रामकथा- रामायण (खण्ड-२)

सकल पदार्थ है जग माहीं, कर्महीण नर पावत नाहीं ।।

* संग्रीकरण :- सौ. प्रगती प्रभाकर अकिम

* छायांकन :- श्री. परमानन्द चंचलानी
स्वर्णकला प्रिंटर्स अँन्ड ॲडव्हर्टायजर्स, २४८/३, रास्ता पेठ, पुणे - २

* कागज पूर्ती :- प्रकाश ग्रुप ऑफ इण्डस्ट्रीज, पूना

* सौजन्य :- पार्टस् कॉटेज, ६-ए, ताडीवाला रोड, दिवाडकर अपार्टमेंटस्, पुणे- ४११००१

* संशोधन, शुद्धिकरण:- श्री. अशोक चांदमल सिंहल

* प्रेषक व्यवस्था :- १) श्री मोहन तुलस्यान (तुलस्यान एक्सप्रेस कुरिअर) फोन नं.२६११९२९१,
३, सागर अपार्टमेंटस्, फ्लॅट नं.८, ताडीवाला रोड, पूना-४११००१
घर-२६०५०७६१ मो.९८२३०४४८३२

२) श्री रामगोपाल केडिया (स्पीडमॅन एक्सप्रेस) फोन नं. २२०८७७५०,
१९१-बी, पहिला मजला, नाइन्थ कॅवेल एक्स-लेन,
डॉ. वेगाज स्ट्रीट, कालबादेवी रोड, मुंबई-४००००२

* सहयोगी :- श्रीमती रश्मि संजय हीरा

* कथाकार :- श्री. महेन्द्रकुमार अनन्तराम पाटोदिया

कोनार्क इन्क्लेव्ह, बी-८, बंड गार्डन रोड, पुणे - १

फोन नं. - २६१६२६७२, २६०५९६७४, २६०५९५०९

* प्रकाशन नारायणी देवी सांस्कृतिक भवन ट्रस्ट
श्री नारायणी धाम, सर्व्हे नं. ७४/१-बी, प्लॉट नं. १७-१८-१९,
कात्रज दूध डेअरी के पीछे, सातारा रोड, पुणे-४११०४३ फोन- २४३६५१५१

* मूल्य - राम भक्ति

गतिमान का जीवन सार्थक होता है।

रामकथा खण्ड-२

धर्म कोई कांच का खिलौना नहीं है, जो बिखर जाये इसकी अपनी मर्यादा है

* विषय-सूची *

१)	इस ग्रन्थ के आधार स्तम्भ	३
२)	किष्किन्धा काण्ड	४ से १४१
३)	सुन्दर काण्ड	१४२ से ३१८
४)	लंका काण्ड (युद्ध काण्ड)	३१९ से ५३९
५)	उत्तर काण्ड	५४० से ५९६
६)	लव-कुश काण्ड	५९७ से ६२६
७)	ग्रन्थ समापन/उपसंहार	६२७ से ६३८
८)	दोस्तों के नाम	६३९ से ६४०

जिन्हे प्यास हो दर्शन की वो खुशनसीब होते है,
चल पडे दो कदम तो भगवान भी उनके करीब होते है।

* इस ग्रन्थ के आधार स्तम्भ *

सन्तों ने सभी साहित्य का सार राम नाम में ला रखा है।

मैंने यह महाग्रन्थ निम्न लिखित ग्रन्थों के सन्दर्भ के सार से रामकथा ग्रन्थ तैयार किया।

१) वाल्मिकि रामायण		१९) तोखे रामायण	कन्नड
२) तुलसीदास रामचरित्र		२०) श्री राम विजय	मराठी
३) भावार्थ एकनाथ रामायण		२१) विचित्र रामायण	उडिया
४) अध्यात्म रामायण		२२) रामायण रहस्य	
५) कम्बम रामायण	तमिल भाषा	२३) वेदान्त रामायण	
६) रंगनाथ मौल रामायण	तेलगु भाषा	२४) विलंका रामायण	
७) कृतवास रामायण	बंगाली	२५) मैथिली रामायण	मैथिली
८) गिरधर रामायण	गुजराती	२६) योग वशिष्ठ रामायण	
९) राधेश्याम रामायण	(पंडित राधेश्याम शर्मा)	२७) अभ्युदय	नरेन्द्र कोहली
१०) संकलन रामायण	सुदर्शन सिंह चक्र	२८) राम विवेचन/मीमांसा	पंडितजी राम किंकर
११) रामावतार चरित्र	कश्मीरी	२९) अद्‌भुत रामायण	
१२) रामायण भानु भक्त	नेपाली	३०) चकबस्त रामायण	उर्दू शायर
१३) रामचन्द्र चरित्र पुराण	कन्नड	३१) अग्नि पुराण/स्कन्दपुराण	
१४) माधव कंदली रामायण	असामी	३२) साकेत	मैथिली शरणगुप्त
१५) भास्कर रामायण		३३) रघुवंश	महाकवि कालीदास
१६) आनन्द रामायण		३४) नमोस्तुते रामायण	प्रभुदत्त ब्रह्मचारी
१७) तत्वार्थ रामायण	डोंगरे महाराज	३५) युगधारा	मैथिली शरण गुप्त
१८) जगमोहन रामायण	उडिया	३६) रामायण	मोरारी बापू

कुछ प्रसंग मैंने रामानन्द सागर की धारावाहिक 'रामायण' से भी लिये है।

झूठी प्रशंसा करने और सुननेवाले कायर और मूर्ख होते है।

रामकथा खण्ड-२
किष्किन्धा काण्ड

* विषय-सूची *

१)	बसन्त ऋतु में पम्पासरोवर की शोभा और श्रीरामका विरह-विलाप	५
२)	हनुमान-मिलन	८
३)	सुग्रीव से मैत्री	१४
४)	बालि सुग्रीव वृत्तान्त	१८
५)	बालि वध	४५
६)	ताराका विलाप और श्रीराम का समझाना	६४
७)	सुग्रीव का राज्याभिषेक और श्रीरामका वर्षाकालमें विरह-वियोग	७०
८)	सुग्रीव की विलासिता और शरद ऋतुका आगमन	८०
९)	किष्किन्धा में लक्ष्मण का सुग्रीव पर रोष	८९
१०)	सीता की खोज में वानर-प्रेषण	१०४
११)	सीता की दक्षिण दिशा में खोज	११३
१२)	योगिनी स्वयंप्रभा	१२१
१३)	वानरोंका गृध्रराज संपाति से भेंट	१२५
१४)	जाम्बवान से हनुमान को समुद्रोल्लंघन की प्रेरणा	१३५

जो दूसरों को कष्ट पहुंचा कर अपना जीवन चलाना चाहता है उसका विनाश अवश्यम्भावी है।
हिंसा कभी टिक नहीं सकती, उससे किसी का जीवन सफल नहीं हो सकता।

किष्किन्धा काण्ड

१) बसन्त ऋतु में पम्पासरोवर की शोभा और श्रीरामका विरह-विलाप

कमल, उत्पल तथा मत्स्योंसे भरी हुई उस पम्पा नामक पुष्करिणीके पास पहुँचकर सीताकी सुधि आ जानेके कारण श्रीरामकी इन्द्रियाँ शोकसे व्याकुल हो उठीं। वे विलाप करने लगे। उस समय सुमित्राकुमार लक्ष्मण उनके साथ थे।

सुमित्रानन्दन ! यह पम्पा कैसी शोभा पा रही है ? इसका जल वैदूर्यमणिके समान स्वच्छ एवं श्याम है। इसमें बहुत-से पद्म और उत्पल खिले हुए हैं। तटपर उत्पन्न हुए नाना प्रकारके वृक्षोंसे इसकी शोभा और भी बढ़ गयी है।

सुमित्राकुमार ! देखो तो सही, पम्पाके किनारेका वन कितना सुन्दर दिखायी दे रहा है। यहाँके ऊँचे-ऊँचे वृक्ष अपनी फैली हुई शाखाओंके कारण अनेक शिखरोंसे युक्त पर्वतोंके समान सुशोभित होते हैं। परंतु मैं इस समय भरतके दुःख और सीताहरणकी चिन्ताके शोकसे संतप्त हो रहा हूँ। मानसिक वेदनाएँ मुझे बहुत कष्ट पहुँचा रही हैं।

यद्यपि मैं शोकसे पीड़ित हूँ तो भी मुझे यह पम्पा बड़ी सुहावनी लग रही है। इसके निकटवर्ती वन बड़े विचित्र दिखायी देते हैं। यह नाना प्रकारके फूलोंसे व्याप्त है। इसका जल बहुत शीतल हैं। यह बहुत सुखदायिनी प्रतीत होती है।

नयी-नयी घासोंसे ढका हुआ यह स्थान अपनी नीली-पीली आभाके कारण अधिक शोभा पा रहा है। यहाँ वृक्षोंके नाना प्रकारके पुष्प सब ओर बिखरे हुए हैं। इससे ऐसा जान पड़ता है मानो यहाँ बहुत-से गलीचे बिछा दिये गये हों।

सुमित्रानन्दन ! इस समय मन्द-मन्द सुखदायिनी हवा चल रही है, जिससे कामनाका उद्दीपन हो रहा है सीताको देखनेकी इच्छा प्रबल हो उठी है। यह चैत्रका महीना है। वृक्षोंमें फूल और फल लग गये हैं और सब ओर मनोहर सुगन्ध छा रही है।

फूलोंसे भरी हुई वृक्षोंकी विभिन्न शाखाओंको झकझोरती हुई वायु जब आगेको बढ़ती है, तब अपने-अपने स्थानसे विचलित हुए भ्रमर मानो उसका यशोगान करते हुए उसके पीछे-पीछे चलने लगते हैं। पर्वतकी कन्दरासे विशेष ध्वनिके साथ निकली हुई वायु मानो उच्च स्वरसे गीत गा रही है। मतवाले कोकिलोंके कलनाद वाद्यका काम देते हैं और उन वाद्योंकी ध्वनिके साथ वह वायु इन झूमते हुए वृक्षोंको मानो नृत्यकी शिक्षा-सी दे रही है। मलयचन्दनका स्पर्श करके बहनेवाली यह शीतलवायु शरीरसे छू जानेपर कितनी सुखद जान पड़ती है। यह थकावट दूर करती हुई बह रही है और सर्वत्र पवित्र सुगन्ध फैला रही है।

मधुर मकरन्द और सुगन्धसे भरे हुए इन वनोंमें गुनगुनाते हुए भ्रमरोंके व्याघ्रसे वायुद्वारा हिलाये गये वृक्ष मानो नृत्यके साथ गान कर रहे हैं। सुमित्रानन्दन ! नाना प्रकारके विहङ्गमोंके कलरवोंसे गूँजता हुआ यह वसन्तका समय सीतासे बिछुड़े हुए मेरे लिये शोकको बढ़ानेवाला हो गया है। वियोगके शोकसे तो मैं पीड़ित हूँ, यह कामदेव सीता विषयक अनुराग मुझे और भी संताप दे रहा है। कोकिल बड़े हर्षके साथ कलनाद करता हुआ मानो मुझे ललकार रहा है। लक्ष्मण ! वनके रमणीय झरनेके निकट बड़े हर्षके साथ बोलता हुआ यह जलकुक्कुट सीतासे मिलनेकी इच्छावाले मुझ रामको शोकमग्न किये देता है।

पहले मेरी प्रिया जब आश्रममें रहती थी, उन दिनों इसका शब्द सुनकर आनन्दमग्न हो जाती थी और मुझे भी निकट बुलाकर अत्यन्त आनन्दित कर देती थी। देखो, इस प्रकार भाँति-भाँतिकी बोली बोलनेवाले विचित्र पक्षी चारों ओर वृक्षों, झाड़ियों और लताओंकी ओर उड़ रहे हैं। सुमित्रानन्दन ! देखो, ये पक्षिणियाँ नर पक्षियोंसे संयुक्त हो अपने झुंडमें आनन्दका अनुभव कर रही है, भौंरोंका गुंजारव सुनकर प्रसन्न हो रही हैं और स्वयं भी मीठी बोली बोल रही हैं।

सुमित्रानन्दन ! यदि मैं सूक्ष्म बरौनियों और सुन्दर केशोंवाली मधुरभाषिणी सीताको न देख सका तो मुझे इस जीवनसे कोई प्रयोजन नहीं है। निष्पाप लक्ष्मण ! वसन्त ऋतुमें वनकी शोभा बड़ी मनोहर हो जाती है, इसकी सीमामें सब ओर कोयलकी मधुर कूक सुनायी पड़ती है। मेरी प्रिया सीताको यह समय बड़ा ही प्रिय लगता था। अपनी उस प्रियतमा पत्नीको मैं नहीं देख पाता हूँ और इन मनोहर वृक्षोंको देख रहा हूँ, इसलिये मेरा अनङ्गज्वर अब और बढ़ जायगा। विदेहनन्दिनी सीता यहाँ मुझे नहीं दिखायी दे रही है, इसलिये मेरा शोक बढ़ाती है तथा मन्द मलयानिलके द्वारा स्वेदसंसर्गका निवारण करनेवाला यह वसन्त भी मेरे शोककी वृद्धि कर रहा है।

सुमित्राकुमार ! मृगनयनी सीता चिन्ता और शोकसे बलपूर्वक पीड़ित किये गये मुझ रामको और भी संताप दे रही है। साथ ही यह

वनमें बहनेवाली चैत्रमासकी वायु भी मुझे पीड़ा दे रही है। ये मोर स्फटिकमणिके बने हुए गवाक्षों झरोखों के समान प्रतीत होनेवाले अपने फैले हुए पंखोंसे, जो वायुसे कम्पित हो रहे हैं, इधर-उधर नाचते हुए कैसी शोभा पा रहे हैं ? मयूरियोंसे घिरे हुए ये मदमत्त मयूर अनङ्गवेदनासे संतप्त हुए मेरी इस कामपीड़ाको और भी बढ़ा रहे हैं। लक्ष्मण ! वह देखो, पर्वतशिखरपर नाचते हुए अपने स्वामी मयूरके साथ-साथ वह मोरनी भी कामपीड़ित होकर नाच रही है। मयूर भी अपने दोनों सुन्दर पंखोंको फैलाकर मन-ही-मन अपनी उसी प्रिया का अनुसरण कर रहा है तथा अपने मधुर स्वरोंसे मेरा उपहास करता-सा जान पड़ता है। निश्चय ही वनमें किसी राक्षसने मोरकी प्रियाका अपहरण नहीं किया है, इसीलिये यह रमणीय वनमें अपनी वल्लभाके साथ नृत्य कर रहा है। यदि विशाल नेत्रोंवाली सीताका अपहरण न हुआ होता तो वह भी इसी प्रकार बड़े प्रेमसे वेगपूर्वक मेरे पास आती। लक्ष्मण ! इस वसन्त ऋतुमें फूलोंके भारसे सम्पन्न हुए इन वनोंके ये सारे फूल मेरे लिये निष्फल हो रहे हैं। प्रिया सीताके यहाँ न होनेसे इनका मेरे लिये कोई प्रयोजन नहीं रह गया है।

जहाँ मेरी प्रिया सीता निवास करती है, वहाँ भी यदि इसी तरह वसन्त छा रहा हो तो उसकी क्या दशा होगी ? निश्चय ही वहाँ-पराधीन हुई सीता मेरी ही तरह शोक कर रही होगी। अवश्य ही जहाँ सीता है, उस एकान्त स्थानमें वसन्तका प्रवेश नहीं है तो भी मेरे बिना वह कजरारे नेत्रोंवाली कमलनयनी सीता कैसे जीवित रह सकेगी। अथवा सम्भव है जहाँ मेरी प्रिया है वहाँ भी इसी तरह वसन्त छा रहा हो, परंतु उसे तो शत्रुओंकी डांट-फटकार सुननी पड़ती होगी; अत: वह बेचारी सुन्दरी सीता क्या कर सकेगी। जिसकी अभी नयी-नयी अवस्था है और प्रफुल्ल कमलदलके समान मनोहर नेत्र हैं, वह मीठी बोली बोलनेवाली मेरी प्राणवल्लभा जानकी निश्चय ही इस वसन्त ऋतुको पाकर अपने प्राण त्याग देगी। मेरे हृदयमें यह विचार दृढ़ होता जा रहा है कि साध्वी सीता मुझसे अलग होकर अधिक कालतक जीवित नहीं रह सकती। वास्तवमें विदेहकुमारीका हार्दिक अनुराग मुझमें और मेरा सम्पूर्ण प्रेम सर्वथा विदेहनन्दिनी सीतामें ही प्रतिष्ठित है। फूलोंकी सुगन्ध लेकर बहनेवाली यह शीतल वायु, जिसका स्पर्श बहुत ही सुखद है, प्राणवल्लभा सीताकी याद आनेपर मुझे आगकी भाँति तपाने लगती है। पहले जानकीके साथ रहनेपर जो मुझे सदा सुखद जान पड़ती थी, वही वायु आज सीताके विरहमें मेरे लिये शोकजनक हो गयी है। जब सीता मेरे साथ थी उन दिनों जो पक्षी कौआ आकाशमें जाकर काँव-काँव करता था, वह उसके भावी वियोगको सूचित करनेवाला था। अब सीताके वियोगकालमें वह कौआ वृक्षपर बैठकर बड़े हर्षके साथ अपनी बोली बोल रहा है इससे सूचित हो रहा है कि सीताका संयोग शीघ्र ही सुलभ होगा। यही वह पक्षी है, जो आकाशमें स्थित होकर बोलनेपर वैदेहीके अपहरणका सूचक हुआ; किंतु आज यह जैसी बोली बोल रहा है, उससे जान पड़ता है कि यह मुझे विशाललोचना सीताके समीप ले जायगा।

लक्ष्मण ! देखो, जिनकी ऊपरी डालियाँ फूलोंसे लदी हैं, वनमें उन वृक्षोंपर कलरव करनेवाले पक्षियोंका यह मधुर शब्द विरहीजनोंके मदनोन्मादको बढ़ानेवाला है। ये मञ्जरियोंसे सुशोभित होनेवाले आमके वृक्ष श्रृङ्गार विलाससे मदमत्तहृदय होकर चन्दन आदि अङ्गराग धारण करनेवाले मनुष्योंके समान दिखायी देते हैं। देखो, पम्पाके जलमें सब ओर खिले हुए ये सुगन्धित कमल प्रात:कालके सूर्यकी भाँति प्रकाशित हो रहे हैं। पम्पाका जल बड़ा ही स्वच्छ है। इसमें लाल कमल और नील कमल खिले हुए हैं। हंस और कारण्डव आदि पक्षी सब ओर फैले हुए हैं तथा सौगन्धिक कमल इसकी शोभा बढ़ा रहे हैं। जलमें प्रात:कालके सूर्यकी भाँति प्रकाशित होनेवाले कमलोंके द्वारा सब ओरसे घिरी हुई पम्पा बड़ी शोभा पा रही है। उन कमलोंके केसरोंको भ्रमरोंने चूस लिया है। इसमें चक्रवाक सदा निवास करते हैं। यहाँके वनोंमें विचित्र-विचित्र स्थान हैं तथा पानी पीनेके लिये आये हुए हाथियों और मृगोंके समूहोंसे इस पम्पाकी शोभा और भी बढ़ जाती है।

लक्ष्मण ! वायुके थपेड़ेसे जिनमें वेग पैदा होता है, उन लहरोंसे ताड़ित होनेवाले कमल पम्पाके निर्मल जलमें बड़ी शोभा पाते हैं। प्रफुल्ल कमलदलके समान विशाल नेत्रोंवाली विदेहराजकुमारी सीताको कमल सदा ही प्रिय रहे हैं। उसे न देखनेके कारण मुझे जीवित रहना अच्छा नहीं लगता है।

अहो ! काम कितना कुटिल है, जो अन्यत्र गयी हुई एवं परम दुर्लभ होनेपर भी कल्याणमय वचन बोलनेवाली उस कल्याणस्वरूपा सीताका बारंबार स्मरण दिला रहा है। सीताके साथ रहनेपर जो-जो वस्तुएँ मुझे रमणीय प्रतीत होती थीं, वे ही आज उसके बिना असुन्दर जान पड़ती हैं। लक्ष्मण ! ये कमलकोषोंके दल सीताके नेत्रकोषोंके समान हैं। इसलिये मेरी आँखें इन्हें ही देखना चाहती हैं। सुमित्रानन्दन! वह देखो, पम्पाके दक्षिण भागमें पर्वत-शिखरोंपर खिली हुई कनेरकी डाल कितनी अधिक शोभा पा रही है। विभिन्न धातुओंसे विभूषित हुआ यह पर्वतराज ऋष्यमूक वायुके वेगसे लायी हुई विचित्र धूलिकी सृष्टि कर रहा है। चारों ओर खिले हुए और सब ओरसे रमणीय प्रतीत होनेवाले पत्रहीन पलाश वृक्षोंसे उपलक्षित इस पर्वतके पृष्ठभाग आगमें जलते हुए-से जान पड़ते हैं। पम्पाके तटपर उत्पन्न हुए ये

वृक्ष इसीके जलसे अभिषिक्त हो बढ़े हैं और मधुर मकरन्द एवं गन्धसे सम्पन्न हुए हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं- मालती, मल्लिका, पद्म और करवीर। ये सब-के-सब फूलोंसे सुशोभित हैं। अमोल, कुरंट, चूर्णक सेमल, पारिभद्रक नीम या मदार, आम, पाटलि, कोविदार, मुचुकुन्द नारङ्ग और अर्जुन नामक वृक्ष भी पर्वत-शिखरोंपर फूलोंसे लदे दिखायी देते हैं। केतक, उद्दालक लसोड़ा, शिरीष, शीशम, धव, सेमल, पलाश, लाल कुरबक, तिनिश, नक्तमाल, चन्दन, स्यन्दन, हिन्ताल, तिलक तथा नागकेसरके पेड़ भी फूलोंसे भरे दिखायी देते हैं। हवाके झोंके खाकर जिनकी डालें हिल रही हैं, वे ये वृक्ष झुककर इतने निकट आ जाते हैं कि हाथसे इनकी डालियोंका स्पर्श किया जा सके। सलोनी लताएँ मदमत्त सुन्दरियोंकी भाँति इनका अनुसरण करती हैं। एक वृक्षसे दूसरे वृक्षपर, एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर तथा एक वनसे दूसरे वनमें जाती हुई वायु अनेक रसोंके आस्वादनसे आनन्दित-सी होकर बह रही है। कुछ वृक्ष प्रचुर पुष्पोंसे भरे हुए हैं और मधु एवं सुगन्धसे सम्पन्न हैं। कुछ मुकुलोंसे आवेष्टित हो श्यामवर्णसे प्रतीत हो रहे हैं। वह भ्रमर रागसे रँगा हुआ है और यह मधुर है, यह स्वादिष्ट है तथा यह अधिक खिला हुआ है इत्यादि बातें सोचता हुआ फूलोंमें ही लीन हो रहा है। पुष्पोंमें छिपकर फिर ऊपरको उड़ जाता है और सहसा अ न्यत्र चल देता है। इस प्रकार मधुका लोभी भ्रमर पम्पातीरवर्ती वृक्षोंपर विचर रहा है। स्वयं झड़कर गिरे हुए पुष्पसमूहोंसे आच्छादित हुई यह भूमि ऐसी सुखदायिनी हो गयी है, मानो इसपर शयन करनेके लिये मुलायम बिछौने बिछा दिये गये हों। पर्वतके शिखरोंपर जो नाना प्रकारकी विशाल शिलाएँ हैं, उनपर झड़े हुए भाँति-भाँतिके फूलोंने उन्हें लाल-पीले रंगकी शय्याओंके समान बना दिया है। सुमित्राकुमार ! वसन्त ऋतुमें वृक्षोंके फूलोंका यह वैभव तो देखो। इस चैत्र मासमें ये वृक्ष मानो परस्पर होड़ लगाकर फूले हुए हैं। यह कारण्डव पक्षी पम्पाके स्वच्छ जलमें प्रवेश करके अपनी प्रियतमाके साथ रमण करता हुआ कामका उद्दीपन सा कर रहा है। मन्दाकिनीके समान प्रतीत होनेवाली इस पम्पाका जब ऐसा मनोरम रूप है, तब संसारमें उसके जो मनोरम गुण विख्यात हैं, वे उचित ही हैं।

रघुश्रेष्ठ लक्ष्मण ! यदि साध्वी सीता दीख जाये और यदि उसके साथ हम यहाँ निवास करने लगें तो हमें न इन्द्रलोकमें जानेकी इच्छा होगी और न अयोध्यामें लौटनेकी ही। हरी-हरी घासोंसे सुशोभित ऐसे रमणीय प्रदेशोंमें सीताके साथ सानन्द विचरनेका अवसर मिले तो मुझे अयोध्या का राज्य न मिलनेके कारण कोई चिन्ता नहीं होंगी और न दूसरे ही दिव्य भोगोंकी अभिलाषा हो सकेगी।

इस वनमें भाँति-भाँतिके पल्लवोंसे सुशोभित और नाना प्रकारके फूलोंसे उपलक्षित ये वृक्ष प्राणवल्लभ सीताके बिना मेरे मनमें चिन्ता उत्पन्न कर देते हैं। सुमित्राकुमार ! देखो, इस पम्पाका जल कितना शीतल है। इसमें असंख्य कमल खिले हुए हैं। चकवे विचरते हैं और कारण्डव निवास करते हैं। इतना ही नहीं, जलकुक्कुट तथा क्रौञ्च भरे हुए हैं एवं बड़े-बड़े मृग इसका सेवन करते हैं। चहकते हुए पक्षियोंसे इस पम्पाकी बड़ी शोभा हो रही है। आनन्दमें निमग्न हुए ये नाना प्रकारके पक्षी मेरे सीताविषयक अनुरागको उद्दीप्त कर देते हैं; क्योंकि इनकी बोली सुनकर मुझे नूतन अवस्थावाली कमलनयनी चन्द्रमुखी प्रिया सीताका स्मरण हो आता है। लक्ष्मण ! देखो, पर्वतके विचित्र शिखरोंपर ये हरिण अपनी हरिणियोंके साथ विचर रहे हैं और मैं मृगनयनी सीतासे बिछुड़ गया हूँ। इधर-उधर विचरते हुए वे मृग मेरे चित्तको व्यथित किये देते हैं। मतवाले पक्षियोंसे भरे हुए इस पर्वतके रमणीय शिखरपर यदि प्राणवल्लभा सीताका दर्शन पा सकूँ तभी मेरा कल्याण होगा। सुमित्रानन्दन ! यदि सुमध्यमा सीता मेरे साथ रहकर इस पम्पासरोवरके तटपर सुखद समीरका सेवन कर सके तो मैं निश्चय ही जीवित रह सकता हूँ। जो लोग अपनी प्रियतमाके साथ रहकर पद्म और सौगन्धिक कमलोंकी सुगन्ध लेकर बहनेवाली शीतल, मन्द एवं शोकनाशक पम्पा-वनकी वायुका सेवन करते हैं, वे धन्य हैं।

हाय ! वह नयी अवस्थावाली कमललोचना जनकनन्दिनी प्रिया सीता मुझसे बिछुड़कर बेबसीकी दशामें अपने प्राणोंको कैसे धारण करती होगी। हाय ! पिताके द्वारा वनमें भेजे जानेपर जो धर्मका आश्रय ले मेरे पीछे-पीछे यहाँ चली आयी, वह मेरी प्रिया इस समय कहाँ है ? लक्ष्मण ! जिसने राज्यसे वञ्चित और हताशय हो जानेपर भी मेरा साथ नहीं छोड़ा- मेरा ही अनुसरण किया, उसके बिना अत्यन्त दीन होकर मैं कैसे जीवन धारण करूँगा ? लक्ष्मण ! वैदेहीके द्वारा कभी हँसकर और कभी मुस्कराकर कही हुई वे मधुर, हितकर एवं लाभदायक बातें जिनकी कहीं तुलना नहीं हैं, मुझे अब कब सुननेको मिलेंगी ?

अयोध्यामें चलनेपर जब मनस्विनी माता कौशल्या पूछेंगी कि मेरी बहूरानी कहाँ है ? तो मैं उन्हें क्या उत्तर दूँगा। लक्ष्मण ! तुम जाओ, भ्रातृवत्सल भरतसे मिलो। मैं तो जनकनन्दिनी सीताके बिना जीवित नहीं रह सकता। इस प्रकार महात्मा श्रीरामको अनाथकी भाँति विलाप करते देख भाई लक्ष्मणने युक्तियुक्त एवं निर्दोष वाणीमें कहा- पुरुषोत्तम श्रीराम ! आप अपनेको सँभालिये। शोक न कीजिये। आप-जैसे पुण्यात्मा पुरुषोंकी बुद्धि उत्साहशून्य नहीं होती।

* * * (७) * * *

स्वजनोंके अवश्यम्भावी वियोगका दु:ख सभीको सहना पड़ता है, इस बातको स्मरण करके अपने प्रिय जनोंके प्रति अधिक स्नेह आसक्ति को त्याग दीजिये; क्योंकि जल आदिसे भीगी हुई बत्ती भी अधिक स्नेह तेल में डूबो दी जानेपर जलने लगती है। तात रघुनन्दन! यदि रावण पातालमें या उससे भी अधिक दूर चला जाय तो भी वह अब किसी तरह जीवित नहीं रह सकता। पहले उस पापी राक्षसका पता लगाइये। फिर या तो वह सीताको वापस करेगा या अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठेगा।

अत: आर्य ! आप कल्याणकारी धैर्यको अपनाइये। यह दीनतापूर्ण विचार त्याग दीजिये। जिनका प्रयत्न और धन नष्ट हो गया है, वे पुरुष यदि उत्साहपूर्वक उद्योग न करें तो उन्हें उस अभीष्ट अर्थकी प्राप्ति नहीं हो सकती। उत्साह ही बलवान् होता है। उत्साहसे बढ़कर दूसरा कोई बल नहीं है। उत्साही पुरुषके लिये संसारमें कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं है। जिनके हृदयमें उत्साह होता है वे पुरुष कठिन-से-कठिन कार्य आ पड़नेपर हिम्मत नहीं हारते। हमलोग केवल उत्साहका आश्रय लेकर ही जनकनन्दिनीको प्राप्त कर सकते है।

शोकको पीछे छोड़कर कामीसा व्यवहारका त्याग कीजिये। आप महात्मा एवं कृतात्मा पवित्र अन्त:करणवाले हैं। किंतु इस समय अपने आपको भूल गये हैं- अपने स्वरूपका स्मरण नहीं कर रहे हैं।

लक्ष्मणके इस प्रकार समझानेपर शोकसे संतप्तचित्त हुए श्रीरामने शोक और मोहका परित्याग करके धैर्य धारण किया। सीताके स्मरणसे जिनका चित्त उद्विग्न हो गया था, अतएव जो दु:खमें डूबे हुए थे, वे महात्मा श्रीराम लक्ष्मणकी कही हुई बातोंपर विचार करके सहसा सावधान हो गये और झरनों तथा कन्दराओंसहित उस सम्पूर्ण वनका निरीक्षण करते हुए वहाँसे आगेको प्रस्थित हुए।

२) हनुमान-मिलन- ऋष्यमूक पर्वतके समीप विचरनेवाले बलवान् वानरराज सुग्रीव पम्पाके निकट घूम रहे थे। उसी समय उन्होंने उन अद्भुत दर्शनीय वीर श्रीराम और लक्ष्मणको देखा। देखते ही उनके मनमें यह भय हो गया कि हो न हो इन्हें मेरे शत्रुबालिने ही भेजा होगा, फिर तो वे इतने डर गये कि खानेपीने आदिकी भी चेष्टा न कर सके।

हाथीके समान मन्दगतिसे चलनेवाले महामना वानरराज सुग्रीव जो वहाँ विचर रहे थे, उस समय एक साथ आगे बढ़ते हुए उन दोनों भाइयोंको देखकर चिन्तित हो उठे। भयके भारी भारसे उनका उत्साह नष्ट हो गया। वे महान् दु:खमें पड़ गये। मतङ्ग मुनिका वह आश्रम परम पवित्र एवं सुखदायक था। मुनिके शापसे उसमें बालिका प्रवेश होना कठिन था, इसलिये वह दूसरे वानरोंका आश्रय बना हुआ था। उस आश्रम या वनके भीतर सदा ही अनेकानेक शाखामृग निवास करते थे। उस दिन उन महातेजस्वी श्रीराम और लक्ष्मणको देखकर दूसरे-दूसरे वानर भी भयभीत हो आश्रमके भीतर चले गये।

महात्मा श्रीराम और लक्ष्मण दोनों भाइयोंको श्रेष्ठ आयुध धारण किये वीर वेशमें आते देख ऋष्यमूक पर्वतपर बैठे हुए सुग्रीवके मनमें बड़ी शमा हुई। वे उद्विग्नचित्त होकर चारों दिशाओंकी ओर देखने लगे। उस समय वानरशिरोमणि सुग्रीव किसी एक स्थानपर स्थिर न रह सके। महाबली श्रीराम और लक्ष्मणको देखते हुए सुग्रीव अपने मनको स्थिर न रख सके। उस समय अत्यन्त भयभीत हुए वन वानरराजका चित्त बहुत दु:खी हो गया। सुग्रीव धर्मात्मा थे- उन्हें राजधर्मका ज्ञान था। उन्होंने मन्त्रियोंके साथ विचारकर अपनी दुर्बलता और शत्रुपक्षकी प्रबलताका निश्चय किया। तत्पश्चात् वे समस्त वानरोंके साथ अत्यन्त उद्विग्न हो उठे।

अकारण भी शमित-भीत व्यक्ति डरता है। अपने अन्तरका भाव ही व्यक्तिको बाहर सर्वत्र दीखता रहता है। सुग्रीव अपने बड़े भाई बालिसे भयभीत थे। यह भय उनके हृदयमें ऐसा बैठ गया था कि वे सदा सशम रहते थे। भले जबसे सुग्रीव ऋष्यमूकपर रहने लगे बालिने उनकी उपेक्षा कर दी, उन्हें मारनेका कोई प्रयत्न नहीं किया, किन्तु सुग्रीव को कैसे भरोसा हो कि बालिने अबतक उन्हें मारनेका यत्न नहीं किया तो आगे भी नहीं करेगा। बड़े भाईने भवन, पत्नी सब छीन लिया। प्राण लेकर भागे। चार मन्त्री विपत्तिके दिनोंके साथी बने रहे- रीछराज जाम्बवन्त, हनुमान, नल और नील। इनके साथ ऋष्यमूकके शिखरपर शरण ली; क्योंकि शापके भयसे बालि यहाँ नहीं आ सकता था। अन्यत्र कहीं जा नहीं सकते थे। इसी पर्वतपर घूमकर और पम्पासरोवरके देखकर मन बहलाना था। प्रकृतिकी गोदमें जैसे दर्पण पड़ा हो, ऐसा पम्पा सरोवर। हरे-भरे वृक्ष-पुष्प, लताएँ गुञ्जार करते भ्रमर, कूजते पक्षी जैसे किसीके स्वागतका सम्भार बनदेवताने सजा रखा हो। भले पत्ते हिलकर बुलावें, पक्षी कूककर आह्वान करें, सुग्रीव बालिके भयसे वहाँ जा नही सकते थे। दूरसे सरोवरकी शोभा ही देख सकते थे।

वानरराज सुग्रीवके हृदयमें बड़ा उद्वेग हो गया था। वे श्रीराम और लक्ष्मणकी ओर देखते हुए अपने मन्त्रियोंसे इस प्रकार बोले- निश्चय ही ये दोनों वीर बालिके भेजे हुए ही इस दुर्गम वनमें विचरते हुए यहाँ आये हैं। इन्होंने छलसे चीर वस्त्र धारण कर लिये हैं, जिससे

हम इन्हें पहचान न सकें। उधर सुग्रीवके सहायक दूसरे-दूसरे वानरोंने जब उन महाधनुर्धर श्रीराम और लक्ष्मणको देखा, तब वे उस पर्वततटसे भागकर दूसरे उत्तम शिखरपर जा पहुँचे। वे यूथपति वानर शीघ्रतापूर्वक जाकर यूथपतियोंके सरदार वानरशिरोमणि सुग्रीवको चारों ओरसे घेरकर उनके पास खड़े हो गये।

इस तरह एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर उछलते-कूदते और अपने वेगसे उन पर्वत-शिखरोंको प्रकम्पित करते हुए वे समस्त महाबली वानर एक मार्गपर आ गये। उन सबने उछल-कूदकर उस समय वहाँ दुर्गम स्थानोंमें स्थित हुए पुष्पशोभित बहुसंख्यक वृक्षोंको तोड़ डाला था। उस बेलामें चारों ओरसे उस महान् पर्वतपर उछलकर आते हुए वे श्रेष्ठ वानर वहाँ रहनेवाले मृगों, बिलावों तथा व्याघ्रोंको भयभीत करते हुए जा रहे थे। इस प्रकार सुग्रीवके सभी सचिव पर्वतराज ऋष्यमूकपर आ पहुँचे और एकाग्रचित्त हो उन वानरराजसे मिलकर उनके सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

जाम्बवान ! हनुमान ! आप सब यहाँ आवें। सुग्रीव शिखरपर घूमने निकले थे। पम्पासरोवरकी ओर दृष्टि गयी और चौंके। मन्त्रियोंको बुलाकर दिखलाया- वे दो श्याम-गौर धनुर्धर सरोवरसे इधर ही आ रहे हैं। कहाँसे आये होंगे ? उत्तरमें कबन्ध है। किष्किन्धामें मनुष्य रहते नहीं; किंतु बालि रावणका मित्र है। राक्षस और वानर भी कामरूप होते हैं। इनमें कोई मनुष्य-रूप बना सकता है। बालिने इन्हें मुझे मारनेको भेजा हो तो ?

सुग्रीवकी शमाको निराधान नहीं कहा जा सकता। उन्हें पता नहीं था कि कबन्ध या खर-दूषण मारे जा चुके हैं। इस राक्षसोंसे भरे प्रदेशमें तपस्वी मुनियोंको छोड़कर सामान्य मनुष्यके आनेकी सम्भावना ही नहीं थी। दूर-दूर तक कोई जनपद नहीं था और जो आ रहे थे वे वन्य भील तो किसी प्रकार कहे नहीं जा सकते थे। उनका वेश भले तपस्वी-जैसा हो, धनुर्धर थे। राक्षसोंके प्रदेशमें घूम रहे हैं तो असाधारण शूर होंगे ही। तदनन्तर बालीसे बुराईकी आशमा करके सुग्रीवको भयभीत देख बातचीत करनेमें कुशल हनुमानजी बोले- आप सब लोग बालिके कारण होनेवाली इस भारी घबराहटको छोड़ दीजिये। यह मलयनामक श्रेष्ठ पर्वत है। यहाँ बालिसे कोई भय नहीं है। वानरशिरोमणे। जिससे उद्विग्नचित्त होकर आप भागे हैं, उस क्रूर दिखायी देनेवाले निर्दय बालिको मैं यहाँ नहीं देखता हूँ। सौम्य बालि ! आपको अपने जिस पापाचारी बड़े भाईसे भय प्राप्त हुआ है, वह दुष्टात्मा बालि यहाँ नहीं आ सकता; अत: मुझे आपके भयका कोई कारण नहीं दिखायी देता। आश्चर्य है कि इस समय आपने अपनी वानरोचित चपलताको ही प्रकट किया है। वानरप्रवर ! आपका चित चञ्चल है। इसलिये आप अपनेको विचार-मार्गपर स्थिर नहीं रख पाते हैं। बुद्धि और विज्ञानसे सम्पन्न होकर आप दूसरोंकी चेष्टाओंके द्वारा उनका मनोभाव समझें और उसीके अनुसार सभी आवश्यक कार्य करें; क्योंकि जो राजा बुद्धि-बलका आश्रय नहीं लेता, वह सम्पूर्ण प्रजापर शासन नहीं कर सकता। हनुमानजीके मुखसे निकले हुए इन सभी श्रेष्ठ वचनोंको सुनकर सुग्रीवने उनसे बहुत ही उत्तम बात कही- इन दोनों वीरोंकी भुजाएँ लंबी और नेत्र बड़े-बड़े हैं। ये धनुष, बाण और तलवार धारण किये देवकुमारोंके समान शोभा पा रहे हैं। इन दोनोंको देखकर किसके मनमें भयका संचार न होगा।

मेरे मनमें संदेह है कि ये दोनों श्रेष्ठ पुरुष बालिके ही भेजे हुए हैं; क्योंकि राजाओंके बहुत-से मित्र होते हैं। अत: उनपर विश्वास करना उचित नहीं है। प्राणिमात्रको छद्मवेषमें विचरनेवाले शत्रुओंको विशेष रूपसे पहचाननेकी चेष्टा करनी चाहिये; क्योंकि वे दूसरोंपर अपना विश्वास जमा लेते हैं, परंतु स्वयं किसीका विश्वास नहीं करते और अवसर पाते ही उन विश्वासी पुरुषोंपर ही प्रहार कर बैठते हैं।

बालि इन सब कार्योंमें बड़ा कुशल है। राजालोग बहुदर्शी होते हैं- वञ्चनाके अनेक उपाय जानते हैं, इसीलिये शत्रुओंका विध्वंस कर डालते हैं। ऐसे शत्रुभूत राजाओंको प्राकृत वेशभूषावाले मनुष्यों को गुप्तचरों द्वारा जाननेका प्रयत्न करना चाहिये।

अत: कपिश्रेष्ठ ! तुम भी एक साधारण पुरुषकी भाँति यहाँसे जाओ और उनकी चेष्टाओंसे, रूपसे तथा बातचीतके तौर-तरीकोंसे उन दोनोंका यथार्थ परिचय प्राप्त करो। उनके मनोभावोंको समझो। यदि वे प्रसन्नचित्त जान पड़ें तो बारंबार मेरी प्रशंसा करके तथा मेरे अभिप्रायको सूचित करनेवाले प्रयत्नोंद्वारा मेरे प्रति उनका विश्वास उत्पन्न करो।

वानरशिरोमणे ! तुम मेरी ही ओर मुँह करके खड़ा होना और उन धनुर्धर वीरोंसे इस वनमें प्रवेश करनेका कारण पूछना। यदि उनका हृदय शुद्ध जान पड़े तो भी तरह-तरहकी बातों और आकृतिके द्वारा यह जाननेकी विशेष प्रयत्न करनी चाहिये कि वे दोनों कोई दुर्भावना लेकर तो नहीं आये हैं। हनुमान ! तुम ब्रह्मचारीका वेश बनाकर उनके समीप जाओ। सुग्रीवने आदेश नहीं दिया, अनुरोध किया- पता लगाओ कि वे बालिके मित्र हैं या नहीं ? बालिने मुझे मारने उनको भेजा हो तो हाथ हिलाकर संकेत कर देना, मैं यह पर्वत छोड़कर

तत्काल भागूँगा। सुग्रीव बालिसे तीव्र गतिसे भाग सकते थे। पहिले भी बालि उन्हें पकड़ नहीं सका था। इन दोनों शूरोंके सामनेसे भाग चलेंगे। भले बालि आवे तो फिर यहाँ आना पड़े।

बालि धार्मिक है। ये उसके मित्र देवता या कोई अपरिचित वानर हुए तो ब्रह्मचारीका सम्मान करेंगे। ब्रह्मचारीसे झूठ बोलनेका प्रयोजन नहीं होगा। कोई दशग्रीवके योधा हुए तो ब्रह्मचारीके प्रति उनका व्यवहार उनको सूचित कर देगा। किसी भी दिशामें एकाकी ब्रह्मचारीसे कोई दुराव नहीं करता।

आप मेरे संकेतकी प्रतीक्षा करें। हनुमानने वहीं सामान्य ब्रह्मचारीका वेश धारण किया। सुग्रीवको समझाया- आप सम्भ्रम त्याग दो। बालि यहाँ आ नहीं सकता और दूसरोंसे सहायता लेना उसके स्वभावमें नहीं है। फिर भी मैं इनके समीप जाता हूँ।

वानरराज सुग्रीवके इस प्रकार आदेश देनेपर पवनकुमार हनुमानने उस स्थानपर जानेका विचार किया, जहाँ श्रीराम और लक्ष्मण विद्यमान थे। अत्यन्त डरे हुए दुर्जय वानर सुग्रीवके उस वचनका आदर करके बहुत अच्छा कहकर महानुभाव हनुमान्‌जी जहाँ अत्यन्त बलशाली श्रीराम और लक्ष्मण थे, उस स्थानके लिये तत्काल चल दिये।

कन्धेपर मूञ्जका यज्ञोपवीत, कक्षमें पलाशदण्ड और अश्वाजिन, हाथमें कमण्डलु, गलेमें रुद्राक्षकी माला, घुटा मस्तक, बँधी शिखा, भालपर भस्म-तिलक, एक युवक ब्रह्मचारीके वेशमें हनुमान ऋष्यमूकके शिखरसे एक ओर कूदे और श्रीरामके समीप ऐसे आये जैसे वनमें-से मतङ्गाश्रमकी ओरसे ही आये हों। तदनन्तर हनुमानने विनीतभावसे उन दोनों रघुवंशी वीरोंके पास जाकर उन्हें प्रणाम करके मनको अत्यन्त प्रिय लगनेवाली मधुर वाणीमें उनके साथ वार्तालाप आरम्भ किया। वानरशिरोमणि हनुमानने पहले तो उन दोनों वीरोंकी यथोचित प्रशंसा की। फिर विधिवत् उनका पूजन आदर करके स्वच्छन्दरूपसे मधुर वाणीमें कहा- वीरो ! आप दोनों सत्यपराक्रमी, राजर्षियों और देवताओंके समान प्रभावशाली, तपस्वी तथा कठोर व्रतका पालन करनेवाले जान पड़ते हैं।

आपके शरीरकी कान्ति बड़ी सुन्दर है। आप दोनों इस वन्य प्रदेशमें किसलिये आये हैं। वनमें विचरनेवाले मृगसमूहों तथा अन्य जीवोंको भी त्रास देते पम्पासरोवरके तटवर्ती वृक्षोंको सब ओरसे देखते और इस सुन्दर जलवाली नदी-सरीखी पम्पाको सुशोभित करते हुए आप दोनों वेगशाली वीर कौन है ? आप दोनों बड़े धैर्यशाली दिखायी देते हैं। आप दोनोंके अङ्गोंपर चीर वस्त्र शोभा पाते है। आपकी भुजाएँ विशाल हैं। आपका क्या परिचय है ? आप दोनों वीरोंकी दृष्टि सिंहके समान है। आपके बल और पराक्रम महान् हैं। आप शत्रुओंको नष्ट करनेकी शक्ति रखते हैं। आप कान्तिमान् तथा रूपवान हैं। आप विशालकाय साँड़के समान मन्दगतिसे चलते हैं। आप दोनोंकी भुजाएँ हाथीकी सूँड़के समान जान पड़ती हैं। आप मनुष्योंमें श्रेष्ठ और परम तेजस्वी हैं। आप दोनोंकी प्रभासे गिरिराज ऋष्यमूक जगमगा रहा है। आप देवताओंके समान पराक्रमी और राज्य भोगनेके योग्य हैं। इस दुर्गम वनप्रदेशमें आपका आगमन किस प्रकार हुआ? हे वीर ! साँवले और गोरे शरीरवाले आप कौन हैं, जो क्षत्रियके रूपमें वनमें फिर रहे हैं ? हे स्वामी ! कठोर भूमिपर कोमल चरणोंसे चलनेवाले आप किस कारण वनमें विचर रहे हैं ?

मनको हरण करनेवाले आपके सुन्दर, कोमल अंग है, और आप वनके दु:सह धूप और वायुको सह रहे हैं। क्या आप ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीन देवताओंमेंसे कोई हैं, या आप दोनों नर और नारायण हैं।

अथवा आप जगत्‌के मूल कारण और सम्पूर्ण लोकोंके स्वामी स्वयं भगवान् हैं, जिन्होंने लोगोंको भवसागरसे पार उतारने तथा पृथ्वीका भार नष्ट करनेके लिये मनुष्य-रूपमें अवतार लिया है ?

वीरो ! इस तरह मैं बारंबार आपका परिचय पूछ रहा हूँ, आपलोग मुझे उत्तर क्यों नहीं दे रहे हैं ? यहाँ सुग्रीव नामक एक श्रेष्ठ वानर रहते हैं, जो बड़े धर्मात्मा और वीर हैं। उनके भाई बालिने उन्हें घरसे निकाल दिया है; इसलिये वे अत्यन्त दुखी होकर सारे जगतमें मारे-मारे फिरते हैं। उन्हीं वानरशिरोमणियोंके राजा महात्मा सुग्रीवके भेजनेसे मैं यहाँ आया हूँ। मेरा नाम हनुमान है। मैं भी वानरजातिका ही हूँ। धर्मात्मा सुग्रीव आप दोनोंसे मित्रता करना चाहते हैं। मुझे आपलोग उन्हींका मन्त्री समझें। मैं वायुदेवताका वानरजातीय पुत्र हूँ। मेरी जहाँ इच्छा हो, जा सकता हूँ और जैसा चाहूँ, रूप धारण कर सकता हूँ। इस समय सुग्रीवका प्रिय करनेके लिये भिक्षुके रूपमें अपनेको छिपाकर मैं ऋष्यमूक पर्वतसे यहाँपर आया हूँ। उन दोनों भाई वीरवर श्रीराम और लक्ष्मण से ऐसा कहकर बातचीत करनेमें कुशल तथा बातका मर्म समझनेमें निपुण हनुमान् चुप हो गये; फिर कुछ न बोले।

उनकी यह बात सुनकर श्रीरामका मुख प्रसन्नतासे खिल उठा। वे अपने बगलमें खड़े हुए छोटे भाई लक्ष्मणसे इस प्रकार कहने लगे-

सुमित्रानन्दन ! ये महामनस्वी वानरराज सुग्रीवके सचिव हैं और उन्हींके हितकी इच्छासे यहाँ हमारे पास आये हैं। लक्ष्मण ! इन शत्रुदमन सुग्रीवसचिव कपिवर हनुमानसे, जो बातके मर्मको समझनेवाले हैं, तुम स्नेहपूर्वक मीठी वाणीमें बातचीत करो।

जिसे ऋग्वेदकी शिक्षा नहीं मिली, जिसने यजुर्वेदका अभ्यास नहीं किया तथा जो सामवेदका विद्वान नहीं है, वह इस प्रकार सुन्दर भाषामें वार्तालाप नहीं कर सकता। निश्चय ही इन्होंने समूचे व्याकरण शास्त्रका कई बार स्वाध्याय किया है; क्योंकि बहुत-सी बातें बोल जानेपर भी इनके मुँहसे कोई अशुद्धि नहीं निकली। सम्भाषणके समय इनके मुख, नेत्र, ललाट, भौंह तथा अन्य सब अङ्गोंसे भी कोई दोष प्रकट हुआ हो, ऐसा कहीं ज्ञात नहीं हुआ।

इन्होंने थोड़ेमें ही बड़ी स्पष्टताके साथ अपना अभिप्राय निवेदन किया है। उसे समझनेमें कहीं कोई संदेह नहीं हुआ है। रुक-रुककर अथवा शब्दों या अक्षरोंको तोड़-मरोड़कर किसी ऐसे वाक्यका उच्चारण नहीं किया है, जो सुननेमें कर्णकटु हो। इनकी वाणी हृदयमें मध्यमारूपसे स्थित है और कण्ठसे बैखरीरूपमें प्रकट होती है, अत: बोलते समय इनकी आवाज न बहुत धीमी रही है न बहुत ऊँची। मध्यम स्वरमें ही इन्होंने सब बातें कहीं हैं। ये संस्कार और क्रमसे सम्पन्न, अद्भुत, अविलम्बित तथा हृदयको आनन्द प्रदान करनेवाली कल्याणमयी वाणीका उच्चारण करते हैं। हृदय, कण्ठ और मूर्धा- इन तीनों स्थानोंद्वारा स्पष्टरूपसे अभिव्यक्त होनेवाली इनकी इस विचित्र वाणीको सुनकर किसका चित्त प्रसन्न न होगा। वध करनेके लिये तलवार उठाये हुए शत्रुका हृदय भी इस अद्भुत वाणीसे बदल सकता है।

निष्पाप लक्ष्मण ! जिस राजाके पास इनके समान दूत न हो, उसके कार्योंकी सिद्धि कैसे हो सकती है। जिसके कार्यसाधक दूत ऐसे उत्तम गुणोंसे युक्त हों, उस राजाके सभी मनोरथ दूतोंकी बातचीतसे ही सिद्ध हो जाते हैं।

श्रीराम हँसकर बोले- क्या बतायें, क्या कहें हम कौन है यही सबसे बड़ा सवाल है। हम खुद इस चक्कर में है किस तरह बताये कहाँ के हैं। जब थे तब तक थे लेकिन अब तो न यहाँ के है न वहाँ के है। विधना ने जो लिखा है उसमें वश किसका चलता है। संसार चक्र ही कुछ ऐसा है। दम-दम पर रंग बदलता है। आपका यह ब्राह्मण का सा वेश है पर आप दिख रहे वनवासी है। देश-विदेश में कोई ठीक-ठीक पता भी नहीं चलता। कौन किसका है, न अपना है न किसी और का है। जो उधर आपकी रंगत है वैसे ही रंगत हमारी है। यह सुनकर पवनसुत लज्जा गये हृदय में खेद हुआ जो भेद लेने आये थे उन्हींका भेद खुल गया।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर बातचीतकी कला जाननेवाले सुमित्रानन्दन लक्ष्मण बातका मर्म समझनेवाले पवनकुमार सुग्रीवसचिव कपिवर हनुमान्‌से इस प्रकार बोले- विद्वन् ! महामना सुग्रीवके गुण हमें ज्ञात हो चुके हैं। हम दोनों भाई वानरराज सुग्रीवकी ही खोजमें यहाँ आये हैं। साधुशिरोमणि हनुमान्‌जी ! आप सुग्रीवके कथनानुसार यहाँ आकर जो मैत्रीकी बात चला रहे हैं, वह हमें स्वीकार है। हम आपके कहनेसे ऐसा कर सकते हैं।

लक्ष्मणके यह स्वीकृतिसूचक निपुणतायुक्त वचन सुनकर पवनकुमार कपिवर हनुमान् बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने सुग्रीवकी विजयसिद्धिमें मन लगाकर उस समय उन दोनों भाइयोंके साथ उनकी मित्रता करनेकी इच्छा की।

लक्ष्मण ! आश्चर्यकी बात है कि इस घोर वनमें इतना अल्पवयस्क और ऐसा विद्वान ब्रह्मचारी आ गया है। श्रीरामने अनुजसे कहा- यह व्याकरण-शास्त्रका प्रकाण्ड पण्डित लगता है। इसने अपने वाक्योंमें एक भी शब्द अशुद्ध अनुपयुक्त नहीं कहा। इसका उच्चारण शुद्ध है, स्पष्ट है और शब्दोंका प्रयोग विद्वत्तापूर्ण है। यह कहीं बोलनेमें अटकता नहीं।

ब्रह्मचारीके ब्राह्मण होनेकी सूचना उसका यज्ञोपवती देता था। उसने आयुमें अपने से बड़ेको सायुध देखकर भी तपस्वी-वेशके कारण पहिले प्रणाम किया, यह उसकी विनम्रता थी। वह अपने भाषणसे विद्वान सिद्ध हुआ। इस वनमें उसकी उपस्थिति कहती थी कि वह अत्यन्त निर्भय है। विरक्त है। किसी ऋषिका शरणापन्न होने आया हो सकता है।

मैं इक्ष्वाकुगोत्रीय अयोध्या-नरेश महाराज दशरथका ज्येष्ठ पुत्र राम हूँ और ये मेरे छोटे भाई लक्ष्मण हैं। श्रीरामने संक्षिप्त परिचय दिया- पिताकी आज्ञासे मैं पत्नीके साथ वनमें आया था। पञ्चवटीमें मेरी पत्नी जनकराजनन्दिनी सीताका राक्षसने हरण कर लिया। हम दोनों उन्हींको ढूँढ़ रहे हैं। आप कौन हैं ? इस वनमें आप कैसे पधारे।

धनी लोगोंके सभी मददगार है। निर्धन का कोई सहायक नहीं। हम दोनों भाई राम-लक्ष्मण अपने प्राणोंपर खेलकर इस धरती को दुष्टविहीन कर देंगे। जग में तो सभी स्वार्थी है न कोई किसीकी सुनता है। आपने पूछा तो हमने प्रकट किया अन्यथा किसीसे कुछ कहना अच्छा नहीं है। सच्चे पारखी के आगे हीरा भी पहचाना जाता है। यह सभी जानते है इश्क और मुश्क कभी छुपता नहीं। वाणीसे, नयनों

से, संकेतों से हनुमान ने इनको पहचान लिया। रुद्रावतार बजरंगीने अपने प्रभु को पहचान लिया।

श्रीरामकी बात सुनकर तथा सुग्रीवके विषयमें उनका सौम्यभाव जानकर और साथ ही यह समझकर कि इन्हें भी सुग्रीवसे कोई आवश्यक काम है, हनुमान्‌जीको बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने मन-ही-मन सुग्रीवका स्मरण किया।

अब अवश्य ही महामना सुग्रीवको राज्यकी प्राप्ति होनेवाली है; क्योंकि ये महानुभाव किसी कार्य या प्रयोजनसे यहाँ आये हैं और यह कार्य सुग्रीवके ही द्वारा सिद्ध होनेवाला है। तत्पश्चात् बातचीतमें कुशल वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी अत्यन्त हर्षमें भरकर श्रीरामसे बोले-

पम्पा-तटवर्ती काननसे सुशोभित यह वन भयंकर और दुर्गम है। इसमें नाना प्रकारके हिंसक जन्तु निवास करते हैं। आप अपने छोटे भाईके साथ यहाँ किसलिये आये हैं ? हनुमानजीका यह वचन सुनकर श्रीरामकी आज्ञासे लक्ष्मणने दशरथनन्दन महात्मा श्रीरामका इस प्रकार परिचय देना आरम्भ किया- विद्वन् ! इस पृथ्वीपर दशरथ नामसे प्रसिद् जो धर्मानुरागी तेजस्वी राजा थे, वे सदा ही अपने धर्मके अनुसार चारों वर्णोंकी प्रजाका पालन करते थे। इस भूतलपर उनसे द्वेष रखनेवाला कोई नहीं था और वे भी किसीसे द्वेष नहीं रखते थे। वे समस्त प्राणियोंपर ब्रह्माजीके समान स्नेह रखते थे।

उन्होंने पर्याप्त दक्षिणावाले अग्निष्टोम आदि यज्ञोंका अनुष्ठान किया था। ये उन्हीं महाराजके ज्येष्ठ पुत्र हैं। लोग इन्हें श्रीराम कहते हैं।

ये सब प्राणियोंको शरण देनेवाले और पिताकी आज्ञाका पालन करनेवाले हैं। महाराज दशरथके चारों पुत्रोंमें ये सबसे अधिक गुणवान हैं। ये राजाके उत्तम लक्षणोंसे सम्पन्न हैं। जब इन्हें राज्यसम्पत्तिसे संयुक्त किया जा रहा था, उस समय कुछ ऐसा कारण आ पड़ा, जिससे ये राज्यसे वञ्चित हो गये और वनमें निवास करनेके लिये मेरे साथ यहाँ आ गये।

महाभाग ! जैसे दिनका क्षय होनेपर सायंकाल महातेजस्वी सूर्य अपने प्रभाके साथ अस्ताचलको जाते हैं, उसी प्रकार ये जितेन्द्रिय श्रीरघुनाथ अपनी पत्नी सीताके साथ वनमें आये थे। मैं इनका छोटा भाई हूँ। मेरा नाम लक्ष्मण है। मैं अपने कृतज्ञ और बहुज्ञ भाईके गुणोंसे आकृष्ट होकर इनका दास हो गया हूँ।

सम्पूर्ण भूतोंके हितमें मन लगानेवाले, सुख भोगनेके योग्य महापुरुषोंद्वारा पूजनीय, ऐश्वर्यसे हीन तथा वनवासमें तत्पर मेरे भाईकी पत्नीको इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले एक राक्षसने सूने आश्रमसे हर लिया। जिसने इनकी पत्नीका हरण किया है, वह राक्षस कौन है और कहाँ रहता है ? इत्यादि बातोंका ठीक-ठीक पता नहीं लग रहा है।

दनु नामक एक दैत्य था, जो शापसे राक्षसभावको प्राप्त हुआ था। उसने सुग्रीवका नाम बताया और कहा- वानरराज सुग्रीव सामर्थ्यशाली और महान् पराक्रमी हैं। वे आपकी पत्नीका अपहरण करनेवाले राक्षसका पता लगा देंगे। ऐसा कहकर तेजसे प्रकाशित होता हुआ दनु स्वर्गलोकमें पहुँचनेके लिये आकाशमें उड़ गया। आपके प्रश्नके अनुसार मैंने सब बातें ठीक-ठीक बता दी। मैं और श्रीराम दोनों ही सुग्रीवकी शरणमें आये हैं। ये पहले बहुत-से धन-वैभवका दान करके परम उत्तम यश प्राप्त कर चुके हैं। जो पूर्वकालमें सम्पूर्ण जगत्‌के नाथ संरक्षक थे, वे आज सुग्रीवको अपना रक्षक बनाना चाहते हैं।

सीता जिनकी पुत्रवधू है, जो शरणागतपालक और धर्मवत्सल रहे हैं, उन्हीं महाराज दशरथके पुत्र शरणदाता श्रीराम आज सुग्रीवकी शरणमें आये हैं। जो मेरे धर्मात्मा बड़े भाई श्रीरघुनाथ पहले सम्पूर्ण जगत्‌को शरण देनेवाले तथा शरणागतवत्सल रहे हैं, वे इस समय सुग्रीवकी शरणमें आये हैं। जिनके प्रसन्न होनेपर सदा यह सारी प्रजा प्रसन्नतासे खिल उठती थी, वे ही श्रीराम आज वानरराज सुग्रीवकी प्रसन्नता चाहते हैं। जिन राजा दशरथने सदा अपने यहाँ आये हुए भूमण्डलके सर्वसद्गुणसम्पन्न समस्त राजाओंका निरन्तर सम्मान किया, उन्हींके ये त्रिभुवनविख्यात ज्येष्ठ पुत्र श्रीराम आज वानरराज सुग्रीवकी शरणमें आये हैं। श्रीराम शोकसे अभिभूत और आर्त होकर शरणमें आये हैं। यूथपतियोंसहित सुग्रीवको इनपर कृपा करनी चाहिये।

मेरे स्वामी ! हनुमानजी साष्टाङ्ग पड़े पृथ्वीपर और श्रीरामके चरणोंपर मस्तक रखकर रुदन करने लगे- मैं अज्ञानी आपको न पहिचान सकूँ, यह स्वाभाविक है; किन्तु शरणागत-वत्सल ! आप अनजानके समान क्यों पूछ रहे हैं ?

एक तो मैं यों ही मन्द हूँ, दूसरे मोहके वशमें हूँ, तीसरे हृदयका कुटिल और अज्ञान हूँ, फिर हे दीनबन्धु भगवान्। प्रभु आप ने भी मुझे भूला दिया। हे नाथ ! यद्यपि मुझमें बहुत-से अवगुण हैं, तथापि सेवक स्वामीकी विस्मृतिमें न पड़े आप उसे न भूल जायँ हे नाथ। जीव आपकी मायासे मोहित है। वह आपहीकी कृपासे निस्तार पा सकता है।

उसपर हे रघुवीर ! मैं आपकी दुहाई शपथ करके कहता हूँ कि मैं भजन-साधन कुछ नहीं जानता। सेवक स्वामीके और पुत्र माताके

भरोसे निश्चिन्त रहता है। प्रभुको सेवकका पालन-पोषण करते ही बनता है करना ही पड़ता है।

ऐसा कहकर हनुमानजी अकुलाकर प्रभुके चरणोंपर गिर पड़े, उन्होंने अपना असली शरीर प्रकट कर दिया। उनके हृदयमें प्रेम छा गया। तब श्रीरघुनाथने उन्हें उठाकर हृदयसे लगा लिया और अपने नेत्रोंके जलसे सींचकर शीतल किया।

श्रीहनुमान अयोध्या रहे थे तब श्रीराम बालक थे। राजकुमार के वेशमें रहते थे। इस तापस-वेशमें यहाँ उनके दर्शन होनेकी सम्भावना नहीं थी। आप ब्रह्मचारी। श्रीरामने कहा।

ब्रह्मचारी नहीं स्वामी ! आपका दास पवनपुत्र हनुमान। एक क्षणमें ब्रह्मचारी-वेश लुप्त हो गया। श्रीहनुमानजी अपने वेशमें प्रकट हुए। श्रीरामने उठाकर हृदयसे लगाया। लक्ष्मणको हनुमानने प्रणाम किया तो उन्होंने भी अममाल दी। पवननन्दन ! आप यहाँ ? श्रीरामने पूछा। प्रभु ! आपके आदेशसे ही मैं अयोध्यासे चला आया था। हनुमानजीने बतलाया- पिताने किष्किन्धा भेजा तो वानरेन्द्र बालिके अनुज सुग्रीवने मुझे अपनी सेवामें स्वीकार कर लिया। मैं उनके ही साथ रहता हूँ। वे आपके सेवक हैं। बड़े भाईने उन्हें निर्वासित कर दिया है, अत: इस सम्मुखके पर्वत-शिखरपर ही अपने चार मन्त्रियोंके साथ रहते हैं। वे आपका सान्निध्य पाकर प्रसन्न होंगे।

केशरी-कुमार। हम तो स्वयं सुग्रीवसे मिलनेको समुत्सुक हैं। श्रीरामने कहा- कबन्धने हमें उनसे मिलनेकी सम्मति दी है।

कबन्धने ? हनुमानजी चौंके नहीं। वे अपने इन आराध्यको जानते हैं। ये असम्भवको सहज सम्भव करनेवाले अवश्य कबन्धका उद्धार कर आये होंगे। वह अपने राक्षस-शरीरसे परित्राण पाकर गन्धर्वलोक चला गया। लक्ष्मणने बतला दिया।

प्रभु ! आपका यह दास सुग्रीवका इस समय सचिव है। हनुमानने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाया- सुग्रीव आपसे मैत्रीकी कामना करते हैं। हे नाथ ! उससे मित्रता कीजिये और उसे दीन जानकर निर्भय कर दीजिये। वह सीताजीकी खोज करावेगा और जहाँ-तहाँ करोड़ों वानरोंको भेजेगा।

नेत्रोंसे आँसू बहाकर करुणाजनक स्वरमें ऐसी बातें कहते हुए सुमित्राकुमार लक्ष्मणसे सुक्ता हनुमानने इस प्रकार कहा- राजकुमारों। वानरराज सुग्रीवको आप जैसे बुद्धिमान, क्रोधविजयी और जितेन्द्रिय पुरुषोंसे मिलनेकी आवश्यकता थी। सौभाग्यकी बात है कि आपने स्वयं ही दर्शन दे दिया। वे भी राज्यसे भ्रष्ट हैं। बालिके साथ उनकी शत्रुता हो गयी है। उनकी स्त्रीका भी बालिने ही अपहरण कर लिया है तथा उस दुष्ट भाईने उन्हें घरसे निकाल दिया है, इसलिये वे अत्यत भयभीत होकर वनमें निवास करते हैं। सूर्यनन्दन ! सुग्रीव सीताका पता लगानेमें हमारे साथ स्वयं रहकर आप दोनोंकी पूर्ण सहायता करेंगे। जिस राक्षसने सीता का हरण किया है हम उसका दीपक ही बुझा देंगे। प्रभु की आज्ञा शिराधार्य कर सीता का पता लगाने में अपनी पूरी बल शक्ति लगा देंगे। स्वामीका दु:ख हरने को अपने सुखोंका बलिदान करेंगे। जो काम आप करने आये है उसमें अपना हाथ बटायेंगे। इस धरती को दुष्टोंसे हीनकर आपके इस प्रणपर प्राण लडायेंगे। ऐसा कहकर हनुमानजीने श्रीरघुनाथजीसे स्निग्ध मधुर वाणीमें कहा- अच्छा, अब हमलोग सुग्रीवके पास चलें।

लक्ष्मण ! तुम देख ही रहे हो ये कपीन्द्र सुग्रीवके सचिव विद्वान है। वेदज्ञके बिना ऐसी शुद्ध वाणी दूसरेके कण्ठसे प्रकट नहीं होती। श्रीरामने पुन: प्रशंसा की- ये मध्यम स्वरमें, बिना विस्तारके असन्दिग्ध स्थिर स्वरसे शुद्ध, स्पष्ट, संस्कारित भाषा बोलते हैं। इनके मुख, नेत्र, भ्रूपर में बोलते समय कहीं विकार नहीं आता। न शीघ्रता, न अटकना। ऐसी वाणी सुनकर कौन मुग्ध नहीं होगा। जिनके ऐसे योग्य सचिव है, वे सुग्रीव अवश्य मित्रता करने योग्य हैं।

हनुमान ! हम भी सुग्रीवसे मिलना चाहते हैं। उनकी मैत्री हमें भी अभीष्ट है। लक्ष्मणने कहा- हम उनके समीप चलेंगे।

उस समय धर्मात्मा लक्ष्मणने उपर्युक्त बात कहनेवाले हनुमानजीका यथोचित सम्मान किया और श्रीरामसे कहा- भैया रघुनन्दन। ये वानरश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमान अत्यन्त हर्षसे भरकर जैसी बात कह रहे हैं, उससे जान पड़ता है कि सुग्रीवको भी आपसे कुछ काम हैं। ऐसी दशामें आप अपना कार्य सिद्ध हुआ ही समझें।

इनके मुखकी कान्ति स्पष्टत: प्रसन्न दिखायी देती है और ये हर्षसे उत्फुल्ल होकर बातचीत करते हैं। अत: मेरा विश्वास है कि पवनपुत्र वीर हनुमानजी झूठ नहीं बोलेंगे। तदनन्तर परम बुद्धिमान् पवनपुत्र हनुमानजी उन दोनों रघुवंशी वीरोंको साथ ले सुग्रीवसे मिलानेके लिये चले। कपिवर हनुमानने भिक्षुरूपको त्यागकर वानररूप धारण कर लिया। वे उन दोनों वीरोंको पीठपर बिठाकर वहाँसे चल दिये। महान् यशस्वी तथा शुभ विचारवाले महापराक्रमी वे कपिवीर पवनकुमार कृतकृत्य-से होकर अत्यन्त हर्षमें भर गये और श्रीराम-लक्ष्मणके साथ गिरिवर ऋष्यमूकपर जा पहुँचे।

आप दोनों मेरे कन्धोंपर विराजमान होनेकी कृपा करें। हनुमान एक घुटना मोड़कर वीरासनसे सामने बैठ गये- नारायणका वाहन गरुड़ भी आज इस वानरके सौभाग्यकी स्पृहा करे। श्रीरामने सस्मित अनुजकी ओर देखा। स्वयं पवनकुमारके दाहिने स्कन्धपर बैठ गये तब अनुज भी वाम स्कन्धपर बैठे। जब दोनों भाइयोंके आगेके चरणोंको भुजाओंसे घेरकर हनुमान खड़े हुए, पर्वतपर खड़े, इसी ओर दृष्टि लगाये सुग्रीवको किसी संकेतकी आवश्यकता नहीं रह गयी।

हनुमान हल्ली- पम्पासरोंवर से थोड़ी दूर पर ही हनुमान हल्ली नामका गांव है। यहीं पर श्रीराम-लक्ष्मण का हनुमान से मिलन हुआ। यह स्थान हास्पेट के पास हम्पी नामक स्थान पर है। यहां पर अंजनी माता का मन्दिर है।

३) सुग्रीव से मैत्री- श्रीराम और लक्ष्मणको ऋष्यमूक पर्वतपर सुग्रीवके वासस्थानमें बिठाकर हनुमानजी वहाँसे मलयपर्वतपर गये जो ऋष्यमूकका ही एक शिखर है और वहाँ वानरराज सुग्रीव को उन दोनों रघुवंशी वीरोंका परिचय देते हुए इस प्रकार बोले- महाप्राज्ञ! जिनका पराक्रम अत्यन्त दृढ़ और अमोघ है, वे श्रीराम अपने भाई लक्ष्मणके साथ पधारे हैं।

इन श्रीरामका आविर्भाव इक्ष्वाकुकुलमें हुआ है। ये महाराज दशरथके पुत्र हैं और स्वधर्मपालनके लिये संसारमें विख्यात हैं। अपने पिताकी आज्ञाका पालन करनेके लिये इस वनमें इनका आगमन हुआ है। महाराज दशरथके पुत्र ये श्रीराम पिताद्वारा अपनी पत्नी कैकेयीके लिये दिये हुए वरका पालन करनेके निमित्त इस वनमें आये हैं। एक दिन रावणने आकर सूने आश्रमसे इनकी पत्नी सीताका अपहरण कर लिया। उन्हींकी खोजमें आपसे सहायता लेनेके लिये ये आपकी शरणमें आये हैं। ये दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण आपसे मित्रता करना चाहते हैं। आप चलकर इन्हें अपनावें और इनका यथोचित सत्कार करे।

हनुमानका यह वचन सुनकर वानरराज सुग्रीव स्वेच्छासे अत्यन्त दर्शनीय रूप धारण करके श्रीरघुनाथके पास आये और बड़े प्रेमसे बोले- प्रभो ! आप धर्मके विषयमें भलीभाँति सुशिक्षित, परम तपस्वी और सबपर दया करनेवाले हैं। पवनकुमार हनुमानने मुझसे आपके यथार्थ गुणोंका वर्णन किया है। भगवन् ! मैं वानर हूँ और आप नर। मेरे साथ जो आप मैत्री करना चाहते हैं, इसमें मेरा ही सत्कार है और मुझे ही उत्तम लाभ प्राप्त हो रहा है। यदि मेरी मैत्री आपको पसंद हो तो मेरा यह हाथ फैला हुआ है। आप इसे अपने हाथमें ले लें और परस्पर मैत्रीका अटूट सम्बन्ध बना रहे- इसके लिये स्थिर मर्यादा बाँध दें।

सुग्रीवका यह सुन्दर वचन सुनकर भगवान् श्रीरामका चित्त प्रसन्न हो गया। उन्होंने अपने हाथसे उनका हाथ पकड़कर दबाया और सौहार्द्रका आश्रय ले बड़े हर्षके साथ शोकपीड़ित सुग्रीवको छातीसे लगा लिया।

हनुमान ने दो लकड़ियोंको रगड़कर आग पैदा की। अग्निको प्रज्वलित करके उन्होंने अग्निदेवका सादर पूजन किया; फिर एकाग्रचित्त हो श्रीराम और सुग्रीवके बीचमें साक्षीके रूपमें उस अग्निको प्रसन्नतापूर्वक स्थापित कर दिया। इसके बाद सुग्रीव और श्रीरामने उस प्रज्वलित अग्निकी प्रदक्षिणा की और दोनों एक-दूसरेके मित्र बन गये। उस समय सुग्रीवने श्रीरामसे प्रसन्नतापूर्वक कहा- आप मेरे प्रिय मित्र हैं। आजसे हम दोनोंका दु:ख और सुख एक है। यह कहकर सुग्रीवने अधिक पत्ते और फूलोंवाली शाल वृक्षकी एक शाखा तोड़ी और उसे बिछाकर वे श्रीरामके साथ उसपर बैठे। तदनन्तर पवनपुत्र हनुमानने अत्यन्त प्रसन्न हो चन्दनवृक्षकी एक डाली, जिसमें बहुत-से फूल लगे हुए थे, तोड़कर लक्ष्मणको बैठनेके लिये दी।

आप मेरे सखा, सुहृद, मित्र हुए। सुग्रीवने गद्‌गद स्वरमें कहा- हमारे सुख-दु:ख स्वार्थ एक हो गये। आपका शत्रु मेरा शत्रु और आपका मित्र मेरा मित्र रहेगा। मैं अपने पिता भगवान भुवन-भास्करको भी साक्षी करता हूँ।

मित्र सुग्रीव ! भगवान सूर्य हम इक्ष्वाकुवंशियोंके कुलपुरुष हैं। श्रीराम मेघ-गम्भीर स्वरमें बोले- रामको कभी कोई बात दो बार नहीं कहनी पड़ती। तुम्हारी मैत्री रामको स्वीकार है।

मैत्री का इच्छुक वह सुग्रीव स्वयं कष्ट में था। उसकी स्थिति स्वयं राम के समान कष्टप्रद तो थी ही, कुछ अंशों में उनसे भी अधिक बीहड़ थी। राम ने अपनी इच्छा से निर्वासन स्वीकार किया था, किंतु सुग्रीव को बलात् किष्किंधा से निष्कासित कर दिया गया था। राम वन में स्वच्छंद जीवन व्यतीत कर रहे थे और सुग्रीव को अज्ञातवास करना पड़ रहा था। राम की पत्नी को रावण नामक संपूर्ण मानवता का शत्रु, दुष्ट राक्षस हरकर ले गया था और सुग्रीव की पत्नी का स्वयं उनके बड़े भाई ने अपहरण किया था। राम अपने शत्रु को खोजकर, उसे दण्डित कर प्रतिशोध लेने तथा सीता को लौटा लाने का साहस रखते थे; और सुग्रीव असहाय-सा, अपने शत्रु से मुख छिपाता फिर रहा था।

राम ने आगे बढ़कर सुग्रीव को गले लगा लिया, सुग्रीव। आज से हम-तुम बंधु हुए। तुम मुझे लक्ष्मण के समान प्रिय रहोगे। एक-दूसरे के सुख-दु:ख में हम सहभागी होंगे। तुम्हारा मित्र मेरा भी मित्र होगा और तुम्हारा शत्रु हमारा भी शत्रु होगा।

अब सुग्रीवने इधर-उधर देखकर एक नवपल्लव तथा पुष्पोंसे भरी शाखा तोड़कर श्रीरामके सम्मुख रखी- यह आसन स्वीकार करें। हम वानर ऐसा आसन अत्युत्तम तथा श्रद्धेयको देने योग्य मानते हैं। आप यह आसन स्वीकार करें। लक्ष्मणने वैसे ही दूसरी पल्लवपुष्पोंसे लदी शाखा तोड़कर सुग्रीवके लिए आसन प्रस्तुत किया। आप भी विराजें। हनुमानने चन्दन-तरुकी पल्लवोंसे परिपूर्ण शाखा तोड़कर लक्ष्मणको आसन दिया।

बन्धुके द्वारा मेरा सर्वस्वापहरण एवं निर्वासन भी सार्थक हुआ। श्रीरामके आसन-ग्रहण कर लेने पर स्वयं भी बैठते हुए सुग्रीव बोले- आप जैसे परम समर्थ को मैं उसके फलस्वरूप ही मित्रके रूपमें पा सका। आज मेरे सौभाग्यका सूर्य उदय हुआ। लक्ष्मण दोनोंसे कुछ पीछे उस चन्दन-शाखापर बैठ गये थे। उनके समीप हनुमान हाथ जोड़े खड़े थे।

सुग्रीवने कहा- श्रीराम ! मैं घरसे निकाल दिया गया हूँ और भयसे पीड़ित होकर यहाँ विचरता हूँ। मेरी पत्नी भी मुझसे छीन ली गयी। मैंने आतमित होकर वनमें इस दुर्गम पर्वतका आश्रय लिया है। रघुनन्दन ! मेरे बड़े भाई बालिने मुझे घरसे निकालकर मेरे साथ वैर बाँध लिया है। उसीके त्रास और भयसे उद्भान्तचित्त होकर मैं इस वनमें निवास करता हूँ। महाभाग ! बालिके भयसे पीड़ित हुए मुझ सेवकको आप अभय-दान दीजिये।

श्रीरामने हँसते हुए बोले- महाकपे ! मुझे मालूम है कि मित्र उपकाररूपी फल देनेवाला होता है। मैं तुम्हारी पत्नीका अपहरण करनेवाले बालिका वध कर दूँगा। मेरे तूणीरमें संगृहीत हुए ये सूर्यतुल्य तेजस्वी बाण अमोघ हैं- इनका वार खाली नहीं जाता। ये बड़े वेगशाली हैं। इनमें कंक पक्षीके परोंके पंख लगे हुए हैं, जिनसे ये आच्छादित हैं। इनके अग्रभाग बड़े तीखे हैं और गाँठें भी सीधी हैं। ये रोषमें भरे हुए सर्पोंके समान छूटते हैं और इन्द्र के वज्रकी भाँति भयंकर चोट करते हैं। उस दुराचारी बालिपर मेरे ये बाण अवश्य गिरेंगे।

अपने लिये परम हितकर श्रीरघुनाथका यह वचन सुनकर सुग्रीवको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे उत्तम वाणीमें बोले- वीर। पुरुषसिंह। मैं आपकी कृपासे अपनी प्यारी पत्नी तथा राज्यको प्राप्त कर सकूँ, ऐसा यत्न कीजिये। नरदेव ! मेरा बड़ा भाई वैरी हो गया है। आप उसकी ऐसी अवस्था कर दें जिससे वह फिर मुझे मार न सके।

श्रीराम अयोध्या के नरपति हैं, सुग्रीव वानरोंका अधिपति है। एक बनवासी है और दूसरा गिरिवासी है। कैसा है दोनों का एकसाथ संयोग। राघव की सीता का हरण हुआ और सुग्रीव की वधू बलात् बालिभवन में है। दोनों के एक दु:ख होने से परस्पर प्रीति हुई। दोस्ती उसी का नाम है जो इन तीनों से परे हो- स्वार्थ, लोभ और धन। इन तीनों दोषों का अलग रखकर ही दोस्ती करनी चाहिए। इन दोषों को छोड़कर दो सतवादी जब आपस में मिलते हैं उसीका नाम दोस्ती है। दोस्ती उसीका नाम है जो दोनों में कोई दोष न हो। तन तो दो हो पर प्राण एक। आपस में ईर्ष्या या रोष कोई न हो। जिस रास्ते पर लोक हँसाई हो न स्वयं उसपर चलें न अपने दोस्त को चलने दे। अपने ऊपर सुख-दु:ख ले लें, पर दोस्त का दिल दुखने न दे। बनी बनी में सभी बनते है मित्र सुख में ऐसे मित्र अनेक। लेकिन जो दु:खका साथी हो वहीं कोई लाखों में एक मिलता है। मित्रता ऐसा कोई रिश्ता नहीं है जब जी चाहा तब छोड दिया। यह कोई मिट्टी का खिलौना नहीं है जो खेल-खेल में तोड़ दिया। मुँह देखे सामने हा हा करना, यह सच्चे दोस्तों के लिये मुनासिब नहीं है। लेने-देने के व्यवहार पर सदा गौर करें यह कभी भी सच्चे दोस्तों के लिये वाजिब नहीं है। यदि आपको किसीसे मित्रता करनी है तो सबसे पहले मित्र का फर्ज अदा करो। वह जफा करे पर तुम सदा वफा करो। वह तुम्हारे साथ दगा करें पर तुम उसके लिये सदा दुआ करो। जो अपने मित्रके दु:ख से दु:खी नहीं होता उसके दु:ख में अपने आपको नहीं तपाता। ऐसे झूठे के देखने में भी पाप है। जो सच्चे मित्र जगत में है वह कब यह बात जानते हैं सब धर्मों से मित्र धर्म सबसे बड़ा है। सच्चा मित्र सर्वत्र दुष्ट आचरणों से बचाता है। स्वयं बादलों की तरह गरम होकर ठण्डा पानी बरसाता है। स्वयं का पर्वत के समान दु:ख, राई की भाँति समझते है। पर मित्र का राई के समान दु:ख पर्वत की तरह मानते है। यही सच्चे मित्रता का लक्षण है, यहीं सच्चे दिलदारी है। अब यह फर्ज कहाँ रहे, अब तो मुँह देखी दोस्ती यारी है। आज तो नाम के मित्र है जिनके तौर तरीके उल्टे है, विपरीत है, बाहर से कुछ और हैं भीतर से कुछ और। अब कैसी यारी अब तो आरी है, अय्यारी है, हुशियारी है, गमख्वारी का जिक्र है और मनमें खूँखारी ही खूँखारी है। जब मित्र ने मदद माँगी तो बोले हम कब तैयार नहीं, समय पर मुँह फेर के आगे बढ़ गये और बोले यह सिरदर्दी हमें स्वीकार नहीं। ऐसे लोग किसीका भोला-भाला धनवान युवक पुत्र पा जाते

है तो अपनी जेब भरने को चट उसको मित्र बनाते है। उसकी दौलत के सब दुश्मन बन जाते है, और दुलत उसको सिखलाते है। उसका सत्यानाश कराते है, ऐसी खुदगर्जी पर, ऐसी यारी पर लानत है। जो हाँजी-हाँजी करता है इन दिनों वही खुशकिस्मत है इस तरह के दोस्तोंसे हमेंशा बचना चाहिए। मूर्ख सेवक, कंजूस राजा, कुलटा स्त्री और कपटी मित्र- ये चारों शूलके समान पीड़ा देनेवाले हैं।

अच्छे स्वभाववाले मित्र अपने घरके सोने-चाँदी अथवा उत्तम आभूषणोंको अपने अच्छे मित्रोंके लिये अविभक्त ही मानते हैं- उन मित्रोंका अपने धनपर अपने ही समान अधिकार समझते हैं। अतएव मित्र धनी हो या दरिद्र, सुखी हो या दुखी अथवा निर्दोष हो या सदोष, वह मित्रके लिये सबसे बड़ा सहायक होता है। साधुपुरुष अपने मित्रका अत्यन्त उत्कृष्ट प्रेम देख आवश्यकता पड़नेपर उसके लिये धन, सुख और देशका भी परित्याग कर देते हैं।

राम और सुग्रीव पक्के और सच्चे गाढ़े मित्र बन गये। इसी हर्ष और आनन्द में दो-चार दिन बीत गये। एक रोज सुग्रीव ने कहा- आप सोच-विचार न करे सीता की सुधि अवश्य मिल जायेगी।

शत्रुदमन श्रीराम ! आपकी भार्या सीता पातालमें हो या आकाशमें, मैं उन्हें ढूँढ लाकर आपकी सेवामें समर्पित कर दूँगा।

रघुनन्दन ! आप मेरी इस बातको सत्य मानें। महाबाहो ! आपकी पत्नी जहर मिलाये हुए भोजनकी भाँति दूसरोंके लिये अग्राह्य है। इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता और असुर भी उन्हें पचा नहीं सकते। आप शोक त्याग दीजिये। मैं आपकी प्राणवल्लभाको अवश्य ला दूँगा।

एक दिन मैंने देखा, भयंकर कर्म करनेवाला कोई राक्षस किसी स्त्रीको लिये जा रहा है। आकाशसे किसी नारी की क्रन्दन ध्वनि सुनायी पड़ी। हम सब चौंककर ऊपर देखने लगे। दसमुख, बीसभुजा, कज्जल वर्ण राक्षसेश्वर रावण उस अबलाको बलात् रथमें पीछे बैठाये ले जा रहा था। वह विद्युल्लेखाके समान ज्योतिर्मयी जैसे अत्यन्त काले मेघके बन्धनमें पड़ गयी हो।

मैं अनुमानसे समझता हूँ, वे मिथिलेशकुमारी सीता ही रही होगी, इसमें संशय नही है; क्योंकि वे टूटे हुए स्वरमें हा राम ! हा राम ! हा लक्ष्मण ! पुकारती हुई रो रही थीं तथा रावणकी गोदमें नागराजकी वधू नागिन की भाँति छटपटाती हुई प्रकाशित हो रही थी।

चार मन्त्रियोंसहित पाँचवाँ मैं इस शैल-शिखरपर बैठा हुआ था। मुझे देखकर देवी सीताने अपनी चादर और कई सुन्दर आभूषण ऊपरसे गिराये। मेरी आँखों के सम्मुख ही वह चोर निकल के भाग गया। उसका रथ सीधा दक्षिण दिशा की ओर गया।

रघुनन्दन ! वे सब वस्तुएँ हमलोगोंने लेकर रख ली हैं। मैं अभी उन्हें लाता हूँ, आप उन्हें पहचान सकते हैं।

तब श्रीरामने यह प्रिय संवाद सुनानेवाले सुग्रीवसे कहा- सखे ! शीघ्र ले आओ, क्यों विलम्ब करते हो। उनके ऐसा कहनेपर सुग्रीव शीघ्र ही श्रीरामका प्रिय करनेकी इच्छासे पर्वतकी एक गहन गुफामें गये और चादर तथा वे आभूषण लेकर निकल आये। बाहर आकर वानरराजने लीजिये, यह देखिये ऐसा कहकर श्रीरामको वे सारे आभूषण दिखाये।

उन वस्त्र और सुन्दर आभूषणोंको लेकर श्रीराम कुहासेसे ढके हुए चन्द्रमाकी भाँति आँसुओंसे अवरुद्ध हो गये। सीताके स्नेहवश बहते हुए आँसुओंसे उनका मुख और वक्षःस्थल भीगने लगे। वे हा प्रिये ! ऐसा कहकर रोने लगे और धैर्य छोड़कर पृथ्वीपर गिर पड़े। उन उत्तम आभूषणोंको बारंबार हृदयसे लगाकर वे बिलमें बैठे हुए रोषमें भरे सर्पकी भाँति जोर-जोरसे साँस लेने लगे। उनके आँसुओंका वेग रुकता ही नहीं था। अपने पास खड़े हुए सुमित्राकुमार लक्ष्मणकी ओर देखकर श्रीराम दीनभावसे विलाप करते हुए बोले- लक्ष्मण ! देखो, राक्षसके द्वारा हरी जाती हुई विदेह-नन्दिनी सीताने यह चादर और ये गहने अपने शरीरसे उतारकर पृथ्वीपर डाल दिये थे।

लक्ष्मण बोले- यह शकुन अच्छा है शीघ्र ही अब वह दिन आयेगा यह कुण्डल वैदेही के कानों में होंगे। वैदेही का हरण करनेवाले अब तुम सावधान होकर सोना, उस सीता सतवन्ती की आहों को सुनकर आ रहे रण करनेवाले, नाचेंगे तेरे प्राणोंपर। ओ दक्षिण दिशा को जानेवाले अब दक्षिण में जाना बाणों पर। निशाचरके द्वारा अपहृत होती हुई सीताके द्वारा त्यागे गये ये आभूषण निश्चय ही घासवाली भूमिपर गिरे होंगे; क्योंकि इनका रूप ज्यों-का-त्यों दिखायी देता है- ये टूटे फूटे नहीं है।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर लक्ष्मण बोले- आर्य ! अब आपको ये वानर श्रेष्ठ सहायक प्राप्त हो गये हैं।

भैया ! मैं इन बाजूबंदोंको तो नहीं जानता और न इन कुण्डलोंको ही समझ पाता हूँ कि किसके हैं; परंतु प्रतिदिन भाभीके चरणोंमें प्रणाम करनेके कारण मैं इन दोनों नूपुरोंको अवश्य पहचानता हूँ। तब श्रीरघुनाथ सुग्रीवसे इस प्रकार बोले- सुग्रीव। तुमने तो देखा है, वह भयंकर रूपधारी राक्षस मेरी प्राणप्यारी सीताको किस दिशाकी ओर ले गया है, यह बताओ। मुझे महान संकट देनेवाला वह राक्षस कहाँ रहता है ? मैं केवल उसीके अपराधके कारण समस्त राक्षसोंका विनाश कर डालूँगा। उस राक्षसने मैथिलीका अपहरण करके मेरा रोष

बढ़ाकर निश्चय ही अपने जीवनका अन्त करनेके लिये मौतका दरवाजा खोल दिया है।

वानरराज ! जिस निशाचरने मुझे धोखेमें डालकर मेरा अपमान करके मेरी प्रियतमाका वनसे अपहरण किया है, वह मेरा घोर शत्रु है। तुम उसका पता बताओ। मैं अभी उसे यमराजके पास पहुँचाता हूँ।

श्रीरामने शोकसे पीड़ित होकर जब ऐसी बातें कहीं, तब वानरराज सुग्रीवकी आँखोंमें आँसू भर आये और वे हाथ जोड़कर अश्रुगद्गद कण्ठसे इस प्रकार बोले- प्रभो ! नीच कुलमें उत्पन्न हुए उस पापात्मा राक्षसका गुप्त निवासस्थान कहाँ है, उसमें कितनी शक्ति है, उसका पराक्रम कैसा है अथवा वह किस वंशका है- इन सब बातोंको मैं सर्वथा नहीं जानता।

परंतु आपके सामने सच्ची प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि मैं ऐसा यत्न करूँगा, जिससे मिथिलेशकुमारी सीता आपको मिल जायँ, इसलिये आप शोकका त्याग करें। मैं आपके संतोषके लिये सैनिकोंसहित रावणका वध करके अपना ऐसा पुरुषार्थ प्रकट करूँगा, जिससे आप शीघ्र ही प्रसन्न हो जायँगे। इस तरह मनमें व्याकुलता लाना व्यर्थ है। आपके हृदयमें स्वाभाविकरूपसे जो धैर्य है, उसका स्मरण कीजिये। इस तरह बुद्धि और विचारको हल्का बना देना- उसकी सहज गम्भीरताको खो देना आप-जैसे महापुरुषोंके लिये उचित नहीं है। मुझे भी पत्नीके विरहका महान कष्ट प्राप्त हुआ है, परंतु मैं इस तरह शोक नहीं करता और न धैर्यको ही छोड़ता हूँ।

यद्यपि मैं एक साधारण वानर हूँ तथापि अपनी पत्नी-के लिये निरन्तर शोक नहीं करता हूँ। फिर आप-जैसे महात्मा, सुशिक्षित और धैर्यवान् महापुरुष शोक न करें। आपको चाहिये कि धैर्य धारण करके इन गिरते हुए आँसुओंको रोकें। सात्विक पुरुषोंकी मर्यादा और धैर्यका परित्याग न करें। आत्मीयजनोंके वियोग आदिसे होनेवाले शोकमें, आर्थिक संकटमें अथवा प्राणान्तकारी भय उपस्थित होनेपर जो अपनी बुद्धिसे दु:ख-निवारणके उपायका विचार करते हुए धैर्य धारण करता है, वह कष्ट नहीं भोगता है।

जो मूढ़ मानव सदा घबराहटमें ही पड़ा रहता है, वह पानीमें भारसे दबी हुई नौकाके समान शोकमें विवश होकर डूब जाता है। मैं प्रेमपूर्वक अनुरोध करता हूँ कि आप प्रसन्न हों और पुरुषार्थका आश्रय लें शोकको अपने ऊपर प्रभाव डालनेका अवसर न दें। जो शोकका अनुसरण करते हैं, उन्हें सुख नहीं मिलता है और उनका तेज भी क्षीण हो जाता है; अत: आप शोक न करें। राजेन्द्र ! शोकसे आक्रान्त हुए मनुष्यके जीवनमें उसके प्राणोंकी रक्षामें भी संशय उपस्थित हो जाता है। इसलिये आप शोकको त्याग दें और केवल धैर्यका आश्रय लें। मैं मित्रताके नाते हितकी सलाह देता हूँ। आपको उपदेश नहीं दे रहा हूँ। आप मेरी मैत्रीका आदर करते हुए कदापि शोक न करें।

सुग्रीवने जब मधुर वाणीमें इस प्रकार सान्त्वना दी, जब श्रीरघुनाथने आँसुओंसे भीगे हुए अपने मुखको वस्त्रके छोरसे पोंछ लिया।

सुग्रीवके वचनसे शोकका परित्याग करके स्वस्थचित्त हो ककुत्स्थकुलभूषण भगवान श्रीरामने मित्रवर सुग्रीवको हृदयसे लगा लिया और इस प्रकार कहा- सुग्रीव ! एक स्नेही और हितैषी मित्रको जो कुछ करना चाहिये, वही तुमने किया है। तुम्हारा कार्य सर्वथा उचित और तुम्हारे योग्य है। सखे ! तुम्हारे आश्वासनसे मेरी सारी चिन्ता मिट गयी। अब मैं पूर्ण स्वस्थ हूँ। तुम्हारे जैसे-बन्धुका विशेषत: ऐसे संकटके समय मिलना कठिन होता है। परंतु तुम्हें मिथिलेशकुमारी सीता तथा रौद्ररूपधारी दुरात्मा राक्षस रावणका पता लगानेके लिये प्रयत्न करना चाहिये। साथ ही मुझे भी इस समय तुम्हारे लिये जो कुछ करना आवश्यक हो, उसे बिना किसी समोचके बताओ। जैसे वर्षाकालमें अच्छे खेतमें बोया हुआ बीज अवश्य फल देता है, उसी प्रकार तुम्हारा सारा मनोरथ सफल होगा।

वानरश्रेष्ठ ! मैंने जो अभिमानपूर्वक यह बालिके वध आदि करनेकी बात कही है, इसे तुम ठीक ही समझो।

मैंने पहले भी कभी झूठी बात नहीं कही है और भविष्यमें भी कभी असत्य नहीं बोलूँगा। इस समय जो कुछ कहा है, उसे पूर्ण करनेके लिये मैं प्रतिज्ञाबद्ध हूँ और तुम्हें विश्वास दिलानेके लिये सत्यकी ही शपथ लेता हूँ।

श्रीरघुनाथकी बात, विशेषत: उनकी प्रतिज्ञा सुनकर अपने वानर-मन्त्रियोंसहित सुग्रीवको बड़ी प्रसन्नता हुई। इस प्रकार एकान्तमें एक दूसरेके निकट बैठे हुए वे दोनों नर और वानर श्रीराम और सुग्रीव ने परस्पर सुख और दु:खकी बातें कहीं, जो एक दूसरेके लिये अनुरूप थीं। श्रीरामने सम्हालकर उन आभरणोंको पुन: उसी वस्त्र खण्डमें बाँधा और कृपणके धनके समान हृदयसे लगाया। सुग्रीवने कहा- ये आभरण जिनके हैं उनके ही श्रीअंगपर सुशोभित हो, इसके लिए सुग्रीव कोई प्रयत्न उठा नहीं रखेगा।

ऋषिमूक पर्वत- सुग्रीव तथा श्रीराम लक्ष्मण का मिलन यहीं पर हम्पी में ऋषिमूक पर्वत पर हुआ। सुग्रीव बालि के भय से यहीं रहता था। यहां पहाडी में एक कन्दरा है। जो सुग्रीव गुफा के नाम से जानी जाती है। यहीं पर सुग्रीव और श्रीराम की मैत्री हुई।

गन्ध मादन पहाड़ी- रावण का सीता हरण के समय सीताने ५ वानरों को इस पर्वत पर बैठे देख कर अपने वस्त्र में कुछ आभूषण

लपेटकर बांध कर फेंक दिये थे। गन्धमादन पर्वत की तलहटी तथा तुंगभद्रा नदी का किनारा वही स्थल है। सुग्रीव ने सीता के आभूषण दिखलाये। सुग्रीव ने आश्वासन दिया वे सीता का अन्वेषण खोज कर लायेंगे। श्रीराम मित्र सुग्रीव के वचन सुनकर प्रसन्न होते है।

४) बालि सुग्रीव वृत्तान्त- सुग्रीवने श्रीरामसे कहा- प्रभो। मेरे भाईने मुझे घरसे निकालकर मेरी स्त्रीको भी छीन लिया है। मैं उसीके भयसे अत्यन्त पीड़ित एवं दु:खी होकर इस पर्वतश्रेष्ठ ऋष्यमूकपर विचरता रहता हूँ।

मुझे बराबर उसका त्रास बना रहता है। मैं भयमें डूबा रहकर भ्रान्तचित्त हो इस वनमें भटकता फिरता हूँ। रघुनन्दन। मेरे भाई बालिने मुझे घरसे निकालनेके बाद भी मेरे साथ वैर बाँध रक्खा है।

प्रभो। आप समस्त लोकोंको अभय देनेवाले हैं। मैं बालिके भयसे दुखी और अनाथ हूँ, अत: आपको मुझपर भी कृपा करनी चाहिये।

सुग्रीवके ऐसा कहनेपर तेजस्वी धर्मज्ञ एवं धर्मवत्सल भगवान श्रीरामने उन्हें हँसते हुए-से इस प्रकार उत्तर दिया- सखे। उपकार ही मित्रताका फल है और अपकार शत्रुताका लक्षण है; अत: मैं आज ही तुम्हारी स्त्रीका अपहरण करनेवाले उस बालिका वध करूँगा।

महाभाग ! मेरे इन बाणोंका तेज प्रचण्ड है। सुवर्णभूषित ये शर कार्तिकेयकी उत्पत्तिके स्थानभूत शरोंके वनमें उत्पन्न हुए हैं इसलिये अभेद्य है। ये कंकपक्षीके परोंसे युक्त हैं और इन्द्रके वज्रकी भाँति अमोघ हैं। इनकी गाँठें सुन्दर और अग्रभाग तीखे हैं। ये रोषमें भरे भुजङ्गोंकी भाँति भयंकर हैं। इन बाणोंसे तुम अपने बालि नामक शत्रुको, जो भाई होकर भी तुम्हारी बुराई कर रहा है, विदीर्ण हुए पर्वतकी भाँति मरकर पृथ्वीपर पड़ा देखोगे।

सुग्रीव बोले- श्रीराम ! मैं शोकसे पीड़ित हूँ और आप शोकाकुल प्राणियोंकी परमगति हैं। मित्र समझकर मैं आपसे अपना दु:ख निवेदन करता हूँ। मैंने आपके हाथमें हाथ देकर अग्निदेवके सामने आपको अपना मित्र बनाया है। इसलिये आप मुझे अपने प्राणोंसे भी बढ़कर प्रिय हैं। आप मेरे मित्र हैं, इसलिये आपपर पूर्ण विश्वास करके मैं अपने भीतरका दु:ख, जो सदा मेरे मनको व्याकुल किये रहता है, आपको बता रहा हूँ। इतनी बात कहते-कहते सुग्रीवके नेत्रोंमें आँसू भर आये। उनकी वाणी अश्रुगद्गद हो गयी।

सुग्रीव श्रीरघुनाथसे बोले- श्रीराम। पहलेकी बात है, बलिष्ठ बालिने कटुवचन सुनाकर बलपूर्वक मेरा तिरस्कार किया और अपने राज्य के युवराजपद से नीचे उतार दिया। इतना ही नहीं, मेरी स्त्रीको भी, जो मुझे प्राणोंसे भी अधिक प्रिय है, उसने छीन लिया और जितने सुहृद् थे, उन सबको कैदमें डाल दिया। रघुनन्दन ! इसके बाद भी वह दुरात्मा बालि मेरे विनाशके लिये यत्न करता रहता है। उसके भेजे हुए बहुत-से वानरोंका मैं वध कर चुका हूँ। रघुनाथ ! आपको भी देखकर मेरे मनमें ऐसा ही संदेह हुआ था, इसीलिये डर जानेके कारण मैं पहले आपके पास न आ सका; क्योंकि भयका अवसर आनेपर प्राय: सभी डर जाते हैं। केवल ये हनुमान् आदि वानर ही मेरे सहायक हैं; अतएव महान् संकटमें पड़कर भी मैं अबतक प्राण धारण करता हूँ। इन लोगोंका मुझपर स्नेह है, अत: ये सभी वानर सब ओरसे सदा मेरी रक्षा करते रहते हैं। जहाँ जाना होता है वहाँ साथ-साथ जाते हैं और जब कहीं मैं ठहर जाता हूँ वहाँ ये नित्य मेरे साथ रहते हैं।

रघुनन्दन ! यह मैंने संक्षेपसे अपनी हालत बतलायी है। बालि मेरा ज्येष्ठ भाई है, फिर भी इस समय मेरा शत्रु हो गया है। उसका पराक्रम सर्वत्र विख्यात है। यद्यपि भाईका नाश भी दु:खका ही कारण है, तथापि इस समय जो मेरा दु:ख है, वह उसका नाश होनेपर ही मिट सकता है। मेरा सुख और जीवन उसके विनाशपर ही निर्भर है।

श्रीराम ! यही मेरे शोकके नाशका उपाय है। मैंने शोकसे पीड़ित होनेके कारण आपसे यह बात निवेदन की है; क्योंकि मित्र दु:खमें हो या सुखमें, वह अपने मित्रकी सदा ही सहायता करता है।

यह सुनकर श्रीरामने सुग्रीवसे कहा- तुम दोनों भाइयोंमें बैर पड़नेका क्या कारण है, यह मैं ठीक-ठीक जानना चाहता हूँ।

वानरराज ! तुम लोगोंकी शत्रुताका कारण जानकर तुम दोनोंकी प्रबलता और निर्बलताका निश्चय करके फिर तत्काल ही तुम्हें सुखी बनानेवाला उपाय करूँगा। जैसे वर्षाकालमें नदी आदिका वेग बहुत बढ़ जाता है, उसी प्रकार तुम्हारे अपमानित होनेकी बात सुनकर मेरा प्रबल रोष बढ़ता जा रहा है और मेरे हृदयको कम्पित किये देता है।

महात्मा श्रीरामके ऐसा कहनेपर सुग्रीवको अपने चारों वानरोंके साथ अपार हर्ष हुआ। तदनन्तर सुग्रीवके मुखपर प्रसन्नता छा गयी और उन्होंने श्रीरामको बालिके साथ वैर होनेका यथार्थ कारण बताना आरम्भ किया।

आदिपुरुष भगवान नारायणकी नाभिकमलसे उत्पन्न भगवान ब्रह्माने एक वानर उपदेवता अपने समल्पसे उत्पन्न किया। रीछ और

वानर दोनों उपदेव-वर्गका अधिपति बनाया उन्हें। उनका नाम रखा ऋक्षराज। सुग्रीवने प्रारम्भसे अपना परिचय प्रारम्भ किया- उन स्रष्टाके समल्प-जन्मा ऋक्षरजाका शरीर पीछे नारी-रूपमें परिवर्तित हो गया। वह सर्वमनोहरा नारी- उसे देखकर देवराज इन्द्र और भगवान भास्कर इतने मुग्ध हुए कि दोनोंका तेजस्खलन हो गया। उस नारीके बालोंपर देवराज इन्द्रका शुक्र पड़नेसे बालिकी उत्पत्ति हुई और ग्रीवापर सूर्य-शुक्र पड़नेसे मैं सुग्रीव उत्पन्न हुआ।

हम दोनोंको जन्म देकर ऋक्षरजा पुन:पुरुष हो गये। अपने ज्येष्ठ पुत्र बालिको रीछ-बानरोंका अधिपति बनाकर वे ब्रह्मलोक चले गये। सुग्रीवने कहा- हम दोनों भाइयोंमें अत्यन्त प्रीति थी। बालिने नित्य कन्या परम सुन्दरी ताराका पाणिग्रहण किया। मेरा परिणय बानरराज सुषेणकी पुत्री रुमाके साथ हुआ।

बालि पिता-पितामहोंके विशाल राज्यका शासन करने लगे और मैं हर समय विनीतभावसे दासकी भाँति उनकी सेवामें रहने लगा।

उन दिनों मायावी नामक एक तेजस्वी दानव रहता था, जो मय दानव (हेमा अप्सरा) का पुत्र मन्दोदरी का भाई दशग्रीव रावण का साला, और दुन्दुभिका बड़ा भाई था। उसके साथ बालिका स्त्रीके कारण बहुत बड़ा वैर हो गया था।

मायावी लंका से आकर किष्किन्धा में तस्करी व्यापार करता था। लंका से विलासिताकी भोग सामग्री विदेशी मदिरा व अपहृत सुन्दर-सुन्दर यक्ष कन्याओंका अपहरण कर वेश्यालय चलाने का काम किष्किन्धा में करता था। बालिसे यही कहता था कि वह थके हुए मन को विश्राम देता है। बालिने कहा मायावी यदि तुम मेरे थके हुए मन को विश्राम दे पाओगे तो मैं समझूँगा तुम वैद्य का काम कर रहे हो अन्यथा तुम अपराधी हो। मैं अपराधी को कठोर दण्ड देता हूँ। सम्राट एक बार सेवा का अवसर दें। मायावी मुस्कराया, यदि सम्राट के मन को विश्राम मिले, सम्राट स्वस्थ हों, तो सेवक को किष्किंधा में अपना व्यापार फैलाने की खुली छूट दें। बालि ने उसे भरपूर दृष्टि से देखा और कहा, स्वीकार है।

सुग्रीवने इसका राजसभा में विरोध किया और कहा- वानर जाति अत्यंत निर्धन है। हम प्रयत्न कर रहे हैं कि हम अपने परिश्रम से अपने साधनों का विकास करें, ताकि हमारी स्थिति कुछ अच्छी हो सके। ऐसे में यदि यहाँ कुछ ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जाए, जिससे परिश्रम का मूल्य कम हो जाए और विलास का बाहुल्य हो जाए, तो हमारी जाति किसी भी प्रकार आगे नहीं बढ़ पाएगी।

सम्राट ! मधुपान का प्रचलन स्थानीय रूप से हमारी जाति में भी है; किंतु यह विशेष अवसरों पर स्वयं तैयार कर, उत्सव मनाने की परिपाटी तक ही सीमित है। यदि लंका से मँगाकर अथवा लंका की पद्धति पर तैयार करवा, सुगंधित मदिरा की धारा अबाध गति से हाटों में बहेगी तो समाज के समर्थ सदस्यों को उसकी चाट लग जाएगी। वे उसे पाने के लिए अधिक धन बटोरना चाहेंगे। अधिक धन के लिए वे अपनी अधीनस्थ प्रजा पर अत्याचार करेंगे, उसका शोषण करेंगे। कम परिश्रम से अधिक धन कमाना चाहेंगे। सुग्रीव क्षण-भर रुककर पुन: बोला, विलास मदिरा तक ही नहीं थम जाता। आप जानते हैं कि मायावी मदिरा के साथ वेश्या-व्यापार भी करवाता है। ये विलासी लोग इस जाति की कन्याओं को वेश्या बना देने के लिए अपने पास धन संचित करेंगे और दूसरों की आर्थिक स्थिति इतनी हीन कर देंगे कि एक मुट्ठी अन्न के लिए कुलांगनाओं को अपना शरीर बेचना पड़े। क्या आप चाहेंगे कि सच्चरित्र श्रमिकों की यह जाति, विलासी लंपटों तथा गणिकाओं की जाति में बदल जाए। सुग्रीव के लिए अपना आवेश रोकना कठिन हो रहा था, और जहाँ तक राज्य की आय की बात है- मैं मानता हूँ कि इस व्यवसाय से भी राज्य की आय बढ़ती है। किंतु यदि आप आज यह राजाज्ञा प्रचारित कर दें कि दस्यु-वृत्ति भी वैध व्यवसाय है, पर अपहृत धन का एक चौथाई राज्य को कर के रूप में देना होगा, तो आप देखेंगे कि आपके राज्य की आय अल्पकाल में ही सौ-गुनी हो जाएगी। किंतु ऐसी आय का हम क्या करेंगे ? राज्य को धन की आवश्यकता होती है प्रजा के कल्याण के लिए। प्रजा के अकल्याण से, उसके कल्याण के लिए धन एकत्रित करने का तर्क कितना आत्म-विरोधी है। धन की शक्ति के साथ, समाज में शोषण की मात्रा भी बढ़ेगी। यदि धनी और विलासी यूथपतियों तथा सामंतों के द्वारा प्रजा का शोषण इतना बढ़ जाए कि दिन-भर के श्रम से थका-हारा श्रमिक अपने अल्प पारिश्रमिक से जब अपने परिवार का भोजन नहीं जुटा पाएगा, तो वह अपने पारिश्रमिक से मदिरा के दो चषक पीकर ही अपनी चिंताओं को भूल जाना चाहेगा। उस मदिरा से प्राप्त कर धन नहीं, प्रजा का रक्त है। क्या सम्राट अपने राज्य के लिए ऐसा धन चाहते हैं ?

सुग्रीव की चिंता का कोई अंत नहीं था। इस जाति का क्या होगा और इस राज्य का ? जब राजा आँखों देखे तथ्यों को अनदेखा करने पर उतारू हो जाए, तो राज्य को रसातल में जाने से कौन रोक सकता है। एक तो बालि स्वयं अहंकारी है; और अब उन्हें एक-से-

बढ़कर-एक संगी-साथी मिलते जा रहे हैं। हनुमान ने सूचना दी थी कि मायावी ने अपने वचन के अनुसार बालि के थके मन को विश्राम दिया था। बालि के अपने मधुपान की ही मात्रा कम नहीं थी, अब मायावी ने उसे जो सुगंधित विदेशी मदिरा पिलाई थी, वह बालि के लिए अभूतपूर्व थी। वैसी मदिरा बालि ने पहले कभी नहीं चखी थी इतना ही नहीं, मायावी ने मदमस्त बालि के अंक के लिए एक अनुपम सुंदरी अलका यक्षिणी प्रस्तुत कर दी थी। बालि की आँखें चौंधिया गई। ऐसी सुंदरी की तो उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी। वह यक्ष-कन्या बालि को वानर जातीय स्त्रियों से बहुत भिन्न लगी थी- उसका रंग-रूप, उसके वस्त्र, उसके हाव-भाव, उसकी भंगिमाएँ। और बालि ने स्वीकार किया कि मायावी से बढ़कर उसका कोई उपकारक नहीं है। वह मायावी को अपना परम मित्र मानता है। मायावी किष्किंधा में जो चाहे कर सकता है। बालि उसे कभी नहीं रोकेगा।

सुग्रीव की सारी कल्पनाएँ दुष्कल्पनाओं में बदलती जा रही थीं बालि के आस-पास, एक-एक कर, मायावी जैसे लोग ही एकत्र होते जा रहे थे। बालि को समझाना कठिन था कि वे उनके मित्र नहीं, शत्रु हैं रावण कब से इस प्रयत्न में है कि वानरों को मादक पदार्थ उपलब्ध करा सके। उनके लिए विलास के साधन जुटा सके। रावण के रथों के चक्रों के आगे-आगे पहले मादक द्रव्य चलते हैं, उसके पश्चात् दूत, फिर गणिकाएँ, अपहरण, परस्पर कलह और अंत में रावण की सेनाएँ मायावी के माध्यम से बालि, रावण को भी अपना मित्र मानने लगेंगे और फिर रावण से विभिन्न प्रकार की विलास सामग्रियों की अपेक्षा करेंगे।

बालि किस प्रकार क्रमश: दुश्चरित्रता की ओर बढ़ते जा रहे हैं- यह उन्हें कौन समझाएगा।

बालि बहुत धार्मिक है; किन्तु अत्यन्त असहिष्णु और अहमारी है। उसके बलकी भी सीमा नहीं है। वह प्रतिदिन चारों दिशाओंके समुद्रोंपर जाकर सन्ध्या तर्पण करता है। सुग्रीव सुना रहे थे- अपनी दिग्विजय यात्रामें लमाका राजा रावण किष्किन्धा आया तो बालि पूर्व समुद्र तटपर सन्ध्या करने गया था। रावणने बालिको वहाँ जाकर युद्धके लिए ललकारा। बालिको बुरा लगा। उसने रावणको थोड़ी देर प्रतीक्षा करनेको कहा; किंतु रावण गर्जना ही करता है, यह देखकर बालिने उसे पकड़कर क्षुद्र पशुके समान अपने कक्षमें दबा लिया। दशग्रीवको ऐसे दबाये ही वह चारों समुद्रोंपर सन्ध्या कर आया। भूल ही गया कि कोई कक्षमें दबा है। छ: महीने पीछे स्मरण आया कक्ष-कण्डू होनेपर, तब उसे अपने पुत्रके पलनेमें बाँध दिया। बालि पत्नी तारा उस दसमौलिके मस्तकोंपर दीपक जलाया करती थी। महर्षि पुलस्त्य आकर छुड़ा न देते तो पता नहीं कब तक बालि उसे बाँधे रहता।

मुक्त होकर दशाग्रीवने बालिसे मैत्रीकी याचनाकी। बालिने इसे स्वीकार कर लिया। स्पष्ट हो गया कि रावणके विरुद्ध बालिसे सहायताकी आशा नहीं की जा सकती। सुग्रीवने कहा- यद्यपि इस मित्रताका अभी तक इतना ही अर्थ रहा है कि बालि लमापर आक्रमण नहीं करेगा और दशग्रीव अथवा उसका कोई अनुचर किष्किन्धाके बानर राज्यमें उत्पात करने नहीं आवेगा; किंतु बालि अहमारी है। वह कब क्या करेगा, कहा नहीं जा सकता। समटमें पड़नेपर दशग्रीव यदि सहायताकी पुकार करे, बालि अपनी मैत्रीके वचनको विस्मृत नहीं कर सकेगा। जब तक रावण बालि का ही कोई अपराध न करे, बालि रावणके विरुद्ध कुछ नहीं करेगा।

वे प्रात: सागर-तट पर उपासना करते हैं। कभी-कभार उपवास भी रख लेते हैं और थोड़ा बहुत दान भी करते हैं। वे स्वयं को पूर्णत: धार्मिक व्यक्ति मानते हैं। धार्मिक व्यक्ति अपने आपको दुश्चरित्र कैसे मान लेगा। अपने दैनिक कर्म-काण्ड के पश्चात् जैसे उन्हें संसार के प्रत्येक दुष्कर्म की अनुमति मिल जाती है।

तारा भाभी की स्थिति भी इन दिनों विचित्र है। वे देख रही हैं कि बालि किस मार्ग पर बढ़ते जा रहे हैं; किंतु उनके लिए जाति, समाज और राज्य संबंधी बालि की नीतियों को ठीक करने के स्थान पर अधिक महत्त्वपूर्ण, अपने जीवन से दूर होते पति को वापस अपने जीवन में लौटा लाना है। बालि की नीतियों का विरोध कर, उन्हें उपदेश देकर अथवा फटकार कर, वे उन्हें वापस नहीं लौटा सकतीं। बालि ने इन दिनों उनके प्रति जो वितृष्णा दिखाई है, उससे तारा भाभी को सबसे अधिक चिंता अपनी स्थिति के प्रति हो गई है कहीं ऐसा न हो कि बालि किसी अन्य रानी को पट्टमहिषी घोषित कर दें। अथवा, कोई नया विवाह कर, नया प्रासाद बनवा- वहीं जाकर रहने लगें पति को प्रसन्न करने के तारा के सारे प्रयत्न निष्फल भी हैं और करुणाजनक भी।

अंगद का विरोध भीतर-ही-भीतर घुट रहा है। पिता के सम्मुख वह कुछ बोल नहीं सकता, किंतु किष्किंधा में प्रतिदिन घटती घटनाएँ देख-देखकर, उसका विरोध बढ़ता जाता है। जब घुटन बहुत बढ़ जाती है, तो सुग्रीव के पास आकर मन हलका कर जाता है। किंतु सुग्रीव भी तो कुछ नहीं कर सकते।

* * * (२०) * * *

सुग्रीव ने जब-जब किष्किंधापुरी को देखा था, उनकी पीड़ा असह्य हो उठी थी- दो पर्वतों के बीच बसी किष्किंधा नगरी कितनी सुंदर घाटी थी। नगर के मध्य में राजप्रासाद था। आस-पास यूथपतियों, सामंतों, सेनापतियों और कुछ धनाढ्य व्यापारियों के आवास थे। उनके मध्य बहुत सुंदर मार्ग थे। स्थान-स्थान पर उपवन और उद्यान थे। जलाशय और नहरें थीं और जहाँ ये प्रासाद समाप्त होते थे, वहीं से निर्धन श्रमिकों की घास-फूस और मिट्टी की बनी झुग्गियाँ आरंभ हो जाती थी। न वहाँ पथ थे, न उद्यान, न जलाशय, न नहरें। कूडे के ढेर जैसे कच्चे घरों में लोग रहते थे। किसी ने पर्वत की खोह का सहारा लेकर रहने के लिए ओट कर ली थी और किसी ने वृक्ष के तने को अपनी दीवार मान लिया था। न पीने के पानी का कोई प्रबंध था, न शौच-स्थान के लिए उचित व्यवस्था। किसी जोहड़ या गढ़े में संचित बरसाती पानी से वे अपना काम चलाते थे- उसी में नहाते थे, उसी को पीते थे, उसी में अपना खाद्य पदार्थ उबालते थे- यूथपतियों के पशुओं के लिए भी उससे कहीं अधिक साफ-सुथरे और व्यवस्थित आवासों का प्रबंध था। ये श्रमिक तो अपने रहन-सहन से सचमुच वानर थे- मानवों की जाति नहीं, पशु वानर, शाख-मृग।

बालि और उसके मंत्रियों का ध्यान मधुशालाओं और मदिरालयों के लिए स्थान का प्रबंध करने की ओर तो गया था, किंतु इन मनुष्यों के लिए भी उनका कोई कर्तव्य है- यह उन्होंने कभी नहीं सोचा।

क्या करें सुग्रीव ? बालि कुछ ऐसी संगति में पड़ गए हैं कि ठीक स्थिति समझाने वाले को वे अपना शत्रु समझने लगे हैं।

सुग्रीव का मन इतना भारी था कि कहीं जाने की इच्छा ही नहीं हुई। राजसभा का समय भी निकल गया तो रुमा ने टोका, क्या हुआ है आपको ? इस प्रकार मुँह-सिर लपेटे क्यों पड़े हैं ? क्या आपको भी जेठजी वाला रोग लग गया है ?

सुग्रीव चौंके, यह जेठजी वाला रोग कौन-सा है ? जैसे आपको मालूम ही नहीं। रुमा मुसकराई, राजप्रासाद में ही नहीं, सामंतों के घरों में भी चर्चा है कि जेठजी का रोग आजकल कुछ अधिक ही बढ़ते जा रहा है। सुग्रीव उठकर बैठ गए, पर यह रोग है कौन-सा-कुछ मालूम भी तो हो ? रूमा ने उन्हें अपांग से देखा, क्या सचमुच नहीं जानते ? नहीं।

चर्चा है कि जेठजी को नव-कन्या रोग हुआ है; अर्थात् कुछ दिनों के पश्चात् नई कन्या नहीं मिलती तो सिर-मुँह लपेटे पड़े रहते हैं। किसी से बात नहीं करते, निकट आनेवाले को काटने को दौड़ते हैं। तुमसे किसने कहा ? सुग्रीव अत्यंत गंभीर थे।

किसी एक ने नहीं कहा, प्रत्येक जिव्हा पर चर्चा है। रुमा फिर मुसकराई, आप राजसभा में क्या करने जाते हैं, जब आपको इतनी भी सूचना नहीं। इतनी सूचनाएँ तो मुझे घर बैठे-बैठे ही मिल जाती हैं।

सुग्रीव के लिए शैय्या पर पड़े रहना कठिन हो गया। वे उठकर खड़े हो गए, और क्या-क्या सुना है तुमने ?

और इस बार रुमा का स्वर गंभीर था, और यह कि इन दिनों जेठजी का निकटतम तथा प्रियतम मित्र मायावी नाम का राक्षस है। कुछ दिनों में वह किष्किंधापुरी का बहुत बड़ा व्यक्ति बन जाएगा। यदि महामंत्री न भी बनाया गया, तो भी मंत्री अथवा महासामंत तो बन जाएगा। सुग्रीव की अवस्था वैसी ही हो गई, जैसे राजसभा में बालि के मुख से अपने लिए आरोप सुनकर हो गई थी निश्चित रूप से ये सूचनाएँ राजप्रासाद के परिचारक-परिचारिकाओं द्वारा ही प्रचारित हुई होंगी संभव है, भावी घटनाओं के विषय में ये किसी की निराधार कल्पना ही हों- यह भी संभव है कि भविष्य का यही रूप हो।

सुग्रीव ने पूछा- भाभी से भेंट हुई ? रुमा ने उदास स्वर में कहा, दीदी इन दिनों बहुत अव्यवस्थित हैं। वे इन चर्चाओं के विषय में कोई बात नहीं करतीं, किंतु लगता है कि उनसे भी कुछ छिपा नहीं है। सुग्रीव को लगा, अब घर में बैठना संभव नहीं था। उन्हें बाहर जाने की तैयारी करते देख, रुमा पुन: मुसकराई, भूल हो गई, जो तुमसे यह सब कह दिया। इसमें भूल की क्या बात है ? सुग्रीव समझ नहीं पा रहे थे। कुछ न कहती, तो घर पर तो रहते। मेरे निकट तो होते। सुग्रीव उदास हो गए, यदि यही गति रही तो स्थायी रूप से तुम्हारे निकट, घर पर ही रहूँगा। वानरों के पास यातायात का अन्य कोई साधन ही नहीं था- सम्राट के पास भी नहीं। या तो शिविका में जाओ, या पैदल; जबकि सुग्रीव अच्छी प्रकार जानते थे कि राक्षसों ने अपने लिए अश्वों के साथ-साथ रथों का भी विकास किया है। उन्होंने जल-मार्गों में भी अपनी परिवहन-व्यवस्था इतनी विकसित कर रखी है कि लंका से समुद्र पार कर जंबुद्वीप में आना-जाना उनके लिए उतना ही सरल है, जितना वानरों के लिए पैदल चलना या शिविका में आना-जाना। किंतु अभी सामान्य वानर इतना भी नहीं जानता कि परिवहन के अन्य साधन भी हो सकते हैं। कितनी बार सम्राट से चर्चा भी हुई, किंतु वे हर बार यह कहकर टाल जाते हैं कि वानरों का कार्य इन साधनों के बिना भी सुचारू रूप से चल रहा है अब उन्होंने मायावी से मित्रता की है; किंतु इस मित्रता के फलस्वरूप या तो

वे मदिरा चाहेंगे, अथवा अपने नव-कन्या-रोग की औषधि।

कितनी पिछड़ी हुई है वानर-जाति। पशु-धरातल से थोड़ी-सी ही उठ पाई है। भयंकर परिश्रम कर वानर खेती करते हैं, पशु-पालन करते हैं अथवा वास्तुकला का थोड़ा परिष्कृत ज्ञान उन्हें है। कुछ अच्छे प्रासाद बन गए हैं; किंतु नल तथा नील जैसे शिल्पी बंधुओं के होते हुए भी, बालि ने किसी नदी पर कभी सेतु बाँधने की बात नहीं सोची, ताकि सुविधा से नदियों के ऊपर पथ प्रशस्त किए जा सकें, बालि के पास, इन बातों के लिए समय ही नहीं है शस्त्रों के विषय में भी कितनी विचित्र स्थिति है वानरों की। उनके पास या तो दण्डधर सैनिक हैं अथवा गदाधर। वे अन्य किसी शस्त्र को जानते ही नहीं। सारी वानर जाति के पास दस से अधिक खड्ग नहीं होंगे; और जो हैं भी, वे आर्य आश्रमों से प्राप्त किए हुए हैं यदि हनुमान आर्य आश्रमों तक नहीं पहुँचते, तो कदाचित् वानर कभी खड्ग के दर्शन भी नहीं कर पाते। शस्त्र राक्षसों के पास हैं, किंतु वे अपने ज्ञान-विज्ञान से वानरों की सहायता नहीं करना चाहते। शस्त्र आर्यों के पास हैं, किंतु उन्हें राक्षसों ने दण्डकारण्य में ही उलझा रखा है कि वानरों तक पहुँच ही न पाएँ। कभी-कभी सुनने में आया है कि अगस्त्य नामक किसी आर्य ऋषि ने वानरों के कुछ यूथों को लाभान्वित किया है। किंतु इसके लिए उन्हें राक्षसों के साथ निरंतर और भयंकर युद्ध करना पड़ा है।

राक्षस ! अपने ज्ञान से पिछड़ी जातियों की सहायता करने के स्थान पर उनका शोषण करनेवाला संगठन। सबल द्वारा निर्बल को खा जाने वाले पशु-सिद्धांत पर गर्व करने बालि जाति। हिंस्र शक्ति के दंभ और शस्त्रास्त्रों से संपन्न जाति। उनके पास गदा, मूसल, शक्ति, खड्ग जैसे सामान्य शस्त्रों के साथ-साथ धनुष-बाण जैसे विशिष्ट शस्त्र ही नहीं, अनेक दिव्यास्त्र भी हैं। उनके पास न धन की कमी है, न शस्त्रों की और न प्रशिक्षण के अवसरों की।

पिता ऋक्षराज के शासनकाल में तो किसी ने इस दिशा में सोचा ही नहीं था। वानर राज्य के भीतर युद्ध होता नहीं था। सर्व-सम्मति से सारी प्रजा अपने सम्राट की आज्ञा मानती थी। यदि भूमि अथवा पशुओं को लेकर किसी पड़ोसी गोत्र के साथ कोई संघर्ष हुआ भी, तो उसका निबटारा दोनों गोत्रों के मल्लयुद्ध से होता था; और मल्लयुद्ध में वानर वीरों को पराजित करना बहुत कठिन था। किंतु होश सँभालते ही, सुग्रीव ने राक्षसों को प्रबल होते देखा था। वानरों पर उनके भारी पड़ने का एकमात्र कारण उनके शस्त्र थे। तभी स्थान-स्थान से वानरों तथा ऋक्षों के पीड़ित होने के समाचार आने लगे थे। जहाँ कहीं अपना स्वार्थ सघता, राक्षस अन्य जातियों के साथ, मैत्रीपूर्ण ढंग से रहने का नियम अनदेखा कर जाते थे। यदि स्थानीय यूथपति झगड़ा सुलझाने का प्रयत्न करता तो राक्षस अपने शस्त्रों और दुष्टता के द्वारा उसे पराजित कर भगा देते अनेक घटनाएँ सुग्रीव के मन में बहुत ताजा और जीवंत थीं, जहाँ राक्षसों ने वानरों की बस्तियों में आग लगा दी थी, या अपने शस्त्रों से उन्हें काट डाला था। उनकी भूमि हथिया ली थी और उनके पशु छीन लिये थे। कई स्थानों पर उन्होंने वानरों को दास बनाकर बेच डाला था। उनकी स्त्रियों का अपहरण कर ले गए थे और वानरों की ओर से कोई प्रतिवाद संभव नहीं था।

सुग्रीव की राजनीतिक समझ राक्षसों के इन्हीं आक्रमणों से निखरी थी। सुग्रीव साफ-साफ देख रहे थे कि वानरों, ऋक्षों तथा अन्य जन-जातियों के क्षेत्रों में राक्षसों के उपनिवेश बढ़ते जा रहे थे। अपने रहने के लिए राक्षस नई भूमि का संधान नहीं करते थे- वन नहीं काटते थे, नये खेत नहीं बनाते थे। उनके लिए अन्य जातियों के बने बनाए खेत छीन लेना अधिक सरल था और उन्हीं की देखा-देखी, प्रत्येक जाति में राक्षस-वृत्ति पनप रही थी। प्रत्येक जाति में अपने राक्षस जन्म लेते थे, जो बाद में अन्य राक्षसों का सहयोग प्राप्त कर लेते थे।

इस आर्थिक लूट की रक्षा के लिए उन्हें राजनीतिक सत्ता और राजनीतिक विधि-विधान की आवश्यकता पड़ती थी। राजनीतिक सत्ता की रक्षा के लिए उन्होंने सेनाओं का निर्माण किया था और सेनाओं को शक्तिशाली बनाने के लिए अस्त्र-शस्त्रों का विकास किया था।

उन्हें रोकने का एक ही मार्ग था- उनके शस्त्रों का सामना। वैसे ही शस्त्रों और दिव्यास्त्रों का निर्माण किंतु बालि को न सेना में रुचि थी, न शस्त्रों में। राज्याधिकार उन्हें मिल गया था। उनका अहंकार यह स्वीकार ही नहीं करता था कि अपने सारे शस्त्रास्त्रों के साथ भी कभी कोई राक्षस युद्ध में उन्हें पराजित कर सकता है। अत: वे मानते थे कि बलिष्ठ व्यक्ति को न सेना की आवश्यकता थी, न कोई अन्य समस्या दिखाई पड़ती थी। रावण उनके लिए बहुत दूर की वस्तु था। निकट की समस्याएँ और थीं- पहले तो तारा थी, अन्य सुंदरी रानियाँ थीं; और अनेक अन्य सुन्दरियाँ थीं, जो कभी उनकी रानियाँ बनी नहीं थी। पीने के लिए मधु था, खेलने के लिए आखेट था। बहुत मन ऊबा तो अखाड़े में जाकर मल्लयुद्ध कर अपने शरीर का आलस्य और मन का अवसाद दूर कर आए और अब आ जुटा था मायावी। जाने वह और क्या-क्या करवाएगा।

कहाँ तो दोनों भाइयों में इतना स्नेह था सुग्रीव को अपना शैशव आज भी याद आता है, तो आँखे भर आती हैं। शैशव से ही बालि

सुग्रीव से कहीं अधिक सबल और भोले थे। सुग्रीव बार-बार विभिन्न प्रकार से हठ करते थे और बालि उनका प्रत्येक हठ मान लेते थे। पिता सदा हँसते हुए कहा करते थे कि यह छोटा, बड़े को नचाएगा। और बालि प्रसन्न होकर कहते थे, यह मुझे जितना नचाता है, उतना ही मुझे अच्छा लगता है। कितना प्यार था बालि में और कितना तेज। राजनीति से अधिक उनका ध्यान पूजा-पाठ में था। पूजा-पाठ में तो आज भी उनका उतना ही ध्यान है, किंतु वह सात्विकता समाप्त हो गई है। कुछ निरंकुश राज्याधिकार, कुछ शारीरिक बल का अहंकार, कुछ चिंतन का अभाव और कुछ कामुकता तथा विलास की प्रवृत्तियाँ- क्या से क्या हो गए हैं बालि। बात-बात में दोनों भाइयों में मतभेद होता है- जैसे भाई न हों, विपक्षी हों, या विरोधी हों। विरोध भी क्रमशः बढ़ता जा रहा है। राजनीतिक मतभेद से कभी-कभी वह व्यक्तिगत संबंधों की सीमा में आ पहुँचता है। पता नहीं, उसका अंत क्या होगा।

आजकल बालि का सबसे अधिक विरोध सुग्रीव ही करने लगा है। कोई भी तो ऐसी बात नहीं होती, जिस पर वे दोनों भाई सहमत हो सकें। मतभेद भी सैद्धांतिक-उससे व्यक्तिगत विरोध भी उभर ही आता है और बालि को उससे भी अधिक पीड़ामय आश्चर्य होता है अंगद को लेकर। दिन-प्रतिदिन अंगद उनसे दूर होता जा रहा है। पुत्र अपने ही पिता से दूर होता जा रहा है। दूरी भी कैसी- असंपर्क की नहीं, विरोधी दिशा की।

बालि को लगता है कि सारा विरोध मायावी के कारण है। सुग्रीव और अंगद, दोनों ही चाहते थे- और कदाचित् आज भी चाहते हैं कि मायावी को बंदी कर, उसे दण्डित किया जाए और मायावी है कि बालि के थके मन को विश्राम देता है। सहसा बालि के लिए सारी सृष्टि विलीन हो गई। मस्तिष्क में एक बात बार-बार ध्वनित हो रही थी- थके मन को विश्राम आँखों के सम्मुख एक ही रूप था- अलका। बालि का शरीर तपने लगा। मन में बार-बार ऐंठन होने लगी। उन्हें लगा, जैसे वे असीम शून्य में खड़े हैं। दसों दिशाओं में कुछ भी नहीं है, बस शून्य-ही-शून्य और बालि का शरीर साधारण शरीर न हो- शिराओं में जैसे आग-ही-आग भरी है और कोई उनकी शिराओं को दो छोरों से पकड़कर खींच रहा है- शिराएँ हैं कि न स्वयं को ढील पाती हैं, न टूट ही पाती हैं और सामने खड़ी है अलका- दो हाथों की दूरी पर। बालि हाथ बढ़ाएँ तो यह यक्ष-कन्या उनकी भुजाओं में आ जाए। वह शीतल जल का रूप है। बालि जानते हैं कि उसे अपनी भुजाओं में पाते ही, शिराओं में बहती हुई आग मद में बदल जाएगी। तनी, खिंची, टूटी हुई शिराएँ- वाद्य-यंत्रों के तारों के समान झँकारने लगेंगी। मन की जलन अमृत हो जाएगी। पर बालि जैसे ही अलका की ओर हाथ बढ़ाना चाहते हैं, सुग्रीव और अंगद कहीं से प्रकट हो उन्हें टोकने लगते हैं।

बालि का मस्तिष्क झनझनाने लगा उनकी भृकुटियाँ तन गईं और हाथ ने सचमुच गदा उठा ली- इस सुग्रीव को मार्ग से हटाना ही होगा, और स्वयं न सुधरा तो अंगद को भी। बालि का मन बार-बार कहता है कि सब उनके सुख के शत्रु हैं। कोई नहीं चाहता कि वे सुखी हो। उनके सुख के लिए तो कोई कुछ करना ही नहीं चाहता। जो सुख उन्होंने स्वयं अपने लिए प्राप्त किया था, वे लोग उसे भी छीन लेना चाहते हैं। कोई उनका अपना नहीं है- न भाई, न पुत्र। न पत्नी तारा भी नहीं। बालि के मन में वितृष्णा जागी। तारा। कब तक वे तारा से ही बँधे रहें। तारा चाहती है कि बालि उससे पहले के ही समान प्यार करें- और बालि तारा का स्पर्श भी करते हैं तो कोई उनके मन को शूलोंयुक्त गदा से कूटना-पीटना आरंभ कर देता है तारा की आकृति देखते ही उनका हृदय एक विराट शिला के समान भारी हो जाती है।

सहसा बालि को लगा, सोचते-सोचते जैसे उनका दम घुट रहा है। वायु अपनी वायवीयता छोड़कर जैसे ठोस हो गई है। अब वे रुक नहीं सकते। उन्हें दो में से एक काम करना ही होगा- या तो वे सुग्रीव और अंगद की हत्या कर देंगे या फिर वे अलका को अपनी भुजाओं में बाँधकर सारे संसार को भूल जाएँगे। बालि उठ खड़े हुए। क्या हुआ, प्रिय ?

तारा अभी तक सोयी नहीं थी। बालि के जबड़े भिंच गए- चुड़ैल भी बैठी पूछताछ करती रहती है। उन्हें लगा, यदि वे तत्काल ही वहाँ से हट न गए तो आज यहाँ कुछ अघटनीय घट जाएगा। वे तारा की बात का उत्तर दिए बिना ही द्वार की ओर बढ़े।

कहाँ जा रहे हैं ? स्वामी ? तारा ने पुनः पूछा। तुम सो रहो। बहुत चाहने पर भी बालि अपनी खीझ छिपा नहीं पाए। अपने स्वर की कठोरता से वे स्वयं घबरा गए। रुकना असंभव था। द्वार खोलकर वे बाहर निकल गए।

रात चाँदनी थी, किंतु पथ सूने थे। एकाकी बालि चुपचाप उन्मत्त व्यक्ति के समान बढ़ते जा रहे थे। परिचारकों, द्वारपालों तथा दण्डधरों को रोषपूर्वक साथ आने का निषेध कर, बालि अकेले ही प्रासाद की सीमाओं से बाहर निकल आए थे। थोड़ी ही दूर चलने पर बालि को लगा, रात की शीतलता, चाँदनी तथा खुली हवा ने उनके उत्तप्त मस्तिष्क पर जैसे चंदन का लेप कर दिया था। उनका

मस्तिष्क, जो किसी हिंस्र पशु के समान अब तक केवल चिंघाड़ रहा था और सामने आई प्रत्येक वस्तु पर झपट पड़ना चाहता था, अब जैसे उस जड़ावस्था से निकलकर कुछ अनुभूति-प्रवण भी हो गया था। वह समझ रहा था कि सुख की भी एक अनुभूति होती है। आँखों को कोई दृश्य अच्छा लग सकता है, कानों को कोई शब्द और हाथों को कोई स्पर्श जैसे-जैसे बालि के पग अलका के घर के निकट पहुँच रहे थे, सुख की वायवीय अनुभूति बालि के मन में आकार ग्रहण करती जा रही थी। बालि की आँखें केवल अलका को देखना चाहती थीं। कान केवल अलका का स्वर सुनना चाहते थे और शरीर केवल अलका का स्पर्श। अलका के द्वार पर पहुँचते ही परिचारक ने उन्हें रोक दिया, भीतर जाने की अनुमति नहीं है।

बालि को झटका लगा- कुछ क्षणों तक जैसे वे समझ ही नहीं पाए कि वह क्या कह रहा है। सारी पृथ्वी पर ऐसा कोई स्थान नहीं था, जहाँ कोई परिचारक बालि को इस प्रकार रोक सके। और यह तो किष्किंधापुरी थी- बालि की राजधानी। वे निस्पंद खड़े परिचारक को देखते रहे। जैसे ही परिचारक की बात उनकी समझ में आई कि वह क्या कह रहा है और उसका अभिप्राय क्या है, एक बार फिर से उनके शरीर का सारा रक्त उनके मस्तिष्क में समा गया। मति वश में नहीं रही। वे आविष्टावस्था में थे। उनके हाथ बढ़े-एक हाथ ने परिचारक की गरदन को पीछे से पकड़ा और दूसरे हाथ ने उसकी कटि को थामा। एक ही झटके में परिचारक के पैर भूमि से उठ गए। बालि ने उसे अपने सिर से ऊपर उठाकर, हवा में तीन-चार चक्कर दिए और फिर पूरी शक्ति से दूर फेंक दिया। पलटकर यह भी नहीं देखा कि वह कहाँ गिरा है।

बालि ने घर के भीतर प्रवेश किया और सीधे अलका के द्वार पर पदाघात किया। द्वार भीतर से बंद था, किंतु प्रकाश की किरणें बाहर से भी भासित हो रही थीं। कौन है ? भीतर से अलका का स्वर सुनाई पड़ा। मैं हूँ बालि। द्वार खोलो। और बिना प्रतीक्षा किए बालि निरंतर द्वार खटखटाते चले गए, द्वार बंद क्यों कर रखा है ? खोलो।

प्रत्येक निमिष के साथ बालि का क्रोध बढ़ता जा रहा था। बालि को रोका गया, एक साधारण परिचारक के द्वारा- भीतर जाने की अनुमति नहीं है। ऊँह। एक तो बालि का अपमान। और दूसरे अलका और बालि के बीच की बाधा। बालि यह सहन नहीं कर सकते। ऐसे समय में बालि के वक्ष में जो पीड़ा और रक्त में जो उन्माद उठता है, वह बालि के अपने ही वश में नहीं रहता। पीड़ा की ऐंठन, क्रोध की लहर पर लहर, रक्त का रेले पर रेला। बालि दरवाजे पर ठोकरें जमाते जा रहे थे। कभी हथेली से मारते, कभी मुक्के से, कभी पैर के पंजे से आघात करते, कभी एड़ी से खोलो। द्वार खोलो।

भीतर से अलका के पहले प्रश्न के बाद कोई शब्द नहीं हुआ था। न कोई जिज्ञासा, न रुकने की प्रार्थना, न द्वार खोलने का आश्वासन। जैसे भीतर कोई हो ही नहीं। किंतु अलका भीतर थी- परिचारक ने भी कहा था और अलका ने भी पहली खटखटाहट के उत्तर में पूछा था कि बाहर कौन है फिर वह बोल क्यों नहीं रही ? क्या उसे सुनाई नहीं पड़ता ? द्वार की चूलें हिल रही हैं और अलका को सुनाई नहीं पड़ता वह बहरी हो गई है या मर गई है ? बालि के मन में जैसे ज्वालामुखी फूटा- वे द्वार ही उखाड़ फेकेंगे, फिर न उसे खोलने की आवश्यकता होगी और न ही उसे कभी बंद किया जा सकेगा। बालि मुड़े और पाँच पग लौटकर पलटे तभी द्वार भीतर से खुल गया।

बालि लपककर कमरे के भीतर घुसे। सामने अलका खड़ी थी- अस्त-व्यस्त केशों और वस्त्रों में। चेहरे का रंग उड़ा हुआ था और सारा शरीर थर-थर काँप रहा था। परिचारक ने मुझे भीतर आने से क्यों रोका ? बालि चिंघाड़ भरे स्वर में बोले; और उन्होंने अलका को दोनों कंधों से पकड़कर झिंझोड़ा, द्वार खोलने में इतना विलंब क्यों हुआ ?

अलका ने एक बार दृष्टि उठाकर बालि की ओर देखा और सिर झुका लिया। बोलो- बालि ने उसे फिर से झिंझोड़ा।

मायावी के कारण। अलका फुसफुसाहट में बोली, जैसे कंठ से स्वर ही न फूट रहा हो।

मायावी। बालि के मस्तिष्क में ज्वाला धधक उठी, मायावी यहाँ था ? तुम्हारे पास ?

अलका ने सिर नहीं उठाया। बालि को लगा, किसी ने वृद्धाकार गदा से उनके पक्ष पर भरपूर वार किया है। वे लड़खड़ा गए मायावी ने मदिरा में धुत्त बालि के सम्मुख अलका प्रस्तुत की थी- सम्राट ! देवताओं के नन्दनवन में भी ऐसा अम्लान कुसुम नहीं है। स्पर्श तो दूर, आज तक किसी ने इसको सूँघा भी नहीं है। यह अलका आपकी है। और अब बालि को बताया जा रहा है कि मायावी स्वयं यहाँ था। दुष्ट मायावी। सुग्रीव प्रतिदिन कहता था- मायावी दुष्ट और अपराधी था। वह वानर कन्याओं का अपहरण कर, उन्हें राक्षसों के श्रृंगार हाटों में बेच रहा था। किंतु बालि ने मायावी का विश्वास किया, सुग्रीव का नहीं। और तो और, उन्होंने अपने पुत्र अंगद की बात की भी उपेक्षा की और मायावी स्वयं बालि की प्रिया के सतीत्व का हरण करता रहा धिक्कार है बालि के पौरुष पर, धिक्कार।

* * * (२४) * * *

बालि की इच्छा हुई, अलका का गला घोंटकर उसे मार डालें अथवा उसे भी परिचारक की तरह उठाकर बाहर फेंक दें। उनकी भुजाएँ उठीं थीं, किंतु भुजाओं से पूर्व जिह्वा चली, वह पहले भी तुम्हारे पास आता रहा है ?

नियमित। तुम्हारी इच्छा से ?

अलका का भय कुछ कम हुआ। उसने दृष्टि उठाई। कंठ के स्वर का अवरोध भी जैसे कम हुआ।

मेरी इच्छा ? उसके चेहरे पर विद्रूप-सी मुसकान उभरी, मेरा हरण मेरी इच्छा से हुआ है, या मायावी की संगति मुझे अपनी इच्छा से झेलनी पड़ी है, या आपकी भोग्या मैं अपनी इच्छा से बनी हूँ।

तुम्हारा हरण हुआ है ? अचकचाकर बालि ने पूछा।

उसके बिना भी कोई स्त्री सर्वभोग्या बनी है क्या ?

हरण किसने किया ?

उन्हें नहीं पहचानती, किंतु हरण करवाने वाला मायावी है। सहसा बालि चौंके, मानो किसी निद्रा से जागे हों, मायावी कहाँ गया।

सम्राट को बड़ी देर से ध्यान आया। अलका ने उपहास की दृष्टि से बालि को देखा, वह उस खुले गवाक्ष से कूदकर भाग गया था। अब तक कदाचित् कोस भर निकल गया होगा।

बालि हतप्रभ हो गए। कितने आहत और अपमानित हुए थे वे। अब तक शत्रु से प्रतिशोध न लेकर इधर-उधर के प्रश्न पूछते रहे और शत्रु कोस भर निकल भी गया। वे कहाँ पाएँगे उसे ? कैसे अपने अपमान का प्रतिशोध लेंगे ?

वे जाने के लिए मुड़े, किंतु दो-चार डग चलकर, थमकर बोले, जब तक कोई अन्य आदेश न दिया जाए, तुम यहीं रहोगी। तुम्हारे भरण-पोषण का दायित्व राज्य पर होगा। वे जिस गति से आए थे, उसी गति से लौट गए।

वही पथ था और वैसा ही अंधकार; किंतु बालि बहुत बदले हुए थे। इतने हतप्रभ तो वे कभी नहीं हुए थे- थके-टूटे, अपमानित और निराश। क्या परख है बालि को मनुष्य की ? उन्होंने आज तक किसी को इतनी मैत्री, प्रेम और सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा था- और क्या निकला मायावी। विश्वासघाती, मित्रद्रोही, लंपट और दुष्ट और बालि ने उसे महासामंत बना दिया था।

सहसा बालि की आँखों के सामने अलका का मुखमण्डल घूम गया। अलका। संसार का पुँजीभूत सौंदर्य। उसके कारण तो बालि संसार में किसी का भी अपमान कर सकते हैं सुग्रीव का भी किंतु अलका के कारण ही मायावी बालि को अपमानित कर गया अपमानित। बालि को लगा, अपमानित शब्द तो बहुत हल्का है, बालि उससे कहीं अधिक आहत और पीड़ित हुए हैं। उनका हृदय जैसे किसी ने परत-परत कर छील दिया है, उसमें से निरंतर रक्त बह रहा हैं। ज्वाला धधक रही है। यह ज्वाला तो तभी शांत होगी, जब बालि मायावी के शरीर को उसी प्रकार रक्त-स्नात कर देंगे, जैसा कि आज उनका अपना मन हुआ है।

मायावी की हत्या के बिना अब बालि किसी भी प्रकार शांति नहीं पा सकते थे मायावी को मारना ही होगा अलका का प्रत्येक स्पर्श, मायावी को उनके मध्य लाकर खड़ा कर देगा और अलका के बिना बालि जीवित नहीं रह पाएँगे।

रात आधी बीत चुकी थी, किंतु बालि को नींद नहीं आ रही थी। थोड़ी देर के लिए आँख लगती फिर नींद उचट जाती। उद्विग्नता की स्थिति में वे उठ बैठे। टहलते-टहलते आकर वे गवाक्ष के पास खड़े हो गए। सहसा उन्होंने सुग्रीव को आते देखा। रक्षकों ने उन्हें मार्ग दे दिया। थोड़ी ही देर में सुग्रीव उनके कक्ष में पहुँच गए। निश्चित रूप से वे भागते हुए आए थे। उनकी साँस धौंकनी के समान चल रही थी और शरीर पसीना-पसीना हो रहा था।

भैया ! बालि ने प्रश्नपूर्वक उन्हें देखा। मायावी नगर में प्रवेश कर चुका है। अनुमान है कि वह अलका के भवन की ओर जा रहा है। वे जल्दी-जल्दी बोले, हमने उसे बंदी कर लिया होता, किंतु आपका आदेश नहीं था।

बालि की आँखें चमकीं। हाथ ने लपककर गदा उठाई और मन ने कहा, सुग्रीव सब कुछ जानता है। अलका के विषय में भी। आओ। बालि तत्काल बाहर निकल गए। गंतव्य पर पहुँचते ही बालि ने दण्डधरों से पूछा। मायावी अभी तक नहीं आया ? बालि ने धीरे से द्वार खटखटाया। एक सोयी हुई-सी परिचारिका ने आकर गवाक्ष खोलकर पूछा, कौन है ? मैं हूँ बालि। द्वार खुल गया और बालि भीतर चले गए। दण्डधरों के साथ ही सुग्रीव भी बाहर ही छिप गए। निश्चित रूप से आज मायावी अवश्य मारा जाएगा- सुग्रीव सोच रहे थे- किंतु कितनी विचित्र बात थी कि मायावी के नगर-प्रवेश की तनिक भी सूचना द्वाररक्षकों को नहीं हुई। स्वयं सुग्रीव के चरों ने इतनी सूचना

तो दी थी कि अकेला मायावी मतंग वन से निकलकर नगर की ओर बढ़ रहा है; किंतु उसके नगर-प्रवेश की सूचना वे भी नहीं दे पाए। नगर में घूमते हनुमान के चरों ने यह सूचना न दी होती, तो सुग्रीव को भी पता न चलता। मायावी ने किष्किंधा में प्रवेश कैसे किया ? सुग्रीव का मन निरंतर इस प्रश्न से मल्ल-युद्ध कर रहा था।

तभी अंधकार में एक छाया उधर बढ़ती दिखाई दी। निश्चित रूप से यह मायावी ही होगा सुग्रीव ने दण्डधरों को संकेत किया और स्वयं भी सावधान होकर बैठ गए। मायावी दबे पाँव भवन की ओर बढ़ रहा था, फिर भी उसकी गति चमत्कारिक रूप से तीव्र थी। वह अत्यंत सावधानी से भवन के द्वार तक आया और धीरे से किसी विशेष सांकेतिक ढंग से उसने दरवाजा खटखटाया।

भीतर से द्वार खोल दिया गया। किंतु न मायावी ने भीतर प्रवेश किया और न भीतर से ही कोई बाहर आया। मायावी खड़ा-खड़ा जाने किस बात की टोह ले रहा था। वह अतिरिक्त रूप से सावधान था और भवन में प्रवेश करने से पूर्व भली प्रकार पुष्टि कर लेना चाहता था कि उसके लिए कोई जोखिम तो नहीं है। मायावी बहुत विलंब कर रहा था।

सहसा भीतर से कूदकर बालि बाहर आए। चंद्रमा के धीमे प्रकाश में उनका उफनता क्रोध, उनके चेहरे पर देखा जा सकता था। उनकी आँखें जल रही थीं, नथुने फड़क रहे थे और भारी गदा थामे हुए भुजाएँ प्रहारक मुद्रा में थीं।

कौन ? बालि ? मायावी बोला।

हाँ। तेरा काल ? मायावी घबराया नहीं। अगले ही क्षण उसके हाथ में नग्न खड्ग चमक रहा था। आ, देख कौन किसका काल है। तेरा वध कर, अलका ही नहीं, तारा का भी हरण कर न ले गया, तो मेरा नाम भी मायावी राक्षस नहीं।

बालि ने घुमाकर गदा का प्रहार किया। मायावी पीछे हटकर वार बचा गया। उसने खड्ग उठाया।

सुग्रीव ने दण्डधरों को संकेत किया और अपना खड्ग कमर से निकालकर झपटे।

मायावी को काठ मार गया। उसकी दृष्टि निमिष-भर के लिए बालि की गदा को देखती थी और अगले ही क्षण सुग्रीव के खड्ग पर टिक जाती थी। चेहरे पर असमंजस के भाव उभर आए, जैसे कोई निश्चय कर रहा हो; और अगले ही क्षण वह पलटा और दण्डधरों को अपने खड्ग से धमकाता हुआ, उनका घेरा तोड़ भाग खड़ा हुआ।

आओ। हाथ उठाकर बालि ने संकेत किया और उसके पीछे भागे। दण्डधरों की ओर देखने का अवकाश नहीं था। सुग्रीव ने भी शक्ति-भर दौड़ लगाई। आगे-आगे मायावी भाग रहा था और पीछे-पीछे बालि तथा सुग्रीव। मायावी या तो अच्छा धावक था, या अपना पीछा करनेवालों से वह इतना भयभीत था कि उसके पगों में पंख लग गए थे। वह बड़ी सरलता से अपना पीछा करने वालों से अपनी दूरी बनाए हुए था। बालि अपने भारी-भरकम शरीर के कारण अपनी गति बढ़ा नहीं पा रहे थे और सुग्रीव कभी भी बहुत अच्छे धावक नहीं रहे।

सहसा मायावी ने पथ छोड़ दिया और नगर-प्राचीर की ओर लपका। सुग्रीव की दृष्टि नगर-प्राचीर के उस भाग पर टिक गई। उस स्थान से प्राचीर कुछ इस प्रकार टूटी हुई थी कि उसकी ऊँचाई अनुल्लंघनीय नहीं रह गई थी। कदाचित् मायावी इस स्थान से परिचित था। संभव है कि उसने इसी स्थान से नगर में प्रवेश किया हो, तभी तो न नगरद्वार के रक्षकों को उसकी भनक पड़ी और न सुग्रीव के चरों को ही उसकी कोई टोह मिली।

बालि और सुग्रीव के देखते-ही-देखते मायावी प्राचीर के भग्नांश पर चढ़ प्राचीर की दूसरी ओर सघन वन में उतर गया।

बालि और सुग्रीव, दोनों ही भौंचक्के खड़े रह गए। कहाँ वे आशा कर रहे थे कि नगर-प्राचीर की अगली चौकी तक जाते-जाते, यह दौड़ समाप्त हो जाएगी और मायावी पकड़ा जाएगा- कहाँ वह उनके हाथोंसे ऐसे निकल गया था, जैसे असावधान हाथों से टकराकर, अपने ही वेग में गेंद लौट आती है।

काश। ऐसे समय में हनुमान यहाँ होते। सुग्रीव सोच रहे थे, भूमि से उछलकर प्राचीर पर चढ़ जाना और प्राचीर से कूदकर वन में जा धँसना तो उनके लिए क्रीड़ा-मात्र थी। सियार अपनी खोह में घुस गया। बालि ने दाँत पीसते हुए कहा।

गदाधरों की एक टोली को उसे घेरने के लिए भेजिए, सम्राट। सुग्रीव ने सुझाव दिया। गदाधर सैनिक उसका क्या कर लेंगे। बालि का चेहरा क्रोध से विकृत हो रहा था, मैं स्वयं उसके पीछे जाऊँगा और उसका वध करके ही लौटूँगा।

आप स्वयं जाएँगे ? सुग्रीव हतप्रभ थे मतंग वन में उसे अच्छी प्रकार घेरा जा सकता था, बालि वहाँ नहीं गए और यहाँ प्राचीर के बाहर सघन वन है। जाने वह कहाँ छिपा होगा। संभव है, आस-पास उसके साथी भी हों। गदाधर टोली नहीं भेजना चाहते तो नगर के बाहर

छावनियों में स्थित यूथपतियों को आदेश दीजिए, वे अपने यूथों से इस क्षेत्र को घेर लें। फिर चाहे आप स्वयं ही उसे दण्डित करें।

नहीं। बालि ने सुग्रीव की पूरी बात भी नहीं सुनी, यह मेरा व्यक्तिगत मामला है। इसे मैं अकेला ही निबटाऊँगा। मैं जा रहा हूँ। सियार यदि खोह में घुसा है, तो उसका वध उसकी खोह में ही करूँगा।

पर भैया। आप सम्राट हैं। आपका अपने प्राणों को इस प्रकार संकट में डालना उचित है क्या ? सुग्रीव ने विवाद किया, अच्छा। मैं भी आपके साथ चलता हूँ। नहीं। बालि का स्वर कठोर था, मुझे अधिक देर नहीं लगेगी। तुम यहीं रुको, इस गुफा के द्वार पर। कहीं वह दुष्ट अपनी खोह से निकलकर फिर से नगर में प्रवेश न कर जाए। मैं लौटकर अभी आया।

कंधे पर अपनी गदा रखे बालि अकेले प्राचीर के उस भग्नांश पर पहुँचे और मायावी के ही समान प्राचीर के पार कूद गए।

सुग्रीव असहाय-से खड़े देखते रहे। क्या कर सकते थे वे ? वे बालि के स्वभाव को जानते थे- क्रुद्ध बालि को मनमानी करने से रोकना असंभव था। और यहाँ तो उनके मर्म पर आघात हुआ था। प्रतीक्षा करने के सिवाय, सुग्रीव और कर भी क्या सकते थे ? बालि के आदेश से हटकर कुछ भी करने पर वे उन्हें संदेह की दृष्टि से देखेंगे। उन पर कोई-न-कोई आरोप लगाएँगे।

भावी घटनाओं का रूप क्या होगा- सुग्रीव समझ नहीं पा रहे थे- अभी थोड़ी देर में बालि मायावी का शव घसीटते हुए लौट आएँगे अथवा मायावी ही बालि को चक्कर देकर, किसी अन्य मार्ग से प्राचीर के इसी टूटे अंश से किष्किंधा में प्रवेश कर, अलका को प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा यदि बालि को बहलाकर, मायावी वन में विलीन हो जाने में सफल हो गया, तो क्या बालि खाली हाथ लौट आएँगे? जिस मुद्रा में वे गए थे, उसमें तो खाली हाथ लौटने का प्रश्न ही नहीं उठता। मायावी भी कम हठी नहीं लगता। यदि वे दोनों ही किसी दीर्घकालीन लुका-छिपी में व्यस्त हो गए तो ? या कहीं मायावी ने बालि का वध कर दिया ? बालि निश्चित रूप से अधिक शक्तिशाली हैं, किंतु मायावी के पास खड्ग है और वह विकट धूर्त है। यह दौड़ लंबी भी हो सकती है और उसके अंत का स्वरूप भी निश्चित नहीं है। सुग्रीव कब तक स्तंभित खड़े रहेंगे ? उन्हें प्रत्येक संभावित स्थिति के लिए तत्पर रहना चाहिए।

पूर्व से ऊषा का उजाला फूटने लगा, किंतु न बालि लौटे, न उनके पीछे गई हुई सैनिक टुकड़ी। अब सुग्रीव के लिए चिंता स्वाभाविक थी। यह बालि के आखेट के लिए जाने जैसी साधारण घटना नहीं थी। सुग्रीव को यह पहले ही सोचना चाहिए था। क्या वे मायावी को जानते नहीं थे ? वह जन्मजात अपराधी, सारा जीवन धूर्ततापूर्वक षड्यंत्र रचता रहा और बालि केवल प्रत्यक्ष युद्ध के मल्ल थे। वे न षड्यंत्र रच सकते थे, न उसे परख सकते थे। मायावी जैसे षड्यंत्रकारी से सामना हो तो बालि की-सी शक्ति और वीरता के होते हुए भी कुछ अघटनीय घट सकता था। कुछ ऐसा ही तो नहीं हो गया ? किंतु तब सैनिक क्यों नहीं लौटे ? संभव है, वे शोक, हताशा अथवा दण्ड के भय से न लौटे हों।

सुग्रीव को स्वयं जाना होगा। अब बालि चाहे आज्ञोल्लंघन का आरोप लगाएँ, अथवा वहाँ से हटकर मायावी के नगर-प्रवेश के लिए मार्ग छोड़ने का संदेह करें, सुग्रीव को कुछ करना ही होगा। खड़े-खड़े चिंता करते रहकर, अपने भाई की मृत्यु, के लिए पथ प्रशस्त करने की कापुरुषता वे नहीं कर सकते।

दिन-भर खोज चलती रही- न किसी ने भोजन किया, न विश्राम। जिसे भूख ने अधिक सताया, उसने किसी वृक्ष से तोड़कर कोई फल खा लिया, स्रोत से जल पी लिया, किंतु खोज न शिथिल हुई, न स्थगित। रात का अंधकार घिरते-घिरते सैनिकों की तो बात ही क्या, स्वयं सुग्रीव और अंगद तक हताश हो चुके थे कुछ बहुत ही असाधारण घटित हुआ था, नहीं तो कोई कारण नहीं था कि इतने लोग उन्हें जीवित अथवा मृत खोज न पाते। जाते-जाते बालि कह गए थे, सियार अपनी खोह में घुस गया है। उन्हीं की बात सच होने जा रही थी। वे दोनों ही किसी ऐसी गुफा में जा घुसे थे, जिसका द्वार खोजने वाले सैकड़ों व्यक्ति भी ढूँढ नहीं पा रहे थे।

सुग्रीव ने पुन: अपने साथियों के साथ विचार-विमर्श किया। सब ही सहमत थे कि इस खोज को स्थगित कर, इन सैनिकों को वापस जाने दिया जाए ताकि उन्हें भोजन और विश्राम मिल सके; किंतु उसके साथ ही एक दीर्घकालीन खोज-योजना बनाई जाए। उसके अनुसार वानरों का एक पूरा यूथ स्थायी रूप से इस वन में रहे, छोटी टुकड़ियों में बँट, बारी-बारी यह अन्वेषण तब तक अनवरत चलता रहे, जब तक सम्राट बालि और मायावी के विषय में कोई निश्चित सूचना नहीं मिल जाती।

सुग्रीवने बतलाया- रात्रिमें जगाये जानेसे क्रुद्ध बालि उस दुष्ट दानव को पकड़ने दौड़ा। दूर तक दोनों आगे-पीछे दौड़ते गये। बहुत दूर जाकर दानव एक पर्वतकी गम्भीर गुफामें प्रविष्ट हो गया।

बालिका स्वभाव इस प्रकार शत्रुको छोड़ देना नहीं है। जिसपर उसे क्रोध आता है, उसको मारकर ही बालि शान्त होता है। दानवके गुफामें जानेपर बालिने मेरी ओर मुख किया- सुग्रीव। तुम यहाँ एक पक्ष तक मेरी प्रतीक्षा करना। पता नहीं गुफा कितनी गम्भीर है और दानव माया युद्ध तो करेगा ही; किन्तु इस अवधिमें मैं उसे अवश्य मार दूँगा।

शत्रुको बिलके अंदर घुसा देख बालिके क्रोधकी सीमा न रही। उनकी सारी इन्द्रियाँ क्षुब्ध हो उठीं और वे मुझसे इस प्रकार बोले-

सुग्रीव। जबतक मैं इस बिलके भीतर प्रवेश करके युद्धमें शत्रुको मारता हूँ, तबतक तुम आज इसके दरवाजेपर सावधानीसे खड़े रहो।

यह बात सुनकर मैंने शत्रुओंको संताप देनेवाले बालिसे स्वयं भी साथ चलनेके लिये प्रार्थना की, किंतु वे अपने चरणोंकी सौगन्ध दिलाकर अकेले ही बिलमें घुसे। बिलके भीतर गये हुए उन्हें एक सालसे अधिक समय बीत गया और बिलके दरवाजेपर खड़े-खड़े मेरा भी उतना ही समय निकल गया। जब इतने दिनोंतक मुझे भाईका दर्शन नहीं हुआ, तब मैंने समझा कि मेरे भाई इस गुफामें ही कहीं खो गये। उस समय भ्रातृस्नेहके कारण मेरा हृदय व्याकुल हो उठा। मेरे मनमें उनके मारे जानेकी शमा होने लगी।

तदनन्तर दीर्घकालके पश्चात् उस बिलसे सहसा फेनसहित खूनकी धारा निकली। उसे देखकर मैं बहुत दु:खी हो गया। इतनेहीमें गरजते हुए असुरोंकी आवाज भी मेरे कानोंमें पड़ी। युद्धमें लगे हुए मेरे बड़े भाई भी गरजना कर रहे थे, किंतु उनकी आवाज मैं नहीं सुन सका। इन सब चिन्होंको देखकर बुद्धिद्वारा विचार करनेपर मैं इस निश्चयपर पहुँचा कि मेरे बड़े भाई मारे गये। फिर तो उस गुफाके दरवाजेपर मैंने पर्वतके समान एक पत्थरकी चट्टान रख दी और उसे बंद करके भाईको जलाञ्जलि दे शोकसे व्याकुल हुआ मैं किष्किन्धापुरीमें लौट आया। सखे ! यद्यपि मैं इस यथार्थ बातको छिपा रहा था, तथापि मन्त्रियोंने यत्न करके सुन लिया।

सुग्रीवने कहा- मैं उस भयानक शब्दको सुनता वहाँ एक महीने रहा। समीपके स्रोतसे जल पी लेता था। वनके समीपके तरुओंके फलोंसे क्षुधा मिटा लेता था। भाईकी प्रतीक्षा करता बैठा रहा वहाँ।

एक महीने पीछे बहुत असाधारण धमाका हुआ गुफामें। कोई अस्पष्ट चीत्कार गूँजी। तनिक देर पीछे गुफाके द्वारसे भल-भलाती रक्त धारा उबल पड़ी। सुग्रीवने खिन्न स्वरमें कहा- मुझसे भूल यही हुई कि मैं भयभीत हो उठा था। रक्तधारा देखकर मेरा धैर्य समाप्त हो गया। मुझे लगा कि दानवने मेरे भाईको मार दिया है और अब बाहर निकलेगा तो मुझे भी मार देगा। मुझसे जितनी भारी शिला उठ सकती थी, उतनी भारी शिला उठाकर मैंने गुहा-द्वार बन्द कर दिया और नगरमें भाग आया।

बालि नगरमें-से आते समय कह आया था कि उसका अन्वेषण अनावश्यक है; किंतु सब उसके लौटनेकी आतुर प्रतीक्षा कर रहे थे। मैंने पहुँचकर गुफामें-से रक्त निकलनेकी बात सुनाकर अपना अनुमान सुना दिया। विभिन्न प्रकार की व्यवस्थाओं से कुछ अवकाश मिला, तो सुग्रीव का ध्यान तारा की ओर गया- भाभी की क्या स्थिति होगी ? यद्यपि अंगद उनके पास था, किंतु अंगद अभी इतना प्रौढ़ नहीं है कि यह सारी स्थिति अकेले उस पर छोड़ दी जाए।

रुमा के साथ सुग्रीव बालि के प्रासाद में पहुँचे तो देखा, तारा के पास अंगद के साथ-साथ सुषेण और तार भी बैठे हुए हैं। सुग्रीव को संतोष हुआ। पिता और भाई मिलकर भाभी को सांत्वना दे लेंगे। भाभी को इस समय सांत्वना की ही आवश्यकता थी। सुषेण युद्ध वैद्य हैं। तन के घावों का उपचार तो कर लेते हैं, मन के घावों का कुछ कर पाएँगे क्या ?

रुमा जाकर तारा के पास बैठ गई और सुग्रीव अंगद के पास बैठे। भाभी। आप मन छोटा न करें। सुग्रीव अत्यंत मृदु स्वर में बोले, या तो भैया स्वयं ही मायावी का वध कर लौट आएँगे या फिर हम उन्हें खोज निकालेंगे और मायावी के वध में उनकी सहायता करेंगे। तारा ने आँखें ऊँची कर सुग्रीव को देखा। सुग्रीव समझ नहीं पाए कि वे आँखें हँस रही थीं या रो रही थीं। किंतु मुख से वे कुछ नहीं बोली।

भैया पहली बार तो गए नहीं हैं, भाभी। सुग्रीव पुन: बोले, आखेट के लिए वे अनेक बार जाया करते थे। अनेक बार बिना बताए भी गए हैं, और कई-कई दिन हमें उनकी सूचना भी नहीं मिली है।

इस बार तारा ने मुसकराने का प्रयत्न किया, किंतु सुग्रीव को वह मुसकान रोने से भी अधिक करुण लगी।

तुमने अलका के विषय में क्या सोचा है ? तारा बोलीं।

इस लड़की को देखो। वृद्ध सुषेण किंचित् उत्तेजित स्वर में बोले, जब इससे कोई बात छेड़ो तो बात को टालने के लिए यह अलका का प्रसंग बीच में ले आती है।

आप ठीक कहते हैं। सुग्रीव ने बात सँभाली, शायद भाभी नहीं चाहतीं कि वे अपना दुख हमारे साथ बाँटें। इसलिए ये दूसरे-तीसरे

व्यक्ति की बात करने लगती हैं। सुग्रीव कुछ रुके और पुन: बोले, पर यदि भाभी चाहती ही हैं कि अलका की बात की जाए, तो वही हो। अंतत: इस सारे झगड़े का मूल कारण अलका ही है। उसी के कारण भैया इस प्रकार गए। उसके विषय में तो कुछ सोचना ही होगा।

आप क्या उसे दण्डित करने की बात सोच रहे हैं ? बीच में ही रुमा बोली।

मेरा आशय यह नहीं है। तारा किंचित् ठहरे हुए स्वर में बोलीं, मैं उसे दण्डित करवाने के लिए नहीं कह रही। तारा का कंठ रूँध गया और वे रुक गईं। किंतु स्वयं को संयत कर बोलीं, मायावी के पीछे सम्राट कल रात गए हैं, किंतु मुझसे तो वे उसी दिन छिन गए थे, जिस दिन वे दुंदुभि को मारकर लौटे थे। अलका तो मात्र बहाना है।

क्या कह रही हैं, जीजी। सच कह रही हूँ, रुमा। तारा का स्वर और भी करुण हो गया, अंतर केवल इतना है कि तब वे इसी प्रासाद में रहते थे, आज वे यहाँ नहीं हैं। किंतु मेरा मुख देखते ही वितृष्णा से भर उठना, मेरे स्वर को सुनते ही खीझ उठना, आधी-आधी रात को उठकर प्रासाद से बाहर चले जाना-क्या इन सबको देखते हुए मैं मानूँ कि वे मेरे पास थे, वे मेरे थे तारा ने सुग्रीव को देखा, तुम कहते हो, देवर। कि मैं अपना दुख तुम लोगों के साथ बाँटना नहीं चाहती। तुम मुझे बताओ, कौन-कौन से दुख तुम लोगों के साथ बाँटू ? कभी किसी ने जाना है कि तारा स्वयं कितनी बँट चुकी है। तारा। तार बीच में बोले।

हाँ, भैया। तारा रो पड़ीं, सोचो, मैं उससे प्रेम करती थी, जो प्रत्येक महीने-पखवारे में किसी नई कन्या के प्रेम में पागल हो जाता था। वे जब नया प्रेम पालते थे, मुझे अपने मार्ग की बाधा मान दुत्कारने लगते थे। तारा रुक गई, मैं क्या-क्या बताऊँ तुम लोगों को। अपने मुख से कहती अच्छी लगती हूँ क्या ? मेरा इतना बड़ा बेटा अंगद यहाँ बैठा है। पूछो इससे कि इसने आज तक किसी राजनीतिक मामले में अपने पिता का साथ क्यों नहीं दिया। यह सदा अपने पिता के प्रतिकूल चाचा का साथ देता रहा।

माँ। अंगद ने कहना चाहा। मैं तुमसे स्पष्टीकरण नहीं माँग रही, पुत्र। तारा बोलीं, मैं तुम्हारे मन की अवस्था समझती हूँ। पर तुम भी तो मेरी अवस्था को समझो। मैंने आज तक तुममें से किसी से कुछ नहीं कहा। आज मेरा मन आप्लावित है और सुग्रीव ने उपालंभ दिया है कि मैं अपना दुख नहीं बाँटती। तारा ने दाँतों से होंठों को काटकर स्वयं को रोका।

भाभी। सुग्रीव समझ नहीं पा रहे थे कि वे क्या कहें। कुछ मत कहो, सुग्रीव। तारा फिर बोलीं, आज मुझे अपना दुख बाँट ही लेने दो। मेरे पिता, भाई पुत्र, देवर, देवरानी- सारे हितू बैठे हैं। मुझे बताओ, तारा किसके लिए रोये- अपने पति के लिए, जो प्रत्येक सुंदरी कन्या को देखते ही लोलुप और कामुक हो उठता था या उन निरीह कन्याओं के लिए, जो उसके पति के द्वारा अपमानित और पीड़ित हुईं। मैंने अपने सौभाग्य के लिए सदा ईश्वर से अपने पति के जीवन की भिक्षा माँगी और अलका जैसी अनेक अभागिनों की रक्षा के लिए, उनको अपमानित करनेवालों के लिए मृत्यु। तारा। सुषेण बोले।

हाँ, पिताजी। तारा का स्वर दृढ़ हो आया, आपकी तारा और कर भी क्या सकती थी। मैंने एक ओर अपने पति के राजनीतिक विरोधियों के नाश की कामना की और दूसरी ओर मेरा मन प्रजा के लिए- सुग्रीव तथा अंगद के लिए शक्ति, सत्ता और दीर्घ जीवन माँगता रहा। पुत्र को पिता के विरुद्ध ले चलने के लिए मैंने सुग्रीव को सैंकड़ों शाप दिए, और अंगद को प्रजा-हित के मार्ग पर ले चलने वाले गुरु सुग्रीव को मैंने अपनी समस्त सद्भावनाएँ भेंट कीं। तारा के कंठ से हिचकियाँ फूट आईं, अब मुझे कोई बताए, मेरे पति को मृत्यु के मुख में धकेलनेवाली अलका के लिए तुम लोगों से मृत्यु-दण्ड की प्रार्थना करूँ अथवा उसे अपमानित जीवन से उबारने के लिए, सम्राट और मायावी को विलुप्त करने के लिए ईश्वर का धन्यवाद करूँ।

तारा चुप हो गईं, किंतु न उनके आँसू रुके, न हिचकियाँ। असमंजस की स्थिति में चुपचाप बैठे, सब लोग उन्हें देखते रहे। अंतत: रुमा ने उन्हें अपनी बाँहों में भर, अपने वक्ष से लगाकर कहा, शांत हो जाओ, जीजी। सच ही, हममें से किसी को आपकी विकट स्थिति का आभास नहीं था। अब मुझे बताओ कि तुम लोगों ने अलका के विषय में क्या सोचा है ? तारा बोलीं तो पर्याप्त संतुलित लग रही थीं, जैसे मन में उठा बवंडर निकल गया हो और वे स्थिर हो गई हों।

उसे वापस उसके पिता के घर पहुँचा देना चाहिए। अंगद बोले, मेरा विचार है कि वह भी यही चाहेगी ? और यदि वह वापस लौटना न चाहे ? तारा ने पूछा, अथवा उसके पिता उसे स्वीकार करना न चाहें ? तो वह सुविधापूर्वक किष्किंधा में भी रह सकती है। सुग्रीव बोले, किंतु वह यहाँ रही तो भैया के लौटने पर घटनाओं का रूप क्या होगा- कहना कठिन है और यदि वह किष्किंधा में न रही, तो तुम्हारे भैया के लौटने पर घटनाओं का रूप क्या होगा, यह कहना भी कठिन है। तारा ने कहा, फिर भी मैं चाहती हूँ कि समय रहते उसे

किसी सुरक्षित स्थान पर भिजवा दो। यदि वह अपने पिता के घर जाना चाहे तो ठीक है, नहीं तो किसी सुरक्षित स्थान पर तारा कुछ रुककर बोलीं, यह मैं ईर्ष्यावश नहीं, उसकी सुरक्षा के लिए कह रही हूँ।

हम समझते हैं। वृद्ध सुषेण ने सिर हिलाया, यही करो, युवराज।

दिन बीतते जा रहे थे और बालि का कोई समाचार नहीं मिल रहा था। गुप्तचर विभाग भी सर्वथा असफल सिद्ध हो रहा था। वानर-यूथों की खोज का भी कोई फल नहीं निकला था। बालि ने स्वयं भी कोई संदेश नहीं भिजवाया था। सामान्य जन में यह विश्वास बढ़ता जा रहा था कि या तो बालि और मायावी दोनों ही किसी दुर्घटना में फँसकर नदी, समुद्र, गुफा अथवा किसी गहरे खड्डे में जा गिरे हैं, जहाँ उन्हें खोजा नहीं जा सकता; अथवा बालि का वध कर मायावी उनके शव को छिपा, वानरों के प्रतिशोध से भयभीत होकर भाग गया है। संभव है, वह लंका में जा पहुँचा हो- वहीं वह सबसे अधिक सुरक्षित था।

सुग्रीव को भाई संबंधी आशंकाओं के साथ-साथ किष्किंधा की राजनीतिक हलचलें भी चिंतित कर रही थीं। उनके अपने सहयोगियों में से सिवाय अंगद के कोई भी राज-परिषद का सदस्य नहीं था। बालि के अनेक मंत्री और महासामंत, उनकी कितनी ही नीतियों को लेकर सुग्रीव से सहमत नहीं थे। उनका सीधा तर्क था- सुग्रीव की स्थिति युवराज की थी। नीतियाँ सम्राट निर्धारित करते हैं। यदि युवराज द्वारा नई नीतियाँ निर्धारित करने का अधिकार स्वीकार कर लिया जाए, तो सम्राट के लौटने पर उनको क्या उत्तर दिया जाएगा। राजसभा में सुग्रीव प्राय: अकेले पड़ जाया करते थे। अंगद भी बहुत सहायता नहीं कर पाते थे। और सुग्रीव की आँखों के सम्मुख ही किष्किंधा में जन-विरोधी नीतियाँ और आज्ञाएँ न केवल प्रचारित होती जा रही थीं- वरन् शत्रुओं का पक्ष शक्तिशाली होता जा रहा था।

कई दिनों तक सुग्रीव सोचते रहे, अपने मित्रों से परामर्श करते रहे, किंतु कोई निश्चित समाधान नहीं मिल रहा था। इस स्थिति का अंत तभी संभव था, जब सम्राट अनुपस्थित होने के स्थान पर उपस्थित हों। या तो बालि ही लौट आएँ, या उनके स्थान पर नया सम्राट सत्ता सँभाले। युवराज के रूप में यह अधिकार स्वयं सुग्रीव का था; और बालि का पुत्र होने के नाते राजकुमार अंगद का। या फिर स्वयं साम्राज्ञी सम्राट की अनुपस्थिति में समस्त अधिकारों को अपने हाथों में लें। नहीं तो यह डाँवाडोल स्थिति सँभल नहीं सकती। और ऐसी अनिश्चित स्थिति न शासन के लिए शुभ थी, न जनसामान्य के लिए हितकारी।

जब कोई समाधान नहीं सूझा तो सुग्रीव विचार-विमर्श के लिए तारा के पास पहुँचे। तारा ने सारी बात धैर्यपूर्वक सुनी और बोलीं, इधर मुझे भी इस प्रकार की अनेक सूचनाएँ मिली हैं। अंगद भी एकाधिक बार कह चुका है- सम्राट की अनुपस्थिति के कारण शासन में अनिश्चितता और अस्थिरता है।

मैं इसीलिए आपके पास आया हूँ, भाभी। सुग्रीव बोले, कि या तो शासन की बागडोर आप अपने हाथ में ले लें अथवा अंगद का अस्थायी राज्याभिषेक कर दें, ताकि भैया के लौटते ही शासन उन्हें लौटाया जा सके।

सम्राट के लौटने की कोई संभावना मुझे तो दिखाई नहीं पड़ती। तारा कुछ उदास हो गईं, फिर भी यदि तुम कहते ही हो, तो अभिषेक अस्थायी ही हो- किंतु अंगद का नहीं, तुम्हारा। क्यों ?

युवराज होने के नाते सम्राट के पश्चात् राज्य पर तुम्हारा ही अधिकार है। तारा बोलीं, स्त्री होने के नाते राजकाज में आज तक मुझे कोई भाग नहीं लेने दिया गया। न मेरी कोई इच्छा ही है। रह गया अंगद, तो वह अभी बच्चा है और तुम्हारा शिष्य है। उसे तुमसे अभी बहुत कुछ सीखना है। वैसे भी यह अस्थायी अभिषेक है। सम्राट के लौटते ही, शासन फिर उन्हें सौंप दिया जाएगा।

सुग्रीव, कुछ सोचते हुए, चुपचाप बैठे उन्हें देखते रहे।

सहमत नहीं हो ?

सुग्रीव बोले, आप शासन सँभालना नहीं चाहतीं। आपके कहने से मैं शासन सँभाल नहीं सकता राजसभा में मेरा विपक्षी दल एक स्वर में कहेगा कि मैंने अबोध साम्राज्ञी को बहका लिया है। अंगद बालक है, अत: उसका समर्थन भी मेरी सहायता नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में मेरे अस्थायी राज्याभिषेक.. तुम ठीक कहते हो। तारा गंभीर हो गईं, तुम्हारे शासन का प्रस्ताव रखने वाला कोई अन्य प्रौढ़ पुरुष होना चाहिए। सहसा उनका स्वर धीमा और आश्वस्त हो गया, तुम्हारे अभिषेक का प्रस्ताव भैया तार करेंगे। मैं उनसे बात कर लूँगी। पिताजी उनका समर्थन करेंगे। तुम निश्चिंत रहो।

सुग्रीव पश्चातापके स्वरमें बोल रहे थे- मन्त्रियोंने मेरे अनुमानको सत्य मान लिया और आपत्कालीन राजसभा बुलाकर मुझे हठ करके

सिंहासनपर बैठा दिया। सिंहासन दो घड़ी भी सूना नहीं रहना चाहिये। मन्त्रियोंका कहना था- इस समय जब दानवके आक्रमणकी सम्भावना है, राजाकी हमे अत्यन्त आवश्यकता है। राजाके नेतृत्वमें ही हम शत्रुका सङ्गठित होकर सामना कर सकते हैं।

मेरे राज्यकाल में मैंने वानर जाति के प्रशिक्षण का बाल-बार प्रस्ताव किया- यदि कोई अपनी संतान को अशिक्षित रखना चाहेगा अथवा कुशिक्षा देना चाहेगा तो मुझे आपत्ति होगी- क्योंकि संतान चाहे वह उसी की है, किंतु वह वानर जाति की अगली पीढ़ी भी है। अपनी जाति की भावी पीढ़ी को सुशिक्षा देने के लिए हम दृढ़संकल्प हैं। यदि कोई व्यक्ति अपनी संतान को यह शिक्षा देता है कि प्रत्येक मनुष्य समान नहीं है, कोई नीचा है, कोई ऊँचा है, इतना ही नहीं, श्रेष्ठ वह है जो किसी षडयंत्र के कारण धन एकत्रित कर लेता है और हीन वह है जो अपने श्रम के बल पर ईमानदारी से जीता है- तो इस शिक्षा का विरोध हम अवश्य करेंगे। यह शिक्षा भावी पीढ़ी के लिए विष है। इस प्रकार मानवता की हत्या की अनुमति हम नहीं देंगे।

दो कारणों से। प्रथम तो यह कि जब अपने देश का धन व्यय कर शिक्षा के लिए किसी को भेजना ही है, तो विदेश वे लोग जाएँ, जो उसके योग्य हैं, जो अपने देश में उपलब्ध शिक्षा साधनों का लाभ उठा चुके हैं; और अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए उनका विदेश जाना आवश्यक हो गया है। दूसरे, धन की शक्ति के कारण अयोग्य लोग विदेश जाकर अपने देश का अपयश फैलाएँ तथा लौटकर विदेशी ज्ञान की धौंस से अपने देश के योग्य व्यक्तियों के शीर्ष पर प्रतिष्ठित हों- यह अनुचित है।

दूसरा अपना अधिकार प्राप्त करने के लिए उन्होंने जब तुम्हारी हिंसा का विरोध अपनी हिंसा से किया तो तुम उन पर हिंसा का आरोप लगाने लगे। अब शासन की ओर से और अधिक हिंसा का प्रयोग कर, सामान्य जन के मौलिक अधिकारों का दमन नहीं होना चाहिए ; अन्यथा जनता की ओर से भी अधिक हिंसा होगी। हमें उनके अधिकारों को मान्यता देनी होगी, वे भी मनुष्य हैं, हमारी अपनी जाति के हैं, हमारे बन्धु हैं।

सबका अनुमान व्यर्थ था। बालि दो घड़ीमें ही आ पहुँचा। वह अत्यन्त क्रुद्ध था। शिलासे गुहा-द्वार बन्द पाकर वह मुझपर सन्देह कर बैठा था कि मैंने उसे मार देनेका प्रयत्न किया है। और उन्हें सूचना मिली थी कि सुग्रीव ने अलका को उसकी इच्छा के अनुसार उसे पिता के पास भेज दिया था। बालि के वक्ष में तब से जैसे एक असहनीय पीड़ा घुमड़ रही थी बालि ने अपने सुख के लिए किष्किंधा से इतना दीर्घ और भयंकर निष्कासन स्वीकार किया था और सुग्रीव की तनिक-सी इच्छा ने, वह सारा सुख बालि से छीन लिया, उनके जीवन की सबसे बड़ी निधि का अपहरण कर लिया। किसी ने सुग्रीव को नहीं रोका। सुग्रीव युवराज न रहकर सम्राट हो गया है। उसके पास राजनीतिक सत्ता है। उस सत्ता के कारण वह जिसका चाहे सुख छीन सकता है, जिसकी चाहे संपत्ति छीन सकता है। बालि का सुख भी बालि अपने आप में कुछ भी नहीं है। सब कुछ राजशक्ति ही है कल यदि सुग्रीव बालि के प्राण भी लेना चाहे, तो वह भी ले सकता है।

बालि की आँखों के सम्मुख दिन के समय का वह दृश्य घूम गया वन से बाहर निकल वे किष्किंधा की प्राचीर के पास पहुँच गए थे, ठीक उसी स्थान पर, जहाँ के भग्नांश से वे मायावी के पीछे वन में उतर गए थे। किंतु अब उस भग्नांश की ही मरम्मत नहीं हो चुकी थी- संपूर्ण प्राचीर का ही जीर्णोद्धार हो चुका था। प्राचीर पक्की तथा ऊँची हो चुकी थी, जैसे बाहर से होनेवाले आक्रमण के लिए चुनौती बनकर खड़ी हो। प्राचीर के चारों ओर सैनिक चौकियाँ स्थापित हो चुकी थीं बालि का मन स्तब्ध रह गया। कहीं ऐसा तो नहीं कि उनकी अनुपस्थिति में किसी शत्रु ने नगर पर आधिपत्य स्थापित कर लिया हो और अब प्राचीर पक्की कर, चारों ओर सैनिक चौकियाँ बैठा, लौटने पर उनके वध की तैयारी में हो उस शत्रु ने यह तो नहीं सोचा कि बालि यदि मायावी के पीछे एक गुफा में उतरे थे तो उन्हें उसी गुफा में बंद कर दिया जाए। बालि का सारा शरीर स्वेद से भीग गया।

प्राय: वर्ष-भर की अनुपस्थिति के पश्चात् बालि लौटा था। सुग्रीव के मन में कितना उल्लास था। जिस भाई के जीवन से वे निराश हो चुके थे, वह साक्षात् सम्मुख आ खड़ा हो तो किसे प्रसन्नता नहीं होगी। बालि मात्र जीवित ही नहीं था- अपने शत्रु की लंबी और कठिन खोज के पश्चात् उसका वध कर, विजयी के रूप में किष्किंधा लौटा था। सारे राजपरिवार में उत्सव की-सी स्थिति थी तारा भाभी के पति लौटे थे, अंगद के पिता पर ऐसी स्थिति में भी बालि प्रसन्न दिखाई नहीं पड़ रहा था। वह सुग्रीव के साथ नगर के निरीक्षण के लिए निकला था। चलते-चलते एक स्थान पर वह नगर-प्राचीर के पास रुक गया।

इस स्थान को पहचानते हो, सुग्रीव ? सुग्रीव इस स्थान को भली प्रकार पहचानते थे यह वही स्थान था, जहाँ प्राचीर टूटी हुई थी और जिस पर से कूदकर मायावी भाग निकला था। क्यों नहीं पहचानूँगा। आपने इसे सियार की गुफा कहा था। सुग्रीव ने बालि को देखा,

आपने मुझे इस स्थान पर दृष्टि रखने के लिए कहा था।

बालि का व्यवहार सहज नहीं था। उसके चेहरे पर चरम क्षोभ के भाव थे और आँखों में विक्षिप्तप्रायावस्था झलक रही थी। मैंने दृष्टि रखने के लिए कहा था, ताकि मायावी वापस न लौट सके; और तुमने प्राचीर का जीर्णोद्धार करा दिया, ताकि बालि ही न लौट सके।

भैय्या। सुग्रीव चीत्कार कर उठे। सत्य सुना नहीं जाता ? बालि जैसे आपे में नहीं था, मैं क्या इतना भी नहीं समझता।

तो क्या सत्य ही बालि यह समझता है कि सुग्रीव ने उसे वापस न लौटने देने के लिए ही प्राचीर की मरम्मत करवाई थी ? क्या वह इतनी सी बात भी नहीं सोच सकता कि किष्किंधा लौटने का एकमात्र मार्ग प्राचीर का वह टूटा हुआ भाग ही नहीं है।

बालि की अपनी चिंतन-पद्धति थी। सुग्रीव क्या कर सकते थे। बालि ने यदि यह मान लिया है कि प्राचीर का जीर्णोद्धार उकसा किष्किंधा प्रवेश रोकने के लिए ही था, तो कोई उसे अन्य बात कैसे समझा सकता है ? संभव है, उसने यह भी मान लिया हो कि वहाँ जो सैनिक थे, वे उसकी खोज के लिए नहीं, उसकी हत्या के लिए नियुक्त किए गए थे और यदि एक बार बालि के मन में ऐसी बात आ गई तो उसे समझाना असंभव है कहीं बालि वह तो नहीं समझ बैठा कि सुग्रीव ने उसकी हत्या का प्रयत्न किया है ? यदि ऐसा है तो बालि, सुग्रीव को जीवित नहीं छोड़ेगा।

वह क्षण बहुत शीघ्र बीत गया था। किंतु यह विचार बालि के मस्तिष्क से जैसे चिपक गया था। नगर पर किसी शत्रु का आधिपत्य नहीं था, उनके अपने भाई सुग्रीव का नियंत्रण हुआ था। सुग्रीव युवराज से सम्राट बन गया था। उसी ने प्राचीर का जीर्णोद्धार करवाया था, नगर के चारों ओर सैनिक चौकियाँ बैठाई थीं और अलका को बालि से छीन किसी अज्ञात देश में उस व्यक्ति को सौंप दिया था, जो उसका पिता था सुग्रीव क्या बालि का मायावी से कम शत्रु था ? सुग्रीव यह सब कर सका, क्योंकि राजनीतिक सत्ता उसके पास थी। वह चाहे तो कल प्रात: बालि का राज्य लौटाने के स्थान पर उनका वध भी कर सकता है वध। बालि का शरीर फिर एक बार स्वेद से भीग गया राजसत्ता के बिना बालि सम्राट तो नहीं हो सकते, वे जीवित भी नहीं रह सकते बालि को लग रहा था, राजसत्ता और उनके प्राण जैसे मिलकर एक हो गए थे उनके प्राण लेने के लिए उनकी सत्ता छीन लेना ही पर्याप्त था। सत्ता बालि के पास रहे तो यह प्रासाद उनका है, नगर उनका है, सेना उनकी है, अलका उनकी है और सत्ता सुग्रीव के पास हो तो न प्रासाद बालि का, न नगरी बालि की, न सेना बालि की, न अलका बालि की, न सुख बालि का, न प्राण बालि की, सुग्रीव ने युवराज रहकर ही प्रजा का पालन क्यों नहीं किया, वह सम्राट क्यों बन बैठा ? उसने प्राचीर का जीर्णोद्धार क्यों कराया ? सैनिक चौकियाँ क्यों बैठाईं ? अलका को बालि से क्यों छीना बालि के भीतर का हिंस्र पशु बार-बार अंगड़ाइयाँ ले रहा था सुग्रीव। दुष्ट सुग्रीव। तूने भाई होकर मेरे साथ शत्रु का कार्य किया छली कल प्रात: एक बार बालि को राजसभा में सिंहासन पर बैठ तो लेने दे, सुग्रीव।

वह समझता था कि मैं पहिले ही दिन गुफा-द्वार रुद्ध करके नगरमें आ गया। मुझे सिंहासनपर बैठा देखकर उसका सन्देह पुष्ट हो गया। सुग्रीव सखेद बोले- बालिको देखते ही मन्त्रीगण उसकी जयध्वनि करने लगे। मैं सिंहासनसे भाईकी पदवन्दना करने उठा ही था कि उसने मुझे पकड़कर पटक दिया। मुझे घूसोंसे मारने लगा। मैं भागता नहीं तो बालि उस दिन मुझे मार डालता।

इस प्रकार शत्रुका वध करके मेरे भाईने उस समय नगरमें प्रवेश किया। उन महात्माका सम्मान करते हुए मैंने यथोचित रूपसे उनके चरणोंमें मस्तक झुकाया तो भी उन्होंने प्रसन्नचित्तसे मुझे आशीर्वाद नहीं दिया। प्रभो ! मैंने भाईके सामने झुककर अपने मस्तकके मुकुटसे उनके दोनों चरणोंका स्पर्श किया तो भी क्रोधके कारण बालि मुझपर प्रसन्न नहीं हुए।

सुग्रीव कहते हैं- तदनन्तर क्रोधसे आविष्ट तथा विक्षुब्ध होकर आये हुए अपने बड़े भाईको उनके हितकी कामनासे मैं पुन: प्रसन्न करनेकी चेष्टा करने लगा। मैंने कहा- अनाथनन्दन। सौभाग्यकी बात है कि आप सकुशल लौट आये और वह शत्रु आपके हाथसे मारा गया। मैं आपके बिना अनाथ हो रहा था। अब एकमात्र आप ही मेरे नाथ हैं। यह बहुत-सी तीलियोंसे युक्त तथा उदित हुए पूर्ण चन्द्रमाके समान श्वेत छत्र मैं आपके मस्तकपर लगाता और चँवर डुलाता हूँ। आप इन्हें स्वीकार करें।

वानरराज ! मैं बहुत दु:खी होकर एक वर्षतक उस बिलके दरवाजेपर खड़ा रहा। उसके बाद बिलके भीतरसे खूनकी धारा निकली। द्वारपर वह रक्त देखकर मेरा हृदय शोकसे उद्विग्न हो उठा और मेरी सारी इन्द्रियाँ अत्यन्त व्याकुल हो गयीं।

तब उस बिलके द्वारको एक पर्वत-शिखरसे ढककर मैं उस स्थानसे हट गया और पुन: किष्किन्धापुरीमें चला आया।

यहाँ विषादपूर्वक मुझे अकेला लौटा देख पुरवासियों और मन्त्रियोंने ही इस राज्यपर मेरा अभिषेक कर दिया। मैंने स्वेच्छासे इस

राज्यको नहीं ग्रहण किया है। अत: अज्ञानवश होनेवाले मेरे इस अपराधको आप क्षमा करें।

आप ही यहाँके सम्माननीय राजा हैं और मैं सदा आपका पूर्ववत् सेवक हूँ। आपके वियोगसे ही राजाके पदपर मेरी यह नियुक्ति की गयी। मन्त्रियों, पुरवासियों तथा नगरसहित आपका यह सारा अकंटक राज्य मेरे पास धरोहरके रूपमें रक्खा था। अब इसे मैं आपकी सेवामें लौटा रहा हूँ। आप मुझपर क्रोध न करें। राजन्। मैं इसके लिये मस्तक झुकाकर प्रार्थना करता हूँ और हाथ जोड़ता हूँ।

मन्त्रियों तथा पुरवासियोंने मिलकर जबर्दस्ती मुझे इस राज्यपर बिठाया है। वह भी इसलिये कि राजासे रहित राज्य देखकर कोई शत्रु इसे जीतनेकी इच्छासे आक्रमण न कर बैठे।

मैंने ये सारी बातें बड़े प्रेमसे कही थीं, किंतु उस वानरने मुझे डाँटकर कहा- तुझे धिक्कार है। यों कहकर उसने मुझे और भी बहुत-सी कठोर बातें सुनायीं। तत्पश्चात् उसने प्रजाजनों और सम्मान्य मन्त्रियोंको बुलाया तथा सुहृदोंके बीचमें मेरे प्रति अत्यन्त निन्दित वचन कहे। यद्यपि वह असुर मायावी बड़ा बलवान् था तथापि मुझे एक दूसरे सहायकके साथ देखते ही भयभीत हो उस रातमें भाग चला। हम दोनों भाइयोंको आते देख वह बड़े वेगसे दौड़ा और एक विशाल गुफामें घुस गया।

उस अत्यन्त भयंकर विशाल गुफामें उस असुरको घुसा हुआ जानकर मैंने अपने इस क्रूरदर्शी भाईसे कहा- सुग्रीव। इस शत्रुको मारे बिना मैं यहाँसे किष्किन्धापुरी को लौट चलनेमें असमर्थ हूँ; अत: जबतक मैं इस असुरको मारकर लौटता हूँ, तबतक तुम इस गुफाके दरवाजेपर रहकर मेरी प्रतीक्षा करो।

ऐसा कहकर और यह तो यहाँ खड़ा है ही ऐसा विश्वास करके मैं उस अत्यन्त दुर्गम गुफाके भीतर प्रविष्ट हुआ। भीतर जाकर मैं उस दानवकी खोज करने लगा और इसीमें मेरा वहाँ एक वर्षका समय व्यतीत हो गया।

इसके बाद मैंने उस भयंकर शत्रुको देखा। इतने दिनोंतक उसके न मिलनेसे मेरे मनमें कोई क्लेश या उदासीनता नहीं हुई थी। मैंने उसे उसके समस्त बन्धु-बान्धवोंसहित तत्काल कालके गालमें डाल दिया।

उसके मुखसे और छातीसे भी भूतलपर रक्तका ऐसा प्रवाह जारी हुआ, जिससे वह सारी दुर्गम गुफा भर गयी।

इस तरह उस पराक्रमी शत्रुका सुखपूर्वक वध करके जब मैं लौटा, तब मुझे निकलनेका कोई मार्ग ही नहीं दिखायी देता था; क्योंकि बिलका दरवाजा बंद कर दिया गया था।

मैंने सुग्रीव ! सुग्रीव ! कहकर बारंबार पुकारा, किंतु कोई उत्तर नहीं मिला। इससे मुझे बड़ा दु:ख हुआ। मैने बारंबार लात मारकर किसी तरह उस पत्थरको पीछेकी ओर ढकेला। इसके बाद गुफाद्वारसे निकलकर यहाँ की राह पकड़े मैं इस नगरमें लौटा हूँ।

यह सुग्रीव ऐसा क्रूर और निर्दयी है कि इसने भ्रातृप्रेमको भुला दिया और सारा राज्य अपने हाथ में कर लेनेके लिये मुझे उस गुफाके अंदर बंद कर दिया था। ऐसा कहकर वानरराज बालिने निर्भयतापूर्वक मुझे घरसे निकाल दिया। उस समय मेरे शरीरपर एक ही वस्त्र रह गया था। बालि को सुग्रीव अपने शैशव से देखते आए हैं और उनकी प्रकृति को अच्छी तरह समझते हैं। बालि अपनी विफलता नहीं सह सकते, न अपनी विफलता के कारणभूत व्यक्ति को क्षमा कर सकते हैं। विफलता छोटी हो, चाहे बड़ी-ऐसे समय में उनके भीतर क्रोध की जो आँधी उठती है, वह सामने आई प्रत्येक वस्तु को पीस डालती है।

मैं भागा; किंतु बालि तो जिसे शत्रु मान ले, उसे जीवित छोड़ना जानता ही नहीं। वह मेरे पीछे दौड़ा। भागते-भागते मैंने क्रुद्ध बालिका स्वर सुन लिया। वह मन्त्रियोंको आदेश दे रहा था- इस लोभी, भ्रातृद्रोहीकी सब सम्पत्ति राजभवन पहुँचा दो। इसकी पत्नीको भी मेरे अन्त:पुरमें पहुँचा दो। इसका भवन अधिकृत कर लो। मैं इसे मार दूँगा।

प्राण बचानेके प्रयत्नमें मैं पूरे देशमें चारों ओर भागता फिरा। वनोंमें, पर्वतोंमें, द्वीपोंमें मैं दौड़ता रहा। जनपदोंसे मैं दूर-दूर रहा। वहाँ लोगोंकी भीड़, भवन मेरी गति मन्द कर सकते थे। कोई भी मुझे पकड़ ले सकते थे। मैं जानता था, इस बार पकड़नेपर बालि मुझे मार ही डालेगा। सुग्रीव वर्णनके समय भी सशम होकर इधर-उधर देखने लगे- यही सृष्टिकर्ताकी कृपा थी कि दौड़नेमें बालिसे मेरा वेग अधिक था। लेकिन जैसे प्राणीके पीछे मृत्यु पडी रहती है, बालि मेरे पीछे पड़ा था। कहीं भी मुझे बैठनेका अवकाश नहीं था।

मैं थककर गिर जाता यदि ऐसे ही और अधिक दौड़ना पड़ता। इस भाग-दौड़में व्याकुल मैं सब कहींसे निराशय घूमकर किष्किन्धाकी ओर ही इस ऋष्यमूक पर्वतपर पहुँचा तो मुझे मानो प्राणदान मिला। सुग्रीवने कहा- मैं भयके कारण भूल ही गया था कि बालि इस पर्वतपर शापके कारण नहीं आ सकता। मैं आश्वस्त होकर खड़ा हो गया जब पर्वतपर मेरे पहुँचते ही बालि का क्रुद्ध स्वर सुन पड़ा-

देखूँगा कि तू कब तक इसी पर्वतपर दुबका रहता है। कई बार मैंने आत्महत्या करने का प्रयत्न किया।

तत्काल ही एक दूसरा स्वर सुग्रीव के मन में गूँजने लगा- इस मृग-मरीचिका में मत फँसना, सुग्रीव। तुम्हारे रक्त से कोई कलंक नहीं धुलेगा। यदि कुछ धुलेगा, तो केवल वानरों का सुखद भविष्य। तुम भावनाओं के आवशे में बह जाने वाले, काल्पनिक आदर्शों में जीने वाले अव्यवहारिक जीव नहीं हो- तुम व्यवहारिक और विवेकी राजनीतिज्ञ हो। प्राण देने से कोई लाभ नहीं होगा। अपने प्राणों की रक्षा करो। इन प्राणों से और बहुत कुछ करना है। आवेश में बह जाना बुद्धिमत्ता नहीं है। आवेश को संयत करो, संतुलित करो और उसे दिशा दो। अंगद ने इतना जोखिम उठाकर, अपने पिता के विरुद्ध तुम्हारी सहायता की है। उसके इस साहसी कृत्य पर पानी मत फेरो। उसे तुमसे कुछ आशाएँ हैं। यदि वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ, तो मतंग वन में हनुमान भी मिल जाएँगे। वहाँ बैठकर शांत मन से सोच-विचार कर, हनुमान के साथ विचार-विमर्श कर, भविष्य का कार्यक्रम बनाया जा सकता है। और यदि बालि से द्वंद्व-युद्ध कर, उसी के हाथों मरना है, तो उसके लिए यही घड़ी उपयुक्त समय नहीं है। बालि को तो कभी भी ललकारा जा सकता है।

रघुनन्दन ! उसने मुझे घरसे तो निकाल ही दिया, मेरी स्त्रीको भी छीन लिया। उसके भयसे मैं वनों और समुद्रोंसहित सारी पृथ्वीपर मारा-मारा फिरता रहा। अन्ततोगत्वा मैं भार्याहरणके दु:खसे दुखी हो इस श्रेष्ठ पर्वत ऋष्यमूकपर चला आया; क्योंकि एक विशेष कारणवश बालिके लिये इस स्थानपर आक्रमण करना बहुत कठिन है।

मुझे स्मरण आ गया कि बालिके लिए यह पर्वत प्रशस्त है। मुझे एक सुरक्षित स्थान मिला। तबसे मैं इसी पर्वतपर हूँ। मेरे विपत्तिके बन्धु ये चारों मन्त्री मेरे समीप आ गये यहाँ और मेरे साथ ही रहते हैं। इनका सौहार्द्र- अन्यथा निर्वासित सुग्रीव इन्हें क्या दे सकता है।

वे साधारण वानर सैनिक हैं। अधिक शिष्टाचार नहीं जानते। उनके शब्द खुरदरे है, व्यवहार कठोर। अधिकार प्रदर्शित करने का अवसर मिलते ही आवश्यकता से अधिक उग्र हो जाते हैं।

सुग्रीवने कृतज्ञतापूर्वक मन्त्रियोंकी ओर देखा- लेकिन यहाँ भी मैं सर्वदा सशम रहता हूँ। बालि शत्रुता भूला नहीं करता। वह कभी किसीको मुझे मारने भेज सकता है।

बालि से हमारा मतैक्य तो नहीं ही रहा, समय-समय पर खुला मतभेद भी होता रहा है। सुग्रीव जैसे अपने-आप से बातें कर रहे थे, जब तक बालि सम्राट था, मैं उसे अपनी राय देता रहा; किंतु उसका विरोध कर उसे हानि पहुँचाने की बात मैंने कभी नहीं सोची। अंतत: हम भाई हैं, शत्रु नहीं। राजनीतिज्ञ होते हुए भी, हमारे व्यवहार का मूल आधार भ्रातृत्व था। मैंने कभी नहीं सोचा कि हम एक-दूसरे के शत्रु हैं। एक ही कुल के सदस्य, एक ही जाति, एक ही गोत्र-फिर शत्रुता कैसी ? वह विरोध भी जैसे आपसी ही था। उसमें क्रूरता और कठोरता के लिए स्थान नहीं था।

सुग्रीव को लगता था, वे प्रतिदिन पहले से अधिक कठोर होते जा रहे हैं। भीतर से आग और ऊपर से पत्थर। अब तक बालि को वे अयोग्य शासक मानते थे, किंतु अब वह अत्याचारी हो गया था। अयोग्य शासक की प्रजा उसकी शिकायत करती है- उसके सम्मुख अपनी माँगें रखती है और उन्हें पूरा करवाने का प्रयत्न करती है; किंतु अत्याचारी शासक से प्रजा घृणा करती है। वह उसका विरोध करती है और अवसर मिलते ही उससे जा टकराती है। क्या बालि से भी टकराने का समय आ गया है ? तो प्रजा विद्रोह क्यों नहीं कर रही ? क्या अत्याचार सघन नहीं हुआ या वानर-प्रजा दमित जाति है, जो कभी भी शासक के विरुद्ध उठने का साहस नहीं जुटा पाएगी।

सुग्रीव को लगा, उनके मन का आदर्श चरमराकर टूट गिरा है और उसके टुकड़ों से उनका मन स्थान-स्थान से छिल गया है। जगह-जगह से रक्तस्राव हो रहा है, और उस आदर्श की मूर्ति के टुकड़ों की चुभन से कितने ही स्थानों से विष जन्म ले रहा है। क्या आचार्य वह होता है, जो अपने टुच्चे स्वार्थों के पीछे, न्याय-अन्याय को अनदेखा कर जाए, अत्याचार को कृपा का नाम दे और अपनी बौद्धिक श्रेष्ठता की ओट में जनसामान्य को भ्रमित करे क्या लाभ ऐसी विद्या और ऐसे ज्ञान का। पुरानी, सड़ी हुई सूचनाओं के थोथे चरित्र में उदात्तता का एक कण नहीं। तनिक-सी असुविधा सहन नहीं कर सकते। तत्काल घुटनों पर गिरकर, अत्याचारियों के तलवे चाटने लगे। क्या करेंगे ऐसे लोग किसी देश और जाति का नेतृत्व। सुख-सुविधाओं के कीड़े।

बालि और सुग्रीव भाई नहीं हो सकते- उन्हें दो विरोधी शक्तियों का रूप ग्रहण करना ही होगा। यदि बालि का निश्चय यह है कि ये दोनों शक्तियाँ साथ-साथ जीवित नहीं रह सकतीं, इसलिए सुग्रीव को मरना होगा; तो सुग्रीव का भी निश्चय है कि यदि उसे जीवित रहना है तो बालि को मरना होगा- सुग्रीव को बालि से लड़ने की तैयारी करनी होगी। अपनी क्षमता को तौलना होगा; न्याय के पक्ष में लड़ने

बालि शक्तियों से संपर्क करना होगा। एक-एक वानर को न्याय के पक्ष में लाकर खड़ा करना होगा। अब तक सुग्रीव ने ये सारी बातें राक्षसों के विरुद्ध ही सोची थीं; किंतु अब कौन कह सकता है कि बालि भी राक्षस नहीं हो गया है- क्या भेद रह गया है बालि और रावण में ? रावण दूर है, सुग्रीव को पहले बालि से ही निबटना होगा।

आप इसीलिए हम दोनोंको देखकर सशम हो उठे थे। लक्ष्मणने तनिक स्मितपूर्वक कहा- बालिको किसके शापने इस पर्वतपर आना कैसे वर्जित किया है ?

रघुनाथ ! यही बालिके साथ मेरे वैर पड़नेकी विस्तृत कथा है। यह सब मैंने आपको सुना दी। देखिये, बिना अपराधके ही मुझे यह सब संकट भोगना पड़ता है।

वीरवर ! आप सम्पूर्ण जगत्का भय दूर करनेवाले हैं। मुझपर कृपा कीजिये और बालिका दमन करके मुझे उसके भयसे बचाइये।

सुग्रीवके ऐसा कहनेपर धर्मके ज्ञाता परम तेजस्वी श्रीरामने उनसे हँसते हुए-से यह धर्मयुक्त वचन कहना आरम्भ किया- मित्र। ये मेरे सूर्यके समान तेजस्वी तीखे बाण अमोघ हैं, जो दुराचारी बालिपर रोषपूर्वक पड़ेंगे।

जबतक तुम्हारी भार्याका अपहरण करनेवाले उस वानरको मैं अपने सामने नहीं देखता हूँ, तबतक सदाचारको कलंकित करनेवाला वह पापात्मा वाली जीवन धारण कर ले। मैं अपने ही अनुमानसे समझता हूँ कि तुम शोकके समुद्रमें डूबे हुए हो। मैं तुम्हारा उद्धार करूँगा। तुम अपनी पत्नी तथा विशाल राज्यको भी अवश्य प्राप्त कर लोगे। श्रीरामका यह वचन हर्ष और पुरुषार्थको बढ़ानेवाला था। उसे सुनकर सुग्रीवको बड़ी प्रसन्नता हुई। बालि सूर्योदयके पहले ही पश्चिम समुद्रसे पूर्व समुद्रतक और दक्षिण सागरसे उत्तरतक घूम आता है; फिर भी वह थकता नहीं है।

पराक्रमी वाली पर्वतोंकी चोटियोंपर चढ़कर बड़े-बड़े शिखरोंको बलपूर्वक उठा लेता और ऊपरको उछालकर फिर उन्हें हाथोंसे थाम लेता है। वनोंमें नाना प्रकारके जो बहुत-से सुदृढ़ वृक्ष थे, उन्हें अपने बलको प्रकट करते हुए बालीने वेगपूर्वक तोड़ डाला है।

पहलेकी बात है यहाँ एक दुन्दुभि नामका असुर मायावी राक्षस का भाई रहता था, जो भैंसेके रूपमें दिखायी देता था। वह ऊँचाईमें कैलास पर्वतके समान जान पड़ता था। पराक्रमी दुन्दुभि अपने शरीरमें एक हजार हाथियोंका बल रखता था। बलके घमंडमें भरा हुआ वह विशालकाय दुष्टात्मा दानव अपनेको मिले हुए वरदानसे मोहित हो सरिताओंके स्वामी समुद्रके पास गया।

जिसमें उत्ताल तरङ्गें उठ रही थीं तथा जो रत्नोंकी निधि हैं, उस महान् जलराशिसे परिपूर्ण समुद्रको लाँघकर- उसे कुछ भी न समझकर दुन्दुभिने उसके अधिष्ठाता देवतासे कहा- मुझे अपने साथ युद्धका अवसर दो।

राजन्। उस समय महान् बलशाली धर्मात्मा समुद्र उस कालप्रेरित असुरसे इस प्रकार बोला- युद्धविशारद वीर। मैं तुम्हें युद्ध का अवसर देने-तुम्हारे साथ युद्ध करनेमें असमर्थ हूँ। जो तुम्हें युद्ध प्रदान करेगा, उसका नाम बतलाता हूँ, सुनो।

विशाल वनमें जो पर्वतोंका राजा और भगवान् शंकरका श्वसुर है, तपस्वी जनोंका सबसे बड़ा आश्रय और संसारमें हिमवान् नामसे विख्यात हैं, जहाँसे जलके बड़े-बड़े स्रोत प्रकट हुए हैं तथा जहाँ बहुत-सी कन्दराएँ और झरने हैं, वह गिरिराज हिमालय ही तुम्हारे साथ युद्ध करनेमें समर्थ है। वह तुम्हें अनुपम प्रीति प्रदान कर सकता है।

यह सुनकर असुरशिरोमणि दुन्दुभि समुद्रको डरा हुआ जान धनुषसे छूटे हुए बाणकी भाँति तुरंत हिमालयके वनमें जा पहुँचा और उस पर्वतकी गजराजोंके समान विशाल श्वेत शिलाओंको बारंबार भूमिपर फेंकने और गर्जना करने लगा।

तब श्वेत-बादलके समान आकार धारण किये सौम्य स्वभाववाले हिमवान् वहाँ प्रकट हुए। उनकी आकृति प्रसन्नताको बढ़ानेवाली थी। वे अपने ही शिखरपर खड़े होकर बोले- धर्मवत्सल दुन्दुभे। तुम मुझे क्लेश न दो। मैं युद्धकर्ममें कुशल नहीं हूँ। मैं तो केवल तपस्वी जनोंका निवासस्थान हूँ।

बुद्धिमान् गिरिराज हिमालयकी यह बात सुनकर दुन्दुभिके नेत्र क्रोधसे लाल हो गये और वह इस प्रकार बोला- यदि तुम युद्ध करनेमें असमर्थ हो अथवा मेरे भयसे ही युद्धकी चेष्टासे विरत हो गये हो तो मुझे उस वीरका नाम बताओ, जो युद्धकी इच्छा रखनेवाले मुझको अपने साथ युद्ध करनेका अवसर दे।

तब हिमवान बोला- महाप्राज्ञ दानवराज। बालि नामसे प्रसिद्ध एक परम तेजस्वी और प्रतापी वानर हैं, जो देवराज इन्द्रके पुत्र हैं और अनुपम शोभासे पूर्ण किष्किन्धानामक पुरीमें निवास करते हैं। वे बड़े बुद्धिमान और युद्धकी कलामें निपुण हैं। वे ही तुमसे जूझनेमें समर्थ

हैं। जैसे इन्द्रने नमुचिको युद्धका अवसर दिया था, उसी प्रकार बालि तुम्हें द्वन्द्वयुद्ध प्रदान कर सकते हैं।

यदि तुम यहाँ युद्ध चाहते हो तो शीघ्र चले जाओ; क्योंकि बालिके लिये किसी शत्रुकी ललकारको सह सकना बहुत कठिन है। वे युद्ध कर्ममें सदा शूरता प्रकट करनेवाले हैं। हिमवान्‌की बात सुनकर क्रोधसे भरा हुआ दुन्दुभि तत्काल बालिकी किष्किन्धापुरीमें जा पहुँचा।

उसने भैंसेका-सा रूप धारण कर रक्खा था। उसके सींग बड़े तीखे थे। वह बड़ा भयंकर था और वर्षाकालके आकाशमें छाये हुए जलसे भरे महान् मेघके समान जान पड़ता था। वह महाबली दुन्दुभि किष्किन्धापुरीके द्वारपर आकर भूमिको कँपाता हुआ जोर-जोरसे गर्जना करने लगा, मानो दुन्दुभिका गम्भीर नाद हो रहा हो। वह आसपासके वृक्षोंको तोड़ता, धरतीको खुरोंसे खोदता और घमंडमें आकर पुरीके दरवाजेको सींगोंसे खरोंचता हुआ युद्धके लिये डट गया।

बालि उस समय अन्त:पुरमें था। उस दानवकी गर्जना सुनकर वह अमर्षसे भर गया और तारोंसे घिरे हुए चन्द्रमाकी भाँति स्त्रियोंसे घिरा हुआ नगरके बाहर निकल आया।

समस्त वनचारी वानरोंके राजा बालिने वहाँ सुस्पष्ट अक्षरों तथा पदोंसे युक्त परिमित वाणीमें उस दुन्दुभिसे कहा- महाबली दुन्दुभे। मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ। तुम इस नगरद्वारको रोककर क्यों गरज रहे हो ? अपने प्राणोंकी रक्षा करो।

तब दुन्दुभि बोला- वीर। तुम्हें स्त्रियोंके समीप ऐसी बात नहीं कहनी चाहिये। मुझे युद्धका अवसर दो, तब मैं तुम्हारा बल समझूँगा।

अथवा वानर ! मैं आजकी रातमें अपने क्रोधको रोके रहूँगा। तुम स्वेच्छानुसार कामभोगके लिये सूर्योदयतक समय मुझसे ले लो।

वानरोंको हृदयसे लगाकर जिसे जो कुछ देना हो दे दो; तुम समस्त कपियोंके राजा हो न ? अपने सुहृदोंसे मिल लो, सलाह कर लो।

किष्किन्धापुरीको अच्छी तरह देख लो। अपने समान पुत्र आदिको इस नगरीके राज्यपर अभिष्कित कर दो और स्त्रियोंके साथ आज जी भरकर क्रीडा कर लो। इसके बाद मैं तुम्हारा घमंड चूर कर दूँगा।

जो मधुपानसे मत्त, प्रमत्त (असावधान), युद्धसे भागे हुए, अस्त्ररहित, दुर्बल, तुम्हारे जैसे स्त्रियोंसे घिरे हुए तथा मदमोहित पुरुषका वध करता है, वह जगत्‌में गर्भहत्यारा कहा जाता है।

यह सुनकर बालि मन्द-मन्द मुस्कराकर उन तारा आदि सब स्त्रियोंको दूर हटा उस असुरराजसे क्रोधपूर्वक बोला- यदि तुम युद्धके लिये निर्भय होकर खड़े हो तो यह न समझो कि यह बालि मधु पीकर मतवाला हो गया है। मेरे इस मदको तुम युद्धस्थलमें उत्साहवृद्धिके लिये वीरोंद्वारा किया जानेवाला औषधविशेषका पान समझो। उससे ऐसा कहकर पिता इन्द्रकी दी हुई विजयदायिनी सुवर्णमालाको गलेमें डालकर बालि कुपित हो युद्धके लिये खड़ा हो गया।

कपिश्रेष्ठ बालिने पर्वताकार दुन्दुभिके दोनों सींग पकड़कर उस समय गर्जना करते हुए उसे बार-बार घुमाया फिर बलपूर्वक उसे धरतीपर दे मारा और बड़े जोरसे सिंहनाद किया। पृथ्वीपर गिराये जाते समय उसके दोनों कानोंसे खूनकी धाराएँ बहने लगीं। क्रोधके आवेशसे युक्त हो एक-दूसरेको जीतनेकी इच्छावाले उन दोनों दुन्दुभि और बालिमें घोर युद्ध होने लगा। उस समय इन्द्रके तुल्य पराक्रमी बालि दुन्दुभिपर मुक्कों, लातों, घुटनों, शिलाओं तथा वृक्षोंसे प्रहार करने लगा। उस युद्धस्थलमें परस्पर प्रहार करते हुए वानर और असुर दोनों योद्धाओंमेंसे असुरकी शक्ति तो घटने लगी और इन्द्रकुमार बालिका बल बढ़ने लगा। उन दोनोंमें वहाँ प्राणान्तकारी युद्ध छिड़ गया। उस समय बालिने दुन्दुभिको उठाकर पृथ्वीपर दे मारा, साथ ही अपने शरीरसे उसको दबा दिया, जिससे दुन्दुभि पिस गया।

गिरते समय उसके शरीरके समस्त छिद्रोंसे बहुत-सा रक्त बहने लगा। वह महाबाहु असुर पृथ्वीपर गिरा और मर गया।

जब उसके प्राण निकल गये और चेतना लुप्त हो गयी, तब वेगवान् बालिने उसे दोनों हाथोंसे उठाकर एक साधारण वेगसे एक योजन दूर फेंक दिया। वेगपूर्वक फेंके गये उस असुरके मुखसे निकली हुई रक्तकी बहुत-सी बूँदें हवाके साथ उड़कर मतंग मुनिके आश्रममें पड़ गयीं। महाभाग। वहाँ पड़े हुए उन रक्त बिन्दुओंको देखकर मतंगमुनि कुपित हो उठे और इस विचारमें पड़ गये कि यह कौन है, जो यहाँ रक्तके छींटे डाल गया है ? जिस दुष्टने सहसा मेरे शरीरसे रक्तका स्पर्श करा दिया, यह दुरात्मा, दुर्बुद्धि, अजितात्मा और मूर्ख कौन है ? ऐसा कहकर मुनिवर मतंगने बाहर निकलकर देखा तो उन्हें एक पर्वताकार भैंसा पृथ्वीपर प्राणहीन होकर पड़ा दिखायी दिया।

उन्होंने अपने तपोबलसे यह जान लिया कि यह एक वानरकी करतूत है। अत: उस लाशको फेंकनेवाले वानरके प्रति उन्होंने बड़ा भारी शाप दिया- जिसने खूनके छीटे डालकर मेरे निवासस्थान इस वनको अपवित्र कर दिया है, अब आजसे इस वनमें प्रवेश न करे। यदि इसमें प्रवेश करेगा तो उसका वध हो जायगा। इस असुरके शरीरको इधर फेंककर जिसने इन वृक्षोंको तोड़ डाला है, वह दुर्बुद्धि यदि मेरे

आश्रमके चारों ओर पूरे एक योजनतककी भूमिमें पैर रक्खेगा तो अवश्य ही अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठेगा।

उस बालिके जो कोई सचिव भी मेरे इस वनमें रहते हों, उन्हें अब यहाँका निवास त्याग देना चाहिये। वे मेरी आज्ञा सुनकर सुखपूर्वक यहाँसे चले जायँ। यदि वे रहेंगे तो उन्हें भी निश्चय ही शाप दे दूँगा। मैंने अपने इस वनकी सदा पुत्रकी भाँति रक्षा की है। जो इसके पत्र और अमुरका विनाश तथा फल-मूलका अभाव करनेके लिये यहाँ रहेंगे, वे अवश्य शापके भागी होंगे।

आजका दिन उन सबके आने-जाने या रहनेकी अन्तिम अवधि है- आज भरके लिये मैं उन सबको छुट्टी देता हूँ। कलसे जो कोई वानर यहाँ मेरी दृष्टिमें पड़ जायगा, वह कई हजार वर्षोंके लिये पत्थर हो जायगा।

मुनिके इस वचनको सुनकर वे सभी वानर मतङ्गवनसे निकल गये। उन्हें देखकर बालिने पूछा- मतङ्गवनमें निवास करनेवाले आप सभी वानर मेरे पास क्यों चले आये ? वनवासियोंकी कुशल तो है न ?

तब उन सभी वानरोंने सुवर्णमालाधारी बालिसे अपने आनेका सब कारण बताया तथा जो बालिको शाप हुआ था, उसे भी कह सुनाया। वानरोंकी कही हुई यह बात सुनकर बालि महर्षि मतंगके पास गया और हाथ जोड़कर क्षमा-याचना करने लगा। किंतु महर्षिने उसका आदर नहीं किया। वे चुपचाप अपने आश्रममें चले गये। इधर बालि शाप प्राप्त होनेसे भयभीत हो बहुत ही व्याकुल हो गया।

नरेश्वर। तबसे उस शापके भयसे भरा हुआ बालि इस महान् पर्वत ऋष्यमूकके स्थानोंमें न तो कभी प्रवेश करना चाहता है ओर न इस पर्वतको देखना ही चाहता है। श्रीराम। यहाँ उसका प्रवेश होना असम्भव है, यह जानकर मैं अपने मन्त्रियोंके साथ इस महान् वनमें विषाद-शून्य होकर विचरता हूँ। यह रहा दुन्दुभिकी हड्डियोंका ढेर, जो एक महान् पर्वतशिखरके समान जान पड़ता है। बालिने अपने बलके घमंडमें आकर दुन्दुभिके शरीरको इतनी दूर फेंका था।

मैं राज्य नहीं चाहता था। अग्रजका मैं अनुगामी था। मैंने भ्रमवश ही गुहा-द्वारपर शिला रखी थी। मन्त्रियोंने मुझे बलात् सिंहासनपर बैठाया था। बालिको सकुशल आया देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई थी। राज्य तो बालि का था ही। मैं जीवन-भर उसका सेवक होकर रहना चाहता था। सुग्रीवने फिर कहा- लेकिन बालिने मुझे दो शब्द भी कहनेका अवसर ही नहीं दिया। वह मेरे प्राणका शत्रु हो गया।

इन हनुमानने ही पीछे बालिको समझानेका प्रयत्न किया। इन्होंने कहा- आपके अनुज निर्दोष हैं।

मैं उसका नाम नहीं रहने दूँगा संसारमें। बालि अङ्गर नेत्र करके दाँत पीसकर बोला- देखूँगा कि वह मूषकके समान कब तक ऋष्यमूकपर छिपा रहता है। उसके सम्बन्धको कोई चर्चा मैं सुनना नहीं चाहता।

हनुमान रुष्ट होकर मेरे समीप आ गये। दूसरे किसीने फिर बालिसे कुछ कहनेका साहस नहीं किया। सुग्रीव अत्यन्त दयनीय स्वरमें बोले- ऐसे असहिष्णु अपनी धारणाके विरुद्ध विनम्र बात भी सुननेको अप्रस्तुतका भ्रम कोई कैसे दूर कर सकता है। कोई मन्त्री या दूसरा क्यों निर्वासित सुग्रीवके लिए बालिका कोप-भाजन बने।

मैं आपका अनुग्रहीत हूँ। आप धीरे-धीरे समझ लोगे कि मैं आपके अयोग्य मित्र नहीं हूँ। आप-से सत्पुरुषकी मैत्री स्थायी होती है। बालिके जीवित रहते इस पर्वतपर भी मैं उद्विग्न रहता हूँ। मैं भले इसे त्यागकर कहीं न जा सकूँ मेरे विपत्तिके साथी ये चारों मन्त्री आपकी भार्याका पता लगावेंगे। सुग्रीवने शिथिल स्वरमें कहा- आप तो परम बुद्धिमान धीर, विद्वान महत्पुरुष हो। मैं वानर हूँ, स्वभाव चञ्चल हूँ। मेरी पत्नी छीन ली गयी है। मेरा सर्वस्व हरण करके मुझे निर्वासित कर दिया गया है। शत्रु सदा मुझे मार देनेके प्रयत्नमें है। मेरी अवस्था आप स्वयं समझ सकते हैं।

अब आप निर्भय हो जायँ। मेरे इन अग्रजका स्वरूप ही अभय है। इनके आश्रितके लिए त्रिभुवनमें कहीं किसी से भय नहीं रह जाता। लक्ष्मणने सुग्रीवको समझाया- इनके पादपद्मोंके प्रपन्न का सभी अभीष्ट अवश्य पूर्ण होता है।

मैं तुम्हारे शत्रुको मार दूँगा। श्रीरामने भी आश्वासन दिया- मेरे बाण अमोघ हैं।

आप दोनों ठीक ही कहते हैं; किंतु सुग्रीवमें कोई उत्साह नहीं आया। वे वैसे ही शिथित स्वरमें में बोले- मैं रावणका निवास स्थान नहीं जानता। केवल सुना है कि समुद्रके मध्य कहीं उसकी स्वर्णपुरी लमा है। उसके पराक्रमको भी नहीं जानता। लेकिन श्रीजनक-नन्दिनीकी शोधका पूरा प्रयत्न करूँगा। रावणको बालिने शशकके समान कक्षमें दबा रखा था। अकल्पनीय बल है बालिमें। सूर्योदयसेपूर्व वह पूर्व समुद्रसे पश्चिम समुद्र और वहाँसे उत्तर तथा दक्षिणके समुद्र भी कूद जाता है। पर्वतोंको उठाकर कन्दुक क्रीड़ा करता है।

आप मुझे क्षमा करें। मैं आपकी शरण हूँ। आपका अपमान करनेका मैं साहस नहीं कर सकता। आपको भयभीत भी नहीं कर रहा

हूँ। मैं बालिके पराक्रमका स्मरण करके भयभीत हूँ। सुग्रीवने हाथ जोड़कर नम्रता पूर्वक कहा- यह जो सामने श्वेत पर्वत दीखता है यह पर्वत नहीं है। यह दुन्दुभि दानवकी अस्थियाँ हैं। बालिने दुन्दुभिको उठाकर दो सौ धनुष दूर फेंक दिया था। इन अस्थियोंको कोई थोड़ा भी हटा पाता तो मैं समझता कि वह शक्तिशाली है। ये सात सालके विशाल एवं मोटे वृक्ष हैं, जो अनेक उत्तम शाखाओंसे सुशोभित होते हैं। बालि इनमेंसे एक-एकको बलपूर्वक हिलाकर पत्रहीन कर सकता है।

श्रीराम ! यह मैंने बालिके अनुपम पराक्रमको प्रकाशित किया है। नरेश्वर ! आप उस बालिको समराङ्गणमें कैसे मार सकेंगे।

सुग्रीवके ऐसा कहनेपर लक्ष्मणको बड़ी हँसी आयी। वे हँसते हुए ही बोले- कौन-सा काम करनेमें तुम्हें विश्वास होगा कि श्रीराम बालिका वध कर सकेंगे।

तब सुग्रीवने उनसे कहा- पूर्वकालमें बालिने सालके इन सातों वृक्षोंको एक-एक करके कई बार बींध डाला है। अत: श्रीराम भी यदि इनमेंसे किसी एक वृक्षको एक ही बाणसे छेद डालेंगे तो इनका पराक्रम देखकर मुझे बालि के मारे जानेका विश्वास हो जायगा।

लक्ष्मण ! यदि इस महिषरूपधारी दुन्दुभिकी हड्डीको एक ही पैरसे उठाकर बलपूर्वक दो सौ धनुषकी दूरीपर फेंक सकें तो भी मैं यह मान लूँगा कि इनके हाथसे बालि का वध हो सकता है।

जिनके नेत्रप्रान्त कुछ-कुछ लाल थे, उन श्रीरामसे ऐसा कहकर सुग्रीव दो घड़ीतक कुछ सोच-विचारमें पड़े रहे। इसके बाद वे श्रीरामसे फिर बोले- बालि शूर है और स्वयं भी उसे अपने शौर्यपर अभिमान है। उसका बल और पुरुषार्थ विख्यात हैं। वह बलवान् वानर अबतकके युद्धोंमें कभी पराजित नहीं हुआ है। इसके ऐसे-ऐसे कर्म देखे जाते हैं, जो देवताओंके लिये दुष्कर हैं और जिनका चिन्तन करके भयभीत हो मैंने इस ऋष्यमूक पर्वतकी शरण ली है।

वानरराज बालिको जीतना दूसरोंके लिये असम्भव है। उसपर आक्रमण अथवा उसका तिरस्कार भी नहीं किया जा सकता। वह शत्रुकी ललकारको नहीं सह सकता। जब मैं उसके प्रभावका चिन्तन करता हूँ, तब इस ऋष्यमूक पर्वतको एक क्षणके लिये भी छोड़ नहीं पाता हूँ। ये हनुमान आदि मेरे श्रेष्ठ सचिव मुझमें अनुराग रखनेवाले हैं। इनके साथ रहकर भी मैं इस विशाल वनमें बालिसे उद्विग्न और शमित होकर ही विचरता हूँ।

मित्रवत्सल ! आप मुझे परम स्पृहणीय श्रेष्ठ मित्र मिल गये हैं। पुरुषसिंह ! आप मेरे लिये हिमालयके समान हैं और मैं आपका आश्रय ले चुका हूँ इसलिये अब मुझे निर्भय हो जाना चाहिये। किंतु रघुनन्दन ! मैं उस बलशाली दुष्ट भ्राताके बलपराक्रमको जानता हूँ और समरभूमिमें आपका पराक्रम मैंने प्रत्यक्ष नहीं देखा है। प्रभो ! अवश्य ही मैं बालिसे आपकी तुलना नहीं करता हूँ। न तो आपको डराता हूँ और न आपका अपमान ही करता हूँ। बालिके कर्मोंने ही मेरे हृदयमें कातरता उत्पन्न कर दी है। रघुनन्दन। निश्चय ही आपकी वाणी मेरे लिये प्रमाणभूत है- विश्वसनीय है; क्योंकि आपका धैर्य और आपकी यह दिव्य आकृति आदि गुण राखसे ढकी हुई आगके समान आपके उत्कृष्ट तेजको सूचित कर रहे हैं।

महात्मा सुग्रीवकी यह बात सुनकर भगवान् श्रीराम पहले तो मुस्कराये। फिर उस वानरकी बातका उत्तर देते हुए उससे बोले- वानर। यदि तुम्हें इस समय पराक्रमके विषयमें हम लोगोंपर विश्वास नहीं होता तो युद्धके समय हम तुम्हें उसका उत्तम विश्वास करा देंगे।

ऐसा कहकर सुग्रीवको सान्त्वना देते हुए श्रीरघुनाथने खिलवाड़में ही दुन्दुभिके शरीरको अपने पैरके अँगूठेसे टाँग लिया और उस असुरके उस सूखे हुए कमालको पैरकें अँगूठेसे ही दस योजन दूर फेंक दिया।

उसके शरीरको फेंका गया देख सुग्रीवने लक्ष्मण और वानरोंके सामने ही तपते हुए सूर्यके समान तेजस्वी वीर भी श्रीरामसे पुन: यह अर्थभरी बात कहीं- सखे ! मेरा भाई बालि उस समय मदमत्त और युद्धसे थका हुआ था और दुन्दुभिका यह शरीर खूनसे भीगा हुआ, मांसयुक्त तथा नया था। इस दशामें उसने इस शरीरको पूर्वकालमें दूर फेंका था। परंतु रघुनन्दन। इस समय यह मांसहीन होनेके कारण तिनकेके समान हल्का हो गया है और आपने हर्ष एवं उत्साहसे युक्त होकर इसे फेंका है। अत: श्रीराम। इस लाशको फेंकनेपर भी यह नहीं माना जा सकता कि आपका बल अधिक है या उसका; क्योंकि वह गीला था और यह सूखा। यह इन दोनों अवस्थाओंमें महान् अन्तर है। तात ! आपके और उसके बलमें वही संशय अबतक बना रह गया। अब इस एक सालवृक्षको विदीर्ण कर देनेपर दोनोंके बलाबलका स्पष्टीकरण हो जायगा।

आपका यह धनुष हाथीकी फैली हुई सूँड़के समान विशाल है। आप इसपर प्रत्यञ्चा चढ़ाइये और इसे कानतक खींचकर सालवृक्षको

लक्ष्य करके एक विशाल बाण छोड़िये। इसमें संदेह नहीं कि आपका छोड़ा हुआ बाण इस साल वृक्षको विदीर्ण कर देगा। राजन्। अब विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं अपनी शपथ दिलाकर कहता हूँ, आप मेरा यह प्रिय कार्य अवश्य कीजिये।

जैसे सम्पूर्ण तेजोंमें सदा सूर्यदेव ही श्रेष्ठ हैं, जैसे बड़े-बड़े पर्वतोंमें गिरिराज हिमवान् श्रेष्ठ हैं और जैसे चौपायोंमें सिंह श्रेष्ठ है, उसी प्रकार पराक्रमके विषयमें सब मनुष्योंमें आप ही श्रेष्ठ हैं।

सुग्रीवने इसपर ध्यान ही नहीं दिया कि दोनों हाथोंसे बालिने दानवको फेंका था। पदाङ्गुष्ठसे बालि भी इन अस्थ्यिोंको हिला पाता, इसमें सन्देह था। लेकिन सुग्रीवने सम्मुखके सात तालवृक्षोंकी ओर संकेत करके एक कथा सुनाना प्रारम्भ किया-

महर्षि मतंगने बालिको शाप दिया, उससे पहिलेकी बात है। बालि बरसातमें सात सुपक्व ताल फल ले आया। यहाँ उन फलोंको रखकर स्नान करने चला गया। लौटनेपर उसने देखा कि एक सर्प उसके फलोंके ऊपर लेटा हुआ है। तूने मेरे फल दूषित कर दिए, जब कि तू इन्हें खा नहीं सकता। बालिने क्रोधमें आकर उस सर्पको शाप दिया- अत: ये फल तेरा शरीर फोड़कर उगेंगे और वृक्ष बनेंगे।

मैं इनकी गन्धसे आकृष्ट होकर आया। इनका स्पर्श सुखद लगा, इसलिए इनपर लेट गया। मैंने इनको मुख नहीं लगाया है। तूने मुझ निरपराधको शाप दिया है। सर्पने बालिको शाप दिया- अत: इन फलोंसे उगे वृक्षोंको जो नष्ट कर देगा, उसीके द्वारा तू मारा जायगा।

ताड़के वृक्ष वैसे भी बहुत सुदृढ़ होते हैं। ये तो एक ही सर्प देहपर उगे, परस्पर उलझी मूल वाले वृक्ष हैं। कितना भी प्रबल अन्धड़ चले, ता एतरु गिर भले जाय, उसके पत्र नहीं टूटते। सुग्रीव कह रहे थे- शापसे पूर्व जब बालि यहाँ आता था, इन तरुओंको एक साथ हिलाकर निष्पत्र कर देता था।

लक्ष्मण ने राम का धनुष और तूणीर लाकर उनके सम्मुख रख दिया। बालि के पराक्रम का सबसे बड़ा प्रमाण क्या है ? सुग्रीव ?

सुग्रीव ने राम को देखा- वे उनसे रुष्ट नहीं थे; अपने मित्र के संतोष के लिए अपनी शक्ति की परीक्षा देने को तैयार खड़े थे। सुग्रीव ने मन-ही-मन क्षण-भर सोचा और सामने एक पंक्ति देने को तैयार खड़े साल के सात वृक्षों की ओर इंगित किया, भद्र राम। बालि के शरीर में इतनी शक्ति है कि वह यदि इन सात वृक्षों को पकड़कर झकझोरें तो उनका एक-एक पत्ता झड़कर पृथ्वी पर आ पड़ेगा।

राम अपनी आश्वस्त मुसकान अधरों पर लिये मुसकराते रहे। उन्होंने वहीं खड़े-खड़े अपने धनुष पर एक तीक्ष्ण लौह-फलक वाला बाण चढ़ाया; प्रत्यंचा को कान तक खींचा और बाण छोड़ दिया।

सुग्रीव तथा उनके साथियों ने आश्चर्य से देखा- राम का बाण एक-एक कर सातों साल वृक्षों को छेद गया था। अद्‌भुत था राम का लक्ष्यभेद, बल तथा कौशल। क्या विचार है, मित्र ?

सुग्रीव अभिभूत थे, समझ गया, भद्र। बालि को तो निकट जाकर अपने हाथों से बारी-बारी सातों वृक्षों को हिलाना पड़ता है। राम अपने स्थान पर खड़े-खड़े, एक ही बाण से, एक ही साथ सातों वृक्षों को छेद सकते हैं। तुम समर्थ हो, मित्र। और तुम्हारे कारण, आज मैं भी बालि से अधिक समर्थ हूँ। सुग्रीव अपने आह्लाद में द्रवीभूत आगे बढ़े और राम को उन्होंने अपने वक्ष से लगा लिया।

सुग्रीवके इस वाक्यके समाप्त होनेसे पूर्व श्रीराम अपने वामस्कन्धसे धनुष उतारकर उसपर प्रत्यञ्चा चढ़ा चुके थे। अब उन्होंने त्रोणसे एक बाण निकालकर धनुषपर चढ़ाया और धीरेसे छोड़ दिया। प्रत्यञ्चा आधी भी खींची नहीं गयी थी, लेकिन बाण छूटा। सातों ताल सर्पके शरीरपर उगे थे। एक सीधमें न होकर सर्पकार पंक्तिमें थे। बाणने सातोंको भूमिके समीपसे काट दिया। वे वृक्ष भयानक शब्द करते, गिरे। बाण वृक्ष काटकर घूमा और श्रीरामके त्रोणमें प्रविष्ट हो गया।

स्वामी ! सुग्रीवके नेत्र आश्चर्यसे खुले रह गये। देरतक वे बोलनेमें ही समर्थ नही हुए। जब बोल सके, श्रीरामको सखा सम्बोधन का साहस समाप्त हो चुका उन्हें लग रहा था कि इन सर्व समर्थकी अकल्पनीय उदारता-ये एक तुच्छ वानरको मित्र कहते हैं; किन्तु मेरी अक्षम्य धृष्टता है कि मैं इनको सखा कहता रहा हूँ। इनके श्रीचरणोंका सेवक-दास होना भी सुग्रीवका परम सौभाग्य है।

जब श्रीराम-लक्ष्मण आये थे, दोनोंके तूणीर देखकर सुग्रीव मनमें हँसे थे- इतने हल्के तूणीर। छोटे और बड़े भाईके भी त्रोणोंमें केवल पाँच-पाँच बाण थे। दो तूणीर हुए तो भी क्या हुआ। दोनों भाइयोंके समीप कुल बीस बाण और एक खड्ग। इतने अल्प अस्त्रको लेकर ये वनमें आगये। कितने भी कुशल लक्ष्यवेधी हों, आखेट भले करलें, बीस बाणोंके बल पर युद्ध तो नहीं किया अथवा जीता जा सकता।

सुग्रीवने देखा कि श्रीरामका बाण लक्ष्यवेध करके स्वत: उनके त्रोणमें लौट आया। अद्‌भुत अस्त्र- जब प्रत्येक शरको पुन: लौट आना है, ऐसा अक्ष्य तूणीर-बीस बाण तो बहुत अधिक होते हैं। ऐसे अस्त्र रखनेवाला तो एक ही बाणके पुन: पुन: प्रयोगसे विश्व-विजय कर

सकता है। ये इतने छोटे त्रोण भी बाँधते हैं, यह इनकी क्रीड़ा ही है।

स्वामी ! मेरे समर्थ स्वामी ! मैंने अपनी अल्पज्ञताके कारण अबतक जो अशिष्टता की है, उसे एक अल्पज्ञ चपल वानरकी क्षुद्रता समझकर क्षमा कर दें। सुग्रीव सीधे श्रीराम के चरणोंपर गिरे। श्रीरामने बीचमें ही उन्हें भुजाओंमें ले लिया।

आप सर्वसमर्थ हैं। इस अधम वानरको अपने इन चारुचरणोंका किंकर स्वीकार करें। श्रीरामका आलिंगन प्राप्त करके सुग्रीवकी बुद्धि निर्मल हो गयी। उनके मनका कलुष-द्वेष विनष्ट हो गया। वे भरे कण्ठ कहते जा रहे थे- मेरा अज्ञान, मेरा भ्रम कि मैं अबतक अपने अग्रज बालिको अपना शत्रु मानता रहा। वह तो मेरा अतिशय उपकार करने वाला है, मेरा समुद्धारक है। मैं मोहवश ऐन्द्रियक भोगोंमें लिप्त था। बालिने मुझे निर्वासित करके अकिञ्चत बना दिया। इस पर्वतपर शरण लेनेको विवश किया। उसीकी कृपाका सुपरिणाम है कि आप अनाश्रयाश्रय अनाथनाथके श्रीचरणोंकी प्राप्ति आज मुझे सुगम हुई।

बालि का मंगल हो। वह सकुशल वानरेन्द्र बना रहे। मैं उसका कृतज्ञ हूँ। सुग्रीव भरे स्वरमें कहते गये- मेरे मनमें अब बालिसे कोई द्वेष नहीं। आप अपने पादपद्मोंका मुझे सेवक बनाकर अपने साथ मुझे लेलें, यही अब मेरी एकमात्र प्रार्थना है।

मनुष्य आवेशमें जो उद्‌गार प्रकट करता है, वे स्थायी नहीं होते। उस समयकी उसकी भावनाको सत्य मानकर जो व्यवहार करेगा, उसे पश्चाताप करना पड़ेगा। श्मशान वैराग्य क्षण-स्थायी होता है। अत्यन्त भयभीत, बहुत दिनोंसे दु:खी सुग्रीवने श्रीरामका प्रभाव देखा तो उनके अन्तरको आश्वासन मिला। फलत: उनकी भावना उमड़ पड़ी थी।

अपने साथ मुझे लेलें। इस प्रार्थनाका अर्थ ? श्रीराम सदा ऋष्यमूकपर बने रहने वाले हैं ? ऋष्यमूक त्यागकर सुग्रीव रामके साथ कहीं रहें तो उनपर आक्रमण न करनेका बालिने कोई व्रत लिया है ? बालि इस पर्वतसे सुग्रीवके हटने पर उसपर आक्रमण करे तो सुग्रीवकी रक्षा रामको करनी पड़ेगी या नहीं ? जब बालिको सुग्रीव की रक्षाके लिए मारना अनिवार्य है, तब समय व्यतीत करनेसे लाभ ? बालिके रहते तो सुग्रीव खुलकर सीतान्वेषणका भी कोई कार्य नहीं कर सकते।

श्रीराम-प्रत्येक अन्तरमें जो अन्तर्यामी बने बैठे हैं, उन रामसे सुग्रीवके हृदयकी वास्तविक स्थिति क्या छिपी थी ? लेकिन सत्पुरुष किसीका तिरस्कार नहीं करते। किसीकी दुर्बलता दूसरोंके सम्मुख प्रकट नहीं करते। दूसरे भले अपनेमें क्षणिक आवेश अथवा दम्भसे सद्‌गुण प्रकट करे, सत्पुरुषोंको उसे सत्य मान लेनेमें तनिक भी हिचकिचाहट नहीं होती।

मित्र ! तुम्हारा अन्त:करण निर्मल है, तुम्हारे हृदयमें राज्यलिप्सा, लोभ अथवा द्वेष सर्वथा नहीं है। श्रीरामने सुग्रीवकी प्रशंसा की- किंतु तुमने रामको मित्र स्वीकार किया है, अत: रामके सत्यकी रक्षा तुम्हें करना चाहिये। मैंने तुम्हारे विरोधीको मार देनेकी प्रतिज्ञा की है। मेरी प्रतिज्ञाको सत्य होने दो और रामके कार्यको सम्पन्न करनेके लिए बालिके मरनेपर वानरेन्द्र पद स्वीकार करो।

तब सुग्रीव बोले- आपकी कृपासे अब मेरा मन स्थिर हो गया। सुख, सम्पत्ति, परिवार और बड़ाई बड़प्पन सबको त्यागकर मैं आपकी सेवा ही करूँगा। क्योंकि आपके चरणोंकी आराधना करनेवाले संत कहते हैं कि ये सब सुख-सम्पत्ति आदि रामभक्तिके विरोधी हैं। जगत्‌में जितने भी शत्रु-मित्र और सुख-दु:ख आदि द्वन्द्व हैं, सब-के-सब मायारचित हैं, परमार्थत: वास्तवमें नहीं हैं।

हे श्रीराम ! बालि तो मेरा परम हितकारी है, जिसकी कृपासे शोकका नाश करनेवाले आप मुझे मिले; और जिसके साथ अब स्वप्नमें भी लड़ाई हो तो जागनेपर उसे समझाकर मनमें संकोच होगा कि स्वप्नमें भी मैं उससे क्यों लड़ा।

हे प्रभो ! अब तो इस प्रकार कृपा कीजिये कि सब छोड़कर दिन-रात मैं आपका भजन ही करूँ। सुग्रीवकी वैराग्ययुक्त वाणी सुनकर उसके क्षणिक वैराग्यको देखकर हाथमें धनुष धारण करनेवाले श्रीराम मुसकराकर बोले- तुमने जो कुछ कहा है, वह सभी सत्य है; परन्तु हे सखा। मेरा वचन मिथ्या नहीं होता अर्थात् बालि मारा जायगा और तुम्हें राज्य मिलेगा। काकभुशुण्डिजी कहते हैं कि- हे पक्षियोंके राजा गरुड़। नट मदारी के बंदरकी तरह श्रीराम सबको नचाते हैं, वेद ऐसा कहते हैं।

मेरे लिए बालि एक अपराधी मात्र है। शेष अपराध इस समय छोड़ भी दिए जाएँ, तो रुमा के अपहरण के लिए बालि को वही दण्ड मिलना चाहिए, जो सीता के अपहरण के लिए रावण को मिलेगा। राम बोले, किंतु सुग्रीव। बालि तुम्हारा भाई है।

संबंध की दृष्टि से बालि मेरा भाई है, सुग्रीव का स्वर अत्यंत गंभीर था, किंतु अपने कृत्यों से वह मेरा ही नहीं, सारी वानर-जाति का शत्रु हो गया है। एक भाई द्वारा अपने भाई के वध के प्रस्ताव पर आपका चकित होना स्वाभाविक ही है। इस विषय में मैं स्वयं भी अनेक चिंताओं से घिरा हुआ हूँ। यदि मैं बालि के वध का माध्यम बनता हूँ तो मेरा प्रिय सहयोगी अंगद अपने पिता के हत्यारे के विषय में क्या

सोचेगा; यह तार अपनी बहन को विधवा करने वाले सुग्रीव से कैसा व्यवहार करेगा; स्वयं भाभी तारा के मन में मेरे प्रति जो स्नेह है, वह क्या कहेगा; और वृद्ध सुषेण मेरे प्रति क्या धारणा रखेंगे ? किंतु आज मैं ऐसे दोराहे पर खड़ा हूँ, जहाँ मुझे अपने स्नेह-संबंधों और न्याय में से एक को चुनना है। दोनों मुझे नहीं मिल सकते। सुग्रीव क्षण-भर के लिए मौन रहकर पुन: बोले, मैं यदि अपने प्रति किए गए बालि के अत्याचारों को भुला भी दूँ तो क्या किष्किंधा की प्रजा तथा वानरों के यूथ उसके अत्याचारों को क्षमा कर देंगे ?

नहीं। जाम्बवान दृढ़ स्वर में बोले, बालि को कोई क्षमा नहीं करेगा। इतना ही नहीं, बालि को क्षमा करनेवाले को किष्किंधा की प्रजा क्षमा नहीं करेगी।

मैं बालि को क्षमा करने का प्रस्ताव नहीं कर रहा। राम मुसकराते हुए बोले, किंतु वह व्यक्ति जो आपका अपना आत्मीय है, आप में से अनेक लोगों का संबंधी है, किष्किंधा का सम्राट रहा है- उसे मृत्युदण्ड देने से पूर्व भली प्रकार सोच-समझ लेना चाहिए। राम ने रुककर, एक बार सबको देखा, बालि ने जो कुछ किया, अथवा वह जो कुछ कर रहा है, वह व्यक्ति-बालि के रूप में नहीं सम्राट-बालि के रूप में ही संभव है। यदि हम बालि को किष्किंधा के सम्राट पद से अपदस्थ कर देते हैं तो उसका वह डंक ही नष्ट हो जाएगा, जिससे वह सारी वानर-जाति को पीड़ित कर रहा है। तब उसके जीवित रहने में आपको क्या आपत्ति है ?

भद्र राम। हनुमान बोले, आप हमसे अधिक बुद्धिमान भी हैं, अनुभवी भी और कदाचित् अधिक उदार भी। इसीलिए आप बालि को केवल अपदस्थ कर छोड़ देने की बात कह रहे हैं। किंतु आर्य। बालि के विषय में जो कुछ मैं जानता हूँ, उसके आधार पर कुछ कहना चाहूँगा। कहो।

जीवित रहते बालि को सम्राट पद से अपदस्थ नहीं किया जा सकता। वह किसी भी अवस्था में उसे संभव नहीं होने देगा। हनुमान गंभीर और स्थिर वाणी में बोले, और यदि आपने बालि को प्राणदान दिया तो उसके सहयोगी-अनुचरों को भी प्राणदान देना होगा- जो हत्यारे, दुष्ट, पामर, पापी और अत्याचारी हैं। वे सब लोग हमारे समाज में रहेंगे। क्षमा कर दिए जाने पर वे समाज में स्वतंत्र रूप से अपने संचित धन के बल पर सम्मानित ढंग से रहने का अधिकार तो पा जाएँगे; किंतु समाज के प्रति अपने दायित्व का तनिक भी निर्वाह नही करेंगे। वे अपनी पराजय को नहीं भूलेंगे तथा समाज में सदा विष फैलाएँगे। नये शासन की अवमानना करेंगे और आदर्शों को अपने पैरों से ठुकराएँगे। उनके रहते हुए समाज में नवनिर्माण का कार्य नहीं हो सकता। इसलिए उन्हें जीवित छोड़ देना अपने ही लक्ष्य के प्रति विश्वासघात होगा। हनुमान ने मुस्कराकर राम को देखा, मैं अनावश्यक रक्तपात का समर्थक नहीं हूँ, भद्र राम। न मैं व्यक्तिगत प्रतिहिंसा में विश्वास करता हूँ; किंतु अपराधियों को उनके अपराध के ही अनुपात में दण्डित करने तथा सामाजिक निर्माण के विघ्नों के उन्मूलन में मेरा विश्वास बद्धमूल है। आप लोगों का क्या मत है ? राम ने अन्य लोगों की ओर देखा।

हनुमान ठीक कहते हैं। सम्मिलित स्वर में समर्थन आया। लक्ष्मण के मुख पर संतुष्टि का उल्लास प्रकट हो गया। तो फिर ऐसा ही हो। राम बोले, मैं आप लोगों के समर्थन से दो घोषणाएँ करना चाहता हूँ। प्रथम, हम इसी क्षण से मित्रवर सुग्रीव को वानरों का सम्राट घोषित करते हैं; तथा द्वितीय, बालि के अपराधों पर विचार करते हुए उसे मृत्युदण्ड देते हैं। हम सहमत हैं। हम सहमत हैं। सब ओर से स्वर आए।

राम ने सुग्रीव का हाथ पकड़कर, उन्हें एक ऊँची शिला पर बैठाया और पंपा सरोवर के जल से उनका अभिषेक कर, उनके हाथ में शस्त्र दे दिया। इस बार वे लोग राज-परिषद की मर्यादा से बैठे।

हमारा युद्ध इस सर्वग्रासी, अन्यायी, शोषक तथा अत्याचारी राक्षसी वृत्ति से है। बालि का विरोध भी उसकी इसी राक्षसी वृत्ति के कारण ही है। वह इस समय रावण का ही एक मोहरा बना हुआ है। हम बालि के साथ युद्ध को इतना महत्त्वपूर्ण नहीं मान सकते कि रावण को भूल जाएँ।

सुग्रीव बोले- राम। यह युद्ध हमारा, सबका है उसमें आप अकेले जोखिम क्यों उठाएँ ? आप हमारे अतिथि हैं। हम यह कैसे सहन करेंगे कि हम सुखपूर्वक अपनी गुफाओं में बैठे रहें और आप हमारे लिए अपने प्राणों को संकट में डालें।

राम खुलकर मुस्कराए, औपचारिक दृष्टि से तो तुम्हारा कथन शिष्टाचार के अनुकूल है, मित्र। किंतु हमने अपनी मैत्री में एक-दूसरे के सुख-दु:ख को अपना मानने की शपथ ली है। अब बालि तुम्हारा ही नहीं, मेरा भी- हम सबका शत्रु है। यदि आज तुम्हारे लिए मेरा अपने प्राणों को संकट में डालना उचित नहीं है तो कल मेरे लिए तुम्हारा अपने प्राणों को संकट में झोंकना भी उतना ही अनुचित हो जाएगा।

सुग्रीव बोले, मैं बालि से बहुत भयभीत हूँ और बहुत कातर मन:स्थिति में हूँ। इस समय मेरा एकमात्र अवलंब आप है। आपने यूथपति

जाम्बवान के मुख से सुना ही है कि आपके आते ही वानरों का मनोबल जाग उठा है और वे बालि के विरुद्ध मेरे पक्ष में खड़े होने की बात सोचने लगे हैं। ऐसे में आपके खोने की तनिक-सी संभावना देखते ही मेरे प्राण तड़प उठते हैं।

आप भैया की शक्ति को भली प्रकार परखकर भी उसे बहुत कम आँक रहे हैं, वानर सम्राट। लक्ष्मण अत्यंत दृढ़ स्वर में बोले, युद्ध का परिणाम कितना भी अनिश्चित क्यों न हो; भैया और बालि के द्वंद्व-युद्ध में भैया की पराजय की रंचमात्र भी संभावना नहीं है।

मेरा अर्थ यह नहीं था। सुग्रीव घबराकर बोले, मैं भद्र राम की शक्ति को तनिक भी कम नहीं आँक रहा। मैं राम के पराजित होने की भी बात नहीं सोच रहा। तो फिर क्या है तुम्हारे मन में ? राम के अधरों पर उनकी कमनीय मुसकान आकर ठहर गई, सत्य बोलने में संकोच मत करो, मित्र। बोलो।

सुग्रीव राम की वाणी और मुस्कान में बँध गए। उनका आत्मनियंत्रण शिथिल हो गया, राम। मुझे भय है कि आपको देखते ही बालि तत्काल आपसे मैत्री की घोषणा कर देगा। वह कह देगा, उसकी आपसे कोई शत्रुता नहीं है। वह आपकी शरण में आ जाएगा। वह सीता को खोजने में आपकी सहायता का वचन देगा। वह सारी वानर सेना को सीता की खोज में लगा देगा सुग्रीव का स्वर काँपने लगा, फिर आप उसका वध कैसे करेंगे राम ? और यदि आप उसका वध नहीं करेंगे तो कौन उसे दण्डित करेगा ? और किसमें इतनी शक्ति है कि वह किष्किंधा और वानर यूथों को बालि के चंगुल से मुक्त कराए। वानर सम्राट की आँखों से अश्रु बहने लगेंगे।

राम अपने स्थान से उठकर सुग्रीव के सम्मुख आ खड़े हुए। उन्होंने उन्हें कंधों से पकड़कर उठाया और अपने वक्ष से लगा लिया। कातर मत हो, सुग्रीव। राम का वचन स्वयं अपने-अपने में प्रमाण होते हैं। मैंने रुमा और वानरों की मुक्ति का वचन दिया है; मैंने बालि को मृत्यु-दण्ड और तुम्हें किष्किंधा का राज्य दिया है।

मुझे इसमें कोई संदेह नहीं, राम। सुग्रीव बोले, किंतु बालि धूर्त है और मेरा मन अत्यंत भीरु तथा कातर। सुग्रीव ने राम के कंधे से सिर उठाकर उनकी आँखों में देखा, जहाँ इतने वचन दिए हैं, वहाँ एक वचन और दो, मित्र। माँगो, सुग्रीव।

सुग्रीव घड़ी-भर राम को देखते रहे; और फिर जैसे संशय-भरे स्वर में बोले, बालि के जीवित होते, आप या लक्ष्मण उसके सम्मुख नहीं पड़ेंगे। उन्होंने अपने मन का वास्तविक भय स्पष्ट कर राम को कह दिया था। राम ने उन्हें वचन दिया था, और राम के वचन पर अविश्वास करने का कोई प्रत्यक्ष कारण भी नहीं था किंतु सुग्रीव अपने उस मन का क्या करते, जो बार-बार भीरु मृग-शावक के समान आशंकित होकर अपनी सुरक्षा के लिए अपने ही स्थान पर खड़ा-खड़ा कूदने लगता था या शश-शावक के समान बिना कुछ सोचे-समझे किसी भी दिशा में दौड़ लगा देता था और अपनी नादानी में पहले से भी बड़ी चिंता की किसी कँटीली झाड़ी में जा उलझता था। चिंता-कंटकों से स्थान-स्थान से आहत होकर रक्त बहा-बहा, उनके मन का भी जैसे श्वास टूटने लगा था।

बालि के लिए कितना सुगम था राम और लक्ष्मण से मैत्री कर लेना। अंतत: वे चाहते क्या हैं- सीता की खोज। बालि के पास उसके लिए साधन सहज उपलब्ध हैं। राम तथा लक्ष्मण आराम से किष्किंधा के प्रासादों में टिके रहें और बालि सीता की खोज-खबर ला देगां कोई प्रतिबंध नहीं, कोई शर्त नहीं- राम और लक्ष्मण को कुछ नहीं करना पड़ेगा। न किसी को दण्डित करना होगा, न किसी को मुक्त करना होगा, न किसी को सम्राट बनाना होगा।

और एक बार ऐसा हो गया तो न केवल सुग्रीव की सुरक्षा स्वप्न हो जाएगी; वरन् बालि पहले से कहीं अधिक शक्तिशाली हो जाएगा। बालि की अपनी शक्ति का कोई प्रतिकार नहीं है; यदि राम और लक्ष्मण भी उससे जा मिले तो सुग्रीव क्या करेंगे वे उनकी शस्त्र-शक्ति, युद्ध-कौशल तथा संगठन का जोड़ा कहाँ से लाएँगे।

सुग्रीव का मन निराशा के तल तक जा पहुँचा और हताश अवस्था में बड़ी देर तक पड़ा रहा। अंतत: स्वयं ही उसकी प्रतिक्रिया आरंभ हो गई और स्वयं ही अपने मन को प्रताड़ित करने लगे- राम तथा लक्ष्मण के प्रति इतने अविश्वास का कारण ? आज तक उन्होंने इन दोनों भाइयों के विषय में जो कुछ सुना था, उससे क्या सुग्रीव ने उनके विषय में यही धारणा बनाई थी कि वे सुख और सुविधाओं के लिए अन्याय से समझौता करते फिरते हैं ? वे इतने ही सुविधाजीवी होते तो अयोध्या का राज्य ही क्यों छोड़ते ? और यदि बलात् वन में धकेल ही दिए गए थे तो समर्थ राक्षसों तथा असमर्थ जन-सामान्य एवं बुद्धिजीवियों में से वे शोषित तथा असमर्थ लोगों का पक्ष क्यों लेते ?

धिक्कार है, सुग्रीव तुझ पर। तूने राम तथा लक्ष्मण की सद्भावना पर विश्वास नहीं किया, उनके चरित्रों को इतना दुर्बल माना और उनकी वीरता पर संदेह किया मूर्ख। बहुत चतुर बनते-बनते तू अपना ही नाश कर बैठा। यदि राम तथा लक्ष्मण, बालि के जीवित रहते

उसके सम्मुख नहीं पड़ेंगे, तो बालि से लड़ने क्या तू जाएगा ? यह क्या किया सुग्रीव तूने

राम बड़ी देर तक बैठे सोचते रहे- कैसी विचित्र परिस्थितियों में घिर गए थे वे। बालि से वे लड़ें, यह सुग्रीव नहीं चाहता; और सुग्रीव की सेना बालि की सेना से लड़े, यह राम नहीं चाहते। न सेना लड़े, न व्यक्ति, तो बालि का वध कैसे होगा ?

वानरों में गृह-युद्ध तो किसी भी स्थिति में नहीं होना चाहिए। ये निरीह हत्याएँ हैं। उनका कोई प्रयोजन नहीं। पराजय बालि की हो अथवा सुग्रीव की-वानर जाति दोनों रूपों में निर्बल होगी। इस युद्ध का प्रयोजन तो केवल बालि के वध से सिद्ध हो जाएगा। हाँ, यदि बालि का वध न हुआ, वह इसी प्रकार सता में बना रहा तथा अत्याचार करता रहा, तो वानर निश्चित रूप से दो पक्षों में युद्ध-सज्जित होते रहेंगे; और अंतत: उनमें परस्पर जो रक्तपात होगा, वह अत्यंत भयंकर होगा। उस रक्तपात से वानरों को बचाने के लिए आवश्यक है कि बालि का अत्याचार शीघ्रातिशीघ्र समाप्त हो; और उसका एक ही मार्ग है- बालि का वध।

बालि को द्वंद्व-युद्ध के लिए कौन ललकारे ? जब उनके अथवा लक्ष्मण के बालि के साथ द्वंद्व-युद्ध की कोई संभावना नहीं है, तो फिर सबसे उपयुक्त व्यक्ति स्वयं सुग्रीव ही हैं। वह वानरों के विद्रोही पक्ष का नेता है, वानरों की दृष्टि से सर्वाधिक शस्त्रबद्ध है और आयुधों के संचालन में भी कुशल है और सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि बालि ने उसी की पत्नी का अपहरण किया है इस पाप के प्रतिकार का सर्वाधिक अधिकार सुग्रीव को ही है। राम द्रुत गति से सुग्रीव की गुफा तक आए। सुग्रीव।

सुग्रीव गुफा से बाहर निकले। राम उन्हें देखकर चौंक उठे- वह अपनी गुफा में बैठा रोता रहा है क्या ? चेहरे का वर्ण पीला पड़ा हुआ आँखों में भय, त्रास, हताशा, उलझन और अनेक अनजाने भावों के गुंजलक। यह सुग्रीव कैसे लड़ेगा दर्पोद्धत बालि से। यह तो बालि को देखते ही भाग जाएगा। कैसे असंभव कार्य की बात सोच रहे हैं राम। कभी मेमना भी सिंह से लड़ा है क्या ? तत्काल राम ने स्वयं ही अपने विचारों को झटक दिया- यह सुग्रीव की प्राकृत दशा नहीं है। सीता के अपहरण के पश्चात् वे स्वयं कितने विचलित और अस्थिर हो गए थे। तब क्या स्वयं उनको देखकर कहा जा सकता था कि राम कभी युद्ध भी कर सकते हैं, सिद्धाश्रम, चित्रकूट तथा दण्डक वन की राक्षस-त्रस्त, भीत तथा भीरु प्रजा को देखकर क्या कोई कल्पना कर सकता था कि वे लोग नियमित जन-सेना में सज्जित हो जाएँगे, और राक्षसों को उनके सम्मुख मुँह की खानी पड़ेगी। सुग्रीव के भीतर प्राकृत योद्धा को जगाना पड़ेगा।

सुग्रीव। मैं बड़ी उलझन में हूँ, भद्र राम।

मैं समझ सकता हूँ, मित्र। राम मुस्कराए, इसीलिए एकांत में तुम्हारे पास आया हूँ। सभा में सारी बातें तो नहीं हो सकतीं।

इस विश्वास और स्नेह के लिए... इन बातों को छोड़ो। राम के अधरों पर स्निग्ध मुस्कान थी, इतने आर्त मत रहो। तुम मेरी शरण में आए हो और मैं तुम्हारी शरण आया हूँ। तुम्हें मेरी आवश्यकता है और मुझे तुम्हारी। मेरे बिना तुम्हारा कार्य रुका पड़ा है और तुम्हारे बिना मेरा। और फिर यह मात्र स्वार्थ या गठबंधन नहीं है- अन्याय के प्रतिकार तथा अत्याचारी को दण्डित करने के लिए युद्धोन्मुख होना है। ऐसी स्थित में तुम उलझन में रहोगे; चिंतित, पीड़ित तथा कातर रहोगे; तो युद्ध कैसे होगा, मित्र ? अत्याचारी दण्डित कैसे होंगे ?

आप ठीक कहते हैं, राम। सुग्रीव धीमे स्वर में बोले, किंतु मैं अपने मन का क्या करूँ ? बालि के आतंक से मेरे हाथ का खड्ग भी काँपकर गिर जाता है। आपको तथा लक्ष्मण को बालि के सम्मुख जाने देने का भी मेरा साहस नहीं होता। बालि का वध कैसे होगा ? उससे युद्ध कौन करेगा ? बालि से युद्ध तुम करोगे, सुग्रीव।

सुग्रीव का सारा शरीर सिहर उठा। राम का स्वर जैसे अपनी लाखों प्रतिध्वनियों के साथ उनकी शिराओं में झनझना रहा था। उन्होंने आश्चर्य से राम की ओर देखा। राम मुस्करा रहे थे- शांत, स्निग्ध तथा मोहक मुसकान। सुग्रीव ने अनुभव किया, राम जब इस प्रकार मुस्कराते हैं तो देखने वाले में आत्मविश्वास का संचार होता है। तभी तो राम जान-बूझकर इस प्रकार मुस्कराते हैं।

बालि का वध मेरे हाथों संभव होता, तो मैं वह कब का कर चुका होता। सुग्रीव धीरे से बोले, यदि बालि से युद्ध करने की क्षमता मुझमें होती तो मैं आज तक ऋष्यमूक की गुफाओं के भीत मूषक के समान क्यों छिपता फिरता ? आप मेरा उपहास न करें, राम। मैं आपकी दया का पात्र हूँ।

मैं उपहास नहीं कर रहा, सुग्रीव। राम पुन: मुसकराए, मैं तुम्हें तुम्हारी क्षमता स्मरण करा रहा हूँ। तुम वीर हो, योद्धा हो, तेजस्वी हो; और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि तुम्हारा पक्ष न्याय का पक्ष है। न्याय के लिए लड़नेवाला भी कभी दुर्बल हुआ है सुग्रीव ?

सुग्रीव ने अत्यंत कातर दृष्टि से राम को देखा, मेरा न्याय बालि की गदा सेटकराता है तो उसका चूर्ण बन जाता है; और बालि की गदा

पर प्रहार का चिन्ह भी नहीं छूटता। मेरी वीरता और रण-दक्षता बालि को सामने पाते ही भाग जाती है। बताओ, मैं क्या करूँ, राम। यदि आप मुझे बालि से लड़ने के लिए बाध्य करेंगे तो मैं यही मानूँगा कि आप बालि के हाथों मेरा वध करवाना चाहते हैं।

नहीं। राम खुलकर हँसे, ऐसा मत सोचना, मित्र। सत्य यह है कि मैं तुम्हें उस पापी से लड़वाऊँगा और तुम्हें वचन देता हूँ कि तुम्हें मरने नहीं दूँगा।

यह आपका अंतिम निर्णय है ?

अंतिम। दृढ़ तथा अपरिवर्तनीय। राम बोले, लड़ना तुमको ही पड़ेगा, क्योंकि पीड़ित तुम हो। प्रतिशोध तो तुम्हें ही लेना होगा, क्योंकि अपराध तुम्हारे प्रति किया गया है। गुरु विश्वामित्र ने कहा था- जो पीड़ित लड़ता नहीं है, उसका उद्धार संभव नहीं है।

पर। पर क्या सुग्रीव। राम बोले, शत्रु की प्रहारक शक्ति यदि तुम्हें श्रेष्ठतर लगती है तो तुम भी अपनी प्रहारक शक्ति बढ़ाओ। उसके शारीरिक बल का प्रतिकार करो।

बालि शस्त्रों से युद्ध करता ही नहीं। सुग्रीव धीरे से बोले, उसके साथ तो शारीरिक शक्ति का ही युद्ध है मल्ल युद्ध और मुष्टि युद्ध।

तो उन्हीं का अभ्यास करो। राम बोले, शक्ति का प्रतिकर कौशल से तो हो ही सकता है।

मैं साहस नहीं कर पाता, भद्र राम।

तुम्हारा साहस तो मैं हूँ, सुग्रीव। राम ने स्नेहयुक्त हाथ सुग्रीव के कंधे पर रखा, मैं वहीं उपस्थित रहूँगा। तुम्हें दिए गए वचन के अनुसार, बालि के सम्मुख नहीं आऊँगा; विपत्ति में देखते ही तुम्हारी सहायता करूँगा। मेरा वचन याद रखना- तुम्हें मरने नहीं दूँगा।

रात-भर सुग्रीव को नींद नहीं आई- कल प्रात: वे बालि से द्वंद्व-युद्ध करने जाएँगे और सुग्रीव ने जब-जब अपने मन से पूछा, क्या वे इस द्वंद्व-युद्ध के इच्छुक थे ? उन्हें एक बार भी स्वीकारात्मक उत्तर नहीं मिला। यदि वे बालि से द्वंद्व-युद्ध के इच्छुक होते, तो फिर इतने दिनों तक वनों तथा पर्वतों में छिपे रहने की क्या आवश्यकता थी ? तब राम का आश्रय पाने की क्या उतावली थी ? जब लड़ना स्वयं सुग्रीव को ही है तो फिर राम का क्या श्रेय ? उनकी सहायता कैसी ? उनका संरक्षण कैसा ? किंतु इसमें राम का क्या दोष है उन्होंने तो स्वयं ही द्वंद्व-युद्ध करने का प्रस्ताव रखा था। तब अपनी मूर्खावश सुग्रीव ने उन्हें उनके वचन में ऐसा बाँध दिया कि अब वे चाहें भी तो बालि से युद्ध नहीं कर सकते अब लड़ना होगा सुग्रीव को। राम के आने से पूर्व, सुग्रीव के पास लड़ने और न लड़ने का तो विकल्प था; किंतु अब परिस्थितियों ने जो मोड़ ले लिया है, उसमें वह विकल्प भी उनके पास नहीं है। अब सारे निर्णय राम के हाथ में हैं, और राम ने यह निर्णय किया है कि सुग्रीव बालि से युद्ध करें पर क्या राम देख नहीं पा रहे कि सुग्रीव में बालि का सामना करने का सामर्थ्य नहीं है। सदा बालि से डरा हुआ सुग्रीव उससे आँखें मिला भी पाएगा क्या ? रामने मल्ल-युद्ध के जो दाँव सिखाए हैं, वे अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। संभवत: बालि ने उनके विषय में कभी सुना भी न हो; किंतु उनके बल पर क्या बालि की असीम शक्ति का प्रतिकार किया जा सकता है ?

जैसे-जैसे उषाकाल निकट आता जा रहा था, सुग्रीव का मन व्याकुल होता जा रहा था। वे स्वयं अपने मन की भावनाओं को समझ नहीं पा रहे थे। वे भयभीत थे, घबराए हुए थे या रुष्ट थे, तो किससे-बालि से ? राम से ? अपने आप से ? अथवा अपने मित्रों से ? कभी मन में आता, झगड़ पड़ें- अपने साथियों से, सहयोगियों से, अपने मंत्रियों से और राम से भी। क्या उन लोगों को इतनी-सी बात समझ में नहीं आ रही कि द्वंद्व-युद्ध के व्याज से, वे सुग्रीव की हत्या का प्रबंध कर रहे हैं पर राम कहते हैं कि वे सुग्रीव को मरने नहीं देंगे तो सुग्रीव युद्ध से पीछे कैसे हट सकते हैं ? वानरराज ऐसे जाल में फँस गए हैं, जिसे काटना असंभव है उन्हें वही कार्य करना पड़ेगा, जिसके लिए वे स्वयं ही प्रस्तुत नहीं हैं।

सुग्रीव का मस्तिष्क तपते-तपते जैसे जड़ हो गया था। उनमें से सारी भावनाएँ निष्क्रमण कर गई थीं। अब वे जैसे कुछ अनुभव ही नहीं कर पा रहे थे। किसी जड़ यंत्र के समान अन्य लोगों के कहने पर हाथ-पैर हिला रहे थे। मन में युद्ध के लिए किसी प्रकार का उत्साह नहीं था। कभी-कभी वे स्वयं अपने-आप में तटस्थ होकर सोचने लगते जब आधी रात को वे किष्किंधा से भागे थे तो अगले दिन रुमा के अपहरण की सूचना पाकर वे बालि से लड़कर मर जाने के लिए किष्किंधा लौटना चाहते थे; किंतु आज उन्हें क्या हो गया था। वे अपने-आपको समझ नहीं पा रहे थे। सुग्रीव जितने जड़ होते जा रहे थे, राम में उसी अनुपात में सक्रियता बढ़ती जा रही थी। उन्होंने अपनी देख-रेख में लक्ष्मण को शस्त्र-सज्जित करवाया था और स्वयं भी बड़े समारोह से आयुध बाँध रहे थे।

जब किसी भी प्रकार सुग्रीव और विलंब न कर सके तो उनका प्रयाण आरंभ हुआ।

५) बालि वध- ऋष्यमूक से नीचे उतरकर वन में प्रवेश करते ही हनुमान सबसे आगे हो गए। उनके पीछे सुग्रीव तथा राम थे। लक्ष्मण-राम साथ लगे-लगे थे; और सबसे पीछे नल-नील तथा तार चल रहे थे। यह कदाचित् सुग्रीव की रक्षा की दृष्टि से किया गया था किंतु सुग्रीव को यह सारा आयोजन ही व्यर्थ लग रहा था। जो सुग्रीव स्वयं अपने पैरों से चलकर मृत्यु के मुख में समाने जा रहे थे, अब उनकी सुरक्षा का क्या अर्थ सहसा सुग्रीव की दृष्टि आगे-आगे चलते हुए हनुमान पर पड़ी। कैसे आत्मविश्वास और वीरदर्प से चल रहा था हनुमान। आज तक किसी के मन में हनुमान के बालि के साथ द्वंद्वयुद्ध की बात क्यों नहीं आई। वय में हनुमान छोटा है। उसमें ऊर्जा भी अधिक है। शरीर से भी सुग्रीव की अपेक्षा सुदृढ़ है। मल्ल-युद्ध में तो वह संपूर्ण वानर-जाति में सर्वोपरि माना जाता है किंतु युद्ध के लिए जा रहे हैं सुग्रीव।

साथ-साथ चलते हुए राम और लक्ष्मण मार्ग की जानकारी पाने के लिए अनेक प्रश्न कर रहे थे। कहीं वे लोग प्रकृति के सौंदर्य पर मुग्ध हो रहे थे; कहीं गुफाओं तथा वृक्षों के झुरमुट को वे सामरिक दृष्टि से परख रहे थे; कहीं उनकी जिज्ञासा वनस्पति के संबंध में थी; कहीं उन्हें कोई स्थान आश्रम के लिए उपयुक्त लग रहा था।

अंगद को सूचना मिली और वे नि:स्पंद रह गए- स्थिति यहाँ तक आ पहुँची है। सुग्रीव और बालि का द्वंद्व-युद्ध। और द्वंद्व-युद्ध का अर्थ होता है- दो योद्धाओं में से एक की मृत्यु। पर पिता तथा गुरु समान अपने चाचा में से वे किसकी मृत्यु के प्रति निरपेक्ष हो सकते हैं। पिता की मृत्यु का अर्थ होता है- एक स्नेह-संबंध की पीड़ादायक समाप्ति, माँ का वैधव्य, चाहे कैसे भी हों, पर पिता तो हैं- उस पिता का सिर से उठ जाना और यदि पिता की विजय हुई तो अंगद के लिए उसका अर्थ है, मित्र सम स्नेही चाचा से विछोह; गुरु तथा मार्गदर्शक नेता का लोप। और किष्किंधा ही नहीं, संपूर्ण वानर-जाति के लिए उसका अर्थ होगा, निकट-भविष्य में मुक्ति की संभावनाओं की निश्चित मृत्यु। स्वतंत्रता, समता तथा न्याय का अकाल देहांत। अंधकारमय, अपमानजनक, शोषक, स्वार्थी, भ्रष्ट सत्ता की निर्विरोध दृढ़ स्थापना।

किसकी विजय की कामना करें अंगद ? किसका पक्ष लें ? और यदि वे किसी का भी पक्ष नहीं ले सकते, तो जाकर उनसे कहें कि वे दोनों न लड़ें किसी प्रकार कोई समझौता कर लें। क्या किसी प्रकार के समझौते की कोई संभावना है ? पर समझौता हो सकता तो यह स्थिति ही क्यों आती ? यह तो होना ही था। दोनों भाइयों की वृत्तियाँ जिस प्रकार एक-दूसरे की विरोधिनी थीं- उनके सह-अस्तित्व की कल्पना भी कैसे की जा सकती है। बालि को प्रजा-पालन का तनिक भी ध्यान नहीं था और सुग्रीव पूर्णत: उसी ओर उन्मुख थे। फिर यह दो भाइयों का झगड़ा कहाँ रहा ? ये दोनों तो दो विरोधिनी शक्तियों के प्रतीक मात्र थे, जिनका भिड़ना अनिवार्य है।

अचानक किसी अपरिचितपर आक्रमण उचित नहीं है। श्रीरामने सुग्रीवको समझाया- मित्र सुग्रीव, तुम बालिको द्वन्द्व युद्धके लिए पुकारो। वह तुमसे युद्ध करने आवेगा, तब उसे हम मार देंगे।

सुग्रीवकी समझमें बात आ गयी। किष्किन्धा (वर्तमान नाम अनागोंडी) पर श्रीराम-लक्ष्मण आक्रमण करें। यह सुग्रीवको भी अभीष्ट नहीं था। इससे तो उनके अपने नगरकी हानि होती। किष्किन्धामें दूसरे किसीसे सुग्रीवकी शत्रुता भी नहीं थी।

तुम आगे चलो। श्रीरामने सुग्रीवसे कहा- मैं अनुजके साथ पीछे आ रहा हूँ।

सुग्रीव श्रीरामको लक्ष्मण समान प्रिय हो गये थे। उनकी बात सुनकर महाप्राज्ञ श्रीरामने अपने उस प्रिय सुहृद्को हृदयसे लगा लिया और बोले- सुग्रीव। हमलोग शीघ्र ही इस स्थानसे किष्किन्धाको चलते हैं। तुम आगे जाओ और जाकर व्यर्थ ही भाई कहलाने- वाले बालिको युद्धके लिये ललकारो।

तदनन्तर वे सब लोग बालिकी राजधानी किष्किन्धापुरीमें गये और वहाँ गहन वनके भीतर वृक्षोंकी आड़में अपनेको छिपकर खड़े हो गये। सुग्रीवने लँगोटसे अपनी कमर खूब कस ली और बालिको बुलानेके लिये भयंकर गर्जना की। वेगपूर्वक़ किये हुए उस सिंहनादसे मानो वे आकाशको फाड़े डालते थे।

सुग्रीवने देख लिया कि श्रीरामने धनुष चढ़ा लिया है और लक्ष्मण, हनुमान, आदिके साथ पीछे चल पड़े हैं, तब ऋष्यमूकके शिखरसे उतरकर किष्किन्धाके द्वारपर पहुँचकर उन्होंने गर्जनाकी- मैं सुग्रीव युद्धके लिए आया हूँ। आओ और मुझसे युद्ध करो।

बालि की आँखों में रक्त छलका- उस दिन तो आधी रात को पत्नी को सोती छोड़ घर से भाग निकला था और आज आया है

ललकारने। नीच। कायर। बालि के किष्किंधा से बाहर जाते ही सिंहासन पर जमकर बैठ गया, जैसे बालि की मृत्यु हो गई हो और स्वयं मरने से इतना डरता है कि अपनी पत्नी भी बालि के लिए छोड़कर भाग गया।

बालि के जी में आया, पूछे कि क्या पाने की इच्छा से लड़ने आया है- किष्किंधा का राज्य चाहिए या रुमा ? पर दूसरे ही क्षण बालि के मन में स्पष्ट हो गया, वह सुग्रीव को इन दोनों में से कुछ भी लौटाने को प्रस्तुत नहीं है। किष्किंधा का राज्य देने का तो कोई अर्थ ही नहीं है रुमा। पहले रुमा की ओर बालि ने कभी विशेष ध्यान नहीं दिया था किंतु अब रुमा के साथ इतने दिन रह लेने के पश्चात् बालि ने उसका मूल्य पहचाना है। बालि उसे नहीं लौटा सकता।

अच्छा। आज इस सुग्रीवको भी साहस हो गया है ? दिनका प्रथम प्रहर ही था। बालि चारों समुद्रोंपर अपनी दैनिक संध्या करके लौटा था। सुग्रीवकी ललकार सुनकर क्रोधवशमें दौड़ा। शत्रुकी ललकार सुनकर सोचने अथवा सहायक लेनेका बालिको अभ्यास नहीं था।

भाईका सिंहनाद सुनकर महाबली बालिको बड़ा क्रोध हुआ। वह अमर्षमें भरकर अस्ताचलसे नीचे जानेवाले सूर्यके समान बड़े वेगसे घरसे निकला।

बालि से कुछ भी वापस माँगने वाला जीवित नहीं रह सकता सुग्रीव तो एकदम ही नहीं बालि के लिए अब रुकना संभव नहीं था। वह झँझावात के समान भागा और उसने सुग्रीव की नाक पर मुक्के से प्रहार किया। सुग्रीव जाने किस विचार में खड़े थे कि न उन्होंने बालि के मार्ग से हटने का प्रयत्न किया, न प्रहार रोकने का। बालि के मुष्टि-प्रहार से जब से दूर जा पड़े, तब जैसे उनकी चेतना लौटी- वे राम के कहने पर बालि से लड़ने के लिए आ गए थे और बालि के आंतक से जड़ीभूत, मूर्ति के समान खड़े हो गए थे। ऐसी विकट स्थिति में भी वे स्पष्ट देख रहे थे कि उनका मन बालि से इतना आतंकित तथा उसके बल से इतना अभिभूत था कि उस पर स्वयं प्रहार कर विजयी होने की बात उनके लिए कल्पनातीत थी किंतु उनके सम्मुख यह भी स्पष्ट था कि बालि इस बार उन्हें जीवित नहीं छोड़ेगा। बालि पर प्रहार करें या न करें, विजयी हों या न हों; किंतु उन्हें अपनी रक्षा तो करनी ही होगी। बालि उनसे कितना भी अधिक शक्तिशाली हो, किंतु इतने निरीह तो सुग्रीव भी नहीं है कि वे चुपचाप पड़े पिटते रहें और शत्रु के प्रहारों से अपने प्राण निकलने की प्रतीक्षा करते रहें। उनकी दृष्टि बालि पर पड़ी, वह पुन: प्रहार करने के लिए झपट रहा था; किंतु जब तक सुग्रीव सँभलते, बालि ने दूसरी चोट कर ही दी थी। सुग्रीव भूमि पर जा गिरे। बालि ने उन्हें उठने का अवसर नहीं दिया। वह पुन: झपट पड़ा। सुग्रीव उसके चंगुल से निकलने का प्रयत्न कर रहे थे और बालि था कि उन्हें भूमि पर रगेदता भी जाता था और पीटता भी जाता था।

फिर तो बालि और सुग्रीव में बड़ा भयंकर युद्ध छिड़ गया, मानो आकाशमें बुध और मङ्गल इन दोनों ग्रहोंमें घोर संग्राम हो रहा हो।

वे दोनों भाई क्रोधसे मूर्च्छित हो एक दूसरेपर वज्र और अशनिके समान तमाचों और घूँसोंका प्रहार करने लगे।

सुग्रीव को बालि का मुक्का लगा और वहीं पछाड़ खा गया और बोला हे श्रीराम तुम्हारे कहने से मैंने व्यर्थमें ही झगड़ा मोड़ लिया। ये बालि काल के समान है। इसका बल मैंने जान लिया। तुम्हारी आज्ञा पर ही मैं बालि से लड़ता रहा और तुम खड़े-खड़े देखते रहे और मुझपर मुक्के पड़ते रहे।

उसी समय श्रीरामने धनुष हाथमें लिया और उन दोनोंकी ओर देखा। वे दोनों वीर अश्विनीकुमारोंकी भाँति परस्पर मिलते-जुलते दिखायी दिये। श्रीरामको यह पता न चला कि इनमें कौन सुग्रीव है और कौन बालि; इसलिये उन्होंने अपना वह प्राणान्तकारी बाण छोड़नेका विचार स्थगित कर दिया।

सुग्रीव ने अपनी संपूर्ण शारीरिक शक्ति तथा मनोबल का आह्वान कर बालि को परे धकेला। निमिष-भर के लिए बालि का दबाव हल्का पड़ा कि सुग्रीव उठ खड़े हुए; किंतु उनसे कहीं अधिक स्फूर्ति से बालि भी उठा और जब तक सुग्रीव सँभलें, बालि ने भयंकर मुष्टिका-प्रहार किया। सुग्रीव की नाक पर बालि का यह दूसरा मुक्का लगा था। पीड़ा से कराहते हुए सुग्रीव भूमि पर लोटते हुए, दूर जा गिरे लेटे-लेटे सुग्रीव ने अपनी नाक पर हाथ रखा। उनका हाथ तरल, उष्ण रक्त से रँग गया। बालि उन्हें घूरता हुआ अपने स्थान पर खड़ा, श्रम के कारण हाँफता हुआ भी, जैसे पुन: झपटने की तैयारी में था। सुग्रीव का मस्तिष्क बड़ी तेजी से सोच रहा था- इस बार के आक्रमण में संभव है, बालि उन्हें उठाकर दे मारे, उनका हाथ या पैर मरोड़कर तोड़ दे अथवा उखाड़ ही डाले, या मस्तक को ही चकनाचूर कर दे उनके अपने शरीर में इतनी क्षमता नहीं बची थी कि वे बालि के प्रहार को सँभाल पाते और राम उनकी सहायता नहीं करेंगे क्यों करेंगे? शक्तिशाली किष्किंधापति बालि के विरुद्ध, कोई भी व्यक्ति निष्कासित, असमर्थ, असहाय, निरुपाय सुग्रीव की सहायता क्यों करेगा?

क्या मिलेगा किसी को सुग्रीव की सहायता करके कोई तेरी सहायता नहीं करेगा, सुग्रीव। उठ। भाग। अपने प्राण बचा।

सुग्रीव उठकर खड़े हुए और बालि पर झपटने के स्थान पर, सहसा पलटकर उल्टी दिशा में वन की ओर भागे। इसी बीचमें बालिने सुग्रीवके पाँव उखाड़ दिये। वे अपने रक्षक श्रीरघुनाथको न देखकर ऋष्यमूक पर्वतकी ओर भागे। वे बहुत थक गये थे। उनका सारा शरीर लहूलुहान और प्रहारोंसे जर्जर हो रहा था। इतनेपर भी बालिने क्रोधपूर्वक़ उनका पीछा किया। किंतु वे मतंग मुनिके महान् वनमें घुस गये। सुग्रीवको उस वनमें प्रविष्ट हुआ देख महाबली बालि शापके भयसे वहाँ नहीं गया और जाओ तुम बच गये ऐसा कहकर वहाँसे लौट आया।

सुग्रीव गदा लेकर आये थे। बालिने गदा छीनकर फेक दी। बहुत थोड़ी देर द्वन्द्व-युद्ध हुआ। बालिके वज्रके समान घूसोंके प्रहारसे व्याकुल सुग्रीव भाग खड़े हुए। बालिने उनका पीछा नहीं किया। सच बात यह है कि पहिले क्रोधके आवेगमें बालिने अवश्य सुग्रीवको मार देनेके लिए खदेड़ा था; किंतु जब सुग्रीवने ऋष्यमूकपर शरण ले ली, बालिने उनकी उपेक्षा कर दी थी। सुग्रीव अपने मनके भयसे ही सदा भीत रहते थे। बालिने कभी सुग्रीवको मारनेकी बात भी नहीं सोची थी। आज भी सुग्रीव भागे तो वह हँसता लौट गया अपने भवन- अब इसे फिर उत्पात करनेका साहस नहीं होगा।

इधर श्रीरघुनाथ भी अपने भाई लक्ष्मण तथा श्रीहनुमानके साथ उसी समय वनमें आ गये, जहाँ वानर सुग्रीव विद्यमान थे।

राम जाकर सुग्रीव के सम्मुख खड़े हो गए, किंतु सुग्रीव ने अपना चेहरा दूसरी ओर फेर लिया।

राम मुसकराए, मुझसे रुष्ट हो, मित्र सुग्रीव ?

सुग्रीव तड़पकर घूमे, जैसे उन पर कशाघात हुआ हो, कौन किसका मित्र है, राम। क्या मैत्री इसी को कहते हैं उनका आक्रोश हताशा में बदल गया और उनकी आँखों से आँसू बह निकले, मैं क्या जानता नहीं था, या मैंने स्वीकार नहीं किया था, कि बालि मुझसे कहीं अधिक शक्तिशाली है। फिर भी मैं तुम्हारी मैत्री और बल का संबल पाकर, तुम्हारी आदेश से यम सरीखे अपने उस शत्रु से लड़ने के लिए गया। मैंने उसे ललकारा था, अपने बल और साहस के भरोसे नहीं, तुम्हारी शक्ति और युद्ध-क्षमता के सहारे। और तुम मुझे वास्तविक मर्कट मानकर मेरे पिटने को अपनी क्रीड़ा समझते रहे। मैं वहाँ पिटता रहा, घाव खाता रहा, मेरा रक्त बहता रहा; और तुम दोनों भाई धनुष-बाण लिये, वृक्ष के पीछे खड़े तमाशा देखते रहे कि दो असम योद्धाओं को भिड़ा, निर्बल को पिटते देखने में कैसा वीभत्स रस मिलता है। जला दो अपने धनुष-बाण। ये या तो शोभा के लिए हैं, या नाटक के लिए।

सुग्रीव ! लक्ष्मण क्रुद्ध होकर बोले, अनर्गल प्रलाप बंद करो। क्या अधिकार है तुम्हें यह सब कहने का ?

एक तो इतना बड़ा छल किया, सुग्रीव तड़पकर बोले, और अब शिकायत भी नहीं करने दोगे।

कहने दो, सौमित्र ! राम मुस्कराए, वानरराज इस समय क्रोध में हैं। कहो, बंधु। क्या कहना है ?

मुझे क्या कहना है। सुग्रीव ने राम की ओर देखा, मैं तो स्वयं यहाँ सुनने के लिए बैठा हूँ। तुमने मेरे साथ छल क्यों किया ?

मैंने तनिक भी छल नहीं किया, मित्र। राम की मुस्कान लुप्त हो गई, मैंने तो सचमुच यही चाहा था कि हम तुम्हें समर्थ बनाएँ, ताकि तुम स्वयं अपने हाथों अपने शत्रु का वध कर, अपना प्रतिशोध लो और वीरत्व का यश पाओ।

पर मैं बालि से लड़ नहीं सकता। सुग्रीव झल्लाकर बोले।

केवल अपने मित्रों से झगड़ सकते हो ? लक्ष्मण ने तीखे स्वर में कहा।

शांत हो जाओ, सौमित्र। राम मुस्कराए, क्रोध में कही गई मित्र की बात का क्या बुरा मानना। वे सुग्रीव की ओर मुड़े, वह तो मैंने भी देखा है, सुग्रीव। तुम्हारा शरीर कितना अक्षम है, यह कहना कठिन है; तुम्हारी चेतना बालि से इतनी पराभूत है कि तुम उसके सम्मुख खड़े नहीं हो सकते। इसीलिए कहूँगा कि तुम बालि से लड़ने अवश्य गए थे; किंतु तुम लड़े नहीं। मैं तो खड़ा-खड़ा ही सोच रहा था। कि दोनोंका बैर निकलने दूँ। यह दोनों भाई-भाई है आपस में यदि मिल जायँ तो मिलने दो।

लड़ा नहीं तो अपना यह रक्त ऐसे ही बहा आया ? सुग्रीव आक्रोशपूर्ण स्वर में बोले।

लड़ना एक बात है, राम मुसकराए, और खड़े-खड़े पिटते रहकर भाग आना दूसरी बात है। तुमने लड़ने का तनिक भी प्रयत्न नहीं किया, मित्र। न देखा बालि प्रहार कैसे कर रहा है, न देखा तुम्हें अपना बचाव कैसे करना चाहिए; तुमने न मल्ल-युद्ध किया, न मुष्टिका-युद्ध। तुमने एक बार भी उन दाँवों के प्रयोग का प्रयत्न नहीं किया, जो तुम्हें सिखाए थे। तुम तो झुँझलाए हुए बच्चे के समान बालि से बचने का प्रयत्न करते रहे; और जब तक मैं समझूँ कि तुम्हारे मन में क्या है, तुम भाग भी चुके थे।

लक्ष्मणसहित श्रीरामको आया देख सुग्रीवको बड़ी लज्जा हुई और वे पृथ्वीकी ओर देखते हुए दीन वाणीमें उनसे बोले- रघुनन्दन। आपने अपना पराक्रम दिखाया और मुझे यह कहकर भेज दिया कि जाओ, बालिको युद्धके लिये ललकारो, यह सब हो जानेपर आपने शत्रुसे पिटवाया और स्वयं छिप गये। बताइये, इस समय आपने ऐसा क्यों किया ? आपको उसी समय सच-सच बता देना चाहिये था कि मैं बालिको नहीं मारूँगा। ऐसी दशामें मैं यहाँसे उसके पास जाता ही नहीं।

आप सत्यवादी हैं, भक्तवत्सल हैं। सुग्रीव अत्यन्त व्याकुल श्रीरामके समीप भागे आये- मेरा मरण ही आपको अभीष्ट था तो स्वयं मार देते। मुझे शत्रुके द्वारा पिटवाकर आपको क्या मिला ?

राम ने कहा- सुग्रीव। मैं बार-बार धनुष बाण पर चढ़ाता था। पर तुम दोनों एकरूप हो इससे मैं बार-बार धोखा खा रहा था।

बालि का और तेरा चेहरा एक समान है- एक रूप तुम भ्राता दोऊ। मेरे बाण चलाने पर यदि तुम मारे जाते तो संसार यही कहता की राम ने मित्र के साथ विश्वासघात किया।

मित्र ! मुझसे भूल हुई। श्रीरामने सुगीवको हृदयसे लगा लिया। सुग्रीवको बहुत चोट लगी थी और आशाके विपरीत पीटे गये थे वे, अत: हृदयपर भी चोट लगी थी। उनका आक्रोश उचित था। उनका मुख तमतमाया था। उनके नेत्र अश्रुपूरित थे। श्रीरामने स्नेहपूर्वक उनके शरीरपर हाथ फेरा तो एक नवीन अनुभव हुआ सुग्रीवको। उनके शरीरकी पीड़ा तत्काल लुप्त हो गयी। उनके भीतर मानो स्फूर्तिका स्रोत फूट पड़ा। इस अनुभवके कारण उनके मनका आक्रोश मिट गया। वे चौंककर श्रीरामके मुखकी ओर देखने लगे। आपने यहाँ तो सात साल-वृक्ष छेद दिए थे, वहाँ बाण क्यों नहीं चलाया ? सुग्रीव बोले, आपने वचन दिया था, आप बालि का वध करेंगे।

महामना सुग्रीव जब दीन वाणीद्वारा इस प्रकार करुणाजनक बात कहने लगे, तब श्रीराम फिर उनसे बोले- तात सुग्रीव। मेरी बात सुनो, क्रोधको अपने जनसे निकाल दो। मैंने क्यों नहीं बाण चलाया, इसका कारण सुनो- सुग्रीव। वेशभूषा, कद और चाल-ढालमें तुम और बालि दोनों एक-दूसरेसे मिलते-जुलते हो। स्वर, कान्ति, दृष्टि, पराक्रम और बोलचालके द्वारा भी मुझे तुम दोनोंमें कोई अन्तर नहीं दिखायी देता। वानरश्रेष्ठ। तुम दोनोंके रूपकी इतनी समानता देखकर मैं मोहमें पड़ गया- तुम्हें पहचान न सका; इसीलिये मैंने अपना महान् वेगशाली शत्रुसंहारक बाण नहीं छोड़ा। मेरा वह भयंकर बाण शत्रुके प्राण लेनेवाला था, इसलिये तुम दोनोंकी समानतासे संदेहमें पड़कर मैंने उस बाणको नहीं छोड़ा। सोचा, कहीं ऐसा न हो कि हम दोनोंके मूल उद्देश्यका ही विनाश हो जाय। वीर। वानरराज। यदि अनजानमें या जल्दबाजीके कारण मेरे बाणसे तुम्हीं मारे जाते तो मेरी बालोचित चपलता और मूढ़ता ही सिद्ध होती।

तुमने मुझे बालि से द्वंद्व-युद्ध करने दिया होता, तो मैंने उसका वध भी कर दिया होता। जिस औघड़ स्थिति में तुमने मुझे डाल दिया है, उसमें मैंने यही कहा था कि बालि का वध तुम ही करोगे। हाँ। मैं बालि को तुम्हारा वध नहीं करने दूँगा।

तो ? तो यह कि अपने मन में हमारे प्रति आया अविश्वास दूर करो। राम पर सामान्य स्थिति में भी अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। राम का स्वर अधिक मैत्रीपूर्ण हो उठा, और इस समय तो सीता की खोज और सुरक्षा के लिए हम तुम्हारी शरण में आए हुए हैं। हम तुम्हारे साथ छल कैसे कर सकते हैं ?

जिसको अभय दान दे दिया गया हो, उसका वध करनेसे बड़ा भारी पाप होता है; यह एक अद्‌भुत पातक है। इस समय मैं, लक्ष्मण और सुन्दरी सीता सब तुम्हारे अधीन है। इस वनमें तुम्हीं हमलोगोंके आश्रय हो; इसलिये वानरराज। शमा न करो।

मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है। सुग्रीव का स्वर आक्रोशशून्य हो गया, मुझे अपने ऊपर तनिक भी भरोसा नहीं है; और आप मेरे ही हाथों बालि का वध करवाना चाहते हैं।

शांत मन से मेरी बात समझने का प्रयत्न करो, सुग्रीव। राम बोले, यह मान बैठना सर्वथा निरर्थक है कि कोई व्यक्ति, समाज अथवा जाति से निश्चित रूप से अधिक शक्तिशाली है। हमारे पास इनके अनुभव-सिद्ध प्रमाण हैं। सिद्धाश्रम से लेकर पंचवटी तक राक्षस अपराजेय शक्ति माने जाते थे; किंतु जहाँ-जहाँ लोग संगठित होकर उठ खड़े हुए- वहाँ-वहाँ वे राक्षसों से अधिक शक्तिशाली हो गए।

पर मैं लोग नहीं; एक व्यक्ति हूँ, सुग्रीव बीच में ही बोले; मैं अपना संगठन कैसे करूँ ?

वही बता रहा हूँ। राम बोले, युद्ध के संदर्भ में शक्ति का अर्थ है, प्रहारक शक्ति। प्रहारक शक्ति कई प्रकार से बढ़ाई जा सकती है- शारीरिक बल बढ़ाकर, युद्ध-कौशल की वृद्धि कर, शस्त्र-शक्ति प्राप्त कर अथवा संगठन से। बालि के साथ युद्ध के संदर्भ में तुम अपनी शारीरिक शक्ति नहीं बढ़ा सकते। शस्त्र-युद्ध तुम्हें करना नहीं है। एक व्यक्ति अपना संगठन कैसे करेगा। अत: तुम्हें अपना युद्ध-कौशल

ही बढ़ाना होगा।

पुन: चलकर युद्ध प्रारम्भ करो। तुम इसी मुहूर्तमें बालि को मेरे एक ही बाणका निशाना बनकर धरतीपर लोटता देखोगे। वानरेश्वर। अपनी पहचानके लिये तुम कोई चिह्न धारण कर लो, जिससे द्वन्द्वयुद्धमें प्रवृत्त होनेपर मैं तुम्हें पहचान सकूँ।

सुग्रीवसे ऐसा कहकर श्रीराम लक्ष्मणसे बोले- लक्ष्मण। यह उत्तम लक्षणोंसे युक्त गजपुष्पी लता फूल रही है। इसे उखाड़कर तुम महामना सुग्रीवके गलेमें पहना दो। यह आज्ञा पाकर लक्ष्मणने पर्वतके किनारे उत्पन्न हुई फूलोंसे भरी वह गजपुष्पी लता उखाड़कर सुग्रीवके गलेमें डाल दिया। गलेमें पड़ी हुई उस लतासे श्रीमान् सुग्रीव वकपंक्तिसे अलंकृत संध्याकालके मेघकी भाँति शोभा पाने लगे।

श्रीरामके वचनसे आश्वासन पाकर अपने सुन्दर शरीरसे शोभा पानेवाले सुग्रीव श्रीरघुनाथके साथ फिर किष्किन्धापुरीमें जा पहुँचे।

अब कोई भ्रम नहीं होगा। श्रीरामने सुग्रीवसे कहा- अब एक बार तुम फिर बालिको पुकारो। इस बारकी तुम्हारी पुकार उसके लिए मरणकी पुकार बनेगी। पर्वतके निचले भागमें उत्पन्न होने वाली अत्यन्त दुर्लभ यह लता निश्चय बालिको मिलनेवाली नहीं थी। बालि पुष्पमाला धारण व्यसनी नहीं था और गजपुष्पीके इतने बड़े, बेढ़ंगे, निर्गन्ध प्राय पुष्पोंकी माला कोई भी पहिनता नहीं। अत: सुग्रीवको भी अब रूप अदृश्यसे होनेवाले भ्रमका भय नहीं रहा।

सुग्रीवके साथ श्रीराम अनुज एवं हनुमानादिके साथ आगे तक आये। आगे वृक्षोंका एक सघन झुरमुट मिला। सुग्रीवने हाथ जोड़कर वहाँ मस्तक झुकाया। श्रीरामने पूछा- यह किसका उद्यान है ?

सुग्रीव- सप्तजन नामके मुनि यहाँ तपस्या करते हैं। वे अधोसिर जलमें डूबे रहते सात दिन बाद जलसे निकलकर आहार ग्रहण करते हैं। वृक्षोंके मध्यस्थित जलाशयमें अब भी होंगे। मैंने उनको ही प्रणाम किया है।

भाईके साथ श्रीरामने भी हाथ जोड़कर उन मुनिके निमित्त मस्तक झुकाया- मित्र। मैं यहीं खड़ा हूँ। तुम बालिको सम्मुखके मैदानमें युद्धके लिए पुकारो। आपके द्वारा अर्पित करायी यह माला मेरे कण्ठमें है। आप इस चिह्नको स्मरण रखना।

सात दिन और सात रात व्यतीत करके वे केवल वायुका आहार करते थे तथा एक स्थानपर निश्चल भावसे रहते थे। इस प्रकार सात सौ वर्षोंतक तपस्या करके वे सशरीर स्वर्गलोकको चले गये। उन्हींके प्रभावसे सघन वृक्षोंकी चहारदीवारीसे घिरा हुआ यह आश्रम इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताओं और असुरोंके लिये भी अत्यन्त दुर्धर्ष बना हुआ है।

पक्षी तथा दूसरे वनचर जीव इसे दूरसे ही त्याग देते हैं। जो मोहवश इसके भीतर प्रवेश करते हैं, वे फिर कभी नहीं लौटते हैं।

रघुनन्दन ! यहाँ मधुर अक्षरवाली वाणीके साथ-साथ आभूषणोंकी झनकारें भी सुनी जाती हैं। वाद्य और गीतकी मधुर ध्वनि भी कानोंमें पड़ती है और दिव्य सुगन्धका भी अनुभव होता है।

यहाँ आहवनीय आदि त्रिविध अग्नियाँ भी प्रज्वलित होती हैं। यह कबूतरके अंगोंकी भाँति धूसर रंगवाला घना धूम उठता दिखायी देता है, जो वृक्षोंकी शिखाओंको आवेष्टित-सा कर रहा है।

उस सप्तजनाश्रमसे दूरतकका मार्ग तय कर लेनेके पश्चात् उन सबने बालिद्वारा सुरक्षित किष्किन्धापुरीको देखा।

तदनन्तर श्रीरामके छोटे भाई लक्ष्मण, श्रीराम तथा वानर, जिनका उग्रतेज उदित हुआ था, हाथोंमें अस्त्र-शस्त्र लेकर इन्द्रकुमार बालिके पराक्रमसे पालित किष्किन्धापुरीमें शत्रुवधके निमित्त पुन: आ पहुँचे।

सुग्रीवने आतुरकी भाँति प्रार्थना की- इस बार विलम्ब मत करना। बालि अब बहुत क्रोधमें भरा आवेगा। वह मुझे मार ही देगा। यदि आपने विलम्ब किया और ऐसा कोई दिव्यास्त्र मत प्रयोग करना कि किष्किन्धाकी सुरक्षा नष्ट हो।

सुग्रीवने बहुत आगे जानेका साहस नहीं किया। उन्होंने थोड़ी ही दूर जाकर-गर्जना करते हुए बालिको पुकारा- मैं सुग्रीव पुन: युद्ध माँगता हूँ। यह इतनी शीघ्र भूल गया अपनी पिटायी ? बालि अभी अत:पुरमें प्रातराश करने बैठा ही था। सुग्रीवकी ललकार सुनकर क्रोधसे काँपता उठ खड़ा हुआ।

वे सब लोग शीघ्रतापूर्वक बालिकी किष्किन्धापुरीमें पहुँचकर एक गहनवनमें वृक्षोंकी ओटमें अपने आपको छिपाकर खड़े हो गये।

कार्यकुशल श्रीरामकी ओर देखकर सुग्रीवने कहा- भगवन्। बालिकी यह किष्किन्धापुरी तपाये हुए सुवर्णके द्वारा निर्मित नगरद्वारसे सुशोभित है। इसमें सब ओर वानरोंका जाल-सा बिछा हुआ है तथा यह ध्वजों और यन्त्रोंसे सम्पन्न है। हम सब लोग इस पुरीमें आ पहुँचे हैं। वीर ! आपने पहले बालि-वधके लिये जो प्रतिज्ञा की थी, उसे अब शीघ्र सफल कीजिये। ठीक उसी तरह जैसे आया हुआ

अनुकूल समय लताको फल-फूलसे सम्पन्न कर देता है।

श्रीरामने सुग्रीवसे कहा- वीर ! अब तो इस गजपुष्पी लताके द्वारा तुमने अपनी पहचानके लिये चिह्न धारण कर ही लिया है। लक्ष्मणने इसे उखाड़कर तुम्हारे कण्ठमें पहना ही दिया है। तुम कण्ठमें धारण की हुई इस लताके द्वारा बड़ी शोभा पा रहे हो। यदि आकाशमें यह विपरीत घटना हो कि सूर्य-मण्डल नक्षत्र-मालासे घिर जाय, तभी इस कण्ठ-लम्बिनी लतासे सुशोभित होनेवाले तुम्हारी उस सूर्यसे तुलना हो सकती है।

वानरराज ! आज मैं बालिसे उत्पन्न हुए तुम्हारे भय और वैर दोनोंको युद्धस्थलमें एक ही बार बाण छोड़कर मिटा दूँगा।

सुग्रीव। तुम मुझे अपने उस भ्रातारूपी शत्रुको दिखा तो दो। फिर वाली मारा जाकर वनके भीतर धूलमें लौटता दिखायी देगा।

यदि मेरी दृष्टिमें पड़ जानेपर भी वह जीवित लौट जाय तो तुम मुझे दोषी समझना और तत्काल जी भरकर मेरी निन्दा करना।

बहुत समयसे संकट झेलते रहनेपर भी मैं कभी झूठ नहीं बोला हूँ। मेरे मनमें धर्मका लोभ है। इसलिये किसी तरह मैं झूठ तो बोलूँगा ही नहीं। साथ ही अपनी प्रतिज्ञाको भी अवश्य सफल करूँगा। अत: तुम भय और घबराहटको अपने हृदयसे निकाल दो।

बालि अनेक युद्धोंमें विजय पाकर विजयश्रीसे सुशोभित हुआ है। सबपर विजय पानेकी इच्छा रखता है और उसने कभी तुमसे हार नहीं खायी है। इसके अलाव युद्धसे उसका बड़ा प्रेम है, अत: बालि कहीं भी आसक्त न होकर नगरके बाहर अवश्य निकलेगा।

क्योंकि अपने पराक्रमको जाननेवाले वीर पुरुष, विशेषत: स्त्रियोंके सामने, युद्धके लिये शत्रुओंके तिरस्कारपूर्ण शब्द सुनकर कदापि सहन नहीं करते हैं। श्रीरामकी यह बात सुनकर सुवर्णके समान पिङ्गलवर्णवाले सुग्रीवने आकाशको विदीर्ण-सा करते हुए कठोर स्वरमें बड़ी भयंकर गर्जना की। तदनन्तर जिनका सिंहनाद मेघकी गर्जनाके समान गम्भीर था और शौर्यके द्वारा जिनका तेज बढ़ा हुआ था, वे सुविख्यात सूर्यकुमार सुग्रीव बड़ी उतावलीके साथ बारंबार गर्जना करने लगे, मानो वायुके वेगसे चञ्चल हुई उत्ताल तरङ्ग मालाओंसे सुशोभित सरिताओंका स्वामी समुद्र कोलाहल कर रहा हो।

परिचारिका ने द्रुतगति से प्रवेश कर तारा का अभिवादन किया, देवि। नगर-द्वार का प्रहरी-नायक सूचना लाया है कि नगर-द्वार पर खड़े सुग्रीव सम्राट को युद्धार्थ ललकार रहे हैं। समाचार सम्राट तक पहुँच गया है क्या ? तारा झपटकर उठ खड़ी हुईं।

अब तक पहुँच गया होगा, देवि। उस समय अमर्षशील बालि अपने अन्त:पुरमें था। उसने अपने भाई महामना सुग्रीवका वह सिंहनाद वहींसे सुना। समस्त प्राणियोंको कम्पित कर देनेवाली उनकी वह गर्जना सुनकर उसका सारा मद सहसा उतर गया और उसे महान् क्रोध उत्पन्न हुआ। फिर तो सुवर्णके सम्मान पीले रंगवाले बालि का सारा शरीर क्रोधसे तमतमा उठा। वह राहुग्रस्त सूर्यके समान तत्काल श्रीहीन दिखायी देने लगा। बालिकी दाढ़ें विकराल थीं, नेत्र क्रोधके कारण प्रज्वलित अग्निके समान उद्दीप्त हो रहे थे। वह उस तालाबके समान श्रीहीन दिखायी देता था, जिसमें कमलपुष्पोंकी शोभा तो नष्ट हो गयी हो और केवल मृणाल रह गये हों।

वह दु:सह शब्द सुनकर बालि अपने पैरोंकी धमकसे पृथ्वीको विदीर्ण-सी करता हुआ बड़े वेगसे निकला।

तारा परिधान-परिवर्तन के लिए भी नहीं रुकीं। वे भागती हुई अपने कक्ष से बाहर निकलीं। आधी रात होने को थी और इस समय सुग्रीव युद्ध के लिए आह्वान कर रहा है तो अवश्य ही कोई विशेष बात हो गई है। आधी रात के समय देवर ने नगर-द्वार के बाहर अपने भाई के वध के लिए जाल बिछाया है, अथवा अपने साथियों को लेकर आया है अंगद कह भी रहा था।

बालि ने अपने कक्ष से बाहर पग रखा ही था कि तारा सामने जा खड़ी हुई, आधी रात के समय कहाँ जा रहे हैं, प्रिय ?

मायावी को मारकर लौटने के पश्चात् अलका को किष्किंधा में न पाकर, बालि के मन में तारा के प्रति कुछ-कुछ आकर्षण लौटा था; किंतु फिर भी बालि के मन की वितृष्णा पूर्णत: समाप्त नहीं हुई थी। अपने क्षोभ के इस क्षण में तारा को सम्मुख देखना बालि को तनिक भी सुखद नहीं लगा।

स्वामी। मेरी प्रार्थना सुन लों। ताराने पतिके पैर पकड़े- आपसे पिटकर आपके छोटे भाई अभी भाग गये थे। यह स्पष्ट है कि बिना किसी प्रबल सहायकके वे इतनी शीघ्र लौटनेका साहस नहीं कर सकते। आप क्रोध त्यागकर विचार कर लो। युद्ध ही करना हो तो कल युद्ध करनेका सन्देश भेज दो। सुग्रीवका पुन: लौटना शंकाका कारण है।

सुग्रीव ने युद्ध के लिए पुकारा है। स्वयं को संयत करने का प्रयत्न करते हुए बालि ने कहा।

इस समय ? समय कोई हो। युद्धाह्वान को सुनकर बालि रुक नहीं सकता।

वानरवीर ! कल प्रात:काल सुग्रीवके साथ युद्ध कीजियेगा इस समय रुक जाइये। यद्यपि युद्धमें कोई शत्रु आपसे बढ़कर नहीं है और आप किसीसे छोटे नहीं हैं। हे स्वामी। इस समय मेरा दिल बहुत धड़क रहा है। न जाने क्या कारण है मेरा दायाँ नेत्र फड़क रहा है। मेरे सिर में दर्द हो रहा है, आँखों के सामने अँधेरा सा छाया जा रहा है। मैं जबरन अपने कलेजे को रोकके खड़ी हूँ यह मुँह को आया जाता है। इस समय सहसा आपका घरसे बाहर निकलना मुझे अच्छा नहीं लगता है।

तब बालि ने कहा- प्रियतमे दु:ख को मत प्राप्त हो। रणमें सौ सुग्रीव भी हों तो उनको मैं समाप्त कर दूँगा।

आपको रोकनेका एक विशेष कारण भी है। उसे बताती हूँ, सुनिये। सुग्रीव पहले भी यहाँ आये थे और क्रोधपूर्वक उन्होंने आपको युद्धके लिये ललकारा था। उस समय आपने नगरसे निकलकर उन्हें परास्त किया और वे आपकी मार खाकर सम्पूर्ण दिशाओंकी ओर भागते हुए मतङ्ग वनमें चले गये थे। इस प्रकार आपके द्वारा पराजित और विशेष पीड़ित होनेपर भी वे पुन: यहाँ आकर आपको युद्धके लिये ललकार रहे हैं। उनका यह पुनरागमन मेरे मनमें शंका-सी उत्पन्न कर रहा है।

इस समय गर्जते हुए सुग्रीवका दर्प और उद्योग जैसा दिखायी देता है तथा उनकी गर्जनामें जो उत्तेजना जान पड़ती है, इसका कोई छोटा-मोटा कारण नहीं होना चाहिये। मैं समझती हूँ सुग्रीव किसी प्रबल सहायकके बिना अबकी बार यहाँ नही आयें हैं। किसी सबल सहायकको साथ लेकर ही आये हैं, जिसके बलपर ये इस तरह गरज रहे हैं। वानर सुग्रीव स्वभावसे ही कार्यकुशल और बुद्धिमान् हैं। वे किसी ऐसे पुरुषके साथ मैत्री नहीं करेंगे, जिसके बल और पराक्रमको अच्छी तरह परख न लिया हो। पर रात को आने के पीछे, सुग्रीव की कोई चाल भी हो सकती है। प्रात: तक रुक जाएँ। मेरी इच्छा है, आप अकेले न जाएँ। अंगद तथा कुछ सेनानायकों को साथ ले जाएँ।

युद्ध के संदर्भ में तुम्हारी इच्छा मेरे लिए कब से मान्य होने लगी ? बालि का स्वर रुक्ष था, यह मेरा और उस कायर सुग्रीव का द्वंद्व-युद्ध है। इसमें और किसी का क्या काम ? बालि ने पग बढ़ाया।

तारा ने झपटकर बालि का हाथ थाम लिया, मेरी बात तो सुन लो, प्रिय। क्या है ? बालि ने उसे रुष्ट दृष्टि से देखा।

मैं उसे सहायकके साथ मार दूँगा। बालिने गर्जनाकी। शत्रुकी ललकार सहन करना उसके स्वभावमें नहीं था।

शत्रुको निर्बल मानना समझदारी नहीं होती। इस बार सुग्रीवके स्वरमें जो दर्प है, वह प्रकट करता है कि वह बड़े सहायकके बिना नहीं आया है। आप जानते हैं कि सुग्रीव जन्मसे चतुर है। अपरीक्षित पराक्रमकी सहायताके भरोसे वह नहीं आया होगा। अब ताराने स्पष्ट कहा- अङ्गदको गुप्तचरके द्वारा सम्वाद मिला है कि सुग्रीवने दशरथ-नन्दन श्रीरामसे मैत्री कर ली है। रामने तुम्हारे वधकी प्रतिज्ञा की है। वे साधु तथा आर्तोंके आश्रय हैं सब सद्गुण श्रीराममें निवास करते हैं। वे सबकी परम गति हैं। उन कबन्धको मारनेवाले से विरोध मत करो। वे अप्रमेयपराक्रम दुर्जय हैं।

मुझे अंगद ने बताया था कि सुग्रीव की मित्रता दो आर्य राजकुमारों से हो गई है। उनके पास भयंकर शस्त्र हैं। उन्होंने आपके वध का वचन सुग्रीव को दिया है।

वे दोनों दुर्जय वीर सुग्रीवका प्रिय करनेके लिये उनके पास पहुँच गये हैं। उन दोनोंमेंसे जो आपके भाईके युद्धकर्ममें सहायक बताये गये हैं, वे श्रीराम शत्रुसेनाका संहार करनेवाले तथा प्रलयकालमें प्रज्वलित हुई अग्निके समान तेजस्वी हैं। वे साधु पुरुषोंके आश्रयदाता कल्पवृक्ष हैं और संकटमें पड़े हुए प्राणियोंके लिये सबसे बड़ा सहारा हैं।

आर्त पुरुषोंके आश्रय, यशके एकमात्र भाजन, ज्ञान-विज्ञानसे सम्पन्न तथा पिताकी आज्ञामें स्थित रहनेवाले हैं।

जैसे गिरिराज हिमालय नाना धातुओंकी खान है, उसी प्रकार श्रीराम उत्तम गुणोंके बहुत बड़े भंडार हैं। अत: उन महात्मा रामके साथ आपका विरोध करना कदापि उचित नहीं है। क्योंकि वे युद्धकी कलामें अपना सानी नहीं रखते हैं। उनपर विजय पाना अत्यन्त कठिन है।

सुग्रीवको बुलाकर आप युवराज बना ले। वे अब दुर्बल नहीं है। छोटे भाई होनेसे वे आपके स्नेह-पात्र है। उनको अपनाकर आप श्रीरामका सौहार्द्र प्राप्त करेंगे। ताराने प्रार्थना की - छोटे भाईको कुछ देकर समीप रख लेनेमें आपकी शोभा है। बस दूसरा मार्ग नहीं है। मैं आपके चरणोंमें यह भिक्षा माँगती हूँ। आप मुझपर प्रसन्न हों। मुझे अपनी हितैषिणी मानते हो तो क्रोध त्याग दें। मैं पथ्यकी बात कहती हूँ, रामसे विरोध मत करें। सुग्रीवको रामका आश्रय है।

मुझे डराओ मत। मेरे शौर्यका अपमान मत करो। अन्त:पुरमें जाओ। बालिने ताराको डाँट दिया- श्रीराम धर्मज्ञ हैं। वे सुग्रीवके कारण मुझे नहीं मारेंगे। वे आये होंगे तो मैं उनके चरण पकड़कर सन्तुष्ट करके ले जाऊँगा। श्रीराम दीन-रक्षक हैं। कदाचित् मार ही दें

मुझे। तुम्हारी आशमा सत्य भी हो तो क्या बालि कभी मरेगा नहीं ? इससे अधिक उत्तम मृत्युका अवसर पुन: मिलेगा ? मैं सुग्रीवको मारूँगा नहीं। केवल उसका गर्व नष्ट करूँगा।

मैं आपके लिये यही उचित समझती हूँ कि आप वैरभावको दूर हटाकर श्रीरामके साथ सौहार्द और सुग्रीवके साथ प्रेमका सम्बन्ध स्थापित कीजिये।

वानर सुग्रीव आपके छोटे भाई हैं। अत: आपका लाड़-प्यार पानेके योग्य हैं। वे ऋष्यमूकपर रहें या किष्किन्धामें सर्वथा आपके बन्धु ही हैं। मैं इस भूतलपर उनके समान बन्धु और किसीको नहीं देखती हूँ। आप दान-मान आदि सत्कारोंके द्वारा उन्हें अपना अत्यन्त अन्तरङ्ग बना लीजिये, जिससे वे इस वैरभावको छोड़कर आपके पास रह सकें।

पुष्ट ग्रीवावाले सुग्रीव आपके अत्यन्त प्रेमी बन्धु हैं, ऐसा मेरा मत है। इस समय भ्रातृप्रेमका सहारा लेनेके सिवा आपके लिये यहाँ दूसरी कोई गति नहीं है। यदि आपको मेरा प्रिय करना हो तथा आप मुझे अपनी हितकारिणी समझते हों तो मैं प्रेमपूर्वक याचना करती हूँ, आप मेरी यह नेक सलाह मान लीजिये।

स्वामिन्। आप प्रसन्न होइये। मैं आपके हितकी बात कहती हूँ। आप इसे ध्यान देकर सुनिये। केवल रोषका ही अनुसरण न कीजिये। कोसलराजकुमार श्रीराम इन्द्रके समान तेजस्वी हैं। उनके साथ वैर बाँधना या युद्ध छेड़ना आपके लिये कदापि उचित नहीं है।

उस समय ताराने बालिसे उसके हितकी ही बात कही थी और यह लाभदायक भी थी। किंतु उसकी बात उसे नहीं रुची। क्योंकि उसके विनाशका समय निकट था और वह कालके पाशमें बँध चुका था।

तभी तो प्रात: सुग्रीव पिटकर चिल्लाता हुआ भाग गया था। बालि का स्वर व्यंग्यात्मक हो उठा, ऐसी निराधार कल्पनाओं पर मेरा कोई विश्वास नहीं है, रानी। मैंने भी सुना है कि राम की पत्नी का हरण हो गया है और वह उसे खोजता फिर रहा है। यदि इसमें तनिक भी सत्य होता तो राम अपनी प्रार्थना लेकर मेरे पास आया होता। इस भगोड़े सुग्रीव की मित्रता से उसे क्या मिलेगा। हटो। मुझे जाने दो। बालि ने अपना हाथ छुड़ा लिया और आगे बढ़ गया।

भीरू। जो कभी परास्त नहीं हुए और जिन्होंने युद्धके अवसरोंपर कभी पीठ नहीं दिखायी, उन शूरवीरोंके लिये शत्रुकी ललकार सह लेना मृत्युसे भी बढ़कर दु:खदायी होता है।

यह हीन ग्रीवावाला सुग्रीव संग्रामभूमिमें मेरे साथ युद्धकी इच्छा रखता है। मैं इसे रोषावेश और गर्जन-तर्जन-को सहन करनेमें असमर्थ हूँ।

श्रीरामकी बात सोचकर भी तुम्हें मेरे लिये विषाद नहीं करना चाहिये। क्योंकि वे धर्मके ज्ञाता तथा कर्तव्याकर्तव्यको समझनेवाले हैं। अत: पाप कैसे करेंगे।

तुम इन स्त्रियोंके साथ लौट जाओ। क्यों मेरे पीछे बार-बार आ रही हो। तुमने मेरे प्रति अपना स्नेह दिखाया। भक्तिका भी परिचय दे दिया। अब जाओ। घबराहट छोड़ो। मैं आगे बढ़कर सुग्रीवका सामना करूँगा। उसके घमण्डको चूर-चूर कर डालूँगा। किंतु प्राण नहीं लूँगा। युद्धके मैदानमें खड़े हुए सुग्रीवकी जो-जो इच्छा है, उसे मैं पूर्ण करूँगा। वृक्षों और मुक्कोंकी मारसे पीड़ित होकर वह स्वयं ही भाग जायगा। तारे। दुरात्मा सुग्रीव मेरे युद्ध विषयक दर्प और आयास उद्योग को नहीं सह सकेगा। तुमने मेरी बौद्धिक सहायता अच्छी तरह कर दी और मेरे प्रति अपना सौहार्द भी दिखा दिया। अब मैं प्राणोंकी सौगन्ध दिलाकर कहता हूँ कि अब तुम इन स्त्रियोंके साथ लौट जाओ। अब अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है, मैं युद्धमें अपने उस भाईको जीतकर लौट आऊँगा।

तारा जड़-सी अपने स्थान पर खड़ी रह गईं- कैसे बालि को समझाएँ वे। सहसा उनके मन में जैसे साहस का स्रोत फूटा और भागकर उन्होंने पुन: बालि को रोक लिया, राम आए हों या न आए हों; किंतु आप दोनों भाइयों के झगड़े से अनिष्ट-ही-अनिष्ट होगा। प्रियतम। आप सुग्रीव को क्षमा कर दें। उसे किष्किंधा में लाकर उसका युवराज्याभिषेक कर दें और रुमा उसे लौटा दें।

ताराने पतिकी प्रदक्षिणाकी। स्वस्त्ययन किया- तिलक लगाया। रुदन करती लौटी। पतिसे यह अन्तिम मिलन है, इसे वह समझ चुकी थी। बालि ने तारा को झटककर अपना हाथ छुड़ा लिया, जैसे तारा का स्पर्श विषैला दंश हो। मुक्त होते ही वह द्रुतगति से आगे बढ़ गया और तारा के देखते-देखते प्रासाद से बाहर जानेवाले मार्ग के मोड़ों में ओझल हो गया।

तारा जानती थीं कि बालि पर अब उनका कोई प्रभाव नहीं था। यदि बालि ने उनकी बात तनिक भी सुनी होती तो यह स्थिति ही नहीं आती, जिसमें दोनों भाई परस्पर एक-दूसरे के रक्त-पिपासु हो उठते। जब तक मायावी और उसके द्वारा लाई गई अलका बीच में नहीं

थी, तब तक इस कुटुंब में मतभेदों के होते हुए भी ऐसी कटुता नहीं थी। किंतु मायावी के आते ही बालि तारा से दूर होते चले गए; और दोनों भाइयों में तो जैसे विष-बीज ही बो दिया गया था। जब तक बालि, मायावी के वध के संदर्भ में किष्किंधा से विलुप्त रहे, तारा ने वह अवधि सौभाग्य तथा वैधव्य की मध्यवर्ती स्थिति के रूप में काटी थी; किंतु बालि के लौटते ही किष्किंधा में रक्तपात, अपहरण, बलात्कार, कारागार तथा अंधकूपों का युग आरंभ हो गया था बालि तारा का तनिक भी कहा मानते तो सुग्रीव की चाहे हत्या कर देते, किंतु रुमा के साथ ऐसा दुर्व्यवहार कभी न कर पाते; परंतु अपने क्रोध में बालि अंधे हो गए थे और तारा सर्वथा असहाय होकर देखती रही कि उनका पति अन्य सामान्य-जनों के समान ही अपनी अनुज-वधू के साथ भी अत्याचार कर रहा है तारा किस अधिकार से जाकर सुग्रीव को कहे कि वह अपने भाई के प्रति द्रोह त्याग दे, उनके विरुद्ध कोई षड्यंत्र न करे। इन सबके बदले सुग्रीव यदि इतनी-सी ही माँग उनके सम्मुख रख दे कि वे रुमा को मुक्त करा उसे सौंप दें, तो तारा उसकी तनिक भी सहायता कर सकेंगी क्या ? बालि अपने अहंकार, विलास, हिंसा तथा उन्माद के बंदी हो चुके हैं, वे किसी की बात नहीं मानेंगे। तो फिर तारा कर ही क्या सकती है।

वह पतिकी विजय चाहती थी और उसे मन्त्रका भी ज्ञान था। इसलिये उसने बालिकी मङ्गल-कामनासे स्वस्तिवाचन किया और शोकसे मोहित हो वह अन्य स्त्रियोंके साथ अन्त:पुरको चली गयी।

स्त्रियोंसहित ताराके अपने महलमें चले जानेपर बालि क्रोधसे भरे हुए महान् सर्पकी भाँति लम्बी साँस खींचता हुआ नगरसे बाहर निकला। महान् रोषसे युक्त और अत्यन्त वेगशाली बालि लम्बी साँस छोड़कर शत्रुको देखनेकी इच्छासे चारों ओर अपनी दृष्टि दौड़ाने लगा। बालिने कोई शस्त्र नहीं लिया था। सुग्रीव भी शस्त्रहीन थे।

इतनेहीमें बालिने सुग्रीवको देखा, जो लँगोट बाँधकर युद्धके लिये डटकर खड़े थे और प्रज्वलित अग्निके समान प्रकाशित हो रहे थे। सुग्रीवको खड़ा देख महाबाहु बालि अत्यन्त कुपित हो उठा। मानो बरसों का बैर उभर आया हो। भुजाओं का जोशीला खून आँखों के रस्ते से उतर आया। उसने अपना लँगोट भी दृढ़ताके साथ बाँध लिया। लँगोटको मजबूतीके साथ कसकर पराक्रमी बालि प्रहारका अवसर देता हुआ मुक्का तानकर सुग्रीवकी छातीकी ओर चला। सुग्रीव भी सुवर्णमालाधारी बालिके उद्देश्यसे बँधा हुआ मुक्का ताने बड़े आवेशके साथ उसकी ओर बढ़े। युद्धकलाके पण्डित महावेगशाली सुग्रीवको अपनी ओर आते देख बालिकी आँखें क्रोधसे लाल हो गयीं और वह इस प्रकार बोला- सुग्रीव। देख ले। यह बड़ा भारी मुक्का खूब कसकर बँधा हुआ है। इसमें सारी अङ्गुलियाँ सुनियन्त्रितरूपसे परस्पर सटी हुई हैं। मेरे द्वारा वेगपूर्वक चलाया हुआ यह मुक्का तेरे प्राण लेकर ही जायगा।

बालिके ऐसा कहनेपर सुग्रीव क्रोधपूर्वक उससे बोले- मेरा यह मुक्का भी तेरे प्राण लेनेके लिये तेरे मस्तकपर गिरे।

इतनेहीमें बालिने वेगपूर्वक आक्रमण करके सुग्रीवपर मुक्केका प्रहार किया। उस चोटसे घायल एवं कुपित हुए सुग्रीव झरनोंसे युक्त पर्वतकी भाँति मुँहसे रक्त वमन करने लगे। तत्पश्चात् सुग्रीवने भी नि:शम होकर बलपूर्वक एक सालवृक्षको उखाड़ लिया और उसे बालीके शरीरपर दे मारा, मानो इन्द्रने किसी विशाल पर्वतपर वज्रका प्रहार किया हो।

उन दोनों भाइयोंका बल और पराक्रम भयंकर था। दोनोंके ही वेग गरुड़के समान थे। वे दोनों भयंकर रूप धारण करके बड़े जोरसे जूझ रहे थे और पूर्णिमाके आकाशमें चन्द्रमा और सूर्यके समान दिखायी देते थे।

वे शत्रुसूदन वीर अपने विपक्षीको मार डालनेकी इच्छासे एक-दूसरेकी दुर्बलता ढूँढ रहे थे; परंतु उस युद्धमें बलविक्रमसम्पन्न बालि बढ़ने लगा और महापराक्रमी सूर्यपुत्र सुग्रीवकी शक्ति क्षीण होने लगी।

बालिने सुग्रीवका घमण्ड चूर्ण कर दिया। उनका पराक्रम मन्द पड़ने लगा। तब बालिके प्रति अमर्षमें भरे हुए सुग्रीवने श्रीरामको अपनी अवस्थाका लक्ष्य कराया। वे दोनों वनचारी वानर लहूलुहान होकर लड़ रहे थे और दो बादलोंकी तरह अत्यन्त भयंकर गर्जना करते हुए एक-दूसरेको डाँट रहे थे। सुग्रीवके कण्ठमें गजपुष्पीके फूलोंकी माला थी। ताराने बालिको स्वर्णमाला पहिनायी थी। मुष्टि-प्रहारसे दोनोंके शरीर स्थान-स्थानपर फट गये। दोनों रक्तसे सन गये। सुग्रीवने पूरी शक्ति लगा रखी थी। वे उछल-कूदके सब दाँव-पेंच प्रयोग करके भी अपनेको बचा नही पा रहे थे। राम ने वृक्ष की ओट में से देखा।

नगर-द्वार के बाहर निकलकर बालि ने सुग्रीव को ढूँढने के लिए अँधेरे में अपनी दृष्टि घुमाई। उसे अधिक प्रयत्न नहीं करना पड़ा। अर्द्धरात्रि के अंधकार में भी चाँदनी में नहाए, एकदम सम्मुख खड़े सुग्रीव पर तत्काल उसकी दृष्टि पड़ी। लगा, वह तत्काल झपट पड़ेगा; किंतु किसी अज्ञात कारण से निमिष-भर के लिए वह अप्रतिभ खड़ा रह गया। कदाचित् सुग्रीव का यह अपूर्व आत्मविश्वास उसके लिए

अप्रत्याशित था। किंतु बालि अधिक देर तक रुका नहीं रहा।

तू फिर आ गया, नीच। पहला प्रहार इस बार भी बालि ने ही किया, इस बार तू जीवित बचकर नहीं जाएगा।

किंतु, बालि के प्रहार को सुग्रीव ने बड़ी शांति से देखा और झपटकर आते हुए बालि के मार्ग से एक ओर हटकर बालि को ईषत् कोण से धक्का दिया। उनके धक्के से बालि गिरा नहीं; किंतु उसका वार खाली चला गया। सुग्रीव अपने स्थान पर और भी दृढ़ होकर खड़े हो गए। बालि क्रोध में जोर से हुँकारा; किंतु सुग्रीव न उससे डोले और न उसकी प्रतिक्रिया में उन्होंने कोई शब्द किया।

सुग्रीव का आत्मविश्वास देखकर राम को भी बल मिला।

बालि ने पुन: प्रहार किया; किंतु सुग्रीव ने उसकी भुजा को कर्तरी के आकार में अपनी पकड़ में ले लिया। राम ने उन्हें यह दाँव विशेष रूप से सिखाया था। बालि का सारा आवेश, भाटा के साथ पीछे हटती हुई झाग के समान बैठता दिखाई दिया। उस अंधकार में भी बालि के चेहरे पर से आक्रोश और क्रोध के भावों के बीच से यातना के चिन्ह उभरते दिखाई पड़े।

राम का मन आश्वस्त हुआ। किंतु बालि अधिक देर तक उस मुद्रा में नहीं रहा। उसने किसी अज्ञात विधि से अथवा मात्र अपनी शारीरिक शक्ति के बल पर स्वयं को मुक्त कर लिया; और इससे पहले कि सुग्रीव सँभलते और अगली विधि के लिए स्वयं को तैयार करते, बालि ने भरपूर मुष्टि-प्रहार सुग्रीव की नाक पर किया सुग्रीव जैसे बलिष्ठ व्यक्ति के लिए भी बालि का प्रहार भारी था। वे उससे डोल गए। किंतु पुन: सँभलकर बालि से गुँथ गए। राम की भृकुटी चिंता में वक्र हो उठी। सुग्रीव को बालि से गुँथना नहीं चाहिए था।

किंतु तब तक बालि ने सुग्रीव को अपनी भुजाओं में बाँधकर विभिन्न युक्तियों से इतना पीड़ित किया कि सुग्रीव बिलबिला उठे। लगा, मल्ल युद्ध का सारा विधि-विधान, सारी युक्तियाँ, दाँव-पेंच उनकी बुद्धि से निकल गए। अपने शरीर के समस्त बल का आह्वान कर, वे छिटककर बालि की पकड़ से निकले और लड़खड़ाकर गिर पड़े। राम समझ नहीं सके कि यह मात्र संयोग था कि सुग्रीव का हाथ पास के किसी वृक्ष से टूटकर गिरी हुई एक सूखी शाखा पर पड़ गया, अथवा उन्होंने सायास उसे प्राप्त किया था। शाखा पकड़कर खड़े होते ही जैसे वे आविष्ट हो उठे। उन्होंने अपनी संपूर्ण शक्ति तथा अद्‌भुत स्फूर्ति से बालि पर आघात करने आरंभ किए। इन विकट आघातों के सम्मुख बालि की गति अवरुद्ध हो गई और वह कुछ क्षणों तक पिटता ही दिखाई पड़ा। कई स्थानों से उसकी त्वचा फट गई थी और रक्त बह रहा था। सहसा शाखा बालि की पकड़ में आ गई। उसने झटके से शाखा खींची। न केवल वह शाखा सुग्रीव के हाथों से निकल गई, वरन् वे ओंधे मुँह भूमि पर आ गिरे। बालि ने वह शाखा घुमाकर दूर फेंकी और जब तक कि सुग्रीव सीधे हों, वह कूदकर उनके वक्ष पर जा चढ़ा और उसने घूँसों, मुक्कों, थप्पडों से पीटना आरंभ किया। सुग्रीव नीचे पड़े पिटते रहे।

यह युद्ध अब बंद करवाना होगा। राम धीरे से बोले।

मैं जाऊँ क्या ? लक्ष्मण ने पूछा।

किंतु तब तक सुग्रीव बालि को अपने ऊपर से हटा चुके थे।

रुक जाओ। राम ने कहा। तभी बालि सुग्रीव पर कूदा और उसने अपना घुटना सुग्रीव के वक्ष पर रख अपने बलिष्ठ पंजों से सुग्रीव का गला दबाना आरंभ किया, मैं तुझे मार डालूँगा। श्रीरघुनाथने देखा, वानरराज सुग्रीव कमजोर पड़ रहे हैं और बारंबार इधर-उधर दृष्टि दौड़ा रहे हैं। वानरराजको पीड़ित देख महातेजस्वी श्रीरामने बालिके वधकी इच्छासे अपने बाणपर दृष्टिपात किया। उन्होंने अपने धनुषपर विषधर सर्पके समान भयंकर बाण रक्खा और उसे जोरसे खींचा, मानो यमराजने कालचक्र उठा लिया हो। उसकी प्रत्यञ्चाकी टमारध्वनिसे भयभीत हो बड़े-बड़े पक्षी और मृग भाग खड़े हुए। वे प्रलयकालके समय मोहित हुए जीवोंके समान किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये।

सुग्रीव का प्रतिरोध टूटता दिखाई दिया।

भैया। लक्ष्मण ने कुछ कहना चाहा। पर, तब तक राम का बाण चल चुका था, अब तो युद्ध रुकवाने का भी समय नहीं रहा, सौमित्र।

बाण बालि के वक्ष में लगा और बालि उलटकर भूमि पर आ गिरा। सुग्रीव फुर्ती से उठकर खड़े हुए और अपने कंठ से टटोलने लगे।

आओ, सौमित्र। राम ने कहा, बालि का खेल समाप्त हो गया।

बाण लगनेसे बालि घूमकर भूमिपर गिर पडा। उसके वक्षसे रक्त की धारा चलने लगी। बालिके गिरते ही श्रीराम कुञ्जसे निकलकर बालिके समीप आये। लक्ष्मण उनके पीछे आये। अब श्रीरामके वाम करमें चढ़ा हुआ धनुष था। उन जटामुकुटी, कमल-लोचन, विशाल-भुजा, वल्कलवसन, दुर्वादलश्याम श्रीरामको देखते ही बालिने मस्तक उठाया।

इन्द्रकुमार बालिके शरीरसे पानीके समान रक्तकी धारा बहने लगी। वह उससे नहा गया और अचेत हो वायुके उखाड़े हुए पुष्पित अशोकवृक्ष एवं आकाशसे नीचे गिरे हुए इन्द्रध्वजके समान समराङ्गणमें पृथ्वीपर गिर पड़ा।

युद्धमें कठोरता दिखानेवाला बालि श्रीरामके बाणसे घायल हो कटे वृक्षकी भाँति सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसका सारा शरीर पृथ्वीपर पड़ा हुआ था। तपाये हुए सुवर्णके आभूषण अब भी उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। वह देवराज इन्द्रके बन्धनरहित ध्वजकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़ा था। इन्द्रकी दी हुई रत्नजटित श्रेष्ठ सुवर्णमाला उस वानरराजके प्राण, तेज और शोभाको धारण किये हुए थी।

वीरवर श्रीरामके धनुषसे चलाये गये उस अस्त्रने बालिके लिये स्वर्गका मार्ग प्रकाशित कर दिया और उसे परमपदको पहुँचा दिया।

लक्ष्मणको साथ लिये श्रीरामने बालिको इस अवस्थामें देखा और वे उसके समीप गये। इस प्रकार ज्वालारहित अग्निकी भाँति वहाँ गिरा हुआ वह वीर धीरे-धीरे देख रहा था। महापराक्रमी दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण उस वीरका विशेष सम्मान करते हुए उसके पास गये। उन श्रीराम तथा महाबली लक्ष्मणको देखकर बालि धर्म और विनयसे युक्त कठोर वाणीमें बोला।

राम और लक्ष्मण के वृक्षों की ओट से निकलते ही हनुमान, नल, नील तथा तार भी प्रकट हो गए। दूसरी ओर, बालि को बाण के आघात से गिरते देख नगर-द्वार के प्रहरी तथा बालि-पक्ष के कुछ सैनिक प्राचीर के भीतर विलुप्त हो गए। राम बालि के निकट आए।

असाधारण रूप से बलिष्ठ शरीर का स्वामी बालि पृथ्वी पर निष्क्रिय पड़ा था। उसके वक्ष से रक्त बह रहा था और उसके चेहरे तथा आँखों में यातना के चिन्ह स्पष्ट थे। अपीन जिह्वा से वह बार-बार होठों को गीला कर रहा था।

तो तुम हो राम। बालि कराहते-से स्वर में बोला, सुना था कि तुमसे सुग्रीव की मैत्री हो गई है। सहसा उसका स्वर आक्रोशपूर्ण हो उठा, यह कौन-सा न्याय है तुम्हारा ? किसी अन्य व्यक्ति से लड़ते हुए तुमने छिपकर मुझे मारा। क्या इसी को वीरता कहते हैं ?

"धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारहेहु मोहि ब्याध की नाईं। मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा।।"

वह श्रीरामकी ओर देखकर बोला- हे गोसाईं। आपने धर्मकी रक्षाके लिये अवतार लिया है और मुझे व्याधकी तरह छिपकर मारा ? मैं वैरी और सुग्रीव प्यारा ? हे नाथ। किस दोषसे आपने मुझे मारा ?

अब उसमें तेज और प्राण स्वल्पमात्रामें ही रह गये थे। वह बाणसे घायल होकर पृथ्वीपर पड़ा था और उसकी चेष्टा धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही थी। रघुनन्दन। आप राजा दशरथके सुविख्यात पुत्र हैं। आपका दर्शन सबको प्रिय है। मैं आपसे युद्ध करने नहीं आया था। मैं तो दूसरेके साथ युद्धमें उलझा हुआ था। उस दशामें आपने मेरा वध करके यहाँ कौन-सा गुण प्राप्त किया है- किस महान् यशका उपार्जन किया है ? क्योंकि मैं युद्धके लिये दूसरेपर रोष प्रकट कर रहा था, किंतु आपके कारण बीचमें ही मृत्युको प्राप्त हुआ।

इस भूतलपर सब प्राणी आपके यशका वर्णन करते हुए कहते हैं- श्रीराम कुलीन, सत्त्वगुणसम्पन्न, तेजस्वी, उत्तम व्रतका आचरण करनेवाले, प्रजाके हितैषी, दयालु, महान् उत्साही, समयोचित कार्य एवं सदाचारके ज्ञाता और दृढ़प्रतिज्ञ हैं।

राजन्। इन्द्रियनिग्रह, मनका संयम, क्षमा, धर्म, धैर्य, सत्य, पराक्रम तथा अपराधियोंको दण्ड देना- ये राजाके गुण हैं।

मैं आपमें इन सभी सद्गुणोंका विश्वास करके आपके उत्तम कुलको यादकर ताराके मना करनेपर भी सुग्रीवके साथ लड़ने आ गया।

जबतक मैंने आपको नहीं देखा था, तबतक मेरे मनमें यही विचार उठता था कि दूसरेके साथ रोषपूर्वक जूझते हुए मुझको आप असावधान अवस्थामें अपने बाणसे बेधना उचित नहीं समझेंगे।

परंतु आज मुझे मालूम हुआ कि आपकी बुद्धि विकार को प्राप्त हुई है। आप धर्मध्वजी हैं। दिखावेके लिए धर्मका चोला पहने हुए हैं। वास्तवमें अधर्मी हैं। आपका आचार-व्यवहार पापपूर्ण है। आप घास-फूससे ढके हुए कूपके समान धोखा देनेवाले हैं।

आपने साधु पुरुषोंका-सा वेश धारण कर रक्खा है; परंतु हैं पापी। राखसे ढकी हुई आगके समान आपका असली रूप साधु-वेषमें छिप गया है। मैं नहीं जानता था कि आपने लोगोंको छलनेके लिये ही धर्मकी आड़ ली है।

जब मैं आपके राज्य या नगरमें कोई उपद्रव नहीं कर रहा था तथा आपका भी तिरस्कार नहीं करता था, तब आपने मुझ निरपराधको क्यों मारा ? मैं सदा फल-मूलका भोजन करनेवाला और वनमें ही विचरनेवाला वानर हूँ। मैं यहाँ आपसे युद्ध नहीं करता था, दूसरेके साथ मेरी लड़ाई हो रही थी। फिर बिना अपराधके आपने मुझे क्यों मारा ?

राजन्। आप एक सम्माननीय नरेशके पुत्र हैं। विश्वासके योग्य हैं और देखनेमें भी प्रिय हैं। आपमें धर्मका साधनभूत चिन्ह जटा वल्कल धारण आदि भी प्रत्यक्ष दिखायी देता है। क्षत्रियकुलमें उत्पन्न शास्त्रका ज्ञाता, संशयरहित तथा धार्मिक वेश-भूषासे आच्छन्न

होकर भी कौन मनुष्य ऐसा क्रूरतापूर्ण कर्म कर सकता है।

महाराज। रघुके कुलमें आपका प्रादुर्भाव हुआ है। आप धर्मात्माके रूपमें प्रसिद्ध हैं तो भी इतने अभव्य क्रूर निकले। यदि यही आपका असली रूप है तो फिर किसलिये ऊपरसे भव्य विनीत एवं दयालु साधु पुरुषका-सा रूप धारण करके चारों ओर दौड़ते फिरते हैं ? राजन्। साम, दान, क्षमा, धर्म, सत्य, धृति, पराक्रम और अपराधियोंको दण्ड देना ये भूपालोंके गुण हैं।

नरेश्वर राम। हम फल-मूल खानेवाले वनचारी मृग हैं। यही हमारी प्रकृति है; किंतु आप तो पुरुष मनुष्य हैं अत: हमारे और आपमें वैरका कोई कारण नहीं है। पृथ्वी, सोना और चाँदी इन्हीं वस्तुओके लिये राजाओंमें परस्पर युद्ध होते हैं। ये ही तीन कलहके मूल कारण हैं। परंतु यहाँ वे भी नहीं है। इस दिशामें इस वनमें या हमारे फलोंमें आपका क्या लोभ हो सकता है ?

नीति और विनय, दण्ड और अनुग्रह- ये राजधर्म हैं, किंतु इनके उपयोगके भिन्न-भिन्न अवसर हैं इनका अविवेकपूर्वक उपयोग करना उचित नहीं है। राजाओंको स्वेच्छाचारी नहीं होना चाहिये। परंतु आप तो कामके गुलाम, क्रोधी और मर्यादामें स्थित न रहनेवाले-चञ्चल हैं। नय-विनय आदि जो राजाओंके धर्म हैं, उनके अवसरका विचार किये बिना ही किसीका कहीं भी प्रयोग कर देते हैं। जहाँ कहीं भी बाण चलाते-फिरते हैं। आपका धर्मके विषयमें आदर नहीं है और न अर्थसाधनमें आपकी बुद्धि स्थिर है। नरेश्वर। आप स्वेच्छाचारी हैं। इसलिये आपकी इन्द्रियाँ आपको कहीं भी खींच ले जाती हैं।

मैं सर्वथा निरपराध था तो भी यहाँ मुझे बाणसे मारनेका घृणित कर्म करके सत्पुरुषोंके बीचमें आप क्या कहेंगे ?

राजाका वध करनेवाला, ब्रह्म-हत्यारा, गोघाती, चोर, प्राणियोंकी हिंसामें तत्पर रहनेवाला, नास्तिक और परिवेत्ता बड़े भाईके अविवाहित रहते अपना विवाह करनेवाला छोटा भाई ये सब-के-सब नरकगामी होते हैं। चुगली खानेवाला, लोभी, मित्र-हत्यारा तथा गुरुपत्नीगामी ये पापात्माओंके लोकमें जाते हैं- इसमें संशय नहीं है।

हम वानरोंका चमड़ा भी तो सत्पुरुषोंके धारण करने योग्य नहीं होता। हमारे रोम और हड्डियाँ भी वर्जित हैं। छूने योग्य नहीं हैं। आप जैसे धर्माचारी पुरुषोंके लिये मांस तो सदा ही अभक्ष्य है; फिर किस लोभसे आपने मुझ वानरको अपने बाणोंका शिकार बनाया है ?

रघुनन्दन। त्रैवर्णिकोंमें जिनकी किसी कारणसे मांसाहार जैसे निन्दनीय कर्म में प्रवृत्ति हो गयी है, उनके लिये भी पाँच नखवाले जीवोंमेंसे पाँच ही भक्षणके योग्य बताये गये हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं- गेंडा, साही, गोह, खरहा और पाँचवाँ कछुआ।

श्रीराम। मनीषी पुरुष मेरे वानरके चमड़े और हड्डीका स्पर्श नहीं करते हैं। वानरके मांस भी सभीके लिये अभक्ष्य होते हैं। इस तरह जिसका सब कुछ निषिद्ध है, ऐसा पाँच नखवाला मैं आज आपके हाथसे क्यों मारा गया हूँ ?

मेरी स्त्री तारा सर्वज्ञ है। उसने मुझे सत्य और हितकी बात बतायी थी। किंतु मोहवश उसका उल्लंघन करके मैं कालके अधीन हो गया। जैसे सुशीला युवती पापात्मा पतिसे सुरक्षित नहीं हो पाती, उसी प्रकार आप जैसे स्वामीको पाकर यह वसुधा सनाथ नहीं हो सकती।

आप शठ छिपे रहकर दूसरोंका अप्रिय करनेवाले, अपकारी, क्षुद्र और झूठे ही शान्तचित्त बने रहनेवाले हैं। महात्मा राजा दशरथने आप-जैसे पापीको कैसे उत्पन्न किया। हाय। जिसने सदाचारका रस्सा तोड़ डाला है, सत्पुरुषोंके धर्म एवं मर्यादाका उल्लंघन किया है तथा जिसने धर्मरूपी अमुशकी भी अवहेलना कर दी है, उस रामरूपी हाथीके द्वारा आज मैं मारा गया। ऐसा अशुभ, अनुचित और सत्पुरुषोंद्वारा निन्दित कर्म करके आप श्रेष्ठ पुरुषोंसे मिलनेपर उनके सामने क्या कहेंगे। श्रीराम ! हम उदासीन प्राणियोंपर आपने जो यह पराक्रम प्रकट किया है, ऐसा बल-पराक्रम आप अपना अपकार करनेवालोंपर प्रकट कर रहे हों, ऐसा मुझे नहीं दिखायी देता।

राजकुमार ! यदि आप युद्धस्थलमें मेरी दृष्टिके सामने आकर मेरे साथ युद्ध करते तो आज मेरे द्वारा मारे जाकर सूर्यपुत्र यम देवताका दर्शन करते होते। जैसे किसी सोये हुए पुरुषको साँप आकर डँस ले और वह मर जाय, उसी प्रकार रणभूमिमें मुझ दुर्जय वीरको आपने छिपे रहकर मारा है तथा ऐसा करके आप पापके भागी हुए हैं।

जिस उद्देश्यको लेकर सुग्रीवका प्रिय करनेकी कामनासे आपने मेरा वध किया है, उसी उद्देश्यकी सिद्धिके लिये यदि आपने पहले मुझे ही कहा होता तो मैं मिथिलेशकुमारी जानकीको एक ही दिनमें ढूँढकर आपके पास ला देता। आपकी पत्नीका अपहरण करनेवाले दुरात्मा राक्षस रावणको मैं युद्धमें मारे बिना ही उसके गलेमें रस्सी बाँधकर पकड़ लाता और उसे आपके हवाले कर देता।

जैसे मधुकैटभद्वारा अपहृत हुई श्वेताश्वतरी श्रुतिका भगवान् हयग्रीवने उद्धार किया था, उसी प्रकार मैं आपके आदेशसे मिथिलेशकुमारी सीताको यदि वे समुद्रके जलमें या पातालमें रक्खी गयी होती तो भी वहाँसे ला देता।

मेरे स्वर्गवासी हो जानेपर सुग्रीव जो यह राज्य प्राप्त करेंगे, वह तो उचित ही है। अनुचित इतना ही हुआ है कि आपने मुझे रणभूमिमें अधर्मपूर्वक धोखेसे मारा है।

यह जगत् कभी-न-कभी कालके अधीन होता ही है। इसका ऐसा स्वभाव ही है। अत: भले ही मेरी मृत्यु हो जाय। इसके लिये मुझे खेद नहीं है। परंतु मेरे इस तरह मारे जानेका यदि आपने उचित उत्तर ढूँढ निकाला हो तो उसे अच्छी तरह सोच-विचारकर मुझे बताये।

आप धर्मज्ञ हैं ? धर्मका बोध है आपको ? आपने मुझे छिपकर मारा है, जैसे व्याध आखेट-पशुको मारता है। ठीक है, मैं पशु हूँ, जिसके हृदयमें बाण लगा हो, उससे प्रिय, मधुर भाषणकी आशा नहीं करनी चाहिऐ। बालि व्यङ्ग कर रहा था। कठोर वाणीमें भर्त्सना कर रहा था- सुग्रीवकी सहायता करनी थी तो सम्मुख आकर युद्ध करते। तब मैं सीधे यमलोक भेज देता। सुग्रीवसे मित्रता क्यों ? सीताको पाना चाहते थे तो किष्किन्धा आनेमें किसीने रोका था? आकर मुझसे खुद कहते, मैं लमा जाकर गला घोटकर रावणको मार देता और सीताको ला देता। मेरे मरनेपर सुग्रीवको राज्य मिलेगा; किंतु आपने मुझे अधर्मपूर्वक मारा।

बहुत अधिक रक्त निकल जानेसे बालिका कण्ठ सूखने लगा था। उसका बोलना विरमिल हुआ तो श्रीराम बोले- तुमने गुरु या वृद्धोंकी सेवा नहीं की है, अत: तुम्हारी बाल-बुद्धि गयी नहीं। तुम धर्मको जानते ही नहीं। इस समय समस्त पृथ्वीके शासक इक्ष्वाकुवंशी, नीतिज्ञ, सत्यपराक्रम भरत हैं। वे धर्मवत्सल हैं। हम सब क्षत्रिय उनके अनुगत हैं। धर्मभ्रष्ट को दण्ड देना राजाका कर्तव्य है और राज-प्रतिनिधिको यह कर्तव्य पूरा करना चाहिये। आवश्यक नहीं है कि अपराधीको दण्ड देनेके लिए राजा या राजप्रतिनिधि उसके सामने ही जाय। सामने जाकर युद्ध तो किया ही नहीं जाता।

अच्छा तो आपने मुझ अपराधीको प्राण दण्ड दिया है ? बालिने व्यङ्ग किया न्यायमूर्ति। मेरा अपराध ?

तुम कर्मसे निन्दित हो। अविद्यादि पञ्चक्लेशयुक्त हो। अर्थ तथा धर्मसे अनभिज्ञ हो। श्रीरामने डाँटा-पुत्र, शिष्य और अनुज समान होते हैं। ज्येष्ठ भ्राता पिताके समान होता है, तुमने छोटे भाईकी पत्नीको अन्त:पुरमें डाल लिया, अत: तुम वध्य हो।

हे बालि। तुमने ब्रह्मा से ऐसा ही वर माँगा था कि किसी से सम्मुख प्रत्यक्ष न मारा जाएगा युद्ध में सम्मुख लड़नेवाले का आधा बल तुझमें खींचकर आ जायेगा। किसी का वरदान हम नष्ट करें यह रघुवंशियों की रीत नहीं है। इन्हीं विचारों से हमने यह बाण वृक्ष की ओट से मारा है। बालि। तुमको पशु मानकर तुम्हारा आखेट नहीं किया गया। तुम मेरा अपमान करते हो, यह योग्य नहीं है। तुम्हें प्राण दण्ड दिया गया है। श्रीराम गम्भीर स्वरमें बोले- तुम अपनेको वानर-पशु कहकर अपने अपराधका समर्थन नहीं कर सकते। तुम पशु नहीं हो। उपदेवता पशु नहीं हुआ करते। तुम सन्ध्या करते हो, यज्ञोपवीत धारण करते हो, वेदपाठ करते हो। इतनेपर भी पुत्री तथा पुत्रवधूके समान अनुजकी पत्नीको तुमने अपने अन्त:पुरमें डाला, अत: वध्य हो। मैं क्षत्रिय ऐसा पाप सहन नहीं कर सकता। वन, पर्वत सहित समस्त पृथ्वी अयोध्याके शासनके अन्तर्गत है, इसे जानते हो ?

राजाके द्वारा दण्डित या क्षमा-प्राप्त अपराधी पाप-मुक्त हो जाता है। वह नरक नहीं जाता। लेकिन राजा पापीको दण्ड न दे तो स्वयं पापका भागी होता है। तुम्हें दण्ड देकर मैंने अपने क्षात्र धर्मका पालन किया है। तुम्हें निष्पाप बनाया है। श्रीरामने बहुत गम्भीर होकर कहा- सीताको तो हमें अपने पराक्रमसे प्राप्त करना है। इस समय मरण-पीड़ाग्रस्त तुम्हारा प्रलाप विश्वास करने योग्य है ? रावणसे तुम्हारी मित्रता नहीं है ? तुम स्वस्थ अपने पदपर होते तो अपनी मैत्रीका निर्वाह करते या मित्रके विरुद्ध मेरी सहायता करते ? तुम्हारी बात मान भी लें तो मेरी सहायता करके तुम अपने मैत्री-धर्मसे भ्रष्ट होते या नहीं ? राम अनुजस्त्रीके अपहृता से उसे मैत्री-धर्मसे भ्रष्ट करके सहायता लेगा, यह आशा करते हो तुम मुझसे ?

तुम अपनेको पशु कहते हो तो ऐसा ही सही। लेकिन तब सुग्रीव तुम्हारे सहधर्मी हैं या नहीं। अपने प्रिय पशुके ऊपर आक्रमण करनेवाला पशु वध्य होता है। अब रामने स्पष्ट मुख्य तथ्य प्रकट किया- रामकी सुग्रीवसे मैत्री है, यह तुम जानते थे। तब सुग्रीवपर आक्रमणका साहस तुमने कैसे किया। राम अपने आश्रितका रक्षक है और अपना अपराध भले क्षमा कर दे, भक्तापराध कभी क्षमा नहीं किया करता- यह राम का व्रत है।

न्याय की बात करने का अधिकार तुमको नहीं है, पापी। राम तेजोद्दीप्त स्वर में बोले, असहाय, निरीह रुमा का अपहरण तुमने किस न्याय और वीरता से किया था ? राम क्षण-भर रुके, अत्याचारियों द्वारा अपनी सुविधा के लिए किए गए उद्घोषों के समूह का नाम न्याय नहीं है। तुमने अपनी निरीह प्रजा पर जो अत्याचार किए हैं, उनके पीछे कौन-सा न्याय था ? न्याय सदा जनहित में होता है।

मैं तुम्हारे द्वारा परिभाषित न्याय और वीरता के जड़ स्वरूप को प्रमाणित करने के लिए, तुम्हारे हाथों, तुम से दुर्बल सुग्रीव को मरते हुए देखता रहता तो वह न्याय होता ? तुम जैसे पापियों को तो न्याय माँगने का अधिकार भी नहींहै। तुम्हारा न्याय तुम्हारी मृत्यु ही है।

सहसा बालि के वक्ष में पीड़ा का वेग बढ़ा। उसने अपनी पीड़ा में हाथ-पैर पटके और धीमे-से स्वर में बोला, तुमने मुझसे कहा होता, राम। मैं तुम्हारी पत्नी की खोज ही नहीं करवा देता, रावण से छीनकर उसे तुम्हारे सम्मुख उपस्थित कर देता।

बालि बोला- हे करुणानिधान आपने धोखा खाया। सुग्रीव को मित्र बनाके प्रभु आपने तो उससे मिलते ही उसका कष्ट हठाया है। उसके कारण से आपने वानरपति बालि को इस जग से मिटाया है। अब आप खुद देखोगे सीतासे आपको कब तक सुग्रीव मिलाता है। प्रभु। प्रभुता पाकर सज्जन भी दुर्जन हो जाता है। निर्बल सुग्रीव से सीता शोध की आशा करना व्यर्थ है। गीदड़ में कहां शक्ति हैं जों सिंह से संग्राम करे। अगर प्रभु आप मुझे पहले मिल जाते तो मैं अवश्य दिखला देता। सीतासे आपको प्रथम मिला देता और बादमें मित्रता की अग्निसाक्षी होती। मैं उस दुष्ट रावण को खूब अच्छी तरह से जानता हूँ जो सीताका अपहरण कर भागा है। मैंने उस दुष्ट अनाडी को छ: महिने तक काख में दबा रखा है। अच्छा जो बीत गयी सो बीत गई अब कहने से क्या होता है अब तो सुग्रीव का भाग जगा। बालि सदा के लिये सोता है।

राम के अधरों पर एक कटु मुसकान उभरी, एक अपहरणकर्ता अन्य अपहरणकर्ता का क्या विरोध करता। एक रावण दूसरे रावण से सीता को कैसे मुक्त कराता। राम का स्वर कठोर हो गया, और तुम कर भी देते, तो भी तुम्हारी सहायता मेरे लिए वांछनीय नहीं थी। मेरी सहायता कर तुम अपने समस्त पापों, अत्याचारों तथा अनाचारों के होते हुए भी, मेरे बाणों से सुरक्षित हो जाते। राम अपनी सुविधा तथा लाभ के लिए भी अत्याचारियों की संगति नहीं चाहता। तुम चाहे कितना सद्भाव और सौहार्द लेकर मेरे पास आते, तुम्हारा और मेरा संबंध एक ही हो सकता था- विरोध का।

श्रीराम बोले- वानर। धर्म, अर्थ, काम और लौकिक सदाचारको तो तुम स्वयं ही नहीं जानते हो। फिर बालोचित अविवेकके कारण आज यहाँ मेरी निन्दा क्यों करते हो ?

सौम्य। तुम आचार्योंद्वारा सम्मानित बुद्धिमान वृद्ध पुरुषोंसे पूछे बिना ही- उनसे धर्मके स्वरूपको ठीक-ठीक समझे बिना ही वानरोचित चपलतावश मुझे यहाँ उपदेश देना चाहते हो ? अथवा मुझपर आक्षेप करनेकी इच्छा रखते हो।

जिसमें नीति, विनय, सत्य और पराक्रम आदि सभी राजोचित गुण यथावत्रूपसे स्थित देखे जायँ, वही देश-काल-तत्त्वको जाननेवाला राजा होता है भरतमें ये सभी गुण विद्यमान हैं।

राजाओंमें श्रेष्ठ भरत धर्मपर अनुराग रखनेवाले हैं। वे समूची पृथ्वीका पालन कर रहे हैं। उनके रहते हुए इस पृथ्वीपर कौन प्राणी धर्मके विरुद्ध आचरण कर सकता है ?

हम सब लोग अपने श्रेष्ठ धर्ममें दृढ़तापूर्वक स्थित रहकर भरतकी आज्ञाको सामने रखते हुए धर्ममार्गसे भ्रष्ट पुरुषको विधिपूर्वक दण्ड देते हैं। तुमने अपने जीवनमें कामको ही प्रधानता दे रक्खी थी। राजोचित मार्गपर तुम कभी स्थिर नहीं रहे। तुमने सदा ही धर्मको बाधा पहुँचायी और बुरे कर्मोंके कारण सत्पुरुषोंद्वारा सदा तुम्हारी निन्दा की गयी।

बड़ा भाई, पिता तथा जो विद्या देता है, वह गुरु ये तीनों धर्ममार्गपर स्थित रहनेवाले पुरुषोंके लिये पिताके तुल्य माननीय हैं, ऐसा समझना चाहिये। इसी प्रकार छोटा भाई, पुत्र और गुणवान् शिष्य ये तीन पुत्रके तुल्य समझे जाने योग्य हैं। उनके प्रति ऐसा भाव रखनेमें धर्म ही कारण है। वानर। सज्जनोंका धर्म सूक्ष्म होता है वह परम दुर्ज्ञेय है- उसे समझना अत्यन्त कठिन है। समस्त प्राणियोंके अन्त:करणमें विराजमान जो परमात्मा हैं, वे ही सबके शुभ और अशुभको जानते हैं।

तुम स्वयं भी चपल हो और चञ्चल चित्तवाले अजितात्मा वानरोंके साथ रहते हो; अत: जैसे कोई जन्मान्ध पुरुष जन्मान्धोंसे ही रास्ता पूछे, उसी प्रकार तुम उन चपल वानरोंके साथ परामर्श करते हो, फिर तुम धर्मका विचार क्या कर सकते हो ? उसके स्वरूपको कैसे समझ सकते हो ?

श्रीरामने कहा- हे मूर्ख। सुन, छोटे भाईकी स्त्री, बहिन, पुत्रकी स्त्री और कन्या- ये चारों समान हैं। इनको जो कोई बुरी दृष्टिसे देखता है, उसे मारनेमें कुछ भी पाप नहीं होता।

हे मूढ़। तुझे अत्यन्त अभिमान है। तूने अपनी स्त्रीकी सीखपर भी कान ध्यान नहीं दिया। सुग्रीवको मेरी भुजाओंके बलका आश्रित

जानकर भी अरे अधम अभिमानी। तूने उसको मारना चाहा।

मैंने यहाँ जो कुछ कहा है, उसका अभिप्राय तुम्हें स्पष्ट करके बताता हूँ। तुम्हें केवल रोषवश मेरी निन्दा नहीं करनी चाहिये।

मैंने तुम्हें क्यों मारा है ? उसका कारण सुनो और समझो। तुम सनातन धर्मका त्याग करके अपने छोटे भाईकी स्त्रीसे सहवास करते हो। इस महामना सुग्रीवके जीते-जी इसकी पत्नी रुमाका, जो तुम्हारी पुत्रवधूके समान है, कामवश उपभोग करते हो। अत: पापाचारी हो। वानर। इस तरह तुम धर्मसे भ्रष्ट हो स्वेच्छाचारी हो गये हो और अपने भाईकी स्त्रीको गले लगाते हो। तुम्हारी इसी अपराधके कारण तुम्हें यह दण्ड दिया गया है। वानरराज। जो लोकाचारसे भ्रष्ट होकर लोकविरुद्ध आचरण करता है, उसे रोकने या राहपर लानेके लिये मैं दण्डके सिवा और कोई उपाय नहीं देखता।

मैं उत्तम कुलमें उत्पन्न क्षत्रिय हूँ; अत: मैं तुम्हारे पापको क्षमा नहीं कर सकता। जो पुरुष अपनी कन्या, बहिन अथवा छोटे भाईकी स्त्रीके पास काम बुद्धिसे जाता है, उसका वध करना ही उसके लिये उपयुक्त दण्ड माना गया है। हमारे राजा भरत हैं। हमलोग तो केवल उनके आदेशका पालन करनेवाले हैं। तुम धर्मसे गिर गये हो; अत: तुम्हारी उपेक्षा कैसे की जा सकती थी।

विद्वान राजा भरत महान् धर्मसे भ्रष्ट हुए पुरुषको दण्ड देते और धर्मात्मा पुरुषका धर्मपूर्वक पालन करते हुए कामासक्त स्वेच्छाचारी पुरुषोंके निग्रहमें तत्पर रहते हैं। हरीश्वर। हमलोग तो भरतकी आज्ञाको ही प्रमाण मानकर धर्ममर्यादाका उल्लंघन करनेवाले तुम्हारे-जैसे लोगोंको दण्ड देनेके लिये सदा उद्यत रहते हैं।

सुग्रीवके साथ मेरी मित्रता हो चुकी है। उनके प्रति मेरा वही भाव है, जो लक्ष्मणके प्रति है। वे अपनी स्त्री और राज्यकी प्राप्तिके लिये मेरी भलाई करनेके लिये भी कटिबद्ध हैं। मैंने वानरोंके समीप इन्हें स्त्री और राज्य दिलानेके लिये प्रतिज्ञा भी कर ली हैं ऐसी दशामें मेरे-जैसा मनुष्य अपनी प्रतिज्ञाकी ओरसे कैसे दृष्टि हटा सकता है।

ये सभी धर्मानुकूल महान् कारण एक साथ उपस्थित हो गये, जिनसे विवश होकर तुम्हें उचित दण्ड देना पड़ा है। तुम भी इसका अनुमोदन करो। धर्मपर दृष्टि रखनेवाले मनुष्यके लिये मित्रका उपकार करना धर्म ही माना गया है; अत: तुम्हें जो यह दण्ड दिया गया है, वह धर्मके अनुकूल है। ऐसा ही तुम्हें समझना चाहिये।

यदि राजा होकर तुम धर्मका अनुसरण करते तो तुम्हें भी वही काम करना पड़ता, जो मैंने किया है। मनुने राजोचेत सदाचारका प्रतिपादन करनेवाले दो श्लोक कहे हैं, जो स्मृतियोंमें सुने जाते हैं और जिन्हें धर्मपालनमें कुशल पुरुषोंने सादर स्वीकार किया। उन्हींके अनुसार इस समय यह मेरा बर्ताव हुआ है।

मनुष्य पाप करके यदि राजाके दिये हुए दण्डको भोग लेते हैं तो वे शुद्ध होकर पुण्यात्मा साधु पुरुषोंकी भाँति स्वर्गलोकमें जाते हैं। चोर आदि पापी जब राजाके सामने उपस्थित हों उस समय उन्हें राजा दण्ड दे अथवा दया करके छोड़ दे। चोर आदि पापी पुरुष अपने पापसे मुक्त हो जाता है; किंतु यदि राजा पापीको उचित दण्ड नहीं देता तो उसे स्वयं उसके पापका फल भोगना पड़ता है।

तुमने जैसा पाप किया है, वैसा ही पाप प्राचीन कालमें एक श्रमणने किया था। उसे मेरे पूर्वज महाराज मान्धाताने बड़ा कठोर दण्ड दिया था, जो शास्त्रके अनुसार अभीष्ट था।

यदि राजा दण्ड देनेमें प्रमाद कर जायँ तो उन्हें दूसरोंके किये हुए पाप भी भोगने पड़ते हैं तथा उसके लिये जब वे प्रायश्चित्त करते हैं तभी उनका दोष शान्त होता है।

अत: वानरश्रेष्ठ। पश्चात्ताप करनेसे कोई लाभ नहीं है। सर्वथा धर्मके अनुसार ही तुम्हारा वध किया गया है; क्योंकि हमलोग अपने वशमें नहीं हैं शास्त्र के ही अधीन हैं। वानरशिरोमणे। तुम्हारे वधका जो दूसरा कारण है, उसे भी सुन लो। वीर। उस महान् कारणको सुनकर तुम्हें मेरे प्रति क्रोध नहीं करना चाहिये।

वानरश्रेष्ठ। इस कार्यके लिये मेरे मनमें न तो संताप होता है और न खेद ही। मनुष्य राजा आदि बड़े-बड़े जाल बिछाकर, फंदे फैलाकर और नाना प्रकारके कूट उपाय गुप्त गड्ढोंके निर्माण आदि करके छिपे रहकर सामने आकर बहुत-से मृगोंको पकड़ लेते हैं; भले ही वे भयभीत होकर भागते हों या विश्वस्त होकर अत्यन्त निकट बैठे हों।

मांसाहारी मनुष्य क्षत्रिय सावधान, असावधान अथवा विमुख होकर भागनेवाले पशुओंको भी अत्यन्त घायल कर देते हैं; किंतु उनके लिये इस मृगयामें दोष नहीं होता।

वानर। धर्मज्ञ राजर्षि भी इस जगत्‌में मृगयाके लिये जाते हैं और विविध जन्तुओंका वध करते हैं। इसलिये मैंने तुम्हें युद्धमें अपने बाणका निशाना बनाया है। तुम मुझसे युद्ध करते थे या नहीं करते थे, तुम्हारी वध्यतामें कोई अन्तर नहीं आता; क्योंकि तुम शाखामृग हो और मृगया करनेका क्षत्रियको अधिकार है। वानरश्रेष्ठ। राजालोग दुर्लभ धर्म, जीवन और लौकिक अभ्युदयके देनेवाले होते हैं; इसमें संयश नहीं है। अत: उनकी हिंसा न करे, उनकी निन्दा न करे, उनके प्रति आक्षेप भी न करे और न उनसे अप्रिय वचन ही बोले; क्योंकि वे वास्तवमें देवता हैं, जो मनुष्यरूपसे इस पृथ्वीपर विचरते रहते हैं। तुम तो धर्मके स्वरूपको न समझकर केवल रोषके वशीभूत हो गये हो, इसलिये पिता-पितामहोंके धर्मपर स्थित रहनेवाले मेरी निन्दा कर रहे हो।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर बालिके मनमें बड़ी व्यथा हुई। इसे धर्मके तत्त्वका निश्चय हो गया। उसने श्रीरामके दोषका चिन्तन त्याग दिया। बालि पुन: तड़पा, मेरे वक्ष से बाण खींच लो, राम। इस पीड़ा से मुझे मुक्त करो। इतनी कृपा तो कर ही दो।

पीड़ा से मुक्त करना ही राम का लक्ष्य है। राम शांत स्वर में बोले, किंतु बाण के निकलते ही बहुत अधिक मात्रा में तुम्हारा रक्त बह जाएगा और तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी। मृत्यु से पूर्व यदि किसी को देखना चाहते हो- पुत्र को, पत्नी को अथवा किसी और को भी तो उनके आने तक यह पीड़ा सहो।

मुझसे भक्तापराध तो हुआ। बालिका मस्तक गिर गया भूमिपर। उसका मानस व्यङ्गकी तीक्ष्णता मिटनेसे निर्मल हो गया। उसने हाथ जोड़ लिया- राजराजेश्वर। सर्वेश्वर। आप ठीक कहते हैं। मैने प्रमादवश जो कुछ कहा, उसे क्षमा कर दें। आपसे वाद-विवाद करके विजय कौन पा सकता है। आप प्रजा-पालक हो। यह पापी पशु वानर भी आपकी प्रजा ही है। लोकतत्त्वज्ञ। धर्मज्ञ। अब मुझे क्षमा कर दें। मैं आपके बाणसे शुद्ध हो गया। आपके सम्मुख यह शरीर छूटेगा, यह मेरा परम सौभाग्य।

इसके बाद वानरराज बालिने श्रीरामसे हाथ जोड़कर कहा- नरश्रेष्ठ। आप जो कुछ कहते हैं, बिल्कुल ठीक है; इसमें संशय नही है। आप-जैसे श्रेष्ठ पुरुषको मुझ-जैसा निम्न श्रेणीका प्राणी उचित उत्तर नहीं दे सकता; अत: मैंने प्रमादवश पहले जो अनुचित बात कह डाली है, उसमें भी आपको मेरा अपराध नहीं मानना चाहिये। रघुनन्दन। आप परमार्थ-तत्त्वके यथार्थ ज्ञाता और प्रजाजनोंके हितमें तत्पर रहनेवाले हैं। आपकी बुद्धि कार्य-कारणके निश्चयमें निर्भ्रान्त एवं निर्मल है।

धर्मज्ञ। मैं धर्मभ्रष्ट प्राणियोंमें अग्रगण्य हूँ और इसी रूपमें मेरी सर्वत्र प्रसिद्धि है तो भी आज आपकी शरणमें आया हूँ। अपनी धर्मतत्त्वकी बाणीसे आज मेरी भी रक्षा कीजिये।

इतना कहते-कहते आँसुओंसे बालिका गला भर आया और वह कीचड़में फँसे हुए हाथीकी तरह आर्तनाद करके श्रीरामकी ओर देखता हुआ धीरे-धीरे बोला- भगवन्। मुझे अपने लिये, ताराके लिये तथा बन्धु-बान्धवोंके लिये भी उतना शोक नहीं होता है, जितना सुवर्णका अङ्गद धारण करनेवाले श्रेष्ठ गुणसम्पन्न पुत्र अङ्गदके लिये हो रहा है।

मैंने बचपनसे ही उसका बड़ा दुलार किया है; अब मुझे न देखकर वह बहुत दुखी होगा और जिसका जल पी लिया गया हो, उस तालाबकी तरह सूख जायगा। श्रीराम। वह अभी बालक है। उसकी बुद्धि परिपक्व नहीं हुई है। मेरा इकलौता बेटा होनेके कारण ताराकुमार अङ्गद मुझे बड़ा प्रिय है। आप मेरे उस महाबली पुत्रकी रक्षा कीजियेगा।

सुग्रीव और अङ्गद दोनोंके प्रति आप सद्भाव रक्खें। अब आप ही इन लोगोंके रक्षक तथा इन्हें कर्तव्य-अकर्तव्यकी शिक्षा देनेवाले हैं।

राजन्। नरेश्वर। भरत और लक्ष्मणके प्रति आपका जैसा बर्ताव है, वही सुग्रीव तथा अङ्गदके प्रति भी होना चाहिये। आप उसी भावसे इन दोनोंका स्मरण करें। बेचारी ताराकी बड़ी शोचनीय अवस्था हो गयी है। मेरे ही अपराधसे उसे भी अपराधिनी समझकर सुग्रीव उसका तिरस्कार न करे, इस बातकी भी व्यवस्था कीजियेगा। सुग्रीव आपका कृपापात्र होकर ही इस राज्यका यथार्थ रूपसे पालन कर सकता है। आपके अधीन होकर आपके चित्तका अनुसरण करनेवाला पुरुष स्वर्ग और पृथ्वीका भी राज्य पा सकता और उसका अच्छी तरह पालन कर सकता है। मैं चाहता था कि आपके हाथसे मेरा वध हो; इसी लिये ताराके मना करनेपर भी मैं अपने भाई सुग्रीवके साथ द्वन्द्वयुक्त करनेके लिये चला आया।

अंगद को देखना चाहता था, किंतु यह पीड़ा नहीं सही जाती। बालि पीड़ा से छटपटाता हुआ बोला, अंगद को मैं तुम्हें सौंपता हूँ, राम। इतने ही न्यायी हो तो देखना, सुग्रीव उसका कोई अनिष्ट न करे।

पीड़ा के कारण बालि का शरीर भूमि से ऊपर उठ आया, इस बाण को निकालो, राम।

राम ने आगे बढ़, बाण को उसके पृष्ठ भाग से पकड़, क्षण-भर के लिए साधा और झटके से बाहर खींचा। बाण का फल ऋतुजापूर्वक निकल आया- मांसपेशियाँ अथवा अंतड़ियाँ उसके साथ नहीं आईं; रक्त का स्रोत फूट निकला।

बालि ने पूरी खुली आँखों से राम को देखा; उनके निकट खड़े लक्ष्मण और तनिक हटकर खड़े सुग्रीव, हनुमान, नल, नील तथा तार को देखा। वे सब बालि को इसी प्रकार रक्त तथा धूल में लोटता हुआ देखने की आकांक्षा लेकर आए होंगे; उनके प्राण इसी दृश्य को देखने के लिए टँगे होंगे; उन्होंने इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कितने दिन परिश्रम किया होगा, कितनी रातों की नींद को उनींदा किया होगा- किंतु इस समय वे दु:खी लग रहे थे; उन सबके चेहरे उतरे हुए थे।

अभी तुम कुछ और कहना चाहते हो, निर्भय कहो। मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूँगा। बालि कुछ कहते-कहते अटक रहा है। यह देखकर श्रीराम समीप आ गये। उन्होंने उसके वक्षमें-से बाण निकाल लिया। उसके मस्तकको अपने कमल-करसे स्पर्श किया।

श्रीराम बोले- इच्छा हो तो माँग बालि बता क्या वर तुमको दूँ। यदि मरना नहीं चाहता हो तो तुझे अभी जिन्दा कर दूँ।

बालि बोला- क्या मुझे इसलिए जिन्दा करना चाहते हो कि मेरेद्वारा सीतासे आपका अतिशीघ्र मिलाप हो।

तब रघुवर बोले- मैं तो सरल भाव से कह रहा हूँ मुझे इसमें कुछ भी स्वार्थ नहीं।

तब प्रमोदित होकर बालि ऐसे वचन बोला- मैं तो कृतार्थ हो गया हूँ। मरने के ठीक समय मनुष्यके मुख से राम भी नहीं निकलता मैं तो ऐसा बड़भागी हूँ की वहीं राम मेरे सामने हैं। अब जीकर और क्या करूँगा। मुझे अब अपनी कोई चिन्ता नहीं। आपका अमृत-स्पर्श पाकर मैं आपके अभयपद चला। पत्नी तारा तत्त्वज्ञा है। आपके चरणोंमें उसकी अनुरक्ति है। अत: उसकी भी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। बालि अब शांत, स्थिर, स्वस्थ स्वरमें बोल रहा था- लेकिन अपने पुत्र अङ्गदका मैंने बचपनसे बहुत प्यारसे पालन किया है। वह बल-बुद्धिमें मेरे समान ही है। आप उसकी रक्षा करें। सुग्रीवके समान ही उसे अपना स्नेहभाजन स्वीकार करें। आप शास्ता हैं, गोप्ता हैं, अत: भरत तथा लक्ष्मणसे जैसा स्नेह करते है, वैसा ही सुग्रीव तथा अङ्गदसे भी करे। स्वामिहीना ताराका सुग्रीव अपमान न करें, यह भी अब आपका ही दायित्व बन गया है।

ताराने मुझे आज युद्धमें आनेसे मना किया था। बालिने अब अपने हृदयकी बात प्रकट की- मैं जानता था कि आप अवश्य मित्रकी रक्षा करेंगे; किंतु मैं आपके शरसे शरीर त्याग करना चाहता था।

अब तुम निष्पाप हो गये। बालिके मस्तकपर अपना कर रखे हुए ही श्रीरामने कहा- तुम अब निश्चिन्त परमपद प्रस्थान करो। अङ्गद सुग्रीवके अनुकूल रहेंगे और सुग्रीव भी उनसे स्नेह करेंगे।

जो दण्डनीय पुरुषको दण्ड देता है तथा जो दण्डका अधिकारी होकर दण्ड भोगता है, उनमेंसे दण्डनीय व्यक्ति अपने अपराधके फलरूपमें शासकका दिया हुआ दण्ड भोगकर तथा दण्ड देनेवाला शासक उसके उस फलभोगमें कारण-निमित्त बनकर कृतार्थ हो जाते हैं- अपना-अपना कर्तव्य पूरा कर लेनेके कारण कर्मरूप ऋणसे मुक्त हो जाते हैं। अत: वे दुखी नहीं होते।

तुम इस दण्डको पाकर पापरहित हुए और इस दण्डका विधान करनेवाले शास्त्रद्वारा कथित दण्डग्रहणरूप मार्गसे ही चलकर तुम्हें धर्मानुकूल शुद्ध स्वरूपकी प्राप्ति हो गयी।

अब तुम अपने हृदयमें स्थित शोक, मोह और भयका त्याग कर दो। वानरश्रेष्ठ। तुम दैवके विधानको नहीं लाँघ सकते।

वानरेश्वर। कुमार अङ्गद तुम्हारे जीवित रहनेपर जैसा था, उसी प्रकार सुग्रीवके और मेरे पास भी सुखसे रहेगा, इसमें संशय नहीं है।

बालिने कहा- प्रभो। देवराज इन्द्रके समान भयंकर पराक्रम प्रकट करनेवाले नरेश्वर। मैं आपके बाणसे पीड़ित होनेके कारण अचेत हो गया था। इसलिये अनजानमें मैंने जो आपके प्रति कठोर बात कह डाली है, उसे आप क्षमा कीजियेगा। इसके लिये मैं प्रार्थनापूर्वक आपको प्रसन्न करना चाहता हूँ। वानरोंका महाराज बालि बाणसे पीड़ित होकर भूमिपर पड़ा था।

पत्थरोंकी मार पड़नेसे उसके अङ्ग टूट-फूट गये थे। वृक्षोंके आघातसे भी वह बहुत घायल हो गया था और श्रीरामके बाणसे आक्रान्त होकर तो वह जीवनके अन्तकालमें ही पहुँच गया था। उस समय वह मूर्छित हो गया।

उसकी पत्नी ताराने सुना कि युद्धस्थलमें वानरश्रेष्ठ बालि श्रीरामके चलाये हुए बाणसे मारे गये।

अपने स्वामीके वधका अत्यन्त भयंकर एवं अप्रिय समाचार सुनकर वह बहुत उद्विग्न हो उठी और अपने पुत्र अङ्गदको साथ ले उस पर्वतकी कन्दरासे बाहर निकली।

अङ्गदको चारों ओरसे घेरकर उनकी रक्षा करनेवाले जो महाबली वानर थे, वे श्रीरामको धनुष लिये देख भयभीत होकर भाग गये।

ताराने वेगसे भागकर आते हुए उन भयभीत वानरोंको देखा।

वे सब वानर श्रीरामसे इस प्रकार डरे हुए थे, मानो उनके बाण इनके पीछे आ रहे हों। उन दुखी वानरोंके पास पहुँचकर सती-साध्वी तारा और भी दुखी हो गयी तथा उनसे बोली- वानरों। तुम तो उन राजसिंह बालिके आगे-आगे चलनेवाले थे। अब उन्हें छोड़कर अत्यन्त भयभीत हो दुर्गतिमें पड़कर क्यों भागे जा रहे हो ?

यदि राज्यके लोभसे उस क्रूर भाई सुग्रीवने श्रीरामको प्रेरित करके उनके द्वारा दूरसे चलाये हुए और दूरतक जानेवाले बाणोंद्वारा अपने भाईको मरवा दिया है तो तुमलोग क्यों भागे जा रहे हो ?

बालिकी पत्नीका वह वचन सुनकर इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले उन वानरोंने कल्याणमयी तारा देवीको सम्बोधित करके सर्वसम्मतिसे स्पष्ट शब्दोंमें कहा - देवि। अभी तुम्हारा पुत्र जीवित है। तुम लौट चलो और अपने पुत्र अङ्गदकी रक्षा करो। श्रीरामका रूप धारण करके स्वयं यमराज आ पहुँचा है, जो बालिको मारकर अपने साथ ले जा रहा है।

बालिके चलाये हुए वृक्षों और बड़ी-बड़ी शिलाओंको अपने वज्रतुल्य बाणोंसे विदीर्ण करके श्रीरामने बालिको मार गिराया है। मानो वज्रधारी इन्द्रने अपने वज्रके द्वारा किसी महान् पर्वतको धराशायी कर दिया हो।

इन्द्रके समान तेजस्वी इन वानरश्रेष्ठ बालिके मारे जानेपर यह सारी वानर-सेना श्रीरामसे पराजित-सी होकर भाग खड़ी हुई है।

तुम शूरवीरोंद्वारा इस नगरीकी रक्षा करो। कुमार अङ्गदका किष्किंधाके राज्यपर अभिषेक कर दो। राजसिंहासन पर बैठे हुए बालिकुमार अङ्गदकी सभी वानर सेवा करेंगे।

अथवा सुमुखि ! अब इस नगरमें तुम्हारा रहना हमें अच्छा नहीं जान पड़ता; क्योंकि किष्किन्धाके दुर्गम स्थानोंमें अभी सुग्रीवपक्षीय वानर शीघ्र प्रवेश करेंगे। यहाँ बहुत-से ऐसे वनचारी वानर हैं, जिनमेंसे कुछ तो अपनी स्त्रियोंके साथ हैं और कुछ स्त्रियोंसे बिछुड़े हुए हैं। उनमें राज्यविषयक लोभ पैदा हो गया है और पहले हमलोगोंके द्वारा राज्य-सुखसे वञ्चित किये गये हैं। अत: इस समय उन सबसे हमलोगोंको महान् भय प्राप्त हो सकता है।

तब बालिपत्नी ताराने कहा- वानरों। जब मेरे महाभाग पतिदेव कपिसिंह वाली ही नष्ट हो रहे हैं, तब मुझे पुत्रसे, राज्यसे तथा अपने इस जीवनसे भी क्या प्रयोजन है ? मैं तो, जिन्हें श्रीरामके चलाये हुए बाणने मार गिराया है, उन महात्मा बालिके चरणोंके समीप ही जाऊँगी। ऐसा कहकर शोकसे व्याकुल हुई तारा रोती और अपने दोनों हाथोंसे दु:खपूर्वक सिर एवं छाती पीटती हुई बड़े जोरसे दौड़ी।

आगे बढ़ती हुई ताराने देखा, जो युद्धमें कभी पीठ न दिखानेवाले दानवराजोंका भी वध करनेमें समर्थ थे, वे मेरे पति वानरराज बालि पृथ्वीपर पड़े हुए हैं। आगे जानेपर उसने देखा, अपने तेजस्वी धनुषको धरतीपर टेककर उसके सहारे श्रीराम खड़े हैं। साथ ही उनके छोटे भाई लक्ष्मण हैं और वहीं पतिके छोटे भाई सुग्रीव भी मौजूद हैं।

वह तारा रणभूमिमें घायल पड़े हुए अपने पतिके पास पहुँची। उन्हें देखकर उसके मनमें बड़ी व्यथा हुई और वह अत्यन्त व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर पड़ी। हा आर्य पुत्र। कहकर मृत्युपाशसे बँधे हुए पतिकी ओर देखती हुई रोने लगी।

उस समय कुररीके समान करुण क्रन्दन करती हुई तारा तथा उसके साथ आये हुए अङ्गदको देखकर सुग्रीवको बड़ा कष्ट हुआ। वे विषादमें डूब गये। बालि मूर्च्छित हो गया। उधर वानरोंमें भगदड़ पड़ी थी। वह अङ्गदको साथ लेकर श्रीरामके समीप पहुँची।

बालिके प्राणोंकी गति शिथिल पड़ गयी थी। वह धीरे-धीरे ऊर्ध्व साँस लेता हुआ सब ओर देखने लगा। सबसे पहले उसने अपने सामने खड़े हुए छोटे भाई सुग्रीवको देखा।

युद्धमें जिन्हें विजय प्राप्त हुई थी, उन वानरराज सुग्रीवको सम्बोधित करके बालिने बड़े स्नेहके साथ स्पष्ट वाणीमें कहा-

सुग्रीव। पूर्वजन्मके किसी पापसे अवश्यम्भावी बुद्धिमोहने मुझे बलपूर्वक आकृष्ट कर लिया था, इसीलिये मैं तुम्हें शत्रु समझने लगा था और इस कारण मेरे द्वारा जो तुम्हारे प्रति अपराध हुए, उसके लिये तुम्हें मेरे प्रति दोषदृष्टि नहीं करनी चाहिये।

तात। मैं समझता हूँ हम दोनोंके लिये एक साथ रहकर सुख भोगना नहीं बदा था, इसीलिये दो भाइयोंमें जो प्रेम होना चाहिये, वह न होकर हमलोगोंमें उसके विपरीत वैरभाव उत्पन्न हो गया।

भाई। तुम आज ही यह वानरोंका राज्य स्वीकार करो तथा मुझे अभी यमराजके घर जानेको तैयार समझो।

मैं अपने जीवन, राज्य, विपुल सम्पत्ति और प्रशंसित यशका भी तुरंत ही त्याग कर रहा हूँ।

वीर। राजन्। इस अवस्थामें मैं जो कुछ कहूँगा, वह यद्यपि करनेमें कठिन है, तथापि तुम उसे अवश्य करना।

देखो, मेरा बेटा अङ्गद धरतीपर पड़ा है। इसका मुँह आँसुओंसे भीगा है। यह सुखमें पला है और सुख भोगनेके ही योग्य है। बालक होनेपर भी यह मूढ़ नहीं है।

यह मुझे प्राणोंसे भी बढ़कर प्रिय है। मेरे न रहनेपर तुम इसे सगे पुत्रकी भाँति मानना। इसके लिये किसी भी सुख-सुविधाकी कमी न होने देना और सदा सब जगह इसकी रक्षा करते रहना।

वानरराज। मेरे ही समान तुम भी इसके पिता, दाता, सब प्रकारसे रक्षक और भयके अवसरोंपर अभय देनेवाले हो।

ताराका यह तेजस्वी पुत्र तुम्हारे समान ही पराक्रमी है। उन राक्षसोंके वधके समय यह सदा तुम्हारे आगे रहेगा। यह बलवान् तेजस्वी तरुण ताराकुमार अङ्गद रणभूमिमें पराक्रम प्रकट करते हुए अपने योग्य कर्म करेगा। सुषेणकी पुत्री यह तारा सूक्ष्म विषयोंके निर्णय करने तथा नाना प्रकारके उत्पातोंके चिन्होंको समझनेमें सर्वथा निपुण है। जिस कार्यको अच्छा बताये, उसे संदेहरहित होकर करना। ताराकी किसी भी सम्मतिका परिणाम उलटा नहीं होता। श्रीरामका काम तुम्हें नि:शम होकर करना चाहिये। उसको न करनेसे तुम्हें पाप लगेगा और अपमानित होनेपर श्रीराम मुझे मार डालेंगे।

सुग्रीव। मेरी यह सोनेकी दिव्यमाला तुम धारण कर लो। इसमें उदार लक्ष्मीका वास है। मेरे मर जानेपर इसकी श्री नष्ट हो जायगी। अत: अभीसे पहन लो।

बालिने भ्रातृस्नेहके कारण जब ऐसी बातें कहीं तब उसके वधके कारण जो हर्ष हुआ था, उसे त्यागकर सुग्रीव फिर दुखी हो गये, मानो चन्द्रमापर ग्रहण लग गया हो। बालिके उस वचनसे सुग्रीवका वैरभाव शान्त हो गया। वे सावधान होकर उचित बर्ताव करने लगे। उन्होंने भाईकी आशासे वह सोनेकी माला ग्रहण कर ली।

बालि और सुग्रीव दोनों भाई वैर छोड़कर प्रेमसे मिले। मरनेके पहले वैरका विनाश करो। वैर और वासना रखकर मरे उसको सद्गति नहीं मिलती। वैर रखकर मरे तो मरण बिगड़ता है। महापुरुष मानते हैं कि मरणका निवारण भले ही असम्भव हो, परन्तु अच्छे जीवन द्वारा मरणको सुधारनाा संभव है।

सुग्रीवको वह सुवर्णमयी माला देनेके पश्चात् बालिने मरनेका निश्चय कर लिया। फिर अपने सामने खड़े हुए पुत्र अङ्गदकी ओर देखकर स्नेहके साथ कहा- बेटा। अब देश-कालको समझो- कब और कहाँ कैसा बर्ताव करना चाहये, इसका निश्चय करके वैसा ही आचरण करो। समयानुसार प्रिय-अप्रिय, सुख-दु:ख जो कुछ आ पड़े, उसको सहो। अपने हृदयमें क्षमाभाव रक्खो और सदा सुग्रीवकी आज्ञाके अधीन रहो। महाबाहो। सदा मेरा दुलार पाकर जिस प्रकार तुम रहते आये हो, यदि वैसा ही बर्ताव अब भी करोगे तो सुग्रीव तुम्हारा विशेष आदर नहीं करेंगे। शत्रुदमन अङ्गद। तुम इनके शत्रुओंका साथ मत दो। जो इनके मित्र न हों, उनसे भी न मिलो और अपनी इन्द्रियोंको वशमें रखकर सदा अपने स्वामी सुग्रीवके कार्य साधनमें संलग्न रहते हुए उन्हींके अधीन रहो। किसीके साथ अत्यन्त प्रेम न करो और प्रेमका सर्वथा अभाव भी न होने दो; क्योंकि ये दोनों ही महान् दोष हैं। अत: मध्यम स्थितिपर ही दृष्टि रक्खो।

बालिने कहा- हे श्रीराम। स्वामी आप से मेरी चतुराई नहीं चल सकती। हे प्रभो। अन्तकालमें आपकी गति शरण पाकर मैं अब भी पापी ही रहा ?

बालिकी अत्यन्त कोमल वाणी सुनकर श्रीरामने उसके सिरको अपने हाथसे स्पर्श किया और कहा- मैं तुम्हारे शरीरको अचल कर दूँ, तुम प्राणोंको रखो। बालिने कहा- हे कृपानिधान। मुनिगण जन्म-जन्ममें प्रत्येक जन्ममें अनेकों प्रकारका साधन करते रहते हैं। फिर भी अन्तकालमें उन्हें राम नहीं कह आता उनके मुखसे रामनाम नहीं निकलता। जिनके नामके बलसे शमरजी काशीमें सबको समानरूपसे अविनाशिनी गति मुक्ति देते हैं। वह श्रीराम स्वयं मेरे नेत्रोंके सामने आ गये हैं। हे प्रभो। ऐसा संयोग क्या फिर कभी बन पड़ेगा ?

श्रुतियाँ नेति-नेति कहकर निरन्तर जिनका गुणगान करती रहती हैं, तथा प्राण और मनको जीतकर एवं इन्द्रियोंको विषयोंके रससे सर्वथा नीरस बनाकर मुनिगण ध्यानमें जिनकी कभी क्वचित् ही झलक पाते हैं, वे ही प्रभु आप साक्षात् मेरे सामने प्रकट हैं। आपने मुझे अत्यन्त अभिमानवश जानकर यह कहा कि तुम शरीर रख लो। परन्तु ऐसा मूर्ख कौन होगा जो हठपूर्वक कल्पवृक्षको काटकर उससे

बबूलके बाड़ लगावेगा अर्थात् पूर्णकाम बना देनेवाले आपको छोड़कर आपसे इस नश्वर शरीरकी रक्षा चाहेगा ?

हे नाथ। अब मुझपर दयादृष्टि कीजिये और मैं जो वर माँगता हूँ उसे दीजिये। मैं कर्मवश जिस योनिमें जन्म लूँ, वहीं श्रीराम आप के चरणोंमें प्रेम करूँ। हे कल्याणप्रभ प्रभो। यह मेरा पुत्र अंगद विनय और बलमें मेरे ही समान है, इसे स्वीकार कीजिये। और हे देवता और मनुष्योंके नाथ। बाँह पकड़कर इसे अपना दास बनाइये।

बालि के शरीर की पीड़ा समाप्त हो गई थी। शरीर में जैसे कोई संवेदन-शक्ति ही शेष नहीं बची थी। केवल मस्तिष्क जाग रहा था। किंतु यह स्थिति भी दो क्षणों से अधिक नहीं रही। मस्तिष्क जैसे सो रहा था, आँखों के सम्मुख अंधकार छा रहा था पृथ्वी घूम रही थी, या कदाचित् आकाश ही चक्कर खा रहा था। नहीं, दोनों ही घूम रहे थे और अब सब कुछ स्थिर हो गया था। बालि निष्प्राण हो चुका था।

श्रीरामके चरणोंमें दृढ़ प्रीति करके बालिने शरीरको वैसे ही आसानीसे त्याग दिया। श्रीरामने बालिको अपने परम धाम भेज दिया। नगरके सब लोग व्याकुल होकर दौड़े। ऐसा कहकर बाणके आघातसे अत्यन्त घायल हुए बालिकी आँखें घूमने लगीं। उसके भयंकर दाँत खुल गये और प्राण-पखेरू उड़ गये।

बालि मरते-मरते अपने सब काम पूरे कर गया। बालि अपनी बुद्धिसे सचमुच विजयी हो गया। श्रीरामसे भक्तिदान माँगकर अपना परलोक सुधारा। अपने बटे अंगद को प्रभु को सौंपकर आगे के लिए राजगद्दी अपने ही बेटे को दे रखीं। अंगद का हाथ राम को देकर श्रीराम को भी उनके बंधन में बाँधा। कहने का भाव व संकेत यही था ये भी वानर शासन में अधिकारी है।

उस समय अपने यूथपतिकी मृत्यु हो जानेसे सभी श्रेष्ठ वानर जोर-जोरसे रोने और विलाप करने लगे- हाय। आज वानरराज बालिके स्वर्गलोक चले जानेसे सारी किष्किन्धापुरी सूनी हो गयी। उद्यान, पर्वत और वन भी सूने हो गये। वानरश्रेष्ठ बालिके मारे जानेसे सारे वानर श्रीहीन हो गये। जिनके महान् वेग (प्रताप) से समस्त कानन और वन पुष्पसमूहोंसे सदा संयुक्त बने रहते थे, आज उनके न रहनेसे कौन ऐसा चमत्कारपूर्ण कार्य करेगा ?

उन्होंने महामना महाबाहु गोलभ नामक गन्धर्वको महान् युद्धका अवसर दिया था। वह युद्ध पंद्रह वर्षोंतक लगातार चलता रहा। न दिनमें बंद होता था, न रातमें। तदनन्तर सोलहवाँ वर्ष आरम्भ होनेपर गोलभ बालिके हाथसे मारा गया। उस दुष्ट गन्धर्वका वध करके जिन विकराल दाढ़ोंवाले बालिने हम सबको अभय दान दिया था, वे ही ये हमारे स्वामी वानरराज स्वयं कैसे मार गिराये गये ?

उस समय वीर वानरराज बालिके मारे जानेपर वनोंमें विचरनेवाले वानर वहाँ चैन न पा सके। जैसे सिंहसे युक्त विशाल वनमें साँड़के मारे जानेपर गौएँ दु:खी हो जाती हैं, वही दशा उन वानरोंकी हुई।

श्रीराम कहते-कहते बालि का सिर एक ओर ढुलक गया। वह महामनस्वी श्रीरामके सम्मुख शरीर-त्यागकर परमधाम चला गया। वानर फूट-फूटकर रोने लगे। सुग्रीव ने चीत्कार कर बालि के वक्ष पर अपना सिर टेक दिया, भैया।

६) ताराका विलाप और श्रीराम का समझाना- तारा विलाप करने लगी और बोली- कपिश्रेष्ठ। उठिये और उत्तम शय्याका आश्रय लीजिये। आप-जैसे श्रेष्ठ भूपात पृथ्वीपर नहीं सोते हैं। रणमें भयानक पराक्रम प्रकट करनेवाले महान् वीर वानरराज। आज इस समय मुझे अपने सामने पाकर भी आप बोलते क्यों नहीं है ? पृथ्वीनाथ। निश्चय ही यह पृथ्वी आपको अत्यन्त प्यारी है, तभी तो निष्प्राण होनेपर भी आप आज मुझे छोड़कर अपने अङ्गोंसे इस वसुधाका ही आलिङ्गन किये सो रहे हैं। वीरवर। आपने धर्मयुक्त युद्ध करके स्वर्गके मार्गमें भी अवश्य ही किष्किंधाकी भाँति कोई रमणीय पुरी बना ली है, अन्यथा आप किष्किन्धाको छोड़कर यहाँ क्यों सोते। आपके साथ मधुर सुगन्धयुक्त वनोंमें इतने जो-जो विहार किये हैं, उन सबको इस समय आपने सदाके लिये समाप्त कर दिया। नाथ। आप बड़े-बड़े यूथपतियोंके भी स्वामी थे। आज आपके मारे जानेसे मेरा सारा आनन्द लुट गया। मैं सब प्रकारसे निराश होकर शोकके समुद्रमें डूब गयी हूँ। निश्चय ही मेरा हृदय बड़ा कठोर है, जो आज आपको पृथ्वीपर पड़ा देखकर भी शोकसे संतप्त हो फट नहीं जाता- इसके हजारों टुकड़े नहीं हो जाते। वानरराज। आपने जो सुग्रीवकी स्त्री छीन ली और उन्हें घरसे बाहर निकाल दिया, उसीका यह फल आपको प्राप्त हुआ है। वानरेन्द्र। मैं आपका हित चाहती थी और आपके कल्याण-साधनमें ही लगी रहती थी तो भी मैंने आपसे जो हितकर बात कही थी, उसे मोहवश आपने नहीं माना और उल्टे मेरी ही निन्दा की। निश्चय ही आज आपके जीवनका अन्त कर देनेवाला संशयरहित काल यहाँ आ पहुँचा था, जिसने किसीके भी वशमें न आनेवाले आपको बलपूर्वक सुग्रीवके वशमें डाल दिया।

अब श्रीरामको सुनाकर बोली- ककुत्स्थ-कुलमें अवतीर्ण हुए श्रीरामने दूसरेके साथ युद्ध करते हुए बालिको मारकर अत्यन्त निन्दित कर्म किया है। इस कुत्सित कर्मको करके भी जो ये संतप्त नहीं हो रहे हैं, यह सर्वथा अनुचित है।

फिर बालिसे बोली- मैंने कभी दीनतापूर्ण जीवन नहीं बिताया था, ऐसे महान् दु:खका सामना नहीं किया था; परंतु आज आपके बिना मैं दीन हो गयी, अब मुझे अनाथकी भाँति शोक-संतापसे पूर्ण वैधव्य जीवन व्यतीत करना होगा। नाथ। आपने अपने वीरपुत्र अङ्गदको, जो सुख भोगने योग्य और सुकुमार है, बड़ा लाड़-प्यार किया था। अब क्रोधसे पागल हुए चाचाके वशमें पड़कर मेरे बेटेकी क्या दशा होगी ? बेटा अङ्गद। अपने धर्मप्रेमी पिताको अच्छी तरह देख लो। अब तुम्हारे लिये उनका दर्शन दुर्लभ हो जायगा।

प्राणनाथ। आप दूसरे देशको जा रहे हैं। अपने पुत्र का मस्तक सूँघकर इसे धैर्य बँधाइये और मेरे लिये भी कुछ संदेश दीजिये। श्रीरामने आपको मारकर बहुत बड़ा कर्म किया है। उन्होंने सुग्रीवसे जो प्रतिज्ञा की थी, उसके ऋणको उतार दिया।

अब सुग्रीवको सुनाकर कहने लगी- सुग्रीव। तुम्हारा मनोरथ सफल हो। तुम्हारे भाई, जिन्हें तुम अपना शत्रु समझते थे, मारे गये। अब बेखटके राज्य भोगो। रुमाको भी प्राप्त कर लोगे।

फिर बालिसे बोली- वानरेश्वर। मैं आपकी प्यारी पत्नी हूँ और इस तरह रोती-कलपती हूँ, फिर भी आप मुझसे बोलते क्यों नहीं हैं? देखिये, आपकी ये बहुत-सी सुन्दरी भार्याएँ यहाँ उपस्थित हैं। ताराका विलाप सुनकर अन्य वानर-पत्नियाँ भी सब ओर से अङ्गदको पकड़कर दीन एवं दु:खसे व्याकुल हो जोर-जोर से क्रन्दन करने लगी।

महाबाहो। यदि नासमझीके कारण मैंने आपका कोई अपराध किया हो तो आप उसे क्षमा कर दें। वानरवंशके स्वामी वीर आर्यपुत्र। मैं आपके चरणोंमें मस्तक रखकर यह प्रार्थना करती हूँ। इस प्रकार अन्य वानर-पत्नियोंके साथ पतिके समीप करुण-विलाप करती हुई अनिन्द्य सुन्दरी ताराने जहाँ बालि पृथ्वीपर पड़ा था, वहीं उसके समीप बैठकर आमरण अनशन करनेका निश्चय किया।.

तदनन्तर शोकके समुद्रमें डूबी हुई ताराने जब अपने मरे हुए स्वामीकी ओर दृष्टिपात किया, तब वह बालि का आलिङ्गन करके कटे हुए महान् वृक्षसे लिपटी हुई लताकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़ी।

उस समय वानरराजका मुख सूँघती हुई लोकविख्यात ताराने रोकर अपने मृत पतिसे इस प्रकार कहा- वीर। दु:खकी बात है कि आपने मेरी बात नहीं मानी और अब आप प्रस्तरसे पूर्ण अत्यन्त दु:खदायक और ऊँचे नीचे भूतलपर शयन कर रहे हैं।

वानरराज। निश्चय ही यह पृथ्वी आपको मुझसे भी बढ़कर प्रिय है, तभी तो आप इसका आलिङ्गन करके सो रहे हैं और मुझसे बाततक नहीं करते। वीर। साहसपूर्ण कार्योंसे प्रेम रखनेवाले वानरराज। यह श्रीरामरूपी विधाता सुग्रीवके वशमें हो गया है आपके नहीं। यह बड़े आश्चर्यकी बात है, अत: अब इस राज्यपर सुग्रीव ही पराक्रमी राजाके रूपमें आसीन होंगे।

प्राणनाथ। प्रधान-प्रधान भालू और वानर जो आप महावीरकी सेवामें रहा करते थे, इस समय बड़े दु:खसे विलाप कर रहे हैं। बेटा अङ्गद भी शोकमें पड़ा है। उन वानरोंका दु:खमय विलाप, अङ्गदका शोकोद्गार तथा मेरी यह अनुनय-विनयभरी वाणी सुनकर भी आप जागते क्यों नहीं हैं ? यही वह वीर-शय्या है, जिसपर पूर्वकालमें आपने ही बहुत-से शत्रुओंको मारकर सुलाया था; किंतु आज स्वयं ही युद्धमें मारे जाकर आप इसपर शयन कर रहे हैं।

विशुद्ध बलशाली कुलमें उत्पन्न, युद्धप्रेमी तथा दूसरोंको मान देनेवाले मेरे प्रियतम। तुम मुझ अनाथको अकेली छोड़कर कहाँ चले गये? निश्चय ही बुद्धिमान् पुरुषको चाहिये कि वह अपनी कन्या किसी शूरवीरके हाथमें न दे। देखो, मैं शूरवीरकी पत्नी होनेके कारण तत्काल विधवा बना दी गयी और इस प्रकार सर्वथा मारी गयी। राजरानी होनेका जो मेरा अभिमान था, वह भङ्ग हो गया। नित्य-निरन्तर सुख पानेकी मेरी आशा नष्ट हो गयी तथा मैं अगाध एवं विशाल शोकसमुद्रमें डूब गयी हूँ। निश्चय ही यह मेरा कठोर हृदय लोहेका बना हुआ है। तभी तो अपने स्वामीको मारा गया देखकर इसके सैकड़ों टुकड़े नहीं हो जाते।

हाय। जो मेरे सुहृद्, स्वामी और स्वभावसे ही प्रिय थे तथा संग्राममें महान् पराक्रम प्रकट करनेवाले शूरवीर थे, वे संसारसे चल बसे।

पतिहीन नारी भले ही पुत्रवती एवं धन-धान्यसे समृद्ध भी हो, किंतु लोग उसे विधवा ही कहते हैं। वीर ! अपने ही शरीरसे प्रकट हुई रक्तराशिमें आप उसी तरह शयन करते हैं, जैसे पहले इन्द्रगोप नामक कीड़ेके-से रंगवाले बिछौनेसे युक्त अपने पलंगपर सोया करते थे।

इस अत्यन्त भयंकर वैरमें आज सुग्रीव कृतकृत्य हो गये। श्रीरामके छोड़े हुए एक ही बाणने उनका सारा भय हर लिया।

बालि का शरीर रणभूमिकी धूलसे भर गया था। उस समय तारा बाणसे आहत हुए अपने शूरवीर स्वामीके उस शरीरको पोंछती हुई

उन्हें नेत्रोंके अश्रुजलसे सींचने लगी। अपने मारे गये पतिके सारे अङ्गोंको रक्तसे भीगा हुआ देख बालि-पत्नी ताराने अपने भूरे नेत्रोंवाले पुत्र अङ्गदसे कहा- बेटा। देखो, तुम्हारे पिताकी अन्तिम अवस्था कितनी भयंकर है। ये इस समय पूर्व पापके कारण प्राप्त हुए वैरसे पार हो चुके हैं। माताके ऐसा कहनेपर अङ्गदने उठकर अपनी मोटी और गोलाकार भुजाओंद्वारा पिताके दोनों पैर पकड़ लिये और प्रणाम करते हुए कहा- पिताजी। मैं अङ्गद हूँ। तब तारा फिर कहने लगी- प्राणनाथ। कुमार अङ्गद पहलेकी ही भाँति आज भी आपके चरणोंमे प्रणाम करता है, किंतु आप इसे चिरंजीवी रहो बेटा ऐसा कहकर आशीर्वाद क्यों नहीं देते हैं ?

जैसे कोई बछड़े सहित गाय सिंहके द्वारा तत्काल मार गिराये हुए साँड़के पास खड़ी हो, उसी प्रकार पुत्रसहित मैं प्राणहीन हुए आपकी सेवामें बैठी हूँ। युद्धमें आपसे संतुष्ट हुए देवराज इन्द्रने आपको जो सोनेकी प्रिय माला दे रक्खी थी, उसे मैं इस समय आपके गलेमें नहीं देख रही हूँ ? दूसरोंको मान देनेवाले वानरराज। प्राणहीन हो जानेपर भी आपको राज्यलक्ष्मी उसी प्रकार नहीं छोड़ रही है, जैसे चारों ओर चक्कर लगानेवाले सूर्यदेवकी प्रभा गिरिराज मेरुको कभी नहीं छोड़ती है।

मैंने आपके हितकी बात कही थीं; परंतु आपने उसे नहीं स्वीकार किया। मैं भी आपको रोक रखनेमें समर्थ न हो सकी। इसका फल यह हुआ कि आप युद्धमें मारे गये। आपके मारे जानेसे मैं भी अपने पुत्रसहित मारी गयी। अब लक्ष्मी आपके साथ ही मुझे और मेरे पुत्रको भी छोड़ रही है।

ताराको आकाशसे टूटकर गिरी हुई तारिकाके समान पृथ्वीपर पड़ी देख वानरयूथपति हनुमान्‌ने धीरे-धीरे समझाना आरम्भ किया- देवि। जीवके द्वारा गुणबुद्धिसे अथवा दोषबुद्धिसे किये हुए जो अपने कर्म हैं, वे ही सुख-दुःखरूप फलकी प्राप्ति करानेवाले होते हैं। परलोकमें जाकर प्रत्येक जीव शान्तभावसे रहकर अपने शुभ और अशुभ- सभी कर्मोंका फल भोगता है।

तुम स्वयं शोचनीया हो; फिर दूसरे किसको शोचनीय समझकर शोक कर रही हो ? स्वयं दीन होकर दूसरे किस दीन-पर दया करती हो ? पानीके बुलबुलेके समान इस शरीरमें रहकर कौन जीव किस जीवके लिये शोचनीय है ?

तुम्हारे पुत्र कुमार अङ्गद जीवित हैं। अब तुम्हें इन्हींकी ओर देखना चाहिये और इनके लिये भविष्यमें जो उन्नतिके साधक श्रेष्ठ कार्य हों, उनका विचार करना चाहिये। देवि। तुम विदुषी हो, अतः जानती ही हो कि प्राणियों के जन्म और मृत्युका कोई निश्चित समय नहीं है। इसलिये शुभ परलोकके लिये सुखद कर्म ही करना चाहिये। अधिक रोना-धोना आदि जो लौकिक कर्म व्यवहार हैं, उसे नहीं करना चाहिये। सैकड़ों, हजारों और लाखों वानर जिनपर आशा लगाये जीवन-निर्वाह करते थे, वे ही ये वानरराज आज अपनी प्रारब्ध निर्मित आयुकी अवधि पूरी कर चुके। इन्होंने नीतिशास्त्रके अनुसार अर्थका साधन-राज्यकार्यका संचालन किया है। ये उपयुक्त समयपर साम, दान और क्षमाका व्यवहार करते आये हैं। अतः धर्मानुसार प्राप्त होनेवाले लोकमें गये हैं। इनके लिये तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये।

सती-साध्वी देवि। ये सभी श्रेष्ठ वानर, ये तुम्हारे पुत्र अङ्गद तथा वानर और भालुओंका यह राज्य सब तुमसे ही सनाथ हैं- तुम्हीं इन सबकी स्वामिनी हो। ये अङ्गद और सुग्रीव दोनों ही शोकसे संतप्त हो रहे हैं। तुम इन्हें भावी कार्यके लिये प्रेरित करो। तुम्हारे अधीन रहकर अङ्गद इस पृथ्वीका शासन करें।

शास्त्रमें संतान होनेका जो प्रयोजन बतलाया गया है तथा इस समय राजा बालिके पारलौकिक कल्याणके लिये जो कुछ कर्तव्य है, वही करो- यही समयकी निश्चित प्रेरणा है। वानरराजका- अन्त्येष्टि संस्कार और कुमार अङ्गदका राज्याभिषेक किया जाय। बेटेको राजसिंहासनपर बैठा देखकर तुम्हें शान्ति मिलेगी।

तारा अपने स्वामीके विरह-शोकसे पीड़ित थी। वह उपर्युक्त वचन सुनकर सामने खड़े हुए हनुमान्‌जीसे बोली- अङ्गदके समान सौ पुत्र एक ओर और मरे होनेपर भी इस वीरवर स्वामीका आलिङ्गन करके सती होना दूसरी ओर इन दोनोंमेंसे अपने वीर पतिके शरीरका आलिङ्गन ही मुझे श्रेष्ठ जान पड़ता है। मैं न तो वानरोंके राज्यकी स्वामिनी हूँ और न मुझे अङ्गदके लिये ही कुछ करनेका अधिकार है। इसके चाचा सुग्रीव ही समस्त कार्योंके लिये समर्थ हैं और वे ही मेरी अपेक्षा इसके निकटवर्ती भी हैं। कपिश्रेष्ठ हनुमानजी। अङ्गदके विषयमें आपकी यह सलाह मेरे लिये काममें लाने योग्य नहीं है। आपको यह समझना चाहिये कि पुत्रके वास्तविक बन्धु सहायक पिता और चाचा ही हैं, माता नहीं। मेरे लिये वानरराज बालिका अनुगमन करनेसे बढ़कर इस लोक या परलोकमें कोई भी कार्य उचित नहीं है। युद्धमें शत्रुसे जूझकर मरे हुए अपने वीर स्वामीके द्वारा सेवित चिता आदिकी शय्यापर शयन करना ही मेरे लिये सर्वथा योग्य है।

सुग्रीव को उस समय अपने भाई बालिके वधसे बड़ा संताप हुआ। उनके मुखपर आँसुओंकी धारा बह चली। उनका मन खिन्न हो

गया और वे भीतर-ही-भीतर कष्टका अनुभव करते हुए अपने भृत्योंके साथ धीरे-धीरे श्रीरामके पास गये और बोले- नरेन्द्र। आपने जैसी प्रतिज्ञा की थी, उसके अनुसार यह काम कर दिखाया। इस कर्मका राज्य-लाभरूप फल भी प्रत्यक्ष ही है। किंतु राजकुमार। इससे मेरा जीवन निन्दनीय हो गया है। अत: अब मेरा मन सभी भोगोंसे निवृत्त हो गया।

श्रीराम ! राजा बालिके मारे जानेसे ये महारानी तारा अत्यन्त विलाप कर रही हैं। सारा नगर दु:खसे संतप्त होकर चीख रहा है तथा कुमार अङ्गदका जीवन भी संशयमें पड़ गया है। इन सब कारणोंसे अब राज्यमें मेरा मन नहीं लगता है।

श्रीरघुनाथ ! भाईने मेरा बहुत अधिक तिरस्कार किया था, इसलिये क्रोध और अमर्षके कारण पहले मैंने उसके वधके लिये अनुमति दे दी थी; परंतु अब वानर-यूथपति बालिके मारे जानेपर मुझे बड़ा संताप हो रहा है। सम्भवत: जीवनभर यह संताप बना ही रहेगा।

अपनी जातिय वृत्तिके अनुसार जैसे-जैसे जीवन-निर्वाह करते हुए उस श्रेष्ठ पर्वत ऋष्यमूकपर चिरकालतक रहना ही आज मैं अपने लिये कल्याणकारी समझता हूँ; किंतु अपने इस भाईका वध कराकर अब मुझे स्वर्गका भी राज्य मिल जाय तो मैं उसे अपने लिये श्रेयस्कर नहीं मानता हूँ।

बुद्धिमान् महात्मा बालिने युद्ध के समय मुझसे कहा था कि तुम चले जाओ, मैं तुम्हारे प्राण लेना नहीं चाहता। श्रीराम। उनकी यह बात उन्हींके योग्य थी और मैंने जो आपसे कहकर उनका वध कराया, मेरा वह क्रूरतापूर्ण वचन और कर्म मेरे ही अनुरूप है।

रघुनन्दन। कोई कितना ही स्वार्थी क्यों न हो ? यदि राज्यके सुख तथा भ्रातृ-वधसे होनेवाले दु:खकी प्रबलता पर विचार करेगा तो वह भाई होकर अपने महान् गुणवान् भाईका वध कैसे अच्छा समझेगा ?

बालिके मनमें मेरे वधका विचार नहीं था; क्योंकि इससे उन्हें अपनी मान-प्रतिष्ठामें बट्टा लगानेका डर था। मेरी ही बुद्धिमें दुष्टता भरी थी, जिसके कारण मैंने अपने भाईके प्रति ऐसा अपराध कर डाला, जो उनके लिये घातक सिद्ध हुआ।

जब बालिने मुझे एक वृक्षकी शाखासे घायल कर दिया और मैं दो घड़ीतक कराहता रहा, तब उन्होंने मुझे सान्त्वना देकर कहा- जाओ, फिर मेरे साथ युद्ध करनेकी इच्छा न करना। उन्होंने भ्रातृभाव, आर्यभाव और धर्मकी भी रक्षा की है; परंतु मैंने केवल काम, क्रोध और वानरोचित चपलताका ही परिचय दिया है।

इन्द्रके पापको तो पृथ्वी, जल, वृक्ष और स्त्रियोंने स्वेच्छासे ग्रहण कर लिया था; परंतु मुझ-जैसे वानरके इस पापको कौन लेना चाहेगा? अथवा कौन ले सकेगा ?

रघुनाथ। अपने कुलका नाश करनेवाला ऐसा पापपूर्ण कर्म करके मैं प्रजाके सम्मानका पात्र नहीं रहा। राज्य पाना तो दूरकी बात है, मुझमें युवराज होनेकी भी योग्यता नहीं है। मैंने वह लोकनिन्दित पापकर्म किया है, जो नीच पुरुषोंके योग्य तथा सम्पूर्ण जगत्को हानि पहुँचानेवाला है। जैसे वर्षाके जलका वेग नीची भूमिकी ओर जाता है, उसी प्रकार यह भ्रातृ-वधजनित महान् शोक सब ओर से मुझपर ही आक्रमण कर रहा है। रघुनन्दन। मैंने जो दु:सह पाप किया है, वह मेरे हृदयस्थित सदाचारको भी नष्ट कर रहा है। ठीक उसी तरह, जैसे आगमें तपाया जानेवाला मलिन सुवर्ण अपने भीतरके मलको नष्ट कर देता है। मेरे ही कारण बालिका वध हुआ, जिससे इस अङ्गदका भी शोक-संताप बढ़ गया और इसीलिये इन महाबली वानर-यूथपतियोंका समुदाय अधमरा-सा जान पड़ता है। वीरवर। सुजन और वशमें रहनेवाला पुत्र तो मिल सकता है, परंतु अङ्गदके समान बेटा कहाँ मिलेगा ? तथा ऐसा कोई देश नहीं है, जहाँ मुझे अपने भाईका सामीप्य मिल सके।

अब वीरवर अङ्गद भी जीवित नहीं रह सकता। यदि जी सकता तो उसकी रक्षाके लिये उसकी माता भी जीवन धारण करती। वह बेचारी तो यों ही संतापसे दीन हो रही है, यदि पुत्र भी न रहा तो उसके जीवनका अन्त हो जायगा- यह बिल्कुल निश्चित बात है।

अत: मैं अपने भाई और पुत्रका साथ देनेकी इच्छासे प्रज्वलित अग्निमें प्रवेश करूँगा। ये वानर वीर आपकी आज्ञामें रहकर सीताकी खोज करेंगे। राजकुमार। मेरी मृत्यु हो जानेपर भी आपका सारा कार्य सिद्ध हो जायगा। मैं कुलकी हत्या करनेवाला और अपराधी हूँ। अत: संसारमें जीवन धारण करनेके योग्य नहीं हूँ। इसलिये श्रीराम। मुझे प्राणत्याग करनेकी आज्ञा दीजिये।

श्रीरघुनाथ पृथ्वीके समान क्षमाशील और सम्पूर्ण जगत्की रक्षा करनेवाले हैं। उन्होंने उस समय अधिक उत्सुक होकर जब इधर-उधर बारंबार दृष्टि दौड़ायी, तब शोकमग्ना तारा उन्हें दिखायी दी, जो अपने स्वामीके लिये रो रही थी।

तारा जब पतिके समीपसे हटायी जाने लगी, तब बारंबार उसका आलिङ्गन करती हुई वह अपनेको छुड़ाने और छटपटाने लगी।

इतनेहीमें उसने अपने सामने धनुष-बाण धारण किये श्रीरामको खड़ा देखा, जो अपने तेजसे सूर्यदेवके समान प्रकाशित हो रहे थे।

उस समय घोर संकटमें पड़ी हुई शोकपीड़ित आर्या तारा अत्यन्त विह्वल हो गिरती-पड़ती तीव्र गतिसे महेन्द्रतुल्य दुर्जय वीर महानुभाव भगवान् श्रीरामके समीप गयी।

उनके पास पहुँचकर वह मनस्विनी तारा इस प्रकार बोली- रघुनन्दन। आप अप्रमेय देश, काल और वस्तुकी सीमासे रहित हैं। आपको पाना बहुत कठिन है। आप जितेन्द्रिय तथा उत्तम धर्मका पालन करनेवाले हैं। आपकी कीर्ति कभी नष्ट नहीं होती। आप दूरदर्शी एवं पृथ्वीके समान क्षमाशील हैं। आपके हाथमें धनुष और बाण शोभा पा रहे हैं। आपका बल महान् हैं। आप सुदृढ़ शरीरसे सम्पन्न हैं और मनुष्य शरीरसे प्राप्त होनेवाले लौकिक सुखका परित्याग करके भी दिव्य शरीरके ऐश्वर्यसे युक्त हैं।

अत: मैं प्रार्थना करती हूँ कि आपने जिस बाणसे मेरे प्रियतम पतिका वध किया है, उसी बाणसे आप मुझे भी मार डालिये। मैं मरकर उनके समीप चली जाऊँगी। मेरे बिना बालि कहीं भी सुखी नहीं रह सकेंगे।

श्रीराम। स्वर्गमें जाकर भी जब बालि सब ओर दृष्टि डालनेपर मुझे नहीं देखेंगे, तब उनका मन वहाँ कदापि नहीं लगेगा। स्वर्गमें भी बालि मेरे बिना शोकका अनुभव करेंगे और उनके शरीरकी कान्ति फीकी पड़ जायगी। वे उसी तरह दुखी रहेंगे जैसे गिरिराज ऋष्यमूकके सुरम्य तट-प्रान्तमें विदेहनन्दिनी सीताके बिना आप कष्टका अनुभव करते हैं। स्त्रीके बिना युवा पुरुषको जो दु:ख उठाना पड़ता है, उसे आप अच्छी तरह जानते हैं। इस तत्त्वको समझकर आप मेरा वध करिये, जिससे बालिको मेरे विरहका दु:ख न भोगना पड़े।

महाराजकुमार। आप महात्मा हैं, इसलिये यदि ऐसा चाहते हों कि मुझे स्त्री हत्याका पाप न लगे तो यह बालि की आत्मा है ऐसा समझकर मेरा वध कीजिये। इससे आपको स्त्री-हत्याका पाप नहीं लगेगा।

शास्त्रोक्त यज्ञ-यागादि कर्मोंमे पति और पत्नी दोनोंका संयुक्त अधिकार होता है- पत्नीको साथ लिये बिना पुरुष यज्ञकर्मका अनुष्ठान नहीं कर सकता। इसके सिवा नाना प्रकारकी वैदिक श्रुतियाँ भी पत्नीको पतिका आधा शरीर बतलाती हैं। दूसरे स्त्रियोंका अपने पतिसे अभिन्न होना सिद्ध होता है अत: मुझे मारनेसे आपको स्त्रीवधका दोष नहीं लग सकता और बालिको स्त्रीकी प्राप्ति हो जायगी; क्योंकि संसारमें ज्ञानी पुरुषोंकी दृष्टिमें स्त्रीदानसे बढ़कर दूसरा कोई दान नहीं है। वीरशिरोमणे। यदि धर्मकी ओर दृष्टि रखते हुए आप भी मुझे मेरे प्रियतम बालिको समर्पित कर देंगे तो इस दानके प्रभावसे मेरी हत्या करनेपर भी आपको पाप नहीं लगेगा। मैं दु:खिनी और अनाथा हूँ। पतिसे दूर कर दी गयी हूँ। ऐसी दशामें मुझे जीवित छोड़ना आपके लिये उचित नहीं है।

ताराके ऐसा कहनेपर महात्मा भगवान् श्रीरामने उसे आश्वासन देकर हितकी बात कही- वीरपत्नी। तुम मृत्युविषयक विपरीत विचारका त्याग करो; क्योंकि विधाताने इस सम्पूर्ण जगत्की सृष्टि की है। विधाताने ही इस सारे जगत्को सुख-दु:खसे संयुक्त किया है। यह बात साधारणलोग भी कहते और जानते हैं। तीनों लोकोंके प्राणी विधाताके विधानका उल्लंघन नहीं कर सकते; क्योंकि सभी उसके अधीन हैं।

जीवात्मा तो निर्वाण है, हे तारा तू किसके लिए रो रही है। पहले तू अपना पता बता कि तू कौन है ? जो तू बोल रही है क्या तू उसको दिखला सकती है। यह शरीर तो पंचभूतों से बनी जड़ शरीर है। इसका ध्यान हटा और आत्मा में अपनी वृत्ति जगा दे। यह ही शास्त्रों का सार हृदय में धारण कर और मोह को मार। इन्हीं सुविचारोंसे तेरा त्राण है तू किसके लिए रो रही है ? यह देह अनित्य पदार्थ निरर्थक है। आकाश, वायु, जल, पृथ्वी, अग्नि इनके तत्त्वोंसे बनी है। इन्हीं तत्वोंमें इस देह की जन्म और मृत्यु होती है। आत्मा सनातन है और यह ज्ञानेन्द्रियाँ भी सर्वत्र और सर्वज्ञ सनातन माने गये हैं। इस आत्मा में कोई नाम रूप का आभास नहीं होता है। यह सबमें है पर किसीने उसे नहीं देखा है। यदि उस सूक्ष्म आत्मा को तुमने पति समझा है तो तुम्हारा पति अमर है और यहींपर है और यदि इस नश्वर देह को अपना पति मानती है तो यह देह तेरे सामने है। फिर तू किसके लिये इतना विलाप कर रही है ? यह शुद्ध अनुपम स्वरूप तुम्हारा मन, बुद्धि इन पंचतत्त्वोंसे अलग है। यह देह अस्थि चर्मसे युक्त नरक का द्वार है। इसे वैराग्य कर और निर्मल तारा बन जा।

तुम्हें पहलेकी ही भाँति अत्यन्त सुख एवं आनन्दकी प्राप्ति होगी तथा तुम्हारा पुत्र युवराजपद प्राप्त करेगा। विधाताका ऐसा ही विधान है। शूरवीरोंकी स्त्रियाँ इस प्रकार विलाप नहीं करती हैं अत: तुम भी शोक छोड़कर शान्त हो जाओ।

शत्रुओंको संताप देनेवाले परम प्रभावशाली महात्मा श्रीरामके इस प्रकार सान्त्वना देनेपर सुन्दर वेष और रूपवाली वीरपत्नी तारा, जिसके मुखसे विलापकी ध्वनि निकलती रहती थी, चुप हो गयी- उसने रोना-धोना छोड़ दिया।

श्रीराम का यह उपदेश सुनकर तारा तो तार तार हो गई और सारा क्लेश खोकर ज्ञानको प्राप्त हो गयी।

लक्ष्मणसहित श्रीराम सुग्रीव आदिके शोकसे उनके समान ही दुखी थे। उन्होंने सुग्रीव, अङ्गद और ताराको सान्त्वना देते हुए इस प्रकार कहा- शोक-संताप करनेसे मरे हुए जीवकी कोई भलाई नहीं होती। अत: अब आगे जो कुछ कर्तव्य है, उसको तुम्हें विधिपूर्वक सम्पन्न करना चाहिये। जगत्में नियति काल ही सबका कारण है। वही समस्त कर्मोंका साधन है और काल ही समस्त प्राणियोंको विभिन्न कर्मोंमें नियुक्त करनेका कारण है क्योंकि वही सबका प्रवर्तक है। कोई भी पुरुष न तो स्वतन्त्रतापूर्वक किसी कामको कर सकता है और न किसी दूसरेको ही उसमें लगानेकी शक्ति रखता है। सारा जगत् स्वभावके अधीन है और स्वभावका आधार काल है।

काल भी कालका अपनी की हुई व्यवस्थाका उल्लंघन नहीं कर सकता। वह काल कभी क्षीण नहीं होता। स्वभाव प्रारब्धकर्म को पाकर कोई भी उसका उल्लंघन नहीं करता। कालका किसीके साथ भाईचारेका, मित्रताका अथवा जाति-बिरादरीका सम्बन्ध नहीं हैं उसको वशमें करनेका कोई उपाय नहीं है तथा उसपर किसीका पराक्रम नहीं चल सकता। कारणस्वरूप भगवान् काल जीवके भी वशमें नहीं है। अत: साधुदर्शी विवेकी पुरुषको सब कुछ कालका ही परिणाम समझना चाहिये। धर्म, अर्थ और काम भी कालक्रमसे ही प्राप्त होते हैं। मेरे द्वारा मारे जानेके कारण वानरराज बालि शरीरसे मुक्त हो अपने शुद्ध स्वरूपको प्राप्त हुए हैं। नीतिशास्त्रके अनुकूल साम, दान और अर्थके समुचित प्रयोगसे मिलनेवाले जो पवित्र कर्म हैं, वे सभी उन्हें प्राप्त हो गये।

महात्मा बालिने पहले अपने धर्मके संयोगसे जिसपर विजय पायी थी, उसी स्वर्गको इस समय युद्धमें प्राणोंकी रक्षा न करके उन्होंने अपने हाथमें कर लिया है। यही सर्वश्रेष्ठ गति है, जिसे वानरोंके सरदार बालिने प्राप्त किया है। अत: अब उनके लिये शोक करना व्यर्थ है। इस समय तुम्हारे सामने जो कर्तव्य उपस्थित है, उसे पूरा करो।

तुम ऐसा नहीं कर सकती हो। श्रीरामने समझाया- अङ्गदके लिए तुम्हें जीवित रहना चाहिये। वैसे भी एक तत्वज्ञा नारीका शरीरके प्रति यह मोह उचित नहीं है। तारा पतिके शरीरसे लिपटकर क्रन्दन करने लगी। इस शोकमें भी उसने पुत्रसे कहा- अङ्गद। मेरा हृदय वज्रका है जो मैं भर्त्ताको इस रूपमें देखकर भी जीवित हूँ; किंतु पिताका वह रूप देख लो। सुगीवके साथ शत्रुताका यह परिणाम है। श्रीरामके स्वजनोंका श्रीरामने जिन्हें अपनाया उनका विरोध करनेवालेकी यही अन्तिम परिणति है।

देवि। आप जानती है कि जन्म-मृत्यु, सुख-दु:ख कर्मानुसार प्राप्त होते हैं। आप शोकका त्याग करें। अङ्गद बालक है। आप व्याकुल होंगी तो वह देह ही त्याग देगा। धर्मज्ञे। तुम किसके लिए शोक करती हो, शरीरके लिए या चेतनके लिए ? श्रीरामका गम्भीर स्वर गूँजा- शरीर सम्मुख पड़ा है तुम्हारे। इसे तुम सड़नेसे बचा सकोगी ? चेतन मरा करता है क्या ? तुम्हारा पति कौन था, जड़ शरीर या चेतन?

बालिकी स्त्री तारा अनेकों प्रकारसे विलाप करने लगी। उसके बाल बिखरे हुए हैं और देहकी सँभाल नहीं है।

ताराको व्याकुल देखकर श्रीरघुनाथने उसे ज्ञान दिया और उसकी माया अज्ञान हर ली। उन्होंने कहा- पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु इन पाँच तत्त्वोंसे यह अत्यन्त अधम शरीर रचा गया है।

वह शरीर तो प्रत्यक्ष तुम्हारे सामने सोया हुआ है, और जीव नित्य है। फिर तुम किसके लिये रो रही हो ?

शरीरके लिये तू रोती है कि आत्माके लिए रोती है ? शरीर तो पंच महाभूतका हैं; यह तेरे आगे ही पड़ा है। आत्माको रोती हो तो आत्मा नहीं मरती। आत्मा तो नित्य है।

मरने वालेके पीछे बहुत रोनेसे उसको भी दु:ख होता है। मरने वालेके पीछे बहुत रोना यह ठीक नहीं। उसके द्वारा जो काम बाकी रहा हो, उसको आगे बढ़ाओ। यह ही सच्ची ममता है। बहुत हाय-हाय करे यह ममता नहीं। अधिक ममता हो तो हरिके नामका जप करके उसका पुण्य मरनेवालेको दो।

मरणका प्रारब्ध भयंकर होता है। मरणका पाप ऐसा होता है कि इसका निवारण साधारण पुण्यसे नहीं होता। अतिशय भक्ति बढ़े तो ही मरण सुधरता है। साधारण भक्तिसे अथवा अतिशय दानसे भी मरण नहीं सुधरता। अतिशय भक्ति करे तभी अन्तकालके पापभस्म होते हैं। मनुष्य दूसरोंके लिए रोनेकी अपेक्षा, सावधान होकर अपने लिए रोवे और साधन करे तो कल्याण होगा। जो गया है वह तो प्रभुके चरणोंमें गया। उसकी अब चिन्ता न करो, उसका स्मरण न करो। प्रभुने ताराको सुन्दर उपदेश किया।

जब ज्ञान उत्पन्न हो गया, तब वह भगवान्के चरणों लगी और उसने परम भक्तिका वर माँग लिया।

आपकी माया अचिन्त्य है। तारा जैसे तत्त्वज्ञाके लिए इतना उपदेश पर्याप्त था। उसने बालिके शरीरको छोड़कर श्रीरामके सम्मुख

पृथ्वीपर मस्तक रखा- आपकी अनुकम्पाके बिना जीव स्वयं अविद्याके अन्धकारसे निकल नहीं पाता। अत: दया करो दयामय।

सुग्रीव। अग्रजकी सविधि अन्त्येष्टि करवाओ अङ्गदके द्वारा। ताराको समझाकर नगरमें भेजकर श्रीरामने सुग्रीवको आदेश दिया- लक्ष्मण तुम्हारे साथ रहेंगे। हम सब रुदन करें तो उससे बालिका कुछ हित होगा ? श्रीरामने समझाया- अश्रुपात हो चुका, अब आवश्यक कर्तव्य करना चाहिये। काल दुरतिक्रम है। काल ही सबका कारण है। कालका अतिक्रम कोई कर नहीं सकता। बालि तो उत्तम लोक गया। सुग्रीव उठो। अङ्गदको लेकर अब अपने अग्रजकी अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न करो। लक्ष्मणने सुग्रीवको हाथ पकड़कर उठाया।

तार नामक वानरने अर्थी बनायी। तारा अन्त:पुरमें न जाकर पुन: लौट आयी। बालि-का शव उठने लगा तो वह उससे लिपटकर रुदन करने लगी। देवि। मुझे बहुत दु:ख है कि मैं वानरेन्द्रकी मृत्यु निमित्त बना। सहज स्नेहशील परमोदार श्रीरामका स्वर आर्द्र हो गया- बालिकी मृत्युका समय आ गया था; किंतु रामका अभाग्य इसे निमित्त बनाने यहाँ ले आया।

कमललोचन। करुणासागर। आपकी उदारता असीम है। श्रीरामके नेत्रोंमें अश्रु देखते ही तारा पतिका शव छोड़कर उठी- वानरेन्द्रका सौभाग्य उन्हें अपने शरसे परिपूत करके, परमधाम देकर भी आप दु:खी हो रहे हैं ? धन्य हैं आप। इसीसे सन्त-सत्पुरुष आपके श्रीचरणोंमें स्थिर प्रीतिकी कामना करते हैं।

राम ने सुग्रीव की बाँह पकड़कर उन्हें उठाया, उठो, सुग्रीव। शोक करने का समय नहीं है। तत्काल किष्किंधा में जाओ। रुमा को मुक्त कर, उसे सम्मानपूर्वक ग्रहण करो। अपहरण से वह दूषित नहीं मानी जा सकती और बालि के वध की घोषणा कर, सत्ता ग्रहण करो। अंगद को युवराज-पद दो तथा न्यायपूर्ण प्रजा का पालन करो। राम रुककर, लक्ष्मण की ओर मुड़े, सौमित्र। तुम भी साथ जाओ। देखना, अनावश्यक हिंसा न हो। दोषी और अपराधी बंदी हों; किंतु प्रतिहिंसा का जन्म न हो।

और आप, भैया ? मैं अपने शत्रु के सम्मान की रक्षा के लिए यहीं रुकूँगा। राम बोले, व्यवस्था कर शीघ्र लौटो। तब अङ्गदके साथ करुण-क्रन्दन करते हुए सुग्रीवने बालिके शवको उठाकर उस शिबिकामें रक्खा। तदनन्तर वानरोंके स्वामी राजा सुग्रीवने आज्ञा दी कि मेरे बड़े भाईका और्ध्वदैहिक संस्कार शास्त्रानुकूल विधिसे सम्पन्न किया जाय। पहाड़ी नदी तुङ्गभद्राके एकान्त तटपर जो जलसे घिरा था, पहुँचकर बहुत-से वनचारी वानरोंने एक चिता तैयार की। इसके बाद संतापपीड़ित इन्द्रियोंवाले अङ्गदने रोते-रोते सुग्रीवकी सहायतासे पिताको चितापर रक्खा। फिर शास्त्रीय विधिके अनुसार उसमें आग लगाकर उन्होंने उसकी प्रदक्षिणा की। इसके बाद यह सोचकर कि मेरे पिता लंबी यात्राके लिये प्रस्थित हुए हैं अङ्गदकी सारी इन्द्रियाँ शोकसे व्याकुल हो उठीं। इस प्रकार विधिवत् बालिका दाह-संस्कार करके सभी वानर जलाञ्जलि देनेके लिये पवित्र जलसे भरी हुई कल्याणमयी तुङ्गभद्रा नदीके तटपर आये।

वहाँ अङ्गदको आगे रखकर सुग्रीव और तारासहित सभी वानरोंने बालिके लिये एक साथ जलाञ्जलि दी। इस प्रकार इक्ष्वाकुवंशशिरोमणि श्रीरामके बाणसे मारे गये श्रेष्ठ पराक्रमी और प्रज्वलित अग्निके समान तेजस्वी सुविख्यात बालि का दाह-संस्कार करके सुग्रीव उस समय लक्ष्मणसहित श्रीरामके पास आये।

उपदेव-वर्गमें उत्तर क्रिया शवदाहसे सम्पूर्ण हो जाती है। उपदेवताओंको मरणाशौच शवदाहके पश्चात् समाप्त हो जाता है स्नान मात्रसे, अत: अब उत्तर क्रिया इस स्नानसे सम्पूर्ण हो गयी।

७) सुग्रीव का राज्याभिषेक और श्रीरामका वर्षाकालमें विरह-वियोग

श्रीरामके पास आकर वे सभी वानर उनके सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये। हनुमान हाथ जोड़कर श्रीराम से बोले- आपकी कृपासे सुग्रीवको सुन्दर दाढ़वाले पूर्णबलशाली और महामनस्वी वानरोंका यह विशाल साम्राज्य प्राप्त हुआ, जो इनके बाप-दादोंके समयसे चला आ रहा है। प्रभो। यद्यपि इसका मिलना बहुत ही कठिन था तो भी आपके प्रसादसे यह इन्हें सुलभ हो गया। अब यदि आप आज्ञा दें तो ये अपने सुन्दर नगरमें प्रवेश करके सुहृदोंके साथ अपना सब राजकार्य सँभालें।

अत: आप इस रमणीय पर्वत-गुफा किष्किन्धामें पधारनेकी कृपा करें और इन्हें इस राज्यका स्वामी बनाकर वानरोंका हर्ष बढ़ावें।

तब श्रीरामने कहा- हनुमन्! सौम्य! मैं पिताकी आज्ञाका पालन कर रहा हूँ, अत: चौदह वर्षोंके पूर्ण होनेतक किसी ग्राम या नगरमें प्रवेश नहीं करूँगा। वानरश्रेष्ठ वीर सुग्रीव इस समृद्धिशालिनी दिव्य गुफामें प्रवेश करें और वहाँ शीघ्र ही इनका विधिपूर्वक राज्याभिषेक कर दिया जाय। हनुमान्से ऐसा कहकर श्रीराम सुग्रीवसे बोले- मित्र! तुम लौकिक और शास्त्रीय सभी व्यवहार जानते हो। कुमार अङ्गद सदाचारसम्पन्न

तथा महान् बल-पराक्रमसे परिपूर्ण हैं। इनमें वीरता कूट-कूटकर भरी है, अत: तुम इनको भी युवराजके पदपर अभिषिक्त करो।

ये तुम्हारे बड़े भाईके ज्येष्ठ पुत्र हैं। पराक्रममें भी उन्हींके समान हैं तथा इनका हृदय उदार है। अत: अङ्गद युवराज-पदके सर्वथा अधिकारी हैं। सौम्य ! वर्षा कहलानेवाले चार मास या चौमासे आ गये। इनमें पहला मास यह श्रावण, जो जलकी प्राप्ति करानेवाले है, आरम्भ हो गया। यह किसीपर चढ़ाई करनेका समय नहीं है। इसलिये तुम अपनी सुन्दर नगरीमें जाओ। मैं लक्ष्मणके साथ इस पर्वतपर निवास करूँगा। सखे ! कार्तिक आनेपर तुम रावणके वधके लिये प्रयत्न करना। यही हमलोगोंका निश्चय रहा। अब तुम अपने महलमें प्रवेश करो और राज्यपर अभिषिक्त होकर सुहृदोंको आनन्दित करो।

श्रीरामकी यह आज्ञा पाकर वानरश्रेष्ठ सुग्रीव उस रमणीय किष्किंन्धापुरीमें गये। वानरराजको देखकर प्रजा आदि समस्त प्रकृतियोंने एकाग्रचित्त हो पृथ्वीपर माथा टेककर उन्हें प्रणाम किया। महाबली पराक्रमी सुग्रीवने उन सबको उठनेकी आज्ञा दी और उन सबसे बातचीत करके वे भाईके अन्त:पुरमें प्रविष्ट हुए। भयंकर पराक्रम प्रकट करनेवाले वानरश्रेष्ठ सुग्रीवको अन्त:पुरमें आया देख उनके सुहृदोनें उनका उसी प्रकार अभिषेक किया, जैसे देवताओंने सहस्र नेत्रधारी इन्द्रका किया था। तदनन्तर उन सबने श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको नाना प्रकारके रत्न, वस्त्र और भक्ष्य पदार्थोंसे संतुष्ट करके वानरश्रेष्ठ सुग्रीवका विधिपूर्वक अभिषेक-कार्य आरम्भ किया।

इसके बाद वानरोंने नदियों, नदों, सम्पूर्ण दिशाओं-के तीर्थों और समस्त समुद्रोंसे लाये हुए निर्मल जलको एकत्र करके उसे सोनेके कलशोंमें रक्खा। फिर गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गन्धमादन, मैन्द, द्विविद, हनुमान् और जाम्बवान्ने महर्षियोंकी बतायी हुई शास्त्रोक्त विधिके अनुसार सुवर्णमय कलशोंमें रक्खे हुए स्वच्छ और सुगन्धित जलसे साँड़के सींगोद्वारा सुग्रीवका उसी प्रकार अभिषेक किया, जैसे वसुओंने इन्द्रका अभिषेक किया था।

सुग्रीवका अभिषेक हो जानेपर वहाँ लाखोंकी संख्यामें एकत्र हुए समस्त महामनस्वी श्रेष्ठ वानर हर्षसे भरकर जयघोष करने लगे। श्रीरामकी आज्ञाका पालन करते हुए वानरराज सुग्रीवने अङ्गदको हृदयसे लगाकर उन्हें भी युवराजके पदपर अभिषिक्त कर दिया। अङ्गदका अभिषेक हो जानेपर महामनस्वी दयालु वानर साधु-साधु कहकर सुग्रीवकी सराहना करने लगे। इस प्रकार अभिषेक होकर किष्किन्धामें सुग्रीव और अङ्गदके विराजमान होनेपर समस्त वानर परम प्रसन्न हो महात्मा श्रीराम ओर लक्ष्मणकी बारंबार स्तुति करने लगे।

वानर बालिके प्रति निष्ठावान रहे है। सुग्रीवका शासन सहज ही वे स्वीकार नहीं करेंगे और युवराज-पद पानेपर भी अङ्गद अभी बालक है। हनुमानने समझाया- सुग्रीव दीर्घकालतक निर्वासित रहे हैं। अत: वानरोंकी वर्तमान स्थिति, वर्तमान समस्या तथा तात्कालिक रुचियोंसे अनभिज्ञ हैं। वानर-राज्य व्यवस्थित बना रहेगा, अङ्गदको ठीक स्नेह, शिक्षण एवं स्वत्व बना रहेगा, यदि आप साम्राज्ञी बनी रहती हैं। हम वानरोंमें इसे बुरा नहीं माना जाता। आप वानर-राज्यपर, प्रजापर कृपा करके अपने पदपर बनी रहें। इसके लिए सुग्रीव आपका आभार मानेंगे। ताराने मस्तक झुका लिया। उन मनस्विनीने दो क्षणमें निश्चय कर लिया- हनुमान मैं समझती हूँ कि वानर-प्रजाको और सुग्रीवको भी मेरी सेवाकी आवश्यकता है; किन्तु मुझे रुमाका स्वत्व नहीं लेना है।

जीजी ! मैं सदा आपकी स्नेह-भाजना रही हूँ। रुमाने ताराके चरण पकड़े- आप जानती हैं कि मैं शासनके सम्बन्धमें कुछ नहीं जानती। आपकी सुरक्षाके बिना मैं असहाय हूँ। आप मुझे इस शासनके दायित्वसे मुक्त करके मुझपर कृपा करेंगी।

सौन्दर्यमें भी अन्तर होता है। तारा परम सुन्दरी; किंतु महिमामयी थी। वह स्वभावसे साम्राज्ञी थी। रुमा भी सुन्दर, किन्तु जैसे छुईमुई, भोली, व्यवहारसे अनजान बालिका हो। बालिने क्रोधमें सुग्रीवको अपमानित करनेके लिए रुमाको अपने अन्त:पुरमें डाल लिया; किंतु उस प्रथम दिनके पश्चात् वह रुमाको भूल ही गया। रुमाको तो ताराने अपनी अनुजाके समान सम्हाल लिया था।

अब स्थिति परिवर्तित हो गयी। तारा सुग्रीवके साथ सिंहासनपर बैठने वाली साम्राज्ञी हो गयी। शासन-व्यवस्थामें सुग्रीवकी सहधर्मिणी तारा। व्यवस्था ताराके करोंमें; किंतु अन्त:पुरके एकान्तमें सुग्रीवकी पत्नी रुमा। ताराकी अब अन्त:पुरके विलासमें कोई अभिरूचि नहीं रही थी। वह अन्त:पुरमें अङ्गदकी माता थी और व्यवस्थामें सुग्रीवको मन्त्रणादायिनी।

लक्ष्मणने अङ्गदका युवराज-पदपर अभिषेक कर दिया। उपदेवताओंमें जन्मते ही शिशु युवाके आकारका तथा सुपुष्ट हो जाता था; किंतु विद्या-बुद्धि तो शिक्षा तथा संगसे धीरे-धीरे आते हैं। अङ्गदको हनुमानका स्नेह एवं शिक्षण सुलभ हुआ। अङ्गद भी हनुमानके साथ ही रहने लगे। वानरसेनाके स्वामी पराक्रमी सुग्रीवने महात्मा श्रीरामके पास जाकर अपने महाभिषेकका समाचार निवेदन किया और अपनी पत्नी रुमाको पाकर उन्होंने उसी प्रकार वानरोंका साम्राज्य प्राप्त किया, जैसे देवराज इन्द्रने त्रिलोकी का।

सुग्रीव-अङ्गदका अभिषेक करके लक्ष्मण निकले नगरसे तो सुग्रीव तारा तथा रुमाको लेकर मन्त्रियोंके साथ लक्ष्मणके साथ श्रीरामके समीप आये। श्रीरामके चरणोंमें प्रणाम करके उन्होंने स्तुति की। श्रीरामने उन्हें विदा करते कहा- मैंने वही किया, जो मित्रको करना चाहिये था। जब वानर सुग्रीवका राज्याभिषेक हो गया ओर वे किष्किन्धामें जाकर रहने लगे, उस समय अपने भाई लक्ष्मणके साथ श्रीराम प्रस्त्रवणगिरिपर चले गये।

वहाँ चीतों और मृगोंकी आवाज गूँजती रहती थी। भयंकर गर्जना करनेवाले सिंहोंसे वह स्थान भरा था। नाना प्रकारकी झाड़ियाँ और लताएँ उस पर्वतको आच्छादित किये हुए थीं और घने वृक्षोंके द्वारा वह सब ओरसे व्याप्त था। रीछ, वानर, लंगूर और बिलाव आदि जन्तु वहाँ निवास करते थे। वह पर्वत मेघोंके समूह-सा जान पड़ता था। दर्शन करनेवाले लोगोंके लिये वह सदा ही मङ्गलमय और पवित्रकारक था। उस पर्वतके शिखरपर एक बहुत बड़ी और विस्तृत गुफा थी। लक्ष्मणसहित श्रीरामने उसीका अपने रहनेके लिये आश्रय लिया।

श्रीरामने लक्ष्मणसे कहा- शत्रुदमन सुमित्राकुमार। यह पर्वतकी गुफा बड़ी ही सुन्दर और विशाल है। यहाँ हवाके आने-जानेका भी मार्ग है। हमलोग वर्षाकी रातमें इसी गुफाके भीतर निवास करेंगे।

राजकुमार। पर्वतका यह शिखर बहुत ही उत्तम और रमणीय है। सफेद, काले और लाल हर तरहके प्रस्तर-खण्ड इसकी शोभा बढ़ा रहे हैं। यहाँ नाना प्रकारके धातुओंकी खानें हैं। पास ही नदी बहती है। उसमें रहनेवाले मेढक यहाँ भी उछलते-कूदते चले आते हैं। नाना प्रकारके वृक्ष-समूह इसकी शोभा बढ़ाते हैं। सुन्दर और विचित्र लताओंसे यह शैल-शिखर हरा-भरा दिखायी देता है। भाँति-भाँतिके पक्षी यहाँ चहक रहे हैं तथा सुन्दर मोरोंकी मीठी बोली गूँज रही है। राजकुमार। यह पुष्करिणी खिले हुए कमलोंसे अलंकृत हो बड़ी रमणीय दिखायी देती है। यह हमलोगोंकी गुफासे अधिक दूर नहीं है।

सौम्य ! यहाँका स्थान ईशानकोणकी ओरसे नीचा है, अत: यहाँ यह गुफा हमारे निवासके लिये बहुत अच्छी रहेगी। पश्चिम-दक्षिणके कोणकी ओरसे ऊँची यह गुफा हवा और वर्षासे बचानेके लिये अच्छी होगी।

सुमित्रानन्दन ! इस गुफाके द्वारपर समतल शिला है, जो बाहर बैठनेके लिये सुविधाजनक होनेके कारण सुखदायिनी है। यह लंबी-चौड़ी होनेके साथ ही खानसे काटकर निकाले हुए कोयलोंकी राशिके समान काली है। इसी तरह दक्षिण दिशामें भी इसका जो शिखर है, वह श्वेत वस्त्र और कैलास-श्रृङ्गके समान श्वेत दिखायी देता है। नाना प्रकारकी धातुएँ उसकी शोभा बढ़ाती हैं।

वह देखो, इस गुफाके दूसरी ओर त्रिकूट पर्वतके समीप बहनेवाली मन्दाकिनीके समान तुङ्गभद्रा नदी बह रही है। उसकी धारा पश्चिमसे पूर्वकी ओर जा रही है। उसमें कीचड़का नाम भी नहीं है। चन्दन, तिलक, साल, तमाल, अतिमुक्तक, पद्मक, सरल और अशोक आदि नाना प्रकारके वृक्षोंसे उस नदीकी कैसी शोभा हो रही है ? जलबेंत, तिमिद, बकुल, केतक, हिन्ताल, नितिश, नीप, स्थलबेंत, कृतमाल (अमिलतास) आदि भाँति-भाँतिके तटवर्ती वृक्षोंसे जहाँ-जहाँ सुशोभित हुई यह नदी वस्त्राभूषणोंसे विभूषित श्रृङ्गारसजित युवती स्त्रीके समान जान पड़ती है। सैकड़ों पक्षिसमूहोंसे संयुक्त हुई यह नदी उनके नाना प्रकारके कलरवोंसे गूँजती रहती है। परस्पर अनुरक्त हुए चकवाक इस सरिताकी शोभा बढ़ाते हैं। अत्यन्त रमणीय तटोंसे अलंकृत, नाना प्रकारके रत्नोंसे सम्पन्न तथा हंस और सारसोंसे सेवित यह नदी अपनी हास्यच्छटा बिखेरती हुई-सी जान पड़ती है। कही तो यह नील कमलोंसे ढकी हुई है, कहीं लाल कमलोंसे सुशोभित होती है और कहीं श्वेत एवं दिव्य कुमुदकलिकाओंसे शोभा पाती है। सैकड़ों जल-पक्षियोंसे सेवित तथा मोर एवं क्रौञ्चके कलरवोंसे मुखरित हुई यह सौम्य नदी बड़ी रमणीय प्रतीत होती है। मुनियोंके समुदाय इसके जलका सेवन करते हैं। वह देखो, अर्जुन और चन्दन वृक्षोंकी पंक्तियाँ कितनी सुन्दर दिखायी देती हैं। मालूम होता है ये मनके संकल्पे साथ ही प्रकट हो गयी हैं।

सौमित्र यह स्थान अत्यंत रमणीय और अद्‌भुत है अत: यहाँ रहना ही ठीक होगा। राजकुमार ! विचित्र काननोंसे सुशोभित सुग्रीवकी रमणीय किष्किन्धापुरी भी यहाँसे अधिक दूर नहीं है।

लक्ष्मण ! मृदङ्गकी मधुर ध्वनिके साथ गर्जते हुए वानरोंके गीत और वाद्यका गम्भीर घोष यहाँसे सुनायी देता है।

निश्चय ही कपिश्रेष्ठ सुग्रीव अपनी पत्नीको पाकर, राज्यको हस्तगत करके और बड़ी भारी लक्ष्मीपर अधिकार प्राप्त करके सुहृदोंके साथ आनन्दोत्सव मना रहे हैं। ऐसा कहकर श्रीराम लक्ष्मणके साथ उस प्रस्त्रवण पर्वतपर जहाँ बहुत-सी कन्दराओं और कुञ्जोंके दर्शन होते थे, निवास करने लगे। यद्यपि उस पर्वतपर परम सुख प्रदान करनेवाले बहुत से फल-फूल आदि आवश्यक पदार्थ थे, तथापि राक्षसद्वारा हरी गयी प्राणोंसे भी बढ़कर आदरणीय सीताका स्मरण करते हुए भगवान् श्रीरामको वहाँ तनिक भी सुख नहीं मिलता था।

सीताके वियोगजनित शोकसे आँसू बहाते हुए वे अचेत हो जाते थे। श्रीरामको निरन्तर शोकमग्न रहकर चिन्ता करते देख उनके दु:खमें समानरूपसे भाग लेनेवाले भाई लक्ष्मणने उनसे कहा- वीर। इस प्रकार व्यथित होनेसे कोई लाभ नहीं है। अत: आपको शोक नहीं करना चाहिये; क्योंकि शोक करनेवाले पुरुषके सभी मनोरथ नष्ट हो जाते हैं, यह बात आपसे छिपी नहीं है।

रघुनन्दन ! आप जगत्‌में कर्मठ-वीर तथा देवताओंका समादर करनेवाले हैं। आस्तिक, धर्मात्मा और उद्योगी हैं।

अत: आप अपने शोकको जड़से उखाड़ फेंकिये और उद्योगके विचारको सुस्थिर कीजिये। तभी आप परिवारसहित उस राक्षसका विनाश कर सकते हैं। आप तो समुद्र, वन और पर्वतोंसहित समूची पृथ्वीको भी उलट सकते हैं; फिर उस रावणका संहार करना आपके लिये कौन बड़ी बात है ?

यह वर्षाकाल आ गया है। अब शरद-ऋतुकी प्रतीक्षा कीजिये। फिर राज्य और सेनासहित रावणका वध कीजियेगा।

श्रीराम बोले- लक्ष्मण ! अनुरागी, स्नेही, हितैषी और सत्यपराक्रमी वीरको जैसी बात कहनी चाहिये, वैसी ही तुमने कही है।

तुम्हारी बात मान लेता हूँ। सुग्रीवके प्रसन्न होकर सहायता करने और नदियोंके जलके स्वच्छ होनेकी बाट देखता हुआ मैं शरत्-कालकी प्रतीक्षा करूँगा। जो वीर पुरुष किसीके उपकारसे उपकृत होता है, वह प्रत्युपकार करके उसका बदला अवश्य चुकाता है, किंतु यदि कोई उपकारको न मानकर या भुलाकर प्रत्युपकारसे मुँह मोड़ लेता है, वह शक्तिशाली श्रेष्ठ पुरुषोंके मनको ठेस पहुँचाता है।

लक्ष्मण बोले- नरेश्वर ! जैसा कि आपने कहा है, वानरराज सुग्रीव शीघ्र ही आपका यह सारा मनोरथ सिद्ध करेंगे। अत: आप शत्रुके संहार करनेका दृढ़ निश्चय लिये शरत्कालकी प्रतीक्षा कीजिये और इस वर्षाकालके विलम्बको सहन कीजिये।

इस प्रकार बालि का वध और सुग्रीवका राज्याभिषेक करनेके अनन्तर माल्यवान् पर्वतके पृष्ठभागमें निवास करते हुए श्रीराम लक्ष्मणसे कहने लगे- सुमित्रानन्दन। अब यह जलकी प्राप्ति करानेवाला वह प्रसिद्ध वर्षाकाल आ गया। देखो, पर्वत के समान प्रतीत होनेवाले मेघोंसे आकाशमण्डल आच्छन्न हो गया है। यह आकाशस्वरूपा तरुणी सूर्यकी किरणोंद्वारा समुद्रोंका रस पीकर कार्तिक आदि नौ मासोंतक धारण किये हुए गर्भ रूपमें जलरूपी रसायनको जन्म दे रही है। संध्याकालकी लाली प्रकट होनेसे बीचमें लाल तथा किनारेके भागोंमें श्वेत एवं स्निग्ध प्रतीत होनेवाले मेघखण्डोंसे आच्छादित हुआ आकाश ऐसा जान पड़ता है, मानो उसने अपने घावमें रक्तरञ्जित सफेद कपड़ोंकी पट्टी बाँध रक्खी हो। मन्द-मन्द हवा नि:श्वास-सी प्रतीत होती है, संध्याकालकी लाली लाल चन्दन बनकर ललाट आदि अङ्गोंको अनुरञ्जित कर रही है तथा मेघरूपी कपोल कुछ-कुछ पाण्डुवर्णका प्रतीत होता है। इस तरह यह आकाश कामातुर पुरुषके समान जान पड़ता है। जो ग्रीष्म-ऋतुमें घामसे तप गयी थी, वह पृथ्वी वर्षाकालमें नूतन जलसे भीगकर (सूर्य-किरणोंसे तपी और आँसुओंसे भीगी हुई) शोकसंतप्त सीताकी भाँति वाष्पविमोचन उष्णताका त्याग अथवा अश्रुपात कर रही है।

मेघरूपी काले मृगचर्म तथा वर्षाकी धारारूप यज्ञोपवीत धारण किये वायुसे पूरित गुफा या हृदयवाले ये पर्वत ब्रह्मचारियोंकी भाँति मानो वेदाध्ययन आरम्भ कर रहे हैं। ये बिजलियाँ सोनेके बने हुए कोड़ोंके समान जान पड़ती हैं। इनकी मार खाकर मानो व्यथित हुआ आकाश अपने भीतर व्यक्त हुई मेघोंकी गम्भीर गर्जनाके रूपमें आर्तनाद-सा कर रहा है। नील मेघका आश्रय लेकर प्रकाशित होती हुई यह विद्युत मुझे रावणके अममें छटपटाती हुई तपस्विनी सीताके समान प्रतीत होती है। बादलोंका लेप लग जानेसे जिनमें ग्रह, नक्षत्र और चन्द्रमा अदृश्य हो गये हैं, अतएव जो नष्ट-सी हो गयी हैं- जिनके पूर्व, पश्चिम आदि भेदोंका विवेक लुप्त सा हो गया है, वे दिशाएँ, उन कामियोंको, जिन्हें प्रेयसीका संयोगसुख सुलभ है, हितकर प्रतीत होती हैं।

सुमित्रानन्दन ! देखो, इस पर्वतके शिखरोंपर खिले हुए कुटज कैसी शोभा पाते हैं ? कहीं तो पहली बार वर्षा होनेपर भूमिसे निकले हुए भापसे ये व्याप्त हो रहे हैं और कहीं वर्षाके आगमनसे अत्यन्त उत्सुक हर्षोत्फुल्ल दिखायी देते हैं। मैं तो प्रिया-विरहके शोकसे पीड़ित हूँ और ये कुटज-पुष्प मेरी प्रेमाग्निको उद्दीप्त कर रहे हैं।

धरतीकी धूल शान्त हो गयी। अब वायुमें शीतलता आ गयी। गर्मीके दोषोंका प्रसार बंद हो गया। भूपालोंकी युद्ध यात्रा रुक गयी और परदेशी मनुष्य अपने-अपने देशको लौट रहे हैं। मानसरोवरमें निवासके लोभी हंस वहाँके लिये प्रस्थित हो गये। इस समय चकवे अपनी प्रियाओंसे मिल रहे हैं। निरन्तर होनेवाली वर्षाके जलसे मार्ग टूट-फूट गये हैं, इसलिये उनपर रथ आदि नहीं चल रहे हैं।

आकाशमें सब ओर बादल छिटके हुए हैं। कहीं तो उन बादलोंसे ढक जानेके कारण आकाश दिखायी नहीं देता है और कहीं उनके फट जानेपर वह स्पष्ट दिखायी देने लगता है। काले-काले भौरोंकेसमान प्रतीत होनेवाले जामुनके सरस फल आजकल लोग जी भरकर

खाते हैं और हवाके वेगसे हिले हुए आमके पके हुए बहुरंगी फल पृथ्वीपर गिरते रहते हैं। जैसे युद्धस्थलमें खड़े हुए मतवाले गजराज उच्चस्वरसे चिंघाडते हैं, उसी प्रकार गिरिराजके शिखरोंकी-सी आकृतिवाले मेघ जोर-जोरसे गर्जना कर रहे हैं। चमकती हुई बिजलियाँ इन मेघरूपी गजराजोंपर पताकाओंके समान फहरा रही है और बगुलोंकी पंक्तियाँ मालाके समान शोभा देती है।

देखो, अपराह्णकालमें इन वनोंकी शोभा अधिक बढ़ जाती है। वर्षाके जलसे इनमें हरी-हरी घासें बढ़ गयी हैं। झुंड-के-झुंड मोरोंने अपना नृत्योत्सव आरम्भ कर दिया है और मेघोंने इनमें निरन्तर जल बरसाया है। बक-पंक्तियोंसे सुशोभित ये जलधर मेघ जलका अधिक भार ढोते और गर्जते हुए बड़े-बड़े पर्वतशिखरोंपर मानो विश्राम ले-लेकर आगे बढ़ते हैं।

छोटे-छोटे इन्द्रगोप (वीरबहूटी) नामक कीड़ोंसे बीच-बीचमें चित्रित हुई नूतन घाससे आच्छादित भूमि उस नारीके समान शोभा पाती है, जिसने अपने अङ्गोंपर तोतेके समान रंगवाला एक ऐसा कम्बल ओढ़ रक्खा हो, जिसको बीच-बीचमें महावरके रंगसे रँगकर विचित्र शोभासे सम्पन्न कर दिया गया हो। चौमासे के इस आरम्भकालमें निद्रा धीरे-धीरे भगवान केशवके समीप जा रही है। नदी तीव्र वेगसे समुद्रके निकट पहुँच रही है। हर्षभरी बलाका उड़कर मेघकी ओर जा रही है और प्रियतमा सकामभावसे अपने प्रियतमकी सेवामें उपस्थित हो रही है। वनप्रान्त मोरोंके सुन्दर नृत्यसे सुशोभित हो गये हैं। कदम्बवृक्ष फूलों और शाखाओंसे सम्पन्न हो गये हैं। साँड़ गौओंके प्रति उन्हींके समान कामभावसे आसक्त हैं और पृथ्वी हरी-हरी खेती तथा हरे-भरे वनोंसे अत्यन्त रमणीय प्रतीत होने लगी है।

नदियाँ बह रही हैं, बादल पानी बरसा रहे हैं, मतवाले हाथी चिंघाड रहे हैं, वनप्रांत शोभा पा रहे हैं, प्रियतमाके संयोगसे वञ्चित हुए वियोगी प्राणी चिन्तामग्न हो रहे हैं, मोर नाच रहे हैं और वानर निश्चिन्त एवं सुखी हो रहे हैं। जलकी धारा गिरनेसे आहत होते और कदम्बकी डालियोंपर लटकते हुए भ्रमर तत्काल ग्रहण किये पुष्परससे उत्पन्न गाढ़ मदको धीरे-धीरे त्याग रहे हैं।

कोयलोंकी चूर्णराशिके समान काले और प्रचुर रससे भरे हुए बड़े-बड़े फलोंसे लदी हुई। जामुन-वृक्षकी शाखाएँ ऐसी जान पड़ती हैं, मानो भ्रमरोंके समुदाय उनमें सटकर उनके रस पी रहे हैं। विद्युत-रूपी पताकाओंसे अलंकृत एवं जोर-जोरसे गम्भीर गर्जना करनेवाले इन बादलोंके रूप युद्धके लिये उत्सुक हुए गजराजोंके समान प्रतीत होते हैं।

कहीं भ्रमरोंके समूह गीत गा रहे हैं, कहीं मोर नाच रहे हैं और कहीं गजराज मदमत्त होकर विचर रहे हैं। इस प्रकार ये वनप्रान्त अनेक भावोंके आश्रय बनकर शोभा पा रहे हैं। कदम्ब, सर्ज, अर्जुन और स्थल-कमलसे सम्पन्न वनके भीतरकी भूमि मधु-जलसे परिपूर्ण हो मोरोंके मदयुक्त कलरवों और नृत्योंसे उपलक्षित होकर आपानभूमि (मधुशाला) के समान प्रतीत होती है।

आकाशसे गिरता हुआ मोतीके समान स्वच्छ एवं निर्मल जल पत्तोंके दोनोंमे संचित हुआ देख प्यासे पक्षी पपीहे हर्षसे भरकर देवराज इन्द्रके दिये हुए उस जलको पीसे हैं। वर्षासे भीग जानेके कारण उनकी पाँखें विविध रंगकी दिखायी देती हैं। भ्रमररूप वीणाकी मधुर झंकार हो रही है। मेढ़कोंकी आवाज टर्र-टर्र कण्ठताल-सी जान पड़ती है। मेघोंकी गर्जनाके रूपमें मृदङ्ग बज रहे हैं। इस प्रकार वनोंमें संगीतोत्सवका आरम्भ-सा हो रहा है। विशाल पंखरूपी आभूषणोंसे विभूषित मोर वनोंमें कहीं नाच रहे हैं, कहीं जोर-जोरसे मीठी बोली बोल रहे हैं और कहीं वृक्षोंकी शाखाओंपर अपने सारे शरीरका बोझ डालकर बैठे हुए हैं। इस प्रकार उन्होंने संगीत नाच-गान का आयोजन-सा कर रक्खा है। मेघोंकी गर्जना सुनकर चिरकालसे रोकी हुई निद्राको त्यागकर जागे हुए अनेक प्रकारके रूप, आकार, वर्ण और बोलीवाले मेंढक नूतन जलकी धारासे अभिहत होकर जोर-जोरसे बोल रहे हैं।

कामातुर युवतियोंकी भाँति दर्पभरी नदियाँ अपने वक्षपर उरोजोंके स्थानमें चक्रवाकोंको वहन करती हैं और मर्यादामें रखनेवाले जीर्ण-शीर्ण कूलगारोंको तोड़-फोड़ एवं दूर बहाकर नूतन पुष्प आदिके उपहारसे पूर्णभोगके लिये सादर स्वीकृत अपने स्वामी समुद्रके समीप वेगपूर्वक चली जा रही हैं। जहाँ मतवाले मोर कलनाद कर रहे हैं, जहाँकी हरी-हरी घासें वीरबहूटियोंके समुदायसे व्याप्त हो रही हैं तथा जो नीप और अर्जुन वृक्षोंके फूलोंकी सुगन्धसे सुवासित हैं, उन परम रमणीय वनप्रान्तोंमें बहुत-से हाथी विचरा करते हैं।

भ्रमरोंके समुदाय नूतन जलकी धारासे नष्ट हुए केसरवाले कमल-पुष्पोंको तुरंत त्यागकर केसरशोभित नवीन कदम्ब-पुष्पोंका रस बड़े हर्षके साथ पी रहे हैं। बड़े वेगसे वर्षा हो रही है, जोरोंकी हवा चल रही है और नदियाँ अपने कगारोंको काटकर अत्यन्त तीव्र गतिसे जल बहा रही हैं। उन्होंने मार्ग रोक दिये हैं। पर्वतमें लाल, काली आदि अनेक रङ्गोंकी शिलाएँ थी; किंतु जिस गुफामें श्रीरामने निवास किया, वह स्वच्छ, उज्ज्वल मर्मर पाषाण की थी। गुहा विस्तृत थी। उसके भीतर ही एक छोटा जल-स्रोत था। इसके कारण वर्षाके मिट्टी-मिले निर्झरोंके जलको स्वच्छ करनेके प्रयत्न अथवा उनके स्वच्छ होनेकी प्रतीक्षा आवश्यक नहीं थी।

वर्षारम्भमें ही आम्र, जामुन, कटहल पक गये। भाद्रके अन्ततक इन फलोंको सुलभ रहना था। अनेक सुस्वादु अंकुर उग आये थे। भाद्रके व्यतीत होनेसे पूर्व ही अनेक कन्द आहार-योग्य हो जाते थे। आम्रके समाप्त होते ही अमरूदने उसका स्थान ले लिया।

लक्ष्मण आकाश निर्मल होते ही निकल जाते थे और कई दिनोंतक चल सकें, इतने फल, अंकुर आदि एकत्र कर लाते थे। आकाश खुला हो तो अनुजके साथ श्रीराम पर्वतपर ही कुछ दूर घूम आते थे अथवा गुहासे बाहर किसी भी शिलापर विराजमान होते थे।

पावस प्रकृतिका पालक, पोषक एवं श्रृङ्गारकर्ता है। वर्षासे धुली शिलाएँ, स्नान-शुद्ध वृक्ष-लताएँ चञ्चल शिशुओंके समान कल-कल, छल-छल करते भागते निर्झर और मयूर, चातक, कोकिल प्रभृति पक्षियोंका श्रवण-मधुर स्वर। भ्रमरोंका गुञ्जन ही नहीं, भेक (मेंढक) की टर्राहट भी पावसमें मनको प्रफुल्ल करती है।

सम्पूर्ण धरा-शिखरतक पर्वत-जैसे हरित वस्त्र धारण करके किसीके स्वागतमें सजे खड़े हों। पुष्पोंके साथ वीरबहूटी-पृथ्वीकी हरी साड़ीकी शोभामयी लाल बूँदें। मृग, शशक, वृषभ, गायें, और दूसरे भी पशु अच्छे स्वस्थ, प्रसन्न, उछलते-कूदते। कभी आनन्द देनेवाले वायुके शीतल झकोरे, कभी ऊमस और कभी वर्षाकी झड़ी गगनमें घटाओंका भेरी-घोष एवं चपलाका चपल नृत्य।

इस सबमें श्रीरामका मन अत्यन्त व्याकुल-सीते ! सीते ! मेघ गर्जना करें, बिजली चमके, वर्षा वेगसे हो या बन्द रहे, श्रीरामको प्रत्येक अवस्थामें अपनी प्राण-प्रियाकी सुधि विक्षिप्त बनाती है। पिक कहू-कहू करे, मयूरोंकी केका-ध्वनि उठो, पपीहा पी कहाँ पुकारे, या जागरण पक्षी उठो सोते लोग की रट लगावे, श्रीरामको केवल- हा जानकी कहना है। निर्झरोंका नृत्य, मृगोंकी मुग्ध विलोकन, लताका झुक झूमना, भ्रमरोंकी गुञ्जार सब श्रीजनक-नन्दिनीका स्मरण कराते हैं।

वर्षा की बूँदें सघन हो गईं, तो राम शिला से उठकर गुफा के भीतर आ खड़े हुए। अपने स्थान से खड़े-खड़े उन्होंने देखा- सारा-का-सारा प्रस्रवण-गिरि वर्षा में भीग रहा था। अब तो नियमित वर्षा-ऋतु आरंभ हो गई थी। प्रहर-प्रहर भर वर्षा होती रहती थी। आठ प्रहरों में से तीन प्रहर वर्षा के होते ही थे। दूर-दूर तक फैली इस पर्वत श्रेणी के अन्य शिखर-ऋष्यमूक तथा मलयगिरि तो इन मेघों के मारे दिखाई भी नहीं देते थे। राम प्रवर्षणगिरि की गुफा में चिंतामग्न थे और विचार कर रहे थे- जटायु ने भी सीता को बचाने के लिए रावण से लड़ते-लड़ते अपने प्राण दे दिए और सीता जाने कहाँ खो गई। जीवित हैं, या वे भी इस लोक में नहीं हैं। यदि उनकी मृत्यु हो गई है तो कैसे हुई ? उस दुष्ट रावण ने वध कर दिया, या व्याकुल होकर स्वयं वैदेही ने ही ऋषि शरभंग के समान आत्मदाह कर लिया; अथवा अपनी असहायता, दु:ख और क्षोभ में घुट-घुटकर प्राण दे दिए ? कैसे असहाय हैं राम भी। जटायु ने सीता के अपहरणकर्ता का नाम बताया। सुग्रीव के पास सुरक्षित सीता के आभूषणों से पुष्टि हो गई कि रावण इसी मार्ग से गया है किंतु नीले आकाश-सा विस्तृत, निराकार प्रश्न आज भी वैसा-का-वैसा ही है- सीता कहाँ हैं ? यदि वे जीवित हैं तो किस स्थान पर छिपा रखा है उस दुष्ट ने उन्हें जब तक सीता का निश्चित पता-ठिकाना मालूम न हो जाए, रावण से युद्ध की नीति भी तय नहीं हो सकती रावण के अड्डों, शिबिरों, स्कंधावारों तथा अधीनस्थ क्षेत्रों का दूर-दूर तक एक जाल-सा फैला हुआ है। राम को लगता है कि उन्हें नीले आकाश के सम्मुख खड़ा कर, कहा गया है कि वे खोज लें कि सीता किस ग्रह-नक्षत्र पर छिपाई गई हैं। जहाँ सारा आकाश तक देखना संभव न हो, बडे-बडे नक्षत्र तक आँखों से दिखाई न पड़ते हों, वहाँ वे कैसे खोज लें कि सीता किस ग्रह-नक्षत्र पर बंदिनी है। यदि जानकी जीवित हैं तो रावण से प्रतिशोध लेने के पूर्व जानकी की सुरक्षा और मुक्ति अधिक आवश्यक है। आक्रमण वहीं होना चाहिए, जहाँ सीता हों; ताकि न सीता का वध हो सके और न उन्हें स्थानांतरित किया जा सके।

सुन्दर वन फूला हुआ अत्यन्त सुशोभित है। मधुके लोभसे भौरोंके समूह गुंजार कर रहे हैं। जबसे प्रभु आये, तबसे वनमें सुन्दर कन्द, मूल, फल और पत्तोंकी बहुतायत हो गयी। मनोहर और अनुपम पर्वतको देखकर देवताओंके सम्राट् श्रीराम छोटे भाईसहित वहाँ रह गये। देवता, सिद्ध और मुनि भौरों, पक्षियों और पशुओंके शरीर धारण करके प्रभुकी सेवा करने लगे।

जबसे रमापति श्रीरामने वहाँ निवास किया तबसे वन मङ्गलस्वरूप हो गया। सुन्दर-स्फटिकमणिकी एक अत्यन्त उज्ज्वल शिला है, उसपर दोनों भाई सुखपूर्वक विराजमान हैं। श्रीराम छोटे भाई लक्ष्मणसे भक्ति, वैराग्य, राजनीति और ज्ञानकी अनेकों कथाएँ कहते हैं। वर्षाकालमें आकाशमें छाये हुए बादल गरजते हुए बहुत ही सुहावने लगते हैं।

श्रीराम कहने लगे- हे लक्ष्मण ! देखो, मोरोंके झुंड बादलोंको देखकर नाच रहे हैं। जैसे वैराग्यमें अनुरक्त गृहस्थ किसी विष्णुभक्तको देखकर हर्षित होते हैं। आकाशमें बादल घुमड़-घुमड़कर घोर गर्जना कर रहे हैं, प्रिया सीता के बिना मेरा मन डर रहा है। बिजलीकी

चमक बादलोंमें ठहरती नहीं, जैसे दुष्टकी प्रीति स्थिर नहीं रहती। बादल पृथ्वीके समीप आकर नीचे उतरकर बरस रहे हैं, जैसे विद्या पाकर, विद्वान नम्र हो जाते हैं। बूँदोंकी चोट पर्वत कैसे सहते हैं, जैसे दुष्टोंके वचन संत सहते हैं। छोटी नदियाँ भरकर किनारोंको तुड़ाती हुई चलीं, जैसे थोड़े धनसे भी दुष्ट इतरा जाते हैं मर्यादाका त्याग कर देते हैं। पृथ्वीपर पड़ते ही पानी गँदला हो गया है, जैसे शुद्ध जीवके माया लिपट गयी हो। जल एकत्र हो-होकर तालाबोंमें भर रहा है, जैसे सद्गुण एक-एककर सज्जनके पास चले आते हैं। नदीका जल समुद्रमें जाकर वैसे ही स्थिर हो जाता है, जैसे जीव श्रीहरिको पाकर अचल आवागमनसे मुक्त हो जाता है।

पृथ्वी घाससे परिपूर्ण होकर हरी हो गयी है, जिससे रास्ते समझ नहीं पड़ते। जैसे पाखण्ड-मतके प्रचारसे सद्ग्रन्थ गुप्त लुप्त हो जाते हैं। चारों दिशाओंमें मेढ़कोंकी ध्वनि ऐसी सुहावनी लगती है, मानो विद्यार्थियोंके समुदाय वेद पढ़ रहे हों। अनेकों वृक्षोंमें नये पत्ते आ गये हैं, जिससे वे ऐसे हरे-भरे एवं सुशोभित हो गये हैं जैसे साधकका मन विवेक ज्ञान प्राप्त होनेपर हो जाता है।

मदार और जवासा बिना पत्तेके हो गये उनके पत्ते झड़ गये। जैसे श्रेष्ठ राज्यमें दुष्टोंका उद्यम जाता रहा उनकी एक भी नहीं चलती। धूल कहीं खोजनेपर भी नहीं मिलती, जैसे क्रोध धर्मको दूर कर देता है अर्थात् क्रोधका आवेश होनेपर धर्मका ज्ञान नहीं रह जाता।

अन्नसे युक्त लहलहाती हुई खेतीसे हरी-भरी पृथ्वी कैसी शोभित हो रही है, जैसी उपकारी पुरुषकी सम्पत्ति। रातके घने अन्धकारमें जुगनू शोभा पा रहे हैं, मानो दम्भियोंका समाज आ जुटा हो। भारी वर्षासे खेतोंकी क्यारियाँ फूट चली हैं, जैसे स्वतन्त्र होनेसे स्त्रियाँ बिगड़ जाती हैं। चतुर किसान खेतोंको निरा रहे हैं उनमेंसे घास आदिको निकालकर फेंक रहे हैं। जैसे विद्वान लोग मोह, मद और मानका त्याग कर देते हैं। चक्रवाक पक्षी दिखायी नहीं दे रहे हैं; जैसे कलियुगको पाकर धर्म भाग जाते हैं। ऊसरमें वर्षा होती है, पर वहाँ घासतक नहीं उगती। जैसे हरिभक्तके हृदयमें काम नहीं उत्पन्न होता। पृथ्वी अनेक तरहके जीवोंसे भरी हुई उसी तरह शोभायमान है, जैसे सुराज्य पाकर प्रजाकी वृद्धि होती है। जहाँ-तहाँ अनेक पथिक थककर ठहरे हुए हैं, जैसे ज्ञान उत्पन्न होनेपर इन्द्रियाँ शिथिल होकर विषयोंकी ओर जाना छोड़ देती हैं। कभी-कभी वायु बड़े जोरसे चलने लगती है, जिससे बादल जहाँ-तहाँ गायब हो जाते हैं। जैसे कुपुत्रके उत्पन्न होनेसे कुलके उत्तम धर्म श्रेष्ठ आचरण नष्ट हो जाते हैं। कभी बादलोंके कारण दिनमें घोर अन्धकार छा जाता है और कभी सूर्य प्रकट हो जाते हैं। जैसे कुसंग पाकर ज्ञान नष्ट हो जाता है और सुसंग पाकर उत्पन्न हो जाता है।

मेघोंकी घटासे समस्त आकाश आच्छादित हो गया है। न रातमें तारे दिखायी देते हैं, न दिनमें सूर्य। नूतन जलराशि पाकर पृथ्वी पूर्ण तृप्त हो गयी है। दिशाएँ अन्धकारसे आच्छन्न हो रही हैं, अतएव प्रकाशित नहीं होती हैं- उनका स्पष्ट ज्ञान नहीं हो पाता है। जलकी धाराओंसे धुले हुए पर्वतोंके विशाल शिखर मोतियोंके लटकते हुए हारोंकी भाँति एवं बहुसंख्यक झरनोंके कारण अधिक शोभा पाते हैं।

पर्वतीय प्रस्तरखण्डोंपर गिरनेसे जिनकावेग टूट गया है, वे श्रेठ पर्वतोंके बहुतेरे झरने मयूरोंकी बोलीसे गूँजती हुई गुफाओंमें टूटकर बिखरते हुए मोतियोंके हारोंके समान प्रतीत होते हैं। जिनके वेग शीघ्रगामी हैं, जिनकी संख्या अधिक है, जिन्होंने पर्वतीय शिखरोंके निम्न प्रदेशोंको धोकर स्वच्छ बना दिया है तथा जो देखनेमें मुक्तामालाओंके समान प्रतीत होते हैं, पर्वतोंके उन झरते हुए झरनोंको बड़ी-बड़ी गुफाएँ अपनी गोदमें धारण कर लेती हैं। सुरत-क्रीडाके समय होनेवाले अङ्गोंके आमदनसे टूटे हुए देवाङ्गनाओंके मौक्तिक हारोंके समान प्रतीत होनेवाली जलकी अनुपम धाराएँ सम्पूर्ण दिशाओंमें सब ओर गिर रही हैं।

पक्षी अपने घोसलेंमें छिप रहे हैं, कमल संकुचित हो रहे हैं और मालती खिलने लगी है; इससे जान पड़ता है कि सूर्यदेव अस्त हो गये।

राजाओंकी युद्ध-यात्रा रुक गयी। प्रस्थित हुई सेना भी रास्तेमें ही पड़ाव डाले पड़ी है। वर्षाके जलने राजाओंके वैर शान्त कर दिये हैं और मार्ग भी रोक दिये हैं। इस प्रकार वैर और मार्ग दोनोंकी एक-सी अवस्था कर दी है।

भादोंका महीना आ गया। यह वेदोंके स्वाध्यायकी इच्छा रखनेवाले ब्राह्मणोंके लिये उपाक्रमका समय उपस्थित हुआ है। सामगान करनेवाले विद्वानोंके स्वाध्यायका भी यही समय है।

श्रीराम सोच रहे है- कोसलदेशके राजा भरतने चार महीनेके लिये आवश्यक वस्तुओंका संग्रह करके गत आषाढकी पूर्णिमाको निश्चय ही किसी उत्तम व्रतकी दीक्षा ली होगी। मुझे वनकी ओर आते देख जिस प्रकार अयोध्यापुरीके लोगोंका आर्तनाद बढ़ गया था, उसी प्रकार इस समय वर्षाके जलसे परिपूर्ण होती हुई सरयू नदीका वेग अवश्य ही बढ़ रहा होगा।

यह वर्षा अनेक गुणोंसे सम्पन्न है। इस समय सुग्रीव अपने शत्रुको परास्त करके विशाल वानर-राज्यपर प्रतिष्ठित हैं और अपनी स्त्रीके साथ रहकर सुख भोग रहे हैं। किंतु लक्ष्मण ! मैं अपने महान् राज्यसे तो भ्रष्ट हो ही गया हूँ, मेरी स्त्री भी हर ली गयी है; इसलिये पानीसे

गले हुए नदीके तटकी भाँति कष्ट पा रहा हूँ। मेरा शोक बढ़ गया है। मेरे लिये वर्षाके दिनोंको बिताना अत्यन्त कठिन हो गया है और मेरा महान शत्रु रावण भी मुझे अजेस-सा प्रतीत होता है। एक तो यह यात्राका समय नहीं है, दूसरे मार्ग भी अत्यन्त दुर्गम है। इसलिये सुग्रीवके नतमस्तक होनेपर भी मैंने उनसे कुछ कहा नहीं है। वानर सुग्रीव बहुत दिनोंसे कष्ट भोगते थे और दीर्घकालके पश्चात् अब अपनी पत्नीसे मिले हैं। इधर मेरा कार्य बड़ा भारी है थोड़े दिनोंमें सिद्ध होनेवाला नहीं है; इसलिये मैं इस समय उससे कुछ कहना नहीं चाहता हूँ। कुछ दिनोंतक विश्राम करके उपयुक्त समय आया हुआ जान वे स्वयं ही मेरे उपकारको समझेंगे; इसमें संशय नहीं है।

अत: शुभलक्षण लक्ष्मण ! मैं सुग्रीवकी प्रसन्नता और नदियोंके जलकी स्वच्छता चाहता हुआ शरत्कालकी प्रतीक्षामें चुपचाप बैठा हुआ हूँ। जो वीर पुरुष किसीके उपकारसे उपकृत होता है, वह प्रत्युपकार करके उसका बदला अवश्य चुकाता है; किंतु यदि कोई उपकारको न मानकर या भुलाकर प्रत्युपकारसे मुँह मोड़ लेता है, वह शक्तिशाली श्रेष्ठ पुरुषोंके मनको ठेस पहुँचाता है।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर लक्ष्मणने सोच-विचारकर उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और दोनों हाथ जोड़कर अपनी शुभ दृष्टिका परिचय देते हुए वे श्रीरामसे इस प्रकार बोले- नरेश्वर ! जैसा कि आपने कहा है, वानरराज सुग्रीव शीघ्र ही आपका यह सारा मनोरथ सिद्ध करेंगे। अत: आप शत्रुके संहार करनेका दृढ़ निश्चय लिये शरत्कालकी प्रतीक्षा कीजिये और इस वर्षाकालके विलम्बको सहन कीजिये।

और इधर इस वर्षा के मारे मार्ग अवरुद्ध हो गए हैं। नदी-नाले जल से भर गए हैं। पहाड़ों पर कीचड़ और फिसलन है। वर्षा के कारण, बिना आश्रय के कहीं रुका नहीं जा सकता। सीता की खोज के लिए सुग्रीव अपने साथियों को भेजें भी तो कैसे अब कोई मार्ग नहीं है, कोई विकल्प नहीं है वर्षा ऋतु की समाप्ति तक रुकना ही होगा। वर्षा के समाप्त होते ही पथों और मार्गों के निर्माण की ओर भी ध्यान देना होगा। वानरों की परिवहन तथा यातायात व्यवस्था का निर्माण भी शून्य से आरंभ होगा।

कैसा संयोग है सुग्रीव तथा राम की मैत्री। दोनों का चिंतन एक समान, दोनों का लक्ष्य एक ही; और अंतत: दोनों का संकट भी एक ही सौमित्र ने बताया था कि जब वे लोग बालि के प्रासाद के प्रहरियों को हटाकर भीतर पहुँचे थे तो सूचना पाकर रुमा दौड़ती हुई गलियारे में आ गई थीं। सुग्रीव को देखते ही वे उनकी ओर लपकी थी, किंतु कंठ से लग जाने के पूर्व ही रुक गई थीं- मूर्तिवत्। सुग्रीव सोचते ही रह गए कि रुमा रुक क्यों गई कि रुमा ने झुककर उनके पैर पकड़ लिये थे, मेरा कोई दोष नहीं है, स्वामी। मैं बाध्य थी। हर रात मेरे शरीर पर सैकड़ों बिच्छू रेंगते रहे, मुझे दंशित करते रहे, मेरे शरीर को विषाक्त करते रहे; किंतु मैं सर्वथा बाध्य थी स्वामी। मेरी तनिक भी सहमति नहीं थी। मैं असहाय थी।

सुग्रीव ने रुमा को उठाकर वक्ष से लगा लिया था, दोष तुम्हारा नहीं था, रुमा। दोष तो मेरा था। मैं ऐसा कायर और निर्बल न होता तो तुम्हें इतना क्यों सहना पड़ता। बालि तुम्हें नहीं, मुझे दण्डित करता रहा। जब-जब उसने तुम्हें अपने आलिंगन में लिया होगा, तब-तब स्वयं को बार-बार याद दिलाया होगा कि तुम मेरी पत्नी हो और तुम्हारे माध्यम से वह मुझे पीड़ित कर रहा है, मुझसे प्रतिशोध ले रहा है दोष मेरा है, रुमा। मैं तुम्हारी रक्षा का समुचित प्रबंध नहीं कर सका।

और राम के मन में बार-बार प्रश्न उठता है कि क्या जब सीता मुक्त होंगी, तो वे भी इसी प्रकार आकर अपनी निर्दोषिता, बाध्यता और असहायता का विश्वास दिलाएँगी। अथवा वे राम और लक्ष्मण को दोषी ठहराएँगी कि वे लोग उन्हें असुरक्षित छोड़कर चल दिए या वे बताएंगी कि उन्होंने रावण से शस्त्र माँगा था और उसका प्रतिरोध किया था; शरीर पर घाव खाये थे और क्षोभ की आग की जलन सही थी; कष्ट सहे थे और वीरतापूर्वक उनका सामना किया था। पर सुरक्षा का पूरा प्रबंध न कर पाने के कारण क्या सुग्रीव दोषी है ? पुरुष-प्रधान समाज में, जहाँ नारी को सौंदर्य और मर्यादा के नाम पर इतना कोमल तथा सुकुमार बना दिया गया है, वहाँ जब तक वह आत्मरक्षा में समर्थ नहीं हो जाती, उसकी रक्षा का दायित्व पुरुष पर ही है।

रुमा को बालि ने सुग्रीव से वियुक्त कर दिया था; फलत: सुग्रीव ने तारा को सदा के लिए बालि का वियोग दिया। कैसा स्पष्ट प्रतिशोध है राम की आँखें वह दृश्य भूल नहीं सकतीं- अपने खुले बालों को चेहरे और कंधे पर बिखेरे हुए, छाती पीटती, हाहा खाती हुई तारा आई थी और बालि के शव पर लोट गई थी- अंतत: तुम्हारी कामुकता तुम्हारे सारे कुटुंब को खा गई। मैं अब उपालंभ भी दूँ तो किसे दूँ ? वह चिल्लाकर रोई थी, सुग्रीव तुम्हारी मृत्यु का निमित्त बना। पर मैं उसे दोष नहीं दे सकती। जब मैं उसे उसकी रुमा नहीं दिला सकी तो उससे तुमको वापस कैसे माँगू राम के बाण ने तुम्हारे प्राण ले लिये, पर राम का क्या दोष। पत्नी के अपहरण की पीड़ा का प्रतिशोध लेनेवाला बाण कोमल तो नहीं हो सकता।

सिर पटक-पटककर रोयी थी तारा अपने पति के शव पर, अहंकारी थे, कामुक थे, स्वार्थी थे, मुझसे रुष्ट थे पर मेरे पति तो तुम ही थे और अंत में उसने राम से कहा था, या तो अपने बाण से मेरे भी प्राण ले लो या फिर मेरे पति का शव मुझे सौंप दो। मैं उनके साथ ही सती हो जाऊँगी। किंतु अंगद ने आगे बढ़कर माँ को उठाकर कंठ से लगा लिया था, धैर्य रखो, माँ। प्रत्येक शोक धैर्य और विवक से ही टाला जा सकता है। पिताजी के साथ तुम भी सती हो गई, तो तुम्हारा अंगद किसके सहारे जियेगा। पति के लिए ही नहीं, माँ। नारी को कभी-कभी पुत्र के लिए भी जीना पड़ता है।

अंगद ने तारा को मना लिया था। अधिक बखेड़ा नहीं किया था तारा ने बालि के शव के निकट मिले थे अंगद और सुग्रीव। कैसी विचित्र स्थिति थी- सुग्रीव के मन में ग्लानि थी और अंगद तथा तारा, सुग्रीव का दोष जानते हुए भी उसे दोषी नहीं मान रहे थे कैसे गिड़गिड़ाकर सुग्रीव ने तारा से कहा था, भाभी। इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मैंने कभी नहीं सोचा था कि मैं भ्रातृ-हंता बनूँगा, किंतु भैया ने मेरे लिए कोई विकल्प ही नहीं छोड़ा था बताओ बदले में मैं और कर ही क्या सकता था। यदि फिर भी मेरा दोष मानो तो अंगद के हाथ में खड्ग दो, वह मेरा वध कर दे- मैं अपना सिर भी नहीं उठाऊँगा।

सुग्रीव के राज्याभिषेक के पश्चात राम तथा लक्ष्मण के रहने के स्थान और व्यवस्था का प्रश्न भी सुग्रीव के सम्मुख आया था। उन्होंने बहुत चाहा था कि राम और लक्ष्मण भी उनके साथ किष्किंधा चलें तथा उन्हीं के प्रासाद, अथवा किसी अन्य सुंदर प्रासाद में रहें; किंतु राम ने अपने वनवास की बात कहकर किष्किंधा में प्रवेश अस्वीकार कर दिया था। राम को छोड़कर लक्ष्मण का कहीं अन्यत्र जाना तो संभव ही नहीं था; जन-सैनिकों ने भी राम से अलग होने में अपनी अरुचि ही प्रकट की थी।

तभी प्रस्रवणगिरि को राम के आश्रम के रूप में चुना गया और राम अपने शस्त्रागार, लक्ष्मण था जन-सैनिकों के साथ वहीं निवास कर रहे थे। सुग्रीव तथा उनके साथियों ने बहुत चाहा कि राम की सेवा में राजकीय परिचारिकाएँ नियुक्त कर दी जाएँ; और यदि राम को यह स्वीकार्य न हो तो वानरों के जन-संगठनों के स्वयंसेवक उनकी सहायता के लिए वहाँ वर्तमान रहें। पर राम को इनमें से कोई भी प्रस्ताव मान्य नहीं था। उन्होंने अपने जन-सैनिकों के साथ अपना स्वतंत्र आश्रम बना रहने देने की इच्छा प्रकट की थी।

तारा सुग्रीव की सहधर्मिणी बन गयी। अंगद को मालूम हुआ तो उन्हें अच्छा नहीं लगा। वे स्वयं समझ नहीं पा रहे थे कि उन्हें क्यों अच्छा नहीं लगा। यदि माँ की यही इच्छा थी और चाचाजी को भी यही स्वीकार्य था, तो अंगद को उसमें क्या आपत्ति है ? कोई नई बात तो है नहीं, न ही इससे वानरों की मर्यादा और परंपरा का कोई अतिक्रमण हुआ है। वानरों में विवाह-विच्छेद भी होते हैं, पुनर्विवाह भी और बहुविवाह भी। फिर अंगद को अच्छा नहीं लगने की क्या बात है ?

अंगद अपने ही मन का विश्लेषण नहीं कर पाते क्या है यह सब ? माँ का वय ही क्या है चालीस वर्ष की विधवा महिला को क्या पुनर्विवाह नहीं करना चाहिए ? यदि उसे सौ वर्ष जीना है, तो शेष साठ वर्ष वह अकेली ही काट दे ? पर माँ अकेली हैं क्या ? एक पिता ही तो नहीं रहे। पति के ही बिना तो स्त्री अकेली हो जाती है। बाईस वर्ष का एक बेटा होने से स्त्री क्या अकेली हो जाती ? हाँ। यदि वह चाहतीं तो अंगद के सहारे अपना जीवन काट सकती थीं। स्त्रियाँ अपने बच्चों के पालन-पोषण में जीवन नहीं काट देतीं क्या ? और जब माँ, पिता के शव के साथ, सती होने जा रही थीं, तो अंगद ने उन्हें यही कहकर तो रोका था कि स्त्रियाँ पतिके लिए ही नहीं, पुत्र के लिए भी जीवित रहती हैं। माँ को अंगद के लिए जीवित रहना चाहिए था कल अंगद का विवाह होगा घर में बहू आएगी, संतान होगी माँ के लिए एक भरा-पूरा परिवार नहीं हो जाएगा क्या ?

पर वह परिवार तो अंगद का होगा। माँ का उसमें क्या होगा ? यदि माँ अंगद को देखकर अपना जीवन काटना चाहें और अंगद क्रमश: अपनी पत्नी और बच्चों का होता जाए, तो क्या माँ फिर अकेली नहीं हो जाएँगी ? अंगद क्या माँ के लिए अच्छा साथी हो सकेगा ? कोई भी बेटा अपनी माँ के लिए अच्छा साथी हो सकता है क्या ? शायद नहीं। अंगद को माँ की बातों में रुचि नहीं होगी, उनकी संगति अंगद के लिए सरस नहीं होगी। वह तो क्रमश: अपनी पत्नी और बच्चों की ओर झुकता जाएगा मनुष्य का जीवन तो नदी की धारा के समान है। वह आगे ही बढ़ता जाता है, पीछे लौटकर नहीं देखता माँ पिछली पीढ़ी हैं, अंगद अपनी पीढ़ी के साथ जीना चाहेगा, वह लौटकर माँ के साथ नहीं चल सकता।

तो फिर माँ को क्यों यह अधिकार नहीं है कि वे अपना मार्ग स्वयं चुनें अपना साथी चुनें अपनी जीवन-पद्धति चुनें।

क्यों नहीं है अधिकार। माँ को पूरा अधिकार है। अंगद माँ के इस अधिकार का तिरस्कार नहीं कर सकता उसका तर्क माँ के अधिकार

को स्वीकार करता है, पर उसका हृदय नहीं मानता उसे अच्छा नहीं लगता।

ऐसी स्थितियों में मन कुछ आदर्शों और सिद्धांतों की ओर आकृष्ट होता है यदि माँ ने अपना सुख न देखा होता, अपनी सुविधा न देखी होती, वह स्वयं को अपने पुत्र और उसके भावी परिवार में ही कहीं खपा देतीं, अपने पौत्र-पौत्रियां को ही अपने बच्चों के समान गले से लगा लेतीं तो क्या मानव-स्वभाव के बहुत प्रतिकूल होता ? नहीं। ऐसा तो नहीं है यदि माँ ऐसा कर पातीं तो अंगद के मन में उनके प्रति कितना सम्मान होता; किष्किंधा की प्रजा, सारी वानर जाति, उन पर कितनी श्रद्धा करती भौतिक सुख-सुविधाओं को छोड़ यदि माँ इन सूक्ष्म उपलब्धियों की ओर बढ़तीं पर शायद स्थूल का ग्रहण सरल है। स्थूल को त्याग सूक्ष्म की ओर बढ़ना कठिन है। माँ ने भी सरल मार्ग चुना है और सरल मार्ग भौतिक सफलता तो देता है, सूक्ष्म उपलब्धियाँ उससे नहीं होतीं। न मानसिक सुख मिलता है, न श्रद्धा, न सम्मान, न यश।

कुछ संबंध हैं, जिन्हें अंगद ने अपनी चेतना के पहले दिन से देखा और स्वीकार किया है, माँ और पिता का संबंध। उन दोनों को उसने एक इकाई के रूप में देखा है। उन दोनों का संबंध उसके लिए नैसर्गिक था। पिता कोई पुरुष नहीं थे, जिनकी पत्नी के रूप में उसने अपनी माँ को देखा हो पर अब वह चाचा की पत्नी भी होंगी माता-पिता के यौन-संबंधों के विषय में उसके मन में कभी कोई बात नहीं उठी थी किंतु अब अंगद बड़ा हो गया है, सोचता-समझता है, जानता है उसकी दृष्टि चाचा और माँ के यौन-संबंधों पर भी पड़ेगी और यह उसे अच्छा नहीं लगेगा माँ के विषय में बच्चे के मन में की ये बातें नहीं आतीं, नहीं आनी चाहिएँ किंतु अंगद की आँखों के सम्मुख माँ की गरिमा भंग हो रही है वह माँ को कामिनी बनी चाचा के पास जाती देखेगा, उसकी श्रृंगार-चेष्टाओं को समझेगा चाचा को देखते ही उसे स्मरण आ जाएगा कि इस पुरुष के उसकी माँ के साथ कैसे संबंध हैं कैसा अनुचित-सा लगता है उसे, जैसे अवैध संबंध हों।

पर इन संबंधों की आवश्यकता ही क्यों पड़ी ? कामासक्ति के कारण ? किसको किसकी आवश्यकता थी ? माँ को चाचा की ? या चाचा को माँ की ? अंगद को ये दोनों ही स्थितियाँ अच्छीं नहीं लगतीं। अपने मन को कहाँ ले जाए अंगद ?

यह भी तो संभव है कि चाचा ने भाई के वध की आत्मग्लानि से बचने के लिए यह प्रस्ताव किया हो। इन संबंधों के पश्चात् माँ के लिए वे परपुरुष नहीं रह गए, अत: चाचा को माँ के सम्मुख लज्जित होने की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी पर यह भी तो हो सकता है कि माँ को सम्राट की पत्नी बने रहने का मोह अब भी हो क्यों यह संभव नहीं हो सकता साम्राज्ञी के अपने विशिष्ट अधिकार हैं, अनेक सुविधाएँ हैं। माँ उन सुविधाओं की अभ्यस्त रही हैं- पति के देहांत के पश्चात् वे अभाव खले होंगे। क्या मात्र उन सुविधाओं के लिए माँ ने चाचा को अपने पति के रूप में स्वीकार कर लिया है ?

किंतु रुमा चाची ने तो संकट के उस काल में भी पिता को अपने पति के रूप में स्वीकार नहीं किया था। रुमा चाची के प्राण संकट में थे- ऐश्वर्य तो दूर, जीवन की सामान्य सुविधाएँ भी उन्हें उपलब्ध नहीं थीं। इतनी यातना में थीं चाची बंदिनी फिर भी चाची ने कोई समझौता नहीं किया। दिखावे के लिए भी, झूठे मुँह नाटक तक नहीं किया रुमा चाची को साम्राज्ञी बन जाने का मोह क्यों नहीं हुआ? किसमें अंतर है- पिता ऐसे व्यक्ति नहीं थे, जिन्हें कोई पर-स्त्री स्वेच्छा से स्वीकार कर सके, अथवा रुमा चाची ऐसी स्त्री हैं, जो किसी पर-पुरुष को कभी स्वीकार नहीं कर सकतीं चाचा में ऐसे गुण हैं कि अन्य स्त्रियाँ भी उन्हें स्वीकार कर सकें, अथवा माँ ही ऐसी स्त्री हैं, जो अन्य पुरुषों की ओर आकृष्ट हो जाती हैं।

अंगद को लगा, इस नये संबंध के विषय में जैसे वे सोच रहे हैं, संभवत: रुमा चाची भी सोच रहीं हों इस नये संबंध से वे भी अंगद के ही समान प्रभावित होंगी क्या सोचती होंगी वे ? इस संबंध को वे सहर्ष स्वीकार करेंगी ? बहु-पत्नीत्व की प्रथा वानरों में बहुव्याप्त है। चाचा ने कोई नई बात नहीं की है। रुमा चाची को माँ से विरोध भी क्या होगा पिता ने चाची के साथ अत्याचार अवश्य किया था, किंतु चाचा के प्राण बचाने में माँ के इस पुत्र का हाथ था। यदि अंगद ने समय से सूचना न भिजवाई होती, तो चाचा अवश्य ही बंदी होते। उनके बंदी होने का अर्थ था, उनका वध। चाचा का वध हो जाता तो चाची को पिता के चंगुल से कौन मुक्त कराता ? सारा जीवन वे पिता के शोषण का पात्र बनी रहीं और जब मुक्त होतीं तो जीवन का कोई अर्थ शेष नहीं रह जाता। चाची अवश्य ही अंगद तथा अंगद की माँ के प्रति कृतज्ञ होंगी। फिर चाचा माँ के वैधव्य के निमित्त कारण थे चाची को माँ से सहानुभूति भी होगी किंतु क्या उसका प्रतिकार वे इस रूप में करने को सहमत थीं ?

चाची की प्रतिक्रिया क्या रही होगी ? क्या माँ के प्रति उनके मन में आक्रोश नहीं जागा होगा कि अब, जब चाची के अच्छे दिन आए थे, वे उनकी सौत बनकर आ गईं और साम्राज्ञी के समस्त अधिकार हस्तगत कर लिये ? क्या चाचा के प्रति उनके मन में क्षोभ नहीं जागा

होगा कि अब जब अपनी दुखिनी पत्नी को कुछ सुख देने का समय आया है- उन्होंने नया विवाह रचा लिया और उन्हें पुन: उपेक्षा के गर्त में धकेल दिया। पर अपने आक्रोश और क्षोभ का क्या करेंगी चाची ? वे चाचा को किसी बात के लिए बाध्य नहीं कर सकतीं। चाचा पुरुष हैं, उनके पति हैं, और फिर सम्राट हैं। माँ, जिनका पिता पर इतना प्रभाव था, वे उनसे अपनी एक बात न मनवा सकीं तो चाची क्या कर सकेंगी- सरल, निरीह तथा अमहत्त्वाकांक्षिणी चाची। इस समाज में स्त्री कर ही क्या सकती है ? एक ही मार्ग है- अपनी बाध्यता को समझकर, अपने अधिकारों की कटौती कर, अपने पति से एक नया समझौता कर, पुन: प्रार्थना करें कि उस पर दया कर उसके रहे-सहे अधिकार भी उससे न छीने जाएँ यही रुमा चाची करेंगी और कोई विकल्प उनके पास नहीं है।

किंतु अंगद किस-किस से समझौता करेगा ? माँ और चाचा के एक हो जाने से वह अंगद जो पहले दोनों का था, अब किसी का भी नहीं रहा जो केवल उसके थे, वे पिता तो अब रहे नहीं चाचा को अब वह पिता कहा करेगा, किंतु वे उसके लिए सदा एक अन्य पुरुष रहेंगे, जिन्होंने उसके पिता का ही वध नहीं किया, उससे उसकी माँ भी छीन ली है, और सुग्रीव उसे अपना पुत्र मानते हुए भी यह कभी नहीं भूलेंगे कि वह एक अन्य पुरुष का पुत्र है जब-जब अंगद के मन में ये भाव जागेंगे, उसके मन में सुग्रीव के प्रति दुर्भावना जागेगी कदाचित् चाचा के मन में भी अंगद के लिए बार-बार संशय जागेगा। संभव है, वह संशय कभी विरोध में भी बदल जाए ओह। यह क्या किया, माँ तुमने ? अपने इस नये विवाह से तुमने नये संबंध नहीं जोड़े- पुराने संबंधों को भी तोड़ दिया।

पर क्या अंगद सुग्रीव के विरोधी पक्ष में खड़े होंगे ? नहीं। ये तो व्यक्तिगत संबंध हैं। उनसे ऊपर सामाजिक और राजनीतिक संबंध हैं। उसके पिता के हत्यारे होने पर भी राम ने वानर-जाति को पूर्ण सुरक्षा दी है राम से सुग्रीव का भी संबंध है और अंगद काभी। अंगद सुग्रीव के विरोधी कैसे हो सकते हैं अभी तो राम के साथ मिलकर वानर-जाति के लिए एक नये समाज का निर्माण करना है और स्वयं आर्य राम का निजी काम देवी सीता की खोज तथा समस्त मानवता का सामूहिक काम-रावण के साथ युद्ध।

८) सुग्रीव की विलासिता और शरद ऋतुका आगमन- कई बार सुग्रीव के मन में आया कि वे भूल जाएँ कि उन्होंने कुछ सपने पाले थे, वे नये समाज के निर्माण का कार्य भूल जाएँ और केवल अपना शासन चलाएँ-न्याय-अन्याय, औचित्य-अनौचित्य को भूलकर अपना स्वार्थ देखें, अपना सुख, अपनी सुविधा, अपना विलास। पर उनका मन यह भी तो नहीं कर पाता वे एक ओर नहीं हो पाते, वे द्वंद्व में फँसे हैं और तब उन्हें लगता है कि बहुत दिनों तक वे सुख से वंचित रहे हैं, उन्हें सुख चाहिए, केवल सुख। वह सुख, जो व्यापारियों के उत्सवों में मिलता है, जो अपना समर्थन और अपनी प्रशंसा सुनने में मिलता है, अपनी मूर्तियों, चित्रों और अपनी जय-जयकार में मिलता है, माधवी में मिलता है, या रुमा अथवा तारा के पास मिलता है।

सुग्रीवका प्रयोजन सिद्ध हो जानेके कारण अब वे धर्म और अर्थके संग्रहमें शिथिलता दिखाने लगे हैं। असाधु पुरुषोंके मार्ग कामसेवन का ही अधिक आश्रय ले रहे हैं। एकान्तमें ही जहाँ स्त्रियोंके सङ्गमें कोई बाधा न पड़े उनका मन लगता है। उनका काम पूरा हो गया है। उनके अभीष्ट प्रयोजनकी सिद्धि हो चुकी है। अब वे सदा युवती स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा-विलासमें ही लगे रहते हैं। उन्होंने अपने सारे अभिलषित मनोरथोंको प्राप्त कर लिया है। अपनी मनोवाञ्छित पत्नी रुमा तथा अभीष्ट सुन्दरी ताराको भी प्राप्त करके अब वे कृतकृत्य एवं निश्चिन्त होकर दिनरात भोग-विलासमें लगे रहते हैं। जैसे देवराज इन्द्र गन्धर्वों और अप्सराओंके समुदायके साथ क्रीडामें तत्पर रहते हैं, उसी प्रकार सुग्रीव भी अपने मन्त्रियोंपर राजकार्यका भार रखकर क्रीड़ा-विहारमें तत्पर हैं। मन्त्रियोंके कार्योंकी देखभाल वे कभी नहीं करते हैं। मन्त्रियोंकी सज्जनताके कारण यद्यपि राज्यको किसी प्रकारकी हानि पहुँचनेका संदेह नहीं है, तथापि स्वयं सुग्रीव ही स्वेच्छाचारीसे हो रहे हैं।

राम नील को पर्वत से नीचे उतरते हुए देखते रहे, जैसे क्रमश: दूर होती जाती उस आकृति में वे अपनी समस्याओं का समाधान ढूँढने का प्रयत्न कर रहे हों। राम को अब चिंता होने लगी थी। प्रस्रवणगिरि पर रहते हुए उन्हें कई मास हो गए थे। वर्षा ऋतु आरंभ हुई, अपने यौवन पर आई और क्रमश: मंद होकर समाप्त हो गई। अपनी गुफा के द्वार पर बैठे हुए राम मेघाच्छन्न आकाश तथा मेघाच्छादित पर्वत-शिखरों को देखते रहे थे। पर्वत की ऋतु का कुछ पता नहीं चलता था- कब मेघ घिर आएँगे और कब वर्षा हो जाएगी। पर्वतों पर पानी ठहर नहीं पाता था, अत: स्थान-स्थान पर जलधाराएँ दिखाई पड़ती थीं। घिरते मेघों, बरसते पानी, इठलाती धाराओं के बीच राम कभी सीता की खोज के विषय में सोचते, कभी सैनिक अभियानों के विषय में। कभी अपने विषय में सोचते, कभी लक्ष्मण के विषय में और

सुग्रीव तक आते ही चिंतनधारा अवरुद्ध हो जाती थी।

सुग्रीव के सम्राट बन जाने के पश्चात् किष्किंधा की स्थिति कुछ विचित्र-सी हो गई थी। बालि के राज्य के विषय में राम ने जो कुछ सुना था, उससे स्पष्ट था कि बालि क्या चाहता था और वह वानरों को किस मार्ग पर चलाना चाहता था किंतु सुग्रीव। सुग्रीव से जो बातें हुई थीं; और हनुमन, अंगद, नील इत्यादि से भी बातें होती रहती थीं- उनसे यह तो स्पष्ट था कि सुग्रीव बालि की अपेक्षा राजनीतिक दृष्टि से कहीं अधिक जागरूक थे। उनके मन में अपनी प्रजा के लिए प्रेम भी था। उनके मन में मानवता की कल्पना समता से भिन्न नहीं थी। दलितों, शोषितों तथा पीड़ितों के उत्थान के लिए उनके मन में अनेक स्वप्न थे। निर्माण के क्षेत्र में भी वे अत्यंत महत्त्वाकांक्षी थे किंतु किष्किंधा में हो क्या रहा है ? सुग्रीव के सम्राट बन जाने पर भी जन-सामान्य के जीवन में कहीं कोई प्रसन्नता प्रकट नहीं हुई थी। उनकी सुविधाओं के लिए जिन निर्माण-योजनाओं की चर्चा थी- वह चर्चा ही रह गई है, उस पर कहीं भी कार्य आरंभ नहीं हुआ। राम स्वयं कभी किष्किंधा के भीतर नहीं गए हैं और सुग्रीव का भी बहुत दिनों से इधर आना नहीं हुआ है। अपने सम्राटत्व के आरंभिक काल में वे प्रतिदिन राम से मिलने आया करते थे। पर राम भी जानते थे कि यह व्यवहारिक नहीं था। यह आवश्यक भी नहीं था। राम वनवास कर रहे थे, अपनी अपहृता पत्नी के संधान के लिए यहाँ रुके हुए थे, वर्षा के कारण उनके मार्ग अवरुद्ध थे किंतु सुग्रीव वानरों के सम्राट थे, उन पर पूरे राज्य का तथा समस्त वानर-यूथों का दायित्व था। राम कैसे यह अपेक्षा कर सकते थे कि सुग्रीव नित्य उनसे मिलने आया करें उससे तो कहीं आवश्यक था कि जन-कल्याण के लिए सुग्रीव ने जो संकल्प किए थे, वे उन्हें ही पूरा करते।

हनुमान आकर राम को मिले हनुमान से राम को सूचनाएँ मिलती थीं। उनके मन में विभिन्न प्रतिक्रियाएँ उठती थीं क्या कर रहे हैं सुग्रीव? पता चलता कि वे माधवी-सेवन के रसिक हो गए हैं उन्हें रुमा से बहुत प्रेम हो गया है, अत: दिन का बहुत सारा समय अपनी पत्नी के पास व्यतीत करते हैं तारा से उन्होंने विवाह कर लिया है, अत: कुछ समय वहाँ भी बीतता है और राम का मन अपने ही द्वंद्वों में उलझता रहता। राम ने जब सुग्रीव की रक्षा करने के लिए बालि का वध किया था और सुग्रीव को सम्राट बनने में सहायता की थी तो यह नहीं सोचा था कि सुग्रीव एक अन्य प्रकार का बालि बन जाएगा। किष्किंधा का धनाढ्य वर्ग और अधिक सम्पन्न होता जाएगा और निर्धन वर्ग और अधिक धनहीन। प्रजा पशुओं का-सा जीवन व्यतीत करने को बाध्य होती रहेगी और सम्राट माधवी पीकर अपनी पत्नियों के पास पड़ा रहेगा।

किंतु क्या राम को हस्तक्षेप करने का अधिकार है ? यदि वे सुग्रीव पर कोई दबाव डालें, तो क्या वह यह नहीं कहेगा कि यह वानरों का अपना आंतरिक मामला है। वह प्रभुसत्ता-संपन्न सम्राट है और उसे अपनी स्वतंत्र नीतियाँ चलाने का पूर्ण अधिकार है। सुग्रीव को ही नहीं, अन्य वानर यूथपतियों को भी यह आपत्ति हो सकती है। आज जो राम वानरों के सहायक और मित्र माने जा रहे हैं, तनिक-सी भ्रांति अथवा भ्रमित प्रचार से वे आक्रांता, अन्य राज्यों की भूमि पर आधिपत्य जमाने के इच्छुक और मित्र के वेश में बैठे हुए अमित्र के रूप में देखे जा सकते हैं। अभी तक वानरों के किसी भी वर्ग की ओर से सुग्रीव के अन्यायी, अत्याचारी अथवा अनाचारी होने की कोई शिकायत नहीं आई है यदि राम से सहायता की इच्छा ही नहीं की जाएगी तो वे किसकी सहायता करने जाएँगे पर जब सुग्रीव ने उनसे सहायता माँगी थी, तो मित्र के रूप में उनकी भी पूरी सहायता करने का वचन दिया था। मित्र की सहायता का यह कौन-सा रूप है कि सुग्रीव माधवी पीकर अपनी पत्नियों के महलों में पड़ा रहे और राम इस प्रस्रवणगिरि की गुफाओं में अपनी पत्नी के संधान की प्रतीक्षा में निष्क्रिय बैठे हुए, अपनी असहायता को कोसते रहें। जाने कहाँ होंगी सीता-जीवित होंगी अथवा विपरीत परिस्थितियों में आत्मरक्षा करती हुई आततायियों के हाथों मारी गई होंगी। जीवित भी होंगी तो जाने किन परिस्थितियों में होंगी। अपमानित, पीड़ित।

हनुमान को शिखर की चढ़ाई चढ़ते देखकर, राम का चिंतन-प्रवाह थम गया। हनुमान आ रहा है- कोई आवश्यक काम होगा। एक यह ऐसा व्यक्ति है, जो सदा आशावान और सक्रिय है। ऐसे-ऐसे साथी हैं सुग्रीव के पास और फिर भी सुग्रीव अनिर्णय, जड़ता और भ्रांतियों की दलदल में धँसता जा रहा है और उसीकी जड़ता के कारण उसके सारे साथी निस्तेज, प्रभावशून्य होते जा रहे हैं। उनकी ऊर्जा उनके अपने ही भीतर ऐंठ-ऐंठकर दम तोड़ती जा रही है क्या हनुमान, क्या अंगद, क्या नल-नील और क्या तार और जाम्बवान।

पर उन सबके साथ-ही-साथ राम की ऊर्जा भी तो उनके भीतर ऐंठ ही रही है। पंचवटी में क्या राम इस प्रकर पराङ्मुखी थे ? क्या उन्हें सोचना पड़ता था कि कोई सुग्रीव सक्रिय तथा सचेष्ट हो और राम का कार्य करे वह जो किष्किंधा पुरी के भीतर अपने प्रासाद के विश्राम-कक्ष में माधवी के पात्र में बंदी है। कितने बंधन हैं सुग्रीव के चारों ओर। राम किस-किस बंधन से उन्हें मुक्त करेंगे। कितना स्वतंत्र और स्वावलंबी जीवन था पंचवटी में। राम के समस्त साथी सदा उन्हें लभ्य थे और उन लोगों के लिए राम सदा उनकी पहुँच के

भीतर थे। यहाँ तो राम को इस पर्वत शिखर पर अपने वचनों का बंदी बनाकर एक सम्राट अपने प्रासाद और प्रमाद में खो गया है। कैसे विवश हैं राम ? क्यों फँसे वे राज्यों और सम्राटों के षड्यंत्र में उन्हें क्या सामान्य जन की शक्ति पर विश्वास नहीं था ?

मैं सुग्रीव के प्रमाद से दु:खी हो रहा हूँ, हनुमान।

हनुमान ने लज्जित-सी दृष्टि से राम की ओर देखा, सम्राट की मन:स्थिति ठीक नहीं है। उनका स्वर अत्यंत मृदु था, किंतु उसके कारण आपका कोई कार्य नहीं रुकेगा, भद्र राम। स्वर को कुछ अधिक आश्वस्त बनाते हुए वे बोले, आप मुझे आदेश दें।

राम हँस पड़े, तुम्हारे जैसा साथी भी मैंने नहीं देखा, हनुमान। सब ओर सुग्रीव की जड़ता ओर प्रमाद की चिंता हो रही है; किंतु तुम अपने मुख से कभी स्वीकार नहीं करोगे।

आर्य। आप जानते हैं, हनुमान अत्यंत शालीन स्वर बोले, वे हमारे साथी हैं, मार्ग-निर्देशक हैं, सम्राट हैं। तनिक-सा प्रमाद हो जाने पर हम उनका साथ तो नहीं छोड़ सकते। उनका मन भ्रातृवध की ग्लानि से पीड़ित हैं; अकस्मात ही अनेक अनपेक्षित समस्याएँ उनके सम्मुख आ खड़ी हुई हैं; दीर्घकाल तक कष्टकर तथा रसहीन जीवन व्यतीत करने के पश्चात् उनके घबराए हुए अस्थिर मन के सम्मुख अनेक प्रलोभन आ उपस्थित हुए हैं। ऐसे में यदि सम्राट अस्थायी रूप से अपना संतुलन खो बैठे हैं, तो हमें उनके प्रति इतना कठोर नहीं हो जाना चाहिए, आर्य।

किंतु क्या तुम्हारा ध्यान इस ओर नहीं गया कि एक-एक क्षण हमारे लिए कितना मूल्यवान है। सुग्रीव का विलास, उनकी व्यक्तिगत बात न रहकर, आज हमारे सामूहिक कल्याण का घातक शत्रु हो गया है। एक-एक दिन के बीतने पर स्थितियाँ जटिल से जटिलतर होती जा रही हैं। यदि सुग्रीव सचेष्ट नहीं हुए तो उनकी निष्क्रियता ही अपने-आप में किष्किंधा ही नहीं, संपूर्ण वानर-राज्य के लिए घातक वज्र बनकर गिरेगी। किष्किंधा के पथों-वीथियों में वानर ही वानरों का रक्त बहाएँगे और एक नये समाज के निर्माण के तुम्हारे सारे स्वप्न चूर-चूर हो जाएँगे, हनुमान। राम के कंठ में कुछ फँसता-सा लगा, जब वानर आपस में जूझ-जूझकर मर रहे होंगे, तो मेरी वैदेही की खोज करने के लिए कौन जाएगा। कभी-कभी तो मेरे मन में आता है, हनुमान कि मैं वापस पंचवटी लौट जाऊँ और वहीं से अपने साथियों की टोलियाँ भेज-भेजकर सीता का संधान करूँ।

हनुमान का संकोच पूर्णत: विलीन नहीं हुआ था, किंतु फिर भी उनका कंठ अपेक्षाकृत कुछ अधिक मुक्त हो गया, आर्य ! मैं आपकी बात से असहमत तो नहीं हूँ। स्थिति वस्तुत: अत्यंत शोचनीय है। किंतु आप देवी वैदेही की खोज को लेकर इतने निराश न हों। सम्राट ने जिन दक्ष खोजियों को विभिन्न वानर-यूथों से बुलवाया था, प्राय: वे सब अब किष्किंधा में उपस्थित हैं एक बार उन्हें सम्राट का आदेश मिल जाए तो देखिए, ये वानर रावण के राज्य के किस कोने में नहीं जा पहुँचेंगे। मैं तो स्वयं देवी की खोज में जाने के लिए अत्यंत व्यग्र हूँ, राम ! किंतु सम्राट की मन:स्थिति तथा यहाँ की परिस्थितियों को देखते हुए उनकी आज्ञा के अभाव में किष्किंधा को छोड़ना मुझे उचित नहीं लगता।

ठीक कहते हो, हनुमान। राम एक तिक्त मुसकान अपने अधरों पर ले आए, विलंब तो केवल तुम्हारे सम्राट की आज्ञा का ही है। पर यदि वे आज्ञा दें तो। आर्य ! मैं प्रयत्न करूँगा कि सम्राट इस विषय में शीघ्र आज्ञा जारी करें। हनुमान उठ खड़े हुए, अनुमति दें। मैं यहाँ से सीधा सम्राट के पास ही जाऊँगा।

श्रीराम हनुमान से बोले- राम के स्वर में हल्का-सा आवेश घुल गया, किष्किंधापुरी में जाकर सुग्रीव को अपनी मित्रता के वादे याद कराओ और कहो- और सम्राट को याद दिला देना कि उन्हें रुमा मिल गई है, किंतु मुझे अभी सीता की खोज-खबर तक नहीं मिली।

हनुमान ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और जाने के लिए मुड़ गए। हनुमान के जाने के पश्चात् भी राम उन्हीं के विषय में सोचते रहे। सुग्रीव की समस्या कहीं पीछे छूट गई थी। सुग्रीव तो फिर अपने निजी कारणों से बाध्य थे; किंतु हनुमान कैसे हो रहे हैं। वे जानते हैं क्या ठीक है, क्या गलत। वे जानते हैं, दुर्बलता कहाँ है; कहीं सुग्रीव की अकर्मण्यता में हनुमान भी बँध गए हैं और अन्य लोग भी। वर्षा रुक गई है, जल बह गया है और कीचड़ सूख गया है। हनुमान बता गए हैं कि खोजियों के दल भी किष्किंधा में आ गए हैं; पर सब कुछ रुका पड़ा है- सुग्रीव के कारण। सुग्रीव को खोज के लिए आदेश देने तक का अवकाश नहीं, अवकाश नहीं है, या होश नहीं है ?

पवनकुमार हनुमान् शास्त्रके निश्चित सिद्धान्तको जाननेवाले थे। क्या करना चाहिये और क्या नहीं-इन सभी बातोंका उन्हें यथार्थ ज्ञान था। किस समय किस विशेष धर्मका पालन करना चाहिये- इसको भी वे ठीक-ठीक समझते थे। उन्हें बातचीत करनेकी कलाका

भी अच्छा ज्ञान था। उन्होंने देखा, आकाश निर्मल हो गया है। अब उसमें न तो बिजली चमकती है और न बादल ही दिखायी देते हैं। अन्तरिक्षमें सब ओर सारस उड़ रहे हैं और उनकी बोली सुनायी देती है। चन्द्रोदय होनेपर आकाश ऐसा जान पड़ता है, मानो उसपर श्वेत चन्दनसदृश रमणीय चाँदनीका लेप चढ़ा दिया गया हो। यह सब सोचकर हनुमान् वानरराज सुग्रीवके पास गये और उन्होंने देखा।

रुमा को अपने पति में एक स्पष्ट परिवर्तन दिखाई पड़ रहा था- सुग्रीव ऐसे नहीं थे। उसका वह सहज प्रेमी पति अब कैसा हो गया था। सुग्रीव अब पहले से कहीं अधिक समय अपने प्रासाद में व्यतीत करते थे; सत्य तो यह है कि अब वे बाहर बहुत कम जाते थे। यदि कहीं कोई भव्य पान-गोष्ठी होती, तो ही वे बाहर निकलते थे, अन्यथा माधवी में डूबे प्रासाद में ही पड़े रहते थे। अपने भाई के राज्यकाल में जो व्यक्ति संपूर्ण वानर-राज्य में मदिरा को वर्जित पदार्थ घोषित करवाने के लिए अपने प्राणों पर खेल रहा था, अब वही व्यक्ति सदा माधवी में डूबा दिखाई पड़ता है। रुमा का मन बार-बार रोने को हो आता था; वही पति पहले अपनी राजनीतिक-सामाजिक गतिविधियों की भाग-दौड़ में से कुछ समय छीन-झपटकर घर आता था तो घर में कैसी चहल-पहल हो जाती थी। उनके एक-एक शब्द में से प्यार टपकता था। इतनी कम अवधि के लिए पति के साथ रहकर भी रुमा को लगता था कि सुग्रीव कितना प्रेम करते थे उससे। अब सुग्रीव प्राय: आठों प्रहर प्रासाद में ही पड़े रहते हैं। हाँ। प्रासाद में उनकी उपस्थिति को रहना मात्र नहीं कहा जा सकता था, वह पड़ा रहना ही था। जो व्यक्ति उठ न सके, बैठ न सके, चल-फिर न सके- पलंग पर बस औंधा-सीधा लेटा रहे, उसे पड़ा रहना ही तो कहा जाता है। अब वे रुमा को देखते ही प्रेम-निवेदन कर बैठतें हैं, उसे बाँहों में भर लेते हैं, सदा स्वयं को उस पर न्यौछावर कर देने की बातें करते रहते हैं; किंतु रुमा को उन शब्दों में प्रेम का तनिक भी आभास नहीं मिलता, उनमें कामुकता की तीव्र गंध होती है।

वह अच्छी-भली प्रिया थी अपने प्रिय की, पत्नी थी अपने पति की; और अब वह एक कामुक की भोग्या मात्र रह गई है। क्या कहे रुमा इस परिवर्तन को, इस प्रक्रिया को और इस व्यक्ति को।

कैसे-कैसे स्वप्न थे सुग्रीव के मन में, एक नये समाज के निर्माण के लिए किंतु तब उनके पास अधिकार नहीं था अब क्या नहीं है उनके पास ? किंतु वे स्वप्न ही कहीं खो गए हैं। उनके साथी आते हैं और उनकी स्थिति देखकर बिना कुछ कहे लौट जाते हैं। सुग्रीव के पास किसी की बात सुनने का आवकाश नहीं है क्या हो गया है उन्हें ? क्या यह सब कुछ मात्र विलास की इच्छा और कामलिप्सा ही है ? क्या बालि के भय से ऋष्यमूक पर जो वंचित जीवन बिताना पड़ा यह उसी की प्रतिक्रिया है ? यह भूखे व्यक्ति का, नाना व्यंजनों को उपलब्ध जानकर, उन पर टूट पड़ना है, या...

बालि के वध के पश्चात् जब सुग्रीव प्रासाद में आए थे तो रुमा अपने प्रेम तथा स्वतंत्रता की मिश्रित भावनाओं की ऊर्जा में दौड़ी थी कि सुग्रीव के वक्ष से जा लगे। किंतु वक्ष से लगने से पूर्व ही वह ठिठक गई। अब स्थिति पहले-जैसी नहीं थी, सुग्रीव और उसका संबंध मात्र पति-पत्नी का नहीं था- थे तो वे अब भी पति-पत्नी ही; किंतु बीच में एक घटना आ खड़ी हुई थी। वह सुग्रीव की पत्नी ही नहीं थी, घर्षिता पत्नी थी। बालि ने उसका अपहरण कर, इतने दिनों तक बलात् उसका भोग किया था वह बालि की भोग्या रह चुकी थी क्या सुग्रीव उसे अंगीकार करेंगे ? रुमा ने सुग्रीव के वक्ष से लगने का विचार त्याग दिया था, वह उनके पैरों में गिर पड़ी थी।

सुग्रीव ने उसे अंगीकार कर लिया था, पर क्या रुमा को अपनी बाँहों में लेते ही सुग्रीव को याद नहीं आ जाता कि यह वही रुमा है, जिसका बालि ने हरण किया था अपने विवेक के तर्क के हाथों बाध्य होकर माधवी में डूबे, वे रुमा के निकट भी नहीं आ सकते थे क्या वे रुमा के प्रति अपनी घृणा को धोने में असमर्थ होकर, उसे माधवी में डुबोने का प्रयत्न कर रहे हैं ?

लगता था, सुग्रीव भीतर से कहीं टूट गए हैं अपने टूटे हुए खण्डों को माधवी से जोड़ने का प्रयत्न कर रहे हैं; पर ऐसा भी कहीं हुआ है

और तारा के साथ विवाह ? यह क्या था- तारा के प्रति आकर्षण ? बालि के प्रति अपनी शत्रुता का निर्वाह ? अंगद के मन में पितृ-हत्या की भावना को धोने का प्रयत्न ? या रुमा के प्रति जुगुप्सा से भर जाने के कारण अपनी कामुकता की संतुष्टि के लिए एक अन्य पात्र की खोज ? रुमा की दृष्टि कक्ष में प्रवेश करती हुई प्रतिहारिणी पर पड़ी।

देवी ! आर्य हनुमान द्वार पर खड़े हैं। अभिवादन कर प्रतिहारिणी बोली, कहते हैं, बहुत आवश्यक कार्य है।

बुला लाओ। प्रतिहारिणी चली गई और रुमा के विचार हनुमान की ओर मुड़ गए। हनुमान के सारे आवश्यक कार्य सम्राट की इस मन:स्थिति के कारण रुके पड़े हैं। किंतु रुमा क्या कर सकती है।

हनुमान ने कक्ष में प्रवेश कर अभिवादन किया। हनुमान ने युक्तियुक्त विविध एवं मनोरम वचनोंके द्वारा प्रसन्न करके बातचीतका मर्म

समझनेवाले उन सुग्रीवसे हितकर, सत्य, लाभदायक, साम, धर्म और अर्थ-नीतिसे युक्त, शास्त्रविश्वासी पुरुषोंके सुदृढ़ निश्चयसे सम्पन्न तथा प्रेम और प्रसन्नतासे भरे वचन बोले।

राजन। आपने राज्य और यश प्राप्त कर लिया तथा कुलपरम्परासे आयी हुई लक्ष्मीको भी बढ़ाया; किंतु अभी मित्रोंको अपनानेका कार्य शेष रह गया है, उसे आपको इस समय पूर्ण करना चाहिये।

जो राजा कब प्रत्युपकार करना चाहिये इस बातको जानकर मित्रोंके प्रति सदा साधुतापूर्ण बर्ताव करता है, उसके राज्य, यश और प्रतापकी वृद्धि होती है। जिस राजाका कोश, दण्ड (सेना), मित्र और अपना शरीर- ये सब-के-सब समान रूपसे उसके वशमें रहते हैं, वह विशाल राज्यका पालन एवं उपभोग करता है।

आप सदाचारसे सम्पन्न और नित्य सनातन धर्मके मार्गपर स्थित है; अत: मित्रके कार्यको सफल बनानेके लिये जो प्रतिज्ञा की है, उसे यथोचितरूपसे पूर्ण कीजिये। जो अपने सब कार्योंको छोड़कर मित्रका कार्य सिद्ध करनेके लिये विशेष उत्साहपूर्वक शीघ्रताके साथ नहीं लग जाता है, उसे अनर्थका भागी होना पड़ता है। कार्यसाधनका उपयुक्त अवसर बीत जानेके बाद जो मित्रके कार्योंमें लगता है, वह बड़े-से-बड़े कार्योंको सिद्ध करके भी मित्रके प्रयोजनको सिद्ध करनेवाला नहीं माना जाता। भगवान् श्रीराम हमारे परम सुदृढ़ हैं। उनके इस कार्यका समय बीता जा रहा है; अत: विदेहकुमारी सीताकी खोज आरम्भ कर देनी चाहिये।

राजन्। परम बुद्धिमान श्रीराम समयका ज्ञान रखते हैं और उन्हें अपने कार्यकी सिद्धिके लिये जल्दी लगी हुई है, तो भी वे आपके अधीन बने हुए हैं। संकोचवश आपसे नहीं कहते कि मेरे कार्यका समय बीत रहा है। वानरराज। भगवान् श्रीराम चिरकालतक मित्रता निभानेवाले हैं। वे आपके समृद्धिशाली कुलके अभ्युदयके हेतु हैं। उनका प्रभाव अतुलनीय है। वे गुणोंमें अपना सानी नहीं रखते हैं। अब आप उनका कार्य सिद्ध कीजिये; क्योंकि उन्होंने आपका काम पहले ही सिद्ध कर दिया है। आप प्रधान-प्रधान वानरोंको इस कार्यके लिये आज्ञा दीजिये।

श्रीरामके कहनेके पहले ही यदि हमलोग कार्य प्रारम्भ कर दें तो समय बीता हुआ नहीं माना जायगा; किंतु यदि उन्हें इसके लिये प्रेरणा करनी पड़ी तो यही समझा जायगा कि हमने समय बिता दिया है- उनके कार्यमें बहुत विलम्ब कर दिया है। वानरराज। जिसने आपका कोई उपकार नहीं किया हो, उसका कार्य भी आप सिद्ध करनेवाले हैं। फिर जिन्होंने बालिका वध तथा राज्य प्रदान करके आपका उपकार किया है, उनका कार्य आप शीघ्र सिद्ध करें, इसके लिये तो कहना ही क्या है। आप शक्तिमान् और अत्यन्त पराक्रमी हैं; फिर भी दशरथनन्दन श्रीरामका प्रिय कार्य करनेके लिये वानरोंको आज्ञा देनेमें क्यों विलम्ब करते हैं ?

इसमें संदेह नहीं कि दशरथकुमार भगवान् श्रीराम अपने बाणोंसे समस्त देवताओं, असुरों और बड़े-बड़े नागोंको भी अपने वशमें कर सकते हैं, तथापि आपने जो उनके कार्यको सिद्ध करनेकी प्रतिज्ञा की है, उसीकी वे राह देख रहे हैं।

उन्हें आपके लिये बालिके प्राणतक लेनेमें हिचक नहीं हुई। वे आपका बहुत बड़ा प्रिय कार्य कर चुके हैं; अत: अब हमलोग उनकी पत्नी विदेहकुमारी सीताका इस भूतलपर और आकाशमें भी पता लगावें।

देवता, दानव, गन्धर्व, असुर, मरुद्गण तथा यक्ष भी श्रीरामको भय नहीं पहुँचा सकते; फिर राक्षसोंकी तो बिसात ही क्या है। वानरराज। ऐसे शक्तिशाली तथा पहले ही उपकार करनेवाले भगवान् श्रीरामका प्रिय कार्य आपको अपनी सारी शक्ति लगाकर करना चाहिये। कपीश्वर। आपकी आज्ञा हो जाय तो जलमें, थलमें, नीचे पातालमें तथा ऊपर आकाशमें कहीं भी हम लोगोंकी गति रुक नहीं सकती। अत: आप आज्ञा दीजिये कि कौन कहाँसे आपकी किस आज्ञाका पालन करनेके लिये उद्योग करे। आपके अधीन करोड़ोंसे भी अधिक ऐसे वानर मौजूद हैं, जिन्हें कोई परास्त नहीं कर सकता।

सुग्रीव सत्त्वगुणसे सम्पन्न थे। उन्होंने हनुमान्‌के द्वारा ठीक समयपर अच्छे ढंगसे कही हुई उपर्युक्त बातें सुनकर भगवान् श्रीरामका कार्य सिद्ध करनेके लिये अत्यन्त उत्तम निश्चय किया।

वे परम बुद्धिमान थे। अत: नित्य उद्यमशील नील नामक वानरको उन्होंने समस्त दिशाओंसे सम्पूर्ण वानरसेनाओंको एकत्र करनेके लिये आज्ञा दी और कहा- तुम ऐसा प्रयत्न करो, जिससे मेरी सारी सेना यहाँ इकट्ठी हो जाय और सभी यूथपति अपनी सेना एवं सेनापतियोंके साथ अविलम्ब उपस्थित हो जायँ।

राज्य-सीमाकी रक्षा करनेवाले जो-जो उद्योगी और शीघ्रगामी वानर हैं, वे सब मेरी आज्ञासे शीघ्र यहाँ आ जायँ। उसके बाद जो कुछ

कर्तव्य हो, उसपर तुम स्वयं ही ध्यान दो।

जो वानर पंद्रह दिनोंके बाद यहाँ पहुँचेगा, उसे प्राणान्त दण्ड दिया जायगा। इसमें कोई अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये। यह मेरी निश्चित आज्ञा है। इसके अनुसार इस व्यवस्थाका अधिकार लेकर अङ्गदके साथ तुम स्वयं बड़े-बूढ़े वानरोंके पास जाओ। ऐसा प्रबन्ध करके महाबली वानरराज सुग्रीव अपने महलमें चले गये।

सुग्रीवको नवीन राज्य मिला था। वे शासनसे तथा प्रजाकी वर्तमान स्थितिसे भी अपरिचित थे। बहुत दिनोंतक निर्वासनका कष्ट भोगनेके पीछे वैभव मिला तो भोगोंमें लिप्त हो गये थे। उन्हें कुछ स्मरण ही नहीं आता था। सुग्रीवके शासनको सम्हालकर सुस्थिर कर देना आवश्यक था। अङ्गदका प्रशिक्षण भी हनुमानको ही करना था और राम-कार्य भी किष्किन्धा रहकर अच्छी प्रकार कराया जा सकता था। अत: हनुमान सुग्रीवके समीप ही रहते थे।

सुग्रीव मनमें कुछ भयभीत, चिन्तित हुए। उन्होंने नल-नीलको भी बुला लिया- रावण मायावी है, दुष्ट है और पृथ्वीमें कहाँ-कहाँ उसके कितने सहायक है, यह पता नहीं है। यद्यपि वह ऋष्यमूकसे सीता-सहित दक्षिण जाता देखा गया था; किंतु मायावी राक्षस मार्गमें किधर मुड़कर कितनी दूर गया होगा, कुछ पता नहीं है। सीताको वह कहीं अरण्यमें गिरिगह्वरमें, जलमें या पातालमें छिपा सकता है।

रावणकी राजधानी लंका दक्षिण समुद्रमें कहीं द्वीपमें हैं, किंतु सीताको उसने कहाँ रखा होगा, कुछ कहा नहीं जा सकता। सुग्रीवका मस्तिष्क सक्रिय हो गया था- पहिले सीताका पता लगाना चाहिये। पहिले रावणसे उलझनेपर सीताकी सुरक्षा संकटमें पड़ सकती है। सीताको पहिले समूची पृथ्वीमें पृथ्वीके पर्वतों, अरण्यों एवं असुर-आवासोंमें अन्वेषण करना है। पानीके भीतर अथवा पातालमें ढूँढनेकी बात पीछे। पृथ्वीपर ही कोई सूत्र सीतातक पहुँचनेका अवश्य पाया जा सकता है। पृथ्वी छोटी तो नहीं है। किष्किन्धाके सब वानर बहुत अपर्याप्त हैं, सीतान्वेषणके लिए।

हनुमानने प्रसन्नता प्रकट की। बहुत अधिक वानरोंको दान-मानसे सन्तुष्ट करके दिशाओंमें भेजा। स्वयं तथा नल-नील भी वानरोंको आमन्त्रित करने चल पड़े। जो वानर जिन प्रदेशोंसे परिचित थे, वे वहाँ भेजे गये। जो अत्यन्त दुर्गम, दूरस्थ प्रदेश थे, वहाँकी यात्रा स्वयं हनुमानको करनी थी।

सहसा राम का तेज जाग उठा। कब तक वे धैर्य धारण करें ? कब तक वे सुग्रीव के कर्तव्य-बोध के जागने की प्रतीक्षा करें ? कब तक वे ऐसे ही असहाय-निष्क्रिय बैठे रहें। वर्षाकाल समाप्त हो चुका है। मार्ग प्राय: सूख रहे हैं। आवागमन सरल और सहज होता जा रहा है। राम सुग्रीव के भरोसे यहाँ बैठे रहेंगे, सीता किसी अज्ञात स्थान पर पीड़ा और अपमान के घूँट पीती रहेंगी, और रावण अपनी सेनाएँ लेकर, जनस्थान पर आक्रमण कर न केवल जनस्थान और पंचवटी, वरन् दण्डक वन के समस्त आश्रमों को नष्ट करने का प्रयत्न करेगा राम का आवेश अपने ही विरुद्ध जागा। यह क्या किया राम ने ? एक अपरिचित व्यक्ति के वचन का इतना भरोसा कर लिया कि सारी वर्षाऋतु अकर्मण्यता में, आकाश के मेघों, वर्षा की फुहारों और बहते हुए जल की धाराओं को देखने में व्यतीत कर दी। कितना जानते हैं राम सुग्रीव को ? किस संकट में उन्होंने परख की है अपने इस मित्र की ? संकट सुग्रीव का था-उसमें राम की परख हुई है। राम ने सुग्रीव की सहायता के लिए अपने प्राणों को दाँव पर लगाया था। उसमें सुग्रीव की परख कैसे हुई। सुग्रीव भी यदि अपने भाई के ही समान कामुक, आलसी और विलासी निकला तो ? यदि वह भी उन लोगों के समान निकला, जिन्हें अपने मुख से उच्चरित शब्दों की सार्थकता का बोध नहीं होता ? यदि सुग्रीव के लिए अपने मुख से उच्चरित शब्दों का कोई महत्त्व नहीं है, यदि वह मैत्री के नाम पर भ्रम पालने का अभ्यस्त है, यदि प्रजा के चीत्कार की ध्वनि उसके कानों तक नहीं जाती, यदि अत्याचारी यूथपति उसके भी वैसे ही मित्र हैं जैसे कि वे बालि के मित्र थे, तो राम को हस्तक्षेप करना ही पड़ेगा, सुग्रीव को उसका कर्तव्य स्मरण कराना ही होगा।

और सीता ? राम के सम्मुख अनेक प्रश्नचिन्ह थे। सुग्रीव की जड़ता के कारण, राम इस प्रकार निश्चेष्ट होकर बैठे रहें ? वानर जाति को परस्पर लड़कर मरने दें ? अथवा सारा वानर राज्य इन राक्षस-मित्र यूथपतियों के पेट में समा जाने दें ? सीता यदि जीवित हैं, तो उन्हें सदा के लिए रावण की बंदिनी अथवा दासी बने रहने दें ?

राक्षसत्व के अंधकार द्वारा संसार के समस्त ज्योतिर्कणों को निगले जाते हुए अवाक् खड़े देखते रहें ?

यदि यही होना है तो धिक्कार है राम की वीरता को उनके शस्त्रों को, उनके संकल्पों को, उनकी संगठन-शक्ति को।

तो क्या करें राम ? राम को लगा, उनके मन में सुग्रीव के विरुद्ध आक्रोश संचित हो रहा है- कैसा नीच और स्वार्थी है यह व्यक्ति। जब

स्वयं कठिनाई में था तो कैसे घिघियाता था। मैत्री के पक्ष में कैसी-कैसी बातें कहीं थीं उसने। तब उसकी पत्नी रुमा बालि के वश में थी और सुग्रीव के प्राणों को बालि की ओर से विकट संकट था किंतु बालि के वध के पश्चात् रुमा ही नहीं, किष्किंधा का राज्य और तारा के रूप में उसे एक अतिरिक्त पत्नी भी मिल गई थी। और अब यह व्यक्ति भूल गया कि राम की पत्नी सीता भी रावण के वश में है, राम के प्राणों को भी राक्षसों की ओर से विकट संकट है।

राम को लगा, उनका आक्रोश इसी प्रकार स्फीत होता रहा तो सुग्रीव से उनकी मैत्री अधिक समय तक नहीं टिक पाएगी। पर ऐसा कार्य अकस्मात ही बिना सोचे-समझे, आक्रोश के ज्वार में नहीं होना चाहिए। ऐसी मैत्री का त्याग तो ठण्डे मस्तिष्क से सोच-समझकर, भली प्रकार विचार-विवेचन करने के पश्चात् होना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि उनका व्यक्तिगत स्वार्थ इतना प्रबल हो उठे कि वे अपने मित्र की समस्या को समझ ही न पाएँ। वह वस्तुत: अपने मानसिक ऊहापोह, अपनी भौतिक परिस्थितियों, विभिन्न शक्तियों के संतुलन की समस्या में उलझा हुआ हो और राम अपने आग्रह से उसे और अधिक पीड़ित कर दें राम अपने मित्र की उलझनों में वृद्धि नहीं करना चाहते वे नहीं चाहते कि वानरों के राज्य में अभी-अभी सत्ता में आई जन-समर्थक राज-शक्ति किसी भी कारण से दुर्बल हो जाए। किंतु कहीं राम सचमुच ही तो भ्रमजाल में नहीं फँस गए हैं। यदि वस्तुत: ही सुग्रीव इतना ही प्रमादी हो कि वह अपने विलास में सब कुछ भुला बैठा हो, तो राम की यह शिथिलता और सीता की खोज में होनेवाला यह विलंब अत्यंत हानिकारक हो सकता है कौन-सी समस्या बड़ी है- किष्किंधा के जन-जीवन की प्रशासनिक समस्याएँ अथवा सीता की खोज ?

राम का मन कोई निर्णय नहीं कर पाता। पहले तो रामने यही सोचा था कि वे अपनी व्यक्तिगत उतावली में ऐसा कोई काम न कर बैठें, जिससे उनके मित्र सुग्रीव के लिए कोई विघ्न-बाधा उपस्थित हो जाए, अथवा उनकी चिंताओं में किसी प्रकार की वृद्धि हो। उनके मन में द्वंद्व इस बात को लेकर था कि पहले सीता की खोज हो अथवा वानरों की अपनी प्रशासनिक समस्याएँ सुलझाई जाएँ ? किंतु अब तो स्थिति बदलती जा रही थी। यदि राम निष्क्रिय बैठे प्रतीक्षा करते रहे, और सुग्रीव अपनी जड़ता तथा प्रमादवश अपने विलास में डूबा रहा तो सीता का संधान न केवल टलता जाएगा; वरन् शनै:-शनै: कठिन होता जाएगा और अंतत: कदाचित असंभव ही हो जाएगा व्यक्तिगत रूप से वंचित तथा अपमानित होकर क्रमश: राम का समस्त तेज भी नष्ट हो जाएगा; अन्याय के विरुद्ध अभी तक किया संघर्ष व्यतीत होते हुए समय के साथ क्षीण होकर, अंतत: शून्य में परिणत हो जाएगा जिन वंचितों, शोषितों तथा असहायों के भविष्य को लेकर उन्होंने अनेक स्वप्न देखे हैं और जिन स्वप्नों के प्रति उन जातियों में चेतना और आकांक्षा जाग उठी है, वे सारे स्वप्न अकालमृत्यु को प्राप्त होंगे और दूसरी ओर अदण्डित रावण इसे अपनी सफलता मानकर और भी प्रोत्साहित होगा। लंका के रावण के समान ही प्रत्येक राज्य में अपने-अपने रावण पैदा होंगे। प्रत्येक गली-मोहल्ले में मनुष्य के रूप में ऐसे पशु न केवल पनपेंगे, वरन् शक्तिशाली होकर अपनी उद्दण्डता और उच्छृंखलता से, अपने पापों और अत्याचारों से समस्त मानवता को पीड़ित करेंगे नहीं। राम यह नहीं होने देंगे।

सहसा राम का मन भीत हिरण के समान चौंक उठा। क्या हो रहा है राम के जीवन में वे कौन-सा लक्ष्य लेकर चले थे और क्या हो रहा है यहाँ ? संसार में इतने व्यापक रूप में हो रहे अत्याचार तथा व्यक्ति रूप में अपनी क्षति और अपमान को भूलकर, वे वानर-राजनीति की वंचना में फँसते जा रहे हैं क्या राम के जीवन का यही लक्ष्य था कि वे आदर्शों, सिद्धांतों, न्याय-अन्याय के विचारों को भूलकर एक राज्य के विभिन्न वर्गों के द्वेषवश होने वाले षड्यंत्रों की दलदल में फँसकर रह जाएँ कदापि नहीं। राम यह भी नहीं होने देंगे।

राम उठ खड़े हुए। उन्हें इस दलदल से निकलना होगा और उसके लिए आवश्यक है कि सुग्रीव की जड़ता टूटे, उनका प्रमाद नष्ट हो यदि सुग्रीव की जड़ता नहीं टूटी तो राम इस दलदल में गहरे-से-गहरे धँसने के लिए बाध्य हो जाएँगे अब वे और प्रतीक्षा नहीं कर सकते। हनुमान ने ठीक ही कहा था, सम्राट की मन:स्थिति के स्वत: संतुलित हो जाने की प्रतीक्षा करना भूल है। यह उनके शुभेच्छियों का कर्त्तव्य है कि वे उन्हें परिस्थितियों के प्रति सजग करें। वही करने का प्रयत्न करूँगा ठीक कहा था हनुमान ने, सुग्रीव को जगाना होगा। उनके शुभेच्छियों का कर्तव्य है कि वे उन्हें जगाएँ, जैसे भी हो, जिस भी प्रकार।

रामने देखा, आकाश श्वेत वर्णका हो रहा है, चन्द्रमण्डल स्वच्छ दिखायी देता है तथा शरद्-ऋतुकी रजनीके अङ्गोंपर चाँदनीका अङ्गराग लगा हुआ है। यह सब देखकर वे सीतासे मिलनेके लिये व्याकुल हो उठे।

उन्होंने सोचा सुग्रीव काममें आसक्त हो रहा है, जनककुमारी सीताका अबतक कुछ पता नहीं लगा है और रावणपर चढ़ाई करनेका समय भी बीता जा रहा है। यह सब देखकर अत्यन्त आतुर हुए श्रीरामका हृदय व्याकुल हो उठा। उन्होंने देखा, आकाश निर्मल है। न

कहीं बिजलीकी गड़गड़ाहट है न मेघोंकी घटा। वहाँ सब ओर सारसोंकी बोली सुनायी देती है। यह सब देखकर वे आर्तवाणीमें विलाप करने लगे। वे बोले- जिसकी बोली सारसोंकी आवाजके समान मीठी थी तथा जो मेरे आश्रमपर सारसोंद्वारा परस्पर एक दूसरेको बुलानेके लिये किये गये मधुर शब्दोंसे मन बहलाती थी, वह मेरी स्त्री सीता आज किस तरह मनोरञ्जन करती होगी ? सुवर्णमय वृक्षोंके समान निर्मल और खिले हुए असन नामक वृक्षोंको देखकर बार-बार उन्हें निहारती हुई भोली-भाली सीता जब मुझे अपने पास नहीं देखती होगी, तब कैसे उसका मन लगता होगा ? जिसके सभी अङ्ग मनोहर हैं तथा जो स्वभावसे ही मधुर भाषण करनेवाली है, वह सीता पहले कलहंसोंके मधुर शब्दसे जागा करती थी; किंतु आज वह मेरी प्रिया वहाँ कैसे प्रसन्न रहती होगी? जिसके विशाल नेत्र प्रफुल्ल कमलदलके समान शोभा पाते हैं, वह मेरी प्रिया जब साथ विचरनेवाले चकवोंकी बोली सुनती होगी, तब उसकी कैसी दशा हो जाती होगी ? हाय। मैं नदी, तालाब, बावली कानन और वन सब जगह घूमता हूँ; परंतु कहीं भी उस मृगशावकनयनी सीताके बिना अब मुझे सुख नहीं मिलता है।

कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि शरद्-ऋतुके गुणोंसे निरन्तर वृद्धिको प्राप्त होनेवाला काम भामिनी सीताको अत्यन्त पीड़ित कर दे; क्योंकि ऐसी सम्भावनाके दो कारण हैं- एक तो उसे मेरे वियोगका कष्ट है, दूसरे वह अत्यन्त सुकुमारी होनेके कारण इस कष्टको सहन नहीं कर पाती होगी। दुस्सह चिन्तामें मग्न होकर अचेत-से हो गये थे और एकान्तमें अकेले ही दुखी होकर बैठे थे। उस समय मनस्वी सुमित्राकुमार लक्ष्मणने जब उन्हें देखा, तब वे तुरंत ही भाईके विषादसे अत्यन्त दुखी हो गये और उनसे इस प्रकार बोले-

आर्य ! इस प्रकार कामके अधीन होकर अपने पौरुषका तिरस्कार करनेसे- पराक्रमको भूल जानेसे क्या लाभ होगा ? इस लज्जाजनक शोकके कारण आपके चित्तकी एकाग्रता नष्ट हो रही है। तात ! आप आवश्यक कर्मोंके अनुष्ठानमें पूर्णरूपसे लग जाइये, मनको प्रसन्न कीजिये और हर समय चित्तकी एकाग्रता बनाये रखिये। साथ ही, अन्त:करणमें दीनताको स्थान न देते हुए अपने पराक्रमकी वृद्धिके लिये सहायता और शक्तिको बढ़ानेका प्रयत्न कीजिये।

मानववंशके नाथ तथा श्रेष्ठ पुरुषोंके भी पूजनीय वीर रघुनन्दन ! जिनके स्वामी आप हैं, वे जनकनन्दिनी सीता किसी भी दूसरे पुरुषके लिये सुलभ नहीं है; क्योंकि जलती हुई आगकी लपटके पास जाकर कोई भी दग्ध हुए बिना नहीं रह सकता।

भगवान् श्रीरामने लक्ष्मणसे कहा- कुमार ! तुमने जो बात कही है, वह वर्तमान समयमें हितकर, भविष्यमें भी सुख पहुँचानेवाली, राजनीतिके सर्वथा अनुकूल तथा सामके साथ-साथ धर्म ओर अर्थसे भी संयुक्त है। निश्चय ही सीताके अनुसंधान कार्यपर ध्यान देना चाहिये तथा उसके लिये विशेष कार्य या उपायका भी अनुसरण करना चाहिये; किंतु प्रयत्न छोड़कर पूर्णरूपसे बढ़े हुए दुर्लभ एवं बलवान् कर्मके फलपर ही दृष्टि रखना उचित नहीं है।

सुमित्रानन्दन ! सहस्त्रनेत्रधार इन्द्र इस पृथ्वीको जलसे तृप्त करके यहाँके अनाजोंको पकाकर अब कृतकृत्य हो गये हैं।

राजकुमार ! देखो, जो अत्यन्त गम्भीर स्वरसे गर्जना किया करते और पर्वतों, नगरों तथा वृक्षोंके ऊपरसे होकर निकलते थे, वे मेघ अपना सारा जल बरसाकर शान्त हो गये। सौम्य ! जिनके भीतर जल विद्यमान था तथा जिनमें कुटज और अर्जुनके फूलोंकी सुगन्ध भरी हुई थी, वे अत्यन्त वेगशाली झंझावात उमड़-घुमड़कर सम्पूर्ण दिशाओंमें विचरण करके अब शान्त हो गये हैं।

निष्पाप लक्ष्मण ! बादलों, हाथियों, मोरों और झरनोंके शब्द इस समय सहसा शान्त हो गये हैं। महान् मेघोंद्वारा बरसाये हुए जलसे धुल जानेके कारण ये विचित्र शिखरोंवाले पर्वत अत्यन्त निर्मल हो गये हैं। इन्हें देखकर ऐसा जान पड़ता है, मानो चन्द्रमाकी किरणोंद्वारा इनके ऊपर सफेदी कर दी गयी है। इस समय शरत्कालके गुणोंसे सम्पन्न हुई लक्ष्मी यद्यपि अनेक आश्रयोंमें विभक्त होकर विचित्र शोभा धारण करती हैं, तथापि सूर्यकी प्रथम किरणोंसे विकसित हुए कमल-वनोंमें वे सबसे अधिक सुशोभित होती हैं। जिनके पंख सुन्दर और विशाल हैं, जिन्हें कामक्रीडा अधिक प्रिय है, जिनके ऊपर कमलोंके पराग बिखरे हुए हैं, जो बड़ी-बड़ी नदियोंके तटोंपर उतरे हैं और मानसरोवरसे साथ ही आये हैं, उन चक्रवाकोंके साथ हंस क्रीडा कर रहे हैं। मदमत्त गजराजोंमे, दर्प-भरे वृषभोंके समूहोंमें तथा स्वच्छ जलवाली सरिताओंमे नाना रूपोंमें विभक्त हुई लक्ष्मी विशेष शोभा पा रही है।

आकाशको बादलोंसे शून्य हुआ देख वनोंमें पंखरूपी आभूषणोंका परित्याग करनेवाले मोर अपनी प्रियतमाओंसे विरक्त हो गये हैं। उनकी शोभा नष्ट हो गयी है और वे आनन्दशून्य हो ध्यानमग्न होकर बैठे हैं। जो अपनी प्रियतमाओंके साथ विचरते हैं, जिन्हें कमलके पुष्प तथा वन अधिक प्रिय हैं, जो छितवनके फूलोंको सूँघकर उन्मत्त हो उठे हैं, जिनमें अधिक मद है तथा जिन्हें मदजनित कामभोगकी लालसा नही हुई है, उन गजराजोंकी गति आज मन्द हो गयी है।

इस समय आकाशका रंग शानपर चढ़े हुए शस्त्रकी धारके समान स्वच्छ दिखायी देता है, नदियोंके जल मन्दगतिसे प्रवाहित हो रहे हैं, श्वेत कमलकी सुगन्ध लेकर शीतल मन्द वायु चल रही है, दिशाओंका अन्धकार दूर हो गया है और अब उनमें पूर्ण प्रकाश छा रहा है। धाम लगनेसे धरतीका कीचड़ सूख गया है। अब उस पर बहुत दिनोंके बाद घनी धूल प्रकट हुई है। परस्पर वैर रखनेवाले राजाओंके लिये युद्धके निमित्त उद्योग करनेका समय अब आ गया है। शरद-ऋतुके गुणोंने जिनके रूप और शोभाको बढ़ा दिया है, जिनके सारे अङ्गोंपर धूल छा रही है, जिनके मदकी अधिक वृद्धि हुई है तथा जो युद्धके लिये लुभाये हुए हैं, वे साँड़ इस समय गौओंके बीचमें खड़े होकर अत्यन्त हर्षपूर्वक हँकड़ रहे हैं। जिसमें कामभावका उदय हुआ है, इसीलिये जो अत्यन्त तीव्र अनुरागसे युक्त है और अच्छे कुलमें उत्पन्न हुई है, वह मन्दगतिसे चलनेवाली हथिनी वनोंमें जाते हुए अपने मदमत्त स्वामीको घेरकर उसका अनुगमन करती है।

अपने आभूषणरूप श्रेष्ठ पंखोंको त्यागकर नदियोंके तटोंपर आये हुए मोर मानो सारस-समूहोंकी फटकार सुनकर दुखी और खिन्नचित्त हो पीछे लौट जाते हैं। जिनके कीचड़ दूर हो गये हैं, जो बालुकाओंसे सुशोभित हैं, जिनका जल बहुत ही स्वच्छ है तथा गौओंके समुदाय जिनके जलका सेवन करते हैं, सारसोंके कलरवोंसे गूँजती हुई उन सरिताओंमें हंस बड़े हर्षके साथ उतर रहे हैं। नदी, मेघ, झरनोंके जल, प्रचण्ड वायु, मोर और हर्षरहित मेढ़कोंके शब्द निश्चय ही इस समय शान्त हो गये हैं।

नूतन मेघोंके उदित होनेपर जो चिरकालसे बिलोंमें छिपे बैठे थे, जिनकी शरीरयात्रा नष्टप्राय हो गयी थी और इस प्रकार जो मृतवत् हो रहे थे, वे भयंकर विषवाले बहुरंगे सर्प भूखसे पीड़ित होकर अब बिलोंसे बाहर निकल रहे हैं।

चाँदनीकी चादर ओढ़े हुए शरत्कालकी यह रात्रि श्वेत साड़ीसे ढके हुए अङ्गवाली एक सुन्दरी नारीके समान शोभा पाती है। उदित हुआ चन्द्रमा ही उसका सौम्य मुख है और तारे ही उसकी खुली हुई मनोहर आँखें हैं। कुमुदके फूलोंसे भरा हुआ उस महान् तालाबका जल जिसमें एक हंस सोया हुआ है, ऐसा जान पड़ता है मानो रातके समय बादलोंके आवरणसे रहित आकाश सब ओर छिटके हुए तारोंसे व्याप्त होकर पूर्ण चन्द्रमाके साथ शोभा पा रहा हो।

नदियोंके तट मन्द-मन्द वायुसे कम्पित, पुष्परूपी हाससे सुशोभित और धुले हुए निर्मल रेशमी वस्त्रोंके समान प्रकाशित होनेवाले नूतन कासोंसे बड़ी शोभा पा रहे हैं। जल स्वच्छ हो गया है, धानकी खेती पक गयी है, वायु मन्दगतिसे चलने लगी है और चन्द्रमा अत्यन्त निर्मल दिखायी देता है- ये सब लक्षण उस शरत्कालके आगमन की सूचना देते हैं, जिसमें वर्षाकी समाप्ति हो जाती है, क्रौञ्च पक्षी बोलने लगते हैं और फूल उस ऋतुके हासकी भाँति खिल उठते हैं।

रातको प्रियतमके उपभोगमें आकर प्रात:काल अलसायी गतिसे चलनेवाली कामिनियोंकी भाँति उन नदीस्वरूपा वधुओंकी गति आज मन्द हो गयी है, जो मछलियोंकी मेखला-सी धारण किये हुए हैं। अच्छी वर्षासे लोगोंको संतुष्ट करके, नदियों और तालाबोंको पानीसे भरकर तथा भूतलको परिपक्व धानकी खेतीसे सम्पन्न करके बादल आकाश छोड़कर अदृश्य हो गये।

सौम्य ! सभी जलाशयोंके जल स्वच्छ हो गये हैं। वहाँ कुरर पक्षियोंके कलनाद गूँज रहे हैं और चक्रवाकोंके समुदाय चारों ओर बिखरे हुए हैं। इस प्रकार उन जलाशयोंकी बड़ी शोभा हो रही है।

हे लक्ष्मण ! देखो, वर्षा बीत गयी और परम सुन्दर शरद-ऋतु आ गयी। फूले हुए काससे सारी पृथ्वी छा गयी। मानो वर्षा-ऋतुने कासरूपी सफेद बालोंके रूपमें अपना बुढ़ापा प्रकट किया।

अगस्त्यके तारेने उदय होकर मार्गके जलको सोख लिया, जैसे सन्तोष लोभको सोख लेता है। नदियों और तालाबोंका निर्मल जल ऐसी शोभा पा रहा है जैसे मद और मोहसे रहित संतोंका हृदय। नदी और तालाबोंका जल धीरे-धीरे सूख रहा है। जैसे ज्ञानी विवेकी पुरुष ममताका त्याग करते हैं। शरद-ऋतु जानकर खंजन पक्षी आ गये। जैसे समय पाकर सुन्दर सुकृत आ जाते हैं पुण्य प्रकट हो जाते हैं।

न कीचड़ है न धूल; इससे धरती निर्मल होकर ऐसी शोभा दे रही है जैसे नीतिनिपुण राजाकी करनी। जलके कम हो जानेसे मछलियाँ व्याकुल हो रही हैं, जैसे मूर्ख विवेकशून्य कुटुम्बी गृहस्थ धनके बिना व्याकुल होता है।

बिना बादलोंका निर्मल आकाश ऐसा शोभित हो रहा है जैसे भगवद्भक्त सब आशाओंको छोड़कर सुशोभित होते हैं। कहीं-कहीं विरले ही स्थानोंमें शरद् ऋतुकी थोड़ी-थोड़ी वर्षा हो रही है। जैसे कोई बिरले ही मेरी भक्ति पाते हैं।

शरद ऋतु पाकर राजा, तपस्वी, व्यापारी और भिखारी क्रमश: विजय, तप, व्यापार और भिक्षाके लिये हर्षित होकर नगर छोड़कर चले। जैसे श्रीहरिकी भक्ति पाकर चारों आश्रमवाले नाना प्रकारके साधनरूपी श्रमोंको त्याग देते हैं।

जो मछलियाँ अथाह जलमें हैं, वे सुखी हैं, जैसे श्रीहरिके शरणमें चले जानेपर एक भी बाधा नहीं रहती। कमलोंके फूलनेसे तालाब कैसी शोभा दे रहा है, जैसे निर्गुण ब्रह्म सगुण होनेपर शोभित होता है।

भौंरे अनुपम शब्द करते हुए गूँज रहे हैं, तथा पक्षियोंके नाना प्रकारके सुन्दर शब्द हो रहे हैं। रात्रि देखकर चकवेके मनमें वैसे ही दु:ख हो रहा है, जैसे दूसरेकी सम्पत्ति देखकर दुष्टको होता है। पपीहा रट लगाये है, उसको बड़ी प्यास है, जैसे श्रीशंकरजीका द्रोही सुख नहीं पाता सुखके लिये झीखता रहता है। शरद-ऋतुके तापको रातके समय चन्द्रमा हर लेता है, जैसे संतोंके दर्शनसे पाप दूर हो जाते हैं।

चकोरोंके समुदाय चन्द्रमाको देखकर इस प्रकार टकटकी लगाये हैं जैसे भगवद्भक्त भगवान्‌को पाकर उनके निर्निमेष नेत्रोंसे दर्शन करते हैं। मच्छर और डाँस जाड़ेके डरसे इस प्रकार नष्ट हो गये जैसे ब्राह्मणके साथ वैर करनेसे कुलका नाश हो जाता है।

वर्षा-ऋतुके कारण पृथ्वीपर जो जीव भर गये थे, वे शरद ऋतुको पाकर वैसे ही नष्ट हो गये जैसे सद्गुरुके मिल जानेपर सन्देह और भ्रमके समूह नष्ट हो जाते हैं। वर्षा बीत गयी, निर्मल शरद्-ऋतु आ गयी। परन्तु हे तात ! सीताकी कोई खबर नहीं मिली। एक बार कैसे भी पता पाऊँ तो कालको भी जीतकर पलभरमें जानकीको ले आऊँ।

कहीं भी रहे, यदि जीती होगी तो हे तात ! यत्न करके मैं उसे अवश्य लाऊँगा। राज्य, खजाना, नगर और स्त्री पा गया, इसलिये सुग्रीवने भी मेरी सुधि भुला दी। जिस बाणसे मैंने बालि को मारा था, उसी बाणसे कल उस मूढ़को मारूँ। शिवजी कहते हैं- हे उमा! जिनकी कृपासे मद और मोह छूट जाते हैं, उनको कहीं स्वप्नमें भी क्रोध हो सकता है ? यह तो लीलामात्र है।

अब वर्षा तो बीत गयी लक्ष्मण। दिशाएँ कासके पुष्पोंसे उज्वल हँसती लगती है। और रजनी शारदी ज्योत्सनासे धवल हो गयी है। सीताके बिना मेरे दिन युगों-जैसे व्यतीत होते हैं। श्रीरामने चारों ओर फूले कासको देखकर कहा- मैं सरिताओंके जलके उतर जाने और सुग्रीवकी प्रतीक्षा करता हुआ किसी प्रकार समय व्यतीत कर रहा था। सरिताओंका जल स्वच्छ हो गया। मार्ग यात्रा-योग्य हो गये; किंतु सुग्रीवको मुझपर दया नहीं आयी ?

सुग्रीव सोचता है कि उसका शत्रु नष्ट हो गया, राज्य मिल गया, अब वह क्यों निर्वासित, वनवासी रामके लिए व्यर्थमें कोई बखेड़ा करे। बाणोंमें रोष आया- उस मूर्खको पता नहीं कि रामके तूणीरमें वह बाण अभी वैसा ही धरा है, जिसने बालिको स्वर्ग भेज दिया। सुग्रीव मेरा वही बालि-वध वाला रूप देखना चाहता है ?

९) किष्किन्धा में लक्ष्मण का सुग्रीव पर रोष- श्रीराम लक्ष्मणसे बोले- सौम्य ! राजकुमार ! जिनमें परस्पर वैर बँधा हुआ है और जो एक दूसरेको जीतनेकी इच्छा रखते हैं, उन भूमिपालोंके लिये यह युद्धके निमित्त उद्योग करनेका समय उपस्थित हुआ है। राजाओंकी विजय यात्राका यह प्रथम अवसर हैं, किंतु न तो मैं सुग्रीवको यहाँ उपस्थित देखता हूँ और न उनका कोई वैसा उद्योग ही दृष्टिगोचर होता है। लक्ष्मण ! देखो तो सही, नदियोंके तटोंपर सब ओर हंस, सारस, चक्रवाक और कुरर नामक पक्षी फैले हुए हैं। मैं सीताको न देखनेके कारण शोकसे संतप्त हो रहा हूँ; अत: ये वर्षाके चार महीने मेरे लिये सौ वर्षोंके समान बीते हैं। जैसे चकवी अपने स्वामीका अनुसरण करती है, उसी प्रकार कल्याण सीता इस भयंकर एवं दुर्गम दण्डकारण्यको उद्यान-सा समझकर मेरे पीछे यहाँतक चली आयी थी।

लक्ष्मण ! मैं अपनी प्रियतमासे बिछुड़ा हुआ हूँ। मेरा राज्य छीन लिया गया है और मैं देशसे निकाल दिया गया हूँ। इस अवस्थामें भी राजा सुग्रीव मुझपर कृपा नहीं कर रहा है। मैं अनाथ हूँ, राज्यसे भ्रष्ट हो गया हूँ। रावणने मेरा तिरस्कार किया है। मैं दीन हूँ। मेरा घर यहाँसे बहुत दूर है। मैं कामना लेकर यहाँ आया हूँ तथा सुग्रीव यह भी समझता है कि राम मेरी शरणमें आये हैं। इन्हीं सब कारणोंसे वानरोंका राजा दुरात्मा सुग्रीव मेरा तिरस्कार कर रहा है; किंतु उसे पता नहीं है कि मैं सदा शत्रुओंको संताप देनेमें समर्थ हूँ। उसने सीताकी खोजके लिये समय निश्चित कर दिया था; किंतु उसका तो अब काम निकल गया है, इसीलिये वह दुर्बुद्धि वानर प्रतिज्ञा करके भी उसका कुछ ख्याल नहीं कर रहा है। अत: लक्ष्मण। तुम मेरी आज्ञासे किष्किन्धापुरीमें जाओ और विषय-भोगमें फँसे हुए मूर्ख वानरराज सुग्रीवसे यह कहो- जो बल-पराक्रमसे सम्पन्न तथा पहले ही उपकार करनेवाले कार्यार्थी पुरुषोंको प्रतिज्ञापूर्वक आशा देकर पीछे उसे तोड़ देता है, वह संसारके सभी पुरुषोंमें नीच है। जो अपने मुखसे प्रतिज्ञाके रूपमें निकले हुए भले या बुरे सभी तरहके वचनोंको अवश्य पालनीय समझकर सत्यकी रक्षाको उद्देश्यसे उनका पालन करता है, वह वीर समस्त पुरुषोंमें श्रेष्ठ माना जाता है। जो

अपना स्वार्थ सिद्ध हो जानेपर, जिनके कार्य नहीं पूरे हुए हैं, उन मित्रोंके सहायक नहीं होते- उनके कार्यको सिद्ध करनेकी चेष्टा नहीं करते, उन कृतघ्न पुरुषोंके मरनेपर मांसाहारी जन्तु भी उनका मांस नहीं खाते हैं।

संग्राममें कुपित होकर मेरेद्वारा खींची गयी प्रत्यञ्चा की भयंकर टमारको, जो वज्रकी गड़गड़ाहटको भी मात करनेवाली है, अब फिर तुम्हें सुननेकी इच्छा हो रही है।

वीर राजकुमार । सुग्रीवको तुम-जैसे सहायकके साथ रहनेवाले मेरे पराक्रमका ज्ञान हो चुका है, ऐसी दशामें भी यदि उसे यह चिन्ता न हो कि ये बालिकी भाँति मुझे मार सकते हैं तो यह आश्चर्यकी ही बात है।

शत्रु-नगरीपर विजय पानेवाले लक्ष्मण। जिसके लिये यह मित्रता आदिका सारा अयोजन किया गया, सीताकी खोजविषयक उस प्रतिज्ञाको इस समय वानरराज सुग्रीव भूल गया है- उसे याद नहीं कर रहा है; क्योंकि उसका अपना काम सिद्ध हो चुका।

सुग्रीवने यह प्रतिज्ञा की थी कि वर्षाका अन्त होते ही सीताकी खोज आरम्भ कर दी जायगी, किंतु वह क्रीडा-विहारमें इतना तन्मय हो गया है कि इन बीते हुए चार महीनोंका उसे कुछ पता ही नहीं है।

सुग्रीव मन्त्रियों तथा परिजनोंसहित क्रीडाजनित आमोद-प्रमोदमें फँसकर विविध पेय पदार्थोंका ही सेवन कर रहा है। हमलोग शोकसे व्याकुल हो रहे हैं तो भी वह हमपर दया नहीं करता है। महाबली वीर लक्ष्मण । तुम जाओ। सुग्रीवसे बात करो। मेरे रोषका जो स्वरूप है, वह उसे बताओ और मेरा यह संदेश भी कह सुनाओ।

सुग्रीव ! बालि मारा जाकर जिस रास्तेसे गया है, वह आज भी बंद नहीं हुआ है। इसलिये तुम अपनी प्रतिज्ञापर डटे रहो। बालिके मार्गका अनुसरण न करो। बालि तो रणक्षेत्रमें अकेला ही मेरे बाणसे मारा गया था, परंतु यदि तुम सत्यसे विचलित हुए तो मैं तुम्हें बन्धु-बान्धवोंसहित कालके गालमें डाल दूँगा।

पुरुषप्रवर ! नरश्रेष्ठ लक्ष्मण ! जब इस तरह कार्य बिगड़ने लगे, ऐसे अवसरपर और भी जो-जो बातें कहनी उचित हों- जिनके कहनेसे अपना हित होता हो, वे सब बातें कहना। जल्दी करो; क्योंकि कार्य आरम्भ करनेका समय बीता जा रहा है।

सुग्रीवसे कहो- वानरराज ! तुम सनातन धर्मपर दृष्टि रखकर अपनी की हुई प्रतिज्ञाको सत्य कर दिखाओ, अन्यथा ऐसा न हो कि तुम्हें आज ही मेरे बाणोंसे प्रेरित हो प्रेतभावको प्राप्त होकर यमलोकमें बालिका दर्शन करना पड़े।

मानव वंशकी वृद्धि करनेवाले उग्र तेजस्वी लक्ष्मणने जब अपने बड़े भाईको दुखी, बढ़े हुए तीव्र रोषसे युक्त तथा अधिक बोलते देखा, तब वानरराज सुग्रीवके प्रति कठोर भाव धारण कर लिया और श्रीरामसे इसप्रकार बोले- आर्य ! सुग्रीव वानर है, वह श्रेष्ठ पुरुषोंके लिये उचित सदाचारपर स्थिर नहीं रह सकेगा। सुग्रीव इस बातको भी नहीं मानता है कि अग्निको साक्षी देकर श्रीरघुनाथके साथ मित्रता-स्थापनरूप जो सत्-कर्म किया गया है, उसीके फलसे मुझे निष्कण्टक राज्यभोग प्राप्त हुए हैं। अत: वह वानरोंकी राज्य-लक्ष्मीका पालन एवं उपभोग नहीं कर सकेगा; क्योंकि उसकी बुद्धि मित्रधर्मके पालनके लिये अधिक आगे नहीं बढ़ रही है।

सुग्रीवकी बुद्धि मारी गयी है, इसलिये वह विषयभोगोंमें आसक्त हो गया है। आपकी कृपासे जो उसे राज्य आदिका लाभ हुआ है, उस उपकारका बदला चुकानेकी उसकी नीयत नहीं है। अत: अब वह भी मारा जाकर अपने बड़े भाई वीरवर बालिका दर्शन करे। ऐसे गुणहीन पुरुषको राज्य नहीं देना चाहिये।

मेरे क्रोधका वेग बढ़ा हुआ है। मैं इसे रोक नहीं सकता। असत्यवादी सुग्रीवको आज ही मारे डालता हूँ। अब बालिकुमारअङ्गद ही राजा होकर प्रधान वानरवीरोंके साथ राजकुमारी सीताकी खोज करे।

यों कहकर लक्ष्मण धनुष-बाण हाथमें ले बड़े वेगसे चल पड़े। उन्होंने अपने जानेका प्रयोजन स्पष्ट शब्दोंमें निवेदन कर दिया था। युद्धके लिये उनका प्रचण्ड कोप बढ़ा हुआ था तथा वे क्या करने जा रहे हैं, इसपर उन्होंने अच्छी तरह विचार नहीं किया था। उस समय विपक्षी वीरोंका संहार करनेवाले श्रीरामने उन्हें शान्त करनेके लिये यह अनुनययुक्त बात कही- सुमित्रानन्दन ! तुम-जैसे श्रेष्ठ पुरुषको संसारमें ऐसा मित्रवधरूप निषिद्ध आचरण नहीं करना चाहिये। जो उत्तम विवेकके द्वारा अपने क्रोधको मार देता है, वह वीर समस्त पुरुषोंमें श्रेष्ठ है। लक्ष्मण ! तुम सदाचारी हो। तुम्हें इस प्रकार सुग्रीव-के मारनेका निश्चय नहीं करना चाहिये। उसके प्रति जो तुम्हारा प्रेम था, उसीका अनुसरण करो और उसके साथ पहले जो मित्रता की गयी है, उसे निबाहो।

तुम्हें सान्त्वनापूर्ण वाणीद्वारा कटु वचनोंका परित्याग करते हुए सुग्रीवसे इतना ही कहना चाहिये कि तुमने सीताकी खोजके लिये जो

समय नियत किया था, वह बीत गया फिर भी चुप क्यों बैठे हो।

अपने बड़े भाईके इस प्रकार यथोचित्त रूपसे समझाने-पर शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले पुरुषप्रवर वीर लक्ष्मणने किष्किन्धापुरीमें प्रवेश करनेका विचार किया। ज्ञानी मुनि जिन्होंने श्रीरघुनाथके चरणोंमें प्रीति मान ली है जोड़ ली है, वे ही इस चरित्र लीलारहस्य को जानते हैं। लक्ष्मणने जब प्रभुको क्रोधयुक्त जाना, तब उन्होंने धनुष चढ़ाकर बाण हाथमें ले लिये। तब दयाकी सीमा श्रीरघुनाथने छोटे भाई लक्ष्मणको समझाया कि हे तात ! सखा सुग्रीवको केवल भय दिखलाकर ले आओ उसे मारनेकी बात नहीं है।

सुग्रीव बुद्धि भ्रष्ट है। कृतघ्न है यह वानर, और कृतघ्नका मांस तो राक्षस भी नहीं खाते। लक्ष्मण क्रुद्ध हो उठे- आपकी कृपाको उसने विस्मृत कर दिया। ऐसा अकृतज्ञ राज्य पानेका अधिकारी नहीं है। उसे और उसके नगरको भस्म कर दूँगा।

लक्ष्मण। रुको। अनुजको धनुष चढ़ाते देखकर श्रीरामने गम्भीर स्वरमें कहा- तुम जानते हो कि राम किसीको अपनाकर छोड़ना नहीं जानता। सुग्रीव अकृतज्ञ, लम्पट, ग्राम्य-सुख-लीन हो सकता है, जीव तो सदासे ही दुर्बल है; किंतु रामने जिसे अपना स्वीकार किया, उसपर समट आवे, यह तो उचित नहीं है। आर्य ? लक्ष्मण अग्रजका मुख देखते रह गये।

रोष मत करो, रोषका नाट्य करो। पथ-भटके शिशुको जैसे माता नेत्र कड़े करके सम्हालती है, अन्तरमें अनन्त वात्सल्य प्राणियोंपर बनाये रखना है, इसे विस्मृत मत करो। श्रीरामने अनुजको आदेश दिया- बुराई को बुराईसे मिटाना योग्य नहीं है। बुराईका प्रतिकार अच्छाईसे किया जाना चाहिये। सुग्रीवको मैंने अग्निकी साक्षीमें मित्र बनाया है। वह वध्य नहीं, रक्षणीय है; किंतु उस अज्ञ को किष्किंधा जाकर धमकाकर जगा दो, सावधान कर दो। उससे कहो कि बालि जिस मार्गसे गया, वह मार्ग न सँकरा हो गया, न रुद्ध हुआ। उस मार्गकी ओर मुख करना है उसे ?

सौमित्र सीधे सुग्रीव के सम्मुख उपस्थित हों और अधिक-से अधिक उग्र रूप में उस तक मेरा संदेश पहुँचाएँ कि जिस मार्ग से बालि गया था, वह मार्ग अभी बंद नहीं हुआ है। कुछ क्षणों तक सब लोग चुप रहे, जैसे राम की बात को मन-ही-मन तोल रहे हों।

मैं प्रस्तुत हूँ। लक्ष्मण ने आश्वस्त स्वर में कहा।

राम बोले- वस्तुत: बहुत सोचने के पश्चात मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि किन्हीं कारणों से सुग्रीव की जड़ता ऐसी स्थिति तक पहुँची है कि हितैषियों द्वारा समझाया-बुझाया जाना उन पर कोई प्रभाव नहीं डालेगा। हनुमान सुग्रीव के व्यवहार से कितने चिंतित हैं, यह मैं निजी रूप में जानता हूँ। नील कल ही परिवाद के रूप में अनेक बातें कहकर गया है। पिछले कुछ दिनों से अंगद से मेरी भेंट नहीं हुई, पर तुम लोगों की उसके संबंध में भी यही धारणा है। अन्य लोग चिंतित नहीं होंगे- यह स्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रश्न है, क्या इन लोगों ने सुग्रीव को समझाया नहीं हो ? मैं समझता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति ने सुग्रीव को भरसक समझाया होगा। पर सुग्रीव क्रमश: हम सबसे असंपृक्त होता जा रहा है। न केवल वह हमारी कोई सहायता नहीं कर पा रहा, वरन् वह वानर-जाति तथा अपने लिए भी उपयोगी नहीं रह गया है। ठीक-ठीक मूल्यांकन किया जाए तो सत्य यह है कि वह वानरों की प्रगति के मार्ग में बाधा-स्वरूप अड़ गया है और उनके गृह-युद्ध का कारण बन गया है। ऐसे में मैंने उसकी मैत्री को दाँव पर लगाने का निश्चय किया है।

पर मैत्री टूटने का परिणाम ? पहली बात तो यह है कि सुग्रीव मैत्री तोड़ने का साहस नहीं करेगा।

राम बोले, यदि हमें उसकी आवश्यकता है, तो उसे भी हमारी आवश्यकता है।

भाईके प्रिय और हितमें तत्पर रहनेवाले शुभ बुद्धिसे युक्त बुद्धिमान लक्ष्मण रोषमें भरे हुए ही वानरराज सुग्रीवके भवनकी ओर चले।

सीताकी खोजविषयक जो श्रीरामकी कामना थी और सुग्रीवकी असावधानीके कारण उसमें बाधा पड़नेसे जो उन्हें क्रोध हुआ था, उन दोनोंके कारण लक्ष्मणकी भी क्रोधाग्नि भड़क उठी थी। उस क्रोधाग्निसे घिरे हुए लक्ष्मण सुग्रीवके प्रति प्रसन्न नहीं थे। वे उसी अवस्थामें वायुके समान वेगसे चले। शीघ्रगामी हाथीके समान अपने पैरोंकी ठोकरसे शिलाओंको चूर-चूर करते और लंबी-लंबी डगे भरते हुए वे कार्यवश बड़ी तेजीके साथ चले।

इक्ष्वाकुकुलके सिंह लक्ष्मणने निकट जाकर वानरराज सुग्रीवकी विशाल पुरी किष्किन्धा देखी, जो पहाड़ोंके बीचमें बसी हुई थी। वानरसेनासे व्याप्त होनेके कारण वह पूरी दूसरोंके लिये दुर्गम थी। उस समय लक्ष्मणके ओष्ठ सुग्रीवके प्रति रोषसे फड़क रहे थे। उन्होंने किष्किन्धाके पास बहुतेरे भयंकर वानरोंको देखा, जो नगरके बाहर विचर रहे थे। उन वानरोंके शरीर हाथियोंके समान विशाल थे। उन समस्त वानरोंने पुरुषप्रवर लक्ष्मणको देखते ही पर्वतके अंदर विद्यमान सैकड़ों शैल-शिखर और बड़े-बड़े वृक्ष उठा लिये।

उन सबको हथियार उठाते देख लक्ष्मण क्रोधसे जल उठे, मानो जलती आगमें बहुत-सी सूखी लकड़ियाँ डाल दी गयी हों। क्षुब्ध हुए लक्ष्मण काल, मृत्यु तथा प्रलयकालीन अग्निके समान भयंकर दिखायी देने लगे। उन्हें देखकर उन वानरोंके शरीर भयसे काँपने लगे और वे सैकड़ोंकी संख्यामें चारों दिशाओंमें भाग गये। तदनन्तर कई श्रेष्ठ वानरोंने सुग्रीवके महलमें जाकर लक्ष्मण के आगमन और क्रोधका समाचार निवेदन किया। उस समय कामके अधीन हुए वानरराज सुग्रीव भोगासक्त हो ताराके साथ थे। इसलिये उन्होंने उन श्रेष्ठ वानरोंकी बातें नहीं सुनीं। किन्हींमें दस हाथियोंके बराबर बल था तो कोई सौ हाथियोंके समान बलशाली थे तथा किन्हीं किन्हींका तेज बल और पराक्रम एक हजार हाथियोंके तुल्य था।

आत्मसंयमी वीर लक्ष्मण सुग्रीवके प्रमाद तथा अपने बड़े भाईके महत्त्वपूर्ण कार्यपर दृष्टिपात करके पुन: वानरराज के प्रति क्रोधके वशीभूत हो गये। उनके नेत्र क्रोधसे लाल हो गये। उस समय लक्ष्मण धूमयुक्त अग्निके समान प्रतीत हो रहे थे।

उस अवसरपर कुमार अङ्गद प्रज्वलित प्रलयाग्नि तथा क्रोधमें भरे हुए नागराज शेषकी भाँति दृष्टिगोचर होनेवाले लक्ष्मणके पास डरते-डरते गये। वे अत्यन्त विषादमें पड़ गये थे।

महायशस्वी लक्ष्मणने क्रोधसे लाल आँखें करके अङ्गदको आदेश दिया- बेटा। सुग्रीवको मेरे आनेकी सूचना दो। उनसे कहना- शत्रुदमन वीर। श्रीरामके छोटे भाई लक्ष्मण अपने भ्राताके दु:खसे दु:खी होकर आपके पास आये हैं और नगर-द्वारपर खड़े हैं। वानरराज। यदि आपकी इच्छा हो तो उनकी आज्ञाका अच्छी तरह पालन कीजिये। शत्रुदमन वत्स अङ्गद। बस, इतना ही कहकर तुम शीघ्र मेरे पास लौट आओ।

तभी अंगद प्राय: भागते हुए-से आए, सम्राट कहाँ हैं ?

क्या बात है युवराज ?

लक्ष्मण ! अंगद अधिक नहीं कह पाए।

कहाँ हैं ?

उनके सशस्त्र जन-सैनिक प्रासाद के चारों ओर फैल गए हैं और वे स्वयं बाहरी ड्योढ़ी पर खड़े धनुष टँकार रहे हैं।

हमारे द्वारपाल ? सब भयभीत होकर भाग गए हैं।

ऐसा करो, अंगद। रुमा बोलीं, तुम बहन तारा से कहो, वे जाकर लक्ष्मण का स्वागत करें और उन्हें भीतर लिवा लाएँ। तब तक मैं सम्राट को जगाती हूँ।

अंगद तारा को बुलाने के लिए भागे और रुमा सुग्रीव के कक्ष की ओर बढ़ गई। हनुमान वहीं खड़े-के-खड़े रह गए। क्या करें हनुमान? वे तो कब से अपने मन में इसी प्रकार की आशंकाएँ पाल रहे थे और डर रहे थे कि कहीं सचमुच ही ऐसी स्थिति न आ जाए कि जिन्हें वे अपने मित्र मानते हैं, जिनके प्रति उनका मन श्रद्धा तथा विश्वास से आप्लावित है, उन्हीं से विरोध की स्थिति आ जाए। आज प्राय: वही स्थिति आ गई है। लक्ष्मण द्वार पर खड़े धनुष टँकार रहे हैं और कोई नहीं जानता कि उनके मन में क्या है। धनुष टँकरना प्रेम का संकेत तो है नहीं। ऐसे में हनुमान का क्या कर्त्तव्य है ? यदि लक्ष्मण ने सचमुच ही सुग्रीव पर आक्रमण किया तो क्या करेंगे हनुमान ? क्या वे लक्ष्मण का विरोध करेंगे ? ऐसे समय में लक्ष्मण के विरोध का अर्थ था उनसे द्वंद्व-युद्ध। सशस्त्र संघर्ष। अपने सम्राट की रक्षा के लिए लक्ष्मण से युद्ध। पर दोष सरासर सम्राट का है। राम और लक्ष्मण ने कुछ भी अनुचित नहीं किया है। बालि के आतंक की समाप्ति तथा किष्किंधा के निर्माण में कितनी सहायता की है उन्होंने। फिर लक्ष्मण के बैर का क्या अर्थ ? और बिना बैर के युद्ध कैसा ? और यदि हनुमान लक्ष्मण से युद्ध नहीं करेंगे तो उसका अर्थ होगा- निष्क्रिय खड़े-खड़े, स्वयं अपनी आँखों के सम्मुख, अपने प्रिय सम्राट की हत्या का पीड़ादायक युद्ध देखना। यह कैसे सह सकेंगे हनुमान ?

सम्राट दोषी ही सही। पर क्या हनुमान इस प्रमाद के लिए अपने सम्राट की हत्या होने देंगे ? और नहीं तो क्या सम्राट को बचाने के लिए लक्ष्मण की हत्या करेंगे ? युद्ध-रत दोनों पक्ष ही अपने मित्र हों तो क्या करे कोई ?

लक्ष्मणकी बात सुनकर शोकाकुल अङ्गदने पिता सुग्रीवके समीप आकर कहा-तात ! ये सुमित्रानन्दन लक्ष्मण यहाँ पधारे हैं।

किंतु सुग्रीव मदमत्त एवं कामसे मोहित होकर पड़े थे। वे निद्रा के वशीभूत थे इसलिये वे जाग न सके। इतनेमें बाहर क्रोधमें भरे हुए लक्ष्मणको देखकर भयसे मोहितचित्त हुए वानर उन्हें प्रसन्न करनेके लिये दीनतासूचक वाणीमें किलकिलाने लगे।

लक्ष्मणपर दृष्टि पड़ते ही उन वानरोंने सुग्रीवके निकटवर्ती स्थानमें एक साथ ही महान् जलप्रवाह तथा वज्रकी गड़गड़ाहटके समान जोर-जोरसे सिंहनाद किया जिससे सुग्रीव जाग उठें। वानरोंकी उस भयंकर गर्जनासे कपिराज सुग्रीवकी नींद खुल गयी। उस समय उनके नेत्र मदसे चञ्चल और लाल हो रहे थे। मन भी स्वस्थ नहीं था।

राजन ! महाभाग श्रीराम और लक्ष्मण दोनों भाई सत्यप्रतिज्ञ हैं। वे वास्तवमें भगवत्स्वरुप है उन्होंने स्वेच्छासे मनुष्य-शरीर धारण किया है। वे दोनों समस्त त्रिलोकीका राज्य चलानेके योग्य हैं। वे ही आपके राज्यदाता हैं।

उनमेंसे एक वीर लक्ष्मण हाथमें धनुष लिये किष्किन्धाके दरवाजेपर खड़े हैं, जिनके भयसे काँपते हुए वानर जोर-जोरसे चीख रहे हैं।

राजन। निष्पाप वानरराज। लक्ष्मणने तारादेवीके इन प्रिय पुत्र अङ्गदको आपके निकट बड़ी उतावलीके साथ भेजा है।

वानरपते ! पराक्रमी लक्ष्मण क्रोधसे लाल आँखें किये नगरद्वारपर उपस्थित हैं और वानरोंकी ओर इस तरह देख रहे हैं, मानो वे अपनी नेत्राग्निसे उन्हें दग्ध कर डालेंगे। महाराज ! आप शीघ्र चलें तथा पुत्र और बन्धु बान्धवोंके साथ उनके चरणोंमें मस्तक नवावें और इस प्रकार आज उनका रोष शान्त करें। राजन्। धर्मात्मा श्रीराम जैसा कहते हैं, सावधानीके साथ उसका पालन कीजिये। आप अपनी दी हुई बात पर अटल रहिये और सत्यप्रतिज्ञ बनिये।

कहाँ है कृतघ्न सुग्रीव ? बहुत गर्व हो गया है उसे वानरोंका राजा बनकर? मैं उसे और उसके नगरको अभी जलाकर भस्म बना दूंगा। लक्ष्मणने धनुषकी प्रत्यञ्चा उतारी नहीं। अग्रजकी आज्ञासे वे वैसे ही किष्किन्ध पहुँचे। बाण चढ़ना अनावश्यक था। केवल ज्याघोष करके द्वारपालोंको, सामने दीखते वानरोंको सुनाकर गर्जना की।

लक्ष्मणने द्वारपालोंकी उपेक्षा कर दी थी। वे नगरमें प्रविष्ट हुए तो कुछ वानरोंको उनका व्यवहार भी अच्छा नहीं लगा था। कुछने रोकनेके उत्साहमें पेड़-पत्थर भी उठा लिए थे; किंतु जैसे ही लक्ष्मणने ज्याघोष किया, सब भयभीत होकर भाग खड़े हुए।

जैसे शत-शत वज्रपात साथ हो रहे हों, लक्ष्मणके धनुषकी प्रत्यञ्चाका भुवन-भेदी नाद घहरा रहा था। लक्ष्मण बराबर ज्याघोष कर रहे थे। वानरोंको लगता था, उनके कर्ण और मस्तिष्क फट जायँगे। पूरी किष्किन्धामें अब अस्त-व्यस्त भाग रहे थे।

आपके द्वारा पालित, आपका चरणाश्रित बालि-पुत्र बानर अङ्गद आपके चरणोंमें प्रणाम करता है। अङ्गद दौड़े आये। लक्ष्मणने अपने पदोंमें प्रणत उन्हें उठाया।

श्रीरामका आश्रित सदा अभय है। लक्ष्मणने उठकर अङ्गदसे कहा- सुग्रीवको समाचार दों उसे मेरी बात माननी हो तो मिले।

इसी समय लक्ष्मण नगरमें आये। उनका क्रोध देखकर बंदर जहाँ-तहाँ भागे। तदनन्तर लक्ष्मणने धनुष चढ़ाकर कहा कि नगरको जलाकर अभी राख कर दूँगा। तब नगरभरको व्याकुल देखकर बालिपुत्र अंगद उनके पास आये। अंगदने उनके चरणोंमें सिर नवाकर विनती की क्षमायाचना की। तब लक्ष्मणने उनको अभय बाँह दी भुजा उठाकर कहा कि डरो मत।

लक्ष्मणके आगमनका समाचार पाकर सुग्रीव आसन छोड़कर खड़े हो गये और हनुमान से कहा- मैंने न तो कोई अनुचित बात मुँहसे निकाली है और न ही कोई बुरा काम ही किया है। फिर श्रीरघुनाथके भ्राता लक्ष्मण मुझपर कुपित क्यों हुए हैं ? इस बातपर मैं बारंबार विचार करता हूँ। लक्ष्मणके कोपके विषयमें पहले तुम सब लोगोंको धीरे-धीरे कुशलतापूर्वक उनके मनोभावका विधिवत् निश्चय कर लेना चाहिये, जिससे उनके कोपके कारणका यथार्थरूपसे ज्ञान हो जाय।

अवश्य ही मुझे लक्ष्मणसे तथा श्रीरघुनाथसे कोई भय नहीं है, तथापि बिना अपराधके कुपित हुआ मित्र हृदयमें घबराहट उत्पन्न कर ही देता है। किसीको मित्र बना लेना सर्वथा सुकर है, परंतु उस मैत्रीको पालना या निभाना बहुत ही कठिन है; क्योंकि मनका भाव सदा एक-सा नहीं रहता। किसीके द्वारा थोड़ी-सी भी चुगली कर दी जानेपर प्रेममें अन्तर आ जाता है। इसी कारण मैं और भी डर गया हूँ; क्योंकि महात्मा श्रीरामने मेरा जो उपकार किया है, उसका बदला चुकानेकी मुझमें शक्ति नहीं है।

सुग्रीवके ऐसा कहनेपर वानरोंमें श्रेष्ठ हनुमान् अपनी युक्तिका सहारा लेकर वानरमन्त्रियोंके बीचमें बोले- कपिराज। मित्रके द्वारा अत्यन्त स्नेहपूर्वक किये गये उत्तम उपकारको जो आप भूल नहीं रहे हैं, इसमें सर्वथा कोई आश्चर्यकी बात नहीं है क्योंकि अच्छे पुरुषोंका ऐसा स्वभाव ही होता है। वीरवर श्रीरघुनाथने तो लोकापवादके भयको दूर हटाकर आपका प्रिय करनेके लिये इन्द्रतुल्य पराक्रमी बालिका वध किया है; अत: वे नि:संदेह आपपर कुपित नहीं हैं। श्रीरामने शोभा सम्पत्तिकी वृद्धि करनेवाले अपने भाई लक्ष्मणको जो आपके पास भेजा है, इसमें सर्वथा आपके प्रति उनका प्रेम ही कारण है।

समयका ज्ञान रखनेवालोंमें श्रेष्ठ कपिराज। आपने सीताकी खोज करनेके लिये जो समय निश्चित किया था, उसे आप इन दिनों प्रमादमें पड़ जानेके कारण भूल गये हैं। यह सुन्दर शरद्-ऋतु आरम्भ हो गयी है। आकाशमें अब बादल नहीं रहे। ग्रह, नक्षत्र निर्मल दिखायी देते हैं। सम्पूर्ण दिशाओंमें प्रकाश छा गया है तथा नदियों और सरोवरोंके जल पूर्णत: स्वच्छ हो गये हैं।

वानरराज। राजाओंके लिये विजय-यात्राकी तैयारी करनेका समय आ गया है; किंतु आपको कुछ पता ही नहीं है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि आप प्रमादमें पड़ गये हैं। इसीलिये लक्ष्मण यहाँ आये हैं।

महात्मा श्रीरामकी पत्नीका अपहरण हुआ है, इसलिये वे बहुत दु:खी हैं। अत: यदि लक्ष्मणके मुखसे उनका कठोर वचन भी सुनना पड़े तो आपको चुपचाप सह लेना चाहिये। आपकी ओरसे अपराध हुआ है। अत: हाथ जोड़कर लक्ष्मणको प्रसन्न करनेके सिवा आपके लिये और कोई उचित कर्तव्य मैं नहीं देखता। भगवान् श्रीराम यदि क्रोध करके धनुष हाथमें ले लें तो देवता-असुर-गन्धर्वोंसहित सम्पूर्ण जगत्को अपने वशमें कर सकते हैं। जिसे पीछे हाथ जोड़कर मनाना पड़े, ऐसे पुरुषको क्रोध दिलाना कदापि उचित नहीं है। विशेषत: वह पुरुष जो मित्रके किये हुए पहले उपकारको याद रखता हो और कृतज्ञ हो, इस बातका अधिक ध्यान रखे।

हनुमानने सुग्रीव को थोड़ा भय दिखाया। हनुमान जानते हैं कि सुग्रीव विषयी जीव है। राम से जोड़ने के लिए इसे लोभ देना चाहिए। उन्होंने कहा- स्वामी ! जिसने केवल सीता-अन्वेषण के वचन मात्र से आपको इतने भोग प्रदान किए हैं, कार्य हो जाने पर पता नहीं वे क्या-क्या देवें। अब चैतन्य होकर आप राम कार्य में प्रवृत्त होवें।

वानरराज ! श्रीराम और लक्ष्मणके आदेशकी आपको मनसे भी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। देवराज इन्द्रके समान तेजस्वी लक्ष्मणसहित श्रीरघुनाथके अलौकिक बलका ज्ञान तो आपके मनको है ही।

किष्किन्धाके द्वारपर जो विशाल शरीरवाले महाबली वानर थे, वे सब लक्ष्मणको देख हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

लक्ष्मणने द्वारके भीतर प्रवेश करके देखा, किष्किन्धापुरी एक बहुत बड़ी रमणीय गुफाके रूपमें बसी हुई है। वह रत्नमयी पुरी नाना प्रकारके रत्नोंसे भरी-पूरी होनेके कारण दिव्य शोभासे सम्पन्न है। वहाँके वन-उपवन फूलोंसे सुशोभित दिखायी दिये। उस पुरीमें विन्ध्याचल तथा मेरुके समान ऊँचे-ऊँचे महल बने थे, जो कई मंजिलके थे। लक्ष्मणने उस गुफाके निकट ही निर्मल जलसे भरी हुई पहाड़ी नदियाँ देखीं। वानरराज सुग्रीवका सुन्दर भवन इन्द्रसदनके समान रमणीय दिखायी देता था। उसमें प्रवेश करना किसीके लिये भी अत्यन्त कठिन था। वह श्वेत पर्वतकी चहारदीवारी-से घिरा हुआ था।

अनेक बलवान् वानर हाथोंमें हथियार लिये उसकी ड्योढ़ीपर पहरा दे रहे थे। वह सुन्दर महल दिव्य मालाओंसे अलंकृत था और उसका बाहरी फाटक पक्के सोनेका बना हुआ था। महाबली सुमित्राकमार लक्ष्मणने सुग्रीवके उस रमणीय भवनमें प्रवेश किया। मानो सूर्यदेव महान् मेघके भीतर प्रविष्ट हुए हों।

धर्मात्मा लक्ष्मणने सवारियों तथा विविध आसनोंसे सुशोभित उस भवनकी सात ड्योढ़ियोंको पार करके बहुत ही गुप्त और विशाल अन्त:पुरको देखा। उसमें जहाँ-तहाँ चाँदी और सोनेके बहुत-से पलंग तथा अनेकानेक श्रेष्ठ आसन रक्खे हुए थे और उन सबपर बहुमूल्य बिछौने बिछे थे। उन सबसे वह अन्त:पुर सुसज्जित दिखायी देता था। उसमें प्रवेश करते ही लक्ष्मणके कानोंमें संगीतकी मीठी तान सुनायी पड़ी, जो वहाँ निरन्तर गूँज रही थी। वीणाके लयपर कोई कोमल कण्ठसे गा रहा था। प्रत्येक पद और अक्षरका उच्चारण सम तालका प्रदर्शन करते हुए हो रहा था।

महाबली लक्ष्मणने सुग्रीवके उस अन्त:पुरमें अनेक रुपरंगकी बहुत-सी सुन्दरी स्त्रियाँ देखीं, जो रुप और यौवनके गर्वसे भरी हुई थीं।

नुपूरोंकी झनकार और करधनीकी खनखनाहट सुनकर सुमित्राकुमार लज्जित हो गये परायी स्त्रियोंपर दृष्टि पड़नेके कारण उन्हें स्वभावत: संकोच हुआ। तत्पश्चात् पुन: आभूषणोंकी झनकार सुनकर वीर लक्ष्मण रोषके आवेगसे और भी कुपित हो उठे और उन्होंने अपने धनुषपर टंकार दी, जिसकी ध्वनिसे समस्त दिशाएँ गूँज उठीं। रघुकुलोचित सदाचारका खयाल करके महाबाहु लक्ष्मण कुछ पीछे हट गये और एकान्तमें जाकर खड़े हो गये। श्रीरामके कार्यकी सिद्धिके लिये वहाँ कोई प्रयत्न होता न देख वे मन-ही-मन कुपित हो रहे थे। धनुषकी टंकार सुनकर वानरराज सुग्रीव समझ गये कि लक्ष्मण यहाँतक आ पहुँचे हैं। फिर तो वे भयसे संत्रस्त होकर अपना सिंहासन छोड़कर खड़े हो गये। वे मन-ही-मन सोचने लगे कि अङ्गदने पहले मुझे जैसा बताया था, उसके अनुसार ये भ्रातृवत्सल सुमित्राकुमार लक्ष्मण अवश्य ही यहाँ आ गये। अङ्गदके द्वारा उनके आगमनका समाचार तो उन्हें पहले ही मिल गया था। अब धनुषकी टंकारसे वानर

सुग्रीवको बस बातका प्रत्यक्ष अनुभव हो गया कि लक्ष्मणने अवश्य यहाँ पर्दापण किया है। फिर तो उनका मुख सूख गया। भयके कारण वे मन-ही-मन घबरा उठे। लक्ष्मणके सामने जानेका उन्हें साहस न हुआ। तथापि किसी तरह धैर्य धारण करके वानरश्रेष्ठ सुग्रीव परम सुन्दरी तारासे हितकी बात बोले- सुन्दरी। इनके रोषका क्या कारण हो सकता है ? जिससे स्वभावत: कोमल चित्त होनेपर भी ये श्रीरघुनाथके छोटे भाई रुष्ट-से होकर यहाँ पधारे हैं। तुम्हारे देखनेमें कुमार लक्ष्मणके रोषका आधार क्या है ? ये मनुष्योंमें श्रेष्ठ हैं। अत: बिना किसी कारणके निश्चय ही क्रोध नहीं कर सकते। यदि हमलोगोंने इनका कोई अपराध किया हो और तुम्हें उसका पता हो तो अपनी बुद्धिसे विचारकर शीघ्र ही बताओ। अथवा भामिनि ! तुम स्वयं ही जाकर लक्ष्मणको देखो और सान्त्वनायुक्त बातें कहकर उन्हें प्रसन्न करनेका प्रयत्न करो। उनका हृदय शुद्ध है। तुम्हारे सामने वे क्रोध नहीं करेंगे; क्योंकि महात्मा पुरुष स्त्रियोंके प्रति कभी कठोर बर्ताव नहीं करते हैं। जब तुम उनके पास जाकर मीठे वचनोंसे उन्हें शान्त कर दोगी और जब उनका मन स्वस्थ एवं इन्द्रियाँ प्रसन्न हो जायँगी, उस समय मैं उन लक्ष्मणका दर्शन करूँगा।

सुग्रीवके ऐसा कहनेपर तारा लक्ष्मणके पास गयी। उसका पतला शरीर स्वाभाविक संकोच एवं विनयसे झुका हुआ था। उसके नेत्र मदसे चञ्चल हो रहे थे, पैर लड़खड़ा रहे थे और उसकी करधनीके सुवर्णमय सूत्र लटक रहे थे।

तारा का मस्तिष्क मधुपान और रात्रि-जागरण से तंद्राग्रस्त था। उनकी इच्छा हो रही थी कि थोड़ी देर के लिए निर्विघ्न शांतिपूर्ण नींद मिल जाए। थोड़ी-सी नींदी ले लें तो मन कुछ सोचने-समझने योग्य हो सकेगा।

किंतु अंगद के मुख से ड्योढ़ी पर खड़े, धनुष टँकारते, लक्ष्मण के क्रुद्ध आक्रामक रूप की चर्चा सुनते ही उनके मन से मधु का मद और निद्रा की तंद्रा- सब कुछ उड़ गया। उन्होंने आज तक लक्ष्मण अथवा राम-दोनों में से किसी को भी धनुष से प्रहार करते नहीं देखा था। उन्होंने उनका क्रुद्ध नहीं, सौम्य रूप ही देखा था, किंतु वक्ष में राम का बाण खाये बालि को तारा नहीं भूल सकतीं। तब राम क्रुद्ध हुए थे, आज लक्ष्मण क्रुद्ध होकर आए हैं। अंगद कह रहा है कि उनके हाथ में धनुष है और वे धनुष की प्रत्यंचा को टँकार रहे हैं तो क्या आज सुग्रीव के वक्ष में बाण लगेगा ?

तारा ने अपने विवेक को साधा और डगमगाते पगों से अंगद के साथ चल पड़ीं। मार्ग में स्थान-स्थान पर घबराई हुए परिचारिकाएँ, प्रतिहारिणियाँ, भयभीत दण्डधर, प्रहरी तथा अंगरक्षक अस्त-व्यस्त खड़े मिले तारा को लगा, लक्ष्मण ने जान-बूझकर ऐसी मुद्रा धारण कर रखी है, जिससे सब लोग आतंकित तो हों; किंतु लक्ष्मण ने अब तक न तो किसी पर प्रहार किया है और न ही उन्होंने प्रासाद में प्रवेश कर सुग्रीव तक पहुँचने का प्रयत्न किया है।

कदाचित लक्ष्मण अपना तथा अपने भाई का रोष जताने ही आए हैं।

लक्ष्मण ने तारा को आज दूसरी बार देखा था- पहली बार बालि के वध के अवसर पर विलाप करती हुई तारा, बालि के शव पर पछाड़ खा-खाकर गिरी थी। तब उसके केश खुले हुए, अस्त-व्यस्त थे। आँखों से अनवरत अश्रु बह रहे थे; और कंठ से रह-रहकर चीत्कार फूटता था। उस मन:स्थिति और वेश में भी तारा के व्यक्तित्व की गरिमा और रूप का आकर्षण सर्वथा अदृश्य नहीं था। किंतु आज उसके चेहरे पर शोक की वह छाया नहीं थी। आँखों में मद की लाली थी और अधरों पर एक कौतुकपूर्ण हास्य था। वेश में परिष्कार तथा संभ्रांतता दोनों ही थीं और यद्यपि वह श्रृंगार करके नहीं आई थी- कदाचित् उसका अवकाश ही नहीं मिला था; किंतु रात्रि के प्रसाधन का अवशेष अब भी था। केश-विन्यास में कलात्मकता तथा सुरुचि स्पष्ट झलक रही थी, यद्यपि उसमें शैथिल्य आ चुका था। यह थी उनके सहायक अंगद की माँ, जो अब सुग्रीव की पत्नी भी थीं। अंगद जैसे तरुण की माँ की दृष्टि से तारा का वय अधिक दिखना चाहिए था; किंतु उसे प्रौढ़ युवती ही कहना होगा, युवती के वय को वह पार कर चुकी थी। किंतु सुग्रीव के वय के पुरुष के लिए वह अब भी कदाचित् अत्यंत आकर्षक स्त्री थी।

तारा को सम्मुख देख लक्ष्मण ने अभिवादन तो नहीं किया, किंतु अपने आक्रोश को अप्रकट रखने के लिए अपनी आँखें अवश्य झुका लीं। वानरराजकी पत्नी तारापर दृष्टि पड़ते ही राजकुमार महात्मा लक्ष्मण अपना मुँह नीचा करके उदासीन भावसे खड़े हो गये। स्त्रीके समीप होनेसे उनका क्रोध दूर हो गया। मधुपानके कारण ताराकी नारी सुलभ लज्जा निवृत्त हो गयी थी। उसे राजकुमार लक्ष्मणकी दृष्टिमें कुछ प्रसन्नता का आभास मिला। इसलिये उसने स्नेहजनित निर्भीकताके साथ महान् अर्थमें युक्त यह सान्त्वनापूर्ण बात कही- राजकुमार। आपके क्रोधका क्या कारण है ? कौन आपकी आज्ञाके अधीन नहीं है ? कौन निडर होकर सूखे वृक्षोंसे भरे हुए वनके भीतर

चारों ओर फैलते हुए दावानलमें प्रवेश कर रहा है ?

तारा की आशंकाएँ कुछ शिथिल हुईं। उतने भय की बात नहीं थी, जितना वे समझ बैठी थीं। लक्ष्मण क्रोध में अवश्य थे, उन्होंने धनुष टँकार कर चेतावनी भी दी थी; किंतु वे प्रहार करने नहीं आए थे। अपना रोष जताने के लिए उन्होंने सहास अभिवादन नहीं किया था, किंतु अपना विरोध जताने के लिए कोई अपशब्द भी नहीं कहा था।

क्या बात है, राजकुमार ? तारा सायास मुसकराईं, आपने हमें एक मधुर स्वागत का भी अवसर नहीं दिया ?

मैं सम्राट से मिलने आया हूँ। लक्ष्मण शुष्क-रुक्ष स्वर में बोले।

सम्राट से मिलने आने के लिए अपने चेहरे को इतना कठोर बनाकर विकृत करना अनिवार्य तो नहीं है, कुमार। तारा की वाणी और आँखों में चंचलता के पीछे कहीं ममता थी, यद्यपि हम अधिक नहीं मिले हैं, किंतु सारी किष्किंधा जानती है कि आर्य राम तथा कुमार लक्ष्मण सम्राट के परिवार के सदस्य-से हैं। फिर भृकुटियाँ कुंचित कर, धनुष टँकरने की क्या आवश्यकता थी, सौमित्र ?

तारा को लगा, लक्ष्मण की आँखों का तेज कुछ अधिक उग्र हो उठा है- कदाचित् वे कोई कठोर बात कहने से स्वंय को रोक रहे थे। तारा का वार लक्ष्य से कुछ आगे जा पड़ा था।

तारा स्नेह और मैत्री के भाव से बोलीं, अंगद सदा आपकी चर्चा एक वरिष्ठ मित्र के रूप में करता है और सम्राट सदा आपको अपने छोटे भाई के रूप में याद करते हैं। उसने रुककर लक्ष्मण के भावों को टटोला, मुझे आप बड़ी भाभी की मर्यादा देंगे न, कुमार।

लक्ष्मण कुछ नहीं बोले, चुपचाप खड़े उसे देखते रहे।

बड़ी भाभी। जो संबंध प्रदत्त पद से ही नहीं, वय की दृष्टि से भी आपसे बहुत बड़ी है, तारा पुन: बोलीं, वात्सल्य का भाव रखने बालि, माँ के समान भाभी। लक्ष्मण के माथे की रेखाएँ कुछ कम हुईं- क्या कहते वे इस गौरवमयी सुंदरी नारी से, जो उनसे देवर का संबंध जोड़, परिहास का अधिकार भी पा लेना चाहती है और माँ का-सा रूप बनाकर श्रद्धा भी माँग रही है। पर क्या गलत कहा तारा ने। लक्ष्मण ने मैत्रियाँ भी तो वैसी ही पाली हैं- अंगद के संबंध से उन्हें तारा को माँ का-सा भाव देना होगा और सुग्रीव के संबंध से बड़ी भाभी का किंतु वह दुष्ट सुग्रीव। ताराके इस वचनमें सान्त्वना भरी थी। उसमें अधिक प्रेमपूर्वक हृदयका भाव प्रकट किया गया था। उसे सुनकर लक्ष्मणके हृदयकी आशमा जाती रही।

देवि। लक्ष्मण का स्वर कोमल, किंतु सधा हुआ था, संबंध तो हमारा कुछ ऐसा ही है, स्पृहणीय भी यही है; किंतु इस संबंध को क्या कहें कि भैया राम और मैं प्रस्त्रवणगिरि पर बैठे देवी वैदेही की खोज की प्रतीक्षा में एक-एक क्षण गिन-गिनकर व्यतीत कर रहे हैं और भाई कहलाने वाला सम्राट, यह दुष्ट सुग्रीव माधवी पी-पीकर केलि-क्रीड़ा में आकंठ डूबा अपनी सुध-बुध खो बैठा है।

ठीक कहते हो कुमार। तारा का स्वर कुछ गंभीर हो गया, यह सम्राट का प्रमाद है। उनके इस व्यवहार का अनुमोदन कोई नहीं करेगा। तारा का स्वर कुछ और गहरा हुआ, वस्तुत: हम सब ही इस विषय में बहुत चिंतित हैं- मैं, अंगद, रुमा, हनुमान- सभी लोग।

तो फिर, देवि। आप सम्राट को समझातीं क्यों नहीं ? लक्ष्मण का रोष पुन: उभरा।

वे कहने लगे- अपने स्वामीके हितमें संलग्न रहनेवाली तारा। तुम्हारा यह पति विषय-भोगमें आसक्त होकर धर्म और अर्थके संग्रहका लोप कर रहा है। क्या तुम्हें इसकी इस अवस्थाका पता नहीं है ? तुम इसे समझाती क्यों नहीं ?

सुग्रीव अपने राज्यकी स्थिरताके लिये ही प्रयास करता है। हमलोग शोकमें डूबे हुए हैं, परंतु हमारी इसे तनिक भी चिन्ता नहीं होती है। यह अपने मन्त्रियों तथा राज-सभाके सदस्योंसहित केवल विषय-भोगोंका ही सेवन कर रहा है।

वानरराज सुग्रीवने चार महीनोंकी अवधि निश्चित की थी। वे कभी बीत गये, परंतु वह मधुपानके मदसे अत्यन्त उन्मत्त होकर स्त्रियोंके साथ क्रीडा-विहार कर रहा है। उसे बीते हुए समयका पता ही नहीं है।

धर्म और अर्थकी सिद्धिके निमित्त प्रयत्न करनेवाले पुरुषके लिये इस तरह मद्यपान अच्छा नहीं माना जाता है; क्योंकि मद्यपानसे अर्थ, धर्म और काम तीनोंका नाश होता है। मित्रके किये हुए उपकारका यदि अवसर आनेपर भी बदला न चुकाया जाय तो धर्मकी हानि तो होती ही है। गुणवान् मित्रके साथ मित्रताका नाता टूट जानेपर अपने अर्थकी भी बहुत बड़ी हानि उठानी पड़ती है।

मित्र दो प्रकारके होते हैं- एक तो अपने मित्रके अर्थसाधनमें तत्पर होता है और दूसरा सत्य एवं धर्मके ही आश्रित रहता है। तुम्हारे स्वामीने मित्रके दोनों ही गुणोंका परित्याग कर दिया है। वह न तो मित्रका कार्य सिद्ध करता है और न स्वयं ही धर्ममें स्थित है।

ऐसी स्थितिमें प्रस्तुत कार्यकी सिद्धिके लिये हमलोगोंको भविष्यमें क्या करना चाहिये ? हमारे लिये जो समुचित कर्तव्य हो, उसे तुम्हीं बताओ; क्योंकि तुम कार्यके तत्त्वको जानती हो।

लक्ष्मणका वचन धर्म और अर्थके निश्चयसे संयुक्त था। उससे उनके मधुर स्वभावका परिचय मिल रहा था। उसे सुनकर तारा भगवान् श्रीरामके कार्यके विषयमें, जिसका प्रयोजन उसे ज्ञात हो चुका था, पुन: लक्ष्मणसे विश्वासके योग्य बात बोली-

यह क्रोध करनेका समय नहीं है। आत्मीय जनोंपर क्रोध करना भी नहीं चाहिये। सुग्रीवके मनमें सदा आपका कार्य सिद्ध करनेकी इच्छा बनी रहती है। अत: यदि उनसे कोई भूल भी हो जाय तो उसे आपको क्षमा करना चाहिये।

कुमार ! गुणोंमें श्रेष्ठ पुरुष किसी हीन गुणवाले प्राणीपर क्रोध कैसे कर सकता है ? जो सत्त्वगुणसे अवरुद्ध होनेके कारण शास्त्र विपरीत व्यापारमें लग नहीं सकता, अतएव जो सद्विचारको जन्म देनेवला है, वह आप-जैसा कौन पुरुष क्रोधके वशीभूत हो सकता है ?

वानरवीर सुग्रीवके मित्र भगवान् श्रीरामके क्रोधका कारण मैं जानती हूँ। उनके कार्यमें जो विलम्ब हुआ है, उससे भी मैं अपरिचित नहीं हूँ। सुग्रीवका जो कार्य आपके अधीन था और जिसे आपलोगोंने पूरा किया है, उसका भी मुझे पता है तथा इस समय जो आपका कार्य प्रस्तुत है, उसके विषयमें हमलोगोंका क्या कर्तव्य है, इसका भी मुझे अच्छी तरह ज्ञान है।

नरश्रेष्ठ ! इस शरीरमें उत्पन्न हुए कामका जो असह्य बल है, उसको भी मैं जानती हूँ तथा उस कामद्वारा आबद्ध होकर सुग्रीव जहाँ आसक्त हो रहे हैं, वह भी मुझे मालूम है। साथ ही इस बातसे भी मैं परिचित हूँ कि कामासक्तिके कारण ही इन दिनों सुग्रीवका मन दूसरे किसी काममें नहीं लगता।

आप जो क्रोधके वशीभूत हो गये हैं, इससे जान पड़ता है कि कामके अधीन हुए पुरुषकी स्थितिका आपको बिल्कुल ज्ञान नहीं है, वानरकी तो बात ही क्या है ? कामासक्त मनुष्यको भी देश, काल, अर्थ और धर्मका ज्ञान नहीं रह जाता- उनकी ओर उसकी दृष्टि नहीं जाती है। विपक्षी वीरोंका विनाश करनेवाले राजकुमार। वानरराज सुग्रीव विषय-भोगमें आसक्त होकर इस समय मेरे ही पास थे। कामके आवेशमें उन्होंने अपनी लज्जाका परित्याग कर दिया है तो भी उन्हें अपना भाई समझकर क्षमा कीजिये।

जो निरन्तर धर्म और तपस्यामें ही संलग्न रहते हैं जिन्होंने मोहको अवरुद्ध कर दिया है अविवेकको दूर भगा दिया है, वे महर्षि भी कभी-कभी विषयाभिलाषी हो जाते हैं; फिर जो स्वभावसे ही चञ्चल वानर हैं, वह राजा सुग्रीव सुख-भोगमें क्यों न आसक्त हो ?

अप्रमेय शक्तिशाली लक्ष्मणसे इस प्रकार महान् अर्थसे युक्त बात कहकर मदसे चञ्चल नेत्रवाली वानर-पत्नी ताराने पुन: खेदपूर्वक स्वामीके लिये यह हितकर वचन कहा- नरश्रेष्ठ यद्यपि सुग्रीव इस समय कामके गुलाम हो रहे हैं, तथापि इन्होंने आपका कार्य सिद्ध करनेके लिये बहुत पहलेसे ही उद्योग आरम्भ करनेकी आज्ञा दे रक्खी है।

इसके फलस्वरूप इस समय विभिन्न पर्वतोंपर निवास करनेवाले लाखों और करोड़ों वानर, जो इच्छानुसार रूप धारण करनेमें समर्थ एवं महान् पराक्रमी हैं, यहाँ उपस्थित हुए हैं।

महाबाहो। दूसरेकी स्त्रियोंको देखना अनुचित समझकर जो आप भीतर नहीं आये, बाहर ही खड़े रह गये- इसके द्वारा आपने सदाचारकी रक्षा की है; अत: अब भीतर आइये। मित्रभावसे स्त्रियोंकी ओर देखना उनके प्रति माता-बहन आदिका भाव रखकर दृष्टि डालना सत्पुरुषोंके लिये अधर्म नहीं है।

क्षण-भर तारा अवाक् सी उन्हें देखती रह गईं; फिर जैसे स्वयं को सायास सँभालकर मुसकराईं, आइए। आप भीतर तो आइए। यह तो आप नहीं ही चाहेंगे कि माधवी में डूबे, अचेत सम्राट को उठाकर हमें यहाँ तक लाना पड़े।

हाँ। भीतर तो आइए, कुमार। अंगद पहली बार बोले; किंतु उनका स्वर सदा के समान सुहृद का-सा न होकर, भय और औपचारिकता लिये हुए था। ताराके वचन सुनकर लक्ष्मणका गात्र शिथिल हो गया। हाथ से शस्त्र छूट गए। शास्त्र में शस्त्र को उतरवाने की शक्ति है। भगवद्-कथा में दुर्गुणों को दूर करने तथा क्रोध को शमन करने की शक्ति है।

तुम चलो, अंगद। वहाँ हनुमान अकेले हैं। तारा ने कहा और अंगद तेजी से अंत:पुर की ओर चले गए।

लक्ष्मण ने जैसे अपने विरोध को बलात् दबाकर आगे बढ़ने के लिए पग उठाया।

ताराके आग्रह और कार्यकी जल्दीसे प्रेरित होकर शत्रुदमन महाबाहु लक्ष्मण सुग्रीवके महलके भीतर गये।

वहाँ जाकर उन्होंने देखा, एक सोनेके सिंहासनपर बहुमूल्य बिछौना बिछा है और वानरराज सुग्रीव सूर्यतुल्य तेजस्वी रूप धारण किये

उसके ऊपर विराजमान हैं।

दिव्य आभूषणों और मालाओंसे अलंकृत युवती स्त्रियाँ उन्हें चारों ओरसे घेरकर खड़ी थीं। उन्हें इस अवस्थामें देख लक्ष्मणके नेत्र रोषावेशके कारण लाल हो गये। वे उस समय यमराजके समान भयंकर प्रतीत होने लगे।

आपने सम्राट को समझाने की बात कही है। तारा का स्वर अत्यंत आत्मीय था, जैसे अपने किसी प्रियजन के सम्मुख अपनी व्यथा-कथा खोल बैठी हों, बड़ा द्वंद्व है, कुमार, मेरे मन में।

लक्ष्मण ने प्रश्नसूचक दृष्टि से तारा को देखा।

आपसे क्या छिपाना; वरन् आप न आते तो कदाचित् मुझे ही आपके आश्रम तक जाना पड़ता। तारा बोलीं, अपने भाई से द्वेष हो जाने के कारण बहुत कष्ट में दिन बताए थे सम्राट ने। राजप्रासाद से दूर वन में, अपनी पत्नी से वंचित, आठों प्रहर मृत्यु के त्रास से पीड़ित, आखेटक कुत्तों से घबराए हुए मृग के समान समय काटा था उन्होंने। कदाचित् यही कारण है कि अब विलास के लिए इतनी तृषा जागी है उनके भीतर कि वे कोई मर्यादा ही नहीं मानते। अपना संतुलन तक खो बैठे हैं। सम्राट बनने से पूर्व वे कदापि ऐसे नहीं थे। जिन दिनों बालि मायावी की खोज में गए हुए थे और सुग्रीव किष्किंधा के सम्राट बनाए गए थे, तब उन्होंने विलास की ओर कोई प्रवृत्ति नहीं दिखाई थी। तब उन्होंने अपना संतुलन नहीं खोया था।

देवि। यह सारा भ्रातृव हम पर ही क्यों आरोपित किया जा रहा है ? आपने सम्राट को क्यों नहीं समझाया कि उनका एक वंचित और अपमानित भाई प्रस्रवणगिरि पर उनकी सहायता की अपेक्षा में चार मास से बैठा है।

उसकी ओर से सम्राट पूर्णत: असावधान नहीं हैं। तारा ने चलने के लिए पग बढ़ाया, सम्राट ने वानरों के विभिन्न यूथों तथा अंचलों से अच्छे खोजियों को बुलवाया था। उनमें से अधिकांश तो किष्किंधा में आ भी पहुँचे हैं। देवी वैदेही की खोज में उन्हें तत्काल भेजा जा सकता है। लक्ष्मण मौन ही रहे- यह सूचना उन्हें राम से मिल चुकी थी।

क्यों ? कुमार को विश्वास नहीं होता ? तारा ने एक भीत मुसकान के साथ पूछा।

नहीं। अविश्वास की कोई बात नहीं है। लक्ष्मण धीरे से बोले, किंतु समझ नहीं पा रहा हूँ कि खोजियों को किष्किंधा में बुलवाने के लिए सम्राट के प्रति कृतज्ञता का प्रदर्शन करूँ, अथवा खोजियों को बुलवाकर, उन्हें खोज के लिए जाने का आदेश न देने के प्रमाद पर अपना रोष प्रकट करूँ।

नहीं कृतज्ञता की कोई बात नहीं है, सौमित्र। तारा का स्वर अत्यंत शालीन था, किष्किंधा का राजपरिवार आप दोनों भाइयों के आभार से इतना दबा है कि आपके लिए कुछ भी कर पाने से हम धन्य होंगे। सुग्रीव का कक्ष आ गया था। द्वारपालों ने एक ओर हटकर भीतर जाने का मार्ग दे दिया।

तारा ने पहले प्रवेश किया और फिर एक ओर हटकर लक्ष्मण को भीतर आने के लिए मार्ग देते हुए, उनके स्वागत का अभिनय किया।

लक्ष्मण प्रविष्ट हुए। सुग्रीव अपने पलंग पर लेटे थे और रुमा उनकी भुजा को अपने कंधे पर रख, बलात् उन्हें उठाने का प्रयत्न कर रही थीं। सुग्रीव स्वयं तो नहीं उठ पा रहे थे, रुमा को ही बार-बार बलात् पलंग पर घसीट लेते थे। अनेक परिचारिकाएँ, हनुमान तथा अंगद खड़े असहाय-से देख रहे थे। लक्ष्मण के शरीर का रक्त उनके मस्तिष्क की ओर झपटा। तारा के समस्त निवेदन तथा संबंधों की मृदुलता उनके मन में से तिरोहित हो गई। उनके मस्तिष्क में केवल एक ही विचार अंगारे के समान दहक रहा था- इस सुग्रीव के लिए राम ने बालि का वध किया और यह कृतघ्न मदिरा पीकर अपनी कामासक्ति का निर्लज्ज प्रदर्शन कर रहा है। उसे इतना भी चेत नहीं है कि वह कहाँ हैं; उसके आस-पास कितने लोग खड़े हैं, वह अपनी पत्नी से कैसा व्यवहार कर रहा है, जैसे वह मनुष्य न होकर वस्तुत: शाखामृग हो, जिसकी मर्यादा तो कोई है ही नहीं, उसमें संकोच और लज्जा की भी कोई चेतना ही न हो।

सहसा लक्ष्मण का हाथ उठा और उन्होंने अपने धनुष को जोर से टँकार दी। धनुष की टँकार सुनते ही रुमा तड़प उठीं और सिर झुकाकर, संकुचित-सी खड़ी हो गईं। परिचारिकाएँ और दासियाँ भयभीत-सी कक्ष की दीवारों से जा लगीं। हनुमान और अंगद के चेहरों पर असमंजस के भाव कुछ और गहरे हो गए। तारा का आश्वस्त चेहरा पुन: भयभीत हो उठा। किंतु सबसे अधिक प्रभाव स्वयं सुग्रीव पर हुआ। इस ध्वनि को जाने उन्होंने क्या समझा कि चौंककर उस दिशा में देखा, जिधर से ध्वनि आई थी। वे उठकर बैठ गए और क्रोध में पलंग के निकट रखी चौकी पर पड़े माधवी के रक्त भाँड तथा चषक उठाकर कुट्टिम फर्श पर पटक दिए और फिर डोलते-

डगमगाते-से शरीर से यथासंभव तनकर खड़े होते हुए उनके हाथों ने अपने गले में पड़ी, सद्य:विकसित पुष्पों तथा मणियों से पिरोई हुई दीर्घ माला को पकड़कर तोड़ डाला। फर्श पर बिखरते हुए पुष्पों तथा मणियों की ओर से दृष्टि हटाकर उन्होंने लक्ष्मण की ओर देखा और कुछ कहने के लिए मुख खोला...

सुन्दर सुवर्णके समान कान्ति और विशाल नेत्रवाले वीर सुग्रीव अपनी पत्नी रुमाको गाढ़ आलिङ्गन-पाशमें बाँधे हुए एक श्रेष्ठ आसनपर विराजमान थे। उसी अवस्थामें उन्होंने उदार हृदय और विशाल नेत्रवाले सुमित्राकुमार लक्ष्मणको देखा।

उसी क्षण लक्ष्मण ने पुन: अपने धनुष को टँकारा और कड़कते हुए स्वर में कहा, वानरराज सुग्रीव।

इस बार की टँकार और लक्ष्मण के स्वर का सुग्रीव पर अद्‌भुत प्रभाव पड़ा। कुछ कहते-कहते उनके अधर रुक गए, जैसे वे लक्ष्मण को पहचान गए हों और उकने स्वर के क्रोध को समझ रहे हों। फिर उन्होंने पलकें झपकाकर लक्ष्मण को देखा, जैसे पहचान की पुष्टि करना चाहते हों और धीरे-से फुसफुसाए, सौमित्र लक्ष्मण।

हाँ, मैं हूँ। लक्ष्मण क्रोधपूर्वक बोले, अग्नि को साक्षी रख, तुमसे मैत्री करनेवाले आर्य राम का भाई। निर्लज्ज मद्यप। आज तुझे हमें पहचानने में भी असुविधा हो रही है। भूल गया, जब तू बालि के भय से वृकों द्वारा प्रताड़ित भयभीत मृग के समान अपने प्राणों की रक्षा के लिए मारा-मारा फिरता था। भैया राम ने तेरी सहायता न की होती तो बालि ने तुझे भूमि पर पटककर अपने पगों की ठोकरों से निर्जीव मांस का लोंदा बना दिया होता और तेरी बोटियाँ चील-कौवों को खिला दी होतीं। कृतघ्न। तेरा वही मित्र अपनी पत्नी के वियोग में वंचित और अपमानित, प्रस्त्रवणगिरि पर तेरी सहायता की बाट जो रहा है। तेरे मित्र और सहायक तथा उसके साथियों के सैनिकों के भय से त्रस्त हैं। तेरी प्रजा बालि के आतंक से मुक्ति पाकर नये जीवन की राह देख रही है, और तू मदांध और कामुक बना, अपने प्रासादों में पड़ा है। नीच। तेरी रक्षा और सहायता करने वाले तेरे उसी मित्र आर्य राम ने कहलवाया है कि सुग्रीव। जिस मार्ग से बालि गया था, वह मार्ग अभी बंद नहीं हुआ है। तू सावधान नहीं हुआ, तो बहुत शीघ्र ही तुझे भी वहीं पहुँचा दिया जाएगा।

लक्ष्मण मौन हुए तो उनका सारा शरीर क्रोध और आवेश से थर-थर काँप रहा था। सुग्रीव के मन की विचित्र स्थिति थी।

उन्होंने सम्राट बनकर न अपनी प्रजा के साथ न्याय किया था, न अपने साथियों के साथ और न अपने मित्र इस राम के साथ। उन्होंने सबका भला करना चाहा था, किंतु उलझनों के बीच से कोई राह नहीं खोज पाए थे और आज वे ही मित्र राम कहलवा रहे हैं कि जिस राह से बालि गया था बालि किस राह पर गया था। मायावी ने बालि को यह राह दिखाई थी। बालि ने मदिरा पीनी आरंभ की थी बालि मदिरा के साथ-साथ प्रत्येक विलास की राह पर बढ़ता चला गया था। कामुकता प्रमुख थी उसमें। अलका के पीछे बालि का मायावी से विरोधी हुआ। अपनी विलासिता के कारण बालि किष्किंधा के वानरों के लिए कुछ नहीं कर सका, किसी का भला नहीं कर सका। अंतत: उसका अपना सगा भाई सुग्रीव ही बालि का विरोधी हो गया कैसे बढ़ता गया विरोध अंतत: बालि मारा गया।

सुग्रीव भी उसी मार्ग पर बढ़ रहे हैं ठीक कहलवाया है राम ने- बालि जिस मार्ग से गया है, वह मार्ग अभी बंद नहीं हुआ हैं। कहाँ बंद हुआ है वह मार्ग ? सुग्रीव भी माधवी में डूबकर सब कुछ भूल गए हैं- प्रजा, मित्र साथी, राज्य। यदि सुग्रीव इसी मार्ग पर बढ़ते गए तो वे भी अपने स्वार्थ, विलास, कामुकता, लंपटता इत्यादि के सिवाय और कुछ नहीं साध पाएँगे वे अपने स्वार्थों के लिए अपनी प्रजा के शत्रु हो जाएँगे, उनके अपने मित्र और साथी उनके वैरी हो जाएँगे ये ही अंगद और हनुमान उनका वध कर डालेंगे अथवा करवा डालेंगे।

राम ने कहलवाया है कि जिस मार्ग से बालि गया है, वह मार्ग अभी बंद नहीं हुआ ? क्या राम ने उस मार्ग की ओर संकेत किया है, जिसके द्वार उनके बाण खोलते हैं ? शक्तिशाली बालि, जो वज्र का आघात हँसकर झेलता था, राम के एक बाण को नहीं सह पाया एक ही बाण से वह यम के द्वार तक जा पहुँचा राम के बाण अभी समाप्त नहीं हुए, राम की शक्ति कम नहीं हुई यदि अपने मित्र की पत्नी को लौटा लाने के लिए वे वानरराज बालि का वध कर सकते हैं, तो अपनी पत्नी की खोज में विघ्न-स्वरूप अड़ गए सुग्रीव को वे जीवित छोड़ देंगे क्या ? और जब राम के बाण से बालि की रक्षा नहीं हो सकी, तो सुग्रीव की रक्षा कौन करेगा।

सुग्रीव को लगा, उन्हें किसी ने पुन: एक बार उठाकर उनके अतीत में ला पटका है। पहले जैसे आधी रात के समय, अपनी पत्नी केा अकेली और निस्सहाय छोड़कर वे एक लंबे समय तक वनों और पर्वतों की गुफाओं में भटकते फिरे थे, वैसे ही वे फिर एक बार राम के बाणों के भय से भूखे-प्यासे असहाय वन-वन भटकते फिरेंगे। बालि के विरुद्ध तो अनेक लोगों ने उनका साथ दिया था, इस बार शायद कोई उनका साथ भी न दे। तब उनमें न्याय के पक्ष का आत्मबल तो था, आज वह भी नहीं है। राम से त्राण पाने के लिए, उनके विरुद्ध

सुग्रीव को उन लोगों का संबल ग्रहण करना पड़ेगा, जिनसे उन्होंने सदा घृणा की है रावण-जैसे लोग।

सुग्रीव को लगा, उनके मस्तिष्क में कहीं कण भर भी माधवी का मद नहीं रह गया है। सारा प्रमाद जाने कहाँ उड़ गया है। वे वस्तुस्थिति को आमने-सामने देख रहे हैं। वे किष्किंधा के सम्राट हैं। यह उनका प्रासाद है और उनका अपना कक्ष है। उनकी अपनी दोनों पत्नियाँ उनके समीप खड़ी हैं। अंगद जैसा वीर और समर्थ पुत्र तथा हनुमान जैसा बलशाली साथी-दोनों विद्यमान हैं। उनके अंगरक्षक, द्वारपाल, सेवक, परिचालक सब हैं और उन सबके बीच निर्भीक खड़े लक्ष्मण, नीच तथा कृतघ्न जैसे विशेषणों से उन्हें संबोधित कर रहे हैं और युद्ध की चुनौती-स्वरूप अपना धनुष टँकार रहे हैं।

राम और लक्ष्मण के बाणों से वे तनिक भी सुरक्षित नहीं हैं। सुग्रीव का शरीर भय से काँप उठा। उन्हें लगा, उनका मस्तिष्क अपना कर्तव्य निश्चित नहीं कर पा रहा है।

हनुमान ने कहा- महाराज। इस समय भोगों में डूबे हुए जीव के शयन प्रकोष्ठ में आप खड़े हैं। कुछ समय आप इस शैया पर विराजें।

हनुमान। तू जानता है कि मैं वैरागी हूँ। मैंने निद्रा का त्याग किया है, पत्नी का त्याग किया है। मैं शैया पर कैसे बैठ सकता हूँ ?

महाराज। मैं जानता हूँ, किन्तु इस नगरी में पलंग के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं। भगवद्-कार्य का विस्मरण कर भोगों में डूबे हुए समाज की यहाँ बहुतायत है। इसलिए आप पलंग पर ही बिराजें। हनुमान। वैरागी का संसारी के पलंग पर बैठना उचित नहीं है।

महाराज। यह तो ठीक है, किन्तु मेरी प्रार्थना है कि आप इस शैया पर बैठें।

पलंग संसारी व्यक्ति का है। एक ब्रह्मचारी तथा पूर्ण वैरागी से इस पलंग पर बैठने की प्रार्थना की जा रही है।

बार-बार प्रार्थना करने पर भी लक्ष्मण पलंग पर बैठने को राजी नहीं होते। अब हनुमानजी ने बताया- महाराज। पलंग विषयासक्ति का प्रतीक है। यदि शैया पर एक नाग आकर बैठ जाए, तो संसारी मनुष्य उस शैया पर सो नहीं सकता। आप शेषनाग के अवतार हैं। आप इस पलंग पर बैठेंगे तो इस सुग्रीव रूपी जीव की जन्म-जन्मान्तरों से चलती आ रही तन्द्रा दूर हो जाएगी। मुझे इस जीव को जाग्रत करना है। आप कृपा करके इस पर बैठें।

लक्ष्मण की फटकार से तारा भी पर्याप्त विचलित हो गई थीं। उन्हें लगा कि अब तक लक्ष्मण के साथ हुई वार्त्ता के कारण, लक्ष्मण के व्यवहार में उत्पन्न हुई कोमलता नष्ट हो चुकी है और उसका कोई प्रभाव लक्ष्मण के हाव-भाव पर शेष दिखाई नहीं दे रहा लक्ष्मण ने यह तो कहा था कि यदि सुग्रीव को कोई समझा नहीं सकता, तो लक्ष्मण उन्हें समझाएँगे; किंतु समझाने का ढंग इतना कठोर होगा, यह तारा ने नहीं सोचा था। यहाँ तक भी कोई हानि नहीं है, किंतु लक्ष्मण ने सुग्रीव का और भी अपमान किया, अथवा जिस धनुष को वे बार-बार टँकार रहे हैं, उस पर बाण चढ़ा लिया, तो समझाने की वह पद्धति अत्यधिक क्रूर हो जाएगी। लक्ष्मण की फटकार के उत्तर में सुग्रीव कुछ सोचते-से चुप खड़े थे। वह मौन मद के कारण नहीं, किसी अन्य चिंता के कारण लग रहे था।

सुग्रीव की ओर से कोई उत्तर नहीं आया तो अंतत: तारा ही बोलीं, कुमार। सम्राट से प्रमाद अवश्य हुआ है; किंतु उनका अपराध इतना गंभीर नहीं है कि उनकी मर्यादा की चिंता किए बिना- उनकी प्रजा के सम्मुख उनका अपमान किया जाए। वे वानरों के सम्राट हैं। तारा रुकीं, किंतु इससे पूर्व कि लक्ष्मण कुछ कहते, वे पुन: बोलीं, किसी वस्तु से वंचित हो जाने के कारण उसके प्रति सामान्यत: हमारा आकर्षण बढ़ जाता है।

सुग्रीव न कृतघ्न हैं, न शठ हैं, न क्रूर हैं, न असत्यवादी हैं और न कुटिल ही हैं।

लक्ष्मण। श्रीरामने इनका जो उपकार किया है, वह युद्धमें दूसरोंके लिये दुष्कर है। उसे इन कपिराजने कभी भुलाया नहीं है।

सुमित्रानन्दन। श्रीरामके कृपा-प्रसादसे ही सुग्रीवने वानरोंके अक्षय राज्यको, यशको, रुमाको तथा मुझको भी प्राप्त किया है।

पहले इन्होंने बड़ा दु:ख उठाया है। अब इस उत्तम सुखको पाकर ये इसमें ऐसे रम गये कि इन्हें प्राप्त हुए समयका ज्ञान ही नहीं रहा। ठीक उसी तरह, जैसे विश्वामित्र मुनिको मेनकामें आसक्त हो जानेके कारण समयकी सुध-बुध नहीं रह गयी थी।

कालका ज्ञान रखनेवालोंमे श्रेष्ठ महातेजस्वी विश्वामित्र को भी जब भोगासक्त होनेपर कालका ज्ञान नहीं रह गया, तब फिर दूसरे साधारण प्राणीको कैसे रह सकता है ?

लक्ष्मण। आहार, निद्रा और मैथुन आदि जो देहके धर्म हैं, जो पशुओंमें भी समानरूपसे पाये जाते हैं उनमें स्थित हुए ये सुग्रीव पहले तो चिरकालतक दु:ख भोगनेके कारण थके-माँदे एवं खिन्न थे। अब भगवान श्रीरामकी कृपासे इन्हें जो काम-भोग प्राप्त हुए हैं, उनसे

अभीतक इनकी तृप्ति नहीं हुई इसीलिये इनसे कुछ असावधानी हो गयी; अत: परम कृपालु श्रीरघुनाथको यहाँ इनका अपराध क्षमा करना चाहिये। लक्ष्मण। आपको यथार्थ बात जाने बिना साधारण मनुष्यकी भाँति सहसा क्रोधके अधीन नहीं होना चाहिये।

आप-जैसे सत्त्वगुणसम्पन्न पुरुष विचार किये बिना ही सहसा रोषके वशीभूत नहीं होते हैं। मैं एकाग्र हृदयसे सुग्रीवके लिये आपसे कृपाकी याचना करती हूँ। आप क्रोधसे उत्पन्न हुए इस महान् क्षोभका परित्याग कीजिये। मेरा तो ऐसा विश्वास है कि सुग्रीव श्रीरामका प्रिय करनेके लिये रुमाका, मेरा, कुमार अङ्गदका तथा धन-धान्य और पशुओंसहित सम्पूर्ण राज्यका भी परित्याग कर सकते हैं।

सुग्रीव उस अधम राक्षसका वध करके श्रीरामको सीतासे उसी तरह मिलायेंगे, जैसे चन्द्रमाका रोहीणीके साथ संयोग हुआ हो।

आपकी सहायताके लिये सुग्रीवने बहुतेरे श्रेष्ठ वानरोंको युद्धके निमित्त असंख्य वानर वीरोंकी सेना एकत्र करनेके लिये भेज रक्खा है।

वानरराज सुग्रीव उन महाबली और पराक्रमी वीरोंके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। अतएव भगवान् श्रीरामका कार्य सिद्ध करनेके लिये अभी नगरसे बाहर नहीं निकल सके हैं। सुग्रीवने उन सबके एकत्र होनेके लिये पहलेसे ही जो अवधि निश्चित कर रक्खी है, उसके अनुसार उन समस्त महाबली वानरोंको आज ही यहाँ उपस्थित हो जाना चाहिये।

लक्ष्मण। आज आपकी सेवामें कोटि सहस्र (दस अरब) रीछ, सौ करोड़ (एक अरब) लंगूर तथा और भी बढ़े हुए तेजवाले कई करोड़ वानर उपस्थित होंगे। इसलिये आप क्रोधको त्याग दीजिये।

आपका मुख क्रोधसे तमतमा उठा है और आँखें रोषसे लाल हो गयी हैं। यह सब देखकर इन वानरराजकी स्त्रियोंको शान्ति नहीं मिल रही है। हम सबको भय बालि वध के समान ही किसी अनिष्टकी आशमा हो रही है।

कठोर प्रवास के पश्चात् यदि सुग्रीव के मन में विलास के प्रति आसक्ति जाग ही गई है, तो सम्राट से कोई अक्षम्य अपराध नहीं हो गया। राम ने यदि सुग्रीव की सहायता की है तो सुग्रीव भी राम की सहायता करेंगे। विभिन्न वानर यूथों से सम्राट ने जो खोजी बुलवाए हैं, वे उन्हें आज ही देवी जानकी की खोज में विभिन्न दिखाओं में भेजेंगे। और तारा का स्वर कुछ आवेशपूर्ण हो उठा, इतने पर भी यदि राम समझते हैं कि उन्हें अब सुग्रीव की आवश्यकता नहीं हैं, तो वे आकर सुग्रीव का वध कर दें। किंतु इतनी बात मेरी सुनते जाओ, राजकुमार ! कि संसार में ऐसा कोई मनुष्य नहीं है, जिसे किसी अन्य व्यक्ति की सहायता की आवश्यकता नहीं है। मैं भी लंका नहीं गई हूँ; किंतु मैंने वीरवर बालि से सुन रखा है कि रावण की राक्षस सेनाओं की गणना भी संभव नहीं है। उस सेना से युद्ध कोई हँसी-खेल नहीं है। यदि राम चाहें तो सुग्रीव को अपना मित्र मानें-सुग्रीव अपनी समस्त वानर सेनाओं के साथ, उनके पक्ष से रावण के विरुद्ध युद्ध करेंगे; अन्यथा राम सुग्रीव का वध कर, अपनी पत्नी की खोज में इन वनों, पर्वतों तथा समुद्र की लहरों पर अपना उद्योग करने को पूर्णत: स्वतंत्र हैं।

तारा की बात ने लक्ष्मण को अप्रभावित नहीं छोड़ा। अपना आक्रोश प्रकट कर चुकने के पश्चात् अब वे उतने कठोर भी नहीं रह गए थे। तारा के तर्क ने उन्हें और भी कोमल कर दिया। बोले, हम हत्याओं का व्यापार करने वाले क्रूर और हिंस्र जीव नहीं हैं, साम्राज्ञी। और न ही पूज्य-पूजन के अयोग्य हैं। किंतु सम्राट ने न केवल अपने शैथिल्य से हमें व्याकुल किया है, वरन् अपने राज्य में अनेक संकटों को जन्म दिया है। यदि इन्होंने अब भी सक्रियता न दिखाई तो विभिन्न वानर-यूथ परस्पर ही लड़कर नष्ट हो जाएँगे। तब कहाँ रहेगा वानर-राज्य और कहाँ रहेंगे वानर सम्राट।

अश्वदानकी प्रतिज्ञा करके उसकी पूर्ति न करनेपर अश्वानृत अश्वविषयक असत्य नामक पाप होता है। यह पाप बन जानेपर मनुष्य सौ अश्वोंकी हत्या के पापका भागी होता है। इसी प्रकार गोदानविषयक प्रतिज्ञाको मिथ्या कर देनेपर सहस्र गौओंके वधका पाप लगता है तथा किसी पुरुषके समक्ष उसका कार्य पूर्ण कर देनेकी प्रतिज्ञा करके जो उसकी पूर्ति नहीं करता है, वह पुरुष आत्मघात और स्वजन-वधके पापका भागी होता है फिर जो परम पुरुष श्रीरामके समक्ष की हुई प्रतिज्ञाको मिथ्या करता है, उसके पापकी कोई इयत्ता नहीं हो सकती।

वानरराज। जो पहले मित्रोंके द्वारा अपना कार्य सिद्ध करके बदलेमें उन मित्रोंका कोई उपकार नहीं करता है, वह कृतघ्न एवं सब प्राणियोंके लिये वध्य है। गोहत्यारे, शराबी, चोर और व्रत भंग करनेवाले पुरुषके लिये सत्पुरुषोंने प्रायश्चित्तका विधान किया है; किंतु कृतघ्नके उद्धारका कोई उपाय नहीं है।

वानर। तुम अनार्य, कृतघ्न और मिथ्यावादी हो; क्योंकि श्रीरामकी सहायतासे तुमने पहले अपना काम तो बना लिया, किंतु जब उनके लिये सहायता करनेका अवसर आया, तब तुम कुछ नही करते। वानर। तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हो चुका है; अत: अब तुम्हें प्रत्युपकारकी इच्छासे श्रीरामकी पत्नी सीताकी खोजके लिये प्रयत्न करना चाहिये।

परंतु तुम्हारी दशा यह है कि अपनी प्रतिज्ञाको झूठी करके ग्राम्यभोगोंमें आसक्त हो रहे हो। श्रीराम यह नहीं जानते हैं कि तुम मेढककी-सी बोली बोलनेवाले सर्प हो जैसे साँप अपने मुँहमें किसी मेढकको जब दबा लेता है, तब केवल मेढक ही बोलता है, दूरके लोग उसे मेढक ही समझते है; परंतु वह वास्तवमें सर्प होता है। वही दशा तुम्हारी है। तुम्हारी बातें कुछ और हैं और स्वरूप कुछ और।

महाभाग श्रीराम परम महात्मा तथा दयासे द्रवित हो जानेवाले हैं; अतएव उन्होंने तुम जैसे पापी और दुरात्माको भी वानरोंके राज्यपर बिठा दिया। यदि तुम महात्मा रघुनाथके किये हुए उपकारको नहीं समझोगे तो शीघ्र ही उनके तीखे बाणोंसे मारे जाकर बालिका दर्शन करोगे। लक्ष्मण को मित्र-भाव से बोलते देख, सुग्रीव के शरीर में भी प्राण लौटे। वे संकोचपूर्वक लक्ष्मण के निकट आए और बहुत धीमे स्वर में बोले, तुम ठीक कहते हो, सौमित्र। मैंने अपने प्रमाद और शैथिल्य से अपने हितैषियों तथा प्रजा के प्रति अपराध किया है। न केवल मैं अपनी प्रजा के प्रति अपने धर्म को भूल गया था, वरन् अपने प्रति किए गए आर्य राम के उपकार को भी विस्मृत कर बैठा था।

तुम मुझे क्षमा करो, सौमित्र। सुग्रीव का स्वर ग्लानि-विगलित हो उठा, और आर्य राम से भी क्षमा प्राप्त करने में मेरी सहायता करो। तुम्हारे कठोर शब्दों तथा व्यवहार के प्रति मेरे मन में तनिक भी प्रतिवाद नहीं है। यदि तुमने ऐसा कठोर व्यवहार न किया होता, तो कदाचित् मेरा प्रमाद भी न मिटता व्याधि जितनी गंभीर होगी औषधि भी उतनी ही कटु होगी। मुझे लगता है कि मैं एक लंबी मोह-निद्रा से जगा हूँ। सुग्रीव ने रुककर कहा, देवी जानकी के संधान के लिए खोजियों के प्रस्थान के लिए मैं शीघ्र व्यवस्था करूँगा।

हनुमान महेन्द्र, हिमवान, विंध्य, कैलास, मंदराचल, अंचल पर्वत, मेरु पर्वत तथा अन्य पर्वतों की गुफाओं अथवा अन्य दुर्गम स्थानों में प्रच्छन्न रूप से वास करनेवाले वानरों के पास शीघ्रगामी दूत भेजो। उन्हें मेरा संदेश दो कि राक्षसों के अत्याचारों से पीड़ित होकर अपने स्थान को छोड़, सुरक्षित स्थानों की खोज में गए वानरों को सुग्रीव का आह्वान है कि अब रावण का भय मानने की आवश्यकता नहीं है। अब कहीं भी कोई राक्षस उन्हें व्याकुल करने का साहस नहीं करेगा। अब हम निरीह प्राणी बनकर, राक्षसों के अत्याचारों से डरकर मारे-मारे फिरने वाले, विभिन्न जातियों, राज्यों अथवा पृथ्वी के दुर्गम स्थानों से अपनी सुरक्षा के लिए शरण माँगने वाले भीरु लोग नहीं हैं। अब आचार्य राम और लक्ष्मण जैसे वीर योद्धा और प्रशिक्षक हमारे सहायक हैं। सुग्रीव उन सी प्रवासी वानरों को किष्किंधा राज्य में लौट आने के लिए आमंत्रित करता है। हम राक्षसों से उनके अब तक के अत्याचारों का प्रतिशोध लेंगे। अब किसी को प्राण-रक्षा के लिए अपना मूल स्थान छोड़कर भागना ही हुआ तो राक्षस भागेंगे। हम आक्रामक युद्ध करेंगे और राक्षसों द्वारा होने वाले वानरों के विभिन्न अंचलों, क्षेत्रों और यूथों के शोषण को सदा के लिए समाप्त कर देंगे। अपनी जाति या राज्य पर होनेवाले अत्याचार के विरुद्ध लड़नेवाले प्रत्येक वानर का वानरराज सुग्रीव किष्किंधा में स्वागत करेगा। सुग्रीव ने क्षण-भर रुककर अपने अधरों को जिह्वा से गीला किया, और जो लोग वीरवर बालि के आतंक से भयभीत होकर वानरयूथों तथा वानर क्षेत्रों को छोड़कर चले गए हैं, उन्हें भी अपने क्षेत्रों और यूथों में लौट आने के लिए आमंत्रित करो। उनसे कहो, अब किष्किंधा में जन-कल्याणकारी राज्य की स्थापना कर दी गई है। अब हम परस्पर नहीं लड़ेंगे, एकजुट होकर अपने शत्रुओं से लड़ेंगे; एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का शोषण नहीं करेगा, हम सब मिलकर अपने लिए आवश्यक वस्तुओं का प्रकृति से अर्जन करेंगे। उनसे भी लौट आने के लिए कहो, जो आजीविका के अभाव में अपना स्थान छोड़ देश-विदेश में भटक रहे हैं। उन वानरों से कहो कि उन्हें अपना पेट भरने के लिए विदेशों में अपमानजनक जीवन व्यतीत करने की आवश्यकता नहीं है। वानर राज्य अब समस्त वानरों के लिए अपना घर है और अपने घर मिलने बालि समस्त सुविधाएँ उन्हें अब मिलेंगी।

सुग्रीव के चारों ओर उल्लास का वातावरण था, जैसे मृत सम्राट फिर से जीवित हो उठा हो। हनुमान, अंगद, तारा, रुमा- सब ही लोग जैसे कोई अद्‌भुत चमत्कार देख रहे थे। कुछ क्षण पहले तक जो लक्ष्मण उनके लिए आतंक बनकर आए थे, वे अब कैसे प्रिय और आत्मीय लग रहे थे। एक बार अपने बाण से बालि का वध कर राम ने सुग्रीव को जीवन-दान दिया था; और आज लक्ष्मण ने अपनी उग्रता से सुग्रीव के प्रमाद की हत्या कर उन्हें पुनर्जीवन दिया था।

लक्ष्मण हैरान थे कि सचमुच सुग्रीव में कोई अब तक मूर्च्छित प्रेत जाग उठा था, या वे उन्हें प्रसन्न करने के लिए बिना सोचे-समझे, राम और लक्ष्मण के भय में आविष्ट, आदेश देते जा रहे थे। पर सत्य यही था कि वे आदेश दे रहे थे।

सुग्रीव लक्ष्मणसे बोले- सुमित्राकुमार। मेरी श्री, कीर्ति तथा सदासे चला आता हुआ वानरोंका राज्य ये सब नष्ट हो चुके थे। भगवान् श्रीरामकी कृपासे ही मुझे पुन: इन सबकी प्राप्ति हुई है।

राजकुमार ! वे भगवान् श्रीराम अपने कर्मोंसे ही सर्वत्र विख्यात हैं। उनके उपकारका वैसा ही बदला अंशमात्रसे भी कौन चुका सकता है। धर्मात्मा श्रीराम अपने ही तेजसे रावणका वध करेंगे और सीताको प्राप्त कर लेंगे। मैं तो उनका एक तुच्छ सहायकमात्र रहूँगा।

जिन्होंने एक ही बाणसे सात बड़े-बड़े ताल वृक्ष, पर्वत, पृथ्वी, पाताल और वहाँ रहनेवाले दैत्योंको भी विदीर्ण कर दिया था, उनको दूसरे किसी सहायककी आवश्यकता भी क्या है ? जिनके धनुष खींचते समय उसकी टंकारसे पर्वतोंसहित पृथवी काँप उठी थी, उन्हें सहायकोंसे क्या लेना है ? मैं तो वैरी रावणका वध करनेके लिये अग्रगामी सैनिकोंसहित यात्रा करनेवाले महाराज श्रीरामके पीछे-पीछे चलूँगा। विश्वास अथवा प्रेमके कारण यदि कोई अपराध बन गया हो तो मुझ दासके उस अपराधको क्षमा कर देना चाहिये; क्योंकि ऐसा कोई सेवक नहीं है, जिससे कभी कोई अपराध होता ही न हो।

सम्राट। अंतत: सस्मित लक्ष्मण सौहार्दपूर्ण स्वर में बोले, इन समस्त आज्ञाओं की प्रतीक्षा हम लंबे समय से कर रहे थे, इसलिए हमारे लिए आज महोत्सव का दिन है। किंतु इतनी सारी कठोर आज्ञाएँ एक साथ देने से पूर्व इस विषय में विचार कर लें कि कहीं कल आपके आलोचक यह न कहें कि ये सारी आज्ञाएँ राम की धमकी से भीत होकर सुग्रीव ने आत्मरक्षा के भाव से प्रेरित होकर दी हैं। ऐसा न हो कि निकट भविष्य में इन आक्षेपों के कारण आपके लिए कोई समस्या खड़ी हो जाए।

यदि मेरे मित्र हो तो मुझे पुन: उस संकट में न डालो, सौमित्र। सुग्रीव अत्यंत दीन स्वर में बोले, तेजस्वी पुरुष अपने तेज के साथ ही सहज होकर जी सकता है। जब इस प्रकार के ऊहापोह, अंतर्द्वंद्व और चिंतन-मनन उसकी तेजस्विता को बंदी बनाने लगते हैं तो उसका दम घुटने लगता हैं। मैंने यह राज्य अपने भाई का वध करवाकर पाया है- इस विचार ने मेरी स्वतंत्र विचार-शक्ति को ग्रस लिया था। मैंने अपनी अंतरात्मा से आदेश लेने बंद कर, यही सोचना आरंभ कर दिया था कि मेरे किस कार्य की आलोचना किस रूप में होगी; और उस आलोचना से बचने के विचार से स्वयं को पूर्वाग्रह-रहित, पक्षपात-शून्य तथा स्वतंत्र विचारक्रम सिद्ध करने की चिंता में मैं अपनी तेजस्विता का दम घोंटता रहा तथा अपनी पीड़ा से बचने के लिए विलास के गर्त में गहरे-से-गहरे उतरता रहा। किसी के समझाने-बुझाने और उपदेश का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। अब, जब तुमने मेरे प्राणों के लिए भय उत्पन्न कर दिया तो मेरी आत्मा अपने समस्त बंधन तोड़कर जाग उठी है; अब पुन: उसे अनिर्णय की ओर मत धकेलो।

आपने सत्य कहा, वानरराज। तेजस्वी पुरुष अपने तेज से जाज्वल्यमान होकर न जी सके तो उसकी आत्मा कुंठित होने लगती हैं भीतर-भीतर घुटना लक्ष्मण का भी स्वभाव नहीं है। लक्ष्मण उन्मुक्त मन से हँसे, इसलिए मैं आपसे भी इस प्रकार जीने को नहीं कहूँगा। जीना तो अपनी प्रकृति के अनुकूल ही होकर जीना है, अपनी अंतरात्मा के संकेत पर।

वानरराज सुग्रीव। विशेषत: तुम-जैसे विनयशील सहायकको पाकर मेरे भाई श्रीराम सर्वथा सनाथ हैं। तुम्हारा जो प्रभाव है और तुम्हारे हृदयमें जो इतना शुद्ध भाव है, इससे तुम वानरराजकी परम उत्तम लक्ष्मीका सदा ही उपभोग करनेके अधिकारी हो। तुम्हें सहायकके रूपमें पाकर प्रतापी श्रीराम रणभूमिमें अपने शत्रुओंका शीघ्र ही वध कर डालेंगे, इसमें संशय नहीं है। तुम धर्मज्ञ, कृतज्ञ तथा युद्धमें कभी पीठ न दिखानेवाले हो। तुम्हारा यह भाषण सर्वथा युक्तिसंगत और उचित है। तुमको और मेरे बड़े भाईको छोड़कर दूसरा कौन ऐसा विद्वान है, जो अपनेमें सामर्थ्य होते हुए भी ऐसा नम्रतापूर्ण वचन कह सके। तुम बल और पराक्रममें भगवान् श्रीरामके बराबर हो। देवताओंने ही हमें दीर्घकालके लिये तुम जैसा सहायक प्रदान किया है। किंतु वीर। अब तुम शीघ्र ही मेरे साथ इस पुरीसे बाहर निकलो।

लक्ष्मण ने रुककर विषय बदला, तो सम्राट यदि आप स्वस्थ हों और किष्किंधा के बाहर निकल सकते हों तो कृपया प्रस्रवणगिरि पर पधारने का कष्ट करें और अपने मित्र की व्याकुलता कम करें।

तुम चलो, सौमित्र। सुग्रीव का पूर्ण आत्मविश्वास उनके स्वर में बोल रहा था, मैं आवश्यक व्यवस्था कर थोड़ी ही देर में उपस्थित होता हूँ। जैसी आपकी इच्छा, आर्य। लक्ष्मण बोले, इस जागरण-प्रक्रिया में मुझसे जो अनुचित कहा गया हो; आपके प्रति जो अभद्र व्यवहार हुआ हो, उसके लिए क्षमा कीजिएगा। आपका अपमान करना मेरा लक्ष्य नहीं था।

तुम धन्य हो, मित्र। सुग्रीव हंसे, मैं तो न कभी तुम्हारे हृदय की कठोरता को पा सका और न कोमलता को।

आगत वानर सीधे श्रीरामके चरणोंमें प्रणाम करने माल्यवान शिखर पहुँचे। सुग्रीवने अङ्गदको समझाया और वे भी हनुमानको लेकर लक्ष्मण के साथ चल पड़ें जहाँ श्रीराम थे।

१०) सीता की खोज में वानर-प्रेषण- राम ने सारा विवरण सुना। सब कुछ कितना विचित्र था। ऋष्यमूक पर मिलनेवाला सुग्रीव कितना भयातुर था। उसके साथियों ने बताया था कि मायावी की खोज में गए बालि की अनुपस्थिति में सुग्रीव ने अद्‌भुत जन-समर्थक नीतियों को अपनाया था और थोड़े ही समय में किष्किंधा का रूप बदल दिया था और बालि के वध के पश्चात सम्राट बनते ही कैसा आलसी, जन-विमुख, कामुक और विलासी हो गया था सुग्रीव। और अब उसके विषय में राम की धारणा ठीक थी। प्रकृति से नीच नहीं है सुग्रीव। नीच व्यक्ति को उदात्त कार्य करने से पीड़ा होती है और उदात्त व्यक्तित्व अपनी प्रकृति के अनुकूल कार्य न कर सकने के कारण तड़पता है। पिछले दिनों जब सुग्रीव के सभी साथी और स्वयं राम अपने मन में सुग्रीव के विरुद्ध अनेक धारणाएँ पाल रहे थे कि वह कामुक और विलासी हो गया है- उन दिनों सुग्रीव अपने मन की यातना को माधवी से धोने का प्रयत्न कर रहा था। अर्थात् यह व्यक्ति केवल तेजस्वी निर्णय ले सकता है, और तेजस्वी बनकर जी सकता है। आत्ममंथन की यातना सहने का सामर्थ्य नहीं है सुग्रीव में। जीवन की विघ्न-बाधाओं तथा संसार के छल-छंद से कभी आत्ममंथन का अवसर आया तो यह व्यक्ति टूटने लगेगा। इसके सम्मुख विकल्प आने ही नहीं चाहिएँ। उसे केवल सीधा मार्ग दिखाई पड़ना चाहिए, जिस पर वह अपनी पूर्ण गति से बढ़ता जाए, जहाँ दोराहा आया कि यह व्यक्ति वहाँ बैठकर अपना सिर धुनने लगेगा।

राम की दृष्टि प्रस्रवणगिरि केचरण प्रदेश पर गई। वानरों की अनेक सैनिक टुकड़ियाँ उनके आश्रम की ओर आ रही थीं। उनकी संख्या इतनी अधिक थी कि इस असाधारणता के कारण, राम के माथे पर भी चिंता की दो-एक रेखाएँ खिंच आईं।

थोड़ी ही देर में प्रस्रवण के पग-प्रदेश में एक शिविका आकर रुकी और उसमें से सुग्रीव उतरे। लक्ष्मण को दिए अपने वचन के अनुसार वे आ पहुँचे थे। पर्वत के ऊपर सुग्रीव पैदल ही चढ़े और सबसे पहले उन्होंने आश्रम में प्रवेश किया। उनके पीछे-पीछे नीचे रुक गई वानर टुकड़ियों ने भी आश्रम में प्रवेश किया। वे सारे सैनिक, सुग्रीव के ही समान, राम के सम्मुख हाथ जोड़कर खड़े हो गए।

हाथमें शस्त्र लिये तीक्ष्ण स्वभाववाले कई सौ वानरोंसे घिरे हुए राजा सुग्रीव उस स्थानपर गये, जहाँ भगवान् श्रीराम निवास करते थे।

वानरराजके हाथ जोड़कर खड़े होनेपर उनके अनुयायी वानर भी उन्हींकी भाँति अञ्जलि बाँधे खड़े हो गये। मुकुलित कमलोंसे भरे हुए विशाल सरोवरकी भाँति वानरोंकी उस बड़ी भारी सेनाको देखकर श्रीराम सुग्रीवपर बहुत प्रसन्न हुए।

यह क्या कर रहे हो, वानरराज ? राम ने कुछ विस्मय के स्वर में कहा।

आर्य। मेरी श्री, कीर्ति और सदा से चला आने वाला वानरों का यह राज्य प्राय: नष्ट हो चुका था। आप तथा आपके वीर भाई के प्रताप से इन सबकी पुनर्प्रतिष्ठा हुई है। कृतज्ञता तथा उपकार को न माननेवाला मनुष्य पशु है। मैं अपने प्रमाद में ग्रस्त होकर अब तक जो पाप कर चुका हूँ, आपसे उसकी क्षमा-याचना करने तथा अब यथासंभव आपकी सेवा करने के लिए उपस्थित हुआ हूँ।

सुग्रीव राम के सम्मुख घुटनों के बल बैठ गए और अपने जुड़े हुए हाथों पर उन्होंने अपना माथा टेक दिया।

वीर ! वानरशिरोमणे ! जो धर्म, अर्थ और कामके लिये समयका विभाग करके सदा उचित समयपर उनका न्याययुक्त सेवन करता है, वही श्रेष्ठ राजा है किंतु जो धर्म-अर्थका त्याग करके केवल कामका ही सेवन करता है, वह वृक्षकी अगली शाखापर सोये हुए मनुष्यके समान है। गिरनेपर ही उसकी आँख खुलती है। जो राजा शत्रुओंके वध और मित्रोंके संग्रहमें संलग्न रहकर योग्य समयपर धर्म, अर्थ और कामका न्याययुक्त सेवन करता है, वह धर्मके फलका भागी होता है।

शत्रुसूदन ! यह हमलोगोंके लिये उद्योगका समय आया है। वानरराज ! तुम इस विषयमें इन वानरों और मन्त्रियोंके साथ विचार करो।

राम तत्काल आगे बढ़े और उन्होंने कंधों से पकड़कर सुग्रीव को उठाया और हृदय से लगा लिया, मैं सौमित्र से सब कुछ सुन चुका हूँ, मित्र। आत्मग्लानि से अपने तेज को क्षीण मत करो। मैत्री समानता के आधार पर होती है। हम दोनों मित्र हैं। यदि इस प्रकार दीन व्यवहार करोगे, तो मैत्री टिक नहीं पाएगी। सुग्रीव प्रकृतस्थ होकर राम के निकट एक शिला पर बैठ गए।

श्रीरघुनाथके चरणोंमें सिर नवाकर हाथ जोड़कर सुग्रीवने कहा- हे नाथ। मुझे कुछ भी दोष नहीं है। हे देव। आपकी माया अत्यन्त ही प्रबल है। आप जब दया करते हैं, हे राम। तभी यह छूटती है। हे स्वामी। देवता, मनुष्य और मुनि सभी विषयोंके वशमें हैं। फिर मैं तो पामर पशु और पशुओंमें भी अत्यन्त कामी बंदर हूँ। स्त्रीका नयन-बाण जिसको नहीं लगा, जो भयंकर क्रोधरूपी अँधेरी रातमें भी जागता रहता है (क्रोधान्ध नहीं होता) और लोभकी फाँसीसे जिसने अपना गला नहीं बँधाया, हे रघुनाथ। वह मनुष्य आपहीके समान

है। ये गुण साधनसे नहीं प्राप्त होते। आपकी कृपासे ही कोई-कोई इन्हें पाते हैं।

माया के चक्कर में पड़कर मेरी दुर्दशा हो गई, मैं पागल सा खड़ा हुआ हूँ मेरी मति-गति सम्पूर्ण खो गई है। नारी पर जो नर कभी मोहित न हुआ हो, ऐसा नर जग में दुर्लभ है। जो लोभ की फाँसी से बच जाए वही सच्चा तपस्वीवर जग में है। योगी, भोगी, त्यागी, रागी, ज्ञानी, गोस्वामी, स्वामी, सन्यासी, मौनी, ध्यानी मानी लाखों इस जग में देखे। ऐसा कोई विरला ही महापुरुष है जो कामिनी और कंचन में लिप्त नहीं हुआ अन्यथा जगत की माया ने किसे विक्षिप्त नहीं किया। हे रघुवर यह बाण भी रखा है और अपराधी भी आपके चरणों में है चाहें मारो या क्षमा करो निर्णय अब प्रभु आपके हाथों में है।

तब प्रभु श्रीराम बोले मेरे तो तुम परम सखा हो। मत रो और न ही मुझे रुलाओ। मुझ रोगी की तो तुम औषधि हो, मुझ विरही की तुम आशा हो। जो जिसको सच्चा प्यारा होता है वह उसे प्राणसम होता है। चाहें बरसों बाद मिले तो भी प्रेम कभी कम नहीं होता है। पिछली बातों को जाने दो और अब आगे का ध्यान धरो भाई और ऐसा कोई उद्योग करो जिससे सीताका पता लगे।

मैं दो कार्य साथ-साथ करना चाहता हूँ- एक देवी जानकी की खोज में विभिन्न दिशाओं में खोजियों को भेजना और दूसरे वानर-यूथों को आसन्न राक्षस-युद्ध में रावण की सेनाओं से युद्ध कर सकने योग्य प्रशिक्षण देना।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर सुग्रीवने उनसे कहा- महाबाहो। मेरी श्री, कीर्ति तथा सदासे चला आनेवाला वानरोंका राज्य- ये सब नष्ट हो चुके थे। आपकी कृपासे ही मुझे पुन: इन सबकी प्राप्ति हुई है। विजयी वीरोंमें श्रेष्ठ देव। आप और आपके भाईकी कृपासे ही मैं वानर-राज्यपर पुन: प्रतिष्ठित हुआ हूँ। आपके उपकारका प्रत्युपकार कर पानेमें सदा असमर्थ रहूँगा; किंतु आपके चरणोंकी सेवा मेरा सौभाग्य बनी रहे। जो किये हुए उपकारका बदला नहीं चुकाता है, वह पुरुषों में धर्मको कलमित करनेवाला माना गया है। ये सैकड़ों बलवान् और मुख्य वानर भूमण्डलके सभी बलशाली वानरोंको साथ लकर यहाँ आये हैं।

रघुनन्दन ! इनमें रीछ हैं, वानर हैं और शौर्यसम्पन्न गोलाङ्गूल लङ्गूर हैं। ये सब-के-सब देखनेमें बड़े भयंकर हैं और बीहड़ वनों तथा दुर्गम स्थानोंके जानकार हैं। राजन्। वे देवराज इन्द्रके समान पराक्रमी तथा मेघों और पर्वतके समान विशालकाय वानर, जो मेरु और विन्ध्याचल में निवास करते हैं, यहाँ शीघ्र ही उपस्थित होंगे।

मित्र। मेघके द्वारा वृष्टि होना, सूर्यका प्रकाश देना जैसे आश्चर्यकी बात नहीं है, तुम्हारे जैसे मित्रके लिए मित्रका उपकार वैसे ही स्वाभाविक है। श्रीराम भी सुग्रीवके साथ उठकर वानरोंके आते दल देखने लगे।

जैसे प्रलयकी घटा उमड़ी आ रही हो, गगन चारों ओर धूलिसे भर गया। वायु उष्ण हो गयी। वानरोंके कण्ठका जयघोष सुनायी पड़ने लगा कौशल-किशोरकी जय ! वानरेन्द्र सुग्रीवकी जय।

श्वेत, पीले, काले, लाल, कपिश, कर्बुर, कपोतरोमा, गोपुच्छ अनेक रंगोंके वानरोंके यूथोंके साथ पर्वताकार अत्यन्त काले तथा हिमश्वेत केशों वाले रीछोंका दल भी उमड़ आ रहा था। राम का आश्रम सुग्रीव के यूथपतियों और पार्षदों से भर गया। राम को ऐसा आभास नहीं था कि सुग्रीव इस प्रकार पूर्ण तैयारी के साथ आए हैं।

शिवजी कहते हैं- हे उमा ! वानरोंकी वह सेना मैंने देखी थी। उसकी जो गिनती करना चाहे वह महान् मूर्ख है। सब वानर आ-आकर श्रीरामके चरणोंमें मस्तक नवाते हैं और सौन्दर्य माधुर्यनिधि श्रीमुखके दर्शन करके कृतार्थ होते हैं। तीन कार्य एक साथ करो, मित्र। राम सस्मित बोले, दो तो तुमने कहे हैं और तीसरा- प्रजा के हित कल्याण-कार्यों को पूर्णता की ओर बढ़ाना।

हाँ, वह भी। सुग्रीव बोले, किंतु देवी जानकी की खोज के लिए विभिन्न दिशाओं में भेजे जाने वाले वानरों का चयन महत्त्वपूर्ण कार्य है। वे निमिष भर रुककर बोले, मेरा ऐसा विचार है कि हम संधान-टोलियों को यथासंभव प्रत्येक दिशा में भेजें; किंतु अधिक संभावना यही है कि जानकी को रावण लंका में ही ले गया होगा। ऐसा मैं दो कारणों से समझता हूँ- एक तो लंका की सुरक्षा-व्यवस्था की दृष्टि से और दूसरे, रावण सीता को अपने निकट ही रखना चाहेगा। इस समय उसके लंका में ही होने की संभावना अधिक है; क्योंकि अन्यत्र कहीं से भी उसे किसी उत्पात के समाचार नहीं आ रहे हैं। इसलिए सबसे महत्वपूर्ण संधान-दल लंका की ओर जाना चाहिए और उसमें सबसे योग्य व्यक्ति सम्मिलित होने चाहिएँ। मेरे विचार से हनुमान, अंगद, नील, तार, जांबवान, सुहोत्र, शरारि, शरगुल्म, गज, गवाक्ष, गवय, वृषभ, मैंद, द्विविद, गंधमादन, उल्कामुख तथा असंग को इस दल में होना चाहिए।

जैसी तुम्हारी इच्छा। राम ने सहमति प्रकट की, मेरे विचार से भी दक्षिण दिशा की ही अच्छी प्रकार खोज होनी चाहिए; और उससे

भी विशेष रूप से लंका की। जनस्थान से भागकर सूर्पणखा भी वहीं गई थी। रावण भी सीता का हरण कर किष्किंधा के निकट से होकर गया है, तो संभवत: लंका ही गया होगा। लंका की भली प्रकार खोज हो, मित्र। किंतु इस दल में तुमने अनेक प्रियजन रखे हैं। विचार कर लों, इन्हें शत्रुओं के घर में घुसकर जानकी का अन्वेषण करना है। यह न हो कि ये लोग किसी कठिनाई में फँस जाएँ।

सखे। तुम्हारी सहायतासे सनाथ होकर मैं युद्धमें समस्त शत्रुओंको जीत लूँगा। तुम्ही मेरे हितैषी मित्र हो और मेरी सहायता कर सकते हो। राक्षसाधम रावणने अपना नाश करनेके लिये ही मिथिलेशकुमारीको धोखा देकर उसका अपहरण किया है। ठीक उसी तरह, जैसे अनुह्लादने अपने विनाशके लिये ही पुलोमपुत्री शचिको छलपूर्वक हर लिया था।

पुलोम दानवकी कन्या शचि इन्द्रदेवके प्रति अनुरक्त थी, परंतु अनुह्लादने उनके पिताको फुसलाकर अपने पक्षमें कर लिया और उसकी अनुमतिसे शचिको हर लिया। जब इन्द्रको इसका पता लगा, तब वे अनुमति देनेवाले पुलोमको और अपहरण करनेवाले अनुह्लादको भी मारकर शचिको अपने घर ले आये।

श्रीराम और सुग्रीवमें जब इस प्रकार बातें हो रही थीं, उसी समय बड़े जोरकी धूल उठी, जिसने आकाशमें फैलकर सूर्यकी प्रचण्ड प्रभाको ढक दिया। तदनन्तर पर्वतराजके समान शरीर और तीखी दाढ़वाले असंख्य महाबली वानरोंसे वहाँकी सारी भूमि आच्छादित हो गयी। पलक मारते-मारते अरबों वानरोंसे घिरे हुए अनेकानेक यूथपतियोंने वहाँ आकर सारी भूमिको ढक लिया। नदी, पर्वत, वन और समुद्र सभी स्थानोंके निवासी महाबली वानर जुट गये, जो मेघोंकी गर्जनाके समान उच्च स्वरसे सिंहनाद करते थे। उस समय परम कान्तिमान शतबलिनामक वीर वानर रूमा के पिता दस अरब वानरोंके साथ दृष्टिगोचर हुआ।

तत्पश्चात् सुवर्णशैलके समान सुन्दर एवं विशाल शरीरवाले ताराके महाबली पिता कई सहस्र कोटि वानरोंके साथ वहाँ उपस्थित देखे गये। तदनन्तर हनुमानके पिता कपिश्रेष्ठ केसरी दिखायी दिये। उनके शरीरका रंग कमलके केसरोंकी भाँति पीला और मुख प्रात:कालके सूर्यके समान लाल था। वे बड़े बुद्धिमान् और समस्त वानरोंमें श्रेष्ठ थे। वे कई सहस्र वानरों से घिरे हुए थे। फिर लंगूर-जातिवाले वानरोंके महाराज भयंकर पराक्रमी गवाका दर्शन हुआ। उनके साथ दस अरब वानरोंकी सेना थी। शत्रुओंका संहार करनेवाले धूम्र भयंकर वेगशाली बीस अरब रीछोंकी सेना लेकर आये। महापराक्रमी यूथपति पनस तीन करोड़ वानरोंके साथ उपस्थित हुए। वे सब-के-सब बड़े भयंकर तथा महान् पर्वताकार दिखायी देते थे। यूथपति नीलका शरीर भी बड़ा विशाल था। वे नीले कज्जल गिरिके समान नीलवर्णके थे और दस करोड़ कपियोंसे घिरे हुए थे।

तदनन्तर यूथपति गवय, जो सुवर्णमय पर्वत मेरुके समान कान्तिमान् और महापराक्रमी थे, पाँच करोड़ वानरोंके साथ उपस्थित हुए।

उसी समय वानरोंके बलवान् सरदार दरीमुख भी आ पहुँचे। वे दस अरब वानरोंके साथ सुग्रीवकी सेवामें उपस्थित हुए थे।

अश्विनीकुमारोंके महाबली पुत्र मैन्द और द्विविद ये दोनों भाई भी दस-दस अरब वानरोंकी सेनाके साथ वहाँ दिखायी दिये। तदनन्तर महातेजस्वी बलवान् वीर गज तीन करोड़ वानरोंके साथ सुग्रीवके पास आया।

रीछोंके राजा जाम्बवान बड़े तेजस्वी थे। वे दस करोड़ रीछोंसे घिरे हुए आये और सुग्रीवके अधीन होकर खड़े हुए। रुमण रुमण्वान् नामक तेजस्वी और बलवान् वानर एक अरब पराक्रमी वानरोंको साथ लिये बड़ी तीव्र गतिसे वहाँ आया। इसके बाद यूथपति गन्धमादन उपस्थित हुए। उनके पीछे एक पद्म वानरोंकी सेना आयी थी। तत्पश्चात् युवराज अङ्गद आये। ये अपने पिताके समान ही पराक्रमी थे। इनके साथ एक सहस्र पद्म और सौ शंकु एक पद्म वानरोंकी सेना थी इनके सैनिकोंकी कुल संख्या दस शंख एक पद्म थी।

तदनन्तर तारोंके समान कान्तिमान तार नामक वानर पाँच करोड़ भयंकर पराक्रमी वानर वीरोंके साथ दूरसे आता दिखायी दिया।

इन्द्रजानु (इन्द्रभानु) नामक वीर यूथपति, जो बड़ा ही विद्‌वान एवं बुद्धिमान था, ग्यारह करोड़ वानरोंके साथ उपस्थित देखा गया। वह उन सबका स्वामी था। इसके बाद रम्भनामक वानर उपस्थित हुआ, जो प्रात:कालके सूर्यकी भाँति लाल रंगका था। उसके साथ ग्यारह हजार एक सौ वानरोंकी सेना थी। तत्पश्चात् वीर यूथपति दुर्मुख नामक बलवान् वानर उपस्थित देखा गया, जो दो करोड़ वानर सैनिकोंसे घिरा हुआ था। इसके बाद हनुमानने दर्शन दिया। उनके साथ कैलासशिखरके समान श्वेत शरीरवाले भयंकर पराक्रमी वानर दस अरबकी संख्यामें मौजूद थे। फिर महापराक्रमी नल उपस्थित हुए, जो एक अरब एक हजार एक सौ द्रुमवासी वानरोंसे घिरे हुए थे। तदनन्तर श्रीमान् दधिमुख दस करोड़ वानरोंके साथ गर्जना करते हुए किष्किन्धामें महात्मा सुग्रीवके पास आये। इनके सिवा शरभ, कुमुद, वह्नि तथा रंह- ये और दूसरे भी बहुत-से इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले वानर-यूथपति सारी पृथ्वी, पर्वत और वनोंको आवृत करके वहाँ उपस्थित

हुए, जिनकी कोई गणना नहीं की जा सकती। धर्मके ज्ञाता वानरराज सुग्रीवने वहाँ आये हुए उन सब वानरशिरोमणियोंका समाचार निवेदन करके श्रीरामको शीघ्रतापूर्वक उनका परिचय दिया, फिर हाथ जोड़कर वे उनके सामने खड़े हो गये।

सुग्रीव भी कुछ समझ नहीं सके। सब मूर्त्तिके समान स्थिर खड़े हो गये। सबके नेत्रोंसे अश्रुप्रवाह चलने लगा। पीछे सबमें एक ही चर्चा-धन्य श्रीराम। मुझ जैसे तुच्छ कपिके समीप स्वयं आये। अपने चरणोंपर पड़ते मुझे उन विशाल-बाहुने उठाकर हृदयसे लगाया। अपने यूथपति भी मेरे जैसे क्षुद्र सेवककी उपस्थितिपर ध्यान नहीं देते और वानरेन्द्र जिनके चरणोंके पास करबद्ध खड़े थे, उन नवघनसुन्दरने पूछा इस कपिसे कि इसके परिवारमें कौन-कौन हैं। उनकी क्या व्यवस्था वानरेन्द्र अथवा यूथपतिने की है। क्या स्थिति हैं उसके आवास-स्थान की। वहाँ जल, फल, मूल प्रचुर हैं या नहीं ? कोई विशेष व्यवस्था आवश्यक हो तो वह बिना समोच सूचित कर दे। प्रत्येक कपि-असंख्य कपि-दलके एक-एक का अनुीव यही था कि श्रीराम स्वयं उससे मिले। उसका स्वागत किया, उसका आभार माना सहायतार्थ आनेके लिए। जैसे वह वानरेन्द्र तथा यूथपतिका अनुचर न होकर स्वयं सहायता करने आया हो। उसकी कुशल पूछी। इन सबको आप अपने सेवकके रूपमें स्वीकार करें। सुग्रीवने श्रीरामसे अञ्जलि बाँधकर प्रार्थना की।

आप सब पर्वतोंमें जल तथा फलकी सुविधा देखकर अपने दलको ठहरावें। यूथपतियोंको वानरेन्द्रने आदेश दिया- यहाँ केवल वे आवेंगे, जिन्हें बुलाया जायगा। असंख्य कपि-दल-किंतु अत्यन्त अनुशासित। ऐसी सेना कि जो शिविर एवं आहरके सम्बन्धमें निरपेक्ष थी। पर्वतोंपर, शिलाओंपर, वृक्षोंपर, सरोवर, निर्झर, सरिताके तटोंपर वानरोंने अपना डेरा जमाया। ऋष्यमूक तथा कई योजन चारों ओरकी भूमि वानरोंसे भर गयी। सब अपना आहार स्वयं ढूँढ लेनेवाले थे।

ये सब आपके किंकर हैं। आपके वशवर्ती हैं। सुग्रीवने श्रीरामसे कहा- आ प इन्हें आज्ञा दें।

मैं जानना चाहता हूँ कि जनक-नन्दिनी सीता जीवित भी हैं या नहीं और जीवित हैं तो कहाँ हैं ? श्रीरामने सुग्रीवका आलिंगन करके उनसे कहा- वानरोंको केवल वानरेन्द्र आदेश दे सकते हैं। यह कार्य न मैं कर सकता, न लक्ष्मण। तुम मेरा काम समझते हो। हमारे हितेच्छु हो, अत: तुम्हीं वानरोंको आदेश दो।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर सुग्रीवने उनके और बुद्धिमान लक्ष्मणके समीप ही विनत नामक यूथपतिसे, जो पर्वतके समान विशालकाय, मेघके समान गम्भीर गर्जना करनेवाले, बलवान् तथा वानरोंके शासक थे और चन्द्रमा एवं सूर्यके समान कान्तिवाले वानरोंके साथ उपस्थित हुए थे, कहा- वानरशिरोमणे ! तुम देश और कालके अनुसार नीतिका प्रयोग करनेवाले तथा कार्यका निश्चय करनेमें चतुर हो। तुम एक लाख वेगवान् वानरोंके साथ पर्वत, वन और काननोंसहित पूर्व दिशाकी ओर जाओ और वहाँ पहाड़ोंके दुर्गम प्रदेशों, वनों तथा सरिताओंमें विदेहकुमारी सीता एवं रावण-के निवास-स्थानकी खोज करो।

भागीरथी गंगा, रमणीय सरूयू, कौशिकी, सुरम्य कलिन्द-नन्दिनी मुना, महापर्वत यामुन, सरस्वती नदी, सिंधु, मणिके समान निर्मल जलवाले शोणभद्र, मही तथा पर्वतों और वनोंसे सुशोभित कालमही आदि नदियोंके किनारे ढूँढ़ो। ब्रह्ममाल, विदेह, मालव, काशी, कोसल, मगध देशके बड़े-बड़े ग्राम, पुण्ड्रदेश तथा अङ्ग आदि जनपदोंमें छानबीन करो। समुद्रके भीतर प्रविष्ट हुए पर्वतोंपर, उसके अन्वर्तती द्वीपोंके विभिन्न नगरोंमें तथा मन्दराचलकी चोटीपर जो कोई गाँव बसे हैं, उन सबमें सीताका अनुसंधान करो। जिन द्वीपोंमें पर्वतोंपर होकर जाना पड़ता है, जहाँ समुद्रको तैरकर या नाव आदिके द्वारा पहुँचा जाता है, उन सब स्थानोंमें सीताको ढूँढना चाहिये।

इसके सिवा तुमलोग यत्नशील होकर सात राज्योंसे सुशोभित यवद्वीप (जावा), सुवर्णद्वीप सुमात्रा तथा रूप्यकद्वीपमें भी जो सुवर्णकी खानोंसे सुशोभित हैं, ढूँढनेका प्रयत्न करो। यवद्वीपको लाँघकर आगे जानेपर एक शिशिरनामक पर्वत मिलता है, जिसके ऊपर देवता और दानव निवास करते हैं। वह पर्वत अपने उच्च शिखरसे स्वर्गलोकको स्पर्श करता-सा जान पड़ता है।

इन सब द्वीपोंके पर्वतों तथा शिशिर पर्वतके दुर्गम प्रदेशोंमें, झरनोंके आसपास और जंगलोंमें तुम सब लोग एक साथ होकर श्रीरामकी यशस्विनी पत्नी सीताका अन्वेषण करो। तदनन्तर समुद्रके उस पार जहाँ सिद्ध और चारण निवास करते हैं, जाकर लाल जलसे भरे हुए शीघ्र प्रवाहित होनेवाले शोण नामक नदी तटपर पहुँच जाओगे। उसके तटवर्ती रमणीय तीर्थों और विचित्र वनोंमें जहाँ-तहाँ विदेहकुमारी सीताके साथ रावणकी खोज करना।

पर्वतोंसे निकली हुई बहुत-सी ऐसी नदियाँ मिलेंगी, जिनके तटोंपर बड़े भयंकर अनेकानेक उपवन प्राप्त होंगे। साथ ही वहाँ बहुत-सी गुफाओंवाले पर्वत उपलब्ध होंगे और अनेक वन भी दृष्टिगोचर होंगे। उन सबमें सीताका पता लगाना चाहिये।

सूर्यके उदयका वह स्थान सबसे पहले ब्रह्माजीने बनाया है; अत: यही पृथ्वी एवं ब्रह्मलोकका द्वार है ऊपरके लोकोंमें रहनेवाले प्राणी इसी द्वारसे भूलोकमें प्रवेश करते हैं तथा भूलोकके प्राणी इसी द्वारसे ब्रह्मलोकमें जाते हैं। पहले इसी दिशामें इस द्वारका निर्माण हुआ, इसलिये इसे पूर्व दिशा कहते हैं।

उदयाचलकी घाटियों, झरनों और गुफाओंमें यत्र-तत्र घूमकर तुम्हें विदेहकुमारी सीतासहित रावणका अन्वेषण करना चाहिये।

वानरशिरोमणियों ! केवल उदयगिरितक ही वानरोंकी पहुँच हो सकती है। इससे आगे न तो सूर्यका प्रकाश है और न देश अनादि कोई सीमा ही है। अत: आगेकी भूमिके बारेमें मुझे कुछ भी मालूम नहीं है।

तुमलोग उदयाचलतक जाकर सीता और रावणके स्थानका पता लगाना और एक मास पूरा होते-होते तक लौट आना।

वानरों। वनसमूहसे अलंकृत पूर्वदिशामें अच्छी तरह भ्रमण करके श्रीरामकी प्यारी पत्नी सीताका समाचार जानकर तुम वहाँसे लौट आओ। इससे तुम सुखी होओगे।

सुषेण मेघके समान काले और भयंकर पराक्रमी थे। उनके सिवा, महर्षि मरीचिके पुत्र महाकपि अर्चिष्मान् भी वहाँ उपस्थित थे, जो देवराज इन्द्रके समान तेजस्वी तथा शूरवीर श्रेष्ठ वानरोंसे घिरे हुए थे। उनकी कान्ति विनतानन्दन गरुड़के समान थी। वे बुद्धि और पराक्रमसे सम्पन्न थे। उनके अतिरिक्त मरीचिके पुत्र मारीच नामवाले वानर भी थे, जो महाबली और अर्चिर्माल्य नामसे प्रसिद्ध थे। इनके सिवा और भी बहुत-से ऋषिकुमार थे, जो वानररूपमें वहाँ विराजमान थे। सुषेणके साथ उन सबको सुग्रीवने पश्चिम दिशाकी ओर जानेकी आज्ञा दी और कहा- कपिवरो। आप सब लोग दो लाख वानरोंको साथ ले सुषेणजीकी प्रधानतामें पश्चिमको जाइये और विदेहनन्दिनी सीताकी खोज कीजिये।

श्रेष्ठ वानरों। सौराष्ट्र, बाह्लीक और चन्द्रचित्र आदि देशों, अन्यान्य समृद्धिशाली एवं रमणीय जनपदों, बड़े-बड़े नगरों तथा पुन्नाग, बकुल और उद्दालक आदि वृक्षोंसे भरे हुए कुक्षिदेशमें एवं केवड़ेके वनोंमें सीताकी खोज करो। पश्चिमकी ओर बहनेवाली शीतल जलसे सुशोभित कल्याणमयी नदियों, तपस्वी जनोंके वनों तथा दुर्गम पर्वतोंमें भी विदेहकुमारीका पता लगाओ।

पश्चिम दिशामें प्राय: मरुभूमि है। अत्यन्त ऊँची और ठंडी शिलाएँ हैं तथा पर्वतमालाओंसे घिरे हुए बहुतसे दुर्गम प्रदेश हैं। उन सभी स्थानोंमें सीताकी खोज करते हुए क्रमश: आगे बढ़कर पश्चिम समुद्रतक जाना और वहाँके प्रत्येक स्थानका निरीक्षण करना। वानरों। समुद्रका जल तिमि नामक मत्स्यों तथा बड़े-बड़े ग्राहोंसे भरा हुआ है। वहाँ सब ओर देख-भाल करना।

समुद्रके तटपर केवड़ोंके कुञ्जोंमें, तमालके काननोंमें तथा नारियलके वनोंमें तुम्हारे सैनिक वानर भलीभाँति विचरण करेंगे। वहाँ तुम लोग सीताको खोजना और रावणके निवास-स्थानका पता लगाना।

सोमगिरिका गगनचुम्बी शिखर सुवर्णम है। उसके ऊपर विचित्र वृक्ष शोभा पाते हैं। इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले वानरोंको चाहिये कि वहाँके सब स्थानोंको शीघ्रतापूर्वक अच्छी तरह देख लें।

पारियात्र पर्वतके शिखरपर इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले, भयंकर, अग्नितुल्य तेजस्वी तथा वेगशाली चौबीस करोड़ गन्धर्व निवास करते हैं। वे सब-के-सब अग्निकी ज्वालाके समान प्रकाशमान हैं और सब ओरसे आकर उस पर्वतपर एकत्र हुए हैं। पारियात्र पर्वतके पास ही समुद्रमें वज्रनामसे प्रसिद्ध एक बहुत ऊँचा पर्वत है, जो नाना प्रकारके वृक्षों और लताओंसे व्याप्त दिखायी देता है। वह वज्रगिरि वैदूर्यमणिके समान नील वर्णका है। वह कठोरतामें वज्रमणि हीरे के समान है। समुद्रके चतुर्थ भागमें चक्रवान् नामक पर्वत हैं। वहीं विश्वकर्माने सहस्रार चक्रका निर्माण किया था। वहींसे पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु पञ्चजन और हयग्रीव नामक दानवोंका वध करके पाञ्चजन्य शफ तथा वह सहस्रार सुदर्शन चक्र लाये थे।

चक्रवान पर्वतके रमणीय शिखरों और विशाल गुफाओंमें भी इधर-उधर वैदेहीसहित रावणका पता लगाना चाहिये।

उनके मध्यभागमें पर्वतोंका राजा गिरिश्रेष्ठ मेरु विराजमान है, जिसे पूर्वकालमें सूर्यदेवने प्रसन्न होकर वर दिया था। उन्होंने उस शैलराजसे कहा था कि जो दिन-रात तुम्हारे आश्रयमें रहेंगे, वे मेरी कृपासे सुवर्णमय हो जायँगे तथा देवता, दानव, गन्धर्व जो भी तुम्हारे ऊपर निवास करेंगे, वे सुवर्णके समान कान्तिमान् और मेरे भक्त हो जायँगे।

विश्वदेव, वसु, मरुद्गण तथा अन्य देवता सायंकालमें उत्तम पर्वत मेरुपर आकर सूर्यदेवका उपस्थान करते हैं। उनके द्वारा भलीभाँति पूजित होकर भगवान् सूर्य सब प्राणियोंकी आँखोंसे ओझल होकर अस्ताचलको चले जाते हैं।

मेरुसे अस्ताचल दस हजार योजनकी दूरीपर है, किंतु सूर्यदेव आधे मुहूर्तमें ही वहाँ पहुँच जाते हैं।

मेरुगिरिपर धर्मके ज्ञाता महर्षि मेरुसावर्णि रहते हैं, जो अपनी तपस्यासे ऊँची स्थितिको प्राप्त हुए हैं। वे प्रजापतिके समान शक्तिशाली एवं विख्यात ऋषि हैं। रात्रिके अन्तमें प्रात:काल उदित हुए भगवान सूर्य जीव-जगत्के इन सभी स्थानोंको अन्धकाररहित एवं प्रकाशपूर्ण करके अन्तमें अस्ताचलको चले जाते हैं

वानरशिरोमणियों। पश्चिम दिशामें इतनी ही दूरतक वानर जा सकते हैं। उसके आगे न तो सूर्यका प्रकाश है और न किसी देश आदिकी सीमा ही। अत: वहाँसे आगेकी भूमिके विषयमें मुझे कोई जानकारी नहीं है।

अस्ताचलतक जाकर रावणके स्थान और सीताका पता लगाओ तथा एक मास पूर्ण होते ही यहाँ लौट आओ।

तुम सब लोग इनकी आज्ञाके अधीन रहकर इनकी सभी बातें ध्यानसे सुनना; क्योंकि ये महाबाहु महाबली सुषेण मेरे श्वशुर एवं गुरुजन हैं अत: तुम्हारे लिये भी गुरुकी भाँति ही आदरणीय हैं। तुम सब लोग भी बड़े पराक्रमी तथा कर्तव्याकर्तव्यके निर्णयमें प्रमाणभूत विश्वसनीय हो, तथापि इन्हें अपना प्रधान बनाकर तुम पश्चिम दिशाकी देखभाल आरम्भ करो।

सुग्रीवकी बातें अच्छी तरह सुनकर सुषेण आदि सब वानर उन वानरराजकी अनुमति ले वरुणद्वारा सुरक्षित पश्चिम दिशाकी ओर चल दिये। पराक्रमी वीर। तुम अपने ही समान एक लाख वनवासी वानरोंको जो यमराजके बेटे हैं, साथ लेकर अपने समस्त मन्त्रियोंसहित उस उत्तर दिशामें प्रवेश करो, जो हिमालयरूपी आभूषणसे विभूषित है और वहाँ सब ओर यशस्विनी श्रीरामपत्नी सीताका अन्वेषण करो। महात्मा श्रीरघुनाथने हमलोगोंका प्रिय कार्य किया है। उसका यदि कुछ बदला दिया जा सके तो हमारा जीवन सफल हो जाय।

जिसने कोई उपकार न किया हो, वह भी यदि किसी कार्य के लिये प्रार्थी होकर आया हो तो जो पुरुष उसके कार्यको सिद्ध कर देता है, उसका जन्म भी सफल हो जाता है। फिर जिसने पहलेके उपकारीके कार्यको सिद्ध किया हो, उसके जीवनकी सफलताके विषयमें तो कहना ही क्या है।

उत्तरमें म्लेच्छ, पुलिन्द, शूरसेन, प्रस्थल, भरत इन्द्रप्रस्थ और हस्तिनापुरके आसपासके प्रान्त, कुरु दणि कुरु- कुरुक्षेत्रके आस-पासकी भूमि, मद्र, काम्बोज, यवन, शकोंके देशों एवं नगरोंमें भलीभाँति अनुसंधान करके दरद देशमें और हिमालय पर्वतपर ढूँढो।

वहाँ लोध्र और पद्मकी झाड़ियोंमें तथा देवदारुके जंगलोंमें वैदेहीसहित रावणकी खोज करनी चाहिये।

रोंगटे खड़े कर देनेवाले उस दुर्गम प्रान्तको शीघ्रतापूर्वक लाँघ जानेपर तुम्हें श्वेतवर्णका कैलास पर्वत मिलेगा। वहाँ पहुँचनेपर तुम सब लोग हर्षसे खिल उठोगे। वहीं विश्वकर्माका बनाया हुआ कुबेरका रमणीय भवन है, जो श्वेत बादलोंके समान प्रतीत होता है। उस भवनको जाम्बूनद नामक सुवर्णसे विभूषित किया गया है।

वहाँ यक्षोंके स्वामी विश्रवाकुमार श्रीमान् राजा कुबेर, जो समस्त विश्वके लिये वन्दनीय ओर धन देनेवाले हैं, गुह्यकोंके साथ विहार करते हैं। इसके बाद क्रौञ्चगिरिपर जाकर वहाँकी अत्यन्त दुर्गम विवररूप गुफामें जो स्कन्दकी शक्तिसे पर्वतके विदीर्ण होनेके कारण बन गयी है, तुम्हें सावधानीके साथ प्रवेश करना चाहिये क्योंकि उसके भीतर प्रवेश करना अत्यन्त कठिन माना गया है।

वहाँसे आगे वृक्षोंसे रहित मानस नामक शिखर है, जहाँ शून्य होनेके कारण कभी पक्षीतक नहीं जाते हैं। कामदेव की तपस्याका स्थान होनेके कारण वह क्रौञ्चशिखर कामशैलके नामसे विख्यात है। वहाँ भूतों, देवताओं तथा राक्षसोंका भी कभी जाना नहीं होता है।

शिखरों, घाटियों और शाखापर्वतोंसहित समुच्चय क्रौञ्चपर्वतकी तुमलोग छानबीन करना क्रौञ्चगिरिको लाँघकर आगे बढ़नेपर मैनाक पर्वत मिलेगा। वहाँ मयदानवका घर है, जिसे उसने स्वयं ही अपने लिये बनाया है। तुमलोगोंको शिखरों, चौरस मैदानों और कन्दराओंसहित मैनाक पर्वतपर भलीभाँति सीताजीकी खोज करनी चाहिये। वह देश सूर्यसे रहित है तो भी सोमगिरिकी प्रभासे सदा प्रकाशित होता रहता है। तपते हुए सूर्यकी प्रभासे जो देश प्रकाशित होते हैं, उन्हींकी भाँति उसे सूर्यदेवकी शोभासे सम्पन्न सा जानना चाहिये।

वहाँ विश्वात्मा भगवान् विष्णु, एकादश रुद्रोंके रुपमें प्रकट होनेवाले भगवान् शंकर तथा ब्रह्मर्षियोंसे घिरे हुए देवेश्वर ब्रह्माजी निवास करते हैं। तुमलोग उत्तर कुरुके मार्गसे सोमगिरितक जाकर उसकी सीमासे आगे किसी तरह बढ़ना। तुम्हारी तरह दूसरे प्राणियोंकी भी वहाँ गति नहीं है। वह सोमगिरि देवताओंके लिये भी दुर्गम है। अत: उसका दर्शनमात्र करके तुमलोग शीघ्र लौट आना।

श्रेष्ठ वानरों। बस, उत्तर दिशामें इतनी ही दूरतक तुम सब वानर जा सकते हो। उसके आगे न तो सूर्यका प्रकाश है और न किसी देश आदिकी सीमा ही। अत: आगेकी भूमिके सम्बन्धमें मैं कुछ नहीं जानता।

मैंने जो-जो स्थान बताये हैं, उन सबमें सीताकी खोज करना और जिन स्थानोंका नाम नहीं लिया है, वहाँ भी ढूँढनेका ही निश्चित विचार रखना। अग्निपुत्र नील, कपिवर हनुमान्‌जी, ब्रह्माजीके महाबली पुत्र जाम्बवान्, सुहोत्र, शरारि, शरगुल्म, गज, गवा, गव, सुषेण प्रथम, वृषभ, मैन्द, द्विविद, सुषेण द्वितीय, गन्धमादन, हुताशनके दो पुत्र उल्कामुख और अनङ्ग (असङ्ग) तथा अङ्गद आदि प्रधान-प्रधान वीरोंको, जो महान् वेग और पराक्रमसे सम्पन्न थे, विशेषज्ञ वानरराज सुग्रीवने दक्षिणकी ओर जानेकी आज्ञा दी।

महान बलशाली अङ्गदको उन समस्त वानर वीरोंका अगुआ बनाकर उन्हें दक्षिण दिशामें सीताकी खोजका भार सौंपा।

मन, वचन तथा कर्मसे उसीका (सीताजीका पता लगानेका) उपाय सोचना। श्रीरामका कार्य सम्पन्न सफल करना। सूर्यको पीठसे और अग्निको हृदयसे सामनेसे सेवन करना चाहिये। परन्तु स्वामीकी सेवा तो छल छोड़कर सर्वभावसे मन, वचन, कर्मसे करनी चाहिये। उस दिशामें जो कोई भी स्थान अत्यन्त दुर्गम थे, उनका भी कपिराज सुग्रीवने उन श्रेष्ठ वानरोंको परिचय दिया।

वे बोले- वानरो ! तुमलोग भाँति-भाँतिके वृक्षों और लताओंसे सुशोभित सहस्त्रों शिखरोंवाले विन्ध्यपर्वत, बड़े-बड़े नागोंसे सेवित रमणीय नर्मदा नदी, सुरम्य गोदावरी, महानदी, कृष्णवेणी तथा बड़े-बड़े नागोंसे सेवित महाभागा वरदा आदि नदियोंके तटोंपर और मेखल (मेकल), उत्कल एवं दशार्ण देशके नगरोंमें तथा आम्रवन्ती और अवन्तीपुरीमें भी सब जबह सीताकी खोज करो।

इसी प्रकार विदर्भ, ऋष्टिक, रम्य माहिषक देश, वङ्ग, कलिङ्ग तथा कौशिक आदि देशोंमें सब ओर देखभाल करके पर्वत, नदी और गुफाओंसहित समूचे दण्डकारण्यमें छानबीन करना। वहाँ जो गोदावरी नदी है, उसमें सब ओर बारंबार देखना। इसी प्रकार आन्ध्र, पुण्ड्र, चोल, पाण्ड्य तथा केरल आदि देशोंमें भी ढूँढना। तत्पश्चात् स्वच्छ जलवाली दिव्य नदी कावेरीको देखना, जहाँ अप्सराएँ विहार करती हैं। वानरों ! वहाँसे आगे बढ़नेपर तुमलोग पाण्ड्यवंशी राजाओंके नगरद्वारपर लगे हुए सुवर्णमय कपाटका दर्शन करोगे, जो मुक्तामणियोंसे विभूषित एवं दिव्य है।

तत्पश्चात् समुद्रके तटपर जाकर उसे पार करनेके सम्बन्धमें अपने कर्तव्यका भलीभाँति निश्चय करके उसका पालन करना। महर्षि अगस्त्यने समुद्रके भीतर एक सुन्दर सुवर्णमय पर्वतको स्थापित किया है, जो महेन्द्रगिरिके नामसे विख्यात हैं। उसके शिखर तथा वहाँके वृक्ष विचित्र शोभासे सम्पन्न हैं। वह शोभाशाली पर्वत श्रेष्ठ समुद्रके भीतर गहराईतक घुसा हुआ है।

नाना प्रकारके खिले हुए वृक्ष और लताएँ उस पर्वतकी शोभा बढ़ाते हैं। देवता, ऋषि, श्रेष्ठ यक्ष और अप्सराओंकी उपस्थितिसे उसकी शोभा और भी बढ़ जाती है। सिद्धों और चारणोंके समुदाय वहाँ सब ओर फैले रहते हैं। इन सबके कारण महेन्द्रपर्वत अत्यन्त मनोरम जान पड़ता है। सहस्त्र नेत्रधारी इन्द्र प्रत्येक पर्वके दिन उस पर्वतपर पदार्पण करते हैं।

उस समुद्रके उस पार एक द्वीप है, जिसका विस्तार सौ योजन है। वहाँ मनुष्योंकी पहुँच नहीं है। वह जो दीप्तिशाली द्वीप है, उसमें चारों ओर पूरा प्रयत्न करके तुम्हें सीताकी विशेषरूपसे खोज करनी चाहिये।

वही देश इन्द्रके समान तेजस्वी दुरात्मा राक्षसराज रावणका, जो हमारा वध्य है, निवासस्थान है।

उस लमाद्वीपमें जो संदिग्ध स्थान हैं, उन सबमें इस तरह खोज करके जब तुम उन्हें संदेहरहित समझ लो और तुम्हारे मनका संशय निकल जाय, तब तुम लमाद्वीपको भी लाँघकर आगे बढ़ जाना और अमिततेजस्वी महाराज श्रीरामकी पत्नीका अन्वेषण करना।

आधुनिक तंजौर ही प्राचीन पाण्ड्यवंशी नरेशोंका नगर है। इस नगरमें भी छानबीन करनेके लिये सुग्रीव वानरोंको आदेश दे रहे हैं।

कुञ्जर पर्वतपर बना हुआ अगस्त्यका वह दिव्य भवन सुवर्णमय तथा नाना प्रकारके रत्नोंसे विभूषित है। उसका विस्तार एक योजनका और ऊँचाई दस योजनकी है।

उसी पर्वतपर सर्पोंकी निवासभूता एक नगरी है, जिसका नाम भोगवती है यह पातालकी भोगवती पुरीसे भिन्न है। यह पुरी दुर्जय है। उसकी सड़कें बहुत बड़ी और विस्तृत हैं। वह सब ओरसे सुरक्षित है। तीखी दाढ़वाले महाविषैले भयंकर सर्प उसकी रक्षा करते हैं।

उस भोगवतीपुरीमें महाभयंकर सर्पराज वासुकि निवास करते हैं ये योगशक्तिसे अनेक रूप धारण करके दोनों भोगवती पुरियोंमें एक साथ रह सकते हैं। तुम्हें विशेषरूपसे उस भोगवतीपुरीमें प्रवेश करके वहाँ सीताकी खोज करनी चाहिये।

उस पुरीमें जो गुप्त एवं व्यवधानरहित स्थान हों, उन सबमें सीताका अन्वेषण करना चाहिये। उस प्रदेशको लाँघकर आगे बढ़नेपर तुम्हें ऋषभ नामक महान् पर्वत मिलेगा।

उससे आगे अत्यन्त भयानक पितृलोक है; वहाँ तुम लोगोंको नहीं जाना चाहिये। यह भूमि यमराजकी राजधानी है, जो कष्टप्रद

अन्धकारसे आच्छादित है।

वीर वानरपुङ्गवो !! बस, दक्षिण दिशामें इतनी ही दूरतक तुम्हें जाना और खोजना है। उससे आगे पहुँचना असम्भव है; क्योंकि उधर जंगम प्राणियोंकी गति नहीं है।

इन सब स्थानोंमें अच्छी तरह देख-भाल करके और भी जो स्थान अन्वेषणके योग्य दिखायी दे, वहाँ भी विदेहकुमारी का पता लगाना; तदनन्तर तुम सबको लौट आना चाहिये।

तुम सबके बल और पराक्रम असीम हैं। तुम विशेष गुणशाली उत्तम कुलोंमें उत्पन्न हुए हो। राजकुमारी सीताका जिस प्रकार भी पता मिल सके, उसके अनुरूप उच्च कोटिका पुरुषार्थ आरम्भ करो।

अंगद, सुग्रीव बोले, मेरे पुत्र और युवराज होने के नाते, मेरे दायित्वों के निर्वाह का सर्वाधिक बोझ तुम्हारे ऊपर है, इसलिए देवी जानकी के अन्वेषण में मैं सबसे अधिक दायित्व का कार्य तुम्हें सौंप रहा हूँ। मैं और आर्य राम प्राय: सहमत हैं कि रावण सीता को लंका में ही ले गया होगा। अत: तुम लंका की दिशा में ही जाओ। खोजियों की एक पूरी टोली तुम्हारे साथ जाएगी, जो तुम्हें मार्ग खोजने, मार्ग की वनस्पतियों, जीव-जंतुओं इत्यादि के विषय में सूचनाएँ देने, मार्ग में रुकने की व्यवस्था करने तथा अन्य प्रकार की कठिनाइयों में सहायता पहुँचाएगी। यदि चाहो तो अपने साथ सशस्त्र वाहिनियाँ भी ले जा सकते हो। सुग्रीव रुके, मुझे पूर्ण विश्वास है कि देवी जानकी लंका में ही होंगी, अत: उन्हें खोजने का पूर्ण दायित्व तुम्हारा ही है, पुत्र। राक्षस लोग बलवान और मायावी हैं; और मार्ग तुम्हारे लिए अनजाना है, इसलिए सावधान होकर जाना। हनुमान, जाम्बवान, तार तथा नील तुमसे अधिक अनुभवी हैं, अत: उनके परामर्श का पूरा लाभ उठाना; किंतु युवराज होने के नाते दल के नायक तुम्हीं रहोगे। निर्णय का अधिकार तथा अन्वेषण का दायित्व तुम्हारा ही होगा।

अंगद ने हाथ जोड़ दिए, आपकी आज्ञा का अक्षरश: पालन होगा, सम्राट।

और पुत्र। एक बात का ध्यान रखना। सुग्रीव का स्वर कुछ आर्द्र हो उठा, तुम इकलौते पुत्र हो मेरे और वानर राज्य के युवराज को अपने प्राणों की रक्षा पूर्ण चतुराई से करनी होगी। लंका में प्रवेश के लिए समुद्र पार करना होगा। ऐसे स्थान से समुद्र पार मत करना, जहाँ से राक्षसों का आवागमन होता हो; अथवा जहाँ निकट ही उनका जलपत्तन हो। उनकी दृष्टि तुम लोगों पर पड़ गई तो हमारे लिए संकट खड़ा हो जाएगा। सारा अन्वेषण गोपन रीति से हो और एक मास के भीतर वापस लौटकर अपनी खोज की सूचना दो। एक मास की अवधि के पश्चात असफल लौटने वाले दल के लिए मैं मृत्यु-दण्ड प्रस्तावित कर रहा हूँ समझ रहे हो न ?

सम्राट की आज्ञा पूरी होगी। जाओ, पुत्र ! अपने साथियों को सूचना दे दो और आर्य राम से आवश्यक निर्देश लेकर यथाशीघ्र प्रस्थान करो। सुग्रीवने सभी दलों को आदेश दिया किसी ऋषि-मुनिका अपमान मत करना। यह आदेश सुग्रीव सभी को सुनाते गये- लेकिन तपस्वियोंसे, परिव्राजकोंसे नाट्य-संगीतजीवी घूमने वालोंसे, भिक्षुकोंसे नम्रतापूर्वक सीताका पता पूछना कोई राक्षस मिले तो तुम उससे यथेच्छ व्यवहार कर सकते हो; किंतु जहाँ तक सम्भव हो, दशग्रीव तक तुम्हारे उद्योगका समाचार न पहुँचे, यह उत्तम होगा।

किसी धार्मिक जनोंके जनपदमें जाना आवश्यक नहीं है। सुग्रीवने काम कम किया- नगरोंसे भी दूर रहो। राक्षस किसी आर्य नगर या ग्राममें वैदेहीको छिपाने नहीं जायगा ? अत: सधन मानव-जनपद जहाँ हैं, उस प्रदेशके अन्वेषणका व्यर्थ श्रम करके समय मत नष्ट करना।

सुग्रीवने प्रत्येक दिशामें जानेवाले यूथपतिके साथ अनेक दूसरे यूथप सहायक दिये सेनाके साथ। सबको मार्ग में पड़नेवाले पर्वत, वन, नदियोंका विस्तारपूर्वक परिचय दिया। वहाँके विशिष्ट भयदायक प्राणियोंसे सावधान किया। सचेत किया कि सुरम्य प्रदेशमें, सुस्वादु फलोंके स्थानोंमें किसीको अटकना नहीं चाहिये।

अमुक स्थानके फलोंको भूलकर भी मत खाना। सुग्रीवने प्राय: सब दलोंको विशेष स्थानोंके सम्बन्धमें सचेत किया- अमुक स्थानपर एक पत्र भी मत छूना। अमुक स्थानके मधुछत्रक अत्यन्त मादक या विषैले हैं। अमुक पर्वतकी शिलाएँ अस्पृष्य हैं। अमुक शिखर या स्थान किसीके निवास या तप:प्रभावसे अनुल्लंघनीय है। अमुक स्थानमें भयानक अजगर, सिंह अथवा शूद्र मशक, यूका जोंक जैसी बाधाएँ हैं। अमुक स्त्रोतों, सरोवरोंके जल पीने योग्य नहीं। अमुक स्थानोंपर अदृश्य तापस रहते हैं। वहाँ मल-मूत्र त्यागसे विपत्तिमें पड़ना पड सकता है। ऐसी सूचनाएँ अत्यन्त आवश्यक थी। सुग्रीवने सब दलपतियोंको समझा दिया कि अपने यूथके प्रत्येक सदस्यको ये बातें बतला दें।

जाम्बवान। अंगद। पवन-पुत्र हनुमान। अग्नि-पुत्र नील-नल। सुहोत्र गव-गवा। मैन्द द्विविद। तार। अन्तमें सुग्रीवने अपने सबसे प्रमुख एवं अत्यन्त विश्वसनीय लोगोंको पुकारा। दशग्रीव वैदेहीको लेकर दक्षिण जाते देखा गया था। उसकी राजधानी लंका दक्षिण

थी। अत: सर्वश्रेष्ठ दलको दक्षिण भेजना उचित ही था।

जो एक महिनेमें निर्दिष्ट स्थलोंको देखकर नहीं लौट आवेगा, मैं अपने हाथों उसका वध करूँगा। अन्तमें सुग्रीवने सबको सुना दिया- जो इस अवधिमें सीताका दर्शन कर आवेगा, उसे वानरोंके मध्य मेरे समान पद प्राप्त होगा। मेरे निर्दिष्ट तथा अनिर्दिष्ट स्थल भी ढूँढना जैसे सीता मिलें, वह करना।

मन, वचन तथा कर्मसे सीताजीका पता लगानेका उपाय सोचना। श्रीरामका कार्य सफल सम्पन्न करना। सूर्यको पीठसे और अग्निको हृदयसे (सामनेसे) सेवन करना चाहिये। परन्तु स्वामीकी सेवा तो छल छोड़कर सर्वभावसे मन, वचन, कर्मसे करनी चाहिये।

सच्चा उपकार तो यही है वे नि:स्वार्थ होकर सज्जनों का साथ दे। सच्चाई पर यदि प्राण जायँ तो स्वर्ग का द्वार भी यहीं है। इसी कारण मैं तुम सबसे कहता हूँ सीता खोजके लिये प्रस्थान करो। यदि अपना जीवन सफल करना है तो पहले जीवनदान करो।

माया विषयोंकी ममता-आसक्ति को छोड़कर परलोकका सेवन भगवान्‌के दिव्य धामकी प्राप्तिके लिये भगवत्सेवारूप साधन करना चाहिये, जिससे भव जन्म-मरण से उत्पन्न सारे शोक मिट जायँ। हे भाई। देह धारण करनेका यही फल है कि सब कामों कामनाओं को छोड़कर श्रीरामका भजन ही किया जाय। सुग्रीवने हनुमानके सम विशेषरूपसे सीताके अन्वेषणरूप प्रयोजनको उपस्थित किया; क्योंकि उन्हें यह दृढ़ विश्वास था कि वानरश्रेष्ठ हनुमानजी इस कार्यको सिद्ध कर सकेंगे।

समस्त वानरोंके स्वामी सुग्रीवने अत्यन्त प्रसन्न होकर परम पराक्रमी वायुपुत्र हनुमानसे इस प्रकार कहा-कपिश्रेष्ठ पृथ्वी, अन्तरिक्ष, आकाश, देवलोक अथवा जलमें भी तुम्हारी गतिका अवरोध मैं कभी नहीं देखता हूँ। असुर, गन्धर्व, नाग, मनुष्य, देवता, समुद्र तथा पर्वतोंसहित सम्पूर्ण लोकोंका तुम्हें ज्ञान है।

वीर। महाकपे। सर्वत्र अबाधित गति, वेग, तेज और फुर्ती ये सभी सद्‌गुण तुममें अपने महापराक्रमी पिता वायुके ही समान हैं।

इस भूमण्डलमें कोई भी प्राणी तुम्हारे तेजकी समानता करनेवाला नहीं है; अत: जिस प्रकार सीताकी उपलब्धि हो सके, वह उपाय तुम्हीं सोचो। हनुमन। तुम नीतिशास्त्रके पण्डित हो। एकमात्र तुम्हींमें बल, बुद्धि, पराक्रम, देश-कालका अनुसरण तथा नीतिपूर्ण बर्ताव एक साथ देखे जाते हैं।

सुग्रीवकी बात सुनकर श्रीरामको यह ज्ञात हुआ कि इस कार्यकी सिद्धिका सम्बन्ध इसे पूर्ण करनेका सारा भार हनुमानपर ही है। उन्होंने स्वयं भी यह अनुभव किया कि हनुमान् इस कार्यको सफल करनेमें समर्थ हैं। फिर वे इस प्रकार मन-ही-मन विचार करने लगे।

इस प्रकार कार्योंद्वारा जिनकी परीक्षा कर ली गयी है तथा जो सबसे श्रेष्ठ समझे गये हैं, वे हनुमान् अपने स्वामी सुग्रीवके द्वारा सीताकी खोजके लिये भेजे जा रहे हैं। इनके द्वारा इस कार्यके फलका उदय सीताका दर्शन होना निश्चित है।

तदनन्तर शत्रुओंको संताप देनेवाले श्रीरामने प्रसन्नतापूर्वक अपने नामके अक्षरोंसे सुशोभित एक अँगूठी हनुमानके हाथमें दी,जो राजकुमारी सीताको पहचानके रूपमें अर्पण करनेके लिये थी।

अँगूठी देकर वे बोले- कपिश्रेष्ठ। इस चिन्हके द्वारा जनककिशोरी सीताको यह विश्वास हो जायगा कि तुम मेरे पाससे ही गये हो। इससे वह भय त्यागकर तुम्हारी ओर देख सकेगी। वैदेही से सब प्रकार की कुशल पूछना फिर उनको मेरी दशा बता देना। अपने इस दलबल का परिचय देकर उसे भी धीरज बँधा देना। मेरे हित के लिये भी वापस लौटते समय सीता से मेरे लिये कुछ प्रेमोपहार लेते आना। वीरवर। तुम्हारा उद्योग, धैर्य, पराक्रम और सुग्रीवका संदेश- ये सब मुझे इस बातकी सूचना-सी दे रहे हैं कि तुम्हारे द्वारा कार्यकी सिद्धि अवश्य होगी। वानरश्रेष्ठ हनुमानने वह अँगूठी लेकर उसे मस्तकपर रक्खा और फिर हाथ जोड़कर श्रीरामके चरणोंमें प्रणाम करके वे वानरशिरोमणि वहाँसे प्रस्थित हुए। जाते हुए हनुमान्‌को सम्बोधित करके श्रीरामने फिर कहा- अत्यन्त बलशाली कपिश्रेष्ठ। मैंने तुम्हारे बलका आश्रय लिया है। पवनकुमार हनुमान। जिस प्रकार भी जनकनन्दिनी सीता प्राप्त हो सके, तुम अपने महान् बलविक्रमसे वैसा ही प्रयत्न करो। हनुमानजीका शरीर पुलकित हो गया। अञ्जलि फैलाकर उन्होंने मुद्रिका ली और मस्तकके केशोंमें जटामें रख ली। साश्रुलोचन पुन: श्रीरामके चरणोंपर मस्तक रखा।

सम्राट का आदेश पाकर चारों दलों के नायक राम के सम्मुख उपस्थित हुए। राम ने उन्हें जाने को प्रस्तुत देखा तो उनका मन भर आया। आर्द्र स्वर में बोले, मित्रो। इस समय आप लोग मुझे अपने भाइयों से भी बढ़कर हैं। जो कार्य मैं स्वयं नहीं कर सका, सौमित्र नहीं कर सके- वह कार्य करने के लिए आप लोग जा रहे हैं। मेरे इस कथन में तनिक भी अतिरंजना नहीं है कि मेरा मानापमान ही नहीं, सीता की उपलब्धि

और उसके माध्यम से मेरे प्राणों की रक्षा आपके इस अनुसंधान-कार्य पर निर्भर है। मेरे मन में इस समय आप लोगों के प्रति क्या भाव हैं, यह मैं शब्दों में अभिव्यक्त नहीं कर सकता। क्षण-भर के लिए वे रुके, जैसे अपने स्वर की थरथराहट को साध रहे हों, यद्यपि अधिक संभावना इसी बात की है कि दक्षिण की ओर जानेवाला दल ही कदाचित् सीता तक पहुँच पाएगा; फिर भी यह निश्चित नहीं है कि आपमें से कौन लक्ष्य तक पहुँचेगा। जो भी सीता को खोज पाए और उन तक पहुँच पाए, उसे चाहिए कि वह उन्हें विश्वास दिलाए कि उन्हें मुक्त कराने के लिए हम कटिबद्ध हैं और उनकी सूचना मिलते ही उनकी मुक्ति के लिए सैनिक अभियान आरंभ कर देंगे।

कपिवरों। जैसा मैंने बताया है, उसके अनुसार तुम सभी श्रेष्ठ वानरोंको इस जगत्में सीताकी खोज करनी चाहिये। स्वामीकी उस कठोर आज्ञाको भलीभाँति समझकर वे सम्पूर्ण श्रेष्ठ वानर टिड्डियोंके दलकी भाँति पृथ्वीको आच्छादित करके वहाँसे प्रस्थित हुए।

सद्गुणोंको पहचाननेवाला गुणवान तथा बड़भागी वही है जो श्रीरघुनाथके चरणोंका प्रेमी है। आज्ञा माँगकर और चरणोंमें फिर सिर नवाकर श्रीरघुनाथका स्मरण करते हुए सब हर्षित होकर चले। इस तरह राजाकी आज्ञा पाकर समस्त वानर-यूथपति बड़ी उतावलीके साथ अपनी-अपनी दिशाकी ओर प्रस्थित हुए।

११) सीता की दक्षिण दिशा में खोज- सुग्रीवसे रामने पूछा- सखे। तुम समस्त भूमण्डलके स्थानोंका परिचय कैसे जानते हो? तब सुग्रीव ने कहा- दुष्टात्मा बालि मुझे मार डालना चाहता था, उसकी सारी इन्द्रियाँ यह सोचकर व्यथित हो उठी थीं कि यह मुझे मारनेके लिये ही गुफाका द्वार बंद करके भाग आया था। मैं अपनी प्राण-रक्षाके लिये मन्त्रियोंके साथ भागा और बालि मेरा पीछे करने लगा। बालि मेरे पीछे लगा रहा और मैं जोर-जोरसे भागता गया। उसी समय मैंने विभिन्न नदियों, वनों और नगरोंको देखते हुए सारी पृथ्वीको गायकी खुरीकी भाँति मानकर उसकी परिक्रमा कर डाली। भागते समय मुझे यह पृथ्वी दर्पण और अताल चक्रके समान दिखायी दी। तदनन्तर पूर्व दिशामें जाकर मैंने नाना प्रकारके वृक्ष, कन्दराओंसहित रमणीय पर्वत और भाँति-भाँतिके सरोवर देखे।

वहीं नाना प्रकारके धातुओंसे मण्डित उदयाचल तथा अप्सराओंके नित्य-निवासस्थान क्षीरोद सागरका भी मैंने दर्शन किया। उस समय बालि पीछा करते रहे और मैं भागता रहा। प्रभो। जब मैं यहाँ फिर लौटकर आया, तब बालिके डरसे पुन: सहसा मुझे भागना पड़ा। उस दिशाको छोड़कर मैं फिर दक्षिण दिशाकी ओर प्रस्थित हुआ, जहाँ विन्ध्यपर्वत और नाना प्रकारके वृक्ष भरे हुए हैं तथा चन्दनके वृक्ष जिसकी शोभा बढ़ाते हैं वृक्षों और पर्वतोंकी ओटमें बारंबार बालिको देखकर मैंने दक्षिण दिशाको छोड़ दिया तथा बालिके खदेड़नेपर पश्चिम दिशाकी शरण ली। वहाँ नाना प्रकारके देशोंको देखता हुआ मैं गिरिश्रेष्ठ अस्ताचलतक जा पहुँचा। वहाँ पहुँचकर मैं पुन: उत्तर दिशाकी ओर भागा।

हिमालय, मेरु और उत्तर समुद्रतक पहुँचकर भी जब बालिके पीछा करनेके कारण मुझे कहीं शरण नहीं मिली, तब परमबुद्धिमान् हनुमान्जीने मुझसे यह बात कही- राजन्। इस समय मुझे उस घटनाका स्मरण हो आया है, जैसा कि मतङ्गमुनिने उन दिनों वानरराज बालिको शाप दिया था कि यदि बालि इस आश्रममण्डलमें प्रवेश करेगा तो उसके मस्तकके सैकड़ों टुकड़े हो जायँगे।

अत: वहीं निवास करना हमलोगोंके लिये सुखद और निर्भय होगा। राजकुमार। इस निश्चयके अनुसार हमलोग ऋष्यमूक पर्वतपर आकर रहने लगे। उस समय मतङ्ग ऋषिके भयसे बालिने वहाँ प्रवेश नहीं किया। राजन्। इस प्रकार मैंने उन दिनों समस्त भूमण्डलको प्रत्यक्ष देखा था। उसके बाद ऋष्यमूककी गुफामें आया था।

सुग्रीव ने अन्य उपस्थित यूथपतियों को राम के निकट प्रस्तुत होने का संकेत किया।

राम। ये हनुमान के पिता कपिश्रेष्ठ यूथपति केसरी हैं। ये भयंकर पराक्रमी महाराज गजाक्ष हैं। ये अत्यंत वेगशाली धूम्र हैं। ये यूथपति पनस हैं। ये यूथपति सवय हैं। ये वानरों के बलवान यूथप दरीमुख हैं। ये तेजस्वी और बलवान रुमण्वान हैं। ये वीर यूथपति इंद्रजानु हैं। ये रंभ हैं। ये यूथपति दुर्मुख हैं। ये महापराक्रमी नल हैं। ये लोग अपनी समस्त वाहिनियों के साथ उपस्थित हैं। किष्किंधा में केवल राजकीय सेना है। इनकी वाहिनियाँ किष्किंधा के निकट के वन-पर्वतों में अपने स्कंधावार डाले पड़ी हैं। हम सब आपकी सेवा में तत्पर हैं। आप आदेश दें ओर जिस प्रकार चाहें हमारा उपयोग करें।

बैठो, मित्रो। राम ने सबको बैठने का संकेत किया और सुग्रीव की ओर देखकर मुसकराए, इस सहायता के लिए कृतज्ञ हूँ। पहले मेरे मन में जो कुछ भी रहा हो, किंतु आज स्पष्ट देख रहा हूँ कि तुमने मेरे कार्य को सर्वथा अपना ही कार्य समझा है। राम कुछ रुके और फिर सबको संबोधित कर बोले, आज संपूर्ण जंबुद्वीप उस राक्षस-शक्ति द्वारा पीड़ित और शोषित है, जिसका केंद्र लंका में है और जिसका

नायक रावण है। आर्यावर्त्त में वह शक्ति बहुत प्रबल नहीं हो पाई है; किंतु विंध्य के नीचे-नीचे उनके अत्याचार अपनी चरम सीमा पर थे। यहाँ आकर मुझे मालूम हुआ कि यद्यपि वानरों का इतना बड़ा और विस्तृत अपना राज्य है, जनबल- तथा साहस एवं शौर्य की आपमें कोई कमी नहीं है- फिर भी यह राज्य तथा वानर ही नहीं; ऋक्ष, गरुड, गृध्र तथा अन्य जातियाँ, रासों की पशु-शक्ति के कारण सदा अपने सम्मान; धन, संपत्ति तथा जन की हानि सहती आ रही हैं क्योंकि उनके पास संगठित युद्ध-तंत्र नहीं है। जन-स्थान में जन-सामान्य तथा आश्रमवासी मिलकर संगठित हो गए थे; अत: राक्षसी सेना पराजित हुई। अब भी जैसे ही सीता-विषयक कोई समाचार मिलेगा, हमारा सैनिक अभियान आरंभ हो जाएगा। यह युद्ध लंका में भी हो सकता है और राक्षसों के किसी अन्य राज्य अथवा नगर में भी। इस बार हमें एक अद्‌भुत युद्ध करना है। इसमें हमें जनस्थान के उस समस्त क्षेत्र की भी रक्षा करनी है, जो राक्षस-शून्य हो चुका है; किष्किंधा राज्य तथा नगर में भी रक्षा करनी है कि कहीं अपने बचाव के लिए राक्षस हम पर पीछे से आक्रमण न कर दें; और हमें राक्षसों के राज्य में घुसकर आक्रामक युद्ध भी करना है।

वस्तुत: आज तक हमने राक्षसों से जो छोटे-बड़े युद्ध किए हैं, वे प्राय: प्रतिरक्षात्मक युद्ध थे। वे हमने अपनी भूमि, अपनी जनसंख्या तथा अपने व्यूह के अनुसार किए हैं। किंतु अब जिस युद्ध की संभावना है, वह आक्रामक युद्ध होगा; रासों की धरती पर, उनकी पक्ष-समर्थक जनसंख्या के बीच होगा। संभवत: हम अपनी इच्छानुसार समय और व्यूह भी नहीं चुन पाएँगे। और सबसे बड़ी बात यह है कि जिस युद्ध की हम तैयारी कर रहे हैं, वह युद्ध उस सेना और सैनिक नेतृत्व से है, जो अपने युद्ध-कौशल तथा प्रहारक शक्ति के लिए विश्वविख्यात है। अत: हमें सोच-समझकर चलना है। किसी प्रकार का कोई संकोच हो तो अभी बता दें।

राम का स्वर पुन: सहज हो गया, वस्तुत: हमें बात यहीं से आरंभ करनी चाहिए कि अब तक वानर राक्षसों से पराजित क्यों होते रहे हैं- क्या इसलिए कि उनमें वीरता अथवा शौर्य की कमी थी ?

नहीं। सबने एक स्वर में कहा। क्या उनके पास जन-बल नहीं था ? नहीं।

क्या वे अपनी विरोधी जनसंख्या के मध्य लड़ रहे थे ? नहीं। क्या युद्धक्षेत्र की प्रकृति और भूगोल उनके विरुद्ध था ? नहीं।

तो फिर क्या कारण था ? राम बोले, वस्तुत: युद्ध तो जन-बल से ही जीते जाते हैं; किंतु कुछ अन्य उपकरण भी होते हैं, जिनसे जय-पराजय का निर्णय होता है। उनमें से एक है- शस्त्र-बल, शस्त्रों की जानकारी, शस्त्र-परिचालन का कौशल। उसके लिए आवश्यक है शस्त्र-उद्योग। युद्ध एक विद्या है, अत: व्यूहों की योजना भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष है। सैनिक नेतृत्व की दक्षता भी युद्धों की जय-पराजय का निर्णय करती है। इसके साथ आवश्यक है- खाद्य-सामग्री तथा यातायात के साधन। राम निमिष भर रुककर बोले, आपके साधारण सैनिकों के पास कौन-से शस्त्र हैं- दण्ड तथा गदा। आपके सैनिकों के पास साधारण असि, परशु तथा धनुष-बाण तक नहीं- जबकि राक्षसों के पास इन साधारण शस्त्रास्त्रों के साथ-साथ भयंकर दिव्यास्त्र भी हैं। उनके पास अश्व तथा रथ हैं।

तो क्या हम इनके बिना लड़ ही नहीं सकते ? सुग्रीव के मुख से अनायास निकला।

नहीं। ऐसी बात नहीं है। राम बोले, मैंने जो कुछ कहा है, वह आप लोगों को निराश अथवा भयभीत करने के लिए नहीं है। युद्ध जीतने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण उपकरण आत्मबल है; और मुझे आप लोगों में उसका अभाव नहीं दीखता। फिर भी हमें युद्ध करना है, आत्महत्या नहीं; अत: युद्ध में जाने से पूर्ण हमें अपनी और अपने शत्रु की शक्ति को भली प्रकार तौलना होगा; अपने और शत्रु के अभावों, कमियों और दुर्बलताओं को जानना होगा; साथ ही अपने अभावों को अन्य उपकरणों की सहायता से यथासंभव पाटना होगा, ताकि हमारे पक्ष के जन-बल की हानि कम-से-कम हो।

सभी वानर सरोवरों, सरिताओं, लतामण्डपों, खुले स्थानों और नगरोंमें तथा नदियोंके कारण दुर्गम प्रदेशोंमें सब ओर घूम-फिरकर सीताकी खोज करने लगे।

सुग्रीवने जिन्हें आज्ञा दी थी, वे सभी वानर-यूथपति अपनी-अपनी दिशाओंके पर्वत, वन और काननोंसहित सम्पूर्ण देशोंकी छानबीन करने लगे। सीताका पता लगानेकी निश्चित इच्छा मनमें लिये वे सब वानर दिनभर इधर-उधर अन्वेषण करते और रातके समय किसी नियत स्थानपर एकत्र हो जाते थे। सारे दिन भिन्न-भिन्न देशोंमें घूम-फिरकर वे वानर सभी ऋतुओंमें फल देनेवाले वृक्षोंके पास जाकर रातको वहीं सोया अथवा विश्राम किया करते थे। जानेके दिनको पहला दिन मानकर एक मास पूर्ण होनेतक वे श्रेष्ठवानर निराश हो लौट आये और कपिराज सुग्रीव से मिलकर प्रस्रवणगिरिपर ठहर गये।

महाबली विनत अपने मन्त्रियोंके साथ पहले बताये अनुसार पूर्व दिशामें खोज करके वहाँ सीताको न पाकर किष्किन्धा लौट आये। महाकपि शतबलि सारी उत्तर दिशाकी छानबीन करके भयभीत हो तत्काल सेनासहित किष्किन्धा आ गये। वानरोंसहित सुषेण भी पश्चिम दिशाका अनुसंधान करके वहाँ सीताको न पाकर एक मास पूर्ण होनेपर सुग्रीवके पास चले ओ।

प्रस्रवणगिरिपर श्रीरामके साथ बैठे हुए सुग्रीवके पास आकर सब वानरोंने उन्हें प्रणाम किया और इस प्रकार कहा- राजन्। हमने समस्त पर्वत, घने जंगल, समुद्रपर्यन्त नदियाँ, सम्पूर्ण देश, आपकी बतायी हुई सारी गुफाएँ तथा लतावितानसे व्याप्त हुई झाड़ियाँ भी खोज डालीं। घने वनों, विभिन्न देशों, दुर्गम स्थानों और ऊँची-ऊँची भूमियोंमें भी ढूँढा है। बड़े-बड़े प्राणियोंकी भी तलाशी ली और उन्हें मार डाला। जो-जो प्रदेश घने और दुर्गम जान पड़े, वहाँ बारंबार खोज की किंतु कहीं भी सीताका पता न लगा।

उन सभी श्रेष्ठ वानरोंके साथ बहुत दूरका रास्ता तय करके वे विन्ध्याचल गये और वहाँकी गुफाओं, जंगलों, पर्वतशिखरों, नदियों, दुर्गम स्थानों, सरोवरों, बड़े-बड़े वृक्षों, झाड़ियों और भाँति-भाँतिके पर्वतों एवं वन्य वृक्षोंमें सब ओर ढूँढते फिरे; परंतु वहाँ उन समस्त वीर वानरोंने मिथिलेशकुमारी जनकनन्दिनी सीताको कहीं नहीं देखा।

आरम्भसे ही अरण्यमें अन्वेषण करना था दक्षिण जानेवाले दलको। सबसे वृद्ध एवं सम्मानित होनेके कारण दलका निर्देशन स्वयं जाम्बवन्त करने लगे। वैसे युवराज अङ्गद साथ थे, अत: वे स्वत:सिद्ध दलनायक थे। पञ्चवटी पहुँचकर इस दलने महर्षि अगस्त्यको प्रणाम किया- दक्षिणारण्यके अन्वेषणकी आपसे अनुमति लेने हम सब आये हैं। हम वानरेन्द्र सुग्रीवके चर हैं।

यथेच्छ विचरण करो। अमित तेजा महर्षिने प्रसन्न होकर आशीर्वाद दे दिया- विश्वास रखो, श्रीरामकी सेवा में लगे प्राणीको सदा सफलता प्राप्त होती है। विन्ध्य गिरिका यह दक्षिणी भाग बहुत विकट था, फलहीन कण्टक वृक्ष और उनमें भी अभीसे पतझड़ हो चुका था। सरिताएँ सूखी पड़ी थीं। उनके भीतर पाषाण और रेतके अतिरिक्त कुछ नहीं था।

विन्ध्यपर्वतके आसपासका महान् देश बहुत-सी गुफाओं तथा घने जंगलोंसे भरा था। इससे वहाँ जानकीको ढूँढनेमें बड़ी कठिनाई होती थी। भयंकर दिखायी देनेवाले वहाँके सुनसान जंगलमें न तो पानी मिलता था और न कोई मनुष्य ही दिखायी देता था।

वैसे जंगलोंमें भी खोज करते समय उन वानरोंको अत्यन्त कष्ट सहन करना पड़ा। वह विशाल प्रदेश अनेक गुहाओं और सघन वनोंसे व्याप्त था। अत: वहाँ अन्वेषणका कार्य बहुत कठिन प्रतीत होता था।

पिछले कई दिनों से अंगद और उनके साथी लगातार चलते जा रहे थे। मार्ग में पड़ने वाले वनों में जहाँ कहीं मनुष्य के बसने की संभावना होती, उसी के आस-पास वे लोग खोज करने लगते। किंतु किसी मनुष्य से पूछताछ करने से पूर्व उन्हें भली प्रकार यह देख लेना पड़ता था कि कहीं वह व्यक्ति राक्षसों से ही तो संबद्ध नहीं है। सुग्रीव का निर्देश उन्हें स्मरण था कि सारी खोज पर्याप्त गोपनीय रीति से होनी चाहिए। ऐसा न हो कि रासों को ज्ञात हो जाने पर वे लोग उनके किसी षड्यंत्र में फँसकर या तो अपने मार्ग से भटक जाएँ या फिर अपने प्राण गँवा बैठें। यह भी संभव था कि उन्हें कोई सूचना-सूत्र मिले; किंतु रावण को इस संधान दल का ज्ञान हो जाए और वह सीता को कहीं अन्यत्र स्थानांतरित कर दे।

फिर भी, जहाँ कहीं कोई ग्राम, बस्ती, आश्रम, पुरवा, टोला-यहाँ तक कि कोई कुटीर भी मिला; बिना उसका सूक्ष्म निरीक्षण किए हुए, वे लोग आगे नहीं बढ़े। यह पद्धति समय-साध्य तो थी; किंतु उसके बिना खोज पूरी नहीं हो सकती थी।

तदनन्तर वे समस्त वानर-यूथपति उस देशको छोड़कर दूसरे प्रदेशमें घुसे, जहाँ जाना और भी कठिन था तो भी उन्हें कहीं किसीसे भय नहीं होता था। वहाँके वृक्ष कभी फल नहीं देते थे। उनमें फूल भी नहीं लगते थे और उनकी डालियोंमें पत्ते भी नहीं थे। वहाँकी नदियोंमें पानीका नाम नहीं था। कन्द-मूल आदि तो वहाँ सर्वथा दुर्लभ थे। उस प्रदेशमें न भैंसे थे न हिरन और हाथी, न बाघ थे न पक्षी तथा वनमें विचरनेवाले अन्य प्राणियोंका भी वहाँ अभाव था। वहाँ न पेड़ थे न पौधे, न औषधियाँ थीं न लता-बेलें। उस देशकी पोखरियोंमें चिकने पत्तों और खिले हुए फूलोंसे युक्त कमल भी नहीं थे। इसीलिये न तो वे देखने योग्य थीं, न उनमें सुगन्ध छा रही थी और न वहाँ भौंरें ही गुंजार करते थे।

पहले वहाँ कण्डु नामसे प्रसिद्ध एक महाभाग सत्यवादी और तपस्याके धनी महर्षि रहते थे, जो बड़े अमर्षशील थे- अपने प्रति किये गये अपराधको सहन नहीं करते थे। शौच-संतोष आदि नियमोंका पालन करनेके कारण उन महर्षिको कोई तिरस्कृत या पराजित नहीं कर सकता था। उस वनमें उनका एक बालक पुत्र, जिसकी अवस्था दस वर्षकी थी, किसी कारणसे मर गया। इससे कुपित होकर वे

महामुनि उस वनके जीवनका अन्त करनेके लिये उद्यत हो गये।

उन धर्मात्मा महर्षिने उस समूचे विशाल वनको वहाँ शाप दे दिया, जिससे वह आश्रयहीन, दुर्गम तथा पशु-पक्षियोंसे शून्य हो गया।

वहाँ सुग्रीवका प्रिय करनेवाले उन महामनस्वी वानरोंने उस वनके सभी प्रदेशों, पर्वतोंकी कन्दराओं तथा नदियोंके उद्गमस्थानोंमें एकाग्रचित्त होकर अनुसंधान किया; परंतु वहाँ भी उन्हें जनकनन्दिनी सीता अथवा उनका अपहरण करनेवाले रावणका कुछ पता नहीं चला। तत्पश्चात् लताओं और झाड़ियोंसे व्याप्त हुए दूसरे किसी भयंकर वनमें प्रवेश करके उन हनुमान् आदि वानरोंने भयानक कर्म करनेवाले एक असुरको देखा, जिसे देवताओंसे कोई भय नहीं था।

उधर वह बलवान् असुर भी उन सब वानरोंको देखकर बोला- अरे, आज तुम सभी मारे गये। इतना कहकर वह अत्यन्त कुपित हो बँधा हुआ मुक्का तानकर उनकी ओर दौड़ा।

उसे सहसा आक्रमण करते देख बालि-पुत्र अङ्गदने समझा कि यही रावण है; अत: उन्होंने आगे बढ़कर उसे एक तमाचा जड़ दिया।

बालिपुत्रके मारनेपर वह असुर मुँहसे रक्त वमन करता हुआ फटकर गिरे हुए पहाड़की भाँति पृथ्वीपर जा पड़ा और उसके प्राणपखेरू उड़ गये। तत्पश्चात् विजयोल्लाससे सुशोभित होनेवाले प्राय: वहाँकी सारी पर्वती गुफाओंमें अनुसंधान करने लगे।

अंगद बोले- हमलोगोंने वन, पर्वत, नदियाँ, दुर्गम स्थान, घने जंगल, कन्दरा और गुफाएँ भीतर प्रवेश करके अच्छी तरह देख डालीं; परंतु उन स्थानोंमें हमें न तो जानकीके दर्शन हुए और न उनका अपहरण करनेवाला वह पापी राक्षस ही मिला।

अत्यत्न सघन अरण्य, बहुत विकट पर्वतीय प्रदेश- इस कठिनाईने सबको थका दिया। सब सघन वृक्ष मिला तो एकत्र होकर बैठे तनिक विश्राम करने। जाम्बवन्तने सबको सावधान किया- वानरेन्द्र सुग्रीव अत्यन्त उग्रदण्ड हैं। हमारे अन्वेषणकी गति बहुत शिथिल है। अत: तन्द्रा, निद्रा त्यागकर सबको पूरी शक्तिसे लगना चाहिये।

हमारा समय भी बहुत बीत गया। राजा सुग्रीवका शासन बड़ा भयंकर है। अत: आपलोग मिलकर पुन: सब ओर सीताकी खोज आरम्भ करें। आलस्य, शोक और आयी हुई निद्राका परित्याग करके इस प्रकार ढूँढ़ें, जिससे हमें जनककुमारी सीताका दर्शन हो सके।

उत्साह, सामर्थ्य और मनमें हिम्मत न हारना- ये कार्यकी सिद्धि करानेवाले सद्गुण कहे गये हैं; इसीलिये मैं आप लोगोंसे यह बात कह रहा हूँ। कर्ममें लगे रहनेवाले लोगोंको उस कर्मका फल अवश्य होता दिखायी देता है; अत: अत्यन्त खिन्न होकर उद्योगको छोड़ बैठना कदापि उचित नहीं है। हमलोग पुन: पर्वतों, कन्दराओं, शिलाओं, निर्जन वनों और पर्वतीय झरनोंकी खोज करें।

यह सुनकर वे महाबली वानर उठकर खड़े हो गये और विन्ध्य पर्वतके काननोंसे व्याप्त दक्षिण दिशामें विचरने लगे।

सीताके दर्शनकी इच्छा रखनेवाले वे सभी श्रेष्ठ वानर वहाँके रमणी लोध्रवनमें और सप्तपर्ण (छितवन) के जंगलोंमें उनकी खोज करने लगे। पृथ्वीपर उतरकर अधिक थक जानेके कारण अचेत हुए वे सभी वानर वहाँ एक वृक्षके नीचे गये और दो घड़ी तक वहाँ बैठे रहे।

एक मुहूर्ततक सुस्ता लेनेपर जब उनकी थकावट कुछ कम हो गयी, तब वे पुन: सम्पूर्ण दक्षिण दिशामें खोजके लिये उद्यत हो गये।

हनुमान् आदि सभी श्रेष्ठ वानर सीताके अन्वेषणके लिये प्रस्थित हो पहले विन्ध्य पर्वतके ही चारों ओर विचरने लगे।

हम सब सूर्यास्तके पश्चात् एकत्र ही विश्राम करेंगे। रात्रिमें अन्वेषण वनमें अशक्य था- सूर्योदयसे पूर्व ही प्रात:कालीन प्रकाश प्रारंभ हो तो सबको अन्वेषणमें लग जाना चाहिये।

जैसे-जैसे यह दल दक्षिण बढ़ता गया, अन्वेषणका क्षेत्र समीर्ण होता जा रहा था। अत: वानरोंके दो-दोके दल अधिक समीप होते गये। वनों को पार कर जब वे पर्वत-प्रदेशों में पहुँचे, तो अंगद को लगा कि उनकी कठिनाई बढ़ गई है। वन में रहने के लिए तो मनुष्य को अपने लिए किसी-न-किसी प्रकार का आवास बनाना ही पड़ता था; और वह आवास दूर से ही दिखाई भी पड़ जाता था। किंतु पर्वतों में प्रकृति की बनाई हुई इतनी गुफाएँ थीं कि बिना उन गुफाओं में प्रवेश किए हुए यह अनुमान करना भी कठिन हो जाता था कि कहाँ मनुष्य का वास है और कहाँ नहीं।

पर्वतों के ऊबड़-खाबड़ मार्गों तथा प्रकृति द्वारा निर्मित इन असंख्य बेढ़ब गुफाओं की व्यर्थ, निष्फल खोज से दल के लोगों का उत्साह भी क्षीण होता रहा था। साथ ही समय भी ऐसे हाथ से खिसकता जा रहा था, जैसे मुट्ठी में पकड़ने के प्रयत्न में जल निकल जाए।

अब तो सामान्यत: यह स्थिति हो गई थी कि किसी पर्वत-कंदरा के निकट पहुँचते ही जाम्बवान और तार जैसे समर्थ लोग भी किसी छायादार स्थान पर इस मुद्रा में बैठ जाते थे कि जिसे ढूँढ़ना हो ढूँढ़ लो- इन पत्थरों में भी कहीं जानकी हो सकती है क्या।

एक हनुमान थे, जिनका उत्साह तनिक भी क्षीण नहीं हुआ था। जब सब लोग पर्वत के पतगल पर ही बैठ जाते थे, वे अकेले ही पर्वत पर चढ़ जाते और इधर-उधर भटकते फिरते। गुफाओं और कंदराओं का अवलोकन करते। कहीं जलाशय दिख जाता तो उसके आस-पास देखते, कहीं अग्नि अथवा धुएँ का आभास मिलता तो उसके विषय में अपनी जिज्ञासा शांत करने चल पड़ते।

हनुमान का स्वर गंभीर था, किंतु उन्होंने सायास अपने रोष को उसमें मिश्रित नहीं होने दिया था, आग, धुआँ या जल, अपने आस-पास बसने का आभास देते हैं। मैं यह तो नहीं मानता कि देवी सीता को रावण ने यहाँ रख छोड़ा होगा; किंतु मेरी यह मान्यता अवश्य है कि रावण जहाँ कहीं से भी सीता को लेकर गया होगा, कहीं-न-कहीं किसी-न-किसी व्यक्ति ने उसे देखा होगा। किसी ने तो वैदेही का चीत्कार सुना होगा अथवा किसी को तो उनका कोई आभूषण पड़ा मिला होगा, जेसे ऋष्यमूक पर निवास करते हुए हमें मिला था। हनुमान कुछ रुककर पूरे उत्साह से बोले, यदि कोई ऐसा व्यक्ति हमें मिल जाए, तो हम निश्चिंत होकर आगे बढ़ सकते हैं कि हम ठीक मार्ग पर जा रहे हैं- व्यर्थ भटककर अपना समय नष्ट नहीं कर रहे। वन के पशु बोल नहीं पाते, नहीं तो मैं उनसे भी पूछता कि क्या उन्होंने कुछ देखा है।

हनुमान की गंभीरता का प्रभाव सारे दल पर हुआ। उनकी बात का उत्तर किसी ने नहीं दिया। कदाचित इस उत्तर के पश्चात् परिहास आगे नहीं बढ़ सकता था और गंभीर चर्चा के लिए वे लोग प्रस्तुत नहीं थे।

उन्होंने सिंह और बाघोंसे भरी हुई कन्दराओं तथा उसके आस-पासकी भूमिको भी छान डाला। गिरिराज विन्ध्यपर जो बड़े-बड़े झरने और दुर्गम स्थान थे, वहाँ भी अन्वेषण किया। गुफाओं और जंगलोंसे भरे हुए उस महान् प्रदेशमें सीताको ढूँढनेका काम बहुत ही कठिन था तो भी वहाँ वायुपुत्र हनुमानजी सारे पर्वतकी छानबीन करने लगे।

आज प्रात: से उन्हें कहीं भी खाद्य पदार्थ अथवा जल नहीं मिला था। पिछले कुछ दिनों से खाने-पीने की व्यवस्था अधिक-से-अधिक अनियमित होती गई थी। किंतु आज प्रात: से उन्हें कुछ भी नहीं मिला था; और उन लोगों ने इस आशा पर अपनी यात्रा आरंभ कर दी थी कि मार्ग में कहीं कुछ-न-कुछ मिल जाएगा। किंतु चलते-चलते प्रहर-भर बीत गया था, सूर्य आकाश पर ऊपर चढ़ आया था, पर अभी तक कहीं जल भी दिखाई नहीं पड़ा था।

अंगद को लगा, जितनी दूर तक वे समझ रहे थे- निराशा उससे आगे बढ़ चुकी थी। उन्होंने हनुमान की ओर प्रश्नवाचक दृष्टि से देखा। हनुमान की आँखों में रुद्ध क्रोध और विवशता के भाव थे, पर देखते-ही-देखते वे जैसे अपने क्रोध को गटक गए और अपने चेहरे पर बलात् मुसकान लाकर बोले, निष्फल वृक्ष के तने से लगकर बैठ जाने से तो मुख में खाद्य पदार्थ आ नहीं पड़ेगा। न ही अभी कोई वर्षा होने बालि है कि बैठे-बैठे आपके मुँह में मेघ जल टपका जाएँगे। खाने-पीने को कुछ चाहिए, तो उठो, कुछ उद्यम करो।

दक्षिण भारतमें बहुत व्यापक जलहीन क्षेत्र अब भी है। यदि नहर न हों, जीवन-शून्य हो जाय वह प्रदेश। अनेक वर्षोंके अवर्षणके कारण सरोवरोंके तले दरारोंसे भरे थे। सरिताओंमें रेत उड़ रही थी। पूर्व और पश्चिम भी अथाह असीम उद्‌धि था; किंतु सागरका जल तृषा शान्त करेगा ? नरिकेलके वृक्ष थे किन्तु फल-रहित।

हनुमान का साहस जाग उठा और मुख उल्लसित हो गया। उन्होंने कृतज्ञता-भरी दृष्टि से जाम्बवान की ओर देखा और बोले, हम लोग दो-दो व्यक्तियों की टोलियों में आस-पास के क्षेत्र का निरीक्षण करें। जिसे भी खाद्य-पदार्थ अथवा जल का कोई आभास मिले, वह टोली यहीं आकर इस वृक्ष के नीचे से अन्य लोगों को पुकारे।

उस पर्वत के विभिन्न भागों में घूमते-घूमते जब प्रहर भर बीतने को आया और फिर प्यास से थक-हारकर उनके बैठे जाने की संभावना जागने लगी, तभी उन्हें जाम्बवान के पुकारने का-सा स्वर सुनाई पड़ा। किंतु उनका स्वर उस वृक्ष की दिशा में से नहीं आ रहा था, जहाँ से खोज आरंभ हुई थी और कुछ मिल जाने पर जहाँ से पुकारना निश्चित हुआ था।

अन्य किसी स्थान से पुकारने का क्या अर्थ ? हनुमान ने सोचा- क्या वृद्ध जाम्बवान किसी कठिनाई में फँस गए हैं ? किंतु उनके आह्वान में संकटग्रस्त होकर, असहायता में पुकारने के स्थान पर, कुछ उपलब्धि का-सा ही आभास था।

मुझे लगता है कि जाम्बवान ने कुछ पा लिया है। हनुमान बोले।

मेरा भी यही अनुमान है। अंगद ने सहमति प्रकट की। वे दोनों झपटते हुए से उसी दिशा में चले।

जाम्बवान और तार एक बड़ी-सी गुफा के सम्मुख खड़े थे। उनकी आँखों में विस्मय और उपलब्धि का भाव था। थोड़ी-थोड़ी देर में वे लोग अपने साथियों को पुकार लेते थे; और फिर उसी प्रकार चकित भाव से उस गुफा की ओर देखने लगते थे। दल के कुछ अन्य

लोग भी आकर उनके निकट उसी मुद्रा में खड़े थे। क्या बात है, तात जाम्बवान ? अंगद ने आगे बढ़कर पूछा।

वह गुफा, युवराज। जाम्बवान ने, बिना अंगद की ओर देखे ही, तर्जनी से उस गुफा की ओर इंगित कर दिया।

गुफाएँ तो इस पर्वत में भरी पड़ी हैं। अंगद कुछ रोष से बोले, आप हम लोगों को गुफा देखने के लिए बुला रहे हैं क्या ?

फिर अलग-अलग एक दूसरेसे थोड़ी ही दूरपर रहकर गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गन्धमादन, मैन्द, द्विविद, हनुमान, जाम्बवान्, युवराज अङ्गद तथा वनवासी वानर तार- ये दक्षिण दिशाके देशोंमें जो पर्वत-मालाओंसे घिरे हुए थे, सीताकी खोज करने लगे। खोजते-खोजते उन्हें वहाँ एक गुफा दिखायी दी, जिसका द्वार बंद नहीं था।

उसमें प्रवेश करना बहुत कठिन था। वह गुफा ऋक्ष-बिल नामसे विख्यात थी और एक दानव उसकी रक्षामें रहता था। वानरोंको भूख-प्यास सता रही थी। वे बहुत थक गये थे और पानी पीना चाहते थे।

अत: लता और वृक्षोंसे आच्छादित विशाल गुफाकी ओर वे देखने लगे। इतनेमें उसके भीतरसे क्रौञ्च, हंस, सारस तथा जलसे भीगे हुए चक्रवाक पक्षी, जिनके अङ्ग कमलोंके परागसे रक्तवर्णके हो रहे थे, बाहर निकले।

तब उस सुगन्धित एवं दुर्लङ्घ्य गुफाके पास जाकर उन सभी श्रेष्ठ वानरोंका मन आश्चर्यसे चकित हो उठा। उस बिलके अंदर उन्हें जल होनेका संदेह हुआ। वे महाबली और तेजस्वी वानर बड़े हर्षमें भरकर उस गुफाके पास आये, जो नाना प्रकारके जन्तुओंसे भरी हुई तथा दैत्यराजोंके निवासस्थान पातालके समान भयंकर प्रतीत होती थी। वह इतनी भयानक थी कि उसकी ओर देखना कठिन जान पड़ता था। उसके भीतर घुसना सर्वथा कष्टसाध्य था।

जाम्बवान कुछ सचेत हुए। उन्होंने आँखें झपकाकर अंगद को देखा, जैसे स्वयं को संतुलित न कर पा रहे हों। किंतु उनके कुछ बोलने से पूर्व ही तार ने कहा, नहीं, युवराज। तुम्हें गुफा देखने के लिए नहीं बुला रहे। हमने इस गुफा में से अनेक पक्षी उड़कर बाहर आते देखे हैं। उनमें से चक्रवाकों का एक जोड़ा ऐसा भी था, जिनके पंख जल से भीगे हुए थे और हमारा तो विचार है उनके पंखों पर कमल का पराग भी अवश्य छिटका हुआ था। अंगद ने हनुमान की ओर देखा।

आप लोगों ने ठीक-ठीक देखा है न, तात। हनुमान गंभीरता और विनोद की मध्य स्थिति में थे, ऐसा तो नहीं कि अपनी प्यास की पीड़ा आपको पक्षियों के पंख भीगे हुए दिखा रही हो।

नहीं हनुमान। हमने ठीक-ठीक देखा है। जाम्बवान अब पर्याप्त स्थिर लग रहे थे, मेरे साथ आओ।

जाम्बवान के पीछे-पीछे वे लोग गुफा के मुख के निकट आ गए। जाम्बवान झुककर मिट्टी में कुछ खोज रहे थे। उन्हें अधिक खोजना नहीं पड़ा। थोड़ी देर में ही वे तनकर सीधे खड़े हो गए और तर्जनी से उन्होंने एक विशिष्ट स्थान की ओर संकेत किया, यह देखो।

हनुमान और अंगद-दोनों ने झुककर देखा- निश्चित रूप से वहाँ पानी की दो-चार बूँदे टपकी थी, जिन्हें मिट्टी ने सोख तो लिया था, किंतु बूँदों के चिह्न अभी मिटे नहीं थे।

अब तक उनके दल की दसों टोलियाँ वहाँ एकत्रित हो चुकी थीं, प्राय: सभी सहमत थे कि धरती पर वे चिह्न पानी की बूँदों के ही चिन्ह थे, अत: जाम्बवान और तार ने ठीक ही देखा था कि उस गुफा में से भीगे पंखों वाले चक्रवाक अवश्य निकले होंगे। ऐसी स्थिति में गुफा के भीतर कहीं जलाशय भी होना चाहिए।

थोडे-से विचार विमर्श के पश्चात, वे लोग जल-संधान के लिए गुफा में प्रवेश करने को सहमत हो गए; किंतु गुफा के भीतर सघन अंधकार था। जाने गुफा कितनी लंबी थी और उसमें किस प्रकार के जीव-जंतु निवास करते थे।

यदि यह गुफा किसी जलाशय तक ले जाती है, तो वह इस गुफा के उस पार होगा। क्यों न हम पर्वत के ऊपर चढ़कर दूसरी ओर उतर जाएँ और वहाँ जलाशय को खोजें ?

हनुमान को लगा, यदि फिर इस प्रकार के विकल्पों की चर्चा होने लगी तो अनेक लोगों के मन में अनुत्साह जागने लगेगा और गुफा में प्रवेश धरा-का-धरा रह जाएगा। और यदि वह जलाशय, पृथ्वी से फूटने वाले जल के किसी उत्स का परिणाम हुआ और यह उत्स गुफा के मध्य में ही हुआ तो हमें दूसरी ओर से भी इस अंधकारमय गुफा में प्रवेश तो करना ही पड़ेगा, उलटे पर्वत लाँघने का अतिरिक्त परिश्रम भी उठाना पड़ेगा। फिर यह भी संभव है कि यह गुफा दूसरी ओर से खुली हुई न हो। ऐसी स्थिति में हम पर्वत लाँघकर दूसरी ओर तो जाएँगे ही, गुफा का दूसरा द्वार न खोज पाने की असफलता से थक-हारकर पुन: पर्वत को लाँघकर इस ओर वापस लौटेंगे और फिर

इसी गुफा में ऐसे ही प्रवेश करेंगे।

तुम्हारी बात तो ठीक हैं, हनुमान। किंतु गुफा सर्वथा प्रकाशशून्य है। उसके भीतर हिंस्र तथा घातक जंतुओं के होने की पूरी संभावना है। संभव है कि विषधर सर्प इत्यादि भी हों।

संभावनाएँ तो सब प्रकार की हैं- भली भी और बुरी भी। हनुमान ने उत्तर दिया, प्रवेश न करने पर अहितकर संभावनाओं से तो हम मुक्त रहेंगे ही, किंतु हितकर संभावनाओं का भी लाभ नहीं उठा सकेंगे। क्यों, युवराज ?

अंगद ने कुछ कहा नहीं, किंतु वे हनुमान से सहमत प्रतीत हो रहे थे।

मेरा प्रस्ताव है कि हम सब लोग एक-दूसरे का हाथ पकड़कर गुफा में प्रवेश करें ? हनुमान बोले, यदि युवराज की अनुमति हो तो, सबसे पहले मैं प्रवेश करूँगा। इससे हम अंधकार में एक-दूसरे का सहारा भी ले सकेंगे, अपने अनुभव का लाभ भी दे सकेंगे और परस्पर निकट भी बने रहेंगे। उत्तम प्रस्ताव है। जाम्बवान ने अपनी सहमति प्रकट कर दी।

हनुमान ने अंगद की ओर देखा। स्वीकार है। अंगद ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया। उस बिलसे निकलते हुए उन सिंहों, मृगों और पक्षियोंको देखकर वे श्रेष्ठ वानर अन्धकारसे आच्छादित हुई उस गुफामें प्रवेश करने लगे।

सबसे पहले हनुमान ने प्रवेश किया। उसका हाथ पकड़कर उसके पीछे अंगद गए। अंगद का हाथ नील ने पकड़ा, नील का तार ने। तार के बाद जाम्बवान आए। फिर तो एक-एक कर सब लोग आ गए। अब खोजियों का स्वतंत्र महत्त्व समाप्त हो चुका था। यह क्षेत्र उनके लिए सर्वथा अपरिचित ही था। वे भी अन्य लोगों के ही समान हाथ पकड़े गुफा में प्रवेश कर गए।

आरंभ में हल्का-हल्का दिखाई देता रहा; किंतु कुछ आगे बढ़ने पर पूर्णत: अंधकार छा गया।

पैरों के नीचे शुष्क और कठोर धरती थी, जिसमें स्थान-स्थान पर कंकड़ भी थे। ऐसा नहीं लगता था कि इस कठोर धरती में आस-पास कहीं कोई जल-स्रोत भी होगा। थोड़ी दूर चलने पर हनुमान का सिर नीचे झुक आई किसी शिला से टकराया। वे धरती तो पैरों से टटोल-टटोलकर आगे बढ़ रहे थे, अत: गति बहुत ही धीमी थी। सिर में अधिक चोट नहीं आई।

क्या हुआ ? उन्हें रुके देख अंगद ने पूछा।

यहाँ से गुफा या तो संकरी हो गई है, हनुमान बोले, या फिर उसका स्वरूप कुछ बदला है।

तुम्हें कैसे मालूम ?

मेरा सिर ऊपर टकराया है, युवराज। हनुमान धीरे से बोले। वे अपने एक हाथ से ऊपर की शिला को टटोल रहे थे।

क्या हुआ ? अनेक लोगों का जिज्ञासामय स्वर गुफा में गूँजा। कोई सर्प तो नहीं है ? एक स्वर आया।

नहीं। कुछ नहीं है। हनुमान उच्च स्वर में उनकी आशंकाओं का निवारण करते हुए बोले, यहाँ गुफा सीधी न रहकर कुछ आड़ी हो गई है। यहाँ से अपना सिर तिरछा करके निकलना। एक-दूसरे का हाथ पकड़े वे अंधकार में बढ़ते जा रहे थे। मार्ग में कोई हिंस्र पशु अथवा अन्य कोई बाधा नहीं थी। बस, एक अंधकार ही अंधकार थां उनकी आँखें कुछ अभ्यस्त हो गईं तो अंधकार भी उतना कष्टकर नहीं रहा; किंतु पूरी तरह सब कुछ देख पाना तब भी संभव नहीं था।

बीच-बीच में अपने किसी साथी को कोई अनुदेश देते हुए किसी का कोई स्वर सुनाई पड़ जाता था; अन्यथा कोई बात भी नहीं कर रहा था। सब एक प्रकार से दम साधे, अपनी इस यात्रा के परिणाम देखने को मन-ही-मन व्यग्र आगे बढ़ते जा रहे थे।

हनुमान बार-बार अपने एक हाथ से गुफाओं को छू-छूकर देख रहे थे और अनुमान लगाने का प्रयत्न कर रहे थे कि यह गुफा प्रकृति-निर्मित है अथवा मानव-निर्मित ? प्रकृति द्वारा निर्मित गुफाएँ इतनी लंबी नहीं होतीं; और सामान्यत: वे दूसरी ओर से बंद भी होती हैं। पर्वतों की शिलाओं में एक ओर से बंद गुफा प्राय: वन्य पशुओं की माँद बन जाती है। कहीं-कहीं उसमें मनुष्य भी रहने लगता है। उस गुफा में उन्हें न तो अभी तक कोई पशु अथवा मनुष्य ही मिला था और न यह गुफा ऊपर अथवा नीचे से विशेष ऊबड़-खाबड़ ही थी।

वे श्रेष्ठ वानर उस बिलमें वेगपूर्वक घुस गये। भीतर जाकर उन्होंने देखा, वह स्थान बहुत ही उत्तम, प्रकाशमान और मनोहर था।

नाना प्रकारके वृक्षोंसे भरी हुई उस भयंकर गुफामें वे एक योजनतक एक दूसरेको पकड़े हुए गये।

वे वानरवीर जब दुर्बल, खिन्नवदन और श्रान्त होकर जीवनसे निराश हो गये, तब उन्हें वहाँ प्रकाश दिखायी दिया।

वहाँ नील वैदूर्यमणिकी-सी कान्तिवाली पद्मलताएँ दिखायी देती थीं, जो पक्षियोंसे आवृत थीं। कई ऐसे सरोवर भी देखनेमें आये,

जो बाल सूर्यकी-सी आभावाले विशाल काञ्चनवृक्षोंसे घिरे हुए थे। उनके भीतर सुनहरे रंगके बड़े-बड़े मत्स्य शोभा पाते थे। वे सरोवर सुवर्णमय कमलोंसे सुशोभित तथा स्वच्छ जलसे भरे हुए थे।

सिवाय इसके कि यह गुफा आड़ी थी और व्यक्ति को यदि यह ज्ञात न हो और वह सीधा चलने का प्रयत्न करे तो उसे बार-बार सिर पर चोट लगेगी- अन्य कोई विशेष बाधा नहीं थी वे पक्षी भी कैसे इस अंधकार में बिना शिलाओं से टकराकर आहत हुए सीधे निकल गए थे। अवश्य ही निर्माण में मानव का हाथ लगा होगा।

क्या विचार है, युवराज ? हनुमान धीरे से बोले, क्या यह गुफा प्रकृति-निर्मित लगती है ?

यदि प्रकृति-निर्मित है तो अद्‌भुत है। अंगद बोले और अपने विचारों में खो गए।

सहसा हनुमान को लगा कि गुफा में कुछ प्रकाश-सा भासित हो रहा है, किंतु आगे से गुफा खुली नहीं थी, वहाँ तक अंधकार था; और जहाँ गुफा रुद्ध हो रही थी, वहाँ प्रकाश का आभास था। और अकस्मात ही बात हनुमान की समझ में आ गई। गुफा यहाँ से मुड़ रही थी और मोड़ के आगे निश्चित रूप से गुफा का द्वार था। वे अपने मन की बात अंगद से कहने ही जा रहे थे कि उनके पैरों के नीचे की मिट्टी की नमी ने उनका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। मिट्टी इतनी गीली थी कि आस-पास कहीं-न-कहीं कोई जल-स्रोत अवश्य होना चाहिए था। हनुमान। अंगद उनसे पहले ही उल्लसित स्वर में बोले, यहाँ की मिट्टी गीली है।

हाँ, युवराज। मैं भी अनुभव कर रहा हूँ। हनुमान ने उत्तर दिया, मुझे भी ऐसा लग रहा है कि गुफा के इस मोड़ के निकट ही कहीं इसका द्वार भी है। तब तक वे लोग मोड़ तक आ चुके थे और अनेक लोगों का ध्यान उस प्रकाश की ओर चला गया था। अनेक कंठों ने एक साथ ही हर्ष-ध्वनि की। सबसे पहले हनुमान गुफा से बाहर निकले और बाहर का दृश्य देखते ही ठगे-से खड़े रहे गए। एक-एक कर सब लोग बाहर आए और सबकी स्थिति हनुमान की-सी ही हुई।

गुफा का अंत किसी वन में नहीं हुआ था। जहाँ वे लोग खड़े थे, वह किसी भव्य प्रासाद का मानव-विकसित उपवन प्रतीत हो रहा था। अनेक प्रकार के फलों तथा फूलों के पेड़-पौधे पूँजीभूत रूप से वहाँ वर्तमान थे और उनके मध्य स्वच्छ जल की एक पुष्करिणी विद्यमान थी। भूख तथा प्यास से संज्ञाशून्य-से होते हुए वानरों ने अपना चिंतन स्थगित कर, पुष्करिणी में से थोड़ा-थोड़ा जल पिया और तब वे फलों के वृक्षों की ओर उन्मुख हुए। सूर्य पूरी प्रखरता से चमककर पश्चिम की ओर झुक चला था। हनुमान ने आकाश की ओर देखकर सोचा- वे लोग कम-से-कम डेढ़ प्रहर उस गुफा को पार करने में लगे रहे थे।

खा-पीकर जब मन कुछ स्वस्थ हुआ और चिंतन-मनन की प्रवृत्ति जागी तो इस उपवन के विषय में उनकी जिज्ञासा जागी। हे प्राकृत वन नहीं था, इतनी बात निश्चित थी। उस समय उसका स्वरूप ऐसा नहीं था, जिससे यह समझा जाता कि उपवन की देख-भाल ठीक से की जा रही है; किंतु उसे सँवारने में कभी-कभी मनुष्य की बुद्धि और हाथ सहयोग अवश्य देते हैं, यह स्पष्ट था। पुष्करिणी के नीचे कहीं जल का उत्स भी रहा होगा, क्योंकि पुष्करिणी जल से आप्लावित थी और अतिरिक्त जल अनेक छोटी-छोटी धाराओं के रूप में विभिन्न दिशाओं में बह रहा था।

यहाँ निकट ही कोई प्रासाद भी होना चाहिए। अंगद धीरे से बोले।

मेरा भी ऐसा ही विचार है, युवराज। यदि यहाँ प्रासाद हो तो उसमें देवी वैदेही को छिपाकर रखने की भी संभावना हो सकती है। नील ने अपना विचार प्रकट किया, इससे अधिक उत्तम और गोपनीय स्थान कौन-सा हो सकता है।

संभावना हो तो सकती है। जांबवान बोले, क्योंकि इतने गोपनीय स्थान पर बनाया गया प्रासाद इस प्रकार के कार्यों के लिए उपयुक्त समझा जा सकता है। किंतु मेरे मन में शंका है। क्या ? सबकी दृष्टि जाम्बवान पर टिक गई।

यदि रावण ने देवी वैदेही को यहाँ बंदिनी बनाकर रखा होता, तो वह स्वयं भी यहाँ निकट ही कहीं वर्तमान होता। इन दोनों ही स्थितियों में यह स्थान इस प्रकार असुरक्षित न छोड़ा गया होता।

दोनों ही संभावनाओं में कुछ-न-कुछ तथ्य प्रतीत होता है। अंगद बोले, पर हम पहले प्रासाद तो खोज लें।

युवराज ठीक कहते हैं। वृक्षावलियों के बीच में से होते हुए वे आगे बढ़े। वृक्षों का आरोपण निश्चित योजनानुसार हुआ था। प्रत्येक झुरमुट के साथ कुछ पुष्पलताएँ लगी थीं और फूलों की कुछ क्यारियाँ थीं। ऊँचे-ऊँचे वृक्षों की पंक्तियों की प्राचीर के पीछे विभिन्न प्रकार के फूलों के पौधे थे और उनके केंद्र में सचमुच एक बहुत बड़ा प्रासाद खड़ा था।

वानरों के पग थम गए। इस एकांत में, इतने गोपनीय ढंग से बनाया गया, जाने यहाँ किसका इतना भव्य प्रासाद था; और वे लोग बिना जाने-बूझे, बिना किसी की अनुमति के भीतर घुस आए थे। संभव है कि प्रासाद का स्वामी शत्रुपक्ष का हो। उसकी सैनिक शक्ति का भी उन्हें कोई आभास नहीं था। कहीं ऐसा न हो कि स्वयं से कहीं अधिक समर्थ और शक्तिशाली शत्रु के अवरोध में पड़कर वे यहाँ बंदी हो जाएँ और किष्किंधा में किसी को उनकी स्थिति की कोई सूचना ही न हो।

अंगद कुछ चिंतित दीखने लगे थे। वे दल के नायक थे। दल के प्रत्येक निर्णय और कर्म के लिए वे उत्तरदायी थे। दल की सुरक्षा का बोझ उन्हीं के कंधों पर था, बिना जाने-बूझे हमें इस प्रकार भीतर नहीं घुस आना चाहिए था।

आप यहाँ ठहरें, युवराज। हनुमान बोले, मैं प्रासाद के भीतर जाकर देखता हूँ।

नहीं। अंगद बोले, अब तो जो एक का भाग्य है, वही सबका है। हम सब इकट्ठे जाएँगे।

आगे-आगे हनुमान और अंगद थे; दो-दो की पंक्तियों में शेष लोग उनके पीछे। उन्होंने प्रासाद के भीतर प्रवेश किया।

वानरोंने वहाँ सब ओर सोने-चाँदीके बने हुए बहुत-से श्रेष्ठ भवन देखे, जिनकी खिड़कियाँ मोतीकी जालियोंसे ढकी थीं। उन भवनोंमे सोनेके जँगले लगे हुए थे। सोने-चाँदीके ही विमान भी थे। कोई घर सोनेके बने थे तो कोई चाँदीके। कितने ही गृह पार्थिव वस्तुओं ईंट, पत्थर, लकड़ी आदि से निर्मित हुए थे। उनमें वैदूर्यमणियाँ भी जड़ी गयी थीं।

१२) योगिनी स्वयंप्रभा- प्रासाद निर्जन पड़ा था- कहीं कोई मनुष्य अथवा पशु दिखाई नहीं पड़ रहा था। इतना बड़ा प्रासाद और सर्वथा मानव-शून्य। न कोई वहाँ बसनेवाला, न प्रतिहारी, रक्षक अथवा दास-दासियाँ। टूटा-फूटा, खण्डित प्रासादा होता तो वे लोग मान लेते कि खण्डहर समझकर स्वामी द्वारा उसका परित्याग कर दिया गया होगा, किंतु वह खण्डहर नहीं था।

सहसा हनुमान और अंगद रुक गए। उनके साथ ही सारी पंक्तियाँ थम गईं।

उनके सामने थोड़ी दूर पर तपस्विनी वेश में एक स्त्री बैठी थी। उसने वल्कल और मृग-चर्म धारण कर रखे थे। उसकी आँखें ध्यान में मुँदी हुई थीं। और अपने तेजसे दीप रही थी। वानरोंने वहाँ उसे बड़े ध्यानसे देखा और आश्चर्यचकित होकर सब ओर खड़े रहे।

क्या ये वैदेही हैं ? अंगद ने धीरे से पूछा।

नहीं। हनुमान बोले, यह तो कोई वृद्धा तापसी है। देवि। तुम कौन हो और यह किसकी गुफा हैं ?

तापसी का ध्यान भंग हो गया। उसके मुँदे नेत्र खुल गए।

आओ, वत्स। कौन हो तुम लोग ? स्त्री ने सहसा उनका स्वागत किया, यह स्थान तो अत्यंत गोपनीय है, तुम लोग यहाँ तक कैसे पहुँच गए ?

साहस कर हनुमान आगे बढ़े। हाथ जोड़कर उन्होंने तापसी को प्रणाम किया और सादर बोले, माता, यदि प्रवेश वर्जित है तो हम अपराधी हैं। हमें क्षमा करना। वन में भटकते हुए हम लोग भूख और प्यास से पीड़ित होकर, मार्ग-भ्रष्ट हो, इधर चले आए हैं

देवि। हम सब लोग भूख-प्यास और थकावटसे कष्ट पा रहे थे। इसलिये सहसा इस अन्धकारपूर्ण गुफामें घुस आये। भूतलका यह विवर बहुत बड़ा है। हम प्याससे पीड़ित होनेके कारण यहाँ आये हैं, किंतु यहाँके इन ऐसे अद्‌भुत विविध पदार्थोंको देखकर हमारे मनमें बड़ी व्यथा हुई है- हम यह सोचकर चिन्तित हो उठे हैं कि यह असुरोंकी माया तो नहीं है, इसीलिये हमारे मनमें घबराहट हो रही है। हमारी विवेकशक्ति लुप्त-सी हो गयी है। हम जानना चाहते हैं कि ये बालसूर्यके समान कान्तिमान् सुवर्णमय वृक्ष किसके हैं ?

ये भोजनकी पवित्र वस्तुएँ, फल-मूल, सोनेके विमान, चाँदीके घर, मणियोंकी जालीसे ढकी हुई सोनेकी खिड़कियाँ तथा पवित्र सुगन्धसे युक्त एवं फल-फूलोंसे लदे हुए ये सुवर्णमय पावन वृक्ष किसके तेजसे प्रकट हुए हैं ?

यहाँके निर्मल जलमें सोनेके कमल कैसे उत्पन्न हुए ? इन सरोवरोंके मत्स्य और कछुए सुवर्णमय कैसे दिखायी देते हैं ? यह सब तुम्हारे अपने प्रभावसे हुआ है या और किसीके ? यह किसके तपोबलका प्रभाव है ? हम सब अनजान हैं; इसलिये पूछते हैं। तुम हमें सारी बातें बतानेकी कृपा करो।

स्त्री ने क्षण-भर कुछ विचार किया और बोली, इतने लोगों के लिए भोजन तत्काल उपलब्ध नहीं हो सकेगा। हाँ, फलाहार पर्याप्त है। तुम लोग फलों और जल से अपनी व्याकुलता मिटा लो; तब तक मैं भोजन का प्रबंध करा देती हूँ।

आप चिंतित न हों, माता। अनपेक्षित स्वागत पा हनुमान उल्लसित होकर बोले, अपनी व्याकुलता के कारण, हम आपकी अनुमति पाने तक धैर्य नहीं रख सके यत्किंचित मात्रा में कुछ-न-कुछ खा-पी चुके हैं। अब यदि आपका परिचय मिल जाता।

एक व्यग्रता मिटा चुके, दूसरी मिटाने का प्रयत्न कर रहे हो। तापसी के वृद्ध अधरों पर एक वात्सल्यपूर्ण मुसकान आ विराजी, मैं इस प्रासाद की संरक्षिका, मेरुसावर्णि की कन्या, स्वयंप्रभा हूँ।

और यह प्रासाद किसका है, माता ? वानरश्रेष्ठ। मायाविशारद महातेजस्वी मयका नाम तुमने सुना होगा। उसीने अपनी मायाके प्रभावसे इस समूचे स्वर्णमय वनका निर्माण किया था।

मयासुर पहले दानव-शिरोमणियोंका विश्वकर्मा था, जिसने इस दिव्य सुवर्णमय उत्तम भवनको बनाया है।

उसने एक सहस्त्र वर्षोंतक वनमें घोर तपस्या करके ब्रह्माजीसे वरदानके रूपमें शुक्राचार्यका सारा शिल्प-वैभव प्राप्त किया था।

बलवान् मयासुरने यहाँकी सारी वस्तुओंका निर्माण करके इस महान् वनमें कुछ काल-तक सुखपूर्वक निवास किया था।

वस्तुत: वनों तथा पर्वत-श्रेणियों की ओट में यह उसकी विचार-स्थली थीं सागर-तट पर यह सुंदर प्रासाद कदाचित् उसने स्वयं को गुप्त रखने के लिए ही बनाया था। आगे चलकर उस दानवराजका हेमा नामकी अप्सराके साथ सम्पर्क हो गया।

यहाँ वह अपनी अप्सरा पत्नी हेमा के साथ रहा करता था; किंतु हेमा के कारण ही इंद्र से उसका विग्रह हुआ। यह जानकर देवेश्वर इन्द्रने हाथमें वज्र ले उसके साथ युद्ध करके उसे मार भगाया।

हेमा यहाँ से चली गई। मय भी अधिक दिन यहाँ नहीं रहा। अपने बच्चों को लेकर जाने कहाँ चला गया। तत्पश्चात् ब्रह्माजीने यह उत्तम वन, यहाँका अक्षय कामभोग तथा यह सोनेका भवन हेमा अप्सराको दे दिया।

नृत्य और गीतकी कलामें चतुर हेमा मेरी प्यारी सखी है। उसने मुझसे अपने भवनकी रक्षाके लिऐ प्रार्थना की थी, इसलिये मैं इस विशाल भवनका संरक्षण करती हूँ। मैं उन दोनों के समय की इस प्रासाद की संरक्षिका हूँ। उन दोनों में से कोई भी अब तक इस ओर नहीं लौटा है और मैं इस प्रासाद की संरक्षिका बनी, उनके आने की प्रतीक्षा कर रही हूँ।

यहाँ मैं दीर्घकालसे श्रीरामके दर्शनके लिए तप कर रही हूँ। मेरे वे आराध्य कहाँ हैं ? मैं उनके श्रीचरणोंका दर्शन करना चाहती हूँ।

मुझे तुम लोगोंसे कुछ नहीं लेना है। उसने कहा- मैं तो इस स्थानका त्यागकर आराध्यके समीप जा रही हूँ। यहाँका जल, फल तुम लोगोंके काम आ गया, आता रहे तो मुझे प्रसन्नता ही है।

हनुमान ने आश्चर्य भरी दृष्टि पहले रावण के श्वसुर मय दानव-द्वारा बनाए गए उस प्रासाद पर डाली और पुन: स्वयं को प्रासाद की संरक्षिका कहनेवाली उस तपस्विनी पर।

अब तू मुझे बता, तू कौन है और तेरे साथ कौन-कौन हैं ? तुम लोग यहाँ क्या करने आए हो ? तुमलोगोंका यहाँ क्या काम है ? किस उद्देश्यसे तुम इन दुर्गम स्थानोंमें विचरते हो ? इस वनमें आना तो बहुत कठिन है। तुमने कैसे इसे देख लिया ?

अच्छा, ये शुद्ध भोजन और फल-मूल प्रस्तुत हैं। इन्हें खाकर पानी पी लो। फिर मुझसे अपना सारा वृत्तान्त कहो।

प्रश्न इतनी आकस्मिकता से आया था कि हनुमान के सम्मुख विकट मानसिक संकट खड़ा हो गया। अपना और अपने अभियान का परिचय वे लोग तब तक अत्यंत गुप्त रखे हुए थे। उनका लक्ष्य और गंतव्य प्रकट हो जाने पर हानि भी हो सकती थी इन लोगों का निकट का न सही, दूर का कोई-न-कोई संबंध रावण से बनता ही था। यदि इस अनुसंधान दल की सूचना इनके माध्यम से राक्षसों तक पहुँच गई ? ये लोग सरल-साधारण वनवासी हैं। किसी लालच अथवा लाभ की अपेक्षा में किसी को कुछ बताने न भी जाएँ तो भी किसी व्यक्ति की असावधानी अथवा अज्ञान से यह सूचना गलत हाथों में पड़ सकती है। तो क्या इस प्रश्न को टाल जाएँ या कोई काल्पनिक परिचय दे दें ? किंतु वृद्धा की सरलता तथा तत्परता उन्हें असत्य बोलने से रोक रही थी और फिर सत्य बताने से वृद्धा के करुण-विगलित हो, जिस सहायता की अपेक्षा थी, वह असत्य-कथन से प्राप्त नहीं हो सकती थी।

इस प्रकार आमने-सामने बैठकर प्रश्न का उत्तर वे अधिक समय तक टाल भी नहीं सकते थे, और अपने साथियों से इस संदर्भ में विचार-विनिमय भी नहीं कर सकते थे सारा दायित्व हनुमान पर ही था-उन्हीं का निर्णय, उन्हीं का कर्म और परिणाम के लिए वे ही उत्तरदायी। हनुमान को लगा, द्वंद्व, में सत्य कथन उनके लिए अधिक उपयोगी होगा वैसे भी इतने सरल लोगों से क्या दुराव। हनुमान ने संक्षेप में अपना और अपने साथियों का परिचय दिया और अपने अभियान के विषय में भी बताया।

देवि। सम्पूर्ण जगत्के राजा दशरथनन्दन श्रीमान् भगवान् राम, जो देवराज इन्द्र और वरुणके समान तेजस्वी हैं, दण्डकारण्यमें पधारे थे। उनके साथ उनके छोटे भाई लक्ष्मण तथा उनकी धर्मपत्नी विदेहनन्दिनी सीता भी थीं। जनस्थानमें आकर रावणने उनकी स्त्रीका बलपूर्वक अपहरण कर लिया।

श्रेष्ठ वानरोंके राजा वानरजातीय वीरवर सुग्रीव महाराज श्रीरामके मित्र हैं, जिन्होंने इन अङ्गद आदि प्रधान वीरोंके साथ हमलोगोंको सीताकी खोज करनेके लिये अगस्त्य सेवित और यमराजद्वारा सुरक्षित दक्षिण दिशामें भेजा है।

उन्होंने आज्ञा दी थी कि तुम सब लोग एक साथ रहकर विदेहकुमारी सीतासहित उस इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले राक्षसराज रावणका पता लगाना। हमने यहाँका सारा जंगल छान डाला। अब दक्षिण दिशामें समुद्रके भीतर उनका अन्वेषण करना है। अबतक सीताका कुछ पता नहीं लगा और हमलोग भूख-प्याससे पीड़ित हो गये। अन्तमें हम सब-के-सब एक वृक्षके नीचे थककर बैठ गये। इसी समय चारों ओर दृष्टि दौड़ानेपर हमको यह विशाल गुफा दिखायी पड़ी, जो लता और वृक्षोंसे ढकी हुई तथा अन्धकारसे आच्छन्न थी। थोड़ी ही देरमें इस गुफासे हंस, कुरर और सारस आदि पक्षी निकले, जिनके पंख जलसे भीगे थे और उनमें कीचड़ लगी हुई थी।

हम सब लोग अपने कार्यकी सिद्धिके लिये उतावले थे ही, अत: इस गुफामें कूद पड़े। अपने हाथोंसे एक दूसरेको दृढ़तापूर्वक पकड़कर हम गुफामें आगे बढ़ने लगे। इस तरह सहसा हमलोगोंने इस अँधेरी गुफामें प्रवेश किया। यही हमारा कार्य है और इसी कार्यसे हम इधर आये हैं। भूखसे व्याकुल एवं दुर्बल होनेके कारण हम सबने तुम्हारी शरण ली। तुमने आतिथ्य-धर्मके अनुसार हमें फल और मूल अर्पित किये और हमने भी भूखसे पीड़ित होनेके कारण उन्हें भरपेट खाया।

भोजन समाप्त करते ही अंगद ने चलने की इच्छा प्रकट की। वृद्धा पुन: हँसी, क्यों रे। भागने की बड़ी जल्दी है ?

हमें देवी वैदेही का पता लगाकर शीघ्र किष्किंधा लौटना है। अंगद वृद्धा के समान हँस नहीं सके, देवी। आप यदि हमें मार्ग...

मुझे देवी क्यों कहता है। वृद्धा ने कुछ उग्र स्वर में कहा, माता क्यों नहीं कहता ? तू युवराज है, इसलिए ?

नहीं, माता। अंगद वृद्धा के रोष से तरल हो उठे, तुम सचमुच माता हो वात्सल्यमयी। मुझे क्षमा करना।

अच्छा, चल। तुझे मार्ग दिखाऊँ। वृद्धा बोली, तू बहुत ही उतावला हो रहा है। किंतु अंधकार घिर रहा है। कहीं मार्ग में भटक गए तो उतावली महँगी पड़ेगी।

स्वयंप्रभा सर्वज्ञ थी। उसने वानरोंसे कहा- मैं तुम सभी वेगशाली वानरोंपर यों ही बहुत संतुष्ट हूँ। धर्मानुष्ठानमें लगी रहनेके कारण मुझे किसीसे कोई प्रयोजन नहीं रह गया है।

हनुमान ने कहा- देवि। तुम धर्माचरणमें लगी हुई हो। अत: हम सब लोग तुम्हारी शरणमें आये हैं। महात्मा सुग्रीवने हमलोगोंके लौटनेके लिये जो समय निश्चित किया था, वह इस गुफाके भीतर घूमनेमें ही बीत गया।

धर्मचारिणी। हमें जो महान् कार्य करना है, उसे भी हम इस गुफामें रहनेके कारण नहीं कर सके हैं।

निकलनेका मार्ग ? वह दो क्षण नेत्र बन्द करके मौन हो गयी- यह भूगर्भ स्थान दानवोंके द्वारा रक्षित है। यहाँ आकर केवल पक्षी यहाँसे निकल पाते थे। पक्षियोंके प्रवेश मार्गसे ही तुम लोग यहाँ पहुँच सके। वह मार्ग तो तुम लोगोंके प्रवेशके पश्चात् तत्काल बन्द हो गया। इस मायामय भूगर्भमें समय भी पृथ्वीके सामान्य समयसे भिन्न है।

हनुमानजीके ऐसा कहनेपर तापसी बोली- मैं समझती हूँ जो एक बार इस गुफामें चला आता है, उसका जीते-जी यहाँसे लौटना बहुत कठिन हो जाता है। तथापि नियमोंके पालन और तपस्याके उत्तम प्रभावसे मैं तुम सभी वानरोंको इस गुफासे बाहर निकाल दूँगी।

मैं संकल्पबलसे तुम्हें यहाँसे बाहर वहाँ समुद्रतटपर पहुँचा दूँगी, जहाँसे तुम सीताका पता पा सको। इस संकल्प बने लोकसे बाहर केवल इसके मर्मसे परिचितका संकल्प ही पहुँचा सकता है।

श्रेष्ठ वानरों। तुम सब लोग अपनी-अपनी आँखें मूँद लो। आँख मूँदे बिना यहाँसे निकलना असम्भव है।

वह आगे-आगे चली और दल का नेतृत्व करते हुए अंगद उसके पीछे-पीछे चलते गए। वृद्धा ने उन्हें शिलाओं के अनेक घुमावदार मोड़ पार कराए, दो-एक छोटी-छोटी गुफाएँ भी मार्ग में आई और वह रुक गई, इन दो पहाड़ियों के बीच का मार्ग तुम्हें सीधे सागर-तट तक पहुँचा देगा। नयन मूँदे, सीधे चलते जाना। जहाँ मोड़ सहज लगें, वहाँ भी मत मुड़ना। यदि एक भी मोड़ ले लिया, तो पुन: इसी मायानगरी में भटकते फिरोगे।

यह सुनकर सबने सुकुमार अङ्गुलिवाले हाथोंसे आँखें मूँद लीं। गुफासे बाहर निकलनेकी इच्छासे प्रसन्न होकर उन सबने सहसा नेत्र बंद कर लिये। इस प्रकार उस समय हाथोंसे मुँह ढक लेनेके कारण उन महात्मा वानरोंको स्वयंप्रभाने पलक मारते-मारते बिलसे बाहर निकाल दिया। तत्पश्चात् वहाँ उस धर्मपरायणा तापसीने उस विषम गुफासे बाहर निकले हुए समस्त वानरोंको आश्वासन देकर इस प्रकार कहा- श्रेष्ठ वानरों। यह रहा नाना प्रकारके वृक्षों और लताओंसे व्याप्त शोभाशाली विन्ध्यगिरि। इधर यह प्रस्रवणगिरि है और सामने यह महासागर लहरा रहा है। तुम्हारा कल्याण हो। अब मैं अपने स्थानपर जाती हूँ। ऐसा कहकर स्वयंप्रभा उस सुन्दर गुफामें चली गयी। दल के सारे सदस्यों ने हाथ जोड़कर वृद्धा को प्रणाम किया और आगे बढ़ गए।

वानरोंके साथ ही स्वयंप्रभा भी उस स्थानसे निकली। यह योगिनी अप्सरा थी। गगन-मार्गसे ऋष्यमूकपर पहुँचकर श्रीरामके चरणोंमें उसने प्रणाम किया। श्रीराम-लक्ष्मणकी प्रदक्षिणा करके स्तुति करने लगी।

हे राजाधिराज। मैं आपकी दासी, आपके दर्शनोंके लिये यहाँ आयी हूँ। मैनें आपके दर्शनोंके लिये ही गुफामें रहकर सहस्त्रों वर्षोंसे कठोर तपस्या की है। आज मेरा यह तप सफल हो गया। अहो। आज कैसा शुभ दिन है, जो मैं साक्षात् मायातीत तथा समस्त भूतोंमें अलक्षित-भावसे बाहर-भीतर विराजमान आप परमेश्वरको प्रणाम कर रही हूँ। जैसे मायारूपको साधारण पुरुष नहीं देखते, वैसे ही आपके शुद्ध स्वरूपको अज्ञानी नहीं दे सके। हे भगवन्। आपने महान भगवद्भक्तोंके भक्तियोगका विधान करनेके लिये ही अवतार लिया है, मैं तमोगुणी बुद्धिवाली आपको कैसे जान सकती हूँ। हे राम। आज मुझे आपके मोक्षदायक चरण कमलोंका दर्शन हुआ है। हे आदि-मध्य-अन्त-हीन। सर्वव्यापक। आप जो लीलाएँ करते हैं, उन्हें कोई नहीं जान सकता। आप समदर्शी, अजन्मा, अकर्ता और ईश्वर हैं। आपके जो देव-तिर्यक् तथा मनुष्य-योनियोंमें जन्म होते हैं वह आपकी महान् लीला है। कोई कहते हैं आपने कथा-श्रवणकी सिद्धिके लिये अवतार लिया, कोई कहते हैं- राजा दशरथकी तपस्याका फल देनेके लिये तो कोई कौशल्याकी प्रार्थनासे प्रकट हुए और कोई ब्रह्माकी प्रार्थनासे भूभार हरनेके लिये अवतरित मानते हैं। प्रभो। जो लोग आपकी कथाको कहेंगे-सुनेंगे वे अवश्य आपके मोक्षदायक चरणकमलोंका दर्शन करेंगे। हे प्रभो। आप मायासे परे हैं। मैं आपको कैसे जान सकती हूँ। अत: भाई लक्ष्मण और सुग्रीवादि पार्षदोंसहित मैं आपको प्रणाम करती हूँ। देवि। तुम क्या चाहती हो ? श्रीरामने पूछा।

योगिनी स्वयंप्रभाकी अनन्य भक्ति-निष्ठा एवं स्तुतिके भावोंसे करुणावरुणालय भगवान् श्रीराम अत्यन्त प्रसन्न होकर योगिनीसे बोले- देवि। तुम्हारी हार्दिक इच्छा क्या है ? इसपर योगिनीने भक्तिपूर्वक कहा-

हे भक्तवत्सल प्रभो। मैं जहाँ कहीं भी जन्म लूँ, आप मुझे अपनी अविचल भक्ति दीजिये। प्रत्येक जन्ममें मेरा संग आपके भक्तोंसे ही हो, संसारी लोगोंसे न हो और मेरी जिव्हा सदा भक्तिपूर्वक राम-राम ऐसा रटा करे और हे राम। मेरा मन आपकी उस शोभायमान श्यामल मूर्तिका श्रीसीताजी और लक्ष्मणके सहित सदा चिन्तन करता रहे, जो धनुष-बाण धारण किये हुए हैं तथा जो पीताम्बरधारी, मुकुट-विभूषित एवं भुजबंद, नूपुर, मोतियोंकी माला, कौस्तुभमणि और कुण्डलोंसे सुशोभित हैं। हे प्रभो। इसके सिवा मैं कोई वर नहीं माँगती।

मैं तो आपके श्रीचरणोंकी किंकरी हूँ। आज मेरा जीवन सफल हो गया। जहाँ, जिस योनिमें भी जन्म हो, आपके भक्तोंका ही संग प्राप्त हो और मेरे मनमें सीता-लक्ष्मणके साथ आप सदा विराजमान रहो। लेकिन इन वनवासी वेशमें नहीं, मुकुटोज्वल मस्तक-राजाधिराजरूपमें।

अच्छा देवि। श्रीरामने स्वीकार करके कहा- अब शेष जीवन बदरीवनमें व्यतीत करो। मेरा नाम-स्मरण करते समय पर अलकनन्दामें शरीर त्याग करके मेरे नित्य धाममें निवास करोगी। प्रभुने उसे अपनी अनपायिनी (अचल) भक्ति दी। प्रभुकी आज्ञा सिरपर धारणकर और श्रीरामके युगल चरणोंको, जिनकी ब्रह्मा और महेश भी वन्दना करते हैं, हृदमें धारणकर वह तो श्रीरामको प्रणाम करके दोनों भाइयोंकी प्रदक्षिणा करके बदरीवन चली गयी। और वहाँ रघुनाथजीका स्मरण करती हुई शरीरान्त होनेपर वह परमपदको प्राप्त हुई। रामकी कृपाको प्राप्त कर स्वयंप्रभाने अपने प्रभुके लोकको प्राप्त कर लिया।

स्वयंप्रभा ने ठीक कहा था। मार्ग में उन्हें अनेक सहज लगनेवाले मोड़ मिले, यदि उन्हें पहले से सावधान न किया गया होता, तो वे लोग कहीं-न-कहीं अवश्य मुड़ गए होते। कदाचित् मय दानव ने सायास ऐसे भ्रांति-तत्पर मोड़ बनाए थे। रात को स्वयंप्रभा के ग्राम में रुक जाना भी सार्थक ही था। यह मार्ग ऐसा नहीं था, जिस पर अंधकार में यात्रा की जा सके। भ्रामक मोड़ों के साथ-साथ अनेक आकस्मिक आरोह तथा अवरोह भी थे। वे लोग स्वयंप्रभा के निर्देशों के अनुसार धैर्यपूर्वक चलते रहे और वह मार्ग उन्हें सीधे सागर-तट पर ले गया। अनेक गुफाओं में से होती हुई उस पगडण्डी को समाप्त कर वे पहाड़ों के बाहर खुले आकाश के नीचे पहुँचे, तो उनके

पाँव सागर-तट की छोटी-बड़ी शिलाओं पर थे और सामने अथाह-अनंत सागर लहरा रहा था। एक के बाद एक मदांध लहर आती थी और चट्टानों पर पछाड़ खाकर गिरती थी तथा असंख्य बूँदों में विभाजित होकर कहीं जल और कहीं फेन के रूप में बिछ जाती थी।

कुछ ही क्षणोंमें समुद्रका गर्जन सुनायी देने लगा। तब सबने नेत्र खोले। वानरोंने जब नेत्र खोला, उनके सम्मुख उत्ताल तरंगोंसे उद्वेलित अनन्त उदधि था।

१३) वानरोंका गृध्रराज संपाति से भेट- अरण्य वसन्तागमके पुष्पोंसे परिपूर्ण है, यह देखकर वानर बहुत व्याकुल हुए। सब एक स्थानपर ही निकले थे। वहीं बैठ गये। अङ्गदने कहा- स्पष्ट है कि हम सबको भूगर्भमें समय बहुत बीत गया। सुग्रीवका दिया समय बीत चुका। अब वे मुझे कदापि क्षमा नहीं करेंगे।

अंगद थोड़ी देर तक खड़े, चिंतित दृष्टि से उन लहरों को देखते रहे। लहरों में कोई समाधान न पाकर उन्होंने दृष्टि घूमाई और दूर तक कुछ खोजने का प्रयत्न करते रहे। अन्य लोग भी आस-पास की भूमि और सागर का निरीक्षण कर रहे थे। थोड़ी ही देर में अंगद के चेहरे पर हताशा के भाव उभर आए।

सागर-तट पर आ गए हैं, तो लंका भी खोज लेंगे। हनुमान अपने आशावान स्वर में बोले, आप इतने हताश क्यों हैं, युवराज ?

उधर देखो। अंगद ने चट्टानों के पीछे उगे एक वृक्ष की ओर संकेत किया, देख रहे हो, हनुमान। वृक्ष पर फूल खिल रहे हैं; अर्थात शरद ऋतु बीतने को है। किष्किंधा लौटने की अवधि समाप्त हो गई है। मैंने तुम्हारी बात मान ली थी कि सफलकाम होकर किष्किंधा लौटने में कोई संकट नहीं हैं; किंतु अब तो सफलता की भी कोई आशा नहीं है।

अंगद बोले- वानरों। हम सब लोग वानरराजकी आज्ञासे आश्विन मास बीतते-बीतते एक मासकी निश्चित अवधि स्वीकार करके सीताकी खोजके लिये निकले थे, किंतु हमारा वह एक मास उस गुफामें ही पूरा हो गया। हम जब चले थे, तबसे लौटनेके लिये जो मास निर्धारित हुआ था, वह भी बीत गया। आपलोगोंको राजाका विश्वास प्राप्त है। आप नीतिमार्गमें निपुण हैं और स्वामीके हितमें तत्पर रहते हैं। इसीलिये आपलोग यथासमय सब कार्योंमें नियुक्त किये जाते हैं। कार्य सिद्ध करनेमें आपलोगोंकी समानता करनेवाला कोई नहीं है। आप सभी अपने पुरुषार्थके लिये सभी दिशाओंमें विख्यात है। इस समय वानरराज सुग्रीवकी आज्ञासे मुझे आगे करके आपलोग जिस कार्यके लिये निकले थे, उसमें आप और हम सफल न हो सके। ऐसी दशामें हमलोगोंको अपने प्राणोंसे हाथ धोना पड़ेगा। भला वानरराजके आदेशका पालन न करके कौन सुखी रह सकता है ? स्वयं सुग्रीवने जो समय निश्चित किया था, उसके बीत जानेपर हम सब वानरोंके लिये उपवास करके प्राण त्याग देना ही ठीक जान पड़ता है। सुग्रीव स्वभावसे ही कठोर हैं। फिर इस समय तो वे हमारे राजा के पदपर स्थित हैं। जब हम अपराध करके उनके पास जायँगे, तब वे कभी हमें क्षमा नहीं करेंगे। उल्टे सीताका समाचार न पानेपर हमारा वध ही कर डालेंगे, अत: हमें आज ही यहाँ स्त्री, पुत्र, धन-सम्पत्ति और घर-द्वारका मोह छोड़कर मरणान्त उपवास आरम्भ कर देना चाहिये। यहाँसे लौटनेपर राजा सुग्रीव निश्चय ही हम सबका वध कर डालेंगे। अनुचित वधकी अपेक्षा यहीं मर जाना हम लोगोंके लिये श्रेयस्कर है।

जाम्बवान्ने अंगदका दु:ख देखकर विशेष उपदेशकी कथाएँ कहीं। वे बोले- हे तात। श्रीरामको मनुष्य न मानो, उन्हें निर्गुण ब्रह्म, अजेय और अजन्मा समझो। हम सब सेवक अत्यन्त बड़भागी हैं, जो निरन्तर सगुण ब्रह्म श्रीराम में प्रीति रखते हैं। देवता, पृथ्वी, गौ और ब्राह्मणोंके लिये प्रभु अपनी इच्छासे किसी कर्मबन्धनसे नहीं अवतार लेते हैं। वहाँ सगुणोपासक भक्तगण सालोक्य, सामीप, सारूप्य, सार्ष्टि और सायुज्य सब प्रकारके मोक्षोंको त्यागकर उनकी सेवामें साथ रहते हैं। इस प्रकार जाम्बवान बहुत प्रकारसे कथाएँ कह रहे हैं।

युवराज। एक तो अभी से हताश होने का मैं कोई कारण नहीं देखता। दूसरे, यदि अपने संपूर्ण प्रयत्न के पश्चात भी हम असफल ही रहे तो अपने निष्कपट प्रयत्न की सच्चाई बताकर हम सम्राट से दया की आशा कर सकते हैं। हम उनके सच्चे और उपयोगी अनुचर हैं तथा वानरराज सुग्रीव दयालु और धर्म पर चलने वाले राजा हैं।

जाम्बवन्त ने कहा- मित्रों यह नाव धर्म की है जो सीधे तट पर जायेगी और पार उतारेगी। हे बलवीरों, किसलिये घबरा रहे हो। दुनिया की यही तो रंगत है। राहत के बाद मुसीबत है फिर वही मुसीबत राहत बन जाती है। जय और पराजय को समान समझें यह ज्ञान धर्मवीरों का है। गम्भीर पुरुषों का लक्षण है कि दु:ख-सुख में सन्तोष करें। उपकार मार्ग में जाने पर मरने का क्या डर है। ऐसे लोग मरकर भी नहीं मरते और अपना नाम अमर कर जाते है।

सुग्रीव और दयालु। अंगद का मुख क्रोध और भय से विकृत हो उठा, सुग्रीव जैसा क्रूर व्यक्ति देखा है कभी तुमने ? जिसने राज्य के लिए अपने भाई का वध करवा दिया, उसे दयालु कहते हो तुम। जो अपने परोपकारी मित्र का कार्य भुलाकर, माधवी पीकर कामासक्ति में पड़ा रहा- उसे धर्मरत राजा कहते हो। मैं तो पहले ही समझ रहा था कि सुग्रीवने मेरे साथ धूर्तता की है। वह जानता था कि दक्षिण दिशा में कितनी कठिनाइयाँ हैं, इसलिए मुझे इस दल का नेता बना दिया और मामा तार को भी साथ कर दिया। वह तो चाहता ही था कि इन बीहड़ वनों और पर्वतों में भटक-भटककर, हम अवधि का समय व्यतीत कर असफल किष्किंधा लौटें, ताकि वह हमारा अपराध सिद्ध कर, हमारा वध कर सके। मेरा सदा का वैरी सुग्रीव।

कपिश्रेष्ठ। राजा सुग्रीवमें स्थिरता, शरीर और मनकी पवित्रता, क्रूरताका अभाव, सरलता, पराक्रम और धैर्य है- यह मान्यता ठीक नहीं जान पड़ती। जिसने अपने बड़े भाईके जीते-जी उनकी प्यारी महारानीको, जो धर्मत: उसकी माताके समान थी, कुत्सित भावनासे ग्रहण कर लिया था, वह धर्मको जानता है, यह कैसे कहा जा सकता है ? जिस दुरात्माने युद्धके लिये जाते हुए भाईके द्वारा बिलकी रक्षाके कार्यमें नियुक्त होनेपर भी पत्थरसे उसका मुँह बंद कर दिया, वह कैसे धर्मज्ञ माना जा सकता है।

जिन्होंने सत्यको साक्षी देकर उसका हाथ पकड़ा और पहले ही उसका कार्य सिद्ध कर दिया, उन महायशस्वी भगवान् श्रीरामको ही जब उसने भुला दिया, तब दूसरे किसके उपकारको वह याद रख सकता है ?

जिसने अधर्मके भयसे डरकर नहीं, लक्ष्मणके ही भयसे भीत हो हमलोगोंको सीताकी खोजके लिये भेजा है, उसमें धर्मकी सम्भावना कैसे हो सकती है ? उस पापी, कृतघ्न, स्मरण-शक्तिसे हीन और चञ्चलचित्त सुग्रीवपर कोई श्रेष्ठ पुरुष, विशेषत: जो उत्तम कुलमें उत्पन्न हुआ हो, कभी भी किस तरह विश्वास कर सकता है ? अपना पुत्र गुणवान् हो या गुणहीन, उसीको राज्यपर बिठाना चाहिये, ऐसी धारणा रखनेवाला सुग्रीव मुझ शत्रुकुलमें उत्पन्न हुए बालकको कैसे जीवित रहने देगा ?

सुग्रीवसे अलग रहनेका जो मेरा गूढ़ विचार था, वह आज प्रकट हो गा। साथ ही, उसकी आज्ञाका पालन न करनेके कारण मैं अपराधी भी हूँ। इतना ही नहीं, मेरी शक्ति क्षीण हो गयी है। मैं अनाथके समान दुर्बल हूँ। ऐसी दशामें किष्किन्धामें जाकर कैसे जीवित रह सकूँगा?

सुग्रीव शठ, क्रूर और निर्दयी है। वह राज्यके लिये मुझे गुप्तरूपसे दण्ड देगा अथवा सदाके लिये मुझे बन्धनमें डाल देगा।

युवराज। हनुमान अपने मन की आशंका सत्य होते देख चिंतित हो गए; किंतु शीघ्र ही स्वयं को सँभालकर बोले, वानरराज आपसे प्रेम करते हैं। उन्होंने आपको युवराज बनाया है। आपने उनके निष्कासन के समय उनकी सहायता की थी। फिर आपने यह बैर की बात कैसे सोच ली ?

सुग्रीवने युवराजपदपर मेरा अभिषेक नहीं किया है। अनायास ही महान् कर्म करनेवाले महाराज श्रीरामने ही उस पदपर मेरा अभिषेक किया है। जीवन-कालमें मेरा व्यसनी राजाके हाथसे मेरा मरण देखनेवाले सुहृदोंसे मुझे क्या काम है ? यहीं समुद्रके पावन तटपर मैं मरणान्त उपवास करूँगा।

अंगद तमतमाकर बोले, मैंने उसके निष्कासन के समय अपने पिता के विरुद्ध सुग्रीव की सहायता की, यह मेरी मूर्खता थी। सुग्रीव को तब सहायता की आवश्यकता थी, इसलिए वह मेरा कृतज्ञ हुआ। किंतु वह कभी नहीं भूला कि मैं बालि का पुत्र हूँ। तभी तो सम्राट बनते ही मेरी माता को अपनी पत्नी बना लिया। मुझे कहीं का नहीं छोड़ा सुग्रीव ने। एक तो हृदय से क्रूर, फिर राजा के पद पर अधिष्ठित और अब अवधि की सीमा बनाकर मुझे अपराधी बना दिया। मेरा किष्किंधा जाना व्यर्थ है। मैं अपना वध करवाने के लिए किष्किंधा जाना नहीं चाहता।

अंगद के मन में सुग्रीव की ओर से अनेक आशंकाएँ हैं। दु:खमें व्यक्तिके मनमें असंगत आशंकाएँ जागती है।

सुग्रीव ने तारा से विवाह कर भयंकर भूल की है। अंगद के मन में तभी से सुग्रीव के विरोध का शूल चुभ गया है। वयस्क पुत्र, किसी भी अन्य पुरुष से अपनी माता का दांपत्य संबंध स्वीकार नहीं कर पाता। सुग्रीव लाख अंगद को अपना पुत्र मानें; किंतु अंगद उन्हें अपने पिता के रूप में कैसे स्वीकार करेगा।

हनुमान बोले- युवराज। सफल या असफल- हम जब किष्किंधा पहुँचेंगे, तो मैं नही समझता कि आपको वानरराज से भयभीत होने का कोई कारण है। आपके अतिरिक्त उनको कोई पुत्र नहीं है। वे आपसे कितना स्नेह करते हैं। आपकी माता साम्राज्ञी तारा कहा करती थीं कि आप सम्राट बालि के इतने निकट कभी नहीं रहे, जितने तब युवराज सुग्रीव के निकट थे। वानरराज आपकी माता का प्रत्येक प्रिय करने को सदा तत्पर रहते हैं। मैं तो समझ ही नहीं पा रहा कि आपके मन में यह आशंकाएँ ही क्यों हैं ?

न सुग्रीव श्रीरामको या मुझे अप्रसन्न करेंगे। श्रीरामका तुमपर बहुत स्नेह है।

युवराज बालिकुमार अङ्गदकी यह बात सुनकर वे सभी श्रेष्ठ वानर करुणस्वरमें बोले- सचमुच सुग्रीवका स्वभाव बड़ा कठोर है। उधर श्रीरामचन्द्र अपनी पत्नी सीताके प्रति अनुरक्त हैं। सीताको खोजकर लौटनेके लिये जो अवधि निश्चित की गयी थी, वह समय व्यतीत हो जानेपर भी यदि हम कार्य किये बिना ही वहाँ उपस्थित होंगे तो उस अवस्थामें हमें देखकर और विदेहकुमारीका दर्शन किये बिना ही हमें लौटा हुआ जानकर श्रीरामका प्रिय करनेकी इच्छासे सुग्रीव हमें मरवा डालेंगे, इसमें संशय नहीं है।

भयसे पीड़ित हुए उन वानरोंका यह वचन सुनकर तारने कहा- यहाँ बैठकर विषाद करनेसे कोई लाभ नहीं है। यदि आपलोगोंको ठीक लगे तो हम सब लोग स्वयंप्रभाकी उस गुफामें ही प्रवेश करके निवास करें।

यह गुफा मायासे निर्मित होनेके कारण अत्यन्त दुर्गम है। वहाँ फल-फूल, जल और खाने-पीनेके दूसरी वस्तुएँ भी प्रचुर मात्रामें उपलब्ध हैं। अत: उसमें हमें न तो देवराज इन्द्रसे, न श्रीरामसे और न वानरराज सुग्रीवसे ही भय है। सभी वानरोंको उसपर विश्वास हो गया। वे सब-के-सब बोल उठे- बन्धुओ। हमें वैसा कार्य आज ही अविलम्ब करना चाहिये, जिससे हम मारे न जायँ।

हनुमानजी यह अच्छी तरह जानते थे कि बालिकुमार अङ्गद आठ गुणवाली बुद्धिसे, चार प्रकारके बलसे और चौदह गुणोंसे सम्पन्न हैं। १) बुद्धिके आठ गुण हैं- सुननेकी इच्छा, सुनना, सुनकर ग्रहण करना, ग्रहण करके धारण करना, ऊहापोह करना, अर्थ या तात्पर्यको भलीभाँति समझना तथा तत्त्वज्ञानसे सम्पन्न होना।

२) साम, दाम, भेद और दण्ड- ये जो शत्रुको वशमें करनेके चार उपाय नीति-शास्त्रमें बताये गये हैं, उन्हींको यहाँ चार प्रकारका बल कहा गया है। किन्हीं किन्हींके मतमें बाहुबल, मनोबल, उपायबल और बन्धुबल ये चार बल हैं।

३) चौदह गुण यों बताये गये हैं- देश कालका ज्ञान, दृढ़ता, सब प्रकारके क्लेशोंको सहन करनेकी क्षमता, सभी विषयोंका ज्ञान प्राप्त करना, चतुरता, उत्साह या बल, मन्त्रणाको गुप्त रखना, परस्पर विरोधी बात न कहना, शूरता, अपनी और शत्रुकी शक्तिका ज्ञान, कृतज्ञता, शरणागतवत्सलता, अमर्षशीलता तथा अचञ्चलता (स्थिरता या गम्भीरता)।

वे तेज, बल और पराक्रमसे सदा परिपूर्ण हो रहे हैं। शुक्ल पक्षके आरम्भमें चन्द्रमाके समान राजकुमार अङ्गदकी श्री दिनोंदिन बढ़ रही है। ये बुद्धिमें बृहस्पतिके समान और पराक्रममें अपने पिता बालिके तुल्य हैं। जैसे देवराज इन्द्र बृहस्पतिके मुखसे नीतिकी बातें सुनते हैं, उसी प्रकार ये अङ्गद तारकी बातें सुनते हैं।

हनुमान बोले- किंतु वानरशिरोमणे। ये कपिलोग सदा ही चञ्चल चित्त होते हैं। अपने स्त्री-पुत्रोंसे अलग रहकर तुम्हारी आज्ञाका पालन करना इनके लिये सह्य नहीं होगा।

मैं तुम्हारे सामने कहता हूँ, ये कोई भी वानर सुग्रीवसे विरोध करके तुम्हारे प्रति अनुरक्त नहीं हो सकते। जैसे ये जाम्बवान, नील और महाकपि सुहोत्र हैं, उसी प्रकार मैं भी हूँ। मैं तथा ये सब लोग साम, दाम आदि उपायोंद्वारा सुग्रीवसे अलग नहीं किये जा सकते। तुम दण्डके द्वारा भी हम सबको वानरराजसे दूर कर सको, यह भी सम्भव नहीं है। अत: सुग्रीव तुम्हारी अपेक्षा प्रबल हैं।

दुर्बलके साथ विरोध करके बलवान् पुरुष चुपचाप बैठा रहे, यह तो सम्भव है। परंतु किसी बलवानसे वैर बाँधकर कोई दुर्बल पुरुष कहीं भी सुखसे नहीं रह सकता; अत: अपनी रक्षा चाहनेवाले दुर्बल पुरुषको बलवान्‌के साथ विग्रह नहीं करना चाहिये- यह नीतिज्ञ पुरुषोंका कथन है।

तुम जो ऐसा मानने लगे हो कि यह स्वयंप्रभा की गुफा हमें माताके समान अपनी गोदमें छिपा लेगी, इसलिये हमारी रक्षा हो जायगी तथा इस बिलकी अभेद्यताके विषयमें जो तुमने तारके मुँहसे कुछ सुना है, यह सब व्यर्थ है; क्योंकि इस गुफाको विदीर्ण कर देना लक्ष्मणके बाणोंके लिये बायें हाथका खेल है अत्यन्त तुच्छ कार्य है।

पूर्वकालमें यहाँ वज्रका प्रहार करके इन्द्रने तो इस गुफाको बहुत थोड़ी हानि पहुँचायी थी; परंतु लक्ष्मण अपने पैने बाणोंद्वारा इसे पत्तेके दोनेकी भाँति विदीर्ण कर डालेंगे। ज्यों ही तुम इस गुफामें रहना आरम्भ करोगे, त्यों ही ये सब वानर तुम्हें त्याग देंगे।

ये अपने बाल-बच्चोंको याद करके सदा उद्विग्न रहेंगे। जब यहाँ इन्हें भूखका कष्ट सहना पड़ेगा और दु:खद शय्यापर सोने या दुरवस्थामें रहनेके कारण इनके मनमें खेद होगा, तब ये तुम्हें पीछे छोड़कर चल देंगे।

ऐसी दशामें तुम हितैषी बन्धुओं और सुहृदोंके सहयोगसे वञ्चित हो उड़ते हुए तिनकेसे भी तुच्छ हो जाओगे और सदा अधिक डरते

रहोगे अथवा हिलते हुए तिनके-से अत्यन्त भयभीत होते रहोगे।

लक्ष्मणके बाण घोर, महान् वेगशाली और दुर्जय हैं। श्रीरामके कार्यसे विमुख होनेपर तुम्हें कदापि मारे बिना नहीं रहेंगे।

हमारे साथ चलकर जब तुम विनीत पुरुषकी भाँति उनकी सेवामें उपस्थित होगे, तब सुग्रीव क्रमश: अपने बाद तुम्हींको राज्यपर बिठायेंगे। तुम्हारे चाचा सुग्रीव धर्मके मार्गपर चलनेवाले राजा हैं। वे सदा तुम्हारी प्रसन्नता चाहनेवाले, दृढ़व्रत, पवित्र और सत्यप्रतिज्ञ हैं। अत: कदापि तुम्हारा नाश नहीं कर सकते।

अङ्गद। उनके मनमें सदा तुम्हारी माताका प्रिय करनेकी इच्छा रहती है। उनकी प्रसन्नताके लिये ही वे जीवन धारण करते हैं। सुग्रीवके तुम्हारे सिवा कोई दूसरा पुत्र भी नहीं है, इसलिये तुम्हें उनके पास चलना चाहिये।

अंगद बोला- हनुमानजी आप ठीक कहते हैं कि गुफामें जानेका मार्ग नहीं हैं और हो भी तो वह लक्ष्मणके बाणोंसे अभेद् नहीं है। ये वानर भी अधिक दिनों तक मेरा साथ नहीं देंगे। मैं अपको, जाम्बवन्तको, नीलको या किसीको श्रीरामकी सेवासे पृथक नहीं करना चाहता। अङ्गदने लगभग रुदन-भरे कण्ठसे कहा- लेकिन मैं सुग्रीवपर विश्वास नहीं कर सकता। उनमें चपलता है, क्रूरता है। उन्हें भागते रहना पड़ा है मेरे पिताके भयसे। मेरे पिताने उनसे अन्याय किया था। अब वे मुझसे प्रतिशोध लेनेका अवसर पा गये हैं।

आप जाकर सुग्रीवसे तथा रुमासे भी मेरा प्रणाम कह देना। मेरी माता ताराको समझाना जिससे मेरी मृत्यु सुनकर वह मर न जाय। अङ्गदने दृढ़ स्वरमें कहा- मैं न वानरोंको साथ लेकर गुफामें बसने जाऊँगा और न किष्किन्धा लौटकर सुग्रीवके द्वारा मारे जानेका मुझमें उत्साह है। मैं यहाँ प्रायोपवेश करके प्राणत्यागका निश्चय कर चुका हूँ।

मैं प्रतिज्ञापूर्वक आप लोगों को कह रहा हूँ कि दल के नायक के रूप में मैं आप लोगों को आपके कर्तव्य से मुक्त कर रहा हूँ तथा स्वयं मरणांत उपवास आरंभ कर रहा हूँ।

हमारा सौभाग्य है कि हम परात्पर पुरुष श्रीरामकी सेवा में लगे हैं। हनुमानने समझानेका पुन: प्रयास किया।

वह सेवा भी हमसे कहाँ हुई ? दक्षिण समुद्रतटतक तो हमने देख लिया, सीताका पता कहाँ मिला हमें ? अङ्गदने स्वयं आसपाससे कुश उखाड़े, उन्हें पूर्वाग्र बिछाकर बैठ गये- उन समर्थ स्वामीको सेवाके अयोग्य इस शरीरको अङ्गद नहीं रखेगा। अनशन करके इसे यहीं, इसी आसनपर मैं त्याग दूँगा।

हम सब ही अनशन करके देह त्याग करेंगे। वानरोंने रोते-रोते कहा और सब कुश बिछाकर आचमन करके बैठ गये। अङ्गदके वचनोंने हनुमानके भी हृदय को स्पर्श किया था। वे भी मौन हो गये। उन्होंने भी कुश उखाड़ा, पूर्वाग्र बिछाया, आचमन किया और बैठ गये। सचमुच सीताका पता कहाँ मिला ? तब श्रीरामकी सेवामें असमर्थ शरीरको रखनेका प्रयोजन ?

श्रीरामके वनवास, राजा दशरथकी मृत्यु, जनस्थानवासी राक्षसोंके संहार, विदेहकुमारी सीताके अपहरण, जटायुके मरण, बालिके वध और श्रीरामके क्रोधकी चर्चा करते हुए उन वानरोंपर एक दूसरा ही भय आ पहुँचा।

महान् पर्वत-शिखरोंके समान शरीरवाले वहाँ बैठे हुए बहुसंख्यक वानर भयके मारे जोर-जोरसे शब्द करने लगे, जिससे उस पर्वतकी कन्दराओंका भीतरी भाग प्रतिध्वनित हो उठा और गर्जते हुए मेघोंसे युक्त आकाशके समान प्रतीत होने लगा।

पर्वतके जिस स्थानपर वे सब वानर आमरण उपवासके लिये बैठे थे, उस प्रदेशमें चिरंजीवी पक्षी श्रीमान् गृध्रराज सम्पाति आये। वे जटायुके भाई थे और अपने बल तथा पुरुषार्थके लिये सर्वत्र प्रसिद्ध थे।

महागिरि विन्ध्यकी कन्दरासे निकलकर सम्पातिने जब वहाँ बैठे हुए वानरोंको देखा, तब उनका हृदय हर्षसे खिल उठा और वे बोले-

कौन है रे यहाँ, जो प्रायोपवेशन कर रहा है ? ये पड़े-पड़े चिल्लाए, यदि मर रहे हो तो मेरे निकट आकर मरो, ताकि तुम्हें खाकर मैं जी उठूँ।आप कौन हैं, आर्य ? क्या आप नर-भक्षी हैं ? उन्हें नीचे की शिलाओं से एक भीरु-सा स्वर सुनाई दिया।

अरे, यहाँ तो वस्तुत: कोई है उनकी चेतना की लौ जाग उठी। बोले, नर-भक्षी तो नहीं हूँ किंतु भूख से मर रहा हूँ। सोचा, तुम्हें अपना शरीर नहीं चाहिए, तो मेरा ही भला करते जाओ।

अहा। इतने अधिक वानर है। समीपके पर्वतकी भयानक कन्दरासे एक काला, झुलसे शरीरका, देखनेमें अत्यन्त भयमर गीध निकलकर उस गुफाके द्वारपर खड़ा हो गया। वह अपना कुरूप सिर इधर-उधर घूमाकर देख रहा था। इतने अधिक वानरोंका रुदन तथा अनशन करके देह त्यागका निश्चय गुफामें से ही सुनकर वह निकला था कर्कश स्वरमें मानो चीखता प्रसन्नता प्रकट कर रहा था-

विश्वका विधायक भी विचित्र दयालु है। कितने दीर्घकालसे मैं क्षुधा-पीड़ित हूँ। अब इतने असंख्य वानर उसने एक साथ मेरे आहारके लिए भेज दिये। ये उपवास करके जैसे-जैसे मरते जायँगे, मैं इन्हें खाता जाऊँगा। अब थोड़े दिनों ही प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। फिर तो बहुत दिनों तकके लिए भोजनकी व्यवस्था हो गयी।

जैसे लोकमें पूर्वजन्मके कर्मानुसार मनुष्यको उसके कियेका फल स्वत: प्राप्त होता है, उसी प्रकार आज दीर्घकालके पश्चात् यह भोजन स्वत: मेरे लिये प्राप्त हो गया। अवश्य ही यह मेरे किसी कर्मका फल है। इन वानरोंमेंसे जो-जो मरता जायगा, यह बात उस पक्षीने उन सब वानरोंको देखकर कहा।

ये उपवास करके अधमरे, असमर्थ होंगे तभी मैं आहार आरम्भ कर सकता हूँ। मेघगर्जनके समान भयानक शब्द था उसका- हम गीध मरे और मरणासन्नमें भेद करें, ऐसी तो कोई मर्यादा मानते नहीं।

हाय। हमें गीध नोच-नोच कर खायेगा। वानरोंमें भय, मनोवेदनाके कारण क्रन्दनध्वनि उठी- एक गीध ही तो था जटायु जिसने श्रीरामके लिए प्राण दे दिये। एक गीध यह है कि हम राम-कार्यमें लगे लोगोंके मरनेकी प्रतीक्षा कर रहा है।

भोजनपर लुभाये हुए उस पक्षीका यह वचन सुनकर अङ्गदको बड़ा दु:ख हुआ और वे हनुमानसे बोले- हमलोगोंने न तो श्रीरामका कार्य किया और न राजाकी आज्ञाका पालन ही। इसी बीच वानरोंपर यह सहसा अज्ञात विपत्ति आ पड़ी। विदेहकुमारी सीताका प्रिय करनेकी इच्छासे गृध्रराज जटायुने जो साहसपूर्ण कार्य किया था, वह सब आपलोगोंने सुना ही होगा। समस्त प्राणी वे पशु-पक्षियोंकी योनिमें ही क्यों न उत्पन्न हुए हों, हमारी तरह प्राण देकर भी श्रीरामका प्रिय कार्य करते हैं। शिष्ट पुरुष स्नेह और करुणाके वशीभूत हो एक दूसरे का उपकार करते हैं, अत: आपलोग भी श्रीरामके उपकार के लिये स्वयं ही अपने शरीरका परित्याग करें। गृध्रराज जटायु ही सुखी हैं, जो युद्धमें रावणके हाथसे मारे गये और परमगतिको प्राप्त हुए। वे सुग्रीवके भयसे मुक्त हैं।

राजा दशरथकी मृत्यु, जटायुका विनाश और विदेहकुमारी सीताका अपहरण- इन घटनाओंसे इस समय वानरोंका जीवन संशयमें पड़ गया है। वानरोंके द्वारा बारंबार कहे गये इन दु:खमय वचनोंको सुनकर और उन सबको पृथ्वीपर पड़ा हुआ देखकर परम बुद्धिमान सम्पातिका हृदय अत्यन्त क्षुब्ध हो उठा और वे दीन वाणीमें बोलनेको उद्यत हुए।

भाई-भाई की प्रबल प्रीति, भाई-भाई ही जानेंगे। जिनके कोई भाई-बहन न हो वे कब यह बात मानेंगे ?

नीचे का वार्तालाप बंद हो गया, जैसे वे लोग सोच में पड़ गए हों। अच्छा, किसी को नहीं खाऊँगा, भाई। संपाति ने हँसने का प्रयत्न किया, तुम लोग हो कौन ? मुझे तनिक नीचे तो उतारो।

नीचे कुछ हलचल हुई और दो-तीन लोग उनके निकट आए। उन्होंने सहारा देकर संपाति को नीचे उतारा।

आप कौन हैं, आर्य ? एक वृद्ध जो अपने शरीर की असमर्थता के कारण अपना भोजन नहीं जुटा पा रहा और भूख से मर रहा है। शरीर निरोग है, इसलिए मर नहीं रहा; और ऊर्जा नहीं है, इसलिए जी नहीं रहा।

आप कुछ खाएँगे ? अंगद ने पूछा। है कुछ तुम्हारे पास ? कुछ फल और थोड़ा-सा जल। खिला दो।

अंगद अपना स्थान छोड़कर उठ गए और वृद्ध के मुख में थोड़ा-सा जल टपकाने के पश्चात् छील-छीलकर फल खिलाने लगे। ये फल तथा जल वे लोग अपने साथ स्वयंप्रभा के प्रासाद से ले आए थे।

यदि वह गुफा न मिल गई होती, अथवा भीगे हुए वे चक्रवाक पक्षी दिखाई न पड़ जाते- अंगद सोच रहे थे- तो उनकी तथा उनके साथियों की भी कदाचित् यही दशा होती। वृद्धावस्था भी कैसा अभिशाप है। कैसा दण्ड है यह। शरीर में प्राण तो हों, पर प्राण-शक्ति न हो, तो जीवन ऐसे ही यातनामय हो जाता है।

गीधसम्पातिने पूछा- यह कौन है, जो मेरे प्राणोंसे भी बढ़कर प्रिय भाई जटायुके वधकी बात कह रहा है। इसे सुनकर मेरा हृदय कम्पित-सा होने लगा है। वनस्थानमें राक्षसका गृध्रके साथ किस प्रकार युद्ध हुआ था ? अपने भाईका प्यारा नाम आज बहुत दिनोंके बाद मेरे कानमें पड़ा है। जटायु मुझसे छोटा, गुणज्ञ और पराक्रमके कारण अत्यन्त प्रशंसाके योग्य था। दीर्घकालके पश्चात् आज उसका नाम सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं चाहता हूँ कि पर्वतके इस दुर्गम स्थानसे आपलोग मुझे नीचे उतार दें। मुझे अपने भाईके विनाशका वृत्तान्त सुननेकी इच्छा है। मेरा भाई जटायु तो जनस्थानमें रहता था। गुरुजनोंके प्रेमी श्रीराम जिनके ज्येष्ठ एवं प्रिय पुत्र हैं, वे महाराज दशरथ मेरे भाईके मित्र कैसे हुए ?

शत्रुदमन वीरो। मेरे पंख सूर्यकी किरणोंसे जल गये हैं, इसलिये मैं उड़ नहीं सकता; किंतु इस पर्वतसे नीचे उतरना चाहता हूँ।

आमरण उपवास के लिये बैठे हुए उन वानरोंने उस समय गीधको देखकर यह भयंकर बात सोची, यह हम सबको खा तो नहीं जायगा?

अच्छा, हम तो सब प्रकारसे मरणान्त उपवासका व्रत लेकर बैठे ही थे। यदि यह पक्षी हमें खा लेगा तो हमारा काम ही बन जायगा। हमें शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त हो जायगी।

फिर तो उन समस्त वानर-यूथपतियोंने यही निश्चय किया। उस समय गीधको उस पर्वत-शिखरसे उतारकर अङ्गदने कहा- पक्षिराज। पहले एक प्रतापी वानरराज हो गये हैं, जिनका नाम था ऋक्षरजा। राजा ऋक्षरजा मेरे पितामह लगते थे। उनके दो धर्मात्मा पुत्र हुए- सुग्रीव और बाली। दोनों ही बड़े बलवान् हुए। उनमेंसे राजा बालि मेरे पिता थे। संसारमें अपने पराक्रमके कारण उनकी बड़ी ख्याति थी। आजसे कुछ वर्ष पहले इक्ष्वाकुवंशके महारथी वीर दशरथकुमार श्रीमान् रामचन्द्रजी, जो सम्पूर्ण जगत्के राजा हैं, पिताकी आज्ञाके पालनमें तत्पर हो धर्म-मार्गका आश्रय ले दण्डकारण्यमें आये थे। उनके साथ उनके छोटे भाई लक्ष्मण तथा उनकी धर्मपत्नी विदेहकुमारी सीता भी थीं।

जनस्थानमें आनेपर उनकी पत्नी सीताको रावणने बलपूर्वक हर लिया। उस समय गृध्रराज जटायुने, जो उनके पिताके मित्र थे, देखा- रावण आकाशमार्गसे विदेहकुमारीको लिये जा रहा है। देखते ही वे रावणपर टूट पड़े और उसके रथको नष्ट-भ्रष्ट करके उन्होंने मिथिलेशकुमारीको सुरक्षितरूपसे भूमिपर खड़ा कर दिया। किंतु वे वृद्ध तो थे ही। युद्ध करते-करते थक गये और अन्ततोगत्वा रणक्षेत्रमें रावणके हाथसे मारे गये। इस प्रकार महाबली रावणके द्वारा जटायुका वध हुआ। स्वयं श्रीरामने उनका दाह-संस्कार किया और वे उत्तम गति साकेतधामको प्राप्त हुए। तदनन्तर श्रीरघुनाथने मेरे चाचा महात्मा सुग्रीवसे मित्रता की और उनके कहनेसे उन्होंने मेरे पिताका वध कर दिया। मेरे पिताने मन्त्रियोंसहित सुग्रीवको राज्य-सुखसे वञ्चित कर दिया था। इसलिये श्रीरामने मेरे पिता बालिको मारकर सुग्रीवका अभिषेक करवाया। उन्होंने ही सुग्रीवको बालिके राज्यपर स्थापित किया। अब सुग्रीव वानरोंके स्वामी हैं। मुख्य-मुख्य वानरोंके भी राजा हैं। उन्होंने हमें सीताकी खोजके लिये भेजा है। इस तरह श्रीरामसे प्रेरित होकर हमलोग इधर-उधर विदेहकुमारी सीताको खोजते-फिरते हैं, किंतु अबतक उनका पता नहीं लगा। जैसे रातमें सूर्यकी प्रभाका दर्शन नहीं होता, उसी प्रकार हमें इस वनमें जानकीका दर्शन नहीं हुआ। हमलोग अपने मनको एकाग्र करके दण्डकारण्यमें भलीभाँति खोज करते हुए अज्ञानवश पृथ्वीके एक खुले हुए विवरमें घुस गये। वह विवर मायासुरकी मायासे निर्मित हुआ है। उसमें खोजते-खोजते हमारा एक मास बीत गया, जिसे राजा सुग्रीवने हमारे लौटनेके लिये अवधि निश्चित किया था।

हम सब लोग कपिराज सुग्रीव के आज्ञाकारी हैं, किंतु उनके द्वारा नियत की हुई अवधिको लाँघ गये हैं। अत: उन्हींके भयसे हम यहाँ आमरण उपवास कर रहे हैं श्रीराम, लक्ष्मण और सुग्रीव तीनों हमपर कुपित होंगे। उस दशामें वहाँ लौट जानेके बाद हम सबके प्राण नहीं बच सकते। सम्पाति बोला- वानरों। तुम जिसे महाबली रावणके द्वारा युद्धमें मारा गया बता रहे हो, वह जटायु मेरा छोटा भाई था।

मैं बूढ़ा हुआ। मेरे पंख जल गये। इसलिये अब मुझमें अपने भाईके वैरका बदला लेनेकी शक्ति नही रह गयी है। यही कारण है कि यह अप्रिय बात सुनकर भी मैं चुपचाप सह लेता हूँ।

पहलेकी बात है जब इन्द्रके द्वारा वृत्रासुरका वध हो गया, तब इन्द्रको प्रबल जानकर हम दोनों भाई उन्हें जीतनेकी इच्छासे पहले आकाशमार्गके द्वारा बड़े वेगसे स्वर्गलोकमें गयें। इन्द्रको जीतकर लौटते समय हम दोनों ही स्वर्गको प्रकाशित करनेवाले अंशुमाली सूर्यके पास आये। हममेंसे जटायु सूर्यके मध्याह्नकालमें उनके तेजसे शिथिल होने लगा। भाईको सूर्यकी किरणोंसे पीड़ित और अत्यन्त व्याकुल देख मैंने स्नेहवश अपनी दोनों पंखोंसे उसे ढक लिया। वानरशिरोमणियों। उस समय मेरे दोनों पंख जल गये और मैं इस विन्ध्य पर्वतपर गिर पड़ा। यहाँ रहकर मैं कभी अपने भाईका समाचार न पा सका आज सबसे पहले तुम लोगोंके मुखसे उसके मारे जानेकी बात मालूम हुई है। पूर्वकालमें यहाँ एक पवित्र आश्रम था, जिसका देवता भी बड़ा सम्मान करते थे। उस आश्रममें निशाकर चन्द्रमा नामधारी एक ऋषि रहते थे, जो बड़े ही उग्र तपस्वी थे। वे धर्मज्ञ निशाकर मुनि अब स्वर्गवासी हो चुके हैं। उन महर्षिके बिना इस पर्वतपर रहते हुए मेरे आठ हजार वर्ष बीत गये।

मैं उन महर्षिका दर्शन करना चाहता था, इसीलिये अत्यन्त कष्ट उठाकर वहाँ गया था। इसके पहले मैं और जटायु दोनों कई बार उनसे मिल चुके थे। उस पवित्र आश्रमपर पहुँचकर मैं एक वृक्षके नीचे ठहर गया और भगवान निशाकरके दर्शनकी इच्छासे उनके आनेकी प्रतीक्षा करने लगा। थोड़ी ही देरमें महर्षि मुझे दूरसे आते दिखायी दिये। वे अपने तेजसे दिप्त रहे थे और स्नान करके उत्तरकी ओर लौटे

आ रहे थे। उनका तिरस्कार करना किसीके लिये भी कठिन था। अनेकानेक रीछ, हरिन, सिंह, बाघ और नाना प्रकारके सर्प उन्हें इस प्रकार घेरे आ रहे थे, जैसे याचना करनेवाले प्राणी दाताको घेरकर चलते हैं।

ऋषि मुझे देखकर बड़े प्रसन्न हुए और अपने आश्रममें प्रवेश करके पुन: दो ही घड़ीमें बाहर निकल आये। फिर पास आकर उन्होंने मेरे आनेका प्रयोजन पूछा- वे बोले- सौम्य। तुम्हारे रोएँ गिर गये और दोनों पंख जल गये हैं। इसका कारण नहीं जान पड़ता। इतनेपर भी तुम्हारे शरीरमें प्राण टिके हुए हैं। सम्पाते। मैं तुम्हें पहचान गया। तुम उन दो भाइयोंमेंसे बड़े हो। जटायु तुम्हारा छोटा भाई था। तुम दोनों मनुष्यरूप धारण करके मेरा चरण-स्पर्श किया करते थे। यह तुम्हें कौन-सा रोग लग गया है। तुम्हारे दोनों पंख कैसे गिर गये ? किसीने दण्ड तो नहीं दिया है ? मैं जो कुछ पूछता हूँ, वह सब तुम स्पष्टरूपसे कहो।

उनके इस प्रकार पूछनेपर मैंने बिना सोचे-समझे सूर्यका अनुगमनरूप जो दुष्कर एवं दारुण कार्य किया था, वह सब उन्हें बताया। मैं और जटायु दोनों ही गर्वसे मोहित हो रहे थे; अत: अपने पराक्रमकी थाह लगानेके लिये हम दोनों दूरतक पहुँचनेके उद्देश्यसे उड़ने लगे। कैलास पर्वतके शिखरपर मुनियोंके सामने हम दोनोंने यह शर्त बदी थी कि सूर्य जबतक अस्ताचलपर जायँ, उसके पहले ही हम दोनोंको उनके पास पहुँच जाना चाहिये। जटायु मुझसे पूछे बिना ही पृथ्वीपर उतर पड़ा। उसे नीचे जाते देख मैंने भी तुरंत अपने आपको आकाशसे नीचेकी ओर छोड़ दिया।

मैंने अपने दोनों पंखोंसे जटायुको ढक लिया था, इसलिये वह जल न सका। मैं ही असावधानीके कारण वहाँ जल गया। वायुके पथसे नीचे गिरते समय मुझे ऐसा संदेह हुआ कि जटायु जनस्थानमें गिरा है; परंतु मैं इस विन्ध्यपर्वतपर गिरा था। मेरे दोनों पंख जल गये थे, इसलिये यहाँ जड़वत् हो गया। राज्यसे भ्रष्ट हुआ, भाईसे बिछुड़ गया और पंख तथा पराक्रमसे भी हाथ धो बैठा। अब मैं सर्वथा मरनेकी ही इच्छासे इस पर्वतशिखरसे नीचे गिरूँगा।

सम्पाते। चिन्ता न करो। तुम्हारे छोटे और बड़े दोनों तरहके पंख फिर नये निकल आयेंगे। आँखें भी ठीक हो जायँगी तथा खोयी हुई प्राणशक्ति बल और पराक्रम सब लौट आयेंगे। इक्ष्वाकुवंशकी कीर्ति बढ़ानेवाले कोई दशरथ नामसे प्रसिद्ध राजा होंगे। उनके एक महातेजस्वी पुत्र होंगे, जिनकी श्रीरामकी नामसे प्रसिद्धि होगी। सत्यपराक्रमी श्रीराम अपनी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मणके साथ वनमें जायँगे; इसे लिये उन्हें पिताकी ओरसे आज्ञा प्राप्त होगी।

वनवास-कालमें जनस्थानमें रहते समय उनकी पत्नी सीताको राक्षसोंका राजा रावण नामक असुर हर ले जायगा। वह देवताओं और दानवोंके लिये भी अवध्य होगा। सीता राक्षसका अन्न नहीं ग्रहण करती- यह मालूम होनेपर देवराज इन्द्र उसके लिये अमृतके समान खीर जो देवताओंको दुर्लभ है, निवेदन करेंगे। उस अन्नको इन्द्रका दिया हुआ जानकर जानकी उसे स्वीकार कर लेगी और सबसे पहले उसमेंसे अग्रभाग निकालकर श्रीरामके उद्देश्यसे पृथ्वीपर रखकर अर्पण करेगी।

उस समय वह इस प्रकार कहेगी- मेरे पति भगवान् श्रीराम तथा देवर लक्ष्मण यदि जीवित हों अथवा देवभावको प्राप्त हो गये हों, यह अन्न उनके लिये समर्पित है।

सम्पाते। रघुनाथके भेजे हुए उनके दूत वानर यहाँ सीताका पता लगाते हुए आयेंगे। उन्हें तुम श्रीरामकी महारानी सीताका पता बताना। यहाँसे किसी तरह कभी दूसरी जगह न जाना। ऐसी दशामें तुम जाओगे भी कहाँ। देश और कालकी प्रतीक्षा करो। तुम्हें फिर नये पंख प्राप्त हो जायँगे।

यद्यपि मैं आज ही तुम्हें पंखयुक्त कर सकता हूँ; फिर भी इसलिये ऐसा नहीं करता कि यहाँ रहनेपर तुम संसारके लिये हितकर कार्य कर सकोगे। यद्यपि मैं भी उन दोनों भाइयोंका दर्शन करना चाहता हूँ; परंतु अधिक कालतक इन प्राणोंको धारण करनेकी इच्छा नहीं है। अत: वह समय आनेसे पहले ही मैं प्राणोंको त्याग दूँगा ऐसा उन तत्त्वदर्शी महर्षिने मुझसे कहा था।

तदनन्तर कन्दरासे धीरे-धीरे निकलकर मैं विन्ध्य पर्वतके शिखरपर चढ़ आया और तबसे तुम लोगोंके आनेकी बाट देख रहा हूँ।

तब अङ्गदने कहा- गृध्रराज। यदि आप जटायुके भाई हैं, यदि आपने मेरी कही हुई बातें सुनी हैं और यदि आप उस राक्षसका निवासस्थान जानते हैं तो हमें बताइये।

वानरों। मेरे पंख जल गये। अब मैं बेपरका गीध हूँ। मेरी शक्ति जाती रही अत: मैं शरीरसे तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकता, तथापि वचनमात्रसे भगवान् श्रीरामकी उत्तम सहायता अवश्य करूँगा।

मैं वरुणके लोकोंको जानता हूँ। वामनावतारके समय भगवान् विष्णुने जहाँ-जहाँ अपने तीन पग रक्खे थे, उन स्थानोंका भी मुझे ज्ञान है। अमृत-मन्थन तथा देवासुरसंग्राम भी मेरी देखी और जानी हुई घटनाएँ हैं। यद्यपि वृद्धावस्थाने मेरा तेज हर लिया है और मेरी प्राणशक्ति शिथिल हो गयी है तथापि श्रीरामका यह कार्य मुझे सबसे पहले करना है।

एक दिन मैंने भी देखा, दुरात्मा रावण सब प्रकारके गहनोंसे सजी हुई एक रूपवती युवतीको हरकर लिये जा रहा था। वह मानिनी देवी हा राम। हा राम। हा लक्ष्मण की रट लगाती हुई अपने गहने फेंकती और अपने शरीरके अवयवोंको कम्पित करती हुई छटपटा रही थी।

उसका सुन्दर रेशमी पीताम्बर उदयाचलके शिखरपर फैली हुई सूर्यकी प्रभाके समान सुशोभित होता था। वह उस काले राक्षसके समीप बादलोंमें चमकती हुई बिजलीके समान प्रकाशित हो रही थी।

श्रीरामका नाम लेनेसे मैं समझता हूँ, वह सीता ही थी। अब मैं उस राक्षसके घरका पता बताता हूँ, सुनो।

रावण नामक राक्षस महर्षि विश्रवाका पुत्र और साक्षात् कुबेरका भाई है। वह लमा नामवाली नगरीमें निवास करता है। यहाँसे पूरे चार सौ कोसके अन्तरपर समुद्रमें एक द्वीप है, जहाँ विश्वकर्माने अत्यन्त रमणीय लङ्कापुरीका निर्माण किया है। उस नगरीकी चहारदीवारी बहुत बड़ी है और सूर्यकी भाँति चमकती रहती है। उसीके भीतर पीले रंगकी रेशमी साड़ी पहने विदेहकुमारी सीता बड़े दु:खसे निवास करती हैं। रावण के अन्त:पुरमें नजरबंद हैं। बहुत-सी राक्षसियाँ उनके पहरेपर तैनात हैं। वहाँ पहुँचनेपर तुमलोग राजा जनककी कन्या मैथिली सीताको देख सकोगे।

लमा चारों ओरसे समुद्रके द्वारा सुरक्षित है। पूरे सौ योजन समुद्रको पार करके उसके दक्षिण तटपर पहुँचनेपर तुमलोग रावणको देख सकोगे। अत: वानरों। समुद्रको पार करनेमें ही तुरंत शीघ्रतापूर्वक अपने पराक्रमका परिचय दो।

निश्चय ही मैं ज्ञानदृष्टिसे देखता हूँ। तुमलोग सीताका दर्शन करके लौट आओगे। आकाशका पहला मार्ग गौरैयों तथा अन्न खानेवाले कबूतर आदि पक्षियोंका है। उससे ऊपरका दूसरा मार्ग कौओं तथा वृक्षोंके फल खाकर रहनेवाले दूसरे-दूसरे पक्षियोंका है। उससे भी ऊँचा जो आकाशका तीसरा मार्ग हैं, उससे चील, क्रौञ्च और कुरर आदि पक्षी जाते हैं।

बाज चौथे और गीध पाँचवें मार्गसे उड़ते हैं। रूप, बल और पराक्रमसे सम्पन्न तथा यौवनसे सुशोभित होनेवाले हंसोंका छठा मार्ग है। है। उनसे भी ऊँची उड़ान गरुड़की है। वानरशिरोमणियों। हम सबका जन्म गरुड़से ही हुआ है।

परंतु पूर्वजन्ममें हमसे कोई निन्दित कर्म बन गया था, जिससे इस समय हमें मांसाहारी होना पड़ा है। तुमलोगोंकी सहायता करते मुझे रावणसे अपने भाईके वैरका बदला लेना है। मैं यहींसे रावण और जानकीको देखता हूँ। हम लोगोंमें भी गरुड़की भाँति दूरतक देखनेकी दिव्य शक्ति है। इसलिये वानरों। हम भोजनजनित बलसे तथा स्वाभाविक शक्तिसे भी सदा सौ योजन और उससे आगेतक भी देख सकते हैं। जातीय स्वभावके अनुसार हमलोगोंकी जीविका-वृत्ति दूरसे देखे गये दूरस्थ भक्ष्यविशेषके द्वारा नियत की गयी है तथा जो कुक्कुट आदि पक्षी हैं, उनकी जीवन-वृत्ति वृक्षकी जड़तक ही सीमित है- वे वहींतक उपलब्ध होनेवाली वस्तुसे जीवन-निर्वाह करते हैं।

अब तुम इस खारे पानीके समुद्रको लाँघनेका कोई उपाय सोचो। विदेहकुमारी सीताके पास जा सफलमनोरथ होकर किष्किंन्धापुरीको लौटोगे। अब मैं तुम्हारी सहायतासे समुद्रके किनारे चलना चाहता हूँ। वहाँ अपने स्वर्गवासी भाई महात्मा जटायुको जलाञ्जलि प्रदान करूँगा। यह सुनकर महापराक्रमी वानरोंने जले पंखवाले पक्षिराज सम्पातिको उठाकर समुद्रके किनारे पहुँचा दिया और जलाञ्जलि देनेके पश्चात् वे पुन: उनको वहाँसे उठाकर उनके रहनेके स्थानपर ले आये। उनके मुखसे सीताका समाचार जानकर उन सभी वानरोंको बड़ी प्रसन्नता हुई। वानरों। विदेहकुमारी सीताका जिस प्रकार अपहरण हुआ है, विशाललोचना सीता इस समय जहाँ है और जिसने मुझसे यह सब वृत्तान्त कहा है एवं जिस तरह मैंने सुना है, वह सब बताता हूँ, सुनो।

निष्पाप अङ्गद। प्राचीन कालमें मैं सूर्यकी किरणोंसे झुलसकर इस विन्ध्यपर्वतके शिखरपर गिरा था। उस समय मेरे सारे अङ्ग सूर्यके प्रचण्ड तापसे संतप्त हो रहे थे। छ: रातें बीतनेपर जब मुझे होश हुआ और मैं विवश एवं विह्वल-सा होकर सम्पूर्ण दिशाओंकी ओर देखने लगा, तब सहसा किसी भी वस्तुको मैं पहचान न सका।

तदनन्तर धीरे-धीरे समुद्र, पर्वत, समस्त नदी, सरोवर, वन और यहाँके विभिन्न प्रदेशोंपर दृष्टि डाली, तब मेरी स्मरण-शक्ति लौटी।

फिर मैंने निश्चय किया कि यह दक्षिण समुद्रके तटपर स्थित विन्ध्यपर्वत है, जो हर्षोत्फुल्ल विहंगमोंके समुदायसे व्याप्त है। यहाँ बहुत-सी कन्दराएँ, गुफाएँ और शिखर हैं।

यह दुर्गम पर्वत कई योजनोंतक फैला है। दीर्घकाल हुआ, जब मैं इस पर्वतपर गिरा था। मेरी प्राणशक्ति क्षीण हो गयी थी और मैं वृद्ध था। इस अवस्थामें मेरा पुत्र पक्षिप्रवर सुपार्श्व ही यथासमय आहार देकर प्रतिदिन मेरा भरण-पोषण करता है।

जैसे गन्धर्वोंका कामभाव तीव्र होता है, सर्पोंका क्रोध तेज होता है और मृगोंको भय अधिक होता है, उसी प्रकार हमारी जातिके लोगोंकी भूख बड़ी तीव्र होती है। एक दिनकी बात है मैं भूखसे पीड़ित होकर आहार प्राप्त करना चाहता था। मेरा पुत्र मेरे लिये भोजनकी तलाशमें निकला था; किंतु सूर्यास्त होनेके बाद वह खाली हाथ लौट आया, उसे कहीं मांस नहीं मिला।

कभी-कभी तो जिह्वा की तृष्णा औचित्य का भी उल्लंघन कर जाती थी। वृद्धावस्था में यदि इंद्रियाँ सक्रिय हों, तो उन पर नियंत्रण पाना कठिन होता है। पुत्र। तो उस दिन भूख से मैं अत्यंत व्याकुल हो उठा। बड़ी देर के पश्चात जब सुपार्श्व कुटिया में लौटा तो मैंने उसे डाँटा कि वह अपने वृद्ध पिता का तनिक भी ध्यान नहीं रखता। मुझे भूख से बिलबिलाता छोड़ स्वयं कहाँ-कहाँ मनोरंजनार्थ भ्रमण करता रहता है। उसका उत्तर मेरी बात से भी अधिक कठोर था। उसने कहा कि वह मेरी इन असंगत बातों से तंग आ गया है। मुझे अपनी मर्यादा में रहना चाहिए। और फिर उसने बताया कि वह भोजन की ही खोज में उस दिन महेन्द्र गिरि तक चला गया था।

मेरा पुत्र सुपार्श्व बोला। तात। मैं यथासमय मांस प्राप्त करनेकी इच्छासे आकाशमें उड़ा और महेन्द्र पर्वतके द्वारको रोककर खड़ा हो गया। वहाँ अपनी चोंच नीची करके मैं समुद्रके भीतर विचरनेवाले सहस्त्रों जन्तुओंके मार्गको रोकनेके लिये अकेला ठहर गया। उस समय मैंने देखा खानसे काटकर निकाले हुए कोयलेकी राशिके समान काला कोई पुरुष एक स्त्रीको लेकर जा रहा है। उस स्त्रीकी कान्ति सूर्योदयकालकी प्रभाके समान प्रकाशित हो रही थी। उस स्त्री और उस पुरुषको देखकर मैंने उन्हें आपके आहारके लिये लानेका निश्चय किया, किंतु उस पुरुषने नम्रतापूर्वक मधुर वाणीमें मुझसे मार्गकी याचना की।

फिर भी मैंने सुपार्श्व से पूछा था कि उसने उस सुंदरी की सहायता क्यों नहीं की। तो जानते हो, उसने क्या उत्तर दिया ?

क्या ? उसने कहा कि वह उस पुरुष का मार्ग रोककर खड़ा हो गया था; किंतु उस पुरुष ने अत्यंत दीन भाव से उससे मार्ग छोड़ देने का अनुरोध किया और कहा कि उसने सुपार्श्व की कोई हानि नहीं की है, अत: सुपार्श्व मार्ग से हट जाए। और वह मार्ग से हट गया ?

हाँ। उसका कहना था कि कोई व्यक्ति इतनी दीनता और शालीनता से प्रार्थना करे तो उससे युद्ध कैसे किया जा सकता है ?

वह व्यक्ति चाहे कितना ही बड़ा अनर्थ क्यों न कर रहा हो ?

पिताजी। भूतलपर नीच पुरुषोंमें भी कोई ऐसा नहीं है, जो विनयपूर्वक मीठे वचन बोलनेवालोंपर प्रहार करे। फिर मुझ-जैसा कुलीन पुरुष कैसे कर सकता है ? फिर तो वह तेजसे आकाशको व्याप्त करता हुआ वेगपूर्वक चला गया। उसके चले जानेपर आकाशचारी प्राणी सिद्ध-चारण आदिने आकर मेरा बड़ा सम्मान किया।

वे महर्षि मुझसे बोले- सौभाग्यकी बात है कि सीता जीवित हैं। तुम्हारी दृष्टि पड़नेपर भी स्त्रीके साथ आया हुआ वह पुरुष किसी तरह सकुशल बच गया; अत: अवश्य तुम्हारा कल्याण हो। उन परम शोभायमान सिद्ध पुरुषोंने मुझसे ऐसा कहा, तत्पश्चात्, उन्होंने यह भी बताया की वह काला पुरुष राक्षसोंका राजा रावण था।

वह जब पके फलों के वृक्षों की खोज में इधर-उधर भटक रहा था तो उसने एक असाधारण दृश्य देखा कि प्रौढ़ वय का एक असाधारण बलशाली श्यामवर्ण राजपुरुष एक गौरवर्णा, अत्यंत असाधारण सुंदरी युवती स्त्री को बलात् अपने कंधे पर लादे लिये जा रहा था। वह सुंदरी अपनी सामर्थ्य भर उस पुरुष की पकड़ से मुक्त होने के लिए संघर्ष कर रही थी और सहायता के लिए अनवरत पुकार रही थी। वह बार-बार दाशरथि राम और सौमित्र लक्ष्मण का आह्वान कर रही थी।

देवी वैदेही ? हनुमान के मुख से अनायास ही निकल गया।

हाँ, वत्स। यह तो मैं आज ही समझ पाया हूँ। संपाति बोले, और वह पुरुष रावण था, जिसके खड्ग से अभी कदाचित मेरे भाई जटायु का रक्त सूख भी न पाया हो। उन्होंने रुककर अपने अश्रु पोंछे, पर तब मैं यह नहीं समझ पाया था।

तात। दशरथनन्दन श्रीरामकी पत्नी जनककिशोरी सीता शोकके वेगसे पराजित हो गयी थीं। उनके आभूषण गिर रहे थे और रेशमी वस्त्र भी सिरसे खिसक गया था। उनके केश खुले हुए थे और वे श्रीराम तथा लक्ष्मणका नाम ले-लेकर उन्हें पुकार रही थीं। मैं उनकी इस दयनीय दशाको देखता रह गया। यही मेरे विलम्बसे आनेका कारण है। इस प्रकार बातचीतकी कला जाननेवालोंमें श्रेष्ठ सुपार्श्वने मेरे सामने इन सारी बातोंका वर्णन किया। यह सब सुनकर भी मेरे हृदयमें पराक्रम कर दिखानेका कोई विचार नहीं उठा।

यही प्रश्न मैंने भी अपने युवक पुत्र से किया था, किंतु वह बार-बार उस पुरुष के अत्याचार से हटकर, उसके शिष्टाचार की बात करने लगता था। संपाति बोले, पर वास्तविक बात तो मैं आज समझा हूँ, पुत्र। उसने कदापि रावण का मार्ग नहीं रोका होगा। जो व्यक्ति अपने पिता के प्रति अपने कर्त्तव्य का बोझ उठाने को तैयार नहीं है, वह एक अपरिचित-अनजान युवती के प्रति अपने कर्त्तव्य को क्या समझेगा। उसने रावण का भयंकर रूप, क्रूर मुख और घातक शस्त्रों को देखा होगा और भय से पीला पड़कर किसी झाड़ी में छिप गया होगा; या संभव है, संज्ञाशून्य होकर कहीं गिर पड़ा हो और वहीं पड़ा रह गया हो। इसी में उसे इतना विलंब हो गया था। संपाति पुन: कुछ सोचते हुए रुक गए, उस दिन मैं यह सब नहीं समझा था, नहीं तो अपनी उस अवस्था में भी कदाचित् मैं इतना निष्क्रिय न रहता। किंतु फिर भी मैंने अपने उस कपूत को इस प्रमाद के लिए बहुत ताड़ना दी और कहा कि मैं ऐसे कायर पुत्र का मुख भी नहीं देखना चाहता। संपाति अप्राकृतिक ढंग से हँसे, वह मेरी ताड़ना से लज्जित नहीं हुआ, न उसने अपनी भूल स्वीकार की उसने भी मेरे स्वर में कहा कि वह मेरे-जैसे वाचाल और पंगु वृद्ध से तंग आ गया है, जो न अपना सामर्थ्य समझता है, न अपनी मर्यादा। मैंने उसी रोष में उससे कहा कि यदि ऐसी ही बात है तो वह अपने इस वृद्ध पिता को अपनी इस कुटिया से निकालकर समुद्र-तट की किसी शिला पर डाल क्यों नहीं आता। लगता है कि वह तो मुझसे मुक्ति पाने को किसी उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा-भर कर रहा था। उसने मेरी आज्ञा का शत-प्रतिशत पालन किया और स्वयं अपने कंधे पर उठाकर अपने आश्रम से इतनी दूर, इस शिला पर डाल गया, जहाँ से उसके आश्रम तक, मुझ मुमुर्ष का चीत्कार भी न जा सके। और मैं यहाँ पड़ा हुआ अपने इन प्राणों को कोसता रहा कि ये लोलुप इस असमर्थ शरीर से क्यों चिपके हैं। क्यों नहीं इसे ये इस यातना से मुक्त कर देते। सहसा संपाति के चेहरे पर कोई पुराना तेज जागा, पर आज समझ गया हूँ कि पिछले चार महीनों से ये प्राण इस शरीर से इस प्रकार मरते-जीते क्यों चिपके हैं वस्तुत: अभी इन प्राणों को इस शरीर से कुछ काम लेना है। उन्होंने रुककर वानर-दल के एक-एक सदस्य को बारी-बारी देखा, मुझमें इतना सामर्थ्य नहीं, पुत्रो। कि तुम्हारे साथ सागर पार कर लंका में जाकर पापी रावण का अपने हाथों से वध कर अपने भाई की हत्या का प्रतिशोध ले सकूँ। पर तुम्हें यह निश्चित सूचना अवश्य दे सकता हूँ कि सीता का हरण रावण ने ही किया है और वह उसे लेकर लंका में ही गया है। तुम लोग यदि सागर पार करने का पराक्रम कर सको तो लंका में सीता को अवश्य पा सकोगे।

सम्पातिने बतलाया- गीधकी दृष्टि बहुत दूरकी वस्तु देख लेती है। सौभाग्यवश सीता यहाँसे ऐसे स्थानपर है कि मेरी दृष्टि-पथ में कोई पर्वत, पेड़ भवन बाधक नहीं है। मैं उनको देख रहा हूँ।

आप श्रीवैदही को देख रहे हैं ? उत्साहमें आकर अङ्गद बोले- वे कहाँ हैं ? कितनी दूर हैं ? क्या कर रही है ?

यहाँसे सौ योजन दूर समुद्रके मध्य त्रिकूट पर्वतके मध्य शिखरपर विश्रवाके पुत्र रावणकी स्वर्णपुरी लमा है। वह राक्षसों से भरी है। उस स्वर्णपुरी के मध्य रावणके राजभवनसे लगे अशोक वाटिका उद्यानमें राक्षसियोंसे घिरी, पीतवस्त्रधारिणी सीता अधोमुखी बैठी रुदन कर रही है। मैं ही सीताको देख सकता हूँ, ऐसा नहीं है। तुममें से कोई भी उसके दर्शन कर सकता है, जो इस सौ योजन समुद्रको कूद जा सके। सम्पातिने उत्साह दिलाया- तुम अवश्य उसपर जाओ और दुष्ट दशग्रीवसे मेरे भाई जटायुका प्रतिशोध लो। तुम तो सर्वसमर्थ श्रीरामके दूत हो। मुनिसे बातचीतके बाद आजतक जो समय बीता है, इसमें आठ हजारसे अधिक वर्ष निकल गये। मुनिके कथनको हृदयमें धारण करके मैं देश-कालकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

निशाकर मुनि महाप्रस्थान करके जब स्वर्गलोकको चले गये, तभीसे मैं अनेक प्रकारके तर्क-वितर्कोंसे घिर गया। संतापकी आग मुझे रात-दिन जलाती रहती है। मेरे मनमें कई बार प्राण त्यागनेकी इच्छा हुई, किंतु मुनिके वचनोंको याद करके मैं उस संकल्पको टालता आया हूँ। उन्होंने मुझे प्राणोंको रखनेके लिये जो बुद्धि (सम्मति) दी थी, वह मेरे दु:खको उसी प्रकार दूर कर देती है, जैसे जलती हुई अग्निशिखा अन्धकारको। दुरात्मा रावणमें कितना बल है, इसे मैं जानता हूँ। इसलिये मैंने कठोर वचनोंद्वारा अपने पुत्रको डाँटा था कि तूने मिथिलेशकुमारी सीताकी रक्षा क्यों नहीं की।

बिना पंखका पक्षी कैसे कोई पराक्रम कर सकता है ? अपनी वाणी और बुद्धिके द्वारा साध्य जो उपकाररूप गुण है, उसे करना मेरा स्वभाव बन गया है। ऐसे स्वभावसे मैं जो कुछ कर सकता हूँ, वह कार्य तुम्हें बता रहा हूँ, सुनो। वह कार्य तुमलोगोंके पुरुषार्थसे ही सिद्ध होनेवाला है। आश्चर्य है कि तुम लोग हताश होकर अनशन करने बैठे थे। यह अवसाद तुम्हारे योग्य नहीं है। तुम लोग उठो, उद्योग करो। अवश्य सफलता तुम्हें प्राप्त होगी।

मुझे देखकर मनमें धीरज धरो। देखो, श्रीरामकी कृपासे देखते-ही-देखते मेरा शरीर कैसा हो गया। बिना पाँखका बेहाल था, पाँख उगनेसे सुन्दर हो गया। पापी भी जिनका नाम स्मरण करके अत्यन्त अपार भवसागरसे तर जाते हैं, तुम उनके दूत हो, अत: कायरता छोड़कर श्रीरामको हृदयमें धारण करके उपाय करो।

वहाँ एकत्र होकर बैठे हुए वानरोंके साथ सम्पाति इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि उन वनचारी वानरोंके समक्ष उसी समय उनके दो नये पंख निकल आये। अपने शरीरको नये निकले हुए लाल रंगके पंखोंसे संयुक्त हुआ देख सम्पातिको अनुपम हर्ष प्राप्त हुआ। वे वानरोंसे बोले- कपिवरों। अमिततेजस्वी राजर्षि निशाकरके प्रसादसे सूर्यकिरणोंद्वारा दग्ध हुए मेरे दोनों पंख फिर उत्पन्न हो गये।

मैं वाणी और बुद्धिके द्वारा तुम सब लोगोंका प्रिय कार्य अवश्य करूँगा; क्योंकि दशरथनन्दन श्रीरामका जो कार्य है, वह मेरा ही है- इसमें संशय नहीं है। अत: अब अधिक समय बितानेकी आवश्यकता नहीं है। अपनी बुद्धिके द्वारा दृढ़ निश्चय करके सीताके दर्शनके लिये उद्योग करो; क्योंकि तुम जैसे बुद्धिमान लोग कार्योंकी सिद्धिमें विलम्ब नहीं करते हैं।

वानरों। तुम सब प्रकारसे यत्न करो। निश्चय ही तुम्हें सीताका दर्शन प्राप्त होगा। मुझे पंखोंका प्राप्त होना तुमलोगोंकी कार्य-सिद्धिका विश्वास दिलानेवाला है। सम्पातिने अब अपने पंख फैलाकर फड़फड़ाये- मुझे अनुमति दो। मैं बहुत दिनोंसे भूखा हूँ। अब कहीं जाकर आहारका अन्वेषण करूँ। वैसे भी तुम सब जानते हो कि किसी उद्योगके समय गीधकी उपस्थिति और उसकी छाया- अशुभ-सूचक है। अत: मुझे तुम्हारे उद्योग-प्रारम्भसे पूर्व ही दूर चले जाना चाहिये। उन समस्त वानरोंसे ऐसा कहकर पक्षियोंमें श्रेष्ठ सम्पाति अपने आकाश-गमनकी शक्तिका परिचय पानेके लिये उस पर्वतशिखरसे उड़ गये।

सम्पातिने पंख पूरे फैलाये, उन्हें वेगपूर्वक हिलाया और आकाशमें मण्डल बनाता ऊपर उठा। सभी वानर मुख ऊपर उठाये तबतक देखते रहे, जबतक सम्पाती उनकी दृष्टिसे ओझल नहीं हो गया। तदनन्तर वायुके समान पराक्रमी वे श्रेष्ठ वानर अपने भूले हुए पुरुषार्थको फिरसे पा गये और जनकनन्दिनी सीताकी खोजके लिये उत्सुक हो अभिजित नक्षत्रसे युक्त दक्षिण दिशाकी ओर चल दिये।

१४) जाम्बवान से हनुमान को समुद्रोल्लंघन की प्रेरणा- संपाति के चले जाने के पश्चात कुछ समय तक नीरवता छाई रही- जैसे प्रत्येक व्यक्ति मन-ही-मन कुछ सोच रहा हो। किंतु अब पहले जैसा हताशा का वातावरण एकदम नहीं था, जो संपाति के आने से पूर्व था; और न ही कोई पुन: प्रायोपवेशन के लिए प्रतिज्ञापूर्वक बैठने का संकल्प दिखा रहा था।

क्या करने जा रहे थे अंगद ?

वे यहाँ बैठकर प्रायोपवेशन करें तो किसकी कौन-सी समस्या सुलझ जाएगी ? क्या वे भी सुपार्श्व के समान, रावण को अत्याचार करते देख भयभीत होकर अपनी आँखें बंद कर रहे हैं ? जब रावण जैसे अत्यचारी संसार-भर में लूट, हत्या, अपहरण और बलात्कार का अभियान चला रहे हों, तो अंगद जैसे युवकों का कर्त्तव्य क्या प्रायोपवेशन करना है? यदि इतने ही उदासीन हैं अंगद न्यायान्याय से, औचित्यानौचित्य से- तो फिर पिता के विरुद्ध सुग्रीव का साथ देने की क्या आवश्यकता थी? क्यों सुग्रीव की रक्षा का प्रयत्न किया? तब ही बालि के हाथों सुग्रीव का वध हो जाने दिया होता जब अपने पिता का ही अत्याचार उन्हें सह नहीं था, तो आज रावण के अत्याचार की उपेक्षा क्यों करने जा रहे हैं।

हनुमान ठीक कहते हैं, सुग्रीव ने सफल होकर लौटने वालों के लिए कोई अवधि निर्धारित नहीं की है। उनके लिए कोई दण्ड प्रतीक्षा नहीं कर रहा। जो वैदेही की खोज में सफल होकर लौटेगा, इच्छा होने पर भी सुगीव उसका वध नहीं कर पाएँगे। उसे सम्मानित करना होगा, उसे यश, मान और पुरस्कार देना होगा। वह व्यक्ति राम और लक्ष्मण का भी प्रिय होगा तो अब अंगद को भय किसका हे ? संपाति ने निश्चित सूचना दी है कि वैदेही लंका में हैं। अंगद लंका जाएँगे तो उन्हें खोज ही निकालेंगे- रावण उन्हें कहीं भी छिपाकर क्यों न रखे। ऐसी निश्चित सफलता भी क्या कभी किसी को पुकारती है ? राम और सुग्रीव ने भी यही कहा था कि दक्षिण दिशा में ही और विशेषकर लंका में ही सीता को छिपाकर रखने की संभावना है, तभी तो सुग्रीव ने हनुमान, तार, जाम्बवान और नील के होते हुए भी अंगद को इस दल का नायक बनाया। वैसी निश्चित सफलता उन्होंने अंगद के हाथ में रख दी थी और अंगद थे कि सुग्रीव के प्रेम और अपने प्रति उनके पक्षपात को नहीं समझ सके। वाह रे, अंगद। तुमने सुग्रीव को अपना शत्रु समझा।

अंगद ने अपने साथियों की ओर देखा, क्या सोचा है, मित्रो ?

इतना सोच लिया है कि अब प्रायोपवेशन नहीं करना होगा। जाम्बवान दृढ़ और स्पष्ट स्वर में बोले, जब सीता का लंका में होना निश्चित है तो हम थोड़ा पौरुष कर, उनका अन्वेषण करने के स्थान पर अपने प्राण क्यों दें। सीता का अन्वेषण, हम सबके प्राणों की सुरक्षा का निश्चित प्रमाण है। हमें वही करना होगा। चलो, उठो। हम दक्षिण दिशा में उस स्थान को ढूँढ़ें जिसके निकट महेन्द्र गिरि है, जिसका संकेत आर्य संपाति कर गए हैं।

पूरे दल में से किसी ने भी जाम्बवान के प्रस्ताव का विरोध नहीं किया। स्वयं जाम्बवान को आश्चर्य हो रहा था कि संपाति के साथ वार्तालाप के पश्चात् सारा-का-सारा दल इतना उत्साही कैसे हो गया था अंगद, जो प्रायोपवेशन कर, अपने प्राण देनेपर तुले हुए थे, इस समय सहर्ष सबसे आगे-आगे चल रहे थे। सागर-तट पर उस स्थान को खोजने में उन्हें तनिक भी कठिनाई नहीं हुई, जिसकी चर्चा संपाति कर गए थे। सामने कुछ दूरी पर महेन्द्र पर्वत था और दूर तक अथाह सागर फैला हुआ था। वह समुद्र कहीं तो तरंगहीन एवं शांत होने के कारण सोया हुआ-सा जान पड़ता था। अन्यत्र, जहाँ छोटी-छोटी लहरें उठ रही थीं, क्रीड़ा करता-सा प्रतीत होता था। कुछ दूरी पर जहाँ उत्ताल तरंगे उठती थीं और जलराशियों के पर्वतों-के-पर्वत उठा-उठाकर एक-दूसरे पर पटक, उन्हें पीसने का प्रयत्न करता हुआ भयंकर दिखाई पड़ता था।

अंगद ने देखा- आधे से अधिक वानरों का उत्साह समुद्र के स्वरूप को देखते ही फेन के समान बैठ गया था और वे सागर पार कर लंका पहुँचने के अभियान के प्रति उत्सुक प्रतीत नहीं हो रहे थे। वे लोग इधर-उधर छिटककर, आकाश-पाताल, सागर अथवा क्षितिज को देखते हुए विभिन्न शिलाओं पर जा बैठे किंतु अंगद का उत्साह इस बार तनिक भी क्षीण नहीं हुआ। उनकी अन्यमनस्कता से अंगद को क्या लेना-देना। सारे दल को लंका जाना नहीं था। संपाति की बात ठीक थी। एक या दो लोगों को ही जाना था। और कोई नहीं जाएगा, तो अंगद तो तैयार हैं ही।

दक्षिण समुद्रके उत्तर तटपर जाकर उन महाबली वानर वीरोंने डेरा डाला। उस महासागरका दर्शन करके सारी वानर-सेनाको विषादमें डूबी हुई देख कपिश्रेष्ठ अङ्गद उन भयातुर वानरोंको आश्वास देते हुए बोले- वीरों। तुम्हें अपने मनको विषादमें नहीं डालना चाहिये; क्योंकि विषादमें बहुत बड़ा दोष है। जैसे क्रोधमें भरा हुआ साँप अपने पास आये हुए बालकको काट खाता है, उसी प्रकार विषाद पुरुषका नाश कर डालता है। जो पराक्रमका अवसर आनेपर विषादग्रस्त हो जाता है, उसके तेजका नाश होता है। उस तेजोदीन पुरुषका पुरुषार्थ नहीं सिद्ध होता है। उस रात्रिके बीत जानेपर बड़े-बड़े वानरोंके साथ मिलकर अङ्गदने पुन: विचार आरम्भ किया।

सज्जनों। तुमलोगोंमें कौन ऐसा महातेजस्वी वीर है जो इस समय समुद्रको लाँघ जायगा और शत्रुदमन सुग्रीवको सत्यप्रतिज्ञ बनायेगा। कौन वीर वानर सौ योजन समुद्रको लाँघ सकेगा ? और कौन इन समस्त यूथपतियोंको महान् भयसे मुक्त कर देगा ? किसके प्रसादसे हमलोग सफलमनोरथ एवं सुखी होकर यहाँसे लौटेंगे और घर-द्वार तथा स्त्री-पुत्रोंका मुँह देख सकेंगे। यदि तुमलोगोंमेंसे कोई वानरवीर समुद्रको लाँघ जानेमें समर्थ हो तो वह शीघ्र ही हमें यहाँ परम पवित्र अभय-दान दे।

तब वानरश्रेष्ठ अङ्गदने पुन: उन सबसे कहा- बलवानोंमें श्रेष्ठ वानरों। तुम सब लोग दृढ़तापूर्वक पराक्रम प्रकट करनेवाले हो। तुम्हारा जन्म कलमरहित उत्तम कुलमें हुआ है। इसके लिये तुम्हारी बारंबार प्रशंसा हो चुकी है। तुमलोगोंमें कभी किसीकी भी गति कहीं नहीं रुकती। इसलिये समुदको लाँघनेमें जिसकी जितनी शक्ति हो, वह उसे बतावे।

अनन्त उत्ताल तरंगायित महोदधि मकर, तिमिङ्गलादिसे परिपूर्ण सम्मुख देखकर वानरोंका साहस समाप्त हो गया था। इस सागरके ऊपर जो सौ योजन कूद सके वह श्रीजनक-नन्दिनीके चरण-दर्शनका सौभाग्य प्राप्त करे।

मैं केवल दस योजन कूद सकता हूँ। वानर यूथपतियोंने परस्पर एक दूसरेकी ओर देखा। उनमें-से प्रमुखोंने अपनी शक्ति स्पष्ट करना प्रारम्भ किया- मैं बीस योजन, मैं तीस, मैं चालीस, मैं पचास, मैं साठ, मैं सत्तर।

मैं अस्सी योजन तक कूद सकता हूँ। अन्तमें ताराके पिता सुषेणने कहा।

रीछराज जाम्बवन्त शिथित स्वरमें बोले- जब भगवान्ने वामनावतार लिया था, तब मैं युवा था। बालिसे तीन पद भूमि-दान लेकर जब वे विराट बने और एकपदसे पृथ्वी तथा दूसरे से द्युलोक उन्होंने नाप लिया, तब मैंने उन विश्वकायकी सात प्रदक्षिणा दौड़ते हुए की थी। किंतु अब मैं वृद्ध हो चुका हूँ। शरीरकी शक्ति प्राय: समाप्त हो गयी है। इतने पर भी मैं अभी नब्बे योजनकी छलाँग लगा सकता हूँ।

सबके नेत्रोंमें प्रशंसाके भाव आये। सृष्टिकर्ताके मानस पुत्र रीछराज वृद्ध होनेपर भी सब यूथपतियोंसे अधिक सशक्त थे। लेकिन इससे तो इस समय सफलता सम्भव नहीं थी।

जहाँ तक समुद्र कूद जानेका प्रश्न है, मैं सौ योजन समुद्र कूदकर लमा पहुँच सकता हूँ। युवराज अङ्गदके स्वरमें भी उत्साह नहीं था- लेकिन केवल वहाँ पहुँचना ही नहीं है। श्रीवैदेही को देखकर लौटना भी है। उनके समीप जाने के प्रयत्नमें रावणके अनुचरों तथा रावणसे संघर्षकी सम्भावना है। यह सब करके मैं सकुशल लौट सकूँगा, इतनी शक्ति मुझमें है इसमें मुझे सन्देह हैं।

उस पार तो पहुँच जाऊँगा यह मेरा दृढ़ निश्चय है। लेकिन इस पार वापस लौटने में मुझे थोड़ा संशय है। क्योंकि जब सागर इस तरह से लाँघूँगा तो जगदम्बा सम्मुख आएँगीं। वे अपना बल देकर मुझको लंकानगरी पहुँचाएँगीं। जब उनकी सुधि लेकर वापस लौटूँगा, तो मेरी पीठ उनकी तरफ हो जाएगी। तब मेरी वह महाशक्ति पूजा उस समय कुछ न कर पाएगी।

गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गन्धमादन, मैन्द, द्विविद, सुषेण और जाम्बवान् इन सबने अपनी-अपनी शक्तिका वर्णन किया।

काकभुशुण्डिजी कहते हैं- हे गरुड़जी। सब किसीने अपना-अपना बल कहा। पर समुद्रके पार जानेमें सभीने सन्देह प्रकट किया।

युवराज अंगद। जाम्बवान अत्यंत स्नेह और सम्मान से बोले, हमें आपके सामर्थ्य और पराक्रम पर पूरा भरोसा है। नायक के रूप में आपका दायित्व-बोध भी श्लाघ्य है। आप जाएँगे तो निश्चय ही कार्य पूर्ण कर, सफलकाम होकर लौटेंगे। किंतु आप हमारे नायक हैं। आप चले गए तो पीछे हम सब असंगठित तृणों के समान परिस्थितियों के वात्याचक्र में उड़ जाएँगे। दल के नेतृत्व के लिए उसे दिशा प्रदान करने के लिए नायक के रूप में आपका यहाँ रहना अत्यंत आवश्यक है। नायक अन्य लोगों को अभियान पर भेजता है, स्वयं अभियान पर नहीं जाता। आपकी सुरक्षा हमारी सुरक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक है; अत: आप स्वयं न जाकर किसी और व्यक्ति को भेजें।

अप्रमेय पराक्रम वानरेन्द्र बालिके पुत्रकी असीम शक्तिमें हमें सन्देह नहीं है। निश्चय तुम सब कार्य करके लौटनेमें समर्थ हो। जाम्बवानने अङ्गदके कन्धे पर कर रखा- किन्तु युवराज। तुम हम सबके अग्रणी हो। हम अपने नायकको दूत बनाकर नहीं भेज सकते।

दूसरा कोई समुद्र पार जानेमें समर्थ नहीं है और मुझे आप जाने नहीं दे सकते। अङ्गदके स्वरमें झुँझलाहट आयी- इसका अर्थ है कि वही आमरण अनशन ही एकमात्र मार्ग हमारे लिए शेष है। जब मृत्युका पथ ही चुनना है, आप अङ्गदको उद्योग-कर लेनेकी अनुमति क्यों नहीं देते। तब जाम्बवन्त बोले- वानरशिरोमणे। जो सबको भेजनेवाला स्वामी है, वह किसी तरह प्रेष्य आज्ञापालक नहीं हो सकता। ये सब लोग तुम्हारे सेवक हैं, तुम इन्हींमेंसे किसीको भेजो।

तुम कलत्र स्त्रीकी भाँति रक्षणीय हो, जैसे नारी पतिके हृदयकी स्वामिनी होती है, उसी प्रकार तुम हमारे स्वामीके पदपर प्रतिष्ठित हो। परंतप। स्वामी सेनाके लिये कलत्र स्त्री के समान संरक्षणीय होता है। यही लोककी मान्यता है।

कार्यके मूलकी रक्षा करनी चाहिये। यही कार्यके तत्त्वको जाननेवाले विद्वानोंकी नीति है; क्योंकि मूलके रहनेपर ही सभी गुण सफल सिद्ध होते हैं। कपिश्रेष्ठ। तुम्हीं हमारे गुरु और गुरुपुत्र हो। तुम्हारा आश्रय लेकर ही हम सब लोग कार्यसाधनमें समर्थ हो सकते हैं।

बुद्धिमान् वानरराज सुग्रीवके आदेशका पालन किये बिना यदि हमलोग किष्किन्धाको लौट चलें तो वहाँ जाकर भी हमें अपने प्राणोंकी रक्षाका कोई उपाय नहीं दिखायी देता। वे हमपर कृपा करने और अत्यन्त कुपित होकर हमें दण्ड देनेमें भी समर्थ हैं। उनकी आज्ञाका उल्लंघन करके जानेपर हमारा विनाश अवश्यम्भावी है।

वीर तुम्हारे इस कार्यमें कोई किंचित् भी त्रुटि नहीं आने पायेगी। अब मैं ऐसे वीरको प्रेरित कर रहा हूँ, जो इस कार्यको सिद्ध कर सकेगा। ऐसा कहकर वानरों और भालुओंके वीर यूथपति जाम्बवानने वानरसेनाके श्रेष्ठ वीर हनुमानको ही प्रेरित किया, जो एकान्तमें जाकर मौजसे बैठे हुए थे। उन्हें किसी बातकी चिन्ता नहीं थी और वे दूरतककी छलाँग मारनेवालोंमें सबसे श्रेष्ठ थे।

हे पवनतनय, अंजनी के लाल, अपनी तन्द्रा को त्यागो। अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ-साथ रामदुलारे जागो। हे कामरूप, शंकरस्वरूप बजरंगी नाम तुम्हारा है। अपने जीवन को याद करो। यह महावीरता का काम तुम्हारा है।

वानरजगत्के वीर। तथा सम्पूर्ण शास्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ हनुमान। तुम एकान्तमें आकर चुपचाप क्यों बैठे हो ? कुछ बोलते क्यों नहीं ?

कश्यपके महाबली पुत्र और समस्त पक्षियोंमें श्रेष्ठ जो विनतानन्दन गरुड़ हैं, उन्हींके समान तुम भी विख्यात शक्तिशाली एवं तीव्रगामी हो। वानरशिरोमणे। तुम्हारा बल, बुद्धि, तेज और धैर्य भी समस्त प्राणियोंमें सबसे बढ़कर है। फिर तुम अपने-आपको ही समुद्र लाँघनेके

लिये क्यों नहीं तैयार करते ?

वीरवर। तुम्हारे प्रादुर्भावकी कथा इस प्रकार है- पुञ्जिकस्थला नामसे विख्यात जो अप्सरा है, वह समस्त अप्सराओंमें अग्रगण्य है। तात। एक समय शापवश वह कपियोनिमें अवतीर्ण हुई। उस समय वह वानरराज महामनस्वी कुञ्जरकी पुत्री इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली थी। इस भूतलपर उसके रूपकी समानता करनेवाली दूसरी कोई स्त्री नहीं थी। वह तीनों लोकोंमें विख्यात थी। उसका नाम अञ्जना था। वह वानरराज केसरीकी पत्नी हुई।

एक दिनकी बात है, रूप और यौवनसे सुशोभित होनेवाली अञ्जना मानवी स्त्रीका शरीर धारण करके वर्षाकालके मेघकी भाँति श्याम कान्तिवाले एक पर्वत-शिखरपर विचर रही थी। उसके अङ्गोंपर रेशमी साड़ी शोभा पाती थी। वह फूलोंके विचित्र आभूषणोंसे विभूषित थी। उस विशाललोचना बालाका सुन्दर वस्त्र तो पीले रंग का था, किंतु उसके किनारेका रंग लाल था। वह पर्वतके शिखरपर खड़ी थी। उसी समय वायु देवताने उसके उस वस्त्रको धीरेसे हर लिया।

उनके सम्पूर्ण अङ्गोंमें कामभावका आवेश हो गया। मन अञ्जनामें ही लग गया। उन्होंने उस अनिन्द्य सुन्दरीको अपनी दोनों विशाल भुजाओंमें भरकर हृदयसे लगा लिया।

अञ्जना उत्तम व्रतका पालन करनेवाली सती नारी थी। अत: उस अवस्थामें पड़कर वह वहीं घबरा उठी और बोली- कौन मेरे इस पातिव्रत्यका नाश करना चाहता है ? अञ्जनाकी बात सुनकर पवनदेवने उत्तर दिया- सुश्रोणि। मैं तुम्हारे एकपत्नी-व्रतका नाश नहीं कर रहा हूँ। अत: तुम्हारे मनसे यह भय दूर हो जाना चाहिये।

यशस्विनि। मैंने अव्यक्तरूपसे तुम्हारा आलिङ्गन करके मानसिक संकल्पके द्वारा तुम्हारे साथ समागम किया है। इससे तुम्हें बल-पराक्रमसे सम्पन्न एवं बुद्धिमान् पुत्र प्राप्त होगा। वह महान् धैर्यवान्, महातेजस्वी, महाबली, महापराक्रमी तथा लाँघने और छलाँग मारनेमें मेरे समान होगा। महाकपे। वायुदेवके ऐसा कहनेपर तुम्हारी माता प्रसन्न हो गयीं। महाबाहो। वानरश्रेष्ठ। फिर उन्होंने तुम्हें एक गुफामें जन्म दिया। बाल्यावस्थामें एक विशाल वनके भीतर एक दिन उदित हुए सूर्यको देखकर तुमने समझा कि यह भी कोई फल है; अत: उसे लेनेके लिये तुम सहसा आकाशमें उछल पड़े। तीन सौ योजन ऊँचे जानेके बाद सूर्यके तेजसे आक्रान्त होनेपर भी तुम्हारे मनमें खेद या चिन्ता नहीं हुई। अन्तरिक्षमें जाकर जब तुरंत ही तुम सूर्यके पास पहुँच गये, तब इन्द्रने कुपित होकर तुम्हारे ऊपर तेजसे प्रकाशित वज्रका प्रहार किया। उस समय उदयगिरिके शिखरपर तुम्हारे हनु (ठोड़ी) का बायाँ भाग वज्रकी चोटसे खण्डित हो गया। तभीसे तुम्हारा नाम हनुमान् पड़ गया। तुमपर प्रहार किया गया है, यह देखकर गन्धवाहक वायुदेवताको बड़ा क्रोध हुआ। उन प्रभञ्जनदेवने तीनों लोकोंमें प्रवाहित होना छोड़ दिया। इससे सम्पूर्ण देवता घबरा गये; क्योंकि वायुके अवरुद्ध हो जानेसे तीनों लोकोंमें खलबली मच गयी थी। उस समय समस्त लोकपाल कुपित हुए वायुदेवको मनाने लगे।

सत्यपराक्रमी तात। पवनदेवके प्रसन्न होनेपर ब्रह्माजीने तुम्हारे लिये यह वर दिया कि तुम समराङ्गणमें किसी भी अस्त्र-शस्त्रके द्वारा मारे नहीं जा सकोगे। प्रभो। वज्रके प्रहारसे भी तुम्हें पीड़ित न देखकर सहस्र नेत्रधारी इन्द्रके मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने तुम्हारे लिये यह उत्तम वर दिया- मृत्यु तुम्हारी इच्छाके अधीन होगी- तुम जब चाहोगे, तभी मर सकोगे, अन्यथा नहीं।

इस प्रकार तुम केसरीके क्षेत्रज पुत्र हो। तुम्हारा पराक्रम शत्रुओंके लिये भयंकर है। तुम वायुदेवके औरस पुत्र हो, इसलिये तेजकी दृष्टिसे भी उन्हींके समान हो। वत्स। तुम पवनके पुत्र हो, अत: छलाँग मारनेमें भी उन्हींके तुल्य हो। हमारी प्राणशक्ति अब चली गयी। इस समय तुम्हीं हमलोगोंमें दूसरे वानरराजकी भाँति चातुर्य एवं पौरुषसे सम्पन्न हो।

समुद्र-मन्थनके समय देवताओंकी आज्ञासे हमने उन औषधियोंका संचय किया था, जिनके द्वारा अमृतको मथकर निकालना था। उन दिनों हममें महान् बल था। अब तो मैं बूढ़ा हो गया हूँ। मेरा पराक्रम घट गया है। इस समय हमलोगोंमें तुम्हीं सब प्रकारके गुणोंसे सम्पन्न हो। अत: पराक्रमी वीर। तुम अपने असीम बलका विस्तार करो। छलाँग मारेनवालोंमें तुम सबसे श्रेष्ठ हो। यह सारी वानरसेना तुम्हारे बल-पराक्रमको देखना चाहती है। सूर्य को तुमने अपना ग्रास बनाया, पर्वतों को तुमने तोड़ा। जिस बल से तुमने ऐसे-ऐसे काम किये वह बल अब कहाँ रख छोड़ा है।

जाम्बवन्त बोले- हनुमान तुम्हारे पराक्रम का कोई पार नहीं है, तुम्हारे प्रति किसे अभिमान नहीं हो। परन्तु सुग्रीव तुम्हारा मित्र है। वह

बहुत दुखी हो गया था ? तब तुमने बालि को क्यों नहीं मारा ? उसे नगर में से निकाल डाला, तो हम उसके साथ थे। तब तुम सहन करते हुए कैसे रह गये ? वह कपि-पति सुग्रीव तब दुखी हो गया था। यह बात बताओ कि तब बालि के साथ तुम्हारी कैसे नहीं चलीं ? वह तुमसे बलवान नहीं था। फिर क्या वह तुमसे नहीं जीता जा सकता था ?

तुमने बाली को क्यों नहीं जीता ? मुझे वह वृत्तान्त बताओ। ऋषपति जाम्बवान के ऐसे वचन सुनकर हनुमान बोले- हे विख्यात ऋक्ष-पति, सुनो। मैं तुम्हारे सन्देह का निवारण करता हूँ। उसके लिए मैं बचपन की बात कहता हूँ। मैं जिस वन में सदा भ्रमण किया करता, वहाँ मुनियों के आश्रम थे। मैं उनकी नित्य अवहेलना करता, क्योंकि मैं कोई भी मर्म नहीं समझ पाता था। मैं मुनियों के बर्तन फोड़ डालता; इसके अतिरिक्त उनके वल्कल के वस्त्र फाड़ देता; उनके आश्रमों को उठाकर ले जाता और फिर समुद्र-तट पर डाल देता। इस प्रकार मैं नित्य बाल-चेष्टा किया करता था, तो वे समस्त ब्राह्मण ऊब गये और वे सब मिलकर एक पर्वत पर आश्रम बनाकर रहने लगे। अनन्तर एक समय रात में मैं उस स्थान पर गया। मैंने उस पर्वत को हाथ पर उठा लिया और समुद्र के पार जाकर छोड़ दिया। सबेरे, जब मुनि उठ गये, तब उन्होंने उस वन को नहीं देखा। चारों ओर समुद्र गरज रहा था। उसे देखकर वे मन में चिन्ता को प्राप्त हो गये। इस कपि ने तो हमें अति सताया है। हम स्वयं क्या उपाय करें ? इसे ब्रह्मा का वरदान प्राप्त है, इसलिए इसे शाप नहीं लगेगा। उन सबमें एक मुख्य मुनि थे। उनका नाम शक्तिऋषि था। सब ब्राह्मणों को ढाढस बँधाते हुए वे ब्रह्मा के धाम लोक चले गये। उस समय उन मुनिवर ने प्रजापति से समस्त दु:ख कहा। कहा कि वह अंजनी-कुमार हमें बहुत दु:ख दे रहा है, वह हमें अपार पीड़ा पहुँचाता है। भगवान विष्णु ने उसे चिरंजीवी बना दिया है, इसलिए वह स्वयं निर्भय हो गया है। उसके अतिरिक्त, तुमने उसे वरदान दिया है, इसलिए उसे किसी का कोई शाप नहीं लग पाता। हे पितामह, हम अब क्या करें ? हम जाकर किस स्थान पर रहें ? रुद्र का अवतार वह कपि हमारे पीछे पड़ा है। तब ब्रह्मा ने कहा- हे शक्तिऋषि जान लो, मैं एक उपाय कहता हूँ। उसे ऐसा शाप दो, जो उसे निश्चय ही वर-स्वरूप जैसा लग जाए। ऐसा सुनकर वे मुनिवर वहाँ आ गये, जिस स्थान पर मैं था। उस समय शक्तिऋषि मुझसे क्रोधपूर्वक बोले। रघुवंश में प्रभु नारायण निश्चय ही धर्म की स्थापना करने के लिए और भूमि के भार का हरण करने के लिए उत्पन्न हो गये हैं। वे अयोध्या नगर के राजा दशरथ के पुत्र श्रीरघुवीर हैं। पिता के वचन का पालन करने के लिए वे रणधीर वन में आएँगे। वे तुम्हारे स्वामी होंगे; वे देवता तुमपर कृपा करेंगे। तुम उनके सेवक बनोगे; तब तुम बल से भरे-पूरे होकर बढ़ जाओगे। हे कपिवर, सुनो मैं तुमसे कहता हूँ। मेरी यह वाणी बात सत्य है। तुमसे रामजी के मिलने तक तुम्हारा बल क्षीण रहेगा और तुम अपने बल को भूल जाओगे। तब तक तुम्हारा बल गुप्त रहेगा। तुम युद्ध में जीत को नहीं प्राप्त हो जाओगे। तब मुनिवर के ऐसे वचन सुनने पर मुझे उनके प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया। उस शाप को मैंने वर माना। मैं मन में बहुत आनन्दित हो गया। मेरी माता ने पूर्वकाल में जो कहा था, तब उससे वह बात मिल गयी। अनन्तर मैं किष्किन्धा में आकर सुग्रीव के पास रह गया। स्वामी से मिलने की आशा में मैं प्रतिदिन बाट जोहता रहा। निश्चय ही उन मुनि के वचन के कारण मैंने बालि को नहीं मार पाया। तुम्हारा यह सन्देह था। उसके निराकरण के लिए मैंने पूर्व कथा का विस्तार कर लिया। अब स्वामी के रूप में रघुवीर मुझसे कृपा और प्रेमपूर्वक मिल गये हैं। अत: मैं सब स्थान पर विजय को प्राप्त करूँगा। उससे मंगल-कुशल हो जाएगा। यह कहते समय मेरा बल राम-कृपा से बढ़ रहा है। अब काल तक को जीतकर वश में कर सकूँगा, तो दूसरे की क्या कही जाए। जिसपर राम कृपा करते हैं, वह बलहीन भी हो तो बलवान हो जाता है। भगवान यदि सहायता करें, तो घास का तिनका तक वज्र को तोड़ सकेगा।

वानरश्रेष्ठ हनुमान्। उठो और इस महासागरको लाँघ जाओ; क्योंकि तुम्हारी गति सभी प्राणियोंसे बढ़कर है। इस प्रकार वानरों और भालुओंमें श्रेष्ठ जाम्बवानकी प्रेरणा पाकर कपिवर पवनकुमार हनुमान्‌को अपने महान् वेगपर विश्वास हो आया। उन्होंने वानर वीरोंकी उस सेनाका हर्ष बढ़ाते हुए उस समय अपना विराट्‌रूप प्रकट किया। हनुमान अपने स्थान से उठकर आए और जाम्बवान के निकट खड़े हो गए, आप आदेश दें, तात जाम्बवान। मैं योग्य होऊँ, न होऊँ- प्रयत्न अवश्य करूँगा।

तुम न केवल सागर-लांघने में समर्थ हो। जाम्बवान का स्वर पूर्णत: प्रशंसात्मक था, तुम लंका में पहुँचकर अपनी रक्षा, संपाति के अन्वेषण तथा अकस्मात् उत्पन्न किसी भी विपत्ति का सामना करने तथा सफलतापूर्वक उसमें से बच निकलने में भी समर्थ हो। तुम्हें ही लंका जाना चाहिए।

मैं प्रस्तुत हूँ, ऋक्षराज। हनुमान ने सहज रूप में स्वीकार कर लिया।

तो तुम्हीं जाओ, हनुमान। अंगद ने हनुमान को मुग्ध दृष्टि से देखा, तुम्हीं हमारे रक्षा-कवच बनो। सीता का अन्वेषण कर सफलकाम हो लौटो। जब तक तुम लौटकर यहाँ नहीं आओगे, हम पंजों के बल खड़े होकर तुम्हारी बाट देखेंगे। हनुमान ने अपनी गदा अंगद के सम्मुख भूमि पर रख दी। अपने वस्त्र कसे और दल के सभी सदस्यों से विदा लेकर समुद्र की ओर मुड़ गए। वे पुन: मुड़े और अंगद उन्हें देखते ही रह गए- किस सहजता से जा रहे हैं हनुमान, जैसे किसी दैनिक कार्य के लिए जा रहे हों। इतना महत्त्वपूर्ण तथा जोखिम का काम हैं; और इस व्यक्ति के चेहरे पर न तनिक-सी उत्तेजना है, न उद्विग्नता। जाने किस मिट्टी का बना है यह हनुमान।

अपनी प्रशंसा सुनकर महाबली हनुमान्ने शरीरको और भी बढ़ाना आरम्भ किया। साथ ही हर्षके साथ अपनी पूँछको बारंबार घुमाकर अपने महान् बलका स्मरण किया। बड़े-बूढ़े वानरशिरोमणियोंके मुखसे अपनी प्रशंसा सुनते और तेजसे परिपूर्ण होते हुए हनुमानजीका रूप उस समय बड़ा ही उत्तम प्रतीत होता था। जैसे पर्वतकी विस्तृत कन्दरामें सिंह अँगड़ाई लेता है, उसी प्रकार वायुदेवताके औरस पुत्रने उस समय अपने शरीरको अँगड़ाई ले-लेकर बढ़ाया। आकाशमें विचरनेवाले वायुदेवता बड़े बलवान है। उनकी शक्तिकी कोई सीमा नहीं है। वे अग्निदेवके सखा है और अपने वेगसे बड़े-बड़े पर्वत शिखरोंको भी तोड़ डालते हैं।

हनुमान बोले- अपनी भुजाओंके वेगसे समुद्रको विक्षुब्ध करके उसके जलसे मैं पर्वत, नदी और जलाशयोंसहित सम्पूर्ण जगत्को आप्लावित कर सकता हूँ। वरुणका निवासस्थान यह महासागर मेरी जाघों और पिंडलियोंके वेगसे विक्षुब्ध हो उठेगा और इसके भीतर रहनेवाले बड़े-बड़े ग्राह ऊपर आ जायँगे।

समस्त पक्षी जिनकी सेवा करते हैं, वे सर्पभोजी विनतानन्दन गरुड़ आकाशमें उड़ते हों तो भी मैं हजारों बार उनके चारों ओर घूम सकता हूँ। श्रेष्ठ वानरो। उदयाचलसे चलकर अपने तेजसे प्रज्वलित होते हुए सूर्यदेवको मैं अस्त होनेसे पहले ही छू सकता हूँ और वहाँसे पृथ्वीतक आकर यहाँ पैर रक्खे बिना ही पुन: उनके पासतक बड़े भयंकर वेगसे जा सकता हूँ।

आकाशचारी समस्त ग्रह-नक्षत्र आदिको लाँघकर आगे बढ़ जानेका उत्साह रखता हूँ। मैं चाहूँ तो समुद्रोंको सोख लूँगा, पृथ्वीको विदीर्ण कर दूँगा और कूद कूदकर पर्वतोंको चूर-चूर कर डालूँगा; क्योंकि मैं दूरतककी छलाँगें मारनेवाला वानर हूँ। महान वेगसे महासागरको फाँदता हुआ मैं अवश्य उसके पार पहुँच जाऊँगा।

कपिवरो। तुम देखोगे, मैं महागिरि मेरुके समान विशाल शरीर धारण करके स्वर्गको ढकता और आकाशको निगलता हुआ-सा आगे बढ़ूँगा, बादलोंको छिन्न-भिन्न कर डालूँगा, पर्वतोंको हिला दूँगा और एकचित्त हो छलाँग मारकर आगे बढ़नेपर समुद्रको भी सुखा दूँगा।

विनतानन्दन गरुड़में, मुझमें अथवा वायु देवतामें ही समुद्रको लाँघ जानेकी शक्ति है। पक्षिराज गरुड अथवा महाबली वायु देवताके सिवा और किसी प्राणीको मैं ऐसा नहीं देखता, जो यहाँसे छलाँग मारनेपर मेरे साथ जा सके।

मेघसे उत्पन्न हुई विद्युतकी भाँति मैं पलक मारते-मारते सहसा निराधार आकाशमें उड़ जाऊँगा।

समुद्रको लाँघते समय मेरा वही रूप प्रकट होगा, जो तीनों पगोंको बढ़ाते समय वामनरूपधारी भगवान् विष्णुका हुआ था।

वानरो ! मैं बुद्धिसे जैसा देखता या सोचता हूँ, मेरे मनकी चेष्टा भी उसके अनुरूप ही होती है। मुझे निश्चय जान पड़ता है कि मैं विदेहकुमारीका दर्शन करूँगा, अत: अब तुमलोग खुशियाँ मनाओ। मैं वेगमें वायुदेवता तथा गरुडके समान हूँ। मेरा तो ऐसा विश्वास है- कि इस समय मैं दस हजार योजनतक जा सकता हूँ। वज्रधारी इन्द्र अथवा स्वयम्भू ब्रह्माजीके हाथसे भी मैं बलपूर्वक अमृत छीनकर सहसा यहाँ ला सकता हूँ। समूची लंका को भी भूमिसे उखाड़कर हाथपर उठाये चल सकता हूँ ऐसा मेरा विश्वास है।

तब जाम्बवन्तजी बोले- ऋषियोंके प्रसाद, वृद्ध वानरोंकी अनुमति तथा गुरुजनोंकी कृपासे तुम इस महासागरके पार हो जाओ। जबतक तुम लौटकर यहाँ आओगे, तबतक हम तुम्हारी प्रतीक्षामें एक पैरसे खड़े रहेंगे; क्योंकि हम सब वानरोंका जीवन तुम्हारे ही अधीन है। तदनन्तर कपिश्रेष्ठ हनुमानने उन वनवासी वानरोंसे कहा- जब मैं यहाँसे छलाँग मारूँगा, उस समय संसारमें कोई भी मेरे वेगको धारण नहीं कर सकेगा।

शिलाओंके समूहसे शोभा पानेवाले केवल इस महेन्द्रपर्वतके ये शिखर ही ऊँचे-ऊँचे और स्थिर है, जिनपर नाना प्रकारके वृक्ष फैले हुए

हैं तथा गेरिक आदि धातुओंके समुदाय शोभा दे रहे हैं। इन महेन्द्र-शिखरोंपर ही वेगपूर्वक पैर रखकर मैं यहाँसे छलाँग मारूँगा।

यहाँसे सौ योजनके लिये छलाँग मारते समय महेन्द्रपर्वतके ये महान शिखर ही मेरे वेगको धारण कर सकेंगे। यों कहकर वायुके समान महापराक्रमी शत्रुमर्दन पवनकुमार हनुमानजी पर्वतोंमें श्रेष्ठ महेन्द्रपर चढ़ गये।

महेन्द्र पर्वतके वनोंमें सिंह और बाघ भी निवास करते थे, मतवाले गजराज विचरते थे, मदमत्त पक्षियोंके समूह सदा कलरव किया करते थे तथा जलके स्रोतों और झरनोंसे वह पर्वत व्याप्त दिखायी देता था। बड़े-बड़े शिखरोंसे ऊँचे प्रतीत होनेवाले महेन्द्र पर्वतपर आरूढ़ हो इन्द्रतुल्य पराक्रमी महाबली कपिश्रेष्ठ हनुमान् वहाँ इधर-उधर टहलने लगे।

महाकाय ! हनुमानजीके दोनों पैरोंसे दबा हुआ वह महान् पर्वत सिंहसे आक्रान्त हुए महान् मदमत्त गजराजकी भाँति चीत्कार-सा करने लगा वहाँ रहनेवाले प्राणियोंका शब्द ही मानो उसका आर्त्त चीत्कार था।

मधुपानके संसर्गसे उद्धत चित्तवाले अनेकानेक गन्धर्वोंके जोड़े, विद्याधरोंके समुदाय और उड़ते हुए पक्षी भी उस पर्वतके विशाल शिखरोंको छोड़कर जाने लगे। बड़े-बड़े सर्प बिलोंमें छिप गये तथा उस पर्वतके शिखरोंसे बड़ी-बड़ी शिलाएँ टूट-टूटकर गिरने लगीं। इस प्रकार वह महान् पर्वत बड़ी दुरवस्थामें पड़ गया।

बिलोंसे अपने आधे शरीरको बाहर निकालकर लंबी साँस खींचते हुए सर्पोंसे उपलक्षित होनेवाला वह महान् पर्वत उस समय अनेकानेक पताकाओंसे अलंकृत-सा प्रतीत होता था।

भयसे घबराये हुए ऋषि-मुनि भी उस पर्वतको छोड़ने लगे। जैसे विशाल दुर्गम वनमें अपने साथियोंसे बिछुड़ा हुआ एक राही भारी विपत्तिमें फँस जाता है, यही दशा उस महान् पर्वत महेन्द्रकी हो रही थी।

शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले वानरसेनाके श्रेष्ठ वीर वेगशाली महामनस्वी महानुभाव हनुमानजीका मन वेगपूर्वक छलाँग मारनेकी योजनामें लगा हुआ था। उन्होंने चित्तको एकाग्र करके मन-ही-मन लमाका स्मरण किया।

इति किष्किन्धाकाण्ड समाप्त

राम नाम सो ही जानिये, जो रमता सकल जहान। घट घट में जो रम रहा, उसे राम पहचान॥

राम नाम की लूट है, जो लूट सके, तो लूट। अन्त काल पछतायेगा, प्राण जायेंगे छूट॥

राम नाम रटते रहो, जब लगि घट में प्रान। कबहुँ तो दीनदयाल के, भनक पडेगी कान॥

रामकथा खण्ड-२
सुन्दर काण्ड

प्रेम बलिदान माँगता है।

* विषय-सूची *

१)	हनुमान की महासागर पर उड़ान	१४३
२)	हनुमानका लमापुरी में प्रवेश	१४८
३)	हनुमानद्वारा लंका में सीता की खोज	१५३
४)	अशोक वाटिका में सीता	१७२
५)	अशोक वाटिका विध्वंस	२११
६)	हनुमान-रावण सम्वाद	२२४
७)	लंका-दहन	२३४
८)	हनुमान का सीतासे मिलकर श्रीरामके पास लौटना	२४२
९)	वानर सेनाका लमाके लिये प्रयाण	२५५
१०)	दशग्रीव की राजसभा में मन्त्रणा	२६२
११)	विभीषण की रामके पास शरणागति	२८८
१२)	सागर पर राम का रोष	३०२
१३)	रामेश्वरम् से लंका तक सेतुबंध निर्माण	३०८
१४)	रामेश्वरम् में शिवलिंग स्थापना	३१२

जिसके जीवन में मर्यादा नहीं, संयम नहीं वह मनुष्य कहलाने योग्य नहीं।

सुन्दर काण्ड

१) हनुमान की महासागर पर उड़ान- हनुमानजीने सूर्य, इन्द्र, पवन, ब्रह्मा और भूतों देवोनिविशेषों को भी हाथ जोड़कर उस पार जानेका विचार किया। फिर पूर्वाभिमुख होकर अपने पिता पवनदेवको प्रणाम किया। तत्पश्चात् कार्यकुशल हनुमान्‌जी दक्षिण दिशामें जानेके लिये अपने शरीरको बढ़ाने लगे।

समुद्रको लाँघनेकी इच्छासे उन्होंने अपने शरीरको बेहद बढ़ा लिया और अपनी दोनों भुजाओं तथा चरणोंसे उस महेन्द्रगिरी पर्वतको दबाया। महापराक्रमी हनुमान्‌जीके द्वारा दबाया जाता हुआ महेन्द्रपर्वत जलके स्त्रोत बहाने लगा, मानो कोई मदमत्त गजराज अपने कुम्भस्थलसे मदकी धारा बहा रहा हो। हनुमान्‌जीके उस पर्वत-पीड़नसे पीड़ित होकर वहाँके समस्त जीव गुफाओंमें घुस गये और बुरी तरहसे चिल्लाने लगे। उस समय वहाँ रहनेवाले तपस्वी और विद्याधरोंने समझा कि इस पर्वतको भूतलोग तोड़ रहे हैं, इससे भयभीत होकर वे अपनी स्त्रियोंके साथ वहाँसे ऊपर उठकर अन्तरिक्षमें चले गये।

विद्याधर और महर्षि अपनी महाविद्या आकाशमें निराधार खड़े होनेकी शक्ति का परिचय देते हुए अन्तरिक्षमें एक साथ खड़े हो गये और उस पर्वतकी ओर देखने लगे। उस समय हनुमानजी अग्निके समान जान पड़ते थे। उन्होंने अपने शरीरको हिलाया और रोएँ झाड़े तथा महान् मेघके समान बड़े जोर-जोरसे गर्जना की।

हनुमानजी अब ऊपरको उछलना ही चाहते थे। उन्होंने क्रमश: गोलाकार मुड़ी तथा रोमावलियोंसे भरी हुई अपनी पूँछको उसी प्रकार आकाशमें फेंका, जैसे पक्षीराज गरुड़ सर्पको फेंकते हैं। उन्होंने अपनी विशाल परिघके समान भुजाओंको पर्वतपर जमाया। फिर ऊपरके सब अङ्गोंको इस तरह सिकोड़ लिया कि वे कटिकी सीमामें ही आ गये; साथ ही उन्होंने दोनों पैरोंको भी समेट लिया। तत्पश्चात् तेजस्वी और पराक्रमी हनुमानजीने अपनी दोनों भुजाओं और गर्दनको भी सिकोड़ लिया। इस समय उनमें तेज, बल और पराक्रम सभीका आवेश हुआ। उन्होंने अपने लंबे मार्गपर दृष्टि दौड़ानेके लिये नेत्रोंको ऊपर उठाया और आकाशकी ओर देखते हुए प्राणोंको हृदयमें रोका। यदि लमामें जनकनन्दिनी सीताको नहीं देखूँगा तो इसी वेगसे मैं स्वर्गलोकमें चला जाऊँगा। इस प्रकार परिश्रम करनेपर यदि मुझे स्वर्गमें भी सीताका दर्शन नहीं होगा तो राक्षसराज रावणको बाँधकर लाऊँगा। सर्वथा कृतकृत्य होकर मैं सीताके साथ लौटूँगा अथवा रावणसहित लमापुरीको ही उखाड़कर लाऊँगा। ऐसा कहकर वेगशाली वानरप्रवर श्रीहनुमान्‌जीने विघ्न-बाधाओंका कोई विचार न करके बड़े वेगसे ऊपरकी ओर छलाँग मारी।

इस प्रकार बलवान धीर महावीर वायु-पुत्र हनुमान ने उड़ान भरने के लिए पूँछ को झटका दिया और असीम गर्जना की। जब उसने भुभुकार ध्वनि की, तब समस्त भू-मण्डल मारे डर के काँप उठा। उस समय धरती काँप उठी और समुद्र का जल जोर से हिलकोरे लेने लगा। उस प्रकार सातों पाताल कम्पायमान हो उठे, आकाश प्रतिध्वनित हो गया। दिग्गज चलायमान हुए; शेष, मेरु और मन्दर पर्वत काँप उठे। जो भुभुकार ध्वनि ब्रह्माण्ड में भरी-पूरी व्याप्त हो गयी, उसे ऋष्यमूक पर्वत पर जगत् के आधार श्रीराम ने सुना। उस समय रघुपति ने सुग्रीव और लक्ष्मण से कहा- भाइयो, सागर के पार कूद जाने के लिए हनुमान तत्पर हो गया है। उस प्रकार उस भयंकर घोर भुभुकार ध्वनि ने दसों दिशाओं को व्याप्त किया। तो शिवजी की समाधि टूट गयी; ब्रह्मलोक में कोलाहल मच गया।

उस समय उन वानरशिरोमणिने अपनेको साक्षात् गरुड़के समान ही समझा। जिस समय वे कूदे, उस समय उनके वेगसे आकृष्ट हो पर्वतपर उगे हुए सब वृक्ष उखड़ गये और अपनी सारी डालियोंको समेटकर उनके साथ ही सब ओरसे वेगपूर्वक उड़ चले। आकाशमें फैलायी गयी उनकी दोनों भुजाएँ ऐसी दिखायी देती थीं, मानो किसी पर्वतके शिखरसे पाँच फनवाले दो सर्प निकले हुए हों।

बादल की तरह गर्जन करते हनुमान ने लंकापुरी को प्रस्थान किया। मानो सागर में ज्वार भाटा उठा हो, शैलों से श्रृंग से ज्वालायें प्रकट होने लगी, सागर में कच्छप वराह भौचक्के रह गये, पता नहीं क्या-क्या होनेवाला है। जिस पर्वत पर मारूती के पाँव पड़ जाए वह नीचे धँसकता जाता था। पवन के समान मारुतनन्दन इस तरह आगे बढ़ता जा रहा था।

वायुके मार्गका अनुसरण करनेवाले हनुमानजीके बिजलीकी-सी चमक पैदा करनेवाले दोनों नेत्र ऐसे प्रकाशित हो रहे थे, मानो पर्वतपर दो स्थानोंमें लगे हुए दावानल दहक रहे हों। लाल-लाल नासिकाके कारण उनका सारा मुँह लाली लिये हुए था, अत: वह

संध्याकालसे संयुक्त सूर्यमण्डलके समान सुशोभित होता था। आकाशमें तैरते हुए पवनपुत्र हनुमान्‌की उठी हुई टेढ़ी पूँछ इन्द्रकी ऊँची ध्वजाके समान जान पड़ती थी। जैसे ऊपरकी दिशासे प्रकट हुई पुच्छयुक्त उल्का आकाशमें जाती देखी जाती है, उसी प्रकार अपनी पूँछके कारण कपिश्रेष्ठ हनुमानजी भी दिखायी देते थे।

चलते हुए सूर्यके समान विशालकाय हनुमानजी अपनी पूँछके कारण ऐसी शोभा पा रहे थे, मानो कोई बड़ा गजराज अपनी कमरमें बँधी हुई रस्सीसे सुशोभित हो रहा हो। वे समुद्रके जिस-जिस भागमें जाते थे, वहाँ-वहाँ उनके अंगके वेगसे उत्ताल तरङ्गें उठने लगती थीं। अत: वह भाग उन्मत्त विक्षुब्ध सा दिखायी देता था। महान् वेगशाली महाकपि हनुमान् पर्वतोंके समान ऊँची महासागरकी तरङ्गमालाओंको अपनी छातीसे चूर-चूर करते हुए आगे बढ़ रहे थे।

वे कपिकेसरी अपने प्रचण्ड वेगसे समुद्रमें बहुत-सी ऊँची-ऊँची तरङ्गोंको आकर्षित करते हुए इस प्रकार उड़े जा रहे थे, मानो पृथ्वी और आकाश दोनोंको विक्षुब्ध कर रहे हैं। जल हट जानेके कारण समुद्रके भीतर रहनेवाले मगर, नाकें, मछलियाँ और कछुए साफ-साफ दिखायी देते थे। जैसे वस्त्र खींच लेनेपर देहधारियोंके शरीर नंगे दीखने लगते हैं। वे परम तेजस्वी महाकाय महाकपि हनुमान् आलम्बनहीन आकाशमें पंखधारी पर्वतके समान जान पड़ते थे। वे बारंबार बादलोंके समूहमें घुस जाते और बाहर निकल आते थे। इस तरह छिपते और प्रकाशित होते हुए चन्द्रमाके समान दृष्टिगोचर होते थे।

वे श्रीरामचन्द्रका कार्य सिद्ध करनेके लिये जा रहे थे, अत: उस समय वेगसे जाते हुए वानरराज हनुमान्‌को सूर्यदेवने ताप नहीं पहुँचाया और वायुदेवने भी उनकी सेवा की। आकाशमार्गसे यात्रा करते हुए वानरवीर हनुमान्‌की ऋषि-मुनि स्तुति करने लगे तथा देवता और गन्धर्व उनकी प्रशंसाके गीत गाने लगे। जिस समय कपिकेसरी हनुमान्‌जी उछलकर समुद्र पार कर रहे थे, उस समय इक्ष्वाकुकुलका सम्मान करनेकी इच्छासे समुद्रने विचार किया। यदि मैं वानरराज हनुमान्‌जीकी सहायता नहीं करूँगा तो बोलनेकी इच्छावाले सभी लोगोंकी दृष्टिमें मैं सर्वथा निन्दनीय हो जाऊँगा। मुझे ऐसा कोई उपाय करना चाहिये, जिससे वानरवीर यहाँ कुछ विश्राम कर लें। मेरे आश्रयमें विश्राम कर लेनेपर मेरे शेष भागको ये सुगमतासे पार कर लेंगे। यह शुभ विचार करके समुद्रने अपने जलमें छिपे हुए सुवर्णमय गिरिश्रेष्ठ मैनाकसे कहा- शैलप्रवर। महामना देवराज इन्द्रने तुम्हें यहाँ पातालवासी असुरसमूहोंके निकलनेके मार्गको रोकनेके लिये परिघरूपसे स्थापित किया है। शैल। ऊपर-नीचे और अगल-बगलमें सब ओर बढ़नेकी तुममें शक्ति है। गिरिश्रेष्ठ। इसलिये मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि तुम ऊपरकी ओर उठो। देखो, ये पराक्रमी कपिकेसरी हनुमान् तुम्हारे ऊपर होकर जा रहे हैं। ये बड़ा भयंकर कर्म करनेवाले हैं, इस समय श्रीरामका कार्य सिद्ध करनेके लिये इन्होंने आकाशमें छलाँग मारी है। अत: तुम हमारी सहायता करो। जिससे हमारे कर्तव्य कर्मका हनुमानजीके सत्काररूपी कार्यका अवसर बीत न जाय। यदि कर्तव्यका पालन नहीं किया जाय तो वह सत्पुरुषोंके क्रोधको जगा देता है। इसलिये तुम पानीसे ऊपर उठो, जिससे ये छलाँग मारनेवालोंमें श्रेष्ठ कपिवर हनुमान् तुम्हारे ऊपर कुछ कालतक ठहरें- विश्राम करें। वे हमारे पूजनीय अतिथि भी हैं।

देवताओं और गन्धर्वोंद्वारा सेवित तथा सुवर्णमय विशाल शिखरवाले मैनाक। तुम्हारे ऊपर विश्राम करनेके पश्चात् हनुमानजी शेष मार्गको सुखपूर्वक तय कर लेंगे। ककुत्स्थवंशी श्रीरामकी दयालुता, मिथिलेशकुमारी सीताका परदेशमें रहनेके लिये विवश होना तथा वानरराज हनुमान्‌का परिश्रम देखकर तुम्हें अवश्य ऊपर उठना चाहिये।

यह सुनकर बड़े-बड़े वृक्षों और लताओंसे आवृत सुवर्णमय मैनाक पर्वत तुरंत ही क्षार समुद्रके जलसे ऊपरको उठ गया। उन परम कान्तिमान् और तेजस्वी सुवर्णमय शिखरोंसे वह गिरिश्रेष्ठ मैनाक सैकड़ों सूर्योंके समान देदीप्यमान हो रहा था।

तब आकाशमें स्थित हुए उस पर्वतने आकाशगत वीर वानर हनुमान्‌जीसे प्रसन्नचित होकर कहा। वह मनुष्यरूप धारण करके अपने ही शिखरपर स्थित हो इस प्रकार बोला- वानरशिरोमणे। आपने यह दुष्कर कर्म किया है। अब उतरकर मेरे इन शिखरोंपर सुखपूर्वक विश्राम कर लीजिये, फिर आगेकी यात्रा कीजियेगा।

श्रीरघुनाथके पूर्वजोंने समुद्रकी वृद्धि की थी, इस समय आप उनका हित करनेमें लगे हैं; अत: समुद्र आपका सत्कार करना चाहता है।

किसीने उपकार किया हो तो बदलेमें उसका भी उपकार किया जाय- यह सनातन धर्म है। इस दृष्टिसे प्रत्युपकार करनेकी इच्छावाला यह सागर आपसे सम्मान पानेके योग्य है आप इसका सत्कार ग्रहण करें। आपके सत्कारके लिये समुद्रने बड़े आदरसे मुझे नियुक्त किया है और कहा है- इन कपिवर हनुमानने सौ योजन दूर जानेके लिये आकाशमें छलाँग मारी है, अत: कुछ देर तक तुम्हारे शिखरोंपर ये

विश्राम कर लें, फिर शेष भागका लङ्घन करेंगे।

धर्मकी जिज्ञासा रखनेवाले विज्ञ पुरुषके लिये एक साधारण अतिथि भी निश्चय ही पूजाके योग्य माना गया है। फिर आप-जैसे असाधारण शौर्यशाली पुरुष कितने सम्मानके योग्य हैं, इस विषयमें तो कहना क्या है ?

कपिश्रेष्ठ। आप देवशिरोमणि महात्मा वायुके पुत्र हैं और वेगमें भी उन्हींके समान है।

तात ! पूर्वकालके सत्ययुगकी बात है। उन दिनों पर्वतोंके भी पंख होते थे। वे भी गरुड़के समान वेगशाली होकर सम्पूर्ण दिशाओंमें उड़ते-फिरते थे। उनके इस तरह वेगपूर्वक उड़ने और आने-जानेपर देवता, ऋषि और समस्त प्राणियोंको उनके गिरनेकी आशमासे बड़ा भय होने लगा। इससे सहस्त्र नेत्रोंवाले देवराज इन्द्र कुपित हो उठे और उन्होंने अपने वज्रसे लाखों पर्वतोंके पंख काट डाले।

उस समय कुपित हुए देवराज इन्द्र वज्र उठाये मेरी ओर भी आये, किंतु महात्मा वायुने सहसा मुझे इस समुद्रमें गिरा दिया।

वानरश्रेष्ठ ! इस क्षार समुद्रमें गिराकर आपके पिताने मेरे पंखोंकी रक्षा कर ली और मैं अपने सम्पूर्ण अंशसे सुरक्षित बच गया। पवननन्दन! कपिश्रेष्ठ ! इसीलिये मैं आपका आदर करता हूँ। आप मेरे माननीय हैं। आपके साथ मेरा यह सम्बन्ध महान् गुणोंसे युक्त है।

महामते ! इस प्रकर चिरकालके बाद जो यह प्रत्युपकाररूप कार्य आपके पिताके उपकारका बदला चुकानेका अवसर प्राप्त हुआ है, इसमें आप प्रसन्नचित्त होकर मेरी और समुद्रकी भी प्रीतिका सम्पादन करें हमारा आतिथ्य ग्रहण करके हमें संतुष्ट करें।

मैनाकके ऐसा कहनेपर कपिश्रेष्ठ हनुमानजीने उस उत्तम पर्वतसे कहा- मैनाक। मुझे भी आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई है। मेरा आतिथ्य हो गया। अब आप अपने मनसे यह दु:ख अथवा चिन्ता निकाल दीजिये कि इन्होंने मेरी पूजा ग्रहण नहीं की।

मेरे कार्यका समय मुझे बहुत जल्दी करनेके लिये प्रेरित कर रहा है। यह दिन भी बीता जा रहा है। मैंने वानरोंके समीप यह प्रतिज्ञा कर ली है कि मैं यहां बीचमें कहीं नहीं ठहर सकता। ऐसा कहकर महाबली वानरशिरोमणि हनुमान्ने हँसते हुए से वहाँ मैनाकका अपने हाथसे स्पर्श किया और आकाशमें ऊपर उठकर चलने लगे।

जाम्बवन्त के निर्देशानुसार हनुमान सब वानरों को प्रणाम करके प्रस्थान करते हैं। महेन्द्र पर्वत से हनुमान सुमात्रा द्वीप पर स्थित मैनाक पर्वत का स्पर्श करके आगे बढ़ते हैं।

हनुमानजीका यह दूसरा अत्यन्त दुष्कर कर्म देखकर सम्पूर्ण देवता, सिद्ध और महर्षिगण उनकी प्रशंसा करने लगे। वहाँ आकाशमें ठहरे हुए देवता तथा सहस्त्र नेत्रधारी इन्द्र उस सुन्दर मध्य भागवाले सुवर्णम मैनाक पर्वतके उस कार्यसे बहुत प्रसन्न हुए।

इन्द्रने कहा- मैनाक। अब तुम्हें मेरे वज्रसे कभी भय नहीं होगा। हनुमानके आगे बढ़ते ही गगनमें ऐरावतपर बैठे इन्द्र प्रकट हुए- तुमने श्रीरामके दूतके सत्कारका प्रयत्न किया है। उन अखिलेशके सेवककी सेवाका प्रयत्न भी अपने आपमें महान है। इसका पुरस्कार तो वही दे सकते हैं। मुझे तो अबसे अपना मित्र मानो। तुम श्रीरामके दासानुदास हो गये। इन्द्र अब तुम्हारा अपराध करनेका साहस नहीं कर सकता। इस प्रकार इन्द्रका दिया हुआ वर पाकर मैनाक उस समय जलमें स्थित हो गया और हनुमान्जी समुद्रके उस प्रदेशको उसी मुहूर्तमें लाँघ गये। तब देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षियोंने सूर्यतुल्य तेजस्विनी नागमाता सुरसासे कहा- ये पवननन्दन श्रीमान् हनुमान्जी समुद्रके ऊपर होकर जा रहे हैं। तुम दो घड़ीके लिये इनके मार्गमें विघ्न डाल दो।

तुम पर्वतके समान अत्यन्त भयंकर राक्षसीका रूप धारण करो। उसमें विकराल दाढ़ें, पीने नेत्र और आकाशको स्पर्श करनेवाला विकट मुँह बनाओ। हमलोग पुन: हनुमान्जीके बल और पराक्रमकी परीक्षा लेना चाहते हैं। या तो किसी उपायसे ये तुम्हें जीत लेंगे अथवा विषादमें पड़ जायँगे इससे इनके बलाबलका ज्ञान हो जायगा।

देवताओंके सत्कारपूर्वक इस प्रकार कहनेपर देवी सुरसाने समुद्रके बीचमें राक्षसीका रूप धारण किया। उसका वह रूप बड़ा ही विकट, बेड़ौल और सबके लिये भयावना था। वह समुद्रके पार जाते हुए हनुमान्जीको घेरकर उनसे इस प्रकार बोली- कपिश्रेष्ठ ! देवेश्वरोंने तुम्हें मेरा भक्ष्य बताकर मुझे अर्पित कर दिया है, अत: मैं तुम्हें खाऊँगी। तुम मेरे इस मुँहमें चले आओ।

सुरसाके ऐसा कहनेपर हनुमान्जीने प्रसन्नमुख होकर कहा- देवि ! दशरथनन्दन श्रीराम अपने भाई लक्ष्मण और धर्मपत्नी सीताके साथ दण्डकारण्यमें आये थे। वहाँ परहित-साधनमें लगे हुए श्रीरामका राक्षसोंके साथ वैर बँध गया। अत: रावणने उनकी यशस्विनी भार्या सीताको हर लिया। मैं श्रीरामकी आज्ञासे उनका दूत बनकर सीताके पास जा रहा हूँ। तुम भी श्रीरामके राज्यमें निवास करती हो। अत: तुम्हें उनकी सहायता करनी चाहिये। अथवा यदि तुम मुझे खाना ही चाहती हो तो मैं सीताका दर्शन करके अनायास ही महान् कर्म

करनेवाले श्रीरामसे जब मिल लूँगा, तब तुम्हारे मुखमें स्वत: आ जाऊँगा- यह तुमसे सच्ची प्रतिज्ञा करके कहता हूँ।

देवि ! दशग्रीवने आपकी सन्तानोंको कम नहीं सताया है। उसने नागलोकमें अनेक नागोंका वध किया। नागकन्याओंको लमामें बन्दी बना रखा है। हनुमानजीने फिर प्रयत्न किया- दशग्रीवके दलनमें श्रीराम प्रवृत्त तब होंगे जब मैं उन्हें लौटकर सीताका समाचार दूँगा। अत: मुझपर दया करें।

हनुमान्‌जीके ऐसा कहनेपर इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली नागमाता सुरसा बोली- मुझे यह वर मिला है कि कोई भी मुझे लाँघकर आगे नहीं जा सकता। वानरश्रेष्ठ। आज मेरे मुखमें प्रवेश करके ही तुम्हें आगे जाना चाहिये। पूर्वकालमें विधाताने मुझे ऐसा ही वर दिया था। ऐसा कहकर सुरसा तुरंत अपना विशाल मुँह फैलाकर हनुमानके सामने खड़ी हो गयी।

जब आपको मेरी बात माननी ही नहीं है तो मुझे खा लीजिये। हनुमानजीके स्वरमें तनिक भी भय या दैन्य नहीं आया।

यह भी कोई बात है कि कोई स्वयं अपने भक्षकके मुखमें प्रवेश करे। जिसे भक्षण करना है, उसे भक्ष्यको मुखमें लेना चाहिये। अभी तक सुरसाने जितना मुख फैला रखा था, हनुमानका आकार उससे बड़ा था। अब सुरसाने अपना मुख एक योजनका फैलाया। अविलम्ब हनुमान दो योजन विशाल हो गये। सुरसाने अपने मुखका विस्तार चार योजन किया। हनुमान आठ योजनके बन गये। सुरसाका मुख सोलह योजन फैला तो हनुमानका आकार बत्तीस योजनका बन गया। झलाकर सुरसाने अपने मुखका विस्तार सौ योजन किया।

सुरसाके फैलाये हुए उस विशाल जिह्वासे युक्त और नरकके समान अत्यन्त भयंकर मुँहको देखकर बुद्धिमान् वायुपुत्र हनुमानने मेघकी भाँति अपने शरीरको संकुचित कर लिया। वे उसी क्षण अंगूठेके बराबर छोटे हो गये।

फिर वे महाबली श्रीमान् पवनकुमार सुरसाके उस मुँहमें प्रवेश करके तुरंत निकल आये और आकाशमें खड़े होकर इस प्रकार बोले- दक्षकुमारी। तुम्हें नमस्कार है। मैं तुम्हारे मुँहमें प्रवेश कर चुका। लो, तुम्हारा वर भी सत्य हो गया। अब मैं उस स्थानको जाऊँगा, जहाँ विदेहकुमारी सीता विद्यमान हैं।

अम्ब ! अब आप मुझे अनुमति दें। कोई सत्पुरुष अपने मुखसे गिरे उच्छिष्ट ग्रासको पुन: मुखमें नहीं डालता। सुरसाका मुख सौ यौजन फैलते ही हनुमान फैलनेके स्थानपर छोटे हुए-अँगूठेके बराबर छोटे। सौ योजनके मुखमें अँगूठेके बराबर आकारका क्या पता लगाना था। जैसे जम्हाई लेते मनुष्यके मुखमें जाकर मच्छर बाहर निकल जाय, हनुमान सुरसाके मुखमें गये और फिर बाहर कूदकर हाथ जोड़कर मस्तक झुकाकर प्रार्थना की।

राहुके मुखसे छूटे हुए चन्द्रमाकी भाँति अपने मुखसे मुक्त हुए हनुमान्‌जीको देखकर सुरसा देवीने अपने असली रूपमें प्रकट होकर उस वानरवीरसे कहा- कपिश्रेष्ठ। तुम भगवान् श्रीरामके कार्यकी सिद्धिके लिये सुखपूर्वक जाओ। सौम्य ! विदेहनन्दिनी सीताको महात्मा श्रीरामसे शीघ्र मिलाओ।

वर्तमान इंडोनेशिया के सुरबाया नामक स्थान पर सुरसा की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर उसका आशीर्वाद लेते हैं।

जो जलकी धाराओंसे सेवित, पक्षियोंसे संयुक्त, गानविद्याके आचार्य तुम्बुरु आदि गन्धर्वोंके विचरणका स्थान तथा ऐरावतके आने-जानेका मार्ग है, सिंह, हाथी, बाघ, पक्षी और सर्प आदि वाहनोंसे जुते और उड़ते हुए निर्मल विमान जिसकी शोभा बढ़ाते हैं, जिनका स्पर्श वज्र और अशनिके समान दु:सह तथा तेज अग्निके समान प्रकाशमान है तथा जो स्वर्गलोकपर विजय पा चुके हैं, ऐसे महाभाग पुण्यात्मा पुरुषोंका जो निवासस्थान है, देवताके लिये अधिक मात्रामें हविष्यका भार वहन करनेवाले अग्निदेव जिसका सदा सेवन करते हैं, ग्रह, नक्षत्र, चन्द्रमा, सूर्य और तारे आभूषणकी भाँति जिसे सजाते हैं, महर्षियोंके समुदाय, गन्धर्व, नाग और यक्ष जहाँ भरे रहते हैं, जो जगत्‌का आश्रय-स्थान, एकान्त और निर्मल है, गन्धर्वराज विश्वासु जिसमें निवास करते हैं, देवराज इन्द्रका हाथी जहाँ चलता-फिरता है, जो चन्द्रमा और सूर्यका भी मङ्गलम मार्ग है, इस जीव-जगत्‌के लिये विमल वितान (चँदोवा) है, साक्षात् परब्रह्म परमात्माने ही जिसकी सृष्टि की है, जो बहुसंख्यक वीरोंसे सेवित और विद्याधरगणोंसे आवृत है, उस वायुपथ आकाशमें पवननन्दन हनुमान्‌जी गरुड़के समान वेगसे चले- इस तरह जाते हुए हनुमान्‌जीको इच्छानुसार रूप धारण करनेवाली विशालकाया सिंहिका नामवाली राक्षसीने देखा। देखकर वह मन-ही-मन इस प्रकार विचार करने लगी- आज दीर्घकालके बाद यह विशाल जीव मेरे वशमें आया है। इसे खा लेनेपर बहुत दिनोंके लिये मेरा पेट भर जायगा।

रावणने लमाकी सुरक्षाके अनेक उपाय कर रखे थे। लमा दूसरे सब ओरसे तो अनन्त समुद्रसे घिरी थी, केवल उत्तरकी ओर लमासे

सौ योजनपर भारत था। अत: सुरक्षाकी आवश्यकता उत्तरकी ओर ही थी। इस उत्तर समुद्रमें उसने राहुकी माता सिंहिकाको नियुक्त कर रखा था। सिंहिका दैत्यकुलकी- रावणके नानाके कुलकी थी और दैत्य विप्रचित्तिकी पत्नी थी। इसमें छायाको पकड़कर प्राणीको खींच लेनेकी शक्ति थी। कोई प्राणी समुद्रके भीतर तैरे, पानीके ऊपर तैरे या आकाशमें उड़ें, सिंहिकाको दौड़कर, झपटकर अपने आखेट तक जानेकी आवश्यकता नहीं थी। वह अपने स्थानपर ही बैठे-बैठे जलमें पड़नेवाली उस प्राणीकी छायाको पकड़कर प्राणीको अपने पास खींचकर भक्षण कर जाती थी।

बहुत दिनोंपर आज मेरा पेट भरेगा। अपने हृदयमें ऐसा सोचकर उस राक्षसीने हनुमान्‌जीकी छाया पकड़ ली। छाया पकड़ी जानेपर वानरवीर हनुमान्‌ने सोचा- अहो। सहसा किसने मुझे पकड़ लिया, इस पकड़के सामने मेरा पराक्रम पङ्गु हो गया है। जैसे प्रतिकूल हवा चलनेपर समुद्रमें जहाजकी गति अवरुद्ध हो जाती है, वैसी ही दशा आज मेरी भी हो गयी है। यही सोचते हुए कपिवर हनुमान्‌ने उस समय अगल-बगलमें, ऊपर और नीचे दृष्टि डाली। इतनेहीमें उन्हें समुद्रके जलके ऊपर उठा हुआ एक विशालकाय प्राणी दिखायी दिया। उस विकराल मुखवाली राक्षसीको देखकर पवनकुमार हनुमान् सोचने लगे- वानरराज सुग्रीवने जिस महापराक्रमी छायाग्राही अद्‌भुज जीवकी चर्चा की थी, वह नि:संदेह यही है। तब हनुमान्‌जीने यह निश्चय करके कि वास्तवमें ही सिंहिका है, वर्षाकालके मेघकी भाँति अपने शरीरको बढ़ाना आरम्भ किया। इस प्रकार वे विशालकाय हो गये।

हनुमान्‌जीने उसका अत्यन्त विकराल और बढ़ा हुआ मुँह देखा। उन्हें अपने शरीरके बराबर ही उसका मुँह दिखायी दिया। उस समय बुद्धिमान् महाकपि हनुमान्‌ने सिंहिकाके मर्मस्थानोंको अपना लक्ष्य बनाया। तदनन्तर वज्रोपम शरीरवाले महाकपि पवनकुमार अपने शरीरको संकुचित करके उसके विकराल मुखमें आ गिरे। उस समय सिद्धों और चारणोंने हनुमान्‌जीको सिंहिकाके मुखमें उसी प्रकार निमग्न होते देखा, जैसे पूर्णिमाकी रातमें पूर्ण चन्द्रमा राहुके ग्रास बन गये हों।

मुखमें प्रवेश करके उन वानरवीरने अपने तीखे नखोंसे उस राक्षसीके मर्मस्थानोंको विदीर्ण कर डाला। इसके पश्चात् वे मनके समान गतिसे उछलकर वेगपूर्वक बाहर निकल आये। दैवके अनुग्रह, स्वाभाविक धैर्य तथा कौशलसे उस राक्षसीको मारकर वे मनस्वी वानरवीर पुन: वेगसे बढ़कर बड़े हो गये। हनुमान्‌जीने प्राणोंके आश्रयभूत उसके हृदयस्थलको ही नष्ट कर दिया, अत: वह प्राणशून्य होकर समुद्रके जलमें गिर पड़ी। विधाताने ही उसे मार गिरानेके लिये हनुमान्‌जीको निमित्त बनाया था।

उन वानरवीरके द्वारा शीघ्र ही मारी जाकर सिंहिका जलमें गिर पड़ी। यह देख आकाशमें विचरनेवाले प्राणी उन कपिश्रेष्ठसे बोले- कपिवर। तुमने यह बड़ा ही भयंकर कर्म किया है, जो इस विशालकाय प्राणीको मार गिराया है। अब तुम बिना किसी विघ्न-बाधाके अपना अभीष्ट कार्य सिद्ध करो। वानरेन्द्र। जिस पुरुषमें तुम्हारे समान धैर्य, सूझ, बुद्धि और कुशलता- ये चार गुण होते हैं, उसे अपने कार्यमें कभी असफलता नहीं होती।

सिंहिका वधमें जो मति, दृष्टि, दाक्षिण्य धैर्य पवन-पुत्रने प्रकट किया, उसे देखकर सुरोंको विश्वास हो गया कि ये अवश्य सफल होंगे। सिंहिकासे सुर भी डरते थे। वे भी वहाँ समुद्रके ऊपर अपने विमान नहीं लाते थे। उस छाया-ग्राहिणीके मरनेसे अब भारतसे लंका तकका समुद्र निर्विघ्न हो गया था।

जावा द्वीप के दक्षिण में निमूर समुद्र में सिंहिका राक्षसी का वध करके वर्तमान आस्ट्रेलिया के उत्तर में शैल सुबेल पर खड़े होकर लंका में प्रवेश करते हैं। शैल सुबेल का वर्तमान नाम माउन्ट विलहेम है इसकी ऊँचाई ४५०० मी. है।

गगनसे हनुमानजीको सागरका दक्षिणतट-लंकाका उत्तरीतट दीख पड़ा। दृष्टि में पड़ी स्वर्णपुरी लमा। हनुमानने अपना वेग शिथिल किया। आवश्यक था कि उतरनेसे पहिले उतरनेके योग्य सुरक्षित स्थान देख लिया जावे।

बहुत वेगसे उतरनेपर शब्द होगा। धक्केसे द्वीप हिल उठेगा। इससे राक्षस सावधान हो जायँगे। वे दौड़ पड़ेंगे। संघर्ष पहिले ही अनिवार्य हो जायगा। आकाशमें असाधारण आकार देखकर भी वे चौकेंगे। श्रीहनुमान सोच रहे थे- भगवती सीताके दर्शनसे पूर्व राक्षसोंको सचेत करना अच्छा नहीं। बहुत ऊपर गगनमें अपना वेग कम कर लिया उन्होंने। अपना आकार भी एक बड़े पक्षी-चीलके बराबर बना लिया। मांसाहारी राक्षसोंकी पुरीपर चीलें मँडराती ही रहती थीं। अत: अब किसीके ध्यान देनेका भय नहीं रहा।

त्रिकूटके तीन शिखर हैं। दक्षिणका शिखर रजतका है। सीधा ऊपर जाता है। खड़े ढालका है। उसके ऊपर रावणका अखाड़ा लगता है। वहाँ सशस्त्र प्रहरी हैं। उस शिखरपर कहीं उतरनेसे ऊपरके प्रहरी देख सकते हैं। हनुमानजी गगनने मण्डल लेते एक बार पूरा द्वीप देख

गये। मध्यका शिखर स्वर्णका था। सपाट था। उसीपर स्वर्णपुरी बसी थी। सुदृढ़ परिखासे घिरी पुरीके चारों ओर बहुत स्थान था; किंतु वहाँ भी राक्षसोंका आवागमन बहुत अधिक था। दिनमें पुरीमें अथवा उसके बाहरके मैदानमें उतरनेपर राक्षस देख सकते थे।

यह शिखर इतना निर्जन क्यों है ? हनुमानजी जिधरसे आए थे, लमाके उत्तरका वह लौह-जैसा पाषण-शिखर सुबेल मध्य शिखरसे कुछ ऊँचा था। सपाट था। वनसे-फलवाले वृक्षोंसे भी भरा था। उसपर सरोवर, निर्झर भी थे; किंतु प्राणिहीनप्राय दीखता था। उसी पुष्पोंसे भरे पर्वतपर हनुमान धीरेसे उतर गये। इस यात्रासे वे तनिक भी श्रान्त नहीं हुए थे। उनके श्वासकी गति बढ़ी नहीं थी। उन्होंने भूतलपर पद रखा- जय श्रीराम।

सौ योजनके अन्तमें प्राय: समुद्रके पार पहुँचकर जब उन्होंने सब ओर दृष्टि डाली, तब उन्हें एक हरी-भरी वन-श्रेणी दिखायी दी।

आकाशमें उड़ते हुए ही शाखामृगोंसे श्रेष्ठ हनुमान्‌जीने भाँति-भाँतिके वृक्षोंसे सुशोभित लमा नामक द्वीप देखा। उत्तर तटकी भाँति समुद्रके दक्षिण तटपर भी मलय नामक पर्वत और उसके उपवन दिखायी दिये।

मनस्वी हनुमान् अपने पर्वताकार शरीरको संकुचित करके पुन: अपने वास्तविक स्वरूपमें स्थित हो गये। ठीक उसी तरह, जैसे मनको वशमें रखनेवाला मोहरहित पुरुष अपने मूल स्वरूपमें प्रतिष्ठित होता है। हनुमान्‌जी बड़े ही सुन्दर और नाना प्रकारके रूप धारण कर लेते थे। उन्होंने समुद्रके दूसरे तटपर, जहाँ दूसरोंका पहुँचना असम्भव था, पहुँचकर अपने विशाल शरीरकी ओर दृष्टिपात किया। फिर अपने कर्तव्यका विचार करके छोटा-सा रूप धारण कर लिया। तदनन्तर समुद्रके तटपर पहुँचकर वहाँसे उन्होंने एक श्रेष्ठ पर्वतके शिखरपर बसी हुई लमाको देखा। देखकर अपने पहले रूपको तिरोहित करके वे वानरवीर वहाँके पशु-पक्षियोंको व्यथित करते हुए उसी पर्वतपर उतर पड़े। हनुमान ने स्वर्णद्वीप वह स्वर्ण देश, कुबेर की नगरी देखी। जिसमें वसुधाभर की सम्पत्ति उस यक्षराजने रखी हुई थी। कुबेर के सौतेले भाई रावण ने जबरन उसपर अधिकार कर लिया था। यक्षोंको वहाँसे भगाया और असुरोंको वहाँ बसाया था। विभीषण विष्णुभक्त था। मेघनाद शक्ति का स्वरूप था। पाण्डित्य कला-कौशल और बल में रावण का कुल ऊँचा समझा जाता था। विज्ञान वादिता उस समय लंका में इतनी थी कि धीरे-धीरे वह नास्तिकता के रूप में परिणित हो गयी। भोजन, विलास, मादकता ही राजा और प्रजाका लक्ष्य था। वहाँका निशाचर दल इतना प्रबल था की पूरा भूतल भी जिससे थर्राता था। प्रत्येक देश को दबा-दबाकर अपना दबदबाव दशकंधर बढ़ाते जा रहा था। इस प्रकार दानवों और सर्पोंसे भरे हुए तथा बड़ी-बड़ी उत्ताल तरङ्गमालाओंसे अलंकृत महासागरको बलपूर्वक लाँघकर वे उसके तटपर उतर गये और अमरावतीके समान सुशोभित लमापुरीकी शोभा देखने लगे।

२) हनुमानका लमापुरी में प्रवेश- रेतीली भूमि से वे कुछ अधिक कठोर भूमि पर आ गए। वृक्ष पीछे छूट गए और खुला मैदान आ गया। उसके पश्चात कुछ ऊँची भूमि आरंभ हो गई थी। कदाचित इसी को त्रिकूट पर्वत कहा जाता हो उसके ऊपर बने अनेक ऊँचे-ऊँचे भवन दिखाई पड़ रहे थे पथ आए और फिर नगर का परकोटा भी दिखाई देने लगा। प्रदोष काल था और मुख्य द्वार से अनेक लोग नगर में प्रवेश कर रहे थे। भीड़ में अनेक प्रकार के लोग थे, और जाने वे कहाँ से आ रहे थे।

भगवदाश्रितको भय तो कभी कहीं हुआ नहीं करता, किन्तु जिस कामसे आये थे, उसमें विघ्न न पड़े, इसके लिए सतर्क रहना आवश्यक था। पूरे सुबेल-शिखरको देख लेनेका अवसर था। अभी पर्याप्त समय था सूर्यास्त होनेमें। लमामें रात्रिके अन्धकारमें ही प्रवेश करना उचित था। तब तक लमाके बहिर्भागका निरीक्षण कर लेना चाहिये। इस स्वर्णपुरी के दुर्दम अधिपतिसे युद्ध अनिवार्य लगता था। तब आराध्य आवेंगे, उनके शिबिरके योग्य स्थान यह सुबेल-शिखर ही लगता है तो इसे भली प्रकार देखा जाना चाहिये। लमाका बहिर्भाग-भावी संग्रामकी भूमि और पुरीपर आक्रमणके उपयुक्त स्थल भी देख ही लेने उचित है।

पवनपुत्र ! किसी ओरसे बहुत विनीत पुकार आयीं यद्यपि स्वर बहुत कर्कश था; किन्तु वह तो पुकारनेवालेकी विवशता थी- आप यहाँ आ गये हैं तो मुझपर कृपा नहीं करेंगे ?

कौन ? हनुमान चौंके। इधर-उधर देखने लगे। समीपकी भारी कन्दरापर दृष्टि गयी- कालदेव आप ? यहाँ इस प्रकार ?

दुरात्मा दशग्रीवने मुझे यहाँ बन्दी बना रखा है। सम्पूर्ण प्राणियोंके महासंहारकके रूपकी भयानकता कल्पनासे परे हैं। उस कोटरस्थ आग्नेय लोचन, कुटिल, दष्ट्रा, कन्दरासे मुख वाले, घोर कृष्ण वर्ण, कंकालप्राय काय, कालके केशोंके रूपमें सर्प ही फूत्कार कर रहे थे। नृमुण्डमाली, चर्मवसन, कपाली काल इस समय अत्यन्त दयनीय हो रहा था- दशग्रीव तन्त्रशास्त्रका प्रकाण्ड पण्डित है। उसके द्वारा

अभिमन्त्रित ये अष्टधातुकी श्रृंखलाएँ तोड़नेकी शक्ति मुझमें नहीं है; किन्तु आपको तो कोई मन्त्र-तन्त्र विवश नहीं करता। आप सम्पूर्ण मन्त्र-जालको छिन्न करनेमें समर्थ हैं। मैं आपकी शरण हूँ। मुझे इस बन्धनसे मुक्त कर दें।

श्रीराम तथा उनके सेवककी शरण पुकारनेपर भव-बन्धन भस्म हो जाता है। हनुमान्‌जीने श्रृंखलाओंको कच्चे सूतके समान तोड़ फेंका। आप स्वतन्त्र है।

मुझे यहाँ बन्दी बनाकर दशग्रीवने कह दिया था कि इस शिखरपर आनेवाले प्राणीको दृष्टिके द्वारा आकर्षित करके मैं आहार बना लिया करूँ। कालने दीन स्वरमें कहा- किन्तु उस दुरात्माने अपने राक्षसोंको सावधान कर दिया। दूसरे किसीको यहाँ आना नहीं था।

अच्छा। इसीलिए यह शिखर प्राणि-शून्य है। हनुमानजी हँसे- आप पधारें। दशग्रीवको पता नहीं लगेगा कि उसकी राजधानीके पार्श्वका यह शिखर अब अरक्षित हो गया है। कल प्रात:के पश्चात् इसे अपनी, अपने नगरकी चिन्तासे ही अवकाश नहीं मिलना है। लेकिन श्रीरामका स्मरण करनेवाले आपसे अभय रहेंगे, यह स्मरण रखें।

आपका स्मरण करनेवाले भी मुझसे अभय रहेंगे। प्रणाम करके, प्रदक्षिणापूर्वक विदा होनेसे पूर्व कालने वचन दिया- रावण, मेघनाद प्रभृति दस-पाँच ही लंकामें वर-प्राप्त हैं। उनके अतिरिक्त जिनको भी आप युद्धमें मारना चाहेंगे, मैं उनकी आयु समाप्त करनेकी सेवा अदृश्य रहकर आपके साथ रहते हुए किया करूँगा।

भगवान् भास्करके पुत्र भी यहाँ हैं ? हनुमानजीको एक दूसरी गुहामें शनैश्चर बन्दी मिले। काला वर्ण; किन्तु काल जैसा नहीं। सुदृढ़ शरीर, नील वस्त्र, आकृति बहुत भयानक नहीं, पर कठोर। विषदृष्टि शनैश्चरके दोनों पैर बँधे थे और वे गुफामें उलटे लटक रहे थे- पैर ऊपर, सिर नीचे। दशग्रीव जब दिग्विजय करने निकला, उस समय मेरी साढ़ेसाती दशा थी। अनेक स्थानोंपर उसे पराजित होना पड़ा। बालि और सहस्त्रबाहुने बन्दी बना रखा उसे। इसका कारण जानकर वह चिढ़ गया। शनैश्चरने बतलाया- उसने मुझे बन्दी बनाकर यहाँ इस प्रकार बाँध दिया। उसका कहना था- लंकामें अब किसीपर शनि-दशा नहीं आवेगी।

आप अब अपने स्थान जानेको स्वतन्त्र हैं। हनुमानजीने शनैश्चरका पद-बन्धन तोड़कर उन्हें सीधा खड़ा कर दिया।

अभी मैं कहीं नहीं जाऊँगा। शनैश्चर नीची दृष्टि किये बोले- जब तक तुम लंकामें हो, तभीतक यह स्वर्णपुरी है। तुम्हारे जाते ही मैं इसे देखूँगा। शनिकी विष-दृष्टि इसके स्वर्णको पाषाण बना देगी। तब मैं अपने लोक जाऊँगा। तुम जाते समय गर्जना करके मुझे सूचित करते जाना कि जा रहे हो।

सुबेलपर और कोई बन्दी नहीं मिला। रावणको कैसे पता लगता कि वहाँ काल या शनैश्चर नहीं हैं। कोई राक्षस उस ओर आनेका कभी साहस ही नहीं करता था। अत: सुबेल-शिखर श्रीरामके आनेपर उनके उतरनेका सबसे अधिक सुविधापूर्ण, सुरक्षित, निरापद शिविर-स्थान सिद्ध हुआ।

हनुमान्‌जीने वह पूरा शिखर भली प्रकार देख लिया। आनेपर प्रभु कहाँ उतरेंगे, यह भी निश्चय कर लिया। बाहर प्रशस्त शिला, वर्षा आवे तो समीप सुविस्तृत गुफा, निर्मल जलका निर्झर, पुष्पित लताएँ, मधुर फलके वृक्ष-साथ ही वहाँसे लंकापुरीकी गतिविधिपर दृष्टि रखी जा सकती थी। महाबली हनुमान्‌जी अलङ्घनीय समुद्रको पार करके त्रिकूट (लम्ब) नामक पर्वतके शिखरपर स्वस्थ भावसे खड़े हो लमापुरीकी शोभा देखने लगे।

बलवानोंमें श्रेष्ठ तथा वानरोंमें उत्तम वे वेगवान् पवनकुमार महासागरको लाँघकर शीघ्र ही लमामें जा पहुँचे।

उन कपिश्रेष्ठने वहाँ सरल चीड़ कनेर, खिले हुए खजूर, चिरौंजी, मुचुलिन्द जम्बीरी नीबू, कुटज, केतक केवड़े, सुगन्धपूर्ण प्रियङ्गु पिप्पली, नीप कदम्ब या अशोक, छितवन, असन, कोविदार तथा खिले हुए करवीर भी देखे। फूलोंके भारसे लदे हुए तथा मुकुलित अधखिले बहुत-से वृक्ष उन्हें दृष्टिगोचर हुए, जिनमें पक्षी भरे हुए थे और हवाके झोंकेसे जिनकी डालियाँ झूम रही थीं। हंसों और कारण्डवोंसे व्याप्त तथा कमल और उत्पलसे आच्छादित हुई बहुत-सी बावड़ियाँ, भाँति-भाँतिके रमणीय क्रीड़ास्थान तथा नाना प्रकारके जलाशय उनके दृष्टिपथमें आये। वह महापुरी सोनेकी चहारदीवारीसे घिरी हुई थी तथा पर्वतके समान ऊँचे और शरद-ऋतुके बादलोंके समान श्वेत भवनोंसे भरी हुई थी। श्वेत रंगकी ऊँची-ऊँची सड़कें उस पुरीको सब ओरसे घेरे हुए थीं। सैकड़ों अट्टालिकाएँ वहाँ शोभा पा रही थीं तथा फहराती हुई ध्वजा-पताकाएँ उस नगरीकी शोभा बढ़ा रही थीं।

तेजस्वी कपि हनुमान्‌ने सुन्दर शुभ्र सदनोंसे सुशोभित और पर्वतके शिखरपर स्थित लमाको इस तरह देखा, मानो वह आकाशमें

विचरनेवाली नगरी हो।

लमापुरी भयानक राक्षसोंसे उसी तरह भरी थी, जैसे पातालकी भोगवतीपुरी नागोंसे भरी रहती है। उसकी निर्माणकला अचिन्त्य थी। उसकी रचना सुन्दर ढंगसे की गयी थी। पूर्वकालमें साक्षात् कुबेर वहाँ निवास करते थे। हाथोंमें शूल और पट्टिश लिये बड़ी-बड़ी दाढ़ोंवाले बहुत-से शूरवीर घोर राक्षस लमापुरीकी उसी प्रकार रक्षा करते थे, जैसे विषधर सर्प अपनी पुरीकी करते हैं।

हनुमान ने सोचा यदि वानर यहाँतक आ जायँ तो भी वे व्यर्थ ही सिद्ध होंगे; क्योंकि युद्धके द्वारा देवता भी लमापर विजय नहीं पा सकते। मैं इस रूपसे राक्षसोंकी इस नगरीमें प्रवेश नहीं कर सकता; क्योंकि बहुत-से क्रूर और बलवान् राक्षस इसकी रक्षा कर रहे हैं। जानकीकी खोज करते समय मुझे अपनेको छिपानेके लिये यहाँके सभी महातेजस्वी, महापराक्रमी और बलवान् राक्षसोंसे आँख बचानी होगी। अत: मुझे रात्रिके समय ही नगरमें प्रवेश करना चाहिये और सीताका अन्वेषणरूप यह महान् समयोचित कार्य सिद्ध करनेके लिये ऐसे रूपका आश्रय लेना चाहिये, जो आँखसे देखा न जा सके। केवल कार्यसे यह अनुमान हो कि कोई आया था।

कई बार कातर अथवा अविवेकपूर्ण कार्य करनेवाले दूतके हाथमें पड़कर देश और कालके विपरीत व्यवहार होनेके कारण बने-बनाये काम भी उसी तरह बिगड़ जाते हैं, जैसे सूर्योदय होनेपर अन्धकार नष्ट हो जाता है।

अत: मैं श्रीरघुनाथका कार्य सिद्ध करनेके लिये रातमें अपनी इसी रूपसे छोटा-सा शरीर धारण करके लमामें प्रवेश करूँगा। यद्यपि रावणकी इस पुरीमें जाना बहुत ही कठिन है तथापि रातको इसके भीतर प्रवेश करके सभी घरोंमें घुसकर मैं जानकीकी खोज करूँगा।

सूर्यास्त हो जानेपर रातके समय उन पवनकुमारने अपने शरीरको छोटा बना लिया। वे बिल्लीके बराबर होकर अत्यन्त अद्‌भुत दिखायी देने लगे। हनुमान्‌ने उस विशाल पुरीको सतमहले, अठमहले मकानों और सुवर्णजटित स्फटिक मणिकी फर्शोंसे सुशोभित देखा। उनमें वैदूर्य नीलम भी जड़े गये थे, जिससे उनकी विचित्र शोभा होती थी। मोतियोंकी जालियाँ भी उन महलोंकी शोभा बढ़ाती थीं। उन सबके कारण राक्षसोंके वे भवन बड़ी सुन्दर शोभासे सम्पन्न हो रहे थे।

उस समय तारागणोंके साथ उनके बीचमें विराजमान अनेक सहस्र किरणोंवाले चन्द्रदेव भी हनुमान्‌जीकी सहायता सी करते हुए समस्त लोकोंपर अपनी चाँदनीका चँदोवा-सा तानकर उदित हो गये। उस पुरीके समीप पहुँचकर हर्ष और उत्साहसे भरे हुए हनुमान्‌जी सहसा उछलकर उसके परकोटेपर चढ़ गये। वहाँ सब ओरसे लमापुरीका अवलोकन करके हनुमान्‌जीका चित्त आश्चर्यसे चकित हो उठा। सीधा खड़ा पर्वत, उसपर केवल कण्टकतरू, चिकनी चमकती शिलाएँ- इस सबसे ऊँचे पर्वतके शिखरका शिरोभाग बहुत सँकरा था। उस पूरे भागको भित्तिसे घेरकर रावणने अपनी मल्लशाला बनवायी थी। वहाँतक पहुँचनेका मार्ग केवल उस छोटे द्वारसे प्रारम्भ होता था, जो पुरीसे उस पर्वततक जानेके लिए ही बना था।

लमाके बहिर्भागकी एक परिक्रमा करके, बाहरसे पुरीको और पुरीके चारों ओरके भू-भागको, खाइको देखकर वे उत्तर द्वारपर पहुँचे।

नगरके चारों ओर चौड़ी, गम्भीर, जलसे भरी खाई थी। उस खाईमें मकर, अष्टपद आदि भयानक जीव भरे पड़े थे। दशग्रीवने उनको आहार देकर पाला था। खाईके बाद उत्युच्च, सुदृढ़ रत्नखचित स्वर्णसे बनी परिखा थी। नगरके अत्युच्च स्वर्ण भवन और उनके रजत-शिखिर बाहरसे दीख रहे थे। नगरके चारों ओर चार कैलास पर्वतके समान ऊँचे महाद्वार थे। खाई पार करनेके लिए द्वारोंके सम्मुख सेतु बने थे, जो यंत्रोंके द्वारा क्षणोंमें उठा लिये जा सके थे।

द्वारोंपर अनेक विशालकाय यन्त्र लगे थे। उनसे शिलाएँ तथा विस्फोटक अस्त्र-शस्त्र फेंके जा सकते थे। द्वारोंपर सशस्त्र, कवच-शिरस्त्राण पहिने महाकाय प्रहरी सावधान खड़े रहते थे। द्वारोंसे देखनेपर ही पता लग जाता था कि पुरी असंख्य बलवान राक्षसोंसे भरी है। इस दुर्धर्ष पुरीतक किसी प्रकार वानर पहुँच भी जायें तो वे कौनसा पराक्रम प्रकट करेंगे ? उत्तर द्वारासे थोड़ी दूर सघन वृक्षोंके मध्य छिपे हनुमान सोचने लगे- इतने वैभव एवं शक्तिसे सम्पन्न दशग्रीवसे सन्धि सम्भव नहीं है। इस स्वर्णपुरीके स्वामीको कोई लोभ क्या देगा ? वह वेदोंका विशिष्ट विद्वान है। सामनीतिसे समझाना भी सम्भव नहीं। इन राक्षसोंमें भेद-फूट डाली नहीं जा सकती। अङ्गद, नील, जाम्बवान्, सुग्रीव जैसे थोड़े ही वानर इस पुरीमें प्रवेश करनेमें समर्थ हैं।

दिनमें तो इस नगरमें राक्षसोंकी दृष्टि बचाकर एक मच्छर भी प्रवेश नहीं कर सकता। इसमें प्रवेश तो रात्रिके अन्धकारमें ही करना पड़ेगा। हनुमानजी खड़े-खड़े सोच रहे थे- मैं अकेला हूँ। पूरा नगर बहुत बड़ा है। तनिक भी असावधानी हुई और मैं देख लिया गया तो कार्य ही नष्ट हो सकता है। मेरा समुद्र-लङ्घन निष्फल नहीं होना चाहिये।

वहाँ क्रौञ्च और मयूरोंके कलरव गूँजते रहते थे, उन द्वारोंपर राजहंस नामक पक्षी भी निवास करते थे। वहाँ भाँति-भाँतिके वाद्यों और आभूषणोंकी मधुर ध्वनि होती रहती थी, जिससे लमापुरी सब ओरसे प्रतिध्वनित हो रही थी।

कुबेरकी अलकाके समान शोभा पानेवाली लमा नगरी त्रिकूटके शिखरपर प्रतिष्ठित होनेके कारण आकाशमें उठी हुई-सी प्रतीत होती थी। उसे देखकर कपिवर हनुमान्‌को बड़ा हर्ष हुआ। राक्षसराजकी वह सुन्दर पुरी लमा सबसे उत्तम और समृद्धिशालिनी थी। उसे देखकर पराक्रमी हनुमान् इस प्रकार सोचने लगे- रावणके सैनिक हाथोंमें अस्त्र-शस्त्र लिये इस पुरीकी रक्षा करते हैं, अत: दूसरा कोई बलपूर्वक इसे अपने काबूमें नहीं कर सकता।

भीड़ के पीछे-पीछे हनुमान भी चल पड़े। तोरण के पश्चात अनेक मार्ग आरंभ हो जाते थे और वे अनेक छोटे-छोटे द्वारों के भीतर चले जाते थे। हनुमान उन फाटकों के निकट से चलते गए। प्रत्येक फाटक पर सशस्त्र प्रहरी खड़े थे और वे विभिन्न लोगों से विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछ रहे थे। हनुमान उन फाटकों को पीछे छोड़ते गए। अंतिम फाटक को झाँककर देखा। लगा, वहाँ कोई नहीं है। न कोई प्रवेश करनेवाला और न कोई पूछताछ करनेवाला। उन्होंने सिर झुकाया और चुपचाप प्रवेश कर गए। किंतु वह फाटक भी सर्वथा अरक्षित नहीं था। कदाचित् वह विशिष्ट जनों के प्रवेश के लिए था, अत: सर्वसाधारण वहाँ भीड़ लगाएं नहीं खड़े थे।

शिवजी कहते हैं- हे उमा। इसमें वानर हनुमान्‌की कुछ बड़ाई नहीं है। यह प्रभुका प्रताप है, जो कालको भी खा जाता है। पर्वतपर चढ़कर उन्होंने लमा देखी। बहुत ही बड़ा किला है, कुछ कहा नहीं जाता। वह अत्यन्त ऊँचा है, उसके चारों ओर समुद्र है। सोनेके परकोटे चहारदीवारी का परम प्रकाश हो रहा है। विचित्र मणियोंसे जड़ा हुआ सोनेका परकोटा है, उसके अंदर बहुत-से सुन्दर-सुन्दर घर हैं। चौराहे, बाजार, सुन्दर मार्ग और गलियाँ हैं; सुन्दर नगर बहुत प्रकारसे सजा हुआ है। हाथी, घोड़े, खच्चरोंके समूह तथा पैदल और रथोंके समूहोंको कौन गिन सकता है। अनेक रूपोंके राक्षसोंके दल हैं, उनकी अत्यन्त बलवती सेना वर्णन करते नहीं बनती।

वन, बाग, उपवन (बगीचे), फुलवाड़ी, तालाब, कुएँ और बावलियाँ सुशोभित हैं। मनुष्य, नाग, देवताओं और गन्धर्वोंकी कन्याएँ अपने सौन्दर्यसे मुनियोंके भी मनोंको मोहे लेती हैं। कहीं पर्वतके समान विशाल शरीरवाले बड़े ही बलवान मल्ल (पहलवान) गरज रहे हैं। वे अनेकों अखाड़ोंमें बहुत प्रकारसे भिड़ते और एक दूसरेको ललकारते हैं। भयंकर शरीरवाले करोड़ों योद्धा यत्न करके बड़ी सावधानीसे नगरकी चारों दिशाओंमें सब ओरसे रखवाली करते हैं। कहीं दुष्ट राक्षस भैंसों, मनुष्यों, गायों, गदहों और बकरोंको खा रहे हैं। नगरके बहुसंख्यक रखवालोंको देखकर हनुमानजीने मनमें विचार किया कि मैं अत्यन्त छोटा रूप धरूँ और रातके समय नगरमें प्रवेश करूँ। तदनन्तर वानरश्रेष्ठ महाकपि पवनकुमार हनुमान् उस पुरीमें प्रवेश करने लगे। इतनेमें ही उस नगरीकी अधिष्ठात्री देवी लंकिनी ने अपने स्वाभाविक रूपमें प्रकट होकर उन्हें देखा।

वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌को देखते ही रावणपालित लंकिनी स्वयं ही उठ खड़ी हुई। उसका मुँह देखनेमें बड़ा विकट था। वहाँ खड़े-खड़े ही जब अन्धकार हो गया सूर्यास्तके पश्चात् तब हनुमानजीने अपना आकार अंगुष्ठके बराबर बना लिया और द्वारकी ओर बढ़े। द्वारमें प्रवेश करके पुरी देखकर चकित हो रहे थे, तब तक एक भयमराकृति राक्षसी मार्ग रोककर आगे आ खड़ी हुई।

हनुमान के प्रवेश करते ही किसी ने उन्हें टोक दिया, ऐ, कहाँ जा रहा है ? हनुमान ने गर्दन उठाकर देखा- प्रहरी। किंतु शायद वह पुरुष नहीं था, स्त्री थी। स्त्री प्रहरी। तो लंका में स्त्रियाँ भी प्रहरियों का काम करती हैं।

आँखें फाड़कर मेरी ओर क्या देख रहा है ? वह पुन: बोली, मैं पूछ रही हूँ, कहाँ जा रहा है ? लंका में। क्या काम है ?

घूमने-फिरने आया हूँ। हनुमान ने बात बनाई, सुना है लंका में ऊँचे-ऊँचे प्रासाद तथा लंबे-चौड़े पथ हैं। उन्हें ही देखने आया हूँ। देखकर लौट जाऊँगा। देखकर लौट नहीं जाएगा तो क्या उन्हें साथ ले जाएगा। वह बोली, तू सैलानी है ?

हाँ। हनुमान ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

प्रहरी ने घूरकर हनुमान को ऊपर से नीचे तक देखा, तू सैलानी है। तेरे जैसे लोग कब से घूमने-फिरने के लिए लंका में आने लगे ? तेरा बाप उरपुर का नगर-श्रेष्ठि है क्या, जो तू भ्रमण करने चला आया ?

तू अपनेको बहुत चतुर समझता है ? जानता नहीं कि इस पुरीमें चोरीसे प्रविष्ट होनेवाले ही मेरे आहार हैं। उसने डाँटा और पकड़नेको हाथ नीचे झुकाया- इस पुरीके सभी राक्षस कामरूप हैं। इच्छानुसार रूप धारण करनेमें समर्थ हमीको तू धोखा देने चला है।

वह उन वीर पवनकुमारके सामने खड़ी हो गयी और बड़े जोरसे गर्जना करती हुई बोली- वनचारी वानर। तू कौन है और किस कार्यसे

यहाँ आया है ? तुम्हारे प्राण जबतक बने हुए हैं, तबतक ही यहाँ आनेका जो यथार्थ रहस्य है, उसे ठीक-ठीक बता दो। सचमुच वानर ही हो ? पुरीमें प्रवेश सम्भव नहीं है।

हनुमान चिंतित हो गए यह अति साधारण व्यक्ति का वेश उपयुक्त नही था। वे क्या जानते थे कि लंका-प्रवेश में यही वेश बाधक बन जाएगा। यदि इसने अपने सहायक बुला लिये और उन्होंने उनका निरीक्षण किया तो उनके अंगदों तथा कंठहार के साथ-साथ, राम की मुद्रिका भी पकड़ी जाएगी यदि पहचान लिये गए तो संकट उपस्थित हो जाएगा न पहचाने गए तो स्वर्णाभूषणों की चोरी के आरोप में धर लिये जा सकते हैं। राम की मुद्रिका ही छिन गई तो सीता को विश्वास दिलाना ही कठिन हो जाएगा। सब किया-धरा बेकार चला जाएगा।

तब वीरवर हनुमान् अपने सामने खड़ी हुई लंकिनीसे बोले- क्रूर स्वभाववाली नारी। तू मुझसे जो कुछ पूछ रही है, उसे मैं ठीक-ठीक बता रहा हूँ; किंतु पहले यह तो बता, तू है कौन ? तेरी आँखें बड़ी भयंकर हैं। तू इस नगरके द्वारपर खड़ी है। क्या कारण है कि तू इस प्रकार क्रोध करके मुझे डाँट रही है ?

मैं महामना राक्षसराज रावणकी आज्ञाकी प्रतीक्षा करनेवाली उनकी सेविका हूँ। मुझपर आक्रमण करना किसीके लिये भी अत्यन्त कठिन है। मैं इस नगरीकी रक्षा करती हूँ। मेरी अवहेलना करके इस पुरीमें प्रवेश करना किसीके लिये भी सम्भव नहीं है। आज मेरे हाथसे मारा जाकर तू प्राणहीन हो इस पृथ्वीपर शयन करेगा।

लंकिनीको विकराल राक्षसीके रूपमें देखकर बुद्धिमान् हनुमान् बोले- मैं अट्टालिकाओं, परकोटों और नगरद्वारोंसहित इस लमा नगरीको देखूँगा। इसी प्रयोजनसे यहाँ आया हूँ। इसे देखनेके लिये मेरे मनमें बड़ा कौतूहल है। इस लमाके जो वन, उपवन, कानन और मुख्य मुख्य भवन हैं, उन्हें देखनेके लिये ही यहाँ मेरा आगमन हुआ है।

लंकिनी बोली- खोटी बुद्धिवाले नीच वानर। राक्षसेश्वर रावणके द्वारा मेरी रक्षा हो रही है। तू मुझे परास्त किये बिना आज इस पुरीको नहीं देख सकता। तब उन वानरशिरोमणिने उस निशाचरीसे कहा- भद्रे। इस पुरीको देखकर मैं फिर जैसे आया हूँ, उसी तरह लौट जाऊँगा। यह सुनकर लंकिनीने बड़ी भयंकर गर्जना करके वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌को बड़े जोरसे एक थप्पड मारा।

लंकिनीद्वारा इस प्रकार जोरसे पीटे जानेपर उन परम पराक्रमी पवनकुमार कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌ने बड़े जोरसे सिंहनाद किया।

कौन है तू ? स्त्री ने पुन: धमकाकर पूछा, धूर्त। मुझे धोखा देना चाहता है- नगर-रक्षिका, लंका-राक्षसी को। दिन-भर में तेरे जैसे यहाँ सहस्त्रों आते हैं। बोल, कौन है तू ? और लंका राक्षसी ने अपने पौरुषपूर्ण हाथ का भरपूर वार हनुमान के मुख पर किया।

हनुमान कुछ विचलित हुए। यह थी तो स्त्री; किंतु प्रहरी-कर्म कर रही थी और शरीर से बलवान थी। वह इसी प्रकार प्रहार करती रही, अथवा उसके सहायक आ गए तो ?

इससे पूर्व कि लंकिनी दूसरा प्रहार करती, हनुमान ने झपटकर उसकी भुजा पकड़ी और उसे ऐंठते चले गए।

लंकिनी ने कराहकर सिसकी भरी- उसकी भुजा में कदाचित् पीड़ा होने लगी थी, क्या कर रहा है रे ? वह धीरे से बोली, तुझे नगर में प्रवेश करना है तो जा, चला जा। तेरे जैसे कितने ही कंगले यहाँ रोटियाँ कमाते हैं। मेरी बाँह क्यों तोड़ रहा है।

हनुमान कुछ नहीं बोले। उन्होंने उसकी बाँह कुछ और ऐंठ दी।

अरे, छोड़ भी, मूर्ख। वह फिर कराही।

किसी को पुकारोगी तो नहीं ?

नहीं। मुझे अपनी आजीविका खोनी है क्या ? वे लोग पहले ही मेरी पदोन्नति नहीं कर रहे कि स्त्रियों से प्रहरी-कर्म नहीं होता। अपनी असमर्थता जताकर क्या मिलेगा मुझे ? छोड़ मुझे और भाग।

अच्छी उलझन इससे लड़ने लगे तो राक्षस दौड़ पड़ेंगे। अभी अपनेको प्रकट करना नहीं है। हनुमानजीने उसे मार देना ही ठीक माना। पलक झपके बड़े हुए और एक भरपूर घूँसा धर दिया। वह रक्तवमन करती भूमिपर गिरीं; किंतु सामान्य राक्षसी तो नहीं थी कि मर जाती। हनुमान भी चकित हो गये- उनके वामकरका घूँसा सहकर भी यह जीवित है ? दूसरा घूँसा बाँधते बोले- तू विरूप तमोमयी कौन है ?

अपने ही द्वारा गिरायी गयी उस लंकिनीकी ओर देखकर और उसे स्त्री समझकर तेजस्वी वीर हनुमानको उसपर दया आ गयी। उन्होंने उसपर बड़ी कृपा की। उधर अत्यन्त उद्विग्न हुई लंकिनी उन वानरवीर हनुमान्‌से अभिमानशून्य गद्‌गद्‌वाणीमें इस प्रकार बोली- महाबाहो। प्रसन्न होइये। कपिश्रेष्ठ। मेरी रक्षा कीजिये। सौम्य। महाबली सत्त्वगुणशाली वीर पुरुष शास्त्रकी मर्यादापर स्थिर रहते हैं

शास्त्रमें स्त्रीको अवध्य बताया है, इसलिये आप मेरे प्राण न लीजिये। महाबली वीर वानर। मैं स्वयं लमापुरी ही हूँ, आपने अपने पराक्रमसे मुझे परास्त कर दिया है।

मुझे मारो मत। वह हाथ जोड़कर गिड़गिड़ायी- मैं इस पुरीकी अधिदेवता लंकिनी हूँ। राक्षसपुरीकी अधिदेवता राक्षसीके रूपकी ही तो होगी। तुमने मुझे जीत कर पुरीपर ही विजय प्राप्त कर ली। मेरी रक्षा करो। मैं तुम्हारे कार्यमें बाधक नहीं बनूंगी।

जब शरीर बनता है, जीव आ जाता है उसमें। तुम्हें यह नहीं बतलाना है कि कोई नगर बसता है तो उसका अधिदेवता उसमें रहने लगता है। सृष्टिके प्रारम्भमें जब यह पुरी सृष्टिकर्त्ताने बनायी, मुझे इसका अधिदेवता बनाया। लंकिनीने कहा- बड़ा दु:ख हुआ, मैं अधर्मी राक्षसोंकी पुरीकी अधिदेवता बनी।

वानरेश्वर। मैं आपसे एक सच्ची बात कहती हूँ। साक्षात् स्वयम्भू ब्रह्माजीने मुझे जैसा वरदान दिया था, वह बता रही हूँ।

उन्होंने कहा था- जब कोई वानर तुझे अपने पराक्रमसे वशमें कर लें, तब तुझे यह समझ लेना चाहिये कि अब राक्षसोंपर बड़ा भारी भय आ पहुँचा है। ब्रह्मलोकसे मुझे दु:खी जाते देख सृष्टिकर्ताने दया करके कहा उसके पश्चात् तू भगवद्भक्तोंकी राजधानीकी अधिदेवता हो जायेगी।

सौम्य। आपका दर्शन पाकर आज मेरे सामने बड़ी घड़ी आ गयी है। ब्रह्माजीने जिस सत्यका निश्चय कर दिया है, उसमें कोई उलट-फेर नहीं हो सकता। अब सीताके कारण दुरात्मा राजा रावण तथा समस्त राक्षसोंके विनाशका समय आ पहुँचा है। दुरात्मा दशग्रीवका सकुल विनाश सन्निकट है।

हे तात। स्वर्ग और मोक्षके सब सुखोंको तराजूके एक पलड़ेमें रखा जाय, तो भी वे सब मिलकर दूसरे पलड़ेपर रखे हुए उस सुखके बराबर नहीं हो सकते, जो लव क्षण मात्रके सत्संङ्गसे होता है।

अयोध्यापुरीके राजा श्रीरघुनाथको हृदयमें रखे हुए नगरमें प्रवेश करके सब काम कीजिये। उसके लिये विष अमृत हो जाता है, शत्रु मित्रता करने लगते हैं, समुद्र गायके खुरके बराबर हो जाता है, अग्निमें शीतलता आ जाती है।

और हे गरुड़जी। सुमेरु पर्वत उसके लिये रजके समान हो जाता है, जिसे श्रीरामने एक बार कृपा करके देख लिया। तब हनुमानजीने बहुत ही छोटा रूप धारण किया और भगवान्का स्मरण करके नगरमें प्रवेश किया।

कपिश्रेष्ठ। अत: आप इस रावणपालित पुरीमें प्रवेश कीजिये और यहाँ जो-जो कार्य करना चाहते हों, उन सबको पूर्ण कर लीजिये।

हनुमान ने उसे जोर का धक्का दिया और पूरी शक्ति से नगर की ओर भागे। कुछ दूर निकल गए तो थककर एक वृक्ष के पीछे छिप गए। झाँककर देखा- उनके धक्के से लंकिनी भूमि पर गिर पड़ी थी। वह चुपचाप उठी और अस्फुट-सा कुछ बड़बड़ाती हुई हाथ-पैर झाड़कर अपने स्थान पर बैठ गई। उसने किसी को पुकारने अथवा सूचना देने की आवश्यकता नहीं समझी। हनुमान निश्चिंत होकर नगर की ओर मुड़ गए। उस असुरपुरीके अधिदेवताके अदृश्य होते ही मानों रावणके मस्तकपर रखा गया हो, इस प्रकार हनुमानने पुरीमें वामपाद प्रथम रखा।

३) हनुमानद्वारा लंका में सीता की खोज- वानरराज सुग्रीवका हित करनेवाले श्रीमान् हनुमान् श्रीरघुनाथकी कार्यसिद्धिके लिये लमामें विचरने लगे। उन्होंने उस पुरीको अच्छी तरह देखा और देखकर प्रसन्नताका अनुभव किया।

अध्ययन भी लंकामें होता था, पूजा-पाठ एवं यज्ञ भी। हनुमानजी ने सायंकाल अन्धकार होनेपर लंकामें प्रवेश किया था। उन्हें राक्षस जप, पाठ, पूजन, हवन, स्तुति करते बहुत मिले; किंतु-बात किंतु की ही है। उनमें बहुतसे तो रावणके नामका जप, रावणकी स्तुतिका पाठ कर रहे थे। कुछ तामस यज्ञ करनेमें, शक्तिके उग्रतम रूपोंकी आराधनामें लगे थे। वहाँ उन्मत्त भैरव, उग्रतारा, चामुण्डा, कंकालीकी आराधना चल रही थी। कोई महिष-बलि दे रहा था तो कोई सुराकी आहुति देनेमें लगा था। नाना प्रकारके मण्डल, यन्त्र, मुद्राएँ और विचित्र-विचित्र अनुष्ठानआराधनाएँ- बीध, काक, कृकलास तककी बलि देकर कामनापूर्ति अथवा पौरुष-वृद्धिके प्रयत्न चल रहे थे।

उन कपिश्रेष्ठने जहाँ-तहाँ एक घरसे दूसरे घरपर जाते हुए विविध आकार-प्रकारके भवन देखे तथा हृदय, कण्ठ और मूधा- इन तीनों स्थानोंसे निकलनेवाले मन्द, मध्यम और उच्च स्वरसे विभूषित मनोहर गीत सुने।

उन्होंने स्वर्गीय अप्सराओंके समान सुन्दरी तथा कामवेदनासे पीड़ित कामिनियोंकी करधनी और पायजेबोंकी झनकार सुनी।

राक्षसोंके घरोंमें बहुतोंको तो उन्होंने वहाँ मन्त्र जपते हुए सुना और कितने ही निशाचरोंको स्वाध्यायमें तत्पर देखा।

कई राक्षसोंको उन्होंने रावणकी स्तुतिके साथ गर्जना करते और निशाचरोंकी एक बड़ी भीड़को राजमार्ग रोककर खड़ी हुई देखा।

नगरके मध्यभागमें उन्हें रावणके बहुत-से गुप्तचर दिखायी दिये। उनमें कोई योगकी दीक्षा लिये हुए, कोई जटा बढ़ाये, कोई मूड़ मुँड़ाये, कोई गोचर्म या मृगचर्म धारण किये और कोई नंग-धड़ंग थे। कोई मुट्ठीभर कुशोंको ही अस्त्ररूपसे धारण किये हुए थे। किन्हींका अग्निकुण्ड ही आयुध था। किन्हींके हाथमें कूट या मुद्गर था। कोई डंडेको ही हथियाररूपमें लिये हुए थे।

कुछ निशाचर न तो अधिक मोटे थे, न अधिक दुर्बल, न बहुत लंबे थे न अधिक छोटे, न बहुत गोरे थे न अधिक काले तथा न अधिक कुबड़े थे न विशेष बौने ही। कोई बड़े कुरूप थे, कोई अनेक प्रकारके रूप धारण कर सकते थे, किन्हींका रूप सुन्दर था, कोई बड़े तेजस्वी थे तथा किन्हींके पास ध्वजा, पताका और अनेक प्रकारके अस्त्र-शस्त्र थे। कोई शक्ति और वृक्षरूप आयुध धारण किये देखे जाते थे तथा किन्हींके पास पट्टिश, वज्र, गुलेल और पाश थे।

कितने ही राक्षस तीखे शूल तथा वज्र लिये हुए थे। वे सब-के-सब महान् बलसे सम्पन्न थे। इनके सिवा कपिवर हनुमान्‌ने एक लाख रक्षक सेनाको राक्षसराज रावणकी आज्ञासे सावधान होकर नगरके मध्यभागकी रक्षामें संलग्न देखा। वे सारे सैनिक रावणके अन्त:पुरके अग्रभागमें स्थित थे। महावीरके प्रवेश करते ही उग्र आराधनाएँ स्वत: निष्प्रभाव हो गयी। अग्निसे नाना प्रकारकी रङ्गीन लपटें उठनेके स्थानमें दुर्गन्धि उठने लगी। उन अभिचार-पटु तामस आराधनाके मर्मज्ञोंको प्रतिकूल लक्षण प्राप्त होने लगे। उनमें अधिकांशने विघ्न-निवारणके उपाय किये; किंतु आहुतियोंकी-रक्तमांसादि आहुतियोंकी दुर्गन्धि दूर नहीं हुई, तब मान लिया कि इष्ट आज किसी कारण असन्तुष्ट अथवा उग्रतर हो गया है अथवा कोई अज्ञात विघ्न उपस्थित हुआ है। किसी प्रकार अपने अभिचार कर्म उस दिन पूरे करके वे सब शीघ्र उठ गये।

हनुमान लंका के एक चतुष्पथ पर खड़े सोच रहे थे कि वे क्या करें ? कहाँ जाएँ और किससे पूछें ? जब तक लंका में प्रवेश नहीं किया था, तब तक तो यही लगता था कि सागर-संतरण ही सबसे बड़ी समस्या है। सागर पार किया नहीं कि सीधे वहाँ जा पहुँचेंगे जहाँ सीता होंगी। उनके दर्शन कर, उनकी कुशलता तथा व्यथा संबंधी वार्तालाप कर तत्काल लौट जाएँगे। तब यह कहाँ सोचा था कि लंका नगरी स्वयं अपने आप में एक अथाह सागर है जिसका कोई ओर-छोर नहीं है। जिस ओर निकल जाओ, कोई अंत नहीं, कोई सीमा नहीं। जाने कितनी किष्किंधा नगरियाँ इस एक लंका में ही समा जाएँ। राजमार्गों का सीमाहीन जाल बिछा हुआ है। जिस मार्ग पर निकल जाओ, बड़े-बड़े उद्यान मिलते हैं। उसके पश्चात् ऊँची-ऊँची अट्टालिकाएँ हैं, प्रासाद हैं, महानिलय हैं, महल हैं। उनके ऊँचे-ऊँचे विशाल फाटक हैं, ऊँची-ऊँची प्राचीरें हैं। सब ओर पहरे का प्रबंध है। बाहर से भीतर का समाचार जानना असंभव है।

हनुमान ने बहुत सारे राज्य और राजधानियाँ देखी थीं, किंतु लंका जैसा नगर पहले कभी नहीं देखा था प्रासादों की पंक्तियों के परे, राजमार्गों से कुछ हटकर साधारण भवन थे। उन भवनों की भी जैसे अपनी पुरियाँ बसी हुई थीं और स बसे अंत में कच्चे घर थे, कुटीर, झुग्गियाँ, झोंपड़ियाँ सागर-तट की दुर्गंध, कीच तथा अन्य प्रकार की गंदगी में बसे वे लोग लगता था यह मानव-यातना का एक पृथक सागर था। निर्धनता, असुविधा, शोषण, वंचना, क्रूरता और अज्ञान में पले ये लोग देखनेवालों की आँखों को कष्ट देते थे। मन में उनके प्रति करुणा न हो तो उनके प्रति घृणा और विरोध जागता था कि इतने साफ-सुथरे नगर में ये गंदे लोग कहाँ से आ गए; और उन्हें भी मनुष्य मानकर उनके प्रति मन में करुणा और ममता रखकर देखो तो स्पष्ट दिखाई पड़ने लगता था कि वे धन के विषम तथा अन्यायपूर्ण वितरण के षड्यंत्र में फँसे, कष्ट पाते हुए दु:खी लोग थे, जो अपनी असुविधाओं के विरुद्ध लड़ते हुए भी व्यवस्था के क्रूर रक्षकों के द्वारा अभावों में जीने के अभ्यस्त बनाए जा रहे थे बालि के राज्य-काल में किष्किंधा में भी कुछ ऐसा ही घटित हो रहा था, किंतु वहाँ निर्धनता के साथ-साथ वैभव का इतना विराट् प्रदर्शन नहीं था। लंका में इतनी अट्टालिकाओं की पृष्ठभूमि में सागर-तट पर धूप और कीचड़ में जीनेवाले ये लोग अधिक वंचित और पीड़ित लगते थे।

क्षमता भर, लंका में इधर-उधर घूमकर, हनुमान पुन: इस चतुष्पथ पर आकर खड़े हो गए थे। अब तक वे यही निश्चय नहीं कर पाए थे कि सीता की खोज कहाँ से आरंभ करें ? सीता का अपहरण रावण ने किया था यथासंभव वह उनकी हत्या नहीं करेगा। हत्या ही करनी होती, तो पंचवटी से उठाकर लंका तक लाने की क्या आवश्यकता थी ? हत्या तो पंचवटी में भी हो सकती थी। फिर रावण तो अपनी लंपटता के लिए प्रसिद्ध था। सुंदर स्त्री की हत्या वह कदाचित् ही करेगा अधिक संभावना इसी बात की है कि उसने देवी वैदेही को कहीं बंदी कर रखा होगा और संभवत: उन्हें मानसिक और शारीरिक यातनाएँ दे रहा होगा। सीता का अपहरण यदि रावण ने अपने लिए किया है तो उन्हें मुख्य

नगर से दूर, समुद्र-तट की गंदी बस्तियों में नहीं रखेगा। वह उन्हें अपने निकट, अपने वैभव के बीच बंदिनी रखेगा।

किंतु किससे पूछें हनुमान्। चारों ओर राक्षसों का जन-पारावार है। लोग ही लोग। राजमार्ग से तनिक हटकर खड़े हो जाओ तो ऐसा लगता है जैसे किसी सरिता-तट पर खड़े हों, जिसमें जलकणों के स्थान पर मानव बह रहे हों। पता नहीं कहाँ से इतने लोग एक ही नगर में एकत्रित हो गए हैं और कहाँ आ-जा रहे हैं इतने लोग ? क्या करते हैं इतने लोग ? किंतु हनुमान इनमें से किसी से कुछ नहीं पूछ सकते। सीता का नाम मुख पर आते ही उन पर संदेह किया जा सकता है। इन राक्षसों के मन में रावण के प्रति भक्ति भी होगी ही। किसी को भी संदेह हुआ तो तत्काल राजपुरुषों को सूचना हो जाएगी और यह तो हनुमान ने देख ही लिया था कि प्रत्येक राजमार्ग पर अनेक राजपुरुष तथा सैनिक घूमते हुए दिखाई दे जाते थे। वे सैनिक साधारण दण्डधर नहीं थे- वे सशस्त्र सैनिक थे। उनके हाथों में सामान्यत: शूल या पट्टिश थे; कुछ चतुष्पथों पर धनुर्धारियों की टुकड़ियाँ भी देखी थीं। बीच-बीच में अश्वारोहियों की टोलियाँ भी दिखाई पड़ जाती थीं।

झुटपुटा अंधकार में परिणत होता जा रहा था। एक ओर हनुमान की चिंता बढ़ती जा रही थी कि अंधकार में जानकी की खोज कहाँ करेंगे और दूसरी ओर उनके मन में आशा का संचार भी हो रहा था कि अँधेरे में वे कुछ अधिक स्वतंत्रता से इस लंका में घूम-फिर सकेंगे। इस समय तो कहीं भी जाने पर उनके पहचान लिये जाने की संभावना थी।

हनुमानजीने अंगुष्ठके बराबर रूप बनाया था- छोटी चुहियासे भी छोटा रूप। विशालकाय राक्षसोंका ध्यान ही नहीं जा सकता था कि इतना क्षुद्र प्राणी वानराकार है। फिर भी जहाँ प्रकाश अधिक हो, वहाँ राक्षसोंके सम्मुख जानेसे हनुमान बचते थे। वे ऐसे स्थानोंपर-से निकलते थे तो पूरे वेगसे दौड़ जाते थे। प्राय: राक्षसोंके पीछेसे अथवा खड़े लोगोंके पैरोंके बीचसे निकलते थे।

रक्षक सेनाके लिये जो विशाल भवन बना था, उसका फाटक बहुमूल्य सुवर्णद्वारा निर्मित हुआ था। उस आरक्षाभवनको देखकर महाकपि हनुमान्जीने राक्षसराज रावणके सुप्रसिद्ध राजमहलपर दृष्टिपात किया, जो त्रिकूट पर्वतके एक शिखरपर प्रतिष्ठित था। वह सब ओरसे श्वेत कमलोंद्वारा अलंकृत खाइयोंसे घिरा हुआ था। उसके चारों ओर बहुत ऊँचा परकोटा था, जिसने उस राजभवनको घेर रक्खा था। वह दिव्य भवन स्वर्गलोकके समान मनोहर था और वहाँ संगीत आदिके दिव्य शब्द गूँज रहे थे।

सहस्त्रों महापराक्रमी निशाचर राक्षसराजके उस महलकी रक्षा करते थे। उस गुप्त भवनमें भी कपिवर हनुमान्जी जा पहुँचे।

जैसे चाँदीके पिंजरेमें हंस, मन्दराचलकी कन्दरापमें सिंह तथा मदमत्त हाथीकी पीठपर वीर पुरुष शोभा पाते हैं, उसी प्रकार आकाशमें चन्द्रदेव सुशोभित हो रहे थे।

शीघ्र ही चन्द्रोदय हो गया। राक्षस अभिचारानुष्ठानों तथा रावणके स्तवनसे उठे तो नृत्य-गीत आदिमें लग गये। मदिरालयोंमें भीड़ बढ़ने लगी। सुरापान करके वे उन्मत्त नाचने-गाने लगे। बहुत थोड़े वृद्ध मिले जो एकत्र बैठकर कुछ गम्भीर विचार करते हों। इन विद्वान वृद्धोंके भी विचारका विषय प्राय: यही था कि दशग्रीवको कहाँ आक्रमणके लिए उत्तेजित करना चाहिये। कहाँ कौन जप, तप, वेदपाठ या सुरोंको सन्तुष्ट करनेमें लगा है और उसका उच्छेद कैसे होगा।

हनुमानजीको राजपथ, गलियाँ, भवन, बन्दीगृह, भवनोंके गुप्त स्थान, भोजनालय, मदिरालय, नृत्यशालाएँ, मल्लशालाएँ सब देखनी थीं। कहीं श्रीजानकीकी चर्चा करते कोई स्त्री-पुरुष मिल जायँ। कहीं श्रीसीता किसी स्थानपर मिल जायँ। सम्पातीने दिनमें उन श्रीजनकनन्दिनीको राक्षसियोंसे घिरी देखा था। वे रावणके अन्त:पुरसे लगे किसी उद्यानमें उस समय थीं। अब रात्रिको पता नहीं, वे कहाँ रखी गयी होंगी। इस अन्वेषणमें रावणके अस्त्रागार, अश्व, गज आदिके स्थान, अन्नागार, सैनिक-शिविर तथा दूसरे भी वे आवश्यक स्थान देख लेने थे जो युद्धके समय दशग्रीवकी शक्तिके आधार थे। युद्ध होनेपर लमाके किन स्थानोंपर प्रथम प्रहार आवश्यक है, वहाँ पहुँचनेके मार्ग क्या हैं, वह भी इसी समय देखना था।

लंकामें वृद्ध मिले; किंतु कोई रोगी नहीं मिला। हनुमानजी स्वयं उपदेवता थे। वे जानते थे कि राक्षस उपदेवताओंका एक वर्ग है। इनके शिशु उत्पन्न होते ही युवाके समान आकार वाले हो जाते हैं। वृद्ध भी तरुणोंके समान सशक्त रहते हैं। रोग तथा वार्धक्यकी अशक्ति उपदेवताओंमें आती नहीं। लेकिन लंकामें कोई उदास, हताश नहीं मिला। कोई स्त्री भी रुदन करती नहीं दीखी। सब प्रसन्न, सब प्रफुल्ल, सब उत्साहमें भरे; किंतु सब भोगोंमें लिप्त। मद्यपान, मांसाहार, उन्मत्त नृत्य, गायन मिला सब कहीं। रावणका उद्भुत वैभव-अद्भुत प्रभाव। विषयोन्मुख प्राणी अतृप्त, विषण्ण नहीं थे। वे उन्मत्त थे। उन्हें भोगोंका उन्मद आवेश विस्मृत बनाये था।

कुम्भकर्णकी गुफा अवश्य कोलाहल-शून्य मिली। वह महाकाय लंकाके बहिर्भागसे रजत-शिखरके नीचे तक गयी गुफामें सो रहा

था। उसमें उसके खर्राटोंका घन-गर्जन गूँज रहा था और श्वासोच्छवाससे अन्धड़ चल रहा था। वहाँ उसकी वैसी ही पर्वताकार पत्नी वज्रज्वाला के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं था।

माली, सुमाली, माल्यवान ये तीनों प्रसिद्ध दैत्य अपने पुत्र-पौत्रोंके साथ अपने दौहित्र दशग्रीवके पुरमें रहने लगे थे। सुमालीका पुत्र प्रहस्त तो रावणका प्रधानमंत्री हो गया था। इन सबके भवन हनुमानजीने देखे। मेघनाद, अतिकाय, अकम्पन, शुक-सारण प्रभृतिके भी भवन, अन्त:पुर, भवनोंके गुप्त स्थान देखे। पता नहीं श्रीवैदेही कहाँ हो। कहीं भी तो मदिरामत्त राक्षस उनकी चर्चा करें।

वीणाके श्रवणसुखद शब्द झमृत हो रहे थे, सदाचारिणी स्त्रियाँ पतियोंके साथ सो रही थीं तथा अत्यन्त अद्‌भुत और भयंकर शील-स्वभाववाले निशाचर निशीथ कालमें विहार कर रहे थे।

बुद्धिमान् वानर हनुमान्‌ने वहाँ बहुत-से घर देखे। किन्हींमें ऐश्वर्य-मदसे मत्त निशाचर निवास करते थे, किन्हींमें मदिरापानसे मतवाले राक्षस भरे हुए थे। कितने ही घर रथ, घोड़े आदि वाहनों और भद्रासनोंसे सम्पन्न थे तथा कितने ही वीर-लक्ष्मीसे व्याप्त दिखायी देते थे। वे सभी गृह एक-दूसरेसे मिले हुए थे।

चिंघाड़ते हुए महान् गजराजों, अत्यन्त सम्मानित श्रेष्ठ सभासदों तथा लंबी साँसें छोड़नेवाले वीरोंके कारण वह लमापुरी फुफकारते हुए सर्पोंसे युक्त सरोवरोंके समान शोभा पा रही थी। हनुमान्‌जीने उस पुरीमें बहुत-से उत्कृष्ट बुद्धिवाले, सुन्दर बोलनेवाले, सम्यक् श्रद्धा रखनेवाले, अनेक प्रकारके रूप-रंगवाले और मनोहर नाम धारण करनेवाले विश्वविख्यात राक्षस देखे।

वे सुन्दर रूपवाले, नाना प्रकारके गुणोंसे सम्पन्न, अपने गुणोंके अनुरूप व्यवहार करनेवाले और तेजस्वी थे। उन्हें देखकर हनुमान्‌जी बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने बहुतेरे राक्षसोंको सुन्दर रूपसे सम्पन्न देखा और कोई-कोई उन्हें बड़े कुरूप दिखायी दिये। तदनन्तर वहाँ उन्होंने सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करनेके योग्य सुन्दरी राक्षस-रमणियोंको देखा, जिनका भाव अन्यन्त विशुद्ध था। वे बड़ी प्रभावशालिनी थीं। उनका मन प्रियतममें तथा मधुपानमें आसक्त था। वे तारिकाओंकी भाँति कान्तिमती और सुन्दर स्वभाववाली थी।

हनुमान्‌जीकी दृष्टिमें कुछ ऐसी स्त्रियाँ भी आयीं, जो अपने रूप-सौन्दर्यसे प्रकाशित हो रही थीं। वे बड़ी लजीली थीं और आधी रातके समय अपने प्रियतमके आलिङ्गन-पाशमें इस प्रकार बँधी हुई थीं जैसे पक्षिणी पक्षीके द्वारा आलिङ्गित होती है। वे सब-के-सब आनन्दमें मग्न थीं। दूसरी बहुत-सी स्त्रियाँ महलोंकी छतोंपर बैठी थीं। वे पतिकी सेवामें तत्पर रहनेवाली, धर्मपरायणा, विवाहिता और कामभावनासे भावित थी। हनुमान्‌जीने उन सबको अपने प्रियतमके अममें सुखपूर्वक बैठी देखा।

जो सदा सनातन मार्गपर स्थिर रहनेवाली, श्रीरामपर ही दृष्टि रखनेवाली, श्रीरामविषयक काम या प्रेमसे परिपूर्ण, अपने पतिके तेजस्वी मनमें बसी हुई तथा दूसरी सभी स्त्रियोंसे सदा ही श्रेष्ठ थीं; जिन्हें विरहजनित ताप सदा पीड़ा देता रहता था, जिनके नेत्रोंसे निरन्तर आँसुओंकी झड़ी लगी रहती थी और कण्ठ उन आँसुओंसे गद्‌गद रहता था, पहले संयोगकालमें जिनका कण्ठ श्रेष्ठ एवं बहुमूल्य निष्क (पदक) से विभूषित रहा करता था, जिनकी पलकें बहुत ही सुन्दर थीं और कण्ठस्वर अत्यन्त मधुर था तथा जो वनमें नृत्य करनेवाली मयूरीके समान मनोहर लगती थीं, जो मेघ आदिसे आच्छादित होनेके कारण अव्यक्त रेखावाली चन्द्रलेखाके समान दिखायी देती थीं, धूलि-धूसर सुवर्ण-रेखा-सी प्रतीत होती थीं, बाणके आघातके उत्पन्न हुई रेखा चिह्न-सी जान पड़ती थीं तथा वायुके द्वारा उड़ायी जाती हुई बादलोंकी रेखा-सी दृष्टिगोचर होती थीं। वक्ताओंमें श्रेष्ठ नरेश्वर श्रीरामकी पत्नी उन सीताजीको बहुत देरतक ढूँढ़नेपर भी जब हनुमान्‌जी न देख सके, तब वे तत्क्षण अत्यन्त दुखी और शिथिल हो गये।

राक्षसोंके प्रधान राक्षसोंके गृहोंमें सुन्दरी, सुकुलोद्भवा, सुशीला कुलवधुएँ थी; किंतु राक्षसोंने देवता, नाग, गन्धर्वादि असंख्य कन्याओंका अपहरण करके गणिका बना डाला था उन्हें। विवशताने उन्हें लज्जाहीन कर दिया था। वे विवस्त्रा या अत्यल्पवस्त्रा नृत्यालयोंमें उन्माद नृत्य कर रही थीं अथवा मदिरालयोंमें, भोजनालयोंमें राक्षसोंको मद्य-मांसादि देकर स्वयं उनके साथ पीने-खाने और निर्लज्ज विनोदमें लगी थीं।

कला-नृत्य, वाद्य, सङ्गीतकी उत्कृष्टतम कला थी लंकामें। त्रिभुवनके प्रख्यात कलाकार, नर्तकियाँ, गायक दशग्रीव ले आया था। रात्रिमें रावणके यहाँ, मेघनादके सदनमें अथवा लंकाके सार्वजनिक समारोहसदनोंमें वह कला भी मूर्त्तिमान हो रही थी- मध्य रात्रिके पश्चात्, राक्षसोंका महाभोज समाप्त होनेपर ही उसका प्रारम्भ होना था। लेकिन हनुमानजीको यदि राक्षसोंका जुगुप्सित आहार, सुरापान विचलित नहीं कर सका तो लंका की सुरदुर्लभ सौन्दर्य प्रतिमाओंका नृत्य, संगीत और वाद्य भी आकर्षित नहीं कर सका। उनके कर्ण सीताकी चर्चा सुननेको उत्कर्ण थे। उनकी दृष्टि वैदेही-दर्शनकी भूखी थी। वे एकसे दूसरे स्थानपर अपने उस क्षुद्र रूपसे दौड़ते प्राय: घूम रहे थे।

सहसा राजमार्ग के दोनों ओर लगे हुए राजकीय दीपक जलने आरंभ हो गए। अनेक सेवक उल्काओं तथा सीढ़ियों के साथ प्रकट हो गए थे और स्तंभों के साथ सीढ़ियाँ लगा, उल्काओं की सहायता से उन दीपकों को प्रकाशित करते जा रहे थे। गोधूलि वेला के समय जो छिटपुट-सा अंधकार छा गया था, दीपक के प्रकाशित होने से अब वह अंधकार भी नहीं रह गया था। हनुमान की अपेक्षा के अनुसार मार्गों पर यातायात तनिक भी कम नहीं हुआ लग रहा था। अंतर मात्र इतना ही था कि पहले मार्गों पर कामकाजी लोगों की भीड़ थी और अब मनोरंजनार्थ घूमने-फिरने वाले सैलानियों का बाहुल्य हो गया था। पहले भार ढोनेवाले पशु तथा यात्रा करनेवाले रथ मार्गों पर दौड़ते फिर रहे थे और अब जैसे-जैसे रात अधिक घिरती जाती थी, बहुमूल्य घोड़े वाले, सुंदर काम किए हुए, ऐश्वर्यपूर्ण रथों की संख्या बढ़ती जा रही थी। कुछ रथ चारों ओर से पूर्णत: बंद थे, कुछ आधे खुले और कुछ पूरी तरह खुले थे। उनमें बैठे हुए राक्षस स्त्री-पुरुषों को भली प्रकार देखा जा सकता था। उनके वस्त्र बहुमूल्य थे। उनके शरीरों पर विभिन्न प्रकार के अंगरागों, चंदन तथा कस्तूरी का लेप था। सारी देह पुष्पों तथा स्वर्णाभूषणों से ढँकी हुई थी। स्त्रियों के शरीर से सुगंधों की लपटें उठ रहीं थी। एक रथ निकल जाता तो घड़ी भर तक के लिए वायु सुगंधित हो उठती थी। हनुमान अनुमान लगा रहे थे- जितना धन एक स्त्री ने अपने शरीर को सुगंधित करने में व्यय किया था, उनते में निश्चित रूप से एक निर्धन परिवार के एक समय का भोजन खरीदा जा सकता था।

निरीक्षण करते हुए हनुमान मार्ग पर चलते गए। मार्ग पर आते-जाते लोगों की भीड़ के साथ ही साथ सशस्त्र प्रहरियों की संख्या भी बढ़ गई थी। दिन के समान ही, रात को भी लोग निर्द्वंद्व होकर घूम रहे थे वरन् आश्चर्यजनक बात यह थी कि दिन के समय फिर भी मार्गों पर कुंभकर, श्रमिक तथा विभिन्न लोग दिखाई पड़ जाते थे; रात के समय तो उन्हीं मार्गों पर जैसे लंका का वैभव ही बिखर आया था। लगता था, नगर के समस्त संपन्न लोग, अपने सर्वश्रेष्ठ परिधान धारण किए हुए अपनी संपूर्ण प्रसाधन-क्षमता का उपयोग कर प्रदर्शन के लिए बाहर निकल आए थे। आवश्यकता की छोटी-मोटी वस्तुओं की दुकानें तो बंद हो गई थीं, किंतु बहुमूल्य आभूषणों और प्रसाधनों के बड़े-बड़े हाट खुले थे, जहाँ राक्षस स्त्री-पुरुषों की भीड़ लगी हुई थी। साथ ही हनुमान ने आश्चर्य से देखा, दिन के प्रकाश में या तो उनका ध्यान इस ओर नहीं गया था, या दिन के समय बंद थे, रात्रि के साथ ही सब ओर अनेक भोजनालय दिखाई पड़ने लगे। भोजनालय बहुत भली प्रकार सज्जित और प्रकाशित थे। उनमें विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनाए जा रहे थे, जिनकी गंध का आभास मार्ग चलते व्यक्ति को भी हो जाता था। मांस के भुने और तले जाने की तीव्र गंध सब ओर व्याप्त थी। मदिरा के भाँड प्रमुखता से प्रदर्शित किए गए थे और अनेक भोजनालयों से नृत्य और गायन का भी स्वर आ रहा था।

बहुत सारा नगर घूम लेने पर सहसा हनुमान ठिठककर खड़े हो गए। ऐसे व्यर्थ घूमते रहने का लाभ ? इस नगर के लोग तो लगता है कि रात-भर खाते-पीते और घूमते रहेंगे। उनके लिए प्रकाश तथा सुरक्षा की व्यवस्था इतनी अधिक थी कि कदाचित् वे देर रात गए तक अपने आमोद-प्रमोद और विलास में मग्न रहेंगे। कदाचित इसीलिए उन्हें निशाचर कहा जाता है। किंतु हनुमान क्यों व्यर्थ ही स्वयं को थका रहे हैं ? इन पथों में घूमने तथा भोजनालयों में झाँकने से तो जानकी का संधान नहीं होगा। वे इन राक्षसों के समान भोजन करने के लिए यहाँ नहीं आएँगी और न कभी रावण ही अपहर्त्ताओं को लेकर यहाँ आता होगा उन्हें अपनी खोज को सार्थक दिशा में मोड़ना चाहिए।

पण्यों और हाटों को पीछे छोड़ते हुए, हनुमान आगे बढ़ते चले गए- उधर, जिधर उन्होंने बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएँ देखी थीं किंतु सहसा उनके पग रुक गए। ऐसे ही बढ़ते जाने का क्या अर्थ हुआ ? किसी से पता तो कर लें कि रावण का महामहल है किस ओर; अन्यथा यदि उसकी विपरीत दिशा में ही बढ़ते चले गए तो लौटने में ही उषाकाल हो जाएगा।

उन्हें इस प्रकार स्तंभित-से खड़े देख, सहसा एक सशस्त्र राजपुरुष आकर उनके सम्मुख रुक गया, ए वानर। यहाँ क्या कर रहा है ?

हनुमान कुछ चकित हुए। बिना कोई प्रश्न किए ही उस राजपुरुष ने उन्हें पहचान लिया था। इसका अर्थ यह हुआ कि ये लोग वानर जाति के व्यक्ति को अलग से पहचान लेते हैं। तो वानर यहाँ आते-जाते रहते होंगे। पर उस राजपुरुष के स्वर में तनिक भी शिष्टता नहीं थी।

मैं एक निर्धन परदेसी हूँ, भाई। वह तो देख रहा हूँ। राक्षस कठोर स्वर में बोला, इस समय यहाँ व्यर्थ डोलते मत फिरो। चोरी के आरोप में धरकर कोई दास बना लेगा, तो सारा जीवन उसकी सेवा में हड्डियाँ घिसते रहोगे। उसने रुककर अँगुली से एक ओर इंगित किया, जाओ उधर, सागर-तट पर निर्धनों और दासों के मुहल्ले में कहीं पड़कर रात काट लो। इस समय यह स्थान लंका के धनाढ्य निशाचरों के विलास का है।

वे चुपचाप आगे बढ़ गए। वे तो स्वयं ही किसी से कुछ पूछने की सोच रहे थे और यहाँ बिना पूछे ही स्थिति यह हो गई कि एक स्थान

पर रुकने में भी खतरा लगता था। यदि हनुमान के मन में एक लक्ष्य न होता, यदि वे सीता के संधान की दृष्टि से यहाँ न आए होते, तो उन्हें इन राक्षसों से तनिक भी घबराहट न होती। इस राजपुरुष को भी उन्होंने उपयुक्त पाठ पढ़ाया होता किंतु उनके सामने अपना लक्ष्य है। वे न तो अपने लक्ष्य से तनिक भी हट सकते हैं और न ही किसी भी ऐसे काम में उलझना चाहते हैं, जिससे लक्ष्य प्राप्ति में व्यवधान उपस्थित होने की संभावना हो। जीवन में अपना लक्ष्य लेकर चलनेवाला व्यक्ति इधर-उधर के स्फुट आकर्षणों तथा संघर्षों में नहीं उलझता। वह तो वन्य-शूकर के समान सिर झुकाए चलता है और सीधा अपने लक्ष्य पर प्रहार करता है। बात बड़ी सीधी है- या तो छोटे-मोटे झँझटों को सुलझाते चलो, या फिर सीधे अपने महान लक्ष्य तक पहुँचो। दोनों बातें एक साथ तो सम्भव नहीं हैं।

वे एक दीवार के साथ-साथ चले जा रहे थे। हास्य की ध्वनि उस दीवार की दूसरी ओर से आ रही थी। दीवार बहुत दूर तक चलती चली गई थी। हनुमान ने रुककर इधर-उधर देखा- कहीं कोई नहीं था। पथ निर्जन था। हनुमान ने उचककर दीवार पर अपनी अँगुलियाँ जमाईं और भुजाओं के बल अपने शरीर को ऊपर उठाया। वे भीतर का दृश्य देखने में सफल हो गए। अंदर एक बहुत विस्तृत उपवन था। रात के इस समय भी वहाँ उल्काओं के बल पर दिन का-सा प्रकाश जगमगा रहा था। सैकड़ों स्त्री-पुरुष, सुंदर वस्त्राभूषण पहने, परस्पर हास-विलास में मग्न थे। उनके हाथों में या तो चषक थे या कुछ नये प्रकार के पात्र। प्रत्येक व्यक्ति कुछ-न-कुछ खा-पी रहा था। अनेक दास विभिन्न प्रकार के व्यंजन लिये, परोसने का कार्य कर रहे थे।

हनुमान नीचे उतर आए। क्या यह रावण का प्रासाद है ?

सामने से किसी के आने के आभास से उनका ध्यान भंग हुआ। सिर उठाकर देखा- आगंतुक अपनी वेशभूषा से किसी का भृत्य अथवा दास दिखाई पड़ता था। उससे पूछने में हानि की कोई संभावना नहीं थी। वह न राजपुरुष था, न सैनिक।

क्यों भाई। हनुमान ने नम्रतापूर्वक उसे पुकारा, यह क्या सम्राट का निवासस्थान है ?

नहीं। वह व्यक्ति हँसा, यह तो एक श्रेष्ठि का उद्यान है, भाई। इतने छोटे-से प्रासाद में कहीं राजाधिराज रहते हैं।

ये लोग भोजनालयों में नहीं जाते ? हनुमान ने निरर्थक ही पूछा।

भोजनालयों में साधारण लोग जाते हैं, भाई। वह व्यक्ति रस लेकर बोला, ये बड़े लोग हैं। भोजनालय इनके घर आते हैं।

ओह, हनुमान ने सोचा- वे तो भोजनालय में जाने वालों को ही धनाढ्य वर्ग मान बैठे थें।

तो सम्राट का प्रासाद कहाँ है ? महामहल प्रासाद ? वह व्यक्ति बोला, थोड़ा पीछे लौट जाओ और बाईं ओर मुड़कर सीधे चलते जाना। अपने-आप उसके सामने पहुँच जाओगे।

हनुमान ने उस व्यक्ति को सर्वथा आपत्तिशून्य पाया। उसने न तो उनकी जिज्ञासा को संदेह की दृष्टि से देखा था, न उनके विषय में जानना चाहा था और न ही यह पूछा था कि वे सम्राट के प्रासाद के विषय में क्यों पूछ रहे हैं।

प्रश्न में हानि न देख, उन्होंने पुन: पूछा, उस प्रासाद को मैं पहचानूँगा कैसे ?

अरे, अपने आप पहचान जाओगे। वह बोला, बहुत बड़ा प्रासाद है। बहुत सारी सीढ़ियाँ चढ़कर प्रवेशद्वार तक पहुँचा जाता है। बहुत ऊँचा तोरण है। प्रासादो के चारों ओर गहरी परिखा है और फिर बहुत ऊँची प्राचीर है। असंख्य रक्षक खड़े हैं। बहुत पूछ-पड़ताल है- कौन हो ? क्या कर रहे हो ? खड़े क्यों हो ? चल क्यों रहे हो ? यहाँ क्यों आए हो ? इस दिशा में क्यों चल रहे हो ? इसकी विपरीत दिशा में क्यों नहीं चल रहे ? इसी समय क्यों आए ? किसी और समय क्यों नहीं आए ? वह रुककर मुसकराया, अब भी पहचान पाओगे या नहीं ? पहचान लूँगा, भाई। हनुमान ने बहुत नम्रता से उसे नमस्कार किया और चल पड़े।

उस पीतवर्ण क्षुद्र प्राणीसे दीखनेवाले पर अनेकोंकी दृष्टि पड़ी। किसीका ध्यान नहीं गया। सर्रसे दौड़ता वह प्राणी निकल जाता था। उसके आकारका पता ही नहीं लगता था। दशग्रीवके दारुण प्रतापसे निर्भय, शमाहीन राक्षस, राक्षसियोंको इतने छोटे प्राणीकी ओर ध्यान देनेकी आवश्यकता नहीं थी। वे सब खाने-पीने, नृत्य-सङ्गीतमें, विनोदविलासमें मग्न थे।

वे प्राचीर के साथ-साथ तैरते चले गए और हाथों तथा दृष्टि की सहायता से परीक्षण करते गए कि कहीं कोई ऐसा स्थान हो, जहाँ से प्राचीर के ऊपर चढ़ने का प्रयत्न किया जा सके। तैरते-तैरते वे काफी आगे निकल गए और सहसा उनकी दृष्टि दूर टिमटिमाते हुए प्रकाश और उसमें दिखाई पड़नेवाले सैनिकों पर पड़ी। उनके हाथ-पैर थम गए इसका अर्थ यह हुआ कि वे महामहालय के तोरण की ओर चले आए हैं। वे तत्काल पलटकर, पुन: पीछे की ओर तैरने लगे।

हनुमान का मन उदास हो गया- यदि सब स्थानों से यह परिखा और प्राचीर ऐसी ही है तो वे कदापि प्रासाद के भीतर प्रवेश नहीं कर सकेंगे। सीता की खोज के लिए यदि वे महामहालय के भीतर नहीं घुस सके तो सागर-उल्लंघन का पराक्रम भी व्यर्थ ही जाएगा। क्या विडंबना है कि जो व्यक्ति इतनी दूर से सागर और पर्वतों को पार कर आया हो, वह एक परिखा और प्राचीर के सम्मुख विवश होकर असफल सिद्ध हो रहा है सुग्रीव द्वारा दी गई अवधि के समाप्त हो चुकने के बहुत बाद वापस किष्किंधा पहुँचकर, वे यह सूचना देंगे कि वे लंका में तो प्रविष्ट हो गए थे; किंतु रावण के महामहाल प्रासाद में प्रवेश करने में असमर्थ रहे, तो राम पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? कहाँ खोजेंगे वे सीता को ? उन्होंने तो सुग्रीव को दिया गया अपना वचन तत्काल पूरा कर दिया; किंतु सुग्रीव अपना वचन कैसे पूरा करेंगे? राम के मन में सुग्रीव का क्या सम्मान रह जाएगा ? इस समय हनुमान पर मात्र अपनी सफलता-असफलता का ही बोझ नहीं है। सुग्रीव का सम्मान, राम का प्रतिशोध, संसार में से राक्षसी अनाचार का नाश, सीता का उद्धार, वानरों की राक्षसों के शोषण से मुक्ति सबका बोझ आज हनुमान के कंधों पर है। हनुमान इतनी सरलता से हार नहीं मान सकते।

दशग्रीवका दारुण आतम-सीताकी चर्चा ही वर्जित थी। मद्यपानके उन्मादमें भी वह किसीके मुखपर नहीं आती थी। लमाके प्राय: सब गृहों, स्थानोंको देखनेके पश्चात हनुमानने दशग्रीवके राजसदनमें रात्रिके तृतीय प्रहरके उत्तरार्धमें प्रवेश किया। सतर्क प्रहरियोंसे अत्यन्त सुरक्षित, प्रकाशसे पूर्ण राजसदनमें इससे पूर्व प्रवेश असंभव था। जब राक्षस नृत्य-गीतसभाओंसे उठकर अपने गृहोंमें चले गये, अपनी विलास-क्रीड़ाओंसे श्रान्त सोने लगे, तब राजसदनके प्रहरी भी उनींदे हो उठे थे। उनके तन्द्रिल क्षणोंका लाभ उठाकर हनुमान उनके समीपसे राजसदनमें प्रविष्ट हुए।

जिस प्रकार कोई साधक आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए सार-असार की विवेक-पूर्वक खोज करता हो, जिस प्रकार किसी बड़ी मात्रा में पुत्र का माता से वियोग हुआ हो, तो वह पुत्र माता को खोजता रहता हो, जिस प्रकार कोई महान वैद्य वन में निकल आया हो और संजीवनी बूटी को खोजता हो, जिस प्रकार भगवान हरि विष्णु ने महावराह का रूप धारण करके मूल-सहित अर्थात् सम्पूर्ण पृथवी को खोज लिया था, अथवा भगवान मुकुन्द अर्थात् विष्णु ने मत्स्यरूप धारण करते हुए समुद्र में वेदों की खोज की हो।

१) मत्स्य रूपधारी विष्णु- पूर्वकाल में शंख नामक एक असुर जो समुद्र का पुत्र था समुद्र में रहता था। उसने अपने प्रताप से समस्त देवों और लोकपालों को पराजित किया और उन्हें स्वर्ण-पर्वत की गुफा में आश्रय लेने को बाध्य किया। तदनन्तर देवों को नित्य दुर्बल बनाये रखने के हेतु उसने चारों वेदों को नष्ट करना चाहा। एक बार जब भगवान विष्णु निद्राधीन थे, तब उसने वेदों पर आक्रमण किया, तो वे भागते हुए समुद्र में जाकर छिप गये। फिर भगवान् ने मत्स्य अवतार धारण कर समुद्र में प्रवेश किया और वेदों को पुन: प्राप्त करते हुए शंखासुर का वध किया।

जिस प्रकार कोई मुमुक्षु सद्गुरु की खोज करता है और जिस प्रकार वह निर्वेद शान्ति को प्राप्त हो जाता हो, उस प्रकार वह कपि हनुमान सीता को खोज रहा था। उसे कोई भी नहीं देख पा रहा था। उस समय उसने इंद्रजित के स्वर्ण-रत्नमय भवन को देखा। निश्चय ही अदृश्य होकर हनुमान उस भवन में प्रविष्ट हो गया। तब रावण-सुत इंद्रजित और उसकी पत्नी सुलोचना दोनों पलंग पर लेटे हुए थे। इंद्रजित की वह रानी स्त्री शेषनाग की कन्या थी, जिसके रूप से कामदेव की स्त्री रति लज्जा को प्राप्त हो जाती और इंद्राणी इन्द्र-पत्नी शची अपने सौन्दर्य-सम्बन्धी मान को छोड़ देती। उसके रूप की उपमा के लिए योग्य स्त्री पृथ्वी-तल पर नहीं थी। उसे देखकर हनुमान को विस्मय हो गया। उसे लगा- क्या यही तो जनक-कन्या नहीं होगी ? इतने में वह सुलोचना जो पतिव्रताओं में श्रेष्ठ थी, इंद्रजित से बोली- हे स्वामी, आपके पिता ने यह बड़ा अधर्म किया है। उस सती पर कुदृष्टि करते हुए वे अपहरण कर उसे लाये हैं, जो जनक की लक्ष्मी-स्वरूपा कन्या है और रामचन्द्र की स्त्री है। उस पाप से राज्य नष्ट हो जाएगा; जीवों की रक्षा की आशा नहीं कर पाओगे। पर-स्त्री की अभिलाषा करने पर कुल का नाश हो जाता है। जो साधु-पुरुषों की सेवा से द्वेष करता हो, जो गुरु की आज्ञा का भंग करता हो, जो माता-पिता को तिरस्कार करता हो, जो पर स्त्रीका संग करता हो, जो ब्राह्मण के ब्राह्मणत्व का हरण करता हो, जो जीव की हिंसा करता हो, जो हरि और हर शिव के चरित्र की निन्दा करता हो, जो वेद आदि सद्ग्रन्थों का उच्छेद करता हो, उस पापी की शीघ्र मौत हो जाती है और संसार में अपकीर्ति शेष रह जाती है। वहाँ सुलोचना के ऐसे वचन सुनकर रावण-सुत इंद्रजित बोला। हे सुन्दरी, तुमने सत्य कहा है- ये धर्म और न्याय संगत वचन हैं। फिर भी मैं क्या करूँ ? वे पिता हैं, इसलिए मन में मानकर रह जाता हूँ। पिताजी जो भी भला-बुरा कर रहे हों, फिर भी मुझसे कुछ नहीं कहा जाता। यदि कोई अन्य हो, तो सहन न करूँगा, उसे दण्ड दूँगा। इसलिए हे सती,

सुनो, जो कुछ होनी हो, वह बात उस समय हो जाएगी। समस्त सुख-दु:ख, मित्रता वा बैर लिखे अनुसार होता है। जीव का जैसा कर्म हो, वैसे मन में उसे सुझायी देता है। इस प्रकार उन पुरुष और स्त्री ने बातचीत की। हनुमान ने उसे वहाँ सुना। तो उसने मन में सोचा- यह सीता तो नहीं है; फिर भी कोई भली सती-शिरोमणि है। इस नारी की बुद्धि धन्य है, धन्य है। वह योगमाया का अवतार जान पड़ती है। इस प्रकार उसकी सराहना करते हुए बलवान हनुमान वहाँ से चल दिया।

अत्यन्त बल-वैभवसे सम्पन्न वे पवनकुमार राक्षसराज रावणके महलमें पहुँचे, जो चारों ओरसे सूर्यके समान चमचमाते हुए सुवर्णमय परकोटोंसे घिरा हुआ था। जैसे सिंह विशाल वनकी रक्षा करते हैं, उसी प्रकार बहुतेरे भयानक राक्षस रावणके उस महलकी रक्षा कर रहे थे। उस भवनका निरीक्षण करते हुए कपिकुञ्जर हनुमानजी मन-ही-मन हर्षका अनुभव करने लगे।

रावणका वह भवन अनेक प्रकारके रत्नोंसे व्याप्त था, बहुमूल्य आसन उसकी शोभा बढ़ाते थे। उसमें सब ओर बड़े-बड़े रथोंके ठहरनेके स्थान बने थे और महारथी वीरोंके लिये विशाल वासस्थान बनाये गये थे। दर्शनीय एवं परम सुन्दर नाना प्रकारके सहस्त्रों पशु और पक्षी वहाँ सब ओर भरे हुए थे। वहाँकी रत्नस्वरूप युवती रमणियाँ सदा प्रसन्न रहा करती थीं। सुन्दर आभूषणोंकी झनकारोंसे झंकृत राक्षसराजका वह महल समुद्रके कलकलनादकी भाँति मुखरित रहता था। वह समुद्रके समान गम्भीर और उसीके समान कोलाहलपूर्ण था। महामना रावणका वह विशाल भवन महान् रत्नमय अलंकारोंसे अलंकृत था। इस प्रकार वे एक घरसे दूसरे घरमें जाकर राक्षसोंके बगीचोंके सभी स्थानोंको देखते हुए बिना किसी भयसे अट्टालिकाओंपर विचरण करने लगे।

हनुमान स्फूर्तिपूर्वक नि:शब्द प्रासाद की ओर बढ़ गए। प्रासाद बहुत बड़ा था। इतने कक्ष कि जैसे प्रासाद न हो, कोई पुरी ही हो। कक्षों में बड़े-बड़े गवाक्ष थे। द्वार भी खुले थे। चौखटों में तिरस्करणियाँ झूल रही थीं। प्रासाद के भीतर रहनेवालों को खुले द्वारों और गवाक्षों में से किसी के आने की आशंका तनिक भी नहीं लगती थी। सुरक्षा का जैसा प्रबंध हनुमान ने बाहर, महामहालय के तोरण पर देखा था, वैसी कोई व्यवस्था भीतर नहीं थी। हनुमान को कहीं भी कोई नि:शस्त्र अथवा सशस्त्र पुरुष प्रहरी दिखाई नहीं पड़ा। स्त्री प्रहरियों की तो जैसे सेना ही नियुक्त थी। वे सब सशस्त्र थीं। उनके हाथों में या तो कुंत थे अथवा कटि में खड्ग बँधे हुए थे। किंतु उनमें से कोई भी जाग नहीं रही थी। वे सब सोई हुई थीं। कुछ तो अपने कार्यस्थान पर अर्थात् कक्षों की चौखटों के साथ सिर टेके सो रही थीं और कुछ को हनुमान ने विभिन्न स्थानों पर भूमि पर अस्त-व्यस्त सोए हुए पाया। कुछ सोई हुए रक्षिकाओं के पास मदिरा के चषक और कहीं-कहीं छोटे भाँड़ देखकर, हनुमान के सम्मुख बात स्पष्ट हो गई। वस्तुत: ये रक्षिकाएँ रक्षा से अधिक शोभा की वस्तुएँ थीं। शायद उनसे यह अपेक्षा ही नहीं थी कि वे रात को जागकर पहरा दें। सारे वातावरण में सुरक्षा तथा आश्वस्ति का भाव इतना अधिक था कि रक्षिकाओं को जागने की आवश्यकता ही नहीं थी।

राजसदनके भीतर भी नाना प्रकारके यान थे, पालकीसे लेकर पुष्पक विमान तक। अश्वशाला, गजशाला, आहारके लिए पालित पशुपक्षियोंका स्थान, अन्नादिका भण्डार, शस्त्रागार, भोजनालय, आपानक-गृह, नृत्यशाला-सब देखा हनुमान्ने। नृत्यशालामें नग्न, अर्धनग्न सुन्दरियाँ श्रान्त होकर वाद्योंको गोदमें लिये जहाँ-तहाँ सो गयी थीं। निद्रामें उनका अस्त-व्यस्त श्रृङ्गार, मुखसे गिरी सुरा-लार-से घृणास्पद लगती थीं। सुरागन्धसे परिपूर्ण वह नृत्यशाला और उसकी सुन्दरियाँ-स्वर्गकी अप्सराएँ तुच्छ थीं उनके सम्मुख। दशग्रीवके सदनमें त्रिभुवनकी श्रेष्ठतम सुन्दरियाँ वह दुर्दान्त राक्षसाधिप ले आया था।

स्पष्ट था उन नारियोंके मुखसे, भङ्गीसे कि वे सन्तुष्ट हैं। वे दशग्रीवको पाकर परम सन्तुष्ट हैं। उनमें कोई अन्यमनोलग्ना नहीं थी। लमामें केवल श्रीवैदेही परस्त्री थीं, असन्तुष्टा थीं, दु:खिनी थीं और वही कहीं दीख नहीं रही थीं।

महान् वेगशाली और पराक्रमी वीर हनुमान् वहाँसे कूदकर प्रहस्तके घरमें उतर गये। फिर वहाँसे उछले और महापार्श्वके महलमें पहुँच गये। तदनन्तर वे महाकपि हनुमान् मेघके समान प्रतीत होनेवाले कुम्भकर्णके भवनमें कूद गये। इसी तरह क्रमश: वे महोदर, विरूपाक्ष, विद्युजिह्व और विद्युन्मालिके घरमें गये। इसके बाद महान् वेगशाली महाकपि हनुमान्ने फिर छलाँग मारी और वे वज्रदंष्ट्र, शुक तथा बुद्धिमान् सारणके घरोंमें जा पहुंचे। इसके बाद वे वानर-यूथपति कपिश्रेष्ठ इन्द्रजितके घरमें गये और वहाँसे जम्बुमालि तथा सुमालिके घरमें पहुँच गये। तदनन्तर वे महाकपि उछलते-कूदते हुए रश्मिकेतु, सूर्यशत्रु और वज्रकायके महलोंमें जा पहुँचे। फिर क्रमश: वे कपिवर पवनकुमार धूम्राक्ष, सम्पाति, विद्युद्रूप, भीम, घन, विघन, शुकनाभ, चक्र, शठ, कपठ, ह्रस्वकर्ण, दंष्ट्र, लोमश, युद्धोन्मत्त, मत्त, ध्वजग्रीव, विद्युजिह्व, द्विजिह्व, हस्तिमुख, कराल, पिशाच और शोणिताक्ष आदिके महलोंमें गये। इस प्रकार क्रमश: कूदते-फाँदते हुए

महाशस्वी पवनपुत्र हनुमान् उन-उन बहुमूल्य भवनोंमें पधारे। वहाँ उन महाकपिने उन समृद्धिशाली राक्षसोंकी समृद्धि देखी। तत्पश्चात् बल-वैभवसे सम्पन्न हनुमान् उन सब भवनोंको लाँघकर पुन: राक्षसराज रावणके महलपर आ गये।

पवनपुत्र हनुमान्‌जीने राक्षसराज रावणके उस भवनमें अनेक प्रकारकी पालकियाँ, विचित्र लता-गृह, चित्रशालाएँ, क्रीडाभवन, काष्ठमय क्रीडापर्वत, रमणीय विलासगृह और दिनमें उपयोगमें आनेवाले विलासभवन भी देखे। रत्नोंकी किरणों तथा रावणके तेजके कारण वह घर किरणोंसे युक्त सूर्यके समान जगमगा रहा था।

कपिवर हनुमान्‌ने वहाँ नाना प्रकारके रत्नोंसे सुशोभित ऐसे-ऐसे घर देखे, जिनकी देवता और असुर भी प्रशंसा करते थे। वे गृह सम्पूर्ण दोषोंसे रहित थे तथा रावणने उन्हें अपने पुरुषार्थसे प्राप्त किया था। फिर उन्होंने राक्षसराज रावणका उसकी शक्तिके अनुरूप अत्यन्त उत्तम और अनुपम भवन (पुष्पक विमान) देखा, जो मेघके समान ऊँचा, सुवर्णके समान सुन्दर कान्तिवाला तथा मनोहर था।

महाकपि हनुमान्‌ने जिस सुन्दर विमानको वहाँ देखा, उसका नाम पुष्पक था। वह रत्नोंकी प्रभासे प्रकाशमान था और इधर-उधर भ्रमण करता था। देवताओंके गृहाकार उत्तम विमानोंमें सबसे अधिक आदर उस महाविमान पुष्पकका ही होता था।

तदनन्तर दशमुख रावणके बाहुबलसे पालित उस प्रशंसित पुरीमें जाकर चारों ओर घूमनेपर भी पतिके गुणोंके वेगसे पराजित विमुग्ध अत्यन्त दुखिनी और परम पूजनीया जनककिशोरी सीताको न देखकर कपिवर हनुमान् बड़ी चिन्तामें पड़ गये।

रावणने जो निराहार रहकर तप किया था और भगवान्‌के चिन्तनमें चित्तको एकाग्र किया था, इससे मिले हुए पराक्रमके द्वारा उसने उस विमानपर अधिकार प्राप्त किया था। मनमें जहाँ भी जानेका संकल्प उठता, वहीं वह विमान पहुँच जाता था। अनेक प्रकारकी विशिष्ट निर्माण-कलाओंद्वारा उस विमानकी रचना हुई थी तथा जहाँ-तहाँसे प्राप्त की गयी दिव्य विमान-निर्माणोचित विशेषताओंसे उसका निर्माण हुआ था। वह स्वामीके मनका अनुसरण करते हुए बड़ी शीघ्रतासे चलनेवाला, दूसरोंके लिये दुर्लभ और वायुके समान वेगपूर्वक आगे बढ़नेवाला था तथा श्रेष्ठ आनन्द महान् सुख के भागी, बढ़े-चढ़े तपवाले, पुण्यकारी महात्माओंका ही वह आश्रय था।

वह विमान गतिविशेषका आश्रय ले व्योमरूप देशविशेषमें स्थित था। आश्चर्यजनक विचित्र वस्तुओंका समुदाय उसमें एकत्र किया गया था। बहुत-सी शालाओंके कारण उसकी बड़ी शोभा हो रही थी। वह शरद्-ऋतुके चन्द्रमाके समान निर्मल और मनको आनन्द प्रदान करनेवाला था। विचित्र छोटे-छोटे शिखरोंसे युक्त किसी पर्वतके प्रधान शिखरकी जैसी शोभा होती है, उसी प्रकार अद्‌भुत शिखरवाले उस पुष्पक विमानकी भी शोभा हो रही थी। राक्षसराज रावणका वह विशाल भवन बहुत-सी अट्टालिकाओंसे व्याप्त था।

विशाललोचना विदेह-नन्दिनी सीताकी खोज करते हुए शत्रुसूदन हनुमान्‌जी उस भवनमें सब ओर चक्कर लगाते फिरे।

रावणका वह महल उसकी राक्षसजातीय पत्नियों तथा पराक्रमपूर्वक हरकर लायी हुई राजकन्याओंसे भरा हुआ था।

जो लक्ष्मी कुबेर, चन्द्रमा और इन्द्रके यहाँ निवास करती हैं, वे ही और भी सुरम्य रूपसे रावणके घरमें नित्य ही निश्चल होकर रहती थी। जो समृद्धि महाराज कुबेर, यम और वरुणके यहाँ दृष्टिगोचर होती है, वही अथवा उससे भी बढ़कर राक्षसोंके घरोंमें देखी जाती थी। वह सब प्रकारके रत्नोंसे विभूषित पुष्पक नामक दिव्य विमान स्वर्गलोकमें विश्वकर्माने ब्रह्माजीके लिये बनाया था। कुबेरने बड़ी भारी तपस्या करके उसे ब्रह्माजीसे प्राप्त किया और फिर कुबेरको बलपूर्वक परास्त करके राक्षसराज रावणने उसे अपने हाथमें कर लिया। उनका प्रकाश अग्नि और सूर्यके समान था। विश्वकर्माने बड़ी कारीगरीसे उसका निर्माण किया था। उसमें सोनेकी सीढ़ियाँ और अत्यन्त मनोहर उत्तम वेदियाँ बनायी गयी थीं।

महाकपि हनुमान्‌जी उस दिव्य पुष्पक विमानपर चढ़ गये, जो नाना प्रकारके सुन्दर कूटागारों (अट्टालिकाओं) से अलंकृत था। वहाँ बैठकर वे सब ओर फैली हुई नाना प्रकारके पेय, भक्ष्य और अन्नकी दिव्य गन्ध सूँघने लगे। वह गन्ध मूर्तिमान् पवन-सी प्रतीत होती थी।

तदनन्तर हनुमान्‌जी उस ओर प्रस्थित हुए। आगे बढ़नेपर उन्होंने एक बहुत बड़ी हवेली देखी, जो बहुत ही सुन्दर और सुखद थी। वह हवेली रावणको बहुत ही प्रिय थी; ठीक वैसे ही जैसे पतिको कान्तिमयी सुन्दरी पत्नी अधिक प्रिय होती है।

उस हवेलीमें बहुमूल्य बिछौने बिछे हुए थे तथा स्वयं राक्षसराज रावण उसमें निवास करता था। वह अगुरु नामक धूपके धूएँसे धूमिल दिखायी देती थी, किंतु वास्तवमें हंसके समान श्वेत एवं निर्मल थी। उसे देखकर हनुमान्‌जी यह तर्क-वितर्क करने लगे कि सम्भव है, यही स्वर्गलोक या देवलोक हो। यह इन्द्रकी पुरी भी हो सकती है अथवा यह परमसिद्धि ब्रह्मलोककी प्राप्ति है।

दीपकोंके प्रकाश, रावणके तेज और आभूषणोंकी कान्तिसे वह सारी हवेली जलती हुई-सी जान पड़ती थी।

तदनन्तर हनुमान्‌जीने कालीनपर बैठी हुई सहस्त्रों सुन्दरी स्त्रियाँ देखीं, जो रंग-बिरंगे वस्त्र और पुष्पमाला धारण किये अनेक प्रकारकी वेष-भूषाओंसे विभूषित थीं। आधी रात बीत जानेपर वे क्रीड़ासे उपरत हो मधुपानके मद और निद्राके वशीभूत हो उस समय गाढ़ी नींदमें सो गयी थीं। रावणकी वह हवेली उन स्त्रियोंसे प्रकाशित होकर वैसा ही शोभा पा रही थी, जैसे शरत्कालमें निर्मल आकाश ताराओंसे प्रकाशित एवं सुशोभित होता है। उन स्त्रियोंसे घिरा हुआ राक्षसराज रावण ताराओंसे घिरे हुए कान्तिमान् नक्षत्रपति चन्द्रमाके समान शोभा पा रहा था। मधुपानके अनन्तर व्यायाम नृत्य, गान, क्रीडा आदि के समय जिनके केश खुलकर बिखर गये थे, पुष्पमालाएँ मर्दित होकर छिन्न-भिन्न हो गयी थीं और सुन्दर आभूषण भी शिथिल होकर इधर-उधर खिसक गये थे, वे सभी सुन्दरियाँ वहाँ निद्रासे अचेत-सी होकर सो रही थीं। वे सोयी हुई सुन्दरियाँ वहाँ सरिताओंके समान सुशोभित होती थीं। किमिणियों घुँघुरूओं के समूह उनमें मुकुलके समान प्रतीत होते थे। सोनेके विभिन्न आभूषण ही वहाँ बहुसंख्यक स्वर्णकमलोंकी शोभा धारण करते थे। भाव सुप्तावस्थामें भी वासनावश होनेवाली श्रृङ्गार-चेष्टाएँ ही मानो ग्राह थे तथा यश कान्ति ही तटके समान जान पड़ते थे।

नाना प्रकारके सुन्दर रूप-रंगवाली उन रावणपत्नियोंके मुखोंपर हिलते हुए वे अञ्चल सुन्दर कान्तिवाली फहराती हुई पताकाओंके समान शोभा पा रहे थे। रावणकी कितनी ही तरुणी पत्नियाँ रावणका ही मुख समझकर बारंबार अपनी सौतोंके ही मुखोंको सूँघ रही थी।

अन्य मदमत्त युवतियाँ अपनी वलयविभूषित भुजाओंका ही तकिया लगाकर तथा कोई-कोई सिरके नीचे अपने सुरम्य वस्त्रोंको ही रखकर वहाँ सो रही थीं। रावणके सुखपूर्वक सो जानेपर वहाँ जलते हुए सुवर्णमय प्रदीप उन अनेक प्रकारकी कान्तिवाली कामिनियोंके मानो एकटक दृष्टिसे देख रहे थे। राजर्षियों, ब्रह्मर्षियों, दैत्यों, गन्धर्वों तथा राक्षसोंकी कन्याएँ कामके वशीभूत होकर रावणकी पत्नियाँ बन गयी थीं। उन सब स्त्रियोंका रावणने युद्धकी इच्छासे अपहरण किया था और कुछ मदमत्त रमणियाँ कामदेवसे मोहित होकर स्वयं ही उसकी सेवामें उपस्थित हो गयी थीं।

वहाँ ऐसी कोई स्त्रियाँ नहीं थीं, जिन्हें बल-पराक्रमसे सम्पन्न होनेपर भी रावण उनकी इच्छाके विरुद्ध बलात्कारसे हर लाया हो। वे सब-की-सब उसे अपने अलौकिक गुणसे ही उपलब्ध हुई थीं। जो श्रेष्ठतम पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रके ही योग्य थीं, उन जनककिशोरी सीताको छोड़कर दूसरी कोई ऐसी स्त्री वहाँ नहीं थी, जो रावणके सिवा किसी दूसरेकी इच्छा रखनेवाली हो, अथवा जिसका पहले कोई दूसरा पति रहा हो। रावणकी कोई भार्या ऐसी नहीं थी, जो उत्तम कुलमें उत्पन्न न हुई हो अथवा जो कुरूप, अनुदार या कौशलरहित, उत्तम वस्त्राभूषण एवं माला आदिसे वञ्चित शक्तिहीन तथा प्रियतमको अप्रिय हो।

फिर उन्होंने सोचा निश्चय ही सीता गुणोंकी दृष्टिसे इन सबकी अपेक्षा बहुत ही बढ़-चढ़कर हैं। इस महाबली लमापतिने मायामय रूप धारण करके सीताको धोखा देकर इनके प्रति यह अपहरणरूप महान् कष्टप्रद नीच कर्म किया है।

दशग्रीवका अन्त:पुरका सिंहासन-उसकी ज्योति, उसके महामणियोंकी प्रभा; किन्तु हनुमानको यह सब देखनेका अवकाश कहाँ था। दशानन अपने कक्षमें शयन करते दीखा। उनके प्रचण्ड शरीर, प्रशस्त भाल, विशाल भुजाओंको देखकर हनुमान्‌के मनमें आया- यह त्रिभुवनविदित पराक्रमी, विख्यात वेदज्ञ विद्वान-कहीं यह धर्मात्मा होता, कहीं भगवद्भक्त होता, निश्चय त्रिभुवनका शासक होने योग्य था यह। सुरेन्द्र इसके सेवक होकर भी तब गौरवान्वित होते; किंतु यह अधर्मी, वेद-विप्रविरोधी।

जिसके भ्रू के कुटिल होनेसे लोकपाल काँपते थे, उसके एकान्त कक्षमें अभय, अशम हनुमान उसके समीप खड़े दो क्षण देखते रहे। बहुत दया आयी उन्हें दशग्रीवपर।

उस प्रकाशमान पलंगपर महाकपि हनुमान्‌जीने वीर राक्षसराज रावणको सोते देखा, जो सुन्दर आभूषणोंसे विभूषित, इच्छानुसार रूप धारण करनेवाला, दिव्य आभरणोंसे अलंकृत और सुरूपवान् था। वह राक्षस-कन्याओंका प्रियतम तथा राक्षसोंको सुख पहुँचानेवाला था। उसके अङ्गोंमें सुगन्धित लाल चन्दनका अनुलेप लगा हुआ था, जिससे वह आकाशमें संध्याकालकी लाली तथा विद्युल्लेखासे युक्त मेघके समान शोभा पाता था। उसकी अङ्गकान्ति मेघके समान श्याम थी। उसके कानोंमें उज्ज्वल कुण्डल झिलमिला रहे थे। आँखें लाल थीं और भुजाएँ बड़ी-बड़ी। उसके वस्त्र सुनहरे रंगके थे। वह रातको स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा करके मदिरा पीकर आराम कर रहा था। उसे देखकर ऐसा जान पड़ता था, मानो वृक्ष, वन और लता-गुल्मोंसे सम्पन्न मन्दराचल सो रहा हो।

राक्षसराज रावणके सोते समय वह सुन्दर पलंग उसी प्रकार शोभा पा रहा था, जैसे गन्धहस्तीके शयन करनेपर विशाल प्रस्त्रवणगिरि सुशोभित हो रहा हो। सुन्दरी युवतियाँ धीरे-धीरे उन बाँहोंको दबाती थीं। उनपर उत्तम गन्ध-द्रव्यका लेप हुआ था। वे यक्ष, नाग,

गन्धर्व, देवता और दानव सभीको युद्धमें रुलानेवाली थीं। उन बड़ी-बड़ी और गोलाकार दो भुजाओंसे युक्त पर्वताकार राक्षसराज रावण दो शिखरोंसे संयुक्त मन्दराचलके समान शोभा पा रहा था। उसका कुण्डलसे प्रकाशमान मुखारविन्द अपने स्थानसे हटे हुए तथा मुक्तामणिसे जटित होनेके कारण विचित्र आभावाले सुवर्णमय मुकुटसे और भी उद्भासित हो रहा था। उसकी आँखें लाल थीं। उसकी कटिके नीचेका भाग ढीले-ढाले श्वेत रेशमी वस्त्रसे ढका हुआ था तथा वह पीले रंगकी बहुमूल्य रेशमी चादर ओढ़े हुए था। उसकी चारों दिशाओंमें चार सुवर्णमय दीपक जल रहे थे, जिनकी प्रभासे वह देदीप्यमान हो रहा था और उसके सारे अङ्ग प्रकाशित होकर स्पष्ट दिखायी दे रहे थे। ठीक उसी तरह, जैसे विद्युद्गणोंसे मेघ प्रकाशित एवं परिलक्षित होता है। पत्नियोंके प्रेमी उस महाकाय राक्षसराजके घरमें हनुमान्‌जीने उसकी पत्नियोंको भी देखा, जो उसके चरणोंके आसपास ही सो रही थीं। वे नाचने और बाजे बजानेमें निपुण थीं, राक्षसराज रावणकी बाँहों और अममें स्थान पानेवाली थीं तथा सुन्दर आभूषण धारण किये हुए थीं। कपिवर हनुमान्‌ने उन सबको वहाँ सोती देखा। उन्होंने उन सुन्दरियोंके कानोंके समीप हीरे तथा नीलम जड़े हुए सोनेके कुण्डल और बाजूबंद देखे। क्षीण कटिप्रदेशवाली वे राक्षसराजकी स्त्रियाँ मद तथा रतिक्रीड़ाके परिश्रमसे थककर जहाँ-तहाँ जो जिस अवस्थामें थीं वैसे ही सो गयी थीं।

रावण के अनगिनत रानियाँ थीं। उनमें मन्दोदरी पटरानी थी। नागिनी, पद्मिनी, गन्धर्वी, किन्नरी, देवकन्या, मानवी, आसुरी आदि जाति की रावण के अनेक ऐसी स्त्रियाँ थी, जिनके रूप के प्रभाव से वह बदल गया था, जिनके चरण-कमलों की सुगन्ध के कारण चारों ओर भ्रमर गुंजारव करते रहते थे और जिन्हें देखकर बड़े-बड़े मुनिवर तक धीरज खो बैठते। उनके जगमगाते वस्त्रों के सामने बिजली भी लज्जित हो जाती थी। कपि हनुमान ने उस समय उन नारियों को देखा। वे सब रति के समान सुन्दर थीं। वे पुष्प-शय्याओं में सोयी हुई थीं। हनुमान ने वहाँ ऐसी नारियों को देखा। वह महावीर हनुमान तो स्वयं जितेंद्रिय था, इसलिए उन नारियों को देखकर वह न मोह को प्राप्त हुआ, न उनका धैर्य नष्ट हो गया। वह राम के बहुत प्रिय भक्त और ऊर्ध्वरेता था, जिसके स्वप्न में भी काम-विकार नहीं उत्पन्न होता था। उस समय वह वज्रदेही तथा निर्लेप विषय विकारों से अप्रभावित हनुमान घूमते-घूमते देख रहा था, जिस प्रकार घट में प्रतिबिंबित होने पर भी आकाश निर्लेप अप्रभावित एवं व्यापक बना रहता है। उस प्रकार हनुमान सब स्थानों पर घूमते हुए भी उनके विषय में मन में कोई आसक्ति नहीं रखता था। अनन्तर देखते-देखते खोजते हुए वह महावीर मन्दोदरी के भवन में आ गया। वह निद्रावश होकर पलंग पर लेटी हुई थी। उसका मुख चन्द्रमा के समान था, शरीर का रंग सोने-का-सा था। वह हनुमान वहाँ अदृश्य रूप से खड़ा रह गया और मन में समझ गया की वह जानकी ही है। यह पतिव्रता पवित्रता के साथ सोयी है। सत्यव्रत से पवित्र हुई यह भूमिकन्या ही होगी। परन्तु उसे वह स्मरण हुआ, जो राम ने कहा था। उसने देखा कि उसे रामनाम का स्मरण नहीं हो रहा था। फिर हनुमान ने उसके मुख को सूँघकर देखा, तो मद्य की बास को आते देखकर वह दु:ख को प्राप्त हो गया।

तब विश्वास हुआ कि जो सीता जनक-कुमारी है, वह यह नहीं है। यह कोई असुर की स्त्री दिखायी दे रही है।

कक्षों के भीतर अधिकांशत: एक स्त्री पलंग पर सोई हुई थी और अनेक दासियाँ उसे घेरकर कुट्टिम फर्श पर सो रही थीं। यदि कोई पलंग तक पहुँचने का प्रयत्न करता तो दासियों में से किसी-न-किसी की नींद अवश्य उचट जाती और उसके पुकारने पर रक्षिकाएँ आ जातीं।

कुछ कक्षों में हनुमान ने पलंग पर स्त्रियों के साथ पुरुषों को भी सोते हुए पाया। ये लोग आलिंगनबद्ध सुख से सो रहे थे, किंतु उन कक्षों में भी उन्हें घेरकर अनेक दासियाँ कुट्टिम फर्श पर सोयी हुई थीं तथा खुले द्वार के बाहर, अन्य कक्षों के ही समान रक्षिकाएँ निद्रा-ग्रस्त थीं। उन कक्षों में मदिरा के भाँड़ तथा चषक अनिवार्य रूप से विद्यमान थे। लगता था कि सोने से पूर्व उन स्त्री-पुरुषों ने अवश्य ही मदिरा-पान किया है। मदिरा का वहाँ बहुत व्यापक प्रयोग भासित हो रहा था और वह उनके विलास का अनिवार्य अंग लगती थी। मदिरा-विहीन प्रेम का स्वरूप कदाचित् इन लोगों के मस्तिष्क में था ही नहीं। यह भी सम्भव था कि राक्षसों में नारी-पुरुष का संबंध, प्रेम का संबंध न होकर, विलास का ही संबंध हो। स्त्री के लिए पुरुष धन और वैभव, सत्ता और सुविधा का प्रतीक हो, पुरुष के लिए स्त्री मात्र एक भोग्या। किंतु इन संबंधों में भी कितना खुलापन है। क्या अपने प्रेम अथवा विलास- इन युगलों में जैसा भी संबंध होने के लिए इन्हें एकांत की कामना नहीं होती दासियों के बीच घिरे, तिरस्करणियों के पार रक्षिकाओं की उपस्थिति में, अपने काम-संबंधों की अभिव्यक्ति और तृप्ति में ये लोग लज्जा का अनुभव नहीं करते निर्लज्ज। अथवा दासियाँ तथा रक्षिकाएँ इनके लिए मनुष्य न होकर निर्जीव पदार्थ हैं। अपने वर्ग की न होने के कारण, क्या ये उन्हें मनुष्य ही नहीं समझते धन के कारण वर्गभेद बहुत तीखा, गहरा तथा उग्र लगता था।

और ये दासियाँ भी जाने कैसा जीवन व्यतीत करती थीं। उनकी क्या स्थिति थी यहाँ ? विभिन्न रानियों-स्वामियों तथा इन प्रेम

अथवा विलासी युगलों को घेरकर सोयी हुई ये अर्द्ध-नग्न नारियाँ, मनुष्य कम, इन विलासियों के विलास में उद्दीपन-तत्त्व अधिक दिखाई पड़ती थीं। रात-भर ये इन कक्षों में सोती हैं तो इनका अपना पारिवारिक जीवन क्या होगा- इनके माता-पिता, भाई-बहन, अथवा पति एवं संतानें क्या इनका कोई नहीं है ? या उन सब के होते हुए भी ये लोग इस प्रकार के कर्तव्य के लिए बाध्य हैं ? आर्थिक दबाव के कारण अथवा सत्ता की शक्ति के सम्मुख असमर्थ होने के कारण ? समस्त कक्षों में अनेक दासियाँ सोयी थीं किंतु मनुष्य के समान सोने का समुचित प्रबंध कर, आस्तरण पर नहीं- पशुवत्, नींद आ जाने पर बाध्य होकर भूमि पर ही।

हनुमान के मस्तिष्क में, राक्षस सेनाओं द्वारा आक्रमण कर अपहृत की गई कन्याओं की समस्त कहानियाँ साकार होने लगीं। ये वे ही स्त्रियाँ होंगी जो लंका में या तो सम्राट को उपहार-स्वरूप भेंट की गई होंगी अथवा सम्राट ने उन्हें क्रय किया होगा अथवा स्वयं सम्राट ने ही उनका अपहरण किया होगा और तब उनके वय, रूप-वैभव तथा यौवन-संपदा के अनुसार विभिन्न कार्यों में उन्हें नियुक्त किया गया होगा या फिर ये निर्धन जातियों तथा राज्यों की वे कन्याएँ होंगी, जो अपनी आजीविका की खोज में इस वैभवशालिनी लंका में आई होंगी; और यहाँ स्वयं को इस प्रकार बेचने को बाध्य हुई होंगी।

हनुमान का मन वितृष्णा से भर गया- कैसे पशु हैं ये राक्षस। पशुओं से भी निकृष्ट। ये सृष्टि का अभिशाप हैं या मानव-जाति के साथ विधाता का परिहास। पशु से भी मनुष्य वही कार्य लेता है, जो उसके उपयुक्त होता है। इन राक्षसों ने मनुष्य को पशु बना दिया है। मानव शरीर क्या केवल दासत्व और भोग के लिए है ? यह तो बहुमूल्य मणियों से पथ में पड़े साधारण रोड़े का कार्य लेने की पद्धति है। ये पशु न अपनी आत्मा का विकास करते हें और न अन्य मानवों के भीतर छिपी असंख्य शक्तियों और संभावनाओंका विकास होने देते हैं। मनुष्य को मात्र एक शरीर, मात्र इंद्रियाँ मान बैठे हैं ये। इन अनिवार्य पाशविक गुणों के पार उनमें कहीं विवेक भी है, आत्मा भी है, उसका एक सूक्ष्म भावनात्मक जीवन भी है- जिसमें त्याग, बलिदान, ममता, समता का भी स्थान है ये बातें इन राक्षसों ने कभी नहीं सोची।

वे जिस कक्ष के सम्मुख खड़े थे, वह कुछ विशिष्ट था। यह कक्ष अन्य कक्षों की अपेक्षा आकार में बहुत बड़ा था तथा उनसे कहीं अधिक सुसज्जित था। उसकी छत और दीवारों पर बहुत कलात्मक किंतु श्रृंगारिक एवं अत्यंत उत्तेजक चित्र बने हुए थे। यहाँ आकर कला भी पशुत्व की चेरी हो गई थी। पता नहीं प्रकृति ने ही इन चित्रों को बनानेवाले कलाकाओं की बाध्यता का लाभ उठाकर बलात् उससे यह पशु-कर्म करवाया था; अथवा कलाकार का महत्त्वाकांक्षी और लोलुप मन धन-बल के हाथों बिककर पशुता को ही गौरवान्वित करने पर तुल गया था। उस सारे कक्ष में ऐश्वर्य और वैभव बिखरा पड़ा था, किंतु उदात्तता कहीं नाम को नहीं थी।

अन्य कक्षों के ही समान, इसके भी मध्य में दो अत्यंत मूल्यवान पलंग बिछे थे, जिनके आस्तरण भी अद्भुत थे। जाने किस देश से ये वस्त्र लाए गए थे- हनुमान ने वैसे वस्त्र पहले कभी नहीं देखे थे। एक पलंग पर प्रौढ़ वय का एक हृष्ट-पुष्ट साँवला पुरुष सोया हुआ था। उसके शरीर पर इतने अलंकार थे कि शरीर उनसे ढँक-सा गया था। सोने से पूर्व उसने कुछ आभूषण उतारे भी होंगे। हनुमान ने अब तक लंका में जितने भी पुरुष देखे थे, उनमें से किसी के भी शरीर पर इतने अधिक अलंकार नहीं थे। किंतु यह विपुलालंकारधारी पुरुष शरीर कोमल का स्वामी नहीं था। उसका आकार, पुष्ट मांसपेशियाँ तथा शरीर की कठोरता उसके द्वारा व्यायाम अथवा शस्त्र-परिचालन के अभ्यास में बहाए गए स्वेद का परिचय दे रहे थे; उसके चेहरे का गौरव उसकी अधिकार-संपन्नता की घोषणा कर रहा था। कहीं यह स्वयं रावण तो नहीं ? संभवत: वही हो हनुमान ने आज तक रावण को नहीं देखा था; किंतु इस प्रासाद के भव्यतम कक्ष में, अधिकतम शारीरिक तथा आलंकारिक शोभा वाला यह पुरुष रावण ही होगा।

हनुमान ने कुछ अधिक निकट होकर ध्यान से देखा। इस समय उसके चेहरे की भाव-भंगिमा तनिक भी क्रूरता लिये हुए नहीं थी। वहाँ कुछ तेज था, कुछ आत्मगौरव, और यदि हनुमान ठीक से देख और समझ पा रहे थे तो कुछ चिंता और उद्विग्नता भी। उसे देखकर कौन कह सकता है कि यही वह मनुष्य था; जो सारे संसार में राक्षसी अत्याचार का उद्घोषकर्ता भी है और संरक्षक भी। इस एक व्यक्ति ने ऐसा तंत्र फैलाया है कि संसार की समस्त पाशविक वृत्तियाँ इसको आवृत किए हुए एकत्रित हो गई हैं और संपूर्ण मानवता का नाश करने पर तुल गई हैं। इसके हाथ इतने लंबे हो गए हैं कि लोग इसकी बीस भुजाओं की किंवदंतियाँ फैलाने लगे हैं; वे मानने लगे हैं कि व्यापक, प्रबल तथा पाशविक राक्षसी तंत्र फैलानेवाले व्यक्ति के कंधों पर एक नहीं, दस मस्तिष्क होने चाहिएँ हनुमान के मन में आया कि तत्काल झपट पड़ें और निरीह पड़े इस रावण को उठाकर भूमि पर दे मारें अथवा कहीं से कोई शस्त्र लेकर अभी नींद में ही इसका वध कर दें, सारी सृष्टि का क्लेश मिट जाए।

किंतु अगले ही क्षण हनुमान ने स्वयं को रोक लिया। उन्हें बिना सोचे-समझे, बिना अपने साथियों से परामर्श किए, इस प्रकार का कोई उग्र कार्य नहीं करना चाहिए। वे अकेले हैं, शस्त्रहीन हैं, और लंका में ही नहीं, रावण के निजी प्रासाद में खड़े हैं। सोए हुए शत्रु पर प्रहार करना वैसे भी वीरता नहीं है; और यदि रावण जाग गया या तो किसी अन्य व्यक्ति की आँख खुल गई तो वे लोग किसी भी प्रकार हनुमान को जीवित किष्किंधा लौटने नहीं देंगे और अभी तो सीता की खोज।

अपने लक्ष्य के प्रति सचेत होते ही अन्य बातें उनके मस्तिष्क से निकल गईं। वे आगे बढ़ गए। साथ के पलंग पर यह सुंदरी कौन है? उसका वर्ण गोरा था। उसका परिधान अत्यंत मूल्यवान तथा भव्य प्रतीत हो रहा था। शरीर पर आभूषण भी अनेक थे। वह असाधारण सुंदरी थी। चेहरे पर अधिकार की भावना भी पर्याप्त मात्रा में थी। क्या ये ही जानकी हैं ? हनुमान के मन में प्रश्न उठा साथ ही उनके माथे पर गहरे विषाद की रेखा खिंच गई। क्या यह सम्भव है कि सीता ने रावण को पति के रूप में अंगीकार कर लिया हो और संसार-भर के सुख-वैभव का भोग कर रही हों ? और इन्हीं के विरह में, उधर राम क्षणभर भी शांति का अनुभव नहीं कर पाते। क्या ऐसा भी सम्भव है कि एक पक्ष प्रेम में अपने जीवन को दाँव पर लगाए, आकाश-पाताल एक कर देने पर तुला बैठा हो और दूसरा पक्ष वैभव का सुख और सत्ता का अधिकार देखते ही अपने प्रेम को भुला दे? पर इसमें अस्वाभाविक ही क्या है ? राजप्रासादों में पली सीता को तेरह वर्षों के दीर्घ तथा कठोर वनवासी जीवन के पश्चात् लंका का यह अभूतपूर्व वैभव अपने चरणों पर लोटता हुआ मिला होगा तो वे इस प्रलोभन को रोक न पाई होंगी साथ ही उन्होंने रावण की सत्ता और शक्ति देखी होगी, राम के यहाँ आने, रावण के साथ युद्ध, जय-पराजय तथा अपने उद्धार की संभावनाओं पर भी विचार किया होगा उन्हें स्पष्ट दिखाई पड़ा होगा कि रावण की बात मान लेने में लाभ ही लाभ है। असंभव की आशा लगाए बैठे रहने और उसकी प्रतीक्षा में कष्ट सहन करने में कोई समझदारी नहीं है।

वह मोती और मणियोंसे जड़े हुए आभूषणोंसे भली-भाँति विभूषित थी और अपनी शोभासे उस उत्तम भवनको विभूषित-सा कर रही थी। वह गोरे रंगकी थी। उसकी अङ्गकान्ति सुवर्णके समान दमक रही थी। वह रावणकी प्रियतमा और उसके अन्त:पुरकी स्वामिनी थी। उसका नाम मन्दोदरी था। वह अपने मनोहर रूपसे सुशोभित हो रही थी। वही वहाँ सो रही थी। हनुमान्‌जीने उसीको देखा। रूप और यौवनकी सम्पत्तिसे युक्त और वस्त्राभूषणोंसे विभूषित मन्दोदरीको देखकर महाबाहु पवनकुमारने अनुमान किया कि ये ही सीताजी हैं। फिर तो ये वानरयूथपति हनुमान् महान् हर्षसे युक्त हो आनन्दमग्न हो गये।

उसी कक्षमें पृथक शय्यापर शयन करती मन्दोदरीको देखकर हनुमान चौंके- यह अनिन्द्य सुन्दरी। इतना सौन्दर्य तो लमामें कहीं दीखा नहीं। स्वर्गमें भी सम्भव नहीं है। यही श्रीजनक-नन्दिनी हैं ?

यह सीता हैं, यहबात मनमें आते ही हनुमान हर्षातिरेकमें समीपके स्तम्भपर चढ़ने-उतरने लगे। उन्होंने अपनी पूंछ चूम ली। कई बार उछले-कूदे; अपनी वानरों-जैसी प्रकृतिका प्रदर्शन करते हुए आनन्दित होने, खेलने और गाने लगे, इधर-उधर आने-जाने लगे। वे कभी खंभोंपर चढ़ जाते और कभी पृथ्वीपर कूद पड़ते थे किंतु यह उत्साह टिका नहीं। हृदयने कहा- व्यर्थ प्रसन्न मत हो। यह वैदेही नहीं हैं।

समझदारी। और हनुमान का मन दूसरी ओर बह निकला। राम जैसे पति को छोड़कर, रावण को पति-रूप में स्वीकार करने में कौन-सी समझदारी है। समझदारी की भी तो अपनी-अपनी अवधारणा है- प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने धरातल पर ही तो जीता है। कोई पशु बनने में ही समझदारी मानता हो किंतु जानकी की प्रकृति के विषय में जो कुछ भद्र राम ने बताया था, वह कुछ और ही था। देवी जानकी तो राम के लिए अयोध्या का साम्राज्य छोड़कर वन में आई थीं उन्हें तो लंका के समग्र वैभव को एक साथ ही ठुकरा देना चाहिए था वे रावण के शयनागार में इस प्रकार निश्चिंत तथा अधिकारपूर्वक कैसे सो सकती हैं ?

हनुमान कुछ निकट आए। उन्होंने संशयपूर्वक उस स्त्री को देखा। किंतु इस स्त्री का उम्र वह नहीं है, जो देवी जानकी का होना चाहिए। यद्यपि यह स्त्री भी असाधारण सुंदरी है; किंतु इसका वय प्रौढ़ था। सम्भव है, यह मंदोदरी हो। हनुमान के मन का विषाद धुल गया।

यह मंदोदरी ही होगी। मय दानव की पुत्री अप्सरा हेमा की जायी मेघनाथ की माँ। हाँ, यह मंदोदरी ही है। हनुमान कैसे धोखा खा गए? सीता इस प्रकार यहाँ कैसे हो सकती हैं किंतु मंदोदरी के चेहरे पर खिन्नता का भाव था। रावण भी उद्विग्न दिखाई पड़ रहा था। सम्भव है कि सोने से पहले किसी प्रकार की कलह हुई हो उन दोनों में अन्य कक्षों के विलासरत युगलों से उनकी कोई समानता नहीं थी।

हनुमान ने एक दृष्टि फर्श पर सोयी हुई दासियों पर भी डाली और कक्ष से बाहर निकल आए। रावण के कक्ष में सोयी हुई दासियाँ भी अन्य दासियों की अपेक्षा अधिक सुंदर और वैभवशालिनी लग रही थीं किंतु जानकी ? देवी जानकी कहाँ थीं ?

श्रीरामके वियोगमें सीता आभूषण धारण नहीं कर सकतीं। अङ्गराग, अलक्तक, ताम्बूल उन्हें किसी प्रकार स्वीकार नहीं होगा। स्मरण आया कि कल ही सम्पातीने उन्हें अन्यत्र देखा है। यह सुप्रसन्न है। इसके मुखपर बीते दु:खका भी चिन्ह नहीं। उसने आभूषण, अङ्गरागादि धारण किये हैं। षोडश शृङ्गार-सज्जिता यह दशग्रीवकी पट्टमहिषी होगी।

बड़ी निराशा हुई। पशुशाला, पक्षीशाला तक देख चुके थे। रावणके राजसदनसे निकले तो अत्यन्त निराश, एक ओर खिन्न चल पड़े। लगता था कि समुद्र-लंघन व्यर्थ चला गया। इसी निराशामें मनमें एक शमाने सिर उठाया- हनुमान। तूने नैष्ठिक ब्रह्मचर्यका व्रत लिया है। कहाँ गया तेरा व्रत ? आज राक्षसोंके भवनोंमें तू स्त्रियोंको- केवल स्त्रियोंको ही तो ध्यानसे देखता घूमा है। अर्धनग्न, सम्पूर्ण विवस्त्रा स्त्रियोंको-कितनी स्त्रियोंको देखा तूने, कुछ गणना है ? इसका प्रायश्चित्त ?

ठीक बात है कि मैंने प्रसुपत नग्न स्त्रियोंको देखा है। भोगरताओंको देखा है। ध्यानसे देखा है; किंतु मैं उनमें अम्बा वैदेहीको ढूंढ रहा था। प्रयोजनवश देखा मैंने। मेरे मनमें विकार तो नहीं आया ? विशुद्ध अन्त:करणमें प्रबुद्ध विवेकका वास होता है। प्रभञ्जन-तनयकी प्रज्ञा प्रदीप्त हो उठी। जैसे हृदयसे अन्तर्यामी हृषिकेश ही बोलते हों- मन ही इन्द्रियोंका नियन्ता है। मन निर्मल है तो इन्द्रियोंमें विकार सम्भव कैसे है। तुम्हारे व्रतके भङ्ग होनेका प्रश्न कहाँ उठता है। श्रीजनकनन्दिनीको ढूँढना है तो स्त्रियाँ नहीं देखोगे, क्या पशु-पक्षियोंमें पाओगे उन्हें ? इन्द्रियके सामने शुभ या अशुभ कुछ आवे, मन निर्विकार है तो तुम निर्विकार हो।

सीताने देहत्याग तो नहीं कर दिया ? दूसरी शमा उठी। राक्षसियोंके उत्पीड़नसे, रावणके व्यवहारसे दु:खी, निराश होकर वे ऐसा कर लें, असम्भव तो नहीं है। दुष्ट रावणने या राक्षसियोंने ही उन्हें मारकर खा लिया हो ?

वैभव में डूबा आदमी दूसरों की आवश्यकताओं की ओर से कैसे अंधा हो जाता है। हनुमान बाहर निकल आए।

उन्हें न कहीं जानकी दिखी थीं, न उनके कहीं होने का संदेह हुआ था। तो क्या रावण ने जानकी की हत्या कर दी है ? हनुमान का हृदय इस विचार से ही स्तब्ध हो गया। राम को यदि जानकी की हत्या का समाचार दिया जाएगा, तो उनकी क्या अवस्था होगी ? क्या उसके पश्चात् भी उनके मन में लंका पर आक्रमण कर, रावण से युद्ध करने का उत्साह रह पाएगा ? यदि राम ही कहीं हतोत्साहित हो गए तो राम के हाथों रावण-वध के परिणामस्वरूप, राक्षसों के शोषण और आतंक से वानरों की जिस मुक्ति का स्वप्न हनुमान और उनके साथियों ने देखा है- उसका क्या होगा ?

उन्होंने सोचा- भामिनी सीता श्रीरामसे बिछुड़ गयी हैं। इस दशामें वे न तो सो सकती हैं, न भोजन कर सकती हैं, न शृङ्गार एवं अलंकार धारण कर सकती हैं, फिर मदिरापानका सेवन तो किसी प्रकार भी नहीं कर सकतीं।

वे किसी दूसरे पुरुषके पास, वह देवताओंका भी ईश्वर क्यों न हो, नहीं जा सकतीं। देवताओंमें भी कोई ऐसा नहीं है जो श्रीरामकी समानता कर सके। अत: अवश्य ही यह सीता नहीं, कोई दूसरी स्त्री है। ऐसा निश्चय करके वे कपिश्रेष्ठ सीताजीके दर्शनके लिये उत्सुक हो पुन: वहाँकी मधुशालामें विचरने लगे।

वानरयूथपति हनुमानजीने उस मधुशालाको ऐसी सहस्त्रों रमणियोंसे संयुक्त देखा, जो भाँति-भाँतिके आभूषणोंसे विभूषित, रूप-लावण्यकी चर्चा करनेवाली, गीतके समुचित अभिप्रायको अपनी वाणीद्वारा प्रकट करनेवाली, देश और कालको समझनेवाली, उचित बात बोलनेवाली और रतिक्रीड़ामें अधिक भाग लेनेवाली थीं।

दूसरे स्थानपर भी उन्होंने ऐसी सहस्त्रों सुन्दरी युवतियोंको सोते देखा, जो आपसमें रूप-सौन्दर्यकी चर्चा करती हुई लेट रही थीं।

वानरयूथपति पवनकुमारने ऐसी बहुत-सी स्त्रियोंको देखा, जो देश-कालको जाननेवाली, उचित बात कहनेवाली तथा रतिक्रीड़ाके पश्चात् गाढ़ निद्रामें सोयी हुई थीं।

उस महाकाय राक्षसराजके भवनमें कपिश्रेष्ठ हनुमान्ने वह मधुशाला देखी, जो सम्पूर्ण मनोवाञ्छित भोगोंसे सम्पन्न थी। उस मधुशालामें अलग-अलग मृगों, भैंसों और सूअरोंके मांस रखे गये थे, जिन्हें हनुमान्जीने देखा। वानरसिंह हनुमान्ने वहाँ सोनेके बड़े-बड़े पात्रोंमें मोर, मुर्गे, सूअर, गेंडा, साही, हरिण तथा मयूरोंके मांस देखे।

यत्र-तत्र रक्खी हुई सुदृढ़ शय्याओं और सुन्दर स्वर्णमय सिंहासनोंसे सुशोभित होनेवाली वह मधुशाला ऐसी जगमगा रही थी कि बिना आगके ही जलती हुई-सी दिखायी देती थी। चाँदी और सोनेके घड़ोंमें, जहाँ श्रेष्ठ पेय पदार्थ रखे थे, उसे घूम-घूमकर देखा। महाकपि पवनकुमारने देखा, वहाँ मदिरासे भरे हुए सोने और मणियोंके भिन्न-भिन्न पात्र रखे गये हैं। किसी घड़ेमें आधी मदिरा शेष थी तो किसी

घड़ेकी सारी-की-सारी पी ली गयी थी तथा किन्हीं-किन्हीं घड़ोंमें रक्खे हुए मद्य सर्वथा पीये नहीं गये थे।

उस राक्षसराजके भवनमें कोई साँवली, कोई गोरी, कोई काली और कोई सुवर्णके समान कान्तिवाली सुन्दरी युवतियाँ सो रही थीं। इस प्रकार महातेजस्वी कपिवर हनुमान्‌ने रावणका सारा अन्त:पुर छान डाला तो भी वहाँ उन्हें जनकनन्दिनी सीताका दर्शन नहीं हुआ। उन सोती हुई स्त्रियोंको देखते-देखते महाकपि हनुमान् धर्मके भयसे शमित हो उठे। उनके हृदयमें बड़ा भारी संदेह उपस्थित हो गया। वे सोचने लगे कि इस तरह गाढ़ निद्रामें सोयी हुई परायी स्त्रियोंको देखना अच्छा नहीं है। यह तो मेरे धर्मका अत्यन्त विनाश कर डालेगा। मेरी दृष्टि अबतक कभी परायी स्त्रियोंपर नहीं पड़ी थी। यहीं आनेपर मुझे परायी स्त्रियोंका अपहरण करनेवाले इस पापी रावणका भी दर्शन हुआ है ऐसे पापीको देखना भी धर्मका लोप करनेवाला होता है।

जिस जीवकी जो जाति होती है, उसीमें उसे खोजा जाता है। खोयी हुई युवती स्त्रीको हरिनियोंके बीचमें नहीं ढूँढ़ा जा सकता है। अत: मैंने रावणके इस सारे अन्त:पुरमें शुद्ध हृदयसे ही अन्वेषण किया है; किंतु यहाँ जानकीजी नहीं दिखायी देती हैं। अन्त:पुरका निरीक्षण करते हुए पराक्रमी हनुमान्‌ने देवताओं, गन्धर्वों और नागोंकी कन्याओंको वहाँ देखा, किंतु जनकनन्दिनी सीताको नहीं देखा। फिर तो हनुमानने उस मद्यशालाको छोड़कर अन्य सब स्थानोंमें उन्हें बड़े यत्नका आश्रय लेकर खोजना आरम्भ किया।

बड़ी भयावह शमा। मैं उन्हें देखे बिना क्या मुख लेकर लौटूँगा ? एक बार फिर नगरमें ढूँढने लगे। बड़े वेगसे दौड़ने लगे। अब प्रहरी भी उनींदे, असावधान थे। राक्षस सो गये थे। मदिरालय, निकुञ्ज, विमान, रखी पालकियाँ, रथ, गुफाएँ, भूगर्भगृह, बावली, उद्यान सब घूम आये। अपनी समझसे कोई स्थान नहीं छोड़ा, जहाँ न गये हों। रावणके द्वारा अपहृत कन्याएँ देखीं; किंतु वे सब तो अब प्रसन्न, सन्तुष्ट थीं।

सम्पातीने कल ही कहा था कि वह श्रीसीताको रुदन करती देख रहा है। बड़ी चिन्ता, बड़ी वेदना। रावण उन्हें आज ही कहीं अन्यत्र तो नहीं रख आया ? अब क्या करें ?

मैं रावणको मार दूँ ? निराशाकी प्रतिक्रिया प्रचण्ड क्रोधके रूपमें प्रकट हुई- नहीं, इसे पकड़ ले चलूँगा, इसे श्रीरामके पदोंमें पटक दूंगा और वही इससे वैदेहीका पता पूछेंगे।

पवनपुत्रने हृदयमें ध्यान किया आराध्यका कुछ भयानक पौरुष प्रकट करनेसे पूर्व। सहसा जैसे प्रकाश प्राप्त हुआ। चौंके- अरे। यह भवन तो अबतक मैंने देखा ही नहीं था। लमामें यह भवन ? तुलसीकानन, पृथक मन्दिर चक्रमण्डित और द्वारपर राम-नाम ? कौन रहता है इसमें?

रावण के महामहालय की प्राचीर फाँदकर जब वे बाहर निकले थे तो अत्यंत हताश थे। शरीर को भूख, नींद और थकान मथे जा रही थी और मस्तिष्क था कि असफलता की भावना से जल-फूँक रहा था। कितना बड़ा उद्यम किया था हनुमान ने। पहले सागर-लंघन किया और फिर रावण के महामहालय में घुसकर, खोज-बीन कर सुरक्षित बाहर भी निकल आए। किंतु जानकी का कहीं कोई पता ही नहीं चला। उनके वध की आशंका बार-बार मन में आती; किंतु उनका तर्कशील मस्तिष्क उस बात को स्वीकार नहीं कर पाता। सीता के वध से रावण को कोई लाभ नहीं था और रावण जैसा लंपट पुरुष सीता जैसी सुंदरी का वध कर भी नहीं सकता था। उसे अपनी कामेच्छा पूर्ण करने अपने शत्रु को अपमानित कर, स्वयं को गौरवान्वित, अथवा राम के समय अपनी इच्छानुकूल किसी भी प्रकार की संधि करने के लिए सीता को जीवित रखना ही चाहिए और यदि सीता जीवित हों तो उन्हें बंदी बनाए रखने के लिए लंका से अधिक सुरक्षित स्थान और कौन-सा होगा; तथा लंका में सबसे अधिक सुरक्षित रावण का अपना महल है।

किंतु सीता वहाँ नहीं हैं हनुमान न केवल सीता को खोज पाए, वरन् उनके संबंध में उन्हें किसी प्रकार की सूचना तक नहीं मिली थी। न सीता के जीवित अथव मृत होने की; न लंका में वर्तमान होने अथवा न होने की। हनुमान का लंका में आना, न आना एक समान हो रहा था। उस राजभवनके भीतर स्थित हुए हनुमान्‌जी सीताजीके दर्शनके लिये उत्सुक हो क्रमश: लता-मण्डपोंमें, चित्रशालाओंमें तथा रात्रिकालिक विश्राम-गृहोंमें गये; परंतु वहाँ भी उन्हें परम सुन्दरी सीताका दर्शन नहीं हुआ।

रघुनन्दन श्रीरामकी प्रियतमा सीता जब वहाँ भी दिखायी न दीं, तब वे महाकपि हनुमान् इस प्रकार चिन्ता करने लगे- निश्चय ही अब मिथिलेशकुमारी सीता जीवित नहीं है; इसीलिये बहुत खोजनेपर भी वे मेरे दृष्टिपथमें नहीं आ रही हैं।

सीताका दर्शन न होनेसे मुझे अपने पुरुषार्थका फल नहीं प्राप्त हो सका। इधर वानरोंके साथ सुदीर्घकालतक इधर-उधर भ्रमण करके मैंने लौटनेकी अवधि भी बिता दी है; अत: अब मेरा सुग्रीवके पास जानेका भी मार्ग बंद हो गया; क्योंकि वह वानर बड़ा बलवान् और अत्यन्त कठोर दण्ड देनेवाला है।

मैंने रावणका सारा अन्त:पुर छान डाला, एक-एक करके रावणकी समस्त स्त्रियोंको भी देख लिया; किंतु अभीतक साध्वी सीताका दर्शन नहीं हुआ; अत: मेरा समुद्रलङ्घन का सारा परिश्रम व्यर्थ हो गया।

जब मैं लौटकर जाऊँगा, तब सारे वानर मिलकर मुझसे क्या कहेंगे; वे पूछेंगे, वीर। वहाँ जाकर तुमने क्या किया है- यह मुझे बताओ।

किंतु जनकनन्दिनी सीताको न देखकर मैं उन्हें क्या उत्तर दूँगा। सुग्रीवके निश्चित किये हुए समयका उल्लंघन कर देनेपर अब मैं निश्चय ही आमरण उपवास करूँगा।

इस प्रकार थोड़ी देरतक हताश-से होकर वे फिर सोचने लगे- हताश न होकर उत्साहको बनाये रखना ही सम्पत्तिका मूल कारण है। उत्साह ही परम सुखका हेतु है; अत: मैं पुन: उन स्थानोंमें सीताकी खोज करूँगा, जहाँ अबतक अनुसंधान नहीं किया गया था।

उत्साह ही प्राणियोंको सर्वदा सब प्रकारके कर्मोंमें प्रवृत्त करता है और वही उन्हें वे जो कुछ करते हैं उस कार्यमें सफलता प्रदान करता है। इसलिये अब मैं और भी उत्तम एवं उत्साहपूर्वक प्रयत्नके लिये चेष्टा करूँगा। रावणके द्वारा सुरक्षित जिन स्थानोंको अबतक नहीं देखा था, उनमें भी पता लगाऊँगा।

आपानशाला, पुष्पगृह, चित्रशाला, क्रीडागृह, गृहोद्यानकी गलियाँ और पुष्पक आदि विमान इन सबका तो मैंने चप्पाचप्पा देख डाला अब अन्यत्र खोज करूँगा। यह सोचकर उन्होंने पुन: खोजना आरम्भ किया।

वे भूमिके भीतर बने हुए घरों तहखानों में, चौराहोंपर बने हुए मण्डपोंमें तथा घरोंको लाँघकर उनसे थोड़ी ही दूरपर बने हुए विलास-भवनोंमें सीताकी खोज करने लगे। वे किसी घरके ऊपर चढ़ जाते, किसीसे नीचे कूद पड़ते, कहीं ठहर जाते और किसीको चलते-चलते ही देख लेते थे। घरोंके दरवाजोंको खोल देते, कहीं किंवाड़ें भिड़का देते, किसीके भीतर घुसकर देखते और फिर निकल आते थे। वे गिरते-पड़ते और उछलते हुए-से सर्वत्र खोज करने लगे।

हनुमान्‌जीने जगह-जगह नाना प्रकारके आकारवाली, कुरूप और विकट राक्षसियाँ देखीं; किंतु वहाँ उन्हें जानकीजीका दर्शन नहीं हुआ। संसारमें जिनके रूप-सौन्दर्यकी कहीं तुलना नहीं थी ऐसी बहुत-सी विद्याधरियाँ भी हनुमान्‌जीकी दृष्टिमें आयीं; परंतु वहाँ उन्हें श्रीरघुनाथको आनन्द प्रदान करनेवाली सीता नहीं दिखायी दीं। महाबाहु पवनकुमार हनुमान्‌को दूसरी बहुत-सी सुन्दरियाँ दिखायी दीं; परंतु सीताजी उनके देखनेमें नहीं आयी।

रावणके सभी घरोंमें एक बार पुन: चक्कर लगाकर जब कपिवर हनुमान्‌जीने जनकनन्दिनी सीताको नहीं देखा, तब वे मन-ही-मन इस प्रकार कहने लगे- मैंने श्रीरामका प्रिय करनेके लिये कई बार लमाको छान डाला; किंतु सर्वाङ्गसुन्दरी विदेहनन्दिनी सीता मुझे कहीं नहीं दिखायी देती हैं। मैंने यहाँके छोटे तालाब, पोखरे, सरोवर, सरिताएँ, नदियाँ, पानीके आस-पासके जंगल तथा दुर्गम पहाड़- सब देख डाले। इस नगरके आसपासकी सारी भूमि खोज डाली; किंतु कहीं भी मुझे जानकीजीका दर्शन नहीं हुआ। अथवा यह भी मालूम होता है कि रावणके प्रबल वेग और उसकी भुजाओंके दृढ़ बन्धनसे पीड़ित होकर विशाललोचना आर्या सीताने अपने प्राणोंका परित्याग कर दिया है। ऐसा भी हो सकता है कि जिस समय रावण उन्हें समुद्रके ऊपर होकर ला रहा हो, उस समय जनककुमारी सीता छटपटाकर समुद्रमें गिर पड़ी हों। अथवा ऐसा तो नहीं हुआ कि अपने शीलकी रक्षामें तत्पर हुई किसी सहायक बन्धुकी सहायतासे वञ्चित तपस्विनी सीताको इस नीच रावणने ही खा लिया हो अथवा मनमें दुष्ट भावना रखनेवाली राक्षसराज रावणकी पत्नियोंने ही कजरारे नेत्रोंवाली साध्वी सीताको अपना आहार बना लिया होगा।

अथवा मेरी समझमें यह आता है कि वे रावणके ही किसी गुप्त गृहमें छिपाकर रक्खी गयी हैं। हाय। वहाँ वह बाला पिंजरेमें बंद हुई मैनाकी तरह बारंबार आर्तनाद करती होगी। जो जनकके कुलमें उत्पन्न हुई हैं और श्रीरामकी धर्मपत्नी हैं, वे नील कमलके-से नेत्रोंवाली सुमध्यमा सीता रावणके अधीन कैसे हो सकती हैं ?

जनककिशोरी सीता चाहे गुप्त गृहमें अदृश्य करके रखी गयी हों, चाहे समुद्रमें गिरकर प्राणोंसे हाथ धो बैठी हों अथवा श्रीरामजीके विरहका कष्ट न सह सकनेके कारण उन्होंने मृत्युकी शरण ली हो, किसी भी दशामें श्रीरामजी को इस बातकी सूचना देना उचित न होगा; क्योंकि वे अपनी पत्नीको बहुत चाहते हैं।

इस समाचारके बतानेमें भी दोष है और न बतानेमें भी दोषकी सम्भावना है, ऐसी दशामें किस उपायसे काम लेना चाहिये ? मेरे लिये तो बताना और न बताना दोनों ही दुष्कर प्रतीत होते हैं। किष्किन्धामें पहुँचनेपर मुझसे मिलकर सुग्रीव, दूसरे-दूसरे वानर तथा वे दोनों

दशरथराजकुमार भी क्या कहेंगे ? यदि वहाँ जाकर मैं श्रीरामसे यह कठोर बात कह दूँ कि मुझे सीताका दर्शन नहीं हुआ तो वे प्राणोंका परित्याग कर देंगे। उन्हें संकटमें पड़कर प्राणोंके परित्यागका संकल्प करते देख उनके प्रति अत्यन्त अनुराग रखनेवाले बुद्धिमान् लक्ष्मण भी जीवित नहीं रहेंगे। अपने इन दो भाइयोंके विनाशका समाचार सुनकर भरत भी प्राण त्याग देंगे और भरतकी मृत्यु देखकर शत्रुघ्न भी जीवित नहीं रह सकेंगे। इस प्रकार चारों पुत्रोंकी मृत्यु हुई देख कौशल्या सुमित्रा और कैकेयी- ये तीनों माताएँ भी निस्संदेह प्राण दे देंगी।

इसलिये मैं यहाँसे किष्किन्धापुरीको तो नहीं जाऊँगा। मिथिलेशकुमारी सीताको देखे बिना मैं सुग्रीवका भी दर्शन नहीं कर सकूँगा।

जानकीका दर्शन न मिलनेपर मैं यहाँ वानप्रस्थी हो जाऊँगा। मेरे हाथपर अपने-आप जो फल आदि खाद्य वस्तु प्राप्त हो जायगी, उसीको खाकर रहूँगा। या परेच्छासे मेरे मुँहमें जो फल आदि खाद्य वस्तु पड़ जायगी, उसीसे निर्वाह करूँगा तथा शौच, संतोष आदि नियमोंके पालनपूर्वक वृक्षके नीचे निवास करूँगा।

यदि मुझे जानकीका दर्शन नहीं हुआ तो मैं खुशी-खुशी जल-समाधि ले लूँगा। मेरे विचारसे इस तरह जलप्रवेश करके परलोकगमन करना ऋषियोंकी दृष्टिमें भी उत्तम ही है। जिसका प्रारम्भ शुभ है, ऐसी सुभगा, यशस्विनी और मेरी कीर्तिमालारूपा यह दीर्घरात्रि भी सीताको देखे बिना ही बीत चली। यदि सीताका पता लगाये बिना ही मैं लौट जाऊँ तो समस्त वानरोंसहित अङ्गद जीवित नहीं रहेंगे। इस जीवनका नाश कर देनेमें बहुत-से दोष हैं। जो पुरुष जीवित रहता है, वह कभी-न-कभी अवश्य कल्याण का भागी होता है; अत: मैं इन प्राणोंको धारण किये रहूँगा। जीवित रहनेपर अभीष्ट वस्तु अथवा सुखकी प्राप्ति अवश्यम्भावी है। इस तरह मनमें अनेक प्रकारके दु:ख धारण किये कपिकुञ्जर हनुमानजी शोकका पार न पा सके। तदनन्तर धैर्यवान् कपिश्रेष्ठ हनुमान्ने पराक्रमका सहारा लेकर सोचा- अथवा महाबली दशमुख रावणका ही वध क्यों न कर डालूँ। भले ही सीताका अपहरण हो गया हो, इस रावणको मार डालनेसे उस वैरका भरपूर बदला सध जायगा। इस प्रकार सीताजीको न पाकर वे चिन्तामें निमग्न हो गये। उनका मन सीताके ध्यान और शोकमें डूब गया। जबतक मैं यशस्विनी श्रीराम-पत्नी सीताका दर्शन न कर लूँगा, तबतक इस लमापुरीमें बारंबार उनकी खोज करता रहूँगा।

किंतु जैसे ही हनुमान को अपनी भूख याद आती, वे और भी तल्लीनता से खोज में लग जाते। भोजन का न अवसर था, न अवकाश। काम में लगे रहने से भूख विस्मृत रहती थी। इसलिए उन्हें चलते रहना चाहिए, आँखों से देखते जाना चाहिए और मस्तिष्क से सोचते जाना चाहिए कौन-सी ऐसी स्त्री है, जो सीता हो सकती है। सहसा हनुमान को स्वयं अपने-आप पर हँसी आ गई। विचित्र हैं वे भी। वे एक ऐसी स्त्री को खोज रहे हैं, जिसको वे पहचानते तक नहीं। कल संध्या से अब तक लंका में उन्होंने सहस्त्रों स्त्रियाँ देखी हैं। उनमें प्रत्येक वय की असंख्य स्त्रियाँ थीं। उनमें सैकड़ों असाधारण सुंदरियाँ भी थीं सम्भव है कि उन्हीं में से कोई सीता भी रही हो। वे क्यों यह मानकर चल रहे हैं कि सीता जहाँ कहीं भी होंगी, बंदिनी ही होंगी- वे निरंतर रो-पीट ही रही होंगी क्या यह सम्भव नहीं है कि प्रतिदिन की पीड़ा और यातना से तंग आकर और अपनी मुक्ति की संभावना से निराश होकर, उन्होंने भाग्य से समझौता कर लिया हो। वे रावण के अंत:पुर में किसी भी रूप में वर्तमान हो सकती हैं- रानी से दासी तक, किसी भी रूप में तो वे किसी से पूछ क्यों नहीं देते ? ऐसे ही व्यर्थ भटकने का लाभ ? पूछ लें ? यदि किसी को संदेह हो गया तो ऐसा भरोसे का आदमी कहाँ मिलेगा ?

अद्‌भुत भवन था वह लमाकी दृष्टिसे। आञ्जनेय उसे देखकर विस्मयमें पड़े सोचने लगे- सम्भव है श्रीजनक-नन्दिनी यहाँ हों। उनको प्रसन्न करने के लिए दशग्रीवने उनके निवासकी अनुकूल व्यवस्था कर दी हो।

रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे। रघुनाथाय नाथाय सीताया: पतये नम:।।

यह शब्द कानमें पड़े और हनुमान अधिक चौंके। इस लमामें कोई सत्पुरुष वैष्णव ? इस ब्रह्ममुहूर्तके प्रारम्भमें जब कि सब राक्षस सो रहे हैं, निद्रासे उठते ही स्वाभाविक रूपसे श्रीरामका स्मरण करनेवाला कोई सत्पुरुष ही तो होगा।

इनसे परिचय करना चाहिये। हनुमानजी ने निश्चय किया- जो प्रभातमें- जागरणके प्रथम क्षणमें श्रीरामका स्मरण कर रहे हैं- वे राम-कार्यमें सहायता न भी कर सकें तो बाधक नहीं बनेंगे। कुछ सूचना इनसे मिल सकती है।

फिर वह विभीषण के घर आ गया। उसने उसे शोभायमान देखा। विभीषण भगवान हरि का परम भक्त था। उसमें रजोगुण और तमोगुण की प्रवृत्ति नहीं थी। उसकी प्रकृति दया, क्षमा, शान्ति, करुणा से युक्त और हिंसा से रहित थी। वह सत्त्वगुण का भंडार था, मान और मद से रहित था, शम-दम के लक्षणों से युक्त था। उसका संकल्प शुभ था, हरि-चरणों में उसकी अभिलाषा थी, वह विषय-संग से मुक्त था। वह रात के समय हाथ में वाद्य यंत्र लेकर हरि-कीर्तन कर रहा था। हनुमान ने विभीषण की ऐसी हरि-भक्ति देखी, तो वहाँ वह विचार करने

लगा। यह जो राक्षस-वंश में कोई श्रेष्ठ हरि भक्त है, निश्चय ही आश्चर्य है। जैसे कौओं के कुल में कोयल उत्पन्न होती है, अथवा बाँस के वन में कपूर होता है, अथवा विष्णु-स्वरूप अश्वत्थ पीपल वृक्ष कौए की विष्ठा में घिरे हुए उत्पन्न होता है, वैसे ही असुर-वंश में यह कोई भक्त शिरोमणि राजा उत्पन्न हुआ है। यह विभीषण समस्त सद्गुणों से विभूषित हरि-भक्त है। उसे देखकर हनुमान प्रसन्न हो गया और उसने मन में सोचा। जब लंका में राम आएँगे, तो इनका काम करेंगे। वे रावण को मारकर निश्चय ही इन्हें राज्य देंगे।

जय श्रीसीताराम हनुमानजीने ब्रह्मचारी ब्राह्मणका वेश बनाया और द्वारके समीप जाकर सामान्य स्वरमें पुकारा। उच्चध्वनि करना यहाँ असामयिक होता।

हनुमान्‌जीने उस रावण को शयन किये देखा; परन्तु महलमें जानकीजी नहीं दिखायी दीं। फिर एक सुन्दर महल दिखायी दिया वहाँ उसमें भगवान्‌का एक अलग मन्दिर बना हुआ था।

वह महल श्रीरामके आयुध धनुष-बाण के चिन्होंसे अमित था, उसकी शोभा वर्णन नहीं की जा सकती। वहाँ नवीन-नवीन तुलसीके वृक्ष-समूहोंको देखकर कपिराज श्रीहनुमान्‌जी हर्षित हुए। लमा तो राक्षसोंके समूहका निवासस्थान है। यहाँ सज्जन (साधु पुरुष) का निवास कहाँ ? हनुमान्‌जी मनमें इस प्रकार तर्क करने लगे। उसी समय विभीषणजी जागे।

विभीषणने रामनामका स्मरण उच्चारण किया। हनुमान्‌जीने उन्हें सज्जन जाना और हृदयमें हर्षित हुए। हनुमान्‌जीने विचार कि इनसे हठ करके अपनी ओरसे ही परिचय करूँगा, क्योंकि साधुसे कार्यकी हानि नहीं होती प्रत्युत लाभ ही होता है।

ब्राह्मणका रूप धरकर हनुमान्‌जीने उन्हें वचन सुनाये पुकारा। सुनते ही विभीषणजी उठकर वहाँ आये। प्रणाम करके कुशल पूछी और कहा कि हे ब्राह्मणदेव। अपनी कथा समझाकर कहिये।

क्या आप हरिभक्तोंमेंसे कोई हैं ? क्योंकि आपको देखकर मेरे हृदयमें अत्यन्त प्रेम उमड़ रहा है। अथवा क्या आप दीनोंसे प्रेम करनेवाले स्वयं श्रीरामजी ही हैं, जो मुझे बड़भागी बनाने (घर-बैठे दर्शन देकर कृतार्थ करने) आये हैं ?

तब हनुमान्‌जीने श्रीरामकी सारी कथा कहकर अपना नाम बताया। सुनते ही दोनोंके शरीर पुलकित हो गये और श्रीरामके गुणसमूहोंका स्मरण करके दोनोंके मन प्रेम और आनन्दमें मग्न हो गये।

विभीषणजीने कहा- हे पवनपुत्र। मेरी रहनी सुनो। मैं यहाँ वैसे ही रहता हूँ, जैसे दाँतोंके बीचमें बेचारी जीभ। हे तात ! मुझे अनाथ जानकर सूर्यकुलके नाथ श्रीराम क्या कभी मुझपर कृपा करेंगे ?

मेरा तामसी (राक्षस) शरीर होनेसे साधन तो कुछ बनता नहीं और न मनमें श्रीरामके चरणकमलोंमें प्रेम ही है। परन्तु हे हनुमान ! अब मुझे विश्वास हो गया कि श्रीरामकी मुझपर कृपा है; क्योंकि हरिकी कृपाके बिना संत नहीं मिलते।

जब श्रीरघुवीरने कृपा की है, तभी तो आपने मुझे हठ करके अपनी ओरसे दर्शन दिये हैं। हनुमान्‌जीने कहा- हे विभीषणजी ! सुनिये, प्रभुकी यही रीति है कि वे सेवकपर सदा ही प्रेम किया करते हैं।

भला कहिये, मैं ही कौन बड़ा कुलीन हूँ ? जातिका चञ्चल वानर हूँ और सब प्रकारसे नीच हूँ। प्रात:काल जो हमलोगों (बंदरों) का नाम ले ले तो उस दिन उसे भोजन आहार न मिले।

हे सखा ! सुनिये, मैं ऐसा अधम हूँ; पर श्रीरामने तो मुझपर भी कृपा ही की है। भगवान्‌के गुणोंका स्मरण करके हनुमान्‌जीके दोनों नेत्रोंमें प्रेमाश्रुओंका जल भर आया।

जो जानते हुए भी ऐसे स्वामी श्रीरघुनाथजी को भुलाकर विषयोंके पीछे भटकते फिरते हैं, वे दुखी क्यों न हों ? इस प्रकार श्रीरामके गुणसमूहोंको कहते हुए उन्होंने अनिर्वचनीय परम शान्ति प्राप्त की।

विभीषण चौंके- रावणकी जय-जयकार जहाँ गूँजती है, उस लमामें श्रीसीतारामकी जय करनेवाला कौन ? वे उठकर शीघ्रतापूर्वक द्वारपर आये। एक अपरिचित ब्रह्मचारी ब्राह्मणको देखकर समझ गये कि ये कोई असाधारण पुरुष हैं। यह वेश कृत्रिम हो सकता है। जहाँ सुर भी आनेका साहस नहीं कर सकते, समुद्रसे घिरी उस लमामें कोई सामान्य ब्राह्मण आवे, असम्भव बात। केवल दिव्य लोकोंके कोई तप:सिद्ध हों तो लेकिन दशग्रीवसे वे लोग भी डरते हैं।

दशग्रीवका कनिष्ठ अनुज विभीषण श्रीचरणोंमें प्रणाम करता है। विभीषणने अञ्जलि बाँधकर मस्तक झुकाया- विप्रवर। आप कौन हैं ? कैसे अनुकम्पा की आपने इस सेवकपर ? मैं कोई सेवा कर सकूँ तो अपना सौभाग्य मानूँगा। थोड़े ही समयमें यह स्थान असुरक्षित

हो जायगा। आप भीतर पधारनेकी कृपा करें।

ऐसे विकट स्थानपर आनेवाला अत्यन्त आवश्यक कार्यसे ही आया होगा। आतिथ्यमें समय नष्ट करके उसकी सुरक्षा, संदिग्ध नहीं बनानी थी। अत: विभीषण ने आतिथ्य स्वीकार करनेका आग्रह अधिक नहीं किया।

आप जिनका स्मरण करते रहते हैं निद्रा त्यागते ही जिनका स्मरण किया, उनका स्मरण जीवनका अभिन्न अङ्ग न बन गया होता तो निद्रा टूटते ही स्वयं नहीं आता। मैं उन्हीं श्रीदशरथ-नन्दन श्रीरामका दूत, पवनपुत्र हनुमान हूँ। हनुमानजीने भी विप्रवेश त्यागकर अपना रूप धारण कर लिया- आपके अग्रज श्रीजनक-नन्दिनीका अपहरण कर लाये हैं। मैं अपने स्वामीकी आज्ञासे उनका पता लगाने आया हूँ मुझे उनके दर्शन करने हैं। वे कहाँ हैं ? कैसे उन तक पहुँचा जा सकता है ? आप कुछ सहायता कर सकते हैं ? एक बात और, इस पुरीमें आपकी यह सात्विकता, संयम, भगवद्भक्ति चल कैसे पाती है ?

आप अपने आराध्यकी अपार शक्ति, अहैतुकी कृपाका प्रभाव जानते हैं। विभीषणने विनयपूर्वक कहा- राक्षसेन्द्रका मैं अनुज हूँ, अत: दूसरा कोई मुझे छेड़ने, सतानेका साहस नहीं कर सकता। आपके सर्व-उर-प्रेरक आराध्यने दुर्दान्त दशग्रीवको सुझा दिया कि उसे अपनी पुरीकी, परिवारकी व्यवस्थाके लिए भी एक शान्त, निष्पक्ष, संयमी, स्वार्थरहित व्यक्तिकी आवश्यकता है। मैं इन गुणोंसे युक्त तो नहीं हूँ; किंतु लंमापतिको और दूसरोंको भी ऐसा लगता है। अत: वे रहन-सहनको सह लेते हैं। मैं भी यथाशक्ति उनकी सेवा करता हूँ। मेरी स्थिति वैसी है, जैसे दाँतोंके मध्य जीभ। मुझे सावधान रहना पड़ता है और वे प्रयत्न करके मुझे सताते नहीं।

हनुमानजी। मुझ अधम असुरपर भी कभी श्रीरघुनाथ कृपा करेंगे ? यह राक्षस भी कभी उनका चरण-दर्शन पा सकेगा ? विभीषणका कण्ठ भर आया। वे अनन्त कृपापारावार हैं। कृपा करना ही उनका स्वरूप है। शरणागतकी उपेक्षा उनके द्वारा सम्भव नहीं। हनुमान्‌जीने भी श्रद्धाशिथिल स्वरमें कहा- वे कहाँ अपनाने समय किसीकी जाति, कुल, वर्ण, विद्या, वैभव या सद्‌गुण, सदाचार, जप-तपादि साधन देखते हैं। मैं ही कौन-सा कुलीन हूँ। चपल वानर, शौच-शीलहीन; किंतु उन्होंने तो एक क्षण भी अपनानेमें नहीं लगाया।

अब मुझे भरोसा हो गया; क्योंकि आप मिले मुझे। विभीषण बोले- उनकी महती कृपाके बिना उनके निज्जन नहीं मिला करते। यदि मुझ राक्षसको अपनाना न होता तो वे सर्वसमर्थ आपको यहाँ क्यों भेजते।

मैं आया हूँ अम्बा सीताका समाचार लेने। हनुमानजी सावधान हुए। यहाँ सत्सङ्ग चल पड़ा तो समयका पता ही नहीं लगेगा। मैंने पूरी लमा देख ली; किंतु उन श्रीमैथिलीके दर्शन नहीं कर सका।

मैं भी साथ चलकर आपको वहाँ तक पहुँचानेमें असमर्थ हूँ। वहाँ कभी-कभी मेरी पत्नी जाती है। विभीषणने पता बतलाया- दशग्रीवके अन्त:पुरसे लगा अशोकोपवन है। वहाँ पहुँचनेका एक मार्ग राक्षसेन्द्रके अन्त:पुरसे है और दूसरा मार्ग राजसदनके बाह्य परकोटेके भीतरसे है। अशोकोपवन उच्च सुदृढ़ परिखासे घिरा है। सशस्त्र प्रहरी तथा राक्षसियाँ उसकी सावधानीसे रक्षा करती हैं। उसका दूसरा द्वार जो उसकी परिखामें है, प्रहरियों, सेविका राक्षसियोंके आवागमन के लिए है। लेकिन वह भी राजसदनके परकोटेके भीतर है। राजसदनके मुख्य द्वारमें प्रवेश किये बिना वहाँ तक पहुँचा नहीं जा सकता। राजसदनका मुख्य द्वार बहुत अधिक सुरक्षित है।

बहुत कठिन है, असम्भवप्राय। विभीषणके स्वरमें वेदना थी। उस स्वर्णकी सुचिक्कन परिखापर चढ़ना दुर्गम है। उसके द्वारपर आप प्रतीक्षा कर सकते हैं। भीतरसे कोई बाहर आना चाहेगा तो द्वार रात्रिमें खुलेगा। अन्यथा प्रभातसे पूर्व नहीं खुलेगा। उद्यानके मध्य सरोवर है। एक देवीका मन्दिर है। उससे थोड़ी दूरीपर विशाल शुशपा-वृक्ष है। समीप कई अशोक-तरु हैं। सीता उन्हींमे-से किसी तरुके मूलमें बैठी रहती है। वे रात्रिमें भी शयन नहीं करतीं। यद्यपि उनके लिये वहाँ एक उत्तम पर्णकुटी दशग्रीवने बनवा दी है; किंतु उसमें उन्होंने कभी प्रवेश नहीं किया। पत्नी सरमा कहती है कि सूर्य उनपर कभी प्रखर आतप नहीं डालता। वर्षाके मेघ उन्हें आर्द्र नहीं करते। शीतकालमें वायु उनके समीप उष्ण बना रहता है। विभीषणने बतलाया- दशग्रीव इसे अपना प्रताप मानता है। सुरोंको उसने सेवक बना रखा है। लेकिन पत्नी उन देवीके तपका प्रभाव मानती है इसे।

जय श्रीसीताराम। हनुमानजीने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाया। उनके लिए अब समय बहुत कम था। जब वे अंगुष्ठ बराबर बनकर दौड़ चले, विभीषण विश्वस्त हो गये- अवश्य ये महाप्राण सफल होंगे। इनके इस आकारपर वहाँ कौन ध्यान देने चला है।

मन-ही-मन उन्होंने हनुमानजीकी मङ्गल-कामना की। लेकिन विभीषण भी अनुमान नहीं लगा सकते थे कि हनुमानजी कितनी सरलतासे सफल होनेवाले है। तुम राक्षसेन्द्रके द्वारपर शीघ्र चले जाओ। विभीषणने लौटते ही अपने विश्वस्त अनुचरको आदेश किया-

वहाँ यदि कोई नवीन सन्देश आवे, कोई अपरिचित आ जाय या किसी बाह्य व्यक्तिकी कोई चर्चा हो तो मुझे तत्काल सूचना देना।

अपने स्नान-पूजनादि दैनिक कृत्य भी विभीषणने शीघ्र सम्पन्न किये; किंतु राजसभामें वे शीघ्र नहीं जा सकते थे। या तो दशग्रीव बुलाये अथवा अपने नित्यके समयपर जाया जाय। शीघ्रता करनेसे उनपर सन्देह किया जा सकता था।

४) अशोक वाटिका में सीता- पूछ ही सकें, तो यह क्यों न पूछ लें कि अशोक वाटिका किधर है ? चल, हनुमान, चल। पूछने के पश्चात् कहीं इस भटकन का अंत रावण के कारागार में न हो? हनुमान पवन-गति से आगे बढ़ते जा रहे थे। कुछ और घट जाए, उससे पहले ही उन्हें अशोक वाटिका में पहुँच जाना चाहिए। यदि सचमुच ही कहीं वहाँ सीता बंदिनी हैं, तो उन तक पहुँचकर, हनुमान को उनसे कुछ वार्तालाप कर लेना चाहिए। ऐसा न हो कि विलंब करते रहें और जानकी को वहाँ से हटा, रावण कहीं और छिपा दे। उन्होंने इधर-उधर दृष्टि फेरी-निकट ही अशोक के सघन वृक्षों का एक झुरमुट-सा था। इस वाटिका में अशोक वृक्षों के ऐसे अनेक झुरमुट होंगे- उन्होंने सोचा- तभी तो इस वाटिका का नाम अशोक वाटिका रखा गया है। छिपे रहने के लिए यह वृक्ष बहुत अच्छा आश्रय है।

हनुमान तत्काल उस झुरमुट में जा घुसे और बिना आहट किए, स्त्रियों के स्वरों की दिशा वाले सिरे के अंतिम वृक्ष के ऊपर चढ़कर बैठ गए। स्वयं को भली प्रकार छिपाकर और सब ओर से संतुष्ट होकर उन्होंने उस दिशा में दृष्टि डाली। वहाँ तो सब कुछ अद्‌भुत था थोड़ी दूरी पर एक छोटी-सी कुटिया थी, उसके द्वार पर एक अशोक वृक्ष था, जिसके चारों ओर ईंटों का एक वृत्ताकार चबूतरा बना हुआ था और उस पर कोई स्त्री बैठी हुई थी। उसने एक साधारण श्वेत साड़ी पहन रखी थी। सिर को उसने उसी साड़ी से भली प्रकार ढँक रखा था; किंतु इधर-उधर से कुछ केश बाहर निकले हुए थे- समझना कठिन था कि उसने एक वेणी कर रखी थी या सारे केश खुले थे। उसने सिर झुका रखा था, अत: उसके चेहरे के भावों को देखना कठिन था। अनेक स्त्रियों ने उसे घेर रखा था और चख-चख मचा रखी थी। उन सम्मिलित स्वरों में कोई-कोई शब्द ही सुनाई पड़ रहा था- पूरी बात स्पष्ट नहीं थी।

इधर यह बहुत बड़ी अशोकवाटिका है, इसके भीतर बड़े-बड़े वृक्ष हैं। इसमें मैंने अभीतक अनुसंधान नहीं किया है, अत: अब इसीमें चलकर ढूँढूँगा। महातेजस्वी हनुमानजी एक मुहूर्ततक इसी प्रकार विचार करते रहे। तत्पश्चात् मन-ही-मन सीताजीका ध्यान करके वे रावणके महलसे कूद पड़े और अशोकवाटिकाकी चहारदीवारीपर चढ़ गये। वह विचित्र वाटिका सोने और चाँदीके समान वर्णवाले वृक्षोंद्वारा सब ओरसे घिरी हुई थी। उसमें नाना प्रकारके पक्षी कलरव कर रहे थे, जिससे वह सारी वाटिका गूँज रही थी। उसके भीतर प्रवेश करके बलवान् हनुमानने उसका निरीक्षण किया। भाँति-भाँतिके विहंगमों और मृगसमूहोंसे उसकी विचित्र शोभा हो रही थी। वह विचित्र काननोंसे अलंकृत थी और नवोदित सूर्यके समान अरुण रंगकी दिखायी देती थी।

उस अशोकवाटिकामें विश्वकर्माके बनाये हुए बड़े-बड़े महल और कृत्रिम कानन सब ओरसे उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। नाना प्रकारके मृगसमूहोंसे उसकी विचित्र शोभा हो रही थी। उस वाटिकामें विचित्र वन-उपवन शोभा दे रहे थे।

तदनन्तर महाकपि हनुमान्‌ने एक सुवर्णमयी शिंशपा अशोक का वृक्ष देखा, जो बहुत-से लतावितानों और अगणित पत्तोंसे व्याप्त था। वह वृक्ष भी सब ओरसे सुवर्णमयी वेदिकाओंसे घिरा था। महान् वेगशाली हनुमान्‌जी पत्तोंसे हरी-भरी उस शिंशपापर यह सोचकर चढ़ गये कि मैं यहीसे श्रीरामके दर्शनके लिये उत्सुक हुई उन विदेहनन्दिनी सीताको देखूँगा, जो दु:खसे आतुर हो इच्छानुसार इधर-उधर जाती-आती होगी। दुरात्मा रावणकी यह अशोकवाटिका बड़ी ही रमणीय है। चन्दन, चम्पा और मौलसिरीके वृक्ष इसकी शोभा बढ़ा रहे हैं। इधर यह पक्षियोंसे सेवित कमलमण्डित सरोवर भी बड़ा सुन्दर है। राजरानी जानकी इसके तटपर निश्चय ही आती होंगी।

ऐसा सोचते हुए महात्मा हनुमान्‌जी नरेन्द्रपत्नी सीताके शुभागमनकी प्रतीक्षामें तत्पर हो सुन्दर फूलोंसे सुशोभित तथा घने पत्तेवाले उस अशोकवृक्षपर छिपे रहकर उस सम्पूर्ण वनपर दृष्टिपात करते रहे।

अशोकोपवनमें प्रवेशके लिए कोई प्रयास नहीं करना पड़ा हनुमानजीको। वे राजभवनके द्वारमें-से पहिलेकी ही भाँति भीतर चले गये। राक्षस प्रहरी भी उनींदे हो रहे थे। भवनके मध्यम कक्षमें गये बिना बाह्य कक्षसे अन्त:पुरकी ओर घूमे तो उद्यानकी परिखा आ गयी। उसपर कूदकर पहुँचनेमें उन्हें क्या कठिनाई थीं कि द्वार खुलनेकी प्रतीक्षा करते। स्वर्ण परिखापर एक कोई अंगुष्ठ प्रमाण स्वर्णिम प्राणी भी है, इसे कोई भी लक्षित नहीं कर सकता था।

त्रिभुवनजयी दशग्रीवका वह अत्यन्त प्रिय उद्यान था। वायुदेव उसकी स्वच्छता रखते थे। मेघोंको ठीक समयपर उसकी सिंचाई

करते रहना था। उसमें स्वर्गीय उद्यानके पुष्पतरु, लताओंके कुञ्ज और स्वर्णिम पत्रोंके वृक्ष लगे थे। सुस्वादु फलोंके वृक्षोंमें सब ऋतुओंमें पक्व फल मिलते थे। उसके सरोवरमें, वापियोंमें नाना रङ्गोंके कमल थे और रात्रिमें अनेक रङ्गोंकी कुमुदिनियाँ खिली थीं। जल-पक्षी सरोवरमें क्रीड़ा कर रहे थे। क्रौञ्च, चक्रबाक, चकोर, हंस सभी थे। उद्यानके वृक्षोंपर अब कोकिल कुहकने लगी थी। मयूरोंकी केकाध्वनि उठती थी। पपीहे बोल रहे थे। इन्द्रका नन्दन वन भी इतना सुन्दर नहीं था।

दशग्रीवके अंत:पुरकी रमणियोंका, रावणका यह क्रीडोपवन था। सशस्त्र राक्षसियाँ ही उसकी देखभाल करती थीं; किंतु उद्यानके बाहर प्रथम परिखामें बहुतसे राक्षस उद्यान-रक्षक थे। उन्हें चाहे जब पुकारा जा सकता था द्वार खोलकर। सामान्यत: किसी पुरुषका- रावणके पुत्रोंका भी इसमें प्रवेश वर्जित था।

उद्यानके मध्य सरोवरके समीप विशाल मन्दिर था देवीका। उसके तोरण, स्तम्भ, भित्तियाँ- सब मणिजटित स्वर्णसे बनी थीं। सरोवरसे कुछ दूर, उद्यानके एक ओर एक सुन्दर पर्णकुटी भी दीखी और पर्याप्त विशाल शिंशुपा-वृक्ष दीख गया। उस ज्योत्स्ना- धवल रजनीमें उद्यानका सौन्दर्य देखनेका अवकाश नहीं था। शिंशुपा-मूलमें राक्षसियोंसे घिरी श्रीवैदेहीको ज्योति-रेखाके समान देखते ही हनुमान परिखापर-से उद्यानमें कूद गये।

वह अशोकवन देवोद्यान नन्दनके समान आनन्ददायी, कुबेरके चैत्ररथ वनके समान विचित्र तथा उन दोनोंसे भी बढ़कर अचिन्त्य, दिव्य एवं रमणीय शोभासे सम्पन्न था। उस अशोकवाटिकामें वानर-शिरोमणि हनुमान्‌ने थोड़ी ही दूरपर एक गोलाकार ऊँचा मन्दिर देखा, जिसके भीतर एक हजार खंभे लगे हुए थें वह मन्दिर कैलास पर्वतके समान श्वेत वर्णका था। उसमें मूँगेकी सीढ़ियाँ बनी थीं तथा तपाये हुए सोनेकी वेदियाँ बनायी गयी थीं। वह निर्मल प्रासाद अपनी शोभासे देदीप्यमान-सा हो रहा था। दर्शकोंकी दृष्टिमें चकाचौंध-सा पैदा कर देता था और बहुत ऊँचा होनेके कारण आकाशमें रेखा खींचता-सा जान पड़ता था।

वह चैत्यप्रासाद (राक्षसोंके कुलदेवता का मन्दिर) देखनेके अनन्तर उनकी दृष्टि वहाँ एक सुन्दरी स्त्रीपर पड़ी, जो मलिन वस्त्र धारण किये राक्षसियोंसे घिरी हुई बैठी थी। वह उपवास करनेके कारण अत्यन्त दुर्बल और दीन दिखायी देती थी तथा बारंबार सिसक रही थी। शुक्लपक्षके आरम्भमें चन्द्रमाकी कला-जैसी निर्मल और कृश दिखायी देती है, वैसी ही वह भी दृष्टिगोचर होती थी।

धुँधली-सी स्मृतिके आधारपर कुछ-कुछ पहचाने जानेवाले अपने रूपसे वह सुन्दर प्रभा बिखेर रही थी और धुएँसे ढकी हुई अग्निकी ज्वालाके समान जान पड़ती थी। एक ही पीले रंगके पुराने रेशमी वस्त्रसे उसका शरीर ढका हुआ था। वह मलिन, अलंकारशून्य होनेके कारण कमलोंसे रहित पुष्करिणीके समान श्रीहीन दिखायी देती थी। वह तपस्विनी मंगलग्रहसे आक्रान्त रोहिणीके समान शोकसे पीड़ित, दु:खसे संतप्त और सर्वथा क्षीणकाय हो रही थी। उपवाससे दुर्बल हुई उस दुखिया नारीके मुँहपर आँसुओंकी धारा बह रही थी। वह शोक और चिन्तामें मग्न हो दीन दशामें पड़ी हुई थी एवं निरन्तर दु:खमें ही डूबी रहती थी।

वह अपने प्रियजनोंको तो देख नहीं पाती थी। उसकी दृष्टिके समक्ष सदा राक्षसियोंका समूह ही बैठा रहता था। जैसे कोई मृगी अपने यूथसे बिछुड़कर कुत्तोंके झुंडसे घिर गयी हो, वही दशा उसकी भी हो रही थी।

वह सुख भोगनेके योग्य थी, किंतु दु:खसे संतप्त हो रही थी। इसके पहले उसे संकटोंका कोई अनुभव नहीं था। उस विशाल नेत्रोंवाली, अत्यन्त मलिन और क्षीणकाय अबलाका अवलोकन करके युक्तियुक्त कारणोंद्वारा हनुमान्‌जी ने यह अनुमान किया कि हो-न-हो यही सीता है। इच्छानुसार रूप धारण करनेवाला वह राक्षस जब सीताजीको हरकर ले जा रहा था, उस दिन जिस रूपमें उनका दर्शन हुआ था, कल्याणी नारी भी वैसे ही रूपसे युक्त दिखायी देती है।

कमलनयनी सीता कामदेवकी प्रेयसी रतिके समान सुन्दरी थी, पूर्ण चन्द्रमाकी प्रभाके समान समस्त जगत्‌के लिये प्रिय थी। उनका शरीर बहुत ही सुन्दर था। वे नियमपरायणा तापसीके समान भूमिपर बैठी थी। यद्यपि वे स्वभावसे ही भीरु और चिन्ताके कारण बारंबार लंबी साँस खींचती थीं तो भी दूसरोंके लिये नागिनके समान भयंकर थीं।

वे संदिग्ध अर्थवाली स्मृति, भूतलपर गिरी हुई ऋद्धि, टूटी हुई श्रद्धा, भग्न हुई आशा, विघ्नयुक्त सिद्धि, कलुषित बुद्धि और मिथ्या कलंकसे भ्रष्ट हुई कीर्तिके समान जान पड़ती थी। अलंकार तथा स्नान-अनुलेपन आदि अङ्गसंस्कारसे रहित हुई सीता व्याकरणादिजनित संस्कारसे शून्य होनेके कारण अर्थान्तरको प्राप्त हुई वाणीके समान पहचानी नहीं जा रही थीं। हनुमान्‌जीने बड़े कष्टसे उन्हें पहचाना।

कहीं ये देवी वैदेही तो नहीं ? हनुमान का मन गेंद के समान उछलने लगा। उन्होंने वृक्ष की डाली को कसकर पकड़ लिया; कहीं अपने

संधान की सफलता की संभावना से चक्कर खाकर ही न गिर पड़ें।

उन विशाललोचना सती-साध्वी राजकुमारीको देखकर उन्होंने कारणों (युक्तियों) द्वारा उपपादन करते हुए मनमें निश्चय किया कि यही सीता हैं। ये वे ही सीता हैं, जिनके लिये श्रीराम इस जगत्‌में करुणा, दया, शोक और प्रेम इन चार कारणोंसे संतप्त होते रहते हैं।

एक स्त्री खो गयी, यह सोचकर उनके हृदयमें करुणा भर आती है। वह हमारे आश्रित थी, यह सोचकर वे दयासे द्रवित हो उठते हैं। मेरी पत्नी ही मुझसे बिछुड़ गयी, इसका विचार करके वे शोकसे व्याकुल हो उठते हैं तथा मेरी प्रियतमा मेरे पास नहीं रही, ऐसी भावना करके उनके हृदयमें प्रेमकी वेदना होने लगती है।

इन देवीका मन श्रीरघुनाथमें और श्रीरघुनाथका मन इनमें लगा हुआ है, इसलिये ये तथा धर्मात्मा श्रीराम जीवित हैं इनके मुहूर्तमात्र जीवनमें भी यही कारण है। इनके बिछुड़ जानेपर भी भगवान् श्रीराम जो अपने शरीरको धारण करते हैं, शोकसे शिथिल नहीं हो जाते हैं, यह उन्होंने अत्यन्त दुष्कर कार्य किया है। हनुमानजीने कहा- श्रीसीताजीका ऐसा कोई लक्षण बताएँ, जिसे मैं याद रख सकूँ।

तब प्रभुने हनुमानजीसे कहा- वे जहाँ होंगी वहाँ मेरा ध्यान करती होंगी, मेरा नाम-जप करती होंगी। हनुमान। सीताजी जहाँ विराजती होंगी, उस घरकी दीवालोंमें से भी श्रीराम, श्रीराम, श्रीराम की ध्वनि निकलती होगी। वे मेरे वियोगमें मेरे नामका सतत जप करती हैं और मेरा ध्यान करती हैं। वे यदि जंगलमें हो तो उस वृक्षमें से श्रीराम-श्रीराम-श्रीराम ऐसी ध्वनि निकलेगी। वही सीताजी हैं, ऐसा जानना। जहाँ पंचमहाभूत राम-नामका जप करें, वहीं समझना कि सीताजी हैं।

हनुमानजीने सीताजीको अशोक-वनमें इन्हीं लक्षणोंसे पहचाना है। श्रीसीताजी-का रामजीमें ऐसा प्रेम है, श्रीसीताजीकी ऐसी निष्ठा है, ऐसी पतिपरायणता है। श्रीसीताजीका पत्नी-धर्म अलौकिक है।

हनुमान एक ओरसे नन्ही गिलहरीके समान दौड़ते गये और उस शिशुपा-वृक्षपर चढ़ गये। ऊपरसे ही उन्होंने श्रीजनक-नन्दिनीके पावन पदोंमें मन-ही-मन प्रणाम किया। बहुत कठिनाईसे अपने हर्षके वेगको रोक सके। फिर भी अनेक बार अपनी पूंछ चूमी उन्होंने।

यही श्रीसीता हैं। इन्हींके लिए श्रीराम व्याकुल रहते हैं। पूरा निश्चय हो गया। वही फटा उत्तरीय, कृशगात्र, अविरल अश्रुधारा, नेत्रकमल अपने ही पदनखोंपर लगे और पल्लव-अधर हिलते-सम्भवत: आराध्यका नाम जपते। मनमें आया- धन्य हैं श्रीरामजी इनके बिना जीवित है। सृष्टिमें इतना भी सौन्दर्य सम्भव है, यह कल्पनासे परेकी बात है।

दशग्रीवपर दया आयी। उसकी पट्टमहिषी मन्दोदरी भी इनकी सेविका होने योग्य नहीं; किंतु वह राक्षसाधिप इन अग्नि-शिखामें पतङ्ग होकर भस्म ही हो सकता है। हनुमानने ताराका सौन्दर्य देखा था, जिसमें गरिमा थी, जैसे वह शासनके लिए ही उत्पन्न हुई हो। रुमाका सौंदर्य, सुकुमार वीरवधूटी जैसा और मन्दोदरीका सौन्दर्य मानो अत्यन्त मादक मदिरा हो; किंतु ये निखिल सृष्टि-सौन्दर्यकीमूर्ति- इनके श्रीविग्रहकी ओर तो दृष्टि ही नहीं उठती। इन्हें देखकर मन, शान्त, निर्विकार हो जाता है। दौड़कर इनके श्रीचरणोंमें सिर रख देनेको हृदय आतुर होता है। ये तो आराध्या हैं। दशग्रीव देख कैसे पाता है इनकी ओर ? रामकी शराग्नि अवश्य लमाके राक्षसोंकी आहुति चाहती है।

हनुमान्‌को अवसर अपेक्षित था। राक्षसियाँ हटें कहीं तो वे इन आराध्याको प्रणाम करें। इन्हें अपने स्वामीका सन्देश दें। राक्षसियाँ अनेकों थीं- सैकड़ों और सब भयमरा। कोई कमालिनी और कोई घटोदरी। भयानकमुखी, विकराल दष्टा, कोई बड़े-बड़े गोल नेत्रोंवाली, कोई एक छोटे, एक बड़े नेत्रकी, कोई ऐंचातानी, सब प्राय लाल, रुक्ष नेत्रा, उन्मुक्तकेशा, नरकपाल एवं अस्थिके आभूषण पहिने।

परम प्रशंसनीया सीता और गुणाभिराम श्रीरामकी प्रशंसा करके वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी फिर विचार करने लगे।

अहो। जिन्होंने गुरुजनोंसे शिक्षा पायी है, उन लक्ष्मणके बड़े भाई श्रीरामकी प्रियतमा पत्नी सीता भी यदि इस प्रकार दु:खसे आतुर हो रही हैं तो यह कहना पड़ता है कि कालका उल्लंङ्घन करना सभीके लिये अत्यन्त कठिन है।

जैसे वर्षा-ऋतु आनेपर भी देवी गङ्गा अधिक क्षुब्ध नहीं होती हैं, उसी प्रकार श्रीराम तथा बुद्धिमान् लक्ष्मणके अमोघ पराक्रमका निश्चित ज्ञान रखनेवाली देवी सीता भी शोकसे अधिक विचलित नहीं हो रही हैं।

इन्हीं विशाललोचना सीताके लिये भगवान् श्रीरामने महाबली बालिका वध किया और रावणके समान पराक्रमी कबन्धको भी मार गिराया। इन्हींके लिये श्रीरामने वनमें पराक्रम करके भयानक पराक्रमी राक्षस विराधको भी उसी प्रकार युद्धमें मार डाला, जैसे देवराज इन्द्रने शम्बरासुरका वध किया था। इन्हींके कारण आत्मज्ञानी श्रीरामने जनस्थानमें अपने अग्निशिखाके सदृश तेजस्वी बाणोंद्वारा भयानक कर्म करनेवाले चौदह हजार राक्षसोंको कालके गालमें भेज दिया और युद्धमें खर, त्रिशिरा तथा महातेजस्वी दूषणको भी मार

गिराया। वानरोंका वह दुर्लभ ऐश्वर्य, जो बालिके द्वारा सुरक्षित था, इन्हींके कारण विश्वविख्यात सुग्रीवको प्राप्त हुआ है। इन्हीं विशाललोचना सीताके लिये मैंने नदों और नदियोंके स्वामी श्रीमान् समुद्रका उल्लंङ्घन किया और इस लमापुरीको छान डाला है। इनके लिये तो यदि भगवान् श्रीराम समुद्रपर्यन्त पृथ्वी तथा सारे संसारको भी उलट देते तो भी वह मेरे विचारसे उचित ही होता।

एक ओर तीनों लोकोंका राज्य और दूसरी ओर जनककुमारी सीताको रखकर तुलना की जाय तो त्रिलोकीका सारा राज्य सीताकी एक कलाके बराबर भी नहीं हो सकता। जो परम पराक्रमी, श्रेष्ठ शील-स्वभाववाले और युद्धसे कभी पीछे न हटनेवाले थे, उन्हीं महाराज दशरथकी ये यशस्विनी ज्येष्ठ पुत्रवधू हैं। धर्मज्ञ, कृतज्ञ एवं आत्मज्ञानी भगवान् श्रीरामकी ये प्यारी पत्नी सीता इस समय राक्षसियोंके वशमें पड़ गयी हैं। ये केवल पतिप्रेमके कारण सारे भोगोंको लात मारकर विपत्तियोंका कुछ भी विचार न करके श्रीरघुनाथके साथ निर्जन वनमें चली आयी थी। वे ही ये सुवर्णके समान सुन्दर अङ्गवाली और सदा मुस्कराकर बात करनेवाली सुन्दरी सीता, जो अनर्थ भोगनेके योग्य नहीं थीं, इस यातनाको सहन करती हैं।

यद्यपि रावणने इन्हें बहुत कष्ट दिये हैं तो भी ये अपने शील, सदाचार एवं सतीत्वसे सम्पन्न हैं उसके वशीभूत नहीं हो सकती हैं। अतएव जैसे प्यासा मनुष्य पौंसलेपर जाना चाहता है, उसी प्रकार श्रीरघुनाथ इन्हें देखना चाहते हैं। जैसे राज्यसे भ्रष्ट हुआ राजा पुन: पृथ्वीका राज्य पाकर बहुत प्रसन्न होता है, उसी प्रकार उनकी पुन: प्राप्ति होनेसे श्रीरामको निश्चय ही बड़ी प्रसन्नता होगी।

ये न तो राक्षसियोंकी ओर देखती हैं और न इन फल-फूलवाले वृक्षोंपर ही दृष्टि डालती हैं, सर्वथा एकाग्रचित्त हो मनकी आँखोंसे केवल श्रीरामका ही निरन्तर दर्शन ध्यान करती हैं- इसमें संदेह नहीं है।

निश्चय ही पति नारीके लिये आभूषणकी अपेक्षा भी अधिक शोभाका हेतु है। ये सीता उन्हीं पतिदेवसे बिछुड़ गयी हैं, इसलिये शोभाके योग्य होनेपर भी शोभा नहीं पा रही हैं।

अहो। जो पृथ्वीके समान क्षमाशील और प्रफुल्ल कमलके समान नेत्रोंवाली हैं तथा श्रीराम और लक्ष्मणने जिनकी सदा रक्षा की है, वे ही सीता आज इस वृक्षके नीचे बैठी हैं और ये विकराल नेत्रोंवाली राक्षसियाँ इनकी रखवाली करती हैं।

हिमकी मारी हुई कमलिनीके समान इनकी शोभा नष्ट हो गयी है, दु:ख-पर-दु:ख उठानेके कारण अत्यन्त पीड़ित हो रही हैं तथा अपने सहचरसे बिछुड़ी हुई चकवीके समान पति-वियोगका कष्ट सहन करती हुई ये जनककिशोरी सीता बड़ी दयनीय दशाको पहुँच गयी हैं।

फूलोंके भारसे जिनकी डालियोंके अग्रभाग झुक गये हैं, वे अशोकवृक्ष इस समय सीतादेवीके लिये अत्यन्त शोक उत्पन्न कर रहे हैं तथा शिशिरका अन्त हो जानेसे वसन्तकी रातमें उदित हुए शीतल किरणोंवाले चन्द्रदेव भी इनके लिये अनेक सहस्र किरणोंसे प्रकाशित होनेवाले सूर्यदेवकी भाँति संताप दे रहे हैं। इस प्रकार विचार करते हुए बलवान् वानरश्रेष्ठ वेगशाली हनुमान्‌जी यह निश्चय करके कि ये ही सीता हैं उसी वृक्षपर बैठे रहे। वायुपुत्र हनुमान्‌जीने जब विदेहकुमारी सीताको देखनेके लिये अपनी दृष्टि दौड़ायी, तब उन्हें उनके पास ही बैठी हुई भयानक दृष्टिवाली बहुत-सी राक्षसियाँ दिखायी दीं।

उनमेंसे किसीके एक आँख थी तो दूसरीके एक कान। किसी-किसीके कान इतने बड़े थे कि वह उन्हें चादरकी भाँति ओढ़े हुए थीं। किसीके कान ही नहीं थे और किसीके कान ऐसे दिखायी देते थे मानो खूँटे गड़े हुए हों। किसी-किसीकी साँस लेनेवाली नाक उसके मस्तकपर थी। किसीका शरीर बहुत बड़ा था और किसीका बहुत उत्तम। किसीकी गर्दन पतली और बड़ी थी। किसीके केश उड़ गये थे और किसी-किसीके माथेपर केश उगे ही नहीं थे। कोई-कोई राक्षसी अपने शरीरके केशोंका ही कम्बल धारण किये हुए थी।

किसीके कान और ललाट बड़े-बड़े थे तो किसीके पेट और स्तन लंबे थे। किसीके ओठ बड़े होनेके कारण लटक रहे थे तो किसीके ठोड़ीमें ही सटे हुए थे। किसीका मुँह बड़ा था और किसीके घुटने। कोई नाटी, कोई लंबी, कोई कुबड़ी, कोई टेढ़ी-मेढ़ी, कोई बवनी, कोई विकराल, कोई टेढ़े मुँहवाली, कोई पीली आँखवाली और कोई विकट मुँहवाली थीं। कितनी ही राक्षसियाँ बिगड़े शरीरवाली, काली, पीली, क्रोध करनेवाली और कलह पसंद करनेवाली थीं उन सबने काले लोहेके बने हुए बड़े-बड़े शूल, कूट और मुद्गर धारण कर रक्ख थे।

कितनी ही राक्षसियोंके मुख सूअर, मृग, सिंह, भैंस, बकरी और सियारिनोंके समान थे। किन्हींके पैर हाथियोंके समान, किन्हींके ऊँटोंके समान और किन्हींके घोड़ोंके समान थे। किन्हीं-किन्हींके सिर कबन्धकी भाँति छातीमें स्थित थे; अत: गड्ढेके समान दिखायी देते थे अथवा किन्हीं-किन्हींके सिरमें गड्ढे थे। किन्हींके एक हाथ थे तो किन्हींके एक पैर। किन्हींके कान गदहोंके समान थे तो किन्हीके घोड़ोंके समान। किन्हीं-किन्हींके कान गौओं, हाथियों और सिंहोंके समान दृष्टिगोचर होते थे। किन्हींके हाथमें शूल थे तो किन्हींके

मुद्गर। कोई क्रोधी स्वभावकी थीं तो कोई कलहसे प्रेम रखती थीं। धुएँ-जैसे केश और विकृत मुखवाली कितनी ही विकराल राक्षसियाँ सदा मद्यपान किया करती थीं। मदिरा और मांस उन्हें सदा प्रिय थे।

जैसे कोई हथिनी अपने यूथसे अलग हो गयी हो, यूथपतिके स्नेहसे बँधी हो और उसे किसी सिंहने रोक लिया हो। रावणकी कैदमें पड़ी हुई सीताकी भी वैसी ही दशा थी। वे वर्षाकाल बीत जानेपर शरद-ऋतुके श्वेत बादलोंसे घिरी हुई चन्द्ररेखाके समान प्रतीत होती थीं। मैले और पुराने वस्त्रसे ढकी हुई मृगशावकनयनी भामिनी सीताको कपिवर हनुमान्‌ने उस अवस्थामें देखा।

उनके नेत्र मृगछौनोंके समान चञ्चल थे। वे डरी हुई मृगकन्याकी भाँति सब ओर सशम दृष्टिसे देख रही थीं। अपने उच्छ्वासोंसे पल्लवधारी वृक्षोंको दग्ध-सी करती जान पड़ती थी। शोकोंकी मूर्तिमती प्रतिमा-सी दिखायी देती थीं और दुःखकी उठी हुई तरंग-सी प्रतीत होती थीं। उनके सभी अङ्गोंका विभाग सुन्दर था। यद्यपि वे विरह-शोकसे दुर्बल हो गयी थीं तथापि आभूषणोंके बिना ही शोभा पाती थीं। इस अवस्थामें मिथिलेशकुमारी सीताको देखकर पवनपुत्र हनुमान्‌को उनका पता लग जानेके कारण अनुपम हर्ष प्राप्त हुआ।

मनोहर नेत्रवाली सीताको वहाँ देखकर हनुमान्‌जी हर्षके आँसू बहाने लगे। उन्होंने मन-ही-मन श्रीरघुनाथको नमस्कार किया। सीताके दर्शनसे उल्लसित हो श्रीराम और लक्ष्मणको नमस्कार करके पराक्रमी हनुमान् वहीं छिपे रहे।

तू राक्षसेश्वरको स्वीकार नहीं करती। मैं अभी तुझे निगल लूंगी। कोई मुख फाड़कर जैसे निगलने ही जा रही हो। कोई तलवार नासिकापर रखने लगती थी और कोई भाला या त्रिशूल वक्षसे लगाती थी। बड़ा क्रोध आया यह देखकर हनुमानको। जी चाहता था, कूद पड़ें और एक-एकको उठाकर समुद्रमें फेंक दें। रातके उस पिछले पहरमें छहों अङ्गोंसहित सम्पूर्ण वेदोंके विद्वान तथा श्रेष्ठ यज्ञोंद्वारा यजन करनेवाले ब्रह्म-राक्षसोंके घरमें वेदपाठकी ध्वनि होने लगी, जिसे हनुमान्‌जीने सुना।

रावणने सब प्रकारके आभूषण धारण किये और परम उत्तम शोभासे सम्पन्न हो उस अशोकवाटिकामें ही प्रवेश किया, जो सब प्रकारके फूल और फल देनेवाले भाँति-भाँतिके वृक्षोंसे सुशोभित थी। नाना प्रकारके पुष्प उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। बहुत-से सरोवरोंद्वारा वह वाटिका घिरी हुई थी। सदा मतवाले रहनेवाले परम अद्‌भुत पक्षियोंके कारण उसकी विचित्र शोभा होती थी। कितने ही नयनाभिराम क्रीडामृगोंसे भरी हुई वह वाटिका भाँति-भाँति के मृगसमूहोंसे व्याप्त थी। बहुत-से गिरे हुए फलोंके कारण वहाँकी भूमि ढक गयी थी। पुष्पवाटिकामें मणि और सुवर्णके फाटक लगे थे और उसके भीतर पंक्तिबद्ध वृक्ष बहुत दूरतक फैले हुए थे। वहाँकी गलियोंको देखता हुआ रावण उस वाटिकामें घुसा। जैसे देवताओं और गन्धर्वोंकी स्त्रियाँ देवराज इन्द्रके पीछे चलती हैं, उसी प्रकार अशोकवनमें जाते हुए पुलस्त्यनन्दन रावणके पीछे-पीछे लगभग एक सौ सुन्दरियाँ गयीं।

उन युवतियोंमेंसे किन्हींने सुवर्णमय दीपक ले रक्खे थे। किन्हींके हाथोंमें चँवर थे तो किन्हींके हाथोंमें ताड़के पंखे। कोई चतुर-चालाक युवती दाहिने हाथमें पेयरससे भरी हुई रत्ननिर्मित चमचमाती झारी लिये हुए थी। कोई दूसरी स्त्री सोनेके डंडेसे युक्त और पूर्ण चन्द्रमा तथा राजहंसके समान श्वेत छत्र लेकर रावणके पीछे-पीछे चल रही थी। जैसे बादलके साथ-साथ बिजलियाँ चलती हैं, उसी प्रकार रावणकी सुन्दरी स्त्रियाँ अपने वीर पतिके पीछे-पीछे जा रही थी। उस समय नींदके नशेमें उनकी आँखें झपी जाती थीं। जिनकी आँखें मदमत्त बना देनेवाली थीं, वे राक्षसराजकी प्यारी पत्नियाँ अशोकवनमें जाते हुए पतिके साथ बड़े आदरसे और अनुरागपूर्वक जा रही थीं। उन सबका पति महाबली मन्दबुद्धि रावण कामके अधीन हो रहा था। वह सीतामें मन लगाये मन्दगतिसे आगे बढ़ता हुआ जा रहा था।

उस समय हनुमान्‌जीने उन परम सुन्दरी रावणपत्नियोंकी करधनीका कलनाद और नूपुरोंकी झनकार सुनी। साथ ही, अनुपम कर्म करनेवाले तथा अचिन्त्य बल-पौरुषसे सम्पन्न रावणको भी हनुमान्‌ने देखा, जो अशोकवाटिकाके द्वारतक आ पहुँचा था। उसके आगे-आगे सुगन्धित तेलसे भीगी हुई और स्त्रियोंद्वारा हाथोंमें धारण की हुई बहुत-सी मशालें जल रही थीं, जिनके द्वारा वह सब ओरसे प्रकाशित हो रहा था। वह काम, दर्प और मदसे युक्त था। उसकी आँखें टेढ़ी, लाल और बड़ी-बड़ी थीं। वह धनुषरहित साक्षात् कामदेवके समान जान पड़ता था। अशोक वृक्षके पत्तों और डालियोंमें छिपे हुए हनुमान्‌जी सैकड़ों पत्रों तथा पुष्पोंसे ढक गये थे। उसी अवस्थामें उन्होंने निकट आये हुए रावणको पहचाननेका प्रयत्न किया।

उन सुन्दर रूपवाली युवतियोंसे घिरे हुए महायशस्वी राजा रावणने उस प्रमदावनमें प्रवेश किया, जहाँ अनेक प्रकारके पशु-पक्षी अपनी-अपनी बोली बोल रहे थे। ताराओंसे घिरे हुए चन्द्रमाकी भाँति वह परम सुन्दरी युवतियोंसे घिरा हुआ था। हनुमान्‌ने उस राक्षसको देखा और मनमें यह विचार कयिा कि यही महाबाहु रावण है।

उस समय अनिन्दिता सुन्दरी राजकुमारी सीताने जब उत्तमोत्तम आभूषणोंसे विभूषित तथा रूप-यौवनसे सम्पन्न राक्षसराज रावणको आते देखा, तब वे प्रचण्ड हवामें हिलनेवाली कदलीके समान भयके मारे थर-थर काँपने लगीं।

राक्षसियोंके पहरेमें रहती हुई विदेहराजकुमारी सीता अत्यन्त दीन और दुखी हो रही थीं। वे समुद्रमें जीर्ण-शीर्ण होकर डूबी हुई नौकाके समान दु:खके सागरमें निमग्न थीं। उस अवस्थामें दशमुख रावणने उनकी ओर देखा। वे बिना बिछौनेके खुली जमीनपर बैठी थीं और कटकर पृथ्वीपर गिरी हुई वृक्षकी शाखाके समान जान पड़ती थीं। उनके द्वारा बड़े कठोर व्रतका पालन किया जा रहा था।

उनका शरीर सूखता जा रहा था। वे अकेली बैठकर रोती तथा श्रीरामके ध्यान एवं उनके वियोगके शोकमें डूबी रहती थीं। उन्हें अपने दु:खका अन्त नहीं दिखायी देता था। वे श्रीराममें अनुराग रखनेवाली तथा उनकी रमणीय भार्या थीं।

वे क्षीण हुई विशाल कीर्ति, तिरस्कृत हुई श्रद्धा, सर्वथा ह्रासको प्राप्त हुई बुद्धि, टूटी हुई आशा, नष्ट हुए भविष्य, उल्लङ्घित हुई राजाज्ञा, उत्पातकालमें दहकती हुई दिशा नष्ट हुई देवपूजा, चन्द्रग्रहणसे मलिन हुई पूर्णमासीकी रात, तुषारपातसे जीर्ण-शीर्ण हुई कमलिनी, जिसका शूरवीर सेनापति मारा गा हो, ऐसी सेना, अन्धकारसे नष्ट हुई प्रभा, सूखी हुई सरिता, अपवित्र प्राणियोंके स्पर्शसे अशुद्ध हुई वेदी और बुझी हुई अग्निशिखाके समान प्रतीत होती थीं।

जिसे हाथीने अपनी सूँड़से हुँड़ेर डाला हो; अतएव जिसके पत्ते और कमल उखड़ गये हों तथा जलपक्षी भयसे थर्रा उठे हों, उस मथित एवं मलिन हुई पुष्करिणीके समान सीता श्रीहीन दिखायी देती थीं। पतिके विरह-शोकसे उनका हृदय बड़ा व्याकुल था। जिसका जल नहरोंके द्वारा इधर-उधर निकाल दिया गया हो, ऐसी नदीके समान वे सूख गयी थीं तथा उत्तम उबटन आदिके न लगनेसे कृष्णपक्षकी रात्रिके समान मलिन हो रही थीं। वे उपवास, शोक, चिन्ता और भसये अत्यन्त क्षीण, कृशका और दीन हो गयी थीं। उनका आहार बहुत कम हो गया था तथा एकमात्र तप ही उनका धन था। वे दु:खसे आतुर हो अपने कुलदेवतासे हाथ जोड़कर मन-ही-मन यह प्रार्थना-सी कर रही थीं कि श्रीरामके हाथसे दशमुख रावणकी पराजय हो।

रावण आ रहा है, यह सुनते ही श्रीमैथिली अपने शरीरको सिकोड़कर बैठ गयीं। भयसे काँपने लगा उनका श्रीअङ्ग। हनुमानने भी अन्त:पुरके द्वारकी ओर देखा। दशग्रीव निद्रासे उठकर चला आ रहा था। उसने मुकुट नहीं धारण किया था। केवल कटिमें खड्ग लगा रखा था। उसके पीछे मन्दोदरी तथा दूसरी अनेक रानियाँ चली आ रही थीं। अनेकों राक्षसियाँ हाथोंमें मशाल लिये दोनों ओर चल रही थीं। दशग्रीवसे व्यर्थ डरा मत करो। त्रिजटाने जाते-जाते फुसफुसाकर कहा था- वह तुम्हें कभी मार नहीं सकता। उसका हाथ तुमपर नहीं उठेगा और उस अप्सराके शापके कारण किसी नारीपर बल-प्रयोग नहीं कर सकता। उसे अपनेपर ही विश्वास नहीं है, अत: तुम्हारे समीप कभी अकेले नहीं आता। आज भी बहुत-सी रानियोंको साथ लेकर आ रहा है।

हनुमानने भी त्रिजटाकी फुसफुसाहट सुन ली थी। सचमुच रावण इतनी रानियोंको जगाकर साथ ला रहा था तो कोई अशिष्टता नहीं कर सकता था। अत: उससे अभी यहाँ संघर्ष नहीं होगा। हनुमान पत्तोंमें छिपकर दृढ़तापूर्वक बैठ गये थे।

ये लक्ष्मणकी वन्दनीया श्रीराम-भार्या भी दु:खिनी हैं तो काल ही बलवान है। पत्तोंमें छिपे हनुमान सोच रहे थे- राम-लक्ष्मणके बलविक्रमके विश्वासपर ही इनका जीवन बचा है। इनके लिए वे समर्थ पृथ्वी भी पलट दें तो अनुपयुक्त नहीं होगा। सीताकी समता त्रिलोकीका समस्त सौन्दर्य एवं शील मिलकर भी नहीं कर सकता। यहाँ ये कितनी यातना सह रही है। राक्षसियोंका यह अहर्निशिका उत्पीड़न, ये न पुष्प देखतीं, न फल, न पक्षी-निरन्तर राम-नाम-जप और वे मिलेंगे, इस आशामें जीवित है।

रात्रिका अन्तिम प्रहर था। लमामें भी ब्रह्मराक्षसोंके द्वारा वेदोच्चारणकी ध्वनि उठी। यद्यपि राक्षसोंको इससे निद्रा ही आती थी लेकिन रावण उस ध्वनिसे जाग उठा था। वह अभी उनींदा था। बीस बाह, दस सिर रावणके अङ्गोंमें अङ्गराग लगा था। उसकी रानियोंके नूपुर, किंकिणी, कमणकी झमार आ रही थी। वे सब सर्वाभरणभूषिता थीं। रावण समीप आया तो सीताने उरूसे उदर और भुजाओंसे वक्ष छिपा लिया। वे सिकुड़ी, दोनों घुटनोंको भुजाओंसे घेरे, मुख नीचे किये रुदन करती हुई भयसे काँप रही थीं। वे एक वेणी, उलझे केश, ऐसी दीखती थीं जैसे वृक्षसे छिन्न शाखा सूखती जा रही हो।

स्त्रियों ने भी उनकी ओर देखा। उनका कोलाहल कुछ धीमा हुआ और एक अकेला कंठ स्पष्ट शब्दों में बोला, देखो, प्रहरी आ गए हैं। घड़ी-भर में महाराजाधिराज भी पधारेंगे। अपने आदेश का पालन न हुआ देखकर वे बहुत क्रुद्ध होंगे। तुम शायद नहीं जानतीं कि उनका दण्ड कितना कठोर होता है।

जानती हूँ। मध्य में बैठी उस स्त्री ने सिर उठाया। उस मलिन वेश में भी उसके सौंदर्य के विषय में कोई भ्रम नहीं हो सकता था और उसका मुख तेज से जाज्वल्यमान था, प्रत्येक दुष्ट राजा कठोर-भाषी और क्रूर-कर्मी होता है और तुम्हारा राजाधिराज तो दुष्ट ही नहीं, नीच भी है। चलो, पीछे हट जाओ। त्रिजटा ने अपनी सखियों को आदेश के-से स्वर में कहा, इसके अधिक पीड़ित मत किया करो। जिस दिन ह महाराजाधिराज के अनुकूल हो गई, उस दिन तुम लोगों से सारा वैर निकाल लेगी और वैसे भी अब महाराजा आने ही वाले होंगे। वे लोग कुछ पीछे हट गईं। उनका वृत्त बड़ा हो गया; किंतु दूर खड़े पुरुष प्रहरियों के समान इन्होंने भी केंद्र तक पहुँचने के लिए मार्ग छोड़ रखा था।

तो यह स्त्री महाराजाधिराज के अनुकुल नहीं है- हनुमान सोच रहे थे- अर्थात् यह अपहरण अथवा किसी अन्य उपाय से बलात् यहाँ लाई गई है। महाराजाधिराज अर्थात रावण इसे श्रृंगार करने का आदेश दे रहा है और स्वयं हाँ आनेवाले है निश्च ही यह देवी जानकी हैं। कैसी सुंदर हैं और कैसा तेज है मुख पर इन्होंने इतने प्रहरियों के सम्मुख इस असहायावस्था में भी रावण को दुष्ट और नीच कहा है।

तभी दासियों की एक टोली प्रविष्ट हुई। ये स्त्रियाँ प्रहरी अथवा सैनिक कर्म करनेवाली नहीं लगती थीं। उनकी आकृति-प्रकृति मृदुल-कोमल थी। देह-यष्टि भी बलिष्ठ नहीं थी। वेश भी वैसा नहीं था और उनका रूप भी सुंदर था। वे लोग यंत्रवत पुरुष-प्रहरियों और पूर्व उपस्थित स्त्री प्रहरियों के बीच घेरा बनाकर चुपचाप खड़ी हो गईं। उनके पश्चात कुछ उल्का वाहिकाएँ आईं और विभिन्न कोणों में इस प्रकार खड़ी हो गईं, जिससे उस सारे क्षेत्र में पर्याप्त प्रकाश हो सके। तभी महाराजाधिराज रावण की जय-जकार के बीच रावण आया। केंद्र में बैठी उस स्त्री को छोड़कर, शेष सभी उपस्थित जन सम्मान प्रकट करने के लिए झुक गए।

हनुमान रावण को पहचान रहे थे- यह वही पुरुष था, जिसे उन्होंने पिछली रात महामहाल प्रासाद के सबसे भव्य कक्ष में सोते हुए देखा था। उसके साथ वही स्त्री थी, जो पिछली रात रावण के साथ वाले पलंग पर सोयी हुई थी, जिसे उन्होंने मंदोदरी माना था। आज भी उन दोनों के चेहरे कुछ तनावपूर्ण थे। उनके पीछे-पीछे अत्यंत सुंदर वेश में अनेक नारियाँ थीं, जो संभवत: अंत:पुर की स्त्रियाँ अथवा दासियाँ थीं। वह चबूतरे के निकट आकर रुका। मंदोदरी उसके साथ खड़ी थी। वैदेही। रावण बोला।

हनुमान् का मन पुन: गेंद के समान उछलने को हुआ। उन्हें लगा, उनके शरीर का सारा रक्त जैसे उनके मुख की ओर दौड़ रहा है तो ये देवी वैदेही ही हैं। उन्हें मन ही मन जैसे विश्वास ही नहीं हो रहा था क्या सत्य ही वे अपने लक्ष्य तक पहुँचे हैं और उन्होंने देवी वैदेही को खोज निकाला है। जिन्हें ढूँढ़ने के लिए सैकड़ों वानर विभिन्न दिशाओं में फैले हुए, दिन-रात परिश्रम कर रहे हैं- उन देवी वैदेही को अंतत: हनुमान ने ही खोज निकाला है। जब वे किष्किंधा से चले थे, जब उन्होंने सागर-संतरण किया था और लंका में स्थान-स्थान पर सीता को खोज रहे थे, तब भी जैसे उनका मन भीतर से यही मानता था कि सीता की खोज सम्भव नहीं है। भला रावण के इस विकराल संगठन में से कैसे किसी को खोजा जा सकता है। किंतु आज असंभव भी सम्भव हो गया था। हनुमान् अपने भीतर की हलचल को स्वयं ही नियंत्रित नहीं कर पा रहे थे जैसे स्वयं सर्वदा हिल्लोलित सागर ही उठकर उनके वक्ष में आ बैठा था।

सुन्दरि। सर्वलोकमनोहरे। मुझे देखकर तुमने अपने अङ्गोंको छिपा लिया है। यहाँसे भाग जाना चाहती हो। भय मत करो। दशग्रीव समीप आ गया। हनुमानने देखा कि उस राक्षसाधिपका साहस भी सीधे श्रीजानकीकी ओर देखनेका नहीं हो रहा है। वह भी नीचे अथवा दिशाओंकी ओर देखता ही बोल रहा है- राक्षस-धर्म बलात्कारको वर्जनीय नहीं मानता; किंतु मैने तुम्हारे साथ कोई बल-प्रयोग कभी नहीं किया। यहाँ दूसरा कोई राक्षस आ नहीं सकता। तुम्हें अपनेसे विरक्ता देखकर मैं स्पर्श नहीं करता; किंतु मुझमें प्रबल काम है। मैंने अपनेको संयमित करना सीखा नहीं है। दशग्रीवने जो चाहा है, उसे प्राप्त किया है। मलिन वस्त्र धारण करना, पृथ्वीपर बिना आसन बैठना-सोना, संस्कारहीन शरीर रखना तुम्हारे योग नहीं है। तुम स्त्री-रत्न हो। तुम्हारी युवावस्था बीती जा रही है, यह फिर नहीं लौटेगी। त्रिभुवनजयी दशग्रीव तुमसे अनुनय करता है। इसे अपनाकर लमाके सम्पूर्ण ऐश्वर्यकी स्वामिनी बनो।

तुम्हारा सौन्दर्य त्रिभुवनमें दुर्लभ है। कौन ऐसा है जो तुम्हें देखकर धैर्य रख सके। मैं तो तुम्हारे करपल्लव अथवा पादांगुलियोंको देखकर वहाँसे दृष्टि नहीं हटा पाता हूँ। रावणने अनुनयके साथ प्रलोभन देना प्रारम्भ किया- तुम कहो तो तुम्हारे पिता जनकको मैं पूरी पृथ्वीका राज्य जीतकर दे दूं। आज तुम अनुमति दो, ये मन्दोदरी आदि मेरी रानियाँ तुम्हारी सेविका बनकर तुम्हें उबटन लगाकर स्नान करावें। सुन्दर वस्त्राभरण एवं अङ्गरागसे तुम्हें सज्जित करें। जो कहो- वह पदार्थ, मणि-रत्न तुम्हारे लिए प्रस्तुत कर दूं। तुम्हारे सब भाई-बन्धु सम्पन्न होकर पृथ्वीका राज्य भोगें।

तुम यहाँसे छूटकर जा सकोगी, यह आशा त्याग दो। रावणने डराया- देवता भी यहाँ आनेका साहस नहीं कर सकते। रामको तुम अब कभी नहीं देख सकोगी। वे सौ योजन समुद्र पार नहीं कर सकते, यह तुम्हें समझना चाहिये। राम तपस्वी हैं। पता नहीं, जीवित भी हैं या नहीं। जीवित भी हों तो अन्तमें उन्हें निराश ही होना है। तुम अब दु:ख त्यागकर लंकाकी स्वामिनी बनो।

किंतु विशाललोचने। मैं तो तुम्हें चाहता हूँ- तुमसे प्रेम करता हूँ। समस्त संसारका मन मोहनेवाली सर्वाङ्गसुन्दरी प्रिये। तुम भी मुझे विशेष आदर दो- मेरी प्रार्थना स्वीकार करो। यहाँ तुम्हारे लिये कोई भय नहीं है। इस स्थानमें न तो मनुष्य आ सकते हैं, न इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले दूसरे राक्षस ही, केवल मैं आ सकता हूँ। परंतु सीते। मुझसे जो तुम्हें भय हो रहा है, वह तो दूर हो ही जाना चाहिये।

भीरु। तुम यह न समझो कि मैंने कोई अधर्म किया है परायी स्त्रियोंके पास जाना अथवा बलात्कारपूर्वक उन्हें हर लाना यह राक्षसोंका सदा ही अपना धर्म रहा है- इसमें संदेह नहीं है।

मिथिलेशनन्दिनि। ऐसी अवस्थामें भी जबतक तुम मुझे न चाहोगी, तबतक मैं तुम्हारा स्पर्श नहीं करूँगा। भले ही कामदेव मेरे शरीरपर इच्छानुसार अत्याचार करे। देवि। इस विषयमें तुम्हें भय नहीं करना चाहिये। प्रिये। मुझपर विश्वास करो और यथार्थरूपसे प्रेमदान दो। इस तरह शोकसे व्याकुल न हो जाओ। मिथिलेशकुमारी। मुझे पाकर तुम विचित्र पुष्प-माला, चन्दन, अगुरु, नाना प्रकारके वस्त्र, दिव्य आभूषण, बहुमूल्य पेय, शय्या, आसन, नाच, गान और वाद्यका सुख भोगो। तुम स्त्रियोंमें रत्न हो। इस तरह मलिन वेषमें न रहो। अपने अङ्गोंमे आभूषण धारण करो। सुन्दरि। मुझे पाकर भी तुम भूषण आदिसे असम्मानित कैसे रहोगी ? यह तुम्हारा नवोदित सुन्दर यौवन बीता जा रहा है। जो बीता जाता है, वह नदियोंके प्रवाहकी भाँति फिर लौटकर नहीं आता।

शुभदर्शने। मैं तो ऐसा समझता हूँ कि रूपकी रचना करनेवाला लोकस्रष्टा विधाता तुम्हें बनाकर फिर उस कार्यसे विरत हो गया; क्योंकि तुम्हारे रूपकी समता करनेवाली दूसरी कोई स्त्री नहीं है। विदेहनन्दिनी। रूप और यौवनसे सुशोभित होनेवाली तुमको पाकर कौन ऐसा पुरुष है, जो धैर्यसे विचलित न होगा। भले ही वह साक्षात् ब्रह्मा क्यों न हो। चन्द्रमाके समान मुखवाली सुमध्यमे। मैं तुम्हारे जिस-जिस अङ्गको देखता हूँ, उसी-उसीमें मेरे नेत्र उलझ जाते हैं। मिथिलेशकुमारी। तुम मेरी भार्या बन जाओ। पातिव्रत्यके इस मोहको छोड़ो। मेरे यहाँ बहुत-सी सुन्दरी रानियाँ हैं। तुम उन सबमें श्रेष्ठ पटरानी बनो।

भीरु। मैं अनेक लोकोंसे उन्हें मथकर जो-जो रत्न लाया हूँ, वे सब तुम्हारे ही होंगे और यह राज्य भी मैं तुम्हींको समर्पित कर दूँगा। विलासिनि। तुम्हारी प्रसन्नताके लिये मैं विभिन्न नगरोंकी मालाओंसे अलंकृत इस सारी पृथ्वीको जीतकर राजा जनकके हाथमें सौंप दूँगा। इस संसारमें मैं किसी दूसरे ऐसे पुरुषको नहीं देखता, जो मेरा सामना कर सके। तुम युद्धमें मेरा वह महान् पराक्रम देखना, जिसके सामने कोई प्रतिद्वन्द्वी टिक नहीं पाता। मैंने युद्धस्थलमें जिनकी ध्वजाएँ तोड़ डाली थीं, वे देवता और असुर मेरे सामने ठहरनेमें असमर्थ होनेके कारण कई बार पीठ दिखा चुके हैं। तुम मुझे स्वीकार करो। आज तुम्हारा उत्तम श्रृङ्गार किया जाय और तुम्हारे अङ्गोंमें चमकीले आभूषण पहनाये जायँ। सुमुखि। आज मैं श्रृङ्गारसे सुसज्जित हुए तुम्हारे सुन्दर रूपको देख रहा हूँ। तुम उदारतावश मुझपर कृपा करके श्रृङ्गारसे सम्पन्न हो जाओ। भीरु। फिर इच्छानुसार भाँति-भाँतिके भोग भोगो, दिव्य रसका पान करो, विहरो तथा पृथ्वी या धनका यथेष्टरूपसे दान करो। तुम मुझपर विश्वास करके भोग भोगनेकी इच्छा करो और निर्भय होकर मुझे अपनी सेवाके लिये आज्ञा दो। मुझपर कृपा करके इच्छानुसार भोग भोगती हुई तुम-जैसी पटरानीके भाई-बन्धु भी मनमाने भोग भोग सकते हैं। भद्रे। यशस्विनि। तुम मेरी समृद्धि और धन-सम्पत्ति-की ओर तो देखो। सुभगे। चीर-वस्त्र धारण करनेवाले रामको लेकर क्या करोगी?

रामने विजयकी आशा त्याग दी है। वे श्रीहीन होकर वन-वनमें विचर रहे हैं, व्रतका पालन करते हैं और मिट्टीकी वेदीपर सोते हैं। अब तो मुझे यह भी संदेह होने लगा है कि वे जीवित भी हैं या नहीं। विदेहनन्दिनि। जिनके आगे बगुलोंकी पंक्तियाँ चलती हैं, उन काले बादलोंसे छिपी हुई चन्द्रिकाके समान तुमको अब राम पाना तो दूर रहा, देख भी नहीं सकते। जैसे हिरण्यकशिपु इन्द्रके हाथमें गयी हुई कीर्तिको न पा सका, उसी प्रकार राम भी मेरे हाथसे तुम्हें नहीं पा सकते। मनोहर, मुस्कान, सुन्दर दन्तावलि तथा रमणीय नेत्रोंवाली विलासिनि। भीरु। जैसे गरुड़ सर्पको उठा ले जाते हैं, उसी प्रकार तुम मेरे मनको हर लेती हो। तुम्हारा रेशमी पीताम्बर मैला हो गया है। तुम बहुत दुबली-पतली हो गयी हो और तुम्हारे अङ्गोंमें आभूषण भी नहीं है तो भी तुम्हें देखकर अपनी दूसरी स्त्रियोंमें मेरा मन नहीं लगता। जनकनन्दिनि। मेरे अन्त:पुरमें निवास करनेवाली जितनी भी सर्वगुणसम्पन्न रानियाँ हैं, उन सबकी तुम स्वामिनी बन जाओ। काले केशोंवाली सुन्दरी। जैसे अप्सराएँ लक्ष्मीकी सेवा करती हैं, उसी प्रकार त्रिभुवनकी श्रेष्ठ सुन्दरियाँ यहाँ तुम्हारी परिचर्या करेंगी।

सुभ्रु। सुश्रोणि। कुबेरके यहाँ जितने भी अच्छे रत्न और धन हैं, उन सबका तथा सम्पूर्ण लोकोंका तुम मेरे साथ सुखपूर्वक उपभोग करो। देवि। राम तो न तपसे, न बलसे, न पराक्रमसे, न धनसे और न तेज अथवा यशके द्वारा ही मेरी समानता कर सकते हैं।

तुम दिव्य रसका पान, विहार एवं रमण करो तथा अभीष्ट भोग भोगो। मैं तुम्हें धनकी राशि और सारी पृथ्वी भी समर्पित किये देता हूँ। ललने। तुम मेरे पास रहकर मौजसे मनचाही वस्तुएँ ग्रहण करो और तुम्हारे निकट आकर तुम्हारे भाई-बन्धु भी सुखपूर्वक इच्छानुसार भोग आदि प्राप्त करें। भीरु। तुम सोनेके निर्मल हारोंसे अपने अङ्गको विभूषित करके मेरे साथ समुद्र-तटवर्ती उन काननोंमें विहार करो, जिनमें खिले हुए वृक्षोंके समुदाय सब ओर फैले हुए हैं और उनपर भ्रमर मँड़रा रहे हैं। वैदेही। रावण पुन: बोला। इस बार उसका स्वर कुछ कोमल हो आया था, तुम्हारा कंगला राजकुमार अपनी असमर्थता पर लज्जित होकर किसी नदी-नाले में डूब मरा होगा। देखो, तुम्हारे सम्मुख लंका का राजाधिराज रावण खड़ा है।

सीता ने झटके से सिर उठाकर रावण को देखा; किंतु कुछ बोलीं नहीं। उनकी आँखों में दयनीयता नहीं थी, वहाँ एक स्पष्ट फुफकार थी।

वैदेही। मैं तुमसे संबोधित हूँ। रावण बोला। सीते। रावण का स्वर अत्यंत कोमल था।

सीता ने उसकी बातों तथा संबोधनों के उत्तर प्राय: बंद कर दिए। क्या उत्तर दिया जाए इस षड्यंत्रकारी नीच पुरुष की बातों का।

सीते। यदि तुम स्वेच्छा से मुझे अंगीकार कर लो तो मैं राम और लक्ष्मण को जीवित छोड़ दूँगा और उन्हें कोई छोटा-मोटा राज्य भी दे दूँगा। वह रुका, और स्त्री के बिना राम यदि अत्यंत दु:खी हो, तो मैं उसका विवाह शूर्पणखा से कर दूँगा।

उस समय सुन्दर अङ्गोंवाली पतिव्रता देवी तपस्विनी सीता दु:खसे आतुर होकर रोती हुई काँप रही थीं और अपने पतिदेवका ही चिन्तन कर रही थीं। पवित्र मुस्कानवाली विदेहनन्दिनीने तिनकेकी ओट करके रावणको इस प्रकार उत्तर दिया- तुम मेरी ओरसे अपना मन हटा लो और आत्मी जनों अपनी ही पत्नियों पर प्रेम करो।

जैसे पापाचारी पुरुष सिद्धिकी इच्छा नहीं कर सकता, उसी प्रकार तुम मेरी इच्छा करनेके योग्य नहीं हो। जो पतिव्रताके लिये निन्दित है, वह न करनेयोग्य कार्य मैं कदापि नहीं कर सकती। क्योंकि मैं एक महान् कुलमें उत्पन्न हुई हूँ और ब्याह करके एक पवित्र कुलमें आयी हूँ। रावणसे ऐसा कहकर यशस्विनी विदेहीराजकुमारीने उसकी ओर अपनी पीठ फेर ली और इस प्रकार कहा- रावण। मैं सती और परायी स्त्री हूँ। तुम्हारी भार्या बनने योग्य नहीं हूँ। निशाचर। तुम श्रेष्ठ धर्मकी ओर दृष्टिपात करो और सत्पुरुषोंके व्रतका अच्छी तरह पालन करो। जैसे तुम्हारी स्त्रियाँ तुमसे संरक्षण पाती हैं, उसी प्रकार दूसरोंकी स्त्रियोंकी भी तुम्हें रक्षा करनी चाहिये।

तुम अपनेको आदर्श बनाकर अपनी ही स्त्रियोंमें अनुरक्त रहो। जो अपनी स्त्रियोंसे संतुष्ट नहीं रहता तथा जिसकी बुद्धि धिक्कार देने योग्य है, उस चपल इन्द्रियोंवाले चञ्चल पुरुषको परायी स्त्रियाँ पराभवको पहुँचा देती हैं- उसे फजीहतमें डाल देती हैं।

क्या यहाँ सत्पुरुष नहीं रहते हैं अथवा रहनेपर भी तुम उनका अनुसरण नहीं करते हो ? जिससे तुम्हारी बुद्धि ऐसी विपरीत एवं सदाचारशून्य हो गयी है ? अथवा बुद्धिमान् पुरुष जो तुम्हारे हितकी बात कहते हैं, उसे नि:सार मानकर राक्षसोंके विनाशपर तुले रहनेके कारण तुम ग्रहण ही नहीं करते हो ?

जिसका मन अपवित्र तथा सदुपदेशको नहीं ग्रहण करनेवाला है, ऐसे अन्यायी राजाके हाथमें पड़कर बड़े-बड़े समृद्धिशाली राज्य और नगर नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार यह रत्नराशिसे पूर्ण लमापुरी तुम्हारे हाथमें आ जानेसे अब अकेले तुम्हारे ही अपराधसे बहुत जल्द नष्ट हो जायगी। रावण। जब कोई अदूरदर्शी पापाचारी अपने कुकर्मोंसे मारा जाता है, उस समय उसका विनाश होनेपर समस्त प्राणियोंको प्रसन्नता होती है। इसी प्रकार तुमने जिन लोगोंको कष्ट पहुँचाया है, वे तुम्हें पापी कहेंगे और बड़ा अच्छा हुआ, जो इस आततायीको यह कष्ट प्राप्त हुआ ऐसा कहकर हर्ष मनायेंगे।

जैसे प्रभा सूर्यसे अलग नहीं होती, उसी प्रकार मैं श्रीरघुनाथसे अभिन्न हूँ। ऐश्वर्य या धनके द्वारा तुम मुझे लुभा नहीं सकते। जिस प्रकार वेदविद्या आत्मज्ञानी स्नातक ब्राह्मणकी ही सम्पत्ति होती है, उसी प्रकार मैं केवल उन पृथ्वीपति रघुनाथकी ही भार्या होने योग्य हूँ। यदि तुम्हें अपने नगरकी रक्षा और दारुण बन्धनसे बचनेकी इच्छा हो तो पुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामको अपना मित्र बना लेना चाहिये; क्योंकि वे ही इसके योग्य हैं। भगवान् श्रीराम समस्त धर्मोंके ज्ञाता और सुप्रसिद्ध शरणागतवत्सल हैं। यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो उनके साथ तुम्हारी मित्रता हो जानी चाहिये। तुम शरणागतवत्सल श्रीरामकी शरण लेकर उन्हें प्रसन्न करो और शुद्धहृदय होकर मुझे उनके पास लौटा दो। इस प्रकार मुझे श्रीरघुनाथको सौंप देनेपर तुम्हारा भला होगा। इसके विपरीत आचरण करनेपर तुम बड़ी भारी

विपत्तिमें पड़ जाओगे। तुम्हारे-जैसे निशाचरको कदाचित् हाथसे छूटा हुआ वज्र बिना मारे छोड़ सकता है और काल भी बहुत दिनोंतक तुम्हारी उपेक्षा कर सकता है; किंतु क्रोधमें भरे हुए लोकनाथ रघुनाथ कदापि नहीं छोड़ेंगे।

यहाँ श्रीराम और लक्ष्मणके नामोंसे अमित और सुन्दर गाँठवाले बाण प्रज्वलित मुखवाले सर्पोंके समान शीघ्र ही गिरेंगे। जैसे विनतानन्दन गरुड़ सर्पोंका संहार करते हैं, उसी प्रकार श्रीरामरूपी महान् गरुड़ राक्षसराजरूपी बड़े-बड़े सर्पोंको वेगपूर्वक उच्छिन्न कर डालेंगे। राक्षस। जब राक्षसोंकी सेनाका संहार हो जानेसे जनस्थानका तुम्हारा आश्रय नष्ट हो गया और तुम युद्ध करेनमें असमर्थ हो गये, तब तुमने छल और चोरीसे यह नीच कर्म किया है। नीच निशाचर। तुमने पुरुषसिंह श्रीराम और लक्ष्मणके सूने आश्रममें घुसकर मेरा हरण किया था। वे दोनों उस समय मायामृगको मारनेके लिये वनमें गये हुए थे नहीं तो तभी तुम्हें इसका फल मिल जाता। श्रीराम और लक्ष्मणकी तो गन्ध पाकर भी तुम उनके सामने नहीं ठहर सकते। क्या कुत्ता कभी दो-दो बाघोंके सामने टिक सकता है।

जैसे इन्द्रकी दो बाँहोंके साथ युद्ध छिड़नेपर वृत्रासुरकी एक बाँहके लिये संग्रामके बोझको सँभालना असम्भव हो गया, उसी प्रकार समराङ्गणमें उन दोनों भाइयोंके साथ युद्धका जुआ उठाये रखना या टिकना तुम्हारे लिये सर्वथा असम्भव है। वे मेरे प्राणनाथ श्रीराम सुमित्राकुमार लक्ष्मणके साथ आकर अपने बाणोंद्वारा शीघ्र तुम्हारे प्राण हर लेंगे। ठीक उसी तरह, जैसे सूर्य थोड़ेसे जलको अपनी किरणोंद्वारा शीघ्र सुखा देते हैं।

तुम कुबेरके कैलासपर्वतपर चले जाओ, अथवा वरुणकी सभामें जाकर छिपे रहो, किंतु कालका मारा हुआ विशाल वृक्ष जैसे वज्रका आघात लगते ही नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार तुम दशरथनन्दन श्रीरामके बाणसे मारे जाकर तत्काल प्राणोंसे हाथ धो बैठोगे, इसमें संशय नहीं हैं; क्योंकि काल तुम्हें पहलेसे ही मार चुका है। तुम्हारी बहन तो अपने दहेज में लंका का राज्य और राजाधिराज का शव लानेवाली थी। सीता का स्वर वितृष्णा से भर उठा।

रावण हतप्रभ रह गया। उसे अपनी स्थिति से उबरने में कुछ क्षण लगे, क्या कहा था शूर्पणखा ने ? उसी से क्यों नहीं पूछ लेते।

रावण सीता को देखता रह गया। वह सीता को नहीं जानता था, किंतु शूर्पणखा को जानता था। उसकी कामाग्नि वस्तुत: इतनी उग्र थी कि यदि उसका वश चलता तो वह अपनी इच्छापूर्ति के लिए अपने समस्त बंधुओं तथा लंका के साम्राज्य को होम डालती। शूर्पणखा रावण की वास्तविक बहन थी।

सहसा रावण का ध्यान दूसरी ओर चला गया। यदि किसी प्रकार राम लंका के आस-पास या लंका में आ गाय और उसने शूर्पणखा की इच्छा पूर्ण कर दी तो लंका में भयंकर गृह-युद्ध होगा। शूर्पणखा रावण सरीखी योद्धा न सही, किंतु युद्ध-कुशल वह भी है। उसके समर्थक एवं प्रेमी भी अनेक हैं। कालकेय दैत्य आज भी उसके इंगित पर मरने को तत्पर बैठे हैं।

हे दशमुख। सुन, जुगनूके प्रकाशसे कभी कमलिनी खिल सकती है ? जानकीजी फिर कहती हैं- तू अपने लिये भी ऐसा ही मनमें समझ ले। रे दुष्ट। तुझे श्रीरघुवीरके बाणकी खबर नहीं है।

रे पापी। तू मुझे सूनेमें हर लाया है। रे अधम। निर्लज्ज। तुझे लज्जा नहीं आती ?

अपनेको जुगनूके समान और रामचन्द्रको सूर्यके समान सुनकर और सीताजीके कठोर वचनोंको सुनकर रावण तलवार निकालकर बड़े गुस्सेमें आकर बोला- सीता। तूने मेरा अपमान किया है। मैं तेरा सिर इस कठोर कृपणसे काट डालूँगा। नहीं तो अब भी जल्दी मेरी बात मान ले। हे सुमुखि। नहीं तो जीवनसे हाथ धोना पड़ेगा।

सीताजी कहती हैं- हे चन्द्रहास (तलवार)। श्रीरघुनाथके विरहकी अग्निसे उत्पन्न मेरी बड़ी भारी जलनको तू हर ले। हे तलवार। तू शीतल, तीव्र और श्रेष्ठ धारा बहाती है अर्थात् तेरी धारा ठंढी और तेज है, तू मेरे दु:खके बोझको हर ले।

रावण ऐसा गृह-युद्ध नहीं चाहेगा। उसे अनेक लोगों से निबटना है। और सबसे बड़ी बात, सीता से आत्म-समर्पण करवाना है। ऐसी स्थिति में शूर्पणखा का लंका में अधिक दिन रहना उचित नहीं है। वैसे भी यदि सीता ने रावण का अंगीकार कर लिया तो शूर्पणखा अपनी ईर्ष्या और क्रोध में ही जल मरेगी। उससे सावधान रहना होगा और उसे राम से यथासंभव दूर रखना होगा। इसी सीता के कारण किस झंझट में फँस गया रावण। एक ओर मंदोदरी क्रुद्ध सिंहनी बनी हुई है, दूसरी ओर शूर्पणखा किसी भी समय घातक हो सकती है। और विभीषण। विभीषण रावण की नीति को कभी स्वीकार नहीं करेगा। इन सारी परिस्थितियों में रावण को लंका में ही पर्याप्त प्रतिरोध का सामना करना पड़ सकता है रावण को पहले अपने घर का व्यूह साधना होगा। शूर्पणखा को तो तत्काल ही अश्मद्वीप भेज देना

होगा। उसका यहाँ रहना रावण के लिए घातक है। रावण की ओर से निराश होकर, वह राम को लंका में बुलाने का भी प्रयत्न कर सकती है और यदि राम लंका में आ गया उसने एक बार मुसकराकर शूर्पणखा की ओर देख लिया तो शूर्पणखा उसकी प्रणय-कृपा पाने की एक आशा में ही लंका को फूँक देगी। कैसे झंझट में फँस गया रावण केवल इस एक स्त्री के कारण।

रावण ने दृष्टि फेरकर सीता को देखा दासियों से घिरी, गंभीर तथा परेशान सीता। इसे प्राप्त न किया तो राजाधिराज होने की क्या सार्थकता ? इसे पाने के लिए प्राण न दिए तो जीवन की क्या उपयोगिता ? शूर्पणखा राम को पाने के लिए यदि लंका को फूँक सकती है तो रावण सीता को पाने के लिए संपूर्ण राक्षस साम्राज्य दाँव पर लगा सकता है।

तभी प्रतिरावण हँसा, यह विरोध राम और रावण का है या रावण और शूर्पणखा का ?

पर रावण का ध्यान प्रतिरावण से हटकर किन्हीं अनजाने मार्गों पर भटकन-भरी यात्राएँ करता चला गया। सीता-प्राप्ति तो बाद में होगी, पहले उसे अपने घर में अपना शासन स्थापित करना पड़ेगा।

प्रतिरावण भी विलीन हो गया। इस बार उसने अधिक हठ नहीं ठाना। कदाचित् शूर्पणखा का भय उपजा जाना ही उसे पर्याप्त लगा था। किंतु मेरी तनिक-सी भी इच्छा तुमसे संबोधित होने की नहीं है। सीता सपाट स्वर में बोलीं।

सीता से रावण ने कोई विशेष बातचीत करने का प्रयास नहीं किया। वह अन्यमनस्क-सा बैठा किन्हीं गुत्थियों को मन-ही-मन सुलझाता रहा। उसके संकेत पर ही रथ अशोक-वाटिका से बाहर निकला। एक बार एक मन में आया भी कि एक साधारण सी कोमल और कमनीय स्त्री को बंदी बनाए रखने के लिए इतने सैनिकों की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए पर तत्काल ही उसका मन सशंक हो उठा। सीता के संबंध में तनिक भी असावधानी नहीं बरती जानी चाहिए। अपने बल पर सीता निकल भागने का प्रयत्न कदाचित् न भी करे, किंतु शूर्पणखा अपने सहायकों के माध्यम से उसकी हत्या भी कर सकती है। सीता की हत्या। इस कल्पना से ही रावण का मन क्षुब्ध हो उठता है। विभीषण उसे मुक्त करवाने में सहायक हो सकता है। और मंदोदरी ? फिर राम के पक्ष का भी कोई व्यक्ति आ सकता है। इन षड्यंत्रों के विरुद्ध रावण को सावधान रहना होगा. पहरे में शिथिलता नहीं करनी होगी।

प्रतिरावण ने अट्टहास किया- राम का भय तेरे रक्त में घुल गया है। उसके यहाँ आ पहुँचने की भी कल्पना करने लगा है तू ?

रथ रुक गया। किंतु सबकी अपेक्षाओं के विरुद्ध, रावण रथ में ही बैठा रह गया- जैसे नीचे उतरने की उसकी इच्छा ही न हो पर यदि उसे रथ में बैठे-बैठे ही लौट जाना था तो यहाँ तक आने की क्या आवश्यकता थी ? सीता को वह इससे भी अधिक दृढ़ सुरक्ष-प्रबंध के साथ यहाँ भिजवा सकता था। दासियों से लेकर पुरुष-रक्षकों तक को ज्ञात था कि यह रावण का प्रमद वन है। किसी स्त्री को यहाँ लाने का एक ही अभिप्राय था। इससे पहले कितनी ही बार ऐसी घटनाएँ घट चुकी थीं। किंतु आज रावण रथ से नीचे उतरा ही नहीं। वह वापस लौटने को तैयार लग रहा था।

हनुमान को लगा, रावण खिन्न हो उठा है और मंदोदरी के चेहरे का भाव कुछ उल्लसित हो उठा है।

वैदेही। तुम मुझे और मेरी शक्ति को जानती हो। शक्ति नहीं। चोर-कला कहो। सीता ने उसकी बात काट दी, शक्ति का तो कोई प्रमाण तुमने दिया ही नहीं। मैं तो कब से कह रही हूँ कि राम से युद्ध का साहस नहीं है तो मुझे ही शस्त्र दो और द्वंद्व-युद्ध कर देखो।

रावण कुछ इस भाव से हँसा, जैसे किसी बालक की अनुचित बात से रुष्ट होकर भी वह उसे टाल रहा हो, मैं जानता हूँ, तुम आत्महत्या की बात सोच रही हो। तुम जानती हो कि राम यहाँ नहीं आ सकता, तुम यहाँ से मुक्त नहीं हो सकतीं, इसलिए तुमने आत्महत्या का यह उपाय सोचा है। तुम मुझसे द्वंद्व-युद्ध कर निश्चिंत मृत्यु चाहती हो, किंतु जानकी... रावण के स्वर में लंपटता की सरसता मुखर हो उठी, मैं तुम्हें मरने नहीं दूँगा। यह वय और यह रूप-सौंदर्य नष्ट होने अथवा करने के लिए नहीं है। तुम उस संन्यासी के साथ रहकर जीवन के सुखों को भूल गई हो- मैं तुम्हारे सम्मुख असंख्य सुखों का असीम संसार प्रस्तुत कर रहा हूँ। एक बार स्वेच्छा से मेरी शैया पर आरूढ़ हो जाओ, राक्षसों का यह संपूर्ण साम्राज्य तुम्हारा है। जैसे चाहो, इसका भोग करो। जो चाहो, अपने भाई-बंधुओं को भेजो, अथवा उन्हें यहाँ बुलाकर, सब कुछ उन्हें समर्पित कर दो। अपने वृद्ध, माता-पिता को भी एक बार दिखला दो कि ऐश्वर्य कहते किसे हैं।

नीच निशाचर। अमिततेजस्वी भगवान् श्रीरामकी पत्नी और इक्ष्वाकुकुलके स्वामी महाराज दशरथकी पुत्रवधूसे यह न कहने योग्य बात कहते समय तेरी जीभ क्यों नहीं गिर गयी ?

दुष्ट पापी। तुझमें क्या पराक्रम है ? मेरे पतिदेव जब निकट नहीं थे, तब तू उन महात्माकी दृष्टिसे छिपकर चोरी-चोरी मुझे हर लाया।

तू भगवान श्रीरामकी समानता नहीं कर सकता। तू तो उनका दास होने योग्य भी नहीं है। श्रीरघुनाथ सर्वथा अजेय, सत्यभाषी, शूरवीर और युद्धके अभिलाषी एवं प्रशंसक है।

रावण। सीता सतेज स्वर में बोलीं, सारे संसार में तेरा क्या एक भी हित करनेवाला नहीं है, जो तुझे समझा सके कि यह तेरे नाश का मार्ग है। क्या कोई तुझे नहीं बताता कि जिस ऐश्वर्य पर तू इतरा रहा है, उसके भोग का तुझे ही नहीं, तेरे परिजनों को भी बहुत शीघ्र मूल्य चुकाना पड़ेगा। कोई तुझे समझाता नहीं, या तू किसी की सुनता नहीं।

जानकी। इन बातों में क्या रखा है। रावण सीता की बातों की उपेक्षा कर बोला, मानव-जन्म बार-बार नहीं मिलता। इस शरीर के माध्यम से जो सुख प्राप्त हो सकते हैं, उन्हें भोगो। राक्षसों का समग्र साम्राज्य अपनी हथेली पर लिये रावण जैसा पुरुष तुमसे प्रणय की याचना कर रहा है।

मैं भी तुम्हें यही बता रही हूँ, रावण। सीता का स्वर कुछ शांत था, कि मानव-शरीर पाकर भी उससे तू केवल पशु-सुख का भोग कर पाया है। मानव का सुख सूक्ष्म है, अभौतिक है और अलौकिक है। यह ग्रहण में नहीं, त्याग में है। दूसरों के सुख के लिए स्वयं को खपाकर पाया गया सुख ही मानव-सुख है। अभी भी अवसर है कि तू अविवेकी हठ छोड़ दे, मुझे मेरे राम को सौंप दे और उनके चरणों में गिरकर उनसे क्षमा माँग।

रावण ने अट्टहास किया, वन में रहकर तूने कंगले तापसों से त्याग का अच्छा पाठ पढ़ा है, जानकी। भिखारियों को राम के सम्मुख हाथ जोड़ते देख, तूने समझा कि राक्षसों का राजाधिराज भी उसके सम्मुख याचक बनकर जाएगा। जानकी। मैं तेरे सम्मुख याचक बनकर खड़ा हूँ। मेरी बात सुन, तू इस रावण को अंगीकार कर तो महारानी मंदोदरी जैसी स्त्रियों को तेरी दासियाँ नियुक्त कर दूँगा।

हनुमान को लगा, जैसे सीता और मंदोदरी दोनों ने ही कुछ अवांछित सुन लिया हो। मंदोदरी का उल्लसित चेहरा कुछ संकुचित हो आया। फिर चेहरे पर कठोरता उभरी और भृकुटियाँ वक्र हो उठीं। किंतु रावण ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। वह सीता की ओर देख रहा था। सीता ने रावण को तीखी दृष्टि से देखा और फिर कुछ उच्च स्वर में बोलीं, तू समझता है कि महारानी मंदोदरी को मेरी दासी नियुक्त करने का प्रस्ताव रख, तू मेरा गौरव बढ़ा रहा है। तेरी नीचता की भी कोई मर्यादा है अथवा नहीं। जो अपनी पट्ट-महिषी केसम्मान की रक्षा नहीं कर सकता, वह अन्य लोगों का सम्मान क्या करेगा। तेरी बात को तो किसी वनचारी, बुद्धिविहीन पशु के निरर्थक गर्जन-तर्जन से अधिक महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए।

रावण का मुख क्रोध से विवर्ण हो उठा। अनायास ही उसका दाहिना हाथ अपने खड्ग की मूठ पर पड़ा।

हनुमान का शरीर जैसे अग्नि की लपटों में जलने लगा- यदि यह दुष्ट उनके सम्मुख ही जानकी का वध करेगा तो क्या वे यहाँ छिपकर बैठे देखते रहेंगे ? लौटकर भद्र राम को सूचना देंगे कि मैंने अपौरुषेय उद्यम कर दिखाया है। सीता का संधान पाकर वहाँ पहुँचा, अपनी आँखों के सम्मुख उनका वध होते देखा है।

किंतु उनके पास कोई शस्त्र नहीं था; और उधर न केवल रावण स्वयं ही सशस्त्र था, वरन् उसके अनेक सशस्त्र सैनिक भी पास ही खड़े थे। बाहर सैनिक चौकियाँ भी थीं, घड़ी भर में यहाँ सैनिक ही सैनिक हो जाएँगे तो क्या करें हनुमान ? अपने सम्मुख वे देवी सीता की निरीह हत्या हो जाने दें, और आत्मरक्षा की आड़ में चुपचाप बैठे देखते रहें ?

तुम और तुम्हारा सब वैभव मेरे लिए इस तृणके समान तुच्छ है। सीताने एक तृण उठाकर अपने और रावणके मध्यमें रख दिया। उस विपत्तिमें भी उनका स्वर सुनकर हनुमान हर्षित हुए। पतिव्रता आर्यनारीके उपयुक्त स्वर-राक्षस। एक अबलाके सामने डींग मारते तुम्हें लज्जा नहीं आती ? तुमने केवल राक्षसियाँ देखी हैं- सती नहीं देखी। मेरे पिता तथा श्वसुरके सदनमें भोगोंकी कमी थी कुछ ? मुझे भोगोंका लालच देनेकी घृष्टता करते हो ? भूलते हो कि अयोध्याके वैभवको ठुकराकर सीता स्वामीके साथ स्वेच्छासे वन आयी थी ?

तुम त्रिभुवनजयी हो ? ऐसा ही साहस और शौर्य था तो मेरे स्वामीके सामनेसे मुझे ले आये होते। उनकी अनुपस्थितिमें मुझे उठा लाये चोरके समान और अब सर्पकी भाँति मुझे घेर रखा है; किंतु मेरे स्वामी गरुड़के समान हैं। वे तुम्हें मारकर मुझे ले जायँगे। तुमने उन बृहद्बाहुके धनुषकी टमार नहीं सुनी। यह सौ योजन सागर उनकी शराग्निमें पलक मारे सूख जायगा। उन नरसिंहोंकी गन्ध भी मिली तो तुम जैसे श्वानोंको भागनेका भी मार्ग नहीं मिलेगा। सीताका स्वर उत्तरोत्तर ओजस्वी होता गया- राक्षस। इस स्वर्णपुरी और अपने स्वजनोंका शत्रु मत बन। जबतक वे कमललोचन क्रुद्ध नहीं होते, उनकी शरण ग्रहण कर। वे धनुष चढ़ा लेंगे, तब तेरे इन सिरों और

भुजाओंको श्रृंगाल ही नोचेंगे। अभी कुछ बिगड़ा नहीं, वे शरणागतवत्सल हैं।

तब दशकंधर बोला- हे सीते। एक बार मेरी ओर कृपादृष्टि से देख ले। यह सुनकर सिया के हृदय में चोट लगीं और तिनके की ओट रखकर दृष्टि नीचे करके सीता बोली- यदि कृपादृष्टि की आकांक्षा थी तो शिवधनुष भंग किया होता। जिस तरह तू तेरे बल और शक्ति का बखान कर रहा है तो यदि तुझमें बल होता तो तू मुझसे उसी स्वयंवर में नाता जोड़ा होता। तू कोई शूरवीर योद्धा नहीं है, तू चोरटा है। मुझ अबला को मेरे पति और देवर की अनुपस्थिति में हरकर लाया है। अब भी तू छल-बल दिखलाता है सत्यता को नहीं जानता।

तब रावण बोला- यह दशकंधर तो तुमसे दयादृष्टि का दान चाहता है। तुम तो अभी तक दशमुख से परदा रखती हों, आँखे नीचे किये रहती हो, तिनके की ओर देखकर दशमुख से बातें करती हो। यह तिनका तुम्हारा क्यों लक्ष्य है ? क्यों उसे बार-बार बीच में लाती हो? क्या तुमने मुझे तिनका समझ रखा है जो बार-बार मुझे तिनका दिखलाती हो।

तब तिनके वाली ने कहा सुन तिनके की बात- पृथ्वी मेरी माता है और तिनका मेरा घात। जिन चरणों की मैं हूँ दासी यह तिनका है उन चरणों का दास। यह मन जिसके पास सदा रहता है तिनका भी उनके पास सदा रहता है। यह तिनका ही मेरा परदा है। घूँघट का पर्दा पर्दा क्या है पर्दा तो आँख और लज्जा का है। मुझे उन प्रभु के पास पहुँचा दें जिनका सीता से नाता है। अन्यथा हे असूर एक दिन तुझे धिक्कारेगा यह तिनका-तिनका।

सीताके ये कठोर वचन सुनकर राक्षसराज रावणने उन प्रियदर्शना सीताको यह अप्रिय उत्तर दिया- लोकमें पुरुष जैसे-जैसे स्त्रियोंसे अनुनय-विनय करता है, वैसे-वैसे वह उनका प्रिय होता जाता है, परंतु मैं तुमसे ज्यों-ज्यों मीठे वचन बोलता हूँ, त्यों-ही-त्यों तुम मेरा तिरस्कार करती जा रही हो।

किंतु जैसे अच्छा सारथि कुमार्गमें दौड़ते हुए घोड़ोंको रोकता है, वैसे ही तुम्हारे प्रति जो मेरा प्रेम उत्पन्न हो गया है, वही मेरे क्रोधको रोक रहा है। सुमुखि। यही कारण है कि झूठे वैराग्यमें तत्पर तथा वध और तिरस्कारके योग्य होनेपर भी तुम्हारा मैं वध नहीं कर रहा हूँ।

मिथिलेशकुमारी। तुम मुझसे जैसी-जैसी कठोर बातें कह रही हो, उनके बदले तो तुम्हें कठोर प्राणदण्ड देना ही उचित है।

सुन्दरि। मैंने तुम्हारे लिये जो अवधि नियुक्त की है, उसके अनुसार मुझे दो महीने और प्रतीक्षा करनी है। तत्पश्चात् तुम्हें मेरी शय्यापर आना होगा। अत: याद रक्खो- यदि दो महीनेके बाद तुम मुझे अपना पति बनाना स्वीकार नहीं करोगी तो रसोइये मेरे कलेवेके लिये तुम्हारे टुकड़े-टुड़के कर डालेंगे।

राक्षसराज रावणके द्वारा जनकनन्दिनी सीताको इस प्रकार धमकायी जाती देख देवताओं और गन्धर्वोंकी कन्याओंको बड़ा विषाद हुआ। उनकी आँखें विकृत हो गयीं। मैं जैसे-जैसे समझानेका प्रयत्न करता हूँ, तुम उतनी ही उद्धत होती जा रही हो। रावण चिल्लाया- बड़ा क्रोध आता है, तुम कटुभाषिणी वधके ही योग्य हो। उस मिथ्या तापससे प्रेम करती हो और मुझे कठोर शब्द सुनाती हो।

तब सीता बोली- रावण। तेरी इतनी रानियोंमें कोई तेरी हितैषिणी नहीं है ? तू दुरात्मा मुझ श्रीराम-भार्याको दुर्वचन कहनेका साहस करता है ? सीताका स्वर कठोर हो गया। रावणकी गर्जना सुनकर गन्धर्व, सुर, नागकन्याएँ जो रानियोंमें थीं, उनके नेत्र सजल हो गये थे। अब मन्दोदरी आदि दैत्य, दानव-कन्याएँ काँप उठीं कि सीता कहीं शाप तो नहीं देने जा रही है। लेकिन श्रीजनकनन्दिनी रोषसहित बोलती गयीं- अब तेरी मृत्यु निश्चित है। शशकके समान तू तबतक सिंहिनीको कटुवचन कह ले, जब तक इसके स्वामीके शर तेरे सिरोंको इन विषवर्षिणी जीभोंके साथ गिरा नहीं देते। मैं तुझे अभी भस्म कर सकती हूँ। तू भस्म कर देने योग्य है; किन्तु तू स्वामीका आखेट है। तू मेरा हरण कर सकता था ? तू तुच्छ श्रृंगाल ? लेकिन वे समर्थ तुझे मारना चाहते हैं, अत: उन्होंने यह बहाना बनाया है।

बड़ा विकट क्षण था। हनुमान के हाथों ने कसकर, अशोक वृक्ष की डाल पकड़ ली थी, जैसे वे अभी ही एक छलाँग में रावण तक जा पहुँचेंगे और उसका खड्ग छीन लेंगे। उनका मस्तिष्क था कि ऊहापोह में उलझा हुआ, अब भी बार-बार उनसे पूछ रहा था कि क्या यह क्षण उनके प्रकट होने का है ? यदि राक्षसों ने उन्हें घेरकर उनकी हत्या कर दी, तो अपने प्राणों से तो जाएँगे ही, न देवी वैदेही को बचा पाएँगे और न ही राम को सीता संबंधी कोई समाचार दे पाएँगे।

सीता बोली- निश्चय ही इस नगरमें कोई भी पुरुष तेरा भला चाहनेवाला नहीं है, जो तुझे इस निन्दित कर्मसे रोके।

जैसे शची इन्द्रकी धर्मपत्नी हैं, उसी प्रकार मैं धर्मात्मा भगवान् श्रीरामकी पत्नी हूँ। त्रिलोकीमें तेरे सिवा दूसरा कौन है, जो मनसे भी मुझे प्राप्त करनेकी इच्छा करे। नीच राक्षस। तूने अमित तेजस्वी श्रीरामकी भार्यासे जो पापकी बात कही है, उसके फलस्वरूप दण्डसे

तू कहाँ जाकर छुटकारा पायेगा?

जिस प्रकार वनमें कोई मतवाला हाथी और कोई खरगोश दैववश एक दूसरेके साथ युद्धके लिये तुल जायँ, वैसे ही भगवान् श्रीराम और तू है। नीच निशाचर। भगवान् राम तो गजराजके समान हैं और तू खरगोशके तुल्य है।

अरे। इक्ष्वाकुनाथ श्रीरामका तिरस्कार करते तुझे लज्जा नहीं आती। तू जबतक उनकी आँखोंके सामने नहीं जाता, तबतक जो चाहे कह ले। अनार्य। मेरी ओर दृष्टि डालते समय तेरी ये क्रूर और विकारयुक्त काली-पीली आँखें पृथ्वीपर क्यों नहीं गिर पड़ीं ? मैं धर्मात्मा श्रीरामकी धर्मपत्नी और महाराज दशरथकी पुत्रवधू हूँ। पापी। मुझसे पापकी बातें करते समय तेरी जीभ क्यों नहीं जल जाती है ?

दशमुख रावण। मेरा तेज ही तुझे भस्म कर डालनेके लिये पर्याप्त है। केवल श्रीरामकी आज्ञा न होनेसे और अपनी तपस्याको सुरक्षित रखनेके विचारसे मैं तुझे भस्म नहीं कर रही हूँ।

मैं मतिमान् श्रीरामकी भार्या हूँ, मुझे हर ले आनेकी शक्ति तेरे अंदर नहीं थी। नि:संदेह तेरे वधके लिये ही विधाताने यह विधान रच दिया है। तू तो बड़ा शूरवीर बनता है, कुबेरका भाई है और तेरे पास सेनाएँ भी बहुत हैं, फिर श्रीरामको छलसे दूर हटाकर क्यों तूने उनकी स्त्रीकी चोरी की है ?

सीताकी ये बातें सुनकर राक्षसराज रावणने उन जनकदुलारीकी ओर आँखें तरेरकर देखा। उसकी दृष्टिसे क्रूरता टपक रही थी। जाने से पहले वह क्षण-भर के लिए सीता की ओर मुड़ा, जानकी। किसी वस्तु की आवश्यकता हो तो माँग लो।

धनुष-बाण। सीता अपने सधे स्वर में बोली, जानकी के हाथ में धनुष-बाण देने में भय लगता हो तो एक खड्ग।

रावण ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने सारथी को रथ मोड़ने का संकेत किया। सीता यह हठ वह उसी क्षण से देख रहा था, जिस क्षण से उसने उसका अपहरण किया था। एक क्षण के लिए भी यह स्त्री न तो भयभीत हुई थी और न दीन। ऐसी स्त्री को जीतना क्या सरल है- जिसमें न भौतिक सुविधाओं के लिए तनिक भी दुर्बलता हो, न शारीरिक कष्टों का भय। यह तो मंदोदरी ने बीच में एक प्रतिबंध लगा दिया कि सीता स्वेच्छा से रावण को स्वीकार करे- अन्यथा भी क्या सीता शारीरिक यातना के सामने अपनी पराजय स्वीकार करती? शायद नहीं। पर ऐसी भी कोई स्त्री हो सकती है, जिसमें न कोई प्रलोभन हो, न कोई भय ? रावण ने आज तक ऐसी कोई स्त्री नहीं देखी।

सीता के हाथ में शस्त्र देने का तो कोई अर्थ ही नहीं था। उसकी शस्त्र-परिचालन-क्षमता को रावण जानता था। इस अवरोध में से वह निकल नहीं पाएगी; किंतु शस्त्र मिल जाने पर युद्ध के माध्यम से अथवा अन्य किसी प्रकार से वह आत्मघात का प्रयत्न करेगी। पर रावण उसे आत्मघात नहीं करने देगा।

कैसी हो, वैदेही ? रावण के मुख पर बिछी लोलुप मुसकान सीता के रक्त में जैसे विष के समान जा घुली। उनकी दीनता और भीरुता विलीन हो गई। तेज से दमकते हुए स्वर में बोली, एक आततायी द्वारा बंदी की गई निरीह नारी कैसी हो सकती है, रावण ?

तत्क्षण उभर आई अपनी प्रसन्नता को रावण ने दबाया और सायास मुसकराकर बोला, आततायी नहीं, जानकी। प्रेमी कहो। मैं तुमसे प्रेम की याचना करने आया हूँ।

प्रेम करनेवाला व्यक्ति अपना जीवन होम देता है, अपहरण नहीं करता। सीता सधे हुए स्वर में बोली, तुम मुझे एक वस्तु नहीं दे सकते। ऐसा क्या है, वैदेही। जो मैं तुम्हें नहीं दे सकता। तुम एक बार स्वेच्छा से मुझे अंगीकार कर लो, मैं महारानी मंदोदरी को तुम्हारी प्रधान दासी नियुक्त कर दूँगा। सीता ने मंदोदरी की ओर देखा। वे धरती को घूर रही थीं, मानो धरती में समा जाने का मार्ग ढूँढ़ रही हों। किंतु रावण का ध्यान उस ओर नहीं था।

मैं किसी को अपमानित करना नहीं चाहती। रावण ने कुछ कहा नहीं। अपने पीछे खड़ी दासी को संकेत किया। दासियों की प्राचीर फटी और उनके पीछे से दासियों का एक समूह अपने हाथों में बड़े-बड़े थाल उठाए प्रकट हुए। उन्होंने एक-एक कर सारे थाल लाकर सीता के चरणों के पास भूमि पर सजाकर, उनके आवरण हटा दिए।

इन्हें देखो, जानकी। रावण बोला, ये वस्त्र और आभूषण केवल लंका में ही उपलब्ध हो सकते हैं, और वह भी केवल तुम्हें। आज तक महारानी मंदोदरी को भी यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। इतने धन से इंद्र का साम्राज्य क्रय किया जा सकता है, जानकी। यह सब कुछ तुम्हारा है।

प्रजा के शोषण से अर्जित धन का अपव्यय कर गौरव का अनुभव करते हो, दंभी। सीता कठोर स्वर में बोली, मैंने तुमसे यह नहीं माँगा था। रावण के शरीर का समस्त रक्त जैसे उसके मुख पर एकत्रित हो आया। उसकी मुट्ठियाँ बँध गई। वह आवेश में एक पग आगे भी

बढ़ा पर सहसा उसकी दृष्टि मंदोदरी पर जा पड़ी और वह रुक गया। क्रोध से उसका कंठ अवरुद्ध हो रहा था, क्या माँगा था तुमने ?

एक खड्ग। और तुमसे हो सके तो द्वंद्व-युद्ध।

अपने ही विष से जलते नाग के समान, रावण का मुख काला और विकृत हो गया। उसने फुफकारती दृष्टि से एक बार सीता को देखा, फिर बरबस उसकी दृष्टि मंदोदरी की ओर घूम गई। मंदोदरी अपने आत्मगौरव में लिपटी शांत और आश्वस्त खड़ी थीं। रावण की गर्दन झुक गई और बिना कुछ कहे, बद्ध पशु-सा, वह वाटिका से बाहर जाने के लिए मुड़ गया।

जनकनन्दिनीके ऐसी कठोर बात कहनेपर दशमुख रावण चितामें लगी हुई आगकी भाँति सहसा क्रोधसे जल उठा और अपनी क्रूर आँखें फाड़-फाड़कर देखता हुआ दाहिना मुक्का तानकर मिथिलेशकुमारीको मारनेके लिये तैयार हो गया। यह देख उस समय वहाँ खड़ी हुई स्त्रियाँ हाहाकार करने लगीं। इतनेहीमें उन स्त्रियोंके बीचसे उस दुरात्माकी सुन्दरी भार्या मन्दोदरी झपटकर आगे आयी और उसने रावणको ऐसा करनेसे रोका। साथ हो, उस कामपीड़ित निशाचरसे मधुर वाणीमें कहा-

महेन्द्रके समान पराक्रमी राक्षसराज। सीतासे तुम्हें क्या काम है ? आज मेरे साथ रमण करो। जनकनन्दिनी सीता मुझसे अधिक सुन्दरी नहीं है। प्रभो। देवताओं, गन्धर्वों और यक्षोंकी कन्याएँ हैं, इनके साथ रमण करो; सीताको लेकर क्या करोगे ?

चलने से पूर्व मंदोदरी ने एक तरल दृष्टि से सीता की ओर देखा और अत्यंत धीमे स्वर में बोलीं, तुम धन्य हो, देवी।

वे रुकीं नहीं। उनके पीछे-पीछे अन्य रानियाँ भी चल पड़ीं। पंक्तिबद्ध दासियाँ थाल उठाए अपनी स्थिर गति से चलती गईं।

रावणने क्रोधसे लाल आँखें करके विदेहकुमारी सीताकी ओर देखा और फुफकारते हुए सर्पके समान लंबी साँसें खींचकर कहा- अन्यायी और निर्धन मनुष्यका अनुसरण करनेवाली नारी। जैसे सूर्यदेव अपने तेजसे प्रात:कालिक संध्याके अन्धकारको नष्ट कर देते हैं, उसी प्रकार आज मैं तेरा विनाश किये देता हूँ।

मिथिलेशकुमारीसे ऐसा कहकर शत्रुओंको रुलानेवाले राजा रावणने भयंकर दिखायी देनेवाली समस्त राक्षसियोंकी ओर देखा।

उसने एकाक्षी (एक आँखवाली), एककर्णा (एक कानवाली), कर्णप्रावरणा (लंबे कानोंसे अपने शरीरको ढक लेनेवाली), गोकर्णी (गौके-से कानोंवाली), हस्तीकर्णी (हाथीके समान कानोंवाली), लंबकर्णी (लंबे कानवाली), अकर्णिका (बिना कानकी), हस्तिपदी (हाथीके-से पैरोंवाली), अश्वपदी (घोड़ेके समान पैरवाली), गोपदी (गायके समान पैरवाली), पादचूलिका (केशयुक्त पैरोंवाली), एकाक्षी, एकपादी (एक पैरवाली), पृथुपादी (मोटे पैरवाली), अपादिका (बिना पैरोंकी), अतिमात्र-कुचोदरी (बहुत बड़े-बड़े स्तन और पेटवाली), अतिमात्रा-स्यनेत्रा (विशाल मुख और नेत्रवाली), दीर्घजिह्वानखा (लंबी जीभ और नखोंवाली), अनासिका (बिना नाक की), सिंहमुखी (सिंहके समान मुखवाली), गोमुखी (गौके समान मुखवाली) तथा सूकरीमुखी (सूकरीके समान मुखवाली) इन सब राक्षसियोंसे कहा- निशाचरियों। तुम सब लोग मिलकर अथवा अलग-अलग शीघ्र ही ऐसा प्रयत्न करो, जिससे जनककिशोरी सीता बहुत जल्द मेरे वशमें आ जाय। अनुकूल-प्रतिकूल उपायोंसे, साम, दान और मेदनीतिसे तथा दण्डका भी भय दिखाकर विदेहकुमारी सीताको वशमें लानेकी चेष्टा करो।

राक्षसियोंको इस प्रकार बारंबार आज्ञा देकर काम और क्रोधसे व्याकुल हुआ राक्षसराज रावण जानकीजीकी ओर देखकर गर्जना करने लगा। मैं अभी तुझे मार देता हूँ। रावणने खड्ग खींच लिया। उस त्रिभुवनजयीको कोई इस प्रकार दुत्कार सकता है ? उसकी रानियोंके सम्मुख उसे इतने कठोर वचन कोई कहे ?

स्वामी। आप मेरी ओर मेरे सिन्दूरकी ओर देखें। मंदोदरीने रावणके दाहिने पैरको दोनों करोंसे पकड़ लिया। मयतनयाके नेत्रोंसे अश्रुधार चल पड़ी। भयसे उसका उत्तरीय गिर पड़ा था। ऊपर मुख उठाये कातर कण्ठ बोली- वह अत्यन्त भयंकारी है। उसे शाप देनेके लिए जलकी भी आवश्यकता नहीं होगी। तदनन्तर राक्षसियोंकी स्वामिनी मन्दोदरी तथा दूसरी पत्नी धन्यमालिनी नामवाली राक्षस-कन्या शीघ्र रावणके पास आयीं और उसका आलिङ्गन करके बोलीं-

महाराज राक्षसराज। आप मेरे साथ क्रीड़ा कीजिये मेरे साथ रमण कीजिये। इस कान्तिहीन और दीन मानव-कन्या सीतासे आपको क्या प्रयोजन है ? महाराज। निश्चय ही देवश्रेष्ठ ब्रह्माजीने इसके भाग्यमें आपके बाहुबलसे उपार्जित दिव्य एवं उत्तम भोग नहीं लिखे हैं। प्राणनाथ। जो स्त्री अपनेसे प्रेम नहीं करती, उसकी कामना करनेवाले पुरुषके शरीरमें केवल ताप ही होता है और अपने प्रति अनुराग रखनेवाली स्त्रीकी कामना करनेवालेको उत्तम प्रसन्नता प्राप्त होती है।

अच्छा, तुम उठो। रावणका स्वर शान्त हो गया। खड्ग कोशमें रखकर पट्टमहिषी को स्नेहपूर्वक उसने उठाया। दानव विश्वकर्मा, त्रिपुर-निर्माता, मायावी मुकुटमणि मयकी दुहिताका सम्मान करता था दशग्रीव। वह मंदोदरी की उपेक्षा नहीं कर सकता था।

उस कृषा, विवर्णा, विमुखा सीतामें धरा क्या है। रानियोंमें-से प्रगल्भा धान्मालिनीने दशग्रीवके कण्ठमें भुजाएँ डाल दी- वह आपके उपयुक्त नहीं है। आप मेरे साथ विहार करें।

तभी मंदोदरी ने हल्के ढंग से रावण की भुजा को अपनी अँगुलियों से स्पर्श किया। रावण ने मंदोदरी को देखा और जैसे रक्त का घूँट पीकर रह गया। उसने खड्ग पर से अपना हाथ हटा लिया। अपनी क्रुद्ध, आरक्त आँखों से उसने एक बार सीता को देखा, एक बार मंदोदरी को; और फिर जैसे अनिर्णय की यातना से तड़पकर आकाश की ओर देखा।

हनुमान को रावण की विवशता समझ नहीं आई। उस समय वह क्रोध से फुफकारता हुआ विषधर सर्प के समान था, जो दंश न कर सकने की बाध्यता से अपने ही विष से जल रहा था।

ठीक है, वैदेही। रावण पुन: सीता से संबोधित हुआ, आज फिर निराश और असफल लौट रहा हूँ। दो मास की अवधि और है। एक मास के पश्चात् पुन: याचना करने आऊँगा। तब भी तुम न मानीं, तो अवधि समाप्त होने पर स्वयं अपने हाथों से तुम्हारा वध करूँगा।

रावण फुफकारता हुआ आगे बढ़ गया। मंदोदरी ने क्षणभर को सीता की ओर देखा। सीता के चेरेहे पर भी हल्की-सी मैत्रीपूर्ण मुसकान उभरी। किंतु बोला कोई भी नहीं- न मंदोदरी, न सीता। मंदोदरी भी बढ़ीं। साथ-साथ सारा अंत:पुर बढ़ा और उन्हें घेरे हुए दासियाँ भी चल पड़ीं। दशग्रीवको हँसी आ गयी। वह रानियोंसे घिरा लौट पड़ा। उसके पीठ फेरते ही राक्षसियोंने सीताजीको घेर लिया।

जब राक्षसीने ऐसा कहा और उसे दूसरी ओर वह हटा ले गयी, तब मेघके समान काला और बलवान् राक्षस रावण जोर-जोरसे हँसता हुआ महलकी ओर लौट पड़ा। अशोकवाटिकासे प्रस्थित होकर पृथ्वीको कम्पित-सी करते हुए दशग्रीवने उद्दीप्त सूर्यके सदृश प्रकाशित होनेवाले अपने भवनमें प्रवेश किया। तदनन्तर देवता, गन्धर्व और नागोंकी कन्याएँ भी रावणको सब ओरसे घेरकर उसके साथ ही उस उत्तम राजभवनमें चली गयीं। इस प्रकार अपने धर्ममें तत्पर, स्थिरचित्त और भयसे काँपती हुई मिथिलेशकुमारी सीताको धमकाकर काममोहित रावण अपने ही महलमें चला गया।

अपने महामहालय में लौटने से पूर्व रावण, शूर्पणखा के पास पहुँचा।

कैसी हो, शूर्पणखे ? आप तो प्रसन्न हैं, भैया। शूर्पणखा की आँखों में हिंस्र चमक थी, सीता आपके आधिपत्य में है।

रावण ने देखा- कितनी ईर्ष्या थी शूर्पणखा की आँखों में। कितनी प्रतिहिंसा। विजयी को चीर-फाड़कर खा जाने की पराजित आशंका का दमित रूप।

भगिनी। रावण यथासंभव कोमल स्वर में बोला, विचित्र संयोग है कि मैंने तुम्हें जितना देना चाहा, उतना कभी नहीं दे पाया। उल्टे मेरे कारण तुम्हारी क्षति होती रही। मैंने किसी वीर सेनापति से तुम्हारा विवाह कर तुम्हें एक स्वतंत्र राज्य देना चाहा; किंतु तुमने विद्युज्जिह्व का वरण किया। भाग्य का खेल देखो, तुम्हारा प्रिय मेरे ही हाथों मारा गया। मैंने तुम्हें जनस्थान का भोग दिया। उसे भी मेरी शत्रुता के कारण राम ने तुमसे छीन लिया। रावण ने रुककर शूर्पणखा को देखा, यह दण्ड भी तुम्हें मेरी बहन होने के कारण सहना पड़ा। इसलिए तुम्हें किसी भी प्रकार सुखी रखने का मेरा दायित्व और भी बढ़ जाता है।

लंका से निष्कासन। शूर्पणखा का मन चीत्कार कर उठा, यह रावण, भाई का प्यार जताकर, बहन को अपने राज्य से निष्कासित कर रहा है। तुम्हारे अपमान का प्रतिशोध मैंने ले लिया है। रावण बोला, जब तक उस कंगले राजकुमार राम का वध कर हम जनस्थान को पुन: हस्तगत नहीं कर लेते, तब तक तुम सुख से अश्मपुर में रहो। मैं एक शक्तिशाली सेना तथा धन का विपुल भंडार तुम्हारे साथ भेज रहा हूँ।

तुम्हें मेरा कितना ध्यान है, भैया। शूर्पणखा होठों पर मुसकान ले आई, अश्मपुर में मैं बहुत अकेली हो जाऊँगी। वहाँ मुझे शांति नही मिलेगी। मैं अभी कुछ दिन और यहीं रहकर अपनी मानसिक शांति लौटाना चाहती हूँ। मंदोदरी भाभी के पास रहना कितना सुखद है।

यह तुम्हारी शांति लूटेगी। प्रतिरावण जोर से हँसा।

मैंने तुम्हारे प्रस्थान की तैयारियों का आदेश दे दिया है। रावण बोला,

अपनी सुविधानुसार अपने राज्य में जाकर सुख-भोग करो। ऐसा न हो कि शासक को उदासीन पाकर अश्मपुर के कालकेय स्वतंत्र हो उठें। रावण ने शूर्पणखा के उत्तर की प्रतीक्षा नहीं की। वह जानता था कि उसका उत्तर क्या होगा।

शूर्पणखा स्पष्ट देख रही थी कि उसका लंका में रहना ही हितकर था। पर रावण यह नहीं चाहता। इस रावण से तो विभीषण ही अच्छा, कम-से-कम अपने मन की बात सच-सच तो कह देता है। पर रावण लंका का राजाधिराज है। उसकी आज्ञा का पालन होगा। हठ में या बल में- वह रावण को जीत नहीं पाएगी। उसे जाना ही होगा।

सूर्पणखा को उसका प्रिय राम तो मिला नहीं उलटे भाई रावण को सीता मिल गई। दोहरा दुख है सूर्पणखा को। एक ओर अपनी वंचना के कारण विरह में जल रही है, दूसरी ओर भाई की उपलब्धि के कारण ईर्ष्याग्नि में। बहुत पीड़ित है बिचारी सूर्पणखा।

न उगलते बने, न निगलते। सीता रावण के पास रहे और उससे रावण को सुख मिले, यह वह नहीं चाहती। किंतु सीता रावण के पास रहे और राम उसे खोजता हुआ आकर शूर्पणखा के जाल में फँस जाए, यह वह चाहती है। अब बताओ, उस स्वर ने अल्पविराम के बाद पूछा, शूर्पणखा क्या चाहती है, सीता रावण के पास रहे या न रहे ?

अशोकवाटिकासे निकलकर जब राक्षसराज रावण अन्त:पुरको चला गया, तब वहाँ जो भयानक रूपवाली राक्षसियाँ थीं, वे सब चारों ओरसे दौड़ी हुई सीताके पास आयीं।

हनुमान ने पलटकर देखा- यद्यपि मंदोदरी रावण के साथ-साथ चल रही थीं, किंतु उन्होंने अपने तनाव को शिथिल नहीं होने दिया; किंतु कुछ अन्य स्त्रियाँ रावण के आस-पास इस भंगिमा में मँडरा रही थीं, जैसे रावण का विरोध दूर होते ही उसके कंठ से लग जाएँगी।

हनुमान ने पुन: अपनी दृष्टि सीता की ओर घुमाई। वे अब भी शांत-सतेज भाव से अपने स्थान पर स्थिर बैठी थीं। इस बीच पुरुष प्रहरी भी अपने शस्त्र समेटकर जा चुके थे और अब वहाँ वे ही स्त्री प्रहरी रह गई थीं, जिन्हें हनुमान ने सबसे पहले वहाँ देखा था। उन लोगों ने सीता को घेर रखा था और किटकिटाए ढंग से उन्हें कोस रहीं थीं।

यह पता नहीं कैसी कुलच्छनी है। इसकी समझ में कोई बात ही नहीं आती। भला एक स्त्री चाहती क्या है ? महाराजाधिराज में कौन-सी न्यूनता है- सुदर्शन हैं, स्वस्थ हैं, शक्तिशाली हैं और महाराजाधिराज हैं। धन, संपत्ति, सत्ता, वैभव, ऐश्वर्य- सब कुछ है। उस कंगले तपस्वी के पीछे पागल हुई पड़ी है। स्वयं भी दु:खी है और हमें भी पीड़ित कर रखा है।

अरे, न हो जिसके भाग्य में राज-सुख, वह कहाँ से भोग लेगी। उसने देखा, उस धन्मालिनी को। महाराजाधिराज के कंठ में बाँहें डालने को कितनी आतुर थी। प्रासाद तक पहुँचने का भी धैर्य उसमें नहीं था। यहीं उनके गले में झूल रही थी और एक यह है अभागिन कि महाराजाधिराज बार-बार याचना करते हैं और यह दुष्टा उन्हें पैरों से ठुकराती है। वह तो कहो कि महाराजाधिराज पर इसके सौंदर्य का जादू चल गया है, नहीं तो कब से काटकर डाल दिया होता इसे।

ऐसी तो कोई सुंदर भी नहीं है। महाराजाधिराज को पता नहीं, इस बार क्या हो गया है। केशों से पकड़कर घसीट ले जाएँ अपनी शैया पर; नहीं तो कर दें इसका वध। तुझे जल्दी किस बात की पड़ी है; बहना। हँसता हुआ एक स्वर आया, लक्षण बड़े स्पष्ट हैं। अंत में इसके टुकड़े ही होंगे। तुम मदिरा तैयार कर रखो।

वह तो होना ही है। पर जितना विलंब होता जा रहा है, उतना ही इसका मांस सूखता जा रहा है। पता नहीं इसका वह कंगला तापस कैसा है, जिसके विरह में यह ऐसे सूख रही है। ऐसे ही दो मास और बीत गए, तो ह एकदम खँखाड़ हो जाएगी।

चलो। जो भी हो। तुम मदिरा तैयार रखो। इसका वध होगा तो निकुंभला देवी की पूजा करेंगे और मदिरा के साथ मानव-मांस का स्वाद लेंगे। सीते। तुम पुलस्त्यजीके कुलमें उत्पन्न हुए सर्वश्रेष्ठ दशग्रीव महामना रावणकी भार्या बनना भी कोई बहुत बड़ी बात नहीं समझतीं ?

विदेहकुमारी। पुलस्त्यजी छ: प्रजापतियोंमें चौथे हैं और ब्रह्माजीके मानस पुत्र हैं। इस रूपमें उनकी सर्वत्र ख्याति है। पुलस्त्यजीके मानस पुत्र तेजस्वी महर्षि विश्रवा हैं। वे भी प्रजापतिके समान ही प्रकाशित होते हैं। विशाललोचने। ये शत्रुओंके रुलानेवाले महाराज रावण उन्हींके पुत्र हैं और समस्त राक्षसोंके राजा हैं। तुम्हें इनकी भार्या हो जाना चाहिये। सर्वाङ्गसुन्दरी। मेरी इस कही हुई बातका तुम अनुमोदन क्यों नहीं करतीं ?

इसके बाद बिल्लीके समान भूरे आँखोंवाली हरिजटा नामकी राक्षसीने क्रोधसे आँखें फाड़कर कहना आरम्भ किया- अरी। जिन्होंने तैंतीसों देवताओं तथा देवराज इन्द्रको भी परास्त कर दिया है, उन राक्षसराज रावणकी रानी तो तुम्हें अवश्य बन जाना चाहिये। उन्हें अपने पराक्रमपर गर्व है। वे युद्धसे पीछे न हटनेवाले शूरवीर हैं। ऐसे बल-पराक्रमसम्पन्न पुरुषकी भार्या बनना तुम क्यों नहीं चाहती हो?

महाबली राजा रावण अपनी अधिक प्रिय और सम्मानित भार्या मन्दोदरीको भी, जो सबकी स्वामिनी हैं, छोड़कर तुम्हारे पास पधारें।

तुम्हारा कितना महान् सौभाग्य है। वे सहस्त्रों रमणिोंसे भरे हुए और अनेक प्रकारके रत्नोंसे सुशोभित उस अन्त:पुरको छोड़कर तुम्हारे पास पधारें (अत: तुम्हें उनकी प्रार्थना मान लेनी चाहिये)

तदनन्तर विकटा नामवाली दूसरी राक्षसीने कहा- जिन भयानक पराक्रमी राक्षसराजने नागों, गन्धर्वों और दानवोंको भी समराङ्गणमें बारंबार परास्त किया है, वे ही तुम्हारे पास पधारे थे। नीच नारी। उन्हीं सम्पूर्ण ऐश्वर्योंसे सम्पन्न महामना राक्षसराज रावणकी भार्या बननेके लिये तुम्हें क्यों इच्छा नहीं होती है ?

फिर उनसे दुर्मुखी नामवाली राक्षसीने कहा- विशाललोचने। जिनसे भय मानकर सूर्य तपना छोड़ देता है और वायुकी गति रुक जाती है, उनके पास तुम क्यों नहीं रहतीं ? भामिनि। जिनके भयसे वृक्ष फूल बरसाने लगते हैं और जो जब इच्छा करते हैं, तभी पर्वत तथा मेघ जलका स्त्रोत बहाने लगते हैं। उन्हीं राजाधिराज राक्षसराज रावणकी भार्या बननेके लिये तुम्हारे मनमें क्यों नहीं विचार होता है ?

देवि। मैंने तुमसे उत्तम, यथार्थ और हितकी बात कही है। सुन्दर मुस्कानवाली सीते। तुम मेरी बात मान लो, नहीं तो तुम्हें प्राणोंसे हाथ धोना पड़ेगा। सीते। रावणका अन्त:पुर समस्त प्राणियोंके लिये मनोरम है। वहाँ बहुमूल्य शय्याएँ बिछी रहती हैं। उस अन्त:पुरमें तुम्हारा निवास हो, इसके लिये तुम क्यों नहीं अनुमति देतीं ? तुम मानुषी हो, इसलिये मनुष्यकी भार्याका जो पद है, उसीको तुम अधिक महत्व देती हो; किंतु अब तुम रामकी ओरसे अपना मन हटा लो, अन्यथा कदापि जीवित नहीं रहोगी। तुम त्रिलोकीके ऐश्वर्यको भोगनेवाले राक्षसराज रावणको पतिरूपमें पाकर आनन्दपूर्वक विहार करो। अनिन्द्य सुन्दरी। तुम मानवी हो, इसीलिये मनुष्य जातीय रामको ही चाहती हो; परंतु राम इस समय राज्यसे भ्रष्ट हैं। उनका कोई मनोरथ सफल नहीं होता है तथा वे सदा व्याकुल रहते हैं।

राक्षसियोंकी ये बातें सुनकर कमलनयनी सीताने आँसूभरे नेत्रोंसे उनकी ओर देखकर इस प्रकार कहा- तुम सब मिलकर मुझसे जो यह लोक-विरुद्ध प्रस्ताव कर रही हो, तुम्हारा यह पापपूर्ण वचन मेरे हृदयमें एक क्षणके लिये भी नहीं ठहर पाता है। एक मानवकन्या किसी राक्षसकी भार्या नहीं हो सकती। तुम सब लोग भले ही मुझे खा जाओ; किंतु मैं तुम्हारी बात नहीं मान सकती। मेरे पति दीन हों अथवा राज्यहीन- वे ही मेरे स्वामी हैं, वे ही मेरे गुरु हैं, मैं सदा उन्हींमें अनुरक्त हूँ और रहूँगी। जैसे सुवर्चला सूर्यमें अनुरक्त रहती हैं।

जैसे महाभागा शची इन्द्रकी सेवामें उपस्थित होती हैं, जैसे देवी अरुन्धती महर्षि वसिष्ठमें, रोहिणी चन्द्रमामें, लोपा मुद्रा अगस्त्में, सुकन्या च्यवनमें, सावित्री सत्यवानमें, श्रीमती कपिलमें, मदयन्ती सौदासमें, केशिनी सगरमें तथा भीमकुमारी दमयन्ती अपने पति निषधनरेश नलमें अनुराग रखती हैं, उसी प्रकार मैं भी अपने पतिदेव इक्ष्वाकुवंश शिरोमणि भगवान् श्रीराममें अनुरक्त हूँ।

अशोक वृक्षमें चुपचाप छिपे बैठे हुए वानर हनुमान्‌जी सीताको फटकारती हुई राक्षसियोंकी बातें सुनते रहे।

उनका क्रोध बहुत बढ़ा हुआ था। वे सब-की-सब तुरंत हाथोंमें फरसे लेकर बोल उठीं- यह राक्षसराज रावणको पतिरूपमें पाने योग्य है ही नहीं। उन भयानक राक्षसियोंके बारंबार डाँटने और धमकाने पर सर्वाङ्गसुन्दरी कल्याणी सीता अपने आँसू पोंछती हुई उसी अशोक वृक्षके नीचे चली आयीं (जिसके ऊपर हनुमान्‌जी छिपे बैठे थे)।

वे बहुत ही दुर्बल हो गयी थीं। उनके मुखपर दीनता छा रही थी और उन्होंने मलिन वस्त्र पहन रक्खा था। उस अवस्थामें उन जनकनन्दिनीको चारों ओर खड़ी हुई भयानक राक्षसियोंने फिर धमकाना आरम्भ किया।

सीते। तूने अपने पतिके प्रति जितना स्नेह दिखाया है, इतना ही बहुत है। भद्रे। अति करना तो सब जगह दु:खका ही कारण होता है।

समस्त राक्षसोंका भरण-पोषण करनेवाले महाराज रावणको तुम अपना पति स्वीकार कर लो। वे देवराज इन्द्रके समान बड़े पराक्रमी तथा रूपवान् हैं। दीन-हीन मनुष्य रामका परित्याग करके सबसे प्रिय वचन बोलनेवाले, उदार और त्यागी रावणका आश्रय लो।

विदेहराजकुमारी। तुम आजसे समस्त लोकोंकी स्वामिनी बन जाओ और दिव्य अङ्गराग तथा दिव्य आभूषण धारण करो। शोभने। जैसे अग्निकी प्रिय पत्नी स्वाहा और इन्द्रकी प्राणवल्लभा शची हैं, उसी प्रकार तुम रावणकी प्रेयसी बन जाओ। विदेहकुमारी। श्रीराम तो दीन हैं। उनकी आयु भी अब समाप्त हो चली है। उनसे तुम्हें क्या मिलेगा ? यदि तुम मेरी कही हुई इस बातको नहीं मानोगी तो हम सब मिलकर तुम्हें इसी मुहूर्तमें अपना आहार बना लेंगी। अत्यन्त खोटी बुद्धिवाली मिथिलेशकुमारी। अबतक हमलोगोंने अपने कोमल स्वभाववश तुमपर दया आ जानेके कारण तुम्हारी बहुत-सी अनुचित बातें सह ली हैं।

इतनेपर भी तुम हमारी बात नहीं मानती हो। हमने तुम्हारे हितके लिये ही समयोचित सलाह दी थी। देखो, तुम्हें समुद्रके इस पार ले आया गया है, जहाँ पहुँचना दूसरोंके लिये अत्यन्त कठिन है। यहाँ भी रावणके भयानक अन्त:पुरमें तुम लाकर रक्खी गयी हो।

मिथिलेशकुमारी। याद रक्खो, रावणके घरमें कैद हो और हम-जैसी राक्षसियाँ तुम्हारी चौकसी कर रही हैं।

मैथिलि। साक्षात् इन्द्र भी यहाँ तुम्हारी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं हो सकते। अत: मेरा कहना मानो, मैं तुम्हारे हितकी बात बता रही हूँ।

आँसू बहानेसे कुछ होने-जानेवाला नहीं है। यह व्यर्थका शोक त्याग दो। सदा छायी रहनेवाली दीनताको दूर करके अपने हृदयमें प्रसन्नता और उल्लासको स्थान दो। सीते। राक्षसराज रावणके साथ सुखपूर्वक क्रीडाविहार करो। भीरु। हम सभी स्त्रियाँ जानती हैं कि नारियोंका यौवन टिकनेवाला नहीं होता। जबतक तुम्हारा यौवन नहीं ढल जाता, तबतक सुख भोग लो। मदमत्त बना देनेवाले नेत्रोंसे शोभा पानेवाली सुन्दरी। तुम राक्षसराज रावणके साथ लमामें रमणीय उद्यानों और पर्वतीय उपवनोंमें विहार करो। देवि। ऐसा करनेसे सहस्त्रों स्त्रियाँ सदा तुम्हारी आज्ञाके-अधीन रहेंगी।

महाराज रावण समस्त राक्षसोंका भरण-पोषण करनेवाले स्वामी हैं। तुम उन्हें अपना पति बना लो। मैंने जो बात कही हैं, यदि उसका ठीक-ठीक पालन नहीं करोगी तो मैं अभी तुम्हारा कलेजा निकालकर खा जाऊँगी।

तदनन्तर प्रधसा नामक राक्षसी बोल उठी- फिर तो हमलोग इस क्रूर-हृदया सीताका गला घोंट दें; अब चुपचाप बैठे रहनेकी क्या आवश्यकता है ? इसे मारकर महाराजको सूचना दे दी जाय कि वह मानवकन्या मर गयी। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस समाचारको सुनकर महाराज यह आज्ञा दे देंगे कि तुम सब लोग उसे खा जाओ। उन विकराल रूपवाली राक्षसियोंके द्वारा इस प्रकार धमकायी जानेपर देवकन्याके समान सुन्दरी सीता धैर्य छोड़कर फूट-फूटकर रोने लगीं।

तब सीता बोली- राक्षसियों। मनुष्यकी कन्या कभी राक्षसकी भार्या नहीं हो सकती। तुम्हारा जी चाहे तो तुम सब लोग मिलकर मुझे खा जाओ, परंतु मैं तुम्हारी बात नहीं मानूँगी। जैसे वनमें अपने यूथसे बिछुड़ी हुई मृगी भेड़ियोंसे पीड़ित होकर भयसे मारे काँप रही हो, उसी प्रकार सीता जोर-जोरसे काँप रही थभं और इस तरह सिकुड़ी जा रही थीं, मानो अपने अङ्गोंमें ही समा जायँगी।

प्रचण्ड वायुके चलनेपर कम्पित होकर गिरे हुए केलेके वृक्षकी भाँति वे राक्षसियोंके भयसे त्रस्त हो पृथ्वीपर गिर पड़ीं। उस समय उनके मुखकी कान्ति फीकी पड़ गयी थी। वे शोकसे पीड़ित होकर लंबी साँसें खींच रही थीं और क्रोधसे अचेत-सी होकर आर्तभावसे आँसू बहा रही थीं। उस समय मिथिलेशकुमारी इस प्रकार विलाप करने लगीं- हा राम। हा लक्ष्मण। हा मेरी सासु कौसल्ये। हा आर्ये सुमित्रे। बारंबार ऐसा कहकर दु:खसे पीड़ित हुई भामिनी सीता रोने-बिलखने लगीं। हाय। पण्डितोंने यह लोकोक्ति ठीक ही कही है कि किसी भी स्त्री या पुरुषकी मृत्यु बिना समय आये नहीं होती। तभी तो मैं श्रीरामके दर्शनसे वञ्चित तथा इन क्रूर राक्षसियोंद्वारा पीड़ित होनेपर भी यहाँ मुहूर्तभर भी जी रही हूँ। मुझे पतिदेवके दर्शन नहीं हो रहे हैं। मैं इन राक्षसियोंके चंगुलमें फँस गयी हूँ और पानीके थपेड़ोंसे आहत हो कटते हुए कगारोंके समान शोकसे क्षीण होती जा रही हूँ। उन आत्मज्ञानी भगवान् श्रीरामसे बिछुड़कर मेरा जीवित रहना उसी तरह सर्वथा दुर्लभ है, जैसे तेज विषका पान करके किसीका भी जीना अत्यन्त कठिन हो जाता है। पता नहीं, मैंने पूर्व-जन्ममें दूसरे शरीरसे कैसा महान् पाप किया था, जिससे यह अत्यन्त कठोर, घोर और महान् दु:ख मुझे प्राप्त हुआ है ?

इस मानव-जीवन और परतन्त्रताको धिक्कार है, जहाँ अपनी इच्छाके अनुसार प्राणोंका परित्याग भी नहीं किया जा सकता। महारथी श्रीरामके बिना राक्षसियोंके बीचमें रहकर मुझे न तो जीवनसे कोई प्रयोजन है, न धनकी आवश्यकता है और न आभूषणोंसे ही कोई काम है। अवश्य ही मेरा यह हृदय लोहेका बना हुआ है अथवा अजर-अमर है, जिससे इस महान् दु:खमें पड़कर भी यह फटता नहीं है। मैं बड़ी ही अनार्य और असती हूँ, मुझे धिक्कार है, जो उनसे अलग होकर मैं एक मुहूर्त भी इस पापी जीवनको धारण किये हूँ। अब तो यह जीवन केवल दु:ख देनेके लिये ही है। उस लोकनिन्दित निशाचर रावणको तो मैं बायें पैरसे भी नहीं छू सकती, फिर उसे चाहनेकी तो बात ही क्या है ? यह राक्षस अपने क्रूर स्वभावके कारण न तो मेरे इन्कारपर ध्यान देता है, न अपने महत्त्वको समझता है और न अपने कुलकी प्रतिष्ठाका ही विचार करता है। बारंबार मुझे प्राप्त करनेकी ही इच्छा करता है।

राक्षसियो। तुम्हारे देरतक बकवाद करनेसे क्या लाभ ? तुम मुझे छेदो, चीरो, टूकड़े-टुकड़े कर डालो, आगमें सेक दो अथवा सर्वथा जलाकर भस्म कर डालो तो भी मैं रावणके पास नहीं जा सकती।

श्रीरघुनाथ विश्वविख्यात ज्ञानी, कृतज्ञ, सदाचारी और परम दयालु हैं तथापि मुझे संदेह हो रहा है कि कहीं वे मेरे भाग्यके नष्ट हो जानेसे मेरे प्रति निर्दय तो नहीं हो गये ? अन्यथा जिन्होंने जनस्थानमें अकेले ही चौदह हजार राक्षसोंको कालके गालमें डाल दिया, वे मेरे पास क्यों नहीं आ रहे हैं ? इस अल्प बलवाले राक्षस रावणने मुझे कैद कर रक्खा है। निश्च ही मेरे पतिदेव समराङ्गणमें इस रावणका

वध करनेमें समर्थ है। जिन श्रीरामने दण्डकारण्यके भीतर राक्षसशिरोमणि विराधको युद्धमें मार डाला था, वे मेरी रक्षा करनेके लिये यहाँ क्यों नहीं आ रहे हैं?

यह लमा समुद्रके बीचमें बसी है, अत: किसी दूसरेके लिये यहाँ आक्रमण करना भले ही कठिन हो; किंतु श्रीरघुनाथके बाणोंकी गति यहाँ भी कुण्ठित नहीं हो सकती। वह कौन-सा कारण है, जिससे बाधित होकर सुदृढ़ पराक्रमी श्रीराम राक्षसद्वारा अपहृत हुई अपनी प्राणपत्नी सीताको छुड़ानेके लिये नहीं आ रहे हैं।

मुझे तो संदेह होता है कि लक्ष्मणके ज्येष्ठ भ्राता श्रीरामको मेरे इस लमामें होनेका पता ही नहीं है। मेरे यहाँ होनेकी बात यदि वे जानते होते तो उनके-जैसा तेजस्वी पुरुष अपनी पत्नीका यह तिरस्कार कैसे सह सकता था ? यदि श्रीरघुनाथको मेरे यहाँ रहनेका पता लग जाता तो वे आज ही कुपित होकर सारे संसारको राक्षसोंसे शून्य कर डालते।

लमापुरीको भी जला देते, महासागरको भी भस्म कर डालते तथा इस नीच निशाचर रावणके नाम और यशका भी नाश कर देते।

फिर तो नि:संदेह अपने पतियोंका संहार हो जानेसे घर-घरमें राक्षसियोंका इसी प्रकार क्रन्दन होता, जैसे आज मैं रो रही हूँ।

श्रीराम और लक्ष्मण लमाका पता लगाकर निश्चय ही राक्षसोंका संहार करेंगे। जिस शत्रुको उन दोनों भाइयोंने एक बार देख लिया, वह दो घड़ी भी जीवित नहीं रह सकता। अब थोड़े ही समयमें यह लमापुरी श्मशान-भूमिके समान हो जायगी। यहाँकी सड़कोंपर चिताका धुआँ फैल रहा होगा और गीधोंकी जमातें इस भूमिकी शोभा बढ़ाती होंगी।

पापाचारी राक्षसराज रावणके मारे जानेपर ह दुर्धर्ष लमापुरी भी निश्चय ही विधवा युवतीकी भाँति सूख जायगी, नष्ट हो जायगी।

श्रीरामके सायकोंसे दग्ध हो जानेके कारण लमापुरीकी प्रभा नष्ट हो जायगी। इसमें अन्धकार छा जायगा और यहाँके सभी प्रमुख राक्षस कालके गालमें चले जायँगे। इस समय अधर्मसे ही महान् उत्पात होनेवाला है। ये मांसभक्षी राक्षस धर्मको बिल्कुल नहीं जानते हैं। जिनके नेत्रप्रान्त अरुण वर्णके हैं, उन श्रीरामका दर्शन न पाकर अत्यन्त दु:खमें पड़ी हुई मुझ असहाय अबलाको पतिका चरणस्पर्श किये बिना ही शीघ्र यमदेवताका दर्शन करना पड़ेगा।

मुझे तो यह निश्चित जान पड़ता है कि मेरे ही शोकसे लक्ष्मणके बड़े भाई वीरवर श्रीराम भूतलपर अपने शरीरका त्याग करके यहाँसे देवलोकको चले गये हैं। वे देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षिगण धन्य हैं, जो मेरे पतिदेव वीर-शिरोमणि कमलनयन श्रीरामका दर्शन पा रहे हैं अथवा केवल धर्मकी कामना रखनेवाले परमात्मस्वरूप बुद्धिमान् राजर्षि श्रीरामको भार्यासे कोई प्रयोजन नहीं है (इसीलिये वे मेरी सुध नहीं ले रहे हैं)।

जो स्वजन अपनी दृष्टिके सामने होते हैं, उन्हींपर प्रीति बनी रहती है। जो आँखसे ओझल होते हैं, उनपर लोगोंका स्नेह नहीं रहता है शायद इसीलिये श्रीरघुनाथ मुझे भूल गये हैं, परंतु यह भी सम्भव नहीं है; क्योंकि कृतघ्न मनुष्य ही पीठ-पीछे प्रेमको ठुकरा देते हैं। भगवान् श्रीराम ऐसा नहीं करेंगे। अथवा मुझमें कोई दुर्गुण हैं या मेरा भाग्य ही फूट गया है, जिससे इस समय मैं मानिनी सीता अपने परम पूजनीय पति श्रीरामसे बिछुड़ गयी हूँ। मेरे पति भगवान् श्रीरामका सदाचार अक्षुण्ण है। वे शूरवीर होनेके साथ ही शत्रुओंका संहार करनेमें समर्थ है। मैं उनसे संरक्षण पानेके योग्य हूँ, परंतु उन महात्मासे बिछुड़ गयी। ऐसी दशामें जीवित रहनेकी अपेक्षा मर जाना ही मेरे लिये श्रेयस्कर है। अत: ऐसे समयमें मैं सब प्रकारसे अपने जीवनका अन्त कर देनेकी इच्छा रखती हूँ; परंतु मालूम होता है इस महान् दु:खमें होते हुए भी अभी मेरी मृत्यु नहीं लिखी है।

जिन्हें प्रियके वियोगसे दु:ख नहीं होता और अप्रियका संयोग प्राप्त होनेपर उससे भी अधिक कष्टका अनुभव नहीं होता- इस प्रकार जो प्रिय और अप्रिय दोनोंसे परे हैं, उन महात्माओंको मेरा नमस्कार है।

मैं अपने प्रियतम आत्मज्ञानी भगवान् श्रीरामसे बिछुड़ गयी हूँ और पापी रावणके चंगुलमें आ फँसी हूँ; अत: अब इन प्राणोंका परित्याग कर दूँगी। उन दुष्ट निशाचरियोंके द्वारा सीताको इस प्रकार डरायी जाती देख बूढ़ी राक्षसी त्रिजटा, जो तत्काल सोकर उठी थी, उन सबसे कहने लगी-नीच निशाचरियों। तुमलोग अपने-आपको ही खा जाओ। राजा जनककी प्यारी बेटी तथा महाराज दशरथकी प्रिय पुत्रवधू सीताजीको नहीं खा सकोगी। आज मैंने बड़ा भयंकर और रोमाञ्चकारी स्वप्न देखा है, जो राक्षसोंके विनाश और सीतापतिके अभ्युदयकी सूचना देनेवाला है।

तब अन्य राक्षसियाँ बोली- अरी। बताओ तो सही, तुमने आज रातमें यह कैसा स्वप्न देखा है ? उन राक्षसियोंके मुखसे निकली हुई

यह बात सुनकर त्रिजटाने उस समय वह स्वप्न-सम्बन्धी बात इस प्रकार कही- आज स्वप्नमें मैंने यह भी देखा है कि सीता श्वेत वस्त्र धारण किये श्वेत पर्वतके शिखरपर बैठी हैं और वह पर्वत समुद्रसे घिरा हुआ है, वहाँ जैसे सूर्यदेवसे उनकी प्रभा मिलती है, उसी प्रकार सीता श्रीरामसे मिली हैं। तदनन्तर अपने तेजसे सूर्यके समान प्रकाशित होते तथा श्वेत माला और श्वेत वस्त्र धारण किये वे दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण जानकीके पास आये। इसके बाद कमलनयनी सीता अपने पतिके अमसे ऊपरको उछलकर चन्द्रमा और सूर्यके पास पहुँच गयीं। वहाँ मैंने देखा वे अपने दोनों हाथोंसे चन्द्रमा और सूर्यको पोंछ रही हैं- उनपर हाथ फेर रही हैं। तत्पश्चात् जिसपर वे दोनों राजकुमार और विशाललोचना सीताजी विराजमान थीं, वह महान् गजराज लमाके ऊपर आकर खड़ा हो गया।

इसके बाद दूसरी जगह मैंने देखा सत्यपराक्रमी और बल-विक्रमशाली पुरुषोत्तम भगवान अपनी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मणके साथ सूर्यतुल्य तेजस्वी दिव्य पुष्पक विमानपर आरूढ़ हो उत्तर दिशाको लक्ष्य करके यहाँसे प्रस्थित हुए हैं। इस प्रकार मैंने स्वप्नमें भगवान् विष्णुके समान पराक्रमी श्रीरामका उनकी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मणके साथ दर्शन किया।

श्रीराम महातेजस्वी हैं। उन्हें देवता, असुर, राक्षस तथा दूसरे लोग भी कदापि जीत नहीं सकते। ठीक उसी तरह, जैसे पापी मनुष्य स्वर्गलोकपर विजय नहीं पा सकते। मैंने रावणको भी सपनेमें देखा था। वह मूड़ मुड़ाये तेलसे नहाकर लाल कपड़े पहने हुए था। मदिरा पीकर मतवाला हो रहा था तथा करवीरके फूलोंकी माला पहने हुए था। इसी वेषभूषामें आज रावण पुष्पक विमानसे पृथ्वीपर गिर पड़ा था। एक स्त्री उस मुण्डित-मस्तक रावणको कहीं खींचे लिये जा रही थी। उस समय मैंने फिर देखा रावणने काले कपड़े पहन रक्खे हैं। वह गधे से जुते हुए रथसे यात्रा कर रहा था। लाल फूलोंकी माला और लाल चन्दनसे विभूषित था। तेल पीता, हँसता और नाचता था। पागलोंकी तरह उसका चित्त भ्रान्त और इन्द्रियाँ व्याकुल थीं। वह गधेपर सवार हो शीघ्रतापूर्वक दक्षिण दिशाकी ओर जा रहा था।

फिर वह भयातुर हो घबराकर सहसा उठा और गदेसे विह्वल हो पागलके समान नंग-धड़ंग वेषमें बहुत-से दुर्वचन (गाली आदि) बकता हुआ आगे बढ़ गया। सामने ही दुर्गन्धयुक्त दु:सह घोर अन्धकारपूर्ण और नरकतुल्य मलका पम था, रावण उसीमें घुसा और वहीं डूब गया। रावणके सभी पुत्र भी मूड़ मुड़ाये और तेलमें नहाये दिखायी दिये हैं। यह भी देखनेमें आया कि रावण सूअरपर, इन्द्रजित् सूँसपर और कुम्भकर्ण ऊँटपर सवार हो दक्षिण दिशाको गये हैं।

राक्षसोंमें एकमात्र विभीषण ही ऐसे हैं, जिन्हें मैंने वहाँ श्वेत छत्र लगाये, सफेद माला पहने, श्वेत वस्त्र धारण किये तथा श्वेत चन्दन और अङ्गराग लगाये देखा है। उनके पास शङ्खध्वनि हो रही थी, नगाड़े बजाये जा रहे थे। इनके गम्भीर घोषके साथ ही नृत्य और गीत भी हो रहे थे, जो विभीषणकी शोभा बढ़ा रहे थे। विभीषण वहाँ अपने चार मन्त्रियोंके साथ पर्वतके समान विशालका मेघके समान गम्भीर शब्द करनेवाले तथा चार दाँतोंवाले दिव्य गजराजपर आरूढ़ हो आकाशमें खड़े थे। यह रमणीय लमापुरी घोड़े, रथ और हाथियोंसहित समुद्रमें गिरी हुई देखी गयी है। इसके बाहरी और भीतरी दरवाजे टूट गये हैं। मैंने स्वप्नमें देखा है कि रावणद्वारा सुरक्षित लमापुरीको श्रीरामका दूत बनकर आये हुए एक वेगशाली वानरने जलाकर भस्म कर दिया है।

कुम्भकर्ण आदि ये समस्त राक्षसशिरोमणि वीर लाल कपड़े पहनकर गोबरके कुण्डमें घुस गये हैं।

अत: अब तुमलोग हट जाओ और देखो कि किस तरह श्री रघुनाथ सीताको प्राप्त कर रहे हैं। वे बड़े अमर्षशील हैं, राक्षसोंके साथ तुम सबको भी मरवा डालेंगे। जिन्होंने वनवासमें भी उनका साथ दिया है, उन अपनी पतिव्रता भार्या और परमादरणीया प्रियतमा सीताका इस तरह धमकाया और डराया जाना श्रीरघुनाथ कदापि सहन नहीं करेंगे।

अत: अब इस तरह कठोर बातें सुनाना छोड़ो; क्योंकि इनसे कोई लाभ नहीं होगा। अब तो मधुर वचन-का ही प्रयोग करो। मुझे तो यही अच्छा लगता है कि हमलोग विदेहनन्दिनी सीतासे कृपा और क्षमाकी याचना करें। मैं जानती हूँ, तुम्हें कुछ और कहने या बोलनेकी इच्छा है; किंतु इससे क्या होगा ? यद्यपि तुमने सीताको बहुत धमकाया है तो भी इनकी शरणमें आकर इनसे अभयकी याचना करो; क्योंकि श्रीरघुनाथकी ओरसे राक्षसोंके लिये घोर भय उपस्थित हुआ है। जनकनन्दिनी मिथिलेशकुमारी सीता केवल प्रणाम करनेसे ही प्रसन्न हो जायेंगी। ये ही उस महान् भयसे तुम्हारी रक्षा करनेमें समर्थ हैं।

मैं तो समझती हूँ कि इन्हें जो वर्तमान दु:ख प्राप्त हुआ है, वह ग्रहणके समय चन्द्रमापर पड़ी हुई छायाके समान थोड़ी ही देरका है; क्योंकि ये देवी सीता मुझे स्वप्नमें विमानपर बैठी दिखायी दी हैं, अत: ये दु:ख भोगनेके योग्य कदापि नहीं है। मुझे तो अब जानकीजीके अभीष्ट मनोरथकी सिद्धि उपस्थित दिखायी देती है। राक्षसराज रावणके विनाश और रघुनाथकी विजयमें अब अधिक विलम्ब नहीं है।

देखो, सामने यह पक्षी शाखाके ऊपर अपने घोंसलेमें बैठकर बारंबार उत्तम सान्त्वनापूर्ण मीठी बोली बोल रहा है। इसकी वाणीसे सुस्वागतम् की ध्वनि निकल रही है और इसके द्वारा यह हर्षमें भरकर मानो पुन: पुन: मङ्गलप्राप्ति की सूचना दे रहा है अथवा आनेवाले प्रियतमकी अगवानीके लिये प्रेरित कर रहा है।

इस प्रकार पतिदेवकी विजयके संवादसे हर्षमें भरी हुई लजीली सीता उन सबसे बोलीं- यदि तुम्हारी बात ठीक हुई तो मैं अवश्य ही तुम सबकी रक्षा करूँगी। मैं इस दुष्ट रावणके हाथसे मारी जानेवाली हूँ, इसलिये यहाँ आत्मघात करनेसे भी मुझे कोई दोष नहीं लग सकता। कुछ भी हो, जैसे द्विज किसी शूद्रको वेदमन्त्रका उपदेश नहीं देता, उसी प्रकार मैं भी इस निशाचरको अपने हृदयका अनुराग नहीं दे सकती। मैं बड़ी दुखिया हूँ। दु:खकी बात है कि मेरी अवधिके ये दो महीने भी जल्दी ही समाप्त हो जायँगे। राजाके कारागारमें कैद हुए और रात्रिके अन्तमें फाँसीकी सजा पानेवाले अपराधी चोरकी जो दशा होती है, वही मेरी भी है।

निश्चय ही उस मृगरूपधारी जीवने मेरे कारण उन दोनों वेगशाली राजकुमारोंको मार डाला होगा। जैसे दो श्रेष्ठ सिंह बिजलीसे मार दिये जायँ, वही दशा उन दोनों भाइयोंकी हुई होगी। अवश्य ही उस समय कालने ही मृगका रूप धारण करके मुझ मन्दभागिनीको लुभाया था, जिससे प्रभावित हो मुझ मूढ़ नारीने उन दोनों आर्यपुत्रों- श्रीराम और लक्ष्मणको उसके पीछे भेज दिया था।

मेरी यह अनन्योपासना, क्षमा, भूमिशयन, धर्मसम्बन्धी नियमोंका पालन और पतिव्रतपरायणता- ये सब-के-सब कृतघ्नोंके प्रति किये गये मनुष्योंके उपकारकी भाँति निष्फल हो गये। मैं शीघ्र ही किसी तीखे शस्त्र अथवा विषसे अपने प्राण त्याग दूँगी; परंतु इस राक्षसके यहाँ मुझे कोई विष या शस्त्र देनेवाला भी नहीं है। शोकसे संतप्त हुई सीताने इसी प्रकार बहुत कुछ विचार करके अपनी चोटीको पकड़कर निश्चय किया कि मैं शीघ्र ही इस चोटीसे फाँसी लगाकर यमलोकमें पहुँच जाऊँगी।

हाय। कोई मुझे विष देनेवाला भी नहीं मिलता। मैं मरना चाहती हूँ। श्रीवैदेहीकी व्याकुलताकी सीमा नहीं थी- मेरे स्वामीको कल्पना भी नहीं होगी कि उनके वियोगमें जानकी इतने दिनों जीवित रहेगी। कहीं मेरे वियोगमें उन्होंने शरीर न छोड़ दिया हो; किंतु वे तो सर्वज्ञ हैं, परमपुरुष हैं। उन धर्मके परमाधारने मुझमें ही कोई दोष देखा, इसलिए मेरी ओरसे उदासीन हो गये हैं। उनके बिना मेरा मरना ही श्रेष्ठ है।

मेरी ओरसे उदासीन होकर उन अक्लिष्ट कर्माने संन्यास तो नहीं स्वीकार कर लिया ? दारुण दशग्रीवने उन दोनों भाईयोंका कोई अनिष्ट किया ? नाना प्रकारकी शंकाओंसे हृदय मथित होने लगा। जो प्रिय-अप्रियमें सुखी-दु:खी नहीं होते, उन महापुरुषोंको मेरा नमन। अब मेरा तो मरण ही श्रेयस्कर है।

देखो। देखो। इन श्रीराम-भार्याकी वाम भुजा फड़क रही है।

त्रिजटाने मुझे देख लिया है ? श्रीहनुमान सोचने लगे- अथवा यह स्वप्न सुना रही है ? मैं सचमुच इन राक्षसियोंके लगभग सिरपर ही तो हूँ। देवि। आप हमें क्षमा करना। हम तो राक्षसाधिपकी दासियाँ हैं। उनके आदेशकी वशवर्तिनी दासियाँ। राक्षसियोंने भूमिमें मस्तक रखकर प्रणाम किया- अब आप तनिक विश्राम कर लें। हम सब भी शयन करने जाती हैं।

सीताजीके सभी अङ्ग बड़े कोमल थे। वे उस अशोक वृक्षके निकट उसकी शाखा पकड़कर खड़ी हो गयीं। इस प्रकार प्राण-त्यागनेके लिये उद्यत हो जब वे श्रीराम, लक्ष्मण और अपने कुलके विषयमें विचार करने लगीं, उस समय शुभाङ्गी सीताके समक्ष ऐसे बहुत-से लोकप्रसिद्ध श्रेष्ठ शकुन प्रकट हुए, जो शोककी निवृत्ति करनेवाले और उन्हें ढाढ़स बँधानेवाले थे। उन शकुनोंका दर्शन और उनके शुभ फलोंका अनुभव उन्हें पहले भी हो चुका था।

उस समय सुन्दर केशोंवाली सीताका बाँकी बरौनियोंसे घिरा हुआ परम मनोहर काला, श्वेत और विशाल बाँया नेत्र फड़कने लगा। जैसे मछलीके आघातसे लाल कमल हिलने लगा हो। तत्पश्चात् अनारके बीजकी भाँति सुन्दर दाँत, मनोहर गात्र और अनुपम नेत्रवाली सीताका, जो वहाँ वृक्षके नीचे खड़ी थीं, सोनेके समान रंगवाला किंचित् मलिन रेशमी पीताम्बर तनिक-सा सरक गया और भावी शुभकी सूचना देने लगा। इनसे तथा और भी अनेक शकुनोंसे, जिनके द्वारा पहले भी मनोरथ-सिद्धिका परिचय मिल चुका था, प्रेरित हुई सुन्दर भौंहोवाली सीता उसी प्रकार हर्षसे खिल उठीं, जैसे हवा और धूपसे सूखकर नष्ट हुआ बीज वर्षाके जलसे सिंचकर हरा हो गया हो। उनका बिम्बफलके समान लाल ओठों, सुन्दर नेत्रों, मनोहर भौंहों, रुचिर केशों, बाँकी बरौनियों तथा श्वेत उज्ज्वल दाँतोंसे सुशोभित मुख राहुके ग्राससे मुक्त हुए चन्द्रमाकी भाँति प्रकाशित होने लगा।

अच्छा, अब लड़ो मत। सो जाओ। त्रिजटा ने उच्च स्वर में आदेश दिया। उनका वार्तालाप अकस्मात् ही बंद हो गया। अंधकार

में हनुमान देख नहीं सके कि वे सो गई थीं, या वैसे ही चुप हो गई थीं। किंतु अब सीता से बात कर सकने की संभावना हनुमान के मन में जाग रही थी। यदि वे सोयी नहीं हैं, तो सो जाएँगी। यदि ये राक्षसियाँ सचमुच सो जाएँ तो वे वृक्ष से उतरकर सीता को राम का संदेश तो दे ही सकते हैं। उन्हें थोड़ी-बहुत सांत्वना भी दे सकते हैं वैसे तो इन विषम परिस्थितियों में भी सीता ने जो धैर्य, साहस और तेज दिखाया था, वह अद्‌भुत था। फिर यदि उन्हें यह सूचना दी जा सके कि हनुमान जाकर राम को बताएँगे कि सीता यहाँ हैं और राम उन्हें मुक्त कराने के लिए, किष्किंधा से ससैन्य चल पड़ेंगे, तो निश्चित रूप से उनका आत्मबल और भी बढ़ेगा।

बैठे-बैठे बहुत देर हो गई, तो हनुमान ने सीता की ओर देखा- अब उनका वह तेजस्वी रूप कहीं विलीन हो गया था। वे अत्यंत दीन और विह्वल लग रही थीं। रावण के जाने के बाद से वे एक शब्द भी नहीं बोली थीं। राक्षसियों ने उन्हीं के विषय में इतना वार्तालाप किया था, उन्हें अनेक अपशब्द भी कहे थे; किंतु सीता ने उनकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया, जैसे उन्होंने सुना ही न हो किंतु उनकी यह दीनता, यह हताशा जैसे आवेश के ज्वार का भाटा हो। क्या सोच रही होंगी सीता ? कदाचित् रावण की धमकी तथा इन दुष्ट प्रहरी राक्षसियों के वार्तालाप ने उन्हें इतना अवसादाग्रस्त और हताश कर दिया था।

सहसा सीता ने एक हल्की-सी सिसकी भरी और फुसफुसाते-से स्वर में उनके मुख से निकला, मेरे राम।

हनुमान के मन में आया, तुरंत वृक्ष से कूद पड़ें और जाकर उनके सामने खड़े हो जाएँ किंतु दूसरे ही क्षण उनके विवेक ने उन्हें रोक दिया। कहीं कोई राक्षसी जागी हुई हो तो ? या उनकी आह से ही किसी की नींद टूट गई या सहसा एक अपरिचित पुरुष को इस प्रकार सामने देखकर स्वयं सीता ही चौंककर चीख पड़ीं। हनुमान को सावधान रहना चाहिए। कुछ समय पूर्व तक उन्हें अपनी सुरक्षा एवं स्वतंत्रता इसलिए आवश्यक लग रही थी, क्योंकि उन्हें सीता का संधान करना था; और अब वह इसलिए महत्त्वपूर्ण हो उठी थी, क्योंकि उन्होंने सीता को खोज लिया था। यह सूचना राम तक पहुँचनी ही चाहिए थी। यदि सीता के लंका में बंदिनी होने की निश्चित सूचना राम तक पहुँच जाए, तो फिर कदाचित् उन्हें लंका में आने से कोई रोक नहीं पाएगा। हनुमान ने उनके बाणों की शक्ति देखी है; उनका नेतृत्व तथा संगठन-कौशल देखा है एक राम ही हैं, जो रावण के समग्र विरोध का नेतृत्व कर पाएँगे। संभवत: उन्हीं के विरोध से रावण का वध हो सके और संसार की समस्त दुर्बल जातियों का, समस्त शोषित लोगों का त्राण हो पाए। हनुमान का सुरक्षित किष्किंधा तक लौटना बहुत आवश्यक था।

विकट द्वंद्व था हनुमान के मन में। इतना भारी दायित्व था उनके कंधों पर, और इस क्षण के कठिन निर्णय का बोझ भी एकमात्र उन्हें ही उठाना था। इस समय कोई सहायक नहीं था, कोई परामर्शदाता अथवा निर्देश देने वाला नहीं था और उनकी तनिक-सी असावधानी में संसार-भर के दलितों का भविष्य सदा के लिए अंधकारमय हो जानेवाला था।

सीता ऐसी जान पड़ती थीं मानो नन्दनवनमें कोई देवी हों। उन्हें देखते हुए वानरवीर हनुमान तरह-तरहकी चिन्ता करने लगे। श्रीसीता असीम प्रभावशाली तथा सब जीवोंपर दया करनेवाले भगवान् श्रीरामकी भार्या हैं। ये अपने पतिदेवका दर्शन पानेकी अभिलाषा रखती हैं, अत: इन्हें सान्त्वना देना उचित है। ये शोकके कारण अचेत-सी हो रही हैं, यदि मैं इन सती-साध्वी सीताको सान्त्वना दिये बिना ही चला जाऊँगा तो मेरा वह जाना दोषयुक्त होगा। मेरे चले जानेपर अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर ये यशस्विनी राजकुमारी जानकी अपने जीवनका अन्त कर देंगी। परंतु राक्षसियोंके सामने इनसे बात करना मेरे लिये ठीक नहीं होगा। ऐसी अवस्थामें यह कार्य कैसे सम्पन्न करना चाहिये, यही निश्चय करना मेरे लिये सबसे बड़ी कठिनाई है।

मैं श्रीरामका दूत बनकर आया। अम्बा जानकीका दर्शन मैंने कर लिया; किंतु इतनेसे मेरा कर्तव्य पूरा हो गया ? वृक्षकी शाखापर बैठे हनुमान सोच रहे थे- इनको आश्वासन देना चाहिये। इन्होंने देह त्याग दिया तो सब प्रयत्न ही व्यर्थ हो जायगा। इनसे बात करके ही स्वामीको सन्देश दे सकूँगा। अब ये अत्यल्प क्षण ही शेष हैं, किन्तु मैं छोटा वानर हूँ। संस्कृत बोलूं तो ये मुझे रावण समझकर भयभीत हो जायँगी। वानर-भाषा ये जानती नहीं। मुझे ऐसा करना है कि ये डरे नहीं। इन्हें सुख हो। इन्हें मुझपर विश्वास हो।

यदि इस रात्रिके बीतते-बीतते मैं सीताको सान्त्वना नहीं दे देता हूँ तो ये सर्वथा अपने जीवनका परित्याग कर देंगी, इसमें संदेह नहीं है। यदि श्रीराम मुझसे पूछें कि सीताने मेरे लिये क्या संदेश भेजा है तो इन सुमध्यमा सीतासे बात किये बिना मैं उन्हें क्या उत्तर दूँगा। यदि मैं सीताका संदेश लिये बिना ही यहाँसे तुरंत लौट गया तो ककुत्स्थकुलभूषण भगवान् श्रीराम अपनी क्रोधभरी दु:सह दृष्टिसे मुझे जलाकर भस्म कर डालेंगे। अच्छा तो राक्षसियोंके रहते हुए ही अवसर पाकर आज मैं यही बैठे-बैठे इन्हें धीरे-धीरे सान्त्वना दूँगा; क्योंकि इनके मनमें बड़ा संताप है।

ऐसी दशामें अवश्य ही मुझे उस सार्थक भाषाका प्रयोग करना चाहिये, जिसे अयोध्याके आस-पासकी साधारण जनता बोलती है, अन्यथा इन सती-साध्वी सीताको मैं उचित आश्वासन नहीं दे पाऊँगा। यदि मैं सामने जाऊँ तो मेरे इस वानररूपको देखकर और मेरे मुखसे मानवोचित भाषा सुनकर ये जनकनन्दिनी सीता, जिन्हें पहलेसे ही राक्षसोंने भयभीत कर रक्खा है, और भी डर जायँगी। मनमें भय उत्पन्न हो जानेपर ये विशाललोचना मनस्विनी सीता मुझे इच्छानुसार रूप धारण करनेवाला रावण समझकर जोर-जोरसे चीखने-चिल्लाने लगेंगी।

सीताके चिल्लानेपर ये यमराजके समान भयानक राक्षसियाँ तरह-तरहके हथियार लेकर सहसा आ धमकेंगी। तदनन्तर ये विकट मुखवाली महाबलवती राक्षसियाँ मुझे सब ओरसे घेरकर मारने या पकड़ लेनेका प्रयत्न करेंगी। फिर मुझे बड़े-बड़े वृक्षोंकी शाखा-प्रशाखा और मोटी-मोटी डालियोंपर दौड़ता देख ये सब-के-सब सशम हो उठेंगी। इसके बाद वे निशाचरियाँ राक्षसराज रावणके महलमें उसके द्वारा नियुक्त किये गये राक्षसोंको बुला लेंगी। इस हलचलमें वे राक्षस भी उद्विग्न होकर शूल, बाण, तलवार और तरह-तरहके शस्त्रास्त्र लेकर बड़े वेगसे आ धमकेंगे। उनके द्वारा सब ओरसे घिर जानेपर मैं राक्षसोंकी सेनाका संहार तो कर सकता हूँ; परंतु समुद्रके उस पार नहीं पहुँच पाऊँगा। इसके सिवा हिंसामें रुचि रखनेवाले राक्षस यदि इन जनकदुलारीको मार डालें तो श्रीरघुनाथ और सुग्रीवका यह सीताकी प्राप्तिरूप उद्योग ही नष्ट हो जायगा।

यह स्थान राक्षसोंसे घिरा हुआ है। यहाँ आनेका मार्ग दूसरोंका देखा या जाना हुआ नहीं है तथा इस प्रदेशको समुद्रने चारों ओरसे घेर रक्खा है। ऐसे गुप्त स्थानमें जानकीजी निवास करती हैं। यदि राक्षसोंने मुझे संग्राममें मार दिया या पकड़ लिया तो फिर श्रीरघुनाथके कार्यको पूर्ण करनेके लिये कोई दूसरा सहायक भी मैं नहीं देख रहा हूँ। बहुत विचार करनेपर भी मुझे ऐसा कोई वानर नहीं दिखायी देता है, जो मेरे मारे जानेपर सौ योजन विस्तृत महासागरको लाँघ सके। मैं इच्छानुसार सहस्रों राक्षसोंको मार डालनेमें समर्थ हूँ; परंतु युद्धमें फँस जानेपर महासागरके उस पार नहीं जा सकूँगा। युद्ध अनिश्चयात्मक होता है उसमें किस पक्षकी विजय होगी, यह निश्चित नहीं रहता और मुझे संशययुक्त कार्य प्रिय नहीं है। कौन ऐसा बुद्धिमान् होगा, जो संशयरहित कार्यको संशययुक्त बनाना चाहेगा।

सीतासे बातचीत करनेमें मुझे ही महान् दोष प्रतीत होता है और यदि बातचीत नहीं करता हूँ तो विदेहनन्दिनी सीताका प्राणत्याग भी निश्चित ही है। अविवेकी या असावधान दूतके हाथमें पड़नेपर बनेबनाये काम भी देश-कालके विरोधी होकर उसी प्रकार असफल हो जाते हैं, जैसे सूर्यका उदय होनेपर सब ओर फैले हुए अन्धकारका कोई वश नहीं चलता, वह निष्फल हो जाता है।

कर्तव्य और अकर्तव्यके विषयमें स्वामीकी निश्चित बुद्धि भी अविवेकी दूतके कारण शोभा नहीं पाती है; क्योंकि अपनेको बड़ा बुद्धिमान् या पण्डित समझनेवाले दूत अपनी ही नासमझीसे कार्यको नष्ट कर डालते हैं। फिर किस प्रकार यह काम न बिगड़े, किस तरह मुझसे कोई असावधानी न हो, किस प्रकार मेरा समुद्र लाँघना व्यर्थ हो जाय और किस तरह सीताजी मेरी सारी बातें सुन लें, किंतु घबराहटमें न पड़ें- इन सब बातोंपर विचार करके बुद्धिमान् हनुमान्‌जीने यह निश्चय किया।

जिनका चित्त अपने जीवन-बन्धु श्रीराममें ही लगा है, उन सीताजीको मैं उनके प्रियतम श्रीरामका जो अनायास ही महान् कर्म करनेवाले हैं, गुण गा-गाकर सुनाऊँगा और उन्हें उद्विग्न नहीं होने दूँगा। मीठी वाणी बोलकर श्रीरामके सारे संदेशोंको इस प्रकार सुनाऊँगा, जिससे सीताका उन वचनोंपर विश्वास हो। जिस तरह उनके मनका संदेह दूर हो, उसी तरह मैं सब बातोंका समाधान करूँगा।

त्रिजटे। तुम मेरी धर्ममाता हो। तुमने अनेक बार मुझे आश्वासन दिया है। मुझे समय-समयपर बचाया है। सीताने हाथ जोड़कर त्रिजटासे अत्यन्त कातर होकर प्रार्थना की- थोड़ी और सहायता कर दो मेरी। मैं अब जीवन-धारणमें असमर्थ हो गयी हूँ। अब सहा नहीं जाता। तनिकसा विष अथवा अग्नि मुझे दे दो। मैं देहत्याग करूँगी।

सीताजी हाथ जोड़कर त्रिजटासे बोलीं- हे माता। तू मेरी विपत्तिकी संगिनी है। जल्दी कोई ऐसा उपाय कर जिससे मैं शरीर छोड़ सकूँ। विरह असह्य हो चला है, अब यह सहा नहीं जाता। काठ लाकर चिता बनाकर सजा दे। हे माता। फिर उसमें आग लगा दे। हे सयानी। तू मेरी प्रीतिको सत्य कर दे। रावणकी शूलके समान दु:ख देनेवाली वाणी कानोंसे कौन सुने ?

सीताजी मन-ही-मन कहने लगीं- क्या करूँ विधाता ही विपरीत हो गया। न आग मिलेगी, न पीड़ा मिटेगी। आकाशमें अङ्गारे प्रकट दिखायी दे रहे हैं, पर पृथ्वीपर एक भी तारा नहीं आता। चन्द्रमा अग्निमय है, किन्तु वह भी मानो मुझे हतभागिनी जानकर आग नहीं बरसाता। हे अशोकवृक्ष। मेरी विनती सुन। मेरा शोक हर ले और अपना अशोक नाम सत्य कर।

तेरे नये-नये कोमल पत्ते अग्निके समान हैं। अग्नि दे, विरह-रोगका अन्त मत कर अर्थात् विरह-रोगको बढ़ाकर सीमातक न पहुँचा। सीताजीको विरहसे परम व्याकुल देखकर वह क्षण हनुमानजीको कल्पके समान बीता।

राजकुमारी। विष तो लंकामें केवल हम राक्षसोंकी वाणी और हृदयमें है। त्रिजटाने कहा- तुम नहीं जानती हो कि यह सूर्योदयका समय हमारा शयनकाल है। इस समय कहीं अग्नि सुलभ नहीं। अब तुम मुझे भी विश्राम करनेकी अनुमति दो। जाते-जाते दूरसे त्रिजटाने घूमकर सीताकी ओर देखा तो उसे लगा कि वृक्षपर कोई छोटा सुनहला पक्षी बैठा है। वह सीताको देख-देकर प्रसन्न हो रहा है और उन्हें मधुर स्वरमें आश्वासन दे रहा है। त्रिजटा इससे प्रसन्न हुई और अपने घर चली गयी। यह सीताका अभाग्य कि स्वर्णमृग देखकर मैं लुब्ध हुई और आर्यपुत्रको उसके पीछे भेजा। सीताजीने भी मधुर वचन कहते हनुमानको वृक्षपर देखकर पहिले पक्षी ही समझा- अब यह स्वर्णिम पक्षी छलना बनकर आया है। यह तो स्पष्ट रूप से जीवन की यातना से तंग आकर आत्महत्या का विचार था देवी वैदेही जैसी साहसी, आत्मविश्वासमयी तथा जिजीविषापूर्ण महिला भी यदि जीवन से ऊब गई हैं तो अवश्य ही उनकी यातना असहनीय हो गई है।

देवी वैदेही। हनुमान के मुख से अनायास ही निकल गया। मुख से शब्द निकलते ही वे सावधान हो गए; कहीं इसकी कोई प्रतिकूल प्रतिक्रिया न हो। लगा, सीता तक उनका शब्द पहुँच गया है। उन्होंने चौंककर इधर-उधर देखा और फिर जैसे उस स्वर को खोजती-सी चल पड़ीं। हनुमान उत्कंठित व्यग्रता से सीता के अपने वृक्ष के निकट पहुँचने की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने राम की मुद्रिका निकालकर अपने हाथ में ले ली थी। वार्तालाप से पूर्व उन्हें राम के दूत होने का प्रमाण देना था।

तब हनुमान्‌जीने हृदयमें विचारकर सीताजीके सामने अँगूठी डाल दी, मानो अशोकने अङ्गारा दे दिया यह समझकर सीताजीने हर्षित होकर उठकर उसे हाथमें ले लिया।

तब उन्होंने राम-नामसे अमित अत्यन्त सुन्दर एवं मनोहर अँगूठी देखी। अँगूठीको पहचानकर सीताजी आश्चर्यचकित होकर उसे देखने लगीं और हर्ष तथा विषादसे हृदयमें अकुला उठीं। वे सोचने लगीं- श्रीरघुनाथजी तो सर्वथा अजेय हैं, उन्हें कौन जीत सकता है? और मायासे ऐसी मायाके उपादानसे सर्वथा रहित दिव्य, चिन्म अँगूठी बनायी नहीं जा सकती। सीताजी मनमें अनेक प्रकारके विचार कर रही थीं। वे निकट आईं तो हनुमान ने पुन: धीरे-से पुकारा, देवी वैदेही।

सीता चकित, ठगी-सी रुक गईं- कहाँ से आ रहा है यह स्वर ? कौन पुकार रहा है ? सीता ने जैसे ही ऊपर की ओर देखा, हनुमान ने मुद्रिका डाल दी। जो साक्षात रुद्र का अवतार है, वह हनुमान रुद्र-वीणा के-से सुस्वर में अनन्त गान करने लगा। उसने वहाँ मूल से समस्त राम-चरित्र का गान करना आरम्भ किया। तब उस अशोक के वृक्ष में से मंगल ध्वनि सुनायी देने लगी।

अयोध्यापुरी के दशरथराय नामक जो राजा थे, उनके घर परिपूर्ण ब्रह्म स्वयं पुत्र रूप में प्रकट हुए। दशरथ के राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न नामक उन चार बलवान पुत्रों में राम को श्रीभगवान समझिए। रघुनाथ राम ने अनेक राक्षसों सहित ताड़का और सुबाहु को मार डाला, विश्वामित्र के यज्ञ को पूरा करवाया और उसकी रक्षा की। उन्होंने शिवजी के धनुष को भग्न कर दिया और जनक-कन्या सीता का वरण किया। फिर भृगु कुल पति परशुराम का गर्व छुड़ाया और तदनन्तर वे मुरारि भगवान राम नगर में पधारे। तब पहले दिये हुए अभिवचन के आधार पर अन्य माता कैकेयी ने राजा से वर माँग लिया। फल-स्वरूप पिता की आज्ञा का पालन करने के लिये राम वन में चले गये। साथ में सीता और लक्ष्मण थे। वे चित्रकूट आ गये। वहाँ भरत आकर प्रेमपूर्वक मिल गया, तो उसे बोध उपदेश करके उन्होंने लौटा दिया। वहाँ से वे गोदावरी तट आ गये और पंचवटी में रहे। उन्होंने वहाँ खर, दूषण आदि अनेकानेक असुरों को मार डाला। तब लंका का राजा रावण सीता का अपहरण करके उन्हें ले गया। उन्हें खोजने के लिए श्रीजगदीश स्वयं वन में गये। अनन्तर उन्होंने सुग्रीव के साथ मित्रता करके वानर बालि को मार डाला। फिर उन्होंने जनक की कन्या सीता की खोज करने, उसे देखने के लिए वानरों को भेज दिया।

इस प्रकार हनुमान ने श्रीराम के सम्पूर्ण चरित्र का गान किया। सुन्दर मधुर स्वर में किये हुए गान से शेषनाग तक ने सिर हिलाया। गान सुनकर जड़-चेतन मोह को प्राप्त हो गये; नदियों के जल प्रवाह स्तब्ध हो गये; पशु-पक्षी तन्मय हो गये और रखवाली करनेवाली राक्षस-स्त्रियाँ निद्राधीन हो गयीं। रात के अन्तिम भाग में जब चन्द्रमा का रथ स्थिर हो गया, तब पाषाण भी द्रवित होने से जल रूप होकर फैल गये। उस समय वायु भी स्तब्ध हो गयी। समस्त राक्षस निद्रावश हो गये; राक्षसियाँ मोह को प्राप्त हो गयीं। इस प्रकार रुद्र-वीणा के-से स्वर में किये गान से सब की सुब-बुध खो गयी। चित्-स्वरूप भगवान राम के इस प्रकार के चरित्र सुनने पर उस मंगल ध्वनि धुन से सीता का मन मोहित हुआ। वह तन्मय होकर चारों ओर देखने लगी। जब उसने किसी को नहीं देखा, तब मन में सोचा- किसी असुर

का यह कुछ कपट दिखायी दे रहा है। न जाने किसने प्रभु के चरित्र का उच्चारण गान किया है। तब सीता के मन को बड़ा विरह अनुभव हुआ। उसके मन का समस्त धैर्य छूट गया। फिर उसने मनमें निश्चय किया- अब मैं शरीर से प्राणों को त्याग दूँगी।

इस प्रकार बहुत-सी बातें सोच-विचारकर महामति हनुमान्‌जीने सीताको सुनाते हुए मधुर वाणीमें इस तरह कहना आरम्भ किया- इक्ष्वाकुवंशमें राजा दशरथ नामसे प्रसिद्ध एक पुण्यात्मा राजा हो गये हैं। वे अत्यन्त कीर्तिमान् और महान् यशस्वी थे। उनके यहाँ रथ, हाथी और घोड़े बहुत अधिक थे। उन श्रेष्ठ नरेशमें राजर्षियोंके समान गुण थे। तपस्यामें भी वे ऋषियोंकी समानता करते थे। उनका जन्म चक्रवर्ती नरेशोंके कुलमें हुआ था। वे देवराज इन्द्रके समान बलवान् थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र श्रीराम-नामसे प्रसिद्ध हैं। वे पिताके लाड़ले, चन्द्रमाके समान मनोहर मुखवाले, सम्पूर्ण धनु-धारियोंमें श्रेष्ठ और शस्त्र-विद्याके विशेषज्ञ हैं।

शत्रुओंको संताप देनेवाले श्रीराम अपने सदाचारके, स्वजनोंके, इस जीव-जगत्‌के तथा धर्मके भी रक्षक हैं।

उनके बूढ़े पिता महाराज दशरथ बड़े सत्यप्रतिज्ञ थे। उनकी आज्ञासे वीर श्रीरघुनाथ अपनी पत्नी और भाई लक्ष्मणके साथ वनमें चले आये। वहाँ विशाल वनमें शिकार खेलते हुए श्रीरामने इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले बहुत-से शूरवीर राक्षसोंका वध कर डाला। उनके द्वारा जनस्थानके विध्वंस और खरदूषणके वधका समाचार सुनकर रावणने अमर्षवश जनकनन्दिनी सीताका अपहरण कर लिया।

पहले तो उस राक्षसने मायासे मृग बने हुए मारीचके द्वारा वनमें श्रीरामको धोखा दिया और स्वयं जाकनीजीको हर ले गया। भगवान् श्रीराम परम साध्वी सीतादेवीकी खोज करते हुए मतंग-वनमें आकर सुग्रीव नामक वानरसे मिले और उनके साथ उन्होंने मैत्री स्थापित कर ली। तदनन्तर शत्रु-नगरीपर विजय पानेवाले श्रीरामने बालिका वध करके वानरोंका राज्य महात्मा सुग्रीवको दे दिया।

तत्पश्चात् वानरराज सुग्रीवकी आज्ञासे इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले हजारों वानर सीतादेवीका पता लगानेके लिये सम्पूर्ण दिशाओंमें निकले हैं। उन्हींमेंसे एक मैं भी हूँ। मैं सम्पातिके कहनेसे विशाललोचना विदेहनन्दिनीकी खोजके लिये सौ योजन विस्तृत समुद्रको वेगपूर्वक लाँघकर यहाँ आया हूँ। मैंने श्रीरघुनाथके मुखसे जानकीका जैसा रूप, जैसा रंग तथा जैसे लक्षण सुने थे, उनके अनुरूप ही इन्हें पाया है। इतना ही कहकर वानरशिरोमणि हनुमान चुप हो गये।

कपिके वचन सुनकर सीताको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे सम्पूर्ण वृत्तियोंसे भगवान् श्रीरामका स्मरण करती हुई समस्त दिशाओंमें दृष्टि दौड़ाने लगी। उन्होंने ऊपर-नीचे तथा इधर-उधर दृष्टिपात करके उन अचिन्त्य बुद्धिवाले पवनपुत्र हनुमान्‌को जो वानरराज सुग्रीवके मन्त्री थे, उदयाचलपर विराजमान सूर्यके समान देखा।

तब शाखाके भीतर छिपे हुए, विद्युत्पुञ्जके समान अत्यन्त पिङ्गल वर्णवाले और श्वेत वस्त्रधारी हनुमान्‌जीपर उनकी दृष्टि पड़ी। फिर तो उनका चित्त चञ्चल हो उठा। उन्होंने देखा, फूले हुए अशोकके समान अरुण कान्तिसे प्रकाशित एक विनीत और प्रियवादी वानर डालियोंके बीचमें बैठा है। उसके नेत्र तपाये हुए सुवर्णके समान चमक रहे हैं।

विनीतभावसे बैठे हुए वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीको देखकर मिथिलेशकुमारीको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे मन-ही-मन सोचने लगीं। भयसे मोहित हुई भामिनी सीता अत्यन्त करुणाजनक स्वरमें हा राम। हा राम। हा लक्ष्मण। ऐसा कहकर दुःखसे आतुर हो अत्यन्त विलाप करने लगीं। उस समय सीता मन्द स्वरमें सहसा रो पड़ीं। इतनेहीमें उन्होंने देखा, वह श्रेष्ठ वानर बड़ी विनयके साथ निकट आ बैठा है। तब सीताने सोचा- यह कोई स्वप्न तो नहीं है। अशोक वृक्ष पर से बलवान हनुमान नीचे उतर गया, तब वह सीता के समीप आ गया और राम की जय हो, राम की जय हो, राम की जय हो, कहते हुए सामने प्रकट हो गया।

सीता बाहर जाने के लिए झपटीं; किंतु तत्काल रुक गईं- यह भी कोई माया ही न हो, कोई षड्यंत्र कहीं यह व्यक्ति रावण का ही भेजा हुआ न हो, जो अपनी माया से उन्हें विश्वास दिलाने आया हो कि अब राम नहीं रहे राम के पास से इतनी दूर कौन आ सकता है। किसे पता है कि वे यहाँ हैं; और फिर इतना बीहड़ मार्ग, समुद्र का इतना बड़ा व्यवधान, लंका की ऐसी विकट रक्षा-व्यवस्था राम स्वयं ही आएँ तो आएँ, अन्य कोई व्यक्ति कैसे आ सकता है।

जिस समय धान सूखने लग गया हो, ठीक उसी समय मेघ बरसा हो अथवा जैसे किसी के अन्तकाल में उसे अमृत मिल गया हो, और वह अमर हो गया हो; अथवा महासागर में किसी के डूबते रहने पर जैसे उसे नाव आकर मिल गयी हो, वैसे ही हनुमान को देखकर सीता को जान पड़ा और मन में अत्यधिक प्रेम उत्पन्न हो गया। फिर वह बोली- हे मंगलदायक वीर, हे मंगल-स्वरूप, तुम कौन हो? तुम कहाँ से आ गये हो ? कहाँ रहते हो ? हनुमान। कौन हो तुम ? मैं तो तुम्हें नहीं जानती ?

माता। मैं किष्किंधा के वानर-सम्राट सुग्रीव का मंत्री हूँ। भद्र राम ने वानरराज का महान उपकार किया है; अत: राम तथा वानरराज में प्रगाढ़ मैत्री हो गई है। राम और सौमित्र इस समय किष्किंधा में हैं और रावण से युद्ध के लिए वानरों की विकट सेना तैयार कर रहे हैं। मैं आपका अन्वेषण करने आया हूँ। लौटकर आपका समाचार दूँगा तो तत्काल सैनिक अभियान आरंभ होगा। आप धैर्य बनाए रखें।

इसमें कोई माया नहीं हो सकती, कोई षड्यंत्र नहीं हो सकता- सीता ने सोचा- माया होती तो राम के विरुद्ध रावण के पक्ष में होती। उन्हें निराश और हताश करने का प्रयत्न किया जाता; किंतु यह व्यक्ति तो उनका उत्साह बढ़ा रहा है, राम और लक्ष्मण द्वारा सैन्य-संगठन का समाचार दे रहा है और उन्हें धैर्य बनाए रखने को कह रहा है। यह सचमुच ही राम का दूत है। उनके राम ने उन्हें विस्मृत नहीं किया है, न वे निराश और हताश हुए हैं। उन्होंने सीता को खोज निकाला है। जब खोज निकाला है तो वे आएँगे भी। अवश्य आएँगे और ससैन्य आएँगे। सीता को भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। जब दुख की अंधिारी रात कट जाएगी उनका राम से मिलन होगा। सीता को रोमांच हो आया।

मेरा धैर्य प्राय: समाप्त हो चला था, हनुमान्। सीता बोलीं, अब अपने प्रिय का समाचार मिला है, तो स्वं को समझाऊँगी। यदि तुम यहीं थे तो तुमने सुना होगा, हरण के पश्चात रावण ने मुझे एक वर्ष की अवधि दी है, अपने पति को भूलने के लिए। तब तक मैं सुरक्षित हूँ। स्वयं मंदेदरी, रावण का भाई विभीषण और रावण का मंत्री अविन्ध्य मेरी रक्षा के लिए प्रयत्नशील हैं। किंतु अवधि के समाप्त होने पर कोई भी मेरी रक्षा नहीं कर पाएगा। रावण की इच्छा तो कभी भी पूरी नहीं होगी; अत: या तो वह स्वयं मेरी हत्या कर देगा, अथवा मैं स्वयं तंग आकर आत्महत्या कर लूँगी। राम से कहना, इस अवधि के भीतर यदि वे यहाँ पहुँच जाएँगे तो उन्हें सीता जीवित मिलेगी।

वे पहुँच जाएँगे, माता।

पूर्णत: आश्वस्त हो ?

उन्हें देखते ही सीताजी अत्यन्त व्यथित होकर ऐसी दशाको पहुँच गयीं, मानो उनके प्राण निकल गये हों। फिर बड़ी देरमें चेत होनेपर सीताने इस प्रकार विचार किया- आज मैंने यह बड़ा बुरा स्वप्न देखा है। सपनेमें वानरको देखना शास्त्रोंने निषिद्ध बताया है। मेरी भगवान्से प्रार्थना है कि श्रीराम, लक्ष्मण और मेरे पिता जनकका मङ्गल हो। उनपर इस दु:स्वप्नका प्रभाव न पड़े।

परंतु यह स्वप्न तो हो नहीं सकता; क्योंकि शोक और दु:खसे पीड़ित रहनेके कारण मुझे कभी नींद आती ही नहीं है नींद उसे आती है, जिसे सुख हो। मुझे तो उन पूर्णचन्द्रके समान मुखवाले श्रीरघुनाथसे बिछुड़ जानेके कारण अब सुख सुलभ ही नहीं है।

मैं बुद्धिसे सर्वदा राम। राम। ऐसा चिन्तन करके वाणीद्वारा भी राम-नामका ही उच्चारण करती रहती हूँ; अत: उस विचारके अनुरूप वैसे ही अर्थवाली यह कथा देख और सुन रही हूँ। सोचती हूँ कि सम्भव है यह मेरे मनकी ही कोई भावना हो तथापि बुद्धिसे भी तर्क-वितर्क करती हूँ कि यह जो कुछ दिखायी देता है, इसका क्या कारण है ? मनोरथ या मनकी भावनाका कोई स्थूल रूप नहीं होता; परंतु इस वानरका रूप तो स्पष्ट दिखायी दे रहा है और यह मुझसे बातचीत भी करता है।

मैं वाणीके स्वामी बृहस्पतिको, वज्रधारी इन्द्रको, स्वयम्भू ब्रह्माजीको तथा वाणीके अधिष्ठातृ-देवता अग्निको भी नमस्कार करती हूँ। इस वनवासी वानरने मेरे सामने यह जो कुछ कहा है, वह सब सत्य हो, उसमें कुछ भी अन्यथा न हो।

प्रफुल्ल कमलदलके समान विशाल नेत्रोंवाली देवि। यह मलिन रेशमी पीताम्बर धारण किये आप कौन हैं ? अनिन्दिते। इस वृक्षकी शाखाका सहारा लिये आप यहाँ क्यों खड़ी हैं ? कमलके पत्तोंसे झरते हुए जल-बिन्दुओंके समान आपकी आँखोंसे ये शोकके आँसू क्यों गिर रहे हैं ? शोभने। आप देवता, असुर, नाग, गन्धर्व, राक्षस, यक्ष, किन्नर, रुद्र, मरुद्गण अथवा वसुओंमेंसे कौन हैं ? इनमेंसे किसकी कन्या अथवा पत्नी हैं ? सुमुखि। वरारोहे। मुझे तो आप कोई देवता-सी जान पड़ती हैं।

क्या आप चन्द्रमासे बिछुड़कर देवलोकसे गिरी हुई नक्षत्रोंमें श्रेष्ठ और गुणोंमें सबसे बढ़ी-चढ़ी रोहिणी देवी हैं ?

रोने, लंबी साँस खीचने तथा पृथ्वीका स्पर्श करनेके कारण मैं आपको देवी नहीं मानता। आप बारंबार किसी राजाका नाम ले रही हैं तथा आपके चिन्ह और लक्षण जैसे दिखायी देते हैं, उन सबपर दृष्टिपात करनेसे यही अनुमान होता है कि आप किसी राजाकी महारानी तथा किसी नरेशकी कन्या हैं। रावण जनस्थानसे जिन्हें बलपूर्वक हर लाया था, वे सीताजी ही यदि आप हों तो आपका कल्याण हो।

दु:खके कारण आपमें जैसी दीनता आ गयी है, जैसा आपका अलौकिक रूप है तथा जैसा तपस्विनीका-सा वेष है, इन सबके द्वारा निश्चय ही आप श्रीरामकी महारानी जान पड़ती हैं।

हनुमानकी बात सुनकर विदेहनन्दिनी सीता श्रीरामकी चर्चासे बहुत प्रसन्न थीं; अत: वृक्षका सहारा लिये खड़े हुए उन पवनकुमारसे इस प्रकार बोलीं- कपिवर। जो भूमण्डलके श्रेष्ठ राजाओंमें प्रधान थे, जिनकी सर्वत्र प्रसिद्धि थी तथा जो शत्रुओंकी सेनाका संहार करनेमें समर्थ थे, उन महाराज दशरथकी मैं पुत्रवधू हूँ, विदेहराज महात्मा जनककी पुत्री हूँ और परम बुद्धिमान भगवान श्रीरामकी धर्मपत्नी हूँ। मेरा नाम सीता है। महाराज दशरथ बड़े सत्यवादी थे। उन्होंने कैकयीदेवीको दो वर देनेके लिये कहा था। उस वरदानका स्मरण करके कैकेयीके क्रूर एवं अप्रिय वचनको सुनकर वे मूर्छित हो गये।

श्रीमान् रामको पिताके वचन राज्याभिषेकसे भी बढ़कर प्रिय थे। इसलिये उन्होंने पहले उन वचनोंको मनसे ग्रहण किया, फिर वाणीसे भी स्वीकार कर लिया। सत्य-पराक्रमी भगवान् श्रीराम केवल देते हैं, लेते नहीं। वे सदा सत्य बोलते हैं, अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये भी कभी झूठ नहीं बोल सकते। उन महायशस्वी श्रीरघुनाथने बहुमूल्य उत्तरीय वस्त्र उतार दिये और मनसे राज्यका त्याग करके मुझे अपनी माताके हवाले कर दिया। किंतु मैं तुरंत ही उनके आगे-आगे वनकी ओर चल दी; क्योंकि उनके बिना मुझे स्वर्गमें भी रहना अच्छा नहीं लगता। अपने सुहृदोंको आनन्द देनेवाले सुमित्राकुमार महाभाग लक्ष्मण भी अपने बड़े भाईका अनुसरण करनेके लिये उनसे भी पहले कुश तथा चीर-वस्त्र धारण करके तैयार हो गये।

इस प्रकार हम तीनोंने अपने स्वामी महाराज दशरथकी आज्ञाको अधिक आदर देकर दृढ़तापूर्वक उत्तम व्रतका पालन करते हुए उस सघन वनमें प्रवेश किया, जिसे पहले कभी नहीं देखा था। वहाँ दण्डकारण्यमें रहते समय उन अमिततेजस्वी भगवन् श्रीरामकी भार्या मुझ सीताको दुरात्मा राक्षस रावण यहाँ हर लाया है।

दु:ख-पर-दु:ख उठानेके कारण पीड़ित हुई सीताका उपर्युक्त वचन सुनकर वानरशिरोमणि हनुमानने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा- देवि। मैं श्रीरामका दूत हूँ और आपके लिये उनका संदेश लेकर आया हूँ। विदेहनन्दिनी। श्रीराम सकुशल हैं और उन्होंने आपका कुशल-समाचार पूछा है। देवि। जिन्हें ब्रह्मास्त्र और वेदोंका भी पूर्ण ज्ञान है, वे वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ दशरथनन्दन श्रीराम स्वयं सकुशल रहकर आपकी भी कुशल पूछ रहे हैं।

आपके पतिके अनुचर तथा प्रिय महातेजस्वी लक्ष्मणने भी शोकसे संतप्त हो आपके चरणोंमें मस्तक झुकाकर प्रणाम कहलाया है।

श्रीराम और लक्ष्मणका समाचार सुनकर देवी सीताके सम्पूर्ण अङ्गोंमें हर्षजनित रोमाञ्च हो आया और वे हनुमानसे बोलीं- यदि मनुष्य जीवित रहे तो उसे सौ वर्ष बाद भी आनन्द प्राप्त होता ही है, यह लौकिक कहावत आज मुझे बिल्कुल सत्य एवं कल्याणमयी जान पड़ती है।

शोकसंतप्त सीताकी वे बातें सुनकर पवनकुमार हनुमान् उनके कुछ निकट चले गये। हनुमान ज्यों-ज्यों निकट आते, त्यों-ही-त्यों सीताको यह शमा होती कि यह कहीं रावण न हो। तत्पश्चात् महाबाहु हनुमान्ने जनकनन्दिनी सीताके चरणोंमें प्रणाम किया, किंतु वे भयभीत होनेके कारण फिर उनकी ओर देख न सकीं।

वानर हनुमान्को बारंबार वन्दना करते देख सीता मधुर वाणीमें बोलीं- यदि तुम स्वयं मायावी रावण हो और मायामय शरीरमें प्रवेश करके फिर मुझे कष्ट दे रहे हो तो यह तुम्हारे लिये अच्छी बात नहीं है। जिसे मैंने जनस्थानमें देखा था तथा जो अपने यथार्थ रूपको छोड़कर संन्यासीका रूप धारण करके आया था, तुम वही रावण हो।

अथवा जिस बातकी मेरे मनमें शमा हो रही है, वह न भी हो; क्योंकि तुम्हें देखनेसे मेरे मन में प्रसन्नता हुई है।

वानरश्रेष्ठ। सचमुच ही यदि तुम भगवन् श्रीरामके दूत हो तो तुम्हारा कल्याण हो। मैं तुमसे उनकी बातें पूछती हूँ; क्योंकि श्रीरामकी चर्चा मुझे बहुत ही प्रिय है। अहो। यह स्वप्न कैसा सुखद हुआ ? जिससे यहाँ चिरकालसे हरकर लायी गयी मैं आज भगवान् श्रीरामके भेजे हुए दूत वानरको देख रही हूँ।

यदि मैं लक्ष्मणसहित वीरवर श्रीरघुनाथको स्वप्नमें भी देख लिया करूँ तो मुझे इतना कष्ट न हो; परंतु स्वप्न भी मुझसे डाह करता है।

मैं इसे स्वप्न नहीं समझती; क्योंकि स्वप्नमें वानरको देख लेनेपर किसीका अभ्युदय नहीं हो सकता और मैंने यहाँ अभ्युदय प्राप्त किया है अभ्युदयकालमें जैसी प्रसन्नता होती है, वैसी ही प्रसन्नता मेरे मनमें छा रही है। अथवा यह मेरे चित्तका मोह तो नहीं है। वात-विकारसे होनेवाला भ्रम तो नहीं है। उन्मादका विकार तो नहीं उमड़ आया अथवा यह मृगतृष्णा तो नहीं है।

तब हनुमान बोले- भगवान् श्रीराम सूर्यके समान तेजस्वी, चन्द्रमाके समान लोककमनीय तथा देव कुबेरकी भाँति सम्पूर्ण जगत्के राजा हैं। महायशस्वी भगवान् विष्णुके समान पराक्रमी तथा बृहस्पतिजीकी भाँति सत्यवादी एवं मधुरभाषी हैं। रूपवान्, सौभाग्यशाली

और कान्तिमान् तो वे इतने हैं, मानो मूर्तिमान् कामदेव हों। वे क्रोधके पात्रपर ही प्रहार करनेमें समर्थ और संसारके श्रेष्ठ महारथी हैं।

सम्पूर्ण विश्व उन महात्माकी भुजाओंके आश्रयमें- उन्हींकी छत्रछायामें विश्राम करता है। मृगरूपधारी निशाचरद्वारा श्रीरघुनाथको आश्रमसे दूर हटाकर जिसने सूने आश्रममें पहुँचकर आपका अपहरण किया है, उसे उस पापका जो फल मिलनेवाला है, उसको आप अपनी आँखों देखेंगी। पराक्रमी श्रीराम क्रोधपूर्वक छोड़े गये प्रज्वलित अग्निके समान तेजस्वी बाणोंद्वारा समराङ्गणमें शीघ्र ही रावणका वध करेंगे। मैं उन्हींका भेजा हुआ दूत होकर यहाँ आपके पास आया हूँ। भगवान् श्रीराम आपके वियोगजनित दु:खसे पीड़ित हैं। उन्होंने आपके पास अपनी कुशल कहलायी है और आपकी भी कुशल पूछी है।

सुमित्राका आनन्द बढ़ानेवाले महातेजस्वी महाबाहु लक्ष्मणने भी आपको प्रणाम करके आपकी कुशल पूछी है।

देवि। श्रीरघुनाथके सखा एक सुग्रीव नामक वानर हैं, जो मुख्य-मुख्य वानरोंके राजा हैं, उन्होंने भी आपसे कुशल पूछी है। सुग्रीव और लक्ष्मणसहित श्रीराम प्रतिदिन आपका स्मरण करते हैं।

विदेहनन्दिनि। राक्षसियोंके चंगुलमें फँसकर भी आप अभीतक जीवित हैं, यह बड़े सौभाग्यकी बात है। अब आप शीघ्र ही महारथी श्रीराम और लक्ष्मणका दर्शन करेंगी। साथ ही करोड़ों वानरोंसे घिरे हुए अमिततेजस्वी सुग्रीवको भी आप देखेंगी। मैं सुग्रीवका मन्त्री हनुमान् नामक वानर हूं। मैंने महासागरको लाँघकर और दुरात्मा रावणके सिरपर पैर रखकर लमापुरीमें प्रवेश किया है। मैं अपने पराक्रमका भरोसा करके आपका दर्शन करनेके लिये यहाँ उपस्थित हुआ हूँ। देवि। आप मुझे जैसा समझ रही हैं, मैं वैसा नहीं हूँ। आप यह विपरीत आशमा छोड़ दीजिये और मेरी बातपर विश्वास कीजिये।

रावण की शक्ति देखी है ? देखी है, माता।

वानर लड़ लेंगे ? हम लंका को ध्वस्त कर देंगे।

पूरा विश्वास है तुम्हें ? कुछ ही दिनों की बात है। आप स्वयं देखेंगी।

माता। हनुमान बोले, यदि आपकी इच्छा हो तो आप मेरे साथ चली चलों। हम बहुत शीघ्र किष्किंधा पहुँच जाएँगे।

कैसे आए हो ? सागर लाँघकर।

नहीं जा सकेंगे। यह व्यवहारिक नहीं है। तुम जाकर राम को ही सेना सहित भेजो। सहसा सीता का स्वर भीरु हो गया, अब तुम जाओ, हनुमान्। थोड़ी देर में उजाला होने वाला है। किसी भी क्षण कोई आ सकता है। तुम पकड़े गए तो।

सीताजीने पूछा- नर और वानरका सङ्ग कहो कैसे हुआ ? तब हनुमान्‌जीने जैसे सङ्ग हुआ था, वह सब कथा कही।

हनुमान्‌जीके प्रेमयुक्त वचन सुनकर सीताजीके मनमें विश्वास उत्पन्न हो गया। उन्होंने जान लिया कि यह मन, वचन और कर्मसे कृपासागर श्रीरघुनाथका दास है।

भगवान्‌का जन सेवक जानकर अत्यन्त गाढ़ी प्रीति हो गयी। नेत्रोंमें प्रेमाश्रुओंका जल भर आया और शरीर अत्यन्त पुलकित हो गया। सीताजीने कहा- हे तात हनुमान्। विरहसागरमें डूबती हुई मुझको तुम जहाज हुए। मैं बलिहारी जाती हूँ, अब छोटे भाई लक्ष्मणसहित खरके शत्रु सुखधाम प्रभुका कुशल-मङ्गल कहो। श्रीरघुनाथ तो कोमलहृदय और कृपालु हैं। फिर हे हनुमान्। उन्होंने किस कारण यह निष्ठुरता धारण कर ली है ? सेवकको सुख देना उनकी स्वाभाविक आदत है। वे श्रीरघुनाथ क्या कभी मेरी भी याद करते है? हे तात। क्या कभी उनके कोमल साँवले अङ्गोंको देखकर मेरे नेत्र शीतल होंगे ? मुँहसे वचन नहीं निकलता, नेत्रोंमें विरहके आँसुओंका जल भर आया। बड़े दु:खसे वे बोलीं- हे नाथ। आपने मुझे बिलकुल ही भुला दिया।

तब सीता बोली- कपिवर। तुम्हारा श्रीरामके साथ सम्बन्ध कहाँ हुआ ? तुम लक्ष्मणको कैसे जानते हो ? मनुष्यों और वानरोंका यह मेल किस प्रकार सम्भव हुआ ? मुझे बताओ भगवान् श्रीराम और लक्ष्मणकी आकृति कैसी है ? उनका रूप किस तरहका है ? उनकी जाँघें और भुजाएँ कैसी हैं ?

तब हनुमान बोले- कमलके समान सुन्दर नेत्रोंवाली विदेहराजकुमारी। आप अपने पतिदेव श्रीरामके तथा देवर लक्ष्मणजीके शरीरके विषयमें जानती हुई भी जो मुझसे पूछ रही हैं, यह मेरे लिये सौभाग्यकी बात है।

जनकनन्दिनि श्रीरामके नेत्र प्रफुल्लकमलदलके समान विशाल एवं सुन्दर हैं। मुख पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान मनोहर है। वे जन्मकालसे ही रूप और उदारता आदि गुणोंसे सम्पन्न हैं। वे तेजमें सूर्यके समान, क्षमामें पृथ्वीके तुल्य, बुद्धिमें बृहस्पतिके सदृश और यशमें इन्द्रके

समान हैं। वे सम्पूर्ण जीव-जगत्‌के तथा स्वजनोंके भी रक्षक हैं। शत्रुओंको संताप देनेवाले श्रीराम अपने सदाचार और धर्मकी रक्षा करते हैं। वे राजनीतिमें पूर्ण शिक्षित, ब्राह्मणोंके उपासक, ज्ञानवान्, शीलवान्, विनम्र तथा शत्रुओंको संताप देनेमें समर्थ हैं।

श्रीराम सत्यधर्मके अनुष्ठानमें संलग्न, श्रीसम्पन्न, न्यासङ्गत धनका संग्रह और प्रजापर अनुग्रह करनेमें तत्पर, देश और कालके विभागको समझनेवाले तथा सब लोगोंसे प्रिय वचन बोलनेवाले हैं।

उनके सौतेले भाई सुमित्राकुमार लक्ष्मण भी बड़े तेजस्वी हैं। अनुराग, रूप और सद्‌गुणोंकी दृष्टिसे भी वे श्रीरामके ही समान हैं।

उन दोनों भाइयोंमें अन्तर इतना ही है कि लक्ष्मणके शरीरकी कान्ति सुवर्णके समान गौर है और महायशस्वी श्रीरामका विग्रह श्याम-सुन्दर है। वे दोनों नरश्रेष्ठ आपके दर्शनके लिये उत्कण्ठित हो सारी पृथ्वीपर आपकी ही खोज करते हुए हमलोगोंसे मिले थे।

ऋष्यमूक पर्वतके मूलभागमें जो बहुत-से वृक्षोंद्वारा घिरा हुआ है, भाईके भयसे पीड़ित हो बैठे हुए प्रियदर्शन सुग्रीवसे वे दोनों भाई मिले। उन दिनों जिन्हें बड़े भाईने राज्यसे उतार दिया था, उन सत्यप्रतिज्ञ वानरराज सुग्रीवकी सेवामें हम सब लोग रहा करते थे। उस शिखरपर बैठनेके पश्चात् वानरराज सुग्रीवने मुझे ही शीघ्रतापूर्वक उन दोनों बन्धुओंके पास भेजा। मुझसे यथार्थ बातें जानकर उन दोनोंको बड़ी प्रसन्नता हुई। फिर मैं अपनी पीठपर बैठाकर उन दोनों पुरुषोत्तम बन्धुओंको उस स्थानपर ले गया जहाँ वानरराज सुग्रीव थे। वहाँ महात्मा सुग्रीवको मैंने इन दोनों बन्धुओंका यथार्थ परिचय दिया। तत्पश्चात् श्रीराम और सुग्रीवने परस्पर बातें कीं, इससे उन दोनोंमें बड़ा प्रेम हो गया। उस समय लक्ष्मणके बड़े भाई श्रीरघुनाथने स्त्रीके लिये अपने महातेजस्वी भाई बालिद्वारा घरसे निकाले हुए सुग्रीवको सान्त्वना दी। तत्पश्चात् अनायास ही महान् कर्म करनेवाले भगवान् श्रीरामको आपके वियोगसे जो शोक हो रहा था, उसे लक्ष्मणने वानरराज सुग्रीवको सुनाया।

तदनन्तर वानर-यूथपतियोंने आपके शरीरपर शोभा पानेवाले उन सब आभूषणोंको ले आकर बड़ी प्रसन्नताके साथ श्रीरामको दिखाया, जिन्हें आपने उस समय पृथ्वीपर गिराया था, जब कि राक्षस आपको हरकर लिये जा रहा था। वानरोंने आभूषण तो दिखाये, किंतु उन्हें आपका पता कुछ भी मालूम नहीं था। उन आभूषणोंको बारंबार देखते, रोते और तिलमिला उठते थे। उस समय दशरथनन्दन श्रीरामकी शोकाग्नि प्रज्वलित हो उठी। उस दु:खसे आतुर हो वे महात्मा रघुवीर बहुत देरतक मूर्छित अवस्थामें पड़े रहे। तब मैंने नाना प्रकारके सान्त्वनापूर्ण वचन कहकर बड़ी कठिनाईसे उन्हें उठाया। आर्ये। आपको न देख पानेके कारण श्रीरघुनाथको बड़ा दु:ख और संताप हो रहा है। जैसे ज्वालामुखी पर्वत जलती हुई बड़ी भारी आगसे सदा तपता रहता है, उसी प्रकार वे आपकी विरहाग्निसे जल रहे हैं। देवि। आपको न देख पानेका शोक श्रीरघुनाथको उसी प्रकार विचलित कर देता है, जैसे भारी भूकम्पसे महान् पर्वत भी हिल जाता है। राजकुमारि। आपको न देखनेके कारण रमणीय काननों, नदियों और झरनोंके पास विचरनेपर भी श्रीरामको सुख नहीं मिलता है। भगवान् श्रीराम रावणको उसके मित्र और बन्धु-बान्धवोंसहित मारकर शीघ्र ही आपसे मिलेंगे। उन दिनों श्रीराम और सुग्रीव जब मित्रभावसे मिले, तब दोनोंने एक-दूसरेकी सहायताके लिये प्रतिज्ञा की। श्रीरामने बालिको मारनेका और सुग्रीवने आपकी खोज करानेका वचन दिया। इसके बाद उन दोनों वीर राजकुमारोंने किष्किन्धामें जाकर वानरराज बालिको युद्धमें मार गिराया। युद्धमें वेगपूर्वक बालिको मारकर श्रीरामने सुग्रीवको समस्त भालुओं और वानरोंका राजा बना दिया।

देवि। श्रीराम और सुग्रीवमें इस प्रकार मित्रता हुई है। मैं उन दोनोंका दूत बनकर यहाँ आया हूँ। अपना राज्य पानेके अनन्तर सुग्रीवने अपने आश्रयमें रहनेवाले बड़े-बड़े बलवान् वानरोंको बुलाया और उन्हें आपकी खोजके लिये दसों दिशाओंमें भेजा।

अम्ब। वे कमल-लोचन, विशाल-स्कन्ध, बृहद्-वक्ष, प्रलम्बबाहु, क्षीण-काटि, कम्बु-कण्ठ, पद्म-पाद, अरुण-कर-नेत्र-अधर श्रीरामकी कुशल यह आपके श्रीचरणोंका सेवक क्या कहे ? हनुमानने हाथ जोड़कर कहा- वे मत्त-गयन्द-गति, मेघ-गम्भीर-स्वर, परम-कृपालु, अमित-पराक्रम, परमोदार आपके वियोगमें वकुल अपने श्रीअङ्गपर बैठे दश-मशक भी नहीं उड़ाते। उनको आपकी स्मृति निरन्तर व्याकुल रखती है। उन्होंने अपनी यह मुद्रिका आपको पहिचानके लिए प्रदान की है।

हे माता। सुन्दर कृपाके धाम प्रभु भाई लक्ष्मणके सहित शरीरसे कुशल हैं, परन्तु आपके दु:खसे दुखी हैं। हे माता। मनमें ग्लानि न मानिये मन छोटा करके दु:ख न कीजिये। श्रीरामके हृदयमें आपसे दूना प्रेम है। हे माता। अब धीरज धरकर श्रीरघुनाथका संदेश सुनिये। ऐसा कहकर हनुमान्‌जी प्रेमसे गद्‌गद् हो गये। उनके नेत्रोंमें प्रेमाश्रुओंका जल भर आया।

हनुमान्‌जी बोले- श्रीरामने कहा है कि हे सीते। तुम्हारे वियोगमें मेरे लिये सभी पदार्थ प्रतिकूल हो गये हैं। वृक्षोंके नये-नय कोमल पत्ते

मानो अग्निके समान, रात्रि कालरात्रिके समान, चन्द्रमा सूर्यके समान। और कमलोंके वन भालोंके वनके समान हो गये हैं। मेघ मानो खौलता हुआ तेल बरसाते हैं। जो हित करनेवाले थे, वे ही अब पीड़ा देने लगे हैं। त्रिविध शीतल, मन्द, सुगन्ध वायु साँपके श्वासके समान जहरीली और गरम हो गयी है।

मनका दु:ख कह डालनेसे भी कुछ घट जाता है। पर कहूँ किससे ? यह दु:ख कोई जानता नहीं। हे प्रिये। मेरे और तेरे प्रेमका तत्त्व (रहस्य) एक मेरा मन ही जानता है और वह मन सदा तेरे ही पास रहता है। बस, मेरे प्रेमका सार इतनेमें ही समझ ले। प्रभुका सन्देश सुनते ही जानकीजी प्रेममें मग्न हो गयीं। उन्हें शरीरकी सुध न रही।

हनुमान्‌जीने कहा- हे माता। हृदयमें धैर्य धारण करो और सेवकोंको सुख देनेवाले श्रीरामका स्मरण करो। श्रीरघुनाथकी प्रभुताको हृदयमें लाओ और मेरे वचन सुनकर कायरता छोड़ दो।

राक्षसोंके समूह पतंगोंके समान और श्रीरघुनाथके बाण अग्निके समान हैं। हे माता। हृदयमें धैर्य धारण करो और राक्षसोंको जला ही समझो। श्रीरामने यदि खबर पायी होती तो वे विलम्ब न करते। हे जानकीजी। रामबाणरूपी सूर्यके उदय होनेपर राक्षसोंकी सेनारूपी अन्धकार कहाँ रह सकता है ?

हे माता। मैं आपको अभी यहाँसे लिवा जाऊँ; पर श्रीरामकी शपथ है, मुझे प्रभु उन की आज्ञा नहीं है। अत: हे माता। कुछ दिन और धीरज धरो। श्रीराम वानरोंसहित यहाँ आवेंगे और राक्षसोंको मारकर आपको ले जायँगे। नारद आदि ऋषि-मुनि तीनों लोकोंमें उनका यश गावेंगे। वानरराज सुग्रीवकी आज्ञा पाकर गिरिराजके समान विशालकाय महाबली वानर पृथ्वीपर सब ओर चल दिये। सुग्रीवकी आज्ञासे भयभीत हो हम तथा अन्य वानर आपकी खोज करते हुए समस्त भूमण्डलमें विचर रहे हैं। बालिके शोभाशाली पुत्र महाबली कपिश्रेष्ठ अंगद वानरोंकी एक तिहाई सेना साथ लेकर आपकी खोजमें निकले थे उन्हींके दलमें मैं भी था।

पर्वतके दुर्गम स्थानोंमें, नदियोंके तटोंपर और झरनोंके आस-पासकी सारी भूमि छान डाली तो भी जब हमें देवी सीता आप के स्थानका पता न चला, तब हम प्राण त्याग देनेको तैयार हो गये। मरणान्त उपवासका निश्चय करके हम सब-के-सब उस पर्वतके शिखरपर बैठ गये। उस समय समस्त वानर-शिरोमणियोंको प्राण त्याग देनेके लिये बैठे देख कुमार अङ्गद अत्यन्त शोकके समुद्रमें डूब गये और विलाप करने लगे। विदेहनन्दिनि। आपका पता न लगने, बालिके मारे जाने, हमलोगोंके मरणान्त उपवास करने तथा जटायुके मरनेकी बातपर विचार करके कुमार अङ्गदको बड़ा दु:ख हुआ था।

स्वामीके आज्ञापालनसे निराश होकर हम मरना ही चाहते थे कि दैववश हमारा कार्य सिद्ध करनेके लिये गृध्रराज जटायुके बड़े भाई सम्पाति, जो स्वयं भी गीधोंके राजा और महान् बलवान पक्षी हैं, वहाँ आ पहुँचे। तब अंगदने जनस्थानमें आपकी रक्षाके उद्देश्यसे जूझते समय जटायुका उस भयानक रूपधारी राक्षसके द्वारा जो महान् वध किया गया था, वह सब प्रसंग ज्यों-का-त्यों कह सुनाया। जटायुके वधका वृत्तान्त सुनकर अरुणपुत्र सम्पातिको बड़ा दु:ख हुआ। वरारोहे। उन्होंने ही हमें बताया कि आप रावणके घरमें निवास कर रही हैं। सम्पातिका वह वचन वानरोंके लिये बड़ा हर्षवर्धक था। उसे सुनकर उन्हींके भेजनेसे अङ्गद आदि हम सभी वानर आपके दर्शनकी आशासे उत्साहित हो विन्ध्यपर्वतसे उठकर समुद्रके उत्तम तटपर आये। इस प्रकार अङ्गद आदि सभी हृष्ट-पुष्ट वानर समुद्रके किनारे आ पहुँचे। आपके दर्शनके लिये उत्सुक होनेपर भी सामने अपार समुद्रको देखकर सब वानर फिर भयानक चिन्तामें पड़ गये। समुद्रको देखकर वानर-सेना कष्टमें पड़ गयी है, यह जानकर मैं उन सबके तीव्र भयको दूर करता हुआ सौ योजन समुद्रको लाँघकर यहाँ आ गया। राक्षसोंसे भरी लुई लमामें मैंने रातमें ही प्रवेश किया है। यहाँ आकर रावणको देखा है और शोकसे पीड़ित हुई आपका भी दर्शन किया है। यह सारा वृत्तान्त मैंने ठीक-ठीक आपके सामने रक्खा है। देवि। मैं दशरथनन्दन श्रीरामका दूत हूँ।

मैंने श्रीरामके कार्यकी सिद्धिके लिये ही यह सारा उद्योग किया है और आपके दर्शनके निमित्त मैं यहाँ आया हूँ। देवि। आप मुझे सुग्रीवका मन्त्री तथा वायुदेवताका पुत्र हनुमान समझें।

मैं सुग्रीवकी आज्ञासे अकेला ही यहाँ आया हूँ। इच्छानुसार रूप धारण करनेकी शक्ति रखता हूँ। आपका पता लगानेकी इच्छासे मैंने बिना किसी सहाकयके अकेले ही घूम-फिरकर इस दक्षिण दिशाका अनुसंधान किया है। आपके विनाशकी सम्भावनासे जो निरन्तर शोकमें डूबे रहते हैं, उन वानरसैनिकोंको यह बताकर कि आप मिल गयीं, मैं उनका संताप दूर करूँगा। यह मेरे लिये बड़े हर्षकी बात होगी। देवि। मेरा समुद्रको लाँघकर यहाँतक आना व्यर्थ नहीं हुआ। सबसे पहले आपके दर्शनका यह यश मुझे ही मिलेगा। यह मेरे लिये

सौभाग्यकी बात है। महापराक्रमी श्रीराम राक्षसराज रावणको उसके पुत्र और बन्धु-बान्धवोंसहित मारकर शीघ्र ही आपसे आ मिलेंगे।

विदेहनन्दिनि। पर्वतोंमें माल्यवान नामसे प्रसिद्ध एक उत्तम पर्वत है। वहाँ केसरी नामक वानर निवास करते थे। एक दिन वे वहाँसे गोकर्ण पर्वतपर गये। महाकपि केसरी मेरे पिता है। उन्होंने समुद्रके तटपर विद्यमान उस पवित्र गोकर्ण तीर्थमें देवर्षियोंकी आज्ञासे शम्बसादन नामक दैत्यका संहार किया था। मिथिलेशकुमारी। उन्हीं कपिराज केसरीकी स्त्रीके गर्भसे वायुदेवताके द्वारा मेरा जन्म हुआ है। मैं लोकमें अपने ही कर्मद्वारा हनुमान् नामसे विख्यात हूँ।

इस प्रकार युक्तियुक्त एवं विश्वसनीय कारणों तथा पहचानके रूपमें बताये गये, श्रीराम और लक्ष्मणके शारीरिक चिन्होंद्वारा हनुमानने शोकसे दुर्बल हुई सीताको अपना विश्वास दिलाया। तब उन्होंने हनुमानको श्रीरामका दूत समझा। उस समय जनकनन्दिनी सीताको अनुपम हर्ष प्राप्त हुआ। उस महान हर्षके कारण दोनों नेत्रोंसे आनन्दके आँसू बहाने लगीं।

अब वे हनुमानको वास्तविक वानर मानने लगीं। इसके विपरीत मायामय रूपधारी राक्षस नहीं। तदनन्तर हनुमान्‌जीने सीतासे फिर कहा- महर्षियोंकी प्रेरणासे कपिवर केसरीद्वारा युद्धमें शम्बसादन नामक असुरके मारे जानेपर मैंने पवनदेवताके द्वारा जन्म ग्रहण किया। अत: मैथिलि। मैं उन वायुदेवताके समान ही प्रभावशाली वानर हूँ। महाभागे। मैं परम बुद्धिमान भगवान् श्रीरामका दूत वानर हूँ। देवि। यह श्रीरामनामसे अमित मुद्रिका है, इसें लेकर देखिये।

पतिके हाथको सुशोभित करनेवाली उस मुद्रिकाको लेकर सीता उसे ध्यानसे देखने लगीं। उस समय जानकीको इतनी प्रसन्नता हुई, मानो स्वयं उनके पतिदेव ही उन्हें मिल गये हों।

वे लजीली विदेहबाला प्रियतमका संदेश पाकर बहुत प्रसन्न हुई। उनके मनको बड़ा संतोष हुआ। वे महाकपि हनुमानका आदर करके उनकी प्रशंसा करने लगीं। वानरश्रेष्ठ। तुम बड़े पराक्रमी, शक्तिशाली और बुद्धिमान हो; क्योंकि तुमने अकेले ही इस राक्षसपुरीको पददलित कर दिया है। तुम अपने पराक्रमके कारण प्रशंसाके योग्य हो; क्योंकि तुमने मगर आदि जन्तुओंसे भरे हुए सौ योजन विस्तारवाले महासागरको लाँघते समय उसे गायकी खुरीके बराबर समझा है। इसलिये प्रशंसाके पात्र हो।

वानरशिरोमणे। मैं तुम्हें कोई साधारण वानर नहीं मानती हूँ; क्योंकि तुम्हारे मनमें रावण-जैसे राक्षससे भी न तो भय होता है और न घबराहट ही। यदि तुम्हें आत्मज्ञानी भगवान् श्रीरामने भेजा है तो तुम अवश्य इस योग्य हो कि मैं तुमसे बातचीत करूँ। दुर्धर्ष वीर श्रीराम विशेषत: मेरे निकट मेरे किसी पुरुषको नहीं भेजेंगे, जिसके पराक्रमका उन्हें ज्ञान न हो तथा जिसके शीलस्वभावकी उन्होंने परीक्षा न कर ली हो। सत्यप्रतिज्ञ एवं धर्मात्मा भगवान् श्रीराम सकुशल हैं तथा सुमित्राका आनन्द बढ़ानेवाले महातेजस्वी लक्ष्मण भी स्वस्थ एवं सुखी हैं, यह जानकर मुझे बड़ा हर्ष हुआ है और यह शुभ संवाद मेरे लिये सौभाग्यका सूचक है।

यदि श्रीराम सकुशल हैं तो वे प्रलय-कालमें उठे हुए प्रलयंकार अग्निके समान कुपित हो समुद्रोंसे घिरी हुई सारी पृथ्वीको दग्ध क्यों नहीं कर देते हैं ?

अथवा वे दोनों भाई देवताओंको भी दण्ड देनेकी शक्ति रखते हैं तो भी अबतक जो चुप बैठे हैं, इसमें उनका उन्हीं मेरे ही भाग्यका दोष है। मैं समझती हूँ कि अभी मेरे ही दु:खोंका अन्त नहीं आया है।

श्रीरामके मनमें कोई व्यथा तो नहीं है ? वे संतप्त तो नहीं होते ? उन्हें आगे जो कुछ करना है, उसे वे करते हैं या नहीं ? उन्हें किसी प्रकारकी दीनता या घबराहट तो नहीं है ? वे काम करते-करते मोहके वशीभूत तो नहीं हो जाते ? क्या राजकुमार श्रीराम पुरुषोचित कार्य पुरुषार्थ करते हैं ? क्या शत्रुओंको संताप देनेवाले श्रीराम मित्रोंके प्रति मित्रभाव रखकर साम और दान रूप दो उपायोंका ही अवलम्बन करते हैं ? तथा शत्रुओंके प्रति उन्हें जीतनेकी इच्छा रखकर दान, भेद और दण्ड इन तीन प्रकारके उपायोंका ही आश्रय लेते हैं ?

क्या श्रीराम स्वयं प्रयत्नपूर्वक मित्रोंका संग्रह करते हैं ? क्या उनके शत्रु भी शरणागत होकर अपनी रक्षाके लिये उनके पास आते हैं? क्या उन्होंने मित्रोंका उपकार करके उन्हें अपने लिये कल्याणकारी बना लिया है ? क्या वे कभी अपने मित्रोंसे भी उपकृत या पुरस्कृत होते हैं ? क्या राजकुमार श्रीराम कभी देवताओंका भी कृपाप्रसाद चाहते हैं- उनकी कृपाके लिये प्रार्थना करते हैं ? क्या वे पुरुषार्थ और दैव दोनोंका आश्रय लेते हैं ? दुर्भाग्यवश मैं उनसे दूर हो गयी हूँ। इस कारण श्रीरघुनाथ मुझपर स्नेहहीन तो नहीं हो गये हैं ? क्या वे मुझे कभी इस संकटसे छुड़ायेंगे। वे सदा सुख भोगनेके ही योग्य हैं, दु:ख भोगनेके योग्य कदापि नहीं हैं; परंतु इन दिनों दु:ख-पर-दु:ख उठानेके कारण श्रीराम अधिक खिन्न और शिथिल तो नहीं हो गये हैं ?

क्या उन्हें माता कौसल्या, सुमित्रा तथा भरतका कुशल-समाचार बराबर मिलता रहता है ? क्या सम्माननीय श्रीरघुनाथ मेरे लिये होनेवाले शोकसे अधिक संतप्त हैं ? वे मेरी ओरसे अन्यमनस्क तो नहीं हो गये हैं ? क्या श्रीराम मुझे इस संकटसे उबारेंगे ? क्या श्रीमान् वानरराज सुग्रीव दाँत और नखोंसे प्रहार करनेवाले वीर वानरोंको साथ ले मुझे छुड़ानेके लिये यहाँतक आनेका कष्ट करेंगे? क्या सुमित्राका आनन्द बढ़ानेवाले शूरवीर लक्ष्मण, जो अनेक अस्त्रोंके ज्ञाता हैं, अपने बाणोंकी वर्षासे राक्षसोंका संहार करेंगे ? क्या मैं रावणको उसके बन्धु-बान्धवोंसहित थोड़े ही दिनोंमें श्रीरघुनाथके द्वारा युद्धमें भयंकर अस्त्र-शस्त्रोंसे मारा गया देखूँगी ?

धर्मपालनके उद्देश्यसे अपने राज्यका त्याग करते और मुझे पैदल ही वनमें लाते समय जिन्हें तनिक भी भय और शोक नहीं हुआ, वे श्रीरघुनाथ इस संकटके समय हृदयमें धैर्य तो धारण करते हैं न ?

सीताका वचन सुनकर हनुमान बोले- देवि। कमलनयन भगवान श्रीरामको यह पता ही नहीं है कि आप लमामें रह रही हैं। इसीलिये जैसे इन्द्र दानवोंके यहाँसे शचीको उठा ले गये, उस प्रकार वे शीघ्र यहाँसे आपको नहीं ले जा रहे हैं।

पानी के ऊपर जिन्होंने पृथ्वी को रखा है, बिना स्तम्भ के आकाश को जिन्होंने धर रखा है, उनके लिए सागर का क्या बोझ ? हे माता, इस सम्बन्ध में विश्वास रखिए। जो श्रीभगवान माँ के उदर के अन्दर गर्भ को जठर से सम्हालते हैं, जो मांस के अन्दर दुग्ध पान कराते हैं और ऐसी कला उनके अतिरिक्त किसी दूसरे से नहीं करायी जा पाती, जो एक क्षण में ब्रह्माण्ड का निर्माण करते हैं, उसका पालन करते हैं, तथा उसको नष्ट भी कर देते हैं और इस काम में उनका कोई साथी भी साथ नहीं होता, वे भगवान श्रीरंग क्या नहीं कर पाएँगे ?

जब मैं यहाँसे लौटकर जाऊँगा, तब मेरी बात सुनते ही श्रीरघुनाथ वानर और भालुओंकी विशाल सेना लेकर तुरंत वहाँसे चल देंगे। आपको न देखनेके कारण उत्पन्न हुए शोकसे उनका हृदय भरा रहता है; अत: श्रीराम सिंहसे पीड़ित हुए हाथीकी भाँति क्षणभरको भी चैन नहीं पाते हैं। ऐरावतकी पीठपर बैठे हुए देवराज इन्द्रके समान प्रस्रवण गिरिके शिखरपर विराजमान श्रीरामका आप शीघ्र दर्शन करेंगी। श्रीरघुनाथका चित्त सदा आपमें लगा रहता है, अत: उन्हें अपने शरीरपर चढ़े हुए डाँस, मच्छर, कीड़ों और सर्पोंको हटानेकी भी सुधि नहीं रहती। श्रीराम आपके प्रेमके वशीभूत हो सदा आपका ही ध्यान करते और निरन्तर आपके ही विरह-शोकमें डूबे रहते हैं। आपको छोड़कर दूसरी कोई बात वे सोचते ही नहीं है। श्रीरामको सदा आपकी चिन्ताके कारण कभी नींद नहीं आती है। यदि कभी आँख लगी भी तो सीता-सीता इस मधुर वाणीका उच्चारण करते हुए वे जल्दी ही जाग उठते हैं। किसी फल, फूल अथवा स्त्रियोंके मनको लुभानेवाली दूसरी वस्तुको भी जब वे देखते हैं, तब लंबी साँस लेकर बारंबार हा प्रिये। कहते हुए आपको पुकारने लगते हैं।

देवि। राजकुमार महात्मा श्रीराम आपके लिये सदा दुखी रहते हैं, सीता-सीता कहकर आपकी ही रट लगाते हैं तथा उत्तम व्रतका पालन करते हुए आपकी ही प्राप्तिके प्रयत्नमें लगे हुए हैं। श्रीरामकी चर्चासे सीताका अपना शोक तो दूर हो गया; किंतु श्रीरामके शोककी बात सुनकर वे पुन: उन्हींके समान शोकमें निमग्न हो गयीं।

वानर। तुमने जो कहा कि श्रीरघुनाथका चित्त दूसरी ओर नहीं जाता और वे शोकमें डूबे रहते हैं, तुम्हारा यह कथन मुझे अमृतके समान लगा है। कोई बड़े भारी ऐश्वर्यमें स्थित हो अथवा अत्यन्त भयंकर विपत्तिमें पड़ा हो, काल मनुष्यको इस तरह खींच लेता है, मानो उसे रस्सीमें बाँध रक्खा हो। दैवके विधानको रोकना प्राणियोंके वशकी बात नहीं है। उदाहरणके लिये सुमित्राकुमार लक्ष्मणको, मुझको और श्रीरामको भी देख लो। हमलोग किस तरह वियोग-दु:खसे मोहित हो रहे हैं। समुद्रमें नौकाके नष्ट हो जानेपर अपने हाथोंसे तैरनेवाले पराक्रमी पुरुषकी भाँति श्रीरघुनाथ कैसे इस शोकसागरसे पार होंगे ? राक्षसोंका वध, रावणका संहार और लमापुरीका विध्वंस करके मेरे पतिदेव मुझे कब देखेंगे ? तुम उनसे जाकर कहना, वे शीघ्रता करें। यह वर्ष जबतक पूरा नहीं हो जाता, तभीतक मेरा जीवन शेष है।

वानर। यह दसवाँ महीना चल रहा है। अब वर्ष पूरा होनेमें दो ही मास शेष हैं। निर्दयी रावणने मेरे जीवनके लिये जो अवधि निश्चित की है, उसमें इतना ही समय बाकी रह गया है। रावणके भाई विभीषणने मुझे लौटा देनेके लिये उससे यत्नपूर्वक बड़ी अनुनय-विनय की थी, किंतु वह उनकी बात नहीं मानता है। मेरा लौटाया जाना रावणको अच्छा नहीं लगता; क्योंकि वह कालके अधीन हो रहा है और युद्धमें मौत उसे ढूँढ रही है।

कपे। विभीषणकी ज्येष्ठ पुत्रीका नाम कला है। उसकी माताने स्वयं उसे मेरे पास भेजा था। उसीने ये सारी बातें मुझसे कही हैं। अविन्ध्य नामका एक श्रेष्ठ राक्षस है, जो बड़ा ही बुद्धिमान्, विद्वान, धीर, सुशील, वृद्ध तथा रावणका सम्मान पात्र है।

उसने रावणको यह बताकर कि श्रीरामके हाथसे राक्षसोंके विनाशका अवसर आ पहुँचा है, मुझे लौटा देनेके लिये प्रेरित किया था,

किंतु वह दुष्टात्मा उसके हितकारी वचनोंको भी नहीं सुनता है।

वानर। श्रीराममें उत्साह, पुरुषार्थ, बल, दयालुता, कृतज्ञता, पराक्रम और प्रभाव आदि सभी गुण विद्यमान हैं।

जिन्होंने जनस्थानमें अपने भाईकी सहायता लिये बिना ही चौदह हजार राक्षसोंका संहार कर डाला, उनसे कौन शत्रु भयभीत न होगा?

श्रीराम पुरुषोंमें श्रेष्ठ हैं। वे संकटोंसे तोले या विचलित किये जायँ, यह सर्वथा असम्भव है। जैसे पुलोमकन्या शची इन्द्रके प्रभावको जानती हैं, उसी तरह मैं श्रीरघुनाथ शक्ति-सामर्थ्को अच्छी तरह जानती हूँ।

कपिवर। शूरवीर भगवान् श्रीराम सूर्यके समान हैं। उनके बाणसमूह ही उनकी किरणे हैं। वे उनके द्वारा शत्रुभूत राक्षसरूपी जलको शीघ्र ही सोख लेंगे। इतना कहते-कहते सीताके मुखपर आँसुओंकी धारा बह चली। वे श्रीरामके लिये शोकसे पीड़ित हो रही थीं। उस समय कपिवर हनुमानने उनसे कहा- देवि। आप धैर्य धारण करें। मेरा वचन सुनते ही श्रीरघुनाथ वानर और भालुओंकी विशाल सेना लेकर शीघ्र यहाँके लिये प्रस्थान कर देंगे।

अथवा मैं अभी आपको इस राक्षसजनित दु:खसे छुटकारा दिला दूँगा। सती-साध्वी देवि। आप मेरी पीठपर बैठ जाइये।

आप मेरे कन्धे पर बैठ जायँ। मैं अभी आपको श्रीरामके समीप ले चलता हूँ। हनुमान कुछ बड़ा आकार बनाकर हाथ जोड़कर सम्मुख बैठ गये। आपको पीठपर बैठाकर मैं समुद्रको लाँघ जाऊँगा। मुझमें रावणसहित सारी लमाको भी ढो ले जानेकी शक्ति है।

मिथिलेशकुमारी। रघुनाथ प्रस्त्रवणगिरिपर रहते हैं। मैं आज ही आपको उनके पास पहुँचा दूँगा। ठीक उसी तरह, जैसे अग्निदेव हवन किये गये हविष्यको इन्द्रकी सेवामें ले जाते हैं। विदेहनन्दिनि। दैत्योंके वधके लिये उत्साह रखनेवाले भगवान् विष्णुकी भाँति राक्षसोंके संहारके लिये सचेष्ट हुए श्रीराम और लक्ष्मणका आप आज ही दर्शन करेंगी। देवि। आप मेरी पीठपर बैठिये। शोभने। मेरे कथन की उपेक्षा न कीजिये। चन्द्रमासे मिलनेवाली रोहिणीकी भाँति आप श्रीरामके साथ मिलनेका निश्चय कीजिये। कल्याणि। मैं आपको लेकर जब यहाँसे चलूँगा, उस समय समूचे लमा-निवासी मिलकर भी मेरा पीछा नहीं कर सकते। विदेहनन्दिनि। जिस प्रकार मैं यहाँ आया हूँ, उसी तरह आपको लेकर आकाशमार्गसे चला जाऊँगा, इसमें संदेह नहीं है। आप मेरा पराक्रम देखिये।

हनुमान्के मुखसे यह अद्भुत वचन सुनकर मिथिलेशकुमारी सीताके सारे शरीरमें हर्ष और विस्मयके कारण रोमाञ्च हो आया। उन्होंने हनुमानसे कहा- हनुमान्। तुम इतने दूरके मार्गपर मुझे कैसे ले चलना चाहते हो ? तुम्हारे इस दु:साहसको मैं वानरोचित चपलता ही समझती हूँ। तुम्हरा शरीर तो बहुत छोटा है। फिर तुम मुझे मेरे स्वामी महाराज श्रीरामके पास ले जानेकी इच्छा कैसे करते हो ?

सीताजीने कहा- हे पुत्र। सब वानर तुम्हारे ही समान नन्हें-नन्हें-से होंगे, राक्षस तो बड़े बलवान् योद्धा हैं।

अत: मेरे हृदयमें बड़ा भारी सन्देह होता है कि तुम-जैसे बंदर राक्षसोंको कैसे जीतेंगे। यह सुनकर हनुमान्जीने अपना शरीर प्रकट किया। सोनेके पर्वत सुमेरु के आकारका अत्यन्त विशाल शरीर था, जो युद्धमें शत्रुओंके हृदयमें भय उत्पन्न करनेवाला, अत्यन्त बलवान् और वीर था। तब उसे देखकर सीताजीके मनमें विश्वास हुआ। हनुमान्जीने फिर छोटा रूप धारण कर लिया।

हे माता। सुनो, वानरोंमें बहुत बल-बुद्धि नहीं होती। परन्तु प्रभुके प्रतापसे बहुत छोटा सर्प भी गरुड़को खा सकता है अत्यन्त निर्बल भी महान् बलवान्को मार सकता है।

भक्ति, प्रताप, तेज और बलसे सनी हुई हनुमान्जीकी वाणी सुनकर सीताजीके मनमें सन्तोष हुआ। उन्होंने श्रीरामके प्रिय जानकर हनुमानको आशीर्वाद दिया कि हे तात। तुम बल और शीलके निधान होओ।

हे पुत्र। तुम अजर बुढ़ापेसे रहित, अमर और गुणोंके खजाने होओ। श्रीरघुनाथ तुमपर बहुत कृपा करें। प्रभु कृपा करें ऐसा कानोंसे सुनते ही हनुमान्जी पूर्ण प्रेममें मग्न हो गये।

हनुमानजीने बार-बार सीताजीके चरणोंमें सिर नवाया और फिर हाथ जोड़कर कहा- हे माता। अब मैं कृतार्थ हो गया। आपका आशीर्वाद अमोघ (अचूक) है, यह बात प्रसिद्ध है।

हनुमान सोचने लगे- कजरारे नेत्रोंवाली विदेहनन्दिनी सीता मेरे बल और प्रभावको नहीं जानती। इसलिये आज मेरे उस रूपको, जिसे मैं इच्छानुसार धारण कर लेता हूँ, ये देख लें। ऐसा विचार करके हनुमान्ने उस समय सीताको अपना स्वरूप दिखाया। वे बुद्धिमान् कपिवर उस वृक्षसे नीचे कूद पड़े और सीताको विश्वास दिलानेके लिये बढ़ने लगे। बात-की-बातमें उनका शरीर मेरूपर्वतके समान ऊँचा हो गया। वे प्रज्वलित अग्निके समान तेजस्वी प्रतीत होने लगे। इस तरह विशाल रूप धारण करके वे वानरश्रेष्ठ हनुमान् सीताके

सामने खड़े हो गये।

वत्स। तुमने महाकाय राक्षसोंको देखा नहीं है। श्रीमैथिलीके मुखपर उस विपत्तिमें भी हनुमानके आकारको देखकर मन्दस्मित आया- तुम्हारा उत्साह प्रशंसनीय है; किंतु सब वानर तो तुम्हारे समान ही आकारवाले होंगे ? वे यहाँ आकर राक्षसोंका क्या कर लेंगे?

इन्हें आश्वस्त करके ही जाना उत्तम है। हनुमानने मनमें कहा और बोले- अम्ब। यह मेरा वास्तविक आकार नहीं है। यह आकार तो मैंने आपका अन्वेषण करनेके लिए धारण किया है। आप मेरा वास्तविक आकार देख लें।

जैसे स्वयं सुमेरु उतर आया हो- प्रचण्ड गगनव्यापी आकार। भयमर मुख, सूर्यमण्डलतक उठी लगती लांगूल, मानो समस्त लमा मुखमें डाल लेनेका उद्यत प्रलयमर प्रकट हो गये हों। लंकामें कठिनाईसे कुम्भकर्ण उनके कन्धे तक आ सके इतने विशाल और उग्रतेजा पौरुषकी प्रत्यक्ष मूर्ति पवनात्मज दूसरे ही क्षण पुन: लघुकाय वानर बने हाथ जोड़े विनम्र खड़े बोले- सुग्रीवके सेवकोंमें यह क्षुद्र दूत आपको श्रीचरणोंमें पहुँचनेसे पूर्व प्राय: पूरी लंका देख चुका है। मैंने सभी प्रधान राक्षसोंको देखा है।

देवि। मुझमें पर्वत, वन, अट्टालिका, चहारदिवारी और नगरद्वारसहित इस लमापुरीको रावणके साथ ही उठा ले जानेकी शक्ति है।

अत: आप मेरे साथ चलनेका निश्चय कर लीजिये। आपकी आशमा व्यर्थ है। देवि। विदेहनन्दिनि। आप मेरे साथ चलकर लक्ष्मणसहित श्रीरघुनाथका शोक दूर कीजिये।

वायुके औरस पुत्र हनुमानको पर्वतके समान विशाल शरीर धारण किये देख जनककिशोरीने उनसे कहा-

महाकपे। मैं तुम्हारी शक्ति और पराक्रमको जानती हूँ। वायुके समान तुम्हारी गति और अग्निके समान तुम्हारा अद्‌भुत तेज है। दूसरा कोई साधारण वानर अपार महासागरके पारकी इस भूमिमें कैसे आ सकता है ? मैं जानती हूँ, तुम समुद्र पार करने और मुझे ले जानेमें भी समर्थ हो, तथापि तुम्हारी तरह मुझे भी अपनी कार्यसिद्धिके विषयमें अवश्य भलीभाँति विचार कर लेना चाहिये।

पुत्र। तुम समर्थ हो, बुद्धिमान हो; किंतु श्रीजानकीके अश्रु बारबार लौटते थे- तुमने मेरी दारुण दशा देखी है। मेरे लिए क्षण-क्षण मृत्यु तुल्य कष्ट देनेवाला है। तुम प्रभुसे प्रार्थना करना कि वे इस किंकरी पर कृपा करके शीघ्र पधारें।

कपिश्रेष्ठ। तुम्हारे साथ मेरा जाना किसी भी दृष्टिसे उचित नहीं है; क्योंकि तुम्हारा वेग वायुके वेगके समान तीव्र है। जाते समय यह वेग मुझे मूर्छित कर सकता है। मैं समुद्रके ऊपर-ऊपर आकाशमें पहुँच जानेपर अधिक वेगसे चलते हुए तुम्हारे पृष्ठभागसे नीचे गिर सकती हूँ। इस तरह समुद्रमें, जो तिमि नामक बड़े-बड़े मत्स्यों, नाकों और मछलियोंसे भरा हुआ है, गिरकर विवश हो मैं शीघ्र ही जल-जन्तुओंका उत्तम आहार बन जाऊँगी।

इसलिये शत्रुनाशन वीर। मैं तुम्हारे साथ नहीं चल सकूँगी। एक स्त्रीको साथ लेकर जब तुम जाने लगोगे, उस समय राक्षसोंको तुमपर संदेह होगा, इसमें संशय नहीं है। मुझे हरकर ले जायी जाती देख दुरात्मा रावणकी आज्ञासे भयंकर पराक्रमी राक्षस तुम्हारा पीछा करेंगे।

आकाशमें अस्त्र-शस्त्रधारी बहुत-से राक्षस तुमपर आक्रमण करेंगे और तुम्हारे हाथमें कोई भी अस्त्र न होगा। उस दशामें तुम उन सबके साथ युद्ध और मेरी रक्षा दोनों कार्य कैसे कर सकोगे ? कपिश्रेष्ठ। उन क्रूरकर्मा राक्षसोंके साथ जब तुम युद्ध करने लगोगे, उस समय मैं भयसे पीड़ित होकर तुम्हारी पीठसे अवश्य ही गिर जाऊँगी। यदि कहीं वे महान् बलवान् भयानक राक्षस किसी तरह तुम्हें युद्धमें जीत लें अथवा युद्ध करते सम मेरी रक्षाकी ओर तुम्हारा ध्यान न रहनेसे यदि मैं गिर गयी तो वे पापी राक्षस मुझ गिरी हुई अबलाको फिर पकड़ ले जायँगे। अथवा यह भी सम्भव है कि वे निशाचर मुझे तुम्हारे हाथसे छीन ले जायँ या मेरा वध ही कर डालें; क्योंकि युद्धमें विजय और पराजयको अनिश्चित ही देखा जाता है। यदि राक्षसोंकी अधिक डाँट पड़नेपर मेरे प्राण निकल गये तो फिर तुम्हारा यह सारा प्रयत्न निष्फल ही हो जायगा। यद्यपि तुम भी सम्पूर्ण राक्षसोंका संहार करनेमें समर्थ हो तथापि तुम्हारे द्वारा राक्षसोंका वध हो जानेपर श्रीरघुनाथके सुयशमें बाधा आयेगी लोग ही कहेंगे कि श्रीराम स्वयं कुछ भी न कर सके। अथवा यह भी सम्भव है कि राक्षसलोग मुझे ले जाकर किसी ऐसे गुप्त स्थानमें रख दें, जहाँ न तो वानरोंको मेरा पता लगे और न श्रीरघुनाथको ही।

यदि ऐसा हुआ तो मेरे लिये किया गया तुम्हारा यह सारा उद्योग व्यर्थ हो जायेगा। यदि तुम्हारे साथ श्रीराम यहाँ पधारे तो उनके आनेसे बहुत बड़ा लाभ होगा। महाबाहो। अमित पराक्रमी श्रीरघुनाथका, उनके भाइयोंका, तुम्हारा तथा वानरराज सुग्रीवके कुलका जीवन मुझपर ही निर्भर है। शोक और संतापसे पीड़ित हुए वे दोनों भाई जब मेरी प्राप्तिकी ओरसे निराश हो जायँगे, तब सम्पूर्ण रीछों और वानरोंके साथ अपने प्राणोंका परित्याग कर देंगे। तुम्हारे साथ न चल सकनेका एक प्रधान कारण और भी है- वानरवीर। पतिभक्तिकी

ओर दृष्टि रखकर मैं भगवान श्रीरामके सिवा दूसरे किसी पुरुषके शरीरका स्वेच्छासे स्पर्श करना नहीं चाहती। रावणके शरीरसे जो मेरा स्पर्श हो गया है, वह तो उसके बलात्कारके कारण हुआ है। उस समय मैं असमर्थ, अनाथ और बेबस थी, क्या करती। यदि श्रीरघुनाथ यहाँ राक्षसोंसहित दशमुख रावणका वध करके मुझे हाँसे ले चलें तो वह उनके योग्य कार्य होगा।

इसमें संदेह नहीं कि आप अबला होनेके कारण मेरी पीठपर बैठकर सौ योजन विस्तृत समुद्रके पार जानेमें समर्थ नहीं हैं।

जनकनन्दिनि। आपके जो दूसरा कारण बताते हुए कहा है कि मेरे लिये श्रीरामके सिवा दूसरे किसी पुरुषका स्वेच्छापूर्वक स्पर्श करना उचित नहीं है, यह आपके ही योग्य है। देवि। महात्मा श्रीरामकी धर्मपत्नीके मुखसे ऐसी बात निकल सकती है। आपको छोड़कर दूसरी कौन स्त्री ऐसा वचन कह सकती है।

देवि। मैंने जो आपको अपने साथ ले जानेका आग्रह किया, उसके बहुतसे कारण हैं। एक तो मैं श्रीरामका शीघ्र ही प्रिय करना चाहता था। अत: स्नेहपूर्ण हृदयसे ही मैंने ऐसी बात कही है। दूसरा कारण यह है कि लमामें प्रवेश करना सबके लिये अत्यन्त कठिन है। तीसरा कारण है महासागरको पार करनेकी कठिनाई। इन सब कारणोंसे तथा अपनेमें आपको ले जानेकी शक्ति होनेसे मैंने ऐसा प्रस्ताव किया था। मैं आज ही आपको श्रीरघुनाथसे मिला देना चाहता था। अत: अपने परमाराध्य गुरु श्रीरामके प्रति स्नेह और आपके प्रति भक्तिके कारण ही मैंने ऐसी बात कही थी, किसी और उद्देश्यसे नहीं।

किंतु सती-साध्वी देवि। यदि आपके मनमें मेरे साथ चलनेका उत्साह नहीं है तो आप अपनी कोई पहचान ही दे दीजिये, जिससे श्रीराम यह जान लें कि मैंने आपका दर्शन किया है।

मैंने युद्धमें शत्रुओंका मर्दन करनेवाले महात्मा श्रीरामके पराक्रम अनेक बार देखे और सुने हैं। देवता, गन्धर्व, नाग और राक्षस सब मिलकर भी संग्राममें उनकी समानता नहीं कर सकते। समराङ्गणमें अपने बाणरूपी तेजसे प्रलयकालीन सूर्यके समान प्रकाशित होनेवाले और मतवाले दिग्गजकी भाँति खड़े हुए रणमर्दन श्रीराम और लक्ष्मणका सामना कौन कर सकता है ?

इसलिये वानरवीर। तुम प्रयत्न करके यूथपति सुग्रीव और लक्ष्मणसहित मेरे प्रियतम श्रीरामको शीघ्र यहाँ बुला ले आओ। मैं श्रीरामके लिये चिरकालसे शोकाकुल हो रही हूँ। तुम उनके शुभागमनसे मुझे हर्ष प्रदान करो।

हनुमानने मस्तकके केशोंमें-से निकालकर वह ज्योतिर्मयी मुद्रिका दोनों हाथोंमें लेकर आगे बढ़ा दी। श्रीजानकीने एक बार आश्चर्यसे मुद्रिकाकी ओर देखा और आतुरतापूर्वक उठा लिया। उस राम-नामांकित मुद्रिकाको उन्होंने नेत्रोंसे, मस्तकसे लगाकर वक्षपर दोनों करोंसे दबा लिया। उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। शरीरसे स्वेद-धारा और नेत्रोंसे अश्रुप्रवाह चलने लगा। उनका श्रीअङ्ग काँपने लगा। अनेक क्षणों तक वे नेत्र बन्द किये निस्पन्द बनी रहीं।

कपिश्रेष्ठ। तुम मेरे स्वामीसे जाकर कहना-प्राणनाथ। पृथ्वीपते। आपने मेरे लिये एक साधारण अपराध करनेवाले कौए पर भी ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया था; फिर जो आपके पाससे मुझे हर ले आया, उसको आप कैसे क्षमा कर रहे हैं ?

दया करना सबड़े बड़ा धर्म है, यह मैंने आपसे ही सुना है। मैं आपको अच्छी तरह जानती हूँ। आपका बल, पराक्रम और उत्साह महान् है। आपका कहीं आर-पार नहीं है- आप असीम हैं। आपको कोई क्षुब्ध या पराजित नहीं कर सकता। आप गम्भीरतामें समुद्रके समान हैं। समुद्रपर्यन्त सारी पृथ्वीके स्वामी हैं तथा इन्द्रके समान तेजस्वी हैं। मैं आपके प्रभावको जानती हूँ।

रघुनन्दन। इस प्रकार अस्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ, बलवान् और शक्तिशाली होते हुए भी आप राक्षसोंपर अपने अस्त्रोंका प्रयोग क्यों नहीं करते हैं ? पवनकुमार। नाग, गन्धर्व, देवता और मरूद्गण कोई भी समराङ्गणमें श्रीरामका वेग नहीं सह सकते।

उन परम पराक्रमी श्रीरामके हृदयमें यदि मेरे लिये कुछ व्याकुलता है तो वे अपने तीखे सायकोंसे इन राक्षसोंका संहार क्यों नहीं कर डालते ?वे दोनों पुरुषसिंह वायु तथा इन्द्रके समान तेजस्वी हैं। यदि वे देवताओंके लिये भी दुर्जय हैं तो किस लिये मेरी उपेक्षा करते हैं ?

नि:संदेह मेरा ही कोई महान् पाप उदित हुआ है, जिससे वे दोनों शत्रुसंतापी वीर मेरा उद्धार करनेमें समर्थ होते हुए भी मुझपर कृपादृष्टि नहीं कर रहे हैं। वत्स हनुमान। तुम सचमुच मेरे स्वामीके दूत हो। आर्द्रकण्ठ कुछ देरपर बोली- मैं क्या दूँ तुम्हें ? इस उपहार एवं सन्देशकी समता तो त्रिभुवनमें है नहीं। सीता सदा तुम्हारी ऋणी रहेगी। तुम अजर, अमर, समस्त सद्गुणोंके धाम हो जाओ। वे आद्या महाशक्ति आशीर्वाद दिये चली जा रही थीं- समस्त सिद्धियाँ तुम्हारी सेवा करें। तुम जहाँ भी निवास करो, सदा-सर्वत्र सब भोग तुम्हारे समीप उपस्थित रहें। तुम्हारे स्मरणसे लोगोंके संकट-अरिष्ट शमित हों। श्रीराघवेन्द्र तुमपर सदा सानुकूल रहें। तुम दूसरोंको राम-भक्ति

सुलभ करनेमें समर्थ रहो। सूर्योदय हो चुका था; किंतु राक्षसोंके तो शयनका प्रगाढ़ निद्राका यही काल था। अत: हनुमानके विशाल आकारको किसीने देखा नहीं था। श्रीजानकीसे वार्तालापका भी उन्हें समुचित समय मिल गया था।

हनुमान। तुमने अद्भुत कार्य किया है। समुद्र-लङ्घन करके एकाकी राक्षसोंकी पुरीमें आये हो। सीताजीने प्रशंसाकी- मेरे स्वामी बिना बल-विक्रम जाने किसी अपरिचितको मेरे समीप नहीं भेज सके। वे बहुत व्याकुल तो नहीं हैं ? पुरुषार्थ-तत्पर तो हैं ? तुम राक्षसोंके सिरपर पैर रखकर यहाँ आये हो। अयोध्याका कुछ समाचार है तुम्हें ? भरतको मेरे अपहरणका पता लगा ? वे सेना भेजेंगे ? राज्य त्यागनेपर भी जिनका धैर्य अभंग रहा, वे मेरे स्वामी परम धर्मात्मा हैं, उनका धैर्य भङ्ग तो नहीं हुआ ?

अम्ब। अयोध्या समाचार देना अनावश्यक है। श्रीरघुनाथ स्वयं समर्थ हैं और उनकी सेवामें वानरेन्द्र सुग्रीव असंख्य वानरोंको लिये हैं। सब उनके लिए प्राण देनेको प्रस्तुत है। हनुमानने बतलाया- अभी तक आपका समाचार मिला नहीं था। श्रीराम कभी भग्नोत्साह हो सकते हैं ? वे आपके लिए अत्यन्त व्याकुल हैं। उन्हें आया ही समझें। यह राक्षसपुरी विनष्ट होकर रहेगी।

अम्ब। आज मेरा जीवन धन्य हो गया। हनुमान गद्गद् साष्टाङ्ग पड़ गये उनके पादपद्मोंमें- आपके श्रीचरणोंके दर्शनसे आज मैं कृतकृत्य हो गया। अब आप अपनेको आश्वस्त करें।

वत्स। दुष्ट दशग्रीवने केवल दो मास मेरी जीवनावधि निश्चित की है। फिर व्याकुल हो गयी वैदेही- मैं अपने आराध्यके श्रीचरण देख सकूँगी ? वे सकुशल भी हैं ? और उनके अनुजने मुझ अपराधिनीको क्षमा कर दिया है ?

मेरे अनन्त दयार्णव स्वामी श्रीराम सकुशल हैं। वे केवल आपके वियोगसे व्याकुल हैं। उनके अनुज लक्ष्मण सदा श्रद्धा-सहित आपका स्मरण करते हैं। हनुमान हाथजोड़े कह रहे थे- अम्ब। यदि आपका पता श्रीरामने पाया होता तो वे क्या विलम्ब करते ? अब वे वानरोंकी विपुल वाहिनी लेकर शीघ्र आवेंगे। दुष्ट दशग्रीवकी बात मैंने सुन ली है; किंतु स्वयं उसका जीवनकाल अब दो मास नहीं रहा है।

वत्स। युद्ध अनिवार्य है; किंतु राम रावणके अनुज विभीषणका ध्यान रखना। उनकी पत्नी सरमा कभी-कभी मेरे समीप आती है। उनकी पुत्री अनला (कला) ने मुझे बतलाया कि विभीषण बार-बार रावणको समझाते हैं मुझे लौटा देनेको; किंतु वह दुष्ट मानता नहीं। सीताने कहा- मेरे कारण विभीषण अनेक बार तिरस्कृत हुए हैं। वे सत्पुरुष हैं। युद्धमें उनका कोई अनिष्ट नहीं होना चाहिये।

अम्ब। मैं। उन महानुभावसे मिल चुका हूँ। मुझपर उनका असीम उपकार है। हनुमान भाव-भीने हो गये- उनकी अनुकम्पासे ही मुझे आपका पता प्राप्त हुआ। वे तो प्रभुके प्रियजन है।

हनुमान ने कहा- देवि। मैं सत्यकी शपथ खाकर आपसे कहता हूँ कि श्रीराम आपके विरह-शोकसे पीड़ित हो अन्य सब कार्योंसे विमुख हो गये हैं- केवल आपका ही चिन्तन करते रहते हैं। श्रीरामके दुखी होनेसे लक्ष्मण भी सदा संतप्त रहते हैं।

किसी तरह आपका दर्शन हो गया। अब शोक करेनका अवसर नहीं है। शोभने। इसी घड़ीसे आप अपने दु:खोंका अन्त होता देखेंगी।

रघुनाथ समराङ्गणमें क्रूरता प्रकट करनेवाले रावणको उसके बन्धु-बान्धवोंसहित मारकर आपको अपनी पुरीमें ले जायँगे।

हनुमानके ऐसा कहनेपर देवी सीताने फिर कहा- कपिश्रेष्ठ। मनस्विनी कौसल्या देवीने जिन्हें जन्म दिया है तथा जो सम्पूर्ण जगत्के स्वामी हैं, उन श्रीरघुनाथको मेरी ओरसे मस्तक झुकाकर प्रणाम करना और उनका कुशल समाचार पूछना। अधिक क्या कहूँ ? जिस तरह यह कार्य सिद्ध हो सके, वही उपाय तुम्हें करना चाहिये। इस विषयमें तुम्हीं प्रमाण हो- इसका सारा भार तुम्हारे ही ऊपर है। तुम्हारे प्रोत्साहन देनेसे ही श्रीरघुनाथ मेरे उद्धारके लिये प्रयत्नशील हो सकते हैं। तुम मेरे स्वामी शूरवीर भगवान् श्रीरामसे बारंबार कहना- दशरथनन्दन। मेरे जीवनकी अवधिके लिये जो मास नियत हैं, उनमेंसे जितना शेष हैं, उतने ही समतक मैं जीवन धारण करूँगी। उन अवशिष्ट दो महीनोंके बाद मैं जीवित नहीं रह सकती। यह मैं आपसे सत्यकी शपथ खाकर कह रही हूँ।

वीर। पापाचारी रावणने मुझे कैद कर रक्खा है। अत: राक्षसियोंद्वारा शठतापूर्वक मुझे बड़ी पीड़ा दी जाती है। जैसे भगवान् विष्णुने इन्द्रकी लक्ष्मीका पातालसे उद्धार किया था, उसी प्रकार आप यहाँसे मेरा उद्धार करें।

वह मणिरत्न लेकर कपिवर हनुमान्ने सीताको प्रणाम किया और उनकी प्रदक्षिणा करके वे विनीतभावसे उनके पास खड़े हो गये।

सीताका दर्शन होनेसे उन्हें महान् हर्ष प्राप्त हुआ था। वे मन-ही-मन भगवन् श्रीराम और शुभ-लक्षण सम्पन्न लक्ष्मणके पास पहुँच गये थे। उन दोनोंका चिन्तन करने लगे थे। मणि देनेके पश्चात् सीता हनुमानजीसे बोली- मेरे इस चिन्हको भगवान् श्रीराम भलीभाँति पहचानते हैं। कपिश्रेष्ठ। तुम पुन: विशेष उत्साहसे प्रेरित हो इस कार्यकी सिद्धिके लिये जो भावी कर्तव्य हो, उसे सोचो।

वानरशिरोमणे। इस कार्यको निभानेमें तुम्हीं प्रमाण हो- तुमपर ही सारा भार है। तुम इसके लिये कोई ऐसा उपाय सोचो, जो मेरे दु:खका निवारण करनेवाला हो।

पवनपुत्र वानरवीर हनुमान्‌को वहाँसे लौटनेके लिये उद्यत जान मिथिलेशकुमारीका गला भर आया और वे अश्रुगद्‌गद् वाणीमें बोलीं- हनुमन्। तुम श्रीराम और लक्ष्मणके दोनोंको एक साथ ही मेरा कुशल-समाचार बताना और उनका कुशल-मङ्गल पूछना। वानरश्रेष्ठ। फिर मन्त्रियोंसहित सुग्रीव तथा अन्य सब बड़े-बूढ़े वानरोंसे धर्मुक्त कुशल-समाचार कहना और पूछना।

हनुमन्। यशस्वी रघुनाथ जिस प्रकार मेरे जीते-जी यहाँ आकर मुझसे मिलें- मुझे सँभालें वैसी ही बातें तुम उनके कहो और ऐसा करके वाणीके द्वारा धर्माचरणका फल प्राप्त करो।

सीताकी यह बात सुनकर पवनकुमार हनुमान् बोले- देवि। जो युद्धमें सारे शत्रुओंको जीतकर आपके शोकका निवारण करेंगे, वे श्रीराम श्रेष्ठ वानरों और भालुओंके साथ शीघ्र ही यहाँ पधारेंगे। मैं मनुष्यों, असुरों अथवा देवताओंमें भी किसीको ऐसा नहीं देखता, जो बाणोंकी वर्षा करते हुए भगवान् श्रीरामके सामने ठहर सके। भगवान् श्रीराम विशेषत: आपके लिये तो युद्धमें सूर्य, इन्द्र और सूर्यपुत्र यमका भी सामना कर सकते हैं। वे समुद्रपर्यन्त सारी पृथ्वीको भी जीत लेने योग्य हैं। जनकनन्दिनि। आपके लिये युद्ध करते समय श्रीराम को निश्चय ही विजय प्राप्त होगी।

तब सीताने कहा- शत्रुओंका दमन करनेवाले वीर। यदि तुम ठीक समझो तो यहाँ एक दिन किसी गुप्त स्थानमें निवास करो। इस तरह एक दिन विश्राम करके कल चले जाना। वानरवीर। तुम्हारे निकट रहनेसे मुझ मन्दभागिनीके महान् शोकका थोड़ी देरके लिये निवारण हो जायगा। कपिश्रेष्ठ। विश्रामके पश्चात् यहाँसे यात्रा करनेके अनन्तर यदि फिर तुमलोगोंके आनेमें संदेह या विलम्ब हुआ तो मेरे प्राणोंपर भी संकट आ जायगा, इसमें संशय नहीं है। मैं दु:ख-पर-दु:ख उठा रही हूँ। तुम्हारे चले जानेपर तुम्हें न देख पानेका शोक मुझे पुन: दग्ध करता हुआ-सा संताप देता रहेगा। तुम्हारे साथी रीछों और वानरोंके विषयमें मेरे सामने अब भी यह महान् संदेह तो विद्यमान ही है कि वे रीछ और वानरोंकी सेनाएँ तथा वे दोनों राजकुमार श्रीराम और लक्ष्मण इस दुष्पार महासागरको कैसे पार करेंगे। इस संसारमें समुद्रको लाँघनेकी शक्ति तो केवल तीन प्राणियोंमें ही देखी गयी है। तुममें, गरुड़में अथवा वायुदेवतामें। वीर। इस प्रकार इस समुद्रलङ्घनरूपी कार्यको निभाना अत्यन्त कठिन हो गया है। ऐसी दशामें तुम्हें कार्यसिद्धिका कौन-सा उपाय दिखाी देता है ? यह बताओ; क्योंकि कार्यसिद्धिका उपाय जाननेवाले लोगोंमें तुम सबसे श्रेष्ठ हो। शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले पवनकुमार। इसमें संदेह नहीं कि तुम अकेले ही मेरे उद्धाररूपी कार्यको सिद्ध करनेमें पूर्णत: समर्थ हो; परंतु ऐसा करनेसे जो विजयरूप फल प्राप्त होगा, उसका यश केवल तुम्हींको मिलेगा, भगवान् श्रीरामको नहीं। यदि रघुनाथ सारी सेनाके साथ रावणको युद्धमें पराजित करके विजयी हो मुझे साथ ले अपनी पुरीको पधारें तो वह उनके अनुरूप कार्य होगा। शत्रुसेनाका संहार करेनवाले श्रीराम यदि अपनी सेनाओंद्वारा लमाको पददलित करके मुझे अपने साथ ले चलें तो वही उनके योग्य होगा। अत: तुम ऐसा उपाय करो जिससे समरशूर महात्मा श्रीरामका उनके अनुरूप पराक्रम प्रकट हो।

हनुमान ने कहा- देवि। वानर और भालुओंकी सेनाके स्वामी कपिश्रेष्ठ सुग्रीव सत्यवादी हैं। वे आपके उद्धारके लिये दृढ़ निश्चय कर चुके हैं। विदेहनन्दिनि। उनमें राक्षसोंका संहार करनेकी शक्ति है। वे सहस्त्रों कोटि वानरोंकी सेना साथ लेकर शीघ्र ही लमापर चढ़ाई करेंगे। उनके पास पराक्रमी, धैर्यशाली, महाबली और मानसिक संकल्पके समान बहुत दूरतक उछलकर जानेवाले बहुत-से वानर हैं, जो उनकी आज्ञाका पालन करनेके लिये सदा तैयार रहते हैं। जिनकी ऊपर-नीचे तथा इधर-उधर कहीं भी गति नहीं रुकती। वे बड़े-से-बड़े कार्योंके आ पड़नेपर भी कभी हिम्मत नहीं हारते। उनमें महान् तेज है। उन्होंने अत्यन्त उत्साहसे पूर्ण होकर वायुपथ (आकाश) का अनुसरण करते हुए समुद्र और पर्वतोंसहित इस पृथ्वीकी अनेक बार परिक्रमा की है।

सुग्रीवकी सेनामें मेरे समान तथा मुझसे भी बढ़कर पराक्रमी वानर हैं। उनके पास कोई भी ऐसा वानर नहीं है जो बल-पराक्रममें मुझसे कम हो। जब मैं ही यहाँ आ गया, तब अन्य महाबली वीरोंके आनेमें क्या संदेह है ? जो श्रेष्ठ पुरुष होते हैं, उन्हें संदेशवाहक दूत बनाकर नहीं भेजा जाता। साधारण कोटिके लोग ही भेजे जाते हैं। अत: देवि। आपको संताप करनेकी आवश्यकता नहीं है। आपका शोक दूर हो जाना चाहिये। वानरयूथपति एक ही छलाँगमें लमा पहुँच जायँगे। उदयकालके सूर्य और चन्द्रमाकी भाँति शोभा पानेवाले और महान् वानर-समुदाके साथ रहनेवाले वे दोनों पुरुषसिंह श्रीराम और लक्ष्मण मेरी पीठपर बैठकर आपके पास आ पहुँचेंगे। वे दोनों नरश्रेष्ठ वीर श्रीराम और लक्ष्मण एक साथ आकर अपने सायकोंसे लमापुरीका विध्वंस कर डालेंगे।

हे वरारोहे। रघुकुलको आनन्दित करनेवाले श्रीरघुनाथ रावणको उसके सैनिकोंसहित मारकर आपको साथ ले अपनी पुरीको लौटेंगे। इसलिये आप धैर्य धारण करें। आपका कल्याण हो। आप समयकी प्रतीक्षा करें। प्रज्वलित अग्निके समान तेजस्वी श्रीरघुनाथ आपको शीघ्र ही दर्शन देंगे।

पुत्र, मन्त्री और बन्धु-बान्धवोंसहित राक्षसराज रावणके मारे जानेपर आप श्रीरामसे उसी प्रकार मिलेंगी, जैसे रोहिणी चन्द्रमासे मिलती है। देवि। मिथिलेशकुमारी आप शीघ्र ही अपने शोकका अन्त हुआ देखेंगी। आपको यह भी दृष्टिगोचर होगा कि श्रीरामने रावणको बलपूर्वक मार डाला है। नख और दाढ़ ही जिनके अस्त्र-शस्त्र हैं तथा जो सिंह और व्याघ्रके समान पराक्रमी एवं गजराजोंके समान विशालकार्य हैं, ऐसे वानरोंको भी आप शीघ्र ही एकत्र हुआ देखेंगी।

आर्ये। पर्वत और मेघके समान विशालकाय मुख्य-मुख्य वानरोंके बहुत-से झुंड लमावर्ती मलयपर्वतके शिखरोंपर गर्जते दिखायी देंगे। देवि। आप शोकके कारण रोदन न करें। आपके मनका भय दूर हो जाय। शोभने। जैसे शची देवराज इन्द्रसे मिलती हैं, उसी प्रकार आप अपने पतिदेवसे मिलेंगी। अग्नि और वायुके तुल्य तेजस्वी वे दोनों भाई आपके आश्रय हैं आपको कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

देवि। राक्षसोंद्वारा सेवित इस अत्यन्त भयंकर देशमें आपको अधिक दिनोंतक नहीं रहना पड़ेगा। आपके प्रियतमके आनेमें विलम्ब नहीं होगा। जबतक मेरी उनसे भेंट न हो, उतने समयतकके विलम्बको आप क्षमा करें।

तब सीताने कहा- वानरवीर। तुमने मुझे बड़ा ही प्रिय संवाद सुनाया है। तुम्हें देखकर हर्षके मारे मेरे शरीरमें रोमाञ्च हो आया है। ठीक उसी तरह, जैसे वर्षाका पानी पड़नेसे आधी जमी हुई खेतीवाली भूमि हरी-भरी हो जाती है।

वानरश्रेष्ठ। श्रीरामने क्रोधवश जो कौएकी एक आँखको फोड़नेवाली सींकका बाण चलाया था, उस प्रसङ्गकी तुम पहचानके रूपमें उन्हें याद दिलाना। महेन्द्र और वरुणके समान पराक्रमी प्रियतम। आप बलवान् होकर भी अपहृत होकर राक्षसोंके घरमें निवास करनेवाली मुझ सीताका तिरस्कार कैसे सहन करते हैं ?

निष्पाप प्राणेश्वर। इस दिव्य चूड़ामणिको मैंने बड़े यत्नसे सुरक्षित रक्खा था और संकटके समय इसे देखकर मानो मुझे आपका ही दर्शन हो गया हो, इस तरह मैं हर्षका अनुभव करती थी। समुद्रके जलसे उत्पन्न हुआ यह कान्तिमान् मणिरत्न आज आपको लौटा रही हूँ। अब शोकसे आतुर होनेके कारण मैं अधिक समयतक जीवित नहीं रह सकूँगी। दुःसहय दुःख, हृदयको छेदनेवाली बातें और राक्षसियोंके साथ निवास- यह सब कुछ मैं आपके लिये ही सह रही हूँ। मैं आपकी प्रतीक्षामें किसी तरह एक मासतक जीवन धारण करूँगी। इसके बाद आपके बिना मैं जीवित नहीं रह सकूँगी। यह राक्षसराज रावण बड़ा क्रूर है। मेरे प्रति इसकी दृष्टि भी अच्छी नहीं है। अब यदि आपको भी विलम्ब करते सुन लूँगी तो मैं क्षणभर भी जीवित नहीं रह सकती।

हनुमान बोले- देवि। मैं सत्यकी शपथ खाकर कहता हूँ कि श्रीरघुनाथ आपके शोकसे ही सब कामोंसे विमुख हो रहे हैं। श्रीरामके शोकातुर होनेसे लक्ष्मण भी बहुत दुखी रहते हैं। अब किसी तरह आपका दर्शन हो गया। भामिनि। आप इसी मुहूर्तमें अपने सारे दुःखोंका अन्त हुआ समझें। वे दोनों भाई पुरुषसिंह राजकुमार श्रीराम और लक्ष्मण सर्वत्र प्रशंसित वीर हैं। आपके दर्शनके लिये उत्साहित होकर वे लमापुरीको भस्म कर डालेंगे। राक्षस रावणको समराङ्गणमें उसके बन्धु-बान्धवोंसहित मारकर वे दोनों रघुवंशी बन्धु आपको अपनी पुरीमें ले जायँगे।

उस श्रेष्ठ चूड़ामणिको लेकर वानरशिरोमणि श्रीमान् हनुमान देवी सीताको सिर झुका प्रणाम करनेके पश्चात् वहाँसे जानेको उद्यत हुए। वानरयूथपति महावेगशाली हनुमानको वहाँसे छलाँग मारनेके लिये उत्साहित हो बढ़ते देख जनकनन्दिनी सीताके मुखपर आँसुओंकी धारा बहने लगी। वे दुखी हो अश्रुगद्गद् वाणीमें बोलीं- हनुमन्। सिंहके समान पराक्रमी दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मणसे तथा मन्त्रियोंसहित सुग्रीव एवं अन्य सब वानरोंसे मेरा कुशल-मङ्गल कहना।

वानरोंके प्रमुख वीर। मेरा यह दुःसह शोक-वेग और इन राक्षसोंकी यह डाँट-डपट भी तुम श्रीरामके समीप जाकर कहना। जाओ, तुम्हारा मार्ग मङ्गलमय हो। वत्स। तुम आये तो जैसे शुष्क होती कृषिको वर्षाका जल प्राप्त हुआ। मुझ मरणासन्नको अमृत बनकर तुमने उज्जीवित किया; किंतु अब तुम भी जाना चाहते हो। अत्यन्त दुःखी होकर वैदेही बोल रही थीं- तुम्हें रोक नहीं सकती। दिनका प्रकाश फैल चुका है। थोड़ी देरमें राक्षस जाग जायँगे। उनके जागनेसे पूर्व तुम प्रस्थान करो तो तुम्हारा मार्ग निर्विघ्न रहेगा।

राजकुमारी सीताके उक्त अभिप्रायको जानकर कपिवर हनुमान्ने अपनेको कृतार्थ समझा और प्रसन्नचित्त होकर थोड़े-से शेष रहे कार्यका विचार करते हुए वहाँसे उत्तर दिशाकी ओर प्रस्थान किया।

इनके मनमें राक्षसोंका भय जमकर बैठ गया है। उसे दूर किये बिना जाना उचित नहीं है। हनुमान मस्तक झुकाये सोचने लगे- मैंने रात्रिमें लमा देखी अवश्य; किंतु मेरा ध्यान तो इन अम्बाके अन्वेषणमें लगा था। इस पुरीको अच्छी प्रकार देखा जाना चाहिये। दशग्रीवकी शक्तिका भी अनुमान करना चाहिये मुझे और यदि सम्भव हो तो आगामी अवश्यम्भावी संग्राममें स्वामीको सुविधा हो, शत्रु आतमित रहें, ऐसा भी कुछ करके ही जाना चाहिये।

५) अशोक वाटिका विध्वंस- हनुमानने आकाश की ओर देखा- अभी उजाला नहीं हुआ था, रात का अंतिम प्रहर ही दीखता था। जल्दी ही सवेरा होगा। पर अनिद्रा के कारण हनुमान का सिर कैसा भन्ना रहा था। कभी लगता था सिर घूम रहा है, कभी कुछ पीड़ा का-सा अनुभव होता था और कभी सुन्न ही हो जाता था। आँखें भी तो कभी बंद हो रही थीं, कभी जल रही थीं और कभी धुँधला रही थीं।

सहसा हनुमान की दृष्टि सामने खड़े कदली-वन पर पड़ी। केले के इतने बड़े-बड़े पेड़ और वे भी फल से लदे हुए। हनुमान को अपनी भूख याद आ गई। अंतिम बार उन्होंने मय दानव के प्रासाद में, वृद्धा तापसी स्वयंप्रभा द्वारा किया गया भोजन किया था। उस मायानगरी से निकलकर, सागरतट पर उन लोगों ने वृद्ध संपाति को तो भोजन करवाया था, किंतु स्वयं कुछ भी नहीं खाया था। लंका की धरती पर उतरकर भी उनके पेट में कुछ नहीं गया था- पहली रात वे रावण के महामहालय में भटकते रहे थे। कल का सारा दिन कुछ उपवन में सोने और कुछ भटकने में बीत गया। आज की रात भी इस अशोक वृक्ष पर टँगे-टँगे ही निकल गई अब भूख असह्य थी।

अब तक अपने कार्य में वे भूले बैठे थे; किंतु अब कार्य भी संपन्न हो गया था और केले जैसा प्रिय और पका हुआ फल इस प्रचुर मात्रा में सामने लटका हुआ उन्हें आमंत्रित कर रहा था।

मैंने सीताका दर्शन तो कर लिया, अब मेरे इस कार्यका थोड़ा-सा अंश शत्रुकी शक्तिका पता लगाना शेष रह गया है। इसके लिये चार उपाय हैं- साम, दान, भेद और दण्ड। यहाँ साम आदि तीन उपायोंको लाँघकर केवल चौथे उपाय दण्ड का प्रयोग ही उपयोगी दिखायी देता है। राक्षसोंके प्रति सामनीतिका प्रयोग करनेसे कोई लाभ नहीं होता। इनके पास घन भी बहुत है, अत: इन्हें दान देनेका भी कोई उपयोग नहीं है। इसके सिवा, ये बलके अभिमानमें चूर रहते हैं। अत: भेदनीतिके द्वारा भी इन्हें वशमें नहीं किया जा सकता। ऐसी दशामें मुझे यहाँ पराक्रम दिखाना ही उचित जान पड़ता है।

इस कार्यकी सिद्धिके लिये पराक्रमके सिवा यहाँ और किसी उपायका अवलम्बन ठीक नहीं जँचता। यदि युद्धमें राक्षसोंके मुख्य-मुख्य वीर मारे जायँ तो ये लोग किसी तरह कुछ नरम पड़ सकते हैं। जो पुरुष प्रधान कार्यके सम्पन्न हो जानेपर दूसरे-दूसरे बहुत-से कार्योंको भी सिद्ध कर लेता है और पहलेके कार्योंमें बाधा नहीं आने देता, वही कार्यको सुचारू रूपमें कर सकता है। छोटे-से-छोटे कर्मकी भी सिद्धिके लिये कोई एक ही साधक हेतु नहीं हुआ करता। जो पुरुष किसी कार्य ा प्रायेजनको अनेक प्रकारसे सिद्ध करनेकी कला जानता हो, वही कार्य-साधनमें समर्थ हो सकता है।

यदि इसी यात्रामें मैं इस बातको ठीक-ठीक समझ लूँ कि अपने और शत्रुपक्षमें युद्ध होनेपर कौन प्रबल होगा और कौन निर्बल, तत्पश्चात् भविष्यके कार्यका भी निश्चय करके आज सुग्रीवके पास चलूँ तो मेरे द्वारा स्वामीकी आज्ञाका पूर्णरूपसे पालन हुआ समझा जायगा। परंतु आज मेरा यहाँतक आना सुखद अथवा शुभ परिणामका जनक कैसे होगा ? राक्षसोंके साथ हठात् युद्ध करनेका अवसर मुझे कैसे प्राप्त होगा? तथा दशमुख रावण सागरमें अपनी सेनाको और मुझे भी तुलनात्मक दृष्टिसे देखकर कैसे यह समझ सकेगा कि कौन सबल है ?

जैसे आग सूखे वनको जला डालती है, उसी प्रकार मैं भी आज इस उपवनका विध्वंस कर डालूँगा। इसके भग्न हो जानेपर रावण अवश्य मुझपर क्रोध करेगा। तत्पश्चात् वह राक्षसराज हाथी, घोड़े तथा विशाल रथोंसे युक्त और त्रिशूल, कालायस एवं पट्टिश आदि अज-शस्त्रोंसे सुसज्जित बहुत बड़ी सेना लेकर आयेगा। फिर तो यहाँ महान् संग्राम छिड़ जायगा।

उस युद्धमें मेरी गति रुक नहीं सकती। मेरा पराक्रम कुण्ठित नहीं हो सकता। मैं प्रचण्ड पराक्रम दिखानेवाले उन राक्षसोंसे भिड़ जाऊँगा और रावणकी भेजी हुई उस सारी सेनाको मौतके घाट उतारकर सुखपूर्वक सुग्रीवके निवासस्थान किष्किन्धापुरीको लौट जाऊँगा।

अम्ब ! मैं समुद्र पारसे चला, तब भी उपेषित ही था ओर आपके अन्वेषण में पूरी रात इस पुरीमें भटकता रहा हूँ। हनुमानने छोटे बालक के समान उदास मुख बनाया- इस वाटिकामें इतने अधिक फल लगे हैं। इन मधुर पक्व फलोंको देखकर मेरी क्षुधा बहुत बढ़ गयी है।

वत्स ! बड़े विकट बलवान् राक्षस इस वाटिकाकी रक्षा करते हैं। श्रीजानकीका मुख उदास हो गया। कौन माता पुत्रको भूखा सुनकर शान्त रह पाती है; किंतु क्या करें वे रावणको यह वाटिका बहुत प्रिय है। आप उस दुष्टकी बात क्यों करती हैं ? मैं उसे और उसके रक्षकोंको देख लूँगा। हनुमानने आग्रहके स्वरमें कहा- आप इस वाटिकामें विराजमान है, अत: मुझे आपकी अनुमति चाहिये। आप प्रसन्न हों तो मुझे किसीकी चिन्ता नहीं। आराध्यका स्मरण करके भली प्रकार फल खाओ। सीताजीने प्रसन्न मनसे अनुमति दे दी।

अम्ब। मैं वानर हूँ। उछल-कूदकर खाये बिना मेरा पेट नहीं भरेगा। हनुमानने फिर कहा- इसमें कुछ शाखाएँ टूट सकती हैं, कुछ वृक्ष भी- आपको खेद तो नहीं होगा ?

मेरा कोई ममत्व इस वाटिकापर नहीं है। तुम यथेच्छ विचरण करो। श्रीजनक-नन्दिनी समझ गयीं कि उनके स्वामीका यह पराक्रमी बुद्धिमान चर अब दशग्रीवका दर्प-दलन करना चाहता है। उन्होंने आज्ञा दे दी- मैंने इस वाटिकाको न देखा है, न देखना चाहती हूँ। केवल मेरे इस आश्रय-वृक्षपर मत कूदना।

क्षणार्धमें हनुमानका अपना स्वर्णशैलाभ शरीर प्रकट हो गया। वे उछले तो वनके वक्षके धक्केसे अनेक वृक्ष टूट गिरे।

जिस डाली पर हनुमान ने निगाह डालीं वह डाली फिर डाली न रही। फल तोड़-तोड़कर सब फेंक दिये न लाली और न हरियाली रही। हर्षित हो किलकार मार-मारकर पेडों से पेडों पर भागने लगे। मीठे-मीठे फल छाँट-छाँट कर जी भर कर खाने लगे। फल खाकर पेड उखाडते थे, सागर में फेंक देते थे। मालीगण सम्मुख आते तो पेड़ों की डालियों से मार भगाते थे।

हनुमान के विवेक ने उन्हें रोका- सावधान, हनुमान। कहीं केले खाने के चक्कर में यहीं अटक गए और कोई प्रहरी आ निकला, तो सारा बना-बनाया काम बिगड़ जाएगा किंतु साथ ही उनकी बुद्धि ने एक दूसरा तर्क उछाल दिया। बिना खाए भी तो काम बिगड़ सकता है। भूख सहन करने की भी कोई सीमा होती है। दो दिन और दो रातें बीत रही हैं और उन्होंने कुछ खाया नहीं है। ऐसा न हो कि फिर वही दशा हो जाए, जो स्वयंप्रभा के पास पहुँचने से पहले हो गई थी। फिर हनुमान दीन-हीन होकर, किससे भोजन माँगते फिरेंगे ? इस समय तो केलों की कांदियाँ सामने लटक रही हैं न किसी से माँगने की आवश्यकता है, न कुछ कहने-सुनने की। निश्चित को छोड़, अनिश्चित की ओर लपकने वाला व्यक्ति मूर्ख कहलाता है। फिर, अभी तो सारा सागर पार करना है। पार करने के लिए भी शरीर में शक्ति चाहिए और मार्ग में पड़ने वाले उन बेढ़ब जीव-जंतुओं से युद्ध करने के लिए भी। भूखे शरीर से कैसे कुछ हो पाएगा... नहीं और अधिक भूखे रहने का जोखिम वे नहीं उठा सकते।

हनुमान के हाथ अनायास बढ़ गए। वृक्ष के बीच कहीं सोए हुए पक्षियों की निद्रा का सुख भंग हो गया और वे चीत्कार करते हुए उड़ गए। हनुमान ने एक बार आश्चर्य से उनको देखा- पक्षी ? भूख और नींद से भन्नाए हुए उनके मस्तिष्क ने भी समझ लिया कि यद्यपि वे इस समय भोजन करने के लिए तत्पर हो रहे हैं, किंतु सामान्य जीव-जंतुओं के लिए यह भोजन का नहीं, शयन का समय है और इस समय उनको जगा देना, समय की दृष्टि से उचित नहीं है। किंतु वे क्या करते ? उनकी अपनी स्थिति असाधारण थी। दो दिन और दो रातें बीत गई थीं, उन्होंने कुछ खाया नहीं था। अब ऐसे में इन सोये हुए पक्षियों को थोड़ा कष्ट होता भी है, तो हनुमान क्या कर सकते हैं। बहुत होगा तो ये पक्षी एक वृक्ष से उड़कर दूसरे वृक्ष पर चल जाएँगे और वहाँ सो रहेंगे। इन्हें कौन-सी चारपाई उठानी है, या बिस्तर झाड़ना है, जाकर सो ही तो रहना है। वैसे वर्षा ऋतु में कई बार मेघ आकर खुले आकाश के नीचे सोये हनुमान को भी जगा देते हैं। चारपाई और बिस्तर समेत भी उठना पड़ता है। तब कोई इस प्रकार तो नहीं चिल्लाता, कोई मेघों से लड़ता नहीं, उन्हें गालियाँ नहीं देता। चुपचाप जाकर पुन: सो जाता है। तो फिर हनुमान ने शाखा को तनिक-सा हिला दिया तो कौन-सा अनर्थ हो गया।

हनुमान की भूख अंगड़ाइयाँ ले-लेकर जागती जा रही थी और पेट भरने के साथ-साथ मस्तिष्क सोता जा रहा था ऐसे केले राक्षस ही क्यों खाते रहें। उन्होंने उछलकर वृक्ष के तने पर पाद-प्रहार किया। हों तो इस जाति के केले सबके लिए हों, या फिर किसी के लिए न हों यह क्या हुआ कि सामान्य जन तो निकृष्ट फल खाएँ और राजा लोग उत्तम कोटि के राजा चाहे किष्किंधा का हो, चाहे लंका का हो, हनुमान ने दो केले खाए पर केले ही खाते जाएँगे क्या ? कोई और फल भी तो होना चाहिए। उन्होंने केले के दूसरे वृक्ष को उसके शीर्ष से पकड़कर मोड़ दिया।

बीसियों पक्षी चीत्कार करते हुए एक साथ उड़े और विभिन्न दिशाओं में फैल गए। उन्हें लगा कि दूर कहीं अन्य जंतुओं का भी स्वर जागा है। हनुमान को हँसी आ गई- केले के एक पेड़ के ध्वंस पर इतना कोलाहल ? वानर तो सारी लंका को ध्वस्त करने की सोच रहे हैं। राक्षसों ने क्या कम ध्वंस किया है ? जातियों की जातिाँ और राज्यों के राज्य नष्ट कर दिए। पीढ़ियों की पीढ़ियाँ पंगु करके धर दीं

जिन राक्षसों के कारण संसार भर में कोई स्वतंत्रता और सम्मान से जी नहीं सकता- उन राक्षसों को तो ध्वस्त होना ही चाहिए।

हनुमान आगे बढ़ गए। यह किस फल का वृक्ष है ? वे निकट गए... नहीं। फलां का वृक्ष नहीं है। यह तो शाद अशोक वृक्ष है... अशोक। अशोक कैसा हुआ, जो शोक नहीं रह सकता और शोक तो होता है जठराग्नि का। पेट की भूख न मिटा सके तो अशोक कैसा? व्यर्थ का नाम और व्यर्थ का वृक्ष। इससे तो अच्छा था, आम का वृक्ष लगाया होता, न सही आम, नारियल का लगाया होता व्यर्थ ही अशोक- अशोक लगा दिया। नाम बड़े और दर्शन छोटे... नाम है अशोक और है पत्तों और लकड़ियों का पुंज। खाने को एक छोटा-सा फल भी नहीं।

हनुमान जोर से उछले और जिस किसी शाखा पर हाथ पड़ा, उसी को थाम लिया। उनके बोझ से शाखा झुकी और कड़कड़ाई।

सहसा हनुमान सजग हुए... यह क्या कर रहे हैं वे ? पक्षियों की चीत्कार अलग। शाखा के टूटने की ध्वनि ऐसे तो प्रहरी जाग जाएँगे।

उन्होंने सावधान होकर इधर-उधर देखा। समझ गए कि विलंब हो चुका था। जो भूल होनी थी, हो चुकी थी; और उसका जो दुष्परिणाम होना था, वह भी सामने था। न केवल सीताको घेरकर सोयी हुई राक्षसियाँ जाग उठी थीं; वरन् अनेक वृक्षों के पीछे उन्हें सशस्त्र पुरुष सैनिक भी दिखाई पड़ रहे थे। अब अंधकार भी उतना सघन नहीं रह गया था।

यह क्या किया तुमने, हनुमान ? वे सोच रहे थे। दो दिन और दो रातें लंका में गुप्त रूप से व्यतीत कर दीं, किसी को उनकी गंध न मिल जाए। कहीं उनके लक्ष्य तक पहुँचने में कोई विघ्न न आ जाए और अब, जब कार्य संपन्न हो चुका था, लौटना भर शेष था, यह दुर्घटना हो गई। सचमुच ह भूख बड़ी राक्षसी है। उसी ने तो करवा दिया यह कांड। पर भूख को क्यों कोसें ? उन्होंने चुपचाप पेट भरकर केले खा लिये होते तो यह सब कुछ भी न होता। न करते उत्पात। इन गोपनीय क्षणों में राजाओं के एकाधिकार के विरुद्ध अभियान कर कदलीवन का ध्वंस क्या आवश्यक था ? और अशोक वृक्ष को उसकी फलहीनता के अपराध का दण्ड देना क्या अत्यधिक अनिद्रा के कारण उनका मस्तिष्क सो गया था ?

ये सैनिक जो उन्हें घेर रहे थे, कदाचित अशोक वाटिका के रक्षक थे। वे उन्हें घेर तो रहे थे, पर लगता था कि पास आने से घबरा भी रहे थे। यह सम्भव है कि इन्होंने और सहायता मँगवाई हो और उसके आने की प्रतीक्षा कर रहे हों। पर ये लोग संख्या में बहुत अधिक थे। इतने लोगों को एक निहत्थे व्यक्ति को पकड़ने के लिए यदि सैनिक कुमुक की आवश्यकता पड़े, तो इन लोगों को बहुत वीर नहीं समझा जा सकता। हनुमान की इच्छा हुई कि जोर की एक किलकारी मारें और इन लोगों पर झपट पड़ें। ये डरे हुए तो हैं ही; इन्हें और भी डरा दें।

ऐसा सोचकर भयानक पुरुषार्थ प्रकट करनेवाले पवनकुमार हनुमानजी क्रोधसे भर गये और वायुके समान बड़े भारी वेगसे वृक्षोंको उखाड़-उखाड़कर फेंकने लगे। तदनन्तर वीर हनुमानने मतवाले पक्षियोंके कलरवसे मुखरित और नाना प्रकारके वृक्षों एवं लताओंसे भरे-पूरे उस प्रमदावन अन्त:पुरके उपवन को उजाड़ डाला। वहाँके वृक्षोंको खण्ड-खण्ड कर दिया। जलाशयोंको मथ डाला और पर्वत-शिखरोंको चूर-चूर कर डाला। इससे वह सुन्दर वन कुछ ही क्षणोंमें अभव्य दिखायी देने लगा।

नाना प्रकारके पक्षी वहाँ भयके मारे चें-चें करने लगे, जलाशयोंके घाट टूट-फूट गये, तामेके समान वृक्षोंके लाल-लाल पल्लव मुरझा गये तथा वहाँके वृक्ष और लताएँ भी रौंद डाली गयीं। इन सब कारणोंसे वह प्रमदावन वहाँ ऐसा जान पड़ता था, मानो दावानलसे झुलस गया हो। वहाँकी लताएँ अपने आवरणोंके नष्ट-भ्रष्ट हो जानेसे घबरायी हुई स्त्रियोंके समान प्रतीत होती थीं।

लतामण्डप और चित्रशालाएँ उजाड़ हो गयीं। पाले हुए हिंसक जन्तु, मृग तथा तरह-तरहके पक्षी आर्तनाद करने लगे। प्रस्तरनिर्मित प्रासाद तथा अन्य साधारण गृह भी तहस-नहस हो गये। इससे उस महान् प्रमदावनका सारा रूप-सौन्दर्य नष्ट हो गया।

इस प्रकार महामना राजा रावणके मनको विशेष कष्ट पहुँचानेवाला कार्य करके अनेक महाबलियोंके साथ अकेले ही युद्ध करनेका हौसला लेकर हनुमानजी प्रमदावन के फाटकपर आ गये। उस समय वे अपने अद्‌भुत तेजसे प्रकाशित हो रहे थे।

पशु और पक्षी भयभीत होकर भागने तथा आर्तनाद करने लगे। राक्षसोंके सामने भयंकर अपशकुन प्रकट होने लगे।

प्रमदावनमें सोयी हुई विकराल मुखवाली राक्षसिोंकी निद्रा टूट गयी। उन्होंने उठनेपर उस वनको उजड़ा हुआ देखा। साथ ही उनकी दृष्टि उन वीर महाकपि हनुमान्‌जीपर भी पड़ी।

महाबली, महान् साहसी एवं महाबाहु हनुमान्‌जीने जब उन राक्षसियोंको देखा, तब उन्हें डरानेवाला विशाल रूप धारण कर लिया।

पर्वतके समान बड़े शरीरवाले महाबली वानरको देखकर वे राक्षसियाँ जनकनन्दिनी सीतासे पूछने लगीं-

तब सर्वाङ्गसुन्दरी साध्वी सीताने कहा- इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले राक्षसोंको समझने या पहचाननेका मेरे पास क्या उपाय है?

तुम्हीं जानो यह कौन है और क्या करेगा ? साँपके पैरोंको साँप ही पहचानता है, इसमें संशय नहीं है।

मैं भी इसे देखकर बहुत डरी हुई हूँ। मुझे नहीं मालूम कि यह कौन है ? मैं तो इसे इच्छानुसार रूप धारण करके आया हुआ कोई राक्षस ही समझती हूँ। विदेहनन्दिनी सीताकी यह बात सुनकर राक्षसियाँ बड़े वेगसे भागीं। उनमेंसे कुछ तो वहीं खड़ी हो गयीं और कुछ रावणको सूचना देनेके लिये चली गयीं।

अशोक वाटिका के रखवाले हनुमान की बार-बार मार खाकर दशानन की सभा में जाकर पुकार करने लगे।

रावणके समीप जाकर उन विकराल मुखवाली राक्षसियोंने रावणको यह सूचना दी कि कोई विकटरूपधारी भयंकर वानर प्रमदावनमें आ पहुँचा है। वे बोलीं- राजन्। अशोकवाटिकामें एक वानर आया है, जिसका शरीर बड़ा भंकर है। उसने सीतासे बातचीत की है। वह महापराक्रमी वानर अभी वहीं मौजूद है।

हमने बहुत पूछा तो भी जनककिशोरी मृगननी सीता उस वानरके विषयमें हमें कुछ बताना नहीं चाहती हैं।

सम्भव है वह इन्द्र या कुबेरका दूत हो अथवा श्रीरामने ही उसे सीताकी खोजके लिये भेजा हो।

अद्‌भुत रूप धारण करनेवाले उस वानरसे आपके मनोहर प्रमदावनको, जिसमें नाना प्रकारके पशु-पक्षी रहा करते थे, उजाड़ दिया।

प्रमदावनका कोई भी ऐसा भाग नहीं है, जिसको उसने नष्ट न कर डाला हो। केवल वह स्थान जहाँ जानकी देवी रहती हैं, उसने नष्ट नहीं किया है। मनोहर पल्लवों और पत्तोंसे भरा हुआ वह विशाल अशोक वृक्ष, जिसके नीचे सीताका निवास है, उसने सुरक्षित रख छोड़ा है। जिसने सीतासे वार्तालाप किया और उस वनको उजाड़ डाला, उस उग्र रूपधारी वानरको आप कोई कठोर दण्ड देनेकी आज्ञा प्रदान करें। फल खाने की तो वानर की कोई बात नहीं पर वह तो पेड़ उखाड़-उखाड़ कर फेंक रहा है। वह कोई वानर नहीं है प्रलय है या यमपुर का कोई दूत है। पूरी अशोक वाटिका उजाड दिया है। राक्षस गणोंको मारा है।

राक्षसियोंकी यह बात सुनकर राक्षसोंका राजा रावण प्रज्वलित चिताकी भाँति क्रोधसे जल उठा। उसके नेत्र रोषसे घूमने लगे।

उस महातेजस्वी निशाचरने हनुमानको कैद करनेके लिये अपने ही समान वीर किंकर नामधारी राक्षसोंको जानेकी आज्ञा दी।

प्रमदावनके फाटकपर खड़े हुए उन वानरवीरके पास पहुँचकर वे महान् वेगशाली निशाचर उनपर चारों ओरसे इस प्रकार झपटे, जैसे पतिंगे आगपर टूट पड़े हों। हाथमें प्रास और तोमर लिये मुद्‌गर, पट्टिश और शूलोंसे सुसज्जित हो वे सहसा हनुमान्‌के चारों ओरसे घेरकर उनके सामने खड़े हो गये। सहसा उनके मन में कौंधा कि वे खुले स्थान में खड़े हैं और चारों ओर से घिरे हुए हैं। शत्रुओं को भयभीत करने की योजना बनाने के लिए यह गलत स्थान और रीति है।

तभी उन्होंने एक और व्यक्ति को अपनी ओर आते देखा। वह बहुत वेग से चलकर, उन्हीं की ओर आ रहा था और अनेक सशस्त्र सैनिक उसे घेरकर चल रहे थे। वह आकर उस वृक्ष से कुछ दूर ही रुक गया, कौन हो तुम ? यहाँ क्या कर रहे हो ? कौन हो तुम ? उस अधिकारी ने पुन: पूछा, यहाँ क्या कर रहे हो ? और यहाँ तुम पहुँचे कैसे ?

हनुमान ने किलकारी मारी। तीन में से कितने प्रश्नों का उत्तर देना अनिवार्य है ?

क्या अभिप्राय है तुम्हारा ? वह व्यक्ति अपनी उपेक्षा से क्रुद्ध हो उठा, एक तो महाराजाधिराज की वाटिका में अनाधिकृत प्रवेश किया, वृक्षों का ध्वंस किया और अब वृक्ष पर चढ़ा पूछता है, कितने प्रश्नों के उत्तर अनिवार्य हैं। अरे, तू पेड़ की शाखा पर बैठा है या किसी परीक्षा-भवन में। क्रुद्ध क्यों होते हो, प्रश्नाधिकारी। हनुमान का मस्तिष्क बड़ी क्षिप्रता से अपने निकलने का कोई मार्ग खोज रहा था, यदि तुम्हें मेरा यहाँ आना अच्छा नहीं लगा तो मैं चला जाता हूँ।

हनुमान ने उसकी प्रतिक्रिया जानने के लिए, वृक्ष से नीचे उतरने का-सा अभिनय किया।

जाता कहाँ है तू। वह अधिकारी चिल्लाया, पहले बता कि तू कौन है और तूने महाराजाधिराज की वाटिका में अनधिकृत प्रवेश क्यों किया ? बताता क्यों नहीं तू ?

धैर्य रखकर, एक-एक कर प्रश्न पूछ, तो तुझे उत्तर भी दूँ। वे बोले, बाणों की झड़ी के समान प्रश्न पूछेगा तो व्यक्ति उनसे आहत होगा या उनके उत्तर देगा ? तू कौन है ? अधिकारी ने किसी प्रकार स्वयं को संयत किया।

बड़ा कठिन प्रश्न है, अधिकारी। हनुमान बोले, तू जानता है कि तू कौन है ? तेरा स्वरूप क्या है ? जन्म से पहले तू कहाँ था और मृत्यु के पश्चात् तू कहाँ जाएगा ?

मैं कहा जाऊँगा, मुझे मालूम नहीं है। अधिकारी पुन: क्रुद्ध हो उठा, पर तू बंदी होकर कहाँ जाएगा, यह मुझे ज्ञात है। तू निगड़बद्ध हो, भूगर्म कारागार में जाएगा।

तुम तो भविष्यवक्ता मालूम होते हो, प्रश्नाधिकारी। हनुमान ने अपनी व्याकुलता को छिपाया, तनिक ऊपर आ जाओ और मेरे भविष्य के विषय में कुछ भी बताओ। इतने भर से मेरा संतोष नहीं हुआ।

अधिकारी की समझ में आ गया कि उसके अधीनस्थ कर्मचारियों के सम्मुख ही उसका विद्रूप बन रहा है।

वह चिल्लाकर बोला, यह प्रलाप बंद कर और बता, तूने राजाधिराज की वाटिका में अनधिकृत प्रवेश क्यों किया ?

हनुमान को निकल भागने का कोई मार्ग नहीं दिख रहा था। युद्ध अनिवार्य हो गया था। उस स्थिति में रावण को भी सूचना मिल सकती थी और असंख्य सशस्त्र सैनिक आ सकते थे। सागर पार स्थिति अपनी प्रतीक्षा करते हुए अन्वेषण दल तक यदि वे एक बार जानकी से हुई अपनी बातचीत की सूचना पहुँचा सकते, तो फिर उन्हें अपने बंदी अथवा हताहत होने में भी कोई भय नहीं था।

बोलता क्यों नहीं ? अधिकारी पुन: चिल्लाया। हनुमान सावधान हो गए- अब सिवाय संघर्ष के और कोई उपाय नहीं था। अधिकारी की आज्ञा के पश्चात्, इधर-उधर छिपे हुए अनेक सशस्त्र प्रहरी प्रकट हो गए थे और योजनाबद्ध रूप से घेरकर, उन्हें बंदी करने के लिए आगे बढ़ रहे थे। आँख-मिचौनी का खेल आरंभ हो गया। हनुमान वृक्षों और लताओं में कहीं छिप जाते और प्रहरी उन्हें खोजते फिरते। किसी की दृष्टि उन पर पड़ती तो वह चिल्ला उठता। वे सब उन्हें घेर, उन पर झपटते और हनुमान किसी को पीटते, किसी को ठेलते, किसी को धकेलते, किसी को आहत करते, किसी पर किसी शाखा से प्रहार करते, किसी को अपनी मुष्टि का बल दिखाते, यह जा, वह जा हो जाते। कुछ राक्षसों को पेड़ गिराकर दबा दिए कुछ को सागर में फेंक दिए और कुछ को अपने पूँछ में बाँधकर घुमा दिए।

ऐसी चार-छह मुठभेड़ों में ही अनेक क्यारियाँ रौंदी जा चुकी थीं, अनेक झुरमुट नष्ट हो चुके थे, अनेक लताएँ टूट चुकी थीं और अनेक वृक्षों की शाखाएँ भग्न हो चुकी थीं। अब तक अशोक वाटिका पर्याप्त शोकपूर्ण हो चुकी थी उसमें सारा दोष हनुमान का ही नहीं था। उनको पकड़ने के लिए झपटते हुए राक्षस सैनिक वाटिका को हनुमान से भी अधिक उजाड़ रहे थे। उस झुटपुटे अँधेरे में हनुमान जहाँ नहीं भी होते, वहाँ भी दिखाई पड़ जाते थे और अनेक बार तो हनुमान के भ्रम में उन भयभीत प्रहरियों के हाथों अनेक सुंदर लता-गुल्म ही पिट गए।

हनुमान अब युद्ध अथवा प्रहार से अधिक अपने बच निकलने का प्रयत्न कर रहे थे। उसमें अधिक परेशानी नहीं थी। किसी एक वृक्ष को हिलाकर, अथवा कहीं कोई शब्द कर वे विपरीत दिशा की ओर निकल जाते थे। वाटिका-रक्षक दल उन्हें उस वृक्ष अथवा उस शब्द-स्थान के आस-पास अत्यंत प्रयत्नपूर्वक खोजता रहता।

हनुमान ने बहुत सारे राक्षस यमपुर पहुँचाए। कुछ बचे कुचे अधमरे असुर फिर राजसभा में जाकर चिल्लाए। उनकी पुकार सुनकर रावण अति क्रोधित हुआ।

वानर ? वानर आया है ? तब क्या बालिने अपनी मुझसे की गयी मैत्री-सन्धि भङ्ग कर दी रावण सचिन्त हो गया। स्वप्न देखता उठाया गया था। स्वप्नमें भी उसे एक विकट-मुख वानर नोच-नोचकर सता रहा था। दशग्रीवको अभी बालिके मारे जानेका पता नहीं था। वह सोचता था- वानरेन्द्र बालिकी अनुमतिके बिना उसके मित्रके नगरमें उत्पात् करने कोई वानर कैसे आया ? कहीं स्वयं बालि तो नहीं आया है ? दूसरा कौन है जो सौ योजन सागर लाँघकर इतना साहस करे ?

पवनपुत्र हनुमान् अत्यन्त विशाल शरीर धारण करके अपनी पूँछ फटकारने और उसके शब्दसे लमाको प्रतिध्वनित करने लगे।

उनकी पूँछ फटकारनेका गम्भीर घोष बहुत दूरतक गूँज उठता था। उससे भयभीत हो पक्षी आकाशसे गिर पड़ते थे। उस समय हनुमानने उच्च स्वरसे इस प्रकार घोषणा की-

जयत्यदिबलो रामो लक्ष्मणश्च महाबल: । राजा जति सुग्रीवो राघवेणाभिपालित: ।।
दासोऽहं कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मण: । हनूमाञ्शत्रुसैन्यानां निहन्ता मारुतात्मज: ।।
न रावणसहस्त्रं मे युद्धे प्रतिबलं भवेत । शिलाभिश्च प्रहरत: पादपैश्च सहस्त्रश: ।।
अर्दयित्वा पुरीं लमामभिवाद्य च मैथिलीम् । समृद्धार्थो गमिष्यामि मिषतां सर्वरक्षसाम् ।।

अत्यंत बलवान् भगवान् श्रीराम तथा महाबली लक्ष्मण की जय हो। श्रीरघुनाथके द्वारा सुरक्षित राजा सुग्रीवकी भी जय हो। मैं अनायास ही महान् पराक्रम करनेवाले कोसलनरेश श्रीरामका दास हूँ। मेरा नाम हनुमान है। मैं वायुका पुत्र तथा शत्रुसेनाका संहार

करनेवाला हूँ। जब मैं हजारों वृक्ष और पत्थरोंसे प्रहार करने लगूँगा, उस समय सहस्त्रों रावण मिलकर भी युद्धमें मेरे बलकी समानता अथवा मेरा सामना नहीं कर सकते। मैं लमापुरीको तहस-नहस कर डालूँगा और मिथिलेशकुमारी सीताको प्रणाम करनेके अनन्तर सब राक्षसोंके देखते-देखते अपना कार्य सिद्ध करके जाऊँगा।

हनुमानकी इस गर्जनासे समस्त राक्षसोंपर भय एवं आतम छा गया। उन सबने हनुमानको देखा। वे संध्याकालके ऊँचे मेघके समान लाल एवं विशालकाय दिखायी देते थे। हनुमानने अपने स्वामीका नाम लेकर स्वयं ही अपना परिचय दे दिया था, इसलिये राक्षसोंको उन्हें पहचाननेमें कोई संदेह नहीं रहा। वे नाना प्रकरके भयंकर अस्त्र-शस्त्रोंका प्रहार करते हुए चारों ओरसे उनपर टूट पड़े।

उन शूरवीर राक्षसोंद्वारा सब ओरसे घिर जानेपर महाबली हनुमान्ने फाटकपर रक्खा हुआ एक भयंकर लोहेका परिघ उठा लिया।

जैसे विनतानन्दन गरुड़ने छटपटाते हुए सर्पको पंजोंमें दाब रक्खा हो, उसी प्रकार उस परिघको हाथमें लेकर हनुमानने उन निशाचरोंका संहार आरम्भ किया। वीर पवनकुमार उस परिघको लेकर आकाशमें विचरने लगे। जैसे सहस्त्रनेत्रधारी इन्द्र अपने वज्रसे दैत्योंका वध करते हैं, उसी प्रकार उन्होंने उस परिघसे सामने आये हुए समस्त राक्षसोंको मार डाला। तदनन्तर वहाँ उस भयसे मुक्त हुए कुछ राक्षसोंने जाकर रावणको यह समाचार निवेदन किया कि समस्त किंकर नामक राक्षस मार डाले गये।

राक्षसोंकी उस विशाल सेनाको मारी गयी सुनकर राक्षसराज रावणकी आँखें चढ़ गयीं और उसने प्रहस्तके पुत्र जम्बुमाली को जिसके पराक्रमकी कहीं तुलना नहीं थी तथा युद्धमें जिसे परास्त करना नितान्त कठिन था, हनुमानका सामना करनेके लिये भेजा।

है तो बावला ही। एक और समर्थन आया, पता नहीं किस-किसकी जय बोल रहा है। जिनका हमने कभी नाम भी नहीं सुना, स्वयं को उनका दूत बता रहा है। दूत का काम संदेश देना है, या लड़ना-भिड़ना। मारो इसे।

सुनो। हनुमान उच्च स्वर में बोले, मैं श्रीराम का दूत हूँ और दूत अवध्य होता है। मेरा वध करोगे तो श्रीराम की रोषाग्नि की दाहकता का अनुभव तो करोगे ही; अपने राजाधिराज के कोप से भी बच नहीं पाओगे। तुम्हारे राजाधिराज के प्रति अभी मैंने अपना संदेश नहीं कहा है। सेना में एक आकस्मिक हलचल हुई और शांति छा गई। कदाचित् वे अपने राजाधिराज के कोपभाजन बनने से डर गए थे।

हनुमान ने अट्टहास किया, जाकर अपने राजाधिराज से कहो कि श्रीराम का दूत यहाँ खड़ा है, वह आकर संदेश सुन जाएँ।

सेनापति ने रोषपूर्ण आँखों से उन्हें देखा और अपना खड्ग निकाल लिया, तू ऐसे नहीं मानेगा, वानर मैं तेरा वध कर, तेरा सिर ले जाकर राजाधिराज के चरणों में चढ़ा दूँगा। फिर कह लेना, जो संदेश तुझे कहना है।

त्रिजटाका स्वप्न इतनी शीघ्र सत्य हो गया ? सीताके समीप रहनेवाली भयमरा राक्षसियाँ काँपने लगीं- वानर तो आ गया। यह अवश्य पुरी-प्रदाह करेगा। राक्षसोंका विनाश आसन्न है। अब तो सीताही शरण दे सकती हैं।

वानर। विकट वानर। घनकी गर्जना। पूरी लमामें भाग-दौड़ पड़ गयी। दूर से वानरको देखने ही सब दौड़े; किंतु वह तो अशोक काननमें था। इधर किंकरोंका वध करके हनुमानजी यह सोचने लगे कि मैंने वनको तो उजाड़ दिया, परंतु इस चैत्यप्रासादको नष्ट नहीं किया है। अत: आज इस चैत्यप्रासादका भी विध्वंस किये देता हूँ। मन-ही-मन ऐसा विचारकर पवनपुत्र वानरश्रेष्ठ हनुमानजी अपने बलका प्रदर्शन करते हुए मेरुपर्वतके शिखरकी भाँति ऊँचे उस चैत्यप्रासादपर उछलकर चढ़ गये।

वहाँ वन में हनुमान ने देवी का एक मन्दिर देखा। वह आधे योजन तक फैला हुआ अर्थात विस्तीर्ण था। उसके सहस्त्रों सुन्दर रत्नमय स्तम्भ थे। वहाँ की शिलाएँ स्फटिक की थीं; उन्हें जोड़ने के लिए प्रयुक्त चूना गारा सोने का था। आकाश में उसका उत्तुंग शिखर शोभायमान था। वह देवी रावण की इष्ट देवी थी। नित्य उसकी बड़ी पूजा होती थी। वह नित्य रक्त प्राशन करती थी और ब्राह्मण का बलिदान ग्रहण करती थी। जब वानर ने उस मन्दिर को देखा, तब उसने उसे मूल से उखाड़ लिया। उसने उसका तत्क्षण चूर्ण कर डाला और पत्थर आकाश में उछाल दिये। जैसे पक्षी आकाश में मँडराते हुए उड़ते हैं, वैसे उस समय पत्थर भ्रमण करने लगे। उसे महापाप का स्थल समझकर उसने उसका चिह्न तक न रहने दिया। फिर प्रचण्ड रूपधारी तथा प्रमत्त हनुमान राम-चरित ही का गान करते हुए भ्रमण करने लगा। वे तेजस्वी पवनकुमार विशाल शरीर धारण करके लमाको प्रतिध्वनित करते हुए धृष्टतापूर्वक उस प्रासादको तोड़ने-फोड़ने लगे। जोर-जोरसे होनेवाला वह तोड़-फोड़का शब्द कानोंसे टकराकर उन्हें बहरा किये देता था। इससे मूर्छित हो वहाँके पक्षी और प्रसादरक्षक भी पृथ्वीपर गिर पड़े।

उन विशालकाय राक्षसोंने उन सब अस्त्रोंका प्रहार करते हुए वहाँ पवनकुमर हनुमानको घेर लिया। विचित्र गदाओं, सोनेके पत्र जड़े हुए परिघों और सूर्यतुल्य तेजस्वी बाणोंसे सुसज्जित हो वे सब-के-सब उन वारनश्रेष्ठ हनुमान्पर चढ़ आये।

तब राक्षसोंको इस प्रकार आक्रमण करते देख पवनकुमार हनुमान्‌ने कुपित हो बड़ा भयंकर रूप धारण किया। उन महावीरने उस प्रासादके एक सुवर्णभूषित खंभेको, जिसमें सौ धारें थीं, बड़े वेगसे उखाड़ लिया। उखाड़कर उन महाबली वीरने उसे घुमाना आरम्भ किया। घुमानेपर उससे आग प्रकट हो गयी, जिससे वह प्रासाद जलने लगा।

प्रासादको जलते देख वानरयूथपति हनुमान्‌ने वज्रसे असुरोंका संहार करनेवाले इन्द्रकी भाँति उन सैकड़ों राक्षसोंको उस खंभेसे ही मार डाला और आकाशमें खड़े होकर उन तेजस्वी वीरने इस प्रकार कहा- राक्षसों। सुग्रीवके वशमें रहनेवाले मेरे-जैसे सहस्त्रों विशालकाय बलवान् वानरश्रेष्ठ सब ओर भेजे गये हैं। हम तथा दूसरे सभी वानर समूची पृथ्वीपर घूम रहे हैं। किन्हींमें दस हाथियोंका बल है तो किन्हींमें सौ हाथियोंका। कितने ही वानर एक सहस्त्र हाथियोंके समान बल-विक्रमसे सम्पन्न हैं।

किन्हींका बल जलके महान् प्रवाहकी भाँति असह्य है। कितने ही वायुके समान बलवान् हैं और कितने ही वानर यूथपति अपने भीतर असीम बल धारण करते हैं। अब न तो यह लमापुरी रहेगी, न तुमलोग रहोगे और न वह रावण ही रह सकेगा, जिसने इक्ष्वाकुवंशी वीर महात्मा श्रीरामके साथ वैर बाँध रक्खा है। राक्षसराज रावणकी आज्ञा पाकर प्रहस्तका बलवान् पुत्र जम्बुमाली, जिसकी दाढ़ें बहुत बड़ी थीं, हाथमें धनुष लिये राजमहलसे बाहर निकला।

हनुमान अपने लिए मार्ग बनाने का प्रयत्न कर ही रहे थे कि गधों जैसे आकार के घोड़ों से जुता हुआ एक रथ वहाँ आ पहुँचा। रथारूढ़ योद्धा ने लाल वस्त्र तथा लाल पुष्पों की माला धारण कर रखी थी। उसके कानों में सुन्दर कुण्डल थे और वह धनुष लिये हुए था।

सेना ने उत्साह से जयघोष किया- प्रहस्त-पुत्र जम्बुमाली की जय।

जंबुमाली ने न वार्तालाप की आवश्यकता समझी, न प्रश्नोत्तर की। कदाचित् उसे हनुमान का परिचय मिल चुका था और उसकी पुष्टि में उसकी तनिक भी रुचि नहीं थी। उसने उचित दूरी पर रथ रोका और अपना धनुष उठा लिया।

हनुमान ने फाटक के छज्जे पर पुन: अपना मोर्चा बाँधा। जम्बुमाली ने हनुमान पर अर्द्धचंद्र, कर्णी और नाराचों से प्रहार किया। हनुमान के बहुत बचाने पर भी उनका मुख, मस्तक तथा भुजाएँ आहत हो गईं।

महातेजस्वी जम्बुमालीने महाकपि हनुमान्‌जीको फाटकके छज्जेपर खड़ा देख उन्हें तीखे बाणोंसे बींधना आरम्भ कर दिया।

राक्षस जम्बुमालीके बाणोंकी चोट खाकर महाकपि हनुमान्‌जी कुपित हो उठे। उन्होंने अपने पास ही पत्थरकी एक बहुत बड़ी चट्टान पड़ी देखी और उसे वेगसे उठाकर उन बलवान् वीरने बड़े जोरसे उस राक्षसकी ओर फेंका।

बाणोंसे हनुमानजीका सारा शरीर भर गया। फिर तो उन्हें बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने उसी परिघको उठाकर उसे बड़ वेगसे घुमाना आरम्भ किया। अत्यन्त वेगवान और उत्कट बलशाली हनुमान्‌ने बड़े वेगसे घुमाकर उस परिघको जम्बुमालीकी विशाल छातीपर दे मारा। फिर तो न उसके मस्तकका पता लगा और न दोनों भुजाओं तथा घुटनोंका ही। न धनुष बचा न रथ, न वहाँ घोड़े दिखायी दिये और न बाण ही। उस परिघसे वेगपूर्वक मारा गया महारथी जम्बुमाली चूर-चूर हुए वृक्षकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़ा।

जम्बुमाली तथा महाबली किंकरोंके मारे जानेका समाचार सुनकर रावणको बड़ा क्रोध हुआ। उसकी आँखें रोषसे रक्तवर्णकी हो गयीं।

महाबली प्रहस्तपुत्र जम्बुमालीके मारे जानेपर निशाचरराज रावणके नेत्र रोषसे लाल होकर घूमने लगे। उसने तुरंत ही अपने मन्त्रीके पुत्रोंको, जो बड़े बलवान और पराक्रमी थे, युद्धके लिये जानेकी आज्ञा दी।

वह उत्पाती वानर सम्पूर्ण प्रासाद ध्वस्त करके स्वर्ण-स्तम्भ लिए गोपुरपर बैठा है। पता नहीं इतने श्रमसे थक गया है या कोई नवीन उत्पात सोचने लगा है।

गोपुरपर बैठा है ? दशग्रीव ऐसे चौंका मानों कपि यहाँ राजप्रासादके गोपुरपर पहुँच गया हो।

अभी तो वह वाटिकाके चैत्यप्रासादके गौपुरपर ही बैठा है आगत राक्षसने कहा-किंतु किसी क्षण हाँ आ सकता है। उसे कौन रोकेगा?

राक्षसोंके राजा रावणकी आज्ञा पाकर मन्त्रीके सात बेटे, जो अग्निके समान तेजस्वी थे, उस राजमहलसे बाहर निकले।

उनके साथ बहुत बड़ी सेना थी। वे अत्यन्त बलावन्, धनुर्धर, अस्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ तथा परस्पर होड़ लगाकर शत्रुपर विजय पानेकी इच्छा रखनेवाले थे। पराक्रमी हनुमान्‌ने राक्षसोंकी उस विशाल वाहिनीको भयभीत करते हुए घोर गर्जना की और उन राक्षसोंपर बड़े वेगसे आक्रमण किया। शत्रुओंको संताप देनेवाले उन वानरवीरने किन्हींको थप्पड़से ही मार गिराया, किन्हींको पैरोंसे कुचल डाला, किन्हींका घूँसोंसे काम तमाम किया और किन्हींको नखोंसे फाड़ डाला। कुछ लोगोंको छातीसे दबाकर उनका कचूमर निकाल दिया और किन्हीं-किन्हींको दोनों

जाँघोंसे दबोचकर मसल डाला। कितने ही निशाचर उनकी गर्जनासे ही प्राणहीन होकर वहीं पृथ्वीपर गिर पड़े। इस प्रकार जब मन्त्रीके सारे पुत्र मारे जाकर धराशायी हो गये, तब उनकी बची-खुची सारी सेना भयभीत होकर दसों दिशाओंमें भाग गयी।

रावणने एक साथ पाँच मन्त्री-पुत्र सेनाके साथ भेजे; किंतु उनका भी वही समाचार। विरुपाक्ष, प्रघस आदि सात सेनापति भेजे गये। उन्हें आदेश था- वानर-पकड़ ले आओ। दशग्रीवने विरूपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्धर, प्रघस और भासकर्ण- इन पाँच सेनापतियोंको, जो बड़े वीर, नीतिनिपुण, धैर्यवान् तथा युद्धमें वायुके समान वेगशाली थे, हनुमानको पकड़नेके लिये आज्ञा दी।

उसने कहा- सेनाके अग्रगामी वीरो। तुमलोग घोड़े, रथ और हाथियोंसहित बड़ी भारी सेना साथ लेकर जाओ और उस वानरको बलपूर्वक पकड़कर उसे अच्छी तरह शिक्षा दो। उस वनचारी वानरके पास पहुँचकर तुम सब लोगोंको सावधान और अत्यन्त प्रयत्नशील हो जाना चाहिये तथा काम वही करना चाहिये, जो देश और कालके अनुरूप हो।

जब मैं उसके अलौकिक कर्मको देखते हुए उसके स्वरूपपर विचार करता हूँ, तब वह मुझे वानर नहीं जान पड़ता है। वह सर्वथा कोई महान् प्राणी है, जो महान् बलसे सम्पन्न है।

सम्भव है इन्द्रने हमलोगोंका विनाश करनेके लिये अपने तपोबलसे इसकी सृष्टि की हो। मेरी आज्ञासे तुम सब लोगोंने मेरे साथ रहकर नागोंसहित यक्षों, गन्धर्वों, देवताओं, असुरों और महर्षियोंको भी अनेक बार पराजित किया है; अत: वे अवश्य हमारा कुछ अनिष्ट करना चाहेंगे। अत: यह उन्हींका रचा हुआ प्राणी है, इसमें संदेह नहीं। तुमलोग उसे हठपूर्वक पकड़ ले आओ। वीरो। तुम हाथी, घोड़े और रथोंसहित बड़ी भारी सेना साथ लेकर जाओ और उस वानरको अच्छी तरह शिक्षा दो। वानर समझकर तुम्हें उसकी अवहेलना नहीं करनी चाहिये; क्योंकि वह धीर और पराक्रमी है। मैंने पहले बड़े-बड़े पराक्रमी वानर और भालू देखे हैं।

जिनके नाम इस प्रकार हैं- बाली, सुग्रीव, महाबली, जाम्बवान्, सेनापति नील तथा द्विविद आदि अन्य वानर।

किंतु उनका वेग ऐसा भयंकर नहीं है और न उनमें ऐसा तेज, पराक्रम, बुद्धि, बल, उत्साह तथा रूप धारण करनेकी शक्ति ही है।

वानरके रूपमें यह कोई बड़ा शक्तिशाली जीव प्रकट हुआ है। अत: तुमलोग महान् प्रयत्न करके उसे कैद करो। भले ही इन्द्रसहित देवता, असुर, मनुष्य एवं तीनों लोक उतर आयें, वे रणभूमिमें तुम्हारे सामने ठहर नहीं सकते। तथापि समराङ्गणमें विजयकी इच्छा रखनेवाले नीतिज्ञ पुरुषको यत्नपूर्वक अपनी रक्षा करनी चाहिये; क्योंकि युद्धमें सफलता अनिश्चित होती है।

स्वामीकी आज्ञा स्वीकार करके वे सब-के-सब अग्निके समान तेजस्वी, महान् वेगशाली और अत्यन्त बलावन् राक्षस तेज चलनेवाले घोड़ों, मतवाले हाथियों तथा विशाल रथोंपर बैठकर युद्धके लिये चल दिये। वे सब प्रकारके तीखे शस्त्रों और सेनाओंसे सम्पन्न थे।

आकाशमें खड़े हुए उन वानरवीरने बाणोंकी वर्षा करते हुए दुर्धरको अपने हुकारमात्रसे उसी प्रकार रोक दिया, जैसे वर्षा-ऋतुके अन्तमें वृष्टि करनेवाले बादलको वायु रोक देती है।

जब दुर्धर अपने बाणोंसे अधिक पीड़ा देने लगा, तब वे परम पराक्रमी पवनकुमार पुन: विकट गर्जना करने और अपने शरीरको बढ़ाने लगे। तत्पश्चात् वे महावेगशाली वानरवीर बहुत दूरतक ऊँचे उछलकर सहसा दुर्धरके रथपर कूद पड़े, मनो किसी पर्वतपर तबजलीका समूह गिर पड़ा हो। दुर्धर प्राणहीन हो उस रथको छोड़कर पृथ्वीपर गिर पड़ा। दुर्धरको धराशायी हुआ देख शत्रुओंका दमन करनेवाले दुर्धर्ष वीर विरूपाक्ष और यूपाक्षको बड़ा क्रोध हुआ। वे दोनों आकाशमें उछले। वहाँ वानरशिरोमणि पवनकुमारने एक साल-वृक्षके पास जाकर उसे उखाड़ लिया और उसीके द्वारा उन दोनों राक्षसवीरोंको मार डाला।

उन वेगशाली वानरवीरके द्वारा उन तीनों राक्षसोंको मारा गया देख महान् वेगसे युक्त बलवान् वीर प्रघस हँसता हुआ उनके पास आया। दूसरी ओरसे पराक्रमी वीर भासकर्ण भी अत्यन्त क्रोधमें भरकर शूल हाथमें लिये वहाँ आ पहुँचा। वे दोनों यशस्वी कपिश्रेष्ठ हनुमानके निकट एक ही ओर खड़े हो गये।

प्रघसने तेज धारवाले पट्टिशसे तथा राक्षस भासकर्णने शूलसे कपिकुञ्जर हनुमानजीपर प्रहार किया।

तब मृग, सर्प और वृक्षोंसहित एक पर्वत-शिखरको उखाड़कर कपिश्रेष्ठ वीर हनुमान्ने उन दोनों राक्षसोंपर दे मारा। पर्वत-शिखरके आघातसे वे दोनों पिस गये और उनके शरीर तिलके समान खण्ड-खण्ड हो गये। इस प्रकार उन पाँचों सेनापतियोंके नष्ट हो जानेपर हनुमान्जीने उनकी बची-खुची सेनाका भी संहार आरम्भ किया।

हनुमानजीके द्वारा अपने पाँच सेनापतियोंको सेवकों और वाहनोंसहित मारा गया सुनकर राजा रावणने अपने सामने बैठे हुए पुत्र

अक्षकुमारकी ओर देखा जो युद्धमें उद्धत और उसके लिये उत्कण्ठित रहनेवाला था।

साधारण वानर था वह कि उसे कोई पकड़ ले जाता ? उसके समीप जो पहुँचता था, वानरके करोंमें स्थित रक्तस्नात स्वर्ण-स्तम्भ उसीको मृत्युको पकड़ाता चला जा रहा था। ये सेनापति भी मारे गये तो रावणने अपने पुत्र अक्षयकुमारको बुलाया- कोई बहुत पराक्रमी वानर आया है। तुम सावधान होकर पौरुष प्रकट करो।

अक्षयकुमार लंकामें मेघनादके पश्चात् सबसे पराक्रमी योद्धा था। वह ससैन्य चला तो सागर क्षुब्ध हो उठा। वायुका वेग शिथिल पड़ गया। सूर्यकी किरणें मन्द पड़ गयी। स्वर्गमें सुर सशंक हो उठे।

तभी तपे हुए स्वर्ण की लाली से युक्त, वेगशाली घोड़ों से जुता, एक रथ सेना में धँसता चला आया। रथ में बाणों से भरे हुए तूणीर रथे थे। अगले भाग में आठ खड्ग बँधे हुए थे। रथ के पिछले भाग में शक्ति, तोमर तथा अन्य शस्त्र रखे हुए थे। योद्धा के पीछे-पीछे विशाल सेना चली आ रही थी। यह अवश्य ही कोई अत्यंत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है- हनुमान सोच रहे थे- स्वर्ण और रत्नजड़ित रथ से तो यह राजपरिवार का ही कोई व्यक्ति होना चाहिए।

रथ आकर उनके सामने रुक गया और सेना ने जयजयकार किया, महाराजाधिराज-पुत्र महाबली अक्षकुमार की जय।

तो यह राजकुमार है- अक्षकुमार। वानर-राज्य में भी कभी-कभी उसका नाम सुना जाता है। किंतु वीरता के लिए नहीं, उसके विलास के लिए। विशेष रूप से वेश्यागामिता की प्रसिद्धि के कारण तो यह योद्धा भी है।

अक्षकुमार का शरीर उसके युद्ध-विमुख, विलासी तथा सुविधाजीवी जीवन का प्रमाण दे रहा था। रावण ने इसे क्यों भेज दिया मरने के लिए- हनुमान ने सोचा- रावण अपने पुत्र की प्रकृति तथा सामर्थ्य को नहीं जानता अथवा वह हनुमान की शक्ति को इतना कम आँक रहा है ? अक्षकुमार ने कंठ में सुवर्ण-निष्क, बाँहों में बाजूबंद तथा कानों में कुण्डल धारण कर रखे थे। उसका वेश युद्ध के उपयुक्त नहीं था। युद्ध-वेश धारण करने का या तो उसे समय ही नहीं मिला था, या फिर उसने वह आवश्यक नहीं समझा था।

हनुमान के लिए इतना ही पर्याप्त था। उन्होंने उसके बाणों की चिंता किए बिना, उसके रथ पर छलाँग लगा दी।

अक्षकुमार के अंगरक्षक हनुमान की इच्छा समझ गए। वे लोग झपटते हुए, दोनों के बीच में आए; किंतु तब तक देर हो चुकी थी। हनुमान रथ में पहुँच गए थे। निकट आनेवाले अंगरक्षकों को उन्होंने अपने विकट पाद-प्रहारों से नीचे धकेल दिया और अक्षकुमार का धनुष छीन लिया। अक्षकुमार अपने बचाव के लिए उनसे गुँथ गया। एक-दूसरे से गुँथे हुए वे दोनों रथ से नीचे आ गिरे। जब तक अक्षकुमार अपनी चेतना को सँभाले, हनुमान उठ खड़े हुए। उन्होंने झपटकर अक्षकुमार को उसकी दोनों टाँगों से पकड़ा और उसे वायु में चार-पाँच चक्कर दे दिए।

कपिश्रेष्ठ हनुमान् और अक्षकुमारका वह संग्राम देखकर भूतलके सारे प्राणी चीख उठे। सूर्यका ताप कम हो गया। वायुकी गति रुक गयी। पर्वत हिलने लगे। आकाशमें भयंकर शब्द होने लगा और समुद्रमें तूफान आ गया।

रणभूमिमें अक्षकुमारका पराक्रम बड़ा प्रचण्ड दिखायी देता था। उसके तेज, बल, पराक्रम और बाण सभी बढ़े-चढ़े थे। युद्धस्थलमें उसकी ओर दृष्टिपात करके हनुमान्‌जीने हर्ष और उत्साहमें भरकर मेघके समान भयानक गर्जना की।

समराङ्गणमें बलके घमंडमें भरे हुए अक्षकुमारको उनकी गर्जना सुनकर बड़ा क्रोध हुआ। उसकी आँखें रक्तके समान लाल हो गयीं। वह अपने बालोचित अज्ञानके कारण अनुपम पराक्रमी हनुमान्‌जीका सामना करनेके लिये आगे बढ़ा। ठीक उसी तरह, जैसे कोई हाथी तिनकोंसे ढके हुए विशाल कूपकी ओर अग्रसर होता है।

उसके बलपूर्वक चलाये हुए बाणोंसे विद्ध होकर हनुमानजीने तुरंत ही उत्साहपूर्वक आकाशको विदीर्ण करते हुए-से मेघके समान गम्भीर स्वरसे भीषण गर्जना की। उस समय दोनों भुजाओं और जाँघोंको चलानेके कारण वे बड़े भयंकर दिखायी देते थे।

अक्षकुमार सर्वथा असहाय-सा, अपने प्राण बचाने के लिए, संकट में पड़े किसी व्याकुल बच्चे के समान चिल्ला रहा था। कभी वह अपनी सहायता के लिए अपने साथियों को बुला रहा था; कभी हनुमान को धमका रहा था और कभी अपने प्राणों की भिक्षा की याचना कर रहा था। उन्हें आकाशमें उछलते देख रथियोंमें श्रेष्ठ और रथपर चढ़े हुए उस बलवान्, प्रतापी एवं राक्षसशिरोमणि वीरने बाणोंकी वर्षा करते हुए उनका पीछा किया। उस समय वह ऐसा जान पड़ता था मानो कोई मेघ किसी पर्वतपर ओले और पत्थरोंकी वर्षा कर रहा हो।

यह महामनस्वी राक्षसकुमार बल-पराक्रमकी दृष्टिसे महान् है। युद्धमें सावधान एवं एकाग्रचित्त है तथा शत्रुके वेगको सहन करनेमें

अत्यन्त समर्थ है। अपने कर्म और गुणोंकी उत्कृष्टताके कारण ही नागों, यक्षों और मुनियोंके द्वारा भी प्रशंसित हुआ होगा, इसमें संशय नहीं है। पराक्रम और उत्साहसे इसका मन बढ़ा हुआ है। यह युद्धके मुहानेपर मेरे सामने खड़ा हो मुझे ही देख रहा है। शीघ्रतापूर्वक युद्ध करनेवाले इस वीरका पराक्रम देवताओं और असुरोंके हृदयको भी कम्पित कर सकता है।

किंतु यदि इसकी उपेक्षा की गयी तो वह मुझे परास्त किये बिना नहीं रहेगा; क्योंकि संग्राममें इसका पराक्रम बढ़ता जा रहा है। अत: अब इसे मार डालना ही मुझे अच्छा जान पड़ता है। बढ़ती हुई आगकी उपेक्षा करना कदापि उचित नहीं है।

हनुमानजी की सिंह की मूर्ति देख कर अक्षकुमार बकरी सा मिमिया उठा।

तब वायुके समान वेग और पराक्रमवाले कपिवर हनुमानजीने पक्षिराज गरुड़, वायु तथा सिद्धोंसे सेवित व्योममार्गमें विचरते हुए उस राक्षसके पास पहुँचकर क्रमश: उसके दोनों पैर दृढ़तापूर्वक पकड़ लिये।

फिर तो अपने पिता वायु देवताके तुल्य पराक्रमी वानरशिरोमणि हनुमान्‌ने जिस प्रकार गरुड़ बड़े-बड़े सर्पोंको घुमाते हैं, उसी तरह उसे हजारों बार घुमाकर बड़े वेगसे उस युद्धभूमिमें पटक दिया।

नीचे गिरते ही उसकी भुजा, जाँघ, कमर और छातीके टुकड़े-टुकड़े हो गये, खूनकी धारा बहने लगी, शरीरकी हड्डियाँ चूर-चूर हो गयीं, आँखें बाहर निकल आयीं, अस्थियोंके जोड़ टूट गये और नस-नाड़ियोंके बन्धन शिथिल हो गये। इस तरह वह राक्षस पवनकुमार हनुमान्‌जीके हाथसे मारा गया। एक ही क्षण में अक्षकुमार का क्षय हुआ कारण उसके सिर पर महाकाल मँडरा उठा।

अक्षकुमारको पृथ्वीपर पटककर महाकपि हनुमान्‌जीने राक्षसराज रावणके हृदयमें बहुत बड़ा भय उत्पन्न कर दिया। उसके मारे जानेपर नक्षत्र-मण्डलमें विचरनेवाले महर्षियों, यक्षों, नागों, भूतों तथा इन्द्रसहित देवताओंने वहाँ एकत्र होकर बड़े विस्मयके साथ हनुमान्‌जीका दर्शन किया। सहसा हनुमान ने पूरे वेग से उसे पृथ्वी पर ला पटका। अक्षकुमार का सिर फट गया था और शरीर के अनेक भाग आहत हो गए थे। उसने मुख से भयंकर वमन किया और दम तोड़ दिया।

राक्षस सेना पहली बार विचलित हो त्राहि-त्राहि कर भाग उठी। तब हनुमानजी ज्वालामुखी की तरह निशाचर दल पर आग बबूले होकर धाए। जो कुछ बचे कुचे थे फिर जाकर दशकंधर के पास दुहाई देने लगे।

हनुमान के मन में आशा जागी कदाचित् अब वे इस घेरेबंदी से मुक्त हो सकें।

किंतु हनुमान की यह आशा अधिक देर तक नहीं टिक सकी। एक-के-पश्चात् एक सेनापतियों का वध उन्होंने किया; किंतु एक सेनापति के मरने और दूसरे सेनापति के आने के बीच के अंतराल में एक बार भी सेनाओं की व्यवस्था इतनी शिथिल नहीं हो पाई थी कि वे उनके घेरे में से निकल भागते हनुमान समझ नहीं पाए कि यह इन सैनिकों का पूर्व-प्रशिक्षण था या इसी समय वे लोग इस प्रकार का व्यवहार कर रहे थे। जब तक उनका कोई सेनापति युद्ध कर रहा होता था, वे आक्रामक होते थे, किंतु सेनापति के हटते ही उनके आक्रमण शिथिल हो जाते थे और वे प्रतिरक्षात्मक युद्ध आरम्भ कर देते थे; किंतु हनुमान को घेरा तोड़ निकल भागने का उन्होंने एक भी अवसर नहीं दिया था।

दूसरी ओर उनके ने सेनापति के आने में इतना विलम्ब एक बार भी नहीं हुआ था कि यह समझा जाता कि कोई चर युद्धश्रेत्र से जाकर उपयुक्त अधिकारियों को सेनापति के देहान्त की सूचना देता है और तब वहाँ से नया सेनापति भेजने की व्यवस्था होती है। सम्भवत: ऐ सेनापति को भेजकर उसी क्षण अगले सेनापति को घोषणा कर दी जाती थी और वह प्रस्थान के लिए तैयार ही रहता था।

अक्षयकुमार मारा गया। सुनते ही रावण शोकसे मूर्छितप्राय हो गया। क्रोधोन्मत्त होकर पुकारा उसने- मेघनाद कहाँ है ?

जब मेघनादने आकर पिताके पदोंमें प्रणाम किया, रावणने अपने चित्तको स्थिर कर चुका था। उसने इन्द्रजितसे शान्त स्वरमें कहा- पुत्र। तुम दिव्यास्त्र-ज्ञाता हो। मन्त्रज्ञोंमें श्रेष्ठ हो। सुरासुर-जी हो। संग्राममें कभी श्रान्त नहीं होते। तप तथा वरदानसे रक्षित हो। तुम देश, कालको भली प्रकार समझते हो। अशोकोद्यानको उजाड़ करनेवाले इस वानरको पकड़ो। यह उसीका निष्ठुर निनाद गूँज रहा है। इसने अभी तुम्हारे अनुज अक्षकुमारको मार दिया है। लेकिन उसे मारना मत। पता लगाना है कि उसका प्रेषक कौन है। कितनी शक्ति है इस वानरके पीछे। उसे बाँधकर लाना।

तदनन्तर हनुमानजीके द्वारा अक्षकुमारके मारे जानेपर राक्षसोंका स्वामी महाकाय रावण अपने मनको किसी तरह सुस्थिर करके रोषसे जल उठा और देवताओंके तुल्य पराक्रमी कुमार इन्दजित् (मेघनाद) को इस प्रकार आज्ञा दी-

इन्द्रके आश्रयमें रहनेवाले देवता और मरुद्‌गण भी समरभूमिमें तुम्हारे अस्त्र-बलका सामना होनेपर टिक नहीं सके हैं।

तीनों लोकोंमें तुम्हारे सिवा दूसरा कोई ऐसा नहीं है, जो युद्धसे थकता न हो। तुम अपने बाहुबलसे तो सुरक्षित हो ही, तपस्याके बलसे भी पूर्णत: निरापद हो। देश-कालका ज्ञान रखनेवालोंमें प्रधान और बुद्धिकी दृष्टिसे भी सर्वश्रेष्ठ तुम्हीं हो।

युद्धमें तुम्हारे वीरोचित कर्मोंके द्वारा कुछ भी असाध्य नहीं है। शास्त्रानुकूल बुद्धिपूर्वक राजकार्यका विचार करते समय तुम्हारे लिये कुछ भी असम्भव नहीं है। तुम्हारा कोई भी विचार ऐसा नहीं होता, जो कार्यका साधक न हो। त्रिलोकीमें एक भी ऐसा वीर नहीं है, जो तुम्हारी शारीरिक शक्ति और अस्त्र-बलको न जानता हो।

तुम्हारा तपोबल, युद्धविषयक पराक्रम और अस्त्रबल मेरे ही समान है। युद्धस्थलमें तुमको पाकर मेरा मन कभी खेद या विषादको नहीं प्राप्त होता; क्योंकि इसे यह निश्चित विश्वास रहता है कि विजय तुम्हारे पक्षमें होगी।

देखो, किंकर नामवाले समस्त राक्षस मार डाले गये। जम्बुमाली नामका राक्षस भी जीवित न रह सका, मन्त्रीके सातों वीर पुत्र तथा मेरे पाँच सेनापति भी कालके गालमें चले गये।

उनके साथ ही हाथी, घोड़े और रथोंसहित मेरी बहुत-सी बल-वीर्यसे सम्पन्न सेनाएँ भी नष्ट हो गयीं और तुम्हारा प्रिय बन्धु कुमार अक्ष भी मार डाला गया। शत्रुसूदन। मुझमें जो तीनों लोकोंपर विजय पानेकी शक्ति है, वह तुम्हींमें है। पहले जो लोग मारे गये हैं, उनमें वह शक्ति नहीं थी इसलिये तुम्हारी विजय निश्चित हैं।

शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ वीर। तुम्हारे सब शत्रु शान्त हो चुके हैं। तुम अपने और पराये बलका विचार करके ऐसा प्रयत्न करो, जिससे युद्धभूमिके निकट तुम्हारे पहुँचते ही मेरी सेनाका विनाश रुक जाय। मैं तुम्हें जो ऐसे संकटमें भेज रहा हूँ, यह यद्यपि स्नेहकी दृष्टिसे उचित नहीं है, तथापि मेरा यह विचार राजनीति और क्षत्रिय-धर्मके अनुकूल है।

वीर पुरुषको संग्राममें प्रकारके शस्त्रोंकी कुशलता अवश्य प्राप्त करनी चाहिये, साथ ही युद्धमें विजय पानेकी भी अभिलाषा रखनी चाहिये। अपने पिता राक्षसराज रावणके इस वचनको सुनकर देवताओंके समान प्रभावशाली वीर मेघनादने युद्धके लिये निश्चित विचार करके जल्दीसे अपने स्वामी रावणकी परिक्रमा की।

दूर से भयंकर शब्द करता हुआ, वायु-वेग से एक रथ भागा चला आ रहा था। सैनिकों का ध्यान उस ओर चला गया था। हनुमान ने भी दृष्टि गड़ाकर देखा केवल एक रथ आ रहा था, उसके साथ सेना नहीं थी। क्या हुआ ? लंका की सेना चुक गई क्या ? या यह नया आनेवाले सेनापति सेनाओं को अनावश्यक समझता है वैसे उपयोग भी क्या था ? राक्षस सैनिक या तो मरे थे, या भागे थे।

युवराज इंद्रजित मेघनाथ की जय। राक्षस सैनिकों ने भयंकर कोलाहल किया।

हनुमान सावधान हो गए। मेघनाथ के विषय में उन्होंने बहुत कुछ सुन रखा था। राक्षस साम्राज्य को इस समय रावण से भी अधिक मेघनाथ पर भरोसा था। जब से उसके नाम के साथ इंद्रजित विशेषण जुड़ा था, तब से वह और भी भयंकर हो उठा था। उसके आने का समाचार सुनते ही राक्षस सैनिकों में जैसे नये प्राण पड़ गये थे। मेघनाथ सामान्य शस्त्रास्त्रों का दक्ष योद्धा तथा दिव्यास्त्रों का निपुण संचालक माना जाता था। ब्रह्मा का तो वह प्रपौत्र ही था, अपनी निष्ठा के बल पर उसने पिता के ही समान महादेव शिव से भी अच्छा सम्पर्क स्थापित कर लिया था और उनकी कृपा से वरदानस्वरूप उनसे अनेक दिव्यास्त्र प्राप्त कर चुका था। वह किसी निकुंभला देवी का भी विकट भक्त था। देवराज इंद्र की सेना को पराजित कर उसने उनसे भी अनेक दिव्यास्त्र छीने थे।

मेघनाथ का रथ निकट आ गया था और हनुमान उसके आत्मविश्वास से पर्याप्त प्रभावित लग रहे थे। वह सर्वथा एकाकी आया था। किंतु उसका रथ असाधारण था। ऐसा रथ हनुमान ने पहले नहीं देखा था। उसे देखकर हनुमान के मन में एक ही शब्द उभरा था- कवच-रक्षित रथ। चारों ओर लेहे की सघन जालियाँ लगी थीं। शत्रु द्वारा फेंके गए शस्त्र उन्हीं जालियों में उलझकर रह जाएँगे और मेघनाथ को खरोंच भर नहीं आएगी। किंतु स्थान-स्थान पर बने हुए गवाक्षों के माध्यम से वह अपनी सुविधानुसार शस्त्र-प्रहार कर सकता था। रथ का आकार भी अन्य रथों से बड़ा था। लगता था, रथ में ही अनेक कक्ष बने हुए हैं, जिनमें विभिन्न शस्त्रास्त्र रखे हुए थे। मेघनाथ अपने साथ वृहद् शस्त्रागार लेकर चलता था।

जिसका वेग शत्रुओंके लिये असह्य था, वह इन्द्रके समान पराक्रमी मेघनाद पक्षिराज गरुड़के समान तीव्र गति तथा तीखे दाढ़ोंवाले चार सिंहोंसे जुते हुए उत्तम रथपर आरूढ़ हुआ। अस्त्र-शस्त्रोंका ज्ञाता, अस्त्रवेत्ताओंमें अग्रगण्य और धनुर्धरोमें श्रेष्ठ वह रथी वीर रथके द्वारा शीघ्र उस स्थानपर गया, जहाँ हनुमान्‌जी उसकी प्रतीक्षामें बैठे थे।

इन्द्रजित् युद्धकी कलामें प्रवीण था। वह धनुष और तीखे अग्रभागवाले सायकोंको लेकर हनुमान्‌जीको लक्ष्य करके आगे बढ़ा। इन्द्राकार चिह्नवाली ध्वजासे सुशोभित रथपर बैठकर शीघ्रतापूर्वक आते हुए मेघनादको देखकर वेगशाली वानरवीर हनुमान्‌ने बड़े जोरसे गर्जना की और अपने शरीरको बढ़ाया। उस दिव्य रथपर बैठकर विचित्र धनुष धारण करनेवाले इन्द्रजितने बिजलीकी गड़गड़ाहटके समान टंकार करनेवाले अपने धनुषको खींचा।

फिर तो अत्यन्त दु:सह वेग और महान् बलसे सम्पन्न हो युद्धमें निर्भय होकर आगे बढ़नेवाले वे दोनों वीर कपिवर हनुमान् तथा राक्षसराजकुमार मेघनाद परस्पर वैर बाँधकर देवराज इन्द्र और दैत्यराज बलिकी भाँति एक दूसरेसे भिड़ गये।

अप्रमेय शक्तिशाली हनुमानजी विशाल शरीर धारण करके अपने पिता वायुके मार्गपर विचरने और युद्धमें सम्मानित होनेवाले उस धनुर्धर महारथी राक्षसवीरके बाणोंके महान् वेगाके व्यर्थ करने लगे।

वे पवनकुमार हनुमान् बारंबार उसके बाणोंके सामने आकर खड़े हो जाते और फिर दोनों हाथ फैलाकर बात-की-बातमें उड़ जाते थे।

वे दोनों वीर महान् वेगसे सम्पन्न तथा युद्ध करनेकी कलामें चतुर थे। वे सम्पूर्ण भूतोंके वित्तको आकर्षित करनेवाला उत्तम युद्ध करने लगे। वह राक्षस हनुमान्‌जीपर प्रहार करनेका अवसर नहीं पाता था और पवनकुमार हनुमान्‌जी भी उस महामनस्वी वीरको घर दबानेका मौका नहीं पाते थे। देवताओंके समान पराक्रमी वे दोनों वीर परस्पर भिड़कर एक दूसरेके लिये दु:सह हो उठे थे।

उन कपिश्रेष्ठको अवध्य समझकर राक्षसराजकुमार मेघनाद वानरवीरोंमें प्रमुख हनुमान्‌जीके विषयमें यह विचार करने लगा कि इन्हें किसी तरह कैद कर लेना चाहिये, परंतु ये मेरी पकड़में आ कैसे सकते हैं ? फिर हनुमानने गरज-गरजकर पेड उखाड़े और सीधे ही भरपूर प्रकार करे। सारथी सहित घोड़े मारे रथ को भी चकनाचूर किया। सारे अंगरक्षकों के दल का संहार कर दिया। फिर इंद्रजीत मेघनाथ के निकट पहुँच कर बजरंगबली ने जयनाद किया।

मेघनादके सभी आये राक्षस सैनिकोंमें अधिकांश मारे गये। कुछ बचे, वे प्राण बचाकर दूर भाग गये और वहींसे युद्ध देखने लगे। अब हनुमान मेघनादपर टूटे। बड़े-बड़े वृक्ष तथा ध्वस्त चैत्यप्रासादके स्तम्भ, शिखर, भित्ति-खण्ड फेंकने लगे। मेघनाद बाणोंके द्वारा उन सबको चूर्ण करता गया; किंतु इस प्रकार बची-खुची वाटिकाका भी विनाश हो गया।

साधारण शरोंसे वानरको अप्रभावित देखकर मेघनादने दिव्यास्त्र उठाये; किंतु व्यर्थ। आग्नेयास्त्र, वायव्यास्त्र, पर्वतास्त्र, पार्जन्यास्त्र सब व्यर्थ। मेघनाद चकित था कि यह वानर कैसा है ? यह दिव्यास्त्र इसके समीप पहुँचते ही क्यों निष्प्रभाव हो जाते हैं ? वानर थकनेका नाम ही नहीं लेता, यह देखकर मेघनादने अन्तमें धनुषपर ब्रह्मास्त्र चढ़ाया। मेघनाद बोला मैं मेघनाद कहलाता हूँ, मैंने बैरी को सदा हराया है। मैंने मेरे सतीयों को हराया है, मैंने स्वर्गलोक को जीता है और इन्द्रजीत का पद पाया है। तब हनुमान बोले- यदि तुम मेघनाद कहलाता है तो मैं रामदास कहलाता हूँ। तु इन्द्रजीत बलवाला हो रहा है मैं कामजीत बलवाला हूँ। तू दीपक हैं, मैं मसाल हूँ, सूर्यवंश के रवि का मैं उजाला हूँ। तब लंकाधीशकुमार मेघनाद बिगड़ उठा और ब्रह्मास्त्र का संधान किया।

फिर तो अस्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ उस महातेजस्वी वीरने उन कपिश्रेष्ठको लक्ष्य करके अपने धनुषपर ब्रह्माजीके दिये हुए ब्रह्मास्त्रका संधान किया। अस्त्रतत्त्वके ज्ञाता इन्द्रजितने महाबाहु पवनकुमारको अवध्य जानकर उन्हें उस अस्त्रसे बाँध लिया। राक्षसद्वारा उस अस्त्रसे बाँध लिये जानेपर वानरवीर हनुमान्‌जी निश्चेष्ट होकर पृथ्वीपर गिर पड़े।

अपनेको ब्रह्मास्त्रसे बँधा हुआ जानकर भी उन्हीं भगवान् ब्रह्माके प्रभावसे हनुमान्‌जीको थोड़ी-सी भी पीड़ाका अनुभव नहीं हुआ। वे प्रमुख वानरवीर अपने ऊपर ब्रह्माजीके महान् अनुग्रहका विचार करने लगे।

जिन मन्त्रोंके देवता साक्षात् स्वयम्भू ब्रह्मा हैं, उनसे अभिमन्त्रित हुए उस ब्रह्मास्त्रको देखकर हनुमानजीको पितामह ब्रह्मासे अपने लिये मिले हुए वरदानका स्मरण हो आया (ब्रह्माजीने उन्हें वर दिया था कि मेरा अस्त्र तुम्हें एक ही मुहूर्तमें अपने बन्धनसे मुक्त कर देगा)।

फिर वे सोचने लगे लोकगुरु ब्रह्माके प्रभावसे मुझमें इस अस्त्रके बन्धनसे छुटकारा पानेकी शक्ति नहीं है- ऐसा मानकर ही इन्द्रजितने मुझे इस प्रकार बाँधा है, तथापि मुझे भगवान् ब्रह्माके सम्मानार्थ इस अस्त्रबन्धनका अनुसरण करना चाहिये। मुझे ब्रह्माके इस ब्रह्मास्त्रका मान-सम्मान रखना है। कपिश्रेष्ठ हनुमानजीने उस अस्त्रकी शक्ति, अपने ऊपर पितामहकी कृपा तथा अपनेमें उसके बन्धनसे छूट जानेकी सामर्थ्य- इन तीनोंपर विचार करके अन्तमें ब्रह्माजीकी आज्ञाका ही अनुसरण किया।

तब अंजनीलालने कहा अब संग्राम पूर्ण हुआ। यह धर्म का बन्धन है अब इसमें बल का क्या काम। यह ब्रह्म-अस्त्र यह ब्रह्मफाँस, यह

ब्रह्मवान ब्रह्मा का है। ऊँ इसे आसानी से काट सकता हूँ पर मुझे इसका सम्मान, ध्यान ब्रह्माका है। जिन रामचंद्रजी को सुर, नर, मुनि रातदिन स्मरण करते हैं, जिनका नाम लेते ही तुरन्त सारे भवबन्धन कट जाते हैं उनके इस दास को यह बन्धन क्या हैं ?

उनके मनमें यह बात आयी कि इस अस्त्रसे बँध जानेपर भी मुझे कोई भय नहीं है; क्योंकि ब्रह्मा, इन्द्र और वायुदेवता तीनों मेरी रक्षा करते हैं। राक्षसोंद्वारा पकड़े जानेमें भी मुझे महान् लाभ ही दिखायी देता है; क्योंकि इनसे मुझे राक्षसराज रावणके साथ बातचीत करनेका अवसर मिलेगा। अत: शत्रु मुझे पकड़कर ले चलें।

ब्रह्माजीने तो अपने इस अस्त्रसे भी मुझे अभय दिया है; किंतु इस अमोघ अस्त्रकी मर्यादा मान लेनी उचित है। हनुमानने तत्काल निश्चय कर लिया- अन्तत: मुझे दशग्रीवको भी तो देखना है। उसका दर्प-दलन करनेका अवसर इस बहाने मिल सकता है।

ऐसा सोचकर अंजनीकुमार स्वयं उस ब्रह्मास्त्र के बन्धन में बँध गये।

शिवजी कहते हैं- हे भवानी। सुनो, जिनका नाम जपकर ज्ञानी विवेकी मनुष्य संसार जन्म-मरण के बन्धनको काट डालते हैं, उनका दूत कहीं बन्धनमें आ सकता है ? किन्तु प्रभुके कार्यके लिये हनुमान्जीने स्वयं अपनेको बँधा लिया।

बंदरका बाँधा जाना सुनकर राक्षस दौड़े और कौतुकके लिये तमाशा देखनेके लिये सब सभामें आये। हनुमान्जीने जाकर रावणकी सभा देखी। उसकी अत्यन्त प्रभुता ऐश्वर्य कुछ कहीं नहीं जाती।

देवता और दिक्पाल हाथ जोड़े बड़ी नम्रताके साथ भयभीत हुए सब रावणकी भौं ताक रहे हैं। उसका रुख देख रहे हैं। उसका ऐसा प्रताप देखकर भी हनुमान्जीके मनमें जरा भी डर नहीं हुआ। वे ऐसे नि:शम खड़े रहे जैसे सर्पोंके समूहमें गरुड़ नि:शम निर्भय रहते हैं।

मेघनादके ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया तो आञ्जनेय मूर्छित होकर गिरे और निश्चेष्ट पड़े रहे। बलवेगोद्दीप्त ही थे वे और तत्काल उठकर प्रहार करनेमें सक्षम थे। न पीड़ा, न भय; किंतु ब्रह्मास्त्रकी मर्यादा मानकर हनुमान शिथिल नेत्र बन्द किये पड़े रहे।

अब दूर खड़े राक्षस दौड़े और जिसे जहाँ भी मिल सकी मोटी-मोटी रस्सियाँ ले आये। मेघनाद उन्हें रोके, इससे पहिले ही वे जुट गये निश्चेष्ट हनुमानको भली प्रकार बाँधनेमें। राक्षसोंने देखा अब यह हाथ पैर नहीं हिलाता, तब वे शत्रुहन्ता हनुमान्जीको सुतरी और वृक्षोंके वल्कलको बटकर बनाये गये रस्सोंसे बाँधने लगे।

शत्रुवीरोंने जो उन्हें हठपूर्वक बाँधा और उनका तिरस्कार किया, यह सब कुछ उस समय उन्हें अच्छा लगा। उनके मनमें यह निश्चित विचार हो गया था कि ऐसी अवस्थामें राक्षसराज रावण सम्भवत: कौतूहलवश मुझे देखनेकी इच्छा करेगा इसीलिये वे सब कुछ सह रहे थे। वल्कलके रस्सेसे बँध जानेपर पराक्रमी हनुमान ब्रह्मास्त्रके बन्धनसे मुक्त हो गये; क्योंकि उस अस्त्रका बन्धन किसी दूसरे बन्धनके साथ नहीं रहता। इन मूर्खोंने तो अनर्थ कर दिया। मेघनाद खिन्न हो गया। ब्रह्मास्त्र दूसरा बन्धन सह नहीं सकता। वह तो प्रथम वानरके शरीरसे स्पर्श कराते ही इसे त्याग गया होगा। अब वानरको यह पता न हो, यह भ्रमसे अपनेको ब्रह्मास्त्रमें बँधा बन्दी मानता रहे तभी कुशल है। अन्यथा इन रज्जुओंको तो यह तोड़ फेंकनेमें सहज समर्थ है।

मेघनाद कुछ बोलकर वानरको सावधान नहीं करना चाहता था। दुबारा ब्रह्मास्त्रका एक ही व्यक्तिपर प्रयोग करो तो वह प्रयोक्ताको नष्ट कर देगा। अत: अब मेघनादको विवशहोकर मौन रहना था। वह समझता था वानर बन्धनके भ्रममें है और हनुमान जानबूझकर शान्त बने राक्षसोंका उत्पात सहन कर रहे थे।

हनुमान्जी यद्यपि अस्त्रके बन्धनसे मुक्त हो गये थे तो भी उन्होंने ऐसा बर्ताव किया, मानो वे इस बातको जानते ही न हों। क्रूर राक्षस उन्हें बन्धनोंसे पीड़ा देते और कठोर मुक्कोंसे मारते हुए खींचकर ले चले। इस तरह वे वानरवीर राक्षसराज रावणके पास पहुँचाये गये।

उन्हें देखकर राक्षसवीर आपसमें कहने लगे- यह कौन है ? किसका पुत्र या सेवक है ? कहाँसे आया है ? यहाँ इसका क्या काम है? तथा इसे सहारा देनेवाला कौन है ?

कुछ दूसरे राक्षस जो अत्यन्त क्रोधसे भरे थे, परस्पर इस प्रकार बोले- इस वानरको मार डालो, जला डालो या खा डालो।

उस समय महातेजस्वी रावणने विकट आकारवाले राक्षसोंके द्वारा इधर-उधर घसीटे जाते हुए कपिश्रेष्ठ हनुमानजीको देखा।

इसे जला दो। मार दो इसे। कच्चा ही खा डालो इस वानरको। राक्षस उत्साहमें बकते जा रहे थे। बहुत-सी रस्सियोंसे कसकर बाँध रहे थे। घूसोंसे, पदसे भी प्रहार कर रहे थे। उसे बहुत तङ्ग मत करो। मेघनादने डाँटा। वह डर रहा था कि कहीं पीड़ित होकर वानर छटपटाया तो बन्धन टूट जायँगे और ब्रह्मास्त्रके बन्धनका भय मिट जायगा- वह राक्षसेन्द्रका बन्दी है। मर गया तो राक्षसाधिप किसीको

क्षमा नहीं करेंगे। राक्षस मेघनादके धमकानेसे थोड़े शान्त हुए। वे पकड़कर पवनपुत्रको दशग्रीवके समीप ले चले।

कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌ने भी राक्षसराज रावणको तपते हुए सूर्यके समान तेज और बलसे सम्पन्न देखा।

हनुमान्‌जीको देखकर दशमुख रावणकी आँखें रोषसे चञ्चल और लाल हो गयीं। उसने वहाँ बैठे हुए कुलीन, सुशील और मुख्य मन्त्रियोंको उनसे परिचय पूछनेके लिये आज्ञा दी।

उन सबने पहले क्रमशः कपिवर हनुमान्‌से उनका कार्य, प्रयोजन तथा उसके मूल कारणके विषयमें पूछा। तब उन्होंने यह बताया कि मैं वानरराज सुग्रीवके पाससे उनका दूत होकर आया हूँ।

६) हनुमान-रावण सम्वाद- अबतक हनुमानने रावणके पाँच सेनापति, आठ मन्त्री और रावणपुत्र अक्षकुमारको मार दिया था। प्रज्ञा और प्राणके मूलतत्त्व उन अञ्जनीनन्दनको बाँधकर राक्षस रावणकी सभामें ले आये। उनको सम्मुख खड़े करके मेघनादने पिताको प्रणाम किया। दशग्रीवने पुत्रको प्रशंसा भरी दृष्टिसे देखा और विश्राम करनेकी अनुमति दे दी।

आञ्जनेयने देखा- अञ्जन कृष्ण-वर्ण, बीस भुजा, दस मस्तक रावण रत्नजटित स्फटिक सिंहासनपर भारी नीलमेघ छत्रके नीचे बैठा है। प्रहस्तादि मन्त्री उसके दोनों पार्श्वोंमें छोटे आसनोंपर विनम्र बैठे हैं। दिक्पाल, लोकपाल भी विनम्र हाथ जोड़े, मस्तक झुकाये आते हैं और खड़े रहते हैं, वायु, अग्नि, वरुण-सब रावणके भ्रू-कुञ्चनसे भयभीत खड़े हैं।

रक्तनेत्र हनुमानको फिर दया आयी दशग्रीवको देखकर- इतना भव्य शरीर, इतना पराक्रम, ऐसा प्रकाण्ड पण्डित। यदि यह अधर्मी न होता तो इन्द्रका भी रक्षक होने योग्य था।

इतना निर्भय वानर। दशग्रीवने देखा कि हनुमानने न मस्तक झुकाया, न कोई हिचक है उनमें। वे सीधे उसीकी ओर देख रहे हैं। मनमें सिहर उठा- कहीं ये भगवान नन्दीश्वर तो नहीं ? उन्होंने मुझे शाप दिया था। मैंने अपने दस मस्तक चढ़ाकर इस रुद्रोंको सन्तुष्ट किया; किंतु ग्यारहवें रुद्र अपूजित रह गये। कहीं वे ही तो वानर बनकर नहीं आये ?

वीर हनुमानने देखा, अपने दस मस्तकोंसे सुशोभित महाबली रावण नाना प्रकारके सर्पोंसे भरे हुए अनेक शिखरोंद्वारा शोभा पानेवाले मन्दराचलके समान प्रतीत हो रहा है। उसका शरीर काले कोयलेके ढेरकी भाँति काला था और वक्षःस्थल चमकीले हारसे विभूषित था। वह पूर्ण चन्द्रके समान मनोरम मुखद्वारा प्रातःकालके सूर्यसे युक्त मेघकी भाँति शोभा पा रहा था।

वह स्फटिकमणिके बने हुए विशाल एवं सुन्दर सिंहासनपर, जो नाना प्रकारके रत्नोंके संयोगसे चित्रित, विचित्र तथा सुन्दर बिछौनोंसे आच्छादित था, बैठा हुआ था। वस्त्र और आभूषणोंसे खूब सजी हुई बहुत-सी युवतियाँ हाथमें चँवर लिये सब ओरसे आसपास खड़ी हो उसकी सेवा करती थीं। इस प्रकार हनुमान्‌जीने मन्त्रियोंसे घिरे हुए अत्यन्त तेजस्वी, सिंहासनारूढ़ राक्षसराज रावणको मेरुशिखरपर विराजमान सजल जलधरके समान देखा।

उस दीप्तिशाली राक्षसराजको अच्छी तरह देखकर उसके तेजसे मोहित हो हनुमान्‌जी मन-ही-मन इस प्रकार विचार करने लगे-

अहो। इस राक्षसराजका रूप कैसा अद्‌भुत है। कैसा अनोखा धैर्य है। कैसी अनुपम शक्ति है। और कैसा आश्चर्यजनक तेज है। इसका सम्पूर्ण राजोचित लक्षणोंसे सम्पन्न होना कितने आश्चर्यकी बात है।

इसके लोकनिन्दित क्रूरतापूर्ण निष्ठुर कर्मोंके कारण देवताओं और दानवोंसहित सम्पूर्ण लोक इससे भयभीत रहते हैं। यह कुपित होनेपर समस्त जगत्‌को एकार्णवमें निमग्न कर सकता है- संसारमें प्रलय मचा सकता है। अमिततेजस्वी राक्षसराजके प्रभावको देखकर वे बुद्धिमान् वानरवीर ऐसी अनेक प्रकारकी चिन्ताएँ करते रहे।

समस्त लोकोंको रुलानेवाला महाबाहु रावण भूरी आँखोंवाले हनुमान्‌जीको सामने खड़ा देख महान् रोषसे भर गया।

रावण ने अपनी आँखें हनुमान की ओर से हटा लीं और प्रहस्त की ओर देखा, इससे पूछो, यह कौन है। और यहाँ क्या करने आया है ? इस तरह तर्क-वितर्क करते हुए राजा रावणने क्रोधसे लाल आँखें करके मन्त्रिवर प्रहस्तसे समयानुकूल गम्भीर एवं अर्थयुक्त बात कही। अमात्य। इस दुरात्मासे पूछो तो सही, यह कहाँसे आया है ? इसके आनेका क्या कारण है ? प्रमदावनको उजाड़ने तथा राक्षसोंको मारनेमें इसका क्या उद्देश्य था ?

मेरी दुर्जय पुरीमें जो इसका आना हुआ है, इसमें इसका क्या प्रयोजन है ? अथवा इसने जो राक्षसोंके साथ युद्ध छेड़ दिया है, उसमें

इसका क्या उद्देश्य है ? ये सारी बातें इस दुर्बुद्धि वानरसे पूछो।

तब मन्त्रि प्रहस्तने हनुमान से पूछा- यदि तुम्हें इन्द्रने महाराज रावणकी नगरीमें भेजा है तो ठीक-ठीक बता दो। वानर। डरो न। छोड़ दिये जाओगे। अथवा यदि तुम कुबेर, यम या वरुणके दूत हो और यह सुन्दर रूप धारण करके हमारी इस पुरीमें घुस आये हो तो यह भी बता दो। अथवा विजयकी अभिलाषा रखनेवाले विष्णुने तुम्हें दूत बनाकर भेजा है ? तुम्हारा तेज वानरोंका-सा नहीं है। केवल रूपमात्र वानरका है। वानर। इस समय सच्ची बात कह दो, फिर तुम छोड़ दिये जाओगे। यदि झूठ बोलोगे तो तुम्हारा जीना असम्भव हो जायगा। तुम्हारा इस रावणके नगरमें आनेका क्या उद्देश्य है ? यही बता दो।

हनुमान बोले तो उनका स्वर स्पष्ट, गम्भीर तथा निर्भीक था- प्रहस्तके इस प्रकार पूछनेपर उस समय वानरश्रेष्ठ हनुमान्ने राक्षसोंके स्वामी रावणसे कहा- हे रावण। सुन; जिनका बल पाकर माया सम्पूर्ण ब्रह्माण्डोंके समूहोंकी रचना करती है; जिनके बलसे हे दशशीश। ब्रह्मा, विष्णु, महेश क्रमश: सृष्टिका सृजन, पालन और संहार करते हैं; जिनके बलसे सहस्त्रमुख फणों वाले शेषजी पर्वत और वनसहित समस्त ब्रह्माण्डको सिरपर धारण करते हैं; जो देवताओंकी रक्षाके लिये नाना प्रकारकी देह धारण करते हैं और जो तुम्हारे जैसे मूर्खोंको शिक्षा देनेवाले हैं; जिन्होंने शिवजीके कठोर धनुषको तोड़ डाला और उसीके साथ राजाओंके समूहका गर्व चूर्ण कर दिया।

जिनके लेशमात्र बलसे तुमने समस्त चराचर जगत्को जीत लिया और जिनकी प्रिय पत्नीको तुम चोरीसे हर लाये हो, मैं उन्हींका दूत हूँ। मैं तुम्हारी प्रभुताको खूब जानता हूँ, सहस्त्रबाहुसे तुम्हारी लड़ाई हुई थी और बालिसे युद्ध करके तुमने यश प्राप्त किया था। हनुमानजीके मार्मिक वचन सुनकर रावणने हँसकर बात टाल दी।

मैं इन्द्र, यम अथवा वरुणका दूत नहीं हूँ। कुबेरके साथ भी मेरी मैत्री नहीं है और भगवान् विष्णुने भी मुझे यहाँ नहीं भेजा है।

सच्चिदानन्द, सर्वदानन्द बल-बुद्धि ज्ञानसागर हैं जो रघुवंश शिरोमणि राघवेन्द्र, रघुकुल नायक रघुवर हैं जो। जो उत्पत्ति स्थिति प्रलयरूप, पालक-पोषक, संहारक हैं जिनकी इच्छा पर विधि हरि-हर संसार कार्य परिचालक हैं। जो दशरथ अजिरबिहारी हैं, कहलाते रघुकुल भूषण है। जिनपर शूर्पणखा रीझीं थीं जिनसे खर और दूषण हारे हैं जिनकी पत्नी सीता को तुम हरकर लाये हो मैं उन्हीं राम का सेवक हूँ, जिनसे तुमने बैर बढ़ाए रखा है। मैं लंका में माता सीता का पता लगाने आया था मुझे भूख लगी थीं। वानर स्वभाव चपल होने से मैं फल खाने को विवश था। तुम्हारी निशाचर कुल में यह अभाव है कि तुमने अपने अतिथि की कोई आवभगत करी नहीं। वानर का तो स्वभाव है ही कि फल खाकर पेड़ तो उगता है। प्रभु जब प्रसाद लेते हैं तभी भक्त प्रसादी पाते हैं। मैंने भी श्रीरामार्पण कर उन वृक्षों के फल खाए हैं। तुम उस प्रसाद के पात्र नहीं थे इस कारण मैंने फल तोड़ गिराए हैं।

मैं किष्किंधापति सुग्रीव का सचिव और उनके मित्र भद्र राम का दूत, केसरीपुत्र हनुमान हूँ। मैं भद्र राम की ओर से लंका के राजाधिराज के लिए संदेश लाया हूँ- राजा का कार्य प्रजा का पालन करना है। यदि राजा पर-स्त्रियों का अपहरण करेगा तो प्रजा की रक्षा कौन करेगा। लंका के राजाधिराज को चाहिए कि वे आर्य राम की पत्नी को उन्हें ससम्मान लौटा दें और अपने इस पाप-कर्म के लिए आर्य राम के चरणों में क्षमा-याचना करें।

मैं जन्मसे ही वानर हूँ और राक्षस रावणसे मिलनेके उद्देश्यसे ही मैंने उनके इस दुर्लभ वनको उजाड़ा है। इसके बाद तुम्हारे बलवान् राक्षस युद्धकी इच्छा से मेरे पास आये और मैंने अपने शरीरकी रक्षाके लिये रणभूमिमें उनका सामना किया। देवता अथवा असुर भी मुझे अस्त्र अथवा पाशसे बाँध नहीं सकते। इसके लिये मुझे भी ब्रह्माजीसे वरदान मिला हुआ है। राक्षसराजको देखनेकी इच्छासे ही मैंने अस्त्रसे बँधना स्वीकार किया है। यद्यपि इस समय मैं अस्त्रसे मुक्त हूँ तथापि इन राक्षसोंने मुझे बँधा समझकर ही यहाँ लाकर तुम्हें सौंपा है। भगवान् श्रीरामका कुछ कार्य है, जिसके लिये मैं तुम्हारे पास आया हूँ। मैं अमित तेजस्वी श्रीरघुनाथका दूत हूँ, ऐसा समझकर मेरे अब मेरा सन्देश सुनो। राक्षसराज। मैं सुग्रीवका संदेश लेकर यहाँ तुम्हारे पास आया हूँ। वानरराज सुग्रीव तुम्हारे भाई हैं। इसी नाते उन्होंने तुम्हारा कुशल-समाचार पूछा है। अब तुम अपने भाई महात्मा सुग्रीवका संदेश-धर्म और अर्थयुक्त वचन, जो इहलोक और परलोकमें भी लाभदायक है, सुनो।

सुग्रीवने श्रीराम-भार्याको ढूँढ़ने सहस्त्रों वानर विभिन्न दिशाओंमें भेजे हैं। उनमें-से ही एक मैं हूँ, जो यहाँ आ गया हूँ। हनुमानजीने सहज स्वरमें कहा- मुझे भूख लगी थी, फलोंपर वानरोंका नैसर्गिक स्वत्व है। वाटिका तुम्हारी है, यह देखनेकी मुझे आवश्यकता नहीं थी। वानर स्वभाव-वश मैंने उछल-कूदकर फल खाये। तुमने इतने दुर्बल वृक्ष क्यों लगाये कि वे मेरी तनिक उछल-कूदमें टूट गये ? जो

राक्षस मुझे मारने आये, मैं उन्हें मारता नहीं तो छोड़ देता ? सब को अपना तन प्यारा है जब आपके पुत्र अक्षकुमार ने मुझे मारा तो प्रतिकार में मैंने भी उसे मारा है।

अपराध तो तुम्हारे पुत्र का है कि मैंने किसीको बाँधा नहीं, पर वह मुझे बाँध लाया। इस युद्धमें तो केवल मारना-मरना चल रहा था। वह मुझे मार देता या मेरे हाथों मर जाता।

सीता विदेहदेशके राजा महात्मा जनककी पुत्री हैं। जनस्थानमें आनेपर श्रीरामपत्नी सीता कहीं खो गयी हैं। राजकुमार श्रीराम अपने भाईके साथ उन्हीं सीतादेवीकी खोज करते हुए ऋष्यमूक पर्वतपर आये और सुग्रीवसे मिले। सुग्रीवने उनसे सीताको ढूँढ़ निकालनेकी प्रतिज्ञा की और श्रीरामने सुग्रीवको वानरोंका राज्य दिलानेका वचन दिया। तत्पश्चात् राजकुमार श्रीरामने युद्धमें बालिको मारकर सुग्रीवको किष्किन्धाके राज्यपर स्थापित कर दिया। इस समय सुग्रीव वानरों और भालुओंके समुदायके स्वामी हैं। वानरराज बालिको तो तुम पहलेसे ही जानते हो। उस वानरवीरको युद्धभूमिमें श्रीरामने एक ही बाणसे मार गिराया था। अब सुग्रीव सीताको खोज निकालनेके लिये व्यग्र हो उठे हैं। उन वानरराजने समस्त दिशाओंमें वानरोंको भेजा है। इस समय सैकड़ों, हजारों और लाखों वानर सम्पूर्ण दिशाओं तथा आकाश और पातालमें भी सीताकी खोज कर रहे हैं। उन वानरवीरोंमेंसे कोई गरुड़के समान वेगवान हैं तो कोई वायुके समान। उनकी गति कहीं नहीं रुकती। वे कपिवीर शीघ्रगामी और महान् बली हैं। मेरा नाम हनुमान हैं। मैं वायुदेवताका औरस पुत्र हूँ। सीताका पता लगाने और तुमसे मिलनेके लिये सौ योजन विस्तृत समुद्रको लाँघकर तीव्र गतिसे यहाँ आया हूँ। घूमते-घूमते तुम्हारे अन्त:पुरमें मैंने जनकनन्दिनी सीताको देखा है। महामते। तुम धर्म और अर्थके तत्त्वको जानते हो। तुमने बड़े भारी तपका संग्रह किया है। अत: दूसरेकी स्त्रीको अपने घरमें रोक रखना तुम्हारे लिये कदापि उचित नहीं है।

हे रावण। मैं हाथ जोड़कर तुमसे विनती करता हूँ, तुम अभिमान छोड़कर मेरी सीख सुनो। तुम अपने पवित्र कुलका विचार करके देखो और भ्रमको छोड़कर भक्तभयहारी भगवान्‌को भजो।

जो देवता, राक्षस और समस्त चराचरको खा जाता है, वह काल भी जिनके डरसे अत्यन्त डरता है, उनसे कदापि वैर न करो और मेरे कहनेसे जानकीजीको दे दो। खरके शत्रु श्रीरघुनाथ शरणागतोंके रक्षक और दयाके समुद्र हैं। शरण जानेपर प्रभु तुम्हारा अपराध भुलाकर तुम्हें अपनी शरणमें रख लेंगे। तुम श्रीरामके चरणकमलोंको हृदयमें धारण करो और लमाका अचल राज्य करो। ऋषि पुलस्त्यजीका यश निर्मल चन्द्रमाके समान है। उस चन्द्रमामें तुम कलंक न बनो।

रामनामके बिना वाणी शोभा नहीं पाती, मद-मोहको छोड़ विचारकर देखो। हे देवताओंके शत्रु। सब गहनोंसे सजी हुई सुन्दरी स्त्री भी कपड़ोंके बिना नंगी शोभा नहीं पाती। रामविमुख पुरुषकी सम्पत्ति और प्रभुता रही हुई भी चली जाती है और उसका पाना न पानेके समान है। जिन नदियोंके मूलमें कोई जलस्रोत नहीं है अर्थात् जिन्हें केवल बरसातका ही आसरा है वे वर्षा बीत जानेपर फिर तुरंत ही सूख जाती हैं। हे रावण। सुनो, मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि रामविमुखकी रक्षा करनेवाला कोई भी नहीं है। हजारों शंकर, विष्णु और ब्रह्मा भी श्रीरामके साथ द्रोह करनेवाले तुमको नहीं बचा सकते। मोह ही जिसका मूल है ऐसे अज्ञानजनित, बहुत पीड़ा देनेवाले, तमरूप अभिमानका त्याग कर दो और रघुकुलके स्वामी, कृपाके समुद्र भगवान् श्रीरामका भजन करो।

धर्मविरुद्ध कार्योंमें बहुत-से अनर्थ भरे रहते हैं। वे कर्ताका जड़मूलसे नाश कर डालते हैं। अत: तुम-जैसे बुद्धिमान पुरुष ऐसे कार्योंमें नहीं प्रवृत्त होते। देवताओं और असुरोंमें भी कौन ऐसा वीर है, जो श्रीरामके क्रोध करनेके पश्चात् लक्ष्मणके छोड़े हुए बाणोंके सामने ठहर सके। राजन्। तीनों लोकोंमें एक भी ऐसा प्राणी नहीं है, जो भगवान् श्रीरामका अपराध करके सुखी रह सके। इसलिये मेरी धर्म और अर्थके अनुकूल बात, जो तीनों कालोंमें हितकर है, मान लो और जानकीको श्रीरामके पास लौटा दो।

मैंने इन देवी सीताका दर्शन कर लिया। जो दुर्लभ वस्तु थी, उसे यहाँ पा लिया। इसके बाद जो कार्य शेष है, उसके साधनमें श्रीरघुनाथ ही निमित्त हैं। मैंने यहाँ सीताकी अवस्थाको लक्ष्य किया है। वे निरन्तर शोकमें डूबी रहती हैं। सीता तुम्हारे घरमें पाँच फनवाली नागिनके समान निवास करती हैं, जिन्हें तुम नहीं जानते हो। जैसे अत्यन्त विषमिश्रित अन्नको खाकर कोई उसे बलपूर्वक नहीं पचा सकता, उसी प्रकार सीताको अपनी शक्तिसे पचा लेना देवताओं और असुरोंके लिये भी असम्भव है।

तुमने तपस्याका कष्ट उठाकर धर्मके फलस्वरूप जो यह ऐश्वर्यका संग्रह किया है तथा शरीर और प्राणोंको चिरकालतक धारण करनेकी शक्ति प्राप्त की है, उसका विनाश करना उचित नहीं। तुम तपस्याके प्रभावसे देवताओं और असुरोंद्वारा जो अपनी अवध्यता

देख रहे हो, उसमें भी तपस्याजनित यह धर्म ही महान् कारण है। अथवा उस अवध्यताके होते हुए भी तुम्हारे वधका दूसरा महान् कारण उपस्थित है। राक्षसराज। सुग्रीव और श्रीराम न तो देवता हैं, न यक्ष हैं और न राक्षस ही हैं। श्रीरघुनाथ मनुष्य हैं और सुग्रीव वानरोंके राजा। अत: उनके हाथसे तुम अपने प्राणोंकी रक्षा कैसे करोगे?

मैंने देखा है, श्रीजनक-नन्दिनी बहुत दु:खी हैं। राक्षसेन्द्र। मैं तुम्हारे हितकी बात कहता हूँ, उन्हें जल्दी छोड़ दो। सीता माता को लंका में रखकर तुम बड़ी भारी भूल कर रहे हो। जीवन में अपयश अर्जन कर बिन आई मृत्यु मर रहे है। मदान्ध प्रभुता वाले सब पीछे पछताते हैं। प्रलकाल निकट आ रहा है यह जानकर भी फिर लंका वाले किसलिए सो रहे है ? इसलिए यही उचित है शत्रुता छोड़ सीता माता को लौटाओ। राघवेन्द्र की छाया में अपनी राज प्रतिष्ठा फैलाओ।

तुम जानते हो कि बालिके अनुज सुग्रीव अपने अग्रजके समान बलवान हैं। उनको कोई दैत्यदानव मार नहीं सकता। वे शीघ्र करोड़ों वानर लेकर आनेवाले हैं यहाँ। अपने दान-पुण्य-तपका फल तुमने भोग लिया। अब तुमने जो अधर्म किया है, उसका फलोदय-काल आ गया है। पवनपुत्रने चुनौतीके स्वरमें कहा- देखते हो, मैं एकाकी, शस्त्रहीन तुम्हारी पुरीमें आया हूँ। मेरे स्वामी श्रीरामकी आज्ञा नहीं है, अन्यथा मैं तुम सबको मारकर, इस स्वर्णपुरीको वाटिकाके चैत्य प्रासादके समान ध्वस्त करके माता सीताको ले जाता।

जो पुरुष प्रबल अधर्मके फलसे बँधा हुआ है, उसे धर्मका फल नहीं मिलता। वह उस अधर्मफलको ही पाता है। हाँ, यदि उस अधर्मके बाद किसी प्रबल धर्मका अनुष्ठान किया गया हो तो वह पहलेके अधर्मका नाशक होता है। तुमने पहले जो धर्म किया था, उसका पूरा-पूरा फल तो यहाँ पा लिया, अब इस सीताहरणरूपी अधर्मका फल भी तुम्हें शीघ्र ही मिलेगा।

जनस्थानके राक्षसोंका संहार, बालिका वध और श्रीराम तथा सुग्रीवकी मैत्री इन तीनों कार्योंको अच्छी तरह समझ लो। उसके बाद अपने हितका विचार करो। यद्यपि मैं अकेला ही हाथी, घोड़े और रथोंसहित समूची लमाका नाश कर सकता हूँ, तथापि श्रीरघुनाथका ऐसा विचार नहीं है- उन्होंने मुझे इस कार्यके लिये आज्ञा नहीं दी है। जिन लोगोंने सीताका तिरस्कार किया है, उन शत्रुओंका स्वयं ही संहार करनेके लिये श्रीरामने वानरों और भालुओंके सामने प्रतिज्ञा की है। भगवान् श्रीरामका अपराध करके साक्षात् इन्द्र भी सुख नहीं पा सकते, फिर तुम्हारे-जैसे साधारण लोगोंकी तो बात ही क्या है ? जिनको तुम सीताके नामसे जानते हो और जो इस समय तुम्हारे अन्त:पुरमें मौजूद हैं, उन्हें सम्पूर्ण लमाका विनाश करनेवाली कालरात्रि समझो।

सीताका शरीर धारण करके तुम्हारे पास कालकी फाँसी आ पहुँची है, उसमें स्वयं गला फँसाना ठीक नहीं है; अत: अपने कल्याणकी चिन्ता करो। देखो, अट्टालिकाओं और गलियोंसहित यह लमापुरी सीताजीके तेज और श्रीरामकी क्रोधाग्निसे जलकर भस्म होने जा रही है बचा सको तो बचाओ। इन मित्रों, मन्त्रियों, कुटुम्बीजनों, भाइयों, पुत्रों, हितकारियों, स्त्रियों, सुख-भोगके साधनों तथा समूची लमाको मौतके मुखमें न झोंको। महायशस्वी श्रीराम चराचर प्राणियोंसहित सम्पूर्ण लोकोंका संहार करके फिर उनका नये सिरेसे निर्माण करनेकी शक्ति रखते हैं। भगवान् श्रीराम श्रीविष्णुके तुल्य पराक्रमी हैं। देवता, असुर, मनुष्य, यक्ष, राक्षस, सर्प, विद्याधर, नाग, गन्धर्व, मृग, सिद्ध, किंनर, पक्षी एवं अन्य समस्त प्राणियोंमें कहीं किसी समय कोई भी ऐसा नहीं है, जो श्रीरघुनाथके साथ लोहा ले सके। सम्पूर्ण लोकोंके अधीश्वर राजसिंह श्रीरामका ऐसा महान् अपराध करके तुम्हारा जीवित रहना कठिन है।

निशाचराज ! श्रीराम तीनों लोकोंके स्वामी हैं। देवता, दैत्य, गन्धर्व, विद्याधर, नाग तथा यक्ष ये सब मिलकर भी युद्धमें उनके सामने नहीं टिक सकते। चार मुखोंवाले स्वयम्भू ब्रह्मा, तीन नेत्रोंवाले त्रिपुरनाशक रुद्र अथवा देवताओंके स्वामी महान् ऐश्वर्यशाली इन्द्र भी समराङ्गणमें श्रीरघुनाथके सामने नहीं ठहर सकते।

दशग्रीव ! भूल जाओ कि ये बन्धन या ब्रह्मास्त्र मुझे बाँध सकते हैं। मैं अपनी इच्छासे अनुकम्पा करके, तुम्हें सचेत करने, मृत्यु-मृखमें कूदनेसे बचाने आया हूँ। हनुमान उसी गम्भीर स्वरमें कह रहे थे- अभी कुछ बिगड़ा नहीं। क्रुद्ध श्रीरामसे तुम्हारी रक्षा चतुर्मुख सृष्टिकर्ता और शूलपाणि त्रिनयन शिव भी नहीं कर सकेंगे। लेकिन वे शरणागत-वत्सल है। सीताको लेकर मेरे साथ उनकी शरण चलो।

वानर। रावण का अहंकार उसके शोक पर आच्छादित हो गया। वह भूल गया कि हनुमान से सीधे संभाषण की उसकी इच्छा नहीं थी, अपनी मर्यादा पहचान। वानर। बकवाद बहुत हो चुकी। मैं तेरी बड़बड़ाहट और नहीं सुन सकता। यद्यपि हनुमानजीने भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और नीतिसे सनी हुई बहुत ही हितकी वाणी कही, तो भी वह महान् अभिमानी रावण बहुत हँसकर व्यंगसे बोला कि हमें यह बंदर बड़ा ज्ञानी गुरु मिला।

रे दुष्ट, रे आँखों के अंधे, सुन। सागर पर सेतु बनाकर कल रघुवर राम आएँगे। वे अयोध्यापति तेरे दसों मस्तकों को छेदकर दसों दिशाओं में बलिदान देंगे। कानों से इस सत्य को तू सुन लेना। जैसे घर में कोई कुत्ता आकर कोई वस्तु लेकर जाता है, रे चोर, तू वैसे ही अपहरण करके सीता को लाया है। रावण ने यह सुनकर मन में सोचा- इसे तो वज्रदेही समझो; अपने स्वामी का उपासक, सत्य-वचनी अन्ततः मरेगा तो नहीं।

रे दुष्ट। तेरी मृत्यु निकट आ गयी है। अधम। मुझे शिक्षा देने चला है। हनुमानजीने कहा- इससे उलटा ही होगा अर्थात् मृत्यु तेरी निकट आयी है, मेरी नहीं। यह तेरा मतिभ्रम बुद्धिका फेर है, मैंने प्रत्यक्ष जान लिया है।

रावण चिल्लाया। लाल-लाल नेत्र करके बोला- वानराधम। मैं राम-लक्ष्मण, सुग्रीव सबको मार दूँगा। व्यर्थ का यह वितान मत तान। चोर और बरजोरी कर मुझे नीति समझा रहा है। पृथ्वी से आकाश तक मेरी धाक है। इस सृष्टि की समस्त रचना मुझसे ही है। सूर्य और चन्द्र मेरी आज्ञा से उदय और अस्त होते है। मेरी त्यौरी के चढ़ते ही पुरी त्रिलोकी नाचने लगती है। सब नक्षत्र ग्रह, काल, देव, कुबेर और वरुण मेरे नियन्त्रण में है, मेरे घर पानी भरते है। मुझे तेरी यह ऊटपटाँग बातें सुनकर बड़ी हँसी आती है। उस अधम तपस्वी बच्चे को तूने किस प्रकार उसका बखान किया और अपना स्वामी बनाया। वह किस घमंड में है जाकर अपने स्वामी को समझाले। उन वानरवाले तपसी से क्या लंकावाले डर जाएंगे ?

दुष्ट। दुर्मुख। तू सबको मार देगा ? हनुमानने दाँत कट-कटाये-तेरे जैसे सहस्त्रों रावण उनके इस दासका भी कुछ बिगाड़ नहीं सकते।

तब अंजनीलाल के नेत्र लाल हुए और क्रोध का भाव दबाकर बोले- तूने मेरे स्वामी को अधम कहा। इससे कब उनकी महिमा घटनेवाली है। कितनी ही धूल सूरज पर फेंको पर सूरज तक नहीं पहुँचनेवाली है। आ गया मृत्यु का दिन समीप तेरे इसलिए काल ने तुझे घुमाया है। तू तो सचमुच बौरा गया। कहना-सुनना भी अब सब व्यर्थ है। यह तु जो मेरा-मेरा बक रहा है पर कभी कुछ काम नहीं आयेगा। मुट्ठी बाँध के आया था और हाथ पसारे जायेगा। श्रीराम का दास बन गया तो देवता भी तेरा स्वागत करेंगे अन्यथा ऐसी मौत मरेगा कि मदान्ध लाखों मक्खियाँ तेरी लाश पर भिनकेंगी।

मैंने तो अपने राजा के मित्र का संदेश मात्र कहा है, राजाधिराज। हनुमान बोले, दूत की मर्यादा उसके राजा की मर्यादा होती है; और मैंने ऐसा कुछ भी नहीं कहा, जो मेरे राजा की मर्यादा का अतिक्रमण करता है।

तुच्छ वानर और दूत की मर्यादा रावण सोच रहा था। इसे दूत की मर्यादा दी तो उस कंगले निर्वासित राजकुमार को भी राजा की मर्यादा देनी पड़ेगी। दूती को चाहिए कि आकर राजसभा में अपना संदेश कहे। रावण कठोर स्वर में बोला, उसे रात के अंधकार में राजाधिराज की वाटिका में प्रवेश कर अवरोध-स्थित सीता से वार्तालाप करने की क्या आवश्यकता थी ?

मैं तो राजसभा में ही आना चाहता था, राजाधिराज। हनुमान अत्यंत भोले-स्वर में बोले, किंतु लंका का प्रत्येक प्रहरी मुझे बंदी करने को उद्यत था और देवी जानकी मेरे नायक की पत्नी हैं। उनके लिए भी मैं आर्य राम का संदेश लाया था।

क्या संदेश ? रावण का हृदय उत्कंठा से फटने-फटने को हो रहा था।

यदि रावण ने अपनी इच्छा से देवी को ससम्मान मुक्त नहीं किया तो रावण का वध कर देवी को मुक्त कराया जाएगा।

वानर। रावण की आँखें क्रोध से जल रही थीं।

यही संदेश था, राजाधिराज। हनुमान के स्वर में रंचमात्र भी भय नहीं था।

संदेश ही देना था तो मेरे पुत्र का वध क्यों किया ?

आत्मरक्षा के लिए, राजाधिराज। राजकुमार मेरी हत्या को उद्यत था।

रावण ने हनुमान के उत्तर पर विचार करने की आवश्यकता नहीं समझी, इस दुष्ट वानर को बाहर ले जाकर, प्रथम चतुष्पथ पर इसका वध कर इसके शरीर का मांस शवभक्षक पशु-पक्षियों को खिला दो। मार दो इसे। दशग्रीवने भी दाँत पीसकर आज्ञा दी।

वीरभावसे निर्भयतापूर्वक भाषण करनेवाले महाकपि हनुमानकी बातें बड़ी सुन्दर एवं युक्तियुक्त थीं, तथापि वे रावणको अप्रिय लगीं। उन्हें सुनकर अनुपम शक्तिशाली दशानन रावणने क्रोधसे आँखें तरेरकर सेवकोंको उनके वधके लिये आज्ञा दी।

अपने सदनमें पत्नी तकसे भी उन्होंने कोई चर्चा नहीं की। लेकिन हनुमानकी सुरक्षाके सम्बन्धमें उनका मन तबतक सशम रहा, जबतक उन्होंने सुन नहीं लिया कि अशोकोपवनमें कोई कपि आया है और उत्पात मचा रहा है।

उत्पात मचा रहा है। सुनकर विभीषण प्रसन्न भी हुए- सचिन्त भी हुए- इसका अर्थ है कि हनुमानने अपना कार्य पूरा कर लिया। वे सीताजीसे मिल चुके। लेकिन अब उत्पात करके यह दशग्रीवको सतर्क करना क्यों ?

क्या कोई और कपि आया है उनके साथ ? सीताका समाचार उसके द्वारा श्रीरामके समीप भेजकर हनुमान उसकी ओरसे राक्षसों और रावणका ध्यान दूसरी ओर आकर्षित करनेके लिए स्वयंको विपत्तिमें डाल रहे हैं ? विभीषण रावणकी लंकाके व्यवस्थापक, वास्तविक प्रशासक थे। उनपर व्यवस्था छोड़कर दशग्रीव, मेघनाद आदि या तो दिग्विजय करते घूमते थे या अपनी विलास-क्रीड़ाओंमें लगे रहते थे। अत: परम नीतिज्ञ विभीषण अपनी नीतिज्ञाताके अनुसार अनुमान कर रहे थे- अथवा हनुमानका बल-पराक्रम इतना अनुमानसे परे है कि अपने आराध्यको युद्ध करने ले आनेसे पूर्व वे दशग्रीव तथा उसके समस्त सहायकोंकी शक्तिका अनुमान कर लेना चाहते हैं। ऐसा हो तो भी आश्चर्य नहीं, क्योंकि दशग्रीवकी पुरीमें कोई अल्पशक्ति एकाकी आनेका साहस ही कैसे कर सकता था।

किष्किंधा में इतना कुछ घटित हो गया और विभीषण को तनिक-सा आभास भी नहीं मिला। विभीषण को सूचनाएँ नहीं मिलीं, क्योंकि कदाचित् लंका में किसी को भी इन घटनाओं की सूचना नहीं है। कैसा है रावण का गुप्तचर विभाग। सारे अधिकारी मदिरा पीकर धुत्त पड़े रहते हैं। कहाँ से आएँगी सूचनाएँ। शूर्पणखा भी जब जनस्थान से रोती हुई लौटी थी तो उसने रावण के मुख पर ही चीख-चीखकर कहा था कि वह मदिरा पीकर बेसुध पड़ा रहता है और राज्य के भीतर-बाहर होने वाली घटनाओं की उसे कोई सूचना नहीं होती। यही प्रमाद किसी दिन इस साम्राज्य को ले डूबेगा। इतना विकसित, उन्नत और समर्थ राष्ट्र। किंतु अपने प्रमाद में आँखें बंद किए बैठा है। विलास ने इस साम्राज्य का विवेक समाप्त कर दिया है, बस उन्माद ही उन्माद रह गया है।

किंतु अगले ही क्षण विभीषण चौंक उठे- वे किस बात से इतने संतुष्ट हो रहे हैं ? यह उत्फुल्लता किस कारण से ? राम की उद्यमशीलता तथा साधन-संपन्नता से उनका दूत यहाँ तक पहुँच तो गया- लंका की सुदृढ़ रक्षा-व्यवस्था के होते हुए भी वह लंका में घुस आया है; रावण की समस्त गोपनीयता का उल्लंघन करते हुए उसने सीता को खोज भी निकाला है, संदेशों का आदान-प्रदान भी कर आया है- इस समय लंका के सैनिकों से युद्ध भी कर रहा है। किंतु वह अकेला है, शस्त्रविहीन है, शत्रु-नगरी में है, दूर-दूर तक उसका कोई सहायक नहीं है। कितनी देर तक प्रतिरोध कर पाएगा वह ? देर-सवेर लंका के सैनिक उसे पराभूत करेंगे। या तो उसका वध होगा अथवा वह बंदी किया जाएगा। बंदी होने की स्थिति में भी वह अधिक काल तक जीवित नहीं रह पाएगा। वह सीता नहीं है, जिसे रावण अशोक वाटिका में अवरोध में रख, प्रत्येक दूसरे-चौथे दिन उससे प्रेम-याचना करेगा। सुन्दरी युवतियों का यह विशेषाधिकार हनुमान को नहीं मिलेगा। युद्ध में यदि उसका वध नहीं हुआ और वह जीवित पकड़ लिया गया तो भी या तो अंधकूप में डाला जाएगा अथवा लंका के किसी चतुष्पथ पर उसका वध होगा।

हनुमान लौटेगा ही नहीं तो राम को कौन बताएगा कि सीता कहाँ हैं ? हनुमान मारा जाएगा; सीता बंदिनी बनी रहेंगी- अंतत: आत्मसमर्पण करेंगी या उनका वध होगा- और राम अपने अपमान की पीड़ा तथा पत्नी के विरह में बिलख-बिलखकर प्राण दे देंगे। ऐसी स्थिति में लंका में स्त्रियों के अपहरण का प्रचलन समाप्त हो जाएगा क्या ?

किस बात से प्रसन्न हो रहे हैं विभीषण ? सीता की मुक्ति के लिए किया जा रहा प्रयत्न असफल होने को है और विभीषण प्रसन्न हो रहे हैं ? सीता की मुक्ति के लिए वह कुछ भी नहीं कर सके; किंतु जो यह प्रयत्न कर रहा है, उस हनुमान की कुछ सहायता तो उन्हें करनी चाहिए। स्वयं में सत्कर्म की क्षमता न हो तो सत्कर्म के प्रति सक्रिय सहानुभूति तो होनी ही चाहिए।

विभीषण बोले, और दूसरी बात, यदि अनाचार बढ़ता जाएगा तो विरोध भी बढ़ेगा ही। सीता लंका में नहीं आई थीं तो हनुमान भी लंका में नहीं पहुँचा था। सीता के अपहरण के कारण, सागर-लंघन कर हनुमान लंका में आया है। अब यदि सीता मुक्त नहीं हुई तो राम भी आ सकता है और उसकी सेना भी आ सकती है।

और मान लो सीता मुक्त होकर राम के पास पहुँच जाएँ, विभीषण बोले, तो क्या तब भी इतना जोखिम उठाकर राम लंका में आएगा या उसकी सेना आएगी क्या ?

इन दिनों मेरी अपनी मन:स्थिति भी मेरी समझ से बाहर है। एक ओर तो मन में आता है कि मैं इस लंका में कोई भी अनुचित कार्य नहीं होने दूँगा, चाहे उसके पीछे स्वयं रावण ही क्यों न हो; किंतु दूसरे ही क्षण लगता है कि प्रत्येक अनौचित्य-विरोध अंतत: रावण-विरोध है- तो भाई का मोह भी आड़े आ जाता है। सोचता हूँ, भाई के प्रेम का कोई भी मूल्य नहीं है क्या ? क्या उसके लिए मुझे तनिक

भी नहीं झुकना चाहिए ? क्या सिद्धांतों के धरातल पर थोड़ा-सा समझौता नहीं कर लेना चाहिए ? पर फिर मैं कुछ अन्य लोगों के प्रेम की ओर देखता हूँ। इस समय राजाधिराज को लगता है कि सिवाय उनके पुत्र मेघनाथ के और कोई उनसे प्रेम नहीं करता, यहाँ तक कि महारानी मंदोदरी भी नहीं।

क्योंकि सिवाय मेघनाथ और शूर्पणखा के परिवार का कोई अन्य सदस्य सीता के अपहरण का समर्थन नहीं करता। विभीषण बोले, और मेघनाथ के इस समर्थन को राजाधिराज अपने प्रति प्रेम मान बैठे हैं। वह अमर्यादित समर्थन उनके अहंकार को स्फीत कर रहा है, उनकी औचित्यानौचित्य-बुद्धि को भ्रमित कर रहा है और उन कार्यों के लिए प्रेरित कर रहा है, जो अंतत: उनके लिए अनर्थकारी सिद्ध होंगे। विभीषण तनिक रुककर बोले, इस समय राजाधिराज, राक्षस-साम्राज्य तथा लंका-निवासियों का सबसे भयंकर शत्रु मेघनाद का सीमाहीन, अमर्यादित रावण-समर्थन है। यह समर्थन रावण तथा राक्षस-साम्राज्य का काल बनेगा।

विभीषण मौन हो गए। मेघनाथ अपने बंदी को सरलता से छोड़ता नहीं। हनुमान पर तो अनेक सैनिकों ही नहीं, राजकुमार अक्ष के वध का भी आरोप है। राजकुमार अक्ष। क्षणभर के लिए विभीषण का हृदय भी कसक उठा, सचमुच यह हनुमान तो उनके भतीजे का भी हत्यारा है।

किंतु अगले ही क्षण वे स्थिर हो गए। युद्ध करने के लिए अक्षकुमार ही सेना लेकर गया था। वह हनुमान की हत्या का प्रयत्न कर रहा था तो आत्मरक्षा के लिए हनुमान क्या करता। ऐसे में हनुमान को हत्यारा कैसे कहा जा सकता था। युद्ध में अपने शत्रु का वध करनेवाला तो सदा वीर ही कहलाता आया है- हनुमान को इसलिए तो हत्यारा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उसका शत्रु विभीषण का भतीजा था। संबंधों के इस मोह को तो त्यागना ही पड़ेगा, अन्यथा वे किसी भी अनुचित कृत्य का विरोध नहीं कर पाएँगे। संबंध और सिद्धांत साथ-साथ नहीं निभते। इन दोनों में से, विभीषण को एक का त्याग तो करना ही पड़ेगा। और जब एक का त्याग करना ही है, तो वे संबंधों का त्याग करेंगे, सिद्धांतों का नहीं।

वह तो ठीक है। विभीषण बोले, हनुमान कोई साधारण हत्यारा नहीं है। वह युद्धवीर है तथा राम एवं सुग्रीव का दूत है। दूत का वध नीति नहीं है। निरंतर मदिरापान करनेवाला व्यक्ति कितनी देर संतुलित व्यवहार करेगा और कितनी देर सचेत रहेगा। आज सारी लंका में प्रसिद्ध है कि कुंभकर्ण छह मास सोता है और एक दिन जागता है; और जिस दिन वह जागता है, उस दिन केवल भक्षण करता है।

इसमें असत्य भी क्या है ? प्रजा उसे और क्या कहेगी, जो या तो अचेत पड़ा रहता है, या सचेत होते ही महिष-मांस और मदिरा का भाँड लेकर पुन: अचेत होने तक अपने खान-पान में जुटा रहता है।

रावण चाहता भी यही है। तभी तो उसने बड़ा भाई होते हुए भी आज तक कभी कुंभकर्ण का इस अनवरत मदिरापान के लिए तिरस्कार नहीं किया; उलटे सदा अबाध मदिरा-आपूर्ति का प्रबंध किया। रावण ने यही शूर्पणखा के साथ किया। पहले उसके प्रेमी विद्युजिह्व से उसके विवाह का निषेध कर, उसके प्रति शूर्पणखा की कामना को उग्र से उग्रतर किया। जब शूर्पणखा ने भाई के अनुशासन से विद्रोह कर उससे विवाह कर लिया तो रावण ने उसका वध स्वंय अपने हाथों किया। पति से उसका आजीवन विच्छेद करा, शूर्पणखा को अपने महामहालय के वासनामय, विलासी वातावरण में रखकर, उसकी वासना की अग्नि को प्रचण्ड रूप देकर, उन्मुक्त विलास की अनुमति के साथ सर्वसत्तासंपन्न बनाकर उसे जनस्थान में भेज दिया। जाने कितने युवकों के यौवन तथा जीवन का भक्षण किया है शूर्पणखा ने। और जब अपनी इच्छा का एक पुरुष-राम- नहीं मिला, तो उसी से वह अमानुषी हो उठी। असंतुलित, अव्यवस्थित, असहज विकट अमानुषी पिशाची। क्या अधिकार था राम और लक्ष्मण पर उसका। यदि वे उसे अंगीकार नहीं करना चाहते थे, उनके मन में उसके प्रति प्रेम, वासना अथवा लोलुपता नहीं जागी तो वह पिशाची सीता की हत्या कर, उन वीर तथा सच्चरित्र पुरुषों के साथ बलात्कार करने को उतावली हो उठी। इस सारे परिवार को नष्ट करने के लिए दोषी कौन है ? रावण का स्वार्थ तथा अहंकार ही तो। उसने अपने विवेक की हत्या की और स्वार्थ-प्रेरित होकर अपने भाई-बहनों के जीवन का नाश किया और आज उसका अपना पुत्र उसी के मार्ग पर चलकर, अपने स्वार्थवश अपने पिता को मृत्यु की ओर धकेल रहा है। सारा वातावरण ऐसा भ्रष्ट हो गया है कि विभीषण की उचित बात भी उन्हें संगत नहीं लगती और रावण की अनुचित बातें भी सबके सिर चढ़कर बोल रही हैं।

भूखा आदमी चिड़चिड़ा और झगड़ालू हो ही जाता है; किंतु यह व्यक्ति हिंस्र तथा भयंकर था। उसने अनेक सैनिकों तथा राजकुमार अक्ष का वध किया था हत्यारा। रावण की आँखों में रक्त-लालिमा तथा रक्त-तृष्णा-दोनों ही एक साथ उतर आईं। यह रावण के पुत्र का हत्यारा था। इसके इस सुंदर शरीर के तत्काल टुकड़े कर घृणित जीवों के सम्मुख डाल दिए जाने चाहिए। इसे सभा में अपना पक्ष

उपस्थित करने का भी अधिकार नहीं होना चाहिए। यह ऐसा जीव नहीं है, जिसे राजसभा में प्रवेश अथवा राजाधिराज से संबोधित होने का अवसर दिया जाए। इसे तो बंदी करते ही नष्ट कर दिया जाना चाहिए था।

वह वैदेही है जिसे रावण का सम्पूर्ण वैभव नहीं जीत सका, न उसे रावण का बल भयभीत कर सका।

विभीषण धक् रह गए। उन्हें इसी बात का भय था। रावण तर्क नहीं सुनेगा और हनुमान को मृत्युदण्ड दे देगा।

दशकंधर को हनुमान का यह उपदेश विष समान लगा। क्रोधयुक्त होकर उसने इस प्रकार आदेश किया। हे राजसभा के सचिववरों, यह वानर सचमुच ही उन्मादी है। यह सीधा-सादा सा दिखता है पर वास्तव में बड़ा विवादि है। निश्चय ही यह उन दोनों तपस्वी बच्चों के बल पर फूला हुआ है। अभी मेरी आँखों के सामने इसका सिर काँट डालो। तभी दुष्ट राक्षसगण कपिका संहार करने तलवारों को खींच उठे। दैवयोग से उसी समय विभीषण वहाँ आ गये और बोल उठे यह कैसा अन्याय है ?

हनुमानके बन्दी होनेका समाचार मिलते ही विभीषण अपने मंत्रियोंके साथ दशग्रीवकी सभाके लिए चल पड़े थे।

अब ? राजाधिराज। विभीषण अपने आसन से उठ खड़े हुए।

रावण ने विभीषण को खड़े होते देखा तो उसका क्रोध एक प्रकार के हठ तथा दुष्ट चातुरी में बदल गया। हनुमान का तर्क सुनना आवश्यक नहीं था, किंतु विभीषण का तर्क तो सुनना ही पड़ेगा। विभीषण बंदी और प्रवासी वानर नहीं हैं, जिसके तर्कों की उपेक्षा कर दी जाए। विभीषण राक्षस वंश का, राजवंश का सदस्य है; राजाधिराज का भाई है, राजसभा का सम्मानित सदस्य है और ऐसे विषयों को पाकर तो विभीषण रावण का विरोध करेगा ही। उसने प्रत्येक अपहरण के लिए रावण की निंदा की है; सीता के अपहरण के अवसर पर भी राजसभा में उसने राजाधिराज का उद्दण्ड विरोध किथा। वह हनुमान का समर्थन करेगा ही। कल राम लंका में आ जाए, तो यह उसका भी समर्थन करेगा। यह राक्षस कुल-कलंक क्या इसके मन में एक बार भी नहीं उठता कि अक्ष इसका भतीजा था ? क्या इसने सुख के साथ-साथ ममता को भी जीत लिया है ? यह पुत्र समान भतीजे के हत्यारे का पक्ष ले रहा है नीच।

तुम विभीषण के तर्कों से डरते हो। उसके मन में बैठा प्रतिरावण हँसा, इसलिए तुम पहले से ही विभीषण-विरोधी मन बना बैठे हो। तुम में भी साहस हो और विभीषण की-सी बुद्धि हो तो उनके तर्कों का उत्तर दो।

हाँ। दूँगा मैं उसके तर्कों का उत्तर। उसने प्रतिरावण को डाँटा, अधिक क्रोध न दिला।

प्रतिरावण ने अट्टहास किया, मेरा तर्क नहीं सुन सकते।

रावण ने कुछ नहीं कहा। बहुत दिनों के पश्चात जागा था प्रतिरावण और बड़े ही अनुपयुक्त समय पर जागा था। विभीषण के रावण-विरोध, पुत्र के शोक, प्रतिशोध के आवेश तथा हनुमान के कारण सीता की संभावित मुक्ति-सबने मिलकर रावण को भयंकर रूप से उद्वेलित कर रखा था। रावण ने विभीषण की ओर देखा।

राजाधिराज। विभीषण ने अत्यंत संयत और शालीन स्वर में कहा, यह वानर दूत है और दूत अवध्य होता है।

राक्षसराज। राजनीति-सम्बन्धी शास्त्रोंमें कहीं भी दूतके वधका विधान नहीं है। दूत तो वही कहता है, जैसा कहनेके लिये उसे बताया गया होता है। उसका कर्तव्य है कि वह अपने स्वामीके अभिप्रायका ज्ञान करा दे।

अनुपम पराक्रमी वीर। दूतका महान् अपराध होनेपर भी शास्त्रमें उसके वधका दण्ड नहीं देखा गया है। उसके किसी अङ्गको विकृत कर देनामात्र ही बताया गया है।

वीर महाराज। इस वानरको मारना धर्मके विरुद्ध और लोकाचारकी दृष्टिसे भी निन्दित है। आप-जैसे वीरके लिये तो यह कदापि उचित नहीं है। आप धर्मके ज्ञाता, उपकारको माननेवाले और राजधर्मके विशेषज्ञ हैं, भले-बुरेका ज्ञान रखनेवाले और परमार्थके ज्ञाता हैं। यदि आप जैसे विद्वान भी रोषके वशीभूत हो जायँ तब तो समस्त शास्त्रोंका पाण्डित्य प्राप्त करना केवल श्रम ही होगा।

अत: शत्रुओंका संहार करनेवाले दुर्ज राक्षसराज। आप प्रसन्न होइये और उचित-अनुचितका विचार करके दूतके योग्य किसी दण्डका विधान कीजिये।

विभीषणकी बात सुनकर राक्षसोंका स्वामी रावण महान् कोपसे भरकर उन्हें उत्तर देता हुआ बोला- दूत अवध्य होता है। रावण क्रुद्ध स्वर में बोला, पर वह वधिक भी होता है क्या ? मैं दूत को नहीं, राजकुमार अक्ष के हत्यारे को मृत्युदण्ड दे रहा हूँ।

रावण ने मौन होकर विभीषण की ओर देखा। इच्छा हो रही थी कि वह विभीषण को कसकर फटकारे और कहे, नराधम। तुझे अपने

भतीजे की हत्या का तनिक भी शोक नहीं है। कल कोई व्यक्ति तेरी पुत्री की हत्या कर देगा, तो क्या रावण उस हत्यारे का पक्ष लेगा ? पर रावण का अहंकार आड़े आ गया। राजाधिराज रावण, विभीषण से इस प्रकार की करुणा की भीख नहीं माँगेगा। इस समय विभीषण उसका भाई नहीं, सभासद है; तो वह उससे सभासद का-सा व्यवहार करेगा। यदि विभीषण अपना संबंध भूल गया है तो रावण भी उसे याद नहीं दिलाएगा। हत्यारे को मृत्युदण्ड उचित ही है। विभीषण ने पुन: अपने स्वर को साधा, किंतु आत्मरक्षा में किसी का वध करना हत्या नहीं है। युद्ध में शत्रु का संहार वीरता कहलाता है और प्रशंसित होता है।

तो तुम्हारा विचार है कि इस नंगे और कंगले वानर की यह कहकर प्रशंसा करूँ कि इसने मेरे पुत्र का वध कर बहुत वीरता का कार्य किया है; उसके लिए मैं इसे पुरस्कृत करना चाहता हूँ ?

विभीषण को लगा, बात इस दिशा में तनिक भी बढ़ी तो रावण असंयत हो उठेगा। उसके उस उन्माद की स्थिति में हनुमान की रक्षा नहीं हो सकेगी। नहीं, राक्षसराज। विभीषण का स्वर धीमा हो गया, यह मैं कैसे चाहूँगा। रावण बोले- शत्रुसूदन। पापियोंका वध करनेमें पाप नहीं है। इस वानरने वाटिकाका विध्वंस तथा राक्षसोंका वध करके पाप किया है। इसलिये अवश्य ही इसका वध करूँगा।

तब विभीषण ने कहा- लमेश्वर। प्रसन्न होइये। राक्षसराज। मेरे धर्म और अर्थतत्त्वसे युक्त वचनको ध्यान देकर सुनिये। राजन्। सत्पुरुषोंका कथन है कि दूत कहीं किसी समय भी वध करने योग्य नहीं होते।

इसमें संदेह नहीं कि यह बहुत बड़ा शत्रु है; क्योंकि इसने वह अपराध किया है जिसकी कहीं तुलना नहीं है, तथापि सत्पुरुष दूतका वध करना उचित नहीं बताते हैं। दूतके लिये अन्य प्रकारके बहुत-से दण्ड देखे गये हैं।

किसी अङ्गको भङ्ग या विकृत कर देना, कोड़ेसे पिटवाना, सिर मुंड़वा देना तथा शरीरमें कोई चिह्न दाग देना- ये ही दण्ड दूतके लिये उचित बताये गये हैं। उसके लिये वधका दण्ड तो मैंने कभी नहीं सुना है।

इसने आपका अप्रिय किया है, उद्धत है और कटुभाषी है; किंतु दूत है। विभीषणने विनम्र स्वरमें कहा- यह दण्डनीय तो है, परन्तु मारने योग्य नहीं है। इसका सिर घूटा दें, कशाघात दण्ड दें, अङ्ग-भङ्ग करा दें, ऐसा ही कुछ दण्ड दें।

इसे मार देनेसे क्या लाभ होगा ? रावणको अपनी ओर देखते देखकर विभीषणने कहा- यह नहीं लौटेगा तो जिन्होंने इसे भेजा है, वे और चर भेजेंगे। हम सबको सदा सशम रहना पड़ेगा कि कब कोई आ जाय। यह लौट जायगा तो अपने स्वामीको ससैन्य ले आवेगा। उनसे एक साथ आप निबट ले सकेंगे।

आपकी बुद्धि धर्म और अर्थकी शिक्षासे युक्त है। आप ऊँच-नीचका विचार करके कर्तव्यका निश्चय करनेवाले हैं। आप-जैसा नीतिज्ञ पुरुष कोपके अधीन कैसे हो सकता है ? क्योंकि शक्तिशाली पुरुष क्रोध नहीं करते हैं।

वीर। धर्मकी व्याख्या करने, लोकाचारका पालन करने अथवा शास्त्रीय सिद्धान्तको समझनेमें आपके समान दूसरा कोई नहीं है। आप सम्पूर्ण देवताओं और असुरोंमें श्रेष्ठ हैं।

पराक्रम और उत्साहसे सम्पन्न जो मनस्वी देवता और असुर हैं, उनके लिये भी आपपर विजय पाना अत्यन्त कठिन है। आप अप्रमेय शक्तिशाली हैं। आपने अनेक युद्धोंमें बारंबार देवेश्वरों तथा नरेशोंको पराजित किया है।

इस वानरको मारनेमें मुझे कोई लाभ नहीं दिखायी देता। जिन्होंने इसे भेजा है, उन्हींको यह प्राणदण्ड दिया जाय।

यह भला हो या बुरा, शत्रुओंने इसे भेजा है; अत: यह उन्हींके स्वार्थकी बात करता है। दूत सदा पराधीन होता है, अत: वह वधके योग्य नहीं होता है। राजन्। इसके मारे जानेपर मैं दूसरे किसी ऐसे आकाशचारी प्राणीको नहीं देखता, जो शत्रुके समीपसे महासागरके इस पार फिर आ सके ऐसी दशामें शत्रुकी गति-विधिका आपको पता नहीं लग सकेगा।

युद्धप्रेमी महाराज। इसके नष्ट हो जानेपर मैं दूसरे किसी प्राणीको ऐसा नहीं देखता, जो आपसे विरोध करनेवाले उन दोनों स्वतन्त्र प्रकृतिके राजकुमारोंको युद्धके लिये तैयार कर सके।

प्रहस्तने सिर झुका दिया हाथ जोड़कर। दूसरे मंत्रियोंको भङ्गीमें भी विभीषणका समर्थन था। ऐसे विकट वानर किसी क्षण आ सकते हैं, लमामें कहीं कोई उत्पात कर सकते हैं, किसीको मार सकते हैं, कोई भवन नष्ट कर सकते हैं, इस आशमामें रात-दिन रहनेकी अपेक्षा एक बार खुलकर युद्ध बुला लेना ही उत्तम लगा सबको। भय-आतमका नारकीय जीवन हो जायगा, यदि यह कपि मार दिया गया, यह सबने समझ लिया।

अपने छोटे भाई विभीषणके इस उत्तम और प्रिय वचनको सुनकर निशाचरोंके स्वामी तथा देवलोकके शत्रु महाबली राक्षसराज रावणने बुद्धिसे सोच-विचारकर उसे स्वीकार कर लिया।

मैंने तो एक साधारण-सी नीति की बात कही है। दूत अवध्य होता है। उसके लिए अन्य कोई दण्ड प्रस्तावित किया जा सकता है। कारावास अथवा अंग-भंग वध ही करना हो तो उनका किया जाए, जिन्होंने इस दूत को भेजा है।

बोल। बोल। दे उत्तर। प्रतिरावण पुन: जाग उठा था, वध करना है तो उनका कर, जिन्होंने इसे भेजा है।

पर इस बार रावण तनिक भी व्यग्र नहीं हुआ। वह मन-ही-मन मंद-मंद मुसकान पीता रहा और विभीषण तथा प्रतिरावण को इस भाव से देखता रहा, जैसे वे अबोध बच्चे हों ओर समझ नहीं पा रहे हों कि वे जिसे चेतावनी दे रहे हैं, वह उनसे कहीं अधिक क्षमतावान है।

तुम्हारी ही बात रही, विभीषण। रावण के मुख पर एक धूर्त मुसकान उभरी, मैं तुम्हारे भतीजे के हत्यारे को प्राणदण्ड नहीं दे रहा, क्योंकि वह किसी का दूत है। अपने बेटे तथा सैनिकों के हत्यारे को मैं प्राणदण्ड नहीं दे रहा, ताकि राक्षसराज को कोई नीतिविहीन न कहे पर मैं उसे दण्डित अवश्य करूँगा।

विभीषण ने उत्कंठित रावण की ओर देखा कौन-सा दण्ड प्रस्तावित होगा ?

विभीषण। तुम्हारा कहना ठीक है। वास्तवमें दूतके वधकी बड़ी निन्दा की गयी हैं; परंतु वधके अतिरिक्त दूसरा कोई दण्ड इसे अवश्य देना चाहिये। दशग्रीवने शान्त स्वरमें कहा। उसने देख लिया था कि उसके सब मन्त्री विभीषण पक्षमें हो गये हैं। सबको असन्तुष्ट करना वह नहीं चाहता था और वानरको छोड़ देना भी उसे अभीष्ट नहीं था। उसने युक्तिपूर्वक कहा- इस कपिने पूँछ घूमा-घूमाकर अशोक वाटिका को उजाड़ा है। अतएव उसे निपूँछा करो यहीं अब आदेश हमारा है। वानरको अपनी पूँछ बहुत प्रिय होती है, यद्यपि यह उसका अनावश्यक अङ्ग है। पर वही इनका आभूषण है। इसकी पूँछमें वस्त्र लपेटकर तेलसे भिगोकर अग्नि लगा दो। इस प्रकार पूँछहीन कुरूप करके इसे यहाँसे भगा दो। अत: जितना जल्दी हो सके, इसकी पूँछ जला दो। जली पूँछ लेकर ही यह यहाँसे जाय।

वहाँ इसके मित्र, कुटुम्बी, भाई-बन्धु तथा हितैषी सुहृद् इसे अङ्ग-भङ्गके कारण पीड़ित एवं दीन अवस्थामें देखें।

पूँछरहित होकर जायगा, तब अपने स्वामीको ले आवेगा। देखना है कि इसके स्वामीमें यहाँतक आनेका साहस है भी या नहीं।

विभीषण अब बोलनेकी स्थितिमें नहीं रह गये। उन्हें मौन रह जाना पड़ा। दशग्रीवके मनमें दुरभिसन्धि थी- स्वभावसे चञ्चल वानर पूँछमें अग्नि लगनेपर उछल-कूद करेगा और स्वयं अपने शरीरमें अग्नि लगा लेगा। इससे यह जल-भुनकर मर जायेगा। मुझे दूत-वधका दोष भी कोई नहीं दे सकेगा।

फिर राक्षसराज रावणने यह आज्ञा दी कि राक्षसगण इसकी पूँछमें आग लगाकर इसे सड़कों और चौराहोंसहित समूचे नगरमें घुमावें।

रावण के अधरों पर विषैली मुसकान थी, तुमने कहा है कि दोषी पाए जाने पर दूत को कारावास का दण्ड दिया जा सकता है। मैं उसे कारावास का भी दण्ड नहीं दे रहा। विभीषण समझ रहे थे कि उदारता की आड़ में रावण कोई निहित दुष्टता करने जा रहा है।

तुमने अंग-भंग को नीतियुक्त कहा है, पर मैं उसका वास्तविक अंग-भंग भी नहीं कर रहा। रावण रुका, उसे केवल प्रतीकात्मक दण्ड दिया जाएगा, जैसा कि उस कंगले राजकुमार के छोटे भाई ने शूर्पणखा को दिया था।

विभीषण रावण की ओर देख नहीं सके। उन्होंने हनुमान की ओर देखा- किस धैर्य से खड़ा है यह वानर, जैसे यह दण्ड किसी और के लिए प्रस्तावित हो रहा हो।

यह वानर है तो इसकी पूँछ भी होनी चाहिए। विभीषण को देखकर रावण दुष्टतापूर्वक मुसकराया और बोला- वानर को अपनी पूँछ बहुत प्रिय होती है। इसलिए वस्त्रों तथा ज्वलनशील पदार्थों से इसकी एक पूँछ बनाकर, इसे पहले वास्तविक वानर का रूप दिया जाए; और जब यह वास्तविक वानर बन जाए तो इसे लंका के गली-मुहल्ले, चतुष्पथों-बाजारों में घुमाकर लंका की जनता को इसके दर्शन कराए जाएँ और जब सब लोग इसका वास्तविक वानर रूप भली-भाँति देख लें तो इसकी पूँछ पर अच्छी प्रकार तेल छिड़ककर उसे आग लगा दी जाए। रावण ने थमकर विभीषण की ओर देखा, कोई बात नीति-विरुद्ध तो नहीं हुई, धर्मात्मा विभीषण ?

विभीषण ने रावण की ओर देखा कैसा धूर्त है यह रावण। कह रहा है कि मैं केवल प्रतीकात्मक दण्ड दे रहा हूँ और इसने हनुमान की मृत्यु का पूरा प्रबंध कर दिया है। पूँछ के बहाने हनुमान के शरीर को घी-तेल सने वस्त्रों में लपेटकर उसे आग लगा दी जाएगी, ताकि या तो वह उस अग्नि में जल मरे अथवा उसका शरीर इतना झुलस जाए कि वह पूर्णत: पंगु होकर मृत्यु से भी भयंकर यातना सहे। पर अब

रावण का विरोध नहीं हो सकता था। उसने विभीषण को उन्हीं के वचनों में बाँध दिया था। लंकेश्वर का निर्णय नीतियुक्त है।

ले जाओ इसे। रावण का स्वर अब भी आक्रोश-शून्य नहीं था, लंका की कोई गली न छूटे, जहाँ के निवासी इसका वास्तविक वानर रूप न देख लें। और पूँछ भी इतनी लंबी बनाना, जिसमें अग्नि धधककर जले।

महाराजका सुझाव बहुत उपयुक्त है। चाटुकार राक्षसोंने प्रशंसा की। समर्थन किया- यह उत्पाती इसी दण्डके योग्य है। वैसे तो उदार महाराजने इसपर कृपा की है। इसे केवल कुरूप बनानेका दण्ड दिया है।

दशकंधर की आज्ञा सुनकर बजरंगबली हनुमान हँसे और बोले यहीं पूँछ तुझ दुष्ट का अभिमान हरण करेगी। शारदा माँ तो अपना काम कर चुकी है अब मैं कुछ कर दिखाऊँगा। इन सबको तिगनी का नाच नचा-नचा कर सब इनकी अकड़ भुलाऊँगा।

७) लंका-दहन - दशग्रीव आदेश देकर राजसभा से उठ गया। मन्त्रियोंको, विभीषणको भी अपने सदन जाना था। राक्षस पकड़कर हनुमानको राजसभासे बाहर ले आये और उनकी पूँछमें वस्त्र, रुई, सूखी लकड़ियाँ तक बाँधने लगे। हनुमानको भी कुतूहल सूझा। उन्होंने अपनी पूँछ बहुत लम्बी कर दी। राक्षस उत्साहमें थे। उन्होंने इसपर ध्यान ही नहीं दिया कि वानरकी पूँछ कितनी विशाल है। वे तो दौड़-दौड़कर घरोंसे रुई, वस्त्र ईंधन ला रहे थे और पूँछमें भली प्रकार लपेटते जा रहे थे।

केवल कपड़ा रहेगा तो ठीक नहीं जलेगा। राक्षस बुद्धिमानी दिखा रहे थे- बीच बीचमें रुई और सूखी लकड़ी लगाओ। पूरी पूँछ भली प्रकार लपेटो। बड़ा कोलाहल, बड़ा उत्साह था राक्षसोंमें। उन्होंने प्राय: सभी घरोंसे अनुपयोगी, कुछ उपयोगी वस्त्र भी लाकर हनुमानकी लांगूलमें लपेट दिया। नगरके सामान्य घरोंमें अनुपयोगी वस्त्र, रुई, सूखा काष्ठ बचने नहीं दिया। इतनी लपेटो कि यह अपनी पूँछ हिला नहीं सके। सबको यह शमा तो थी पूँछ हिला सका तो वानर समीपके भवनोंमें अग्नि लगा सकता है; किंतु कोई नहीं समझता था कि यह बन्धनसे छूट भी जा सकता है। स्वामीका यह आदेश सुनकर क्रोधके कारण कठोरतापूर्ण बर्ताव करनेवाले राक्षस हनुमान्‌जीकी पूँछमें पुराने सूती कपड़े लपेटने लगे। पूरे लंका भर के कपड़े हनुमान के पूँछ को लगा दिये कपड़े का ऐसा अकाल हुआ, कि कफन तक का भी कपड़ा नहीं बचा। जब उनकी पूँछमें वस्त्र लपेटा जाने लगा, उस समय वनोंमें सूखी लकड़ी पाकर भभक उठनेवाली आगकी भाँति उन महाकपिका शरीर बढ़कर बहुत बड़ा हो गया।

हनुमान के लिए उस क्षण अपने मन का विश्लेषण करना कठिन हो रहा था। पर अब मन उस जड़ावस्था से बाहर निकल आया था। वह सोचने-समझने लगा था। हनुमान समझ रहे थे कि विभीषण ने उन्हें बचा लिया था। अशोक वाटिका में देवी वैदेही ने उन्हें बताया था कि विभीषण तथा मन्त्री अविंध्य उनकी रक्षा के लिए प्रयत्नशील हैं। पर विभीषण का सारा व्यवहार बता रहा था कि वे केवल देवी वैदेही की सुरक्षा के लिए ही सचेष्ट नहीं थे; वे सिद्धांतत: रावण के इन कृत्यों के विरोधी थे और उसके अन्याय और अत्याचार के भरसक प्रतिकार के लिए व्यवहारिक रूप से सक्रिय थे। विभीषण ने हनुमान को बचा लिया था।

पीछे से किसी ने हनुमान को धक्का दिया, चल। हनुमान के पग उठे, किंतु उनकी दृष्टि विभीषण पर टिक गई। विभीषण उन्हीं की ओर देख रहे थे। उनकी आँखें कितनी वाचाल थीं इस समय। कितना कुछ एक साथ ही कह रही थीं। कितनी करुणा थी उनमें, सद्‌भावना और चेतावनी भी। किंतु सहसा हनुमान का भाव बदला ये लोग मनुष्य नहीं हैं, ये राक्षस हैं। अपने विलास के लिए ये इन दुर्लभ वस्त्रों को अग्निसात कर सकते हैं, किंतु किसी निर्धन का तन ढकने को इन वस्त्रों का त्याग नहीं कर सकते। अपने स्व तक सीमित हो जानेवाला व्यक्ति स्वार्थी और अहंकारी ही नहीं, राक्षस हो जाता है, राक्षस। अपनी एक सनक के पीछे स्वर्ण-मुद्राएँ बहा सकता है और दूसरे के प्राण बचाने के लिए एक कौड़ी नहीं दे सकता। वैसे भी यह धन उन्होंने अपने श्रम से उत्पन्न नहीं किया था। यह लूट और शोषण से प्राप्त किया गया धन था। उसको इस प्रकार फूँकने में उन्हें क्या पीड़ा हो सकती थीं।

राक्षसोंने वस्त्र लपेटनेके पश्चात् उनकी पूँछपर तेल छिड़क दिया और आग लगा दी। तब हनुमानजीका हृदय रोषसे भर गया। उनका मुख प्रात:कालके सूर्यकी भाँति अरुण आभासे उद्भासित हो उठा और वे अपनी जलती हुई पूँछसे ही राक्षसोंको पीटने लगे।

तब क्रूर राक्षसोंने मिलकर पुन: उन वानरशिरोमणिको कसकर बाँध दिया। यह देख स्त्रियों, बालकों और वृद्धोंसहित समस्त निशाचर बड़े प्रसन्न हुए। बच्चे, बूढ़े, तरुण सब विविध भाँति बोल-बोलकर हनुमान के साथ ढोल बजा-बजाकर यह खिलवाड़ करने लगे। अन्धों को भी सुख में दु:ख की लाग नहीं सूझी। उसे पूरे नगर में घूमाया और कपि पूँछ में तुरन्त आग लगा दी। बड़े-बूढ़े जो कहते हैं यहीं बात

यहाँ पर लागू हैं खाँसी सब रोगों की जड़ हैं और हँसी सभी लड़ाई का घर है।

श्रीरामकी महिमा को यह पापी लंकावाले क्या जानें। बजरंगबली की लीला को यह मतवाले निशाचर क्या जानें। जिस रात्रि के जाते ही प्रात: होनेपर सूर्य उदय होता है उसी तरह पूँछ में आग लगते ही हनुमान परम् प्रचण्ड हो उठे। पृथ्वी से आकाश तक व्यापक शब्द करने लगे। लंका में बिजली सी चमकने लगी, मेघ गर्जने का शोर हुआ। हनुमान ने अपना आकार बढ़ाया। आँधी का सा अँधियारा चारों ओर हुआ। मैं अपने स्वामी श्रीरामके हितके लिये विचर रहा हूँ, तो भी ये दुरात्मा राक्षस यदि अपने राजाके आदेशसे मुझे बाँध रहे हैं तो इससे मैं जो कुछ कर चुका हूँ, उसका बदला नहीं पूरा हो सका है।

ऐसा करनेसे मुझे पुन: समूची लमामें विचरने और इसके निरीक्षण करनेका अवसर मिलेगा; क्योंकि रातमें घूमनेके कारण मैंने दुर्गरचनाकी विधिपर दृष्टि रखते हुए इसका अच्छी तरह अवलोकन नहीं किया था।

अत: सबेरा हो जानेपर मुझे अवश्य ही लमा देखनी है। भले ही ये राक्षस मुझे बारंबार बाँधें और पूँछमें आग लगाकर पीड़ा पहुँचायें। मेरे मनमें इसके कारण तनिक भी कष्ट नहीं होगा। तदनन्तर वे क्रूरकर्मा राक्षस अपने दिव्य आकारको छिपाये रखनेवाले सत्त्वगुणशाली महान् वानरवीर कपिकुञ्जर हनुमानजीको पकड़कर बड़े हर्षके साथ ले चले और शम एवं भेरी बजाकर उनके रावण-द्रोह आदि अपराधोंकी घोषणा करते हुए उन्हें लमापुरीमें सब ओर घुमाने लगे।

मेरे आराध्यने अच्छा सुयोग्य दिया है। हनुमान मनमें प्रसन्न हो रहे थे। उन्होंने पूरी योजना मनमें बना ली और हँसे- सरस्वतीने समयपर सहायता की है। राक्षसोंको ऐसी बुद्धि देकर वे वीणापाणि बधाई पाने योग्य हो गयी हैं।

इसे पूरे नगरमें घुमाओ। सब देख लें कि लमामें चोरीसे घुसे गुप्तचरकी क्या दशा होती है। किसीने कहा- तबतक खूब सारा घी, तेल, मेद (चर्बी) एकत्र कर लो यहाँ। राक्षसोंने पवित्र-अपवित्र सब प्रकारके वस्त्र हनुमानजीकी पूँछमें लपेटे थे। उसमें पुरुष-स्त्री, बालक सबके अनेक रङ्गोंके वस्त्र थे। पवन कुमारकी लांगूल वस्त्रादिसे लिपटी बहुत मोटी और इन्द्रधनुषके समान हो रही थी। वे भी उसे ऐसे सीधी किये थे, जैसे सचमुच पूँछ हिलानेमें असमर्थ हो गये हों।

राक्षस उन्हें गालियाँ दे रहे थे। घूसे, थप्पड़ तथा पाद-प्रहारसे ताड़ित कर रहे थे। राक्षस-बालक कूद रहे थे। ताली बजा रहे थे। दुर्वचन कह रहे थे। उनके कान या केश पकड़कर खींचते थे। पाषाण या लगुडका प्रहार भी करते थे। बालकोंको कुछ डाँटते भी थे- अरे दूर रहो। इसके मुख या हाथोंके पास मत जाओ। यह बहुत दुष्ट है। अब भी किसीको नोच ले सकता है। काट खा सकता है। दूर रहो इससे।

परकोटेसे घिरे हुए कितने ही भूभाग, पृथक्-पृथक् बने हुए सुन्दर चबूतरे, घनीभूत गृहपंक्तियोंसे घिरी हुई सड़कें, चौराहे, छोटी-बड़ी गलियाँ और घरोंके मध्यभाग-इन सबको वे बड़े गौरसे देखने लगे।

भिन्न-भिन्न स्थानोंमें जलती पूँछवाले हनुमान्जीको देखनेके लिये वहाँ बहुत-से बालक, वृद्ध और स्त्रियाँ कौतूहल-वश घरसे बाहर निकल आती थीं। हनुमानकी पूँछमें जब आग लगायी जा रही थी, उस समय भयंकर नेत्रोंवाली राक्षसियोंने सीतादेवीके पास जाकर उनसे यह अप्रिय समाचार कहा- सीते। जिस लाल मुँहवाले बन्दरने तुम्हारे साथ बातचीत की थी, उसकी पूँछमें आग लगाकर उसे सारे नगरमें घुमाया जा रहा है। अपने अपहरणकी ही भाँति दु:ख देनेवाली यह क्रूरतापूर्ण बात सुनकर विदेहनन्दिनी सीता शोकसे संतप्त हो उठीं और मन-ही-मन अग्निदेवकी उपासना करने लगीं।

उस समय विशाललोचना पवित्रहृदया सीता महाकपि हनुमानके लिये मङ्गलकामना करती हुई अग्निदेवकी उपासनामें संलग्न हो गयीं और इस प्रकार बोलीं- अग्निदेव। यदि मैंने पतिकी सेवा की है और यदि मुझमें कुछ भी तपस्या तथा पातिव्रत्यका बल है तो तुम हनुमान्के लिये शीतल हो जाओ। यदि बुद्धिमान् भगवान् श्रीरामके मनमें मेरे प्रति किंचिन्मात्र भी दया है अथवा यदि मेरा सौभाग्य शेष है तो तुम हनुमान्के लिये शीतल हो जाओ। यदि धर्मात्मा श्रीरघुनाथने मुझे सदाचारसे सम्पन्न और अपनेसे मिलनेके लिये उत्सुक जानते हैं तो तुम हनुमानके लिये शीतल हो जाओ। यदि सत्यप्रतिज्ञ आर्य सुग्रीव इस दु:खके महासागरसे मेरा उद्धार कर सकें तो तुम हनुमान्के लिये शीतल हो जाओ।

मृगनयनी सीताके इस प्रकार प्रार्थना करनेपर तीखी लपटोंवाले अग्निदेव मानो उन्हें हनुमान्के मङ्गलकी सूचना देते हुए शान्तभावसे जलने लगे। उनकी शिखा प्रदक्षिणभावसे उठने लगी। हनुमान्के पिता वायुदेवता भी उनकी पूँछमें लगी हुई आगसे युक्त हो बर्फीली हवाके समान शीतल और देवी सीताके लिये स्वास्थ्यकारी सुखद होकर बहने लगे।

उधर पूँछमें आग लगायी जानेपर हनुमान्‌जी सोचने लगे- अहो। यह आग सब ओरसे प्रज्वलित होनेपर भी मुझे जलाती क्यों नहीं है?

इसमें इतनी ऊँची ज्वाला उठती दिखायी देती है, तथापि यह आग मुझे पीड़ा नहीं दे रहा है। मालूम होता है मेरी पूँछके अग्रभागमें बर्फका ढेर सा रख दिया गया है।

यदि श्रीरामके उपकारके लिये समुद्र और बुद्धिमान् मैनाकके मनमें वैसी आदरपूर्ण उतावली देखी गयी तो क्या अग्निदेव उन भगवान्‌के उपकारके लिये शीतलता नहीं प्रकट करेंगे ?

निश्चय ही भगवती सीताकी दया, श्रीरघुनाथके तेज तथा मेरे पिताकी मैत्रीके प्रभावसे अग्निदेव मुझे जला नहीं रहे हैं।

उछलकर वे श्रीमान् पवनकुमार पर्वत-शिखरके समान ऊँचे नगरद्वारपर जा पहुँचे, जहाँ राक्षसोंकी भीड़ नहीं थी।

पर्वताकार होकर भी वे मनस्वी हनुमान् पुन: क्षणभरमें बहुत ही छोटे और पतले हो गये। इस प्रकार उन्होंने अपने सारे बन्धनोंको निकाल फेंका। उन बन्धनोंसे मुक्त होते ही तेजस्वी हनुमानजी फिर पर्वतके समान विशालकाय हो गये।

उस समय उन्होंने जब इधर-उधर दृष्टि डाली, तब उन्हें फाटकके सहारे रक्खा हुआ एक परिघ दिखायी दिया। काले लोहेके बने हुए उस परिघको लेकर महाबाहु पवनपुत्रने वहाँके समस्त राक्षकोंको फिर मार गिराया।

उन राक्षसोंको मारकर रणभूमिमें प्रचण्ड पराक्रम प्रकट करनेवाले हनुमान्‌जी पुन: लमापुरीका निरीक्षण करने लगे। उस समय जलती हुई पूँछसे जो ज्वालाओंकी माला-सी उठ रही थी, उससे अलंकृत हुए वे वानरवीर तेज:पुञ्जसे देदीप्यमान सूर्यदेवके समान प्रकाशित हो रहे थे। हमने गुप्तचर पकड़ा है। यह चोर है। राक्षस अनेक प्रकारके अपशब्द सुना रहे थे। वे रस्सियोंमें बँधे हनुमानको पकड़कर नगरमें घुमाने लगे। सहस्त्रों राक्षसोंने रस्सियाँ पकड़ रखी थीं।

प्रभुने कैसा उत्तम सुयोग दिया। मैंने लमा रात्रिमें अन्यमनस्क भावसे देखी थी। अब दिनके प्रकाशमें भली प्रकार देखनेका यह अच्छा अवसर मिला है। राक्षसोंकी गालियाँ, घूसे, थप्पड़ आदिकी ओर तो हनुमानका ऐसे ही ध्यान नहीं गया, जैसे भिनभिनाती मक्खियोंके शब्द और उनके शरीरपर बैठनेपर कोई ध्यान नहीं देता। वे तो देख रहे थे- बहुत ध्यानपूर्वक देखते जा रहे थे लमाके राजपथ, वीथियाँ, चतुरष्क। उनका ध्यान इस ओर था कि रावणका शस्त्रागार कहाँ है, उसका अन्नभण्डार कहाँ है, गज-अश्वादि कहाँ हैं और कहाँ हैं उसके सैनिकोंके-सुरक्षित सैनिकोंके भी स्थान। युद्धके समय किन पथोंका उपयोग होना है, किन स्थानोंको पहिले ध्वस्त किया जाना चाहिये, इस ओर हनुमानका पूरा ध्यान था। शत्रु स्वयं उन्हें अपना पूरा नगर दिखला रहे थे।

राक्षसियाँ भवानोंके ऊपरसे, पथपर आकर वानरको देख रही थीं। वे भी ताली बजाकर हँसती थीं। त्रिजटासे जिन्होंने उसका स्वप्न सुना था, केवल ये भयभीत सशम थीं- अब यह पूँछ घूमाकर पूरी लमा जला देगा। लेकिन उनकी कौन सुनता। राक्षस उतसहमें थे। वे भेरी, डमरू, ढोल पीटते चिल्लाते हुए हनुमानजीको नगरमें घूमा रहे थे। अद्‌भुत थी हनुमानकी यह नगर-यात्रा।

पूरा नगर घूमाकर राक्षस पवन-पुत्रको फिर नगरके पश्चिम द्वारके पास ले आये। अब उनकी लांगूलका घृत-तैलाभिषेक प्रारम्भ हुआ। सहस्त्रों चर्मकुप्पे तैल, घृत, वसाके एकत्र थे वहाँ। दौड़-दौड़कर राक्षस और ले आ रहे थे। दशग्रीवका राजकीय तैल-घृत भण्डार भी रिक्त कर दिया सबोंने उत्साहमें आकर।

शत-शत राक्षसोंने हनुमानकी पूँछ पकड़ रखी थी। दूसरे बहुतोंने उन रस्सियोंको पकड़ रखा था, जिनमें वे बँधे थे। सैकड़ों घृत, तैल, वसाके कुप्पे उठाकर उनकी पूँछपर धारा गिरा रहे थे। बहुतसे पूँछको हाथोंसे थपथपाते थे, जिससे घृत या तैल, वस्त्र, रुईमें भीतर तक प्रवेश कर जाय। भूमिपर तैल-घृत न गिरे, इसकी वे सावधानी रख रहे थे।

अब आनन्द आवेगा। राक्षस उछल रहे थे- यह कूदेगा और चिल्लायेगा। अब आनन्द आवेगा। हनुमान भी मनमें प्रसन्न हो रहे थे- मैं कूदूँगा, चिल्लाऊँगा और सब राक्षस भागेंगे, चिल्लायेंगे। उनकी पूँछ पूरा तैल, घृत, वसा पाकर स्निग्ध हो चुकी थी।

अरी सीता। वह वानर पकड़ लिया गया है, जिसने तुमसे बातें की थीं। राक्षसियाँ दौड़ी-दौड़ी अशोकोद्यान पहुँची। उनको अब त्रिजटाका स्वप्न सत्य होता दीखता था। श्रीजानकीकी सहानुभूति अपेक्षित थी उन्हें किंतु अपने स्वभाव, संस्कारका क्या करें। उनकी वाणी सहज रूक्ष। उन्होंने समाचार दिया- उसे बाँधकर मारते-पीटते पूरे नगरमें घुमाया है। बड़ी दुर्गति की उसकी। उसकी पूँछमें वस्त्र लपेटकर उसे घृततैलादिसे भिगा रहे हैं। अब उसकी पूँछमें आग लगा देंगे। वह बन्दर जलनेसे कदाचित ही बचे।

राक्षसोंने पश्चिम द्वारपर बँधे हनुमानकी घृत-तैलसिक्त विशाल लांगूलमें सैकड़ों उल्मुक लेकर एक साथ अग्नि लगा दी। अब हनुमानने

सहसा अपना शरीर छोटा किया। केवल पूँछ विशाल बनी रही। शरीरको बाँधनेवाली रस्सियाँ ढीली होकर गिर पड़ीं। अब पवनपुत्र बन्धनसे स्वतंत्र हो गये। राक्षस भयसे भागे। उनका उत्साह भङ्ग हो गया; किंतु हनुमानने पूँछ घूमा दी। कूदकर पश्चिम द्वारसे एक स्तम्भ उखाड़ लिया। जो राक्षस बाँधने, पकड़नेवाले आसपास थे, वे पूँछकी लपटोंमें झुलस गये और स्तम्भके प्रहारसे मार दिये गये।

अग्निकी लपटें इतनी सुखद शीतल होती है ? हनुमान भी चौंकें वे जानते थे कि अग्निदेवने शैशवमें ही उनको अपनेसे अभयका वरदान दिया है; किंतु लपटें जलाती नहीं थी, तो भी उष्ण तो लग रही थीं। अचानक वे ऐसी शीतल हो गयीं जैसे शरीरको अङ्गराग लगाकर सहला रही हों। हनुमान्‌को स्वभावसे लगा- मेरे सर्वसमर्थ स्वामी श्रीरामकी असीम शक्ति अपने सेवककी रक्षार्थ सर्वत्र सतर्क रहती है। यह उसीका अचिन्त्य प्रभाव है।

हनुमानकी हुमारके साथ उनका जयघोष गूँजने लगा। उनकी पूँछ घूमने लगी और वे लमामें एकसे दूसरे भवनपर छलाँग लेने लगे। पश्चिम द्वार, उसपर लगे महायन्त्र प्रथम धक्केमें ध्वस्त हो गये। द्वार-रक्षक मारे गये।

पवनपुत्रका शरीर पर्वताकार हो गया था। उनके असह्य तेजके सम्मुख देख पाना कठिन था। वे प्रलयमर बने पल-पलपर विकट हुमार कर रहे थे। उनकी पूँछ उठती थी तो लगता था कि सूर्य भी उसकी लपटोंमें झुलस जायँगे। पवनदेव अपने पुत्रकी सहायतामें प्राणपणसे लगे, अपने उनचासों रूपोंसे अग्निको प्रज्वलित, प्रसारित कर रहे थे।

आञ्जने पाद-प्रहारसे भवन ध्वस्त कर रहे थे। करोंसे कंगूरे झटक देते थे। उनके वक्षके धक्केसे प्रासादोंके शिखर चूर हो रहे थे। पहिले उन्होंने चुन-चुनकर शस्त्रागार, धान्यागार, वाहनस्थान, सैन्यशिविर भस्म किये। इस प्रयासमें नगरके चारों द्वार गिरा दिये। पूरी परिखा पादाघातसे गिराकर खाईं पाट दी। सब महायन्त्र नष्ट कर दिये। इतना करके एक ओरसे लमा-दहन करने लगे।

सागर में कच्छप काँपने लगे, सर्प, नाग दहलने लगे। पृथ्वीपर भूकम्प आने लगा। गगन हिलता हुआ नजर आया। पर्वत धरणि पर धँसने लगे। उनश्वास मरुत चलने लगी। जैसे-जैसे अंजनीलाल बढ़ रहे थे आकाश-धरातल एक हुआ।

लमामें चारों ओर लपटें उठ रही थीं। राक्षस, राक्षसियाँ क्रन्दन कर रहे थे। गवाक्ष बन्द करो तो प्रतप्त स्वर्णका ताप असह्य था और गवाक्ष या द्वार खोलो तो प्रज्वलित पूँछ भीतर आकर पूरे कक्षमें आग लगा जाती थी। राक्षस अपनी स्त्रियों, बच्चोंको लेकर भाग रहे थे। वापी, सरोवर, सरिताके जलमें खड़े होनेपर भी परित्राण नहीं था। हनुमानकी जलती पूँछ वहाँ भी लोगोंको लपककर झुलसा जाती थी।

प्रत्येक दिशा में घूम-घूमकर वानरराज हनुमान नगर को जलाते थे। सायँ-सायँ कर ज्वाला सा विस्तार बढ़ने लगा और असुरों के घर-द्वार धायँ-धायँ कर जलने लगे। लंका के सभी नर-नारी व्याकुल होकर फिर रहे थे और ऐसी प्रचण्ड आग लगी की घर के घर खण्ड-खण्ड होकर गिर रहे थे। जब ऊपर की ओर लपटें उठने लगीं तब सूर्य का रथ भी रूक गया। सारा त्रिकूट पर्वत भभक उठा और सागर का भी जल खोलने लगा। लंका नगरी के नर-नारी सब प्रकार से हाहाकार मचाने लगे और कहने लगे लंकेश ने हमें मार डाला हो जायँ इसका सत्यानाश। बाहर जले, भीतर जलें, धरती जलें आकाश। जानकी तो हाथ आई नहीं और जान देने की घड़ी आ गयी।

तब यह सब देखकर दशकंधर भी हाहाकार कर उठा। होंठ काटकर दाँतों से अपने दोनों हाथों से मींज लिया। जब बुरे दिन आते है तो कोई सीध उपाय नहीं होता। सीधा व्यवसाय भी प्रतिकूल फल देता है। ईश्वर की माया अद्‌भुत है होनी का खेल निराला है। जब भगवान राम ही रूठे हो तो आगे कौन बचानेवाला है।

जिस अग्नि में जल पहुँचा तब विपरीत फल देने लगा। आग बुझाने के बदले तो जलने आहुति ने घी का सा काम किया और वह आग दूनी जलने लगी। मानो आकाश के झरने से पावक की धार झर रही हो। यह प्रकृति का चमत्कार देखकर अंजनीलाला हर्षित हुए। हनुमत को जब हँसते हुए देखा तब रावण खिसिया उठा।

अब इस समय लमामें मेरे लिये कौन-सा ऐसा कार्य बाकी रह गया है, जो इन राक्षसोंको अधिक संताप देनेवाला हो।

प्रमदावनको तो मैंने पहले ही उजाड़ दिया था, बड़े-बड़े राक्षसोंको भी मौतके घाट उतार दिया और रावणकी सेनाके भी एक अंशका संहार कर डाला। अब दुर्गका विध्वंस करना शेष रह गया।

ऐसा सोचकर जलती हुई पूँछके कारण बिजलीसहित मेघकी भाँति शोभा पानेवाले कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी लमाके महलोंपर घूमने लगे।

वे वानरवीर राक्षसोंके एक घरसे दूसरे घरपर पहुँचकर उद्यानों और राजभवनोंको देखते हुए निर्भय होकर विचरने लगे।

घूमते-घूमते वायुके समान बलवान् और महान् वेगशाली हनुमान उछलकर प्रहस्तके महलपर जा पहुँचे और उसमें आग लगाकर दूसरे

घरपर कूद पड़े। वह महापार्श्वका निवासस्थान था। पराक्रमी हनुमान्‌ने उसमें भी कालाग्निकी लपटोंके समान प्रज्वलित होनवाली आग फैला दी। तत्पश्चात् वे महातेजस्वी महाकपि क्रमश: वज्रदंष्ट्र, शुक्र और बुद्धिमान् सारणके घरोंपर कूदे और उनमें आग लगाकर आगे बढ़ गये।

इसके बाद वानरयूथपति हनुमानने इन्द्रविजयी मेघनादका घर जलाया। फिर जम्बुमाली और सुमालीके घरोंको फूँक दिया।

तदनन्तर रश्मिकेतु, सूर्यशत्रु, ह्रस्वकर्ण, दंष्ट्र, राक्षस रोमश, रणोन्मत्त मत्त, ध्वजग्रीव, भयानक विद्युजिह्व, हस्तिमु, कराल, विशाल, शोणिताक्ष, कुम्भकर्ण, मकराक्ष, नरान्तक, कुम्भ, दुरात्मा निकुम्भ, यज्ञशत्रु और ब्रह्मशत्रु आदि राक्षसोंके घरोंमें जा-जाकर उन्होंने आग लगायी। उस समय महातेजस्वी कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌ने केवल विभीषणका घर छोड़कर अन्य सब घरोंमें क्रमश: पहुँचकर उन सबमें आग लगा दी। सबके घरोंको लाँघते हुए शोभाशाली पराक्रमी हनुमान् राक्षसराज रावणके महलपर जा पहुँचे।

वही लमाके सब महलोंमें श्रेष्ठ, भाँति-भाँतिके रत्नोंसे विभूषित, मेरुपर्वतके समान ऊँचा और नाना प्रकारके माङ्गलिक उत्सवोंसे सुशोभित था। अपनी पूँछके अग्रभागमें प्रतिष्ठित हुई प्रज्वलित अग्निको उस महलमें छोड़कर वीरवर हनुमान् प्रलयकालके मेघकी भाँति भयानक गर्जना करने लगे।

हवाका सहारा पाकर वह प्रबल आग बड़े वेगसे बढ़ने लगी और कालाग्निके समान प्रज्वलित हो उठी।

वायु उस प्रज्वलित अग्निको सभी घरोंमें फैलाने लगी। सोनेकी खिड़कियोंसे सुशोभित, मोती और मणियोंद्वारा निर्मित तथा रत्नोंसे विभूषित ऊँचे-ऊँचे प्रासाद एवं सतमहले भवन फट-फटकर पृथ्वीपर गिरने लगे।

वे गिरते हुए भवन पुण्यका क्षय होनेपर आकाशसे नीचे गिरनेवाले सिद्धोंके घरोंके समान जान पड़ते थे। उस समय राक्षस अपने-अपने घरोंको बचाने-उनकी आग बुझानेके लिये इधर-उधर दौड़ने लगे। उनका उत्साह जाता रहा और उनकी श्री नष्ट हो गयी थी। उन सबका तुमुल आर्तनाद चारों ओर गूँजने लगा।

वे कहते थे- हाय। यह वानरके रूपमें साक्षात् अग्निदेवता ही आ पहुँचा है। कितनी ही स्त्रियाँ गोदमें बच्चे लिये सहसा क्रन्दन करती हुई नीचे गिर पड़ीं। कुछ राक्षसियोंके सारे अङ्ग आगकी लपेटमें आ गये, वे बाल बिखेरे अट्टालिकाओंसे नीचे गिर पड़ीं। गिरते समय वे आकाशमें स्थित मेघोंसे गिरनेवाली बिजलियोंके समान प्रकाशित होती थीं। जैसे आग सूखे काठ और तिनकोंको जलानेसे कभी तृप्त नहीं होती, उसी प्रकार हनुमान् बड़े-बड़े राक्षसोंके वध करनेसे तनिक भी तृप्त नहीं होते थे और हनुमान्‌जीके मारे हुए राक्षसोंको अपनी गोदमें धारण करनेसे इस वसुन्धाराका भी जी नहीं भरता था।

जैसे भगवान् रुद्रने पूर्वकालमें त्रिपुरको दग्ध किया था, उसी प्रकार हनुमानजीने लमापुरीको जला दिया। तत्पश्चात् लमापुरीके पर्वत-शिखरपर आग लगी, वहाँ अग्निदेवका बड़ा भयानक पराक्रम प्रकट हुआ। वेगशाली हनुमानकी लगायी हुई वह आग चारों ओर अपने ज्वालामण्डलको फैलाकर बड़े जोरसे प्रज्वलित हो उठी।

हवाका सहारा पाकर वह आग इतनी बढ़ गयी कि उसका रूप प्रलयकालीन अग्निके समान दिखायी देने लगा। उसकी ऊँची लपटें मानो स्वर्गलोकका स्पर्श कर रही थीं। लमाके भवनोंमें लगी हुई उस आगकी ज्वालामें धूमका नाम भी नहीं था। राक्षसोंके शरीररूपी घीकी आहुति पाकर उसकी ज्वालाएँ उत्तरोत्तर बढ़ रही थीं।

प्राणियोंके समुदाय, गृह और वृक्षोंसहित समस्त लमापुरीको सहसा दग्ध हुई देख बड़े-बड़े राक्षस झुंड़-के-झुंड़ एकत्र हो गये और वे सब-के-सब परस्पर इस प्रकार कहने लगे- यह देवताओंका राजा वज्रधारी इन्द्र अथवा साक्षात् यमराज तो नहीं है ? वरुण, वायु, रुद्र, अग्नि, सूर्य, कुबेर या चन्द्रमामेंसे तो कोई नहीं है ? यह वानर नहीं साक्षात् काल ही है। क्या सम्पूर्ण जगत्‌के पितामह चतुर्मुख ब्रह्माजीका प्रचण्ड कोप ही वानरका रूप धारण करके राक्षसोंका संहार करनेके लिये यहाँ उपस्थित हुआ है ? अथवा भगवान् विष्णुका महान् तेज जो अचिन्त्य, अव्यक्त, अनन्त और अद्वितीय है, अपनी मायासे वानरका शरीर ग्रहण करके राक्षसोंके विनाशके लिये तो इस समय नहीं आया है। इस प्रकार घोड़े, हाथी, रथ, पशु, पक्षी, वृक्ष तथा कितने ही राक्षसोंसहित लमापुरी सहसा दग्ध हो गयी। वहाँके निवासी दीनभावसे तुमुल नाद करते हुए फूट-फूटकर रोने लगे।

हनुमान्‌जीके क्रोध-बलसे अभिभूत हुई लमापुरी आगकी ज्वालासे घिर गयी थी। उसके प्रमुख प्रमुख वीर मार डाले गये थे। समस्त योद्धा तितर-बितर और उद्विग्न हो गये थे। इस प्रकार वह पुरी शनि के शापसे आक्रान्त हुई-सी जान पड़ती थी।

जब राक्षसराज रावण ने शनिग्रह को अपना बन्दी बना लिया और हनुमानजीने रावण के चंगुल से शनिको मुक्त किया। उसी समय

शनिने श्राप दिया कि यह लंकापुरी जलकर कोयला हो जायेगी। वह श्राप अब अभिभूत हुआ। सोनेकी लंका स्वर्ण की चमक से चारों ओरसे चमक रही थी, देदीप्यमान थी। वही लंका आज लंका दहन से कोयला बन गई, चमक चली गई, काली पड़ गईं। जबसे अब तक वहाँकी उपज काली हो गयी, वहाँके नर-नारी रंग में कालें हैं, वहाँ की भूमि और पत्थर काले हैं, वहाँपर काली लौंग और काली मिर्च का व्यवसाय होता है। वहाँकी पूरी उपज भी काली है। वहाँपर सर्व अधिक प्रिय जो पीला रंग था वह काले में बदल गया।

दशग्रीवने क्रोधित होकर कहा- हे काल तू कहाँ बैठा है ? कुछ कार्य नहीं कर रहा है। लंका में आग लगी हुई है और तू खड़ा-खड़ा ताक रहा है। इस विपत्ति काल में आ शीघ्र झपटकर बाहर आ। मैं तुझे आज्ञा देता हूँ इस वानर को भक्षण कर लें। जिस भाँति मदारी के रहते बंदर तरह-तरह के कर्तब दिखाते हैं वैसे ही रावण के प्रताप से यम और काल भी डरते थे। दशकंधर को कुपित देखकर काल भी कम्पित हो गया फिर वह प्रलयकाय की भाँति बजरंगी पर झपटा मारा। तब अंजनीलाल जय रघुराज की बोले और बोले तुझको ही संसार में काल कहते है क्या ? तू लोक-जीत, तू भुवन-जीत, जगजीत ऐसा लोग तेरा बखान करते है। पर मेरा यह शरीर तो रामदास है जो कालजीत कहलाता है। अरे काल मैं महाकाल हूँ, तुझ जैसे कराल को भी मैं विकराल हूँ। जिसके अधीन तेरी शक्ति है, उस महाशक्ति का मैं लाल हूँ। यह कहकर उस क्रूरकाल को उसी क्षण हनुमान ने झट से झपटे से पकड़ा। जैसे बाल्यकाल में छलांग मारकर सूर्य को अपने मुँह में रखा। पूरे त्रिभुवन में हाहाकार छा गया। इन्द्रपुर हिला, ब्रह्मासन डोला। कैलाश शिखर भी डोल गया, कैलाशनाथ का योगासन हिला। तब इन्द्र आदि सब देवता महावीर के पास प्रार्थना करने आये- हे बजरंगबली अब शान्त हो जाओ। देवतालोग सब विनय कर रहे है। प्रकृति का खेल मिट जायेगा इसलिए सब देव डर रहे है। तुम लंका को फूँको, जलाओं, सोने के महलों को तोड़ो पर हे महावीर हमारे आग्रह से इस समय काल को छोड़ो। देवताओं की विनती सुनकर हनुमान ने काल को छोड़ दिया।

तब दशानन आँख निकालकर गरजा। इस वानरको मार दो। दशग्रीवने अपने सदनसे बाहर आने का साहस नहीं किया। वहींसे उसने आज्ञा दी; किंतु जो अस्त्र-शस्त्र लेकर निकले, उन्हें प्रहारसे पहिले ही वानरकी प्रज्वलित पूँछने अपनी लपेटमें ले लिया। मेघनाद तक छिपा बैठा था। जीवित जलनेका उत्साह उसमें भी नहीं था।

वर्षा करके अग्नि बुझा दो और वानरको समुद्रमें बहा दो। राक्षसेन्द्रने मेघोंको आज्ञा दी। आकाश काली घटाओंसे ढक गया। विद्युत कड़कने लगी। राक्षसोंको तनिक आशा हुई कि अब अग्नि बुझ जायगी।

यह क्या ? वर्षाकी धारा पड़ती है तो अग्नि ऐसी प्रचण्ड होती है, जैसे उसमें घृताहुति पड़ी हो। प्रतप्त स्वर्ण भवनोंका प्रबलतम ताप, पानी पड़ते ही विखण्डित होता है और विखण्डित जलकी दोनों बाष्पें तो अग्निको बढ़ाती ही हैं। वर्षाके धाराबद्ध वेगसे बढ़ी लपटें आकाश तक जा पहुँची। लंका लपटोंमें अदृश्यप्राय हो गयी।

बचाओ। कोई प्राण बचाओ। इस दुष्ट दशग्रीवने घर बैठे मृत्यु बुलायी थी। जो पहिले वानरको गालिया दें रहे थे, हँस रहे थे, ताली बजा रहे थे, वही अब राक्षसेश्वरको कोस रहे थे- हमने पहिले कहा था कि यह वानर नहीं है। वानरके रूपमें कोई देवता है। तब बीस लोचनके अन्धेको कुछ दीखा ही नहीं। बाप रे। यह पानीसे प्रज्वलित होनेवाला प्रलयानल।

वर्षा बन्द करो। कालको बुलाओ। दशग्रीवको मेघोंको रोकना पड़ा और काल सुबेलपर बन्दी होता भी तो वहाँ तक हनुमान्‌की पूँछ किसीको पहुँचने देती ?

दुहाई रामदूत। तुम्हें अपने स्वामी श्रीरामकी दुहाई। हनुमान कुम्भकर्णकी गुहा-द्वारपर पहुँचे। उन्होंने पूँछ भीतर डालना चाहा तो कुम्भकर्णकी पत्नी आँचल फैलाकर कातर कण्ठसे चिल्लायी- मेरे पति निर्दोष हैं। सो रहे हैं। इन्हें जलाओ मत।

हनुमान तत्काल उस गुहासे दूर कूद गये। इस प्रकार वह गुफा अग्नि-संस्कार शुद्ध होनेसे रह गयी। राक्षसोंके अनाचार, मद्यपान, मांसाहारसे अपवित्र लमाको हनुमान अग्नि-संस्कार-शुद्ध करनेमें लगे थे। आगे उनके आराध्य यह पुरी विभीषणको देनेवाले हैं तो इसे शुद्ध कर देना ही उचित था।

अब पुरीमें स्थान चुन-चुनकर अग्नि लगाना अनावश्यक हो गया था। समूची पुरी प्रज्वलित थी। जहाँ लपटें तनिक शिथिल होती थीं, हनुमान्‌की पूँछ वहीं पहुँची जाती थी। पुरीमें प्रतिक्षण विस्फोट भयमर नाद हो रहा था। कहीं स्वर्ण पिघलनेसे भवन गिरते थे, कहीं कुप्पे अथवा कोई अस्त्र फटते थे।

ताप-प्राणान्तक ताप और ऊपरसे गूँजती हृदय विदीर्ण करती पवनपुत्रकी हुँकार। उनकी जलती पूँछकी ज्वाला राक्षसोंको खदेड़-

खदेड़कर जला रही थी। लोगोंके शरीरके वस्त्र जलने लगे तो उन्हें उन्होंने उतार फेंके। कुलवधुएँ तक नग्न भाग रही थीं और उनके केश भी झुलस गये थे। जो राक्षस इस प्रलयसे बचे भी, उनके भी श्मश्रु, केश जल गये थे। लमामें झुलसे मुख-मस्तक, बिना श्मश्रु, केशके ही अधिकांश राक्षस-राक्षसियाँ पीछे बची थीं।

आहारके लिए अथवा क्रीड़ाके लिए पाले गये पशु बहुत थे लमामें। महिष, बकरे, गर्दभ, खच्चर, व्याघ्र, सिंह और अश्व-गज तो थे ही। ये पशु अपना आश्रय-स्थान ध्वस्त होनेसे मार्गोंमें ज्वालासे व्याकुल, जलते-झुलसते भाग रहे थे। ये राक्षसोंको कुचलते, घायल करते उन्मत्त होकर दौड़ रहे थे। इनमें से अधिकांशको राक्षसोंने मार दिया। इसमें दशग्रीवकी आज्ञा भी अपेक्षित नहीं हुई। इनको न मारा जाय तो ये राक्षसोंको ही मार दे रहे थे।

क्रन्दन, चीत्कार, भाग-दौड़ और शवोंके जलनेकी दुर्गन्धि- लमा महाश्मशान भी कहने योग्य नहीं रह गयी थी। प्रलयके समय जब प्रलयमर तृतीय नेत्र खोले उद्दाम ताण्डव करते हैं, कदाचित ऐसा ही दृश्य होता होगा।

दशग्रीवका नगर-दुर्दान्त सुरासुरजी दशग्रीवकी राजधानी अनाथके झोपड़ेके समान जल रही थी और वह स्वयं, जल रही थी और वह स्वयं, उसका इन्द्रजित पुत्र, उसके दूसरे महाशूर अपने परिवारोंको स्त्रियोंको लिये मूषकोंके समान भूगर्भ गृहोंमें दुबके थे। वहाँ भी प्रबलतम तापसे शुष्क कण्ठ व्याकुल हो रहे थे। किसीको कुछ करणीय सूझ नहीं रहा था।

हनुमानने नगर परिखाका नाम नहीं छोड़ा। पूरी खाई पाट दी। खाईके मकरादि जन्तु मारे गये। नगरकी सरिताका, सरोवरोंका जल उबलने लगा। पक्षी पहिले ही भाग गये थे और सुवेल अथवा रजत शिखरपर मँडराते क्रन्दन करते थे। किसी सरोवरमें कमल, कुमुद कुछ नहीं रहा। मध्यके स्वर्ण-शिखरपर बसी पुरी वृक्ष-लताओंसे रहित हो गयी। अवश्य ही पिघलते स्वर्णका ताप और ज्योति उधर दृष्टि नहीं टिकने देती थी।

नीचे अधिकांश भवन ध्वस्त हो गये। राक्षस भूगर्भ गृहोंमें जा छिपे। भवनोंकी सामग्री, वस्त्र, खाद्य सबकी आहुति हो चुकी। एक नहीं, कई-कई बार हनुमानने घूम-घूमकर दशाननकी पुरीपर अपनी पूँछ फिरायी। इस सब समय उन्हें विभीषणका स्मरण बना रहा। वे विभीषणके भवनसे दूर रहे। उनकी पूँछ भूलसे भी उधर नहीं भटकी।

विभीषणके उद्यानकी तुलसी तकको ताप नहीं पहुँचा। इस सुरक्षाके कारण विभीषणके भवनके दोनों ओरके दो भवन भी ज्वालासे अस्पृष्ट हो। राम-भक्तके पड़ोसमें बसनेका पुरस्कार मिला यह उन्हें। संयोगकी बात थी कि उनमें-से एक भवन त्रिजटाका था और दूसरी और विभीषणके ही मन्त्रियोंका।

विभीषणका भवन रावणके राजप्रासादसे दूर हटकर था; किंतु राजप्रासादकी ओर मध्यमें कोई दूसरा भवन नहीं था। एकान्त-प्रिय विभीषणने भवन ऐसा चुना था कि उनके पीछे भी भवन नहीं थे। उधर सुवेल शिखर तथा समुद्र पड़ता था। केवल दोनों पार्श्वोंमें भवन थे और वे भी केवल दो। इसलिए रात्रिमें सीतान्वेषण के समय हनुमान बहुत पीछे इधर पहुँचे थे। लमा-दहनके समय भी इस एक ओर बने भवनको सुरक्षित छोड़ देनेमें उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई थी।

वानरने विभीषणका भवन छोड़ दिया। हनुमानजीके चले जानेपर लमामें यह चर्चा चली।

विभीषणने उसे प्राणदण्ड पानेसे बचानेकी चेष्टा की थी। उन्होंने ही उसे दूत कहकर अबध्य कहा था। सबको ही यह समाधान प्राप्त था। वानर अकृतज्ञ नहीं था। उसने अपने प्राण बचानेका प्रयत्न करनेवालेका सदन उसे शत्रुका भाई जानते हुए भी छोड़ दिया।

विभीषणके सम्बन्धमें दशग्रीव सन्दिग्ध अवश्य हो उठा इस घटनासे; किंतु स्पष्ट सन्देह व्यक्त करनेका कोई कारण उसे भी नहीं मिला।

पवनकुमार वानरवीर हनुमानजी उत्तमोत्तम वृक्षोंसे भरे हुए वनको उजाड़कर, युद्धमें बड़े-बड़े राक्षसोंको मारकर तथा सुन्दर महलोंसे सुशोभित लमापुरीको जलाकर शान्त हो गये।

उनके इस कार्यसे सभी देवता, मुनिवर, गन्धर्व, विद्याधर, नाग तथा सम्पूर्ण महान् प्राणी अत्यन्त प्रसन्न हुए। उनके उस हर्षकी कहीं तुलना नहीं थी। इस प्रकार सारी लमापुरीको पीड़ा दे वानरशिरोमणि महाकपि हनुमान्ने उस समुद्रके जलमें अपनी पूँछकी आग बुझायी। वानरवीर हनुमानने जब देखा कि सारी लमापुरी जल रही है, वहाँके निवासियोंपर छा गया है और राक्षसगण अत्यन्त भयभीत हो गये हैं, तब उनके मनमें सीताके दग्ध होनेकी आशमासे बड़ी चिन्ता हुई।

क्रोधसे भर जानेपर कौन पुरुष पाप नहीं करता ? क्रोधके वशीभूत हुआ मनुष्य गुरुजनोंकी भी हत्या कर सकता है। क्रोधी मानव साधु

पुरुषोंपर भी कटुवचनोंद्वारा आक्षेप करने लगता है।

अधिक कुपित हुआ मनुष्य कभी इस बातका विचार नहीं करता कि मुँहसे क्या कहना चाहिये और क्या नहीं ? क्रोधीके लिये कोई ऐसा बुरा काम नहीं, जिसे वह न कर सके और कोई ऐसी बुरी बात नहीं, जिसे वह मुँहसे न निकाल सके।

जो हृदयमें उत्पन्न हुए क्रोधको क्षमाके द्वारा उसी तरह निकाल देता है, जैसे साँप अपनी पुरानी केंचुलको छोड़ देता है, वही पुरुष कहलाता है। हनुमानने लमा-दहन पूरा कर लिया तब समुद्रमें कूद गये। उन्होंने पूँछ सागरजलमें बुझा दी। समुद्रकी लहरोंने उन्हें स्नान कराया और उनकी पूँछमें लिपटे जले, अधजले वस्त्रोंको, रुईको धोकर स्वच्छ कर दिया।

हाय। मुझ मूर्खने तो सब कार्य ही नष्ट कर दिया। आवेश शान्त होते ही स्मरण आया- सीताजी भी जल गयी होंगी। वे तो रावणके अन्त:पुरसे सटी वाटिकामें ही थीं। मैंने क्रोधवश रावणके सदनमें बार-बार अग्नि लगाया है। इतने प्रचण्ड तापमें वे कैसे बची होंगी। क्रोधमें मैंने महापाप किया। मैं अधम दूत हूँ। क्या मुख दिखलाऊँगा किसीको। मेरा मरण ही अब उत्तम है।

मेरी बुद्धि बड़ी खोटी है, मैं निर्लज्ज और महान् पापाचारी हूँ। मैंने सीताकी रक्षाका कोई विचार न करके लमामें आग लगा दी और इस तरह अपने स्वामीकी ही हत्या कर डाली। मुझे धिक्कार है।

यदि यह सारी लमा जल गयी तो आर्या जानकी भी निश्चय ही उसमें दग्ध हो गयी होंगी। ऐसा करके मैंने अनजानमें अपने स्वामीका सारा काम ही चौपट कर डाला। जिस कार्यकी सिद्धिके लिये यह सारा उद्योग किया गया था, वह कार्य ही मैंने नष्ट कर दिया; क्योंकि लमा जलाते समय मैंने सीताकी रक्षा नहीं की। इसमें संदेह नहीं कि यह लमा-दहन एक छोटा-सा कार्य शेष रह गया था, जिसे मैंने पूर्ण किया; परंतु क्रोधसे पागल होनेके कारण मैंने श्रीरामके कार्यकी तो जड़ ही काट डाली। लमाका कोई भी भाग ऐसा नहीं दिखायी देता, जहाँ आग न लगी हो। सारी पुरी ही मैंने भस्म कर डाली है, अत: जानकी नष्ट हो गयी, यह बात स्वत: स्पष्ट हो जाती है।

यदि अपनी विपरीत बुद्धिके कारण मैंने सारा काम चौपट कर दिया तो यहीं आज मेरे प्राणोंका भी विसर्जन हो जाना चाहिये। यही मुझे अच्छा जान पड़ता है। क्या मैं अब जलती आगमें कूद पड़ूँ या वडवानलके मुखमें ? अथवा समुद्रमें निवास करनेवाले जल-जन्तुओंको ही यहाँ अपना शरीर समर्पित कर दूँ। जब मैंने सारा कार्य ही नष्ट कर दिया तब अब जीते-जी कैसे वानरराज सुग्रीव अथवा उन दोनों पुरुषसिंह श्रीराम और लक्ष्मणका दर्शन कर सकता हूँ या उन्हें अपना मुँह दिखा सकता हूँ ?

मैंने रोषके दोषसे तीनों लोकोंमें विख्यात इस वानरोचित चपलताका ही यहाँ प्रदर्शन किया है।

सीताके नष्ट हो जानेसे वे दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण भी नष्ट हो जायँगे। उन दोनोंका नाश होनेपर बन्धु-बान्धवोंसहित सुग्रीव भी जीवित नहीं रहेंगे। अत: सीताकी रक्षा न करनेके कारण मैंने धर्म और अर्थके संग्रहको नष्ट कर दिया, अतएव मैं बड़ा भाग्यहीन हूँ। मेरा हृदय रोषदोषके वशीभूत हो गया है, इसलिये मैं अवश्य ही समस्त लोकका विनाशक हो गया हूँ- मुझे सम्पूर्ण जगत्के विनाशके पापका भागी होना पड़ेगा। अथवा सम्भव है सर्वाङ्गसुन्दरी सीता अपने ही तेजसे सुरक्षित हों।

इतने प्रचण्ड पौरुषके पश्चात् हतोत्साह, पश्चातापसे अत्यन्त पीड़ित पवनपुत्रने समुद्रमें ही अपना वक्ष विदीर्ण करनेका निश्चय करके आराध्यका स्मरण किया- स्वामी। दयामय। इस अज्ञ अपराधी भृत्यको क्षमा करना। श्रीराम।

सहसा हाथ रुक गया। सीता अपने तेजसे ही सुरक्षित नहीं होंगी ? हृदयने कहा- श्रीरामके प्रभावसे अग्नि तुम्हारे लिए शीतल हो गया, तुम्हारी बालधिका एक बाल नहीं जला, तो अग्नि श्रीरामकी प्रियाको कैसे जला सकता है ?

कल्याणी जनकनन्दिनीका नाश कदापि नहीं होगा; क्योंकि आग आगको नहीं जलाती है। सीता अमिततेजस्वी धर्मात्मा भगवान् श्रीरामकी पत्नी हैं। वे अपने चरित्रके बलसे पातिव्रत्यके प्रभावसे सुरक्षित हैं। आग उन्हें छू भी नहीं सकती। यह दाहक एवं अविनाशी अग्नि सर्वत्र अपना प्रभाव रखती है, सबको जला सकती है, तो भी यह जिनके प्रभावसे मेरी पूँछको नहीं जला पाती है, उन्हीं साक्षात् माता जानकीको कैसे जला सकेगी ? वे सोचने लगी- तपस्या, सत्यभाषण तथा पतिमें अनन्य भक्तिके कारण आर्या सीता ही अग्निको जला सकती हैं, आग उन्हें नहीं जला सकती।

अहो। हनुमान्जीने राक्षसोंके घरोंमें दु:सह एवं भयंकर आग लगाकर बड़ा ही अद्भुत और दुष्कर कार्य किया है।

साधुके अपमानका यह फल है कि नगर अनाथके नगरकी तरह जल रहा है। हनुमानजीने एक ही क्षणमें सारा नगर जला डाला। एक विभीषणका घर नहीं जलाया। शिवजी कहते हैं- हे पार्वती। जिन्होंने अग्निको बनाया, हनुमानजी उन्हींके दूत हैं। इसी कारण वे अग्निसे

नहीं जले। हनुमानजीने उलट-पलटकर एक ओरसे दूसरी ओरतक सारी लमा जला दी। फिर वे समुद्रमें कूद पड़े।

समुद्र ने यह बात कही- अपनी पूँछ बाहर रखो; मैं लहरों से पानी उछालता हूँ। यह बात मानकर हनुमान फिर समुद्र तट पर बैठ गया। समुद्र ने तत्क्षण लहरों से पानी उछाल दिया और उसकी पूँछ को बुझाकर ठण्डा कर दिया। उस समय हनुमान के भाल पर श्रम से पसीना उत्पन्न हो गया था। उस पसीने की बूँद समुद्र में गिर गयी उसे एक मछली ने निगल लिया। फलत: उसके मकरध्वज नामक एक पुत्र उत्पन्न हो गया, जो हनुमान का पुत्र कहाता है।

घरमेंसे भागे हुए राक्षसों, बालकों और वृद्धोंसे भरी हुई सारी लमा जन-कोलाहलसे परिपूर्ण हो चीत्कार करती हुई-सी जान पड़ती है। पर्वतकी कन्दराओं, अटारियों, परकोटों और नगरके फाटकोंसहित यह सारी लमा नगरी दग्ध हो गयी; परंतु सीतापर आँच नहीं आयी। यह हमारे लिये बड़ी अद्भुत और आश्चर्यकी बात है।

राजकुमारी सीताको कोई क्षति नहीं पहुँची है, यह जानकर कपिवर हनुमान्‌जीने अपना सम्पूर्ण मनोरथ सफल समझा और पुन: उनका प्रत्यक्ष दर्शन करके लौट जानेका विचार किया। तभी समुद्रतटसे भेरी-घोषके साथ होती घोषणा श्रवणमें पड़ी- आश्चर्य है, सीता और वह शिंशुपा वृक्ष जिसके नीचे वह बैठी है, तनिक भी नहीं झुलसा। यह कालाग्नि ही कपि बनकर आया था। उसने विभीषणका भवन और सीताका वृक्ष बचा दिया है। राजसदन, शस्त्रागार, महाद्वार, प्रहस्त- महापार्श्वादिके गृह, प्रेक्षागार, गजशाला, उद्यान सब ध्वस्त हो गये। भेरी-घोषसे घोषणा हो रही थी- किंतु अब भयकी बात नहीं है। उत्पाती वानर चला गया लगता है। वह कहीं दीखे भी तो राक्षसेन्द्रकी आज्ञा है, कोई उसके समीप न जाय। उसे जानेमें कोई बाधा न दी जाय।

लोग अपने भवनोंको लौटें। राक्षसेन्द्र शीघ्र भवनोंको पूर्ववत बनवा देंगे। सबके सदनोंमें आवश्यक सामग्री तत्काल पहुँचानेकी व्यवस्था कर दी गयी है। भेरी-घोष सुनकर हनुमानका मनस्ताप शान्त हो गया। दशग्रीवकी तत्परताकी मनमें प्रशंसा की उन्होंने। घोषणा हो रही थी- आहतोंकी चिकित्सा, व्रणरोपणादिमें वैद्य श्रेष्ठ सुषेण सहायकोंके साथ लग गये हैं। सुलगती अग्निको अब मेघ शान्त कर रहे हैं। भय त्याग दो। मृत स्वजनोंका शव प्राप्त हो तो उसका संस्कार कर दो। नगरको स्वच्छ करने तथा इसके पुनर्निर्माणमें शासनकी सहायता करो।

८) हनुमान का सीतासे मिलकर श्रीरामके पास लौटना- तदनन्तर हनुमान्‌जी अशोकवृक्षके नीचे बैठी हुई जानकीजीके पास गये और उन्हें प्रणाम करके बोले- आर्ये। सौभाग्यकी बात है कि इस समय मैं आपको सकुशल देख रहा हूँ।

अम्ब। आपके अनुग्रहसे और श्रीरघुनाथकी कृपासे दशग्रीव दलित-दर्प हो गया। हनुमानने समुद्र-स्नानके पश्चात् छलाँग लगायी और सीधे अशोकोपवनमें जाकर श्रीजानकीके सम्मुख प्रणिपात किया। अब उन्हें न छोटा रूप बनानेकी आवश्यकता थी, न छिपकर आने की। उन्हें देखते ही राक्षसियाँ भयके मारे दूर भाग गयीं। हाथ जोड़कर खड़े होकर बोले- मैं आराध्यके आनेका पथ आपकी अनुकम्पासे प्रशस्त कर सका। यहाँ जो देखना था, सब देख चुका। अब आप मुझे अनुमति दें।

वत्स। तुम्हारा पराक्रम अद्‌भुत है। तुम अकेले ही स्वामीका कार्य करनेमें सक्षम हो। श्रीजानकीने हर्ष और स्नेहसे कहा- किंतु उनका सुयश इसमें है कि वे आवें, अपने बाणोंसे लमा ध्वस्त करके मुझे ले जायँ। तुम बहुत श्रान्त हुए हो, एक दिन विश्राम करके तब जाना ठीक होता।

सीता अपने पतिके स्नेहमें डूबी हुई थीं। वे हनुमान्‌जीको प्रस्थान करनेके लिये उद्यत जान उन्हें बारंबार देखती हुई बोलीं- तात। निष्पाप वानरवीर। यदि तुम उचित समझो तो एक दिन और यहाँ किसी गुप्त स्थानमें ठहर जाओ, आज विश्राम करके कल चले जाना। वानरप्रवर। तुम्हारे निकट रहनेसे मुझ मन्दभागिनीका अपार शोक भी थोड़ी देरके लिये कम हो जायगा। कपिश्रेष्ठ। वानरशिरोमणे। जब तुम चले जाओगे, तब फिर तुम्हारे आनेतक मेरे प्राण रहेंगे या नहीं, इसका कोई विश्वास नहीं है। वीर। मुझपर दु:ख-पर-दु:ख पड़ते गये हैं। मैं मानसिक शोकसे दिन-दिन दुर्बल होती जा रही हूँ। अब तुम्हारा दर्शन न होना मेरे हृदयको और भी विदीर्ण करता रहेगा। वीर। मेरे सामने यह संदेह अभीतक बना ही हुआ है कि बड़े-बड़े वानरों और रीछोंके सहायक होनेपर भी महाबली सुग्रीव इस दुर्लङ्घ्य समुद्रको कैसे पार करेंगे ? उनकी सेनाके वे वानर और भालू तथा वे दोनों राजकुमार श्रीराम और लक्ष्मण भी इस महासागरको कैसे लाँघ सकेंगे?

तीन ही प्राणियोंमें इस समुद्रको लाँघनेकी शक्ति है- तुममें, गरुड़में अथवा वायुदेवतामें। शत्रुवीरोंका संहार करेनवाले कपिश्रेष्ठ। इसमें संदेह नहीं कि इस कार्यको सिद्ध करनेमें तुम अकेले ही पूर्ण समर्थ हो; परंतु तुम्हारेद्वारा जो विजयरूप फलकी प्राप्ति होगी, उससे तुम्हारा

ही यश बढ़ेगा, भगवान् श्रीरामका नहीं।

आपके आशीर्वादसे मुझे तनिक भी श्रान्ति नहीं है। हनुमानने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाया- मेरा यहाँ रुकना अनुचित है। वहाँ श्रीराम अत्यन्त व्याकुल होंगे और यहाँ रावण मेरे रुकनेसे आपको अधिक तङ्ग करेगा। मुझे भी शान्तिसे बैठने नहीं देगा। देवि। वानर और भालुओंकी सेनाओंके स्वामी कपिश्रेष्ठ सुग्रीव बड़े शक्तिशाली पुरुष हैं। वे तुम्हारे उद्धारके लिये प्रतिज्ञा कर चुके हैं। विदेहनन्दिनि। अत: वे वानरराज सुग्रीव सहस्त्रों कोटि वानरोंसे घिरे हुए तुरंत यहाँ आयेंगे।

साथ ही वे दोनों वीर नरश्रेष्ठ श्रीराम और लक्ष्मण भी एक साथ आकर अपने सायकोंसे इस लमापुरीका विध्वंस कर डालेंगे। इसलिये आप धैर्य धारण करें। आप समयकी प्रतीक्षा करें। रावण शीघ्र ही रणभूमिमें श्रीरामके हाथसे मारा जायगा, यह आप अपनी आँखों देखेंगी। पुत्र, मन्त्री और भाई-बन्धुओंसहित राक्षसराज रावणके मारे जानेपर आप श्रीरामके साथ उसी प्रकार मिलेंगी, जैसे रोहिणी चन्द्रमासे मिलती है। विदेहनन्दिनी सीताको इस प्रकार आश्वासन दे वहाँसे जानेका विचार करके पवनकुमार हनुमान्ने उन्हें प्रणाम किया। वे बड़े-बड़े राक्षसोंको मारकर अपने महान् बलका परिचय दे वहाँ ख्याति प्राप्त कर चुके थे। उन्होंने सीताको आश्वासन दे, लमापुरीको व्याकुल करके, रावणको चकमा देकर, उसे अपना भयानक बल दिखाया, वैदेहीको प्रणाम करके पुन: समुद्रके बीचसे होकर लौट जानेका विचार किया। तुम्हारा मार्ग मङ्गलमय हो। श्रीवैदेहीने आशीर्वाद दिया- स्वामी जैसे शीघ्र आवें, वही करना।

तब हनुमान ने माता सीतासे पहचान के बतौर वह निशानी माँगी और श्रीराम को क्या संदेश देना है। तब माता सीताने अपनी चूड़ामणि निकालकर दी और कहा प्रभु श्रीराम के चरणों में रख देना और मेरी तरफ से यह निवेदन कर देना की जो बाण चित्रकूट में जयन्त काक पर छोड़ा था वह कहाँ गया, यदि एक मास के भीतर प्रभु आकर मुझे नहीं छुड़ायेंगे तब मुझे जीता नहीं पायेंगे। मैं छातीपर पत्थर सा रख कर तुम्हें विदा कर रही हूँ। परवश होकर धीर धारण कर रही है।

आप आश्वस्त रहें। वे मेरे पहुँचते ही प्रस्थान करेंगे ? हनुमानने पुन: प्रणिपात किया और वहाँसे कूदकर अरिष्ट पर्वतपर-रजत-शिखरपर पहुँचे। वहाँसे उन्होंने कूदनेसे पूर्व जो गर्जना की, समूची लमा काँप उठी। बहुत अधिक लोग खड़ेसे गिर पड़े। राक्षस इधर-उधर भयसे भागने लगे।

सुबेलपर शनिदेव इसी गर्जनाकी प्रतीक्षामें थे। अब अपने लोक प्रस्थानसे पूर्व उन्होंने दृष्टि उठाकर लमाको देखा। लमाका स्वर्ण-शिखर और भवनोंका सम्पूर्ण स्वर्ण, भित्तियाँ आदि तत्काल काले पत्थरमें परिवर्तित हो गयीं। अब भी लक्षद्वीप समूह इन काले झुलसे पत्थरोंसे परिपूर्ण है। लंकाके आसपास का हिन्द महासागर इसका पानी भी काला है। इसके आसपास के अंदमान, निकोबार द्वीप में काले पानी की सजा के लिये अपराधियोंको भेजा जाता है। लंका दहन के पश्चात और शनि के श्राप से पूरी लंका काले रूप रंग में परिवर्तित हो गयी।

क्या ? यह क्या हुआ ? दशग्रीवके सभी मन्त्री चौंके। उन सबने देखा भवनोंकी भित्तियोंको, पिघले स्वर्णको काले पाषाणमें परिवर्तित होते। स्वर्ण भी पाषाण बन जाता है ?

पाषाणके भवन स्वर्णसे अधिक सुखद होते हैं। दशग्रीवने अपने मन्त्रियोंका चौंकना देखा तो हँसकर बोला- अब अग्नि लगनेपर ये न ताप देंगे, न पिघलकर बहेंगे। वह उत्पाती कपि चला गया, यह सूचना है। वह जाते-जाते हमारी यह सेवा कर गया।

वानर चला गया। इस बातसे सबको आश्वासन ही मिला; किंतु सबके हृदयमें बैठ गया- वह इतना प्रभावशाली कि जब तक रहा, लमाका स्वर्ण, स्वर्ण बना रहा और उसने यह भूमि छोड़ी तो यहाँकी समस्त श्री समेटता गया। यहाँके स्वर्णको झुलसे पत्थर बना गया? वह कुछ सदाको तो गया नहीं। अब वह अपने स्वामीको और पता नहीं कितने अपने जैसे साथियोंको लेकर लौटेगा।

चलते समय उन्होंने महाध्वनिसे भारी गर्जन किया, जिसे सुनकर राक्षसोंकी स्त्रियोंके गर्भ गिरने लगे। समुद्र लाँघकर वे इस पार आये और उन्होंने वानरोंको किलकिला शब्द हर्षध्वनि सुनाया।

अब प्रथम कार्य है, ध्वस्त परिखा एवं भवनोंका शीघ्र पुनर्निर्माण। दशग्रीवने सबको दूसरे कार्यमें अविलम्ब लगा देना ही इस आतमके विस्मरणका उपाय समझा- कोई बाहरी सहायता इस कार्यमें नहीं मिलेगी। किसीको भी आलस्य करते पाया गया तो क्षमा नहीं किया जायगा। अन्न-भण्डार, शस्त्रागार, अश्व-गजादिके नष्ट होनेकी चिन्ता किसीको नहीं करनी थी। नवनिधियाँ दशग्रीवके समीप थीं। सभी सिद्धियाँ उसकी सेविका थीं। अत: सम्पत्ति, अन्न-धन तो तत्काल भर जाना था। बन तो जाती पुरी भी पूर्ववत् क्योंकि विश्वकर्मा

रावणके आदेशकी उपेक्षा नहीं कर सकते थे। दानव विश्वकर्मा मय स्वयं दशग्रीवके स्वसुर थे; किंतु रावण नहीं चाहता था कि देवता अथवा दानव देखें कि अकेले वानरने उसकी पुरीकी कैसी दुर्गति की है। अत: पुरीका पुनर्निर्माण करनेमें उसने किसी बाहरी व्यक्तिको बुलाना अस्वीकार कर दिया। यह कार्य, लमाके ही शिल्पियोंको- वास्तु विशेषज्ञोंको करना था। स्वयं दशग्रीव इसकी देखरेखमें लग गया। अनेकानेक झरनोंके कलकल नादसे वह अरिष्टगिरि स्पष्टतया गीत-सा गा रहा था। ऊँचे-ऊँचे देवदारु वृक्षोंके कारण मानो हाथ ऊपर उठाये खड़ा था। वायुके झोंके खाकर हिलते और मधुर ध्वनि करते बाँसोंसे उपलक्षित होनेवाला वह पर्वत मानो बाँसुरी बजा रहा था। भयानक विषधर सर्पोंके फुंकारसे लंबी साँस खींचता-सा जान पड़ता था।

मेघमालाओंसे अलंकृत शिखरोंद्वारा वह आकाशमें अँगड़ाई- सी ले रहा था। अनेकानेक श्रृङ्गोंसे व्याप्त तथा बहुत-सी कन्दराओंसे सुशोभित था। नाना प्रकारके पशु वहाँ सब ओर भरे हुए थे। विविध धातुओंके पिघलनेसे उसकी बड़ी शोभा हो रही थी। वह पर्वत बहुसंख्यक झरनोंसे विभूषित तथा राशि-राशि शिलाओंसे भरा हुआ था। महर्षि, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर और नागगण वहाँ निवास करते थे। लताओं और वृक्षोंद्वारा वह सब ओरसे आच्छादित था। उसकी कन्दराओंमें सिंह दहाड़ रहे थे। उस पर्वतके रमणीय शिखरोंपर जो शिलाएँ थीं, वे उनके पैरोंके आघातसे भारी आवाजके साथ चूर-चूर होकर बिखर जाती थीं। उस शैलराज अरिष्टपर आरूढ़ हो महाकपि हनुमान्‌जीने समुद्रके दक्षिण तटसे उत्तर तटपर जानेकी इच्छासे अपने शरीरको बहुत बड़ा बना लिया।

हनुमान्‌जीके पैरोंका दबाव पड़नेके कारण उस श्रेष्ठ पर्वतसे बड़ी भयंकर आवाज हुई और वह अपने काँपते हुए शिखरों, टूटकर गिरते हुए वृक्षों तथा भाँति-भाँतिके प्राणियोंसहित तत्काल धरतीमें धँस गया। उस समय उस पर्वतकी कन्दराओंमें रहकर दबे हुए महाबली सिंहोंका भयंकर नाद आकाशको फाड़ता हुआ-सा सुनायी दे रहा था। भयके कारण जिनके वस्त्र ढीले पड़ गये थे और आभूषण उलट-पलट गये थे, वे विद्याधरियाँ सहसा उस पर्वतसे ऊपरकी ओर उड़ चलीं। किन्नर, नाग, गन्धर्व, यक्ष और विद्याधर उस धँसते हुए पर्वतको छोड़कर आकाशमें स्थित हो गये। बलवान् हनुमान्‌जीके वेगसे दबकर वह शोभाशाली महीधर वृक्षों और ऊँचे शिखरोंसहित रसातलमें चला गया। अरिष्ट पर्वत तीस योजन ऊँचा और दस योजन चौड़ा था। फिर भी उनके पैरोंसे दबकर भूमिके बराबर हो गया।

जिसकी ऊँची-ऊँची तरङ्गें उठकर अपने किनारोंका चुम्बन करती थीं, उस खारे पानीके भयानक समुद्रको लीलापूर्वक लाँघ जानेकी इच्छासे हनुमान्‌जी आकाशमें उड़ान भरी। सन्देह नहीं कि पवनपुत्र कृत-कार्य हुए। समुद्रतटपर प्रतीक्षा करते वानरोंसे जाम्बवानने कहा- यह गर्जना उन्हींकी है। वह आकाशमें लहराती उनकी लांगूल दीख रही है। चरम असफलता की स्थिति भी हो सकती है, युवराज। जांबवान धीमे स्वर में बोले, हनुमान की शक्ति समाप्त हो जाए तो वे समुद्र के तल में समा सकते हैं। कोई भयंकर जल-जीव उनका भक्षण कर सकता है। राक्षसों के साथ युद्ध में वे वीरगति को प्राप्त हो सकते हैं। उन्हें बंदी कर राक्षस उनका वध कर सकते हैं।

उस समय आसमानमें सफेद, लाल, नीले, मंजीठके रंगके, हरे और अरुण वर्णके बड़े-बड़े मेघ शोभा पा रहे थे। बारंबार मेघ-समूहोंको विदीर्ण करने और उनमें होकर निकलनेके कारण वे पवनकुमार हनुमान् आकाशमें गरुड़के समान प्रतीत होते थे।

वहाँ पर्वतराज सुनाभ मैनाक का स्पर्श करके वे पराक्रमी एवं महान् वेगशाली वानर-वीर धनुषसे छूटे हुए बाणकी भाँति आगे बढ़ गये।

उत्तर तटके कुछ निकट पहुँचनेपर महागिरि महेन्द्रपर दृष्टि पड़ते ही उन महाकपिने मेघके समान बड़े जोरसे गर्जना की।

उस समय वायुपुत्र हनुमान्‌के दर्शनकी इच्छासे जो शूरवीर महाबली वानर समुद्रके उत्तर तटपर पहलेसे ही बैठे थे, उन्होंने वायुसे टकराये हुए महान् मेघकी गर्जनाके समान हनुमान्‌जीका जोर-जोरसे सिंहनाद सुना। गर्जते हुए पवनकुमारका वह सिंहनाद सुनकर सब ओर बैठे हुए वे समस्त वानर अपने सुहृद् हनुमान्‌को देखनेकी अभिलाषासे उत्कण्ठित हो गये।

वानर-भालुओंमें श्रेष्ठ जाम्बवान्‌के मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई। वे हर्षसे खिल उठे और सब वानरोंको निकट बुलाकर इस प्रकार बोले- इसमें संदेह नहीं कि हनुमान्‌जी सब प्रकारसे अपना कार्य सिद्ध करके आ रहे हैं। कृतकार्य हुए बिना इनकी ऐसी गर्जना नहीं हो सकती।

हनुमानको देखनेकी इच्छासे वे प्रसन्नतापूर्वक एक वृक्षसे दूसरे वृक्षोंपर तथा एक शिखरसे दूसरे शिखरोंपर चढ़ने लगे।

हनुमान महेन्द्र पर्वतपर धीरेसे उतरे। लमा-दहनके पश्चात् उन्होंने विश्राम नहीं किया था। लमामें प्रात: अशोक वाटिकाके फल खाये थे; किंतु कल प्रात: से जल नहीं पिया था। उन्हें प्यास लगी थी। महेन्द्र पर्वतपर महर्षि लोमशका आश्रम था उस समय। उनके यहाँ जल पीने चले गये। सरोवरमें स्नान कर लो। जल पी लो। हनुमानके प्रणाम करनेपर महर्षिने कहा। हनुमानने सीताजीसे प्राप्त चूड़ामणि और मुद्रिका वहीं ऋषिके समीप धर दी और स्नान करने चले गये।

मुद्रिका ? पवनकुमार लौटे तो चूड़ामणि रखी थी, पर मुद्रिका वहाँ नहीं थी। वह तुम्हें चाहिये तो कमण्डलुमें से निकाल लो। ऋषिने कहा- मैंने तो उसे कमण्डलुमें डाल दिया है।

भगवन। मेरी मुद्रिका ? हनुमानने कमण्डलुमें हाथ डाला तो उसमें बहुत मुद्रिकाएँ लगीं। मुट्ठीभर निकाल लीं और देखकर चकित रह गये। सब मुद्रिकाएँ एक जैसी थीं। उसीमें ढूँढ़ो ऋषिके मुखपर स्मित आया।

हनुमानजी हाथ डालकर मुट्ठी भर-भरकर मुद्रिकाएँ निकालते गये। कई मुट्ठी निकालकर चकित ऋषिकी ओर देखने लगे।

सब श्रीरामकी हैं। सब तुम्हीं यहाँ लाये हो। महर्षिने कहा- प्रत्येक कल्पमें जब रामावतार होता है, हनुमान ऐसे ही लमासे लौटते समय मुद्रिका यहाँ धर जाते हैं, चिन्मय श्रीरामके आभरण भी चिन्मय हैं। उनमें अन्तर नहीं हुआ करता। अब तुम्हें मुद्रिकाका प्रयोजन क्या है ? चूड़ामणि ले लो श्रीरामके लिए और उनके समीप जाओ।

भगवन्। आपकी आयु ? हनुमानने पूछा।

देखते ही हो कि तुम्हारे समान मेरा शरीर भी लोमसे भरा है। लोमशने कहा- जब अपनी सौ वर्षकी आयु पूरी करके एक ब्रह्मा मरते हैं तो उनके सूतकसे शुद्ध होने के लिए मैं एक रोम तोड़ देता हूँ। इतने रोम तो टूट गये। जब सब रोम टूट जायँगे, तब मेरी आयु समाप्त हो जायगी। महर्षिके बाएँ घुटनेपर बहुत थोड़ी दूरीमें रोम नहीं रहे थे। हनुमानजीने उन्हें प्रणाम किया और चूड़ामणि उठाकर उठ खड़े हुए। उन्होंने अपूर्व पौरुष लमामें प्रकट किया, यह बात उनके मनसे निकल गयी। श्रीराम अपने जनमें अभिमानका लेश भी रहने नहीं देते, यह उन्हीं अनन्त करुणावरुणालकी कृपा है, यह समझना आञ्जनेको शेष नहीं था।

वानर बड़ी व्यग्रतासे वृक्षोंपर, पर्वत-शिखरपर चढ़कर प्रतीक्षा कर रहे थे। हनुमानने अपना आकार सामान्य बना लिया था। उन्होंने आकर अपनेसे आयुमें बड़े जाम्बवान आदिको प्रणाम किया। अङ्गदको हृदयसे लगाया।

फिर जाम्बवान् और अङ्गदने भी आरदणीय हनुमानजी का आदर-सत्कार किया तथा दूसरे-दूसरे वानरोंने भी उनका सम्मान करके उनको संतुष्ट किया। तत्पश्चात् उन पराक्रमी वानरवीरने संक्षेपमें निवेदन किया- मुझे सीतादेवीका दर्शन हो गया।

जनकनन्दिनी सीता लमाके अशोकवनमें निवास करती हैं। वहीं मैंने उनका दर्शन किया है।

अत्यंत भयंकर आकारवाली राक्षसियाँ उनकी रखवाली करती हैं। साध्वी सीता बड़ी भोली-भाली हैं। वे एक वेणी धारण किये वहाँ रहती हैं और श्रीरामके दर्शनके लिये बहुत ही उत्सुक हैं। उपवासके कारण बहुत थक गयी हैं, दुर्बल और मलिन हो रही हैं तथा उनके केश जटाके रूपमें परिणत हो गये हैं।

उस समय सीताका दर्शन हो गया यह वचन वानरोंको अमृतके समान प्रतीत हुआ। यह उनके महान् प्रयोजनकी सिद्धिका सूचक था। हनुमान्जीके मुखसे यह शुभ संवाद सुनकर सब वानर बड़े प्रसन्न हुए। कोई हर्षनाद और कोई सिंहनाद करने लगे। दूसरे महाबली वानर गर्जने लगे। कितने ही किलकारियाँ भरने लगे और दूसरे वानर एककी गर्जनाके उत्तरमें स्वयं भी गर्जना करने लगे।

बहुत-से कपिकुञ्जर हर्षसे उल्लसित हो अपनी पूँछ ऊपर उठाकर नाचने लगे। कितने ही अपनी लंबी और मोटी पूँछें घूमाने या हिलाने लगे। हनुमानजीकी उपयुक्त बात सुनकर अङ्गदने उस समय समस्त वानरवीरोंके बीचमें यह परम उत्तम बात कही।

वानरश्रेष्ठ। बल और पराक्रममें तुम्हारे समान कोई नहीं है; क्योंकि तुम इस विशाल समुद्रको लाँघकर फिर इस पार लौट आये।

अपने स्वामी श्रीरघुनाथके प्रति तुम्हारी भक्ति अद्भुत है। तुम्हारा पराक्रम और धैर्य भी आश्चर्यजनक है। बड़े सौभाग्यकी बात है कि तुम श्रीरामकी यशस्विनी पत्नी सीतादेवीका दर्शन कर आये, अब भगवान् श्रीराम सीताके वियोगसे उत्पन्न हुए शोकको त्याग देंगे, यह भी सौभाग्यका ही विषय है।

तत्पश्चात् सभी श्रेष्ठ वानर समुद्रलङ्घन, लमा, रावण एवं सीताके दर्शनका समाचार सुननेके लिये एकत्र हुए तथा अङ्गद, हनुमान् और जाम्बवान्को चारों ओरसे घेरकर पर्वतकी बड़ी-बड़ी शिलाओंपर आनन्दपूर्वक बैठ गये। वे सब-के-सब हाथ जोड़े हुए थे और उन सबकी आँखें हनुमान्जीके मुखपर लगी थीं। तदनन्तर हनुमान् आदि महाबली वानर महेन्द्रगिरिके शिखरपर परस्पर मिलकर बड़े प्रसन्न हुए। जब सभी महामनस्वी वानर वहाँ प्रसन्नतापूर्वक बैठ गये, तब हर्षमें भरे हुए जाम्बवान्ने उन पवनकुमार महाकपि हनुमान्से प्रेमपूर्वक कार्यसिद्धिका समाचार पूछा- महाकपे। तुमने देवी सीताको कैसे देखा ? वे वहाँ किस प्रकार रहती हैं ? और क्रूरकर्मा दशानन उनके प्रति कैसा बर्ताव करता है ? तुमने देवी सीताको किस प्रकार ढूँढ़ निकाला और उन्होंने तुमसे क्या कहा ?

जाम्बवान्‌के इस प्रकार पूछनेपर हनुमान्‌जीके शरीरमें रोमाञ्च हो आया। उन्होंने सीतादेवीको मन-ही-मन मस्तक झुकाकर प्रणाम किया और कहा- मैं आपलोगोंके सामने ही समुद्रके दक्षिण तटपर जानेकी इच्छासे सावधान हो महेन्द्रपर्वतके शिखरसे आकाशमें उछला था। मैंने अम्बा सीताको देखा है। हनुमानने कहा- सम्पातीने जो विवरण दिया था, वह अक्षरश: सत्य निकला।

अब हम मार्गमें तुमसे यात्रा-वर्णन सुनेंगे। जाम्बवान उठ खड़े हुए- हमें शीघ्र वानरेन्द्र सुग्रीवके समीप पहुँचना चाहिये।

सभीको जाम्बवन्तकी बात अच्छी लगी। हनुमानजीने मार्गमें उन्हें अपनी यात्राका वर्णन सुनाया। अब तो सीधे ही किष्किन्धा लौटना था। सब पूरे वेगसे उछलते, दौड़ते चल रहे थे। सुग्रीवका दिया समय समाप्त हो गया, इसकी चिन्ता करनेकी अब आवश्यकता नहीं थी। कपिवरो। श्रीरामका उद्योग और सुग्रीवका उत्साह सफल हुआ। सीताका उत्तम शील-स्वभाव पातिव्रत्य देखकर मेरा मन अत्यन्त संतुष्ट हुआ है। जिस नारीका शील-स्वभाव आर्या सीताके समान होगा, वह अपनी तपस्यासे सम्पूर्ण लोकोंको धारण कर सकती है अथवा कुपित होनेपर तीनों लोकोंको जला सकती है।

हाथसे छू जानेपर आगकी लपट भी वह काम नहीं कर सकती, जो क्रोध दिलानेपर जनकन्दिनी सीता कर सकती हैं।

मैं अकेला भी राक्षसगणोंसहित समस्त लमापुरीका वेगपूर्वक विध्वंस करने तथा महाबली रावणको मार डालनेके लिये पर्याप्त हूँ। फिर यदि सम्पूर्ण अस्त्रोंको जाननेवाले आप जैसे वीर, बलवान्, शुद्धात्मा, शक्तिशाली और विजयाभिलाषी वानरोंकी सहायता मिल जाय, तब तो कहना ही क्या है। युद्धस्थलमें सेना, अग्रगामी सैनिक, पुत्र और सगे भाइयोंसहित रावणका तो मैं ही वध कर डालूँगा।

यद्यपि इन्द्रजित्‌के ब्राह्म अस्त्र, रौद्र, वायव्य तथा वारुण आदि अस्त्र युद्धमें दुर्लक्ष्य होते हैं- किसीकी दृष्टिमें नहीं आते हैं, तथापि मैं ब्रह्माजीके वरदानसे उनका निवारण कर दूँगा और राक्षसोंका संहार कर डालूँगा।

आपलोगोंकी आज्ञा न होनेके कारण ही मेरा पुरुषार्थ मुझे रोक रहा है। समुद्र अपनी मर्यादाको लाँघ जाय और मन्दराचल अपने स्थानसे हट जाय, परंतु समराङ्गणमें शत्रुओंकी सेना जाम्बवान्‌को विचलित कर दे, यह कभी सम्भव नहीं है।

सम्पूर्ण राक्षसों और उनके पूर्वजोंको भी यमलोक पहुँचानेके लिये बालिके वीर पुत्र कपिश्रेष्ठ अङ्गद अकेले ही काफी हैं।

मैंने अकेले ही लमावासियोंको मार गिराया, नगरमें आग लगा दी और सारी पुरीको जलाकर भस्म कर दिया। इतना ही नहीं, वहाँकी सब सड़कोंपर मैंने अपने नामका डंका पीट दिया। दुरात्मा रावणकी अशोकवाटिकाके मध्यभागमें एक अशोक वृक्षके नीचे साध्वी सीता बड़ी दयनीय अवस्थामें रहती हैं। राक्षसियोंसे घिरी हुई होनेके कारण वे शोक-संतापसे दुर्बल होती जा रही हैं। बादलोंकी पंक्तिसे घिरी हुई चन्द्रलेखाकी भाँति श्रीहीन हो गयी हैं। कल्याणी सीता श्रीराममें सम्पूर्ण हृदयसे अनुरक्त हैं, जेसे शची देवराज इन्द्रमें अनन्य प्रेम रखती हैं, उसी प्रकार सीताका चित्त अनन्यभावसे श्रीरामके ही चिन्तनमें लगा हुआ है। उन मृगनयनी सीताको मैंने बड़ी कठिनाईसे किसी तरह अपना विश्वास दिलाया। तब उनसे बातचीतका अवसर मिला और सारी बातें मैं उनके समक्ष रख सका।

श्रीराम और सुग्रीवकी मित्रताकी बात सुनकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। सीताजीमें सुदृढ़ सदाचार (पातिव्रत्य) विद्यमान है। अपने पतिके प्रति उनके हृदयमें उत्तम भक्ति है।

भगवती सीता एक तो स्वभावसे ही दुबली-पतली हैं, दूसरे श्रीरामके वियोगसे और भी कृश हो गयी हैं। जैसे प्रतिपादके दिन स्वाध्याय करनेवाले विद्यार्थीकी विद्या क्षीण हो जाती है, उसी प्रकार उनका शरीर भी अत्यन्त दुर्बल हो गया है।

इस प्रकार महाभागा सीता सदा शोकमें डूबी रहती हैं। अत: इस समय जो प्रतीकार करना हो, वह सब आपलोग करें।

हनुमानकी यह बात सुनकर बालिपुत्र अङ्गदने कहा- अश्विनीकुमारके पुत्र ये मैन्द और द्विविद दोनों वानर अत्यन्त वेगशाली और बलवान् हैं। पूर्वकालमें ब्रह्माजीका वर मिलनेसे इनका अभिमान बढ़ गया और ये बड़े घमंडमें भर गये थे। सम्पूर्ण लोकोंके पितामह ब्रह्माजीने अश्विनीकुमारोंका मान रखनेके लिये पहले इन दोनोंको यह अनुपम वरदान दिया था कि तुम्हें कोई भी मार नहीं सकता। उस वरके अभिमानसे मत्त हो इन दोनों महाबली वीरोंने देवताओंकी विशाल सेनाको मथकर अमृत पी लिया था।

ये ही दोनों यदि क्रोधमें भर जायँ तो हाथी, घोड़े और रथोंसहित समूची लमाका नाश कर सकते हैं। भले ही और सब वानर बैठे रहें।

वानरशिरोमणियों। देवताओं और दैत्योंसहित सम्पूर्ण लोकोंमें कोई भी ऐसा वीर नहीं है, जो दूरतककी छलाँग मारने और पराक्रम दिखानेमें आपलोगोंकी समानता कर सके।

अत: निशाचरसमुदायसहित लमाको जीतकर, युद्धमें रावणका वध करके, सीताको साथ ले, सफलमनोरथ एवं प्रसन्नचित्त होकर

हमलोग श्रीरामके पास चलें।

कपिवरों। हम जनककिशोरीको ले चलकर श्रीराम और लक्ष्मणके बीचमें खड़े कर दें। किष्किन्धामें जुटे हुए उन सब वानरोंको कष्ट देनेकी क्या आवश्यकता है। हमलोग ही लमामें चलकर वहाँके मुख्य-मुख्य राक्षसोंका वध कर डालें, उसके बाद लौटकर श्रीराम, लक्ष्मण तथा सुग्रीवका दर्शन करें।

अङ्गदका ऐसा संकल्प जानकर वानर-भालुओंमें श्रेष्ठ और अर्थतत्त्वके ज्ञाता जाम्बवान्‌ने अत्यन्त प्रसन्न होकर यह सार्थक बात कही- महाकपे। तुम बड़े बुद्धिमान हो तथापि इस समय जो कुछ कह रहे हो, यह बुद्धिमानीकी बात नहीं है; क्योंकि वानरराज सुग्रीव तथा परम बुद्धिमान् भगवान् श्रीरामने हमें उत्तम दक्षिण दिशामें केवल सीताको खोजनेकी आज्ञा दी है, साथ ले आनेकी नहीं।

राजा श्रीरामने सभी प्रमुख वानरवीरोंके सामने स्वयं ही सीताको जीतकर लानेकी प्रतिज्ञा की है, उसे वे मिथ्या कैसे करेंगे। इसलिये हम सब लोग इस कार्यकी सूचना देनेके लिये वहीं चलें, जहाँ लक्ष्मणसहित भगवान् श्रीराम और महातेजस्वी सुग्रीव विद्यमान हैं।

राजकुमार। तुम जैसा देखते या सोचते हो, यह विचार हमलोगोंके योग्य ही है- हम इसे न कर सकें, ऐसी बात नहीं है; तथापि इस विषयमें भगवान् श्रीरामका जैसा निश्चय हो, उसीके अनुसार तुम्हें कार्यसिद्धिपर दृष्टि रखनी चाहिये।

तदनन्तर अङ्गद आदि सभी वीर वानरों और महाकपि हनुमान्‌ने भी जाम्बवान्‌की बात मान ली।

श्रीरघुनाथके कार्यकी सिद्धि करनेका उत्तम यश पाकर उन वानरोंका मनोरथ सफल हो गया था। उस कार्यकी सिद्धि हो जानेसे उनका उत्साह बढ़ा हुआ था। वे सभी भगवान् श्रीरामको प्रिय संवाद सुनानेके लिये उत्सुक थे। सभी युद्धका अभिनन्दन करनेवाले थे। श्रीरामके द्वारा रावणका पराभव हो- ऐसा सबने निश्चय कर लिया था तथा वे सब-के-सब मनस्वी वीर थे।

किष्किन्धासे कुछ दूर दक्षिणकी ओर वानरेन्द्रका फलोद्यान मधुबन था। उसमें बहुत अधिक मधु-छत्रक लगे थे। पूरे मार्ग वानर उत्साहमें कूदते-नृत्य करते आये थे। वे बार-बार कूदकर पवनकुमारका स्पर्श करते, उनके कंधोंपर कूद जाते, उनका गुणगान करते। मार्गमें पर्वतपर, वृक्षोंपर वे उत्साहतिरेकमें चढ़ते रहे थे। अङ्गदने बार-बार भरे कण्ठ से कहा था- आञ्जनेय। सत्व, बल, वीर्यमें तुम अतुलनीय हो। तुमने हम सबको जीवनदान दिया।

युवराज। हम भूखे हैं। अब वानरोंने मधुबनको देखकर कहा- हनुमानजीका भी सत्कार किया जाना चाहिए। ये कितना परिश्रम करके लौटे हैं। यथेच्छ फल खाओ और मधु पियो। युवराजने आज्ञा दे दी- उद्यान अपना ही है।

उसका नाम मधुवन था। सुग्रीवका वह मधुवन सर्वथा सुरक्षित था। समस्त प्राणियोंमेंसे कोई भी उसको हानि नहीं पहुँचा सकता था। उसे देखकर सभी प्राणियोंका मन लुभा जाता था। कपिश्रेष्ठ महात्मा सुग्रीवके मामा महावीर दधिमुख नामक वानर सदा उस वनकी रक्षा करते थें। वानरराज सुग्रीवके उस मनोरम महावनके पास पहुँचकर वे सभी वानर वहाँका मधु पीने और फल खाने आदिके लिये अत्यन्त उत्कण्ठित हो गये।

तब हर्षसे भरे हुए तथा मधुके समान पिङ्गल वर्णवाले उन वानरोंने उस महान् मधुवनका देखकर कुमार अङ्गदसे मधुपान करनेकी आज्ञा माँगी। उस समय कुमार अङ्गदने जाम्बवान् आदि बड़े-बूढ़े वानरोंकी अनुमति लेकर उन सबको मधु पीनेकी आज्ञा दे दी।

राजकुमार अङ्गदकी आज्ञा पाकर वे वानर भौरोंके झुंडसे भरे हुए वृक्षोंपर चढ़ गये। वहाँकी सुगन्धित फल-मूलोंका भक्षण करते हुए उन सबको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे सभी मदसे उन्मत्त हो गये।

युवराजकी अनुमति मिल जानेसे सभी वानरोंको बड़ा हर्ष हुआ। वे आनन्दमग्न होकर इधर-उधर नाचने लगे। कोई गाते, कोई हँसते, कोई नाचते, कोई नमस्कार करते, कोई गिरते-पड़ते, कोई जोर-जोरसे चलते, कोई उछलते-कूदते और कोई प्रलाप करते थे।

कोई दूसरेको पीड़ा देता तो दूसरा उसके पास बड़े जोरसे गर्जना करता हुआ आता था। इस प्रकार वह सारी वानरसेना मदोन्मत्त होकर उसके अनुरूप चेष्टा कर रही थी। वानरोंके उस समुदायमें कोई भी ऐसा नहीं था, जो मतवाला न हो गया हो और कोई भी ऐसा नहीं था, जो दर्पसे भर न गया हो। तदनन्तर मधुवनके फल-मूल आदिका भक्षण होता और वहाँके वृक्षोंके पत्तों एवं फूलोंको नष्ट किया जाता देख दधिमुख नामक वानरको बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने उन वानरोंको वैसा करनेसे रोका।

मदके कारण जिनके वेगको रोकना असम्भव हो गया था, उन वानरोंको जब दधिमुख बलपूर्वक रोकनेकी चेष्टा करने लगे, तब वे सब मिलकर उन्हें बलपूर्वक इधर-उधर घसीटने लगे। वनरक्षक दधिमुख पर आक्रमण करनेसे राजदण्ड प्राप्त होगा, इसकी ओर उनकी दृष्टि

नहीं गयी। अतएव वे सब निर्भय होकर उन्हें इधर-उधर खींचने लगे। मदके प्रभावसे वे वानर कपिवर दधिमुखको नखोंसे बकोटने, दाँतोंसे काटने और थप्पड़ों तथा लातोंसे मार-मारकर अधमरा करने लगे। इस प्रकार उन्होंने उस विशाल वनको सब ओरसे फल आदिसे शून्य कर दिया। वानरशिरोमणि अङ्गदकी प्रशंसा करके वे सब वानर जहाँ मधुवन था, उस मार्गपर उसी तरह दौड़े गये, जैसे नदीके जलका वेग तटवर्ती वृक्षकी ओर जाता है।

मिथिलेशकुमारी सीताको हनुमान्‌जी तो देखकर आये थे और अन्य वानरोंने उन्हींके मुखसे यह सुन लिया था कि वे लमामें हैं, अत: उन सबका उत्साह बढ़ा हुआ था। इधर युवराज अङ्गदका आदेश भी मिल गया था, इसलिये वे सामर्थ्यशाली सभी वानर वनरक्षकोंपर पूरी शक्तिसे आक्रमण करके मधुवनमें घुस गये और वहाँ इच्छानुसार मधु पीने तथा रसीले फल खाने लगे।

कितने ही वानर मदके कारण अत्यन्त ग्लानिका अनुभव कर रहे थे। उनका वेग उन्मत्त पुरुषोंके समान देखा जाता था। वे मधु पी-पीकर मतवाले हो गये थे, अत: बड़े हर्षके साथ पत्ते बिछाकर सो गये।

कोई एक दूसरेपर मधु फेंकते, कोई लड़खड़ाकर गिरते, कोई गरजते और कोई हर्षके साथ पक्षियोंकी भाँति कलरव करते थे।

राम का मन हताश हो गया। कई बार मन में आया कि सब कुछ छोड़-छाड़कर कहीं भाग जाएँ। सेना और सैनिक तैयारियों की ओर देखते तो लगता जैसे वे सब उनका परिहास कर रहे हैं देखो। यह राम है, जो रावण से लड़ने का दुस्साहस करने का इच्छुक है। इतना तो खोज नहीं पाया कि सीता है कहाँ। स्वयं पहाड़ की चोटी पर अपनी गुफा में आराम से बैठा है और चाहता है कि कोई इसकी पत्नी को खोजकर इसे पता ला दे। जब राम स्वयं आराम से यहाँ बैठे हैं, सौमित्र को भी उन्होंने नहीं भेजा है, तो वानरों में से किसी को क्या आवश्यकता है कि वे अपने प्राणों पर खेल, सीता का संधान करें। सीता का क्या संबंध है उनसे ? जिनका अपमान हुआ है, जो एक क्षण भी सीता के बिना रह नहीं सकते- वे तो आराम से यहाँ अपनी गुफा में बैठे हैं; तो वानरों को क्या पड़ी है कि विश्व-भर में खोजते फिरें, कठिनाइयों और जोखिमों से जूझते फिरें और सीता संधान करें।

उन दिनों लक्ष्मण का उग्र उत्साह ही राम का सहारा था। वे इस प्रकार दृढ़ और कठोर होकर उनके साथ खड़े न हुए होते तो राम के टूट जाने की बहुत संभावना थी।

अब सारी आशाएँ दक्षिण दिशा की ओर गए दल पर टिकी हुई थीं। उने वापस न लौटने से कुछ आशा बँधती थी कि शायद उन्हें कोई संधान मिला हो और वे उसी दिशा में आगे बढ़ रहे हों। दूसरी ओर यह भी लगता था कि वे मार्ग से भटक गए होंगे, सागर में डूब गए होंगे, शत्रुओं के हाथ पड़कर बंदी हो गए होंगे, अथवा मार डाले गए होंगे। राम स्वयं अपने-आपको ही समझा नहीं पा रहे थे। उनके मन में जैसे एक दुराशा बद्धमूल हो गई थी। राम कभी सफल-काम नहीं हुए, राम का कोई काम पूर्ण नहीं होता। उनके जीवन में बाधाएँ, असफलताएँ तथा निराशाएँ ही कदाचित् पूर्वनियोजित हैं, हतभाग्य राम। किंतु फिर भी उनकी हठपूर्वक संघर्ष करने की भावना हार मानने को तैयार नहीं थी। एक मन जैसे अनवर अपनी पराजय का विलाप कर रहा था; और एक और मन अपनी आस्था पर आसन जमाए शांति से थमा बैठा था; कार्य पूर्ण नहीं होते तो क्या प्रयत्न छोड़ दें ? प्रयत्न ही तो फलता है। किंतु इस सारी अवधि में राम ने लक्ष्मण को कभी विचलित होने नहीं दिया।

महात्मा सुग्रीवको यह मधुवन बहुत ही प्रिय है। यह उनके बाप-दादोंका दिव्य वन है। इसमें प्रवेश करना देवताओंके लिये भी कठिन है। मधुके लोभी इन सभी वानरोंकी आयु समाप्त हो चली है। सुग्रीव इन्हें कठोर दण्ड देकर इनके सुहृदोंसहित इन सबको मरवा डालेंगे।

राजाकी आज्ञाका उल्लंघन करनेवाले ये दुरात्मा राजद्रोही वानर वधके ही योग्य हैं। इनका वध होनेपर ही मेरा अमर्षजनित रोष सफल होगा। वनके रक्षकोंसे ऐसा कहकर उन्हें साथ ले महाबली दधिमुख सहसा उछलकर आकाशमार्गसे चले। और पलक मारते-मारते वे उस स्थानपर जा पहुँचे, जहाँ बुद्धिमान् सूर्यपुत्र वानरराज सुग्रीव विराजमान थे।

वनरक्षकोंके स्वामी महावीर वानर दधिमुख पृथ्वीपर उतरकर उन रक्षकोंसे घिरे हुए उदास मुख किये सुग्रीवके पास गये और सिरपर अञ्जलि बाँधे उनके चरणोंमें मस्तक झुकाकर उन्होंने प्रणाम किया।

वानर दधिमुखको माथा टेक प्रणाम करते देख वानरशिरोमणि सुग्रीवका हृदय उद्विग्न हो उठा। वे उनसे इस प्रकार बोले- कहो, किसके भयसे यहाँ आये हो। जो पूर्णत: हितकर बात हो, उसे बताओ; क्योंकि तुम सब कुछ कहनेके योग्य हो। मधुवनमें कुशल तो है न ? वानर। मैं तुम्हारे मुखसे यह सब सुनना चाहता हूँ।

राजन्। आपके पिता ऋक्षरजाने, वालिने और आपने भी पहले कभी जिस वनके मनमाने उपभोगके लिये किसीको आज्ञा नहीं दी थी, उसीका हनुमान् आदि वानरोंने आज नाश कर दिया।

देव। इन हनुमान आदि वानरोंने जब मधुवनमें लूट मचाना आरम्भ किया, तब हमारे इन वनरक्षकोंने उन सबको रोकनेकी चेष्टा की; परंतु वे वानर इनको और मुझे भी कुछ नहीं गिनते हुए वहाँके फल आदिका भक्षण कर रहे हैं।

वानरशिरोमणि सुग्रीवको जब इस प्रकार मधुवनके लूटे जानेका वृत्तान्त बताया जा रहा था, उस समय शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले परम बुद्धिमान् लक्ष्मणने उनसे पूछा- राजन्। वनकी रक्षा करनेवाला यह वानर यहाँ किस लिये उपस्थित हुआ है ? और किस विषयकी ओर संकेत करके इसने दुखी होकर बात की है ?

लक्ष्मणके पूछनेपर सुग्रीवने उन्हें यों उत्तर दिया- आर्य लक्ष्मण। वीर वानर दधिमुखने मुझसे यह कहा है कि अङ्गद आदि वीर वानरोंने मधुवनका सारा मधु खा-पी लिया है। इसकी बात सुनकर मुझे यह अनुमान होता है कि वे जिस कार्यके लिये गये थे, उसे अवश्य ही उन्होंने पूरा कर लिया है। तभी उन्होंने मधुवनपर आक्रमण किया है। यदि वे अपना कार्य सिद्ध करके न आये होते तो उनके द्वारा ऐसा अपराध नहीं बना होता- वे मेरे मधुवनको लूटनेका साहस नहीं कर सकते थे। इस कार्यको सिद्ध करनेमें हनुमान्‌जीके सिवा और कोई कारण बना हो, ऐसा सम्भव नहीं है। वानरशिरोमणि हनुमान्‌में ही कार्य-सिद्धिकी शक्ति और बुद्धि है। उन्हींमें उद्योग, पराक्रम और शास्त्रज्ञान भी प्रतिष्ठित है। जिस दलके नेता जाम्बवान् और महाबली अङ्गद हों तथा अधिष्ठाता हनुमान हो, उस दलको विपरीत परिणाम-असफलता मिले, यह सम्भव नहीं है।

सुमित्रानन्दन। इस बातको आप ठीक समझें कि अब सीताका पता लग गया; क्योंकि वे सभी वानर उस वनमें जाकर मधु पी रहे हैं। विदेहनन्दिनीका दर्शन किये बिना उस दिव्य वनका, जो देवताओंसे मेरे पूर्वजको वरदानके रूपमें प्राप्त हुआ है, वे विख्यात वानर कभी विध्वंस नहीं कर सकते थे।

मामा। अपना कार्य सिद्ध करके लौटे हुए उन वानरोंने जो मेरे मधुवनका उपभोग किया है, उससे मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ; अत: तुम्हें भी कृतकृत्य होकर आये हुए उन कपियोंकी ढिठाई तथा उद्दण्डतापूर्ण चेष्टाओंको क्षमा कर देना चाहिये। अब शीघ्र जाओ और तुम्हीं उस मधुवनकी रक्षा करो। साथ ही हनुमान् आदि सब वानरोंको जल्दी यहाँ भेजो।

वे दोनों राजकुमार श्रीराम और लक्ष्मण पूर्वोक्त समाचारसे अपनेको सफलमनोरथ मानकर हर्षसे पुलकित हो गये थे। उनकी आँखें प्रसन्नतासे खिल उठी थीं। उन्हें इस तरह प्रसन्न देख तथा अपने हर्षोत्फुल्ल अङ्गोंसे कार्यसिद्धिको हाथोंमें आयी हुई जान वानरराज सुग्रीव अत्यन्त आनन्दमें निमग्न हो गये।

सुग्रीवके ऐसा कहनेपर प्रसन्नचित्त वानर दधिमुखने श्रीराम, लक्ष्मण और सुग्रीवको प्रणाम किया। सुग्रीव तथा उन महाबली रघुवंशी बन्धुओंको प्रणाम करके वे शूरवीर वानरोंके साथ आकाशमार्गसे उड़ चले।

वीर दधिमुख उनके पास गये और दोनों हाथोंकी अञ्जलि बाँध अङ्गदसे हर्षयुक्त वाणीमें बोले- सौम्य। इन रक्षकोंने जो अज्ञानवश आपको रोका था, क्रोधपूर्वक आपलोगोंको मधु पीनेसे मना किया था, इसके लिये आप अपने मनमें क्रोध न करें। आपलोग दूरसे थके-माँदे आये हैं, अत: फल खाइये और मधु पीजिये। यह सब आपकी ही सम्पत्ति है। महाबली वीर। आप हमारे युवराज और इस वनके स्वामी हैं। निष्पाप युवराज। मैंने यहाँसे जाकर आपके चाचा सुग्रीवसे इन सब वानरोंके यहाँ पधारनेका हाल कहा था। इन वानरोंके साथ आपका आगमन सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए। इस वनके विध्वंसका समाचार सुनकर भी उन्हें रोष नहीं हुआ। आपके चाचा वानरराज सुग्रीवने बड़े हर्षके साथ मुझसे कहा है कि उन सबको शीघ्र यहाँ भेजो।

वानरयूथपतियों। जान पड़ता है भगवान् श्रीरामने हम लोगोंके लौटनेका समाचार सुन लिया; क्योंकि ये बहुत प्रसन्न होकर वहाँकी बात सुना रहे हैं। इसीसे मुझे ऐसा ज्ञात होता है। अत: शत्रुओंको संताप देनेवाले वीरो। कार्य पूरा हो जानेपर अब हमलोगोंको यहाँ अधिक नहीं ठहरना चाहिये। तब सब वानर बोले- राजन्। कपिश्रेष्ठ। स्वामी होकर भी अपने अधीन रहनेवाले लोगोंसे कौन इस तरहकी बात करेगा ? प्राय: सब लोग ऐश्वर्यके मदसे उन्मत्त हो अहंकारवश अपनेको ही सर्वोपरि मानने लगते हैं।

आपकी यह बात आपके ही योग्य है। दूसरे किसीके मुँहसे प्राय: ऐसी बात नहीं निकलती। यह नम्रता आपकी भावी शुभयोग्यताका परिचय दे रही है।

वानरश्रेष्ठ। आपकी आज्ञा प्राप्त हुए बिना हम वानरगण कहीं एक पग भी नहीं जा सकते, यह आपसे सच्ची बात कहते हैं। वे वानरगण जब ऐसी बातें कहने लगे, तब अङ्गद बोले- बहुत अच्छा, अब हमलोग चलें। इतना कहकर वे महाबली वानर आकाशमें उड़ चले।

अङ्गद और वानरवीर हनुमान्‌को आगे करके सभी वेगवान वानर सहसा आकाशमें उछलकर वायुसे उड़ाये गये बादलोंकी भाँति बड़े जोर-जोरसे गर्जना करते हुए किष्किन्धाके निकट जा पहुँचे।

तब सुग्रीव बोले- शुभदर्शन श्रीराम। अङ्गदकी अत्यन्त प्रसन्नतासे भी मुझे इसी बातकी सूचना मिल रही है। यदि काम बिगाड़ दिया गया होता तो वानरोंमें श्रेष्ठ युवराज महाबाहु अङ्गद मेरे पास कदापि लौटकर नहीं आते।

मेरे बाप-दादोंके इस मधुवनका, जिसकी पूर्वजनोंने भी सदा रक्षा की है, कोई जनककिशोरी दर्शन किये बिना विध्वंस नहीं कर सकता था। मतिमनोंमें श्रेष्ठ रघुनन्दन। इस कार्यको सिद्ध करनेमें हनुमान्‌जीके सिवा और कोई कारण बना हो, ऐसा सम्भव नहीं है। वानरशिरोमणि हनुमानमें ही कार्यसिद्धिकी शक्ति और बुद्धि है। उन्हींमें उद्योग, पराक्रम और शास्त्रज्ञान भी प्रतिष्ठित है। जिस दलके नेता जाम्बवान् और महाबली अङ्गद हों तथा अधिष्ठाता हनुमान् हों, उस दलको विपरीत परिणाम असफलता मिले, यह सम्भव नहीं है।

वे इस प्रकार कह ही रहे थे कि उन्हें आकाशमें निकटसे वानरोंकी किलकारियाँ सुनायी दीं। हनुमान्‌जीके पराक्रमपर गर्व करके किष्किन्धाके पास आ गर्जना करनेवाले वे वनवासी वानर मानो सिद्धिकी सूचना दे रहे थे।

इतनेमें ही श्रीरामके दर्शनकी इच्छासे अङ्गद और वानरवीर हनुमान्‌को आगे करके वे सब वानर वहाँ आ पहुँचे।

जिस प्रकार विनता का पुत्र सुपर्ण गरुड़ अमृत लेकर आ गया, जिस प्रकार देवगुरु बृहस्पति का पुत्र कच मृतक को पुनर्जीवित कर देने बालि संजीवनी विद्या सिद्ध करके आ गया, उस प्रकार हनुमान अपने उस कार्य को सम्पन्न करके आ गया, तो अपनी सफलता के कारण अति आनन्दित हो गया।

कच-देवों और दैत्यों के संग्राम में मृत दैत्यों को दैत्य गुरु शुक्राचार्य संजीवनी मन्त्र से जीवित कर देता था। इसलिए दैत्यों का बल कम नहीं होता था। तब देवों ने अपने गुरु बृहस्पत के पुत्र कच को शुक्राचार्य के पास उसका शिष्यत्व स्वीकार करके संजीवनी प्राप्त करने के लिए भेज दिया। दैत्यों ने इस चाल को जान लिया, तो वे उसे मार डालने का यत्न करने लगे। एक बार उन्होंने उसे मारकर उसकी देह के टुकड़ों को सियारों को खिला दिया। दूसरी बार उसे मारकर समुद्र में फेंक दिया। तीसरी बार उन्होंने उसे जलाकर उसका भस्म मदिरा में डाला और वह मदिरा शुक्राचार्य को पिला दी। परन्तु शुक्राचार्य की कन्या देवयानी कच से प्रेम करने लगी थी। वह हठपूर्वक अपने पिता द्वारा उसे जीवित करवा देती। अन्त में जब शुक्राचार्य ने कच को लौटा लाने के हेतु संजीवनी मन्त्र पढ़ा, तो भस्मरूप में पेट में रहनेवाले कच को वह मन्त्र प्राप्त हो गया। वह उसके पेट को फाड़कर बाहर आ गया। फिर उसने मृत शुक्राचार्य को मन्त्रबल से जीवित कर दिया और देवलोक की ओर प्रस्थान किया।

भाव-विह्वल राम हनुमान को गले से लगा स्वयं को संतुलित करने का प्रयत्न करते रहे। उनके मन में एक ओर सीता का निश्चित संधान पा जाने का उल्लास इतना विकट कोलाहल कर रहा था और दूसरी ओर हनुमान के प्रति कृतज्ञता की उत्ताल तरंगे उठ रही थीं- हनुमान ने ही तो सीता का संधान किया; अन्यथा सीता के जीवित होते हुए भी, राम उन तक पहुँच नहीं पाते। राम तुम्हारे इस उपकार से उऋण नहीं हो सकता। जब तक पृथ्वी, आकाश रहेंगे तब तक राम तुम्हारा ऋणी रहेगा।

कैसी हैं देवी ? राम ने स्वयं को सम्भालकर अलग किया।

सकुशल तो हैं, किंतु बंदिनी हैं और अत्यंत दु:खी हैं। वह सिंहनी ऐसे रहती हैं जैसे जीव दाँतों के बीच में रहती है।

बैठो, हनुमान। राम ने एक शिला की ओर संकेत किया, मुझे विस्तार से सब कुछ बताओ।

नीति-शास्त्र में ऐसा कहा है- अपना पराक्रम, बल, अपनी की हुई तीर्थ-स्थलों की यात्रा, कीर्ति, धर्म सम्बन्धी आचार, विद्या, पुरुषार्थ, अपना किया हुआ भगवद्- भजन और अपने धन का दिया हुआ दान- इतनी बातें अपने मुँह कहते शोभा नहीं देतीं; अत: इन्हें अपने मुँह न कहना चाहिए। कोई दूसरा कहे और हम सुनें- तब उससे प्राप्त सुख शोभा देता है।

थके हुए होने पर भी हनुमान ने अत्यंत विस्तार से अपनी यात्रा, सीता की खोज, सीता से वार्तालाप, राक्षसों से संघर्ष और वापसी की अपनी यात्रा के विषय में बताया।

महाबाहु हनुमान्‌ने श्रीरघुनाथके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रणाम किया और उन्हें यह बताया कि देवी सीता पातिव्रत्यके कठोर

नियमोंका पालन करती हुई शरीरसे सकुशल हैं।

मैंने देवी सीताका दर्शन किया है, हनुमान्‌जीके मुखसे यह अमृतके समान मधुर वचन सुनकर लक्ष्मणसहित श्रीरामको बड़ी प्रसन्नता हुई। शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले श्रीरघुनाथने परम प्रीति और महान् सम्मानके साथ हनुमान्‌जीकी ओर देखा।

हनुमान ने बताया- सीता देवी रावणके अन्त:पुरमें रोक रक्खी गयी हैं। राक्षसियाँ उन्हें धमकाती रहती हैं। श्रीरामके प्रति उनका अनन्य अनुराग है। रावणने सीताके जीवित रहनेके लिये केवल एक मासकी अवधि दे रक्खी है। इस समय विदेहकुमारीको कोई क्षति नहीं पहुँची है- वे सकुशल हैं।

श्रीराम बोले- वानरो। देवी सीता कहाँ हैं ? मेरे प्रति उनका कैसा भाव है ? विदेहकुमारीके विषयमें ये सारी बातें मुझसे कहो।

उन वानरोंकी बात सुनकर पवनपुत्र हनुमान्‌जीने पहले देवी सीताके उद्देश्यसे दक्षिण दिशाकी ओर मस्तक झुकाकर प्रणाम किया।

फिर बातचीतको कलाको जाननेवाले उन वानरवीरने सीताजीका दर्शन जिस प्रकार हुआ था, वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया। तत्पश्चात् अपने तेजसे प्रकाशित होनेवाली उस दिव्य काञ्चनमणि (चूड़ामणि) को भगवान् श्रीरामके हाथमें देकर हनुमान्‌जी हाथ जोड़कर बोले- प्रभो। मैं जनकनन्दिनी सीताके दर्शनकी इच्छासे उनका पता लगाता हुआ सौ योजन विस्तृत समुद्रको लाँघकर उसके दक्षिण किनारेपर जा पहुँचा। वहीं दुरात्मा रावणकी नगरी लमा है। वह समुद्रके दक्षिण तटपर ही बसी हुई है।

श्रीराम। लमामें पहुँचकर मैंने रावणके अन्त:पुरमें प्रमदावनके भीतर राक्षसियोंके बीचमें बैठी हुई सती-साध्वी सुन्दरी देवी सीताका दर्शन किया। वे अपनी सारी अभिलाषाओंको आपमें ही केन्द्रित करके किसी तरह जीवन धारण कर रही हैं। विकराल रूपवाली राक्षसियाँ उनकी रखवाली करती हैं और बारंबार उन्हें डाँटती-फटकारती रहती हैं।

वे नीचे भूमिपर सोती हैं। जैसे जाड़ेके दिनोंमें पाला पड़नेके कारण कमलिनी सूख जाती है, उसी प्रकार उनके अमोंकी कान्ति फीकी पड़ गयी है। रावणसे उनका कोई प्रयोजन नहीं है। उन्होंने प्राण त्याग देनेका निश्चय कर लिया है।

आपकी सुग्रीवके साथ मित्रताका समाचार सुनकर उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। उनका उच्चकोटिका आचार-विचार (पातिव्रत्य) सुदृढ़ है। वे सदा आपमें ही भक्ति रखती हैं।

महामते। रघुनन्दन। चित्रकूटमें आपके पास देवीके रहते समय एक कौएको लेकर जो घटना घटित हुई थी, उस वृत्तान्तको उन्होंने पहचानके रूपमें मुझसे कहा था। जानकीजीने आते समय मुझसे कहा- वायुनन्दन। तुम यहाँ जैसी मेरी हालत देख चुके हो, वह सब भगवान् श्रीरामको बताना और इस मणिको बड़े यत्नसे सुरक्षितरूपमें ले जाकर उनके हाथमें देना।

उन्होंने यह भी कहा- दशरथनन्दन। मैं एक मास और जीवन धारण करूँगी। उसके बाद राक्षसोंके वशमें पड़कर प्राण त्याग दूँगी- किसी तरह जीवित नहीं रह सकूँगी।

इस प्रकार दुबले-पतले शरीरवाली धर्मपरायणा सीताने मुझे आपसे कहनेके लिये यह संदेश दिया था। वे रावणके अन्त:पुरमें कैद हैं और भयके मारे आँख फाड़-फाड़कर इधर-उधर देखनेवाली हरिणीके समान वे सशम दृष्टिसे सब ओर देखा करती हैं।

राजकुमार श्रीराम और लक्ष्मणको कुछ आश्वासन मिल गया, ऐसा जानकर तथा वह पहचान श्रीरघुनाथके हाथमें देकर वायुपुत्र हनुमान्‌ने देवी सीताकी कही हुई सारी बातें क्रमश: अपनी वाणीद्वारा पूर्णरूपसे कह सुनायी।

हनुमान्‌जीके ऐसा कहनेपर दशरथनन्दन श्रीराम उस मणिको अपनी छातीसे लगाकर रोने लगे। साथ ही लक्ष्मण भी रो पड़े।

उस श्रेष्ठ मणिकी ओर देखकर शोकसे व्याकुल हुए श्रीरघुनाथजी अपने दोनों नेत्रोंमें आँसू भरकर सुग्रीवसे बोले- मित्र। जैसे वत्सला धेनु अपने बछड़ेके स्नेहसे थनोंसे दूध झरने लगती है, उसी प्रकार इस उत्तम मणिको देखकर आज मेरा हृदय भी द्रवीभूत हो रहा है।

जलसे प्रकट हुई यह मणि श्रेष्ठ देवताओंद्वारा पूजित है। किसी यज्ञमें बहुत संतुष्ट हुए बुद्धिमान् इन्द्रने राजा जनकको यह मणि दी थी।

सौम्य ! इस मणिरत्नका दर्शन करके आज मुझे मानो अपने पूज्य पिताका और विदेहराज महाराज जनकका भी दर्शन मिल गया हो, ऐसा अनुभव हो रहा है। सौम्य पवनकुमार ! जैसे बेहोश हुए मनुष्यको होशमें लानेके लिये उसपर जलके छींटे दिये जाते हैं, उसी प्रकार विदेहनन्दिनी सीताने मूर्च्छित हुए-से मुझ रामको अपने वाक्यरूपी शीतल जलसे सींचते हुए क्या-क्या कहा है ? यह बारंबार बताओ।

फिर वे हनुमान्‌जीसे बोले- वीर पवनकुमार। यदि विदेहनन्दिनी सीता एक मासतक जीवन धारण कर लेगी, तब तो वह बहुत समयतक जी रही है। मैं तो जानकीके बिना अब एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता।

तुमने जहाँ मेरी प्रियाको देखा है, उसी देशमें मुझे भी ले चलो। उसका समाचार पाकर अब मैं एक क्षण भी यहाँ नहीं रूक सकता।

हनुमन्। मुझे ठीक-ठीक बताओ, सीताने क्या-क्या कहा है ? जैसे रोगी दवा लेनेसे जीता है, उसी प्रकार मैं सीताके इस संदेश-वाक्यको सुनकर ही जीवन धारण करूँगा।

महात्मा श्रीरघुनाथके ऐसा कहनेपर हनुमान्‌जीने सीताजीकी कही हुई सब बातें उनसे निवेदन कर दीं।

सीता कहती हैं- रघुनन्दन। इस प्रकार अस्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ, शक्तिशाली और शीलवान् होते हुए भी आप राक्षसोंपर अपने अस्त्रका प्रयोग क्यों नहीं करते हैं ? आप बल-पराक्रमसे सम्पन्न हैं। यदि मेरे प्रति आपका कुछ भी आदर है तो आप शीघ्र ही अपने तीखे बाणोंसे रणभूमिमें रावणको मार डालिये।

हनुमन्। अथवा अपने भाईकी आज्ञा लेकर शत्रुओंको संताप देनेवाले रघुकुलतिलक नरश्रेष्ठ लक्ष्मण क्यों नहीं मेरी रक्षा करते हैं।

वे दोनों पुरुषसिंह श्रीराम और लक्ष्मण वायु तथा अग्निके तुल्य तेजस्वी एवं शक्तिशाली हैं, देवताओंके लिये भी दुर्जय है; फिर किसलिये मेरी उपेक्षा कर रहे हैं ?

तब हनुमान ने सीतासे कहा- शत्रुओंको संताप देनेवाले वे दोनों नरश्रेष्ठ राजकुमार आपके दर्शनके लिये उत्साहित हो लमापुरीको जलाकर भस्म कर देंगे।

वरारोहे। समराङ्गणमें रौद्र राक्षस रावणको बन्धुबान्धवोंसहित मारकर रघुनाथजी अवश्य ही आपको अपनी पुरीमें ले जायँगे।

लौटनेके लिये उत्साहित हो मुझे अपने शरीरको बढ़ाते देख सुन्दरी जनकनन्दिनी सीता बहुत दुखी हो गयी। उनके मुखपर आँसुओंकी धारा बह चली। मेरी उछलनेकी तैयारीसे वे घबरा गयीं और शोकके वेगसे आहत हो उठीं। उस समय उनका स्वर अश्रुगद्‌गद हो गया था। वे मुझसे कहने लगीं- महाकपे। तुम बड़े सौभाग्यशाली हो, जो मेरे महाबाहु प्रियतम कमलनयन श्रीरामको तथा मेरे यशस्वी देवर महाबाहु लक्ष्मणको भी अपनी आँखोंसे देखोगे।

सीताजीके ऐसा कहनेपर मैंने उन मिथिलेशकुमारीसे कहा- देवि। जनकनन्दिनी। आप शीघ्र मेरी पीठपर चढ़ जाइये। महाभागे। श्यामलोचने। मैं अभी सुग्रीव और लक्ष्मणसहित आपके पतिदेव श्रीरघुनाथजीका आपको दर्शन कराता हूँ।

यह सुनकर सीतादेवी मुझसे बोलीं- महाकपे। वानर-शिरोमणे। मेरा यह धर्म नहीं है कि मैं अपने वशमें होती हुई भी स्वेच्छासे तुम्हारी पीठका आश्रय लूँ।

पहले जो राक्षस रावणके द्वारा मेरे अङ्गोंका स्पर्श हो गया, उस समय वहाँ मैं क्या कर सकती थी ? मुझे तो कालने ही पीड़ित कर रक्खा था। अत: वानरप्रवर। जहाँ वे दोनों राजकुमार हैं, वहाँ तुम जाओ। मेरे इस तीव्र शोक-वेगको तथा इन राक्षसोंद्वारा जो मुझे डराया-धमकाया जाता है, इसको भी उन श्रीरामके पास जाकर कहना। तुम्हारा मार्ग मङ्गलमय हो।

नरेश्वर। आपकी प्रियतमा संयमशीला आर्या सीताने बड़े विषादके साथ ये सारी बातें कही हैं। मेरी कही हुई इन सब बातोंपर विचार करके आप विश्वास करें कि सतीशिरोमणि सीता सकुशल हैं।

तब सीताने मुझसे कहा- शत्रुओंका दमन करनेवाले वीर। यदि तुम ठीक समझो तो यहाँ किसी गुप्त स्थानमें एक दिनके लिये ठहर जाओ। आज विश्राम करके कल सबेरे यहाँसे चले जाना।

वानर। तुम्हारे निकट रहनेसे मुझ मन्दभागिनीको इस शोकविपाकसे थोड़ी देरके लिये भी छुटकारा मिल जाय।

तुम्हें न देखनेसे होनेवाले शोक दु:ख पर दु:ख उठाने से पराभव तथा दुर्गतिमें पड़ी हुई दुखियाको और भी संताप देता रहेगा।

विपक्षी वीरोंका नाश करनेवाले कपिश्रेष्ठ। इसमें संदेह नहीं कि इस कार्यकी सिद्धिके लिये तुम अकेले ही बहुत हो, तथापि तुम्हारे बलका यह उद्रेक तुम्हारे लिये ही यशकी वृद्धि करनेवाला होगा (श्रीरामके लिये नहीं)।

यदि श्रीराम अपनी सम्पूर्ण सेनाके साथ यहाँ आकर युद्धमें रावणको मार डालें और विजयी होकर मुझे अपनी पुरीको ले चलें तो यह उनके लिये यशकी वृद्धि करनेवाला होगा।

महात्मा श्रीराम संग्राममें शौर्य प्रकट करनेवाले हैं, अत: जिस प्रकार उनके अनुरूप पराक्रम प्रकट हो सके, वैसा ही उपाय तुम करो।

तब मैंने माता जानकी से कहाँ- वहाँ मुझसे बढ़कर तथा मेरे समान शक्तिशाली बहुत-से वानर हैं। सुग्रीवके पास कोई ऐसा वानर नहीं है, जो मुझसे किसी बातमें कम हो।

अत: देवि। अब संताप करनेकी आवश्यकता नहीं है। आपका मानसिक दु:ख दूर हो जाना चाहिये। वे वानर-यूथपति एक ही छलाँगमें लमामें पहुँच जायँगे। महाभागे। वे पुरुषसिंह श्रीराम और लक्ष्मण भी उदयाचलपर उदित होनेवाले चन्द्रमा और सूर्यकी भाँति मेरी पीठपर बैठकर आपके पास आ जायँगे।

आप शीघ्र ही देखेंगी कि सिंहके समान पराक्रमी शत्रुनाशक श्रीराम और लक्ष्मण हाथमें धनुष लिये लमाके द्वारपर आ पहुँचे हैं।

नख और दाढ़ें ही जिनके आयुध हैं, जो सिंह और बाघके समान पराक्रमी हैं तथा बड़े-बड़े गजराजोंके समान जिनकी विशाल काया है, उन वीर वानरोंको आप शीघ्र ही यहाँ एकत्र हुआ देखेंगी।

आपको जल्दी ही यह देखनेका भी सौभाग्य प्राप्त होगा कि शत्रुओंका दमन करनेवाले श्रीरघुनाथजी वनवासकी अवधि पूरी करके आपके साथ अयोध्यामें जाकर वहाँके राज्यपर अभिषिक्त हो गये हैं।

आपके अत्यन्त शोकसे बहुत ही पीड़ित होनेपर भी जिनकी वाणीमें कभी दीनता नहीं आने पाती, उन मिथिलेशकुमारीको जब मैंने प्रिय एवं मङ्गलमय वचनोंद्वारा सान्त्वना देकर प्रसन्न किया, तब उनके मनको कुछ शान्ति मिली।

तब श्रीराम बोले- हनुमान्ने बड़ा भारी कार्य किया है। भूतलपर ऐसा कार्य होना कठिन है। इस भूमण्डमें दूसरा कोई तो ऐसा कार्य करनेकी बात मनके द्वारा सोच भी नहीं सकता।

गरुड़, वायु और हनुमान्को छोड़कर दूसरे किसीको मैं ऐसा नहीं देखता, जो महासागरको लाँघ सके।

जो हनुमान्के समान बल-पराक्रमसे सम्पन्न न हो, ऐसा कौन पुरुष राक्षसोंद्वारा सुरक्षित अत्यन्त दुर्जय लमामें प्रवेश कर सकता है।

हनुमान्ने समुद्र-लङ्घन आदि कार्योंके द्वारा अपने पराक्रमके अनुरूप बल प्रकट करके एक सच्चे सेवकके योग्य सुग्रीवका बहुत बड़ा कार्य सम्पन्न किया है। हनुमान्ने स्वामीके एक कार्यमें नियुक्त होकर उसके साथ ही दूसरे महत्त्वपूर्ण कार्योंको भी पूरा किया, अपने गौरवमें भी कमी नहीं आने दी- अपने-आपको दूसरोंकी दृष्टिमें छोटा नहीं बनने दिया और सुग्रीवको भी पूर्णत: संतुष्ट कर दिया।

आज हनुमान्ने विदेहनन्दिनी सीताका पता लगाकर उन्हें अपनी आँखों देखकर धर्मके अनुसार मेरी, समस्त रघुवंशकी और महाबली लक्ष्मणकी भी रक्षा की है।

आज मेरे पास पुरस्कार देने योग्य वस्तुका अभाव है, यह बात मेरे मनमें बड़ी कसक पैदा कर रही है कि यहाँ जिसने मुझे ऐसा प्रिय संवाद सुनाया, उसका मैं कोई वैसा ही प्रिय कार्य नहीं कर पा रहा हूँ।

ऐसा कहते-कहते रघुनाथके अङ्ग-प्रत्यङ्ग प्रेमसे पुलकित हो गये और उन्होंने अपनी आज्ञाके पालनमें सफलता पाकर लौटे हुए पवित्रात्मा हनुमान्जीको हृदयसे लगा लिया।

राम बोले- ऐसी पतिव्रता ऐसे संकट में घिरी हुई है जिसका मुझ जैसा पति हो वह पत्नी इतनी दु:ख में है। जिसका जीवन महलों में बीता हो उसकी कुशोंकी सेज साथरी है। करनी का लिखा कभी मिटता नहीं, होनी का खेल निराला है।

तब हनुमान बोले- हे नाथ आपके अति उच्च विचार है। इस संसार में दु:ख उसीको होता है जिन्होंने इन चरणों की शरण नहीं गही हो। उसी ठौरपर दु:ख या संकट आता है जिस ठौर पर प्रभु का स्मरण न हो। माता को दु:ख संकट कैसा। रात-दिन वह आपका नाम स्मरण करती है। मन-मन्दिर में रघुराई है साक्षात् आप ही का दर्शन करती है।

तब श्रीराम बोले- हे वीर हनुमान धन्य हो। तेरी गति-मति योग्यता किस भाँति बखानी जाय। तुझ जैसा उपकारी इस संसार में न देवताओं में, न पुरुषों में, न मुनियों में हुआ है। अब और विशेष क्या कहूँ। तू प्राणों से भी प्यारा है, तुम भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण, सीता से बढ़कर मेरा प्यारा है। यह कह-कहकर प्रभु अश्रुओं को रोकते थे और टकटकी बाँधकर बार-बार हनुमान की ओर निहार रहे थे। स्वामी सेवक का यह मिलन देखकर त्रिभुवन-मण्डल भी पुलकाने लगा। तब से भगवान श्रीराम ने हनुमान को संकटमोचन का नाम प्रदान किया।

हनुमान ने कहा- बंदरका बस, यही बड़ा पुरुषार्थ है कि वह एक डालसे दूसरी डालपर चला जाता है। मैंने जो समुद्र लाँघकर सोनेका नगर जलाया और राक्षसगणको मारकर अशोकवनको उजाड़ डाला यह सब तो श्रीरघुनाथजी। आपहीका प्रताप हैं। हे नाथ। इसमें मेरी प्रभुता बड़ाई कुछ भी नहीं है।

हे प्रभु जिसपर आप प्रसन्न हों, उसके लिये कुछ भी कठिन नहीं है। आपके प्रभावसे रुई जो स्वयं बहुत जल्दी जल जानेवाली वस्तु हैं बड़वानलको निश्चय ही जला सकती है अर्थात् असम्भव भी सम्भव हो सकता है।

हे नाथ। मुझे अत्यन्त सुख देनेवाली अपनी निश्चल भक्ति कृपा करके दीजिये। हनुमानजीकी अत्यन्त सरल वाणी सुनकर, हे भवानी। तब प्रभु श्रीरामने एवमस्तु ऐसा ही हो कहा।

बन्धुओ। सीताकी खोजका काम तो सुचारू रूपसे सम्पन्न हो गया; किंतु समुद्रतककी दुस्तरताका विचार करके मेरे मनका उत्साह फिर नष्ट हो गया।

महान् जलराशिसे परिपूर्ण समुद्रको पार करना तो बड़ा ही कठिन काम है। यहाँ एकत्र हुए ये वानर समुद्रके दक्षिण तटपर कैसे पहुँचेंगे।

हनुमान्‌जीसे ऐसा कहकर शत्रुसूदन महाबाहु श्रीराम शोकाकुल होकर बड़ी चिन्तामें पड़ गये।

प्रशंसा गुरुजनोंकी उनके सम्मुख की जाती है, मित्रकी पीठ पीछे की जाती है, पुत्रकी कभी नहीं की जाती और सेवकों की तब की जाती है, जब वह कार्य सम्पन्न करके आता है।

केवल वायु, गरुड़ और पवनपुत्र ही समुद्र पार कर सकते हैं। सुग्रीवका कार्य हनुमानने सम्पन्न किया है। बिना आज्ञा भी निर्दिष्ट कार्यसे अधिक कार्य किया। आगामी कार्यके लिए भूमिका प्रशस्त कर दी। हनुमान उत्तम सेवक हैं। श्रीराम आभार-गद्‌गद् स्वर कहते गये- मुझे, लक्ष्मणको, भरतको, माता कौसल्याको, रघुवंशको, पूरी अयोध्याको हनुमानने जीवन दिया है। सबकी पवनपुत्रने रक्षा की है।

मेरे नाथ। मेरे स्वामी। हनुमानने व्याकुल होकर चरण पकड़ लिये।

इतना प्रिय सम्वाद लाने वालेको देने योग्य मेरे पास कुछ नहीं है। राम कङ्गाल है। श्रीराम उठ खड़े हुए- मेरे पास मेरा हृदय ही है, अत: मैं आञ्जनेयको आलिंगन देता हूँ। यही मेरा सर्वस्व है। सब साक्षी रहें, राम अपने आपको हनुमानको दे रहा है।

दोनों विशाल बाहु बढ़ाकर, झुककर श्रीरामने बलपूर्वक हनुमानको उठाकर हृदयसे लगाया और देरतक लगाये रहे।

मैं तुमसे यह पूछता हूँ- लंका कैसी शोभायमान सुन्दर है ? लोग किस धर्म का पालन करते हैं ? राक्षसों के कर्म सम्बन्धी बात भी कह दो। इस पर हनुमान बोला- लंका का गढ़ तो बाँका है। वह लंका तीन सौ योजन लम्बी विशाल है। एक-एक की शोभा दूसरे से अधिक सुन्दर है। उनमें तीनों काल बड़ी पूजा होती है। असुरों के घरों में अग्निहोत्र चलता रहता है और बहुत प्रकार से वेदों का अध्ययन हुआ करता है। राक्षस शरीर पर भस्म के साथ रुद्राक्ष धारण करते हैं। रावण ने वेदों के खण्ड बना लिये हैं अर्थात् वेदों को विभिन्न खण्डों में विभक्त किया है। फिर भी वह देवों को बहुत दण्ड देता है। वे महाकपटी राक्षस दारुण तप करते हैं और मलिन अर्थात् अपवित्र मन्त्रों का जाप करते रहते हैं। राक्षसों में जरा भी दया नहीं है। वे सद् आचार-रहित हैं, उनका वेश भी अपावन है। वे गायों-ब्राह्मणों तथा देवों को पीड़ा पहुँचाते हैं और नित्य हिंसा करते हुए घूमते रहते हैं। तीनों लोकों का जो भी वैभव है, वह रावण के भवनों में भरा हुआ है। उसके असंख्य सुन्दर स्त्रियाँ है और वह नि:शंक होकर रात-दिन क्रीड़ा भोग-विलास करता रहता है। उसके कन्याएँ और जामाता अनगिनत हैं, पुत्रों-पौत्रों का तो कोई पार ही नहीं है। लंका में केवल एक विभीषण ऐसा भक्त है, जो आपके प्रति आसक्त है। शेष समस्त असुर धर्म-रहित हैं, निर्दय और अपवित्र हैं, हिंसाचारी हैं। हनुमान ने जब ऐसी बात कही, तो उसे सुनकर जगत्पिता श्रीराम हँस पड़े। वे बोले- उनके तप और होम को धिक्कार है, जिन्होंने कोई तत्त्व ब्रह्म-सम्बन्धी विचार नहीं जाना है। जिन्होंने समर्थ होने पर भी आत्मा को नहीं जाना, उन्होंने जो भी शास्त्रों का श्रवण किया हो, वह व्यर्थ है। साँप की शान्ति जैसी होती है, असुरों की धर्म-सम्बन्धी इन क्रिया वैसी ही व्यर्थ समझो। विधवा का रूप और यौवन जैसे अर्थहीन होता है, अन्त्यज का रम्य भवन जैसे व्यर्थ होता है, जार व्यक्ति का आचरण जैसा शुभ अर्थात् पूर्णत: अशुभ, अपवित्र होता है, चोरों की समझदारी जैसे व्यर्थ होती है, दम्भी व्यक्ति द्वारा किया हुआ भजन और ध्यान जैसे व्यर्थ होता है, जैसे बिना भूत-दया के ज्ञान व्यर्थ होता है- उन सबको जैसे मिथ्या झूठा, अतएव व्यर्थ समझ लो, वैसे ही व्यर्थ राक्षसों के धर्म-सम्बन्धी उन कर्मों को समझो।

यह अन्वेषण-कार्य तो पूरा हो गया। कुछ क्षणोंके पश्चात् श्रीराम जब स्वस्थ होकर बैठ गये, सुग्रीवकी ओर देखकर बोले- अब समुद्र पार कैसे होगा ?

आप यहीं इस प्रकारकी बात क्यों करते हैं ? आप लीलामय हैं, जानता हूँ; किंतु यह असङ्गत लीला क्यों ? सुग्रीव उठ खड़े हुए- श्रीजानकीका पता लग गया, अब उन्हें प्राप्त करनेकी युक्ति ढूँढनी है। हम निश्चय समुद्र पार करेंगे। वानर शूरवीर हैं। इनके मनमें आपके प्रति भक्ति है। हम पराक्रम करके समुद्रको पाट देंगे। रावणको मारकर श्रीजनक-नन्दिनीको लाना ही है। आप बुद्धिको व्याकुल मत बनावें। आप धनुष लेकर खड़े होंगे तो समुद्रको शुष्क कर देनेमें आपको विलम्ब होगा ? आप अब दशग्रीवपर क्रोध करें। मैं तो ऐसे

शकुन स्पष्ट देख रहा हूँ कि आपकी विजय होगी।

पवनपुत्र। तुम सीताका पता लाये हो। हम कैसे भी समुद्र पार करेंगे ही। श्रीरामको तो सुग्रीवको प्रोत्साहित करना था। अब बोले- तुमने लमा देखी है। उसकी स्थिति क्या है ? उसके द्वारादि कैसे हैं ?

त्रिकूटके मध्य शिखरपर बसी लमा सब प्रकार समृद्ध है। उसके सभी निवासी रावणसे प्रेम करते हैं। राक्षस सुखी हैं। उसके चारों ओर चार द्वार है। उनपर महायन्त्र लगे थे। अत्यन्त बलशाली राक्षस उन द्वारोंके रक्षक थे। हनुमानने विवरण दिया- बहुत सुदृढ़ चिकनी परिखा नगरके चारों ओर थी, जिसपर चढ़नेको सहारा नहीं था। परिखाके बाहर चौड़ी खाई थी, उसमें ग्राह पले थे। स्वत:चालित यन्त्र बाहर और जलमें भी थे।

लमा दुर्ग अत्यन्त दुर्धर्ष था। उसकी प्रत्येक दिशामें खाईसे बाहर भी सरिता, वन अथवा खड़े पर्वतकी सुरक्षा हैं। नौकाका मार्ग नहीं है। हनुमानने पूरा विवरण दिया- लमा ऊँचाई पर बसी है। उसकी परिखापर यन्त्र लगे थे। सब ओर मुख किये शतघ्नी सजी थीं। पूर्व द्वारपर दस सहस्त्र योधा द्वार-रक्षक थे। दक्षिण, उत्तर, पश्चिमके द्वारोंपर इतने योधा थे कि मैं अनुमान नहीं कर सकता। नगरकी मध्यम कक्षामें भी महायन्त्र लगे थे।

देव। मैंने पुरीकी प्राय: पूरी परिखा गिराकर खाई पाट दी है। द्वार ध्वस्त कर दिये। कह नहीं सकता कि दशग्रीव कितनी कैसी परिखा हमारे पहुँचने तक बना लेगा और द्वार कहाँ कैसे बनवायेगा। हनुमानने हाथ जोड़े निवेदन किया- मैंने सब महायन्त्र तथा शतघ्नियाँ लात मारकर नष्ट कर दी हैं। शत्रु उनका पुनर्निमाण बहुत शीघ्र नहीं कर सकता। मैं अनुमान लगानेकी स्थितिमें नहीं था; किंतु मैंने राक्षसोंको कहते सुना कि इस उत्पाती वानरने लमाकी चौथाई सेना मार दी।

नगरके बहुत अधिक भवन नष्ट किये हैं मैंने। हनुमानने कहा- शत्रुको सबसे पहिले नगर-परिखा और भवन बनानेमें व्यस्त होना पड़ेगा। वह महायन्त्रोंपर ध्यान अभी नहीं दे सकेगा। आञ्जनेयने विवरण पूरा किया- नगरके बाहरकी सरिता भी अग्निके तापसे मकरादिरहित हो चुकी है। दशग्रीव अनुमान भी नहीं कर सकेगा कि उसका उत्तर शिखरसुबेल, काल तथा शनिश्चरको मुक्त करके अरक्षित कर दिया गया है।

शत्रुको जितना अधिक समय मिलेगा वह अपनी सुरक्षा उतनी दृढ़ कर सकेगा। अत: उसे समय नहीं देना चाहिए।

अब आञ्जनेयने प्रस्ताव किया- आप अविलम्ब प्रस्थान करें। आपके प्रताप-प्रभावने ही इतना कार्य किया है। अन्यथा मुझ तुच्छ वानरमें तो केवल शाखाओंपर कूदनेकी शक्ति है। अम्बाका उस दारुण विपत्तिसे यथाशीघ्र परित्राण परमावश्यक है। दशग्रीवको समय नहीं मिलना चाहिये। अत: शेष कार्यको सम्पन्न करनेके लिए अब प्रभुको प्रयाण करना चाहिये। इन सूचनाओं के तत्काल पश्चात, वहीं बैठकर सैनिक अभियान की योजना बनाई गई और अगले दिन प्रात: ही प्रयाण का निश्चय किया गया।

९) वानर सेनाका लमाके लिये प्रयाण - सुग्रीवने श्रीराम से कहा- वीरवर। आप दूसरे साधारण मनुष्योंकी भाँति क्यों संताप कर रहे हैं ? आप इस तरह चिन्तित न हों। जैसे कृतघ्न पुरुष सौहार्दको त्याग देता है, उसी तरह आप भी इस संतापको छोड़ दें। आप बुद्धिमान्, शास्त्रोंके ज्ञाता, विचारकुशल और पण्डित हैं, अत: कृतात्मा पुरुषकी भाँति इस अर्थदूषक प्राकृत बुद्धिका परित्याग कर दीजिये। जो पुरुष उत्साहशून्य, दीन और मन-ही-मन शोकसे व्याकुल रहता है, उसके सारे काम बिगड़ जाते हैं और वह बड़ी विपत्तिमें पड़ जाता है।

ये वानरूथपति सब प्रकारसे समर्थ एवं शूरवीर हैं। आपका प्रिय करनेके लिये इनके मनमें बड़ा उत्साह है। ये आपके लिये जलती आगमें भी प्रवेश कर सकते हैं। समुद्रको लाँघने और रावणको मारनेका प्रसंग चलनेपर इनका मुँह प्रसन्नतासे खिल जाता है। इनके इस हर्ष और उत्साहसे ही मैं इस बातको जानता हूँ तथा इस विषयमें मेरा अपना तर्क निश्चय भी सुदृढ़ है।

आप ऐसा कोई उपाय कीजिये, जिससे समुद्रपर सेतु बँध सके और हम उस राक्षसराजकी लमापुरीको देख सकें। त्रिकूटपर्वतके शिखरपर बसी हुई लमापुरी एक बार दीख जाय तो आप यह निश्चित समझिये कि युद्धमें रावण दिखायी दिया और मारा गया।

वरुणके निवासभूत घोर समुद्रपर पुल बाँधे बिना तो इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता और असुर भी लमाको पददलित नहीं कर सकते।

अत: राजन। आप इस व्याकुल बुद्धिका आश्रय न लें- बुद्धिकी इस व्याकुलताको त्याग दें; क्योंकि यह समस्त कार्योंको बिगाड़

देनेवाली है और शोक इस जगत्‌में पुरुषके शौर्यको नष्ट कर देता है।

मनुष्यको जिसका आश्रय लेना चाहिये, उस शौर्यका ही वह अवलम्बन करे; क्योंकि वह कर्ताको शीघ्र ही अलंकृत कर देता है- उसके अभीष्ट फलकी सिद्धि करा देता है।

आप इस समय तेजके साथ ही धैय्यका आश्रय लें। कोई वस्तु खो गयी हो या नष्ट हो गयी हो, उसके लिये आप-जैसे शूरवीर महात्मा पुरुषोंको शोक नहीं करना चाहिये; क्योंकि शोक सब कामोंको बिगाड़ देता है। आप बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ और सम्पूर्ण शास्त्रोंके मर्मज्ञ हैं। अत: हम जैसे मन्त्रियों एवं सहायकोंके साथ रहकर अवश्य ही शत्रुपर विजय प्राप्त करें। मुझे तो तीनों लोकोंमें ऐसा कोई वीर नहीं दिखायी देता, जो रणभूमिमें धनुष लेकर खड़े हुए आपके सामने ठहर सके। वानरोंपर जिसका भार रक्खा गया है, आपका वह कार्य बिगड़ने नहीं पायेगा। आप शीघ्र ही इस अक्षय समुद्रको पार करके सीताका दर्शन करेंगे।

अपने हृदयमें शोकको स्थान देना व्यर्थ है। इस समय तो आप शत्रुओंके प्रति क्रोध धारण कीजिये। जो क्षत्रिय मन्द क्रोधशून्य होते हैं, उनसे कोई चेष्टा नहीं बन पाती; परंतु जो शत्रुके प्रति आवश्यक रोषमें भरा होता है, उससे सब डरते हैं। नदियोंके स्वामी घोर समुद्रको पार करनेके लिये क्या उपाय किया जाय, इस विषयमें आप हमारे साथ बैठकर विचार कीजिये; क्योंकि आपकी बुद्धि बड़ी सूक्ष्म है।

ये वानर संग्राममें बड़े शूरवीर हैं और इच्छानुसार रूप धारण कर सकते हैं। ये पत्थरों और पेड़ोंकी वर्षा करके ही उन शत्रुओंका संहार कर डालेंगे। सुग्रीवके ये युक्तियुक्त और उत्तम अभिप्रायसे पूर्ण वचन सुनकर श्रीरामने उन्हें स्वीकार किया और फिर हनुमान्‌जीसे कहा- वानरवीर। तुम मुझे यह तो बताओ कि उस दुर्गम लमापुरीके कितने दुर्ग हैं। मैं देखे हुएके समान उसका सारा विवरण स्पष्टरूपसे जानना चाहता हूँ। तुमने रावणकी सेनाका परिमाण, पुरीके दरवाजोंको दुर्गम बनानेके साधन, लमाकी रक्षाके उपाय तथा राक्षसोंके भवन- इन सबको सुखपूर्वक यथावत्‌रूपसे वहाँ देखा है। अत: इन सबका ठीक-ठीक वर्णन करो; क्योंकि तुम सब प्रकारसे कुशल हो।

श्रीरघुनाथका यह वचन सुनकर हनुमान्‌ने श्रीरामसे फिर कहा- प्रभो। लमापुरी हर्ष और आमोद-प्रमोदसे पूर्ण है। वह विशाल पुरी मतवाले हाथियोंसे व्याप्त तथा असंख्य रथोंसे भरी हुई है। राक्षसोंके समुदाय सदा उसमें निवास करते हैं।

उस पुरीके चार बड़े-बड़े दरवाजे हैं, जो बहुत लंबे-चौड़े हैं। उनमें बहुत मजबूत किवाड़ लगे हैं और मोटी-मोटी अर्गलाएँ हैं। उन दरवाजोंपर बड़े विशाल और प्रबल यन्त्र लगे हैं। जो तीर और पत्थरोंके गोले बरसाते हैं। उनके द्वारा आक्रमण करनेवाली शत्रुसेनाको आगे बढ़नेसे रोका जाता है। उस पुरीके चारों ओर सोनेका बना हुआ बहुत ऊँचा परकोटा है, जिसको तोड़ना बहुत ही कठिन है। उसमें मणि, मूँगे, नीलम और मोतियोंका काम किया गया है। परकोटोंके चारों ओर महाभयंकर, शत्रुओंका महान् अमङ्गल करनेवाली, ठंडे जलसे भरी हुई और अगाध गहराईसे युक्त कई खाइयाँ बनी हुई हैं, जिनमें ग्राह और बड़े-बड़े मत्स्य निवास करते हैं।

रावण युद्धके लिये उत्सुक होता हुआ स्वयं कभी क्षुब्ध नहीं होता- स्वस्थ एवं धीर बना रहता है। वह सेनाओंके बारंबार निरीक्षणके लिये सदा सावधान एवं उद्यत रहता है। लमापर चढ़ाई करनेके लिये कोई अवलम्ब नहीं है। वह पुरी देवताओंके लिये भी दुर्गम और बड़ी भयावनी है। उसके चारों ओर नदी, पर्वत, वन और कृत्रिम खाई, परकोटा आदि- ये चार प्रकारके दुर्ग हैं।

वह बहुत दूरतक फैले हुए समुद्रके दक्षिण किनारेपर बसी हुई है। वहाँ जानेके लिये नावका भी मार्ग नहीं है; क्योंकि उसमें लक्ष्यका भी किसी प्रकार पता रहना सम्भव नहीं है। वह दुर्गम पुरी पर्वतके शिखरपर बसायी गयी है और देवपुरीके समान सुन्दर दिखायी देती है, हाथी, घोड़ोंसे भरी हुई वह लमा अत्यन्त दुर्जय है।

खाइयाँ, शतघ्नियाँ और तरह-तरहके यन्त्र दुरात्मा रावणकी उस लमानगरीकी शोभा बढ़ाते हैं। लमाके मध्यभागकी छावनीमें सैकड़ों सहस्र दुर्जय राक्षस रहते हैं, जिनकी संख्या एक करोड़से अधिक है। किंतु मैंने उन सब संक्रमोंको तोड़ डाला है, खाइयाँ पाट दी हैं, लमापुरीको जला दिया है और उसके परकोटोंको भी धराशायी कर दिया है। इतना ही नहीं, वहाँके विशालकाय राक्षसोंकी सेनाका एक चौथाई भाग नष्ट कर डाला है।

हमलोग किसी-न-किसी मार्ग या उपायसे एक बार समुद्रको पार कर लें; फिर तो लमाको वानरोंके द्वारा नष्ट हुई ही समझिये। अङ्गद, द्विविद, मैन्द, जाम्बवान्, पनस, नल और सेनापति नील- इतने ही वानर लमाविजय करनेके लिये पर्याप्त हैं।

ये अङ्गद आदि वीर आकाशमें उछलते-कूदते हुए रावणकी महापुरी लमामें पहुँचकर उसे पर्वत, वन, खाई, दरवाजे, परकोटे और मकानोंसहित नष्ट करके सीताजीको यहाँ ले आयेंगे। ऐसा समझकर आप शीघ्र ही समस्त सैनिकोंको सम्पूर्ण आवश्यक वस्तुओंका संग्रह

करके कूच करनेकी आज्ञा प्रदान करें। उचित मुहूर्तसे प्रस्थानकी इच्छा कीजिये।

तब राम बोले- हनुमन्। मैं तुमसे सच कहता हूँ- तुमने उस भयानक राक्षसकी जिस लमापुरीका वर्णन किया है, उसे मैं शीघ्र ही नष्ट कर डालूँगा। सुग्रीव। तुम इसी अभिजित मुहूर्तमें (जिसे विजय मुहूर्त कहा जाता है) प्रस्थानकी तैयारी करो। सूर्यदेव दिनके मध्य भागमें जा पहुँचे हैं। इसलिये इस विजय नामक मुहूर्तमें हमारी यात्रा उपयुक्त होगी।

अभिजित-मध्याह्नका यह विजय-मुहूर्त है। वानरेन्द्र सुग्रीव। हम तत्काल यात्रा करें। श्रीरामने देख लिया कि लक्ष्मणको पल-पल असह्य हो रहा है, अत: उठ खड़े हुए। अपने त्रोण कसते हुए ही कहा- मेरा दाहिना नेत्र, दक्षिण भुजा फड़क रही है। हमारी विजय निश्चित है। सेनाके आगे वानरोंके साथ नील चलें।

इस समय जो शकुन प्रकट हो रहे हैं और जिन्हें मैं देख रहा हूँ, उनसे यह विश्वास होता है कि मैं अवश्य ही रावणका वध करके जनकनन्दिनी सीताको ले आऊँगा। इसके सिवा मेरी दाहिनी आँखका ऊपरी भाग फड़क रहा है। वह भी मानो मेरी विजय-प्राप्ति और मनोरथसिद्धि को सूचित कर रहा है।

श्रीरामने गणपतिको मस्तक झुकाया। मनमें सिंहवाहिनीका स्मरण किया और गगनमें उन अष्टभुजा ज्योतिर्मयीको प्रत्यक्ष सानुकूल देखकर प्रसन्न हो गये। वे तो स्वत: सेवाको समुस्तुक थीं।

प्रचण्ड- पराक्रम श्रीरामकी जय। अमित-विक्रम लक्ष्मणलालकी जय। उग्रवीर्य वानरेन्द्र सुग्रीवकी जय।

गगन वानरोंके जयघोषसे गूँज उठा। उधर लमामें भगवती वैदेहीका वाम नेत्र, वाम भुजा फड़की तो दशग्रीव और प्राय: सब राक्षसोंके भी वही अङ्ग फड़कने लगे; किंतु मन्दोदरी और राक्षसियोंके दक्षिण नेत्र, दक्षिण बाहु फड़के। रावणके भवनपर गीध आकर बैठा। वह उड़ानेपर भी बार-बार वहीं बैठता था। पता नहीं कहाँसे असंख्य काले काक आ गये। वे इतने धृष्ट कि राक्षसोंके ही नहीं राक्षसेश्वर तकके मस्तकरोंपर बैठकर ललाटपर चञ्चु प्रहार करते थे। लमाके भवनोंपर, मन्दिरोंपर भी लगी ध्वजाएँ बिना वायु टूट गिरीं।

यहाँ अङ्गदके कन्धेपर बैठे लक्ष्मणने आगे चलनेको उद्यत हनुमानके कन्धेपर बैठे अग्रजसे कहा- आर्य। हम लोग शीघ्र रावणको मारकर अम्बा मैथिलीको लेकर लौटेंगे। देवता हमारे अनुकूल हैं। देखिये, नीलकण्ठ और श्वेत चील बार-बार हमारे साथ आगे चलना चाहते हैं। वायु पीछेसे आगे गति दे रहे हैं। मृगमाला दाहिने आगे दौड़ती जा रही है। मैंने गत रात्रिमें गगन ध्यानसे देखा था। इस समयके लग्नके अनुसार मङ्गल हमारे षष्टभ और शनि अष्टम हैं। शेषग्रह उच्चके या स्वगृही अनुकूल स्थानोंमें हैं। यह यायी-जयद योग चल रहा है।

इस सेनाके आगे-आगे एक लाख वेगवान् वानरोंसे घिरे हुए सेनापति नील मार्ग देखनेके लिये चलें।

सेनापति नील। तुम सारी सेनाको ऐसे मार्गसे शीघ्रतापूर्वक ले चलो, जिसमें फल-मूलकी अधिकता हो, शीतल छायासे युक्त सघन वन हो, ठंडा जल मिल सके और मधु भी उपलब्ध हो सके।

वानरोंको चाहिये कि जहाँ गड्ढे, दुर्गम वन और साधारण जंगल हों, वहाँ सब ओर कूद-फाँदकर यह देखते रहें कि कहीं शत्रुओंकी सेना तो नहीं छिपी है ऐसा न हो कि हम आगे निकल जायँ और शत्रु अकस्मात् पीछेसे आक्रमण कर दे।

जिस सेनामें बाल, वृद्ध आदिके कारण दुर्बलता हो, वह यहाँ किष्किन्धामें ही रहे; क्योंकि हमारा यह युद्धरूपी कृत्य बड़ा भयंकर है, अत: इसके लिये बल-विक्रमसम्पन्न सेनाको ही यात्रा करनी चाहिये।

सैकड़ों और हजारों महाबली कपिकेसरी वीर महासागरकी जलराशिके समान भयंकर एवं अपार वानर-सेनाके अग्रभागको अपने साथ आगे बढ़ाये चलें। पर्वतके समान विशालकाय गज, महाबली गवय तथा मतवाले साँड़की भाँति पराक्रमी गवा सेनाके आगे-आगे चलें। उछल-कूदकर चलनेवाले कपियोंके पालक वानर-शिरोमणि ऋषभ इस वानर-सेनाके दाहिने भागकी रक्षा करते हुए चलें। गन्धहस्तीके समान दुर्जय और वेगशाली वानर गन्धमादन इस वानर-वाहिनीके वामभागमें रहकर इसकी रक्षा करते हुए आगे बढ़ें। जैसे देवराज इन्द्र ऐरावत हाथीपर आरूढ़ होते हैं, उसी प्रकार मैं हनुमान्के कंधेपर चढ़कर सेनाके बीचमें रहकर सारी सेनाका हर्ष बढ़ाता हुआ चलूँगा। जैसे धनाध्यक्ष कुबेर सार्वभौम नामक दिग्गजकी पीठपर बैठकर यात्रा करते हैं, उसी प्रकार कालके समान पराक्रमी लक्ष्मण अंगदपर आरूढ़ होकर यात्रा करें। महाबाहु ऋक्षराज जाम्बवान्, सुषेण और वानर वेगदर्शी ये तीनों वानर सेनाके पृष्ठभागकी रक्षा करें। सुग्रीवने उन वानरोंको यथोचित आज्ञा दी।

तब वे समस्त महाबली वानरगण अपनी गुफाओं और शिखरोंसे शीघ्र ही निकलकर उछलते-कूदते हुए चलने लगे। तत्पश्चात्

वानरराज सुग्रीव और लक्ष्मणके सादर अनुरोध करनेपर सेनासहित धर्मात्मा श्रीराम दक्षिण दिशाकी ओर प्रस्थित हुए।

यात्रा करते हुए श्रीरामके पीछे वह विशाल वानरवाहिनी चलने लगी। उस सेनाके सभी वीर सुग्रीवसे पालित होनेके कारण हृष्ट-पुष्ट एवं प्रसन्न थे। इतनी संगठित, प्रशिक्षित तथा शस्त्र-संपन्न वानर-सेना आज तक के वानरों के इतिहास में कभी सुनी नहीं गई। भालू, वानरों की यह सेना टिड्डीदल जैसा चल रहीं थी किलकारियाँ मार रहीं थी। आकाश धूल-धूसरित हो गया। सूर्य भी दृष्टि में नहीं आता था। पूरे विश्व में जयकार गूँज गया। सुरमण्डल भी हर्षित हुआ। घर में यदि एक वानर आ जाय तो घरवाले भी घबराते है। अब लंका में क्या बीतेगी जब इतने सारे वानर बढ़कर जाते है। नख ही जिनके शस्त्र हैं, वे इच्छानुसार सर्वत्र बेरोक-टोक चलनेवाले रीछवानर पर्वतों और वृक्षोंको धारण किये कोई आकाशमार्गसे और कोई पृथ्वीपर चले जा रहे हैं। वे सिंहके समान गर्जना कर रहे हैं। उनके चलने और गर्जनेसे दिशाओंके हाथी विचलित होकर चिंघाड रहे हैं।

दिशाओंके हाथी चिंघाडने लगे, पृथ्वी डोलने लगी, पर्वत चञ्चल हो गये काँपने लगे और समुद्र खलबला उठे। गन्धर्व, देवता, मुनि, नाग, किन्नर सब-के-सब मनमें हर्षित हुए कि अब हमारे दु:ख टल गये। अनेकों करोड़ भयानक वानर योद्धा कटकटा रहे हैं और करोड़ों ही दौड़ रहे हैं। प्रबलप्रताप कोसलनाथ श्रीरामकी जय हो ऐसा पुकारते हुए वे उनके गुणसमूहोंको गा रहे हैं।

उनमेंसे कुछ वानर उस सेनाकी रक्षाके लिये उछलते-कूदते हुए चारों ओर चक्कर लगाते थे, कुछ मार्गशोधनके लिये कूदते-फाँदते आगे बढ़ जाते थे, कुछ वानर मेघोंके समान गर्जते, कुछ सिंहोंके समान दहाड़ते और कुछ किलकारियाँ भरते हुए दक्षिण दिशाकी ओर अग्रसर हो रहे थे। श्रीराम के समीप चलते हुए वानर यह कहते हुए गर्जना करते थे कि हमें रावणको मार डालना चाहिये। समस्त निशाचरोंका भी संहार कर देना चाहिये।

सबसे आगे ऋषभ, नील और वीर कुमुद- ये बहुसंख्यक वानरोंके साथ रास्ता ठीक करते जाते थे। सेनाके मध्यभागमें राजा सुग्रीव, श्रीराम और लक्ष्मण ये तीनों शत्रुसूदन वीर अनेक बलशाली एवं भयंकर वानरोंसे घिरे हुए चल रहे थे। बहुसंख्यक भालुओंसे घिरे हुए सुषेण और जाम्बवान् ये दोनों सुग्रीवको आगे करके सेनाके पिछले भागकी रक्षा कर रहे थे।

रास्तेमें उन्हें बहुत-से सुन्दर सरोवर और तालाब दिखायी दिये, जिनमें मनोहर कमल खिले हुए थे। श्रीरामकी आज्ञा थी कि रास्तेमें कोई किसी प्रकारका उपद्रव न करे। मार्गमें जल, फल, कन्द, मधु मिलेंगे। उन्हें तबतक कोई स्पर्श न करे, जबतक उनकी परीक्षा न कर ली जाय। दुरात्मा राक्षस उन्हें दूषित कर दे सकते हैं। श्रीरामने सबको सावधान किया- जलादिकी परीक्षा करनेवाले अग्रिम दलके साथ चलें। आप चिन्ता न करें। सुग्रीवने कहा- हम उपदेवता सही; किंतु वानर हैं। हमारे सब लोग दृष्टि पड़ते ही विष-मिश्रित पदार्थ पहिचान लेते हैं। फिर भी सावधानी आवश्यक है। श्रीरामने सूचित किया- शत्रु महामायावी है। कहीं नीची भूमि पड़े तो कपि उछलकर पहिले देख लें कि शत्रु वहीं छिपे तो नहीं हैं। गुफाओंके समीप पर्वत-शिखरोंपर चढ़नेसे पूर्व भी यह सावधानी रखी जाय। सेनाके निर्बल अंशको यहीं रक्षार्थ रखो।

भयंकर कोपवाले श्रीरामके इस आदेशको जानकर समुद्रके जलप्रवाहकी भाँति अपार एवं भयंकर दिखायी देनेवाली वह विशाल वानर-सेना भयभीत-सी होकर नगरोंके समीपवर्ती स्थानों और जनपदोंको दूरसे ही छोड़ती चली जा रही थी। विकट गर्जना करनेके कारण भयानक शब्दवाले समुद्रकी भाँति वह महाघोर जान पड़ती थी।

हनुमान् और अंगद- इन दो वानर वीरोंद्वारा ढोये जाते हुए वे नरश्रेष्ठ श्रीराम और लक्ष्मण शुक्र और बृहस्पति इन दो महाग्रहोंसे संयुक्त हुए चन्द्रमा और सूर्यके समान शोभा पा रहे थे।

उस समय वानरराज सुग्रीव और लक्ष्मणसे सम्मानित हुए धर्मात्मा श्रीराम सेनासहित दक्षिण दिशाकी ओर बढ़े जा रहे थे।

लक्ष्मणजी अंगदके कंधेपर बैठे हुए थे। वे शकुनोंके द्वारा कार्यसिद्धिकी बात अच्छी तरह जान लेते थे। उन्होंने पूर्णकाम भगवान् श्रीरामसे मङ्गलमयी वाणीमें कहा- रघुनन्दन। मुझे पृथ्वी और आकाशमें बहुत अच्छे-अच्छे शकुन दिखायी देते हैं। ये सब आपके मनोरथकी सिद्धिको सूचित करते हैं। इनसे निश्चय होता है कि आप शीघ्र ही रावणको मारकर हरी हुई सीताको प्राप्त करेंगे और सफलमनोरथ होकर समृद्धिशालिनी अयोध्याको पधारेंगे।

देखिये सेनाके पीछे शीतल, मन्द, हितकर और सुखमय समीर चल रहा है। ये पशु और पक्षी पूर्ण मधुर स्वरमें अपनी-अपनी बोली बोल रहे हैं। भृगुनन्दन शुक्र भी अपनी उज्ज्वल प्रभासे प्रकाशित हो आपके पीछेकी दिशामें प्रकाशित हो रहे हैं। जहाँ सप्तर्षियोंका समुदाय शोभा पाता है, वह ध्रुवतारा भी निर्मल दिखायी देता है। शुद्ध और प्रकाशमान समस्त सप्तर्षिगण ध्रुवको अपने दाहिने रखकर

उनकी परिक्रमा करते हैं।

हम महामनस्वी इक्ष्वाकुवंशियोंके लिये जो सबसे उत्तम है, वह विशाखानामक युगल नक्षत्र निर्मल एवं उपद्रवशून्य मंगल आदि दुष्ट ग्रहोंकी आक्रान्तिसे रहित होकर प्रकाशित हो रहा है। राक्षसोंका नक्षत्र मूल, जिसके देवता निर्ऋति हैं, अत्यन्त पीड़ित हो रहा है। उस मूलके नियामक धूमकेतुसे आक्रान्त होकर वह संतापका भागी हो रहा है।

जल स्वच्छ और उत्तम रससे पूर्ण दिखायी देता है, जंगलोंमें पर्याप्त फल उपलब्ध होते हैं, सुगन्धित वायु अधिक तीव्रगतिसे नहीं बह रही है और वृक्षोंमें ऋतुओंके अनुसार फूल लगे हुए हैं।

प्रभो। व्यूहबद्ध वानरी सेना बड़ी शोभासम्पन्न जान पड़ती है। तारकामय संग्रामके अवसरपर देवताओंकी सेनाएँ जिस तरह उत्साहसे सम्पन्न थीं, इसी प्रकार आज ये वानर-सेनाएँ भी हैं। आर्य। ऐसे शुभ लक्षण देखकर आपको प्रसन्न होना चाहिये।

उस सेनामें कुछ रीछ थे और कुछ सिंहके समान पराक्रमी वानर। नख और दाँत ही उनके शस्त्र थे। वे सभी वानर सैनिक हाथों और पैरोंकी अंगुलियोंसे बड़ी धूल उड़ा रहे थे। उनकी उड़ायी हुई उस भयंकर धूलने सूर्यकी प्रभाको ढककर सम्पूर्ण जगत्‌को छिपा-सा दिया। वह भयानक वानरसेना पर्वत, वन और आकाशसहित दक्षिण दिशाको आच्छादित-सी करती हुई उसी तरह आगे बढ़ रही थी, जैसे मेघोंकी घटा आकाशको ढककर अग्रसर होती है।

वह विशाल सेना निर्मल जलवाले सरोवर, वृक्षोंसे ढके हुए पर्वत, भूमिके समतल प्रदेश और फलोंसे भरे हुए वन इन सभी स्थानोंके मध्यमें, इधर-उधर तथा ऊपर-नीचे सब ओरकी सारी भूमिको घेरकर चल रही थी।

वे जवानीके जोश और अभिमानजनित दर्पके कारण रास्तेमें एक दूसरेको उत्साह, पराक्रम तथा नाना प्रकारके बल-सम्बन्धी उत्कर्ष दिखा रहे थे। उनमेंसे कोई तो बड़ी तेजीसे भूतलपर चलते थे और दूसरे उछलकर आकाशमें उड़ जाते थे। कितने ही वनवासी वानर किलकारियाँ भरते, पृथ्वीपर अपनी पूँछ फटकारते और पैर पटकते थे। कितने ही अपनी बाँहें फैलाकर पर्वत-शिखरों और वृक्षोंको तोड़ डालते थे तथा पर्वतोंपर विचरनेवाले बहुतेरे वानर पहाड़ोंकी चोटियोंपर चढ़ जाते थे। कोई बड़े जोरसे गर्जते और कोई सिंहनाद करते थे। कितने ही अपनी जाँघोंके वेगसे अनेकानेक लता-समूहोंको मसल डाते थे।

वे सभी वानर बड़े पराक्रमी थे। अँगड़ाई लेते हुए पत्थरकी चट्टानों और बड़े-बड़े वृक्षोंसे खेल करते थे। उन सहस्त्रों, लाखों और करोड़ों वानरोंसे घिरी हुई सारी पृथ्वी बड़ी शोभा पाती थी। चलते-चलते घने वृक्षोंसे व्याप्त और अनेकानेक काननोंसे संयुक्त सह्य पर्वतके पास पहुँचकर वे सब वानर उसके ऊपर चढ़ गये।

श्रीराम सह्य और मलयके विचित्र काननों, नदियों तथा झरनोंकी शोभा देखते हुए यात्रा कर रहे थे। मधुसे सुगन्धित वनोंमें गुनगुनाते हुए भौरोंके साथ चन्दनके समान शीतल, मन्द, सुगन्ध वायु चल रही थी। प्रसन्नतासे भरे हुए वानरोंने उन सब वृक्षोंको घेर लिया था। उस पर्वतपर बहुत-सी रमणीय बावड़ियाँ तथा छोटे-छोटे जलाशय थे, जहाँ चकवे विचरते और जलकुक्कुट निवास करते थें जलकाक और क्रौञ्च भरे हुए थे तथा सूअर और हिरन उनमें पानी पीते थे।

उस पर्वतके शिखरोंपर नाना प्रकारके पक्षी कलरव करते थे। वानर उन जलाशयोंमें नहाते, पानी पीते और जलमें क्रीड़ा करते थे। पेड़ोंको तोड़ते, लताओंको खींचते और बड़े-बड़े पर्वतोंको प्रतिध्वनित करते हुए वे श्रेष्ठ वानर तीव्र गतिसे आगे बढ़ रहे थे।

श्रीरामने मुख पीछे करके प्रशंसाकी दृष्टिसे सुग्रीवकी ओर देखा। वानरेन्द्र ने सुरक्षा, सावधानीके सब निर्देशोंको अनावश्यक बना दिया था। कपि सेनाको सर्वथा सुरक्षित रखनेकी निर्दोष योजना कर दी थी। गगनमें भी वे छायाकी भाँति अङ्गदके पीछे ही थे। वन, पर्वत, आकाशको घेरती वह असंख्य वानर-सेना उछलते समय भी इतनी व्यूहबद्ध रह सकती है, इसकी कल्पना करना भी कठिन है। केवल सामान्य वानरोंने पृथ्वीपर मध्यमें पद टेके; किंतु इतनी शीघ्र फिर कूदे कि उनका भूमिपर उतरना लक्षित करना कठिन था। सब गगनमें मानों उड़ रहे हों, ऐसे सीधे जाकर दक्षिण-सागर तटपर उतरे।

श्रीराम महेन्द्र पर्वतके पास पहुँचकर भाँति-भाँतिके वृक्षोंसे सुशोभित उसके शिखरपर चढ़ गये। महेन्द्र पर्वतके शिखरपर आरूढ़ हो दशरथनन्दन भगवान् श्रीरामने कछुओं और मत्स्योंसे भरे हुए समुद्रको देखा। इस प्रकार वे सह्य तथा मलयको लाँघकर क्रमशः महेन्द्र पर्वतके समीपवर्ती समुद्रके तटपर जा पहुँचे, जहाँ बड़ा भयंकर शब्द हो रहा था।

समुद्र का जल दिखाई पड़ते ही राम की गति मंथर हो गई। उनके साथ-साथ सुग्रीव और लक्ष्मण के पग भी धीमे हुए और एक पंक्ति

पीछे जाने वाले हनुमान, अंगद, जांबवान तथा तार भी सावधान हो गए। पीछे आने वाली टुकड़ियों को इंगित कर दिया गया। इंगित एक से दूसरी टुकड़ी तक होता हुआ सारी सेना में यात्रा करता चला गया।

सागर के तट पर, जल के निकट आकर राम रुक गए। नल अपनी टुकड़ी के साथ आगे आए और तत्काल केंद्रीय शिविर की स्थापना कर दी। केंद्रिय शिविर सेना का मुख्यालय था, जहाँ स्वयं राम रहते थे। पीछे आने वाली टुकड़ियाँ बहते आते हुए जल के समान दाएँ और बाएँ फैलती जा रही थीं और सागर-तट पर अपने-अपने शिविर की स्थापना करती चल रही थीं।

राम अपने शिविर के निकट एक ऊँचे स्थान पर खड़े अपनी सेना को स्कंधावार स्थापित करते देख रहे थे। उनके मन में सागर का बिम्ब था- एक ओर जल का सागर और दूसरी ओर सैनिकों का सागर। ऐसा लगता था जैसे एक सागर के तट पर दूसरे सागर की लहरें आ-आकर अपना बसेरा कर रही हैं। पता नहीं जल का सागर कितना विस्तृत था और यह वानर सेना उसे कहाँ तक घेर पाएगी; किंतु जिस गति से यह सेना स्वयं को फैला रही थी, उससे लगता था कि यह मानव-सागर जल-सागर पर छा जाएगा।

जहाँ सहसा उठी हुई जलकी तरङ्गोंसे प्रस्तरकी शिलाएँ धुल गयी थीं, उस विस्तृत सिन्धुतटपर पहुँचकर श्रीरामने कहा- इससे आगे तो वह सरिताओंका स्वामी महासागर ही विद्यमान है, जिसका कहीं पार नहीं दिखायी देता। अब बिना किसी समुचित उपायके सागरको पार करना असम्भव है। इसलिये यहीं सेनाका पड़ाव पड़ जाय और हमलोग यहाँ बैठकर यह विचार आरम्भ करें कि किस प्रकार यह वानर-सेना समुद्रके उस पारतक पहुँच सकती है।

वे बोले- कपिश्रेष्ठ। समस्त सेनाओंको समुद्रके तटपर ठहराया जाय। अब यहाँ हमारे लिये समुद्र-लङ्घनके उपायपर विचार करनेका अवसर प्राप्त हुआ है।

इस समय कोई भी सेनापति किसी भी कारणसे अपनी-अपनी सेनाको छोड़कर कहीं अन्यत्र न जाय। समस्त शूरवीर वानर-सेनाकी रक्षाके लिये यथास्थान चले जायँ। सबको यह जान लेना चाहिये कि हमलोगोंपर राक्षसोंकी मायासे गुप्त भय आ सकता है।

श्रीरामचन्द्रका यह वचन सुनकर लक्ष्मणसहित सुग्रीवने वृक्षावलियोंसे सुशोभित सागर-तटपर सेनाको ठहरा दिया। सागर-तटवर्ती वनमें पहुँचकर वे सभी श्रेष्ठ वानर समुद्रके उस पार जानेकी अभिलाषा मनमें लिये वहीं ठहर गये। वहाँ डेरा डालते हुए उन श्रीराम आदिकी सेनाओंके संचरणसे जो महान् कोलाहल हुआ, वह महासागरकी गम्भीर गर्जनाको भी दबाकर सुनायी देने लगा।

सुग्रीवद्वारा सुरक्षित वह वानरोंकी विशाल सेना श्रीरामके कार्य-साधनमें तत्पर हो रीछ, लंगूर और वानरोंके भेदसे तीन भागोंमें विभक्त होकर ठहर गयी। राक्षसोंका निवासभूत वह अगाध महासागर अत्यन्त दुर्गम था। उसे पार करनेका कोई मार्ग या साधन दुर्लभ था। उसमें वायुकी प्रेरणासे उठी हुई चञ्चल तरङ्गें, जो मगरों और विशालकाय सर्पोंसे व्याप्त थीं, बड़े उल्लाससे ऊपरको उठती और नीचेको उतर आती थीं। आकाशमें मेघोंकी घटा घिर आयी थी और समुद्र तरङ्ग मालाओंसे व्याप्त हो रहा था। अत: समुद्र और आकाश दोनोंमें कोई अन्तर नहीं रह गया था। परस्पर टकराकर और सटकर सिन्धुराजकी लहरें आकाशमें बजनेवाली देवताओंकी बड़ी-बड़ी भेरियोंके समान भयानक शब्द करती थीं। वायुसे प्रेरित हो रत्नोंको उछालनेवाली जलकी तरङ्गोंके कलकल नादसे युक्त और जल-जन्तुओंसे भरा हुआ समुद्र इस प्रकार ऊपरको उछल रहा था, मानो रोषसे भरा हुआ था।

उन महामनस्वी वानरवीरोंने देखा, समुद्र वायुके थपेड़े खाकर पवनकी प्रेरणासे आकाशमें ऊँचे उठकर उत्ताल तरमोंके द्वारा नृत्य-सा कर रहा था। तदनन्तर वहाँ खड़े हुए वानरोंने यह भी देखा कि चक्कर काटते हुए तरङ्ग-समूहोंके कल-कल नादसे युक्त महासागर अत्यन्त चञ्चल-सा हो गया है। यह देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ।

किसीका ध्यान नहीं गया कि नीचे अरण्यमें उनके उड़ते जानेसे कितना अन्धकार हो गया था। कितने वृक्ष और शाखाएँ उनके वेगसे उठी आँधीने तोड़े-उखाड़े। वन पशुओं और पक्षियोंमें कितनी व्याकुलता, दौड़ा-दौड़ मची। सबकी दृष्टि आगे थी। सब लक्ष्यदर्शी थे। सबको नीलका पीछा करना था और नीलको सीधे वहाँ उतरना था, जहाँसे हनुमान लमासे लौटकर उतरे थे। नीलका देखा था वह स्थान। नील वहीं उतरे तो पलोंमें पूरी वानर-सेना वहाँ उतर गयी।

वर्तमान भूगोलकी भाषामें दक्षिण भारतका वह पूराभाग जो रामेश्वरमसे त्रिवेंद्रम् तक सीधी रेखा खींचनेसे नीचे आवेगा, वानर-सेनासे भर गया। सम्भवत: पश्चिम समुद्रतटका और ऊपर तकका भाग।

वानरेन्द्र। अब सबको खाने-पीनेकी अनुमति दे दों। श्रीरामने हनुमानके कन्धेसे उतरते ही कहा- हम लोग यहाँ सागरके समीप ही

अपना शिविर स्थापित करें।

वानर पूँछ पटककर, उछलकर गर्जना कर रहे थे। बार-बार जयनाद गूँज रहा था। वे पर्वतोंपर चढ़ते थे, वृक्ष उखाड़ते तोड़ते थे। समीपमें सरोवर थे, सरिता थी। जलका सम्यक् सुयोग था। वन पक्व फलोंसे लदा था। कदाचित उन मर्यादा पुरुषोत्तमका ही प्रभाव होगा कि उस प्रदेशमें कन्याकुमारीके आसपास अबतक सभी महीनोंमें पका आम मिलता है।

वनपशु व्याकुल होकर भाग खड़े हुए। पक्षी चिल्लाते दूर चले गये। वानर पर्वतपर चढ़कर पानीमें कूदते थे। उनका सायमालीन स्नान चल रहा था। सबको अपना-अपना दल सम्हाल लेना चाहिये। सुग्रीवने यूथपोंको आदेश दिया- हम शत्रुके समीप हैं, अत: रात्रिमें भी हम सबको सावधान रहना है।

नीलने तत्काल सबकी व्यवस्था देखी। वानरोंको फल-कन्द ही आहार करना था। उसका यहाँ कोई अभाव नहीं था। नीलको केवल निर्देश करना था कि कौनसे यूथप अपने यूथको लेकर कहाँ रात्रिमें रहेंगे। सुरक्षाकी सबसे अधिक आवश्यकता समुद्रकी ओरसे थी। हनुमान, अङ्गद, सुग्रीव, जाम्बवान्, सुषेण नील आदि प्रमुख यूथप श्रीराम-लक्ष्मणको घेरकर समुद्रकी ओरसे सावधान थे।

श्रीराम-लक्ष्मणने स्नान करके सायं-संध्या सम्पन्न की। स्वयं सुग्रीव पर्णपुटकमें जल और मधुर फल लेकर उपस्थित हुए। अङ्गद-हनुमानने कोमल पत्र तोड़कर श्रीरामके लिए पत्र-शय्या सजा दी।

समुद्रके किनारे सेनाका पड़ाव पड़ जानेपर श्रीरामने अपने पास बैठे हुए लक्ष्मणकी ओर देखकर कहा- सुमित्रानन्दन। कहा जाता है कि शोक बीतते हुए समयके साथ स्वयं भी दूर हो जाता है; परंतु मेरा शोक तो अपनी प्राणवल्लभाको न देखनेके कारण दिनोंदिन बढ़ रहा है। मुझे इस बातका दु:ख नहीं है कि मेरी प्रिया मुझसे दूर है। उसका अपहरण हुआ- इसका भी दु:ख नहीं है। मैं तो बारंबार इसीलिये शोकमें डूब रहा हूँ कि उसके जीवित रहनेके लिये जो अवधि नियत कर दी गयी है, वह शीघ्रतापूर्वक बीती जा रही है। प्रियतमाका वियोग ही जिसका ईंधन है, उसकी चिन्ता ही जिसकी दीप्तिमती लपटें हैं, वह प्रेमाग्नि मेरे शरीरको रात-दिन जलाती रहती है। जैसे जलसे भरी हुई क्यारीके सम्पर्कसे बिना जलकी क्यारीका धान भी जीवित रहता है- सूखता नहीं है, उसी प्रकार मैं जो यह सुनता हूँ कि सीता अभी जीवित है, इसीसे जी रहा हूँ। सती-साध्वी सीता, जिसका मैं ही नाथ हूँ, आज अनाथकी भाँति राक्षसोंके बीचमें पड़कर निश्चय ही कोई रक्षक नहीं पा रही होगी। राजा जनककी पुत्री, महाराज दशरथकी पुत्रवधू और मेरी प्रियतमा सीता राक्षसियोंके बीचमें कैसे सोती होगी? वह समय कब आयेगा, जब कि सीता मेरे द्वारा उन दुर्धर्ष राक्षसोंका विनाश करके उसी प्रकार अपना उद्धार करेगी, जैसे शरत्कालमें चन्द्रलेखा काले बादलोंका निवारण करके उनके आवरणसे मुक्त हो जाती है।

देवकन्याके समान सुन्दरी मेरी सती-साध्वी सीता कब उत्कण्ठापूर्वक मेरे गलेसे लगकर अपने नेत्रोंसे आनन्दके आँसू बहायेगी। ऐसा समय कब आयेगा, जब मैं मिथिलेशकुमारीके वियोगसे होनेवाले इस भयंकर शोकको मलिन वस्त्रकी भाँति सहसा त्याग दूँगा। बुद्धिमान् श्रीराम वहाँ इस प्रकार विलाप कर ही रहे थे कि दिनका अन्त होनेके कारण मन्द किरणोंवाले सूर्यदेव अस्ताचलको जा पहुँचे।

कब सीताका समुद्धार होगा। कब यह शोक दूर होगा। श्रीराम सचिन्त हो उठे।

लक्ष्मणने आश्वासन दिया- आर्य। अब आप दशग्रीवपर क्रोध करें, केवल इतना ही विलम्ब आर्या अम्बाके उद्धारमें है। अब तो शोकका नहीं, उत्साहका समय है। रात्रिमें सबको बहुत सावधान रहना चाहिये। श्रीरामने सुग्रीवको समीप बुलाया- दशग्रीव और उसके अनुचर, निशाचर हैं। रात्रिमें उनका बल बढ़ जाता है।

आपका प्रताप और अशोक वाटिकामें बैठी तपस्विनी अम्बाका आशीर्वाद आपके जनोंकी कैसी रक्षा करता है, मैं इसका प्रत्यक्ष अनुभव कर चुका हूँ। हनुमानने कहा। वे अङ्गदके साथ श्रीरामका चरणसंवाहन करने आ बैठे थे।

मित्र सुग्रीव। इस अपार उदधिको हम सब कैसे पार करेंगे ? अधलेटे श्रीरामने अपने वाम भागमें बैठे सुग्रीवकी ओर देखा- अब हम सागरतट तक तो आ चुके हैं।

देव। हम वानर रात्रिको निष्क्रिय हो जाते हैं। सुग्रीवने सरलतापूर्वक कह दिया- समुद्र आपके प्रतापसे सूख जायगा, यह मुझे विश्वास है। लेकिन इसपर विस्तारसे विचार कल प्रात: करना अच्छा है। अभी सब वानर यूथप भी श्रान्त हैं। सबको विश्राम करना चाहिये।

श्रीराम सदाके समोचीनाथ हैं। उन्होंने शीघ्र नेत्र बन्द कर लिये। लक्ष्मण धनुष चढ़ाये वीरासनसे बैठ ही गये थे। हनुमान, अङ्गद, जाम्बवान, नील और स्वयं सुग्रीव पूरी रात्रि सतर्क जागते रहे। ग्राम के ग्राम खाली हो गए हैं और सेना में सम्मिलित होने के लिए आ

गए हैं। उस समय सुग्रीव बोले, यदि हमारा विचार यह है कि हमें और सैनिकों की आवश्यकता नहीं है। हमारी सेना रावण से लड़ने के लिए पर्याप्त और सक्षम है तो हम और सैनिकों को लेकर अपना बोझ क्यों बढ़ाएँ।

तब जाम्बवन्त बोले, उन लोगों की वास्तविकता को जाने बिना उन्हें क्या सेना में सम्मिलित करने की बात सोचना भी उचित है क्या? कल्पना कीजिए वे लोग रावण के पक्ष की प्रेरणा से हमारे पास आए हों। हम उन्हें स्वयं सम्मिलित कर लेते हैं और ठीक युद्ध के समय वे लोग रावण से जा मिलते हैं; या हमारी सैनिक पंक्तियों में उत्पात मचाते हैं तो उन्हें सँभालना ही कठिन हो जाएगा- तब हम शत्रु से क्या लड़ेंगे। दूसरी बात यह है कि यह प्रदेश अत्यंत निर्धन, शोषित, अविकसित और पिछड़ा हुआ है- बेकारों की संख्या यहाँ निश्चित रूप से बहुत अधिक है। यदि हमारी सेना के आगमन को उन्होंने अपने लिए मात्र आजीविका का अवसर मानकर यह प्रस्ताव रखा है तो मुझे लगता है कि न तो ऐसे सैनिक विश्वसनीय हो सकते हैं और न ही उनकी भूख की बाध्यता से लाभ उठाना ही न्यायोचित है।

तब लक्ष्मण बोले- ये बातें अवश्य ही विचारणीय हैं। किंतु ये सारी संभावनाएँ ऋण-पक्ष की हैं। इस प्रश्न का धन-पक्ष भी है। उन्होंने रुककर एक दृष्टि हनुमान पर डाली, दण्डकवन के अनेक छोटे-बड़े युद्धों के अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि जिस क्षेत्र की प्रजा शोषित, पीड़ित और सताई हुई होती है- वह जन-वाहिनी के बनने अथवा वहाँ पहुँचने पर उनके साथ हो लेती है। उसमें उनका दृष्टिकोण मात्र आत्मरक्षा अथवा न्याय के युद्ध में अपना योग देने का होता है। वह अपने शोषण का प्रतिशोध चाहती है। उनकी प्रेरणा भविष्य के लिए एक न्यायपूर्ण व्यवस्था के निर्माण की इच्छा होती है। उन लोगों ने कभी वृत्ति अथवा वेतन नहीं माँगा है। इसलिए यह मानना कि लोग अपनी आजीविका पाने मात्र के लिए हमारी सेना में सम्मिलित होना चाहते हैं- उचित नहीं है।

इतनी खोज तो करनी ही होगी कि उनके आने के पीछे राक्षसों की प्रेरणा तो नहीं है। जांबवान बोले, यदि वे लोग राक्षसों की प्रेरणा से नहीं आए और यदि उनका लक्ष्य आजीविका कमाना मात्र नहीं है तो उन्हें अपनी सेना में सम्मिलित करने में मैं कोई हानि नहीं देखता।

मेरा भी कुछ ऐसा ही विचार है। जांबवान के चुप होने पर राम बोले, सामान्यत: आजीविका के लिए युद्ध-वृत्ति अपनाने वाला सैनिक भी बुरा नहीं माना जाता। साम्राज्यों की वेतनभोगी सेनाएँ इसी कोटि में आती हैं। किंतु हमारी सेना इस अर्थ में किष्किंधा की वेतनभोगी सेना नहीं है। न हमारे पास इतना धन है कि उसके बल पर हम सेनाएँ संगठित कर लें और न वह हमारा लक्ष्य है। हमारी सेना इस प्रकार की आत्मनिर्भर जन-सेना है, जो अन्याय के नाश और न्याय की स्थापना के लिए लड़ रही है। यदि ये नवागंतुक इसी रूप में सेना का अंग बनना चाहें तो मुझे कोई दोष दिखाई नहीं पड़ता। एक बात और है, राम तनिक रुके, अनुकूल जनसंख्या के बीच रहकर युद्ध करने में हमें भी सुविधा ही रहेगी। यदि हम उनकी इच्छा के विरुद्ध उनको स्वयं से पृथक् कर देते हैं, तो उसका प्रतिकूल प्रभाव भी हो सकता है। वे लोग हमसे असहयोग भी कर सकते हैं। मैं यह नहीं कर रहा कि उनके असहयोग की आशंका से भयभीत होकर हम उनकी प्रत्येक उचित-अनुचित इच्छा पूरी करें; किंतु अपने मित्रों को अपनी नासमझी में स्वयं से दूर भगा देना तो बुद्धिमानी नहीं है।

राम धीरे-से मुसकराए, हाँ। इस विषय में भी सोचना होगा। किंतु उसके पहले यह स्पष्ट कर दूँ कि उन लोगों को नियमित सैनिक के रूप में ग्रहण करने की बात मैं नहीं कह रहा हूँ। उन्हें हम सहायक सैनिक के रूप में ही अंगीकार करें। यथासम्भव वे अपने ग्रामों में रहें, यथासंभव अपना कार्य भी करें। इस प्रकार भोजन, आवास तथा वस्त्रों के संदर्भ में आत्मनिर्भर रहें। हमारे प्रशिक्षक उनके ग्रामों में ही उन्हें यथासंभव सैनिक सहायता के कार्य दिए जाएँ। पर उनमें जो अच्छे सैनिक सिद्ध हों, उन्हें नियमित सैनिक का पद दिया जाए और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें बचावपूर्ण संघर्ष का दायित्व भी सौंपा जा सकता है। वे लोग इस क्षेत्र में हमारे प्रहरी हो सकते हैं, हमारे सूचना चर अथवा संदेशवाहक हो सकते हैं, हमारी भूमि और हमारे मार्गों के रक्षक हो सकते हैं, शक्ति-प्रदर्शन में हमारे सहायक हो सकते हैं, व्यूह-निर्माण में हमारा अंग हो सकते हैं तथा समय आने पर आवश्यक सामग्री लाने-ले जाने का भी कार्य कर सकते हैं।

इससे किसी को कोई असहमति नहीं हो सकती। सुग्रीव बोले, यदि हमें सैनिक-असैनिक कार्यों के लिए सहायक मिल जाते हैं, और उनसे हमारा बोझ भी नहीं बढ़ता तो हमें क्या आपत्ति हो सकती है।

१०) दशग्रीव की राजसभा में मन्त्रणा - अब क्या होनेवाला है ? लमामें हनुमानजीके लौटनेके क्षणसे ही सब अत्यन्त आतमग्रस्त हो गये थे। दूसरे तो सामान्य थे, मेघनाद तकका मन कोई समाधान नहीं पाता था। वह भी सोचता था- मेरे सब दिव्यास्त्र उस बानरपर व्यर्थ हो गये। ब्रह्मास्त्रसे भी वह पूरा मूर्छित नहीं हुआ था। अब उसके स्वामी और उसके जैसे असंख्यों वानर

आवेंगे ? उसके जैसे तो सम्भव नहीं। उसके स्वामीने अवश्य अपना सर्वश्रेष्ठ सेवक भेजा होगा; किन्तु वह फिर आवेगा। उसके असंख सहायक साथ होंगे और उसके स्वामी ? अब इस पुरीका विनाश निश्चित है।

इस पुरीका-राक्षस कुलका विनाश निश्चित है। इसमें अब किसीको सन्देह नहीं था; किन्तु सब जानते थे कि दशग्रीव विरोध सुननेका अभ्यासी नहीं है। अत: कोई कुछ कहनेका साहस नहीं करता था। राक्षसोंमें चाहे जितने दुर्गुण हों; किंतु वे मनस्वी थे। स्वामि-भक्त थे। उन्होंने दशाननके लिए प्राणदानका मनमें प्रण कर लिया- जिनके संरक्षणमें हमने दीर्घकाल तक सब सुख भोगे, अब उनका साथ, उनका अनुगमन करनेमें यदि मृत्यु आती है तो आवे।

हरि या हरिका भजन करके, इनकी शरण होकर अथवा ज्ञानी या योगी तो सदासे मुक्त होते आये हैं। धर्माचरण करेनवालोंकी सद्गति हो, इसमें किसी की विशेषता क्या है ? दशग्रीवको भी राक्षस कुलका विनाश सुनिश्चित दीखता था; किन्तु उसका दर्प था- दशाननके भक्तोंका-रावणका अनुगमन करनेवालोंका उद्धार होगा। जिन्होंने हठपूर्वक सम्पूर्ण जीवन अधर्म किया है, गौ-ब्राह्मणोंकी हत्या तथा सुरापान-अनाचार, उत्पीड़नको व्यसन बनाया है, रावणका अनुगमन करके उनका उद्धार होगा। लमा में केवल वे रह जायँगे। पीछेके लिए जो रामके अथवा उनमें अनुरक्त विभीषणके अनुगामी होंगे। दशग्रीव अपने अधर्मी, अत्याचारी, लोकोत्पीड़क अनुयायियोंका उद्धार करा सकता है, यह त्रिभुवन देखेगा।

विभीषण ? इस विभीषणको यहाँसे हटाना होगा। रावण अपने ढंगसे सोचता था- अब इसके लिए यहाँ स्थान नहीं है। अन्तत: इस पुरीका कोई रक्षक भी तो रहना चाहिये; किन्तु अभी यहाँ नहीं। अभी यहाँ दशग्रीवका दर्प नृत्य करेगा और दर्पसे समुद्धार होता है, यह संसार देखेगा। दर्पसे समुद्धार। अपने एकान्त कक्षमें उसने अट्टहास किया। उस परम वेदज्ञ, सकल शास्त्र निष्णात तन्त्रोंके सर्वश्रेष्ठ विद्वानका दर्प हुंकार कर रहा था- आगम और निगमोंके मार्ग ठीक हैं, उनसे उद्धार होता है; किन्तु ये हीनसत्व प्राणियोंके लिए हैं। दशग्रीवने सदा अपना मार्ग स्वयं बनाया है। अपने और अपने आश्रितोंके समुद्धारका स्वतन्त्र राजपथ प्रशस्त करेगा वह।

राक्षसोंमें सबके सब विश्वसनीय और दशग्रीवके भक्त ही नहीं थे। उनमें भी दुर्बल हृदय थे। उनको जब विनाश सुनिश्चित दीखा तो उन्हें एकमात्र विभीषणसे कुछ आशा लगी। उन्होंने विभीषणसे चुपचाप मिलना और अपनी आशमा प्रकट प्रारम्भ कर दिया।

विभीषणके स्वभावमें छल-कपट, षड्यन्त्र नहीं था। वे निश्छल, सरल हृदय थे। अग्रजके हृदयसे हितैषी थे और जब भाईने निकाल दिया, श्रीरामके शरणापन्न हुए तो सच्चे हृदयसे उनके हो गये। उस समय उनको लमासे दो वर्गके राक्षसोंसे सहायता-सूचनाएँ मिलती रहीं। एक तो यह दुर्बल हृदय जो अभी उनसे मिलते थे। दूसरे उनके स्वजन पत्नी, पुत्री, सेवक जो लमामें छूट गये थे। क्योंकि लमाके वे वास्तविक व्यवस्था नियन्त्रक रहे थे, उनके विश्वसनीय और उनमें आस्था रखनेवाले लोग भी लमामें पर्याप्त थे। वे भी इन दिनों बहुत व्याकुल थे। बहुत देर से विभीषण दम साधे बैठे थे। ऐसा भयंकर द्वंद्व उनके जीवन में कम ही आया था। जो कुछ हो रहा था, उसे देखते हुए मौन रह जाना उनके लिए बहुत कठिन था, और बोलने का यह कोई स्थान नहीं था। वे जानते थे कि जो कुछ वे बोलना चाहते हैं, वह इस राजसभा में कदापि सहन नहीं किया जाएगा।

यह राजसभा है या लंपटों का अड्डा, जिस अपराध के लिए किसी साधारण अपराधी को कदाचित् मृत्यु-दण्ड दिया जाता, उस अपराध के लिए राजाधिराज की स्तुति हो रही है। चाटुकार सभासद, मंत्री, साम्राज्य के चिंतक तथा विचारविद् लोग रावण की प्रशस्तियाँ गा रहे हैं। पिता परस्त्री के अपहरण जैसा निंदनीय कर्म करके आया है और पुत्र भुजा उठा-उठाकर पिता की वीरता का गुणगान कर रहा है। क्या हो गया है मेघनाथ को ? क्या आदेश रखा है रावण ने अपने परिवार तथा प्रजा के सम्मुख ? आज इंद्रजित पिता द्वारा किए गए अपहरण की प्रशंसा के गीत गा रहा है, तो कल यदि उसका अपना मन किसी पर आ जाएगा, तो क्या वह अपहरण नहीं करवाएगा ? अपहरणों और बलात्कारों के लिए क्या हत्याएँ नहीं होंगी ? इंद्रजित करेगा तो क्या उसके भाई नहीं करेंगे ? पहले ही साम्राज्य की स्थिति इस दृष्टि से अच्छी नहीं है। राजकीय दण्डधर वैसे ही सिवाय अपने स्वार्थों के और किसी की रक्षा नहीं करते। अपराधों के कीचड़ में वे आकंठ ऐसे धँसे हैं कि साधारण अपराध तो उन्हें अपराध ही नहीं लगते। सामान्य-जन के धन, सम्मान और प्राणों का उनकी दृष्टि में कोई मूल्य ही नहीं है। उनसे कार्य करवाने के लिए या तो उन्हें सत्ता का भय दिखाना पड़ता है अथवा भारी उत्कोच देना पड़ता है। लंका के लोगों के लिए ये ऐसी जानी-मानी बातें हैं कि सुनकर अब कोई चौंकता भी नहीं है और जब कभी साम्राज्य के दण्डधर अथवा सैनिक संधान करते हैं तो सारे अपराधों के मूल में या तो राजाधिराज के अपने पुत्रों में से कोई निकल आता

है, अथवा बड़े-बड़े पदाधिकारियों के सुपुत्रों में से कोई। इनमें से कोई न भी हुआ तो इन्हीं की छत्रछाया में पलनेवाले मल्लों में कोई होता है। उन अपराधियों को दण्ड नहीं दिया जा सकता, क्योंकि शक्तिशाली राजपुत्रों अथवा राजपुरुषों में से किसी के रुष्ट हो जाने का भय बना रहता है। राजपुत्रों ने अपने-अपने मनोरंजन के लिए मल्लों की सेनाएँ पाल रखी हैं। अपने आश्रयदाताओं के लिए आखेट करते-करते अब इन मल्लों को भी आदत पड़ गई है। संध्या का झुटपुटा हुआ नहीं और उन्होंने मदिरा का भाँड अपने कंठ के नीचे उँड़ेला और बंद रथों को लेकर आखेट के लिए निकल गए। कभी कोई वेश्या उनके हाथ लग गई तो ठीक; अन्यथा कोई कुलवधू अथवा कुमारी कन्या ही उनकी बलि चढ़ जाती है।

नाना सुमाली ने सभागार में प्रवेश किया और कहा- वत्स। तुमने शत्रु-पत्नी का अपहरण कर एक ओर उसका क्षय कर दिया और दूसरी ओर हमारा सिर गौरव से ऊँचा कर दिया। विभीषण का हृदय जल उठा। स्वयं को रोकना उनके लिए संभव नहीं रहा। क्षमा हो, राजाधिराज। असुरक्षित स्त्रियों के हरण में मुझे कोई वीरता दिखाई नहीं देती।

रावण का उल्लसित चेहरा क्षण-भर के लिए संकुचित हुआ और फिर उस पर घृणा के भाव स्पष्ट हो गए। सीता-हरण के लिए जाते हुए भी रावण ने विभीषण के विषय में सोचा था। उसे विभीषण से यही आशा थी। यह व्यक्ति, जिसे आज तक रावण ने आश्रय दिया, भाई होने के नाते अबाध धन-संपत्ति और अधिकार दिए- यह नैतिकता के नाम पर सदा रावण के कृत्यों का विरोध करता है। रावण जिसका भला करता है, वही रावण का विरोध करने लगता है- शूर्पणखा हो या विभीषण-आज तक रावण ने सबको खरीदा है, किंतु विभीषण की अंतरात्मा का क्रय न रावण का भय कर सका, न रावण का धन और न रावण द्वारा प्रस्तावित भेंट में दी जाने वालि सुंदरियों की सेना। विभीषण अपनी एक सरमा से ही तृप्त है।

यह राजनीति है, विभीषण। रावण का स्वर अत्यंत शुष्क था, शत्रु को तेजहीन और हताश करने के लिए सामरिक महत्त्व की एक चाल। रावण के चेहरे पर एक क्रूर मुसकान उभरी, इतने दिनों तक राजसभा में रहकर भी तुम्हारी राजनीतिक बुद्धि का विकास नहीं हुआ।

कदाचित नहीं हुआ। विभीषण का हृदय आवेश से कठोर होता गया, राजाधिराज। विभीषण स्त्री के अपहरण को सामाजिक तथा मानवी अपराध मानता है। यह राजनीतिक चाल नहीं है, यह कामुकता का खुला प्रदर्शन है। कामुकता को गौरवान्वित करना गर्व का विषय नहीं है।

राजाधिराज के कृत्यों को गौरवान्वित करने में क्या दोष है, विभीषण ? रावण के बोलने से पूर्व नाना सुमाली बोला।

दोष कहाँ है। विभीषण वक्रता से मुस्कराए, राजाधिराज के द्वारा एक सीता का अपहरण होता है तो लंका में बीसियों स्त्रियोंका हरण होता है। यह पिताजी को अपयश देने का प्रयत्न है। मेघनाथ दाँत पीसकर बोला।

मैं अपशय की नहीं, परंपरा की बात कह रहा हूँ। विभीषण का चेहरा शांत और स्वर गंभीर हो उठा, प्रजा के सम्मुख दुष्ट उदाहरण रखने से दुष्ट तत्त्वों को बल मिलता है। सूक्ष्म दृष्टि से देखो और गंभीरता से सोचो, इंद्रजित। विभीषण का स्वर पुन: आवेशमय हो उठा, इसमें न राजनीति है, न वीरता, न इसमें शत्रु-अशत्रु का प्रश्न है- मूल रूप में यह एक असहाय स्त्री के अपहरण की बात है। वह स्त्री कोई भी हो, यह पुरुष जाति का स्वार्थ है, उसकी पशु-वृत्ति है अपने पक्ष की पशु-वृत्ति का समर्थन कोई अच्छी बात नहीं है। उसका प्रभाव लंका से बाहर ही नहीं, लंका के भीतर भी होता है। अन्य जातियों के लिए कठिनाइयाँ उत्पन्न करने के प्रयत्न में हम अपने लिए भी उतनी ही कठिनाइयाँ उत्पन्न कर रहे हैं।

किंतु वह शत्रु-पत्नी है, विभीषण। सुमाली ने दोहराया।

रहने दीजिए, नाना। रावण ने विवाद को रोक दिया, इस वैरागी को पुन: उपदेश देने का दौरा पड़ा है। इस समय सम्मोहनावस्था में है। इसकी आँखें अब कुछ नहीं देखेंगी, कान कुछ नहीं सुनेंगे। इस विकृत मस्तिष्क को हमारा प्रत्येक शत्रु अपना मित्र दिखाई पड़ता है। हमारा गौरव इसे कुकृत्य लगता है। मेरी समझ में नहीं आता कि मेरी माँ ने मेरा शत्रु अपने ही उदर से क्यों उत्पन्न किया। यह कार्य किसी और के लिए छोड़ दिया होता, तो उसका क्या बिगड़ जाता।

विभीषण आपे में लौट आए। राजपरिषद् का वातावरण अब तर्क-वितर्क का नहीं था। रावण जब इस मन:स्थिति तक आ पहुँचा था, तो राजसभा में विरोधी मत नहीं रखे जा सकते थे। ऐसे में या तो रावण का समर्थन किया जा सकता था, उसकी प्रशस्ति गायी जा सकती थी, या फिर मौन रहा जा सकता था। अन्यथा बहुत संभावना थी कि रावण के मुख से या तो कोई कठोर दण्ड उच्चरित हो उठेगा अथवा

उसका चंद्रहास खड्ग नग्न होकर चमकने लगेगा।

विभीषण अपने स्थान पर बैठ गए। रावण की क्रुद्ध फुफकारती दृष्टि उन्हें घूरती रही। लगता था, नाग ने फन उठा लिया है और प्रतीक्षा में है कि शत्रु में तनिक भी स्पंद हो और वह उसे डंक मारे। किंतु विभीषण दम साधकर पड़े रहे फुफकारते नाग को दंश का कोई अवसर नहीं मिला और थोड़ी-सी प्रतीक्षा के बाद वह दृष्टि लौट गई।

आज ये सब लोग राम को अपना शत्रु बता रहे हैं, किंतु राम ने किया क्या है ? वे इनके शत्रु हैं, या ये उनके शत्रु हो रहे हैं। आज रावण को लंका से बाहर अपने शत्रु-ही-शत्रु क्यों दिखाई पड़ रहे हैं। किसी समय एक मित्र सहस्त्रार्जुन था; क्योंकि रावण उससे पराजित हो गया था। एक मित्र बालि है, क्योंकि रावण उसके व्यक्तिगत शौर्य से भयभीत है। मैत्री भी ऊपर-ही-ऊपर से दिखाने के लिए है, ताकि बालि रावण को कोई हानि न पहुँचाए; अन्यथा वानरों के प्रति रावण का व्यवहार कभी भी मैत्रीपूर्ण नहीं रहा। शेष सब शत्रु-ही-शत्रु हैं। क्यों ? ताकि उनकी भूमि हथियाई जा सके, उनकी स्त्रियों का अपहरण किया जा सके, उनके खनिज पदार्थ और उनकी संपदा को लूटा जा सके। मैत्री में तो दूसरे पक्ष को भी कुछ अधिकार देने पड़ेंगे, शत्रु का तो कोई अधिकार होता नहीं- उसका सब कुछ छीना जा सकता है, उसका सर्वांग शोषण हो सकता है। तो फिर क्यों न रावण सबको अपना शत्रु बनाए अपने भाई कुबेर तक को तो शत्रु बनाकर उसकी लंका छीन ली जाने कैसे अभी तक विभीषण यहाँ टिके हैं लोक-लाज हैं, या सचमुच भ्रातृत्व इतना प्रबल होता है, अन्यथा रावण का अपना तो वही हो सकता है, जो लूट में उसका साथ दें, निर्बलों और असहायों के शोषण में उसकी सहायता करे दुष्टों, लंपटों तथा अत्याचारियों का हिंस्र पशुओं का सा एक झुण्ड साम्राज्य के पदाधिकारियों की पदवी लिये बैठा है।

किसी की संपत्ति छीन लो, या उसके प्राण ले लो, उसकी स्त्री का अपहरण कर लो- वह अथवा उसका कोई सहायक विरोध करे तो उसको अपना शत्रु घोषित कर अपनी लोलुपता, कामुकता की तृप्ति करो और फिर अपनी इन वृत्तियों को गौरवान्वित करो।

राम शत्रु हैं, तो रावण क्यों नहीं लड़ा राम से ? क्या आवश्यकता थी इस षड्यंत्र की ? अकेली, अबला, असहाय स्त्री को चुरा लाये और अब अपनी वीरता का बखान कर रहे हैं। वीर तो राम हैं। शूर्पणखा ने उसकी पत्नी की हत्या करनी चाही; किंतु उसके भाई ने केवल अपमान-चिन्ह देने के लिए, नाक और कानों को शस्त्र-चिह्नित कर छोड़ दिया। वे लोग नारी का सम्मान करना जानते हैं; अन्यथा रावण की नीति के अनुसार उन्हें भी या तो शूर्पणखा का भोग करना चाहिए था अथवा अपने सैनिकों के बीच उसे सर्वभोग्या बनाकर रखना चाहिए था किंतु उन्होंने...

आज रावण अपनी कामुकता को वीरता कहता है। स्त्री-अपहरण वीरता है, तो जब विद्युज्जिह्व शूर्पणखा को ले गया था तो रावण ने उसकी वीरता का अभिनंदन क्यों नहीं किया ? क्यों जाकर उससे युद्ध किया और उसकी हत्या की ? जब कुंभीनसी को मधुदैत्य लंका से निकालकर ले गया था, तो प्रतिशोध के लिए रावण को मथुरा तक धावा बोलने की क्या आवश्यकता थी ? क्यों नहीं उसने मधु की वीरता पर प्रसन्नता प्रकट की ? फिर शूर्पणखा और कुंभीनसी तो अपनी इच्छा से अपने वरे हुए प्रेमियों के साथ गई थीं।

सहसा विभीषण का ध्यान उचट गया; सभा भंग हो चुकी थी और रावण अपने स्थान से उठकर खड़ा हो चुका था। विभीषण भी उठ खड़े हुए। जाते-जाते रावण विभीषण के पास रुका, काफी समझदार हो गए हो। तुम्हारा बाद का व्यवहार हमें बहुत पसंद आया।

विभीषण चुपचाप उसे देखते रहे। रावण अपने अधरों पर एक वक्र मुसकान ले आया और आगे बढ़ गया।

राक्षसों के वर्चस्व, अपने शत्रुओं और अपनी वीरता की आड़ में रावण क्या कर रहा है मानव के पशुत्व का गौरव-गान। वह मनुष्य के भीतर सोये हुए पशु को न केवल जगा रहा है, उसे बल भी दे रहा है- अबाध भोग कोई संयम नहीं, कोई मर्यादा नहीं। सारे विश्व का धन बहता हुआ लंका में आ रहा है; किंतु प्रत्येक लंकावासी अपने भोजन-भर के लिए भी आश्वस्त नहीं है। एक ओर निर्बाध विलास है और दूसरी ओर सीमाहीन भूख। ऐसे भी है जो अपने बच्चों को बेचने को बाध्य हों और ऐसे भी हैं, जो सैकड़ों दासों की से वा ग्रहण करते हुए भी अभी प्रसन्न नहीं है। राजपुत्रों और राजपुरुषों का आचरण ऐसा है कि वे अपने सिवाय प्रत्येक पुरुष को दास तथा प्रत्येक स्त्री को वेश्या बना देना चाहते हैं धन से न्याय मिल सकता है, विद्या मिल सकती है, सम्मान मिल सकता है, मानव शरीर मिल सकता है- जीवित शरीर शोषण अथवा भोग के लिए; मृत शरीर भक्षण के लिए धन नहीं है तो भोजन भी नहीं, वस्त्र भी नहीं, औषधि नहीं; सुरक्षा नहीं, न्याय नहीं धनवान के लिए लंका स्वर्ग है और धनहीन के लिए नरक।

मदिरा का कितना प्रचलन हो गया है लंका में, जैसे लंका के चारों ओर जल का नहीं, मदिरा का समुद्र उफन रहा हो। संस्कृति के नाम

पर रावण की राजधानी में सार्वजनिक मनोरंजन के लिए जो नाटक होते हैं, वे हिंसा, विकृत नैतिकता, बलात्कारों, अवैध संबंधों, वेश्या-विटों के संबंधों से भरे पड़े हैं। प्रदर्शन के लिए नारी का नग्न शरीर सबसे महत्वपूर्ण वस्तु है। नई पीढ़ी आँख खोलते ही विलास, कामुकता तथा अपराध को पहचान लेती है। ये बातें उसके मन में ऐसी बस जाती हैं कि उनकी आँखें और कुछ देख ही नहीं पातीं। विद्यालयों के आचार्य, साम्राज्य के कवि तथा विद्वान मदिरा-लोलुप, लोभी और कायर हो गए हैं। उनके जीवन में एक ही तथ्य रह गया है- राजाधिराज की सेवा में चाटूक्तियाँ प्रस्तुत करना और साम्राज्य से धन ऐंठने का प्रयास करना।

विभीषण राजसभा से अपने सदन लौट आये और पत्नी सरमा से बोले- बहन पति का अपहरण नहीं कर सकी तो भाई पत्नी का अपहरण कर लाया।

ओह। वैदेही का अपहरण।

हाँ। सूचना मिल गई ?

यह सूचना तो लंका की हवा में तैर रही है। सरमा बोली, पर मैंने सुना है कि इस अपराध के लिए राजाधिराज को उकसाने बालि बहन शूर्पणखा भी इससे प्रसन्न नहीं है; और बहन मंदोदरी की भी इस विषय में राजाधिराज से पर्याप्त कहा-सुनी हुई है।

भाभी का तो मुझे पता नहीं। विभीषण बोले, किंतु अपनी बहन के विषय में निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि वह इससे प्रसन्न नहीं होगी। बहन की ईर्ष्या की कोई सीमा नहीं। मैं समाज में फैलते पशुता के इस विष के कारण उद्विग्न हूँ। विभीषण बोले, इस विष के कारण संसार में आज कोई भी, कहीं भी सुरक्षित नहीं है।

आप तो हैं ?

रुमा भी बालि की अनुजवधू थी। विभीषण जैसे स्वप्न में बोल रहे थे, जब मनुष्य पशु हो जाता है, तो फिर कैसा अनुज और कैसी अनुजवधू। विभीषण का सिर चकराने लगा था।

रावण ने जब-जब इस प्रकार के कृत्य किए थे, तब-तब विभीषण के मन में विरोध जागा था। हर बार विभीषण ने सोचा था कि वे रावण का विरोध करें और उसे इन घृणित कार्यों से रोकें, किंतु रावण की शारीरिक शक्ति, उसका शस्त्र-कौशल, उसकी राजनीतिक सत्ता तथा उसके समर्थकों को देखकर, वे सक्रिय रूप से कुछ करने का साहस नहीं कर पाए थे। बार-बार वे अपनी असमर्थता को यह समझकर पी गए थे कि यह रावण का कुछ दिनों का उन्माद है- कब तक उसका अविवेक उसे अशुभ मार्ग पर चलाता रहेगा। किंतु अब सिद्ध हो चुका था कि यह रावण के यौवन का उन्माद अथवा अविवेक मात्र नहीं था; यह तो रावण की प्रकृति है- जो उसके प्राण रहते नहीं जाएगी। उसकी इंद्रियाँ शिथिल हो जाएँगी तो वह अपनी कामुकता की तृप्ति के लिए कोई और मार्ग खोज लेगा उससे पीड़ित मानवता का त्राण कभी नहीं होगा और अब उसका सुयोग्य पुत्र शासन-व्यवस्था में बहुत महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है। ऐसा पुत्र-जो पिता की कामुकता का भी समर्थन करता है। ऐसे पिता तो विभीषण ने देखे और सुने थे, जो संतान के प्रति अपने वात्सल्य में बँधे-बँधे अपनी संतान की दुश्चरित्रता की ओर से आँखें मूँद लेते हैं; किंतु ऐसा पुत्र तो उन्होंने पहली बार ही देखा है, जो न केवल अपने पिता की दुश्चरित्रता को स्वीकार करता है, वरन् उसका समर्थन करता है और कदाचित् उसे प्रोत्साहित भी करता है।

मानवीय धरातल पर तो धन का सुख उसके समान वितरण में है- उसे जनहित में व्यय करने में है। किंतु शोषण द्वारा अर्जित धन को वह मोहांध जनहित में कैसे व्यय कर सकता है- वह तो उसका सुख भोगने के लिए स्वयं को पशु बनाएगा ही। पशु-धरातल पर ही सुख भोगेगा- मदिरा और नारी शरीर का संयमरहित भोग अनंत तृष्णा के पीछे भागता फिरेगा सारा साम्राज्य पशु-वृत्ति को पोषित कर रहा है।

विभीषण की विचार-श्रृंखला भंग हुई। रात के सन्नाटे में किसी के रोने का स्वर उभरा था। स्वर किसी नारी-कंठ का रहा है।

ऊपर से सुखी दिखाई पड़ने वालि यह लंका नगरी कितनी दु:खी है- विभीषण सोच रहे थे- कोई रात ऐसी नहीं बीतती, जब इस प्रकार रोने के कातर स्वर लंका की वीथियों में न गूँजते हों, जब झगड़े अथवा मारपीट की ध्वनियाँ न उठती हों, अथवा सहायता माँगती आर्त्त पुकार न सुनाई पड़ती हो- पता नहीं यह नारी क्यों रो रही थी। संभव है, उसका पति मदिरा में धुत्त इस समय घर लौटा हो और मारपीट कर रहा हो; संभव है द्यूत में हारकर कोई जुआरी अपनी पत्नी के गहने छीन रहा हो; संभव है पत्नी से रुष्ट होकर पति घर से बाहर धकेल रहा हो; या किसी दासी के साथ कोई अत्याचार कर रहा हो; कोई कुलवधू लंपटों के हाथ में पड़ गई हो; या राजपुत्र अथवा राजपुरुष ही कोई अनाचार कर रहे हों ? इस समय विभीषण यदि उठकर जाएँ भी, तो उस प्रासाद में वे प्रवेश नहीं कर पाएँगे। पड़ोसियों अथवा

राजशक्ति से उन्हें कोई सहायता नहीं मिलेगी। प्रासाद के भीतर उसके स्वामी का अधिकार होता है और नारी का इस समाज में वंचित होने के सिवाय अन्य कोई अधिकार नहीं है।

विभीषण का तेज जागता है, तो उनकी इच्छा होती है कि अपनी गदा लेकर निकल पड़ें और जिस प्रासाद से कोई आर्त्त स्वर आए, उसके कपाटों को तोड़कर भीतर घुस जाएँ तथा प्रासाद के स्वामी का सिर कुचल दें किंतु दूसरे ही क्षण वे सचेत हो जाते हैं- किसी एक अन्यायी का सिर कुचलकर क्या होगा ? यह रावण की व्यवस्था है यह रावण का बनाया हुआ समाज है। इस समय प्रत्येक प्रासाद में कोई-न-कोई अत्याचारी बैठा है; वरन् अत्याचारियों को ही प्रासाद मिले हैं। बिना अत्याचार के प्रासादों का निर्माण ही नहीं हो सकता। अत्याचार द्वारा संचित धन का सुख विभीषण भी भोग रहे हैं। वे इस पाप के भागी नहीं हैं- यह वे कैसे मान लें ? किंतु उनकी गदा उठी तो उसे रोकने के लिए रावण का खड्ग उठेगा। इस सारे अनाचार का रक्षक वही है- और उसका तनिक-सा भी विरोध रावण का ही विरोध है। रावण की प्रकृति रंच मात्र भी सहिष्णु नहीं है और यदि इस समय विरोध ही करना हो तो सबसे पहले रावण की लंपटता का ही विरोध होना चाहिए, रक्षा करनी हो तो सबसे पहले वैदेही की रक्षा होनी चाहिए। है विभीषण में साहस ? अशोक-वाटिका में जाकर, रक्षकों को मार भगा, सीता को वे सुरक्षित राम के पास पहुँचा सकते हैं ? विभीषण की कल्पना में रावण का क्रुद्ध-क्रूर रूप उभरा। क्रोध से फट आई आँखें और नग्न खड्ग पकड़े उठी हुई भुजा। रावण ने अपने बहनोई का वध कर दिया तो क्या विभीषण को वह छोड़ देगा और इंद्रजित ? रावण के मन में अपने भाई के प्रति कदाचित् करुणा जग जाए; किंतु इंद्रजित के मन में कोमलता कहाँ ?

विभीषण को लगा, उनका मन असुरक्षा-भाव से घबरा उठा है। कैसा विचित्र होता है मनुष्य। न्याय की रक्षा से पहले वह अपनी रक्षा करना चाहता है। अपनी असुरक्षा का ध्यान आते ही वह या तो अत्याचार से समझौता कर लेता है या उसकी ओर से आँखें मूँद लेता है। सदा ऐसा ही होता आया है विभीषण के साथ। हर बार उनके भीतर उठे विरोध और विद्रोह के भाव को, आत्मरक्षा के भाव ने दबा दिया है; और रावण का भाई विभीषण कभी नहीं कह सका कि रावण अत्याचारी है। विभीषण ने इस नगरी में सदा स्वयं को असहाय और बाध्य पाया है। परिणामत: उनकी जिह्वा छटपटाकर शांत हो जाती रही है। खड्ग कभी कोष से बाहर नहीं निकला, गदा कभी प्रहार की मुद्रा में ऊपर नहीं उठी। किंतु घुटन ओर आत्मदमन की भी कोई सीमा होती है, स्वयं अपने-आपको धिक्कारने का भी कोई अंत होता है या नहीं ? जब इतने आत्मदमन के पश्चात् भी विभीषण स्वयं को इस राक्षस नगरी के अनुकूल नहीं बना पाए; आज तक के रावण के आमोद-प्रमोद से तनिक-सा भी सुख नहीं पा सके, तो क्यों नहीं वे मान लेते कि उनका तथा रावण का टकराव अवश्यंभावी है। अंतत: किसी दिन तो उन्हें रावण की उठी हुई भुजा थामनी ही होगी। परिणाम चाहे कुछ हो रावण की भुजा कटे या विभीषण का सिर कब वह दिन आएगा, जब न्याय का भाव आत्मरक्षा से भी प्रबल हो उठेगा ? कब गौरवशाली मृत्यु अपमानित जीवन से अधिक श्रेयस्कर लगेगी ? इस प्रकार दबे-घुटे, अपमानित-अवमानित जीवन में ही उन्हें कौन-सी उपलब्धि हो रही है, जिसका सुख वे छोड़ नहीं पा रहे? उनकी मृत्यु हो गई तो संसार की क्या क्षति हो जाएगी।

विभीषण की इच्छा हुई, अट्टहास कर स्वयं पर हँस पड़ें, या स्वयं को ऐसा धिक्कारे कि किसी को मुख न दिखा सकें। कैसी आड़ ढूँढ़ निकाली है अपनी कायरता के लिए। अपने लिए नहीं जीना, सरमा की सुरक्षा के लिए जीना है। अपनी कायरता भी छिपा ली और परमार्थ का गौरव भी ओढ़ लिया।

विभीषण का ध्यान सहसा सरमा से हटकर सीता की ओर चला गया। सरमा उनकी पत्नी है, उसकी रक्षा तो उनका धर्म है ही; किंतु न्याय और धर्म की मर्यादा इतनी ही तो नहीं है कि अपनी सुरक्षित पत्नी का रक्षा का दंभ किया जाए। जब कभी किसी अन्यायी की दृष्टि सरमा पर पड़ेगी और उसका हाथ सरमा की ओर बढ़ेगा, तब विभीषण उसकी रक्षा करेंगे। किंतु सीता ? सीता का अपहरण तो हो चुका। रावण उन्हें लंका में ले भी आया है। उनकी रक्षा के लिए क्या किया है विभीषण ने ? प्रश्न यह है कि क्या सीता की रक्षा हो भी सकती है? उड़ता-उड़ता समाचार मिला था कि महारानी मंदोदरी ने राजाधिराज को बाध्य किया है कि सीता को अपने पति को भूलने के लिए एक वर्ष का समय दिया जाए। संभव है यह सत्य हो; अन्यथा रावण सीता को अशोक-वाटिका में क्यों रखता ? पर अशोक-वाटिका में रहने भर से ही सीता सुरक्षित हैं क्या ? अशोक-वाटिका भी तो रावण का प्रमद वन ही है। संभवत: भाभी को विश्वास हो कि वर्ष भर के लिए सीता सुरक्षित हो गईं। पर भाभी सीता की सुरक्षा क्यों चाहती हैं ? क्या उन्हें राम का भय है ? क्या वे सीता की रक्षा कर, राम के क्रोध से अपने परिवार को बचाना चाहती हैं ? तो क्या वे समझती हैं कि राम वर्ष-भर में आकर सीता को छुड़ा ले जाएँगे ? या इस

अवधि में सीता को लौटा देने के लिए वे सम्राट को सहमत कर लेंगी ?

रावण मान कैसे गया ? रावण की प्रकृति को थोड़ा-सा भी जाननेवाला व्यक्ति तत्काल कह देगा कि इतना बड़ा त्याग रावण के लिए संभव नहीं है। कौन-सी शक्ति है भाभी के पास अपने पति को बाध्य करने के लिए इंद्रजित ? सीता-हरण के लिए रावण की जो सबसे बड़ी शक्ति है, वही सीता की रक्षा के लिए भाभी की शक्ति है। एक इंद्रजित ही अब पति-पत्नी दोनों की शक्ति हो गया।

क्या राम जान पाएँगे कि सीता को कौन ले गया ? जान गए तो लंका में आने का साहस कर पाएँगे ? पंचवटी में उन्होंने अद्‌भुत वीरता तथा युद्ध-कौशल दिखाया है; पर लंका ? समुद्र और फिर रावण की सेना क्या सोच रही है भाभी ?

रावण तुल जाए तो लंका में सीता की रक्षा विभीषण नहीं कर सकेंगे। परंतु अपना विरोध तो उन्हें प्रकट करते ही रहना चाहिए। संभव है, रावण का मनोबल ही कुछ कम हो।

विभीषण चौंके। आज सहसा ही उनके मन में आत्मसाक्षात्कार किया था। कैसी विचित्र बात थी। विभीषण के मन में सीता की सुरक्षा के लिए अपने भाई के शत्रुओं की सहायता करने का भी विचार आ रहा था। जाने कब से रावण की क्रूर प्रकृति के विरुद्ध विभीषण का मन विद्रोह कर रहा था, किंतु यह उन्होंने आज ही पहचाना था कि अब अपने भाई के प्रति उनके मन में ऐसा कोई स्नेह-सूत्र नहीं रह गया था, जिसके कारण वे उसके अन्याय का भी समर्थन कर सकें।

विभीषण का चिंतन-प्रवाह पुन: टूटा। वे सब भविष्य की बातें हैं। संभव है, वे पुन: रावण को समझाने का प्रयत्न करें। मंदोदरी भाभी और शूर्पणखा भी अपने ढंग से सीता की रक्षा का प्रयत्न करेंगी। संभवत: राजाधिराज के मंत्रियों में अविंध्य भी इस अपहरण का समर्थन नहीं करेंगे किंतु इस समय भी वैदेही की सुरक्षा के लिए कुछ-न-कुछ करना होगा।

सीता को शूर्पणखा और मंदोदरी अपनी सखियों-सी प्रिय लगने लगीं। वे सीता के प्राणों को अक्षुण्ण रखेंगी, तो राम सीता को प्राप्त करने के लिए लंका में आएँगे। सीता इन राक्षसों का काल बनेंगी और अन्याय की चिता पर अपने प्रिय को पाएँगी। इतनी बड़ी उपलब्धि के लिए सीता को अपनी अग्नि-परीक्षा तो देनी ही होगी।

इधर इन्द्रतुल्य पराक्रमी महात्मा हनुमान्‌जीने लमामें जो अत्यन्त भयावह घोर कर्म किया था, उसे देखकर राक्षसराज रावणका मुख लज्जासे कुछ नीचेको झुक गया और उसने समस्त राक्षसोंसे इस प्रकार कहा- निशाचरो। वह हनुमान्, जो एक वानरमात्र है, अकेला इस दुर्धर्ष पुरीमें घुस आया। उसने इसे तहस-नहस कर डाला और जनककुमारी सीतासे भेंट भी कर ली। इतना ही नहीं, हनुमान्‌ने चैत्यप्रासादको धराशायी कर दिया, मुख्य-मुख्य राक्षसोंको मार गिराया और सारी लमापुरीमें खलबली मचा दी।

महाबली वीरों। मनस्वी पुरुषोंका कहना है कि विजयका मूल कारण मन्त्रियोंकी दी हुई अच्छी सलाह ही है। इसलिये मैं श्रीरामके विषयमें आपलोगोंसे सलाह लेना अच्छा समझता हूँ।

संसारमें उत्तम, मध्यम और अधम तीन प्रकारके पुरुष होते हैं। मैं उन सबके गुण-दोषोंका वर्णन करता हूँ।

जिसका मन्त्र आगे बताये जानेवाले तीन लक्षणोंसे युक्त होता है तथा जो पुरुष मन्त्रनिर्णयमें समर्थ मित्रों, समान दु:ख-सुखवाले बान्धवों और उनसे भी बढ़कर अपने हितकारियोंके साथ सलाह करके कार्यका आरम्भ करता है तथा दैवके सहारे प्रयत्न करता है, उसे उत्तम पुरुष कहते हैं।

जो अकेला ही अपने कर्तव्यका विचार करता है, अकेला ही धर्ममें मन लगाता है और अकेला ही सब काम करता है, उसे मध्यम श्रेणीका पुरुष कहा जाता है। जो गुण-दोषका विचार न करके दैवका भी आश्रय छोड़कर केवल करूँगा इसी बुद्धिसे कार्य आरम्भ करता है और फिर उसकी उपेक्षा कर देता है, वह पुरुषोंमें अधम है। जैसे ये पुरुष सदा उत्तम, मध्यम और अधम तीन प्रकारके होते हैं, वैसे ही मन्त्र निश्चित किया हुआ विचार भी उत्तम, मध्यम और अधम भेदसे तीन प्रकारका समझना चाहिये। जिसमें शास्त्रोक्त दृष्टिसे सब मन्त्री एकमत होकर प्रवृत्त होते हैं, उसे उत्तम मन्त्र कहते हैं। जहाँ प्रारम्भमें कई प्रकारका मतभेद होनेपर भी अन्तमें सब मन्त्रियोंका कर्तव्यविषयक निर्णय एक हो जाता है, वह मन्त्र मध्यम माना गया है।

जहाँ भिन्न-भिन्न बुद्धिका आश्रय ले सब ओरसे स्पर्धापूर्वक भाषण किया जाता और एकमत होनेपर भी जिससे कल्याणकी सम्भावना न हो, वह मन्त्र या निश्चय अधम कहलाता है। आप सब लोग परम बुद्धिमान् हैं; इसलिये अच्छी तरह सलाह करके कोई एक कार्य निश्चित करें। उसीको मैं अपना कर्तव्य समझूँगा। यह बात भी भलीभाँति स्पष्ट हो चुकी है कि वे रघुवंशी राम अपने समुचित बलके

द्वारा भाई, सेना और सेवकोंसहित सुखपूर्वक समुद्रको पार कर लेंगे।

सबसे अधिक आतम ग्रस्थ थीं वे राक्षसियाँ जिन्हें रावणने सीताजी को सन्त्रस्त करनेके लिए नियुक्त कर दिया था। उन्होंने त्रिजटा स्वप्न सुना और सबेरे ही उस स्वपनको सत्य होते देखा था। वानर आ गया, यह सुनते ही वे सब स्वप्नके शेष भागको सत्य समझने लगी थीं। जब वानरको बाँधकर उसकी पूँछ जलानेका उद्योग राक्षस कर रहे थे तब भी वे भयभीत थीं। परस्पर कह रही थीं- ये हमारे सब लोगोंकी मति मारी गयी। अब यह वानर अपनी पूँछ फिराकर पुरी भस्म कर देगा।

उनकी आशमा सत्य सिद्ध हो गयी थी। अत: राक्षसोंके विनाशमें, दशग्रीवके मारे जानेमें और विभीषणके राजा होनेमें अब उन्हें तनिक भी सन्देह नहीं रहा था। अब मनसे वे विभीषणकी सेविका हो गयी थीं। लुक-छिपकर विभीषणके घर चली जाती थीं और उनकी पत्नी सरमाके पदोंमें प्रणामकर आती थीं। अब वे बार-बार श्रीजानकीसे क्षमा माँगती थीं। उनसे कहती थीं- देवि। हम अब भी यदा-कदा अभिनयको विवशा हैं। कोई अशोकोद्यानकी ओर न जाय। दशग्रीवने अपने अन्त:पुरको कठोर निर्देश दे दिया था। उसकी कोई रानी उधर नहीं जाती थी। वाटिका ही नहीं थी और न इतनी शीघ्र लगायी जा सकती थी, अत: वाटिकाकी सेविकाएँ हटा ली गयी थीं। मध्यम कक्षमें रहने वाले वाटिकारक्षकोंको हनुमानने मार ही दिया था। वाटिकाके अभावमें दूसरे रक्षक नियुक्त नहीं हुए। दशग्रीवको इधर ध्यान देनेका अवसर नहीं मिला।

श्रीजनक-नन्दिनीने अपनी रक्षामें नियुक्त राक्षसियोंको अभय दे दिया था। अब यदा-कदा किसीके आगमनकी आशमा होनेपर चौंककर वे शस्त्र उठाकर भय दिखानेपर अभिनय करती थीं। वे अपनेमें-से एक-दोको नियुक्त रखती थीं यह देखनेको कि अन्त:पुरकी ओरसे कोई आता तो नहीं दीखता। हनुमानजी भले आकर चले गये थे, किन्तु उनके आतमने भी वैदेहीका रात-दिन सन्त्रस्त किया जाना समाप्त कर दिया था।

जो भी उपलब्ध पाषाण हों, उनसे ही परिखा और ध्वस्त भवन शीघ्र बना दिये जायँ। रावणने यह आदेश दिया था। अत्यल्प कालमें उन्होंने परिखा पूर्ववत् सुदृढ़ बना दी। ध्वस्त भवनोंको भी आवास योग्य बना दिया और ऐसा बना दिया कि भले वे स्वर्णके नहीं रहें, कम सुन्दर नहीं बने। उनमें और परिखामें भी आकर्षक कला व्यक्त हुई। महायन्त्रोंकी ओर ध्यान देनेका अवकाश नहीं मिला। क्योंकि छलांग लगानेवाले वानरोंके आनेकी ही सम्भावना थी, खाईको पुन: खोदना अनावश्यक मानकर छोड़ दिया गया।

अवसर ही कितना मिला ? रात-दिन परिखा या भवन निर्माण और वह कठिनाईसे पूरा भी नहीं हुआ था कि पता लगा, वानर सेना समुद्र पार आ पहुँची। दशग्रीवने आदेश दिया- पुनर्निर्माण कार्य अत्यधिक गतिसे अहर्निश चलाते रहा जाय।

राक्षसोंको न तो नीतिका ज्ञान था और न वे शत्रुपक्षके बलाबलको ही समझते थे। वे बलवान् तो बहुत थे; किंतु नीतिकी दृष्टिसे महामूर्ख थे। इसलिये जब राक्षसराज रावणने उनसे बातें की, तब वे सब-के-सब हाथ जोड़कर उससे बोले- राजन्। हमारे पास परिघ, शक्ति, ऋष्टि, शूल, पट्टिश और भालोंसे लैस बहुत बड़ी सेना मौजूद है; फिर आप विषाद क्यों करते हैं।

आपने तो भोगवती पुरीमें जाकर नागोंको भी युद्धमें परास्त कर दिया था। बहुसंख्यक यक्षोंसे घिरे हुए कैलास-शिखरके निवासी कुबेरको भी युद्धमें भारी मार-काट मचाकर वशमें कर लिया था।

प्रभो। महाबली लोकपाल कुबेर महादेवजीके साथ मित्रता होनेके कारण आपके साथ बड़ी स्पर्धा रखते थे; परंतु आपने समराङ्गणमें रोषपूर्वक उन्हें हरा दिया।

यक्षोंकी सेनाको विचलित करके बंदी बना लिया और कितनोंको धराशायी करके कैलासशिखरसे आप उनका यह विमान छीन लाये थे।

राक्षसशिरोमणे। दानवराज मयने आपसे भयभीत होकर ही आपको अपना मित्र बना लेनेकी इच्छा की और इसी उद्देश्यसे आपको धर्मपत्नीके रूपमें अपनी पुत्री समर्पित कर दी।

महाबाहो। अपने पराक्रमका घमंड रखनेवाले दुर्जय दानवराज मधुको भी, जो आपकी बहिन कुम्भीनसीको सुख देनेवाला उसका पति है, आपने युद्ध छेड़कर वशमें कर लिया। आपने रसातलपर चढ़ाई करके वासुकि, तक्षक, शफऔर जटी आदि नागोंको युद्धमें जीता और अपने अधीन कर लिया। दानवलोग बड़े ही बलवान्, किसीसे नष्ट न होनेवाले, शूरवीर तथा वर पाकर अद्भुत शक्तिसे सम्पन्न हो गये थे; परंतु आपने समराङ्गणमें एक वर्षतक युद्ध करके अपने ही बलके भरोसे उन सबको अपने अधीन कर लिया और वहाँ उनसे बहुत-सी मायाएँ भी प्राप्त कीं। महाभाग। आपने वरुणके शूरवीर और बलवान् पुत्रोंको भी उनकी चतुरंगिणी सेनासहित युद्धमें परास्त कर दिया

था। उन वीरोंमें जो पराक्रम, गुण और उत्साह थे, उनकी दृष्टिसे राम रणभूमिमें उनके समान कदापि नहीं है; राजन्। जब आपने उन समरदुर्जय वीरोंको भी बलपूर्वक मार डाला, तब रामपर विजय पाना आपके लिये कौन बड़ी बात है ?

अथवा महाराज। आप चुपचाप यहीं बैठे रहें। आपको परिश्रम करनेकी क्या आवश्यकता है। अकेले ये महाबाहु इन्द्रजित ही सब वानरोंका संहार कर डालेंगे।

महाराज। इन्होंने परम उत्तम माहेश्वर यज्ञका अनुष्ठान करके वह वर प्राप्त किया है, जो संसारमें दूसरेके लिये अत्यन्त दुर्लभ है।

देवताओंकी सेना समुद्रके समान थी। शक्ति और तोमर ही उसमें मत्स्य थे। निकालकर फेंकी हुई आँतें सेवाका काम देती थीं। हाथी ही उस सैन्य-सागरमें कछुओंके समान भरे थे। घोड़े मेढ़कोंके समान उसमें सब ओर व्याप्त थे। रुद्रगण और आदित्यगण उस सेनारूपी समुद्रके बड़े-बड़े ग्राह थे। मरुद्गण और वसुगण वहाँके विशाल नाग थे। रथ, हाथी और घोड़े जलराशिके समान थे और पैदल सेनिक उसके विशाल तट थे; परंतु इस इन्द्रजितने देवताओंके उस सैन्य-समुद्रमें घुसकर देवराज इन्द्रको कैद कर लिया और उन्हें लमापुरीमें लाकर बंद कर दिया। राजन्। फिर ब्रह्माजीके कहनेसे इन्होंने शम्बर और वृत्रासुरको मारनेवाले सर्वदेववन्दित इन्द्रको मुक्त किया। तब वे स्वर्गलोकमें गये।

अत: महाराज। इस कामके लिये आप राजकुमार इन्द्रजितको ही भेजिये, जिससे ये रामसहित वानर-सेनाका यहाँ आनेसे पहले ही संहार कर डालें। राजन्। साधारण नर और वानरोंसे प्राप्त हुई इस आपत्तिके विषयमें चिन्ता करना आपके लिये उचित नहीं है। आपको तो अपने हृदयमें इसे स्थान ही नहीं देना चाहिये। आप अवश्य ही रामका वध कर डालेंगे।

महाराज। हमलोग देवता, दानव, गन्धर्व, पिशाच, पक्षी और सर्प सभीको पराजित कर सकते हैं; फिर उन दो मनुष्योंको रणभूमिमें हराना कौन बड़ी बात है।

शत्रु सेना समुद्र पार आ गया। अब हमें क्या करना है ? रावणने अपने सब मन्त्रियोंको बुलाया। संयोगवश कुम्भकर्णका जागरण दिन था। अत: उसे और मेघनादको भी बुला लिया गया मन्त्रण सभामें। रावणनें एक बार सबकी ओर देखा- राम सम्भवत: हमपर घेरा डालना चाहते हैं।

हम न नीति जानते, न शत्रु पक्षकी शक्ति। इसे जाननेकी हमें आवश्यकता भी नहीं है। सब हाथ जोड़कर बोले। वे जानते थे कि उनका अधीश्वर क्या सुनकर सन्तुष्ट होगा। उन्हें उसको सन्तुष्ट रखना था। परिणामकी चिन्ता करने बैठो तो दुर्दम दशग्रीव अभी मार दे सकता है। अत: उनका एक स्वर- हमारे पास अमोध अस्त्र हैं।

कोई देवता, दानव, दैत्य आपको जीत नहीं सकता। महामन्त्री प्रहस्तने कहा- हमने प्रमाद किया, उपेक्षाकी इसलिए वह वानर बचकर चला गया। अब या तो वे सागरसे इस ओर आवेंगे ही नहीं, या हम आनेपर सबको मार देंगे।

रावण ने आश्चर्य से शार्दूल की ओर देखा- इसे मतिभ्रम तो नहीं हो गया है ?

राजन। शार्दूल अपनी बात कहता जा रहा था, जो कुछ हुआ है, वह हम सबके लिए अभूतपूर्व है। राम की सेना कहूँ या सुग्रीव की सेना- वह सेना नहीं है, वह तो एक और समुद्र है, जो किसी बाधा को उचित नहीं मानता। उसकी लहरें आ-आकर जल के सागर के साथ टकराती हैं और वहीं शिबिर कर लेती हैं। जैसे जल को आगे जाने का मार्ग न मिले तो वह दाएँ-बाएँ फैलने लगता है, वैसे ही यह सेना भी सागरतट के साथ-साथ दाएँ-बाएँ फैलती जा रही है। मैं नहीं जानता कि इतने मनुष्य और वानर राम ने कहाँ से एकत्रित किए हैं। उनके वेतन और भोजन का वह क्या करेगा ? हमारी दृष्टि से तो वानरों में सैनिक बनने की क्षमता बहुत कम लोगों में है। वे लोग भीरु भी होते हैं और उच्छृंखल भी। वे न युद्ध कर सकते हैं, न अनुशासन में रह सकते हैं।

हमारे सैनिक स्कंधावार का क्या हुआ ? रावण ने उत्तेजित स्वर में पूछा।

उन्होंने युद्ध नहीं किया। शार्दूल बोला, वस्तुत: उस सेना से युद्ध करना मूर्खता होती। हमारे सैनिक अपना स्कंधावार छोड़कर लंका लौट आए हैं। उनके विषय में मुझे कोई सूचना नहीं है, राजाधिराज। शार्दूल धीरे-से बोला, केवल इतना ही निवेदन करना चाहता हूँ कि अब उस तट पर न कोई राक्षस सैनिक है, न राक्षस चौकी। उस तट पर राम की सेना का पूर्ण आधिपत्य है। वे जब वहाँ तक आ गए हैं तो सागर पार कर लंका में भी आ जाएँगे। आप लंका की रक्षा का प्रबंध कीजिए।

सुन लिया। रावण ने हाट उठाकर शार्दूल को मौन कर दिया। उसने अपने मंत्रियों और सभासदों की ओर देखा, मैं तो अभी उस दुष्ट वानर हनुमान के अपराधों के लिए उसे समुचित रूप से दण्डित करने के लिए आप लोगों की मंत्रणा चाहता था; और यह वानरों का उस

सेना को मुझे भय दिखा रहा है जिसका नेतृत्व वे कंगले तापस राजकुमार कर रहे हैं। जिन सैनिकों के शरीर पर वस्त्र नहीं हैं, पैरों में जूते नहीं हैं, हाथों में शस्त्र नहीं हैं- यह मुझे उनका भय दिखा रहा है और लंका की रक्षा की व्यवस्था करने का परामर्श दे रहा है। क्षण भर को रुककर रावण ने एक दृष्टि शार्दूल पर डाली, मैं नहीं जानता कि ऐसे गुप्तचर का क्या उपयोग है, जो सदा पराजय की सूचना लाता है और शत्रुओं की प्रशंसा करता है।

शार्दूल सिहर उठा। रावण के इस एक वाक्य ने उसका भविष्य निर्धारित कर दिया था। अब शार्दूल की समझ में आया था कि लंका के गुप्तचर विभाग के अधिकारी शत्रु-संबंधी सूचनाएँ एकत्रित करने के स्थान पर वेश्यालयों, मदिरालयों में समय बिताना क्यों अच्छा समझते थे। सहसा प्रहस्त उठ खड़ा हुआ और दंभपूर्वक बोला, राजाधिराज। पहले की बात और थी, जब हनुमान नाम का एक वानर आया और लंकावासियों को पीड़ित कर गया। तब हम असावधान थे। अब वैसे स्थिति नहीं है। न केवल हम सावधान हैं, वरन् हमारे पास भयंकर मार करने वाले ऐसे शस्त्रास्त्र हैं, जिनका वानरों ने कभी नाम भी नहीं सुना होगा। उसने रुककर एक बार सारी सभा को देखा और फिर उसकी दृष्टि आकर रावण पर रुक गईं, आपको स्वयं कोई कष्ट करने की आवश्यकता नहीं है, आप हमें युवराज के नेतृत्व की अनुमति मात्र प्रदान कर दें।

हम इन दोनों कंगले राजकुमारों के सिर काटकर ला, आपके चरणों में डाल देंगे। उनका वध होने से वानर तो कभी पलटकर लंका की ओर देखने का भी साहस नहीं करेंगे। वैदेही भी राम की मृत्यु के विषय में जानकर सदा के लिए आपकी हो रहेगी।

मैं अकेले सबको मार आता हूँ। दुर्मुख उठ खड़ा हुआ। उसके साथ वज्रनख, यमदंष्ट्रा, महोदर, महापार्श्व, विरूपाक्ष, अग्निजिह्व भी अस्त्र-शस्त्र लेकर उठे- आप हमें आज्ञा दे दें। हम उन्हें अभी मार आते हैं।

ये सब भाग तो नहीं जाना चाहते ? अथवा शत्रुसे मिलनेका सुयोग चाहते हैं ? दशग्रीवने सशम सबकी ओर देखकर विभीषणकी ओर देखा। वह अनुमान करना चाहता था कि विभीषण इनसे मिलकर कोई षडयन्त्र तो नहीं कर रहे हैं।

राक्षसराज। मैं वानरमात्रसे आपकी रक्षा करूँगा, अत: अपनेद्वारा किये गये सीता हरणरूपी अपराधके कारण कोई दु:ख आपपर नहीं आने पायेगा। तत्पश्चात् दुर्मुख नामक राक्षसने, अत्यन्त कुपित होकर कहा- यह क्षमा करनेयोग्य अपराध नहीं है, क्योंकि इसके द्वारा हम सब लोगोंका तिरस्कार हुआ है।

वानरके द्वारा हमलोगोंपर जो आक्रमण हुआ है, वह समस्त लमापुरीका, महाराजके अन्त:पुरका और श्रीमान् राक्षसराज रावणका भी भारी पराभव है। दुर्जय वीर राम, सुग्रीव और लक्ष्मणके रहते हुए हमें उस बेचारे तपस्वी हनुमान्से क्या काम है ?

तत्पश्चात् निकुम्भ, रभस, महाबली सूर्यशत्रु, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, महापार्श्व, महोदर, दुर्ज अग्निकेतु, राक्षस रश्मिकेतु, महातेजस्वी बलवान् रावणकुमार इन्द्रजित, प्रहस्त, विरूपाक्ष, महाबली वज्रदंष्ट्र, धूम्राक्ष, अतिकाय और निशाचर दुर्मुख- ये सब राक्षस अत्यन्त कुपित हो हाथोंमें परिघ, पट्टिश, शूल, प्रास, शक्ति, फरसे, धनुष, बाण तथा पैनी धारवाले बड़े-बड़े खड्ग लिये उछलकर रावणके सामने आये और अपने तेजसे उद्दीप्त-से होकर वे सब-के-सब उससे बोले- हमलोग आज ही राम, सुग्रीव, लक्ष्मण और उस कायर हनुमान्को भी मार डालेंगे, जिसने लमापुरी जलायी है।

अपना सारा अस्तित्व अपनी आँखों में टिकाए विभीषण रावण की ओर देख रहे थे- शार्दूल द्वारा दी गई तथ्यात्मक सूचना को पाबर चिंतित होने के स्थान पर रावण कुपित हो गया था। यह व्यक्ति अपनी शक्ति के दंभ में ऐसा अंध-बधिर हो गया है कि सिवाय अपनी जय-जयकार के और कुछ नहीं सुन सकता। तथ्यों को इसने सुना नहीं और प्रहस्त की इस निर्लज्ज बकवाद से प्रसन्न हो रहा है। कितनी जल्दी यह रावण भूल गया है कि हनुमान बीच लंका में घुसकर इसके पुत्र अक्ष का वध कर गया था। यह प्रहस्त तो आज सभा में खड़ा गाल बजा रहा है- इसका पुत्र जंबुमाली जब हनुमान के हाथों मारा गया था, तब क्यों नहीं इसकी वीरता जागी थी और क्यों नहीं इसने हनुमान से अपने पुत्र-वध का प्रतिशोध लिया था।

शत्रुपर विजय प्राप्त करनेके लिए साम-दान और भेदसे काम न चले तब दण्ड अर्थात् युद्धकी घोषणा अनिवार्य होती है। विभीषण हाथ जोड़कर उठे और बोलने लगे- शत्रु असावधान हो तब उसपर आक्रमण उचित होता है।

परायी स्त्रीका अपहरण आयु और यशका नाशक होता है। विभीषणके स्वरमें रोष आया- अब ये लोग बकवाद करने उठे हैं, आपके सम्मुख बातें बनाते हैं कि आप आज्ञा दे दो तो ये संसारमें एक भी वानर और मनुष्य जीवित नहीं छोड़ेंगे; किंतु एक अकेला वानर आया

था, उसने पूरी पुरी जलादी, तब ये कहाँ गये थे। इनके अपने भवन भस्म कर रहा था वह, तो ये सो रहे थे या प्रवासमें पधारे थे ?

राक्षसेश्वर। इन सबकी बातें सुननेसे विपत्ति बढ़ेगी। इनकी वीरता केवल बातों तक है। विभीषणका स्वर गम्भीर हुआ- जानकीके कारण ही यह भय आया है। उनकी सेनामें पता नहीं हनुमान जैसे और कितने होंगे। अत: जबतक राम समुद्र पार करके लमापर चढ़ाई नहीं कर देते उससे पूर्व उनकी भार्याको लौटा देना चाहिये। इसमें सबका हित है, सबका जीवन है। अत: क्रोध त्यागकर आप हमपर प्रसन्न हों। ऐसा करें जिससे हमारे पुत्र तथा बन्धु-बान्धव जीवित रहें।

प्रहस्त की गर्वोक्ति का रावण पर स्पष्ट प्रभाव पड़ा था। शार्दूल की सूचना से कटुता की जो रेखाएँ रावण के मुख पर खिंची थीं, वे अब पूर्णत: धुल चुकी थीं और वह पहले जैसा ही सहज, आत्मविश्वस्त और उल्लसित रावण लग रहा था।

तुमने ठीक कहा, प्रहस्त। रावण ने अपने मंत्री के प्रति प्रशंसा-भाव व्यक्त किया, सीता को पाने का मुझे ही एक विश्वसनीय मार्ग दिखाई पड़ रहा है- राम का वध। मुझे लगता है कि वह कंगला तापस मेरी भूल सुधारने आ रहा है।

सभा में निस्तब्धता छा गई- क्या कह रहे हैं महाराजाधिराज ? किस भूल की ओर संकेत है उनका ?

सीता का हरण करते हुए, जाने किन-किन लोगों की बातों में आ, राम और लक्ष्मण को मैं जीवित छोड़ आया था। मुझे उनका तब ही वध कर देना चाहिए था। रावण का स्वर दंभपूर्ण हो उठा, तब भूल हो गई, सो हो गई। अब नहीं होगी। वह स्वयं ही आ रहा है तो उसे आने दो। मुझे कहीं जाने की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। उन दोनों भाइयों के कटे मुँड़ों का उपहार चढ़ाऊँगा, तभी तो देवी वैदेही प्रसन्न होकर मेरी मनोकामना पूरी करेगी।

लगा, रावण जोर का अट्टहास करेगा; किंतु वह उससे पहले ही रुक गया। दुर्मुख ने खड़े होकर अभिवादन किया और बोला, राक्षसराज। मैं तो यह जानने को अत्यंत उत्कंठित हूँ कि राम के परामर्शदाताओं में कौन हमारा ऐसा हितैषी है, जो हमारा कार्य सरल करने के लिए राम को बढ़ावा देता हुआ लंका में ला रहा है।

सुग्रीव। सुग्रीव। सभा में कोलाहल हो उठा। सभा का सारा अनुशासन भंग हो गया और सब सभासद भूल गए कि वे रावण के सम्मुख बैठे हैं। हाँ। वही होगा। वज्रदंष्ट्र उच्च स्वर में बोला, वही उस कंगले तापस के साथ वानर-चाल खेल रहा होगा। राम जब तक जीवित रहेगा, उसे याद दिलाता रहेगा कि किष्किंधा का राज्य उसी ने उसे दिलाया है। सुग्रीव के मन में उससे छुटकारा पाने की इच्छा जगी होगी; और छुटकारे का इससे अच्छा मार्ग और क्या हो सकता है कि उसे लंका की ओर धकेला जाए।

सभा में जोरदार अट्टहास गूँज उठा।

यह मूर्खता, चापलूसी और दंभ का वातावरण विभीषण से देखा नहीं गया। वे तड़पकर उठे और बोले, यदि राम का वध करवाना ही सुग्रीव का उद्देश्य है तो इतनी विशाल वानर सेना साथ लाने का क्या अभिप्राय है ?

खिन्न मन विभीषण, निरर्थकता की अनुभूति लिये, अपने स्थान पर बैठ गए। किंतु मुझे भय है, राक्षसराज। वज्रदंष्ट्र पुन: बोला, कि जिस भ्रम को मन में लिये हुए, वह राम चला आ रहा है, जिस क्षण भ्रम टूटेगा, जिस क्षण उसे राक्षस सेनाओं, हमारे सेनापतियों तथा हमारे राजाधिराज के बल-विक्रम की भनक मिलेगी, वह अपना कमण्डल इत्यादि छोड़ कहीं भाग न जाए।

सभा में एक ओर जोर का ठहाका पड़ा और फिर वहाँ अनेक स्वरों का मिश्रित कोलाहल छा गया।

विभीषण झल्लाए बैठे थे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि कैसे लोग थे। इतनी गम्भीर सूचना को ये लोग कैसे हँसी में उड़ा रहे थे। न अपने बल का सम्यक् मूल्यांकन करने को तैयार थे, न शत्रु के वास्तविक बल को देखना चाहते थे। किसी राजा के आस-पास जब ऐसे चाटुकार सभासद हों तो उसे वास्तविकता का ज्ञान ही कैसे हो सकता है। वह तो अपने मित्रों द्वारा बनाए गए काल्पनिक लोक का बंदी होकर रह जाएगा और अंतत: धोखा खाएगा... किंतु इसमें सभासदों का भी क्या दोष- वे तो वही कर रहे थे जो राजा चाहता था। शार्दूल के साथ किया गया व्यवहार ये सभासद कैसे भूल सकते हैं ?

विभीषण के मन में आया कि वे खड़े होकर रावण के सम्मुख यथार्थ स्थिति स्पष्ट करें। उसे बताएँ कि सभासदों का लबाड़ियापन किसी भी राजा के लिए हितकर नहीं होता। किंतु रावण उनकी बात सुनेगा क्या ?

विभीषण सोचते ही रह गए और कुंभकर्ण का पुत्र निकुंभ उठकर खड़ा हो गया।

राक्षसपति। मेरा अनुरोध है कि इस बार आप मुझे अवसर दें। आपको या भाई इंद्रजित को कष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

मैं इन समस्त कंगलों को एक बार ही नष्ट कर आऊँगा। मुझे लगता है कि सीता-हरण तो एक आड़ मात्र है। ये भुक्खड़ वानर, वैसे भी धन की तृष्णा में, जब कभी अवसर मिले, लूटपाट करने को तत्पर रहते ही हैं। मैं सोचता हूँ कि एक बार उन्हें ऐसा पाठ पढ़ा दूँ कि फिर ये लोग धनी और संपन्न राज्यों की ओर आँख उठाकर भी न देखें। वह तनिक रुककर बोला, सुग्रीव नया-नया राजा बना है। और राजा बनकर ही उसे ज्ञात हुआ होगा कि राजा बन जाने मात्र से जीवन के भोग उपलब्ध नहीं होते। उसके लिए धन की आवश्यकता पड़ती है; और धन किष्किंधा राज्य के पास नहीं है। तभी तो वह विश्वभर के कंगलों और भुक्कड़ों को एकत्रित कर उनकी सेना बना लंका की ओर बढ़ रहा है। उसको भी यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि राजा हो अथवा याचक-जीवन का सुखभोग वानरों के लिए नहीं है। वे वानर हैं और वानर रहेंगे। और जहाँ तक सीता का प्रश्न है, वह जहाँ के योग्य थी, वहाँ पहुँच गई है। वह लौटाई नहीं जा सकती।

विभीषण की चिंतन-प्रक्रिया पुन: चल पड़ी-कैसे लोग हैं ये। अन्य जातियों और राज्यों का धन छीनकर धनाढ्य बन, अब मान बैठे हैं कि जीवन के सुखभोग इन्हीं के लिए हैं। उन्हें न प्रकृति के नियमों का ज्ञान है और न मानव-मन और मानव-समाज के। ये क्यों नहीं सोचते कि वानरों में भी अपने अधिकार की चेतना जाग रही है और यह शोषण-चक्र अब और नहीं चल सकेगा।

वज्रहनु ने निकुंभ का प्रबल समर्थन किया और रावण से युद्ध में जाने की अनुमति माँगी। और देखते-ही-देखते निकुंभ, रभस, सूर्यशत्रु, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, महापार्श्व, महोदर, अग्निकेतु, रश्मिकेतु, इंद्रजित, प्रहस्त, विरुपा, वज्रदंष्ट्र, धूम्राक्ष, अतिकाय, दुर्मुख तथा ऐसे ही अनेक लोग अपने-अपने शस्त्र चमकाते हुए युद्ध के लिए अनुमति माँगने लगे।

विभीषण को लगा, वे अब भी नहीं बोले, तो फिर बहुत देर हो जाएगी। उन्हें अपनी बात इन लोगों को सुनानी ही पड़ेगी, चाहे कोलाहल हो या अव्यवस्था।

तात। विभीषण उच्च स्वर में रावण से संबोधित हुए, यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि लंका में ऐसे-ऐसे वीर हैं, जो शत्रु को अपने द्वार पर खड़े देखकर भयभीत नहीं होते, वरन् युद्ध के लिए उत्साहित होते हैं। मैं इन वीरों का अभिनंदन करता हूँ और कामना करता हूँ कि ये लोग शुभ काम के लिए युद्ध करते हुए अपना वीरत्व प्रदर्शित करें और विजयी हों।

तात। जो मनोरथ साम, दान और भेद इन तीन उपायोंसे प्राप्त न हो सके, उसीकी प्राप्तिके लिये नीतिशास्त्रके ज्ञाता मनीषी विद्वानोंने पराक्रम करनेके योग्य अवसर बताये हैं।

निशाचरो। नदों और नदियोंके स्वामी भयंकर महासागरको जो एक ही छलाँगमें लाँघकर यहाँतक आ पहुँचे थे, उन हनुमान्‌जीकी गतिको इस संसारमें कौन जान सकता है अथवा कौन उसका अनुमान लगा सकता है ? शत्रुओंके पास असंख्य सेनाएँ हैं, उनमें असीम बल और पराक्रम है; इस बातको तुमलोग अच्छी तरह जान लो। दूसरोंकी शक्तिको भुलाकर किसी तरह भी सहसा उनकी अवहेलना नहीं करनी चाहिये।

श्रीरामने पहले राक्षसराज रावणका कौन-सा अपराध किया था, जिसने उन यशस्वी महात्माकी पत्नीके ये जनस्थानसे हर लाये ?

यदि कहें कि उन्होंने खरको मारा था तो यह ठीक नहीं है; क्योंकि खर अत्याचारी था। उसने स्वयं ही उन्हें मार डालनेके लिये उनपर आक्रमण किया था। इसलिये श्रीरामने रणभूमिमें उसका वध किया; क्योंकि प्रत्येक प्राणीको यथाशक्ति अपने प्राणोंकी रक्षा अवश्य करनी चाहिये। यदि इसी कारणसे सीताको हरकर लाया गया हो तो उन्हें जल्दी ही लौटा देना चाहिये; अन्यथा हमलोगोंपर महान् भय आ सकता है। जिस कर्मका फल केवल कलह है, उसे करनेसे क्या लाभ ? श्रीराम बड़े धर्मात्मा और पराक्रमी हैं। उनके साथ व्यर्थ वैर करना उचित नहीं है। मिथिलेशकुमारी सीताको उनके पास लौटा देना चाहिये।

जबतक हाथी, घोड़े और अनेकों रत्नोंसे भरी हुई लमापुरीका श्रीराम अपने बाणोंद्वारा विध्वंस नहीं कर डालते, तबतक ही मैथिलीको उन्हें लौटा दिया जाय। जबतक अत्यन्त भयंकर, विशाल और दुर्जय वानरवाहिनी हमारी लमाको पददलित नहीं कर देती, तभीतक सीताको वापस कर दिया जाय। यदि श्रीरामकी प्राणवल्लभा सीताको हमलोग स्वयं ही नहीं लौटा देते हैं तो यह लमापुरी नष्ट हो जायगी और समस्त शूरवीर राक्षस मार डाले जायँगे। आप मेरे बड़े भाई हैं। अत: मैं आपको विनयपूर्वक प्रसन्न करना चाहता हूँ। आप मेरी बात मान लें। मैं आपके हितके लिये सच्ची बात कहता हूँ- आप श्रीरामको उनकी सीता वापस कर दें।

राजकुमार श्रीराम जबतक आपके वधके लिये शरत्कालके सूर्यकी किरणोंके समान तेजस्वी, उज्ज्वल अग्रभाग एवं पंखोंसे सुशोभित, सुदृढ़ तथा अमोघ बाणोंकी वर्षा करें, उसके पहले ही आप उन दशरथनन्दनकी सेवामें मिथिलेशकुमारी सीताको सौंप दें।

भैया। आप क्रोधको त्याग दें; क्योंकि वह सुख और धर्मका नाश करनेवाला है। धर्मका सेवन कीजिये; क्योंकि वह सुख और सुयशको बढ़ानेवाला है। हमपर प्रसन्न होइये, जिससे हम पुत्र और बन्धु-बान्धवोंसहित जीवित रह सकें। इसी दृष्टिसे मेरी प्रार्थना है कि आप दशरथनन्दन श्रीरामके हाथमें मिथिलेशकुमारी सीताको लौटा दें।

किंतु इस समय प्रश्न यह है, विभीषण कोलाहल के शांत होने की प्रतीक्षा में रुके नहीं, कि जिस युद्ध की हम तैयारी कर रहे हैं, क्या यह युद्ध नीतिसंगत भी है ?

विभीषण ने रुककर सभासदों पर अपनी दृष्टि फेरी, यह युद्ध लंका की रक्षा के लिए नहीं है; यह युद्ध किसी सिद्धांत की रक्षा के लिए भी नहीं है, यह युद्ध अपने प्रति किए गए किसी अपराध के परिमार्जन के लिए भी नहीं है; स्वाभिमान और सम्मान की रक्षा के लिए भी नहीं है। यह युद्ध नीति का शासन स्थापित करने, प्रजा को अभयदान करने, नये देश जीतने, किसी राजा के गर्व को खण्डित करने के लिए भी नहीं है। यह युद्ध अपने राजा के अपराध की रक्षा के लिए है।

विभीषण। रावण चेतावनी के स्वर में बोला, शब्द को मुख से बाहर निकालने से पहले कुछ तो सोच लो। अनर्गल प्रलाप तुम्हारे लिए हितकर नहीं है।

यह अनर्गल प्रलाप नहीं है, राजन्। विभीषण की तेजस्विता कुछ और मुखर हो उठी, राम आपका राज्य छीनने नहीं आ रहा है। उसका क्या अपराध था कि आप उसकी पत्नी का हरण कर लाए ?

मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देने को बाध्य नहीं हूँ। रावण उग्र होता जा रहा था, फिर भी तुम्हें समझाने के लिए कह रहा हूँ कि शूर्पणखा तुम्हारी भी बहन है। राम ने उसका अपमान किया है। खर-दूषण तुम्हारे भी भाई थे। राम ने उनका वध किया है। मैंने प्रतिशोध की भावना से शत्रु-पत्नी का हरण किया है। यह अपराध नहीं है, हमारी नीति है।

शूर्पणखा मेरी बहन है और खर-दूषण मेरे भाई थे; किंतु संबंधी होने भर से ही तो उनके कृत्य न्यायसंगत नहीं हो जाते। विभीषण बोले, शूर्पणखा ने बलात् राम को प्राप्त करना चाहा था और सीता की हत्या का प्रयत्न किया था। खर-दूषण सेना लेकर राम से युद्ध करने गए थे। राम ने जो कुछ किया, अपने स्वाभिमान और प्राणों की रक्षा के लिए किया है और अब भी वह अपने अपमान के प्रतिकार तथा अपनी पत्नी को पुन: प्राप्त करने के लिए सैनिक अभियान कर रहा है। उसके लिए उसे दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

तो फिर दोषी किसे ठहराया जाएगा ? मुझे ? रावणने कहा।

हाँ। आपको, राजन। विभीषण का निर्भीक स्वर सभा में गूँजता चला गया, जिसने शत्रु के साथ युद्ध कर उसका वध नहीं किया, कामुकता के कारण एक निरीह और असहाय स्त्री का अपहरण किया और अब आप उस स्त्री पर अपना अनैतिक, अनाधिकृत आधिपत्य बनाए रखने के लिए लंका की सेनाओं को युद्ध की भट्टी में झोंक रहे हैं।

विभीषण। रावण का स्वर अत्यंत उग्र था, तुम बार-बार भूल जाते हो कि रावण लंका का राजा भी है और तुम्हारा बड़ा भाई भी। मैं बार-बार तुम्हें क्षमा करता हूँ और तुम बार-बार अपनी मर्यादा का उल्लंघन करते हो। उसने अपनी भंगिमा बदली, हाँ। सीता के रूप और यौवन में मेरी आसक्ति है। मैंने कामेच्छा से बलात् उसका हरण किया है। मेरे लिये यह कोई नई बात नहीं है। जिस स्त्री के रूप पे मेरी कामाग्नि को प्रज्वलित किया है, मैंने सदा उसे प्राप्त किया है; और जिस किसी ने मेरा विरोध किया है उसका मैंने वध किया है और आज भी यहीं कहता हूँ । रावण का यह विश्वास है कि भोग केवल शक्तिशाली के लिए है। जो मेरा विरोध करता है, वह मेरे खड्ग को देख ले- चाहे वह राम हो या विभीषण। रावण युद्ध में समर्थ है, अत: वह युद्ध से नहीं डरता।

रावण चुप हुआ तो लगा कि अब सभा में कोई नहीं बोलेगा। किंतु उस स्तब्धता को विभीषण ने पुन: तोड़ा। इस बार उनका स्वर तेज से भरा-पूरा नहीं था। न ही वे उग्रता से अपनी बात कह रहे थे। वे समझाते हुए-से, शांत स्वर में बोले, राजन्। मुझे आपके सामर्थ्य में संदेह नहीं है। किंतु लंकावासियों के हित के लिए ही कह रहा हूँ। आप मेरी नीति-संबंधी बात चाहे न सुनें, युद्ध-नीति संबंधी बात तो सुनें।

कहो। रावण उपेक्षापूर्ण स्वर में बोला।

तात। जो शत्रु असावधान हों, जिन पर उनके शत्रुओं ने आक्रमण कर रखा हो, जो महारोग से ग्रस्त हों, दैव से ही मारे गए हों- भली-भाँति विचार कर उन्हीं पर विधिपूर्वक किए गए पराक्रम सफल होते हैं, विभीषण बोले, राम असावधान नहीं है। वह विजय की इच्छा से आ रहा है। उसके साथ वानरों की भयंकर सेना है। उससे युद्ध में लंका को कोई लाभ नहीं होगा।

तो क्या किया जाए ?

विभीषण बोले- वैदेही लौटा दी जाए। जो हो गया सो हो गया। अब सोच-समझ कर आगे से पाँव धरो। जो चली गई सो चली गई, जो रह गयी उसकी बात करो। सीताको लौटाकर जड़ से ही रार मिटा दो। रघुकुलपति से मित्रता बढ़ाकर लंका को और सुदृढ़ बनाओ। जानकी जगदम्बा है, शक्ति स्वरूप है, जगन्माता है। हे भाई उसे त्रास देकर अन्त में कुशल नहीं है।

विभीषण की यह बात सुनकर दशशीस बिगड़ उठा और उसके बीसों भुजाएँ फड़कने लगी। बोला- मौन हो विभीषण। दुश्मन के आगे सर झुकाए यह रावण का दस्तूर नहीं। मर जाना मंजूर है मगर सीता देना मंजूर नहीं।

असम्भव। रावण अपने आसन से उठ खड़ा हुआ, अपने जीते-जी रावण सीता को नहीं लौटा सकता। रावण दृढ़तापूर्वक पग रखता हुआ, सभाभवन से बाहर निकल गया। सभा स्वत: ही विसर्जित हो गई।

प्रात: ही विभीषण रावण के महामहाल में पहुँचे। आज सभासदों की अनुपस्थिति में वे अकेले रावण को अपने भाई को- समझाने का प्रयत्न करेंगे। किंतु आश्चर्य की बात थी कि आज इस समय भी रावण अकेला नहीं था। उसके अनेक मंत्री उसके आस-पास बैठे थे; और उनके मध्य एक ऊँचे आसन पर बैठा वह अपनी राजसभा में ही बैठा प्रतीत हो रहा था।

विभीषण ने अभिवादन किया तो उसने अत्यंत शांत स्वर में उत्तर दिया और विभीषण को बैठने के लिए एक मंच की ओर संकेत किया। तात्। विभीषण बोले, कल राजसभा के विचार-विमर्श में कुछ उत्तेजना अवश्य आ गई थी, किंतु मेरा मंतव्य आपका विरोध करने का नहीं है। आपके भाई के रूप में जो बात आपके और लंका के हित में समझता हूँ, वही कहता हूँ। निवेदन है कि आप मेरी बात शांत मन से सुनें और उस पर विचार करें।

कहो, विभीषण। रावण की आँखों में उभर आई अशांति की छाया को उसकी वाणी की स्थिरता ने दबा दिया।

तात्। जब से आप सीता का हरण कर उसे लंका में लाए हैं, तब से लंका में अनेक नई-नई बातें हो रही हैं।

क्या नई बातें हो रही हैं ? रावण की भृकुटि ऊपर की ओर उठी।

मन्त्रोंद्वारा विधिपूर्वक धधकानेपर भी आग अच्छी तरह प्रज्वलित नहीं हो रही है। उससे चिनगारियाँ निकलने लगती हैं। उसकी लपटके साथ धुआँ उठने लगता है और मन्थनकालमें जब अग्नि प्रकट होती है, उस समय भी वह धूएँसे मलिन ही रहती है।

रसोई-घरोंमें, अग्निशालाओंमें तथा वेदाध्ययनके स्थानोंमें भी साँप देखे जाते हैं और हवन-सामग्रियोंमें चींटियाँ पड़ी दिखायी देती हैं। गायोंका दूध सूख गया है, बड़े-बड़े गजराज मदरहित हो गये हैं, घोड़े नये ग्राससे आनन्दित (भोजनसे संतुष्ट) होनेपर भी दीनतापूर्ण स्वरमें हिनहिनाते हैं।

राजन्। गधों, ऊँटों और खच्चरोंके रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उनके नेत्रोंसे आँसू गिरने लगते हैं। विधिपूर्वक चिकित्सा की जानेपर भी वे पूर्णत: स्वस्थ हो नहीं पाते हैं। क्रूर कौए झुंड-के-झुंड एकत्र होकर कर्कश स्वरमें काँव-काँव करने लगते हैं तथा वे सतमहल मकानोंपर समूह-के-समूह इकट्ठे हुए देखे जाते हैं। लमापुरीके ऊपर झुंड़-के-झुंड़ गीध उसका स्पर्श करते हुए- से मंड़राते रहते हैं। दोनों संध्याओंके समय सियारिनें नगरके समीप आकर अमङ्गलसूचक शब्द करती हैं। नगरके सभी फाटकोंपर समूह-के-समूह एकत्र हुए मांसभक्षी पशुओंके जोर-जोरसे किये जानेवाले चीत्कार बिजलीकी गड़गड़ाहटके समान सुनायी पड़ते हैं।

वीरवर। ऐसी परिस्थितिमें मुझे तो यही प्रायश्चित अच्छा जान पड़ता है कि विदेहकुमारी सीता श्रीरामको लौटा दी जायँ। महाराज। यदि यह बात मैंने मोह या लोभसे कही हो तो भी आपको मुझमें दोषदृष्टि नहीं करनी चाहिये। सीताका अपहरण तथा इससे होनेवाला अपशकुनरूपी दोष यहाँकी सारी जनता, राक्षस-राक्षसी तथा नगर और अन्त:पुर सभीके लिये उपलक्षित होता है।

यह बात आपके कानोंतक पहुँचानेमें प्राय: सभी मन्त्री संकोच करते हैं; परंतु जो बात मैंने देखी या सुनी है, वह मुझे तो आपके आगे अवश्य निवेदन कर देनी चाहिये; अत: उसपर यथोचित विचार करके आप जैसा उचित समझें, वैसा करें। इस प्रकार भाई विभीषणने अपने मन्त्रियोंके बीचमें बड़े भाई राक्षसराज रावणसे ये हितकारी वचन कहे।

विभीषणकी ये हितकर, महान् अर्थकी साधक, कोमल, युक्तिसंगत तथा भूत, भविष्य और वर्तमान-कालमें भी कार्यसाधनमें समर्थ बातें सुनकर रावणको बुखार चढ़ आया। श्रीरामके साथ वैर बढ़ानेमें उसकी आसक्ति हो गयी थीं। इसलिये उसने इस प्रकार उत्तर दिया- विभीषण। मैं तो कहींसे भी कोई भय नहीं देखता। राम मिथिलेशकुमारी सीताको कभी नहीं पा सकते। इन्द्रसहित देवताओंकी सहायता

प्राप्त कर लेनेपर भी लक्ष्मणके बड़े भाई राम मेरे सामने संग्राममें कैसे टिक सकेंगे ?

राजकुल की एकता खण्डित हो गई है। विभीषण बोले, बाहर से आए अनेक लोगों के माध्यम से राम और उसकी सेना के विषय में विभिन्न प्रकार की बातें सुनने में आ रही हैं। मैं नहीं जानता कि यह राम कैसा मायावी पुरुष है, जिसका दूत सागर पे उड़ान भर कर लंका में आ सकता है और अपने पीछे भूकंप का-सा प्रभाव छोड़कर जा सकता है। क्षणभर के लिए विभीषण रुके, लगता है कि लंका के आस-पास रहने वाले पशु-पक्षी भी सजग होकर राम की सेना में जा मिले हैं। रामने मिट्टी में प्राण फूँककर उसमें से ऐसी दुस्साहसी सेना गढ़ ली है, जो लंका पर आक्रमण करने के लिए सागर-संतरण का पराक्रम करने को तैयार है। भैया, मेरा आपसे नम्र निवेदन है कि आप इस विषय में गंभीरता से सोचें कि यदि यह वानर-सेना किसी प्रकार लंका में आ गई तो विजय चाहे किसी की हो- लंका की कितनी क्षति होगी। आज मैं आपसे धर्म-अधर्म की बात नहीं कर रहा, नीति-अनीति की बात नहीं कर रहा- आज तो मैं केवल लंका की रक्षा की बात कर रहा हूँ। यदि केवल सीता को लौटा देने से लंका की यह भूमि सुरक्षित रहती है, राक्षसों की संपदा अक्षुण्ण बनी रहती है और सहस्त्रों सैनिकों के प्राण बच जाते हैं तो इसमें आपकी क्या हानि है ? आपके अंत:पुर में स्त्रियों की कोई कमी नहीं। एक सीता के नहीं रहने से क्या होगा ? विभीषण ने निमिष-भर रुककर रावण को देखा, राम की सेना के भय से भाग-भाग लंका में आ पहुँचे अनेक लोगों से उस सेना के विषय में सुन-सुनकर लंका में जो भय और त्रास फैल गया है; आपके विरुद्ध जन-मन में जो विरोध संचित हो रहा है- उसके विषय में आपके मंत्री आपको सूचना देने में संकोच करते हैं। किंतु मैं यथार्थ को आप तक पहुँचाए बिना नहीं रह सकता।

रावण ने उसी शांत दृष्टि से विभीषण को देखा। विभीषण चकित थे कि उनकी ये सारी बातें रावण को तनिक-सा भी उत्तेजित करने में सर्वथा असमर्थ रही थीं- क्या रावण सचमुच यथार्थ के प्रति सचेत हो रहा है ?

मैं तुम्हारी बातों पर विचार करूँगा, विभीषण। रावण बोला, और आज राजसभा में मंत्रियों से मंत्रणा और विचार-विमर्श भी करूँगा। वहीं अपनी नीति की घोषणा भी करूँगा।

रावण ने विभीषण की बात सुन ली थी और अपना उत्तर दे दिया था। उसके मंत्री अभी मंत्रणा के लिए बैठे हुए थे। स्पष्टत: यह विभीषण के लिए जाने का संकेत था।

राक्षसोंका राजा रावण मिथिलेशकुमारी सीताके प्रति कामसे मोहित हो रहा था, उसके हितैषी सुहृद् विभीषण आदि उसका अनादर करने लगे थे- उसके कुकृत्योंकी निन्दा करते थे तथा सीताहरणरूपी जघन्य पाप-कर्मके कारण पापी घोषित किया गया था- इन सब कारणोंसे वह अत्यंत कृश (चिन्तायुक्त एवं दुर्बल) हो गया था।

वह अत्यन्त कामसे पीड़ित होकर बारंबार विदेहकुमारीका चिन्तन करता था, इसलिये युद्धका अवसर बीत जानेपर भी उसने उस समय मन्त्रियों और सुहृदोंके साथ सलाह करके युद्धको ही समयोचित कर्तव्य माना।

महान् मेघोंकी गर्जना समान घर्घराहट पैदा करनेवाले उस उत्तम रथपर आरूढ़ हो राक्षसशिरोमणि दशग्रीव सभा भवनकी ओर प्रस्थित हुआ। राक्षसोंद्वारा की गयी स्तुति, जय-जयकार और आशीर्वाद सुनता हुआ शत्रुदमन महातेजस्वी रावण उस समय विश्वकर्माद्वारा निर्मित राजसभामें पहुँचा। तुमलोग शीघ्र ही यहाँ बैठनेवाले सुविख्यात राक्षसोंको मेरे पास बुला ले आओ; क्योंकि शत्रुओंके साथ करने योग्य महान् कार्य मुझपर आ पड़ा है। इस बाताके मैं अच्छी तरह समझ रहा हूँ (अत: इसपर विचार करनेके लिय सब सभासदोंका यहाँ आना अत्यन्त आवश्यक है।

राजाकी आज्ञासे उस सभामें एकत्र होकर वे सब राक्षस राक्षसराज रावणके आसपास यथायोग्य आसनोंपर बैठ गये।

यथायोग्य भिन्न-भिन्न विषयोंके लिये उचित सम्मति देनेवाले मुख्य-मुख्य, कर्तव्य-निश्चयमें पाण्डित्यका परिचय देनेवाले सचिव, बुद्धिदर्शी, सर्वज्ञ, सद्गुण-सम्पन्न, उपमन्त्री तथा और भी बहुत-से शूरवीर सम्पूर्ण अर्थोंके निश्चयके लिये और सुखप्राप्तिके उपायपर विचार करनेके लिये उस सुनहरी कान्तिवाली सभाके भीतर सैकड़ोंकी संख्यामें उपस्थित थे।

छोटे भाई विभीषणने पहले अपना नाम बताया, फिर बड़े भाईके चरणोंमें मस्तक झुकाया। इसी तरह शुक और प्रहस्तने भी किया। तब रावणने उन सबको यथायोग्य पृथक्-पृथक् आसन दिये।

शत्रुविजयी रावणने उस सम्पूर्ण सभाकी ओर दृष्टिपात करके सेनापति प्रहस्तको उस समय इस प्रकार आदेश दिया- सेनापते। तुम सैनिकोंको ऐसी आज्ञा दो, जिससे तुम्हारे अस्त्रविद्यामें पारंगत रथी, घुड़सवार, हाथीसवार और पैदल योद्धा नगरकी रक्षामें तत्पर रहें।

नगरकी रक्षाके लिये सारी सेनाको तैनात करके प्रहस्त राजा रावणके सामने आ बैठा और इस प्रकार बोला- राक्षसराज। आप महाबली महाराजकी सेनाको मैंने नगरके बाहर और भीतर यथास्थान नियुक्त कर दिया है। अब आप स्वस्थचित्त होकर शीघ्र ही अपने अभीष्ट कार्यका सम्पादन कीजिये।

रावण ने एक सिंह-दृष्टि चारों ओर डाली और बोला, यह सभा मैंने विशेष प्रयोजन से बुलाई है। जब कभी कोई राजनैतिक, सैनिक अथवा नैतिक संकट आया है, मैंने सदा आपका परामर्श चाहा है। आज भी एक ऐसा ही संकट मुझ पर आया है। रावण का स्वर गर्विष्ठ हो उठा, राक्षसों की विचरण-भूमि दण्डकारण्य में से मैं उस कंगले तापस राम की सुंदरी पत्नी सीता हरण कर लाया हूँ। मेरी दृष्टि में सीता सारे विश्व में सर्वश्रेष्ठ सुंदरी है। उसे देखते ही मेरा हृदय और शरीर कामाग्नि से दग्ध होने लगता है। मैं आपसे स्पष्ट कह दूँ कि किसी भी स्थिति में, किसी के भी परामर्श अथवा विरोध के भय से मैं सीता को लौटाने को प्रस्तुत नहीं हूँ। राम वानरों की सेना लेकर लंका पर आक्रमण करने आ रहा है। युद्ध में जय हो अथवा पराजय, मैं सीता का त्याग नहीं कर सकता। रावण ने रुककर विभीषण को देखा, सीता मेरी शैया पर आरूढ़ होना नहीं चाहती। मेरे अपने परिवार में से सीता-हरण को लेकर मेरा विरोध हो रहा है। किंतु मैं सीता का त्याग नहीं कर सकता। मैं अपनी वासना में दग्ध हो रहा हूँ, कामाग्नि में जल रहा हूँ।

आपलोगोंने सदा परस्पर विचार करके जिन-जिन कार्योंका आरम्भ किया है, वे सब-के-सब मेरे लिये कभी निष्फल नहीं हुए हैं।

जैसे चन्द्रमा, ग्रह और नक्षत्रोंसहित मरूद्गणोंसे घिरे हुए इन्द्र स्वर्गकी सम्पत्तिका उपभोग करते हैं, उसी भाँति आपलोगोंसे घिरा रहकर मैं भी लमाकी प्रचुर राजलक्ष्मीका सुख भोगता रहूँ- यही मेरी अभिलाषा है। किंतु वह मन्दगामिनी सीता मेरी शय्यापर आरूढ़ होना नहीं चाहती है। मेरी दृष्टिमें तीनों लोकोंके भीतर सीताके समान सुन्दरी दूसरी कोई स्त्री नहीं है।

सीताके उन चरणोंको देखकर मेरी कामाग्नि प्रज्वलित हो उठती है। जिसमें घीकी आहुति डाली गयी हो, उस अग्निकी लपट और सूर्यकी प्रभाके समान इस तेजस्विनी सीताको देखकर तथा ऊँची नाक और विशाल नेत्रोंसे सुशोभित उसके निर्मल एवं मनोहर मुखका अवलोकन करके मैं अपने वशमें नहीं रह गया हूँ। कामने मुझे अपने अधीन कर लिया है।

जो क्रोध और हर्ष दोनों अवस्थाओंमें समानरूपसे बना रहता है, शरीरकी कान्तिको फीकी कर देता है और शोक तथा संतापसे समय भी कभी मनसे दूर नहीं होता, उस कामने मेरे हृदयको कलुषित (व्याकुल) कर दिया है। विशाल नेत्रोंवाली माननीय सीताने मुझसे एक वर्षका समय माँगा है। इस बीचमें वह अपने पति श्रीरामकी प्रतीक्षा करेगी। मैंने मनोहर नेत्रोंवाली सीताके उस सुन्दर वचनको सुनकर उसे पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा कर ली है।

जैसे बड़े मार्गमें चलते-चलते घोड़ा थक जाता है, उसी प्रकार मैं भी कामपीड़ासे थकावटका अनुभव कर रहा हूँ। वैसे तो मुझे शत्रुओंकी ओरसे कोई डर नहीं है; क्योंकि वे वनवासी वानर अथवा वे दोनों दशरथकुमार श्रीराम और लक्ष्मण असंख्य जल-जन्तुओं तथा मत्स्योंसे भरे हुए अलङ्घ्य महासागरको कैसे पार कर सकेंगे ?

अथवा एक ही वानरने आकर हमारे यहाँ महान् संहार मचा दिया था। इसलिये कार्यसिद्धिके उपायोंको समझ लेना अत्यन्त कठिन हैं। अत: जिसको अपनी बुद्धिके अनुसार जैसा उचित जान पड़े, वह वैसा ही बतावे। तुम सब लोग अपने विचार अवश्य व्यक्त करो। यद्यपि हमें मनुष्यसे कोई भय नहीं है, तथापि तुम्हें विजयके उपायपर विचार तो करना ही चाहिये।

उन दिनों जब देवताओं और असुरोंका युद्ध चल रहा था, उसमें आप सब लोगोंकी सहायतासे ही मैंने विजय प्राप्त की थी। आज भी आप मेरे उसी प्रकार सहायक हैं। वे दोनों राजकुमार सीताका पता पाकर सुग्रीव आदि वानरोंको साथ लिये समुद्रके उस तटतक पहुँच चुके हैं। अब आपलोग आपसमें सलाह कीजिये और कोई ऐसी सुन्दर नीति बताइये, जिससे सीताको लौटाना न पड़े तथा वे दोनों दशरथकुमार मारे जाँय।

वानरोंके साथ समुद्रको पार करके यहाँतक आनेकी शक्ति जगत्में रामके सिवा और किसीमें नहीं देखता हूँ (किंतु राम और वानर यहाँ आकर भी मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते), अत: यह निश्चय है कि जीत मेरी ही होगी।

सहसा कुंभकर्ण उठकर अपने स्थान पर खड़ा हो गया। उसका चेहरा क्रोध से तमतमाया हुआ था, आप कामाग्नि में जल रहे हैं तो क्या सारे राक्षसों को युद्धाग्नि में जला डालेंगे ? आपने बिना किसी से परामर्श किए यह अनुचित कार्य कर डाला है। किसी की पत्नी के हरण का क्या अर्थ ? कुंभकर्ण। रावण के स्वर में याचना थी, तुम राक्षस होकर भोग का विरोध करते हो। हमारी नीति तो हमारा बल है। मैंने सदा

तुम्हारे सुख और भोग की सामग्री तुम्हें उपलब्ध कराई और आज तुम अपने ही बड़े भाई के सुख-भोग में नैतिकता की अड़चन खड़ी कर रहे हो।

यह बात क्या है ? मैं पुरीको दूसरे प्रकारकी देखता हूँ। तुमने रामकी पत्नीका हरण किया है ? कुम्भकर्ण क्रुद्ध स्वरमें सीधे रावणकी ओर देखकर अपने घन गर्जन स्वरमें बोला यह काम ही अन्यायका हुआ। अनुचित हुआ। उस समय तो तुमने मुझसे पूछा नहीं। अपने मनसे सीताका हरण किया। सौभाग्यकी बात है कि उस हरणके समय ही रामने तुम्हें मार नहीं डाला। अवश्य वे वहाँ रहे नहीं होंगे। लेकिन जब सीताको ले ही आये हो तो पट्टमहिषी बना लो।

सीता किसी प्रकार रामके अतिरिक्त दूसरेको स्वीकार करनेको प्रस्तुत नहीं है। रावणने शान्त स्वरमें कहा।

कामातुर रावणका यह खेदपूर्ण प्रलाप सुनकर कुम्भकर्णको क्रोध आ गया और उसने इस प्रकार कहा- जब तुम लक्ष्मणसहित श्रीरामके आश्रमसे एक बार स्वयं ही मनमाना विचार करके सीताको यहाँ बलपूर्वक हर लाये थे, उसी समय तुम्हारे चित्तको हमलोगोंके साथ इस विषयमें सुनिश्चित विचार कर लेना चाहिये था। ठीक उसी तरह जैसे यमुना जब पृथ्वीपर उतरनेको उद्यत हुईं, तभी उन्होंने यमुनोत्री पर्वतके कुण्डविशेषको अपने जलसे पूर्ण किया था (पृथ्वीपर उतर जानेके बाद उनका वेग जब समुद्रमें जाकर शान्त हो गया, तब वे पुन: उस कुण्डको नहीं भर सकतीं, उसी प्रकार तुमने भी जब विचार करनेका अवसर था, तब तो हमारे साथ बैठकर विचार किया नहीं। अब अवसर बिताकर सारा काम बिगड़ जानेके बाद तुम विचार करने चले हो।)

महाराज। तुमने जो यह छलपूर्वक छिपकर परस्त्री-हरण आदि कार्य किया है, यह सब तुम्हारे लिये बहुत अनुचित है। इस पापकर्मको करनेसे पहले ही आपको हमारे साथ परामर्श कर लेना चाहिये था।

दशानन। जो राजा सब राजकार्य न्यायपूर्वक करता है, उसकी बुद्धि निश्चयपूर्ण होनेके कारण उसे पीछे पछताना नहीं पड़ता है।

जो कर्म उचित उपायका अवलम्बन किये बिना ही किये जाते हैं तथा जो लोक और शास्त्रके विपरीत होते हैं, ये पापकर्म उसी तरह दोषकी प्राप्ति कराते हैं, जैसे अपवित्र आभिचारिक यज्ञोंमें होमे गये हविष्य। जो पहले करने योग्य कार्योंको पीछे करना चाहता है और पीछे करने योग्य काम पहले ही कर डालता है, वह नीति और अनीतिको नहीं जानता।

महाराज। तुमने भावी परिणामका विचार किये बिना ही यह बहुत बड़ा दुष्कर्म आरम्भ किया है। जैसे विषमिश्रित भोजन खानेवालेके प्राण हर लेता है, उसी प्रकार श्रीराम तुम्हारा वध कर डालेंगे। उन्होंने अभीतक तुम्हें मार नहीं डाला, इसे अपने लिये सौभाग्यकी बात समझो।

अनघ। यद्यपि तुमने शत्रुओंके साथ अनुचित कर्म आरम्भ किया है, तथापि मैं तुम्हारे शत्रुओंका संहार करके सबको ठीक कर दूँगा।

निशाचर। तुम्हारे शत्रु यदि इन्द्र, सूर्य, अग्नि, वायु, कुबेर और वरुण भी हों तो मैं उनके साथ युद्ध करूँगा और तुम्हारे सभी शत्रुओंको उखाड़ फेंकूँगा। मैं पर्वतके समान विशाल एवं तीखी दाढ़ोंसे युक्त शरीर धारण करके महान् परिघ हाथमें ले समरभूमिमें जूझता हुआ जब गर्जना करूँगा, उस समय देवराज इन्द्र भी भयभीत हो जायँगे। मैं दशरथनन्दन श्रीरामका वध करके तुम्हारे लिये सुखदायिनी विजय सुलभ करानेका प्रयत्न करूँगा। लक्ष्मणसहित रामको मारकर समस्त वानरयूथपतियोंको खा जाऊँगा। तुम मौजसे विहार करो। उत्तम वारुणीका पान करो और निश्चित होकर अपने लिये हितकर कार्य करते रहो। मेरे द्वारा रामके यमलोक भेज दिये जानेपर सीता चिरकालके लिये तुम्हारे अधीन हो जायगी।

कुंभकर्ण के चेहरे का भाव बदल गया, किया तो आपने अनुचित ही है; पर चलिए, यदि आपकी इच्छा है, यदि आपको सुख मिलता है, तो ऐसा ही हो।

फिर भी तो कोई समस्या नहीं है। हम राक्षसोंमें छल भी कहाँ वर्जित है ? कुम्भकर्ण बोला- तुम रामका रूप भी तो बना सकते हो।

मैंने प्रयत्न किया था। रावणने बताया- जानते ही हो कि मायासे किसीका रूप धारण करनेके लिए उसके रूपका गाढ़ चिन्तन करना पड़ता है। दूर्वादल श्याम रामका चिन्तन करते ही चित्तसे सब अधर्म वासनाएँ नष्ट हो जाती हैं। उस समय परस्त्री पानेकी तो कल्पना ही अत्यन्त घृणास्पद लगती है। धन्य श्रीराम। विभीषणके मुखसे सहसा निकला।

धन्य राम। कुम्भकर्णने भी कहा। फिर दो क्षण चुप रहकर बोला- तुमने काम तो बहुत बुरा किया; किन्तु अब चिन्ता मत करो। मैं तुम्हारे सब शत्रुओंको खा लूँगा। तुम निश्चिन्त सुरापान करो और मनमाना भोग भोगो।

कुम्भकर्ण यह कहकर उठा और सभागृहसे बाहर गया तो रावण भी खुलकर हँसा। वह उठ खड़ा हुआ। सभा विसर्जित हो गयी। दशग्रीव ठीक समझ गया था कि अब सायंकाल कुम्भकर्ण सीधे अपनी गुफामें जायगा। वहाँ उसके लिए महिष और मद्यघट हैं। खा-

पीकर उसे सो जाना है। एक बार सो गया तो उसे आजकी कोई बात स्मरण भी आवे तो ६ महीने पीछे आवेगी।

राम कहाँ हैं ? सभागृहसे निकलते ही कुम्भकर्णने द्वारपालसे पूछा।

सुना है- समुद्र पार हैं। द्वारपालने बतलाया।

अच्छा। कुम्भकर्णको लगा कि समुद्रपर जानेसे पूर्व उसे अल्पाहार कर लेना चाहिये। वह उनींदा हो उठा था। अपनी गुफामें जाकर जो मिल सका, मुखमें डालकर तनिक लेटा। अब उसे निद्रा आ गयी तो उसका अपराध ?

रावण का मुख उल्लसित हो उठा और बोला- आप लोग यह न समझें कि मैं राम अथवा उसके वानरों से डर गया हूँ। राम एक साधारण कंगला तपस्वी है, जिसे उसके छोटे भाइयों ने राज्य से निष्कासित कर रखा है। वह मूर्ख वानरों को चाहे जितना फुसला ले, युद्ध में मेरे सम्मुख टिक नहीं पाएगा। उसके वानर सैनिक ऐसे वन-पशु हैं, जिन्हें शस्त्र पकड़ना भी नहीं आता। वे लोग लंका की देव-विजयिनी, उन्नत शस्त्रों से सज्जित, प्रशिक्षित सेना के सम्मुख कैसे टिक पाएँगे; और फिर उनके और हमारे बीच सर्पों तथा भयंकर जलचरों से भरे हुए सागर की प्राचीर है। सागर को पार करने के प्रयत्न में वह सारे वानरों को उसमें डूबो देगा। मैं राम और उसकी सेना से तनिक भी भयभीत नहीं हूँ। रावण ने क्षणभर रुककर उच्च स्वर में कहा, मैं इसलिए रण-सज्जित हो रहा हूँ कि याचक को युद्ध-दान करना वीरों का धर्म है। मैं विजय के लिए रण-सज्जित हो रहा हूँ। इस युद्ध में असंख्य वानर मारे जाएँगे और तब उनका विशाल राज्य हमारा होगा, उनकी धन-सम्पत्ति हमारी होगी, उनकी सुंदरी स्त्रियाँ हमारी शैयाओं पर आरूढ़ होंगी। युद्ध तो हम करेंगे ही।

तब रावणको कुपित हुआ जान महाबली महापार्श्वने दो घड़ीतक कुछ सोच-विचार करनेके बाद हाथ जोड़कर कहा- जो हिंसक पशुओं और सर्पोंसे भरे हुए दुर्गम वनमें जाकर वहाँ पीने योग्य मधु पाकर भी उसे पीता नहीं है, वह पुरुष मूर्ख ही है।

महाराज। आप तो स्वयं ही ईश्वर हैं। आप का ईश्वर कौन है ? आप शुत्रओंके सिरपर पैर रखकर विदेहकुमारी सीताके साथ रमण कीजिये। आप कुक्कुटोंके बर्तावको अपनाकर सीताके साथ बलात्कार कीजिये। बारंबार आक्रमण करके उनके साथ रमण एवं उपभोग कीजिये। जब आपका मनोरथ सफल हो जायगा, तब फिर आपपर कौन-सा भय आयेगा ? यदि वर्तमान एवं भविष्यकालमें कोई भय आा भी तो उस समस्त भका यथोचित प्रतीकार किया जायगा।

हमलोगोंके साथ यदि महाबली कुम्भकर्ण और इन्द्रजित् खड़े हो जायँ तो ये दोनों वज्रधारी इन्द्रको भी आगे बढ़नेसे रोक सकते हैं।

मैं तो नीतिनिपुण पुरुषोंके द्वारा प्रयुक्त साम, दान और भेदको छोड़कर केवल दण्डके द्वारा काम बना लेना ही अच्छा समझता हूँ।

महाबली राक्षसराज। यहाँ आपके जो भी शत्रु आयेंगे, उन्हें हमलोग अपने शस्त्रोंके प्रतापसे वशमें कर लेंगे, इसमें संशय नहीं है।

महापार्श्वके ऐसा कहनेपर उस समय लमाके राजा रावणने उसके वचनोंकी प्रशंसा करते हुए इस प्रकार कहा- एक बार मैंने आकाशमें अग्नि-शिखाके समान प्रकाशित होती हुई पुञ्जिकास्थला नामकी अप्सराको देखा, जो पितामह ब्रह्माजीके भवनकी ओर जा रही थी। वह अप्सरा मेरे भयसे लुकती-छिपती आगे बढ़ रही थी। मैंने बलपूर्वक उसके वस्त्र उतार दिये और हठात् उसका उपभोग किया। इसके बाद वह ब्रह्माजीके भवनमें गयी। उसकी दशा हाथीद्वारा मसलकर फेंकी हुई कमलिनीके सम्मान हो रही थी।

मैं समझता हूँ कि मेरेद्वारा उसकी जो दुर्दशा की गयी थी, वह पितामह ब्रह्माजीको ज्ञात हो गयी। इससे वे अत्यन्त कुपित हो उठे और मुझसे इस प्रकार बोले- आजसे यदि तू किसी दूसरी नारीके साथ बलपूर्वक समागम करेगा तो तेरे मस्तकके सौ टुकड़े हो जायँगे, इसमें संशय नहीं है। इस तरह मैं ब्रह्माजीके शापसे भयभीत हूँ। इसीलिये अपनी शुभ-शय्यापर विदेहकुमारी सीताको हठात् एवं बलपूर्वक नहीं चढ़ाता हूँ। मेरा वेग समुद्रके समान है और मेरी गति वायुके तुल्य है। इस बातको दशरथनन्दन राम नहीं जानते हैं, इसीसे वे मुझपर चढ़ाई करते हैं। अन्यथा पर्वतकी कन्दरामें सुखपूर्वक सोये हुए सिंहके समान तथा कुपित होकर बैठी हुई मृत्युके तुल्य भयंकर मुझ रावणको कौन जगाना चाहेगा ?

मैं अपने धनुषसे शीघ्रतापूर्वक छूटे हुए सैकड़ों वज्रसमान बाणोंद्वारा रामको उसी प्रकार जला डालूँगा, जैसे लोग उल्काओंद्वारा हाथीको उसे भगानेके लिये जलाते हैं। युद्धमें तो हजार नेत्रोंवाले इन्द्र और वरुण भी मेरा सामना नहीं कर सकते। पूर्वकालमें कुबेरके द्वारा पालित हुई इस लमापुरीको मैंने अपने बाहुबलसे ही जीता था।

विभीषण को लगा, महापार्श्व के शब्द सुनकर उनका संपूर्ण अस्तित्व ही जैसे जल उठा हो। यह राजसभा अब उनके लिए असह्य हो उठी थी। रावण का भय उनके मन में से जैसे निकल गया।

अग्नि के-से तपते शब्द उनके मुख से अनायास ही बहते चले गए, कैसी राजसभा है, जहाँ मंत्री अपने राजा को पर-स्त्रियों के साथ बलात्कार करने की मंत्रणा देते हैं। उचित-अनुचित का ध्यान तुम्हें नहीं है तो अपना स्वार्थ तो पहचानो। राम ने इन्हीं वानरों की छोटी-सी सेना से तुम्हारा जनस्थान का स्कंधावार ध्वस्त किया था। उसकी पत्नी का हरण हुआ तो वह सारे विश्व के वानरों को सैनिक रूप देकर, तुम्हारी लंका के द्वार खटखटा रहा है। उसकी पत्नी के साथ बलात्कार हुआ तो वह तुम लोगों को क्षमा कर देगा क्या ? विभीषण उग्र से उग्रतर होते जा रहे थे, लंका का एक-एक परिवार नष्ट हो जाएगा। तुम्हें वानरों की सुंदरी स्त्रियों का प्रलोभन दिया जा रहा है; किंतु तुम्हें अपनी स्त्रियों का ध्यान नहीं है। कभी सोचा है कि प्रतिशोध की भावना से भरी वानर सेना, तुम्हारी स्त्रियों के साथ कैसा व्यवहार करेगी ?

राजकुमार विभीषण भय के मारे आत्मविश्वास खो चुके हैं। प्रहस्त हँसकर बोला, ये राम की सेना से डर गए हैं; किंतु हम किसी से नहीं डरते। हमारी सेनाओं ने देवों, यक्षों, गंधर्वों, नागों, दैत्यों, दानवों, असुरों-सभी को परास्त किया है, ये बेचारे तो साधारण वानर हैं।

विभीषण का तेज कुछ और भी उग्र हो उठा, सेनापति प्रहस्त। भयभीत होने की बात अभी रहने दो। युद्ध-विद्या और सेना के बलाबल का कुछ ज्ञान मुझे भी है। मैं कह रहा हूँ कि एक तो महाराजाधिराज रावण स्वयं ही वाणी और दण्ड की कठोरता, धन के अपव्यय, मदिरापान, स्त्री, मृगया और द्यूत जैसे व्यसनों के वशीभूत हैं और उसके कारण नीति-अनीति का संतुलन उनके हाथ से छूट जाता है-ऊपर से राक्षसों के सत्यानाश के लिए तुम-जैसे शत्रु-तुल्य मित्र उनकी सेवा में उपस्थित रहते हैं। तुम लोगों से यह तो होता नहीं कि राजा को न्यायोचित परामर्श दो। उलटे राजा की कृपा-प्राप्ति के लिए चाटुकारिता कर उनके दुर्गुणों को बढ़ावा देते हो। धिक्कार है तुम जैसे स्वार्थी, लोभी तथा चाटुकार मंत्रियों पर।

सहसा विभीषण की दृष्टि रावण पर जा पड़ी। लगा कि रावण की अप्रसन्नता उस सीमा तक जा पहुँची है, जहाँ वह इस द्वंद्व में होता है कि मुख से कठोर शब्द निकाले अथवा कोष से खड्ग। विभीषण चुप हो गए।

रावण अन्त:पुरसे भवनके निजी मन्त्रण कक्षमें आ गया। मेघनाद तथा दूसरे मन्त्रियोंको उसने बुलवा लिया। विभीषण अग्रजके हित की चिन्तासे व्यस्त स्वयं दशग्रीवसे उसके सदनमें मिलना चाहते थे। उन्हें देखते ही दशग्रीवके मनमें आया- कितना सरल, निश्च्छल है। इसे अब राक्षसोंके मध्य नहीं रहना चाहिये।

आप जानते हैं कि मुझे साम नीति प्रिय है। अत: आप मेरी धृष्टता क्षमा करें। यद्यपि विभीषणकी रावणने उपेक्षा की थी, उन्हें सदाकी भाँति आसनपर बैठनेका संकेत नहीं किया था; किन्तु इस ओर ध्यान देकर हाथ जोड़कर विभीषण स्वयं कहने लगे- आप विद्वान हैं, अलक्ष्यके इंगितको अच्छी प्रकार जानते हैं। मोह या लोभवश आपको मेरी बात न रुचे तो मेरा अभाग्य। सबके लिए अनिष्टका समय आ गया है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि सीता रामको लौटा दें।

राक्षसराज रावणके इन वचनों और कुम्भकर्णकी गर्जनाओंको सुनकर विभीषणने रावणसे ये सार्थक और हितकारी वचन कहे- राजन्। सीता नामधारी विशालकाय महान् सर्पको किसने आपके गलेमें बाँध दिया है ? उसके हृदयका भाग ही उस सर्पका शरीर है, चिन्ता ही विष है, सुन्दर मुस्कान ही तीखी दाढ़ हैं और प्रत्येक हाथकी पाँच-पाँच अङ्गुलियाँ ही इस सर्पके पाँच सिर हैं।

जबतक पर्वत-शिखरके समान ऊँचे वानर, जिनके दाँत और नख ही आयुध हैं, लमापर चढ़ाई नहीं करते, तभीतक आप दशरथनन्दन श्रीरामके हाथमें मिथिलेशकुमारी सीताको सौंप दीजिये।

राजन्। ये कुम्भकर्ण, इन्द्रजित, महापार्श्व, महोदर, निकुम्भ, कुम्भ और अतिकाय कोई भी समराङ्गणमें श्रीरघुनाथके सामने नहीं ठहर सकते हैं। यदि सूर्य या वायु आपकी रक्षा करें, इन्द्र या यम आपको गोदमें छिपा लें अथवा आप आकाश या पातालमें घुस जायँ तो भी श्रीरामके हाथसे जीवित नहीं बच सकेंगे। विभीषणकी यह बात सुनकर प्रहस्तने कहा- हम देवताओं अथवा दानवोंसे कभी नहीं डरते। भय क्या वस्तु है ? यह हम जानते ही नहीं है।

हमें युद्धमें यक्षों, गन्धर्वों, बड़े-बड़े नागों, पक्षियों और सर्पोंसे भी भय नहीं होता है; फिर समराङ्गणमें राजकुमार रामसे हमें कभी भी कैसे भय होगा ? प्रहस्त। महाराज रावण, महोदर, तुम और कुम्भकर्ण श्रीरामके प्रति जो कुछ कह रहे हो, वह सब तुम्हारे किये नहीं हो सकता। ठीक उसी तरह, जैसे पापात्मा पुरुषकी स्वर्गमें पहुँच नहीं हो सकती है। प्रहस्त। श्रीराम अर्थविशारद हैं-समस्त कार्योंके साधनमें कुशल हैं। जैसे बिना जहाज या नौकाके कोई महासागरको पार नहीं कर सकता, उसी प्रकार मुझसे, तुमसे अथवा समस्त राक्षसोंसे भी श्रीरामका वध होना कैसे सम्भव है ?

श्रीराम धर्मको ही प्रधान वस्तु मानते हैं। उनका प्रादुर्भाव इक्ष्वाकुकुलमें हुआ है। वे सभी कार्योंके सम्पादनमें समर्थ और महारथी वीर हैं (उन्होंने विराध, कबन्ध और बाली-जैसे वीरोंको बात-की-बातमें यमलोक भेज दिया था।) ऐसे प्रसिद्ध पराक्रमी राजा श्रीरामसे सामना पड़नेपर तो देवता भी अपना अहंकार भूल जायँगे (फिर हमारी-तुम्हारी तो बात ही क्या है ?)

प्रहस्त। श्रीरामके बाण वज्रके समान वेगशाली होते हैं। वे प्राणोंका अन्त करके ही छोड़ते हैं। श्रीरघुनाथके धनुषसे छूटे हुए वे तीखे बाण तुम्हारे शरीरको फोड़कर अंदर नहीं घुसे हैं; इसीलिये तुम इतनी शेखी बघारते हो।

रावण, महाबली त्रिशिरा, कुम्भकर्णकुमार निकुम्भ और इन्द्रविजयी मेघनाद भी समराङ्गणमें इन्द्रतुल्य तेजस्वी दशरथनन्दन श्रीरामको वेग सहन करनेमें समर्थ नहीं हैं।

देवान्तक, नरान्तक, अतिकाय, महाकाय अतिरथ तथा पर्वतके समान शक्तिशाली अकम्पन भी युद्धभूमिमें श्रीरघुनाथके सामने नहीं ठहर सकते हैं। ये महाराज रावण तो व्यसनोंके (वाणी और दण्डकी कठोरता, धनका अपव्यय, मद्यपान, स्त्री, मृगया और द्यूत ये राजाके सात प्रकारके व्यसन हैं) वशीभूत हैं, इसलिये सोच-विचारकर काम नहीं करते हैं। इसके सिवा ये स्वभावसे ही कठोर हैं तथा राक्षसोंके सत्यानाशके लिये तुम-जैसे शत्रुतुल्य मित्रकी सेवामें उपस्थित रहते हैं।

मैं तो राक्षसोंसहित इस सारे नगरके और सुहृदोंसहित स्वयं महाराजके हितके लिये अपनी यही उत्तम सम्मति देता हूँ कि ये राजकुमार श्रीरामके हाथोंमें मिथिलेशकुमारी सीताको सौंप दें।

वास्तवमें सच्चा मन्त्री वही है जो अपने और शत्रु-पक्षके बल-पराक्रमको समझकर तथा दोनों पक्षोंकी स्थिति, हानि और वृद्धिका अपने बुद्धिके द्वारा विचार करके जो स्वामीके लिये हितकर और उचित हो वही बात कहे।

विभीषण तो पवित्र आचार-विचार वाला महापुरुष था। मानो वह सद्गुण रूपी गंगा का जल था। जैसे कौओं की सभा में कोई धैर्यशील राजहंस ही बैठा हो। वह परमार्थ रूपी वृक्ष का पुष्प, सत्य और न्याय का सागर, भक्ति ज्ञान और वैराग्य का समुद्र तथा विवेकवान कहाता था। इस प्रकार जो विचक्षण था, उस विभीषण ने असुरों की उक्तियों को सुना, तो फिर मन में क्रोध धारण करके वह सभा में बोला।

हे मन्त्रियो, राजा को नीति-नियम से वश में रखते हैं, जैसे एक अंकुश हाथी को वश में रखता है, अथवा मन्त्र नाग को, ज्ञान चतुर व्यक्ति को और विवेक ज्ञानी को वश करके रखता है; लज्जा स्त्री को, गुरु साधक को, तट-मर्यादा समुद्र को उचित मार्ग पर रखती है। इस प्रकार मन्त्री प्रमाद रहित होकर राजा को नित्य नियम से वश में रखते हैं। यह निश्चय है कि अब तेरा राज्य नहीं रहेगा। जैसे भेड़िये के पास कुत्ते इकट्ठा होते हैं, वैसे तुझे समस्त दुष्ट साथी मिले हैं।

विभीषण ठीक कहते हैं। रावणके नाना सुमालीके ज्येष्ठभ्राता माल्यवन्तने कहा- मुझे भी यही उचित लगता है कि एक नारीके लिए सबका विनाश बुलाना अच्छा नहीं।

ये दोनों दुर्मुख मुझे भयभीत करना चाहते हैं। इन्हें किसने बुलाया ? रावण क्रुद्ध हो उठा- मुझे किसीका भय नहीं है। देवताओंको लेकर इन्द्रभी रामकी सहायता करने आता हो तो आ जाये। हमारा वे सब कुछ बिगाड़ नहीं सकते।

तेरी मति भ्रष्ट हो गयी है। हमने समझा था कि तुझ दौहित्रके आश्रयसे हमें पृथ्वीपर रहना सुलभ होगा; किन्तु तू अपने विनाशपर उतर आया है। वयोवृद्ध दैत्य श्रेष्ठ माल्यवन्त उठे और जाते-जाते कहते गये- हमने इसी प्रकार अनेक बार वरदर्पित दैत्य-दानवोंका विनाश देखा है हमको फिर पातालमें ही जाना पड़ेगा। सब उद्यत हो जाओ। सेनाको सन्नद्ध कर दो। सब योधा सजग रहें। रामको समुद्रपार करते समय ही नष्ट कर दो; रावणने आज्ञा दे दी।

मन्त्रियोंको एक बार फिर जाना पड़ा। दशग्रीव फिर राजसभामें आ गया। अब सेनाको सावधान करके प्रधान शूर तथा मन्त्री आकर नाम लेकर राक्षसेश्वरको प्रणाम करके अपने निर्दिष्ट स्थानपर बैठने लगे। सभी मन्त्री, प्रधान योद्धा आ गये। पता लग गया कि कुम्भकर्ण सो चुका है। सबके बैठ जानेपर दशग्रीवने प्रधानमन्त्री प्रहस्तकी ओर देखा- मातुल। तुम क्या ठीक समझते हो ?

राक्षसेश्वर मन उदास मत करें। प्रहस्त पुराना घाघ था। अपने इस प्रचण्ड भागिनेयका रुख समझकर इसे प्रसन्न रखते हुए ही प्रधानमन्त्री बन सका था। बोला- शत्रुपर आक्रमण करें। अवश्य हम विजयी होंगे।

आप सब कृतविद्य हैं। आपकी सम्मतिसे किये गये कार्य सदा सफल हुए हैं। एक कपिने आकर लमाका अपमान किया है, अत:

सीताको देनेका प्रश्न ही नहीं उठता। दशग्रीवने सबकी ओर देखा- हमें दशरथके पुत्रोंको मारना है, यह मानकर उचित सम्मति दें।

मैं आपसे पुन: प्रार्थना करता हूँ। विभीषण हाथ जोड़कर अत्यन्त विनम्र होकर बोले- सीता इस पुरीके लिए सर्पिणी सिद्ध हो चुकी है। उसे लौटा दीजिये। ये आपके सम्मुख बड़ी ड़ींगे हाँकनेवाले कोई रामके संग्राममें खड़े नहीं होंगे। रामके क्रुद्ध होनेपर त्रिभुवनमें भागकर भी बचना सम्भव नहीं होगा।

आप हमारा अपमान कर रहे हें। हमें भयभीत क्यों करते हैं ? प्रहस्त क्रोधपूर्वक बोला- हम मानवोंसे डरते नहीं। वे हमारे आहार हैं।

आपके समीप भोगोंका अभाव तो नहीं है। विभीषणने प्रहस्तकी उपेक्षा कर दी। वे सीधे रावणने बोले- ये मित्र रूपी शत्रु आपको घेरे हैं। ये इतना भी नहीं समझते कि इस महान अनर्थसे स्वामीको बचाना चाहिये।

विभीषण के मौन होते ही मेघनाथ उठ खड़ा हुआ। उसने विभीषण से कुछ नहीं कहा। वह सीधे रावण से संबोधित हुआ, महाराजाधिराज। मेरा विचार है कि युद्ध की बात इस प्रकार खुली राजसभा में नहीं होनी चाहिए। उससे अनेक लोग डर जाते हैं और अनर्गल प्रलाप करने लगते हैं। उसने मुड़कर एक दृष्टि विभीषण पर डाली और बोला, राजन्। मेरे छोटे चाचा राजकुमार विभीषण आसन्न युद्ध से भयभीत होकर अपना मानसिक संतुलन खो बैठे हैं। मेरा अनुरोध है कि अपने कुल में उनका जन्म होने पर भी उन्हें युद्ध के अयोग्य तथा भीरु मानकर, युद्ध-संबंधी कोई कार्य न सौंपा जाए।

मेघनाथ की मुसकान, विभीषण के वक्ष को ऊपर से नीचे तक चीर गई। ओह। कितना विषैला है यह मेघनाथ। इंद्र को पराजित कर, कैसा उद्दण्ड हो गया है।

तुम उद्दण्ड और अविनयी हो, मेघनाथ। विभीषण क्रुद्ध स्वर में बोले, नीति का पक्ष लेकर यदि तुमने अपने पिता के अनैतिक कार्यों का विरोध किया होता तो मैं समझता कि तुम विवेकी पुरुष हो और अपने पिता का हित चाहते हो। किंतु तुम अपने पिता को विनाश की ओर धकेलने में सहायक हो रहे हो। तुम पुत्र होकर भी अपने पिता और वंश के विनाश का कारण बन रहे हो- तुम मोह तथा स्वार्थवश पिता की हाँ में हाँ मिलाकर, ऊपर से मित्र दिखते हुए भी, महाराजाधिराज रावण से शत्रुता कर रहे हो।

मेघनाथ ने कहा- ये छोटे चाचा सदाके स्त्रियों जैसे डरपोक हैं; इनमें सत्व, धैर्य, पराक्रम, तेज, वीर्य कुछ नहीं है। इस बार इन्द्रजितने उठकर आक्षेप किया- ये सदा छोटी बातें करते हैं। इन्द्र भी मुझसे डरते हैं। मैंने ऐरावतके दाँत पकड़कर उखाड़ लिये, यहाँ केवल आप हैं जो मेरे पूज्य हैं और मैं आपका अनुशासन मानता हूँ।

मेघनाथ बोले, वे दोनों मानव राजकुमार क्या हैं ? उन्हें तो हमारा एक साधारण-सा राक्षस भी मार सकता है; फिर मेरे डरपोक चाचा। आप हमें क्यों डरा रहे हैं ?

मैंने तीनों लोकोंके स्वामी देवराज इन्द्रको भी स्वर्गसे हटाकर इस भूतलपर ला बिठाया था। उस समय सारे देवताओंने भयभीत हो भागकर सम्पूर्ण दिशाओंकी शरण ली थी।

जो देवताओंके भी दर्पका दलन कर सकता है, बड़े-बड़े दैत्योंको भी शोकमग्न कर देनेवाला है तथा जो उत्तम बलपराक्रमसे सम्पन्न है, वही मुझ-जैसा वीर मनुष्य जातिके दो साधारण राजकुमारोंका सामना कैसे नहीं कर सकता है ?

मेघनाथ। तुम अभी बालक हो। सम्मति देने योग्य परिपक्व बुद्धि तुम्हारी नहीं हुई। तुम पिताको अनुपयुक्त सम्मति दे रहे हो। विभीषणने मेघनाथको डाँट दिया। रावणसे बोले- मैं आपका अनुज हूँ। आपसे याचना करता हूँ। अत: राजन। हमलोग धन, रत्न, सुन्दर आभूषण, दिव्य वस्त्र, विचित्र मणि और देवी सीताको श्रीरामकी सेवामें समर्पित करके ही शोकरहित होकर इस नगरमें निवास कर सकते हैं। तुम्हारी बुद्धि कच्ची है। तुम्हारे मनमें कर्तव्य और अकर्तव्यका यथार्थ निश्चय नहीं हुआ है। इसीलिये तुम भी अपने ही विनाशके लिये बहुत-सी निरर्थक बातें बक रहे हो।

इन्द्रजित्। तुम रावणके पुत्र कहलाकर भी ऊपरसे ही उसके मित्र हो। भीतरसे तो तुम पिताके शत्रु ही जान पड़ते हो। यही कारण है कि तुम श्रीरघुनाथके द्वारा राक्षसराजके विनाशकी बातें सुनकर भी मोहवश उन्हींकी हाँ-में-हाँ मिला रहे हो।

तुम्हारी बुद्धि बहुत ही खोटी है। तुम स्वयं तो मार डालनेके योग्य हो ही, जो तुम्हें यहाँ बुला लाया है, वह भी वधके ही योग्य है। जिसने आज तुम-जैसे अत्यन्त दु:साहसी बालकको इन सलाहकारोंके समीप आने दिया है, वह प्राणदण्ड का ही अपराधी है।

इन्द्रजित्। तुम अविवेकी हो। तुम्हारी बुद्धि परिपक्व नहीं है। विनय तो तुम्हें छूतक नहीं गयी है। तुम्हारा स्वभाव बड़ा तीखा और बुद्धि

बहुत थोड़ी है। तुम अत्यन्त दुर्बुद्धि, दुरात्मा और मूर्ख हो। इसीलिये बालकोंकी-सी बे सिर-पैरकी बातें करते हो।

भगवान् श्रीरामके द्वारा युद्धके मुहानेपर शत्रुओंके समक्ष छोड़े गये तेजस्वी बाण साक्षात् ब्रह्मण्डके समान प्रकाशित होते हैं, कालके समान जान पड़ते हैं और यमदण्डके समान भयंकर होते हैं। भला, उन्हें कौन सह सकता है ?

विभीषण शायद अभी कुछ और भी कहते किंतु तब तक रावण की आँखें क्रोध से तप्त अंगारों के समान दहक उठीं। अपने प्रति कहे गए शब्द उसने फिर भी सहन कर लिये थे, किंतु पुत्र के प्रति इस प्रकार की ताड़ना ने उसकी सहनशीलता समाप्त कर दी थी, बस। बहुत हो चुका, विभीषण। शत्रु अथवा कुपित विषधर के साथ रहना पड़े तो व्यक्ति रह ले, किंतु उस भाई के साथ कदापि न रहे, जो मित्र कहलाकर भी शत्रु की सेवा कर रहा हो। और सहसा रावण के धैर्य का भी बाँध टूटा, मेरा अभ्युदय, सुख और विलास तुमने नहीं देखा जाता, विभीषण। कुटुंबीजन ऐसे ही होते हैं। तुम्हें आज तक मैंने व्यर्थ अपना भाई मानकर तुम्हारे सुख, सम्मान और रक्षा के लिए स्वयं को चिंतित किया। तुमसे स्नेह की आशा व्यर्थ है। मैं बहुत दिनों से तुम्हारे मन में पलते विष का आभास पा रहा हूँ; किंतु उदारतावश क्षमा करता आया हूँ। तुमने जो कुछ कहा है, यदि किसी और ने कहा होता तो उसका मुँड धरती पर लोट रहा होता। तुम्हें आज मैंने फिर क्षमा किया।

रावणके सिरपर काल मँडरा रहा था, इसलिये उसने सुन्दर अर्थसे युक्त और हितकर बात कहनेपर भी विभीषणसे कठोर वाणीमें कहा-

निशाचर। जो ज्येष्ठ होनेके कारण राज्य पाकर सबमें प्रधान हो गया हो, राज्यकार्यको अच्छी तरह चला रहा हो और विद्वान, धर्मशील तथा शूरवीर हो, उसे भी कुटुम्बीजन अपमानित करते हैं और अवसर पाकर उसे नीचा दिखानेकी भी चेष्टा करते हैं।

जातिवाले सदा एक दूसरेपर संकट आनेपर हर्षका अनुभव करते हैं। वे बड़े बाततायी होते हैं- मौका पड़नेपर आग लगाने, जहर देने, शस्त्र चलाने, धन हड़पने और क्षेत्र तथा स्त्रीका अपहरण करनेमें भी नहीं हिचकते हैं। अपना मनोभाव छिपाये रहते हैं; अतएव क्रूर और भयंकर होते हैं।

हमें अग्नि, दूसरे-दूसरे शस्त्र तथा पाश भय नहीं दे सकते। हमारे लिये तो अपने स्वार्थी जाति-भाई ही भयानक और खतरेकी वस्तु हैं। ये ही हमारे पकड़े जानेका उपाय बता देंगे, इसमें संशय नहीं; अत: सम्पूर्ण भयोंकी अपेक्षा हमें अपने जातिभाईयोंसे प्राप्त होनेवाला भय ही अधिक कष्टदायक जान पड़ता है। जैसे गौओंमें हव्य-कव्यकी सम्पत्ति दूध होता है, स्त्रियोंमें चपलता होती है और ब्राह्मणमें तपस्या रहा करती है, उसी प्रकार जाति-भाइयोंसे भय अवश्य प्राप्त होता है।

अत: सौम्य। आज जो सारा संसार मेरा सम्मान करता है और मैं जो ऐश्वर्यवान, कुलीन और शत्रुओंके सिरपर स्थित हैं; यह सब तुहें अभीष्ट नहीं है। जैसे कमलके पत्तेपर गिरी हुई पानीकी बूँदें उसमें सटती नहीं हैं, उसी प्रकार अनार्योंके हृदयमें सौहार्द नहीं टिकता है। जैसे शरद-ऋतुमें गर्जते और बरसते हुए मेघोके जलसे धरती गीली नहीं होती है, उसी प्रकार अनायोंके हृदमें स्नेहजनित आर्द्रता नहीं होती है। जैसे भ्रमर रसकी इच्छासे काशके फूलका पान करे तो उसमें रस नहीं पा सकता, उसी प्रकार अनार्योंमें जो स्नेह होता है, वह किसीके लिये लाभदायक नहीं होता।

जैसे हाथी पहले स्नान करके फिर सूँड़से धूल उछालकर अपने शरीरको गँदा कर लेता है, उसी प्रकार दुर्जनोंकी मैत्री दूषित होती है।

अर्थात् त्रिलोकजयी रावण एक अनाश्रित वनवासी तापससे भीत होकर उसे अर्थदण्ड देकर सन्धि करे ? क्रोधसे काँपता चीत्कार करता दशग्रीव सिंहासनसे उठकर खड़ा हो गया। भयके मारे सब सभासद उठ खड़े हुए। विभीषणकी ओर पूरा हाथ फैलाकर आग्नेय नेत्रोंसे देखता बोला- यह घरका सर्प है। यह घरवाला होकर घर ही को अपमानित कर रहा है। यह इस राज सिंहासन और छत्र की आबरू को मिट्टी में मिला रहा है। यह कुलद्रोही है, कायर कुबुद्धि है, जा ओझल हो जा मेरी आँखों से और उन तपस्वी बच्चोंमें जाकर मिल और उनको यह नीति सुनाना। क्या काम है उसका यहाँ पर जिसने बैरी से प्यार किया। यह कहकर रावणने भाई विभीषण पर चरण प्रहार किया। रावणने विभीषणके वक्षपर पाद-प्रहार किया।

जाओ, चले जाओ और यथाशीघ्र लंका से बाहर निकल जाओ। लंका में तुम जीवित नहीं रह पाओगे। उसने रुककर विभीषण को देखा, जाने से पहले लंकेश्वर का प्रसाद लेते जाओ। यहाँ आओ।

यंत्रवत् विभीषण, रावण के निकट आकर खड़े हो गए।

जिसका पक्ष लेते तुम नहीं थकते, रावण बोला, जिसे तुम अपना प्रिय मानते हो, उस राम ने मेरी बहन शूर्पणखा को दण्डस्वरूप खड्ग से चिह्नित किया था। मैं तुम्हें खड्ग के योग्य नहीं मानता। तुम इसके योग्य हो।

और इससे पूर्व कि कोई समझ पाता कि रावण के मन में क्या है, उसने सिंहासन से उठकर विभीषण को लात से प्रहार किया।

विभीषण स्तब्ध खड़े रह गए।

जो कुछ हुआ था, वह अप्रत्याशित ही नहीं, कल्पनातीत था। ऐसी स्थिति में विभीषण क्या करें ? रावण से उनके संबंध बिगड़ते जा रहे थे- यह वे देख रहे थे। वे दोनों परस्पर-विरोधी पक्षों से सज्जित हो रहे हैं, यह भी वे जान रहे थे। अपने भाई का विरोध उन्हें करना होगा; संभवत: किसी समय अपने भाई को छोड़ना भी पड़ेगा- यह भी कहीं-न-कहीं उनके मन में था। किंतु उनके कल्याणकारी आग्रह पर भरी सभा में रावण उन पर पाद-प्रहार करेगा- यह उन्होंने नहीं सोचा था। इतना ही नहीं, उसने उन्हें लंका छोड़कर चले जाने के लिए कहा था। न भी कहा होता, तो भी इतने अपमानित होकर लंका में रहना विभीषण के लिए सम्भव नहीं था।

विष और अमृत दोनों भी पदार्थ समुद्र से निकले है। पर एक में तत्व मरण के हैं दूसरे में जीवन देने की है। होनी जब सर पर आती है तो मति अन्धी हो जाती है। विभीषण ने कहा तुम भटको कंकड़ों में, मैं तो चला मोती पाने। लंका तुम्हें मुबारक हो मैं तो श्रीराम चरणों में चला। जिन चरणों का शिव-सनकादिक सुर, मुनि ध्यान लगाते हैं, जिन चरणों की लीला महिमा, नारद-शारद नित गाते हैं, जिन चरणों के सेवन से कली का नाश करनेवाली गंगा की धारा निकली है, जिन चरणों ने गौतम की नारि अहिल्या को निस्तारा है, जिन चरणों को अंजनीलाल सदा आदर से देखा करते है, जिन चरणों की पादुका का भरत श्रद्धा से पूजा करते है अब वह शुभ घड़ी आ गई हैं उन चरणों को अब मैं निरखूँगा।

सचमुच विभीषण का ध्यान उधर नहीं गया था- विभीषण के चले जाने के पश्चात् लंका में रावण को रोकने या बाँधने वाला कोई नहीं रह जाएगा। लंका की प्रजा रावण की दया पर होगी। रावण सेनाओं पर सेनाएँ तैयार करेगा और युद्ध करेगा। लंका की यह समस्त प्रजा उसके अहंकार की अग्नि को प्रदीप्त रखने के लिए ईंधन मात्र बन जाएगी। और फिर इस समय सागर तट पर राम की सेना पड़ी है। युद्ध तो होना ही है कुछ को रावण मारेगा, कुछ को राम की सेना मार डालेगी। रावण की विजय हुई तो लंका में और भी अत्याचारी, उच्छृंखल शासन स्थापित होगा और प्रजा उसकी हवि बनेगी; राम की विजय हुई तो लंका पराधीन हो जाएगी, या तो सुग्रीव का शासन होगा या राम का। विदेशी शासन...

विभीषण न्यायानुकूल बातें कह रहे थे तो भी रावणने जब उनसे ऐसे कठोर वचन कहे, तब वे हाथमें गदा लेकर अन्य चार राक्षसोंके साथ उसी समय उछलकर आकाशमें चले गये।

उस समय अन्तरिक्षमें खड़े हुए तेजस्वी भ्राता विभीषण-ने कुपित होकर राक्षसराज रावणसे कहा-

राजन्। तुम्हारी बुद्धि भ्रममें पड़ी हुई है। तुम धर्मके मार्गपर नहीं हो। यों तो मेरे बड़े भाई होनेके कारण तुम पिताके समान आदरणीय हो। इसलिये मुझे जो-जो चाहो, कह लो; परंतु अग्रज होनेपर भी तुम्हारे इस कठोर वचनको कदापि नहीं सह सकता।

दशानन। जो अजितेन्द्रिय पुरुष कालके वशीभूत हो जाते हैं, वे हितकी कामनासे कहे हुए सुन्दर नीतियुक्त वचनोंको भी नहीं ग्रहण करते हैं। राजन्। सदा प्रिय लगनेवाली मीठी-मीठी बातें कहनेवाले लोग तो सुगमतासे मिल सकते हैं; परंतु जो सुननेमें अप्रिय किंतु परिणाममें हितकर हो, ऐसी बात कहने और सुननेवाले दुर्लभ होते हैं।

तुम समस्त प्राणियोंका संहार करनेवाले कालके पाशमें बँध चुके हो। जिसमें आग लग गयी हो, उस घरकी भाँति नष्ट हो रहे हो। ऐसी दशामें मैं तुम्हारी उपेक्षा नहीं कर सकता था, इसीलिये तुम्हें हितकी बात सुझा दी थी।

जो मनुष्य अपना कल्याण, सुन्दर यश, सुबुद्धि, शुभ गति और नाना प्रकारके सुख चाहता हो, वह हे स्वामी। परस्त्रीके ललाटको चौथके चन्द्रमाकी तरह त्याग दे अर्थात् जैसे लोग चौथके चन्द्रमाको नहीं देखते, उसी प्रकार परस्त्रीका मुख ही न देखे।

चौदहों भुवनोंका एक ही स्वामी हो, वह भी जीवोंसे वैर करके ठहर नहीं सकता नष्ट हो जाता है। जो मनुष्य गुणोंका समुद्र और चतुर हो, उसे चाहे थोड़ा भी लोभ क्यों न हो, तो भी कोई भला नहीं कहता।

हे नाथ। काम, क्रोध, मद और लोभ- ये सब नरकके रास्ते हैं। इन सबको छोड़कर श्रीरामको भजिये, जिन्हें संत सत्पुरुष भजते हैं।

हे तात। राम मनुष्योंके ही राजा नहीं हैं। वे समस्त लोकोंके स्वामी और कालके भी काल हैं। वे सम्पूर्ण ऐश्वर्य, यश, श्री, धर्म, वैराग्य एवं ज्ञानके भण्डार भगवान हैं; वे निरामय विकाररहित, अजन्मा, व्यापक, अजेय, अनादि और अनन्त ब्रह्म हैं।

उन कृपाके समुद्र भगवान्ने पृथ्वी, ब्राह्मण, गौ और देवताओंका हित करनेके लिये ही मनुष्य-शरीर धारण किया है। हे भाई। सुनिये,

वे सेवकोंको आनन्द देनेवाले, दुष्टोंके समूहका नाश करनेवाले और वेद तथा धर्मकी रक्षा करनेवाले हैं।

वैर त्यागकर उन्हें मस्तक नवाइये। वे श्रीरघुनाथ शरणागत्का दु:ख नाश करनेवाले हैं। हे नाथ। उन प्रभु सर्वेश्वर को जानकी दे दीजिये और बिना ही कारण स्नेह करनेवाले श्रीरामको भजिये।

जिसे सम्पूर्ण जगत्से द्रोह करनेका पाप लगा है, शरण जानेपर प्रभु उसका भी त्याग नहीं करते। जिनका नाम तीनों तापोंका नाश करनेवाला है, वे ही प्रभु भगवान् मनुष्यरूपमें प्रकट हुए हैं। हे रावण। हृदयमें यह समझ लीजिये।

हे दशशीश। मैं बार-बार आपके चरणों पडता हूँ और विनती करता हूँ कि मान, मोह और मदको त्यागकर आप कोसलपति श्रीरामका भजन कीजिये।

मुनि पुलस्त्यजीने अपने शिष्यके हाथ यह बात कहला भेजी है। हे तात। सुन्दर अवसर पाकर मैंने तुरंत ही वह बात प्रभु आप से कह दी।

हे नाथ। पुराण और वेद ऐसा कहते हैं कि सुबुद्धि अच्छी बुद्धि और कुबुद्धि खोटी बुद्धि सबके हृदयमें रहती हैं, जहाँ सुबुद्धि है, वहाँ नाना प्रकारकी सम्पदाएँ सुखकी स्थिति रहती हैं और जहाँ कुबुद्धि है, वहाँ परिणाममें विपत्ति दु:ख रहती है।

आपके हृदयमें उलटी बुद्धि आ बसी है। इसीसे आप हितको अहित और शत्रुको मित्र मान रहे हैं। जो राक्षसकुलके लिये कालरात्रि के समान हैं, उन सीतापर आपकी बड़ी प्रीति है।

हे तात। मैं चरण पकड़कर आपसे भीख माँगता हूँ विनती करता हूँ कि आप मेरा दुलार रखिये मुझ बालकके आग्रहको स्नेहपूर्वक स्वीकार कीजिये। श्रीरामको सीता दे दीजिये, जिसमें आपका अहित न हो।

श्रीरामके सुवर्णभूषित बाण प्रज्वलित अग्निके समान तेजस्वी और तीखे हैं। मैं श्रीरामके द्वारा उन बाणोंसे तुम्हारी मृत्यु नहीं देखना चाहता था, इसीलिये तुम्हें समझानेकी चेष्टा की थी।

कालके वशीभूत होनेपर बड़े-बड़े शूर-वीर, बलवान् और अस्त्रवेत्ता भी बालूकी भीति या बाँधके समान नष्ट हो जाते हैं।

राक्षसराज। मैं तुम्हारा हित चाहता हूँ। इसीलिये जो कुछ भी कहा है, वह यदि तुम्हें अच्छा नहीं लगा तो उसके लिये मुझे क्षमा कर दो; क्योंकि तुम मेरे बड़े भाई हो। अब तुम अपनी तथा राक्षसोंसहित इस समस्त लमापुरीकी सब प्रकारसे रक्षा करो। तुम्हारा कल्याण हो। अब मैं यहाँसे चला जाऊँगा। तुम मेरे बिना सुखी हो जाओ।

निशाचराज। मैं तुम्हारा हितैषी हूँ। इसीलिये मैंने तुम्हें बार-बार अनुचित मार्गपर चलनेसे रोका है, किंतु तुम्हें मेरी बात अच्छी नहीं लगती है। वास्तवमें जिन लोगोंकी आयु समाप्त हो जाती है, वे जीवनके अन्तकालमें अपने सुहृदोंकी कही हुई हितकर बात भी नहीं मानते हैं। विभीषणने पण्डितों, पुराणों और वेदोंद्वारा सम्मत अनुमोदित वाणीसे नीति बखानकर कही।

शिवजी कहते हैं- हे उमा। संतकी यही बड़ाई महिमा है कि वे बुराई करनेपर भी बुराई करनेवालेकी भलाई ही करते हैं।

हे भवानी। साधुका अपमान तुरंत ही सम्पूर्ण कल्याणकी हानि नाश कर देता है। रावणने जिस क्षण विभीषणको त्यागा, उसी क्षण वह अभागा वैभव ऐश्वर्य से हीन हो गया। भवन, पत्नी, पुत्र, पुत्री, परिवार सब त्यागकर विभीषण लमासे गगन मार्गसे चल पड़े। जीव सबका मोह त्यागे बिना कहीं उन परमपुरुषके सम्मुख हो पाता है।

उसे जाने दो। प्रहस्तको अपनी ओर देखते दशाननने देखा तो कठोर स्वरमें आदेश दिया- उसका यहाँसे जाना अच्छा हुआ। वह मुझसे मिलकर नहीं रह सकता तो जाय; किन्तु वह दशग्रीवका अनुज है। दूसरा कोई उसका शत्रुपक्षमें खड़े होनेसे पूर्व अपमान करे अथवा उसके परिवारको उत्पीड़ित करे, यह दशानन सह नहीं सकेगा। सबको इसका ध्यान रखना चाहिये।

शुक-सारण। तुम दोनों छिपकर, वानर बनकर इसके पीछे जाओ। दशग्रीवने दूसरी आज्ञा दी- देखो कि यह वहाँ क्या करता है। शत्रुकी सेनाका, बल पराक्रमका पता लगाकर लौटो, तब हम निर्णय करेंगे कि हमें क्या करना है।

मन्त्री, वैद्य और गुरु ये तीन यदि अप्रसन्नताके भय या लाभकी आशासे, हितकी बात न कहकर प्रिय बोलते हैं ठकुरसुहाती कहने लगते हैं; तो क्रमश: राज्य, शरीर और धर्म इन तीनका शीघ्र ही नाश हो जाता है।

सभा भङ्ग करके दशग्रीव दर्पके साथ उठ गया। वह अब सब निर्णय स्वयं लेगा। उसके ये सब चाटुकार हैं यह वह भली प्रकार समझता है। उसे इनकी भीरुताका लाभ उठाना है इनके उद्धारमें।

दशग्रीव अपने अन्त:पुरमें पहुँचा तो मन्दोदरीने चरण पकड़ लिये- मेरे स्वामी। आप मुझपर कृपा करें। हे प्रियतम। श्रीहरिसे विरोध

छोड़ दीजिये। मेरे कहनेको अत्यन्त ही हितकर जानकर हृदयमें धारण कीजिये। जिनके दूतकी करनीका विचार करते ही स्मरण आते ही राक्षसोंकी स्त्रियोंके गर्भ गिर जाते हैं, हे प्यारे स्वामी। यदि भला चाहते हैं, तो अपने मन्त्रीको बुलाकर उसके साथ उनकी स्त्रीको भेज दीजिये। सीता आपके कुलरूपी कमलोंके वनको दुःख देनेवाली जाड़ेकी रात्रिके समान आयी है। हे नाथ। सुनिये, सीताको दिये लौटाये बिना शम्भु और ब्रह्माके किये भी आपका भला नहीं हो सकता।

श्रीरामके बाण सर्पोंके समूहके समान हैं और राक्षसोंके समूह मेढ़कके समान। जबतक वे इन्हें ग्रस नहीं लेते निगल नहीं जाते तबतक हठ छोड़कर उपाय कर लीजिये।

जिनका दूत इतना समर्थ है, उनके आनेपर राक्षस कुलका क्या होगा ? सीता कालरात्रि होकर लमामें आयी है। उसे शीघ्र विदा कर दें यहाँसे कि मेरा सौभाग्य सिन्दूर अम्लान रहे। महारानी मन्दोदरी अत्यंत उदास हो रो उठी और एकान्त में पति के चरणों के पास जाकर बोली- हे प्राणनाथ, हे प्रजानाथ, हे भूमण्डल के स्वामी मेरी आँखों में घोर प्रलय का रूप घूम रहा है। हनुमान जैसे वानर जिनके सहायक हो वे कैसे मारे जाएंगे। जिनको तुम बालक समझते हो वे ही बालक तुम्हें हरायेंगे। कुसमय में शत्रु से सन्धि करना ही उचित है। यह विद्वानों का राजाओं का कथन है। जो औरों को भी और स्वयं को भी ले डूबे वह मार्ग महा मुर्खोंका है। वह कार्य सदा ही अच्छा होता है जो मेल-मिलाप में किया जाता है। आगे तो वही होना हैं जो कुछ किस्मत में लिखा है। अपनी लंका बनी रहें, हमें क्या काम हैं झगड़ों से। यही हमारी जीत है, यही हमारी विजय है। तपस्वियों से सुलह करने में ही उत्तम है।

मूर्ख और जगत्प्रसिद्ध अभिमानी रावण कानोंसे उसकी वाणी सुनकर खूब हँसा और बोला- स्त्रियोंका स्वभाव सचमुच ही बहुत डरपोक होता है। मङ्गलमें भी भय करती हो। तुम्हारा मन हृदय बहुत ही कच्चा कमजोर है।

यदि वानरोंकी सेना आवेगी तो बेचारे राक्षस उसे खाकर अपना जीवननिर्वाह करेंगे। लोकपाल भी जिसके डरसे काँपते हैं, उसकी स्त्री डरती हो, यह बड़ी हँसीकी बात है। सचमुच स्त्रियाँ बहुत भीरु होती हैं। दशग्रीवने उठाकर पट्टमहिषीको हृदयसे लगाया- तुम व्यर्थ मत डरो। अभी तो मैं अपने शूरोंसे मन्त्रणा कर रहा हूँ।

रानी के वचन सुनकर वह सुरअरि रावण बोला- हे कम हिम्मत जात नारि। यह तेरे उपदेश रहने दे जो रण में डटकर हट जायें वह शूर नहीं वह तो कायर है। वह मर्द नहीं नामर्द है जो कहकर बात पलट जाएँ। गंगा का जल चाहें उल्टी तरफ से बहने लगे या पश्चिम से सूरज उदय हो जाय पर इस लंकापति की राय कभी नहीं बदल सकती। वह नाव सदा औघटघाट में फँसी रहती है जिसके खैवनहार नये सिखनेवाले हो। जिसने ओछें व्यक्तियों से सलाह ली उसके घरका तो सदा ही बारहबाट है। उस वानरवाले तपस्वी से क्या मेरी प्रभुताई कम है ? जानकी को मैं कदापि नहीं दूँगा जब तक मेरे दम में दम है।

मेघनाद ने आकर माँ को प्रणाम किया। चिरंजीवी होओ, वत्स!

किस कारण स्मरण किया, माँ ? बैठो, पुत्र ! मंदोदरी ने हल्के स्मित के साथ कहा, क्या विश्वविजयी पिता के ही समान जगद्विजेता पुत्र के पास भी महारानी कही जाने वालि इस स्त्री के लिए तनिक भी अवकाश नहीं है !

मेघनाथ ने चकित होकर माँ की ओर देखा, यह उपालंभ क्यों, माँ ? पति और पुत्र दोनों के प्रति यह कटाक्ष। विश्वविजय इतना उपहासास्पद कर्म तो नहीं, माँ !

इसीलिए कह रही हूँ- बैठो, वत्स! मंदोदरी अपने पलंग पर बैठ गई और मेघनाथ को अपने निकट बैठने को इंगित किया।

मेघनाथ कुछ चिंतित-संकुचित-सा आकर माँ के पास बैठ गया- जाने क्या है माँ के मन में।

विश्वविजय निश्चय ही उपहासास्पद कर्म नहीं है, बेटा। मंदोदरी ने गर्व-भरी आँखों से अपने पुत्र को देखा और स्नेह-भरा हाथ उसकी पीठ पर फेरा, और फिर मैं तो वह भाग्यशालिनी नारी हूँ, जिसका पति तथा पुत्र दोनों ही विश्वविजेता हैं। किंतु उस गौरव के पीछे थोड़ी पीड़ा भी है।

क्या है, माँ ? मेघनाथ का स्वर विह्वल हो आया, ऐसी कौन-सी पीड़ा है, जिसका हरण तुम्हारा यह पुत्र नहीं कर सकता ?

मेघनाथ ने ध्यान से अपनी माँ को देखा- आज माँ ने एक बार भी उसे मेघ कहकर नहीं पुकारा था और इस बार तो माँ ने उसे इंद्रजित कहा है- इंद्र को जीतना भी माँ के लिए आपत्तिजनक है क्या ?

तुम और तुम्हारे पिता- तुम दोनों ही अद्‌भुत वीर हो, इंद्रजित ! वीरता का प्रदर्शन अपने घर में तो हो नहीं सकता; इसलिए

विश्वविजयी वीर अधिकांशत: लंका से बाहर रहते हैं। तुम लोग जब लौटते हो, तो विपुल धन- स्वर्ण, रत्न और मणि-माणिक्य लेकर आते हो। देश-विदेश की सुंदरियाँ- क्रय, विजय अथवा अपहरण कर लाते हो; और पुन: किसी युद्ध के लिए लौट जाते हो। लंका की सेनाएँ अपराजेय हैं, अत: लंका के व्यापारियों के लिए विश्व के सारे मार्ग खुल गए हैं। उनके माध्म से भी लंका में कम धन नहीं आता। लंका में इतना सारा धन संचित हो रहा है- लंका के राक्षस इसका क्या करेंगे, पुत्र ?

वे लोग धन का भोग करेंगे, इंद्रजित हँसा, इसके लिए चिंतित होने की क्या आवश्यकता है, माँ ? धन सुख का पर्याय है। आज विश्व-भर का सुख लंका में संचित हो रहा है। यह हमारे लिए हर्ष की बात है, माँ। रक्षपति रावण के साम्राज्य के समान वैभवशाली राज्य सारे संसार में किसी का नहीं है।

तुम सत्य कह रहे हो, पुत्र ! मंदोदरी शांत स्वर में बोली, तुमने लंका में अपार वैभव एकत्रित कर दिया है; किंतु कभी सोचा है कि इस वैभव का भोग कैसे होगा ? मंदोदरी ने मेघनाथ के उत्तर की प्रतीक्षा नहीं की, स्वर्ण, रत्न, मणि-माणिक्य स्वयं में कोई सुख नहीं हैं- सुख वे द्रव्य हैं, जो इनके माध्यम से खरीदे जाते हैं। आज लंका के राक्षस सुखी हैं क्योंकि लंका ने अपने वैभव-प्रदर्शन के लिए असंख्य मदिरालय, द्यूतालय और वेश्यालय खोल दिए हैं। राजपुत्रों, सामंत-पुत्रों और राजपुरुषों को कुछ करना नहीं पड़ता है। उनका जीवन अर्जन का नहीं, भोग का जीवन है। भोग के लिए धन व्यय करना पड़ता है; और व्यय के लिए उनके पास पुष्कल धन है। संध्या समय वे अपने प्रासादों से निकलते हैं और मदिरालयों में जा बैठते हैं। मदिरा पीते हैं, द्यूत खेलते हैं और नारी-शरीर की खोज में निकल पड़ते हैं। वेश्यालयों में भीड़ लग जाती है। लंका में यह प्रचलन बहुत बढ़ गया है; इसलिए वारवनिताओं की माँग भी बढ़ गई है। परिणामत: अपहरण अधिक हो गए हैं, बलात्कार बढ़ गए हैं, दासियों का क्रय-विक्र बढ़ गया है।

किंतु माँ ! इससे मेरा क्या संबंध ? मेघनाथ चकित था।

क्यों ? क्या वह इसी वातावरण में नहीं पल रहा; या उसके पास पर्याप्त मात्रा में धन नहीं है ? मंदोदरी का स्वर कुछ तीव्र हो गया।

किंतु वह राजकुमार है। उसे शस्त्र-विद्या सीखनी चाहिए।

मेघनाथ चुपचाप माँ को देखता रहा। मंदोदरी मौन ही रही।

मंदोदरी का तेज जैसे भभककर फूटा, पिता संसार-भर में से सुंदरियों का अपहरण करता फिरेगा तो पुत्र अपने नगर की एक वेश्याके पास भी नहीं जाएगा क्या? तुम्हारे पिता ने कभी यह सोचा है कि उनका वय किस योग्य है कि उनका पुत्र यह सोचेगा ?

माँ ! मेघनाथ का स्वर भी कुछ ऊँचा हुआ, जगद्विजेता, राक्षसेन्द्र, राजाधिराज रावण के विष में ऐसा कहना तुम्हें शोभा नहीं देता। वे आपके पति हैं। राक्षसेन्द्र के लिए यह कोई नई बात तो नहीं।

पुरानी बात उचित ही होती है क्या ? मंदोदरी का तेज तनिक भी फीका नहीं पड़ा, तुम कब इस परंपरा का अनुसरण करने वाले हो? मैं सुलोचना-प्रमिला से कह रखूँ कि वह अपने कुछ पुराने वस्त्र सँभाल रखें और दासी कर्म के लिए तैयार रहें।

माँ ! मेघनाथ क्रुद्ध स्वर में बोला।

क्यों ? बुरा लगा ? मंदोदरी का स्वर व्यंग्यपूर्ण था, जब तुम्हारे पिता ने मेरी उपस्थिति में, अपहृता वैदेही के सम्मुख यह प्रस्ताव रखा कि वे महारानी मंदोदरी को उसकी प्रधान दासी नियुक्त कर देंगे; तो तुम्हारी माँ को कैसा लगा होगा, पुत्र ?

मेघनाथ चुप रहा। बोलते क्यों नहीं ? इन पकते हुए केशों के वय में, महारानी मंदोदरी को भोग के लिए लाई गई नवागत युवतियों की दासी बनाकर विश्वविजेता वीर की जननी का अभिनंदन किया जा रहा है क्या ?

नहीं, माँ ! यह बात नहीं है। तो क्या बात है ?

पिताजी ने सीता का मन जीतने के लिए प्रलोभन दिया होगा।

कई क्षणों तक मंदोदरी अपने पुत्र को देखती रहीं और सहसा उनके मुख से करुण स्वर फूटा, तेरे जैसा पितृभक्त पुत्र भी मैंने नहीं देखा, इंद्रजित ! तुझे पाकर तेरे पिता फूले नहीं समाते होंगे; पर मैं सोचती हूँ कि तू इतना पितृभक्त न होता तो शायद तेरे पिता का कल्याण होता। जा पुत्र ! मैं हतभागी सुलोचना को उसका भविष्य बता दूँगी।

इंद्रजित ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह प्रणाम कर मंदोदरी के कक्ष से निकल गया।

मंदोदरी पछाड़ खाकर पलंग पर औंधी जा पड़ीं।

११) विभीषण की रामके पास शरणागति - आकाश मार्गसे अपनी ही ओर आते ये मेघकृष्ण पर्वताकार पाँच व्यक्ति कौन ? विभीषण जैसे ही लमाके गगनसे समुद्रपर आये, वानर चौंके।

विभीषण सोचते थे मैं जाकर भगवान्‌के कोमल और लाल वर्णके सुन्दर चरणकमलोंके दर्शन करूँगा, जो सेवकोंको सुख देनेवाले हैं, जिन चरणोंका स्पर्श पाकर ऋषिपत्नी अहल्या तर गयीं और जो दण्डकवनको पवित्र करनेवाले हैं। जिन चरणोंको जानकीजीने हृदयमें धारण कर रखा है, जो कपटमृगके साथ पृथ्वीपर उसे पकड़नेको दौड़े थे और जो चरणकमल साक्षात् शिवजीके हृदयरूपी सरोवरमें विराजते हैं, मेरा अहोभाग्य है कि उन्हींको आज मैं देखूँगा। जिन चरणोंकी पादुकाओंमें भरतजीने अपना मन लगा रखा है, आज मैं उन्हीं चरणोंको अभी जाकर इन नेत्रोंसे देखूँगा।

लमासे पाँच सशस्त्र राक्षस आ रहे हैं। वानरोंने आकृति बहुत दूरसे पहचानकर सुग्रीवको समाचार दिया।

सावधान रहो। सुग्रीवने आदेश दिया- वे सशस्त्र हैं और अपने वेशमें ही आ रहे हैं, कृत्रिम माया वेश भी नहीं बनाये हैं तो आक्रमण करने ही आते होंगे।

आपकी आज्ञा हो तो हम उन्हें मार दें। वानरोंमें बहुत अधिक उत्साह था। और निकट आने दो। सुग्रीवने सचेत क्रिया- वे केवल पाँच चले हैं, हमारी इतनी विशाल सेना जानकर भी तो सामान्य नहीं होंगे। समुद्रके ऊपर उनसे संघर्ष करना उनके अनुकूल हो सकता है। उन्हें इसकी आशा होगी; किंतु शत्रू जो चाहता हो, चाह सकता हो, उसे नहीं करना चाहिये।

रावणकी सभा प्राय: रात्रिभर चली थी। प्रभातमें ही विभीषणको तिरस्कार पूर्वक निकालकर वह सभासे उठा था। समुद्रके इस पार श्रीराम अनुजके साथ स्नान-सन्ध्या करके, सूर्यको अर्ध्य देनेके उपरान्त अभी बैठे ही थे। अब समुद्रपार करनेकी समस्यापर विचार करने सुग्रीव जाम्बवान आदि श्रीरामके समीप आये थे, तभी यह समाचार वानरोंने दिया।

विभीषणने गगनसे देख लिया कि उनको देखकर वानरोंमें दौड़ धूप हुई है। श्रीरामके अत्यन्त समीप बैठे वानर श्रेष्ठ स्वयं उठकर समुद्रतटपर पर्वतके ऊपर आ गये हैं। वानरोंका उनके प्रति सम्मान देखकर समझ लिया- ये वानरेन्द्र सुग्रीव होंगे।

वानर वृक्ष-पर्वत उठाये युद्ध के लिये उद्यत दीखे। सुग्रीवके समीप उनके यूथप आ खड़े हुए थे। विभीषण समझ गये कि उन्हें शंकाकी दृष्टिसे देखा जा रहा है। यह स्वाभाविक था। ऐसा न होता, तभी आश्चर्यकी बात थी।

आप सब महात्मा हैं। आप श्रीरामके सेवक हैं। आप मेरी प्रार्थना सुनें और मुझ दीन अशरणकी सहायता करें। विभीषणने दूर गगनसे ही पुकारा- आप शरणागत वत्सल, समस्त सृष्टिको शरण देनेमें समर्थ श्रीरामको मेरा निवेदन सुना दें। जिसने उनकी भार्याका हरण किया है, जिसने पञ्चवटीमें गीधराज जटायुका वध किया है, जिसने सीताको लमामें रोक रखा है, उसी त्रिलोक-कण्टक, सुर-साधु, विप्र-वेद शत्रु दशग्रीवका अधम अनुज राक्षस मैं विभीषण रावणसे तिरस्कृत, निष्कासित होकर उन अनाथ- नाथ, अशरण-शरणकी शरण आया हूँ।

मैंने भाँति-भाँतिके युक्तिसंगत वचनोंद्वारा उसे बारंबार समझाया कि तुम श्रीरामकी सेवामें सीताको सादर लौटा दो- इसीमें भलाई है।

यद्यपि मैंने यह बात उसके हितके लिये ही कही थी, तथापि कालसे प्रेरित होनेके कारण रावणने मेरी बात नहीं मानी। ठीक उसी प्रकार, जैसे मरणासन्न पुरुष औषध नहीं लेता।

यही नहीं, उसने मुझे बहुत-सी कठोर बातें सुनायें और दासकी भाँति मेरा अपमान किया। इसलिये मैं अपने स्त्रीपुत्रोंको वहीं छोड़कर श्रीरघुनाथकी शरणमें आया हूँ।

विभीषणकी यह बात सुनकर शीघ्रगामी सुग्रीवने तुरंत ही भगवान श्रीरामके पास जाकर लक्ष्मणके सामने ही कुछ आवेशके साथ इस प्रकार कहा- प्रभो। आज कोई बैरी, जो राक्षस होनेके कारण पहले हमारे शत्रु रावणकी सेनामें सम्मिलित हुआ था, अब अकस्मात् हमारी सेनामें प्रवेश पानेके लिये आ गया है। वह मौका पाकर हमें उसी तरह मार डालेगा, जैसे उल्लू कौओंका काम तमाम कर देता है।

हे रघुनन्दन। अत: आपको अपने वानरसैनिकोंपर अनुग्रह और शत्रुओंका निग्रह करनेके लिये कार्याकार्यके विचार, सेनाकी मोर्चेबंदी, नीतियुक्त उपायोंके प्रयोग तथा गुप्तचरोंकी नियुक्ति आदिके विषयमें सतत सावधान रहना चाहिये। ये राक्षसलोग मनमाना रूप धारण कर सकते हैं। इनमें अन्तर्धान होनेकी भी शक्ति होती है। शूरवीर और मायावी तो ये होते ही हैं। इसलिये इनका कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। सम्भव है यह राक्षसराज रावणका कोई गुप्तचर हो। यदि ऐसा हुआ तो हमलोगोंमें घुसकर फूट पैदा कर देगा, इसमें संदेह नहीं।

अथवा यह बुद्धिमान राक्षस छिद्र पाकर हमारी विश्वस्त सेनाके भीतर घुसकर कभी स्वयं ही हमलोगोंपर प्रहार कर बैठेगा, इस बातकी भी सम्भावना है। मित्रोंकी, जंगली जातियोंकी तथा परम्परागत भृत्योंकी जो सेनाएँ हैं, इन सबका संग्रह तो किया जा सकता है; किंतु जो शत्रुपक्षसे मिले हुए हों, ऐसे सैनिकोंका संग्रह कदापि नहीं करना चाहिये।

प्रभो। यह स्वभावसे तो राक्षस है ही, अपनेको शत्रुका भाई भी बता रहा है। इस दृष्टिसे यह साक्षात् हमारा शत्रु ही यहाँ आ पहुँचा है; फिर इसपर कैसे विश्वास किया जा सकता है। रावणका छोटा भाई, जो विभीषणके नामसे प्रसिद्ध है, चार राक्षसोंके साथ आपकी शरणमें आया है। आप उस विभीषणको रावणका भेजा हुआ ही समझें। रघुनन्दन। मैं तो उसको कैद कर लेना ही उचित समझता हूँ।

श्रीराम। मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि यह राक्षस रावणके कहनेसे ही यहाँ आया है। इसकी बुद्धिमें कुटिलता भरी है। यह मायासे छिपा रहेगा तथा जब आप इसपर पूरा विश्वास करके इसकी ओरसे निश्चिन्त हो जायँगे, तब यह आपहीपर चोट कर बैठेगा। इसी उद्देश्यसे इसका यहाँ आना हुआ है। यह महाक्रूर रावणका भाई है, इसलिये इसे कठोर दण्ड देकर इसके मन्त्रियोंसहित मार डालना चाहिये।

मन्त्रणा, नीति, गुप्तचर, योजनाके बिना युद्धमें सफलता नहीं मिला करती। राक्षस मायावी होते हैं, कामरूप होते हैं। यह गुप्तचर हो सकता है। हमारे बीचमें रहकर हममें भेद उत्पन्न करनेका यत्न करेगा। बुद्धिमान होगा तो विश्वासपात्र बनकर प्रहार करेगा। शत्रु-सेनाके लोगोंको सेनामें रखना ठीक नहीं हैं इसे रावणने भेजा हो सकता है। उस कुटिल बुद्धिके सिखलानेसे आया होगा।

यह कुछ नया स्वाँग बनाकर आया है। बैरी का भाई है, इसके मनमें गम्भीर भेद छुपा हुआ है। राक्षस सभी मायावी होते है इसलिए इसको सीधा नहीं समझियेगा। उत्तर का मार्ग बताते हैं और दक्षिण को जाते है। मेरा विचार तो ऐसा है कि उसको अभी स्वाद चखा दूँ। वानरों से बँधवाकर अभी कैद करवा दूँ। भाई को बंदी समझकर रावण घबराकर यहाँ आयेगा, सीता माँ को दे जायेगा और इसको अपने साथ ले जायेगा।

सुग्रीवका यह वचन सुनकर महाबली श्रीराम अपने निकट बैठे हुए हनुमान् आदि वानरोंसे इस प्रकार बोले- मित्रोंकी स्थायी उन्नति चाहनेवाले बुद्धिमान् एवं समर्थ पुरुषको कर्तव्याकर्तव्यके विषयमें संशय उपस्थित होनेपर सदा ही अपनी सम्मति देनी चाहिये।

इस प्रकार सलाह पूछी जानेपर श्रीरामका प्रिय करनेकी इच्छा रखनेवाले वे सब वानर आलस्य छोड़ उत्साहित हो सादर अपना-अपना मत प्रकट करने लगे- रघुनन्दन। तीनों लोकोंमें कोई ऐसी बात नहीं है, जो आपको ज्ञात न हो, तथापि हम आपके अपने ही अङ्ग हैं, अत: आप मित्रभावसे हमारा सम्मान बढ़ाते हुए हमसे सलाह पूछते हैं।

वानरोंके ऐसा कहनेपर सबसे पहले बुद्धिमान् वानर अङ्गद विभीषणकी परीक्षाके लिये सुझाव देते हुए श्रीरघुनाथसे बोले- भगवन्। विभीषण शत्रुके पाससे आया है, इसलिये उसपर अभी शमा ही करनी चाहिये। उसे सहसा विश्वासपात्र नहीं बना लेना चाहिये।

बहुत-से शठतापूर्ण विचार रखनेवाले लोग अपने मनोभावको छिपाकर विचरते रहते हैं और मौका पाते ही प्रहार कर बैठते हैं। इससे बहुत बड़ा अनर्थ हो जाता है। अत: गुण-दोषका विचार करके पहले यह निश्चय कर लेना चाहिये कि इस व्यक्तिसे अर्थकी प्राप्ति होगी या अनर्थकी (यह हितका साधन करेगा या अहितका)। यदि उसमें गुण हों तो उसे स्वीकार करे और यदि दोष दिखायी दें तो त्याग दे। महाराज। यदि उसमें महान् दोष हो तो नि:संदेह उसका त्याग कर देना ही उचित है। गुणोंकी दृष्टिसे यदि उसमें बहुत-से सद्गुणोंके होनेका पता लगे, तभी उस व्यक्तिको अपनाना चाहिये।

तदनन्तर शरभने सोच-विचारकर यह सार्थक बात कही- पुरुषसिंह। इस विभीषणके ऊपर शीघ्र ही कोई गुप्तचर नियुक्त कर दिया जाय। सूक्ष्म बुद्धिवाले गुप्तचरको भेजकर उसके द्वारा यथावत् रूपसे उसकी परीक्षा कर ली जाय। इसके बाद यथोचित रीतिसे उसका संग्रह करना चाहिये। इसके बाद परम चतुर जाम्बवान्ने शास्त्री बुद्धिसे विचार करके ये गुणयुक्त दोषरहित वचन कहे- राक्षसराज रावण बड़ा पापी है। उसने हमारे साथ वैर बाँध रक्खा है और यह विभीषण उसीके पाससे आ रहा है। वास्तवमें न तो इसके आनेका यह समय है और न स्थान ही। इसलिये इसके विषयमें सब प्रकारसे सशम ही रहना चाहिये।

तदनन्तर नीति और अनीतिके ज्ञाता तथा वाग्वैभवसे सम्पन्न मैन्दने सोच-विचारकर यह युक्तियुक्त उत्तम बात कही- महाराज। यह विभीषण रावणका छोटा भाई ही तो है, इसलिये इससे मधुर व्यवहारके साथ धीरे-धीरे सब बातें पूछनी चाहिये। नरश्रेष्ठ। फिर इसके भावको समझकर आप बुद्धिपूर्वक यह ठीक-ठीक निश्चय करें कि यह दुष्ट है या नहीं। उसके बाद जैसा उचित हो, वैसा करना चाहिये।

तत्पश्चात् सचिवोंमें श्रेष्ठ और सम्पूर्ण शास्त्रोंके ज्ञानजनित संस्कारसे युक्त हनुमानजीने ये श्रवणमधुर, सार्थक, सुन्दर और संक्षिप्त

वचन कहे- प्रभो। आप बुद्धिमानोंमें उत्तम, सामर्थ्यशाली और वक्ताओंमें श्रेष्ठ हैं। यदि बृहस्पति भी भाषण दें तो वे अपने-को आपसे बढ़कर वक्ता नहीं सिद्ध कर सकते। महाराज श्रीराम। मैं जो कुछ निवेदन करूँगा, वह वाद-विवाद या तर्क, स्पर्धा, अधिक बुद्धिमत्ताके अभिमान अथवा किसी प्रकारकी कामनासे नहीं करूँगा। मैं तो कार्यकी गुरुतापर दृष्टि रखकर जो यथार्थ समझूँगा, वही बात कहूँगा। आपके मन्त्रियोंने जो अर्थ और अनर्थके निर्णयके लिये गुण-दोषकी परीक्षा करनेका सुझाव दिया है, उसमें मुझे दोष दिखायी देता है; क्योंकि इस समय परीक्षा लेना कदापि सम्भव नहीं है। विभीषण आश्रय देनेके योग्य हैं या नहीं- इसका निर्णय उसे किसी काममें नियुक्त किये बिना नहीं हो सकता और सहसा उसे किसी काममें लगा देना भी मुझे सदोष ही प्रतीत होता है।

आपके मन्त्रियोंने जो गुप्तचर नियुक्त करनेकी बात कही है, उसका कोई प्रयोजन न होनेसे वैसा करनेका कोई युक्तियुक्त कारण नहीं दिखायी देता। (जो दूर रहता हो और जिसका वृत्तान्त ज्ञात न हो, उसीके लिये गुप्तचरकी नियुक्ति की जाती है। जो सामने खड़ा है और स्पष्टरूपसे अपना वृत्तान्त बता रहा है, उसके लिये गुप्तचर भेजनेकी क्या आवश्यकता है)

उसके यहाँ आनेकी ही उत्तम देश और काल है, यह बात जिस तरह सिद्ध होती है, वैसा बता रहा हूँ। विभीषण एक नीच पुरुषके पाससे चलकर एक श्रेष्ठ पुरुषके पास आया है। उसने दोनोंके दोषों और गुणोंका भी विवेचन किया है। तत्पश्चात् रावणमें दुष्टता और आपमें पराक्रम देख वह रावण को छोड़कर आपके पास आ गया है। इसलिये उसका यहाँ आगमन सर्वथा उचित और उसकी उत्तम बुद्धिके अनुरूप है।

यदि कोई अपरिचित व्यक्ति यह पूछेगा कि तुम कौन हो, कहाँसे आये हो ? किसलिये आये हो ? इत्यादि, तब कोई बुद्धिमान पुरुष सहसा उस पूछनेवालेपर संदेह करने लगेगा और यदि उसे यह मालूम हो जायगा कि सब कुछ जानते हुए भी मुझसे झूठ ही पूछा जा रहा है, तब सुखके लिये आये हुए उस नवारात मित्रका हृदय कलुषित हो जायगा (इस प्रकार हमें एक मित्रके लाभसे वंचित होना पड़ेगा)।

इसके सिवा महाराज, किसी दूसरेके मनकी बातको सहसा समझ लेना असम्भव है। बीच-बीचमें स्वरभेदसे आप अच्छी तरह यह निश्चय कर लें कि यह साधुभावसे आया है या असाधुभावसे।

इसकी बातचीतसे भी कभी इसका दुर्भाव नहीं लक्षित होता। इसका मुख भी प्रसन्न है। इसलिये मेरे मनमें इसके प्रति कोई संदेह नहीं है।

दुष्ट पुरुष कभी निशम एवं स्वस्थचित्त होकर सामने नहीं आ सकता। इसके सिवा इसकी वाणी भी दोषयुक्त नहीं है। अत: मुझे इसके विषयमें कोई संदेह नहीं है। कोई अपने आकारको कितना ही क्यों न छिपाये, उसके भीतरका भाव कभी छिप नहीं सकता। बाहरका आकार पुरुषोंके आन्तरिक भावको बलात् प्रकट कर देता है।

श्रीराम। विभीषणका यहाँ आगमनरूप जो कार्य है, वह देश-कालके अनुरूप ही है। ऐसा कार्य यदि योग्य पुरुषके द्वारा सम्पादित हो तो अपने-आपको शीघ्र सफल बनाता है।

आपके उद्योग, रावणके मिथ्याचार, बालिके वध और सुग्रीवके राज्याभिषेकका समाचार जान-सुनकर राज्य पानेकी इच्छासे यह समझ-बूझकर ही यहाँ आपके पास आया है (इसके मनमें यह विश्वास है कि शरणागतवत्सल दयालु श्रीराम अवश्य ही मेरी रक्षा करेंगे और राज्य भी दे देंगे)। इन्हीं सब बातोंको दृष्टिमें रखकर विभीषणका संग्रह करना- उसे अपना लेना मुझे उचित जान पड़ता है।

हे रघुनाथ। इस प्रकार इस राक्षसकी सरलता और निर्दोषताके विषयमें मैंने यथाशक्ति निवेदन किया। इसे सुनकर आगे आप जैसा उचित समझें, वैसा करें।

अधम पुरुष रावणका त्याग कर पुरुषोत्तम आपकी शरण यह आया है। आपके पराक्रम का, गुणका विचार करके आया है। आपने वानरेन्द्र सुग्रीवको शरण दी, यह सुनकर आया है। पवनपुत्र दूसरी सब सम्मतियोंका युक्तिपूर्वक खण्डन कर दिया- आप समीप बुलाकर पूछेंगे भी तो सशम होगा। मित्र बननेवाला भी होगा तो सन्दिग्ध हो जायगा। इसने जो प्रार्थना की है, जैसे की है, उसमें कोई कपट नहीं लगता। यह प्रसन्न नहीं है, दु:खी है। पूछताछ करके इसे सशम बना लेना ठीक नहीं है। रावणका भाई सहायक मिल रहा है। शठ लगता नहीं है। अत: मैं तो इसे अपना लेनेके पक्षमें हूँ। यह भी राज्य चाहता होगा। सुग्रीवको आपने अपनाया, यह सुनकर इसे आशा हो गयी होगी। आपको, वानरेन्द्रको या हममें किसीको लमापति होना नहीं है, अत: इसे शरणमें स्वीकार करें, यह मुझे अच्छा लगता है। स्वामीकी जो आज्ञा हो।

मित्रो। विभीषणके सम्बन्धमें मैं भी कुछ कहना चाहता हूँ। आप सब लोग मेरे हितसाधनमें संलग्न रहनेवाले हैं। अत: मेरी इच्छा है कि आप भी उसे सुन लें।

जो मनुष्य अपने अहितका अनुमान करके शरणमें आये हुएका त्याग कर देते हैं, वे पामर क्षुद्र हैं, पापमय हैं; उन्हें देखनेमें भी हानि है पाप लगता है। जिसे करोड़ों ब्राह्मणोंकी हत्या लगी हो, शरणमें आनेपर मैं उसे भी नहीं त्यागता। जीव ज्यों ही मेरे सम्मुख होता है, त्योंही उसके करोड़ों जन्मोंके पाप नष्ट हो जाते हैं। पापीका यह सहज स्वभाव होता है कि मेरा भजन उसे कभी नहीं सुहाता। यदि वह रावणका भाई निश्चय ही दुष्ट हृदयका होता तो क्या वह मेरे सम्मुख आ सकता था ? जो मनुष्य निर्मल मनका होता है, वही मुझे पाता है। मुझे कपट और छल छिद्र नहीं सुहाते। यदि उसे रावणने भेद लेनेको भेजा है, तब भी हे सुग्रीव। अपनेको कुछ भी भय या हानी नहीं है। क्योंकि हे सखे। जगत्में जितने भी राक्षस हैं, लक्ष्मण क्षणभरमें उन सबको मार सकते हैं और यदि वह भयभीत होकर मेरे शरण आया है तो मैं उसे प्राणोंकी तरह रखूँगा।

जो मित्रभावसे मेरे पास आ गया हो, उसे मैं किसी तरह त्याग नहीं सकता। सम्भव है उसमें कुछ दोष भी हों, परंतु दोषीको- आश्रय देना भी सत्पुरुषोंके लिये निन्दित नहीं है (अत: विभीषणको मैं अवश्य अपनाऊँगा)।

जो निर्मल है, निश्छल है वही मुझको पा सकता है। चालाक, प्रपञ्ची, धूर्त, छली कब मेरे सम्मुख आता है। यदि महापातकी भी मेरे सामने आ जाय तो उसका भी कदापि त्याग नहीं करूँगा। जो सब प्रकार से आरत है मैं उसका सच्चा साथी हूँ। जो जन मेरा शरणागत है उसका मैं सच्चा साथी हूँ। उसे मैं अपना बनाकर रखूँगा जो मेरी शरण में आ रहा है। अपने समीप बिठाऊँगा और लक्ष्मण जैसा समझूँगा।

वानरराज सुग्रीव भगवान् श्रीरामके इस कथनको सुनकर स्वयं भी उसे दोहराया और उसपर विचार करके यह परम सुन्दर बात कही- प्रभो। यह दुष्ट हो या अदुष्ट, इससे क्या ? है तो यह निशाचर ही। फिर जो पुरुष ऐसे संकटमें पड़े हुए अपने भाईको छोड़ सकता है, उसका दूसरा ऐसा कौन सम्बन्धी होगा, जिसे वह त्याग न सके।

श्रीराम बोले- सुमित्रानन्दन। इस समय वानरराज जैसी बात कही है, वैसी कोई भी पुरुष शास्त्रोंका अध्ययन और गुरुजनोंकी सेवा किये बिना नहीं कह सकता।

राजाओंके छिद्र दो प्रकारके बताये गये हैं- एक तो उसी कुलमें उत्पन्न हुए जाति-भाई और दूसरे पड़ोसी देशोंके निवासी। ये संकटमें पड़नेपर अपने विरोधी राजा या राजपुत्र पर प्रहार कर बैठते हैं। इसी भयसे वह विभीषण यहाँ आया है (इसे भी अपने जाति-भाइयोंसे भय है)। जिनके मनमें पाप नहीं है, ऐसे एक कुलमें उत्पन्न हुए भाई-बन्धु अपने कुटुम्बीजनोंको हितैषी मानते हैं, परंतु यही सजातीय बन्धु अच्छा होनेपर भी प्राय: राजाओंके लिये शमनीय होता है (रावण भी विभीषणको शमाकी दृष्टिसे देखने लगा है; इसलिये इसका अपनी रक्षाके लिये यहाँ आना अनुचित नहीं है। अत: तुम्हें इसके ऊपर भाईके त्यागका दोष नहीं लगाना चाहिये।

तुमने शत्रुपक्षीय सैनिकको अपनानेमें जो यह दोष बताया है कि वह अवसर देखकर प्रहार कर बैठता है, उसके विषयमें मैं तुम्हें यह नीतिशास्त्रके अनुकूल उत्तर दे रहा हूँ।

हमलोग इसके कुटुम्बी तो हैं नहीं (अत: हमसे स्वार्थहानिकी आशमा इसे नहीं है) और यह राक्षस राज्य पानेका अभिलाषी है (इसलिये भी यह हमारा त्याग नहीं कर सकता)। इन राक्षसोंमें बहुत-से लोग बड़े विद्वान भी होते हैं; (अत: वे मित्र होनेपर बड़े कामके सिद्ध होंगे) इसलिये विभीषणको अपने पक्षमें मिला लेना चाहिये।

हमसे मिल जानेपर ये विभीषण आदि निश्चिन्त एवं प्रसन्न हो जायँगे। इनकी जो यह शरणागतिके लिये प्रबल पुकार है, इससे मालूम होता है, राक्षसोंमें एक दूसरेसे भय बना हुआ है। इसी कारणसे इनमें परस्पर फूट होगी और ये नष्ट हो जायँगे। इसलिये भी विभीषणको ग्रहण कर लेना चाहिये।

तात सुग्रीव। संसारमें सब भाई भरतके ही समान नहीं होते। बापके सब बेटे मेरे ही जैसे नहीं होते और सभी मित्र तुम्हारे ही समान नहीं हुआ करते हैं।

तब सुग्रीव बोले- हे रघुनन्दन। आप उस राक्षसको रावणका भेजा हुआ ही समझें। मैं तो उसे कैद कर लेना ही ठीक समझता हूँ।

श्रीराम। यह निशाचर रावणके कहनेसे मनमें कुटिल विचार लेकर ही यहाँ आया है। जब हमलोग इसपर विश्वास करके इसकी ओरसे निश्चिन्त हो जायँगे, उस समय यह आपपर, मुझपर अथवा लक्ष्मणपर भी प्रहार कर सकता है। इसलिये महाबाहो। क्रूर रावणके भाई इस विभीषणका मन्त्रियोंसहित वध कर देना ही उचित है।

सुग्रीवका वह वचन सुनकर और उसपर भलीभाँत विचार करके श्रीरामने उन वानरशिरोमणिसे यह परम मङ्गलमयी बात कही-

वानरराज। विभीषण दुष्ट हो या साधु। क्या यह निशाचर किसी तरह भी मेरा सूक्ष्म-से-सूक्ष्मरूपमें भी अहित कर सकता है ?

वानरयूथपते। यदि मैं चाहूँ तो पृथ्वीपर जितने भी पिशाच, दानव, यक्ष और राक्षस हैं, उन सबको एक अंगुलिके अग्रभागसे मार सकता हूँ। सुना जाता है कि एक कबूतरने अपनी शरणमें आये हुए अपने ही शत्रु एक व्याधका यथोचित आतिथ्य-सत्कार किया था और उसे निमन्त्रण दे अपने शरीरके मांसका भोजन कराया था।

उस व्याधने उस कबूतरकी भार्या कबूतरीको पकड़ लिया था तो भी अपने घर आनेपर कबूतरने उसका आदर किया; फिर मेरे-जैसा मनुष्य शरणागतपर अनुग्रह करे, इसके लिये तो कहना ही क्या है ?

परंतप। यदि शत्रु भी शरणमें आये और दीनभावसे हाथ जोड़कर दयाकी याचना करे तो उसपर प्रहार नहीं करना चाहिये।

शत्रु दुखी हो या अभिमानी, यदि वह अपने विपक्षीकी शरणमें जाय तो शुद्ध हृदयवाले श्रेष्ठ पुरुषको अपने प्राणोंका मोह छोड़कर उसकी रक्षा करनी चाहिये। यदि वह भय, मोह अथवा किसी कामनासे न्यायानुसार यथाशक्ति उसकी रक्षा नहीं करता तो उसके उस पाप-कर्मकी लोकमें बड़ी निन्दा होती है। यदि शरणमें आया हुआ पुरुष संरक्षण पाकर उस रक्षकके देखते-देखते नष्ट हो जाय तो वह उसके सारे पुण्यको अपने साथ ले जाता है।

इस प्रकार शरणागतकी रक्षा न करनेमें महान् दोष बताया गया है। शरणागतका त्याग स्वर्ग और सुयशकी प्राप्तिको मिटा देता है और मनुष्यके बल और वीर्यका नाश करता है।

जो एक बार भी शरणमें आकर मैं तुम्हारा हूँ ऐसा कहकर मुझसे रक्षाकी प्रार्थना करता है, उसे मैं समस्त प्राणियोंसे अभय कर देता हूँ। यह मेरा सदाके लिये व्रत है। अत: कपिश्रेष्ठ सुग्रीव। वह विभीषण हो या स्वयं रावण आ गया हो। तुम उसे ले आओ। मैंने उसे अभयदान दे दिया।

भगवान् श्रीरामका यह वचन सुनकर वानरराज सुग्रीवने सौहार्दसे भरकर उनसे कहा- धर्मज्ञ। लोकेश्वरशिरोमणे। आपने जो यह श्रेष्ठ धर्मकी बात कही है, इसमें क्या आश्चर्य है ? क्योंकि आप महान् शक्तिशाली और सन्मार्गपर स्थित हैं।

यह मेरी अन्तरात्मा भी विभीषणको शुद्ध समझती है। हनुमानजीने भी अनुमान और भावसे उनकी भीतर-बाहर सब ओरसे भलीभाँति परीक्षा कर ली है। अत: रघुनन्दन। अब विभीषण शीघ्र ही यहाँ हमारे-जैसे होकर रहें और हमारी मित्रता प्राप्त करें।

तदनन्तर वानरराज सुग्रीवकी कही हुई वह बात सुनकर राजा श्रीराम शीघ्र आगे बढ़कर विभीषणको बुलानेके लिये आज्ञा दी।

इस प्रकार श्रीरघुनाथके अभय देनेपर विनयशील महाबुद्धिमान् विभीषणने नीचे उतरनेके लिये पृथ्वीकी ओर देखा।

वे अपने भक्त सेवकोंके साथ हर्षसे भरकर आकाशसे पृथ्वीपर उतर आये। उतरकर चारों राक्षसोंके साथ धर्मात्मा विभीषण श्रीरामके चरणोंमें गिर पड़े।

सुग्रीवने उत्तम बात कही है। बिना वृद्धोंकी सेवाके समय पर ऐसी बात सूझती नहीं। शीलसिन्धु श्रीरामने सुग्रीवको झिड़का नहीं कि आप शरण आये थे तो किसके विरुद्ध थे ? सुग्रीवकी प्रशंसा करके बोले- राजा लोग परिवारपर, उत्तराधिकारीपर शमा करते हैं, अत: रावण यदि विभीषणपर शमा करे तो उचित होगा। लेकिन हमारी हानिसे तो विभीषणको कोई लाभ नहीं होना है, यदि ये राज्य चाहते होंगे तो हमारी विजयसे मिलेगा या हमारी हानिसे ? अत: यह अपनाने योग्य हैं। लमामें इनपर शमा होगी, इन्होंने हनुमानको बचानेकी चेष्टा की थी। इन्हें वहाँ भय होगा सुग्रीव।

इसे रावणने गुप्तचर बनाकर भेजा होगा। सुग्रीवने फिर शमा की- इसे बन्दी कर लें, अन्यथा यह हम सबको विश्वासमें लेकर आपपर या लक्ष्मणपर धोखेसे आघात करेगा।

मित्र सुग्रीव। तुम्हारी बात मान भी लें कि सच हो, तो भी वह हमारा अहित कर सकनेमें असमर्थ है। श्रीराम क्षणभर मौन रहकर अत्यन्त गम्भीर स्वरमें बोले- मेरे अनुज लक्ष्मण क्रोध करें तो समस्त सृष्टिका संहार करनेके लिए इन्हें धनुषपर दो बाण नहीं चढ़ाने पड़ेंगे मेरा प्रण है कि यक्ष, राक्षस, पिशाच कोई शरण आवे, मैं उसका त्याग नहीं करूँगा। शरणागतका त्याग भी अधर्म है। स्वयं रावण भी शरण आवे तो मैं उसे स्वीकार करूँगा। यह भयसे, कामनासे, मोहसे चाहे जैसे आया हो, उसे ले आओ। राम भय, स्वार्थ या मोहसे शरणागतका त्याग नहीं कर सकता। शरणागत-रक्षामें मरण भी श्रेयस्कर है। वधार्ह भी शरण आया हो तो उसकी रक्षा उचित है।

एक बार भी जो पुकार लेता है कि मैं आपका हूँ, आपकी शरण हूँ, उसे मैं सम्पूर्ण प्राणियोंसे अभय कर देता हूँ, यह मेरा व्रत है।

श्रीरामने आदेशके स्वरमें कहा- मैंने विभीषणको अभय दिया। उसे सादर ले आओ। दशग्रीवभी शरण आवे तो बिना पूछे ले आना।

लोकनाथ। धर्मज्ञ। करुणामय। आपके लिए यह आश्चर्यकी बात नहीं है। सुग्रीवने हर्षमें भरकर कहा- मैं नीतिकी बात कह रहा था; किंतु मेरी अन्तरात्मा उसे विशुद्ध कहती है। वह मेरा मित्र बने।

हनुमान और अङ्गद संकेत मिलते ही उठकर दौड़े। अभी विभीषण मन्त्रियों सहित समुद्रके ऊपर गगनमें प्रतीक्षा कर रहे थे। हनुमानको देखते ही प्रसन्न हो गये। हनुमानने तनिक दूरसे ही कहा- पधारिये। प्रभु आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

यह रावणानुज अधम राक्षस विभीषण आपका सुयश सुनकर शरण आया है। विभीषणने दूरसे पुकार की- शरणागतवत्सल, अनाश्रयाश्रय स्वामी। पाहि। पाहि।

लंका-निष्कासित मैं, राक्षसराज रावण का भाई विभीषण हूँ। मेरे साथ मेरे चार सचिव- अनल, पनस, संपाति तथा प्रमति हैं। विभीषण ने अपना परिचय दिया, हम लंकावासियों की ओर से आपकी शरण में आए हैं।

राम ने विभीषण को देखा- यह उनके शत्रु का भाई था, जो उनकी शरण में आ गया था। हनुमान के माध्यम से सीता ने सूचना भेजी थी कि विभीषण और उनका परिवार सीता की सहायता कर रहा था। हनुमान को भी इसी विभीषण ने मृत्युदण्ड से बचाया था। रावण से उसका भेद बढ़ गया लगता है।

राम ने मुसकराकर विभीषण के कंधे पर हाथ रख, उन्हें हल्के-से दबाया, आपका स्वागत है, बंधुवर विभीषण। मैं स्वयं अयोध्या से निष्कासित हूँ। सुग्रीव से जब मेरी मित्रता हुई थी, वे भी किष्किंधा से निष्कासित थे।

विभीषण हल्के-से मुसकराए, किंतु कुछ बोले नहीं।

पुन: राम ही बोले, इस दृष्टि से हममें सम धरातल पर मैत्री हो तो अधिक अच्छा है; शरणागत होकर आना आपके लिए शोभनीय नहीं होगा। राम रुके, आपको राक्षसराज की ओर से कोई आशंका है ?

विभीषण के अधरों पर एक गम्भीर मुसकान उभरी, मैं अपनी सुरक्षा के लिए आपकी शरण में नहीं आया। मैंने पहले ही निवेदन किया है कि मैं लंकावासियों की ओर से आपकी शरण में आया हूँ। स्पष्ट कहो, विभीषण।

आर्य राम। इतना तो आप स्वीकार करेंगे ही कि राक्षसराज रावण जो कुछ भी कर रहा है- आवश्यक नहीं कि लंका का प्रत्येक निवासी उससे सहमति ही रखता हो।

नहीं आवश्यक नहीं। राम सहज भाव से बोले, स्वेच्छाचारी राजा अनेक बार अपनी इच्छा अपनी प्रजा पर बलात् आरोपित करता है। मेरा तात्पर्य भी यही है, आर्य। विभीषण बोले, आपका शत्रु रावण है, लंका की प्रजा नहीं।

राम मुसकराए, मैंने किसी भी राज्य की प्रजा को कभी भी अपना शत्रु नहीं माना।

ऐसी स्थिति में अपनी बात स्पष्ट कह सकूँगा। विभीषण बोले, रावण की स्वेच्छाचारिता ने लंकावासियों पर अनेक युद्ध थोपे हैं। वे युद्ध न तो लंकावासियों ने आत्मरक्षा में लड़े हैं, न अपने किसी अन्य लाभ के लिए। ये युद्ध लंका का राजा अपने विलास, अपने अहंकार की स्फीति तथा अपने साम्राज्य के विस्तार के लिए करता रहा है। किंतु वे युद्ध अधिकांशत: लंका की भूमि से दूर लड़े गए थे। आज पहला अवसर आया है कि लंका किसी सेना द्वारा इस प्रकार घेरी जा रही है और यह युद्ध कदाचित् लंका की भूमि पर ही हो।

शायद ऐसा ही है। राम बोले।

लंका मेरी जन्मभूमि नहीं है। विभीषण पुन: बोले, हमारे परिवार में से किसी की जन्मभूमि नहीं है। संसार जानता है कि रावण ने अपने सैनिक बल से यक्षपति धनेश (कुबेर) से लंका छीनी है और रक्ष-चिंतन के समर्थकों को सारे विश्व में से बुलाकर लंका पर उनका शासन स्थापित किया है। इस समय लंका के शासनाधिकार रावण, उसके कुटुंब तथा उसके संबंधियों के हाथों में हैं। प्रजा को शासन संबंधी कोई अधिकार नहीं है। विभीषण ने रुककर राम की ओर देखा, फिर भी जो लोग लंका में रह रहे हैं, वे उसे अपनी भूमि मानते हैं। मुझे भी लंका से अपनी जन्मभूमि का-सा प्यार है, इसलिए मैं लंका का अहित नहीं चाहता।

यह असम्भव है। सुग्रीव बोले। विभीषण ने राम की ओर देखा, किंतु राम कुछ नहीं बोले।

मुझे गलत न समझें। विभीषण पुन: बोले, मैं लंका का अहित नहीं चाहता, किंतु रावण और लंका पर्याय नहीं हैं।

राम मंद-मंद मुसकराए, अपना अभिप्राय कहो, विभीषण।

हम आपकी सहायता के माध्यम से रावण से लंकावासियों की रक्षा करना चाहते हैं।

आप लोग रावण के विरुद्ध लड़ेंगे ? लक्ष्मण ने पूछा।

यदि आप लंका की रक्षा का वचन दें तो आपका और हमारा पक्ष एक होगा। हम रावण के विरुद्ध लड़ेंगे। विभीषण बोले, मुझे कोई रावण-विरोधी कहे तो मैं उसे प्रशंसा के रूप में स्वीकार करूँगा; किंतु मैं देशद्रोही नहीं कहलाना चाहता।

राम मंद-मंद मुसकराते हुए विभीषण को देखते रहे, जैसे कुछ सोच रहे हों। फिर धीरे-से बोले, आपको कोई देशद्रोही नहीं कह सकेगा, मित्र विभीषण। आपने सचमुच लंका की रक्षा कर ली है। अब वानर-सेना लंका का नाश नहीं करेगी, वह युद्ध में आई हुई केवल रावण-समर्थक सेनाओं का संहार करेगी। आपको मैं शरणागत नहीं मानता। आप समानता के आधार पर हमसे संधि कीजिए। संधि की आधारभूत प्रतिज्ञाएँ स्पष्ट कह दीजिए।

आप सच कह रहे हैं, राम ? विभीषण ने आश्चर्य से पूछा। राम पर अविश्वास का कोई कारण नहीं है। राम मुसकराए।

आप मुझे अपने शत्रु का असहाय भाई मानकर अनादर तो नहीं करेंगे ? विभीषण बोले, लंका को शत्रु नगरी मानकर उसका तिरस्कार तो नहीं करेंगे ? नहीं। राम बोले, अपने मन की आशंकाएँ निकाल दो, संदेह भुला दो; और अपनी आधारभूत प्रतिज्ञा कहो।

विभीषण मौन ही रहे, जैसे अभी भी संशय में हों कि क्या सचमुच राम उनकी बात मान जाएँगे। मौन लंबा हो गया तो बोले, युद्ध की अनिवार्य स्थितियों को छोड़कर, लंका तथा लंकावासियों का नाश नहीं किया जाएगा; और विजय के परिणामस्वरूप लंका को न दण्डित किया जाएगा, न उस पर कोई बाहरी शासन आरोपित किया जाएगा। यह युद्ध रावण को उसके पापों का दण्ड तथा लंका को उसके अत्याचारों से मुक्त करने का साधन होगा।

इसमें ऐसी कोई बात नहीं, जो हमारे मन के प्रतिकूल हो। राम का स्वर शांत था, हमारा युद्ध लंका से नहीं, रावण से है। लंका को हस्तगत कर उस पर आधिपत्य जमाने की न मेरी इच्छा है, न वानरपति सुग्रीव की। हम सैनिक तंत्र के माध्यम से अन्य राज्यों, समाजों अथवा जातियों का वैभव लूटने वाले लुटेरे नहीं हैं। अनावश्यक हत्याओं अथवा किसी भी प्रकार के नाश में हमारी कोई रुचि नहीं है। हम युद्ध को केवल युद्ध मानते हैं और उसे युद्ध-क्षेत्र तक ही सीमित रखते हैं। हाँ। युद्ध की आवश्यकता की दृष्टि से, शत्रु की शक्ति नष्ट करने के लिए किसी समय नगर के किसी स्थान पर भी आक्रमण करना पड़ सकता है। कुछ स्थानों को नष्ट करना पड़ सकता है। मैं मित्र विभीषण की प्रतिज्ञाओं को स्वीकार करने के पक्ष में हूँ। किसी को कोई आपत्ति हो तो कृपया अपनी बात कहें।

तो मैं अपने पक्ष की ओर से आपकी प्रतिज्ञाएँ स्वीकार करता हूँ, मित्र विभीषण। राम का स्वर और अधिक दृढ़ हो गया, किंतु इसका अर्थ यह होगा कि आप हमारी सेना के अंग हुए। अब हमारे विरुद्ध युद्ध क्षेत्र में आए अपने किसी कुटुंबी की रक्षा का न केवल प्रयास नहीं करेंगे, वरन् उसके वध का सक्रिय प्रयत्न करेंगे। शत्रु-पक्ष से युद्ध-क्षेत्र में आए हुए अपने किसी परिजन के प्रति आपकी ममता नहीं जागेगी। उनके पूर्ण नाश के लिए आप हममें से एक होंगे।

क्षणभर के लिए विभीषण भी स्तब्ध रह गए; किंतु स्वयं को संयत करने में उन्हें अधिक समय नहीं लगा। निष्कंप स्वर में बोले, मुझे स्वीकार है। राम ने आगे बढ़कर विभीषण को गले से लगा लिया।

राम के मधुर वचन सुनकर विभीषण को आनन्द प्राप्त हुआ और वे बोले- यह आपका दास बड़भागी है जो प्रभुपद का अनुगामी हुआ। जिसका रघुकुल सा स्वामी हो वह जन निष्कण्टक निर्भय है। मद, मोह, काम, क्रोध, लोभ उसके हृदय से हठ जाते है। माया में फँसा हुआ प्राणी तब तक विश्राम नहीं पाता जब तक वह निष्काम शुद्ध मन से, अपने मुख से श्रीराम नहीं कहता। जो बात आज तक कान से सुनता था, आज वह प्रत्यक्ष आँखों से देखी है। बुद्धि, प्रताप वहीं होता है जहाँ मर्यादा धर्म की होती है। मैं निशाचर कुल में पैदा होकर अब तक बहुत भरमाया हूँ। हे रघुनायक। मेरी बाँह गहो, मैं शरण आपकी आया हूँ। मेरा धन-धाम छुटा, परिवार छुटा, इसकी न मुझे चिन्ता है, न ही मुझे कोई राज्य की महत्त्वकांक्षा है अब तो विभीषण यही चाहता है कि जन गणनायक के पास रहे। इन चरणों में पड़ा रहें, सदा इन चरणों का दास रहे।

तब श्रीराम बोले- हे लंकेश। परिवारसहित अपनी कुशल कहो। तुम्हारा निवास बुरी जगहपर है। दिन-रात दुष्टोंकी मण्डलीमें बसते हो। ऐसी दशामें हे सखे। तुम्हारा धर्म किस प्रकार निभता है ? मैं तुम्हारी सब रीति आचार-व्यवहार जानता हूँ। तुम अत्यन्त नीतिनिपुण हो, तुम्हें अनीति नहीं सुहाती।

विभीषणने कहा- हे तात। नरकमें रहना वरं अच्छा है। परन्तु विधाता दुष्टका संग कभी न दे। हे रघुनाथ। अब आपके चरणोंका दर्शन कर कुशलसे हूँ, जो आपने अपना सेवक जानकर मुझपर दया की है। तबतक जीवकी कुशल नहीं और न स्वप्नमें भी उसके मनको शान्ति है, जबतक वह शोकके घर काम विषय-कामना को छोड़कर श्रीरामको नहीं भजता। लोभ, मोह, मत्सर डाह, मद और मान आदि अनेकों दुष्ट तभीतक हृदयमें बसते हैं, जबतक कि धुनष-बाण और कमरमें तरकस धारण किये हुए श्रीरघुनाथ हृदयमें नहीं बसते।

ममता पूर्ण अँधेरी रात है, जो राग-द्वेषरूपी उल्लुओंको सुख देनेवाली है। वह ममतारूपी रात्रि तभीतक जीवके मनमें बसती है, जबतक प्रभु आप का प्रतापरूपी सूर्य उदय नहीं होता।

हे श्रीरामजी आपके चरणारविन्दके दर्शन कर अब मैं कुशलसे हूँ, मेरे भारी भय मिट गये। हे कृपालु। आप जिसपर अनुकूल होते हैं, उसे तीनों प्रकारके भवशूल आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक ताप नहीं व्यापते।

तब श्रीरामने कहा- हे सखा। सुनो, मैं तुम्हें अपना स्वभाव कहता हूँ, जिसे काकभुशुण्डि, शिवजी और पार्वतीजी भी जानती हैं। कोई मनुष्य सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत्का द्रोही हो, यदि वह भी भयभीत होकर मेरी शरण तककर आ जाय, और मद, मोह तथा नाना प्रकारके छल-कपट त्याग दे तो मैं उसे बहुत शीघ्र साधुके समान कर देता हूँ। माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्रीं, शरीर, धन, घर, मित्र और परिवार इन सबके ममत्वरूपी तागोंको बटोरकर और उन सबकी एक डोरी बटकर उसके द्वारा जो अपने मनको मेरे चरणोंमें बाँध देता है सारे सांसारिक सम्बन्धोंका केन्द्र मुझे बना लेता है, जो समदर्शी है, जिसे कुछ इच्छा नहीं है और जिसके मनमें हर्ष, शोक और भय नहीं है।

ऐसा सज्जन मेरे हृदयमें कैसे बसता है, जैसे लोभीके हृदयमें धन बसा करता है। तुम सरीखे संत ही मुझे प्रिय हैं। मैं और किसीके निहोरेसे कृतज्ञतावश देह धारण नहीं करता।

जो सगुण साकार भगवान्के उपासक हैं, दूसरेके हितमें लगे रहते हैं, नीति और नियमोंमें दृढ़ हैं और जिन्हें ब्राह्मणोंके चरणोंमें प्रेम है, वे मनुष्य मेरे प्राणोंके समान हैं। हे लमापति। सुनो, तुम्हारे अंदर उपर्युक्त सब गुण हैं। इससे तुम मुझे अत्यन्त ही प्रिय हो। श्रीरामके वचन सुनकर सब वानरोंके समूह कहने लगे- कृपाके समूह श्रीरामकी जय हो।

श्रीरामने रावणके क्रोधरूपी अग्निमें, जो अपनी विभीषणकी श्वास वचनरूपी पवनसे प्रचण्ड हो रही थी, जलते हुए विभीषणको बचा लिया और उसे अखण्ड राज्य दिया। शिवजीने जो सम्पत्ति रावणको दसों सिरोंकी बलि देनेपर दी थी, वही सम्पत्ति श्रीरघुनाथने विभीषणको बहुत सकुचाते हुए दी।

तब श्रीराम बोले- अब बताओ निशाचरपति दशकंधर से किस भाँति लडना है। इस स्वयोजन के सागर को किस भाँति पार करना है। तब विभीषण ने कहा- सुनिये करुणागार। सदा धर्म की जय रहेगी होगा बेड़ा पार। वानर सेना जब अगणित है तो समुद्रल्लंघन की चिंता ही क्या है। उद्योगी वीरों की जग में कभी कोई कठिनाई नहीं है।

तब विभीषणने लंकाके बलाबल की स्थिति स्पष्ट करते हुए राम को बताया- राजकुमार। ब्रह्माजीके वरदानके प्रभावसे दशमुख रावण (केवल मनुष्यको छोड़कर) गन्धर्व, नाग और पक्षी आदि सभी प्राणियोंके लिये अवध्य है।

रावणसे छोटा और मुझसे बड़ा जो मेरा भाई कुम्भकर्ण है, वह महातेजस्वी और पराक्रमी है। युद्धमें वह इन्द्रके समान बलशाली है।

श्रीराम। रावणके सेनापतिका नाम प्रहस्त है। शायद आपने भी उसका नाम सुना होगा। उसने कैलासपर घटित हुए युद्धमें कुबेरके सेनापति मणिभद्रको भी पराजित कर दिया था।

रावणका पुत्र जो इन्द्रजित है, वह गोहके चमड़ेके बने हुए दस्ताने पहनकर अवध्य कवच धारण करके हाथमें धनुष ले जब युद्धमें खड़ा होता है, उस समय अदृश्य हो जाता है।

रघुनन्दन। श्रीमान् इन्द्रजितने अग्निदेवको तृप्त करके ऐसी शक्ति प्राप्त कर ली है कि वह विशाल व्यूहसे युक्त संग्राममें अदृश्य होकर शत्रुओंपर प्रहार करता है।

महोदर, महापार्श्व और अकम्पन- ये तीनों राक्षस रावणके सेनापति हैं और युद्धमें लोकपालोंके समान पराक्रम प्रकट करते हैं।

विभीषणकी वह बात सुनकर रघुकुलतिलक श्रीरामने मन-ही-मन उस सबपर बारंबार विचार किया और इस प्रकार कहा- विभीषण। तुमने रावणके युद्धविषयक जिन-जिन पराक्रमोंका वर्णन किया है, उन्हें मैं अच्छी तरह जानता हूँ।

परंतु सुनो। मैं सच कहता हूँ कि प्रहस्त और पुत्रोंके सहित रावणका वध करके मैं तुम्हें लमाका राजा बनाऊँगा।

रावण रसातल या पातालमें प्रवेश कर जाय अथवा पितामह ब्रह्माजीके पास चला जाय तो भी वह अब मेरे हाथसे जीवित नहीं छूट सकेगा। मैं अपने तीनों भाइयोंकी सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि युद्धमें पुत्र, भृत्यजन और बन्धु-बान्धवोंसहित रावणका वध किये बिना अयोध्यापुरीमें प्रवेश नहीं करूँगा। अनायास ही महान कर्म करनेवाले श्रीरामके ये वचन सुनकर धर्मात्मा विभीषणने मस्तक झुकाकर उन्हें प्रणाम किया और फिर इस प्रकार कहना आरम्भ किया-

प्रभो। राक्षसोंके संहारमें और लमापुरीपर आक्रमण करके उसे जीतनेमें मैं आपकी यथाशक्ति सहायता करूँगा तथा प्राणोंकी बाजी लगाकर युद्धके लिये रावणकी सेनामें भी प्रवेश करूँगा।

विभीषणके ऐसा कहनेपर भगवान श्रीरामने उन्हें हृदसे लगा लिया और प्रसन्न होकर लक्ष्मणसे कहा- दूसरोंको मान देनेवाले सुमित्रानन्दन। तुम समुद्रसे जल ले आओ और उसके द्वारा इन परम बुद्धिमान राक्षसराज विभीषणका लमाके राज्यपर शीघ्र ही अभिषेक कर दो। मेरे प्रसन्न होनेपर इन्हें यह लाभ मिलना ही चाहिये।

स्वामी। स्वीकार करता हूँ कि चला था तो हृदय निष्काम नहीं था। राक्षसका हृदय निष्कल्मष हो कैसे सकता था; किन्तु इन पतितपावन पादारविन्दोंका दर्शन करनेके पश्चात् कोई कामना शेष रह सकती है ? विभीषण विह्वल बोल रहे थे- अब आप प्रसन्न हैं तो वर दें कि आपके श्रीचरणोंमें मेरी अविचल भक्ति बनी रहे।

एवमस्तु। सागर समस्त तीर्थमय है। अनुजकी ओर देखकर उन उदार चक्र-चूड़ामणिने कहा- मुझे वह तीर्थोदक चाहिये।

हनुमानके लौटनेके पश्चात् दशग्रीव मुझपर सन्देह करने लगा था। उसने किसी कार्यमें फिर मेरी सम्मति नहीं ली। विभीषणने बतलाया- परिखा सुदृढ़ बनवा ली है। भवन सब बन गये हैं। खाई अनावश्यक मानकर खोदी नहीं गयी। महायन्त्रोंकी ओर ध्यान देनेको समय नहीं मिला। नगरमें खाद्य तथा अस्त्र-शस्त्रका किञ्चित् भी अभाव नहीं है।

विभीषणने विस्तारसे दशग्रीवको सेनाका वर्णन किया। इसी समय लक्ष्मण कमण्डलमें सागर-जल ले आये। श्रीरामने हाथ पकड़कर विभीषणको शिलापर बैठाया और सागर-जलसे तिलक करके जयघोष किया- लंकेश विभीषणकी जय।

वानरेन्द्र सुग्रीवने भी श्रीरामके संकेतपर तिलक किया। फिर जयनाद गूँजा- राक्षसेन्द्र विभीषणकी जय।

मैंने तुम्हें लमाका राज्य दिया। श्रीरामका स्थिर स्वस्थ स्वर- सहायकोंके साथ रावणको मारकर इसकी औपचारिकता अवश्य पूरी कर दूँगा। रावण पाताल या ब्रह्मलोक चाहे जहाँ भागे, चाहे जिसकी शरण जाय, अब वह बच नहीं सकता।

यदि वह आपकी ही शरण आ जाय तो ? अङ्गदने शमा प्रकटकी। उचित थी शमा। थोड़ी देर पहिले श्रीराम सुग्रीवको आज्ञा दे चुके थे- रावण भी शरण आवे तो बिना पूछे ले आओ।

लमाका राज्य विभीषणका हो चुका। बिना हिचके श्रीरामने अङ्गदकी ओर देखा- दशग्रीवको सद्बुद्धि आ जाय और वह शरणापन्न हो तो अयोध्याका राज्य उसका। रघुवंशी अपने धनुषके बलसे आरण्यमें दूसरा राज्य स्थापित कर लेंगे।

तब उस समय वहाँ सुग्रीव ने कहा- हे राम, एक विनती सुनिए। आपने विभीषण को लंका प्रदान की, परन्तु वह काम तो आपने बिना सोचे-विचारे किया है। आज सीता को लेकर रावण कदाचित् शरण में आएगा- आत्म-समर्पण करेगा। हे महाराज, मुझे बताइए कि तब आप फिर रावण को क्या देंगे। तब रघुपति ने कहा- यदि रावण प्रेमपूर्वक शरण में आए, तो तब मैं वैभव तथा राज्यसहित अपनी अयोध्या उसे दूँगा। मैं वन में जाकर तपस्या करूँगा और उधर राजा रावण राज करेगा।

भक्तवत्सल श्रीरामकी जय। सुग्रीवने उछलकर जयनाद किया।

शरणागतवत्सल राघवेन्द्रकी जय। विभीषण हर्ष-विह्वल बोले।

कृपापारावार श्रीरघुनाथकी जय। हनुमान, अङ्गद, सभी वानर जयघोष करते उछलते-कूदते हर्षोन्मत हो गये। ऐसे उदार-शिरोमणि स्वामीकी सेवाका सौभाग्य मिलना क्या सहज सुलभ होता है।

हम सब इन परमपुरुष श्रीरामके किंकर हैं। सुग्रीवने विभीषणको हृदयसे लगाकर कहा- अबसे तुम हममें प्रधान हुए।

युवराज। तुम वानरेन्द्रके युवराज हो, मैं भूल तो नहीं करता ? विभीषणने अङ्गदकी ओर देखकर धीरेसे कहा- तुम्हारी बात कदाचित सत्य हो जाय तो विभीषणसे अधिक प्रसन्न दूसरा कोई नहीं होगा। मैं चरण पकड़कर अपने इन अनन्त दयाधाम स्वामीको मना लूँगा। दशग्रीव लमाका अधीश्वर बना रहेगा। लेकिन मैं अपने उस अभिमानी अग्रजको भली प्रकार जानता हूँ। वह दर्पकी पराकाष्ठा है।

राक्षस-कुलका विनाशकाल आ गया है। झुकना दूर, वह अपनी इच्छाके विरुद्ध आधा वाक्य भी सुन नहीं सकता।

अभाग्य उसका। अङ्गदका स्वर अत्यन्त खिन्न था- ऐसे उदारशिरोमणि स्वामीकी शरण भी जिसे न सूझे, उसके जैसा भाग्यहीन दूसरा कौन होगा। अङ्गदको अपने पिताका स्मरण आ रहा था। दशग्रीव उनके पिताका मित्र बन चुका था। उसने अक्षम्य अपराध किया था; किन्तु अङ्गदको उसपर दया आ रही थीं उनके मनमें आता था- एक बार उसे ठीक ढंगसे समझाया जा पाता। सम्भव है उसे सद्बुद्धि आ ही जाय। न भी आवे तो पिताके मित्रके प्रति कर्तव्य-पालन न करनेका खेद तो मनमें नहीं रहता।

श्रीराम सर्वज्ञ हैं और भक्तवाच्छा-कल्पतरु हैं। अङ्गदकी इस कामनाको भी मन-ही-मन उन्होंने एवमस्तु कह दिया। अङ्गदको समझानेका अवसर मिलना उसी समय सुनिश्चित हो गया। यद्यपि उसकी चर्चा उस समय किसीके भी मुखपर नहीं आयी। उस चर्चाका अवसर तो सुबेलपर पहुँचनेपर आना था।

उनके ऐसा कहनेपर सुमित्राकुमार लक्ष्मणने मुख्य-मुख्य वानरोंके बीच महाराज श्रीरामके आदेशसे विभीषणका राक्षसोंके राजाके पदपर अभिषेक कर दिया।

तत्पश्चात् हनुमान और सुग्रीवने विभीषणसे पूछा- राक्षसराज। हम सब लोग इस अक्षोभ्य समुद्रको महाबली वानरोंकी सेनाओंके साथ किस प्रकार पार कर सकेंगे ?

जिस उपायसे हम सब लोग सेनासहित नदों और नदियोंके स्वामी वरुणाल समुद्रके पार जा सकें, वह बताओ।

तब विभीषणने यों उत्तर दिया- रघुवंशी राजा श्रीरामको समुद्रकी शरण लेनी चाहिये। इस अपार महासागरको राजा सगरने खुदवाया था। श्रीराम सगरके वंशज हैं। इसलिये समुद्रको इनका काम अवश्य करना चाहिये।

विद्वान राक्षस विभीषणके ऐसा कहनेपर सुग्रीव उस स्थानपर आये, जहाँ लक्ष्मणसहित श्रीराम विद्यमान थे।

वहाँ विशाल ग्रीवावाले सुग्रीवने समुद्रपर धरना देनेके विषयमें जो विभीषणका शुभ वचन था, उसे कहना आरम्भ किया।

भगवान् श्रीराम स्वभावसे ही धर्मशील थे, अत: उन्हें भी विभीषणकी यह बात अच्छी लगी। वे महातेजस्वी रघुनाथ लक्ष्मणसहित कार्यदक्ष वानरराज सुग्रीवका सत्कार करते हुए उनसे मुसकराकर बोले-

लक्ष्मण। विभीषणकी यह सम्मति मुझे भी अच्छी लगती है; परंतु सुग्रीव राजनीतिके बड़े पण्डित हैं और तुम भी समयोचित सलाह देनेमें सदा ही कुशल हो। इसलिये तुम दोनों प्रस्तुत कार्यपर अच्छी तरह विचार करके जो ठीक जान पड़े, वह बताओ।

भगवान् श्रीरामके ऐसा कहनेपर वे दोनों वीर सुग्रीव और लक्ष्मण उनसे आदरपूर्वक बोले-

इस भयंकर समुद्रमें पुल बाँधे बिना इन्द्रसहित देवता और असुर भी इधरसे लमापुरीमें नहीं पहुँच सकते।

इसलिये आप शूरवीर विभीषणके यथार्थ वचनके अनुसार ही कार्य करें। अब अधिक विलम्ब करना ठीक नहीं है। इस समुद्रसे यह अनुरोध किया जाय कि वह हमारी सहायता करे, जिससे हम सेनाके साथ रावणपालित लमापुरीमें पहुँच सकें।

उन दोनोंके ऐसा कहनेपर श्रीराम उस समय समुद्रके तटपर कुश बिछाकर उसके ऊपर उसी तरह बैठे, जैसे वेदीपर अग्निदेव प्रतिष्ठित होते हैं। लंकापति। राम ने विभीषण को संबोधित किया, राजनीति अथवा युद्ध संबंधी कोई भी चर्चा करने से पूर्व एक प्रश्न आपके परिवार की सुरक्षा के विषय में करना चाहता हूँ। वे प्राय: सुरक्षित हैं। विभीषण ने उत्तर दिया।

पर कैसे ? राम आश्वस्त नहीं थे, युद्ध यदि आर्य आदर्शों के अनुरूप हो रहा होता, तो आपकी बात मानने में मुझे कोई आपत्ति नहीं होती। उसमें असैनिकों का वध नहीं होता। किंतु रावण उन आदर्शों पर नहीं चलता है। उसे जब मालूम होगा कि आपका अभिषेक लंकापति के रूप में हो चुका है और आप हमारे पक्ष से युद्ध कर रहे हैं तो वह आपकी पत्नी तथा पुत्री को जीवित रहने देगा क्या ? युद्ध के उन्माद में उसे अपने संबंध और संबंधी याद नहीं रहते, अन्यथा वह विद्युज्जिह्व की हत्या नहीं करता।

मैं भावना में बह गया था। विभीषण कुछ संकुचित हुए, रावण की प्रकृति को देखते हुए तो सरमा और कला तनिक भी सुरक्षित नहीं हैं; किंतु आप उन परिस्थितियों पर विचार कीजिए जिनमें आर्या सीता अभी तक वहाँ सुरक्षित हैं। यह रावण की अपनी इच्छा से नहीं हो रहा। उसी प्रकार लंका में ऐसी शक्तियाँ हैं, जो सरमा और कला की भी रक्षा करेंगी। जहाँ तक मेरी समझ काम करती है; बहुत रुष्ट होने पर रावण उन्हें अवरोध में तो रख सकता है, उन पर पहरा बैठा सकता है, पर उनकी हत्या नहीं कर सकता।

फिर भी वे कौन-सी शक्तियाँ हैं ?

विभीषण कुछ देर सोचते रहे, फिर धीरे-से बाले, आरम्भ से ही मेरा रावण से नीति-संबंधी विरोध था। मुझे उसका विस्तारवादी, साम्राज्यवादी, उच्छृंखल, अत्याचारी रूप तनिक भी पसंद नही था। समय-समय पर मैं अपना विरोध प्रकट भी करता रहा हूँ। मेरे कुछ प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष समर्थक भी थे, किंतु रावण ने उसकी कभी चिंता नहीं की।

वह राक्षस साम्राज्य के विस्तार का काल था। सारे विश्व का धन, सुख विलास, सत्ता-अधिकार लंका में एकत्रित हो रहा था, तो सामान्य राक्षस रावण का विरोध क्यों करते अथवा मेरा साथ क्यों देते ? मंदोदरी भाभी को भी रावण द्वारा ब्याही, हरी या खरीदी गई सुंदरियों के कारण कोई विरोध नहीं था, क्योंकि उनके लिए सुख के साधन भी बढ़ रहे थे और उनका रूप और सौंदर्य उनके अपने अधिकारों की रक्षा के लिए पर्याप्त था। फिर वे अपने पति पर पूर्णत: आश्रित थीं- उनका अपना बल कोई नहीं था। किंतु क्रमश: राक्षस-व्यवस्था के सुखों की सीमा आ गई और उसके दोषों का रूप प्रकट होने लगा। मेघनाथ बड़ा होता गया और अपनी अमर्यादित महत्त्वाकांक्षाओं में रावण के अनुचित कामों में न केवल वह उसका समर्थक होता चला गया, वरन् स्वयं भी पिता के पद-चिन्हों पर आगे बढ़ता गया और अपने पिता को अनौचित्य की ओर धकेलता चला गया। रावण भी मेघनाथ का बल पाकर और अधिक अहंकारी और क्रूर होता गया।

यह सारा समय मेरे लिए भीषण अंतर्द्वंद्व का समय रहा है। मैं वस्तुत: लंका की प्रजा और अपनी जाति से प्रेम करता हूँ और उनका तनिक भी अहित नहीं चाहता। किंतु मुझे आरंभ से ही लगता रहा है कि यह अनिष्ट का मार्ग है। इससे लंका के धनाढ्य वर्ग को अब भी लाभ पहुँच रहा है। शासन धनी और संपन्न हो रहा है, किंतु सामान्य जन अधिक पीड़ित होता जा रहा है। प्रत्येक पुरुष किसी भी प्रकार धनाढ्य होना चाहता है और अन्य पुरुषों को दास तथा स्त्रियों को वेश्या बना देना चाहता है। समग्रत: यह मार्ग विनाश का मार्ग है।

कुंभकर्ण रावण द्वारा प्रस्तुत की गई मदिरा तथा भोग-सामग्री के कारण एक प्रकार की अक्रिय तटस्थता अपनाए बैठा है और मैं रावण से सदा असहमत रहा हूँ। हमारी एकमात्र बहन शूर्पणखा जिस वीभत्स रूप को प्राप्त हुई है, उसके लिए भी दोषी स्वयं रावण है और अब वह भी रावण के रक्त की प्यासी है। हम सबसे निराश हो रावण की सारी महत्त्वकांक्षाएँ अपने अन्य पुत्रोंके साथ-साथ मेघनाथ पर आ टिकी हैं। प्रत्येक महत्वपूर्ण पद पर वह मेघनाथ को ही प्रतिष्ठित करना चाहता है। रावण द्वारा मेघनाथ का यह बलात आरोपण अन्य लोगों के लिए पर्याप्त दमनमूलक है। पिता-पुत्र पूर्ण अधिनायकत्व प्राप्त कर, शासन-पद्धति तथा विधान की सर्वथा उपेक्षा कर निर्द्वंद्व शासन नीति चला रहे हैं।

मैंने अनेक अवसरों पर रावण का विरोध किया था, किंतु खुले विद्रोह का साहस कभी नहीं कर सका। लंका की परिस्थितियों में विद्रोह आत्महत्या के समान होता। यदि रावण वस्तुत: क्रुद्ध हो जाता और वह मुझे अपने लिए संकटपूर्ण मान लेता तो प्रत्यक्ष अथवा गोपनीय ढंग से मेरा वध करवा, मेरे अनुचरों, मित्रों, संबंधियों तथा मंत्रियों की हत्याएँ करवा देना उसके लिए तनिक भी कठिन नहीं था। मैं इस प्रकार की निरर्थक आत्महत्या के लिए तैयार नहीं था।

सीता अपहरण का प्रसंग प्रजा तथा राजपार्षदों के लिए दमन की पराकाष्ठा भी था और अन्याय की चरम सीमा भी। इस कृत्य के पश्चात् उसके साथ निर्वाह करना मेरे लिए बहुत कठिन हो गया था। इधर आपकी सेना के आगमन से लंका पर पड़े दबाव से जो स्थिति उत्पन्न हो गयी थी; उसमें मैं कुछ खुलकर कह सकता था। मैंने प्रयत्न किया; किंतु रावण ने मेरी बात नहीं सुनी और परिणाम आपके सामने है।

श्रीराम का चेहरा गम्भीर था। वे विभीषण को देखते रहे और लंका-विषयक उनके विश्लेषण पर विचार करते रहे; और सहसा जैसे किसी निष्कर्ष पर पहुँचते हुए बोले, मनुष्य देख पाए या न देख पाए, किंतु प्रकृति के अपने निश्चित और अपरिवर्तनीय नियम हैं। वे ही प्राकृतिक सत्य हैं। सारी सृष्टि उन्हीं सत्यों के आधार पर चलती है और उन्हीं से प्रकृति का संतुलन बना रहता है। उन्होंने रुककर विभीषण को देखा, बंधुवर। जब कोई नई सभ्यता उत्पन्न होती है तो वह अपने विकास के आरंभिक चरणों में संसार को बहुत कुछ नया देती है- अत: उससे लाभान्वित होने वाले प्रजाजन के द्वारा उसका स्वागत भी होता है। किंतु, अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँचकर, जब कुछ धनात्मक देने में असमर्थ हो जाती है तो जीवन के कुछेक पक्षों पर अतिरिक्त तथा असंतुलित बल देने के कारण प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ने लगती है; अत: अनेक अंतर्विरोधों को जन्म देती है। देव सभ्यता ने भी विलास पर अतिरिक्त बल दिया और अपने ही अंतर्विरोधों के कारण नष्ट हो गई। राक्षस सभ्यता भी अपने ही अंतर्विरोधों के कारण अब भीतर से खोखली हो चुकी है। अत: उसके नाश का समय आ गया है। यदि किसी सभ्यता के अपने अंतर्विरोध उसे भीतर से खोखला न कर चुके हों, तो बाहरी आक्रमण उसकी अधिक क्षति नहीं कर पाता।

राक्षसराज रावण सहसा व्यग्र हो उठा और अपने कर्तव्यका निश्चय करके अर्थवेत्ताओंमें श्रेष्ठ शुक नामक राक्षससे यह उत्तम वचन बोला- दूत- तुम मेरे कहनेसे शीघ्र ही वानरराज सुग्रीवके पास जाओ और मधुर एवं उत्तम वाणीद्वारा निर्भीकतापूर्वक उनसे मेरा यह संदेश कहो- वानरराज। आप वानरोंके महाराजके कुलमें उत्पन्न हुए हैं। आदरणीय ऋक्षरजाके पुत्र हैं और स्वयं भी बड़े बलवान् हैं। मैं आपको अपने भाईके समान समझता हूँ। यदि मुझसे आपका कोई लाभ नहीं हुआ है तो मेरे द्वारा आपकी कोई हानि भी नहीं हुई है।

सुग्रीव। यदि मैं बुद्धिमान् राजपुत्र रामकी स्त्रीको हर लाया हूँ तो इसमें आपकी क्या हानि है ? अत: आप किष्किन्धाको लौट जाइये।

हमारी इस लमामें वानरलोग किसी तरह भी नहीं पहुँच सकते। यहाँ देवताओं और गन्धर्वोंका भी प्रवेश होना असम्भव है; फिर मनुष्यों और वानरोंकी तो बात ही क्या है ?

राक्षसराज रावणके इस प्रकार संदेश देनेपर उस समय निशाचर शुक तोता नामक पक्षीका रूप धारण करके तुरंत आकाशमें उड़ चला।

समुद्रके ऊपर-ही-ऊपर बहुत दूरका रास्ता तै करके वह सुग्रीवके पास जा पहुँचा और आकाशमें ही ठहरकर उसने दुरात्मा रावणकी आज्ञाके अनुसार वे सारी बातें सुग्रीवसे कहीं।

जिस समय वह संदेश सुना रहा था, उसी समय वानर उछलकर तुरंत उसके पास जा पहुँचे। वे चाहते थे कि हम शीघ्र ही इसकी पाँखें नोच लें और इसे घूसोंसे ही मार डालें। इस निश्चयके साथ सारे वानरोंने उस निशाचरको बलपूर्वक पकड़ लिया और उसे कैद करके तुरंत आकाशसे भूतलपर उतारा। राम की बात समाप्त होनेपर संभवत: चर्चा आगे बढ़ती, किंतु थोड़ी दूर से आते हुए कोलाहल ने उन सबका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लिया।

कोलाहल निकट आया तो सबने देखा कि चार वानर प्रहरी एक व्यक्ति को पकड़े हुए घसीटे ला रहे हैं और वह व्यक्ति बार-बार चिल्ला रहा था कि उसे वानरराज सुग्रीव से मिलना है, कंगले तपस्वी राम से उसका कोई काम नहीं है और वानर थे कि बार-बार उसे डाँटकर चुप करा रहे थे। विभीषण ने ध्यान से उस व्यक्ति को देखा तो अनायास ही उनके मुख से निकला, शुक।

कौन है यह ? सुग्रीव ने पूछा।

यह रावण का विशेष दूत है। विभीषण बोले, यह व्यक्ति कूटनीति और धूर्तता के लिए प्रसिद्ध है। जब रावण अपनी सैनिक शक्ति का प्रयोग नहीं करता, तो इसका प्रयोग करता है। इस समय इसका यहाँ आना विशेष रूप से अर्थपूर्ण है।

तब तक वानरों ने शुक को लाकर राम के सम्मुख खड़ा कर दिया था, आर्य राम को प्रणाम करो।

किंतु शुक के चेहरे का भाव तनिक भी शालीन नहीं हुआ। वह अपने चेहरे पर कुछ और वितृष्णा और घृणा ले आया, मैंने कह दिया कि मैं राक्षसराज लंकेश्वर महाराजाधिराज रावण का दूत हूँ और उनका संदेश लेकर आया हूँ। कंगले तपस्वियों से मेरा कोई अभिप्राय नहीं है। एक नृप का संदेश किसी नरेन्द्र को ही दिया जा सकता है। मैं किष्किंधापति वानरराज सुग्रीव के लिए राज-संदेश लाया हूँ। उस कंगले...

एक वानर प्रहरी का हाथ उठा, कदाचित् वह शुक को एक थप्पड़ लगा देता।

ठहरो। राम ने उसे बीच में ही रोक दिया, यद्यपि अब हम रावण को लंकेश्वर नहीं मानते, लंकापति विभीषण हैं; फिर भी यदि यह किष्किंधापति वानरराज सुग्रीव के सम्मुख कुछ निवेदन करना ही चाहता है तो इसकी इच्छा पूरी करो। वह स्वयं को दूत बता रहा है तो उसे दूत की मर्यादा दो। राम की मुसकान अत्यंत मोहक थी।

प्रहरियों ने शुक को सुग्रीव के सम्मुख खड़ा कर दिया। इस बार शुक का व्यवहार अत्यंत बदला हुआ था। उसने पूरे राजसी आडम्बर के साथ सुग्रीव का अभिवादन किया और अत्यंत शालीनतापूर्वक निवेदन किया, यह जन किष्किंधापति वानरराज सुग्रीव की सेवा में राक्षसराज लंकेश्वर रावण का संदेश निवेदित करने की अनुमति चाहता है।

सुग्रीव के सम्मुख आज पहली बार यह संकट आया था, जबकि राम की उपेक्षा कर, उनको इतना महत्त्व दिया जा रहा था। महत्त्व पाना सुग्रीव के लिए संकट का विषय नहीं था, किंतु भरी सभा में, प्राय: सभी प्रमुख सेनापतियों तथा मंत्रियों के सम्मुख यह दूत उनको सम्मान देने के बहाने राम की जो अवमानना कर रहा था, वह निश्चित रूपसे स्थिति को बहुत ही विकट बना रही थी। किंतु स्वयं राम ने शुक को यह अनुमति दी थी और इसमें कोई संदेह नहीं था कि वानरों के राजा सुग्रीव ही थे- राम नहीं। इसके लिए दूत को कुछ कहा भी नहीं जा सकता था।

अनुमति है। सुग्रीव ने एक भीत दृष्टि अपने साथियों पर डाली। वे देख रहे थे कि दूत के वचनों द्वारा उत्पन्न कर दी गई यह स्थिति

किसी के लिए भी सुखद नहीं थी।

वानरराज। राक्षसराज ने कहा है कि, शुक असाधारण शालीनता से बोला, हमारे दोनों राज्यों की मैत्री आपके पिता सम्राट ऋक्षराज के समय से ही चली आ रही है। बालि मेरा मित्र था। उसके हाथों अपने परिजन मायावी के वध के पश्चात् भी मैंने उसका विरोध नहीं किया। इस दृष्टि से तुम मेरे भाई के समान हो। तुम्हारा मैंने कभी कोई उपकार नहीं किया तो कभी कोई अपकार भी नहीं किया। तुमसे मेरी शत्रुता नहीं है। ऐसे में एक बाहरी व्यक्ति, जिसका न अपना राज्य है, न सेना है, वानर जिसकी न जाति के हैं, न गोत्र के- तुम्हें फुसलाकर मेरे विरुद्ध लड़ने के लिए ले आया है। शत्रुता किसी की और युद्ध में प्राण देने कोई और आया है। यदि मैंने राम की पत्नी का हरण किया है तो उसमें तुम्हें मुझ जैसे मित्र के विरुद्ध युद्ध करने की क्या आवश्यकता है ? इस युद्ध में विजय वानरों की हो या राक्षसों की- राज्य या मेरा जाएगा या तुम्हारा, सेनाएँ मेरी नष्ट होंगी या तुम्हारी, परिजन मेरे मरेंगे या तुम्हारे- इस युद्ध में उस कंगले राम का कुछ भी दाँव पर लगा हुआ नहीं है। उस कंगले परदेसी के बहकावे में क्यों आते हो ? तुम्हें कुछ चाहिए तो मुझसे कहो। युद्ध में सिवाय अपने और अपनी जाति के विनाश के तुम्हें और कुछ हाथ नहीं लगेगा।

आरंभ में सुग्रीव भी अत्यंत शांत बने रहे थे, किंतु क्रमश: उनकी व्यग्रता उनके चेहरे पर प्रकट होती दिखाई दी। अंत तक आते-आते लगा कि यदि दूत मौन नहीं हो गया होता तो सुग्रीव उसे मौन कर ही देते।

दूत के चुप होने तक सुग्रीव का धैर्य जैसे समाप्त हो चुका था। वे वानरराज की मर्यादा भूलकर अत्यंत क्रुद्ध व्यक्ति के समान फूट पड़े, आज रावण को याद आया है कि वह राक्षसराज है और मैं वानरराज हूँ; इसलिए हममें मैत्री ही नहीं, भ्रातृत्व का संबंध है। वह भूल गया कि आज तक समस्त नृपों को वह अपना दास बनाने के लिए सैनिक अभियान करता आया है। उसने नृपों को अपना मित्र नहीं, दास माना है। वह नृप होकर भी पर-धन पर अधिकार और पर-स्त्रियों का हरण करता आया है, और जिसे वह बार-बार उपेक्षा और अवहेलना से कंगला, निर्धन और तपस्वी कहता आया है वह स्वत्वहीन आर्य राम मुझ और विभीषण जैसे अपमानित, अवमानित, निष्कासित असहाय मित्रों को सम्राज्यदान करते आए हैं। जब मेरी पत्नी का अपहरण कर, मुझे किष्किंधा से निष्कासित किया गया था और मैं अपने प्राणों की रक्षा के लिए वनों-पर्वतों में छिपा फिरता था, तब रावण को याद नहीं आया था कि मैं उसका भाई हूँ। सुग्रीव ने रुककर शुक को देखा और पूरे आक्रोश से बोले, रावण से कहना कि मैं और वह कैसे भाई हैं, इसे वह भूल जाए; किंतु विभीषण और रावण कैसे भाई हैं, इसे याद रखे। यह संदेश उसने अपने सहोदर भ्राता विभीषण को क्यों नहीं भेजा कि वे उससे मिलकर अपना मतभेद दूर कर लें। और दूत। सुग्रीव का स्वर और भी ऊँचा हो गया, अभी तक कोई नहीं भूला कि रावण लंका का निवासी नहीं है- वह बाहर का व्यक्ति है। रावण की राजसभा में एक भी सभासद लंका का मूल निवासी नहीं है और जहाँ तक जाति की बात है, राम मेरी जाति के नहीं हैं; किंतु वे सब दीन-हीन, निराश्रित-दुर्बल लोग, जिन्हें रावण की राक्षसी सेनाएँ मारती, काटती, पीटती, लूटती तथा पीड़ित करती रही हैं- वे सब मेरी ही जाति के हैं। राम की जाति को रावण नहीं जानता। राम की जाति मानवता की जाति है, यह बात तुम्हारे उस रावण की समझ में नहीं आएगी तुम अब जाओ, अन्यथा तुम्हारा कोई अनिष्ट हो जाए तो मैं उत्तरदायी नहीं होऊँगा।

एक निवेदन और है, सम्राट। वह अत्यंत वक्र वाणी में बोला, यदि आप राम और लक्ष्मण को बंदी कर राक्षसराज को सौंप दें तो वे आपको समस्त वानर जातियों का एकछत्र सम्राट स्वीकार कर लेंगे; अन्यथा वह चुप हो गया।

अन्यथा ? सुग्रीव ने पूछा।

अन्यथा, वह एक विषैली मुसकान अपने अधरों पर ले आया, अन्यथा स्वर्गीय सम्राट वाली के न्यायोचित उत्तराधिकारी युवराज अंगद को वानरों के सम्राट के रूप में प्रतिष्ठित कर, आपको भ्रातृवध के अपराध के दण्डस्वरूप मृत्युदण्ड।

शुक की बात अभी पूरी नहीं हुई थी कि अंगद उस पर झपट पड़े। इससे पहले कि कोई उन्हें रोकता, उन्होंने शुक के मुख पर तीन-चार मुष्टि-प्रहार कर डाले। वह मुख से रक्त थूक रहा था कि राम ने आगे बढ़कर अंगद की बाँह पकड़ लीं।

अंगद का शरीर, राम के स्पर्श से जैसे बँध गया किंतु उनकी जिह्वा चल निकली, नीच। तू यहाँ अपनी धूर्तता दिखाने आया है। हममें फूट का विष-वृक्ष बोना चाहता है। तेरा राजाधिराज क्या सारे विश्व का न्यायनियंता है ? उसने किस न्यास से कुबेर की लंका छीनी थी तथा अन्य लोगों के राज्यों, धन तथा स्त्रियों का हरण किया था। जा, जाकर उसे कह दे कि वह राजनीति की चिंताएँ अब छोड़ दे। हम स्वयं लंका में आ रहे हैं उसके अपराधों और पापों के लिए उसे मृत्युदंड देने और लंका के हेमसिंहासन पर न्यायोचित उत्तराधिकारी को बैठाने।

शांत हो जाओ, युवराज। राम मधुर स्वर में बोले, इस व्यक्ति पर क्रोध करना अनावश्यक है। यह तो दूत मात्र है। वे शुक की ओर मुड़े, दूत। यद्यपि रावण ने मुझसे सम्बोधित होना अपने लिए अवमानना माना है, फिर भी जब कभी रावण के पास पहुँच सको, उसे मेरा एक संदेश दे देना। वे थमकर बोले, मेरे पास न राज्य है, न सत्ता, न सेना- मैं निर्धन, कंगाल तथा निष्कासित वनवासी हूँ; किंतु मेरे पास अपने इन मित्रों के रूप में जो धन है, रावण के साम्राज्य पर भी भारी पड़ेगा। वे मुसकराए, अब आओ। इससे पहले कि हमारे सैनिक यह जान पाएँ कि तुमने यहाँ क्या विष-वमन किया है, तुम्हें सुरक्षित स्थान पर भेज रहा हूँ- सैनिक कारागार में। उचित समय आने पर तुम्हें मुक्त कर दिया जाएगा। यदि तुमने भागने का प्रयत्न किया तो कदाचित् तुम्हारी सुरक्षा के लिए हम कुछ भी कर न सकें।

वानर प्रहरी शुक को शीघ्रतापूर्वक वहाँ से निकाल ले गए; अन्यथा साधारण वानर सैनिक तो कदाचित् बाद में ही कुछ करते, स्वयं सुग्रीव का आक्रोश इतना बढ़ता जा रहा था कि संदेह होता था कि कहीं वे ही उसके वध का आदेश न दे दें।

शुक के जाने के पश्चात वहाँ एक अटपटा-सा मौन छा गया। सब लोग स्वयं को संयत तथा संतुलित करने का प्रयत्न कर रहे थे।

उस मौन को सबसे पहले राम ने ही तोड़ा। मित्रों। शस्त्र-युद्ध तो बाद में होगा, कूटनीतिक युद्ध पहले ही आरंभ हो गया है। रावण का यह पहला प्रहार था। इसका अर्थ यह भी है कि वह हमारी शक्ति से भयभीत है और यह भी कि वह समझता है कि हमारी एकता इतनी दृढ़ नहीं है, जिसे खण्डित न किया जा सके। राम कुछ सोचते रहे, ये सारी बातें जो आज कहीं गई हैं, बार-बार कही जा सकती हैं। कहा जा सकता है कि मैं एक बाहरी व्यक्ति हूँ। यह युद्ध मेरा और रावण का युद्ध है- भला उसमें वानरों और भालुओं को अपने प्राण देनेकी क्या आवश्यकता है। अंगद के पिता का वध मेरे हाथों हुआ है और विभीषण की बहन लक्ष्मण के हाथों अपमानित हुई है।

मुझे क्षमा कीजिएगा, आर्य राम। हनुमान अपना संकोच छोड़, कुछ आवेश में बोले, आपकी बात बीच में ही काट रहा हूँ। यदि हमारी सद्भावना इतनी ही कच्ची है तो न केवल हमें यह सब कहा जा सकता है, आपको भी समझाया जा सकता है कि आप अयोध्या के राजकुमार हैं। भावी सूर्यवंशी सम्राट हैं। आपको इन वानर-भालुओं जैसी पिछड़ी, पशु-सरीखी जातियों से मैत्री करने की क्या आवश्यकता है। यदि आपकी पत्नी का हरण हो ही गया है तो आप अयोध्या से सेनाएँ मँगवाएँ, इंद्र, ब्रह्मा और शिव से सहायता माँगें। और यदि जीत सकें तो सारे जंबुद्वीप पर अपना अक्षुण्ण राज्य स्थापित करें। किंतु आप जानते हैं कि, हनुमान रुके, हमारे सम्बन्ध स्वार्थ पर नहीं, सिद्धांत पर आधृत हैं। यह युद्ध न्याय और अन्याय का युद्ध है। यह युद्ध शोषितों के द्वारा शोषकों के विरुद्ध लड़ा जा रहा है। हम आपके लिए नहीं, अपने लिए लड़ रहे हैं। शताब्दियों में पहली बार ये पिछड़ी जातियाँ इतनी आत्मविश्वासी हो सकी हैं कि उन्होंने लंका की विपरीत दिशा में भागने के स्थान पर, लंका के सागर के तट पर, आक्रमण के लक्ष्य से अपना पड़ाव है। यह किसी का व्यक्तिगत युद्ध नहीं है। भद्र राम। यह तो पीड़ित मानवता का अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध अपना स्वातंत्र्य युद्ध है। राक्षसों के घरों में पशुओं के समान पिसते दास-वानर, लंका के हाटों में जीवित तथा मृत वानरों का बिकता मांस और अस्थियाँ, वानर बस्तियों पर राक्षसों के आक्रमण, हमारी स्त्रियों का अपहरण, हमारी अगली पीढ़ियों का पंगु बनाने का उनका प्रयत्न, नदी के समान समुद्र में गिरने जैसे हमारी संपत्ति का लंका की ओर प्रवाहित होना हम यह सब भूल जाएँगे क्या ? हनुमान का स्वर भावावेश से काँप रहा था, यदि आप हमारे लिए बाहरी और पराए हैं, तो हमारा अपना कौन है ?

तुम ठीक कहते हो, हनुमान। विभीषण का स्वर चिंतन में डूबा हुआ था, रिश्ते-नाते रक्त-मांस से भी होते हैं; किंतु वास्तविक संबंध तो सिद्धांत, लक्ष्य और गंतव्य की एकता का है।

प्रकृति के साथ मनुष्य कितनी संघर्ष करता है और अंतत: प्रकृति को अपने अनुकूल बना लेता है- प्रकृति का अनुकूलन भी प्रकृति के नियमों के अनुसार ही होता है। उन नियमों को खोजना पड़ता है। ये सारे ऋषि, मुनि, आचार्य उन्हीं नियमों को खोजने में लगे हुए हैं- भौतिक संसार के क्षेत्र में, मानव समाज के क्षेत्र में, अध्यात्म के क्षेत्र में। प्रत्येक क्षेत्र का अन्वेषक अपने क्षेत्र के नियमों को ही सत्य मानता है; उसे सोचना चाहिए कि सत्य वही नियम हो सकता है, जो प्रत्येक क्षेत्र के अनुसंधान से सत्य प्रमाणित हो। एक क्षेत्र का सत्य यदि दूसरे में जाकर असत्य हो जाता है, तो वह पूर्ण सत्य नहीं हो सकता।

शुकके वचन और विलापको सुनकर भगान् श्रीरामने उसे पीटनेवाले प्रमुख वानरोंको पुकारकर कहा- इसे मत मारो।

शुक आकाशमें खड़ा हो गया और पुन: बोला- महान बल और पराक्रमसे युद्ध शक्तिशाली सुग्रीव। समस्त लोकोंको रुलानेवाले रावणको मुझे आपकी ओरसे क्या उत्तर देना चाहिये।

(दूत। तुम रावणसे इस प्रकार कहना-) वधके योग्य दशानन। तुम न तो मेरे मित्र हो, न दयाके पात्र हो, न मेरे उपकारी हो और न मेरे प्रिय व्यक्तियोंमेंसे ही कोई हो। भगवान् श्रीरामके शत्रु हो, इस कारण अपने सगे-सम्बन्धियोंसहित तुम वालीकी भाँति ही मेरे लिये वध्य हो।

नास्तिकता, चोरी, कलह, नशा और पर नारि हरण ह सब वस्तुएँ वंश विनाशनहारि है। आँखों के रहते वो अन्धा है वो बीज जहर का बोता है। चोरी से हरकर परनारी अब युद्ध में सम्मुख होता है। इस उल्टी चाल के कारण ही लंका की सत्यानाशी हो रही है। यह बार-बार जता देना जानकी रावण की जान की प्यासी है।

निशाचराज। मैं पुत्र, बन्धु और कुटुम्बीजनोंसहित तुम्हारा संहार करूँगा और बड़ी भारी सेनाके साथ आकर समस्त लमापुरीको भस्म कर डालूँगा। मूर्ख रावण। यदि इन्द्र आदि समस्त देवता तुम्हारी रक्षा करें तो भी श्रीरघुनाथके हाथसे अब तुम जीवित नहीं छूट सकोगे। तुम अन्तर्धान हो जाओ, आकाशमें चले जाओ, पातालमें घुस जाओ अथवा महादेवजीके चरणारविन्दोंका आश्रय लो; फिर भी अपने भाइयोंसहित तुम अवश्य श्रीरामके हाथोंसे मारे जाओगे।

तीनों लोकोंमें मुझे कोई भी पिशाच, राक्षस, गन्धर्व या असुर ऐसा नहीं दिखायी देता, जो तुम्हारी रक्षा कर सके।

चिरकालके बूढ़े गृध्रराज जटायुको तुमने क्यों मारा ? यदि तुममें बड़ा बल था तो श्रीराम और लक्ष्मणके पाससे तुमने विशाललोचना सीताका अपहरण क्यों नहीं किया ? तुम सीताजीको ले जाकर अपने सिरपर आयी हुई विपत्तिको क्यों नहीं समझ रहे हो।

रघुकुलतिलक श्रीराम महाबली, महात्मा और देवताओंके लिये भी दुर्जय हैं, किंतु तुम उन्हें अभीतक समझ नहीं सके। (तुमने छिपकर सीताका हरण किया है, परंतु) वे सामने आकर तुम्हारे प्राणोंका अपहरण करेंगे।

तत्पश्चात् वानरशिरोमणि वालिकुमार अङ्गदने कहा- महाराज। मुझे तो यह दूत नहीं, कोई गुप्तचर प्रतीत होता है। इसने यहाँ खड़े-खड़े आपकी सारी सेनाका माप-तौल कर लिया है- पूरा-पूरा अंदाजा लगा लिया है। अत: इसे पकड़ लिया जाय, लमाको न जाने पाये। मुझे यही ठीक जान पड़ता है।

फिर तो राजा सुग्रीवके आदेशसे वानरोंने उछलकर उसे पकड़ लिया और बन्दी बना दिया। वह बेचारा अनाथकी भाँति विलाप करता रहा। उन प्रचण्ड वानरोंसे पीड़ित हो शुकने दशरथनन्दन महात्मा श्रीरामको बड़े जोरसे पुकारा और कहा- प्रभो। बलपूर्वक मेरी पाँखें नोची और आँखे फोड़ी जा रही हैं। यदि आज मैंने प्राणोंका त्याग किया तो जिस रातमें मेरा जन्म हुआ था और जिस रातको मैं मरूँगा, जन्म और मरणके इस मध्यवर्ती कालमें, मैंने जो भी पाप किया है, वह सब आपको ही लगेगा। उस समय उसका वह विलाप सुनकर श्रीरामने उसका वध नहीं होने दिया। उन्होंने वानरोंसे कहा- छोड़ दो। यह दूत होकर ही आया था।

१२) सागर पर राम का रोष - रावण ने अपना एक भी सैनिक सागर के इस ओर नहीं छोड़ा था। वह सैनिक-जलपत्तन भी खाली कर गया था। क्या है रावण के मन में ? राम की चिंता बढ़ती जा रही थी। उसने राम की सेना को कहीं भी रोकने का प्रयत्न नहीं किया थां अपनी सैनिक चौकियों और जलपत्तन पर अधिकार बनाए रखने का रंचमात्र भी प्रयत्न नहीं किया था। क्या वह लंका में इतना सुरक्षित है ? वह समझता है कि राम की सेना कभी भी सागर पार नहीं कर पाएगी ? वानर-सेना सागर में डूब मरेगी? सागर-तट पर पड़ी-पड़ी सागर पार करने के साधनों की प्रतीक्षा में अन्न-जल समाप्त होने पर तड़प-तड़पकर प्राण दे देगी ? प्रायोपवेशन करने को बाध्य होगी अथवा निराश होकर लौट जाएगी ? इतना कठिन है क्या सागर पार करना ?

या रावण लंका में किसी विकट व्यूह की रचना कर रहा है ? यदि राम अपनी सेना-सहित लंका में जा पहुँचें तो उसके तैयार किए जाल में तो नहीं जा फँसेंगे ? या अवसर पाकर उनकी असावधानी में वह उन पर आक्रमण करना चाहता है ?

रावण ने अपना चर भेजा था- शुक। शुक ने सीता के परम अधिपति राम से कुछ नहीं कहा, वह सुग्रीव से संबोधित हुआ। उसने सुग्रीव को याद दिलाया कि वह राजा है और राम कंगला, निर्वासित तापस। उसने सुग्रीव के मन में भेद उत्पन्न करना चाहता है। वह सफल नहीं हुआ; किंतु किसी समय रावण की यह चाल चल भी सकती है। यदि सुग्रीव अपने राजत्व के दंभ में सेना का नायकत्व अपने हाथ में ले ले ? यदि लंका-विजय का श्रेय वह स्वयं लेना चाहे ? यदि वह लंका का राज्य हस्तगत करना चाहे ?

केवल सुग्रीव ही क्यों ? रावण किसी भी समय अंगद को याद दिला सकता है कि उसके पिता का वध राम के हाथों हुआ है। तार का बहनोई था बालि और सुषेण का जमाता। युद्ध के किसी महत्त्वपूर्ण क्षण में रावण, विभीषण को फुसलाकर ले जाए।

कैसे-कैसे जोखिम हैं इस सेना के संगठन में। रावण सरलता से सफल नहीं होगा- राम जानते हैं- राम के लिए सुग्रीव के मन में भय भी है और स्नेह भी। सुग्रीव ने आज तक उन्हें अपने वरिष्ठ मित्र का सम्मान दिया है वह राम और लक्ष्मण की शस्त्र-शक्ति को जानता है और वह जानता है कि राम से टूटते ही उसके अपने घर में उसके विरुद्ध द्रोह हो सकता है। वह यह भी समझता ही होगा कि रावण कभी विश्वसनीय मित्र नहीं हो सकता।

हनुमान, नल और नील कभी राम का साथ नहीं छोड़ेंगे। हनुमान को राम ने जितना पहचाना है, उस दृष्टि से वह सुग्रीव को छोड़ सकता है, राम को नहीं। अंगद ने भी कभी कोई ऐसा लक्षण नहीं दिखाया। अंगद अपनी माँ के कारण सुग्रीव के विरुद्ध नहीं जा सकता, तो राम के विरुद्ध कैसे जाएगा विभीषण यदि रावण के जीवित रहते लंका में लौट गया तो उसका वध भी हो सकता है।

नहीं। राम के ये मित्र उन्हें छोड़ नहीं सकते। उनकी प्रकृति ऐसी नहीं हैं उन पर संदेह करना व्यर्थ है फिर रावण का विरोध और भय उन्हें एक साथ बाँधे रखेगा।

हमारा विरोध रावण के क्रूर शासन तथा उसके लिए उत्तरदायी लोगों से है। राक्षस प्रजा से हमारा कोई विरोध नहीं है, अन्यथा विभीषण मुझे भाई के समान प्रिय कैसे होते ?

थोड़ी-थोड़ी देर में राम का मन अपनी असहायता पर सिर धुनने को होता और फिर समुद्र के विरुद्ध उनका आक्रोश संचित होने लगता। उनका वश चलता तो वे सागर को पी जाते, जैसे अगस्त्य ने पिया था किंतु साथ ही साथ वे यह भी जानते थे कि इस आक्रोश से कुछ नहीं होगा। जब तक समाधान उपलब्ध नहीं होते, तब तक सागर-संतरण नहीं होगा।

किंतु संध्या तक कोई मार्ग दिखाई नहीं पड़ा। राम का धैर्य क्रमश: क्षीण हो रहा था और उनका आक्रोश बढ़ता जा रहा था। अत्याचारी रावण अपने सारे पापों के साथ सुरक्षित बैठा रहेगा, क्योंकि राम इस सागर के सामने असहाय हो रहे हैं ? ब्रह्मा का प्रपौत्र है रावण। शिव का परम भक्त है, प्रिय शिष्य। बड़े-बड़े लोगों की सहायता है रावण को, पापी और अत्याचारी रावण को। विश्व के समस्त सागरों पर जिसके जलपोतों का एकछत्र साम्राज्य माना जाता है, वह वरुण भी राम की सहायता को नहीं आया है। ये देव शक्तियाँ अपने सीमित स्वार्थों, ईर्ष्या-द्वेष तथा संकुचित दृष्टि के कारण नष्ट हो जाएँगी। नहीं चाहिए राम को किसी की सहायता। सामर्थ्य इन महाशक्तियों का ही एकाधिकार नहीं है। राम इस पिछड़ी हुई मानवता को ही समर्थ बनाकर छोड़ेंगे।

अपने बाहुबल से सागर से भूमि छीनूँगा। राम बोले, जैसे परशुराम ने छीनी थी।

उपस्थित लोग स्तब्ध रह गए- हाँ, परशुराम ने सागर के जल को धकेलकर अपने लिए नई भूमि का निर्माण किया था।

मैं ये सारे पहाड़ खोदकर सागर में डालने का प्रस्ताव कर रहा हूँ। राम बोले, जिसे यह असंभव लगता हो, वह लौट जाए। राम अब सागर-तट पर और भटकना नहीं चाहता, न अपने साथियों को भूखा मरते देखना चाहता है।

राम की मुट्ठी अपने धनुष पर कस गई।

लक्ष्मण चकित दृष्टि से राम को देख रहे थे- इतना आवेश।

अब समुद्र कैसे पार किया जाय ? विभीषणको अभिषिक्त करके श्रीराम मूल प्रश्नपर आ गये। उन्होंने विभीषणकी ओर ही देखा।

आपको सागरकी शरण लेना चाहिये। विभीषणने कहा- आपके पूर्वज महाराज सगरके पुत्रोंने अभिवर्धन किया है। वैसे भी यह नारायणाङ्ग-समुद्भव है। अत: आपकी प्रार्थनापर उदधिके अधिदेवताको प्रकट होकर स्वयं पार होने का पथ बतलाना चाहिये। यह उत्तम सम्मति है। स्वभावसे शान्त, धर्मशील श्रीरामको विभीषणकी बात रुची। सुग्रीवने भी विभीषणकी सम्मति मानने योग्य माना। दूसरा कोई विकल्प भी उनके समीप नहीं था।

आप सर्वलोक-शरण्य समुद्रकी शरण लेंगे ? कुमार लक्ष्मणको यह बात बुरी लगी। उन्होंने विरोध किया- धनुष उठाइये या इस सेवकको आज्ञा दीजिये। समुद्रको शुष्क करने-में कितने क्षण लगने वाले हैं। जो कार्य शीघ्र करना है वह विनय की बातों से नहीं होगा। घी कभी सीधी ऊँगली से नहीं निकलता। चढ़ जाए धनुष पर बाण, तभी इस सागर का गर्व हरण होगा। फिर सागर हो या महासागर आर्त होकर आपके चरण शरण होगा।

हे नाथ। दैवका कौन भरोसा। मनमें क्रोध कीजिये और समुद्रको सुखा डालिये। यह दैव तो कायरके मनका एक आधार तसल्ली देनेका उपाय है। आलसी लोग ही दैव-दैव पुकारा करते हैं।

तुम ठीक कहते हो। श्रीरामने भाईकी ओर देखा- लेकिन यह उपाय तब आवश्यक है, जब सौम्य उपाय असफल हो जाय। अत: तनिक धैर्य रखो। आज्ञा पाकर हनुमान कुश उखाड़ लाये। उत्तराग्र कुश बिछाकर उसपर श्रीराम अपनी बाम भुजाका उपाधान (तकिया) बनाकर लेट गये। समुद्रकी बेलापर। उन्होंने मौन धारण कर लिया। आहार और जलका त्याग कर दिया। एक ही प्रकारसे समुद्रकी ओर देखते स्थिर लेटे रहे।

दशग्रीवने इस सन्देशके पश्चात् ही मन्त्रियोंको मन्त्रणाके लिए बुलाया था। जब विभीषण लंकासे चले, तब उनके पीछे ही उसने शुक-सारणको भेज दिया था। दोनों कामरूप राक्षस वानर बनकर सुग्रीवके दलमें मिल गये। वे जहाँ जाते थे, उसी यूथके वानर उन्हें अपने दलके किसी दूसरे यूथका समझ लेते थे। इस प्रकार वे वानर-यूथोंमें घूमते, वानरी सेना देखनेमें लगे थे।

प्राणी अपनी भावनापर कब तक नियन्त्रण रख सकता है। दोनोंने श्रीरामका अत्यन्त उदार स्वभाव देखा। उन शरणागत-वत्सलने विभीषीणको अपनाया ही नहीं, लंकेश्वर कहकर अभिषिक्त कर दिया। उदारताकी सीमा टूट गयी जब उन्होंने कह दिया- रावण शरण आवे तो अयोध्याका राज्य उसका।

अब जब श्रीराम विभीषणकी सम्मति मानकर समुद्रके तटपर अनशन करने लेट गये, शुक-सारण विभोर हो गये। विस्मृत हो गये कि वे शत्रु-सेनामें है और वानर नहीं हैं। शुक बोल उठा- धन्यशील। असीम शक्ति, अकल्पनीय औदार्य और इतना सरल स्वभाव आजसे पूर्व सोचा भी नहीं था कि सृष्टिमें सम्भव है।

अभागा दशग्रीव इनसे शत्रुता करता है ? सारण बोल पड़ा- इनके समीप रहस्य क्या है कि कोई छिपकर देखेगा।

ये वानर नहीं है। ये गुप्तचर हैं- शत्रुके गुप्तचर। समीपके वानरोंने सुना तो चौक गये- पकड़ो इन्हें।

सारण पकड़ लिया गया। पकड़ तो शुक भी लिया गया।

इस सन्देश देने-सुननेमें शुक तनिक असावधान हुआ। इतनेमें वानरोंने उसे कूदकर पकड़ लिया। उसे अपना स्वरूप धारण करना पड़ा; क्योंकि वानरोंने पक्ष नोंच फेंके। अब उस पर थप्पड़ घूसे पड़ने लगे। किसीने पुकारा- दोनोंके नाक-कान काट लो। दूतके अंग-भङ्गकी परम्परा दशग्रीवने ही प्रचलित की है।

आप सबको अपने स्वामी श्रीरामकी दुहाई। दोनों राक्षस चिल्लाये- हमारे नाक-कान मत काटिये। हम श्रीरामकी शरण हैं।

इन्हें यहाँ लाओ। कुमार लक्ष्मणने समीप बुलाया। दोनोंको आश्वस्त किया। एक पत्र वाणगी नोकसे तालपत्रपर लिखकर दिया- इसे दशग्रीवको दे देना।

देव। ये गुप्तचर हैं। इतनेमें विभीषण समीप आ गये और हाथ जोड़कर बोले- समुद्रपार जब तक सम्पूर्ण सेना न पहुँच जाय, इन्हें बन्दी बनाकर रखना चाहिये। इनसे समाचार पाकर दशग्रीव सागरपार होनेमें बाधा उपस्थित कर सकता है।

लमाके चरोंके सम्बन्धमें लंकेशका निर्देश सामान्य है। लक्ष्मणने हँसकर कह दिया। दोनों बन्दी बना लिये गये। उनके ऊपर दृष्टि रखनेको वानर नियुक्त हो गये।

तदनन्तर श्रीरघुनाथजी समुद्रके तटपर कुशा बिछा महासागरके समक्ष हाथ जोड़ पूर्वाभिमुख हो वहाँ लेट गये।

बायीं ओरको बारंबार बाण चलानेके कारण प्रत्यञ्चाके आघातसे जिसकी त्वचापर रगड़ पड़ गयी थी, जो विशाल परिघके समान सुदृढ़ एवं बलिष्ठ थी तथा जिसके द्वारा उन्होंने सहस्त्रों गौओंका दान किया था, उस विशाल दाहिनी भुजाका तकिया लगाकर उदारता आदि गुणोंसे युक्त महाबाहु श्रीराम आज या तो मैं समुद्रके पार जाऊँगा या मेरेद्वारा समुद्रका संहार होगा ऐसा निश्चय करके मौन हो मन, वाणी और शरीरको संयममें रखकर महासागरको अनुकूल करनेके उद्देश्यसे विधिपूर्वक धरना देते हुए उस कुशासनपर सो गये।

कुश बिछी हुई भूमिपर सोकर नियमसे असावधान न होते हुए श्रीरामकी वहाँ तीन रातें व्यतीत हो गयीं।

इस प्रकार उस समय वहाँ तीन रात लेटे रहकर नीतिके ज्ञाता, धर्मवत्सल श्रीराम सरिताओंके स्वामी समुद्रकी उपासना करते रहे; परंतु नियमपूर्वक रहते हुए श्रीरामके द्वारा यथोचित पूजा और सत्कार पाकर भी उस मन्दमति महासागरने उन्हें अपने आधिदैविक रूपका दर्शन नहीं कराया- वह उनके समक्ष प्रकट नहीं हुआ।

इधर तीन दिन बीत गये, किन्तु जड़ समुद्र विनय नहीं मानता। तब श्रीराम क्रोधसहित बोले- बिना भयके प्रीति नहीं होती।

हे लक्ष्मण। धनुष-बाण लाओ, मैं अग्निबाणसे समुद्रको सोख डालूँ। मूर्खसे विनय, कुटिलके साथ प्रीति, स्वाभाविक ही कंजूससे

सुन्दर नीति उदारताका उपदेश, ममतामें फँसे हुए मनुष्यसे ज्ञानकी कथा, अत्यन्त लोभीसे वैराग्यका वर्णन, क्रोधीसे शम शान्ति की बात और कामीसे भगवानकी कथा, इनका वैसा ही फल होता है जैसा ऊसरमें बीज बोनेसे होता है अर्थात् ऊसरमें बीज बोनेकी भाँति यह सब व्यर्थ जाता है। ऐसा कहकर श्रीरघुनाथने धनुष चढ़ाया। यह मत लक्ष्मणजीके मनको बहुत अच्छा लगा। प्रभुने भयानक अग्नि बाण सन्धान किया, जिससे समुद्रके हृदयके अंदर अग्निकी ज्वाला उठी।

तब अरुणनेत्रप्रान्तवाले भगवान् श्रीराम समुद्रपर कुपित हो उठे और पास ही खड़े हुए लक्ष्मणसे इस प्रकार बोले- समुद्रको अपने ऊपर बड़ा अहमार है, जिससे वह स्वयं मेरे सामने प्रकट नहीं हो रहा है। शान्ति, क्षमा, सरलता और मधुर भाषण- ये जो सत्पुरुषोंके गुण हैं, इनका गुणहीनोंके प्रति प्रयोग करनेपर यही परिणाम होता है कि वे उस गुणवान पुरुषको भी असमर्थ समझ लेते हैं।

जो अपनी प्रशंसा करनेवाला, दुष्ट, धृष्ट, सर्वत्र धावा करनेवाला और अच्छे-बुरे सभी लोगोंपर कठोर दण्डका प्रयोग करनेवाला होता है, उस मनुष्यका सब लोग सत्कार करते हैं।

लक्ष्मण। सामनीति (शान्ति) के द्वारा इस लोकमें न तो कीर्ति प्राप्त की जा सकती है, न यशका प्रसार हो सकता है और न संग्राममें विजय ही पायी जा सकती है।

सुमित्रानन्दन। आज मेरे बाणोंसे खण्ड-खण्ड हो मगर और मस्त्य सब ओर उतराकर बहने लगेंगे और उनकी लाशोंसे इस मकरालय समुद्र का जल आच्छादित हो जायगा। तुम यह दृश्य आज अपनी आँखों से देखो। लक्ष्मण। तुम देखो कि मैं यहाँ जलमें रहनेवाले सर्पोंके शरीर, मत्स्योंके विशाल कलेवर और जल-हस्तियोंके शुण्ड-दण्डके किस तरह टुकड़े-टुकड़े कर डालता हूँ।

आज महान् युद्ध ठानकर शर्फे और सीतियोंके समुदाय तथा मत्स्यों और मगरोंसहित समुद्रको मैं अभी सुखाये देता हूँ।

मगरोंका निवासभूत यह समुद्र मुझे क्षमासे युक्त देख असमर्थ समझने लगा है। ऐसे मूर्खोंके प्रति की गयी क्षमाको धिक्कार है। सामनीतिका आश्रय लेनेसे यह समुद्र मेरे सामने अपना रूप नहीं प्रकट कर रहा है, इसलिये धनुष तथा विषधर सर्पोंके समान भयंकर बाण ले आओ। मैं समुद्रको सुखा डालूँगा; फिर वानरलोग पैदल ही लमापुरीको चलें।

यद्यपि समुद्रको अक्षोभ्य कहा गया है; फिर भी आज कुपित होकर मैं इसे विक्षुब्ध कर दूँगा। इसमें सहस्त्रों तरङ्गें उठती रहती हैं; फिर भी यह सदा अपने तटकी मर्यादा सीमा में ही रहता है। किंतु अपने बाणोंसे मारकर मैं इसकी मर्यादा नष्ट कर दूँगा। बड़े-बड़े दानवोंसे भरे हुए इस महासागरमें हलचल मचा दूँगा- तूफान ला दूँगा।

तब रघुकुलतिलक श्रीरामने समुद्रसे कठोर शब्दोंमें कहा- महासागर। आज मैं पातालसहित तुझे सुखा डालूँगा।

सागर। मेरे बाणोंसे तुम्हारी सारी जलराशि दग्ध हो जायगी, तू सूख जायगा और तेरे भीतर रहनेवाले सब जीव नष्ट हो जायँगे। उस दशामें तेरे यहाँ जलके स्थानमें विशाल बालुकाराशि पैदा हो जायगी।

समुद्र। मेरे धनुषद्वारा की गयी बाण-वर्षासे जब तेरी ऐसी दशा हो जायगी, तब वानरलोग पैदल ही चलकर तेरे उस पार पहुँच जायँगे।

दानवोंके निवासस्थान। तू केवल चारों ओरसे बहकर आयी हुई जलराशिका संग्रह करता है। तुझे मेरे बल और पराक्रमका पता नहीं है। किंतु याद रख, (इस उपेक्षाके कारण) तुझे मुझसे भारी संताप प्राप्त होगा।

यों कहकर महाबली श्रीरामने एक ब्रह्मदण्डके समान भयंकर बाणको अग्नेस्त्रसे अभिमन्त्रित करके अपने श्रेष्ठ धनुषपर चढ़ाकर खींचा।

यों कहकर दुर्धर्ष वीर भगवान् श्रीरामने हाथमें धनुष ले लिया। वे क्रोधसे आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगे और प्रलयाग्निके समान प्रज्वलित हो उठे। उन्होंने अपने भयंकर अग्निबाण धनुषको धीरेसे दबाकर उसपर प्रत्यञ्चा चढ़ा दी और उसकी टमारसे सारे जगत्को कम्पित करते हुए बड़े भयंकर बाण छोड़े, मानो इन्द्रने बहुत-से वज्रोंका प्रहार किया हो।

तेजसे प्रज्वलित होते हुए वे महान् वेगशाली श्रेष्ठ बाण समुद्रके जलमें घुस गये। वहाँ रहनेवाले सर्प भयसे थर्रा उठे।

श्रीरघुनाथके द्वारा सहसा उस धनुषके खींचे जाते ही पृथ्वी और आकाश मानो फटने लगे और पर्वत डगमगा उठे।

सारे संसारमें अन्धकार छा गया। किसीको दिशाओंका ज्ञान न रहा। सरिताओं और सरोवरोंमें तत्काल हलचल पैदा हो गयीं।

चन्द्रमा और सूर्य नक्षत्रोंके साथ तिर्यक्-गतिसे चलने लगे। सूर्यकी किरणोंसे प्रकाशित होनेपर भी आकाशमें अन्धकार छा गया।

उस समय आकाशमें सैकड़ों उल्काएँ प्रज्वलित होकर उसे प्रकाशित करने लगी तथा अन्तरिक्षसे अनुपम एवं भारी गड़गड़ाहटके साथ

वज्रपात होने लगे।

परिवह आदि वायुभेदोंका समूह बड़े वेगसे बहने लगा। वह मेघोंकी घटाको उड़ाता हुआ बारंबार वृक्षोंको तोड़ने, बड़े-बड़े पर्वतोंसे टकराने और उनके शिखरोंको खण्डित करके गिराने लगा।

आकाशमें महान् वेगशाली विशाल वज्र भारी गड़गड़ाहट के साथ टकराकर उस समय वैद्युत अग्निकी वर्षा करने लगे। जो प्राणी दिखायी दे रहे थे और जो नहीं दिखायी देते थे, वे सब बिजलीकी कड़कके समान भयंकर शब्द करने लगे।

उनमेंसे कितने ही अभिभूत होकर धराशायी हो गये। कितने ही भयभीत और उद्विग्न हो उठे। कोई व्यथासे व्याकुल हो गये और कितने ही भयके मारे जडवत् हो गये।

समुद्र अपने भीतर रहनेवाले प्राणियों, तरङ्गों, सर्पों और राक्षसोंसहित सहसा भयानक वेगसे युक्त हो गया और प्रलयकालके बिना ही तीव्रगतिसे अपनी मर्यादा लाँघकर एक-एक योजन आगे बढ़ गया।

मत्स्यों और मगरोंसहित महासागरके जलका महान् वेग सहसा अत्यन्त भयंकर हो गया। वहाँ तूफानका कोलाहल छा गया।

बड़ी-बड़ी तरङ्ग मालाओंसे सारा समुद्र व्याप्त हो उठा। शफ और सीपियाँ पानीके ऊपर छा गयीं। वहाँ धुआँ उठने लगा और सारे महासागरमें सहसा बड़ी-बड़ी लहरें चक्कर काटने लगीं।

चमकीले फन और दीप्तिशाली नेत्रोंवाले सर्प व्यथित हो उठे तथा पातालमें रहनेवाले महापराक्रमी दानव भी व्याकुल हो गये।

सिन्धुराजकी सहस्रों लहरें जो विन्ध्याचल और मन्दराचलके समान विशाल एवं विस्तृत थीं, नकरों और मकरोंको साथ लिये ऊपरको उठने लगीं। सागरकी उत्ताल तरङ्ग-मालाएँ झूमने और चक्कर काटने लगीं। वहाँ निवास करनेवाले नाग और राक्षस घबरा गये। बड़े-बड़े ग्राह ऊपरको उछलने लगे तथा वरुणके निवासभूत उस समुद्रमें सब ओर भारी कोलाहल मच गया।

लक्ष्मण बोले- भैया। आप वीर-शिरोमणि हैं। इस समुद्रको नष्ट किये बिना भी आपका कार्य सम्पन्न हो जायगा। आप-जैसे महापुरुष क्रोधके अधीन नहीं होते हैं। अब आप सुदीर्घकालतक उपयोगमें लाये जानेवाले किसी अच्छे उपायपर दृष्टि डालें- कोई दूसरी उत्तम युक्ति सोचें।

अब श्रीराम के स्वरमें रोष था- सत्पुरुषके सद्गुण शान्ति, क्षमा सरलताको हीनसत्व उसकी दुर्बलता मानते हैं। यह मूढ़ सागर मेरी क्षमाको मेरी विवशता समझता है। मैं इसे शुष्क कर दूँगा।

उन अखिलेश्वरकी भृकुटिका कुटिल होना पर्याप्त था। उनके धनुषपर ज्या चढ़ाते ही प्रचण्ड पवन चलने लगा। धनुषपर आग्नेयास्त्र चढ़ा और सागरका अतलजल खौल उठा। मत्स्य, कच्छपोंकी चर्चा व्यर्थ है, मकर, तिमिंगल तक व्याकुल होकर उछलने लगे। गगनमें सुर त्राहि। त्राहि। पुकार उठे।

मगर, साँप तथा मछलियोंके समूह व्याकुल हो गये। जब समुद्रने जीवोंको जलते जाना, तब सोनेके थालमें अनेक मणियों रत्नों को भरकर अभिमान छोड़कर वह ब्राह्मणके रूपमें आया। काकभुशुण्डिजी कहते हैं- हे गरूड़जी। सुनिये, चाहे कोई करोड़ों उपाय करके सींचे, पर केला तो काटनेपर ही फलता है। नीच विनयसे नहीं मानता, वह डाँटनेपर ही झुकता है रास्तेपर आता है।

तब समुद्रके बीचसे सागर स्वयं मूर्तिमान होकर प्रकट हुआ, मानो महाशैल मेरुपर्वतके अङ्गभूत उदयाचलसे सूर्यदेव उदित हुए हों।

पाहि पुरुषोत्तम प्रणतबन्धु ! समुद्रकी उत्तालतरंगोंने श्रीरामके चारु चरण धोये और उनपर मौक्तिक राशि बिखेर दी। तरंगवसन, नीलकाय, फेनिलकेश, मुक्ताभरण सागराधिदेव करबद्ध कटिपर्यन्त जलमें खड़े काँप रहे थे- अपराध क्षमा करो क्षमाधाम ! आपने ही पृथ्वी, जल, वायु आदिको स्वभावसे जड़ बनाया है। मेरी जड़ता आपका ही निर्माण है। आप मर्यादा पुरुषोत्तमने जो मर्यादा-मेरी निश्चित कर दी है, मैं उसे मानता रहा यही तो मेरा अपराध है क्या? आप निग्रह-अनुग्रह समर्थकी मैं शरण हूँ।

समुद्रने भयभीत होकर प्रभुके चरण पकड़कर कहा- हे नाथ। मेरे सब अवगुण दोष क्षमा कीजिये। हे नाथ। आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी इन सबकी करनी स्वभावसे ही जड है। आपकी प्रेरणासे मायाने इन्हें सृष्टिके लिये उत्पन्न किया है, सब ग्रन्थोंने यही गाया है। जिसके लिये स्वामीकी जैसी आज्ञा है, वह उसी प्रकारसे रहनेमें सुख पाता है। प्रभुने अच्छा किया जो मुझे शिक्षा दण्ड दी; किन्तु मर्यादा जीवोंका स्वभाव ही आपकी ही बनायी हुई है। ढोल, गँवार, शूद्र, पशु और स्त्री ये सब मार से सुधारने के अधिकारी हैं।

प्रभुके प्रतापसे मैं सूख जाऊँगा और सेना पार उतर जायगी, इसमें मेरी बड़ाई नहीं है मेरी मर्यादा नहीं रहेगी। तथापि प्रभुकी आज्ञा

अपेल है अर्थात आपकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं हो सकता। ऐसा वेद गाते हैं। अब आपको जो अच्छा लगे, मैं तुरंत वही करूँ।

चञ्चल तरंगे उसे घेरे हुए थीं। मेघमाला और वायुसे वह व्याप्त था तथा गङ्गा और सिन्धु आदि नदियाँ उसे सब ओरसे घेरकर खड़ी थी।

हे श्रीराम। पृथ्वी, वायु, आकाश, जल और तेज- ये सर्वदा अपने स्वभावमें स्थित रहते हैं, अपने सनातन मार्गको कभी नहीं छोड़ते- सदा उसीके आश्रित रहते हैं।

मेरा भी यह स्वभाव ही है जो मैं अगाध और अथाह हूँ- कोई मेरे पार नहीं जा सकता। यदि मेरी थाह मिल जाय तो यह विकार- मेरे स्वभावका व्यतिक्रम ही होगा। इसलिये मैं आपसे पार होनेका यह उपाय बताता हूँ।

श्रीराम। मैं ऐसा उपाय बताऊँगा, जिससे आप मेरे पार चले जायँगे, ग्राह वानरोंको कष्ट नहीं देंगे, सारी सेना पार उतर जायगी और मुझे भी खेद नहीं होगा। मैं आसानीसे सब कुछ सह लूँगा। वानरोंके पार जानेके लिये जिस प्रकार पुल बन जाय, वैसा प्रयत्न मैं करूँगा।

श्रीरामका स्वर शान्त हो गया था। मेरा शर अमोघ है। इसका लक्ष्य बतलाओ। बाण चढ़ा भी रहता तो उसके प्रभावसे जलजीव समाप्त हो जाते। असंख्य दुर्बल जीव अब तक जलकी ऊष्मासे मर चुके थे।

हे शरणागत वत्सल श्रीपति रघुनाथ, रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए। तब रघुपति बोले, अरे अभिमानी, बिना मारे, तुम नहीं मानोगे। अब धनुष पर चढ़ा हुआ यह बाण निश्चय ही फिर नहीं उतरेगा। इसलिए अपने इस अमोघ बाण को मैं जहाँ छोड़ दूँ, वहाँ प्रलय हो जाएगा। तब हाथ जोड़कर समुद्र बोला- हे रघुराज, सुनिए। पश्चिम देश में मरु नामक एक दैत्य रहता है। वह गायों, ब्राह्मणों और सन्तों को पीड़ा पहुँचा रहा है। वह अपार पाप कर रहा है अत: उसपर यह बाण छोड़िए। तब राम ने वह अग्नि-अस्त्र से युक्त बाण पश्चिम देश की ओर चला दिया और उस मरु दैत्य का सिर काट डाला। फिर वह बाण पृथ्वी पर गिर गया। पड़ते-पड़ते उसने पृथ्वी के समस्त जल को निश्चय ही सोख लिया। अनन्तर वहाँ मारवाड़ नामक देश बस गया, जहाँ अब भी पानी गइराई से ही निकलता है। उस देश में पानी बहुत कम है, फिर भी वहाँ के वृक्ष सदा फलयुक्त रहते हैं। इस प्रकार राम-बाण की महिमा तो देखिए, जो अब भी प्रत्यक्ष रूप में अस्तित्व में है। फिर समुद्र ने रत्नों से श्रीराम का स्तवन किया, उन्हें अनेक वस्त्र और आभूषण समर्पित किये और उन रणधीर को सन्तुष्ट किया। अनन्तर समुद्र ने मोतियों से थाल भरकर श्रीराम पर वृष्टि कर दी, उनकी अपार स्तुति करते हुए उनके क्रोध को शान्त कर लिया और उन्हें उसी स्थान पर प्रसन्न कर लिया।

मेरे उत्तर तटपर द्रुमकुल्य (दुबई) प्रदेश दारुण दस्युओंका वास बना है। आप उसे इस बाणका लक्ष्य बना लें। सागरने कहा- इससे लोकोत्पीड़कोंका विनाश कर दें।

वहाँ आभीर आदि जातियोंके बहुत-से मनुष्य निवास करते हैं, जिनके रूप और कर्म बड़े ही भयानक हैं। वे सब-के-सब पापी और लुटेरे हैं। वे लोग मेरा जल पीते हैं। उन पापाचारियोंका स्पर्श मुझे प्राप्त होता रहता है, इस पापको मैं नहीं सह सकता। श्रीराम। आप अपने इस उत्तम बाणको वहीं सफल कीजिये। महामना समुद्रका यह वचन सुनकर सागरके दिखाये अनुसार उसी देशमें श्रीरामने वह अत्यन्त प्रज्वलित बाण छोड़ दिया।

श्रीरघुनाथका बाण धनुषसे छूटकर जहाँ गिरा, वह पूरा प्रदेश मरुस्थल बन गया सदाके लिए। अरब देशोंका वह दुर्गम मरुस्थल आज वहाँके अनेक राज्योंमें विस्तीर्ण है। दस्यु ही नहीं, वनस्पति भी वहाँ भस्म हो गयी। वह धराका व्रण बन गया।

राजस्थानसे लेकर कच्छ का रन और पश्चिमी समुद्र तटपर दुबई तक का पूरे क्षेत्र में रामके अग्नेय बाण से जल सूख गया और वहाँपर मरुस्थल रेगिस्तान बन गया। वह वज्र और अशनिके समान तेजस्वी बाण जिस स्थान पर गिरा था, वह स्थान उस बाणके कारण ही पृथ्वीमें दुर्गम मरूभूमिके नामसे प्रसिद्ध हुआ। उस बाणसे पीड़ित होकर उस समय वसुधा आर्तनाद कर उठी। उसकी चोटसे जो छेद हुआ, उसमें होकर रसातल का जल ऊपरको उछलने लगा।

वह छिद्र कुएँके समान हो गया और व्रणके नामसे प्रसिद्ध हुआ। उस कुएँसे सदा निकलता हुआ जल समुद्रके जलकी भाँति ही दिखायी देता है। उस समय वहाँ भूमिके विदीर्ण होनेका भयंकर शब्द सुनायी पड़ा। उस बाणको गिराकर वहाँके भूतलकी कुक्षिमें (तालाब-पोखरे आदिमें) वर्तमान जलको श्रीरामने सुखा दिया।

तबसे वह स्थान तीनों लोकोंमें मरुकान्तारके नामसे ही विख्यात हो गया। जो पहले समुद्रका कुक्षिप्रदेश था, उसे सुखाकर देवोपम श्रीरामने उस मरुभूमिको वरदान दिया। यह मरुभूमि पशुओंके लिये हितकारी होगी। यहाँ रोग कम होंगे। यह भूमि फल, मूल और रसोंसे

सम्पन्न होगी। यहाँ घी आदि चिकने पदार्थ अधिक सुलभ होंगे, दूधकी भी बहुतायत होगी। यहाँ सुगन्ध छायी रहेगी और अनेक प्रकारकी ओषधियाँ उत्पन्न होंगी। यहाँपर लक्ष्मी का वास होगा। इस प्रकार भगवान् श्रीरामके वरदानसे वह मरुप्रदेश इस तरहके बहुसंख्यक गुणोंसे सम्पन्न हो सबके लिये मङ्गलकारी मार्ग बन गया।

इस सम्पूर्ण सेनाको लमा पहुँचना है। वह बाण जब लक्ष्य भस्म करके त्रोणमें लौट आया, श्रीरामने समुद्रके अधिदेवतासे आदेशके स्वरमें कहा- हमें मार्ग दो।

आपके प्रभावसे मैं सूख जा सकता हूँ और सेना उस पार चली जागी; किन्तु समुद्रदेव अत्यन्त नम्र स्वरमें बोले- देव। आप मर्यादा-पुरुषोत्तम मेरी मर्यादा मिटाकर प्रसन्न हों तो ये भी करो। क्योंकि प्रकृति के सब स्वभाव आपके द्वारा ही निर्मित है और आपने ही उनकी मर्यादाएं स्थापित किये है। यदि आप ही जीव के स्वभाव की मर्यादाएं भंग करेंगे तो कल कोई भी साधारण आदमी उठकर हमपर अपना बल शक्ति प्रयोग में लाकर हमीं पर अत्याचार करेगा और अपना मनोहर सफल करेगा। इसलिए हे रघुनाथ हमारी मर्यादाएं जो आपने दी है वह भंग न हो। तुम्हारी मर्यादा रक्षित रहते कोई और सुगम मार्ग है ? श्रीरामने पूछ लिया।

हे प्रभु। आपका सुयश अनन्तकाल तक प्राणियोंको पवित्र करता रहेगा, यदि आप मुझपर सेतु-निर्माण करके सेनाको पार ले जाते हैं। समुद्र वैसे ही करबद्ध प्रार्थना कर रहे थे- मैं अपनी शक्तिके अनुसार सहायता करूँगा।

हे रघुवर। आप जानते है ढोर, पशु, क्षुद्र, गँवार और नारी तथा जल, वायु, अग्नि इन सबको बाँधकर रखना चाहिए अर्थात नियन्त्रण में रखना चाहिए। यदि इनको स्वतंत्र छोड़ दिया जाए तो ये बड़े-बड़े उत्पात कर सकते है और विनाश कर सकते है। इसलिए आप मेरे ऊपर जल का सेतु निर्माण करे।

सेतु-निर्माण ? सुप्रसन्न श्रीरामने सागरकी ओर देखा।

सरिताओंके स्वामी समुद्रने श्रीरामसे कहा- सौम्य। आपकी सेनामें जो यह नल नामक कान्तिमान् वानर है, साक्षात् विश्वकर्माका पुत्र है। इसे इसके पिताने यह वर दिया है कि तुम मेरे ही समान समस्त शिल्पकालमें निपुण होओगे। प्रभो। आप भी तो इस विश्वके स्रष्टा विश्वकर्मा हैं। इस नलके हृदयमें आपके प्रति बड़ा प्रेम है।

नल और नीलने लड़कपनमें ऋषिसे आशीार्वद पाया था। उनके स्पर्श कर लेनेसे ही भारी-भारी पहाड़ भी आपके प्रतापसे समुद्रपर तैर जायँगे। मैं भी प्रभुकी प्रभुताको हृदयमें धारण कर अपने बलके अनुसार जहाँतक मुझसे बन पड़ेगा सहायता करूँगा। हे नाथ। इस प्रकार समुद्रको बँधाइये, जिससे तीनो लोकोंमें आपका सुन्दर यश गाया जाय।

यह महान् उत्साही वानर अपने पिताके समान ही शिल्पकर्ममें समर्थ है, अत: यह मेरे ऊपर पुलका निर्माण करे। मैं उस पुलको धारण करूँगा। सागरने सूचना दी- उनके करसे स्पृष्ट भारी पर्वत भी जलमें तैरते हैं। अच्छा। श्रीरामने स्वीकार कर लिया। फिर सागर श्रीरामकी चरणोंकी वन्दना करके चला गया। समुद्राधिदेव अपने जलमें अन्तर्हित हो गये।

१३) रामेश्वरम् से लंका तक सेतुबंध निर्माण - इसप्रकार समुद्र रस्ता बताकर अदृश्य हो गया। तब वानरश्रेष्ठ नल उठकर महाबली भगवान् श्रीरामसे बोले- प्रभो। मैं पिताकी दी हुई शक्तिको पाकर इस विस्तृत समुद्रपर सेतुका निर्माण करूँगा। महासागरने ठीक कहा है। संसारमें पुरुषके लिये अकृतज्ञोंके प्रति दण्डनीतिका प्रयोग ही सबसे बड़ा अर्थसाधक है, ऐसा मेरा विश्वास होता है। वैसे लोगोंके प्रति क्षमा, सान्त्वना और दाननीतिके प्रयोगको धिक्कार है।

इस भयानक समुद्रको राजा सगरके पुत्रोंने ही बढ़ाया है। फिर भी इसने कृतज्ञतासे नहीं, दण्डके भयसे ही सेतुकर्म देखनेकी इच्छा मनमें लाकर श्रीरघुनाथको अपनी थाह दी है।

मन्दराचलपर विश्वकर्माने मेरी माताको यह वर दिया था कि देवि। तुम्हारे गर्भसे मेरे ही समान पुत्र होगा।

इस प्रकार मैं विश्वकर्माका औरस पुत्र हूँ और शिल्पकर्ममें उन्हींके समान हूँ। इस समुद्रने आज मुझे इन सब बातोंका स्मरण दिला दिया है। महासागरने जो कुछ कहा है; ठीक है। मैं बिना पूछे आपलोगोंसे अपने गुणोंको नहीं बता सकता था, इसीलिये अबतक चुप था।

अपनी यह विशेषता तबतक प्रकट मत करना, जबतक कोई दूसरा ही तुमने न कहे। सुग्रीवके पूछनेपर नल-नील दोनों भाइयोंने स्वीकार किया- बचपनमें हम दोनों भाई अत्यन्त चञ्चल थे। आस-पास ऋषियोंके आश्रम बहुत थे। हम दोनों अवसर पाते ही उनके

आराध्य शालिग्राम अथवा शिवलिङ्ग उठाकर सरोवरमें डाल देते और हँसते- अब ये भली प्रकार स्नान करेंगे।

ऋषिगणोंने दु:खी होकर शाप दिया- इन दोनों वानरोंके करसे सृष्ट शिलाएँ जलमें डूबेंगी ही नहीं।

उन कृपालु क्षमाशील महात्माओंने हम दोनोंका कोई अहित नहीं किया। केवल अपने आराध्य विग्रहको प्राप्त करने, सुरक्षित रखनेका उपाय किया। नीलने कहा- लेकिन वह उपाय हमारे लिए इतना सौभाग्यदायी वरदान बनेगा, यह तो हम जानते ही नहीं थे। अपने कुलवृद्धोंके आदेशानुसार मैं अबतक मौन था। आप वानरोंको शिलाएँ पर्वत ले आनेका आदेश दें। हम दोनों सेतु-निर्माणका श्रीगणेश करते हैं। मैं महासागरपर पुल बाँधनेमें समर्थ हूँ, अत: सब वानर आज ही पुल बाँधनेका कार्य आरम्भ कर दें। तब भगवान् श्रीरामके भेजनेसे लाखों बड़े-बड़े वानर हर्ष और उत्साहमें भरकर सब ओर उछलते हुए गये और बड़े-बड़े जंगलोंमें घुस गये।

वे पर्वतके समान विशालकास वानरशिरोमणि पर्वतशिखरों और वृक्षोंको तोड़ देते और उन्हें समुद्रतक खींच लाते थे। वे साल, अश्वकर्ण, धव, बाँस, कुटज, अर्जुन, ताल, तिलक, तिनिश, बेल, छितवन, खिले हुए कनेर, आम और अशोक आदि वृक्षोंसे समुद्रको पाटने लगे। वे श्रेष्ठ वानर वहाँके वृक्षोंको जड़से उखाड़ लाते या जड़के ऊपरसे भी तोड़ लाते थे। इन्द्रध्वजके समान ऊँचे-ऊँचे वृक्षोंको उठाये लिये चले आते थे।

ताड़ों, अनारकी झाड़ियों, नारियल और बहेड़ेके वृक्षों, करीर, बकुल तथा नीमको भी इधर-उधरसे तोड़-तोड़कर लाने लगे।

महाकाय महाबली वानर हाथीके समान बड़ी-बड़ी शिलाओं और पर्वतोंको उखाड़कर यन्त्रों विभिन्न साधनों द्वारा समुद्रतटपर ले आते थे। शिलाखण्डोंको फेंकनेसे समुद्रका जल सहसा आकाशमें उठ जाता और फिर वहाँसे नीचेको गिर जाता था।

उन वानरोंने सब ओर पत्थर गिराकर समुद्रमें हलचल मचा दी। कुछ दूसरे वानर सौ योजन लंबा सूत पकड़े हुए थे।

नल नदों और नदियोंके स्वामी समुद्रके बीचमें महान् सेतुका निर्माण कर रहे थे। भयंकर कर्म करनेवाले वानरोंने मिल-जुलकर उस समय सेतुनिर्माणका कार्य आरम्भ किया था।

पर्वतों जैसी बड़ी-बड़ी चट्टानें और पर्वत-शिखर लेकर सब ओर दौड़ते वानर दानवोंके समान दिखायी देते थे। उस समय उस महासागरमें फेंकी जाती हुई शिलाओं और गिराये जाते हुए पहाड़ोंके गिरनेसे बड़ा भीषण शब्द हो रहा था। हाथीके समान विशालकाय वानर बड़े उत्साह और तेजीके साथ काममें लगे हुए थे।

हम सेतु-निर्माण करेंगे। वानरोंमें अपार उत्साह जागा। समुद्रकी विशालता देखकर उत्पन्न निराशा समाप्त हो गयी। नल-नीलने तनिक घूमकर स्थान देखा। श्रीरामके द्वारा गणपति-पूजन, नवग्रह-पूजनादि स्थापत्यवेदमें वर्णित आरम्भिक कार्य सम्पन्न कराये और सागर-बेलाके समीप एक भाई एक ओर, दूसरे भाई दूसरी ओर एक दूसरेकी ओर मुख करके बैठ गये। उन्हें दस योजन चौड़ा सेतु बनाना था। वर्तमान रामेश्वरम्के समीपसे लेकर कन्याकुमारीतक सेतुकी चौड़ाई उन्होंने निश्चित की थी।

आरम्भमें ही एक समस्या उपस्थित हो गयी। दो शिलाओंको परस्पर आबद्ध करनेका कोई साधन नहीं था। प्रथम पर्वत सागरके पानीपर रखकर जबतक दूसरा पर्वत लिया दोनों भाइयोंके द्वारा जलपर रखे दोनों पर्वत समुद्रकी उत्ताल तरंगोंके थपेड़े खाकर दूर चले गये। हम सेतु-निर्माण कर सकते हैं। दोनों भाइयोंका गर्व गलित हो गया। नीलने नलको पुकारा- भाई ! सेतु बनेगा तो श्रीरामके प्रतापसे ही बनेगा। हमारे नामको अमर करनेका अनुग्रह किया इन समर्थ स्वामीने; किन्तु हम निमित्त मात्र हैं। इनके नामको ही शिला-संयोजनका साधन बनाओ। इनके नामको साधन ? नलने पुकारकर पूछा।

हाँ ! नीलने हाथके पर्वतपर नखसे रा लिखा और उसे जलपर रख दिया। वह तैरता रहा, स्थिर बना रहा। दूसरा पर्वत लिया, उसपर म लिखा। जलपर रखते ही वह पहिले पर्वतसे स्वत: सट गया। नलने भी यह प्रक्रिया सीख ली। चल पड़ा अब यह क्रम। सागरकी तरंगे अब पर्वत-शिलाओंको ऊपर-नीचे तो हिलाती थीं; किन्तु स्थानान्तरित नहीं कर पाती थीं। एक शिलापर रा दूसरी पर म यह दो अक्षर शिलासंयोजक बन गये।

हनुमान, अंगद, जाम्बवान्, मैन्द, द्विविद, गय, गवाक्ष, शरभ आदि बलवान यूथपोंने निर्णय किया- समीपके पर्वत सामान्य वानरोंको लानेके लिए छोड़ दो। हम सबको दूरसे पर्वत लाने चाहिये।

सभी वानर उत्साहमें थे। वे अपनी शक्तिके अनुसार भारीसे भारी शिला या पूरा शिखर उठा लाते थे। नल-नील सामान्य ईंटकी भाँति लेते थे और नखसे रा या म लिखकर जलपर पहिली शिलासे सटाकर रख देते थे। वृक्ष-विशाल वृक्ष भी लाये जा रहे थे; किन्तु केवल

नल या नीलके कहनेपर। जब उन्हें दो शिलाओंके मध्यकी विषमता पाटनेकी आवश्यकता हो। वे स्वयं भी भारी पर्वतोंको पटककर आवश्यकतानुसार समतल करते जा रहे थे।

श्रीरामने सुग्रीव तथा विभीषणको रोक दिया था इस उद्योगमें लगनेसे आप दोनों केवल निर्माणको देखें और वानरोंको प्रोत्साहित करते रहें। विभीषणके चारों मन्त्री पर्वत ढोनेमें स्वयं लग गये थे। अनुजके साथ श्रीराम यह कौतुक कुछ देर खड़े देखते रहे। पवनपुत्रकी दृष्टि पड़ी कि प्रभु अचानक चुपचाप एक ओर चल पड़े तो वे पर्वत लाना छोड़कर अपनी उपस्थिति बिना सूचित किये अनुगमन करने लगे। इस समय स्वामीको अकेले अरक्षित छोड़ना उचित नहीं था।

श्रीराम सागरतटके सहारे नीलके समीपसे टहलते पर्याप्त उत्तर चले गये। अब वे रुके, इधर-उधर देखा। पीछे दूर छिपे खड़े आञ्जनेय दृष्टि नहीं पड़े। श्रीरामने समीपसे एक छोटा पाषाण उठाया। समुद्रके समीप आये। उसे धीरेसे जलपर रखा; किन्तु वह जलमें डूब गया। श्रीराम उठ खड़े हुए। उनका कमलमुख उदास हो गया था।

मेरे नाथ। आपका नाम भव-सागरसे सबका समुद्धारक है। अब पवनपुत्र हाथ जोड़े सम्मुख आ गये- लेकिन आपके ये अभय पद कर जिसका त्याग कर देंगे, वह तो डूबेगा ही। उसके तरनेकी सम्भावना कहाँ रह जाती है।

हनुमान तुम ? श्रीराम हँस पड़े- तुम्हारी मतिको कभी कहीं अविद्याका स्पर्श नहीं होगा। तुम आश्रितोंका अविद्यान्धकार दूर करनेमें समर्थ रहोगे। नन्ही गिलहरीने पूँछ हिलायी, केश फुलाये, पूँछके बलपर बैठकर दो पदोंपर आधी खड़ी होकर हनुमानजीको ही डाँट दिया- तुम अकेलेने परम पुरुषोत्तमकी सेवाका ठेका लिया है ? जिसमें बल नहीं है, उसे अपनी क्षुद्र शक्तिके अनुसार उनकी सेवाका स्वत्व नहीं है? तुमसे उनकी क्या सेवा इस समय सम्भव है ? हनुमान चकित रह गये।

तुम्हें दीखता नहीं कि सेतुपर दो शिलाओंके मध्य कितनी सन्धि है। गिलहरीने उसी रोष-भरे स्वरमें कहा- इसपरसे उन सर्वेशको चलाना है। उनके सुकुमार चरण पड़ेंगे यहाँ। मैं शक्तिभर इन सन्धियोंको मिटा देनेमें लगी हूँ। मेरे तुम्हारे समान शक्तिशाली हाथ तो नहीं हैं। सागर-जलमें शरीर भिगाकर, पुलिनपर लोट-पोट होकर थोड़ी रेत अपने केशोंमें ला पाती हूँ। केश हिलाकर यहाँ डाल जाती हूँ। प्राणी अपनी शक्तिके अनुसार ही तो उन परमप्रभुकी सेवा कर सकता है।

तुमने सेवा कर ली। तुम्हें चलो प्रभुके समीप पहुँचा दूँ। पवनकुमारने प्रेमसे कहा- अन्यथा किसीके पैरसे कुचल जा सकती हो।

तो क्या हो जायगा ? किसी रामभक्तके चरणों तले आ जाऊँगी तो मेरी मृत्यु धन्य हो जायगी। जो सर्वव्यापक हैं, जिनका स्मरण अपवित्र को पवित्र करता है, उनका सेतु कहीं गिलहरीके तनिकसे शरीरसे अपवित्र हो सकता है। गिलहरीने झिड़क दिया- तुम अपना काम करो। मुझे अपना काम करने दो। मुझे तुम्हारी सहायता अपेक्षित नहीं है। उन दीनबन्धु तक पहुँचने-में किसी क्षुद्र प्राणीपर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। कोई दुर्बल असमर्थ भी हो जाय तो उसके समीप आकर उसे उठा लेना उन दयासिन्धुको आता है।

हनुमानजीको इस हठी गिलहरीपर दया आ रही थी। इसके कुचल जानेकी पूरी सम्भावना थी। वे चाहते थे कि यह डरकर हट जाय। उन्होंने पादाँगुष्ठसे उसकी पूँछ तनिक दबा दी। पीड़ासे गिलहरी तड़प उठी- चीं चीं पूँछ खिंचकर लम्बी हो गयी। तनिक सी टूट गयी।

चीं ची करती घायल पूछ लिये गिलहरी भागी और सीधे श्रीरामके समीप गयी। उसने उन करुणा-वरुणालयके सम्मुख सिर उठाकर चीं चीं की तो उन्होंने उसे उठाकर वाम करपर रख लिया। दक्षिण करकी अंगुलियोंसे उसे स्नेहपूर्वक थपथपा दिया। वे अंगुलीके चिन्ह उसकी पीठपर नित्य हो गये पूरी वंश-परम्परामें। हनुमानजी उसके पीछे आये थे। उनकी ओर गिलहरीने सगर्व देखा।

हनुमान ! तुमने सेवामें लगे इस क्षुद्र प्राणीको पीड़ा देकर अच्छा नहीं किया। प्रभुने उपालम्भ दिया। पवनपुत्र का मस्तक झुक गया। श्रीराम भक्तापराध क्षमा नहीं करते। आञ्जनेयका पुच्छ-भंग तो उसी समय उनकहा विधान बन गया।

स्पष्ट है कि वानरोंका उत्साह उत्तरोत्तर बढ़ता गया था। यद्यपि उनकी कठिनाई, श्रम भी उत्तरोत्तर बढ़ता रहा था। आसपासका प्रदेश पर्वत-रहित होता गया और उन्हें अधिक दूरसे पर्वत ढोने पड़े लेकिन उनका वेग उत्साहातिरेकसे बढ़ता ही गया था।

सेतु-निर्माणका अन्तिम दिन था। सायंकाल समीप था। पवनकुमारको प्रात:कालसे ही हिमालयके शिखर लाने पड़ रहे थे। विन्ध्यको उन्होंने दूसरे वानरोंके लिए छोड़ दिया था। अन्तिम बार उन्होंने हिमालयपर द्रोणाचलके शिखर गोवर्धनको उठानेका प्रयत्न किया। उन्हें आश्चर्य हुआ, सम्पूर्ण शक्ति लगा देनेपर भी वह सामान्य शिखर उनसे हिला तक नहीं।

तुम्हें पितृ स्थानसे इतना मोह है ? पवन कुमारने पर्वतको झिड़की दी- मैं तो तुम्हें परात्पर प्रभुके पादस्पर्शसे परिपूत होनेका अवसर

देने ले जा रहा था। तुम सच कहते हो ? पर्वतसे वाणी प्रकट हुई- तुम उन सर्वेश्वरके दर्शन करानेका वचन दो तो मैं भारहीन हुआ जाता हूँ। इस तपोभूमिको त्यागकर सामान्य मानवोंकी क्रीड़ा स्थलीमें जानेका उत्साह मुझमें नहीं है।

मैं प्रभुके पादस्पर्शको सुलभ करनेकी प्रतिज्ञा करता हूँ। हनुमानने भी देख लिया कि वे सामान्य पर्वत नहीं उठाने लगे थे। वह तो समूचा ही चिन्म, दिव्यगिरि है। तब उसे आराध्यकी सेवासे अवश्य सार्थक होना चाहिये।

तब ले चलो। गोवर्धनने कहा। हनुमानने उठाया तो वह उनके करोंपर आ गया। भार हीन बन गया।

सायंकाल समीप था। सेतु-निर्माण पूरा हो गया। नल-नील उठ खड़े हुए। श्रीरामने आज्ञा दी- जो वानर जहाँ हैं, वहीं हाथकी शिला या पर्वत डालकर आ जायँ। दूसरोंको भी दौड़कर सूचना दे दें।

इस आदेशका परिणाम हुआ कि विन्ध्यसे दक्षिणका पूरा भारत पर्वतीय हो गया। अधिकांश प्रदेश श्रृंखला हीन जहाँ तहाँ अकेले अकेले पड़े पर्वतोंसे भर गया। थोड़े ही स्थान ऐसे बने जहाँ बहुतसे वानरोंने हाथके पर्वत साथ साथ फेंके।

श्रीरामका आदेश है, जो वानर जहाँ हैं, हाथका पर्वत वहीं डालकर उनके समीप पहुँचें। यह आदेश हनुमानने तब सुना, जब वे व्रजमें गोवर्धनको लिये पहुँचे। आराध्यकी आज्ञाके अनुसार पर्वतको पृथ्वीपर रखकर बोले- मैं स्वामीसे अनुमति लेकर आता हूँ।

मैंने उन पर्वत श्रेष्ठको श्रीचरणोंमें उपस्थित करनेका वचन दिया, तब वे उठनेको प्रस्तुत हुए। हनुमानजीने श्रीरघुनाथके समीप पहुँचकर प्रार्थना की। तुम उन्हें माथुर-मण्डलमें ही तो छोड़ आये हो ? वे लीलामय हँसे- वे जहाँके हैं, वहीं तुमने उन्हें स्थापित किया है। उन्हें मेरा यह स्वरूप प्रिय नहीं लगेगा। वे गोलोकके क्रीड़ा गिरि-उनसे जाकर कहो कि धरापर आ गये हैं तो इस कल्पके अट्ठाइस्वें द्वापरान्त तक प्रतीक्षा करलें। मैं अपने मित्रों और गायोंके साथ उनपर विहार करूँगा। उनको करपर रखूँगा और उनकी पूजा कराऊँगा। विश्वमें सर्वोपरि सम्मान भाजन बनेंगे वे।

हनुमानजीने जाकर गोवर्धनको अपने स्वामीका सन्देश सुनाया तो वे गिरिवर सन्तुष्ट हो गये। द्वापरमें उन्हें उठाकर ही तो मयूरमुकुटी नन्दनन्दको गिरिधर कहलानेका गौरव प्राप्त होना था।

पहले दिन उन्होंने चौदह योजन लंबा पुल बाँधा। फिर दूसरे दिन भयंकर शरीरवाले महाबली वानरोंने तेजीसे काम करके बीस योजन लंबा पुल बाँध दिया। तीसरे दिन शीघ्रतापूर्वक काममें जुटे हुए महाकाय कपियोंने समुद्रमें इक्कीस योजन लंबा पुल बाँध दिया। चौथे दिन महान् वेगशाली और शीघ्रकारी वानरोंने बाईस योजन लंबा पुल और बाँध दिया। तथा पाँचवें दिन शीघ्रता करनेवाले उन वानर वीरोंने सुबेल पर्वतके निकटतक तेईस योजन लंबा पुल बाँधा।

इस प्रकार विश्वकर्माके बलवान् पुत्र कान्तिमान् कपिश्रेष्ठ नलने समुद्रमें सौ योजन लंबा पुल तैयार कर दिया। इस कार्यमें वे अपने पिताके समान ही प्रतिभाशाली थे। मकरालय समुद्रमें नलके द्वारा निर्मित हुआ वह सुन्दर और शोभाशाली सेतु आकाशमें स्वातीपथ छाया-पथ के समान सुशोभित होता था।

उस समय देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षि उस अद्भुत कार्यको देखनेके लिये आकाशमें आकर खड़े थे। नलके बनाये हुए सौ योजन लंबे और दस योजन चौड़े उस पुलको देवताओं और गन्धर्वोंने देखा, जिसे बनाना बहुत ही कठिन काम था।

सेतु-सम्पूर्ण हो गया। श्रीराम-नामके प्रतापसे तैरती शिलाओंका सेतु। विश्वकर्माको भी विस्मयमें डाल दे ऐसा सेतु। भवसागर जिनके नामका आश्रय लेकर प्राणी प्रमोद पूर्वक पारकर जाता है, उन्हींके उसी नामसे अमित शिलाओंका सेतु। अद्भुत शोभा थी उसकी। नाना रंगके पर्वतोंसे बना वह सेतु। पर्वतोंपर हरित, पुष्पित वृक्ष थे। नल-नीलने शिलाओंकी विषम सन्धिमें भी पूरे पूरे विशाल वृक्ष जमाये थे। शाखा, पत्र, पुष्पों सहित वृक्ष वहाँ सम्पूर्ण समुद्र टूटे पत्तों, पुष्पों, फलों, टहनियोंसे भर उठा था और सागरकी लहरें वह सब दोनों तटोंपर दूरतक उसे सज्जित करनेमें लगी थीं। जैसे श्रीरामके स्वागतमें सागरके दोनों तटोंपर लम्बी बन्दनवार बिछायी गयी हो और सेतु- वह तो समुद्र वक्षपर इन्द्र धनुषके समान सुशोभित था। इस प्रकार उन सहस्त्र कोटि एक खरब महाबली एवं उत्साही वानरोंका दल पुल बाँधते-बाँधते ही समुद्रके उस पार पहुँच गया। वह पुल बड़ा ही विशाल, सुन्दरतासे बनाया हुआ, शोभासम्पन्न, समतल और सुसम्बद्ध था। वह महान् सेतु सागरमें सीमन्तके समान शोभा पाता था। पुल तैयार हो जानेपर अपने सचिवोंके साथ विभीषण गदा हाथमें लेकर समुद्रके दूसरे तटपर खड़े हो गये, जिससे शत्रुपक्षीय राक्षस यदि पुल तोड़नेके लिये आवें तो उन्हें दण्ड दिया जा सके।

तदनन्तर सुग्रीवने सत्यपराक्रमी श्रीरामसे कहा- वीरवर। आप हनुमानके कंधेपर चढ़ जाइये और लक्ष्मण अङ्गदकी पीठपर सवार हो

लें; क्योंकि यह मकरालय समुद्र बहुत लंबा-चौड़ा है। ये दोनों वानर आकाश-मार्गसे चलनेवाले हैं। अत: ये ही दोनों आप दोनों भाइयोंको धारण कर सकेंगे। इस प्रकार धनुर्धर एवं धर्मात्मा भगवान् श्रीराम लक्ष्मण और सुग्रीवके साथ उस सेनाके आगे-आगे चले।

दूसरे वानर सेनाके बीचमें और अगल-बगलमें होकर चलने लगे। कितने ही वानर जलमें कूद पड़ते और तैरते हुए चलते थे। दूसरे पुलका मार्ग पकड़कर जाते थे और कितने ही आकाशमें उछलकर गरुड़के समान उड़ते थे।

इस प्रकार पार जाती हुई उस भयंकर वानर-सेनाने अपने महान् घोषसे समुद्रकी बढ़ी हुई भीषण गर्जनाको भी दबा दिया।

धीरे-धीरे वानरोंकी सारी सेना नलके बनाये हुए पुलसे समुद्रके उस पार पहुँच गयी। राजा सुग्रीवने फल, मूल और जलकी अधिकता देख सागरके तटपर ही सेनाका पड़ाव डाला।

१४) रामेश्वरम् में शिवलिंग स्थापना - अशुतोष गङ्गाधर नीलकण्ठ महेश्वरके लिङ्ग विग्रहकी स्थापना यहाँ की जानी चाहिये। सेतुको देखकर श्रीरामने कहा- लमा-विजयके लिए उन उमाकान्तका अनुग्रह प्राप्त करना आवश्यक है।

उनका लिङ्ग-विग्रह कहाँसे आवेगा ? इन प्रश्नपर कोई विवाद नहीं उठा। नर्मदेश्वर लानेकी अपेक्षाकी अपेक्षा सबको अच्छा लगा कि पवन-कुमार कैलास जाकर भगवान कृत्तिवाससे ही उनका लिङ्ग-विग्रह माँग लावें। हनुमान उसी समय कैलास चले गये।

इस अनुष्ठानका आचार्य कौन बनेगा ? सबसे कठिन प्रश्न था। मतङ्ग आश्रमके पश्चात् कोई ऋषि-मुनि नहीं थे। मतङ्गाश्रममें भी सब वैष्णव थे। वेदज्ञ ब्राह्मण आचार्य आवश्यक था और शिव-स्थापनामें यह भी आवश्यक था कि वह नैष्ठिक शैव हो।

पौलस्य दशग्रीव ब्राह्मण हैं, वेदज्ञ हैं और नैष्ठिक शैव हैं। श्रीरामने सबको चौंका दिया- हम आचार्यत्वके लिए उनको आमन्त्रित तो कर ही सकते हैं। रावणको आप आचार्य बनावेंगे अपना ? सुग्रीवने सशम स्वरमें पूछा।

क्या दोष है ? श्रीरामने कहा- दशग्रीव इतने छुद्र नहीं हैं कि आचार्य होकर आनेपर कोई कपटाचार करेंगे।

आपका अनुमान उचित है। विभीषण बोले- आनेपर मेरे अग्रज यहाँ कपटाचार नहीं करेंगे। आ गये तो अपने कर्तव्यमें किञ्चित् प्रमाद भी नहीं करेंगे। उनके जैसा वेदज्ञ विधि-विशेषज्ञ भी दूसरा नहीं है। वे नहीं ही आवेंगे, यह भी मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता। उनका स्वभाव अद्भुत है। वे कब किस विषयमें क्या निर्णय लेंगे कोई अनुमान नहीं कर सकता। आपकी इच्छा हो तो उन्हें आमन्त्रित करनेमें दोष मैं नहीं देखता।

दूत बनकर कौन जायगा ? श्रीरामने सबकी ओर देखा। स्वयं बोले- ऋक्षराज जाम्बवन्तजीको जाना चाहिये। सृष्टिकर्ताके ये मानसपुत्र। दशग्रीवके भी सम्मान्य हैं। इनकी उपेक्षा वे भी सहसा नहीं कर सकेंगे।

इस बार रामने एक रीछ भेजा है। लमामें आतम फैल गया। प्रथम कल्पके सतयुगमें-सृष्टिकी आदिमें उत्पन्न हुए जाम्बवन्तजी आकारमें कुम्भकर्णसे तनिक ही छोटे थे। पूरे नगरमें यह समाचार विद्युतवेगसे फैला। सबके हृदयकी धड़कनें बढ़े गयीं- पहिले वानर और अब ऋक्ष वानरसे अधिक ही भयावह होता है।

जाम्बवन्तको किसीसे कुछ पूछना नहीं पड़ा। द्वारके प्रहरियोंने हाथ जोड़कर मार्ग दिखला दिया। बीचमें भी मार्ग प्राय: सुनसान मिला। कहीं कोई मिला भी तो भयके कारण बिना पूछे, एक शब्द बोले बिना ही पथका संकेत कर देता था। इस प्रकार जाम्बवन्त सीधे राजसभाके द्वारपर पहुँचे।

दशग्रीवसे कहो कि महर्षि पुलस्त्यका भाई ऋक्ष जाम्बवन्त श्रीरामका दूत होकर आया है। जाम्बवन्तका समाचार द्वारपालने लगभग दौड़कर पहुँचाया। स्वयं दशग्रीव उन्हें द्वारतक लेने आया।

राक्षसेन्द्र। मैं अर्घ्यका पात्र नहीं हूँ। दशग्रीवको अर्चाका उपक्रम करते देखकर जाम्बवन्तने हँसकर कहा- मैं इक्ष्वाकु गोत्रीय अयोध्या नरेश महाराज दशरथके ज्येष्ठ पुत्र रामका दूत होकर आया हूँ। उन्होंने तुम्हें सादर प्रणाम कहा है।

आप आसन ग्रहण करें। दशग्रीवने सविनय कहा- आप हमारे पितामहके भाई हैं। हमारे पूज्य हैं। आप एक राक्षसकी अर्चा स्वीकार कर लेंगे तो मैं आपका सन्देश भी सावधान होकर सुन सकूँगा।

जाम्बवन्तने कोई आपत्ति नहीं की। उन्होंने अर्घ्यपाद्यादि स्वीकार कर लिये। अर्चाके अनन्तर दशग्रीव बैठ गया, तब जाम्बवन्तने फिर कहा- इक्ष्वाकु गोत्रीय श्रीरामने तुम्हे प्रणाम कहा है। वे सागर-सेतु-बन्धपर भगवान् शमरके लिङ्ग-विग्रहकी स्थापना यथाशीघ्र करना

चाहते हैं। इस अनुष्ठानको सम्पन्न करानेके लिए उन्होंने वेदज्ञ, परमशैव पौलस्त्य दशग्रीवको आचार्य पदपर वरण करनेकी इच्छा की है। मैं उनकी ओरसे आमन्त्रित करने आया हूँ।

यह शिव-स्थापन लमा-विजयकी कामनासे किया जा रहा है ? दशग्रीवने हँसते हुए पूछ लिया।

स्वाभाविक है। जाम्बवन्तने स्वीकार किया- श्रीरामका भगवान शमरके चरणोंमें भक्ति है।

अत्यन्त धृष्टता। नितान्त निर्लज्जता ! प्रहस्त चिल्लाया- लंकेश्वर ऐसा प्रस्ताव स्वीकार नहीं कर सकते।

मातुल ! तुम्हें किसने मध्यमें पड़नेको कहा ? दशग्रीवने कठोर स्वरमें डाँट दिया। जीवनमें प्रथम बार किसीने रावणको ब्राह्मण माना, आचार्य बनाने योग्य माना और दशग्रीव इतना कापुरुष निकलेगा कि वह भारतके परम प्रशंसित महर्षि पुलस्त्यके सगे भाई वशिष्ठके यजमानका आमन्त्रण-अपने आराध्यकी स्थापनाके आचार्यत्वका आमन्त्रण अस्वीकार कर देगा ?

ऋक्षेश्वर। तपस्वी राजकुमारने जब इतना बड़ा आचार्य आमन्त्रित किया है, देखना होगा कि वह उचित अधिकारी यजमान भी है या नहीं। दशग्रीवने जाम्बवन्तकी ओर देखा- आप जानते ही हैं कि आप त्रिभुवनजयी अपने इस शत्रुकी पुरीमें पधारे हैं। हम यदि आपको यहाँ बन्दी कर लें, आपको लौटने ही न दें ?

उचित होगा। प्रहस्त चुप नहीं रह सका। राक्षसोंको भी यह ठीक लगा। किसीने जाम्बवन्तके सेतुबन्ध शब्दपर ध्यान नहीं दिया था। दशग्रीव तकने समझा था कि राम शिव-स्थापन करके समुद्रपर सेतुनिर्माणका उपक्रम करनेवाले हैं।

यह सम्भव नहीं है। जाम्बवन्त खुलकर हँसे- मुझे निरूद्ध करनेकी शक्ति लमाके सब राक्षसोंके सम्मिलित प्रयासमें भी नहीं है; किंतु मुझे कोई घृष्टता करनेकी न अनुमति है, न आवश्यकता। मैं जब चलने लगा था, तब रामानुज लक्ष्मण समुद्र-तटपर वीरासनमें बैठ गये थे। उन्होंने आचमन करके अपने त्रोणसे पाशुपात निकाल लिया था और मुझसे कहा था- ऋक्षराज ! दशग्रीवसे कह देना कि यदि एक मुहूर्तमें आप सकुशल मेरे दृष्टिपथमें नहीं आ गये तो यह अस्त्र सम्पूर्ण राक्षस-कुलके संहारका समल्प लेकर छूट जायगा।

राक्षसोंके मुख भयभीत हो गये। प्रहस्तका शरीर स्वेदसे लथपथ हो गया। दशग्रीव तक काँप उठा। पाशुपतास्त्र-महेश्वरका यह अमोघास्त्र तो सृष्टिमें एक साथ दो पुरुष प्रयोग नहीं कर सकते। अब भले वह दशग्रीव तथा इन्द्रजितके भी त्रोणमें हो, जब लक्ष्मणने उसे निकाल लिया, स्वयं भगवान शिव भी अब उसे उठा नहीं सकते। उसका तो कोई प्रतिकार नहीं।

आप पधारें। दशग्रीवने अपनेको सम्हालकर कहा- यजमान उचित अधिकारी है। उसे अपने दूतको संरक्षण देना आता है। रामसे कहिये, मैंने उनका आचार्यत्व स्वीकार किया। आवश्यक उपकरण जो यजमान उपलब्ध न कर सके, जुटा देना आचार्यका कर्तव्य होता है। मैं उनको लेकर आ रहा हूँ; क्योंकि जानता हूँ कि अरण्यवासी राजकुमारके समीप क्या हो सकता है।

जाम्बवन्तको विदा देकर दशग्रीवने आवश्यक सामग्री संग्रह करनेकी आज्ञा दे दी और स्वंय सीधे अशोकोद्यान पहुँचा। उसने सीतासे कहा- इस समय रावण तुम्हारे सामने रामके आचार्यके रूपमें आया है। वे शिव-स्थापन करने जा रहे हैं और पौलस्त्यको उन्होंने आचार्य वरण किया है। सौभाग्यवती भव ! सुनते ही श्रीजनक-नन्दिनीने भूमिपर भाल रख दिया। स्वस्थ कण्ठसे दक्षिण भुजा फैलाकर आशीर्वाद देनेके अनन्तर दशग्रीव बोला- तुम जानती हो कि पत्नीके बिना गृहस्थके सब अनुष्ठान अपूर्ण रहते हैं। रामका अनुष्ठान पूर्ण हो, यह दायित्व उनके आचार्यका है। रथ आ रहा है, उसपर बैठ जाओ। लेकिन स्मरण रखना, तुम वहाँ रहकर भी रावणकी वन्दिनी रहोगी। कर्मान्तमें इसी प्रकार शान्त यहाँ आनेके लिए रथपर बैठ जाओगी।

स्वामीने योग्य आचार्यका वरण किया है ! श्रीजानकीने दोनों हाथ जोड़कर मस्तक झुका दिया स्वीकृतिमें।

रथपर बैठकर जब रावण समुद्र-तटपर पहुँचा, सेतु देखकर उसके नेत्र खुले रह गये। रथ और सीताको उसने वहीं छोड़ा। आदेश मिलनेपर आना कहकर और स्वयं आकाश-मार्गसे अकेला आया। जाम्बवन्तसे समाचार पाकर श्रीराम भाईके साथ स्वागतको पहिलेसे प्रस्तुत थे। वानरसेनाको समझा दिया गया था।

ऐक्ष्वाकु गोत्रीय दाशरथि राम प्रणिपात करता है। दशग्रीवके तटपर उतरते ही श्रीरामने सानुज प्रणाम किया भूमिमें पड़कर।

आयुष्मान् भव ! समर-विजी भव ! पौलस्त्यके आशीर्वचनके स्वरने सबको चौंकाया। लेकिन दशग्रीवने सुग्रीव, विभीषण तककी उपेक्षा कर दी। जैसे वे वहाँ हों ही नहीं। किसीके प्रणामका प्रत्युत्तर नहीं दिया।

तुम संन्यासी नहीं हो। पत्नी-परिग्रह-हीन वानप्रस्थका भी तुमने व्रत नहीं लिया है। दशग्रीवने आचार्यके लिए उचित ढङ्गसे कहा-

तब पत्नी-रहित अनुष्ठान तुम कैसे कर सकते हो ?

यजमान असमर्थ हो तो श्रुति-तत्त्वज्ञ आचार्य उत्तम कल्पके अभावमें अन्य विधान भी तो कर सकते हैं ? श्रीरामने अञ्जलि बाँधकर अत्यन्त नम्र स्वरमें प्रार्थना की।

कर सकते हैं; किंतु पौलस्त्य जैसा आचार्य प्रथम कल्पसे किंचिन्यून विधि भी स्वीकार नहीं करता। दशग्रीव हँसा- किसीको भेज दो उस पार। रथ खड़ा है। यजमान जिन उनकरणोंको उपलब्ध करनेमें असमर्थ हो, उन्हें उपलब्ध कराना आचार्यका दायित्व होता है। लेकिन राम। अनुष्ठानान्तमें वे उपकरण आचार्य लौटा ले जाया करता है।

श्रीरामने अञ्जलि बाँधकर मस्तक झुकाकर मौन भावसे यह उचित तथ्य स्वीकार कर लिया। दशग्रीवने सेतुके चर्चा तक नहीं की। श्रीरामके संकेतपर विभीषणके एक मन्त्री गये और श्रीसीताके साथ रथ इस तटपर आया। उसमें अन्य आवश्यक सामग्री सजाकर रखी गयी थी। सामग्री के समीप रखी गयी।

पतिके पार्श्वमें और अनुष्ठानमें आवश्यक सहयोग दो। हाथ जोड़े मस्तक नीचे किये वैदेहीको दशग्रीवने ही आदेश दिया।

आवश्यक गणपति-पूजन, कलश-स्थापन, नवग्रह पूजनादिके अनन्तर रावणने पूछा- लिङ्गविग्रह ?

उसे लेने गत रात्रिके प्रारम्भमें ही पवनपुत्र कैलास गये। श्रीरामने नम्रतापूर्वक निवेदन किया- वे अभी तक लौटे नहीं हैं।

विलम्ब नहीं किया जा सकता। उत्तम मुहूर्त उपस्थित है। दशग्रीवने आदेश दिया- यजमान- पत्नीको बालुका-लिङ्ग बना लेना चाहिये। आचार्य ऐसा ही होना चाहिये जो कैसा भी यजमान हो, विधि सम्पन्न करानेमें उसका तनिक भी संकोच न करे। श्रीजनक-नन्दिनीने स्वकरसे समुद्रकी आर्द्र रेणुकासे बड़ी-सी लिङ्ग-मूर्ति निर्मित्त की। दशग्रीव निर्देश देता गया। रेणुका का ही आधार-पीठ बना। श्रीरामने वही श्रीविग्रह स्थापित किया। दशग्रीवने सविधि अर्चा सम्पन्न करा दी।

आचार्यकी दक्षिणा। विधिका निर्देश तो किया ही जाना था।

आप जो आज्ञा करें ? श्रीराम अञ्जलि बाँधे प्रस्तुत थे। सम्पूर्ण वानरदलका हृदय वेगसे धड़क रहा था- राक्षसेश्वर क्या माँगेगा ?

राम। स्वर्णपुरीके त्रिभुवनजयी स्वामीकी दक्षिणा सम्पत्ति नहीं हो सकती; दशग्रीवने कहा।

आचार्य जानते हैं कि उनका यजमान इस समय वनवासी है। श्रीरामका स्वर भी शान्त, स्वस्थ था- फिर भी जो आज्ञा हो, राम उसे पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा करता है।

दशग्रीव जब समर-शय्या ग्रहण करे, तुम सम्मुख उपस्थित रहोगे। रावणने अपनी दक्षिणा माँगी और मेरे और तुम्हारे युद्ध के बीच मैं जब तुमपर बाण से प्रहार करूँ तब तुम्हारे सौम्य सुन्दर स्वरूप को देखकर मैं विचलित नहीं हूँ और मुझे इतनी शक्ति मिले कि मैं तुमपर बाणसे प्रहार कर सकूँ।

अच्छा आचार्य। श्रीरामके कमल-लोचन भर आये। अब लक्ष्मणने तथा दूसरे सबने सच्ची श्रद्धाके साथ इस अद्‌भुत आचार्यको भूमिमें मस्तक रखकर प्रणाम किया। श्रीजनक-नन्दिनी संकेत पाकर रथपर बैठ गयीं। दशग्रीवने सेतुपर पद नहीं रखा। वह गगन-मार्गसे ही गया। श्रीजानकी रथपर बैठकर लमा लौट गयीं।

लमासे गया रथ लौटा और पवनकुमार शिवलिम लेकर पहुँचे। वे दोनों कन्धोंपर दो लिङ्ग-विग्रह लिये आये थे। यहाँ स्थापना हो चुकी यह देखकर बहुत दु:ख हुआ। कुछ प्रणय-रोषसे लिङ्ग-विग्रहोंको रखकर प्रभुसे बोले- मैं वहाँ गया तो भगवान् शमरके दर्शन नहीं हुए। देर तक स्तुति करनेपर वे प्रकट हुए। उनके द्वारा प्राप्त ही लिङ्ग-मूर्ति लानी थी। इसमें विलम्ब मेरा अपराध तो नहीं है ?

बात अपराधकी नहीं है। मुहूर्त व्यतीत हो रहा था, अत: आचार्यके आदेशसे सीताने रेणुका विग्रह बना दिया। उसीकी स्थापना करके मैंने पूजा कर दी। श्रीरामने थोड़े शब्दोंमें रावणके आचार्य होने तथा सीताको लाने, लौटा ले जानेका समाचार देकर कहा- तुमको बहुत क्षोभ हो तो इस स्थापित विग्रहको हटा दो। मैं तुम्हारे द्वारा लो विग्रहोंमें- से एककी स्थापना कर दूँगा।

तुमको बहुत क्षोभ हो तो श्रीरामके इन शब्दोंपर ध्यान देनेकी मन:स्थिति हनुमानकी नहीं थी। यह संकेत था कि स्वामीके कार्यसे क्षुब्ध होना सेवकको शोभा नहीं देता। उसे स्वामीके निर्णयसे सन्तुष्ट होना चाहिये। लेकिन हनुमानको बहुत क्षोभ था। रावण आचार्य बना, इसलिए भी। रावणपर तो वे अत्यन्त रुष्ट थे। अशोकोद्यानमें श्रीवैदेहीके प्रति उसका व्यवहार उनका देखा था। अम्बा सीता उन्हीं दारुण राक्षसियोंमें लौट गयीं, इसलिए भी।

हनुमानको लगा कि उन्होंने लमा को जलाया है, इसलिए रावणने जानबूझकर उनका अपमानित किया। उनके लाये श्रीविग्रहको स्थापनाका अवसर नहीं दिया। रावणके ऊपर जो रोष था, वह उसके द्वारा स्थापित शिव-लिङ्गपर उमड़ा। उसे उठाकर फेंक देनेके लिए पहिले अवज्ञापूर्वक वामहस्तसे प्रयत्न किया। असफल होनेपर दोनों हाथ लगाये। दूध, दधि, घृतादि से अभिषिक्त स्निग्ध शिव-लिङ्गसे हाथ सरक जाते थे। अन्तमें लांगूल लपेटकर पूरी शक्ति लगायी। शिव-लिङ्ग तो हिला नहीं, पूँछका कुछ भाग टूट गया और हनुमान दूर मुखके बल जा गिरे। मुखसे रक्त आने लगा। मूर्छित हो गये।

श्रीराम आतुरतापूर्वक उठे। उन्होंने हनुमानके मुखपर जल छिड़का। उन्हें उठाया। अपने कर-स्पर्शसे उनकी पीड़ा, व्रण दूर करके स्नेहपूर्वक समीप बैठाकर समझाया- पवनपुत्र। तुमने आते ही क्रोधपूर्वक पैर पटके थे, इससे तुम्हारे पैर पृथ्वीमें धँस गये थे। अब यह लांगूल छिन्न हो गयी। अत: यहाँ तुम पादगुप्त छिन्नपुच्छ विग्रहके रूपमें सदा पूजित रहो।

हनुमान। तुम्हें सोचना चाहिये था कि निखिल विश्व-विधायिका सीताने जिसका स्वरोंसे निर्माण किया, उस लिङ्ग-विग्रहको हिलाया- उखाड़ा कैसे जा सकता है। श्रीरामने आदेश दिया- अब तुम अपने लाये विग्रहोंमें-से एककी स्थापना कर दो। उसका नाम हनुमदीश्वर होगा। उसका दर्शन किये बिना मेरे द्वारा स्थापित रामेश्वरके दर्शन-पूजनका फल नहीं होगा। दूसरा लिङ्ग-विग्रह अपूजित रहने दो। उसकी स्थापना मैं अगले कल्पमें कर दूँगा।

वानरराज सुग्रीवने बहुत-से दूत भेजे, जो सब श्रेष्ठ मुनियोंको बुलाकर ले आये। शिवलिंगकी स्थापना करके विधिपूर्वक उसका पूजन हुआ। फिर भगवान राम बोले- शिवजीके समान मुझको दूसरा कोई प्रिय नहीं है।

जो शिवसे द्रोह रखता है और मेरा भक्त कहलाता है, वह मनुष्य स्वप्नमें भी मुझे नहीं पाता। शमरजीसे विमुख होकर विरोध करके जो मेरी भक्ति चाहता है, वह नरकगामी, मूर्ख और अल्पबुद्धि है।

जिनको शमरजी प्रिय हैं, परन्तु जो मेरे द्रोही हैं; एवं जो शिवजीके द्रोही हैं और मेरे दास बनना चाहते हैं, वे मनुष्य कल्पभर घोर नरकमें निवास करते हैं। जो मनुष्य मेरे स्थापित किये हुए इन रामेश्वरजीका दर्शन करेंगे, वे शरीर छोड़कर मेरे लोकको जायँगे। और जो गङ्गाजल लाकर इनपर चढ़ावेगा, वह मनुष्य सायुज्य मुक्ति पावेगा अर्थात मेरे साथ एक हो जायगा।

जो छल छोड़कर और निष्काम होकर श्रीरामेश्वरजीकी सेवा करेंगे, उन्हें शमरजी मेरी भक्ति देंगे। और जो मेरे बनाये सेतुका दर्शन करेगा, वह बिना ही परिश्रम संसाररूपी समुद्रसे तर जायगा।

श्रीहनुमानजीने आज्ञा पालन किया। हनुमदीश्वर लिङ्ग स्थापित कर दिया। दूसरा लिङ्ग-विग्रह, जो विश्वेश्वर कहा जाता है, अब भी अपूजित है। इसके पश्चात् श्रीराम सेतुपर आकर खड़े हुए।

उसी समय भगवान शंकर प्रगट हुए और बोले- यह स्थान रामेश्वर के नाम से जाना जायगा। अर्थात राम:+ईश राम जिसके ईश्वर है वह स्थान रामेश्वर है। तब भगवान श्रीराम बोले- भगवान नीलकंठ यह नहीं है अर्थात् रामस्य ईश्वर है। राम के जो ईश्वर है वह रामेश्वर है। राम और शिवने परस्पर एक-दूसरे का दास कहा है और आपसमें एक-दूसरे की महिमा बढ़ाई है।

प्रभु श्रीराम बोले- शंकर में और मुझमें लेशमात्र भी भेद नहीं है। जैसे सब नदियों का पानी सागर में ही आता है वैसे सब देवों का पूजन, परमात्मा में ही हो जाता है। इसलिए आज से आगे शिवराम एक ही नाम हुआ।

इस प्रकार राम ने जिस शिवजी की स्थापना की, वह सेतु-बन्ध रामेश्वर है। उस पूर्ण सेतुबन्ध के पास समस्त कपि और मुनि आकर बैठ गये। तदनन्तर समस्त सभाजनों के सुनते हुए स्वयं श्रीराम बोले। मेरे द्वारा ये महादेवजी स्थापित हैं। जो कोई भक्ति-भाव से इनकी सेवा करे, वह मनोवांछित फल को प्राप्त हो जाएगा और उसके करोड़ों जन्मों का पाप (दोष) नष्ट हो जाएगा। जो कोई गंगा-जल लाते हुए इन पर चढ़ाएगा, वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाएगा। जो शिवजी के प्रति स्नेह धारण करेगा, वह मेरा बहुत प्रियजन हो जाएगा। कोई मेरा भक्त मेरे प्रति अनन्य आसक्ति तो रखे, परन्तु शिवजी के प्रति द्रोह करे, तो मैं किसी भी समय उससे प्रसन्न नहीं हो सकता। उस प्राणी को चण्डाल समझो। इस प्रकार श्रीरघुवीर अपने श्रीमुख से कोमल परन्तु गम्भीर वाणी स्वर में बोले। अनन्तर जगदाधार श्रीराम रामेश्वर को नमस्कार करके सेतु पर चढ़ गये।

तब श्रीरामने रामेश्वरम् में एक छोटी पहाड़ी गंधमादन पर्वत पर चढ़कर अपनी पूरी सेनाका अवलोकन व निरीक्षण किया। उस स्थानका नाम रामेश्वरम् में राम झरोखा है।

चतुर नल और नीलने सेतु बाँधा। श्रीरामकी कृपासे उनका यह उज्ज्वल यश सर्वत्र फैल गया। जो पत्थर आप डूबते हैं और दूसरोंको डुबा देते हैं, वे ही जहाजके समान स्वयं तैरनेवाले और दूसरोंको पार ले जानेवाले हो गये।

श्रीरघुवीरके प्रतापसे पत्थर भी समुद्रपर तैर गये। ऐसे श्रीरामको छोड़कर जो किसी दूसरे स्वामीको जाकर भजते हैं वे निश्चय ही मन्दबुद्धि हैं। नल-नीलने सेतु बाँधकर उसे बहुत मजबूत बनाया। देखनेपर वह कृपानिधान श्रीरामके मनको बहुत ही अच्छा लगा। सेना चली, जिसका कुछ वर्णन नहीं हो सकता। योद्धा वानरोंके समुदाय गरज रहे हैं।

कृपालु श्रीरघुनाथ सेतुबन्धके तटपर चढ़कर समुद्रका विस्तार देखने लगे। करुणाकन्द करुणाके मूल प्रभुके दर्शनके लिये सब जलचरोंके समूह प्रकट हो गये जलके ऊपर निकल आये।

बहुत तरहके मगर, नाक घड़ियाल, मच्छ और सर्प थे, जिनके सौ-सौ योजनके बहुत बड़े विशाल शरीर थे। कुछ ऐसे भी जन्तु थे जो उनको भी खा जायँ। किसी-किसीके डरसे तो वे भी डर रहे थे।

वे सब वैर-विरोध भूलकर प्रभुके दर्शन कर रहे हैं, हटानेसे भी नहीं हटते। सबके मन हर्षित हैं; सब सुखी हो गये। उनकी आड़के कारण जल नहीं दिखायी पड़ता। वे सब भगवान्‌का रूप देखकर आनन्द और प्रेममें मग्न हो गये। सेतुबन्धपर बड़ी भीड़ हो गयी, इससे कुछ वानर आकाशमार्गसे उड़ने लगे और दूसरे कितने ही जलचर जीवोंपर चढ़-चढ़कर पार जा रहे हैं।

ये लीलामय। इन्होंने तो हमें सुयश देनेके लिए ही सेतु-निर्माण कराया। इन्हें कहाँ इसकी आवश्यकता थी। नीलने अपने भाई नलकी ओर देखा और समुद्रकी ओर संकेत किया। अब सेतुका कोई अर्थ नहीं रह गया था। श्रीरामके वहाँ खड़े होते ही समुद्रके महाकाय, योजन-शरीरों जलचरोंका समुदाय ऊपर आ गया था। सेतुके दोनों ओर जहाँ तक दृष्टि जाती थी, केवल जलचर, एकके ऊपर एक लदे-से जल-जीव। ये केवल सिर ऊपर किये एकटक श्रीरामको देख रहे थे। स्थिर-शिलाके समान स्थिर देख रहे थे। उनके शरीरोंके कारण सागरका जल दीखता ही नहीं था।

सुग्रीवकी प्रार्थनापर श्रीराम हनुमानके कन्धेपर बैठे और लक्ष्मण अङ्गदके कन्धेपर। सौ योजनकी यात्रा थी समुद्रके ऊपर। गदा लेकर विभीषण मन्त्रियोंके साथ आगे चले। जाम्बवन्त और सुषेणने पार्श्व-रक्षा पकड़ी। सुग्रीवको पीछे चलना था।

वानरोंसे कम ही सेतुका सहारा लेते थे। बहुत-से गगनमें कूदते थे और जलचरोंमें किसीकी पीठपर उतरकर फिर छलाँग लगा देते थे। बहुत अधिक थे जिन्हें जलचरोंकी पीठपर चलना एक विनोद प्रतीत हो रहा था। अनेक तो पादक्षेपके साथ गिनते जा रहे थे कि कितने जलचरोंकी पीठपर वे पैर रख सके।

जलचर स्थिर, अविचल पानीके ऊपर पड़े थे। उन्हें जैसे पता तक न हो कि उनकी पीठपर कौन चल रहे हैं, कौन कूद रहे हैं। केवल उनके सिर हिलते, घूमते थे श्रीरामको देखने के लिए। असंख्य वानर-सेना; किंतु जलचरोंके शरीरोंसे बने सेतुका विस्तार भी बहुत बड़ा था। दस योजन चौड़े नल-नील द्वारा बनाये गये सेतुपर- से केवल यूथपोंमें कुछ प्रधान जा रहे थे। शेष सेना तो उछलते-कूदते, जलचरोंके शरीरोंसे बने इस सजीव सेतुसे सागर पार कर रही थी। श्रीरामके साथ ही उनके सम्पूर्ण कटकने समुद्र पार कर लिया। श्रीराम तब तक समुद्रतटपर हनुमानके कन्धेपर स्थित रहे, जब तक सेनाके वानरोंका अन्तिम यूथ सागर पार उतर नहीं गया।

प्रभुने समुद्रके पार डेरा डाला और सब वानरोंको आज्ञा दी कि तुम जाकर सुन्दर फल-मूल खाओ। यह सुनते ही रीछ-वानर जहाँ-तहाँ दौड़ पड़े। श्रीरामके हित सेवा के लिये सब वृक्ष ऋतु-कुऋतु- समयकी गतिको छोड़कर फल उठे। वानर-भालू मीठे-मीठे फल खा रहे हैं, वृक्षोंको हिला रहे हैं और पर्वतोंके शिखरोंको लमाकी ओर फेंक रहे हैं।

घूमते-फिरते जहाँ कहीं किसी राक्षसको पा जाते हैं तो सब उसे घेरकर खूब नाच नचाते हैं और दाँतोंसे उसके नाक-कान काटकर, प्रभुका सुयश कहकर अथवा कहलाकर तब उसे जाने देते हैं।

रामने किष्किंधा से लेकर रामेश्वरम् तक इस प्रकार यात्रा की- **चक्रतीर्थ-** तुंगभद्रा नदी यहां पर धनुषाकार घुमाव लेती है। इसलिये इसे चक्रतीर्थ कहते है। इसी नदी के तट पर श्रीराम सुग्रीव की दुर्दशा देख कर सुग्रीव को विश्वास दिलाने हेतु सप्त ताल वृक्ष वेध देते है तथा दुन्दुभि राक्षस की हड्डियों के पहाड को पैर के अंगूठों से स्पर्श मात्र से ही दूर फेंक देते है। नदी के एक ओर बालि-सुग्रीव का युद्ध हुआ तथा दूसरे किनारे पर वृक्षों की ओट में श्रीराम ने धनुष बाण लेकर बालि का वध किया। सुग्रीव को किष्किन्धा का राज्य दिया।

किष्किन्धा- किष्किन्धा अब अनागोंडी नाम से जाना जाता है। यहां पर बालि का भंडार, पीरूक्षम मन्दिर, कोदंड राम मन्दिर, मतंग

पहाडी ये सब दर्शनीय स्थल है।

प्रवर्षण गिरि- श्रीराम ने वर्षा के ४ महिने चौमासा इस पर्वत की चोटी पर बिताये। यहीं पर हनुमान ने सीताजी का पता लगा कर सूचना दी और यहीं से श्रीराम ने लंका के लिये प्रस्थान किया। हम्पी से ४ किमी. दूर माल्यवन्त पर्वत की चोटी का नाम ही प्रवर्षण चोटी है। यहीं एक मात्र स्थल है जहां राम ने धनुष धारण नहीं किया हुआ है। यहां पर एक स्फटिक शिला है जहां श्रीराम लक्ष्मण विराजते है। यहीं पर बैठ कर श्रीराम अपने भक्तों की चर्चा किया करते थे। यही पर हनुमान ने सीता की खोज की सूचना दी।

कर सिद्धेश्वर मन्दिर- होस दुर्ग से २५ कि.मी. दूर रामगिरी नामक पहाड पर राम ने लंका जाते समय भगवान शिव की यहां पूजा की थी।

हाल रामेश्वर - चित्रदुर्ग जिले में होसदुर्ग से ११ कि.मी. दूर जंगल में श्रीराम ने शिव पूजा की। शिव को श्रीराम अपना ईश्वर मानते थे इसलिये इस मन्दिर का नाम हाल रामेश्वर हुआ।

मनकत्तूर- स्थानीय प्रभाव से यहां पर लक्ष्मण का मन राम भक्ति से विचलित हुआ। राम देवट गुड्डा के निकट जंगल मे शिव मन्दिर है। यहां पर शिव अर्चना की।

बाणावर शिव मन्दिर- यहां पर लक्ष्मण ने श्रीराम को धनुष बाण लेकर चलने से मना कर दिया। यहां भगवान शिव ने लक्ष्मण को स्थानीय प्रभाव बता कर शान्त किया।

गुडनेली केरो शिव मन्दिर- लंका जाते समय श्रीराम यहां आये थे। यहीं पर दशरथ जी का श्राद्ध किया था।

शिव मन्दिर कुर्ग- तालुका में सोमवार पेठ स्थान पर कुर्ग में श्रीराम ने शिव पूजा की थी।

मेल कोटे- वानर सेना ने इस स्थान पर जलपान किया था। नगर से ३ कि.मी. दूर जंगल में एक पहाडी पर श्रीराम के बाण द्वारा बनाया गया जल स्तोत्र आज भी है।

गावी रायन वेट्टा - लंका जाते समय इस गांव में गावी दैत्य का वध किया था तथा यहां पर शिव पूजा कर पिता दशरथ जी का श्राद्ध किया था। इसी भगवान शिव मन्दिर पर आज भी स्थानीय लोग अपने पूर्वजों का श्राद्ध करने आते है।

राम पाद गांव- यहाँ से श्रीराम तमिलनाडु द्रविणम प्रान्त में आये। यहां एक निकट पहाडी पर श्रीराम का मन्दिर बना है। यहां पर से श्रीराम लंका की ओर आगे बढ़कर त्रिचनापल्ली में गये थे।

त्रिचनापल्ली - इसका मूल नाम त्रिशिरापल्ली है। यह रावण के भाई त्रिशिरा ने बनाई थी। श्रीराम की वानर सेना इधर से ही होकर रामेश्वरम् गयी थी। यहां पर श्रीराम ने विश्राम किया। यही पर एक दिव्य हरि मन्दिर बना जिसका नाम रंगनाथ स्वामी मन्दिर है। अभी रंगजी मन्दिर के नाम से जाना जाता है। जहां आज विभिषण प्रतिदिन हरिदर्शन के लिये आते है।

हनुमान मन्दिर कपिस्थल - कहते है यह स्थल तन्जौर जिले के पापनाशनम् तालुका में है। यहां से हनुमानजी ने छलांग लगायी थी। यहां पर हनुमान का मन्दिर है। यहां पर महेन्द्र पर्वत का एक शिखर है। स्थानीय लोग इसे कपि स्थल कहते है।

शिव मन्दिर पापनाशम्- यह रामलिंग (शिव मन्दिर) रामेश्वर की तरह ही बनाया गया है। यहां कुल १०८ शिवलिंग स्थापित किये गये है। खरदूषण तथा त्रिशिरा की ब्रह्म हत्या से छुटकारे के लिये श्रीराम ने यहां शिव पूजा की थी।

राम पाद कोडी करई - श्रीराम ने कोडी करई से पुल बनाना शुरू किया था किन्तु किसी कारण वश फिर स्थान बदलना पडा। वेदारण्य में श्रीराम ने विश्राम किया था। यहां श्रीराम के चरण चिन्ह है। वेदारण्य से ७ कि.मी. दूर समुद्र के किनारे जंगल में श्रीराम के चिन्ह है।

कल्याण राम मन्दिर- मिमिसाइल में यहां के ऋषियों ने इच्छा की वे श्रीराम का विवाह दृश्य देखना चाहते है। यहां पर श्रीराम अनेक ऋषियों से मिले। यहां पर श्रीराम कल्याण सीता स्वयंवर श्रीराम विवाह के सुन्दर दृश्य शिलाओं पर अंकित है। इसे श्रीराम कल्याण मन्दिर कहते है।

मुत्तु कुडा शिव मन्दिर- मिमिसाइल से ९-१० कि.मी. दक्षिण में श्रीराम ने शिव पूजा की थी।

तीर ताड धाम- मुत्तु कुडा से १० कि.मी. दक्षिण दिशा में तीरताण्ड धाम में श्रीराम ने अगस्त्य मुनि के आदेश पर शिव पूजा करी थी। मन्दिर मे श्रीराम, लक्ष्मण राजा सेतुपति, ऋषि अगस्त्य तथा भगवान शिव की सुन्दर चित्रावली है। यहां से १ किमी. दूर रामपाद चिन्ह बने है। यही पर अगस्त्य मुनि ने सम्पूर्ण समुद्र का जल पान कर लिया था। यह सिद्ध स्थल है।

ताप नाशन विनायक मन्दिर - धूप गर्मी तपन से त्रस्त श्रीराम लक्ष्मण ने इस स्थान पर गणेश पूजा की थी। तब गणेशजी ने यहां

पर प्रत्यक्ष प्रकट होकर विजयी होने का आशीर्वाद दिया था।

देवि पट्टन - तीरतांड धाम से १५ किमी. देवी पट्टन स्थान पर श्रीराम ने शनि शान्त करने के लिये यहां नवग्रह की पूजा की थी। यहां पर श्रीराम ने विष्णु के सुदर्शन चक्र की पूजा की थी, तो आशीर्वाद मिला कि वानरों की सेना को समुद्री लहरे परेशान नहीं करेगी। सुदर्शन चक्र ने आश्वासन दिया कुंभकरण वध हेतु मैं आपके आहवान पर आपके कारमुक नामक बाण पर बैठ कर कुंभकरण का सिर काट कर रावण के सम्मुख रख दूंगा।

रामेश्वर - रामेश्वर के समुद्री तट पर पहुंच कर श्रीराम समुद्र से रास्ता लेने के लिये तीन दिन तक तपस्या करते पृथ्वी पर दर्भ शैया पर लेटे रहे। यहीं पर शिव लिंग की स्थापना कर पूजा की। इसे आदि रामेश्वर माना जाता है। यहीं पर समुद्र ने प्रकट होकर श्रीराम को नल नील द्वारा पुल बांधने की युक्ति सुझाई थी। यही स्थान रामेश्वर है। यहा आज भी २२ जल स्तोत्र है जिनका जल मीठा है। लोग पुण्य के लिये यहां स्नान करते है। यह मन्दिर भगवान शिव के भव्यतम तथा विशालतम मन्दिर १२ ज्योतिर्लिंग में से एक है।

छेदु करई- यहां से सेतु बांधना शुरु हुआ था। यहीं पर पुल की आधार शिला रखी गई थी। छेदु करई से समुद्र में २ कि.मी. भीतर तक सेतु के अवशेष आज भी देखे जा सकते है। यहीं पर सेतु के स्तम्भ है। राम सेतु बन्ध पुल रामेश्वर द्वीप से श्रीलंका में मन्नार की खाडी से जोडता है। रामानंद से ४८ मील दूर एक पथरीली पट्टी रेत और सूखी चट्टानों से निर्मित मन्नार की खाडी में जाकर समाप्त होता है। सन १४८० में एक समुद्री तूफान के बाद राम सेतु में एक दरार पड गई जो एक समुद्री तूफान के बाद और चौडी हो गई। इसकी लम्बाई ४८ कि.मी. और चौडाई २ कि.मी. है। रामसेतु चूनेदार बालू पत्थर से निर्मित है।

विलुंडी तीर्थ- वानर सेना के लिये शुद्ध मीठे जल हेतु श्रीराम ने बाण से यहां स्त्रोत बनाया। तगचिमडम से लगभग १० कि.मी. दूर समुद्र में स्थित इस कुंये से मीठा जल निकलता है।

कोदंड राम मन्दिर- समुद्र में एक प्राचीन मन्दिर में श्रीराम, लक्ष्मण, हनुमान, सुग्रीव, जाम्बवन्त तथा विभीषण के बहुत सुन्दर विग्रह है। विभीषण श्रीराम के शरण में यही पर आये थे और श्रीराम ने उनका लंकाधिपति कहकर राज्याभिषेक किया था।

अग्नि तीर्थ - समुद्र पर क्रोध कर श्रीराम ने यहां पर स्नान करके अपने क्रोध को विदा किया।

कोदंडराम मन्दिर गन्धमादन पर्वत राम झरोखा- समुद्र के किनारे एक छोटी सी पहाडी का नाम गन्दमादन पर्वत है। यहां पर श्रीराम के चरण चिन्ह बने है। यही पर खडे होकर श्रीराम ने अपनी वानर सेना का अवलोकन किया था इसलिये इस स्थल को राम झरोखा कहते है।

सुबेल पर्वत- छेदु करई से ताल मन्नार की खाडी तक सेतु बन्ध बांधक श्रीराम वानर सेना सहित लंका में पहुंचे और यहां के सबसे ऊंचे पर्वत सुबेल पर अपनी सेना का पडाव डाल कर अपने छावनी बनाते।

जटा तीर्थ- रामेश्वर मन्दिर से धनुषकोटि के मार्ग में जटा तीर्थ है। यहां श्रीराम ने अपनी जटाये धोई थी। यहां स्नान करने से सन्तान प्राप्ति होती है।

एकान्त राम मन्दिर- जंगल में सुनसान स्थान पर एक उपेक्षित सा मन्दिर है। लंका जाने से पूर्व राम ने युद्धनीति पर यही मन्त्रणा की थी।

धनुषकोटि- यह स्थान रामेश्वरम से १६ कि.मी. दूर है। श्रीराम ने विभीषण के अनुरोध पर धनुष की नोक से बने हुये सेतुबन्ध पुल को तोड दिया था। इस स्थल का पुराना नाम धनुष तोडी भी है जो कालान्तर में धनुष कोटि के नाम से हुआ। श्रीराम लक्ष्मण जानकी लंका से वापिस अयोध्या को लौट रहे थे उस समय श्रीराम के मन में विचार आया कि मैंने मेरे इस धनुष से ब्रह्म हत्या (रावण पुलस्त्य ऋषि का पौत्र ब्राह्मण ही था) कर दी है। तथा अब इस धनुष का प्रयोजन भी पूरा हो गया। उसी समय इस स्थान पर धनुष की पूजा कर इसे तोड कर सागर के पानी में विसर्जित कर दिया तथा पूजा करके ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित किया।

इति सुन्दरकाण्ड समाप्त

जापर कृपा राम की होई। ता पर कृपा करहिं सब कोई॥

लंका-काण्ड (युद्ध काण्ड)

* विषय-सूची *

१)	राम की वानरसेना का सुबेल शिखर पर पड़ाव	३२०
२)	अङ्गद-रावण सम्वाद	३३९
३)	युद्धारम्भ	३६०
४)	मेघनाद का लक्ष्मण पर ब्रह्मास्त्र शक्ति प्रयोग	३७०
५)	सेनापति प्रहस्त का वध	३८२
६)	रावण का युद्धभूमि में आना	३८४
७)	कुम्भकर्ण वध	३९४
८)	मेघनाद का राम-लक्ष्मणको नागपाश में बाँधना	४०८
९)	धूम्राक्ष, वज्रदंष्ट्र और अकम्पन का वध	४१४
१०)	त्रिशिरा, देवान्तक, नरान्तक का वध	४१७
११)	लक्ष्मणके द्वारा अतिकाय का वध	४२०
१२)	कुम्भकर्ण पुत्र कुम्भ और निकुम्भ का वध	४२३
१३)	श्रीरामद्वारा मकराक्ष वध	४२५
१४)	तरणीसेन का युद्ध और पतन	४२६
१५)	वीरबाहु का वध	४३१
१६)	भस्मलोचन का वध	४३२
१७)	लक्ष्मणद्वारा मेघनाद (इन्द्रजित) का वध	४३२
१८)	सती सुलोचना (प्रमिला)	४५०
१९)	अहिरावण वध	४५६
२०)	श्रीराम की शक्ति पूजा	४६२
२१)	सीताका अशोकवाटिका में क्रन्दन	४६६
२२)	वानर और राक्षसोंका युद्ध	४६८
२३)	राक्षस महोदर, महापार्श्व और विरूपाक्षका वध	४७१
२४)	श्रीराम-रावण युद्ध	४७३
२५)	रावण वध	४८१
२६)	रावण का राम को राजनीति उपदेश व रावण की अन्तिम अभिलाषा	४९७
२७)	श्रीराम स्तवन	५०२
२८)	विभीषण का विलाप, रावण की स्त्रियों का विलाप, मन्दोदरी का विलाप और रावण की अन्त्येष्टि क्रिया	५०३
२९)	विभीषणका राज्याभिषेक	५११
३०)	सीताकी अग्निपरीक्षा	५१५
३१)	राम का अयोध्या लौटना	५२६

लंका-काण्ड

१) राम की वानरसेना का सुबेल शिखर पर पड़ाव

अपना सैन्य-शिविर कहाँ बनेगा ? श्रीरामने विभीषणसे पूछा। इसी सुबेल-शिखरपर। उत्तर हनुमानने दिया। सुबेलपर ? विभीषण चौंके। मैं आपसे बतलाना भूल गया था कि इसपर हमारे जिन मित्रोंको रावणने बन्दी किया था, मैंने अपनी यात्रामें उन्हें बन्धन-मुक्त कर दिया है। पवनकुमार बोले- शिविरके उपयुक्त स्थान तो है यह ?

श्रीरामके सेवकोंका स्वभाव ही बद्ध प्राणीको परित्राण देना है। विभीषणने हनुमानजीकी ओर आदरके भावसे देखा- आप इसे निरापद कर गये हैं तो इससे अधिक उपयुक्त स्थान दूसरा त्रिकूटपर नहीं है।

लक्ष्मण ! इस शिखरपर प्रचुर शीतल जलके निर्झर हैं। सुपक्व फलोंसे लदे वृक्ष हैं। इसे अपने अधिकार में ले लो। श्रीरामने शिखर देखकर प्रसन्न मन अनुजसे कहा- सेनाको व्यूहबद्ध विश्राम दो। शकुनोंसे प्रकट हो रहा है कि युद्ध होगा। लमाका नाश निश्चित है। अब उन रावणके चरोंको मुक्त कर देना चाहिये। उन्हें सेना दिखला दो।

विभीषणने भी स्वीकृति दे दी। घूमाकर सेना दिखला दी। शुकसारण छोड़ दिये गये। वे श्रीरामकी प्रदक्षिणा करके उन्हें प्रणाम करके लमा पहुँचे। दशग्रीव प्रतीक्षा ही कर रहा था। उसने देखते ही शुकसे पूछा- तेरे पंख अब तक बँधे क्यों हैं ? ये इतने छोटे क्यों हैं ?

राक्षसेन्द्र। वानरोंने मुझे पकड़ लिया था। मैं आपको सावधान किये देता हूँ श्रीराम क्षमासिन्धु है; किन्तु वानर बहुत क्रोधी हैं शुकने सुनाना प्रारम्भ किया- मैं तो समुद्र-पार गया था; किंतु अब श्रीराम सागरपर सेतु बनाकर त्रिकूटपर उतर आये हैं। उन्होंने सुबेलपर शिविर स्थापित किया है। सुबेलपर ? रावण चौंका।

उस समय रावणने हँसते हुए-से ही शुकसे कहा- ये तुम्हारी दोनों पाँखें बाँध क्यों दी गयी हैं। इससे तुम इस तरह दिखायी देते हो मानो तुम्हारे पंख नोच लिये गये हों। कहीं तुम उन चञ्चलचित्तवाले वानरोंके चंगुलमें तो नहीं फँस गये हो।

महाराज। मैंने समुद्रके उत्तर तटपर पहुँचकर आपका संदेश बहुत स्पष्ट शब्दोंमें मधुर वाणीद्वारा सान्त्वना देते हुए सुनाया।

किंतु मुझपर दृष्टि पड़ते ही कुपित हुए वानरोंने उछलकर मुझे पकड़ लिया और घूसोंसे मारना एवं पाँखे नोचना आरम्भ किया।

राक्षसराज। ये वानर स्वभावसे ही क्रोधी और तीखे हैं। उनसे बात भी नहीं की जा सकती थी। फिर यह पूछनेका अवसर कहाँ था कि तुम मुझे क्यों मार रहे हो ?

जो विराध, कबन्ध और खरका वध कर चुके हैं, वे श्रीराम सुग्रीवके साथ सीताके स्थानका पता पाकर उनका उद्धार करनेके लिये आये हैं। वे रघुनाथजी समुद्रपर पुल बाँध लवणसागरको पार करके राक्षसोंको तिनकोंके समान समझकर धनुष हाथमें लिये यहाँ पास ही खड़े हैं। पर्वत और मेघोंके समान विशालकाय रीछों और वानर-समूहोंकी सहस्त्रों सेनाएँ इस पृथ्वीपर छा गयी हैं। श्रीराम धरापर प्राणियोंको कालसे अभय करने ही आये हैं। शनैश्चरको भी हनुमान मुक्त कर गये थे। शुकने कहा- अब कुशल इसीमें है कि आप सीताको उन्हें लौटा दें।

उपदेश करनेकी आज्ञा तुझे किसने दी ? रक्तनेत्र रावणने ऐसे शुककी ओर देखा जैसे उसे भस्म कर देगा- चाहे सब देवता, दैत्य, दानव, गन्धर्व, यक्ष रामकी सहायताको आ जायँ, मैं उन्हें सीता नहीं दूँगा। चल, उनका दल देखें। उनकी शक्तिकी सूचना लाने तुझे भेजा गया था। शुककी यह बात सुनकर रावणकी आँखे रोषसे लाल हो गयीं। वह इस तरह घूर-घूरकर देखने लगा, मानो अपनी दृष्टिसे उसको दग्ध कर देगा। वह बोला- यदि देवता, गन्धर्व और दानव भी मुझसे युद्ध करनेको तैयार हो जायँ तथा सारे संसारके लोग मुझे भय दिखाने लगें तो भी मैं सीताको नहीं लौटाऊँगा। जैसे सूर्य अपने उदयके साथ ही समस्त नक्षत्रोंकी प्रभा हर लेते हैं, उसी प्रकार मैं विशाल सेनाके साथ रणभूमिमें खड़ा हो रामकी समस्त वानर-सेनाको आत्मसात् कर लूँगा।

दशरथकुमार रामने अभी समरभूमिमें समुद्रके समान मेरे वेग और वायुके समान मेरे बलका अनुभव नहीं किया है, इसलिये वह मेरे साथ युद्ध करना चाहता है। मेरे तरकसमें सोये हुए बाण विषधर सर्पोंके समान भयंकर हैं। रामने संग्राममें उन बाणोंको देखा ही नहीं है; इसलिये वह मुझसे जुझना चाहता है। यदि महासमरमें सहस्त्रनेत्रधारी इन्द्र अथवा साक्षात् वरुण या स्वयं यमराज अथवा मेरे बड़े भाई कुबेर ही आ जायँ तो वे भी अपनी बाणाग्निसे मुझे पराजित नहीं कर सकते। लोगोंके मुँहसे सुननेपर भी मुझे किसी तरह यह विश्वास नहीं होता

कि समुद्रपर पुल बाँधा गया होगा। वानरसेना कितनी है ? इसका ज्ञान मुझे अवश्य प्राप्त करना चाहिये।

वानरवेशमें छिपकर सेनाका निरीक्षण करते हुए दोनों राक्षस शुक और सारणको महातेजस्वी विभीषणने देखा, देखते ही पहचाना और उन दोनोंको पकड़कर श्रीरामसे कहा- शत्रुनगरीपर विजय पानेवाले नरेश्वर। ये दोनों लमासे आये हुए गुप्तचर एवं राक्षसराज रावणके मन्त्री शुक तथा सारण हैं।

वे दोनों राक्षस श्रीरामको देखकर अत्यन्त व्यथित हुए और जीवनसे निराश हो गये। उन दोनोंके मनमें भय समा गया। वे हाथ जोड़कर इस प्रकार बोले- सौम्य। रघुनन्दन। हम दोनोंको रावणने भेजा है और हम इस सारी सेनाके विषयमें आवश्यक जानकारी प्राप्त करनेके लिये आये हैं। उन दोनोंकी वह बात सुनकर सम्पूर्ण प्राणियोंके हितमें लगे रहनेवाले दशरथनन्दन भगवान् श्रीराम हँसते हुए बोले- यदि तुमने सारी सेना देख ली हो, हमारी सैनिक शक्तिका ज्ञान प्राप्त कर लिया हो तथा रावणके कथनानुसार सब काम पूरा कर लिया हो तो अब तुम दोनों अपनी इच्छाके अनुसार प्रसन्नतापूर्वक लौट जाओ। अथवा यदि अभी कुछ देखना बाकी रह गया हो तो फिर देख लो। विभीषण तुम्हें सब कुछ पुन: पूर्णरूपसे दिखा देंगे। इस समय जो तुम पकड़ लिये गये हो, इससे तुम्हें अपने जीवनके विषयमें कोई भय नहीं होना चाहिये; क्योंकि शस्त्रहीन अवस्थामें पकड़े गये तुम दोनों दूत वधके योग्य नहीं हो।

रामने समुद्रपर अभूतपूर्व सेतु-निर्माण करके सागर पार किया है। विभीषणने हमें पहिचान लिया था। उनके बतलानेसे हम बन्दी बना लिये गये। अब अनुग्रह करके रामने मुक्त कर दिया। श्रीराम बोले- शुक और सारण। जब तुम दोनों लमामें पहुँचो, तब कुबेरके छोटे भाई राक्षसराज रावणको मेरी ओरसे यह संदेश सुना देना-रावण। जिस बलके भरोसे तुमने मेरी सीताका अपहरण किया है, उसे अब सेना और बन्धुजनोंसहित आकर इच्छानुसार दिखाओ। भगवान् श्रीरामका यह संदेश पाकर दोनों राक्षस शुक और सारण धर्मवत्सल श्रीरघुनाथका आपकी जय हो आप चिरंजीवी हों इत्यादि वचनोंद्वारा अभिनंदन करके लमापुरीमें आकर राक्षसराज रावणसे बोले-

राक्षसेश्वर। हमें तो विभीषणने वध करनेके लिये पकड़ लिया था; किंतु जब अमित तेजस्वी धर्मात्मा श्रीरामने देखा, तब हमें छुड़वा दिया। दशरथनन्दन श्रीराम, लक्ष्मण, विभीषण तथा महेन्द्रतुल्य पराक्रमी महातेजस्वी सुग्रीव- ये चारों वीर लोकपालोंके समान शौर्यशाली, दृढ़ पराक्रमी और अस्त्र-शस्त्रोंके ज्ञाता हैं। जहाँ ये चारों पुरुषप्रवर एक जगह एकत्र हो गये हैं, वहाँ विजय निश्चित है और सब वानर अलग रहें तो भी ये चार ही परकोटे और दरवाजोंके सहित सारी लमापुरीको उखाड़कर फेंक सकते हैं।

श्रीरामका जैसा रूप है और जैसे उनके अस्त्र-शस्त्र हैं, उनसे तो यही मालूम होता है कि वे अकेले ही सारी लमापुरीका वध कर डालेंगे।

महाराज। श्रीराम, लक्ष्मण और सुग्रीवसे सुरक्षित वह वानरोंकी सेना तो समस्त देवताओं और असुरोंके लिये भी अत्यन्त दुर्जय है।

महामनस्वी वानर इस समय युद्ध करनेके लिये उत्सुक हैं। उनकी सेनाके सभी वीर योद्धा बड़े प्रसन्न हैं। अत: उनके साथ विरोध करनेसे आपको कोई लाभ नहीं होगा। इसलिये संधि कर लीजिये और श्रीरामकी सेवामें सीताको लौटा दीजिये।

उस समय रावण क्रोधसे तमतमा उठा था। उसने उन दोनों गुप्तचरोंके साथ जब समुद, पर्वत और वनोंपर दृष्टिपात किया, तब पृथ्वीका सारा प्रदेश वानरोंसे भरा दिखायी दिया। वानरोंकी वह विशाल सेना अपार और असह्य थी। उसे देखकर राजा रावणने सारणसे पूछा-

सारण। इन वानरोंमें कौन-कौनसे मुख्य हैं ? कौन शूरवीर हैं और कौन बलमें बहुत बढ़े-चढ़े हैं ?

इस प्रकार पूछते हुए राक्षसराज रावणका वचन सुनकर मुख्य-मुख्य वानरोंको जाननेवाले सारणने उन मुख्य वानरोंका परिचय देते हुए कहा- सारणने विवरण देना आरम्भ किया, जब दोनोंको लेकर दशग्रीव दुर्गके उच्च भागपर चढ़कर सुबेल-शिखरकी ओर देखने लगा- वे श्रीरामके समीप आपके अनुजसे सटे वानरेन्द्र सुग्रीव बैठे हैं। उनका पराक्रम असीम है। वे हाथ उठाये बालिपुत्र अङ्गद इधर ही देख रहे है। उन स्वर्णवर्ण हनुमानसे आप परिचित हैं। वे नीलवर्ण विश्वकर्माके पुत्र नल हैं। वह हिमश्वेत वानर शरभ है।

महाराज। यह जो लकांकी ओर मुख करके खड़ा है और गरज रहा है, एक लाख यूथपोंसे घिरा हुआ है तथा जिसकी गर्जनाके अत्यन्त गम्भीर घोषसे परकोटे, दरवाजे, पर्वत और वनोंके सहित सारी लमा प्रतिहत हो गूँज उठी है, इसका नाम नील है। यह वीर यूथपतियोंमेंसे है। समस्त वानरोंके राजा महामना सुग्रीवकी सेनाके आगे यही खड़ा होता है।

जो पराक्रमी वानर दोनों उठी हुई बाँहोंको एक दूसरी- सक पकड़कर दोनों पैरोंसे पृथ्वीपर टहल रहा है, लमाकी ओर मुख करके क्रोधपूर्वक देखता है और बारंबार अँगड़ाई लेता है, जिसका शरीर पर्वतशिखरके समान ऊँचा है, जिसकी कान्ति कमलकेसरके समान सुनहले रंगकी है, जो रोषसे भरकर बारंबार अपनी पूँछ पटक रहा है तथा जिसकी पूँछके पटकनेकी आवाजसे दसों दिशाएँ गूँज उठती हैं, यह युवराज अङ्गद

है। वानरराज सुग्रीवने इसका युवराजके पदपर अभिषेक किया है। यह अपने साथ युद्धके लिये आपको ललकारता है।

बालिका यह पुत्र अपने पिताके समान ही बलशाली है। सुग्रीवको यह सदा ही प्रिय है। जैसे वरुण इन्द्रके लिये पराक्रम प्रकट करते हैं, उसी प्रकार यह श्रीरामके लिये अपना पुरुषार्थ प्रकट करनेके लिये उद्यत है।

श्रीरघुनाथका हित चाहनेवाले वेगशाली हनुमानने जो यहाँ आकर जनकनन्दिनी सीताका दर्शन किया, उसके भीतर इस अङ्गदकी ही सारी बुद्धि काम कर रही थी। पराक्रमी अङ्गद वानरशिरोमणियोंके बहुत-से यूथ लिये अपनी सेनाके साथ आपको कुचल डालनेके लिये आ रहा है। अङ्गदके पीछे संग्रामभूमिमें जो वीर विशाल सेनासे घिरा हुआ खड़ा है, इसका नाम नल है। यही सेतु-निर्माणका प्रधान हेतु है। गोमतीके तटपर जो नाना प्रकारके वृक्षोंसे युक्त संरोचन नामक पर्वत है, उसी रमणीय पर्वतके चारों ओर जो पहले विचरा करता था और वहीं अपने वानरराज्यका शासन करता था, वही यह कुमुदनामक यूथपति है।

राजन। जो सिंहके समान पराक्रमी और कपिल वर्णका है, जिसकी गर्दनमें लंबे-लंबे बाल हैं और जो ध्यान लगाकर लमाकी ओर इस प्रकार देख रहा है, मानो इसे भस्म कर देगा, वह रम्भनामक यूथपति है। वह निरन्तर विन्ध्य, कृष्णगिरि, सह्य और सुदर्शन आदि पर्वतोंपर रहा करता है। वे सब-के-सब अपने बलसे लमाको मसल डालनेके लिये रम्भको सब ओरसे घेरे हुए आ रहे हैं।

जो कानोंको फैलाता है, बारंबार जँभाई लेता है, मृत्युसे भी नहीं डरता है और सेनाके पीछे न जाकर अर्थात् सेनाका भरोसा न करके अकेले ही युद्ध करना चाहता है, रोषसे काँप रहा है, तिरछी नजरसे देखता है और पूँछ फटकारकर सिंहनाद करता है, इसका नाम शरभ है। देखिये, यह महाबली वानर कैसी गर्जना करता है। ये सारे-के-सारे वानर दु:सह वीर हैं। इनकी गणना करना भी असम्भव है। यूथपतियोंमें श्रेष्ठ जो यूथप हैं, उन सबके अलग-अलग यूथ हैं।

इस धूम्रके छोटे भाई जाम्बवान् हैं, जो महान यूथपतियोंके भी यूथपति हैं। देखिये ये कैसे पर्वताकार दिखायी देते हैं। ये रूपमें तो अपने भाईके समान ही हैं; किंतु पराक्रममें उससे भी बढ़कर हैं। इनका स्वभाव शान्त है। ये बड़े भाई तथा गुरुजनोंकी आज्ञाके अधीन रहते हैं और उनकी सेवा करते हैं। युद्धके अवसरोंपर इनका रोष और आमर्ष बहुत बढ़ जाता है।

इन बुद्धिमान् जाम्बवान्ने देवासुर-संग्राममें इन्द्रकी बहुत बड़ी सहायता की थी और उनसे इन्हें बहुत-से वर भी प्राप्त हुए थे।

ये काले मुँहवाले लंगूरजातिके वानर हैं। इनमें महान् बल है। इन भयंकर वानरोंकी संख्या एक करोड़ हैं। महाराज। जिसने सेतु बाँधनेमें सहायता की है, उस लंगूरजातिके गवाक्ष नामक यूथपतिको चारों ओरसे घेरकर ये वानर चल रहे हैं और लमाको बलपूर्वक कुचल डालनेके लिये जोर-जोरसे गर्जना करते हैं।

राजन्। आप इन वानरोंमें देवताओंके समान रूपवाले जिन दो वानरोंको खड़ा देख रहे हैं उनके नाम हैं मैन्द और द्विविद। युद्धमें उनकी बराबरी करनेवाला कोई नहीं है। ब्रह्माजीकी आज्ञासे उन दोनोंने अमृतपान किया है। ये दोनों वीर अपने बल-पराक्रमसे लमाको कुचल डालनेकी इच्छा रखते हैं। इधर जिसे आप मदकी धारा बहानेवाले मतवाले हाथीकी भाँति खड़ा देख रहे है, जो वानर कुपित होनेपर समुद्रको भी विक्षुब्ध कर सकता है, जो लमामें आपके पास आया था और विदेहनन्दिनी सीतासे भी मिलकर गया था, उसे देखिये। पहलेका देखा हुआ यह वानर फिर आया है। यह केसरीका बड़ा पुत्र है। पवनपुत्रके भी नामसे विख्यात है। उसे लोग हनुमान् कहते हैं। इसीने पहले समुद्र लाँघा था।

विश्वसनीय व्यक्तियोंके सम्पर्कसे मैंने इस वानरका वृत्तान्त ठीक-ठीक जाना है। इसके बल, रूप और प्रभावका पूर्णरूपसे वर्णन करना किसीके लिये भी असम्भव है। यह अकेला ही सारी लमाको मसल देना चाहता है। जिसे आपने लमामें रोक रक्खा था, उस अग्निको भी जिसने अपनी पूँछद्वारा प्रज्वलित करके सारी लमा जला डाली, उस वानरको आप भूलते कैसे हैं ?

धर्म उनसे कभी अलग नहीं होता। ये धर्मका कभी उल्लङ्घन नहीं करते तथा ब्रह्मास्त्र और वेद दोनोंके ज्ञाता हैं। वेदवेत्ताओंमें इनका बहुत ऊँचा स्थान है। ये अपने बाणोंसे आकाशका भी भेदन कर सकते हैं, पृथ्वीको भी विदीर्ण करनेकी क्षमता रखते हैं। इनका क्रोध मृत्युके समान और पराक्रम इन्द्रके तुल्य है।

राजन्। जिनकी भार्या सीताको आप जनस्थानसे हर लाये हैं, वे ही ये श्रीराम आपसे युद्ध करनेके लिये सामने आकर खड़े हैं।

उनके दाहिने भागमें जो ये शुद्ध सुवर्णके समान कान्तिमान्, विशाल वक्ष:स्थलसे सुशोभित, कुछ-कुछ लाल नेत्रवाले तथा मस्तकपर काले-काले घुँघराले केश धारण करनेवाले हैं, इनका नाम लक्ष्मण है। ये अपने भाईके प्रिय और हितमें लगे रहनेवाले हैं, राजनीति और

युद्धमें कुशल हैं तथा सम्पूर्ण शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ हैं।

श्रीरामकी बायीं ओर जो राक्षसोंसे घिरे हुऐ खड़े हैं, ये राजा विभीषण हैं। राजाधिराज श्रीरामने इन्हें लमाके राज्यपर अभिषिक्त कर दिया है। अब ये आपपर कुपित होकर युद्धके लिये सामने आ गये हैं। जिन्हें आप सब वानरोंके बीचमें पर्वतके समान अविचल भावसे खड़ा देखते हैं, वे समस्त वानरोंके स्वामी अमित तेजस्वी सुग्रीव हैं। जैसे हिमालय सब पर्वतोंमें श्रेष्ठ है, उसी प्रकार वे तेज, यश, बुद्धि, बल और कुलकी दृष्टिसे समस्त वानरोंमें सर्वोपरि विराजमान हैं। महाराज। यह सेना एक प्रकाशमान ग्रहके समान है। इसे उपस्थित देख आप कोई ऐसा उपाय करें, जिससे आपकी विजय हो और शत्रुओंके सामने आपको नीचा न देखना पड़े।

ये सब वानर राक्षसोंके समान ही कामरूप हैं। इनसे युद्ध करना सरल नहीं है। जीवनका मोह त्यागकर ये श्रीरामके लिए युद्ध करेंगे। सारणने दिखलाया- समुद्रके समान यह असीम वानरी सेना है। इनमें श्वेत, पीत, नील, धूम्रवर्ण, गोपुच्छ सभी प्रकारके हैं। काले सचल पर्वतोंके समान वह रीछोंकी सेना है, जिनके यूथपति जाम्बवन्त हैं।

वह मत्तगजके समान चलता मैन्द है। दैत्य-दानव किसीको युद्धमें कुछ गिनता नहीं। उसके समीप उसका भाई द्विविद है। शुकने थोड़ा परिचय देकर कहा- हनुमानके पराक्रमको आपने देखा है। इस समस्त सेनाके प्राण श्रीराम हैं, जिन्हें छोड़कर धर्म कहीं नहीं जाता। कोई दिव्यास्त्र नहीं, जो ये न जानते हों। लेकिन शरणागतवत्सल हैं। उदार-शिरोमणि हैं। आपके भाई विभीषणको जाते ही लमाका राज्य दिया और लंकेश कहकर संबोधित करने लगे।

रावण हँसा। शुकने दिखलाया- श्रीरामके पार्श्वमें अरुणनेत्र गौरवर्ण, असह्यतेजा उनके भाई लक्ष्मण हैं। ये सर्वास्त्रविशारद श्रीरामके दाहिने हाथ हैं और उन्हींके लिए अपना जीवन मानते हैं। वह मूर्ख है जो इस असीम वानरसेनाकी गणना करना चाहे। इनका पराक्रम अचिन्त्य है। आप देख ही रहे हैं कि वानर लमामें बजती भेरियोंकी ध्वनिपर नृत्य कर रहे हैं। गर्जना कर रहे हैं। आपकी नगर-परिखाके भीतर उनके फेंके पर्वत वृक्ष गिर रहे हैं।

तुम लोग मूर्ख हो। वानरोंने तुम्हें बहुत मारा-पीटा लगता है। भयभीत हो गये हो। दशग्रीवने शुक-सारणकी भर्त्सना की- हमारा अन्न खाते हो और शत्रुकी प्रशंसा करते हो। मैं अभी तुमको मार देता, किंतु तुम दोनोंने पहिले मेरी बहुत सेवा की, अत: क्षमा करता हूँ।

आप असन्तुष्ट न हों। दशग्रीव आकर अपनी सभामें बैठ गया, तब शुकने नम्रतापूर्वक लक्ष्मणका दिया पत्र निकाला- इसे रामके छोटे भाईने आपको देनेके लिए दिया है।

प्रहस्त ! पढ़ो इसे दशग्रीवने तीन घेरेके सूत्रसे आवेष्टित वह पत्र वाम हस्तसे लेकर मन्त्री प्रहस्तको पकड़ा दिया। प्रहस्तने खोला, देखा और दशग्रीवको पुन: देते बोला- मैं इस अशिष्टतापूर्ण पत्रको पढ़नेका साहस नहीं कर सकता।

अज्ञ ! व्यर्थ्य तूने विद्या का भार ढोया। तुझे चार श्री भी लिखना सम्मान ही देना है। अब भी अभिमान त्याग और श्रीजनक-नन्दिनीको देकर श्रीरामके चरण पकड़ अन्यथा तेरा और तेरे वंशका विनाश आ पहुँचा है। तेरे संहारके लिए मुझ लक्ष्मणके त्रोणमें ही पर्याप्त बाण विद्यमान हैं। दशग्रीवने पत्र देखा और फाड़कर अग्निमें डालनेको दे दिया। शुकने हाथ जोड़े- आप सचमुच पत्रकी बात मानकर सीताको लौटा दें तो आपका मङ्गल होगा।

उन सबको देखकर रावणका हृदय कुछ उद्विग्न हो उठा। उसे क्रोध आ गया और उसने बात समाप्त होनेपर वीर शुक और सारणको फटकारा। बेचारे शुक और सारण विनीत भावसे नीचे मुँह किये खड़े रहे और रावणने रोषगद्गद् वाणीमें क्रोधपूर्वक यह कठोर बात कही।

वानर और भालुओं की तो चिन्ता ही क्या ? वह तो असुरों का भोजन है। जो रावण से लड़ने आते हैं यह तो लड़कों का लड़कपन है। देखो उस छोटे तपस्वी को कैसी बकवाद करता है। हिरन का बच्चा चन्द्रिका को छूनेको चौकड़ी छलाँगे भरता है।

तब शुक ने कहा- सुनिए निशाचर राज। आपसे राज और ताज रूठ रहा है। लंका में कुछ होनहार है हमें दिखाई पड़ती है। जो भली बात भी तुम्हें विष जैसी कड़वी लगती है इसमें संशय की तो बात ही क्या जब हम स्वयं देखकर आये है। निश्चय ही वह अपनी ताकत से ड्योढ़े और सवाए है। यदि जग में जीवित रहना है तो सीता को दे दीजिए और सन्धि कर लीजिए। अन्यथा हमें तो यह दिख रहा है उनसे लड़ना खुद मरना है। हम जिसे तपस्वी कहते हैं वह तो भूतल में योगेश्वर है। युद्धस्थल में हमें खिलौना जैसे तोड़ डालेंगे यह सुनकर रावण रक्तवर्ण हो गया और उसके नेत्र लाल हो गये और बोला।

राजा निग्रह और अनुग्रह करनेमें भी समर्थ होता है। उसके सहारे जीविका चलानेवाले मन्त्रियोंको ऐसी कोई बात नहीं कहनी चाहिये,

जो उसे अप्रिय लगे। जो शत्रु अपने विरोधी हैं और युद्धके लिये सामने आये हैं, उनकी बिना किसी प्रसङ्गके ही स्तुति करना क्या तुम दोनोंके लिये उचित था ?

तुमलोगोंने आचार्य, गुरु और वृद्धोंकी व्यर्थ ही सेवा की है; क्योंकि राजनीतिका जो संग्रहणीय सार है, उसे तुम नहीं ग्रहण कर सके।

यदि तुमने उसे ग्रहण भी किया हो तो भी इस समय तुम्हें उसका ज्ञान नहीं रह गया है- तुमने उसे भुला दिया है। तुमलोग केवल अज्ञानका बोझ ढो रहे हो। ऐसे मूर्ख मन्त्रियोंके सम्पर्कमें रहते हुए भी जो मैं अपने राज्यको सुरक्षित रख सका हूँ, यह सौभाग्यकी ही बात है। मैं इस राज्यका शासक हूँ। मेरी जिह्वा ही तुम्हें शुभ या अशुभकी प्राप्ति करा सकती है- मैं वाणीमात्रसे तुमपर निग्रह और अनुग्रह कर सकता हूँ; फिर भी तुम दोनोंने मेरे सामने कठोर बात कहनेका साहस किया। क्या तुम्हें मृत्युका भय नहीं है ?

अब तुम दोनों मेरी सभामें प्रवेशके अधिकारसे वञ्चित हो। मेरे पाससे चले जाओ; फिर कभी मुझे अपना मुँह न दिखाना। मैं तुम दोनोंका वध करना नहीं चाहता; क्योंकि तुम दोनोंके किये हुए उपकारोंको सदा स्मरण रखता हूँ। तुम दोनों मेरे स्नेहसे विमुख और कृतघ्न हो, अत: मरे हुएके ही समान हो।

उसके ऐसा कहनेपर शुक और सारण बहुत लज्जित हुए और जय-जयकारके द्वारा रावणका अभिनन्दन करके वहाँसे निकल गये।

तुम दोनों कृतघ्न हो। रावण क्रुद्ध गर्जना कर उठा- अभी लमासे निकल जाओ। भयके मारे दोनों ऊपर उछले। आश्चर्य ! गगनमें पहुँचते ही दोनोंका राक्षस शरीर मुनि रूपमें बदल गया। वस्तुत: शुक वेदपाठी ब्राह्मण था। भाई सारणके साथ वानप्रस्थाश्रम स्वीकार करके वनमें तपस्या करने आ गया था। राक्षस कैसे सह लेते कि मतमाश्रमसे दक्षिण भी कोई आश्रम बना ले। लेकिन तप:तेज के सम्मुख तो राक्षसोंका वश चला नहीं करता। शुक-सारण संयमी तपस्वी थे।

मायावी वज्रदंष्ट्र महर्षि अगस्त्यको सारणका रूप धारण करके आमन्त्रित कर आया। फिर अगस्त्यका रूप धारण कर इनके आश्रम आया। दोनों भाइयोंने स्वागत किया, पूजा किया। पूछा- आपने असमय कैसे कृपा की ?

तुम लोग जानते ही हो कि मुझे वातापि राक्षसने अपने भाई आतापिका मांस धोखेसे खिला दिया था मायावी राक्षसने कहा- फलत: मांसाहारकी वासना पुन: जाग गयी है। तुम्हारे यहाँ इसीलिए आया हूँ। थोड़ी देरमें स्नान करके आता हूँ।

दोनों भाई बड़े समोचमें पड़े। संयोगसे व्याघ्र द्वारा मारा मृग उन्हें अपने आश्रमके बाहर मिल गया। दोनोंने उसे महर्षिका प्रभाव समझा। उस मृग-मांसका रन्धन किया। धर्मकी गति अत्यन्त सूक्ष्म है। किसीके भी आदेशसे, किसी भी निमित्त धर्मका उल्लंघन अनर्थकारी होता है। महर्षि अगस्त्यको तो वज्रदंष्ट्र आमन्त्रित कर ही आया था। वे पधारे तो अपने सम्मुख मांस परोसा गया देखकर क्रुद्ध हो उठे। शाप दे दिया- तुम दोनों मुझे माँस खिलाना चाहते हो ? राक्षस हो जाओ।

भगवन्। यह अपराध तो आपकी आज्ञासे ही हुआ है। दोनों चरणोंपर गिर पड़े।

तुम्हारे साथ छल हुआ। अगस्त्यने ध्यान करके स्थिति को समझ लिया- अनजानमें तुमने अपराध किया; किंतु मेरा शाप मिथ्या नहीं हो सकता। राक्षस होकर लमामें रहो। श्रीरामका दर्शन करके रावण द्वारा निष्कासित होनेपर शापमुक्त हो जाओगे।

आज दोनों शापमुक्त हुए। सुबेलपर श्रीरामकी प्रदक्षिणा करके, उन्हें प्रणाम करके अपने आश्रम चले गये।

ये राक्षस नहीं थे ? शुक-सारणका मुनि-वेश रावणने देखा। इनकी सूचनापर विश्वास नहीं किया जा सकता।

उसने महोदरको आज्ञा देकर दूसरे चर बुलवाये। आज्ञा दी- रामकी सेनामें जाकर उसका पूरा पता लगाओ।

शार्दूल पहिले चर बनकर गया था। वही अग्रणी बना; किंतु शीघ्र रोता-चिल्लाता लौट आया। रावणने पूछा- शत्रुने तुझे पकड़ लिया था ? आप गुप्तचर भेजनेका व्यर्थ प्रयास मत करें। सब मार्ग वानरोंने घेर लिये हैं। शादूर्लने कहा- मैं अन्योंके साथ वानर बनकर गगनमार्गसे चला; किंतु विभीषणने शरीरगन्धसे हम सबको पहिचान लिया। हम पकड़ लिये गये। वानर हमें मार ही देते, यदि दयामय श्रीरामने रक्षा न की होती। श्रीरामने गरुड़-व्यूह बनाया है। अब आप युद्ध करें अथवा शीघ्र सीता उन्हें लौटा दें।

तुझे सम्मति देनेको नियुक्त नहीं किया गया है। दशग्रीवने डाँटा- शत्रुकी सेनाका वर्णन कर।

गुप्तचरोंने लमापति रावणको यह बताया कि श्रीरामकी सेना सुबेल पर्वतके पास आकर ठहरी है और वह सर्वथा अजेय है।

श्रीराम पर्वतीय शिलाखण्डोंद्वारा समुद्रको पाटकर लमाके दरवाजेपर आ धमके हैं और हाथमें धनुष लिये खड़े हैं।

इस भूतलपर कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं है, जो श्रीरामके गुणोंका पूर्णरूपसे वर्णन कर सके। श्रीरामने ही जनस्थानमें उतने राक्षसोंका

संहार किया था। धर्मात्मा लक्ष्मण भी श्रेष्ठ गजराजके समान पराक्रमी हैं, उनके बाणोंका निशाना बन जानेपर देवराज इन्द्र भी जीवित नहीं रह सकते। वानर देवपुत्र हैं। उनकी गणना और उनके बल-पराक्रमका अनुमान कर पाना असम्भव है। शार्दूल बोला- इसी प्रकार रामलक्ष्मणकी शक्ति एवं सद्गुणोंका भी अनुमान नहीं किया जा सकता।

शत्रुकी स्तुति करता है ? रावणने भर्त्सना की। शार्दूल चुप हो गया। सायंकाल हो चुका था। दशग्रीव उठा, और वह राजसभामें चला गया। उस समय श्रीरामने वानरसैनिकोंको यह आदेश दिया- इस विशाल सेनामेंसे अपनी सेनाको साथ लेकर दुर्जय एवं पराक्रमी वीर अङ्गद नीलके साथ वानरसेनाके पुरुषव्यूहमें हृदयके स्थानमें स्थित हों।

इसी तरह ऋषभ नामक वानर कपियोंके समुदायसे घिरे रहकर इस वानर-वाहिनीके दाहिने पार्श्वमें खड़े हों।

मैं लक्ष्मणके साथ सावधान रहकर इस व्यूहके मस्तकके स्थानमें खड़ा होऊँगा। जाम्बवान, सुषेण और वानर वेगदर्शी ये तीन महामनस्वी वीर जो रीछोंकी सेनाके प्रधान है, वे सैन्य व्यूहके कुक्षिभागकी रक्षा करें।

वानरराज सुग्रीव वानरवाहिनीके पिछले भागकी रक्षामें उसी प्रकार लगे रहें, जैसे तेजस्वी वरुण इस जगत्की पश्चिम दिशाका संरक्षण करते हैं। इस प्रकार सुन्दरतासे विभक्त हो विशाल व्यूहमें बद्ध हुई वह सेना, जिसकी बड़े-बड़े वानर रक्षा करते थे, मेघोंसे घिरे हुए आकाशके समान जान पड़ती थी।

रावण अपने राजसदनमें जाकर मन्त्रियोंसे बोला- आपलोगोंने रामके पराक्रम, बल-पौरुष तथा समुद्रलङ्घनकी जो बात बतायी है, वह सब मैंने सुन ली; परंतु मैं तो आपलोगोंको भी, जो इस समय रामके पराक्रमकी बातें जानकर चुपचाप एक दूसरेका मुँह देख रहे हैं, संग्रामभूमिमें सत्यपराक्रमी वीर समझता हूँ।

तदनन्तर मन्त्रियोंसहित राक्षस रावणने परस्पर विचारविमर्श करके तत्काल लमाकी रक्षाका प्रबन्ध किया।

उसने पूर्व द्वारपर उसकी रक्षाके लिये राक्षस प्रहस्तको तैनात किया, दक्षिण द्वारपर महापराक्रमी महापार्श्व और महोदरको नियुक्त किया तथा पश्चिम द्वारपर अपने पुत्र इन्द्रजितको रक्खा, जो महान मायावी था। वह बहुत-से राक्षसोंद्वारा घिरा हुआ था।

तदनन्तर नगरके उत्तर द्वारपर शुक और सारणको रक्षाके लिये जानेकी आज्ञा दे मन्त्रियोंसे रावणने कहा- मैं स्वयं भी उत्तर द्वारपर जाऊँगा। नगरके बीचकी छावनीपर उसने बहुसंख्यक राक्षसोंके साथ महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न राक्षस विरूपाक्षको स्थापित किया।

इस प्रकार लमामें पुरीकी रक्षाका प्रबन्ध करके कालप्रेरित राक्षसशिरोमणि रावण अपने आपको कृतकृत्य मानने लगा।

इस तरह नगरके संरक्षणकी प्रचुर व्यवस्थाके लिये आज्ञा देकर रावणने सब मन्त्रियोंको विदा कर दिया और स्वयं भी उनके विजयसूचक आशीर्वादसे सम्मानित हो अपने समृद्धिशाली एवं विशाल अन्त:पुरमें चला गया।

मन्दोदरी ने रावण से यह विचार बात कही। हे स्वामी, सीता आज लौटा दीजिए; नहीं तो विपरीत काम हो जाएगा। मैंने अभी एक स्वप्न देखा। उसमें अपशकुन सूचित हैं। एक वानर ने वन को उजाड़ डाला और मेरे पुत्र अक्षकुमार को मार डाला। उसने लंका-नगरी को जला डाला। फिर राम सेना लेकर आये। उन्होंने आपको, कुम्भकर्ण, इंद्रजित आदि को कुल-सहित मार डाला। इसलिए हे स्वामी, इसके मर्म पर विचार करो। वे राम तो पूर्ण ब्रह्म हैं। हे महाराज, उनकी रानी सीता को लेकर आज आप राम की शरण में जाइए। राम निश्चय ही मनुष्य नहीं हैं। वे तो पुराण-पुरुष अवतरित हुए हैं। आपने धीर पुरुष होकर सब जीता है, फिर भी रघुवीर को आप नहीं जीत पाएँगे। कहिए पर-स्त्री का अभिलाषी अधम पुरुष सुख को कैसे प्राप्त हो पाएगा। जो छाती पर पत्थर बाँधकर सागर को तैरकर पार करे, ऐसा कौन है ? जो नर विष-पान करता हो, वह उससे अमर नहीं हो जाता। हे नाथ, सर्पके मुख में हाथ डालने पर वह कैसे दंश नहीं करेगा? इसलिए हे स्वामी, राम के साथ वैर को प्राप्त होकर आप सुख में कैसे रहेंगे ? कहिए, तो मैं राम की शरण में जाऊँ और उनकी स्तुति करके मृत्यु से बचा लूं। वे श्रीभगवान दयालु हैं। मैं यह बात निश्चय ही माँगकर ले आऊँगी। तब रानी के ऐसे वचन सुनकर रावण हँसकर बोला- तू किसलिए चिन्ता कर रही है। मृत्यु किसी को नहीं छोड़ती। नीच-ऊँच, राजा और रंक सब चरम सीमा तक भोग तो भोगते हैं। संसार में समस्त जीव पूर्व कर्म के अनुसार व्यवहार करते हैं। जो होनेवाला हो, वह हो जाए। परन्तु मैं सीता न दूँगा।

शत्रुके देशमें पहुँचे हुए नरराज श्रीराम, सुमित्राकुमार लक्ष्मण, वानरराज सुग्रीव, वायुपुत्र हनुमान्, ऋक्षराज जाम्बवान् राक्षस विभीषण, बालिपुत्र अङ्गद, शरभ, बन्धु-बान्धवोंसहित सुषेण, मैन्द, द्विविद, गज, गवाक्ष, कुमुद, नल और पनस ये सब आपसमें मिलकर विचार करने लगे- राक्षसराज रावण इस पुरीमें सदा निवास करता है। अब आपलोग इसपर विजय पानेके उपायोंका निर्णय करनेके लिये परस्पर

विचार करें। उन सबके इस प्रकार कहनेपर रावणके छोटे भाई विभीषणने संस्कारयुक्त पद और प्रचुर अर्थसे भरी हुई वाणीमें कहा- मेरे मन्त्री अनल, पनस, सम्पाति और प्रमति- ये चारों लमापुरीमें जाकर फिर यहाँ लौट आये हैं।

ये सब लोग पक्षीका रूप धारण करके शत्रुकी सेनामें गये थे और वहाँ जो व्यवस्था की गयी है, उसे अपनी आँखों देखकर फिर यहाँ उपस्थित हुए हैं। सेनासहित प्रहस्त नगरके पूर्वद्वारका आश्रय लेकर खड़ा है। महापराक्रमी महापार्श्व और महोदर दक्षिण द्वारपर खड़े हैं।

बहुसंख्यक राक्षसोंसे घिरा हुआ इन्द्रजित् नगरके पश्चिम द्वारपर खड़ा है। उसके साथी राक्षस पट्टिश, खड्ग, धनुष, शूल और मुद्गर आदि अस्त्र-शस्त्र हाथोंमें लिये हुए हैं। नाना प्रकारके आयुध धारण करनेवाले शूरवीरोंसे घिरा हुआ वह रावणकुमार पश्चिमद्वारकी रक्षाके लिये डटा है। स्वयं मन्त्रवेत्ता रावण शुक, सारण आदि कई सहस्र शस्त्रधारी राक्षसोंके साथ नगरके उत्तर द्वारपर सावधानीके साथ खड़ा है। वह मन-ही-मन अत्यन्त उद्विग्न जान पड़ता है।

विरूपाक्ष शूल, खड्ग और धनुष धारण करनेवाली विशाल राक्षससेनाके साथ नगरके बीचकी छावनीपर खड़ा है। रावणकी सेनामें दस हजार हाथी, दस हजार रथ, बीस हजार घोड़े और एक करोड़से भी ऊपर पैदल राक्षस हैं। वे सभी बड़े वीर, बल-पराक्रमसे सम्पन्न और युद्धमें आततायी हैं। ये सभी निशाचर राक्षसराज रावणको सदा ही प्रिय हैं। महाबाहु विभीषणने मन्त्रियोंद्वारा बताये गये लमाविषयक समाचारको इस प्रकार बताकर उन मन्त्रीस्वरूप राक्षसोंको भी श्रीरामसे मिलाया और उनके द्वारा लमाका सारा वृत्तान्त पुन: उनसे कहलाया। मैंने जो रावणकी शक्तिका वर्णन किया है, इसको लेकर न तो आपको अपने मनमें दीनता लानी चाहिये और न मुझ पर रोष ही करना चाहिये। मैं आपको डराता नहीं, शत्रुके प्रति आपके क्रोधको उभाड़ रहा हूँ; क्योंकि आप अपने बलपराक्रमद्वारा देवताओंका भी दमन करनेमें समर्थ हैं।

विभीषणके ऐसी बात कहनेपर भगवान् श्रीरामने शत्रुओंको परास्त करनेको कहा- बहुसंख्यक वानरोंसे घिरे हुए कपिश्रेष्ठ नील पूर्व द्वारपर जाकर प्रहस्तका सामना करें। विशाल वाहिनीसे युक्त बालिकुमार अङ्गद दक्षिण द्वारपर स्थित हो महापार्श्व और महोदरके कार्यमें बाधा दें। पवनकुमार हनुमान् अप्रमेय आत्मबलसे सम्पन्न हैं। ये बहुत-से वानरोंके साथ लमाके पश्चिम फाटकमें प्रवेश करें।

दैत्यों, दानवसमूहों तथा महात्मा ऋषियोंका अपकार करना ही जिसे प्रिय लगता है, जिसका स्वभाव क्षुद्र है, जो वरदानकी शक्तिसे सम्पन्न है और प्रजाजनोंको संताप देता हुआ सम्पूर्ण लोकोंमें घूमता रहता है, उस राक्षसराज रावणके वधका दृढ़ निश्चय लेकर मैं स्वंय ही सुमित्राकुमार लक्ष्मणके साथ नगरके उत्तर फाटकपर आक्रमण करके उसके भीतर प्रवेश करूँगा- जहाँ सेनासहित रावण विद्यमान है।

बलवान् वानरराज सुग्रीव, रीछोंके पराक्रमी राजा जाम्बवान् तथा राक्षसराज रावणके छोटे भाई विभीषण- ये लोग नगरके बीचके मोर्चेपर आक्रमण करें। इस स्वजनवर्गमें वानर ही हमारे चिन्ह होंगे। केवल हम सात व्यक्ति ही मनुष्यरूपमें रहकर शत्रुओंके साथ युद्ध करेंगे। मैं अपने महातेजस्वी भाई लक्ष्मणके साथ रहूँगा और ये मेरे मित्र विभीषण अपने चार मन्त्रियोंके साथ पाँचवें होंगे। (इस प्रकार हम सात व्यक्ति मनुष्यरूपमें रहकर युद्ध करेंगे) तदनन्तर महामना महात्मा श्रीराम अपनी विशाल सेनाके द्वारा वहाँकी सारी पृथ्वीको आच्छादित करके शत्रुवधका निश्चय कर बड़े हर्ष और उत्साहसे लमाकी ओर चले।

श्रीराम बोले- मित्रो। यह पर्वतराज सुबेल सैकड़ों धातुओंसे भलीभाँति भरा हुआ है। हम सब लोग इसपर चढ़ें और आजकी इस रातमें यहीं निवास करें। यहाँसे हमलोग उस राक्षसकी निवासभूत लमापुरीका भी अवलोकन करेंगे, जिस दुरात्माने अपनी मृत्युके लिये ही मेरी भार्याका अपहरण किया है। जिसने न तो धर्मको जाना है, न सदाचारको ही कुछ समझा है और न कुलका ही विचार किया है; केवल राक्षसोचित नीच बुद्धिके कारण ही वह निन्दित कर्म किया है।

कालके पाशमें बँधा हुआ एक ही पुरुष पाप करता है, किंतु उस नीचके अपने ही दोषसे सारा कुल नष्ट हो जाता है।

इस प्रकार चिन्तन करते हुए ही श्रीराम रावणके प्रति कुपित हो विचित्र शिखरवाले सुबेल पर्वतपर निवास करनेके लिये चढ़ गये।

तत्पश्चात् सुग्रीव, मन्त्रियोंसहित विभीषण, हनुमान्, अङ्गद, नील, मैन्द, द्विविद, गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गन्धमादन, पनस, कुमुद, हर, यूथपति रम्भ, जाम्बवान्, सुषेण, महामति ऋषभ, महातेजस्वी दुर्मुख तथा कपिवर शतवलि- ये और दूसरे भी बहुत-से शीघ्रगामी वानर जो वायुके समान वेगसे चलनेवाले तथा पर्वतोंपर ही विचरनेवाले थे, उस सुबेलगिरिपर चढ़ गये।

युद्धकी इच्छा रखनेवाले राक्षसोंको देखकर वे सब वानर श्रीरामके देखते-देखते नाना प्रकारसे सिंहनाद करने लगे।

वानर-यूथपतियोंने वह रात उस सुबेलपर्वतपर ही बितायी और वहींसे उन वीरोंने लमाके वन और उपवन भी देखे।

वानरोंके उस सिंहनादसे त्रस्त एवं भयभीत हुए रीछ, सिंह, भैंसे, हाथी, मृग और पक्षी दसों दिशाओंकी ओर भाग गये।

लोग त्रिकूटके उस शिखरपर मनके द्वारा चढ़नेकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे। फिर क्रियाद्वारा उसपर आरूढ़ होनेकी तो बात ही क्या है ? रावणद्वारा पालित लमा त्रिकूटके उसी शिखरपर बसी हुई थी।

वह पुरी दस योजन चौड़ी और बीस योजन लंबी थी। सफेद बादलोंके समान ऊँचे-ऊँचे गोपुर तथा सोने और चाँदीके परकोटे उसकी शोभा बढ़ाते थे। इस प्रकार वह पुरी बड़ी ही मनोहर, सुवर्णमयी, अनेकानेक पर्वतोंसे अलंकृत, नाना प्रकारकी विचित्र धातुओंसे चित्रित और अनेक उद्यानोंसे सुशोभित थी। धन-धान्यसे सम्पन्न तथा सम्पूर्ण मनोवाञ्छित वस्तुओंसे भरी-पूरी उस रावण-पुरीको लक्ष्मणके बड़े भाई लक्ष्मीवान् श्रीरामने वानरोंके साथ देखा।

लक्ष्मण बोले- महाराज विभीषण विश्वकर्मा द्वारा रचित स्वर्णजड़ित सुशोभित यह तो अलकापुरी को भी मात कर रही है। हनुमानजीने तो लंका को जलाकर राख कर दिया था फिर यह ? विभीषण बोले- हनुमान ने ठीक ही कहा था परन्तु रावण ने इसका पुन:निर्माण कर लिया। लक्ष्मण बोले- हनुमानजी को आये कुछ ही दिन तो हुये है इतनी जल्दी इतना सारा निर्माण कर लिया क्या यह संभव है ?

विभीषण बोले- यह माया नगरी है। सब कुछ सम्भव है। मयदानव महाराज रावण के श्वसुर है और विश्वकर्मा उनकी आज्ञाका उल्लंघन करने का साहस नहीं कर सकता। रावण के आज्ञा से इन दोनों नें दो ही दिनोंमें इसे फिर से रच लिया है। हमें फिर से यह दुर्ग बन्दी तोड़नी होगी। श्रीराम बोले- अद्वितीय है यह सागर के बीच में बसा हुआ प्रदेश। विभीषण बोले- अपने चारों मन्त्रियों से समाचार मिला है कि रावण ने अंदर ही अंदर मोर्चाबन्दी शुरू कर दी है। वो देखो लंका का पूर्वद्वार वहीं लंका का प्रवेश द्वार भी है। वो देखो गोपुरम में स्वयं लंकाधिपति रावण, वही महाराज जिसने आपकी पत्नी माता सीता को हर लिया।

सुग्रीव बोले- इस नराधम को इस धरती पर जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं। इसे हम अभी यमपुरी पहुंचा देंगे। यह कहकर सुग्रीव वहाँ से उछल पड़ें और लंका के गोपुर में छलांग लगा दी।

उस नगरके गोपुरकी छतपर उन्हें दुर्ज राक्षसराज रावण बैठा दिखायी दिया, जिसके दोनों ओर श्वेत चँवर डुलाए जा रहे थे, सिरपर विज-छत्र शोभा दे रहा था। वह काले मेघके समान जान पड़ता था। उसके वस्त्रोंपर सोनेके काम किये गये थे। ऐरावत हाथीके दाँतोंके अग्रभागसे आहत होनेके कारण उसके वक्ष:स्थलमें आघातचिन्ह बन गया था।

मुख्य-मुख्य वानरों तथा श्रीरघुनाथके समान ही राक्षसराज रावणपर दृष्टि पड़ते ही सुग्रीव सहसा खड़े हो गये। वे क्रोधके वेगसे युक्त और शारीरिक एवं मानसिक बलसे प्रेरित हो सुबेलके शिखरसे उठकर उस गोपुरकी छतपर कूद पड़े। सुग्रीव और रावण आपसमें मल्लयुद्ध करने लगे, एक-दूसरे को मार गिराने लगे। जैसे वज्र पर्वत पर गिर पड़ता हो वैसे ही कपिनाथ सुग्रीव कूद पड़ा। झपट्टा मारकर उसने एक हाथसे छत्र गरा दिये और दूसरे हाथसे मुकुट गिरा दिया।

सुग्रीव बोले- राक्षस। मैं लोकनाथ भगवान् श्रीरामका सखा और दास हूँ। महाराज श्रीरामके तेजसे आज तू मेरे हाथसे छूट नहीं सकेगा। ऐसा कहकर वे अकस्मात् उछलकर रावणके ऊपर जा कूदे और उसके विचित्र मुकुटोंको खींचकर उन्होंने पृथ्वीपर गिरा दिया।

जब छत्र और मुकुट गिराये गये तब दशानन बहुत घबड़ा उठा। फिर मन में क्रुद्ध होकर रावण ने सुग्रीव को एक लाथ मार दी। उन्हें इस प्रकार तीव्र गतिसे अपने ऊपर आक्रमण करते देख रावणने कहा- अरे। जबतक तू मेरे सामने नहीं आया था, तभीतक सुग्रीव (सुन्दर कण्ठसे युक्त) था। अब तो तू अपनी इस ग्रीवासे रहित हो जायगा। ऐसा कहकर रावणने अपनी दो भुजाओंद्वारा उन्हें शीघ्र ही उठाकर उस छतकी फर्शपर दे मारा। फिर वानरराज सुग्रीवने भी गेंदकी तरह उछलकर रावणको दोनों भुजाओंसे उठा लिया और उसी फर्शपर जोरसे पटक दिया। राक्षसराज रावण और वानरराज सुग्रीव दोनों ही बड़े बलवान् थे, अत: दोनों घूँसे, थप्पड़, कोहनी और पंजोंकी मारे साथ बड़ा असह्य युद्ध करने लगे।

फिर वे एक दूसरेका बार-बार आलिङ्गन करके उसे बाहुपाशमें जकड़ने लगे। दोनों ही क्रोध, शिक्षा (मल्लयुद्ध विषयक अभ्यास) तथा शारीरिक बलसे सम्पन्न थे; अत: उस युद्धस्थलमें कुश्तीके अनेक दाँव-पेंच दिखाते हुए भ्रमण करने लगे।

मतवाले हाथियोंके समान सुग्रीव और रावण गजराजके शुण्ड-दण्डकी भाँति मोटे एवं बलिष्ठ बाहुदण्डोंद्वारा एक दूसरेके दाँवको रोकते हुए बहुत देरतक बड़े आवेशके साथ युद्ध करते और शीघ्रतापूर्वक पैंतरे बदलते रहे।

वे परस्पर भिड़कर एक दूसरेको मार डालनेका प्रयत्न कर रहे थे। जैसे दो बिलाव किसी भक्ष्य वस्तुके लिये क्रोधपूर्वक स्थित हो परस्पर

दृष्टिपात कर बारंबार गुर्राते रहते हैं, उसी तरह रावण और सुग्रीव भी लड़ रहे थे।

इसी बीचमें राक्षस रावणने अपनी मायाशक्तिसे काम लेनेका विचार किया। वानरराज सुग्रीव इस बातको ताड़ गये; इसलिये सहसा आकाशमें उछल पड़े। वे विजयोल्लाससे सुशोभित होते थे और थकावटको जीत चुके थे। वानरराज रावणको चकमा देकर निकल गये और वह खड़ा-खड़ा देखता ही रह गया। लोग कहने लगे जिसने लंका को जलाया था, लगता है वहीं हनुमान फिर से आ गया है। सिवाय उसके वह क्या विघ्न उत्पन्न करेगा ? वह कपि तो बलवान और नि:शंक है।

अनन्तर अवसर देखकर वह रावण के हाथों से छूट गया। जिस प्रकार मृगेन्द्र सिंह की पकड़ में से सियार भाग जाता हो, गृहस्वामी के जाग उठने पर घरमें आया चोर भाग जाता हो, उसप्रकार कपियोंका वह राजा सुग्रीव भाग गया। जिसप्रकार साँप के मुख से चूहा छूट गया हो, उसी प्रकार रावण की पकड़ से छूटकर सुग्रीव भाग गया। सुग्रीव कुशल क्षेमपूर्वक सुबेल पर आ गये।

जिन्हें संग्राममें कीर्ति प्राप्त हुई थी, वे वानरराज सूर्यपुत्र सुग्रीव निशाचरपति रावणको युद्धमें थकाकर अत्यन्त विशाल आकाशमार्गका लंघन करके वानरोंकी सेनाके बीच श्रीरामके पास आ पहुँचे। सुग्रीवके शरीरमें युद्धके चिह्न देखकर श्रीरामने उन्हें हृदयसे लगा लिया और बोले- सुग्रीव। तुमने मुझसे सलाह लिये बिना ही यह बड़े साहसका काम कर डाला। राजालोग ऐसे दु:साहसपूर्ण कार्य नहीं किया करते हैं।

साहसप्रिय वीर। तुमने मुझको, इस वानरसेनाको और विभीषणको भी संशयमें डालकर जो यह साहसपूर्ण कार्य किया है, इससे हमें बड़ा कष्ट हुआ। शत्रुओंका दमन करनेवाले वीर। अब फिर तुम ऐसा दु:साहस न करना। यदि तुम्हें कुछ हो गया तो मैं सीता, भरत, लक्ष्मण, छोटे भाई शत्रुघ्न तथा अपने इस शरीरको भी लेकर क्या करूँगा ?

मित्र यह कैसी नादानी है। सुग्रीव बोले- नर पिशाच नराधम को देखकर मैं अपने बस में नहीं रह सका।

विभीषण बोले- तुम्हारे इस असामायिक साहस ने हमें चिन्ता में डाल दिया। श्रीराम बोले- अब कभी भी दु:साहस करके अपने प्राण संकट में मत डालना। मैं अपनी मनोदशाका कैसे वर्णन करूँ। सुग्रीव बोले- माता सीता का हरण करने वाले उस पापी आततायी को देखकर मेरे नस-नस में बिजली कौंद गयी। मैं आपे में नहीं रह सका, मैं पागल सा हो गया प्रभु।

राम बोले- मित्र। तुम हमारे राजा हो। तुम्हारे परास्त होते ही हम सबकी पराजय हो जायेगी। हमारे धर्म युद्ध पर अधर्म की विजय होगी। तुम्हें कोई भी कदम बिना विचारे, बिना परामर्श के नहीं उठाना चाहिये। मैं रावण का वध करूँगा। विभीषण को लंका का राज्य दूँगा। किन्तु तुम्हारे प्राणोंपर संकट आये तो भरत को राज्य देकर स्वयं तुम्हारे साथ देह त्याग करूँगा।

सुग्रीव बोले- प्रभु। फिर से ऐसी भूल कभी नहीं होगी। अपने पराक्रमका ज्ञान रखते हुए मैं आपकी भार्याका अपहरण करनेवाले रावणको देखकर कैसे क्षमा कर सकता था ? सुग्रीव विह्वल हो गये और चरण पकड़के बोले- मुझे क्षमा करें। आपकी पत्नीके हर्त्ताको देखकर मैं सहन नहीं कर सका। अब इस आदेशको स्मरण रखूँगा।

उस पर्वतसे उतरकर धर्मात्मा श्रीरघुनाथजीने अपनी सेनाका निरीक्षण किया, जो शत्रुओंके लिये अत्यन्त दुर्जय थी। तदनन्तर महाबाहु धनुर्धर श्रीरघुनाथ उस विशाल सेनाके साथ शुभ मुहूर्तमें आगे-आगे लमापुरीकी ओर प्रस्थित हुए। उस समय विभीषण, सुग्रीव, हनुमान, ऋक्षराज जाम्बवान्, नल, नील तथा लक्ष्मण उनके पीछे-पीछे चले। शत्रुओंको आगे बढ़नेसे रोकनेवाले हाथीके समान विशालकाय वानरोंने सैकड़ों शैलशिखरों और बड़े-बड़े वृक्षोंको हाथमें ले रक्खा था। शत्रुओंका दमन करनेवाले वे दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण थोड़ी ही देरमें लमापुरीके पास पहुँच गये।

महाराज रावण मन्दोदरी राक्षसेश्वरी को रजतशिखरपर बनी रंगशाला में ले गया। लमाके तीसरे शिखरपर- रजत-शिखरपर रावणकी नृत्यशाला थी। सम्पूर्ण शिखर घेरकर प्रेक्षागार बनाया गया था। चारों ओर बैठनेके स्थान सीढ़ियोंकी भाँति ओर मध्यमें मंच। दशग्रीवके वहाँ पहुँचते ही दुन्दुभियाँ बजने लगीं।

अत्यन्त विशाल मेघवर्ण महाछत्रके नीचे सिंहासनपर दशग्रीव मन्दोदरीके साथ बैठ गया। वाद्योंकी गम्भीर ध्वनि होने लगी। उन्होंने उस रङ्गशालाका पूजन किया। दशग्रीव राक्षसोंको, लमाके लोगोंको दिखलाना चाहता था कि वह कितना निश्चिन्त है। सुबेलपर उतरी वानर-सेनाकी अवगणना करके वह सहज मनोरञ्जनमें सम्मिलित रह सकता है।

लंकाकी चोटीपर एक अत्यन्त विचित्र महल था। वहाँ नाच-गानका अखाड़ा जमता था। रावण उस महलमें जाकर बैठ गया। किन्नर उसके गुणसमूहोंको गाने लगे। ताल करताल, पखावज मृदंग और बीणा बज रहे हैं। नृत्यमें प्रवीण अप्सराएँ नाच रही हैं। वह निरन्तर

सैकड़ों इन्द्रोंके समान भोग-विलास करता रहता है। यद्यपि श्रीराम-सरीखा अत्यन्त प्रबल शत्रु सिरपर है, फिर भी उसको न तो चिन्ता है और न डर ही है। यहाँ श्रीरघुवीर सुबेल पर्वतपर सेनाकी बड़ी भीड़ बड़े समूह के साथ उतरे। पर्वतका एक बहुत ऊँचा, परम रमणीय, समतल और विशेषरूपसे उज्ज्वल शिखर देखकर- वहाँ लक्ष्मणजीने वृक्षोंके कोमल पत्ते और सुन्दर फूल अपने हाथोंसे सजाकर बिछा दिये। उसपर सुन्दर और कोमल मृगछाला बिछा दी। उसी आसनपर कृपालु श्रीराम विराजमान थे।

प्रभु श्रीराम वानरराज सुग्रीवकी गोदमें अपना सिर रखे हैं। उनकी बायीं ओर धनुष तथा दाहिनी ओर तरकस रखा है। वे अपने दोनों कर-कमलोंसे बाण सुधार रहे हैं। विभीषण कानोंसे लगकर सलाह कर रहे हैं।

परम भाग्यशाली अंगद और हनुमान अनेकों प्रकारसे प्रभुके चरणकमलोंको दबा रहे हैं। लक्ष्मण कमरमें तरकस कसे और हाथोंमें धनुष-बाण लिये वीरासनसे प्रभुके पीछे सुशोभित हैं। इस प्रकार कृपा, रूप सौन्दर्य और गुणोंके धाम श्रीराम विराजमान हैं। वे मनुष्य धन्य हैं जो सदा इस ध्यानमें लौ लगाये रहते हैं।

पूर्णिमाकी उज्वल ज्योत्सनासे धवल रजनी। लक्ष्मण तनिक पीछे अभी खड़े थे। जाम्बवन्त, नल-नील प्रभृति वानरोंको व्यूह-बद्ध करनेमें लगे थे। असंख्य वानरोंका पूरा दल फलाहार कर चुका था। अब सब रात्रि-विश्राम करना चाहते थे।

मित्र। लगता है कि हम सबको गुहामें रात्रि-विश्राम करना होगा। श्रीरामने गम्भीर वाद्य-ध्वनि सुनकर सिर उठाया और दक्षिण देखा- उधर दक्षिण घटा उठती दीखती है। किञ्चित् विद्युल्लेखा भी झलकने लगी है।

विभीषणने विनम्र स्वरमें निवेदन किया- देव। वह उठते मेघ नहीं है। वहाँ रजत-शिखरपर दशग्रीवकी रंगशाला है। लगता है, वह वहाँ पहुँच गया है। यह मेघ-गर्जनाके समान वाद्य-ध्वनि गूँज रही है। वह उठती घटाके वर्णका उसका महाछत्र है और विद्युतके समान महारानी मयसुताके कर्णकुण्डल झलमला रहे हैं। पूर्व दिशाकी ओर देखकर प्रभु श्रीरामने चन्द्रमाको उदय हुआ देखा। तब वे सबसे कहने लगे- चन्द्रमाको तो देखो। कैसा सिंहके समान निडर है। पूर्व दिशारूपी पर्वतकी गुफामें रहनेवाला, अत्यन्त प्रताप, तेज और बलकी राशि यह चन्द्रमारूपी सिंह अन्धकाररूपी मतवाले हाथीके मस्तकको विदीर्ण करके आकाशरूपी वनमें निर्भय विचर रहा है।

आकाशमें बिखरे हुए तारे मोतियोंके समान हैं, जो रात्रिरूपी सुन्दर स्त्रीके श्रृङ्गार हैं। प्रभुने कहा- भाइयो। चन्द्रमामें जो कालापन है वह क्या है ? अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार कहो।

सुग्रीवने कहा- हे रघुनाथ। सुनिये। चन्द्रमामें पृथ्वीकी छाया दिखायी दे रही है। किसीने कहा- चन्द्रमाको राहुने ग्रसा था। वही चोटका काला दाग हृदयपर पड़ा हुआ है। कोई कहता है जब ब्रह्माने कामदेवकी स्त्री रतिका मुख बनाया, तब उसने चन्द्रमाका सार भाग निकाल लिया जिससे रतिका मुख तो परम सुन्दर बन गया, परन्तु चन्द्रमाके हृदयमें छेद हो गया। वही छेद चन्द्रमाके हृदयमें वर्तमान है, जिसकी राहसे आकाशकी काली छाया उसमें दिखायी पड़ती है।

प्रभु श्रीरामने कहा- विष चन्द्रमाका बहुत प्यारा भाई है। इसीसे उसने विषको अपने हृदयमें स्थान दे रखा है। विषयुक्त अपने किरणसमूहको फैलाकर वह वियोगी नर-नारियोंको जलाता रहता है। हनुमानने कहा- हे प्रभो। सुनिये, चन्द्रमा आपका प्रिय दास है। आपकी सुन्दर श्याम मूर्ति चन्द्रमाके हृदयमें बसती है, वही श्यामताकी झलक चन्द्रमामें है।

हे विभीषण। दक्षिण दिशाकी ओर देखो, बादल कैसा घुमड़ रहा है और बिजली चमक रही है। भयानक बादल मीठे-मीठे हलके-हलके स्वरसे गरज रहा है। कहीं कठोर ओलोंकी वर्षा न हो। विभीषण बोले- हे कृपालु। सुनिये, यह न तो बिजली है, न बादलोंकी घटा। लंकाकी चोटीपर एक महल है। दशग्रीव रावण वहाँ रंगशाला का अखाड़ा देख रहा है।

रावणने सिरपर मेघडंबर बादलोंके डंबर-जैसा विशाल और काला छत्र धारण कर रखा है। वही मानो बादलोंकी अत्यन्त काली घटा है। मन्दोदरीके कानोंमें जो कर्णफूल हिल रहे हैं, हे प्रभो। वही मानो बिजली चमक रही है।

दशग्रीवका यह दर्प-प्रदर्शन है। लक्ष्मणने तनिक आगे आकर श्रीरामके करोंमें उनका धनुष दे दिया- आर्यके करोंकी लक्ष्यवेध कुशलता भी नैकषेयोंको देखनी चाहिये।

अच्छा। श्रीरामने अनुजके मुखकी ओर देखा। पल्लवतल्पपर तनिक बैठ गये। धनुष ज्यासज्ज हो गया और त्रोणमें-से एक बाण निकाल कर चढ़ाकर उस रजत-शिखरकी ओर छोड़ दिया।

हे देवताओंके सम्राट। सुनिये, अनुपम ताल और मृदंग बज रहे हैं। वही मधुर गर्जन ध्वनि है। रावणका अभिमान समझकर प्रभु

मुसकराये। उन्होंने धनुष चढ़ाकर उसपर बाणका सन्धान किया और एक ही बाणसे रावणके छत्र-मुकुट और मन्दोदरीके कर्णफूल काट गिराये। सबके देखते-देखते वे जमीनपर आ पड़े, पर इसका भेद कारण किसीने नहीं जाना।

ऐसा चमत्कार करके श्रीरामका बाण वापस आकर फिर तरकसमें जा घुसा। यह महान् रस-भंग रंगमें भंग देखकर रावणकी सारी सभा भयभीत हो गयी। न भूकम्प हुआ, न बहुत जोरकी हवा आँधी चली। न कोई अस्त्र-शस्त्र ही नेत्रोंसे देखे। फिर ये छत्र, मुकुट और कर्णफूल कैसे कटकर गिर पड़े ? सभी अपने-अपने हृदयमें सोच रहे हैं कि यह बड़ा भयमर अपशकुन हुआ।

श्रीरामने धनुषकी प्रत्यञ्चा उतारनेके लिए सहज भावसे भाईके करोंमें जब दिया, रजत-शिखरसे उठती वाद्य-ध्वनि बन्द हो चुकी थी। वह घटाकार महाछत्र और बिजलीकी चमक अदृश्य हो गयी थी। सबने देखा कि वह बाण लौटकर स्वयं त्रोणमें प्रवेश कर गया।

उस रजत-शिखरकी रंगशालामें बैठे लमाके मन्त्री शूर सेनापति आदि किसीकी समझमें नहीं आया कि हुआ क्या। दशग्रीवका महाछत्र, दसों मुकुट कटकर भूमिमें गिरे। साथ ही महारानी मन्दोदरीके दोनों ज्योतिर्मय मणि-कुण्डल कर्णपल्लियोंसे गिरे।

क्या हुआ ? अशुभ शकुन ? मन्दोदरी पहिले चौंकी। उसके कर कर्णपल्लियोंपर गये। एक मन्त्रीने ही कुण्डल उठाकर महारानीको सादर दिये; किंतु वे अब पहिननेके अयोग्य थे। उनका आधार छिन्न हो चुका था। छत्र-दण्ड कट गया था और महाछत्र भूमिमें पड़ा था। दशग्रीवने अपने मुकुट स्वयं झुककर उठाये।

आशमा व्यर्थ है। सबको भयभीत देखकर रावणने अट्टहास किया- मस्तकोंका गिरना जिसको वरदान दिलानेवाला बनता है, मुकुटका गिरना भी तो उसका शुभ-सूचक होगा।

बाण किसीने देखा नहीं था। भूकम्प, आँधी कुछ कारण था नहीं। सबको- महारानी मन्दोदरीको भी दशग्रीवके दर्प-भरे वचनसे कोई आश्वासन नहीं मिला। वाद्य स्वत: बन्द हो गये थे।

मैं इस असुरक्षित स्थानपर और नहीं बैठ सकती। महारानी उठीं तो दूसरे सबको उनके सम्मानमें उठकर खड़ा होना पड़ा।

आज इस क्रीड़ाको विरमित रहने दो। विवश होकर दशग्रीव भी उठा। उसे अपनी महारानीका साथ देना पड़ा। वे भयभीत थीं। अन्त:पुर तक उनके साथ जाना इस समय आवश्यक हो गया था।

सभाको भयभीत देखकर रावणने हँसकर युक्ति रचकर ये वचन कहे- सिरोंका गिरना भी जिसके लिये निरन्तर शुभ होता रहा है, उसके लिये मुकुटका गिरना अपशकुन कैसा ?

अपने-अपने घर जाकर सोये रहो डरनेकी कोई बात नहीं है। तब सब लोग सिर नवाकर घर गये। जबसे कर्णफूल पृथ्वीपर गिरा, तबसे मन्दोदरीके हृदयमें सोच बस गया। नेत्रोंमें जल भरकर, दोनों हाथ जोड़कर वह रावणसे कहने लगी- हे प्राणनाथ। मेरी विनती सुनिये। हे प्रियतम। श्रीरामसे विरोध छोड़ दीजिये। उन्हें मनुष्य जानकर मनमें हठ न पकड़े रहिये।

मेरे इन वचनोंपर विश्वास कीजिये कि वे रघुकुलके शिरोमणि श्रीराम विश्वरूप हैं यह सारा विश्व उन्हींका रूप है वेद जिनके अङ्ग-अङ्गमें लोकोंकी कल्पना करते हैं।

हे प्राणपति। सुनिये, ऐसा विचारकर प्रभुसे वैर छोड़कर श्रीरघुवीरके चरणोंमें प्रेम कीजिये, जिससे मेरा सुहाग न जाय।

फिर अपनी व्याकुलताको समझकर ऊपरसे हँसता हुआ, भयको भुलाकर रावण महलको गया। जब मन्दोदरीने सुना कि प्रभु श्रीराम आ गये हैं और उन्होंने खेलमें ही समुद्रको बँधवा लिया है।

हे नाथ। वैर उसीके साथ करना चाहिये जिससे बुद्धि और बलके द्वारा जीत सके। आपमें और श्रीरघुनाथमें निश्चय ही कैसा अन्तर है, जैसा जुगनू और सूर्यमें। जिन्होंने विष्णुरूपसे अत्यन्त बलवान मधु कैटभ दैत्य मारे और वाराह और नृसिंहरूपसे महान् शूरवीर दितिके पुत्रों हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु का संहार किया; जिन्होंने वामनरूपसे बलिको बाँधा और परशुरामरूपसे सहस्त्रबाहुको मारा, वे ही भगवान पृथ्वीका भार हरण करनेके लिये रामरूपमें अवतीर्ण प्रकट हुए हैं। हे नाथ। उनका विरोध न कीजिये, जिनके हाथमें काल, कर्म और जीव सभी हैं। श्रीरामके चरणकमलोंमें सिर नवाकर उनकी शरणमें जाकर उनको जानकीजी सौंप दीजिये और आप पुत्रको राज्य देकर वनमें जाकर श्रीरघुनाथका भजन कीजिये।

हे नाथ। श्रीरघुनाथ तो दीनोंपर दया करनेवाले हैं। सम्मुख शरण जानेपर तो बाघ भी नहीं खाता। आपको जो कुछ करना चाहिये था, वह सब आप कर चुके। आपने देवता, राक्षस तथा चर-अचर सभीको जीत लिया।

हे दशमुख। संतजन ऐसी नीति कहते हैं कि चौथेपन बुढ़ापे में राजाको वनमें चला जाना चाहिये। हे स्वामी। वहाँ वनमें आप उनका भजन कीजिये जो सृष्टिके रचनेवाले, पालनेवाले और संहार करनेवाले हैं। हे नाथ। आप विषयोंकी सारी ममता छोड़कर उन्हीं शरणागतपर प्रेम करनेवाले भगवान्‌का भजन कीजिये। जिनके लिये श्रेष्ठ मुनि साधन करते हैं और राजा राज्य छोड़कर वैरागी हो जाते हैं।

वही कोसलाधीश श्रीरघुनाथ आपपर दया करने आये हैं। हे प्रियतम। यदि आप मेरी सीख मान लेंगे, तो आपका अत्यन्त पवित्र और सुन्दर यश तीनों लोकोंमें फैल जायगा। ऐसा कहकर, नेत्रोंमें करुणाका जल भरकर और पतिके चरण पकड़कर, काँपते हुए शरीरसे मन्दोदरीने कहा- हे नाथ। श्रीरघुनाथका भजन कीजिये, जिससे मेरा सुहाग अचल हो जाय।

पत्नीके वचन कानोंसे सुनकर रावण खूब हँसा और बोला- अहो। मोह अज्ञान की महिमा बड़ी बलवान है। स्त्रीका स्वभाव सब सत्य ही कहते हैं कि उसके हृदयमें आठ अवगुण सदा रहते हैं। साहस, झूठ, चञ्चलता, माया (छल), भय (डरपोकपन), अविवेक (मूर्खता), अपवित्रता और निर्दयता। तूने शत्रुका समग्र विराट रूप गाया और मुझे उसका बड़ा भारी भय सुनाया।

हे प्रिये। वह सब यह चराचर विश्व तो स्वभावसे ही मेरे वशमें है। तेरी कृपासे मुझे यह अब समझ पड़ा। हे प्रिये। तेरी चतुराई मैं जान गया। तू इस प्रकार इसी बहाने मेरी प्रभुताका बखान कर रही है।

हे मृगनयनी। तेरी बातें बड़ी गूढ़ रहस्यभरी हैं, समझनेपर सुख देनेवाली और सुननेसे भय छुड़ानेवाली हैं।

तब रावणने मन्दोदरीको उठाया और उससे अपनी प्रभुता कहने लगा- हे प्रिये। सुन, तूने व्यर्थ ही भय मान रखा है। बता तो जगत्‌में मेरे समान योद्धा है कौन ?

वरुण, कुबेर, पवन, यमराज आदि सभी दिक्पालोंको तथा कालको भी मैंने अपनी भुजाओंके बलसे जीत रखा है। देवता, दानव और मनुष्य सभी मेरे वशमें हैं। फिर तुझको यह भय किस कारण उत्पन्न हो गया ?

मन्दोदरीने उसे बहुत तरहसे समझाकर कहा किन्तु रावणने उसकी एक भी बात न सुनी और वह फिर सभामें जाकर बैठ गया। मन्दोदरीने हृदयमें ऐसा जान लिया कि कालके वश होनेसे पतिको अभिमान हो गया है।

मन्दोदरीने मनमें ऐसा निश्चय कर लिया कि पतिको कालवश मतिभ्रम हो गया है। इस प्रकार अज्ञानवश बहुत-से विनोद करते हुए रावणको सबेरा हो गया। तब स्वभावसे ही निडर और घमण्डमें अंधा लंकापति सभामें गया। यद्यपि बादल अमृत-सा जल बरसाते हैं, तो भी बेत फूलता-फलता नहीं। इसी प्रकार चाहे ब्रह्माके समान भी ज्ञानी गुरु मिलें, तो भी मूर्खके हृदयमें चेत ज्ञान नहीं होता।

मेरे सभी मन्त्री एकाग्रचित्त होकर शीघ्र यहाँ आ जायँ। राक्षसों। यह हमारे लिये गुप्त मन्त्रणा करनेका अवसर आ गया है।

उस समय राक्षसराज रावणने माया जाननेवाले विद्युजिह्वसे कहा- हम दोनों मायाद्वारा जनकनन्दिनी सीताको मोहित करेंगे।

निशाचर। तुम श्रीरामका मायानिर्मित मस्तक लेकर एक महान् धनुष-बाणके साथ मेरे पास आओ।

मैं निश्चय ही कपट करके सीता को माया दिखा देता हूँ। तब रावण मन में आनन्दित हो गया और बोला- हे भाई, तुम भले मंत्री हो। यदि ऐसा हो तो मैं तुम्हें जितना अधिकार तुम्हारा है, उससे अधिक अधिकार दूँगा। जैसे मद्यपी को भंग मिल गयी हो, जार को स्त्री-राज्य मिल गया हो, जैसे नीम के फल को पक्व हुए देखकर कौओं का समुदाय आनन्दित हो जाता हो, वैसे उस स्थान पर अपने मंत्रियों के बल को देखकर रावण मन में आनन्दित हो गया। फिर उसने आज्ञा दी- जाओ यह काम करके आ जाओ। तदनन्तर वह मंत्री मन में उल्लास को प्राप्त होकर कपट करने चला गया। रावणकी यह आज्ञा पाकर निशाचर विद्युजिह्वने कहा- बहुत अच्छा। फिर उसने रावणको बड़ी कुशलतासे प्रकट की हुई अपनी माया दिखायी।

इससे राजा रावण उसपर बहुत प्रसन्न हुआ फिर वह महाबली राक्षसराज सीताको देखनेके लिये अशोकवाटिकामें गया।

रावणने सीताको देखा- निश्चय ही बिना किसी पूर्व-सूचना के रावण को इस प्रकार आया देख, वह चकित हो रही थी। भय, आश्चर्य, आशंकाएँ जाने कितने भाव उसकी आँखों में थे और उसके रूप को एक विचित्र भंगिमा प्रदान कर रहे थे। रावण की इच्छा हो रही थी- उसे देखता ही जाए। ऐसा रूप रावण ने कभी नहीं देखा, ऐसी गरिमा, ऐसा साहस और चारित्र्य रावण ने कभी नहीं देखा। रावण की रानियों, प्रेमिकाओं, रखैलों, भोग्याओं और दासियों में एक भी ऐसी स्त्री नहीं है और इस स्त्री को उससे छीनने के लिए राम आया है।

रावण के शरीर का सारा रक्त उसके मस्तिष्क की ओर दौड़ चला। रावण सारे विश्व का नाश कर देगा, पर सीता नहीं देगा। पर तत्काल रावण के मन में प्रश्न उठा- क्या सीता को राम के आने का कोई आभास है ? अवश्य होगा। चारों ओर इतना कोलाहल है।

वानरों के स्वर आते होंगे। यहाँ के रक्षक-रक्षिकाओं में इसकी चर्चा होती होगी।

जो लोग अभिमानी होते हैं, उनमें विवेक-विचार नहीं होता वे विवेक के साथ विचार नहीं कर सकते।

जैसे हरिणी के समीप बाघ आ गया हो, हथिनी के पास सिंह आ गया हो, वैसे ही सीता के समीप रावण आते हुए स्पष्ट रूप में बोला। हे सीता, मैं तुमसे कहता हूँ, जिससे मेरा उद्देश्य पूर्ण हो गया है। इतने दिन तुमने धीरज धारण कर रखा था, वह सब व्यर्थ हो गया। अब सन्देह छोड़कर तुम मेरा वरण करो और लंका की रानी बन जाओ। तुम्हें पटरानी समझकर मन्दोदरी तुम्हारी सेवा करेगी।

सीता। रावण के स्वर में क्रूरता तथा माधुर्य का विचित्र मिश्रण था, तेरी भी प्रतीक्षा समाप्त हुई और मेरी भी। अपनी मुक्ति के लिए जिसकी प्रतीक्षा तुम कर रही हो, वह सागर पार लंका के द्वार तक आ गया था। राम।

हाँ, राम। कल रात तुमने सागर-तट से उठता कोलाहल सुना होगा। वह अपनी सेना लेकर आया था। बहुत प्रसन्न हो कि वह तुम्हें मुक्त कराकर अंगीकार कर लेगा ? रावण ने अट्टहास किया, वह भी यही समझकर आया था कि वह यहाँ अपनी सीता को प्राप्त कर लेगा। रावण ने पुन: अट्टहास किया और हँसता ही चला गया।

सीता आशंकित दृष्टि से रावण को देख रही थी- राम के लंका पहुँचने पर रावण हँस क्यों रहा है ? वह भयभीत क्यों नहीं है ? और उनके आने की चर्चा भूतकाल में क्यों कर रहा है ? भद्रे। मेरे बार-बार सान्त्वना देने और प्रार्थना करनेपर भी तुम जिनका आश्रय लेकर मेरी बात नहीं मानती थीं, खरका वध करनेवाले वे तुम्हारे पतिदेव श्रीराम समरभूमिमें मारे गये।

तुम्हारी जो जड़ थी, सर्वथा कट गयी। तुम्हारे दर्पको मैंने चूर्ण कर दिया। अब अपने ऊपर आये हुए इस संकटसे ही विवश होकर तुम स्वयं मेरी भार्या बन जाओगी। मूढ़ सीते। अब यह रामविषयक चिन्तन छोड़ दो। उस मरे हुए रामको लेकर क्या करोगी।

कहा जाता है राम मुझे मारनेके लिये समुद्रके किनारे तक आये थे। उनके साथ वानरराज सुग्रीवकी लायी हुई विशाल सेना भी थी।

जब आधी रात हुई, उस समय रास्तेकी थकी-माँदी सारी सेना सुखपूर्वक सो गयी थी। उस अवस्थामें वहाँ पहुँचकर मेरे गुप्तचरोंने पहले तो उसका भलीभाँति निरीक्षण किया।

फिर प्रहस्तके सेनापतित्वमें वहाँ गयी हुई मेरी बहुत बड़ी सेनाने रातमें, जहाँ राम और लक्ष्मण थे, उस वानर सेनाको नष्ट कर दिया।

उस समय राक्षसोंने पट्टिश, चक्र, ऋष्टि, दण्ड, बड़े-बड़े आयुध, बाणोंके समूह, त्रिशूल, चमकीले कूट और मुद्गर, डंडे तोमर, प्रास तथा मूसल उठा-उठाकर वानरोंपर प्रहार किया था। तदनन्तर शत्रुओंको मथ डालनेवाले प्रहस्तने, जिसके हाथ खूब सीधे हुए हैं, बहुत बड़ी तलवार हाथमें लेकर उससे बिना किसी रुकावटके रामका मस्तक काट डाला। फिर अकस्मात् उछलकर उसने विभीषणको पकड़ लिया और वानरसैनिकोंसहित लक्ष्मणको विभिन्न दिशाओंमें भाग जानेको विवश किया।

सीते। वानरराज सुग्रीवकी ग्रीवा काट दी गयी, हनुमान्‌की हनु (ठोड़ी) नष्ट करके उसे राक्षसोंने मार डाला।

जाम्बवान् ऊपरको उछल रहे थे, उसी समय युद्धस्थलमें राक्षसोंने बहुत-से पट्टिशोंद्वारा उनके दोनों घुटनोंपर प्रहार किया। वे छिन्न-भिन्न होकर कटे हुए पेड़की भाँति धराशाी हो गये।

अङ्गदधारी अङ्गदपर आक्रमण करके बहुत-से राक्षसोंने उन्हें बाणोंद्वारा छिन्न-भिन्न कर दिया है। वे सब अङ्गोंसे रक्त बहाते हुए पृथ्वीपर पड़े हैं। जैसे सिंहके खदेड़नेसे बड़े-बड़े हाथी भागते हैं, उसी प्रकार राक्षसोंके पीछे करनेपर बहुत-से वानर पीठपर बाणोंकी मार खाते हुए भाग गये हैं। कोई समुद्रमें कूद पड़े और कोई आकाशमें उड़ गये हैं। बहुत-से रीछ वानरी वृत्तिका आश्रय ले पेड़ोंपर चढ़ गये हैं। इस प्रकार मेरी सेनाने सैनिकोंसहित तुम्हारे पतिको मौतके घाट उतार दिया। खूनसे भीगा और धूलमें सना हुआ उनका ही मस्तक यहाँ लाया गया है।

तुम लोगों ने इसे बच्चों का खेल समझ रखा है क्या कि भागकर रस्सी को छू लेनेवाला अपना पारितोषिक पा जाएगा। रावण के चेहरे पर भयंकर क्रूरता खेल गई, न तुम इस बात को समझीं कि तुम राम को काल के गाल में खींचने के लिए चुम्बक मात्र हो और न राम इस बात को समझ पाया कि रावण इस सागर में सीता जैसी कामिनियों का चारा डालकर राम जैसे मत्स्यों का आखेट करता है।

सीता की आँखें फट आईं, मुख कुछ खुल गया और हाथ कानों तक चले गए।

रावण बोला, उसके जटाजूट को पकड़ अपने चंद्रहास खड्ग के एक वार से उसका सिर उसके शरीर से अलग कर दिया है। उसका सिर इस समय भी मेरे रथ में मेरे पैरों से ठुकराए जाने के लिए पायदान पर पड़ा है। रावण हँसा, तुम्हें भेंट देनेके लिए लाया हूँ सोचा, शायद तुम उसे न देख सको। वह चेहरा अब उतना सुदर्शन नहीं रहा। कटी हुई ग्रीवा का मांस कुछ विचित्र प्रकार का लाल है। उससे

टपकता हुआ तुम्हारे प्रिय का लाल-लाल रक्त अब सूखकर काला हो गया है। हाँ। कुछ शिराएँ भद्दी रस्सियों के समान झूल रही हैं। उसकी आँखे पथरा गई हैं। खुले होठों पर मुसकान नहीं है- भय, याचना और दीनता का भाव है।

तुमने जिसपर आशा लगा रखी है, तुम्हारे उस पति की मृत्यु हो गयी है। इसलिए अब मेरी उपेक्षा करते हुए तुम किसकी शरण में रहोगी। विद्युजिह्व वह राम का मायामय सिर और धनुष हाथ में लिये हुए आ गया। वस्तुत: जो सिर और धनुष कृत्रिम अतएव मिथ्या था, उसे लाकर उसने सीता के पास डाल दिया। उस श्यामसुन्दर मुख के कण्ठनाल से रक्त झर रहा था। फिर भी किरीट, कुण्डलों से विभूषित वह मंगल रूप में झलक रहा था। उसकी कान्ति सूरज की-सी थी। जब जनक-नन्दिनी ने ऐसा मस्तक देखा, तब उसे मूर्च्छा आ गयी और जैसे कदली पर बिजली गिर जाए तो वह जैसी गिर जाती हो, वैसे वह भूमि पर गिर पड़ी। जैसे पाले से कमलिनी दग्ध हो जाती है, जैसे लता अग्नि के ताप से दग्ध हो जाती है, वैसे सीता शोक-रूपी अग्नि में जल गयी। वह स्वयं बड़े दु:ख को प्राप्त हो गयी।

रावण विद्युजिह्व से बोला- तुम दशरथकुमार रामका मस्तक शीघ्र ही सीताके आगे रख दो, जिससे यह बेचारी अपने पतिकी अन्तिम अवस्थाका अच्छी तरह दर्शन कर ले। रावणने भी उस विशाल चमकीले धनुषको यह कहकर सीताके सामने डाल दिया कि यही रामका त्रिभुवनविख्यात धनुष है। फिर बोला- सीते। यही तुम्हारे रामका प्रत्यञ्चासहित धनुष है। रातके समय उस मनुष्यको मारकर प्रहस्त इस धनुषको यहाँ ले आया है। जब विद्युजिह्वने मस्तक वहाँ रक्खा, उसके साथ ही रावणने वह धनुष पृथ्वीपर डाल दिया। तत्पश्चात् सीतासे बोला- अब तुम मेरे वशमें हो जाओ।

सीताजीने उन मस्तक और उस उत्तम धनुषको देखकर तथा हनुमानजीकी कही हुई सुग्रीवके साथ मैत्री-सम्बन्ध होनेकी बात याद करके अपने पतिके-जैसे ही नेत्र, मुखका वर्ण, मुखाकृति, केश, ललाट और उस सुन्दर चूडामणिको लक्ष्य किया। इन सब चिन्होंसे पतिको पहचानकर वे बहुत दुखी हुई और कुररीकी भाँति रो-रोकर विलाप करने लगीं।

ऐसा कहकर दु:खकी मारी तपस्विनी वैदेही बाला थरथर काँपती हुई कटी कदलीके समान पृथ्वीपर गिर पड़ीं।

फिर दो घड़ीमें उनकी चेतना लौटी और वे सीता कुछ धीरज धारणकर उस मस्तकको अपने निकट रखकर विलाप करने लगीं।

हाय। महाबाहो। मैं मारी गयी। आप वीरव्रतका पालन करनेवाले थे। आपकी इस अन्तिम अवस्थाको मुझे अपनी आँखोंसे देखना पड़ा। आपने मुझे विधवा बना दिया। स्त्रीसे पहले पतिका मरना उसके लिये महान् अनर्थकारी दोष बताया जाता है। मुझ सती-साध्वीके रहते हुए मेरे सामने आज-जैसे सदाचारी पतिका निधन हुआ, यह मेरे लिये महान् दु:खकी बात है। मैं महान संकटमें पड़ी हूँ, शोकके समुद्रमें डूबी हूँ, जो मेरा उद्धार करनेके लिये उद्यत थे, उन आप-जैसे वीरको भी शत्रुओंने मार गिराया।

रघुवीर। ज्योतिषियोंने तो आपकी आयु बहुत बड़ी बतायी थी, किंतु उनकी बात झूठी सिद्ध हुई। रघुनन्दन। आप बड़े अल्पायु निकले। आप तो नीतिशास्त्रके विद्वान थे। संकटसे बचनेके उपायोंको जानते थे और व्यसनोंके निवारणमें कुशल थे तो भी कैसे आपको ऐसी मृत्यु प्राप्त हुई, जो दूसरे किसी वीर पुरुषको प्राप्त होती नहीं देखी गयी थी ?

कमलनयन। भीषण और अत्यन्त क्रूर कालरात्रि आपको हृदयसे लगाकर मुझसे हठात् छीन ले गयी। पुरुषोत्तम। महाबाहो। आप मुझ तपस्विनीको त्यागकर अपनी प्रियतमा नारीकी भाँति इस पृथ्वीका आलिङ्गन करके वहाँ सो रहे हैं। राजन्। आपने अपनी छोटी अवस्थामें ही जब कि मेरी भी छोटी ही अवस्था थी, मुझे पत्नीरूपमें प्राप्त किया। मैं सदा आपके साथ विचरनेवाली सहधर्मिणी हूँ। आप मेरी ओर क्यों नहीं देखते हैं अथवा मेरी बातका उत्तर क्यों नहीं देते है ? काकुत्स्थ। मेरा पाणिग्रहण करते समय जो आपने प्रतिज्ञा की थी कि मैं तुम्हारे साथ धर्माचरण करूँगा, उसका स्मरण कीजिये और मुझ दु:खिनीको भी साथ ही ले चलिये।

रघुनन्दन। आप मुझे अपने साथ वनमें लाकर और यहाँ मुझ दु:खिनीको छोड़कर इस लोकसे परलोकको क्यों चले गये ?

आपने तो पर्याप्त दक्षिणाओंसे युक्त अग्निष्टोम आदि यज्ञोंद्वारा भगवान् यज्ञपुरुषकी आराधना की है; फिर क्या कारण है कि अग्निहोत्रकी अग्निसे दाह-संस्कारका सुयोग आपको नहीं मिल रहा है।

हम तीन व्यक्ति एक साथ वनमें आये थे; परंतु अब शोकाकुल हुई माता कौशल्या केवल एक व्यक्ति लक्ष्मणको ही घर लौटा हुआ देख सकेंगी। रघुनन्दन। जब उन्हें यह ज्ञात होगा कि आप सोते समय मारे गये और मैं राक्षसके घरमें हर लायी गयी हूँ तो उनका हृदय विदीर्ण हो जायगा और वे अपने प्राण त्याग देंगी।

हाय। दशरथनन्दन श्रीराम मुझ-जैसी कुलकलमिनी नारीको मोहवश ब्याह लाये। पत्नी ही आर्यपुत्र श्रीरामके लिये मृत्युरूप बन

गयी। जिनके यहाँ सब लोग याचक बनकर आते थे एवं सभी अतिथि जिन्हें प्रिय थे, उन्हीं श्रीरामकी पत्नी होकर जो मैं आज शोक कर रही हूँ, इससे जान पड़ता है कि मैंने दूसरे जन्ममें निश्चय ही उत्तम दानधर्ममें बाधा डाली थी।

मूर्च्छा के दूर हो जाने पर वह धरती पर रखे उस सिर की ओर देखने लगी और उस समय उसने शोक से उच्च स्वर में रुदन करना आरम्भ किया। हाय, हाय, हे अयोध्या-पति राजीवनेत्र रघुराज, हे अनन्त गुणों से सम्पन्न जगन्मोहन, हे महाराज, आपने यह क्या किया ? आप अपने कोमल चरणों से चौदह वर्ष वन और पर्वत में भ्रमण करते रहे। आपने मेरे कारण बहुत शोक करते हुए अत्यधिक परिश्रम किया। मेरे निमित्त बालि को मार डाला और मेरा ध्यान रखा। समुद्र पर सेतु बनवाकर सुबेल नामक स्थान पर आप आ गये। परन्तु अन्तिम समय ऐसा काम करना आपके लिए उचित नहीं है। हे अयोध्या-पति, आपके बिना मुझे अब यहाँ से कौन छुड़ाएगा ? हे प्रभु, आप मुझे विदेश में छोड़कर चले गये, अब कहाँ से किस तरह मिलना होगा ? हे शेष के अवतार लक्ष्मणजी, तुम बन्धु को छोड़कर कैसे गये ? चौदह वर्ष वन में रहते हुए तुम्हारी आज्ञा का पालन किया, परन्तु अन्त में सेवा चूक गयी। जब भरत और कौशल्याजी आपसे पूछेंगे; तब तुम क्या उत्तर दोगे ? सूर्यकुल में अब दोष लग गया है। इस प्रकार वह विलाप कर रही थी। सीता के इस प्रकार रोते रहने पर समस्त पशु-पक्षी, वृक्ष, पाषाण रोने लगे।

रावण ! मेरे सिरसे पतिके सिरका और मेरे शरीरसे उनके शरीरका संयोग करा दो। इस प्रकार मैं अपने महात्मा पतिकी गतिका ही अनुसरण करूँगी। मेरे प्रिय का वध कर अब मुझे ही बताने आया है, दुष्ट। सीता ने चीत्कार किया, मेरा भी वध कर दे। चला अपना चन्द्रहास खड्ग कर दे मेरा भी सिर धड़ से अलग।

हठ छोड़ो, सीते ! रावण का स्वर कोमल हो गया, मेरे पास तुम्हारे लिए मृत्यु नहीं, जीवन का सुख और भोग है। मुझे अंगीकार करो। मुझ जैसा स्वामी पाकर तुम धन्य हो जाओगी।

लगा, जैसे उसकी बात ने सीता के कानों में प्रवेश ही नहीं किया। वह वैसे ही बिलख-बिलखकर रो रही थीं, तुझसे नहीं होता तो ला मुझे दे अपना खड्ग। मैं स्वयं आत्मघात कर लूँगी।

तुम इस वय में मरने के लिए नहीं बनी हो। रावण बोला, एक बार रावण के प्रेम का आस्वाद लो, फिर कभी मरना नहीं चाहोगी।

सहसा सीता ने बिलखना बंद कर दिया; कानों पर से अपनी हथेलियाँ हटा लीं। उन्होंने सीधे रावण की ओर देखा। उनकी आँखों में अब नमी नहीं थी। नमी जमकर कठोर हो गई थी। चेहरे पर भी एक दृढ़ संकल्प था, आज तक तुम एक शस्त्र की माँग तो पूरी नहीं कर सके, लंकेश्वर। अपनी ओर से जो उपहार तुम लाए, वे मुझे स्वीकार्य नहीं थे। पर आज जो भेंट लाए हो, वह मुझे ग्राह्य है। यदि तुमने सत्य ही राम का वध कर दिया है तो मेरे प्रिय का सिर मुझे दे दो। मरने से पूर्व एक बार मैं उनके दर्शन कर लूँ। सीता की आँखों में पुन: अश्रु आ गए थे। रावण की आँखें फट गईं- किस मिट्टी की बनी है यह स्त्री ? ऐसी स्त्री उसने सचमुच पहले कभी नहीं देखी।

जब सीता इस तरह विलाप कर रही थीं, उसी समय वहाँ रावणकी सेनाका एक राक्षस हाथ जोड़े हुए अपने स्वामीके पास आया। उसने आर्यपुत्र महाराजकी जय हो कहकर रावणका अभिवादन किया और उसे प्रसन्न करके यह सूचना दी कि सेनापति प्रहस्त पधारे हैं। प्रभो। सब मन्त्रियोंके साथ प्रहस्त महाराजकी सेवामें उपस्थित हुए हैं। वे आपका दर्शन करना चाहते हैं, इसीलिये उन्होंने मुझे यहाँ भेजा है। क्षमाशील महाराज। निश्चय ही कोई अत्यन्त आवश्यक राजकीय कार्य आ पड़ा है, अत: आप उन्हें दर्शन देनेका कष्ट करें।

राक्षसकी कही हुई यह बात सुनकर दशग्रीव रावण अशोकवाटिका छोड़कर मन्त्रियोंसे मिलनेके लिये चला गया।

रावणके वहाँसे निकलते ही वह सिर और उत्तम धनुष दोनों अदृश्य हो गये।

प्रतिरावण हँस रहा था, स्वयं को बहुत चतुर समझते हो, राक्षसराज। यहाँ तुम्हारी माया भी नहीं चलेगी। माया वहाँ चलती है, जहाँ दुर्बलता होती है। और दुर्बलता तुममें है, सीता में नहीं।

महामहालय में मंदोदरी रावण की प्रतीक्षा कर रही थी। मंत्रियों से मिलने से पूर्व रावण को उससे मिलना पड़ा।

नाथ। क्या सोचा है आपने ? किस विषय में ? सीता को लौटाने के विषय में ?

रावण ने घूरकर मंदोदरी को देखा, उस विषय में तुमसे बहुत पहले निश्चित हो चुका है कि सीता के साथ मेरा व्यवहार क्या होगा।

किंतु उस संधि को आप भंग क्यों कर रहे हैं- आज आप सीता से मिलने के लिए अकेले क्यों गऐ थे ? मंदोदरी बोली, और फिर राम के ससैन्य आ पहुँचने से परिस्थितियाँ बदल नहीं गईं क्या ?

सूचना मिल गई तुम्हें। रावण ने दाँत पीस लिये, मुझसे अच्छे गुप्तचर तो तुम्हारे पास है।

गुप्तचर आपके भी बुरे नहीं हैं। मंदोदरी शांत स्वर में बोलीं, किंतु आपकी मदांधता आपको सत्य सुनने नहीं देती।

रानी ! प्रमाण मिल गया न। मंदोदरी वक्रता से मुसकराई, आप मेरे मुख से निकला सत्य नहीं सुन सकते, तो गुप्तचरों से क्या सुनेंगे।

मंदोदरी ! रावण कठोर स्वर में बोला, अपनी जिह्वा को नियंत्रण में ही रखो। ऐसा न हो कि मुझसे कुछ अवांछित हो जाए।

धमकाने का प्रयत्न मत कीजिए। मंदोदरी का स्वर दृढ़ हो गया, यदि आप अपनी पत्नी की हत्या कर राम पर विजय प्राप्त करने की बात सोच रहे हैं, तो गलत सोच रहे हैं। आपके तनिक से दुर्व्यवहार से आपका सगा भाई आपके शत्रु से मिल गया है। आपकी आँखें अब भी नहीं खुलीं क्या ? मंदोदरी रुकी, आपको पता भी है कि लंका में क्या हो रहा है ? आप कटु सत्य नहीं सुन सकते, इसलिए कोई मंत्री, कोई गुप्तचर आपको ठीक सूचना देने का साहस नहीं करता।

क्या हो रहा है लंका में ? लंका नगरी की प्राचीर के बाहर रहने वाले समस्त निर्धन वानर-अवानर श्रमिक अपनी छेनी-हथौड़ी के साथ राम से जा मिले है। जो लंका में निर्माण करते थे, अब वे उसका विध्वंस करेंगे।

श्रमिकों के पलायन से डर गई हो ? रावण हँसा, युद्ध सैनिक लड़ता है, श्रमिक नहीं।

जानती हूँ। पर क्या आप जानते हैं कि श्रमिक काम न करें तो सैनिक लड़ नहीं सकता। मंदोदरी का स्वर कटु हो गया, और बात इतनी ही नहीं है। लंका के भीतर इतनी बड़ी संख्या में रहने वाले निर्धन लोग, राम की सेना के दबाव में घबराई हुई लंका में या तो लूट-पाट मचाने की तैयारी में हैं, या परकोटा फाँदकर राम के पक्ष में जा मिलने की।

वे ऐसा नहीं कर सकते। रावण अविश्वास से बोला, वे यहाँ के नागरिक हैं। लंका उनकी अपनी मातृभूमि है।

मंदोदरी उपहास करती हुई हँस पड़ी, आज याद आया है आपको कि वे लंका के नागरिक हैं। जब उनके नंग-भूखे बच्चे बिना भोजन, आवास, शिक्षा और औषध के या तो पशुओं के समान जी रहे थे या मर रहे थे- तब आपने उन्हें नागरिक माना था क्या उसने घूरकर रावण को देखा, और जो आपके नागरिक थे, वे इसलिए थे, क्योंकि लंका में उनके लिए सुख-सुविधा थी, शांति और सुरक्षा थी। सैनिक आक्रमण जैसी आपत्ति बुलाने वाले राजा के नागरिक बनकर वे नहीं रहना चाहते। वे इस प्रयत्न में हैं कि किसी प्रकार वे लंका से निकलकर सागर-तट पर पहुँच जाएँ और अपने परिवार और धन के साथ इस संकटग्रस्त क्षेत्र से दूर निकल जाएँ। आपको पता है, आज लंका में स्वर्ण-मुद्राओं में भी एक दिन के लिए रथ नहीं मिल रहा। किसी ने आपको बताया कि लंका का प्रत्येक नागरिक घबराया हुआ है कि एक वानर आया था तो लंका को अग्निसात् कर गया था; आज वानर-सेना आई है तो क्या करेगी ?

तुम क्या चाहती हो ? युद्ध टालने के लिए सीता लौटा दीजिए। तुम मेरा पराभव चाहती हो। रावण बोला, यह नहीं होगा। रावण जाने के लिए मुड़ गया। विदेहनन्दिनी सीताको मोहमें पड़ी हुई देख सरमा विभीषण की पत्नी उनके पास उसी तरह आयी, जैसे प्रेम रखनेवाली सखी अपनी प्यारी सखीके पास जाती है। सरमाने सखी सीताको देखा। उनकी चेतना नष्ट-सी हो रही थी। जैसे परिश्रमसे थकी हुई घोड़ी धरतीकी धूलमें लोटकर खड़ी हुई हो, उसी प्रकार सीता भी पृथ्वीपर लोटकर रोने और विलाप करनेके कारण धूलिधूसरित हो रही थीं। मिथिलेशकुमारी। राक्षसराज रावण जिस कारण यहाँसे घबराकर निकल गया है, उसका भी मैं वहाँ जाकर पूर्णरूपसे पता लगा आयी हूँ। भगवान् श्रीराम अपने स्वरूपको जाननेवाले सर्वज्ञ परमात्मा हैं। उनका सोते समय वध करना किसीके लिये भी सर्वथा असम्भव है। पुरुषसिंह श्रीरामके विषयमें इस तरह उनके वध होनेकी बात युक्तिसंगत नहीं जान पड़ती।

सीते ! श्रीमान् राम सुविख्यात धर्मात्मा हैं। उनमें महान पराक्रम है। वे भाई लक्ष्मणकी सहायतासे अपनी तथा दूसरेकी भी रक्षा करनेमें समर्थ हैं। नीतिशास्त्रके ज्ञाता और कुलीन हैं। उनके बल और पौरुष अचिन्त्य हैं। वे शत्रुपक्षके सैन्यसमूहोंका संहार करनेकी शक्ति रखते हैं। शत्रुसूदन श्रीराम कदापि मारे नहीं गये हैं। रावणकी बुद्धि और कर्म दोनों ही बुरे हैं। वह समस्त प्राणियोंका विरोधी, क्रूर और म ायावी है। उसने तुमपर यह मायाका प्रयोग किया था (वह मस्तक और धनुष मायाद्वारा रचे गये थे।)

अब तुम्हारे शोकके दिन बीत गये। सब प्रकारसे कल्याणका अवसर उपस्थित हुआ है। निश्चय की लक्ष्मी तुम्हारा सेवन करती हैं। तुम्हारा प्रिय कार्य होने जा रहा है। उसे बताती हूँ, सुनो।

श्रीराम वानरसेनाके साथ समुद्रको लाँघकर इस पार आ गये हैं। उन्होंने सागरके दक्षिणतटपर पड़ाव डाला है।

मैंने स्वयं लक्ष्मणसहित पूर्णकाम श्रीरामका दर्शन किया है। वे समुद्रतटपर ठहरी हुई अपनी संगठित सेनाओंद्वारा सर्वथा सुरक्षित हैं।

रावणने जो-जो शीघ्रगामी राक्षस भेजे थे, वे सब यहाँ यही समाचार लाये हैं कि श्रीरघुनाथ समुद्रको पार करके आ गये।

विशाललोचने। इस समाचारको सुनकर यह राक्षसराज रावण अपने सभी मन्त्रियोंके साथ गुप्त परामर्श कर रहा है।

भीरू। यह भयानक भेरीनाद युद्धके लिये तैयारीकी सूचना दे रहा है। मेघकी गर्जनाके समान रणभेरीका गम्भीर घोष तुम भी सुन लो।

जहाँ-तहाँसे युद्धके लिये संनद्ध हुए सहस्त्रों सैनिक दौड़े चले आ रहे हैं। सारी सड़कें अद्भुत वेषमें सजे और बड़े वेगसे गर्जना करते हुए सैनिकोंसे उसी तरह भरती जा रही हैं जैसे जलके असंख्य प्रवाह सागरमें मिल रहे हों।

हाथियोंपर बजते हुए घण्टोंका गम्भीर घोष सुनो, रथोंकी घर्घराहट सुनो और हिनहिनाते हुए घोड़ों तथा भाँति-भाँतिके बाजोंकी आवाज भी सुन लो। हाथोंमें हथियार लिये रावणके अनुगामी राक्षसोंमें इस समय बड़ी घबराहट है और शोकका निवारण करनेवली लक्ष्मी तुम्हारी सेवामें उपस्थित हो रही है।

तुम्हारे पति कमलनयन श्रीराम क्रोधको जीत चुके हैं। उनका पराक्रम अचिन्त्य है। वे दैत्योंको परास्त करनेवाले इन्द्रकी भाँति राक्षसोंको हराकर समराङ्गणमें रावणका वध करके तुम्हें प्राप्त कर लेंगे। शत्रु रावणका संहार हो जानेपर मैं शीघ्र ही तुम-जैसी सती-साध्वीको यहाँ पधारे हुए श्रीरघुनाथकी गोदमें समोद बैठी देखूँगी। अब शीघ्र ही तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा। मिथिलेशकुमारी। समराङ्गणमें शीघ्र ही रावणका वध करके सुख भोगनेके योग्य श्रीराम सफलमनोरथ हो तुझ प्रियतमाके साथ मनोवाञ्छित सुख प्राप्त करेंगे।

जैसे पृथ्वी उत्तम वर्षासे अभिषिक्त होनेपर हरी-भरी खेतीसे लहलहा उठती है, उसी प्रकार तुम महात्मा श्रीरामसे सम्मानित हो आनन्दमग्न हो जाओगी। हे सखी। मुझमें यह साहस और उत्साह है कि मैं श्रीरामके पास जाकर तुम्हारा संदेश और कुशल-समाचार निवेदन कर दूँ और फिर छिपी हुई वहाँसे लौट आऊँ। निराधार आकाशमें तीव्र वेगसे जाती हुई मेरी गतिका अनुसरण करनेमें वायु अथवा गरुड़-भी समर्थ नहीं हैं।

सरमे ! तुम आकाश और पाताल सभी जगह जानेमें समर्थ हो। मेरे लिये जो कर्तव्य तुम्हें करना है, उसे अब बता रही हूँ, सुनो और समझो। यदि तुम्हें मेरा प्रिय कार्य करना है और यदि इस विषयमें तुम्हारी बुद्धि स्थिर है तो मैं यह जानना चाहती हूँ कि रावण यहाँसे जाकर क्या कर रहा है ? शत्रुओंको रुलानेवाला रावण मायाबलसे सम्पन्न है। वह दुष्टात्मा मुझे उसी प्रकार मोहित कर रहा है, जैसे वारुणी अधिक मात्रामें पी लेनेपर वह पीनेवालेको मोहित (अचेत) कर देती है। मैं सदा उससे उद्विग्न और शमित रहती हूँ। मेरा चित्त स्वस्थ नहीं हो पाता। मैं उसीके भयसे व्याकुल होकर अशोकवाटिकामें चली आयी थी।

यदि मन्त्रियोंके साथ उसकी बातचीत चल रही है तो वहाँ जो कुछ निश्चय हो अथवा रावणका जो निश्चित विचार हो, वह सब मुझे बताती रहो। यह मुझपर तुम्हारी बहुत बड़ी कृपा होगी। सखी। यहाँ सुखसे बैठकर सारी बातें ठीक-ठीक बताओ। उस क्रूर एवं दुरात्मा रावणने क्या निश्चय किया।

इस प्रकार बूढ़े मन्त्रियों तथा माताके बहुत समझानेपर भी वह तुम्हें उसी तरह छोड़नेकी इच्छा नहीं करता है, जैसे धनका लोभी धनको त्यागना नहीं चाहता है। मिथिलेशकुमारी। वह युद्धमें मरे बिना तुम्हें छोड़नेका साहस नहीं कर सकता। मन्त्रियोंसहित उस नृशंस निशाचरका यही निश्चय है। रावणके सिरपर काल नाच रहा है। इसलिये उसके मनमें मृत्युके प्रति लोभ पैदा हो गया है। यही कारण है कि तुम्हें न लौटानेके निश्चयपर उसकी बुद्धि सुस्थिर हो गयी है। वह जबतक युद्धमें राक्षसोंके संहार और अपने वधके द्वारा (नष्ट) नहीं हो जायगा; केवल भय दिखानेसे तुम्हें नहीं छोड़ सकता।

सीते ! इसका परिणाम यही होगा कि भगवान् श्रीराम अपने सर्वथा तीखे बाणोंसे युद्धस्थलमें रावणका वध करके तुम्हें अयोध्याको ले जायँगे। सीता बोली- हे सरमा रानी, तुम धन्य हो, धन्य हो। फिर उसने उसे दृढ़तापूर्वक हृदय से लगा लिया। वह फिर बोली, अरे माँ, तुम तो मेरे लिए इस शोक-सागर में नाव के समान हो गयी हो। इसके अतिरिक्त तुम असुरों की माया समझ सकती हो। तुमने मुझे अभयदान दिया है। फिर सीता ने उसे आशीर्वाद दिया- तुम लंका की रानी बनोगी। समय की कठिनाई को जानकर तुम तत्क्षण आ गयी और मुझे तुमने महादु:ख में से मुक्त कर दिया है।

बधाई हो, बहन। सरमा ने निकट आते ही धीरे से कहा, राम अपनी सेना सहित सागर पार कर आए हैं। विभीषण उनके साथ हैं। आर्य राम ने मेरे प्राणनाथ को लंकाका राजाधिराज घोषित कर, उनका राजतिलक कर दिया है।

पर... पर क्या ? प्रात: तुम्हारा जेठ कह गया है कि उसने राम का वध कर दिया है।

मेरा जेठ। सरमा दबे स्वर में हँसी, वानर सेना के आ जाने से घबरा गया होगा बेचारा। उसी घबराहट में, शस्त्र से राम को जीतने के स्थान पर, मिथ्या बकवाद से सीता को जीतने चला आया। अभी युद्ध आरंभ नहीं हुआ। राम पूर्णत: सकुशल हैं और युद्ध की तैयारी में संलग्न हैं। सरमा एक क्षण के लिए रुककर बोलीं, रावण और लंका की स्थिति यह है, मेरी बहना ! कि भाई को शत्रु पक्ष से लड़ने आया देख, रावण ने हम माँ-बेटी पर सैनिक पहरा बैठा दिया है। हमारा प्रासाद सैनिक अवरोध में है। किंतु लंका में यह तथ्य भी बहु-प्रचारित है कि जिसके एक वानर ने आकर राजाधिराज के पुत्र का वध कर, अशोक वाटिका उजाड़, लंका जला दी थी, उसी राम ने विभीषण को लंकापति घोषित किया है। युद्ध का परिणाम अभी अनिश्चित है; किंतु यदि विजय राम की हुई तो विभीषण लंकापति होंगे। अत: उनके परिवार के साथ कठोर व्यवहार करने वाला लंका में सकुशल नहीं रह पाएगा। इसीलिए सैनिक अवरोध होने पर भी मैं अशोक वाटिका जैसे निषिद्ध स्थान पर आने में सफल हो गई हूँ... हाँ। लंका से बाहर निकलना मेरे लिए भी असंभव है।

तुम्हें भय नहीं लगता, बहन ? पूर्ण निर्भय तो नहीं हो सकती। सरमा बोली, किंतु भय भी कब तक करूँ अब तो जो होना होगा, वह होगा। तुम्हारा और मेरा भाग्य अब एक ही है- डूबेंगे तो एक साथ, तरेंगे तो एक साथ।

ठीक कहती हो, बहन। सीता मुसकरा पड़ीं, किंतु लंका की प्रजा क्या सोचती है ?

शोषित जनता राम की सेना का स्वागत करने को तैयार बैठी है। शोषक जन शांतिप्रियता के नाम पर लंका से निकल भागने के अवसर की खोज में हैं। रावण पर उसके परिवार के भीतर और बाहर से अनेक प्रकार के दबाव पड़ रहे हैं कि वह सीता को लौटाकर राम से समझौता कर ले। किंतु वह कामासक्त है। तुम्हें लौटाएगा नहीं। युद्ध होगा।

जब रावण का इतना विरोध है तो लड़ेगा कौन ?

सेना लड़ेगी। सरमा का स्वर बाहर आते कोलाहल में डूब गया, देखो, यह है सैनिक अभियान की तैयारी। रावण ने अपने सैनिकोंकी तथा सेनापतियों को असाधारण सुविधाएँ दे रखी हैं। जब-जब राक्षस सेनाएँ बाहर गईं, उन्हें लूटपाट में अपार धन तथा सुंदरियाँ मिली हैं। रावण ने उन्हें लूटने अथवा अत्याचार करने से कभी मना नहीं किया। लंका की सेना ने कभी कष्ट नहीं पाया। विलास के साधनों में आकंठ डूबी इस सेना के मस्तिष्क को ताले लगे हुए हैं। न्याय-अन्याय का उसको पता नहीं। अच्छे-बुरे का उन्हें ज्ञान नहीं। वे या तो युद्ध करते हैं या भोग। किंतु वे सुविधापूर्वक लड़ने के अभ्यस्त हैं। कठिन परिस्थितियों में वे लड़ नहीं सकते। सहसा सरमा कुछ रुककर बोली, अच्छा मैं चलूँ। त्रिजटा संकेत कर रही है। शायद कोई आ रहा है।

सीता के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना, सरमा जल्दी-जल्दी पग बढ़ाती हुई वाटिका से निकल गई।

राजनन्दिनी। आप इतनी चकित, आर्त क्यों हैं ? हम राक्षसोंकी मायासे सावधान रहें। विभीषणकी पत्नी सरमा उद्यानमें आ गयी थी। दूरसे, छिपकर दशग्रीवकी दुष्टता देख ली थी उसने। रावणके जानेपर समीप आकर उसने पद-वन्दना करके कहा- मैं अभी दर्शन करके आयी हूँ रजत शिखरसे। मेरे स्वामीके साथ वे आपके सर्वेश्वर आराध्य सकुशल हैं। समुद्रके इस पार सुबेल-शिखरपर उनका सैन्य शिविर है। आपने ध्यान दिया कि राक्षसेश्वर यहाँसे उतावला लौटा है।

आप भी राक्षसोंकी असत्य बातोंमें आ जाती हैं ? श्रीराम पर सोते समय आक्रमण सम्भव है ? आपने ही तो मुझसे कहा कि लक्ष्मण कभी निद्रा नहीं लेते। सरमाने तनिक स्मितपूर्वक कहा- यह आपने जो देखा था, वह मायासे निर्मित था। भयका कारण तो लंकेश्वरके लिए उपस्थित है। वे अपने सेनापतियोंके बुलानेसे भागे गये हैं यहाँसे।

अच्छा, यदि श्रीराम, सुग्रीव, हनुमान मार ही दिये गये हैं तो लमामें यह किससे युद्धका उद्योग हो रहा है ? सरमाने उसी समय पुरीमें उठते कोलाहलकी ओर ध्यान दिलाया- यह भेरी घोष गज घण्टोंकी ध्वनि, रथोंका घर्घरनाद और सैनिकोंका कोलाहल इस पुरीमें इतना क्यों है? आप आज्ञा दो तो मैं अदृश्य रहकर आपके आराध्यका दर्शन करके आपको लौटकर समाचार दे सकती हूँ। सरमा प्रणाम करके चली गयीं।

इधर मन्दोदरी व्याकुल होकर विचार करने लगी दूसरा वानर सुग्रीव उल्कापात बनकर हमारे महाराज पर टूट पडा। क्या-क्या अनहोनी हो रही है ? जिस प्रकार अदृश्य दिशा से एक बाण आया और मेरे कान के कर्णफूल कुंडल गिरा दिया। महाराज का मुकुट धूल-धूसरित हो गया। महाराज दम भरते है कि हमारी माया शक्ति से कोई पार नहीं पा सकता। यह लक्षण किस बात का संकेत है। महाराज को सन्मति पर लाने का क्या उपाय करूँ। तभी आकर दासियों ने कहा आपके पिताश्री महाराज मय लंका का पुनरुद्धार करने आये है। उन्हें कहिये महाराज दशानन को समझाये। महाराज उनकी बात का आदर करेंगे।

मन्दोदरी बोली- ठीक है। मैं अपने पिताश्री का आश्रय लेकर बात करूँगी। मय दानव आये उसी समय मय दानव रावण के अन्त:पुर में आये और बोले पुत्री मन्दोदरी। कितनी अधीर हो रही है। मन्दोदरी बोली- पिताजी आप सब कुछ जानते हुए भी अन्जान बन रहे है। एक के कारण सर्वनाश की घड़ी आ गयी है। मय दानव बोला- बेटी उस स्त्री का कोई दोष नहीं है। मन्दोदरीने कहा- हां दोष तो मेरे भाग्य का है, दोष तो मेरे स्वामी का है परन्तु उन्हें अनीति के रास्ते से चलने से रोक नहीं सकेंगे क्या ? मयदानव बोले- तुम्हारा पति कोई नई रीति तो कर नहीं रहा है बेटी। वो तो हमारे दानव समाज की पुरानी परम्परा है जिसकी जितनी अधिक रानियाँ होंगी वह उतना ही अधिक वैभवशाली और पराक्रमी कहलाया जायेगा। यह तो प्रतिष्ठा की निशानी है।

मन्दोदरी बोली- लंकेश्वर के महल में कितनी भी रानियाँ रहें उनसे मुझे कोई विरोध नहीं। मय ने कहा- तो क्या सीतासे है ? मन्दोदरी बोली- नहीं, सीता से भी नहीं। यदि सीता लंकेश्वर को इच्छा से स्वीकार कर लें तो मैं उसे सगी बहन की भाँति प्यार करूँगी। यदि वह मेरे स्वामी को सुख दे सके तो मैं अपने प्राण भी उस पर न्यौछावर करूँगी। मयदानव ने कहा- तो फिर बेटी यह संताप क्यों ? मन्दोदरी बोली- पिताजी सीता काल निशा बनकर आई है। वो मेरी सौत नहीं मेरे पति की मौत बन कर आई है। आप की बेटी का वैधव्य है सीता। यदि आप अपनी पुत्री के ललाटपर सौभाग्य सिन्दूर बनाये रखना चाहते है तो अपने जामाता के मन से सीता का मोह निकाल दीजिये। मय बोला- यह भय, यह आशंका, यह चिन्ता इस कदर तुम्हारे मन में घर कर गयी है इस कारण तुम इतनी तड़फ रही हो। मन्दोदरी बोली- कारण एक हो तो बताऊँ। मैं अन्दर की पीड़ा को व्यथा को कैसे बताऊँ ? जिस दिन से सीता को हर कर लाये हैं एक दिन भी शान्ति से नहीं बीता है ? अनर्थ और अमंगल हो रहे है, विनाश के बवंडर उठ रहे है, भूचाल दिन-प्रतिदिन लंका को निगलने आगे बढ़ा आ रहा है। जिन्हें साधारण वनवासी तुच्छ समझ रहे थे उन्होंने सृष्टि का सबसे असम्भव कार्य कर डाला। समुद्र को बाँधने की कभी किसीने कल्पना भी की थी ? पिताजी एक वानर के द्वारा जली हुयी खण्डहर बनी लंका का पुनर्निर्माण तो आपने कर दिया परन्तु मेरे पति के शरीर में नये प्राण भी आप डाल सकेंगे क्या ? बोलिये पिताजी बोलिये ?

मय दानव राजने कहा- तेरे उमडते हुये गहरे शोक ने मुझे अशान्त कर दिया है। मैं प्रयत्न करूँगा तेरे पति को सन्मार्ग पर ला सकूं उसके हठ को मिटा सकूं।

राक्षसराज रावणने अपने उन भयानक मन्त्रियोंके साथ बैठकर रामके प्रति किये जानेवाले तत्कालोचित कर्तव्यका निश्चय किया। रावण ने अपनी राजसभा में आपतिकाल की घोषणा कर दी आमोद-प्रमोद ऐश्वर्य के साधन आज से समाप्त किये जाते है। आदेश का तत्काल पालन हो। राजसभा में सिर्फ विशेष मन्त्री, सैन्य संचालन करनेवाले अधिकारी व विशेष गुप्तचर ही उपस्थित रहे। अन्य सभी सर्व साधारण सदस्यों के लिये उपस्थिति आवश्यक नहीं है। आर्यावृत से आये हुए एक दुस्साहसी मानव ने कुछ वानरों को लेकर लंका पर चढ़ाई करने का साहस कर लिया है। तब नाना माल्यवंत बोले- लंकेश युद्ध को लंका के द्वारपर लाने का दायित्व क्या उस मानव पर ही है, क्या हम यह विचार नहीं कर सकते यदि सीता को लौटाने से युद्ध टल जाएं तो क्यों नहीं सीता को लौटा दें ? जो युद्ध का वास्तविक कारण है हमें उस पर विचार करना चाहिये महाराज। तब इन्द्रजित बीचमें बोल उठा, नहीं। केवल निवारण पर ही विचार किया जायेगा। इस प्रकार हमारी धरती पर आये कुछ वानरों और मानवों को उनके दुस्साहस का दण्ड देकर उन्हें खदेड दिया जाये बस इसी बात की योजना बनानी होगी। लंकेश्वर की आलोचना अपराध मानी जायेगी। मूल विषय से हठकर और कोई बात न की जाये। हम व्यर्थ में तर्क-वितर्क में समय गंवाते रहें और वो सागर से उठकर हमारे सिरपर आ बैठे। हमें ऐसी नीति अपनानी चाहिये उन रैंगते हुए सपोलों के फन इसी वक्त कुचल दिये जाये।

रावण बोला-इन्द्रजीत ने सेनापति के पद के अनुकूल ही बात कही है। पैर निकलना ही चिटियों के प्राण निकलने का संकेत है। महाराज चिटियों को मसल डालने की आज्ञा प्रदान करेंगे। तब रावण बोला- उसका समय भी आ रहा है, परन्तु हमें अपनी व्यूह रचना के अनुसार परकोटे में ही रहना चाहिये। सर्वोच्च सेना अध्यक्ष का पद युवराज इन्द्रजीत ही सम्हाले रहेंगे। इन्द्रजित ने जिन युद्धों का संचालन किया है हमारी सदा जय ही रही है।

सभामें आकर उसने मन्त्रियोंसे पूछा कि शत्रुके साथ किस प्रकारसे युद्ध करना होगा ? मन्त्री कहने लगे- हे राक्षसोंके नाथ। हे प्रभु। सुनिये, आप बार-बार क्या पूछते हैं ?

कहिये तो ऐसा कौन-सा बड़ा भय है, जिसका विचार किया जाय ? भयकी बात ही क्या है ? मनुष्य और वानर-भालू तो हमारे

भोजन की सामग्री हैं। कानोंसे सबके वचन सुनकर रावणका पुत्र प्रहस्त हाथ जोड़कर कहने लगा- हे प्रभु। नीतिके विरुद्ध कुछ भी नहीं करना चाहिये, मन्त्रियोंमें बहुत ही थोड़ी बुद्धि है।

ये सभी मूर्ख खुशामदी मन्त्री ठकुरसुहाती मुँहदेखी कह रहे हैं। हे नाथ। इस प्रकारकी बातोंसे पूरा नहीं पड़ेगा। एक ही बंदर समुद्र लाँघकर आया था। उसका चरित्र सब लोग अब भी मन-ही-मन गाया करते हैं स्मरण करते हैं।

उस समय तुमलोगोंमेंसे किसीको भूख न थी ? बंदर तो तुम्हारा भोजन ही हैं, फिर नगर जलाते समय उसे पकड़कर क्यों नहीं खा लिया? इन मन्त्रियोंने स्वामी आप को ऐसी सम्मति सुनायी है जो सुननेमें अच्छी है पर जिससे आगे चलकर दु:ख पाना होगा।

जिसने खेल-ही-खेलमें समुद्र बँधा लिया और जो सेनासहित सुबेल पर्वतपर आ उतरा। हे भाई। कहो वह मनुष्य है, जिसे कहते हो कि हम खा लेंगे ? सब गाल फुला-फुलाकर पागलोंकी तरह वचन कह रहे हैं।

हे तात। मेरे वचनोंको बहुत आदरसे बड़े गौरसे सुनिये। मुझे मनमें कायर न समझ लीजियेगा। जगत्में ऐसे मनुष्य झुंड-के-झुंड बहुत अधिक हैं, जो प्यारी मुँहपर मीठी लगनेवाली बात ही सुनते और कहते हैं।

हे प्रभो। सुननेमें कठोर परन्तु परिणाममें परम हितकारी वचन जो सुनते और कहते हैं, वे मनुष्य बहुत ही थोड़े हैं। नीति सुनिये, उसके अनुसार पहले दूत भेजिये, और फिर सीताको देकर श्रीरामसे प्रीति मेल कर लीजिये।

यदि वे स्त्री पाकर लौट जायँ, तब तो व्यर्थ झगड़ा न बढ़ाइये। नहीं तो यदि न फिरें तो हे तात। सम्मुख युद्धभूमिमें उनसे हठपूर्वक डटकर मारकाट कीजिये। हे प्रभो। यदि आप मेरी यह सम्मति मानेंगे, तो जगत्में दोनों ही प्रकारसे आपका सुयश होगा। रावणने गुस्सेमें भरकर पुत्रसे कहा- अरे मूर्ख। तुझे ऐसी बुद्धि किसने सिखायी ?

अभीसे हृदयमें सन्देह भय हो रहा है ? हे पुत्र। तू तो बाँसकी जड़में घमोई हुआ तू मेरे वंशके अनुकूल या अनुरूप नहीं हुआ। पिताकी अत्यन्त घोर और कठोर वाणी सुनकर प्रहस्त ये कड़े वचन कहता हुआ घरको चला गया।

हितकी सलाह आपको कैसे नहीं लगती आपपर कैसे असर नहीं करती, जैसे मृत्युके वश हुए रोगी को दवा नहीं लगती। सन्ध्याका समय जानकर रावण अपनी बीसों भुजाओंको देखता हुआ महलको चला गया। सभा विसर्जित कर लंकेश चला गया।

२) अङ्गद-रावण सम्वाद- यहाँ सुबेल पर्वतपर प्रात:काल श्रीरघुनाथ जागे और उन्होंने सब मन्त्रियोंको बुलाकर सलाह पूछी कि शीघ्र बताइये, अब क्या उपाय करना चाहिये ?

अभी वहाँ उस शिखरपर लोग आनन्द-उल्लास मग्न थे और अब वहाँ श्मशान जैसी शान्ति है। श्रीरामको दशग्रीवका दर्प-भङ्ग करके सुख नहीं मिला। वे उठ बैठे, खड़े हो गये। कुछ देर लमाकी ओर देखते रहे। इसके पश्चात् बैठे तो उनका स्वर अत्यन्त खिन्न था। अतिशय कोमल, सहज उदार स्वभाव वे बोले- कल या कुछ दिनोंके अनन्तर इस वैभवशालिनी पुरीकी यही दशा होगी। यहाँ कुलवधुएँ विधवा बनकर, केश खोले रुदन करेंगी। इन स्वर्गोपम सदनोंमें श्मशान जैसी नीरवता रहेगी। दशग्रीवका दर्प, उसका अधर्म रामको यह क्रूर कर्म करनेको विवश कर रहा है।

सुग्रीव ! विभीषण ! जाम्बवन्त ! इस पुरीको बचाया नहीं जा सकता ? श्रीरामका हृदय व्याकुल हो उठा था- सीताको तो आश्वासन है कि मैं मिलूँगा; किंतु जब वीर राक्षस मार दिये जायँगे, उनकी विधवाओंको वह आश्वासन भी नहीं होगा।

देव ! हमारे यहाँ नारीका पुनर्विवाह अधर्म नहीं माना जाता। विभीषणने कुछ दबे स्वरमें ही कहा- किंतु कुछ अवश्य ऐसी सतियाँ निकलेंगी जो सहमरण स्वीकार करेंगी।

कदाचित् ऐसा ही है। राम विभीषण से सहमत प्रतीत हो रहे थे, यदि ऐसा है तो मैं चाहूँगा कि युद्धारंभ से पहले हम रावण को एक चेतावनी और दे दें।

अब चेतावनी किसलिए ? अंगद ने कहा, क्या हमारी सेना का सागर के इस पार उतरना उसके लिए पर्याप्त चेतावनी नहीं है ?

किस रूप में चेतावनी देना चाहते हैं आप ? जांबवान धैर्यपूर्वक बोले, एक चेतावनी वह भी है, जिसकी चर्चा युवराज कर रहे हैं।

इस द्वार पर यदि रावण स्वयं उपस्थित है तो मैं चाहता हूँ कि दूत भेजा जाए, जो उससे कुछ बातें कह आए। राम शांत स्वर में बोले।

विभीषण बोले- महाराज। फिर जो बिना मार के दण्ड के नहीं मानता हो, वह मूर्ख, लम्पट और लंठ ही होगा। हे सीताकान्त सुनिए,

इस प्रकार समय के अनुसार कार्य सिद्ध करना है। जिस प्रकार मन्त्र से नाग वश में आ जाता है, पानी से आग शान्त हो जाती है बुझ जाती है, जिस प्रकार आत्मज्ञान से संसाररूपी सागर को तैर जाएँ, शम और दम से मन को जीत लें, विवेक से काम, क्रोध, मोह जैसे विकारों को जीत लें, भक्ति के बल पर भगवान को प्राप्त कर लें, उसी प्रकार शत्रु को साम, दाम, भेद, दण्ड से वश में कर लेना चाहिए। जिस प्रकार पण्डित विद्वान व्यक्ति सभा में विपक्षियों को व्युत्पत्ति के बल को धारण करके जीत लेता है, जिस प्रकार पत्थर के नीचे हाथ फँस जाए, तो कला चतुराई से उसे निकाल लेना चाहिए, उस प्रकार बुद्धि-बल और चतुराई से शत्रु को जीत लेना चाहिए। इसलिए रावण को निश्चय ही साम, भेद आदि की नीति से समझा दीजिए। अत: जो सुन्दर प्रवीण चतुर शिरोमणि हो, उसे मध्यस्थता करने को भेज दीजिए।

राम बोले- भाई। बतलाओ आगे कैसे बढ़ना है। लंकापति तो चुपचाप बैठा है, कुछ खबर भी नहीं मन में उसने क्या ठान रखा है ? हम तो उसके घर पर आ पहुँचे पर वह युद्धमें नहीं आया है। लंकाके द्वार किसलिए बंद है कुछ इसका भी भेद नहीं मालूम पड़ रहा है। विभीषण ने कहा- सुनिये कृपानिधान। रावण कोई साधारण पुरुष नहीं है, सुजान और बलवान है। लंका के दरवाजे बन्द देखकर यह न समझें कि वह हमसे डरता होंगा। अपने सचिवों के साथ वहाँ भी वो विचार करता होगा। तब हनुमान बोले- अब हम और इन्तजार नहीं कर सकते। हम वृक्षों और पत्थरों से रावण का दुर्ग ढहा देंगे। बात की बात में चुटकी में लंका का द्वार तोड़ प्रलय मचा देंगे। राजभवन को तोड़ेंगे तो निशाचर घबरा जायेगा या तो सीताजी को दे जायेगा या खुद लड़ने आएगा।

तब श्रीराम बोले- महाराज सुग्रीव व विभीषणजी हमारे मन में विचार है कि आक्रमण करने के पहले रावण को एक अवसर दिया जाए इसके पहले की हमारे योद्धा इस सुन्दर नगरी का विध्वंस कर दें। यदि रावण सीता को सम्मान सहित लौटाकर हमारी शरण में आ जाए तो हम उसे क्षमा कर देंगे। लक्ष्मण क्रोधित होकर बोले- उस पापी को क्षमा कर देंगे जिसने जगदम्बा सीता माता का हरण किया। देवों को हानि पहुँचायी, हमारे पितातुल्य महात्मा जटायु का वध कर दिया। नहीं भैया जिसने मेरे देवतुल्य भैया को दु:ख पहुँचाया है वह क्षमा करने योग्य नहीं है। तब श्रीराम बोले- लक्ष्मण शास्त्र कहता है क्षमावान को क्षमाका गुण नहीं त्यागना चाहिए। दया ही वीर की शोभा है। देवगुरु बृहस्पतिने राजनीतिकी शिक्षा देते हुए कहा है निजी क्रोध की अभिव्यक्ति के लिए एक व्यक्ति को पाप का दण्ड देते हुए यदि किसी प्रजा और निर्दोष प्राणियों की विनाश की सम्भावना हो तो वीर पुरुष निज रोष का शमन करके क्षमा के गुण को अपनाते है और शत्रु को अपने पाप के प्रायश्चित करने का अवसर दें यहीं राजधर्म है, यहीं राजनीति है। यह मन्त्रणा धर्म के योग्य भी है और अनुकुल भी। अब प्रश्न यह है कि अब दूत किसे बनाकर भेजा जाए ? दूत ऐसा होना चाहिए जो परम बुद्धिमान, परम वीर भी हो क्योंकि ऐसा शत्रु कभी छल भी कर सकता है।

लक्ष्मण बोले तो फिर हमें हनुमान को भेजना चाहिए। प्रभु श्रीराम बोले- नहीं शत्रु यहीं सोचेगा सारी वानरसेनामें यही एक वीर योद्धा है जिसे हर बार भेजा जा रहा है। दूत ऐसा होना चाहिए जो बेरी के मन का सारा भेद ले आये। सम्भव है शत्रु सुलह करले, तब तो यह विचार सुन्दर है। इस मार काट के युद्ध से पहले उसको समझाना बेहतर है। हनुमन्त को भेजने से रावण अवश्य यहीं समझेगा पुरे युद्ध का आधार यहीं है।

हमको एक प्रयत्न और करना चाहिये। दशग्रीव किसी भी प्रकार यदि समझ सके। श्रीरामका स्वभाव ही शत्रुका भी समट सह पाना नहीं है। वे दूसरेका दु:ख देखकर व्याकुल हो जाते हैं- यदि वह अधर्मका पथ छोड़ दे, उसे क्षमा कर देना सहज है।

दूत यह कहे, राम कुछ सोचते हुए बोले, हम युद्ध को मानव मात्र के लिए एक अभिशाप मानते हैं। हम अकारण हिंसा नहीं चाहते। हम बिना कारण के किसी भी मनुष्य का रक्त बहाना नहीं चाहते, चाहे वह मनुष्य किसी भी जाति अथवा देश का क्यों न हो। लंकावासियों से हमारा कोई विरोध नहीं है, किंतु रावण हमारा अपराधी है। रावण सीता को लौटा दे और अपने अपराधों का दण्ड ग्रहण करने के लिए, स्वयं को न्यायार्थ हमारे सम्मुख प्रस्तुत करें; अन्यथा युद्ध में हुई लंकावासियों की क्षति का दायित्व हम पर नहीं होगा। अपनी शर्तों पर संधि भय का नहीं, शक्ति का प्रमाण है।

तब सुग्रीव ने बाली के पुत्र अंगद की ओर देखा। वह वहाँ बैठा हुआ था। जिस प्रकार रत्नपरीक्षक खोजकर भारी और बहुमोल हीरा निकालता है उस प्रकार उसे देखकर सुग्रीव बोले- हे श्रीरंग, सुनिए। शिष्टतापूर्वक सब प्रकार से मध्यस्थता करने के लिए अंगद को वहाँ भेज दीजिए। वह बल, लक्षणों और गुणों से परिपूर्ण है और दूत-नीति का भी जानकार है। हे राम, जिस प्रकार चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र आदि नौ ग्रहों में सूर्य सर्वाधिक तेजस्वी है, शस्त्रोंमें सुदर्शन सर्वश्रेष्ठ है, सर्पों में जैसा शेषनाग है, पक्षियों में गरुड़ है, उस प्रकार वानरों

में अंगद सर्वाधिक चतुर है।

अंगद परमवीर है, धैर्यवान है और वार्तालाप की चतुराई भी अच्छी तरह समझता है, इसलिए वह एक आदर्श दूत सिद्ध होगा।

अंगद ने राम की ओर देखा- क्या है राम के मन में ? वे सचमुच इस सारी वानर सेना में हनुमान के पश्चात उन्हें ही इतना वीर पुरुष मानते हैं कि ऐसा दायित्व का काम उन्हें सौंप रहे हैं, या वे युद्ध से पहले बालि-पुत्र की अपने प्रति निष्ठा की परीक्षा कर रहे हैं। सहसा अंगद का मन उल्लसित हो उठा। यह हो ही जाए तो अच्छा है, अन्यथा बाद में किसी समय कोई कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। युद्ध की अवधि में यदि अंगद के कारण सेना की कोई क्षति हो जाए तो यह नहीं माना जाए कि वह उसने जान-बूझकर किया है। एक बार युद्ध के पूर्व ही वानर सेना के प्रति उन्हें अपनी निष्ठा प्रमाणित करनी चाहिए। अंगद ने सुना था कि राम से मैत्री स्थापित करने से पूर्व, सुग्रीव ने कई प्रकार से उनकी परीक्षा ली थी। अब बारी राम की थी। वे अंगद की परीक्षा ले रहे थे और एक प्रकार से सुग्रीव की भी। क्या राम के लिए सुग्रीव अपने युवराज को मृत्यु के मुख में धकेल सकेंगे ?

राम बोले- अंगद तुम युवराज हो। हम तुमें पुत्र समान समझते है। लंका में दुश्मन के घर भेजने से डरते है। किष्किन्धा के युवराज होने से दूत का कार्य उचित नहीं है। आपके लिये तो कपि सेना संचालन ही शोभा देता है। क्या यह कार्य आपको स्वीकार है।

तब अंगद सहज ही मुस्करा पड़े और बोले- मैं प्रस्तुत हूँ और सिर नवाया। हे करुणानिधान मेरे सिरपर आशीर्वाद का हाथ रखिये। हे प्रभो। इतने विद्वान और ज्ञानवानों के होते हुए भी आपने मुझे इस योग्य समझा। मेरे धन्य भाग्य है आपने मेरा गौरव बढ़ा दिया हे कृपानिधान। राम बोले- अंगद दूत का दायित्व बहुत बड़ा होता है। शत्रु को भरी सभा में स्वामी का सन्देश सुनाना होता है और अपनी बात से सहमत कराना, अपनी स्वामी की शक्ति बलाबल का इसप्रकार बखान करना कि अपने स्वामी का सम्मान भी बना रहे और सामने सुननेवाले को अपना निरादर भी न लगे। संयम दूत का सबसे बड़ा गुण है।

अंगद बोले- प्रभो। आप जिसके सिरपर हाथ रख दे वो बुद्धि, विवेक, गुण-ज्ञान की खान बन जाता है। राम बोले- तुम क्या उद्देश्य लेकर जा रहे हों इसें भलीभांति समझ लो। रावण सम्मान के साथ सीता को लौटा दें रक्तपात और संहार की स्थिति न आने पायें। यही उद्देश्य है हमारा। तुम हमारी ओर से शान्तिदूत बनकर जाओ हे बालिकुमार। तब अंगद बोले- जिसपर आपकी कृपा हो वह रसातल तक जाकर लड़ सकता है। वह उदयाचल से अस्ताचल तक निर्भय है उसको किसी प्रकार का भय नहीं। मैं लंकामें रावण की राजधानी में जाकर निश्चय ही अपनी धाक जमाऊँगा प्रभो आपका तो प्रताप ही ऐसा है कि पत्थर पानी पर तैरते है। इससे बढ़कर मेरे लिये कोई सम्मान नहीं कि जन से हो कार्य जनार्दन का। आपका युवराज बनने में मेरा कोई मान नहीं घटता है। मैं भी हनुमान के समान आपकी सेवा करने को उत्सुक हूँ। हे मेरे सर्वस्व मुझे आज्ञा दो मैं तुरन्त जानेको इच्छुक हूँ।

यदि आप मुझे अनुमति दें तो मैं रावण को बाँधकर यहाँ लाऊँगा, अथवा लंका को उखाड़कर उलटी करके सागर में फेंक दूँगा।

तब अंगद के वचन सुनकर रघुनाथ प्रसन्न हुए और विशेष अधिकार और बल देकर अंगद के सिर पर हाथ रखा और बोले- हम यह जानते है युवराज तुम सच्चे व्यवहार कुशल हो। बलवान बाप के बेटे हो, सब भाँति समर्थ और सबल भी हो। उस दुराचारी रावण को कुछ धर्मनीति, कुछ राजनीति कुछ अपने बल दिखलाते आना। हे बलवीर जहाँ तक हो सब झगड़ा निपटाते आना।

अङ्गद। तुम्हें कुछ समझाना नहीं है। श्रीरामने अविलम्ब जाम्बवन्तका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया- तुम स्वयं नीतिज्ञ हो। साम, दाम, भेद, दण्ड सबको अपना सकते हो। मेरा काम केवल सीताको पाना नहीं है। श्रुति, साधु, सुरोंकी सुरक्षा समटापन्न न बनी रहे, यह भी ध्यान रखना और उसका हित हो, ऐसा ही प्रयत्न करना।

तुमको बहुत समझाकर क्या कहूँ। मैं जानता हूँ, तुम परम चतुर हो। शत्रुसे वही बातचीत करना जिससे हमारा काम हो और उसका कल्याण हो। सौम्य। कपिप्रवर। दशमुख रावण राज्यलक्ष्मीसे भ्रष्ट हो गया, अब उसका ऐश्वर्य समाप्त हो चला, वह मरना ही चाहता है, इसलिये उसकी चेतना (विचार-शक्ति) नष्ट हो गयी है। तुम परकोटा लाँघकर लमापुरीमें भय छोड़कर जाओ और व्यथारहित हो उससे मेरी ओरसे ये बातें कहो-

निशाचर ! राक्षसराज ! तुमने मोहवश घमंडमें आकर ऋषि, देवता, गन्धर्व, अप्सरा, नाग, यक्ष और राजाओंका बड़ा अपराध किया है। ब्रह्माजीका वरदान पाकर तुम्हें जो अभिमान हो गया था, निश्चय ही उसके नष्ट होनेका अब समय आ गया है। तुम्हारे उस पापका दु:सह फल आज उपस्थित है।

मैं अपराधियोंको दण्ड देनेवाला शासक हूँ। तुमने जो मेरी भार्याका अपहरण किया है, इससे मुझे बड़ा कष्ट पहुँचा है; अत: तुम्हें उसका दण्ड देनेके लिये मैं लमाके द्वारपर आकर खड़ा हूँ।

राक्षस। यदि तुम युद्धमें स्थिरतापूर्वक खड़े रहे तो उन समस्त देवताओं, महर्षियों और राजर्षियोंकी पदवीको पहुँच जाओगे- उन्हींकी भाँति तुम्हें परलोकवासी होना पड़ेगा।

नीच निशाचर। जिस बलके भरोसे तुमने मुझे धोखा देकर मायासे सीताका हरण किया है, उसे आज युद्धके मैदान में दिखाओ।

यदि तुम मिथिलेशकुमारीको लेकर मेरी शरणमें नहीं आये तो मैं अपने तीखे बाणोंद्वारा इस संसारको राक्षसोंसे सूना कर दूँगा।

राक्षसोंमें श्रेष्ठ ये श्रीमान धर्मात्मा विभीषण भी मेरे साथ यहाँ आये हैं, निश्चय ही लमाका निष्कण्टक राज्य इन्हें ही प्राप्त होगा।

तुम पापी हो। तुम्हें अपने स्वरूपका ज्ञान नहीं है और तुम्हारे संगी-साथी भी मूर्ख हैं; अत: इस प्रकार अधर्मपूर्वक अब तुम एक क्षण भी इस राज्यको नहीं भोग सकोगे। राक्षस। शूरताका आश्रय ले धैर्य धारण करके मेरे साथ युद्ध करो। रणभूमिमें मेरे बाणोंसे शान्त (प्राणशून्य) होकर तुम पूत (शुद्ध एवं निष्पाप) हो जाओगे। निशाचर। मेरे दृष्टिपथमें आनेके पश्चात् यदि तुम पक्षी होकर तीनों लोकोंमें उड़ते और छिपते फिरो तो भी अपने घरको जीवित नहीं लौट सकोगे।

अब मैं तुम्हें हितकी बात बताता हूँ। तुम अपना श्राद्ध कर डालो- परलोकमें सुख देनेवाले दान-पुण्य कर लो और लमाको जी भरकर देख लो; क्योंकि तुम्हारा जीवन मेरे अधीन हो चुका है।

नीति-विचार कहने पर यदि रावण मान जाए तो ठीक है नहीं तो अंत में यह निश्चय है कि मैं युद्ध करके उसे मार दूँगा।

श्रीराम बोले- दूत का एक और भी कर्तव्य होता है युवराज शत्रु के सामने अपने दल की शक्ति और सेना का वर्णन चतुराई से करें ताकि शत्रु अन्दर ही अन्दर दहल जाये। अङ्गद ने कहा- जिस विश्वास के साथ आप यह भार मुझे सौंप रहे हैं उसे मैं पूरी तरह निभा सकूँ यह आशीर्वाद दीजीये प्रभु। मैं सफल होकर आपके चरणोंमें लौटूँगा। तब अंगद प्रभु के चरणों में प्रणाम करके चले। श्रीराम बोले- जाओ वत्स विजयी भव, यशस्वी भव:। सुग्रीव ने उन्हें समझा दिया यदि उन्हें किसी तरह का संकट जा जायें तो संकेत कर दें।

अंगद जब जाने लगें तब विभीषण ने कहा- अंगद एक संदेश उस हटी दशानन को मेरी तरफ से भी कह देना जिस समय उसने सिंहासन पर से उठकर मुझपर मूर्ख और विद्रोही समझकर पद-प्रहार किया था, अब देखना है कि लंकापुरी की रक्षा किस प्रकार करता है। उस महाभिमानी रावण को यह भलीभाँति बतला देना घर-भर और पूरे परिवार में विभीषण ही रह जायेगा सबका तर्पण करने को। तब राम रघुराय मन-ही-मन हँसने लगे और उसी समय अंगद को विदा करने पूरा कपि समाज उठा।

प्रभुकी आज्ञा सिर चढ़ाकर और उनके चरणोंकी वन्दना करके अंगद उठे और बोले- हे भगवान् श्रीराम। आप जिसपर कृपा करें, वही गुणोंका समुद्र हो जाता है। स्वामीके सब कार्य अपने-आप सिद्ध हैं; यह तो प्रभुने मुझको आदर दिया है जो मुझे अपने कार्यपर भेज रहे हैं। ऐसा विचारकर युवराज अंगदका हृदय हर्षित और शरीर पुलकित हो गया। चरणोंकी वन्दना करके और भगवान्‌की प्रभुता हृदयमें धरकर अंगद सबको सिर नवाकर चले। प्रभुके प्रतापको हृदयमें धारण किये हुए रणबाँकुरे वीर बालिपुत्र स्वाभाविक ही निर्भय हैं।

शान्तिदूत ने शान्ति का सन्देश लेकर राम का नाम लेकर अधर्म, अनीति, असत्य के गढ़ में प्रवेश किया। लंका के द्वार पर सेनापतिने अंगद से कहा दूत को शस्त्रों की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए अपनी गदा यहीं छोड़ दें। अंगद ने अपनी गदा उछाली और अपनी वानर सेना के पास लौटा दी।

महाशक्तियों को यह ध्यान रहें बिन कारण कोई अकाल न मरे जग में और वंश कोई निर्वंश न हो। चाहे कोई भी अनीति में भेद करे यदि राम सरीखा हंस ना हो। पृथ्वी भी धस जाये रसातल में, जो पृथ्वी पर धर्म का अंश ना हो।

दूत को द्वार से प्रवेश करना चाहिये। राम दूत सब सुनते ही द्वारपालों ने द्वार खोल दिये। लंका के द्वार में प्रवेश करते ही रावण के पुत्र अक्षमाली से इसकी भेंट हुयी जो वहाँ खेल रहा था। बातों-बातों में झगड़ा बढ़ गया क्योंकि दोनों ही अतुलनीय बलवान् थे और फिर दोनोंकी युवावस्था भी थी।

अक्षमाली ने अंगद से भौंहें टेढ़ी कर कहा- मेरे आगे से हटता नहीं और मुझे बिना प्रणाम किये चले जा रहा है। इस असभ्यता का स्वाद हो वानरे तुझे अभी चखवाऊँगा। मैं यहाँ का राजकुमार हूँ तेरी बोटी-बोटी नुचवाऊँगा।

यह सुनकर अंगद अँगारा हुये और बोले खबरदार तेरे होठों का अभी तक दूध भी नहीं सुखा है और अपने-आप में सिपहसलार बना

हुआ है। हम जिसके भेजे आए हैं वह स्वामी भूमण्डल का है। आगे से हट हम तुझे क्यों प्रणाम करें। क्या हम पर तेरा कर्जा है। हम बालिराज के बालक हैं जो अपने बल से पूरा था। तू क्या है ? तेरे पिता रावण को तो छ: मास काँख में रखा था। तू उस रामदूत से क्या बेढ़ंगी बातें करता है। हे नादान आँख खोलकर देख आज अंगद से तेरी भेंट हुयी है।

अक्षमाली बोला- बस मौन हो, मुँह को लगा लगाम। आज तेरा सामना हो गया। कभी तेरा नाम भी सुना था। हम राजेश्वर के पुत्र है। तू दासों से भी बद्तर है। हम शेरों से भी बढ़कर है तू स्यारों से भी कमतर है। तू क्या उन्हीं लड़कों का दूत है जो मारे-मारे फिर रहे है। बन-बन दुखियारे फिरते है जिनका राजपाट छुट गया है। जिनकी वह सुन्दर सी नारि, लंका के बंदीगृह में है। उनका गुलाम बनकर बेवकूफ क्यों इस राजनगर में आया है।

तभी अंगद बोले- वाह क्या बात हैं चोर पिता के पुत्र है। भिक्षुक बाबा बनकर चोरी से पर नारि को हर ले आये हो। तारीफ तो तुम्हारी तब थी जब लातें लड़कर शहजोरी से अब हमारा समय आया है ठहरों तुमको दिखलाएंगे। लंका में भीषण सँहार कर सीता माता को ले जाएँगे। हम उनके है जिनकी प्रभुता से पत्थर पानी पर तैरते हैं। सेतु बाँधकर तेरी लंका की राजधानी में आ गये है। जिनका एक छोटासा दूत आकर तुम्हारे भाई अक्षकुमार को मार गया। लंका को भीषण आग लगाकर बेखौफ समुद्र पार गया। जिनका तेजस्वी मुख देखकर तुम्हारी बुवा शूर्पणखा रीझ गयी। वह सती साध्वी लंका में श्रीराम को बोली- मुझसे शादी करके अपनी दासी बनाकर ले चलो। तभी लक्ष्मण ने क्रोधित होकर उसे नकटी बूची करके भेजा। बात ही बात में इस तरह से दोनों वीरों में लड़ाई ठन गयी। तब अक्षमाली ने क्रोधित होकर अपना खाँडा निकाला और क्रोधित होकर अंगद पर खाँडेका प्रहार किया। अंगद ने उस खाँडेका खण्ड-खण्ड कर दिया और राघव का जयजयकार किया। अब तो सब अस्त्र-शस्त्र छूटे मल्लोंकी भाँति भेंट हुयी। अन्त में अंगद ने उसकी कमर तोडी। परभर में पत्थर पर पटक कर उसका प्राणान्त कर दिया।

यह दृश्य देखकर लमापुरी में घर-घर हाहाकार होने लगा। बाजार बन्द होने लगे, नर-नारी भयभीत होने लगे। हाटों, बांटों, घाटों में हर जगह यह बात चली फिर लंका में पहले वाला वानर आ पहुँचा है बजरंगबली। अब अपने-अपने घर को सँभालो यह रण तो मरण समान हुआ। लंकानगरी के जलने का फिर से सब सामान हुआ। सब जगह निशाचर इसी तरह अंगद के बारे में बातें करते थे। सब पर अंगद की ऐसी धाक जमीं कि सब-के-सब अंगद की छाया से डरते थे। जिसपर भी अंगद दृष्टि डालते थे वह भय से सुख जाता था। जिससे भी वह रावण के राजमहल का रस्ता पूछना चाहते थे वह बिना पूछे ही बतला देता था।

श्रीरामके चरणकमलोंका स्मरण करके अंगद रावणकी सभाके द्वारपर गये और वे धीर, वीर और बलकी राशि अंगद सिंहकी-सी ऐंड शान से इधर-उधर देखने लगे।

मैं श्रीरामका दूत दशग्रीव को देखना चाहता हूँ। राजसभाके द्वारपालोंसे अंगद ने कहा तो वह सूचना देने दौड़ गया।

तुरंत ही उन्होंने एक राक्षसको भेजा और रावणको अपने आनेका समाचार सूचित किया। सुनते ही रावण हँसकर बोला- बुला लाओ, देखें कहाँका बंदर है। तब रावण के दूतों ने यह सब देखा और जाकर रावण से सब बखान किया। द्वारपाल ने आकर कहा जय राजेश्वर राज रावण। तपस्वी बच्चोंकी सेना से अंगद नामक एक कपि आया है वह अपने को रामदूत बताता है और कुछ राजसंदेश लेकर आया है। रावण बोला शान्ति का प्रस्ताव लाया है दूत से पहले ही शान्तिदूत भेज दिया। अभी तक तो राम ने चन्द्रहास तलवार की चमक देखी ही नहीं पहले ही डर गया रावण ने जोर से अट्टहास किया।

आज्ञा पाकर बहुत-से दूत दौड़े और वानरोंमें हाथीके समान अंगदको बुला लाये। अंगदने रावणको ऐसे बैठे हुए देखा जैसे कोई प्राणयुक्त सजीव काजलका पहाड़ हो।

भुजाएँ वृक्षोंके और सिर पर्वतोंके शिखरोंके समान हैं। रोमावली मानो बहुत-सी लताएँ हैं। मुँह, नाक, नेत्र और कान पर्वतकी कन्दराओं और खोहोंके बराबर हैं। अत्यन्त बलवान् बाँके वीर बालिपुत्र अंगद सभामें गये, वे मनमें जरा भी नहीं झिझके। अंगदको देखते ही सब सभासद उठ खड़े हुए। यह देखकर रावणके हृदयमें बड़ा क्रोध हुआ। जैसे मतवाले हाथियोंके झुंडमें सिंह नि:शम होकर चला जाता है, वैसे ही श्रीरामके प्रतापका हृदयमें स्मरण करके वे निर्भय सभामें सिर नवाकर बैठ गये।

तब रावण का एक मन्त्री बोला- श्रीमान वहीं वानर होगा जो अभी नगर में आया है। दूतोंने जिसकी बात कही वहीं घर-घर जिसका भय छाया है। क्या काम है उस नटखट मरकट का ? मुँहफट हत्यारे का ? जो द्वार से आते-आते राजदुलारे का हन्ता है। होगा यही

उचित उसको द्वार से सीधे कारागृह में भिजवा दें और सन्ध्या समय ही चौरास्ते पर खड़ा कर सूली पर चढ़वा दें।

मन्त्री का प्रस्ताव सुनकर दशानन क्रोधित हुआ और आँख निकालकर बोला- हे मतिमान आज मतिमन्द मत बन। वह कोई मरकट नहीं है महावीर हैं जिसने राजकुमार का वध किया है। बेहतर यही है कि आदर से हम उसको बुलवायें और उसका स्वागत करें। ऐसे योद्धा कुशल से उसे अपनी ओर मिला लें। अब राजपुत्र की कोई व्यथा मुझे नहीं रहीं वह तो लंका में अपयश का टीका ही था। कायर था, कर्महीन था वानर से लड़कर अन्त पा गया। ऐसे कपुत का क्या रोना। मर गया तो मर गया। राजदूत का वध करना अनुचित है इसलिए यह स्वीकृत मत है उसको राजसभा में आने दो यहीं आदेश न्यायसंगत है। इसप्रकार दशकंठ ने जब आज्ञा दी तो द्वारपाल भली प्रकार से बालिकुमार को ले आये।

रावण की सभा में जब बालिकुमार अंगद आ गया, तो उसे देखकर सब भय को प्राप्त हो गये और वे आपस में विचार करने लगे। एक वानर ने छत्रों और मुकुटों को गिराया था; हनुमान ने नगर को जला डाला था, फिर यह कौन तीसरा वानर आ गया है। यह भी बलवान दिखाई दे रहा है। तब अंगद ने कहा- अरे कोई सुविख्यात पराया व्यक्ति मिलने के लिए आया हो, तो जो आदरपूर्वक बात नहीं पूछती हो, उस सभा को मूर्ख लोगों की सभा समझ लो। ऐसा कहते हुए अंगद रावण के सामने बैठ गया।

रावण ने पूछा- वानर कौन हो तुम, कहाँ से आये हो और क्या सन्देश लेकर आये हो ?

अंगद ने कहा- महाराज राजदरबारों का विधान और शिष्टाचार है कि दूसरे राज्यों से आये हुये राजदूतों का स्वागत करके पहले उसे आसन दिया जाए फिर सम्मानसहित उसका आतिथ्य करके उसका आनेका उद्देश्य पूछा जाए।

रावण बोला- मूर्ख। इतना भी नहीं जानता राजदूत उसे कहते है जिसे किसी राजा ने भेजा हो। जंगल से आये हुये किसी भिखारी के भेजे हुये वानर को राजदूत नहीं कहते।

अंगद बोले- आप राजा की बात करते है लंकेश्वर। मैं जिनका दूत हूँ वो तो राजाओं के भी राजा है। राजराजेश्वर है केवल इस भूमिखंड के नहीं वरन तीनों लोकों के स्वामी है। देवताओं, वेदों और विधि के भी वे ही नायक है। मैं उन्ही त्रिलोकेश्वर श्रीराम का राजदूत हूँ।

रावण बोला- वह हरि है, हर है या ब्रह्मा है। कौन है वो ? जिसके लिये तुम इतने बड़े-बड़े वार्तालाप सुना रहे हो। उस तुम्हारे राम की वास्तविकता इतनी है कि एक भटकता हुआ वनवासी जिसे अपने राज्य से भी निकाल दिया गया है। बताओ उस भिखारी ने क्या सन्देश देकर भेजा है तुम्हे ?

अंगद बोले- महाराज रावण, आपने मेरे स्वामी राज राजेश्वर का अपमान किया है। इसलिये नियमानुसार मुझे इस सभा से चला जाना चाहिये। राजदूत का सम्मान उसके राजा का सम्मान होता है। राजदूत का कर्तव्य होता है वह अपने सम्मान की रक्षा करें। मेरे अपमान का अर्थ होगा मेरे स्वामी राज राजेश्वर श्रीराम का अपमान। इसलिये मेरे लिये दो ही रास्ते है पहला यह कि जहां मुझे सन्मानपूर्वक आसन नहीं दिया तो उस सभा से मैं चला जाऊँ परन्तु जो सन्देश मैं लाया हूँ वह इतना महत्वपूर्ण है कि उसपर लंका, लंकानिवासियों और सारी राक्षस जाति का जीवन-मरण, भविष्य निर्भर है। इसलिये मेरे लिये यही रास्ता है कि मैं इस सभा में अपने लिये एक राज्योचित आसन स्वयं निर्माण कर लूँ। तब सन्मानपूर्वक बैठ कर अपने राजा का सन्देश आप तक पहुँचा सकूँ।

अंगद ने यह कहकर अपने लांगुल का विस्तार कर अपने बैठने का स्थान ऊँचा बना लिया और रावण के सामने जाकर बैठा। रावण के अंग-अंग में आग लग गयी। पूंछ बिना कहीं पूछ नहीं होती। तो अपने पूंछ को गोल आसन बनाकर बैठ गये।

अंगद ने कहा, मेरा नाम अंगद है, मैं रघुवीर का दूत हूँ। मैं यहाँ शान्तिप्रस्ताव लेकर आया हूँ। मैं आपके हित और भलाई के लिये श्री रघुवीर का दूत बनकर आया हूँ। महाराज मेरे पिता श्री से आपकी मित्रता थी इसलिये मैं आपको भलीभाँति सम्मति देने आया हूँ। आपका उत्तर कुल है, आप पौलस्त्य ऋषि के पौत्र है, आपने शिव और ब्रह्मा की पूजा करके बहुत से वर प्राप्त किये है और आपने सब काम सिद्ध किये है। उसी शक्ति से आपने सभी लोकपालों को भी जीत लिया है। परन्तु आपने किसी संग-दोष या कुमति के कारण उन शक्तियों का दुरुपयोग करके ऋषि, देवता, अप्सरा, नाग, यक्ष और राजाओं का अपराध किया है। उसी राजमद से अन्धे होकर आप जगतजननी सीता को हर ले आये है। जब पाप कर्म इस प्रकार अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है तभी दैवी शक्तियों को पाप का नाश करना ही पड़ता है। परन्तु उस नाश के बाद पापी की घोर दुर्गति होती है। उसका अन्त बड़ा भयानक होता है। फिर मृत्यु उपरान्त उसकी दशा अत्यन्त दु:खदायी होती है। आपके पाप आज आपको उसी सीमा पर ले आये है। मैं आपके हित के लिये यही परामर्श

देने आया हूँ कि यही एक ऐसा क्षण है जब आप चाहे तो प्रभु श्रीराम से क्षमा माँगकर उनकी शरण में चले जाएँ। श्रीराम की यह आन है सच्चे हृदय से शरण में आनेवालों के दोष नहीं देखते। जिसने शरण में आकर पुकारा मेरी रक्षा करें। ऐसी आर्त पुकार सुनते ही प्रभु अपने शरणागत को अभय प्रदान कर संसार के समस्त दु:खों से मुक्त कर देते है। उनके बाणों में तीनों लोकों को एक साथ भस्म कर देनेकी शक्ति होते हुये भी वे एक सच्चे वीर की भांति दया को नहीं छोड़ते इसलिये आप मेरी मानिये और इसी समय गलेमें कुल्हाडी डालकर, दाँतों में तिनका दबाकर अपने समस्त कुटुंबियों के साथ श्रीराम के शरण में जाकर जानकी को बड़े आदर के साथ उनके पति को लौटा दे। श्रीराम ऐसे उदार और कृपालु है जो क्षमा शब्द कहने के पहिले ही आपको क्षमा कर देंगे।

हे लंकाराज, अब सीता राम को लौटा देकर यदि तुम उनसे मिल जाओ, तो तुम्हारी मृत्यु टल जाएगी और तुम्हारा राज्य निर्भय हो जाएगा। हे दशानन, इस देह को प्राप्त होकर जो निर्मल मन से आचरण करता है, उसका यश जगत में विस्तार को प्राप्त हो जाता है; उसका जीवन धन्य होता है। इसलिए सदा सद्‌बुद्धि और विवेक से मन में सद्‌सद् सम्बन्धी ज्ञान धारण करें, सत्पुरुष की संगति करें और अज्ञान को टाल दें। किसी से दुष्ट वचन दुर्वचन न कहें, किसी की अवहेलना अनादर न करें। सबके भले की कामना करें जिससे सब लोग सुखी हो जाएँ। दूसरे के गुणों का वंदन करें आदर करें, इसके अतिरिक्त परोपकार करें। समस्त प्राणियों की आत्मा को एक देखकर जानकर सार-असार विवेक करें। यदि अन्त:करण में काम, क्रोध, लोभ और मत्सर जैसे विकार हों, तो उन्हें शत्रु समझें और उन्हें वहीं हटा दें। इस देह को अशाश्वत समझकर अशुभ आचरण को टाल दें। मैं कर्ता हूँ, ऐसे अभिमान को छोड़कर हरि की शरण में रहे। गुण-दोष से मुक्त रहते हुए संसार में व्यवहार करें। कमल पानी में रहता तो है, फिर भी उसका उससे तनिक भी स्पर्श नहीं होता उसी प्रकार संसार में रहते हुए भी सांसारिक गुण-दोषों से निर्लिप्त रहें। अपनी इन्द्रियों को निश्चय ही सत्कर्म-पूर्वक वश में रखें। समझ लें कि मन की भगवद्‌भजन में योजना करें। मन को भगवद्‌भजन में लगाएँ। आत्माराम में हृदय में स्थित भगवान में रमा रहें, विषय-भोग की आशा त्याग दें। जो असत्य मिथ्या और केवल जगत् का आभास है, उस संसार को मिथ्या मान लें। मन में परनिन्दा, परहिंसा का विचार स्वप्न तक में नहीं करें। हे राजा, पर-स्त्री और परधन में मन न लगाये रखें। सद्‌गुरु के वचन के प्रति विश्वास धारण करें, उसके प्रति मन में सद्‌भाव रखें। भवरूपी सागर को तैरकर पार जाने के हेतु सत्संग का नित्य सेवन करें- सत्संग करें। क्लेश, दु:ख, मृत्यु आ जाए, तो भी स्वधर्म का त्याग न करें। यथान्याय न्यायपूर्वक राज्य करें, शम शान्ति और दम इन्द्रिय-दमन रख लें। दया, क्षमा, उपरति, शान्ति, भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, सात्विक आनन्द, सद्‌विद्या, समाधि, अनुराग का अंगीकार कर रखें। विद्या, शरीर, धन, रूप, यौवन के विषय में अभिमान न करें। काल के अनुसार सब भोग भोग्य-पदार्थ अन्त में नष्ट हो जाते हैं। हे भाई, किसी समय महासुख को प्राप्त हो जाएँ, तो भी तब गर्व न करें और किसी समय दु:ख तथा दरिद्रता आ जाए, तो धीरज न छोड़ें। इसलिए, हे लंकापति, मेरी बात तो सत्य मान लो। रघुनाथ राम से प्रेम करो। यही सच्ची बुद्धि संगत बात है। राम तो केवल गुण-निधि हैं, फिर वे दीनों के प्रति वात्सल्य-युक्त दीन-वत्सल हैं, वे शरणागत व्यक्ति के गुण-दोष मन में नहीं रखते। इसलिए मन में धीरज धारण करके उनसे सर्वभाव से मित्रता करो। श्रीरघुवीर एकबाणी, एकपत्नी व्रती और एकवचनी हैं। इसलिए जानकी लौटा दो और राम से प्रेम करो। अनन्तर निर्भयता से व्यवहार करो और निर्भय रहकर राज्यका भोग करो।

अंगदके ऐसे वचन सुनकर रावण बोला- अच्छा हमारी क्षमा माँगने से पहिले ही वे राम हमें क्षमा कर देंगे। यह तुम हमें विश्वास दिलाते हो। हम सीता को लेकर अपने कुटुम्बियों सहित दाँतों में तिनका दबाकर उनके शिबिर में क्षमा माँगने जाएँ और वे हमें क्षमा न करें तो और बन्दी बना लें तो ? सारा जग हमपर हँसेगा। इस बातका विश्वास हमें कैसे हो ?

अंगद बोला महाराज रावण प्रभुपर विश्वास रखना ही पड़ता है। जिसे प्रभु पर पूर्ण विश्वास नहीं होता उसे प्रभु की प्राप्ति कभी नहीं होती। आपको आश्वस्त करने के लिए इतना बता दूँ कि जब वानर सेना ने सुसज्जित होकर लंका को चारों ओरसे घेर लिया है। सब लंकापर धावा बोलने के लिये प्रभु श्रीराम की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे थे उस समय प्रभु रामने, करुणाके सागर ने मुझे बुलाकर स्वयं कहा जाओ रावणसे जाकर कहो कि मैं युद्ध की ज्वाला में लंका की निर्दोष प्रजा की आहुति नहीं देना चाहता। यदि वो जानकी को पूरे सम्मान के साथ मेरे हवाले कर दें तो मैं अभी उसे क्षमा कर दूँगा और मैं लंकासे वापस चला जाऊँगा। मैं शान्ति चाहता हूँ। तुम शान्तिदूत बनकर महाराज रावण के पास जाओ। रावण बोला- यह बात रामने स्वयं तुझसे कहीं कि तुम मुझे मेरी सीता दे दो मैं वापस चला जाऊँगा, मैं युद्ध नहीं करूँगा, मुझे शान्ति चाहिए। अंगद बोले- महाराज, उन्होंने स्वयं कहा था।

रावण बोला- यहीं बात तो हम तुम्हारे मुँह से सुनना चाहते थे। मूर्ख वानर इस बात में तुझे राम की करूणा दिखाई दी। यह दिखाई नहीं

दिया कि रणक्षेत्र में रावण के सामने आनेसे उस धनुष्यधारी के हाँथ-पाँव काँपने लगे। जिसकी प्रिय पत्नी को कोई हर ले गया हो शत्रुके लिये इतने दिनों से उसके तन में रक्त की कोई ज्वाला नहीं भडकी तो फिर वो क्षत्रिय का रक्त ही नहीं है। तेरा परमवीर भिखारियों की भाँति हमसे सीता की भीख माँग रहा है। जाकर कह दो सीता कोई भिक्षा में देनेवाली वस्तु नहीं है। उसे तो अपने बाहुबल से जीतना पड़ता है।

अंगद बोले- महाराज, माता सीताको तो उन्होंने अपने बाहुबल से जीता था, शायद आप भूल गये जिस शिव धनुष को प्रभु श्रीराम ने उठाकर तोड़ दिया था उस धनुष्य यज्ञ में आप भी गये थे और सुना है आपसे वह धनुष उठाया नहीं गया। प्रतिशोध वीरता की निशानी नहीं होता और कायर में शत्रु को क्षमा करने का साहस नहीं होता। रावण बोला- हे वानर, दन्तकथाओं में क्या रखा है। मुर्ख वानर तुमने कहा था तुम्हारे पिता हमारे मित्र थे, परन्तु अपने कुल का परिचय नहीं दिया तुमने।

रावणने कहा- अरे बंदरके बच्चे। सँभालकर बोल। मूर्ख। मुझ देवताओंके शत्रुको तूने जाना नहीं ? अरे भाई। अपना और अपने बापका नाम तो बता। किस नातेसे मित्रता मानता है ? रावण बोला- तूने जिस बालि का नाम लिया वह कौन है बालि या राम।

अंगद बोले- अगर आपको ध्यान न हों तो बताता हूँ। आप तभी मूर्च्छा में थे इसलिए आप बालि को भूल गये। आप शूर्पणखा को प्रतिदिन देखते हैं फिर भी अचम्भा तो यह है कि श्रीराम नाम को भूल गये है। अब जान गए कि राम कौन है, या पिछली कथा और सुनाऊँ। श्रीराम राज राजेश्वर, पुरुषोत्तम, परमेश्वर है वानर की तो गिनती ही क्या। सुर-नर मुनि उनके अनुचर है। उनका ही सेवक अंगद यह अपना कर्तव्य निभाने आया है। इस उल्टी राजसभा में कुछ अच्छी बात बताने आया हैं। तब राक्षसराज को अंगद का यह व्याख्यान अच्छा नहीं लगा। तब आँख तरेरकर रावण ने कहा- हे अज्ञानी, बकवादी चुप हो। क्या तू ही अंगद है, क्या तू ही बालि का बालक है, क्या तू ही बाँस की ज्वाला है, क्या तू ही बालिका हत्यारा है ? यदि जन्म से पहले ही तेरा गर्व नष्ट हो जाता तो आज यह अकाज नहीं होता। तपस्वी का दूत कहलाने में तुझे लाज नहीं आती। जिसने तेरे बाप बालि को मारा उसीका तू दास हो गया। तेरे पिताके हत्यारे पर तुझे विश्वास हो गया। यदि तू मेरे से मिला होता मेरा प्रताप देखकर तेरा यशकमल खिल जायेगा। यदि अब भी तुम मुझसे मिल जायेगा तो तेरी शुभगति हो जायेगी। इस बड़े राज्य लंका का कल से तुझे सेनापति बना दूँगा।

अंगदने कहा- मेरा नाम अंगद है, मैं बालिका पुत्र हूँ। उनसे कभी तुम्हारी भेंट हुई थी ? अंगदका वचन सुनते ही रावण कुछ सकुचा गया और बोला- हाँ, मैं जान गया मुझे याद आ गया, बालि नामका एक बंदर था।

अरे अंगद। तू ही बालिका लड़का है ? अरे कुलनाशक। तू तो अपने कुलरूपी बाँसके लिये अग्निरूप ही पैदा हुआ। गर्भमें ही क्यों न नष्ट हो गया ? तू व्यर्थ ही पैदा हुआ जो अपने ही मुँहसे तपस्वियोंका दूत कहलाया।

अब बालिकी कुशल तो बता, वह आजकल कहाँ है तब अंगदने हँसकर कहा- बस कुछ दिन बीतनेपर स्वयं ही बालिके पास जाकर, अपने मित्रको हृदयसे लगाकर, उसीसे कुशल पूछ लेना।

श्रीरामसे विरोध करनेपर जैसी कुशल होती है, वह सब तुमको वे सुनावेंगे। हे मूर्ख। सुन, भेद उसीके मनमें पड़ सकता है, भेदनीति उसीपर अपना प्रभाव डाल सकती है जिसके हृदयमें श्रीरघुवीर न हों।

सच है, मैं तो कुलका नाश करनेवाला हूँ और हे रावण। तुम कुलके रक्षक हो। अंधे-बहरे भी ऐसी बात नहीं कहते, तुम्हारे तो बीस नेत्र और बीस कान हैं। शिव, ब्रह्मा आदि देवता और मुनियोंके समुदाय जिनके चरणोंकी सेवा करना चाहते हैं, उनका दूत होकर मैंने कुलको डुबा दिया ? अरे ऐसी बुद्धि होनेपर भी तुम्हारा हृदय फट नहीं जाता ?

अंगद बोले- महाराज, देवराज इन्द्रके पुत्र बालि का मैं पुत्र हूँ मेरा नाम अंगद है। मैंने ऐसी भी एक दन्तकथा सुनी है कि मेरे पिता महाराज बालि एक बार रावण नाम के प्राणि को अपने पूँछ में बाँधकर पर्वतों पर फिर रहे थे। वहीं बालि ने अमृत मन्थन के समय देवताओं को समुद्र मथने में सहायता की थी।

रावण बोला- तुम वानरराज बालि के पुत्र हो। उनकी और हमारी तो मित्रता की सन्धि थी। हमें यह देखकर अत्यन्त दु:ख हो रहा है ऐसे महाबली के पुत्र होकर एक तुच्छ नर के दूत बनकर तुम ऐसी प्रसंगता दिखा रहे हो जो तुम्हारे पिताका हत्यारा है। उसके पीछे सेवकों की भाँति हाथ जोड़कर चल रहे हो। तुमने अपने वंशको लज्जित कर दिया है अंगद।

तुम अपने कुलमें कुलांगार उत्पन्न हुए। अच्छा बताओ अब बालि कहाँ है ? कुशलपूर्वक तो है ?

हो सकता है बालि के मरने के बाद सुग्रीव के डर से बिचारे अंगद का किसीने साथ नहीं दिया हो। यह निसहाय अवस्था में अपने

चाचा और पितृ हन्ता की सेवा करने के लिये विवश हो गया हो। अगर यहीं बात है तो हमारे होते हुये तुम अपने को नि:सहाय मत समझो। अंगद तुम हमारे पुत्र समान हो हम तुम्हें तुम्हारा राज्य वापस दिलायेंगे। तुम्हारे पिता की गद्दी पर तुम्हारा ही अधिकार है। तुम अपने को विवश मत समझो। अपने प्रतिशोध की ज्वाला को मत घुसने दो। तुम राम के विश्वसनीय हो उसका लाभ उठाओ। अकेले चुपचाप उसकी हत्या कर अपने पिता के वध का बदला लो। यही एक वीर पुत्र का कर्तव्य है। किष्किंधा का राज्य तेरा है तुझे दिलवा दूँगा और तेरी माता तारा को उस दुष्ट सुग्रीव के आधिपत्य से मुक्त करा दूँगा।

अंगद बोले- हे दशानन, बहुत विलम्ब नहीं है तुम्हारे बालिके समीप पहुँचनेमें। श्रीरामने जिस मार्गसे उसे जहाँ भेजा है, उसी मार्गसे तुम्हें भी शीघ्र वहीं भेज देंगे। स्वयं मित्रसे मिलकर कुशल पूछ लेना। वह तुम्हें समझा देगा कि श्रीरामका विरोध करनेसे कुशल कैसी होती है। आप बार-बार वीरता का बखान कर रहे है परन्तु सच्ची वीरता के गुण नहीं जानते महाराज। यदि श्रीराम प्रभु आपके अपराधों को भूलकर आपको अपनी शरण में आश्रय प्रदान कर दे तो यह उनकी महानता है, उनकी उदारता है, यह उनकी परम वीरता है, कायरता नहीं। जिन्होंने अपने बाणों से आपकी नानी ताड़का और मामा मारीच, आपके भाई खर-दूषण को आपकी विशालसेना सहित अकेले ही यमपुर पहुँचा दिया। उन्हें शक्तिहीन मत समझिये, वे तीनों लोकों के स्वामी है। मेरे महाबली पिता ने मरते समय मुझे यह भेद बताया था यदि मैं उनके श्रीचरणों की सेवा करता रहूँ इसलिये आपको मुझ पर दया करके मेरी सहायता की कोई आवश्यकता नहीं। अपने आप पर दया कीजिये।

राम के बाण से अभी सामना नहीं हुआ; घर में शूर्पणखा है उसके कटे हुए नाक-कान देख ले। घर में तेरी बहिन है- वह तुझसे कोई भिन्न नहीं है- राम के बाण के चिह्न तेरे निकट ही विद्यमान हैं। राम के बाण से तेरा सामना हो जाय तो एक ही बाण से रावण तू अपने सारे वंश सहित नष्ट हो जायगा। गुणसागर राम के पास जितने बाण हैं, हे अबोध रावण ! उन सबके नाम तो सुन। अमर्त्त-समर्थ बाण, महाबल बाण, विष्णुजाल, इन्द्रजाल, कालान्त, अनल, उल्कामुख, वरुण, विद्युत, खरशान, गुहपति, नक्षत्र, गगन, रुद्रबाण, सूचीमुख, शिलीमुख जैसे भयानक रूपवाले बाण, सिंहदन्त, वज्रदन्त और विरोचन, वालदन्त, ऐषीक व कर्णिकर बाण, चन्द्रमुख, अश्वमुख एवं सप्तसार विकट संकट-बाण जिसके सप्तमुख हैं, अर्द्धचन्द्र, खुरपा, आशुत्र, क्षुरधार बाण, पशु, पक्षी, अग्नि और अग्निमुख बाण, कुवेरास्त्र, राजहंस, वर्धमान बाण, यमक दुर्जय बाण, मंत्र-विमंत्र बाण, त्रिशूल, अंकुश, वायव्य, आतंक, वज्रबाण, गरुड़, मयूर, सुसन्धान बाण, काकमुख, भेकमुख, कपोतक बाण, विष्णुचक्र, पटचक्र, हुताशन, संतापन, विलापन जैसे संग्राम-शमन बाण, गजांक चारों ओर से कसा हुआ सन्धान बाण, सिंह और शार्दूल जिनके चारों ओर काँटे हैं- इतने बाणों पर रघुनाथ की गति है, जिनमें से एक बाण से बालि ने प्राण त्याग दिया। जिस बालि से तू पराजित हुआ था उसी बालि को श्रीराम ने मार गिराया। शिव का धनुष तोड़ना जिनके लिए बाल-क्रीड़ा के समान है, उनके साथ तेरे युद्ध का क्या प्रसंग ? राम ने एक बाण से सप्ततालको भेद किया, उनके समान वीर इस चराचर पर दूसरा कौन है। किस बूते पर तू आँखे लाल कर रहा है, तेरी लंका को मैं मकड़ी के अंडे के समान देखता हूँ।

अंगद बोले- क्या लंका की गोद सेनापतियों से शून्य है। आपने कहा था मैं तुझे आज ही लंकाका सेनापति बना दूँ। मैं आपकी यह सेवा करता और मुझमें इतनी योग्यता कहाँ है ? मैं लंकाका सेनाध्यक्ष बनूँ मुझमें यह बुद्धि और वीरता कहाँ है। रामादल में तो दो-चार नहीं सैकड़ों वहां सेनापति बनने के काबिल है। सेनापति अगर चाहते हो तो शायद ही कोई इसे स्वीकार करें इस मैले आभूषण को। ऐसे कुराज्य में रहने को कोई भी स्वीकार नहीं करेगा जहाँ नारियाँ चुराई जाती है अन्यथा विभीषण तो इस सेवा को आ सकता है आप सेनापति ही क्या चाहते हो वह तो राज्य भी चला सकता है। विभीषण ने महाराज लंकाधीश्वर रावण को यह सन्देशा भेजा है की सारी लंका में एक वहीं शेष रह जायेगा अपने सब राक्षस पितरोंका तर्पण करने को। इसलिए बैर भाव त्यागकर अपने मन का दर्पण उज्वल करिए। रघुनायक से सन्धि कर सीता उन्हें अर्पण कीजिये। यह अच्छी तरह जान लीजिये वानर सेना लंकामें पाँव रख चुकी है। रघुवीर का यह प्रण है की पूरी पृथ्वी निशाचर हीन कर देंगे।

मुझे मालूम है, तू मुक्ति का क्या अर्थ समझता है। अंगद बोले, मुझे अपने लिए जो कुछ करना है, उसके लिए मैं स्वयं सक्षम हूँ। मुक्त करना है तो देवी सीता को मुक्त कर। प्रतिशोध लेना है तो अक्षकुमार का प्रतिशोध ले और भ्रातृत्व जताना है तो विभीषण से जता।

रावण बोला- यह कोई प्रण नहीं है सब बकवास है। यह पृथ्वी कैसे निशाचर हीन हो सकती। जब निशाचर ही उनके पास है। मेरे शरणार्थी भाई विभीषण को भाई की भाँति पालते है। मिलते ही उसको अभयदान देकर लंकेश्वर बना दिया। जब तक विभीषण निशाचरोंके दल में रहेगा उनका यह प्रण पृथ्वी को निशाचर हीन करूँगा बकवास ही रहेगा।

तब अंगद बोले- बलिहारी जाता हूँ आपकी समझ को, आपने शरीर को ही निशाचर समझा है। तन से कोई भी प्राणी सुर-असुर नहीं माना जाता वह तो अपने आचरणों से ही पहचाना जाता है कि वह देवता है या निशाचर। जब विभीषण रामके शरण में चला गया तो उसे निशाचर कैसे माना जाए। जो प्रभु रामकी शरण में नहीं जाता वही यथार्थ में निशाचर है।

तब रावण बोला- अंगद अच्छा यदि सन्धि चाहते हो तो मुझे इन नियमों पर सन्धि स्वीकार है। पहले वे विभीषण को मेरे पास भेजे फिर मेरे चरणोंपर सिर रखकर समुन्दर पर जो सेतु बाँधा है उसे तोड़ें जिससे की कोई लंका में आ-जा न सके। फिर हनुमान का मान मिटाकर उसे रावण की सेवा में भेजे। दाँतों में तृण दबाकर मेरे इन बाणों की शरणागत हो और हाथ जोड़कर राम और लक्ष्मण मुझसे अपने प्राणों की भिक्षा माँगे तो यह सन्धि का प्रस्ताव हो सकता है।

रावण की यह बात सुनकर बालिसुत अंगद क्रोध से लाल हो गये और बोले- बस यहीं या इससे भी कुछ अधिक। यह तो साधारण माँगे है। मैं जाकर उनसे कह दूँगा। चारों बातें साधारण है। जिन हाथोंसे उन्होंने पुल बाँधा है वह उसे भी तोड़ डालेंगे। लंकाका माल विभीषण का है लंका में ही उसे भेज देंगे। जितनी हानि हो चुकीं उसका भी हम भरपाई कर देंगे। पर जो एक महा हानि हुई है वह कैसे पूरी कर पाएंगे। जब-जब तुम अपने घर जावोगे तब बहन शूर्पणखा की कटी नाँक देख-देख कर नजरों में आयेगी। वह किस प्रकार से जोडी जायेगी।

मालिक तेरा नाबालिग है और नारी के वियोग का दु:ख सह रहा है। उसके दु:खसे दु:खी होकर उसका भाई हर वक्त दु:खी रहता है। वानर तो सब मुली, गाजर के समान है। सुग्रीव सरिता के कगार पर खड़ा पेड़ है। जिस जाम्बवन्त पर तुमको अभिमान है वह बुढ़ा है और चौथेपन में भटक रहा है। नल और नील तो कोरे शिल्पी हैं उनको युद्ध करना ही नहीं आता। विभीषण तो मेरा भक्त है वो तलवार उठाना क्या जानें। बस यदि कोई कुछ कहें तो वो एक वानर जो लंका आकर चला गया धोखेसे पक्षी जैसा चला गया।

अंगद बोले- हे श्रीमान। आपने क्या कथन किया। क्या उस छोटेसे वानर ने सचमुच ही लंका दहन कर दिया। वह तो पूँछ नचानेवाला वानर है। भागदौड़ में नामी है और इधर-उधर सन्देश घूमाते रहता है। उसे रणकौशल क्या मालूम ? कपिपति सुग्रीव ने चलते समय उसे चार कर्तव्य समझाये थे। पहले लंका में जाते ही सीतामाता की सुधि लेना। फिर लंका नगरी को ढाकर सागर के मध्य बहा देना, सीताजी को कन्धोंपर बिठलाके लाना और रावण को बन्दी करके साथ-साथ लेते आना। अब लगता है उसने कुछ काम नहीं किया इसिलिए वो अभी तक हमारे यहाँपर पहुँचा नहीं शायद अपना मुँह भी नहीं दिखाया है। मालूम नहीं वह किस ओर चला गया, कौनसे जंगल में जाकर छिप गया। हे राजन। जो तुम्हें बार-बार खटक रहा है वह अब रामादल में नहीं है। अंगद की यह बात सुन पूरा असुर समाज काँपने लग गया। कहीं यही वानर पूरे चारों काम करनेको नहीं आया। जिस तरह से घी की आहुति पड़ते ही ज्वाला उत्तेजित हो जाती है वैसे ही उसी क्षण राक्षसराज भी भभक उठा।

वानर अंगद की कठोर वाणी सुनकर रावण आँखे तरेरकर तिरछी करके बोला- अरे दुष्ट। मैं तेरे सब कठोर वचन इसीलिये सह रहा हूँ कि मैं नीति और धर्मको जानता हूँ उन्हींकी रक्षा कर रहा हूँ।

अंगदने कहा- तुम्हारी धर्मशीलता मैंने भी सुनी है। वह यह कि तुमने परायी स्त्रीकी चोरी की है। और दूतकी रक्षाकी बात तो अपनी आँखोंसे देख ली। ऐसे धर्मके व्रतको धारण पालन करनेवाले तुम डूबकर मर नहीं जाते।

नाक-कानसे रहित बहिनको देखकर तुमने धर्म विचारकर ही तो क्षमा कर दिया था। तुम्हारी धर्मशीलता जग-जाहिर है। मैं भी बड़ा भाग्यवान हूँ, जो मैंने तुम्हारा दर्शन पाया ?

रावणने कहा- अरे जड जन्तु वानर। व्यर्थ बक-बक न कर; अरे मूर्ख। मेरी भुजाएँ तो देख। ये सब लोकपालोंके विशाल बलरूपी चन्द्रमाको ग्रसनेके लिये राहु हैं।

अंगद के ऐसे वचन सुनकर राजा रावण बोला- अरे कपि, मैं सर्वज्ञ हूँ; मुझे तू क्या सिखा रहा है ? हे मर्कट, राम की बहुत बड़ाई करते हुए तू क्या प्रशंसा कर रहा है ? परन्तु त्रिभुवन में मेरे समान दूसरा कौन बलवान ईश्वर ऐश्वर्यधारी है ? मैंने देवों को जीतकर उन्हें अपने वश में कर लिया, फिर लोकपालों को अधीन कर लिया। मैं राम को अब कैसे नमस्कार करूँ ? उससे मेरी प्रभुता हीनता को प्राप्त हो जाएगी। इस राम से क्या होनेवाला है ? वह क्या उपकार कर पाएगा ? संसार तो अपने-अपने कर्म के अनुसार समस्त सुखों या दुखों का भोग करता है। तू कह रहा है कि वह भगवान है, परन्तु वह हमारे किस काम का ? मैं तो शिवजी का उपासक हूँ; फिर मैं जाकर राम को नमस्कार क्यों करूँ ? मैंने राम से बैर ठान लिया है और मैं उसकी स्त्री सीता को लाया हूँ। अब यदि मैं जाकर उनसे मिलूँ, तो सब

मेरा धिक्कार करेंगे। संसार यह कहेगा कि राजा रावण राम से डरकर उससे मिल गया। रे कपि, यदि सूर्य पश्चिम में निकले, तो भी यह काम मुझसे नहीं होगा। जिस प्रकार हाथी के दाँत निकल आये हों, तो फिर वह किसी एक स्थान पर चिपका नहीं रहता वह पराक्रम करता फिरता है उस प्रकार शक्तिसम्पन्न होकर मैंने जब कि राम से बैर कर लिया है, तो मैं अपने मस्तक से ही सौदा तय करूँगा। रे बन्दर के बच्चे, ऐसा समझ ले कि जीवित रहते हुए कृपण का धन, सर्प की मणि, सिंह की मूँछ का बाल किसी के हाथ नहीं लग पाता, वैसे ही मेरे जीते जी सीता किसी को प्राप्त नहीं होगी। तू जाकर अपने राम से कह दे कि दीनतापूर्वक गिड़गिड़ाहट से विनती करने से काम नहीं होगा। मेरे जीते जी राम सीता का मुख तक देख नहीं पाएगा।

रावण की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् बालिकुमार अंगद बोला- हे राजा, सुन ले। तू अपने मन में इतना गर्व क्या कर रहा है ? तू राम के रूप को नहीं पहचान रहा है। हे राजा, अन्त:करण में विचार करके तो देख तो समझ में आएगा कि, ये राम मनुष्य नहीं है। ऐसा पराक्रम किसी दूसरे से नहीं होगा- यह तो ईश्वर की ही करनी है। तू जिनकी आराधना करता है, जो वे सदाशिव भगवान हैं, वे भी राम की भक्ति करते हैं, वे नित्य उनका ध्यान करते हैं। इस बात को विचार करके देख; ये तेरे स्वामी के स्वामी हैं। इसलिए राम से बैर करके तू स्वामी-द्रोही हो जाएगा। जिसकी आज्ञा इन्द्र, ब्रह्मा तथा लोकपाल मानते हैं; जिसके कटाक्ष से काल तक काँप उठता है, वह ये ही रघुराज राम हैं। शिवजी, सनत्कुमार आदि ऋषिवर, शेष तथा योगी जिनका ध्यान करते हैं, जिनके निर्मल गुणों का गान वेद करते रहते हैं, वे ही ये स्वयं भगवान हैं। रे मूढ़-मति दशानन, उन राम से तू मित्रता कर, जो कतुमकतु समर्थ हैं और जिनकी गति गूढ़ है। जो सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार के कर्ता हैं, वे सबके कारण कर्ता और अकारण विनाशकर्ता हैं- उन्हीं को हम राम कहते हैं। वे भक्तों के लिए पृथ्वी का भार उतारने के हेतु, सद्-धर्म की स्थापना करने और दुष्टों का संहार करने के हेतु अवतरित हो गये हैं। जो प्राणी कोटि-कोटि अपराध करने पर भी उनकी शरण में आता है, उसके सब दोषों पापों को दूर करके वे उसे अभय दान देते हैं। उस प्राणी को वे अपना लेते हैं। ऐसे वे शरणागत-वत्सल स्वामी हैं। रे दशानन, तेरा कल्याण होगा- तू रघुवीर के साथ मित्रता कर। मूर्खता मत करो। श्रीरामने अत्यन्त दया करके, तुम्हारे कल्याणके लिए मुझे भेजा है। उन सर्वसमर्थसे विरोध करके किसीकी कुशल सम्भव नहीं। अभी कुछ नहीं बिगड़ा। अधर्म-पथ त्याग दो और सीताको देकर उन शरणागतवत्सलकी शरण लो। तुम्हारा राज्य, सुख, ऐश्वर्य अखण्ड बना रहेगा।

जिनको श्रीरामके श्रीचरणोंका सान्निध्य नहीं मिला, उनकी ही बुद्धिको स्वार्थका प्रलोभन विकृत करनेमें समर्थ है। ये दुष्प्रयत्न त्याग और सीधा मार्ग अपना अन्यथा मृत्यु अब तेरे मस्तकपर मँडराने लगी है।

रावण बोला- अंगद, तुम किसे बार-बार डराना चाहते हो ? त्रिभुवनजयी दशग्रीव बन्दरघुड़कीमें आयेगा क्या ? अरे मर्कट, निश्चय ही चुप रह जा। मैं तेरे राम को जानता हूँ। बहुत बार बार-बार उसका क्या बखान कर रहा है। अरे राम का बन्दीजन होकर, जैसे कोई भाट करता है, वैसे, तू राम के यश का बखान कर रहा है। वह क्या कीर्ति प्राप्त करने चल दिया है ? तू यह तो भाग जाने की बाट के बहाने बोल रहा है। मैं उसके पराक्रम को जानता हूँ। यह क्या काम कर पाएगा ? जिसने वानरों से मित्रता की, वह तो क्षत्रियराज नहीं हो सकता। वन में वन्य फल खाने से उसकी देह बलहीन हो गयी है। फिर वानर-सेना इकट्ठी करके यह क्या युद्ध कर पाएगा ? अरे, मेरा नाम रावण है। मुझे तू क्या उपदेश दे रहा है। मैं पण्डितों का पण्डित हूँ; इसके अतिरिक्त मैं क्रोध का क्रोध हूँ। जिस प्रकार कोई अग्नि में घास डाल दे, तो वह स्वयं जल जाती है जैसे शिवजी पर कामदेव ने बाण चला दिये, तो वह स्वयं जल गया उसी प्रकार तेरा उपदेश, तेरी बातें, मुझपर व्यर्थ हो जाती हैं। अरे मच्छड़, मुझे तू क्या शिक्षा दे रहा है ? मैं अज्ञान तो नहीं हूँ। तू समझता है कि बलवान को छल-कपट पूर्वक धोखा दे दें और काम बना ले। परन्तु आज मैं बिना युद्ध किये जानकी नहीं लौटाऊँगा। जाकर अपने राम से कह दे, गिड़गिड़ाने से काम नहीं होता।

अंगद बोले- हो सके तो श्रीराम की चरण में जाकर अपने और अपनी राक्षस जाति का विनाश होने से बचा ले। रावण क्रोध से बोला- बस बहुत हो चुका यह अनर्गल प्रलाप। मतिमन्द तूने अभी तक रावण की शक्तियों को नहीं पहचाना। हमारा हाथ खडग् की ओर उठता है तो आकाश में लोकपाल काँपते है। इन भुजाओं ने स्वयं कैलाश को उठा लिया था। इन भुजाओं को उठने मात्र से देवता भय से साँस रोक लेते है। तुम्हारी सेना में ऐसा एक भी योद्धा हो तो बताओ जिसके साथ युद्ध करने में रावण को गौरव मिले। अंगद बोले- आपने सत्य कहा महाराज हमारी सेना में ऐसा कोई नहीं जो आपसे लड़ने में शोभा पावें। नीति कहती है प्रीति और बैर बराबर वालों से ही करना उचित है। आप जैसा पापी, कामी, स्त्री-लोलुप जो धोखे से पराये स्त्री को हर ले आया ऐसे नीच के साथ युद्ध करने से किसकी शोभा बढ़ेगी ? रावण बोला- सावधान अंगद यह मत समझ तुम दूत बनकर आये हो तो तुम कुछ भी कहो और हमारे हाथों बचे रहो। दूत की भी कुछ मर्यादा होती

है। यदि रावण के साथ सीमा से आगे बढ़ा तो यही तेरा शेष प्रलाप होगा। अब आगे यदि तुझे रावण की सहायता नहीं चाहिए तो उसके क्रोध से डर। अंगद बोला- महाराज रावण रावण कितनी बार इस नामको दोहराया है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि जगत में कितने रावण है ? कितने ही रावणों के नाम मैंने अपने कानोंसे सुन रखे है। महाराज इनमें से आप कौनसे रावण है ? एक रावण तो मैंने सुना था कि राजा बलि को जीतने पाताल में गया था। वहाँपर बच्चों ने उसे घुड़साल में बाँधकर बहुत पिटा था तब बलि ने ही दया करके उसे छुड़वा दिया और एक रावण के विषय में मैंने सुना है कि सहस्त्रबाहु ने एक जन्तु की भाँति कीड़ा समझकर पकड़ लिया था। तब पुलस्त्य मुनि ने प्रार्थना कर उसे छुड़वा दिया था। एक और रावण की बात कहते संकोच लगता है कहते है कि मेरे पिताश्री ने उसे जो छ: महीनों तक अपने काख में दबाकर चारों दिशाओं की उपासना करते रहे। ऐसे-ऐसे वीरों में से आप कौनसे रावण है महाराज ?

अंगद इन्द्रजित मेघनाद से बोला- धन्य है नारी मन्दोदरी और धन्य है तेरी माँ, कि एक युवती होकर इतने पतियों को कैसे प्रसन्न रखती है। इनमें से तेरे किस बाप ने तीनों लोकों को जीता ? तेरा कौन-सा बाप कहाँ गया, मुझको तनिक परिचय तो दे। तेरा कौन-सा बाप है जिसने पाताल में दासी का अन्न खाया ? तेरा कौन-सा बाप है जो अर्जुन के अस्तबल में बँधा पड़ा था। तेरा कौन-सा बाप यम पर विजय प्राप्त करने दक्षिण गया था ? तेरा कौन-सा बाप है जिसने मान्धाता के बाण से त्रस्त होकर दाँतों से तिनका उठाया था? तेरा कौन-सा बाप धनुष तोड़ने मिथिला गया था ? तेरा कौन-सा बाप कैलास पर्वत उठाने गया था ? तेरा कौन-सा बाप बहू के प्रेम में आसक्त हो गया था ? तेरे कौन से बाप की बहिन को मधु दैत्य ने चुरा लिया ? तेरा कौन-सा बाप जामदग्न्य परशुराम के तेज के सम्मुख पराभूत हुआ था। मेरे बाप ने तेरे किस बाप को अपनी पूँछ में लपेट लिया था ? एक-एक कर तेरे सारे बापों की कथा वर्णन कर अच्छा, यह सब बातें भी रहने दो, तेरा वह तपसी बाप कहाँ है ? दुष्ट शूर्पणखा ने जिसको मंत्र दिया और दंडक अरण्य में जो भीख माँगकर खाता रहा ? कानों में शंख का कुडल और अंग में भगवा वस्त्र पहने डम्बरू बजा-बजाकर घर-घर में भीख माँगता था। सन्यासी का वेश धारण किये मुँह पर राख पोतकर घूमता था। अस्तु, इन बापों की जरूरत नहीं; मुझे तो तेरे उस जोगड़े बाप की चाहत है।

रावण बोला- मूर्ख, हम वहीं बलवान रावण है जिनकी भुजाओं की लीला कैलाश पर्वत जानता है। इसकी शूरवीरता को उमापति महादेवजीने स्वीकार किया। अपने शीश रूपी पुष्प चढ़ा-चढ़ाकर जिनकी पूजा की। हमारी भुजाओं का पराक्रम दिकपाल जानते है। हमारे छातीकी कठोरता दसो दिशाओं के दिग्गज जानते है। उन दिग्गजों के बाण इस छाती से टकरा-टकरा कर टूट गये। हम वहीं जगत प्रसिद्ध रावण है जिसके चलने से पृथ्वी इस प्रकार डोलती है जैसे नांव में कोई हाथी सवार हो गया हो। रावण के सामने तुच्छ मनुष्य राम की बात करता है। बस वानरोंकी सहायता से उसने समुद्रपर सेतु बाँध लिया। क्या यहीं उसकी प्रभुता है ? समुद्र को तो पक्षी भी लाँघ जाते है। पर उससे तो वे शूर-वीर नहीं हो जाते। यदि तेरा स्वामी ऐसा ही योद्धा है तो दूत किसलिए भेजता है। शत्रु से सन्धि करते उसे लाज नहीं आती। अंगद बोले- महाराज, लज्जा तो बस आप ही का गुण है। उसी लज्जा के मारे आप बार-बार अपने गुण गाते नहीं थकते। हे लंकेश राम ने डर कर मुझे दूत बनाकर नहीं भेजा। श्री रघुवीर ने यह सोचकर भेजा है किसी सियार को मारने से शेर की शोभा नहीं होती है। इस कारण वे तुम पर दया करना चाहते है पर तुम दया के पात्र नहीं हो।

अरे दुष्ट ! देवताओं पर विजय प्राप्त कर तेरा दिमाग खराब हो गया है, अकेली सीता के लिए ही तेरा सत्यानाश हो जायगा। ऐसी आकांक्षा न रखना कि तेरे वंश में कोई भी जीवित रह जायगा। तूने स्वयं ही अपनी विपत्ति बुला ली। पलंग पर पड़े मौज से दो चार दिन बिता ले, दिव्य नारियों के साथ हास-परिहास कर ले, दिन में दोबार परिवार-वर्ग को देख ले, विश्वकर्मा के बनाये घर-द्वार देख ले, इस सोने की लंकापुरी को भी देख ले।

रावण बोला- तुझको यह ज्ञात नहीं मैं काल, जीत मतवाला हूँ। मैं ऐसा विषवाला सर्प हूँ जिसके काटें का कोई मन्त्र नहीं। मेरी इन कठोर भुजाओं ने ही कैलाश पर्वत उठाया है। यम, इन्द्र, कुबेर, वरुणमण्डल मेरे बाणों से थर्राया है। सूर्यदेव मेरे संकेतों पर ही पूरब से पश्चिम जाता है, मेरी इच्छा पर ही वायु ठण्डी और गरम होकर प्रवाहित होती है। मेरे जैसा पण्डित, विद्वान, मेरे जैसा योद्धा पूरे त्रिभुवन में और कोई नहीं है।

अंगद बोले- धन्य है जादूगर राज। स्वयं अपनी बड़ाई करते तुम्हें लाज नहीं आयी। जो करनी करनेवाला होता है वह अपनी करनी का बखान कब करता है। यह तो मशहूर कहावत है जो गरजा है वह कब बरसा है। बलि की घुड़शाला में बच्चों ने आपके दसों शीश को दीपस्तंभ बनाया था। आपने कहा अपने शीश काट-काटकर शंकर को भेंट चढ़ायें है। इन्द्रजाल करनेवाले तान्त्रिक तो हीं करते है

अपने तन को बार-बार काट लेते है तो वो योद्धा नहीं कहलाते है। आप बार-बार कह रहे हों मैं बडा हटी और क्रोधी हूँ। हमने ऐसी बात कहनेवाले लाखों देखे हैं। हे लंकाधीश अपनी महिमा गानेवाले, ऋषियों को सतानेवाले, पर नारी चुरानेवाले, जिनको तुमने साधारण तपस्वी बालक समझ रखा है अब भी उनसे बचने का अवसर है जैसे वैद्य चिकित्सा के लिए तत्पर रहता है। अवसर चुक गया तो समझो डर ही डर है। तब मृत्यु तुम्हारे सरपर नृत्य कर रही है। दिग्गज यदि मेंढ़क को मारे तो उसमें उसकी प्रतिष्ठा नहीं है। बस तेरा वध करने में रघुवंशी को यही सकुचाहट है यही झमेला है, झंझट है। रघुवंशी का क्रोध बड़ा विकट है हे सोनेवाले जाग अपने आलसपन को त्याग। अहंकार का राग छोड़ और राम की शरण में आ जा।

यद्यपि तुम्हें मारनेमें श्रीरामकी लघुता है और बड़ा दोष भी है, तथापि हे रावण। सुनो, क्षत्रियजातिका क्रोध बड़ा कठिन होता है।

तब रावण हँसकर बोला- बंदरमें यह एक बड़ा गुण है कि जो उसे पालता है, उसका वह अनेकों उपायोंसे भला करनेकी चेष्टा करता है।

बंदरको धन्य है, जो अपने मालिकके लिये लाज छोड़कर जहाँ-तहाँ नाचता है। नाच-कूदकर, लोगोंको रिझाकर, मालिकका हित करता है। यह उसके धर्मकी निपुणता है।

हे अंगद। तेरी जाति स्वामिभक्त है। फिर भला तू अपने मालिकके गुण इस प्रकार कैसे न बखानेगा ? मैं गुणग्राहक गुणोंका आदर करनेवाला और परम सुजान समझदार हूँ, इसीसे तेरी जली-कटी बक-बकपर कान ध्यान नहीं देता।

अंगदने कहा- तुम्हारी सच्ची गुणग्राहकता तो मुझे हनुमान्‌ने सुनायी थी। उसने अशोकवनको विध्वंस तहस-नहस करके, तुम्हारे पुत्रको मारकर नगरको जला दिया था। तो भी तुमने अपनी गुणग्राहकताके कारण यही समझा कि उसने तुम्हारा कुछ भी अपकार नहीं किया।

तुम्हारा वही सुन्दर स्वभाव विचारकर, हे दशग्रीव। मैंने कुछ धृष्टता की है। हनुमान्‌ने जो कुछ कहा था, उसे आकर मैंने प्रत्यक्ष देख लिया कि तुम्हें न लज्जा है, न क्रोध है और न चिढ़ है।

रावण बोला- अरे वानर। जब तेरी ऐसी बुद्धि है तभी तो तू बापको खा गया। ऐसा वचन कहकर रावण हँसा। अंगदने कहा- पिताको खाकर फिर तुमको भी खा डालता। परन्तु अभी तुरंत कुछ और ही बात मेरी समझमें आ गयी।

अरे नीच अभिमानी। बालिके निर्मल यशका पात्र कारण जानकर तुम्हें मैं नहीं मारता।

रावणके ये वचन सुनकर अंगद क्रोधसहित वचन बोले- अरे नीच अभिमानी। सँभालकर सोच-समझकर बोल। जिनका फरसा सहस्रबाहुकी भुजाओंरूपी अपार वनको जलानेके लिये अग्निके समान था।

जिनके फरसारूपी समुद्रकी तीव्र धारामें अनगिनत राजा अनेकों बार डूब गये, उन परशुरामका गर्व जिन्हें देखते ही भाग गया, अरे अभागे दशशीश। वे मनुष्य क्योंकर हैं ?

क्यों रे मूर्ख उद्दण्ड। श्रीराम मनुष्य हैं ? कामदेव भी क्या धनुर्धारी है ? और गङ्गाजी क्या नदी हैं ? कामधेनु क्या पशु है ? और कल्पवृक्ष क्या पेड़ है ? अन्न भी क्या दान है ? और अमृत क्या रस है ?

गरुड़ क्या पक्षी हैं ? शेषजी क्या सर्प हैं ? अरे रावण। चिन्तामणि भी क्या पत्थर है ? अरे ओ मूर्ख। सुन, वैकुण्ठ भी क्या लोक है? और श्रीरघुनाथकी अखण्ड भक्ति क्या और लाभों-जैसा ही लाभ है ?

सेनासमेत तेरा मान मथकर, अशोकवनको उजाड़कर, नगरको जलाकर और तेरे पुत्रको मारकर जो लौट गये तू उनका कुछ भी न बिगाड़ सका, क्यों रे दुष्ट। वे हनुमानजी क्या वानर हैं ?

अरे रावण। चतुराई कपट छोड़कर सुन। कृपाके समुद्र श्रीरघुनाथका तू भजन क्यों नहीं करता ? अरे दुष्ट यदि तू श्रीरामका वैरी हुआ तो तुझे ब्रह्मा और रुद्र भी नहीं बचा सकेंगे।

हे मूढ़। व्यर्थ गाल न मार (डींग न हाँक)। श्रीरामसे वैर करनेपर तेरा ऐसा हाल होगा कि तेरे सिर-समूह श्रीरामके बाण लगते ही वानरोंके आगे पृथ्वीपर पड़ेंगे।

और रीछ-वानर तेरे उन गेंदके समान अनेकों सिरोंसे चौगान खेलेंगे। जब श्रीरघुनाथ युद्धमें कोप करेंगे और उनके अत्यन्त तीक्ष्ण बहुत-से बाण छूटेंगे।

तब क्या तेरा ऐसा गाल चलेगा ? ऐसा विचारकर उदार कृपालु श्रीरामको भज। अंगदके ये वचन सुनकर रावण बहुत अधिक जल उठा। मानो जलती हुई प्रचण्ड अग्निमें घी पड़ गया हो।

वह बोला- अरे मूर्ख। कुम्भकर्ण- ऐसा मेरा भाई है, इन्द्रका शत्रु सुप्रसिद्ध मेघनाद मेरा पुत्र है और मेरा पराक्रम तो तूने सुना ही नहीं कि मैंने सम्पूर्ण जड़चेतन जगत्‌को जीत लिया है।

मेरी एक-एक भुजारूपी समुद्र बलरूपी जलसे पूर्ण है, जिसमें बहुत-से शूरवीर देवता और मनुष्य डूब चुके हैं। बता, कौन ऐसा शूरवीर है जो मेरे इन अथाह और अपार बीस समुद्रोंका पार पा जायगा ?

अरे दुष्ट मैंने दिक्पालोंतकसे जल भरवाया और तू एक राजाका मुझे सुयश सुनाता है।

रावणके समान शूरवीर कौन है ? जिसने अपने ही हाथोंसे सिर काट-काटकर अत्यन्त हर्षके साथ बहुत बार उन्हें अग्निमें होम दिया। स्वयं गौरीपति शिवजी इस बातके साक्षी हैं।

मस्तकोंके जलते समय जब मैंने अपने ललाटोंपर लिखे हुए विधाताके अक्षर देखे, तब मनुष्यके हाथसे अपनी मृत्यु होना पढ़कर, विधाताकी वाणी लेखको असत्य जानकर मैं हँसा।

उस बातको समझकर स्मरण करके भी मेरे मनमें डर नहीं है। क्योंकि मैं समझता हूँ कि बूढ़े ब्रह्माने बुद्धिभ्रमसे ऐसा लिख दिया। अरे मूर्ख। तू लज्जा और मर्यादा छोड़कर मेरे आगे बार-बार दूसरे वीरका बल कहता है।

अरे मन्दबुद्धि। समझकर देख। पतंगे मोहवश आगमें जल मरते हैं, गदहोंके झुंड बोझ लादकर चलते हैं, पर इस कारण वे शूरवीर नहीं कहलाते। अरे दुष्ट। अब बतबढ़ाव मत कर; मेरा वचन सुन और अभिमान त्याग दे। हे दशमुख। मैं दूतकी तरह सन्धि करने नहीं आया हूँ। श्रीरघुवीरने ऐसा विचारकर मुझे भेजा है।

कृपालु श्रीराम बार-बार ऐसा कहते हैं कि स्यारके मारनेसे सिंहको यश नहीं मिलता। अरे मूर्ख। प्रभुके उन वचनोंको मनमें समझकर याद करके ही मैंने तेरे कठोर वचन सहे हैं।

नहीं तो तेरे मुँह तोड़कर मैं सीताको जबरदस्ती ले जाता। अरे अधम। देवताओंके शत्रु। तेरा बल तो मैंने तभी जान लिया जब तू सूनेमें परायी स्त्रीको हर चुरा लाया।

तू राक्षसोंका राजा और बड़ा अभिमानी है। परन्तु मैं तो श्रीरघुनाथके सेवक सुग्रीव का दूत सेवकका भी सेवक हूँ। यदि मैं श्रीरामके अपमानसे न डरूँ तो तेरे देखते-देखते ऐसा तमाशा करूँ कि- तुझे जमीनपर पटककर, तेरी सेनाका संहार कर और तेरे गाँवको चौपट नष्ट-भ्रष्ट करके, अरे मूर्ख। तेरी युवती स्त्रियोंसहित जानकीको ले जाऊँ। यदि ऐसा करूँ, तो भी इसमें कोई बड़ाई नहीं है। मरे हुएको मारनेमें कुछ भी पुरुषत्व बहादुरी नहीं है। वाममार्गी, कामी, कंजूस, अत्यन्त मूढ़, अति दरिद्र, बदनाम, बहुत बूढ़ा।

नित्यका रोगी, निरन्तर क्रोधयुक्त रहनेवाला, भगवान विष्णुसे विमुख, वेद और संतोंका विरोधी, अपना ही शरीर पोषण करनेवाला, परायी निन्दा करनेवाला और पापकी खान महान पापी ये चौदह प्राणी जीते ही मुरदेके समान हैं।

रावण ने कहा- क्या कहा तूने कि राम लंकापुर आ गया तो उसके डर से हम अपने देश में रह नहीं सकेंगे। यह क्या तूने गुहक-चंडाल की मित्रता समझ रखी है। वन के बन्दरों की सहायता से वह सीता का उद्धार करेगा ? राम की कितनी योग्यता है यह तो तो दिखाई ही पड़ रही है, वर्ना उसका भाई उसे देश से बाहर क्यों निकाल देता; और अपनी नारी को साथ लेकर वह जंगल भी क्यों आया होता; भाई को मार कर वह अपना राज्य क्यों नहीं छीन लेता। राम से जो कुछ बन पड़े आकर मेरा बिगाड़ ले; तुझसे मेरा क्या झगड़ा है ? शूर्पणखा की नाक उसने काट ली और नाहक की मैं जिन्दा हूँ। मैं राम की सीता उठा लाया हूँ, उस तपसी राम से जाकर बताना कि उसके जी में जो आवे सो कर ले। यदि सुमेरू पर्वत को मक्खी परिचालित कर दे, सती नारी अपने पति का त्याग कर दे, गरुड का धन यदि कौआ छीन लेने में समर्थ हो जाय, खल के शरीर में यदि पाप का लेश न रहे, जुगनू के निकलने से यदि चन्द्र का पतन हो जाय, फिर भी रावण को जीत कर रघुनाथ सीता को नहीं ले जा सकेगा।

अरे दुष्ट। ऐसा विचारकर मैं तुझे नहीं मारता। अब तू मुझमें क्रोध न पैदा कर मुझे गुस्सा न दिला। अङ्गदके वचन सुनकर राक्षसराज रावण दाँतोंसे होठ काटकर, क्रोधित होकर हाथ मलता हुआ बोला-

अरे नीच बंदर। अब तू मरना ही चाहता है। इसीसे छोटे मुँह बड़ी बात कहता है। अरे मूर्ख बंदर। तू जिसके बलपर कडुए वचन बक रहा है, उसमें बल, प्रताप, बुद्धि अथवा तेज कुछ भी नहीं है।

उसे गुणहीन और मानहीन समझकर ही तो पिताने वनवास दे दिया। उसे एक तो वह उसका दुःख, उसपर युवती स्त्रीका विरह और

फिर रात-दिन मेरा डर बना रहता है।

जिनके बलका तुझे गर्व है, ऐसे अनेकों मनुष्योंको तो राक्षस रात-दिन खाया करते हैं। अरे मूढ़। जिद्द छोड़कर समझ विचार कर।

रावण की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् अंगद यह बात बोला। अरे पापी, मेरे पिता को तू अब भी नहीं जानता ? जिसने तुझे काख में ठूँस दिया था, उसे भूल गया क्या ? अनन्तर चारों समुद्रों में स्नान करके वह घर लौट आया, फिर उसने तुझे मेरे पालने के ऊपर बाँध दिया और तब मैंने तुझे बहुत प्रकार से मारा था। जिस प्रकार चोर को बाँधकर रखते हैं, वैसे वहाँ तुझे बाँधकर अधोमुख रखा था। मैंने तेरे मुँह पर लातें मारी थीं। उसे तू कैसे भूल गया ? तू अति बड़े अपमान को प्राप्त हो गया था। तुझे उससे कोई शिक्षा नहीं प्राप्त हो गयी है। हे भाई, तू सकुशल कैसे रह पाएगा? बड़ी भारी भूल हो गई है। जिस प्रकार हवन-गृह में से कोई कुत्ता पुरोड़ाश लेकर भाग जाए, उस प्रकार हे चोर, अज्ञान बनकर तू जानकी को अपहरण कर लाया है। अब चोर के मार्ग को खोजते हुए भगवान राम सुबेल आ गये हैं। वे विभीषण को राज्य देंगे और तेरा अन्त कर देंगे। अरे मूर्ख रावण, तूने वेदों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले हैं। इसलिए तुझे दण्ड देने के लिए रघुवीर राम अवतरित हैं।

ऐ राजा लंकेश्वर ! मेरा वचन सुन ले, मैं यह समाचार देने आया हूँ कि श्रीराम ने सागर लाँघ लिया है, तेरा अब कोई निस्तार नहीं, तू यमद्वार के बहुत निकट पहुँच गया है। राजा होकर तूने परस्त्री का अपहरण किया, तेरे दिमाग में थोड़ी सी भी बुद्धि नहीं है। केवल ब्रह्मा के वरदान के कारण तूने पुरन्दर पर विजय प्राप्त की, लेकिन राम-नाम के कारण तेरी सब शक्ति लुप्त हो गई है। अपने प्राण बचा, सीता को जाकर लौटा आ और राम के चरणों की वन्दना कर। उनके समक्ष जाकर क्षमा माँग ले, इसके सिवा तेरा कोई उपाय नहीं है, तभी तेरे प्राण बच सकते हैं। तू निशाचर जाति का है, अपना पराया नहीं समझता, तेरे भाई ने जाकर राम से मित्रता कर ली। श्रीराम ने यह अंगीकार कर लिया है और वे अब विभीषण को लंका में सुप्रतिष्ठित करेंगे।

जब जगदीश राम क्रोध करेंगे, तब वे तुझे दण्ड देंगे, तेरा अन्त नाश कर डालेंगे। अंगद की ऐसी बातें सुनने के पश्चात रावण को क्रोध आ गया। रावण बहुत क्रुद्ध हो गया। क्रोध से उसकी आँखें लाल हो गयीं। जिस प्रकार अग्नि में घी का हवन कर दें तो वह जैसे प्रज्वलित हो जाती है, उस प्रकार अंगद की बातों ने उसकी क्रोधाग्नि के लिए घी का काम कर दिया, तो उसके नखशिखा में ज्वाला आग लग गयी। वह बोला- अरे वनचर, विचार करके बोल। बारबार विस्तार करते हुए क्या कह रहा है ? तू धूर्त लाज खोकर बोल रहा है। तुझे दूत समझकर मैं चुप रहा हूँ। अरे, मेरा नाम रावण है। तूने मेरे कार्यों को नहीं देखा। मैंने देवों को बन्दी बना लिया है और उनके द्वारा मैं अपनी सेवा करवा रहा हूँ। नन्दन वन में अनगिनत फूल हैं। इन्द्र उनके हार बनाकर लाता है। अग्निदेव मेरे वस्त्र धोता है। सूर्य नित्य दीप धारण किये रहता है। रसों का स्वामी वरुण मेरा मेरे लिए पानी भर देता है, तो चन्द्र मेरे मस्तक पर छत्र धरता है। नारी सरस्वती मेरे कार्यालय के कामकाज का विवरण लिखती है, तो वायुदेव मेरे द्वार पर झाडू लगाते हुए स्वच्छता करता है। ब्रह्मा मेरा पुरोहित कहाता है, तो नारद और तुम्बरू नित्य गाया करते हैं। मेरे इष्टदेव हैं महादेव शिवजी, जिनकी मैं तीनों काल सेवा कर रहा हूँ। इस प्रकार मैं रावण बलवान हूँ, मैं नरों-वानरों का नाश कर दूँगा। तब अंगद ने कहा- रे पापमति, तू मिथ्या प्रलाप क्यों कर रहा है। उस एक कपि का बल तुझसे सहन नहीं हुआ, जिसने तेरे अशोक वन को उजाड़ डाला था, जिसने असंख्य राक्षसों को तेरे पुत्र अक्षकुमार सहित मार डाला था। जब वह लंका को जलाकर सकुशल चला गया, तब तेरा बल कहाँ गया था ? ऐसे अनेक बलवान कपि हैं। राम के वे दूत तेरी समझ में नहीं आ रहे हैं। रे मन्दमति, जो राम त्रिभुवन के स्वामी हैं, उन्हें तू मनुष्य समझ रहा है। रे अज्ञान, जिस प्रकार छोटा नाला गंगा के समान कभी भी नहीं हो सकता, उस प्रकार साधारण मनुष्य और राम समान नहीं हैं। ऐरावत और कोई दूसरा हाथी, अथवा उच्चैश्रवा इन्द्र का घोड़ा और कोई अन्य घोड़ा- दोनों समान नहीं हो सकते। फिर जिस प्रकार जुगनू और सूर्य समान नहीं हो सकते, उस प्रकार राम और कोई अन्य मनुष्य समान नहीं हैं। मेंढ़क और गरुड़ कैसे समान हो सकते हैं। वायुनन्दन हनुमान और कोई अन्य वानर, अथवा शिवजी का वाहन नन्दी और कोई अन्य पशु समान नहीं हैं। समझ ले कि पारस और साधारण पत्थर तथा कल्पवृक्ष और अन्य वृक्ष जिस प्रकार समान नहीं हैं, उस प्रकार राम और अन्य मनुष्य समान नहीं हैं। जिस प्रकार कोई भूमि पर रेंगनेवाला साधारण सर्प और फणिपाल शेषनाग, अथवा हंस और बगुला समान नहीं हो सकते, उसी प्रकार राम और अन्य मनुष्य समान नहीं हैं, उन को मूर्ख ही समान समझता है। अरे, तू शिवजी के वरदान को प्राप्त हो गया और उससे अभिमान करते हुए तू उन्मत्त हो गया है। सीता आदिमाया, भवानी हैं। वे निर्भयतापूर्वक तेरे रूप में भोग ग्रहण करेंगी। राम मानो रणभूमि में होम-कुण्ड बनाएँगे; उसमें राक्षसोंके मस्तकों का हवन करेंगे, और पूर्णाहुति के समय क्रोधपूर्वक तेरे दसों मस्तक श्रीफल नारियल की भाँति होम में डाल देंगे। तुझ जैसे वनचर पशु को मार डालने के लिए

जगत्पिता राम सुबेल पर आये हैं। जब योद्धा वीर अंगद ने ऐसा कहा, तो रावण क्रुद्ध होकर बोला। अरे पामर, मर्कट के बच्चे, राम ने तेरे बाप को मार डाला और यह राज्य सुग्रीव को दे दिया। तू दास होकर उसका काम कर रहा है। ऐसे राम को स्वामी समझ रहा है और अब तू अपने पिता का देनदार रहा है। तेरी माँ ने व्यभिचार किया है। तुझ जैसे पुत्र को धिक्कार है। तेरे वैरी हैं सुग्रीव और राम; उनका तू दास होकर रह रहा है। इसलिए यदि तू राम के चरणों की सेवा करना छोड़कर मेरे आश्रय में आएगा, तो मैं आज सुग्रीव को मार डालूँगा और तुझे किष्किन्धा का राज्य सौंप दूँगा। यह सुनकर अंगद बोला, तू यह झूठी बात कह रहा है। संसार तेरे पुरुषार्थ को जानता है।

अंगद ने कहा, अरे रावण, मेरी माँ को तू कुलटा कहता है, सच-सच बता तू किसका बेटा है। तेरा जन्म ब्राह्मणवंश में हुआ, त्रिभुवन में यहीं विदित है। तू विश्वश्रवा का बेटा है और पुलस्त्य का पौत्र है। विश्वश्रवा महातपा थे- विश्वभर में उनका यश है। अगर तू उनका बेटा है तो राक्षस कैसे बन गया। तेरी माँ राक्षसी है और पिता ब्राह्मण। तूने दानव-कन्या से विवाह कर लिया। तेरी बहन कुम्भनसी को दैत्य चुरा ले गया। तेरी जाति कौन सी है कुछ विचार करके देख। सती रम्भावती तुझको श्वसुर कहकर पुकारती, तूने उसके साथ पर्वत की गुहा में बलात्कार किया। अपनी खोट नहीं देखता, दूसरे को ऐब लगाता है। बार-बार तू बड़ाई करता है, मर कहीं के। उसके सामने अपनी बड़ाई किया कर, जो तेरे बारे में कुछ जानता न हो।

वे राम काल के काल हैं, जिनकी शिवजी और ब्रह्मा सेवा करते हैं। वे अखंड, एक अविनाशी भगवान हैं। ऐसा समझकर मैं उनका दास हो गया हूँ। वे पूर्णकाम राम अब तुझे मार डालने के लिए त्वरायुक्त अतिशीघ्र काम करने के लिए उद्यत हो गये हैं। जब श्रीजगदीश कोप करेंगे, तो युद्ध में तेरे मस्तकों को पीस डालेंगे। मूर्ख को सीख किसलिए दें ? वह तो बिना दण्ड दिये नहीं मानता। क्या करूँ ? जो राम की आज्ञा जो नहीं है। अन्यथा, मैं तुझे इसी स्थान पर मार डालता।

रावण बोला- अब तू तेरा उपदेशक का कार्य बन्द कर। तू तपस्वी का दूत है या आचार्य। अपनी मर्यादा के भीतर ही रह। अब कोई झगड़ा बढ़ाने का तुझे कोई अधिकार नहीं है। तेरा बीचमें क्या काम है। वे दोनों निपट लेंगे जिनमें आपस में लड़ाई ठन गयी है। तो तू जा पेड़ों पे उछल-कूद कर। क्यों यहाँ पर बकबक लगायी है।

तब अंगद बोले- ठीक है महाराज, यह बकबक नहीं है आवश्यक विषय है। यदि दोनों ओर सन्धि होगी तो सैनिक बलिदान नहीं होंगे। सब जगह आपके ठाठ-बाट बने रहेंगे। जनपथ सुनसान नहीं होंगे। यदि रणचण्डी जाग गयी तो यह धरती रक्त से सिंचित होगी। जय-पराजय तो बाद में होगी पहले तो यहाँ महाप्रलय हो जायेगी। यदि आराधकता फैली तो गृहयुद्ध हो जायगा। वही हरि-भरी लंका स्मशानभूमि बन जायगी। बच्चे अनाथ हो जायँगे, बहुए विधवा हो जायंगी। लाखों पुत्रोंकी मातायें निपुत्र हो जायगी और घर-घर में कोहराम मच जायगा। जब तक इस लंका के राजा की यह सुन्दर मूर्ति शोभायमान है तब तक मेरे स्वर्गीय पिता बालि की भी सब जगह कीर्ति जीवित है। आपको देखकर तत्काल ध्यान में आ जाता है कि ये वही रावण राजा है जिसे बालिने अपनी काख में दबायें रखा था। जिस दिन यह पराक्रमी दशमुख पृथ्वीतल से उठ जायगा उसी दिन से मेरे पिता बालि का भी यश इस भूमंडल से उठ जायगा। इसलिए हे दशानन, जीओ और लम्बे अर्से तक खूब जीओ। जिनेका साधन भी यही है सियावर रघुवीर के सेवक बन जाओ।

अब धन-प्राण से विनष्ट होने का दिन आ गया है। सिंह के प्रति सियार की अकड़-धकड़ बेकार है- राम से छेड़-छाड़ करके तू लंकापुरी के ध्वंस की स्थिति ले आया।

तब रावण बोला- हे वानर, बन्द कर अब यह वचन व्यंग आघात। बहुत हो चुका छोटे मुख से कर रहा बहुत बड़ी बात। जो कायर और भयातुर होते हैं वे ही सन्धि-संदेश भेजते है। सच्चे वीर तो युद्ध में अपना सिर कटा देते है पर सर नहीं झुकाते है। मेरी दुर्दण्ड चंडता से बढ़कर सूर्य का तेज भी प्रचण्ड नहीं है। तू राजदूत है इस कारण मैं तुझे दण्ड नहीं दे रहा। पर मैंने मन में निश्चय ठान लिया है कि तेरे दुर्वचनों का बदला लूँगा। जब तू इस राजसभा से जायगा तब तुझको मरवा डालूँगा।

तब अंगद बोले- अब मुझे शूली का आदेश हो चुका तो अब तू मेरा अन्तिम आदेश खड़ा-खड़ा सुन ले। हे अज्ञानी, अभिमानी राक्षस तू किस घमंड में फूला है। इस संसार में मनुष्य इस तरह है जैसे जल पर बबूला है। तू क्या अपनी शेखी बघार रहा है कि त्रिभुवन को मैंने जीता है। तूने कभी यह लोकोक्ति नहीं सुनी, अन्यायी कभी अधिक दिनों तक नहीं जीता है। जब मरने के दिन आते हैं थोड़ी उम्र रह जाती है और बुद्धि भी निपट उल्टी होकर अभिमान के जल में बह जाती है। पापोंने तुझे अन्धा किया है तेरा अन्तिम दिन आनेवाला है। दो-चार रोज में रावण तू इस जगसे जानेवाला है। उस जगमें जाकर वानरराज बालिसे मिलकर सब मेरी कुशल सुना देना। सुग्रीव का सब इन्तजाम

और हनुमान का शौर्य और काम बता देना। जाते-जाते लंका का राज्य विभीषण को देते जा और अपने साथ कुम्भकर्ण और मेघनाथ को साथ लेते जा। हे लंकानाथ महल में जाकर अपने रानियों से तय करले कौन-कौन सी रानियाँ तेरे साथ सती हो जायेगी।

सारा शास्त्र पढ़कर भी तू वज्र-मूरख रह गया- कहने पर भी सुनता नहीं, यही तो अफसोस है। राम रघुमणि पूर्णब्रह्म नारायण हैं- धरती पर दुष्टों का संहार करने के लिए उन्होंने जन्म लिया। हे मदमत्त निशाचर ! हे पातकी रावण ! तू अपने पूरे वंश के साथ ध्वंस होगा, ऐसे लक्षण दिखाई दे रहे हैं। तू यह नहीं समझ सका कि राम विष्णु हैं और सीता साक्षात् लक्ष्मी। दुष्टों के दमन के लिए दशरथ के घर उन्होंने जन्म लिया है। मदमत्त होकर तूने जानकी को केशों से पकड़ा- इसी अपराध से तू अपने वंश के साथ चौपट हो गया। सुन ले रे अभागे ! विधाता तुझसे विमुख है, मरने के निमित्त ही तू राम की सीता को ले आया। रात-दिन दस हजार देवकन्याओं से सम्बन्ध रखता है, फिर भी निगोड़े, तू बिना पर-स्त्री रह नहीं सका ? कामरस में मत्त होकर तू जाल में फँस गया है, बौना होकर तू चाँद पकड़ने लपका था। सूर्यवंश के चूड़ामणि-सदृश राजा दशरथ की पूजा देवता गन्धर्व तक करते हैं। उन्हीं के घर में रघुमणि भगवान ने स्वयं जन्म लिया। रे रावण ! अब तू निर्वंश हुआ। कामरस में डूब गया, व्यसन में मस्त हो गया। तक्षक ने तुझे डस लिया, अब औषध क्या कर सकता है?

यह सुनते ही लंकाधीश्वर आग बबूला हो गया और बोला- हे दुर्भाषी ठहर, जिस बल के कटु शब्दों में तूने मुझको झक़झोरा है वह तपस्वी तो कल का बालक है, बल-बुद्धि ज्ञान में कोरा है। जब उसके पिताने उसे पूर्णहीन जाना तब उसे देश से निकाल दिया। वह तो नारी विरह में रो रहा है और इस दु:खने उसको मृतप्राय बना दिया। मेरे निशाचर विकट मोहवाले जो मानवभक्षी है ऐसे-ऐसे भक्षियोंको तो एक-एक रात में खा जाते है।

प्रभु के प्रति दशशीश जब ऐसे अपशब्द बोला तब अंगद के हृदय में क्रोध की ज्वाला भभक उठी और बोला- जो सेवक अपने कानोंसे स्वामी की निन्दा सुनता है उसका परिहार नहीं करता उसे तो गौवध का पाप लगता है। क्रोधाग्नि दबाये दबी नहीं। अचलेश्वर का अपमान हुआ फिर भी अचला (पृथ्वी) तू मचली नहीं। तब यह सोचकर अपने हाथ इस पृथ्वी पर दे मारें। वानरश्रेष्ठ अंगद बहुत जोरसे कटकटाये शब्द किया और उन्होंने तमककर जोरसे अपने दोनों भुजदण्डोंको पृथ्वीपर दे मारा। पृथ्वी हिलने लगी, जिससे बैठे हुए सभासद गिर पड़े और भयरूपी पवन भूत-से ग्रस्त होकर भाग चले। धरती भी डगमगा उठी, पूरी सभा का सिर चक्राया, लगा कोई भूकम्प आया है। समूची लमा हिल उठी इस प्रकार जैसे जलमें नन्हीं नौकाको सहसा बड़ी हिलारेका थपेड़ा लग जाय। दशग्रीवकी सभामें सबके-सब अपने आसनोंसे मुखके बल गिरे। स्वयं रावण गिरते-गिरते बचा; किंतु उसके सब मुकुट भूमिपर गिर पड़े। अङ्गदने चारों मुकुट सुबेल-शिखरकी ओर पूरे वेगसे झटक दिये।

लंका में हलचल आया है। यह देखकर लंकेश्वर का रंग उड़ गया। दशानन सिंहासन से चक्कर खाकर धरती पर गिर गया। रावण गिरते-गिरते सँभलकर उठा। उसके अत्यन्त सुन्दर मुकुट पृथ्वीपर गिर पड़े। कुछ तो उसने उठाकर अपने सिरोंपर सुधारकर रख लिया और कुछ अंगदने उठाकर प्रभु श्रीरामके पास फेंक दिये।

दिनमें ही उल्कापात। रावणके ज्योतिर्मय रत्न-मुकुट सूर्यकी रश्मियोंसे चमकते वेगसे आते दीखे तो वानरोंमें भय व्याप्त हो गया- दशग्रीवने कोई चार दिव्यास्त्र तो नहीं चलाये।

पवनकुमारने कूदकर चारोंको पकड़ लिया और लाकर श्रीरामके चरणोंके समीप रख दिया। वानरोंका समूह उन अत्यन्त प्रकाश पुञ्ज मुकुटोंको देखने कुतूहलवश घिर आया। श्रीरामके संकेतपर उन्हें हाथमें उठाकर सुग्रीवने सबको दिखलाया- ये दशग्रीवके मुकुट है। लगता है, अपने युवराजने छीन कर फेंके है। युवराज अंगदकी जय। वानर जयघोष करते कूदने लगे।

मुकुटोंको आते देखकर वानर भागे। सोचने लगे विधाता। क्या दिनमें ही उल्कापात होने लगा तारे टूटकर गिरने लगे ? अथवा क्या रावणने क्रोध करके चार वज्र चलाये हैं, जो बड़े धायेके साथ वेगसे आ रहे हैं ?

प्रभुने उनसे हँसकर कहा- मनमें डरो नहीं। न उल्का हैं, न वज्र हैं और न केतु या राहु ही हैं। अरे भाई। ये तो रावणके मुकुट हैं; जो बालिपुत्र अंगदके फेंके हुए आ रहे हैं।

पवनपुत्र श्रीहनुमानने उछलकर उनको हाथसे पकड़ लिया और लाकर प्रभुके पास रख दिया। रीछ और वानर तमाशा देखने लगे। उनका प्रकाश सूर्यके समान था।

रावण बोला- वाचाल वानर। अपने उस कंगले स्वामी का संदेश कह। रावण अंगद द्वारा चर्चित सारे प्रसंग टाल गया, क्या चाहता

है तेरा कंगला स्वामी कि मैं उसका वध न करूँ और उसे जीवित लंका से वापस लौट जाने देने की कृपा करूँ ?

अपनी कृपा तू अपने पास रख। अंगद बोले, और राम हमारे स्वामी नहीं-नायक हैं। स्वामी-सेवक का संबंध हमारे समाज में नहीं है। हमने अपने नये समाज में इन संबंधों को समाप्त कर, परस्पर सहयोग और बंधुत्व का संबंध स्थापित किया है।

मुझे समाजशास्त्र मत पढ़ा। मुझे मालूम है, तुम लोगों ने एक विजातीय के हाथों में अपने मन-प्राण गिरवी रख दिए हैं। रावण बोला, अपना संदेश कह।

तो वही सुन। अंगद बोले, हमारी सेना के महानायक आर्य राम ने कहा है, हम युद्ध को मानव मात्र के लिए एक अभिशाप मानते हैं। हम अकारण हिंसा नहीं चाहते। हम बिना कारण के किसी भी मनुष्य का रक्त बहाना नहीं चाहते, चाहे वह मनुष्य किसी भी जाति अथवा देश का क्यों न हो। लंकावासियों से हमारा कोई विरोध नहीं है; किंतु रावण हमारा अपराधी है। रावण देवी सीता को लौटा दे और अपने अपराधों का दण्ड ग्रहण करने के लिए स्वयं को न्यायार्थ हमारे सम्मुख प्रस्तुत करे; अन्यथा युद्ध में हुई लंकावासियों की क्षति का दायित्व हम पर नहीं होगा।

ऐसी बात है तो वह युद्ध क्यों नहीं करता ? बार-बार संदेश क्यों भेजता है ? रावण उग्र स्वर में बोला।

वे तो युद्ध के लिए तेरे द्वार पर आए खड़े हैं। अंगद मुसकराकर बोले, तू ही अवगुँठनवती के समान प्राचीर के भीतर छिपा बैठा है।

अंगद बोले- अब श्रीराम की अन्तिम चेतावनी तुझे सुनाता हूँ। उन्होंने कहा है तुम्हारे अपराधों का दण्ड देने लंका के द्वार पर आ गया हूँ। ब्रह्मा के वर के कारण तुझे जो अभिमान है उसके नष्ट होनेका अब समय आ गया है। राक्षसाधम यदि तुम सीता को लेकर मेरी शरण में नहीं आए तो मैं पृथ्वी को राक्षस विहीन कर दूंगा। जिस बल के भरोसे तुमने सीताका छलसे हरण किया है उस बल को आज युद्धभूमि में दिखाओ। मैं तेरे मन्त्री पुत्र, बन्धु-बान्धवों सहित पराभव करूँगा क्योंकि तुम्हारे मारे जानेसे तीनों लोक निश्चिन्त हो जायेंगे। इस रावण रूपी जहाज के डुबने का समय आ गया है। अब भी समय है जिसे श्रीराम की शरण में आना हो आ जाय।

माता कौसल्याका आनन्द बढ़ानेवाले रघुकुलतिलक श्रीरामने तुम्हारे लिये यह संदेश दिया है- नृशंस रावण। जरा मर्द बनो और घरसे बाहर निकलकर युद्धमें मेरा सामना करो।

तुम देवता, दानव, यक्ष, गन्धर्व, नाग और राक्षस- सभीके शत्रु हो। ऋषियोंके लिये तो कंटकरूप ही हो; अत: आज मैं तुम्हें उखाड़ फेकूँगा। अत: यदि तुम मेरे चरणोंमें गिरकर आदरपूर्वक सीताको नहीं लौटाओगे तो मेरे हाथसे मारे जाओगे और तुम्हारे मारे जानेपर लमाका सारा ऐश्वर्य विभीषणको प्राप्त होगा।

रावण बोला- वानर। अब तूने अपने जीनेका अधिकार खो दिया है। इसी सभा में इसका सिर काटकर इसे रावण की शक्ति का आभास करा दो। आज्ञा का पालन हो।

वहाँ सभामें क्रोधयुक्त रावण सबसे क्रोधित होकर कहने लगा कि- बंदरको पकड़ लो और पकड़कर मार डालो। अंगद यह सुनकर मुसकराने लगे- रावण फिर बोला- इसे मारकर सब योद्धा तुरंत दौड़ो और जहाँ-कहीं रीछ-वानरोंको पाओ, वहीं खा डालो। पृथ्वीको बंदरोंसे रहित कर दो और जाकर दोनों तपस्वी भाइयों राम-लक्ष्मण को जीते-जी पकड़ लो।

रावणके ये कोपभरे वचन सुनकर तब युवराज अंगद क्रोधित होकर बोले- तुझे गाल बजाते लाज नहीं आती। अरे निर्लज्ज। अरे कुलनाशक। गला काटकर आत्महत्या करके मर जा। मेरा बल देखकर भी क्या तेरी छाती नहीं फटती।

अरे स्त्रीके चोर। अरे कुमार्गपर चलनेवाले। अरे दुष्ट, पापकी राशि, मन्दबुद्धि और कामी। तू सन्निपातमें क्या दुर्वचन बक रहा है ? अरे दुष्ट राक्षस। तू कालके वश हो गया है।

इसका फल तू आगे वानर और भालुओंके चपेटे लगनेपर पावेगा। राम मनुष्य हैं, ऐसा वचन बोलते ही, अरे अभिमानी। तेरी जीभें नहीं गिर पड़तीं ? रे दशकन्ध। जिसने एक ही बाणसे बालिको मार डाला, वह मनुष्य कैसे है ? अरे कुजाति, अरे जड। बीस आँखें होनेपर भी तू अन्धा है। तेरे जन्मको धिक्कार है।

श्रीरामके बाणसमूह तेरे रक्तकी प्याससे प्यासे हैं। वे प्यासे ही रह जायँगे इस डरसे, अरे कड़वी बकवाद करनेवाले नीच राक्षस। मैं तुझे छोड़ता हूँ। मैं तेरे दाँत तोड़नेमें समर्थ हूँ। पर क्या करूँ ? श्रीरघुनाथने मुझे आज्ञा नहीं दी। ऐसा क्रोध आता है कि तेरे दसों मुँह तोड़ डालूँ और तेरी लमाको पकड़कर समुद्रमें डुबा दूँ।

तेरी लमा गूलरके फलके समान है। तुम सब कीड़े उसके भीतर अज्ञानवश निडर होकर बस रहे हो। मैं बंदर हूँ, मुझे इस फलको खाते क्या देर थी ? पर उदार कृपालु श्रीरामने वैसी आज्ञा नहीं दी।

अंगदकी युक्ति सुनकर रावण मुसकराया और बोला- अरे मूर्ख। बहुत झूठ बोलना तूने कहाँ सीखा ? बालिने तो कभी ऐसा गाल नहीं बजाया। जान पड़ता है तू तपस्वियोंसे मिलकर लबार हो गया है।

अंगदने कहा- अरे बीस भुजावाले। यदि तेरी दसों जीभें मैंने नहीं उखाड़ लीं तो सचमुच मैं लबार ही हूँ।

रावण बोला- इस ढीठ वानर को बाँधने को रस्सियाँ लाओ और लोहे की गरम छड़ें लेकर इसका सारा शरीर झुलसाओ। मुख्य-मुख्य योद्धा यहाँ आओ और अपना आदर्श पूर्ण कर दिखलाओ। उन दो वनवासी लड़कों को मेरे सन्निकट बाँधकर लाओ। अगर यह कार्य कदाचित् भारी हो तो बेटा मेघनाथ तुम स्वयं जाओ। तब बालिकुमार मेघ सम गरजकर बोले- ओ झूठे स्त्री चोर, मूर्ख तुझे क्या सन्निपात हो गया। तेरे लिये कोई बड़ा वैद्य लेकर आऊँ जो तुझे चन्द्रोदय दिखला दे। तेरी लंका तो गूलर के फल के समान है और इन रस में भुनगें कीड़े जैसे बसते हैं। वानरों का तो स्वभाव ही है कि वो फल खाकर पेड़ तोड़ते है। जिस घर में हरि का नाम है वो तो उजड़ जाए जल जाए और जो रसना हरि का नाम नहीं भजती वह सड़ जाए, गल जाए। सागर को क्या गरज पड़ी है जो किसी ताल से मेल करें। दिवाकर-दिवानाथ को क्या जरूरत है जो जाकर दीपक से खेल करे। अजान की सी बातें मत कर जानकी जान की साथी है।

अंगद बोला- हे गर्वोन्मत्त महान दशशीश, हे मूर्ख, जानकी जानकीश की जान है। अब तुझे यही कहता हूँ जानकी दे दे नहीं तो सुन जानकी तेरे जान की प्यासी है। अबला तू कलपाएगा तो कल कभी तू देख नहीं पायेगा। पापी पातकों का बदला आज नहीं तो कल पायेगा। असुरों के तू गुण गाता है तो तेरा धोखा है, छल है।

महाराज दशानन ये बिचारे आपकी शक्ति मुझे क्या दिखाएंगे मैं आपको अपनी शक्ति दिखाता हूँ। जय श्रीराम कहकर अंगदने छलांग लगाकर पूँछके आसन को समेट अपने पैरको जमीनपर पटककर गाड दिया और बोले हे लंकेश, यदि आपको अपने योद्धाओं की शक्ति का बड़ा अभिमान है तो मैं श्रीराम की ओर से आपके समस्त योद्धाओं को चुनौती देता हूँ मैं अपना पैर आपके इस दरबार में जमा देता हूँ यदि कोई आपका कोई योद्धा इस पैर को धरती से उठा सके तो मैं अपनी स्वामी की ओर से यह वचन देता हूँ कि वो अपनी हार मान कर इस लंका से वापिस चले जायेंगे। जय श्रीराम। बारी-बारी से सभी योद्धाओं ने अंगद का पैर हिलाने का प्रयत्न किया।

शिवजी कहते हैं- हे उमा। जिन श्रीरामके भ्रूविलास भौंहके इशारे- से विश्व उत्पन्न होता है और फिर नाशको प्राप्त होता है; जो तृणको वज्र और वज्रको तृण बना देते हैं अत्यन्त निर्बलको महान् प्रबल और महान् प्रबलको अत्यन्त निर्बल कर देते हैं, उनके दूतका प्रण, कहो, कैसे टल सकता है ?

अड़कर, बढ़कर, गिरकर, पड़ककर, उठ-उठ कर सभी योद्धा होड़ लगाते थे। पर पैर किसीसे भी नहीं हठा उस हठीले का। ऐसी-वैसी की तो गिनती ही क्या इन्द्रजीत का भी बल वहाँ घटा। पृथ्वी काँपी, भूकम्प हुआ पर पाँव तिलभर भी नहीं हटा। जैसे करोड़ों विघ्न आनेपर भी संतका मन नीतिको नहीं छोड़ता, वैसे ही वानर अंगद का चरण पृथ्वीको नहीं छोड़ता। यह देखकर शत्रु रावण का मद दूर हो गया। जिसस प्रकार कामी जन के मोहमंत्र से सती नारी का मन तनिक भी विचलित नहीं हो जाता, जिस प्रकार ज्ञानी व्यक्ति का चित्त उसके अपने अधीन रहता है और संसार के दु:खों को देखकर वह नहीं डिग जाता, उस प्रकार असुरों के यत्न करते रहने पर भी अंगद का पाँव नहीं हिला।

मेघनाद इन्द्रजीत भी उसके पैर को नहीं हिला सका तब दशानन स्वयं सिंहासन से उठकर अंगद का पैर उठाने आया। जैसेही रावणने अंगद के पैर पकड़नेका प्रयत्न किया अंगद ने अपना पैर उठा लिया जिसके धक्के से रावण मुंह के बल धरतीपर गिरा।

रावण यह देखकर खिसिया गया। विकलांग, विह्वल, विकल, व्याकुल, विचलित, बलवान रावण हुआ। लज्जा की नदी में डूबा, और उसका अभिमान पानी-पानी हो गया। कपिश का यह क्रूर हास्य देखकर रावण जल उठा और आँख बदलकर बोला अरे धूर्तों के सिरमौर जा हट जा भाग यहाँ से अन्यथा बुरा फल पाएगा। अब तू फिर जबान चलायेगा तो मैं अब तुझपर तलवार चलाऊँगा। उन तपस्वी व्यक्तियों से जाकर कह दे मैं रण करने को तत्पर हूँ। यहाँ क्यों कटने-मरने को आये वे उल्टे पैर घर लौट जायें।

अंगद बोला- महाराज मेरे चरण पकड़कर क्या होगा। यदि चरण ही पकड़ना हो तो प्रभु श्रीराम का पकड़ो जिससे तुम्हारा कल्याण हो। जिनकी चरणोंमें मुक्ति का द्वार है। मेरी चुनौती तो आपकी योद्धाओं को थी आपको नहीं। आपको तो मैं यहीं कहूँगा श्रीराम का

चरण पकड़ लीजिये आपका कल्याण हो जायेगा। मैं कल सूर्योदय तक का समय देता हूँ इसके पश्चात् लंकापर चढ़ाई कर दी जायेगी।

हे महाराज मैं तो रामादल को जाता हूँ मेरी अन्तिम प्रार्थना आपको जाते-जाते समझा देता हूँ। यदि रघुराई के शरण में गये तो जीते जी तर जाओगे अन्यथा अकाल मृत्यु में बेमौत स्वयं मर जाओगे। जिस तन पर आपको अभिमान है वह एक दिन छूट जायेगा। बसन्तकालका अन्त यहीं है खिला हुआ उपवन उजाड़ हो जायेगा। जो मिट्टी है, वो मिट्टी है, जो अपने एक रंग में नहीं रहे उसकी रंगत कैसी। जो वस्तु सर्वथा मिथ्या है उसमें क्या अनुराग बढ़ाना। जो बिरवा ग्रीष्म ऋतु में जल जायें उसको जल से सींचवाने से क्या लाभ। जो काल सदा-सर्वदा साथ न रहे उस कालके साथ क्या सन्धि। जिन पुष्पों को मुरझाने है उनकी मादक सुगन्धी का क्या अर्थ। यह मिट्टी की काया मिट्टी में ही मिल जाना है उसे धूल में खोजना सिर्फ धूल उडाना है। इसलिए हे रावण उठो, सौन्दर्य उपासन को छोड़ो और सत्साधन में लग जाओ। भक्ति का यही मार्ग ठीक है। अपने मनको निर्मल कर डालो। यह वासना डायन की तरह बढ़ती है जितनी इसको बढ़ाओ। सर्प को जितना दूध पिलाओ उतना ही जहर उगलता है। इस कारण राज्य लोभ छोड़कर आनन्दधाम में जाओ यदि सच्चा आराम चाहते हो तो राम नाम का स्मरण करो। जो अन्नदाता को भूल गया वह आठों याम रोते ही रहता है। यह सब कुछ तुम जानते हो फिर भी जो काम करने का है वो नहीं करते हो। हे रावण, यह धरा धाम, धन-धान्य सभी साथ नहीं जायेंगे यहीं रह जायेंगे। यदि समय निकल गया तो वह समय हाथ में नहीं आयेगा। जब सन्ध्या होने लगी तब इसप्रकार चेतावनी देकर बालिकुमार सुबेल पर्वतपर राम के पास लौटे।

रावण बोला- इन्द्रजित पकड़ लो इसे भागने न पाये। अंगद उछलकर सुबेल पर्वत पर श्रीरामके पास आ गये। रावण खिसियाकर उदास मन से अपने अंत:पुरमें आ गया।

अंगद को आता देखकर रघुनाथ उठे सम्मान किया। पूरे कपि मंडल से सारा संवाद बखान किया।

अंगद ने बताया स्वामी यह मुकुट नहीं है यह तो भूपतिमें रहनेवाले चार सहज सद्गुण है साम, दाम, दण्ड, भेद जो इन चार गुणोंसे सम्पन्न ऐश्वर्य, उदार्य, शौर्य, न्याय। मरणासन्न रावणको त्यागकर वे सकल सद्गुणैकधाम इन श्रीचरणोंमें आश्रय लेने आये है।

अंगद बोला- मैंने रावण को बहुत शिक्षा दी परन्तु उस अज्ञान ने उसे नहीं माना। कौए को दूध से स्नान कराएँ फिर भी वह राजहंस नहीं होता, सर्प को दूध और शक्कर पिलायें फिर भी मुख का विष नष्ट नहीं होता। ढोर, मूर्ख और पशु इनके अतिरिक्त दुर्मुखी स्त्री वे सब बिना दण्ड के नहीं मानते। इसलिए हे प्रभु अब युद्ध करना निश्चित हैं। युद्ध किये बिना आप सीता को प्राप्त नहीं कर सकते।

सन्ध्या हो गयी जानकर दशग्रीव विलखता हुआ उदास होकर महलमें गया। मन्दोदरीने रावणको समझाकर फिर कहा-

हे कान्त। मनमें समझकर विचारकर कुबुद्धिको छोड़ दो। आपसे और श्रीरघुनाथसे युद्ध शोभा नहीं देता। उनके छोटे भाईने एक जरा-सी रेखा खींच दी थी, उसे भी आप नहीं लाँघ सके, ऐसा तो आपका पुरुषत्व है।

हे प्रियतम। आप उन्हें संग्राममें जीत पायेंगे, जिनके दूतका ऐसा काम है ? खेलसे ही समुद्र लाँघकर वह वानरोंमें सिंह हनुमान आपकी लंकामें निर्भय चला आया। रखवालोंको मारकर उसने अशोकवन उजाड़ डाला। आपके देखते-देखते उसने अक्षकुमारको मार डाला और सम्पूर्ण नगरको जलाकर राख कर दिया। उस समय आपके बलका गर्व कहाँ चला गया था ?

अब हे स्वामी। झूठ व्यर्थ गाल न मारिये डींग न हाँकिये मेरे कहनेपर हृदयमें कुछ विचार कीजिये। हे पति। आप श्रीरघुपतिको निरा राजा मत समझिये, बल्कि अग-जगनाथ चराचरके स्वामी और अतुलनीय बलवान् जानिये।

श्रीरामके बाणका प्रताप तो नीच मारीच भी जानता था। परन्तु आपने उसका कहना भी नहीं माना। जनककी सभामें अगणित राजागण थे। वहाँ विशाल और अतुलनीय बलवाले आप भी थे।

वहाँ शिवजीका धनुष तोड़कर श्रीरामने जानकीको ब्याहा, तब आपने उनको संग्राममें क्यों नहीं जीता ? इन्द्रपुत्र जयन्त उनके बलको कुछ-कुछ जानता है। श्रीरामने पकड़कर केवल उसकी एक आँख ही फोड़ दी और उसे जीवित ही छोड़ दिया।

शूर्पणखाकी दशा तो आपने देख ही ली। तो भी आपके हृदयमें उनसे लड़नेकी बात सोचते विशेष कुछ भी लज्जा नहीं आती।

जिन्होंने विराध और खर-दूषणको मारकर लीलासे ही कबन्धको भी मार डाला; और जिन्होंने बालिको एक ही बाणसे मार दिया, हे दशकन्ध। आप उन्हें उनके महत्त्वको समझिये।

जिन्होंने खेलसे ही समुद्रको बँधा लिया और जो प्रभु सेनासहित सुबेल पर्वतपर उतर पड़े, उन सूर्यकुलके ध्वजास्वरूप कीर्तिको बढ़ानेवाले करुणामय भगवान्ने आपहीके हितके लिये दूत भेजा।

जिसने बीच सभामें आकर आपके बलको उसी प्रकार मथ डाला जैसे हाथियोंके झुंडमें आकर सिंह उसे छिन्न-भिन्न कर डालता है। रणमें बाँके अत्यन्त विकट वीर अंगद और हनुमान जिनके सेवक हैं।

हे पति। उन्हें आप बार-बार मनुष्य कहते हैं। आप व्यर्थ ही मान, ममता और मदका बोझा ढो रहे हैं। हा प्रियतम। आपने श्रीरामसे विरोध कर लिया और कालके विशेष वश होनेसे आपके मनमें अब भी ज्ञान नहीं उत्पन्न हुआ।

काल दण्ड लाठी लेकर किसीको नहीं मारता। वह धर्म, बल, बुद्धि और विचारको हर लेता है। हे स्वामी। जिसका काल मरण-समय निकट आ जाता है, उसे आपहीकी तरह भ्रम हो जाता है।

आपके दो पुत्र मारे गये और नगर जल गया। जो हुआ सो हुआ हे प्रियतम। अब भी इस भूलकी पूर्ति समाप्ति कर दीजिये। श्रीरामसे वैर त्याग दीजिये, और हे नाथ। कृपाके समुद्र श्रीरघुनाथको भजकर निर्मल यश लीजिये।

उधर अंगदके लमासे प्रस्थान करते ही रावण राजसभासे उठकर अपने अन्त:पुरमें पहुँचा। मन्दोदरीने फिर पतिके चरण पकड़े- मेरे स्वामी। अब भी आप सीताको देकर रामसे सन्धि कर लो। उनके इस दूसरे दूतका भी पराक्रम आप देख चुके। यह भी मेरा एक पुत्र मार गया। आपके सब शूर जिसका पद नहीं हिला सके, उसके स्वामीके साथ संग्राम करके विजयकी आशा है ? ये दोनों दूत हनुमान-अंगद लमा उखाड़कर स्थानान्तरित कर सकते है। आप हठ त्याग दें।

मन्दोदरी ने कहा, हे राजन, सुनिए। मन में एक बात पर कुछ विचार तो कीजिए। कुल का नाश ही आप क्यों करने जा रहे हैं ? दावानल में आप किसलिए मरने जा रहे हैं ? राम से बैर ही करके, कहिए कि कौन टिककर बैठा है ? इसलिए हे राजा, आप हठ छोड़ दीजिए क्योंकि राम कदापि नहीं जीते जाएँगे। इसलिए आप युद्ध करने नहीं जाइए। आप जय को नहीं प्राप्त हो सकेंगे, आप अप्रतिष्ठित हो जाएँगे। आपके स्वामी शिवजी का शत्रु कामदेव है। हे स्वामी, आपने उससे मित्रता की है। इसलिए शिवराज क्रुद्ध हो गये हैं। उससे आप मृत्यु को प्राप्त हो जाएँगे; आपकी जय नहीं हो सकेगी। हे स्वामी आपने त्रिभुवन को तो जीत लिया है, परन्तु बिना काम को जीते वह सब व्यर्थ है। काम ने बहुतों की दुर्दशा कर दी है- उसने योगियों, मुनियों, तपस्वियों को ठग लिया है। उसने अनेक राजकुमारों को युद्ध में नष्ट कर डाला है। उसने महापुरुषों के मान को छुड़ाया है। इस प्रकार काम दुर्जय और बलवान है। हे महाराज, ऐसा जानकर आप विपरीत काम करना छोड़ दीजिए। सीता सुन्दरी पतिव्रता है। उसे राम को सौंपकर उनको प्रणाम कीजिए। यदि आप अन्त में रघुपति की शरण में जाएँगे, तो हे कान्त, आपका कल्याण हो जाएगा। हे नाथ, वे शरणागत-वत्सल हैं, वे आपके मस्तक पर अभयदान देनेवाला हाथ रखेंगे। वे आपका एक भी अवगुण मन में नहीं रखेंगे और हे स्वामी, आपको अभय दान देंगे। फिर आप निर्भयता-पूर्वक लंका नगर का राज्य कीजिए, अखण्ड भोगों का उपभोग करते रहिए। परधन, परनिन्दा और परस्त्री का जो त्याग करता है, वह संसार में धन्य है। कोई जब विरोध शत्रुता, हिंसा और अभिमान को छोड़ देता है, तब उसका ज्ञान शोभायमान होता है। जो सत्य आचरण करता हो, उसे ही देह धारण करने से एक लाभ ही होता है। मैं जानती हूँ कि आप सर्वज्ञ हैं; आपको किस बात की कमी है ? अणिमा आदि सिद्धियाँ आपके चरणों में झुककर रह गयी हैं। कल्पवृक्ष, कामधेनु आपके अधीन है; देव आपके दीन सेवक होकर रह रहे हैं। जिन्हें देखकर ब्रह्मा आदि तक विचलित हो जाते हैं, ऐसी अनगिनत पद्मिनी जाति की स्त्रियाँ आपकी छाया में रहती हैं। फिर भी आप अपहरण करके सीता को लाये हैं। जान पड़ता है, यह आपकी अन्तकाल लानेवाली बुद्धि फिर गयी है। जब मृत्यु निकट आती है, तब मनुष्य का विवेक और ज्ञान नष्ट हो जाता है।

जो शनि आदि ग्रह जगत को पीड़ा पहुँचाते हैं, वे आपके बन्दीवान होकर घूम रहे हैं। यमराज समस्त विश्व को दण्ड देता है, वह आज आपसे भयभीत होकर घूमता है। परन्तु ऐसे कार्मों से आपका क्षय हो जाएगा, कुटुम्ब, राज्य, नगर सब नष्ट हो जाएँगे। इसलिए रघुवर से प्रेम कीजिए। हे नाथ, मेरा कहा मानिए, तो कुशल होगी। यह सीता कालाग्नि की ज्वाला है। हे राजा, वह आपके कुल का दहन कर देगी। आप कह रहे हैं- मैं राम को जीत लूँगा। परन्तु मन की इस मिथ्या कामना को छोड़ दीजिए। आप समस्त पुरुषार्थों के ईश्वर हैं; हे नाथ, उन राम को आप कैसे जीत पाएँगे ? मेरी बात मानिए- मैं हाथ जोड़कर कह रही हूँ। जिन्होंने मत्स्य रूप धारण करके वेदों की रखवाली की और शंखासुर का वध किया, जिन्होंने कूर्म रूप होकर भूतल का भार धारण किया और फिर भगवान मुरारि ने सागर को मथ लिया; जिसने शूकर सूअर, वराह होकर हिरण्याक्ष को मार डाला और पृथ्वी की प्रतिष्ठापना की, जिन्होंने नरसिंह के रूप में अवतरित होते हुए हिरण्यकशिपु का वध किया और भक्त प्रह्लाद की रक्षा की, जिन्होंने वामन रूप में अवतरित होते हुए बलिराज से याचना की और उसे पाताल में डालकर इन्द्र की रक्षा की, जिन्होंने परशुराम के रूप में अवतरित होकर माता-पिता की आज्ञा का पालन करते हुए पृथ्वी को नि:क्षत्रिय कर डाला, वे स्वयं

दशरथ के घर राम रूप में अवतरित होते हुए भूमि का भार उतारने के लिए प्रकट हो गये हैं। वे भगवान राम स्वयं पूर्ण ब्रह्म हैं, जिनका कोई आदि, मध्य तथा अन्त नहीं है। जिनके कटाक्ष से काल काँप उठता है, जो सृष्टि का निर्माण करनेवाले हैं, उसके प्रतिपालक तथा संहारक हैं, जिनके वश में चराचर के प्राण रहते हैं, निश्चय ही वे ही ये राम हैं, जो अन्तर्यामी हैं, जो घटघट में, अर्थात् प्रत्येक वस्तु में निवास कर रहे हैं, उन राम को आप कैसे जीत पाएँगे ? हे स्वामी यद्यपि आप करोड़ों उपाय करें, फिर भी ये बिना भक्ति के आपके वश में नहीं हो जाएँगे। समस्त सिद्धान्तों से ही मैंने देखा है कि वे हरि केवल एक भक्त के ही अधीन हो जाते हैं। इसलिए, हे नाथ, मैं आँचल पसारकर कह रही हूँ कि आप राम के हाथ जोड़कर आज जनक-नन्दिनी उन्हें सौंप दीजिए और हे महाराज, राम की शरण में जाइए। यदि आप रघुपति के चोर बनकर घूमते रहेंगे, तो शिव और ब्रह्मा द्वारा भी नहीं बचाये जाएँगे। इसलिए हे नाथ, यदि आप अपने कल्याण की कामना कर रहे हों, तो मेरी यह बात मानिए। रानी की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् लंका का स्वामी रावण हँसकर बोला।

रावण ने कहा, सुनो, हे सुन्दरी, सती-शिरोमणि नारी, तुम जो कहती हो, वह सब सच्चा है; परन्तु मैं इस सम्बन्ध में एक विचार कहता हूँ। मैंने राम से बैर ठान लिया है, यह जगत में सबको विदित हो गया है। अत: यदि अब मैं जाकर उससे मिलूँ, तो मेरी कीर्ति की हानि हो जाएगी। फिर मेरा क्या पुरुषार्थ है ? लोग मेरी निन्दा करेंगे और कहेंगे कि राम के भय से राजा रावण डर गया है। मैं पुरुषार्थी असुर हूँ। मेरे बल, पराक्रम की महिमा है। फिर राम से मैत्री करने पर मेरी समस्त कीर्ति चली जाएगी। हे नारी, सुन लो। मेरे द्वारा अभिमान नहीं छोड़ा जाता है। मैं नहीं झुकूँगा। जब हो तब तो जगत में एक ही बार मरना है। फिर समझ लो, उस राम से युद्ध करते-करते मेरी मृत्यु हो जाएगी; तब अन्त में त्रिभुवन में मेरी सत्कीर्ति हो जाएगी। जिन्होंने इस जगत में अवतरित होकर अर्थात् जन्म लेकर अपनी कीर्ति की वृद्धि नहीं की, वे प्राणी जीवित रहने पर भी मरे हैं- संसार में प्रेत रूप में रहते हैं। किसी ने थोड़ा जीवित रहते हुए कीर्ति प्राप्त की, तो उस नर को कीर्ति रूप से अमर समझ लो। कोई निश्चय ही यशहीन होकर कल्प तक जीवित रहे, तो जो बिना पुरुषार्थ के जीवित रहे हैं, वे मनुष्य जीवित रहते हुए भी मृत के बराबर हैं। इसलिए, मैंने कीर्ति के मूल्य के बदले में देह की मृत्यु का आदर स्वीकार किया है। फिर मन में अभिलाषा है, तो नरों और वानरों का क्या भार ? क्योंकि असंख्य बलवान योद्धा मेरे सहायक हैं। मेरे एक लाख पुत्र हैं, उनके सिवा सवा लाख पुत्र हैं, कुम्भकर्ण जैसा मेरा बन्धु है। काल तक को जीतकर वे अपने वश में कर सकते हैं- ऐसे वे रणधीर हैं। इसलिए हे सुन्दरी, मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ- जो होनेवाला हो, वह हो जाए; मैं न राम को नमस्कार करूँगा राम के सामने नहीं झुकूँगा, न ही सीता लौटा दूँगा।

मन में अभिमान लाते हुए रावण यह बलपूर्वक बोला, तब रानी मन्दोदरी ने यह निश्चित रूप में समझ लिया कि यह अज्ञान व्यक्ति नहीं मान जाएगा। जिस प्रकार व्यभिचारी व्यक्ति की भक्ति व्यर्थ होती है, दम्भी का वैराग्य निरर्थक होता है, उस प्रकार रावण का ज्ञान व्यर्थ है। ज्ञानवान व्यक्ति ही परद्रोही हो तो क्या ? उसका ज्ञानी होना व्यर्थ हैं कपटी का अनुराग व्यर्थ होता है। जिस प्रकार नीति-धर्म के मार्ग से भ्रष्ट मनुष्य का धार्मिक आचार व्यर्थ होता है, जिस प्रकार कंजूस का दान अर्थहीन होता है, समझो कि रावण की जो समझदारी थी, ज्ञान था, उसी प्रकार व्यर्थ है। निश्चय ही इनके सिर पर मौत निकट आ गयी है। इसलिए जब तक घट देह में प्राण हों, तब तक ये नहीं मानेंगे। फिर ऐसा विचार करके मय-सुता मन्दोदरी चुप हो गयी। स्त्रीके बाणके समान वचन सुनकर वह सबेरा होते ही उठकर सभामें चला गया और सारा भय भुलाकर अत्यन्त अभिमानमें फूलकर सिंहासनपर जा बैठा।

३) युद्धारम्भ- महाबुद्धिमान् माल्यवान् नामक राक्षस, जो रावणका नाना था, महाराज दशानन के पास आये और बोले- राजन्। जो राजा चौदहों विद्याओंमें सुशिक्षित और नीतिका अनुसरण करनेवाला होता है, वह दीर्घकालतक राज्यका शासन करता है। वह शत्रुओंको भी वशमें कर लेता है। जो समयके अनुसार आवश्यक होनेपर शत्रुओंके साथ संधि और विग्रह करता है तथा अपने पक्षकी वृद्धिमें लगा रहता है, वह महान् ऐश्वर्यका भागी होता है।

जिस राजाकी शक्ति क्षीण हो रही हो अथवा जो शत्रुके समान ही शक्ति रखता हो, उसे संधि कर लेनी चाहिये। अपनेसे अधिक या समान शक्तिवाले शत्रुका कभी अपमान न करे। यदि स्वयं ही शक्तिमें बढ़ा-चढ़ा हो, तभी शत्रुके साथ वह युद्ध ठाने। इसलिये रावण। मुझे तो श्रीरामके साथ संधि करना ही अच्छा लगता है। जिसके लिये तुम्हारे ऊपर आक्रमण हो रहा है, वह सीता तुम श्रीरामको लौटा दो। देखो, देवता, ऋषि और गन्धर्व सभी श्रीरामकी विजय चाहते हैं, अत: तुम उनसे विरोध न करो। उनके साथ संधि कर लेनेकी ही इच्छा करो।

तात यद्यपि अंगद के शान्ति प्रस्ताव को तुमने ठुकरा दिया है फिर भी बात अभी तक तुम्हारे हाथ में है। एक रात में तो तुम होनी को

बदल सकते हो। विपल्व का मुख मोड सकते हो।

रावण बोला- नानाजी, विपल्व कैसा विपल्व ? कहाँ मच गया विपल्व ? माल्यवान बोले- वत्स जिस युद्ध की तुम तैयारी कर रहे हो वो विपल्व नही तो और क्या है ? रावण बोला- नानाजी, यह तो वीरों की रण क्रीडा है। इतने दिनों से असुरों के घर में अस्त्र-शस्त्र जंग खा रहे थे इसी बहाने उसपर धार रखकर पैने करने का समय आ गया है। माल्यवान बोले- खर दूषण के साथ एक हाथ से १४ सहस्त्र योद्धा बलि चढ़ गये उससे तुम्हारी रण पिपासा पूरी नहीं हुई लंकेश। रावण बोला- इसी का तो प्रतिशोध लेने के लिये रणचंडी हमारा आहवान कर रही है। माल्यवान बोले- वत्स, इतने विद्वान, गुणनिधान होकर कैसी बचकानी बातें कर रहे हो। तनिक विचार करो सन्धि का प्रस्ताव शत्रु पक्ष की ओर से आया है।

रावण बोला- सन्धि की शर्त पर आप विचार नहीं कर रहे नानाजी, क्या सीता को लौटा दूँ ? माल्यवान बोले- उसमें हानि ही क्या है तात? रावण बोला- इसमें तो हानि ही हानि है काश राष्ट्र में फैले हुये रावण के झन्डे ध्वजियां बनकर धूल में मिल जाये। दसों-दिशायें हमारे नाम पर थूकेगी और कहेगी दसों दिशाओं के विजेताने थूंककर चाट लिया। बड़ी अकड के साथ सीता को उठा लाया था अब सियार के समान भयभीत होकर वापस लौटा दिया। इस प्रस्ताव को मानना ही हमारी पराजय है नानाजी। माल्यवान बोले- वत्स, तुम सच्चाई से मुँह मोड़कर बैठे हो। सारा लोकमत राम के साथ है। देवता, नाग, गन्धर्व, ऋषि-मुनि यहाँ तक कि जिस ब्रह्मा और शिवशंकर के वरदान पर अभिमान कर रहे हो वो भी तुम्हारे कार्य को अधर्म मानकर राम के विजय की कामना कर रहे हैं। तुम दिग्विजय हो पर दिक दिगवंत से तुम्हारा हित चाहनेवाला कोई नहीं है। हे लंकेश भगवान् ब्रह्माने सुर और असुर दो ही पक्षोंकी सृष्टि की है। धर्म और अधर्म ही इनके आश्रय हैं। सुना जाता है महात्मा देवताओंका पक्ष धर्म है। राक्षसराज। राक्षसों और असुरोंका पक्ष अधर्म है। अन्त में विजय धर्म की ही होती है।

जब सत्ययुग होता है, तब धर्म बलवान् होकर अधर्मको ग्रस लेता है और जब कलियुग आता है, तब अधर्म ही धर्मको दबा देता है।

तुमने दिग्विजयके लिये सब लोकोंमें भ्रमण करते हुए महान् धर्मका नाश किया है और अधर्मको गले लगाया है, इसलिये हमारे शत्रु हमसे प्रबल हैं। तुम्हारे प्रमादसे बढ़ा हुआ अधर्मरूपी अजगर अब हमें निगल जाना चाहता है और देवताओंद्वारा पालित धर्म उनके पक्षकी वृद्धि कर रहा है। विषयोंमें आसक्त होकर जो कुछ भी कर डालनेवाले तुमने जो मनमाना आचरण किया है, इससे अग्निके समान तेजस्वी ऋषियोंको बड़ा ही उद्वेग प्राप्त हुआ है। यदि ऐसा हुआ तो विजय शत्रुपक्ष की ही होगी।

उनका प्रभाव प्रज्वलित अग्निके समान दुर्धर्ष है। वे ऋषि-मुनि तपस्याके द्वारा अपने अन्त:करणको शुद्ध करके धर्मके ही संग्रहमें तत्पर रहते हैं। ये द्विजगुण मुख्य-मुख्य यज्ञोंद्वारा यजन करते, विधिवत् अग्निमें आहुति देते और उच्चस्वरसे वेदोंका पाठ करते हैं।

अग्नितुल्य तेजस्वी ऋषियोंके अग्निहोत्रसे प्रकट हुआ धूम दसों दिशाओंमें व्याप्त होकर राक्षसोंके तेजको हर लेता है।

तुमने देवताओं, दानवों और यक्षोंसे ही अवध्य होनेका वह प्राप्त किया है, मनुष्य आदिसे नहीं। परंतु यहाँ तो मनुष्य, वानर, रीछ और लंगूर आकर गरज रहे हैं। वे सब-के-सब हैं भी बड़े बलवान्, सैनिकशक्तिसे सम्पन्न तथा सुदृढ़ पराक्रमी।

रावण बोला- उन तुच्छ वानरों और मानवों की विजय होगी। नानाजी आपको यह मतिभ्रम कैसे हो गया।

माल्यवान बोले- तुम जिन्हें तुच्छ वानर समझ रहे हो उनमें कितने ही देवताओं के गुप्त अंश है यह आप नहीं जानते। उनकी सेना में श्वेत और ज्योतिर्मुख भगवान सूर्य के पुत्र है। हेमकूट वरूण का, नल विश्वकर्मा का और महापराक्रमी दुर्धर वसु का पुत्र है। नील अग्नि का पुत्र है। राजकुमार अंगद जो आज दरबार में आया था वह देवराज इन्द्र का नाती है। महाबली द्विविद और मयंद अश्विनीकुमारों के पुत्र है और इन दोनोंने ब्रह्माजी की आज्ञा से अमृतपान किया है। ये अमर है। ऋक्षराज जाम्बवन्त जिसे आप बूढा समझते हो वह ब्रह्मा का पुत्र बहुत शान्त दिखता है परन्तु उसकी चोट बड़ी असहाय होती है। उसने असुर संग्राम में इन्द्र की बड़ी सहायता की थी। अमृत मंथन के समय भी वो वहांपर उपस्थित था। लंकेश इनमें से एक अकेला ही लंका का विनाश कर सकता है। महाराज प्रात: ही युद्ध होने से पहले ही यह अन्तिम अवसर है। मैं बार-बार आपको यही समझा रहा हूँ कि इस युद्ध में राक्षस जाति का विनाश हो जायेगा। मुझे सारे अपशकुन राक्षसों की पराजय के दिखाई दे रहे है।

रावण बोला- अपशकुन, कैसे अपशकुन दिखाई दे रहे है ? नगरके चारों ओर सियार और गीद्ध भयंकर शब्द कर रहे है। दिशायें धूल से मलिन हो गई है। नाना प्रकारके बहुत-से भयंकर उत्पातोंको लक्ष्य करके मैं तो इन समस्त राक्षसोंके विनाशका ही अवसर उपस्थित देख रहा हूँ।

घरोंमें जो बलिकर्म किये जाते हैं, उस बलि-सामग्रीको कुत्ते खा जाते हैं। गौओंसे गधे और नेवलोंसे चूहे पैदा होते हैं। घरोंमें पाले हुये पक्षी और मृग सूर्य की ओर मुख करके रोने लग जाते है। बाघोंके साथ बिलाव, कुत्तोंके साथ सूअर तथा राक्षसों और मनुष्योंके साथ किन्नर समागम करते हैं। जिनकी पाँखें सफेद और पंजे लाल हैं, वे कबूतर पक्षी दैवसे प्रेरित हो राक्षसोंका भावी विनाश सूचित करनेके लिये यहाँ सब ओर विचरते हैं। ये तथा और भी बहुत-से अपशकुन हो रहे हैं।

लंकेश वही राजा चिरकाल तक शासन कर सकता है जो अवसर और समय को देख शकुन-अपशकुन का विचार कर सन्धि कर लें। वीरता पर बुद्धि का अंकुश आवश्यक है। इसलिए युद्ध न करना अधिक बुद्धिमानी होता है। राजन इससे अच्छा अवसर नहीं आयेगा। सन्धि का प्रस्ताव बैरी पक्ष से आया है। इस समय आपका मस्तक ऊँचा है।

मैं ऐसा समझता हूँ कि साक्षात् भगवान विष्णु ही मानवरूप धारण करके राम होकर आये हैं। जिन्होंने समुद्रमें अत्यन्त अद्भुत सेतु बाँधा है, वे दृढ़पराक्रमी रघुवीर साधारण मनुष्यमात्र नहीं हैं। रावण। तुम नरराज श्रीरामके साथ संधि कर लो। श्रीरामके अलौकिक कर्मों और लमामें होनेवाले उत्पातोंको जानकर जो कार्य भविष्यमें सुख देनेवाला हो, उसका निश्चय करके वही करो।

यह बात कहकर तथा राक्षसराज रावणके मनोभावकी परीक्षा करके उत्तम मन्त्रियोंमें श्रेष्ठ पौरुषशाली महाबली माल्यवान् रावणकी ओर देखता हुआ चुप हो गया। दुष्टात्मा दशमुख रावण कालके अधीन हो रहा था, इसलिये माल्यवान्की कही हुई हितकर बातको भी वह सहन नहीं कर सका। वह क्रोधके वशीभूत हो गया। अमर्षसे उसके नेत्र घूमने लगे। उसने भौंहें टेढ़ी करके माल्यवान्से कहा।

आपको इसका दूसरा रूप नहीं दिखायी पड़ रहा है नानाजी। हमारी शक्ति से भयभीत होकर शत्रुने सन्धि का हाथ बढ़ाया है यहीं हमारे विजय का प्रथम लक्षण है।

तुमने शत्रुका पक्ष लेकर हित-बुद्धिसे जो मेरे अहितकी कठोर बात कही है, वह पूरी तौरसे मेरे कानोंतक नहीं पहुँची।

बेचारा राम एक मनुष्य ही तो है, जिसने सहारा लिया है कुछ बंदरोंका। पिताके त्याग देनेसे उसने वनकी शरण ली है। उसमें कौन-सी विशेषता है, जिससे तुम उसे बड़ा सामर्थ्यशाली मान रहे हो।

मैं राक्षसोंका स्वामी तथा सभी प्रकारके पराक्रमोंसे सम्पन्न हूँ, देवताओंके मनमें भी भय उत्पन्न करता हूँ; फिर किस कारणसे तुम मुझे रामकी अपेक्षा हीन समझते हो ?

तुमने जो मुझे कठोर बातें सुनायी हैं, उनके विषयमें मुझे शमा है कि तुम या तो मुझ-जैसे वीरसे द्वेष रखते हो या शत्रुसे मिले हुए हो अथवा शत्रुओंने ऐसा कहने या करनेके लिये तुम्हें प्रोत्साहन दिया है।

जो प्रभावशाली होनेके साथ ही अपने राज्यपर प्रतिष्ठित है, ऐसे पुरुषको कौन शास्त्रतत्त्वज्ञ विद्वान शत्रुका प्रोत्साहन पाये बिना कटुवचन सुना सकता है ? कमलहीन कमलाकी भाँति सुन्दरी सीताको वनसे ले आकर अब केवल रामके भयसे मैं कैसे लौटा दूँ ?

जिसके सामने द्वन्द्वयुद्धमें देवता भी नहीं ठहर पाते हैं, वही रावण युद्धमें किससे भयभीत होगा।

मैं बीचसे दो टूक हो जाऊँगा, पर किसीके सामने झुक नहीं सकूँगा, यह मेरा सहज दोष है और स्वभाव किसीके लिये भी दुर्लङ्घ्य होता है। यदि रामने दैववश समुद्रपर सेतु बाँध लिया तो इसमें विस्मयकी कौन बात है, जिससे तुम्हें इतना भय हो गया है ?

मैं तुम्हारे आगे सच्ची प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि समुद्र पार करके वानरसेनासहित आये हुए राम यहाँसे जीवित नहीं लौट सकेंगे।

जाईये निश्चित होकर अपने भवन में विश्राम कीजिये। राजनीति और रणनीति में सर खपाने की अब आपकी आयु नहीं रही। ऐसी बातें कहते हुए रावणको क्रोधसे भरा हुआ एवं रुष्ट जानकर माल्यवान् बहुत लज्जित हुआ और उसने कोई उत्तर नहीं दिया। यह कहकर माल्यवान को विदा कर रावण चला गया।

रावण के अन्त:पुर के सभागृह में मय दानव रावण का श्वसुर आया। रावण बोला- दानव राजमय हे धर्म पिता रावण का कर बद्ध नमस्कार स्वीकार करें। मय दानव बोले- चिरंजीवी हो, यशस्वी हो। रावण बोला- हम आपके बहुत आभारी है दानवराज। हम तो क्या लंका का बच्चा-बच्चा आपके चमत्कार को नमस्कार करता है। एक जंगली उद्दंड वानर ने संसार के सर्वोत्तम लंका को उजाड दिया। आपने लंका को पुनर्वत सुसज्जित कर दिया। वानर की आग की लपटों में जलकर सोने की लंका और चमक उठी। मय दानव बोले- वत्स, लंका की यह चमक युग-युग तक बनी रहें इसी चिंता से व्याकुल होकर मैं आपके द्वार पर आया हूँ दानवराज। रावण बोला- लंका का राजा आपका उपकार मानता है दानवराज। आप उससे जो चाहे मांग सकते है। मय दानव बोला- इस समय मैं दानव राजमय

नहीं एक पुत्री का पिता अपने जामाता के द्वार पर कुछ मांगने आया है। रावण बोला- पुत्री का पिता कन्यादान का दाता उसके द्वार पर कभी कुछ मांगने नहीं जाता। सदा देता ही रहता है। यही युग-युग की रीत है। मयदावन बोले- पुत्री के कल्याण के कार्य में, बेटी के सुख-सौभाग्य की रक्षा के लिये हर पिता को अधिकार है लंकेश्वर। उससे वह कभी मुक्त नहीं हो सकता। रावण बोला- लंकेश्वर की महारानी की चिन्ता से आप उसी दिन मुक्त हो गये थे जिस दिन से हमारी भार्या के रूप में उसका भाग्य हमारे साथ बाँध दिया था। अब उसके कल्याण की कामना करना आपका काम नहीं, यह हमारा कर्तव्य है। मयदानव बोले- हे परमप्रतापी लंकेश, ये मेरी पुत्री मन्दोदरी के कल्याण का प्रश्न नहीं। महर्षि पुलस्त्य की आनेवाली पीढ़ी विश्रवा के वंश की रक्षा का प्रश्न है। रावण बोला- आप कहना क्या चाहते है वहीं बात कहिये। इधर-उधर की बातों में भटकने का समय नहीं है हमारे पास। मय बोला- तात तुम्हारे पितातुल्य श्वसुर तुमनसे हाथ जोड़कर विनती करता है कि सीता के मोह से अपने मन को मुक्त कर लो। रावण बोला- क्यों किसलिये, इसलिये वह वन-वन भटकने वाला वनवासी कुछ भालु और वानरों को इकट्ठा करके हमें गीदड धमकी दे रहा है। मयदानव बोले- तुम उस तपस्वी को पहचान नहीं रहे हो तात। रावण बोला- आपने तो जान लिया ना, आपने पहचान लिया उसे ? मयदानव बोले- हां, मेरे अर्न्तचक्षु कहते है कि वो और कोई नहीं साक्षात सर्वशक्तिमान त्रिलोकीनाथ है। रावण बोला- कौन है, त्रिलोकीनाथ हमसे बढ़कर कौन है आज तीनों लोकोंमें ?

मयदानव बोले- तात, तुम तो त्रिलोक विजेता हो पर वो तो त्रिलोक रचयिता है। वे विष्णु का अवतार है। रावण ने अट्टहास किया और बोला- हा, हा, विष्णु का अवतार। दानवेश्वर लगता है आप हमारी मान्यता को मिटाने की ठानकर आये है। जिसे अखिलेश्वर का अवतार मान आप उसके सामने हमें झुकाने आये है। वो साक्षात् बैकुंठेश्वर विष्णु के सामने हम नहीं झुकेंगे। उनका यह सुदर्शन चक्र का प्रहार हमें तिल भर भी नहीं झुका सका। विष्णु का अवतार हमारे लिये किस गिनती में है ? यह न भूलियेगा दानवराज लंकेश दशानन का सिर कट सकता है पर झुक नहीं सकता। आज दशानन का शीश झुकाने वाला अभीतक पृथ्वीपर पैदा नहीं हुआ है। यह कहकर रावण आगे अन्त:पुर में चला गया और अन्त:पुर में उसकी भेंट अपनी माता कैकस्वी से हुयी।

कैकस्वी बोली- बेटे मेरे लाल बैकुंठ जाने से पहले तुम्हारे पूज्य पिता के वचन मेरे कानों में गुंज रहे है क्या वो सत्य हो जायेंगे। बड़ों की बात में कुछ तथ्य होता है, कुछ तत्व होता है। अपने नानाजी की बात न मानकर तुमने अच्छा नहीं किया।

रावण बोला- माता, रावण कोई दूध पिता शिशु नहीं है, बड़ों की अंगुली थामकर उनके सहारे चलनेवाला नन्हा नादान नहीं है, पाठशाला में गुरु के पास बैठ कर पाठ पढ़नेवाला विद्यार्थी नहीं है। वो अपना भला-बुरा भलीभाँति समझता है आपका यह पुत्र।

माता कैकस्वी बोली- यह तेरा अहंकार है बेटे। रावण बोला- माता आपने हमें जन्म अवश्य दिया है परन्तु हमारे जीवन के निर्माता हम स्वयंम्भू है रावण। एको अहं द्वितीयों ना अस्ति, न भूतो न भविष्यति। अब हमारा भूत, भविष्य और वर्तमान हम स्वयं बनायेंगे। आपको हमारी चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं, माता।

जब शत्रुके समाचार प्राप्त हो गये, तब श्रीरामने सब मन्त्रियोंको पास बुलाया और कहा- लमाके चार बड़े विकट दरवाजे हैं। उनपर किस तरह आक्रमण किया जाय, इसपर विचार करो।

श्रीराम सुग्रीव से बोले- यह रघुवंशी लाचार हो गया अब हमें रघुकुल का गौरव रखना है। लंकापति मदमत्त हो गया है। अब उसको इसका फल चखाना है। अगर रक्तपात की नदियाँ बहती है तो मनुष्यता पर चोट पड़ती है। चुपचाप सहन करने से कायरता आती है। असुरोंका रक्त उछल रहा है अपना रक्त नाश कराने को। इस छत्री की भुजा फड़क रही है पृथ्वीका भार हटाने को। अधर्म के खूनों से जब इस धरती को सींच दिया जाता है तब शान्त सृष्टि रचकर दुनिया अपना सौन्दर्य दिखाती है। यह जगत परिवर्तनशील है। संघर्ष होना निश्चित है। श्रीराम अब उसे रोक नहीं सकता, लंका में रण होना तय है। इस आर्यभूमि की सीता को हर कर लंकापति सुखचैन नहीं पायेगा। किष्किंधा का यह वानर दल अब यह सोने की लंका ढहायेगा। इसलिए अब न्याय के नाते से आर्य देश के नाते से अपने कर्तव्य के नाते से, सीता संदेश के नाते से हर हर महादेव पुकारो और वीरों आगे को बढ़ जाओ। मन से शंका को निकालो डंका बजाओ और लंका पर चढ़ाई की तैय्यारी करो। जब प्रभु श्रीराम की आज्ञा मिली तब वानरराज सुग्रीव, ऋक्षपति जाम्बवान् और विभीषणने हृदयमें सूर्यकुलके भूषण श्रीरघुनाथका स्मरण किया और विचार करके उन्होंने कर्तव्य निश्चित किया। वानरोंकी सेनाके चार दल बनाये और उनके लिये यथायोग्य जैसे चाहिये वैसे सेनापति नियुक्त किये। फिर सब यूथपतियोंको बुला लिया और प्रभुका प्रताप कहकर सबको समझाया, जिसे सुनकर वानर सिंहके समान गर्जना करके दौड़े।

वे हर्षित होकर श्रीरामके चरणोंमें सिर नवाते हैं और पर्वतोंके शिखर ले-लेकर सब वीर दौड़ते हैं। कोसलराज श्रीरघुवीरजीकी जय हो पुकारते हुए भालू और वानर गरजते और ललकारते हैं।

अङ्गदसे लंका दुर्गके समाचार पाकर श्रीराम उठ खड़े हुए- आज इस अभिजित मुहूर्तमें ही लमापर चढ़ायी करनी है। चारों ओरसे नगरको घेरकर आक्रमण करना है।

अमित विक्रम श्रीरामकी जय। लमाकी ओर श्रीराम चार पाद चले वानरोंने जयनाद किया। लमामें बजती भेरियोंके तालपर ही वानर उछलने, नृत्य करने लगे। लक्ष्मण। लमा इतनी बड़ी है। इसमें अनेक विमान हैं। अत: शास्त्रसम्मत व्यूह बनाना है। श्रीरामने गरूड़ व्यूहका निर्देश किया- अङ्गद और नील व्यूह-वक्ष रहेंगे। दक्षिण पक्ष ऋषभ और वाम पक्ष गन्धमादन। मैं मस्तकके स्थानपर जाम्बवान और सुषेण, कुक्षि, सुग्रीव जघन रक्षक रहेंगे। सम्पूर्ण वानर सेना व्यूहका शरीर है।

लक्ष्मण। आजसे तुम स्वयं दिनान्तमें देख लिया करो कि सब वानर आहार पा चुके या नहीं। सबको जल प्राप्त हुआ। श्रीरामने सबको भाव-विह्वल देखकर प्रसंगान्तर किया- एक-एक वानरकी सुविधा प्रतिदिन देख लिया करो। जो आहत हों, उनकी तत्काल चिकित्सा की जाय। किसीको कोई असुविधा न हो।

प्रात:काल जब सुबेल शिखरसे सेना सहित श्रीराम उतरने लगे, शुभ शकुनोंको मानो स्वागतका सुअवसर मिला। गगनसे सुरोंने पुष्पवर्षा की। श्वेत चील मँडराती दीखी। नील कण्ठ दाहिने आ बैठा।

श्रीरामने स्वयं सबको ठीक स्थानोंपर नियुक्त किया। पूर्वमें नील, मैन्द, द्विविद पश्चिममें हनुमान। दक्षिण अंगद, गय, गवाक्ष। उत्तर स्वयं श्रीराम। सुग्रीव, जाम्बवन्त, विभीषण सबको सहायता करने, पृष्ठ रक्षाको स्वतन्त्र रखे गये। पर्वत शिखर, वृक्ष उठाये जयघोष करते वानरोंने लमाके द्वार घेर लिये। श्रीरामने घूमकर व्यूहका निरीक्षण करके आक्रमणकी आज्ञा दे दी।

वानरोंके तुमुल जयघोषसे गगन गूँजने लगा। वे परिखा ध्वस्त करने लगे। नगरपर पर्वत फेंकने लगे। उच्च परिखापर चढ़ गये- श्रीराम अनुजके साथ उत्तर द्वारपर खड़े थे। सुग्रीवने वहींसे आक्रमण आरम्भ किया- अमित विक्रम श्रीरामकी जय। असह्य पराक्रम लक्ष्मणकी जय। लमाको अत्यन्त श्रेष्ठ अजेय किला जानते हुए भी वानर प्रभु श्रीरामके प्रतापसे निडर होकर चले। चारों ओरसे घिरी हुई बादलोंकी घटाकी तरह लमाको चारों दिशाओंसे घेरकर वे मुँहसे ही डंके और भेरी बजाने लगे।

महान बलकी सीमा वे वानर-भालू सिंहके समान ऊँचे स्वरसे श्रीरामकी जय, लक्ष्मणकी जय, वानरराज सुग्रीवकी जय ऐसी गर्जना करने लगे। लमामें बड़ा भारी कोलाहल कोहराम मच गया। अत्यन्त अहमारी रावणने उसे सुनकर कहा- वानरोंकी ढिठाई तो देखो। यह कहते हुए हँसकर उसने राक्षसोंकी सेना बुलायी।

बंदर कालकी प्रेरणासे चले आये हैं। मेरे राक्षस सभी भूखे हैं। विधाताने इन्हें घर बैठे भोजन भेज दिया। ऐसा कहकर उस मूर्खने अट्टहास किया वह बड़े जोरसे ठहाका मारकर हँसा और बोला- हे वीरो। सब लोग चारों दिशाओंमें जाओ और रीछ-वानर सबको पकड़-पकड़कर खाओ। शिवजी कहते हैं हे उमा। रावणको ऐसा अभिमान था जैसे टिटिहिरी पक्षी पैर ऊपरकी ओर करके सोता है मानो आकाशको थाम लेगा।

दशग्रीवने भी युद्धकी घोषणा की। अपने सैनिकोंको आज्ञा दी- इन वानरोंको मार दो। समुद्रमें फेंक दो। खा डालो।

आज्ञा माँगकर और हाथोंमें उत्तम भिंदिपाल, साँगी बरछी, तोमर, मुद्गर, प्रचण्ड फरसे, शूल, दुधारी तलवार, परिघ और पहाड़ोंके टुक्ड़े लेकर राक्षस चले। जैसे मूर्ख मांसाहारी पक्षी लाल पत्थरोंका समूह देखकर उसपर टूट पड़ते हैं, पत्थरोंपर लगनेसे चोंच टूटनेका दु:ख उन्हें नहीं सूझता, वैसे ही ये बेसमझ राक्षस दौड़े।

उधर रावणकी और इधर श्रीरामकी दोहाई बोली जा रही है। जय जय जय की ध्वनि होते ही लड़ाई छिड़ गयी। राक्षस पहाड़ोंके ढेर-के-ढेर शिखरोंको फेंकते हैं। वानर कूदकर उन्हें पकड़ लेते हैं और वापस उन्हींकी ओर चलाते हैं।

सहायक सैनिक पथराव करते जा रहे थे। परकोटे पर से राक्षस सैनिक नीचे उतर गए थे और भीतर से बाण अधिक संख्या में बाहर नहीं आ रहे थे। कदाचित् राक्षस सेनापति समझ नहीं पा रहे थे कि इस पथराव का क्या अर्थ है। युद्ध पत्थरों से नहीं, शस्त्रों से होता है और राम की सेना की ओर से अभी एक भी शस्त्र-साधारण-सा बाण भी लंका के भीतर नहीं फेंका गया था। क्या इसे युद्ध माना जा सकता है और यदि वानर सेना पत्थरों से ही युद्ध करने आई है तो पत्थरों का उत्तर किन शस्त्रों से दिया जाना चाहिए ? और यदि यह

युद्ध नहीं है तो इसका क्या अर्थ हो सकता है ?

राम खड़े देख रहे थे- जब-जब कोई असैनिक जन-समुदाय राम के पास आया था कि उन्हें भी सेना में सम्मिलित किया जाए, तब राम ने कभी नहीं सोचा था कि ये लोग युद्ध की स्थिति में सैनिक कर्म में भी इतने अधिक सहायक हो सकते हैं। आरंभ में तो अनेक लोगों ने इनका विरोध भी किया था। पर राम ने यही माना था कि ये जन-समुदाय उनके सहायक भी होंगे। राक्षसों की शस्त्र-विद्या के विरुद्ध उनका एक ही तो शस्त्र था- जन-बल। जिस परिखा और परकोटे को रावण ने अपनी सेना की सुरक्षा का मुख्य उपकरण माना था, वह तो अनायास ही ध्वस्त होता दिखाई पड़ रहा था। वैसे रावण को इतना तो सोचना ही चाहिए था कि जिस सेना को स्वयं सागर का विस्तार नहीं रोक सका, उसे यह छोटी-सी परिखा और पत्थरों को जोड़कर बनाया गया परकोटा कैसे रोक पाएँगे।

तभी राक्षस सेना में भयंकर कोलाहल के साथ रावण का जय-जयकार हुआ और युद्ध-वाद्य अपने ओजपूर्ण स्वर में बजने लगे। द्वारों के साँकल खटके और अगले ही क्षण राक्षस सेनाएँ द्वार खोलकर बाहर निकल आईं। उनके आगे-आगे रथ थे और पीछे-पीछे पैदल सेना।

प्रचण्ड वानर और भालू पर्वतोंके टुकड़े ले-लेकर किलेपर डालते हैं। वे झपटते हैं और राक्षसोंके पैर पकड़कर उन्हें पृथ्वीपर पटककर भाग चलते हैं और फिर ललकारते हैं। बहुत ही चञ्चल और बड़े तेजस्वी वानर-भालू बड़ी फुर्तीसे उछलकर किलेपर चढ़-चढ़कर गये और जहाँ-तहाँ महलोंमें घुसकर श्रीरामका यश गाने लगे। बिजली की तरह वानर आगे बढ़े और किल्कार किल्कार कर एक-एक राक्षस से भिड़ गये। ढफ, ढोल और शंखों के स्वर धरती को दहलाए देते थे। बलवानों के गर्जन-तर्जन से आकाश हिला देते थे। झन-झन ध्वनियों से आकाश में एक ओर शस्त्र उछलते थे दूसरी ओर खट-खट स्वर से पर्वतोंके खण्ड मुष्टियों के प्रहार से टूटते थे।

श्रीरामके प्रतापसे प्रबल वानरोंके झुंड राक्षस योद्धाओंके समूह-के-समूह योद्धाओंको मसल रहे हैं। वानर फिर जहाँ-तहाँ किलेपर चढ़ गये और प्रतापमें सूर्यके समान श्रीरघुवीरका जय बोलने लगे।

तब लंका के और भी द्वार टूटने लग गये तब शत्रु सेना रोषसहित उठी अपनी चौगुनी शक्ति से रणचंडी की पिपासा बुझाने लगे पर युद्धभूमि में जोर से युद्ध होने लगा। युद्धभूमि में मतवाले, राक्षस और कपिगण नाच उठे। लाशों पर लाशें लोट पडी, सिर मुण्डों पर सिर नाचने लगे।

राक्षसोंके झुंड वैसे ही भाग चले जैसे जोरकी हवा चलनेपर बादलोंके समूह तितर-बितर हो जाते हैं। लमा नगरीमें बड़ा भारी हाहाकार मच गया। बालक, स्त्रियाँ और रोगी असमर्थताके कारण रोने लगे।

सब मिलकर रावणको गालियाँ देने लगे कि राज्य करते हुए इसने मृत्युको बुला लिया। रावणने जब अपनी सेनाका विचलित होना कानोंसे सुना, तब भागते हुए योद्धाओंको लौटाकर वह क्रोधित होकर बोला- मैं जिसे रणसे पीठ देकर भागा हुआ अपने कानों सुनूँगा, उसे स्वयं भयानक दुधारी तलवारसे मारूँगा। मेरा सब कुछ खाया, भाँति-भाँतिके भोग किये और अब रणभूमिमें प्राण प्यारे हो गये।

रावणके उग्र कठोर वचन सुनकर सब वीर डर गये और लज्जित होकर क्रोध करके युद्धके लिये लौट चले। रणमें शत्रुके सम्मुख युद्ध करते हुए मरनेमें ही वीरकी शोभा है। यह सोचकर तब उन्होंने प्राणोंका लोभ छोड़ दिया।

बहुत से अस्त्र-शस्त्र धारण किये सब वीर ललकार-ललकारकर भिड़ने लगे। उन्होंने परिघों और त्रिशूलोंसे मार-मारकर सब रीछ वानरोंको व्याकुल कर दिया।

दशरथनन्दन वीर श्रीराम लक्ष्मणको साथ ले रावणपालित लमापुरीके पास जा उत्तर द्वारपर पहुँचकर जहाँ स्वयं रावण खड़ा था, वहीं डट गये। श्रीरामके सिवा दूसरा कोई उस द्वारपर अपने सैनिकोंकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं हो सकता था।

वानरसेनापति पराक्रमी नील मैन्द और द्विविदके साथ लमाके पूर्वद्वारपर जाकर डट गये। महाबली अङ्गदने ऋषभ, गवाक्ष, गज और गवयके साथ दक्षिण द्वारपर अधिकार जमा लिया। प्रमाथी, प्रघस तथा अन्य वानरवीरोंके साथ बलवान् कपिश्रेष्ठ हनुमानने पश्चिम द्वारका मार्ग रोक लिया। वे वानरसिंह बाघोंके समान बड़े-बड़े दाढ़ोंसे युक्त थे। वे हर्ष और उत्साहमें भरकर हाथोंमें वृक्ष और पर्वत-शिखर लिये युद्धके लिये डट गये।

लमामें उछल-उछलकर आते हुए वानरोंसे आकाश भर गया था और पुरीमें प्रवेश करके खड़े हुए कपिसमूहोंसे वहाँकी सारी पृथ्वी आच्छादित हो गयी थी। हाथोंमें वृक्ष लिये बलवान् वानरोंद्वारा सब ओरसे घिरी हुई लमामें वायुके लिये भी प्रवेश पाना कठिन हो गया था। जैसे सेतुको विदीर्ण कर अथवा मर्यादाको तोड़कर बहनेवाले समुद्रके जलका महान् शब्द होता है, उसी प्रकार वहाँ आक्रमण करती हुई विशाल वानरसेनाका महान् कोलाहल हो रहा था।

शिवजी कहते हैं वानर भयातुर होकर डरके मारे घबड़ाकर भागने लगे, यद्यपि हे उमा। आगे चलकर वे ही जीतेंगे। कोई कहता है- अंगद- हनुमान् कहाँ हैं ? बलवान् नल, नील और द्विविद कहाँ हैं ?

हनुमानने जब अपने दलको विकल भयभीत हुआ सुना, उस समय वे बलवान् पश्चिम द्वारपर थे। वहाँ उनसे मेघनाद युद्ध कर रहा था। वह द्वार टूटता न था, बड़ी भारी कठिनाई हो रही थी। तब पवनपुत्र हनुमानके मनमें बड़ा भारी क्रोध हुआ। वे कालके समान योद्धा बड़े जोरसे गरजे और कूदकर लमाके किलेपर आ गये और पहाड़ लेकर मेघनादकी और दौड़े।

वह महाभीषण कोलाहल आरम्भ होनेपर राक्षसराज रावणके योद्धा निशाचर बड़े-बड़े आयुध हाथोंमें लेकर प्रलयकालकी प्रचण्ड वायुके समान सब ओर विचरने लगे।

तदनन्तर उन राक्षसोंने रावण के महलमें जाकर यह निवेदन किया कि वानरोंके साथ श्रीरामने लमापुरीको चारों ओरसे घेर लिया है।

वहींसे उसने देखा कि पर्वत, वन और काननोंसहित सारी लमा सब ओरसे असंख्य युद्धाभिलाषी वानरोंद्वारा घिरी हुई है।

इधर श्रीराम अपनी सेनाके साथ प्रसन्नतापूर्वक आगे बढ़े। उन्होंने देखा, लमा सब ओरसे राक्षसोंद्वारा आवृत और सुरक्षित है।

इस प्रकार राक्षसियोंद्वारा पीड़ित विदेहनन्दिनीका बारंबार चिन्तन करते हुए धर्मात्मा श्रीरामने तत्काल वानरोंको शत्रुभूत राक्षसोंका वध करनेके लिये आज्ञा दी।

वे वानरसेनापति पर्वतोंके बड़े-बड़े शिखर उठाकर और नाना प्रकारके वृक्षोंको उखाड़कर प्रहार करनेके लिये खड़े थे।

राक्षसराज रावण के देखते-देखते विभिन्न भागोंमें बँटे हुए वे वानर-सैनिक श्रीरघुनाथका प्रिय करनेकी इच्छासे तत्काल लमाके परकोटोंपर चढ़ गये। वे सभी वानर वृक्षों, पर्वत-शिखरों और मुक्कोंसे असंख्य परकोटों और दरवाजोंको तोड़ने लगे।

उन वानरोंने स्वच्छ जलसे भरी हुई खाइयोंको धूल, पर्वत-शिखर, घास-फूस और काठोंसे पाट दिया।

बड़े-बड़े गजराजोंके समान विशालकाय वानर सोनेके बने हुए दरवाजोंको धूलमें मिलाते, कैलासशिखरके समान ऊँचे-ऊँचे गोपुरोंको भी ढहाते, उछलते-कूदते एवं गर्जते हुए लमापर धावा बोलने लगे।

इसी समय वीरबाहु, सुबाहु, नल और पनस- ये वानरयूथपति लमाके परकोटेपर चढ़कर बैठ गये और उसी बीचमें उन्होंने वहाँ अपनी सेनाका पड़ाव डाल दिया। कवच आदिसे सुसज्जित महान् पराक्रमी विभीषण हाथमे गदा लिये अपने सावधान मन्त्रियोंके साथ वहीं आकर डट गये, जहाँ महाबली श्रीराम विद्यमान थे।

गज, गवाक्ष, गवय, शरभ और गन्धमादन- सब ओर घूम-घूमकर वानर-सेनाकी रक्षा करने लगे। इसी समय अत्यन्त क्रोधसे भरे हुए राक्षसराज रावणने अपनी सारी सेनाको तुरंत ही बाहर निकलनेकी आज्ञा दी। फिर तो राक्षसोंके यहाँ जिनके मुखभाग चन्द्रमाके समान उज्ज्वल थे और जो सोनेके डंडेसे बजाये या पीटे जाते थे, वे बहुत-से धौंसे एक साथ बज उठे। साथ ही भयानक राक्षसोंके मुखकी वायुसे पूरित हो लाखों गम्भीर घोषवाले शफबजने लगे। तदनन्तर रावणकी प्रेरणासे उसके सैनिक बड़े हर्षके साथ युद्धके लिये निकलने लगे, मानो प्रलयकालमें महान् मेघोंके जलसे भरे जाते हुए समुद्रके वेग आगे बढ़ रहे हों।

तत्पश्चात् वानर सैनिकोंने सब ओर बड़े जोरसे सिंहनाद किया, जिससे छोटे-बड़े शिखरों और कन्दराओंसहित मलयपर्वत्त गूँज उठा। इतनेहीमें पूर्वकालमें घटित हुए देवासुर-संग्रामकी भाँति राक्षसों और वानरोंमें घोर युद्ध होने लगा।

वे राक्षस दमकती हुई गदाओं तथा शक्ति, शूल और फरसोंसे समस्त वानरोंको मारने एवं अपने पराक्रमकी घोषणा करने लगे।

उसी प्रकार वेगशाली विशालका वानर भी राक्षसोंपर बड़े-बड़े वृक्षों, पर्वत-शिखरों, नखों और दाँतोंसे चोट करने लगे।

दूसरे बहुत-से भयानक राक्षस जो परकोटेपर चढ़े हुए थे, पृथ्वीपर खड़े हुए वानरोंको भिन्दिपालों और शूलोंसे विदीर्ण करने लगे।

तब पृथ्वीपर खड़े हुए वानर भी अत्यन्त कुपित हो उठे और आकाशमें उछलकर परकोटेपर बैठे हुए राक्षसोंको अपनी बाँहोंसें पकड़-पकड़कर गिराने लगे। इस प्रकार राक्षसों और वानरोंमें बड़ा ही अद्‌भुत घमासान युद्ध हुआ, जिससे वहाँ रक्त और माँसकी कीच जम गयी। भगवान् श्रीरामकी विजय चाहनेवाले वानरोंकी उस विशाल सेनाने भी घोर कर्म करनेवाले राक्षसोंकी सेनापर धावा किया।

इसी समय एक दूसरेपर धावा बोलते हुए राक्षसों और वानरोंमें द्वन्द्वयुद्ध छिड़ गया। उन बलवान निशाचरोंसे आशा से भी अधिक वे वानर लड़ें। उनके सामने उनके मुष्टी नखों और दान्तों के सामने शस्त्रों की धार भी हार गयी। उस समय युद्ध में वह निशाचर सेना कट-कट कर मरने लगी तब अन्याय और न्याय का निर्णय खून से रंजित पृथ्वी की लाली करती थी। छोटे-छोटे वानरोंद्वारा दुष्ट दल की

पराजय हो गयी। संसार ने इस धर्म बल की जीत अधर्म की छाती पर देखी। ऐसे कही दिन तक कपिदल विजयी रहा तब असुरपति रावण अपने असुरोंसे ललकार कर बोला- धिक्कार है तुम्हें तुम्हारे शस्त्रों पर, तुम्हारे लंबे-चौड़े आकारोंपर। यह दस-दस बीस-बीस वानर ही अपना काम तुम्हारे हजारोंपर कर जाते है। हे आराम पसंदो, आलसियों किसलिए अपना ढोल बजाते हो, लंका विदेशों को देखकर क्यों अपना अस्तित्व मिटाते हो। तुम्हारी इस जन्मभूमि के वैभव को जी जान लढ़ाकर रखना है। लंका नगरी के गौरव को बढ़ा-चढ़ा कर रखना है। तुम लोग वो हो जिनसे देवताओं को भी इस दशकंधर ने जीता है। यह लंकाधीश्वर तुम लोगोंके पौरुष से ही जीता है। जिसका राजा स्वर्गजीत है वह कैलाश उठा सकता है, जिसके राजाने यमराज को अपने बंदीगृह में बन्द कर डाला हो, उनके सहचर और अनुचरों पर लाख-लाख लानत है जो वानरोंसे पीट रहे है और अपने-आपको वीरोंकी जाति में कहते है। रावण की इसप्रकार की ललकार सुनकर दुष्टजनों ने अगले दिन घोर संग्राम किया। यह युद्ध पाप और पुण्य के बीच था। कब तक यह नीच लोग पवित्रता से लड़ सकते थे।

बालिपुत्र अङ्गदके साथ महातेजस्वी राक्षस इन्द्रजित उसी तरह भिड़ गया, जैसे त्रिनेत्रधारी महादेवजीके साथ अन्धकासुर लड़ रहा हो। वानरराज सुग्रीव प्रघसके साथ और श्रीमान् लक्ष्मण समरभूमिमें विरूपाक्षके साथ युद्ध करने लगे। दुर्जय वीर अग्निकेतु, रश्मिकेतु, सुप्तघ्न और यज्ञकोप ये सब राक्षस श्रीरामचन्द्रके साथ जूझने लगे। धर्मके बलवान् पुत्र महाकपि सुषेण राक्षण विद्युन्मालीके साथ लोहा लेने लगे। इसी प्रकार अन्याय भयानक वानर बहुतोंके साथ युद्ध करनेके पश्चात् दूसरे-दूसरे राक्षसोंके साथ सहसा द्वन्द्वयुक्त करने लगे।

अंगद मेघनाथ के सामने जा डटे थे। हनुमान प्रजँघ और जंबुमाली से भिड़ गए थे। नील निकुंभ से लड़ रहे थे। सुग्रीव और प्रघस में युद्ध हो रहा था। लक्ष्मण और रावणपुत्र विरुपाक्ष में शक्ति-परीक्षण चल रहा था। अग्निकेतु, रश्मिकेतु, सुप्रघ्न तथा यज्ञकोप के संयुक्त आक्रमण को स्वयं राम रोक रहे थे। मैंद और वज्रमुष्टि में युद्ध हो रहा था। द्विविद तथा अशनिप्रभ भिड़े हुए थे। नल तथा प्रतपन में संघर्ष हो रहा था और वृद्ध सुषेण विद्युन्माली को सँभाले हुए थे।

युद्ध अत्यंत वेग से आरम्भ हुआ था और क्रमश: बल पकड़ता जा रहा था। राक्षस योद्धाओं को शस्त्र-परिचालन का अच्छा अभ्यास था; किंतु वानर यूथपतियों में शारीरिक बल, युद्ध में डटे रहने का दम तथा मन की निष्ठा अधिक थी। युद्ध के वर्द्धमान वेग के साथ-साथ वानर अपनी आरम्भिक व्याकुलता पर नियंत्रण पाते जा रहे थे और राक्षसों की ऊर्जा क्षीण होती प्रतीत हो रही थी।

वानरों और राक्षसोंके शरीरोंसे निकलकर बहुत-सी खून की नदियाँ बहने लगीं। उनके सिरके बाल ही वहाँ शैवाल (सेवार) के समान जान पड़ते थे। वे नदियाँ सैनिकोंकी लाशरूपी काष्ठसमूहोंको बहाये लिये जाती थीं।

जिस प्रकार इन्द्र वज्रसे प्रहार करते हैं, उसी तरह इन्द्रजित् मेघनादने शत्रुसेनाको विदीर्ण करनेवाले वीर अङ्गदपर गदासे आघात किया। किंतु वेगशाली वानर अङ्गदने उसकी गदा हाथसे पकड़ ली और उसी गदासे इन्द्रजित्के सुवर्णजटित रथको सारथि और घोड़ोंसहित चूर-चूर कर डाला।

महाबली जम्बुमाली रथपर बैठा हुआ था। उसने कुपित होकर समराङ्गणमें एक रथ-शक्तिके द्वारा हनुमान्जीकी छातीपर चोट की।

परंतु पवननन्दन हनुमान् उछलकर उसके उस रथपर चढ़ गये और तुरंत ही थप्पड़से मारकर उन्होंने उस राक्षसके साथ ही उस रथको भी चौपट कर दिया (जम्बुमाली मर गया)।

उधर राक्षस प्रघस वानरसेनाको कालका ग्रास बना रहा था। यह देख वानरराज सुग्रीवने सप्तपर्णनामक वृक्षसे उसे वेगपूर्वक मार गिराया। लक्ष्मणने पहले बाणोंकी वर्षा करके भयंकर दृष्टिवाले राक्षस विरूपाक्षको बहुत पीड़ा दी। फिर एक बाणसे मारकर उसे मौतके घाट उतार दिया। अग्निकेतु, दुर्जय रश्मिकेतु, सुप्तघ्न और यज्ञकोप नामक राक्षसोंने श्रीरामको अपने बाणोंसे घायल कर दिया।

तब श्रीरामने कुपित हो अग्निशिखाके समान भयंकर बाणोंद्वारा समराङ्गणमें उन चारोंके सिर काट लिये। निशाचर विद्युन्माली तुरंत ही बड़ी फुर्तीके साथ रथसे नीचे कूद पड़ा और हाथमें गदा लेकर पृथ्वीपर खड़ा हो गया। तदनन्तर क्रोधसे भरे हुए वानरशिरोमणि सुषेण एक बहुत बड़ी शिला लेकर उस निशाचरकी ओर दौड़े। कपिश्रेष्ठ सुषेणको आक्रमण करते देख निशाचर विद्युन्मालीने तत्काल ही गदासे उनकी छातीपर प्रहार किया। गदाके उस भीषण प्रहारकी कुछ भी परवा न करके वानरप्रवर सुषेणने उसी पहलेवाली शिलाको चुपचाप उठा लिया और उस महासमरमें उसे विद्युन्मालीकी छातीपर दे मारा।

शिलाके प्रहारसे घायल हुए निशाचर विद्युन्मालीकी छाती चूर-चूर हो गयी और वह प्राणशून्य होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा।

इस प्रकार उन वानर और राक्षसोंमें युद्ध चल ही रहा था कि सूर्यदेव अस्त हो गये तथा प्राणोंका संहार करनेवाली रात्रिका आगमन

हुआ। वानरों और राक्षसोंमें परस्पर वैर बँध गया था। दोनों ही पक्षोंके योद्धा बड़े भयंकर थे तथा अपनी-अपनी विजय चाहते थे; अत: उस समय उनमें रात्रियुद्ध होने लगा।

उस दारुण अन्धकारमें वानरलोग अपने विपक्षीसे पूछते थे, क्या तुम राक्षस हो ? और राक्षसलोग भी पूछते थे, क्या तुम वानर हो ? इस प्रकार पूछ-पूछकर समराङ्गणमें वे एक दूसरेपर प्रहार करते थे।

बलवान् वानरोंने युद्धमें राक्षस-सेनाके भीतर हलचल मचा दी। वे सब-के-सब क्रोधसे पागल हो रहे थे; अत: हाथियों एवं हाथीसवारोंको तथा ध्वजा-पताकासे सुशोभित रथोंको भी खींच लेते और दाँतोंसे काट-काटकर क्षत-विक्षत कर देते थे।

बड़े-बड़े राक्षस कभी प्रकट होकर युद्ध करते थे और कभी अदृश्य हो जाते थे; परंतु श्रीराम और लक्ष्मण विषधर सर्पोंके समान अपने बाणोंद्वारा दृश्य और अदृश्य सभी राक्षसोंको मार डालते थे।

घायल होकर कराहते हुए राक्षसों और शस्त्रोंसे क्षतविक्षत हुए वानरोंका आर्तनाद वहाँ बड़ा भयंकर प्रतीत होता था।

वानरों और राक्षसोंका संहार करनेवाली वह भयंकर रजनी कालरात्रिके समान समस्त प्राणियोंके लिये दुर्लङ्घ्य हो गयी थी।

तब श्रीरामने पलक मारते-मारते अग्निज्वालाके समान भयानक बाणोंसे छ: निशाचरोंको घायल कर दिया। दुर्धर्ष, वीर यज्ञशत्रु, महापार्श्व, महोदर, महाकाय, वज्रदंष्ट्र तथा वे दोनों शुक और सारण।

श्रीरामके बाणसमूहोंसे सारे मर्मस्थानोंमें चोट पहुँचनेके कारण वे छहों राक्षस युद्ध छोड़कर भाग गये; इसीलिये उनकी आयु शेष रह गयी। दूसरे भी जो-जो राक्षसवीर श्रीरामके सामने खड़े थे, वे भी उसी प्रकार नष्ट हो गये, जैसे आगमें पड़कर पतिंगे जल जाते हैं।

राक्षसोंके सिंहनादों और भेरियोंकी आवाजोंसे वह भयानक रात्रि और भी भयंकर हो उठी थी। दूसरी ओर अङ्गद रणभूमिमें शत्रुओंका संहार करनेके लिये आगे बढ़े। उन्होंने रावणपुत्र इन्द्रजितको घायल कर दिया तथा उसके सारथि और घोडोंको भी यमलोक पहुँचा दिया।

राक्षस दुर्गपर अस्त्र-शस्त्र लेकर पहुँचे। वानरोंने उन्हें उछलकर पैर पकड़कर नीचे पटकना प्रारम्भ किया। वे महाबली वानर राक्षसोंको छातीसे दबा पीस देते थे, नखोंसे नोचते थे, दाँतोंसे काटते थे, घूमाकर समुद्रमें फेंक देते थे। अङ्गदके साथ इन्द्रजित, हनुमानके साथ जम्बुमाली जूझ रहा था। रावणके छ: मन्त्री श्रीरामपर टूटे-यमशत्रु, महापार्श्व, वज्रदंष्ट, महोदर, महाकाय, उग्रकेश; किंतु श्रीरामने जब धनुष चढ़ाया, उनकी शरवर्षाके सम्मुख वे भाग खड़े हुए। युद्ध भूमिका आकाश रामनामामित बाणोंसे व्याप्त हो गया।

सूर्यास्त हो गया। इस प्रथम दिनके संघर्षमें लमाकी एक चतुर्थांश सेना समाप्त हो।

समग्र रूप से संध्या तक वानर सेना पर्याप्त प्रबल सिद्ध हुई थी किंतु संध्या होते-होते वे लोग थकने लगे थे। रथ के अश्वों की समता में दौड़ना और अपने से ऊँचाई पर रथ में सुरक्षित बैठे शत्रुओं के साथ लड़ना, अपनी क्षमता को अप्लकाल में ही व्यय कर देने की माँग करता था। सूर्यास्त होने तक वे लोग अपनी क्षमता-भर युद्ध कर चुके थे और अब रात्रि के लिए युद्ध स्थगित करने की इच्छा रखते थे।

पूर्णत: अंधकार हो जाने पर भी युद्ध चलता रहा। वानर अंधकार में लड़ने के अभ्यस्त नहीं थे, किंतु युद्ध स्थगित करना उनके हाथ में नहीं था। न तो दोनों पक्षों में ऐसा कोई समझौता होता दीख रहा था और न ही राक्षस-सेनाएँ वापस नगर में लौटने की इच्छुक प्रतीत हो रही थीं। युद्ध तो वानरों को लड़ना ही था।

अंधकार के कारण राक्षसों की गति में कुछ अंतर नहीं पड़ा था। ऐसा नहीं लगता था कि उन्हें तनिक भी असुविधा हो रही है, वरन् अंधकार में उनकी गति कुछ बढ़ गई थी।

राम की चिंता बढ़ती जा रही थी। उन्हें लग रहा था कि दिन-भर के युद्ध से थकी हुई उनकी सेना, इस प्रकार अधिक देर तक नहीं टिक पाएगी। पता नहीं, अंधकार में राक्षस किस अभ्यास के आधार पर लड़ते थे। स्वयं को छिपाना तो सरल था, किंतु शत्रु को ढूँढकर उस पर प्रहार करने का कोई विशिष्ट उपकरण उनके पास प्रतीत होता था। वानर सेना अग्निकाष्ठों की सहायता से युद्ध कर रही थी; किंतु क्षीण प्रकाश में राक्षस सेना के व्यूहों और स्थितियों को समझ पाना सम्भव नहीं था कदाचित् दिन-भर युद्ध करनेवाली उनकी वाहिनियाँ इस अंधकार में लंका में लौट गई थीं और उनका स्थान नई वाहिनियों ने ले लिया था। नवागत वाहिनियाँ थकी हुई नहीं थीं, इसलिए वे पूर्ण वेग के साथ युद्ध कर रही थीं।

अङ्गदके द्वारा घोड़े और सारथिके मारे जानेपर महान् कष्टमें पड़ा हुआ इन्द्रजित् रथको छोड़कर वहीं अन्तर्धान हो गया।

अब अन्धकार फैलने लगा तो निशाचरका बल बढ़ गया। अभी चन्द्रोदय हुआ नहीं था। मायायुद्धके लिए रात्रि ही सबसे उपयुक्त

अवसर है। मेघनाद मायासे अन्तर्धान हो गया। सम्पूर्ण प्राणी युद्धमें इन्द्रजित्‌के प्रभावको जानते थे; अत: अङ्गदके द्वारा उसको पराजित हुआ देख उन महात्मा अङ्गदपर दृष्टिपात करके सबको बड़ी प्रसन्नता हुई। रथ तोड़ा डाला, सारथिको मार गिराया और मेघनादकी छातीमें लात मारी। दूसरा सारथि मेघनादको व्याकुल जानकर, उसे रथमें डालकर, तुरंत घर ले आया।

इधर अंगदने सुना कि पवनपुत्र हनुमान किलेपर अकेले ही गये हैं, तो रणमें बाँके बालिपुत्र वानरके खेलकी तरह उछलकर किलेपर चढ़ गये। युद्धमें शत्रुओंके विरुद्ध दोनों वानर क्रुद्ध हो गये। हृदयमें श्रीरामके प्रतापका स्मरण करके दोनों दौड़कर रावणके महलपर जा चढ़े और कोसलराज श्रीरामकी दुहाई बोलने लगे।

उन्होंने कलशसहित महलको पकड़कर ढहा दिया। यह देखकर राक्षसराज रावण डर गया। सब स्त्रियाँ हाथोंसे छाती पीटने लगीं और कहने लगीं- अबकी बार दो उत्पाती वानर एक साथ आ गये।

वानरलीला करके घुड़की देकर दोनों उनको डराते हैं और श्रीरामका सुन्दर यश सुनाते हैं। फिर सोनेके खंभोंको हाथोंसे पकड़कर उन्होंने परस्पर कहा कि अब उत्पात आरम्भ किया जाय।

वे गर्जकर शत्रुकी सेनाके बीचमें कूद पड़े और अपने भारी भुजबलसे उसका मर्दन करने लगे। किसीकी लातसे और किसीकी थप्पड़से खबर लेते हैं और कहते हैं कि तुम श्रीरामको नहीं भजते, उसका यह फल लो।

एकको दूसरेसे रगड़कर मसल डालते हैं और सिरोंको तोड़कर फेंकते हैं। वे सिर जाकर रावणके सामने गिरते हैं और ऐसे फूटते हैं मानो दहीके कूँड़े फूट रहे हों। जिन बड़े-बड़े मुखियों प्रधान सेनापतियों को पकड़ पाते हैं उनके पैर पकड़कर उन्हें प्रभुके पास फेंक देते हैं। विभीषण उनके नाम बतलाते हैं और श्रीराम उन्हें भी अपना धाम परम पद दे देते हैं।

ब्राह्मणोंका मांस खानेवाले वे नरभोजी दुष्ट राक्षस भी वह परम गति पाते हैं जिसकी योगी भी याचना किया करते हैं परन्तु सहजमें नहीं पाते। शिवजी कहते हैं- हे उमा। श्रीराम बड़े ही कोमलहृदय और करुणाकी खान हैं। वे सोचते हैं कि राक्षस मुझे वैरभावसे ही सही, स्मरण तो करते ही हैं।

ऐसा हृदयमें जानकर वे उन्हें परमगति मोक्ष देते हैं। हे भवानी। कहो तो ऐसे कृपालु और कौन हैं ? प्रभुका ऐसा स्वभाव सुनकर भी जो मनुष्य भ्रम त्यागकर उनका भजन नहीं करते, वे अत्यन्त मन्दबुद्धि और परम भाग्यहीन हैं।

भुजाओंके बलसे शत्रुकी सेनाको कुचलकर और मसलकर, फिर दिनका अन्त होता देखकर हनुमान और अङ्गद दोनों कूद पड़े और श्रम थकावट रहित होकर वहाँ आ गये जहाँ भगवान् श्रीराम थे।

अङ्गद और हनुमानको गये जानकर सभी भालू और वानर वीर लौट पड़े। राक्षसोंने पदोष सायंकालका बल पाकर रावणकी दुहाई देते हुए वानरोंपर धावा किया। राक्षसोंकी सेना आती देखकर वानर लौट पड़े और वे योद्धा जहाँ-तहाँ कटकटाकर भिड़ गये। दोनों ही दल बड़े बलवान हैं। योद्धा ललकार-ललकारकर लड़ते हैं, कोई हार नहीं मानते।

सभी राक्षस महान वीर और अत्यन्त काले हैं और वानर विशालकाय तथा अनेकों रंगोंके हैं। दोनों ही दल बलवान् हैं और समान बलवाले योद्धा हैं। वे क्रोध करके लड़ते हैं और खेल करते वीरता दिखलाते हैं।

राक्षस और वानर युद्ध करते हुए ऐसे जान पड़ते हैं मानो क्रमश: वर्षा और शरद ऋतुके बहुत-से बादल पवनसे प्रेरित होकर लड़ रहे हों। अकंपन और अतिकाय इन सेनापतियोंने अपनी सेनाको विचलित होते देखकर माया की।

पलभरमें अत्यन्त अन्धकार हो गया। खून, पत्थर और राखकी वर्षा होने लगी।

दसों दिशाओंमें अत्यन्त घना अन्धकार देखकर वानरोंकी सेनामें खलबली पड़ गयी। एकको एक दूसरा नहीं देख सकता और सब जहाँ-तहाँ पुकार कर रहे हैं। फिर कृपालु श्रीरामने हँसकर धनुष चढ़ाया और तुरंत ही अग्निबाण चलाया, जिससे प्रकाश हो गया, कहीं अँधेरा नहीं रह गया। जैसे ज्ञानके उदय होनेपर सब प्रकारके सन्देह दूर हो जाते हैं।

भालू और वानर प्रकाश पाकर श्रम और भयसे रहित तथा प्रसन्न होकर दौड़े। हनुमान और अङ्गद रणमें गरज उठे। उनकी हाँक सुनते ही राक्षस भाग छूटे। भागते हुए राक्षस योद्धाओंको वानर और भालू पकड़कर पृथ्वीपर दे मारते हैं और अद्भुत आश्चर्यजनक करनी करते हैं युद्धकौशल दिखलाते हैं। पैर पकड़कर उन्हें समुद्रमें डाल देते हैं। वहाँ मगर, साँप और मच्छ उन्हें पकड़-पकड़कर खा डालते हैं। कुछ मारे गये, कुछ घायल हुए, कुछ भागकर गढ़पर चढ़ गये। अपने बलसे शत्रुदलको विचलित करके रीछ और वानर वीर गरज रहे हैं।

वहाँ लमामें रावणने मन्त्रियोंको बुलाया और जो योद्धा मारे गये थे उन सबको सबसे बताया। उसने कहा वानरोंने आधी सेनाका संहार कर दिया। अब शीघ्र बताओ, क्या विचार उपाय करना चाहिये ?

जब अकम्पन प्रयस आदि राक्षसोंका समुदाय जूझ गया। रणभूमि में वज्रदन्त अतिकाय मारे गये तब युद्ध के लिए मेघनाद अपने पिता से आज्ञा लेकर चले। इस मेघनाद योद्धा की लंका में बड़ी शक्ति है। यह सेना का सर्वोच्च पद अध्यक्ष संचालक है और युवराज की भी पदवी इसे मिली थी। इसीने इन्द्रलोक जिता इसलिए यह इन्द्रजीत कहलाता। रावण के सब बेटों में सबसे प्यारे बेटा रावणका समझा जाता था। इसकी पत्नी सुलोचना (प्रमिला) शेषकी पुत्री मानी हुई जगत की सती थी। मेघनाद भी एक पत्नीव्रत था। महलोंमें इसके और कोई दूसरी रानी नहीं थी। पतिने नारीको जयमाला पहना के विदा किया और सती अपने सत् के बल से कह उठीं आज विजय होकर आओगे उसी समय चारों ओर चहलका मच गया। सूरमण्डल भी उन शब्दोंसे व्याप गया। सब गुप्त शक्तियाँ व्याकुल हो गयीं। आज रणस्थल में क्या होगा। हे विधाता, दयादृष्टि रखना, सन्मुख उत्पात दिख रहा है। सतवन्ती का सत् बल लेकर मेघनाद युद्ध में जा रहा है। संसार में जितने भी व्रत है उन सबमें पतिव्रत धर्म का व्रत सबसे ऊँचा है। सतवन्ती के सच्चे सत् का संसार भी लोहा मानता है। सत् के भय से सब जल, जंगल, आकाश, पृथ्वी काँप उठते है। यह सब प्रकृति के गुप्त भेद देखकर भगवान भी मुस्कराते है।

४) मेघनाद का लक्ष्मण पर ब्रह्मास्त्र शक्ति प्रयोग- राजा रावणको शोकके समुद्रमें निमग्न एवं दीन हुआ देख रथियोंमें श्रेष्ठ राक्षसराजकुमार इन्द्रजितने यह बात कही- तात। राक्षसराज। जबतक इन्द्रजित् जीवित है तबतक आप चिन्ता और मोहमें न पड़िये। इस इन्द्रशत्रुके बाणोंसे घायल होकर कोई भी समराङ्गणमें अपने प्राणोंकी रक्षा नहीं कर सकता।

आप मुझ इन्द्रशत्रुकी इस सुनिश्चित प्रतिज्ञाको, जो मेरे पुरुषार्थसे और दैवबल ब्रह्माजीकी कृपा से भी सिद्ध होनेवाली है, सुन लीजिये- मैं आज ही लक्ष्मणसहित रामको अपने अमोघ बाणोंसे पूर्णत: तृप्त करूँगा- उनकी युद्धविषयक पिपासाको बुझा दूँगा।

आज इन्द्र, यम, विष्णु, रुद्र, साध्य, अग्नि, सूर्य, और चन्द्रमा बलिके यज्ञमण्डपमें भगवान् विष्णुके भयंकर विक्रमकी भाँति मेरे अपार पराक्रमको देखेंगे। उस महामनस्वी वीरको प्रस्थान करते देख बहुत-से महाबली राक्षस हाथोंमें श्रेष्ठ धनुष हर्ष और उत्साहके साथ उसके पीछे-पीछे चले। उन सबने प्रास, पट्टिश, खड्ग, फरसे, गदा, भुशुण्डि, मुद्गर, डंडे, शतघ्नी और परिघ आदि आयुध धारण कर रक्खे थे।

शर्खोकी ध्वनिके साथ मिली हुई भेरियोंकी भयानक आवाज सब ओर गूँज उठी। उस तुमुलनादके साथ इन्द्रद्रोही पराक्रमी इन्द्रजितने बड़े वेगसे रणभूमिकी ओर प्रस्थान किया।

तब मेघनाद क्रोधपूर्वक बोला- सबेरे मेरी करामात देखना। मैं बहुत कुछ करूँगा; थोड़ा क्या कहूँ ? जो कुछ वर्णन करूँगा थोड़ा ही होगा। पुत्रके वचन सुनकर रावणको भरोसा आ गया। उसने प्रेमके साथ उसे गोदमें बैठा लिया। विचार करते-करते ही सबेरा हो गया। वानर फिर चारों दरवाजोंपर जा लगे। मेघनादने कानोंसे ऐसा सुना कि वानरोंने आकर फिर किलेको घेर लिया है। तब वह वीर किलेसे उतरा और डंका बजाकर उनके सामने चला।

मेघनादने पुकारकर कहा- समस्त लोकोंमें प्रसिद्ध धनुर्धर कोसलाधीश दोनों भाई कहाँ हैं ? नल, नील, द्विविद, सुग्रीव और बलकी सीमा अङ्गद और हनुमान कहाँ हैं ?

भाईसे द्रोह करनेवाला विभीषण कहाँ हैं ? आज मैं सबको और उस दुष्टको तो हठपूर्वक अवश्य ही मारूँगा। ऐसा कहकर उसने धनुषपर कठिन बाणोंका सन्धान किया और अत्यन्त क्रोध करके उसे कानतक खींचा।

वह बाणोंके समूह छोड़ने लगा। मानो बहुत-से पंखवाले साँप दौड़े जा रहे हों। जहाँ-तहाँ वानर गिरते दिखायी पड़ने लगे। उस समय कोई भी उसके सामने न हो सके। तदनन्तर अस्त्रविद्याविशारद इन्द्रजितने ब्रह्मास्त्रका आवाहन किया और अपने धनुष तथा रथ आदि सब वस्तुओंको वहाँ सिद्ध ब्रह्मास्त्रमन्त्रसे अभिमन्त्रित किया।

रावणपुत्र इन्द्रजित शत्रुओंके प्रति अत्यन्त क्रोधसे भरा हुआ था। उसने निशाचरोंकी ओर देखकर कहा- तुम लोग वानरोंको मार डालनेकी इच्छासे हर्ष और उत्साहपूर्वक युद्ध करो। उस युद्धस्थलमें राक्षसोंसे घिरे रहकर इन्द्रजितने भी नालीक, नाराच, गदा और मुसल आदि अस्त्र-शस्त्रोंद्वारा वानरोंका संहार आरम्भ किया।

समराङ्गणमें उसके अस्त्र-शस्त्रोंसे घायल होनेवाले वानर भी जो वृक्षोंसे ही हथियारका काम लेते थे, सहसा रावणकुमार पर शैल-

शिखरों और वृक्षोंकी वर्षा करने लगे।

उस समय कुपित हुए महातेजस्वी महाबली रावणपुत्र इन्द्रजितने वानरोंके शरीरोंको छिन्न-भिन्न कर डाला।

रणक्षेत्रमें देवताओंद्वारा पीड़ित हुए बड़े-बड़े असुरोंकी भाँति इन्द्रजितके बाणोंसे व्यथित हुए वानरोंके शरीर छिन्नभिन्न हो गये। उनकी विजयकी आशापर तुषारपात हो गया और वे अचेत-से होकर पृथ्वीपर गिर पड़े।

वानरोंने भगवान् श्रीरामके लिये अपने जीवनका मोह छोड़ दिया था। वे पराक्रमपूर्वक गर्जना करते हुए हाथमें शिलाएँ लिये समरभूमिमें डटे रहे- युद्धभूमिसे पीछे न हटे।

समराङ्गणमें खड़े हुए वे वानर रावणकुमारपर वृक्षों, पर्वत शिखरों और शिलाओंकी वर्षा करने लगे।

सब ओर फैली हुई प्रलयाग्निके समान अत्यन्त रोषसे भरे हुए इन्द्रजितने दूसरे-दूसरे श्रेष्ठ वानरोंको भी बहुसंख्यक बाणोंकी मारसे व्यथित कर दिया। वह राक्षसराजकुमार इन्द्रजित बड़ा तेजस्वी, प्रभावशाली एवं बलवान था। उसने सब ओरसे बाणों तथा अन्यान्य अस्त्र-शस्त्रोंकी भयंकर वर्षा करके पुन: वानर-सेनाको रौंद डाला। राक्षसराज इन्द्रजितके बाणोंसे विदीर्ण हो वे श्रेष्ठ वानर एक दूसरेके सामने जाकर विकृत स्वरमें चीत्कार करते हुए धराशायी हो जाते थे।

राक्षसप्रवर इन्द्रजितने दिव्य मन्त्रोंसे अभिमन्त्रित प्रासों, शूलों और पैने बाणोंद्वारा हनुमान, सुग्रीव, अंगद, गन्धमादन, जाम्बवान, सुषेण, वेगदर्शी, मैन्द, द्विविद, नील, गवाक्ष, गवय, केसरी, हरिलोमा, विद्युदंष्ट्र, सूर्यानन, ज्योतिर्मुख, दधिमुख, पावका, नल और कुमुद आदि सभी श्रेष्ठ वानरोंको घायल कर दिया।

तब मेघनाद रघुनाथके पास गया और उसने उनके प्रति अनेकों प्रकारके दुर्वचनोंका प्रयोग किया। फिर उसने उनपर अस्त्र-शस्त्र तथा और सब हथियार चलाये। प्रभुने खेलमें ही सबको काटकर अलग कर दिया।

श्रीरामका प्रताप सामर्थ्य देखकर वह मूर्ख लज्जित हो गया और अनेकों प्रकारकी माया करने लगा। जैसे कोई व्यक्ति छोटा-सा साँपका बच्चा हाथमें लेकर गरुड़को डरावे और उससे खेल करे।

शिवजी और ब्रह्माजीतक बड़े-छोटे सभी जिनकी अत्यन्त बलवान् मायाभी वशमें हैं, नीचबुद्धि निशाचर उनको अपनी माया दिखलाता है। आकाशमें ऊँचे चढ़कर वह बहुत-से अंगारे बरसाने लगा। पृथ्वीसे जलकी धाराएँ प्रकट होने लगीं। अनेक प्रकारके पिशाच तथा पिशाचिनियाँ नाच-नाचकर मारो, काटो की आवाज करने लगीं।

वह कभी तो विष्ठा, पीब, खून, बाल और हड्डियाँ बरसाता था और कभी बहुतसे पत्थर फेंके देता था। फिर उसने धूल बरसाकर ऐसा अँधेरा कर दिया कि अपना ही पसारा हुआ हाथ नहीं सूझता था।

माया देखकर वानर अकुला उठे। वे सोचने लगे कि इस हिसाबसे इसी तरह रहा तो सबका मरण आ बना। यह कौतुक देखकर श्रीराम मुसकराये। उन्होंने जान लिया कि सब वानर भयभीत हो गये है।

तब श्रीरामने एक ही बाणसे सारी माया काट डाली, जैसे सूर्य अन्धकारके समूहको हर लेता है। तदनन्तर उन्होंने कृपाभरी दृष्टिसे वानर-भालुओंकी ओर देखा, जिससे वे ऐसे प्रबल हो गये कि रणमें रोकनेपर भी नहीं रुकते थे।

रीछ-वानर जहाँ-तहाँ भाग चले। सबको युद्धकी इच्छा भूल गयी। रणभूमिमें ऐसा एक भी वानर या भालू नहीं दिखायी पड़ा जिसको उसने प्राणमात्र अवशेष न कर दिया हो अर्थात् जिसके केवल प्राणमात्र ही न बचे हों; बल, पुरुषार्थ सारा जाता न रहा हो।

सारी सेनाको बेहाल व्याकुल देखकर पवनसुत हनुमान क्रोध करके ऐसे दौड़े मानो स्वयं काल दौड़ा आता हो। उन्होंने तुरंत एक बड़ा भारी पहाड़ उखाड़ लिया और बड़े ही क्रोधके साथ मेघनादपर छोड़ा।

पहाड़को आते देखकर वह आकाशमें उड़ गया। उसके रथ, सारथि और घोड़े सब नष्ट हो गये चूर-चूर हो गये। हनुमानजी उसे बार-बार ललकारते हैं। पर वह निकट नहीं आता, क्योंकि वह उनके बलका मर्म जानता था।

जब मेघनाद युद्ध में आ गया तब वानरसेनामें विषम विषाद व्यापा। वह योद्धा छल, बल, कौशल से लड़ता था। कभी अन्तर्ध्यान हो जाता, कभी प्रकट हो जाता, कभी युद्ध में दिन कर देता और कभी रात्रि कर देता था। आकाश मार्गमें जा-जाकर हड्डियाँ और धूल बरसाता था और तकतक कर वीर वानरोंपर नाना प्रकार के तीर चलाता था। इसतरह लड़ते-लड़ते जब वानरसेना चूर हो गयी तब भयभीत होकर वानरसेना रघुनाथ के नामपर दुहाई है यह बोल उठी। लक्ष्मणने देखा रणभूमिमें वानरसेना लाचार हो गयी है तब रघुनाथजीकी

आज्ञा लेकर लक्ष्मण युद्धस्थल में आ गये और अपने एक ही बाण में असुर की माया का नाश कर रणभूमि में प्रकाश कर दिया। लक्ष्मण को देखकर मेघनाद बोला- अच्छा अब बच्चे भी रणको तैयार हो गये। यह युद्धस्थल वीरोंका है यह कोई बच्चोंका खिलवाड़ नहीं है। यह कोई मिठाइयों के दुकान का बाझार नहीं है। यहाँ पर कृपाणों की धारें चलती है। यह कोई शूर्पणखा की नाक-कान काँटना नहीं है, न हीं बालि वानर का पीछा करना है। न हीं यह कोई श्रवणकुमार का शिकार है यह जो तुम्हारे सामने खड़ा है लंकेश्वर का लोहू है। अभी तब तुम्हारे दाँतोंका दूध भी नहीं सुखा है मुझे दु:ख होता है इन्हें तोड़ने में। इसलिए हे लक्ष्मण, बेहतर है घर लौट जाओ अन्यथा तुम्हारा ताड़का वध वाला अभिमान चूर हो जायेगा और मेरा खर-दूषण-त्रिशिरा के वध का प्रतिशोध पूर्ण हो जायेगा।

तब लक्ष्मण बोले- बकवास बन्द कर। हम शाह लोग चोर की बात का बुरा नहीं मानते। इस लंका पर रघुकुल की कमान आकर कड़की है। ऋषियों के यज्ञों की ज्वाला का बदला लेने को भड़की है। सुरमण्डल, मुनिमण्डल, गोमण्डल के सन्तापों का, इन्द्रासन वाले पापोंका आज प्रतिघात होगा। अब पृथ्वी शीघ्र ही अपनी प्रतिहिंसा की पीड़ा मिटायेगी और असुरों के ताजे लहुसे जी-भरकर नहायेगी। इसलिए हे इन्द्रजीत, अब सँभल जा। यह इन्द्रियजीत लक्ष्मण आगे बढ़ रहा है। अब क्षत्रिय के कालजीत धनुष पर शायक चढ़ रहा है। रघुवंश की प्रतिज्ञा है कि वह दुष्टों का विनाश करेगा। लक्ष्मण के उसप्रकार वचन सुनकर इन्द्रजीत लाल हो गया और आपस में दोनों विशाल वीर भिड़ गये। धनुष पर धनुष खड़क उठे, बाणोंपर बाण बोल उठे। वीरों का बाँका युद्ध देखकर पृथ्वी और पाताल भी डोलने लगे। जब शत्रु मेघनाद ने मेघबाण छोड़ा तब लक्ष्मण ने वायु बाण छोड़ा। जब मेघनाद ने अग्नि बाण छोड़ा और लक्ष्मण ने जलवाष्प बाण छोड़ा। नाना प्रकार का युद्धकौशल दशकंधर पुत्र मेघनाद दिखलाता था। कौशल किशोर लक्ष्मण के कौशल से मेघनाद के सभी आघात व्यर्थ जा रहे थे और बाण बूझ रहे थे। सब भाँति युद्ध में इन्द्रजीत हारा और साहसहीन हुआ। उर्मिलानाथ लक्ष्मण के बाणोंसे मूर्छित होकर दीन हो गया। तब मन में सोचने लगा यह तो प्रलयंकारी है लक्ष्मण कोई साधारण मानव नहीं है सचमुच यह तो विजय का अवतार है।

अब मेघनाद के पास ब्रह्मशक्ति प्रहार बाकी रहा। उछलकर ललकारकर यहीं बोला अब तक मैं तुझे खेल खिलाता था अब तुमको खा जानेकी बारी है। इस शक्तिबाण का रूप धारण अब तुम्हारी मृत्यु आ पहुँची है। यह ब्रह्म शक्ति है ब्रह्मा की जो देवलोक से मेरे पास आयी है। जिस समय इन्द्र को जीता था, उस समय मेरे हाथ में आयी है। उसका मारा बेसुध होकर गिरता है और दिन उगने के पहले अपने प्राण गँवाता है। जो यह तन पर पड़ती है, शरीर मृततुल्य हो जाता है। इसलिए हो रघुवंशी सँभल तू आज बचने नहीं पाएगा। अब यह इन्द्रजीत भू-मंडल पर लषणजीत कहलायेगा।

तब लक्ष्मणने हँसकर कहा- इस मत पर तुझे धिक्कार है। मुदगर टूटा, गदा टूटी, तेरी तलवार टूटी, जो भी तुम्हारे पास हथियार थे उन सबसे तूने हार मानी है अब शस्त्रयुद्ध से हार गये तो तुमने ब्रह्मयुद्ध की ठानी है। तुम कितने भी आज पतित हो गये हो, पर ब्राह्मण वंश तुम्हारा है और हम ब्रह्मशक्ति का आदर करते है जिससे उसके सामने हमारा सर झुका हुआ है। अन्यथा तुम्हारी ताकत को तो हम मिट्टी धूल में मिला देते थे। यदि तुम्हारा ब्राह्मणपन का प्रश्न न होता तो कितना चकनाचूर कर देते। ब्रह्म फाँस की कोई चिंता नहीं है, यह क्षत्रिय जीता जायेगा। कुछ घड़ियों के बाद फिर चमकेगा। अब यह चन्द्रग्रहण में आता है।

तब मेघनादने वीरघातिनी शक्ति चलायी। वह तेजपूर्ण शक्ति लक्ष्मणकी छातीमें लगी। शक्तिके लगनेसे उन्हें मूर्छा आ गयी। तब मेघनाद भय छोड़कर उनके पास चला गया।

मेघनादके समान सौ करोड़ अगणित योद्धा उन्हें उठा रहे हैं। परन्तु जगत्के आधार श्रीशेषजी लक्ष्मणजी उनसे कैसे उठते ? तब वे लजाकर चले गये।

शिवजी कहते हैं- हे गिरिजे। सुनो, प्रलयकालमें जिन शेषनागके क्रोधकी अग्नि चौदहों भुवनोंको तुरंत ही जला डालती है और देवता, मनुष्य तथा समस्त चराचर जीव जिनकी सेवा करते हैं, उनको संग्राममें कौन जीत सकता है ?

इस लीलाको वही जान सकता है जिसपर श्रीरामकी कृपा हो। सन्ध्या होनेपर दोनों ओरकी सेनाएँ लौट पड़ीं; सेनापति अपनी-अपनी सेनाएँ सँभालने लगे।

यह कहकर लक्ष्मणने छाती आगे कर सुखसे उस ब्रह्मशक्ति का महाप्रहार सहा और अपने आये हुए संकट पर ध्यान न दें, उस ब्रह्मशक्ति का वार सहा। तब संसार की गुप्त शक्तियाँ बोल उठीं धन्य हो। रण में भी यह ब्रह्मणयता का मान मनो देव ब्रह्माय और इस भाँति लखन उदास होकर समरभूमि में गिर पड़े। अब मेघनाद हर्ष नाद करने लगा।

व्यापक, ब्रह्म, अजेय, सम्पूर्ण ब्रह्माण्डके ईश्वर और करुणाकी खान श्रीरामने पूछा- लक्ष्मण कहाँ हैं ?

इतने में ही उस जगह पर जहाँ लक्ष्मण पड़े थे आँधी वेग के समान रामादल से एक महान वानर आया और उस मूर्च्छित पड़े शरीर को शीश नवाकर दोनों हाथोंसे अपने कंधे पर उठा ले चला और उसे राम के पास ले गया। हनुमान के पीछे-पीछे पूरी वानरसेना अधीर होकर चल दी। उस निशाचर मेघनाद ने पहचान लिया कि लक्ष्मण को हनुमान अपने हाथों पर ले गये है। तबतक हनुमान उन्हें ले आये। छोटे भाईको इस दशामें देखकर प्रभुने बहुत ही दु:ख माना। तब व्याकुल हो श्रीराम लक्ष्मण की देह पर गिरे और उसी समय वानर मंडल में कोहराम मच गया। बड़े-बड़े वीर वानर योद्धा करने लगे हा विधना, यह क्या उत्पात हुआ? कपिदल पर यह कैसा वज्रापात हुआ। रघुकुल पर उल्कापात हुआ। जब लखन नहीं तो राम कहाँ ? जब राम नहीं होंगे तो विजय कहाँ ? विजय नहीं मिलेगी तो सिया कैसे मिलेगी ? जब सिया नहीं होगी तो शुभ समय कहाँसे आयेगा ? यह रण तो सीता पर था, लंका पर चढ़ाई करने का यही उद्देश्य था। अपना रण परमार्थ पर था, साहस पर था यही आदेश और आदर सबके लिये था। सबको लंका पर जय पानेकी अभिलाषा थी जब सहायता से पूरा कार्य करने को जब साथ हुये उसी समय यह विपत्ति आ पड़ी। श्रीराम बोले- संसार कहेगा रघुवंशी ने वानरोंको वनमें बहका दिये। वानर तो सब वनको भाग गये पर यह रघुवंश सब कुछ खो आया। धिक्कार हमारे जीवन पर जो हमारा नाम इस धरा पर रहे। इससे तो अच्छा है सागर में जाकर डूब जायें और अपना अस्तित्व मिटायें। इस तरह से प्रभु श्रीराम हाहाकार कर रहे थे।

तभी विभीषण ने कहा- रोने-धोने से क्या फायदा, अन्त समय तक भी चतुर धीरवान पुरुष उपचार करते है। लमामें भिषक्-श्रेष्ठ सुषेण रहते हैं। यह धन्वतंरी वैद्य के पुत्र है। अब विभीषणका मस्तिष्क भी सक्रिय हो गया- वे संसारमें कहाँ कौन-सी औषधि हैं, उसके ज्ञाता हैं। लंका में एक सुषेण वैद्य नामका विख्यात चिकित्सक औषधियों का सम्पूर्ण ज्ञाता है वह अपने काम में निपुण है। मेरा जाना तो लंका में ठीक नहीं है क्योंकि मेरे लिये तो दुविधा का प्रश्न है।

पवनपुत्र। यह तुम्हारे पराक्रमका समय है। जाम्बवन्तने सुझाया- सुन ही रहे हो कि लमासे महोत्सव वाद्योंकी ध्वनि आ रही है। वहाँ सब उत्सवमें, विजयोल्लासमें प्रमत्त हैं। तुम वैद्यको ले आ सकते हो।

इसी क्षण हनुमान बोल उठे- हे रघुनाथ मैं उसे अभी लेकर आता हूँ। तभी विभीषण ने सुषेण वैद्य का पूरा पता निशान बताया। हनुमान जी रघुनाथजी का ध्यान धर कर चले। हनुमान छोटा रूपधर कर गये।

वहाँ जाकर सुषेण अपने घर में शयन कर रहा था। हनुमान को विभीषणने वैद्यके गृहका ठीक स्थान बतलाया। लमा पवनपुत्रकी देखी थी। सीधे सुषेणके गृहके समीप कूदकर पहुँचे। मनमें आया- कुछ भी हो, यह शत्रु-पक्षका है। वहाँ जाकर पता नहीं क्या बहाना बनावेगा। इसके ग्रन्थ और औषधियाँ इसके गृहमें ही तो होंगी। लमा बसी ही त्रिकूटके शिखरपर थी। सुषेणका गृह जिस विशाल शिलापर था, उसे समूची उखाड़कर आञ्जनेयने गृह-सहित समरभूमिमें लाकर धर दिया। शय्यासहित सोये हुए सुषेण को घर समेत लंका में उसे उठा लाये। सुषेण एकाकी थे। परिवार उनके था नहीं। सेवक उत्सव मनाने चले गये थे। गृह उखाड़कर उठाया गया तो जाग गये। भूमिपर भवन उतरते ही द्वारसे निकले। विभीषण अञ्जलि बाँधे सामने मिले।

सुषेण रामादल में पहुँच गये तो देखा सामने रघुनाथजी छोटे भाई को गोद में लिये व्याकुल होकर बैठे है। इस समय श्याम सलोना मुख आँसूओंसे तर है। मानों पानी से भरा मेघ पृथ्वीपर झर रहा हो। सुषेण को देखकर कौसलराय राम बोले वैद्यराज कुछ शीघ्र उपाय कीजिए। तब सुषेण ने श्रीराम से कुछ मर्मभरे वचन कहें। मैं दशानन के घर का वैद्य हूँ। किसतरह से मैं आपका यह काम करूँ। लंकापति के बैरी को यदि आराम करूँ तो मेरे लिये यह अनुचित होगा। जिस कर्म के करने में प्रत्यक्ष बुराई है वह कर्म कैसे किया जाए। हे राम तुम तो धर्म पर प्रतिष्ठित हो क्या मुझे यह अधर्म करने के लिए आज्ञा दे रहे हो। यह सुनते ही श्रीराम चौंके और बोले- हे महावर, राम कभी भी धर्म छोड़नेकी राय नहीं देगा। जिस धर्म हेतु मेरा राज्य गया, मेरे पिताश्री का मरण हुआ, जिस धर्म हेतु मेरा प्रिय भाई भरत छूटा, मेरी सीता प्यारी का हरण हुआ। उस धर्म और सत्य पर अडिग रह कर यदि लक्ष्मण भी मर जायें तो मर जायें पर मेरी तो यहीं आवाज होगी किसी तरह धर्म न जाने पायें। हर चीज इस जगत में धर्म पर कुर्बान है। धर्म और संप्रदाय क्या है ? पूरा जी-जान धर्म पर है। रघुवंश में चाण्डाल के घर हमारे पूर्वज बिके थे, रघुकुल की सर्वदासहित सब सन्ताने धर्म पर है। ब्रह्मास्त्रद्वारा मेरा भाई मूर्छित हुआ तो क्या है उसकी कमान अब भी बलवान धर्म पर है। अवसर आने पर राघव यह भी दिखलायेगा कि भाई सहित स्वयं का बलिदान भी धर्म पर है।

इस उदार वाक्य को सुनकर सुषेण वैद्य शान्त हो गया और चरणोंपर गिरकर कहने लगा। जय जय सीताकान्त प्रभु आप सचमुच ही

धर्मावतार हैं मैं दर्शन पाकर धन्य हुआ। मेरा जड़जीवन, जड़ शरीर आपके इन शब्दोंसे चैतन्य हुआ। हे नाथ, यह तो धर्म की चर्चा थी केवल इस समय धर्म की परीक्षा थी अन्यथा मैं तो स्वामी की सेवा करने मात्र ही आया था। लंका में रहकर भी यह सुषेण दशानन के पक्ष का नहीं है यह सदा से ही विभीषण दल का सहकारी और सहयोगी है।

सुषेणने गम्भीर स्वरमें कहा- चिकित्सकका शत्रु-मित्र कोई नहीं होता। मुझे शीघ्र रुग्णके समीप पहुँचाओ।

यहाँ तो अधिकांश शर-जर्जर मृत पड़े हैं। विभीषणने अत्यन्त खिन्न स्वरमें कहा।

जिनके भी शरीर सुरक्षित हैं, वे मृत नहीं हो सकते। सुषेणका स्वर स्वस्थ था- आघात-जर्जर प्राणीके शरीरमें प्राण एक रात्रि अवश्य रहते हैं। वह सम्पूर्ण मृत सूर्योदयके पश्चात् ही होता है।

वैद्यकुलरत्न लक्ष्मण की नाड़ी देखकर बोले- गहरी भारी चोट आयी हैं और प्रयत्न अति दूर है। सूरज उगने से पहले ही यदि यह संजीवनी जड़ी-बूटी मिल जाए तो जीवन हैं अन्यथा लक्ष्मण के प्राण बचना असम्भव है क्योंकि विषने पूरे शरीर को निर्जीव किया है। यह संजीवनी औषधि अत्यन्त दूर है जो रातभर में आ नहीं सकती ऐसा कौनसा योद्धा है जो लायें इसे रात्रि में।

तब प्रभुदास पवनपुत्र हनुमान बोले- इस दास की प्रतिज्ञा है मैं इसे ला सकता हूँ। भूतल में हो या आकाश में, पर्वत में हो या सागर में यह आपका दास उसको अभी लेकर आयेगा चाहे वह ब्रह्मा के घर में भले क्यों न हो। हे वैद्यराज वह किस जगह पर मिलेगी, उसका रूप, रंग, पहचान बतलाओ। राघव अगर सहायक होंगे तो रातभर में ही यह औषधि आ जायेगी। हनुमान के साहस पर वैद्य भी बड़े उल्लसित हुये और बोले- उत्तराखण्ड में जो द्रोणगिरी पर्वत हैं हिमाचल प्रदेश में सिमला के पास जाखू नाम का स्थान है वहाँपर द्रोणगिरी पर्वत है और जोशीमठ तक फैला हुआ है उसपर यह औषधि मिलेगी। यह औषधि संजीवनी जो जीवन प्रदान करनेवाली है ज्वाला की भाँति चमकती है। यदि सुबह तक नहीं आयी तो जान नहीं बच सकती। जब श्रीराम और लक्ष्मण शबरीकी कुटिया में गये थे उस समय शबरी ने झूठे बेर खिलाये थे पर लक्ष्मण ने वो बेर नहीं खाये और श्रीराम की नजर बचाकर उठाकर पीछे की तरफ फेंक दिया वहीं बेर द्रोणगिरी पर जाकर गिरा और संजीवनी औषधि बना, जिससे लक्ष्मण के प्राण बचें। तुम्हीं यह कार्य कर सकते हो। सुषेणने हनुमानकी ओर देखा- हिमालयको लगभग पार करके कैलासके समीप द्रोणाचल शिखरपर मृत सञ्जीवनी, विशल्यकारिणी, व्रणरोपिणी और संरोहिणी औषधियाँ होती हैं। वे सब रात्रिमें प्रकाशित रहती हैं। उन्हें ले आओ। दो बातोंका ध्यान रखना- १) तुम्हें प्रभातसे पूर्व यहाँ पहुँच जाना चाहिये। २) पर्याप्त अधिक औषधिकी यहाँ आवश्यकता है।

श्रीराम ने कहा- हे वीर, अब रघुकुल की लाज तुम्हारे हाथ है। सुग्रीव की तुमने रक्षा की है, पापियों को तुमने तारा है, अशोकवन में सीता का प्राण उबारा है। अब लक्ष्मण में जान डालकर राघव को पूर्ण सुखी करो। जो सदा से तुम्हारा ऋणी रहा उसको आज फिर ऋणी करो। जब रामने इसप्रकार गम्भीर वचन कहें तब हनुमान शीश नवाकर जय रघुवीर कहकर चले।

पवनकुमारने उसी क्षण आकाशसे छलाँग लगा दी; किंतु इस बार दशग्रीव असावधान नहीं था। युद्ध-भूमिमें कोई बाहरसे आवे यहा वहाँसे कोई नहीं जाने लगे तो मुझे अविलम्ब सूचना दो रावणने कहा।

कोई सुर आनेका साहस न करे, इसके लिए रावण विशेष सावधान था। उसके चरोंने सूचना दी- रात्रिके प्रारम्भमें ही वह वानर उठ बैठा, जिसने लमा जलायी थी। विभीषणसे कुछ मन्त्रणा करके परिखा कूदकर नगरमें आया अैर भिषक् श्रेष्ठ सुषेणको गृह-सहित उठा ले गया। सुषेणने उसे कोई औषधि लानेको कहा है। वह अभी उत्तर दिशामें आकाश-मार्गसे जा रहा है। उसको रोकनेकी शक्ति हममें नहीं है।

वायु से भी अधिक वायुपुत्र बजरंगीने चाल पकड़ी। जो बल सूरज पर झपटने को लगाया था, जिसने लंका-दहन किया था वहीं आँधी की तरह आज संजीवनी बूटी लेने को गया। उधर लंका में दशकंधर रावण भी निश्चिन्त नहीं था। गुप्तचर पल-पल का सब हल रावण को सुनाते थे। हनुमान का प्रबल प्रयाण जब रावण ने सुना तो उसको रास्तें में अटकानेका प्रबन्ध किया। कालनेमि के घर पहुँचकर कालनेमि से बोला कोई ऐसा उपाय करों जो महावीर हनुमान को मार्ग में अधिक देर लग जायें। किसीतरह यह निशा काल रात्रि बीत जायें तो सारा काम बिगड़ जायेगा। फिर तो यह बूटी भी किसी तरह का काम नहीं कर सकेगी।

रावणने उसको सारा मर्म हाल बतलाया। गन्धमादन पर्वत पर (दौणगिरि) गन्धकाली नामक एक मादा मगर है। वह गन्धमादन के सरोवर में रहती है। उसका शरीर विशाल है और मुख विपरीत दिशा में है। उस मादा-मगर को देखकर सुर-असुर सभी डरते हैं। उसके डर से कोई उस सरोवर के निकट नहीं जाता और न उसका पानी छूता है। लाख-लाखच प्राणियों की मृत्यु उसके पेट में हुई है। वीर

हनुमान है तो वानर जाति का ही, उसको गन्दमादन का यह रहस्य मालूम नहीं है।

कालनेमिने सुना और बार-बार सिर पीटा खेद प्रकट किया। उसने कहा- तुम्हारे देखते-देखते जिसने नगर जला डाला, उसका मार्ग कौन रोक सकता है ?

श्रीरघुनाथका भजन करके तुम अपना कल्याण करो। हे नाथ। झूठी बकवाद छोड़ दो। नेत्रोंको आनन्द देनेवाले नीलकमलके समान सुन्दर शम शरीरको अपने हृदयमें रखो। मैं-तू भेद-भाव और ममतारूपी मूढ़ताको त्याग दो। महामोह अज्ञान-रूपी रात्रिमें सो रहे हो, सो जाग उठो। जो कालरूपी सर्पका भी भक्षक है, कहीं स्वप्नमें भी वह रणमें जीता जा सकता है ?

उसकी ये बातें सुनकर रावण बहुत ही क्रोधित हुआ। तब कालनेमिने मनमें विचार किया कि इसके हाथसे मरनेकी अपेक्षा श्रीरामके दूतके हाथसे ही मरूँ तो अच्छा है। यह दुष्ट तो पापसमूहमें रत है।

वह मन-ही-मन ऐसा कहकर चला और उसने मार्गमें जाखू स्थान पर माया रची। तालाब, मन्दिर और सुन्दर बाग बनाया।

महामायावी असुर कालनेमि। वह पूरे वेगसे बढ़ा। पवनकुमारसे आगे जाकर वनमें मार्गमें पड़नेवाले एक प्राचीन सरोवरके समीप मायासे मनोहर उद्यान प्रकट किया उसने। पर्णकुटी प्रकट हो गयी मायासे। मायावी राक्षस मायासे विशाल जटाधारी महामुनि बनकर वहाँ बैठ गया। हनुमान पूरे वेगसे उत्तर जा रहे थे। कालनेमिकी मायाका उनपर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्हें तीव्र प्यास लगी। कण्ठ सूखने लगा। चन्द्रोदय हो रहा था। नीचे जल देखने लगे तो मुनिका आश्रम दीखा। मुनि दीखे खुले गगनके नीचे शिलापर बैठे। मनमें आया- अवश्य समीप जल होगा। मुनिसे पूछकर जल पी लूँ तो आगेकी यात्रा सुगम हो जायगी।

ओह हनुमान्। तुम्हारा कल्याण हो। सफलकाम हो तुम। प्रणाम करते ही मायावी मुनिने स्वयं कहा- हम एकान्तवासियोंका मन तो इन्दीवरसुन्दर श्रीरामके समीप ही रहता है। गुरु-कृपासे मैं यहाँ बैठे भी उनकी भुवनपावनी लीलाका दर्शन करता रहता हूँ। उन पुरुषोत्तमने इस समय नरनाट्य करते हुए रावणके साथ युद्धकी क्रीड़ा प्रारम्भ की है। विजय तो उनकी सुनिश्चित है।

मुझे तीव्र प्यास लगी है। कृपा करके यह बता दें कि जल कहाँ हैं ? हनुमानजीने बीचमें हाथ जोड़कर प्रार्थना की। कालनेमि जानता था कि आञ्जनेय अत्यन्त रसिक हैं श्रीरामकथा-श्रवणके। उसने सोचा था कि कथा-श्रवणमें यह निमग्न हो जायेंगे तो रात्रि व्यतीत होनेका इन्हें पता नहीं लगेगा; किंतु सेवामें लगनेपर पवनकुमारमें प्रमाद हो, यह सम्भव नहीं था। प्राणोंको परमप्रिय लगनेवाले श्रीरामके सुयश-श्रवणका लोभ भी उन्हें विचलित नहीं कर सका।

मैं तो भूल ही गया था। जल पी लो पहिले। कालनेमिने अपना कमण्डलु आगे बढ़ा दिया। पहिलेसे कमण्डलुके जलमें उसने अत्यन्त तीक्ष्ण विष मिला दिया था। यही जल पिलानेके निमित्त तो उसने मायासे हनुमानने पिपासा उत्पन्न की थी।

इस अल्प जलसे मेरा ताल भी आर्द्र नहीं होगा। हनुमानने हाथ जोड़ा- आप मुझे जलाशयका पथ सूचित कर दें।

कालनेमिने कहा, तेरी बुद्धि बिल्कुल बच्चों जैसी है। भूखा रहकर और शोक में तू कैसे अपना मनोरथ पूर्ण कर सकेगा। मेरे स्थान पर यदि अतिथि उपवासी रह जाय तो मेरा सारा तप ही व्यर्थ हो जाता है। वह भी भला कैसा तपस्वी है, जिसके घर में अतिथि आकर उपवास करता है उसके उपवास के कारण उस घर का सर्वनाश हो जाता है। अतिथि को देखकर जो उसकी आवभगत नहीं करता उसका सर्वनाश हो जाता है और वह नरक में वास करने लगता है। यह देखो तप के प्रसाद से बना यह सरोवर है। डुबकी लगाकर इसमें नहा लो, सारा दुख दूर हो जायगा। यदि उसका अँजुरी भर पानी पी लो तो एकवर्ष तक भूख-प्यास नहीं रह जायगी।

तुमको औषधि लेने भी तो जाना है, वे दिव्यौषधियाँ बिना मन्त्र-ज्ञानके दर्शन ही नहीं देती। कालनेमिका जब विष पिलानेका प्रयत्न विफल हो गया, उसने दूसरी योजना मनमें बना ली- इन वृक्षोंके पीछे ही सरोवर है। जल पीकर, स्नान करके शीघ्र आ जाओ। मैं मन्त्रदीक्ष दे दूँगा, जिससे औषधियोंको पहिचाननेका ज्ञान तुम्हें प्राप्त हो जाय।

आपका असीम अनुग्रह। हनुमानने प्रणाम किया और सरोवरकी ओर चल पड़े। कालनेमिने सोचा था कि दीक्षामें अंगन्यास, कारन्यास, मातृका न्यासादि करवानेमें ही वह रात्रि पूरी कर देगा।

हनुमानने सरोवरका जल पिया। स्नान करनेके लिए उसमें प्रवेश किया तो एक मादा मगरीने उनका पैर पकड़ लिया। दूसरे पदसे एक भरपूत लात धमक दी पवनपुत्रने उसे। उसका मगर-देह तो उसे ऋषिके शापसे मिला था। श्रीरामदूतका चरणस्पर्श पाकर शापमुक्त हो वह पुन: अप्सरा गन्धकाली (धन्यमाला) होकर आकाशमें जाकर, हाथ जोड़कर बोली- आपकी पदरज पाकर मैं पवित्र हुई वह जो

महामुनि बना बैठा है, आपको विलम्बित करनेके प्रयत्नमें लगा राक्षस कालनेमि है।

मादा-मगर जो कि एक देवकन्या थी आकाश में उड़ गई। आकाश में उड़कर उसने हनुमान से कहा, मैं गन्धकाली नामक देवकन्या थी, देवताओं के घरों में नाच-गाना करती फिरती थी। नृत्यगीत के रंग में मैं कुबेर के भवन में गई, वहाँ दक्ष-मुनि के शरीर से मेरा अंग छू गया। दक्ष नामक वह मुनि उस समय पथ पर तपस्या कर रहे थे, कोप में आकर उन्होंने मुझको अचूक शाप दिया। मुनि ने शाप दिया कि गन्धमादन में जाकर मादामगर बन कर रहो और लाख-लाख प्राणियों को मार कर अपना पाप बढ़ाओ। हनुमान के हाथों ही तू शापमुक्त होगी। नारायण राम का अवतार लेंगे, उन्हीं के सेवक के हाथ तुम्हारा उद्धार होगा। चिरंजीव होकर राम का कार्य साधित करो, तुम्हारी ही कृपा से फिर से देव-समाज में जा रही हूँ; और हनुमान, तुमसे एक बात बताये जाती हूँ, उस ढोंगी तपस्वी से सावधान रहना। इतना कहकर गन्धकाली आकाश में चली गई। वह अपने सौन्दर्य से आकाश-मार्ग को यों प्रकाशित कर गई मानों बिजली हो।

अप्सराके द्वारा इतनी सूचना मिलना पर्याप्त था। हनुमान-सरोवरसे निकले। उस असुरके समीप आकर बोले- मुनिराज। आप मन्त्र पीछे देना मुझे। पहिले अपनी उपयुक्त दक्षिणा स्वीकार करो।

कालनेमिको सम्हलने, सोचनेका अवसर नहीं मिला। हनुमानने उसके कण्ठमें लांगूल लपेटकर उसे शिलापर पटक दिया। मरते समय कालनेमिका अपना रूप प्रकट हो गया। उसके मुखसे निकला- हा राम।

हनुमान सूर्य से प्रार्थना कर बोले हे सूर्य इतना ध्यान रखना आज सूर्यवंश पर संकट हैं। लंका के नीच राहू द्वारा सूर्य पर आघात है। इसलिये जब तक मैं जड़ी न पहुँचा दूँ छिपे रहना। हे भगवान उसी समय प्रकट होना जब यह संकट की रात्रि मिटा दूँ। मेरी सेवा के पले यदि तुम मुदित हो गये तो सूर्यवंश में हे सूर्यदेव सचमुच ही अंधकार: हो जायगा। मेरी यह तुच्छ छोटीसी प्रार्थना हैं इसे सच्चे मन से स्वीकार करों। आतुर की इस आर्त अवस्था को करुणा के साथ निहारो अन्यथा मुझे क्षमा करना। आज अञ्जलितनय से आपका पाला है। बचपन से मुझे जान रहे हो। हनुमान कितना मतवाला है। तुम्हें मुख में धरने को फिर आज मुझे कोई क्रूर साधन करना पड़ेगा। तब जाकर के लक्ष्मण का संकट मिटेगा। इसतरह प्रार्थना कर वीर अंजनीलाल द्रोणगिरि पर पहुँचे।

हनुमान अब पूरे वेगसे उड़ चले। द्रोणाचल तक कुछ क्षणोंमें पहुँचे। उस पर्वतपर उन्हें हिरण्यगर्भ भगवान् ब्रह्माका स्थान, उन्हींके दूसरे स्वरूप रजतनाभिका स्थान, इन्द्रका भवन, जहाँ खड़े होकर रुद्रदेवने त्रिपुरासुरपर बाण छोड़ा था, वह स्थान, भगवान् हयग्रीवका वासस्थान तथा ब्रह्मास्त्र देवताका दीप्तिमान् स्थान ये सभी दिव्य स्थान दिखायी दिये। साथ ही यमराजके सेवक भी वहाँ दृष्टिगोचर हुए।

इसके सिवा अग्निका, कुबेरका और द्वादश सूर्योंके समावेशका भी सूर्यतुल्य तेजस्वी स्थान उन्हें दृष्टिगोचर हुआ। चतुर्मुख ब्रह्मा, शंकरजीके धनुष और वसुन्धराकी नाभिके स्थानोंका भी उन्होंने दर्शन किया।

तत्पश्चात् श्रेष्ठ कैलासपर्वत, हिमालय-शिला, शिवजीके वाहन वृषभ तथा सुवर्णमय श्रेष्ठ पर्वत ऋषभको भी देखा। इसके बाद उनकी दृष्टि सम्पूर्ण ओषधियोंके उत्तम पर्वतपर पड़ी, जो सब प्रकारकी दीप्तिमति औषधियोंसे देदीप्यमान हो रहा था।

अग्निराशिके समान प्रकाशित होनेवाले उस पर्वतको देखकर पवनकुमार हनुमानको बड़ा विस्मय हुआ। वे कूदकर औषधियोंसे भरे हुए उस गिरिराजपर चढ़ गये और वहाँ पूर्वोक्त चारों औषधियोंकी खोज करने लगे।

तब द्रोणगिरि हनुमानपर कुपित हुआ और बोले- अरे मर्कट, तू कौन है ? मेरी औषधियाँ देवों के लिये दुर्लभ है तुझे मैं वह कैसे दूँ ? मैं तेरे कोई राम और लक्ष्मण को नहीं जानता। तब कपि हनुमान क्रोधभरे वचन बोला- अरे जड़बुद्धि पाषाण तेरे मन में कुछ ज्ञान नहीं है। जिस प्रकार कौए में विवेक नहीं होता, मद्यपी में तत्व-विचार नहीं होता, जिस प्रकार निर्दय हिंसक में दया नहीं होती, व्यसनी में पवित्र आचरण नहीं होता, जिस प्रकार भ्रष्ट आचरण वाला व्यक्ति धर्मशास्त्र नहीं जान पाता, मूढ़ विद्याभ्यास करना नहीं जानता, उस प्रकार तुझ निर्दय को राम के कार्य का उद्देश्य विदित नहीं है। जार के लिए शील क्या है ? कृपण के लिए दान सम्बन्धी धर्म क्या है ? कपटी के लिए विश्वास क्या है ? इसलिए मैं तुझे अभी चूर-चूर कर डालूँगा। तुझे दण्ड दूँगा।

हनुमानन ने कहा, मैं राम का दास हूँ, तूने औषधि नहीं दी और उलटे मेरा उपहास करता है। तुझको पर्वत कौन कहता है, तू तो छोटा सा पत्थर है, तुझ जैसे सैकड़ों को मैंने पानी में डुबो दिया है। इतना कहकर पवन नन्दन पर्वत को पकड़कर खींचने लगा- तो लताओं के सारे बन्धन चट-चट और बडे-बडे पेड भी उखड-उखड कर गिरने लगे। झुंड के झुंड जंगली जानवर भागने लग गये। कितने ही ऋषि-मुनियों की तपस्या-भंग हो गई। कहीं तो सिंह पर हाथी जा गिरता तो कहीं शार्दूल पर कुत्ते सियार जा गिरते। नेवला, चूहा और

साँप एक ही जगह एकत्र हो गये। भूत-प्रेम-पिशाच अपने-अपने प्राण लेकर भाग खडे हुए। आतंक से यक्ष कहने लगे, हे ईश्वर रक्षा करो, प्रलय आ गया, भागने का रास्ता नहीं। इतने में ऋषि की मूर्ति घरकर पर्वत ने दर्शन दिया।

ऋषि का रूप लेकर वह हनुमान के सम्मुख आया और मधुर वचन से हनुमान से पूछा, हे वीर चूड़ामणि, तुम कौन हो, कहाँ रहते हो, पर्वत पकड़ कर क्यों खींचातानी कर रहे हो। हनुमान ने कहा, मैं पवनसुत हूँ, सुग्रीव का अनुचर और श्रीराम का दूत हूँ। श्रीराम की सीता का दुष्ट दशानन ने हरण किया है। रघुनाथ ने सागर बाँध डाला है और लंका में राम और रावण में युद्ध हो रहा है। इन्द्रजीत के बाण से घायल हो रघुनाथ गिरे हैं। रघुनाथ मूर्च्छित हैं, लक्ष्मण तथा सुग्रीव, अंगद आदि सारे कपि लंका में अचेतन पड़े हैं। जाम्बवान ने मुझको औषधि के लिए भेजा है। वह महौषधि इसी पर्वत पर है। इस मेरु ने जाने किस अहंकार से औषधि नहीं दी। मैं प्राणों की बाजी लगाकर भी राम का उपकार करूँगा- मैं इस पर्वत को समुद्र पार ले जाऊँगा।

पूरा शिखर ज्योर्तिमय औषधियोंसे जगमगा रहा था। मनमें आया- इनमें वे चार कौन जो वैद्यने बतलायी है। प्रत्येककी कितनी मात्रा? शत्रुपक्षीय वैद्य है। कोई बहाना कभी बना दे सकता है। उसे कोई अवसर नहीं मिलना चाहिए। यह सोचकर हनुमानने पूरा शिखर उखाड़कर बायें हाथपर उठाया और लौट पड़े।

वहाँ देखा सारी बूटियाँ ज्वाला की तरह चमक रही है। रावण ने इस जगह भी अपनी चाल खेली। विमानों से अपने सचिव को भेजकर पूरा गिरि लाल करवा दिया जिससे हनुमान औषधि पहचान नहीं सके। उस उत्तम पर्वतपर रहनेवाली सम्पूर्ण महौषधियाँ यह जानकर कि कोई हमें लेनेके लिये आ रहा है, तत्काल अदृश्य हो गयीं।

उन ओषधियोंको न देखकर महात्मा हनुमान कुपित हो उठे और रोषके कारण जोर-जोरसे गर्जना करने लगे। ओषधियोंका छिपाना उनके लिये असह्य हो गया। उनकी आँखें अग्निके समान लाल हो गयीं।

दीपावली में जैसे तारे चमकते हैं वैसा ही सारा पर्वत चमक रहा था। हनुमन संशय में पड़ गयें बूटी का पता नहीं चलता था। जितने अधिक बलशाली होते है वे अधिक विचार नहीं करते और जब उन्हें आवेश आता हैं तो अपना मन चाहकर उठते है। हनुमत के भी मन में तरंगे उठी और सोचा औषधि पहचाननेकी इस हुज्जत को छोड़ो अब देखने भालने का समय नहीं है पूरा पर्वत ही उठाकर ले चलो। यह सोचकर जो प्रेरणा मिली उसको धारण कर बाएं हाथ पर उस पर्वत को धर श्रीराम की जय कहकर गगन मार्ग से ही रात्रि में पर्वतसहित हनुमन्त ने उत्तराखण्ड से दक्षिण दिशा की ओर प्रयाण किया।

उन्होंने वेगसे पकड़कर वृक्षों, हाथियों, सुवर्ण तथा अन्य सहस्त्रों प्रकारकी धातुओंसे भरे हुए उस पर्वतशिखरको ही सहसा उखाड़ लिया। वेगसे उखाड़े जानेके कारण उसकी बहुत-सी चोटियाँ बिखरकर गिर पड़ीं। उस पर्वतका ऊपरी भाग अपनी प्रभासे प्रज्वलित-सा हो रहा था। उसे उखाड़कर साथ ले हनुमान्‌जी देवेश्वरों और असुरेश्वरोंसहित सम्पूर्ण लोकोंको भयभीत करते हुए गरुड़के समान भयंकर वेगसे आकाशमें उड़ चलें। उस समय बहुत से आकाशचारी प्राणी उनकी स्तुति कर रहे थे।

रात्रिका प्रथम प्रहर ही था। श्रीभरतलाल नन्द्रिग्राममें पर्णकुटीमें पादुका-पूजन पूर्ण करके जप करने चाँदनीमें आ बैठे थे। लौटते समय हनुमानने सबसे छोटा आकाश मार्ग पकड़ा था, अत: अयोध्याके ऊपरसे निकलना था उन्हें। भरतने अचानक देखा कि गगनमें कोई महाकाय एक प्रज्वलित पर्वत लिए उड़ा चला जा रहा है। मनमें आशमा हुई- कोई निशाचर है। अयोध्यापर हाथका पर्वत पटक दे सकता है। किसी मुनिआश्रमको भी ध्वस्त कर सकता है। कहीं आक्रमण न करना होता तो पर्वत उठाये इतने वेगसे क्यों दौड़ा आता?

समीपसे धनुष उठाया। ज्यासज्ज किया। बिना नोकका बाण चढ़ाया। यह देखकर कि गगनचर ऐसे स्थानपर आ गया जहाँ नीचे गृह, उद्यानादि नहीं हैं, बाण छोड़ दिया। उस बाणके हृदयमें लगते ही हनुमानके मुखसे मूर्छित होते-होते निकला- राम। श्रीराम।

भरत बोले- हे राम, राम के शब्द बोलने वाले फिर से बोल। इन शब्दों से मेरा मन रहा डोल। इन्हीं शब्दोंसे पृथ्वी, आकाश, पवन, पानी सबमें गुंजार भरी है। इस शान्त प्रकृति के कण-कण में मिटी झंकार भरी है। इसी नामसे जड़ भी चेतन होते है। यह अमृतरस बरसाया है, इस त्रिभुवन के ताड़-ताड़ में राम नाम का संगीत समाया है। यह नाम वह है जिसने जीवन में अमृतसरोवरोंको पाया है। तू वह है जिससे तूने जीवन पाया है। मैं वह हूँ जो पिउ-पिउ करके रात-दिन ऊपर की ओर देखा करता हूँ इसलिए तूही मुझे कुछ दे अपने हिस्सेमें से दीवाने को। अब तू भी गायें मैं भी गाऊँ उस मीठे-मीठे गाने को।

राम। श्रीराम। भरतने सुना। धनुष फेंका और दौड़े- यह रामनाम लेकर गिरता प्राणी कौन ? मैंने किसे मार दिया ? मुझसे भक्तापराध

हो गया ? कोई श्रीरामका सेवक आहत हुआ ?

हनुमान हाथ-पैर फैलाये भूमिपर गिरे। पर्वत-शिखरको पवनदेवने गगनमें ही सम्हाल लिया। दौड़े भरत आये। हनुमानको मूर्छित देखते ही उनके प्राण छटपटा उठे। भरत। तूने यह क्या किया ? तू वैसे ही श्रीराम-विमुख था और उसपर यह अपराध ?

यदि मैं सच्चे हृदयसे श्रीरामका सेवक हूँ तो यह वानर स्वस्थ हो जाय। भरत साश्रुलोचन हनुमानके समीप घुटनोंके बल बैठे। उनके हृदयपर दक्षिण हस्त रखे बोले- यदि इस जनपर उन सर्वेश श्रीरामका तनिक भी स्नेह हो तो यह वानर स्वस्थ हो जाय।

भरत को देखकर प्रभु श्याम का सलोना, सोहना, साँवरा रूप देखकर भक्त हनुमान भी धोखा खा गये। वहीं सौन्दर्य, वही लावण्य जिसपर त्रिभुवन बलि जाते हैं। वहीं नयन, वहीं चितवन् जिससे कामदेव लजाते हैं। वहीं मटियाले जटाजूट, घूँघरवाले मतवाले बाल है। तब मगन होकर हनुमान भक्त ने अपना सर झुका दिया और बोले मैं कहा आ गया पर आप स्वामी इस समय कहाँ है ?

श्रीराम। हनुमानने नेत्र खोले और उठ बैठे। श्रीभरतलालको देखते ही सहसा बोले- मेरे अनन्त दयाधाम स्वामी आप ?

भद्र। मैं चक्रवर्ती महाराज दशरथका द्वितीयपुत्र श्रीरामका अनुज भरत हूँ। अपना परिचय देकर बोले- मुझसे अनजानमें अपराध हुआ। यदि तुम मुझे क्षमा कर सकते हो तो अपना परिचय देकर मेरे श्रवण पवित्र कर दो। इस समय आप कोशलधीश के निकट भरत के पास है। मैं श्रीरामका सेवक पवनपुत्र हनुमान आपके श्रीचरणोंमें प्रणाम करता हूँ। शीघ्रतापूर्वक उठकर आञ्जनेयने प्रणिपात किया- आपके दर्शन करके यह वानर आज पवित्र हो गया।

मेरे वे स्वामी कहाँ हैं ? कहाँ हैं हमारे छोटे भाई लक्ष्मण और अम्बा वैदेही ? वे सकुशल हैं ? क्या कर रहे हैं ? हनुमानसे आतुरतापूर्वक भरतने पूछा- तुम इस समय पर्वत लेकर कहाँ जा रहे थे ?

हनुमानने थोड़े शब्दोंमें जो समाचार दिया, बहुत दारुण समाचार था वह। बहुत संक्षिप्त विवरण देकर हनुमानने कहा- देव। मुझे अनुमति दें। मुझे वहाँ प्रभातसे पूर्व पहुँच जाना चाहिये।

तुम अयोध्याके आतुर प्राणोंको थोड़े क्षण दे सकते हो। अभी रात्रिका प्रथम प्रहर है। सूर्यास्तके पर्याप्त पश्चात तुम चले हो और पूरा मार्ग पार करके, पर्वत लेकर लगभग एक तिहाई पथ लौट चुके हो। भरतने अनुनयके स्वरमें कहा- माताएँ मुझे कैसे क्षमा करेंगी यदि मैं तुम्हें उनसे मिलाये बिना चले जाने दूँ। भरत बोले- लक्ष्मण बड़े बड़भागी है जो सदा उनके चरणों में रहते है। जो अब तक उनके चरणों में जिया उनके चरणों में मर रहा है। पर यह भरत अभागा है जो प्रभु के अबतक कुछ काम नहीं आया। खाने, पीने, सोने में ही इसने अपना पूरा जन्म व्यर्थ गँवाया है। हे विधाता, यदि तुझे यहीं करना था तो मुझे जन्म ही क्यों दिया। जन्म ही देना था तो लक्ष्मण के जैसा भाग्य देना था अन्यथा इस अभागे के बदले कोई पत्थर ही उत्पन्न किया होता। मेरे इस तरह के जीने पर धिक्कार है जिस जीने में कोई सार नहीं। भगवान की प्रतिमा होते हुए भी मुझे पूजा का अधिकार नहीं। उसीका जीवन धन्य है जो इस संसार में सेवा व्रत में लगा हुआ है। जिसने दुनिया को धर्म सिखाया और जो धर्म पे खुद मिटा हुआ है। उसीका तेज नभ में चमकता है। उसीका तप भूमि में है जो सदा ही परमार्थ के तपन में स्वर्ण जैसा तपा हुआ है। जो दूसरों के खातिर जिया हैं, मरा है जो दूसरों के खातिर वह सदा इस जगत में अमर रहा है। यह जगत उसीपर खड़ा हुआ है। इस जहाँ के तख्तोंपर उसीका नाम सदैव स्वर्णअक्षरों में लिखा हुआ है। जिसने कभी असत् पर कदम नहीं रखा और सदा सत् पर डटा रहाँ उसीने इस अमृत को पाया है। वहीं देवताओं को रिझा पाया है। उसने अपनी रंगत मिटायी और अमिट के रंग में रँगा गया। उसको हर्ष और शोक समान है, प्रभु सेवा में जो सदा लगा हुआ है।

मैं भी उनके पूजनीय पदोंका वन्दन करके अपनेको कृतार्थ मानूँगा। हनुमानने स्वीकृति दे दी। चित्रकूटसे लौटनेके पश्चात पहिली बार भरतने रथ स्वीकार किया। वे हनुमानके साथ अयोध्या आये। मार्गमें ही कुलगुरुको समाचार भेज दिया।

अयोध्याकी राजसभा मणिदीपोंसे नित्य आलोकित- वह प्रज्वलित उल्मुकोंके प्रकाशसे जगमगा उठी। माताएँ पधारीं, राज-सदनकी तीनों पुत्रवधुएँ उनके साथ आयीं। महर्षि वशिष्ठ आये। शत्रुघ्नने समाचार देकर नगरके सम्मानित जनोंको, मन्त्रियोंको प्रजाप्रतिनिधियोंको बुला लिया। हनुमानने सबको प्रणाम किया। थोड़े शब्दोंमें श्रीरामका समाचार सीताहरणके अबतकका सुनाकर अन्तमें कहा- छोटे कुमार सर्वथा निश्चेष्ट थे।

हम दुर्दम दुष्ट दशग्रीवको और उसके राक्षसोंकी शक्तिको देख लेंगे। महासेनापतिका सिंहनाद सर्वप्रथम गूँजा- लंकाको समुद्रमें डुबाकर, अपनी साम्राज्ञीके अपमानका प्रतिशोध लेना है हमें। कुमार। आप मुझे आज्ञा दें। हम अभी प्रयाण करेंगे।

महासेनापतिका शंख उनके अधरोंसे लगने ही वाला था। उन्होंने शत्रुघ्नकुमारकी ओर देखा। शत्रुघ्नने भरतकी ओर देखकर अनुमति चाही। गुरुदेवकी उपस्थितिमें भरत यह धृष्टता नहीं कर सकते थे। अयोध्याके परम सञ्चालक महर्षि वशिष्ठ स्वयं उपस्थित थे। स्वाभाविक था कि भरत अनुमतिकी उनसे अपेक्षा करें।

शत्रुघ्न। तुम्हें किसकी अनुमति चाहिये ? सहसा माता सुमित्राका ओजस्वी स्वर सुनायी पड़ा- ये वानर- श्रेष्ठ पर्वत ले जा रहे हैं तो अवश्य तुमको भी ले जा सकेंगे। लमा समीप नहीं है। सेना को पहुँचनेमें समय लगेगा। राम शत्रुके स्थानमें एकाकी हो गये हैं। तुम जाओ। उनसे मेरा सन्देश कहना- लक्ष्मणकी चिन्ता छोड़ दें। वह स्वामीकी सेवामें शरीर देकर धन्य हो गया। सच्चे सेवकका कर्तव्य पूर्ण किया उसने। सेवक कर्तव्य पूर्ण करके समर-शय्या ले लेते हैं तो स्वामीका उनके लिए रुदन शोभा नहीं देता। रामको शत्रुका शमन करके वधू सीताके साथ अयोध्या लौटना चाहिये।

हनुमान। मेरे रामसे कहना कि वह सीता और लक्ष्मणके साथ लौट सके तो अयोध्या लौटे। माता कौसल्याके स्वरमें कोई कातरता नहीं थी- अन्यथा उसे अयोध्या नहीं लौटना चाहिए।

नहीं। नहीं। नहीं। सुमित्राजीने उच्च स्वरमें कहा- हनुमान मेरा आदेश है, तुम यह सन्देश नहीं कहोगे। शत्रुघ्नको साथ ले जाओ। यह भी यदि अपने अग्रजके समान समर शय्या ले ले तो सुमित्रा पुत्रवती मानेगी अपनेको। रामको तब भी सीता-सहित लौटना है।

अम्ब। आप सब मुझे लज्जाहीना होकर बोलनेके लिए क्षमा करें। हनुमान भी चौंके। इतना मधुर, इतना ओजस्वी नारी स्वर होता है? उन्होंने देखा- जैसे भगवती सीताकी ही दूसरी मूर्ति तनिक अवगुण्ठनवती होकर अपने स्थान पर उठ खड़ी हुई। पवनपुत्रने पृथ्वीमें मस्तक रखकर प्रणाम किया। वह ओजस्वी स्वर मेरे स्वामी को कुछ नहीं हुआ है। उन्हें कुछ नहीं हो सकता। आप देखते हैं, मेरी चूड़ियोंमें सब अभग्न है। ललाटका सिन्दूर-बिन्दु समुज्वल है। उर्मिला स्वस्थ, जीवित है, तब तक इसके आराध्यको कुछ हो कैसे सकता है ?

उर्मिलाने दोनों हाथ उठाकर चूड़ियाँ दिखला दीं और तनिक देर-क्षणार्धको अवगुण्ठन ललाटसे हटाया तो महर्षि वशिष्ठने दोनों हाथ जोड़कर मस्तक झुका दिया- देवि। तुम महासती हो। तुम्हारी संकल्पको वारित करनेकी शक्ति सृष्टिकर्तामें भी नहीं है। दूसरा कुछ भी न हो तो भी लक्ष्मण तुम्हारे सतीत्वके तेजसे ही सुरक्षित हैं। उनके ऊपर आघात करनेवाले अज्ञने अपनी आयु समाप्त कर ली। अब वह दूसरा सूर्यास्त नहीं देख सकेगा।

यहाँसे किसीको जानेकी आवश्यकता नहीं है। मुमुर्षु दशग्रीवकी विजयका सम्पूर्ण सुयश वत्स श्रीरामको प्राप्त करने दो। महर्षिणी वाणी पर अयोध्यामें अविश्वास करनवाला कोई नहीं था। हनुमानको भी स्पष्ट लगता था कि इन सृष्टिकर्ताके पुत्रने इन्द्रजितकी आयु तो समाप्त ही कर दी, रावणके जीवन-दिन भी अत्यल्प कर दिये। महर्षिका स्वर तनिक प्रसन्न हुआ- यहाँ सब क्यों भूलते हैं कि श्रीरामकी वनवास-अवधि समाप्तप्राय है। हमें अयोध्यामें उनके स्वागतका समारम्भ करना है।

सचमुच इस अवधिकी ओर तो अब तक किसीका ध्यान गया ही नहीं था। महासेनापतिका शंखयुक्त कर नीचे आ गया। हनुमानने पृथ्वीमें मस्तक रखकर सब माताओंको, कुलवधुओंको, शत्रुघ्नको, भरतको भी प्रणाम करके महर्षिके पदोंमें मूस्तक रखा तो उन्होंने पूरा दक्षिण हस्त फैलाकर आशीर्वाद दिया- विजयी भव। सफलकामो भव। शुभस्ते पन्थान: सन्तु।

समय नहीं था। माताओंने संकेतसे अनुमति दे दी। श्रीभरतके साथ शत्रुघ्न भी हनुमानेके पार्श्वमें रथमें बैठे। रथ नन्दिग्राम आया। अब भरतजीने कहा- पवनकुमार। हमने तुम्हारा पर्याप्त समय नष्ट कर दिया। तुम्हें बहुत दूर जाना है। पर्वतको लेकर मेरे बाणपर बेठ जाओ। मैं तुम्हें अभी लंका पहुँचा देता हूँ।

मेरे भारको वाण कैसे वहन करेगा ? एक बार हनुमानके मनमें आया। दूसरे ही क्षण सावधान बुद्धिने सुझाया- जिनके शरके सन्धान करते ही सागर खौल उठा था, उनके अनुजकी शक्तिको अल्प समझनेकी भूल करते हो ? उनका वाण अयोध्याकी समस्त सेनाके सहित तुम्हारा वहन कर सकता है।

अब यह भी समझमें आ गया कि लगभग दो सौ योजन दूर लंका पर चढ़ाई करनेके लिए अयोध्याके महासेनापति किस बलपर शंखनाद करने जा रहे थे। हनुमानने हाथ जोड़े। विनम्र स्वरमें प्रार्थना की- आप आज्ञा दें। आपके अनुग्रहसे मैं पर्वत लेकर वाण-वेगसे ही जा सकूँगा। फिर कुअवसर विपरीत समय जानकर मनमें धीरज धरकर भरत हनुमानसे बोले- हा दैव। मैं जगतमें क्यों जन्मा ? प्रभुके एक भी काम न आया।

प्रभुसे मेरा प्रणाम कहना। भरतने अममाल दी- अब तुम प्रस्थान करो।

हनुमानने भरतलालके पदोंमें प्रणिपात किया- उनकी प्रदक्षिणा की और गगनमें पहुँचकर वाम हस्तपर पर्वतको सम्हाला तो शब्दसे भी अधिक तीव्र वेगसे जाते उन पवनपुत्रका जयघोष नीचे सुनायी पड़ा- जय श्रीराम।

धन्य, धन्य है इस स्वार्थी जगत में। भरत के जैसा भाई हो। ऐसे ही भाईसे इस आर्य देश की इज्जत है। भ्रातृभाव जहाँ भरत जैसा हो वहीं पूर्ण सम्पत्ति है, वहीं सुमति है, वहीं सुगति हैं, वहीं सदा उन्नति हैं। हे अवध के त्राता नमो, नमो, हे जगत के त्राता नमो, नमो, हे शान्ति दाता नमो, नम:, हे राम भ्राता भरत नमो नम:। रोम-रोम में इस दर्शन से हनुमान के मोद लहर की छाई। जन्म कृतार्थ हुआ देखकर छोटे रघुराई। इन्हीं विचारों में मग्न हो हनुमान की आधी रात्र व्यतीत हो गयी। इतने समय राघवेन्द्र अब चुपचाप न रह सके और नरलीला हित प्रकट करने हेतु विलाप करने लगे। देर हो गयी अब तक हनुमन्त वीर नहीं आया। हाय विधाता अब किस तरह धीरज धारण करूँ। क्या पता पवनपुत्र उस द्रोणगिरितक जा भी सके या नहीं या कहीं बीच ही हार में नहीं डूब गये। योद्धा हैं आने में शरम आयी हों। लक्ष्मण के साथ-साथ अगर उन्होंने भी दुनिया छोड़ दीं तो हे विधाता, तूने मेरी दुसरी भुजा भी उखाड़ डालीं। पुत्रादिक सब मुँह देखे की नीति पालते हैं।

भाई से ही भाई सदा सच्ची प्रीति करता है। कारणवश भाई-भाई में चाहे कितनी भी अनबन हो जायें पर विपत्ति पड़ने पर भाई ही साथ देता है एक मन को। जब भाई-भाई का दोनोंका एक ही लहू है तो फिर जोश क्यों नहीं आयेगा ? भाई-भाई के दु:ख में कभी खामोश नहीं रह सकता। इस विश्व में मित्र, सम्बन्धी हजारों मिल जायेंगे लेकिन भाई जैसा कोई कभी नहीं मिलता। इसी भाईचारे को देखो जब भाई पर संकट आया है तो इस युद्धस्थल में पहले छोटेने निज प्राण गँवाया है। अगर भाई मर गया अगर मैं जिन्दा रहा तब मुझे लाख लाख धिक्कार है। मैं तो मुझपर बलिहार चुका अब मुझे बलिहार होना है। अब संसार देख लें मैंने अपना हक्क अदा किया है। आया था काल मुझे लेनेको पर ले लिया हैं शीश पर मेरे भाई को। बलिहारी है इस मरने पर दे डाला अपनी जीवन अपने प्यारे को। मरने में भी भाई ने भाईचारा दिखलाया है। सबसे पहले तो उज्ज्वल भ्राता मिलना कठिन है फिर भी सौमित्र सा संयमवाला भ्राता कभी मिल ही नहीं सकता। जब मुझे बनवास मिला था, तब उबाल उसमें उठा था। भाई की सेवा करने को सबसे पहले वहीं तैयार हुआ था। मैंने तो माता की आज्ञा से अपनी राजशाही पोषाक उठायी थी पर इसने तो भ्रातृभाव की बलि देकर राजमहलों को ठोकर मारी थी। जंगल के काँटे इसने मेरे ही कारण स्वीकारे थे। मेरे सुख को वन के दु:ख इसने अपने मस्तकपर धारण किये थे।

यह सेवक भी था, रक्षक भी था, पालक भी यही मेरा भ्राता था। खाने को फल और पीनेको जल हर रोज वनोंसे लाकर देता था औरों का जो आदर्श बना ऐसा भ्राता कभी मिल नहीं सकता। हे दुनिया तू बतला दे तूने कहीं ऐसा भ्राता देखा है। लक्ष्मणसे भाई को खोकर राम के इस जीनेपर धिक्कार है। हे ब्रह्मशक्ति तू अब इसे छोड़ दें और मेरे सीनेपर आ जा। यह छोटा है और बड़ा मैं हूँ यह अनुचित है इसका मुझसे पहले मरना। हे काल इसे पीछे लेना पहले समाप्त मुझे ही कर देना या यह भी अच्छा है एकसाथ दोनोंका प्राण निकल जायें। भाई-भाई का एक ही रक्त है, एक ही चिता पर दोनों जल जाएँ। इतना कहकर रघुराई लक्ष्मण की देहपर पछाड़ खाकर गिरे। आसमान में तारे फीके पड़ रहे थे, रात बीती चली जा रहीं थी।

राम बोले- हे लक्ष्मण तुम मुझे अकेला छोड़कर कहाँ जा रहे हो। तुम तो हरदम कहा करते थे सेवा को हरदम तैयार है यह भाई और जब समय सेवा का है तब तुमको चिर निद्रा आने लगी। सेवा बस यहीं है कि युद्धस्थल में रावण का मान घटाना है। मैंने जो प्रण किया है वह तुम्हें पूरा करना है। रघुकुल की नारी सीता को असुरोंसे शीघ्र छुड़ाना है। विजयी होकर अवधपुर में जाकर माता को मुँह दिखलाना है। तुम यदि सोते ही रह गये तो यह काम नहीं बनेगा। बिना तुम्हारे यह राम क्या करेगा। हे तात- तुम्हारे ही बल पर मैं लंमापर चढ़ा आया हूँ। हे भ्राता तुम्हारे ही बल पर मेरी विजय का सम्पूर्ण भार है। काम और कोई करता है और नाम किसी और का होता है। जलता है तेल और बाँति लोग कहते हैं दीपक जलता है। एक बात और भी है हमने विभीषण को लंका का राज्य दिया है। मुझे सोच नहीं है सीता का और न हीं अब कोई दु:ख हैं तुम्हारे जानेका। न ही इस विपत्ति में मुझे अपने प्राण गँवाने का संकोच है। बस सिर्फ यहीं चिंता है कि हमने विभीषण का हाथ पकड़कर प्रतिज्ञा की थी कि हम तुम्हें लंकाधिपति बनायेंगे। हे भाई अब किसी तरह उठकर यह रघुवर के प्रण की नौका पार करो। वनमें आते समय माताने तुम्हारा हाथ पकड़वाया था। अब बिना तुम्हारे हे भैय्या किस तरह मैं अवधपुर जाऊँगा और जब माँ पूछेंगी मेरा लक्ष्मण कहाँ है तो मैं उसे क्या कहकर समझाऊँगा। उस समय उसकी छातीसे, उसकी गोदीसे जो ज्वाला भड़भड़ा उठेगी जैसे मछली बिना पानी के व्याकुल हो जाती है वैसे ही मैया तड़फ उठेगी तो लक्ष्मण भैय्या बतलाओ कैसे ना जलेगा

जगत यहाँ। फिर इन लपटों से क्या शत्रुघ्न और भरत बच पायेंगे। तुम इस शक्तिवान की मूर्च्छा में मरते हो। सीता लंका में मर रही है। माताओं, गणेश, हे भ्राता उधर अयोध्या में मरते हैं। इतने सबको अगर मारना हो तो हे भैया अपने प्राण तजो अन्यथा सबके जीवनहित जल्दी से जाग उठो। भाई को खोकर यदि मुझे विजय का हार भी मिले तो यह जीवन से सबसे बड़ी हार है इस रणके उपहार से। धिक्कार है मुझे इस लड़ने पर जिसमें मैंने यह पुण्य कमाया। फिर अपनी नारी के लिये लक्ष्मण से प्यारे भाई को गँवाया। मरनेवाले का लाल खून काला जो पड़ जाता है वह मेरी इस करनी के कालेपन को दिखलाता है। सारी दुनिया देखेगी कर्तव्य धर्म के रक्षण में लक्ष्मण मरा पर राम अपने भीतर के रण से कायरता से मरा। तुम जा रहे हो ऊँचे सिर से पर मैं नीचा सिर किये पत्नीके हित अपना भाई खोया। काला कलंक जीवनभर साथ लिये। रग-रग में प्रभु श्रीराम के काँटें चुभ रहे है।

आधी रात बीत चुकी, हनुमान् नहीं आये। यह कहकर श्रीरामने छोटे भाई लक्ष्मणको उठाकर हृदयसे लगा लिया।

और बोले- हे भाई। तुम मुझे कभी दु:खी नहीं देख सकते थे। तुम्हारा स्वभाव सदासे ही कोमल था। मेरे हितके लिये तुमने माता-पिताको भी छोड़ दिया और वनमें जाड़ा, गरमी और हवा सब सहन किया।

हे भाई। वह प्रेम अब कहाँ हैं ? मेरे व्याकुलतापूर्ण वचन सुनकर उठते क्यों नहीं ? यदि मैं जानता कि वनमें भाईका विछोह होगा तो मैं पिताका वचन जिसका मानना मेरे लिये परम कर्तव्य था उसे भी न मानता।

पुत्र, धन, स्त्री, घर और परिवार ये जगत्में बार-बार होते और जाते हैं, परन्तु जगत्में सहोदर भाई बार-बार नहीं मिलता। हृदयमें ऐसा विचारकर हे तात। जागो। जैसे पंख बिना पक्षी, मणि बिना सर्प और सूँड़ बिना श्रेष्ठ हाथी अत्यन्त दीन हो जाते हैं, हे भाई। यदि कहीं जड़ दैव मुझे जीवित रखे तो तुम्हारे बिना मेरा जीवन भी ऐसा ही होगा। स्त्रीके लिये प्यारे भाईको खोकर, मैं कौन-सा मुँह लेकर अवध जाऊँगा ? मैं जगत्में बदनामी भले ही सह लेता कि राममें कुछ भी वीरता नहीं है जो स्त्रीको खो बैठे। स्त्रीकी हानिसे इस हानिको देखते कोई विशेष क्षति नहीं थी। अब तो हे पुत्र। मेरा निष्ठुर और कठोर हृदय यह अपयश और तुम्हारा शोक दोनों ही सहन करेगा। हे तात। तुम अपनी माताके एक ही पुत्र और उसके प्राणाधार हो।

सब प्रकारसे सुख देनेवाला और परम हितकारी जानकर उन्होंने तुम्हें हाथ पकड़कर मुझे सौंपा था। मैं अब जाकर उन्हें क्या उत्तर दूँगा? हे भाई। तुम उठकर मुझे समझाते क्यों नहीं ?

सोचसे छुड़ानेवाले श्रीराम बहुत प्रकारसे सोच कर रहे हैं। उनके कमलकी पँखुड़ीके समान नेत्रोंसे विषादके आँसुओंका जल बह रहा है। शिवजी कहते हैं- हे उमा। श्रीरघुनाथ एक अद्वितीय और अखण्ड वियोगरहित हैं। भक्तोंपर कृपा करनेवाले भगवान्ने लीला करके मनुष्यकी दशा दिखलायी है। प्रभुके लीलाके लिये किये गये प्रलापको कानोंसे सुनकर वानरोंके समूह व्याकुल हो गये।

इसी विचार के साथ अयोध्यानाथ फिर कुछ समय के लिये मूर्छित हुये। अब की बार जब आँख खुली तो देखा प्रात:काल का पवन चलने लगा बहुत कम रात शेष रह गयी। जाम्बवन्त और सुग्रीव को अपने पास बिठाकर फिर अत्यन्त उदास हो बोले, अब जब लक्ष्मण ही नहीं रहेगा तो मेरा जीनेसे क्या काम। हे बन्धुवीरों। अभी यह राम तुम सबसे विदा लेता है। इतने उपकार तुमने मुझपर किये हैं। अपने उपकारोंके इस घटको फिर आज और भरते जाना। इस राघव की अन्तिम इच्छा है- इसे इस भाँति पूर्ण करते जाना। इतना करना हम दोनोंकी छातियाँ एक-दूसरे से मिला देना भाई। एक ही वस्त्र में दोनों को कसकर लिपटा देना भाई और एक ही चिता में जला देना। यदि चिता एक साथ बनानी मुश्किल हों तो दोनों के शरीर को एक साथ हीं जल में बहाँ देना। उस सागर की ठंडी लहरों में दोनों को एक साथ सुला देना। दोनों के रूधिर से इस सागर के तट पर लिख देना- यह भाई-भाई की यादगार है इसी सागर के मरघट पर। जिस समय वह लीला में भगवान राम अति व्याकुल हो रहे थे तभी इशानकोन से लालिमा युक्त अँगारा जैसा कुछ दिखाई पड़ा। प्रभुने शोक में समझा अब कुछ आस बाकी नहीं रहीं सूर्य का प्रकाश निकल रहा है अरूणोदय हो रहा है। हे प्राण, तुम भी अब लखन के साथ जाओ। इसप्रकार विलाप करके कौशलनाथ फिरसे गिरे। तभी सुग्रीव ने ऊपर उठकर देखकर कहा- हे रघुनाथजी कृत्रिम लाली है इस लाली में पवन का लाल चमक रहा है। लगता है हनुमान आ गये हैं। सचमुच इतने में वहाँ कपिनाथ हनुमान पहुँचे। ज्वाला से जलते हुये पर्वत खण्ड के साथ संजीवनी बूटी लेकर हनुमान वहाँ पहुँचे।

उस समय उन्हें लौटा देख सब वानर जोर-जोरसे गर्जना करने लगे। उन्होंने भी उन सबको देखकर बड़े हर्षसे सिंहनाद किया। उन सबके उस तुमुलनादको सुनकर लमावासी निशाचर और भी भयानक स्वरमें चीत्कार करने लगे।

इसके बाद वे दोनों राजकुमार श्रीराम और लक्ष्मण उन महौषधियोंकी सुगंध लेकर स्वस्थ हो गये। उनके शरीरसे बाण निकल गये और घाव भर गये। इसी प्रकार जो दूसरे-दूसरे प्रमुख वानर वीर वहाँ हताहत हुए थे, वे सब-के-सब उन श्रेष्ठ औषधियोंकी सुगन्धसे रातके अन्तमें सोकर उठे हुए प्राणियोंकी भाँति क्षणभरमें नीरोग हो उठकर खड़े हो गये। उनके शरीरसे बाण निकल गये और उनकी सारी पीड़ा जाती रही।

हनुमानने पर्वत भूमिपर रखा तो सबसे पहिले सुषेण उठे। वे उस शिखरपर चढ़कर कुछ औषधियाँ लेकर उतरे। श्रीराम-लक्ष्मणके समीप जाते हुए उन्होंने हनुमानको ही आदेश दिया- भद्र। पर्वतको पूरी सेनामें घुमा दो। औषधियोंकी गन्ध अपना काम पूरा कर देगी।

मृत सञ्जीवनीकी गन्धसे मृत भी जीवित हो गये। विशल्यकरिणीके प्रभावसे शरीरमें रह गये बाण स्वत: बाहर हो गये। व्रणरोपिणीने घाव ऐसे भर दिये कि उनका चिन्ह भी शेष नहीं रहा। संरोहिणीने छिन्नाङ्ग पुन: पूर्ण कर दिये। श्रीराम हर्षित होकर हनुमानसे गले लगकर मिले। प्रभु परम सुजान चतुर और अत्यन्त ही कृतज्ञ हैं। तब वैद्य सुषेण ने तुरंत उपाय किया, जिससे लक्ष्मण हर्षित होकर उठ बैठे।

प्रभु भाईको हृदयसे लगाकर मिले। भालू और वानरोंके समूह सब हर्षित हो गये। फिर हनुमानने वैद्यको उसी प्रकार वहाँ पहुँचा दिया जिस प्रकार वे उस बार पहले उसे ले आये थे। सुषेणको उनके गृह समेत लंकामें यथास्थान स्थापित करके जब पवनपुत्र लौटे, श्रीराम-लक्ष्मण पूर्ण स्वस्थ थे। वानरी सेना जयनाद करती कूद रही थी।

लक्ष्मण की मूर्छा दूर होने पर अवध में भरत के दाएँ अंग फड़कने लगे। जय-जयकार की रंगरलियोंसे पूरा समाज सुखी हुआ।

जब रावण ने यह सुना लक्ष्मण स्वस्थ हो गये है और जाग गये हैं तो रावण बोला लगता है लंकापुरी के भाग्य सो गये है।

लमामें जबसे वानरों और राक्षसोंकी लड़ाई शुरू हुई, तभीसे वानरवीरोंद्वारा रणभूमिमें जो-जो राक्षस मारे जाते थे, वे सभी रावणकी आज्ञाके अनुसार प्रतिदिन मरते-मरते ही समुद्रमें फेंक दिये जाते थे। ऐसा इसलिये होता था कि वानरोंको यह मालूम न हो कि बहुत-से राक्षस मार डाले गये।

५) सेनापति प्रहस्त का वध- अब रावण चिन्तित हुआ। उसने मन्त्रियोंसे मन्त्रणा की। लमापुरी चारों ओरसे शत्रुओंद्वारा घेर ली गयी थी। यह देखकर राक्षसराज रावणने अपने हितैषी युद्धकलाकोविद प्रहस्तसे यह समोचित बात कही- अपने प्रधानमन्त्री प्रहस्तसे बोला- मातुल।

वानरोंको हम लोग जैसा उपेक्षणीय मानते थे, बात उससे उलटी निकली। उन्होंने लमा घेर रखी है। उनको रोका न गया तो वे पुरीमें आ पहुँचेंगे। तुम सेनाको प्रिय हो। तुम्हीं वानरोंका वेग सम्हाल सकते हो। पहिले सेना भगा देना। राम-लक्ष्मण एकाकी हो जायें तब उन्हें पकड़ लेना। तुम चाहे सेना ले जाओ। चाहे जिस द्वारसे आक्रमण करो।

अब तो इस तरहके युद्धका भार मैं, कुम्भकर्ण, मेरे सेनापति तुम, बेटा इन्द्रजित् अथवा निकुम्भ ही उठा सकते हैं। अत: तुम शीघ्र ही सेना लेकर विजयके लिये प्रस्थान करो और जहाँ ये सब वानर जुटे हुए हैं, वहाँ जाओ। वानरलोग बड़े चञ्चल, ढीठ और डरपोक होते हैं, जैसे हाथी सिंहकी गर्जना नहीं सह सकते, उसी प्रकार वे वानर तुम्हारा सिंहनाद नहीं सह सकेंगे।

प्रहस्त। जब वानरसेना भाग जायगी, तब कोई सहारा न रहनेके कारण लक्ष्मणसहित श्रीराम विवश होकर तुम्हारे अधीन हो जायँगे।

युद्धमें मृत्यु संदिग्ध होती है, हो भी सकती है और न भी हो। किंतु ऐसी मृत्यु ही श्रेष्ठ है। इसके विपरीत जीवनको बिना संशय जोखिम में डाले बिना युद्धस्थलके जो मृत्यु होती है, वह श्रेष्ठ नहीं होती ऐसा मेरा विचार है। इसके अनुकूल या प्रतिकूल जो कुछ तुम हमारे लिये हितकर समझते हो, उसे बताओ।

प्रहस्त ने कहा- मेरा पहलेसे ही यह निश्चय रहा है कि सीताजीको लौटा देनेसे ही हमलोगोंका कल्याण होगा और न लौटानेपर युद्ध अवश्य होगा। उस निश्चयके अनुसार ही हमें आज यह युद्धका संकट दिखायी दिया है।

परंतु आपने दान, मान और विविध सान्त्वनाओंके द्वारा समय-समयपर सदा ही मेरा सत्कार किया है। फिर मैं आपका हितसाधन क्यों नहीं करूँगा ? (अथवा आपके हितके लिये कौन-सा कार्य नहीं कर सकूँगा।)

मुझे अपने जीवन, स्त्री, पुत्र और धन आदिकी रक्षा नहीं करनी है- इनकी रक्षाके लिये मुझे कोई चिन्ता नहीं। आप देखिये कि मैं किस तरह आपके लिये युद्धकी ज्वालामें अपने जीवनकी आहुति देता हूँ।

उस रथपर बैठकर रावणकी आज्ञा शिरोधार्य करके विशाल सेनासे घिरा हुआ प्रहस्त तुरंत लमासे बाहर निकला।

नरान्तक, कुम्भहनु, महानाद और समुन्नत- ये प्रहस्त के चार सचिव उसे चारों ओरसे घेरकर निकले।

भयानक गीदड़ियाँ मुँहसे आगकी ज्वाला उगलती हुई अशुभसूचक बोली बोलने लगीं। आकाशसे उल्कापात होने लगा और प्रचण्ड वायु चलने लगी। संग्रामभूमिमें प्रवेश करते समय घोड़ेको काबूमें रखनेवाले उसके सारथिके हाथसे कई बार चाबुक गिर पड़ा।

युद्धके लिये निकलते समय प्रहस्तकी जो परम दुर्लभ और प्रकाशमान शोभा थी, वह दो ही घड़ीमें नष्ट हो गयी। उसके घोड़े समतल भूमिमें भी लड़खड़ाकर गिर पड़े। जिसके गुण और पौरुष विख्यात थे, वह प्रहस्त ज्यों ही युद्धभूमिमें उपस्थित हुआ, त्यों ही शिला, वृक्ष आदि नाना प्रकारके प्रहार-साधनोंसे सम्पन्न वानरसेना उसका सामना करनेके लिये आ गयी।

श्रीरघुनाथका वचन सुनकर विभीषणने इस प्रकार उत्तर दिया- प्रभो। इस राक्षसका नाम प्रहस्त है। यह राक्षसराज रावणका सेनापति है और लमाकी एक तिहाई सेना से घिरा हुआ है। इसका पराक्रम भलीभाँति विख्यात है। यह नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंका ज्ञाता, बल-विक्रमसे सम्पन्न और शूरवीर है।

फिर दोनों पक्षोंके बहुसंख्यक वीरोंमें पत्थरों और बाणोंकी वर्षाके साथ-साथ आपसमें बड़ा भारी संग्राम छिड़ गया।

कितने ही वानर तलवारोंकी मारसे दो टूक होकर पृथ्वीपर गिर पड़े और तड़फड़ाने लगे। कितने ही शूरवीर राक्षसोंने वानरोंकी पसलियाँ फाड़ डालीं। इसी तरह वानरोंने भी अत्यन्त कुपित हो वृक्षों और पर्वत-शिखरोंद्वारा सब ओर भूतलपर झुंड-के-झुंड राक्षसोंको पीस डाला। शीघ्रतापूर्वक आक्रमण करते और वानरोंको मारते हुए प्रहस्तके सचिवोंमेंसे एकको, जिसका नाम नरान्तक था, द्विविदने एक पर्वत के शिखर से मार डाला। फिर दुर्मुखने एक विशाल वृक्ष लिये उठकर शीघ्रतापूर्वक हाथ चलानेवाले राक्षस समुन्नतको कुचल डाला। तत्पश्चात् अत्यन्त कुपित हुए तेजस्वी जाम्बवानने एक बड़ी भारी शिला उठा ली और उसे महानादकी छातीपर दे मारा।

बाकी रहा पराक्रमी कुम्भहनु। वह तार नामक वानरसे भिड़ा और अन्तमें एक विशाल वृक्षकी चपेटमें आकर उसे भी रणभूमिमें अपने प्राणोंसे हाथ धोने पड़े।

रथपर बैठे हुए प्रहस्तसे वानरोंका यह अद्‌भुत पराक्रम नहीं सहा गया। उसने हाथमें धनुष लेकर वानरोंका घोर संहार आरम्भ किया।

अत्यन्त क्रोधसे भरे हुए रणदुर्मद राक्षस प्रहस्तने अपने बाण-समूहोंद्वारा उस महासमरमें वानरोंको पीड़ित करना आरम्भ किया।

पृथ्वीपर वानरों और राक्षसोंकी लाशोंके ढेर लग गये। उनसे आच्छादित हुई रणभूमि भयानक पर्वतोंसे ढकी हुई-सी जान पड़ती थी। तदनन्तर नीलने देखा, रथपर बैठा हुआ प्रहस्त बाण-समूहोंकी वर्षा करके वेगपूर्वक वानरोंका संहार कर रहा है।

धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ और निशाचरोंकी सेनाके नायक प्रहस्तने उस महासमरमें अपने धनुषको खींचकर नीलपर बाणोंकी वर्षा आरम्भ कर दी। प्रहस्तके पैने बाण प्रज्वलित अग्निके समान जान पड़ते थे। उनकी चोटसे नील बहुत घायल हो गये। इस तरह उस परम दुर्जय राक्षस प्रहस्तको अपने ऊपर आक्रमण करते देख बल-विक्रमशाली महाकपि नीलने एक पेड़ उखाड़कर उसीके द्वारा उसपर आघात किया। प्रहस्तकी बाणवर्षासे कुपित हो महाबली महाकपि नीलने एक विशाल सालवृक्षके द्वारा उसके घोड़ोंको मार डाला।

नीलके द्वारा धनुषरहित किया गया सेनापति प्रहस्त एक भयानक मुसल हाथमें लेकर अपने रथसे कूद पड़ा। उस समय परम उद्योगी प्रहस्तने नीलके ललाटमें मुसलसे आघात किया। इससे उसके ललाटसे रक्तकी धारा बह चली। उसके सारे अङ्ग रक्तसे भीग गये। तब क्रोधसे भरे हुए महाकपि नीलने एक विशाल वृक्ष उठाकर प्रहस्तकी छातीपर दे मारा। कपिप्रवर नीलके द्वारा चलायी गयी उस भयंकर एवं विशाल शिलाने प्रहस्तके मस्तकको कुचलकर उसके कई टुकड़े कर डाले। उसके प्राण-पखेरू उड़ गये। उसकी कान्ति, उसका बल और उसकी सारी इन्द्रियाँ भी चलीं गयीं। वह राक्षस जड़से कटे हुए वृक्षकी भाँति सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा।

नीलके द्वारा प्रहस्तके मारे जानेपर दुखी हुए राक्षसोंकी वह अकम्पनीय विशाल सेना लमाको लौट गयी। सेनापतिके मारे जानेपर वह सेना ठहर न सकी। जैसे बाँध टूट जानेपर नदीका पानी रुक नहीं पाता।

राक्षसोंने निशाचराज रावणके पास जाकर अग्निपुत्र नीलके हाथसे प्रहस्तके मारे जानेका समाचार सुनाया। उनकी वह बात सुनकर राक्षसराज रावणको बड़ा क्रोध हुआ।

युद्धस्थलमें प्रहस्त मारा गया यह सुनते ही वह क्रोधसे तमतमा उठा; किंतु थोड़ी ही देरमें उसका चित्त उसके लिये शोकसे व्याकुल हो गया। अत: वह मुख्य-मुख्य देवताओंसे बातचीत करेनवाले इन्द्रकी भाँति राक्षससेनाके मुख्य अधिकारियोंसे बोला-

शत्रुओंको नगण्य समझकर उनकी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। मैं जिन्हें बहुत छोटा समझता था, उन्हीं शत्रुओंने मेरे उस

सेनापतिको सेवकों और हाथियोंसहित मार गिराया, जो इन्द्रकी सेनाका भी संहार करनेमें समर्थ था।

पर्वत और मेघोंके समान काले एवं विशाल रूपवाले मांसाहारी राक्षसोंसे, जिनके नेत्र प्रज्वलित अग्निके समान उद्दीप्त हो रहे थे। घिरा हुआ राक्षसराजाधिराज रावण भूतगणोंसे घिरे हुए देवेश्वर रुद्रके समान शोभा पाता था।

६) रावण का युद्धभूमि में आना - रावण का क्रोध बढ़ता जा रहा था। लंका के पश्चिमी द्वार पर धूम्राक्ष हनुमान के हाथों मार डाला गया था। वज्रदंष्ट्र का दक्षिण द्वार पर अंगद ने वध किया था। दुर्मुख ने समुन्नत को, जांबवान ने महानाद को, तार ने कुंभहनु को तथा नील ने प्रजन्य को सहज ही नष्ट कर दिया था।

एक के पश्चात् एक सेनापति और सेनानायक के वध का समाचार आता; एक-एक कर वाहिनियों के नष्ट होने की सूचना मिलती और रावण अपने महाराजाधिराजत्व में बँधा, पृथ्वी पर पाद-प्रहार कर विवश घूमता अपना रक्त खौलाता रहता। पहले दिन अपने कुछ वीर योद्धा खोकर भी राक्षस सेना विजयनी रही थी। मेघनाथ ने आकर राम और लक्ष्मण दोनों के वध और वानर सेना के हताश होने का समाचार दिया था। रावण ने अपने वीर पुत्र का अभिनन्दन किया था और तत्काल राम और लक्ष्मण के वध का समाचार सीता तक पहुँचा दिया था। रावण ने सोचा था कि सीता दीन होकर आत्मसमर्पण कर देगी और रावण पूर्ण विजय का सुख-भोग करेगा। किंतु सीता ने यह कहकर इस सूचना का तिरस्कार कर दिया था कि रावण का क्या है, वह तो प्रतिदिन एक राम का वध करता है और प्रतिदिन एक नया राम जीवित होकर उठ खड़ा होता है।

कैसी मायाविनी है यह सीता। इधर उसने यह बात कहीं और उधर वानर सेनाके हर्ष-निनाद से लंका की प्राचीर काँप-काँप गई। रावण चकित रह गया था। सेना के दो महासेनापतियों के वध के पश्चात् जिस सेना को या तो युद्ध-क्षेत्र से पलायन कर जाना चाहिए था, या रावण के सम्मुख आत्मसमर्पण कर देना चाहिए था, अथवा यदि वह सेना बहुत ही साहसी दृढ़ और वीर थी तो उसे शोकाकुल होकर रुदन करना चाहिए था और तब रावण को सूचना मिली थी कि राम और लक्ष्मण सचमुच जीवित हो उठे हैं। रावण चकरा गया था... कैसे मायावी हैं ये राम और लक्ष्मण, जो मर-मरकर जी उठते है। सच कहा था सीता ने, रावण प्रतिदिन एक राम का वध करता है और राम पुन: जीवित होकर उठ खड़ा होता है।

प्रतिरावण ने तब प्रबलतम अट्टहास किया था, राम मायावी नहीं है। मायावी तेरा पुत्र मेघनाद है। उसकी माया झूठ की माया है। तूने सीता को झूठ के बल पर ठगना चाहा था; तेरा पुत्र उसी झूठ के आधार पर तुझे ठग गया। तूने ही इस झूठ को सदा संरक्षण दिया है, रावण। अब तू ही इसे भुगत। जब तेरी बहन शूर्पणखा ने आकर तुझसे झूठ कहा था, तो तू उसे सच मानकर सीता का हरण करने चल पड़ा; क्योंकि झूठ तुझे अभीष्ट था। अब मेघनाद के झूठ को सच मान ले, वह भी तेरा अभीष्ट है।

रावण को लगा, क्रोध से उसका दम घुट जाएगा। क्या करे वह इस प्रतिरावण का। उसने शूर्पणखा को लंका से निकाल अश्मपुरी में रोक रखा है, विभीषण को लंका से निकाल दिया और अब एक-एक कर धूम्राक्ष , दुर्कम्पन, समुन्नत, महानाद, कुंभहनु, प्रजन्य और खरपुत्र मकराक्ष मारे जा चुके है।

रावण के अपराजेय बल में लंकावासियों का विश्वास नहीं रहा। उसका विरोध बढ़ता जा रहा है। स्थान-स्थान पर लोग कहते फिरते हैं कि सीता को लौटाकर उसे राम से संधि कर लेनी चाहिए। लंका को वानर सेना ने ऐसे घेर रखा है कि आवश्यक सामग्री की कमी होती जा रही है। लंकावासी कठिन जीवन जीने के अभ्यस्त नहीं हैं। विलास के बिना वे जी नहीं सकते। वे चाहते हैं युद्ध समाप्त हो, लंका में शांति हो ताकि विलास की अबाध धारा बहती रहे।

कैसा विवश हो गया था देवशत्रु महाराजाधिराज रावण। न सीता को लौटा सकता है, न उसका वध कर सकता है; और न बलात् उसे अपनी शैया पर खींच सकता है। उसकी अपनी बहन उसकी विरोधिनी हो गई, उसकी बाधा बनकर उसके मार्गमें खड़ी हो गई है और उसका भाई उसके शत्रु पक्ष के साथ जा मिला है।

अपनी आसक्ति के कारण सीता का वध तो तू कर नहीं सकता, प्रतिरावण का स्वर उसके मस्तिष्क में गूँजा, विभीषण से तो प्रतिशोध ले सकता है। सरमा और कला का वध कर दे।

रावण का मन सिहर उठा- यह प्रतिरावण उसे विनाश की ओर धकेलकर ही छोड़ेगा। यदि रावण ने अपना नियंत्रण तनिक भी

शिथिल किया तो प्रतिरावण उसे अपने प्रवाह में बहा ले जाएगा और यदि रावण ने सचमुच सरमा अथवा कला के साथ कोई दुर्व्यवहार किया तो न केवल कुंभकर्ण उसका साथ छोड़ जाएगा; मंदोदरी और प्रबल होकर उसका विरोध करेगी; वरन् लंका के भीतर उपद्रव होने लगेंगे। विभीषण-समर्थक संगठन लंका की प्राचीर में भीतर से सेंध मारने लगेंगे। जो युद्ध लंका की प्राचीर के बाहर हो रहा है, वह लंका की वीथियों, पथों और चतुष्पथों पर होने लगेगा।

इस प्रतिरावण से भी उसे छुटकारा पाना है; किंतु राम ? पहले इस मायावी राम का प्रबंध करना होगा। इस दुष्ट ने इन नीच वानरों को आकाश पर चढ़ा दिया है। उन्हें विश्वास दिला दिया है कि वे भी मनुष्य हैं और राक्षसों के समतुल्य हैं किंतु रावण उन्हें अच्छी तरह समझा देगा कि उनकी नियति क्या है। वानर वानर ही रहेंगे और राक्षस राक्षस ही। राम अथवा वैसे ही लबाड़िए प्रचारकों की बातों का क्या है। रावण यह सत्य प्रमाणित कर दिखाएगा कि वानर नीच होकर ही जन्मा है और नीच रहकर ही मरेगा। वे राक्षसों के सुख के साधन मात्र हैं। उन्हें वहीं रहना होगा।

किंतु यह एक के पश्चात् एक सेनापतियों की पराजय और उनकी मृत्यु। यह क्रम और नहीं चल सकता। रावण ने वानरों की शक्ति को कम आँका, इसलिए वह अभी युद्ध-क्षेत्र में नहीं गया, अन्य सेनापतियों को भेजता रहा। पर यह क्रम और नहीं चल सकता। आज रावण स्वयं जाएगा और इन वानरों को पाठ पढ़ाएगा। साधारण अस्त्र-शस्त्रों से नहीं मरेंगे तो दिव्यास्त्रों का प्रयोग कर इनके सेनापतियों को मारना होगा। यदि राक्षस सेना को वानरों से एक भी पराजय और मिली तो लंकावासियों का विश्वास राजाधिराज से उठ जाएगा।

मेघनाथ पिता से सहमत नहीं था। उसका विचार था कि अन्य सेनापतियों के रहते हुए, महाराजाधिराज का स्वयं युद्ध के लिए जाना शोभनीय नहीं था; किंतु पिता और महाराजाधिराज के अधिकार से रावण ने उसे लंका की रक्षा के लिए नियुक्त किया और स्वयं युद्ध के लिए द्वार से बाहर निकल आया।

शत्रुकी उपेक्षा कभी उचित नहीं। इन्द्रको समरमें विचलित करनेवाला मेरा प्रधान सेनापति मारा गया दशग्रीव प्रहस्तका मरण सुनकर अत्यन्त दु:खी हुआ। अब मैं स्वयं युद्ध करने जाऊँगा। पृथ्वी वानरोंके रक्तसे परितृप्त हो।

वानर बलवान नहीं है। बातें बनानेवालोंके पास प्रत्येक परिस्थितिमें बातें विद्यमान रहती हैं। एक राक्षस बोला- आप जानते हैं कि पेट भरनेपर हम राक्षसोंको सो जानेकी जूझती है। वे युद्धमें भी ऊँघते जाते हैं। आपके प्रबन्धक अत्यन्त उदार हैं। राक्षसोंको भरपेट आहार देते हैं। तुम कहना क्या चाहते हो ? दशग्रीवने उसकी ओर देखा।

सब राक्षसोंका भोजन बन्द करा दीजिये। उसने सुझाव दिया- भूखे जायँगे तो दस-बीस वानर प्रत्येक भक्षण करनेका प्रयत्न करेगा।

अच्छी बात। अबसे लमामें राक्षसोंको आहार नहीं मिलेगा। युक्ति रावणको भी उचित लगी। लेकिन तुम अभी मेरे साथ युद्धमें चलो।

मुझे आज क्षमा कर दें। वह गिड़गिड़ाया। उसे क्या पता था कि बोलनेके पुरस्कारमें उसीको बलि पशु बनना पड़ेगा। मैंने अभी-अभी भरपेट तरुण भैंसे खाये हैं। भरपेट भोजन कर लेनेपर मुझे पूरे सप्ताह भूख नहीं लगती।

बहाने बन्द। हम सब आज शत्रु रक्तसे प्रहस्तका तर्पण करेंगे। रावणने गर्जनाकी। भेरी, पवण बजने लगे। राक्षस जयनाद करने लगे। रावण स्वयं रथारूढ़ निकला तो वानरोंने हूँ-हूँ करके एक साथ उसपर आक्रमण कर दिया।

महातेजस्वी रावणने लमापुरीसे सहसा निकलकर महासागर और मेघोंके समान गर्जना करनेवाली उस भयंकर वानरसेनाको देखा, जो हाथोंमें पर्वत-शिखर एवं वृक्ष लिये युद्धके लिये तैयार थी।

नाना पताकाओंसे युक्त, गज सेनासे पूर्ण यह कौन आ रहा है ? श्रीरामने विभीषणसे पूछा। वे दूर थे दशग्रीवके दलसे।

आप इसकी ओर ध्यान दें। स्वयं राक्षसेश्वर युद्ध करने आया है। विभीषणने विवरण दिया। अकम्पन द्वितीय, अतिकाय, पिशाच महोदर, कुम्भ, निकुम्भ, नरान्तक और मेघनादसे घिरा मुकुटधारी, विन्ध्यके समान दीर्घकाय दशग्रीव समराङ्गणमें स्वयं आया है।

तब विभीषण श्रीरामसे बोले- यह जो व्याघ्र, ऊँट, हाथी, हिरन और घोड़ेके-से मुँहवाले, चढ़ी हुई आँखवाले तथा अनेक प्रकारके भयंकर रुपवाले भूतोंसे घिरा हुआ है, जो देवताओंका भी दर्प दलन करनेवाला है तथा जहाँ, जिसके ऊपर पूर्ण चन्द्रमाके समान श्वेत एवं पतली कमानीवाला सुन्दर छत्र शोभा पाता है, वही यह राक्षसराज महामना रावण है, जो भूतोंसे घिरे हुए रुद्रदेवके समान सुशोभित होता है। यह सिरपर मुकुट धारण किये है। इसका मुख कानोंमें हिलते हुए कुण्डलोंसे अलंकृत है। इसका शरीर गिरिराज हिमालय और विन्ध्याचलके समान विशाल एवं भयंकर है तथा यह इन्द्र और यमराजके भी घमंडको चूर करनेवाला है। यह राक्षसराज साक्षात् सूर्यके समान प्रकाशित

हो रहा है। तब श्रीरामने विभीषणको इस प्रकार उत्तर दिया- अहो। राक्षसराज रावणका तेज तो बहुत ही बढ़ा-चढ़ा और देदीप्यमान है।

इस राक्षसराजका शरीर जैसा सुशोभित हो रहा है, ऐसा तो देवता और दानव वीरोंका भी नहीं होगा।

विभीषण। सभी राक्षस पर्वताकार होते हैं; किन्तु राक्षसेश्वरमें कितना तेज है ? श्रीरामने शत्रुकी प्रशंसा करके कहा- सौभाग्यसे सीताका हरणकर्ता मेरे सम्मुख आ गया है। लक्ष्मण। धनुष उठाओ और तुम मेरे पीछे रहो।

सब राक्षस यूथप गोपुरोंमें सावधान बैठे थे। रावणने भी द्वारसे निकलते-निकलते अपने यूथपोंको आज्ञा दी- वानर आक्रमण करके पुरीध्वंस न करें, इसके लिए सावधान रहो।

जो दीप्तिमान्, भयंकर दिखायी देनेवाले और तीखे स्वभाववाले हैं, उन राक्षसोंसे घिरा हुआ यह राक्षसराज रावण देहधारी भूतोंसे घिरे हुए यमराजके समान जान पड़ता है। सौभाग्यकी बात है कि यह पापात्मा मेरी आँखोंके सामने आ गया। सीताहरणके कारण मेरे मनमें जो क्रोध संचित हुआ है, उसे आज इसके ऊपर छोड़ूँगा। ऐसा कहकर बल-विक्रमशाली श्रीराम धनुष लेकर उत्तम बाण निकालकर युद्धके लिये डट गये। इस कार्यमें लक्ष्मणने भी उनका साथ दिया।

रावण के साथ अकंपन, अतिकाय, महोदर, पिशाच, रावणि त्रिशिरा एवं नरांतक तथा कुंभकर्ण के पुत्र और निकुंभ अपनी-अपनी वाहिनियाँ लिये चल रहे थे। राक्षस सेना प्रलयकालीन ज्वार के समान हुँकार करती हुई बढ़ती चली जा रही थी। रावण ने कोई विशेष व्यूह न बनाकर वानर सेना पर सीधा आक्रमण किया था। उसके सेनापति जहाँ-तहाँ वानर यूथपतियों से उलझ गए थे।

सुग्रीव ने रावण को आते देखा। राम अपने व्यूह में अन्यत्र व्यस्त थे। वैसे भी इस समय राम का सीधे रावण से टकराना सुग्रीव को उचित नहीं लग रहा था। सम्भव है कि रावण को देखते ही राम अपना संयम छोड़ बैठें और अपने आक्रोश के कारण स्वयं को अनावश्यक जोखिम में डालें। यह न राम के हित में होगा, न वानर सेना के। उससे तो अच्छा है कि सुग्रीव स्वयं ही रावण को रोकें। उन्हें भी तो रावण से अपना पुराना हिसाब चुकाना था।

रावण के रथ के सम्मुख अनेक घोड़े जुते थे। रथ के पहिए बड़े-बड़े थे। जंगली भैसें के चर्म से बने कवच से रथ रक्षित था और अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्रों में अँटा पड़ा था। चमकीले धनुष-बाण लिये राक्षसराज रावणको युद्धस्थलमें सहसा आया देख वानरराज सुग्रीवने एक बड़ा भारी पर्वत-शिखर उखाड़ लिया और उसे लेकर उसने निशाचरराजपर आक्रमण किया।

अनेक वृक्षों और शिखरोंसे युक्त उस महान् शैल-शिखर-को सुग्रीवने रावणपर दे मारा। उस शिखरको अपने ऊपर आता देख रावणने सहसा सुवर्णमय पंखवाले बहुत-से बाण मारकर उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

सुग्रीव को अपना धनुर्विद्या के अभ्यास का अभाव खला। रावण से लड़ने के लिए धनुष ही उपयुक्त शस्त्र था किंतु सुग्रीव के पास तो गदा थी, गदा-कौशल था, शारीरिक बल था और मन में आक्रोशपूर्ण वीरता थी।

उत्तम वृक्ष और शिखरवाला वह महान् शैलश्रृङ्ग जब विदीर्ण होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा, तब राक्षसलोकके स्वामी रावणने महान् सर्प और यमराजके समान भयंकर बाणका संधान किया।

उस बाणका वेग वायुके समान था। उससे चिनगारियाँ छूटती थीं और प्रज्वलित अग्निके समान प्रकाश फैलता था। इन्द्रके वज्रकी भाँति भयंकर वेगवाले उस बाणको रावणने रुष्ट होकर सुग्रीवके वधके लिये चलाया।

रावणके हाथोंसे छूटे हुए उस सायकने इन्द्रके वज्रकी भाँति कान्तिमान् शरीरवाले सुग्रीवके पास पहुँचकर उसी तरह वेगपूर्वक उन्हें घायल कर दिया, जैसे स्वामी कार्तिकेयकी चलायी हुई भयानक शक्तिने क्रौञ्चपर्वतको विदीर्ण कर डाला था।

उस बाणकी चोटसे वीर सुग्रीव अचेत हो गये और आर्तनाद करते हुए पृथ्वीपर गिर पड़े। सुग्रीवको बेहोश हो घूमकर गिरा देख उस युद्धस्थलमें आये हुए सब राक्षस बड़े हर्षके साथ सिंहनाद करने लगे।

सुग्रीवने पर्वत उठाकर युद्धका श्रीगणेश किया; किन्तु दशग्रीवने बाणोंसे पर्वतको चूर-चूरकर दिया। उसके आघातसे आहत सुग्रीव चीत्कार करके मूर्छित हो गये। वानरसेना की धनुर्धारी टुकड़ियों ने बाणों की पहली बौछार की तो राक्षसों की पैदल सेना की गति रुद्ध हो गई। रावण के रथ की गति मंथर हुई तो उसने अपने धनुष से सारथी को कोंचा, रथ को आगे निकालो।

सुग्रीव को अपने लिए उपयुक्त अवसर दिखाई पड़ा। वे कूदकर रावण के रथ पर चढ़ गए; किंतु इससे पहले कि रावण पर वे अपनी गदा चलाते, रावण ने उनके वक्ष में एक शूल दे मारा। शूल इतने निकट से वेग से चलाया गया था कि सुग्रीव उसे सँभाल नहीं सके। उन्हें

चक्कर आ गया और वे रथ से नीचे खिसक पड़े।

किंतु वानर सेना तनिक भी असावधान नहीं थी। सुग्रीव को गिरते देख, तत्काल व्यूह बदल गए। इससे पहले कि रावण अथवा कोई अन्य राक्षस सेनापति उन पर प्रहार कर सकता; गवाक्ष, गवय, सुषेण, ऋषभ, ज्योतिर्मुख और नल अपनी वाहिनियों के साथ रावण पर इस तीव्रता से झपके कि रावण को सुग्रीव को भूलकर अपनी रक्षा के लिए प्रयत्नशील होना पड़ा।

फिर तो रावणने अपने बाण-समूहोंद्वारा उस भयंकर वानरसेनाको आच्छादित कर दिया। रावणके बाणोंसे पीड़ित और डरे हुए वीर वानर उसकी मार खा-खाकर जोर-जोरसे चीत्कार करते हुए धराशायी होने लगे।

रावण के सेनापति भी अपनी सेनाओं के साथ उसके आस-पास घिर आए। अकस्मात् ही युद्ध अत्यंत भयंकर हो उठा। लगा कि युद्ध के अन्य व्यूह निरस्त कर दिए गए हैं और प्रत्येक योद्धा इसी दिशा में बढ़ा चला आ रहा है। नील ने आते ही मूर्च्छित सुग्रीव को चिकित्सा-शिविर की ओर भिजवाया। सुषेण को उनके पीछे भेजा और स्वयं रावण के सम्मुख डट गए। नील के बाणों ने रावण को कुछ इस प्रकार पीडित किया कि रावण अपना धैर्य खो बैठा। उसकी दृष्टि अपने दिव्यास्त्रों पर घूम गईं। उसने आग्नेयास्त्र उठाकर अपने बाण के फल पर लगाया और पूरी शक्ति से धनुष की प्रत्यंचा खींचकर बाण छोड़ दिए।

राक्षसोंके राजा प्रतापी दशग्रीवने शत्रुओंके मर्मको विदीर्ण करनेवाले सर्पतुल्य भयंकर बाणोंद्वारा वानर-सेनापति नीलको संताप देना आरम्भ किया। इतनेहीमें तेजस्वी महामना हनुमान भी सँभल गये और पुन: युद्धकी इच्छासे रावणकी ओर देखने लगे। उस समय राक्षसराज रावण नीलके साथ उलझा हुआ था। हनुमानने उससे रोषपूर्वक कहा- ओ निशाचर। इस समय तुम दूसरेके साथ युद्ध कर रहे हो, अत: अब तुमपर धावा करना मेरे लिये उचित न होगा।

वानर। तुम्हारा बल प्रशंसनीय है। रावण भी सम्हलकर उठ खड़ा हुआ। प्रशंसाकी उसने-साधु। साधु। तुम सचमुच बलवान हो।

मेरे बलको धिक्कार है कि तू जीवित उठ गया। हनुमानने ललकारा- फिर प्रहारका।

रावणने इस बार पूरी शक्ति लगाकर घूसा मारा। हनुमान इस आघातसे कुछ विह्वल हुए तो दशग्रीव डर गया- अबकी बार इसे सावधान होकर प्रहार करनेका अवसर प्राप्त होगा तो यह मुझे अवश्य मार डालेगा। वह नीलसे युद्ध करने लगा।

नीलने युद्धस्थलमें अश्वकर्ण, साल, खिले हुए आम्र तथा अन्य नाना प्रकारके वृक्षोंको उखाड़-उखाड़कर रावणपर चलाना आरम्भ किया। रावणने उन सब वृक्षोंको सामने आनेपर काट गिराया और अग्निपुत्र नीलपर बाणोंकी भयानक वर्षा की। अपनी ध्वजाके ऊपर बैठे हुए अग्निपुत्र नीलको देखकर रावण क्रोधसे जल उठा और उधर नील जोर-जोरसे गर्जना करने लगे। नीलको कभी रावणकी ध्वजापर, कभी धनुषपर और कभी मुकुटपर बैठा देख श्रीराम, लक्ष्मण और हनुमान को भी बड़ा विस्मय हुआ। उस समय वानरोंके हर्षनादसे रावणको बड़ा क्रोध हुआ। साथ ही हृदयमें घबराहट छा गयी थी, इसलिये वह कर्तव्य-का कुछ निश्चय नहीं कर सका।

तब रावण बोला- वानर। यदि शक्तिशाली हो तो मेरे बाणसे अपने जीवन-की रक्षा करो। यद्यपि तुम अपने पराक्रमके योग्य ही भिन्न-भिन्न प्रकारके कर्म कर रहे हो तथापि मेरा छोड़ा हुआ दिव्यास्त्रप्रेरित बाण जीवन-रक्षाकी चेष्टा करनेपर भी तुम्हें प्राणहीन कर देगा।

उसके धनुषसे छूटे हुए उस बाणने नीलकी छातीपर गहरी चोट की। वे उसकी आँचसे जलते हुए सहसा पृथ्वीपर गिर पड़े।

यद्यपि नीलने पृथ्वीपर घुटने टेक दिये, तथापि पिता अग्निदेवके माहात्म्यसे और अपने तेजके प्रभावसे उनके प्राण नहीं निकले।

आग्नेयास्त्र को न नील काट सके और न उनका कवच उसे रोक पाया। उन्हें लगा जैसे कवच स्थान-स्थान से जलकर शिथिल हो गया है और उनके अंग-प्रत्यंग झुलस रहे है। नील का मस्तिष्क सोने-सोने को हो गया। वे मूर्च्छित हो गए थे।

रावणके सायकोंसे पीड़ित हो बहुत-से वानर शरणागतवत्सल भगवान् श्रीरामकी शरणमें गये। सुग्रीवको संकटमें देखकर गय, गवाक्षादि सब यूथक दौड़ पड़े। दशग्रीवने सबका सम्मिलित प्रहार सह लिया। उसके दसों धनुषोंकी अनवरत बाण-वर्षाने वानरोंको व्याकुल कर दिया।

तब धनुर्धर महात्मा श्रीराम सहसा धनुष लेकर आगे बढ़े। उसी समय लक्ष्मणने उनके सामने आकर हाथ जोड़ उनसे ये यथार्थ वचन कहे- आर्य। इस दुरात्माका वध करनेके लिये तो मैं ही पर्याप्त हूँ। प्रभो। आप मुझे आज्ञा दीजिये। मैं इसका नाश करूँगा।

निसन्देह आप राक्षस-नाशमें समर्थ हैं। अग्रजको धनुष उठाते देखकर लक्ष्मणने प्रार्थना की- किन्तु अभी तो यह सेवक विद्यमान है।

जाओ, किन्तु सावधान रहना। श्रीरामने अनुजको आज्ञा दे दी- रावण असाधारण पराक्रमी है। वह अपनी रक्षा नेत्रोंसे भी कर लेता

है। उसकी पलकें भी प्रबलतम बाणोंको व्यर्थ कर देती हैं। लक्ष्मणने अग्रजको प्रणाम किया। उनकी परिक्रमा की।

तुम युद्धमें रावणके छिद्र देखना। उसकी कमजोरियोंसे लाभ उठाना और अपने छिद्रोंपर भी दृष्टि रखना कहीं शत्रु उनसे लाभ न उठाने पाये। एकाग्रचित्त हो पूरी सावधानीके साथ अपनी दृष्टि और धनुषसे भी आत्मरक्षा करना।

नील के गिरते ही, तत्काल उनके स्थान पर लक्ष्मण आ खड़े हुए। बड़ी विकट स्थिति थी। इस समय तनिक-सी भी शिथिलता से रावण का रथ वानर सेना पर चढ़ आता। उसके शस्त्रास्त्रों और दिव्यास्त्रों से वानरों का भयंकर नाश होता और राक्षस सेना वानरों को पूर्णत: ग्रस लेती। वानर नीलको अचेत हुआ देख रणोत्सुक रावणने मेघकी गर्जनाके समान गम्भीर ध्वनि करनेवाले रथके द्वारा सुमित्राकुमार लक्ष्मणपर धावा किया। युद्धभूमिमें सारी वानरसेनाको आगे बढ़नेसे रोककर वह लक्ष्मणके पास पहुँच गया और प्रज्वलित अग्निके समान सामने खड़ा हो प्रतापी राक्षसराज रावण अपने धनुषकी टंकार करने लगा।

उस समय अपने अनुपम धनुषको खींचते हुए रावणसे उदार शक्तिशाली लक्ष्मणने कहा- निशाचरराज। समझ लो, मैं आ गया। अत: अब तुम्हें वानरोंके साथ युद्ध नहीं करना चाहिये।

लक्ष्मणकी यह बात गम्भीर ध्वनिसे युक्त थी और उनकी प्रत्यञ्चासे भी भयानक टंकार-ध्वनि हो रही थी। उसे सुनकर युद्धके लिये उपस्थित हुए सुमित्राकुमारके निकट जा राक्षसोंके राजा रावणने रोषपूर्वक कहा-

रघुवंशी राजकुमार। सौभाग्यकी बात है कि तुम मेरी आँखोंके सामने आ गये। तुम्हारा शीघ्र ही अन्त होनेवाला है, इसीलिये तुम्हारी बुद्धि विपरीत हो गयी है। अब तुम मेरे बाणसमूहोंसे पीड़ित हो इसी क्षण यमलोककी यात्रा करोगे।

सुमित्राकुमार लक्ष्मणको उसकी बात सुनकर कोई विस्मय नहीं हुआ। उसके दाँत बड़े ही तीखे और उत्कट थे और वह जोर-जोरसे गर्जना कर रहा था। उस समय सुमित्राकुमारने उससे कहा- राजन्। महान् प्रभावशाली पुरुष तुम्हारी तरह केवल गर्जना नहीं करते हैं कुछ पराक्रम करके दिखाते हैं। पापाचारियोंमें अग्रगण्य रावण। तुम तो झूठे ही डींग हाँकते हो।

राक्षसराज। तुमने सूने घरसे जो चोरी-चोरी एक असहाय नारीका अपहरण किया, इसीसे मैं तुम्हारे बल, वीर्य, प्रताप और पराक्रमको अच्छी तरह जानता हूँ; इसीलिये हाथमें धनुष-बाण लेकर सामने खड़ा हूँ। आओ युद्ध करो। व्यर्थ बातें बनानेसे क्या होगा?

राक्षसराज। मुझसे संग्राम करो। वानरोंसे समर तुम्हें शोभा नहीं देता। धनुष चढ़ाकर चुनौती देते सौमित्रने ज्याघोष किया। उस भुवनभेदी ध्वनिसे दशग्रीव भी एकबार काँप गया। तापस। यह मेरा अन्तिम क्षण है। रावणने धमकी दी।

प्रभावशाली डींग नहीं मारा करते। लक्ष्मणने ललकारा- तू परम पापिष्ट है। तेरा पौरुष-पराक्रम जानता हूँ मेरी उपस्थितिमें तुझे श्रीजनक-नन्दनीके हरणका साहस नहीं हुआ था। मैं धनुष लिये तेरे सम्मुख हूँ, पराक्रम प्रकट कर।

लक्ष्मण किसी कठोर शिला के समान रावण के रथ के सम्मुख खड़े क्षुर, अर्द्धचन्द्र, उत्तमकर्णी तथा भल्ल बाणों की झड़ी लगाए हुए थे। दूसरी ओर उनका मस्तिष्क निरंतर अपने बाण चला रहा था- यही वह रावण है, जिसने सीता का हरण किया, जटायु को मारा यही है वह अन्यायी, जिसने संसार के समस्त न्याय को ग्रस लिया है। इसके कारण संसार में शोषण का प्रकोप है इसके कारण कोई सुरक्षित नहीं, सम्मानित नहीं यह पाप है, अपराध है, शोषण है।

लक्ष्मण को देखकर रावण के मन में भी कुछ कौंधा- यह उन दो भाइयों में से एक है, जिन्होंने उसके आधिपत्य को सर्वत्र तोड़ा है। जिन लोगों ने स्वयं को कभी मनुष्य समझा, उन्हें इन्होंने समता, स्वतंत्रता, अधिकार और न्याय के लिए लड़ना नहीं सिखा दिया है। यदि ये दोनों भाई जीवित रहे तो राक्षस-यंत्र नष्ट हो जाएगा, राक्षसों का आधिपत्य सर्वथा समाप्त हो जाएगा।

जैसे बड़े-बड़े सर्पोंके शरीरके टुकड़े-टुकड़े कर दिये जायँ, उसी प्रकार अपने समस्त बाणोंको सहसा खण्डित हुआ देख लमापति रावण क्रोधके वशीभूत हो गया और उसने दूसरे तीखे बाण छोड़े।

परंतु लक्ष्मण इससे विचलित नहीं हुए। उन्होंने अपने धनुषसे बाणोंकी भयंकर वर्षा की और क्षुर, अर्धचन्द्र, उत्तम कर्णी तथा भल्ल जातिके बाणोंद्वारा रावणके छोड़े हुए उन सब बाणोंको काट डाला।

परंतु राक्षसराजने ब्रह्माजीके दिये हुए कालाग्निके समान तेजस्वी बाणसे लक्ष्मणके ललाटपर चोट की।

रावणके उस बाणसे पीड़ित हो लक्ष्मणजी विचलित हो उठे। उन्होंने हाथमें जो धनुष ले रक्खा था, उसकी मुट्ठी ढीली पड़ गयी। फिर उन्होंने बड़े कष्टसे होश सँभाला और देवद्रोही रावणके धनुषको काट दिया।

जब धनुष कट गया और बाणोंकी गहरी चोट खानी पड़ी, तब रावणका सारा शरीर मेदे और रक्तसे भीग गया। उस अवस्थामें उस भयंकर शक्तिशाली देवद्रोही राक्षसने युद्धस्थलमें ब्रह्माजीकी दी हुई शक्ति उठा ली।

वह शक्ति धूमयुक्त अग्निके समान दिखायी देती थी और युद्धमें वानरोंको भयभीत करनेवाली थी। रावणने वह जलती हुई शक्ति बड़े वेगसे लक्ष्मणपर चलायी। अपनी ओर आती हुई उस शक्तिपर लक्ष्मणने अग्नितुल्य तेजस्वी बहुत-से बाणों तथा अस्त्रोंका प्रहार किया; तथापि वह शक्ति लक्ष्मणके विशाल वक्ष:स्थलमें घुस गयी।

अब प्रचण्ड युद्ध प्रारम्भ हुआ। दोनों ओरसे अनवरत बाण वर्षा, दोनोंने दिव्यास्त्रोंकी झड़ी लगा दी। अन्तमें दशग्रीवका धनुष कट गया। लक्ष्मणके प्रहारोंसे व्याकुल होकर उसने ब्रह्मासे प्राप्त अमोघ शक्ति उठायी। वह निर्धूम अग्निके समान ज्वालमालावृता शक्ति चली तो लक्ष्मणने उसे भी काटनेका प्रयास किया, किन्तु वह ब्राह्मीशक्ति उनके वक्षमें लगी। मूर्छित होकर श्रीरामानुज गिर पड़े।

रघुकुलके प्रधान वीर लक्ष्मण यद्यपि बड़े शक्तिशाली थे, तथापि उस शक्तिसे आहत हो पृथ्वीपर गिर पड़े और जलने-से लगे। उन्हें विह्वल हुआ देख राजा रावण सहसा उनके पास जा पहुँचा और उनको वेगपूर्वक अपनी दोनों भुजाओंसे उठाने लगा।

जिस रावणमें देवताओंसहित हिमालय, मन्दराचल, मेरुगिरि अथवा तीनों लोकोंको भुजाओंद्वारा उठा लेनेकी शक्ति थी, वही भरतके छोटे भाई लक्ष्मणको उठानेमें समर्थ न हो सका।

ब्रह्माकी शक्तिसे छातीमें चोट खानेपर भी लक्ष्मणने भगवान् विष्णुके अचिन्त्य अंशरूपसे अपना चिन्तन किया।

अत: देवशत्रु रावण दानवोंका दर्प चूर्ण करनेवाले लक्ष्मणको अपनी दोनों भुजाओंमें दबाकर हिलानेमें भी समर्थ न हो सका।

रावण ने ब्रह्मबाण अपने धनुष पर चढ़ाया और लक्ष्मण पर चला दिया। बाण लक्ष्मण के वक्ष में लगा। अपने धनुष पर लक्ष्मण की पकड़ ढीली हो गई। उन्हें लगा कि उनके हाथ से धनुष खिसक रहा है और उनका सिर चकरा रहा है। लक्ष्मण ने सिर को झटका। स्वयं को संतुलित किया और पुन: सन्नद्ध होकर खड़े हो गए। उन्होंने एक के बाद एक बाण रावण पर चला दिए। रावण के धनुष की प्रत्यंचा कटकर झूल गई। प्रतिरावण जोर से हँसा। बस, रावण। इतनी ही-सी शक्ति थी तेरी।

अपने आवेश में रावण सब कुछ भूल गया। उसे लगा, उस पर नाश का आवेश छा गया। इस समय उसके हाथ में जो भी भयंकर से भयंकर अस्त्र होता, वह उसी को चला देता। मदांध रावण के मन में लक्ष्मण के साथ-साथ अपने प्रति भी क्रोध जागा। क्या हो गया है उसे। वह कल के इन छोकरों को भी उपयुक्त पाठ नहीं पढ़ा सकता। उसने ब्रह्मा का दिया हुआ दिव्य शर चलाया और यह छोकरा उसे झेल गया। व्यर्थ ही ब्रह्मा उसके पितामह और शंकर उसके गुरु कहलाते हैं। शिव ने क्यों नहीं उसे वैसा धनुष दिया, जैसा सीरध्वज जनक के घर पर पड़ा था। अपनी भुजाओं की शक्ति से न चलाकर, यंत्र परिचालित धनुषों से वह देवास्त्र प्रक्षेपित करता और विश्व को जलाकर क्षार कर देता।

शक्ति वस्तुत: आमोघ थी। लक्ष्मण के बाण मार्ग में शक्ति को नहीं काट सके। शक्ति लक्ष्मण के वक्ष में लगी और लक्ष्मण के शरीर में भयंकर जलन उत्पन्न हो गई, जैसे कोई भयंकर विष उनके रक्त में पहुँचकर अग्निदाह कर रहा हो। यह ज्वाला असहनीय थी, असह्य। लक्ष्मण मूर्च्छित होकर भूमि पर आ गिरे।

रावण का रथ आगे बढ़ा और वानर सेना तितर-बितर हो गई। लक्ष्मण के गिरने का समाचार दावानल के समान फैल गया। रावण ने सारथी को रुकने का संकेत किया।

रथ लक्ष्मण के मूर्च्छित शरीर के पास रुका और सहसा वानर यूथपतियों की समझ में आया कि रावण के मन में क्या है। रावण ने मूर्च्छित लक्ष्मण की भुजा पकड़ी ही थी कि असंख्य वानर रावण पर अपने अस्त्रों-शस्त्रों के साथ झपट पड़े।

रावणको इस प्रकार पराक्रम करते देख महातेजस्वी पवनपुत्र हनुमान्‌जी उसके बाण-समूहोंका निवारण करते हुए उसकी ओर दौड़े।

उसके रथके पास पहुँचकर अपना दायाँ हाथ उठा बुद्धिमान् हनुमान्‌ने रावणको भयभीत करते हुए कहा-

निशाचर। तुमने देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष और राक्षसोंसे न मारे जानेका वर प्राप्त कर लिया है; परंतु वानरोंसे तो तुम्हें भय है ही।

देखो। पाँच अँगुलियोंसे युक्त यह मेरा दाहिना हाथ उठा हुआ है। तुम्हारे शरीरमें चिरकालसे जो जीवात्मा निवास करता है, उसे आज यह इस देहसे अलग कर देगा।

इसी समय क्रोधसे भरे हुए वायुपुत्र हनुमान्‌जी रावणकी ओर दौड़े और अपने वज्र-सरीखे मुक्केसे रावणकी छातीमें मारा।

उस मुक्केकी मारसे राक्षसराज रावणने धरतीपर घुटने टेक दिये। वह काँपने लगा और अन्ततोगत्वा गिर पड़ा।

उसके मुख, नेत्र और कानोंसे बहुत-सा रक्त गिरने लगा और वह चक्कर काटता हुआ रथके पिछले भागमें निश्चेष्ट होकर जा बैठा।

वह मूर्च्छित होकर अपनी सुध-बुध खो बैठा। वहाँ भी वह स्थित न रह सका- तड़पता और छटपटाता रहा। समराङ्गणमें भयंकर पराक्रमी रावणको अचेत हुआ देख ऋषि, देवता, असुर और वानर हर्षनाद करने लगे।

हनुमानका यह वचन सुनकर भयानक पराक्रमी रावणके नेत्र क्रोधसे लाल हो उठे और उसने रोषपूर्वक कहा-

वानर। तुम नि:शम होकर शीघ्र मेरे ऊपर प्रहार करो और सुस्थिर यश प्राप्त कर लो। तुममें कितना पराक्रम है, यह जान लेनेपर ही मैं तुम्हारा नाश करूँगा। रावणकी बात सुनकर पवनपुत्र हनुमान्‌जी बोले- मैंने तो पहले ही तुम्हारे पुत्र अक्षको मार डाला है। इस बातको याद तो करो। उनके इतना कहते ही बल-विक्रमसम्पन्न महातेजस्वी राक्षसराज रावणने उन पवनकुमारकी छातीमें एक तमाचा जड़ दिया। उस थप्पड़की चोटसे हनुमानजी बारंबार इधर-उधर चक्कर काटने लगे; परंतु वे बड़े बुद्धिमान और तेजस्वी थे, अत: दो ही घड़ीमें अपनेको सुस्थिर करके खड़े हो गये। फिर उन्होंने भी अत्यन्त कुपित होकर उस देवद्रोहीको थप्पड़से ही मारा।

उन महात्मा वानरके थप्पड़की मार खाकर दशमुख रावण उसी तरह काँप उठा, जैसे भूकम्प आनेपर पर्वत हिलने लगता है।

तदनन्तर महातेजस्वी रावणने सँभलकर कहा- शाबाश वानर। शाबाश, तुम पराक्रमकी दृष्टिसे मेरे प्रशंसनीय प्रतिद्वन्द्वी हो।

रावणके ऐसा कहनेपर पवनकुमार हनुमान्‌ने कहा- रावण। तू अब भी जीवित है, इसलिये मेरे पराक्रमको धिक्कार है।

दुर्बुद्धे। अब तुम एक बार और मुझपर प्रहार करो। बढ़-बढ़कर बातें क्यों बना रहे हो। तुम्हारे प्रहारके पश्चात् जब मेरा मुक्का पड़ेगा, तब वह तुम्हें तत्काल यमलोक पहुँचा देगा।

हनुमानकी इस बातसे रावणका क्रोध प्रज्वलित हो उठा। उसकी आँखें लाल हो गयीं। उस पराक्रमी राक्षसने बड़े यत्नसे दाहिना मुक्का तानकर हनुमानजीकी छातीमें वेगपूर्वक प्रहार किया।

हनुमान ने अपनी गदा का एक भरपूर प्रहार रावण के वक्ष पर किया। लहर पर लहर के समान बढ़कर आते हुए वानरों ने रावण को विचलित कर दिया। लक्ष्मण के मूर्च्छित शरीर को वह उठा नहीं पाया। किंतु इस आपाधापी में वह एक स्थान पर टिक नहीं सका। हनुमान का प्रहार भी लक्ष्य-च्युत हो गया। कंधे पर हुए प्रहार के कारण रावण क्षणभर के लिए निश्चेष्ट हो गया। उसके सारथी ने उसे सहारा देकर रथ में बैठाया और रथ आगे बढ़ाया।

रावणको अपने लिए एक सुयोग प्रतीत हुआ। यदि वह लक्ष्मणको उठाकर रथमें डाल लमा ले जा सके, रामपर लौट जानेका दबाव डाल सकेगा। वह रथसे कूदा; किन्तु भले उसने कैलास उठा लिया हो, बीसों भुजाएँ और पूरा बल लगानेपर भी लक्ष्मण हिला तक नहीं सका।

दुष्ट। पापिष्ठ। अचानक पवनकुमारकी दृष्टि पड़ी। वे दौड़े और आते ही एक घूसा क्रोधमें भरकर धमक दिया। दशग्रीवके नेत्रोंसे, कर्णोंसे रक्त प्रवाह चलने लगा। वह किसी प्रकार अपने रथपर चढ़ तो गया, पर गिरकर मूर्छित हो गया।

हनुमान अद्‌भुत स्फूर्ति से आगे बढ़े। इसके पश्चात् तेजस्वी हनुमान् रावणपीड़ित लक्ष्मणको दोनों हाथोंसे उठाकर श्रीरघुनाथके निकट ले आये। उधर वानर सेना राक्षसों के भयंकर आक्रमण के सम्मुख लौह प्राचीर के समान अविचलित खड़ी थी।

राम को सूचना मिली। हनुमानके सौहार्द और उत्कट भक्तिभावके कारण लक्ष्मण उनके लिये हल्के हो गये। शत्रुओंके लिये तो वे अब भी अकम्पनीय थे- वे उन्हें हिला नहीं सकते थे।

तुम निखिल सृष्टि-धारक, कालके भी काल हो। तुम्हें कोई शक्ति संज्ञाशून्य कर सकती है। हनुमान जब लक्ष्मणको उठा ले आये श्रीरामने अपने अमृत स्यन्दी कर अनुजपर फेरते कहा। लक्ष्मण उठ बैठे। शक्ति उनको त्यागकर ब्रह्मलोक चली गयी।

विशाल वाहिनीके बड़े-बड़े वीर मार गिराये गये, यह देखकर रणभूमिमें रघुनाथने रावणपर धावा किया।

उस समय हनुमानने उनके पास आकर कहा- प्रभो। जैसे भगवान् विष्णु गरुड़पर चढ़कर दैत्योंका संहार करते हैं, उसी प्रकार आप मेरी पीठपर चढ़कर इस राक्षस को दण्ड दें। जब सचेत होकर रावण पुन: युद्धमें आया, श्रीरामने धनुषकी प्रत्यञ्चा चढ़ा ली। पवनकुमारने प्रार्थनाकी- जैसे विष्णु गरुड़को वाहन बनाकर युद्ध करते हैं, आप मेरे स्कन्धारूढ़ होनेकी कृपा करें।

पवनकुमारकी कही हुई यह बात सुनकर श्रीरघुनाथ सहसा उन महाकपि हनुमानकी पीठपर चढ़ गये।

उन पर दोहरी प्रतिक्रिया हुई- रावण युद्ध-क्षेत्र में आया है और लक्ष्मण मूर्च्छित हुए पड़े हैं। राम द्वंद्व में थे- किधर जाएँ ? पहले

मूर्छित भाई की सुध लें, अथवा पहले अपने शत्रु को रण-निमंत्रण दें ? रावण ने सुग्रीव, नील और अब सौमित्र को आहत कर मूर्च्छित कर दिया था... राम को वहीं जाना चाहिए। कब से राम इस शत्रु को खोज रहे थे और वह अपनी सोने की लंका में सुरक्षित बैठा था। आज वह रणक्षेत्र में आया है और वे उससे भेंट न करें तो धिक्कार है उनकी वीरता पर।

राम ने चरों को शिविर में भेजा- सौमित्र के स्वास्थ्य की सूचनाएँ निरन्तर भिजवाते रहें अपना व्यूह उन्होंने अंगद को सौंपा और उस क्षेत्र में पहुँचे, जहाँ रावण का रथ खड़ा था।

रावण की निष्क्रियता नष्ट हुई तो उसने पुन: धनुष उठा लिया। किंतु इस बार उसके सामने लक्ष्मण नहीं था। उसने सारथी की ओर देखा।

राम। सारथी ने बताया।

यह वही कंगला राजकुमार है, जिसके भय से तू कभी उसके सामने नहीं पड़ा। प्रतिरावण हँस रहा था।

राम ने रावण को देखा- प्रौढ़ वय का साधन-संपन्न हृष्ट-पुष्ट योद्धा। पर यह योद्धा कैसा ? यह तो चोर है- सीता का हरण करनेवाला। दुष्ट, अत्याचारी और कायर। पूरा शस्त्रागार अपने रथ में रख युद्ध करने आया है ताकि न्याय की हत्या कर अपने पापों से अपनी रक्षा कर सके... सारी मानवता का पीड़क... सीता को उनसे छीननेवाला।

दुष्ट निशाचर। तेरी प्रतीक्षा बहुत दिनों से थी। राम के जबड़े भिंच गए, आज पृथ्वी का पाप कट जाएगा।

महाराज श्रीरामने समराङ्गणमें रावणको रथपर बैठा देखा। उसे देखते ही महातेजस्वी श्रीराम रावणकी ओर उसी प्रकार दौड़े, जैसे कुपित हुए भगवान विष्णु अपना चक्र उठाये विरोचनकुमार बलिपर टूट पड़े थे।

रामने अपने धनुषकी तीव्र टंकार प्रकट की, जो वज्रकी गड़गड़ाहटसे भी अधिक कठोर थी। इसके बाद श्रीरामजी रावणसे गम्भीर वाणीमें बोले- रावण। खड़ा रह, खड़ा रह। मेरा ऐसा अपराध करके तू कहाँ जाकर प्राणसंकटसे छुटकारा पा सकेगा।

यदि तू इन्द्र, यम अथवा सूर्यके पास, ब्रह्मा, अग्नि या शंकरके समीप अथवा दसों दिशाओंमें भागकर जायगा तो भी अब मेरे हाथसे बच नहीं सकेगा।

रावण। तेरे सामने खड़े हुए इस रघुवंशी राजकुमारने ही अपने बाणोंद्वारा जनस्थाननिवासी उन चौदह हजार राक्षसोंका संहार कर डाला था, जो अद्भुत एवं दर्शनी योद्धा थे और उत्तमोत्तम अस्त्र-शस्त्रोंसे सम्पन्न हैं।

रावण ने सौंदर्य और शौर्य के उस पुँज को देखा- शूर्पणखा यदि इसे देकर अपना विवेक खो बैठी थी, तो उसने क्या गलत किया था। सीता यदि किसी दूसरे पुरुष को स्वीकार नहीं कर सकती तो उसका क्या दोष। राम के रहते हुए कोई भी स्त्री किसी अन्य पुरुष को कै से अंगीकार कर सकती है। यही है वह पुरुष, जिसने इस सारे जनपद में घास-फूस के समान चरी जा रही प्रजा के हाथ में शस्त्र देकर उन्हें सैनिक बना दिया है और कैसे खड़ा है रावण के अस्त्र-शस्त्रों से अँटें हुए कवच-रक्षित रथ के सम्मुख। भूमि पर नंगे पाँव, पदाति शरीर पर एक कवच है- जाने कैसा पुराना-सा जीर्ण-शीर्ण कवच है। रथ के अभाव में अपने दोनों कंधों पर तूणीर लटकाए, कटि में खड्ग बाँधे और हाथ में धनुष लिये। हनुमान के कन्धे पर बैठे है।

सहसा रावण का आक्रोश उबला- जब तक यह जीवित है, सीता रावण की नहीं हो सकती। जब तक यह जीवित है, रावण जंबुद्वीप का अधिपति नहीं हो सकता। इसे मरना ही होगा, इसी क्षण...।

रावण ने लक्ष्मण को मूर्छित करनेवाली ब्रह्मशक्ति पुन: उठा ली और धनुष पर चढ़ा, राम के वक्ष पर छोड़ दी, किंतु राम ने अपने कौशल से शक्ति को मार्ग में ही नष्ट कर दिया। रावण ने राम का अद्भुत रण-कौशल देखा उसने ठीक ही सुना था कि इस व्यक्ति ने विश्वामित्र और अगस्त्य से दिव्यास्त्र प्रापत किए हैं। लगता है कि रावण को देवास्त्रों के लिए पुन: महादेव शिव की शरण में जाना होगा।

श्रीरामकी यह बात सुनकर रावण महान रोषसे भर गया। उसे पहलेके वैरका स्मरण हो आया और उसने कालाग्निकी शिखाके समान दीप्तिशाली बाणोंद्वारा रणभूमिमें श्रीरघुनाथका वाहन बने हुए महान् वेगशाली वायुपुत्र हनुमानको अत्यन्त घायल कर दिया।

युद्धस्थलमें उस राक्षसोंके सायकोंसे आहत होनेपर भी स्वाभाविक तेजसे सम्पन्न हनुमानका शौर्य और भी बढ़ गया।

वानरशिरोमणि हनुमानको रावणने घायल कर दिया, यह देखकर महातेजस्वी श्रीराम क्रोधके वशीभूत हो गये।

फिर तो उन भगवान् श्रीरामने आक्रमण करके पहिये, घोड़े, ध्वजा, छत्र, पताका, सारथि, अशनि, शूल और खड्गसहित उसके रथको अपने पैने बाणोंसे तिल-तिल करके काट डाला।

जैसे भगवान इन्द्रने वज्रके द्वारा मेरु पर्वतपर आघात किया हो, उसी प्रकार प्रभु श्रीरामने वज्र और अग्निके समान तेजस्वी बाणसे इन्द्रशुत्र रावणकी विशाल एवं सुन्दर छातीमें वेगपूर्वक आघात किया।

जो राजा रावण वज्र और अशनिके आघातसे भी कभी क्षुब्ध एवं विचलित नहीं हुआ था, वही वीर उस समय श्रीरामके बाणोंसे घायल हो अत्यन्त आर्त एवं कम्पित हो उठा और उसके हाथसे धनुष छूटकर गिर पड़ा।

रावणको व्याकुल हुआ देख महात्मा श्रीरामने एक चमचमाता हुआ अर्धचन्द्राकार बाण हाथमें लिया और उसके द्वारा राक्षसराजका सूर्यके समान देदीप्यमान मुकुट सहसा काट डाला।

उस समय धनुष न होनेसे रावण विषहीन सर्पके समान अपना प्रभाव खो बैठा था। सायंकालमें जिसकी प्रभा शान्त हो गयी हो, उस सूर्यदेवके समान निस्तेज हो गया था तथा मुकुटोंका समूह कट जानेसे श्रीहीन दिखायी देता था।

राम के बाणों से रावण के रथ के अनेक घोड़े घायल होकर शिथिल हो रहे थे। सारथी की भुजाएँ आहत होकर वल्गा सँभालने में बहुत दक्ष नहीं रह गई थीं; और सहसा राम के नाराच ने रावण के धनुष की प्रत्यंचा काट डाली।

रावण दूसरा धनुष लेने के लिए मुड़ा। उसने धनुष उठाकर साधा ही था कि राम ने एक के पश्चात् एक बाण उसके वक्ष में धँसा दिए।

रावण के सम्मुख अन्धःकार छा रहा था।

रावण का हर्ष और अभिमान दोनों खंडित हो चुके थे। जब वह लंका लौटा तो धनुष टूट गया था, रथ के घोड़े या तो मर गए थे। या मरनेवाले थे; सारथी पंगु हो चुका था, किरीट खण्डित था। विश्वविजेता महाराजाधिराज रावण अत्यंत चिंतित था।

राम ने रावण को अस्त्रहीन जाना और शान्त शत्रु को देखा तो राम बोले रावण, आज मैं तुम्हें छोड़ देता हूँ। श्रान्त शत्रुपर आक्रमण करना वीर पुरुष का काम नहीं है। उस अवस्थामें श्रीरामने युद्धभूमिमें राक्षसराजसे कहा- रावण। तुमने आज बड़ा भयंकर कर्म किया है, मेरी सेनाके प्रधान-प्रधान वीरोंको मार डाला है। इतनेपर भी थका हआ समझकर मैं बाणोंद्वारा तुझे मौतके अधीन नहीं कर रहा हूँ।

मैं श्रान्त शत्रुका वध नहीं करता। अर्धचन्द्र बाणसे दशग्रीवका किरीट काटनेके अनन्तर उसे शिथिल देखकर श्रीरामने कृपाकी- मैं अनुमति देता हूँ, लमा लौट जाओ। स्वस्थ होनेपर लौटोगे तब मेरे पराक्रमका अवसर आवेगा।

निशाचरराज। मैं जानता हूँ तू युद्धसे पीड़ित है। इसलिये आज्ञा देता हूँ, जा, लमामें प्रवेश करके कुछ विश्राम कर ले। फिर रथ और धनुषके साथ निकलना। उस समय रथारूढ़ रहकर तू फिर मेरा बल देखना। कल फिर युद्ध के लिए तैयार होकर आना। रावण का रथ टूट चुका था। इसलिए पैदल ही युद्धस्थल से लंकाकी ओर दशानन चल पड़ा। आज रावण को रामकी शक्तिका पता चला जिसे वह वानरोंके अरमानों की सेना समझ रखा था। आज उसने जाना कि शत्रु का पक्ष प्रबल है, होता है ऊँचाई का भान जब ऊँट आता है पहाड़ तले। रावण आज युद्ध से निराशित और उदासीन होकर युद्धभूमि से लंका में लौटा।

भगवान श्रीरामके ऐसा कहनेपर राजा रावण सहसा लंकामें घुस गया उसका हर्ष और अभिमान मिट्टीमें मिल चुका था, धनुष काट दिया गया था, घोड़े तथा सारथि मार डाले गये थे, महान् किरीट खण्डित हो चुका था और वह स्वयं भी बाणोंसे बहुत पीड़ित था।

रावणके लमामें चले जानेपर लक्ष्मणसहित श्रीरामने उस महायुद्धके मुहानेपर वानरोंके शरीरसे बाण निकाले।

देवराज इन्द्रका शत्रु रावण जब युद्धस्थलमें भाग गया, तब उसे पराभव का विचार करके देवता, असुर, भूत, दिशाएँ, समुद्र, ऋषिगण, बड़े-बड़े नाग और भूच और जचलर प्राणी भी बहुत प्रसन्न हुए।

भगवान श्रीरामके बाणों और भयसे पीड़ित हो राक्षसराज रावण जब लमापुरीमें पहुँचा, तब उसका अभिमान चूर-चूर हो गया था। उसकी सारी इन्द्रियाँ व्यथासे व्याकुल थीं।

भगवान श्रीरामके बाण ब्रह्मदण्डके प्रतीक जान पड़ते थे। उनकी दीप्ति चपलाके समान चञ्चल थी। उन्हें याद करके राक्षसराज रावणके मनमें बड़ी व्यथा हुई। मैंने जो बहुत बड़ी तपस्या की थी, वह सब अवश्य ही व्यर्थ हो गयी; क्योंकि आज महेन्द्रतुल्य पराक्रमी मुझ रावणको एक मनुष्यने परास्त कर दिया। मैंने तो देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और सर्पोंसे ही अवध्य होनेका वर माँगा था, मनुष्योंसे अभय होनेकी वर-याचना नहीं की थी।

पूर्वकालमें इक्ष्वाकुवंशी राजा अरण्यने मुझे शाप देते हुए कहा था कि राक्षसाधम। कुलाङ्गार। दुर्मते। मेरे ही वंशमें एक ऐसा श्रेष्ठ पुरुष उत्पन्न होगा, जो तुझे पुत्र, मन्त्री, सेना, अश्व और सारथिके साथ समराङ्गणमें मार डालेगा। मालूम होता है कि अनरण्यने जिसकी ओर

संकेत किया था, यह दशरथकुमार राम वही मनुष्य है।

इसके सिवा पूर्वकालमें मुझे वेदवतीने भी शाप दिया था; क्योंकि मैंने उसके साथ बलात्कार किया था। जान पड़ता है वही यह महाभागा जनकनन्दिनी सीता होकर प्रकट हुई है। इसी तरह उमा, नन्दीश्वर, रम्भा और वरुण-कन्याने भी जैसा-जैसा कहा था, वैसा ही परिणाम मुझे प्राप्त हुआ है। सच है ऋषियोंकी बात कभी झूठी नहीं होती।

उमाने कैलास उठानेके समय भयभीत होनेसे रावणको शाप दिया था कि तेरी मृत्यु स्त्रीके कारण होगी। नन्दीश्वरकी वानर-मूर्ति देखकर रावण हँसा था, इसलिये उन्होंने कहा था- मेरे समान रूप और पराक्रमवाले ही तेरे कुलका नाश करेंगे। रम्भाके निमित्तसे नल-कुबेरने और वरुण-कन्या पुञ्जिकस्थलाके निमित्तसे ब्रह्माजीने शाप दिया था कि अनिच्छासे किसी स्त्रीके साथ सम्भोग करनेपर तेरी मृत्यु हो जायगी।

उसने सदा यही माना था कि वह उच्च है, श्रेष्ठ है, अधिक बुद्धिमान्, शक्तिशाली और समर्थ है। वानर तथा अन्य जातियों को उसने अपने लिए उपकरण अथवा सामान्य पशुओं से अधिक महत्त्व नहीं दिया था। उन्हें मनुष्य मानने की कभी आवश्यकता नहीं पड़ी थी। उनकी भी कोई सेना अथवा सैनिक शक्ति हो सकती है- यह उसका मन कभी स्वीकार नहीं कर सका था। उसके पास धन था, साम्राज्य था, सेना थी, शस्त्र थे, ब्रह्मा और शिव जैसी महाशक्तियाँ उसकी रक्षा के लिए खड़ी थीं उन वानरों के पास इनमें से कुछ भी नहीं था- किंतु राम की मानवता के प्रति आस्था ने उन्हें क्या से क्या बना दिया था। क्या था राम के पास, मानवता में अप्रतिम आस्था के सिवाय ? तो क्या मनुष्य धन, शक्ति, शस्त्र, पशुबल-सबको बड़ा होता है ? रावण ने माना था कि ये वानर पशु के समान जन्मे थे, पशु का-सा बड़ा जीवन जिएँगे और पशुओं की-सी मृत्यु मर जाएँगे। किंतु राम की आस्था ने उन्हें विश्व की इतनी बड़ी शक्ति सिद्ध कर दिया था। मात्र मनुष्य शस्त्रों से बड़ा हो गया था।

किंतु दूसरे ही क्षण रावण सचेत हो गया। वह यह सब क्या सोच रहा है ? कहीं उसके भीतर का प्रतिरावण तो उसे बहकाने का प्रयत्न नहीं कर रहा है ? शस्त्र शस्त्र हैं, मनुष्य मनुष्य और रावण को लगा, उसके भीतर ब्रह्मा और शिव के विरुद्ध जमा हुआ आक्रोश फिर से खौलने लगा था क्यों नहीं वे लोग उसे दिव्यास्त्रों से भी अधिक शक्तिशाली देवास्त्र दे देते ? एक बार रावण को देवास्त्र मिल जाएँ तो वह इस पृथ्वी पर से पशु-सरीखे इन मनुष्यों का चिन्ह तक मिटा देगा। ये लोग रावण का विरोध कर जीने के अधिकारी नहीं रहे। किंतु इतनी चिरौरी करने पर भी, प्रेम, निष्ठा और भक्ति प्रदर्शित करने पर भी न कभी ब्रह्मा पसीजे, न शिव, कि उसे देवास्त्र दे देते और रावण एक बार तो नाश का विकट तांडव करता बस उसे दिव्यास्त्रों तक ही रोक दिया जाता है।

रावण का धन देव महाशक्तियों से हटकर लंका की वर्तमान स्थिति पर आ गया। लंका की रक्षा कैसे हो ? यदि राक्षस सेना लंका के द्वारों से बाहर निकलकर वानरों से लड़ने में तनिक असमर्थ सिद्ध हुई तो वानर सेना अपना अवरोध संकीर्ण करती हुई लंका की प्राचीर तक आ जाएगी। लंका के हाट-बाजारों में घुस जाएँगे। लंका के प्रासादों पर पथराव करेंगे।

अब शिथिलता का समय नहीं था। लंका के द्वारों पर विकट चौकसी रखनी होगी। पथों-चौराहों पर सैनिकों को रखना होगा। परकोटों पर प्रहरियों को नियुक्त करना होगा किंतु सम्मुख युद्ध में सेनापति होकर अब कौन जाएगा ?

रावण के अपने सेनापतित्व में राक्षस सेना को अपमानजनक पराजय मिली है। रावण के पुन: लौटने पर वानरों का मनोबल और बढ़ जाएगा। और हतबल राक्षस पराजय के और निकट होते जाएँगे। रावण स्वयं भी अभी लौटकर जाना नहीं चाहता। रावण को लगा, जनस्थान में राक्षस सेना की पराजय के पश्चात् जो मन:स्थिति उसकी हुई थी, अब पुन: उसी मन:स्थिति में लौट आया है। तब भी वह राम से सम्मुख-युद्ध बचा जाना चाहता था, अब भी वह सम्मुख-युद्ध में राम के सम्मुख पड़ना नहीं चाहता। न केवल वह स्वयं सम्मुख-युद्ध से बचना चाहता है, उसके मन में कहीं-न-कहीं मेघनाथ को भेजने का भी विरोध है। मेघनाद की पराजय से राक्षस सेना का मनोबल और भी गिर जाएगा। पिता-पुत्र, किसी के भी सेनापतित्व में राक्षसों का विश्वास नहीं रह जाएगा। फिर कहीं यदि मेघनाद का वध हो गया, तो रावण का एक अनन्य अनुचर समाप्त हो जाएगा। राम की सेना के दबाव ने लंकावासियों के चेहरों पर लगे नकली मुखवटे उतारकर रख दिए थे। भीतरी और बाहरी विरोध के इस संकटकाल में रावण को अपने समर्थकों को सँजो-सँजोकर रखना होगा। नहीं मेघनाद को इन मायावी तापसों से लड़ने के लिए नहीं भेजा जा सकता। वह उन्हें मारकर आ जाता है और वे पुन: जीवित हो उठते हैं। ऐसे लोगों से लड़ने के लिए मेघनाद को नहीं भेजा जा सकता और हां, सेनापति कोई भी हो, उसे कहना होगा कि यदि यह इन कंगले सन्यासी राजकुमारों अथवा वानर यूथपतियों में से किसी को भी आहत अथवा मूर्च्छित करने में सफल हो जाए तो वह उनके शरीरों को

अवश्य लंका में ले आए, ताकि उनका शिरोच्छेद कर उनकी मृत्यु को निश्चित बनाया जा सके। यदि मेघनाद पहले युद्ध में राम-लक्ष्मण के शरीरों को लंका में उठा लाता, अथवा स्वयं रावण आज सुग्रीव तथा लक्ष्मण के शरीरों को अपने साथ ला पाता तो उनकी मृत्यु को एक निश्चयात्मक तथ्य में बदल सकता।

सहसा रावण का ध्यान कुंभकर्ण की ओर चला गया- मदांध कुंभकर्ण। वह मदिरा पीकर पड़ा होगा। इन दिनों लंका में घटने वाली घटनाओं की कोई सूचना उसे होगी भी या नहीं, कहा नहीं जा सकता। और यदि किसी ने सूचना दी भी होगी, तो उस पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा होगा। मदिरा में एक बड़ा गुण है, वह व्यक्ति को कायर नहीं बनने देती। कुंभकर्ण ने यदि राम के शौर्य के विषय में सुना भी होगा, तो भी उससे भयभीत नहीं हुआ होगा।

और फिर प्रत्येक क्षण रावण के मन में यह चिंता होती है कि कहीं किसी बात से रुष्ट होकर विभीषण के समान कुंभकर्ण भी उसका विरोधी न हो जाए। कितना अच्छा अवसर है इस समय। कुंभकर्ण को सेनापति का मान-सम्मान देकर, रावण उसे अपने प्रेम का विश्वास दिलाएगा। कुंभकर्ण राक्षस सेना की इस हतवीर्य स्थिति में यदि अपने पराक्रम से उसे उबार सका तो रावण के लिए गौरव ही गौरव है; यदि वह पराजित होकर मारा गया तो रावण को आतंकित करने वाली लंका की भीतरी शक्तियों में से एक कम हो जाएगी। रावण को यह पहले क्यों नहीं सूझा ? ऐसे सब लोगों को, जो किसी भी स्थिति में रावण के विरोध को किसी प्रकार का बल दे सकते हैं, अथवा रावण के विरुद्ध खड़े हो सकते हैं- एक-एक कर युद्ध में भेजना चाहिए। मंदोदरी के वे सारे पुत्र भी, जो पिता के विरुद्ध माँ का पक्ष ग्रहण कर सकते हैं। इंद्रजित मेघनाद को बचाकर रखना चाहिए; वह रावण के विपक्ष में जा ही नहीं सकता, विपक्ष में चाहे स्वयं मंदोदरी ही क्यों न हो।

७) कुम्भकर्ण वध- साथ ही जिसके गाम्भीर्यकी कहीं तुलना नहीं है, जो देवताओं और दानवोंका दर्प दलन करनेवाला है तथा ब्रह्माजीके शापसे प्राप्त हुई निद्रा जिसे सदा अभिभूत किये रहती है, उस कुम्भकर्णको भी जगाया जाय।

मैं तो दुखी, चिन्तित और अपूर्णकाम होकर जाग रहा हूँ और वह राक्षस कामभोगसे अचेत हो बड़ी निश्चिन्तताके साथ सुखपूर्वक सो रहा है। वह कभी नौ, कभी सात, कभी दस और कभी आठ मासतक सोता रहता है। यह आजसे नौ महीने पहले मुझसे सलाह करके सोया था। अत: तुमलोग महाबली कुम्भकर्णको शीघ्र जगा दो। महाबाहु कुम्भकर्ण सभी राक्षसोंमें श्रेष्ठ है। वह युद्धस्थलमें वानरों और उन राजकुमारोंको भी शीघ्र ही मार डालेगा। यदि कुम्भकर्णको जगा दिया जाय तो इस भयंकर संग्राममें मुझे रामसे पराजित होनेका शोक नहीं होगा। यदि इस घोर संकटके समय भी कुम्भकर्ण मेरी सहायता करनेमें समर्थ नहीं हो रहा है तो इन्द्रके तुल्य बलशाली होने पर भी उससे मेरा प्रयोजन ही क्या है- मैं उसे लेकर क्या करूँगा ?

रक्त-मांसका भोजन करनेवाले वे राक्षस रावणकी आज्ञा पाकर गन्ध, माल्य तथा खाने-पीनेकी बहुत-सी सामग्री लिये सहसा कुम्भकर्णके पास गये। कुम्भकर्ण एक गुफामें रहता था, जो बड़ी ही सुन्दर थी और वहाँके वातावरणमें फूलोंकी सुगन्ध छायी रहती थी। उसकी लंबाई-चौड़ाई सब ओरसे एक-एक योजनकी थी तथा उसका दरवाजा बहुत बड़ा था। उसमें प्रवेश करते ही वे महाबली राक्षस कुम्भकर्णकी साँसके वेगसे सहसा पीछेको ठेल दिये गये। फिर बड़ी कठिनाईसे पैर जमाते हुए वे पूरा प्रयत्न करके उस गुफाके भीतर घुसे।

महानिद्रामें निमग्न हुआ कुम्भकर्ण बिखरे हुए पर्वतके समान विकृतावस्थामें सोकर खुर्राटे ले रहा था, अत: वे सब राक्षस एकत्र हो उसे जगानेकी चेष्टा करने लगे। उसका सारा शरीर ऊपर उठी हुई रोमावलियोंसे भरा था। वह सर्पके समान साँस लेता और अपने नि:श्वासोंसे लोगोंको चक्करमें डाल देता था। वहाँ सोया हुआ यह राक्षस भयानक बल-विक्रमसे सम्पन्न था।

तदनन्तर उन महाकाय निशाचरोंने कुम्भकर्णके सामने प्राणियोंके मेरुपर्वत-जैसे ढेर लगा दिये, जो उसे अत्यन्त तृप्ति प्रदान करनेवाले थे। उन श्रेष्ठ राक्षसोंने वहाँ मृगों, भैंसों और सूअरोंके समूह खड़े कर दिये तथा अन्नकी भी अद्भुत राशि एकत्र कर दी। इतना ही नहीं, उन देवद्रोहियोंने कुम्भकर्णके आगे रक्तसे भरे हुए बहुतेरे घड़े और नाना प्रकारके मांस भी रख दिये। इतनेपर भी जब कुम्भकर्ण नहीं उठा, तब अमर्षसे भरे हुए राक्षस चन्द्रमाके समान श्वेत रंगके बहुत-से शफफूँकने तथा एक साथ तुमुल-ध्वनिसे गर्जना करने लगे।

वे निशाचर सिंहनाद करने, ताल ठोंकने और कुम्भकर्णके विभिन्न अंगोंको झकझोरने लगे। उन्होंने कुम्भकर्णको जगानेके लिये बड़े जोर-जोरसे गम्भीर ध्वनि की। शफ, भेरी और पणव बजने लगे। ताल ठोंकने, गर्जने और सिंहनादका शब्द सब ओर गूँज उठा। वह तुमुल नाद सुनकर पक्षी समस्त दिशाओंकी ओर भागने और आकाशमें उड़ने लगे। उड़ते-उड़ते वे सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ते थे।

जब उस महान् कोलाहलसे भी सोया हुआ विशालकाय कुम्भकर्ण नहीं जग सका, तब उन समस्त राक्षसोंने अपने हाथोंमें भुशुण्डी, मुसल और गदाएँ ले लीं। कुम्भकर्ण भूतलपर ही सुखसे सो रहा था। उसी अवस्थामें उन प्रचण्ड राक्षसोंने उस समय उसकी छातीपर पर्वतशिखरों, मुसलों, गदाओं, मुद्गरों और मुक्कोंसे मारना आरम्भ किया।

किंतु राक्षस कुम्भकर्णकी नि:श्वास-वायुसे प्रेरित हो वे सब निशाचर उसके आगे ठहर नहीं पाते थे।

तदनन्तर अपने वस्त्रोंको खूब कसकर बाँध लेनेके पश्चात् वे भयानक पराक्रमी राक्षस जिनकी संख्या लगभग दस हजार थी, एक ही समय कुम्भकर्णको घेरकर खड़े हो गये और काले कोयलेके ढेरके समान पड़े हुए उस निशाचरको जगानेका प्रयत्न करने लगे। उन सबने एक साथ मृदंग, पणव, भेरी, शफऔर कुम्भ धौंसे बजाने आरम्भ किये।

इस तरह वे राक्षस बाजे बजाते और गर्जते रहे तो भी कुम्भकर्णकी निद्रा नहीं टूटी। जब वे उसे किसी तरह जगा न सके, तब उन्होंने पहलेसे भी भारी प्रयत्न आरम्भ किया। इतनेपर भी शापके अधीन हुआ वह अतिशय निद्रालु निशाचर नहीं जागा। इससे वहाँ आये हुए सब राक्षसोंको बड़ा क्रोध हुआ। कोई धौंसे बजाने लगे, कोई महान् कोलाहल करने लगे, कोई कुम्भकर्णके सिरके बाल नोचने लगे और कोई दाँतोंसे उसके कान काटने लगे।

दूसरे राक्षसोंने उसके दोनों कानोंमें सौ घड़े पानी डाल दिये तो भी महानिद्राके वशमें पड़ा हुआ कुम्भकर्ण टस-से-मस नहीं हुआ।

तत्पश्चात् रस्सियोंसे बँधी हुई शतघ्नियोंद्वारा उसपर सब ओरसे चोटें पड़ने लगीं। फिर भी उस महाकाय राक्षसकी नींद नहीं टूटी।

इसके बाद उसके शरीरपर हजारों हाथी दौड़ाये गये। तब उसे कुछ स्पर्श मालूम हुआ और वह जाग उठा।

यद्यपि उसके ऊपर पर्वतशिखर और वृक्ष गिराये जाते थे, तथापि उसने उन भारी प्रहारोंको कुछ भी नहीं गिना। हाथियोंके स्पर्शसे जब उसकी नींद टूटी, तब वह भूखके भयसे पीड़ित हो अँगड़ाई लेता हुआ सहसा उछलकर खड़ा हो गया।

नींदसे उठे हुए कुम्भकर्णका वह रूप प्रलयकालमें समस्त प्राणियोंके संहारकी इच्छा रखनेवाले कालके समान जान पड़ता था।

उसकी दोनों बड़ी-बड़ी आँखें प्रज्वलित अग्नि और विद्युतके समान दीप्तिमती दिखायी देती थीं। वे ऐसी लगती थीं मानो दो महान् ग्रह प्रकाशित हो रहे हों। तदनन्तर राक्षसोंने वहाँ जो अनेक प्रकारकी खाने-पीनेकी वस्तुएँ प्रचुर मात्रामें रखी गयी थीं, वे सब-की-सब कुम्भकर्णको दिखायीं। वह महाबली राक्षस बात-की-बातमें बहुतेरे भैंसों और सूअरोंको चट कर गया।

उसे बड़ी भूख लगी थी, अत: उसने भरपेट मांस खाया और प्यास बुझानेके लिये रक्त पान किया। तदनन्तर उस इन्द्रद्रोही निशाचरने चर्बीसे भरे हुए कितने ही घड़े साफ कर दिये और वह कई घड़े मदिरा पी भी गया।

निशाचरोंमें श्रेष्ठ कुम्भकर्णने उन सब राक्षसोंको सान्त्वना दी और अपने जगाये जानेके कारण विस्मित हो उनसे इस प्रकार पूछा

तुमलोगोंने इस प्रकार आदर करके मुझे किसलिये जगाया है ? राक्षसराज रावण कुशलसे हैं न ? यहाँ कोई भय तो नहीं उपस्थित हुआ है ? अच्छा तो आज मैं राक्षसराजके भयको उखाड़ फेकूँगा। महेन्द्र पर्वत या इन्द्र को भी चीर डालूँगा और अग्निको भी ठंडा कर दूँगा।

मुझ-जैसे पुरुषको किसी छोटे-मोटे कारणवश नींदसे नहीं जगाया जायगा। अत: तुमलोग ठीकसे बताओ, मेरे जगाये जानेका क्या कारण है ? तब रावण के सचिव ने कहा- महाराज। हमें देवताओंकी ओरसे तो कभी कोई भय हो ही नहीं सकता। इस समय केवल एक मनुष्यसे तुमुल भय प्राप्त हुआ है, जो हमें सता रहा है।

राजन्। इस समय एक मनुष्यसे हमारे लिये जैसा भय उपस्थित हो गया है, वैसा तो कभी दैत्यों और दानवोंसे भी नहीं हुआ था।

पहले एक ही वानरने यहाँ आकर इस महापुरीको जला दिया था और हाथियों तथा साथियोंसहित राजकुमार अक्षको भी मार डाला था। श्रीराम सूर्यके समान तेजस्वी हैं। उन्होंने राक्षसराज रावणको भी युद्धमें हराकर जीवित छोड़ दिया और कहा- लमाको लौट जाओ।

महाराजकी जो दशा देवता, दैत्य और दानव भी नहीं कर सके थे, वह रामने कर दी। उनके प्राण बड़े संकटसे बचे हैं। आपके अग्रज राक्षसेश्वरको भी रामने युद्धमें आज आहत, अपमानित करके मृत समझकर छोड़ दिया।

युद्धमें भाईकी पराजयसे सम्बन्ध रखनेवाली यूपाक्षकी यह बात सुनकर कुम्भकर्ण आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगा और यूपाक्षसे इस प्रकार बोला- यूपाक्ष। मैं अभी सारी वानरसेनाको तथा लक्ष्मणसहित रामको भी रणभूमिमें परास्त करके रावणका दर्शन करूँगा।

आज वानरोंके मांस और रक्तसे राक्षसोंको तृप्त करूँगा और स्वयं भी राम और लक्ष्मणके खून पीऊँगा।

तब महोदर ने कहा- महाबाहो। पहले चलकर महाराज रावणकी बात सुन लीजिये। फिर गुण-दोषका विचार करनेके पश्चात् युद्धमें

शत्रुओंको परास्त कीजियेगा। इस तरह सोये हुए भयानक नेत्र, रूप और पराक्रमवाले कुम्भकर्णको उठाकर वे राक्षस शीघ्र ही दशमुख रावणके महलमें ले गये। दशग्रीव उत्तम सिंहासनपर बैठा हुआ था, उसके पास जाकर सभी निशाचर हाथ जोड़कर बोले- हे राक्षसेश्वर। आपके भाई कुम्भकर्ण जाग उठे हैं। कहिये, वे क्या करें ? सीधे युद्धस्थलमें ही पधारें या आप उन्हें यहाँ उपस्थित देखना चाहते हैं ?

प्रभो। सर्वराक्षसशिरोमणि महाराज रावण आपको देखना चाहते हैं। अत: आप वहाँ चलनेका विचार करें और पधारकर अपने भाईका हर्ष बढ़ावें। तब रावणके आदेशसे वे सब राक्षस तुरंत मद्य तथा नाना प्रकारके भक्ष्य पदार्थ ले आये।

कुम्भकर्ण दो हजार घड़े मद्य गटककर चलनेको उद्यत हुआ। इससे उसमें कुछ ताजगी आ गयी तथा वह मतवाला, तेजस्वी और शक्तिसम्पन्न हो गया। फिर जब राक्षसोंकी सेनाके साथ कुम्भकर्ण भाईके महलकी ओर चला, उस समय वह रोषसे भरे हुए प्रलयकालके विनाशकारी यमराजके समान जान पड़ता था। कुम्भकर्ण अपने पैरोंकी धमकसे सारी पृथ्वीको कम्पित कर रहा था। कुम्भकर्णके चलनेसे पूरा त्रिकूट शिखर हिलने लगा था।

राजमार्गपर चलते समय शत्रुघाती कुम्भकर्ण पर्वतशिखरके समान जान पड़ता था। नगरके बाहर खड़े हुए वानर सहसा उस विशालकाय राक्षसको देखकर सेनापतियोंसहित सहम गये।

उनमेंसे कुछ वानरोंने शरणागतवत्सल भगवान् श्रीरामकी शरण ली। कुछ व्यथित होकर गिर पड़े। कोई पीड़ित हो सम्पूर्ण दिशाओंमें भाग गये और जहाँ-तहाँ धराशायी हो गये और कितने ही वानर भयसे पीड़ित हो धरतीपर लेट गये।

वह पर्वतके समान दिखायी देता था और राक्षसोंमें सबसे बड़ा था। जैसे पूर्वकालमें भगवान् नारायणने आकाशको नापनेके लिये डग भरे थे, उसी प्रकार वह भी डग बढ़ाता जा रहा था। सजल जलधरके समान काला कुम्भकर्ण सोनेके बाजूबन्दसे विभूषित था। उसे देखकर वानरोंकी वह विशाल सेना पुन: बड़े वेगसे भागने लगी।

अपनी सेनाको भागते तथा राक्षस कुम्भकर्णको बढ़ते देख श्रीरामको बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने विभीषणसे पूछा- यह लमापुरीमें पर्वतके समान विशालकाय वीर कौन है, जिसके मस्तकपर किरीट शोभा पाता है और नेत्र भूरे हैं ? यह ऐसा दिखायी देता है मानो बिजलीसहित मेघ हो। विभीषण। बताओ। यह इतने बड़े डील-डौलका कौन पुरुष है ? कोई राक्षस है या असुर ? मैंने ऐसे प्राणीको पहले कभी नहीं देखा था।

भगवन्। जिसने युद्धमें वैवस्वत यम और देवराज इन्द्रको भी पराजित किया था, वही यह विश्रवाका प्रतापी पुत्र कुम्भकर्ण है। इसके बराबर लंबा दूसरा कोई राक्षस नहीं है। रघुनन्दन। इसने देवता, दानव, यक्ष, नाग, राक्षस, गन्धर्व, विद्याधर और किन्नरोंको सहस्त्रों बार युद्धमें मार भगाया है। कुम्भकर्ण स्वभावसे ही तेजस्वी और महाबलवान् है। अन्य राक्षसपतियोंके पास जो बल है, वह वरदानसे प्राप्त हुआ है। इस महाकाय राक्षसने जन्म लेते ही बाल्यावस्थामें भूखसे पीड़ित हो कई सहस्त्र प्रजाजनोंको खा डाला था। जब सहस्त्रों प्रजाजन इसका आहार बनने लगे, तब भयसे पीड़ित हो वे सब-के-सब देवराज इन्द्रकी शरणमें गये और उन सबने उनके समक्ष अपना कष्ट निवेदन किया। इससे वज्रधारी देवराज इन्द्रको बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने अपने तीखे वज्रसे कुम्भकर्णको घायल कर दिया। इन्द्रके वज्रकी चोट खाकर यह महाकाय राक्षस क्षुब्ध हो उठा और रोषपूर्वक जोर-जोरसे सिंहनाद करने लगा। राक्षस कुम्भकर्णके बारंबार गर्जना करनेपर उसका भयंकर सिंहनाद सुनकर प्रजावर्गके लोग भयभीत हो और भी डर गये। तदनन्तर कुपित हुए महाबली कुम्भकर्णने इन्द्रके ऐरावतके मुँहसे एक दाँत उखाड़ लिया और उसीसे देवेन्द्र की छाती पर प्रहार किया। कुम्भकर्णके प्रहारसे इन्द्र व्याकुल हो गये और उनके हृदयमें जलन होने लगी। यह देखकर सब देवता, ब्रह्मर्षि और दानव सहसा विषादमें डूब गये।

तत्पश्चात् इन्द्र उन प्रजाजनोंके साथ ब्रह्माजीके धाममें गये। वहाँ जाकर उन सबने प्रजापतिके समक्ष कुम्भकर्णकी दुष्टताका विस्तारपूर्वक वर्णन किया। इसके द्वारा प्रजाके भक्षण, देवताओंके घर्षण तिरस्कार, ऋषियोंके आश्रमोंके विध्वंस तथा परायी स्त्रियोंके बारंबार हरण होनेकी भी बात बतायी।

इन्द्रने कहा- भगवन्। यदि यह नित्यप्रति इसी प्रकार प्रजाजनोंका भक्षण करता रहा तो थोड़े ही समयमें सारा संसार सूना हो जायगा। इन्द्रकी यह बात सुनकर सर्वलोकपितामह ब्रह्माने सब राक्षसोंको बुलाया और कुम्भकर्णसे भी भेंट की।

कुम्भकर्णको देखते ही स्वयम्भू प्रजापति थर्रा उठे। फिर अपनेको सँभालकर वे उस राक्षससे बोले- कुम्भकर्ण। निश्चय ही इस जगत्का विनाश करनेके लिये ही विश्रवाने तुझे उत्पन्न किया है; अत: मैं शाप देता हूँ, आजसे तू मुर्देके समान सोता रहेगा।

ब्रह्माजीके शापसे अभिभूत होकर वह रावणके सामने ही गिर पड़ा। इससे रावणको बड़ी घबराहट हुई और उसने कहा- प्रजापते। अपने द्वारा लगाया और बढ़ाया हुआ सुवर्णरूप फल देनेवाला वृक्ष फल देनेके समय नहीं काटा जाता है। यह आपका नाती है, इसे इस प्रकार शाप देना कदापि उचित नहीं है।

आपकी बात कभी झूठी नहीं होती, इसलिये अब इसे सोना ही पड़ेगा, इसमें संशय नहीं है; परंतु आप इसके सोने और जागनेका कोई समय नियत कर दें। रावणका यह कथन सुनकर स्वयम्भू ब्रह्माने कहा- यह छः मासतक सोता रहेगा एक दिन जगेगा।

उस एक दिन ही यह वीर भूखा होकर पृथ्वीपर विचरेगा और प्रज्वलित अग्निके समान मुँह फैलाकर बहुत-से लोगोंको खा जायगा।

महाराज। इस समय आपत्तिमें पड़कर और आपके पराक्रमसे भयभीत होकर राजा रावणने कुम्भकर्णको जगाया है।

यह भयानक पराक्रमी वीर अपने शिबिरसे निकला है और अत्यन्त कुपित हो वानरोंको खा जानेके लिये सब ओर दौड़ रहा है।

जब कुम्भकर्णको देखकर ही आज सारे वानर भाग चले, तब रणभूमिमें कुपित हुए उस वीरको ये आगे बढ़नेसे कैसे रोक सकेंगे ?

सब वानरोंसे यह कह दिया जाय कि यह कोई व्यक्ति नहीं, मायाद्वारा निर्मित ऊँचा यन्त्रमात्र है। ऐसा जानकर वानर निर्भय हो जायँगे।

विभीषणके सुन्दर मुखसे निकली हुई यह युक्तियुक्त बात सुनकर श्रीरघुनाथने सेनापति नीलसे कहा- अग्निनन्दन। जाओ, समस्त सेनाओंकी मोर्चेबंदी करके युद्धके लिये तैयार रहो और लमाके द्वारों तथा राजमार्गोंपर अधिकार जमाकर वहीं डटे रहो। पर्वतोंके शिखर, वृक्ष और शिलाएँ एकत्र कर लो तथा तुम और सब वानर अस्त्र-शस्त्र एवं पत्थर लिये तैयार रहो।

तदनन्तर गवाक्ष, शरभ, हनुमान् और अङ्गद आदि पर्वताकार वानर पर्वतशिखर लिये लमाके द्वारपर डट गये। जैसे सूर्य मेघोंकी घटामें छिप जायँ, उसी प्रकार कुम्भकर्णने राक्षसराजके महलमें प्रवेश किया और राजसिंहासनपर बैठे हुए अपने भाईको दूरसे ही देखा, मानो देवराज इन्द्रने दिव्य कमलासनपर विराजमान स्वयम्भू ब्रह्माका दर्शन किया हो।

राक्षसोंसहित कुम्भकर्ण अपने भाईके भवनमें जाते समय जब-जब एक-एक पैर आगे बढ़ाता था, तब-तब पृथ्वी काँप उठती थी।

भाईके भवनमें जाकर जब वह भीतरकी कक्षामें प्रविष्ट हुआ, तब उसने बड़े भाई रावण को देखा।

महाबली कुम्भकर्णने सिंहासनपर बैठे हुए अपने भाईके चरणोंमें प्रणाम किया और पूछा- कौन-सा कार्य आ पड़ा है ?

रावणने उछलकर बड़ी प्रसन्नताके साथ कुम्भकर्णको हृदयसे लगा लिया। भाई रावणने उसका आलिंगन करके यथावत्रूपसे अभिनन्दन किया। रावणने आगे आकर उसका हाथ पकड़ा और अपने खुले प्राङ्गणमें सिंहासनपर समीप बैठाया।

राजन्। किसलिये तुमने बड़े आदरके साथ मुझे जगाया है ? बताओ, यहाँ तुम्हें किससे भय प्राप्त हुआ है ? अथवा कौन परलोकका पथिक होनेवाला है ? मेरे रहते तुमको किसी का भी डर नहीं होना चाहिए- कितनी ही बार मैंने यम और पुरन्दर को हराया है। मैं सागर सोख डालूँ, आग खा डालू और भूमण्डल को शूल से खंड-खंड कर डालूं। चन्द्र-सूर्य को दाँतों से चबाकर फेंक दूँ, पृथ्वी को उखाडकर समुद्र में फेंक दूँ। सप्तद्वीपवाली इस पृथ्वी को मैं खंड-खंड कर डालूँ और तीनों लोकों पर तुम्हारा प्रभुत्व हो जाय।

तब रावण अपने पास बैठे हुए कुपित भाई कुम्भकर्णसे रोषसे चञ्चल आँखें किये बोला- महाबली वीर। तुम्हारे सोये-सोये दीर्घकाल व्यतीत हो गया। तुम गाढ़ निद्रामें निमग्न होनेके कारण नहीं जानते कि मुझे रामसे भय प्राप्त हुआ है। ये दशरथकुमार राम सुग्रीवके साथ समुद्र लाँघकर यहाँ आये हैं और हमारे कुलका विनाश कर रहे हैं। युद्धमें वानर घटते ही नहीं। मेरा राज कोष रिक्त हो गया है, सेना समाप्तप्राय है। तुमसे मुझे बड़ी आशा है। तुम विश्वमें अतुलनीय हो। लमाकी रक्षा कर लो और मुझे बचा लो।

हाय। देखो तो सही, समुद्रमें पुल बाँधकर सुखपूर्वक यहाँ आये हुए वानरोंने लमाके समस्त वनों और उपवानोंको एकार्णवमय बना दिया है- यहाँ वानररूपी जलका समुद्र-सा लहरा रहा है।

हमारे जो मुख्य-मुख्य राक्षस वीर थे, उन्हें वानरोंने युद्धमें मार डाला; किंतु रणभूमिमें वानरोंका संहार होता मुझे किसी तरह नहीं दिखायी देता। युद्धमें कभी कोई वानर पहले जीते नहीं गये हैं।

महाबली वीर। इस समय हमारे ऊपर यही भय उपस्थित हुआ है। तुम इससे हमारी रक्षा करो और आज इन वानरोंको नष्ट कर दो। इसीलिये हमने तुम्हें जगाया है। हमारा सारा खजाना खाली हो गया है; अतः मुझपर अनुग्रह करके तुम इस लमापुरीकी रक्षा करो; अब यहाँ केवल बालक और वृद्ध ही शेष रह गये हैं।

महाबाहो। तुम अपने इस भाईके लिये अत्यन्त दुष्कर पराक्रम करो। परतंप। आजसे पहले किसी भाईसे मैंने ऐसी अनुनय विनय नहीं

की थी। तुम्हारे ऊपर मेरा बड़ा स्नेह है और मुझे तुमसे बड़ी आशा है। राक्षसशिरोमणे। तुमने देवासुर-संग्रामके अवसरोंपर अनेक बार प्रतिद्वन्द्वीका स्थान लेकर रणभूमिमें देवताओं और असुरोंको भी परास्त किया है।

अत: भयंकर पराक्रमी वीर। तुम्हीं यह सारा पराक्रमपूर्ण कार्य सम्पन्न करो; क्योंकि समस्त प्राणियोंमें तुम्हारे समान बलवान मुझे दूसरा कोई नहीं दिखायी देता है।

तुम युद्धप्रेमी तो हो ही, अपने बन्धु-बान्धवोंसे भी बड़ा प्रेम रखते हो। इस समय तुम मेरा यही प्रिय और उत्तम हित करो। अपने तेजसे शत्रुओंकी सेनाको उसी तरह व्यथित कर दो, जैसे वेगसे उठी हुई प्रचण्ड वायु शरद् ऋतुके बादलोंको छिन्न-भिन्न कर देती है।

राक्षसराज रावणका यह विलाप सुनकर कुम्भकर्ण ठहाका मारकर हँसने लगा और इस प्रकार बोला- भाई। पहले विभीषण आदिके साथ विचार करते समय हमलोगोंने जो दोष देखा था, वही तुम्हें इस समय प्राप्त हुआ है; क्योंकि तुमने हितैषी पुरुषों और उनकी बातोंपर विश्वास नहीं किया था।

तुम्हें शीघ्र ही अपने पापकर्मका फल मिल गया। जैसे कुकर्मी पुरुषोंका नरकोंमें पड़ना निश्चित है, उसी प्रकार तुम्हें भी अपने दुष्कर्मका फल मिलना अवश्यम्भावी था।

महाराज। केवल बलके घमंडसे तुमने पहले इस पापकर्मकी कोई परवा नहीं की। इसके परिणामका कुछ भी विचार नहीं किया था।

जो ऐश्वर्यके अभिमानमें आकर पहले करनेयोग्य कार्योंको पीछे करता है और पीछे करनेयोग्य कार्योंको पहले कर डालता है, वह नीति तथा अनीतिको नहीं जानता है।

जो कार्य उचित देश-काल न होनेपर विपरीत स्थितिमें किये जाते हैं, वे संस्कारहीन अग्नियोंमें होमे गये हविष्यकी भाँति केवल दु:खके ही कारण होते हैं। जो राजा सचिवोंके साथ विचार करके क्षय, वृद्धि और स्थानरूपसे उपलक्षित साम, दान और दण्ड इन तीनों कर्मोंके पाँच प्रकारके प्रयोगको काममें लाता है, वही उत्तम नीति-मार्गपर विद्यमान है, ऐसा समझना चाहिये।

जो नरेश नीतिशास्त्रके अनुसार मन्त्रियोंके साथ क्षय आदिके लिये उपयुक्त समयका विचार करके तदनुरूप कार्य करता है और अपनी बुद्धिसे सुहृदोंकी भी पहचान कर लेता है, वही कर्तव्य और अकर्तव्यका विवेक कर पाता है।

राक्षसराज। नीतिज्ञ पुरुषको चाहिये कि धर्म, अर्थ या कामका अथवा सबका अपने समयपर सेवन करे अथवा तीनों द्वद्वोंका- धर्म-अर्थ, अर्थ-धर्म और काम-अर्थ इन सबका भी उपयुक्त समयमें ही सेवन करे।

धर्म, अर्थ और काम- इन तीनोंमें धर्म ही श्रेष्ठ है; अत: विशेष अवसरोंपर अर्थ और कामकी उपेक्षा करके भी धर्मका ही सेवन करना चाहिये- इस बातको विश्वसनीय पुरुषोंसे सुनकर भी जो राजा या राजपुरुष नहीं समझता अथवा समझकर भी स्वीकार नहीं करता, उसका अनेक शास्त्रोंका अध्ययन व्यर्थ ही है। राक्षसशिरोमणे। जो मनस्वी राजा मन्त्रियोंसे अच्छी तरह सलाह करके समयके अनुसार दान, भेद और पराक्रमका, इनके पूर्वोक्त पाँच प्रकारके योगका, नय और अनयका तथा ठीक समयपर धर्म, अर्थ और कामका सेवन करता है, वह इस लोकमें कभी दु:ख या विपत्तिका भागी नहीं होता।

राजाको चाहिये कि वह अर्थतत्त्वज्ञ एवं बुद्धिजीवी मन्त्रियोंकी सलाह लेकर जो अपने लिये परिणाममें हितकर दिखायी देता हो, वही कार्य करे। जो पशुके समान बुद्धिवाले किसी तरह मन्त्रियोंको सम्मिलित कर लिये गये हैं, वे शास्त्रके अर्थको तो जानते नहीं, केवल धृष्टतावश बातें बनाना चाहते हैं। शास्त्रके ज्ञानसे शून्य और अर्थशास्त्रसे अनभिज्ञ होते हुए भी प्रचुर सम्पत्ति चाहनेवाले उन अयोग्य मन्त्रियोंकी कही हुई बात कभी नहीं माननी चाहिये। जो लोग धृष्टताके कारण अहितकर बातको हितका रूप देकर कहते हैं, वे निश्चय ही सलाह लेने योग्य नहीं हैं। अत: उन्हें इस कार्यसे अलग कर देना चाहिये। वे तो काम बिगाड़नेवाले ही होते हैं।

कुछ बुरे मन्त्री साम आदि उपायोंके ज्ञाता शत्रुओंके साथ मिल जाते हैं और अपने स्वामीका विनाश करनेके लिये ही उससे विपरीत कर्म करवाते हैं। जब किसी वस्तु या कार्यके निश्चयके लिये मन्त्रियोंकी सलाह ली जा रही हो, उस समय राजा व्यवहारके द्वारा ही उन मन्त्रियोंको पहचाननेका प्रयत्न करे, जो रिश्वत आदि लेकर शत्रुओंसे मिल गये हैं और अपने मित्र-से बने रहकर वास्तवमें शत्रुका काम करते हैं। जो राजा चञ्चल है- आपातरमणी वचनोंको सुनकर ही संतुष्ट हो जाता है और सहसा बिना सोचे-विचारे ही किसी भी कार्यकी ओर दौड़ पड़ता है, उसके इस छिद्र दुर्बलता को शत्रुलोग उसी तरह ताड़ जाते हैं, जैसे क्रौञ्च पर्वतके छेदसे होकर पक्षी जैसे पर्वतके उस पार आते-जाते हैं, उसी तरह शत्रु भी राजाके उस छिद्र या कमजोरीसे लाभ उठाते हैं।

जो राजा शत्रुकी अवहेलना करके अपनी रक्षाका प्रबन्ध नहीं करता है, वह अनेक अनर्थोंका भागी होता और अपने स्थान राज्य से नीचे उतार दिया जाता है।

तुम्हारी प्रिय पत्नी मन्दोदरी और मेरे छोटे भाई विभीषणने पहले तुमसे जो कुछ कहा था, वही हमारे लिये हितकर था। यों तुम्हारी जैसी इच्छा हो, वैसा करो। आपने अपनी शक्ति के दम्भ में किसीका परामर्श नहीं माना।

हे भाई। जगज्जननी जानकीको हर लाकर अब तू क्या कल्याण चाहता है। आपने अच्छा नहीं किया। अब भी अभिमान छोड़कर श्रीरामको भजो तो कल्याण होगा। हे रावण। जिनके हनुमान-सरीखे सेवक हैं, वे श्रीरघुनाथजी क्या मनुष्य है ? हाय भाई। तूने बुरा किया, जो पहले ही आकर मुझे यह हाल नहीं सुनाया।

मन्त्रणा-सभामें मैंने कहा था कि रामसे युद्ध करनेमें भला नहीं है। यह विपत्ति तुम्हारे पापसे आयी है। बलके दर्पमें तुमने पहिले कर्तव्यका निश्चय नहीं किया। देश-कालके विपरीत कार्य किया और उचित सम्मतिपर ध्यान नहीं दिया। कुम्भकर्णने हँसकर कहा- फिर भी बड़े हो, अब जो कहो, वह करूँगा।

हे स्वामी। तुमने उस परम देवताका विरोध किया, जिसके शिव, ब्रह्मा आदि देवता सेवक हैं। हे भाई, अब तो अन्तिम बार अँकवार भरकर मुझसे मिल लो। मैं जाकर अपने नेत्र सफल करूँगा और तीनों तापोंको छुड़ानेवाले श्यामशरीर, कमलनेत्र श्रीरामके दर्शन करूँगा।

हे भाई, पर नारी हरकर आप मुझे कौनसा ज्ञान सिखलाते हो। शूर्पणखा वहाँ क्यों गयी थी ? भला क्या काम था उसके जाने क्या ? कोई तो कारण बना होगा उन कुमारों से नाक कटाने का। इस बेमतलब के झगड़े में लंका की सत्यानाशी है।

जब विनाश होनेवाला हो तब विपरीत बुद्धि उत्पन्न हो जाती है। तुम जानकी को क्या करने के लिये लाये हो ? तुम्हारे समस्त कुल का क्षय हो जाएगा। ये इनके रूप में नारायण ही अवतरित हैं तथा सब वानर देव हैं। परन्तु भविष्य में जो होनेवाली हो, वह नहीं टलती। इसमें सब समझदारी नष्ट हो जाता है। इसलिए जब से तुमने विभीषण को (घर से) निकाल दिया, तब से नगर में अवदशा प्रविष्ट हो गयी है। जिस प्रकार बिना चंद्र की रात शोभाहीन होती है, जिस प्रकार बिना दीये के घर होता है, विभीषण के अभाव में लंकाग्राम को उसी प्रकार उजाड़ समझिए। परनारी अग्नि की ज्वाला जैसी होती है, विष की वल्ली जैसी होती है। मोक्ष मार्ग में अवरोध उत्पन्न करते हुए वह मनुष्य को नरक कुण्ड में धकेल देती है। अरे, तुमसे जानकी जीती नहीं गयी, तो राम को कैसे जीत पाओगे ? यदि सीता तुम्हारे अधीन नहीं हो गयी, तब उसे लाने का क्या प्रयोजन ?

कुम्भकर्णकी यह बात सुनकर दशमुख रावणने भौहें टेढ़ी कर लीं और कुपित होकर उससे कहा- तुम माननीय गुरु और आचार्यकी भाँति मुझे उपदेश क्यों दे रहे हो ? इस तरह भाषण देनेका परिश्रम करनेसे क्या लाभ होगा ? इस समय जो उचित और आवश्यक हो, वह काम करो। मुझसे छोटे होकर विपत्तिमें पड़नेके कारण मुझे आचार्यके समान उपदेश करने लगे हो ? दशग्रीवका स्वर दु:खी था- यह उपदेशका नहीं, काम करनेका समय है। मैंने जो किया वह गर्वसे किया या मोहसे, इस विचारका समय नहीं है। मैंने अनुचित भी किया तो अब दोष दूर करो। मुझसे प्रेम है तो मेरी सहायता करो। विपत्तिमें सहायक ही भाई होता है।

तुम आज रुष्ट हुए पिता अथवा गुरु के समान मुझे उपदेश क्यों दे रहे हो ? अंत में रावण बोला, तुम मेरे प्रिय भाई हो। विभीषण मुझे छोड़ गया है। अब तुम मेरे एकमात्र भाई हो। संकट में तुम्हें मेरी सहायता करनी चाहिए अथवा मेरी त्रुटियाँ बताकर मुझे प्रताड़ित कर, मेरी कठिनाई और बढ़ानी चाहिए।

मैंने भ्रमसे, चित्तके मोहसे अथवा अपने बल-पराक्रमके भरोसे पहले जो तुमलोगोंकी बात नहीं मानी थी, उसकी इस समय पुन: चर्चा करना व्यर्थ है। जो बात बीत गयी, सो तो बीत ही गयी। बुद्धिमान् लोग बीती बातके लिये बारंबार शोक नहीं करते हैं। अब इस समय हमें क्या करना चाहिये, इसका विचार करो। अपने पराक्रमसे मेरे अनीतिजनित दु:खको शान्त कर दो।

यदि मुझपर तुम्हारा स्नेह है, यदि अपने भीतर यथेष्ट पराक्रम समझते हो और यदि मेरे इस कार्यको परम कर्तव्य समझकर हृदयमें स्थान देते हो तो युद्ध करो। वही सुहृद् है, जो सारा कार्य नष्ट हो जानेसे दुखी हुए स्वजनपर अकारण अनुग्रह करता है तथा वही बन्धु है, जो अनीतिके मार्गपर चलनेसे संकटमें पड़े हुए पुरुषोंकी सहायता करता है।

कुम्भकर्ण ने कहा, भाई दशानन, सुनो, यह तो तुमने आश्चर्यजनक बात बताई। अगर राम-लक्ष्मण सामान्य नर होते तो जल पर पत्थर कैसे तैराते। वन का वानर राम के गुण पर रीझ कर उसका सेवक बन गया है। उसको तुम सामान्य मनुष्य न सोचना। कुम्भकर्ण ने कहा,

मुझको यों लग रहा है कि मनुष्य के रूप में यह नारायण है। रावण ने कहा, राम यदि नारायण ही है तो संन्यासी के वेश में क्यों भटकता फिर रहा है। कुम्भकर्ण ने कहा, राम तपस्वी होगा। रावण ने पूछा, तो फिर वह तीर्थवासी क्यों नहीं बना ? कुम्भकर्ण ने कहा, राम राजा का बेटा है। रावण ने कहा, तो फिर वह सिर पर जटा क्यों धरे है ? कुम्भकर्ण ने कहा हो सकता है राम व्याध (शिकारी) हो। रावण ने कहा, फिर यज्ञोपवीत क्यों धारण किये हुए है। कुम्भकर्ण ने कहा, राम ब्रह्मचारी होगा। रावन ने कहा, तो उसके साथ नारी क्यों है ?

रावण ने कहा, यह कैसा ब्रह्मचारी है कि भक्ति से बुलाने पर चंडाल के घर भी चला जाता है। पाँच-छह दिन पंचवटी में था, वहीं इसने गोंद से बालों में जटा बना ली। इन्द्र, चन्द्र, वरुण, कुबेर पुरन्दर जैसे देवता भय से लंका में प्रवेश नहीं करते। लेकिन मनुष्य होकर भी इस व्यक्ति को इतना घमंड है। बन्दरों की सहायता से इसने समुद्र लाँघा, कुछ बता भी नहीं सकता कि यह नियति का कैसा खेल है कि त्रिभुवन के कपियों के साथ वह मंत्रणा करता रहता है। इतने दिनों से रत्नाकर समुद्र अथाह गहरा और चंचल था लेकिन वह भी मनुष्य से डर गया और हाथ जोडकर बन्धन स्वीकार कर लिया। रत्नाकर इतने दिनों में बदनाम हो गया- उसको नर और वानर ने पेड और पत्थरों से बाँध डाला।

यह मूर्ख विभीषण जाने किसके लिए प्राण दे रहा है। मनुष्य की भलाई सोचता हुआ अपने सगे-सम्बन्धियों से झगडा मोल लिए है। अरुण, वरुण, यम से मैं नहीं डरता और सीता को लौटा दूँगा तो सारी सुरपुरी हँसेगी। दूसरा कोई हँसे तो कोई बात नहीं लेकिन पुरन्दर हँसेगा और कहेगा कि लंकेश्वर हीन है। भाई, समझ-बूझकर जो जी में आवे करो, तुम्हारे बिना लंका का कोई निस्तार नहीं। तुम्हारे ही बाहुबल से मैंने त्रिभुवन पर विजय पाई। पता नहीं, बन्दरों के साथ इस युद्ध में भाग्य में क्या लिखा है। लंकापुरी की रक्षा करो और मेरा हित। जो कुछ भी तुमको उचित लगे वही करो।

कुम्भकर्णने देखा मेरे भाईकी सारी इन्द्रियाँ अत्यन्त विक्षुब्ध हो उठी हैं, अत: कुम्भकर्णने धीरे-धीरे उसे सान्त्वना देते हुए कहा- राक्षसराज। संताप करना व्यर्थ है। अब तुम्हें रोष त्यागकर स्वस्थ हो जाना चाहिये। पृथ्वीनाथ। मेरे जीते-जी तुम्हें मनमें ऐसा भाव नहीं लाना चाहिये। तुम्हें जिसके कारण संतप्त होना पड़ रहा है, उसे मैं नष्ट कर दूँगा। अवश्य ही सब अवस्थाओंमें मुझे तुम्हारे हितकी बात कहनी चाहिये। अत: मैंने बन्धुभाव और भ्रातृस्नेहके कारण ही ये बातें कही हैं।

राजेन्द्र। क्रोध मत करो। निराश मत हो। मैं तुम्हारी कठिनाई दूर कर दूँगा। सीता-राम-लक्ष्मणको मृत देखेगी। महाप्राण कुम्भकर्ण अत्यन्त गम्भीर हो गया- सम्भव है, मैं मारा जाऊँ, तो भी तुम्हारे मरणका दु:ख मुझे नहीं देखना पड़ेगा। अत: अब मुझे आज्ञा दो। अस्त्रशस्त्रकी आवश्यकता मुझे नहीं है। चिन्ता मत करना। हनुमान सुग्रीव तो क्या, मैं सारा स्वर्ग भी चबा डालूँ तो मेरा पेट नहीं भरेगा। मैं प्राण देकर भी तुम्हें सुखी करनेका प्रयत्न करूँगा। तुम सुरापान करके सो जाओ।

इस समय एक भाईको स्नेहवश जो कुछ करना उचित है, वही करूँगा। अब रणभूमिमें मेरे द्वारा किया जानेवाला शत्रुओंका संहार देखो। महाबाहो। आज युद्धके मुहानेपर मेरे द्वारा भाईसहित रामके मारे जानेके पश्चात् तुम देखोगे कि वानरोंकी सेना किस तरह भागी जा रही है। लमामें जिन राक्षसोंके सगे-सम्बन्धी मारे गये हैं, वे भी आज रामकी मृत्यु देख लें। यह उनके लिये बहुत ही प्रिय बात होगी। अपने भाई-बन्धुओंके मारे जानेसे जो लोग अत्यन्त शोकमें डूबे हुए हैं, आज युद्धमें शत्रुका नाश करके मैं उनके आँसू पोछूँगा। आज पर्वतके समान विशालकाय वानरराज सुग्रीवको समराङ्गणमें खूनसे लथपथ होकर गिरे हुए देखोगे।

निष्पाप निशाचरराज। ये राक्षस तथा मैं सब लोग दशरथपुत्र रामको मार डालनेकी इच्छा रखते हैं और तुम्हें इस बातके लिये आश्वासन देते हैं तो भी तुम सदा व्यथित क्यों रहते हो ?

राक्षसराज। पहले मेरा वध करके ही राम तुम्हें मार सकेंगे; किंतु मैं अपने विषयमें रामसे संताप या भय नहीं मानता।

हे वीर। इस समय तुम इच्छानुसार मुझे युद्धके लिये आदेश दो। शत्रुओंसे जूझनेके लिये तुम्हें दूसरे किसीकी ओर देखनेकी आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे महाबली शत्रु यदि इन्द्र, यम, अग्नि, वायु, कुबेर और वरुण भी हों तो मैं उनसे भी युद्ध करूँगा तथा उन सबको उखाड़ फेकूँगा। मैं न तो शक्तिसे, न गदासे, न तलवारसे और न पैने बाणोंसे ही काम लूँगा। रोषसे भरकर केवल दोनों हाथोंसे ही वज्रधारी इन्द्र-जैसे शत्रुको भी मौतके घाट उतार दूँगा। यदि राम आज मेरी मुट्ठीका वेग सह लेंगे तो मेरे बाण समूह अवश्य ही उनका रक्त पान करेंगे। राजन्। मेरे रहते हुए तुम किसलिये चिन्ताकी आगसे झुलस रहे हो ? मैं तुम्हारे शत्रुओंका विनाश करनेके लिये अभी रणभूमिमें जानेको उद्यत हूँ। तुम्हें रामसे जो घोर भय हो रहा है, उसे त्याग दो। मैं रणभूमिमें राम, लक्ष्मण और महाबली सुग्रीवको अवश्य

मार डालूँगा। युद्ध उपस्थित होनेपर मैं राक्षसोंका संहार करनेवाले उस हनुमान्‌को भी जीवित नहीं छोड़ूँगा, जिसने लमा जलायी थी। साथ ही अन्य वानरोंको भी खा जाऊँगा। आज मैं तुम्हें अलौकिक एवं महान् यश प्रदान करना चाहता हूँ। राजन्। यदि तुम्हें इन्द्र अथवा स्वयम्भू ब्रह्मासे भी भय है तो मैं उस भयको भी उसी तरह नष्ट कर दूँगा, जैसे सूर्य रात्रिके अन्धकारको। मेरे कुपित होनेपर देवता भी धराशायी हो जायँगे। फिर मनुष्यों और वानरोंकी तो बात ही क्या है ? मैं यमराजको भी शान्त कर दूँगा। सर्वभक्षी अग्निका भी भक्षण कर जाऊँगा। नक्षत्रोंसहित सूर्यको भी पृथ्वीपर मार गिराऊँगा, इन्द्रका भी वध कर डालूँगा और समुद्रको भी पी जाऊँगा। पर्वतोंको चूर-चूर कर दूँगा। भूमण्डलको विदीर्ण कर डालूँगा। आज मेरे द्वारा खाये जानेवाले सब प्राणी दीर्घकालतक सोकर उठे हुए मुझ कुम्भकर्णका पराक्रम देखें। यह सारी त्रिलोकी आहार बन जाय तो भी मेरा पेट नहीं भर सकता।

दशरथकुमार श्रीरामका वध करके मैं तुम्हें उत्तरोत्तर सुखकी प्राप्ति करानेवाले सुख-सौभाग्यको देना चाहता हूँ। लक्ष्मणसहित रामका वध करके सभी प्रधान-प्रधान वानरयूथपतियोंको खा जाऊँगा। राजन्। अब मौज करो, मदिरा पीओ और मानसिक दु:खको दूर करके सब कार्य करो। आज मेरे द्वारा राम यमलोक पहुँचा दिये जायँगे; फिर तो सीता चिरकाल सदा के लिये तुम्हारे अधीन हो जायगी।

महाराज। जो राजा बिना युद्धके ही शत्रुपर विजय पाता है, उसकी सेना नष्ट नहीं होती। उसका जीवन भी संशयमें नहीं पड़ता, वह पवित्र एवं महान् यश पाता तथा दीर्घकालतक लक्ष्मी एवं उत्तम कीर्तिका उपभोग करता है।

राजन्। आज मैं उस दुरात्मा रामका वध करके तुम्हारे घोर भयको दूर कर दूँगा। तुम वैरभावसे मुक्त होकर सुखी हो जाओ। शूरवीर जलहीन बादलके समान व्यर्थ गर्जना नहीं किया करते। तुम देखना, अब युद्धस्थलमें मैं अपने पराक्रमके द्वारा ही गर्जना करूँगा।

बुद्धिमान कुम्भकर्णने जब ऐसी वीरोचित बात कही, तब राक्षसराज रावणने हँसते हुए उत्तर दिया।

कुम्भकर्ण। मेरे आत्मीयजनोंमें सौहार्द और बलकी दृष्टिसे कोई भी तुम्हारी समानता करनेवाला नहीं है। तुम शत्रुओंका वध करने और विजय पानेके लिये युद्धभूमिमें जाओ। शत्रुदमन वीर। तुम सो रहे थे। तुम्हारे द्वारा शत्रुओंका नाश करानेके लिये ही मैंने तुम्हें जगाया है। राक्षसोंकी युद्धयात्राके लिये यह सबसे उत्तम समय है। वानर तुम्हारा रूप देखते ही भाग जायँगे तथा राम और लक्ष्मणके हृदय भी विदीर्ण हो जायँगे। राजा रावण कुम्भकर्णके बलको अच्छी तरह जानता था, उसके पराक्रमसे भी पूर्ण परिचित था; इसलिये वह निर्मल चन्द्रमाके समान परम आह्लादसे भर गया। रावणके ऐसा कहनेपर महाबली कुम्भकर्ण बहुत प्रसन्न हुआ। वह राजा रावणकी बात सुनकर उस समय युद्धके लिये उद्यत हो गया और लमापुरीसे बाहर निकला।

आज मैं भूखा हूँ और मेरा क्रोध भी बढ़ा हुआ है। इसलिये समस्त वानरोंको भक्षण कर जाऊँगा। कुम्भकर्णकी यह बात सुनकर रावण बोला- कुम्भकर्ण। तुम हाथोंमें शूल और मुद्गर धारण करनेवाले सैनिकोंसे घिरे रहकर युद्धके लिये यात्रा करो, क्योंकि महामनस्वी वानर बड़े वीर और अत्यन्त उद्योगी है। वे तुम्हें अकेला या असावधान देख दाँतोंसे काट-काटकर नष्ट कर डालेंगे; इसलिये सेनासे घिरकर सब ओरसे सुरक्षित हो यहाँसे जाओ। उस दशामें तुम्हें परास्त करना शत्रुओंके लिये बहुत कठिन होगा। तुम राक्षसोंका अहित करनेवाले समस्त शत्रुदलका संहार करो।

भाईको हृदयसे लगाकर उसकी परिक्रमा करके उस महाबली वीरने उसे मस्तक झुकाकर प्रणाम किया। तत्पश्चात् वह युद्धके लिये चला। उस समय रावणने उत्तम आशीर्वाद देकर श्रेष्ठ आयुधोंसे सुसज्जित सेनाओंके साथ उसे युद्धके लिये विदा किया। यात्राके समय उसने शफ और दुन्दुभि आदि बाजे भी बजवाये।

उसके साथ बहुत-से पैदल राक्षस भी गये, जो बड़े बलवान, जोर-जोरसे गर्जना करनेवाले, भीषण नेत्रधारी और भयानक रूपवाले थे। उन सबके हाथोंमें नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्र थे। तदनन्तर महातेजस्वी महाबली कुम्भकर्णने बड़ा उग्र रूप धारण किया, जिसे देखनेपर भय मालूम होता था। ऐसा रूप धारण करके वह युद्धके लिये चल पड़ा।

पहले तो उसने राक्षस-सेनाकी व्यूह-रचना की। फिर दावानलसे दग्ध हुए पर्वतके समान महाकाय कुम्भकर्ण अपना विशाल मुख फैलाकर अट्टहास करता हुआ इस प्रकार बोला- राक्षसों। जैसे आग पतंगोंको जलाती है, उसी प्रकार मैं भी कुपित होकर आज प्रधान-प्रधान वानरोंके एक-एक झुंडको भस्म कर डालूँगा।

यों तो वनमें विचरनेवाले बेचारे वानर स्वेच्छासे मेरा कोई अपराध नहीं कर रहे हैं; अत: वे वधके योग्य नहीं हैं। वानरोंकी जाति तो

हम-जैसे लोगोंके नगरोद्यानका आभूषण है। वास्तवमें लमापुरीपर घेरा डालनेके प्रधान कारण हैं- लक्ष्मणसहित राम। अत: सबसे पहले मैं उन्हींको युद्धमें मारूँगा। उनके मारे जानेपर सारी वानर-सेना स्वत: मरी हुई सी हो जायगी।

कुम्भकर्णके ऐसा कहनेपर राक्षसोंने समुद्रको कम्पित-सा करते हुए बड़ी भयानक गर्जना की।

गदहोंके समान भूरे रंगवाले बादल घिर आये। साथ ही उल्कापात हुआ और बिजलियाँ गिरीं। समुद्र और वनोंसहित सारी पृथ्वी काँपने लगी। रास्तेमें चलते समय कुम्भकर्णके शूलपर गीध आ बैठा। उसकी बायीं आँख फड़कने लगी और बायीं भुजा कम्पित होने लगी। इसप्रकार रोंगटें खड़े कर देनेवाले बहुत-से बड़े-बड़े उत्पात प्रकट हुए; किंतु उनकी कुछ भी परवा न करके कालकी शक्तिसे प्रेरित हुआ कुम्भकर्ण युद्धके लिये निकल पड़ा।

उस पर्वताकार श्रेष्ठ राक्षसको देखते ही समस्त वानर हवासे उड़ाये गये बादलोंके समान तत्काल सम्पूर्ण दिशाओंमें भाग चले। छिन्न-भिन्न हुए बादलोंके समूहकी भाँति उस अतिशय प्रचण्ड वानर-वाहिनीको सम्पूर्ण दिशाओंमें भागती देख मेघोंके समान काला कुम्भकर्ण बड़े हर्षके साथ सजल जलधरके सदृश गम्भीर स्वरमें बारं-बार गर्जना करने लगा। आकाशमें जैसी मेघोंकी गर्जना होती है, उसीके समान उस राक्षसका घोर सिंहनाद सुनकर बहुत-से वानर जड़से कटे हुए सालवृक्षोंके समान पृथ्वीपर गिर पड़े। इन्द्र, यम अथवा वरूणके द्वारा भी उसका वध होना असम्भव था। उस भयानक नेत्रवाले निशाचरको आते देख सभी वानर भागे खड़े हुए।

तब अङ्गद ने अपनी वानरसेना से कहा- वानरवीरों। अपने उत्तम कुलों और उन अलौकिक पराक्रमोंको भुलाकर साधारण बंदरोंकी भाँति भयभीत हो तुम कहाँ भागे जा रहे हो?

अपने सामने उठी हुई राक्षसोंकी इस बड़ी भारी विभीषिकाको हम अपने पराक्रमसे नष्ट कर देंगे। अत: वानरवीरों लौट आओ।

तब वानरोंने बड़ी कठिनाईसे धैर्य धारण किया और जहाँ-तहाँसे एकत्र हो हाथोंमें वृक्ष लेकर वे रणभूमिकी ओर चले।

लौटनेपर वे महाबली वानर मतवाले हाथियोंकी भाँति अत्यन्त क्रोध और रोषसे भर गये और कुम्भकर्णके ऊपर ऊँचे-ऊँचे पर्वतीय-शिखरों, शिलाओं तथा खिले हुए वृक्षोंसे प्रहार करने लगे। उनकी मार खाकर भी कुम्भकर्ण विचलित नहीं होता था।

उधर क्रोधसे भरा हुआ कुम्भकर्ण भी अत्यन्त सावधान हो महाबली वानरोंकी सेनाओंको उसी प्रकार रौंदने लगा, जैसे बढ़ा हुआ दावानल बड़े-बड़े जंगलोंको जलाकर भस्म कर देता है।

वानर ऊँची-नीची भूमिको लाँघते हुए जोर-जोरसे भागने लगे। वे आगे-पीछे और अगल-बगलमें कहीं भी दृष्टि नहीं डालते थे। कोई समुद्रमें गिर पड़े और कोई आकाशमें ही उड़ते रह गये।

उस राक्षसने खेल-खेलमें ही जिन्हें मारा, वे वीर वानर जिस मार्गसे समुद्र पार करके लमामें आये थे, उसी मार्गसे भागने लगे।

भयके मारे वानरोंके मुखकी कान्ति फीकी पड़ गयी। वे नीची जगह देख-देखकर भागने और छिपने लगे। कितने ही रीछ वृक्षोंपर जा चढ़े और कितनोंने पर्वतोंकी शरण ली। कितने ही वानर और भालू समुद्रमें डूब गये। कितनोंने पर्वतोंकी गुफाओंका आश्रय लिया। कोई गिरे, कोई एक स्थानपर खड़े न रह सके, इसलिये भागे। कुछ धराशायी हो गये और कोई-कोई मुर्दोंके समान साँस रोककर पड़ गये।

उन वानरोंको भागते देख अङ्गदने इस प्रकार कहा- वानरवीरों। ठहरो, लौट आओ। हम सब मिलकर युद्ध करेंगे।

यदि तुम भाग गये तो सारी पृथ्वीकी परिक्रमा करके भी कहीं तुम्हें ठहरनेके लिये स्थान मिल सके, ऐसा मुझे नहीं दिखायी देता सुग्रीवकी आज्ञाके बिना कहीं भी जानेपर तुम जीवित नहीं बच सकोगे। इसलिये सब लोग लौट आओ। क्यों अपने ही प्राण बचानेकी फिक्रमें पड़े हो?

तुम्हारे वेग और पराक्रमको कोई रोकनेवाला नहीं है। यदि तुम हथियार डालकर भाग जाओगे तो तुम्हारी स्त्रियाँ ही तुमलोगोंका उपहास करेंगी और वह उपहास जीवित रहनेपर भी तुम्हारे लिये मृत्युके समान दु:खदायी होगा।

तुम सब लोग महान् और बहुत दूरतक फैले हुए श्रेष्ठ कुलमें उत्पन्न हुए हो। फिर साधारण वानरोंकी भाँति भयभीत होकर कहाँ भागे जा रहे हो ? यदि तुम पराक्रम छोड़कर सबके कारण भागते हो तो निश्चय ही अनार्य समझे जाओगे।

तुम जन-समुदायमें बैठकर जो डींग हाँका करते थे कि हम बड़े प्रचण्ड, वीर है और स्वामीके हितैषी हैं, तुम्हारी वे सब बातें आज कहाँ चली गयीं ? जो सत्पुरुषोंद्वारा धिक्कृत होकर भी जीवन धारण करता है, उसके उस जीवनको धिक्कार है, इस तरहके निन्दात्मक वचन कायरोंको सदा सुनने पड़ते हैं। इसलिये तुमलोग भय छोड़ो और सत्पुरुषोंद्वारा सेवित मार्गका आश्रय लो।

यदि हमलोग अल्पजीवी हों और शत्रुके द्वारा मारे जाकर रणभूमिमें सो जायँ तो हमें उस ब्रह्मलोककी प्राप्ति होगी, जो कुयोगियोंके

लिये परम दुर्लभ है। वानरों। यदि युद्धमें हमने शत्रुको मार गिराया तो हमें उत्तम कीर्ति मिलेगी और यदि स्वयं ही मारे गये तो हम वीरलोकके वैभवका उपभोग करेंगे। श्रीरघुनाथजीके सामने जानेपर कुम्भकर्ण जीवित नहीं लौट सकेगा; ठीक उसी तरह, जैसे प्रज्वलित अग्निके पास पहुँचकर पतङ्ग भस्म हुए बिना नहीं रह सकता। यदि हमलोग प्रख्यात वीर होकर भी भागकर अपने प्राण बचायेंगे और अधिक संख्यामें होकर भी एक योद्धाका सामना नहीं कर सकेंगे तो हमारा यश मिट्टीमें मिल जायगा।

वे बोले- राक्षस कुम्भकर्णने हमारा घोर संहार मचा रखा है; अत: यह ठहरनेका समय नहीं है। हम जा रहे हैं; क्योंकि हमें अपनी जान प्यारी है। तब उन भागते हुए सभी वीर वानरोंको अङ्गदने सान्त्वना और आदरसम्मानके द्वारा लौटाया।

बुद्धिमान् बालिपुत्रने उन सबको प्रसन्न कर लिया। वे सब वानरयूथपति सुग्रीवकी आज्ञाकी प्रतीक्षा करते हुए खड़े हो गये।

तदनन्तर ऋषभ, शरभ, मैन्द, धूम्र, नील, कुमुद, सुषेण, गवाक्ष, रम्भ, तार, द्विविद, पनस और वायुपुत्र हनुमान् आदि श्रेष्ठ वानर वीर तुरंत ही कुम्भकर्णका सामना करनेके लिये रणक्षेत्रकी ओर बढ़े।

अङ्गदके पूर्वोक्त वचन सुनकर वे सब विशालकाय वानर मरने-मारनेका निश्चय करके युद्धकी इच्छासे लौटे थे।

उन विशालकाय वानर-वीरोंने वृक्ष तथा बड़े-बड़े पर्वत शिखर लेकर तुरंत ही कुम्भकर्णपर धावा किया।

परंतु अत्यन्त क्रोधसे भरे हुए विक्रमशाली महाकाय कुम्भकर्णने गदा उठाकर शत्रुओंको घायल करके उन्हें चारों ओर बिखेर दिया।

वह सोलह, आठ, दस, बीस और तीस-तीस वानरोंको अपनी दोनों भुजाओंसे समेट लेता और जैसे गरुड़ सर्पोंको खाता है, उसी प्रकार अत्यन्त क्रोधपूर्वक उनका भक्षण करता हुआ सब ओर दौड़ता-फिरता था।

तत्पश्चात् मेघके समान विशाल शरीरवाले वानरशिरोमणि द्विविदने एक पर्वत उखाड़कर पर्वतशिखरके समान ऊँचे कुम्भकर्णपर आक्रमण किया। उस पर्वत-शिखरने राक्षससेनाके कितने ही घोड़ों, हाथियों, रथों, गजराजों तथा दूसरे-दूसरे राक्षसोंको भी कुचल डाला। महामनस्वी वानर भी बड़े-बड़े पेड़ उखाड़कर शत्रुसेनाके रथ, घोड़े, हाथी, ऊँट और राक्षसोंका संहार करने लगे। हनुमानजी आकाशमें पहुँचकर कुम्भकर्णके मस्तकपर पर्वत-शिखरों, शिलाओं और नाना प्रकारके वृक्षोंकी वर्षा करने लगे।

परंतु महाबली कुम्भकर्णने अपने शूलसे उन पर्वतशिखरोंको फोड़ डाला और बरसाये जानेवाले वृक्षोंके भी टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

उस महासमरमें शूलकी चोटसे हनुमानजीकी दोनों भुजाओंके बीचका भाग वक्ष:स्थल विदीर्ण हो गया। वे व्याकुल हो गये और मुँहसे रक्त वमन करने लगे। उस समय पीड़ाके मारे उन्होंने बड़ा भयंकर आर्तनाद किया, जो प्रलयकालके मेघोंकी गर्जनाके समान जान पड़ता था।

हनुमानजीको आघातसे पीड़ित देख राक्षसोंके हर्षकी सीमा न रही। वे सहसा जोर-जोरसे कोलाहल करने लगे। इधर कुम्भकर्णके भयसे पीड़ित एवं व्यथित हुए वानर युद्धभूमि छोड़कर भागने लगे।

यह देख बलवान् नीलने वानरसेनाको धैर्य बँधाने एवं सुस्थिर रखनेके लिये बुद्धिमान् कुम्भकर्णपर एक पर्वतका शिखर चलाया।

इसके बाद ऋषभ, शरभ, नील, गवाक्ष और गन्धमादन इन पाँच प्रमुख वानरवीरोंने कुम्भकर्णपर धावा किया।

कुम्भकर्णकी दोनों भुजाओंसे दबकर पीड़ित हुए भयंकर वानरशिरोमणि ऋषभके मुँहसे खून निकलने लगा और वे पृथ्वीपर गिर पड़े।

उन महामनस्वी प्रमुख वानरोंके धराशायी हो जानेपर हजारों वानर एक साथ कुम्भकर्णपर टूट पड़े।

वे वानरशिरोमणि नखों, दाँतों, मुक्कों और हाथोंसे महाबाहु कुम्भकर्णको मारने लगे।

जैसे गरुड़ सर्पोंको अपना आहार बनाते हैं, उसी तरह अत्यन्त कुपित हुआ वह महाबली राक्षस समस्त वानरोंको दोनों हाथोंसे पकड़-पकड़कर भक्षण करने लगा।

कुम्भकर्ण अपने पातालके समान मुखमें वानरोंको झोंकता जाता था और वे उसके कानों तथा नाकोंकी राहसे बाहर निकलते जाते थे।

शूल हाथमें लेकर संग्रामभूमिमें विचरता हुआ महाबली कुम्भकर्ण वज्रधारी इन्द्र और पाशधारी यमराजके समान जान पड़ता था।

जैसे ग्रीष्म ऋतुमें दावानल सूखे जंगलोंको जला देता है, उसी प्रकार कुम्भकर्ण वानरसेनाओंको दग्ध करने लगा।

कुम्भकर्णके हाथसे मारे जाते हुए बहुत-से वानर, जिनका दिल टूट गया था, व्यथित हो श्रीरघुनाथकी शरणमें गये।

मस्तकपर उस पर्वत-शिखरकी चोट खाकर इन्द्रद्रोही कुम्भकर्ण उस समय महान् क्रोधसे जल उठा और उस प्रहारको सहन न कर सकनेके कारण बड़े वेगसे बालिपुत्रकी ओर दौड़ा।

बड़े जोरसे गर्जना करनेवाले महाबली कुम्भकर्णने समस्त वानरोंको संत्रस्त करते हुए अङ्गदपर बड़े रोषसे शूलका प्रहार किया।

साथ ही बड़े वेगसे उछलकर उन्होंने उसकी छातीमें एक थप्पड़ मारा। क्रोधपूर्वक चलाये हुए उस थप्पड़की मार खाकर वह पर्वताकार राक्षस मूर्च्छित हो गया। थोड़ी देरमें जब उसे होश हुआ, तब उस अत्यन्त बलशाली राक्षसने भी बायें हाथसे मुक्का बाँधकर अंगदपर प्रहार किया, जिससे वे अचेत होकर पृथ्वीपर गिर पड़े।

वानरप्रवर अङ्गदके अचेत एवं धराशायी हो जानेपर कुम्भकर्ण वही शूल लेकर सुग्रीवकी ओर दौड़ा। महाबली कुम्भकर्णको अपनी ओर आते देख वीर वानरराज सुग्रीव तत्काल ऊपरकी ओर उछले। महाकपि सुग्रीवने एक पर्वतशिखरको उठा लिया और उसे घूमाकर महाबली कुम्भकर्णपर वेगपूर्वक धावा किया।

वानर। तुम प्रजापतिके पौत्र, ऋक्षरजाके पुत्र तथा धैर्य एवं पौरुषसे सम्पन्न हो। इसीलिये इस तरह गरज रहे हो।

कुम्भकर्णकी यह बात सुनकर सुग्रीवने उस शैल-शिखरको घूमाकर सहसा उसके ऊपर छोड़ दिया। वह वज्र और अशनिके समान था। उसके द्वारा उन्होंने कुम्भकर्णकी छातीमें गहरी चोट पहुँचायी।

किंतु उसके विशाल वक्ष:स्थलसे टकराकर वह शैलशिखर सहसा चूर-चूर हो गया। यह देख वानर तत्काल विषादमें डूब गये और राक्षस बड़े हर्षके साथ गर्जना करने लगे।

उस पर्वत-शिखरकी चोट खाकर कुम्भकर्णको बड़ा क्रोध हुआ। वह रोषसे मुँह फैलाकर जोर-जोरसे गर्जना करने लगा। फिर उसने बिजलीके समान चमकनेवाले उस शूलको घूमाकर सुग्रीवके वधके लिये चलाया।

कुम्भकर्णके हाथसे छूटे हुए उस तीखे शूलको, जिसके डंडेमें सोनेकी लड़ियाँ लगी हुई थीं, वायुपुत्र हनुमान्‌ने शीघ्र उछलकर दोनों हाथोंसे पकड़ लिया और उसे वेगपूर्वक तोड़ डाला।

वह महान् शूल हजार भार काले लोहेका बना हुआ था, जिसे हनुमानने बड़े हर्षके साथ अपने घुटनोंमें लगाकर तत्काल तोड़ दिया।

इस प्रकार उस शूलको भग्न हुआ देख महाकाय राक्षसराज कुम्भकर्णको बड़ा क्रोध हुआ और उसने लमाके निकटवर्ती मलय पर्वतका शिखर उठाकर सुग्रीवके निकट जा उनपर दे मारा।

उस शैलशिखरसे आहत हो वानरराज सुग्रीव अपनी सुध-बुध खो बैठे और युद्धभूमिमें गिर पड़े। उन्हें अचेत होकर पृथ्वीपर पड़ा देख निशाचरोंको बड़ी प्रसन्नता हुई और वे रणक्षेत्रमें सिंहनाद करने लगे।

कुम्भकर्णका स्वरूप मेरू पर्वतके समान जान पड़ता था। वह महान् मेघके समान रूपवाले सुग्रीवको उठाकर जब युद्धस्थलसे चला, उस समय भयानक ऊँचे शिखरोंवाले मेरुगिरिके समान ही शोभा पाने लगा।

उन्हें लेकर वह वीर राक्षसराज लमाकी ओर चल दिया। उस समय युद्धस्थलमें सभी राक्षस उसकी स्तुति कर रहे थे। वानरराजके पकड़े जानेसे आश्चर्यचकित हुए देवताओंका दु:खजनित शब्द उसे स्पष्ट सुनायी दे रहा था।

वानरोंकी सेना इधर-उधर भाग रही है और वानरराज सुग्रीवको कुम्भकर्णने पकड़ लिया है, यह देखकर बुद्धिमान् पवनकुमार हनुमानने सोचा- सुग्रीवके इस प्रकार पकड़ लिये जानेपर मुझे क्या करना चाहिये ?

तब बड़ी कठिनाईसे सचेत हो बलवान् कुम्भकर्णकी भुजाओंमें दबे हुए महात्मा सुग्रीव नगर और राजमार्गकी ओर देखकर बारंबार इस प्रकार विचार करने लगे-

इस प्रकार इस राक्षसकी पकड़में आकर अब मैं किस तरह इससे भरपूर बदला ले सकता हूँ ? मैं वही करूँगा, जिससे वानरोंका अभीष्ट और हितकर कार्य हो। ऐसा निश्चय करके वानरोंके राजा सुग्रीवने सहसा हाथोंमें तीखे नखोंद्वारा इन्द्रशत्रु कुम्भकर्णके दोनों कान नोच लिये, दाँतोंसे उसकी नाक काट ली और अपने पैरोंके नखोंसे उस राक्षसकी दोनों पसलियाँ फाड़ डालीं।

भयानक बलशाली कुम्भकर्ण जब उन्हें पृथ्वीपर रगड़ रहा था और वे देवद्रोही राक्षस उनपर सब ओरसे चोट कर रहे थे, उसी समय सुग्रीव सहसा गेंदकी भाँति वेगपूर्वक आकाशमें उछले और पुन: श्रीरामसे आ मिले।

महाबली कुम्भकर्ण अपनी नाक और कान खो बैठा। उसके अङ्गोंसे इस तरह खून बहने लगा, जैसे पर्वतसे पानीके झरने गिरते हैं। वह रक्तसे नहा उठा और झरनोंसे युक्त शैलशिखरकी भाँति शोभा पाने लगा।

सुग्रीवके निकल भागनेपर वह इन्द्रद्रोही राक्षस फिर युद्धके लिये दौड़ा। उस समय यह सोचकर कि मेरे पास कोई हथियार नहीं है, उसने एक बड़ा भयंकर मुद्गर ले लिया।

रणके उत्साहमें कुम्भकर्ण विरुद्ध होकर उनके सामने ऐसा चला मानो क्रोधित होकर काल ही आ रहा हो। वह करोड़-करोड़ वानरोंको एक साथ पकड़-पकड़कर खाने लगा। वे उसके मुँहमें इस तरह घुसने लगे मानो पर्वतकी गुफामें टिड्डियाँ समा रही हों।

करोड़ों वानरों को पकड़कर उसने शरीरसे मसल डाला। करोड़ोंकी हाथोंसे मसलकर पृथ्वीकी धूलमें मिला दिया। पेटमें गये हुए भालू और वानरोंके ठट्ट-के-ठट्ट उसके मुख, नाक और कानोंकी राहसे निकल-निकलकर भाग रहे हैं।

रणके मदमें मत्त राक्षस कुम्भकर्ण इस प्रकार गर्वित हुआ, मानो विधाताने उसको सारा विश्व अर्पण कर दिया हो, और उसे वह ग्रास कर जायगा। सब योद्धा भाग खड़े हुए, वे लौटाये भी नहीं लौटते। आँखोंसे उन्हें सूझ नहीं पड़ता और पुकारनेसे सुनते नहीं।

उस समय कुम्भकर्णको भूख सता रही थी, अतएव वह रक्त और मांसके लिये लालायित हो रहा था। उसने उस भयंकर वानर-सेनामें प्रवेश करके मोहवश वानरों और भालुओंके साथ-साथ राक्षसों तथा पिशाचोंको भी खाना आरम्भ कर दिया। वह प्रधान-प्रधान वानरोंको उसी प्रकार अपना ग्रास बना रहा था, जैसे प्रलयकालमें मृत्यु प्राणियोंके प्राणोंका अपहरण करती है।

उस समय वह महाबली निशाचर पर्वत-शिखरोंकी मार खाता हुआ भी मुँहसे वानरोंकी चर्बी और रक्त गिराता हुआ उन सबका भक्षण कर रहा था। वह सात, आठ, बीस तथा सौ-सौ वानरोंको अपनी दोनों भुजाओंमें भर लेता और उन्हें खाता हुआ रणभूमिमें दौड़ता-फिरता था। उस समय शत्रुनगरीपर विजय पाने तथा शत्रुओंका संहार करनेवाले सुमित्राकुमार लक्ष्मण कुपित होकर उस राक्षसके साथ युद्ध करने लगे। काले कोयलेके ढेरकी-सी कान्तिवाला कुम्भकर्ण लक्ष्मणके सुवर्णभूषित बाणोंसे आच्छादित हो मेघोंसे ढके हुए अंशुमाली सूर्यके समान शोभा पा रहा था।

तब उस भयंकर राक्षसने मेघकी गर्जनाके समान गम्भीर स्वरसे सुमित्रानन्दन लक्ष्मणका तिरस्कार करते हुए कहा- लक्ष्मण। मैं युद्धमें यमराजको भी बिना कष्ट उठाये ही जीत लेनेकी शक्ति रखता हूँ। तुमने मेरे साथ निर्भय होकर युद्ध करते हुए अपनी अद्‌भुत वीरताका परिचय दिया है। जब मैं महासमरमें मृत्युके समान हथियार लेकर युद्धके लिये उद्यत होऊँ, उस समय जो मेरे सामने खड़ा रह जा, वह भी प्रशंसाका पात्र है। फिर जो मुझे युद्ध प्रदान कर रहा हो, उसके लिये तो कहना ही क्या है ? सुमित्रानन्दन। तुमने बालक होकर भी आज अपने पराक्रमसे मुझे संतुष्ट कर दिया, अत: मैं तुम्हारी अनुमति लेकर युद्धके लिये श्रीरामके पास जाना चाहता हूँ। मेरे द्वारा रामके मारे जानेपर जो दूसरे लोग युद्धभूमिमें खड़े रहेंगे, उन सबके साथ मैं अपने संहारकारी बलके द्वारा युद्ध करूँगा।

वीर कुम्भकर्ण। तुम महान् पौरुष पाकर जो इन्द्र आदि देवताओंके लिये भी असह्य हो उठे हो, वह तुम्हारा कथन बिल्कुल ठीक है, झूठ नहीं है। मैंने स्वयं अपनी आँखोंसे आज तुम्हारा पराक्रम देख लिया। ये रहे दशरथनन्दन भगवान् श्रीराम, जो पर्वतके समान अविचल भावसे खड़े है। लक्ष्मणकी यह बात सुनकर उसका आदर न करते हुए महाबली निशाचर कुम्भकर्णने सुमित्राकुमारको लाँघकर श्रीरामपर ही धावा किया। उस समय वह अपने पैरोंकी धमकसे पृथ्वीको कम्पित किये देता था।

उसे आते देख दशरथनन्दन श्रीरामने रौद्रास्त्रका प्रयोग करके कुम्भकर्णके हृदयमें अनेक तीखे बाण मारे।

श्रीरामके बाणोंसे घायल हो वह सहसा उनपर टूट पड़ा। उस समय क्रोधसे भरे हुए कुम्भकर्णके मुखसे अङ्गारमिश्रित आगकी लपटें निकल रही थीं। भगवान् श्रीरामके अस्त्रसे पीड़ित हो कुम्भकर्ण घोर गर्जना करता और रणभूमिमें वानरोंको खदेड़ता हुआ क्रोधपूर्वक उनकी ओर दौड़ा। श्रीरामके बाणोंमें मोरके पंख लगे हुए थे। वे कुम्भकर्णकी छातीमें धँस गये। अत: व्याकुलताके कारण उसके हाथसे गदा छूटकर पृथ्वीपर गिर पड़ीं। इतना ही नहीं, उसके अन्य सब आयुध भी भूमिपर बिखर गये। जब उसने समझ लिया कि अब मेरे पास कोई हथियार नहीं है, तब उस महाबली निशाचरने दोनों मुक्कों और हाथोंसे ही वानरोंका महान् संहार आरम्भ किया।

इसी बीचमें यमराजके समान प्रतीत होनेवाले उस बलवान् एवं भयानक पराक्रमी निशाचरने एक भयंकर पर्वतका शिखर उठाया और उसे घूमाकर श्रीरामको लक्ष्य करके चला दिया।

उस समय धर्मात्मा लक्ष्मणने जो कुम्भकर्णके वधके लिये नियुक्त थे, उसके वधकी अनेक युक्तियोंका विचार करते हुए श्रीरामसे कहा- राजन। यह राक्षस शोणितकी गन्धसे मतवाला हो गया है; अत: न वानरोंको पहचानता है न राक्षसोंको। अपने और पराये दोनों ही पक्षोंके योद्धाओंको खा रहा है।

अत: श्रेष्ठ वानर-यूथपतियोंमें जो प्रधान लोग हैं, वे सब ओरसे इसके ऊपर चढ़ जायँ और इसके शरीरपर ही बैठे रहें।

ऐसा होनेसे यह दुर्बुद्धि निशाचर इस समय भारी भयसे पीड़ित हो रणभूमिमें विचरण करते समय दूसरे वानरोंको नहीं मार डालेगा।

वानरोंके चढ़ जानेपर कुम्भकर्ण अन्यन्त कुपित हो उठा और जैसे बिगड़ैल हाथी महावतोंको गिरा देता है, उसी प्रकार उसने वेगपूर्वक वानरोंको अपनी देह हिलाकर गिरा दिया।

उस समय उनके नेत्र क्रोधसे लाल हो रहे थे। धीरे-वीर श्रीरघुनाथ उसकी ओर इस प्रकार देखने लगे, मानो उसे अपनी दृष्टिसे दग्ध कर डालेंगे। उन्होंने कुम्भकर्णके बलसे पीड़ित समस्त वानरयूथपतियोंका हर्ष बढ़ाते हुए बड़े वेगसे उस राक्षसपर धावा किया।

इस प्रकार प्रज्वलित अग्निके समान तेजस्वी कुम्भकर्णको देखकर श्रीरामने तत्काल अपना धनुष खींचा।

उनके धनुषकी टंकार सुनकर राक्षसश्रेष्ठ कुम्भकर्ण कुपित हो उठा और उस टंकारध्वनिको सहन न करके श्रीरघुनाथकी ओर दौड़ा।

तब श्रीरामके लिये युद्ध करनेके निमित्त गदा हाथमें लिये विभीषण उनके आगे आकर खड़े हो गये और उस युद्धस्थलमें भाई होकर भाईका सामना करनेके लिये बड़े वेगसे आगे बढ़े। विभीषणको सामने देखकर कुम्भकर्णने इस प्रकार कहा- वत्स। रावण तो कालके वश हो गया है उसके सिरपर मृत्यु नाच रही है। वह क्या उत्तम शिक्षा मान सकता है ? हे विभीषण। तू तो धन्य है, धन्य है। हे तात, तू राक्षसकुलका भूषण हो गया। हे भाई, तूने अपने कुलको देदीप्यमान कर दिया, जो शोभा और सुखके समुद्र श्रीरामजीको भजा।

तुम भाईका स्नेह छोड़कर रघुनाथका प्रिय करो और रणभूमिमें शीघ्र मेरे ऊपर गदा चलाओ। इस समय तुम क्षात्रधर्ममें दृढ़तापूर्वक स्थिर रहो। तुम जो श्रीरामकी शरणमें आ गये, इससे तुमने हमलोगोंका काम बना दिया। राक्षसोंमें एक तुम्हीं ऐसे हो, जिसने इस जगत्में सत्य और धर्मकी रक्षा की है। जो धर्ममें अनुरक्त होते है, उन्हें कभी कोई दु:ख नहीं भोगना पड़ता है। अब एकमात्र तुम्हीं इस कुलकी संतानपरम्पराको सुरक्षित रखनेके लिये जीवित रहोगे। श्रीरघुनाथजीकी कृपासे तुम्हें राक्षसोंका राज्य प्राप्त होगा। दुर्जय वीर। मेरी प्रकृतिसे तो तुम परिचित ही हो; अत: शीघ्र मेरा रास्ता छोड़कर दूर हट जाओ। इस समय सम्भ्रमके कारण मेरी विचारशक्ति नष्ट हो गयी हैं; अत: तुम्हें मेरे सामने नहीं खड़ा होना चाहिये। निशाचर। इस समय युद्धमें आसक्त होनेके कारण मुझे तुम अपने अथवा परायेकी पहचान नहीं हो रही है, तथापि वत्स। तुम मेरे लिये रक्षणीय हो- मैं तुम्हारा वध करना नहीं चाहता। यह तुमसे सच्ची बात कहता हूँ। बुद्धिमान् कुम्भकर्णके ऐसा कहनेपर महाबाहु विभीषणने उससे कहा- हे वीर। परम हितकर सलाह एवं विचार कहनेपर रावणने मुझे लात मारी। उसी ग्लानिके मारे मैं श्रीरघुनाथके पास चला आया। दीन देखकर प्रभुके मनको मैं बहुत प्रिय लगा।

मैंने इस कुलकी रक्षाके लिये बहुत कुछ कहा था; किंतु समस्त राक्षसोंने मेरी बात नहीं सुनी; अत: मैं निराश होकर श्रीरामकी शरणमें आ गया। महाभाग। यह मेरे लिये पुण्य हो या पाप। अब मैंने श्रीरामका आश्रय तो ग्रहण कर ही लिया। ऐसा कहकर गदाधारी विभीषणके नेत्रोंमें आँसू भर आये और वे एकान्तका आश्रय ले खड़े होकर चिन्ता करने लगे।

राक्षसराज। आओ, विषाद न करो। मैं धनुष लेकर खड़ा हूँ। मुझे राक्षसवंशका विनाश करनेवाला समझो। अब तुम भी दो ही घड़ीमें अपनी चेतना खो बैठोगे, मर जाओगे।

यही राम हैं- यह जानकर वह राक्षस विकृत स्वरमें अट्टहास करने लगा और अत्यन्त कुपित हो रणक्षेत्रमें वानरोंको भगाता हुआ उनकी ओर दौड़ा। महातेजस्वी कुम्भकर्ण समस्त वानरोंके हृदयको विदीर्ण सा करता हुआ विकृत स्वरमें जोर-जोरसे हँसकर मेघ-गर्जनाके समान गम्भीर एवं भयंकर वाणीमें श्रीरघुनाथसे बोला- राम। मुझे विराध, कबन्ध और खर नहीं समझना। मैं मारीच और बालि भी नहीं हूँ। यह कुम्भकर्ण तुमसे लड़ने आया है।

मेरे इस भयंकर एवं विशाल मुद्गरकी ओर देखो। यह सब-का-सब काले लोहेका बना हुआ है। मैंने पूर्वकालमें इसीके द्वारा समस्त देवताओं और दानवोंको परास्त किया है। निष्पाप रघुनन्दन। तुम इक्ष्वाकुवंशके वीर पुरुष हो, अत: मेरे अङ्गोंपर अपना पराक्रम दिखाओ। तुम्हारे पौरुष एवं बल-विक्रमको देख लेनेके बाद ही मैं तुम्हें खाऊँगा।

देवराज इन्द्रका शत्रु कुम्भकर्ण जलकी धाराके समान श्रीरामकी बाणवर्षाको अपने शरीरसे पीने लगा और भयंकर वेगशाली मुद्गरको चारों ओरसे घुमा-घुमाकर उनके बाणोंके महान् वेगको नष्ट करने लगा।

तदनन्तर वह राक्षस देवताओंकी विशाल सेनाको भयभीत करनेवाले और खूनसे लिपटे हुए उस उग्र वेगशाली मुद्गरको घूमा-घूमाकर वानरोंकी वाहिनीको खदेड़ने लगा।

यह देख भगवान् श्रीरामने वायव्य नामक दूसरे अस्त्रका संधान करके उसे कुम्भकर्णपर चलाया और उसके द्वारा उस निशाचरकी मुद्गरसहित दाहिनी बाँह काट डाली। बाँह कट जानेपर वह राक्षस भयानक आवाजमें चीत्कार करने लगा।

श्रीरघुनाथके बाणसे कटी हुई वह बाँह, जो पर्वतशिखरके समान जान पड़ती थी, मुद्गरके साथ ही वानरोंकी सेनामें गिरी। उसके नीचे दबकर कितने ही वानर सैनिक अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठे।

जो अङ्ग-भङ्ग होने या मरनेसे बचे, वे खिन्नचित हो किनारे जाकर खड़े हो गये। उनके शरीरमें बड़ी पीड़ा हो रही थी और वे चुपचाप महाराज श्रीराम और राक्षस कुम्भकर्णके घोर संग्रामको देखने लगे।

वायव्यास्त्रसे एक बाँह कट जानेपर कुम्भकर्ण शिखरहीन पर्वतके समान प्रतीत होने लगा। उसने एक ही हाथसे एक ताड़का वृक्ष उखाड़ लिया और उसे लेकर रणभूमिमें महाराज श्रीरामपर धावा किया।

तब श्रीरामने एक सुवर्णभूषित बाण निकालकर उसे ऐन्द्रास्त्रसे अभिमन्त्रित किया और उसके द्वारा सर्पके समान उठी हुई राक्षसकी दूसरी बाँहको भी वृक्षसहित काट गिराया।

कुम्भकर्णकी वह कटी हुई बाँह पर्वतशिखरके समान पृथ्वीपर गिरी और छटपटाने लगी। उसने कितने ही वृक्षों, शैलशिखरों, शिलाओं, वानरों और राक्षसोंको भी कुचल डाला।

उन दोनों भुजाओंके कट जानेपर वह राक्षस सहसा आर्तनाद करता हुआ श्रीरामपर टूट पड़ा। उसे आक्रमण करते देख श्रीरामने दो तीखे अर्धचन्द्राकार बाण लेकर उनके द्वारा युद्धस्थलमें उस राक्षसके दोनों पैर भी उड़ा दिये।

उसके दोनों पैर दिशा-विदिशा, पर्वतकी कन्दरा, महासागर, लमापुरी तथा वानरों और राक्षसोंकी सेनाओंको भी प्रतिध्वनित करते हुए पृथ्वीपर गिर पड़े। दोनों बाँहों और पैरोंके कट जानेपर उसने वडवानलके समान अपने विकराल मुखको फैलाया और जैसे राहु आकाशमें चन्द्रमाको ग्रस लेता है, उसी प्रकार वह श्रीरामको ग्रसनेके लिये भयानक गर्जना करता हुआ सहसा उनके ऊपर टूट पड़ा।

इसके बाद भगवान् श्रीरामने ब्रह्मदण्ड तथा विनाशकारी कालके समान भयंकर एवं तीखा बाण, जो सूर्यकी किरणोंके समान उद्दीप्त, इन्द्रास्त्रसे अभिमन्त्रित, शत्रुनाशक, तेजस्वी सूर्य और प्रज्वलित अग्निके समान देदीप्यमान, हीरे और सुवर्णसे विभूषित सुन्दर पंखसे युक्त, वायु तथा इन्द्रके वज्र और अशनिके समान वेगशाली था, हाथमें लिया और उस निशाचरको लक्ष्य करके छोड़ दिया।

जैसे पूर्वकालमें देवराज इन्द्रने वृत्रासुरका मस्तक काट डाला था, उसी प्रकार उस बाणने राक्षसराज कुम्भकर्णके महान् पर्वतशिखरके समान ऊँचे, सुन्दर गोलाकार दाढ़ोंसे युक्त तथा हिलते हुए मनोहर कुण्डलोंसे अलंकृत मस्तकको धड़से अलग कर दिया।

श्रीरामके बाणोंसे कटा हुआ राक्षसका वह पर्वताकार मस्तक लमामें जा गिरा। उसने अपने धक्केसे सड़कके आसपासके कितने ही मकानों, दरवाजों और ऊँचे परकोटेको भी धराशायी कर दिया। इसी प्रकार उस राक्षसका विशाल धड़ भी, जो हिमालयके समान जान पड़ता था, तत्काल समुद्रके जलमें गिर पड़ा और बड़े-बड़े ग्राहों, मत्स्यों तथा साँपोंको पीसता हुआ पृथ्वीके भीतर समा गया।

कुम्भकर्ण सदाके लिए समरभूमिमें सो गये। उसके शरीरसे निकली अद्भुत ज्योति श्रीरामके शरीरमें लीन हो गयी।

ब्राह्मणों और देवताओंके शत्रु महाबली कुम्भकर्णके युद्धमें मारे जानेपर पृथ्वी डौलने लगी, पर्वत हिलने लगे और सम्पूर्ण देवता हर्षसे भरकर तुमुल नाद करने लगे। उस समय आकाशमें खड़े हुए देवर्षि, महर्षि, सर्प, देवता, भूतगण, गरुड़, गुह्यक, यक्ष और गन्धर्वगण श्रीरामका पराक्रम देखकर बहुत प्रसन्न हुए।

जो बड़े-बड़े युद्धोंमें कभी पराजित नहीं हुआ था तथा देवताओंकी सेनाको भी कुचल डालनेवाला था, उस महान् राक्षस कुम्भकर्णको रणभूमिमें मारकर रघुनाथको वैसी ही प्रसन्नता हुई जैसी वृत्रासुरका वध करके देवराज इन्द्रको हुई थी।

महात्मा श्रीरामके द्वारा कुम्भकर्णको मारा गया देख राक्षसोंने अपने राजा रावणसे जाकर कहा-

महाराज। कालके समान भयंकर पराक्रमी कुम्भकर्ण वानरसेनाको भगाकर तथा बहुत-से वानरोंको अपना आहार बनाकर स्वयं भी कालके गालमें चले गये।

महाबली कुम्भकर्ण युद्धस्थलमें मारा गया। यह सुनकर रावण शोकसे संतप्त एवं मूर्छित हो गया और तत्काल पृथ्वी पर गिर पड़ा।

अपने चाचाके निधनका समाचार सुनकर देवान्तक, नरान्तक, त्रिशिरा और अतिकाय दुःखसे पीड़ित हो फूट-फूटकर रोने लगे।

अनायास ही महान् कर्म करनेवाले श्रीरामके द्वारा भाई कुम्भकर्ण मारे गये, यह सुनकर उसके सौतेले भाई महोदर और महापार्श्व शोकसे व्याकुल हो गये।

महाबली वीर। तुम मेरा तथा इन भाई-बन्धुओंका कण्टक दूर किये बिना शत्रुसेनाको संतप्त करके मुझे छोड़ अकेले कहाँ चले जा रहे हो?

इस समय मैं अवश्य ही नहींके बराबर हूँ; क्योंकि मेरी दाहिनी बाँह कुम्भकर्ण धराशायी हो गया। जिसका भरोसा करके मैं देवता और असुर किसीसे नहीं डरता था। देवताओं और दानवोंका दर्प चूर करनेवाला ऐसा वीर, जो कालाग्निके समान प्रतीत होता था, आज रणक्षेत्रमें रामके हाथसे कैसे मारा गया ?

भाई। तुम्हें तो वज्रका प्रहार भी कभी कष्ट नहीं पहुँचा सकता था। वही तुम आज रामके बाणोंसे पीड़ित हो भूतलपर कैसे सो रहे हो?

निश्चय ही अब अवसर पाकर हर्षसे भरे हुए वानर आज ही लमाके समस्त दुर्गम द्वारोंपर चढ़ जायँगे।

अब मुझे राज्यसे कोई प्रयोजन नहीं है। सीताको लेकर भी मैं क्या करूँगा ? कुम्भकर्णके बिना जीनेका मेरा मन नहीं है।

यदि मैं युद्धस्थलमें अपने भाईका वध करनेवाले रामको नहीं मार सकता तो मेरा मर जाना ही अच्छा है। इस निरर्थक जीवनको सुरक्षित रखना कदापि अच्छा नहीं है। मैंने पहले देवताओंका अपकार किया था। अब वे मुझे देखकर हँसेंगे। हा कुम्भकर्ण। तुम्हारे मारे जानेपर अब मैं इन्द्रको कैसे जीत सकूँगा?

मैंने महात्मा विभीषणकी कही हुई जिन उत्तम बातोंको अज्ञानवश स्वीकार नहीं किया था, वे मेरे ऊपर आज प्रत्यक्षरूपसे घटित हो रही हैं। विभीषणकी बात ही सत्य थी। मैंने उसे स्वीकार नहीं किया। मैंने उस विनम्रको अपमानित किया। वह कुशल रहे। विपत्तिमें बहुत बार बुद्धि जाग्रत होती है। बुद्धि-विपर्यय भी हो जाता है। यह विभीषणकी बात न माननेका दुष्परिणाम है।

जबसे कुम्भकर्ण और प्रहस्तका यह दारुण विनाश उत्पन्न हुआ है, तभीसे विभीषणकी बात याद आकर मुझे लज्जित कर रही है।

मैंने धर्मपरायण श्रीमान् विभीषणको जो घरसे निकाल दिया था, उसी कर्मका यह शोकदायक परिणाम अब मुझे भोगना पड़ रहा है।

इस प्रकार भाँति-भाँतिसे दीनतापूर्वक अत्यन्त विलाप करके व्याकुलचित्त हुआ दशमुख रावण अपने छोटे भाई इन्द्र-शत्रु कुम्भकर्णके वधका स्मरण करके बहुत ही व्यथित हो पुन: पृथ्वीपर गिर पड़ा।

आप हम सबके अधीश्वर हैं। आप जैसे महत्पुरुष विलाप नहीं किया करते। त्रिशिराने साहस किया- आपके समीप ब्रह्माका दिया अभेद्य कवच है, शक्ति है, एक सहस्त्र गर्दभ जुतें, ऐसा अपूर्व रथ है। आप निराश क्यों होते हैं ? अब तो शत्रुका सामना करना ही एकमात्र मार्ग है। आप भाईका प्रतिशोध लेनेका निश्चय करके उठ खड़े हों। अभी तो आपके पुत्र हम सब सेवाको समुद्यत है। आप हमें संग्राममें जानेकी आज्ञा दें।

तुमलोग विजयी होओ। महाकालिका तुम्हारे आगे-आगे प्रयाण करे। रावणने त्रिशिरा, देवान्तक नरान्तकादि अपने पुत्रोंको आशीर्वाद दिया- मैं इस समय शोक-सन्तप्त हूँ। कुम्भकर्ण क्या गया, मेरी शक्ति, साहस सब चला गया। मुझे सम्हलनेमें समय लगेगा। मेरे दोषसे मेरा भाई मारा गया। उसे ब्रह्माने कहा था- जब असमय जगा दिया जाय, समझ लेना कि अब मृत्य तुझे अनन्त निद्रा देनेवाली है।

हाय। मुझ स्वार्थान्धने भाईको असमय जगाया। आज दशग्रीव अत्यन्त व्याकुल था। उसे कुम्भकर्णपर गर्व था। इस सदा सोनेवाले भोले भाईसे असीम अनुराग था।

आप आकुलताका त्याग कर दें। नरान्तकने आश्वासन दिया- हम सब शत्रुपर विजय प्राप्त करके ही आपके सम्मुख आवेंगे। अन्यथा अब समरभूमि हमारी अनन्त शय्या होगी। लमासे जो यह प्रतिज्ञा करके गया, उसके भाग्यमें समर शय्या ही है- इसे दशग्रीव समझता था। पुत्रोंको विदा करते उसका हृदय विदीर्ण हो रहा था- पर कोई उपाय नहीं था। यह अग्नि उसने स्वयं लगायी थी। इस नरमेध यज्ञमें अपनोंकी आहुति देनेको अब वह विवश था।

८) मेघनाद का राम-लक्ष्मणको नागपाश में बाँधना

शिवजी कहते हैं हे गिरिजे, कुम्भकर्ण जो नीच राक्षस और पापकी खान था, उसे भी श्रीरामने अपना परमधाम दे दिया। अत: वे मनुष्य निश्चय ही मन्दबुद्धि हैं जो उन श्रीरामको नहीं भजते। दिनका अन्त होनेपर दोनों सेनाएँ लौट पड़ीं। आजके युद्धमें योद्धाओंको बड़ी थकावट हुई; परन्तु श्रीरामकी कृपासे वानरसेनाका बल उसी प्रकार बढ़ गया जैसे घास पाकर अग्नि बहुत बढ़ जाती है।

उधर राक्षस दिन-रात इस प्रकार घटते जा रहे हैं जिस प्रकार अपने ही मुखसे कहनेपर पुण्य घट जाते हैं। रावण बहुत विलाप कर रहा है। बार-बार भाई कुम्भकर्ण का सिर कलेजेसे लगाता है।

स्त्रियाँ उसके बड़े भारी तेज और बलको बखान करके हाथोंसे छाती पीट-पीटकर रो रही हैं। उसी समय मेघनाद आया और उसने

बहुत-सी कथाएँ कहकर पिताको समझाया। और कहा- हे तात, क्या करने किसलिए रो रहे हो ? जिसका जन्म होता है, उसका नाश भी होता है। मृत्युलोक में अवतरित होकर कोई भी चिरजीवी नहीं होता। इसलिए किसलिए शोक धारण कर रहे हो ? जो होनेवाला हो, वह होगा ही। नर, वानर जिस किसी ने कुम्भकर्ण को मार डाला है, मैं जानता हूँ, उसके लिए अन्त में अब विपरीत काल आ गया है। कल मेरा पुरुषार्थ देखियेगा। अभी बहुत बड़ाई क्या करूँ ? हे तात। मैंने अपने इष्टदेवसे जो बल और रथ पाया था वह बल और रथ अबतक आपको नहीं दिखलाया था। इस प्रकार डींग मारते हुए सबेरा हो गया। लंकाके चारों दरवाजोंपर बहुतसे वानर आ डटे। इधर कालके समान वीर वानर-भालू हैं और उधर अत्यन्त रणधीर राक्षस। दोनों ओरके योद्धा अपनी-अपनी जयके लिये लड़ रहे हैं। हे गरुड़। उनके युद्धका वर्णन नहीं किया जा सकता। मेघनाद उसी पूर्वोक्त मायामय रथपर चढ़कर आकाशमें चला गया और अट्टहास करके गरजा, जिससे वानरोंकी सेनामें भय छा गया। वह शक्ति, शूल, तलवार, कृपाण आदि अस्त्र, शस्त्र एवं वज्र आदि बहुतसे आयुध चलाने तथा फरसे, परिघ, पत्थर आदि डालने और बहुत-से बाणोंकी वृष्टि करने लगा।

युद्धस्थलमें भयानक कर्म करनेवाले बालिपुत्र अङ्गदसे पराजित होकर इन्द्रजित्ने बड़ा भयंकर क्रोध प्रकट किया।

रावणकुमार वीर इन्द्रजित् ब्रह्माजीसे वर प्राप्त कर चुका था। युद्धमें अधिक कष्ट पानेके कारण वह पापी रावणपुत्र क्रोधसे अचेत-सा हो रहा था; अत: अन्तर्धान-विद्याका आश्रय ले अदृश्य हो उसने वज्रके समान तेजस्वी और तीखे बाण बरसाने आरम्भ किये।

समराङ्गणमें कुपित हुए इन्द्रजित्ने घोर सर्पम बाणोंद्वारा श्रीराम और लक्ष्मणको घायल कर दिया। वे दोनों रघुवंशी बन्धु अपने सभी अङ्गोंमें चोट खाकर क्षत-विक्षत हो रहे थे।

आकाशमें दसों दिशाओंमें बाण छा गये, मानो मघा नक्षत्रके बादलोंने झड़ी लगा दी हो। पकड़ो, पकड़ो, मारो ये शब्द कानोंसे सुनायी पड़ते हैं। पर जो मार रहा है उसे कोई नहीं जान पाता।

पर्वत और वृक्षोंको लेकर वानर आकाशमें दौड़कर जाते हैं। पर उसे देख नहीं पाते, इससे दुखी होकर लौट आते हैं- मेघनादने मायाके बलसे अटपटी घाटियों, रास्तों और पर्वत-कन्दराओंको बाणोंके पिंजरे बना दिये बाणोंसे छा दिया।

अब कहाँ जायँ, यह सोचकर रास्ता न पाकर वानर व्याकुल हो गये। मानो पर्वत इन्द्रकी कैदमें पड़े हों। मेघनादने मारुति हनुमान, अंगद, नल और नील आदि सभी बलवानोंको व्याकुल कर दिया।

फिर उसने लक्ष्मणजी, सुग्रीव और विभीषणको बाणोंसे मारकर उनके शरीरोंको चलनी कर दिया। फिर वह श्रीरघुनाथसे लड़ने लगा। वह जो बाण छोड़ता है, वे साँप होकर लगते हैं।

नागपाश बाण बडा ही भयंकर बाण है, जिसके नाम पर इन्द्र, यम और वरुण तक काँपते हैं। प्रबल ओजपूर्ण ब्रह्मास्त्र सा नागपाश बाण है। उसके एक बाण से चौरासी लाख साँप उत्पन्न हो गये। साँप बनकर वह बाण गगन में गया और फन काढ़ लिया और साँप के मुँह से मानों आग लपलपाने लगी। उनके मुँह से भयंकर अग्नि की लौ निकलने लगी। वासुकि तक काँपने लग गये। वह अजेय बाण चल पडा, एक-एक साँप मानों अग्नि के समान हो, और वे जाकर राम-लक्ष्मण के हाथ-पैरों में लिपट गये। कोई साँप तो गले में लिपट गया तो कोई पैर में। भुजंग सारे अंग भर में लिपट गये। हाथ-पैर हिलाने डुलाने में वे असमर्थ हो गये और गले में फाँसी जैसी लग गयी। नागपाश से बँध गये और विष की ज्वाला से उनके शरीर शिथिल हो गये।

जो स्वतंत्र, अनन्त, एक अखण्ड और निर्विकार हैं, वे खरके शत्रु श्रीराम लीलासे नागपाशके वशमें हो गये उससे बँध गये। श्रीरामचन्द्र सदा स्वतन्त्र, एक अद्वितीय, भगवान हैं। वे नटकी तरह अनेकों प्रकारके दिखावटी चरित्र करते हैं।

रणकी शोभाके लिये प्रभुने अपनेको नागपाशमें बँधा लिया; किन्तु उससे देवताओंको बड़ा भय हुआ।

अदृश्य रहकर मेघनादने बाण वर्षा प्रारम्भ की। उसने सभी वानरोंको और विभीषणको भी व्याकुल कर दिया। वह अन्तरिक्षमें ही श्रीरामके समीप आया और नागास्त्रका प्रयोग करके ऐसे बाण मारे कि वे सर्प होकर श्रीराम-लक्ष्मणके शरीरोंसे लिपट गये। दोनों भाई नागपाशमें बद्ध मूर्छित होकर गिर पड़े।

मायासे आवृत हो समस्त प्राणियोंके लिये अदृश्य होकर वहाँ कूटयुद्ध करनेवाले उस निशाचरने युद्धस्थलमें दोनों रघुवंशी बन्धु श्रीराम और लक्ष्मणको मोहमें डालते हुए उन्हें सर्पाकार बाणोंके बन्धनमें बाँध लिया।

प्रकटरूपसे युद्ध करते समय जब राक्षसराजकुमार इन्द्रजित् उन दोनों राजकुमारोंको बाधा देनेमें समर्थ न हो सका, तब उनपर मायाका

प्रयोग करनेको उतारू हो गया और उन दोनों भाइयोंको उस दुरात्माने बाँध लिया।

इसी समय जिसके नेत्रप्रान्त कुछ लाल थे और शरीर खानसे काटकर निकाले गये कोयलोंके ढेरकी भाँति काला था, वह रावणकुमार इन्द्रजित अन्तर्धान-अवस्थामें ही उन दोनों भाइयोंसे इस प्रकार बोला- युद्धके समय अलक्ष्य हो जानेपर तो मुझे देवराज इन्द्र भी नहीं देख या पा सकता; फिर तुम दोनोंकी क्या बिसात है ?

मैंने तुम दोनों रघुवंशियोंको कंकपत्रयुक्त बाणके जालमें फँसा लिया है। अब रोषसे भरकर मैं अभी तुम दोनोंको यमलोक भेजे देता हूँ।

कटे-छटे कोयलेकी राशिके समान काला इन्द्रजित् फिर अपने विशाल धनुषको फैलाकर उस महासमरमें घोर बाणोंकी वर्षा करने लगा। वे महान् धनुर्धर वीर भूपाल मर्मस्थलके भेदनसे विचलित एवं कृशका हो पृथ्वीपर गिर पड़े।

युद्धभूमिमें वीरशय्यापर सोये हुए वे दोनों वीर रक्तसे नहा उठे थे। उनके सारे अङ्गोंमें बाणरूपधारी नाग लिपटे हुए थे तथा वे अत्यन्त पीड़ित एवं व्यथित हो रहे थे।

नागपाशमें बँधकर वीरशय्यापर सोये हुए उन दोनों भाइयोंको चारों ओरसे घेरकर सब वानर खड़े हो गये। वहाँ आये हुए हनुमान् आदि मुख्य-मुख्य वानर व्यथित हो बड़े विषादमें पड़ गये।

शिवजी कहते हैं- हे गिरिजे। जिनका नाम जपकर मुनि भव जन्म-मृत्यु की फाँसीको काट डालते हैं, वे सर्वव्यापक और विश्वनिवास विश्वके आधार प्रभु कहीं बन्धनमें आ सकते हैं ?

मेघनादने सेनाको व्याकुल कर दिया। फिर वह प्रकट हो गया और दुर्वचन कहने लगा। इसपर जाम्बवान्ने कहा- अरे दुष्ट। खड़ा रह। यह सुनकर उसे बड़ा क्रोध बढ़ा।

अरे मूर्ख। मैंने बूढ़ा जानकर तुझको छोड़ दिया था। अरे अधम। अब तू मुझीको ललकारने लगा है ? ऐसा कहकर उसने चमकता हुआ त्रिशूल चलाया। जाम्बवान् उसी त्रिशूलको हाथसे पकड़कर दौड़ा और उसे मेघनादकी छातीपर दे मारा। वह देवताओंका शत्रु चक्कर खाकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। जाम्बवानने फिर क्रोधमें भरकर पैर पकड़कर उसको घूमाया और पृथ्वीपर पटककर उसे अपना बल दिखलाया। किन्तु वरदानके प्रतापसे वह मारे नहीं मरता। जब जाम्बवान्ने उसका पैर पकड़कर उसे लंकापर फेंक दिया।

हनुमान्जीके साथ नील, द्विविद, मैन्द, सुषेण, कुमुद और अङ्गद तुरंत ही श्रीरघुनाथके लिये शोक करने लगे।

वीरशय्यापर सोये हुए मन्द चेष्टावाले वे दोनों वीर आँसूभरे नेत्रोंवाले अपने यूथपतियोंसे घिरे हुए थे।

बाणोंके जालसे आवृत होकर पृथ्वीपर पड़े हुए उन दोनों रघुवंशी बन्धुओंको देखकर विभीषणसहित सब वानर व्यथित हो उठे।

तब विभीषणने मायासे ही देखना आरम्भ किया। उस समय उन्होंने मायासे ही छिपे हुए अपने उस भतीजेको सामने खड़ा देखा, जिसके कर्म अनुपम थे और युद्धस्थलमें जिसका सामना करनेवाला कोई योद्धा नहीं था।

तेज, यश और पराक्रमसे युक्त विभीषणने मायाके द्वारा ही वरदानके प्रभावसे छिपे हुए वीर इन्द्रजितको देख लिया।

श्रीराम और लक्ष्मणको युद्धभूमिमें सोते देख इन्द्रजित्को बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने समस्त राक्षसोंका हर्ष बढ़ाते हुए अपने पराक्रमका वर्णन आरम्भ किया- वह देखो, जिन्होंने खर और दूषणका वध किया था, वे दोनों भाई महाबली श्रीराम और लक्ष्मण मेरे बाणोंसे मारे गये। यदि सारे मुनिसमूहोंसहित समस्त देवता और असुर भी आ जायँ तो वे इस बाण-बन्धनसे इन दोनोंको छुटकारा नहीं दिला सकते।

जैसे शरद्ऋतुके सारे बादल पानी न बरसानेके कारण व्यर्थ होते हैं, उसी प्रकार श्रीराम, लक्ष्मण और सम्पूर्ण वानरोंके सारे बल-विक्रम निष्फल हो गये। इस प्रकार अग्नितुल्य तेजस्वी सायकोंसे उन मुख्य-मुख्य वानरोंको घायल करके महान् धैर्यशाली और बलवान् रावणकुमार वहाँ जोर-जोरसे गर्जना करने लगा।

इन्द्रजितने भी जब यह देखा कि श्रीराम और लक्ष्मण दोनों भाई पृथ्वीपर निश्चेत पड़े हैं तथा उनका श्वास भी नहीं चल रहा है, तब उन दोनोंको मरा हुआ ही समझा।

इससे युद्धविजयी इन्द्रजित्को बड़ा हर्ष हुआ तथा वह समस्त राक्षसोंका हर्ष बढ़ाता हुआ लमापुरीमें चला गया।

मैंने राम-लक्ष्मणको मार दिया। मेघनादने गर्वपूर्वक लंकामें लौटकर पिताके पदोंमें प्रणाम करके कहा। राक्षस प्रसन्न हो गये। लंकामें विजयोत्सव प्रारम्भ हो गया।

श्रीराम और लक्ष्मणके शरीरों तथा सभी अङ्ग-उपाङ्गोंको बाणोंसे व्याप्त देख सुग्रीवके मनमें भय सा समा गया।

उनके मुखपर दीनता छा गयी, आँसुओंकी धारा बह चली और नेत्र शोकसे व्याकुल हो उठे। उस समय अत्यन्त भयभीत हुए वानरराजसे विभीषणने कहा- सुग्रीव। डरो मत। डरनेसे कोई लाभ नहीं। आँसुओंका यह वेग रोको।

वीर। सभी युद्धोंकी प्राय: ऐसी ही स्थिति होती है, उनमें विजय निश्चित नहीं हुआ करती। यदि हमलोगोंका भाग्य शेष होगा तो ये दोनों महाबली महात्मा अवश्य मूर्छा त्याग देंगे। वानरराज। तुम अपनेको और मुझ अनाथको भी सँभालो। जो लोग सत्य-धर्ममें अनुराग रखते हैं, उन्हें मृत्युका भय नहीं होता है।

वानरसम्राट। यह समय घबरानेका नहीं है। ऐसे समयमें अधिक स्नेहका प्रदर्शन भी मौतका भय उपस्थित कर देता है।

श्रीरामके लिये यह संकट कुछ भी नहीं है। ये मर नहीं सकते हैं; क्योंकि जिनकी आयु समाप्त हो चली है, उनके लिये जो दुर्लभ लक्ष्मी (शोभा) है, वह इनका त्याग नहीं कर रही है।

कपिश्रेष्ठ। देखो, इन वानरोंके मनमें भय समा गया है, इसीलिये ये आँखें फाड़-फाड़कर देखते हैं और आपसमें कानाफूँसी करते हैं।

इस प्रकार सुग्रीवको आश्वासन दे राक्षसराज विभीषणने भागनेके लिये उद्यत हुई वानर-सेनाको फिरसे सान्त्वना दी।

इधर महामायावी इन्द्रजित सारी सेनाके साथ लमापुरीमें लौटा और अपने पिताके पास आया।

वहाँ रावणके पास पहुँचकर उसने उसे हाथ जोड़कर प्रणाम किया और श्रीराम-लक्ष्मणके मारे जानेका प्रिय संवाद सुनाया।

राक्षसोंके बीचमें अपने दोनों शत्रुओंके मारे जानेका समाचार सुनकर रावण हर्षसे उछल पड़ा और उसने अपने पुत्रको हृदयसे लगा लिया। महारथी इन्द्रजितकी उस बातको सुनकर रावणकी अन्तरात्मा हर्षके उद्रेकसे खिल उठी। दशरथनन्दन श्रीरामकी ओरसे जो उसे भय और चिन्ता प्राप्त हुई थी, उसे उसने त्याग दिया और प्रसन्नतापूर्ण वचनोंद्वारा अपने पुत्रका अभिनन्दन किया।

रावणकुमार इन्द्रजित् जब अपना काम बनाकर लमामें चला गया, तब सभी श्रेष्ठ वानर श्रीरघुनाथको चारों ओरसे घेरकर उनकी रक्षा करने लगे। उधर हर्षसे भरे हुए रावणने भी अपने पुत्र इन्द्रजित्को बिदा करके उस समय सीताजीकी रक्षा करनेवाली राक्षसियोंको बुलवाया- आज्ञा पाते ही त्रिजटा तथा अन्य राक्षसियाँ उसके पास आयीं। तब हर्षमें भरे हुए राक्षसराजने उन राक्षसियोंसे कहा-

तुमलोग विदेहकुमारी सीतासे जाकर कहो कि इन्द्रजित्ने राम और लक्ष्मणको मार डाला। फिर पुष्पकविमानपर सीताको चढ़ाकर रणभूमिमें ले जाओ और उन मारे गये दोनों बन्धुओंको उसे दिखा दो।

जिसके आश्रयसे गर्वमें भरकर यह मेरे पास नहीं आती थी, वह इसका पति अपने भाईके साथ युद्धके मुहानेपर मारा गया।

आज रणभूमिमें कालके अधीन हुए राम और लक्ष्मण को देखकर वह उनकी ओरसे अपना मन हटा लेगी तथा अपने लिये दूसरा कोई आश्रय न देखकर उधरसे निराश हो सीता स्वयं ही मेरे पास चली आयेगी।

दुरात्मा रावणकी वह बात सुनकर वे सब राक्षसियाँ अशोकवाटिकामें बैठी हुई मिथिलेशकुमारीके पास आयीं।

उन राक्षसियोंने पतिके शोकसे व्याकुल हुई सीताको तत्काल पुष्पकविमानपर चढ़ाया।

इधर हर्षसे भरे हुए राक्षसराज रावणने लमामें सर्वत्र यह घोषणा करा दी कि राम और लक्ष्मण रणभूमिमें इन्द्रजित्के हाथसे मारे गये।

तदनन्तर सीताने बाणशय्यापर सोये हुए दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मणको भी देखा, जो बाणोंसे पीड़ित हो संज्ञाशून्य होकर पड़े थे।

निर्दोष अङ्गोंवाली श्यामलोचना जनकनन्दिनी सीता अपने पति श्रीराम और देवर लक्ष्मणको धूलमें लोटते देख फूट-फूटकर रोने लगीं। उनके नेत्रोंसे आँसू बह रहे थे और हृदय शोकके आघातसे पीड़ित था। देवताओंके तुल्य प्रभावशाली उन दोनों भाइयोंको उस अवस्थामें देखकर उनके मरणकी आशमा करती हुई वे दु:ख एवं चिन्तामें डूब गयीं और इस प्रकार बोलीं।

सामुद्रिक लक्षणोंके ज्ञाता विद्वानोंने मुझे पुत्रवती और सधवा बताया था। आज श्रीरामके मारे जानेसे वे सब लक्षण-ज्ञानी पुरुष असत्यवादी हो गये। जिन्होंने मुझे यज्ञपरायण तथा विविध सत्रोंका संचालन करेनवाले राजाधिराजकी पत्नी बताया था, आज श्रीरामके मारे जानेसे वे सभी लक्षणवेत्ता पुरुष झूठे हो गये।

ज्योतिषशास्त्रके सिद्धान्तको जाननेवाले जिन ब्राह्मणोंने मेरे सामने ही मुझे नित्य मङ्गलमयी कहा था, वे सभी लक्षणवेत्ता पुरुष आज श्रीरामके मारे जानेपर असत्यवादी सिद्ध हो गये। ज्योतिषके सिद्धान्तको जाननेवाले निपुण ब्राह्मणोंने यह बताया था कि मेरा पतिके साथ राज्याभिषेक होगा, किंतु आज वे सारी बातें झूठी हो गयीं।

इन दोनों भाइयोंने मेरे लिये जनस्थानको छान डाला तथा मेरा समाचार पाकर अक्षोभ्य समुद्रको पार किया, किंतु हाय। इतना सब

कर लेनेके बाद थोड़ी-सी राक्षससेनाके द्वारा जिसे हराना इनके लिये गोपदको लाँघनेके समान था, वे दोनों मारे गये।

परंतु ये दोनों रघुवंशी बन्धु तो वारुण, आग्नेय, ऐन्द्र, वायव्य और ब्रह्मशिर आदि अस्त्रोंको भी जानते थे। मरनेसे पहले इन्होंने उन अस्त्रोंका प्रयोग क्यों नहीं किया ?

मुझ अनाथके रक्षक श्रीराम और लक्ष्मण इन्द्रतुल्य पराक्रमी थे, किंतु इन्द्रजितने स्वयं मायासे अदृश्य रहकर ही इन्हें रणभूमिमें मार डाला है। मैं श्रीराम, महारथी लक्ष्मण, अपने और अपनी माताके लिये भी उतना शोक नहीं करती हूँ जितना अपनी तपस्विनी सासुजीके लिये कर रही हूँ। वे तो प्रतिदिन यही सोचती होंगी कि वह दिन कब आयेगा जब कि वनवासका व्रत समाप्त करके वनसे लौटे हुए श्रीराम, लक्ष्मण और सीताको मैं देखूँगी।

इस प्रकार विलाप करती हुई सीतासे राक्षसी त्रिजटाने कहा- देवि। विषाद न करो। तुम्हारे ये पतिदेव जीवित हैं।

युद्धमें स्वामीके मारे जानेपर योद्धाओंके मुँह क्रोध और हर्षकी उत्सुकतासे युक्त नहीं रहते (किंतु यहाँ वे दोनों बातें पायी जाती हैं। इसलिये ये दोनों जीवित हैं)

विदेहनन्दिनि। यह पुष्पक नामक विमान दिव्य है। यदि इन दोनोंके प्राण चले गये होते तो (वैधव्यावस्थामें) यह तुम्हें धारण न करता। इसके सिवा जब प्रधान वीर मारा जाता है, तब उसकी सेना उत्साह और उद्योगसे हीन हो युद्धस्थलमें उसी तरह मारी-मारी फिरती है, जैसे कर्णधारके नष्ट हो जानेपर नौका जलमें ही बहती रहती है। परंतु तपस्विनि। इस सेनामें किसी प्रकार की घबराहट या उद्वेग नहीं है। यह इन दोनों राजकुमारोंकी रक्षा कर रही है। ये दोनों भाई जीवित हैं।

इसलिये अब तुम इन भावी सुखकी सूचना देनेवाले अनुमानों (हेतुओं) से निश्चिन्त हो जाओ- विश्वास करो कि ये जीवित हैं। तुम इन दोनों रघुवंशी राजकुमारोंको इसी रूपमें देखो कि ये मारे नहीं गये हैं।

मिथिलेशकुमारी। तुम्हारा शील-स्वभाव तुम्हारे निर्मल चरित्रके कारण बड़ा सुखदायक जान पड़ता है।

इन दोनों वीरोंको रणभूमिमें इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता और असुर भी नहीं जीत सकते।

मिथिलेशकुमारी। यह महान् आश्चर्यकी बात तो देखो। बाणोंके लगनेसे ये अचेत होकर पड़े हैं तो भी लक्ष्मी (शरीरकी सहज कान्ति) इनका त्याग नहीं कर रही है।

जनककिशोरी। तुम श्रीराम और लक्ष्मणके लिये शोक, दु:ख और मोह त्याग दो। ये अब मर नहीं सकते।

त्रिजटाकी यह बात सुनकर सीताने हाथ जोड़कर उससे कहा- बहिन। ऐसा ही हो।

फिर मनके समान वेगवाले पुष्पकविमानको लौटाकर त्रिजटा दु:खिनी सीताको लमापुरीमें ही ले आयी।

तत्पश्चात् त्रिजटाके साथ विमानसे उतरनेपर राक्षसियोंने उन्हें पुन: अशोकवाटिकामें ही पहुँचा दिया।

इसी बीचमें पराक्रमी श्रीराम नागपाशसे बँधे होनेपर भी अपने शरीरकी दृढ़ता और शक्तिमत्ताके कारण मूर्छासे जाग उठे।

उन्होंने देखा कि भाई लक्ष्मण बाणोंसे अत्यन्त घायल होकर खूनसे लथपथ हुए पड़े हैं और उनका चेहरा बहुत उतर गया है; अत: वे आतुर होकर विलाप करने लगे- हाय। यदि मुझे सीता मिल भी गयीं तो मैं उन्हें लेकर क्या करूँगा ? अथवा इस जीवनको ही रखकर क्या करना है ? जब कि आज मैं अपने पराजित हुए भाईको युद्धस्थलमें पड़ा हुआ देख रहा हूँ।

मर्त्यलोकमें ढूँढ़नेपर मुझे सीता-जैसी दूसरी स्त्री मिल सकती है; परंतु लक्ष्मणके समान सहायक और युद्धकुशल भाई नहीं मिल सकता। सुमित्राके आनन्दको बढ़ानेवाले लक्ष्मण यदि जीवित न रहे तो मैं वानरोंके देखते-देते अपने प्राणोंका परित्याग कर दूँगा।

लक्ष्मणके बिना यदि मैं अयोध्याको लौटूँ तो माता कौसल्या और कैकेयीको क्या जवाब दूँगा तथा अपने पुत्रको देखनेके लिये उत्सुक हो बछड़ेसे गायके समान काँपती और कुररीकी भाँति रोती-बिलखती माता सुमित्रासे क्या कहूँगा ? उन्हें किस तरह धैर्य बँधाऊँगा ?

मैं यशस्वी भरत और शत्रुघ्नसे किस तरह यह कह सकूँगा कि लक्ष्मण मेरे साथ वनको गये थे; किंतु मैं उन्हें वहीं खोकर उनके बिना ही लौट आया हूँ। दोनों माताओंसहित सुमित्राका उपालम्भ मैं नहीं सह सकूँगा; अत: यहीं इस देहको त्याग दूँगा। अब मुझमें जीवित रहनेका उत्साह नहीं है। लक्ष्मण। जब मैं अत्यन्त विषादमें डूब जाता था, उस समय तुम्हीं सदा मुझे आश्वासन देते थे; परंतु आज तुम्हारे प्राण नहीं रहे, इसलिये आज तुम मुझ दुखियासे बात करनेमें भी असमर्थ हो।

भैया। जिस रणभूमिमें आज तुमने बहुत-से राक्षसोंको मार गिराया था, उसीमें शूरवीर होकर भी तुम बाणोंद्वारा मारे जाकर सो रहे हो।

जिस तरह वनकी यात्रा करते समय महातेजस्वी लक्ष्मण मेरे पीछे-पीछे चले आये थे, उसी प्रकार मैं भी यमलोकमें इनका अनुसरण करूँगा। मुझे ऐसा कोई प्रसंग याद नहीं आता, जब कि वीर लक्ष्मणने अत्यन्त कुपित होनेपर भी मुझे कभी कोई कठोर था अप्रिय बात सुनायी हो। जो अपने अस्त्रोंद्वारा महात्मा इन्द्रके भी अस्त्रोंको काट सकते थे, वे ही बहुमूल्य शय्यापर सोने योग्य लक्ष्मण आज स्वयं मारे जाकर पृथ्वीपर सो रहे हैं। मैं विभीषणको राक्षसोंका राजा न बना सका; अत: मेरा वह झूठा प्रलाप मुझे सदा जलाता रहेगा, इसमें संशय नहीं है। वाननराज सुग्रीव। तुम इसी मुहूर्तमें यहाँसे लौट जाओ; क्योंकि मेरे बिना तुम्हें असहाय समझकर रावण तुम्हारा तिरस्कार करेगा। मित्र सुग्रीव। सेना और सामग्रियोंसहित अङ्गदको आगे करनके नल और नीलके साथ तुम समुद्रके पार चले जाओ।

किंतु सुग्रीव। मनुष्योंके लिये दैवके विधानको लाँघना असम्भव है। मेरे परम मित्र अथवा उत्तम सुहृद्के नाते तुम जैसे धर्मभीरु पुरुषके द्वारा जो कुछ किया जा सकता था, वह सब तुमने किया है। वानरशिरोमणियों। तुम सबने मिलकर मित्रके इस कार्यको सम्पन्न किया है। अब मैं आज्ञा देता हूँ- तुम सब जहाँ इच्छा हो, वहाँ चले जाओ।

भगवान् श्रीरामका यह विलाप भूरी आँखोंवाले जिन-जिन वानरोंने सुना, वे सब अपने नेत्रोंसे आँसू बहाने लगे।

तदनन्तर समस्त सेनाओंको स्थिरतापूर्वक स्थापित करके विभीषण हाथमें गदा लिये तुरंत उस स्थानपर लौट आये, जहाँ श्रीराम विद्यमान थे। इसी बीचमें वीर, विभीषण हाथमें गदा लिये वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने विजयसूचक आशीर्वाद देकर सुग्रीव तथा श्रीरघुनाथकी अभ्युदय कामना की। ये दोनों वीर सरलतापूर्वक पराक्रम प्रकट कर रहे थे। परंतु भाईके इस दुरात्मा कुपुत्रने अपनी कुटिल राक्षसी बुद्धिके द्वारा इन दोनोंके साथ धोखा किया।

जिनके बल-पराक्रमका आश्रय लेकर मैंने लमाके राज्यपर प्रतिष्ठित होनेकी अभिलाषा की थी, वे ही दोनों भाई पुरुषशिरोमणि श्रीराम और लक्ष्मण देह-त्यागके लिये सोये हुए हैं।

आज मैं जीते-जी मर गया। मेरा राज्यविषयक मनोरथ नष्ट हो गया। शत्रु रावणने जो सीताको न लौटानेकी प्रतिज्ञा की थी, उसकी वह प्रतिज्ञा पूरी हुई। उसके पुत्रने उसे सफलमनोरथ बना दिया।

इस प्रकार विलाप करते हुए विभीषणको हृदयसे लगाकर शक्तिशाली वानरराज सुग्रीवने उनसे यों कहा- धर्मज्ञ। तुम्हें लमाका राज्य प्राप्त होगा, इसमें संशय नहीं है। पुत्रसहित रावण यहाँ अपनी कामना पूरी नहीं कर सकेगा।

ये दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण मूर्छा त्यागनेके पश्चात् गरुड़की पीठपर बैठकर रणभूमिमें राक्षसगणोंसहित रावणका वध करेंगे।

अचानक आकाशमें मेघ घिर आये। इतना प्रचण्ड पवन कि वृक्ष टूटकर गिरने लगे। वानर आशंका व्याकुल हुए रात्रिमें कोई और राक्षसी माया ? इतने में दिशाएँ आलोकित हो उठीं। सस्वर सामगान गूँजने लगा गगनमें। प्रतप्त स्वर्णकान्ति विनता-नन्दन गरुड़के पक्ष चालनका प्रभाव था यह प्रचण्ड पवन। उनके पंखोंकी गतिसे ही श्रुतिके स्वर उठ रहे थे। उन्हें देवर्षि नारदने भेजा था। अपने पंख समेटे वे समर भूमिमें उतर पड़े। उनके उतरते ही श्रीराम-लक्ष्मणके शरीरोंमें लिपटे सर्प उन्हें छोड़कर अदृश्य हो गये।

गरुड़के पंखसे उठी हुई प्रचण्ड वायुने सम्पूर्ण द्वीपके बड़े-बड़े वृक्षोंकी डालियाँ तोड़ डालीं और उन्हें लवणसमुद्रके जलमें गिरा दिया।

लमावासी और महाकाय सर्प भयसे थर्रा उठे। सम्पूर्ण जलजन्तु शीघ्रतापूर्वक समुद्रके जलमें घुस गये।

तदनन्तर दो ही घड़ीमें समस्त वानरोंने प्रज्वलित अग्निके समान तेजस्वी महाबली वितनानन्दन गरुड़को वहाँ उपस्थित देखा।

उन्हें आया देख जिन महाबली नागोंने बाणके रूपमें आकर उन दोनों महापुरुषोंको बाँध रक्खा था, वे सब-के-सब वहाँसे भाग खड़े हुए। तत्पश्चात् गरुड़ने उन दोनों रघुवंशी बन्धुओंको स्पर्श करके अभिनन्दन किया और अपने हाथोंसे उनके चन्द्रमाके समान कान्तिमान् मुखोंको पोंछा। गरुड़जीका स्पर्श प्राप्त होते ही श्रीराम और लक्ष्मणके सारे घाव भर गये और उनके शरीर तत्काल ही सुन्दर कान्तिसे युक्त एवं स्निग्ध हो गये। उनमें तेज, वीर्य, बल, ओज, उत्साह, दृष्टिशक्ति, बुद्धि और स्मरणशक्ति आदि महान गुण पहलेसे भी दुगुने हो गये। इधर देवर्षि नारदजीने गरुड़को भेजा। वे तुरंत ही श्रीरामके पास आ पहुँचे। पक्षिराज गरुड़जी सब माया-सर्पोंके समूहोंको पकड़कर खा गये। तब सब वानरोंके झुंड मायासे रहित होकर हर्षित हुए।

इन्द्रजितके कारण हमलोगोंपर जो महान् संकट आ गया था, उसे हम आपकी कृपासे लाँघ गये। आप विशिष्ट उपायके ज्ञाता हैं; अत: आपने हम दोनोंको शीघ्र ही पूर्ववत् बलसे सम्पन्न कर दिया।

जैसे पिता दशरथ और पितामह अजके पास जानेसे मेरा मन प्रसन्न हो सकता था, वैसे ही आपको पाकर मेरा हृदय हर्षसे खिल उठा है।

श्रीराम प्रसन्न होकर गरुड़का स्वागत करने उठे। उन नारायणके वाहनने अपने दक्षिण पक्षसे लक्ष्मणका स्पर्श कर दिया। बल, तेज, स्मृति, उत्साह द्विगुण हो उठा दोनों भाइयोंमें। मैं दाशरथि राम आपको नमस्कार करता हूँ। मर्यादा पुरुषोत्तमने मस्तक झुकाया- आप पक्षधर, दिव्याभरण, दिव्यवस्त्र, दिव्यदेह। हम विपन्नोंपर अनुग्रह करनेवाले आप कौन हैं ?

तब गरुड़ने मन-ही-मन प्रसन्न हो आनन्दके आँसुओंसे भरे हुए नेत्रवाले श्रीरामसे कहा-

काकुत्स्थ। मैं आपका प्रिय मित्र गरुड़ हूँ। बाहर विचरनेवाला आपका प्राण हूँ। आप दोनोंकी सहायताके लिये ही मैं इस समय यहाँ आया हूँ। महापराक्रमी असुर, महाबली दानव, देवता तथा गन्धर्व भी यदि इन्द्रको आगे करके यहाँ आते तो वे भी इस भयंकर सर्पाकार बाणके बन्धनसे आपको छुड़ानेमें समर्थ नहीं हो सकते थे। मैं देवताओंके मुखसे आप लोगोंके नागपाशमें बँधनेका समाचार सुनकर बड़ी उतावलीके साथ यहाँ आया हूँ। हम दोनोंमें जो स्नेह है, उससे प्रेरित हो मित्रधर्मका पालन करता हुआ सहसा आ पहुँचा हूँ।

आकर मैंने इस महाभयंकर बाण-बन्धनसे आप दोनोंको मुक्त किया। अब आपको सदा ही सावधान रहना चाहिये।

समस्त राक्षस स्वभावसे ही संग्राममें कपटपूर्वक युद्ध करनेवाले होते हैं, परंतु शुद्ध भाववाले आप जैसे शूरवीरोंका सरलता ही बल है।

इसलिये इसी दृष्टान्तको सामने रखकर आपको रणक्षेत्रमें राक्षसोंका कभी विश्वास नहीं करना चाहिये; क्योंकि राक्षस सदा ही कुटिल होते हैं। लीलामय। यह आपका सेवक है। नरलीलाको ही मानना है तो मैं आपका मित्र गरुत्मान हूँ। गरुड़ने नम्रतापूर्वक कहा- इन्द्रजितने आप दोनोंको नागपाशमें बाँध दिया है, यह समाचार देवर्षिसे पाकर मैं शीघ्रतापूर्वक आया हूँ। ये कद्रूके पुत्र नाग बहुत विषैले हैं इनका विष बहुत दाह उत्पन्न करता है। ये मन्त्र-प्रभावसे आह्वान करनेपर आ जाते हैं। अब इस युद्धमें इनको इन्द्रजित पुन: नहीं बुला सकता। ऐसा कहकर महाबली गरुड़ने उस समय परम स्नेही श्रीरामको हृदयसे लगाकर उनसे जानेकी आज्ञा लेनेका विचार किया। वे बोले- शत्रुओंपर भी दया दिखानेवाले धर्मज्ञ मित्र रघुनन्दन। अब मैं सुखपूर्वक यहाँसे प्रस्थान करूँगा। इसके लिये आपकी आज्ञा चाहता हूँ।

ऐसी बातें कहकर शीघ्रगामी एवं शक्तिशाली गरुड़ने श्रीरामको नीरोग करके उन वानरोंके बीचमें उनकी परिक्रमा की और उन्हें हृदयसे लगाकर वे वायुके समान गतिसे आकाशमें चले गये।

गरुड़ने नागपाश काटकर राम-लक्ष्मण की मूर्छा दूर की पर उसी समय गरुड़ को मोह त्यास हुआ। नारदजीने बताया है कि यह तेरे स्वामी है पर यह मेरे स्वामी कैसे हो सकते है। जबकि ये तो एक साधारण मानवों की भाँति सर्पोंके पासमें बँधे हुए हैं। अपना संशयमिटाने के लिये वे सीधे यहाँसे नारदजीके पास गये।

फिर तो वानरोंने डंके पीटे, मृदंग बजाये, शफ्नाद किये और हर्षोल्लाससे भरकर पहलेकी भाँति वे गर्जने और ताल ठोंकने लगे।

९) धूम्राक्ष, वज्रदंष्ट्र और अकम्पन का वध- दूसरे पराक्रमी वानर जो वृक्षों और पर्वत-शिखरोंको हाथमें लेकर युद्ध करते थे, नाना प्रकारके वृक्ष उखाड़कर लाखोंकी संख्यामें युद्धके लिये खड़े हो गये। जोर-जोरसे गर्जते और निशाचरोंको डराते हुए सारे वानर युद्धकी इच्छासे लमाके दरवाजोंपर आकर डट गये।

उस समय भीषण गर्जना करते हुए महाबली वानरोंका वह तुमुलनाद राक्षसोंसहित रावणने सुना।

मन्त्रियोंसे ऐसा कहकर राक्षसराज रावणने अपने पास ही खड़े हुए राक्षसोंसे कहा- तुमलोग शीघ्र ही जाकर इस बातका पता लगाओ कि शोकका अवसर उपस्थित होनेपर भी इन सब वानरोंके हर्षका कौन-सा कारण प्रकट हो गया है।

जब उन्हें मालूम हुआ कि महाभाग श्रीराम और लक्ष्मण उस अत्यन्त भयंकर नागरूपी बाणोंके बन्धनसे मुक्त होकर उठ गये हैं, तब समस्त राक्षसोंको बड़ा दु:ख हुआ।

वे बोले- महाराज। कुमार इन्द्रजितने जिन राम और लक्ष्मण दोनों भाइयोंको युद्धस्थलमें नागरूपी बाणोंके बन्धनसे बाँधकर हाथ हिलानेमें भी असमर्थ कर दिया था, वे गजराजके समान पराक्रमी दोनों वीर जैसे हाथी रस्सेको तोड़कर स्वतन्त्र हो जायँ, उसी तरह बाणबन्धनसे मुक्त हो समराङ्गणमें खड़े दिखायी देते हैं।

ऐसा कहकर अत्यन्त कुपित हुआ रावण फुफकारते हुए सर्पके समान जोर-जोरसे साँस लेने लगा और राक्षसोंके बीचमें धूम्राक्ष नामक निशाचरसे बोला- भयानक पराक्रमी वीर। तुम राक्षसोंकी बहुत बड़ी सेना साथ लेकर वानरोंसहित रामका वध करनेके लिये शीघ्र जाओ। बुद्धिमान् राक्षसराजके इस प्रकार आज्ञा देनेपर धूम्राक्षने उसकी परिक्रमा की तथा वह तुरंत राजभवनसे बाहर निकल गया।

धूम्राक्षके रथमें सोनेके आभूषणोंसे विभूषित ऐसे गधे बंधे हुए थे जिनके मुँह भेड़ियों और सिंहोंके समान थे। गधेकी भाँति रेंकनेवाला धूम्राक्ष उस दिव्य रथपर सवार हुआ। इस प्रकार बहुत-से राक्षसोंके साथ महापराक्रमी धूम्राक्ष हँसता हुआ पश्चिम द्वारसे, जहाँ हनुमान्‌जी शत्रुका सामना करनेके लिये खड़े थे, युद्धके लिये निकला।

उसके रथके ऊपरी भागपर एक महाभयानक गीध आ गिरा। ध्वजके अग्रभागपर बहुत-से मुर्दाखोर पक्षी परस्पर मुँथे हुए-से गिर पड़े। उसी समय एक बहुत बड़ा श्वेत कबन्ध (धड़) खूनसे लथपथ होकर पृथ्वीपर गिरा।

राक्षसोंके लिये भय देनेवाले वहाँ प्रकट हुए उन भयंकर उत्पातोंको देखकर धूम्राक्ष व्यथित हो उठा और उसके आगे चलनेवाले सभी राक्षस अचेत-से हो गये। नाना प्रकारकी शिलाओं और बहुत-सी शाखावाले वृक्षोंके प्रहारसे वहाँ वानरों और राक्षसोंमें घोर एवं-अद्‌भुत युद्ध होने लगा। विजयोल्लाससे सुशोभित होनेवाले वानरोंने कितने ही राक्षसोंको मसल डाला। कितने ही रक्तभोजी राक्षस उनकी मार खाकर अपने मुखोंसे रक्त वमन करने लगे।

प्रतिपक्षीको वेगपूर्वक गिरानेवाले उन राक्षसोंका बहुत-से अत्यन्त वेगशाली वानरोंने लातों, मुक्कों, दाँतों और वृक्षोंकी मारसे कचूमर निकाल दिया। अपनी सेनाको वानरोंद्वारा भगायी गयी देख राक्षसशिरोमणि धूम्राक्षने युद्धकी इच्छासे सामने आये हुए वानरोंका रोषपूर्वक संहार आरम्भ किया। वानरों और राक्षसोंसे भरा हुआ वह महान् युद्ध बड़ा भयानक प्रतीत होता था। उसमें अस्त्र-शस्त्रोंकी बहुलता थी तथा शिलाओं और वृक्षोंकी वर्षासे सारी रणभूमि भर गयी थी। इस प्रकार धनुष हाथमें धूम्राक्षने युद्धके मुहानेपर बाणोंकी वर्षा करके वानरोंको हँसते-हँसते सम्पूर्ण दिशाओंमें मार भगाया। धूम्राक्षकी मारसे अपनी सेनाको पीड़ित एवं व्यथित हुई देख पवनकुमार हनुमान्‌जी अत्यन्त कुपित हो उठे और एक विशाल शिला हाथमें ले उसके सामने आये।

उस समय क्रोधके कारण उनके नेत्र दुगुने लाल हो रहे थे। उनका पराक्रम अपने पिता वायुदेवताके ही समान था। उन्होंने धूम्राक्षके रथपर वह विशाल शिला दे मारी। वह शिला पहिये, कूबर, अश्व, ध्वज और धनुषसहित उसके रथको चूर-चूर करके पृथ्वीपर गिर पड़ी। इस प्रकार धूम्राक्षके रथको चौपट करके पवनपुत्र हनुमान्‌ने छोटी-बड़ी डालियोंसहित वृक्षोंद्वारा राक्षसोंका संहार आरम्भ किया।

बहुतेरे राक्षसोंके सिर फुट गये और वे रक्तसे नहा उठे। दूसरे बहुत-से निशाचर वृक्षोंकी मारसे कुचले जाकर धरतीपर लोट गये। इस प्रकार राक्षससेनाको खदेड़कर पवनकुमार हनुमान्‌ने एक पर्वतका शिखर उठा लिया और धूम्राक्षपर धावा किया। धूम्राक्षने कुपित हुए हनुमानके मस्तकपर बहुसंख्यक काँटोंसे भरी हुई वह गदा दे मारी। भयानक वेगवाली उस गदाकी चोट खाकर भी वायुके समान बलशाली कपिवर हनुमान्‌ने वहाँ इस प्रहारको कुछ भी नहीं गिना और धूम्राक्षके मस्तकपर वह पर्वतशिखर चला दिया।

पर्वतशिखरकी गहरी चोट खाकर धूम्राक्षके सारे अङ्ग छिन्न-भिन्न हो गये और वह बिखरे हुए पर्वतकी भाँति सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा। धूम्राक्षको मारा गया देख मरनेसे बचे हुए निशाचर भयभीत हो वानरोंकी मार खाते हुए लमामें घुस गये। धूम्राक्षके मारे जानेका समाचार सुनकर राक्षसराज रावणको महान् क्रोध हुआ। वह फुफकारते हुए सर्पके समान जोर-जोरसे साँस लेने लगा।

क्रोधसे कलुषित हो गर्म-गर्म लंबी साँस खींचकर उसने क्रूर निशाचर महाबली वज्रदंष्ट्रसे कहा- वीर। तुम राक्षसोंके साथ जाओ और दशरथकुमार राम और वानरोंसहित सुग्रीवको मार डालो।

युद्धके उद्देश्यसे प्रस्थित हुई राक्षसोंकी वह सारी सेना वर्षाकालमें गर्जते हुए बिजलियोंसहित मेघके समान शोभा पा रही थी। वह सेना लमाके दक्षिणद्वारसे निकली, जहाँ वानरयूथपति अङ्गद राह रोके खड़े थे। उधरसे निकलते ही उन राक्षसोंके सामने अशुभसूचक अपशकुन होने लगा। घोर पशु ऐसी बोली बोलने लगे, जिससे राक्षसोंके संहारकी सूचना मिल रही थी। युद्धके लिये आते हुए योद्धा बुरी तरह लड़खड़ाकर गिर पड़ते थे। इससे उनकी बड़ी दारुण अवस्था हो जाती थी।

इन उत्पातसूचक लक्षणोको देखकर भी महाबली वज्रदंष्ट्रने धैर्य नहीं छोड़ा। वह तेजस्वी वीर युद्धके लिये उत्सुक होकर निकला।

कुछ योद्धा अपने हथियार फेंककर बाहुयुद्ध करने लगते थे। थप्पड़ों, लातों, मुक्कों, वृक्षों और घुटनोंकी मार खाकर कितने ही राक्षसोंके शरीर चूर-चूर हो गये थे। रणदुर्मद वानरोंने शिलाओंसे मार-मारकर कितने ही राक्षसोंका चूरा बना दिया था।

उस समय वज्रदंष्ट्र अपने बाणोंकी मारसे वानरोंको अत्यन्त भयभीत करता हुआ तीनों लोकोंके संहारके लिये उठे हुए पाशधारी यमराजके समान रणभूमिमें विचरने लगा। किंतु प्रलयकालमें संवर्तक अग्नि जैसे प्राणियोंका संहार करती है, उसी तरह बालिपुत्र अङ्गद और भी निर्भय हो दूने क्रोधसे भरकर उन सब राक्षसोंका वध करने लगे।

उनकी आँखें क्रोधसे लाल हो रही थीं। वे इन्द्रके तुल्य पराक्रमी थे। जैसे सिंह छोटे वन्य-पशुओंको अनायास ही नष्ट कर देता है, उसी तरह पराक्रमी अङ्गदने एक वृक्ष उठाकर उन समस्त राक्षसगणोंका घोर संहार आरम्भ किया।

अङ्गदके पराक्रमसे अपनी सेनाका संहार होता देख महाबली राक्षस वज्रदंष्ट्र अत्यन्त कुपित हो उठा। वह इन्द्रके वज्रके समान तेजस्वी अपना भयंकर धनुष खींचकर वानरोंकी सेनापर बाणोंकी वर्षा करने लगा। युद्धमें पीठ न दिखानेवाले और उत्साहपूर्वक जूझनेवाले शूरवीर वानरों और राक्षसोंका वह युद्ध उत्तरोत्तर बढ़ता गया। वानर और राक्षस दोनों ही दलोंके लोग वहाँ धराशायी हो रहे थे। तत्पश्चात् कुछ ही देरमें वानर-सैनिकोंके प्रहारोंसे पीड़ित हो सारी निशाचरसेना वज्रदंष्ट्रके देखते-देखते भाग चली। वानरोंकी मारसे राक्षसोंको भयभीत हुआ देख प्रतापी वज्रदंष्ट्रकी आँखें क्रोधसे लाल हो गयीं। फिर तो वज्रदंष्ट्र और अङ्गद अत्यन्त कुपित हो एक दूसरेसे वेगपूर्वक युद्ध करने लगे। वे दोनों रणभूमिमें बाघ और मतवाले हाथीके समान विचर रहे थे।

वज्रदंष्ट्रके उस पराक्रमको देखकर वानरशिरोमणि अङ्गदने एक विशाल चट्टान लेकर उसके ऊपर दे मारी और बड़े जोरसे गर्जना की।

अङ्गदकी फेंकी हुई वह चट्टान उसके रथपर पहुँच गयी और युद्धके मुहानेपर उसने पहिये, कूबर तथा घोड़ोंसहित उस रथको तत्काल चूर-चूर कर डाला। होशमें आनेपर उस निशाचरने अत्यन्त कुपित हो सामने खड़े हुए बालिपुत्रकी छातीमें गदासे प्रहार किया। फिर गदा त्यागकर वह वहाँ मुक्केसे युद्ध करने लगा। वे वानर और राक्षस दोनों वीर एक दूसरेको मुक्कोंसे मारने लगे। दोनों ही बड़े पराक्रमी थे और परस्पर जूझते हुए मङ्गल एवं बुधके समान जान पड़ते थे। आपसके प्रहारोंसे पीड़ित हो दोनों ही थक गये और मुँहसे रक्त वमन करने लगे।

महाबली बालिकुमारने अपनी निर्मल एवं तेज धारवाली चमकीली तलवारसे वज्रदंष्ट्रका विशाल मस्तक काट डाला।

वज्रदंष्ट्रको मारा गया देख राक्षस भयसे अचेत हो गये। वे वानरोंकी मार खाकर भयके मारे लमामें भाग गये। उनके मुखपर विषाद छा रहा था। वे बहुत दु:खी थे और लज्जाके कारण उन्होंने अपना मुँह कुछ नीचा कर लिया था।

बालिपुत्र अङ्गदके हाथसे वज्रदंष्ट्रके मारे जानेका समाचार सुनकर रावणने हाथ जोड़कर अपने पास खड़े हुए सेनापति प्रहस्तसे कहा-

अकम्पन सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रोंके ज्ञाता हैं, अत: उन्हींको आगे करके भयंकर पराक्रमी दुर्धर्ष राक्षस शीघ्र यहाँसे युद्धके लिये जायँ।

रावणकी उस आज्ञाको शिरोधार्य करके शीघ्रपराक्रमी महाबली सेनाध्यक्षने उस समय युद्धके लिये सेना भेजी।

सेनापतिसे प्रेरित हो भयानक नेत्रोंवाले मुख्य-मुख्य भयंकर राक्षस नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्र लिये नगरसे बाहर निकले।

अकम्पनके कंधे सिंहके समान पुष्ट थे। उसका पराक्रम व्याघ्रके समान था। वह पूर्वोक्त उत्पातोंकी कोई परवा न करके रणभूमिकी ओर चला। उस महान् कोलाहलसे वानरोंकी वह विशाल सेना भयभीत हो गयी। युद्धके लिये उपस्थित हो वृक्षों और शैल-शिखरोंका प्रहार करनेवाले उन वानरों और राक्षसों में महाभयंकर युद्ध होने लगा।

श्रीराम और रावणके निमित्त आत्मत्यागके लिये उद्यत हुए वे समस्त शूरवीर अत्यन्त बलशाली और पर्वतके समान विशालकाय थे। भयंकर कर्म करनेवाले वानर अपनी परिघके समान भुजाओंद्वारा पर्वताकार राक्षसोंके साथ युद्ध करते हुए रणभूमिमें उन्हें मारने लगे। उधर राक्षसलोग भी अत्यन्त कुपित हो हाथोंमें प्रास और तोमल लिये अत्यन्त भयंकर शस्त्रोंद्वारा वानरोंका वध करने लगे। इस समय अधिक रोषसे भरा हुआ राक्षस-सेनापति अकम्पन भी भयानक पराक्रम प्रकट करनेवाले उन सभी राक्षसोंका हर्ष बढ़ाने लगा।

उन वानरशिरोमणियोंद्वारा किये गये उस महान् पराक्रमको देखकर युद्धस्थलमें अकम्पनको बड़ा भारी एवं दु:सह क्रोध हुआ। तदनन्तर तेज चलनेवाले घोड़ोंसे जुते हुए रथके द्वारा रथियोंमें श्रेष्ठ अकम्पन दूरसे ही बाणसमूहोंकी वर्षा करता हुआ उन वानरोंपर टूट पड़ा।

अकम्पनके बाण वानरोंके पीछे लगे थे और वे मृत्युके अधीन होते जाते थे। अपने जाति-भाइयोंकी यह दशा देखकर महाबली हनुमान्‌जी अकम्पनके पास आये। हनुमान्‌जीको युद्धके लिये डटा हुआ देख वे सभी श्रेष्ठ वानर उन बलवान् वीरका आश्रय ले स्वयं भी बलवान् हो गये। अपने हाथमें कोई हथियार नहीं है, यह जानकर क्रोधसे भरे हुए वानरशिरोमणि हनुमान्‌ने बड़े वेगसे पर्वत उखाड़ लिया।

अकम्पनने उस उठे हुए पर्वतशिखरको देख अर्धचन्द्राकार विशाल बाणोंके द्वारा उसे दूरसे ही विदीर्ण कर दिया।

फिर रोष और दर्पसे उन वानरवीरने महान् पर्वतके समान ऊँचे अश्वकर्ण नामक वृक्षके पास जाकर उसे शीघ्रतापूर्वक उखाड़ लिया।

प्रचण्ड क्रोधसे भरे हुए हनुमान्‌ने बड़े वेगसे दौड़कर कितने ही वृक्षोंको तोड़ डाला और पैरोंकी धमकसे वे पृथ्वीको भी विदीर्ण-सी करने लगे। सवारोंसहित हाथियों, रथोंसहित रथियों तथा पैदल राक्षसोंको भी बुद्धिमान् हनुमान्‌जी मौतके घाट उतारने लगे। तदनन्तर महान् वेग प्रकट करके हनुमान्‌जीने एक दूसरा वृक्ष उखाड़ लिया और तुरंत ही उसे राक्षसराज अकम्पन के सिरपर दे मारा। क्रोधसे भरे

वानरश्रेष्ठ महात्मा हनुमान्‌के चलाये हुए उस वृक्षकी गहरी चोट खाकर राक्षस अकम्पन पृथ्वीपर गिरा और मर गया। जैसे भूकम्प आनेपर सारे वृक्ष काँपने लगते हैं, उसी प्रकार राक्षसराज अकम्पनको रणभूमिमें मारा गया देख समस्त राक्षस व्यथित हो उठे। वानरोंके खदेड़नेपर वहाँ परास्त हुए वे सब राक्षस अपने अस्त्र-शस्त्र फेंककर डरके मारे लमामें भाग गये।

अकम्पनके वधका समाचार पाकर राक्षसराज रावणको बड़ा क्रोध हुआ। उसके मुखपर कुछ दीनता छा गयी और वह मन्त्रियोंकी ओर देखने लगा। अपनी शक्तिके अनुसार धूम्राक्षने बहुत पौरुष प्रकट किया; किन्तु वानर अत्यधिक उत्साहमें थे। वे राक्षसोंको जीवित भी समुद्रमें फेंक देते थे। वहाँ समर-भूमिके समीप सागरतटका जल, मकर, व्याघ्रमुखी, तिमिंगल आदि मांसाहारी जल जन्तुओंसे भर उठा था। जहाँ आहार मिलनेकी सम्भावना हो, जलचर वहाँ स्वभावसे एकत्र हो जाते हैं। वानर मानो सेतु बनकर समुद्रपार करानेका पुरस्कार देनेमें लगे थे। कोई राक्षसोंको अधमरा करके उन्हें रेतमें ही गाड़ देते थे। वानरोंने अपने दलका विकट संहार किया है, राक्षस भागने लगे है, यह देखकर धूम्राक्षने भी भयंकर आक्रमण किया; किन्तु पवनपुत्र पूरा पर्वत शिखर लेकर दौड़े और पटक दिया। धूम्राक्ष उसके नीचे पिस गया।

रावण तक समाचार पहुँचा। क्रोध करके भारी सेनाके साथ उसने वज्रदंष्ट्रको भेजा। सेना वानरोंने समाप्त कर दी और वज्रदंष्ट्रको बालितनने पटककर मार दिया।

तुम तो सुरोंसे संग्राममें भी अकम्पित रहते हो; इसी प्रकार प्रशंसा करके सेनाके साथ रावणने अकम्पनको भेजा। अश्वकर्ण सहायक बनकर आया। उसका अभाग्य-पवनकुमार पर बाणवर्षा करने लगा। उन आञ्जनेयकी वज्र कायासे टकराकर बाण टूट ही तो सकते थे। आज पवनपुत्र पर्वत पटकनेमें लगे थे। अकम्पनकी काया भी इसी प्रकार पिस गयी। अश्वकर्ण हनुमानकी मुष्टिका पाकर मर गया। वानर कूदने लगे। हनुमानकी पूँछ चूमने लगे।

१०) त्रिशिरा, देवान्तक, नरान्तक का वध- दुरात्मा रावण जब शोकसे पीड़ित हो इस प्रकार विलाप करने लगा, तब त्रिशिराने कहा- राजन्। इसमें संदेह नहीं कि हमारे मझले चाचा कुम्भकर्ण, जो इस समय युद्धमें मारे गये हैं, ऐसे ही महान् पराक्रमी थे; परंतु आप जिस प्रकार रोते-बिलखते हैं, उस तरह श्रेष्ठ पुरुष किसीके लिये विलाप नहीं करते हैं।

आपने एक ही शस्त्रसे देवताओं और दानवोंको अनेक बार पछाड़ा है, अत: सब प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित होनेपर आप रामको भी दण्ड दे सकते हैं। जैसे इन्द्रने शम्बरासुरको और भगवान् विष्णुने नरकासुरको मार गिराया था, उसी प्रकार युद्धस्थलमें आज मेरे द्वारा मारे जाकर राम सदाके लिये सो जायँगे। त्रिशिराकी यह बात सुनकर राक्षसराज रावणको इतना संतोष हुआ कि वह अपना नया जन्म हुआ-सा मानने लगा। कालसे प्रेरित होकर ही उसकी ऐसी बुद्धि हो गयी।

त्रिशिराका उपर्युक्त कथन सुनकर देवान्तक, नरान्तक और तेजस्वी अतिकाय-ये तीनों युद्धके लिये उत्साहित हो गये।

मैं युद्धके लिये जाऊँगा, ऐसा कहते और गर्जते हुए वे तीनों श्रेष्ठ निशाचर युद्धके लिये तैयार हो गये। रावणके वे वीर पुत्र इन्द्रके समान पराक्रमी थे। उसने अपने पुत्रोंको हृदयसे लगाकर नाना प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित किया और उत्तम आशीर्वाद देकर रणभूमिमें भेजा। रावणने अपने दोनों भाई युद्धोन्मत्त महापार्श्व और मत्त महोदर को भी युद्धमें कुमारोंकी रक्षाके लिये भेजा। वे सभी महाकाय राक्षस समस्त लोकोंको रुलानेवाले महामना रावणको प्रणाम और उसकी परिक्रमा करके युद्धके लिये प्रस्थित हुए। राक्षसराज रावणका अत्यन्त तेजस्वी पुत्र अतिकाय समस्त धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ था। वह भी उस समय एक उत्तम रथपर आरूढ़ हुआ।

नरान्तक उच्चै:श्रवाके समान श्वेत वर्णवाले एक सुवर्णभूषित विशालकाय और मनके समान वेगशाली अश्वपर आरूढ़ हुआ।

देवान्तक स्वर्णभूषित परिघ लेकर समुद्रमन्थनके समय दोनों हाथोंसे मन्दराचल उठाये हुए भगवान् विष्णुके स्वरूप का अनुकरण-सा कर रहा था।आज या तो हम शत्रुओंको परास्त कर देंगे, या स्वयं ही मृत्युकी गोदमें सदाके लिये सो जायँगे- ऐसा निश्चय करके वे वीर राक्षस युद्धके लिये आगे बढ़े।

उन राक्षसोंके गर्जने, ताल ठोंकने और सिंहनाद करनेसे पृथ्वी कम्पित-सी होने लगी और आकाश फटने-सा लगा। उन महाबली राक्षसशिरोमणि वीरोंने प्रसन्नतापूर्वक नगरकी सीमासे बाहर निकलकर देखा, वानरोंकी सेना पर्वतशिखर और बड़े-बड़े वृक्ष उठाये युद्धके लिये तैयार खड़ी है। प्रज्वलित अग्नि और सूर्यके समान तेजस्वी राक्षसोंने उसे सब ओरसे घेर रखा था। निशाचरोंकी उस सेनाको आती

देख वानर प्रहार करनेका अवसर पाकर महान् पर्वतशिखर उठाये बारंबार गर्जना करने लगे। वे राक्षसोंका सिंहनाद सहन न करनेके कारण बदलेमें जोर-जोरसे दहाड़ने लगे थे।

उस समय राक्षसों और वानरोंके उस युद्धने बड़ा भयंकर रूप धारण किया। राक्षसोंने बाणसमूहोंकी वर्षाद्वारा जब वानरोंको आगे बढ़नेसे रोका, उस समय वे भयंकर पराक्रमी वानर उनपर वृक्षों, शिलाओं तथा शैलशिखरोंकी अनुपम दृष्टि करने लगे। कितने ही वानर रथ, हाथी और घोड़ेपर बैठे हुए वीर राक्षसोंको भी सहसा उछलकर मार डालते थे। वहाँ प्रधान-प्रधान राक्षसोंके शरीर पर्वत-शिखरोंसे आच्छादित हो गये थे। वानरोंके मुक्कोंकी मार खाकर कितनोंकी आँखें बाहर निकल आयी थीं। वे निशाचर भागते, गिरते-पड़ते और चीत्कार करते थे। राक्षसोंने भी पैने बाणोंसे कितने ही वानर-शिरोमणियोंको विदीर्ण कर दिया था तथा शूलों, मुद्गरों, खड्गों, प्रासों और शक्तियोंसे बहुतोंको मार गिराया था।

उस समय राक्षस अपने शत्रुओंके हाथसे शिलाओं और शैल-शिखरोंको छीनकर उन्हींसे उनपर प्रहार करने लगे तथा वानर भी राक्षसोंके हथियार छीनकर उन्हींके द्वारा उनका वध करने लगे।इस तरह राक्षस और वानर दोनों ही दलोंके योद्धा एक-दूसरेको पर्वत-शिखरसे मारने, अस्त्र-शस्त्रोंसे विदीर्ण करने तथा रणभूमिमें सिंहोंके समान दहाड़ने लगे। कितने ही वानर रणभूमिमें रथसे रथको, हाथीसे हाथीको और घोड़ेसे घोड़ेको मार गिराते थे। टूट-फूटकर गिरे हुए पर्वतों, कटे हुए वृक्षों तथा राक्षसों और वानरोंकी लाशोंसे पट जानेके कारण उस भूमिमें चलना-फिरना कठिन हो गया। इस प्रकार जब भयंकर मार-काट मची हुई थी, वानर प्रसन्न थे और राक्षसोंकी लाशें गिर रही थीं, उस समय महर्षि तथा देवगण हर्षनाद करने लगे।

तब लंकेश्वर ने अपने पुत्र नरान्तक को सेनासहित बुलाया। उस निशाचर ने भीषण रण किया। उस निशाचर को वर प्राप्त थे। यह भेद नारद के द्वारा ज्ञात हुआ। तभी सुग्रीव ने हनुमान से सब बात कहीं की इस नरान्तक का वध मेरे पुत्र दधिबल के हाथों होगा। विधि वाक्य अटल होता है। जैसे तुम संजीवनी लेकर आये थे वैसे ही मेरे पुत्र दधिबल को बुलाकर ले आओ। संजीवनी लाने को तुम द्रोणगिरि पर गये थे अब मेरे पुत्र को धवलगिरि पर जाकर बुलाकर लाओ।

तदनन्तर वायुके समान तीव्र वेगवाले घोड़ेपर सवार हो हाथमें तीखी शक्ति लिये नरान्तक वानरोंकी भयंकर सेनामें उसी तरह घुसा, जैसे कोई मत्स्य महासागरमें प्रवेश कर रहा हो। जैसे दावानल सूखे जंगलोंको जलाता है, उसी प्रकार प्रज्वलित प्रास लिये नरान्तक युद्धके मुहानेपर वानर-सेनाओंको दग्ध करने लगा। सुग्रीवने जब सब ओर दृष्टिपात किया, तब देखा कि वानरोंकी सेना नरान्तकसे भयभीत होकर इधर-उधर भाग रही है। उसे देखकर महातेजस्वी वानरराज सुग्रीवने इन्द्रतुल्य पराक्रमी वीर कुमार अङ्गदसे कहा- बेटा। वह जो घोड़ेपर बैठा हुआ वानर-सेनामें हलचल मचा रहा है, उस वीर राक्षसका सामना करनेके लिये जाओ और उसके प्राणोंका शीघ्र ही अन्त कर दो। बालिपुत्र अङ्गद महातेजस्वी थे। उनके पास कोई हथियार नहीं था। केवल नख और दाढ़ ही उनके अस्त्र-शस्त्र थे। वे नरान्तकके पास पहुँचकर बोले- ओ निशाचर। ठहर जा। इन साधारण बंदरोंको मारकर तू क्या करेगा ? तेरे भालेकी चोट वज्रके समान असह्य है; किन्तु जरा इसे मेरी इस छातीपर तो मार।

उसी समय महावीर बजरंगी सुग्रीव सूत दधिबल को ले आयें जो अबतक अंगद का संग्राम असफल हो रहा था। भाई अब बाजी पलट गया। उसने उस चमकते हुए भालेको घुमाकर सहसा उसे अङ्गदपर दे मारा। तब बालिपुत्र अङ्गदका वक्ष:स्थल वज्रके समान कठोर था। नरान्तकका भाला उसपर टकराकर टूट गया और जमीनपर जा पड़ा। उस प्रहारसे घोड़ेका सिर फट गया, पैर नीचेको धँस गये, आँखें फूट गयीं और जीभ बाहर निकल आयी। वह पर्वताकार अश्व प्राणहीन होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा।

घोड़ेको मरकर पृथ्वीपर पड़ा देख नरान्तकके क्रोधकी सीमा न रही। उस महाप्रभावशाली निशाचरने युद्धस्थलमें मुक्का तानकर बालिकुमारके मस्तकपर मारा। फिर सुग्रीवसुत दधिमुखने पर्वत-शिखरके समान अपना मुक्का ताना, जिसका वेग मृत्युके समान था। फिर उन महात्मा बालिकुमारने उससे नरान्तककी छातीमें प्रहार किया।

मुक्केके आघातसे नरान्तकका हृदय विदीर्ण हो गया। वह मुँहसे आगकी ज्वाला-सी उगलने लगा। उसके सारे अङ्ग लहूलुहान हो गये और वह वज्रके मारे हुए पर्वतकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़ा। तब उसकी पत्नि बिन्दुप्रिया उसके साथ सती हो गयी।

सुग्रीव सुत द्वारा युद्धस्थलमें उत्तम पराक्रमी नरान्तकके मारे जानेपर उस समय आकाशमें देवताओंने और भूतलपर वानरोंने बड़ जोरसे हर्षनाद किया। महोदरने मेघसे समान गजराजपर बैठकर महापराक्रमी अङ्गदके ऊपर बड़े वेगसे धावा किया। भाईके मारे जानेसे

संतप्त हुए बलवान् देवान्तकने भयानक परिघ हाथमें लेकर अङ्गदपर आक्रमण किया। इस प्रकार वीर त्रिशिरा उत्तम घोड़ोंसे जुते हुए सूर्यतुल्य तेजस्वी रथपर बैठकर बालिकुमारका सामना करनेके लिये आया।

देवताओंका दर्प दलन करनेवाले उन तीनों निशाचरपतियोंके आक्रमण करनेपर वीर अङ्गदने विशाल शाखाओंसे युक्त एक वृक्षको उखाड़ लिया और जैसे इन्द्र प्रज्वलित वज्रका प्रहार करते हैं, उसी प्रकार उन बालिकुमारने बड़ी-बड़ी शाखाओंसे युक्त उस महान् वृक्षको सहसा देवान्तकपर दे मारा।

उन तीनों प्रमुख निशाचरोंने एक साथ ही धावा किया था, तो भी महातेजस्वी और प्रतापी बालिकुमार अङ्गदके मनमें तनिक भी व्यथा नहीं हुई। फिर महाबली बालिकुमारने उस हाथीका एक दाँत उखाड़ लिया और युद्धस्थलमें दौड़कर उसीके द्वारा देवान्तकपर चोट की। तेजस्वी देवान्तक उस प्रहारसे व्याकुल हो गया और वायुके हिलाये हुए वृक्षकी भाँति काँपने लगा। उसके शरीरसे महावरके समान रंगवाला रक्तका महान् प्रवाह बह चला। तदनन्तर अङ्गदको तीन प्रमुख निशाचरोंसे घिरा हुआ जान हनुमान् और नील भी उनकी सहायताके लिये अग्रसर हुए। अपने भाईका पराक्रम बढ़ता देख बलवान् देवान्तकको बड़ा हर्ष हुआ और उसने परिघ लेकर युद्धस्थलमें हनुमानजी पर धावा किया। बलवान् वायुकुमार महाकपि हनुमानजीने उस समय देवान्तकके मस्तकपर प्रहार किया और अपनी भीषण गर्जनासे राक्षसोंको कम्पित कर दिया। उनके मुष्टि-प्रहारसे देवान्तकका मस्तक फट गया और पिस उठा। दाँत, आँखें और लंबी जीभ बाहर निकल आयीं तथा वह राक्षसराजकुमार प्राणशून्य होकर सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा।

राक्षस-योद्धाओंमें प्रधान महाबली देवद्रोही देवान्तकके युद्धमें मारे जानेपर त्रिशिराको बड़ा क्रोध हुआ और उसने नीलकी छातीपर पैने बाणोंकी भयंकर वर्षा आरम्भ कर दी। बाण-समूहोंकी निरन्तर वर्षा होनेसे वानरसेनापति नीलके सारे अङ्ग क्षत-विक्षत हो गये। उनका शरीर शिथिल हो गया। इस प्रकार महाबली महोदरने उन्हें मूर्छित करके उनके बलविक्रमको कुण्ठित कर दिया।

तत्पश्चात् होशमें आनेपर नीलने वृक्ष-समूहोंसे युक्त एक शैल-शिखरको उखाड़ लिया। उनका वेग बड़ा भयंकर था। उन्होंने उछलकर उस वृक्षको महोदरके मस्तकपर दे मारा। उस पर्वतशिखरके आघातसे महोदर उस महान् गजराजके साथ ही चूर-चूर हो गया और मूर्च्छित एवं प्राणशून्य हो वज्रके मारे हुए पर्वतकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़ा।

उस पर्वतशिखरके प्रहारको व्यर्थ हुआ देख कपिवर हनुमानने उस रणभूमिमें रावणपुत्र त्रिशिराके ऊपर वृक्षोंकी वर्षा आरम्भ की।

तब राक्षसशिरोमणि त्रिशिराने तलवार उठायी और कपिश्रेष्ठ हनुमानजीकी छातीपर उसकी भरपूर चोट की। तलवारकी चोटसे घायल हो पराक्रमी पवनकुमार हनुमान्ने त्रिशिराकी छातीमें एक तमाचा जड़ दिया। उनका थप्पड़ लगते ही महातेजस्वी त्रिशिरा अपनी चेतना खो बैठा। उसके हाथसे हथियार खिसक गया और वह स्वयं भी पृथ्वीपर गिर पडा।

गिरते समय उस राक्षसके खड्गको छीनकर पर्वताकार महाकपि हनुमानजी सब राक्षसोंको भयभीत करते हुए जोर-जोरसे गर्जना करने लगे। फिर तो जैसे पूर्वकालमें इन्द्रने त्वष्टाके पुत्र विश्वरूपके तीनों मस्तकोंको वज्रसे काट गिराया था, उसी प्रकार कुपित हुए पवनपुत्र हनुमान्ने रावणपुत्र त्रिशिराके किरीट और कुण्डलोंसहित तीनों मस्तकोंको तीखी तलवारसे काट डाला।

उन मस्तकोंकी सभी इन्द्रियाँ विशाल थीं। उनकी आँखें प्रज्वलित अग्निके समान उद्दीप्त हो रही थीं। उस इन्द्रद्रोही त्रिशिराके वे तीनों सिर उसी प्रकार पृथ्वीपर गिरे, जैसे आकाशसे तारे टूटकर गिरते हैं।

देवद्रोही त्रिशिरा जब इन्द्रतुल्य पराक्रमी हनुमान्जीके हाथसे मारा गया, तब समस्त वानर हर्षनाद करने लगे, धरती काँपने लगी तथा राक्षस चारों दिशाओंकी ओर भाग चले।

त्रिशिरा तथा महोदरको मारा गया देख और दुर्जय वीर देवान्तक एवं नरान्तकको भी कालके गालमें गया हुआ जान अत्यन्त अमर्षशील राक्षसशिरोमणि मत्त महापार्श्व कुपित हो उठा। उसने एक तेजस्विनी गदा हाथमें ली, जो सम्पूर्णत: लोहेकी बनी हुई थी।

उस गदाको हाथमें लेकर क्रोधसे भरा हुआ राक्षस शिरोमणि मत्त महापार्श्व प्रलयकालकी अग्निके समान प्रज्वलित हो उठा और वानरोंकी ओर दौड़ा। पर्वताकार वानरवीर ऋषभको सामने खड़ा देख कुपित हुए महापार्श्वने अपीन वज्रतुल्य गदासे उनकी छातीपर प्रहार किया। वानरवीरोंमें प्रधान ऋषभका रूप पर्वतके समान जान पड़ता था। वे बड़े वेगशाली थे। उन्होंने वेगपूर्वक उस राक्षसके पास पहुँचकर मुक्का ताना और सहसा उसकी छातीपर प्रहार किया।

उस समय उस राक्षसने महामना ऋषभके हाथसे अपनी गदा लेनेके लिये उनपर धावा किया; किंतु ऋषभने उस भयानक गदाको हाथमें

लेकर बारंबार घुमाया और बड़े वेगसे महापार्श्वपर आक्रमण किया। इस तरह उन महामनस्वी वानरवीरने युद्धके मुहानेपर उस निशाचरकी जीवन-लीला समाप्त कर दी थी। अपनी ही गदाकी चोट खाकर महापार्श्वके दाँत टूट गये और आँखें फूट गयीं। वह वज्रके मारे हुए पर्वत-शिखरकी भाँति तत्काल धराशायी हो गया।

रावणके भाई महापार्श्वका वध हो जानेपर राक्षसोंकी वह समुद्रके समान विशाल सेना हथियार फेंककर केवल जान बचानेके लिये सब ओर भागने लगी, मानो महासागर फूटकर सब ओर बहने लगा हो।

सुषेण और उनके सहयोगी अग्निकाष्ठों और उल्काओं के प्रकाश में अत्यधिक व्यस्त थे। कुंभकर्ण के साथ हुए युद्ध में वानर सेना की क्षति अपेक्षा से कहीं अधिक हुई थी। राक्षसों के रथों, हाथियों और घोड़ों के सामने पदाति वानर पर्याप्त असुरक्षित थे। यह तो उनकी संख्या, उनका आत्मबल तथा उनके सेनानायकों का धैर्य एवं कौशल ही था, जो इस सेना को अब तक सँभाले हुए था। कुंभकर्ण की मृत्यु के पश्चात रावण के पुत्र देवांतक और त्रिशिरा युद्ध के लिए आए थे। हनुमान के हाथों उनका वध हुआ।

११) लक्ष्मणके द्वारा अतिकाय का वध - अतिकायने देखा, शत्रुओंके रोंगटै खड़े कर देनेवाली मेरी भयंकर सेना व्यथित हो उठी है, इन्द्रके तुल्य पराक्रमी मेरे भाइयोंका संहार हो गया है तथा मेरे चाचा- दोनों भाई युद्धोन्मत्त महोदर और मत्त महापार्श्व भी समराङ्गण में मार गिराये गये हैं, तब उस महातेजस्वी निशाचरको बड़ा क्रोध हुआ। उसे ब्रह्माजीसे वरदान प्राप्त हो चुका था। अतिकाय पर्वतके समान विशालकाय तथा देवता और दानवोंके दर्पका दलन करनेवाला था।

वह इन्द्रका शत्रु था। उसने सहस्त्रों सूर्योंके समूहकी भाँति देदीप्यमान तेजस्वी रथपर आरूढ़ होकर वानरोंपर धावा किया।

उस सिंहनादसे, अपने नामकी घोषणासे और प्रत्यञ्चाकी भयानक टमारसे उसने वानरोंको भयभीत कर दिया। रथपर बैठे हुए पर्वताकार अतिकायको श्रीरामने भी देखा। वह हाथमें धनुष लिये कुछ दूरपर प्रलयकालके मेघकी भाँति गर्जना कर रहा था।

तब श्रीरामने विभीषण से पूछा- विभीषण। हजार घोड़ोंसे जुते हुए विशाल रथपर बैठा हुआ वह पर्वताकार निशाचर कौन है ? उसके हाथमें धनुष है और आँखें सिंहके समान तेजस्विनी दिखायी देती हैं। यह राक्षसोंमें सिंहके समान पराक्रमी और रथियोंमें श्रेष्ठ वीर अपने सूर्यतुल्य तेजस्वी रथके द्वारा रणभूमिकी शोभा बढ़ाता हुआ मेरे सामने आ रहा है।

महाबाहो। तुम मुझे इस श्रेष्ठ राक्षसका परिचय दो, जिसे देखते ही सब वानर भयभीत हो सम्पूर्ण दिशाओंकी ओर भाग चले हैं।

तब विभीषण ने कहा- भगवन्। राजा रावण के एक बड़ा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ, जो बलमें रावणके ही समान है। वह वृद्ध पुरुषोंका सेवन करनेवाला, वेद-शास्त्रोंका ज्ञाता तथा सम्पूर्ण अस्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ है।

हाथी-घोड़ोंकी सवारी करने, तलवार चलाने, धनुषपर बाणोंका संघान करने, प्रत्यञ्चा खींचने, लक्ष्य बेधने, साम और दानका प्रयोग करने तथा न्याययुक्त बर्ताव एवं मन्त्रणा देनेमें वह सबके द्वारा सम्मानित है।

उसीके बाहुबलका आश्रय लेकर लमापुरी सदा निर्भय रहती आयी है। वही यह वीर निशाचर है। यह रावणकी दूसरी पत्नी धन्यमालिनीका पुत्र है। इसे लोग अतिकायके नामसे जानते हैं।

ब्रह्माजीने इसे देवताओं और असुरोंसे न मारे जानेका वरदान दिया है। ये दिव्य कवच और सूर्यके समान तेजस्वी रथ भी उन्हींके दिये हुए हैं। इसने देवता और दानवोंको सैकड़ों बार पराजित किया है, राक्षसोंकी रक्षा की है और यक्षोंको मार भगाया है। इस बुद्धिमान् राक्षसने अपने बाणोंद्वारा इन्द्रके वज्रको भी कुण्ठित कर दिया है तथा युद्धमें जलके स्वामी वरुणके पाशको भी सफल नहीं होने दिया है।

राक्षसोंमें श्रेष्ठ यह बुद्धिमान् रावणकुमार अतिकाय बड़ा बलवान तथा देवताओं और दानवोंके दर्पको भी दलन करनेवाला है।

रथियोंमें श्रेष्ठ और भयंकर शरीरवाले उस राक्षसको रथपर बैठकर आते देख कुमुद, द्विविद, मैन्द, नील और शरभ आदि जो प्रधान-प्रधान महामनस्वी वानर थे, वे वृक्ष तथा पर्वतशिखर धारण किये एक साथ ही उसपर टूट पड़े। जैसे जवानीके जोशसे भरा हुआ कुपित सिंह मृगोंके झुंडको भयभीत कर देता है, उसी प्रकार वह राक्षस वानरवीरोंकी उस सेनाको त्रास देने लगा।

तब अतिकाय बोला- मैं धनुष और बाण लेकर रथपर बैठा हूँ। किसी साधारण प्राणीसे युद्ध करनेका मेरा विचार नहीं है। जिसके अंदर शक्ति हो, साहस और उत्साह हो, वह शीघ्र यहाँ आकर मुझे युद्धका अवसर दे।

कुपित हुए लक्ष्मण उछलकर आगे आये और तरकससे बाण खींचकर अतिकायके सामने आ अपने विशाल धनुषको खींचने लगे।

लक्ष्मणके धनुषकी प्रत्यञ्चाका वह शब्द बड़ा भयंकर था। वह सारी पृथ्वी, आकाश, समुद्र तथा सम्पूर्ण दिशाओंमें गूँज उठा और निशाचरोंको त्रास देने लगा।

लक्ष्मणको अपना सामना करनेके लिये उठा देख अतिकाय रोषसे भर गया और तीखा बाण हाथमें लेकर इस प्रकार बोला- सुमित्राकुमार। तुम अभी बालक हो। पराक्रम करनेमें कुशल नहीं हो, अत: लौट जाओ। मैं तुम्हारे लिये कालके समान हूँ। मुझसे जूझनेकी इच्छा क्यों करते हो ?

मेरे हाथसे छूटे हुए बाणोंका वेग गिरिराज हिमालय भी नहीं सह सकता। पृथ्वी और आकाश भी उसे नहीं सहन कर सकते।

तुम सुखसे सोयी शान्त हुई प्रलयाग्निको क्यों जगाना (प्रज्वलित करना) चाहते हो ? धनुषको यहीं छोड़कर लौट जाओ। मुझसे भिड़कर अपने प्राणोंका परित्याग न करो।

युद्धस्थलमें अतिकायके रोष और गर्वसे भरे हुए इस वचनको सुनकर लक्ष्मणको बड़ा क्रोध हुआ। वे यह महान् अर्थसे युक्त वचन बोले- दुरात्मन्। केवल बातें बनानेसे तू बड़ा नहीं हो सकता। सिर्फ डींग हाँकनेसे कोई श्रेष्ठ पुरुष नहीं होते। मैं हाथमें धनुष और बाण लेकर तेरे सामने खड़ा हूँ। तू अपना सारा बल मुझे दिखा।

पराक्रमके द्वारा अपनी वीरताका परिचय दे। झूठी शेखी बघारना तेरे लिये उचित नहीं है। शूर वही माना गया है, जिसमें पुरुषार्थ हो।

तेरे पास सब तरहके हथियार मौजूद हैं। तू धनुष लेकर रथपर बैठा हुआ है; अत: बाणों अथवा अन्य अस्त्र-शस्त्रोंके द्वारा पहले अपना पराक्रम दिखा ले। आज तपे हुए सुवर्णसे विभूषित मेरे बाण अपनी नोंकद्वारा किये गये छिद्रसे निकले हुए तेरे शरीरके रक्तका पान करेंगे।

तू मुझे बालक जानकर मेरी अवहेलना न कर। मैं बालक होऊँ अथवा वृद्ध, संग्राममें तो तू मुझे अपना काल ही समझ ले।

तदनन्तर विद्याधर, भूत, देवता, दैत्य, महर्षि तथा महामना गुह्यकरण उस युद्धको देखनेके लिये आये।

उस समय अतिकायने कुपित हो धनुषपर वह उत्तम बाण चढ़ाया और आकाशको अपना ग्रास बनाते हुए-से उसे लक्ष्मणपर चला दिया। किंतु शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले लक्ष्मणने एक अर्धचन्द्राकार बाणके द्वारा अपनी ओर आते हुए उस विषधर सर्पके तुल्य भयंकर एवं तीखे बाणको काट डाला। उस राक्षसराजके धनुषसे छूटे हुए उन सुवर्णभूषित, सूर्यतुल्य तेजस्वी तथा कालके समान भयंकर बाणोंने आकाशको प्रकाशसे पूर्णसा कर दिया। परंतु लक्ष्मणने बिना किसी घबराहटके उस निशाचरद्वारा चलो हुए उन बाणसमूहोंको तेज धारवाले बहसंख्यक सायकोंद्वारा काट गिराया।

फिर सामर्थ्यशाली लक्ष्मणने सहसा अपनी छातीसे उस बाणको निकाल दिया और एक तीखा सायक हाथमें लेकर उसे दिव्यास्त्रसे संयोजित किया। उस समय अपने उस सायकको उन्होंने आग्नेयास्त्रसे अभिमन्त्रित किया। अभिमन्त्रित होते ही महात्मा लक्ष्मणके धनुषपर रक्खा हुआ वह बाण तत्काल प्रज्वलित हो उठा। इतनेहीमें लक्ष्मणने दिव्यास्त्रकी शक्तिसे सम्पन्न उस प्रज्वलित एवं भयकर बाणको अतिकायके ऊपर चलाया, मानो यमराजने अपने कालदण्डका प्रयोग किया हो। उन दोनों सायकोंके अग्रभाग तेजसे प्रज्वलित हो रहे थे। आकाशमें पहुँचकर वे दोनों कुपित हुए दो सर्पोंकी भाँति आपसमें टकरा गये और एक दूसरेको दग्ध करके पृथ्वीपर गिर पड़े।

वे दोनों ही बाण उत्तम कोटिके थे और अपनी दीप्तिसे प्रकाशित हो रहे थे, तथापि एक-दूसरीके तेजसे भस्म होकर अपना-अपना तेज खो बैठे। इसलिये भूतलपर निष्प्रभ होनेके कारण उनकी शोभा नहीं हो रही थी।

लक्ष्मण इन्द्रके समान पराक्रमी थे। उन्होंने वायुदेवताका उपर्युक्त वचन सुनकर एक भयंकर वेगवाले बाणको सहसा ब्रह्मास्त्रसे अभिमन्त्रित करके धनुषपर रक्खा। लक्ष्मणके द्वारा तेज धारवाले उस श्रेष्ठ बाणमें ब्रह्मास्त्रकी संयोजना की जानेपर उस समय सम्पूर्ण दिशाएँ, चन्द्रमा और सूर्य आदि बड़े-बड़े ग्रह तथा अन्तरिक्षलोकके प्राणी थर्रा उठे और भूमण्डलमें महान् कोलाहल मच गया।

सुमित्राकुमारने धनुषपर रक्खे हुए उस सुन्दर पंखवाले बाणको जब ब्रह्मास्त्रसे अभिमन्त्रित किया, तब वह यमदूतके समान भंकर और वज्रके समान अमोघ हो गया। उन्होंने युद्धस्थलमें उस बाणको इन्द्रद्रोही रावणके बेटे अतिकायको लक्ष्य करके चला दिया।

प्रलयमर कालके समान प्रज्वलित हुए उस बाणको अत्यन्त निकट आया देखकर भी अतिकायकी युद्धविषयक चेष्टा नहीं हुई। उसने शक्ति, ऋष्टि, गदा, कुठार, शूल तथा बाणोंद्वारा उसे नष्ट करनेका प्रयन्त किया। परंतु अग्निके समान प्रज्वलित हुए उस बाणने उन अद्भुत अस्त्रोंको व्यर्थ करके अतिकायके मुकुटमण्डित मस्तकको धड़से अलग कर दिया।

लक्ष्मणके बाणसे कटा हुआ राक्षसका वह शिरस्त्राणसहित मस्तक हिमालयके शिखरकी भाँति सहसा पृथ्वीपर जा पड़ा।

सेनानायके मारे जानेपर निशाचरोंका युद्धविषयक उत्साह नष्ट हो गया, अत: वे भयभीत हो तुरंत ही लमापुरीकी ओर भाग चले।

युद्धस्थलमें अत्यन्त बलशाली और मेघके समान विशाल अतिकायको धराशायी करके लक्ष्मण बड़े प्रसन्न हुए। वे उस समय वानर-समूहोंसे सम्मानित हो तुरंत ही श्रीरामजी के पास गये।

विभीषण सूचना लाये थे कि अतिकाय की मृत्यु पर रावण बहुत हताश हुआ था। उसे कुंभकर्ण के ही समान अतिकाय के बल और शौर्य पर बहुत भरोसा था। कुंभकर्ण के वध के कारण वह राम से भयभीत भी हुआथा और क्रुद्ध भी। अब अतिकाय के वध के कारण उसके मन में यही भाव लक्ष्मण के प्रति भी थे। विभीषण यह भी सूचना लाए थे कि रावण अपनी जय-जयकार की चिंता किए बिना राम और लक्ष्मण का वध करवाने का प्रयत्न करेगा। यह वध युद्ध-क्षेत्र में भी हो सकता है और युद्ध-से बाहर भी। इसलिए राम और लक्ष्मण अपनी सुरक्षा के लिए अतिरिक्त रूप से सावधान रहें।

विभीषण यह सूचना भी लाए थे कि अतिकाय की माँ धन्यमालिनी ने राजपरिषद में रावण और उसके मंत्रियों के सम्मुख छाती पीट-पीटकर भयंकर विलाप किया था और रावण को बार-बार धिक्कारा था। उसने इस युद्ध-क्षेत्र के लिए प्रत्यक्ष रूप से रावण को दोषी ठहराया था। उसके कहे हुए वाक्य आज लंका के घर-घर में प्रचारित हो रहे थे- राम तुम्हारा सोने का सिंहासन छीनने को नहीं जूझ रहा। फिर वह लंकावासियों का शत्रु कैसे हुआ ? तुमने स्वयं अपने कर्म-दोष से अपने वंश को डुबोया है। धन्यमालिनी ने अपना मुँह माथा पीट लिया था, सीता को जलाने के लिए मैं उसके सम्मुख रावण के कंठ में अपनी भुजाएँ डाल-डालकर झूली थी। उस दुष्टता का फल मुझे आज यह मिला है कि मैं रावण के कंठ से लगाकर पुत्र-शोक में बिलख-बिलखकर रोना चाहती हूँ; किंतु रावण को पुत्र शोक में रोने का भी अवकाश नहीं है।

विभीषण और भी बहुत सारे समाचार लाये थे। रावण के प्रासादों में कुहराम मचा हुआ है। नित्य-प्रति रावण के किसी-न-किसी पुत्र अथवा भाई के वध का समाचार आता है रावण की कोई पत्नी अथवा सौतेली माँ अपने पुत्र का शोक माने को चीत्कार करने लगती है। लंका की प्रजा में इस युद्ध का विरोध बढ़ता जा रहा था। यदि यह विरोध ऐसे ही बढ़ता गया तो रावण को लंका में से सैनिक इकट्ठे करने में भी कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है। सुना गया कि मंदोदरी ने भी रावण को बहुत धिक्कारा था कि उसने अपने समस्त पुत्रों और बंधु-बाँधवों की चिताओं पर बैठकर सीता के साथ काम-क्रीड़ा का संकल्प किया है क्या ?

युद्ध चाहे न्याय के लिए लड़ा जाए अथवा स्वार्थ के लिए युद्ध में विजय हो या पराजय दोनों पक्षों की क्षति होती ही है। गोदें उजड़ती हैं, सिंदूर-बिंदु मिटते हैं और माँगों में राख पड़ जाती है। युद्ध निश्चित रूप से एक क्रूर सत्य है।

महात्मा लक्ष्मणके द्वारा अतिकायको मारा गया सुनकर राजा रावण उद्विग्न हो उठा और इस प्रकार बोला- अत्यन्त अमर्षशील धूम्राक्ष, सम्पूर्ण शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ अकम्पन, प्रहस्त तथा कुम्भकर्ण- ये महाबली वीर राक्षस सदा युद्धकी अभिलाषा रखते थे। ये सब-के-सब शत्रुओंकी सेनाओंपर विजय पाते और स्वयं विपक्षियोंसे कभी पराजित नहीं होते थे। परंतु अनायास ही महान् कर्म करनेवाले रामने नाना प्रकारके शास्त्रोंके ज्ञानमें निपुण उन विशालकाय वीर राक्षसोंका सेनासहित संहार कर डाला।

मेरी आज्ञासे जो-जो शूरवीर योद्धा राक्षस युद्धके लिये निकले, उन सबको समराङ्गणमें महाबली वानरोंने मार डाला।

मैं आज ऐसे किसी वीरको नहीं देखता, जो युद्धमें लक्ष्मणसहित रामको और सेना तथा सुग्रीवसहित वीर विभीषणको नष्ट कर दे। अहो। राम बड़े बलवान् हैं, निश्चय ही उनका अस्त्रबल महान् हैं; जिनके बल-विक्रमका सामना करके असंख्य राक्षस कालके गालमें चले गये। राक्षसों। तुमलोग हर समय सावधान रहकर सैनिकसहित इस पुरीकी ओर जहाँ सीता रक्खी गयी हैं, उस अशोकशिबिर वाटिकाकी भी विशेषरूपसे रक्षा करो। उन सबको पूर्वोक्त आदेश देकर राक्षसराज रावण अपने हृदयमें चुभे हुए दु:ख और क्रोधरूपी काँटेकी पीड़ाका भार वहन करता हुआ दीनभावसे अपने महलमें गया। महाबली निशाचराज रावणकी क्रोधाग्नि भड़क उठी थी। वह अपने पुत्रकी उस मृत्युको ही याद करके उस समय बारंबार लंबी साँस खींच रहा था।

जब उल्काधारी वानरोंने सब ओरसे आक्रमण किया, तब द्वार-रक्षाके काममें नियुक्त हुए राक्षस सहसा भाग खड़े हुए। वे गोपुरों दरवाजों, अट्टालिकाओं, सड़कों, नाना प्रकारकी गलियों और महलोंमें भी बड़े हर्षके साथ आग लगाने लगे। अग्निकी लपटोंमें लिपटे हुए लमापुरीके मकान दावाग्निसे दग्ध होते हुए बड़े-बड़े पर्वतोंके शिखरोंके समान जान पड़ते थे। वहाँ आगकी लपेटमें आये हुए कितने ही भवन इन्द्रके वज्रके मारे हुए महान् पर्वतोंके शिखरोंके समान धराशायी हो रहे थे।

लमापुरीके जलते समय समुद्रमें आगकी ज्वालाका प्रतिबिम्ब पड़ रहा था, जिससे वह महासागर लाल पानीसे युक्त लालसागरके समान शोभा पाता था। वानरोंद्वारा जिसमें आग लगायी गयी थी, वह लमापुरी दो ही घड़ीमें संसारके घोर संहारके समय दग्ध हुई पृथ्वीके समान प्रतीत होने लगी। वानरोंकी गर्जना और राक्षसोंके आर्तनादसे दसों दिशाएँ, समुद्र और पृथ्वी गूँज उठी। वानरोंकी गर्जना, राक्षसोंका कोलाहल और श्रीरामके धनुषकी टंकार- ये तीनों प्रकारके शब्द दसों दिशाओंमें व्याप्त हो रहे थे। भगवान् श्रीरामके धनुषसे छूटे हुए बाणोंद्वारा लमापुरीका वह नगरद्वार, जो कैलास-शिखरके समान ऊँचा था, टूट-फूटकर भूतलपर बिखर गया।

१२) कुम्भकर्ण पुत्र कुम्भ और निकुम्भ का वध- क्रोधसे भरे हुए रावणने कुम्भकर्णके दो पुत्र कुम्भ और निकुम्भको बहुत-से राक्षसोंके साथ भेजा। रावणकी आज्ञासे यूपाक्ष, शोणिताक्ष, प्रजङ्घ और कम्पन भी कुम्भकर्णके दोनों पुत्रोंके साथ-साथ युद्धके लिये निकले। राक्षसोंकी उस दुर्जय सेनाको आती देख वानर-सेना आगे बढ़ी और उच्च स्वरसे गर्जना करने लगी।

वहाँ युद्धकी इच्छावाले वानर उन्मत्त-से होकर वृक्षों, पत्थरों और मुक्कोंसे निशाचरोंको मारते हुए उनपर टूट पड़े। इसी प्रकार भयानक पराक्रमी निशाचर भी अपने तीखे बाणोंसे सामने आये हुए वानरोंके मस्तक सहसा काट-काटकर गिराने लगे।

उस समय वानरों और राक्षसोंमें बड़ा भयंकर युद्ध होने लगा। हथियार गिर जाते, कवच और अस्त्र-शस्त्र छूट जाते, बड़े-बड़े भाले ऊँचे उठे दिखायी देते तथा मुक्कों, शूलों, तलवारों और भालोंकी मार होती थी। उस युद्धस्थलमें राक्षस दस-दस या सात-सात वानरोंको एक साथ मार गिराते थे और वानर भी दस-दस या सात-सात राक्षसोंको एक साथ धराशायी कर देते थे।

कम्पनने अङ्गदको क्रोधपूर्वक ललकारकर बड़े वेगसे उनके ऊपर पहले गदाका प्रहार किया। इससे उनको बड़ी चोट पहुँची और वे काँपकर बेहोश हो गये। फिर चेत होनेपर तेजस्वी वीर अङ्गदने एक पर्वतका शिखर उठाकर उस राक्षसपर दे मारा। उस प्रहारसे पीड़ित हो कम्पन पृथ्वीपर गिर पड़ा- उसके प्राण-पखेरु उड़ गये।

कम्पनको युद्धमें मारा गया देख शोणिताक्षने रथपर बैठकर तुरंत ही निर्भय हो अङ्गदपर धावा किया। तदनन्तर वेगवान् निशाचर शोणिताक्षने कुपित हो तत्काल ही ढाल और तलवार हाथमें ले ली तथा वह बिना सोचे-विचारे रथसे कूद पड़ा। इतनेहीमें बलवान् अङ्गदने शीघ्रतापूर्वक उछलकर उसे पकड़ लिया और अपने हाथसे उसकी उस तलवारको छीनकर बड़े जोरसे सिंहनाद किया।

शोणिताक्ष और प्रजङ्घ दोनों राक्षसोंके बीचमें कपिश्रेष्ठ अङ्गद वैसी ही शोभा पा रहे थे, जैसे दोनों विशाखा नक्षत्रोंके बीचमें पूर्ण चन्द्रमा सुशोभित होते हैं।

उस समय मैन्द और द्विविद अङ्गदकी रक्षा करनेके लिये उनके निकट आकर खड़े हो गये। वे दोनों अपने-अपने योग्य विपक्षी योद्धाकी तलाश भी कर रहे थे। ये तीन वानर-सेनापति उन तीन प्रमुख राक्षसोंके साथ उलझे हुए थे। उस समय उनमें रोंगटे खड़े कर देनेवाला महान् युद्ध छिड़ गया। उन तीनों वानरोंने रणभूमिमें वृक्ष ले-लेकर युद्धमें निशाचरोंपर चलाये, परंतु महाबली प्रजङ्घने अपनी तलवारसे उन सब वृक्षोंको काट गिराया। उस महातेजस्वी निशाचरने महापराक्रमी वानरशिरोमणि अङ्गदके ललाटमें बड़े जोरसे मुक्का मारा, जिससे अङ्गदको दो घड़ीतक चक्कर आता रहा।

इसके बाद होशमें आनेपर तेजस्वी और प्रतापी बालिकुमारने प्रजङ्घको ऐसा घूमा मारा कि उसका सिर धड़से अलग हो गया। यूपाक्षको आक्रमण करते देख बलवान् वीर द्विविदने कुपित हो बड़ी फुर्तीके साथ उसकी छातीमें चोट की और उसे बलपूर्वक पकड़ लिया। इसी बीचमें पराक्रमी मैन्द भी द्विविदके पास आ गये और उन्होंने यूपाक्षकी छातीमें एक थप्पड़ मारा।

वे दोनों वेगशाली वीर शोणिताक्ष और यूपाक्ष उन दोनों वानर मैन्द और द्विविदके साथ समराङ्गणमें बड़ी तेजीसे छीनाझपटी और पटकापटकी करने लगे। पराक्रमी द्विविदने अपने नखोंसे शोणिताक्षका मुँह नोच लिया और उसे बलपूर्वक पृथ्वीपर पटककर पीस डाला।

तत्पश्चात् अत्यन्त क्रोधसे भरे हुए वानरपुत्र मैन्दने यूपाक्षको अपनी दोनों बाँहोंसे इस तरह दबाया कि वह निष्प्राण होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। इन प्रमुख वीरोंके मारे जानेपर राक्षसराजकी सेना व्यथित हो उठी और भागकर उस ओर चली गयी, जहाँ कुम्भकर्णका पुत्र युद्ध कर रहा था। राक्षससेनाके बड़े-बड़े वीरोंको मारा गया देख तेजस्वी कुम्भने रणभूमिमें अत्यन्त दुष्कर कर्म करना आरम्भ किया।

उसके बाणसे सहसा आहत होकर त्रिकूट पर्वतके समान विशालकाय वानरश्रेष्ठ द्विविद व्याकुल हो गये और छटपटाते हुए पाँव फैलाकर पृथ्वीपर गिर पड़े। उस महासमरमें अपने भाईको घायल होकर गिरा देख मैन्द बहुत बड़ी शिला उठाकर वेगपूर्वक दौड़े।

मैन्द और द्विविद अङ्गदके मामा थे। उन दोनों महाबली वीरोंको घायल हुआ देख अङ्गद धनुष लेकर खड़े हुए कुम्भके ऊपर बड़े वेगसे टूटे। जिनकी धारें कुण्ठित नहीं हुई थीं तथा जो सुवर्णसे विभूषित थे, ऐसे तेज और तीखे बाणोंसे बालिपुत्र अङ्गदका सारा शरीर छिद गया था तो भी वे कम्पित नहीं हुए।

उन्होंने उस राक्षसके मस्तकपर शिलाओं और वृक्षोंकी वर्षा आरम्भ कर दी; किंतु कुम्भकर्णकुमार श्रीमान् कुम्भने बालिपुत्रके चलाये हुए उन समस्त वृक्षोंको काट दिया और शिलाओंको भी तोड़-फोड़ डाला।

श्रीरामने जब सुना कि बालिपुत्र अङ्गद महासमरमें मूर्छित होकर गिरे हैं, तब उन्होंने जाम्बवान् आदि प्रमुख वानरवीरोंको युद्धके लिये जानेकी आज्ञा दी। वे सभी प्रमुख वानर अङ्गदकी रक्षा करना चाहते थे; अत: क्रोधसे लाल आँखें किये हाथोंमें वृक्ष और शिलाएँ लेकर उस राक्षसकी ओर दौड़े।

जाम्बवान्, सुषेण और वेगदर्शीने कुपित हो वीर कुम्भकर्णकुमारपर धावा किया। महाकपि सुग्रीव अश्वकर्ण आदि बड़े-बड़े वृक्ष तथा दूसरे भी नाना प्रकारके वृक्ष उखाड़कर उस राक्षसपर फेंकने लगे।

उस वृक्ष-वृष्टिको कुम्भके द्वारा खण्डित हुई देख महान् शक्तिशाली पराक्रमी वानरराज सुग्रीव व्यथित नहीं हुए।

वे उसके बाणोंकी चोट खाते और सहते हुए सहसा उछलकर उसके रथपर चढ़ गये और कुम्भके इन्द्र-धनुषके समान तेजस्वी धनुषको छीनकर उन्होंने उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। तत्पश्चात् वे शीघ्र ही वहाँसे नीचे कूद पड़े। यह दुष्कर कर्म करनेके पश्चात् उन्होंने टूटे दाँतवाले हाथीके समान कुम्भसे कुपित होकर कहा-

कुम्भ। तुम्हारा पराक्रम और तुम्हारे बाणोंका वेग अद्‌भुत है। राक्षसोंके प्रति विनय अथवा प्रणवता तथा प्रभाव या तो तुममें है या रावणमें। तुम प्रल्हाद, बलि, इन्द्र, कुबेर और वरुणके समान हो।

तुम धनुर्विद्यामें इन्द्रजित्‌के समान और प्रतापमें रावणके तुल्य हो। राक्षसोंके संसारमें अब बल और पराक्रमकी दृष्टिसे केवल तुम्हीं श्रेष्ठ हो। तुमने वह पराक्रम किया है, जिसकी कहीं तुलना नहीं है। तुमने अपना अस्त्र-कौशल दिखा दिया। तुम्हारे साथ युद्ध करके ये भयंकर पराक्रमी वानरवीर धराशायी हो गये।

वीर। अबतक जो मैंने तुम्हारा वध नहीं किया है, उसमें कारण है लोगोंके उपालम्भका भय- लोग यह कहकर मेरी निन्दा करते कि कुम्भ बहुत-से वीरोंके साथ युद्ध करके थक गया था, उस दशामें सुग्रीवने उसे मारा है; अत: अब तुम कुछ विश्राम कर लो, फिर मेरा बल देखो। सुग्रीवके इस अपमानयुक्त वचनद्वारा सम्मानित हो घीकी आहुति पाये हुए अग्निदेवके समान कुम्भका तेज बढ़ गया। फिर तो कुम्भने सुग्रीवको अपनी दोनों भुजाओंसे पकड़ लिया। तत्पश्चात् वे दोनों वीर मदमत्त गजराजोंकी भाँति बारंबार लंबी साँस खींचते हुए एक-दूसरेसे गुँथ गये। दोनों दोनोंको रगड़ने लगे और दोनों ही अपने मुखसे परिश्रमके कारण धूमयुक्त आगकी ज्वाला-सी उगलने लगे।

उन दोनोंके पैरोंके आघातसे धरती नीचेको धँसले लगी। झूमती हुई तरङ्गोंसे युक्त वरुणाल समुद्रमें ज्वार-सा आ गया। इतनेहीमें सुग्रीवने कुम्भको उठाकर बड़े वेगसे समुद्रके जलमें फेंक दिया। उसमें गिरते ही कुम्भको समुद्रका निचला तल देखना पड़ा। कुम्भके गिरनेसे बड़ी भारी जलराशि ऊपरको उठी, जो विन्ध्य और मन्दराचलके समान जान पड़ी और सब ओर फैल गयी।

कुम्भके द्वारा इस प्रकार आहत होनेपर सुग्रीवने भी अपना वज्रतुल्य मुक्का सँभाला और कुम्भकी छातीमें बलपूर्वक़ आघात किया। उस मुक्केका तेज सहस्रों किरणोंसे प्रकाशित सूर्यमण्डलके समान उद्दीप्त हो रहा था। उस प्रहारसे कुम्भको बड़ी पीड़ा हुई। वह व्याकुल हो बुझी हुई आगकी तरह गिर पड़ा। सुग्रीवके मुक्केकी चोट खाकर वह राक्षस आकाशसे अकस्मात गिरनेवाले मंगलकी भाँति तत्काल धराशायी हो गया। सुग्रीवके द्वारा युद्धमें उस निशाचरके मारे जानेपर पर्वत और वनोंसहित सारी पृथ्वी काँपने लगी और राक्षसोंके हृदयमें अत्यन्त भय समा गया।

सुग्रीवके द्वारा अपने भाई कुम्भको मारा गया देख निकुम्भने वानरराजकी ओर इस प्रकार देखा, मानो उन्हें अपने क्रोधसे दग्ध कर देगा। उस इन्द्रध्वजके समान तेजस्वी परिघको घूमाता हुआ वह महातेजस्वी भयानक पराक्रमी राक्षस निकुम्भ मुँह फैलाकर जोर-जोरसे गर्जना करने लगा। निकुम्भके परिघ घूमानेसे विटपावती नगरी अलकापुरी, गन्धर्वोंके उत्तम भवन, तारे, नक्षत्र, चन्द्रमा तथा बड़े-बड़े ग्रहोंके साथ समस्त आकाशमण्डल घूमता-सा प्रतीत होता था। उस समय राक्षस और वानर भयके मारे हिल-डुल भी न सके। केवल महाबली हनुमान् अपनी छाती खोलकर उस राक्षसके सामने खड़े हो गये।

निकुम्भकी भुजाएँ परिघके समान थीं। उस महाबली राक्षसने उस सूर्यतुल्य तेजस्वी परिघको बलवान् वीर हनुमानजी की छातीपर दे मारा। हनुमानजीकी छाती बड़ी सुदृढ़ और विशाल थी। उससे टकराते ही उस परिघके सहसा सैकड़ों टुकड़े होकर बिखर गये, मानो आकाशमें सौ-सौ उल्काएँ एक साथ गिरी हों।

महाकपि हनुमानजी परिघसे आहत होनेपर भी उस प्रहार से विचलित नहीं हुए, जैसे भूकम्प होनेपर भी पर्वत नहीं गिरता है।

वे महान् तेजस्वी, पराक्रमी, वेगवान और वायुके समान बल-विक्रमसे सम्पन्न थे। उन्होंने मुक्का तानकर बड़े वेगसे निकुम्भकी छातीपर मारा। उस प्रहारसे निकुम्भ विचलित हो उठा; फिर थोड़ी ही देरमें सँभलकर उसने महाबली हनुमानजीको पकड़ लिया।

उस राक्षसके द्वारा इस प्रकार अपहृत होनेपर भी पवनपुत्र हनुमान्‌जीने अपने वज्रतुल्य मुक्केसे उसपर प्रहार किया।

फिर वे अपनेको उसके चंगुलसे छुड़ाकर पृथ्वीपर खड़े हो गये। तदनन्तर वायुपुत्र हनुमान्‌ने तत्काल ही निकुम्भको पृथ्वीपर दे मारा।

इसके बाद उन वेगशाली वीरने बड़े प्रयाससे निकुम्भको पृथ्वीपर गिराया और खूब रगड़ा। फिर वेगसे उछलकर वे उसकी छातीपर चढ़ बैठे और दोनों हाथोंसे गला मरोड़कर उन्होंने उसके मस्तकको उखाड़ लिया। गला मरोड़ते समय वह राक्षस भयंकर आर्तनाद कर रहा था। निकुम्भके प्राणत्याग करनेपर सभी वानर बड़े हर्षके साथ गर्जने लगे। सम्पूर्ण दिशाएँ कोलाहलसे भर गयीं। पृथ्वी चलती-सी जान पड़ी, आकाश मानो फट पड़ा हो, ऐसा प्रतीत होने लगा तथा राक्षसोंकी सेनामें भय समा गया।

१३) श्रीरामद्वारा मकराक्ष वध- रणभूमिमें वायुपुत्र हनुमानजीके द्वारा गर्जना करनेवाले निकुम्भके मारे जानेपर एक दूसरेपर अत्यन्त कुपित हुए श्रीराम और मकराक्षमें बड़ा युद्ध हुआ।

निकुम्भ और कुम्भको मारा यह सुनकर रावणको बड़ा क्रोध हुआ। वह आगके समान जल उठा। रावणने क्रोध और शोक दोनोंसे व्याकुल हो विशाल नेत्रोंवाले खरपुत्र मकराक्षसे कहा- बेटा। मेरी आज्ञासे विशाल सेनाके साथ जाओ और बंदरोंसहित उन दोनों भाई राम तथा लक्ष्मणको मार डालो। तब मकराक्ष ने कहा- राक्षसों। आज मैं राम, लक्ष्मण, वानरराज सुग्रीव तथा दूसरे-दूसरे वानरोंका अपने उत्तम बाणोंद्वारा वध करूँगा। जैसे आग सूखी लकड़ीको जला देती है, उसी प्रकार आज मैं शूलोंकी मारसे सामने आयी हुई वानरोंकी विशाल वाहिनीको दग्ध कर डालूँगा।

प्रधान-प्रधान वानरोंने जब देखा कि मकराक्ष नगरसे निकला आ रहा है, तब वे सब-के-सब सहसा उछलकर युद्धके लिये खड़े हो गये। फिर तो वानरोंका निशाचरोंके साथ बड़ा भारी युद्ध छिड़ गया, जो देव-दानव-संग्रामके समान रोंगटे खड़े कर देनेवाला था।

खरपुत्र मकराक्षने अपने बाणसमूहोंसे वानरोंको अत्यन्त घायल कर दिया। उनके मनमें बड़ी घबराहट हुई और वे सब-के-सब भयसे पीड़ित हो इधर-उधर भागने लगे। वे वानर जब सब ओर भागने-लगे, तब श्रीरामने बाणोंकी वर्षा करके राक्षसोंको आगे बढ़नेसे रोका।

राक्षसोंको रोका गया देख निशाचर मकराक्ष क्रोधकी आगसे जल उठा और इस प्रकार बोला- राम। ठहरो, मेरे साथ तुम्हारा द्वन्द्वयुद्ध होगा। आज अपने धनुषसे छूटे हुए पैने बाणोंद्वारा तुम्हारे प्राण हर लूँगा।

उन दिनों दण्डकारण्यके भीतर जो तुमने मेरे पिताका वध किया था, तभीसे लेकर अबतक तुम राक्षस-वधके ही कर्ममें लगे हुए थे। इस रूपमें तुम्हारा स्मरण करके मेरा रोष बढ़ता जा रहा है।

किंतु राम। सौभाग्यकी बात है, जो तुम आज यहाँ मेरी आँखोंके सामने पड़ गये। जैसे भूखसे पीड़ित हुए सिंहको दूसरे वन-जन्तुओंकी अभिलाषा होती है, उसी तरह मैं भी तुम्हें पानेकी इच्छा करता था।

आज मेरे बाणोंके वेगसे यमराजके राज्यमें पहुँचकर तुम्हें उन्हीं वीर निशाचरोंके साथ निवास करना पड़ेगा, जो तुम्हारे हाथसे मारे गये हैं। राम। तुम्हें रणभूमिमें अस्त्रोंसे, गदासे अथवा दोनों भुजाओंसे- जिससे भी अभ्यास हो, उसीके हुए आज तुम्हारे साथ मेरा युद्ध है।

राम बोले- निशाचर। क्यों व्यर्थ डींग हाँकता है। तेरे मुँहसे बहुतसी ऐसी बातें निकल रही है, वो वीर पुरुषोंके योग्य नहीं है। संग्राममें युद्ध किये बिना कोरी बकवासके बलसे विजय नहीं प्राप्त हो सकती।

पापी राक्षस। यह ठीक है दण्डकारण्यमें चौदह हजार राक्षसोंके साथ तेरे पिता खरका, त्रिशिराका और दूषणका भी मैंने वध किया था। उस समय तीखी चोंच और अमुशके समान पंजेवाले बहुत-से गीधों, गीदड़ों तथा कौओंको भी उनके मांससे अच्छी तरह तृप्त किया था और अब आज वे तेर मांससे भरपेट भोजन पायेंगे।

दशरथनन्दन भगवान श्रीराम और राक्षस खरके पुत्र मुकराक्ष- इन दोनोंमें एक दूसरेके निकट आकर बलपूर्वक युद्ध होने लगा।

देवता, दानव, गन्धर्व, किन्नर और बड़े-बड़ नाग ये सब-के-सब उस अद्भुत युद्धको देखनेके लिये अन्तरिक्षमें आकर खड़े हो गये।

दोनोंके शरीर बाणोंसे बिंध गये थे; फिर भी उनका बल दुगुना बढ़ता जाता था। वे दोनों संग्रामभूमिमें एक-दूसरेके अस्त्रोंको काटते हुए लड़ रहे थे।

श्रीरामके छोड़े हुए बाण-समूहोंको वह राक्षस रणभूमिमें काट डालता था और राक्षसके चलाये हुए सायकोंको श्रीराम अपने बाणोंद्वारा टूट-टूट कर डालते थे।

सम्पूर्ण दिशा और विदिशाएँ बाण-समूहोंसे आच्छादित हो गयी थीं तथा सारी पृथ्वी ढक गयी थी। चारों ओर कुछ भी दिखायी नहीं देता था। फिर अनेक बाणोंसे रथको छिन्न-भिन्न करके श्रीरामने घोड़ोंको भी मार गिराया। रथहीन हो जानेपर निशाचर मकराक्ष भूमिपर खड़ा हो गया। खरपुत्र मकराक्षके हाथसे छूटे हुए उस प्रज्वलित शूलको अपनी ओर आते देख श्रीरामने बाण मारकर आकाशमें ही उसको काट डाला। दिव्य सुवर्णसे विभूषित वह शूल श्रीरामके बाणोंसे खण्डित हो अनेक टुकड़ोंमें बँट गया और बड़ी भारी उल्काके समान भूतलपर बिखर गया। उस शूलके टुकड़े-टुकड़े हुए देख निशाचर मकराक्षने घूसा तानकर श्रीरामसे कहा- अरे। खड़ा रह, खड़ा रह।

उसे आक्रमण करते देख श्रीरामने हँसकर अपने धनुषपर आग्नेयास्त्रका संधान किया और उस अस्त्रके द्वारा उन्होंने रणभूमिमें तत्काल उस राक्षसपर प्रहार किया। बाणके आघातसे राक्षसका हृदय विदीर्ण हो गया; अत: वह गिरा और मर गया। मकराक्षका धराशायी होना देख वे सब राक्षस श्रीरामके बाणोंके भयसे व्याकुल हो लमामें ही भाग गये। दशाननने ने सुषेण वैद्य को बुलवाया सुषेणने आकर प्रणाम किया तो क्रुद्ध होकर रावण बोला- तुम केवल वानरोंको जीवित करना जानते हो।

सुषेणने निर्भीक उत्तर दिया- राक्षसेन्द्र, आप क्रोधका त्याग करें। मैं चिकित्सक हूँ। मेरे सम्मुख रूग्ण होता है, राक्षस या वानर नहीं। मैंने कभी आपकी सेवा अस्वीकार की है ?

अभी संसारमें कहाँ-कहाँ तुम्हारी औषधियाँ हैं जो मृत को जीवित कर देती हैं। दशग्रीवने सबको नष्ट कर देनेका विचार कर लिया था।

केवल तीन स्थानोंपर वे प्राप्य थीं, क्षीरोदधि, गन्धमादन और द्रोणाचलपर। सुषेणने कहा- तीनों स्थानोंकी वे लोग ले आये।

इसका अर्थ कि औषधियाँ समाप्त हो गयी। सन्तोषसे दशग्रीव बोला- अब यदि उन्हें मार दिया जाता है तो फिर इसी प्रकार उन्हें कोई जीवित नहीं कर सकता। यदि देवता उन्हें अमृत देकर जीवित न कर दें। सुषेणने कहा- जहाँ तक मैं जानता हूँ, अब औषधियाँ शेष नहीं है। एक बार उखाड़ देनेपर उनको उगनेमें पर्याप्त समय लगता है। वे रखी हुई निष्प्रभाव होती हैं।

सुषेणको रावणने विदा कर दिया। इस कर्तव्यनिष्ठ वैद्यके प्रति निष्ठुर होनेसे उसकी अपनी ही हानि थीं।

१४) तरणीसेन का युद्ध और पतन- राजा का आदेश पाकर वीर तरणीसेन आया और भूमि पर लोट कर उसने दशानन को प्रणाम किया। राजाने उसको बाँहों में बाँधकर उसका सम्मान बढ़ाया और पुष्प-पान देकर उसकी युद्ध करने के लिए आरती उतारी। रावन ने कहा, तरणी। अब लंकापुरी की रक्षा करो, इतनी बड़ी विपत्ति आ जायगी, यह मुझको पहले नहीं मालूम था तुम्हारे पिता विभीषण धर्म के अनुगत रहे, उन्होंने बहुत सारे हित-उपदेश दिये और मुझको समझाया भी। लेकिन मैं अहंकार में मत्त था, मेरी मति भ्रष्ट हो चुकी थी, मैंने बिना-अपराध के ही उन पर लात का प्रहार किया। भाई विभीषण मुझको त्याग कर चले गये और मुझपर क्रोधित होने के कारण उन्होंने राम की शरण ले ली। वही सारे सन्धान का उपदेश देते रहते हैं और श्रीराम यम जैसा बैठा हुआ है। तुम्हारे पिता शत्रु के पक्ष में हो गये हैं और उन्हीं की मंत्रणा से कनक-लंका ध्वंस हो रही है। तुम उनके पुत्र हो लेकिन उन जैसे नहीं हो, सदा से जानता हूँ। तब तरणीसेन ने हाथ जोडकर कहा, हे राक्षसों के नाथ, तुम त्रैलोक्यविजयी हो। सभी शास्त्रों में कहा गया है कि माता-पिता महागुरु हैं, इसलिए पिता के सम्बन्ध में कुछ भी कहना उचित नहीं होगा। दशानन ने कहा, तुम हमारे वंश के सुसन्तान हो, नर और वानर के हाथों से हमारी रक्षा करो। मुझको लगता है कि तुम संग्राम में विजयी होगे। तुम सा वीर तीनों भुवनों में नहीं है। तुम बुद्धि से विलक्षण हो और युद्ध में कुशल योद्धा हो। तुम श्रीराम-लक्ष्मण को हाथ-पैरों से बाँधकर ले आओ। इतना सुनकर विभीषण के पुत्र ने कहा, संग्राम में अपनी शक्तिभर मारकाट मचाऊँगा। वंश के नाश में मूल आधार पिता हैं- इस समय उनसे मैं कोई भी अनुरोध नहीं करूँगा। विभिन्न प्रकार के पुराण और शास्त्रों में यह कहा गया है कि युद्ध के समय श्रेष्ठ और ज्येष्ठ की विवेचना नहीं करनी चाहिए।

राजा को तरणी के वचन से बड़ा आनन्द पहुँचा। उन्होंने उसका सिर चूम कर उसे गोद में ले लिया। रावण ने उसको अपने हाथों से रणसज्जा पहनाई। सारथी संग्राम में जाने के निमित्त रथ ले आया।

तब तरणी ने सेना को सुसज्जित होने का आदेश दिया। तभी उसकी अपनी माँ सरमा याद आ गई। शीघ्रगति से वीर अपने जननी के पास पहुँचा। प्रणाम कर हाथ जोड़ वह खड़ा हो गया। तरणी ने कहा, माता तुम्हारे चरणों में निवेदन करता हूँ कि राजा का आदेश मिला है और मैं रण में जा रहा हूँ। पूर्णब्रह्म नारायण को अपनी आँखों से देखूँगा। राम के दर्शन से यह शरीर पवित्र हो जायगा। अपने पिता के चरण-कमल भी देख सकूँगा। माँ, मुझको अनुमति दो, मैं रणस्थल में जाऊँगा।

पुत्र संग्राम पर जायगा, यह सुनकर सरमा चौंक कर रो पड़ी। हाय, बेटा तूने यह क्या सुनाया, मैं तुझको नर-वानर के रण में नहीं जाने दूँगी। लंका छोड़कर तुझको लेकर कहीं और चली जाऊँगी। राजा लंकेश्वर अपना राज्य लेकर रहें। सभी लोग जानते हैं कि तुम्हारे पिता धार्मिक हैं, पाप-संगति त्याग कर उन्होंने राम की शरण ली है। तुम जाकर राम के चरणों में स्तुति करो। श्रीराम मनुष्य नहीं हैं, वे गोलोक के पति हैं। दुष्ट राक्षसकुल का ध्वंस करने के लिए विष्णु ने दशरथ के घर पर राम-अवतार के रूप में जन्म लिया है। जिसके एक लाख पुत्र हों और सवा लाख पोते हों, उनके वंश में एक भी दीपक जलाने को नहीं बचेगा। तुम्हारे पिता विभीषण ने अटपटा देखा तो भागकर राम की शरण में पहुँच गये। तुम तो बुद्धिमान हो और विलक्षण भी, फिर यह सब जान-बूझकर भी तुम किस कारण युद्ध में जा रहे हो।

माँ की बातें सुनकर तरणी कहने लगा, मैं भली-भाँति जानता हूँ कि राम विष्णु-अवतार हैं, फिर भी मैंने निश्चय कर लिया है कि युद्ध करूँगा। सर्व-शास्त्रों में और वेदों में लिखा है कि राम के हाथों मरने पर स्वर्ग में आवास मिलेगा। माँ, तुम किस कारण दुखी हो रही हो। कौन किसको मार सकता है और भला कौन किसका शत्रु है। एक ही विष्णु सारे विश्वभर में फैले हैं- उनके भिन्न-भिन्न शरीर हैं। समय के बीतने पर प्रलय होता है। हे माता, फिर मृत्यु के भय से तुम नाहक क्यों चिन्ता करती हो। पिता के मुँह मैंने महायोग-तंत्र सुना है कि यह शरीर अनित्य है, माया-यंत्र मात्र है। यदि दास का पुत्र समझ कर राम मेरा वध न करें तो लौटकर तुम्हारे चरणों में फिर प्रणाम करूँगा। नियत समय पूर्ण होने पर त्रिभुवन में किसकी शक्ति है कि किसी को रोक रखे।

महाज्ञानवती एवं सती सुन्दरी सरमा आँसू रोक कर बैठ गई। वीर तरणीसेन सरमा-जननी के चरणों का नमन कर चल पड़ा। तरणी ने सबको सजो-सजो यह कहकर पुकारा। सारी सेना में सुसज्जित होने के लिए गुहार मच गई।

सारे अंगों पर सानन्द राम-नाम लिखकर तरणीसेन संग्राम के लिए सुसज्जित हुआ। असंख्य कटक सुसज्जित हुआ, कोई रथ पर, कोई हाथी पर तो कोई घोड़े पर। किसी ने शेल-शूल लिया तो किसी ने धनुष-बाण। किसी ने जाठा-जाठी ली तो किसी ने धारदार खड्ग। आसमान के तारे भी गिने जा सकते है लेकिन तरणी की सेना की संख्या नहीं गिनी जा सकती। लाख-लाख अश्व और गज और लाख-लाख रथों ने गगन ढक लिया और पथ को छेंक लिया। उसने गंगा की मृत्तिका से लाख-लाख राम-नाम रथ पर और ध्वज-पताका पर लिख डाला।

हाथ में धनुष लेकर वीरता का अवतार तरणीसेन का रथ पर सवार हुआ और मार-मार शब्द करता पश्चिमी द्वार पर चल पड़ा। गढ़ से बाहर निकल कर उसने घोषणा की- बाजे पर रामजय-रामजय की धुन बजाओ। कोई कहता मारो-मारो तो कोई कहता पकड़ लो। वानर वृक्ष और पत्थर लेकर पिल पड़े। तरणी की सेना धनुष तान कर लड़ने लगी। वानरों की सेना में मानों आँधी चलने लगी। राक्षसों और वानरों में महारण हुआ। वानर प्रहार को सहने में असमर्थ हो भाग खड़े हुए।

श्रीराम ने कहा, मित्र विभीषण, तनिक देखना तो कौन युद्ध करने आ गया। विभीषणने कहा, हे राजीवलोचन, यह तो रावण के अन्न से पला कोई है। रिश्ते में वह उसका भतीजा लगता है और परिचय से उसके गोत्र कहा है। धर्म से धार्मिक यह पुत्र काफी बड़ा योद्धा है। संकेत से उन्होंने उसका प्रकृत परिचय दिया। तरणी सोच रहा है, दयामय राम कहाँ हैं।

दोनों सेनाओं में काफी युद्ध होता रहा। जितने वानर थे सब भाग खड़े हुए। तरणी चारों ओर निहार रहा है कि कब राम रघुमणि का दर्शन मिलता है। कितनी देर में पिता का दर्शन होगा और जन्म सफल और जीवन धन्य होगा। मन ही मन सोचता, देव-नारायण जाने कितनी दूर पर हैं। उसने झटपट रथ को तेज दौड़ाया। उसने रघुनाथ की ओर रथ भगाया तो रास्ता रोककर नीलवीर खड़े हो गये। वीरवर नील ने कहा, अरे राक्षस कहाँ जा रहा है, एक ही चाँटे में तेरा सिर तोड़ दूँगा। विभीषण-नन्दन ने हाथ जोड़कर कहा, रास्ता छोड़ो, चलकर श्रीराम-लक्ष्मण को देखूँ। नील ने कहा, पहाड़ के नीचे कुचल कर तुझे मार डालूँगा, कैसे तू श्रीराम-लक्ष्मण को देख सकेगा।

सारे अंग पर तथा रथ के चारों ओर राम-नाम लिखा है- तरणी की भक्ति देखकर वानर हँसने लगे। दुष्ट निशाचर कितने ही प्रकार के ढोंग जानते हैं। बगुला-भगत बनकर युद्ध करने आया है।

नीलवीर क्रोधित हो एक लम्बासा पेड़ उखाड़ कर ले आया, उसने बाँहों की पूरी शक्ति से उस पेड़ को तरणी के सिर पर दे मारा। हँसकर तरणीसेन ने उसको बाएँ हाथ से पकड़ लिया। वृक्ष व्यर्थ गया देखकर नीलवीर रोष से क्षणभर में एक पर्वत ले आया। उसने समूचा पर्वत हुंकार के साथ फेंका, तरणी की गदा से टकराकर वह पर्वत भी चकनाचूर हो गया। जब गदा के प्रहार से पर्वत चूर-चूर हो गया तब तरणी ने नील पर बाण छोड़ा। नीलवीर के मुँह से खून निकल आया और वह बेहोश हो गया। नीलवीर की पराजय देखकर हनुमान को बड़ा क्रोध आया।

छलाँग मार हनुमान उसके रथ पर चढ़ गया और सारथी के हाथ से चाबुक छीन लिया। गुस्से में आकर तरणीसेन ने एक मुक्का मारा। रथसे गिरकर हनुमान तड़फड़ाने लगा। होश में आकर हनुमान फिर मार-मार कर उठा और फिर कूद कर रथ पर जा चढ़ा। रथ के ऊपर ही दोनों में महायुद्ध छिड़ गया। कुपित होकर तरणीसेन ने हनुमान को पकड़ लिया और जमीन पर उसको पटक दिया। डर कर हनुमान पीछे हट गया। हनुमान को पीछे हटते देख सारे वानर डर गये, आतंक से कोई भी बन्दर आगे नहीं बढ़ा।

भीषण क्रोध से हनुमान को पीछे कर बाली का वीर बेटा रण में आ गया। तरणी पर उसने एक पर्वत फेंका। यह देखकर तरणीसेन घबड़ा गया। घबड़ा कर उसने तीखे-तीखे बाण चलाये और बाणोंसे उसने पर्वत को खंड-खंड कर डाला। पर्वत खंड-खंड हो गया, देखकर अंगद को डर लगा। उसने मुक्का मार कर रथ के चारों घोड़ों को मार डाला। सारथी बड़ा ही चुस्त था, उसने तुरन्त घोड़े जोतकर रथ चला दिया। तरणीसेन अंगद पर गुस्सा गया और अंगद के सीने पर उसने लोहे का मुद्‌गर दे मारा। मुद्‌गर के प्रहार से बाली का बेटा गिर पडा तो महेन्द्र और देवेन्द्र गरजते हुए आ पहुँचे और भी सारे बन्र एक साथ इकट्ठे हो गये और तरणी पर पेड़-पत्थर की वर्षा करने लगे। जिस प्रकार पर्वत अपने सिर पर वर्षा की झड़ी को सहता है उसी प्रकार तरणीसेन संग्राम में खड़ा रहा। परमकुशल वीर तरणीसेन विभिन्न विद्याओं में निष्णात था, उसने क्षणभर में सारे पेड़-पर्वतों को काट-काट कर गिरा दिया। तरणी के बाण मानों आग की शिखा हों, उन्होंने लाखों बानीरों के प्राण ले लिये। वानर चाँटा, घूँसा और लात से हमला करते और लाखों राक्षसों के सिर चूर-चूर करते। वानर राक्षसों को मारते और राक्षस वानरों को। पर्याप्त संख्या में हाथी, घोड़े, रथ और रथी ढेर हो गये। स्थान-स्थान पर पर्वत के समान ढेर जमा हो गया। रण-भूमि में खून की नदी बह निकली। वानरों का घोरनाद, हाथियों का चिंघाड़ना, रथों का घरघराना- यह सब अत्यन्त घोर शब्द उत्पन्न करने लगा। गदा, शेल, शूल जैसे अस्त्रों के टकराव से ठन्-ठन् का शब्द होने लगा। किसी के हाथ-पैर कट गये तो किसी के आँख और कान। मूसल के प्रहार से किसी का अंग उड़ गया। यह युद्ध बड़ा भयंकर हुआ, इसकी तुलना नहीं की जा सकती। चारों द्वारों के वानर पश्चिमद्वार पर इकट्ठे हो गये।

तरणी के बाणों को कोई भी सह नहीं सका। बूढ़ा सुषेण बिगड़कर आगे बढ़ आया। सुषेण के प्रताप से राक्षस काँपने लगे। वह एक छलाँग में तरणी के रथ पर जा चढ़ा। उसने तरणी के हाथों का धनुष छीन लिया और सभी अंगों को नाखून और दाँतों से नोच-खसोट डाला। तरणी के शरीर से रक्त की धारा बह निकली। लात मारकर उसने रथ के चारों घोड़ों को मार डाला और सारथी का मुंड भी नोच डाला। फिर एक छलांग में अपनी सेना के बीच आ गया। तरणी की दुर्दशा देखकर वानर हँसने लगे। तरणी ने तुरन्त घोड़े और सारथी मँगवाये। फिर बाणों की वर्षा करने लगा। सम्मुख संग्राम में उसके सामने टिक रहा ऐसी शक्ति किसमें है।

बड़े-बड़े वानर दूर भाग गये। तीखे-तीखे बाण आकर सुग्रीव को लगने लगे। बाणों की चोट से सुग्रीव-राजा क्रोध से जलने लगे। वीर ने गरज कर एक पर्वत फेंका। तरणी ने क्रोध से काँपते हुए उसपर गदा की चोट की जिससे पहाड़ के सैकड़ों टुकड़े हो गये। सुग्रीव के सीने पर उसने घरघोर जाठा फेंककर मारा- सुग्रीव राजा गिर पड़े और उनके मुख से खून निकलने लगा। राजा सुग्रीव ज्यों ही युद्धस्थल पर गिरे तो दुम उठाकर सारे वानर भागने लग गये। वानर भागने लगे तो पीछे पलटकर भी नहीं देखा। पकड़ो-पकड़ो, कह कर राक्षस उनके पीछे पड़ गये। बड़े-बड़े वीर प्राणों के भय से भागे। तरणीसेन के बाणों से कोई भी स्थिर नहीं रह सका। महेन्द्र, देवेन्द्र, द्विविद और कुमुद भागने लगे। हनुमान, सुषेण और अंगद रह गये। तीनों मिलकर सुग्रीव को होश में करने लग गये। विभीषण-नन्दन ने रथ चला दिया।

हाथ में धनुष लिये श्रीराम-लक्ष्मण खड़े हैं। उनके दक्षिण में जाम्बवान खड़ा है तो बाएँ विभीषण। सामने तरणी का रथ जा पहुँचा।

कुछ रास्ता शेष रहते वह रथ से उतर पड़ा। पिता के चरणों पर उसने संकेत से प्रणाम किया। हाथ जोड़कर उसने श्रीराम-लक्ष्मण को प्रणाम किया। विभीषण ने कहा, हे राम, शीघ्र देखो तुम दोनों को निशाचर प्रणाम कर रहा है। श्रीराम ने कहा, मित्र विभीषण सुनो, यह निशाचर विपक्ष की ओर से युद्ध करने रणभूमि में आया है, वह किस कारण हम दोनों को प्रणाम करेगा ? विभीषण बोले, प्रभु आप इसका कारण नहीं जानते। लंका नगरी में यह आपका एक भक्त है। आपके चरणों के अतिरिक्त यह और कुछ भी नहीं जानता है। राजा के आदेश से यह युद्ध करने आया है। राम ने कहा, अगर निश्चित रूप से जानते हो कि यह मेरा भक्त है तो आशीर्वाद करता हूँ कि इसकी मनोकामना पूर्ण हो। लक्ष्मण ने कहा, हाय, यह आपने क्या किया। राक्षस की अभिलाषा है रावण की विजय। श्रीराम ने कहा, तुम नहीं जानते लक्ष्मण, भक्त कभी भौतिक इच्छाएँ नहीं करता।

राम रघुमणि यह सब कह ही रहे थे कि धनुष पर टंकार मारते तरणी आ गया। गम्भीर गर्जन से उसने सिंहनाद किया, कहा कि क्या अपने देश सकुशल लौट जाने की साध है तुमको। यह सुनकर प्रचंड क्रोध से लक्ष्मण के होंठ काँपने लगे। उन्होंने धनुष पर यमराज के समान बाण चढ़ाया।

जिनते बाण लक्ष्मण तरणी पर निशाना साधकर फेकते, श्रीराम का स्मरण कर वीर तरणी उनको काट कर गिरा देता। अमर्त्य, समर्थ, कर्णरिखा आदि कितने ही बाण उसने काट डाले। दोनों ही अपनी-अपनी शिक्षा के अनुसार बाण चलाते रहे। लक्ष्मण ने अग्नि-अवतार बाण चलाया तो तरणी ने वरुण-बाण से उसका संहार किया। लक्ष्मण ने पाशुपत बाण मारा तो वीर तरणी ने वैष्णव-बाण से उसका निवारण किया। लक्ष्मण ने भयंकर पर्वत-बाण फेंका तो निशाचर ने पवन-बाण से उसका निवारण लाख-लाख अजगरों से गगन छा गया, निशाचर तरणीसेन ने गरुड़-बाण से उसका प्रतिरोध किया। लक्ष्मण ने कुहरा-बाण फेंका तो चारों ओर अंधेरा छा गया, कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं होता था, निशाचर आपस में मारकाट कर ध्वंस होने लगे, तरणी की सेना में खलबली मच गई। तरणी ने चिकुरबाण से अन्धकार का नाश किया। गुस्से में आकर लक्ष्मण ने गन्धर्व-बाण फेंका उतनी देर में तीन करोड़ गन्धर्वों का जन्म हो गया। गन्धर्वों और राक्षसों में घनघोर मारकाट शुरू हो गई और तरणी की सारी सेना मर-खप गई, सारा कटक गिर गया, एक भी सैनिक नहीं बचा, विभीषण का नन्दन उनकी रक्षा न कर सका। क्रोधित हो तरणीसेन ने हाथ में जाठा उठा लिया और गरज कर लक्ष्मण के सिर पर दे मारा। तब बेहोश होकर लक्ष्मण-वीर गिर पड़े और लक्ष्मण को लेकर हनुमान भाग खड़े हुये।

संग्राम जीतकर तरणीसेन ने पुकारा, कहाँ है वह कपटी तपस्वी जटाधारी राम ? राम ने कहा, अब और कोई विलम्ब नहीं, तुझे जल्द ही यम के घर भेज रहा हूँ। लक्ष्मण के गिरने पर अपने हाथों में त्रिभुवन-विजयी धनुष-बाण लेकर रघुनाथ आगे बढ़ आए। रघुनाथ तरणी के सम्मुख आकर खड़े हो गये। वीर तरणी राम का सर्वांग निहारने लगा। निशाचर ने राम का विश्वरूप देखा। उनके एक-एक रोम-कूप में एक-एक ब्रह्माण्ड समाया हुआ था। उसी में उसने कितने ही नद-नदी पर्वत-कानतार वन आदि देखे। मर्त्यलोक, तपोलोक, ब्रह्मलोक देखे। माया से गोलोक के स्वामी मनुष्यरूप धर कर लीला कर रहे हैं, उनके चरणों पर गंगा-भागीरथी प्रवाहमान है। लाख-लाख यक्ष, रक्ष, देवता, किन्नर विचर रहे हैं। यह विश्वरूप देखकर वह मन ही मन विस्मित हुआ। भूमि पर साष्टांग लोट कर उसने प्रणाम किया। फिर धनुष-बाण फेंककर वह स्तुति करने लगा।

श्रीराम ने कहा, हे मित्र विभीषण, सुनो, अब मुझको विदित हुआ कि लंका में मेरा ऐसा भी भक्त है। इस पर मैं अस्त्र कैसे चला सकता हूँ- यह कहकर उन्होंने अपने हाथ के धनुष-बाण रख दिये। राम ने कहा, विभीषण तुमसे बताऊँ, ऐसे भक्त को मार कर मैं कैसे रह सकूँगा। व्यर्थ ही मैंने सागर बांधा, लंका का युद्ध त्याग कर फिर वन चला जाऊँ। मैंने कितने ही युद्ध किये, किन्तु अब सारी मेहनत बेकार गई। मैंने अब समझ लिया कि सीता का उद्धार न हो सकेगा। न सीता का उद्धार होगा और न मैं लौटकर अपने राज्य में जाऊँगा। भला मैं भक्त के अंगों पर बाण कैसे चलाऊँ। मेरे भक्त के अंग में काँटा भी चुभ जाय तो मेरे हृदय पर शेल की चोट सी लगती है। भक्त ही मेरे पिता-माता हैं, भक्त ही मेरे प्राणों के समान हैं, मैं ऐसे भक्त के शरीर पर बाणों का प्रहार कैसे कर सकूँगा। इतना सोचकर रघुनाथ युद्ध से हाथ खींचकर चिन्तित हो अलग बैठ गये।

राजीव लोचन राम को सदय-हृदय देखकर तरणी अपने मन ही मन विचारने लगा। कदाचित् मेरी स्तुति से तुष्ट होकर रघुवर मुझ पर अस्त्र नहीं चला रहे हैं। इस राक्षस-देह से कैसे मुक्ति मिलेगी, युद्ध के बिना मुक्ति का कोई उपाय नहीं। इतना सोचकर उसने धनुष-बाण उठा लिया। धनुष पर बाण चढ़ा कर उसने कठोर वाक्य कहना शुरू कर दिया। तरणी ने कहा, सुन राम, मैं तेरे को बताता हूँ कि मैंने

ये प्यारे-प्यारे शब्द तुझे परखने के लिए कहे थे। तूने यह कैसे समझ लिया कि मैं युद्ध नहीं करूँगा, मैं अभी तुझे यमालय भेजता हूँ। तेरी जो वीरता है उसके बारे में चराचर में विदित है। भरत ने तुझे भगाकर राज्य छीन लिया। तुझको मारने के बाद मैं युद्ध में लक्ष्मण का भी वध करूँगा और सीता को लेकर रावण के बाएँ बिठाऊँगा।

महावीर तरणी का इतना कहना था कि लक्ष्मण का शरीर क्रोध से काँपने लगा। लक्ष्मण ने कहा, यह दुष्ट निशाचर जाति का है, प्राणों के भय से इसने विनती की। यह कहाँ भक्त ठहरा, यह तो पापिष्ठ दुर्जन है। इतना कहकर लक्ष्मण ने बाण धनुष पर चढ़ाये। यह देखकर तरणीसेन ने मन ही मन सोचा- मुझको तो राम के हाथों मरने की अभिलाषा है। यह सोचते ही उसका चेहरा विषाद से भर गया। विभीषण ने तरणी की अभिलाषा भाँप ली।

हाथ जोड़कर विभीषण ने रघुनाथ से कहा, लंका में यह लड़का दुर्जय वीर है। एकबार इससे लड़ते हुए लक्ष्मण मूर्च्छित हो चुके हैं, फिर क्यों दुबारा लक्ष्मण को युद्ध में भेज रहे हैं। स्वयं ही इस निशाचर को आप मारें। इतना सुनकर रघुवर ने धनुष उठा लिया और निशाना साध-साध कर तीखे-तीखे बाण फेंकने लगे। उन बाणोंको तरणी ने आधे ही रास्ते में टुकड़े-टुकड़े कर दिये। जितने बाण राम रघुमणि ने फेंके, तरणी ने अपने बाणों के द्वारा उनको काट गिराया। तरणी ने चुन-चुन कर पैने-पैने बाण फेंके और राम के कोमल अंगों को छेद-छेद कर जर्जर कर डाला। दोनों में युद्ध ठन गया, दोनों ही बराबरी के थे। क्रोध में आकर राम ने धनुष पर अर्धचन्द्र बाण चढ़ाया। वह बाण देखकर तरणी के मन में भय समा गया। उस बाण से रथ के चारों घोड़े कट गये। घोड़े कट गये तो रथ अचल हो गया। तरणी कूदकर भूमि पर खड़ा हो गया। सामने पर्वत, पत्थर, पेड जो भी दिखता उसे उठाकर गरजते हुए श्रीराम के वक्ष पर फेंकने लगा। चारों ओर अँधियारा कर वह पेड़ और पत्थर फेंकने लगा, इस प्रहार से रघुवर बड़े कातर हुए। उनका चाँद सा मुखड़ा सूख गया और हाथ भी जवाब देने लगे। ऐसा प्रतीत होने लगा मानों पूर्णमासी के चन्द्रमा को राहु ग्रसने लगा हो। श्रीराम को कातर देखकर तरणी सोच रहा है कि राम अत्यन्त परिश्रम से श्रान्त हो गये हैं। पुत्र-कलत्र सभी कुछ मिथ्या है, माया है, अलीक है। युग-युग से कामना करने के उपरान्त परम-शत्रु के रूप में परम-ईश्वर को पाया है। मुझको राज्य-धन-सम्पत्ति कुछ भी नहीं चाहिए। केवल राम के हाथों मर कर गोलोकधाम जाना चाहता हूँ।

तरणी ने जब मन ही मन इतना सोचा तो विभीषण ने राम के कानों में कहा, प्रभु रघुनाथ सुनो, निवेदन है कि इसकी मृत्यु केवल ब्रह्मास्त्र से ही होगी। अन्य किसी अस्त्र से इस निशाचर की मृत्यु नहीं होगी। ब्रह्मा ने सदय होकर उसको यह वरदान दिया है। इतना सुनकर कमललोचन राम ने धनुष पर ब्रह्म-अस्त्र चढ़ाया। रवि के किरण सा प्रखर वह बाण धनुष पर चढ़ाकर राम ने निशाना साधा। बाण का गर्जन भी ऐसा था मानो बादल गरज रहा हो। विमान से बाण आने लगा और विजय-घंट बजने लगा। स्वर्ग से देवता सुमंगल-ध्वनि करने लगे। तरणी हाथ जोड़ कर श्रीराम से कहने लगा, तुम्हारे चरणों को निहार कर मैं अपने प्राण त्यागता हूँ। हे प्रभु, परलोक में भी अपने श्रीचरणों में स्थान देना। तरणी ने अपने मन में इतना सोचा भर होगा कि बाण आकर उसको लगा और उसका मुंड कटकर अलग जा गिरा। दो खंड होकर वह वीर भूमि पर गिरा। तरणी का कटा मुंड राम-राम उच्चारने लगा। सारे वानर राम जय की शुभ ध्वनि करने लगे। तब हाय-हाय करता हुआ विभीषण जमीन पर गिर पड़ा, उसके अंग तथा वस्त्र आँसुओं से भीग गये। तब दौड़कर राम ने विभीषण को गोद में उठा लिया। श्रीराम ने कहा, मित्र विभीषण, तुम ऐसा अधीर होकर क्यों रो रहे हो। इस बीच तुम्हारे मन में कौन सा दु:ख उपजा जो तुम रोकर ऐसा व्याकुल होने लगे। विभीषण ने कहा, प्रभु निवेदन करता हूँ, यह मेरा पुत्र तरणीसेन मरा। इतना सुनकर रघुनाथ भी रोने लगे। तुमने पहले क्यों नहीं बताया कि यह तुम्हारा पुत्र है। अगर तुम पहले कह दिये होते कि यह तुम्हारा पुत्र है तो मैं तरणी के साथ युद्ध नहीं करता। इस प्रकार शोकाकुल होकर दोनों रोने लगे। श्रीराम-लक्ष्मण और सारे वानर भी रोने लगे। सुग्रीव, अंगद और वीर हनुमान भी रोने लगे, सुषेण आदि वानर और मंत्री जाम्बवान रोने लगे। श्रीराम ने कहा, मित्र विभीषण, पता नहीं तुम्हारा हृदय कितना कठोर है, तुम्हीं ने मुझे ब्रह्म-अस्त्र से मारने की मंत्रणा दी। स्वयं तुमने अपनी सन्तान का वध कराया। पहले तुमने इस बारे में क्यों नहीं सोचा और अब किस कारण तुम रो रहे हो। हे मित्र। शोक मत करो, मन को स्थिर करो, यह शरीर नश्वर है, इसके लिए क्यों रोते हो।

विभीषण ने कहा, प्रभु। तुम्हारे चरणों में निवेदन करता हूँ तुम ऐसा न सोचना कि मैं पुत्र-शोक से रो रहा हूँ। मैं धन्य हूँ और मेरा पुत्र भी पुण्यात्मा है जिसने तुम्हारे हाथों मर कर निर्वाण प्राप्त किया है। शायद वह बैकुंठ गया या गोलोक, उसने अपना राक्षस-शरीर त्यागा और तुमने उसको मुक्त किया। कुम्भकर्ण, अतिकाय आदि वीरों ने भी शरीर त्याग कर आनन्द से गोलोक के लिए प्रस्थान किया। ये लोग शत्रु बनकर मुक्ति पा गये। तुम्हारे चरण-कमलों की सेवा कर मुझको क्या लाभ हुआ। यदि मैं इस शरीर को छोड़ सकता तो मैं भी बैकुंठ जा

सकता था। लेकिन ब्रह्मा ने वर दिया है कि मेरी मृत्यु नहीं होगी, और पृथ्वी पर मुझको बहुत दु:ख सहना पड़ेगा। इसी कारण विषाद से भरकर मैं रो रहा हूँ। श्रीराम ने कहा, हे विभीषण, दु:ख मत करो, जो तुम हो वही मैं हूँ, इसमें कोई झूठ नहीं। साधु के लिये जीवन-मृत्यु दोनों बराबर हैं। जितने दिन तुम संसार में रहोगे सदा तुम पर मेरी कृपा बनी रहेगी। इतना सुनकर विभीषण ने अपना क्रन्दन रोका।

१५) वीरबाहु का वध- चित्रसेन नाम का एक गन्धर्व था जिसकी कन्या चित्रांगदा रूप सौन्दर्य से अनुपम थी। रावण उस पर सुन्दरी कन्या जो कि समस्त विद्याधरियों से भी अधिक रूपवती थी उसे हर कर ले आया। विष्णु के वरदान से उसको एक पुत्र प्राप्ति हुई। रावण के उस औरस पुत्र का नाम वीरबाहु हुआ। वह देव गुरु आदि से भक्ति रखता था और सदा राम का नाम जपता रहता था। उसे ब्रह्मा से वर प्राप्त हुआ। संग्राम में तेरी विजय होगी और इसे एक ऐरावत के समान एक हाथी दे दिया और कहा इसी गज की मृत्यु के साथ तुम्हारी मृत्यु छिपी है। यह सुनकर वीरबाहु ने कहा मृत्यु तो निश्चित होगी लेकिन युद्ध में मर कर मैं दैव नारायण को प्राप्त कर सकुं। तब ब्रह्मा ने कहा नारायण नर का रूप लेकर आयेंगे तब तुम अपनी खुशी से उन्हीं के हाथों अपनी मृत्यु प्राप्त कर लेना। तुम विष्णु भक्त हो इसलिये विष्णु में तुम्हारी भक्ति बनी रहेगी। मेरे इस वर से अन्त में तुम सुरधाम जाओगे।

युद्ध की बात सुनकर वीरवाहु लंका में चला आया। मन ही मन जानता था कि स्वयं नारायण नर का रूप लेकर आये है जिनके दर्शन से सारा तन, मन सफल हो जायेगा। वह वीर रावण के सम्मुख गया और चरण वन्दना की तब रावण बोला, वीर तुमने लंका की दुर्दशा देख ली मैंने स्वर्ग पाताल मर्त्य तीनों लोकों पर विजय प्राप्त की है पर आज नर वानरों के हाथों मेरा जीवन विपत्ति में पडा है। राम वानरों को लेकर लंका आ पहुंचा है। कुम्भकरण आदि वीर युद्ध में मारे गये है। तब वीरबाहु ने यह सोचकर विष्णु के हाथों मर कर स्वर्ग लोक में जाऊँगा। रावण से बोला हे पिता मुझे देखकर इन्द्र आदि देवता भी सब कांपने लगते है। मैं रण क्षेत्र में जाऊँगा। मां को यह मालुम हुआ तो वह दौड़कर पुत्र के पास आई और बोली पुत्र तुम किसके कहने से युद्ध में जा रहे हो ? बडे-बडे वीरों का निधन हो गया है। सोने की लंका वीरों से रहित हो गयी है। कुम्भकरण जैसे वीर रण में मारे गये। नर और वानरों ने मिल कर अतिकाय को मार डाला। यदि तुम युद्ध में गये तो मैं प्राण त्याग दूँगी। तब वीरबाहु मां को चरणों में नमन कर हंसते हुये बोला, तुम अबोध अबला जाति हो, व्यवहारिक बातों से अनभिज्ञ हो। यदि मैं ही युद्ध नहीं करूँ तो राज्य की रक्षा कौन करेगा ? युद्ध में यदि मैं राम के हाथों मारा गया तो स्वर्ग की प्राप्ति करूँगा। ऐसा मां को समझाकर वह वीर हाथी पर आरूढ़ हो युद्ध के लिये प्रस्थान कर गया। वानर और राक्षसों में भयंकर संग्राम हुआ। राक्षस के साथ युद्ध करने अंगद चला। अंगद युद्ध में गिर पडा तब हनुमान ने उस राक्षसपर एक बडा भारी शाल वृक्ष फेंक कर हाथी के सिर पर दे मारा। लेकिन वह पेड हाथी के सिर से टकरा कर खंड खंड हो कर टूट गया। तब हाथी गुस्से में बाबला होकर युद्ध भूमि में चारों ओर विचरने लगा। वीर बाहु के बाणों से हनुमान अचेतन हो गये। उसने बाणों से भेद भेदकर वानरों को व्याकुल कर दिया। तब वानर अपने प्राण लेकर भागने लगे। तब वानरों ने दौड कर प्रभु श्रीराम से विनती की यह कालान्तक यम सा आया है, हनुमान आदि गिर गये है। तब श्रीराम लक्ष्मण के साथ युद्धभूमि में चल पडे तथा वानर भी सभी पेड पत्थर हाथ में लिये उनके साथ दौड पड़े।

तब प्रभु श्रीराम ने विभीषण से इस वीर का परिचय पूछा। विभीषण ने वीर बाहु का परिचय देते हुये ब्रह्मा के वरदान की बात बतायी और बोले इस प्रताप से कोई भी रण में स्थिर नहीं है। वीर बाहु को जीतने के बाद रावण को जीतना मानो समुद्र तरने के गढे-गुच्चे में भरे पानी को पार करना है। इतने में ही रावण कुमार वीरबाहु वहां पहुंचा और ललकार कह कहने लगा हे राम लक्ष्मण तुम दोनों में से कौन मेरे साथ युद्ध करेगा। तब राम बोले आज तुम्हारी और मेरी लडाई है आज के युद्ध में मैं तुम्हारा संहार करूँगा। तब यह सुनकर वीरबाहु अकेले युद्ध करने लगा। वीर बाहु ने श्रीराम के सारे अंगों पर विष्णु के लक्षण देखे। तो वीरबाहु ने जान लिया कि राम विष्णु के अवतार है। हाथी से उतर कर धरती पर लौटकर दोनों हाथ जोड कर स्तवन किया।

रावण नन्दन स्तवन कर मन ही मन सोचने लगा मेरी मृत्यु कैसे हो। ये यदि मुझे युद्ध में नहीं मारते है तो मेरा उद्धार नहीं हो सकता। जिसके निमित्त ऋषि मुनि तीर्थों में भ्रमण करते है, जिसके निमित्त साधु सन्यासी विभिन्न यज्ञ करते है, हे गुण निधि मुझको वही परम पद अनायास प्राप्त हो जायेगा। बिना जाति व्यवहार के तो यह काम बनेगा नही। ऐसा सोचकर वह रावण कुमार एक छलांग मार कर उछल कर अपने हाथी पर जा बैठा और हाथी पर रखे उस प्रचंड धनुष को मुट्ठी में लेकर श्रीराम को बीधने लगा और कुवचन बोलने लगा क्यों रे अभागी, तपस्वी, कपटी, वनवासी तू बाते कर अपनी मृत्यु से बच जाना चाहता है ? यह काल जैसा अब मेरा अस्त्र देख।

वीरबाहु ने जब ये दुर्वचन कहे तो क्रोध से राम आग की भांति तमतमा उठे। क्रोध से राम कालान्तक यम समान बन गये। राम ने बाण साधा। दोनों के बाणों से बाण टकराकर चिनगारियां निकलने लगी। दोनों के बाण एक दूसरे को काटने लगे। वीर बाहु ने अग्निबाण सन्धान कर चारों ओर अग्नि फैला दी। राम ने वरुण बाण से उसका संहार किया। रावण नन्दन ने लक्ष्मण पर जाठा फेका। तब राम ने अपने बाणों से उसके जाठा के खंड-खंड कर दिये। तब राम ने ऐषिक बाण सन्धान कर चलाया जिससे वीर बाहु का हाथी खून से लथपथ हो लोट पोट हो गया। तब सुग्रीव ने पत्थर और पेड उठाकर हाथी के मस्तक पर दे मारा फिर भी पत्थर और पेड टूट गये। उस हाथी ने सुग्रीव को अपनी सूँड में पकडकर उठाकर जमीन पर दे पटका इससे सुग्रीव की हड्डियां चूर चूर हो गई तब सुग्रीव जमीन पर पडकर कराहने लगे। यह देखकर सारे वानर भाग खडे हु। दोनों में महाभयंकर युद्ध होने लगा। श्रीराम ने ब्रह्मास्त्र चलाया तो गजेन्द्र का मुंड कटकर जमीन पर गिर पडा। ब्रह्म अस्त्र से श्रीराम ने वीरबाहु का धनुष भी काट डाला। तत्पश्चात् श्रीराम ने वैष्णव अस्त्र को सन्धान कर बाण छोड दिया। इससे सारा संसार प्रकाशमय हो गया। इस बाण से मुकुट सहित विष्णु अस्त्र से मर कर वह वीर बाहु मुक्त हो गया। श्रीराम के चरणों में प्रणिपात होते ही वह ज्योतिर्मय हो गया।

१६) भस्मलोचन का वध- भस्माक्ष नाम का एक राक्षस था वह जिसके मुख पर दृष्टि डालता था वही भस्म हो जाता था। संसार में वह किसी का भी मुंह नहीं देखता था। ऐसा महावीर भस्माक्ष रण करने के लिये चल पड़ा। उसके साथ सम्मुख संग्राम में कौन जीत सकता था ? उसके साथ सैकडों वीर युद्ध करने चले। भस्मालोचन राम के सम्मुख युद्ध करने चला। भस्मा लोचन की आंखों पर चमडे के ढक्कन लगे थे। वह राम के सम्मुख इसी उद्देश्य से चला कि वही जाकर अपनी आखों की अन्धेरियां हटा ले। तब विभीषण ने श्रीराम से कहा, देखो वीर भस्माक्ष आ पहुंचा है यह बडी विपत्ति है। जिसको भी वह देख लेगा वही भस्म रूप में परिणित हो जायेगा। रथ में साक्षात यम के समान बैठा है, इसने हजार वर्ष तक कठोर तपस्या की है। तपस्या से तुष्ट होकर इसने ब्रह्मा से वर पाये है। इसने ब्रह्मा से कहा मुझे अमर कर दो। तब ब्रह्मा ने कहा हे निशाचर तुमको अमर बना देने से सृष्टि का विध्वंस हो जायेगा। तब निशाचर ने प्रार्थना की मैं जिधर भी दृष्टि डाल कर देखुं वह भस्म हो जाये। ब्रह्मा ने एवमस्तु कह दिया। यह वर पाकर राक्षस बहुत प्रसन्न हुआ। इस वर की परीक्षा करने अपने साथ के राक्षसों को देखा तो देखते ही वे सब के सब भस्म हो गये। इससे इसके पास इसके स्त्री और पुत्र भी नहीं रहे। तो हे प्रभो इसके साथ युद्ध करने में प्रमत्त मत होना। या सावधान रहना। हे प्रभो मेरी एक मन्त्रणा है उसके सामने दर्पण रख दो जैसे ही वह मुख देखने के लिये आयेगा दर्पण में अपना मुख देखेगा तो निशाचर वही भस्म हो जायेगा। श्रीराम ने अपने धनुषपर दर्पण अस्त्र लगाया। बाण छूटकर राम के सम्मुख बना रहा। राम के सम्मुख आ उस दुष्ट ने अपनी आंखों पर से दोनों अंधेरियां (ढक्कन) हटा ली। दर्पणास्त्र से श्रीराम ने पहले सभी को ढक दिया, सारे वानरों के मुख दर्पण बन गये। भस्माक्ष वीर ने जिसके भी मुंह की ओर देखा उसका मुख नहीं दिखाई पडा, केवल दर्पण दिखाई पडे। तब श्रीराम से पुकार कर बोला तुम प्राणों के भय से कातर हो। यदि भयभीत हो तो भाग कर अपने घर चले जाओ। राम ने कहा तुझे क्या मृत्यु की इच्छा है, अभी तुझे यम के घर भेज देता हूं। राम के वाक्य सुनकर क्रोध से उस निशाचर ने राम के पास अपना रथ ले आया। राम को देखने के लिये उसने अपनी आंखे खोल दी। राक्षस के सम्मुख राम ने दर्पण कर दिया। दर्पण के भीतर अपना मुख देख कर वह स्वयं भस्म हो गया और अपने रथ पर गिर गया।

१७) लक्ष्मणद्वारा मेघनाद (इन्द्रजित) का वध- रामद्वारा जब कुम्भकर्ण का संहार हो गया तब लंका में घर-घर में भीषण हाहाकार मचा। तब मेघनाद अपने पिता रावण को बोला- हे लंकाराय, आप किसी प्रकार का सोच न करें। मुझे धिक्कार है कि आपके मुख से हाय निकलती है। आपने मेरा पौरुष देखा होगा। मैंने नागपाशद्वारा दोनो भाइयोंको और कपिगण को जकड़ा था। वे भाग्य से कल बच गये नहीं तो कल ही उन दोनोंको समाप्त कर देता था। अब चाचा विभीषण का बदला लिये बिना और जब तक विजय पाकर लौट न आऊँ मेरे लिये सब कुछ हराम है।

मकराक्षको मारा गया सुनकर समरविजयी रावण महान् रोषसे भरकर दाँत पीसने लगा। पर्वत, वृक्ष, पत्थर और नख धारण किये वानर क्रोधित होकर दौड़े। निशाचर विशेष व्याकुल होकर भाग चले और भागकर किलेपर चढ़ गये। मेघनादकी मूर्च्छा छूटी, तब पिताको देखकर उसे बड़ी शर्म लगी। मैं अजेय होनेको यज्ञ करूँ, ऐसा मनमें निश्चय करके वह तुरंत श्रेष्ठ पर्वतकी गुफामें चला गया।

कुपित हुआ वह निशाचर उस समय वहाँ इस चिन्तामें पड़ गया कि अब क्या करना चाहिये। उसने अत्यन्त क्रोधसे भरकर अपने

पुत्र इन्द्रजित्को युद्धके लिये जानेकी आज्ञा दी। तभी मेघनाद मदमाता हुआ रण की ओर चला तभी दशानन ने कहा हे पुत्र, अधीर मत हो, ठहरो। जब ब्रह्मशक्ति ही उन तपस्वी बच्चों के आगे निरर्थक हो गयी तो अब और कौनसी शक्तियाँ उनके सम्मुख ठहरेगी। इसलिए हे पुत्र, अजेय शक्ति लेने के लिये निकुम्बला मन्दिर में जाओ और योग करो। हे रणवीर, रण करने के पहले इस इष्टदेवी की तुम आराधना करो। मेघनाद एक वीर पितृभक्त योद्धा था और वृद्ध पिता की बात उसने मान ली और विजय यज्ञ करने के लिये प्रात: ही निकुम्बला मन्दिर की ओर चला।

रावण बोला- वीर। तुम महापराक्रमी राम और लक्ष्मण दोनों भाइयोंको छिपकर या प्रत्यक्षरूपसे मार डालो; क्योंकि तुम बलमें सर्वथा बढ़े-चढ़े हो। जिसके पराक्रमकी कहीं तुलना नहीं है, उस इन्द्रको भी तुम युद्धमें परास्त कर देते हो; फिर उन दो मनुष्योंको रणभूमिमें अपने सामने पाकर क्यों नहीं मार सकोगे ?

अग्निमें आहुति दे आभिचारिक यज्ञ-सम्बन्धी देवता, दानव तथा राक्षसोंको तृप्त करनेके पश्चात् इन्द्रजित अन्तर्धान होनेकी शक्तिसे सम्पन्न सुन्दर रथपर आरूढ़ हुआ। समरविजयी इन्द्रजित् नगरसे निकलकर निर्ऋति-देवता सम्बन्धी मन्त्रोंसे अग्निमें आहुति दे अन्तर्धानकी शक्तिसे सम्पन्न हो बोला- जो व्यर्थ ही वनमें आये हैं अथवा झूठे ही तपस्वीका बाना धारण किये हुए हैं, उन दोनों भाई राम और लक्ष्मण को आज रणभूमिमें मारकर मैं अपने पिता रावणको उत्कृष्ट जय प्रदान करूँगा।

यह कहकर मेघनाद अपने भवन में गया। उसी समय मेघनाद पत्नी प्रमिला आयी और बोली- मेरे स्वामी। मैंने कभी आपसे कोई प्रार्थना नहीं की। आपको कभी कोई क्लेश नहीं दिया। आपकी इच्छा ही मेरी इच्छा रही है। मेघनाद चिन्तामग्न अपने सदन पहुँचा तो उसकी परमसती पत्नी प्रमिलाने उसका पैर पकड़ा- आज इस अनुचरीका अनुरोध स्वीकार कर लें। आज मेरी दक्षिण नेत्र और भुजा स्फुरित हो रही है। आप समरभूमिमें आज मत जाइये।

तुम सहज भीरु हो। मेघनादने हँसकर पत्नीको उठाया- शत्रु द्वारपर सिंहनाद कर रहा है। मैंने पिताको आश्वासन दिया है। अब प्राणभयसे भवनमें कैसे बैठा रहा जा सकता है ? तुम स्वयं कहती हो कि तुम्हारा सौभाग्य तुम्हारे सतीत्वसे सुरक्षित है।

यह सत्य होनेपर भी अपूर्ण सत्य है स्वामी। प्रमिला ने रुद्ध कण्ठ कहा- आज मेरा विश्वास विचलित हो रहा है। सबकी शक्ति-सीमा है। सीता महासती हैं और कोई और हैं- मेरा हृदय कहता है, कोई और हैं, सम्भवत: रामके अनुजकी सहधर्मिणी। मेरे सतीत्वकी शक्ति उनकी अदृश्य शक्तिके सम्मुख कुण्ठित होती लगती है। आप आज मेरा अनुरोध मान लें। मुझे दिशाएँ अन्धकारसे ढकती लगती हैं। मेरे करोंके कमणोंसे एक स्वत: भग्न हो गया।

मैं युद्ध करने अभी नहीं जा रहा हूँ। इन्द्रजितने पत्नीको आश्वासन दिया। वह युद्ध करने नहीं, माया-प्रदर्शन करने जा रहा था।

जब कटक सुसज्जित कर वीर मेघनाद युद्ध करने के लिए चल पड़ा तो उसे जननी मन्दोदरी याद आ गयी। उसने सोचा यदि मैं माँ से बिना कहे युद्ध के लिए प्रयाण करूँगा तो माता मन्दोदरी अन्नजल त्याग देंगी। मैं जननी को भक्ति से प्रणाम कर उनकी आज्ञा लेने के उपरान्त रणभूमि में जाऊँगा। इस प्रकार सोच कर वीर इन्द्रजीत भक्तिपूर्ण हृदय से माता के निकट गया। समस्त सेना और सेनापतियों को द्वार पर छोड कर वह जननी के अन्त:पुर में गया। सुवर्ण का बना अन्त:पुर जिसकी शोभा की तुलना संसार में नहीं है। वहाँ के पलंग आदि सभी वस्तुएँ स्वर्ण की बनी हुई हैं। दस हजार सौतों से घिरी मन्दोदरी के सुख की कोई सीमा नहीं। वहाँ तीन लाख बत्तियों में नारायण-तैल जल रहा है और मन्दोदरी महेश-पार्वती की पूजा कर रही है। दस हजार सौतों के अतिरिक्त सैकड़ों बहूबेटियाँ और अन्य नारियाँ भी हैं।

ऐसे ही समय इन्द्रजीत वहाँ आ उपस्थित हुआ मानों पूर्वाचल से आदित्य का उदय हुआ। उसकी शोभा अरुण-किरण जैसी है और उसका चन्द्रकला जैसा सौन्दर्य निरखने के लिए नारियों का मेला लग गया। मेघनाद ने माता के चरणों में प्रणाम किया। मन्दोदरी ने पुलकित नेत्रों से पुत्र की ओर देखा। अस्त-व्यस्त हो रानी ने उसे बाहों में भर लिया। मन्दोदरी ने कहा, हे पुत्र मैं गंगाधर शंकर की पूजा करती हूँ और उसी पुण्य के कारण मुझे तुम जैसा पुत्र प्राप्त हुआ है। तुमको गर्भ में धारण करते ही मैं पटरानी बनी और दस हजार सौतें मेरी दासी बनकर सेवा करने लगीं। मैं यह समझती हूँ कि श्रीराम कोई मनुष्य नहीं हैं- जो भी युद्ध में जाता है लौट कर नहीं आता। तेरे पिता ने पराई स्त्री को ग्रहण कर महापाप किया है और उसी अपराध के कारण उसे इतना मनोकष्ट मिल रहा है। तुम राम की सीता को लौटा दो और उनसे मित्रता कर लो। कनक-लंका नष्ट-भ्रष्ट हो रही है, इसे बचाने का कोई उपाय नहीं। बन्दरों ने सोने की लंका को जलाकर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। श्रीराम कोई मनुष्य नहीं है, वह विष्णु का अवतार हैं। तुम्हारे चाचा विभीषण गुणों की निधि हैं, उनको

राजा ने भरी-सभा में पदाघात किया। स्वयं तो राम की सीता को हर लाया, अब दूसरों को क्यों रण में भेजने लगा। नर-वानर के युद्ध में नहीं जाने दूँगी। राजा सीता को लौटा दें- यह परामर्श सुनें। यह घोषणा कर दो कि आज से कोई युद्ध नहीं रहा।

मन्दोदरी के ये वचन सुनकर मेघनाद हँसने लगा और माता को विभिन्न प्रकार से समझाने-बुझाने लगा। हे मां, मेरे पिता संसार के प्रभु हैं, वे अष्टलोकपालों को हराकर दुर्जय-प्रतापी बन गये हैं। किसके रोब-दाब के कारण तुम इतने वैभव को भोग रही हो। ऐसे व्यक्ति की निन्दा तुम नारियों के समाज में कर रही हो। तुम नारी जाति की हो इस कारण तुम्हारे वाक्य भी वैसे ही हैं। पतिनिन्दा महापाप है- क्यों ऐसा कर रही हो ? इन्द्राणी अतुल ऐश्वर्य का भोग करती है। तुम उस शचीदेव इन्द्राणी से सौ गुना अधिक अधिकार-सम्पन्न हो। स्वर्ग-मर्त्य-पाताल में जितने देवता हैं उनमें कौन ऐसा है जिसने पराई स्त्री को न रखा हो। देवताओं में श्रेष्ठ सुरपति इन्द्र को ही देख लो न -उसने गुरुपत्नी का हरण क्यों किया ? गौतम का शिष्य होकर भी देवराज इन्द्र को ऐसा कुत्सित कार्य करते लाज न आयी।

सब लोग कहते हैं कि देवताओं में सर्वोत्तम देवराज इन्द्र हैं जिनके कारण गौतम को अपनी नारी को त्यागना पड़ा। संसार में प्रसिद्ध है कि चन्द्र ब्राह्मणों का राजा है- उसने क्यों अपने गुरु की पत्नी का हरण किया। बृहस्पति के घर वह पाठाभ्यास के निमित्त गया और अपनी गुरुपत्नी का हरण कर लाया- यह कोई झूठी बात नहीं। फिर भी वह चन्द्र के रूप में संसार भर को प्रकाश देता है। पुरुषों में कौन है जो ऐसा पाप नहीं करता। संसार में श्रेष्ठ माना जानेवाला पवन भी वानरी-गमन कर चुका है। कौन ऐसा है जो इस प्रकार का दुराचार नहीं करता ? फिर नाहक क्यों मेरे पिता को दोषी बनाती हो। राम तो मनुष्य जाति का है कोई पूज्य भी नहीं, तो उसकी नारी लाकर पिता ने कौन सा अनुचित कार्य किया। खर-दूषण का वध कर राम हमारा वैरी बन गया। उनकी नारी लाकर पिता ने अच्छा ही काम किया है।

आज राम और लक्ष्मणको मारकर पृथ्वीको वानरोंसे सूनी करके मैं पिताको परम संतोष दूँगा। ऐसा कहकर वह अदृश्य हो गया।

ये ही वे दोनों है ऐसा सोचकर इन्द्रजितने अपने धनुषपर प्रत्यञ्चा चढ़ायी और जलकी वर्षा करनेवाले मेघकी भाँति अपनी बाण-धाराओंसे सम्पूर्ण दिशाओंको भर दिया।

उसका रथ आकाशमें खड़ा था और श्रीराम तथा लक्ष्मण युद्धभूमिमें विराजमान थे। उन दोनोंकी दृष्टिसे ओझल होकर वह राक्षस उन्हें पैने बाणोंसे बींधने लगा। उस तेजस्वी राक्षसने मायासे धूमजनित अन्धकारकी सृष्टि की और आकाशको ढक दिया। साथ ही कुहरेका अन्धकार फैलाकर दिशाओंको भी ढक दिया।

उसकी प्रत्यञ्चाकी टंकार नहीं सुनायी देती थी। पहियोंकी घर्घराहट तथा घोड़ोंकी टापकी आवाज भी कानोंमें नहीं पड़ती थी और सब ओर विचरते हुए उस राक्षसका रूप भी दृष्टिगोचर नहीं होता था। महाबाहु इन्द्रजित उस घने अन्धकारमें जहाँ दृष्टि काम नहीं करती थी, पत्थरोंकी अद्‌भुत वृष्टिके समान नाराच नामक बाणोंकी वर्षा करने लगा। समराङ्गणमें कुपित हुए उस रावणकुमारने वरदानमें प्राप्त हुए सूर्यतुल्य तेजस्वी बाणोंद्वारा श्रीरामके सम्पूर्ण अङ्गोंमें घाव कर दिया। जैसे दो पर्वतोंपर जलकी धाराएँ बरस रही हों, उसी प्रकार उन दोनों नरश्रेष्ठ वीरोंपर नाराचोंकी मार पड़ने लगी। उसी अवस्थामें वे दोनों वीर भी सोनेके पंखोंसे सुशोभित तीखे बाण छोड़ने लगे।

वे कमपत्रयुक्त बाण आकाशमें पहुँचकर रावणकुमार इन्द्रजित्‌को क्षत-विक्षत करके रक्तमें डूबे हुए पृथ्वीपर गिर पड़ते थे।

जिस ओरसे तीखे बाण आते दिखायी देते, उसी ओर वे दोनों भाई दशरथकुमार श्रीराम और लक्ष्मण अपने उत्तम अस्त्रोंको चलाया करते थे। अतिरथी वीर रावणपुत्र इन्द्रजित अपने रथके द्वारा सम्पूर्ण दिशाओंमें दौड़ लगाता और बड़ी फुर्तीसे अस्त्र चलाता था। उसने अपने पैने बाणोंद्वारा उन दोनों दशरथकुमारोंको घायल कर दिया।

इन्द्रजित्‌की वेगपूर्ण गति, रूप, धनुष और बाणोंको कोई देख नहीं पाता था। मेघोंकी घटामें छिपे हुए सूर्यकी भाँति उसकी कोई भी बात किसीको ज्ञात नहीं हो पाती थी। उसके द्वारा घायल और आहत होकर कितने ही वानर अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठे तथा सैकड़ों योद्धा मरकर पृथ्वीपर गिर पड़े। तब लक्ष्मणको बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने अपने भाईसे कहा- आर्य। अब मैं समस्त राक्षसोंके संहारके लिये ब्रह्मास्त्रका प्रयोग करूँगा।

उनकी यह बात सुनकर श्रीरामने लक्ष्मणसे कहा- भाई। एकके कारण भूमण्डलके समस्त राक्षसोंका वध करना तुम्हारे लिये उचित नहीं है। जो युद्ध न करता हो, छिपा हो, हाथ जोड़कर शरणमें आया हो, युद्धसे भाग रहा हो अथवा पागल हो गया हो, ऐसे व्यक्तिको तुम्हें नहीं मारना चाहिये। अब मैं उस इन्द्रजित्‌के ही वधका प्रयत्न करता हूँ। हमलोग विषैले सर्पोंकी भाँति भयंकर तथा अत्यन्त वेगशाली अस्त्रोंका प्रयोग करें।

यह मायावी राक्षस बड़ा नीच है। इसने अन्तर्धान-शक्तिसे अपने रथको छिपा लिया है। यदि यह दीख जाय तो वानरयूथपति इस राक्षसको अवश्य मार डालेंगे। यदि यह पृथ्वीमें समा जाय, स्वर्गको चला जाय, रसातलमें प्रवेश करे अथवा आकाशमें ही स्थित रहे तथापि इस तरह छिपे होनपर भी मेरे अस्त्रोंसे दग्ध होकर प्राणशून्य हो भूतलपर अवश्य गिरेगा।

इस प्रकार वानरोंसे घिरे हुए वीर महात्मा श्रीराम उस क्रूरकर्मा भयानक राक्षसका वध करनेके लिये तत्काल ही इधर-उधर दृष्टिपात करने लगे। महात्मा रघुनाथके मनोभावको समझकर इन्द्रजित् युद्धसे निवृत्त हो लमापुरीमें चला गया।

वहाँ जानेपर बलवान् राक्षसोंके वधका स्मरण हो आनेसे शूरवीर रावणकुमारकी आँखें क्रोधसे लाल हो गयीं। वह पुन: युद्धके लिये निकला। दोनों भाई वीर श्रीराम और लक्ष्मणको युद्धके लिये उद्यत देख इन्द्रजित्ने उस समय माया प्रकट की।

उसने मायामयी सीताका निर्माण करके उसे अपने रथपर बिठा लिया और विशाल सेनाके घेरेमें रखकर उसका वध करनेका विचार किया। उसे युद्धके लिये निकलते देख सभी वानर क्रोधसे भर गये और हाथमें शिला उठाये युद्धकी इच्छासे उसके ऊपर टूट पड़े।

कपिकुञ्जर हनुमान्जी उन सबके आगे-आगे चले। उन्होंने पर्वतका एक बहुत बड़ा शिखर ले रक्खा था, जिसे उठाना दूसरेके लिये नितान्त कठिन था। हनुमान्जी कुछ देरतक उनकी ओर देखते रहे। अन्तमें यह निश्चय किया कि ये मिथिलेशकुमारी ही हैं। उन्होंने जनककिशोरीको थोड़े ही दिन पहले देखा था, इसलिये वे शीघ्र ही उन्हें पहचान सके थे।

राक्षसराजके पुत्र इन्द्रजितके पास रथपर बैठी हुई तपस्विनी सीता शोकसे पीड़ित, दीन एवं आनन्दशून्य हो रही थीं।

वानरोंकी उस सेनाको अपनी ओर आती देख रावणकुमारके क्रोधकी सीमा न रही। उसने तलवारको म्यानसे बाहर निकाला और सीताके सिरके केश पकड़कर उन्हें घसीटा। मायाद्वारा रथपर बैठायी हुई वह स्त्री हा राम, हा राम कहकर चिल्ला रही थी और वह राक्षस उन सबके देखते-देखते उस स्त्रीको पीट रहा था।

सीताका केश पकड़ा गया देख हनुमान्जीको बड़ा दु:ख हुआ। वे पवनकुमार हनुमान् अपने नेत्रोंसे दु:खजनित आँसू बहाने लगे।

दुरात्मन। तू अपने विनाशके लिये ही तुला हुआ है, तभी सीताके केशोंका स्पर्श कर रहा है। तेरा जन्म ब्रह्मर्षियोंके कुलमें हुआ है तथापि तूने राक्षस-जातिके स्वभावका ही आश्रय लिया है।

अरे। तेरी बुद्धि ऐसी बिगड़ी हुई है ? धिक्कार है तुझजैसे पापाचारीको। नृशंस। अनार्य। दुराचारी तथा पापपूर्ण पराक्रम करनेवाले नीच। तेरी यह करतूत नीच पुरुषोंके ही योग्य है। निर्दयी। तेरे हृदयमें तनिक भी दया नहीं है।

बेचारी मिथिलेशकुमारी घरसे, राज्यसे और श्रीरामके करकमलोंके आश्रयसे भी बिछुड़ गयी है। निष्ठुर। इन्होंने तेरा क्या अपराध किया है, जो तू इन्हें इतनी निर्दयतासे मार रहा है ?

सीताको मारकर तू अधिक कालतक किसी तरह जीवित नहीं रह सकेगा। वधके योग्य नीच। तू अपने पापकर्मके कारण मेरे हाथमें पड़ गया है अब तेरा जीना कठिन है। लोकमें अपने पापके कारण वधके योग्य माने गये जो चोर आदि हैं, वे भी जिन लोकोंकी निन्दा करते हैं तथा जो स्त्री-हत्यारोंको ही मिलते हैं, तू यहाँ अपने प्राणोंका परित्याग करके उन्हीं नरक-लोकोंमें जायगा।

ऐसी बातें कहते हुए हनुमान्जी अत्यन्त कुपित हो शिला आदि आयुध धारण करनेवाले वानरवीरोंके साथ राक्षसराज कुमारपर टूट पड़े। वानरोंके उस महापराक्रमी सैन्य-समुदायको आक्रमण करते देख इन्द्रजितने भयानक क्रोधवाले राक्षसोंकी सेनाके द्वारा उसे आगे बढ़नेसे रोका। वानर। सुग्रीव, राम और तुम सब लोग जिसके लिये यहाँ तक आये हो, उस विदेहकुमारी सीताको मैं अभी तुम्हारे देखते-देखते मार डालूँगा। इसे मारकर मैं क्रमश: राम-लक्ष्मणका, तुम्हारा, सुग्रीवका तथा उस अनार्य विभीषणका भी वध कर डालूँगा।

बंदर। तुम जो यह कह रहे थे कि स्त्रियोंको मारना नहीं चाहिये, उसके उत्तरमें मुझे यह कहना है कि जिस कार्यके करनेसे शत्रुओंको अधिक कष्ट पहुँचे, वह कर्तव्य ही माना गया है।

हनुमान्जीसे ऐसा कहकर इन्द्रजितने स्वयं ही तेज धारवाली तलवारसे उस रोती हुई मायामयी सीतापर घातक प्रहार किया।

शरीरमें यज्ञोपवीत धारण करनेका जो स्थान है, उसी जगहसे उस मायामयी सीताके दो टुकड़े हो गये और वह मायाजनित तपस्विनी सीता पृथ्वीपर गिर पड़ी। उस स्त्रीका वध करके इन्द्रजितने् हनुमानसे कहा- देखलो, मैंने रामकी इस प्यारी पत्नीको तलवारसे काट डाला। यह रही कटी हुई विदेह-राजकुमारी सीता। अब तुमलोगोंका युद्धके लिये परिश्रम व्यर्थ है।

स्वयं इन्द्रजित विशाल खड्गसे उस मायामयी स्त्रीका वध करके रथपर बैठा-बड़े हर्षके साथ जोर-जोरसे सिंहनाद करने लगा।

रावणके उस पुत्रकी बुद्धि बड़ी खोटी थी। उसने इस प्रकार मायामयी सीताका वध करके अपने मनमें बड़ी प्रसन्नता का अनुभव किया। उसे हर्षसे उत्फुल्ल देख वानर विषादग्रस्त हो भाग खड़े हुए।

तब हनुमान बोले- वानरों ! तुम क्यों मुखपर विषाद किये युद्ध-विषयक उत्साह छोड़कर भागे जा रहे हो ? तुम्हारा वह शौर्य कहाँ चला गया ? मैं युद्धमें आगे-आगे चलता हूँ। तुम सब लोग मेरे पीछे आ जाओ। उत्तम कुलमें उत्पन्न शूरवीरोंके लिये युद्धमें पीठ दिखाना सर्वथा अनुचित है। वे श्रेष्ठ वानरवीर उस महासमरमें हनुमान्‌जीको चारों ओरसे घेरकर उनके पीछे-पीछे चले और जोर-जोरसे गर्जना करते हुए वहाँ राक्षसोंपर टूट पड़े।

वानर-सैनिकोंसे घिरे हुए उन महाकपि हनुमान्‌जीने प्रलयकालके संहारकारी यमराजके समान राक्षसोंका संहार आरम्भ किया।

वे भयानक पराक्रमी वानर वीर युद्धस्थलमें इन्द्रजित्‌पर उन वृक्षों और पर्वत-शिखरोंको फेंकने लगे। वृक्षों और शैलशिखरोंकी बड़ी भारी वृष्टि करते हुए वे वानर शत्रुओंका संहार करने और भाँति-भाँतिकी आवाजमें गर्जने लगे।

इस तरह शत्रुसेनाका वेग रोककर हनुमान्‌जीने वानरोंसे कहा- बन्धुओ। अब लौट चलो, अब हमें इस सेनाके संहार करनेकी आवश्यकता नहीं रह गयी है। हमलोग जिनके लिये श्रीरामका प्रिय करनेकी इच्छा रखकर प्राणोंका मोह छोड़ पूरे प्रयत्न के साथ युद्ध करते थे, वे सीता मारी गयीं। अब इस बातकी सूचना भगवान् श्रीराम और सुग्रीवको दे देनी चाहिये। फिर वे दोनों इसके लिये जैसा प्रतीकार सोचेंगे, वैसा ही हम भी करेंगे।

हनुमान्‌जीको श्रीरामके पास जाते देख दुरात्मा इन्द्रजित् होम करनेकी इच्छासे निकुम्भिलादेवीके मन्दिरमें चला गया।

निकुम्भिला-मन्दिरमें जाकर उस निशाचर इन्द्रजितने् अग्निमें आहुति दी। तदनन्तर यज्ञभूमिमें भी जाकर उस राक्षसने अग्निदेवको होमके द्वारा तृप्त किया। वे होमशोणितभोजी अभिचारिक अग्निदेवता आहुति पाते ही होम और शोणितसे तृप्त हो प्रज्वलित हो उठे और ज्वालाओंसे आवृत दिखायी देने लगे। वे तीव्र तेजवाले अग्निदेवता संध्याकालके सूर्यकी भाँति प्रकट हुए थे।

इन्द्रजित् यज्ञके विधानका ज्ञाता था। उसने समस्त राक्षसोंके अभ्युदयके लिये विधिपूर्वक हवन करना आरम्भ किया। उस होमको देखकर महायुद्धके अवसरोंपर नीति-अनीति-कर्तव्याकर्तव्यके ज्ञाता राक्षस खड़े हो गये।

महायशस्वी हनुमान उस सेनाके साथ शीघ्र भगवान् श्रीरामके निकट आये और दुखी होकर बोले-

प्रभो। हमलोग युद्ध करनेमें लगे थे, उसी समय समरभूमिमें रावणपुत्र इन्द्रजितने हमारे देखते-देखते रोती हुई सीताको मार डाला है। उन्हें उस अवस्थामें देख मेरा चित्त उद्‌भ्रान्त हो उठा है। मैं विषादमें डूब गया हूँ। इसलिये मैं आपको यह समाचार बतानेके लिये आया हूँ। हनुमानजीकी यह बात सुनकर श्रीरामजी उस समय शोकसे मूर्छित हो जड़से कटे हुए वृक्षकी भाँति तत्काल पृथ्वीपर गिर पड़े।

भाईकी यह अवस्था देखकर लक्ष्मणको बड़ा दु:ख हुआ। वे उन्हें दोनों भुजाओंमें भरकर बैठ गये और अस्वस्थ हुए श्रीरामसे यह युक्तियुक्त एवं प्रयोजनभरी बात बोले- आर्य ! आप सदा शुभ मार्गपर स्थिर रहनेवाले और जितेन्द्रिय हैं, तथापि धर्म आपको अनर्थोंसे बचा नहीं पाता है। इसलिये वह निरर्थक ही जान पड़ता है। स्थावरों तथा पशु आदि जङ्गम प्राणियोंको भी सुखका प्रत्यक्ष अनुभव होता है; किंतु उनके सुखमें धर्म कारण नहीं है क्योंकि न तो उनमें धर्माचरणकी शक्ति है और न धर्ममें उनका अधिकार ही है। अत: धर्म सुखका साधन नहीं है; ऐसा मेरा विचार है।

जैसे स्थावर भूत धर्माधिकारी न होनेपर भी सुखी देखा जाता है, उसी प्रकार जङ्गम प्राणी पशु आदि भी सुखी है, यह बात स्पष्ट ही समझमें आती है। यदि कहें जहाँ धर्म है, वहाँ सुख अवश्य है तो ऐसा भी नहीं कहा जा सकता; क्योंकि उस दशामें आप-जैसे धर्मात्मा पुरुषको विपत्तिमें नहीं पड़ना चाहिये। यदि अधर्मकी भी सत्ता होती अर्थात् अधर्म अवश्य ही दु:खका साधन होता तो रावणको नरकमें पड़े रहना चाहिये था और आप-जैसे धर्मात्मा पुरुषपर संकट नहीं आना चाहिये था।

रावणपर तो कोई संकट नहीं है और आप संकटमें पड़ गये हैं; अत: धर्म और अधर्म दोनों परस्परविरोधी हो गये हैं- धर्मात्माको दु:ख और पापात्माको सुख मिलने लगा है।

यदि धर्मसे धर्मका फल सुख और अधर्मसे अधर्म का फल दु:ख ही मिलनेका नियम होता तो जिस रावण आदिमें अधर्म ही प्रतिष्ठित है, वे अधर्मके फलभूत दु:खसे ही युक्त होते और जो लोग अधर्ममें रुचि नहीं रखते हैं, वे धर्मसे- धर्मके फलभूत सुखसे कभी वञ्चित न होते। धर्ममार्गसे चलनेवाले इन धर्मात्मा पुरुषोंको केवल धर्मका फल- सुख ही प्राप्त होता।

किंतु जिनमें अधर्म प्रतिष्ठित है, उनके तो धन बढ़ रहे हैं और जो स्वभावसे ही धर्माचरण करनेवाले हैं, वे क्लेशमें पड़े हुए हैं। इसलिये धर्म और अधर्म दोनों निरर्थक हैं। यदि पापाचारी पुरुष धर्म या अधर्मसे मारे जाते हैं तो धर्म या अधर्म क्रियारूप होनेके कारण आदि, मध्य और अन्त तीन ही क्षणोंतक रह सकता है। चतुर्थ क्षणमें तो वह स्वयं ही नष्ट हो जायगा; फिर नष्ट हुआ वह धर्म या अधर्म किसका वध करेगा ? अथवा यह जीव यदि विधिपूर्वक किये गये कर्मविशेष श्येनयाग आदि के द्वारा मारा जाता है या स्वयं वैसा कर्म करके दूसरेको मारता है तो विधि विहित कर्मजनित अदृष्ट को ही हत्याके दोषसे लिप्त होना चाहिये, कर्मका अनुष्ठान करनेवाले पुरुषका उस पापकर्मसे सम्बन्ध नहीं होना चाहिये क्योंकि पुत्रके किये हुए अपराधका दण्ड पिताको नहीं मिलता है।

शत्रुसूदन ! जो चेतन न होनेके कारण प्रतीकार-ज्ञानसे शून्य है, अव्यक्त है और असत्के समान विद्यमान है, उस धर्मके द्वारा दूसरे पापात्मा को वध्यरूपसे प्राप्त करना कैसे सम्भव है ?

सत्पुरुषोंमें श्रेष्ठ रघुवीर ! यदि सत्कर्मजनित अदृष्ट सत् या शुभ ही होता तो आपको कुछ भी अशुभ या दु:ख नहीं प्राप्त होता। यदि आपको ऐसा दु:ख प्राप्त हुआ है तो सत्कर्मजनित अदृष्ट सत् ही है, इस कथनकी संगति नहीं बैठती।

यदि दुर्बल और कातर स्वत: कार्य-साधनमें असमर्थ होनेके कारण धर्म पुरुषार्थका अनुसरण करता है, तब तो दुर्बल और फलदानकी मर्यादासे रहित धर्मका सेवन ही नहीं करना चाहिये- यह मेरी स्पष्ट राय है।

यदि धर्म बल अथवा पुरुषार्थका अङ्ग या उपकरणमात्र है तो धर्मको छोड़कर पराक्रमपूर्ण बर्ताव कीजिये। जैसे आप धर्मको प्रधान मानकर धर्ममें लगे हैं, उसी प्रकार बलको प्रधान मानकर बल या पुरुषार्थमें ही प्रवृत्त होइये।

हे भाई ! यदि आप सत्यभाषणरूप धर्मका पालन करते हैं अर्थात् पिताकी आज्ञाको स्वीकार करके उनके सत्यकी रक्षारूप धर्मका अनुष्ठान करते हैं तो आप ज्येष्ठ पुत्रके प्रति युवराजपदपर अभिषिक्त करनेकी जो बात पिताने कही थी, उस सत्यका पालन न करनेपर पिताको जो असत्यरूप अधर्म प्राप्त हुआ, उसीके कारण वे आपसे वियुक्त होकर मर गये। ऐसी दशामें क्या आप राजाके पहले कहे हुए अभिषेक-सम्बन्धी सत्य वचनसे नहीं बँधे हुए थे ? उस सत्यका पालन करनेके लिये बाध्य नहीं थे यदि आपने पिताके पहले कहे हुए वचनका ही पालन करके युवराजपदपर अपना अभिषेक करा लिया होता तो न पिताकी मृत्यु हुई होती और न सीता-हरण आदि अनर्थ ही संघटित हुए होते।

रघुनन्दन। धर्मसे भिन्न जो पुरुषार्थ है, उससे मिला हुआ धर्म ही शत्रुओंका नाश करता है। अत: काकुत्स्थ ! प्रत्येक मनुष्य आवश्यकता एवं रुचिके अनुसार इन सबका धर्म एवं पुरुषार्थका अनुष्ठान करता है। हे राघव। इस प्रकार समयानुसार धर्म एवं पुरुषार्थमें से किसी एकका आश्रय लेना धर्म ही है; ऐसा मेरा मत है। आपने उस दिन राज्यका त्याग करके धर्मके मूलभूत अर्थका उच्छेद कर डाला। जैसे पर्वतोंसे नदियाँ निकलती हैं, उसी तरह जहाँ-तहाँसे संग्रह करके लाये और बढ़े हुए अर्थसे सारी क्रियाएँ चाहे वे योगप्रधान हों या भोगप्रधान सम्पन्न होती हैं निष्काम भाव होनेपर सभी क्रियाएँ योगप्रधान हो जाती हैं और सकाम भाव होनेपर भोगप्रधान।

जो मन्दबुद्धि मानव अर्थसे वञ्चित है, उसकी सारी क्रियाएँ उसी तरह छिन्न-भिन्न हो जाती हैं, जैसे ग्रीष्म ऋतुमें छोटी-छोटी नदियाँ सूख जाती हैं। जो पुरुष सुखमें पला हुआ है, वह यदि प्राप्त हुए अर्थको त्यागकर सुख चाहता है तो उस अभीष्ट सुखके लिये अन्यायपूर्वक अर्थोपार्जन करनेमें प्रवृत्त होता है; इसलिये उसे ताड़न, बन्धन आदि दोष प्राप्त होते हैं। जिसके पास धन है, उसीके अधिक मित्र होते हैं। जिसके पास धनका संग्रह है, उसीके सब लोग भाई-बन्धु बनते हैं। जिसके यहाँ पर्याप्त धन है, वही संसारमें श्रेष्ठ पुरुष कहलाता है और जिसके पास धन है, वही विद्वान समझा जाता है। जिसके यहाँ धनराशि एकत्र है, वह पराक्रमी कहा जाता है। जिसके पास धनकी अधिकता है वह बुद्धिमान् माना जाता है, जिसके यहाँ अर्थसंग्रह है वह महान भाग्यशाली कहलाता है तथा जिसके यहाँ धर्म-सम्पत्ति है, वह गुणोंमें भी बढ़ा-चढ़ा समझा जाता है। अर्थका त्याग करनेसे जो मित्रका अभाव आदि दोष प्राप्त होते हैं, उनका मैंने स्पष्टरूपसे वर्णन किया है। आपने राज्य छोड़ते समय क्या लाभ सोचकर अपनी बुद्धिमें अर्थत्यागकी भावनाको स्थान दिया, यह मैं नहीं जानता। जिसके पास धन है, उसके धर्म और कामरूप सारे प्रयोजन सिद्ध होते हैं। उसके लिये सब कुछ अनुकूल बन जाता है। जो निर्धन है, वह अर्थकी इच्छा रखकर उसका अनुसंधान करेनपर भी पुरुषार्थके बिना उसे नहीं पा सकता।

नरेश्वर! हर्ष, काम, दर्प, धर्म, क्रोध, शम और दम ये सब धन होनेसे ही सफल होते हैं। जो धर्मका आचरण करनेवाले और तपस्यामें लगे हुए हैं, उन पुरुषोंका यह लोक ऐहिक पुरुषार्थ अर्थाभावके कारण ही नष्ट हो जाता है; यह स्पष्ट देखा जाता है। वही अर्थ इस दुर्दिनमें

आपके पास उसी तरह नहीं दिखायी देता है, जैसे आकाशमें बादल घिर आनेपर ग्रहोंके दर्शन नहीं होते हैं। वीर ! आप पूज्य पिताकी आज्ञा पालन करनेके लिये राज्य छोड़कर वनमें चले आये और सत्यके पालनपर ही डटे रहे; परंतु राक्षसने आपकी पत्नीको, जो आपको प्राणोंसे भी अधिक प्यारी थी, हर लिया। वीर रघुनन्दन ! आज इन्द्रजितने हमलोगोंको जो महान् दु:ख दिया है, उसे मैं अपने पराक्रमसे दूर करूँगा; अत: चिन्ता छोड़कर उठिये। नरश्रेष्ठ ! उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महाबाहो ! उठिये। आप परम बुद्धिमान् और परमात्मा हैं, इस रूपमें अपने-आपको क्यों नहीं समझ रहे हैं ?

निष्पाप रघुवीर ! यह मैंने आपसे जो कुछ कहा है, वह सब आपका प्रिय करनेके लिये- आपका ध्यान शोककी ओरसे हटाकर पुरुषार्थकी ओर आकृष्ट करनेके लिये कहा है। अब जनकनन्दिनीकी मृत्युका वृत्तान्त जानकर मेरा रोष बढ़ गया है, अत: आज अपने बाणोंद्वारा हाथी, घोड़े, रथ और राक्षसराज रावणसहित सारी लमाको धूलमें मिला दूँगा।

तुम त्रिलोक के नाथ हो, धर्म-निकेतन हो, धर्म के कारण तुमने राज्य छोड़ा, वल्कल का वस्त्र धारण किया, फल-मूल का भोजन किया और सिर पर जटाएँ धारण कीं। स्त्रीके कारण तुम ऐसा क्लेश पा रहे हो जैसे गृहस्थ लोग पाते हैं। अगर राज्य भोगते हुए दिव्य-सिंहासन पर बैठे रहते तो दुष्ट दशानन सीता को कैसे देख पाता। अपने ही दोष से तुम प्रवासी बने और सीता जैसी नारी को जन्म भर के लिए खो दिया। पिता, माता, बन्धु आदि सभी कुछ इस प्रकार मिथ्या है, मानों पेड़ तले मिलने वाले क्षणभर के बटोही हों। स्त्री-पुत्र सभी कुछ मिथ्या हैं, कोई भी किसी का नहीं होता, मानों पथ में पथिक-पथिक में परिचय मात्र हुआ। यह संसार असार है, कपटों का मेला है। डोरा हिलाकर मानों कठपुतलियों का नाच हो रहा है। विभिन्न प्रकार की विपत्तियाँ और तरह-तरह के उपद्रव भी आते हैं किन्तु ज्ञानी लोग इनके कारण शोकमग्न नहीं हो जाते। हे प्रभु। स्त्री के शोक से तुम ऐसा व्याकुल क्यों हो रहे हो। जो महाजन होता है वही विपत्तियों के समुद्र को पार कर जाता है। तुम्हारी भार्या भी क्या है ? और तुम्हारा पिता-भाई भी कौन है ? भला तुम तो जगत् के प्रभु हो, असामान्य हो। तुम्हीं सबके प्राण हो और बाकी लोग तुम्हारी छाया मात्र हैं। तुम्हारे बिना कोई कुछ नहीं है, सब माया है।

कुल-पुरोहित वशिष्ठ महामुनि थे और वे सदेह स्वर्ग गये, किन्तु स्वर्ग जाकर भी उनको दारा-पुत्र के शोक ने व्याकुल किया तभी वे स्वर्ग से भ्रष्ट होकर मृत्युलोक में आ गये। तपस्या करके इन्द्र देवराज बन गा। शोक से तुम व्याकुल हो रहे हो, यह कोई अच्छी बात नहीं है।

तब श्रीराम ने कहा, हे लक्ष्मण, तुम मुझको क्या समझा रे हो, भार्या का शोक भुलाने वाला नहीं होता। इस मिथ्या संसार में स्त्री और पुरुष दोनों जन्म लेते हैं। स्त्री से पुत्र प्राप्त होता है, परिवार बढ़ता है। हे भाई, इष्ट-मित्र कुटुम्ब और घर के सारे लोगों से भी भार्या का शोक अधिक होता है। सुनो भाई। देश-विदेश में कितनी ही कामिनियाँ मिलेंगी किन्तु गुणवती पत्नी की मृत्यु अपनी मृत्यु के समान है। ऐसा कभी नहीं सुना कि स्त्री के बिना पुरुष सुखी है। जो पत्नी-शोक पर विजय पा सकता है वह परम ज्ञानी है। राज्य नहीं रहा, पिता नहीं रहे, यह सब मैं भूल सकता हूँ किन्तु पत्नी गँवाने के बाद मैं उसको भुला नहीं सकता। सीता को बिना देखे मैं रह नहीं सकता। सीता की मृत्यु पर मैं मन को किस प्रकार दिलासा दूँ।

भ्रातृभक्त लक्ष्मण जब श्रीरामको इस प्रकार आश्वासन दे रहे थे, उसी समय विभीषण वानरसैनिकोंको अपने-अपने स्थान पर स्थापित करके वहाँ आये। वहाँ आकर उन्होंने देखा महात्मा लक्ष्मण शोकमें मग्न हैं तथा वानरोंके नेत्रोंमें भी आँसू भरे हुए हैं।

जो मूर्च्छित हो लक्ष्मणकी गोदमें लेटे हुए थे। साथश्रीरामकी दृष्टि पड़ी। श्रीरामको लज्जित तथा शोकसे संतप्त देख विभीषणका हृदय आन्तरिक दु:खसे दीन हो गया। उन्होंने पूछा- यह क्या बात है ?

तब लक्ष्मण ने कहा- सौम्य ! हनुमानके मुँहसे यह सुनकर कि इन्द्रजितने सीताको मार डाला श्रीरघुनाथ तत्काल मूर्च्छित हो गये है।

इस प्रकार कहते हुए लक्ष्मणको विभीषणने रोका और अचेत पड़े हुए श्रीरामसे यह निश्चित बात कही-

महाराज ! हनुमानने दुखी होकर जो आपको समाचार सुनाया है, उसे मैं समुद्रको सोख लेनेके समान असम्भव मानता हूँ।

महाबाहो ! दुरात्मा रावणका सीताके प्रति क्या भाव है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वह उनका वध कदापि नहीं करने देगा।

मैंने उसका हित करनेकी इच्छासे अनेक बार यह अनुरोध किया कि विदेहकुमारीको छोड़ दो; किंतु उसने मेरी बात नहीं मानी।

सीताको दूसरा कोई पुरुष साम, दाम और भेदनीतिके द्वाराभी नहीं देख सकता; फिर युद्धके द्वारा कैसे देख सकता है ?

महाबाहो ! राक्षस इन्द्रजित् वानरोंको मोहमें डालकर चला गया है। जिसका उसने वध किया था, वह मायामयी जानकी थीं।

मेघनाद इस समय निकुम्भिला-मन्दिरमें जाकर होम करेगा और जब होम करके लौटेगा, उस समय उस रावणकुमारको संग्राममें

परास्त करना इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताओंके लिये भी कठिन होगा।

निश्चय ही उसने हमलोगोंको मोहमें डालनेके लिये ही यह मायाका प्रयोग किया है। उसने सोचा होगा- यदि वानरोंका पराक्रम चलता रहा तो मेरे इस कार्यमें विघ्न पड़ेगा इसीलिये उसने ऐसा किया है।

जबतक उसका होम-कर्म समाप्त नहीं होता, उसके पहले ही हमलोग सेनासहित निकुम्भिला-मन्दिरमें चलें। नरश्रेष्ठ झूठे ही प्राप्त हुए इस संतापको त्याग दीजिये।

प्रभो ! आपको शोकसे संतप्त होते देख सारी सेना दु:खमें पड़ी हुई है। आप तो धैर्यमें सबसे बढ़े-चढ़े हैं; अत: स्वस्थचित्त होकर यहीं रहिये और सेनाको लेकर जाते हुए हम लोगोंके साथ लक्ष्मणजीको भेज दीजिये।

ये नरश्रेष्ठ लक्ष्मण अपने पैने बाणोंसे मारकर रावणकुमारको वह होमकर्म त्याग देनेके लिये विवश कर देंगे। इससे वह मारा जा सकेगा।

अत: महाबाहो। जैसे वज्रधानी इन्द्र दैत्योंके वधके लिये वज्रका प्रयोग करते हैं, उसी प्रकार आप उस राक्षसके विनाशके लिये लक्ष्मणको जानेकी आज्ञा दीजिये।

नरेश्वर ! शत्रुका विनाश करनेमें अब यह कालक्षेप करना उचित नहीं है। इसलिये आप शत्रुवधके लिये उसी तरह लक्ष्मणको भेजिये, जैसे देवद्रोही दैत्योंके विनाशके लिये देवराज इन्द्र वज्रका प्रयोग करते हैं। वह राक्षसशिरोमणि इन्द्रजित् जब अपना अनुष्ठान पूरा कर लेगा, तब समराङ्गणमें देवता और असुर भी उसे देख नहीं सकेंगे। अपना कर्म पूरा करके जब वह युद्धकी इच्छासे रणभूमिमें खड़ा होगा, उस समय देवताओंको भी अपने जीवनकी रक्षाके विषयमें महान् संदेह होने लगेगा।

विभीषण बोले- महाराज ! अब पुन: मुझे जो बात आपकी सेवामें निवेदन करनी है, उसे भी सुन लीजिये। बिना किसी कारणके आपके संतप्त होनेसे हमलोगोंके हृदयमें भी बड़ा संताप हो रहा है। राजन ! मिथ्या प्राप्त हुए इस शोक और संतापको त्याग दीजिये; साथ ही इस चिन्ताको भी अपने मनसे निकाल दीजिये; क्योंकि यह शत्रुओंका हर्ष बढ़ानेवाली है।

वीर ! यदि आप सीताको पाना और निशाचरोंका वध करना चाहते हैं तो उद्योग कीजिये; हर्ष और उत्साहका सहारा लीजिये।

रघुनन्दन ! रावणकुमार इन्द्रजित् निकुम्भिलामन्दिरकी ओर गया है, अत: ये सुमित्राकुमार लक्ष्मण विशाल सेना साथ लेकर अभी उसपर आक्रमण करें- युद्धमें उस रावणपुत्रका वध करनेके लिये उसपर चढ़ाई कर दें- यही अच्छा होगा। युद्धविजयी महाधनुर्धर लक्ष्मण अपने मण्डलाकार धनुषद्वारा छोड़े गये विषधर सर्पोंके तुल्य भयानक बाणोंसे रावण पुत्रका वध करनेमें समर्थ हैं।

महाबाहो ! सम्पूर्ण लोकोंके स्वामी ब्रह्माजीने उसे वरदान देते हुए कहा था- इन्द्रशत्रो ! निकुम्भिला नामक वटवृक्षके पास पहुँचने तथा हवन-सम्बन्धी कार्य पूर्ण करनेके पहले ही जो शत्रु तुझ आततायी शस्त्रधारी को मारनेके लिये आक्रमण करेगा, उसीके हाथसे तुम्हारा वध होगा। राजन् ! इस प्रकार बुद्धिमान् इन्द्रजितकी मृत्युका विधान किया गया है।

इसलिये श्रीराम ! आप इन्द्रजितका वध करनेके लिये महाबली लक्ष्मणको आज्ञा दीजिये। उसके मारे जानेपर रावणको अपने सुहृदोंसहित मरा ही समझिये।

उपाय। विभीषण के चेहरे पर क्रूरता उभरी, मुझे सूचना मिली है कि मेघनाथ निकुंभिला देवी के मंदिर में बैठा जप कर रहा है। अपना यज्ञ पूरा कर वह प्रात: पुन: युद्धभूमि में आकर हमारी सेना का ध्वंस करेगा। यदि उस नाश को रोकना है तो आप सूर्योदय से पूर्व, निकुंभिला देवी के मंदिर में यज्ञरत मेघनाथ पर आक्रमण करें।

जिसने निद्रा और आहार का बारह वर्ष त्याग किया हो, जिसने निर्धार-पूर्वक चौदह वर्ष ब्रह्मचर्य पालन किया हो, ऐसा जो कोई इन्द्रियों को अचूक जीतनेवाला पुरुष इसके सामने हो, तो वह निश्चय ही इसे जीत पाएगा, उससे इन्द्रजीत मरेगा।

राम ने विभीषण की ओर देखा, नि:शस्त्र शत्रु पर ?

वह नि:शस्त्र नहीं है। विभीषण बोले, उसके चारों ओर राक्षस सेना व्यूह बाँधे खड़ी है और वह आभिचारिक यज्ञ कर रहा है। हाँ। इस अर्थ में वह अवश्य निहत्था है कि उसके पास ब्रह्मास्त्र नहीं है। किंतु धर्म। सुग्रीव ने कुछ कहना चाहा।

धर्म यह है कि आपके नि:शस्त्र सहायक सैनिकों पर मेघनाद ब्रह्मास्त्र से आक्रमण करे। वानरराज। विभीषण का स्वर ऊँचा उठ गया, धर्म का चिंतन मैंने भी बहुत किया है; किंतु धर्म अनिवार्यत: सुख नहीं देता। अधर्म से व्यक्ति पीड़ा ही नहीं पाता, अन्यथा रावण को नरक के सभी कष्ट मिलने चाहिए थे। धर्म तो कर्तव्य का नाम है। कर्तव्य क्या है ? आत्मरक्षा। आत्मरक्षा में असमर्थ होना मूर्खता है। उनका स्वर

कुछ नम्र हुआ, कुछ अन्यथा कह गया होऊँ तो क्षमा करें। पर यदि आप नहीं जाना चाहते, तो सेना मुझे दें। मैं अकेला ही जाऊँगा।

राम के अधरों पर एक क्षीण-सी दुर्बल मुसकान उभरी, लंकापति। आपको अकेले जाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, मैं आपके साथ जाऊँगा। सौमित्र पीछे रहकर सेना की रक्षा करेंगे।

नहीं। लक्ष्मण ने अपना दुखता हुआ मस्तक छोड़ दिया, भैया। आपकी यह आज्ञा नहीं मानूँगा।

पंचवटी के युद्ध में आपने मुझे सुरक्षित स्थान पर रखा और स्वयं विकट जोखिम का युद्ध किया। पुन: मुझे आश्रम में छोड़कर आप मारीच के पीछे गए और भाभी को यह संदेह हुआ कि मैं जान-बूझकर संकट के समय पीछे रह जाता हूँ। यदि यह न हुआ होता तो भाभी का हरण न हुआ होता। ऐसी दुर्घटना अब नहीं होने दूँगा। आप सेना के अधिपति हैं। आप पीछें रहें और सेना की रक्षा करें। मेघनाथ का वध मैं करूँगा। विभीषणके वचन सुनकर श्रीराम शोकका परित्याग करके बोले- सत्यपराक्रमी विभीषण ! उस भयंकर राक्षसकी मायाको मैं जानता हूँ। वह ब्रह्मास्त्रका ज्ञाता, बुद्धिमान्, बहुत बड़ा मायावी और महान् बलवान है। वरुणसहित सम्पूर्ण देवताओंको भी वह युद्धमें अचेत कर सकता है।

लक्ष्मण ! वानरराज सुग्रीवकी जो भी सेना है, वह सब साथ ले हनुमान् आदि यूथपतियों, ऋक्षराज जाम्बवान् तथा अन्य सैनिकोंसे घिरे रहकर तुम मायाबलसे सम्पन्न इन्द्रजितका वध करो।

हे भाई। सुनो, उसको ऐसे बल और बुद्धिके उपायसे मारना, जिससे निशाचरका नाश हो। हे जाम्बवान्, सुग्रीव और विभीषण। तुम तीनों जने सेनासमेत इनके साथ रहना।

ये महामना राक्षसराज विभीषण उसकी मायाओंसे अच्छी तरह परिचित हैं, अत: अपने मन्त्रियोंके साथ ये भी तुम्हारे पीछे-पीछे जायँगे। तो फिर ऐसा ही हो, सौमित्र। सेना भी जितनी चाहो, ले जाओ। सूर्योदय से पहले मेघनाथ का वध कर लौटो।

तब लक्ष्मण बोले- आर्य ! आज मेरे धनुषसे छूटे हुए बाण रावणकुमारको विदीर्ण करके उसी तरह लमामें गिरेंगे, जैसे हंस कमलोंसे भरे हुए सरोवरोंमें उतरते हैं। इस विशाल धनुषसे छूटे हुए मेरे बाण आज ही उस भयंकर राक्षसके शरीरको विदीर्ण करके उसे कालके गालमें डाल देंगे। इस प्रकार जब श्रीरघुवीरने आज्ञा दी, तब कमरमें तरकस कसकर और धनुष सजाकर चढ़ाकर रणीधर श्रीलक्ष्मणजी प्रभुके प्रतापको हृदयमें धारण करके मेघके समान गम्भीर वाणी बोले- यदि मैं आज उसे बिना मारे आऊँ, तो श्रीरघुनाथका सेवक न कहलाऊँ। यदि सैकड़ों शमर भी उसकी सहायता करें तो भी रघुवीरकी दुहाई है; आज मैं उसे मार ही डालूँगा।

तभी उर्मिलानाथ का धनुषपर हाथ गया और प्रभु श्रीराम से बोले- कि मुझे आप रण में जानेकी आज्ञा दें। यह सिंह आज उसका हृदय विदारेगा। आपके चरणों की सौगन्ध है आज उसका अब शीश उतारूंगा। कब तक सत्यता का डंका छलकी छातीपर बोलेगा। हे आर्य, आज मैं लंका में वीरता का डंका बजा दूँगा।

श्रीराम बोले- हे भ्राता, मैं तुम्हें रण में जाने की आज्ञा देता हूँ पर युद्ध से पहले यह बात ध्यान में रखना कि मेघनाद साधु है, तपस्वी है, बलशाली है, वरदानी है, संयमी है, पत्नीव्रतवाला है। उसके एक ही सुलोचना (प्रमिला) रानी है। वह योग द्वारा स्वयंयोगी है। उसकी विशेषता है कि वह चाहे तो मर सकता है और मरकर फिर अपने प्राणों को अपने तन में प्रवेश कर सकता है। इस कारण हे भाई तुम ऐसे योद्धा का शरीर छिन्न-भिन्न कर आना और उसके मस्तिष्क को हाथोंमें ही मेरे पास लेकर आना कारण की उसका मस्तक आनेपर और भी कुछ कार्य करना शेष है। विज्ञान दृष्टि से भी हम सबको यह मस्तक रखना है। इस महाकार्य के साथ-साथ और भी कुछ गुप्त कारण है। उस कारण पर ही इस युद्ध में हमारी जय अवलंबित है। जो मेघनाद की पत्नी सती सुलोचना (प्रमिला) वासुकी नागकी राजकुमारी है। त्रिभुवन विख्यात साध्वी है। वह इस जग में उत्तम श्रेणी की पतिव्रता कहलाती है और उसके पत्नीव्रत की शक्ति से सदा वह स्वामी को विजय दिलाते आयी है। ऐसी सती सतवन्ती के पति का सिर अगर भूमि पर पड़ जाएगा तो कपिदल किस गिनती में है। उसके प्रताप से पूरा संसार भी भस्म हो जायेगा। कुम्भकर्ण इत्यादि का संहार हुआ। निश्चय ही उससे धरती का भार कुछ कम हुआ। पर मेघनाद के पहले ही मुझे कुछ संकोच हो रहा है कि पृथ्वी से एक नर उठ रहा है। उसकी पत्नी यदि पतिव्रता है तो वह भी पत्नीव्रतवाला है। ब्रह्मा ने भी यह निर्मल जोडा अपने उज्ज्वल हाथोंसे बनाया है। सत्य है की रावण का पाप आज उसकी भी नाव डुबो रहा है। घर का स्वामी यदि पापी हो तो पूरा घरभर का नाश हो जाता है। अब मुझे और कुछ नहीं कहना है, जाओ अब वध करने को उस महावीर का। दुनिया तो आनी-जानी है अन्त तक किसको यहाँ रहना है। तब सभी भालू और कपिसमुदाय श्रीराम को धन्य-धन्य कहने लगा।

श्रीरघुनाथके चरणोंमें सिर नवाकर शेषावतार श्रीलक्ष्मणजी तुरंत चले। उनके साथ अंगद, नील, मयंद, नल और हनुमान आदि उत्तम योद्धा थे। इन्द्रजित्के वधकी अभिलाषा रखनेवाले तेजस्वी लक्ष्मण अपने भाईके सामने ऐसी बात कहकर तुरंत वहाँसे चल दिये। कई हजार वानरवीरोंके साथ हनुमान् और मन्त्रियोंसहित विभीषण भी लक्ष्मणके पीछे शीघ्रतापूर्वक प्रस्थित हुए।

इस अभिचारिक यज्ञ ने युद्धारंभ से पहले ही चमत्कार कर डाला था। राक्षस पूर्णत: आश्वस्त थे कि आज के युद्ध की विजय मेघनाथ को प्राप्त होगी और वानर उस यज्ञ के प्रभाव के विषय में सोच-सोचकर संकुचित हो रहे थे। बात इतनी ही नहीं थी राम को यह भी सूचना मिली थी कि मेघनाथ अपने रथ में कहीं ऐसे स्थान पर बैठा था, जहाँ से वह दिखाई नहीं पड़ रहा था। वह अदृश्य रहकर ही युद्ध कर रहा था। वह धनुष नहीं चला रहा था। उसके पास कोई यंत्र था, जिसे राक्षसों ने ब्रह्मास्त्र कहकर अभिनंदित किया था। उस यंत्र में से अनवरत नालीक, नाराच, गदा, मूसल, परिघ, शक्ति, शूल, शतघ्नी इत्यादि शस्त्रों की वर्षा हो रही थी। जिस वेग और गति से, जिस संख्या और मात्रा में शस्त्र बरस रहे थे, सहस्त्रों मनुष्य मिलकर भी उतनी शस्त्र-वर्षा नहीं कर सकते थे। ब्रह्मा का दिया हुआ यह यंत्र अद्भुत था। यह दिव्यास्त्र नहीं, देवास्त्र था।

भूतल पर हलचल हुयी, नवमण्डल भी तिलमिला उठा। अति प्रबल तामसी यज्ञ देखकर सात्विक जगत भी काँप उठा। वेदमन्त्रों की ध्वनि उच्चारित हो रही थी पर यह यज्ञ पृथ्वीपर से वैदिक धर्म मिटाने को था। यह महाशक्ति की पूजा जग का नाश कराने को जा रही थी। जैसे ही यज्ञ का धूम आकाश के ऊपर फैला तभी श्रीराम विभीषण की ओर देखकर बोले- यह कैसे बादल छाये हैं ? यह कैसा अन्धेरा आया है, अब उस मायावी दशकंधर ने क्या मायावी रचाई है। तांत्रिक तन्त्रोंके द्वारा सचमुच ही कोई धुआँ उड़ाया है या कोई वैज्ञानिक यन्त्रोंके द्वारा विष फैलाया है। तब विभीषण बोले- यह न तो कोई माया है और न कोई चाल है। निकुम्बला देवी के मठ से उठकर पूरे संसार में धुआँ फैल रहा है। इसी मन्दिर में बैठकर इन्द्रजीत देवी को सिद्ध कर रहा है। इस विजय यज्ञ में मेघनाद पूर्णचित्त लगा हुआ है। यदि यह यज्ञ पूर्ण हो जायेगा तो अपनी जीत अनिश्चित हो जायगी।

जग में जब पुरूष अपने पौरुष से लाचार हो जाता है तभी सभी देवी-देवताओंको कायर की भाँति मनाता है। पर देवी तो उसकी रक्षक होती है जो युद्ध धर्म पर करता है। सिर्फ अपने स्वार्थ के लिये जो देवी के मन्दिर पर नाक रगड़ता है वह तो पागल है।

वानरोंने जाकर देखा कि वह बैठा हुआ खून और भैंसेकी आहुति दे रहा है। वानरोंने सब यज्ञ विध्वंस कर दिया।

इतनेपर भी वह न उठा, तब उन्होंने जाकर उसके बाल पकड़े और लातोंसे मार-मारकर वे भाग चले। तभी श्रीराम के दुर्दण्ड चण्ड वानर उस असुरी के यज्ञ में जा धमके और क्षणभीतर ही उस यज्ञका रंग पलट गया। उस यज्ञ वेदीपर ही उन रणवीरों ने रण यज्ञ कर दिया। चण्डी की प्रतिमा के आगे रणचण्डीका आह्वान हुआ। रक्त से यह हवनकुंड भर गया। ऐसा भीषण बलिदान हुआ। मानो रावण का पूर्ण पाप सब आज उदय हो गया हो। वैदेही की यह विरह अग्नि इस भाँति पूर्ण रंग लायी। स्वाहा-स्वाहा ध्वनि से जब हाहाकार का स्वर भिड़ा तब सिंहनाद करने मेघनाद तत्काल उठा और वह त्रिशूल लेकर दौड़ा, तब वानर भागे और वहाँ आ गये जहाँ आगे लक्ष्मणजी खड़े थे। कितने ही वानरों को तो उठते-उठते उसने दाँतों से दबा डाला। कितनों को उस मदमाते ने मिट्टी में मिला डाला। चटपट चुटकी-चुटकी में ही वानरसेना को जर्जरित कर डाला। मुख्य मुख्य जो योद्धा तो उन सबको मूर्छित कर डाला।

वह अत्यन्त क्रोधका मारा हुआ आया और बार-बार भयंकर शब्द करके गरजने लगा। मारुति हनुमान् और अंगद क्रोध करके दौड़े। उसने छातीमें त्रिशूल मारकर दोनोंको धरतीपर गिरा दिया।

रघुवंशी लक्ष्मण हाथमें धनुष ले ब्रह्माजीके निश्चित किये हुए विधानके अनुसार उस मायावी राक्षसको जीतनेके लिये निकुम्भिला नामक स्थानमें पहुँचकर एक जगह खड़े हो गये।

तब विभीषण ने कहा- लक्ष्मण ! यह सामने जो मेघोंकी काली घटाके समान राक्षसोंकी सेना दिखायी देती है, उसके साथ शिलारूपी आयुध धारण करनेवाले वानरवीर शीघ्र ही युद्ध छेड़ दें और आप भी इस विशाल वाहिनीके व्यूहका भेदन करनेका प्रयत्न करे। इसका मोर्चा टूटनेपर राक्षसराजका पुत्र इन्द्रजित् भी हमें दिखायी देगा।

अत: आप इस हवन-कर्मकी समाप्तिके पहले ही वज्रतुल्य बाणोंकी वर्षा करते हुए शत्रुओंपर शीघ्र धावा कीजिये।

वीर ! वह दुरात्मा रावणकुमार बड़ा ही मायावी, अधर्मी, क्रूर कर्म करनेवाला और सम्पूर्ण लोकोंके लिये भयंकर है, अत: इसका वध कीजिये।

लक्ष्मण ने देखा- सामने निकुंभिला यज्ञागार था। इसी के भीतर यज्ञ में दीक्षित हो इंद्रजित मेघनाथ बैठा ध्यान कर रहा था। अपने

नगर की प्राचीर के भीतर, मंदिर में बैठा मेघनाद सर्वथा असुरक्षित नहीं था। सहस्त्रों राक्षस सैनिक उस यज्ञागार की रक्षा कर रहे थे। वे सदा ऐसे ही रक्षा करते हैं या उन्हें इस अभियान की सूचना नहीं। उन्हें लक्ष्मण के इस अभियान की सूचना नहीं हो सकती। उन्हें यदि इसका तनिक भी आभास होता तो मेघनाद इस समय यहाँ यज्ञ न कर रहा होता; वह अपना ब्रह्मास्त्र लेकर वानर सेना का ध्वंस करने के लिए लंका की प्राचीर से बाहर निकल गया होता। किंतु किसी आशंका की अनुपस्थिति में भी कितनी विकट रक्षा-व्यवस्था है मेघनाद के लिए। राक्षस सर्वथा असावधान नहीं है।

विभीषणकी यह बात सुनकर लक्ष्मणने राक्षसराजके पुत्रको लक्ष्य करके बाणोंकी वर्षा आरम्भ कर दी। साथ ही बड़े-बड़े वृक्ष लेकर युद्ध करनेवाले वानर और भालू भी वहाँ खड़ी हुई राक्षस-सेनापर एक साथ ही टूट पड़े। इस प्रकार वानरों और राक्षसोंमें घमासान युद्ध होने लगा। उसे महान् कोलाहलसे समूची लमापुरी सब ओरसे गूँज उठी। नाना प्रकारके शस्त्रों, पैने बाणों, उठे हुए वृक्षों और भयानक पर्वत-शिखरोंसे वहाँका आकाश आच्छादित हो गया। मुख्य-मुख्य महाकाय महाबली रीछों और वानरोंसे जूझते हुए राक्षसोंको महान् भय लगने लगा।

सहायक सैनिक लंका पर भयंकर पथराव कर रहे थे। वानर सैनिकों की धनुर्धर टोलियाँ लंका की अट्टालिकाओंपर उल्काओं की वर्षा कर रही थीं। सुग्रीव, हनुमान, मैंद, द्विविद, अंगद और स्वयं राम- लंका के द्वारों से बाहर निकल आई राक्षस सेना से प्रत्यक्ष युद्ध कर रहे थे। दूसरी और विभीषण के बताए हुए मार्ग पर जनसेना की असंख्य टोलियाँ वन के वृक्षों की ओट में निकुंभिला देवी के यज्ञागार की ओर बढ़ रही थी।

रावणकुमार इन्द्रजित् बड़ा दुर्धर्ष वीर था। उसने जब सुना कि मेरी सेना शत्रुओंद्वारा पीड़ित होकर बड़े दु:खमें पड़ गयी है, तब अनुष्ठान समाप्त होनेके पहले ही वह युद्धके लिये उठ खड़ा हुआ। उस समय उसके मनमें बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ था। वह वृक्षोंके अन्धकारसे निकलकर एक सुसज्जित रथपर आरूढ़ हुआ, जो पहलेसे ही जोतकर तैयार रक्खा गया था। वह रथ बहुत ही सुदृढ़ था।

इन्द्रजितके हाथमें भयंकर धनुष और बाण थे। वह काले कोयलेके ढेर-सा जान पड़ता था। उसके मुँह और नेत्र लाल थे। वह भयंकर राक्षस विनाशकारी मृत्युके समान प्रतीत होता था।

पवनकुमार हनुमानजी बड़े वेगसे राक्षस-सेनाका विध्वंस कर रहे हैं, यह देखते ही सहस्त्रों राक्षस उनपर अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा करने लगे। इन्द्रजित्ने देखा, कपिवर पवनकुमार हनुमान् पर्वतके समान अचल हो नि:शमभावसे अपने शत्रुओंका संहार कर रहे हैं।

यह देखकर उसने अपने सारथिसे कहा- जहाँ यह वानर युद्ध करता है, वहीं चलो। यदि उसकी उपेक्षा की गयी तो यह हम सब राक्षसोंका विनाश ही कर डालेगा।

वहाँ पहुँचकर उस दुर्जय राक्षसने हनुमान्जीके मस्तकपर बाणों, तलवारों, पट्टिशों और फरसोंकी वर्षा आरम्भ कर दी।

तब विभीषण बोले- सुमित्रानन्दन ! रावणका जो पुत्र इन्द्रको भी जीत चुका है, वही यह रथपर बैठकर हनुमान्जीका वध करना चाहता है। अत: आप शत्रुओंका विदारण करनेवाला, अनुपम आकार-प्रकारसे युक्त एवं प्राणान्तकारी भयंकर बाणोंद्वारा उस रावणकुमारको मार डालिये। यह बलवान् रावणकुमार प्रतिदिन यहीं आकर पहले भूतोंको बलि देता, उसके बाद युद्धमें प्रवृत्त होता है।

इसीसे संग्रामभूमिमें यह राक्षस सम्पूर्ण भूतोंके लिये अदृश्य हो जाता है और उत्तम बाणोंसे शत्रुओंको मारता तथा बाँध लेता है।

अत: जबतक यह इस बरगदके नीचे आये, उसके पहले ही आप अपने तेजस्वी बाणोंद्वारा इस बलवान् रावणकुमारको रथ, घोड़े और सारथिसहित नष्ट कर दीजिये।

इतनेमें ही बलवान् रावणकुमार इन्द्रजित् अग्निके समान तेजस्वी रथपर बैठा हुआ कवच, खड्ग और ध्वजाके साथ दिखायी पड़ा।

तब महातेजस्वी लक्ष्मणने पराजित न होनेवाले पुलत्स्यकुलनन्दन इन्द्रजितसे कहा- राजकुमार। मैं तुम्हें युद्धके लिये ललकारता हूँ। तुम अच्छी तरह सँभलकर मेरे साथ युद्ध करो। लक्ष्मण ने एक भयंकर नाराच अपने धनुष पर चढ़ाया और विकट हुँकार के साथ यज्ञागार के मुख्य द्वार पर छोड़ दिया। यह आक्रमण का संकेत भी था और आदेश भी। एक ही क्षण में राम के जय-जयकार के बीच यज्ञागार पर चारों ओर से बाण बरसने लगे; किंतु कोई भी योद्धा प्रकट नहीं हुआ।

तभी मुख्य द्वार खुला और अपने रथ पर आरूढ़ मेघनाद प्रकट हुआ। उसका रथ यज्ञागार के भीतर ही रहा होगा। इस समय वह आभिचारिक यज्ञ के वश को त्याग योद्धा का रूप धारण कर चुका था। उसके शरीर पर कवच था और हाथों में धनुष-बाण। लक्ष्मण ने ध्यान से देखा- रथ पर ब्रह्मास्त्र नहीं था।

मेघनाद के अंगरक्षकों ने प्रसन्नता का विकट कोलाहल किया। युवराज को अपने मध्य पाकर उनकी असहायता, दीनता और घबराहट विलीन हो गई थी।

लक्ष्मण ने अपने धनुष पर एक उल्का चढ़ाकर आकाश की ओर छोड़ दी। जनसेना की समस्त टोलियाँ चारों दिशाओं से आकर उनके निकट व्यूह-बद्ध खड़ी हो गईं। विभीषण अपने मंत्रियों सहित, लक्ष्मण के साथ सटकर खड़े हो गए थे।

लक्ष्मणके ऐसा कहनेपर महातेजस्वी और मनस्वी रावणकुमारने वहाँ विभीषणको उपस्थित देखा- दोनों ओर से सैनिक आमने-सामने सज्जित हो गए तो मेघनाद ने अपना रथ आगे बढ़ाया। किंतु शस्त्र-प्रहार उसने नहीं किया। अपनी सेना के भाल-प्रदेश पर रथ रोक उसने विभीषण को देखा, राक्षस कुलांगार। देशद्रोही। और कुछ नहीं हो सका तो पुत्र सरीखे अपने भ्रातव्य को असावधान समझ, उसका वध करने आए हो।

राक्षस ! यहीं तुम्हारा जन्म हुआ और यहीं बढ़कर तुम इतने बड़े हुए। तुम मेरे पिताके सगे भाई और मेरे चाचा हो। फिर तुम अपने पुत्रसे-मुझसे क्यों द्रोह करते हो ?

दुर्मते ! तुममें न तो कुटुम्बीजनोंके प्रति अपनापनका भाव है, न आत्मीयजनोंके प्रति स्नेह है और न अपनी जातिका अभिमान ही है। तुममें कर्तव्य-अकर्तव्यकी मर्यादा, भ्रातृप्रेम और धर्म कुछ भी नहीं है। तुम राक्षस-धर्मको कलंकित करनेवाले हो।

दुर्बुद्धे ! तुमने स्वजनोंका परित्याग करके दूसरोंकी गुलामी स्वीकार की है। अत: तुम सत्पुरुषोंद्वारा निन्दनीय और शोकके योग्य हो।

नीच निशाचर। तुम अपनी शिथिल बुद्धिके द्वारा इस महान् अन्तरको नहीं समझ पा रहे हो कि कहाँ तो स्वजनोंके साथ रहकर स्वच्छन्दताका आनन्द लेना और कहाँ दूसरोंकी गुलामी करके जीना है।

दूसरे लोग कितने ही गुणवान् क्यों न हों और स्वजन गुणहीन ही क्यों न हो ? वह गुणहीन स्वजन भी दूसरोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ ही है; क्योंकि दूसरा दूसरा ही होता है वह कभी अपना नहीं हो सकता।

जो अपने पक्षको छोड़कर दूसरे पक्षके लोगोंका सेवन करता है, वह अपने पक्षके नष्ट हो जानेपर फिर उन्हींके द्वारा मार डाला जाता है। रावणके छोटे भाई निशाचर। तुमने लक्ष्मणको इस स्थानतक ले आकर मेरा वध करानेके लिये प्रयत्न करके यह जैसी निर्दयता दिखायी है, ऐसा पुरुषार्थ तुम्हारे जैसा स्वजन ही कर सकता है- तुम्हारे सिवा दूसरे किसी स्वजनके लिये ऐसा करना सम्भव नहीं है।

मेघनाद विभीषण से बोला, हे चाचा। राक्षस-वंश में तुम्हारा और मेरे पिता का एक वीर्य से जन्म हुआ। तुमको सभी लोग धार्मिक कहते हैं। तुम पिता के सहोदर हो इसलिए पिता के समान हो। पिता जैसा ही मान कर मैंने तुम्हारी बहुत सेवा की है। चाचा तुमने इष्ट-मित्रों को त्याग कर मनुष्य की शरण क्यों ले ली, राक्षस-वंश में दीया जलाने के लिए भी किसी को नहीं छोड़ा। तुमने सबको मरवा डाला है, तुम्हारे मन में जरा भी क्षमाभाव नहीं है, तुमने मेरी मृत्यु का सन्धान भी इनको बतला दिया है। निर्दय होकर तुमने राक्षस-कुल का ध्वंस किया, तुमको देखने से ही पाप लगता है। गुणवान् हो अथवा गुणहीन, फिर भी लोग उसको कुटुम्बी कहते हैं। कुटुम्ब बन्धु मिलकर साथ-साथ निवास करते हैं। चाचा, तुम दूसरे की गोद में परमसुन्दरी देखकर व्याकुल हो रहे हो यदि वह तुम्हारे भाग्य में नहीं तो क्या करोगे। इतने सारे भतीजों को मार कर तुम्हारा जी नहीं भरा, किस मुँह से तुम मुझको मारने आ गये। चाचा, वानर-सेना को दूर ले जाओ, यज्ञ में पूर्णाहुति डालकर वर माँग लूँ। इतना कहकर इन्द्रजीत मन ही मन मनसूबे बाँधने लगा, कि चाचा आज तुमको काटकर अपने सिर से सनीचर दूर करूँगा।

विभीषण मुसकराए, पुत्र सरीखे तो तुम हो ही, दम्भी। जो अपने गुरुजनों को सदा मूर्ख समझता रहा, उनका अपमान करता रहा, अपने पिता के कुकर्मों का समर्थन करता रहा और प्रत्येक सत्परामर्श को ठुकराता रहा। तुम जैसे पुत्रों के कारण ही तो पिता पर स्त्रियों का हरण कर अपने कुल को गौरवान्ति करता है। राक्षस कुलांगार कौन है ? सत्पथ पर चलनेवाला दीन विभीषण अथवा अहंकार में ऐंठें तुम और तुम्हारे पिता महाराजाधिराज रावण ?

विभीषण ने कहा, बेटा तू तो उल्टा गाने लग गया है। सभी लोग भलीभाँति मेरे चरित्र से अवगत हैं। राक्षस-कुल में जन्म लेकर मैंने कभी बुरे आचरण नहीं किये। मैं न दूसरों की वस्तु हड़पता हूँ और न दूसरों की औरतें। तेरे पिता के घर में चौदह हजार देव कन्याएँ हैं। इतनी स्त्रियों के होते हुए भी तेरा पिता परदारा की कामना करता है। वह एक तपस्विनी पर-नारी का हरण कर लाया है, वह इतना सरापती तथा कुवचन कहती रही फिर भी उसने उस कामिनी को नहीं छोड़ा। सैकड़ों मुनि-ऋषियों को मार कर उसने महान् पाप

अर्जित किया है। जितना पाप तेरे पिता ने किया है उसका कोई अन्त नहीं। तीनों लोकों से तेरे पिता का विरोध है। पाप कितने दिनों तक सहा जा सकता है- अब विपत्ति आ पड़ी हैं। वृक्ष में सदा फल नहीं फलता, समय पर ही फलता है- तेरे पिता के पापों का फल इतने दिनों में फला। अरे इन्द्रजीत, तेरी मृत्यु निकट है, भला हो कि तू अपने कुटुम्ब के साथ लंका छोड़कर एक ओर चला जा। अरे दुष्ट, अग्नि के वर से तू बार-बार जीत जाता है लेकिन अब अग्नि से तुझको वर नहीं मिलेगा।

नीति-चर्चा का अवकाश नहीं है, चाचा। मेघनाद का स्वर तनिक भी नम्र नहीं था, किंतु मरने से पूर्व तनिक बता दो, तुम्हें अपनी भूमि, अपनी जाति, अपने समाज से तनिक भी मोह नहीं कि उसका नाश करवाने के लिए न केवल शत्रुओं से जा मिले, वरन् उन्हें मार्ग बता-बताकर यहाँ तक ले आए।

अपने भतीजेके ऐसा कहनेपर विभीषणने उत्तर दिया- राक्षस। तू आज ऐसी शेखी क्यों बघारता है ? जान पड़ता है तुझे मेरे स्वभावका पता ही नहीं है। अधम। बड़ोंके बड़प्पनका ख्याल करके तू इस कठोरताका परित्याग कर दे। यद्यपि मेरा जन्म क्रूरकर्मा राक्षसोंके कुलमें ही हुआ है, तथापि मेरा शील-स्वभाव राक्षसोंका-सा नहीं है। सत्पुरुषोंका जो प्रधान गुण सत्व है, मैंने उसीका आश्रय ले रक्खा है। क्रूरतापूर्ण कर्ममें मेरा मन नहीं लगता। अधर्ममें मेरी रुचि नहीं होती। यदि अपने भाईका शील-स्वभाव अपनेसे न मिलता हो तो भी बड़ा भाई छोटे भाईको कैसे घरसे निकाल सकता है ? परंतु मुझे घरसे निकाल दिया गया, फिर मैं दूसरे सत्पुरुषका आश्रय क्यों न लूँ ?

जिसका शील-स्वभाव धर्मसे भ्रष्ट हो गया हो, जिसने पाप करनेका दृढ़ निश्चय कर लिया हो, ऐसे पुरुषका त्याग करके प्रत्येक प्राणी उसी प्रकार सुखी होता है, जैसे हाथपर बैठे हुए जहरीले सर्पको त्याग देनेसे मनुष्य निर्भय हो जाता है।

जो दूसरोंका धन लूटता हो और परायी स्त्रीपर हाथ लगाता हो, उस दुरात्माको जलते हुए घरकी भाँति त्याग देने योग्य बताया गया है। पराये धनका अपहरण, परस्त्रीके साथ संसर्ग और अपने हितैषी सुहृदोंपर अधिक शमा अविश्वास ये तीन दोष विनाशकारी बताये गये हैं।

इस बार विभीषण खुलकर हँसे, पूछा ही है तो उत्तर भी धैर्य से सुनो, मनस्वी युवराज। लंका न तुम्हारी भूमि है, न तुम्हारे पिता की। उसे तुम्हारे पिता ने कुबेर से छीना और उसे सदा उपनिवेश ही माना, देश नहीं। लंका सोने की है, किंतु लंका का सामान्य प्रजा आज भी इतनी निर्धन और असहाय है कि स्त्रियाँ अपना यौवन बेचती हैं और पुरुष अपना रक्त-मांस। तुमने लंका के लिए, यहाँ के जन-सामान्य के लिए, इस देश के विकास के लिए क्या किया ? यहाँ जो कुछ बना हुआ दिखाई पड़ता है- पथ, भवन, प्रासाद, अट्टालिकाएँ, जलपत्तन सब कुछ यक्षराज कुबेर के समय से निर्मित हैं। तुमने केवल यह किया कि सारा धन, सत्ता, शक्ति, व्यापार, उद्योग-राजपरिवार के सदस्यों, अपने मंत्रियों, सेनापतियों, सामंतों के हाथ में संचित कर दिया- प्रजा चाहे भूखी मरे। एक परिवार, एक वर्ग को सर्व-संपन्न बनाकर शेष लोगों को पशु से भी हीनतर जीवन जीने को बाध्य कर दिया। फिर भी तुम्हें गुमान है कि लंका तुम्हारी है। लंका को तुमने अपनी समझा ही कब ? और फिर केवल लंकावासी होकर ही तो कोई लंका का हितू नहीं हो सकता। विभीषण आवेश में बोले, तुमने लंकावासियों को दास और वेश्याएँ बनाया है- राम उन्हें मुक्ति देंगे और मैं उस मुक्ति की रक्षा करूँगा।

अब तू मुझे शिक्षा देने चला है ? अपने घरमें पलनेवाले सर्पवृश्चिक पहिले मार दिये जाने चाहिये। विभीषणने भी फटकारा- विश्वके सत्पुरुषोंका विनाश करनेको उद्यत दुष्टोंकी अभय कर देना घोर अधर्म है। उन्हें मिटा देना आवश्यक है।

महर्षियोंका भयंकर वध, सम्पूर्ण देवताओंके साथ विरोध, अभिमान, रोष, वैर और धर्मके प्रतिकूल चलना ये दोष मेरे भाईमें मौजूद हैं, जो उसके प्राण और ऐश्वर्य दोनोंका नाश करनेवाले हैं। जैसे बादल पर्वतोंको आच्छादित कर देते हैं, उसी प्रकार इन दोषोंने मेरे भाईके सारे गुणोंको ढक दिया है। इन्हीं दोषोंके कारण मैंने अपने भाई एवं तेरे पिताका त्याग किया है। अब न तो यह लमापुरी रहेगी, न तू रहेगा और न तेरे पिता ही रह जायँगे। राक्षस। तू अत्यन्त अभिमानी, उद्दण्ड और बालक मूर्ख है, कालके पाशमें बँधा हुआ है; इसलिये तेरी जो-जो इच्छा हो, मुझे कह ले। नीच राक्षस। तूने मुझसे जो कठोर बात कही है, उसीका यह फल है कि आज तुझपर यहाँ घोर संकट आया है। अब तू बरगदके नीचेतक नहीं जा सकता।

लक्ष्मणका तिरस्कार करके तू जीवित नहीं रह सकता; अत: इन नरदेव लक्ष्मणके साथ रणभूमिमें युद्ध कर। यहाँ मारा जाकर तू यमलोकमें पहुँचेगा और देवताओंका कार्य करेगा उन्हें संतुष्ट करेगा।

अब तू अपना बढ़ा हुआ सारा बल दिखा समस्त आयुधों और सायकोंको व्यय कर ले; परंतु लक्ष्मणके बाणोंका निशाना बनकर आज तू सेनासहित जीवित नहीं लौट सकेगा।

राजनीतिक चेतना कुछ अधिक ही उग्र हो गई है तुममें, चाचा। मेघनाथ वितृष्णा से मुसकराया, और तुम वीरवर लक्ष्मण। उसके स्वर में व्यंग्य था, यज्ञ-दीक्षित नि:शस्त्र योद्धा को चुपके से घेर मारने आए हो। कायर। दो बार जाने किस माया से तुम मरकर भी जीवित हो गए; किंतु आज तुम्हें किसी प्रकार भी जीवित नहीं लौटने दूँगा।

विभीषणकी यह बात सुनकर रावणकुमार इन्द्रजित् क्रोधसे मूर्च्छित-सा हो उठा। वह रोषपूर्वक कठोर बातें कहने लगा और उछलकर सामने आ गया। वह भयंकर बलशाली निशाचर बहुत बड़े आकारवाले, लंबे, मजबूत, वेगशाली और भयानक धनुषको तथा शत्रुओंका नाश करनेमें समर्थ बाणोंको भी लेकर युद्धके लिये उद्यत था।

तब इन्द्रजित आकर बोला- जैसे आग रूईके ढेरको जला देती है, उसी प्रकार इस विशाल धनुषसे छूटे हुए मेरे बाण आज तुम्हारे शरीरोंकी धज्जियाँ उड़ा देंगे।

आज अपने शूल, शक्ति, ऋष्टि और तोमरोंद्वारा तथा तीखे सायकोंसे छिन्न-भिन्न करके तुम सब लोगोंको यमलोक पहुँचा दूँगा।

लक्ष्मण। उस दिन रात्रियुद्धमें मैंने वज्र और अशनिके समान तेजस्वी बाणोंद्वारा जो पहले तुम दोनों भाइयोंको रणभूमिमें सुला दिया था और तुमलोग अपने अग्रगामी सैनिकोंसहित मूर्च्छित होकर पड़े थे, मैं समझता हूँ, उसका इस समय तुम्हें स्मरण नहीं है। विषधर सर्पके समान रोषसे भरे हुए मुझ इन्द्रजित्के साथ जो तुम युद्ध करनेके लिये उपस्थित हो गये, उससे स्पष्ट जान पड़ता है कि यमलोकमें जानेके लिये उद्यत हो।

तुम्हें पिछले युद्ध की याद नहीं है। उस बार तो तुम्हें भाग्य ने बचा लिया था पर अब तुम इस बार बच नहीं पाओगे। पहली बार तो मूर्छा ही आयी थी पर अब के प्राण गँवाओगे। हे लक्ष्मण, मैं वह सागर हूँ यदि मैं आगे बढ़ जाऊं तो प्रलयकार उमड़ जायेगा। और मैं वह ज्वालामुखी पर्वत हूँ जो फटा तो सारा जग जल जायेगा।

तब लक्ष्मण बोले- यह गर्व, अहंकार, घमण्ड त्याग दे। यह तेरी मैं-मैं का राग किसी भाँति भी अच्छा नहीं है। जग में वही शक्तिशाली कहलाता है जो नम्र भाव दिखलाता है। फलवाला वृक्ष ही नीचे को झुकता है। बिना फल का वृक्ष ठूँठ खड़ा रहता है। जो पक्षी, मैंना जो मैं-ना मैंना कहती है वह सबके मनको अच्छी लगती है और यह बकरी जो मैं-मैं करती है वह कसाई से अपने गलेपर छूरी फिरवाती है। तब बीच ही में बात काटकर मेघनाद बोल उठा- बालक, यह कोई राजमहल नहीं है यह रणभूमि है। साहस धीरज या स्वाभिमान रणवीरों का आभूषण है। सिंह के समान गर्जन-तर्जन ही सच्चे योद्धा का लक्षण है। यह मैंना जो मैं-ना, मैं-ना कहती है तब पिंजरे मे जन्म बिताती है और बकरी अपनी गर्दन कटवाकर भी फिर भी उसकी मैं-मैं नहीं जाती है।

तब लक्ष्मण बोले- उसकी भी यही एक टेक है। उस मैं-मैं वाली के लिये भी एक दिन आता है। मरने पर उसकी अस्थि मांस को पृथक-पृथक कर उसकी आँत निकाली जाती है और उसी आँत की यन्त्रों से ताँत बना ली जाती है। उसी ताँत से रूई धुनी जाती है। वह ताँत जिस समय रूई धुननेवाले के हाथ में आती है और धुनियाँ जब उसको धुनता है तब वह मैंना-मैंना तूही-तूही गाती है। लक्ष्मण का इसप्रकार उपदेश सुन बलवान फिर से गरजा और बोला- आज तुम्हारी जान नहीं बच सकती।

तब लक्ष्मण बोले- तुम्हारे प्राण रहते, स्वयं जीवित लौटने की आकांक्षा लेकर नहीं आया हूँ, वीरता-दंभी। लक्ष्मण तेजस्वी स्वर में बोले, मुझे दोष देने से पहले तनिक अपनी वीरता पर भी विचार कर लिया होता। पत्थरों और शाखाओं से लड़नेवाले निहत्थे वानरों पर तुमने ब्रह्मास्त्र चलाया है। युद्ध के नियमों के सर्वथा विरुद्ध तुमने हम पर विषैली औषधियों में पगे शस्त्रों का प्रयोग किया है। फिर भी वीरता का दम्भ है तुम्हें? लक्ष्मण का स्वर ऊँचा हो गया, हमारा निरीह वध करने के लिए अभिचारिक यज्ञ करते हो, धर्मावतार। मैं तुम्हें बताने आया हूँ कि प्रकृति की सबसे बड़ी शक्ति मनुष्य का पुरुषार्थ है। इसका प्रमाण मैं अभी तुम्हारे इस यज्ञ-दीक्षित, तिलक-मण्डित मस्तक को तुम्हारे कबंध से अलग कर दूँगा। तुम यज्ञ करो, बलियाँ दो, भूत शक्तियों को अपनी रक्षा के लिए पुकारो, रक्षा-कवच बाँधो, टोने-टोटके करो- किंतु न राम किसी अमानुषी शक्ति को पुकारेंगे और न उनका अनुज। हम तुम्हारे प्रत्येक मंत्र और शक्ति के ही नहीं, देवास्त्र, दिव्यास्त्र तथा शस्त्र शक्ति के विरुद्ध केवल जन-शक्ति को खड़ा कर तुम्हें बता देंगे कि वास्तविक शक्ति कहाँ है।

तब लक्ष्मण बोले- निशाचर। तुमने केवल वाणीद्वारा अपने शत्रुवध आदि कार्योंकी पूर्तिके लिये घोषणा कर दी; परंतु उन कार्योंको पूरा करना तुम्हारे लिये बहुत ही कठिन है। जो क्रियाद्वारा कर्तव्यकर्मोंके पार पहुँचता है अर्थात् जो कहता नहीं, काम पूरा करके दिखा देता है, वही पुरुष बुद्धिमान् है।

दुर्मते। तुम अपने अभीष्ट कार्यको सिद्ध करनेमें असमर्थ हो। जो कार्य किसीके द्वारा भी सिद्ध होना कठिन है, उसे केवल वाणीके द्वारा कहकर तुम अपनेको कृतार्थ मान रहे हो ? उस दिन संग्राममें अपनेको छिपाकर तुमने जिसका आश्रय लिया था, वह चोरोंका मार्ग है। वीर पुरुष उसका सेवन नहीं करते। राक्षस। इस समय मैं तुम्हारे बाणोंके मार्गमें आकर खड़ा हूँ। आज तुम अपना वह तेज दिखाओ। केवल बढ़-बढ़कर बातें क्यों बना रहे हो ?

वेगवान् रावणकुमार इन्द्रजित्ने उन अत्यन्त वेगशाली बाणोंद्वारा युद्धमें लक्ष्मणको घायल कर दिया। बाणोंसे उनका शरीर अत्यन्त क्षत-विक्षत हो गया। वे रक्तसे नहा उठे। उस अवस्थामें श्रीमान् लक्ष्मण धूमरहित प्रज्वलित अग्निके समान शोभा पा रहे थे।

सुमित्राकुमार। मेरे धनुषसे छूटे हुए तेज धारवाले पंखधारी बाण शत्रुके जीवनका अन्त कर देनेवाले हैं। ये आज तुम्हारे प्राण लेकर ही रहेंगे। तुम्हारा कवच खिसककर पृथ्वीपर गिर जायगा, धनुष भी दूर जा पड़ेगा और तुम्हारा मस्तक भी धड़से अलग कर दिया जायगा। इस अवस्थामें राम आज मेरे हाथसे मारे गये तुमको देखेंगे।

लक्ष्मणने कूपित होकर यह उत्तर दिया- क्रूरकर्म करनेवाले दुबुद्धि राक्षस। बकवासका बल छोड़ दे। तू ये सब बातें कहता क्यों है ? करके दिखा। निशाचर। जो काम अभी किया नहीं, उसके लिये यहाँ व्यर्थ डींग क्यों हाँकता है ? तू जिसे कहता है, उस कार्यको पूरा कर, जिससे मुझे तेरी इस बढ़ा-चढ़ाकर कही हुई बातपर विश्वास हो।

लक्ष्मणके बाणोंसे आहत होकर रावणकुमार रोषसे आगबबूला हो उठा। उसने अच्छी तरह चलाये हुए बाणोंसे लक्ष्मणको भी घायल करके बदला चुकाया। एक ओर लक्ष्मण थे तो दूसरी ओर इन्द्रजित्। दोनों युद्धस्थलमें एक-दूसरेपर विजय पाना चाहते थे। उन दोनोंका वह तुमुल संग्राम महाभयंकर था। वे दोनों वीर पराक्रमी, बलसम्पन्न, विक्रमशाली, परम दुर्जय तथा अनुपम बल और तेजसे युक्त होनेके कारण अत्यन्त दुर्जय थे। जैसे आकाशमें दो ग्रह टकरा गये हों, उसी तरह वे दोनों वीर परस्पर जूझ रहे थे। उस युद्धस्थलमें वे इन्द्र और वृत्रासुरके समान दुर्धर्ष जान पड़ते थे।

वे महामनस्वी नरश्रेष्ठ तथा राक्षसप्रवर वीर जैसे दो सिंह आपसमें लड़ रहे हों उसी प्रकार युद्ध करते थे और बहुत-से बाणोंकी वर्षा करते हुए युद्धभूमिमें डटे हुए थे। दोनों ही बड़े हर्ष और उत्साहके साथ एक-दूसरेका सामना कर रहे थे।

विभीषणने युद्धमें लगे हुए लक्ष्मणसे कहा- महाबाहो। इस समय रावणपुत्र इन्द्रजित्में मुझे जो लक्षण दिखायी दे रहे हैं, उनसे जान पड़ता है कि नि:संदेह इसका उत्साह भंग हो गया है; अत: आप इसके वधके लिये शीघ्रता करें।

तब लक्ष्मणने विषधर सर्पोंके समान भयंकर बाणोंको धनुषपर चढ़ाया और उन्हें इन्द्रजित्को लक्ष्य करके चला दिया। वे बाण क्या थे महाविषैले सर्प थे। उन बाणोंका स्पर्श इन्द्रके वज्रकी भाँति दु:सह था। लक्ष्मणके चलाये हुए उन बाणोंकी चोट खाकर इन्द्रजित् दो घड़ीके लिये मूर्छित हो गया। उसकी सारी इन्द्रियाँ विक्षुब्ध हो उठीं।

तब इन्द्रजीत बोला- यदि पहले युद्धमें तुमने मेरा पराक्रम नहीं देखा है तो आज तुम्हें दिखा दूँगा। इस समय सुस्थिरभावसे खड़े रहो।

तत्पश्चात् दूने रोषसे भरे हुए उस पराक्रमी निशाचरने अच्छी तरहसे छोड़े गये बाणोंद्वारा विभीषणको क्रोधपूर्वक क्षत-विक्षत कर दिया। लक्ष्मणके बाणोंसे इन्द्रजित्का महान कवच, जो सोनेका बना हुआ था, टूटकर रथकी बैठकमें बिखर गया, मानो आकाशसे ताराओंका समूह टूटकर गिर पड़ा हो। दोनों वीर दीर्घकालतक एक-दूसरेपर पैने बाणोंका प्रहार करते रहे। दोनों ही महामनस्वी तथा युद्धकी कलामें निपुण थे। दोनों भयंकर पराक्रम प्रकट करते थे और अपनी-अपनी विजयके लिये प्रयत्नशील थे।

दोनों ही भयंकर गर्जनाके साथ बाणोंकी घोर वर्षा कर रहे थे, मानो प्रलयकालके दो नील मेघ आकाशमें जलकी धारा बरसा रहे हों।

वह बड़ा भयंकर युद्ध हो रहा था। उसमें उन दोनोंके बाणोंका समूह यज्ञमें गार्हपत्य और आहवनी नामक दो प्रज्वलित अग्नियोंके साथ बिछे हुए कुशोंके ढेरकी भाँति जान पड़ता था। एक दूसरेको जीतनेकी इच्छावाले इन्द्रजित् और लक्ष्मण रह-रहकर बारंबार भयंकर मा र-काट मचाते थे। वहाँ खड़े होकर उन्होंने अपने विशाल धनुषको खींचा और राक्षसोंपर तेज धारवाले बड़े-बड़े बाणोंको बरसाना आरम्भ किया। जैसे वज्र नामक अस्त्र बड़े-बड़े पर्वतोंको विदीर्ण कर देते हैं, उसी प्रकार विभीषणके चलाये हुए वे बाण, जिनका स्पर्श आगके समान जलानेवाला था, राक्षसोंपर गिरकर उनके अङ्गोंको चीरने लगे।

विभीषणके अनुचर भी राक्षसोंमें श्रेष्ठ वीर थे; अत: वे भी समराङ्गणमें शूल, खड्ग और पट्टिशोंद्वारा वीर राक्षसोंका संहार करने लगे।

विभीषण बोले- वानरेश्वरो। अब खड़े-खड़े क्या देखते हो ? राक्षसराज रावणका यह एकमात्र सहारा है, जो तुम्हारे सामने खड़ा है।

रावणकी सेनाका इतना ही भाग अब शेष रह गया है। वानरो। इतनी ही राक्षससेना और शेष रह गयी है, जिसे तुम्हें जीतना है। अपने बलपर घमंड करनेवाले प्राय: सभी राक्षस तुमसे भिड़कर मारे जा चुके हैं।

मैं इसके बापका भाई हूँ। इस नाते यह मेरा पुत्र है। अत: मेरे लिये इसका वध करना अनुचित है, तथापि श्रीरामके लिये दयाको तिलाञ्जलि दे मैं अपने इस भतीजेको मारनेके लिये उद्यत हूँ।

जब मैं स्वयं मारनेके लिये इसपर हथियार चलाना चाहता हूँ, उस समय आँसू मेरी दृष्टि बंद कर देते हैं; अत: ये महाबाहु लक्ष्मण ही इसका विनाश करेंगे। वानरों और राक्षसोंका वह महायुद्ध क्रोधसे भरे हुए देवताओं और असुरोंके संग्रामकी भाँति बड़ा भयंकर हो चला। उसमें बड़े जोर-जोरसे भयानक कोलाहल होने लगा।

शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले बलवान् इन्द्रजितने अपने चाचाको भी घोर युद्धका अवसर देकर पुन: लक्ष्मणपर धावा किया।

धनुषके वेगसे छोड़े गये बाणसमूहोंद्वारा आकाश सब ओरसे ढक गया। अत: उसमें साकार वस्तुओंका दीखना बंद हो गया।

सारथिके मारे जानेपर महातेजस्वी मन्दोदरीकुमार इन्द्रजित् स्वयं ही सारथिका भी काम सँभालता- घोड़ोंको भी काबूमें रखता और फिर धनुषको भी चलाता था। युद्धस्थलमें उसके द्वारा वहाँ सारथिके कार्यका भी सम्पादन होना दर्शकोंकी दृष्टिमें बड़ी अद्भुत बात थी।

समरभूमिमें सारथिको मारा गया देख रावणकुमारने युद्धविषयक उत्साह त्याग दिया। वह विषादमें डूब गया।

सारथि तो पहले ही मारा गया था। जब घोड़े भी मार डाले गये, तब रावणकुमार रथसे कूद पड़ा और बाणोंकी वर्षा करता हुआ सुमित्राकुमारकी ओर बढ़ा।

श्रेष्ठ निशाचरो। चारों दिशाओंमें अन्धकार छा रहा है, अत: यहाँ अपने या परायेकी पहचान नहीं हो रही है।

इन्द्रजीत बोला- इसलिये मैं जाता हूँ। दूसरे रथपर बैठकर शीघ्र ही युद्धके लिये आऊँगा। तबतक तुमलोग वानरोंको मोहमें डालनेके लिये निर्भय होकर ऐसा युद्ध करो, जिससे वे महामनस्वी वानर नगरमें प्रवेश करते समय मेरा सामना करनेके लिये न आवें।

ऐसा कहकर शत्रुहन्ता रावणकुमार वानरोंको चकमा दे रथके लिये लमापुरीमें चला गया।

रावणकुमारको रथपर बैठा देख सुमित्रानन्दन लक्ष्मण, महापराक्रमी वानरगण तथा राक्षसराज विभीषण- सबको बड़ा विस्मय हुआ। सभी उस बुद्धिमान् निशाचरकी फुर्ती देखकर दंग रह गये।

तत्पश्चात् क्रोधसे भरे हुए रावणपुत्रने अपने बाण-समूहोंद्वारा रणभूमिमें सैकड़ों और हजारों वानर-यूथपतियोंको गिराना आरम्भ किया। तब शत्रुके युद्धसे लक्ष्मणका क्रोध भड़क उठा। वे रोषसे जल उठे और उन्होंने अपने हाथकी फूर्ती दिखाते हुए उस राक्षसके धनुषको काट दिया।

यद्यपि इन्द्रजित्द्वारा की गयी उस बाणवर्षाको रोकना बहुत ही कठिन था, तो भी शत्रुदमन लक्ष्मणने बिना किसी घबराहटके उसको रोक दिया। सुदृढ़ पराक्रमी सुमित्राकुमार लक्ष्मण अमर्षके वशीभूत हो रणक्षेत्रमें उसके घोड़ोंको भयभीत करनेके लिये उन्हें बाणोंसे वेधने लगे। जिसका सारथि पहले ही मारा जा चुका था और अब घोड़े भी मार डाले गये, उस रथसे नीचे कूदकर महातेजस्वी इन्द्रजित्ने अपने चाचापर शक्तिका प्रहार किया। उस शक्तिको आती देख सुमित्राका आनन्द बढ़ानेवाले लक्ष्मणने तीखे बाणोंसे काट डाला और टुकड़े करके उसे पृथ्वीपर गिरा दिया।

तब महाबली इन्द्रजित्के मनमें अपने चाचाके प्रति बड़ा क्रोध हुआ। उसने राक्षसोंके बीचमें यमराजका दिया हुआ उत्तम बाण हाथमें लिया। मेघनाद के अंगरक्षक भी तत्काल व्यूह-बद्ध हो गए। इस समय लंका के भीतर-बाहर जिस प्रकार का युद्ध हो रहा था, उसमें तत्काल सैनिक सहायता आने की आशा निरर्थक थी। किंतु स्वयं युवराज इन्द्रजित मेघनाथ उसके साथ थे।

लक्ष्मण ने अपने बाण पर वरुणास्त्र धारण किया और मेघनाद पर प्रथम प्रहार किया। मेघनाद असावधान नहीं था। उसने रौद्रास्त्र से लक्ष्मण के प्रहार का निवारण किया।

उस रौद्रास्त्रसे आहत होकर लक्ष्मणका अत्यन्त अद्भुत वारुणास्त्र शान्त हो गया। तदनन्तर समरविजी महातेजस्वी इन्द्रजित्ने कुपित होकर दीप्तिमान् आग्नेयास्त्रका संधान किया, मानो वह उसके द्वारा समस्त लोकोंका प्रलय कर देना चाहता हो।

परंतु वीर लक्ष्मणने सूर्यास्त्रके प्रयोगसे उसे शान्त कर दिया। अपने अस्त्रको प्रतिहत हुआ देख रावणकुमार इन्द्रजित् अचेत-सा हो गया। भैरव-गर्जनासे गूँजते हुए वानरों और राक्षसोंके उस भयानक युद्धके छिड़ जानेपर आश्चर्यचकित हुए बहुसंख्यक प्राणी आकाशमें

आकर खड़े हो गये। उनसे घिरे हुए उस आकाशकी अद्‌भुत शोभा हो रही थी।

ऋषि, पितर, देवता, गन्धर्व, गरुड़ और नाग भी इन्द्रको आगे करके रणभूमिमें सुमित्राकुमारकी रक्षा करने लगे।

तब लक्ष्मण ने दूसरा बाण अपने धनुष्यपर रखा। जिसका स्पर्श आगके समान जलानेवाला था और उसमें रावणकुमार मेघनाद को विदिर्ण करने की शक्ति थी। उसमें सुन्दर पर लगे थे। उस बाणका सारा अङ्ग सुडौल एवं गोल था। उसकी गाँठ भी सुन्दर थी। वह बहुत ही मजबूत और सुवर्णसे भूषित था। उसमें शरीरको चीर डालनेकी क्षमता थी। उसे रोकना अत्यन्त कठिन था। उसके आघात को सह लेना भी बहुत मुश्किल था। वह राक्षसोंको भयभीत करनेवाला तथा विषधर सर्पके विषकी भाँति शत्रुके प्राण लेनेवाला था। देवताओंद्वारा उस बाणकी सदा ही पूजा की गयी थी। पूर्वकालके देवासुर-संग्राममें हरे रंगके घोड़ोंसे युक्त रक्तवाले, पराक्रमी, शक्तिमान् एवं महातेजस्वी इन्द्रने उसी बाणसे दानवोंपर विजय पायी थी। उसका नाम था ऐन्द्रास्त्र। वह युद्धके अवसरोंपर कभी पराजित या असफल नहीं हुआ था। लक्ष्मणने अपने उत्तम धनुषपर उस श्रेष्ठ बाणको रखकर उसे खींचते हुए अपने अभिप्रायको सिद्ध करनेवाली यह बात कही- यदि श्रीराम धर्मात्मा और सत्यप्रतिज्ञ हैं तथा पुरुषार्थमें उनकी समानता करनेवाला दूसरा कोई वीर नहीं है तो हे अस्त्र। तुम इस रावणपुत्रका वध कर डालो।

यदि राम पूर्णब्रह्म हों, शुद्ध चैतन्य स्वरूप तथा सनातन पूर्णकाम मायापति हो, आज यदि सूर्यवंशीय रघुवर एकपत्नी-व्रत हों, तो हे महाराज, इस बाण से अब इन्द्रजित मर जाए। यदि मैं सच्चे अर्थों में बारह वर्षों से निराहार तथा ब्रह्मचारी रहा होऊँ, यदि मेरी प्रीति रघुवीर राम के चरणों में हो, तो इस बाण से इसका अन्त आ जाए। यदि सीता साध्वी एवं सती पतिनिष्ठा हो, इसके अतिरिक्त हनुमान अनन्य दास हो, तो इन्द्रजित का सिर इस बाण से कट जाए और उसे मौत आ जाए।

फिर उसने प्रभु श्रीलक्ष्मणजीपर प्रचण्ड त्रिशूल छोड़ा। अनन्त श्रीलक्ष्मणजी ने बाण मारकर उसके दो टुकड़े कर दिये। हनुमानजी और युवराज अंगद फिर उठकर क्रोध करके उसे मारने लगे, पर उसे चोट न लगी।

शत्रु मेघनाद मारे नहीं मरता, यह देखकर जब वीर लौटे, तब वह घोर चिग्घाड करके दौड़ा। उसे क्रुद्ध कालकी तरह आता देखकर लक्ष्मणजीने भयानक बाण छोड़े।

वज्रके समान बाणोंको आते देखकर वह दुष्ट तुरंत अन्तर्धान हो गया और फिर भाँति-भाँतिके रूप धारण करके युद्ध करने लगा। वह कभी प्रकट होता था और कभी छिप जाता था।

शत्रुको पराजित न होता देखकर वानर डरे। तब सर्पराज शेषजी लक्ष्मणजी बहुत ही क्रोधित हुए। लक्ष्मणजीने मनमें यह विचार दृढ़ किया कि इस पापीको मैं बहुत खेला चुका अब और अधिक खेलाना अच्छा नहीं, अब तो इसे समाप्त ही कर देना चाहिये।

समराङ्गणमें ऐसा कहकर लक्ष्मणने सीधे जानेवाले उस बाणको कानतक खींचकर ऐन्द्रास्त्रसे संयुक्त करके इन्द्रजित्‌की ओर छोड़ दिया। किंतु लक्ष्मण तनिक भी असावधान नहीं थे। उन्होंने तत्काल अगस्त्य का दिया हुआ ऐंद्रास्त्र बाण पर चढ़ाया और धनुष की प्रत्यंचा कान तक खींचकर छोड़ दी। वह काल बाण था जिसने क्षणभर में ही इन्द्रजित जैसे योद्धा का हृदय ज्वलन्त कर दिया। उसके शरीर की चेतना नष्ट हुई। आँखों के आगे अंध:कार छा गया और मृत्यु की निद्रा पा गया। इतने में ही दूसरा बाण लक्ष्मण के हाथ से फिसक गया और वह उसकी भुजाओं को काटकर आकाश मार्गसे निकल गया। फिर उसके हाथ-पाँव को दो-चार बाणोंसे काट डाला और कुछ बाण ऐसे भी पहुँचे जैसे सम्पूर्ण अंग छिन्न हो गया। ऐंन्द्रास्त्र से उसका मस्तक काटा। इस तरह मेघनादने प्राण त्यागते समय श्रीराम राम उच्चारा और परमधाम को पहुँच गया। मेघनाथ के विचलित मस्तिष्क ने कुछ सोचा, व्याकुल दृष्टि से ऐंद्रास्त्र को देखा और अगले ही क्षण उसका मस्तक कटकर पृथ्वी पर जा गिरा।

कोसलपति श्रीरामजीके प्रतापका स्मरण करके लक्ष्मणजीने वीरोचित दर्प करके बाणका सन्धान किया। बाण छोड़ते ही उसकी छातीके बीचमें लगा। मरते समय उसने सब कपट त्याग दिया।

धनुषसे छूटते ही ऐन्द्रास्त्रने जगमगाते हुए कुण्डलोंसे युक्त इन्द्रजित्‌के शिरस्त्रासणहित दीप्तिमान् मस्तकको धड़से काटकर धरतीपर गिरा दिया। इस प्रकार मारा जाकर कवच, सिर और शिरस्त्रासहित रावणकुमार धराशायी हो गया। उसका धनुष दूर जा गिरा।

इन्द्रजितको धराशायी हुआ जान राक्षसोंकी वह विशाल सेना विजयसे उल्लसित हुए वानरोंकी मार खाकर सम्पूर्ण दिशाओंमें भागने लगी। रामके छोटे भाई लक्ष्मण कहाँ हैं ? राम कहाँ हैं ? ऐसा कहकर उसने प्राण छोड़ दिये। अंगद और हनुमान् कहने लगे- तेरी माता धन्य है, धन्य है, जो तू लक्ष्मणजीके हाथों मरा और मरते समय श्रीराम-लक्ष्मणको स्मरण करके तूने उनके नामोंका उच्चारण किया।

हनुमानजीने उसको बिना ही परिश्रमके उठा लिया और लमाके दरवाजेपर रखकर वे लौट आये। उसका मरना सुनकर देवता और गन्धर्व आदि सब विमानोंपर चढ़कर आकाशमें आये। वे फूल बरसाकर नगाड़े बजाते हैं और श्रीरघुनाथका निर्मल यश गाते हैं। हे अनन्त। आपकी जय हो, हे जगदाधार। आपकी जय हो। हे प्रभो। आपने सब देवताओंका महान् विपत्तिसे उद्धार किया।

वानरोंद्वारा मारे जाते हुए राक्षस अपनी सुध-बुध खो बैठे और अस्त्र-शस्त्रोंको छोड़कर तेजीसे भागते हुए लमाकी ओर चले गये।

इन्द्रजित् मारा गया और रणभूमिमें सो रहा है यह देख हजारों राक्षसोंमेंसे एक भी वहाँ खड़ा नहीं दिखायी दिया।

जैसे सूर्यके अस्त हो जानेपर उसकी किरणें यहाँ नहीं ठहरती है, उसी प्रकार इन्द्रजित्के धराशायी होनेपर वे राक्षस वहाँ रुक न सके, सम्पूर्ण दिशाओंमें भाग गये। उस समय राक्षसराजकुमार इन्द्रजित्के समरभूमिमें गिर जानेपर सारे संसारकी अधिकांश पीड़ा नष्ट हो गयी। सबका शत्रु मारा गया और सभी हर्षसे भर गये।

जो सिर लंका में रहता था, लंकावालों का विभूषण था इस समय रक्त से लथपथ होकर वह महाबली बजरंगी के हाथों में था। समराङ्गणमें अप्रतिम बलशाली निशाचरशिरोमणि इन्द्रजित्को मारा गया देख हर्षसे भरे हुए वानर-यूथपति लक्ष्मणका अभिनन्दन करने लगे। युद्धस्थलमें लक्ष्मणके प्रिय सुहृद् वानर उनका वह दुष्कर एवं महान् पराक्रम देख बड़े प्रसन्न हुए। देवता भी उस इन्द्रद्रोही राक्षसका वध हुआ देख मनमें बड़े भारी हर्षका अनुभव करने लगे।

विभीषणने बड़े हर्षके साथ श्रीरामसे यह निवेदन किया कि महात्मा लक्ष्मणने ही रावणकुमार इन्द्रजित्का मस्तक काटा है।

लक्ष्मणके द्वारा इन्द्रजित्का वध हुआ है यह समाचार सुनते ही महापराक्रमी श्रीरामको अनुपम हर्ष प्राप्त हुआ और वे इस प्रकार बोले- शाबाश। लक्ष्मण। मैं तुमपर बहुत प्रसन्न हूँ। आज तुमने बड़ा दुष्कर पराक्रम किया। रावणपुत्र इन्द्रजित्के मारे जानेसे तुम यह निश्चित समझ लो कि अब हमलोग युद्धमें जीत गये।

वीर। तुमने अपने दुष्कर पराक्रमसे परम कल्याणकारी कार्य सम्पन्न किया है। आज बेटेके मारे जानेपर युद्धस्थलमें रावणको भी मैं मारा गया ही मानता हूँ। उस दुरात्मा शत्रुका वध हो जानेसे आज मैं वास्तवमें विजयी हो गया। सौभाग्यकी बात है कि तुमने रणभूमिमें इन्द्रजित्का वध करके निर्दयी निशाचर रावणकी दाहिनी बाँह ही काट डाली; क्योंकि वही उसका सबसे बड़ा सहारा था।

लक्ष्मण। इन्द्रजित् इन्द्रको भी जीत चुका था। जब उसे भी तुमने युद्धभूमिमें मार गिराया, तब तुम-जैसे रक्षक और सहायकके होते हुए मुझे सीता और भूमण्डलके राज्यको प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी।

श्रीरामने अनुजको हृदयसे लगाया। तुमने आज असाध्यको साध्य कर दिया। जो द्वादश वर्ष निराहार, निद्रारहित ब्रह्मचर्यव्रती रहे, वही इसे मार सकता था। श्रीरामने सुनाया तो लक्ष्मणने मस्तक झुका लिया। वानर भले आश्चर्यसे उनकी ओर देखें; किंतु ये सब व्रत तो उनके लिए अयोध्या छोड़नेके समयसे स्वाभाविक हो गये थे और उसे तो अब चतुर्दश वर्ष पूरे होनेवाले थे।

देवता और सिद्ध स्तुति करके चले गये, तब लक्ष्मण कृपाके समुद्र श्रीरामके पास आये। रावणने ज्यों ही पुत्रवधका समाचार सुना, त्यों ही वह मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा।

रावण को मेघनाद के वध का समाचार दिया गया। वह संज्ञाशून्य हो गया। रावण को लगा कि जाने क्यों उसके मस्तिष्क में फेन-बुदबुद उठ रहे हैं। चिंतन-शक्ति जैसे जड़ हो गई है। कभी-कभी तो जैसे श्वास भी रुकता मालूम पड़ता था। कानों में अनवरत एक सनसनाहट-सी चल रही थी और आँखों के सम्मुख हल्के और भारी परदे झूल रहे थे। किंतु इनके ऊपर प्रतिरावण का एक दीर्घ अट्टहास गूँज रहा था।

बड़ी देर तक रावण इसी प्रकार भाव-शून्य-सा बैठा रहा। कुछ भी अनुभव करने में असमर्थ। शनैः-शनैः उसे लगा कि फेन बैठती जा रही है, मस्तिष्क कुछ जीवित हो उठा है और तब उसे अनुभूति हुई कि उसने क्या खोया है। मेघनाद मारा गया था, युवराज इंद्रजित मेघनाद। शोक से कहीं अधिक रावण को आश्चर्य हो रहा था- यह कैसे सम्भव है ? मेघनाद कैसे मर सकता है ? उसे कौन मार सकता है ? पहले दिन वह युद्ध में गया तो वानर सेना से काल के समान लड़ा- राम और लक्ष्मण का वध कर आया। जाने कैसे मायावी हैं वे लोग- पुनः जीवित हो उठे। दूसरी बार गया तो ब्रह्मास्त्र से न केवल राम और लक्ष्मण-प्रायः जीवित सभी वानर सेनापतियों को हताहत कर आया। और आज तो वह अभी युद्ध में गया ही नहीं था। वह तो निकुंभिला देवी के मंदिर में यज्ञ कर रहा था। वह मायावी लक्ष्मण वहाँ भी पहुँच गया। विभीषण जैसा भ्रातृद्रोही साथ हो तो लक्ष्मण कहाँ नहीं पहुँच सकता। लंका का राज्य पाने के लिए विभीषण लोभ-मद में मस्त हो रहा है, नहीं तो वह इतना निर्मम हो जाता ? वह अपने ही बंधु-बाँधवों को मार रहा है, जैसे क्षुधार्त नाग अपने ही बच्चों को खा जाता है।

मन्दोदरी छाती पीट-पीटकर और बहुत प्रकारसे पुकार-पुकारकर बड़ा भारी विलाप करने लगी। नगरके सब लोग शोकसे व्याकुल हो गये। सभी रावणको नीच कहने लगे।

तब रावणने सब स्त्रियोंको अनेकों प्रकारसे समझाया कि समस्त जगत्का यह दृश्य रूप नाशवान है, हृदयमें विचारकर देखो।

रावणने उनको ज्ञानका उपदेश किया। वह स्वयं तो नीच है, पर उसकी कथा बातें शुभ और पवित्र है। दूसरोंको उपदेश देनेमें तो बहुत लोग निपुण होते हैं। पर ऐसे लोग अधिक नहीं हैं जो उपदेशके अनुसार आचरण भी करते हैं।

१८) सती सुलोचना (प्रमिला) - असुरों में भी सुलोचना नामकी जगमें एक विख्यात सती हुयी है। असुरों में रहने पर भी वह स्वर्ग की देवी समझी जाती थी जैसे लंका के काले अम्बर पर चन्द्रमा शोभायमान होता है। उसके हिरनी के से चंचल, उज्ज्वल रतनारे नेत्र मन को सुहाने रहने वाले बिना काजल के मतवारे लग रहे थे। अपने सत् और पतीव्रत के कारण वे सती कहलाती थी और इन्हीं सुन्दर नेत्रों के कारण सुलोचना कहलाती थी। वह शेषनाग की कन्या थी, वह सुन्दरी सुन्दर रूप तथा शोभा के युक्त थी। वह स्त्री परम सतियों में शिरोमणि ही थी। मानो वह गुणों और लावण्य के सागर की कोई लहर ही हो। जिसके रूप को देखते हुए रति तक लज्जित हो जाती हो, उस नारी के लिए कोई योग्य उपमा नहीं थी। उसके सौन्दर्य और वेश को देखकर बड़े-बड़े श्रेष्ठ मुनि तक मोह को प्राप्त हो जाते थे। वह सौन्दर्य और वेश कामदेव के मन में भी काम-विकार उत्पन्न कर देता था; चन्द्रमा, चम्पक और कनक भी को लज्जित कर देता था। उसके अंग से जो सुगन्ध महकती थी, वह एक कोस तक फैली हुई रहती थी। नैषधराज नल की दमयन्ती नामक जो स्त्री थी और काव्य में कविजन जिसके सौन्दर्य का बखान करते हैं, वह भी शेष-कन्या सुलोचना के सौन्दर्य की तुलना में बराबर नहीं आ पाती। ऐसी वह सुलोचना रावण के पुत्र इन्द्रजीत की वधू कहाती थी।

आज वह सती प्रात:काल उद्यानविहार में बैठी थी। इतने में ही एक वायु का झोंका आया। उस सती का दाया नेत्र फड़क उठा। शीश के बाल खुल गये। आकाश मार्गसे तभी एक भुजा वाहन से प्रवित होकर पृथ्वीपर गिरी। जैसे उसे देखकर आँखे पथरा उठी, जैसे कोई मुक्का छातीपर लगा। उस एक भुजा को पकड़ने के लिये सुलोचना ने अपनी दोनों भुजायें बढ़ाई और देखा अरे यह क्या हुआ यह तो मेरे स्वामी के हाथ हैं। यह हाथ आज बाणोंका साथी क्यों बन गया।

नहीं। नहीं। प्रमिला बार-बार चीत्कार करती थी। उसे अपने चारों ओर अन्धकार घिरता लगता था। उसकी एकाग्रता बार-बार नष्ट होती थी। अन्तमें जब उसके करोंका कंकण अकारण कड़ाक करके टूटा, वह मूर्छित होकर गिर पड़ी- हाय। स्वामी गये। हार गयीमैं। मेरी अदृश्य संस्पर्धिनी। यह आसुरी शाप देती है, तुम्हें भी स्वामीके पीछे सती ही होना पड़ेगा।

हे पतीके हाथ मुझे बता इन हाथोंको को तूने क्यों छोड़ा है। तू तो इन हाथोंको छोड़ रहा है पर मेरे यह हाथ तुझे नहीं छोड़ेंगे। पंचोंके सामने जिन हाथोंको पकड़ा था अब उनसे नाता क्यों तोड़ रहा है ? हमारा सम्बन्ध तो जन्म-जन्मांतर का है। न कभी तोड़ा है, न तोड़ेंगे। इस दिव्य जगत में नारी की शोभा सारी पति से ही होती है। यह दुनिया भी पतिसे शोभित होती है और वह दुनिया भी पतिसे ही शोभित है। मेरे जीवन के जीवनधन तार तुम्हीं हो। देखो यह डोर न टूटे हाथसे, यह छोर कभी ना छूटे। सुलोचना ने इसप्रकार विलाप कर अब उस हाथको अपने हाथ से सहेजा। फिर मन में कुछ क्षण के लिये ठिठकी। कहीं कोई माया का तो उत्पात नहीं है ? सम्भव है नारी परीक्षा लेनेको ही पतिने कोई खेल रचाया हो या स्वामीका हाथ बनकर कहीं पर-पति का हाथ न आया हो। इसलिए शीघ्रता करने में, मेरे सतीपन पर बट्टा लग सकता है। इससे तप जाएगा, यश जाएगा, प्रिय पतिव्रत भी जाएगा। जब हृदयसिन्धु में इसप्रकार की गम्भीर हिलौने उठने लगी तब पतिके हाथसे उसीक्षण वह सती हाथ जोड़कर बोली- यदि यह मेरे पतिका हाथ है और इसमें किसीकी चाल नहीं है। तुझे मेरी शपथ अपने इस हाथ से पूरा सच्चा सच्चा हाल लिख दे। सतीके इन शब्दोंसे पूरा भूगोल डोल उठा। उस मेघनाद की आत्मा उस भुजा में बोल पड़ी। एक खड़िया से पृथ्वी के ऊपर, अविनाशी शक्ति लिखने को लगी। उस पतिव्रता के सभी प्रश्नों का उत्तर उस भुजाने लिखा। शंका की कोई जगह नहीं है, यह साध्वी के सत्य की लीला है। उस हाथने लिखा हे प्रियतमे, हमारा परवश साथ छूट गया है। यह हाथ किसी और का नहीं है यह तो मेरा ही हाथ है। लक्ष्मण शेषावतार है उनके द्वारा ही मेरा संहार हुआ है। इस बैर-भक्ति के कारण ही मेरी मुक्ति हुई और इसी कारण मेरा उद्धार हुआ। मेरा धड़ तो लंका के द्वार पर है और सिर रामादल में सुरक्षित है। यह अविनाशी आत्मा सुखसे अनन्त के अंचल में विचर रहा है। पति-पत्नि का सम्बन्ध सदा से आत्मिक सम्बन्ध कहलाता है। यह

अविनाशी नाता है, शारीरिक सम्बन्ध का नाता तो नश्वर है। इसी नाते से मैं कहता हूँ यदि तुमने यह तत्व जान लिया तो हे सुलोचने निश्चय समझो। पत्नी पत का स्वत्व तुमने पा लिया है। तुम उसी स्वत्व की सतवन्ती हो। तुम लंका में ऐसी ज्योति जगा देना। पतिव्रता किसको कहते है यह सारी दुनिया को दिखला देना। इतनी बात लिखकर आत्मा सूक्ष्म में पहुँची और उसी समय सुलोचना के सिर पर वज्र सा पात हुआ। सुलोचना ने उन हाथोंको भूमिपर नहीं गिरने दिया और अपने हृदयेश्वर के हाथको तुरंत सिर नवाया। सुलोचना बोली- हे स्वामी, आपने कुछ भेद नहीं बताया आप तो यज्ञ करने की बात कहकर गये थे उस जगह यह कैसा युद्ध कर दिखलाया। हे स्वामी आपने यह कैसा यज्ञ किया अपने ही प्राणोंकी आहुति दे डाली। हे पतिदेव, अब तो तुम्हारे बाणोंकी ही कहानी इस जग में रह गयी। भगवान किसी नारी को भी ऐसा दिन न दिखलायें। सारे दु:खों से दुनिया में यह विधवा दु:ख सबसे बड़कर है। मुझे तो इतना ही खेद रह गया कि मैं आपके साथ रणभूमि में नहीं रही। नहीं तो उस युद्धज्वाला में सबसे पहिले मैं अपनी आहुति दे देती। या तो तुम मेरे सर पे होते और मैं तुम्हारे चरणों पे होती। हम दोनों साथ-साथ मरकर उस शान्त किनारे पर जाते। कोई बात नहीं आने दो उस संकट की रात को मैं तो उस प्रभात कि किरण हूँ जिस रात के साथ प्रभात हो। इस धरती पर अपनी जोड़ी अतिउत्तम मानी जाती है। तुम पत्निव्रत में पूरे थे और मैं पतिव्रता कहलाती थी। अब उस दुनिया में भी हे प्रियतम यही आदर्श दिखायेंगे। अब आयेगी अपने पतिकी अर्धांगिनी पति-पत्नि का धर्म निभाने को। यह पति-पत्नी का नाता जन्म-जन्मातर का नाता है, पृथ्वी से लेकर आकाश तक यह नाता माना जाता है। इसलिए तुम्हारी आत्मा में मैं अपनी आत्मा मिलाऊँगी। तुम युद्ध मार्ग से चले गये मैं सती मार्ग से आपके पास आऊँगी। जब तालाब सूख जाता है तो मछली का वहाँ रहनेका कोई काम नहीं। अब वहीं धधकती हुई चिता बालों में सिन्दूर भरेगी। वही प्रियतम की जलती हुयी चिता इस विधवा की सुखद सेज होगी। जो होनी थी सो हो गयी। धुआँधार जब हो जायगी यह चुनरी और चोली। जलती हुई चितापर होगी तब पतिके साथ ही होगी। जब सतीपर इसतरह का सत का ऐसा रंग चढ़ा तब वह रोती हुई मन्दोदरी और दशकंधर के पास गयी। राक्षसेन्द्र। आपकी पुत्र-वधू आपका दर्शन करने पधार रही हैं। रावण अशोकोद्यानसे आकर अपने भवनके मन्त्रणाकक्षमें ही सिर झुकाये बैठ गया था। अन्त:पुरसे सेविकाने आकर सूचना दी तो वह हड़बड़ा उठा।

दशकंधर बोला- बेटी, किसलिए रोती हो। क्यों करूणा की नदी बहा रही हो, तुम तो अपने स्वामी की प्रिय पत्नी हो जिसने यह महान गति पायी है। आपके पुत्र मेरी प्रतीक्षा करते होंगे, आप मुझे अनुमति दें। कक्षामें प्रवेश करके प्रमिलाने पृथ्वीपर सिर रखकर प्रणाम किया। उसने अपना सम्पूर्ण श्रृङ्गार किया था। जैसे वह आज पुन: नववधू बन गयी हो। उसके स्वरमें कम्पनका नाम नहीं था। भूमिसे सिर उठाकर उसने दोनों हाथोंमें लेकर अञ्चल फैलाया- मैंने सुन लिया, निकुम्भिला मन्दिरमें उनका कबन्ध पड़ा है। मैं उनका मस्तक माँगने आयी हूँ।

अपने पुत्र का बदला लेने मैं अभी युद्धस्थल में जाऊँगा और एक शीश के बदले लाखों शीश ले आऊँगा। इन वचनों से उस सतीकी मनकी ज्वाला और भड़की और लाज-शर्म सब छोड़कर वह तत्काल बोली- हे महाराज, आपकी बेटी तो केवल आपकी आशिष चाहती है। लाखों शीश लेकर क्या होगा यह तो अपने पतिका शीश चाहती है। मेरे स्वामी वीरगति पाकर गये है। मैं नारी हूँ और उचित गति पाऊँगी। पतिका शव साथ में लेकर चितामें सानन्द सती हो जाऊँगी। बिना पति यह संसार सूना है। पति से ही जप, तप, है, पति ही कर्तार है। पतिके बिना इस तन को भी हजार विपत्ति है। इस जग में यदि एक पतिव्रत ही रहे बाकि अन्य व्रत बेकार है। बिना पतिव्रत के नारी का जीवन धिक्कार है। पुत्रवधू के वचन सुनकर दशग्रीव व्याकुल हुआ।

दशग्रीव फूटकर रो पड़ा। उसने अपने हाथोंसे दसों मुख ढक लिये। कठिनाईसे बोल सका- वत्से। यद्यपि सहमरणकी प्रथा हमारे राक्षसकुलमें सम्मानित नहीं है; किंतु मैं तुम्हें रोकूँगा नहीं। जो स्वयं अपनी आहुति देनेको उतावला हो रहा है, वह दूसरेको रोक कैसे सकता है। मेघनादके चले जानेसे रावण कङ्गाल हो गया। आज किसीको मरणके अतिरिक्त कुछ देनेको मेरे पास नहीं और अपनी पुत्र-वधूको मरणका उल्लास देने योग्य भी वह नहीं रहा। त्रिभुवनजयीका इतना निराश, व्यथापूर्ण स्वर कदाचित् ही कोई सुन सकता हो- वत्से तेरे पतिका मस्तक रामके समीप पहुँच गया। बलपूर्वक उसे ला दे सकूँगा, अब यह कहनेका दर्प दशग्रीवमें नहीं रहा। राम धर्मात्मा हैं। यह राक्षसाधिप उनका आचार्य बना था। निर्लज्ज होकर, शस्त्रहीन होकर उनके समीप जाय और पुत्रका मस्तक माँगे तो वे अस्वीकार नहीं करेंगे।

नहीं। आप नहीं जायँगे। प्रमिलाने तेजोद्दीप्त मुख उठाया- अब मेरे पास लज्जा, संकोच करनेको रह क्या गया। मैं स्वयं उनके समीप जाकर पतिका मस्तक माँग लूँगी।

रावणने शिथिल स्वरमें कहा- वहाँ तुम्हारे स्वसुर विभीषण हैं। वे तुम्हारी सहायता करेंगे। राम धर्मज्ञ हैं। भले मैंने उनकी पतिव्रता

पत्नी का हरण किया है, वे सतीका सम्मान करना जानते हैं। उनके समीप जानेमें तुम्हें संकोच नहीं होना चाहिए तुम्हारे लिए वे भी स्वसुर समान हैं। सुरक्षा-सैनिक साथ जायँगे।

केवल अन्त:पुरकी रक्षिकाएँ जायँगी मेरे साथ। पुन: प्रणाम करके जब वह सती लौटी, उसके पादक्षेपसे कक्षभूमि पर कुंकुम झड़ रहा था। दशग्रीवने देखा। सिंहासनसे उठकर उस कुंकुमको मस्तकसे लगाकर पुत्रके उपयुक्त उत्तरक्रियाके प्रबन्धमें लग गया।

तब मन्दोदरी ने कहा- बेटी, यह बतलाओ। इस बुढ़िया की किसतरह नैया पार लगावोगी। मेघनाद के जब मरने से ही मेरी तो छाती जर्जर हो रही है। दु:खोंपर दु:ख आ रहे है और तू भी मुझसे बिछुड़ रही है। किस भाँति मैं जीवित रहूँगी। इतना तो मुझको समझाये जाय। तू मुझ अन्धी की लकड़ी है यह रास्ता तो मुझे दिखलाते जा। मन्दोदरी के हृदय पर गहरा कष्ट और आघात देखकर प्रमिला वधू ने कहा माता शोक मत करो। ईश्वर या देश जातिके हित में रण में जो प्राण गँवाता है उसीने तो जगमें सच्चा जंग पाया है उसीकी माता धन्य है। इसलिये हे माता रोना छोड़ो यह अवसर रोने योग्य नहीं है। मेरे स्वामी का जगसे इतना ही नाता था और यहाँ उनके लिये कुछ भोगना योग्य नहीं था। तुमसी संसार में कोई अन्य नारी नहीं होगी। धन्य है तुम्हारे चरित्र को देखकर धन्य है। अपने मन के विरुद्ध पति पाकर भी ईश्वर के समान उसे अपनाया, उसके दु:ख में दु:ख और सुख में सुख पाया। यही पतिव्रत धर्म की सीमा है।

हे माता तुम जिस पथ पर हो वह पथ खाण्डे पर चलने के समान है। इस पर भी लंका के इतिहास में एक स्वर्ण पत्रपर लिखा है कि आपने इन्द्रजीत जैसे बलशाली, संयमी पुत्र को जन्म दिया। फिर मेरा जीवन भी माता आपने ही पावन बनाया है। पिता के गृह में जो सुख मुझे नहीं मिला वह सुख मैंने आपके घर में पाया है। मैं आपको क्या बतलाऊँ आप ही मुझे बतलाओं। विधवाओं के विषय में माता मुझे कुछ समझाओ। तभी यह बात सुनकर मन्दोदरी उसी जगह बैठ गयी और बोली- तुझसी बहू कभी और नहीं मिलेगी। जगमें जो धर्म बहू का है वह तो तूने पूरा निभाया है। तूने कभी भी भूल से भी मुझे सास नहीं समझा सदा मुझे माता ही माना है। घर के झगड़ों से सदा दूर रही, और घरवालों को सदा सम्मान दिया। गहने-कपड़ों, आभूषणों का मोह छोड़कर गृहचर्या पर सदा ध्यान दिया।

इसलिए आज तुझे वैधव्य में देखकर तुझे विधवाओं के भेद समझाती हूँ। सच तो यह है उत्तम विधवा जग में वही कहलाती है जो पति के साथ सती होकर, सीधी पतिलोक को जाती है। वे विधवायें भी उत्तम हैं जो तपस्विनी बनकर, अपने पतिकी विरहिन बनकर भगवान की पूजा, उपासना करती है। अथवा अपने समान बहनों का सुधार करती हैं, और नित अपने चित्त में सच्ची सन्यासिनी बन-बनकर देश जाति के हित में लग जाती है। तारायण और चन्द्रायण व्रत कर, दिन प्रतिदिन अपने देह क्षीण करती है और उत्तम आदर्श कथाओं को सुनती और सुनाती हैं। वे विधवायें मध्यम श्रेणी की है जिनका जग में भोगों से चित्त नहीं भरता है। घरमें मन मारे रहती हैं, पर किसी क्षण भी उनका मन नहीं मरता है। जगत् दिखाने को जिसने चूड़ियाँ तोड़ दी पर मनकी चूड़ियाँ नहीं तोड़ सकी। जीवन का श्रृंगार समाप्त हुआ, फिर भी शरीर का श्रृंगार न छोड़ सकीं। जिसके साथ सत्संगति नहीं है और मन में जिसके सन्तोष नहीं है ऐसी विधवाओं का यदि पुनर्विवाह हो जायें तो भी उसमें कोई दोष नहीं है। चौथी श्रेणी की विधवायें जिसकी दुनिया को कोई दरकार नहीं है। उनका तो भूमि पर रहना बोझ ही है। वे विधवाएँ कभी नहीं है, वे तो ऊँचे कुल की कुलटाएँ है। वो तो वेश्याओं से भी नीचे गिरी हुई है, सिर्फ पर्देवाली वेश्याएँ हैं। इन वेश्याओं की आत्माएँ, भीतर ही भीतर सड़ती हैं। सैकड़ों, हजारों बरसों तक, विभिन्न नरकों में पड़ी रहती है। तब सुलोचना यह उपदेश सुनकर माता मन्दोदरी के चरणों में गिरी और बोली- माता, अब इस विधवा के हेतु क्या आदेश हैं? जब उत्तम वैधव्य पति के साथ सती होना ही है तो आज्ञा दो प्रमिला को। हे माता, संकोच छोड़ो मोह तजो, और जो धर्मनिष्ठ बात है उसे कहो। दुनिया में सबसे बड़ी साख, सद्व्रत की और स्वधर्म की है।

उसी समय मन्दोदरी के नयनोंसे आँसू बरसने लगे, मानों वे नेत्र बेचैन होकर सुलोचना को आज्ञा दे उठीं। आँखों ही आँखों में सुलोचना का निवेदन स्वीकार हुआ। तभी सुलोचना आँखोंसे ओझल हुई। पति चरणोंका ध्यान धर और अश्व पालखी मँगाकर तत्काल रामादल की तरफ चल पडी।

थोड़ी-सी पुर-रक्षिकाओंकी सेना। सब पालखी पर बैठीं। सब सशस्त्र, सबने कवच पहिन रखे। केवल उन काले कवच, शिरस्त्राण पहिने राक्षसियोंकी काली घोड़ियोंके मध्य अकेली रक्ताम्बरा, श्वेतवड़वारूढ़ा, मुक्तकेशा प्रमिला। लगता था कि कोई स्वर्गकी देवी अवनि पर उतर आयी है।

वहाँ सागर के किनारे एक श्वेत पाषाण पर प्रभु श्रीराम भक्तोंके प्राण विराज रहे थे। कोमल तन, धूलसे धूसरित, शीश जटाओं का

जूड़ा बना हुआ अपने सिर पर जगकी सेवाओंका भार उठायें हुए। कीमती मखमल रेशम वस्त्रों का नाम नहीं, देह पर बल्कल वस्त्र ढायें हुए। उस तपस्वी के वस्त्र से जगको सन्देश मिलता था त्यागी राजासे भी बढ़कर है। उस श्याम सलोने चेहरेपर अद्भुत शान्ति और मुस्कराहट है। गम्भीर ओज पृथ्वीपर धनुष्यबाण रखा हुआ है। उस कौशलानन्द की जग उद्धारक, जग वन्दन की छवि पर पूरा त्रिभुवन मन से आकर्षित है। भालू, वानरों सहित वन में क्षत्रिय सभा सजाई है। इसप्रकार प्रकृति द्वारा, जनपति की पदवी पाई है। वानरसेना फल, फूल, पात पर ही रहती है। पर्वत, खण्डों, वृक्षोंसे लड़ती हैं। शस्त्रोंको यहीं धारण करती है। ऐसी सेना पाकर वह सेनापति पुलकित और गर्वित हैं। सेना भी अपने राजा पर आनन्दित, प्रमुदित और हर्षित हैं।

गुप्तचरोंने उसी क्षण जाकर प्रभु श्रीराम को समाचार दिया। एक पालखी अपनी तरफ आ रही है। तभी सब वानर किलकारी भरकर बोले- लगता है अब तो यह प्रत्यक्ष है दशग्रीव हार गया। इस सुघर पालकी में, सीता माँ को भिजवाया है। लगता है यही उसका सच्चा सन्धिपत्र इस अवसर पर आया है। मेघनाद पुत्र के मरने से दशानन जीते जी मर गया। अब शरणागत होने आया है, रण करने से घबराया है।

तब पवनकुमार हनुमान हँसकर बोले- यह तो सचमुच बड़ी अच्छी बात हुई। फिर विभीषण से कहने लगे, बतलाओ अब क्या होगा? साँकल की एक प्रधान कड़ी उलझ गयी है वह सुलझाओ। जो कठिनाई मुझे सामने दिख रही है। यदि रावण भी शरण आ गया तो तुम दोनों में से कौन लंकेश होगा भाई ? विभीषण तनिक चिन्ता को प्राप्त हुए उससे पहले ही प्रभु श्रीरामने इस विषय का समाधान किया। बोले- हम भारतवासी हैं, अपने शरणागत को कभी न भुलाएँगे। विभीषण को लंकेश बनाया है, तो रावण को अवधेश बनायेंगे। अब तब तो दो ही भाई वन-वन में बनवासी होकर फिरते थे। अब चारों भाई इस जग में सन्यासी होकर विचरेंगे। उसी समय वह पालखी वहाँपर आ पहुँची। तब वानरसेना बोल उठी- जय श्रीराजाराम।

स्त्रियोंकी सेना आ रही है। वानरोंने जैसे ही प्रमिलाका दल उत्तर द्वारसे निकला, दौड़कर श्रीरामको सूचना दी।

स्त्रियोंकी सेना ? श्रीरामने चौंककर विभीषणकी ओर देखा। अब क्या दशग्रीव इतना दुर्बल, कायर हो गया है कि वह स्वयं दुर्गमें दुबका रहे और स्त्रियोंको संग्राम करने भेजे ?

राक्षसेन्द्रको किसीने कापुरुष कभी नहीं कहा। विभीषणने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाया- मैं देखता हूँ।

फिर सबने देखा क्या यह जागृत अवस्था है या सपना। सीता माता को समझकर धोखा हुआ यह तो शत्रुपक्ष की वधू सुनयना सुलोचना है। यह वहीं शक्ति, वहीं देवी है जिससे देवता भयभीत थे। यह रावणकी पुत्रवधू है, और वासुकी नागकी प्यारी कन्या हैं। जो आज जगत की आँखों में साक्षात करूणा बन गई हैं। जिसने कभी रोना नहीं देखा, वह रानी आज स्वयं रो रही है। पृथ्वी के ऊपर खड़ी हुई वह पृथ्वीका भार हो रही है। सारा रामादल उसकी सत् की आभा देखकर काँप उठा। भगवान राम भी उसे देखकर थोड़े सकुचाए उस तेजोमय प्रतिमा के आगे। भक्त विभीषण भी उसे देखकर रो पड़े। उन्हें अत्यधिक क्लेश हुआ। विभीषण की तो सारी सुध-बुध ही खो गई उस सतीका वेश देखकर।

आपकी पुत्र-वधू प्रमिला आपके पदोंमें प्रणत है। विभीषणको देखते ही उस सतीने राक्षसियोंको रोका और स्वयं वाहन बढ़ाकर सम्मुख आ गयी- गुरुजनोंके व्यवहारकी आलोचना और उन्हें उलाहना देनेका मुझे अधिकार नहीं है। मैं तो अपने पतिका मस्तक माँगने आयी हूँ। आप मुझे स्वामीके शरीरके साथ चितारोहणमें इतनी सहायता करेंगे कि मैं श्रीरामके समीप उपस्थित हो सकूँ ?

वत्से। उनके समीप उपस्थिति होनेमें किसी आर्तको अनुमतिकी आवश्यकता नहीं होती। विभीषणके नेत्र वर्षा करने लगा- तुम आ सकती हो। विभीषण बोले- ये शेष की कन्या इन्द्रजीत की स्त्री है। इस सती का नाम लेने ही से सब पाप जल जाते है। ये स्वयं अपने स्वामी का सिर लेने तथा सहगमन करने के लिए आ गयी है। जिसके पाँव के अँगूठे पर सूर्य की किरण तक नहीं पड़ पाती थी, जिसके दर्शन को देव तक नीति-संगत रीति से नहीं प्राप्त कर पाते, वह रणभूमि में पति का मस्तक लेने के लिए स्वयं आ गयी है। यह दैवगति विपरीता है। इन्द्रजितकी विधवा सती होना चाहती है। आपसे अपने पतिका मस्तक माँगने आयी है। विभीषणसे सुनते ही श्रीराम उठकर खड़े हो गये।

देवि। सती सर्ववन्दनीया होती है। अत: यह इक्ष्वाकु-गोत्रीय दाशरथि राम तुम्हें प्रणाम करता है। श्रीरामने अञ्जलि बाँधकर मस्तक झुकाया इससे पूर्व कि प्रमिला बड़वासे उतरकर उनको प्रणाम करती, वानर स्तब्ध देखते रहे। वे भुवनवन्द्य हाथ जोड़े, सिर झुकाये कह रहे थे- मुझे खेद है कि यह क्रूर कर्तव्य हमें करना पड़ा; किन्तु किसी सतीके फैले अञ्चलमें उसके स्वामीका छिन्न मस्तक अर्पित

करनेमें राम समर्थ नहीं हैं। तुम कहो तो तुम्हारे स्वामीको सजीव कर दे।

प्रमिलाने पुकारा- नहीं। नहीं। उन्होंने वीरगति प्राप्त की। यह उनकी अनुगामिनी उनको पीछे लौटनेको बाध्य नहीं करेगी। सुना था कि आप उदारशिरोमणि, धर्मात्मा हैं। आज स्वयं देखती हूँ कि पुरुषोत्तमके पादारविन्दमें पहुँच गयी हूँ। पतिलोककी प्राप्तिमें आपकी केवल अनुमति और आशीर्वाद लेने आयी हूँ।

मैं विपत की मारी हूँ, दु:ख से आज सताई हुई हूँ। अपना सिर नीचा किए हुए पतिका सिर लेने आयी हूँ। यदि राम दयासागर हैं, तो इस भिखारिन की आन रखेंगे आशा है इस भिखारिन की विनती स्वीकार करेंगे।

पति ने वीरों की सुगति पायी और युद्ध में मरना अच्छा समझा। मैंने भी सती होकर संसार से तरना अच्छा समझा। मेरा स्वामी शस्त्र की राह से गुजरकर जिस लोक में गया है मैंने भी अग्निकी राह से उस लोक में जाना अच्छा समझा। मेरे पिया रक्त में नहाएँ और मैं अब आग में नहाऊँगी। धर्म पर अपना आत्म बलिदान कर पतिको निज गोद में लें अपनी माँग सझाऊँगी। जब करुणानिधि ने सुलोचना के करूण वचन सुनें तब प्रभु श्रीराम भूमिको देखने, कुदेड़ने लगे, सतवन्ती के तेज का प्रभु श्रीराम पर ऐसा प्रभाव पड़ा वे बोले- हे देवी, तुमपर दु:ख देख, मैं अति दु:खी हो रहा हूँ। तुम तो प्रत्यक्ष में रो रही हो, मैं मन में इधर रो रहा हूँ। दुर्लभ है ऐसा जग-विजयी, जिसपर सब का गौरव है।, वह शूरवीरता, वह साहस, पृथ्वीपर मिले असम्भव है। यदि किसी भाँति, यदि किसी तरह, आत्मा के या तप के बल से, सत्कर्म धर्म के प्रतिफल से यदि मेघनाद जीवित हो जाए तो हर्षपूर्वक मैं अपने सब सुकृत दान कर सकता हूँ और लंका की इस राजवधू का मैं भलीभाँति मान कर सकता हूँ। तब प्रभु श्रीराम के वचन सुनकर सुलोचना के नैन अश्रु से भर गए और विह्वल हो गयी और बोली हे सूर्यकूल के भूषण हे रघुपति आपने आज जो बात कहीं वो प्राणोंको भी सुखदायी है। यदि आप में अद्भुत बल हैं दूसरों के लिए आप अपना भी सुख छोड़ देते है। हे राम, आपका यह चरित्र अति निर्मल, अति उज्ज्वल है। मैं कहती हूँ इसमें मेरा कुछ भी सम्मान नहीं है न हीं मेरे परलोकवासी पति का भी उत्थान है। यदि वे देवलोक से लौटकर इस मृत्युलोक में आ जायेंगे तो निस्संदेह वे ऐसी सुगति कभी न पायेंगे। हे राम यह इन्द्रजीत की नारी सुलोचना कभी भी भार नहीं लगेगी।

लक्ष्मणने मेरे तपस्वी पति का सब भाँति सम्पूर्ण सम्मान किया। मेरा पति पूजा करते, याचक बनकर आया था उसको प्राणों का दान दिया। अब यह प्रमिला उसीके भाईके प्राणदान नहीं ले सकती। यदि प्रमिला कोई भीख नहीं देख सकती तो दी हुई भीख क्या लेगी।

वत्से। सतीको वारित करनेकी शक्ति सृष्टिमें किसीमें नहीं होती। श्रीरामने गम्भीर कण्ठ कहा- तुम स्वयं सादर अपने स्वामीका सिर ग्रहण करो। उसे सम्मानपूर्वक रखा गया है। वे उत्तम गतिको प्राप्त हुए हैं।

सुलोचना प्रमिला श्रीरामके संकेतके अनुसार आगे बढ़ी। मेघनादका मस्तक एक स्वच्छ शिलापर सुरक्षित रख दिया गया था। प्रमिलाने वहाँ पहुँचकर पहिले भूमिमें घुटने टेककर पृथ्वीमें सिर रखकर उस सिरको प्रणाम किया। अविकृत मेघनादका मुख- लगा कि उसपर जो क्रोधके भाव थे, पत्नीके सम्मुख आनेपर लुप्त हो गये। उठकर दोनों हाथोंसे उठाकर वह सिर उसने हृदयसे लगाया।

सुलोचना बोली- हे भाई लक्ष्मण, तुम कभी भी इस बात का अपने मन में अभिमान मत करना कि तुम अति बलवान हो जो मेघनाद (इन्द्रजीत) को युद्ध में मार दिया। मेघनाद और लक्ष्मण का तो यह महायुद्ध बस एक ऊपरी पर्दा था। वास्तव में देखो तो यह दो सतियों का सत् युद्धभूमि में लड़ता था। जो अवधपुरी में उर्मिला बैठी है उस तपस्विनी से मेरा रण था। अपने पति मेघनाद को सुरक्षित रखूँगी यह मेरा महाकठिन प्रण था। मेरे पति तो अपने पिता दशग्रीव का साथ दे रहे थे जो परपत्नी को हर लाया। बस इसीसे मेरा बल, तेज और सत् क्षीण हुआ जिससे मुझको यह दिन देखना पड़ा। मैं तो अपने सत् में अकेली हूँ उधर सत् में उर्मिला के साथ सीता है इसलिए इस रण में प्रमिला से उर्मिला सती ने युद्ध जीता है। मेरे पति का सर शर से बिंधा हुआ आकाश मार्ग से आपके पास आया है। उसने ही पृथ्वी पर लिखकर सिर का सब पता बताया है। संकेत उसी का पाकर मैं उसीसे सन्देश पाकर मैं तुमसे दोनों हाथ फैलाकर अपना धन माँग रही हूँ। पत्नी का पति में इतना अनन्य प्रेम देखकर रघुवर श्रीराम पुलक उठे और बोले- देवि, तुम धन्य हो। कौन कहता है कि तुम राक्षसकुल की कुलवधू हो। तुम तो लंका की मरू जंगल में सुरसरि गंगा की पावनधारा हो। सत् का प्रभाव इतना पड़ता है कि कब किसके रोके रूकती है। तुम तो इतने ऊँचे पथ पर हो कि तुम्हारे सम्मुख इस राघव का भी मस्तक झुकता है। यह कहकर प्रभु श्रीरामने संकेत करकर वह शीश मँगा लिया और सती सुलोचना को देने को उद्यत हुए तभी सुग्रीव बोल उठे- प्रभु। मुझे एक संदेह है। पृथ्वी के ऊपर भुजा कट गयी वह किस भाँति लिख सकती है। जो बात प्रकृति के विरुद्ध है वह किसी तरह भी मन में नहीं जँचती है। विभीषणजी

क्षमा करना मुझे, यह मुझे संशय है मैं कोई इसका उपहास नहीं कर रहा। ये लंकावाले बड़े मायावी है इसलिए मुझे उनका विश्वास नहीं हो रहा। तभी विभीषण ने कहा- तुम कहते यह ठीक है। समर में नीति की लीक भी सीधी नहीं होती है। फिर भी मेरा यहीं कहना है इसमें संशय का लेशमात्र भी नाम नहीं। यह तो धार्मिक, अध्यात्म जगत की बातें है। इसमें युद्धनीति का भी काम नहीं है। नारी के पतिव्रत का बल अनहोनी भी ढा सकता है। यदि पतिव्रत नारी प्रबल हो उठे तो ईश्वर भी उससे डर सकता है।

तब सुग्रीव बोले- हे रघुराय, यदि ऐसा ही है तो हमें इसका परिचय मिल जायें। इस युद्धभूमि में सब खड़े हुए बस एक ही रस्ता जानते हैं। हम इस गुप्त जगत की बातों पर विश्वास नहीं करते हैं हम प्रत्यक्ष को प्रमाण मानते हैं। जिसने लंका में यह सत् दिखलाया है वह चमत्कार यहाँ भी दिखलायें। यदि यह कटा शीश हँस जाएं तो हमें विश्वास हो जायेगा।

तब सती सुलोचना बोली- इसमें सन्देह मत करिये यह शीश भी हँस देगा। संसार में प्रेम बड़ी वस्तु हैं। हे मेरे प्राणेश्वर के कटे शीश अब बात पतिव्रत धर्मपर आ गयीं है। इस विधवा का अब कहीं ठठा न उड़ें, सत् पर कभी बट्टा न लग जाएं। इस भरी सभा में आज यह आँखे तुझे ही देख रही है। उन टूटी हुई चूड़ियों की लाज मिट्टी में न मिल जायें। तुम्हारे ही आदेश पर यह नारी रामादल में आयी हैं। अब यदि इस जग में लोकहँसाई हुई तो यह मेरी नहीं तुम्हारी ही हँसाई है। हे मेरे प्राणधन जीवन क्यों नहीं हँस रहे हो, क्यों मेरी हँसी कराते हो, क्यों पंचोंमें निर्णय देनेसे पहले हँसी कराते हो। ऐसी भी हँसी अच्छी नहीं होती। आ गया परीक्षा का अवसर। हे मेरे सरताज के सर अब तु हँस दे। मेरी नाव किनारे पर अड़ती है क्यों इस जग के नर-नारी मुझपर हँस रहे हैं ? क्यों हँस रहें है यह धरती यह अम्बर। तू हँसकर इनको चुप कर दे। तू सुरमण्डल पर हँसता था, तू शत्रुके बलपर हँसता था अब क्यों चुप बैठा है मेरे योगेश्वर। हँस दे अब भी मेरे सरताज के सर। कटा हाथ जब लिखता है फिर कटा शीश क्यों नहीं हँस सकता। हे स्वामी हँस-हँसकर इतना उत्तर दे क्या हुआ शीश कटा हुआ कहीं पड़ा है, हाथ और भुजायें कहीं। आत्मा तो सब समय अमर है। कुछ पहले मैं जो तुम्हारी सुधि पा जाती तो तुम्हें अपने पास बुलाती। फिर यह युद्ध किसी भाँति नहीं होता। पर अब तो हँस दे मेरे सरताज के सर।

तब सिर ने सोचा यह लक्ष्मण पिता है, वासुकि है, शेषनाग है। यहाँपर लक्ष्मण का वेष धर अवतीर्ण हुआ है। कन्या हरने का बदला उसने मुझसे ले लिया है। तब मारकेश की दशा कब देती है जीवनदान ? इसी बात को सोचकर अट्टहास के साथ वह सर हँसा। तभी पृथ्वी, गगन काँप उठी। कुछ क्षण का वह दृश्य था जिसे देखकर प्रभु श्रीराम मुसकाये। जब हँसा असुर मेघनाद का शीश तब सुग्रीव का सिर झुका।

तभी सुलोचना ने साह्लाद अपने पति का शीश उठा लिया और प्रभु श्रीराम से बोली- हे जगदीश्वर, हे कौशलपति सच्चाई जग को प्यारी है। अवध जिस तरह तुम्हारा है अब लंका भी उसी तरह तुम्हारी है। हे राम युग-युग तक तुम रहोगे जगत के इतिहास के पन्नों पर। तुम्हारा नाम भक्त सदा जपते रहेंगे अपने मन की माला पर।

प्रमिलाने किसीकी ओर नहीं देखा। उसके मानधनी पतिका वह मस्तक उसकी गोदमें था, जो पिताके अतिरिक्त कहीं झुकता नहीं था। उस मस्तकको लेकर मेघनादकी मरणोन्मुख अर्धांगिनी किसीकी भी वन्दना नहीं कर सकती थी।

विभीषण। लमा-द्वार तक तुम्हें इस सतीका अनुगमन करना चाहिये। विभीषणको भेजकर श्रीरामने सुग्रीवकी ओर देखा- वानर इस समय शान्त रहेंगे। दशग्रीव जब तक पुत्रकी उत्तर क्रिया सम्पन्न नहीं कर लेता, कोई लंकामें नहीं जायगा और न उधर, जहाँ इस पुरीकी श्मशान-भूमि है। इस समय कोई जयघोष नहीं किया जायगा।

दशग्रीवने समुद्र किनारे चिता सज्जित करा ली थी। मेघनादका मस्तकहीन शरीर कबन्ध निकुम्भिला मन्दिरसे वहाँ मँगा लिया था। उसे स्नान कराके चितापर-शरीरधारी सनातनधर्मी गृहस्थकी जो अनिवार्य अन्तिम शय्या है, उसपर शयन करा दिया गया था। प्रमिलाकी प्रतीक्षा थी।

प्रमिलाने किसीकी ओर नहीं देखा। आकर वह अपनी बड़वासे उतरी और सीधे चितापर चढ़ गयी। पतिके शरीरको उसने इस प्रकार अपनी गोदमें रखा कि उससे सटाकर सिर रखनेपर वह प्रमिलाकी दक्षिण जंघापर ऐसे धरा रहा, जैसे शरीरसे लगा ही हो।

वत्से। दशग्रीव कुछ कहना चाहता था; किंतु उसके कण्ठने साथ नहीं दिया। वह निर्निमेष देखता खड़ा रहा।

राक्षसेन्द्र। आप धन्य है। आपने पुरुषोत्तमको पतितपावन होनेका अवसर दिया है। सतीकी दिव्य दृष्टिको दशग्रीवका अभिनय आच्छादित नहीं कर सकता था। शान्त, निष्कम्प स्वरमें सम्पूर्ण समष्टिको उस परमसतीने आशीर्वाद दिया- आप ठीक सोचते हैं अपने आरम्भ किये महामेधयज्ञको अपनी आहुति देकर परमगति प्राप्त करें। सुर संकटहीन होकर सुखी हों। असुर शान्त होकर सुखी

हों। संसार रामके छत्रकी छाया प्राप्त करके परम सुखी हो। यह दृश्य देखने को सागर पर अपार भीड़ हुई। उस अग्नि की ज्वाला में भौतिक शरीर जले इस भूतल पर। पति-पत्नी दोनों प्रेमसहित जाकर मिल गए नभमण्डल पर।

आज भी सती स्वत: अग्नि प्राप्त कर लेती है, उस समय तक तो अग्निदेव लंकामें सेवक थे। उस चितामें न किसीको अग्नि देनी पड़ी, न दक्षिणाग्निका आह्वान करना पड़ा। प्रमिलाने तनिक ऊपर दृष्टि उठाकर अस्ताचलकी ओर जाते आदित्यमण्डलकी ओर देखा और अञ्जलि फैला दी। जैसे मेघनादका शरीर और प्रमिलाका शरीर कर्पूर-निर्मित हो, इस प्रकार एक साथ जल उठा। चिताके चन्दनकाष्ठने पीछे ज्वाला पकड़ी, वे दोनों शरीर पहिले प्रज्वलित हो उठे।

हुताशनमें सतीका अपमान करनेका साहस नहीं था। प्रमिलाका शरीर भस्म होता गया- भस्म हो गया; किन्तु उसके वस्त्र तब तक बच रहे, जब तक उसके शरीरकी अस्थियाँ भस्म नहीं हो गयीं।

दशग्रीव संज्ञाशून्यके समान खड़ा रहा। तब तक चिताग्नि शान्त नहीं हो गयी। अन्तमें पुत्र-पुत्रवधूको जलाञ्जलि देने वह सागरमें उतरा। गुप्त शक्तियों ने मेघनाद और सुलोचना की कीर्ति बखान करी। कण-कण सारी प्रकृति का गा उठा। हे सती, जाओ अपने प्रिय पति के धाम। अब मृत्युलोक के शोक और दु:खसे नहीं तुम्हें कुछ काम। कीर्ति तुम्हारी आज अचल हुयी, अमर हुआ है तुम्हारा नाम। बड़े पुण्य फलों से तुम्हें मिला है यह सुन्दर परिणाम। यदि राम कृपा करें तो पतित जाति भी पावन हो जाती है। इसलिए ऐसे दयाधाम की बोलो जय जय सीताराम।

१९) अहिरावण वध- रावण के रनिवास में जोरोंसे हाहाकार मच रहा था। निशाचरपति रावणने देखा चारों तरफ करूणा की घटा छा रही हैं। बेटे के मरने से रानी मन्दोदरी जीते जी मरने जा रही है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। जब दु:ख सिर पर आता है तब कितना भी धीरजवाला हो, धीरज उसका टूट जाता है। फिर भी साहस कर, दशकन्धर बोला- यह कैसा शोक छाया हुआ है ? मेरे जीते जी इस घरमें किसलिए शोक किया जा रहा है। रोना-धोना अब बन्द करो। मैं अपनी अद्‌भुत शक्ति दिखाऊँगा। अपने पुत्र के हत्यारे का बदला अब सम्पूर्ण रूप से चुकाता हूँ।

अभी कोई और प्रधानहुति अवशिष्ट है ? पुत्रको जलाञ्जलि देकर दशग्रीव समुद्रसे निकला तो उसके मनमें एकमात्र यही प्रश्न था। शीघ्र उसकी बुद्धिने उत्तर दे दिया- एक है। अमङ्गल मुहूर्तमें मेरी अनुमतिके बिना जिसका प्रसव उसकी माताने कर दिया, अत: क्रुद्ध होकर जिसे मैंने सागरकी लहरोंको सौंप दिया, वह अपने भाइयों-सहोदरोंके साथ मरा तो नहीं। वह नागलोकके एक द्वीपमें बस गया। मेरा नाम अपनाया उसने। नागलोकवासी होनेके कारण अपनेको अहिरावण कहने लगा। वह और उसके भाई मेरे ही औरस पुत्र हैं। वे रह जायँगे ? इस महामेधमें भी उद्धार-वञ्चित ही रह जायँगे ?

विभीषणको रामने शरण दी है। अपने सेवकके अनुगतोंका दायित्व उनपर। अत: लमामें विभीषणके अनुचर बचे रहें, इसमें कोई आपत्ति नहीं। रावणकी मेधा प्रबुद्ध हो गयी थी- दशग्रीव। यदि अपने अनुगतोंको, अपने औरसोंको त्यागकर तू चला जाता है तो उनका उद्धार करनेवाला कोई नहीं मिलेगा ?

अहिरावण नागलोक में रहता है। उसे यहाँ बुला भी लिया जाय, लाभ ? राक्षसेन्द्रने क्षणभरमें निश्चय कर लिया। उसके पूरे कुलका उद्धार करनेके लिए रामको वहाँ जाना पड़ेगा। उनको वहाँ जाना ही है।

अहिरावण भी रावण का बेटा था। वह भी प्राणोंसे प्यारा था। अहिरावण के भय से पूरा पाताल लोक थर-थर थर्राता था। साहस और कुशलता और बल में भी अधूरा नहीं था। देवी का परम उपासक था। अपनी इष्ट सिद्धिमें भी पूरा था। उसे देवीसे वरदान मिला था कि तुझको रण में कोई भी नहीं हरायेगा। पर यदि तूने छल से चोरी की तो फिर कोई बचा भी नहीं पायेगा।

अहिरावण का जन्म रावण से इसप्रकार हुआ- शत्रुधनु नामक एक गन्धर्व-पुत्र था। वह विष्णु के सम्मुख नित्य प्रतिदिन नृत्य करता और गायन गाता था। विष्णु के सदन में वह नित्य-प्रति नृत्य करता था इससे देव नारायण बड़े सन्तुष्ट थे। विष्णु से मिलने अष्टावक्र मुनि आये। उनकी टेढ़ी-मेढ़ी मूत्ति को देखकर गन्धर्व को हँसी आ गई। मुनि का रूप देखकर गन्धर्व व्यंग्य करने लगा। मुनि को देखने में उसका ताल-भंग हो गया। मुनि ने कहा, मुझको देखकर उपहास करते हो। तुम्हारा सुन्दर शरीर विनष्ट हो जायगा। पापी होकर राक्षस-कुल में जाकर जन्म लो। विकट मूत्ति लेकर पाताल में वास करो। मुनि का शाप सुनकर विद्याधर चिन्ता करने लगा कि किस

दोष से इस मुनिवर ने एक भयानक शाप दिया। वह कहने लगा मैं अबोध पापी हूँ, तुमको पहचानता नहीं हूँ। आप महामुनि त्रिभुवन में पूजित हैं। मैं तुम्हारे चरणों का स्पर्श करता हूँ, हे प्रभु कृपा करो और इस पापी को पाप से मुक्त कर दो।

शत्रुधनु का वचन सुनकर मुनिवर ने प्रसन्न होकर उससे कहा, मेरा वचन अन्यथा नहीं होगा, तुम पाताल में राक्षस प्रधान बनकर रहोगे। तुम्हारी तपस्या के बल पर महामाया तुम्हारे घर में रहेगी और तुम महेश के वर से सुख से राज्य करोगे। दुष्ट राक्षस-वंश का विनाश करने के लिए विष्णु अवतार लेंगे। उन्हीं राम-लक्ष्मण को तुम चुरा कर ले जाओगे और पाताल में अपने पुर में उनको रखोगे। हनुमान के हाथों ही तुम्हारा शाप-विमोचन होगा। मेरा वचन कभी मिथ्या नहीं होगा। इतना कहकर मुनि अपने-अपने स्थान चले गये और वह पाताल में अहिरावण बन गया। मुनि के वाक्य कभी अन्यथा नहीं हो सकते।

दशग्रीव समुद्रतटसे वैसे ही आर्द्रवस्त्र राजसदन न जाकर निकुम्भिला मन्दिर चला गया। मेघनादके रक्तसे सिञ्चित उसी प्राङ्गणमें वह बैठ गया। सामग्री सेवकोंने आज्ञा पाते ही प्रस्तुत कर दी। तन्त्रोंका वह परमाचार्य अहिरावणके नामसे आकर्षण-प्रयोग करने लगा था।

आपने मुझे स्मरण किया पिताजी। अहिरावण उत्पन्न होते ही त्याग दिया गया था। समुद्रकी लहरोंने उसे निगला नहीं। अपने सब भाइयोंके साथ नागलोकमें उसने स्वयं अपना राज्य स्थापित किया था। लमासे, माता-पितासे न उसे प्रीति थी, न कोई सम्बन्ध। वह पृथ्वीपर आया ही नहीं था। केवल दिग्विजय करता जब दशानन उसके यहाँ पहुँचा था, परिचय हो गया था। उसने पिताका सत्कार किया था। आज अचानक पिता से मिलनेकी तीव्र उत्कण्ठा उसके मनमें जगी। वह अपनेको रोक नहीं सका था। कोई अज्ञात शक्ति उसे सीधे यहाँ निकुम्भिला मन्दिर खींच लायी। दशग्रीवके अनुष्ठानका सम्भार देखते ही वह समझ गया कि उसकी यहाँ आनेकी उत्कण्ठताका कारण क्या था। उसने विनम्र होकर, प्रणाम करके पूछा- मेरे योग्य कोई सेवा ?

वत्स। आज तुम्हारी यह पितृभूमि और पिता संकटमें हैं। मेरा सुरासुरजयी पुत्र मेघनाद भी मारा गया। रावणने उसे हृदयसे लगाकर कहा- तुमको तुम्हारे मातमह मयने अपनी समस्त मायिक शक्तियोंसे स्नेहपूर्वक सम्पन्न किया है। अब तुम्हीं समटसे मुझे बचा सकते हो। अहिरावणने जब रावण का मन्तव्य समझ लिया तब समयोचित कर्त्तव्य का निश्चित किया।

पितासे पूरा विवरण सुनकर अहिरावणने कहा- मैं उन दोनों राजकुमारोंको हरण करके अपने यहाँ लिये जाता हूँ। वहाँ आज ही उनकी बलि दे दूँगा अपनी आराध्या चामुण्डाको। आज चांदनी रात ही बाधक है माया से पहले इसको ही हरना है और अन्धकार उस रामादल में करना है। रावणने प्रसन्न होकर कहा- तुम इतना कर सको तो वानर स्वत: भाग जायेंगे। जो प्रात:कालसे पूर्व रह जायँगे, उन्हें मैं मार दूँगा। लेकिन दोनों राजकुमार वानरोंसे सुरक्षित रहते हैं। तुम उनको ले जानेमें सफल हो गये, यह सूचना मुझे कौन देगा ?

अहिरावणने योजना स्पष्ट की- आपने ही तो कहा है कि पितृव्य विभीषण उनके पक्षमें हैं। मैं उनके रूपमें वहाँ जाऊँगा। आपको क्षणार्धके लिये जब गगन में तीव्र आलोक दीखे, समझलें कि आपके शत्रु जा रहे हैं। यह कहकर अहिरावण चल पड़ा और अमावस्या जैसा अन्धकार तुरन्त ही फैला दिया। मानो की आकाश में राहु-केतु आए हो। चन्द्रमा छिपा, चाँदनी गयी, काले-काले बादल छा गये।

पिताको आश्वासन देकर अहिरावण उत्तर द्वारके ऊपर आया। उसने मायासे समस्त वानर-सेनाको सम्मोहित किया। दिन-रातके युद्धसे श्रान्त आज सब मेघनादके मारे जानेसे निश्चिन्त थे। श्रीरामने अत्यन्त आग्रह करके लक्ष्मणको आज अपने समीप शयन करा लिया था। दुनिया के सो जानेपर सदा जागते रहनेवाले हे लीलाधर आज निद्रा की लीला कर रहे है। एक हाथ धनुष पर है और दूसरा लक्ष्मण पर है। पाँवों के नीचे लंका है, और मस्तिष्क के ऊपर सागर हैं। चारों दिशाओंमें कपिदल सो रहा है। श्री सीतापति का दिव्य रूप अहिरावण ने सुस्थिर होकर ही आगे बढ़कर वह मुख देखा। अपने कितने ही पुण्यों का, जन्मोंका फल अपने सम्मुख देखा। अहिरावण को ध्यान आया कि अब रावण के काम बनाने का समय आया है। लक्ष्मण सहित रघुराई को चुपके से हर ले जानेका यही उचित समय है। रावण ने लंका का नाश कराने के लिए सीता का हरण किया अब अहिरावण श्रीराम और लक्ष्मण का हरण करके चला रावण का वंश मिटाने को। मायावी का सार्थक हो गया मायाजाल। सब सो गये मायाके प्रभावसे।

अहिरावणने देखा, अपने लांगलकी परिखा सुप्त बानर सेनाके चारों ओर बनाकर हनुमान स्वयं उसका द्वार बने बैठे हैं। यद्यपि मायाके प्रभावसे उनको भी तन्द्रा आ रही थी; किंतु बलपूर्वक वे अपनेको सुप्त होनेसे बचाये थे। उनकी पूँछ- परिखाका उल्लङ्घन असम्भव है। इस प्रयत्नमें पक्षी भी पवनपुत्रकी अचिन्त्य शक्तिके कारण पृथ्वीपर गिर पड़ेगा, यह अहिरावण समझ गया। वह विभीषणके रूपमें उनके समीप पहुँचा। वह हनुमान को धोखा देकर रामादल में पहुँच गया। जाते ही अपनी मायाका कौतुक दिखलाया। जागने वालोंकी आँखे

झपका दी और सोये हुओंको गहरी नींद में सुला दिया।

हनुमान ने पूछा- आप इस समय ? उस कृत्रिम विभीषण ने कहा- मैं समुद्र-किनारे सन्ध्या करने चला गया था। यह भी आवश्यक था कि देख लूँ, दशग्रीव क्या करने जा रहा है। पुत्रको जलाञ्जलि देकर वह नगरमें गया। कल युद्धमें आवेगा। यह सब देखनेमें मुझे विलम्ब हो गया। हनुमानने फिर पूछा- आजका सांकेतिक शब्द ?

मायावी राक्षसने शान्त स्वर में कहा- मुझे कैसे पता हो सकता है। आप जानते हैं कि ये शब्द सूर्यास्ते पश्चात् निश्चित किये जाते हैं। मैं तो उससे पूर्वसे प्रभुके समीप पहुँच ही नहीं सका।

सन्देहका कोई कारण नहीं था। पवनकुमार ने मार्ग दे दिया; वह मायावी पृथ्वीसे मायापति को पाताल ले गया।

किंतु थोड़ी देरमें ही भीतर कोलाहल होने लगा। मायाका प्रभाव दूर होनेपर पहिले सुग्रीव जागे। अब उन्होंने देखा आज तो असुरोंसे रण हुआ नहीं फिर राम, भाई लक्ष्मणसमवेत कहाँ है पता नहीं। उन्होंने व्याकुल होकर जाम्बवन्तको जगाया- सानुज श्रीराम नहीं है। इस अन्धकारपूर्ण रात्रिमें वे कहाँ गये ? रघुकुलपतिके खो जानेसे दल में चारों ओर सन्नाटा छाया। रामके बिना पूरा कपिदल अधिर हो गया। व्याकुल-विकल होकर चारों दिशाओं में देख रहे हैं कि रघुवीर कहा गये। कभी लंका नगरी की दिशा में दौड़ रहे हैं, तो कभी सागर के तीर पर ढूँढ रहे है। यह घटना सुनकर पवनकुमार अधिक व्याकुल हो गये और मनमें विचार करने लगे। हे बहते हुए समुद्र बना मेरे प्रभु किस ओर कहाँ है ? जिसने सीता का हरण किया वहीं निर्दयी निशाचर हत्यारा रामको भी हरकर ले गया क्या ? यदि ऐसा है तो सारी लंका को आज सागर में बहा दूँगा। दशमुख के सौ-सौ टुकड़े कर गीधों का ग्रास बना दूँगा। हे पामर पापी, सावधान हो जा, अभी यह हनुमान भयंकर है। कल तक तो यह लंका जलानेवाला ही था पर आज पूर्ण प्रलंयकारी है। फिर सोचने लगे, जिस प्रभुने रण में उस कुम्भकर्णको मारा है, जिस लक्ष्मण ने मेघनाद को रणमें संहारा है, जिनके नाम बलरूप से मैंने लंका दहन किया, अंगद ने पाँव जमाया उस दुष्ट दल का बल सब शमन किया। उन स्वामीको किसका साहस है जो कपिमंडल से हरकर ले जायें अब रावण तो क्या यमराज तलक रामादल से थर्राता है। लगता है हमसे ही कुछ भूल हुयी जो इसप्रकार मुँह तोड़ गए। अपने भक्तोंको सोता छोड़ गएं और दासोंको रोता छोड़ गयें। कुछ समझमें भी नहीं आता है, कुछ ध्यान में भी नहीं आता है। हे राम अब आप ही प्रकाश दे, सेवक को तो कुछ नहीं सूझता है। बस इन्हीं विचारों में पवनपुत्र व्याकुल थे क्या करें ? कहाँ जाएं ? यहीं सब उस अवसर पर सोच रहे थे।

सानुज श्रीराम नहीं है। जाम्बवन्तने विभीषणको जगाया। दो चार क्षणोंमें सम्पूर्ण वानर-सेना जाग गयी। सब व्याकुल हो उठे। जाम्बवन्तने कहा- हनुमानसे पूछना चाहिये।

सानुज श्रीराम नहीं है। कोई सायंकालके पश्चात् भीतर आया था ? सुग्रीव, विभीषण, जाम्बवन्त पहुँचे हनुमानके पास। पूछा- भीतरसे कोई बाहर गया ?

भीतरसे बाहर किसीको जाते मैंने नहीं देखा। मेरी पूँछका उल्लङ्घन कोई तभी कर सकता है जब मेरे स्वामी उसके साथ हों। हनुमानने कहा- जब मैं प्रबन्ध में था तब बाहरसे भीतर तो अन्धकार हो जानेके पश्चात् केवल ये विभीषणजी गये थे। उस डरावनी अँधेरी रात में कहाँ कुछ बात कर पायें थे। मैं तो अपनी धुन में था और आप स्वामी के समीप गये थे। अतएव अब आप ही बतलायें वह युगल किशोर किस दिशा में गये।

विभीषण ने कहा- मैं तो मेघनाद- वधसे लौटनेके पश्चात् प्रभुके समीप ही हूँ। मैं तो इधर आया ही कब था लगता है तुमने कोई स्वप्न देखा हैं या भ्रम की बात है। चन्द्रोदय के उपरान्त मैं तो प्रभुकी सेवामें ही था। फिर उन चरणोंके समीप ही गहरी निद्रामें सोया था। लगता है कोई मेरे रूपमें आकर श्रीराम-लक्ष्मणको हरण कर ले गया।

मैंने गगनमें एक तीव्र प्रकाश क्षणार्धके लिए देखा। हनुमानने बतलाया- जो भी आपके वेशमें रहा हो, उसके भीतर जानेके तनिक देर पीछे ही वह प्रकाश हुआ।

मैं अपने वंशकी अन्तिम आहुति स्वयं दे रहा हूँ। उसी प्रकाशको देखकर लंकाके राजसदन में दशग्रीवने दीर्घ श्वास ली।

हम राक्षसोंके कुलकी एक पवित्र शपथ है, राज परिवारके लोगोंका रूप मायासे केवल राज-परिवार के लोग ही बना सकते हैं। विभीषण संचित रह रहे थे- रावण-कुम्भकर्णके पुत्रों में अब कोई जीवित नहीं है। मेरा रूप दानवेन्द्र मय बना सकते है या स्वयं रावण। लेकिन दानवेन्द्रमें दुर्वृत्तिका लेश नहीं है। दशग्रीव भी मुझे कलमित करनेका ऐसा क्षुद्र प्रयास नहीं करेगा। वह राम-लक्ष्मणका हरण भी

करे तो रखेगा कहाँ ?

केवल एक है- रावणका परित्यक्त एक औरस पुत्र अहिरावण। उस मायावीके अतिरिक्त यह कर्म और किसीका नहीं हो सकता। विभीषणने निश्चयात्मक स्वरमें कहा- अवश्य मेघनादकी मृत्युसे निराश रावणने उसे बुलाया होगा। रावण का बेटा अहिरावण पाताल लोकसे आया होगा अब निश्चिय ही इस अँधेरे का कौतुक उसीने रचाया होगा। मेरे स्वरूप में आकर लगता है प्रभुवर को वो उठा ले गया है। दु:ख भंजन करने वालेको इसभांति छिनकर वह दुष्ट यह दु:ख हमको दे गया है। हे वीरवर। लगता है वह आपसे भी चाल खेल गया और जो पृथ्वीपर थे उन्हें पाताल पहुँचाया होगा।

पवनपुत्र। आपको प्रभुके समीप शीघ्र पहुँचना चाहिये। सूर्योदयसे पूर्व दोनों भाइयोंको यहाँ ले आनेमें आप ही समर्थ हैं।

हे हनुमान। विपत्ति पड़ने पर सदाही तुमने वरिता के काम किये है। निर्बलोंके आप बललता है बदधाम है। हे पवनसुत केसरी सुवन जागो, हम सबकी जीवन रक्षा करो। हे मारूतनन्दन। जागो, रात ही रात में संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मणको तुमने प्राणदान दिये। जो काम वायु कर सकता है वहीं वायुपुत्र तुमने किये। जब-जब भी दु:ख के अवसर पर सारा कपिदल निरूपाय हुआ, अति खिन्न हुआ, अतिभीत हुआ, असमर्थ हुआ, असहाय हुआ तब-तब तुमने हे महावीर, सबमें नवजीवन डाला हैं। तुम इस भूतल के प्रकाश हो। सूर्य समान तुम्हारा उजियाला है। पवनसुत का नाम लेते ही असुरोंका दिल भी हिल जाता है। पवनपुत्र की गर्जन सुनकर पृथ्वी मण्डल भी हिल जाता है। फिर आज अपनी गाज उसी भाँति सुनाओ जिससे यह कपि समाज जीवित रहे। लंका में रामराज हो तो वानर मण्डल की लाज रहे। यदि प्रभु श्रीराम को नहीं छुड़ाया तो वह अपनी सभी चतुराई पर धिक्कार है। उपकार तो वहीं सच्चा है कि परायी विपत्ति पर मर जायें। वैसे तो जगमे इस जीवोंका आना-जाना रहता है। पर जो जीवनदान दूसरोंको देता है उसका ही जीवन वास्तव में जीवन है।

हे अन्जनीनन्दन शीघ्र जाओ और यह काम पूर्ण करो। सीतापर जब संकट था तो क्षणभर में निवारण कर दिया। अब सीतापति के संकट पर देर क्यों लगा रहे हैं ? हे संकटमोचन तुम्हें राम बुला रहे है। वन में एक सिंह होता है और घर में एक सुजान व्यक्ति होता है। इसी भाँति रण में तुम एक वीर हनुमान हो।

तब जाम्बवन्त की बात सुनकर नवजीवन सा प्राप्त कर पवनपुत्र हनुमान गरजे। वे महावीर थे, इनमें प्राकृतिक महाबल था। इनमें शारीरिक, आत्मिक बल और फिर रामकृपा का बल था। हनुमानने अपने साथियों को आज्ञा दी और बोले कितनी सी बात हैं कौनसा बड़ा काम हैं। वे कृपानिधान भक्तवत्सल इस जन से जो काम कराते है इसका रहस्य केवल यहीं है कि वे भक्तों का मान बड़ाते है। इस तरह कहकर रामकार्य के हेतु फिर रामदास चला।

आगे बढ़ना ही जीना है, रूक जाना मरना है। एक-एक क्षण मूल्यवान है। जो कुछ करना है उसका यही एक अवसर है।

आप सब सावधान रहें। मैं यहाँ नहीं हूँ, वह किसी प्रकार राक्षसों को ज्ञात न हो। हनुमानने विभीषणसे अहिरावणकी पुरीका पूरा पता पूछा और उसी क्षण प्रस्थान किया।

पवनकुमार पाताल में नागलोक में अहिरावण के नगर में जा पहुँचे। वहाँपर मकरध्वज नामक एक वीर उस राजधानी का रक्षक था। हनुमान तो राम के सेवक थे पर वह मकरध्वज अहिरावण का सेवक था। हनुमान मँझे हुए खिलाड़ी थे जबकि यह मकरध्वज युवक नौसिखिया था। फिर भी अपने बल में, साहस में यह बाँका योद्धा था। उसने हनुमान को रोका और कहाँ मेरे स्वामी का आदेश है आज किसीका इस नगर में प्रवेश नहीं होगा और यदि मेरी आज्ञा स्वीकार नहीं की तो उत्पात हो जायगा। हे वृद्ध कपिश इस बालक के द्वारा तुम्हारा अभिमान चूर्ण हो जायगा।

इस पुरीका स्वामी आज कहीं बाहर गया था ? समुद्रके भीतर नागलोकके उपद्वीपमें हनुमान पहुँचे तो उस पुरीके द्वारपर अपने ही समान रूप, आकारके बलवान वानर को देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। उन्होंने उससे पूछा।

मेरे स्वामी अहिरावण आज कहींसे दो अत्यन्त सुन्दर श्याम-गौर राजकुमारोंको निद्रित ही उठा लाये हैं। उस वानरने कहा- उन दोनों की अभी थोड़ी देरमें चामुण्डाको वे बलि दे देंगे। तुम देवी-मन्दिरमें उठती वाद्य-ध्वनि सुन रहे हो ?

सुन रहा हूँ। तुम कौन हो ? हनुमानने पूछा।

मैं परम पराक्रमी पवनपुत्र हनुमानका सुत मकरध्वज हूँ। उस वानरने गर्वपूर्वक कहा- मेरे स्वामीने मुझे आज द्वारपर नियुक्त करके आज्ञा दी है कि किसीको भीतर प्रवेश मत करने देना।

मैं आजन्म ब्रह्मचारी, तुम मेरे पुत्र कैसे हो गये ? हनुमानने उस वानरको घूरकर देखा। वह आकृति में उनकी प्रतिमूर्ति था।

मेरे अहोभाग्य कि मुझे आज अपने पूजनीय पितृपदोंके दर्शन हुए। वह चरणोंमें लोट गया। उठकर हाथ जोड़ बोला- आपने जब लमा जलाकर समुद्रमें पूँछ बुझानेके लिए छलाँग लगायी, आपके शरीरका स्वेद-बिन्दु जल में टपका। उस उज्वल बिन्दुको एक महामत्स्यने आहार समझकर मुखमें ले लिया। उससे उसके उदरमें मेरे शरीरका निर्माण हुआ। जालमें उसे दैत्य मछुओंने पकड़ा और अहिरावणको दे गये। उस मत्स्यको यहाँ रसोईघरमें काटा गया तो मैं निकला। इस पुरीके स्वामीने मेरा पालन कराया। एक दिन देवर्षि नारद पधारे। उन्होंने मुझे यह मेरी जन्म-कथा बतला दी।

अच्छा। अब मुझे तुम्हारे देव-मन्दिर जाना है। हनुमानने पैर बढ़ाया- वे दोनों राजकुमार मेरे स्वामी हैं। मैं उन्हें ले जाने आया हूँ।

आप मेरे पिता है; किंतु जिसने मेरा पालन किया है, उसने मुझे द्वार-रक्षापर नियुक्त किया है। मकरध्वज द्वार रोककर खड़ा हो गया- जब तक मुझमें शक्ति है, आप भीतर नहीं जा सकते। हे पिताश्री, इधर स्वामीका आदेश हैं और ईधर पिता का आदर हैं यह मकरध्वज असमंजसमें हैं। सोच रहा है क्या करना चाहिए। उस ओर कुआँ दीख रहा है उधर खाई दिख रही है। ऐसे ठौर पर सेवक खड़ा हैं जिसे पथ दिखाई नहीं दे रहा है। हे पितृदेव अब आप बतलायें इस समय मेरा धर्म क्या है। हे कर्मशील, हे कर्मवीर इस समय मेरा क्या कर्तव्य है। जब ही हनुमान ने अपने पुत्र में कर्तव्य की हिलोर देखी। तब प्रेम दृष्टि से पिता ने पुत्र को देखा। कर्तव्य पूछ रहे हो बेटा यह सुनकर पिताको सन्तोष हुआ। तुम निश्चय ही मेरे पुत्र हो यह आज सिद्ध हुआ और पुष्ठ हुआ। क्यों कि हनुमन्त का ही बेटा ऐसा गम्भीर प्रश्न बेधडक होकर पूछ सकता है। मैं महावीर कहलाता हूँ तो भी युवक तुम वीरवर हो। यदि मैं प्रभुका पक्का सेवक हूँ तो तुम भी किसीके किंकर हो। इस समय तुम मुझसे पूछ रहे हो तुम्हारा क्या धर्म है ? अब मैं तुमसे पूछता हूँ इस समय मेरा क्या कर्तव्य है और धर्म है। यदि तुम चाहते हो मैं ही इसका निर्णय कर दूँ। तो सुनो, अहिरावण का वध कर हनुमन्त अपने प्रभु को लेकर यहाँ से जायगा। इसलिए इस समय मेरा धर्म यह है कि मैं नागलोक नगरी के भीतर पहुँचू। जब लक्ष्य हम दोनों का भिन्न-भिन्न है ऐसे में कैसा बाप और कैसा बेटा। इसलिए हे पुत्र इसी समय इसी जगह दोनों वीरोंमें मल्लयुद्ध होगा। पर शक्ति ही इसका निर्णय करेगी तुम मकरध्वज मछली नन्दन हो, और हनुमान अंजनीनन्दन है। पिता का पुत्र से ही सामना है। देखो प्रकृति में क्या नया बानक बनाया है। इस तरह आगे बढ़ दोनों वीर भिड़ गए जैसे कोई प्रलय और भूचाल आया हो। मारुतसुत और मारुतसुत का सुत दोनों ही वीर मतवाले थे। कसवाले थे, बलवाले थे, मतिवाले थे, और मतवाले थे। हाथ से हाथ, छाती से छाती, सिर से सिर लड़ता था। पृथ्वीपर एक-दूसरे को गिराने का डांव ढूँढता था। जय राघव की गर्जना कर हनुमान उठे। इस गर्जने से क्षणभर वह बलवान सहमा और उसी समय मल्लयुद्ध में पृथ्वीपर गिरा और गिरकर उदास हुआ।

पिता-पुत्रमें मल्ल-युद्ध प्रारम्भ हो गया। हनुमान के समीप अधिक अवकाश नहीं था। उन्होंने मकरध्वजको पटककर उसीकी पूँछसे कसकर बाँध दिया। उसे वैसे ही वहीं छोड़कर भीतर चले गये। देवी-मन्दिर पहुँचकर हनुमानने स्वयं देवी का भयंकर रूप धारण किया। वह चामुण्डा-विग्रह तो उनके चरणों के दबावसे पाताल-प्रविष्ट हो गया और वे स्वयं उसके पीठपर स्थिर खड़े हो गये। मैया की मानसिक प्रार्थना की, हे देवी आज हनुमान की लाज रखनी होगी। आपके सिर चढ़ने की अशिष्टता, इस समय क्षमा करनी होगी। सीता रूपमें तुमने हीं शक्तिका वरदान मुझे दिया था। अति पावन मनभावन प्रसाद, श्रीरामभक्तिका मुझे दिया था। माता की जिसपर कृपादृष्टि हो सदा वह पुत्र निर्भीक खेलता है कभी गोद में चढ़ जाता है तो कभी शीश पर जा बैठता है। जगदम्बा ने भी पुत्र की आन रखी स्वयम् नीचे की ओर धँस गई और पुत्र को उच्च स्थान दिया।

आज चामुण्डा (महामायादेवी) बहुत प्रसन्न है। राक्षस अत्यन्त उत्साहमें थे। उन्होंने अर्चा करके जो भी नैवेद्य अर्पित किया, हनुमानने मुख खोलकर सब खा लिया। अब जितना भी मिष्ठान्न और पकवान देवी पर चढ़ता था देवी स्वरूप में वह देवा मुँह फाड़-फाड़कर खाता था। राक्षसोंने चमत्कार देखकर समझे देवी आज प्रकट हो गयीं और उन्मत्त होकर नृत्य करने लगे।

अयोध्या छोड़नेके पश्चात् आज प्रथम बार भली प्रकार श्रीराम-लक्ष्मणको अभ्यङ्ग लगाकर उष्णोदकसे राक्षसोंने स्नान कराया। उनकी अलकोंमें सुमन सजाये। शरीरमें सुगन्धित चन्दन लगाया। दोनों भाइयोंने केवल फलाहार स्वीकार किया, अन्यथा राक्षस तो स्वादिष्ट पक्वान्न प्रस्तुत कर रहे थे। अहिरावणने आज्ञा दे दी थी- कोई कटु वाक्य नहीं कहे। कोई बलप्रयोग मत करो। पुरुष-पशु भली प्रकार सत्कार योग्य होता है।

अहिरावण राम-लखन की ओर ठहाका मारकर हँसा और फिर ऐसे कठोर वचन बोला- तुम तो अब तक यहीं जानते हो कि हम तुम्हें देवी

की बलि देनेको लाये हैं लेकिन तुम्हें और भी बात बता दे किस हेतु तुम्हें हम लाए हैं। रावण से तुमने लड़ाई ठान लीं और अपना सिर बहुत उठाया हैं। अब यह तुम्हारा सिर देवीकी भेंट चढ़े इस हेतु हम तुम्हें उठाकर लायें है। यह तुम्हारा अभिमान ही तुमको आज भारी दण्ड दे रहा है। रावण से भिड़ने का बदला उसका पुत्र अहिरावण आज तुमसे ले रहा है। यह सुनकर लक्ष्मण के दोनों नेत्र क्रोध से लाल हो गये और कहा- अरे दुष्ट चुप हो जा। क्यों व्यर्थ में अपनी गाल बजा रहा हैं। सीतादेवीके कारण ही यह रण हम रावण से करते हैं। रावण से भी क्या उस दुष्ट चोर से लड़ते हैं। अब तो इस कथन से सिद्ध होता है कि तूने भी चोरी की है। तो चोरोंका साथी निश्चय ही उससे मिला है। जब तेरे मन में भाव ही दूसरा है तो यह कैसी देवी की आराधना है। तेरे हृदय में तो बदले की आग जल रही है। बलि प्रदान कर यह कैसा पूजन है। देवी माँ समझती हैं इस पूजा के भीतर छल है। जब छल है तो यह अहिरावण, तू असुर स्वयं निर्बल है। सीताके बलपर हमें पूरा विश्वास है। तू तो क्या कोई भी असुर हमें त्रास नहीं दे सकेगा। जो हाथ खाँडा (तलवार) उठायेगा वह हाथ अपने आप गल जायेगा। सीता के सत् की ज्वाला में हे पापी तू सदेह जल जाएगा। इस कारण तुझे बतलाता हूँ तू पतिव्रता का शाप न लें। रावण की नाई अहिरावण अपने माथे पर यह पाप न ले। यह ही अवसर हैं जाग और चेत अन्यथा बाद में बहुत पछताएगा। घर सहित, कुलसहित, सेनासहित, अतिशीघ्र नष्ट हो जाएगा। यह देवी, देवी मैया जिनका तू अर्जन पूजन करता है, जिनकी आड लें आज इस मन्दिर में हिंसा का अर्जन करता है। वे जान रहीं है और सब समझती है वे अन्याय नहीं कर सकती। सीता सी सती साध्वी का वे सौभाग्य कभी खण्डित नहीं कर सकती। इसलिए फिर से समझ लें यदि तेरी इच्छाएँ पाप कमाएँगी तो अभी यही देवी तुझपर रणचण्डी बनकर चढ़ आएँगी।

तब अहिरावण लक्ष्मण के वचन सुनकर अपने नेत्र क्रोध से लाल करके बोला- इस समय मुझे बडे-बूढोंकी बात याद आती है रस्सी तमाम जल जाती है पर उसकी ऐंठ नहीं जाती हैं। मरने को तैयार खडा है फिर भी अपनी ही हाँके जा रहा है। काल के मुँह में घिर चुका है फिर भी अपनी बकवाद सुनाता है। तू अपनी अकल दिखाए जा, पर मुझे तेरे मुँह नहीं लगना है। जो अभी यमपुर जानेवाला हैं न ही मुझे कोई संवाद करना है। बस इतना ही कह देता हूँ तुम दोनोंसे तुम्हारे मरने की घडी आ रही हैं। इस कारण देवी के सम्मुख यह पूछा जा रहा है तुम्हारी अन्तिम अभिलाषाएँ क्या है ?

अब जो तुम्हें प्रिय हो, तुम्हारी सहायता कर सके, उसका स्मरण कर लो। खिलाकर, इत्रादिसे पूजित करके दोनों भाइयोंको देवीके सम्मुख खड़े अहिरावणने खड्ग उठाया- अब तुम्हारी बलि दी जायगी।

आर्य। लक्ष्मणने अग्रजकी ओर देखा। उनके ये भाई भी अद्भुत हैं। वे संकेतसे भी अनुमति दे दें तो इन सब राक्षसोंको वे अपने हुंकारसे भस्म कर दे सकते हैं; किंतु वे तो बराबर शान्त रहनेका संकेत करते आ रहे हैं।

लक्ष्मण। मुझे तो पवनकुमार ही परम प्रिय हैं। श्रीरामने सहजभावसे कहा- तुम भी उन सबके विपत्ति- विदारक वायुपुत्रका स्मरण करो। हनुमंत के होते राघव को कोई सता सकता है ? यह रावण और अहिरावण तो क्या यम तक भी रामको नहीं डरा सकता है।

यहाँ पवनपुत्र ? लक्ष्मणने आश्चर्यसे पूछा। तुमने देवीके नेत्रोंको ध्यानसे देखा ? श्रीरामके अधरोंपर मन्द स्मित आया।

अहिरावण समझा देवी को अब देह नहीं स्वीकार है। मैया कुछ दु:खी सी हो रही हैं इसलिये देर करना अच्छा नहीं। बलि देनेका अवसर आ गया है। धन्य तुम्हारा यह शरीर जो देवी की बलि पर चढ़ रहा है। ऐसा अच्छा संयोग भला क्या कहीं सहज में मिल सकता है। अहिरावण बोला- यह हनुमंत कैसा हनुमंत। कपिदल में तो वह सोता है। तुम दोनों उसको रोते हो वह तुम दोनों को रोता है। अब भावना छोड़ दो सीताकी। उसका सत् यहाँ तक पहुँच नहीं पायेगा। अभी तुम्हारा सिर कटते ही सभी संस्मरणों का भी मरण हो जाएगा। तब देवी भली प्रकार अट्टहास कर उठीं और इधर राम-लखन भी ठहाका मारकर हँसने लगे।

अब तक अहिरावण शस्त्र-पूजन सम्पन्न कर चुका था। उसका खड्गवाला दाहिना हाथ ऊपर उठा। सहसा मानो वह सम्पूर्ण लोक फट जायेगा, ऐसी भयमर गर्जना गूँजी। हुं के विश्वभेदी घोषके साथ हनुमान प्रकट हो गये। अहिरावणके हाथका खड्ग छीन लिया उन्होंने और उसीसे उस मायावी राक्षसका मस्तक उड़ा दिया। कुछ क्षण लगे, वहाँ के सब राक्षसोंके छिन्न-सिर शव बिछ गये। रक्तके प्रवाहसे पूरी पुरी पिच्छल हो गयी। हनुमान प्रभु श्रीरामसे बोले रावण न सहीं हे भगवान अहिरावण को तो मेरे इन हाथोंद्वारा मरने दो। जब अचानक यह बाना बन ही गया है तो इस जन को अपने मनका करने दो। अहिरावण का संहार हुआ और अहिरावण प्रभुधाम पहुँच गया। पौराणिक जगत जानता है यह बजरंगी रुद्रावतार है। इस बजरंगी के चोले में मानो स्वयं रुद्र ही है।

यह कौन है ? अहिरावणकी पुरीमें केवल स्त्रियाँ बच गयी थीं जब हनुमान श्रीराम-लक्ष्मण को अपने दोनों कन्धोंपर उठाकर वहाँसे

चले। द्वारके समीप अपनी ही पूँछमें बँधे मकरध्वज को देखकर श्रीरामने पूछा।

यह मुझे प्रवेश नहीं करने दे रहा था। हनुमानने झुककर उसे खोल दिया- अत: मैं इसे बाँधता गया था।

यह तो तुम्हारा पुत्र लगता है। स्नेहपूर्वक श्रीरामने मकरध्वजकी ओर देखा। पवनकुमारने संकोचसे सिर झुका लिया। उसने दोनों भाइयों-को तथा हनुमानको भी प्रणाम किया। उनकी प्रदक्षिणा की।

वत्स। अब तुम इस पुरीके अधीश्वर हुए। समीप बुलाकर श्रीरामने उसके मस्तकपर हाथ रखा- आसुर भाव मत अपनाना। अपने इन पिताके समान शरणागतोंके रक्षक रहो।

लंकाकी समर-भूमि ब्रह्ममूहूर्तसे पूर्व ही जयघोषसे गूँजने लगी। पवनपुत्र वहाँ दोनों भाइयोंको लेकर पहुँच चुके थे। अब नवजीवन पाकर भालू कपि नाच उठें जहाँ अकस्मात दु:खकी काली रात आयी थीं वहाँ अब सुखका स्वच्छ प्रभा उदय हुआ।

यहाँ रावण ने जब अहिरावण का वृत्तान्त सुना तब दशानन का मस्तिष्क घूम गया और चित्त अशान्त हुआ। तब लंकेश्वर ने अपने पुत्र नरान्तक को सैन्यसहित बुलाया और रणके लिये उद्यत कर उसे भेज दिया।

२०) श्रीराम की शक्ति पूजा- अनेक बार मन कोई निमित्त पकड़ता है। श्रीरामने अहिरावणकी पाताल नगरीसे समर भूमिमें आते ही कहा- लक्ष्मण। मेघनाद मरनेसे पूर्व यज्ञ करके श्मशान-कालिकाको सन्तुष्ट करनेका प्रयत्न कर रहा था। अहिरावण चामुण्डाकी अर्चना-चेष्टामें लगा था। दोनोंकी उपासना अधूरी रह गयी, यह दूसरी बात है; किंतु उनकी उपासना शक्तिदात्री है, यह तो हम भी स्वीकार करते ही हैं। तब शत्रु-संहारके लिए हमको भी उन महाशक्तिकी शरण लेना चाहिये।

लक्ष्मणने अग्रजकी ओर देखा। उनके ये लीलामय अग्रज कब क्या करना चाहते है- किसीके लिए भी समझ लेना सम्भव नहीं है; किंतु लक्ष्मणको चामुण्डा, श्मशान-चण्डिका, उग्रतारा, छिन्नमस्ता प्रभृति शक्तिके राजस-तामस रूपों से सहज विरक्ति है। वे बोले नहीं।

महाशक्ति सर्वेश्वरी, सर्वसञ्चालिका हैं; किंतु सृष्टिके सञ्चालनके लिए उन्होंने गुणोंका आश्रयण करके अनेक रूप धारण किया है। उनके नवदुर्गारूप हों या दस महाविद्यारूप, एक ही महाशक्तिके रूप हैं। श्रीरामने अनुज की विरक्ति देखकर समझाया- जैसे प्रकृतिमें तमोगुणसे रजोगुण तथा रजोगुणसे सत्त्वगुण बलवान है; किंतु आवेश, उत्पात, आरम्भिक उग्रता तमस एव रजोगुणमें अधिक है, उसी प्रकार शक्तिके राजस-तामस उग्ररूप प्रचण्ड हैं। उनका प्रभाव अत्यन्त प्रबल है। फिर भी सात्त्विक रूप शान्त होते हुए भी अन्तत: उनको प्रशमित करने में समर्थ हैं।

दैत्य, दानव, राक्षस अपनी राजस-तामस प्रकृतिके अनुसार कालिकुलका आश्रयण करते हैं। अब श्रीराम ने स्पष्ट किया- हम वैसा नहीं कर सकते। उग्ररूपों को सन्तुष्ट करने के लिए जो कुछ अनिवार्य है, वह हमें इष्ट नहीं है। हम गौरीकुलका आश्रय करेंगे।

त्रिपुरसुन्दरी भगवती ललिता ? लक्ष्मणमें अब उत्साह आया- अथवा उनका शीघ्र सन्तुष्ट होनेवाला स्वरूप त्रिभुपरभैरवी ?

वे आद्या सर्वाराध्या है। श्रीरामने मस्तक झुकाया- इस समय हम संग्राममें अत्यन्त दुर्बल शत्रुका शमन चाहते हैं, अत: उनकी सिंहवाहिनी, दशभुजा महाशक्ति दुर्गाका स्तवन करेंगे।

श्रीरामको पूजा-सामग्री अपेक्षित थी ? वे दयामयी कहाँ सामग्री-सम्भार देखती हैं। उनकी अर्चा-सामग्री अन्त:करणमें भक्ति जितनी उत्तम होती है, बाह्य सामग्री उतनी श्रेष्ठ कैसे एकत्र की जा सकती है। श्रीरामने उन दशभुजाका उपस्थान किया।

अभी अरुणोदय हुआ नहीं था; किंतु श्रीरामके स्तवन करते ही दिशाएँ आलोकसे उज्वल हो उठीं। गगनमें श्रीरामसे किञ्चित् दक्षिण होकर वे सिंहवाहिनी सायुधाभरणा, रक्तवसना, त्रिनेत्रा, चन्द्रकिरीटिनी प्रकट हो गयीं। उनका शतसहस्र सूर्योपम महातेज, वानरोंने ही नहीं, लक्ष्मणने भी नेत्र बन्द कर लिए दोनों करोंसे। असम्भव था उनकी ओर देख पाना।

स्वर्णसटा केशा, करालदंष्ट्रा केशरी शान्त, स्निग्ध लोचनोंसे देख रही थीं। वे अभयकरा, वरदहस्ता, सुप्रसन्ना- श्रीरामने अञ्जलि बाँधकर अवनिमें ही मस्तक रखा। खड़े होकर उन अरुण-मृदुल पादपद्योंमें मानसिक पुष्पाञ्जलि अर्पित की।

परावाणीको कृतार्थ होनेका अवसर कब आता ? श्रीराम स्तवन करने लगे। लगा निखिल ब्रह्माण्डोंका कण-कण उनके स्तवन-स्वरसे ध्वनित हो रहा है। देवता, ऋषि, गन्धर्वादि प्रत्यक्ष दीखे गगनमें महाशक्तिके चारों ओर उसी स्तुतिके स्वरों का साथ देते।

ब्रह्मा ने राम से कहा- आप असमय बोधन कर देवी महेश्वरीका पूजन करें। श्रीराम बोले- बसन्त ही एकमात्र शुद्ध समय है, इस पूजा

के लिये शरद् असमय है। और उसके लिए कृष्णा नवमी का दिन ठीक है। चण्डी पाठ करने के उपरान्त राम ने उत्सव किया। गीत-गाायन और नाटक प्रदर्शन हुआ। सारे वधु जयध्वनि कर प्रेमानन्द से नाचने लगे और देवी का गुण गाने लगे। चंडी की आराधना में दिवाकर अस्त हो गया। सन्ध्या सम रामने बोधन किया। स्नान करने के बाद प्रभु ने पूजन आरम्भ किया। और वेदोक्त विधि से उन्होंने पूजा समाप्त की शुद्ध और सात्विक ढंग से पूजा हुई। देवी की पूजा अशोक, कांचन, अड़हुल, मल्लिका, मालती, पलाश, पाटली, मौलश्री और गन्धराज आदि विभिन्न प्रकार के वनपुष्प, थलकमल, कदम्ब, पारूल, लाल पंखुड़ियाँ वाले शतदल, कुमुद, कल्हार, नल, आँवले की पत्ती, पारिजात, हरसिंगार, करवी, कनक-चम्पा, सहस्त्र पत्र वाला कोकनद, अतसी, अपराजिता (जिससे दुर्गा प्रसन्न होती हैं), झम्पक, माधवी, चाँदनी, तुलसी, अलसी, धातकी, भूचम्पक, केतकी, पद्मवक्र और कृष्णकलि। सोन-जूही, हरसिंगार, कुर्ची, गुलाब पुष्प, मनोहर कृष्णचूड़ा आदि पुष्पों का ढेर से अर्चना की। वानरों ने अनोखे वनफलों के द्वारा नैवेद्य का आयोजन किया।

राम परम आनन्द से शंकरी की पूजा करते हैं। सात्विक भाव से विधान आदि के अनुसार, तंत्र-मंत्र-मत से रघुनाथ पूजा करने लगे। श्रीराम को लगा कि दुर्गा मुझपर प्रसन्न नहीं हुई। उन्होंने महेश्वरी को नहीं देखा। देवी ने मुझसे वंचना की, करुणामय प्रभु के नयनों से अश्रुधारा गिरने लगी, हृदय शोक पूर्ण हो गया और वे रुदन करने लगे।

तब विभीषण ने कहा, हे प्रभु, निस्तार के लिए चण्डी को तुष्ट करने के लिए १०८ नीलकमल से उनका अर्चन करें। यह देव-दुर्लभ पुष्प हर कहीं नहीं मिलता। इससे भगवती तुष्ट होगी। तब हनुमान ने कहा- हे भगवन्, आप चिन्ता न करें, निश्चिन्त रहे। अगर नीलकमल कहीं भी हुआ तो मैं स्वर्ग, मर्त्य-पाताल तीनों लोकों घुमकर १०८ नीलकमल ला दूँगा।

हनुमान को कमल लाने भेजकर श्रीराम देवी चंडिका की स्तुति करने लगे। हे दु:ख हरनेवाली दुर्गे, तुम दुर्गतिनाशिनी तारा हो, तुम दुर्गम विन्धय-गिरि की निवासिनी हो, तुम दुराराध्या, ध्यानसाध्या सनातनी शक्ति हो, तुम परात्परा परमा प्रकृति पुरातनी हो। तुम नीलकंठ-प्रिया, निराकारा नारायणी हो, तुम सारात्सारा मूलशक्ति सच्चिदा साकारा हो। तुम महिष-मर्दिनी, महामाया महोदरी हो, तुम शिव-सीमन्तिनी श्यामा, शर्वाणी, शंकरी हो। तुम विरूपाक्षी, शताक्षी, शारदा शाकम्भरी हो, तुम भ्रामरी, भवानी, भीमा, धूमा, क्षेमंकरी हो। तुम कालहरा काली हो, तुम कालाकाल को पार करती हो। तुम कुल-कुंडलिनी हो और कातर व्यक्ति का निस्तार करती हो। तुम लम्बोदरा, दिगम्बरा, कलुषनासिनी हो, तुम कृतान्त-दलनी, काल-उरू-विलासिनी हो। जब श्रीहरि ने इस प्रकार बहुत स्तुति की तो देवेश्वरी हैमवती देवी तुष्ट हो गईं। किन्तु नील-कमलों की आशा में अदृश्य बनी रहीं। राम के नयन-कमल आँसुओं से भरे रहे।

वीर हनुमान १०८ नीलकमल देवीदह से लेकर श्रीराम के पास पहुँचे। नीलकमल पाकर राम अत्यन्त आनन्दित हुआ और देवी के सम्मुख विचित्र चित्र का समावेश हुआ। राम ने कमल अर्ध्य देने का संकल्प किया।

पुलकित चित्त से विधान के अनुसार मूल-मंत्र का उच्चारण करते हुए श्रीराम सहस्त्र-दल वाले नील-कमल शकरी के चरणों में सौंपने लगे। शंकर-प्रिया देवी ने परीक्षा लेने के लिए छल किया और परात्परा महेश्वरी ने उनका एक कमल चुरा लिया। धीरे-धीरे जगत् के गुसाँई राघव राम ने सारे कमल चढ़ा दिये। अन्त में देखा गया कि एक कमल नहीं मिला- कम पड़ रहा है। चित्त चकित हो उठा और वे विस्मित हो गये। संकल्प-भंग का भय भी उपजा। सनातन ब्रह्म ने हनुमान से कहा, हे पवनतनय यह कैसी बात है। विधान की रचना कर, एक सौ आठ कमलों का संकल्प किया पर अब देखता हूँ कि उसमें एक कमल नहीं है, यह तो बड़ी अड़चन आ गई।

तब श्रीराम ने स्तुति की, हे शर्वाणि, ईशानि इन्द्राणि, ईश्वरि, ईश्वर-जााय नमस्ते। तुम अपर्णा, अभया, अन्नपूर्णा, जया, महेश्वरी और महामाया हो। हे उमे। तुम उग्रचंडा, आशुतोषिन, धूमा, अपराजिता, उर्वशी हो। तुम राज-राजेश्वरी हो, तुम रमा, रणकरी, शंकरी, शिवा, षोडशी हो। तुम मातंगी, बगला, कल्याणी, कमला हो, तुम भवानी भुवनेश्वरी हो। तुम सर्व-विश्वोदरी, शुभा-शुभंकरी हो, तुम क्षिति-क्षेत्र-क्षेमंकरी हो। तुम सहस्त्र-सुहस्ता, भीमा, छिन्नमस्ता हो, हे माता तुम महिषमर्दिनी हो। तुम निस्तार-कारिणी नरक-वारिणी, शुम्भ-निशुम्भ-घातिनी हो। तुम दैत्य-निकृन्तिनी, शिव-सीमन्तिनी, शैलसुता, सुवदनी हो। तुम विरिंच-वन्दिनी, दुष्ट-निष्कन्दिनी, दिगम्बर की धरणी हो। तुम देवी दिगम्बरी दुर्गे, दुर्ग-अरि, कालिके, कराल-वेशी हो। तुम शिवे, शवारूढ़ा, चंडी, चन्द्रचूड़ा, घोररूपा, एलोकेशी हो। तुम सर्व-सुशोभिनी, त्रैलोक्य-मोहिनी, लोल रसना हो। तुम दिग्-विवसना, सर्व-शवासना, विकट दशना विश्वा हो। तुम शारदा, वरदा, शुभदा, सुखदा, अन्नदा, मोक्षदा, श्यामा हो। तुम मृगेश-वाहिनी, महेश-मोहिनी, सुरेश-वन्दिता वामा हो। तुम कामाख्या, रुद्राणी, हरा, हररानी, हर-रमा, कात्यायनी हो। तुम शमन-त्रासिनी, अरिष्ट-नाशिनी, दयामी दाक्षायणी हो।

हे माँ दुर्गा, मैं बड़ा दीन हूँ, बड़ी विपत्ति में पड़ा हूँ। कमल-पत्र पर जल की नाईं भय से भीत सदा चंचल हूँ। मेरी विपत्ति में तुमको मुझे और विडम्बित नहीं करना चाहिए। हे अभया, मुझपर दया करो और मुझे भव-सागर से तार दो।

राम कातर होकर देवी के चरणों में प्रार्थना कर रहे हैं और उनका हृदय विह्वल और रोमांचित है, नयन आँसुओं से भरे है। स्तुति वाक्य कह रहे है- हे काली, मेरे दुस्समय में जरा कृपादृष्टि से देखो। हे परात्परा, सारात्सारा, विपत्ति-छेदिनी, तुम महामाया के रूप में त्रिभुवन पर छायी हुई हो। तुम कर्म हो और कर्म का मूल कारण भी हो। तुम कीर्ति, वृत्ति, दया, लज्जा और निवृत्ति भी हो। तुम सर्वमयी, सर्वात्मा, सर्वशक्तिमयी हो। तुम्हीं में संसार-अनुरागी सारे जीव आश्रित हैं। तुम्हीं सृष्टि-स्थिति-प्रलय की कारण हो। सजीव, अजीव, व्याप्ति स्वर्ग सुरभूमि में है। हे माँ, तुम्हीं सब कुछ शुभाशुभ करती हो। तुम्हीं मनुष्यों को सम्पदा, विपदा, धर्म, अधर्म के अनुगत बनाती हो। तुम्हीं कर्माकर्म तथा भोग-मोक्ष प्रदायिनी हो। तुम्हीं स्त्री-पुरुष-नपुंसक सभी जीवों की सहायिका हो। हे योगमाया, योग के द्वारा तुम्हीं मुझे भूतल पर लाईं और आज विडम्बित कर शोक के आँसुओं में तुमने मुझे डुबो दिया। चिन्तामणि नाम वाली होकर भी तुमने मुझे चिन्ता समर्पित कर दी। तुम कर्म की योजना की प्रयोजिका हो। तुम सर्वभूत में, सर्वरूप में शरीर को भिन्न (अनेकरूप) करती हो। तुम शक्तिमयी सर्वाधारा हो, कोई भी विच्छिन्न नहीं। इन्द्रजाल के समान यह संसार तुम्हारी माया है। तुम्हारा यह नाटक कठपुतलियों जैसा है। तुम किसी को राजा तो किसी को उसका मंत्री, किसी को कोई गज पर सवारी करनेवाला तो किसी को उस गज का रखवाला बना देती हो। कोई दीर्घजीवी तो किसी को स्वल्पायु बना देती हो। किसी के सिर पर छत्र धरती हो तो किसी के सिर पर गाज गिराती हो। किसी को पालकी की सवारी करने वाला तो किसी को उसे ढोने वाला बना देती हो। कोई सुखी और महायोगी है तो कोई बड़े कष्ट से रहता है। किसी के स्वर्णपात्र में पचास पकवान होते हैं तो किसी को अन्न ही नहीं मिलता, भीख माँगकर भोजन प्राप्त होता है। कोई रोगी, है तो, कोई गुस्सैल और बलवान, कोई साधू है तो कोई चोर, कोई धार्मिक है तो कोई अधार्मिक। इसी प्रकार माँ तुम संसार का स्थापन किये हुई हो। मुझको तुमने केवल दु:ख ही भोगने का पात्र बनाया है। मुझको तुमने त्रिभुवन में दु:ख-क्लेश में रखा है। माँ, तुमसे निवेदन है कि अधिक दु:ख मत दो। सुख-भांड थोड़ा हुआ और उसमें दु:ख भारी हो गया।

हे माँ, क्या बताऊँ जन्म से ही दु:ख सह रहा हूँ, फिर भी तुम दु:ख देती ही जा रही हो, तुमको दया नहीं आती। क्लेश से मेरा शरीर अवसाद-पूर्ण है, हे तारिणी सुनो, हे दामयी पतितोद्धारिणी, दया करो। माँ जरा सोच-विचार कर देख लो कितने ही कष्ट तुम देती रहीं। राज्य से हटाकर तुम मुझे जंगल में ले आईं, जंगल में लाकर भी तुमने क्षमा नहीं किया। रावण से जानकी का हरण कराया। कितने ही कष्ट से कपियों को लेकर मैंने सेना बनाई, शिला और वृक्षों से सेतु बनाकर समुद्र पार किया। सीता के उद्धार के लिए मैं तत्पर हुआ, राक्षसों का मैंने विनाश किया, केवल लंकेश्वर रावण बचा है। हे हर की अँगना, मैंने कष्ट से युद्ध किया फिर भी तुम स्वयं मेरी वंचना कर रही हो। अकाल-बोधन द्वारा मैंने तुम्हारी अर्चना की फिर भी मेरी आराधना से तुमने कृपा नहीं की। अन्त में श्यामा के चरणों की पूजा एक सौ आठ नील-कमलों से करूँगा। ऐसा संकल्प किया। उसमें भी हे मोहिनी, तुमने कृपणता की, हे हर-रानी (शंकर प्रिया) तुमने मेरे संकल्पित एक नीलकमल का हरण कर लिया। मैं दीन-हीन हूँ और बड़ा ही अभागा हूँ। हे माँ, कृपाकोर से दृष्टिपात कर मेरी मनोकामना पूर्ण करो, इस विफल जीवन में अब और यातना नहीं सही जाती।

इस प्रकार रामचन्द्र ने विनय किया फिर भी तारा ने दर्शन नहीं दिया। श्रीरघुनाथ रोकर व्याकुल हो उठे, उनके गालों से आँसू ढरकने लगे। लक्ष्मण, वीर हनुमान, सुग्रीव, सुषेण, विभीषण और जाम्बवान रोने लगे। श्रीराम ने कहा, तुम लोग अब देखते क्या हो, सीता का उद्धार अब नहीं होगा यह मैंने निश्चय रूप से जान लिया। हे मित्र सुग्रीव, अपने गणों को तुम ले जाओ। व्यर्थ रोते क्यों हो, व्यर्थ ही मुँह ताकते हो। विभीषण को अयोध्या क्षेत्र में राज्य दूँगा। अपने सत्य का पालन करते हुए उसे यत्न से रखूँगा और मैं समुद्र में कूद पड़ूँगा, इतना कहकर राम शोकपूर्ण हृदय से रोने लगे। सभी लोग व्याकुल होकर राम को समझाने लगे।

सिर पर हाथ मार कर विलाप करते रहे कि मेरे भाग्य में केवल निराशा ही निराशा है। सोचते-सोचते राम की समझ में आया कि लोग मुझको नील-कमलाक्ष कहा करते हैं। मेरे दोनों नयन खिले हुए नीलोत्पल के समान हैं। आज मैं अपना संकल्प पूरा करूँगा। एक आँख मैं देवी के चरणों में अर्पित करूँगा। इतना कहकर राम ने अनुज लक्ष्मण से कहा, अब क्या देखते हो भाई, अब करूँ भी तो क्या। दुर्गा की कृपा नहीं हुई, जीवन ही विफल है। मुझको सब लोग कमल-लोचन कहा करते हैं, मैं संकल्प पूरा करने में एक आँख भेंट चढ़ाऊँगा।

इतना कहकर उन्होंने तूण से बाण निकाला और आँख प्रदान करने के लिए उसे निकालने को उद्यत हुए। रोते हुए राम स्तुति करते

रहे, यह देख कर देवी को दुख हुआ। जब राम आँख निकालने के लिए उद्यत हुए तो कात्यायनी ने उनका हाथ पकड़ लिया और बोलीं, जगत्-गुसाईं, प्रभु क्या करते हो, तुम्हारा संकल्प पूरा हो गया, मुझको आँख नहीं चाहिए।

तब श्रीराम ने कातर-भाव से दोनों आँखों से लगातार आँसू ढरकाते हुए देवी से कहा, माँ तुमने असमय देखकर खूब क्लेश दिया लेकिन जननी के लिए ऐसा उचित नहीं है। सारे शास्त्रों में पुत्र के प्रति माता के स्नेह के बारे में गाया जाता है किन्तु मेरे लिए तुम मीन या भुजंग की माता जैसी हो। जानकी-उद्धार में माँ मैं बड़ी विपत्ति में पड़ गया हूँ, रावण-संहार में माँ तुम अपनी सम्मति दो। जो कुछ किया सो अच्छा किया, अब तो कृपादृष्टि डालो, मरे के ऊपर अस्त्र चलाकर तुम व्यर्थ दुख बढ़ाती हो। अब तुम्हारा ही भरोसा है, अब मुझे निराश मत करो। मुझको बड़ी आशा है, तुम मुझको आश्वासन दो। हे काल-निवारिणी काली, तुम काल की मोहिनी हो, तुम प्रकृति, परमेश्वरी, परमशोभिनी हो। भोजन के बिना मेरा शरीर जीण-शीर्ण है।

श्रीराम के वचन सुनकर, विषाद तज हर्षित होकर कात्यायनी ने स्तुति वाक्य से कहा, हे प्रभु दयामय सुनो, इस सम्पूर्ण अखिल ब्रह्माण्ड के तुम पति हो- तुम सनातन-ब्रह्म हो। तुम अखंड काल के समान आदि-भगवान हो, तुम्हारे रोएँ-रोएँ में अनन्त विश्व छिपे हैं। तुम ही चराचर की गति हो, तुम अच्युत अव्यय हो, तुम परमाणु के रूप में व्यापकता हो। तुम माया से मनुष्य हो, चतुर्व्यूह धारण कर भूमि पर दुराचारी राक्षस का वध करने आए हो। तुम भव के भाव्य (शिव के आराध्य) प्रभु हो, तुम कब किस ढंग से रहते हो, तुम्हारा यह शुद्धतत्व कौन जान सकता है। तुम्हारी जानकी परमा प्रकृति है, रावण की क्या सामर्थ्य कि उसका हरण करे। तुम सीता-हरण के बहाने समुद्र पर सेतु बाँधकर राक्षस के विनाश हेतु आए हो। मन में सोचकर देखो, वैकुंठ में रावण तुम्हारे द्वार का द्वारपाल था। ब्रह्म-शाप से वह पृथ्वी पर आया और तुमको शत्रु-रूप में पा गया, तभी पभु तुम धरती पर आये हो। तुमने असमय बोधन कर दशभुजा की पूजा की और समस्त विधि के अनुसार उसका विन्यास किया। मुझको धन्य कने के लिए और लोगों में प्रचारित करने के लिए धरती पर तुमने यह प्रकट किया। अब मैं रावण को छोड़कर जाती हूँ, अब तुम उसका विनाश करो, इतना कहकर वह अन्तर्धान हो गई।

अभयमस्तु। समरविजयी भव। उन आद्याका दक्षिण कर उठा। उनके अकल्पनीय मधुर, स्नेह-स्निग्ध स्वरसे दिशाएँ झूम उठीं। उनके करके चन्द्रोज्वल कङ्कणकी किरणोंमें करतलकी अरुणिमाका राग-श्रीराम, सम्पूर्ण वानर-सेना-स्नान कर गयीं। वे निखिल ब्रह्माण्ड- विधायिका, विश्वविनोदिनी बोलीं- तुमको इस स्तवनकी आवश्यकता थी ? तुम्हारा संकल्प- वही तो घनीभूत होकर यह शक्ति-स्वरूप ग्रहण करता है। लेकिन तुम मर्यादापुरुषोत्तम अपनी मर्यादासे महिमान्वित करते हो, विश्वके लिए एक परम्परा बनाते हो और स्वयं अपनी परम्पराका पालन करते हो।

अच्युत। अविनाशी। अद्वय। तुम नित्यविजयी हो। नेत्र बन्द किये लक्ष्मणके अधरों पर स्मित आया। ये आद्या उनके अग्रजकी स्तुति कर रही हैं या अग्रज उनके उपस्थानमें लगे हैं ? लेकिन वे आद्या ही कह रही थीं- यह दुर्जय दशग्रीव तो तुम्हारा अपना जन है। तुम अपने करोंसे इसका यह रूप मिटा दो। तुम्हारे अपने जनोंका- वे कहीं किसी रूपमें हों, दूसरा कोई भी पराभव नहीं कर सकता। दूसरेमें इतनी शक्ति कभी नहीं आयेगी कि वह तुम्हारे आश्रितोंको पराजित कर सके।

अवनत-सिर श्रीराम स्तवन कर रहे थे। साश्रुलोचन, पुलकित तन, गद्गद स्वर-एकाग्रमना श्रीरामकी परावाणी सृष्टिके अणु-अणुको श्रद्धाका पुनीत उपहार दे रही थी। वे ही तो अनादिकालसे प्राणियों के पथ-प्रदर्शक हैं। वही तो अन्धकारमें भटकते जीवोंके लिए आलोक बनकर आते हैं। उनकी यह उपासना, उनकी यह स्तुति- विश्वके भ्रान्त जन ही न सीख सकें तो वे क्या करें। अनुजके, समस्त वानरोंके सम्मुख वे जो महाशक्तिका स्तवन कर रहे थे।

महाशक्ति कह रही थीं- दशग्रीव तृण के समान भस्म हो सकता है किसी भी वानर के द्वारा यदि तुम दृष्टि उठाकर ऐसा संकल्प करो। लेकिन तुम्हें समर-विजयकी परिपाटी स्थापित करनी है। उस अपने अभिनयलीन दर्पदर्शीका उद्धार करना है तो कर दो। तुम सर्वसमर्थ- मुझसे समर्थन कराना है ? समर-विजय करो।

वे आद्या अदृश्य हो गयी। अदृश्य हो गया उनका वाहन। अदृश्य हो गये उनका स्तवन करते सुर, ऋषि, मुनि, गन्धर्वादि; किंतु दिशाओंमें व्याप्त उनकी असह्य अङ्गकान्ति आलोक धीरे-धीरे अदृश्य हुआ।

लक्ष्मणने, वानरोंने दृष्टि खोली। उनको लगा, जो दिव्य असह्य तेज उन भगवती आद्याके श्रीविग्रह में था, वह श्रीराम के शरीरमें पुञ्जीभूत हो गया है। आज इन इन्दीवरसुन्दर की ओर देखना कठिन हो रहा था। इनका सहस्र-सहस्त्र ज्योत्स्ना- मधुर श्रीअङ्ग आज

दुरासद दुर्धर्ष तेज-समन्वित हो रहा था।

अब भी गगनसे अदृश्य आशीर्वादकी वर्षा होती लगती थी। अब भी जैसे श्रवण सुन रहे हों- समरविजयी भव। सबका हृदय प्रफुल्ल था। सब अत्यन्त उल्लासपूर्ण थे। सबके मनपर छायी युद्धकी विभीषीका जैसे सर्वथा तिरोहित हो चुकी थी। युद्धारम्भसे पूर्व जो उत्साह था, वह जैसे द्विगुण हो उठा।

वहीं जमे, सूखे, काले पड़ गये रक्तसे क्लिन्न समर-भूमि, वही छिन्नायुध, भग्न रथोंसे पटी पृथ्वी। दशग्रीवके अनुचरोंने रात्रिमें राक्षसोंके शव, शरीरसे कटे अङ्ग समेटकर समुद्रमें फेंक दिये थे सदाके समान। अपने अश्वों, गजों, गर्दभों, खच्चरोंके शव भी फेंक दिये थे; किंतु अब भी युद्ध-भूमि आयुधोंसे, आयुधोंके खण्डोंसे, भग्नरथोंसे, मृत या आहत वीरों तथा गज या अश्वोंके आभूषणोंसे, कवच, ढाल आदि उपकरणोंसे पटी पड़ी थी। उसमें चलना-दौड़ना अत्यन्त कठिन था।

सम्मुख लंकाका वही दुर्धर्ष दुर्ग। दशग्रीवके स्थापत्य-निपुणोंने दिनकी भग्न परिखाको रात्रि में सदृढ़ा कर दिया था प्रतिदिनके समान। सबसे बड़ी बात- अभी भी त्रिभुवनजयी दशग्रीव जीवित था। अब भी उसके समीप लंकाके चुने शूरोंकी अपार शक्तिशाली राक्षससेना थी। सब था; किंतु वानरों के हृदयसे आतंक विदा हो गया था। अब उन्हें लंका और लंकापति तृण-तुच्छ प्रतीत होने लगा था। उनके जयघोष-से गगन गूंजा- अमित विक्रम श्रीरामकी जय। परम पराक्रमी लक्ष्मणकी जय।

२१) सीताका अशोकवाटिका में क्रन्दन- अभाग्य मेरा कभी पीछा नहीं छोड़ेगा सखि। मैं जहाँ जाती हूँ, दुर्दैव वहीं विपत्ति और विनाश बुला लेता है। श्रीवैदेही अत्यन्त दु:खित हो विभीषण पत्नी सरमासे कह रही थीं- मेरे कारण पिताकी पुरीपर शत्रुओंने घेरा डाला और सब नगरजनोंको वर्षभर अत्यन्त विषम स्थितिमें रहना पड़ा। वे घेरा डालनेवाले राजा और राजकुमार मेरे कारण ही मारे गये अथवा आहत, अपमानित होकर भागे।

मैं अयोध्या आयी तो आर्यपुत्रको राज्याभिषेकके दिन वनमें आना पड़ा। साक्षात् श्री, शारदा और उमाके समान मेरी स्नेहमयी सासुएँ विधवा हो गयीं। सम्पूर्ण अयोध्याके नागरिक अब भी आर्यपुत्रके वियोगदावानलमें दग्ध हो रहे हैं। अपने उन संकोचशील आर्यपुत्रकी दूसरी मूर्ति बड़े देवरके व्रत-तपकी बात सुनी है मैंने। उनके सुखके दिन थे और अभी से उन्हें मुनि-मन-अगम्य तपमें लगना पड़ा है।

मैं मर क्यों नहीं गयी। आर्यपुत्रके जिन चरणोंको मैं अत्यन्त संकोचसे संवाहन करती थी, उनके उस परम सुकुमार श्रीविग्रहको आज यहाँ शत्रुके शरोंसे जर्जर होना पड़ता है। श्रीजानकीके मनकी व्याकुलता अनुमानसे परे है- मेरे प्रतप्त स्वर्ण-गौर देवर लक्ष्मण, इतने सेवाशील, इतने संकोची, वे स्नेह पाने योग्य, किंतु आज उन्हें बार-बार शत्रुके प्रहार इस अभागिनीके कारण मरणासन्न करते रहते हैं।

वह असीम पराक्रमी वानर आया था। उसके अम्बा सम्बोधनने मुझे पुत्रवती बना दिया; किंतु इस दग्ध-कपालाने उसे क्या दिया ? इसके कारण उसे बाँधा गया, राक्षसोंने अपमानित किया और अग्निकी लपटोंमें वह दौड़ता-कूदता फिरा। आज वह और उसके ही साथी असंख्य वानर बेचारे अपना घर-द्वार, पुत्र-परिवार त्यागकर समुद्रके पार इस राक्षसपुरीमें पड़े हैं। राक्षसोंके द्वारा मारे जा रहे हैं।

देवि। सृष्टिमें सदा दुर्लभ रत्नके लिए संघर्ष होता आया है। यह संघर्ष तो अन्यायको, अधर्मको मिटाकर धर्मकी स्थापनाके लिए आपके आराध्य कर रहे हैं। सरमा बार-बार हाथ जोड़ती है, समझाती है- आप जैसा महारत्न सृष्टिने दूसरा नहीं पाया। आपका यह तप विश्वको परम वरदान है। इससे सुरोंका, सत्पुरुषोंका संकट सदाके लिए समाप्त होने जा रहा है। संसारकी शान्ति सुरक्षित होने जा रही है। श्रीरामका यह अद्भुत शौर्य सम्पन्न करके संसारके प्राणी सदा पवित्र होंगे। आप उनकी यशोध्वजा हो। आपके कारण उनका सुयज्ञ समुज्वल हुआ है।

मैं रत्न हूँ सखि ? तू कहती है तो रत्न ही हूँ, अन्यथा ऐसी पाषणी कैसी होती। इतना दु:ख कैसे सह पाती। लेकिन इतना अमांगल्य अशुभ रत्न विश्वमें कभी नहीं हुआ होगा। जहाँ जाती हूँ, वहीं विपत्तिके मेघ घिर आते हैं। मैं पञ्चवटी पहुँची तो जनस्थान उजाड़ हो गया। यहाँ लमा आकर मैंने सुना कि खरदूषण कुल ही समाप्त हो गया।

आप जैसी दयामयी ही शत्रुकी विपत्तिमें भी दु:खी हो सकती हैं। सरमाने झुककर चरणरज ले ली- अन्यथा यह तो ऐसी घटना है कि सुर अब तक स्मरण करके आनन्द-विभोर होते हैं। ऋषि, मुनि, तापस, सत्पुरुष सबके लिए जनस्थान अगम्य हो गया था। दारुण-राक्षस तपस्वी, शान्त प्राणिमात्रके सुहृद सत्पुरुषोंको अकारण उत्पीड़ित करके आनन्द मनाते थे। उन्हें आहार बना लेते थे। वे हँसते

थे यह एक कंकाल प्राय मुनि मिल गया था आज।

सरमा कैसे समझे कि जो जगज्जननी जगदम्बा हैं, उनकी करुणा अपने अधमतम कुपुत्रके लिए भी आकुल होती है। वह कहती गयी- सर्प, वृश्चिम, दंश-मस्तक, व्याघ्र-भेड़ियोंको स्वातन्त्र्य प्राप्त हो जाय तो सृष्टिमें कोई प्राणी सुरक्षित रहेगा ? इनका शमन, इनका संहार तो आवश्यक है, यह तो सत्कार्य है। निर्बल, निरीह, निर्दोष प्राणियोंको समर्थ ही सुरक्षा प्रदान नहीं करेंगे तो कौन करेगा ? आपके परम समर्थ आराध्य ने सृष्टिके संतप्त प्राणियोंको दारुण राक्षसोंसे अभय देनेके लिए धनुष उठाया है। उनके असह्य, अकल्पनीय पराक्रमसे यह सुर-साधु-सुरक्षाका कार्य पूर्ण हो रहा है। अवशिष्ट भी पूर्ण होने जा रहा है, यह तो प्रसन्नताकी बात है।

प्रसन्नता, सुख सीताके प्रारब्धमें लिखना विधाता भूल गया। यह तो जहाँ जाती है, दारुण दावानलजल उठता है। यह स्वर्णपुरी इसके कारण दग्ध हुई। वह राक्षसोका, राक्षसियोंका क्रन्दन, इस्तत: भागते फिरना देखने योग्य था? जिसमें अनन्त दया है, उसके दु:खको कैसे कम किया जा सकता है ? संसारके अज्ञ जीव अपने पापोंसे अपराधोंसे अपने लिए पीड़ाके निमित्त एकत्र करते रहते हैं और उन वात्सल्मयीकी वेदना बढ़ती है।

श्रीजनक-नन्दिनीको जबसे दशग्रीवने पञ्चवटीसे उठाया, उनकी वेदना विरामका नाम नहीं लेती थी। वे निद्रा तो लेती ही नहीं थी। अहर्निशिके रुदनने उनके कपोलोंपर अपनी स्थिर रेखाएँ बना ली थीं। वही वस्त्र जो उन्हें देवी अनुसूयाने दिया था। सिरके केश उलझकर एक वेणी-जटा बन गये थे। पल्लव- मृदुल अधर सदा हिलते रहते थे। प्राय: सिर झुकाये अपने पदनखोंको देखती राम-नामकी रट लगी थी उन्हें। दशग्रीवका अशोकोद्यान नन्दनकाननसे कहीं सुन्दूर, कहीं सुरम्य और अत्यन्त सुशोभित था; किन्तु श्रीमैथिलीने केवल उस दिन दृष्टि उठाकर उस उद्यानको देखा, जिस दिन हनुमान उसे ध्वस्त करते उसमें उछलते उत्पात कर रहे थे।

वे तो अपने अपराधी भृत्यको भी नहीं भूलते। अखण्ड अविचल विश्वास। इस विश्वासने ही उन दारुण दिनोंमें उनका जीवन बचाया- वे आवेंगे- अवश्य आवेंगे। इस अपनी दासीका उद्धार किये बिना वे रह नहीं सकते। क्या होता है दुष्ट दशग्रीव उन अमित-विक्रमके सम्मुख।

पवनपुत्र अन्वेषण करते अकस्मात आ पहुँचे थे। उनके आगमन ने पूरी परिस्थिति परिवर्तन कर दी। पहिले केवल त्रिजटा थी जो तनिक सहानुभूति रखती थी। वह भी उस सहानुभूति प्रकट करनेमें भय खाती थी। विभीषणकी पत्नी सरमा और उनकी पुत्री कला कदाचित ही लुक-छिपकर आ पाती थीं। त्रिजटाने उस दिन राक्षसियोंको अपना स्वप्न सुनाकर डरा दिया। हनुमानने लमा जलाकर स्वप्न सत्यताको प्रामाणिक बना दिया। तबसे रावणका भयंकर भय होने पर भी राक्षसियाँ सब सानुकूल हो गयीं। वे कभी डराती भी हैं तो पीछे पैरोंमें पड़कर प्रार्थना करती हैं- हमें क्षमा करना। हम यह अभिनय करनेको विवश है।

अब इनका भयभीत करनेका अभिनय देखकर हँसी आती हैं; किन्तु जो दूसरोंके दु:खसे दु:खी होनेवाली अनन्त दयामयी हैं, उसकी वेदनाका अन्त कहाँ है। प्रतीक्षा सफल हुई, विश्वास बलवान सिद्ध हुआ। श्रीराम असंख्य वानर-सेना लेकर समुद्रपर सेतु बनाकर आ गये उद्धार करने, किन्तु अब अपनी चिन्ता मिटी नहीं, मिटती दीखती है, वियोगका महावाडव बुझता दीखता है तो दूसरोंके दु:खकी ज्वाला दग्ध करने लगी है।

स्वामीके सुकुमार शरीरपर असंख्य बाण प्रतिदिन लगते हैं। उन्हें नागपाशका विषम बन्धन प्राप्त हुआ। लक्ष्मण जो ललित होने योग्य हैं, प्रबलतम प्रहार प्रतिपक्षका झेल रहे हैं। कई-कई बार इतने आहत हुए कि उनके उठबैठनेकी आशा ही नहीं रह गयी थी। अब सरमा अदृश्य रहकर युद्धकी स्थिति देख आती है। यह जो सुनाती है, उससे जो प्राणोंको पीड़ा होती है- अभागिनी सीता मर जाती या युग-युग तक यहीं दशाननकी बन्दिनी बनी रहती- इसके लिए आर्यपुत्रको, लक्ष्मणको कितना दु:ख उठाना पड़ रहा है।

यहीं तक अन्त होता, तब भी कुछ बात थी। सरमा प्राय: सायंकाल आकर सुनाती है कि युद्धमें कौन-कौनसे प्रधान शूर सेनापति खेत रहे। वह बड़े उत्साहसे कहती है- दशग्रीवका दर्प चूर्ण हो गया। उसकी शक्ति क्षीण हो रही है। उसके दुर्दान्त दिक्चक्रजयी दनुज मारे जा रहे हैं।

हाय सखि। सीताने आकर इस स्वर्णपुरीको दग्ध पाषाणी बना दिया और अब स्वर्गका तिरस्कार करने वाली इस राक्षस-राजधानीमें नरककी ज्वाला जलाने लगी है। उत्साहके स्थानपर उन कृपामयीकी वेदना तीव्रतम हो जाती है- बेचारे राक्षसोंकी विधवाएँ क्रन्दन करती होंगी। उनके शिशु अनाथ हो गये। यह दारुणा दग्ध-कपाला यहाँ चिताकी ज्वाला बढ़ाती जा रही है। जहाँ काल भी बन्दी था, जहाँके लोगोंने दु:ख जाना ही नहीं था, वहाँ जानकीने घर-घर क्रन्दन ध्वनि गुंजित कर दी है।

उस दिन जब प्रमिलाके सती होनेका सम्वाद देते हुए स्वयं सरमा फूटकर रो पड़ी- लमामें यह साकुमार्य, सौन्दर्य, पवित्रताकी पावन प्रतिमा थी। शचीका सौन्दर्य मद उसे देखकर दूर हो गया था। वह परम पतिव्रता- मुझे वह अपनी सगी पुत्रवधू लगती थी। स्वामी को राक्षसेन्द्रने निर्वासित कर दिया, इन्द्रजितने भी उन्हें अपमानित करने की घृष्टता की; किन्तु शील-संकोचकी मूर्ति सुलोचनाने मेरे सम्मानमें कभी प्रमाद नहीं किया। वह उठकर मेरे पदोंपर मस्तक ही रखती थी। स्वामीकी चर्चा आनेपर भरे दृग कह देती- पूज्योंके गुणावगुण सोचने का हमें अधिकार ही नहीं है।

सरमा चली गयी ? श्रीजानकीने चेतनामें आते ही पूछा- त्रिजटा। सब लोग तुम सबको राक्षसियाँ कहते हैं; किंतु तुम लोग इस प्रत्यक्ष पिशाचनीको धिक्कारती क्यों नहीं हो जो तुम्हारे स्वजनों, सम्बन्धियों को प्रतिदिन चबाये जा रही है। इसे आज के दारुण दिनमें मारने आकर भी दशग्रीव लौट गया। इतनी दया उसमें और उसके मन्त्री महापार्श्वमें भी है; किंतु सीतामें दया नहीं है।

त्रिजटाको उस दिन बहुत कठिनाई हुई। श्री मैथिली बार-बार मूर्छिता होती थीं- हाय प्रमिला। वह भोली बालिका सती हो गयी। उसे इस भाग्यकी मारी सीताके कारण ज्वालाओंका आलिङ्गन करना पड़ा।

तुम अब लंकाकी साम्राज्ञी होनेवाली हो। इतना सचेत तुम्हें रहना चाहिये कि इन अपनी आराध्याको उत्साहातिरेकमें व्याकुल न बना दो। जानती हो कि ये दशग्रीव के वधको भी सुनकर प्रसन्न नहीं हो सकतीं। संसारकी सम्पूर्ण ममता इनमें मूर्तिमती हो गयी है।

लेकिन सरमा और त्रिजटा जो पूरी लमामें करुण क्रन्दन व्याप्त था, उसे कैसे दबा सकती थीं। आज जब राक्षसियाँ दशग्रीवको ही दु:खिता होकर दुर्वचन कह रही थी, श्रीजानकी तक उनके अपशब्द न पहुँचे- कैसे सम्भव था ? कोई सम्मुख आकर कठोर वचन न कहे, इस विषयमें त्रिजटा, सरमा और सुरक्षामें लगी दूसरी राक्षसियोंने भी पूरी सावधानी रखी; किंतु दूरसे जो चिल्लाने, पुकारने की ध्वनि आ रही थी। सीता पिशाचिनी है। वह सब राक्षसोंका रक्तपान करनेपर तुली है। सीता चामुण्डा है, वह यहाँ सबको चबाती चली जा रही है। वह इन्द्रजीतको, कुम्भकर्णको भी चबा गयी। दशग्रीवको भी चबा जायगी। उसकी उदर-ज्वालासे यहाँ कोई नहीं बचेगा।

सीता करालिका सीता साक्षात् मृत्यु सीता, सीता, सीता। राक्षसियाँ चिल्ला-चिल्लाकर कोस रही थीं। जिनके जो मुखमें आता था कहती थीं। आज जब रावण का ही भय उन्हें नहीं था, त्रिजटा या सरमा उनको रोकनेमें कैसे समर्थ होती ?

वे सब सच कहती हैं। श्रीजनकनन्दिनीके नेत्र लाल- लाल हो रहे थे। आज उनके अश्रु भी सूख गये थे। वे जैसे उन्मादिनी हो उठी थीं- लेकिन वे इस पिशाचिनी, करालिका, विपद्रूपाको मार क्यों नहीं देती हैं ? वह वज्र-हृदया ही अब कौन-सा सुख भोगनेको जी रही हैं ? सरमा और त्रिजटा अत्यन्त व्याकुल थीं। उनका हृदय छटपटा रहा था। किसी क्षण कोई दुर्घटना न हो जाय- अब एक क्षणको भी वैदेहीको अकेली नहीं छोड़ा जा सकता था।

२२) वानर और राक्षसोंका युद्ध- रावणके मन्त्रियोंने जब इन्द्रजित्के वधका समाचार सुना, तब उन्होंने स्वयं भी प्रत्यक्ष देखकर इसका निश्चय कर लेनेके बाद तुरंत जाकर दशमुख रावणसे सारा हाल कह सुनाया।

जिसने देवताओंके राजा इन्द्रको भी परास्त किया था और पहलेके युद्धोंमें जिसकी कभी पराजय नहीं हुई थी, वही आपका शूरवीर पुत्र इन्द्रजित् शौर्यसम्पन्न लक्ष्मणके साथ भिड़कर उनके द्वारा मारा गया। वह अपने बाणोंद्वारा लक्ष्मणको पूर्णत: तृप्त करके उत्तम लोकोंमें गया। अविराम तीन दिन-रात इन्द्रजितने युद्ध किया था। श्रीराम अनुजकी प्रशंसा कर रहे थे।

विभीषण लक्ष्मणको वानरोंके साथ निकुम्भिला मन्दिर ले आये थे। उन्होंने ही बार-बार उत्तेजित किया। राक्षसोंने रावणको जाकर यह समाचार दिया- आपके पुत्र इन्द्रजितने अतुलनीय पराक्रम प्रदर्शित किया; किन्तु अन्तमें उन्होंने वीरगति प्राप्त की। उनका मस्तक हनुमान उठा ले गये।

युद्धमें अपने पुत्र इन्द्रजित्के भयानक वधका घोर एवं दारुण समाचार सुननेपर रावणको बड़ी भारी मूर्च्छाने धर दबाया। दशग्रीव पुत्रवध सुनकर मूर्छित हो गया। चेतना प्राप्त करके शोकार्त रुदन करने लगा- तुम यम और कालसे भी अजेय थे। युद्धमें मृत्यु तुम जैसे शूरका योग्य सुयश है। आज स्वर्गमें सुर उत्सव मनावेंगे। लमामें तुम्हारी माता और पत्नी रुदन करेंगी।

मैंने एक सहस्र वर्ष दुश्चरतप करके सृष्टिकर्ताको सन्तुष्ट किया। उन्होंने मुझे देवता तथा असुरोंसे अवध्य बनाया। रावणने उन्माद-ग्रस्तकी भाँति अट्टहास किया- ब्रह्माके द्वारा दिया गया मेरा दिव्य धनुष और कवच कहाँ है ? विजय-वाद्य बजाओ। मैं मानवोंकी शक्ति

देखूँगा। आज उन्हें मार दूँगा या मर जाऊँगा। हा पुत्र। हा राक्षस-सेनाके महाबली कर्णधार। तुम तो पहले इन्द्रपर भी विजय पा चुके थे; फिर आज लक्ष्मणके वशमें कैसे पड़ गये?

महाबाहो। आज सूर्यके पुत्र प्रेतराज यमका महत्त्व मुझे अधिक जान पड़ने लगा है, जिन्होंने तुम्हें भी कालधर्मसे संयुक्त कर दिया।

आज समस्त देवता, लोकपाल तथा महर्षि इन्द्रजित्का मारा जाना सुनकर निडर हो सुखकी नींद सो सकेंगे।

आज तीनों लोक और काननोंसहित यह सारी पृथ्वी भी अकेले इन्द्रजित्के न होनेसे मुझे सूनी-सी दिखायी देती है।

शत्रुओंको संताप देनेवाले पुत्र। आज अपने युवराजपदको, लमापुरीको, समस्त राक्षसोंको, अपनी माँको, मुझको और अपनी पत्नीयोंको हम सब लोगोंको छोड़कर तुम कहाँ चले गये ?

वीर। होना तो यह चाहिये था कि मैं पहले यमलोकमें जाता और तुम यहाँ रहकर मेरी अन्त्येष्टि क्रिया करते; परंतु तुम विपरीत अवस्थामें स्थित हो गये (तुम परलोकवासी हुए और मुझे तुम्हारा अन्त्येष्टि करनी पड़ी)।

हाय। राम, लक्ष्मण और सुग्रीव अभी जीवित हैं; ऐसी अवस्थामें मेरे हृदयका काँटा निकाले बिना ही तुम हमें छोड़कर कहाँ चले गये?

इस प्रकार आर्तभावसे विलाप करते हुए राक्षसराज रावणके हृदयमें अपने पुत्रके वधका स्मरण करके महान् क्रोधका आवेश हुआ।

अपने पुत्रके वधसे संतप्त हुआ शूरवीर रावण सहसा क्रोधके वशीभूत हो गया। उसने बुद्धिसे सोच-विचारकर विदेहकुमारी सीताको मार डालना ही अच्छा समझा।

निशाचरो। मैंने सहस्रों वर्षोंतक कठोर तपस्या करके विभिन्न तपस्याओंकी समाप्तिपर स्वयम्भू ब्रह्माजीको संतुष्ट किया है।

उसी तपस्याके फलसे और ब्रह्माजीकी कृपासे मुझे देवताओं और असुरोंकी ओरसे कभी भय नहीं है।

मन्त्रियोंसे ऐसा कहकर उसने शीघ्र ही तलवार हाथमें ले ली, जो खड्गोचित गुणोंसे युक्त और आकाशके समान निर्मल कान्तिवाली थी। उसे म्यानसे निकालकर पत्नी और मन्त्रियोंसे घिरा हुआ रावण बड़े वेगसे आगे बढ़ा। पुत्रके शोकसे उसकी चेतना अत्यन्त आकुल हो रही थी। इन्द्रजितने मायासे सीताका वध दिखलाया था, मैं उसे सत्य करूँगा। दुरासद् दुर्धर्ष दशग्रीव क्रोधोन्मत्त दाँत पीस रहा था। अपने हाथ मसल रहा था। पैर पटक रहा था। पुत्रका मरण सुनकर उसकी बुद्धि विचलित हो गयी थी। उसका निर्णय अस्त-व्यस्त हो गया था। भयके कारण राक्षस भी उसके सामने आनेका साहस नहीं कर पा रहे थे, उसने भारी तलवार खींच ली- सब साथ चलो। आज मैं सबके सम्मुख सीताको मार दूँगा।

वह अत्यन्त कुपित हो तलवार लेकर सहसा उस स्थानपर जा पहुँचा, जहाँ मिथिलेशकुमारी सीता मौजूद थीं। उधर जाते हुए उस राक्षसको देखकर उसके मन्त्री सिंहनाद करने लगे। क्योंकि कुपित होनेपर इस राक्षसराजने इन्द्र आदि चारों लोकपालोंको जीत लिया और दूसरे बहुत-से शत्रुओंको भी युद्धमें मार गिराया था। तीनों लोकोंमें जो रत्नभूत पदार्थ हैं, उन सबको लाकर रावण भोग रहा है। भूमण्डलमें इसके समान पराक्रमी और बलवान् दूसरा कोई नहीं है।

हुमार करते क्रुद्ध रावणको आता देखकर अशोकवनमें वैदेहीके समीप बैठी राक्षसियाँ भाग गयीं। पहिली बार रावण इस वाटिकामें अपने सेनापतियोंके साथ, बिना किसी रानीको संग लिए आ रहा था। उसकी उग्रतर भङ्गिमा देखकर दैवी मैथिली डर गयीं- आज यह मुझे अनाथके समान मार देगा। मेरी ओरसे निराश हो गया है और मेरे स्वामी तथा देवरपर कोई वश नहीं चला है, तब क्रोधोन्मत्त मुझे मारने आया है। आर्यपुत्र दीर्घायु हों। लक्ष्मण दीर्घायु हों।

श्रीजनकनन्दिनीने नेत्र बन्द कर लिए। उन्होंने अपने जीवनका अन्तिम क्षण समझा। अपने मनको श्रीरामके चरण-चिन्तनमें एकाग्र किया। उस समय सती-साध्वी सीता राक्षसियोंके संरक्षणमें थीं। उन्होंने देखा, क्रोधसे भरा हुआ राक्षस एक बहुत बड़ी तलवार लिये मुझे मारनेके लिये आ रहा है। यद्यपि उसके सुहृद् उसे बारंबार रोक रहे हैं तो भी वह लौट नहीं रहा है। इस तरह तलवार ले रावणको आते देख जनकनंदिनीके मनमें बड़ी व्यथा हुई। दु:खमें डूबी हुई और विलाप करती सीता इसप्रकार बोली- मैं अपने पतिमें अनुराग रखती हूँ तो भी इसने अनेक बार प्रेरित किया कि तुम मेरी भार्या बन जाओ। उस समय मैंने इसे ठुकरा दिया था। मेरे इस तरह ठुकरानेपर यह निराश हो क्रोध और मोहके वशीभूत हो गया है और अवश्य ही मुझे मार डालनेके लिये उद्‌त है। मुझ क्षुद्र (मूर्ख) नारीने हनुमानकी कही हुई वह बात नहीं मानी। यदि श्रीरामद्वारा जीती न जानेपर भी उस समय हनुमानकी पीठपर बैठकर चली गयी होती तो पतिके

अममें स्थान पाकर आज इस तरह बारंबार शोक नहीं करती।

चन्द्रमासे बिछुड़कर किसी क्रूर ग्रहके वशमें पड़ी हुई रोहिणीकी भाँति तपस्विनी सीताको इस प्रकार विलाप करती देख रावणके सुशील एवं शुद्ध आचार-विचारवाले सुपार्श्वनामक बुद्धिमान् मन्त्रीने दूसरे सचिवोंके मना करनेपर भी उस समय राक्षसराज रावणसे यह बात कही- महाराज दशग्रीव।

आप महर्षि पुलस्त्यके पौत्र, वैश्रावण कुबेरके भाई हैं। वेदज्ञ हैं, विवेकी हैं, कर्तव्यपालक हैं फिर क्रोधके कारण धर्मको तिलाञ्जलि दे विदेहकुमारीके वधकी इच्छा कैसे कर रहे हो ? मन्त्री सुपार्श्वने सीताके समीप पहुँचनेसे पूर्व ही हाथ जोड़कर दशग्रीवकी स्तुति करते हुए डरते-डरते कहा- आप अपना क्रोध मुख्य शत्रुपर सार्थक करें। एक विवशा स्त्रीका वध क्यों करते हैं ?

कभी-कभी प्रबल प्रवाहमें प्रवाहितको एक साधारण हिलोर भी दूसरी दिशा दे देती है। रावण खड़ा हो गया। उसने सुपार्श्वकी ओर देखा- तुम ठीक कहते हो।

वीर राक्षसराज। तुम विधिपूर्वक ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए वेदविद्याका अध्ययन पूरा करके गुरुकुलसे स्नातक होकर निकले थे और तबसे सदा अपने कर्तव्यके पालनमें लगे रहे तो भी आज अपने हाथसे एक स्त्रीका वध करना तुम कैसे ठीक समझते हो ?

तुम शूरवीर, बुद्धिमान् और रथीवीर हो। एक श्रेष्ठ रथपर आरूढ़ हो खड्ग हाथमें लेकर युद्ध करो। दशरथनन्दन रामका वध करके तुम मिथिलेशकुमारी सीताको प्राप्त कर लोगे।

दशग्रीव। तूने स्वयं यह नरमेधयज्ञ प्रारम्भ किया है। इस यज्ञमें रामको होता बना लियातोवे आहुति देंगे ही। लक्ष्मण तो उनके उद्गाता हैं। सुग्रीव-विभीषण अहवर्यु ऋत्विक बन गये। इतने वानरोंको तूने सभासद बनाकर बुला लिया। अब अपनी पूर्णाहुति देनेमें यह संकोच क्यों ? मस्तक झुकाये रावण जो बोलता जा रहा था, साथके राक्षसोंने उसे शोकोन्मादका प्रलाप ही माना। वह बोलता जा रहा था- देखना यह है कि कोई प्रधानहुति तो अवशिष्ट नहीं है।

रावण समझ गया, वह सीता का वध नहीं कर सकता। सीता का वध कर सकता अथवा उसका मोह त्यागकर उसे लौटा सका होता, तो यह दिन क्यों देखना पड़ता। सीता तो उसके जीवन के संपूर्ण संघर्षों की उपलब्धि थी। सीता ही न रही तो राम और लक्ष्मण से युद्ध कैसा ? वे मंदोदरी का हरण करने तो आ नहीं रहे हैं। नहीं। सीता को जीना पड़ेगा; जब तक राम और रावण में से एक भी व्यक्ति जीवित है, उसे जीना पड़ेगा।

और रावण को लड़ना पड़ेगा। पहले दिन से ही स्पष्ट था कि सीता को प्राप्त करने के लिए लड़ना पड़ेगा। उसने युद्ध को टाला और सीता को उठा लाया; किंतु सीता उसे नहीं मिली। सीता उसे युद्ध के बाद ही मिलेगी। सीता जैसी विश्व-सुंदरी के लिए युद्ध न हो, यह कैसे सम्भव है। सीता, राम को चाहिए या रावण को युद्ध के बिना किसी को नहीं मिल सकेगी। यदि रावण ने ही यही युद्ध पंचवटी में लड़ लिया होता तो उसके बंधु-बाँधवों के वध की यह स्थिति नहीं आती।

वह महाबली रावण पुत्रशोकसे पीड़ित हो रहा था; अत: अपनी सेनाके प्रधान-प्रधान योद्धाओंसे बोला- वीरो। तुम सब लोग समस्त हाथी, घोड़े, रथसमुदाय तथा पैदल सैनिकोंसे घिरकर उन सबसे सुशोभित होते हुए नगरसे बाहर निकलो और समरभूमिमें एकमात्र रामको चारों ओरसे घेरकर मार डालो। जैसे वर्षाकालमें बादल जलकी वर्षा करते हैं, उसी प्रकार तुमलोग भी बाणोंकी वृष्टि करते हुए रामको मार डालनेका प्रयत्न करो। अथवा मैं ही कल महासमरमें तुम्हारे साथ रहकर अपने तीखे बाणोंसे रामके शरीरको छिन्न-भिन्न करके सब लोगोंके देखते-देखते उन्हें मार डालूँगा।

सूर्योदयके समय राक्षसों और वानरोंके उस तुमुल युद्धने महाभयंकर रूप धारण किया। वानर और राक्षस उस युद्धभूमिमें विचित्र गदाओं, भालों, तलवारों और फरसोंसे एक दूसरेको मारने लगे।

समस्त वानर खूनसे लथपथ हो रहे थे। कूद-कूदकर समराङ्गणमें राक्षसोंके ध्वज, कवच, रथ, घोड़े और नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंका विनाश करने लगे। वानर अपने तीखे दाँतों और नखोंसे निशाचरोंके केश, कान, ललाट और नाक कुतर डालते थे।

उस समय पर्वताकार राक्षस भी भारी गदाओं, भालों, तलवारों और फरसोंसे भयंकर वानरोंको मारने लगे। राक्षसोंद्वारा मारी जाती हुई वानरोंकी वह विशाल सेना श्रीरामकी शरणमें गयी।

निशाचर रणभूमिमें श्रीरामचन्द्रजीके द्वारा किये गये अत्यन्त घोर एवं दुष्कर कर्मोंको ही देख पाते थे, उनके स्वरूपको नहीं। जैसे वनमें चलती हुई हवा बड़े-बड़े वृक्षोंको हिलाती और तोड़ डालती है तो भी वह देखनेमें नहीं आती, उसी प्रकार भगवान् श्रीराम निशाचरोंकी विशाल सेनाको विचलित करते और कितने ही महारथियोंकी धज्जियाँ उड़ा देते थे, तो भी वे राक्षस उन्हें देख नहीं पाते थे।

श्रीराम राक्षससेनाको दग्ध कर रहे थे तो भी वे राक्षस उन्हें देख नहीं सके। महात्मा श्रीरामने राक्षसोंको गान्धर्वनामक दिव्य अस्त्रसे मोहित कर दिया था।

अत: वे राक्षस रणभूमिमें कभी तो हजारों राम देखते थे और कभी उन्हें उस महासमरमें एक ही रामका दर्शन होता था।

जब घोड़े और रथ नष्ट हो गये तथा ध्वज तोड़-फोड़ डाले गये, तब मरनेसे बचे हुए निशाचर शान्त हो लमापुरीमें भाग गये।

मारे गये हाथियों, घोड़ों और पैदल सैनिकोंकी लाशोंसे भरी हुई वह रणभूमि कुपित हुए महात्मा रुद्रदेवकी क्रीडाभूमि-सी प्रतीत होती थी। जिनके पति, पुत्र और भाई-बन्धु मारे गये थे, वे अनाथ राक्षसियाँ झुंड-की-झुंड एकत्र होकर दु:खसे पीड़ित हो विलाप करने लगीं।

दशमुख रावण जनकनन्दिनी सीताको कभी नहीं पा सकेगा; परंतु उसने बलवान् रघुनाथजीसे अमिट वैर बाँध लिया है।

जनस्थानमें भयानक कर्म करनेवाले चौदह हजार राक्षसोंको श्रीरामने अग्निशिखाके समान तेजस्वी बाणोंद्वारा कालके गालमें डाल दिया था और सूर्यके सदृश प्रकाशमान सायकोंसे समराङ्गणमें खर, दूषण तथा त्रिशिराका भी संहार कर डाला था; यह उनकी अजेयताको समझ लेनेके लिये पर्याप्त दृष्टान्त था।

विभीषणने जो धर्म और अर्थसे युक्त बात कही थी, वह सभी राक्षसोंके लिये हितकर तथा युक्तियुक्त थी; परंतु मोहवश रावणको वह अच्छी न लगी। यदि कुबेरका छोटा भाई रावण विभीषणकी बात मान लेता तो यह लमापुरी इस तरह दु:खसे पीड़ित हो श्मशानभूमि नहीं बन जाती। महाबली कुम्भकर्ण श्रीरामके हाथसे मारा गया। दु:सह वीर अतिकायको लक्ष्मणने मार गिराया तथा रावणका प्यारा पुत्र इन्द्रजित भी उन्हींके हाथसे मारा गया तथापि रावण भगवान् श्रीरामके प्रभावको नहीं समझ रहा है।

हाय, मेरा बेटा मारा गया। मेरे भाईको प्राणोंसे हाथ धोना पड़ा। रणभूमिमें मेरे पतिदेव मार डाले गये। लमाके घर-घरमें राक्षसियोंके ये शब्द सुनायी देते हैं। जान पड़ता है, श्रीरामका रूप धारण करके हमें साक्षात् भगवान रुद्रदेव, भगवान् विष्णु, शतक्रतु इन्द्र अथवा स्वयं यमराज ही मार रहे हैं।

दशमुख रावण शूरवीर है। इसे ब्रह्माजीने महान् वर दिया है। इसी घमंडके कारण यह श्रीरामके हाथसे प्राप्त हुए इस महाघोर भयको नहीं समझ पाता है। युद्धस्थलमें श्रीराम जिसे मारनेको तुल जायँ, उसे न तो देवता, न गन्धर्व, न पिशाच और न राक्षस ही बचा सकते हैं।

रावणके प्रत्येक युद्धमें जो उत्पात दिखायी देते हैं, वे रामके द्वारा रावणके विनाशकी ही सूचना देते हैं।

ब्रह्माजीने प्रसन्न होकर रावणको देवताओं, दानवों तथा राक्षसोंकी ओरसे अभयदान दे दिया था। मनुष्योंकी ओरसे अभय प्राप्त होनेके लिये इसने याचना ही नहीं की थी।

आजसे समस्त दानव तथा राक्षस भयसे युक्त होकर ही नित्य-निरन्तर तीनों लोकोंमें विचरण करेंगे। तत्पश्चात् इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवताओंने मिलकर त्रिपुरनाशक वृषभध्वज महादेवजीको संतुष्ट किया।

संतुष्ट होनेपर महादेवजीने देवताओंसे कहा- तुम लोगोंके हितके लिय एक दिव्य नारीका आविर्भाव होगा, जो समस्त राक्षसोंके विनाशमें कारण होगी। जैसे पूर्वकल्पमें देवताओंद्वारा प्रयुक्त हुई क्षुधाने दानवोंका भक्षण किया था, उसी प्रकार यह निशाचरनाशिनी सीता रावणसहित हम सब लोगोंको खा जायगी।

उद्दण्ड और दुर्बुद्धि रावणके अन्यायसे यह शोकसंयुक्त घोर विनाश हम सबको प्राप्त हुआ है।

महात्मा पुलस्त्यनन्दन विभीषणने समयोचित कार्य किया है। उन्हें जिनसे भय दिखायी दिया, उन्हींकी शरणमें वे चले गये।

रावणने लमाके घर-घरमें शोकमग्न राक्षसियोंका करुणाजनक विलाप सुना।

२३) राक्षस महोदर, महापार्श्व और विरूपाक्षका वध- रावणने कहा- निशाचरो। महोदर, महापार्श्व तथा राक्षस विरूपाक्षसे शीघ्र जाकर कहो- तुमलोग मेरी आज्ञासे शीघ्र ही सेनाओंको कूच करनेका आदेश दो।

तत्पश्चात् रावण क्रोधसे मूर्च्छित-सा होकर बड़े जोरसे हँस पड़ा और महोदर, महापार्श्व तथा राक्षस विरूपाक्षसे कहा- आज अपने

धनुषसे छूटे हुए तीखे बाणोंद्वारा, जो प्रलयकालके सूर्य-सदृश तेजस्वी हैं, मैं राम और लक्ष्मणको भी यमलोक पहुँचा दूँगा।

आज शत्रुका वध करके खर, कुम्भकर्ण, प्रहस्त तथा इन्द्रजित्‌के मारे जानेका भरपूर बदला चुकाऊँगा।

आज शत्रुका वध करके मैं उन सब निशाचरोंके आँसू पोछूँगा, जिनके भाई और पुत्र इस युद्धमें मारे गये हैं।

तब महापार्श्व बोला- लंका के सैनिक विजय और विजयोपरांत लूट के अभ्यस्त हैं। पराजय की बेला में अपने स्वामी के लिए प्राण देने का पाठ उन्होंने नहीं पढ़ा है। तदनन्तर बहुत-से राक्षसोंसे घिरा हुआ रावण सहसा युद्धके लिये प्रस्थित हुआ। वह अपने बलकी अधिकतासे पृथ्वीको विदीर्ण-सा करता हुआ जा रहा था।

सीताको चुरानेवाला, दुराचारी, ब्रह्महत्यारा तथा देवताओंके लिये कण्टकरूप राक्षसराज रावण छत्र एवं चँवर लगाये श्रीरघुनाथजीके साथ युद्ध करनेके लिये आ रहा है; इस प्रकारकी कलह-ध्वनि कानोंमें पड़ रही थी। उस महानादसे पृथ्वी काँप उठी। उस भयानक शब्दको सुनकर सब वानर सहसा भयसे भाग चले। बायीं आँख फड़कने लगी। बायीं भुजा सहसा काँप उठी। उसके चेहरेका रंग फीका पड़ गया और आवाज कुछ बदल गयी।

राक्षस दशग्रीव ज्यों ही युद्धके लिये निकला, त्यों ही रणभूमिमें उसकी मृत्युके सूचक लक्षण प्रकट होने लगे। आकाशसे उल्कापात हुआ। उससे वज्रपातके समान गड़गड़ाहट पैदा हुई। अमङ्गलसूचक पक्षी गीध कौओंसे मिलकर अशुभ बोली बोलने लगे। उस समय दशमुख रावण अपने सुवर्णभूषित बाणोंद्वारा वानरोंकी सेनाओंमें रोषपूर्वक बड़ी भारी मार-काट मचाने लगा। रावणने कितने ही वानरोंके सिर काट लिये, कितनोंकी छाती छेद डाली और बहुतोंके कान उड़ा दिये। कितनोंने घायल होकर प्राण त्याग दिये। रावणने कितने ही वानरोंकी पसलियाँ फाड़ डालीं, कितनोंके मस्तक कुचल डाले और कितनोंकी आँखें चौपट कर दीं।

दशमुख रावणके नेत्र क्रोधसे घूम रहे थे। वह अपने रथके द्वारा युद्धस्थलमें जहाँ-जहाँ गया, वहाँ-वहाँ वे वानरयूथपति उसके बाणोंका वेग न सह सके। इस प्रकार जब रावणने अपने बाणोंसे वानरोंके अङ्ग-भङ्ग कर डाले, तब वहाँ धराशायी हुए वानरोंसे वह सारी रणभूमि पट गयी। जैसे हवा बड़े-बड़े बादलोंको छिन्न-भिन्न कर देती है, उसी प्रकार रावण अपने बाणोंसे वानरसेनाओंका संहार करता हुआ समराङ्गणमें विचरने लगा।

उधर सुग्रीवने देखा, वानरसैनिक रावण खदेड़े जाकर समरणभूमिमें भाग रहे हैं, तब उन्होंने सेनाको स्थिर रखनेका भार सुषेणको सौंपकर स्वयं शीघ्र ही युद्ध करनेका विचार किया।

उस समय सुग्रीवने युद्धमें उच्चस्वरसे गर्जना की और प्रलयकालमें बड़े-बड़े वृक्षोंको उखाड़ फेंकनेवाले वायुदेवकी भाँति उन विशालकाय विभिन्न प्रकारकी आकृतिवाले बड़े-बड़े राक्षसोंको गिरा-गिराकर मथ एवं कुचल डाला।

जैसे बादल वनमें पक्षियोंके समुदायपर ओले बरसाता है, उसी प्रकार सुग्रीव राक्षसोंकी सेनाओंपर बड़े-बड़े पत्थरोंकी वर्षा करने लगे। इस प्रकार सुग्रीवकी मारसे जब सब ओर राक्षसोंका विनाश होने लगा तथा वे भागने और आर्तनाद करते हुए पृथ्वीपर गिरने लगे, तब विरूपाक्ष नामक दुर्ज राक्षस हाथमें धनुष ले अपना नाम घोषित करता हुआ रथसे कूद पड़ा और हाथीकी पीठपर जा चढ़ा।

उस राक्षसके पैने बाणोंसे अत्यन्त घायल हुए वानरराज सुग्रीवने महान् क्रोधसे भरकर भीषण गर्जना की और विरूपाक्षको मार डालनेका विचार किया।

सुग्रीवके प्रहारसे घायल हो वह महान् गजराज एक धनुष पीछे हटकर बैठ गया और पीड़ासे आर्तनाद करने लगा।

यह देख सुग्रीवने एक बहुत बड़ी शिला हाथमें ली, जो मेघके समान काली थी। उसे उन्होंने विरूपाक्षके शरीरपर क्रोधपूर्वक दे मारा।

तदनन्तर सुग्रीवने विरूपाक्षके ललाटपर क्रोधपूर्वक दूसरा महान् थप्पड मारा, जिसका स्पर्श इन्द्रके वज्रके समान दु:सह था। उससे आहत होकर विरूपाक्ष पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसका सारा शरीर खूनसे भीग गया और वह समस्त इन्द्रिय-गोलकोंसे उसी प्रकार रक्त वमन करने लगा, जैसे झरनेसे जल गिर रहा हो।

वानरराज सुग्रीवके द्वारा महाबली विरूपाक्षका वध हुआ देख वानरों और राक्षसोंकी सेनाएँ एकत्र हो बढ़ी हुई गङ्गाके समान उद्वेलित हो गयीं। एक ओर आनन्दजनित कोलाहल था तो दूसरी ओर शोकके कारण आर्तनाद हो रहा था।

अपनी सेनाके विनाश और विरूपाक्षके वधसे राक्षसराज रावणका क्रोध दूना बढ़ गया।

उसने पास ही खड़े हुए महोदरसे कहा- महाबाहो। इस समय मेरी विजयकी आशा तुम्हारे ऊपर ही अवलम्बित है।

वीर। आज अपना पराक्रम दिखाओ और शत्रुसेनाका वध करो। यही स्वामीके अन्नका बदला चुकानेका समय है। अत: अच्छी तरह युद्ध करो। सेनामें प्रवेश करके तेजस्वी और महाबली महोदरने स्वामीकी आज्ञासे प्रेरित हो अपने पराक्रमद्वारा वानरोंका संहार आरम्भ किया। वानर भी बड़ी शक्तिशाली थे। वे बड़ी-बड़ी शिलाएँ लेकर शत्रुकी भयंकर सेनामें घुस गये और समस्त राक्षसोंका संहार करने लगे। वानरोंकी विशाल सेनाको समरभूमिसे भागती देख सुग्रीवने पास ही खड़े हुए महोदरपर आक्रमण किया।

वानरराज बड़े तेजस्वी थे। उन्होंने पर्वतके समान विशाल एवं भयंकर शिला उठाकर महोदरके वधके लिये उसपर चलायी। घोड़ोंके मारे जानेपर वीर राक्षस महोदर अपने विशाल रथसे कूद पड़ा और अत्यन्त रोषसे भरकर उसने गदा उठा ली। तदनन्तर कुपित हुए राक्षस महोदरने सुग्रीवपर सूर्यतुल्य तेजसे दमकती हुई एक गदा चलायी। तब तेजस्वी सुग्रीवने भूमिपरसे एक लोहेका भयंकर मूसल उठाया, जिसमें सब ओरसे सोना जड़ा हुआ था। वे दोनों वीर तेज और बलसे सम्पन्न थे और जलती हुई अग्नियोंके समान उद्दीप्त हो रहे थे। अपने-अपने आयुधोंके टूट जानेपर वे घूसोंसे एक दूसरेको मारने लगे।

महोदर और सुग्रीव दोनों युद्धके मैदानमें शस्त्र चलानेकी कलामें चतुर थे तथा दोनोंके शरीर रोषसे प्रभावित थे; अत: रणभूमिमें हर्ष और उत्साहसे युक्त हो वे तलवार उठावे गर्जते हुए एक दूसरेपर टूट पड़े। अपने बलपर घमंड करनेवाले महान् वेगशाली तथा शौर्यसम्पन्न दुर्बुद्धि महोदरने अपनी वह तलवार सुग्रीवके विशाल कवचपर दे मारी।

सुग्रीवके कवचमें लगी हुई तलवारको जब वह राक्षस खींचने लगा, उसी समय कपिकुञ्जर सुग्रीवने महोदरके शिरस्त्राणसहित कुण्डलमण्डित मस्तकको अपने खड्गसे काट लिया। मस्तक कट जानेपर राक्षसराज महोदर पृथ्वीपर गिर पड़ा। यह देखकर उसकी सेना फिर वहाँ नहीं दिखायी दी। महोदरको मारकर प्रसन्न हुए वानरराज सुग्रीव अन्य वानरोंके साथ गर्जना करने लगे। उस समय दशमुख रावणको बड़ा क्रोध हुआ और श्रीराम हर्षसे खिल उठे।

उस समय समस्त राक्षसोंका मन दुखी हो गया। उन सबके मुखपर विषाद छा गया औश्र वे सभी भयभीतचित्त होकर वहाँसे भाग चले। इस प्रकार वानरराज सुग्रीव युद्धके मुहानेपर विजय पाकर बड़ी शोभा पाने लगे। उस सम देवता, सिद्ध और यक्षोंके समुदा तथा भूतलनिवासी प्राणियोंके समूह भी बड़े हर्षसे उनकी ओर देखने लगे।

सुग्रीवकेद्वारा महोदरके मारे जानेपर उनकी ओर देखकर महाबली महापार्श्वके नेत्र क्रोधसे लाल हो गये।

उसने अपने बाणोंद्वारा अंगदकी भयंकर सेनामें हलचल मचा दी। वह राक्षस मुख्य-मुख्य वानरोंके मस्तक धड़से काट-काटकर गिराने लगा, मानो वायु वृन्त या डंडलसे फल गिरा रही हो।

महापार्श्वकी बाणवर्षासे पीड़ित हो बहुत-से वानर युद्धसे विमुख हो गये। सबकी चेतना जाती रही।

इतना ही नहीं उसने रीछोंके राजा गवाक्षको भी बहुत-से बाणोंद्वारा क्षत-विक्षत कर दिया। गवाक्ष और जाम्बवान्को बाणोंसे पीड़ित देख अङ्गदके क्रोधकी सीमा न रही। उन्होंने भयंकर परिघ हाथमें ले लिया।

तब महान् वेगशाली महातेजस्वी महापार्श्वने कुपित होकर एक हाथमें बहुत बड़ा फरसा ले लिया।

राक्षस महापार्श्वने अत्यन्त कुपित हो वह फरसा बालिपुत्र अङ्गदपर दे मारा। तत्पश्चात् अत्यन्त क्रोधसे भरे हुए वीर अङ्गदने, जो अपने पिताके समान ही पराक्रमी थे, वज्रके समान मुट्ठी बाँधी।

वे हृदयके मर्मस्थानसे परिचित थे; अत: उन्होंने उस राक्षसके स्तनोंके निकट छातीमें बड़े वेगसे मुक्का मारा, जिसका स्पर्श इन्द्रके वज्रके समान असह्य था। उनका वह घूसा लगते ही उस महासमरमें राक्षस महापार्श्वका हृदय फट गया और वह मरकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसके मरकर पृथ्वीपर गिर जानेके पश्चात् उसकी सेना विक्षुब्ध हो उठी तथा समरभूमिमें रावणको भी महान् क्रोध हुआ।

युद्धस्थलमें देवताओं और वानरोंकी वह बड़ी भारी गर्जना सुनकर इन्द्रद्रोही राक्षसराज रावण पुन: रोषपूर्वक युद्धके लिये उत्सुक हो वहाँ खड़ा हो गया।

२४) श्रीराम-रावण युद्ध- लंका के कुछ शिष्ट नागरिक रामके पास आये और रामसे बोले- हम लंका के सामान्य प्रजा-जन हैं। उनका नेता आगे बढ़ आया, हमें राजनीति से कोई सरोकार नहीं है। अत: शासन चाहे रावण का हो अथवा आपका, हम केवल शांति चाहते हैं। लगा, राम का धैर्य चुक गया है, वे कुछ कहने को व्यग्र हैं; किंतु उन्होंने स्वयं को बलात् रोक लिया।

लंका में आज यह प्राय: सर्वमान्य हैं कि एक-आध दिन में रावण-वध होगा और लंका पर आर्य राम का शासन हो जाएगा। वह व्यक्ति बोला, हम लंका की प्रजा की ओर से आपको यह आश्वासन देने आए हैं कि लंका में आपका विरोध नहीं होगा। किंतु साथ ही निवेदन है कि आपकी सेना लंका पर आधिपत्य स्थापित करते समय, शांतिप्रिय नागरिकों का व्यर्थ रक्तपात न करे। हमारी सम्पत्ति की यथासम्भव रक्षा की जाए यदि यह सम्भव न हो, उस व्यक्ति का स्वर नम्र से कोमल और कोमल से भीरु हो गया, तो हमें युद्ध से पूर्व ही लंका से निकल जाने की अनुमति दी जाए और मार्ग का निर्देश किया जाए। लंका की सेना अब इतनी सक्षम नहीं है कि लंका त्यागने वालों को रोक सके।

राम ने कठोर दृष्टि से उस व्यक्ति को देखा, हम आपको लंका त्यागने की सुविधा नहीं देंगे। जनता का धन लेकर भागने की सुविधा देना हमारी नीति नहीं है। राम का स्वर कुछ धीमा हुआ, अभी युद्ध चल रहा है अत: अनिर्णीत है। रावण के वध के प्रति जितने आश्वस्त आप हैं, उतना मैं नहीं हूँ। फिर भी मैं इतना कह सकता हूँ कि विजय की स्थिति में भी यह सेना अनुशासित रहेगी। यह लुटेरों का गिरोह नहीं है; अंधकार का विरोध करनेवाली जन-सेना है। अनावश्यक रक्तपात इसकी प्रवृत्ति नहीं है। राम रुककर बोले, वैसे आपको सूचित कर दूँ कि किसी भी स्थिति में लंका पर राम का राज्य नहीं होगा। वानरसेना लंका पर आधिपत्य स्थापित नहीं करेगी। मैंने पहले ही विभीषण को लंकापति घोषित कर दिया है। यह वे देखेंगे कि आपका धन पाप द्वारा संचित है या नहीं उसकी रक्षा आवश्यक है या नहीं। वैसे धन-संचय पाप से ही सम्भव है। राम किंचित् मुसकराए, आपका राजनीति से कोई संबंध नहीं है, यह कोई गर्व का विषय नहीं है। आप यदि राम और रावण में अंतर नहीं करते तो यह आपकी शांतिप्रियता नहीं, आपका स्वार्थ और आपकी कायरता है।

दशग्रीवने अपने सेना को सीधे कठोर स्वर में कहा- कि अब सबको समझ लेना चाहिए कि जो भी युद्धमें जानेसे आनाकानी करेगा या समर भूमिसे भागेगा उसका मैं अपने हाथोंसे वध कर दूँगा। पृथ्वीपर राक्षसोंका मण्डल सदासे विजयी मण्डल कहलाता है। फिर क्या कारण है कि वानरदल राक्षसोंके दलको दलता जाता है। रणमें कुम्भकर्ण, मेघनाद, नरान्तक, अहिरावण जैसे योद्धा मारे गये अब दशकन्धर कैसे शान्त रह सकता है। लडाई की उमंग निशाचर दल में बढ़ी हुई है। बेसमझ निशाचर विद्रोही होकर शत्रुपक्षमें मिलने जाते है। जब इस नादानी को छोड़ोगे तब तुम्हें बात समझमें आयेगी सन्धि पत्र तो बाद में जायेगा पहले तुम्हारी स्वतंत्रता जायेगी। फिर यह हानि चुकाने के लिए विपदा पर विपदा तुमपर आयेगी। यह सोने की लंका वीरोंसे खाली हो जायगी। इसलिए यह उचित है कि अपना हृदय बलवान करो और आज रणभूमिमें महा घमासान युद्ध करों। खाँडे, परसे, तोमर, मुदगर, शर-धन्वा, भाले लेकर अस्त्र-शस्त्रोंसे सज्जित होकर रण में आगे बढ़ो और जोर से खेलो। सब लोग हर हर महादेव बोलकर दुश्मन के दल पर चढ़ जाओ। अपने बल पर अपनी जन्मभूमि की आन-बान कायम रखो। मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ और आँधी के जैसा धावा करूँगा। विजयी होकर जीना है, और वीरभूमि पर मरना है। इसप्रकार विशाल राक्षससेना सजकर चली, जिससे पृथ्वी थर्राने लगी, दिकपाल दहल गए।

रात बीत गयी, सबेरा हुआ। रीछ-वानर फिर चारों दरवाजोंपर जा डटे। योद्धाओंको बुलाकर दशमुख रावणने कहा- लड़ाईमें शत्रुके सम्मुख जिसका मन डाँवाडोल हो, अच्छा है वह अभी भाग जाय। युद्धमें जाकर विमुख होने भागने में भलाई नहीं है। मैंने अपनी भुजाओंके बलपर वैर बढ़ाया है। जो शत्रु चढ़ आया है, उसको मैं अपने ही उत्तर दे लूँगा।

उस समय असंख्य अशकुन होने लगे। पर अपनी भुजाओंके बलका बड़ा गर्व होनेसे रावण उन्हें गिनता नहीं है।

अत्यन्त गर्वके कारण वह शकुन-अशकुनका विचार नहीं करता। हथियार हाथोंसे गिर रहे हैं। योद्धा रथसे गिर पड़ते हैं। घोड़े, हाथी साथ छोड़कर चिग्घाड़ते हुए भाग जाते हैं। स्यार, गीध, कौए, और गदहे शब्द कर रहे हैं। बहुत अधिक कुत्ते बोल रहे हैं। उल्लू ऐसे अत्यन्त भयानक शब्द कर रहे हैं, मानो कालके दूत हों मृत्युका सँदेशा सुना रहे हों।

जो जीवोंके द्रोहमें रत है, मोहके वश हो रहा है, रामविमुख है और कामासक्त है, उसको क्या कभी स्वप्नमें भी सम्पत्ति, शुभ शकुन और चित्तकी शान्ति हो सकती है ?

राक्षसोंकी अपार सेना चली। चतुरंगिणी सेनाकी बहुत-सी टुकड़ियाँ हैं। अनेकों प्रकारके वाहन, रथ और सवारियाँ हैं तथा बहुत-से रंगोंकी अनेकों पताकाएँ और ध्वजाएँ हैं।

मतवाले हाथियोंके बहुत-से झुंड चले। मानो पवनसे प्रेरित हुए वर्षा-ऋतुके बादल हों। रंग-बिरंगे बाना धारण करनेवाले वीरोंके समूह हैं, जो युद्धमें बड़े शूरवीर हैं और बहुत प्रकारकी माया जानते हैं।

अत्यन्त विचित्र फौज शोभित है। मानो वीर वसन्तने सेना सजायी हो। सेनाके चलनेसे दिशाओंके हाथी डिगने लगे, समुद्र क्षुभित

हो गये और पर्वत डगमगाने लगे।

इतनी धूल उड़ी कि सूर्य छिप गये। फिर सहसा पवन रुक गया और पृथ्वी अकुला उठी। ढोल और नगाड़े भीषण ध्वनिसे बज रहे हैं, जैसे प्रलयकालके बादल गरज रहे हों।

भेरी, नफीरी तुरही और शहनाईमें योद्धाओंको सुख देनेवाला मारू राग बजा रहा है। सब वीर सिंहनाद करते हैं और अपने-अपने बल-पौरुषका बखान कर रहे हैं।

रावणने सारथिको रथ आगे बढ़ानेकी आज्ञा दी और इस प्रकार कहा- सूत। मेरे मन्त्री मारे गये और लमापुरीपर चारों ओरसे घेरा डाला गया। इसके लिये मुझे बड़ा दु:ख है। आज राम और लक्ष्मणका वध करके ही मैं अपने इस दु:खको दूर करूँगा।

ऐसा कहकर महान् अतिरथी वीर रावण अपने रथकी घर्घराहटसे दसों दिशाओंको गुँजाता हुआ बड़ी तेजीके साथ श्रीरघुनाथजीकी ओर बढ़ा। रावणने कहा- हे उत्तम योद्धाओं। सुनो। तुम रीछ-वानरोंके ठट्टको मसल डालो और मैं दोनों राजकुमार भाइयोंको मारूँगा। ऐसा कहकर उसने अपनी सेना सामने चलायी।

वे विशाल और कालके समान कराल वानर-भालू दौड़े। मानो पंखवाले पर्वतोंके समूह उड़ रहे हों। वे अनेक वर्णोंके हैं। नख, दाँत, पर्वत और बड़े-बड़े वृक्ष ही उनके हथियार हैं वे बड़े बलवान् हैं और किसीका भी डर नहीं मानते। रावणरूपी मतवाले हाथीके लिये सिंहरूप श्रीरामका जय-जयकार करके वे उनके सुन्दर यशका बखान करते हैं।

यह रहे राम। श्रीरामने गन्धर्वास्त्रका प्रयोग किया तो राक्षस मोहित होकर परस्पर एक दूसरेको राम समझकर एक दूसरेपर ही प्रहार करने लगे। जैसे सहस्त्रों राम हो गये हों।

श्रीराम एक भी हुए तो उनके करोंमें धनुष कुम्भकारके चक्रके समान घूम रहा था। घूम रहे थे वात्यचक्रके समान पवनपुत्र। राम दीखते ही नहीं थे उस प्रचण्ड वेगके कारण। आज श्रीराम राक्षसों को साक्षात् काल दीखने लगे।

उस समय रावणने तामस नामवाले अत्यन्त भयंकर महाघोर अस्त्रको प्रकट करके समस्त वानरोंको भस्म करना आरम्भ किया। सब ओर उनकी लाशें गिरने लगीं। वानर सेनाको रौंदता रावणका रथ बढ़ा। रावणकी अनवरत बाण-वर्षाके सम्मुख वानर टिक नहीं सकते थे। श्रीरामने धनुष चढ़ाया। वानर-सेनाको पीछे किया और अनुजसे कहा- लक्ष्मण। तुम सेनाको सम्हालो मैं इसे देखता हूँ।

रावणके उत्तम बाणोंसे आहत हो वानरोंकी सैकड़ों सेनाएँ तितर-बितर हो गयी हैं- यह देख भगवान् श्रीराम युद्धके लिये उद्यत हो सुस्थिरभावसे खड़े हो गये।

रावणके बाण-समूहोंसे तथा श्रीरामचन्द्रजीके धनुषकी टमारसे जो भयंकर शब्द प्रकट हुआ, उससे आतमित होकर सैकड़ों राक्षस तत्काल धराशायी हो गये। लक्ष्मण अपने पैने बाणोंके द्वारा रावणके साथ पहले स्वयं ही युद्ध करना चाहते थे; इसलिये धनुष तानकर वे अग्निशिखाके समान तेजस्वी बाण छोड़ने लगे।

बाणों की संख्या में कोई गिनती ही नहीं। आँखें मूँदकर दोनों धनुष खींचने लगे और चारों ओर अग्निमय देखकर त्रिभुवन कम्पित हो उठा। अष्टवसु सूर्य आदि काँपने लगे, रसातल काँप उठा, शून्य में सभी देवता काँपने लगे, बार-बार उल्कापात होने लगा, तारे गिरने लगे, इस प्रकार श्रीराम के त्रास से त्रिभुवन कम्पित हो उठा। उनके श्रीचरणों की चाप से लंका डाँवाडोल होने लगी। सिंहनाद से सागर के जल में उथल-पुथल मच गई। ऐसा लगने लगा कि गगन टूटा पड़ रहा है। धनुष की टंकार और बाणों की ठनाठन। चन्द्र-सूर्य का आवामन रुद्ध हो गया। दिवा निशि, सप्ताह- रण में कोई विराम नहीं। सात दिन हो गये, कौन कहाँ है दिखाई नहीं पड़ता। सुग्रीव, अंगद आदि भाग गये। नल नील, सुषेण, हनुमान भाग खडे हुए। अपनी-अपनी सेना लेकर प्राण लेकर सब भागे। शरभंग, द्विविद बेतहाशा भागे। पनस, केशरी भागे तो पीछे पलट कर भी नहीं देखा। अपने कटक के साथ असंख्य कपि भागने लगे। बाणों से लंका अंधकार-मयी हो गई- दृष्टि नहीं काम करती थी। गवाक्ष के हाथ में एक साखु का वृक्ष था, उसको फेंककर ऊपर मुख किये हुए वह अपनी सेना के साथ भाग खड़ा हुआ। श्रीराम-लक्ष्मण दोनों क्रोध से यमराज के समान हो गये और दोनों ही झुंड के झुंड बाण बरसाने लग गये। सारे राक्षस धनुष-बाण फेंक-फेंक कर भागने ले। सभी भालुओं को लेकर जाम्बवान भागे। राम-रावण के युद्ध में गिनती का कोई हिसाब नहीं, दोनों के अंग के मांस ही नष्ट हो गये। स्वर्ग में इन्द्रदेव और पाताल में बलिराजा काँपने लगे। बाणों की आग से सारी रणभूमि प्रदीप्त हो उठी। श्रीराम यों बाण फेंकते मानों नक्षत्र लपक रहा हो और रावण के अंग में वे बाण जाकर काँटों की तरह चुभते। उन्होंने अग्निबाण फेंका। चारों ओर

घोर शब्द हुआ किन्तु रावण पर इस बाण का कोई असर न हुआ। श्रीराम ने बेड़ापाक नामक बाण फेंका जो कि रणस्थल में कुम्हार के चाक जैसा घूमने लगा। झनझना कर महाशब्द उठा। बाण खाकर दशानन स्तब्ध बना रहा। श्रीराम का बाण वज्र के समान लपका और उस बाण के आघात से रावण तेजशून्य हो गया। शरीर के आभूषण और सिर से मुकुट गिर गये। बदन पर रक्त-मांस नहीं रहा और अब हड्डियों में बाण बिंधने लगे। हड्डिों को बिंध कर रघुनाथ ने उसे जर्जर कर डाला फिर भी दशानन संग्राम-स्थल में लड़ता ही रहा।

विभीषण ने कहा, हे राम, अब तुम धर्म-अस्त्र फेंको और रावण का स्वर्णनिर्मित कवच काट कर गिरा दो। जब कक्ष का कवच कट गया तो रावण चिन्तित हुआ। मन ही मन सोचने लगा कि भगवती ने अवश्य ही उसे त्याग दिया है। यह तो मैं जान ही गया कि राम विष्णु के अवतार हैं। जन्म लेते पर मरना ही पड़ेगा- उसकी कौन सी चिन्ता है। यदि राम मुझको मार गिराएँ तो मेरा जन्म सफल है। राम के सम्मुख आज शरीर त्याग कर जन्म सफल करता हुआ स्वर्गवास करने चला जाऊँगा। राम का सुन्दर मुख देखकर रावण के चेहरे पर हँसी आ गई। रावण ने सोचा कि मैं राम को कोई प्रेम-वचन नहीं कहूँगा, दया आ जाने से शायद वे मुझे न भी मारें। रावण ने राम से कहा, अपना गुमान छोडो, आज के युद्ध में मैं तेरा वध करूँगा। मैं कोई खर-दूषण नहीं हूँ, मैं हूँ लंका का रावण। अभी तुझे यम के घर भेजता हूँ। श्रीराम ने कहा, तू बड़े जीवट का है, मेरे बाण खाकर भी तू अभी तक जिन्दा है।

फिर एकबार राम-रावण में युद्ध छिड़ गया। बाण की आग गगन पर चढ़ गई। बाण घोर अँधेरी रात को प्रदीप्त करते रहे। युद्ध-स्थल पर मानों बिजलियाँ चमक रहीं हो। राम रघुवर ने शंकर बाण छोड़ा। रावण के वक्ष पर उसके लगने से वह कातर हो गया।

बाण खाकर दशानन का मन काँप उठा। उसने गुस्से में आकर पार्वती का महाशूल फेंका। राम का सहस्त्राक्ष बाण उद्‌र्ध्वमुख होकर चला और तत्काल रावण के वक्ष पर जा लगा। बाण के आघात से रावण त्रस्त हो उठा। तब राम ने विष्णुमंत्र का जाप कर गदा चलायी। राजा दशानन ने कालचक्र से उस गदा को काट गिराया। गदा व्यर्थ गयी देखकर कमल-लोचन राम सोच में पड़ गये। तब राजा दशानन ने पाशुपत-बाण फेंका। राम ने उसे विष्णुचक्र से काटा और क्रोध में आकर महाकाल बाण फेंका। रावण के वक्ष को छेदता हुआ वह बाण पाताल में प्रवेश कर गया।

रावणने जब अपने दल को पीछे हटते देखा तब तेवर तीखे कर तीर निकाले और तीखे तीर छोड़ने शुरू किये। तब कुहरे के समान वानर कटक फटने लगा। तब हनुमान ने देखा कपिदल बेचैन हो रहा है उसी समय हनुमान के नेत्र लाल हो गये और पर्वत का प्रबल प्रचण्ड खण्ड उठाकर तब हनुमान ने उस निशाचर समूह पर दे मारा। इससे निशाचरपति का रथ टूट गया। दशकंधर सन्नाटे में आ गया। असुरों का दल अचरज करने लगा कि हनुमान के हाथों फेंका हुआ पत्थर इतना बल लगता। तब रावण बोला- हे कपि, तुझे धन्य है। मैं तेरी शक्ति पर प्रसन्न हूँ। सुर, असूर, नाग, नर यक्षों में भी इतना साहस कभी देखा न सुना। जो रावण का रथ तोड़ सके यह बल भी कहीं देखा न सुना। आज यह प्रथम ही अवसर है जो तूने मेरा रथ तोड़ा है। तेरी इस जय पर जितना तेरा सम्मान करूँ उतना ही थोड़ा है। तब अंजनीलाल बोले हे जगविजय वीर, मैं वानर किस योग्य हूँ यह जो कुछ कृपा है वह तो श्रीरघुवीर की है। वे सारे जग को खेल खिलाते है यह खेल भी उन्हींका है। जब ग्रीष्म ऋतु बहुत गरम हो जाती है तब वर्षाऋतु लाती है। रावण बोला- हे कपि मैं समझ गया। तुम बालब्रह्मचारी हो। यह ब्रह्मचर्य का बल है। अब मेरी इच्छा है कि तुम मेरे साथी बन जाओ। रणनायक की पदवी लेकर मेरे रणमन्त्री हो जाओ।

तब हनुमान ने कहा- क्षमा करें महाराज। यह पदवी कोई मानके सूचक नहीं है। यह तो कोरे मिथ्याभिमान और गुमान की सूचक है। जो करनी करते है वे रण के सच्चे वीर कब कहते है, कब करते है। वे तो रणवीर इसी पर मरते है।

यह उत्तर सुनकर दशबदन लज्जित हो गया और बोला अच्छा देखूँ तेरा बल कितना है और यह कहकर हनुमान से चिपट गया। रघुवर का प्यारा कपि भी आगे बढ़कर उससे लिपट गया। अब ताल ठोककर मलयुद्ध हुआ। दोनों ही योद्धा आपसमें भिड़ते है। दूरसे यहीं ज्ञात होता है जैसे कज्जलगिरी और सुमेरुगिरी आपसमें लड़ते है। दोनों ओर दोनों आपस में दाँवपेच करते है। दोनों ही बाँके योद्धा है दोनों ही मल्ल अभिमानी है, दोनों ही वीर सिंह समान है और दोनों ही अति वरदानी थे। लड़ते-लड़ते जब दोनों बलवीर थक गए तब श्रान्त होकर इधर-उधर को हठ गये। तब रावण बोला- हनुमान अभी तक फैसला नहीं हुआ अब मुक्का मारकर इसका अन्त करना है। तब रावण ने बलवान हनुमान पर एक मुष्टिक प्रहार किया। तब हनुमान ने अपना एक हाथ भूमिपर रख दिया। यह देखकर दशकन्धर लज्जित हुआ। इतने में गर्जना कर बजरंग बोल उठे- हे दशानन, आज राम कृपा से तेरा बल निष्फल हुआ। अब हे असुरों के सरताज मेरी मुष्टिका प्रहार देख। इस तरह मुक्का मारकर कपिने जय रघुनाथ घोष किया। राक्षस मूर्च्छित हो गया। उसका सिर घूमने लगा।

तब कुछ चेतना आनेपर रावण बोला- हे बलशाली कपिवर, तेरी जननी धन्य है। जिसने ऐसा वीर पुत्र जन्मा है। मेरे सम्मुख जो भी कोई आया गन्धर्व, देवता, नर-किन्नर सब मेरे बल से थर्राये हैं। मैंने उन सबको पददलित किया है। प्रत्येक वीर इस दुनिया का मेरे बल के आधीन हुआ। मुझ बलशाली को धिक्कार है जो तेरी मुष्टिका प्रहार से मैं चेतनाहीन हुआ। तब हनुमन्त बोले- हे दशानन, तुझको धिक्कार नहीं मुझको धिक्कार है। जो मेरे मुक्के की मार खाकर अब तक तू जिता रह गया। मेरा मुक्का पड़ जायें तो क्षणभर में पर्वत भी चूर्ण हो जाता है। मेरे मुक्के में वो बल है जिससे धरती भी रसातल में धंस जाएँ। मुझे खेद है कि मेरा मुक्का खाकर भी तू आज मेरे सम्मुख जीवित है। हे दशकन्धर तू किसलिये लज्जित है ? हनुमान तो स्वयम् ही अपनेआप से लज्जित है।

तब रावण बोला- हे वानरे, तू किसलिए यह व्यंग कर रहा है। आज नहीं तो फिर कभी कर दूँगा तेरा मद भंग। अब तो सायंकाल हो चुका है युद्ध हो गया बन्द। कल प्रभात में तुम सभी का काटूँगा भव फन्द।

जब दूसरा दिन हुआ तो रावण क्रुद्ध होकर अपनी वीरता का नाना प्रकार युद्ध दिखाने लगा। उसने ऐसे-ऐसे बाण छोड़ें की वानरसेना काँप उठी। उन लाशोंसे वह रणका मैदान फटने लगा। पतझड़ के मौसम में जैसे वृक्षों के पत्ते झड़ते हैं वैसे ही रावण के बाणों से वानर- पर-वानर गिरने लगे। कपिदल में हाहाकार हुआ। रघुकुल नाथ की दुहाई देने लगे और बोले यह निशाचर नहीं है यह प्राणचर है। हम सब पर विपदा आयीं है जब तमाम वानरसेना कटने लग गयीं तो अपने आसन से रघुकुलभूषण लक्ष्मण उठे। जब अपने दासों पर संकट आयीं तो स्वामी कैसे विश्राम कर सकता है ? वही स्वरूप, वही स्वभाव इस अवसर पर प्रबल हो उठा। तब लक्षण सँभलकर यह देखकर कि लंकापति बढ़ते आता है राक्षस वानरोंको परास्त कर अब हम पर ही चढ़ते आता है। यहीं अवसर है लक्ष्मण रघुवंशी कहलानेका। यही तो समय है विश्वभर को सत् की जय दिखलाने का। रणमें जब दुष्ट राक्षस का वध करने का विधान होगा तब वन में की हुई प्रतिज्ञा का पूरा अनुष्ठान होगा। तब शान्त समुद्र में कुछ तूफान सा आया। लक्ष्मणने धनुषबाण हाथ में लेकर वल्कल का पटका कसकर बाँधा। वह उग्ररूप, अनूप विरासन पर धनुष बाण, सूर्यके समान दिखता हुआ बदन जिनकी आँखों ने देखा वहीं यह लाभ जानते हैं। वे हीं अपने जन्म और जीवन को सुखदायक सफल मानते हैं। इतने में ही दृश्य बदला। रावण कुछ बकता हुआ लक्ष्मण के सम्मुख आ पहुँचा और बोला- यह आग से मत खेलो यह आग तुम्हें खा जायेगी। इस आग की एक चिंगारी भी चटक उठी तो तुम्हारे प्राणोंपर आ जायगी। तब लक्ष्मण मौन नहीं रह सके और बोले- बेकार है तुम्हारी धमकी। चिंगारी क्या कर सकती है। यह सूर्यवंश ही तो अँगारे है। लक्ष्मण की बात सुनकर दशभाल गरज उठा और बोला- हे क्षत्री के लाल आओ रण में लड़ने को। तब राक्षसद्वारा आमन्त्रित हो हाथमें धनुषबाण लेकर कौशलसुत लक्ष्मण युद्ध करने चल पड़े।

धनुर्धर लक्ष्मणके धनुषसे छूटते ही उन बाणोंको महातेजस्वी रावणने अपने सायकोंद्वारा आकाशमें ही काट गिराया।

श्री राघवेन्द्र की जय कहकर दोनों ओर भारी लड़ाई ठन गई। शस्त्रों पर शस्त्र खटकने लगें, योद्धाओं से योद्धा झूझने लगे। रणबाँके अंगद और हनुमान आगे बढ़-बढ़कर लड़ने लगे। सब ओर से यहीं आवाजें आती थी काटो, छाँटो, पकड़ो खाओ, घेरो-घेरो-, मारो-मारो, भागो-भागो। पृथ्वीपर बलवान योद्धा कट-कट कर मरने लगे मानों लंकाका मैदान मुर्दोंकी बस्ती बन गया।

समरविजयी रावण सुमित्राकुमारको लाँघकर रणभूमिमें दूसरे पर्वतकी भाँति अविचल भावसे खड़े हुए श्रीरामके पास जा पहुँचा।

श्रीराम ने कहा, ऐ रावण तूने मृत्यु की इच्छा प्रकट की, अभी तुझे यम के सदन भेजता हूँ। इतना कहकर रघुवर क्रोध से काँपने लगे और फिर अपना धनुष-बाण उठा लिया। फिर श्रीराम-रावण में युद्ध छिड़ गया और गगन में बाण आपस में टकराकर एक दूसरे को काटने लग गये। पर्वत में जिस प्रकार सिंह-सिंह में लड़ाई छिड़ जाती है, उसी प्रकार श्रीराम और रावण में युद्ध ठन गया। राम ने धनुष की प्रत्यंचा पर पंचबाण छोड़ा जिसको रावण ने अग्निबाण से काट गिराया। राम ने रावण के शरीर पर गन्धर्वास्त्र फेंका तो उस अस्त्र के आघात से दशानन बेसुध हो गया।

श्रीरामके निकट जाकर क्रोधसे लाल आँखें किये राक्षसराज रावण उनके ऊपर बाणोंकी वृष्टि करने लगा।

श्रीरामने रावणके विषधर सर्पोंके समान महाभयंकर एवं दीप्तिमान् बाणसमूहोंको उन तीखे भल्लोंसे काट डाला।

श्रीरामने अपनी शक्ति दिखा दी और अपने प्रलयकाल के धनुष से खलदल में प्रलय मचा दी। जो बाण धनुष से चलता था उसके लाखों बाण बन जाते थे। इसतरह राम के कालबाण, लाखों को मिटा देते थे। जैसे आतिशबाजी वाला अनार चिंगारियों का घर है। वैसे ही राघव का एक बाण अगणित किरणों का सूर्य है। विज्ञान कला अति महान है इसको विद्वान ही जानते हैं। बहुत अगम वस्तुओं को वैज्ञानिक सुगम ही मानते हैं। अब भी देखो विज्ञान जगत् नये-नये आविष्कार करता है। उस त्रेता वाले युग में भी जगत् में वैज्ञानिक

भण्डार था। इतना ही नहीं एक तीर, लाखों के प्राण मिटाता था और फिर वहीं तीर लौटकर तर्कश में आ जाता था। या तो यह मन्त्रोंपचार था या उस समय की उन्नत विज्ञानकला। यह चमत्कार था प्रभु के बाणों में असीम शक्ति थी। इसप्रकार श्रीराम के धनुष से जब अखण्ड शर चलते थे तब समरस्थल में रक्त की सरिता बहती थी। जब-जब असुरोंका भीषण संहार होने लगा तब तो मानो मृत्यु का महाभयंकर ताण्डव होकर मृत्युका बजार गरम हुआ। लाशों पर लाशें पट गयी। रण बन गया शमशान। लंका का वह मैदान अब बन गया प्रेतस्थान। रात हुयी तो नाचने लगे भूत-वैताल और कर्कश स्वरों में कुत्ते, ऊल्लू और सियार अपनी वाणी में बोलने लगे। इसप्रकार दो दिन तक घोर संग्राम चला। राम के बाणोंसे शत्रुदल आहत हुआ। अगले दिन रणभूमि से निशाचर भाग गये यह देखकर लंकापति रावण क्रोधसे आग बन गया। तब लंकापति रावणने लप-लपाते बाण छोड़े और कपियों का साथ तोड़ दिया और अपने बाणोंसे राघवेन्द्र के रथ को भी उत्तर दिशा में मोड़ दिया। सुग्रीव, नील, नल, अंगदादि सबको पीड़ित किया।

फिर श्रीरामने रावणको और रावणने श्रीरामको अपना लक्ष्य बनाया और दोनों ही शीघ्रतापूर्वक एक दूसरेपर भाँति-भाँतिके पैने बाणोंकी वर्षा करने लगे। दोनों ही महान् धनुर्धर और दोनों ही युद्धकी कलामें निपुण थे। दोनों ही अस्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ थे; अत: दोनों बड़े ही उत्साहसे रणभूमिमें विचरने लगे। वे जिस-जिस मार्गसे जाते, उसी-उसीसे बाणोंकी लहर-सी उठने लगती थी। ठीक उसी तरह, जैसे वायुके थपेड़े खाकर दो समुद्रोंके जलमें उत्ताल तरङ्गें उठ रही हों।

श्रीराम और रावणके युद्धकी सृष्टि में तुलना नहीं है- सामान्य शर दोनोंमें कोई छूता नहीं था। सिंहमुख, शृगालमुख, सर्पमुख शरोंकी झड़ी भी क्षणिक थी। दिव्यास्त्र चलने लगे। आग्नेयास्त्र के विरुद्ध पार्जन्य मेघास्त्रके विरुद्ध वायव्य, पार्वतास्त्रके विरुद्ध ऐन्द्रास्त्र ये दिव्यास्त्र भी दशग्रीवको तुच्छ लगे। वह जो अस्त्र उठाता था, उसको श्रीराम उचित उत्तर देकर, व्यर्थ करते चले गये।

तत्पश्चात् क्रोधसे भरे हुए श्रीरामने पुन: बहुत-से बाण लेकर मन्त्रजपपूर्वक रौद्रास्त्रका प्रयोग किया।

श्रीरामके अस्त्रका निवारण करके क्रोधसे मूर्छित हुए रावणने आसुरनामक दूसरा महाभयंकर अस्त्र प्रकट किया।

अनायास ही महान् कर्म करनेवाले श्रीरामने उस आसुरास्त्रको नष्ट कर दिया, यह देख इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले सुग्रीव आदि सभी वीर वानर श्रीरामको चारों ओरसे घेरकर हर्षनाद करने लगे।

उस समय रावणके धनुषसे वज्रके समान दृढ़ और दमकते हुए शूल, गदा, मूसल, मुद्गर, कूटपाश तथा चमचमाती अशनि आदि भाँति-भाँतिके तीखे अस्त्र छूटने लगे, मानो प्रलयकालमें वायुके विविध रूप प्रकट हो रहे हों।

तब रामने गान्धर्वनामक श्रेष्ठ अस्त्रके द्वारा रावणके उस अस्त्रको शान्त कर दिया।

श्रीरामके द्वारा उस अस्त्रके प्रतिहत हो जानेपर रावणके नेत्र क्रोधसे लाल हो गये और उसने सूर्यास्त्रका प्रयोग किया।

चन्द्रमा और सूर्य आदि ग्रहोंके समान आकारवाले वे दीप्तिमान् अस्त्र-शस्त्र सब ओर प्रकट होते और गिरते थे। उनसे आकाशमें प्रकाश छा गया और सम्पूर्ण दिशाएँ उद्भासित हो उठीं।

उन महान् वेगशाली सायकोंद्वरा उन सुमित्राकुमारने रावणकी ध्वजाके, कई टुकड़े कर डालें।

इसके बाद महाबली श्रीमान् लक्ष्मणने एक बाणसे उस राक्षसके सारथिका जगमगाते हुए कुण्डलोंसे मण्डित मस्तक भी काट लिया।

तदनन्तर विभीषणने उछलकर अपनी गदासे रावणके नील मेघके समान कान्तिवाले सुन्दर पर्वताकार घोड़ोंको भी मार गिराया।

घोड़ोंके मारे जानेपर रावण अपने विशाल रथसे वेगपूर्वक कूद पड़ा और अपने भाईपर उसे बड़ा क्रोध आया। तब उस महान् शक्तिशाली प्रतापी राक्षसराजने विभीषणको मारनेके लिये एक वज्रके समान प्रज्वलित शक्ति चलायी। तदनन्तर रावणने विभीषणको मारनेके लिये एक ऐसी विशाल शक्ति हाथमें ली, जो अपनी अमोघताके लिये विशेष विख्यात थी। काल भी उसके वेगको नहीं सह सकता था। वह शक्ति अपने तेजसे उद्दीप्त हो रही थी।

दुरात्मा बलवान् रावणके द्वारा हाथमें ली हुई वह वेगशालिनी, महातेजस्विनी और वज्रके समान दीप्तिमती शक्ति अपने दिव्य तेजसे प्रज्वलित हो उठी। इसी बीचमें विभीषणको प्राण-संशयकी अवस्थामें पड़ा देख वीर लक्ष्मणने तुरंत उनकी रक्षा की। उन्हें पीछे करके वे स्वयं शक्तिके सामने खड़े हो गये।

विभीषणको बचानेके लिये वीर लक्ष्मण अपने धनुषको खींचकर हाथमें शक्ति लिये खड़े हुए रावणपर बाणोंकी वर्षा करने लगे। महात्मा लक्ष्मणके छोड़े हुए बाण-समूहोंका निशाना बनकर रावण अपने भाईको मारनेके पराक्रमसे विमुख हो गया। अब उसके मनमें

प्रहार करनेकी इच्छा नहीं रह गयी।

लक्ष्मणने मेरे भाईको बचा लिया, यह देख रावण उनकी ओर मुँह करके खड़ा हो गया और इस प्रकार बोला- अपने बलपर घमंड रखनेवाले लक्ष्मण। तुमने ऐसा प्रयास करके विभीषणको बचा लिया है, इसलिये अब उस राक्षसको छोड़कर मैं तुम्हारे ऊपर ही इस शक्तिका प्रहार करता हूँ।

यह शक्ति स्वभावसे ही शत्रुओंके खूनसे नहानेवाली है, यह मेरे हाथसे छूटते ही तुम्हारे हृदयको विदीर्ण करके प्राणोंको अपने साथ ले जायगी। मेरे शरणागतवत्सल अग्रजने विभीषणको अभय किया है। लक्ष्मणको निर्णय करने में आधा निमेष भी नहीं लगा। वे कूदकर विभीषणके आगे आ गये। शक्ति वक्षस्थल में लगी तो वे मूर्छित होकर गिरे। वज्र और अशनिके समान गड़गड़ाहट पैदा करनेवाली वह शक्ति युद्धके मुहानेपर भयानक वेगसे चलायी गयी और लक्ष्मणको वेगपूर्वक लगी।

लक्ष्मणकी ओर आती हुई उस शक्तिको लक्ष्य करके भगवान् श्रीरामने कहा- लक्ष्मणका कल्याण हो, तेरा प्राणनाशविषयक उद्योग नष्ट हो; अतएव तू व्यर्थ हो जा। वह शक्ति विषधर सर्पके समान भयंकर थी। रणभूमिमें कुपित हुए रावणने जब उसे छोड़ा, तब वह तुरंत ही निर्भय वीर लक्ष्मणकी छातीमें लग गयी।

नागराज वासुकिकी जिह्वाके समान देदीप्यमान वह महातेजस्विनी और महावेगवती शक्ति जब लक्ष्मणके विशाल वक्षस्थलपर गिरी, तब रावणके वेगसे बहुत गहराई तक धँस गयी। उस शक्तिसे हृदय विदीर्ण हो जानेके कारण लक्ष्मण पृथ्वीपर गिर पड़े।

यह विषादका समय नहीं है ऐसा सोचकर श्रीरामने रावणके वधका निश्चय करके महान् प्रयत्नके द्वारा सारी शक्ति लगाकर और लक्ष्मणकी ओर देखकर अत्यन्त भयंकर युद्ध प्रारम्भ किया।

अत्यन्त बलवान् रावणकी चलायी हुई उस शक्तिको लक्ष्मणकी छातीसे निकालनेके लिये बहुत प्रयत्न करनेपर भी वे श्रेष्ठ वानरगण सफल न हो सके। तब श्रीरामने उस भयंकर शक्तिको अपने दोनों हाथोंसे पकड़कर लक्ष्मणके शरीरसे निकाला और समराङ्गणमें कुपित हो उसे तोड़ डाला। तब क्रोधित होकर विभीषण बोले- अरे अभागे। मूर्ख, नीच, दुर्बुद्धे। तूने देवता, मनुष्य, मुनि, नाग सभीसे विरोध किया। तूने आदरसहित शिवजीको सिर चढ़ाये। इसीसे एक-एकके बदलेमें करोड़ों पाये।

उसी कारणसे अरे दुष्ट। तू अबतक बचा है। (किन्तु) अब काल तेरे सिरपर नाच रहा है। अरे मूर्ख। तू रामविमुख होकर सम्पत्ति सुख चाहता है ? ऐसा कहकर विभीषणने रावणकी छातीके बीचों-बीच गदा मारी।

बीच छातीमें कठोर गदाकी घोर और कठिन चोट लगते ही वह पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसके दसों मुखोंसे रुधिर बहने लगा; वह अपनेको फिर सँभालकर क्रोधमें भरा हुआ दौड़ा। दोनों अत्यन्त बलवान योद्धा भिड़ गये और मल्लयुद्धमें एक-दूसरेके विरुद्ध होकर मारने लगे। श्रीरघुवीरके बलसे गर्वित विभीषण उसको (रावण-जैसे जगद्विजयी योद्धाको) पासंगके बराबर भी नहीं समझते।

शिवजी कहते हैं- हे भवानी। विभीषण क्या कभी रावणके सामने आँख उठाकर भी देख सकता था ? परन्तु अब वही कालके समान उससे भिड़ रहा है। यह श्रीरघुवीरका ही प्रभाव है।

रावण खड़ा रहा, पर उसका शरीर अत्यन्त काँपने लगा। विभीषण वहाँ गये जहाँ सेवकोंके रक्षक श्रीराम थे। फिर रावणने ललकारकर हनुमानको मारा। वे पूँछ फैलाकर आकाशमें चले गये। रावणने पूँछ पकड़ ली, हनुमान उसको साथ लिये हुए ऊपर उड़े। फिर लौटकर महाबलवान् हनुमान उससे भिड़ गये। दोनों समान योद्धा आकाशमें लड़ते हुए एक-दूसरेको क्रोध करके मारने लगे।

इस पापात्मा एवं पापपूर्ण विचार रखनेवाले दशमुख रावणको अब मार डाला जाय, यही उचित है। जैसे पपीहेको ग्रीष्म ऋतुके अन्तमें मेघके दर्शनकी इच्छा रहती है, उसी प्रकार मैं भी इसका वध करनेके लिये चिरकालसे इसे देखना चाहता हूँ।

मेरे राज्यका नाश, वनका निवास, दण्डकारण्यकी दौड़-धूप, विदेहकुमारी सीताका राक्षसद्वारा अपहरण तथा राक्षसोंके साथ संग्राम- इन सबके कारण मुझे महाघोर दु:ख सहना पड़ा है और नरकके समान कष्ट उठाना पड़ा है; किंतु रणभूमिमें रावणका वध करके आज मैं सारे दु:खोंसे छुटकारा पा जाऊँगा।

जिसके लिये मैं वानरोंकी यह विशाल सेना साथ लाया हूँ, जिसके कारण मैंने युद्धमें बालिका वध करके सुग्रीवको राज्यपर बिठाया है तथा जिसके उद्देश्यसे समुद्रपर पुल बाँधा और उसे पार किया, वह पापी रावण आज युद्धमें मेरी आँखोंके सामने उपस्थित है। मेरे दृष्टिपथमें आकर अब यह जीवित रहने योग्य नहीं है।

आज संग्राममें देवता, गन्धर्व, सिद्ध, ऋषि और चारणोंसहित तीनों लोकोंके प्राणी रामका रामत्व देखें।

आज मैं वह पराक्रम प्रकट करूँगा, जिसकी जबतक यह पृथ्वी कायम रहेगी, तबतक चराचर जगत्के जीव और देवता भी सदा लोकमें एकत्र होकर चर्चा करेंगे और जिस प्रकार युद्ध हुआ है, उसे एक दूसरेसे कहेंगे।

ऐसा कहकर भगवान श्रीराम सावधान हो अपने सुवर्णभूषित तीखे बाणोंसे रणभूमिमें दशानन रावणको घायल करने लगे।

एक दूसरेंपर चोट करते हुए राम और रावणके छोड़े हुए श्रेष्ठ बाणोंके परस्पर टकरानेसे बड़ा भयंकर शब्द प्रकट होता था।

श्रीराम और रावणके बाण परस्पर छिन्न-भिन्न होकर आकाशसे पृथ्वीपर गिर पड़ते थे। उस समय उनके अग्रभाग बड़े उद्दीप्त दिखायी देते थे। राम और रावणके धनुषकी प्रत्यञ्चासे प्रकट हुई महान् टंकारध्वनि समस्त प्राणियोंके मनमें त्रास उत्पन्न कर देती थी और बड़ी अद्भुत प्रतीत होती थी। जैसे वायुके थपेड़े खाकर मेघ छिन्न भिन्न हो जाता है, उसी प्रकार श्रीरामके बाण-समूहोंकी वर्षासे आहत एवं पीड़ित हुआ रावण भयके मारे वहाँसे चला गया।

उस समय सुषेणने उन्हें आश्वासन देते हुए यह उत्तम बात कही- पुरुषसिंह। व्याकुलता उत्पन्न करनेवाली इस चिन्तायुक्त बुद्धिका परित्याग कीजिये; क्योंकि युद्धके मुहानेपर की हुई चिन्ता बाणोंके समान होती है और केवल शोकको जन्म देती है।

शत्रुओंका दमन करनेवाले वीर। आप विषाद न करें। लक्ष्मणके शरीरमें प्राण हैं। वीर। ये सो गये हैं। इनका शरीर शिथिल होकर भूतलपर पड़ा है। साँस चल रही है और हृदय बारंबार कम्पित हो रहा है- उसकी गति बंद नहीं हुई है। यह लक्षण इनके जीवित होनेकी सूचना दे रहा है।

सौम्य। तुम शीघ्र ही यहाँसे महोदय पर्वतपर, जिसका पता जाम्बवान् तुम्हें पहले बता चुके हैं, जाओ और उसके दक्षिण शिखरपर उगी हुई विशल्यकरणी, सावर्णकरणी, संजीवनकणी तथा सँधानी नामसे प्रसिद्ध महौषधियोंको यहाँ ले आओ। वीर। उन्हींसे वीरवर लक्ष्मणके जीवनकी रक्षा होगी।

पवनपुत्रको वह समर-भूमिसे दूर स्थापित शिखर उठा लानेमें क्या श्रम था। सुषेणने औषधि लीं और उनके उपचारसे लक्ष्मण ठीक हो गये। शत्रुका संहार करनेवाले लक्ष्मणके सारे शरीरमें बाण धँसे हुए थे। उस अवस्थामें उस औषधिको सूँघते ही उनके शरीर-से बाण निकल गये और वे निरोग हो शीघ्र ही भूतलसे उठकर खड़े हो गये।

तब श्रीरामने हनुमान का साधुवाद किया और बोले पवनकुमार तुम धन्य हो, धन्य हो। हे प्राणसखा, मैं तुम्हारा क्या प्रत्युपकार कर सकता हूँ। वे विभीषण और सुग्रीवको संबोधित कर बोले- हे विभीषण, हे सुग्रीव हनुमान के समान पृथ्वी में कोई बलवान नहीं है। इसने हमारे बहुत काम किये हैं। उसके लिए कोई काम दुर्घट नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार रघुराज ने हनुमान की बहुत प्रशंसा की। वे द्रवित हो गये। तब विभीषण बोला, हे प्रभु, जो आपके चरणों की सेवा किया करता हो, वह क्या नहीं कर पाएगा ? जिसने आपका आश्रय ग्रहण किया हो, वह काल से भी भय को प्राप्त नहीं होगा। जिस प्रकार एक तो पहले साँप है, और फिर उसके पंख निकल जाएँ तो वह जैसे अधिक शक्तिशाली बन जाता हो; जिस प्रकार एक तो पहले सिंह है, दूसरे वह पर्वत के मस्तक अर्थात शिखर पर चढ़ गया हो, जिस प्रकार एक तो कोई पहले ही से शूर है, दूसरे फिर वह युद्ध-भूमि में चढ़ दौड़ा हो, जिस प्रकार एक तो कोई पण्डित है, फिर दूसरे उसपर वाणी की देवी सरस्वती प्रसन्न हो गयी हो, जिस प्रकार एक तो कोई दानी पुरुष है, फिर दूसरे उसे धन मिल गया हो, जिस प्रकार एक तो कोई वैद्य है, फिर दूसरे उसे संजीवनी विद्या प्राप्त हो गयी हो, जिस प्रकार एक तो कोई मुमुक्षु है, फिर दूसरे उसे सद्गुरु मिल गये हों, एक तो कोई असुर है, फिर दूसरे उसपर शिवजी प्रसन्न हो गये हों, जिस प्रकार किसी आभूषण में अमूल्य रत्न जड़ गया हो, जिससे उसकी शोभा अत्यधिक बढ़ गयी हो, किसी राजा को निष्कण्टक राज्य प्राप्त हो गया हो, उस प्रकार ये हनुमान एक तो मूलत: महाबलवान् हैं, फिर दूसरे वे आपके दास हैं, तो वे ऐसा काम क्या नहीं कर पाएँगे ? ऐसी बातें सुनते ही रघुपति आनन्दित हो गये; हनुमान भी प्रसन्न हो गये।

लक्ष्मण बोले- आर्य। आप सत्यपराक्रमी हैं। आपने पहले रावणका वध करके विभीषणको लमाका राज्य देनेकी प्रतिज्ञा की थी। वैसी प्रतिज्ञा करके अब निर्बल मनुष्यकी भाँति आपको ऐसी बात नहीं कहनी चाहिये।

सत्यवादी पुरुष झूठी प्रतिज्ञा नहीं करते हैं। प्रतिज्ञाका पालन ही बड़प्पनका लक्षण है। निष्प्रान रघुवीर। मेरे लिये आपको इतना निराश नहीं होना चाहिये। आज रावणका वध करके आप अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिये।

ये सूर्यदेव अपने दिनभरका भ्रमणकार्य पूरा करके अस्ताचलको नहीं चले जाते, तबतक ही जितना शीघ्र सम्भव हो सके, मैं उस दुरात्मा रावणका वध देखना चाहता हूँ।

आर्य। वीरवर। यदि आप युद्धमें रावणका वध करना चाहते हैं, यदि आपके मनमें अपनी प्रतिज्ञाको पूरी करनेकी इच्छा है तथा आप राजकुमारी सीताको पानेकी अभिलाषा रखते हैं तो आज शीघ्र ही रावणको मारकर मेरी प्रार्थना सफल करें।

श्रीरामने सेनाके मुहानेपर रावणको लक्ष्य करके उन भयंकर बाणोंको छोड़ना आरम्भ किया। इतनेमें राक्षसराज रावण भी दूसरे रथपर सवार हो श्रीरामपर उसी तरह चढ़ आया, जेसे राहु सूर्यपर आक्रमण करता है।

श्रीराम भी एकाग्रचित्त हो रणभूमिमें दशमुख रावणपर प्रज्वलित अग्निके समान सुवर्णभूषित बाणोंकी वर्षा करने लगे।

२५) रावण वध- कंगले राजकुमार उसके सामने भूमि पर खड़े थे। रथी रावण के सामने उन्हें इसी प्रकार खड़े होना चाहिए था; जैसे वह सिंहासन पर बैठा हो और वे उसके सम्मुख हाथ बाँधे, भूमि पर खड़े, कुछ याचना कर रहे हों किंतु यथार्थ यह था कि वे उसकी राजसभा में नहीं, युद्ध-भूमि में खड़े थे। यद्यपि अपने महत्त्व के अनुकूल, नंगे पाँव, मिट्टी पर खड़े थे; किंतु उनके हाथ बंधे नहीं थे और वे शस्त्र-बद्ध थे। वे याचना नहीं, प्रहार कर रहे थे। रावण ने पहली बार अपने क्रोध के साथ-साथ एक पीड़ा का भी अनुभव किया। जिन्हें सदा अत्यंत नीच, हीन और दुर्बल माना था, वे उसके सामने युद्ध में समानता के अधिकार से डटे ही नहीं थे, उस पर कहीं भारी पड़ते जा रहे थे। राक्षस सेना की कोई-कोई टुकड़ी कहीं-कहीं अपने अस्तित्व के लिए युद्ध करती दिखाई पड़ रही थी और वानर-सेना सर्वग्रासी सागर के समान बची-खुची सेना को लीलने के लिए, अपना भयंकर मुख खोले आगे बढ़ती आ रही थी।

शत्रु अत्यन्त बलवान है। अस्त्रज्ञ है और रथारूढ़ है। लक्ष्मणके साथ ही विभीषण श्रीरामके समीप आ गये थे। उन्होंने हाथ जोड़कर प्रार्थना की- आप पदाति हैं। इतने दुर्जय शत्रुसे इस प्रकार संग्राममें पार पाना अत्यन्त कठिन है। आप पहिलेके समान पवनपुत्रके स्कन्धों पर आरूढ़ होना स्वीकार कर लें।

हे नाथ। आपके पद में न तो पदत्राण है, न आपके चढ़ने को कोई रथ है। न तन की रक्षा करनेवाला कवच है। मुझे विश्वास नहीं होता कि पैदल रथवाले को जीत लेंगे। जिसके बल से धरती कम्पित होती है, पाताल और स्वर्ग थर्राते है। उसको किस बल पर पैदल ही रघुनाथ जीतने जाते है ? वह बलवान रावण किसप्रकार आपसे जीता जायेगा ?

श्रीरामने कहा- विभीषण। विजय सामान्य स्यन्दनसे नहीं हुआ करती। शौर्य, धैर्य, साहस और धर्मका स्यन्दन विजयदायी होता है। तुम क्या समझते हो कि अधर्महत दशग्रीवको उसका यह रथ बचा लेगा ? हे सखे, सुनो जिससे जय होती है वह रथ दूसरा ही है।

शौर्य और धैर्य उस रथके पहिये हैं। सत्य और शील सदाचार उसकी मजबूत ध्वजा और पताका हैं। बल, विवेक, दम (इन्द्रियोंका वशमें होना) और परोपकार- ये चार उसके घोड़े हैं, जो क्षमा, दया और समतारूपी डोरीसे रथमें जोड़े हुए हैं।

ईश्वरका भजन ही उस रथको चलानेवाला चतुर सारथि है। वैराग्य ढाल है और सन्तोष तलवार है। दान फरसा है, बुद्धि प्रचण्ड शक्ति है, श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है।

निर्मल पापरहित और अचल स्थिर मन तरकसके समान है। शम मनका वशमें होना, अहिंसादि यम और शौचादि नियम- ये बहुत-से बाण हैं। ब्राह्मणों और गुरुका पूजन अभेद्य कवच है। इसके समान विजयका दूसरा उपाय नहीं है।

हे सखे। ऐसा धर्ममय रथ जिसके हो उसके लिये जीतनेको कहीं शत्रु ही नहीं है।

हे धीर बुद्धिवाले सखा। सुनो, जिसके पास ऐसा दृढ़ रथ हो, वह वीर संसार (जन्म-मृत्यु)- रूपी महान् दुर्जय शत्रुको भी जीत सकता है रावणकी तो बात ही क्या है।

हमारे पास धर्म का रथ है इससे हम निर्द्वन्द है।

प्रभुके वचन सुनकर विभीषणजीने हर्षित होकर उनके चरणकमल पकड़ लिये और कहा- हे कृपा और सुखके समूह श्रीराम। आपने इसी बहाने मुझे महान् उपदेश दिया।

तब रावण बोला- तुच्छ बालक जब लड़ने के लिए पैदल आते है तब उसे रथपर बैठकर लड़ने में यह लंका का नाथ लजाता है। जिस तरह निहत्थे बैरी का वध करना योद्धा का कर्म नहीं है वैसे ही पैदल से रथारूढ़ होकर लड़ना योद्धा का धर्म नहीं है। यह कहकर दशग्रीवने

रथ छोड़ दिया और बोला लो मैं भी पैदल हो गया हूँ। चुटपुट करने के लिए तुम्हें कल के दिन से मैं व्याकुल हूँ। आगे को बढ़ गया धनुष की डोर खींचकर। घोर युद्ध होने लगा कुछ क्षणोंमें दोनों ओर। बाणों-से बाण बिंध रहे थे ऐसा बानक था बना हुआ। मानो युद्धभूमिपर बाणों का वितान तना हुआ था। वह रणस्थल रक्तस्थल बन गया। जहाँ वीरदलों का नर्तन हो रहा था।

दोनों ओरके योद्धा रण-रसमें मतवाले हो रहे हैं। वानरोंको श्रीरामका बल है, इससे वे जयशील हैं जीत रहे हैं। एक दूसरेसे भिड़ते और ललकारते हैं और एक-दूसरेको मसल-मसलकर पृथ्वीपर डाल देते हैं। वे मारते, काटते, पकड़ते और पछाड़ देते हैं और सिर तोड़कर उन्हीं सिरोंसे दूसरोंको मारते हैं। पेट फाड़ते हैं, भुजाएँ उखाड़ते हैं और योद्धाओंको पैर पकड़कर पृथ्वीपर पटक देते हैं।

राक्षस योद्धाओंको भालू पृथ्वीमें गाड़ देते हैं और ऊपरसे बहुत-सी बालू डाल देते हैं। युद्धमें शत्रुओंसे विरुद्ध हुए वीर वानर ऐसे दिखायी पड़ते हैं मानो बहुत-से क्रोधित काल हों।

क्रोधित हुए कालके समान वे वानर खून बहते हुए शरीरोंसे शोभित हो रहे हैं। वे बलवान् वीर राक्षसोंकी सेनाके योद्धाओंको मसलते हैं और मेघकी तरह गरजते हैं। डाँटकर चपेटोंसे मारते, दाँतोंसे काटकर लातोंसे पीस डालते हैं। वानर-भालू चिङ्घाड़ते और ऐसा छल-बल करते हैं जिससे दुष्ट राक्षस नष्ट हो जायँ।

वे राक्षसोंके गाल पकड़कर फाड़ डालते हैं, छाती चीर डालते हैं और उनकी अँतड़ियाँ निकालकर गलेमें डाल लेते हैं। वे वानर ऐसे देख पड़ते हैं मानो प्रह्लादके स्वामी श्रीनृसिंह भगवान् अनेकों शरीर धारण करके युद्धके मैदानमें क्रीडा कर रहे हों। पकड़ो, मारो, काटो, पछाड़ों आदि घोर शब्द आकाश और पृथ्वीमें भर (छा) गये हैं। श्रीरामकी जय हो, जो सचमुच तृणसे वज्र और वज्रसे तृण कर देते हैं। निर्बलको सबल और सबलको निर्बल कर देते हैं।

रावण अत्यन्त क्रोधित होकर दौड़ा। वानर हुंकार करते हुए लड़नेके लिये उसके सामने चलें। उन्होंने हाथोंमें वृक्ष, पत्थर और पहाड़ लेकर रावणपर एक ही साथ डाले।

श्रीराम भूमिपर खड़े हैं और वह राक्षस रथपर बैठा हुआ है, ऐसी दशामें इन दोनोंका युद्ध बराबर नहीं है, वहाँ आकाशमें खड़े हुए देवता, गन्धर्व और किन्नर इस तरहकी बातें करने लगे।

उनकी ये अमृतके समान मधुर बातें सुनकर तेजस्वी देवराज इन्द्रने मातलिको बुलाकर कहा- सारथे। रघुकुलतिलक श्रीराम भूमिपर खड़े हैं। मेरा रथ लेकर तुम शीघ्र उनके पास जाओ। भूतलपर पहुँचकर श्रीरामको पुकारकर कहो- यह रथ देवराजने आपकी सेवामें भेजा है। इस तरह उन्हें रथपर बिठाकर तुम देवताओंके महान् हितका कार्य सिद्ध करो।

काले अश्वोंसे जुते, स्वर्णमाल्य-सज्जित मेघाकार रथपर दशग्रीव बैठा। नगरद्वारसे निकला और उसने प्रचण्ड बाण-वर्षा प्रारम्भ कर दी। इसी समय इन्द्रका रथ लेकर उनका सारथि मातलि आया।

उसने श्रीरामसे प्रार्थना की- सुरपतिने आपकी सेवामें अपना यह दिव्य रथ भेजा है। आप इसपर आरूढ़ हों।

सहस्रलोचन इन्द्रका सारथि मातलि चाबुक लिये रथपर बैठा हुआ हाथ जोड़कर श्रीरामसे बोला- श्रीरघुवीर। देवराज इन्द्रने विजयके लिये आपको यह रथ समर्पित किया है। यह इन्द्रका विशाल धनुष है। यह अग्निके समान तेजस्वी कवच है। ये सूर्यसदृश प्रकाशमान बाण हैं तथा वह कल्याणमयी निर्मल शक्ति है। वीरवर महाराज। आप इस रथपर आरूढ़ हो मुझ सारथिकी सहायतासे राक्षसराज रावणका उसी तरह वध कीजिये, जैसे महेन्द्र दानवोंका संहार करते हैं।

आर्य। मैं देवराज इंद्र का सारथि मातलि हूँ। सारथि ने निकट आते ही अपना परिचय दिया, यह रथ देवराज ने आपकी सहायता के लिए भेजा है। समय नष्ट न कीजिए। युद्ध की सारी सामग्री रथ में विद्यमान है।

इंद्र। राम ने विस्मय से पूछा, इंद्र मेरी सहायता क्यों कर रहे हैं ? मेरा उनसे कोई मैत्री संबंध नहीं है।

विलम्ब न करें, आर्य। मातलि बोला, इंद्र ने राम की नहीं, देवशत्रु रावण के शत्रु की सहायता की है। ऐसा न हो कि रथ के अभाव के कारण आपका यह जीता हुआ युद्ध भी आपको विजयी बनाने में असफल रह जाए।

हमारे पास कोई सारथि भी तो नहीं है।

मैं जो हूँ। मातलि बोला, युद्धपर्यंत आपका सारथित्व करूँगा।

मातलि ! को देखते ही रावण पहचान गया- इंद्र उस पर वार कर गया था। मेघनाथ से हारकर, राक्षसों की सेना से सम्मुख युद्ध का

साहस इंद्र कभी नहीं कर सका, तो अब उसने राम को सहायता भेजी है। रथ, सारथि, कवच, धनुष, बाण, शक्तियाँ घृणित शत्रु है इंद्र। जिस समय रावण विपत्ति में फँसा हुआ है सेना ध्वस्त है, सेनापति मारे जा चुके हैं। वानर सेना ने उसे चारों ओर से घेर रखा है, वानर सेनापति युद्ध में सक्षम है, ऐसे में इंद्र ने प्रहार किया है। रावण के घातक और गम्भीर शत्रु को रथ और शस्त्र पहुँचा दिए। इंद्र को क्या अब रावण का भय नहीं रहा ? न सही रावण। वह महादेव शिव से भी नहीं डरता क्या ?

इन्द्र का रथ रण-स्थल में देखकर रावण मन ही मन चिन्तित हुआ और उसका साहस टूटने लगा। दशानन ने मन ही मन अनुमान लगाया और इन्द्र का विमान पहचान लिया। हाय। इन्द्रजीत कहाँ गया और मेरा भाई कुम्भकर्ण भी कहाँ चला गया। वे होते तो अभी देवताओं को मजा चखा देते। इतने दिनों तक सेवक की तरह सेवा करते रहे और अब बुरा समय देखकर शत्रु के अनुगत बन गये हैं। मेरी मौजूदगी में ही वे शत्रु को रथ भेज रहे हैं, इतना कहकर उसने कोप से स्वर्ग की ओर देखा। क्रोधित होकर लंकेश्वर ने मातलि से कहा, जितने देवता हैं वे सबल के ही सहायक बनते हैं। इस बार के युद्ध में यदि प्राणों से बच कर गया तो एक-एक कर सारे देवताओं को काट डालूँगा।

मातलिके ऐसा कहनेपर श्रीरामने उस रथकी परिक्रमा की और उसे प्रणाम करके वे उसपर सवार हुए। उस समय अपनी शोभासे वे समस्त लोकोंको प्रकाशित करने लगे।

मातलि सावधान। शत्रुका रथ हमको दक्षिण करके वाम भागमें जा रहा है। मैं आज इसे मार देना चाहता हूँ। अपने नेत्र स्थिर रखना, अव्यग्र रहना। रथ-रश्मि सँभालकर आगे बढ़ो। तुम सुरपतिके सारथि हो। तुमने अनेक बार असुरोंका युद्ध देखा है। तुम्हें सचेत करना अनावश्यक है। मैं अब युद्धमें एकाग्र हो रहा हूँ।

मातलिने नि:शब्द सिर झुकाकर आदेश स्वीकार किया। उसी क्षण उस सुरेन्द्र-सारथिका कौशल प्रकट हुआ। उसने रथको ऐसा वेग दिया कि रथ-चक्रोंसे उड़ती धूलिसे रावणके लिए कुछ भी देखना असम्भव हो गया।

तत्पश्चात् महाबाहु श्रीराम और राक्षस रावणमें द्वैरथ युद्ध प्रारम्भ हुआ, जो बड़ा ही अद्‌भुत और रोंगटे खड़े कर देनेवाला था।

तब राक्षसोंके निशाचर रावणने अत्यन्त कुपित हो पुन: परम भयानक राक्षसास्त्रका प्रयोग किया।

युद्धस्थलमें उन सर्पोंको आते देख भगवान् श्रीरामने अत्यन्त भयंकर गारुडास्त्रको प्रकट किया।

इस प्रकार अपने अस्त्रके प्रतिहत हो जानेपर राक्षसराज रावण क्रोधसे जल उठा और उस समय श्रीरघुनाथजीपर भयंकर बाणोंकी वर्षा करने लगा।

रावण ने गांधर्वास्त्र का प्रयोग किया। राम ने भी उसी अस्त्र से उसका प्रतिकार कर दिया। रावण ने देवास्त्र फेंका। राम ने भी देवास्त्र का ही प्रयोग किया। रावण ने राक्षसास्त्र फेंका तो राम ने गरुड़ास्त्र से प्रहार किया।

रावण के बाण उग्र से उग्रतर होते जा रहे थे, और राम का युद्ध अधिक-से-अधिक रक्षात्मक होता जा रहा था। रावण जैसे हारे हुए युद्ध को पलट देने के प्रयत्न में था, और राम युद्ध की यथास्थिति बनाए रखना चाह रहे थे।

राम पर प्रहार करने में असफल हो रावण ने अपने रोष में राम के रथ की ध्वजाशचि काट दी, घोड़ों को घायल किया और अंतत: मातलि पर भी अनेक प्रहार किए।

उस समय दस मस्तक और बीस भुजाओंसे युक्त दशग्रीव रावण हाथोंमें धनुष लिये मैनाक पर्वतके समान दिखायी देता था।

राक्षस रावणके बाणोंसे बारंबार निरस्त आहत होनेके कारण भगवान् श्रीराम युद्धके मुहानेपर अपने सायकोंका संधान नहीं कर पाते थे।

उस समय कुपित हुए बुद्धिमान् श्रीरामके मुखकी ओर देखकर समस्त प्राणी भयसे थर्रा उठे और पृथ्वी काँपने लगी।

सिंहों और व्याघ्रोंसे भरा हुआ पर्वत हिल गया। उसके ऊपरके वृक्ष झूमने लगे और समुद्रमें ज्वार आ गया।

आकाशमें सब ओर उत्पातसूचक गर्दभाकार प्रचण्ड गर्जना करनेवाले रूखे बादल गर्जते हुए चक्कर लगाने लगे।

श्रीरामको अत्यन्त कुपित और दारुण उत्पातोंका प्राकट्य देखकर समस्त प्राणी भयभीत हो गये तथा रावणके भीतर भी भय समा गया।

इतनी देरमें रावणके साथ आये-असिलोमा, वहिलोमा आदि जो थोड़ेसे राक्षस सैनिक थे, उन्हें अङ्गदादिने मार दिया। अब श्रीराम और रावणका द्वैरथ युद्ध आरम्भ हुआ। शेष सब तटस्थ दर्शक रह गये।

अब दोनों ओरसे दिव्यास्त्रोंकी वर्षा प्रारम्भ हुई। दोनों ही दिव्यास्त्रोंके लोकोत्तर ज्ञाता। सुर भी चकित रह गये। युद्ध-भूमिमें पल-पल प्रचण्ड तेज, प्रलय-मेघ गर्जन, ब्रह्माण्ड-भेदी शब्द, अग्नि, जल वायु आदिका अकल्पनीय वेग प्रकट होने लगा। दोनों, दोनोंके

दिव्यास्त्रोंका प्रत्यास्त्रोंसे उत्तर देने लगे।

उस अवसरपर युद्ध देखनेके लिये आये हुए समस्त देवता और असुर उस महासमरको देखकर भक्तिभावसे हर्षपूर्वक बातें करने लगे।

उस महाकाय दुरात्मा निशाचरके भैरवनादसे सम्पूर्ण प्राणी थर्रा उठे और सागर भी विक्षुब्ध हो उठा।

राम। यह शूल वज्रके समान शक्तिशाली है। इसे मैंने रोषपूर्वक अपने हाथमें लिया है। यह भाईसहित तुम्हारे प्राणोंको तत्काल हर लेगा।

युद्धकी इच्छा रखनेवाले राघव। आज तुम्हारा वध करके सेनाके मुहानेपर जो शूरवीर राक्षस मारे गये हैं, उन्हींके समान अवस्थामें तुम्हें भी पहुँचा दूँगा। रघुकुलके राजकुमार। ठहरो, अभी इस शूलके द्वारा तुम्हें मौतके घाट उतारता हूँ। ऐसा कहकर राक्षसराज रावणने श्रीरामके ऊपर उस शूलको चला दिया।

रावण ने एक भयंकर शूल राम पर फेंका। राम की चेतना फड़फड़ाकर जाग उठी। उनके बाण निष्फल हो रहे थे। उन्होंने रथ में से इंद्र की एक शक्ति उठा ली। शक्ति के प्रहार से शूल को मार्ग में ही नष्ट कर दिया। अब प्रहार करने की बारी राम की थी।

परम पराक्रमी श्रीरामने उस भयंकर एवं प्रज्वलित शूलको अपनी ओर आते देख धनुष तानकर बाणोंकी वर्षा आरम्भ कर दी।

श्रीरघुनाथने बाणसमूहोंद्वारा अपनी ओर आते हुए शूलको उसी तरह रोकनेका प्रयास किया, जैसे देवराज इन्द्र ऊपरकी ओर उठती हुई प्रलयाग्निको संवर्तक मेघोंके बरसाये हुए जलप्रवाहके द्वारा शान्त करनेकी चेष्टा करते हैं।

परंतु जैसे आग पतंगोंको जला देती है, उसी तरह रावणके उस महान् शूलने श्रीरामके धनुषसे छूटे हुए समस्त बाणोंको जलाकर भस्म कर दिया। अत्यन्त क्रोधसे भरे हुए श्रीरामने मातलिकी लायी हुई देवेन्द्रद्वारा सम्मानित शक्तिको हाथमें ले लिया। श्रीरामने जब उसे चलाया, तब वह शक्ति राक्षसराजके उस शूलपर ही पड़ी। उसके प्रहारसे टूक-टूक और निस्तेज हो वह महान् शूल पृथ्वीपर गिर पड़ा।

श्रीरामके द्वारा क्रोधपूर्वक अत्यन्त पीड़ित किये जानेपर युद्धकी इच्छा रखनेवाले रावणको महान क्रोध हुआ।

युद्धस्थलमें रावणके धनुषसे छूटे हुए बाणसमूहोंसे व्याप्त हो जानेपर भी श्रीरघुनाथ विचलित नहीं हुए क्योंकि वे महान् पर्वतकी भाँति अचल थे। इसी समय क्रोधसे भरे हुए वीर दशरथकुमार श्रीरामने रावणसे हँसते हुए कठोर वाणीमें कहा- नीच राक्षस। तू मेरे अनजानमें जनस्थानसे मेरी असहाय स्त्रीको हर लाया है, इसलिये तू बलवान या पराक्रमी तो कदापि नहीं है।

विशाल वनमें मुझसे विलग हुई दीन अवस्थामें विद्यमान विदेहराजकुमारीका बलपूर्वक अपहरण करके तू अपनेको शूरवीर समझता है?

असहाय अबलाओंपर वीरता दिखानेवाले निशाचर। परस्त्रीके अपहरण- जैसे कापुरुषोचित कर्म करके तू अपनेको शूरवीर मानता है?

धर्मकी मर्यादा भङ्ग करनेवाले पापी, निर्लज्ज और सदाचारशून्य निशाचर। तूने बलके घमंडसे वैदेहीके रूपमें अपनी मौत बुलायी है। क्या अब भी तू अपनेको शूरवीर समझता है ? तू बड़ा शूरवीर, बलसम्पन्न और साक्षात् कुबेरका भाई जो है। इसीलिये तून यह परम प्रशंसनीय और महान् यशोवर्धक कर्म किया है। अभिमानपूर्वक किये गये उन निन्दित और अहितकर पापकर्मका जो महान् फल है, उसे तू आज अभी प्राप्त कर ले। निशाचर। तू अपनेको शूरतासे सम्पन्न समझता है; किंतु सीताको चोरकी तरह चुराते समय तुझे तनिक भी लज्जा नहीं आयी ?

मन्दबुद्धे। सौभाग्यकी बात है कि आज तू मेरी आँखों-के सामने आ गया है। मैं अभी तुझे अपने तीखे बाणोंसे यमलोक पहुँचाता हूँ। आज मेरे बाणोंसे विदीर्ण प्राणशून्य होकर पड़े हुए तेरे शरीरकी आँतोंको पक्षी उसी तरह खींचें, जैसे गरुड़ सर्पोंको खींचते हैं। उस समय युद्धस्थलमें शत्रुवधकी इच्छा रखनेवाले श्रीरामका बल, पराक्रम, उत्साह और अस्त्र-बल बढ़कर दूना हो गया। अपनेमें ये शुभ लक्षण प्रकट हुए जान राक्षसोंका अन्त करनेवाले भगवान् श्रीराम पुन: रावणको पीड़ित करने लगे। वानरोंके चलाये हुए प्रस्तरसमूहों और श्रीरामके छोड़े हुए बाणोंकी वर्षासे आहत होकर रावणका हृदय व्याकुल एवं विभ्रान्त हो उठा।

संग्राम स्थल पर दोनों में महायुद्ध ठन गया। कोप से राम रावण को कुशब्द कहने लगे। सब लोग तुझको महाराज रावण कहा करते हैं और तुझको दूसरे की नारी चुराते लाज नहीं आई। मेरे सम्मुख यदि तू सीता को लाया होता तो उसी दिन तुझको भी खर के साथ यम-सदन भेज देता। मेरे मौजूद न होने पर तूने चोरी की। देख, आज तुझको यमपुरी भेजे देता हूँ। अपने दशमुंडों को तूने विभिन्न अलंकारों से सुसज्जित किया है। तेरे ये मुंड समुद्र के तट पर लुढ़केंगे। ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, देवेन्द्र और वासुकि किसकी शक्ति है कि तेरी रक्षा करे, तू मेरे हाथों पड़ा है। इस प्रकार धिक्कारने से श्रीराम की शक्ति बढ़ गई और वे चुन-चुनकर बाण बरसाने लगे। वानर चारों ओर पेड़-पत्थर बरसाने लगे और चारों ओर से मारने लगे। रावण से इतना सहा नहीं गया। आयु समाप्त हो रही है और रावण का बल

टूटने लगा है। रावण चारों ओर राम का रूप निहारने लगा। राम ने रावण पर वज्र-अस्त्र फेंका तो वह मूर्छित होकर रथ के भीतर गिर पड़ा। हाथ-पैर पटक कर राजा छटपटाने लगा। सारथि रथ लेकर भाग खड़ा हुआ।

जब हृदयकी व्याकुलताके कारण उसमें शस्त्र उठाने, धनुषको खींचने और श्रीरामके पराक्रमका सामना करनेकी क्षमता नहीं रह गयी तथा जब श्रीरामके शीघ्रतापूर्वक चलाये हुए बाण एवं भाँति-भाँतिके शस्त्र उसकी मृत्युके साधक बनने लगे और उसका मृत्युकाल समीप आ पहुँचा, तब उसकी ऐसी अवस्था देख उसका रथचालक सारथि बिना किसी घबराहटके उसके रथको रणभूमिसे दूर हटा ले गया।

अपने राजाको शक्तिहीन होकर रथपर पड़ा देख रावणका सारथि मेघके समान गम्भीर घोष करनेवाले उसके भयानक रथको लौटाकर उसके साथ ही भयके मारे समरभूमिसे बाहर निकल गया।

रावण कालकी शक्तिसे प्रेरित हो रहा था, अत: मोहवश अत्यन्त कुपित हो क्रोधसे लाल आँखें करके अपने सारथिसे बोला- दुर्बुद्धे। क्या तूने मुझे पराक्रमशून्य, असमर्थ, पुरुषार्थशून्य, डरपोक, ओछा, धैर्यहीन, निस्तेज, मायारहित और अस्त्रोंके ज्ञानसे वञ्चित समझ रक्खा है, जो मेरी अवहेलना करते तू अपनी बुद्धिसे मनमाना काम कर रहा है तूने मुझसे पूछा क्यों नहीं ?

मेरा अभिप्राय क्या है, यह जाने बिना ही मेरी अवहेलना करके तू किसलिये शत्रुके सामनेसे मेरा यह रथ हटा लाया ?

अनार्य। आज तूने मेरे चिरकालसे उपार्जित यश, पराक्रम, तेज और विश्वासपर पानी फेर दिया।

मेरे शत्रुका बल-पराक्रम विख्यात है। उसे अपने बल-विक्रमद्वारा संतुष्ट करना मेरे लिये उचित है और मैं युद्धका लोभी हूँ, तो भी तूने रथ हटाकर शत्रुकी दृष्टिमें मुझे कायर सिद्ध कर दिया।

हित चाहनेवाले मित्रका यह काम नहीं है। तूने जो कार्य किया है, वह शत्रुओंके करने योग्य है।

यदि तू मेरे साथ बहुत दिनोंसे रहा है और यदि मेरे गुणोंका तुझे स्मरण है तो मेरे इस रथको शीघ्र लौटा ले चल। कहीं ऐसा न हों कि मेरा शत्रु भाग जाय।

कुछ दूर पहुँचकर रावण होश में आ गया। आँख गुरेरते हुए उसने सारथि को कुवचन कहे। वैरी के साथ मैं रणभूमि में युद्ध कर रहा हूँ, किसके कहने पर तू रथ लेकर भाग आया। बल में ऱ्हास देखकर तू घबरा गया, तूने हीनबुद्धि का काम किया, क्या तुझे इसका डर नहीं। राम के साथ सलाह कर तू मेरे साथ टिका हुआ है, रण से तू भाग आया, तुझे इसका कोई भय नहीं।

रावण ने सारथि को डाँटा, मूर्ख। कहाँ भगाए लिये जा रहा है तू ?

राजाधिराज। आपकी रक्षा।

किसकी रक्षा। रावण बोला, मेरे यश को नष्ट कर, मुझे कलंकित करना चाहता है ? शत्रुओं से उत्कोच लिया है तूने क्या ?

राजाधिराज।

लौट जा।

यद्यपि सारथिकी बुद्धिमें रावणके लिये हितकी ही भावना थी तथापि उस मूर्खने जब उससे ऐसी कठोर बात कही, तब सारथिने बड़ी विनयके साथ यह हितकर वचन कहा- महाराज। मैं डरा नहीं हूँ। मेरा विवेक भी नष्ट नहीं हुआ है और न मुझे शत्रुओंने ही बहकाया हे। मैं असावधान भी नहीं हूँ। आपके प्रति मेरा स्नेह भी कम नहीं हुआ है तथा आपने जो मेरा सत्कार किया है, उसे भी मैं नही भूला हूँ।

मैं सदा आपका हित चाहता हूँ और आपके यशकी रक्षाके लिये ही यत्नशील रहता हूँ। मेरा हृदय आपके प्रति स्नेहसे आर्द्र है। इस कार्यसे आपका हित होगा- यह सोचकर ही मैंने इसे किया है। भले ही वह आपको अप्रिय लगा हो।

महाराज। मैं आपके प्रिय और हितमें तत्पर रहनेवाला हूँ; अत: इस कार्यके लिये आप किसी ओछे और अनार्य पुरुषकी भाँति मुझपर दोषारोपण न करें। जैसे चन्द्रोदयके कारण बढ़ा हुआ समुद्रका जल नदीके वेगको पीछे लौटा देता है, उसी प्रकार मैंने जिस कारणसे आपके रथको युद्धभूमिमें पीछे हटाया है, उसे बता रहा हूँ।

उस समय मैंने यह समझा था कि आप महान् युद्धके कारण थक गये हैं। शत्रुकी अपेक्षा मैंने आपकी प्रबलता नहीं देखी, आपमें अधिक पराक्रम नहीं पाया। मेरे घोड़े भी रथको खींचते-खींचते थक गये थे। इनके पाँव लड़खड़ा रहे थे। ये धूपसे पीड़ित हो वर्षाकी मारी हुई गौओंके समान दुखी हो गये थे। साथ ही इस समय मेरे सामने जो-जो लक्षण प्रकट हो रहे हैं, यदि वे सफल हुए तो हमें उसमें अपना अमङ्गल ही दिखायी देता है।

सारथिको देश-कालका, शुभाशुभ लक्षणोंका, रथीकी चेष्टाओंका, उत्साह, अनुत्साह और खेदका तथा बलाबलका भी ज्ञान रखना चाहिये। धरतीके जो ऊँचे-नीचे, सम-विषम स्थान हों, उनकी भी जानकारी रखनी चाहिये। युद्धका उपयुक्त अवसर कब होगा, इसे जानना और शत्रुकी दुर्बलतापर भी दृष्टि रखनी चाहिये।

शत्रुके पास जाने, दूर हटने, युद्धमें स्थिर रहने तथा युद्धभूमिसे अलग हो जानेका उपयुक्त अवसर कब आता है, इन सब बातोंको समझना रथपर बैठे हुए सारथिका कर्तव्य है। आपको तथा इन रथके घोड़ोंको थोड़ी देरतक विश्राम देने और खेद दूर करनेके लिये मैंने जो यह कार्य किया है, सर्वथा उचित है।

वीर। प्रभो। मैंने मनमानी करने के लिये नहीं, स्वामीके स्नेहवश उनकी रक्षाके लिये इस रथको दूर हटाया है।

शत्रुसूदन वीर। अब आज्ञा दीजिये। आप ठीक समझकर जो कुछ भी कहेंगे, उसे मैं मनमें आपके ऋणसे उऋण होनेकी भावना रखकर करूँगा।

भय से सारथि ने हाथ जोड़कर कहा, हे राक्षसों के नाथ, मुझपर क्रोधित मत होओ। घोरतर युद्ध के बीच तुमको मूर्छित होते देखा- रण के परिश्रम से घोड़े भी पसीने से लथपथ हो गये थे। हे नरपति, ऐसे क्षेत्र में सारथि रथ लौटा कर योद्धा को बचाता है, यही सारथि का धर्म है। रण में तुम्हारी मूर्छा देखकर मैंने यह कार्य किया, अन्याय ढंग से मुझको कटु वाक्य क्यों कह रहे हो। तुम्हारे हित की चिन्ता करने में यह कैसा विपरीत कार्य हुआ, तुम मुझ पर दोष लगा रहे हो यह तुम्हारे लिए उचित नहीं है। हे राजा, अधिक क्रोध मत करो, इतना कहकर उसने आठों घोड़े चला दिये। कुपित होकर उसने आठों घोड़ों की पीठ पर चाबुक मार वेग से राम के सम्मुख जा उपस्थित हुआ।

सारथिके इस कथनसे रावण बहुत संतुष्ट हुआ नाना प्रकारसे उसकी सराहना करके युद्धके लिये लोलुप होकर बोला- सूत। अब तुम इस रथको शीघ्र रामके सामने ले चलो। रावण समरमें अपने शत्रुओंको मारे बिना घर नहीं लौटेगा।

रावणकी आज्ञासे प्रेरित हो सारथिने तुरंत ही अपने घोड़े हाँके। फिर तो राक्षसराज्यका वह विशाल रथ क्षणभरमें युद्धके मुहानेपर श्रीरामके समीप पहुँचा।

आचार्य। आप जैसे सद्गुरुके रहते मेरी यह दुदर्शा ? अपने ऊपर ही आ पड़ती है, तब व्यक्तिके सैद्धान्तिक निश्चय अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। दशग्रीव कभी इतना आहत, अपमानित नहीं हुआ था। उसका हृदय व्याकुल हो गया था। उसका निश्चय विचलित हो गया था। उसने सुतल जाकर शुक्राचार्यके चरण पकड़े।

वत्स। मेरी सञ्जीवनी विद्या केवल मेरे यजमानों-दैत्यकुल तक सीमित रहेगी, यह मैंने सृष्टिकर्त्ताको वचन दे दिया है। अत्यन्त नीतिज्ञ उन असुर-गुरुको द्रवित कर लेना सरल नहीं है। वे तटस्थ भावसे कह गये- दानव-कुलको भी इसका लाभ कभी नहीं मिला। मेरे यजमानोंमें माली और सुमाली लंका नहीं गये। वृद्ध माल्यवान युद्धमें नहीं उतरेंगे। सुमालीके पुत्र प्रहस्त तथा उसके दैत्य साथियोंको मैंने पुनर्जीवित कर दिया है। उन्हें आदेश दे दिया है कि अब वे पृथ्वीपर चलनेवाले इस युद्ध से दूर रहें।

मैं किसीको पुनर्जीवित करनेकी प्रार्थना करने नहीं आया। रावण जानता था कि दैत्य-गुरुपर ऐसी प्रार्थनाका प्रभाव नहीं पड़ता है। यहाँ आकर वह निराश हो गया कि अब उसे अपने मातृकुलसे भी कोई सहायता मिलनेकी आशा नहीं रही। क्योंकि दैत्यकुल अपने आचार्यका अत्यन्त आज्ञानुवर्ती है। अत: दीन वाणीमें दशग्रीवने कहा- मैं अपनी रक्षाके लिए प्रार्थना करने आया था।

तुम आ ही गये हो तो मैं तुम्हें निराश नहीं करूँगा। शुक्राचार्यने मन्त्रोपदेश करके कहा-एकान्तमें इसके द्वारा हवन करो। यदि इस दस सहस्राहुति निर्विघ्न दे सके तो यज्ञकुण्डमें-से अश्वोंसे जुता रथ, दिव्य धनुष तथा अक्षय त्रोण प्राप्त होगा। तुम सबसे अजेय हो जाओगे।

आचार्यको प्रणाम करके रावण लौटा। अपने नगर-द्वार बन्द करा दिये राजसदनका द्वार बन्द करा दिया। अपने अन्त:पुरके उस भूगर्भमें जिसमें लमा दहनके समय वह परिवार सहित सुरक्षित रहा था, प्रवेश करके, आवश्यक सामग्री लेकर मौन होकर बैठ गया। उसका द्वार भी उसने भीतरसे बन्द कर लिया।

रावणने अम्बा की स्तुति की- हे माँ तारिणी, तुम कहाँ हो, मुझपर सदय हो जाओ। इस असमय पर दर्शन देकर मेरी रक्षा करो। हे कालिके, तुम पतित-पावनी और पापहारिणी हो। हे जगत्पालिके, तुम दीनों की जननी हो। इस दुखी सेवक की ओर करुणामय-नेत्रों से देखो। राम के साथ इस युद्ध में मैं बड़े संकट में फँस गया हूँ। संसार में और अन्य कोई सहाय नहीं। शंकर ने मुझे त्याग दिया, इसीलिए माँ तुमको पुकारता हूँ। तुम दयामयी माँ हो ऐसा पुराण में मैंने सुना है। तुम शक्ति हो, तुम तृप्ति हो, तुम सर्वत्र व्याप्त हो। इन तीनों

भुवनों में तुम्हारा नाम और गुण व्यक्त है। रुप गुण अव्यक्त हैं, उसका निरूपण नहीं हो सकता। जो तुम्हारी शरण लेता है उस पर कोई विपत्ति नहीं आती। इसका प्रमाण है इन्द्र जिसके पास अरमत्व की सम्पदा है। अब मेरे निकट पुकारने योग्य को व्यक्ति नहीं। कृपादृष्टि डालकर मेरा शोक दूर करो। इस पकार जब रावण ने स्तुति की तो हैमवती (पार्वती) का हृदय प्रसन्न हो गया, वे दयालु हो गईं।

श्रीराम भी रावणके साथ युद्ध करते हुए श्रान्त हो गये थे। वे प्रात:काल चिन्तित हो रहे थे- अब दशग्रीव आने ही वाला है।

चिन्ता सुरोंको भी कम नहीं थी। अत: सुरगुरु महर्षि अगस्त्यको लेकर वहाँ पधारे। आकाशसे अगस्त्यजी श्रीराम के समीप उतरे। श्रीरामने भाईके साथ उन्हें प्रणाम किया तो वे बोले- महाबाहु राम: मुझसे सनातन गुह्यमन्त्र आदित्य हृदयको ग्रहण करो। यह शत्रुनाशक, परम कल्याणकारी है। यह चिन्ता-शोकहारी, परमपावन देवासुरनमस्कृत भगवान भास्करका स्तवन सर्वमङ्गल्य, सर्वानर्थ निवर्तक, आयुदाता, गुणवर्धक है। क्योंकि भगवान सूर्य निशानिवर्तक हैं, यह निशाचरोंके प्रतिकूल है। इसका तीन बार जप इसी समय करके तुम रावणका वध कर सकोगे।

महर्षि अगस्त्य मन्त्रोपदेश करके चले गये। श्रीरामने आचमन करके प्रभातमें उदय हुए भगवान भास्करकी ओर देखते हुए एकाग्रमनसे तीन बार उस मन्त्रका जप किया, अन्तमें पुन: आचमन करके धनुष उठाया।

त्वरस्व। त्वरस्व। सूर्यमण्डलसे आती रश्मियोंसे स्पष्ट सुनायी पड़ा- शीघ्र रावणको मार दो।

रावण सोचने लगा, राम युद्ध नहीं कर पा रहे हैं। शायद सीता को छोड़कर ही भाग जायें। इतना सोचकर रावण ने अपने मन को स्वस्थ किया। अब भी सीता मिल जाये तो दु:ख के उपरान्त सुख मिले। इन्द्रजीत और अहिरावण दोनों मर गये इतने पर भी यदि सीता मिल जाय तो सारे दु:खों का अन्त हो जाय। यह सोच-सोचकर दशानन हर्षित होता रहा।

विभीषण। आज अब तक दुर्गद्वार बन्द हैं। दशग्रीव या उसका कोई योधा युद्धभूमिमें नहीं आया ? श्रीरामने देखा कि वानर द्वारपर प्रहार करके उसे तोड़ देनेका प्रयत्न कर रहे हैं।

दशग्रीव अपने अन्त:पुरमें कोई यज्ञ करने लगा है। इसी समय विभीषणके एक मन्त्रीने आकर उनके कानमें कुछ कहा। उसे सुनकर विभीषणने श्रीरामसे निवेदन किया- लमामें राजभवन के ऊपर धूम्रकी रेखायें दीख रहीं हैं। वह तन्त्रोंका अद्वितीय ज्ञाता है। उसका यज्ञ पूरा हो गया तो उसे जीतना असम्भव हो जायेगा। अत: हनुमान, अङ्गदादिको उसका यज्ञ, ध्वस्त करनेकी आज्ञा दें।

इस बार विभीषण साथ नहीं गये। अङ्गदके साथ हनुमान, नल-नील, द्विविद्, मैन्द, गय, गवाक्षादि प्रधान यूथप श्रीरामके आदेशसे परिखापर कूदकर चढ़ गये और वहाँसे भवनोंपर कूदते सीधे राजसदन पहुँचे। अन्त:पुरमें उन्हें उतरते विलम्ब नहीं हुआ। रक्षकोंको थोड़ेसे संघर्षमें वानरोंने समाप्त कर दिया। विभीषणकी पत्नी सरमाने एक सेविकाको अपनी ओर कर लिया था। उसने भूगर्भगृहका द्वार संकेतसे सूचित कर दिया। अङ्गदने ठोकर मारकर वह द्वार तोड़ दिया; किंतु उस लम्बे स्थानमें सब एक साथ युद्ध नहीं कर सकते थे। रावण लाल वस्त्र पहिने अग्निमें आहुति डाल रहाथा। उसने द्वारकी ओर मुड़कर भी नहीं देखा।

वानरोंने भवनके कंगूरे गिरा दिये। स्तम्भ उखाड़ फेंके। यज्ञकी सब सामग्री उठाकर एक साथ यज्ञ-कुण्डमें डाल दी। दशग्रीवके हाथ से स्रुवा छीनकर तोड़ डाला। उसके केश खींचकर, उसे नोचकर भागे : किंतु वह अविचल बैठा रहा। उसका जप अविराम चल रहा था। उसे आशा थी कि जपसे भी काम चल जायगा।

अब भी दशग्रीव उठता नहीं है, यह देखकर अङ्गदने क्रोधमें आकर उसकी एक रानीकी चोटी पकड़ी और उसे घसीटने लगे। दूसरे वानरोंने भी इसका अनुकरण किया। मन्दोदरी भी वानरोंके इस आक्रमण से नहीं बची। स्त्रियाँ चिल्लाने लगीं- हाय। आज हमारा पुत्र होता तो हमारी रक्षा करता।

वानरोंने मुख फाड़कर नाक-कान काट लेनेका ढङ्ग दिखाया। अब रानियाँ चीत्कार करने लगीं- हमारा अपमान हो रहा है। हम कुरूपा की जा रही हैं। तुम्हारे ऐसे पौरुष और यज्ञको धिक्कार।

वानर बोले- अरे ओ निर्लज्ज। रणभूमिसे घर भाग आया और यहाँ आकर बगुलेका-सा ध्यान लगाकर बैठा है? ऐसा कहकर अंगदने लात मारी। पर उसने इनकी ओर देखा भी नहीं, उस दुष्टका मन स्वार्थमें अनुरक्त था।

रावणको लगा, वानर सचमुच उसकी रानियोंके नाक-कान काट लेंगे। रामने यह परम्परा ही प्रचलित कर दी है। वह तलवार लेकर उठा और गर्जना की- दुष्टो। स्त्रियोंको छोड़ दो।

हो गया काम। वानर तो चाहते थे कि रावण आसन त्याग दे और मौन तोड़ दे। वे अङ्गदका संकेत पाकर कूदे। अब उनको सीधे श्रीरामके समीप पहुँचनेसे कौन रोक लेता। यज्ञ विध्वंस करके सब चतुर वानर रघुनाथके पास आ गये। तब रावण जीनेकी आशा छोड़कर क्रोधित होकर चला।

दशग्रीव रानियोंको समझाने लगा- जीवनमें मान-अपमान, सुख-दु:ख आता ही है। अत: धैर्य धारण करो। आज मैं रामको मार दूँगा। यदि मैं आज मारा जाऊँ तो तुम सीताको मारकर मेरे साथ अग्नि-प्रवेश करना।

श्रीरामको जीतना असम्भव है। वे सनातन पुरुष हैं। प्रकृति-पुरुषके वही सञ्चालक हैं। तुमने अन्यायपूर्वक सीता-हरण किया है। मन्दोदरीने कहा- विभीषण गये, तबसे यह पुरी दीना हो गयी। अब भी सीता श्रीराम को लौटा दो।

पतिके चरण दबाती हुई नारियाँ हिचकियाँ मार-मारकर रोती थी। मन्दोदरी बोली- अभी यह आन छोड़िये। अब प्राणोंपर आ गयी हैं अपना अभिमान छोडिये। तुम जिसे बालक कहते हो वे अति बलवान है। जिनके प्रबल सेवक अंगदादि हनुमान है। हे प्राणनाथ, उनसे लड़कर तुम कभी जय नहीं पाओगे। मेरा बायाँ आँख फड़क रहा है और कहता है कि तुम मुझे विधवा बनाओगे। जिस दिन से सीता लंका में आयी है निशाचर घर में शीत छा गया है। जानकी जान की लेवा है यह आप नहीं सोचते है। जो लढ़कर तुम्हें मूर्छित करें, यह सामर्थ्य उस नर की नहीं है। उन तपस्वियों के शरीर में, ईश्वर की शक्ति अवतीर्ण हुयी है। अत: हे पतिदेव, मेरे माँग की आज पत रखो जिसके तुम नाथ हो उसको तुम अनाथ मत होने दो।

हे पिया अब रन में उनसे रार मत बढ़ाओ। वन में सोते हुए सिंहों को मत जगाओ। उनमें वीरता है रण धर्म पे भिड़ जाने की और तुम में हीनता है परनारि के चुराने की। इधर तुम्हारा पल्ला हल्का है तुम्हारी जय नहीं हो पायेगी इसलिए अपने घराने की बात बनी रहने दो। कटीली बाढ़ अपने भवन में मत उगाओ नहीं तो उस उपवन में शूल उगेंगे।

मन्दोदरी ने कहा, हे लंका के अधिपति सुनो। इतने बुद्धिमान होते हुए भी तुम्हारी मति क्यों मारी गई। तुम परम पंडित हो, शक्ति में महावीर हो, विश्वश्रवा मुनि के पुत्र हो परम अचंचल हो। अपने बाहुबल से तुमने स्वर्ग, मर्त्य, पाताल तीनों लोकोंपर विजय पाई है। यम और इन्द्र तुमको देखकर काँपने लगते हैं। हे लंका के अधिकारी, तुम सर्वशास्त्रों में पारंगत हो, मैं हीनबुद्धि नारी होकर तुमको क्या समझा सकती हूँ। फिर भी प्रार्थना के रूप में दो शब्द कहूँगी- केवल खड़े होकर तनिक सुन लो। मुनियों का कहना है और सर्वशास्त्रों में भी यह कहा गया है कि रमणी का सु-परामर्श सुनना उचित है। विपत्ति में यदि रमणी सुबुद्धि दे तो उस बुद्धि के कारण पुरुष कुशल से रहता है। बहुत दिनों से तुम लंका में राज्य कर रहे हो, किस युग में तुमने ऐसी असंभव घटना देखी है। किस युग में वानरों ने समुद्र लाँघा है या पानी पर पत्थर तैरा है। ऐसी अनोखी बात तुमने किसे देश में सुनी है। पत्थर के स्पर्श से पत्थर की मनुष्य-मूर्ति बन जाती है। श्रीराम कोई मनुष्य नहीं हैं, वे विष्णु के अवतार हैं। सीता को लौटा दो, अब युद्ध की कोई आवश्यकता नहीं रही।

हे प्रिये, घर जाकर आराम से बैठो। राम के बाणों से प्राण दे सकता हूँ किन्तु सीता को कदापि नहीं लौटा सकता।

मन्दोदरी ने कहा, जानती हूँ कि भाग्य खोटा होने पर प्रवीण मनुष्य का भी बल-बुद्धि और पराक्रम बिसर जाता है। ऐसे आसन्न-समय में कहीं कुछ विपरीत न हो जाय। राजा, कोप न करो, तनिक सुनो। पतितपावन राम संसार के कर्ता है, वे त्रिभुवन में सभी का पालन करते हैं। सत्वगुण से वही प्रभु सबका पालन किया करते हैं, वही शत्रु के रूप में तुमको मारने के लिए आये हैं। सीतादेवी लक्ष्मी के रूप में सारे संसार में पूजित हैं, तुम उस लक्ष्मी को अशोक-वन में कष्ट दे रहे हो। जो पालनकर्त्ता है वही मार रहा है, तुम सा अभागा इस संसार में कोई दूसरा नहीं है।

लंका के अधिकारी ने मुस्करा कर कहा, हे रानी मन्दोदरी, तुम्हारी बुद्धि बहुत कम है। सीता शक्तिरूपिणी महालक्ष्मी हैं, यह तुम मुझको क्या समझाती हो, मैं यह भली-भाँति जानता हूँ। लोग इनको जप, यज्ञ, पूजा करके भी नहीं रख पाते हैं, और वह बिना अर्चना के हमारे द्वार पर पड़ी हैं। निराहार अनशन कर कितने ही लोग जप किया करते हैं किन्तु मृत्यु के समय इन चरणों की प्राप्ति नहीं हो पाती है। ध्यान में भी मुनि-ऋषि जिनको नहीं पाते हैं, वह राम निराहार बैठे मेरी चिन्ता किया करते हैं। श्रीराम के मन में मेरा रूप जाग्रत है। सोच रहे हैं कि कितनी देर में मेरा वध करेंगे। अगर भाग्य में लिखा है कि राम के हाथों मरूँगा तो यम की क्या मजाल कि निकट आ सके। विमान पर बिठाकर विष्णुदूत ले जायगा। जीवन और मरण दोनोंमें समान पराक्रम दिखाऊँगा। जीवित दशा में इन्द्र आदि देवता मेरे आज्ञाकारी रहे और मरने के बाद मैं सबसे ऊपर वैकुंठ चला जाऊँगा। बिना जाने-बूझे तुमने मुझको अभागा कहा, मुझ

सा भाग्यवान इस संसार में नहीं है। युद्ध कर यह फैसला करना है- मारूँगा या मरूँगा। मन्दोदरी, तुम रोना त्याग दो।

मयतनया। तूने यह बात अनेक बार कहीं है। अब मेरी बात सुन। तू जो कहती है, मैं उसे समझता नहीं हूँ, ऐसी बात नहीं है। आज दशग्रीव खुल पड़ा- किंतु मेरे सब पुत्र, भाई, सुहृद सम्बन्धी मारे गये, मैं जीवित अब किसके लिए रहूँ ? तुझे अब भी जीवनका मोह है? मैंने तो सबका त्याग किया। अब अकेला दशग्रीव युद्धमें जा रहा है। आज इसे इस महामेघमें आत्माहुति देकर यह यज्ञ पूर्ण कर देना है।

रावण बोला- चल हट हे कायर नारी। मैं उससे नहीं डरता हूँ। जब मैं आगे को पग धरता हूँ तो फिर कभी पीछे नहीं हटता हूँ। तू क्या बार-बार उनके गुण गाती है। क्या मैं इसे डर जाऊँगा बस प्रात:काल ही निर्णय होगा या तो मारूँगा या मर जाऊँगा। यदि वे ईश्वर के अवतार ही है तो मेरी अनबन सफल होगी। उन्हें परमात्मा बताकर क्यों बातें करती है इतनी हल्की। देखो मेरे बल की महिमा कि मेरे खातिर वह खुद आये हैं। अहंकार की वायु से वह दीपक बुझ चला और बोला मेरे इन चरणोंपर सारा सुरमण्डल झुकता है। बन्दी होकर मेरे घर में यम और काल तक पलता है। तू इतना ही जानती है कि मैं केवल लंका का अधीश्वर हूँ हे बावली तुझे खबर नहीं मैं ही दुनिया का ईश्वर हूँ। जिधर देखता हूँ मैं ही मैं हूँ, जब सोचता हूँ तो मैं ही मैं हूँ, मेरे सिवा नहीं है और कोई। जब मैं बोलता हूँ तो मैं ही मैं हूँ। पराजय में, विजय में, घरमें, रणमें जहाँ भी हूँ मैं ही मैं हूँ। ईश्वर है सुना है पर जब उसको खोजता हूँ तो अपने को ही मैं ही मैं पाता हूँ। मूर्ख और विद्वान की आपस में कब पटती है बात। यह कहकर रावण उठ खड़ा हुआ छोड़ नारी का ध्यान और अगले दिन के युद्ध का समस्त किया विधान।

जिसकी मृत्यु निकट हो उसको दवा क्या लाभ पहुँचा सकती है। मन्दोदरी के परामर्श से रावण न रुका। मन्दोदरी ने पति की प्रदक्षिणा कर मंगलवाक्य उच्चारित किए, उसकी आँखे सजल हो आईं। अन्तर में जान कर रानी बहुत रोई। दस हजार सौतों के साथ वह अन्त:पुर चली गई। समस्त दिशाएँ और विदिशाएँ अन्धकारसे आच्छन्न हो गयीं। धूलकी बड़ी भारी वर्षाके कारण आकाशका दिखायी देना कठिन हो गया। श्रीरामके सामने भी अनेक शकुन प्रकट हुए, जो सब प्रकारसे शुभ, मङ्गलमय तथा विजयके सूचक थे।

उस समय राक्षसों और वानरोंकी विशाल सेनाएँ हाथमें हथियार लिये रहनेपर भी निश्चेष्ट खड़ी रहीं- कोई किसीपर प्रहार नहीं करता था।

मनुष्य और निशाचर दोनों वीरोंको बलपूर्वक युद्ध करते देख सबके हृदय उन्हींकी ओर खिंच गये; अत: सभी बड़े आश्चर्यमें पड़ गये।

राक्षस रावणकी ओर देख रहे थे और वानर श्रीरघुनाथकी ओर। उन सबके नेत्र विस्मित थे; अत: निस्तब्ध खड़ी रहनेके कारण उभय पक्षकी सेनाएँ चित्रलिखित-सी जान पड़ती थीं।

जैसे कलका युद्ध का दृश्य था वैसेही आज भी दृश्य हो गया। श्रीराम और रावण का यह रण पूरा किसने कह पाया है। वही दलबल और वही हलचल वह ही मुठभेड़ थी। प्रतिदिन की भाँति श्याम-श्वेत वीरोंकी रंगत थी। वह रणमण्डल, नभमण्डल नक्षत्रों सा निशाचरदल था। जिस रथ पर राम प्रकट हुए वह रथ मानो उदयाचल से आ रहा था। सूर्य के प्रकाश से जैसे अंध:कार क्रमसे हटते जाता है वैसे ही राम बाण से दिन प्रतिदिन राक्षसदल कटता जाता था। विधवाओं के स्वर लंका में आकाश हिला देते थे। निपूती माँओं के पत्थर सा दिल पिघला देते थे। सारांश यही की लड़ाई कई दिनों तक घमसान घोर अत्यन्त हुई। कितने ही माई के लाल मर गये पर गिनती आजतक नहीं हुई।

श्रीरामको यह विश्वास था कि मेरी ही जीत होगी और रावणको भी यह निश्चय हो गया था कि मुझे अवश्य ही मरना होगा; अत: वे दोनों युद्धमें अपना सारा पराक्रम प्रकट करके दिखाने लगे। तेजस्वी श्रीरामने उस ध्वजकी ओर निशाना साधकर अपना सायक चलाया और वह दशाननके उस ध्वजको काटकर पृथ्वीमें समा गया।

रावणने अपने तेजस्वी बाणोंसे श्रीरामके घोड़ोंको घायल करना आरम्भ किया; परंतु वे घोड़े दिव्य थे, इसलिये न तो लड़खड़ाये और न अपने स्थानसे विचलित ही हुए। वे पूर्ववत् स्वस्थचित्त बने रहे, मानो उनपर कमलकी नालोंसे प्रहार किया गया हो।

रावणने श्रीरामके रथके अश्वोंपर प्रहार किया, पर व्यर्थ। वे अमरेन्द्रके अमर अश्व मरनेवाले तो थे नहीं, उनके शरीरपर कोई व्रण भी नहीं बनता था। रावण अविराम शस्त्र फेंक रहा था। राम हँसते हुए काटते जा रहे थे। बीच-बीचमें रावणको उत्साहित कर देते थे- साधु। साधु। अच्छा श्रम कर रहे हो और वेगसे। और बल लगाकर।

दोनों रथोंके सारथियोंका कौशल अवर्णनीय था। वे अपने रथीको अवसर देने अथवा बचानेके लिए रथोंको आगे-पीछे, दाहिने-बायें, मण्डलाकार दौड़ा रहे थे पूरे वेगसे।

श्रीरामकी बाण-वर्षाने रावण को एक बार विमुख होनेको बाध्य कर दिया। उसके चारों अश्व आहत होकर पीछे भागे। सारथि

कठिनाईसे उन्हें रोककर आगे ला सका। इस अविराम दिव्यास्त्र-वृष्टि से समुद्र क्षुब्ध हो उठा। देवता, ऋषि व्याकुल पुकारने लगे- स्वस्ति प्रजाभ्य:। गौ-ब्राह्मणोंका मङ्गल हो। सब लोगोंका मंगल हो। राम विजयी हो।

युद्धस्थलमें अनेक शस्त्रोंकी वह विशाल वर्षा बड़ी भयानक, तुमुल, त्रासजनक और भयंकर कोलाहलसे पूर्ण थी।

वे दोनों योद्धा दायें-बायें प्रहार करते हुए निरन्तर युद्धमें लगे रहे। उन्होंने अपने भयंकर बाणोंसे आकाशको इस तरह भर दिया कि मानो उसमें साँस लेनेकी भी जगह नहीं रह गयी।

इस प्रकार वे दोनों अत्यन्त क्रोधसे भरे हुए उत्तम रीतिसे युद्ध करने लगे। दो घड़ीतक तो उन दोनोंमें ऐसा भयंकर संग्राम हुआ, जो रोंगटे खड़े कर देनेवाला था।

इस प्रकार युद्धमें लगे हुए श्रीराम तथा रावणको सम्पूर्ण प्राणी चकितचित्तसे निहारने लगे।

एक दूसरेके वधके प्रयत्नमें लगे हुए वे दोनों वीर बड़े भयानक जान पड़ते थे। उन दोनोंके सारथि कभी रथको चक्कर काटते हुए ले जाते, कभी सीधे मार्गसे दौड़ाते और कभी आगेकी ओर बढ़ाकर पीछेकी ओर लौटाते थे। इस तरह वे दोनों अपने रथ हाँकनेमें विविध प्रकारके ज्ञानका परिचय देने लगे।

श्रीराम रावणको पीड़ित करने लगे और रावण श्रीरामको पीड़ा देने लगा। इस प्रकार युद्धविषयक प्रवृत्ति और निवृत्ति में दोनों तदनुरूप गतिवेगका आश्रय लेते थे।

तब रथपर बैठा हुआ राक्षसराज रावण भी कुपित हो उठा और गदा तथा मूसलोंकी वर्षासे रणभूमिमें श्रीरामको पीड़ा देने लगा।

इस प्रकार उन दोनोंमें पुन: बड़ा भयंकर और रोमाञ्चकारी युद्ध होने लगा। गदाओं, मुसलों और परिघोंकी आवाजसे तथा बाणोंके पंखोंकी सनसनाती हुई हवासे सातों समुद्र विक्षुब्ध हो उठे।

उन विक्षुब्ध समुद्रोंके पातालतलमें निवास करनेवाले समस्त दानव और सहस्त्रों नाग व्यथित हो गये।

पर्वतों, वनों और काननोंसहित सारी पृथ्वी काँप उठी, सूर्यकी प्रभा लुप्त हो गयी और वायुकी गति भी रुक गयी।

देवता, गन्धर्व, सिद्ध, महर्षि, किन्नर और बड़े-बड़ नाग सभी चिन्तामें पड़ गये।

सबके मुँहसे यही बात निकलने लगी- गौ और ब्राह्मणोंका कल्याण हो, प्रवाहरूपसे सदा रहनेवाले इन लोकोंकी रक्षा हो और श्रीरघुनाथ युद्धमें राक्षसराज रावणपर विजय पावें।

इसप्रकार कहते हुए ऋषियोंसहित वे देवगण श्रीराम और रावणके अत्यंत भयंकर तथा रोमाञ्चकारी युद्धको देखने लगे।

क्रोध में दोनों ही बाण बरसाते रहे। बाणों की संख्या की कोई गिनती ही नहीं। आँखे मूँदकर दोनों धनुष खींचने लगे और चारों ओर अग्निमय देखकर त्रिभुवन कम्पित हो उठा। अष्टवसु सूर्य आदि काँपने लगे, रसातल काँप उठा, शून्य में सभी देवता काँपने लगे, बार-बार उल्कापात होने लगा, तारे गिरने लगे, इस प्रकार श्रीराम के त्रास से त्रिभुवन कम्पित हो उठा। उनके श्रीचरणों की चाप से लंका डाँवाडोल होने लगी। सिंहनाद के सागर के जल में उथल-पुथल मच गई। ऐसा लगने लगा कि गगन टूट पड़ रहा है। धनुष की टंकार और बाणों की ठनाठन। चन्द्र-सूर्य का आवागमन रुद्ध हो गया। दिवा निशि, सप्ताह रण में कोई विराम नहीं। सात दिन हो गये, कौन कहाँ है दिखाई नहीं पड़ता। सुग्रीव, अंगद आदि भाग गये। नल नील, सुषेण, हनुमान भाग खड़े हुए। अपनी-अपनी सेना लेकर प्राण लेकर सब भागे। शरभंग, द्विविद बेतहाशा भागे। पनस, केशरी भागे तो पीछे पलट कर भी नहीं देखा। अपने कटक के साथ असंख्य कपि भागने लगे। बाणों से लंका अंधकार-मयी हो गई- दृष्टि नहीं काम करती थी। गवाक्ष के हाथ में एक साखु का वृक्ष था, उसको फेंककर ऊपर मुख किये हुए वह अपनी सेना के साथ भाग खड़ा हुआ। श्रीराम-लक्ष्मण दोनों क्रोध से यमराज के समान हो गये और दोनों ही झुंड के झुंड बाण बरसाने लग गये। सारे राक्षस धनुष-बाण फेंक-फेंक कर भागने लगे। राम-रावण के युद्ध में गिनती का कोई हिसाब नहीं, दोनों के अंग के मांस ही नष्ट हो गये। स्वर्ग में इन्द्रदेव और पाताल में बलिराजा काँपने लगे। बाणों की आग से सारी रणभूमि प्रदीप्त हो उठी। श्रीराम यों बाण फेंकते मानों नक्षत्र लपक रहा हो और रावण के अंग में वे बाण जाकर काँटों की तरह चुभते। उन्होंने अग्निबाण फेंका। चारों ओर घोर शब्द हुआ किन्तु रावणपर इस बाण का कोई असर न हुआ। श्रीराम ने बेड़ापाक नामक बाण फेंका जो कि रणस्थल में कुम्हार के चाक जैसा घूमने लगा। झनझना कर महाशब्द उठा। बाण खाकर दशानन स्तब्ध बना रहा। श्रीराम का बाण वज्र के समान लपका और उस बाण के आघात से रावण तेजशून्य हो गया। शरीर के आभूषण और सिर से मुकुट गिर गये। बदन पर रक्त-मांस नहीं रहा और अब हड्डियों में बाण

बिंधने लगे। हड्डियों को बिंध कर रघुनाथ ने उसे जर्जर कर डाला फिर भी दशानन संग्राम-स्थल में लड़ता ही रहा।

विभीषण ने कहा, हे राम, अब तुम धर्म-अस्त्र फेंको और रावण का स्वर्णनिर्मित कवच काट कर गिरा दो। जब कक्ष का कवच कट गया तो रावण चिन्तित हुआ। मन ही मन सोचने लगा कि भगवती ने अवश्य ही उसे त्याग दिया है। यह तो मैं जान ही गया कि राम विष्णु के अवतार हैं। जन्म लेने पर मरना ही पड़ेगा- उसकी कौन सी चिन्ता है। यदि राम मुझको मार गिराएँ तो मेरा जन्म सफल है। राम के सम्मुख आज शरीर त्याग कर जन्म सफल करता हुआ स्वर्गवास करने चला जाऊँगा। राम का सुन्दर मुख देखकर रावण के चेहरे पर हँसी आ गई। रावण ने सोचा कि मैं राम को कोई प्रेम-वचन नहीं कहूँगा, दया आ जाने से शायद वे मुझे न भी मारें। रावण ने राम से कहा, अपना गुमान छोड़ो, आज के युद्ध में मैं तेरा वध करूँगा। मैं कोई खर-दूषण नहीं हूँ, मैं हूँ लंका का रावण। अभी तुझे यम के घर भेजता हूँ। श्रीराम ने कहा, तू बड़े जीवट का है, मेरे बाण खाकर भी तू अभी तक जिन्दा है।

फिर एकबार राम-रावण में युद्ध छिड़ गया। बाण की आग गगन पर चढ़ गई। बाण घोर अँधेरी रात को प्रदीप्त करते रहे। युद्ध-स्थल पर मानों बिजलियाँ चमक रही हों। राम रघुवर ने शंकर बाण छोड़ा। रावण के वक्ष पर उसके लगने से वह कातर हो गया।

बाण खाकर दशानन का मन काँप उठा। उसने गुस्से में आकर पार्वती का महाशूल फेंका। शूल चुभने से रघुनाथ अचेतन हो गये। फिर चैतन्य होकर बाण बरसाने लगे। राम का सहस्राक्ष बाण उद्‌र्ध्वमुख होकर चला और तत्काल रावण के वक्ष पर जा लगा। बाण के आघात से रावण त्रस्त हो उठा। तब राम ने विष्णुमंत्र का जाप कर गदा चलायी। राजा दशानन ने कालचक्र से उस गदा को काट गिराया। गदा व्यर्थ गयी देखकर कमललोचन राम सोच में पड़ गये। तब राजा दशानन ने पाशुपत-बाण फेंका। रामने उसे विष्णुचक्र से काटा और क्रोध में आकर महाकाल बाण फेंका। रावण के वक्ष को छेदता हुआ वह बाण पाताल में प्रवेश कर गया।

गन्धर्वों और अप्सराओंके समुदाय उस अनुपम युद्धको देखकर कहने लगे- आकाश आकाशके ही तुल्य है, समुद्र समुद्रके ही समान है तथा राम और रावणका युद्ध राम और रावणके युद्धके ही सदृश है ऐसा कहते हुए वे सब लोग राम-रावणका युद्ध देखने लगे।

बहुत-से कृपाण और तलवारें चमक रहीं हैं। मानो दसों दिशाओंमें बिजलियाँ चमक रहीं हों। हाथी, रथ और घोड़ोंका कठोर चिंघाड ऐसा लगता है मानो बादल भयंकर गर्जन कर रहे हों।

वानरोंकी बहुत-सी पूँछें आकाशमें छायी हुई हैं। वे ऐसी शोभा दे रही हैं मानो सुन्दर इन्द्रधनुष उदय हुए हों। धूल ऐसी उठ रही है मानो जलकी धारा हो। बाणरूपी बूँदोंकी अपार वृष्टि हुई।

दोनों ओरसे योद्धा पर्वतोंका प्रहार करते हैं। मानो बारंबार वज्रपात हो रहा हो। श्रीरघुनाथने क्रोध करके बाणोंकी झड़ी लगा दी, जिससे राक्षसोंकी सेना घायल हो गयी।

बाण लगते ही वीर चीत्कार कर उठते हैं और चक्कर खा-खाकर जहाँ-तहाँ पृथ्वीपर गिर पड़ते हैं। उनके शरीरोंसे ऐसे खून बह रहा है मानो पर्वतके भारी झरनोंसे जल बह रहा हो। इस प्रकार डरपोकोंको भय उत्पन्न करनेवाली रुधिरकी नदी बह चली।

वीर पृथ्वीपर इस तरह गिर रहे हैं, मानो नदी-किनारेके वृक्ष ढह रहे हों। बहुत-सी मज्जा बह रही है, वही फेन है। डरपोक जहाँ इसे देखकर डरते हैं, वहाँ उत्तम योद्धाओंके मनमें सुख होता है।

तब रावण बोला- अरे तपस्वी। सुनो, तुमने युद्धमें जिन योद्धाओंको जीता है, मैं उनके समान नहीं हूँ। मेरा नाम रावण है, मेरा यश सारा जगत् जानता है, लोकपालतक जिसके कैदखानेमें पड़े हैं।

तुमने खर, दूषण और विराधको मारा। बेचारे बालिका व्याधकी तरह वध किया। बड़े-बड़े राक्षस योद्धाओंके समूहका संहार किया और कुम्भकर्ण तथा मेघनादको भी मारा।

अरे राजा। यदि तुम रणसे भाग न गये तो आज मैं वह सारा वैर निकाल लूँगा। आज मैं तुम्हें निश्चय ही कालके हवाले कर दूँगा। तुम कठिन रावणके पाले पड़े हो।

रावणके दुर्वचन सुनकर और उसे कालवश जान कृपानिधान श्रीरामने हँसकर यह वचन कहा- तुम्हारी सारी प्रभुता, जैसा तुम कहते हो, बिलकुल सच है। पर अब व्यर्थ बकवाद न करो, अपना पुरुषार्थ दिखलाओ।

व्यर्थ बकवाद करके अपने सुन्दर यशका नाश न करो। क्षमा करना, तुम्हें नीति सुनाता हूँ, सुनो। संसारमें तीन प्रकारके पुरुष होते हैं- पाटल (गुलाब), आम और कटहलके समान। एक (पाटल) फूल देते हैं, एक आम फूल और फल दोनों देते हैं और एक कटहल में

केवल फल ही लगते हैं। इसी प्रकार पुरुषोंमें एक कहते हैं करते नहीं, दूसरे कहते और करते भी हैं और एक तीसरे केवल करते हैं, पर वाणीसे कहते नहीं।

श्रीरामके वचन सुनकर वह खूब हँसा और बोला- मुझे ज्ञान सिखाते हो ? उस समय वैर करते तो नहीं डरे, अब प्राण प्यारे लग रहे हैं।

दुर्वचन कहकर रावण क्रुद्ध होकर वज्रके समान बाण छोड़ने लगा। अनेकों आकारके बाण दौड़े और दिशा, विदिशा तथा आकाश और पृथ्वीमें, सब जगह छा गये।

वह करोड़ों चक्र और त्रिशूल चलाता है, परन्तु प्रभु उन्हें बिना ही परिश्रम काटकर हटा देते हैं। रावणके बाण किस प्रकार निष्फल होते हैं जैसे दुष्ट मनुष्यके सब मनोरथ।

एक दिन कौशलाधीश कूपित हो उठे और दशशीश के शीश काटने शुरू किये। उसी समय सबने देखा एक सीर कटता है और उसके बदले दूसरा नया सिर प्रकट होता है। यह सिर क्या थे जादू के पुतले थे। कट-कट कर फिर प्रकट हो जाते थे। कही देर तक यहीं ह ोता रहा और सूर वानर सब घबराने लगे। रघुनाथ सिर काटते जाते है और सिर नये निकलते आते है।

तदनन्तर रघुकुलकी कीर्ति बढ़ानेवाले श्रीरामने कुपित होकर अपने धनुषपर एक विषधर सर्पके समान बाणका संधान किया और उसके द्वारा जगमगाते हुए कुण्डलोंसे युक्त रावणका एक सुन्दर मस्तक काट डाला। उसका वह कटा हुआ सिर उस समय पृथ्वीपर गिर पड़ा, जिसे तीनों लोकोंके प्राणियोंने देखा।

उसकी जगह रावणके वैसा ही दूसरा नया सिर उत्पन्न हो गया। शीघ्रतापूर्वक हाथ चलानेवाले शीघ्रकारी श्रीरामने युद्धस्थलमें अपने सायकोंद्वारा रावणका वह दूसरा सिर भी शीघ्र ही काट डाला।

उसके कटते ही पुन: नया सिर उत्पन्न दिखायी देने लगा, किंतु उसे भी श्रीरामके वज्रतुल्य सायकोंने काट डाला।

इस प्रकार एक-से तेजवाले उसके बहुत सिर काट डाले गये, तथापि उसके जीवनका नाश होनेके लिये उसके मस्तकोंका अन्त होता नहीं दिखायी देता था।

जैसे-जैसे प्रभु उसके सिरोंको काटते हैं, वैसे-ही-वैसे अपार होते जाते हैं। जैसे विषयोंका सेवन करनेसे काम उन्हें भोगनेकी इच्छा दिन-प्रति-दिन नया-नया बढ़ता जाता है।

तब श्रीरघुनाथने रावणके सिर, भुजाएँ, बाण और धनुष काट डाले। पर वे फिर बहुत बढ़ गये, जैसे तीर्थमें किये हुए पाप बढ़ जाते हैं (कई गुना अधिक भयानक फल उत्पन्न करते हैं)

बालिपुत्र अंगद, मारुति हनुमान्, नल, नील, वानरराज सुग्रीव और द्विविद आदि बलवान् उसपर वृक्ष और पर्वतोंका प्रहार करते हैं। वह उन्हीं पर्वतों और वृक्षोंको पकड़कर वानरोंको मारता है।

सिरोंकी बाढ़ देखकर रावणको अपना मरना भूल गया और बड़ा गहरा क्रोध हुआ। वह महान् अभिमानी मूर्ख गरजा और दसों धनुषोंको तानकर दौड़ा।

तदनन्तर श्रीराम अनेक प्रकारके बाणोंसे युक्त होनेपर भी इस प्रकार चिन्ता करने लगे- मैंने जिन बाणोंसे मारीच, खर और दूषणको मारा, क्रौञ्चवनके गड्ढेमें विराधका वध किया, दण्डकारण्यमें कबन्धको मौतके घाट उतारा, सालवृक्ष और पर्वतोंको विदीर्ण किया, बालिके प्राण लिये और समुद्रको भी क्षुब्ध कर दिया, अनेक बारके संग्राममें परीक्षा करके जिनकी अमोघताका विश्वास कर लिया गया है, वे ही ये मेरे सब सायक आज रावणके ऊपर निस्तेज- कुण्ठित हो गये हैं; इसका क्या कारण हो सकता है।

परन्तु प्रभु उसके हृदयमें बाण इसलिये नहीं मारते कि इसके हृदयमें जानकीजी आप बसती हैं।

सिरोंके बार-बार काटे जानेसे जब वह व्याकुल हो जायगा और उसके हृदयसे तुम्हारा ध्यान छूट जायगा, तब सुजान (अन्तर्यामी) श्रीराम रावणके हृदयमें बाण मारेंगे।

उस महायुद्धने बड़ा भयंकर रूप धारण किया। उसे देखते ही रोंगटे खड़े हो जाते थे। वह युद्ध कभी आकाशमें, कभी भूतलपर और कभी-कभी पर्वतके शिखरपर होता था।

देवता, दानव, यक्ष, पिशाच, नाग और राक्षसोंके देखते-देखते वह महान् संग्राम सारी रात चलता रहा।

श्रीरामको भी क्रोध आ गया। वे बराबर शत्रुके सिर और भुजाएँ काटते चले गये। इसका एक बहुत भयानक कुपरिणाम हुआ। रावणकी

कटी भुजाएँ आकाशमें चारों ओर उड़ने लगीं। वे श्रीरामके बहुतसे बाणोंको व्यर्थ करने के पश्चात् पृथ्वीपर गिरती थीं। पृथ्वी उन भुजाओंसे पट गयी। दशग्रीव के छिन्न सिर ऊपर-नीचे, चारों ओर दौड़ने लगे। उनसे हुंकार गूंजने लगी- पकड़ो। रामको मार दो। कहाँ हैं राम।

एक-एक करके अब दशानन के शीश कटकर गिरने लगे। तब मन-ही-मन दशानन विचार करने लगा। भाईसे वैर बढ़ाने का क्या फल होता है मैंने देख लिया। मुझे उसका बदला मिल गया जैसा मैंने उसके साथ किया। मैं भी कैसा मतवाला था, जो भाई को त्यागा मैने। भाई-भाई ही था। आखिर क्यों मैंने भाईको त्यागा। यदि उसके मत पर चलता तो यश मिल जाता। उसीमें भलाई थी। उल्टा मैने ही सभा बीच उसको लात लगाई थी। हे राम, मुझे मारने में तुम्हें कुछ भी गौरव प्राप्त नहीं होगा। क्योंकि यह रण तो भाई-भाई का था जो ऐसे आज समाप्त हुआ।

देवता, ऋषिगण उन उड़ते मस्तकोंके कारण अधिक ऊपर भागनेको बाध्य हुए। वानरोंने कूद-कूदकर कौतुकपूर्वक बहुतसे सिर पकड़े और उन्हें समुद्रमें फेंकने लगे। एक आतम व्याप्त हो गया। श्रीरामने इस आतमको देखा। उन्होंने बाण मारकर शत्रुके उड़ते सब मस्तकोंको विद्ध करके भूमिपर गिरा दिया। लेकिन इससे समस्या सुलझी नहीं। दुर्जय दशग्रीव अभी अविराम अस्त्र-वर्षा कर रहा था। उसे अपनी भुजाओं और मस्तकके बार-बार कटनेसे जैसे कोई क्लेश हो ही नहीं रहा था।

इस युद्धका अन्त कहाँ है ? इस भावसे श्रीराम ने सारथिकी ओर देखा।

तब मातलि बोले- प्रभो। आप इसके वधके लिये ब्रह्माजीके अस्त्रका प्रयोग कीजिये। देवताओंने इसके विनाशका जो समय बताया है, वह अब आ पहुँचा है।

आप उपाय जानते हैं। युद्ध-क्रीड़ा करना चाहते हैं तो आप लीलामयको कौन रोकेगा। मातलिने क्षणार्धके लिए गर्दन घुमाकर पीछे देखा- ब्रह्माजीने महेन्द्रके द्वारा जो ब्रह्मास्त्रयुक्त बाण महर्षि अगस्त्यके समीप भेजा था, वह आपके त्रोण में अब भी सुरक्षित है। उसको प्रयोग क्यों नहीं करते आप ?

श्रीरामने सस्मित अपना कर दूसरे त्रोणकी ओर बढ़ाया। दक्षिण स्कन्धपर बँधे त्रोणसे उस बाणके बाहर आते ही दिशाएँ उसके तेजसे व्याप्त हो गयीं। श्रीरामने उस शरको मस्तक से लगाया और अभिमन्त्रित किया।

मातलिके इस वाक्यसे श्रीरामको उस अस्त्रका स्मरण हो आया। फिर तो उन्होंने फुफकारते हुए सर्पके समान एक तेजस्वी बाण हाथमें लिया। वानर भागकर जहाँ भी जाते हैं, वहीं आग जलती देखते हैं। वानर-भालू व्याकुल हो गये। फिर रावण बालू बरसाने लगा।

सिर और भुजाएँ बहुत बार काटी गयीं। फिर भी वीर रावण मरता नहीं। प्रभु तो खेल कर रहे हैं; परन्तु मुनि, सिद्ध और देवता उस क्लेशको देखकर प्रभुको क्लेश पाते समझकर व्याकुल हैं।

काटते ही सिरोंका समूह बढ़ जाता है जैसे प्रत्येक लाभपर लोभ बढ़ता है। शत्रु मरता नहीं और परिश्रम बहुत हुआ। तब श्रीरामने विभीषणकी ओर देखा।

तभी विभीषण को हँसी आयी और रामके हृदय का भाव रामभक्त विभीषण पहचान गया और साथ में भाई का ध्यान रखते हुए झिझका। सचमुच उस क्षण में उस भाई में भाई का प्रेम उभर आया। मानो सूखे सरोवर के भीतर आप ही आप जल भर आया और सोचने लगा आज रावण की मृत्यु का भेद नहीं खोलूँगा। इसीमें मेरे लिये आज भलाई है। कैसा ही भला-बुरा हो पर आखिर तो मेरा भाई है। इधर विभीषण में भाई का प्यार जगा और उधर दशानन के मन में उठा एक विचार।

रावण का सारा आक्रोश विभीषण पर केंद्रित हो गया। सारे कष्टों की जड़ यही विभीषण है। यह न होता तो राम और लक्ष्मण लंका का कुछ नहीं बिगाड़ सकते थे। यही सागर पार जाकर उनको इस पार लिवा लाया, यही उन्हें लंका के सारे भेद देता रहा, यही लक्ष्मण को मेघनाथ के वध-स्थल तक ले गया हीं।

तब रावण विभीषणसे बोला- अरे नपुंसक, तू शत्रु की शरणमें गया है, अत: तुझे धिक्कार है। असुरों के कुल में उत्पन्न होकर भी तू कुबुद्धिशील और कायर हो गया है। अरे हमने तेरा परिपालन किया, वह सब मिथ्या व्यर्थ हो गया है। जिस प्रकार कोई भस्म में अवदान आहुति-द्रव्य अर्पित कर दे तो वह व्यर्थ हो जाता है, उस प्रकार हमने तेरे लिए जो किया, वह तुझपर व्यर्थ सिद्ध हो गया है। अरे जिस प्रकार मृतक के लिए श्रृंगार सजाना व्यर्थ हो जाता है, किसी पद्मिनी जाति की स्त्री का परिणय षण्ढ नपुंसक से करा दें, तो वह व्यर्थ हो जाता है; जिस प्रकार कृतघ्न का उपकार करें या लम्पट-लण्ठ का गुण गान करें, तो वह व्यर्थ ही हो जाता है, उसी प्रकार हमने तेरा

लालन-पालन किया, वह वैसे ही व्यर्थ हो गया है। जैसे साँप को कोई दूध से दूध पिलाकर पाल ले, तो वह साँप विष का त्याग नहीं करता, बल्कि पालनेवाले को भी काट सकता है। वैसे ही हमने तुझे पाला है; फिर भी तू साँप की भाँति, हमारे प्राणों का शत्रु हो गया है तू आज हमारे विरोध में समस्त कुलाभिमान को छोड़कर शत्रु पक्ष का साथी हो गया है। तेरे रूप में कुल का नाश करने के लिए कुल में कलंक ही उत्पन्न हो गया है। अरे, जिस प्रकार अपने अंग में से आग प्रकट करते हुए बाँस समस्त वन को जला डालता है, उस प्रकार तूने हमारे सम्बन्ध में शत्रुता-रूपी आग उत्पन्न करते हुए हमारे कुल का नाश करवा डाला है। तुझ बन्धु को धिक्कार है। समस्त मर्म-भरा विचार करते हुए, तूने इन्द्रजित को मरवा डाला है। शास्त्र और पुराण इस प्रकार कहते हैं कि जिसका घर फूट पड़ा (जिसके घर में फूट पड़ गयी) उसका कर्म भाग्य भी फूट गया फूट जाता है। रावण की ऐसी बातें सुनकर विभीषण ने यह बात कही। अरे मन्द बुद्धिवाले, मलिन पापी, झूठी कल्पना बकवास क्या कर रहा है ? पहले तुझे सद्विचार नहीं सुझायी दिया और अब मिथ्या झूठी, व्यर्थ कल्पना क्या कर रहा है ? तूने अपने हाथों से कुल का क्षय कर डाला है। अपहरण करके सीता को तू क्यों ले आया ? मैं तो रघुवीर की शरण में गया हूँ, जिससे जन्म और मृत्यु टल जाएँगे मुक्ति मिल जाएगी। रे अभागे, मैंने तुझे मार्मिक हेतु भरी बहुत बातें कही थीं, उन्हें तूने नहीं माना था। अब तेरे किये कर्म के जो फल होंगे, उन्हें तू स्वयं भोग लेना। सुन्दर शिक्षा देने पर भी तूने मुझे लात मारी और मुझे घर से निकाल दिया। अरे, जिस प्रकार प्रल्हाद ने पिता को त्याग दिया, उस प्रकार मैंने तुझे त्यज दिया है। विभीषण की ऐसी बातें सुनकर रावण क्रोध से बोला, अरे लक्ष्मण ने तुझे बचा लिया, नहीं तो मैं तेरे प्राण लेता। परन्तु अब मेरा पराक्रम देख-मेरा नाम रावण है। अरे, तुझे जिसने बचा रखा है, अब उस लक्ष्मण को मार डालता हूँ।

मेरे भेदों का जानकार इस जगह विभीषण ही है। इसलिए मेरी मृत्यु का भी यही कारण हो सकता है। पहले इसको मारूँ तो मेरा जीवन निर्भय हो जायगा। फिर तपस्वी तो किस गिनती में है ब्रह्मा तक मुझे मार नहीं पाएगा। तभी दशानन ने अपने छोटे भाई की तरफ शक्ति बाण चलाया। तभी विभीषण को बचाने के लिये कौशल्याका लाल सामने आ गया। तब वह बाण भी सामने कृपानिधान को देखकर उनके चरणों को छूकर सीधा ब्रह्मस्थान चला गया। इस दुर्घटना के घटते ही विभीषण के मन में परिवर्तन आया कि मैं तो इसको भाई समझ रहा था पर यह तो मेरा बैरी है। अब तो मैं इसको रण में मरवा दूँगा और बदले की आग मनमें भड़कते ही वह दौड़ पड़ा भेद बताने को। तैयार हुआ घर का भेदी, सोने की लंका ढाने को।

शिवजी कहते हैं- हे उमा। जिसकी इच्छामात्रसे काल भी मर जाता है, वही प्रभु सेवककी प्रीतिकी परीक्षा ले रहे हैं। विभीषणने कहा- हे सर्वज्ञ। हे चराचरके स्वामी। हे शरणागतके पालन करनेवाले। हे देवता और मुनियोंको सुख देनेवाले रामसे निवेदन किया- हे कौशलनाथ मैं आपको दशानन किस तरह मरेगा इसका भेद बतलाता हूँ। इसके बार-बार सिर उगने की चिंता न करें। यह तो मृत्युञ्जय की छाया है जो इसको जीता रखती है वह मृत्युञ्जय की माया है। इसने शिवार्चन में अपने सिर काट-काट चढ़ाये थे वे ही शंकर के वरदान से वे ही सिर अब वापस आये हैं। यदि किसी यत्न प्रयत्न से वे महादेव इसके मन से हट जाएँ तो शिरोंकी बाढ़ नष्ट होकर असली मस्तक कट जाएँगे।

इसके नाभिकुण्डमें अमृतका निवास है। हे नाथ। रावण उसीके बलपर जीता है। इसलिए एक ऐसा शर छोडिये जो ब्रह्माद्वारा दिया हुआ इसीके पास है जो इसके बल को सोख सकता है नहीं तो यह दशानन का मरना मुश्किल है। इसे ब्रह्मासे वर प्राप्त है वह मैं तुम्हें सब सुनाता हूँ- विभीषण ने श्रीराम से कहा- हे प्रभु एक पुरानी बात याद पड़ गई। जब तीनों भाइयों ने मिलकर तपस्या की और जब पद्मयोनि हमलोगों को वर देने के लिए आए तो राजा दशानन ने अमर होने का वर माँगा, ब्रह्मा ने कहा, हे निशाचर सुनो, अमरता का वर मत माँगो, कोई दूसरा वर माँगो। दशानन ने कहा, मुझको दूसरा कोई वर नहीं चाहिए, मुझको अतुल धन-सम्पदा की कोई आवश्यकता नहीं।

ब्रह्मा ने कहा, दशानन दुखी क्यों होते हो। मैं तुम्हें अमरत्व का वरदान तो नहीं दे सकता क्योंकि मैं स्वयं मरना धर्म हूँ। पर मैं तुम्हें ऐसा वर दूँगा कि तुम्हारी मृत्यु तुम्हारे हाथ में ही होगी। अपने कौशल से वर देकर तुमको मैं अमर बना दूँगा। दस मुंड और बीस हाथ भी अगर तुम्हारे कट जायें फिर भी तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी। हे निशाचर, यदि तुम्हारा शरीर कोई खंड-खंड कर काट भी डाले तो उससे भी तुम नहीं मरोगे। हे दशानन सुनो, संग्राम की रीति यह है कि वैरी लोग सिर को काट डालने की चेष्टा करते हैं तथा तीखे बाण चलाकर हाथ-पैर काट डालते हैं। अस्त्र के आघात से सारे शरीर को टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं। अत: हे दशानन, मैं तुमसे बताता हूँ सुनो, तुम्हारी मृत्यु हाथ पैर और मुंड कटने से नहीं होगी। कटा हुआ मुंड फिर तुम्हारे कन्धे से जुड़ जायगा, वर के कौशल से तुम सहज ही अमर हो जाओगे।

जब तुम्हारे नाभिकुण्ड में ब्रह्मास्त्र प्रविष्ट हो जायगा हे रावण तभी तुम्हारी मृत्यु होगी। दूसरा कोई अस्त्र तुम्हारे शरीर में प्रवेश नहीं कर

सकेगा, तुम्हारी मृत्यु का अस्त्र तुम्हारे पास ही रहेगा। मैंने उस ब्रह्म-बाण, अग्नि बाण का निर्माण किया है, लो इसे लो और अपने स्थान पर अपने पास रख दो। विपक्षी यदि यह अस्त्र किसी प्रकार पा जाये और उससे तुम्हारे हृदय पर आघात करे तभी तुम मरोगे, इसमें कोई सन्देह नहीं, अपना यह मृत्युअस्त्र अपने ठाँव पर ही सुरक्षित रूप से रख लो और इसे गुप्त रखना इसे अपनी पत्नि तक को भी नहीं बताना।

यह वर सुनकर और अस्त्र पाकर दशानन बड़ा प्रसन्न हुआ। रावण अपने स्थान पर गया। उस बाण को रानी मन्दोदरी ने रखा है, वह अस्त्र कहाँ रखा है किसी को कुछ भी मालूम नहीं।

विभीषण ने राम से कहा कि रावण का मृत्युबाण रावण के घर पर ही होगा। वह अस्त्र लाने की शक्ति किसी में नहीं है। राम ने कहा, लंका-अधिपति तब तक नहीं मरेगा। वह बाण ले आने योग्य यहाँ कौन है, विभीषण को भी मालूम नहीं कि वह बाण कहाँ है। यह तो निश्चित है कि वह मन्दोदरी के पास होगा और वह बाण लाने पर ही रावण का विनाश होगा। मन्दोदरी का अन्त:पुर बड़ा भयंकर स्थान है वहाँ ब्रह्मा आदि देवता भी नहीं जा सकते। रावण के भय से वहाँ पवन भी नहीं पहुँचता, कौन है जो उस स्थान से बाण ले आयगा।

राक्षस विभीषण ने जब इतना कहा तब तक वहाँ पवन-नन्दन जा पहुँचे। हनुमान ने कहा, हे रघुमणि क्यों सोच करते हो, मैं जाकर अभी मृत्यु-बाण ले आऊँगा। राम ने कहा, बार-बार तुमने कितना ही परिश्रम किया किन्तु अभी तक रावण-वध नहीं हुआ, सभी कुछ व्यर्थ हो गया। हनुमान ने कहा, प्रभु आशीर्वाद दो, मैं अभी बाण ले आता हूँ, प्रमाद कैसा ?

इतना कह रघुनाथ को प्रणाम कर जाम्बवान और सुग्रीव की पदधूलि लेकर हनुमान ने धीरे-धीरे अन्त:पुर में प्रवेश किया। माया से वृद्ध ब्राह्मण का वेश धारण कर लिया। काँख के नीचे पोथी-पत्रा, दाहिने हाथ में छड़ी, माथे पर लम्बा तिलक लगाये वह धीरे-धीरे पग-पग आगे बढ़ने लगे। मुट्ठी में कुश की पवित्री पहने और गले में जनेऊ डाले थे। वे बार-बार रावण राजा की जय की ध्वनि करने लगे और बोले मैं ज्योतिष गणना में बड़ा ही प्रवीण ब्राह्मण हूँ, यह कहकर वह रानी के सामने जा पहुँचे।

महारानी उस समय अन्य स्त्रियोंके साथ पार्वती की आराधना कर रही थीं। बूढ़ा ब्राह्मण देखकर रानी का मन बड़ा प्रसन्न हो गया। बैठो-बैठो कहकर उसने रत्न-सिंहासन दिया। जब रानी ने सिंहासन दिया तो वह उसपर न बैठकर अपनी बगल से कुशासन निकाल उसको जमीन पर बिछाकर बैठ गया। उस द्विज ने कहा, मैं ज्योतिष में बड़ा प्रवीण हूँ और सदा से रावण के हित की चिन्ता करता हूँ। नर-वानर ने आकर विपत्ति खड़ी कर दी, मैं आशीर्वाद देता हूँ कि राजा की जय हो। प्रतिदिन ज्योतिष से गणना कर पूर्वापर देखा करता हूँ कि नर और वानर क्या कर सकेंगे और क्या नहीं कर सकेंगे। हे मन्दोदरी, तुम्हारे कमरे में जो धन है, उसके प्रभाव से यदि राम भी आ जाये तो रावण का क्या बिगाड़ सकते हैं।

मन्दोदरी ने कहा, ऐसा कौन सा धन है। द्विज ने कहा, मैंने गणना करके देख लिया है। ज्योतिष की गणना द्वारा मुझको कितने ही समाचार विदित हैं। राजा का जीवन और उसकी मृत्यु तुम्हारे ही घर में है। कौशल से रावण राजा अमर बन गया है, प्रकट रूप से यह बात किसी को भी नहीं मालूम और किसीसे भी मत कहना। इतना कहकर विप्रवर उठकर खड़ा हो गया और चल पड़ा। रानी मन्दोदरी ने हाथ जोड़कर कहा, ऐसा कौन सा धन मेरे घर में है जो कि ज्योतिष के द्वारा गिनकर आपने जाना है।

द्विज ने कहा, मन्दोदरी मेरे साथ छलना मत करो, मेरी गणना बहुत बड़ी विद्या है। लंकापुरी में जहाँ पर जो चीज है वह खड़िया से चारखाना बनाकर और गणना कर ठीक-ठीक से बता सकता हूँ। अब इन बातों की कोई आवश्यकता नहीं, मैंने कह दिया जहाँ वह गुप्त धन रखा है। ब्रह्मा भी यदि आकर तुमसे स्वयं कहें तो किसी प्रकार भी उसको प्रकट मत करना।

विप्र की बातों से रानी बहुत ही विस्मित हुई; यह ब्राह्मण कोई मामूली गणक नहीं है। इतना सोचकर मन्दोदरी ने विप्रवर से कहा, उसको बड़े जतन से मैंने छिपा रखा है। द्विज ने कहा, यह सुनकर मुझको बड़ी प्रसन्नता हुई। उनको सावधानी से रखना, देखना किसी को भी पता न लगने पाए।

इतना कहकर द्विजवर तुरन्त चल पड़ा। दो पग जाकर ही वह फिर पलट कर लौट आया। द्विजवर ने कहा, रानी मन्दोदरी सुनो, कितना भी कहो तुम हीनबुद्धि नारी ही हो। यह सच है कि तुमने उसे छिपा कर रखा है, यह कोई झूठ नहीं, फिर भी तुम्हारे वाक्य पर विश्वास नहीं होता। घर का भेदी विभीषण बड़ा ही घनघोर शत्रु हैं, कुपरामर्श देकर किसी भी समय विपत्ति ढा सकता है। विभीषण को लंका में कोई स्थान अज्ञात नहीं है, तब राजा रावण किस प्रकार से छुटकारा पायेगा। मन्दोदरी ने कहा, द्विज अपने हृदय में कतई कोई चिन्ता मत करो। विभीषण की क्या सामर्थ्य कि उसको निकाल सके। तुम राजा के पक्ष में परम हितैषी हो, तुम्हारे सामने विशेष रूप

से कहूँगी। तुम्हारे आशीर्वाद से उसको कौन ले सकता है, उसको मैंने इस अन्त:पुर के स्तम्भ में छुपा रखा है। नारी की दुर्बलता से भेद प्रकट हो गया। नारी के मुँह से यह विशेष समाचार सुनकर हनुमान ने बिल्लौरी खम्भे पर एक लात जमाकर उसको तोड़ डाला। स्फटिक-स्तम्भ को तोड़ते ही बाण दिखाई पड़ गया। बाण लेकर वीर हनुमान ने छलाँग मारी। अपना वास्तविक रूप धारण करके वह प्राचीर पर जा बैठा और एक छलाँग मार कर वह श्रीराम के समक्ष पहुँच गया। बाण देकर उन्होंने रघुनाथ को प्रणाम किया।

यह वही बाण था, जिसे पहले शक्तिशाली भगवान् अगस्त्य ऋषिने रघुनाथको दिया था। वह विशाल बाण ब्रह्माजीका दिया हुआ था और युद्धमें अमोघ था। अमित तेजस्वी ब्रह्माजीने पहले इन्द्रके लिये उस बाणका निर्माण किया था और तीनों लोकोंपर विजय पानेकी इच्छा रखनेवाले देवेन्द्रको ही पूर्वकालमें अर्पित किया था।

उस बाणके वेगमें वायुकी, धारमें अग्नि और सूर्यकी, शरीरमें आकाशकी तथा भारीपनमें मेरु और मन्दराचलकी प्रतिष्ठा की गयी थी।

विभीषणके वचन सुनते ही कृपालु श्रीरघुनाथने हर्षित होकर हाथमें विकराल बाण लिये।

वह सम्पूर्णभूतोंके तेजसे बनाया गया था। उससे सूर्यके समान ज्योति निकलती रहती थी। वह सुवर्णसे भूषित, सुन्दर पंखसे युक्त, स्वरूपसे जाज्वल्यमान, प्रलयकालकी धूमयुक्त अग्निके समान भयंकर, दीप्तिमान्, विषधर सर्पके समान विषैला, मनुष्य हाथी और घोड़ोंको विदीर्ण कर डालनेवाला तथा शीघ्रतापूर्वक लक्ष्यका भेदन करनेवाला था।

जिस बाणसे बालि मारा गया था, जिस बाणने खर-दूषणको कालके मुखमें फेंक दिया था, दुर्दम दशग्रीवने उनकी भी उपेक्षा की थी। वे बाण भी केवल उसका मस्तक काट सके थे और मस्तकोंका, भुजाओं का कटना तो रावणके लिए केशोंके कटनेसे अधिक महत्त्वका नहीं रह गया था। उसे कोई पीड़ा नहीं होती थी। कटे केश बढ़ जाते हैं; किंतु उनके बढ़नेमें समय लगता है, पर दशग्रीवकी भुजाएँ और सिर तो उसी क्षण उग आते थे। अत: वह उनके कटनेकी ओर क्यों ध्यान दे। लेकिन इस दिव्य बाणको देखकर उसका हृदय भी काँप गया।

बड़े-बड़े दरवाजों, परिघों तथा पर्वतोंको भी तोड़-फोड़ देनेकी उसमें शक्ति थी। उसका सारा शरीर नाना प्रकारके रक्तमें नहाया और चर्बीसे परिपुष्ट हुआ था। देखनेमें भी वह बड़ा भयंकर था। वज्रके समान कठोर, महान् शब्दसे युक्त, अनेकानेक युद्धोंमें शत्रुसेनाको विदीर्ण करनेवाला, सबको त्रास देनेवाला तथा फुफकारते हुए सर्पके समान भयंकर था। युद्धमें वह यमराजका भयावह रूप धारण कर लेता था। समरभूमिमें कौए, गीध, बगले, गीदड़ तथा पिशाचोंको वह सदा भक्ष्य प्रदान करता था।

वह उत्तम बाण समस्त लोकों तथा इक्ष्वाकुवंशियोंके भयका नाशक था, शत्रुओंकी कीर्तिका अपहरण तथा अपने हर्षकी वृद्धि करनेवाला था। उस महान् सायकको वेदोक्त विधिसे अभिमन्त्रित करके महाबली श्रीरामने अपने धनुषपर रक्खा।

शून्यपथ में रहकर देवताओं ने देखा, रघुनाथ ने अपने धनुष पर मृत्युबाण को स्थापित किया है। उस बाण के मुख का आकार हंस की तरह है। उस बाण को देखकर देवता आश्चर्य करने लगे। सोने का बना हुआ वह बाण सारे भूमंडल को प्रकाशमय कर रहा था। बाण के मुख में गुप्त-रूप से अग्नि स्थित है। बाण के मध्यस्थल पर पशुपति बैठे हैं और उनचास पवन द्वारा वह संचालित होता है। धरा और आकाश उसके मूल में विराजते हैं। अलक्षित रूप से यम उस बाण पर स्थित हैं। बाण के गर्जन से त्रिभुवन डर जाता है, पर्वत उखड़ जाते हैं और सागर उच्छ्वसित हो उठता है। उस कृष्णवर्ण बाण की पूर्ण ज्योति क्षणभर में सारी वसुमती का विनाश कर सकती है। विभिन्न पुष्प-मालाओं से उस बाण को सुसज्जित कर रघुनाथ ने मंत्र पढ़कर पूजा की। रघुनाथ ने मंत्रबल से मृत्युबाण साधा। बाण के मुँह से धुँवा निकलने लगा और ब्रह्म-अग्नि प्रज्वलित हो उठी। महाशब्द करता वह बाण गरजने लगा, यह देखकर रावण के प्राण उड़ गये।

मृत्युबाण देखते ही रावण राजा ने पहचान लिया। यह भी जान लिया कि इसी बाण से मेरे प्राण निकलेंगे। अब रावण को ज्ञात हुआ कि स्त्री जाति कितनी दुर्बल होती है। वह कोई भेद गुप्त नहीं रख सकती। हो-नो-हो यह बाण मन्दोदरी से ही किसीने लिया होगा। नहीं तो यह मेरा मृत्युबाण इस रणस्थल में कैसे आता।

श्रीराम जब उस उत्तम बाणका संधान करने लगे, तब सम्पूर्ण प्राणी थर्रा उठे और धरती डोलने लगी।

उस समय नाना प्रकारके अपशकुन होने लगे। बहुत-से गदहे, स्यार और कुत्ते रोने लगे। जगत्के दु:ख (अशुभ) को सूचित करनेके लिये पक्षी बोलने लगे। आकाशमें जहाँ-तहाँ केतु (पुच्छल तारे) प्रकट हो गये।

दसों दिशाओंमें अत्यन्त दाह होने लगा (आग लगने लगी)। बिना ही पर्व (योग) के सूर्यग्रहण होने लगा। मन्दोदरीका हृदय बहुत काँपने लगा। मूर्तियाँ नेत्र-मार्गसे जल बहाने लगीं।

मूर्तियाँ रोने लगीं, आकाशसे वज्रपात होने लगे, अत्यन्त प्रचण्ड वायु बहने लगी, पृथ्वी हिलने लगी, बादल रक्त, बाल और धूलकी वर्षा करने लगे। इस प्रकार इतने अधिक अमङ्गल होने लगे कि उनको कौन कह सकता है ? अपरिमित उत्पात देखकर आकाशमें देवता व्याकुल होकर जय-जय पुकार उठे। देवताओंको भयभीत जानकर कृपालु श्रीरघुनाथ धनुषपर बाण सन्धान करने लगे।

इधर देवताओंने स्तुति की कि हे श्रीराम। इसने हमको दारुण दु:ख दिये हैं। अब आप इसे अधिक न खेलाइये। जानकीजी बहुत ही दु:खी हो रही हैं।

श्रीरामने वह बाण प्रत्यंचापर चढ़ाया। पृथ्वीमें भूकम्प आ गया। समुद्रमें उत्ताल तरंगे उठने लगीं। असमय ज्वार आ गया। अनेक-अनेक जलीय प्रचण्ड वात्यचक्र आकाश तक उठ गये। गगनसे उल्कापात होने लगा। जैसे सूर्य-मण्डलका तेज मन्द पड़ गया हो। दिशाएँ प्रज्वलित हो उठीं।

विभीषण दौड़कर समीप आ गये। दोनों हाथ जोड़कर मस्तक झुकाकर बोले- मस्तकोंको लक्ष्य मत बनाइये। सिर काटनेसे यह मरनेवाला नहीं है। इसके नाभि-हृदयमें अमृतकुण्ड है, यह उसीकी शक्तिसे जीवित है।

इतनी सूचना पर्याप्त थी। संकेत पाकर विभीषण पीछे चले गये। श्रीरामने कान तक प्रत्यञ्चा खींचकर वह अमोघ ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया। विदीर्ण हो गया दशग्रीवका वक्ष, फट गया दुर्जय दशाननका हृदय, भस्म हो गयी रावणके नाभि-हृदयमें स्थित सुधाकणिका। ध्वस्त रथ, मृत सारथि, त्रिलोकीको युगों तक रुलानेवाला रावण भूमिपर गिर पड़ा।

एक बाणने नाभिके अमृतकुण्डको सोख लिया। दूसरे तीखे बाण कोप करके उसके सिरों और भुजाओंमें लगे। बाण सिरों और भुजाओंको लेकर चले।

विश्वामित्र का स्मरण कर रघुवीर ने बाण छोड़ा। रावण के वक्ष में चुभकर उसने वक्ष को चीर दिया। धरती पर गिरकर राजा छटपटाने लगा। रावण धराशायी हुआ।

रावण एक बड़ा ही विद्वान पण्डित और कुशल राजनीतिज्ञ था और उसे सहसम्मान सभी रामायण, पुराणों और ग्रन्थों ने लिखा है कि रावण रणस्थल पर महाशयन करेगा। पुराण में कहीं भी ऐसा नहीं लिखा है कि रावण मरेगा अत: ऐसा ही विचार है कि वह मरा नहीं। कौन सा देव है जो कहता है कि रावण की मृत्यु होगी। किससे उसको अमर होने का वर प्राप्त हुआ। रावण अजेय के रूप में संसार में विख्यात होगा। रावण दुर्जय होगा इसलिए प्रकट रूप से मृत्यु का लिखना उचित नहीं समझा। अबकी बार रावण मरा, इसमें अब कोई सन्देह नहीं है।

मरते-मरते भी रावण को तनिक सा चेत हुआ। क्योंकि रावण बेसुध हुआ था। उसने आँखे खोली और सामने कृपानिकेत को देख वह अपना जीवन-मरण पवित्र करने लगा।

२६) रावण का राम को राजनीति उपदेश व रावण की अन्तिम अभिलाषा

देवता कुछ भी निश्चय न कर सके। ऐसे ही समय रघुनाथने मन ही मन सोचा, राजा दशानन मेरा परम भक्त है, शाप से उसको राक्षस-योनि प्राप्त हुई है। बाण की चोट से जर्जर हो वह रणभूमि में पड़ा है इसलिए मैं एक बार उसको जाकर दर्शन दूँगा। इसमें सन्देह नहीं रावण अभी मरेगा, मृत्यु के समय उसको दर्शन देकर उसकी देह को मुक्त कर दूँ। लक्ष्मण को भेजकर जान लूँ कि उसी प्रकार है या उसको दिव्यज्ञान प्राप्त हो चुका है।

इतना सोचकर रघुनाथ ने लक्ष्मण से कहा- हम दोनों भाइयों ने राजा के वंश में जन्म लिया है, सदा से वन में घूमते-फिरते रहे हैं। पहले बचपन में गुरुकुल से आये वरमें ताड़का-राक्षसी के वध के लिये विश्वामित्र माँगकर ले गये। कितने ही दिनों तक मुनियों की सेवा करते रहे हैं, पिता से कुछ भी राजनीति नहीं सीख सके। अरण्य में मैने ताड़का-राक्षसी का वध किया, विवाह के उपरान्त दोनों भाई अयोध्या में आए। राजनीति सीखने की मन में साध थी किन्तु विधि की विडम्बना से वह आशा निराशा बन गई। पिता का सत्य पालन करने के लिए वन आना पड़ गया। चौदह वर्ष तक दोनों भाई वनों में ही भटकते रहे। भालू और वानर लेकर वन-वन घूमते फिर रहे हैं, कौन है जो मुझको राजनीति सिखायेगा, राजनीति की शिक्षा लूँ भी तो कहाँ से ? अयोध्या नगर पहुँचते ही राज्यभार मिलेगा, किन्तु न तो धर्माधर्म जानता हूँ और न राज्य-व्यवहार। कौन मुझको राजधर्म सिखायेगा, किसके पास जाऊँ। कहीं अयोध्या नगर में लोग मेरी निन्दा न करने लग जायें। राक्षसराज रावण प्रवीण राजा है, सभी शास्त्रों की व्याख्या कर सकता है। राक्षस-स्वभाव के कारण उसने अधर्मकर्म किया है। राज-

धर्म-कर्म में रावण परम पंडित है, रावण से तनिक राजनीति सिखनी चाहिये। अभी राजा शरीर त्याग कर चला जायगा, उससे पूर्व ही उससे दो-चार नीतिवाक्य पूछ लो। अनमोल रत्न यदि कुठाँव में भी पड़ा हो तो उसको ग्रहण किया जा सकता है, शास्त्र में ऐसा कहा गया है।

श्रीराम की आज्ञा पाकर लक्ष्मण तुरंत लंकेश्वर के पास जा पहुँचे। लंकाधिपति उस समय ब्रह्म-अस्त्र से आहत हो व्याकुल पड़ा था।

अभी दशग्रीवका देहान्त नहीं हुआ है। श्रीरामने इतने उग्र युद्धके पश्चात् स्वेद शुष्क होनेकी भी प्रतीक्षा नहीं की। वे लक्ष्मणसे बोले- वे महाप्रयाण श्रीरामेश्वरकी स्थापनामें मेरे आचार्य हुए थे। उन्होंने मुझे विजयी होनेका आशीर्वाद दिया और अपनी आहुति देकर वह आशीर्वाद सत्य किया। उनकी दक्षिणा चुकानी बाकी है रामको। लेकिन लक्ष्मण। नीतिशास्त्र का यह सूर्य मेरे उपस्थित होते ही अस्त हो जागया। तुम जाकर उनसे उपदेश ग्रहण करो।

लक्ष्मण गये और लौट आये। उनके पुकारनेपर भी रावणने नेत्र नहीं खोले थे। लक्ष्मण रावण के सिर की ओर खड़े थे और दशानन से बोले- मुझे राजनीति का उपदेश करो। तब रावण ने कहा- मुझे मालूम है उसने तुम्हें भेजा होगा। तुम तो स्वयम् अपनी इच्छा से आये नहीं हो। उसे जाकर कह दो कि मैं श्रीराम का दर्शन करना चाहता हूँ।

अनुजको निराश लौटा देखकर श्रीरामने उपालम्भ दिया- तुमने आचार्यके चरणोंके समीप उनको अभिवादन किया था ? सम्यक सम्मान जो न देता हो, जो उपदेशके अनुकूल स्थितिका ध्यान न रखता हो, ऐसे दुर्विनीत एवं प्रमत्त जिज्ञासुका परित्याग कर देना चाहिये, यह शास्त्रकी मर्यादा है। इसे तो तुम्हें स्मरण रखना था।

यह इक्ष्वाकुगोत्रीय दाशरथि लक्ष्मण निखिलशास्त्रनिष्णात आचार्य पौलत्स्ये पदोंमें प्रणाम करता है। इस बार लक्ष्मणने आहत, मूर्छितप्राय, भूमिमें विदीर्णवक्ष उत्तान पड़े दशग्रीवके पैरोंके समीप खड़े होकर उच्चस्वरसे कहकर मस्तक झुकाया। दशग्रीवने नेत्र खोल दिये- यह देखकर दोनों हाथ जोड़कर विनम्र स्वरमें बोले- अग्रजने मुझे आपके समीप नीतिशास्त्रका उपदेश-ग्रहण करने भेजा है। वे स्वयं शीघ्र उपस्थित हो रहे हैं।

लक्ष्मण को देखते ही वह सकरुण स्तुति करने लगा। दशानन ने कहा, हे देव लक्ष्मण सुनो, झगडकर मैंने भयंकर युद्ध किया, मैं सैकड़ों अपराधों का अपराधी हूँ। हे महानुभाव, मेरा अपराध क्षमा कर दो, अब मेरा अन्तिम समय उपस्थित है।

लक्ष्मण ने कहा, तुम्हारा कोई दोष नहीं है। ये सारे संयोग तो विधाता के लेख लिखे हैं। तुम लंका के स्वामी हो और परम विद्वान हो, राम ने मुझको नीति सीखने के लिए आपके पास भेजा है।

हे रावण जग में तुमसा योद्धा, तुमसा आनवाला, तुमसा ज्ञानवाला आज तक कोई हुआ नहीं। तुम नीति विशारद पण्डित हो। इसलिये हे विज्ञानी अपना कुछ अनुभव, कुछ नीति अपनी उस मृत्युसे पहले हमें सिखाके जाओ। तब रावण के होंठोंपर कुछ मुस्कान आयी। देखो भगवान अपने भक्त का किस तरह मान बढ़ाते हैं।

लक्ष्मण के ये वाक्य सुनकर लंकेश्वर ने कहा, संसार की कौन सी नीति ऐसी है जो राम को अज्ञात हो। भला बताओ मैं राम को राजनीति क्या बताऊँगा। हाँ, अगर वह मुझे कहने के लिए आदेश देते हैं, सेवक के मुँह से अगर सुनना चाहें तो कृपया एकबार दर्शन दे दें। मैं भक्तिशून्य हो गया हूँ, प्राण निकल रहे हैं, प्रभु के समक्ष नहीं जा सकता। यदि राम कृपया यहाँ आ जायें तो राजनीति जितनी जानता हूँ उनके चरणों में निवेदन करूँगा।

तब दशानन बोला- हे लक्ष्मण, अब इतनी मुझमें शक्ति नहीं है कि मैं नीतिशास्त्र का वर्णन कर पाऊँ पर अब जितनी साँसें बाकी है उनमें कुछ आज्ञा पालन हो जाए यही मैं करता हूँ।

लक्ष्मण। मेरी अवस्था देखते ही हो। मेरा अंग-अंग, रोम-रोम रामके शरोंसे विद्ध है। मैं बोलनेमें अत्यन्त पीड़ाका अनुभव कर रहा हूँ। मेरी इन्द्रियाँ शिथिल होती जा रही हैं। प्राण अब प्रस्थानको उत्सुक हैं। केवल तुम्हारे इन्दीवरसुन्दर अग्रजकी एक झाँकीकी प्रतीक्षा है; किन्तु-वह महाप्राण अपनी समस्त शक्ति समेटकर इस अवस्थामें भी मस्तिष्कको, स्मृतिको सावधान रखता बोला- तुम नीति-शिक्षा ग्रहण करने आये हो। कोई विद्वान अपने समीप उपस्थित जिज्ञासुको निराश करे तो विद्या उसे शाप देती है। वह पिशाच बनता है। यद्यपि अत्यन्त असमय है, पर तुम्हारे लिये और समय भी तो नहीं है। मैं तुम्हें निराश नहीं करूँगा।

तुम महर्षि वशिष्ठके शिष्य हो। शास्त्रोंका सम्यक् अध्ययन किया है तुमने, राजनीति-शास्त्र तुमसे अज्ञात नहीं है। रावणने शास्त्रोचित रीतिसे जीज्ञासुकी प्रशंसाकी- मैं केवल अपने अनुभव का सार सुना दू, इतना ही समय है और तुम्हारे लिए इतना पर्याप्त है।

साम, दान, दण्ड और भेद- इन व्यवहार-शास्त्रके चारों अंगोंको तुम समझते हो। दशग्रीवने अब अपना अनुभव सुनाना प्रारम्भ किया- अपने सेवक और स्वजन प्राण देकर भी अत्यन्त अप्रिय होने पर भी उसका आदेश स्वीकार कर लेते हैं जो सदा उनकी सुख-सुविधाका पूरा ध्यान रखता रहा है। जो उनकी स्वतन्त्रता-उच्छृंखलताको भी सहता रहा है। राक्षसोंने मेरा साथ नहीं छोड़ा। मेरे लिये युद्धमें प्राण दिये। मेरी अत्युग्र प्रकृतिको सहकर भी मेरा सम्मान करते रहे, यह केवल आतङ्कसे सम्भव नहीं था। मैंने उन्हें पूरी स्वतन्त्रता दे रखी थी। उनकी रुचि, सुख-सुविधा मैंने सदा सावधानीसे देखी और उन्हें सुगम बनाये रखा।

कोई सेवाशील, विनम्र, धर्मात्मा व्यक्ति यदि अपना विरोध करने लगे, अपने मनके विरुद्ध बोले तो उसका अपमान या उपेक्षा करनेके स्थानपर उसकी बातपर विशेष ध्यान देना चाहिये। दशग्रीवने आज स्वीकार किया- मैंने विभीषणका तिरस्कार जानबूझकर किया। मैं जानता था कि वह धर्मात्मा है। ऐसा व्यक्ति चाटुकारी नहीं कर सकता। वह अपने आश्रयदाताके हितकी बात अप्रिय होने पर भी कहेगा। अपने अत्यन्त अहित होनेका भय होनेपर भी कहेगा। बात उसीकी सुनने और मानने योग्य होती है। लेकिन मैं यह भी जानता था कि विभीषण तुम्हारे पक्षमें नहीं गया तो लमा अनाथ हो जायगी। राम इसे अधिकृत करनेको रुकेंगे नही। अपने उत्तम निर्दोष अनुजको मुझे निर्वासित करना ही था।

शत्रुको सामान्य मानकर उसकी उपेक्षा कभी नहीं की जानी चाहिये; किन्तु अपनेको संचित दिखलाकर अपने अनुयायियोंमे भयके प्रवेशको अवसर नहीं देना चाहिये। यह अपने व्यवहारकी व्याख्या की रावणने। दशग्रीवने शत्रुकी उपेक्षाकी, यह दोष कोई मुझे नहीं दे सकता। रामके प्रकट होनेके क्षणसे मैं सतर्क था; किन्तु तुम ससैन्य सुबेल पर आ गये, तब तक मैंने अपने सैनिकों, सेनापतियों के मध्य उत्सव मनाये। रंगलीला देखता रहा।

सदा सफलता ही श्रेयस्कर नहीं होती लक्ष्मण। अब रावणका स्वर आर्द्र हुआ, शिथिल होने लगा। उसने नेत्र- संकतसे-क्योंकि कर उठने में असमर्थ हो गये थे- सौमित्रको अपने मुखके समीप बुला लिया- कभी असफलता, पराजय, मृत्युका भी आयोजन करना पड़ता है।

अब मैं अधिक बोल नहीं सकूँगा। मेरी मुख्य बात मन लगाकर सुनो। दशग्रीवने उपदेशका उपसंहार किया- जीवनके कोई महत्त्वपूर्ण कार्य करनेकी महत्त्वाकांक्षा हो तो उसे सब सामान्य कार्य छोड़कर पूर्ण कर डालो। उसे कल पर टालते रहोगे तो वह कभी पूर्ण नहीं होगा। शुभकार्य सदा शीघ्र करना चाहिए और दुष्कर्म जितना टल सके उसको टालनेका प्रयत्न करना चाहिए।

जग नीति है कि स्त्री का हृदय बड़ा ही दुर्बल और कोमल है। वह कोई भी भेद गुप्त नहीं रख सकती और प्रगट कर देती है। इसलिए अपना मन्तव्य और भेद अपनी प्रिय पत्नीतक को भी नहीं बताना चाहिए और न ही उसपर अत्यधिक विश्वास करना चाहिए। मेरी मृत्युका एक कारण यह भी बना कि मैंने मन्दोदरी को अपनी प्रिय पत्नी जानकर मेरी मृत्यु का भेद उसको सौंप दिया और वह अपनी भोली अवस्था में दुर्बल हृदय और कोमल मन से हनुमान के सामने यह भेद उगल दिया।

दशानन ने कहा, मेरे प्राण कभी भी निकल जायें, मुँह से शब्द नहीं निकल रहे हैं। जब तक प्राण हैं और मैं सचेतन हूँ, तुम्हें कुछ नीति सुनाऊँगा। कोई भी अच्छा कार्य करने की जब भी इच्छा हो आलस्य त्यागकर तभी उसको कर डालना चाहिए। काम को छोड़ रखने से फिर से उसका पूरा होना कठिन हो जाता है। मैं तुमको सुनाता हूँ।

एक दिन मैं स्वर्गपुर से आ रहा था कि रास्ते में अपने रथ से मुझको यमपुरी दिखाई पड़ी। शून्य से मैंने यम का भवन देखा। उसके तीनों द्वारों पर विभिन्न साधुजनों को देखा। दक्षिण में पापियों की चौकी देखी। वहाँ दिन है या रात कुछ भी पता नहीं चलता है। अन्धकार में चौरासी नर के कुंड बने हैं जिनमें पातकियों के मुंड पड़े हुए हैं। विषम प्रहार से पापी त्राहि-त्राहि पुकार रहे हैं। यमदूत सिर नहीं उठाने देते-पीटने लगते हैं। यह देखकर मेरे मन में बड़ी दया उपजी। मैंने सोचा, मैं यम के हाथों पापियों का यह दु:ख दूर करूँगा। पापियों की दुर्गति देखी नहीं जाती। इतना सोचकर उस दिन मैं लंका चला आया। रोज सोचता रहा कि नरक-कुंडों को तोप दूँगा, लेकिन आज कल करते हुए, वह उपेक्षा में पड़ा ही रह गया। फिर तुम्हारे साथ यह युद्ध छिड़ गया। कुंड भरने के लिए जब मन में विचार किया था यदि तभी उसे पूरा कर देता तो प्रण पूर्ण होता। अवहेलना से उसे रख छोड़ा, इसी लिए वह काम फिर न बन सका, मन की वह कामना मन ही में रह गई।

एक और बात मैं निवेदन करता हूँ, सुनो। लंकापुरी लवण-समुद्र के बीच में है। एक दिन मन में यह बात उपजी कि सातों समुद्रों की सृष्टि विधाता ने की है। दूध, दही और घी के समुद्र रहते हुए मैं क्यों लवण-समुद्र में पड़ा हुआ हूँ। मर्त्य, पाताल मेरी हथेली पर हैं। मैं इस समुद्र का जल सोख लूँगा और क्षीरसागर को लाकर यहाँ स्थापित करूँगा, यह बात हमेशा मेरे मन में रही। जब भी याद आ जाती,

जब भी करने को होता, तभी कोई दूसरा काम आ जाता और सागर सोखना भूल जाता। इस प्रकार उपेक्षा में बहुत दिन निकल गये, फिर तुम्हारे साथ युद्ध छिड़ गया। समुद्र सोखना रह गया। मेरे मन में यह दु:ख भी बना रहा। अत: हे रघुमणि सुनो, यदि मन में कोई शुभकार्य करने की इच्छा हो तो उसे तत्काल कर डालना चाहिए।

आपकी कोई महत्वाकांक्षा अपूर्ण तो नहीं रह गयी ? लक्ष्मण ने श्रद्धा उत्साहपूर्वक पूछा।

रह गयी, किंतु वह असुरकी महत्वाकांक्षा है। उसे तुम मर्यादा पुरुषोत्तमके अनुज पूर्ण नहीं कर सकते। उसे अपूर्ण ही रहने दो। इस अवस्थामें भी दशग्रीव हँस पड़ा। पर वह क्या है ? लक्ष्मणने आग्रह किया।

सुनोगे ? अच्छा सुनो। शिथिल स्वरमें ही अब वह बोल रहा था- मैं सम्पूर्ण क्षार समुद्र को मधुर पेय जलसे पूर्ण कर देना चाहता था। सम्पूर्ण सागरको अनेक भागोंमें विभाजित करके बाँध देना, एक-एक भागके जलको उष्ण करके वाष्प बना देना, अवशिष्ट लवणको धरापर पर्वताकार एकत्र कर देना और वाष्पको वारिद बनाकर वर्षाके निर्मल जलसे सागरके उस अंशको पुन: भर देना लमाके अधीश्वरके लिए असम्भव कार्य नहीं था। इसमें असंख्य जल-जन्तु मारे जाते; किंतु हम राक्षस कहाँ प्राणियों की मृत्युपर रोने बैठते हैं।

मैं चाहता था पृथ्वी से स्वर्गके लिए सीढ़ी निर्मित कर देना। भले स्वर्ग सूक्ष्म लोक हो, दशग्रीव स्थूल, सूक्ष्मके मध्य सोपान निर्माणमें असमर्थ नहीं था। लक्ष्मण चौंक गये। ओह। कहीं यह महत्वाकांक्षा यह महाप्राण पूर्ण करनेमें लग जाता- श्रुति-शास्त्र तथा सत्कर्म सदाको समाप्त हो जाते। लक्ष्मणका चौंकना देखकर रावण हँसा- मैं पापी- पुण्यात्माका भेद मिटा देना चाहता था। मैं असुर था न- मैं चाहता था कि जो शरीरबलसे समर्थ हो, इतनी दीर्घ यात्रा कर सकें, सब इच्छानुसार स्वर्ग जाकर मनोरञ्जन कर सकें।

छोड़ रखने पर कोई भी काम हो नहीं पाता। नाग, नर, भूचर, खेचर, भूत, प्रेत, पिशाच, गन्धर्व आदि सभी जीव ब्रह्मा की सृष्टि में हैं। अमरपुर जाने से सभी वंचित है। वहाँ जाने की शक्ति सभी की नहीं है। कोई-कोई दैव-शक्ति के प्रभाव से जा सकते हैं। इस संसार के ये शक्तिहीन मनुष्य कभी स्वर्गपुर नहीं जा पाते हैं। अमरलोक जाने की उनकी मन ही मन साध है किन्तु दैव-शक्ति से शून्य होने के कारण वे नहीं जा पाते हैं। उनका दु:ख देखकर मैंने मन में सोचा कि किस प्रकार से ये जीव स्वर्गपुर जा सकते हैं। सभी लोग अनायास देवलोक जा सकें इस हेतु मैं विश्वकर्मा को बुलवाकर स्वर्ग का पथ निर्मित कराऊँगा। ऐसे पथ का निर्माण करूँगा कि सभी लोग स्वर्ग जा सकें, मैं पृथ्वी से स्वर्ग तक का सीढ़ी बनवा दूँगा। संसार में अपूर्व पौरूष और कीर्ति का नमूना रह जायगा और तीनो लोंको में मेरा यश गाया जायगा। जब यह मन में आया था तभी अगर यह करवा लेता तो जाने कब के मेरी कार्य-सिद्धि हो जाती। उपेक्षा से वह पड़ा रहा और बहुत दिन बीत गये, फिर तुम्हारे साथ युद्ध आरम्भ हो गया। अत: कोई भी शुभकार्य तत्काल कर डालना चाहिए। उपेक्षा से पड़े रह जाने से संकल्प व्यर्थ हो जाता है।

मैं चाहता था कि संसारमें कोई भी कभी रोगी या वृद्ध न हो। इसके लिए वृक्षोंमें मैं अमृत फल लगाने का विधान करना चाहता था। रावणने बतलाया- मैं प्रकृतिके स्थूल रहस्योंका प्रकाण्ड-प्रयोग करनेमें लग जाता तो रोग, वार्धक्य एवं मृत्युको समाप्त कर देनेवाला आविष्कार अवश्यक कर लेता।

मैं चाहता था लंका स्वर्णनगरी है। मेरे यहाँ सोना भरा पड़ा है पर सोना निर्जीव है। इसमें नाना प्रकार के सुगन्धित सुवास पैदा हो जाए। जो सबके मनको इसकी चमक के साथ-साथ चेतना जागृत कर सके।

मैं चाहता था कि अग्नि प्रज्वलित ज्वाला में धूम्र न हो। मैं अग्नि से धुँआ मिटाना चाहता था।

लक्ष्मण ने कहा- अब कुछ पाप-कर्मों के विषय में भी बताओ। मुझसे वह नीति बताओ जिससे पाप-कर्म को उपेक्षा से डाल रखना चाहिए। तत्काल पाप-कर्म करने से क्या दुर्दशा होती है वह राजनीति स्पष्ट रूप से बताओ।

पर आज-आज करते-करते यह सब कर्तव्य मुझसे रह गये। मनमें जो कामना, महत्वाकांक्षा थी वह अपूर्ण रह गयीं। पर नारी हरण (चोरी) करने का कार्य मैंने शीघ्रता से कर डाला जो मुझे नहीं करना चाहिए था। परिणाम उसीका मैंने यह पाया कि आज मैं दुनिया से चल पड़ा। दशानन के कहा, पाप-कर्म तो बहुत हैं। हे रघुबर, उनको विस्तार से कहाँ तक बताऊँ। मैंने सदा ही बहुत से पापकर्म किये हैं। अब प्रहार से मेरा शरीर दुखी है, इसलिए मैं बता नहीं पा रहा हूँ। मेरे मन में बहुत सारी बातें हैं। मैं तुमसे क्या-क्या बताऊँ। लक्ष्मण तुमने शूर्पणखा के नाक-कान काट डाले। उसीने आकर मुझको सलाह दी। उसी की बुद्धि के अनुसार मैं सीता का हरण कर लाया। शूर्पणखा ने पैरों पड़कर रोया तो सीता को हर लाने का मन हुआ। एक बार मैंने अपने मन में सोचा, आज नहीं, कल सीता को

पकड़ कर लाऊँगा। फिर सोच-विचार कर देखा कि यह काम उपेक्षा से पड़े रह जाने पर अन्त तक शायद सीता का लाना सम्भव न हो। अत: मैंने शीघ्रातिशीघ्र सीता का हरण किया और सीता के कारण ही मेरा सर्वनाश हुआ। मेरे एक लाख बेटे और सवा लाख पोते थे। अब वे सभी मर गये और अन्त में लंका का अधिपति मैं स्वयं मर रहा हूँ। अगर मैं सोचविचार कर सीता को लाया होता तो क्यों अपने सारे वंश के साथ तुम्हारे बाणों से मुझको मरना पड़ता। यदि उपेक्षा से सीता हरण पड़ा रह जाता तो मेरा संहार कभी नहीं हो सकता था। जो कुछ मुझको मालूम थे वे नीति-वाक्य मैंने कह सुनाये।

लक्ष्मणने भी हँसकर कहा- तब पृथ्वीपर केवल राक्षस रह जाते। अन्य सब प्राणियोंको समाप्त कर देते। उनकी सन्तानोंके लिए भी पृथ्वी छोटी पड़ जाती; क्योंकि उन्हें मरना तो होता ही नहीं। आचार्य। आपकी महत्वाकांक्षाओंका अपूर्ण रह जाना ही विश्वके लिए वरदान हुआ।

परम वेदज्ञ पौलस्त्य दशग्रीवको इक्ष्वाकुगोत्रीय दाशरथि राम प्रणाम करता है। इसी समय श्रीराम आये और रावणको अञ्जलि बाँधकर मस्तक झुकाते उसके दाहिने इस प्रकार खड़े हो गये, जिससे वह भली प्रकार उन्हें देख सके। उनका मेघ-गम्भीर स्वर गूँजा- अपने आचार्यको अभीष्ट दक्षिणा देने यह जन उनके चरणोंमें उपस्थित हो गया है।

तुम आ गये राम ? दशग्रीवके अपलक लोचन इन इन्दीवरसुन्दरके श्रीमुखपर लग गये। रावण से मिलने के लिए रघुपति आए। रावण के मन में आया कि झट उठकर बैठ जायें। किन्तु राजा दशानन में उठने की शक्ति नहीं रही। उसने मन ही मन भक्तिभाव से राम को प्रणाम किया। प्रहार से उसके अंग बेकल हैं, मुँह से शब्द नहीं निकलते। धीरे-धीरे विनयपूर्वक वह बोलने लगा। रावण ने राम का सर्वांग निरीक्षण किया, यह तो साक्षात् विराट-मूर्त्ति ब्रह्म सनातन हैं। हे विश्वमय। माया से तुम मानव-देह ग्रहण किये हुए हो, तुम्हारी महिमा भला मैं क्या जानूँ। तुम अनाथों के नाथ हो, पतितपावन हो। कृपा कर मेरे मस्तक पर अपने चरणकमल रखो। मैं सदा से तुम्हारे चरणों का दास हूँ। शाप से मेरा जन्म राक्षस-कुल में हुआ। तीन जन्म मुझको इस संसार में भटकना पड़ा है। असुर की बुद्धि के कारण धर्म और अधर्म का ज्ञान नहीं रहा। हे गोलोकपति। मेरे अपराध क्षमा कर दो। तुम अनादि पुरुष हो किन्तु अपने स्वरूप को भूले हुए हो। हे रघुवर तुमसे मैं राजनीति क्या बखानूँ, संसार की सारी नीतियाँ तुमको विदित हैं।

राम ने कहा, जो कुछ तुमने कहा वह सभी प्रमाण-सापेक्ष है। फिर भी ऐसा विधान है कि गुरु से ही विद्या सीखनी चाहिए। तुम प्राचीन भूपति हो, अति विलक्षण हो, त्रिभुवन को बाहुबल से तुमने जीता है। धर्माधर्म और राजकर्म तुमको विदित हैं।

राम अब नीति उपदेश समाप्त हुआ तो मुझे अपने हृदय की एक बात कहनी है। अब यह बताओ कि इस युद्ध में विजय मेरी हुई या तुम्हारी हुयी ?

तब लक्ष्मण ने देखा रावण धराशायी हो रहा है। फिर भी उसका अहंकार गलित नहीं हुआ। तब लक्ष्मणने कहा- अब तो विजय हमारी हुई है। रावण बोला- नहीं। तुम समझते हो तुम्हारी जीत हुयी है पर जीत तो मेरी हुई है। मैंने अपने जीतेजी हे राम तुम्हें लंका में जाने नहीं दिया और अब मैं तुम्हारे सामने ही तुम्हारे धाम को जा रहा हूँ। कहो मेरी विजय हुई ना ?

तुम देखते हो कि इस युद्धमें मैंने प्रयत्नपूर्वक अपने समस्त शूरोंकी आहुति दे दी है। लेकिन मैं जीवित हूँ तब तक तुम लमामें प्रवेश कर सके ? मेरे सब अनुचर कहाँ गये यह भी तुमको बतलाना पड़ेगा ? अब तुम्हीं सोचकर बतलाओ, विजय किसकी हुई है ?

आप धन्य हैं आचार्य। अवश्य आप विजयी हुए है। आज पहिली बार लक्ष्मणने सच्ची श्रद्धासे दशग्रीवको मस्तक झुकाया। शिव-स्थापनाके समय तो वे अग्रजके संकोचसे ही इस शत्रुको प्रणाम करते रहे थे।

मुझ जैसे पापी दुष्ट का मरना ही ठीक है। मुझ नीच ने ही बन्धु बैर की लीक खोली थी। इसप्रकार वह लंकापति रावण अपने भाई विभीषण से आतुरता के साथ मिला। उस प्रेमसागर में सभी अच्छे-बुरे विचार लय हुए। दोनों बन्धुओं ने अपने सभी विकार मिटा दिये।

शोक से रोते-रोते विभीषण ने कहा, हे भाई, अपने बाहुबल से तुमने त्रिभुवन पर विजय पाई। उसी अहंकार के कारण तुम राम को नहीं पहचान सके। तुम नासमझी से सीतादेवी को लंका ले आये। लक्ष्मी को चुराकर तुम अपने वंश के साथ नष्ट हो गये। तुमने मृत्यु को ही अपना लिया, लेकिन सीता को नहीं दिया। पैरों पड़कर मैंने तुमसे अनुरोध किया किन्तु तुमने मेरी एक भी न सुनी। अब अपने वंश के साथ तुमने अपने प्राण गँवाये, लेकिन ज्ञानभ्रष्ट होने के कारण मेरी बात नहीं मानी। मरे तो तुम अपने ही दोष से लेकिन मुझ पर कलंक लग गया, आज लंका का अधिकार तुम किसे सौंपे जा रहे हो।

रावणके कण्ठने अन्तिम सम्बोधन किया- राम। एक अद्‌भुत ज्योति उसके शरीरसे निकली। उसने श्रीरामकी प्रदक्षिणा की ओर उनके श्रीचरणोंमें लीन हो गये।

ब्रह्मा आदि देवता गगनमण्डल में रहकर देखने लगे। सूर्य, चन्द्र, कुबेर, वरुण, पुरन्दर आदि तैंतीस करोड़ देवता एकत्र होकर आपस में बातचीत करने लगे। कोई कहता, अब रावण मर गया, उसके हाथ पैर नहीं हिल रहे हैं, अब निश्चयरूप से मर गया है। कोई कहता, रावण का कोई भी विश्वास नहीं। यह दुष्ट कितने ही बार मरता है और फिर जी उठता है। मेरा तो ऐसा विचार है कि यह छल से दुबका पड़ा हुआ है। क्या जाने इस बार अगर रावण नहीं मरा तो रावण के हाथों से प्राण नहीं बचेंगे। शत्रु चिन्ता करने लगे कि जब तक रावण की चिता का धुँवा नहीं निकलता तब तक निकट नहीं जाऊँगा।

वानरेन्द्र। सब वानरोंको मना कर दो। श्रीरामने तत्काल सुग्रीवको आदेश दिया- गर्जना करनेका समय समाप्त हो गया। जयघोष करके हत शत्रुके स्वजनोंको दु:खी करना नृशंसता है। अत: सब शान्त रहे।

यह आदेश वानर स्वीकार कर सकते थे, उन्होंने स्वीकार कर लिया। वे शान्त हो गये किंतु सुरोंके अन्तरमें जो उल्लास उमड़ पड़ा था, युगोंके उत्पीड़नके पश्चात् उन्हें जो परित्राण प्राप्त हुआ था, उससे उत्साहमें आये देवताओंको कैसे रोका जा सकता था ? उनहें तो मर्यादा पुरुषोत्तम आदेश नहीं दे सकते थे।

गगनमें आते जयनादसे दिशाएँ गूँज रही थी। दुन्दुभि- नाद उठ रहा था आकाशसे और अनवरत कुसुम वर्षा हो रही थी। अप्सरा, किन्नर, गन्धर्वोंने नृत्य, वाद्य, स्तवनका महामहोत्सव प्रारम्भ कर दिया था।

रावणका तेज प्रभुके मुखमें समा गया। यह देखकर शिवजी और ब्रह्माजी हर्षित हुए। ब्रह्माण्डभरमें जय-जयकी ध्वनि भर गयी। प्रबल भुजदण्डोंवाले श्रीरघुवीरकी जय हो।

२७) श्रीराम-स्तवन- अभी तक देवता आकाशमें ही स्थित जयघोष कर रहे थे। उन्हें युगों तक रावणने उत्पीड़ित किया था। वे तबतक आतमित थे, जबतक दशग्रीवमें किञ्चित् भी श्वास शेष था। उन्हें विश्वास ही नहीं होता था कि रावण मर भी सकता था। वे भयभीत थे- यह दारुण कहीं अब भी उठ खड़ा हो।

जब दशग्रीवके शरीरसे निकली ज्योति श्रीरामके चरणारविन्दोंमें लय होते देवताओंने देख ली, तब उन्हें रावणकी मृत्युका विश्वास हुआ। अब देवता युद्धभूमिमें उतर आये।

देवता आये तो उनके साथ हंसवाहन भगवान ब्रह्मा भी आ गये और वृषभध्वज नीलकण्ठ महेश्वर भी पधारे। श्रुतियोंके-शरीरधारी वेद आये। जनलोक और तपोलोकके दिव्य ऋषिगण पहुँचे। लोकपाल, दिक्पालादि कोई यह सुअवसर क्यों छोड़ देता।

ब्रह्माजीने, भगवान् शमरने, ऋषियोंने, वेदोंने, सब लोकपालों दिक्पालोंने पृथक-पृथक स्तवन किया। सभीका संकट तो श्रीरामने दूर किया था। गन्धर्व, किन्नर, यक्षादि सबको स्तुति करनी थी। सब स्तवन कर चुके, तब श्रीरामने देवराज इन्द्रसे कहा- आप मुझपर एक अनुग्रह करेंगे ? आप आदेश करें। सुरपति इन्द्रने हाथ जोड़ा।

मेरे लिए जिन्होंने अपने घर-द्वार, स्त्री-पुत्र सब छोड़ें, यहाँ अपने आवाससे दूर शत्रु के प्रदेशमें आये, वे संग्राम-भूमिमें मरे पड़े हैं। श्रीरामके नेत्र सजल हो गये- दशग्रीवकी अन्त्येष्टि के पश्चात आप अमृतवर्षा करके उन सब मृत वानरोंको जीवित कर दें।

सभी वानर सुरोंके अशोद्भव हैं। इन्होंने इस युद्धमें सम्मिलित होकर हम देवताओंकी ही सेवा की है। इन्द्रने कहा- यह तो आप शीलसिन्धुका संकोची स्वभाव है कि आप इनको जीवित करनेकी प्रार्थना करते हैं, अपनेको उपकृत मानते हैं। अन्यथा वानरोंका यह अपना स्वार्थ था। उन्होंने सुरोंकी सेवामें शरीर दिया है, अत: उनको जीवित कर देना मेरा कर्तव्य है। मैं आदेशका पालन करूँगा।

श्रीराम। आपके पिताश्री महाराज दशरथ मेरे मित्र थे। इन्द्रने पुन: प्रार्थनाके स्वरमें कहा- देहत्यागके पश्चात् उन्होंने अमरावतीमें रहनेका अनुग्रह किया। वे आपको देखनेके उत्सुक थे, अत: मैंने उनके यहाँ पधारनेकी व्यवस्था कर दी है। वे विमानके द्वारा आ रहे हैं।

प्राणीका देहत्यागके समय पृथ्वीके किसी व्यक्ति अथवा वस्तुसे तीव्र राग या द्वेष हो तो वह यहाँ उसके समीप ही कर्मानुसार योनिमें जन्म ले लेता है, अथवा अतिवाहिक देहमें उसके आसपास ही प्रेत या पितर बनकर मँडराता रहता है। महाराज दशरथ अत्यन्त पुण्यात्मा थे। अत: उन्हें प्रेत या पितरका अतिवाहिक देह मिलना सम्भव नहीं था। श्रीभरतने जिनकी उत्तर-क्रिया सम्पन्न की थीं,

श्रीरामने जिन्हें जलाञ्जलि दी थी, उन्हें पितृलोकमें तब रहना पड़ता, जब उन्हें पृथ्वीपर पुनर्जन्म प्राप्त करनेकी प्रतीक्षा करनी हो। उन्होंने श्रीरामका स्मरण करके शरीर त्याग किया था। उचित तो यह था कि वे सीधे श्रीरामके धाम साकेत जाते; किंतु अभी श्रीराम स्वयं धरापर थे, और महाराज दशरथके मनमें श्रीरामको मूर्धाभिषिक्त देखनेकी तीव्र लालसा थी। अतएव श्रीरामका राज्याभिषेक हो जाने तक उन्होंने स्वर्गमें रहना स्वीकार कर लिया था। पुण्यात्मा प्राणियोंको भले स्वर्ग भोगलोकके रूपमें मिले, श्रीचक्रवर्ती महाराज को यह मध्यमें स्वागत-स्थलके रूपमें ही प्राप्त हुआ था। महाराज वहाँ शक्रके शासित नहीं, इन्द्रके सम्मान्य अतिथि थे।

प्राणीके शरीर-त्यागके समय उसके स्थूल शरीरका जैसा आकार होता है, उसे मिलनेवाले आतिवाहिक देह प्रेत एवं पितर शरीर का, भोग-देह स्वर्गके शरीर का तथा यातना-देह नरकके शरीर का भी वैसा ही आकार होता है। यह शरीर होता तो पाञ्चभौतिक ही है; किंतु पृथ्वीके स्थूल शरीरोंकी भाँति पार्थिव पृथ्वी तत्त्व प्रधान नहीं होता। यदि आतिवाहिक देह (प्रेत या पितरका) अथवा यातना देह नरकका हुआ तो वायु तत्त्वप्रधान होता है। यदि भोग देह (देव देह) हुआ तो तेजस अग्नि तत्त्व प्रधान होता है।

इन सब शरीरोंको सामान्यत: पृथ्वीके प्राणी देख नहीं सकते। क्योंकि ये शरीर सूक्ष्म तत्त्वोंसे बने हैं, पार्थिव पदार्थ- वृक्ष, पर्वत, भित्तियाँ, शिलाएँ या जल इनकी गति में बाधक नहीं बन सकते। उनमें-से ये ऐसे ही आ-जा सकते हैं, जैसे हम आप आकाशमें-से। इन शरीरोंमें रहनेवाले प्राणी चाहें तो अपने शरीरको थोड़े कालके लिए इतना सघन कर ले सकते हैं कि उन्हें पृथ्वीके लोग देख सकें। उनको पृथ्वीके पार्थिव शरीरके समान समझकर उनसे व्यवहार कर सकें। इस प्रकार शरीरको सघनता देनेकी शक्ति, उसे सघन बनाये रखनेका समय सबका भिन्न-भिन्न होता है। प्रेत प्राय: रात्रिमें ही ऐसा कर पाते हैं। पितर, देवता दिनमें भी कर सकते हैं। देरतक इस स्थितिमें रह सकते हैं। देवताओंकी शरीरकी परछाई नहीं पड़ती है, देवताओंके चरण भूमिको स्पर्श नहीं करते और उनके आने-जानेका माध्यम अग्नि है।

सुरोंने भी इसी प्रकार अपना शरीर सघन करके श्रीरामका स्तवन किया था। महाराज दशरथ भी इसी प्रकार प्रत्यक्ष अपने प्रिय पुत्रके समीप पधारे। पिताको आया देखकर श्रीराम सानुज खड़े हो गये। दोनों भाइयोंने भूमिपर लेटकर पिताको प्रणिपात किया। महाराज दशरथने दोनोंको उठाकर हृदयसे लगाया। दोनोंका सिर सूँघा।

वत्स राम भद्र। तुम्हारा कल्याण हो। महाराजकी वाणी गद्‌गद् हो रही थी- तुमने दशग्रीवको मारकर इक्ष्वाकु वंशको उज्वल कर दिया; मैंने और मेरे पूर्व पुरुषोंने इस सुर-साधु-संतापदायीकी उपेक्षा करके जो अपराध किया था, उसे तुमने मिटा दिया। चक्रवर्ती होकर भी सत्कार्य एवं सत्पुरुषोंको पीड़ित करने वालेकी उपेक्षा हमारे कुलके लिए कलम थी। तुमने उस कलुषको धो दिया।

श्रीरामके अञ्जलि बाँधकर प्रार्थना की। यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मैं आपके द्वारा एक वरदान पानेकी कामना करता हूँ।

वत्स तुम सर्वलोकेश्वर हो। दशरथ धरापर था तो और स्वर्गमें है तो, इसका जो कुछ है, जो भी इसकी शक्तिमें है, वह सब तुम्हारा स्वत्व है। महाराज उत्फुल्ल बोले- तुम कुछ माँगकर मुझे सुखी करना चाहते हो। तुम्हें कुछ भी देकर मुझे असीम आनन्द प्राप्त होगा।

आज रामको जो यश, जो उत्कर्ष प्राप्त हुआ है, वह अम्बा कैकेयीके वरदानोंका प्रसाद है। श्रीरामने प्रार्थना की- आपने मेरे स्नेहवश उन परम सतीको परित्यक्ता घोषित कर दिया था। मेरा अनुरोध है कि आप उन्हें पुन: अपनी पत्नीके रूपमें स्वीकार कर ले। वे पतिलोक प्राप्त करें और वहाँ आपकी प्रिया बनी रहें।

राम। यह प्रार्थना तुम्हीं कर सकते थे। महाराजका स्वर अत्यन्त गद्‌गद् हो गया- तुम्हारा आदेश-अनुरोध अस्वीकार कर देनेकी शक्ति त्रिभुवनमें किसीमें नहीं है। तुम चाहते हो, अत: मैं कैकेयीको स्वीकार करता हूँ।

महाराज जब पूछकर, आशीर्वाद देकर स्वर्ग पधारे श्रीरामको लगा कि उनके हृदयका भारी भार दूर हो गया। उन्हें दशग्रीव-दलनका सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार प्राप्त हुआ।

२८) विभीषण का विलाप, रावण की स्त्रियों का विलाप, मन्दोदरी का विलाप और रावण की अन्त्येष्टि क्रिया-

सम्पूर्ण लमामें शरण ! शरण ! की पुकार गूँजने लगी। दोनों हाथ ऊपर उठाये, शस्त्रहीन, शिरस्त्राण-सहित द्वार-रक्षक, पुरीके पथिक, अवशिष्ट वृद्ध आदि सब राक्षस नगर-द्वारोंसे शरण ! शरण ! पुकारते भय-विह्वल कातर-लोचन पंक्तिबद्ध निकल पड़े।

पराजित हुए भाईको मरकर रणभूमिमें पड़ा देख विभीषणका हृदय शोकके वेगसे व्याकुल हो गया और वे विलाप करने लगे- वीरवर।

आज तुम्हारे ऊपर वही संकट आकर पड़ा है, जिसके लिये मैंने तुम्हें पहलेसे ही आगाह कर दिया था; किंतु उस समय काम और मोहके वशीभूत होनेके कारण तुम्हें मेरी बात अच्छी नहीं लगी।

मैंने ही अपना घर ढाया है। भाई होकर भाई का रण में संहार कराया है। बड़ा भाई था क्या अनुचित हुआ ? जो उसने मुझपर लात का प्रहार किया। बस इतनी सी बात पर मैंने क्यों उससे शत्रुता बढ़ाई हैं ? चरण प्रहार से मैंने अपना अपमान समझा तो मुझमें सहिष्णुता कहाँ रहीं ? शिष्टता गयी, नम्रता गयी, फिर भला मुझमें साधुता कहाँ रही ? मेरा सुंकुचित चित्त होने से मुझसे यह अनुचित हुआ। बड़ा भाई था गुणों में भी मुझसे बढ़कर था। लंकाका मान उसीसे था।

रणभूमिकी धूलमें राक्षसशिरोमणि रावणके सो जानेसे इस लोकका आधार और बल समाप्त हो गया। अब यहाँ क्या शेष रह गया ?

जिससे अर्थनिश्चय प्रकट हो रहा था ऐसी युक्तिसंगत बात कहते हुए शोकमग्न विभीषणसे उस समय भगवान् श्रीरामने कहा- विभीषण। यह रावण समराङ्गणमें असमर्थ होकर नहीं मारा गया है। इसने प्रचण्ड पराक्रम प्रकट किया है, इसका उत्साह बहुत बढ़ा हुआ था। इसे मृत्युसे कोई भय नहीं था। यह दैवात् रणभूमिमें धराशायी हुआ है।

जो लोग अपने अभ्युदयकी इच्छासे क्षत्रियधर्ममें स्थित हो समराङ्गणमें मारे जाते हें, इस तरह नष्ट होनेवाले लोगोंके विषयमें शोक नहीं करना चाहिये। युद्धमें किसीको सदा विजय-ही-विजय मिले, ऐसा पहले भी कभी नहीं हुआ है। वीर पुरुष संग्राममें या तो शत्रुओंद्वारा मारा जाता है या स्वयं ही शत्रुओंको मार गिराता है।

आज रावणको जो गति प्राप्त हुई है, यह पूर्वकालके महापुरुषोंद्वारा बतायी गयी उत्तम गति है। क्षात्र-वृत्तिका आश्रय लेनेवाले वीरोंके लिये तो यह बड़े आदरकी वस्तु है। क्षत्रिय-वृत्तिसे रहनेवाला वीर पुरुष यदि युद्धमें मारा गया हो तो वह शोकके योग्य नहीं है; यही शास्त्रका सिद्धान्त है।

भगवन्। पूर्वकालमें युद्धके अवसरोंपर समस्त देवताओं तथा इन्द्रने भी जिसे कभी पीछे नहीं हटाया था, वही रावण आज रणभूमिमें आपसे टक्कर लेकर उसी तरह शान्त हो गया, जैसे समुद्र अपनी तट-भूमितक जाकर शान्त हो जाता है।

इसने याचकोंको दान दिये, भोग भोगे और भृत्योंका भरण-पोषण किया है। मित्रोंको धन अर्पित किये और शत्रुओंसे वैरका बदला लिया। आज आप सुरजयी, वेदज्ञ, महापराक्रमी, इस प्रकार पृथ्वीपर पड़े हैं ? इच्छा न होनेपर भी बड़े भाईका शव देखकर विभीषण व्याकुल हो उठे थे। वे उस शवके समीप घुटनोंके बल बैठकर रुदन करने लगे थे- यही परिणाम होना है, मैं जानता था; किंतु आपने अहमारवश मेरी बात नहीं मानी। प्रहस्तने, इन्द्रजितने, कुम्भकर्णने, आपने जिस परिणामकी आशा नहीं की थी, वह सामने आया। राजनीतिका प्रखर प्रताप, वेदज्ञोंका सूर्य अस्त हो गया। पौरुषका प्रतिमान आज नष्ट हो गया।

रावण की अन्य पत्नियों के नेत्रोंसे आँसुओंकी धारा बह रही थी। वे पतिके शोकसे बेसुध हो यूथपतिके मारे जानेपर हथिनियोंकी तरह करुण-क्रन्दन कर रही थीं।

उन्होंने महाकाय, महापराक्रमी और महातेजस्वी रावणको देखा, जो काले कोयलेके ढेर-सा पृथ्वीपर मर पड़ा था।

इसी समय लंकाके दुर्गद्वारसे मुक्तकेशा, निराभरणा दशग्रीवकी रानियाँ रुदन करती, वक्ष पीटती निकलीं। वे उस समरभूमिमें पड़े शवसे लिपटकर क्रन्दन करने लगीं- तुम अपने तेजसे इन्द्र और यमको भी कम्पित करते थे। लोकपाल कुबेरसे पुष्पक इसीलिए छीन लाये थे कि आज इस प्रकार पृथ्वीपर पड़े रहो ? सीतारूपी मृत्युको तुम स्वयं उठा लाये। विभीषणकी बात मानी नहीं। इनकी बात मानकर सीताको लौटा देते तो हम आज अनाथ, विधवा क्यों बनती ?

रणभूमिकी धूलिमें पड़े हुए अपने मृतक पतिपर सहसा दृष्टि पड़ते ही वे कटी हुई वनकी लताओंके समान उसके अङ्गोंपर गिर पड़ीं।

कोई स्त्री अपनी दोनों भुजाएँ ऊपर उठा पछाड़ खाकर गिरी और धरतीपर लोटने लगी तथा कोई मरे हुए स्वामीका मुख देखकर मूर्छित हो गयी। कोई पतिका मस्तक गोदमें लेकर उसका मुँह निहारती और ओसकणोंसे कमलकी भाँति अश्रु-बिन्दुओंसे पतिके मुखारविन्दको नहलाती हुई रोदन करने लगी।

वे बोलीं- हाय। जिन्होंने यमराज और इन्द्रको भी भयभीत कर रक्खा था, राजाधिराज कुबेरका पुष्पक विमान छीन लिया था तथा गन्धर्वों, ऋषियों और महामनस्वी देवताओंको भी रणभूमिमें भय प्रदान किया था, वे ही हमारे प्राणनाथ आज समराङ्गणमें मारे जाकर सदाके लिये सो गये हैं।

हाय। जो असुरों, देवताओं तथा नागोंसे भी भयभीत होना नहीं जानते थे, उन्हींको आज मनुष्यसे यह भय प्राप्त हो गया।

जिन्हें देवता, दानव और राक्षस भी नहीं मार सकते थे, वे ही आज एक पैदल मनुष्यके हाथसे मारे जाकर रणभूमिमें सो रहे हैं।

जो देवताओं, असुरों तथा यक्षोंके लिये भी अवध्य थे, वे ही किसी निर्बल प्राणीके समान एक मनुष्यके हाथसे मृत्युको प्राप्त हुए।

वे बोलीं- प्राणनाथ। आपने सदा हितकी बात बतानेवाले सुहृदोंकी बातें अनसुनी कर दीं और अपनी मृत्युके लिये सीताका अपहरण किया। इसका फल यह हुआ कि ये राक्षस मार गिराये गये तथा आपने इस समय अपनेको रणभूमिमें और हमलोगोंको महान् दु:खके समुद्रमें गिरा दिया है। यदि आपने मिथिलेशकुमारी सीताको श्रीरामके पास लौटा दिया होता तो जड़-मूलसहित हमारा विनाश करनेवाला यह महाघोर संकट हमपर न आता। राक्षसशिरोमणी। आपका स्वेच्छाचार ही हमारे विनाशमें कारण हुआ हो, ऐसी बात नहीं है। दैव ही सब कुछ कराता है। दैवका मारा हुआ ही मारा जाता या मरता है।

महाबाहो। इस युद्धमें वानरोंका, राक्षसोंका और आपका भी विनाश दैवयोगसे ही हुआ है।

संसारमें फल देनेके लिये उन्मुख हुए दैवके विधानको कोई धनसे, कामनासे, पराक्रमसे, आज्ञासे अथवा शक्तिसे भी नहीं पलट सकता। इस प्रकार राक्षसराजकी सभी स्त्रियाँ दु:खसे पीड़ित हो आँखोंमें आँसू भरकर दीनभावसे कुररीकी भाँति विलाप करने लगीं।

तब मन्दोदरी वहाँ आयी अपने पति की अवस्था को देखकर अत्यन्त दीन व दु:खी हो गयी और हाय हाय करकर लाशपर गिर पडी और विलाप करने लगी- यही आप आज युद्धमें एक मानवमात्र रामसे परास्त हो गये। राजन्। क्या आपको इससे लज्जा नहीं आती है। राक्षसेश्वर। बोलिये तो सही, यह क्या बात है ? हे लंका के राय आपके साथ क्या हुआ ? आँखे फाड़ फाड़कर उस दुखियाने अपने प्राणेश्वर के तन को देखा। लोहू से लथपथ छिन्न-भिन्न हुआ, अपने जीवनधन को देखा और चिल्लाकर हाय-हाय करने लगी। मेरा सुहाग गया, श्रृङ्गार गया, साम्राज्य गया इस घर के राजा के साथ-साथ इस घर की रानी का राज्य गया। अच्छा हो हे ईश्वर यह न्याय बदल दो जो तुम अब तक करते आये हो। पति को पत्नी से पहले मार देतो हो और फिर पत्नी को विधवा कर देते हो। अभी यमको ऐसी आज्ञा दो ये विपरित नियम सुधर जाएं। पहले पत्नी मर जाए और पीछे से पति के प्राण जाएं। हे प्रभो, क्या तुम तक विधवाओं की चीखें नहीं पहुँचती क्या ? यह प्रलयकाल की आवाजें तुम्हें क्यों नहीं रुलाती ? यदि तुम अपनेआपको न्यायनिधान कहते हो तो नारी को विधवा मत करो अन्यथा तुमको सब विधवायें अन्यायी कहेंगी। घण्टोंतक वह दुखिया इसप्रकार रोती रहीं। अपने हाथ की चूड़ियाँ तोड़ी और बिछुए उतार लिए।

तुमने जिसे उत्कर्षके शिखरपर पहुँचाया था, स्वयं उस राक्षस जातिको नष्ट कर दिया। सदा कहीं किसीके मनका हुआ है ? दैवकी गतिको कोई टाल सका है ? महारानी मन्दोदरी अममें रावणका मस्तक लेकर विलाप कर रही थीं- तुमसे उद्विग्न होकर देवता भागते थे। त्रिलोकीको जीता तुमने, वही तुम रामके हाथों मारे गये, यह विश्वास ही नहीं होता है।

वे कहती हैं- हे नाथ। तुम्हारे बलसे पृथ्वी सदा काँपती रहती थी। अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य तुम्हारे सामने तेजहीन थे। शेष और कच्छप भी जिसका भार नहीं सह सकते थे, वही तुम्हारा शरीर आज धूलमें भरा हुआ पृथ्वीपर पड़ा है।

वरुण, कुबेर, इन्द्र और वायु, इनमेंसे किसीने भी रणमें तुम्हारे सामने धैर्य धारण नहीं किया। हे स्वामी। तुमने अपने भुजबलसे काल और यमराजको भी जीत लिया था। वही तुम आज अनाथकी तरह पड़े हो।

तुम्हारी प्रभुता जगत्भरमें प्रसिद्ध है। तुम्हारे पुत्रों और कुटुम्बियोंके बलका हाय। वर्णन ही नहीं हो सकता। श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होनेसे ही तुम्हारी ऐसी दुर्दशा हुई कि आज कुलमें कोई रोनेवाला भी न रह गया।

आपने तीनों लोकोंको जीतकर अपनेको सम्पत्तिशाली और पराक्रमी बनाया था। आपके वेगको सह लेना किसीके लिये सम्भव नहीं था; फिर आप-जैसे वीरको एक वनवासी मनुष्यने कैसे मार डाला ?

आप ऐसे देशमें विचरते थे, जहाँ मनुष्योंकी पहुँच नहीं हो सकती थी। आप इच्छानुसार रूप धारण करनेमें समर्थ थे तो भी युद्धमें रामके हाथसे आपका विनाश हुआ; यह सम्भव अथवा विश्वासके योग्य नहीं जान पड़ता।

अथवा साक्षात् काल ही अतर्कित माया रचकर आपके विनाशके लिये श्रीरामके रूपमें यहाँ आ पहुँचा था।

निश्चय ही ये श्रीराम महान् योगी एवं सनातन परमात्मा हैं। इनका आदि, मध्य और अन्त नहीं है। ये महान्से भी महान्, अज्ञानान्धकारसे परे तथा सबको धारण करनेवाले परमेश्वर हैं, जो अपने हाथमें शफ, चक्र और गदा धारण करते हैं, जिनके वक्ष:स्थलमें श्रीवत्सका चिह्न है, भगवती लक्ष्मी जिनका कभी साथ नहीं छोड़ती, जिन्हें परास्त करना सर्वथा असम्भव है तथा जो नित्य स्थिर एवं

सम्पूर्ण लोकोंके अधीश्वर हैं, उन सत्यपराक्रमी भगवान् विष्णुने ही समस्त लोकोंके हित करनेकी इच्छासे मनुष्यका रूप धारण करके वानररूपमें प्रकट हुए सम्पूर्ण देवताओंके साथ आकर राक्षसोंसहित आपका वध किया है; क्योंकि आप देवताओंके शत्रु और समस्त संसारके लिये भयंकर थे। हे पति। कालके पूर्ण वशमें होनेसे तुमने किश्रसीका कहना नहीं माना और चराचरके नाथ परमात्माको मनुष्य करके जाना।

खरके मारनेका समाचार मिला, तभी मुझे लगा कि राम मनुष्य नहीं हैं। जब इन्होंने समुद्रपर सेतु बना लिया, विश्वास हो गया कि राम परम पुरुष, अनादि-अनन्त, सनातन पुरुष हैं। मनुष्य रूपमें लोक रक्षा निमित्त प्रकट इन श्रीवत्सवक्षा, अजित, अप्रमेय, शाश्वत, सत्यपराक्रमको पहिचाना नहीं। मन्दोदरीका विलाप भी उसीके अनुरूप था- तुम ऐसे महत्तम कि तुम्हें पराजित करनेको देवता वानर बने। परमेश्वरको भी तुम्हें मारनेके लिए मनुष्य बनना पड़ा। मैंने तुमसे बार-बार कहा था कि रामसे विरोध मत करो।

जिस लमा नगरीमें देवताओंका भी प्रवेश होना कठिन था, वहीं जब हनुमान्जी बलपूर्वक घुस आये, उसी समय हमलोग भावी अनिष्टकी आशमासे व्यथित हो उठी थीं।

मैंने बारंबार कहा- प्राणनाथ। आप रघुनाथजीसे वैर-विरोध न कीजिये; परंतु आपने मेरी बात नहीं मानी। उसीका आज यह फल मिला है। राक्षसराज। आपने अपने ऐश्वर्यका, शरीरका तथा स्वजनोंका विनाश करनेके लिये ही अकस्मात् सीताकी कामना की थी।

मेरे प्राणनाथ। सर्वाङ्गसुन्दरी शुभलक्षणा सीता निर्जन वनमें निवास करती थीं। आप छलसे उन्हें दु:खमें डालकर यहाँ हर लाये। यह आपके लिये बड़े कलङ्ककी बात हुई। मिथिलेशकुमारीके साथ समागमके लिये जो आपके मनमें कामना थी, उसे तो आप पा नहीं सके, उल्टे उन पतिव्रता देवीकी तपस्यासे जलकर भस्म हो गये।

तुम्हारी मृत्यु के बाद मैं यह प्राण कैसे रख सकूँगी ? इस काली-नागिन सीता को तुम क्यों ले जाए, सोने की लंकापुरी में एक भी प्राणी नहीं बच सका। तुम्हारे शंकर-शंकरी ने क्या किया ? राम-लक्ष्मण ने स्वर्ण की लंकापुरी का विनाश किया। विपत्ति आ पड़ने पर किसी का कोई नहीं होता। सीता के कारण इतना बड़ा प्रलय हो गया। तुम्हारी बहन सूर्पणखा तुम्हारे लिए यम बन गई।

प्राणवल्लभ। इसमें कोई संदेह नहीं कि समय आनेपर कर्ताको उसके पाप-कर्मका फल अवश्य मिलता है।

शुभकर्म करनेवालेको उत्तम फलकी प्राप्ति होती है और पापीको पापका फल- दु:ख भोगना पड़ता है। विभीषणको अपने शुभ कर्मोंके कारण ही सुख प्राप्त हुआ है और आपको ऐसा दु:ख भोगना पड़ा है।

आपके घरमें सीतादेवीसे भी अधिक सुन्दर रूपवाली दूसरी युवतियाँ मौजूद हैं; परंतु आप कामके वशीभूत हो मोहवश इस बातको समझ नहीं पाते थे।

परस्त्री सीताकी चाह-ने तुम्हारी यह गति की। सीता तो अरुन्धतीसे भी श्रेष्ठ महासती हैं, तुमने उनकी अवज्ञा की। उन पतिव्रताके तपसे तुम दग्ध हो गये। रानियोंमें अनेकों प्रकारकी विलाप व्याकुल बातें उठ रहीं थी। पापका फल अवश्य भोगना पड़ता है अत्युग्र पाप तत्काल फल देता है। अन्यथा कुलमें, रूपमें सीता मुझसे श्रेष्ठ नहीं हैं, पर तुम्हें यह सूझता ही नहीं था। अभागिनी तो मैं हूँ। मेरा पुण्य क्षीण हो गया। तुमने मुझे क्या-क्या सुख नहीं दिया।

संसारमें कभी किसी भी प्राणीकी मृत्यु अकारण नहीं होती है। इस नियमके अनुसार मिथिलेशकुमारी सीता आपकी मृत्युका कारण बन गयीं। आपने सीताके कारण होनेवाली मृत्युको स्वयं ही दूरसे बुला लिया। मिथिलेशनन्दिनी सीता अब शोकरहित हो श्रीरामके साथ विहार करेंगी; परंतु मेरा पुण्य बहुत थोड़ा था, इसलिये वह जल्दी समाप्त हो गया और मैं शोकके घोर समुद्रमें गिर पड़ी।

हाय। मुझ मन्दभागिनीने कभी जिसके विषयमें सोचातक नहीं था, वही मुझे वैधव्यका दु:ख प्रदान करनेवाली अन्तिम अवस्था मृत्यु आपको प्राप्त हो गयीं।

दानवराज मय मेरे पिता, राक्षसराज रावण मेरे पति और इन्द्रपर भी विजय प्राप्त करनेवाला इन्द्रजित् मेरा पुत्र है- यह सोचकर मैं अत्यन्त गर्वसे भरी रहती थी।

राक्षसशिरोमणियों। ऐसे प्रभावशाली तुमलोगोंको यह मनुष्यसे अज्ञात भय किस प्रकार प्राप्त हुआ ?

नाथ। यह स्वप्न है या सत्य। हाय। आप श्रीरामके हाथसे कैसे मारे गये ? आप तो मृत्युकी भी मृत्यु थे; फिर स्वयं ही मृत्युके अधीन कैसे हो गये ?

आपने तीनों लोकोंकी सम्पत्तिका उपभोग किया और त्रिलोकीके प्राणियोंको महान् उद्वेगमें डाल दिया था। आप लोकपालोंपर भी विजय पा चुके थे। आपने कैलास-पर्वतके साथ ही भगवान् शमरको भी उठा लिया था तथा बड़े-बड़े अभिमानी वीरोंको युद्धमें बंदी बनाकर अपने पराक्रमको प्रकट किया था।

आपने समस्त संसारको क्षोभमें डाला, साधु पुरुषोंकी हिंसा की और शत्रुओंके समीप बलपूर्वक अहंकारपूर्ण बातें कहीं।

भयानक पराक्रम करनेवाले विपक्षियोंको मारकर अपने पक्षके लोगों और सेवकोंकी रक्षा की। दानवोंके सरदारों और हजारों यक्षोंको भी मौतके घाट उतारा। आप धर्मकी व्यवस्थाको तोड़नेवाले तथा संग्राममें मायाकी सृष्टि करनेवाले थे। देवताओं, असुरों और मनुष्योंकी कन्याओंको इधर-उधरसे हर लाते थे।

आप शत्रुकी स्त्रियोंको शोक प्रदान करनेवाले, स्वजनोंके नेता, लमापुरीके रक्षक, भयानक कर्म करनेवाले तथा हम सब लोगोंको कामोपभोगका सुख देनेवाले थे। ऐसे प्रभावशाली तथा रथियोंमें श्रेष्ठ अपने प्रियतम पतिको श्रीरामके द्वारा धराशायी किया गया देखकर भी जो मैं अबतक इस शरीरको धारण कर रही हूँ, प्रियतमके मारे जानेपर भी जी रही हूँ- यह मेरी पाषाणहृदयताका परिचायक है।

राक्षसराज। आप तो बहुमूल्य पलंगोंपर शयन करते थे, फिर यहाँ धरतीपर धूलिमें लिपटे हुए क्यों सो रहे हैं ?

जब लक्ष्मणने युद्धमें मेरे बेटे इन्द्रजित्को मारा था, उस समय मुझे गहरा आघात पहुँचा था और आज आपका वध होनेसे तो मैं मार ही डाली गयी। अब मैं बन्धुजनोंसे हीन, आप-जैसे स्वामीसे रहित तथा कामभोगोंसे वञ्चित होकर अनन्त वर्षोंतक शोकमें ही डूबी रहूँगी। राजन्। आज आप जिस अत्यन्त दुर्गम एवं विशाल मार्गपर गये हैं, वहीं मुझ दुखियाको भी ले चलते। मैं आपके बिना जीवित नहीं रह सकूँगी।

हाय। मुझ असहायाको यहीं छोड़कर आप क्यों अन्यत्र चला जाना चाहते हैं ? मैं दीन अभागिनी होकर आपके लिये रो रही हूँ। आप मुझसे बोलते क्यों नहीं ? नाथ। आपकी क्रीडासहचरी यह मन्दोदरी आज अनाथ होकर विलाप कर रही है। आप इसे आश्वासन क्यों नहीं देते अथवा अधिक आदर क्यों नहीं करते ?

राजन्। आपने बहुत-सी कुलललनाओंको, जो गुरुजनोंकी सेवामें लगी रहनेवाली, धर्मपरायणा तथा पतिव्रता थीं, विधवा बनाया और उनका अपमान किया था; अत: उस समय उन्होंने शोकसे संतप्त होकर आपको शाप दे दिया था, उसीका यह फल है कि आपको शत्रु एवं मृत्युके अधीन होना पड़ा है।

महाराज। पतिव्रताओंके आँसू इस पृथ्वीपर व्यर्थ नहीं गिरते। राजन्। आप तो अपने तेजसे तीनों लोकोंको आक्रान्त करके अपनेको बड़ा शूरवीर मानते थे; फिर भी परायी स्त्रीको चुरानेका यह नीच काम आपने कैसे किया ?

मायामय मृगके बहाने श्रीरामको आश्रमसे दूर हटाया और लक्ष्मणको भी अलग किया। उसके बाद आप श्रीरामपत्नी सीताको चुराकर यहाँ ले आये; यह कितनी बड़ी कायरता है।

युद्धमें कभी आपने कायरता दिखायी हो, यह मुझे याद नहीं पड़ता; परन्तु भाग्यके फेरसे उस दिन सीताका हरण करते समय निश्चय ही आपमें कायरता आ गयी थी, जो आपके निकट विनाशकी सूचना दे रही थी।

महाबाहो। मेरे देवर विभीषण सत्यवादी, भूत और भविष्य के ज्ञाता तथा वर्तमानको भी समझनेमें कुशल है। उन्होंने हरकर लायी हुई मिथिलेशकुमारी सीताको देखकर मन-ही-मन कुछ विचार किया और अन्तमें लंबी साँस छोड़कर कहा- अब प्रधान-प्रधान राक्षसोंके विनाशका समय उपस्थित हो गया है।

काम और क्रोधसे उत्पन्न आपके आसक्तिविषयक दोषके कारण यह सारा ऐश्वर्य नष्ट हो गया और जड़मूलका नाश करनेवाला यह महान् अनर्थ प्राप्त हुआ। आज आपने समस्त राक्षसकुलको अनाथ कर दिया।

आप अपने बल और पुरुषार्थके लिये विख्यात थे, अत: आपके लिये शोक करना मेरे लिये उचित नहीं है, तथापि स्त्रीस्वभावके कारण मेरे हृदयमें दीनता आ गयी है।

आप अपना पुण्य और पाप साथ लेकर अपनी वीरोचित गतिको प्राप्त हुए हैं। आपके विनाशसे मैं महान् दु:खमें पड़ गयी हूँ; इसलिये बारंबार अपने ही लिये शोक करती हूँ।

महाराज दशानन। हित चाहनेवाले सुहृदों तथा बन्धुओंने जो आपसे सम्पूर्णत: हितकी बातें कही थीं, उन्हें आपने अनसुनी कर

दिया। आप अपने बलके घमंडमें मतवाले हो रहे थे; अत: मारीच, कुम्भकर्ण तथा मेरे पिताकी कही हुई बात भी आपने नहीं मानी। उसीका यह ऐसा फल आपको प्राप्त हुआ है।

मैं शोकसे पीड़ित हो रही हूँ और आप गहरी नींदमें सोये हुए पुरुषकी भाँति मेरी बातका जवाब नहीं दे रहे हैं। नाथ। ऐसा क्यों हो रहा है?

राक्षसराज। उठिये, उठिये। श्रीरामके द्वारा आपका नूतन पराभव किया गया है तो भी आप सो कैसे रहे हैं ? आज ही ये सूर्यकी किरणें लमामें निर्भय होकर प्रविष्ट हुई हैं।

प्राणनाथ। आप अपनी प्यारी पत्नीकी भाँति रणभूमिका आलिंगन करके क्यों सो रहे हैं और किस कारणसे मुझे अप्रियसी मानकर मुझसे बोलना तक नहीं चाहते हैं ?

मैं दानवेन्द्र मयकी पुत्री, इन्द्रजितकी माता आज अनाथा हूँ ? मन्दोदरीकी व्याकुलता असीम थी- मैं तभी क्यों नहीं मर गयी, जब इन्द्रजित मरा। तुमने ऋषियोंको बहुत सताया। सहस्त्रों सतियोंको विधवा बनाया। उनका शाप आज मुझे यह दिन दिखला रहा है। तुम तो अपने पुण्य-पाप लेकर चले गये, अब मैं अपने लिए शोक कर रही हूँ।

आपकी मृत्यु हो जानेपर भी मेरे शोकपीड़ित हृदयके हजारों टुकड़े नहीं हो जाते; अत: मुझ पाषाणहृदया नारीको धिक्कार है।

उस टूटे हुए दिल के करुण शब्द कैसे कहने में आ सकते है ? उस व्याकुल हृदय के पछतावे किस भाँति लिखे जा सकते है ?

अहह। नाथ। श्रीरघुनाथजीके समान कृपाका समुद्र दूसरा कोई नहीं है, जिन भगवान्ने तुमको वह गति दी जो योगिसमाजको भी दुर्लभ है।

इस प्रकार विलाप करती हुई मन्दोदरीके नेत्रोंमें आँसू भरे हुए थे। उसका हृदय स्नेहसे द्रवीभूत हो रहा था। वह रोती-रोती सहसा मूर्च्छित हो गयी और उसी अवस्थामें रावणकी छातीपर गिर पड़ी। उसे दूसरी रानियोंने उठाया। रावणके वक्ष:स्थलपर मन्दोदरीकी वैसी ही शोभा हो रही थी, जैसे संध्याकी लालीसे रँगे हुए बादलमें दीप्तिमती विद्युत चमक रही हो।

उसकी सौतें भी शोकसे अत्यन्त आतुर हो रही थीं, उन्होंने उसे उस अवस्थामें देखकर उठाया और स्वयं भी रोते-रोते जोर-जोरसे विलाप करती हुई मन्दोदरीको धीरज बँधाया।

वे बोलीं- महारानी। क्या आप नहीं जानतीं कि संसार का स्वरूप अस्थिर है। दशा बदल जानेपर राजाओंकी लक्ष्मी स्थिर नहीं रहती।

जब आँसुओं की धारा बह रही थी तब रामादल भी पूरा आँसुमय हो रहा था। यहीं भय था कि लंका के निकट एक और आँसुओं का महासागर न बन जाए।

मन्दोदरीके वचन कानोंसे सुनकर देवता, मुनि और सिद्ध सभीने सुख माना। ब्रह्मा, महादेव, नारद और सनकादि तथा और भी जो परमार्थवादी परमात्माके तत्त्वको जानने और कहनेवाले श्रेष्ठ मुनि थे।

वे सभी श्रीरघुनाथको नेत्र भरकर निरखकर प्रेममग्न हो गये और अत्यन्त सुखी हुए। अपने घरकी सब स्त्रियोंको रोती हुई देखकर विभीषणके मनमें बड़ा भारी दु:ख हुआ और वे उनके पास गये।

जब प्रभुने मन्दोदरी की दिन दशा देखी और विभीषण भक्त को भी दु:खी और मलीन देखा तब प्रभु विभीषण से बोले- विभीषण। तुम्हारे ये अग्रज श्लाघ्य हैं। जैसे ही देवता स्तुति करके गये, श्रीराम विभीषणके समीप आ गये। कौन कहता है कि ये विनष्ट हुए। युद्धमें प्रचण्ड पराक्रम करके वीरगति पाना शूरोंको सदा अभीष्ट रहा है। इनकी मृत्यु शोकके योग्य नहीं, प्रशंसाके योग्य है। अत: शोक त्याग दो। ये जीवनमें कभी पराजित नहीं हुए थे; किंतु यह महासागरका प्रबल ज्वार आज आप-रूपी बेलासे टकराकर भग्न हो गया। यह देखकर श्रीरामने विभीषणसे कहा- इन स्त्रियोंको धैर्य बँधाओ स्त्रियोंको लौटा दो और सब शोक त्यागकर अग्रजका अग्नि संस्कार करो।

विभीषणने शोक कातर कहा- जीवन में इन्होंने दान किया, सब भोग भरपूर भोगे, शत्रुओंको सन्ताप दिया और सन्तुष्ट किया। सेवकोंको धनी, सुखी रखा। ये तपस्वी, आहिताग्नि, वेदज्ञ थे। इनके मरनेपर मुझे उचित कर्तव्यका आप परम धर्मज्ञ उपदेश करें।

भगवन्। जिसने धर्म और सदाचारका त्याग कर दिया था, जो क्रूर, निर्दयी, असत्यवादी तथा परायी स्त्रीका स्पर्श करनेवाला था, उसका दाह संस्कार करना मैं उचित नहीं समझता हूँ।

सबके अहितमें संलग्न रहनेवाला यह रावण भाईके रूपमें मेरा शत्रु था। यद्यपि ज्येष्ठ होनेसे गुरुजनोचित गौरवके कारण वह मेरा पूज्य था, तथापि वह मुझसे सत्कार पाने योग्य नहीं है।

श्रीराम। मेरी यह बात सुनकर संसारके मनुष्य मुझे क्रूर अवश्य कहेंगे; परंतु जब रावणके दुर्गुणोंको भी सुनेंगे, तब सब लोग मेरे इस विचारको उचित ही बतायेंगे।

विभीषण रूदन करते-करते अपनी मुट्ठियों से वक्ष:स्थल पर आघात कर रहा था। तब रणधीर रघुवीर राम विभीषण के इस प्रकार के विलाप को सुनकर उसके पास आ गये। फिर उन्होंने स्वयं उसके हाथ को पकड़कर समझा लिया। वे यह बात बोले। हे विभीषण, तुम विवेक की मूर्ति होकर भी यह रुदन क्यों कर रहे हो ? इस नाशवान का शोक न करें। मन में विचार करके तो देखो। यह माया द्वारा निर्मित जगत् आडम्बर है। पिण्ड और ब्रह्माण्ड मृगजल जैसा है। आकार, तेज, विकार अशाश्वत है। अत: जो स्थिर और अखण्ड हो, उसे जान लो। इसलिए, जो मोह-रूप संसार है, उसके लिए तुम्हारा यह शोक करना योग्य नहीं है। उस समय राम की ऐसी बातें सुनकर विभीषण रोना बन्द करके चुप हो गया।

श्रीरामने स्नेहपूर्वक समझाया- राक्षसराज। मुझे तुम्हारा भी प्रिय करना है, क्योंकि तुम्हारे ही प्रभावसे मेरी जीत हुई है। अवश्य ही मुझे तुमसे उचित बात कहनी चाहिये; अत: सुनो। विभीषण। तुम धर्मज्ञ हो। जानते हो कि सब समय अपने मनका कार्य ही उचित नहीं होता। मेरी प्रसन्नता के लिये दशग्रीवकी अन्त्येष्टि करो।

यह निशाचर भले ही अधर्मी और असत्यवादी रहा हो; परंतु संग्राममें सदा ही तेजस्वी, बलवान् तथा शूरवीर रहा है। उसकी बुराई भूल जाओ। इससे तुम्हें सुयश प्राप्त होगा।

सुना जाता है- इन्द्र आदि देवता भी इसे परास्त नहीं कर सकते थे। समस्त लोकोंको रुलानेवाला रावण बल-पराक्रमसे सम्पन्न तथा महामनस्वी था।

वैर मरनेतक ही रहता है। मरनेके बाद उसका अन्त हो जाता है। अब हमारा प्रयोजन भी सिद्ध हो चुका है, अत: इस समय जैसे यह तुम्हारा भाई है, वैसे ही मेरा भी है; इसलिये इसका दाहसंस्कार करो।

मेरे सम्बन्धमें शमा मत करो। शत्रुता शत्रुके शरीरसे नहीं, उसके कर्मसे होती है। इनकी मृत्युके साथ हमारा प्रयोजन पूरा हो गया। श्रीरामने समझाया- सबका अन्तिम यज्ञ होता है देहमेध। अत: उठो और इनकी अन्त्येष्टि शरीरकी अग्निको आहुति देकर वह यज्ञ सम्पन्न कर दो।

श्रीराम बोले- शास्त्रके इस निश्चयपर विचार करके सात्त्विक बुद्धिका आश्रय ले तुम निश्चिन्त हो जाओ और अब आगे जो कुछ अन्त्येष्टि क्रिया आदि कार्य करना हो, उसके सम्बन्धमें विचार करो।

यह रावण अग्निहोत्री, महातपस्वी, वेदान्तवेत्ता तथा यज्ञ-यागादि कर्मोंमे श्रेठ शूर- परम कर्मठ रहा है। अब वह प्रेतभावको प्राप्त हुआ है, अत: अब मैं ही आपकी कृपासे इसका प्रेत-कृत्य करना चाहता हूँ।

विभीषणके करुणाजनक वचनोंद्वारा अच्छी तरह समझाये जानेपर उदारचेता राजकुमार महात्मा श्रीरामने उन्हें रावणके लिये स्वर्गादि उत्तम लोकोंकी प्राप्ति करानेवाला अन्त्येष्टि-कर्म करनेकी आज्ञा दी।

महाबाहो। धर्मके अनुसार रावण तुम्हारी ओरसे शीघ्र ही विधिपूर्वक दाह-संस्कार प्राप्त करनेके योग्य है। ऐसा करनेसे तुम यशके भागी होओगे। आपका आदेश अनुलंघनीय है विभीषण उठ खड़े हुए। अब उनका चितशोक और वितृष्णा दोनोंसे स्वच्छ हो गया था। उन्होंने दशग्रीवकी रानियोंको समझाकर नगर में भेजा। श्रीराम का आदेश पाकर विभीषणने सब साधन जुटाएं और श्रीराम उच्चारण कर रावण के शव संस्कार करने के लिए उद्यत हुए।

प्रभुकी आज्ञा मानकर और हृदयमें देश और कालका विचार करके विभीषणने विधिपूर्वक सब क्रिया की।

मैं इनके साथ जाऊँगी। मन्दोदरी अपने पतिके शवके साथ लिपट गयी।

नहीं देवि। श्रीरामने टोका। रोकनेका कारण था। सतीको पतिके साथ सती होने से रोक देनेकी शक्ति किसी में नहीं है; किंतु सतीत्व एक साधना है, आवेश नहीं है। आवेश क्षणिक होता है, पर साधना तो सतत चलकर जीवनका निर्माण करती है। जिन लोकोत्तर नारियोंके जीवनमें यह सतीत्वकी सतत साधना चलती रही है, पतिका परलेक गमन उनमें शोक नहीं जगाता। उनमें एक आत्मोत्सर्गकी दिव्य प्रेरणा देता है। उस समय उनका अन्त:करण अद्‌भुत स्थिरता और उज्ज्वलता प्राप्त कर लेता है। उनका देह तक दिव्य हो उठता है। उनके पदोंसे पृथ्वीपर कुंकुमके बिन्दु गिरते लगते हैं। दशग्रीवकी रानियोंमें-से एकमें भी ऐसी स्थिरता-दिव्यता नहीं आयी थी। वे

केवल शोकावेशमें थी।

मन्दोदरी नित्य कन्या- उसमें सतीत्वका जागना तो सम्भव नहीं था। दूसरी रानियोंमें भी किसीमें यह स्थैर्य नहीं जागा कि वे सुव्यवस्थित श्रृङ्गार करके, शान्त सहमरणको आयी हों। वे तो शोक विह्वला थी और आवेशमें आकर प्राणत्याग आत्मोत्सर्ग नहीं, आत्महत्या होती हैं। श्रीरामने समझाया- तुम दिव्या हो। तत्त्वज्ञा हो। तुम्हारी बहुत अधिक आवश्यकता है लमाको। अपनेको स्थिर करो। दशग्रीवकी अन्त्येष्टिके पश्चात् तुम्हारे दर्शन करके रामको प्रसन्नता होगी। मन्दोदरीने भूमिपर श्रीरामके सम्मुख मस्तक रखा- तुम सर्व सञ्चालक, सर्वेश्वर। तुम्हारे संकेतसे ही समस्त सृष्टि-चक्र चलता है। एक अबला तुम्हारे आदेशकी अवज्ञा कैसे कर सकती है।

श्रीरामके इस वचनको सुनकर विभीषण युद्धमें मारे गये अपने भाई रावणके दाह-संस्कारकी शीघ्रतापूर्वक तैयारी करने लगे।

राक्षसराज विभीषणने लमापुरीमें प्रवेश करके रावणके अग्निहोत्रको शीघ्र ही विधिपूर्वक समाप्त किया।

फिर दो ही घड़ीमें राक्षसोंसे घिरे हुए वे शीघ्र वहाँसे चले आये। तदनन्तर नाना माल्यवानके साथ मिलकर उन्होंने दाह-संस्कारकी तैयारीका सारा कार्य पूर्ण किया।

भाँति-भाँतिके वाद्यघोषोंद्वारा स्तुति करनेवाले मागधोंने जिसका अभिनन्दन किया था, राक्षसराज रावणके उस शवको रेशमी वस्त्रसे ढककर उसे सोनेके दिव्य विमानमें रखनेके पश्चात् राक्षसजातीय ब्राह्मण वहाँ नेत्रोंसे आँसू बहाते हुए खड़े हो गये।

उस शिबिकाको विचित्र पताकाओं तथा फूलोंसे सजाया गया था। जिससे वह विचित्र शोभा धारण करती थी। विभीषण आदि राक्षस उसे कंधेपर उठाकर तथा अन्य सब लोग हाथमें सूखे काठ लिये दक्षिण दिशामें श्मशानभूमिकी ओर चले।

यजुर्वेदीय याजकोंद्वारा ढोयी जाती हुई त्रिविध अग्नियाँ प्रज्वलित हो उठीं। वे सब कुण्डमें रक्खी हुई थीं और पुरोहितगण उन्हें लेकर शवके आगे-आगे चल रहे थे।

अन्त:पुरकी सारी स्त्रियाँ रोती हुई तुरंत ही शवके पीछे-पीछे चल पड़ी। वे सब ओर लड़खड़ाती चलती थीं।

मन्दोदरी दूसरी रानियोंके साथ समुद्र-स्नान करने चली गयी। मन्दोदरी आदि सब स्त्रियाँ उसे रावणको तिलाञ्जलि देकर मनमें श्रीरामके गुणसमूहोंका वर्णन करती हुई महलको गयीं।

आगे जाकर रावणके विमानको एक पवित्र स्थानमें रखकर अत्यन्त दुखी हुए विभीषण आदि राक्षसोंने मलयचन्दन काष्ठ, पद्मक, उशीर खस तथा अन्य प्रकारके चंदनोंद्वारा वेदोक्त विधिसे चिता बनायी और उसके ऊपर रमु नामक मृगका चर्म बिछाया।

उसके ऊपर राक्षसराजके शवको सुलाकर उन्होंने उत्तम विधिसे उसका पितृमेघ (दाहसंस्कार) किया। उन्होंने चिताके दक्षिण-पूर्वमें वेदी बनाकर उसपर यथास्थान अग्निको स्थापित किया था। फिर दधिमिश्रित घीसे भरी हुई स्रुवा रावणके कंधपर रक्खी। इसके बाद पैरोंपर शकट और जाँघोंपर उलूखल रक्खा।

तथा काष्ठके सभी पात्र, अरणि, उत्तरारणि और मूसल आदिको भी यथास्थान रख दिया।

वेदोक्त विधि और महर्षियोंद्वारा रचित कल्पसूत्रोंमें बतायी गयी प्रणालीसे वहाँ सारा कार्य हुआ। राक्षसोंने राक्षसोंकी रीतिके अनुसार मेध्य पशुका हनन करके राजा रावणकी चितापर फैलाये हुए मृगचर्मको घीसे तर कर दिया, फिर रावणके शवको चन्दन और फूलोंसे अलंकृत करके वे राक्षस मन-ही-मन दु:खका अनुभव करने लगे।

फिर विभीषणके साथ अन्यान्य राक्षसोंने भी चितापर नाना प्रकारके वस्त्र और लावा बिखेरे। उस समय उनके मुखपर आँसुओंकी धारा बह चली। तदनन्तर विभीषणने चितामें विधिके अनुसार आग लगायी। उसके बाद स्नान करके भीगे वस्त्र पहने हुए ही उन्होंने तिल, कुश और जलके द्वारा विधिवत् रावणको जलाञ्जलि दी। तत्पश्चात् रावणकी स्त्रियोंको बारंबार सान्त्वना देकर उनसे घर चलनेके लिये अनुनय-विनय की। समुद्रके किनारे अमावस्याके दिन मध्याह्नके उपरान्त युगों तक त्रिभुवनको आतमित रखनेवाले दुर्दान्त दशग्रीवका शरीर चितापर धू-धू करते जल रहा था। इतना दीर्घायु, इतना ऐश्वर्य, इतना वैभव ऐसा अतर्क्य बल-सबका धरापर यही अन्तिम परिणाम। स्वयं दशग्रीवने जो महामेघ प्रारम्भ किया था, उसमें अपने समस्त अनुयायियोंकी आहुति देनेके पश्चात् उसके स्वयंके शरीरकी यह पूर्णाहुति पड़ गयी।

ऐ दुनिया के जीवों, देखो सभी इस घाट पर आते हैं, दु:ख तो यह है कि कुछ दिनों के लिये क्या-क्या न पाप हम करते हैं। इस संसार में कोई भी साथ में नहीं जाता, आँखों से देख सको तो देखो दुनिया का सदा से यही रंग है। जहाँ रोज शक्लें बनती है और खुद ही मिटा

करती हैं। कभी बच्चें, कभी जवान, कभी बूढ़े यह शक्ले कितने ही रंग में खुद को रंग लेती है। कोई रंक होता है, कोई शहंशाह होता है यही शक्लें दिन-रात धोखा दिया करती हैं। कुछ दिन के लिए शक्लें क्या-क्या न करती, सोने को पलंग चाहिए और रहने को महल। अपने मकान को देखके यह शक्लें फूली नहीं समाती, औरों के घरको देखकर हँसने से बाज नहीं आती। अपना-अपना करके आखिर में चली जाती है। क्या थीं, कौन थी, कहाँ गयी न कुछ मालूम है। परर्दे में इसका खिलाड़ी कोई और है बस सबकी डोर उसीके पास फिरा करती है।

महलमें चलो यह विभीषणका आदेश सुनकर वे सारी स्त्रियाँ नगरीमें चली गयीं। स्त्रियोंके पुरीमें प्रवेश कर जानेपर राक्षसराज विभीषण श्रीरामके पास आकर विनीतभावसे खड़े हो गये। विभीषणने आर्द्रवस्त्र अपने इस अग्रजका अर्पण किया। सब कर्म सम्पन्न करके वे श्रीरामके समीप आये।

इसी समय मन्दोदरी भी आयी। वह लमाकी साम्राज्ञी, आज एकाकिनी, पैदल, मुक्तकेशा, आभरणहीना आयी थी। उसके नेत्रोंसे अश्रुधारा चल रही थी। वह बोलनेमें असमर्थ थी। दोनों हाथ जोड़कर श्रीराम चरणोंके सम्मुख वह शान्त बैठ गयी।

आप दानवेन्द्र मयकी महिमामयी पुत्री हैं देवि। आपका कन्यात्व नित्य अखण्ड है। आपका ज्ञान अविद्याके कल्मषसे कभी अपवित्र नहीं हुआ। आपमें शरीरके प्रति यह आसक्ति उचित नहीं है। आप शोकका त्याग करें। श्रीराम स्वयं मन्दोदरी को समझाने लगे। वे सबके उर-प्रेरक हृषीकेश-उनकी इच्छा ही तो सर्वत्र साकार होती है।

आपके इस पतिकुलमें और पितृकुलमें भी सहमरण श्लाघ्य नहीं माना जाता। श्रीरामने कहा- अपवाद सर्वत्र होते हैं; किंतु उनको नियम बनाना उचित नहीं है। आपकी पुत्रवधू प्रमिला अपवाद थी इस कुलमें।

आप अपने इस पति-कुलको उच्छिन्न, परस्परके संघर्षसे समाप्त होता तो नहीं देखना चाहतीं ? श्रीराम इस समय मन्दोदरीके प्रति अत्यन्त आदर प्रदर्शित कर रहे थे- यह सत्य है कि लमाके वास्तविक शासक विभीषण ही थे; किंतु जो परिस्थिति बन चुकी है, उसमें अवशिष्ट राक्षसों की आस्था विभीषणपर बनी रहेगी ? जिनके पति-पुत्र-भाई मारे गये हैं, वे नारियाँ विभीषणको सहयोग देंगी ?

विभीषणको भय तथा आतमको माध्यम बनाकर व्यवहार करना नहीं आता, यह आप भली प्रकार जानती हैं। श्रीरामके मुखकी ओर चकित मन्दोदरी देख रही थी। उसके अश्रु सूख चुके थे। वह समझ नहीं पाती थी कि ये लीलामय कहना क्या चाहते हैं। श्रीराम कहते गये- विभीषण भोग लोलुप नहीं हैं। उन्हें आवश्यक भोगोंका अब अभाव नहीं रहेगा। अपनी पत्नीमें इनकी प्रीति है।

आपका सम्पूर्ण राक्षस-कुलपर अखण्ड प्रभाव रहा है। आपपर अब भी सब राक्षस-राक्षसियोंकी आस्था है। सब आपका सम्मान करते हैं। आपके कुलमें इसे दोष नहीं माना जाता। अब श्रीरामने अभिप्राय स्पष्ट किया- अत: लमाकी सुव्यवस्थाके लिए, हत-बान्धव दु:खियोंको आश्वस्त करनेके लिए आप सबका आश्रय बन। आप अपना साम्राज्ञीका मुकुट स्वीकार कर लें। विभीषणको केवल सिंहासनपर साथ देनेके लिए आपका सहयोग वाञ्छित है।

अर्थात् मैं पुन: श्रृङ्गार करूँ ? मन्दोदरीके नेत्र जल उठे- आप मर्यादा पुरुषोत्तम चाहते हैं कि यह विधवा फिर वधू बने ? मैं सरमाका स्वत्वापहरण करूँ ?

देवि। आप नित्य कन्या है। श्रीराम शान्त बन रहे। आपके कुलमें यह निन्दित आचार नहीं है। इस समय समग्र राक्षस जातिको जो इस महासंहारसे बची है, आपके आश्रयकी आवश्यकता है। विभीषणकी पत्नी का स्वत्वापहरण कहाँ होता है। मैंने सुना है, वे सरला-शासिका नहीं है। शासन उनके स्वभावमें नहीं है। वे विभीषणके अन्त:पुरकी अधीश्वरी बनी रहेंगी। यह तो आपके लिए एक विषम तप है। मन्दोदरी ने रोते-रोते भूमिमें मस्तक रखा। दोनों हाथोंमें मुख छिपाये वह रोती हुई लौट चली लमाकी ओर।

तदनन्तर इन्द्रके दिये हुए धनुष, बाण और विशाल कवचको त्यागकर तथा शत्रुका दमन कर देनेके कारण रोषको भी छोड़कर शत्रुसूदन श्रीरामने शान्तभाव धारण कर लिया।

२९) विभीषणका राज्याभिषेक - विभीषण। इन सबको अभय दो। श्रीरामने अब घूमकर विभीषणको पुकारा और अपने धनुषकी ज्या उतार ली। रथसे उतरकर उन्होंने सुरेन्द्रके उस रथकी पुन:प्रदक्षिणा की। उसने मस्तक झुकाया। बोले- मातलि। तुम्हारे अत्यन्त निपुण सारथ्यने रामको विजयी बनाया। तुम्हारे और सुरेन्द्रके प्रति भी मेरा आभार। अब रथको स्वर्ग ले जाओ। इसके बाद श्रीरामने इन्द्रके दिये हुए दिव्य रथको, जो अग्निके समान देदीप्यमान था, ले जानेकी आज्ञा देकर मातलिका बड़ा

सम्मान किया।

मातलि उस दिव्य रथको लेकर स्वर्ग जानेके लिए गगनमें उठे, तब विभीषण घोषणा कर रहे थे- सब राक्षस लमामें लौट जायें। सब अपने कर्तव्यका पालन करें। दूसरी आज्ञा तक जो जहाँ नियुक्त थे, वहीं लगे रहें। कोई कर्तव्य-पालनमें प्रमाद न करे; किन्तु किसीको उत्पीड़त या संत्रस्त न करे।

वहाँ आकर श्रीरामने अपने समीप खड़े हुए लक्ष्मणसे कहा- सौम्य। अब तुम लमामें जाकर इन विभीषणका राज्याभिषेक करो।

लक्ष्मण। ये मुझमें अनुरक्त है। इन्होंने मेरे लिए स्वर्वस्वका त्याग कर दिया। युद्धमें इन्होंने मेरा बहुत उपकार किया। मैं इनके प्रति किये गये अपने लंकेश्वर सम्बोधनको सफल देखना चाहता हूँ। सुग्रीवको आलिंगन देकर कहा- वानरेन्द्र। आप हनुमान, अङ्गद, नील आदि सब प्रमुख यूथपोंको लेकर लक्ष्मणके साथ लमा पधारे। विभीषणको सविधि सिंहासन पर बैठा दें और राक्षसोंको आश्वस्त कर दे।

पिताके वचनोंके कारण मैं नगरमें नहीं आ सकता। पर अपने ही समान वानर और छोटे भाईको भेजता हूँ।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर लक्ष्मणको बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने बहुत अच्छा कहकर सोनेका घड़ा हाथमें लिया और उसे वानरयूथपतियोंके हाथमें देकर उन महान् शक्तिशाली तथा मनके समान वेगवाले वानरोंको समुद्रका जल ले आनेकी आज्ञा दी।

लक्ष्मण सबके साथ विभीषणको लेकर लंकामें प्रविष्ट हुए। वानरोंको स्वर्ण कलश देकर सभी समुद्रोंका जल, तीर्थोंका जल तथा आवश्यक औषधियाँ लाने भेज दिया गया। शीघ्रतापूर्वक दशग्रीवकी राजसभा सज्जित की गयी।

ऐसा विषम समय था, जब राज्याभिषेकका कोई बड़ा महोत्सव करना विडम्बना ही होती। लंकामें सब विभीषणके अपने ही स्वजन थे। उनके पुत्र, पिता, भाई, सगे सम्बन्धी मारे गये थे, विधवाओंकी ही बहुलता थी लंकाके गृहोंमें। अत: अनिवार्य माङ्गलिक शङ्खध्वनि मात्र होनी थी।

विभीषणको, उनकी पत्नी सरमाको, मन्दोदरीको भी तीर्थोंके जलसे स्नान कराया गया। तीनोंने वस्त्राभरण धारण किए। अङ्गराग, चन्दन, पुष्पमाल्य- इनके अतिरिक्त रावणके कोषमें सभी निधियाँ थी। दक्षिणवर्त उज्वल शङ्ख तथा अन्य मांगलिक रत्न, मणियाँ उपस्थित की गयीं।

तदनन्तर लक्ष्मणने एक घट लेकर उसे उत्तम आसनपर स्थापित कर दिया और उस घटके जलसे विभीषणका वेदोक्त विधिके अनुसार लमाके राजपदपर अभिषेक किया। यह अभिषेक श्रीरामकी आज्ञासे हुआ था। उस समय राक्षसोंके बीचमें सुहृदोंसे घिरे हुए विभीषण राजसिंहासनपर विराजमान थे। लक्ष्मणके बाद सभी राक्षसों और वानरोंने भी उनका अभिषेक किया।

लक्ष्मणने हाथ पकड़कर विभीषणको सिंहासनपर बैठाकर तिलक किया। वानरेन्द्र, सुग्रीवने उनके करोंमें रत्न-जटित राजदण्ड दिया। लक्ष्मणके अनुरोधपर मन्दोदरीने विभीषणके वामपार्श्वमें बैठकर जब रत्नकिरीट मस्तकपर रखा, सरमाने आगे आकर सादर अपनी इस साम्राज्ञीकी पद-वन्दना की।

विभीषणके मन्त्रियोंने उनके ऊपर छत्र तथा चामर, व्यजन धारण किया। युवराज अङ्गद तथा दूसरे वानर यूथपोंने जब उनकी वन्दना कर ली, अवशिष्ट राक्षस उपहार लिये आये। इनमें सबसे आगे दैत्यश्रेष्ठ, दशग्रीवके मातामह माल्यवन्त थे।

वे अत्यन्त प्रसन्न होकर श्रीरामकी ही स्तुति करने लगे। राक्षसराज विभीषण को लमाके राज्यपर अभिषिक्त देख उनके मन्त्री और प्रेमी राक्षस बहुत प्रसन्न हुए। साथ ही लक्ष्मणसहित श्रीरामको भी बड़ी प्रसननता हुई।

उसी समय लक्ष्मण तथा सुग्रीवसे सम्मति करके विभीषणने अपने अबतक साथ रहे मन्त्रियोंको शासनका मन्त्री घोषित किया। उन्होंने इसी समय नगर के सुरक्षा अधिकारी नियुक्त किये। दूसरे भी कुछ प्रधान पदोंकी घोषणा की।

लमामें रावण-वधका समाचार पहुँचते ही सूर्पणखा नगर त्यागकर चली गयी थी। उसने मधुवन पहुँचकर मधुदैत्यके पुत्र लवणासुर के यहाँ शरण ले ली।

किसीको भी उसके पिछले अपराधोंके लिए कोई दण्ड नहीं दिया जायगा। विभीषणकी प्रथम राजाज्ञा नगर में तत्काल घोषित की गयी- नवीन राक्षसेश्वर तथा महारानी मन्दोदरीने सबके अबतकके अपराध क्षमा कर दिये। किसीको भयभीत नहीं होना चाहिये; किंतु अब राक्षसों को कहीं किसीको भी उत्पीड़ित नहीं करना चाहिये। सुरोंका, सत्पुरुषोंका और सभी के उपासना स्थानों का सम्मान करना चाहिये। अब गोवंश सम्मान्य पशु माना जायगा। किसीका स्वत्व हरण करनेवाला, किसीके साथ अन्याय करनेवाला दण्डित होगा।

राज्य वस्तुत: मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामका है। विभीषणने स्पष्ट घोषणा की- मैं केवल उनका सेवक हूँ। भारतके सभी आर्य नरेश और वानरेन्द्र सुग्रीव हमारे मित्र हैं। हमारी कोई महत्वाकांक्षा नहीं है। हम शान्तिपूर्वक रहने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं।

वहाँके असुर समाज आपस में कहने लगे- राजा रावण तो कहा करते थे यदि राम विजयी हो जायेंगे तो इस लंका की ईंट-ईंट अवध में ले जायेंगे पर वे तो लंका में आये भी नहीं और केवल लक्ष्मण को भेजा है। वह भी इसलिए कि वे विभीषण को राज्य दे जाएँ। लंका का राज्य रघुनन्दन ने जीता पर जीतकर भी यह सोने की लंका लंकावालोंको ही दे दी। उसपर जरा भी अपने मनकी इच्छा या लोभ नहीं रखा। वह देश और जाति धन्य है, जहाँ ऐसे दानी राजा होते हैं। वह कोख धन्य है जिससे ऐसे सद्ज्ञानी पैदा होते हैं। इस समय तो हम यहीं देख रहे हैं कि यह लंका परिणाम यहीं हुआ कि हमारे तन पर तो राज्य विभीषण का है पर मन पर राज्य श्रीराम का है। इसप्रकार विधिपूर्वक विभीषण लंकेश हो गये।

श्रीरामके दिये हुए उस विशाल राज्यको पाकर विभीषण अपनी प्रजाको सान्त्वना दे श्रीरामके पास आये।

प्राप्त सब उपहार, सब माङ्गलिक द्रव्य, असंख्य रत्न-मणि पुष्पकमें विभीषणने भरवायीं। उस विमानको लेकर श्रीरामके सम्मुख उपस्थित हुए। वह सब सामग्री उन्होंने सादर अर्पित की।

मैंने यह सब स्वीकार किया। सस्मित श्रीराम बोले- लेकिन अभी लंकेश्वरको किञ्चित् श्रम और करना है। इन वानरवीरोंकी सहायतासे ही राम समर-विजयी हुआ है। अत: विजयोपहारके ये प्रथम अधिकारी हैं। इन असंख्य वानरोंको पुरस्कार-वितरणकी एक ही सुविधाजनक व्यवस्था सम्भव है, तुम विमानमें बैठकर आकाशसे सब सामग्रीकी वर्षा कर दो। वानर स्वेच्छानुसार पदार्थ ग्रहण कर लें।

तब श्रीरामजी विभीषणने अपने पास बिठाकर कहा- लंकापति जनसेना अपने स्थानों पर लौट चुकी है। सहायक सैनिक अपने-अपने ग्रामों की ओर प्रस्थान कर रहे हैं और किष्किंधा की राजकीय सेना अपने हताहतों की व्यवस्था कर एक-दो दिनों में अपनी चौकी समेटकर लौट जाएगी। तब विभीषण बोले- आप यह सब क्यों कह रहे हैं ? मैंने तो इन सेनाओं को कभी पराया समझा ही नहीं। मैंने उन्हें अपने ऊपर कोई बोझ भी नहीं माना।

राम बोले- मित्र। तुम्हारा मानना ही तो सब कुछ नहीं है। तुम न भी मानो, तो भी स्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। यथार्थ के अपने कुछ नियम होते हैं। विभीषण बोले- ऐसा क्यों भद्र।

तब रामने कहा- मूलभूत मानवता सब स्थानों पर विद्यमान है, प्रिय। सीता का स्वर धीमा और सकुरण था, लंका में भी विभीषण-पत्नी सरमा थीं। विभीषण थे। अविंध्य थे। किन जोखिमों के बीच से होकर कला मुझसे मिलने आई थी। त्रिजटा कैसे-कैसे मेरी सहायता करती रही।

यह विषय अत्यंत सुकुमार है और संकटपूर्ण भी। सहायक होकर आई, कोई भी बाहरी सेना, विजय की घड़ी के पश्चात ठहरी रहे तो आधिपत्य सेना का रूप धारण कर लेती है। आज वानर सेना लंका के नये शासन की सहायक है, मित्र है, सम्मानित अतिथि है; किंतु यदि ठहरने के समय की मर्यादा का उल्लंघन करेगी तो लंका के लिए एक भयावह बोझ हो जाएगी। तुम इसका पक्ष लोगे तो विदेशी सेना के पिट्ठू कहलाओगे और लंकावासियों की दृष्टि में असम्मान के भाजन बनोगे।

लंका के सारे चिकित्सालय इस समय हताहतों से भरे पड़े हैं। प्रत्येक घर में से कोई-न-कोई पुरुष या तो आहत है या मर गया है अग्निकाण्डों से भी कुछ क्षति हुई ही है। जनसंख्या विचलित भी है और अस्त-व्यस्त भी। पिछले शासन के ध्वंसावशेष भी पर्याप्त शक्तिशाली हैं। न तुम उन्हें नष्ट कर सकते हो और न अंगीकार। ऐसे में यह न हो कि नये समाज में भी पुराना शोषण और अन्याय चलता रहे; और जिन्होंने नये शासन, नई व्यवस्था और नये शासक के लिए अपने प्राण दिए हैं अथवा अपना रक्त बहाया है, वे तथा उनके परिवार पहले के समान शोषण के पात्र बने रहें। यदि ऐसा होता रहा तो याद रखना, जन सामान्य को शस्त्र ग्रहण करना आ गया है।

विभीषण मुसकराए, आप निश्चिंत रहें, आर्य। ऐसा नहीं होगा। विभीषण ने वर्षों से एक नये, न्यायपूर्ण, शोषणरहित और समताधृत समाज के स्वप्न देखे हैं। अपने स्वप्नों को न मैं भूल सकता हूँ, न नष्ट होने दे सकता हूँ।

राम बोले- मुझे विश्वास है कि ऐसा ही होगा। किंतु ऐसा न हो कि नया समाज बनाने की आड़ में एक नई शोषण-व्यवस्था उत्पन्न हो जाए। अपने सगे-संबंधियों, मित्रों तथा अपने पक्षधरों द्वारा होने वाले अन्यायों का विरोध तथा प्रतिकार, न्याय की पहली माँग है। रावण के समान संसार भर के आततायी गुण्डों को एकत्रित कर हिंसा, शोषण तथा अन्याय के आधार पर साम्राज्य स्थापित करना तथा

विलास में लिप्त हो जाना राजनीतिक आदर्श नहीं है। राम कुछ रुककर बोले, मनुष्य अपने पक्ष के व्यक्ति को अनाचार के माध्यम से कुछ प्राप्त करते हुए अथवा अन्य लोगों का शोषण करते हुए देखकर प्रसन्न होता है कि वह अपने पक्षवालों के लिए सुख के साधन एकत्रित कर रहा है। रावण के अत्याचारों के माध्यम से लंका में धन एकत्रित होते देख, लंकावासियों ने यही सोचा था। किंतु वस्तुत: वह सुख के नहीं, अपने और अपने समाज के नाश के साधन एकत्रित कर रहा होता है। प्रकृति के कर्म तथा सुख के नियम बड़े कठोर हैं और जटिल भी। सुख अर्जित करना चाहिए, एकत्रित नहीं।

आप ठीक कह रहे हैं, राम। विभीषण जैसे अपने-आपसे कह रहे थे, मुझे इन बातों के प्रति सचेत रहना होगा। अपने पक्ष के प्रति, अपने विरोधियों के प्रति, अपने मन के प्रलोभनों के प्रति तथा अपने सगे-संबंधियों की सुविधा-जीविता के प्रति तटस्थ, न्यायपूर्ण तथा कठोर रहना पड़ेगा।

हाँ, विभीषण। अपने साथियों को भी तुम्हें समझाना होगा कि वस्तुत: हित क्या है ? सुख क्या है ? इंद्रियों का सुख भौतिक सुख है। वह उपयोगिता की दृष्टि से अनिवार्य है; किंतु जब वह उसकी अनिवार्यता का अतिक्रमण कर अतिरिक्त सुख खोजता है, तो रोग बन जाता है। भोजन पौष्टिकता तक अनिवार्य है; किंतु स्वाद की सीमा में प्रवेश करते ही वह रोग को जन्म देता है। निद्रा विश्राम की सीमा तक अनिवार्य है; किंतु अकर्मण्यता तक पहुँचकर वह विष में बदल जाती है। यौन-सुख, जाति-सुरक्षा की वृत्ति- शरीर की आवश्यकता तक निर्माण है, विलास के क्षेत्र में पहुँचकर वह क्षय है।

प्रत्येक अति सुख में दु:ख छिपा है, राम। प्रकृति द्वंद्वात्मक है। राम मुसकराए, इसलिए मनुष्य को अपनी सीमा पहचाननी होगी।

विभीषण ने पूछा, बौद्धिक सुखों पर भी यह नियम लागू होगा, भद्र ? वहाँ तो इंद्रियाँ नहीं हैं ?

राम बोले, शरीर-सुख की तो फिर भी एक सीमा है। क्योंकि शरीर की क्षमताएँ सीमित हैं। बुद्धि सूक्ष्म है, उसकी सीमा नहीं, इसलिए उसका विष और भी भयंकर है, विभीषण। रावण की साम्राज्य नीति इंद्रियों के सुखों का अतिक्रमण कर बौद्धिक सुख के भोग में प्रविष्ट हो चुकी थीं। पदार्थों के भोग की सीमा हो सकती है, किंतु उनके संचय की कोई सीमा नहीं होती। रावण का साम्राज्य, भोग के आगे, संचय सुख में प्रवेश कर चुका था। तुम्हारा राज्य ऐसा न हो, मित्र। बौद्धिक सुख स्वभिमान की सीमा तक ही रहे तो ठीक हैं; अहंकार के क्षेत्र में पहुँचकर व्यक्ति सर्वश्रेष्ठता का भाव पाल लेता है। वह अन्य मनुष्यों को स्वयं से हीन मानकर, उनके सुख और कल्याण की कामना न कर, उनका भावात्मक और शारीरिक उत्पीड़न करता है। रावण अहंकारी हो गया था- दूसरों की भावनाओं, इच्छाओं, आवश्यकताओं, सम्मान और अधिकार की उसे चिंता नहीं थी। वह परपीड़न-रति का रोगी होकर पशु हो गया था।

तो संसार में कोई सुख नहीं है, राम ? विभीषण की जिज्ञासा में पीड़ा थी, संसार पूर्णत: दु:खमय है ?

नहीं। राम मुसकराए, समस्त अभौतिक सुख दोषहीन हैं। विवेक का सुख ऐसा ही सुख है। यह निर्माण का सुख है। स्वार्थ का त्याग कर, अपनी शक्तियों को जन-कल्याण में लगाओ- यह सारा संसार तुम्हारे लिए सुखमय हो जाएगा। राम ने अयोध्या का राजसिंहासन स्वीकार किया होता तो कदाचित् सुखी न हो पाता; वनवास में इतनी कठिनाइयों और विरोधों के होने पर भी मैं सुखी हूँ। तुम्हें भी इसी मार्ग पर चलना होगा। विभीषण कुछ सोचते-से चुपचाप खड़े रहे।

राम पुन: बोले, एक बात और कहना चाहूँगा, बन्धुवर। इस संघर्ष के संदर्भ में जिन्हें चेतना मिली है, जिन्होंने विद्रोह करना सीखा है, अपने अधिकारों के लिए युद्ध करना जाना है, उनकी ऊर्जा को निर्माण की ओर लगाए रखना। तुम असावधान हुए तो वे तुम्हारा ही नाश कर देंगे वे तुम्हारे सतत जागृत प्रहरी हैं।

मैं तुम्हारा आभारी हूँ, राम। कि तुम मेरी रक्षा के लिए ऐसे प्रहरी छोड़े जा रहे हो। विभीषण विह्वल हो उठे, मेरे जीवन का लक्ष्य होगा कि आपके इन प्रतिनिधियों की चेतना सदा जागरूक और प्रज्वलित रहे। अंधकार के विरुद्ध यह संघर्ष चलता रहे।

राम ने पूछा- और मंदोदरी ?

उन्हें अब भी पट्टमहिषी का सम्मान प्राप्त होगा।

यही कहना चाहता हूँ कि यदि वे मार्ग की बाधा न बनें तो उन्हें अनावश्यक कष्ट न दिया जाए; किंतु इतना संरक्षण भी न मिले कि एक नई शूर्पणखा तैय्यार हो।

विभीषण मुसकरा पड़े, नहीं। अब लंका में शूर्पणखाएँ उत्पन्न न होंगी। जो हैं, उन्हें भी अपना मार्ग बदलना होगा। नया समाज क्रूर

नहीं है, किंतु अत्याचार के प्रतीकों को यह बदल देगा, अन्यथा नष्ट कर देगा। राम ने आगे बढ़कर विभीषण को गले से लगा लिया।

विभीषणका अभिषेक हो रहा था, तभी युद्धभूमिपर महेन्द्रने अमृत-वृष्टि कर दिया था। युद्धमें मारे गये सब वानर जीवित हो गये थे। विभीषणने आज्ञा मानकर वस्तुओंकी वर्षा की तो वानर उन्हें कूद-कूदकर लूटने लगे।

आपने जिस अपराधमें दशग्रीवका वध किया, परस्त्रीको बलपूर्वक अपमानित करनेका वही अपराध इस दुष्टने किया है। अबतक लक्ष्मणने अपनेको संयमित रखा था। विभीषणके पदार्थ वर्षा करके उतरते ही अङ्गदने लक्ष्मणके संकेत के अनुसार बँधे द्विविद वानरको श्रीरामके सम्मुख उपस्थित किया। लक्ष्मण अत्यन्त क्रुद्ध थे- यह प्राणदण्डका पात्र है।

विभीषणके अभिषेक महोत्सवमें आयी राक्षस-सुन्दरियोंको देखकर द्विविदका मन विचलित हो गया था। उसने एकको बलपूर्वक उठाया। वह चाहता था कि उसे किसी गुफामें छिपा देना। यहाँसे विदा होते समय ले जायगा; किंतु वह चीत्कार करने लगी। उसके क्रन्दनको सुनकर अङ्गद दौड़े। द्विविदको लक्ष्मण वहीं विभीषणके द्वारा प्राणदण्ड दिलाना चाहते थे, परन्तु विभीषण श्रीरामके किसी जनको दण्ड नहीं देना चाहते थे। उन्होंने कह दिया- विजयके उल्लासमें सैनिक कुछ उच्छृंखलता करें तो उसे क्षमा किया जाना चाहिये।

इस समय इसे दण्ड देना उचित नहीं है। द्विविद लक्ष्मणके आदेशके अनुसार बन्दी करके लाया गया था। मर्यादा पुरुषोत्तमने अनुजसे कहा- हमें लंकेश्वरके प्रथम क्षमादानका सम्मान करना चाहिये। यह अब असुर हो ही गया है। तुम द्वापरमें इसे प्राणदण्ड दे देना।

तत्पश्चात् उन्होंने हाथ जोड़कर विनीतभावसे खड़े हुए हनुमानसे कहा- सौम्य। तुम इन महाराज विभीषणकी आज्ञा से लमा नगरीमें प्रवेश करके मिथिलेशकुमारी सीतासे उनका कुशल समाचार पूछो। साथ ही उन विदेहराजकुमारीसे सुग्रीव और लक्ष्मणसहित मेरा कुशल-समाचार निवेदन करो। वक्ताओंमें श्रेष्ठ हरीश्वर। तुम वैदेहीको यह प्रिय समाचार सुना दो कि रावण युद्धमें मारा गया। तत्पश्चात् उनका संदेश लेकर लौट आओ।

श्रीवैदेही तक समाचार पहुँच गया होगा; किंतु उन्हें अधिकृत एव विश्वस्त सूत्रसे भी तो समाचार मिलना चाहिए। राक्षसियोंपर अविश्वास कर सकती हैं। श्रीरामके दलमें केवल हनुमानसे परिचित थीं। जिन्होंने उनका पता लगानेके लिए समुद्र लाँघनेका श्रम करके अकेले शत्रुपुरीमें प्रवेशका साहस किया था, सुख-समाचार पहुँचाना उनका स्वत्व था।

हनुमानने राजसदन पहुँचकर विभीषणसे अनुमति माँगी तो वे हाथ जोड़कर खड़े हो गये। वे स्वयं साथ जाते; परन्तु हनुमान एकाकी जाना चाहते थे। इस समय यही उचित था।

अब तुम राजधानी जाकर पहिले पुरीकी व्यवस्था करो। श्रीरामने विभीषणको आज्ञा दी। विभीषण भी इस समय उत्सुक थे नगरमें जानेके लिए। उन्हें उनके अत्यावश्यक कार्य स्मरण आ रहे थे। भगवती वैदेहीके दर्शन आवश्यक थे और श्रीरघुनाथसे नगरमें पधारनेकी प्रार्थना करनेसे पूर्व भी कुछ व्यवस्था करनी ही थी। वे प्रणाम करके चले गये।

३०) सीताकी अग्निपरीक्षा- अशोकवाटिकामें प्रवेश करके न्यायानुसार उन्होंने सीताको अपने आगमनकी सूचना दी। तत्पश्चात् निकट जाकर उनका दर्शन किया। वे स्नान आदिसे हीन होनेके कारण कुछ मलिन दिखायी देती थीं और सशम हुई रोहिणीके समान जान पड़ती थीं। उनका मुख सौम्य था। राक्षसियाँ आज बहुत अधिक थीं। सब हाथ जोड़े विनम्रवदना बैठी थीं।

हनुमान अशोक वन में आ गया, जहाँ सती सीता बैठी हुई थी। जिस प्रकार बछड़ा गाय के निकट आ जाता हो, हंस मानसरोवर के पास आ जाता हो, जिस प्रकार विनता-सुत गरुड लक्ष्मी के दर्शन के लिए जाता हो, उसी प्रकार पवनकुमार हनुमान अशोक वन में सीता के पास आ गया।

महाबली हनुमान्को आया देख देवी सीता उन्हें पहचानकर मन-ही-मन प्रसन्न हुई; किंतु बोल न सकीं। चुपचाप बैठी रहीं।

सीताके मुखपर सौम्यभाव लक्षित हो रहा था। अम्ब ! श्रीरामका सेवक यह पवनपुत्र हनुमान आपके पादपद्मोंमें प्रणाम करता है। हनुमानने द्वारसे प्रवेश किया था। पृथ्वीपर पड़कर प्रणाम किया।

उसे देखकर कपिश्रेष्ठ हनुमानने सीतासे कहा- विदेहनन्दिनि। श्रीराम लक्ष्मण और सुग्रीवके साथ सकुशल हैं। अपने शत्रुका वध करके सफलमनोरथ हुए उन शत्रुविजयी श्रीरामने आपकी कुशल पूछी है।

देवि। विभीषणकी सहायता पाकर वानरों और लक्ष्मणसहित श्रीरामने बल-विक्रमसम्पन्न रावणको युद्धमें मार डाला है।

श्रीरामने आपको यह संदेश दिया है-देवि। मैंने तुम्हारे उद्धारके लिये जो प्रतिज्ञा की थी, उसके लिये निद्रा त्यागकर अथक प्रयत्न किया और समुद्रमें पुल बाँधकर रावणवधके द्वारा उस प्रतिज्ञाको पूर्ण किया।

अब तुम अपनेको रावणके घरमें वर्तमान समझकर भयभीत न होना; क्योंकि लमाका सारा ऐश्वर्य विभीषणके अधीन कर दिया गया है। अब तुम अपने ही घरमें हो। ऐसा जानकर निश्चिन्त होकर धैर्य धारण करो। देवि। ये विभीषण भी हर्षसे भरकर आपके दर्शनके लिये उत्कण्ठित हो अभी यहाँ आ रहे हैं।

तब सीता गद्‌गद् वाणीसे बोली- वानर वीर। ऐसा प्रिय समाचार सुनानेके कारण मैं तुम्हें कुछ पुरस्कार देना चाहती हूँ; किंतु बहुत सोचनेपर भी मुझे इसके योग्य कोई वस्तु दिखायी नहीं देती।

सौम्य वानर वीर। इस भूमण्डलमें मैं कोई ऐसी वस्तु नहीं देखती, जो इस प्रिय संवादके अनुरूप हो और जिसे तुम्हें देकर मैं संतुष्ट हो सकूँ। सोना, चाँदी, नाना प्रकारके रत्न अथवा तीनों लोकोंका राज्य भी इस प्रिय समाचारकी बराबरी नहीं कर सकता।

पतिकी विजय चाहनेवाली और पतिके ही प्रिय एवं हितमें सदा संलग्न रहनेवाली सती-साध्वी देवि। आपके ही मुँहसे ऐसा स्नेहपूर्ण वचन निकल सकता है आपके इस वचनसे मैं सब कुछ पा गया।

सौम्ये। आपका यह वचन सारगर्भित और स्नेहयुक्त है, अत: भाँति-भाँतिकी रत्नराशि और देवताओंके राज्यसे भी बढ़कर है।

मैं जब यह देखता हूँ कि श्रीराम अपने शत्रुका वध करके विजयी हो गये और स्वयं सकुशल हैं, तब मैं यह अनुभव करता हूँ कि मेरे सारे प्रयोजन सिद्ध हो गये- देवताओंके राज्य आदि सभी उत्कृष्ट गुणोंसे युक्त पदार्थ मुझे मिल गये।

तुम वायुदेवताके प्रशंसनीय पुत्र तथा परम धर्मात्मा हो। शारीरिक बल, शूरता, शास्त्रज्ञान, मानसिक बल, पराक्रम, उत्तम दक्षता, तेज, क्षमा, धैर्य, स्थिरता, विनय तथा अन्य बहुत-से सुन्दर गुण केवल तुम्हींमें एक साथ विद्यमान हैं, इसमें संशय नहीं है।

वत्स ! तुमसा सच्चा सेवक ही ऐसी बात कह सकता है। उन निखिलेश्वरीने आशीर्वाद दिया- तुम बल, वीर्य, तेज, सहनशक्ति, धृतिमें विश्वमें अद्वितीय रहो। श्रीराम-चरणानुराग तुम्हारे अनुग्रहसे प्राणियोंको प्राप्त हो।

देवि। यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं इन समस्त राक्षसियोंको, जो पहले आपको बहुत डराती- धमकाती रही हैं, मार डालना चाहता हूँ। ये सब-की-सब विकराल, विकट आकारवाली, क्रूर और अत्यन्त दारुण हैं। इनके नेत्रों और केशोंसे भी क्रूरता टपकती है। मैं तरह-तरहके आघातोंद्वारा इन सबका वध कर डालना चाहता हूँ।

तब सीता बोली- कपिश्रेष्ठ। ये बेचारी राजाके आश्रयमें रहनेके कारण पराधीन थीं। दूसरोंकी आज्ञासे ही सब कुछ करती थी, अत: स्वामीकी आज्ञाका पालन करनेवाली इन दासियोंपर कौन क्रोध करेगा ? मेरा भाग्य ही अच्छा नहीं था तथा मेरे पूर्वजन्मके दुष्कर्म अपना फल देने लगे थे, इसीसे मुझे यह सब कष्ट प्राप्त हुआ है; क्योंकि सभी प्राणी अपने किये हुए शुभाशुभ कर्मोंका ही फल भोगते हैं, अत: महाबाहो। तुम इन्हें मारनेकी बात न कहो। मेरे लिये दैवका ही ऐसा विधान था।

मुझे अपने पूर्वकर्मजनित दशाके योगसे यह सारा दु:ख निश्चितरूपसे भोगना ही था; इसलिये रावणकी दासियोंका यदि कुछ अपराध हो तो भी उसे मैं क्षमा करती हूँ; क्योंकि इनके प्रति दयाके उद्रेकसे मैं दुर्बल हो रही हूँ।

श्रेष्ठ पुरुष दूसरेकी बुराई करनेवाले पापियोंके पापकर्मको नहीं अपनाते हैं- बदलेमें उनके साथ स्वयं भी पापपूर्ण बर्ताव नहीं करना चाहते हैं, अत: अपनी प्रतिज्ञा एवं सदाचारकी रक्षा ही करनी चाहिये; क्योंकि साधुपुरुष अपने उत्तम चरित्रसे ही विभूषित होते हैं। सदाचार ही उनका आभूषण है।

श्रेष्ठ पुरुषको चाहिये कि कोई पापी हों या पुण्यात्मा अथवा वे वधके योग्य अपराध करनेवाले ही क्यों न हों, उन सबपर दया करें; क्योंकि ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है, जिससे कभी अपराध होता ही न हो।

जो लोगोंकी हिंसामें ही रमते और सदा पापका ही आचरण करते हैं, उन क्रूर स्वभाववाले पापियोंका भी कभी अमङ्गल नहीं करना चाहिये। सीता बोलीं- मैं अपने भक्तवत्सल स्वामीका दर्शन करना चाहती हूँ।

अम्ब। आप श्रीरामभार्याके अनुरूप ही ये वचन हैं। हनुमानने पुन: चरण-वन्दना की- मैं अपने स्वामीके समीप जानाचाहता हूँ, आप कोई सन्देश देंगी ?

तब त्रिजटा ने सीता से कहा- हे मिथिलेशकुमारी, बधाई हो। हे विध्वंस की रात्रि उत्पात समाप्त हुआ। सूर्यवंश के राजा प्रकाशित

हुये और अपनी पत्नी के लिए प्रभात हुआ। अब तुम जिनकी हो उनके पास जाओ, अपना क्या जोर हैं पराये पर। हम तो दीपक हैं हमारा आदर ही क्या जब दिन उग आता है तो दीपक का क्या महत्व है। हे देवि, उस दिन अशोक वाटिका में तुमने चिता रचायी थी। पर मैंने तुम्हारे आदेश की अवहेलना कर आग नहीं सुलगायी थी। मुझे इसकी क्षमा दे देना जो पीड़ा मैंने तुम्हें पहचानी थी। तुम बड़ी आदमिन हो, इससे कहती हूँ जो मुँह में आयी। जो तुम्हारे साथ रात-दिन दु:ख में रहे हैं उन्हें कभी सुख में मत भूल जाना।

आप सभी सानुज श्रीराघवेन्द्रका दर्शन करेंगी। पवनकुमारने प्रणिपात किया और लौटे।

वहाँसे लौटते ही कपिवर हनुमानजीने श्रीरामको सीताका सन्देश सुनाया।

वे शोकमें डूबी रहती हैं। उनके नेत्र आँसुओंसे भरे हुए हैं। आपकी विजयका समाचार सुनकर वे मिथिलेशकुमारी आपका दर्शन करना चाहती हैं।

जानकीको ले आओ। विभीषण श्रीहनुमानजीके साथ ही आये थे। उनको यह आदेश देते हुए श्रीरामका स्वर शिथिल था। उनके कमललोचन भर आये थे। उनके भीतर एक मनोमन्थन चल रहा था- जनकनन्दिनी बहुत अधिक कष्ट पा चुकी हैं, उन्हें और क्लेश कैसे दिया जा सकता है वे सर्वथा निर्दोष हैं, उनका त्याग कर देना किसी प्रकार उचित नहीं है; किंतु उनको स्वीकार करनेमें लोकापवाद है। अब राम व्यक्ति नहीं रहा। अपने ही व्यक्तित्वको लेकर विचार करनेका इसे अधिकार नहीं है। अभी अयोध्या चलकर पूर्वजोंका सिंहासन स्वीकार करना होगा इसे। प्रजा तो शासकका अनुवर्तन करती है। लोक-रुचि छिद्रान्वेषी है। अत: अब कर्तव्य ?

विभीषण प्रणाम करके चले गये। देर तक श्रीराम सिर झुकाये सोचते रहे। लक्ष्मण, सुग्रीव किसीमें भी कुछ बोलने-पूछनेका साहस नहीं था। इतना गम्भीर उन्होंने श्रीरामको कभी नहीं देखा था। लेकिन कुछ देरमें जब उन रघुवंश-विभूषणने सिर उठाया, अपने नेत्र पोछ लिये। उनके मुखपर दृढ़ निर्णयकी आभा आ चुकी थी।

तब श्रीराम विभीषणसे बोले- तुम सीताको मस्तकपरसे स्नान कराकर दिव्य अनुराग तथा दिव्य आभूषणोंसे विभूषित करके शीघ्र मेरे पास ले आओ।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर विभीषण बड़ी उतावलीके साथ अन्त:पुरमें गये और पहले अपनी स्त्रियोंको भेजकर उन्होंने सीताको अपने आनेकी खबर दी।

इसके बाद विभीषणने स्वयं ही जाकर सीताका दर्शन किया और मस्तकपर अञ्जलि बाँध विनीतभावसे कहा- विदेहराजकुमारी। आप स्नान करके दिव्य अङ्गराज तथा दिव्य वस्त्राभूषणोंसे भूषित होकर सवारीपर बैठिये। आपके स्वामी आपको देखना चाहते हैं।

मैं जैसी हूँ, वैसी ही अपने स्वामीके श्रीचरणोंमे उपस्थित होना चाहती हूँ। श्रीवैदेहीने विभीषणसे कहा। विभीषणको प्रथमावसर प्राप्त हुआ था उन परम श्रद्धेयाके पावन पदोंमें प्रणाम करनेका। वे राजभवनकी निपुणतमा सेविकाओंसे- महाराज्ञी मन्दोदरीकी सेवामें रहनेवाली अत्यन्त सेवा-कला- मर्मज्ञाओंसे घिरे गये थे। सेविकाओंका वह समूह अपने साथ समस्त प्रसाधनोपकरण ले गया था।

मात:। हम राक्षस हैं। आप जानती हैं कि अविनय हमारा स्वभाव है। हमें अपनी इच्छा ही पूरी करना आता है। विभीषणने हाथ जोड़कर विनम्र स्वरमें कहा- आपने बहुत दिनों तक बड़े भाईके अत्याचार सहे हैं। इस उसीके छोटे भाईके अत्याचार भी आपको एक बार सहने हैं। इसपर इसे तो अपने स्वामी रघुनाथकी अनुमति प्राप्त हो गयी है।

सेविकाओंको संकेत करके विभीषण शीघ्र वहाँसे लौट गये। उनमें एक-एक सेवाकी अनेकों मर्मज्ञा थीं। उन्होंने श्रीमैथिलीको घेर लिया। उससे अङ्ग-मार्जन करके सबोंने उष्णोदकमें अनके सुगन्धित द्रव्य डालकर स्नान कराया। वस्त्राभरण सजाये। केशोंको सुलझाया, सुगन्धित तैलसे सिञ्चित किया। उनकी वेणी बनाकर उनमें मौक्तिक लड़ियाँ लगायीं। अंगोंमें अंगराग, चरणोंमें अलक्तक, कण्ठमें पुष्पमाल्य।

अत्यन्त अनिच्छापूर्वक श्रीमैथिलीको यह सब स्वीकार करना पड़ा। उन्होंने बार-बार कहा- मेरे स्वामी जटा-वल्कलधारी तपस्वी वेशमें हैं। मुझे यह सब शोभा नहीं देता। मुझपर दया करो।

उनके ऐसा कहनेपर विदेहकुमारीने सिरसे स्नान करके सुन्दर श्रृङ्गार किया तथा बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण धारणकर वे चलनेको तैयार हो गयीं।

आप निखिलेश्वरी स्वेच्छासे लमा नहीं पधारीं। सबने अपने नवीन सम्राट्का स्वर सीख लिया था- आपने तो यहाँ अत्याचार ही सहे

हैं। हम सब राक्षसियाँ हैं। हमें सेवा करना क्या आवे। हमें अपनी कलाको, अपने करोंको कृतार्थ करनेका आज अवसर मिला है। अत: आज भी आपको हम सबका अत्याचार सहना ही है।

सूचना मिली विभीषणको सेविकाओंसे- श्रीवैदेहीको स्नान कराया जा चुका; किंतु अपने स्वामीका दर्शन करनेके पूर्व वे किसी प्रकार यहाँ मुखमें जल भी डालनेको प्रस्तुत नहीं है।

विभीषणने रत्नजटित स्वर्ण-शिविका सज्जित करा रखी थी। उसे उपस्थित किया। भगवती मैथिली उसपर आरूढ़ हुईं। बहुमूल्य कञ्चुक, उष्णोषधारी महाकाय राक्षस वेत्रहस्त शिविकाको चारों ओर से घेरकर चले। स्वयं विभीषण उनके आगे-आगे चलने लगे।

ऐसे ही समय मन्दोदरी ने आकर प्रणाम किया। उसका अंग धूल से धूसरित था और बाल बिखरे हुए थे। मन्दोदरी ने कहा, हे जनकनन्दिनी, तुम्हारे ही कारण मैं अनाथिनी बनी। सारी नगरी के साथ रावण को क्रोध की आग में जलाकर तुम आनन्द से राम से संभाषण करने जा रही हो। यह आनन्द तुम्हारा अकस्मात् ही निरानन्द में बदल जायेगा। रघुनाथ तुमको विषदृष्टि से देखेंगे। अगर मैं सती हूँ और पति के प्रति ही मेरा मन रहा हो तो मेरा यह शाप खंडित नहीं हो सकता। इतना कहकर मन्दोदरी अन्त:पुर चली गई।

तब विभीषण बहुमूल्य वस्त्रोंसे आवृत दीप्तिमती सीता देवीको शिबिकामें बिठाकर भगवान् श्रीरामके पास ले आये। उस समय बहुत-से निशाचर चारों ओरसे घेरकर उनकी रक्षा कर रहे थे।

श्रीराम नेत्र बन्द किये शिलातलपर ध्यानस्थ बैठे थे। दोनों पार्श्वोंमें लक्ष्मण और सुग्रीव शान्त खड़े थे। दूसरे वानर-यूथप भी पीछे खड़े थे। श्रीरामकी इस समयकी गम्भीरताने सबको अद्‌भुत असमञ्जसमें डाल दिया था।

माता जानकी पधार रही हैं। विभीषणने शिविका दुर्गद्वारसे बाहर रोक दी। स्वयं आगे आकर प्रणाम करके निवेदन किया।

राक्षसके घरमें बहुत दिनोंतक निवास करनेके बाद आज सीताजी आयी हैं, यह सोच उनके आगमनका समाचार सुनकर रामको एक ही समय रोष, हर्ष और दु:ख प्राप्त हुआ।

तुमने मेरा असीम उपकार किया है। श्रीरामने सिर उठाकर विभीषणकी ओर देखा। उनका स्वर इतना शुष्क था कि विभीषण चौंक गये। वे जैसे बहुत दूरसे, अत्यन्त तटस्थ बोले- उन्हें शीघ्र यहाँ ले आओ।

पवनकुमार जिन्हें अम्बा कहते थकते नहीं; जिनके रूपकी गुणोंकी सदा प्रशंसा सुनी है, जिनकी प्राप्तिके लिए इतना श्रम, इतना कठिन संघर्ष हुआ, वे श्रीवैदेही आ रही हैं तो उनके दर्शनोंकी उत्सुकता वानरोंमें उठनी ही थी। वे सब एक साथ दौड़े पड़े। शिविका-रक्षक उन्हें बेत चलाकर वारित करने लगे। इससे विपुल कोलाहल होने लगा।

तब वे विभीषण से बोले- सदा मेरी विजयके लिये तत्पर रहनेवाले सौम्य राक्षसराज। तुम विदेहकुमारीसे कहो, वे शीघ्र मेरे पास आयें।

श्रीरघुनाथकी यह बात सुनकर धर्मज्ञ विभीषणने तुरंत वहाँसे दूसरे लोगोंको हटाना प्रारम्भ किया। उनके द्वारा हटाये जाते हुए रीछों, वानरों और राक्षसोंके समुदाय अन्ततोगत्वा दूर जाकर खड़े हो गये।

विभीषण। सब वानर मेरे अपने हैं। इनका अपमान मेरा अपमान है। श्रीराम कुछ सरोष बोले- स्त्रीका सत्कार उसे पर्देमें रखना नहीं है। उसका शील, उसकी सच्चरित्रताही उसका पदार्थ है। कष्टमें युद्धमें और स्वयंवरमें पर्देका त्याग दोष नहीं है। अत: सीताको पैदल आना चाहिये। सब वानर उनका दर्शन करें।

घर, वस्त्र (कनात आदि) और चहारदीवारी आदि वस्तुएँ स्त्रीके लिये परदा नहीं हुआ करती हैं। इस तरह लोगोंको दूर हटानेके जो निष्ठुरतापूर्ण व्यवहार हैं, ये भी स्त्रीके लिये आवरण या पर्देका काम नहीं देते हैं। पतिसे प्राप्त होनेवाले सत्कार तथा नारीके अपने सदाचार- ये ही उसके लिये आवरण हैं।

विपत्तिकालमें, शारीरिक या मानसिक पीड़ाके अवसरोंपर, युद्धमें, स्वयंवरमें, यज्ञमें अथवा विवाहमें स्त्रीका दिखना या दूसरोंकी दृष्टिमें आना दोषकी बात नहीं है।

यह सीता इस समय विपत्तिमें है। मानसिक कष्टसे भी युक्त है और विशेषत: मेरे पास है; इसलिये इसका परदेके बिना सबके सामने आना दोषकी बात नहीं है।

अत: जानकी शिबिका (पालकी) छोड़कर पैदल ही मेरे पास आयें और ये सभी वानर उनका दर्शन करें।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर विभीषण बड़े विचारमें पड़ गये और विनीतभावसे सीताको उनके समीप ले आये।

श्रीरामकी भयंकर चेष्टाएँ यह सूचित कर रही थीं कि वे पत्नीकी ओरसे निरपेक्ष हो गये हैं। इसीलिये उन तीनोंने यह अनुमान किया कि रघुनाथ सीतापर अप्रसन्न-से जान पड़ते हैं।

आगे-आगे सीता थीं और पीछे विभीषण। वे लज्जासे अपने अङ्गोंमें ही सिकुड़ी जा रही थीं। इस तरह वे अपने पतिदेवके सामने उपस्थित हुई। लक्ष्मण, हनुमान, सुग्रीवादि श्रीरामके स्वर तथा बोलनेके ढंगसे सशम हो गये। विभीषणने जाकर आदेश सुनाया। उनका ऐसा श्रृङ्गार किया था राक्षसियोंने, उनको ऐसे बहुमूल्य वस्त्राभरण धारण कराये थे जैसे जनकपुरसे नववधू बनकर वे अयोध्या आयी थीं। इस वेशमें स्वामीके समीप जानेमें उन्हें और भी लज्जाका अनुभव हो रहा था। श्रीरामका दर्शन करके उनका मुखकमल खिल उठा। उनके मुखसे हर्ष-विह्वल निकला- आर्यपुत्र।

सीताका मुख अत्यन्त सौभ्यभावसे युक्त था। वे पतिको ही देवता माननेवाली थीं। उन्होंने बड़े विस्मय, हर्ष और स्नेहके साथ अपने स्वामीके सौम्य (मनोहर) मुखका दर्शन किया।

मिथिलेशकुमारी सीताको विनयपूर्वक अपने समीप खड़ी देख श्रीरामने अपना हार्दिक अभिप्राय बताना आरम्भ किया-भद्रे। समराङ्गणमें शत्रुको पराजित करके मैंने तुम्हें उसके चंगुलसे छुड़ा लिया। पुरुषार्थके द्वारा जो कुछ किया जा सकता था, वह सब मैंने किया।

आज सबने मेरा पराक्रम देख लिया। अब मेरा परिश्रम सफल हो गया और इस समय प्रतिज्ञा पूर्ण करके मैं उसके भारसे मुक्त एवं स्वतन्त्र हो गया। जब तुम आश्रममें अकेली थीं, उस समय वह चञ्चल चित्तवाला राक्षस तुम्हें हर ले गया। यह दोष मेरे ऊपर दैववश प्राप्त हुआ था, जिसका मैने मानवसाध्य पुरुषार्थके द्वारा मार्जन कर दिया।

जो पुरुष प्राप्त हुए अपमानका अपने तेज या बलसे मार्जन नहीं कर देता है, उस मन्दबुद्धि मानवके महान् पुरुषार्थसे भी क्या लाभ हुआ?

ये विभीषण दुगुर्णोसे भरे हुए अपने भाईका परित्याग करके स्वयं ही मेरे पास उपस्थित हुए थे। अबतकका किया हुआ इनका परिश्रम भी निष्फल नहीं हुआ।

इस तरह कहते हुए श्रीरामकी बातें सुनकर मृगीके समान विकसित नेत्रोंवाली सीताकी आँखोंमें आँसू भर आया।

वे अपने स्वामीकी हृदयवल्लभा थीं। उनके प्राणवल्लभ उन्हें अपने समीप देख रहे थे; परंतु लोकापवादके भयसे राजा श्रीरामका हृदय उस समय विदीर्ण हो रहा था। अपने तिरस्कारका बदला चुकानेके लिये मनुष्यका जो कर्तव्य है, वह सब मैंने अपनी मानरक्षाकी अभिलाषासे रावणका वध करके पूर्ण किया। सदाचारकी रक्षा, सब ओर फैले हुए अपवादका निवारण तथा अपने सुविख्यात वंशपर लगे हुए कलंकका परिमार्जन करनेके लिये ही यह सब मैंने किया है।

तुम्हारे चरित्रमें संदेहका अवसर उपस्थित है; फिर भी तुम मेरे सामने खड़ी हो। जैसे आँखके रोगीको दीपककी ज्योति नहीं सुहाती, उसी प्रकार आज तुम मुझे अत्यन्त अप्रिय जान पड़ती हो।

अत: जनककुमारी। तुम्हारी जहाँ इच्छा हो चली जाओ। मैं अपनी ओरसे तुम्हें अनुमति देता हूँ। भद्रे। ये दसों दिशाएँ तुम्हारे लिये खुली हैं। अब तुमसे मेरा कोई प्रयोजन नहीं है। कौन ऐसा कुलीन पुरुष होगा, जो तेजस्वी होकर भी दूसरेके घरमें रही हुई स्त्रीको, केवल इस लोभसे कि यह मेरे साथ बहुत दिनोंतक रहकर सौहार्द स्थापित कर चुकी है, मनसे भी ग्रहण कर सकेगा।

हे सीता, मेरे पास इस प्रकार मत आना, अपहरण करके रावण तुम्हें ले गया था। तुम वहाँ छ: मास रह चुकी हो। उससे लोकापवाद हो गया है और वह विश्व में प्रकट रूप से फैल गया है। लोग यह कहेंगे कि अपने सुन्दर रूप के साथ यह रावण के घर में रह गयी थी। वहाँ इसका शील-व्रत कैसे सुरक्षित रह गया होगा ? इसमें बड़ा सन्देह है। इसलिए यदि तुम कोई दिव्य करके मेरे पास आओगी, तो मैं तुम्हें स्वीकार करूँगा।

रावण तुम्हें अपनी गोदमें उठाकर ले गया और तुमपर अपनी दूषित दृष्टि डाल चुका है, ऐसी दशामें अपने कुलको महान् बताता हुआ मैं फिर तुम्हें कैसे ग्रहण कर सकता हूँ। अत: जिस उद्देश्यसे मैंने तुम्हें जीता था, वह सिद्ध हो गया- मेरे कुलके कलंकका मार्जन हो गया। अब मेरी तुम्हारे प्रति ममता या आसक्ति नहीं है; अत: तुम जहाँ जाना चाहो, जा सकती हो।

सीते। तुम्हारी इच्छा हो तो तुम शत्रुघ्न, वानरराज सुग्रीव अथाव राक्षसराज विभीषण के पास भी रह सकती हो। जहाँ तुम्हें सुख मिले, वहीं अपना मन लगाओ। सीते। तुम-जैसी दिव्यरूप सौन्दर्यसे सुशोभित मनोरम नारीको अपने घरमें स्थित देखकर रावण चिरकालतक तुमसे दूर रहनेका कष्ट नहीं सह सका होगा।

जो सदा प्रिय वचन सुननेके ही योग्य थीं, वे मानिनी सीता चिरकालके बाद मिले हुए प्रियतमके मुखसे ऐसी अप्रिय बात सुनकर उस समय हाथीकी सूँड़से आहत हुई लताके समान आँसू बहाने और रोने लगीं।

राम के ये शब्द-रूपी बाण सीता को लग गये। वह उस समय वहीं की वहीं खड़ी रह गयी। उसकी आँखों से आँसुओ की धारा बह रही थी और मन में बड़ा दु:ख उत्पन्न हो गया। जिस प्रकार कदली के पौधे पर बिजली गिर जाए, तो वह जैसे झुलस जाएगा उसी प्रकार उसे अनुभव हो गया, अर्थात् उसी प्रकार उसकी देह सन्तप्त हो उठी। अनन्तर धीरज धारण करके सीता बोली, हे जगदात्मा, हे आनन्दकन्द प्रभु, आप अखिल ब्रह्माण्डों के समूह के अन्तर्यामी हैं। हे प्रभु आपके वियोग से मैंने बहुत दिन महान दु:ख सहन किया। आज आपके चरणों की शरण में आ गयी हूँ- आपके दर्शन का संयोग प्राप्त हुआ है। मेरे पूर्व-कृत कर्म फिर भी कठिन ही गये हैं। तभी तो हे प्रभु, आप मुझे बिना मेरे किसी अपराध के तज रहे हैं। हे अखण्ड ब्रह्माण्ड के अथाह ज्ञान को रखनेवाले प्रभु, मैं आपके चरणों के ध्यान से नहीं चूक गयी हूँ। जिस प्रकार अमृत का पात्र भरकर कोई उसे पीने लग गाय हो और क्षण में वह हलाहल बन गया हो, उसी प्रकार, हे भगवान मेरे बारे में हो रहा है। जिस प्रकार सिंह की शरण में जाते हुए किसी को बीच में सियार खा डाले, अथवा गरुड के पास रक्षा के लिए जाते हुए किसी को साँप ने काटा हो, हे रघुराज, उसी प्रकार मेरी स्थिति हो गयी है, भागीरथी गंगा जैसी कोई नदी समुद्र की शरण में गयी हो, तब उसने कहा हो, तुम्हारे लिए स्थान नहीं है, उसी प्रकार हे पूर्णकाम राम, मैं आपकी दासी आपकी शरण में आ गयी हूँ और आप मुझे आश्रय देना अस्वीकार कक्षर रहे हैं।

उन वाग्बाणोंसे पीड़ित होकर वे जनककिशोरी अपने ही अङ्गोंमें विलीन-सी होने लगीं। उनके नेत्रोंसे आँसुओंका अविरल प्रवाह जारी हो गया। नेत्रोंके जलसे भीगे हुए अपने मुखको अंचलसे पोंछती हुई वे धीरे-धीरे गद्गद् वाणीमें पतिदेवसे बोलीं- वीर। आप ऐसी कठोर, अनुचित, कर्णकटु और रूखी बात मुझे क्यों सुना रहे हैं। जैसे कोई निम्न श्रेणीका पुरुष निम्नकोटिकी ही स्त्रीसे न कहने योग्य बातें भी कह डालता है, उसी तरह आप भी मुझसे कह रहे हैं। महाबाहो। आप मुझे अब जैसी समझते हैं, वैसी मैं नहीं हूँ। मुझपर विश्वास कीजिये। मैं अपने सदाचारकी ही शपथ खाकर कहती हूँ कि मैं संदेहके योग्य नहीं हूँ।

नीच श्रेणीकी स्त्रियोंका आचरण देखकर यदि आप समूची स्त्री-जातिपर ही संदेह करते हैं तो यह उचित नहीं है। यदि आपने मुझे अच्छी तरह परख लिया हो तो अपने इस संदेहको मनसे निकाल दीजिये।

प्रभो। रावणके शरीरसे जो मेरे इस शरीरका स्पर्श हो गया है, उसमें मेरी विवशता ही कारण है। मैंने स्वेच्छासे ऐसा नहीं किया था। इसमें मेरे दुर्भाग्यका ही दोष है।

जो मेरे अधीन है, वह मेरा हृदय सदा आपमें ही लगा रहता है उसपर दूसरा कोई अधिकार नहीं कर सकता; परंतु मेरे अङ्ग तो पराधीन थे। उनका यदि दूसरेसे स्पर्श हो गया तो मैं विवश अबला क्या कर सकती थी। दूसरोंको मान देनेवाले प्राणनाथ। हम दोनोंका परस्पर अनुराग सदा साथ-साथ बढ़ा है। हम सदा एक साथ रहते आये हैं। इतनेपर भी यदि आपने मुझे अच्छी तरह नहीं समझा तो मैं सदाके लिये मारी गयी। नृपश्रेष्ठ। आपने ओछे मनुष्यकी भाँति केवल रोषका ही अनुसरण करके मेरे शील-स्वभावका विचार छोड़कर केवल निम्नकोटिकी स्त्रियोंके स्वभावको ही अपने सामने रक्खा है।

सदाचारके मर्मको जाननेवाले देवता। राजा जनककी यज्ञभूमिसे आविर्भूत होनेके कारण ही मुझे जानकी कहकर पुकारा जाता है। वास्तवमें मेरी उत्पत्ति जनकसे नहीं हुई है। मैं भूतलसे प्रकट हुई हूँ। साधारण मानव-जातिसे विलक्षण हूँ- दिव्य हूँ। उसी तरह मेरा आचार-विचार भी अलौकिक एवं दिव्य है; मुझमें चारित्रिक बल विद्यमान है, परंतु आपने मेरी इन विशेषताओंको अधिक महत्व नहीं दिया- इन सबको अपने सामने नहीं रखा।

बाल्यावस्थामें आपने मेरा पाणिग्रहण किया है, इसकी ओर भी ध्यान नहीं दिया। वे ओजस्विनी फूट पड़ी- आपने हनुमानको भेजा तभी क्यों कहला नहीं दिया था कि आप इस सीताको स्वीकार नहीं करेंगे ? तभी मैं मर गयी होती। आपको समुद्रपर सेतु बनाने, संग्राम करनेका श्रम नहीं करना पड़ता।

आपके प्रति मेरे हृदयमें जो भक्ति है और मुझमें जो शील है, वह सब आपने पीछे ढकेल दिया- एक साथ ही भुला दिया।

इतना कहते-कहते सीताका गला भर आया। वे रोती और आँसू बहाती हुई दुखी एवं चिन्तामग्न होकर बैठे हुए लक्ष्मणसे गद्गद् वाणीमें बोलीं- सुमित्रानन्दन। मिथ्या कलमसे कलमित होकर मैं जीवित नहीं रह सकती।

सीताने अपने पति के मन की भावना जान गयीं। अब प्रभु जो सोचते हैं वहीं विधान करूँ और अपने चरित्र का चमत्कार दुनिया को दिखलाऊँ। अपना काल्पनिक प्रतिम्बिब अग्नि को अर्पण करूँ तथा वास्तविक सीता बन जाऊँ। यदि अग्नि मेंरी साक्षी रहीं तो मेरा यह सब कलंक मिट जायेगा। जैसे आग में जलकर सोना पहले से अधिक चमकता है।

लक्ष्मण। यदि अब भी मैं तुम्हारी कोई हूँ तो अञ्चल फैलाकर तुमसे भिक्षा माँगती हूँ। उठो, मेरी सहायता करो। उन तेजोमयीके अश्रु सूख गये। उन्होंने सौमित्रकी ओर देखा- मेरे लिये चिता प्रस्तुत कर दो। पुण्य होगा तुम्हें। मेरे पतिने सबके सम्मुख मेरा त्याग कर दिया है अत: मैं यह शरीर धारण नहीं करूँगी।

मेरे स्वामी मेरे गुणोंसे प्रसन्न नहीं है। इन्होंने भरी सभामें मेरा परित्याग कर दिया है। ऐसी दशामें मेरे लिये जो उचित मार्ग है, उसपर जानेके लिये मैं अग्निमें प्रवेश करूँगी। विदेहनन्दिनीके ऐसा कहनेपर लक्ष्मणने अमर्षके वशीभूत होकर श्रीरामकी ओर देखा (उनसे सीताका वह अपमान सहा नहीं जाता था)।

लक्ष्मण अत्यन्त व्याकुल हो गये। उन्होंने बहुत दयनीयकी भाँति अग्रजकी ओर देखा; किंतु श्रीरामने चिता बना देनेका- श्रीवैदेहीकी बात मान लेनेका संकेत कर दिया। वानर व्याकुल रुदन करने लगे। हनुमान रुष्ट होकर समुद्र तटपर जा बैठे। लेकिन लक्ष्मणके मूक अनुरोधपर विभीषणने राक्षसोंको काष्ठ लानेका संकेत कर दिया। चन्दन काष्ट आ गया तो रोते-रोते लक्ष्मणने चिता सजाकर उसमें अग्नि लगा दी।

भगवान् श्रीराम सिर झुकाये खड़े थे। उसी अवस्थामें सीताने उनकी परिक्रमा की। इसके बाद वे प्रज्ज्वलित अग्निके पास गयीं।

यदि मेरा हृदय कभी एक क्षणके लिये भी श्रीरघुनाथसे दूर न हुआ हो तो सम्पूर्ण जगत्के साक्षी अग्निदेव मेरी सब ओरसे रक्षा करें।

हे अग्निदेव इन दुनिया के अविश्वासियों को अब उत्तर तुम देना। यदि मैं मनसे पापिनी हूँ तो मुझे भस्म कर देना।

मेरा चरित्र शुद्ध है फिर भी श्रीरघुनाथ मुझे दूषित समझ रहे हैं। यदि मै सर्वथा निष्कलंक होऊँ तो सम्पूर्ण जगत्के साक्षी अग्निदेव मेरी सब ओरसे रक्षा करें। यदि मैंने मन, वाणी और क्रियाद्वारा कभी सम्पूर्ण धर्मोंके ज्ञाता श्रीरघुनाथका अतिक्रमण न किया हो तो अग्निदेव मेरी रक्षा करें। यदि भगवान सूर्य, वायु, दिशाएँ, चन्द्रमा, दिन, रात, दोनों संध्याएँ, पृथ्वी देवी तथा अन्य देवता भी मुझे शुद्ध चरित्रसे युक्त जानते हों तो अग्निदेव मेरी सब ओरसे रक्षा करें।

ऐसा कहकर विदेहराजकुमारीने अग्निदेवकी परिक्रमा की और नि:शम चित्तसे वे उस प्रज्ज्वलित अग्निमें समा गयीं।

बालकों और वृद्धोंसे भरे हुए वहाँके महान् जनसमुदायने उन दीप्तिमती मिथिलेशकुमारीको जलती आगमें प्रवेश करते देखा।

तपाये हुए नूतन सुवर्णकी-सी कान्तिवाली सीता आगमें तपाकर शुद्ध किये गये सुवर्णके आभूषणोंसे विभूषित थीं। वे सब लोगोंकेनिकट देखते-देखते उस जलती आगमें कूद पड़ीं।

जैसे यज्ञमें मन्त्रोंद्वारा संस्कार की हुई वसुधाराकी आहुति दी जाती है, उसी प्रकार दिव्य आभूषणोंसे विभूषित सीताको आगमें गिरते देख वहाँ आयी हुई सभी स्त्रियाँ चीख उठीं।

तीनों लोकोंके दिव्य प्राणी, ऋषि, देवता, गन्धर्व तथा दानवोंने भी भगवती सीताको आगमें गिरते देखा, मानो स्वर्गसे कोई देवी शापग्रस्त होकर नरकमें गिरी हो। उनके अग्निमें प्रवेश करते समय राक्षस और वानर जोर-जोरसे हाहाकार करने लगे। उनका वह अद्भुत आर्तनाद चारों ओर गूँज उठा। सर्वत्र हाहाकार मच गया। स्वर्णवर्णा, रत्नाभरणभूषिता, लोकवन्दिता वैदेहीने अग्निमें प्रवेश किया।

परन्तु यह शुद्ध और अशुद्ध की ही परीक्षा थी। उसे जगत् क्या जान सकता है ? इसलिए जानकी अग्नि में प्रवेश कर गयी और बाहर निकल आयी। लक्ष्मण मूर्छित होकर गिरे। हनुमान पहिले मूर्छित हो चुके थे। सभी वानरोंने, सुग्रीव, जाम्बवन्तने, विभीषणने, राक्षसोंने भी दोनों हाथोंसे नेत्र बन्द कर लिये थे। सब चीत्कार कर रहे थे। केवल श्रीराम स्वस्थ बैठे थे। इन लीलामयको अग्निमें छिपायी अपनी नित्य सहचरीको प्रकट करना था इस छाया-सीताको तिरोहित करके।

तभी ऐसा कुरंग देखकर लक्ष्मण मूर्च्छासे उठे और जब सुग्रीव से माँ सीता का अग्निप्रवेश सुना तो उनकी आत्मा से यह मन का दारुणक्लेष सहा नहीं गया। आँखें उनकी लाल हुयी और क्रोधकी ज्वाला भडक उठी। भृकुटी टेड़ी करके तत्काल बोले- हे रघुराज, आप मेरे स्वामी है इसलिए आज मैं आपसे कुछ नहीं कहता हूँ। लेकिन इस भीषण अग्निदेव से मुझे आज युद्ध करना है। हे अग्निदेव, यह ध्यान रहे आज तुम्हारा भला नहीं है। आज मेरी माता को लौटा दो तो तुमसे कोई शत्रुता नहीं है अन्यथा पवन की शपथ है, ब्रह्मा की शपथ है, विष्णु की शपथ है, शंकर की शपथ है, उस राम रघुवर की शपथ है मैं तुमको आज भक्षण कर लूँगा। यह पृथ्वी खण्ड-खण्ड

में टूट जायगी, आकाश रसातल में चले जायेगा, यह माँका बेटा अग्निलोक तक जाकर भी माता को ले आयेगा। पर यह पृथ्वी जो पाँच तत्त्वोंवाली है उसकी सब सृष्टि मिटायी जायगी। और आगे से चार ही तत्त्व से इस जगकी रचना रचवाई जायेगी। इतना कहकर वीर बजरंगबली अग्निकी तरफ झपट पड़े।

इसी समय विश्रवाके पुत्र यक्षराज कुबेर, पितरोंसहित यमराज, देवताओंके स्वामी सहस नेत्रधारी इन्द्र, जलके अधिपति वरूण, नित्रेत्रधारी श्रीमान वृषभध्वज महादेव तथा सम्पूर्ण जगत्के स्रष्टा ब्रह्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजी- ये सब देवता सूर्यतुल्य विमानोंद्वारा लंकापुरीमें आकर श्रीरघुनाथजीके पास गये। सभीने अञ्जलि बाँधकर कहा- सर्वेश्वरेश्वर। सर्वज्ञ। सर्वसञ्चालक। आप अपनी ही अभिन्न शक्ति भगवती सीताकी उपेक्षा क्यों कर रहे हैं ? सभी सुरोंने स्तवन किया- आप स्वयं प्रभ, आत्मतन्त्र हैं; किंतु सामान्य मनुष्यके समान श्रीजनकनन्दिनीकी उपेक्षा उचित नहीं है।

श्रीराम, आपके द्वारा रावण मारा गया। अब आप प्रसन्नतापूर्वक अपने दिव्य धाममें पधारिये। देव। आपका बल अमोघ है। आपके पराक्रम भी व्यर्थ होनेवाले नहीं हैं। आपका दर्शन अमोघ हैं। आपका स्तवन भी अमोघ है तथा आपमें भक्ति रखनेवाले मनुष्य भी इस भूमण्डलमें अमोघ ही होंगे। आप पुराणपुरुषोत्तम हैं। दिव्यरूपधारी परमात्मा हैं। जो लोग आपमें भक्ति रखेंगे, वे इस लोक और परलोकमें अपने सभी मनोरथ प्राप्त कर लेंगे।

आप सब मुझ मानव दशरथात्मजकी स्तुति क्यों कर रहे हैं ? श्रीरामने अत्यन्त समोचपूर्वक कहा।

चक्रायुध। सर्वकारण कारण। सर्ववान्तर्यामी स्वयं प्रकाश आप ही जैसे लोकोंकी रक्षाके लिये अपनी योगमायाका आश्रय लेकर कभी वाराह, कभी नृसिंह, कभी कच्छप, वामन या मत्स्य बनते हो, वैसे ही इस समय दशरथात्मज बने हो। चतुर्मुख हंस वाहन बोले- पुरुषोत्तम। अजित। सृष्टिमें आप ही सत्ता रूपसे व्याप्त हो। सृष्टिकी उत्पत्ति, पालन, लयक आश्रय आप हो। सर्व शरण, सर्वाश्रय शरणागत वत्सल। आपका स्वरूप कौन जान सकता है। आप सर्वरूप, सर्वनामा, सर्वव्यापक हो। आपका दर्शन, आपका पराक्रम अमोघ है। आप अपनी अभिन्न शक्तिका त्याग कैसे कर सकते हैं ?

ब्रह्माजीके कहे हुए इन शुभ वचनोंको सुनकर मूर्तिमान् अग्निदेव विदेहनन्दिनी सीताको पिताकी भाँति गोदमें लिये चितासे ऊपरको उठे।

तब अग्निने शरीर धारण करके वेदोंमें और जगत्में प्रसिद्ध वास्तविक श्री सीताजी का हाथ पकड़ उन्हें श्रीरामको वैसे ही समर्पित किया जैसे क्षीरसागरने विष्णुभगवान्को लक्ष्मी समर्पित की थी। वे सीताजी श्रीरामके वाम भागमें विराजित हुईं। उनकी उत्तम शोभा अत्यन्त ही सुन्दर हैं। मानो नये खिले हुए नीले कमलके पास सोनेके कमलकी कली सुशोभित हो।

उस समय लोकसाक्षी अग्निने श्रीरामसे कहा- श्रीराम। यह आपकी धर्मपत्नी विदेहराजकुमारी सीता है। इसमें कोई पाप या दोष नहीं है।

उत्तम आचारवाली इस शुभलक्षणा सतीने मन, वाणी, बुद्धि अथवा नेत्रोंद्वारा भी आपके सिवा किसी दूसरे पुरुषका आश्रय नहीं लिया। इसने सदा सदाचारपरायण आपका ही आराधन किया है।

अग्नि ने कहा, मैं पाप-पुण्य का साक्षी हूँ। जो आदमी छिपकर पाप करता है उसको भी देख लेता हूँ। मुझको कोई धोखा नहीं दे सकता। मैं तो सीता में कोई पाप का कारण नहीं देख पाता हूँ। हे राम, आज से मेरा जीवन सफल है कि मैंने सीता सती का स्पर्श किया। हे राम, तुमसे मैं यह प्रार्थना करता हूँ कि तुम सीता के दिल को न दुखाना। जानकी यदि शाप दे दे तो तुम्हारा राज्य भस्म हो जायेगा। जो भी नारी सीता का चरित्र सुनेगी उसके सारे पाप दूर हो जाएँगे और वह पवित्र हो जायेगी।

अपने बल-पराक्रमका घमंड रखनेवाले राक्षस रावणने जब इसका अपहरण किया था, उस समय यह बेचारी सती सूने आश्रममें अकेली थी- आप इसके पास नहीं थे; अत: यह वेवश थी इसका कोई वश नहीं चला।

अत: इसका भाव सर्वथा शुद्ध है। यह मिथिलेशनन्दिनी सर्वथा निष्पाप है। आप इसे सादर स्वीकार करें। मैं आपको आज्ञा देता हूँ, आप इससे कभी कोई कठोर बात न कहें।

श्रीराम। यह निष्पाप सीता तुम्हारी हैं। ये सद्वृत्ता हैं। इन्होंने मन, वाणी, कर्मसे कभी तुम्हारा अतिक्रमण नहीं किया है। सहसा चिताकी लपटें एक बार आकाश तक भभककर बुझ गयीं। चिता बिखर गयी। द्विमूर्धा सप्तजिह्वा, अंगारलोचन, लपट केश अग्निदेव लोहित वस्त्रधारिणी, श्रीसीताको लेकर प्रकट हुए। बोले- रावणकी वाटिकामें भी अनाहार रहकर इन्होंने केवल तुम्हारा चिन्तन किया है। तुम अपनेको मानव कहते हो, अत: लोकपाल हव्यवाह होनेके कारण मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ, इन्हें स्वीकार करो। इनका कभी तिरस्कार

मत करना। अग्निदेवकी यह बात सुनकर श्रीरामका मन प्रसन्न हो गया। उनके नेत्रोंमें आनन्दके आँसू छलक आये। वे थोड़ी देरतक विचारमें डूबे रहे। तदनन्तर महातेजस्वी श्रीरामने देवशिरोमणि अग्निदेवसे उनकी पूर्वोक्त बातके उत्तरमें कहा- भगवन्। लोगोंमें सीताजीकी पवित्रताका विश्वास दिलानेके लिये इनकी यह शुद्धिविषयक परीक्षा आवश्यक थी; क्योंकि शुभलक्षणा सीताको विवश होकर दीर्घकालतक रावणके अन्त:पुरमें रहना पड़ा है।

यदि मैं जनकनन्दिनीकी शुद्धिके विषयमें परीक्षा न करता तो लोग यही कहते कि दशरथपुत्र राम बड़ा ही मूर्ख और कामी है।

यह बात मैं भी जानता हूँ कि मिथिलेशनन्दिनी जनककुमारी सीताका हृदय सदा मुझमें ही लगा रहता है। मुझसे कभी अलग नहीं होता। ये सदा मेरा ही मन रखती- मेरी इच्छाके अनुसार चलती हैं।

मुझे यह भी विश्वास है कि जिसे महासागर अपनी तटभूमिको नहीं लाँघ सकता, उसी प्रकार रावण अपने ही तेजसे सुरक्षित इन विशाललोचना सीतापर अत्याचार नहीं कर सकता था।

मिथिलेशकुमारी सीता प्रज्वलित अग्निशिखाके समान दुर्धर्ष तथा दूसरेके लिये अलभ्य है। दुष्टात्मा रावण मनके द्वारा भी इनपर अत्याचार करनेमें समर्थ नहीं हो सकता था। ये सती-साध्वी देवी रावणके अन्त:पुरमें रहकर भी व्याकुलता या घबराहटमें नहीं पड़ सकती थीं; क्योंकि ये मुझसे उसी तरह अभिन्न हैं, जैसे सूर्यदेवसे उनकी प्रभा। मिथिलेशकुमारी जानकी तीनों लोकोंमें परम पवित्र हैं। जैसे मनस्वी पुरुष कीर्तिका त्याग नहीं कर सकता, उसी तरह मैं भी इन्हें नहीं छोड़ सकता। आप सभी लोकपाल मेरे हितकी ही बात कह रहे हैं और आपलोगोंका मुझपर बड़ा स्नेह है; अत: आप सभी देवताओंके हितकर वचनका मुझे अवश्य पालन करना चाहिये।

आपकी आज्ञा उचित है। प्रेमाश्रुपूर्ण दृग, गद्गद्स्वर श्रीरामने सिर झुकाया- नि:सन्देह सीतामें कल्मषलेश भी नहीं है; किंतु दीर्घकाल तक ये रावणान्त:पुरमें रही थीं। मैं इन्हें ऐसे ही स्वीकार कर लेता तो लोकापवाद इन्हें भी बहुत व्यथा देता। मैं जानता था, ये सर्वथा निष्पाप है। ये अपने तेजसे ही रक्षित हैं। रावण इनका तिरस्कार करनेमें असमर्थ था। मैं इनका त्याग नहीं कर सकता। अब तो ये आप लोकपूज्यका प्रसाद बनकर मुझे प्राप्त हुई हैं। आपकी आज्ञा मुझे स्वीकार है।

श्रीरामने आगे बढ़कर श्रीजनकनन्दिनीका कर पकड़ा। यह साक्षात् अग्निदेवकी साक्षीमें पुन: पाणिग्रहण सम्पन्न हुआ। आशीर्वाद देकर अग्नि अदृश्य हो गये। श्रीरामने वैदेहीको अपने समीप बैठा लिया।

अपयश का अँधेरा मिट गया। नई यशप्रभा प्रगट हुयी। अग्निदेव की साक्षी से सतवन्ती का सत् चमक उठा। अब बाएँ ओर वैदेही, और दाएँ ओर श्रीराम शोभायमान थे। हनुमान बड़भागी थे जो श्रीचरणोंमें बैठे थे।

हर्षविह्वल लक्ष्मण और हनुमानने एक साथ श्रीसीतारामके चरणोंमें मस्तक रखा। वानर जयघोष करते उछलने-कूदने लगे। लमामें बधाईके वाद्य बज उठे। दिशाएँ निर्मल हो गयीं। सर्वत्र व्याप्त दु:ख, शोक, व्याकुलताकी कालिमा स्वच्छ हो गयी। सुर प्रसन्न होकर सुमनवर्षा करने लगे। गगनमें गन्धर्व, किन्नर, अप्सराओंका नृत्य-वाद्य महोत्सव प्रारम्भ हो गया।

श्रीरघुनाथके कहे हुए इन शुभ वचनोंको सुनकर श्रीमहादेवजी और भी शुभतर वचन बोले-श्रीराम। रावणजनित भय और दु:ख सारे लोकोंके लिये बढ़े हुए घोर अन्ध:कारके समान था, जिसे आपने युद्धमें मिटा दिया।

हे रघुकुलके स्वामी। सुन्दर हाथोंमें श्रेष्ठ धनुष और सुन्दर बाण धारण किये हुए आप मेरी रक्षा कीजिये। आप महामोहरूपी मेघसमूहके उड़ानेके लिये प्रचण्ड पवन हैं, संशयरूपी वनके (भस्म करनेके) लिये अग्नि हैं और देवताओंको आनन्द देनेवाले है।

आप निर्गुण, सगुण, दिव्य गुणोंके धाम और परम सुन्दर हैं। भ्रमरूपी अन्धकारके नाशके लिये प्रबल प्रतापी सूर्य हैं। काम, क्रोध और मदरूपी हाथियोंके वधके लिये सिंहके समान आप इस सेवकके मनरूपी वनमें निरन्तर निवास कीजिये।

विषयकामनाओंके समूहरूपी कमलवनके नाशके लिये आप प्रबल पाला हैं, आप उदार और मनसे परे हैं। भवसागर को मथने के लिये आप मन्दराचल पर्वत हैं। आप हमारे परम भयको दूर कीजिये और हमें दुस्तर संसारसागरसे पार कीजिये।

हे श्यामसुन्दर- शरीर। हे कमलनयन। हे दीनबन्धु। हे शरणागतको दु:खसे छुड़ानेवाले। हे राजा रामचन्द्रजी। आप छोटे भाई लक्ष्मण और जानकीजीसहित निरन्तर मेरे हृदयके अंदर निवास कीजिये। आप मुनियोंको आनन्द देनेवाले, पृथ्वीमण्डलके भूषण है।

महाबली वीर। अब दुखी भरतको धीरज बँधाकर, यशस्विनी कौशल्या, कैकेयी तथा लक्ष्मणजननी सुमित्रासे मिलकर, अयोध्याका राज्य पाकर, सुहृदोंको आनन्द देकर, इक्ष्वाकु-कुलमें अपना वंश स्थापित करके, अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान कर, सर्वोत्तम यशका

उपार्जन करके तथा ब्राह्मणोंको धन देकर आपको अपने परम धाममें जाना चाहिये।

श्रीराम। देखिये, ये आपके पिता राजा दशरथ विमानपर बैठे हुए हैं। मनुष्यलोकमें ये ही आपके महायशस्वी गुरु थे। ये श्रीमान् नरेश इन्द्रलोकको प्राप्त हुए हैं। आप जैसे सुपुत्रने इन्हें तार दिया। आप भाई लक्ष्मणके साथ इन्हें नमस्कार करें।

महादेवजीकी यह बात सुनकर लक्ष्मणसहित श्रीरघुनाथने विमानमें उच्चस्थानपर बैठे हुए अपने पिताजीको प्रणाम किया।

विमानपर बैठै हुए महाराज दशरथ अपने प्राणोंसे भी प्यारे पुत्र श्रीरामको देखकर बहुत प्रसन्न हुए। राम। मैं तुमसे सच कहता हूँ, तुमसे बिलग होकर मुझे स्वर्गका सुख तथा देवताओंद्वारा प्राप्त हुआ सम्मान भी अच्छा नहीं लगता। आज तुम शत्रुओंका वध करके पूर्णमनोरथ हो गये और तुमने वनवासकी अवधि भी पूरी कर ली, यह सब देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है।

आज लक्ष्मणसहित तुमको सशकुल देखकर और हृदयसे लगाकर मैं समस्त दु:खोंसे छुटकारा पा गया हूँ। ठीक उसी तरह, जैसे चन्द्रमा कुहरेसे निकल आये हों। बेटा। जैसे अष्टावक्रने अपने धर्मात्मा पिता कहोल नामक ब्राह्मणको तार दिया था, वैसे ही तुम-जैसे महात्मा पुत्रने मेरा उद्धार कर दिया। सौम्य। आज इन देवताओंके द्वारा मुझे मालूम हुआ कि रावणका वध करनेके लिये स्वयं पुरुषोत्तम भगवान् ही तुम्हारे रूपमें अवतीर्ण हुए हैं। श्रीराम। कौशल्याका जीवन सार्थक है, जो वनसे लौटनेपर तुम-जैसे शत्रुसूदन वीर पुत्रको अपने घरमें हर्ष और उल्लासके साथ देखेंगी। भरत बड़ा ही धर्मात्मा, पवित्र और बलवान है। वह तुममें सच्चा अनुराग रखता है। मैं उसके साथ तुम्हारा शीघ्र ही मिलन देखना चाहता हूँ। सौम्य। तुमने मेरी प्रसन्नताके लिये लक्ष्मण और सीताके साथ रहते हुए वनमें चौदह वर्ष व्यतीत किये। अब तुम्हारे वनवासकी अवधि पूरी हो गयी। मेरी प्रतिज्ञा भी तुमने पूर्ण कर दी तथा संग्राममें रावणको मारकर देवताओंको भी संतुष्ट कर दिया।

लक्ष्मण। तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हें धर्म और यश प्राप्त हुआ। महाराज दशरथने लक्ष्मणकी ओर देखा- श्रीराम सदा सबके कल्याणमें लगे रहते हैं। इन्द्रादि देवता भी तुम्हारे इन अग्रजका पूजन करते हैं। ये साक्षात् परब्रह्म हैं। तुमने इनकी सेवामें लगकर मुझे पुत्रवान बनाया। मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ।

वत्से वैदेही ? अवनतमुखी पुत्रवधूसे श्रीचक्रवर्ती महाराजने कहा- श्रीरामने तुम्हारे अपयश-मार्जनके लिए यहाँ तुम्हारी उपेक्षा दिखलायी। इनकी अवज्ञा, या इनपर क्रोध मत करना। यही तुम्हारे परम देवता है।

दशरथ जब सूक्ष्म जग में चले गये तो राम दर्शन की अभिलाषा वासना मन में रह गयी। जो शरीर के बन्धन की अवस्था थी वहीं अवस्था अन्त में सूक्ष्म में रह गयी। अब उस अभिलाषा को पूरी करने उसी भावना से दशरथ वहाँ पर आये। योग दृष्टि से राम सब भेद जान गयें। पिता और पुत्र में आपस में आशिष और प्रणाम हो गया। पिता मुस्कुराते हुये बोले- हे राम अब कोई कामना शेष नहीं रह गयी है। इस रूपमाधुरी को पाकर मनकी वासना पूरी हुयी। आज मेरा जिना-मरना सफल हुआ। अब मैं अपने आपको तुममें लय करता हूँ अपनी आत्मा का राज तुम्हें बताकर। इसतरह प्रकृति प्रपंच विहीन बिंदु पूर्ण सिन्धु में लीन हुआ।

जब राजा इस प्रकार कह चुके, तब श्रीराम हाथ जोड़कर उनसे बोले- धर्मज्ञ महाराज। आप कैकेयी और भरतपर प्रसन्न हों- उन दोनोंपर कृपा करें। प्रभो। आपने जो कैकेयीसे कहा था कि मैं पुत्रसहित तेरा त्याग करता हूँ, आपका वह घोर शाप पुत्रसहित कैकेयी-का स्पर्श न करें। मेरे दु:ख से भरत दुखी हुआ है, इसलिए अब उसका वर्जन करना आपके लिए उचित नहीं है। देवताओं के सम्मुख भरत को वर दें जिससे मेरे मन को सन्तोष और तृप्ति मिले। राम के कहने पर राजा ने यह विधान दिया कि भरत का श्राद्ध मेरे लिए अमृत के समान होगा। भरत के प्रति वरदान सभी देवताओं ने सुना।

तब श्रीरामसे बहुत अच्छा कहकर महाराज दशरथने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और हाथ जोड़े खड़े हुए लक्ष्मणको हृदयसे लगाकर फिर यह बात कही- वत्स। तुमने विदहनन्दिनी सीताके साथ श्रीरामकी भक्तिपूर्वक सेवा करके मुझे बहुत प्रसन्न किया है। तुम्हें धर्मका फल प्राप्त हुआ है। धर्मज्ञ। भविष्यमें भी तुम्हें धर्मका फल प्राप्त होगा और भूमण्डलमें महान् यशकी उपलब्धि होगी। श्रीरामकी प्रसन्नता-से तुम्हें उत्तम स्वर्ग और महत्त्व प्राप्त होगा।

बेटी। तुमने अपने विशुद्ध चरित्रको परिलक्षित करानेके लिये जो अग्निप्रवेशरूप कार्य किया है, यह दूसरी स्त्रियोंके लिये अत्यन्त दुष्कर है। तुम्हारा यह कर्म अन्य नारियोंके यशको ढक लेगा।

पति-सेवाके सम्बन्धमें भले ही तुम्हें कोई उपदेश देनेकी आवश्यकता न हो; किंतु इतना तो मुझे अवश्य बता देना चाहिये कि ये

श्रीराम ही तुम्हारे सबसे बड़े देवता हैं।

इस प्रकार दोनों पुत्रों और सीताको आदेश एवं उपदेश देकर रघुवंशी राजा दशरथ विमानके द्वारा इन्द्रलोकको चले गये।

महाराज दशरथके लौट जानेपर देवोंके अधिपति इन्द्रने अत्यन्त प्रसन्न हो हाथ जोड़े श्रीरघुनाथसे कहा- नरश्रेष्ठ श्रीराम। तुम्हें जो हमारा दर्शन हुआ, वह व्यर्थ नहीं जाना चाहिये और हम तुमपर बहुत प्रसन्न हैं। इसलिये तुम्हारे मनमें जो इच्छा हो, वह मुझसे कहो।

तब श्रीरामने कहा-यदि आप मुझपर प्रसन्न है तो मेरी एक प्रार्थना है। मेरे लिये युद्धमें पराक्रम करके जो यमलोकको चले गये हैं, वे सब वानर नया जीवन पाकर उठ खड़े हों। मानद। जो वानर मेरे लिये अपने स्त्री-पुत्रोंसे बिछुड़ गये हैं, उन सबको मैं प्रसन्नचित्त देखना चाहता हूँ। पुरंदर। वे पराक्रमी और शूरवीर थे तथा मृत्युको कुछ भी नहीं गिनते थे। उन्होंने मेरे लिये बड़ा प्रयत्न किया हैं और अन्तमें कालके गालमें चले गये हैं। आप उन सबको जीवित कर दें।

उनको मैंने न तो धन-दौलत दी और न जमीन-जायदाद, वे अपने बाल-बच्चों को पीछे छोड कर मेरे संग चले आए। चुरायी हुई सीता को पाकर मैं सुखी हुआ। तब वानरों की स्त्रियाँ और उनके बच्चे क्यों दुखी हो। जब रघुनाथ ने इन्द्र से इतना कहा तो इन्द्र ने हाथ जोड़कर कहा, तुम स्वयं नारायणा हो, संसार के नाथ हो, मार कर इन तीनों लोकों को फिर से जिला सकते हो। तुम स्वयं अपने बारे में जानते हो, तुमको कौन जान सकता है, तुम्हारा नाम जप करने पर मरनेवाला भी जी उठता है। स्वयं ही तुमने वर माँगा अब इसको कौन अन्यथा कर सकता है।

जो वानर सदा मेरा प्रिय करनेमें लगे रहते थे और मौतको कुछ नहीं समझते थे, वे सब वानर आपकी कृपासे फिर मुझे मिले यह मैं चाहता हूँ। मैं उन वानर, लंगूर और भालुओंको निरोग, व्रणहीन और बल-पौरुषसे सम्पन्न देखना चाहता हूँ।

ये वानर जिस स्थानपर रहें, वहाँ असमय भी फल-मूल और पुष्पोंकी भरमार रहे तथा निर्मल जलवाली नदियाँ बहती रहें।

तब इन्द्रने वर दिया- जो युद्धमें मारे गये हैं और राक्षसोंने जिनके मस्तक तथा भुजाएँ काट डाली हैं, वे सब वानर, भालू और लंगूर जी उठें। नींद टूटनेपर सोकर उठे हुए मनुष्योंकी भाँति वे सभी वानर निरोग, व्रणहीन तथा बल-पौरुषसे सम्पन्न होकर उठ बैठेंगे। सभी परमानन्दसे युक्त हो अपने सुहृदों, बान्धवों, जातिभाइयों तथा स्वजनोंसे मिलेंगे। महाधनुर्धर वीर। ये वानर जहाँ रहेंगे, वहाँ असमयमें भी वृक्ष फल-फूलोंसे लद जायँगे और नदियाँ जलसे भरी रहेंगी।

इन्द्र की आज्ञा से मेघ अमृत बरसाने लग गया, मृत वानरों पर सुधावृष्टि हुई। कटे हाथ, कटे पैर सभी जुड़ गये, चारों द्वारों पर मरी पड़ी हुई वानर सेना बदन झटक कर उठ खड़ी हुई। जो वानर राक्षसों से लड़ता हुआ मरा था वह उठते ही युद्ध समझकर मार-मार करने लग जाता। कोई तो हाँक लगाता कि कुम्भकर्ण को मार डालो तो कोई चिल्लाने लगता, इन्द्रजीत को मार डालो। देवान्तक, नरान्तक, त्रिशिरा को मार डालो, परनारी चुराने वाले रावण को झट मार डालो। सभी रणभूमि पर बावले से हो गये, इष्टमित्र उनको बाहों में बाँधे समझाने लग गये। किसको मार रहे हो, किसको काट रहे हो, युद्ध भी कैसा है, राक्षसों का नाश हो गया है, राम शत्रु पर विजय पा चुके हैं। देखो श्रीराम के बाएँ सुन्दरी जानकी बैठी हैं, देवताओं को देखो, यहीं स्वर्गपुरी बन गयी है। जब वानरों ने यह हर्षभरी बात सुनी तो सभी जाकर राम के सम्मुख सिर झुका कर खड़े हो गये। त्रिभुवन में तुम्हारे समान किसी को नहीं देख पाता हूँ। तुम्हारे प्रसाद से मर कर भी प्राण मिल गया। युग युग में तुम जैसा ही प्रभु मिले, तुमको सामने बिठा कर सदा तुम्हारी सेवा करता रहूँ। जितने बानर मर गये सभी को प्राण मिल गये। तब राम ने देवताओं की उपस्थिति में पूछा।

राम ने कहा, देवराज, तुमसे पूछता हूँ। एक बात में मुझे बड़ा सन्देह है। दोनों दलों में काफी युद्ध हुआ राक्षस-वानर दोनों के सैन्य गिरे। तुमने सभी के ऊपर अमृत वर्षण किया। असंख्य वानर प्राण पाकर उठ खड़े हुए। अत: तुमसे यह पूछता हूँ कि किस कारण राक्षसों को प्राण नहीं मिले।

इन्द्र ने कहा, हे कमल-लोचन राम, राक्षसों को क्यों प्राण नहीं मिला इसका विवरण सुनो। रावण को मारो कहकर वानर मर गये इसलिए किस नाम के बल पर उनको मुक्ति मिल सकती थी। राम को मारो यह शब्द कहकर राक्षस मरे, राम का नाम लेकर मरने के कारण वे सीधे स्वर्ग गये। श्रीराम का नाम लेकर जिसके प्राण चले जाते हैं वह अनायास ही मुक्त होकर बैकुंठ चला जाता है। राम नाम के गुण से वे मुक्त हो गये हैं। जब वे उद्धार हो चुके हैं तो फिर जिएँगे कैसे।

इन्द्रके इस प्रकार कहनेपर वे सब श्रेष्ठ वानर जिनके सब अङ्ग पहले घावोंसे भरे थे, उस समय घावरहित हो गये और सभी सोकर जगे

हुएकी भाँति सहसा उठकर खड़े हो गये।

समस्त श्रेष्ठ देवता अत्यन्त प्रसन्न हो लक्ष्मणसहित श्रीरामकी स्तुति करके बोले- राजन्। अब आप यहाँसे अयोध्याको पधारें और समस्त वानरोंको बिदा कर दें। ये मिथिलेशकुमारी यशस्विनी सीता सदा आपमें अनुराग रखती हैं। इन्हें सान्त्वना दीजिये और भाई भरत आपके शोकसे पीड़ित हो व्रत कर रहे हैं, अत: उनसे जाकर मिलिये।

परंतप। आप महात्मा शत्रुघ्नसे और समस्त माताओंसे भी जाकर मिलें, अपना अभिषेक करावें और पुरवासियोंको हर्ष प्रदान करें।

श्रीराम और लक्ष्मणसे ऐसा कहकर देवराज इन्द्र सब देवताओंके साथ सूर्यतुल्य तेजस्वी विमानोंद्वारा बड़ी प्रसन्नताके साथ अपने लोकको चले गये।

सीताके साथ राम बैठे थे। दोनों अपने पूर्वदु:ख का स्मरण कर विषादमग्न हो गये।

श्रीरामने कहा, प्रिये, तुम्हारे विरह में इतना क्लेश मिला कि कहने में भी कष्ट हो रहा है। तुम ही धन हो, तुम ही प्राण हो और तुम ही जीवन हो। तुमसे बिछुड़कर तीनों लोकों को मैं सूना देखने लगा। दस महीने तक तुम्हारे मुख के अदर्शन से मैं अन्धकार में डूबा हुआ था। सुधाकर (चन्द्र) दिवाकर (सूर्य) सा लगता था और उत्ताप के डर से मैं उसके सम्मुख नहीं जाता था। भौरों की झंकार और कोयल की कूकें लगती थी मानों नागिन ने डस लिया हो। सागर को बाँधने के बाद जानकी मिल जायेगी इसी आशा में इतने दिनों तक मैंने अपने प्राण बचा रखे। सीता देवी ने इससे पूर्व जितना दु:ख भोगा था, उसका वर्णन वे राम से हर्षमग्न होकर करने लगीं। दोनों के मन में जितनी पीड़ा थी वह सब परस्पर बातचीत से दूर हो गई।

३१) श्रीरामका अयोध्या लौटना- विभीषण हाथ जोड़े आगे आकर खड़े हो गये- आप सानुज सुग्रीवादि सहित नगरमें पधारें। स्नान करके आभरण धारण करें। श्रीराम विभीषण से बोले- मेरे लिये तो इस समय सत्यका आश्रय लेनेवाले धर्मात्मा महाबाहु भरत बहुत कष्ट सह रहे हैं। वे सुकुमार हैं और सुख पानेके योग्य हैं। भरतकी दशा याद करके मुझे एक-एक पल कल्पके समान बीत रहा है। तपस्वीके वेषमें कृश दुबले शरीरसे निरन्तर मेरा नाम जप कर रहे हैं। हे सखा। वही उपाय करो जिससे मैं जल्दी-से-जल्दी उन्हें देख सकूँ। मैं तुमसे निहोरा अनुरोध करता हूँ। यदि अवधि बीत जानेपर जाता हूँ तो भाईको जीता न पाऊँगा। छोटे भाई भरतकी प्रीतिका स्मरण करके प्रभुका शरीर बार-बार पुलकित हो रहा हैं।

श्रीरामने फिर कहा- हे विभीषण। तुम कल्पभर राज्य करना, मनमें मेरा निरन्तर स्मरण करते रहना। फिर तुम मेरे उस धामको पा जाओगे जहाँ सब संत जाते हैं।

उन धर्मपरायण कैकेयीकुमार भरतसे मिले बिना न तो मुझे स्नान अच्छा लगता है, न वस्त्र और आभूषणोंको धारण करना ही।

अब तो तुम इस बातकी ओर ध्यान दो कि हम किस तरह जल्दी-से-जल्दी अयोध्यापुरीको लौट सकेंगे; क्योंकि वहाँतक पैदल यात्रा करनेवालेके लिये यह मार्ग बहुत ही दुर्गम है।

अभी वनवासकी अवधि व्यतीत नहीं हुई है। श्रीरामने स्नेहपूर्वक कहा- तुम सुग्रीवादिका सत्कार करो। मैं भाई भरतको स्नान कराके, उनकी जटाओंको सुलझाकर ही शिर:स्नान करूँगा। उनसे मिले बिना एक-एक क्षण युगोंके समान व्यतीत हो रहा है।

मेरे भक्त जहाँ निवास करते हैं, वह स्थान सदा पावन ही होता है। जो नगरी लंका कहाती है, मैंने वह तुम्हें दान में दी है। हे विभीषण, सुनो, मैं सत्य कहता हूँ, वहाँ हम नहीं आ सकते। जिस घर विशुद्ध मन से कन्या-दान किया हो, उस घर का अन्न नहीं ग्रहण कर सकते। किसी सत्पात्र सुयोग्य व्यक्ति को गोदान दिया हो, तो उस गाय का दूध नहीं पी सकते। इस प्रकार मैंने तुम्हें लंका दान में दी है, इसलिए मैं नहीं आ सकूँगा। फिर बिना भरत से मिले मुझसे नगर में प्रवेश नहीं किया जाएगा।

आप मुझपर अनुग्रह करें। लमाकी प्रजाको भी अपनाकर पवित्र कर दें। विभीषणने पुन: प्रार्थना की- प्रात:काल पुष्पक विमानके द्वारा अयोध्या पधारें।

तुमने भली प्रकार मेरा सत्कार किया। मेरा मन भरतके समीप है। उनके बिना मैं कोई भोग स्वीकार नहीं कर सकता। श्रीरामने नगरमें जाना स्वीकार नहीं किया। लक्ष्मण और सीताके साथ वे उस युद्ध-स्थलीमें ही रात्रिको रहे। हनुमान उनके समीप रहे। बहुत आग्रह करके विभीषण सुग्रीवादि वानर-यूथपोंको नगरमें ले गये। उनका उत्तम आतिथ्य किया।

विभीषण। बुरा मत मानना कि मैंने तुम्हारी उपेक्षा की। प्रात:काल पद-वन्दनाके लिए आते ही श्रीरामने विभीषणसे कहा- मेरी माताएँ, गुरुदेव, सुहृद सब दु:खी हैं। मैं उन्हें देखनेको आतुर हूँ। अत: विमान शीघ्र उपस्थित करो।

तब विभीषण बोले- मेरे यहाँ मेरे बड़े भाई कुबेरका सूर्यतुल्य तेजस्वी पुष्पकविमान मौजूद है, जिसे महाबली रावणने संग्राममें कुबेरको हराकर छीन लिया था। वह इच्छानुसार चलनेवाला, दिव्य एवं उत्तम विमान मैंने यहाँ आपकी सेवामें रखा है।

मेघ-जैसा दिखायी देनेवाला वह दिव्य विमान यहाँ विद्यमान है, जिसके द्वारा निश्चित होकर आप अयोध्यापुरीको जा सकेंगे।

सम्पूर्ण स्वर्ण-निर्मित विमान उपस्थित करके विभीषणने निवेदन किया- दशग्रीवने इसे यक्षराज कुबेर से छीना था। अब यह आपका है। आप इसे स्वीकार करके मुझे कृतार्थ करें।

धनाधीशका स्वस्त है इसपर। श्रीरामने विमानको देखा- यह उनकी सेवामें रहे, उचित यही है। आवश्यकता होनेपर मैं इसका उपयोग कर लिया करूँगा। उन लोकपालको इसमें आपत्ति नहीं होनी है।

अद्‌भुत विमान था पुष्पक। उसके लिए किसी चालककी आवश्यकता नहीं थी। जिसके अधिकारमें हो, उसकी इच्छानुसार वह कहीं भी जा सकता था। उसे बिना किसी आरोहीके कहीं भी भेजा या कहींसे भी बुलाया जा सकता था। वह अपने आरोहीकी इच्छानुसार केवल संकल्पसे गगनमें स्थिर रह सकता था, मन्द गतिसे चल सकता था और शब्दसे कई गुना तीव्र भी चल सकता था। वह पृथ्वीपर, जलपर, या पर्वत-शिखरपर भी उतर सकता था।

पुष्पकके भीतर सदा सुखद वातावरण रहता था। शीत, ताप, ओले, वर्षा, अन्धड़का उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। वह बहुत ऊपर ग्रहान्तरोंमें भी जा सकता था और पृथ्वीके बहुत पाससे उड़ सकता था। नगरमें राजपथपर भी उसे उतारा जा सकता था।

पुष्पकमें वैदूर्य मणिकी वेदियाँ बैठनेके लिए बनी थीं। यह समूचा विमान केवल संकल्प करनेसे छोटा अथवा बड़ा किया जा सकता था। छोटा इतना कि एक ही आरोही बैठे। बड़ा इतना कि विशाल सेना उसमें आ जाय। यद्यपि वह यात्री- विमान था, उसे क्षणार्धमें युद्ध-विमान बनाया जा सकता था। उसपर किसी अस्त्र-शस्त्रका प्रभाव नहीं पड़ता था।

पुष्पकमें ऐसी ध्वजाएँ लगी थीं कि वे वृक्ष, पर्वतादिके मध्यसे विमानके जानेपर भी उलझती या टूटती नहीं थी। विमानके आरोही भीतर वैसे ही चल-फिर सकते थे, जैसे भूमिपर हों। विमानके उतरते या उड़ते समय भी कोई झटका नहीं लगता था।

सम्पूर्ण विमान बहुत सुसज्ज था। उसमें प्रकाशको इच्छानुसार रखा जा सकता था। विमान उड़ता था, तब बाहर केवल एक मधुर संगीत-लहरी हंसोंके कूजने समान गूँजती थी। विमानके भीतर तो विमानकी गति, शब्दका पता भी नहीं चलता था।

निधिपति कुबेरका यह विमान असंख्य आरोहियोंको महीनों अन्तरिक्षकी यात्रा करा सकता था। उसमें सभी आरोहियोंकी सुखसुविधाकी पूरी सामग्री सदा विद्यमान रहती थी। उसमें बैठने अथवा शयन करनेकी सब सुविधाएँ थीं।

सबसे बड़ी विशेषता यह कि पुष्पक दिव्य विमान था। वह स्वयं आदेश समझ सकता था एक जीवित बुद्धिमान मनुष्यके समान। उसे दीर्घकाल तक स्मरण रख सकता था और समयपर उसके अनुसार कार्य करता था।

श्रीराम। यदि मुझे आप अपना कृपापात्र समझते हैं, मुझमें कुछ गुण देखते या मानते हैं और मेरे प्रति आपका सौहार्द है तो अभी भाई लक्ष्मण तथा पत्नी सीताजीके साथ कुछ दिन यहीं विराजिये। मैं सम्पूर्ण मनोवाच्छित वस्तुओंद्वारा आपका सत्कार करना चाहूँगा। मेरे उस सत्कारको ग्रहण कर लेनेके पश्चात् अयोध्याको लौटे।

हे रघुनन्दन। मैं प्रसन्नतापूर्वक आपका सत्कार करूँगा। मेरे द्वारा प्रस्तुत किये गये उस सत्कारको आपके सुहृदों तथा सेनाओंके साथ ग्रहण करें। हे रघुवीर। मैं केवल प्रेम, सम्मान और सौहार्दके कारण ही आपसे यह प्रार्थना कर रहा हूँ। आपको प्रसन्न करना चाहता हूँ। मैं आपका सेवक हूँ। इसलिये आपसे विनय करता हूँ।

तब श्रीराम बोले- हे राक्षसेश्वर। तुम्हारी इस बातको मैं निश्चय ही अस्वीकार नहीं कर सकता हूँ; परंतु इस समय मेरा मन अपने उन भाई भरतको देखनेके लिये उद्यत हो रहा है, जो मुझे लौटा ले जानेके लिये चित्रकूटतक आये थे और मेरे चरणोंमें सिर झुकाकर याचना करनेपर भी जिनकी बात मैंने नहीं मानी थी।

उनके सिवा माता कौशल्या, सुमित्रा, यशस्विनी कैकेयी, मित्रवर गुह और नगर एवं जनपदके लोगोंको देखनेके लिये भी मुझे बड़ी उत्कण्ठा हो रही है। हे सौम्य विभीषण। अब तो तुम मुझे जानेकी ही अनुमति दो। मैं तुम्हारेद्वारा बहुत सम्मानित हो चुका हूँ। मेरे इस

हठके कारण मुझपर क्रोध न करना। इसके लिये मैं तुमसे बार-बार प्रार्थना करता हूँ।

राक्षसराज। अब शीघ्र मेरे लिये पुष्पकविमानको यहाँ मँगाओ। जब मेरा यहाँ कार्य समाप्त हो गया, तब यहाँ ठहरना मेरे लिये कैसे ठीक हो सकता है ?

श्रीरामके ऐसा कहनेपर राक्षसराज विभीषणने बड़ी उतावलीके साथ उस सूर्यतुल्य तेजस्वी विमानका आवाहन किया।

वह विश्वकर्माका बनाया हुआ विमान सुमेरू-शिखरके समान ऊँचा तथा मोती और चाँदीसे सुसज्जित बड़े-बड़े कमरोंसे विभूषित था। उसका मनके समान वेग था और उसकी गति कहीं रुकती नहीं थी। वह विमान सेवामें उपस्थित हुआ। विभीषण श्रीरामको उसके आनेकी सूचना देकर वहाँ खड़े हो गये।

राक्षसराज विभीषणने दोनों हाथ जोड़कर बड़ी विनय और उतावलीके साथ श्रीरघुनाथसे पूछा- प्रभो। अब मैं क्या सेवा करूँ ?

तब श्रीराम बोले- विभीषण। इन सारे वानरोंने युद्धमें बड़ा यत्न एवं परिश्रम किया है; अत: तुम नाना प्रकारके रत्न और धन आदिके द्वारा इन सबका सत्कार करो।

ये सभी वानर इस समय अपना काम पूरा कर चुके हैं, अत: इन्हें रत्न और धन आदि देकर तुम इनके इस कर्मको सफल करो।

तुम कृतज्ञ होकर जब इनका इस प्रकार सम्मान और अभिनन्दन करोगे, तब ये वानरयूथपति बहुत संतुष्ट होंगे।

ऐसा करनेसे सब लोग यह जानेंगे कि विभीषण उचित अवसरपर धनका त्याग एवं दान करते हैं, यथासमय न्यायोचित रीतिसे धन और रत्न आदिका संग्रह करते हैं, दयालु हैं और जितेन्द्रिय हैं; इसलिये तुम्हें ऐसा करनेके लिये समझा रहा हूँ।

हे नरेश्वर। जो राजा सेवकोंमें प्रेम उत्पन्न करनेवाले दानमान आदि सब गुणोंसे रहित होता है, उसे युद्धके अवसरपर उद्विग्न हुई सेना छोड़कर चल देती है, वह समझती है कि यह व्यर्थ ही हमारा वध करा रहा है- हमारे भरण-पोषणका या योग-क्षेमकी चिन्ता इसे बिल्कुल नहीं है। श्रीरामके ऐसा कहनेपर विभीषणने उन सब वानरोंको रत्न और धन देकर सभीका पूजन सत्कार किया।

जिनको मुनि ध्यानमें भी नहीं पाते, जिन्हें वेद नेति-नेति कहते हैं, वे ही कृपाके समुद्र श्रीरामजी वानरोंके साथ अनेकों प्रकारके विनोद कर रहे हैं।

शिवजी कहते हैं- हे भवानी। अनेकों प्रकारके योग, जप, दान, तप, यज्ञ, व्रत और नियम करनेपर भी श्रीरामजी वैसी कृपा नहीं करते जैसी अनन्य प्रेम होनेपर करते हैं।

वानरेन्द्र। अब सब वानरोंको अपने स्थानोंपर जानेकी आज्ञा दे दें। श्रीरामने विमान आ जानेपर सुग्रीवसे कहा- इन्हें अपनी स्त्री-पुत्र-परिवारसे पृथक हुए पर्याप्त समय हो गया।

मैं आप सबका बहुत उपकृत हूँ। आप सबकी सम्मिलित सहायतासे ही दशग्रीव मारा गया और विभीषण लमाका राज्य पा सके। श्रीरामने समस्त वानर-सेनाको सम्बोधित किया- अब सब लोग अपने आवास पधारें। किसीको भी कोई कष्ट कभी हो तो मुझे सूचित करनेमें संकोच न करे। अयोध्या आप सबकी है। राम आप सबका है।

विदा होनेका समय बहुत विषम होता है यदि किसी प्रियसे विदा होना हो। श्रीराम प्राणोंके प्राण। ऐसा संकोचशील, स्नेहमय, परमोदार स्वामी सृष्टिमें कहाँ सुलभ है जो प्रत्येक पल सेवकोंको सम्हालता रहे। लमाके दारुण युद्धमें भी जिन्होंने स्वयं आगे रहकर सबकी रक्षा की, सबकी सुविधाको आगे रखा, आहत एवं मृत वानरोंको भी स्वस्थ, सजीव बनाया, उन श्रीरामसे विदा-उनका वियोग- वानर व्याकुल हो गये; किंन्तु विदा तो होना ही था। सब श्रीसीतारामकी चरण-वन्दना करके जाने लगे।

किसीको नहीं लगा कि श्रीराम उससे व्यक्तिगत रूपसे नहीं मिले या उससे बात नहीं की। वे सर्वसमर्थ सबसे मिले। सबका स्वास्थ्य पूछा। सबको कर-स्पर्शसे सन्तुष्ट करके भेजा उन्होंने।

उन वानरयूथपतियोंको रत्न और धनसे पूजित हुआ देख उस समय भगवान श्रीराम लजाती हुई मनस्विनी विदेहकुमारीको अङ्गमें लेकर पराक्रमी धनुर्धर बन्धु लक्ष्मणके साथ उस उत्तम विमानपर आरूढ़ हुए।

विमानपर बैठकर समस्त वानरोंका समादर करते हुए उन श्रीरामने विभीषणसहित महापराक्रमी सुग्रीवसे कहा- सखे सुग्रीव। एक हितैषी एवं प्रेमी मित्रको जो काम करना चाहिये, वह सब तुमने पूरा-पूरा कर दिखाया; क्योंकि तुम अधर्मसे डरनेवाले हो।

हे वानरराज। अब तुम अपनी सेनाके साथ शीघ्र ही किष्किन्धापुरीको चले जाओ। विभीषण। तुम भी लमामें मेरे दिये हुए अपने राज्यपर

स्थिर रहो; अब इन्द्र आदि देवता भी तुम्हारा कुछ बिगाड नहीं सकते हैं। अब इस समय मैं अपने पिताकी राजधानी अयोध्याको जाऊँगा। इसके लिये आप सब लोगोंसे पूछता हूँ और सबकी अनुमति चाहता हूँ। बोले इस युद्ध के नाते आपने मन से नाता जोडा है और जिस नाते के आगे जग का नाता कुछ भी नहीं है। जो नाता जीवन अर्पण कर देने से होता है वो दुनिया के सारे नातोंसे बढ़कर है। हम दोनों भाई विह्वल और व्याकुल होकर वन-वन में मारे फिरते थे। सीतासी रत्न मंजरी खोकर बिना कोई धर्म के दु:खियारे जैसे फिरते थे। ऐसे दुर्दिनों में मेरे साथी बनकर तुमने जो जान लढ़ाई है उस सहायता की राम भी आपकी क्या बढ़ाई कर सकता है। सच तो यह है कि आपने जग को स्वर्गीय धर्म सिखलाया है। उपकार किस तरह किया जाता है यह मानव समाज को सिखाया है। तुमने ही रावण का वध किया है और सीता का कष्ट निवारा है। मैं तो नाममात्र का विजय हूँ। पूरी विजय का श्रेय तुम्हें ही है। तुम ही लोगोंने मेरा और सीताका कष्ट निवारण किया है। वास्तव में यह काम तुम्हारा ही है। मेरा मन तुम्हारा ही धाम है। अब तक तो तुम राम के थे पर अबसे राम तुम्हारा है।

वानरेन्द्र। मैं तुमसा मित्र पाकर गौरवान्वित हुआ। श्रीरामने सुग्रीवके कन्धेपर हाथ रखा- तुमने मित्र-धर्मका पूरा पालन किया। अकेले सुग्रीव ही नहीं थे। उनके पीछे अङ्गद, जाम्बवन्त, नल-नील, मैन्द, गय, गवाक्षादि सब यूथप हाथ जोड़े, साश्रुलोचन खड़े थे। विभीषण भी इसी समूहके साथ आकर खड़े हो गये थे। केवल द्विविद वानरोंके साथ विदा हो गया था। वह अपने अपकर्मसे-अपराधसे लज्जित होकर श्रीरामके सम्मुख आनेका फिर साहस नहीं कर सका।

हनुमान इस यूथसे तटस्थ विमानमें श्रीरघुनाथके बैठनेकी वेदिका सज्जित करनेमें लगे थे। उन्हें आवश्यक नहीं लगा कि अयोध्या जानेकी अनुमति श्रीरामसे माँगनी हैं। उन्होंने साथ जाना सुनिश्चित मान लिया था। वे अपनेको श्रीरामकी सेवामें सदाको अर्पित कर चुके। इसमें पूछनेकी आवश्यकता ?

सभी वानर गण प्रेमभरे यह शब्द सुनकर सानन्द हुये और भक्ति का दान लें जय रघुकुल कह कर चले।

हनुमान, सुग्रीव, विभीषणादि प्रभुके अतिशय अनुरागी थे। वे प्रभु श्रीराम का साथ छोडना नहीं चाहते थे।

श्रीरामके ऐसा कहनेपर सभी वानर-सेनापति तथा राक्षसराज विभीषण हाथ जोड़कर कहने लगे- हे भगवन्। हम भी अयोध्यापुरीको चलना चाहते हैं, आप हमें भी अपने साथ ले चलिये। वहाँ हम प्रसन्नतापूर्वक वनों और उपवनोंमें विचरेंगे। हम सब आपके साथ जाकर आपके स्वजनोंका दर्शन करना चाहते हैं। सुग्रीव तथा विभीषणने एक साथ प्रार्थना की- आपके अभिषेक महोत्सवमें सम्मिलित होनेके पश्चात् आप जैसा आदेश करेंगे। अच्छा, तब सब लोग विमानमें बैठें। श्रीराम सीता तथा अनुजके साथ विमानमें आरूढ़ हो गये। उनके पीछे विभीषण, सुग्रीव आदि भी विमानमें आ बैठे। श्रीरामके आदेशसे विमान ऊपर उठा।

तब लाचारी से प्रभु श्रीराम उन्हें अवध ले चलने के लिये तैयार हुए साथ में जाम्बुवन्त, अङ्गद आदि सभी साथ चले।

विभीषणसहित वानरोंके इस प्रकार अनुरोध करनेपर श्रीरामने सुग्रीव तथा विभीषणसहित उन वानरोंसे कहा- मित्रो। यह तो मेरे लिये प्रियसे भी प्रिय बात होगी- परम प्रिय वस्तुका लाभ होगा, यदि मैं आप सभी सुहृदोंके साथ अयोध्यापुरीको चल सकूँ। इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता प्राप्त होगी। सुग्रीव। तुम सब वानरोंके साथ शीघ्र ही इस विमानपर चढ़ जाओ। राक्षसराज विभीषण। तुम भी मन्त्रियोंके साथ विमानपर आरूढ़ हो जाओ।

तब वानरोंसहित सुग्रीव और मन्त्रियोंसहित विभीषण बड़ी प्रसन्नताके साथ उस दिव्य पुष्पकविमानपर चढ़ गये। इसप्रकार अपने साथियों को लेकर गजानन गौरी शिव मनाकर प्रभु श्रीराम अवध की ओर चले।

श्रीरामकी आज्ञा पाकर वह हंसयुक्त उत्तम विमान महान् शब्द करता हुआ आकाशमें उड़ने लगा।

अतिशय सुन्दर हंसाकार विमान पुष्पक पृथ्वीसे ऐसे ऊपर उठा, जैसे कोई बैठा हुआ बड़ा पक्षी अपने पफफैलाकर उड़ जाता है। उससे मधुर कल हंस ध्वनि गूँज रही थी। श्रीरामकी इच्छानुसार विमान बहुत मन्द गतिसे, पृथ्वीके बहुत समीपसे-इतने समीपसे कि लमाके भवनोंसे, वृक्षोंसे, पर्वतके शिखरसे टकरा न जाय, समरभूमिका एक चक्कर लगाने लगा।

तब प्रभु श्रीरामने सीतासे कहा- विदेहराजनन्दिनि। कैलास-शिखरके समान सुन्दर चित्रकूट पर्वतके विशाल श्रृङ्गपर बसी हुई विश्वकर्माकी बनायी लमापुरीको देखो, कैसी सुन्दर दिखायी देती है।

इधर इस युद्धभूमिको देखो। यहाँ रक्त और मांसकी कीच जमी हुई है। सीते। इस युद्धक्षेत्रमें वानरों और राक्षसों का महान् संहार हुआ है।

विशाललोचने। यह राक्षसराज रावण राखका ढेर बनकर सो रहा है। यह बड़ा भारी हिंसक था और इसे ब्रह्माजीने वरदान दे रक्खा था;

किंतु तुम्हारे लिये मैंने इसका वध कर डाला है। यहींपर मैंने कुम्भकर्णको मारा था।

तुमने तो महाकाय कुम्भकर्णको देखा नहीं होगा। श्रीरामने युद्धभूमिकी ओर संकेत किया- वह मरकर गिरा तो वह उतना बड़ा भूभाग उसके शरीरके नीचे आकर गड्ढा बन गया है। यद्यपि तब मैंने उसका मस्तक, उसके दोनों पैर और उसकी भुजाएँ काट दी थीं। अपने राक्षसेन्द्र ये विभीषणजी उसके छोटे भाई हैं- सचमुच छोटे। ये कठिनाईसे अपने हाथ उठाकर उसके सिरका स्पर्श कर सकते होंगे। वह जब लमाके राजपथपर निकला, तब हमारे अनेक बुद्धिमान यूथपोंने वानरोंको यह कहकर बहलाया- यह सजीव राक्षस नहीं है। यह रावणकी मायासे निर्मित राक्षसाकार महायन्त्र है।

सुनकर श्रीवैदेही हँस पड़ीं। श्रीरघुनाथने भी तनिक मन्दस्मितके साथ नीलकी ओर देखा तो उन्होंने मस्तक झुका लिया; क्योंकि यह युक्ति उनके ही मस्तिष्कका आविष्कार थी।

देवि। कुम्भकर्ण महाकाय था; किंतु उसको जीतना उतना कठिन नहीं था, जितना रावणके ज्येष्ठ पुत्र मेघनादको। वह ब्रह्मास्त्रवेत्ता, मायावियोंका मुकुटमणि अदृश्य रहकर युद्ध करता था। एक बार तो उसने हम सबोंको नागपाशसे बाँधकर मूर्छित-मृत तुल्य ही कर दिया था। समट समाप्त हो जानेपर उसकी स्मृति व्यक्तिको गौरव देती है। श्रीराम युद्ध-संस्मरण सुना रहे थे।

मुझे उसी समय दशग्रीवने राक्षसियोंके साथ पुष्पकमें युद्धभूमि देखने भेजा था। श्रीमैथिलीके श्रीअङ्गमें सिहरन उठी- मैं उसी दिन प्राण त्याग देती, यदि त्रिजटाने मुझे समझाया न होता कि आर्यपुत्र देवरके साथ केवल मूर्छित हैं। बहुत कठिनाईसे मैं उसकी बातका विश्वास कर सकी।

लंकेश उस वृद्धाका ध्यान रखेंगे। वैदेहीने विभीषणकी ओर देखा- वह विपत्तिके दिनोंमें माताके समान मेरी रक्षा करती रही है। वही थी कि आज सीता जीवित है।

मैंने पवनपुवत्रसे उसका वह स्वप्न सुन लिया है, जो उन्होंने राक्षसियोंको सुनाया था। विभीषणने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाया- सभीने उन्हें राजमाता मान लिया है। वे अब राज सदनमें आ चुकी हैं।

प्रशंसा पूर्ण दृष्टि उठी श्रीराघवेन्द्रकी विभीषणकी ओर। उन्होंने उचित व्यक्तिको लमाका राज्य दिया है।

यहीं निशाचर प्रहस्त मारा गया है और इसी समराङ्गणमें वानरवीर हनुमान्‌ने धूम्राक्षका वध किया है।

यहीं महामना सुषेणने विद्युन्मालीको मारा था और इसी रणभूमिमें लक्ष्मणने रावणपुत्र इन्द्रजित्‌का संहार किया था।

जो द्वादश वर्ष अनाहार, अनिद्र, ब्रह्मचारी रह चुका हो और दिव्यास्त्र ज्ञानमें भी लगभग संसारमें अद्वितीय ही हो, वही इस इन्द्रजितको मार सकता था। अब श्रीरामकी वात्सल्यसे पूर्ण दृष्टि पीछे खड़े अनुजकी ओर गयी तो लज्जासे लक्ष्मण अत्यन्त संकुचित हो गये- यह दुष्कर कार्य वत्स लक्ष्मणने सम्पन्न किया। यहाँ गुहामें निकुम्भिला मन्दिर है देवीका। यहीं मेघनाद कालीको सन्तुष्ट करनेके लिए यज्ञ करने लगा था। यज्ञ पूरा होनेपर वह अमर हो जाता। लक्ष्मणने यहाँ उसका वध किया युद्ध करके।

ओह। कितने कष्ट उठाने पड़े मेरे लिए आर्यपुत्रको और मेरे सुकुमार देवरको। भगवती मैथिलीके लोचन सजल हो गये। उनको पञ्चवटीमें कहे अपने कठोर वचन स्मरण आये। वे लक्ष्मणसे क्षमा-याचना करने वाली थी; किंतु दृष्टि जब लक्ष्मणकी ओर गयी, वे हाथ जोड़े, सिर झुकाये ऐसे संकुचित हो रहे थे कि समझ गयीं- इनपर बहुत अत्याचार होगा- बड़ी निष्ठुरता होगी इनके प्रति इनसे क्षमा की कोई बात कहना। युदोन्मत्त और मत्त- ये दोनों श्रेष्ठ राक्षस तथा बलवान् कुम्भ और निकुम्भ- ये कुम्भकर्णके दोनों पुत्र भी यहीं मृत्युको प्राप्त हुए।

यहाँ हनुमानने, यहाँ अङ्गदने, यहाँ सुग्रीवने रावणके प्रमुख सेनापतियोंको मारा। श्रीरामने प्रसङ्गान्तर किया।

युद्ध-भूमिमें अब तक असंख्य रथ भग्न पड़े थे। कटे कवच, शिरस्त्राण, आभूषण, अस्त्र-शस्त्र चमक रहे थे। सम्पूर्ण समर-भूमि जमे रक्तके दलदलसे लोहितकृष्ण हो रही थी। अब नीचे श्रृंगाल, गृद्ध, काक, श्वानादि अपनी उदर पूर्तिमें लगे थे और स्वभावानुसार लड़-झगड़ रहे थे। सहस्त्रश: राक्षस सेवक समर-स्थली स्वच्छ करनेमें लग चुके थे। वह दृश्य अत्यन्त वीभत्स था। वह देखने योग्य नहीं था। विमानने लमाका चक्कर लिया।

यहाँ नीचे वह दासका आवास है। विभीषण दिखलाने लगे- वह अत्युच्च राजसदन है। नीचे राक्षस, राक्षसियाँ सब हाथ जोड़े, ऊपर मुख उठाये खड़े थे। राजसदनके ऊपर श्रीजानकीने सरमा और त्रिजटाको साथ खड़े देखकर पहिचाना।

हम पहिले इस सुबेल शिखरपर उतरे थे। यह हमारा प्रथम सैनिक शिबिर है। श्रीरामने पवनपुत्रकी ओर देखा- हनुमानने पहिले ही

हमारे लिए इसे प्रशस्त कर दिया था।

श्रीरघुनाथ कुछ थोड़ा परिचय दे रहे थे, सम्बन्धित कथाएँ सुना रहे थे। बीच-बीचमें किसीकी प्रशंसा भी करते थे। विभीषण, सुग्रीव अथवा वानरोंमें-से भी कोई बोलता था। श्रीजनकनन्दिनी मध्यमें कुछ पूछती थीं। किसीकी ओर कृतज्ञता, वात्सल्य स्नेहसे देख लेती थीं। उनके लिए सब अपरिचित था। लमामें तो उन्होंने अशोक-वाटिकाकी ओर भी दृष्टि दशग्रीव वधके पश्चात् डाली। वे बलात् लायी गयीं तब इतनी व्याकुल थीं कि कुछ देखनेकी उनकी अवस्था ही नहीं थी। आज अपने स्वामीके अप्रमेय पौरुषके प्रत्येक प्रतीकको देख लेने, समझ लेनेकी उत्सुकता जाग उठी थी उनमें। उनकी दृष्टि नीचे ही लगी थी। विमान बहुत मन्द गतिसे चल रहा था। जब श्रीराम किसी स्थलको दिखलाते हुए उसका वर्णन करने लगते थे, तब विमान वहाँ लगभग स्थिर हो जाता था।

अच्छा यही था कि विनाशके बहुतसे केवल चिन्ह बचे थे। पवनपुत्रने लमा जलाकर उसे जो रूप दिया था, उसको बहुत कुछ दशग्रीव सुधार चुका था। अब तो युद्धके मध्य वानरोंने-विशेषत: हनुमान और अङ्गदने नगरमें जो ध्वंस किया था, वही देखा जा सकता था। वह भी अल्प नहीं था; किन्तु विभीषणके आदेशसे उसका भी पुनर्निर्माण प्रारम्भ हो गया था।

हे सुमुखि। यह समुद्रका तीर्थ दिखायी देता है, जहाँ समुद्रको पार करके हमलोगोंने वह रात बितायी थी। विशाललोचने। खारे पानीके समुद्रमें यह मेरा बँधवाया हुआ पुल है, जो नलसेतुके नामसे विख्यात है। देवि। तुम्हारे लिये ही यह अत्यन्त दुष्कर सेतु बाँधा गया था।

अहा। लगता है उदधिको आपने माला पहिना दी है। श्रीवैदेहीने दूरसे सेतुको देखकर पुलकित होकर कहा। उन्होंने सुन लिया था कि उनके स्वामीने समुद्रपर सेतु-निर्माण अपने आराध्यके इस अतुलनीय पौरुषसे मन विभोर हो गया। इस उत्ताल तरङ्गायमान उदधिके वक्षपर पुष्पमाल्यके समान ऊपर-नीचे, उठता-बैठता, लहराता; किंतु अभग्न सुदृढ़ सेतु। इतना विशाल, इतना चौड़ा-बिना मध्यमें कोई आधार स्तम्भ दिये।

सेतु अब अधिक स्वाभाविक हो गया था। सागरकी तरङ्गोंने उसके दोनों ओरके किनारोंको बहुत कुछ सपाट कर दिया था। तरङ्गोंपर बराबर ऊपर-नीचे होते रहनेके कारण सेतु अधिक समतल बन चुका था। मध्यमें लगे वृक्षोंके पत्ते, पुष्प, फल सूखकर झड़ चुके थे और बह गये थे। अब तो रङ्ग-बिरङ्गी शिलाएँ भी बराबर समुद्र जलसे सिञ्चित होनेके कारण लगभग एकाकार होने लगी थीं। दस योजन चौड़ा व सौ योजन लम्बा अब काईके रङ्गसे उपलिप्त जैसा वह सेतु अद्भुत आश्चर्य था सृष्टिका। उसे देखकर विश्वकर्मा और मय दोनों चकित ही हो सकते थे।

यह नल-नीलके करोंका कौशल है। श्रीरामने मुक्त-कण्ठसे प्रशंसा की। इन्होंने इसे केवल पाँच दिनमें पूरा कर दिया था। वृक्ष, शिलाएँ, पर्वत ढोनेका अथक उद्योग वानरेन्द्र सुग्रीवके सैनिकोंने किया।

हम दोनोंको निमित्त बनाकर जिन्होंने गौरव दिया, हमारे स्वामी तो सदासे सेवकको सुयश देनेवाले हैं। नल-नील हाथ जोड़कर खड़े हो गये- हम दोनों तो असफल हो चुके थे, जब समुद्र हमारे द्वारा स्थापित शिलाएँ बहा ले गया था। यदि आपके नामने उन्हें संयोजित न किया होता, हम क्या कर लेते ?

श्रीजनक-नन्दिनीसे अपने आराध्यके नामका असीम प्रभाव अज्ञात नहीं है। उस नामका स्मरण करके प्राणी भवसिन्धु पार कर लेता है; किंतु पवनपुत्रने शिला-संयोजनका यह प्रभाव सूचित किया तो उन्हें आनन्दमिश्रित आश्चर्य ही हुआ।

यह समुद्रके उदरमें ही विशाल टापू है, जहाँ मैंने सेनाका पडाव डाला था। आर्य तो समुद्रसे मार्ग पानेके लिए वहाँ अनशन करके प्रार्थना करते लेट गये थे। तीन दिन उपोषित पड़े रहे। लक्ष्मणने श्रीरामका वह प्रचण्ड पौरुष सुनाया, जिससे भीत समुद्रके देवताको शरण। शरण।। पुकारते प्रकट होना पड़ा था। वहाँ विभीषण मिले थे।

यहीं पूर्वकालमें भगवान् महादेवने मुझपर कृपा की थीं- सेतु बाँधनेसे पहले मेरे द्वारा स्थापित होकर वे यहाँ विराजमान हुए थे।

इस पुण्यस्थलमें विशालकाय समुद्रका तीर्थ दिखायी देता है, जो सेतुनिर्माणका मूलप्रदेश होनेके कारण सेतुबन्ध नामसे विख्यात तथा तीनों लोकोंद्वारा पूजित होगा। यह तीर्थ परम पवित्र और महान् पातकोंका नाश करनेवाला होगा। यहीं ये राक्षसराज विभीषण आकर मुझसे मिले थे। यह रामेश्वरम् टापू है।

मैं उन आशुतोषके दर्शन करूँगी। श्रीजानकीके कहते ही विमान सागरके दूसरे तटपर सेतुबन्धके समीप कुछ मंडलाकार घूमकर उतरा और पक्षीके समान अपने पफ समेटकर उस स्थापित श्रीविग्रहके समीप तक चला गया।

श्रीरामने वैदेही तथा लक्ष्मणके साथ समुद्र-स्नान करके श्रीरामेश्वर लिङ्ग विग्रहका पूजन किया। विभीषण तथा अन्य सबने भी सागर-स्नान तथा शिवार्चन सम्पन्न किया। श्रीरामने हनुमदीश्वरकी स्थापनाकी कथा सुनायी। सबने उस हनुमदीश्वर लिङ्गकी भी अर्चनाकी हनुमानजी इस अवसरपर तनिक लज्जित हो गये थे।

अचानक विभीषण अञ्जलि बाँधकर सम्मुख खड़े हो गये। श्रीरामने उनकी ओर देखा। इस दृष्टिमें ही प्रश्न था- कुछ कहना है तुमको? मुझसे कुछ कहनेमें मेरे अपनोंको संकोच क्यों होना चाहिये ?

लक्ष्मण, सुग्रीवादि भी विभीषणकी ओर देखने लगे। सबको कुतूहल हुआ कि ये लंकेश उस स्थापनापर आकर जहाँ प्रभुके- दर्शन इन्होंने किये थे, अब क्या कहना चाहते हैं ?

आपने दुर्दान्त दशग्रीवको मारकर सुर-साधु सबको सुखीकर दिया। समुद्रपर बना यह सेतु न भी रहे तो भी आपके सुयशसे त्रिभुवन सदा उज्ज्वल रहेगा। अत्यन्त विनम्र स्वरमें विभीषण प्रार्थना कर रहे थे- आपने लमाके पालनका दायित्व अपने इस अयोग्य दासपर डाल दिया। सेतु बना रहा तो मानव, मुनिगण, विप्रगण कोई भी सरलता-पूर्वक चाहे जब लमा पहुँचते रहेंगे। राक्षसोंका स्वभाव आप जानते हो। वह उनका जन्मजात स्वभाव सम्पूर्ण परिवर्तित हो जाय, यदि आप ऐसा आशीर्वाद दे दो तो मुझे कुछ कहना नहीं है। अन्यथा अपने यहाँ आ गये साधुओं, मुनियों, गायोंको वे अपमान नहीं करेंगे, उन्हें कष्ट नहीं देंगे, यह विश्वास मुझे नहीं है।

मैं अपनी असमर्थना निवेदन कर दूँ। उग्र दण्ड देना मेरे स्वभावमें नहीं है। मैं कठोर दण्ड-विधानकी क्रूरता नहीं कर पाता। विभीषणने कहा- दशग्रीवके उग्र दण्डसे राक्षस डरते थे। इस समय जिनके स्वजन मारे गये हैं, उनसे अपराध भी हो तो भी उन्हें कठोर दण्ड देना नृशंसता लगेगा मुझे। अत: यदि इस सेतुको सुरक्षित रखना है।

अब इसकी आवश्यकता भी क्या है। श्रीराम उठ खड़े हुए- हमारा प्रयोजन पूरा हो गया। तुमको और तुम्हारे राक्षसोंको सेतुकी कभी आवश्यकता नहीं हुई। तुम ठीक कहते हो कि अब यदि यह बना रहता है तो इसके दुरुपयोगकी ही सम्भावना अधिक है।

श्रीराम को लगा मेरा इस अब धनुष का प्रयोजन पूरा हो चुका और इस धनुष से एक ब्राह्मण पुलस्त्य पौत्र रावण का मेरेद्वारा वध हुआ। इसका प्रायश्चित करने के लिये उन्होंने रामेश्वरम् से १६ किलोमीटर दूर सागर तट पर उस धनुष की पूजा अर्चना कर उस धनुष को तोड़कर सागर में विसर्जित कर दिया। इसलिए उस स्थल का नाम धनुषतोड़ी हुआ और कालान्तर में इसका अपभ्रंश होते-होते इसका नाम धनुष कोड़ी हुआ। सन इ. १९६१ में यह धनुष कोड़ी द्वीप अत्यन्त प्रबल चक्रवात (सायक्लोन) से लुप्त हो गया। सागर में डूब गया। यह इस गाँव में करीबन ५००० व्यक्ति रहते थे जिनकी असमय मृत्यु हो गयी और एक पूरी रेलगाड़ी जो करीबन ७०० से ८०० व्यक्तियों से भरी हुयी थी पानी में डूब गयीं। अब यह टापू फिर पानी से बाहर निकल आया जिसकी देखरेख व पुनर्वसन तामिलनाडू सरकार कर रही है। श्रीरामने विभीषण के कहनेपर उसी धनुष के नोंक से लंका और रामेश्वरम् के बीच का सेतु पुल तोडके पानी में डुबो दिया। विभीषण का मत था कि यह राक्षसजाति कोई आचार-विचार तो जानते नहीं है और कभी भी उच्छृंखल हो सकती है और यदि यह पुल रहा तो सीधे लंका से जनस्थानों में आ-जानेका मार्ग बना लेगी और जनपथ को कष्ट पहुँचाने लगेगी और विभीषण उनकी स्वतन्त्रता को नियंत्रण करने में समर्थ नहीं हो सकेंगे।

श्रीराम वहाँसे धनुष लिए पैदल ही उस स्थान तक पहुँचे जिसे आज धनुष्कोटि कहा जाता हैं। जहाँसे सेतुकी चौड़ाईका प्रारम्भ होता था। सेतुकी चौड़ाईका दूसरा भाग तो दक्षिण-पश्चिम वर्तमान कन्याकुमारी तक चला गया था। विभीषण, लक्ष्मणादि सभी श्रीरामके पीछे वहाँ तक आ गये।

अपने यशके इस अद्भुत प्रतीककी ओर एक बार दृष्टि उठाकर भी उन महत्तमने नहीं देखा। अपने धनुषकी नोकसे प्रारम्भकी एक शिला मात्र हटी; किंतु जिन सत्य समल्पके संकल्प-बलसे सेतु टिका था, उन्होंने ही उसे भग्न करनेका संकल्प किया तो उसे टूटनेमें कितने क्षण लगने थे ? समुद्रको स्वयं कहाँ यह बन्धन स्वीकार था। उत्ताल तरंगोंके थपेड़ोंमें क्षण भरमें सेतु अदृश्य हो गया। वे तैरते पाषाण कहाँ गये, कौन कह सकता है।

सब स्तब्ध रह गये। नीरव ही सब लौटे और श्रीसीतारामके साथ पुष्पकपर जा बैठे। पुष्पकके पफफैल गये और वह पक्षीके समान आकाशमें उड़ गया। इसप्रकार सीताको रामेश्वरम् के तीर्थस्थान दिखाकर पुष्पकयान ने आगेकी यात्रा के लिए प्रस्थान किया।

अपने वानरेन्द्रकी पुरी किष्किन्धा आ रही है। श्रीजानकीका ध्यान नीचेकी ओर राघवेन्द्रने दिलाया। समुद्रतट छोड़नेके पश्चात्

अबतक कोई उल्लेखनीय दृश्य आया नहीं था।

विमानको यहाँ उतरना चाहिये। वैदेहीने उत्सुक होकर कहा- यहाँ वानरेन्द्र की पत्नियाँ हैं। दूसरे भी वानर यूथपोंकी जो पत्नियाँ यहाँ हैं, उनमे मैं मिलूँगी। यदि आर्यपुत्र अनुमति दें तो उन्हें भी अयोध्या साथ ले चलें।

अवश्य उन्हें साथ ले लेना चाहिये। श्रीरामने प्रसन्न होकर कहा। विमान नीचे उतरने लगा था। किष्किन्धाके समीप भूमिका स्पर्श करते ही उसने पफसमेट लिये। सीते। वहीं मैंने बालिका वध किया था।

विदेहनन्दिनी सीताके ऐसा कहनेपर श्रीरघुनाथसे कहा- ऐसा ही हो। फिर किष्किन्धामें पहुँचनेपर उन्होंने विमान ठहराया और सुग्रीवकी ओर देखकर कहा- वानरश्रेष्ठ। तुम समस्त वानरयूथपतियोंसे कहो कि वे सब लोग अपनी-अपनी स्त्रियोंको साथ लेकर सीताके साथ अयोध्या चलें तथा महाबली वानरराज सुग्रीव। तुम भी अपनी सब स्त्रियोंके साथ शीघ्र चलनेकी तैयारी करो, जिससे हम सब लोग जल्दी वहाँ पहुँचे।

मित्र। आप शीघ्रता करेंगे। श्रीरामने सुग्रीवसे अनुरोध किया। स्पष्ट हो गया कि वे स्वयं तो उस वानर पुरीमें नहीं ही जायेंगे, श्रीजनकनन्दिनी तथा लक्ष्मणको भी जानेका अवकाश नहीं है।

आपकी आज्ञा हो तो मैं अपनी माताके चरण-दर्शन कर आऊँ। पवनकुमारने प्रार्थनाकी। उनके पिता केसरीजी तो साथ ही थे। विमानको मैं मार्गमें मिल जाऊँगा।

उन पूजनीयाके हम सब दर्शन करेंगे। श्रीराघवेन्द्र सुप्रसन्न बोले- तुम पहिले जा सकते हो; क्योंकि माताके पुत्र- मिलनको कुछ एकान्त क्षण प्राप्त होने चाहिये।

सुग्रीव, अङ्गदादि विमानसे नगरमें चले गये और बहुत शीघ्र लौटै। उनके साथ किष्किन्धाके उनके सेवक, पत्नियाँ तथा स्वागत सामग्री थी।

ताराने श्रीरामकी, लक्ष्मणकी भी चरण-वन्दना की। पद-वन्दनाके समय उसे श्रीजानकीने हृदयसे लगा लिया। उसने साश्रुलोचन कहा- हम वानरोंकी पुरी आप जगद्धात्रीके पदारविन्दसे पवित्र होने योग्य नहीं है ?

आर्यपुत्र अत्यन्त आतुर हैं अयोध्या पहुँचनेके लिए। श्रीवैदेहीने संकोचके साथ मानो क्षमा याचना की- वानरेन्द्र आर्यपुत्रके अपने हैं, अत: यह पुरी तो हमारी ही है। तुम इस समयकी हमारी स्थिति देखकर बुरा मत मानना।

समझती हूँ देवी। आप चौदह वर्षोंसे वन-वन भटकती रही हैं। राक्षसके द्वारा उत्पीड़ित हुई हैं। अयोध्या समाचार पहुँचा होगा। वहाँके स्वजन अपनी साम्राज्ञीके दर्शनोंके लिए कितने उत्सुक, कितने व्याकुल होंगे, समझ सकती हूँ। ताराने कहा- मैं अधिक आग्रह नहीं करूँगी।

तारा अयोध्या नहीं जा सकती थी। सुग्रीव और अङ्गद दोनों ही अयोध्या जा रहे थे, अत: वानर-पुरीकी व्यवस्था बनाये रखनेके लिये ताराका यहीं बने रहना आवश्यक था। वस्तुत: किष्किन्धाकी समस्त व्यवस्था वानरेन्द्रके वहाँ न होनेपर ताराके ही हाथोंमें रहती थी।

सुग्रीवके साथ उनकी पत्नी रुमाको साथ जाना था। रुमाने पदवन्दना की तोश्रीजानकीने उसे अङ्गमें ही समेट लिया। वह अत्यन्त समोची, छुई-मुई-सी अपनी पुत्री जैसी ही प्रतीत हुई श्रीजनक-नन्दिनीको। उसे उन्होंने स्नेहपूर्वक विमानमें अपने समीप बैठाना चाहा; किंतु वह उनके पाद-पीठके समीप भी बहुत सिकुड़ी सिमटी बैठी।

श्रीजनकनन्दिनी नित्य अतुलनीय हैं। वे निखिलेश्वरि-सर्वलोक वन्दनीया सुरेन्द्र भी उनके श्रीचरणोंमें मस्तक रखकर अपनेको कृतार्थ मानते हैं। अनन्त वात्सल्यकी धनीभूत मूर्ति वे कृपा-पारावार प्रतिमा।

लमामें मन्दोदरी और विभीषण पत्नी सरमा थीं तथा किष्किन्धामें यहाँ तारा और रुमा मिलीं। चारों अपूर्व सुन्दरियाँ; किन्तु तुलना ही करनी हो तो मन्दोदरी एवं तारा तथा सरमा और रुमासे की जानी चाहिये। मन्दोदरी एवं तारा दोनोंको देखकर लगता है कि वे जन्मजात प्रशासिका हैं। वे स्वरूपसे ही शासन करनेके लिए उत्पन्न हई हैं। दोनों तत्त्वज्ञा, दीर्घदर्शिनी, गम्भीर। दोनोंको दैवने एक-सी परिस्थिति प्रदान की। लेकिन तारा किञ्चित् प्रगल्भा और मन्दोदरी अधिक विनयावनता। सम्भव है बालि- की स्नेहशीलता तथा दशग्रीवकी दुर्घर्षताका दोनोंमें प्रभाव आया हो।

सरमा सहज सेवा परायणा। श्रीवैदेही उसे सखि। कहती थी किंतु रुमा इतनी लज्जामयी, सिकुड़ी रहनेवाली जैसे कोई बहुत सुकुमार

सुमन हो, स्पर्श करते ही म्लान पड़ जायगा। श्रीमैथिलीका वात्सल्य वह मिलते ही प्राप्त कर चुकी थी।

तारा बहुत-सा उपहार ले आयी थी। श्रीरघुनाथने उसे स्वीकार करनेकी स्वीकृति दे दी। श्रीजनकनन्दिनीने उसे स्वीकार कर लिया। अद्भुत थे वे उपहार। अनेक रङ्गोंके, अनेक गुणवाले मधुछत्रक, विचित्र प्रभाववाली औषधियाँ थीं उनमें। इनको प्राप्त करना किसी सम्राटके लिये भी कठिन ही था।

किष्किन्धासे विदा होते समय श्रीवैदेहीने ऋष्यमूक शिखर देखनेकी इच्छा की- आर्यपुत्र जहाँ पाँच मास रहे हैं, वह गुहा मुझे देखनी है।

तुम्हारे बिना कैसे व्यतीत हुए वे दिन, मैं ही जानता हूँ। सस्मित श्रीरघुनाथने कहा।

वह गुहा, वह शिलातल जिसपर श्रीरघुनाथ बैठा करते थे- बालिकाके समान दौड़ती श्रीवैदेही उन स्थानोंपर घूमीं। उन्होंने पता नहीं कितने स्थानोंपर मस्तक रखा, कितने स्थानोंको स्पर्श किया। यहाँ केवल लक्ष्मण साथ बतला रहे थे स्थानोंको। शेष सब दर्शक बने रहे।

श्रीरघुनाथको शीघ्रता थी। सबको विमानमें बैठकर उस पावन स्थलीको प्रणाम करके विदा होना पडा। अब विमान अञ्जना-शिखरपर जाकर उतरा। अब तक पवनकुमारने माताको कोई समाचार नहीं दिया था। आते ही मातृपदोंमें उन्होंने प्रणाम किया तो माताने उन्हें हृदयसे लगा लिया। वे अब तक माताके वात्सल्य-विभोर अङ्गमें शिशु बने बैठे थे। बहुत कालके पश्चात् पुत्रको पाकर माता भी शरीरकी सुधि भूल गयी थीं।

अब पुष्पकको उतरते देखकर हनुमान सावधान हुए। माताको सूचना दी- आपके दर्शनार्थ सानुज श्रीरघुनाथ पधारे हैं। अम्ब सीता साथ हैं और अपने प्रमुख परिकरोंके साथ वानरेन्द्र सुग्रीव भी।

केसरीने इस अवसरपर उपयुक्त माना कि वे पृथक रहें। देवी अञ्जनाने शीघ्रतापूर्वक स्वात-सम्भार एकत्र करना प्रारम्भ किया। वे बार-बार दुहरा रहीं थीं- हनुमान। तू सच्चा पुत्र सिद्ध हुआ। तूने मेरा मातृत्व सफल किया। मुझे कृतकृत्य किया।

सानुज श्रीरामने गोत्र तथा पिताका नाम लेकर प्रणाम किया। पुलकित शरीर, अङ्ग-अङ्ग काँपता, अविरल अश्रुधारा, बोलनेमें असमर्थ वाणी। माता अञ्जना तो जैसे प्रतिमाके समान स्थिर रह गयीं। वे मूर्छित होकर गिर पड़ती; किंतु तभी श्रीजानकीने करोंमें अञ्चल लेकर उनके चरणोंपर सिर रखना चाहा; उन्हें अङ्गमें समेटकर वे सावधान ही हुईं।

अर्घ्य, पाद्यादिसे जब वे श्रीरामकी अर्चा कर चुकीं, दूसरे लोगोंने प्रणाम करना प्रारम्भ किया। हनुमान उनका परिचय देने लगे- ये वानरेन्द्र सुग्रीव। ये युवराज अङ्गद। ये ऋक्षपति जाम्बवान। ये वानर विश्वकर्मा नल-नील बन्धु।

ये लमाधिप राक्षसेश्वर विभीषण। जानबूझकर विभीषणने सबसे अन्तमें प्रणाम किया था। देवी अञ्जनाके जाति स्वजनोंको प्रथम अवसर प्राप्त होना चाहिये था यहाँ।

हनुमान। लमाधिप तो दशग्रीव है। पुत्रकी ओर देखकर प्रश्न किया माता अञ्जनाने।

श्रीरघुनाथने उसे समर-शैय्या दे दी। हनुमानजीने संक्षिप्त कथा सुनाना प्रारम्भ किया- वह सुर-मुनियोंका सन्त्रासक समाप्त हो गया। अब तो श्रीरघुनाथकी कृपाके परम भाजन विभीषणजी राक्षसाधिप हैं।

तूने अञ्जनाका दूध पिया है, धिक्कार हैं तुझे। माता अञ्जनाके नेत्र अङ्गार हो उठे- तू क्या करता रहा ? मेरे दूधको पीकर भी तुझमें शक्ति नहीं आयी, साहस नहीं हुआ कि सीताके अपहरणकर्ताको समुचित दण्ड दे देता। मैंने व्यर्थ तुझे अपना दूध पिलाया। तू दशग्रीवको मसल नहीं दे सकता था मेरा दूध पीकर भी कि रामको वानरेन्द्रसे सहायता लेनी पड़ी और इतना श्रम करना पड़ा। मुझे मुख दिखलानेका साहस तूने कैसे किया ?

फड़कते अधर, कठोर भृकुटि माताके सम्मुख महावीर हनुमान भय कातर बालकके समान खड़े थे। बड़ी कठिनाईसे काँपते स्वरमें किसी प्रकार बोल सके- आप मुझपर अकारण क्रोध करती हैं। मुझे ऋषपति जाम्बवन्तने वर्जित किया था। ये आपके सम्मुख हैं, इनसे पूछ लें। ये हममें वृद्ध थे, सम्मान्य थे। मेरा अपराध इतना ही है कि मैंने इनका अनुशासन स्वीकार कर लिया। इनका तर्क था- दशग्रीव-दलनका सुयश इस सेवकको न लेकर अपने स्वामीके लिए सुरक्षित रहने देना चाहिये।

ऋक्षपति हम सबके सम्मान्य हैं। माताका रोष शान्त हो गया- उनका सोचना ही उचित था। तुमने उनका आदेश स्वीकार करके समझदारी दिखलायी।

कुमार। तुम समझते हो कि अञ्जना सबके सम्मुख अपने पुत्र और अपने दूधकी प्रशंसामें डींग मार रही है ? माता अञ्जनाकी दृष्टि

लक्ष्मण की ओर चली गयी। उनके मुखपर स्मित देखकर वे बड़ी गम्भीरतासे बोलीं- अञ्जनाके दूधकी शक्ति देखोगे ? देखोगे कि हनुमानने कैसा दूध पिया है ?

किसीको कुछ कहनेका अवकाश नहीं मिला। माता अञ्जना घूमीं और वानरोंके समूहसे बाहर एक ओर आकर अपना वक्षावरण हटाया उन्होंने। इतने दीर्घकालके पश्चात् पुत्रके मिलनेसे वात्सल्याधिक्यके कारण पयोधरोंमें दूध भर आया था। उनमें-से एकको उन्होंने अपने हाथसे दबाया।

दूधकी उज्ज्वल धारा सम्मुखके पर्वत-शिखरपर पड़ी, मानो वज्रपात हुआ हो। भयमर शब्द के साथ वह शिखर मध्यसे विदीर्ण हो गया। वानर स्तब्ध रह गये। माता घूमीं तो लक्ष्मण उनके चरणोंपर गिर पड़े।

अब आप हम सबको अनुमति दें। श्रीरामने अञ्जलि बाँधकर सादर मस्तक झुकाया।

तुम परम पुरुष मेरे यहाँ पधारे, यह वानरी तुम्हारा कोई सत्कार करने योग्य नहीं है। माताका स्वर फिर विह्वल हो गया- मैं अपने हनुमानको तुम्हारे चरणोंमें अर्पित करती हूँ। इसे स्वीकार कर लो। यह सदा तुम्हारा विनम्र सेवक बना रहेगा।

राम आप पूजनीयाके आदेशको स्मरण रखेगा। श्रीरामने पुन: वन्दन किया। श्रीवैदेहीको अममाल मिली। वानरेन्द्रने, वानरोंने, विभीषणने तथा वानर-पत्नियोंने भी चरण-वन्दना की। सब पुष्पकपर बैठे, तब तक हनुमान माताके समीप खड़े रहे। सबके अन्तमें माताके पदोंपर मस्तक रखकर, उनसे अनुमति लेकर वे विमानपर आये। जब तक पुष्पक गगनमें दीखता रहा, देवी अञ्जना स्थिर खड़ी उसे अपलक देखती रहीं।

किष्किन्धामें वानरेन्द्रकी सेविकाओं, सहचारियों ने मुझमें एक विलक्षण त्रुटि ढूँढ ली थी। विमानपर बैठनेके पश्चात् विभीषणने वातावरणको सुप्रसन्न बनानेके उद्देश्यसे श्रीरघुनाथसे निवेदन किया- सबका कहना था कि आप दोनों भाई तो दिव्य पुरुष हैं, अत: आपका स्वरूप देवतुल्य होना उचित है; किंतु मैं बिना पूँछके अशोभना लगता हूँ।

सुनकर श्रीरघुनाथ, जनकनन्दिनी भी हँस पड़ीं। लक्ष्मणके भी मुखपर स्मित आया। अवश्य वानरियोंने मुख छिपा लिया। वानरेन्द्र सुग्रीव संकुचित हो गये। रुमा तो लज्जासे लाल हो उठी।

वे सब कहती थीं कि मैं आकारमें वानरेन्द्रसे विशाल हूँ तो मेरी पूँछ भी वानरेन्द्रसे बड़ी होनी चाहिये थी। एक छोटी पूँछ भी मेरे नहीं। विभीषणजी हँसते कह रहे थे- वानर साम्राज्ञी तारादेवीने मेरा पक्ष लिया था। उन्होंने सबको समझाया- जैसे हम वानरोंमें पुरुषोंके ही पूँछ होती है, वानरियोंके नहीं होती, वैसे ही राक्षसों और मनुष्योंमें भी केवल पुरुषोंके मूँछे होती हैं।

विभीषणने अपनी बड़ी मूछोंपर ताव फेरा। कुमार लक्ष्मण हँसे- हम इन मूछोंसे वञ्चित हैं।

आप दोनों तो देवपुरुष हैं- पुरुषोत्तम। इस बार वानरेन्द्र सुग्रीवने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाया।

सीते वह जो बिजलीसहित मेघके समान सुवर्णमय धातुओंसे युक्त श्रेष्ठ एवं महान् पर्वत दिखायी देता है, उसका नाम ऋष्यमूक है। सीते। यहीं मैं वानरराज सुग्रीवसे मिला था और मित्रता करनेके पश्चात् बालिका वध करनेके लिये प्रतिज्ञा की थी। यहीं वह पम्पा नामक पुष्करिणी है, जो तटवर्ती विचित्र काननोंसे सुशोभित हो रही है। यहाँ तुम्हारे वियोगसे अत्यन्त दु:खी होकर मैंने विलाप किया था।

यह महर्षि मतङ्ग का आश्रम है। श्रीरामने नीचेकी ओर संकेत किया- तपस्विनी शबरी यहीं मिली थी। उसने इतने स्वादिष्ट बेर खिलाये कि उनका स्वाद मुझे अब तक स्मरण है। वैसा स्वादिष्ट पदार्थ कभी नहीं मिला था। परिहास समाप्त हो गया। सबकी दृष्टि नीचे लग गयी। आर्यपुत्रको जटायु यहीं कहीं मिले होंगे। मैथिलीके नेत्र भर आये- वह महावट दीख रहा है, जिसपर वे रहा करते थे। उन वृद्धने मेरे लिए दशग्रीवसे युद्ध किया। उससे एक बार मुझे छीन लिया था। उसका रथ नष्ट कर दिया और उसे अपना आहत किया कि वह मूर्छित हो गया था। यहाँ मिले थे वे पितृव्य। श्रीरामने भी अपने नेत्र पोंछें- उनके प्राण केवल तुम्हारा समाचार मुझे सुनानेके लिए भी शरीरमें अटके थे। धन्य थे वे।

विमान वहाँ प्राय: रुक गया था गगनमें। श्रीसीतारामने लक्ष्मणने भी जटायुको उद्देश्य करके मस्तक झुकाया। सभी वानरोंने उझककर नीचे देखा, जैसे वे महाप्राण अब भी वहाँ होंगे।

उन आदरणीयकी अन्त्येष्टि करके हम आगे बढ़े तो वहाँ कबन्ध मिल गया था। उसने लक्ष्मणको शिशुके समान पकड़ लिया। श्रीरामने पीछेकी ओर संकेत किया, जहाँ अब केवल विशाल गर्त अवशेष था। श्रीमैथिलीने सस्नेह लक्ष्मणकी ओर देखा।

इधर वह स्थान है, जहाँ एक योजन लंबी भुजावाले कबन्ध नामक असुरका मैंने वध किया था। सीते।

यह वह स्थान है, जहाँ मेरे सीधे जानेवाले बाणोंद्वारा खर मारा गया, दूषण धराशायी किया गया और महापराक्रमी त्रिशिराको भी मौतके घाट उतार दिया गया।

वरवर्णिनि। शुभदर्शने। यह हमलोगोंका आश्रम है तथा वह विचित्र पर्णशाला दिखायी देती है, जहाँ आकर राक्षसराज रावणने बलपूर्वक अपहरण किया था।

वह अपनी भाग्यहीना पर्णकुटी है पञ्चवटीमें। अनेक-अनेक स्मृतियाँ एक साथ मानसमें जाग उठीं। लक्ष्मणने भी नीचे देखा और एक दीर्घ-श्वास ली। यहीं तो आपका वरण करने सूर्पणखा आयी थी। जानकीके अधरोंपर स्मित आया- वह तो देवरको भी बर-बनानेको प्रस्तुत थी; किंतु इनको उसके नासिका-कर्ण इतने बुरे लगे कि उन्हें काट ही दिया।

वही दशग्रीवके विनाशका आरम्भ बनी। उसीसे तुम्हारी विपत्ति प्रारम्भ हुई। श्रीरघुनाथने विभीषणकी ओर देखा- किंतु राक्षसेन्द्रको उस अपनी भगिनीके प्रति सदय रहना चाहिये। वह अपनी दुर्बलतासे विवश बनी।

मैंने सुन लिया है कि उसने स्वत: लमाका त्यागकर दिया और मधुवनमें शरण ली है। विभीषणने निवेदन किया- शैशवसे वह मुझसे चिढ़ती रही थी। मैं सद भी रहता, तब भी वह मेरा विश्वास नहीं कर सकती थी।

यह स्वच्छ जलराशिसे सुशोभित मङ्गलमयी रमणीय गोदावरी नदी है तथा वह केलेके कुञ्जोंसे घिरा हुआ महर्षि अगस्त्यका आश्रम दिखायी देता है। यह महात्मा सुतीक्ष्णका दीप्तिमान् आश्रम है और विदेहनन्दिनि। वह शरभङ्ग मुनिका महान् आश्रम दिखायी देता है, जहाँ सहस्त्रनेत्रधारी पुरंदर इन्द्र पधारे थे।

वह महर्षि सुतीक्ष्णका आश्रम है। विमानने वेग पकड़ लिया था। श्रीराम नीचे दिखलाने लगे- वहाँ महामुनि शरभङ्गने हमारे सामने ही शरीर त्यागा था। आर्यपुत्रने महर्षि अगस्त्यका आश्रम छोड़ ही दिया। श्रीजानकीने स्मरण दिलाया- वहीं आपको विजयदायी आयुध प्राप्त हुए थे। भगवती लोपामुद्राका स्नेह मिला था मुझे।

महर्षिने मुझे समरभूमिमें भी दर्शन देनेका आग्रह किया था। श्रीरामने आदित्य-हृदय प्राप्तिका वर्णन करके कहा- उन्होंने अयोध्या आनेका आश्वासन दिया है। अत: इतनी दूर गगनसे उनके उटजके ऊपरसे उड़ना अशिष्टता ही होती। अब समय भी थोड़ा ही है हम दिनके चतुर्थ प्रहर प्रयाग पहुँच सकेंगे।

यह वह स्थान है, जहाँ मैंने विशालकाय विराधका वध किया था। देवि। ये वे तापस दिखायी देते हैं, जिनका दर्शन हमलोगोंने पहले किया था। सीते। इस तापसाश्रमपर ही सूर्य और अग्निके समान तेजस्वी कुलपति अत्रि मुनि निवास करते हैं। यहीं तुमने धर्मपरायणा तपस्विनी अनसूयादेवीका दर्शन किया था। वह गिरिराज चित्रकूट प्रकाशित हो रहा है। वहीं कैकेयीकुमार भरत मुझे प्रसन्न करके लौटा लेनेके लिये आये थे।

वह नीचे महर्षि अत्रिका आश्रम है। भगवती अनसूयाने यहीं देवीको दिव्य वस्त्रालमार दिये थे। श्रीरघुनाथने अञ्जलि बाँधकर मस्तक झुकाया। श्रीजानकीने, लक्ष्मणने भी ऐसा ही किया। वानरोंने भी अनुकरण किया।

वह पयस्विनी-मन्दाकिनी संगमके समीप अपनी दोनों पर्णकुटी हैं। ये अब तक सुरति हैं। श्रीमैथिलीने ममता और आश्चर्यके साथ नीचे देखा। आपके कर-कमलों द्वारा लगायी गयी लतिका पुष्पभारसे लदी है। इस बार लक्ष्मण बोले- आपने जो आम्रतरु आरोपित किया था, उसमें भी फलोंके घौर लगे हैं। वह आपकी पर्णशालाके सम्मुख बैठा मृग सम्भवत: अब भी आपके करोंका नीवार पाना चाहता है। वह मृग शावक इतना बड़ा हो गया ? इतने बड़े सींग हो गये उसके ? उसने तो बहुत-सी संगिनियाँ जुटा ली है। जैसे अपने पुत्रका परिवार देखकर माता प्रसन्न हो गयी हो।

अरण्यानी मानवोंको भले नागरिक जन असभ्य कहें, उनके शरीरपर वस्त्र भले अत्यल्प हों, उनके हृदयमें अपार श्रद्धा होती है। श्री रघुनाथ सस्नेह कह रहे थे- देवि। चित्रकूटमें अपने आसपास आकर बस गये कोल-किरातोंका स्नेह मुझे भूलता नहीं। उनकी श्रद्धाने ही हमारी पर्णकुटियोंको अबतक यथावत रक्षित रखा है। उनका समूह जहाँ-तहाँ सिर उठाये विमान देखने में लगा है; किंतु इनको तो अयोध्या बुलाकर ही सत्कृत करना है।

ये अयोध्या आवेंगे ? लक्ष्मणके स्वरमें सन्देह स्पष्ट था। सचमुच अरण्यमें सेवा करना सुगम था इनके लिए; किंतु अयोध्याका

महानगर इनके अनुकूल पड़ेगा ?

अपने निषादराज इनके अधिपति हैं। श्रीरामने समाधान कर दिया- वे इनको आमन्त्रित कर लेंगे और इनका आतिथ्य भी उचित रीतिसे करेंगे।

यह महर्षि वाल्मीकिका आश्रम। श्रीरघुनाथने नीचे संकेत किया- ये आदि कवि अद्वितीय तपस्वी हैं।

मुझे अपने पितृचरणों जैसे ही प्रतीत हुए। उनका वात्सल्य आर्यपुत्रपर भी बहुत था।

श्रीवैदेहीके साथ सभी ने प्रणाम किया।

तब प्रभु श्रीराम पुष्पकयान से वाल्मीकि आश्रम में पधारे और मुनि वाल्मीकि से मिलकर बढ़े प्रसन्न हुये। मुनि वाल्मीकि ने कहा- हे राम, अभी तक जग को विश्राम नहीं मिला है। अभी तक रावण का वध हुआ ही कहाँ है ? तुम्हारी माया का सागर चारों ओर है। उसमें यह शरीर ही लंका है। उस शरीर में यह अहंकार रावण बन बैठा है जो प्रतिदिन अपना डंका बजा रहा है। यह स्वार्थी मेघनाद है। यह आलस्य कुम्भकर्ण है। हे प्रभो, जब तक इन सबका वध नहीं होगा तब तक भू-भार का हरण कहाँ होगा। इस भाँति जन-जन का सब काज पूर्ण सफल करो और हे प्रभो, मेरे मनरूपी अवध में बैठकर अपना राज करो। सीता लक्ष्मण के साथ सदा मेरी आँखों में रहना इसी रूप से हे नाथ मेरे हृदय में विचरना। हे मेरे राम मेरे रोम-रोम में रमो और मुझे कृतार्थ करो।

ये पुण्यसलिला त्रिपथगा गङ्गा नदी दीख रही हैं, जिनके तटपर नाना प्रकारकी पक्षी कलरव करते हैं और द्विजवृन्द पुण्यकर्मोंमें रत हैं। इनके तटवर्ती वनके वृक्ष सुन्दर फूलोंसे भरे हुए हैं।

अब नीचे गङ्गा-यमुनाकी धारा स्पष्ट दीख रही है। वह संगमके आगे महर्षि भरद्वाजका आश्रम है। श्रीरामकी इच्छानुसार विमान कुछ और आगे बढ़ गया। दूरसे देखकर श्रीरघुनाथने संकेत किया- वह पुण्य सलिला सरयू और उसके तटपर इक्ष्वाकु कुलकी अमित गौरवशालिनी पुरी अयोध्या।

गंगा तट पर प्रभु प्रयाग पहुँचे। वहाँपर पुष्पकयान को उतारा और प्रभु श्रीराम भरद्वाज आश्रम में पहुँचे।

वह विमान भरद्वाज आश्रमके समीप उतरा। ब्रह्मचारियोंने दौड़कर महर्षिको सूचना दी। वे उत्सुकतावश विमानके उतरते ही समीप आ गये थे।

इक्ष्वाकु गोत्रीय दाशरथि राम श्रीचरणोंमें प्रणत है। श्रीरामने सनुज पृथ्वीमें पड़कर प्रणिपात किया। महर्षिने लगभग दौड़कर उठाकर हृदयसे लगाया। गद्‌गद् स्वर से बोले- वत्स। तुम्हारे सुयशसे त्रिभुवन सदा पवित्र होता रहेगा। तुमने दशग्रीव-दलन करके सुर-मुनियोंका संकट समाप्त कर दिया।

तपस्याके धनी भरद्वाज मुनिको प्रणाम करके श्रीरामने उनसे पूछा- भगवन्। आपने अयोध्यापुरीके विषयमें भी कुछ सुना है ? वहाँ सुकाल और कुशल-मङ्गल तो है न ? भरत प्रजापालनमें तत्पर रहते हैं न ? मेरी माताएँ जीवित हैं न ?

तब महामुनि भरद्वाज ने कहा- रघुनन्दन। भरत आपकी आज्ञाके अधीन हैं। वे जटा बढ़ाये आपके आगमनकी प्रतीक्षा करते हैं। आपकी चरणपादुकाओंको सामने रखकर सारा कार्य करते हैं। आपके घरपर और नगरमें भी सब कुशल है।

भरत के राजकार्य की कथा अनोखी है, चारों युगों में तीनों लोकों में कभी ऐसी शासन व्यवस्था नहीं सुनी गई। भरत सिंहासन, खाट, चतुर्दोल आदि सभी छोड़े हुए हैं, उनके पास हाथी है, घोड़ा है, फिर भी पैदल चलते हैं। पेड की छाल पहनते हैं और सिर पर जटा रखे हुए हैं। शरीर पर अगुरु चन्दन आदि का लेप नहीं करते, भरत राजा होकर भी राजभोग नहीं करते, मुनियों जैसा आचरण करते हैं मानो महायोगी हो। रत्न-सिंहासन पर रेशमी वस्त्र बिछाकर उस पर तुम्हारी पादुका रख उस पर दंड और छत्र लगाते हैं। पादुका से नीचे काले हिरन की चाम पर बैठकर वशिष्ठ और नारद को लेकर राजकर्म में लगे रहते हैं। राज-सभा का कार्य समाप्त कर जब भरत घर जाते हैं तब तुम्हारे खड़ाऊँ से वह बिदा माँगते हैं।

वत्स। वे तुम्हारे अनुज हैं; किंतु उनके नियम, व्रत, तपके सम्मुख सभी मुनियोंका तप तुच्छ हो गया है। महर्षिने पुलकित तन वर्णन किया- वे जटा वल्कल धारी तुम्हारे ध्यानमें तल्लीन भुवन वन्दनीय हैं। वे तुम्हारी आतुर प्रतीक्षा कर रहे हैं; किंतु आज तुम अपने आतिथ्यका अवसर मुझे दो। कल प्रात: यहाँसे प्रस्थान करना।

पहले जब आप महान् वनकी यात्रा कर रहे थे, उस समय आपने चीरवस्त्र धारण कर रक्खा था और आप दोनों भाइयोंके साथ तीसरी

केवल आपकी स्त्री थी। आप राज्यसे वञ्चित किये गये थे और केवल धर्मपालनकी इच्छा मनमें ले सर्वस्व त्यागकर पिताकी आज्ञाका पालन करनेके लिये पैदल ही जा रहे थे। सारे भोगोंसे दूर हो स्वर्गसे भूतलपर गिरे हुए देवताके समान जान पडते थे। शत्रुविजयी वीर। आप कैकेयीके आदेशके पालनमें तत्पर हो जंगली फल-मूलका आहार करते थे, उस समय आपको देखकर मेरे मनमें बड़ी करुणा हुई थी। रघुवीर। आपने जनस्थानमें रहकर जो विपुल सुख-दु:ख उठाये हैं, वे सब मुझे मालूम हैं।

वहाँ रहकर आप ब्राह्मणोंके कार्यमें संलग्न हो समस्त तपस्वी मुनियोंकी रक्षा करते थे। उस समय रावण आपकी इस सती-साध्वी भार्याको हर ले गया।

धर्मवत्सल। मारीचका कपटमृगके रूपमें दिखायी देना, सीताका बलपूर्वक अपहरण होना, इनकी खोज करते समय आपके मार्गमें कबन्धका मिलना, आपका पम्पासरोवरके तटपर जाना, सुग्रीवके साथ आपकी मैत्रीका होना, आपके हाथसे बालिका मारा जाना, सीताकी खोज, पवनपुत्र हनुमान्‌का अद्‌भुत कर्म, सीताका पता लग जानेपर नलके द्वारा समुद्रपर सेतुका निर्माण, हर्ष और उत्साहसे भरे हुए वानर-यूथपतियोंद्वारा लमापुरीका दहन, पुत्र, बन्धु, मन्त्री, सेना और सवारियोंसहित बलाभिमानी रावणका आपके द्वारा युद्धमें वध होना, उस देवकण्टक रावणके मारे जानेपर देवताओंके साथ आपका समागम होना तथा उनका आपको वर देना- ये सारी बातें मुझे तपके प्रभावसे ज्ञात है।

मेरे प्रवृत्ति नामक शिष्य यहाँसे अयोध्यापुरीको जाते रहते हैं (अत: मुझे वहाँका वृत्तान्त मालूम होता रहता है), हे श्रीराम। यहाँ मैं भी आपको एक वर देता हूँ (आपकी जो इच्छा हो, उसे माँग लें) आज मेरा अर्घ्य और आतिथ्य-सत्कार ग्रहण करें। कल सबेरे अयोध्याको जाइयेगा।

भगवन। यहाँसे अयोध्या जाते समय मार्गके सब वृक्षोंमें असमय में भी फल उत्पन्न हो जायँ और वे सब-के-सब मधुकी धारा टपकानेवाले हों। उनमें नाना प्रकारके बहुत-से अमृतोपम सुगन्धित फल लग जायँ।

वानरों का भोजन है फल, तुम्हारे तपोवन के वृक्षों में तरह-तरह के फल फले हैं। इस देश में जितने आम-कटहल के वृक्ष हैं उनमें असमय फल-फूल पत्तियाँ निकल आवें। सूखे पेड़ भी फल-फूल पत्तियों से मँजरित हो उठें। चारों ओर की डालियों पर मधुमक्खियों के छत्ते लग जायँ। नन्दीग्राम छोड़कर अयोध्या जाने के रास्ते वानरों को फल खाने को मिले। राम ने जो-जो वर माँगा ऋषि ने वही-वही वर दिया और बातचीत से एक दूसरे के मन को प्रसन्न करने लगे।

भरद्वाजजीने कहा- ऐसा ही होगा। उनके इस प्रकार प्रतिज्ञा करते ही- उनकी उस वाणीके निकलते ही तत्काल वहाँके सारे वृक्ष स्वर्गीय वृक्षोंके समान हो गये।

जिनमें फल नहीं थे, उनमें फल आ गये। जिनमें फूल नहीं थे, वे फूलोंसे सुशोभित होने लगे। सूखे हुए वृक्षोंमें भी हरे-हरे पत्ते निकल आये और सभी वृक्ष मधुकी धारा बहाने लगे। अयोध्या जानेका जो मार्ग था, उसके आस-पास तीन योजनतकके वृक्ष ऐसे ही हो गये।

महर्षिका अनुरोध भी आदेश ही था। सबको त्रिवेणी स्नान करना था। श्रीरामने हनुमानको समीप बुलाया- पवनपुत्र। तुम अयोध्या चले जाओ। मार्गमें श्रृङ्गबेरपुरमें मेरे सखा निषादराज गुहको मेरे सकुशल लौटनेका समाचार देते जाना।

नन्दिग्राममें भरतके समीप मानववेशमें जाओ। तुम्हारे अपने वेशसे तो वे परिचित हो चुके हैं। उनको मेरे सकुशल लौटने, सीताकी प्राप्ति तथा दशग्रीव वधका पूरा समाचार देना और ध्यानसे उनके मुखको देखना कि उनकी भङ्गी कैसी है ? वे क्या चाहते हैं ? राजवभनमें सब लोग सकुशल तो हैं न ?

वे क्या चाहेंगे देव ? हनुमानको आश्चर्य हुआ ?

वे बहुत संकोची हैं, दृढ़ निश्चयी हैं। उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि मैं चौदह वर्ष व्यतीत होते ही अयोध्या न पहुँचा तो वे देहत्याग देंगे। श्रीरामने समझाया- मैं मध्याह्नके लगभग अयोध्यासे चला था। उसी समय वहाँ उतरना चाहता हूँ, किंतु यदि ऐसा लगे कि भरत इतनी प्रतीक्षा नहीं करेंगे तो मुझे अवश्य बतलाना, पुष्पक सूर्यकी प्रथम किरणके साथ वहाँ उतरेगा।

श्रृङ्गवेरपुरमें पहुँचकर वनवासी निषादराज गुहसे भी मिलना और मेरी ओरसे कुशल कहना।

मुझे सकुशल, नीरोग और चिन्तारहित सुनकर निषादराज गुहको बड़ी प्रसन्नता होगी; क्योंकि वह मेरा मित्र है। मेरे लिये आत्माके समान है।

भरतके पास जाकर तुम मेरी ओरसे उनका कुशल पूछना और उन्हें सीता एवं लक्ष्मणसहित मेरे सफलमनोरथ होकर लौटनेका समाचार बताना। सौम्य। फिर भरतसे यह भी निवेदन करना कि श्रीराम शत्रुओंको जीतकर परम उत्तम यश पाकर, सफलमनोरथ हो राक्षसराज विभीषण, वानरराज सुग्रीव तथा अपने अन्य महाबली मित्रोंके साथ आ रहे हैं और प्रयागतक आ पहुँचे हैं।

वहाँके सारे वृत्तान्त तथा भरतकी चेष्टाएँ तुम्हें यथार्थरूपसे जाननी चाहिये। मुखकी कान्ति, दृष्टि और बातचीतसे उनके मनोभावको समझनेकी चेष्टा करनी चाहिये। समस्त मनोवाञ्छित भोगोंसे सम्पन्न तथा हाथी, घोड़े और रथोंसे भरपूर बाप-दादोंका राज्य सुलभ हो तो वह किसके मनको नहीं पलट देता ?

यदि कैकेयीकी संगति अथवा चिरकालतक राज्यवैभवका संसर्ग होनेसे श्रीमान् भरत स्वयं ही राज्य पानेकी इच्छा रखते हों तो वे रघुकुलनन्दन भरत बेखटके समस्त भूमण्डलका राज्य करें (मुझे उस राज्यको नहीं लेना है। उस दशामें हम कहीं अन्यत्र रहकर तपस्वी जीवन व्यतीत करेंगे)।

वानरवीर। तुम भरतके विचार और निश्चयको जानकर जबतक हमलोग इस आश्रमसे दूर न चले जायँ तभीतक शीघ्र लौट आओ।

श्रीरघुनाथके इस प्रकार आदेश देनेपर पवनपुत्र हनुमान्‌जी मनुष्यका रूप धारण करके तीव्रगतिसे अयोध्याकी ओर चल दिये।

पवनपुत्र प्रणाम करके चले गये। पुष्पक उतरनेसे पहिले ही श्रीरघुनाथने वानरोंको समझा दिया था कि अबसे अयोध्या रहने तक सब सामान्य मनुष्य वेशमें ही रहेंगे। विभीषण भी सामान्याकार हो गये थे। सबने त्रिवेणी स्नान, पूजन किया। महर्षि भरद्वाजने अपनी सिद्धियोंका स्मरण करके श्रीरामका तथा वानरोंका भी भव्य सत्कार किया। वह रात्रि वहाँ आनन्दपूर्वक व्यतीत हुई।

अपने पिता वायुके मार्ग- अन्तरिक्षको, जो पक्षिराज गरुड़का सुन्दर गृह है, लाँघकर गङ्गा और यमुनाके वेगशाली संगमको पार करके श्रृङ्गवेरपुरमें पहुँचकर पराक्रमी हनुमान्‌जी निषादराज गुहसे मिले और बड़े हर्षके साथ सुन्दर वाणीमें बोले- तुम्हारे मित्र ककुत्स्थकलभूषण सत्यपराक्रमी श्रीराम सीता और लक्ष्मणके साथ आ रहे हैं और उन्होंने तुम्हें अपना कुशल-समाचार कहलाया है। वे प्रयागमें हैं और भरद्वाजमुनिके कहनेसे उन्हींके आश्रममें आज पञ्चमीकी रात बिताकर कल उनकी आज्ञा ले वहाँसे चलेंगे। तुम्हें यहीं श्रीरघुनाथजीका दर्शन होगा। गुहसे यों कहकर महातेजस्वी और वेगशाली हनुमान्‌जी बिना कोई सोच-विचार किये बड़े वेगसे आगेको उड़ चले। उस समय उनके सारे अङ्गोंमें हर्षजनित रोमाञ्च हो आया था।

इति लंकाकाण्ड समाप्त

भारतीय शास्त्र रूपी अगाध समुद्र मे श्रीमद् भगवत गीता एवं
श्रीराम चरित मानस जैसे दोनो रत्न हमे उपलब्ध है।

पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं।

रामकथा खण्ड-२

उत्तराकाण्ड

जो शास्त्र वचन हमारे जीवन के लिये उपयोगी नहीं है वह शास्त्र भी निरर्थक है।

* विषय-सूची *

१) अयोध्या में श्रीराम-भरत का मिलाप ५४१

२) श्रीराम का राज्याभिषेक ५५४

३) राम राज्य ५६३

४) सम्बन्धियोंका अतिथियों का सत्कार ५७३

५) माताओंका परलोक प्रस्थान ५७५

६) संत समागम, सत्संग ५७७

७) काक भुशुण्डि प्रसंग ५८०

देखने की प्रीति स्वार्थ में बाधा पडते ही टूट जाती है।

रामराज्य में दूध की नदियाँ बहती थी, लोग केवल पीते ही नहीं, नहाते भी थे।

१) अयोध्या में श्रीराम-भरत का मिलाप- आज इतने दिनोंपर बोले हो तुम काक। माता कौशल्या आज बहुत दिनोंके पश्चात् प्रसन्न हैं। कबसे, कितने दिनोंसे वे इन कौओंके लिए अपने आँगनमें मधुर आहार रखती हैं। ये कौए बहुत चतुर हैं। आते हैं- अनेक-अनेक आते हैं; किंतु जब माता पूछती हैं- मेरे रामभद्र आ रहे हैं ? आ रहे हैं मेरे लक्ष्मण ? तो ये मौन बने रहते हैं। ये आहार लेते हैं और उड़ जाते हैं। माता देखती रहती हैं एकटक इनकी ओर।

हाय। मुझे अभागिनीके अमधन पता नहीं कैसे होंगे ? कहाँ क्या करते होंगे ? माताके अश्रु कहाँ सूख पाते हैं। ये तपस्विनी-उपासना गृह ही इनका आवास बन गया है। आंगनमें आती हैं तो काकोंसे शकुन जानना चाहती हैं, परन्तु काक कुछ भी तो संकेत नहीं करते। आज इतने दिनोंपर- लगता है युगों-कल्पोंके पश्चात् एक उत्तम काक आया है। पता नहीं क्यों माताको यह बहुत पहिचाना-बहुत परिचित लगता है। बहुत प्रिय लगता है। माता पूछते नहीं थक रहीं हैं इससे- मेरे राम- लक्ष्मण आ रहे हैं ? आ रही है सकुशल मेरी वधू सीता?

काँव। काँव काँव। माताको आज कौएका काँव, काँव बहुत श्रुति मधुर लगता है। लगता है, यह हाँ, हाँ, हाँ करता बोल रहा है। बोलता है और उड़ता है। उड़ता है और बोलता है। आहारको मुखही कम लगाता है। बोलता है और उड़कर मन्दिरके शिखरपर जा बैठता है। जैसे माताको आश्वासन ही देने आया हो।

जीजी। मेरे आँगनमें आज नीलकण्ठ उतर आया। माता सुमित्रा प्रसन्न आ गयीं हैं- देखती हूँ कि आपके यहाँ तो ऊपर क्षेमकरी (श्वेत चील) बराबर मण्डल बना रही है।

कहाँ ? माता कौशल्याने ऊपर गगनकी ओर देखा। अभी वे काक-शकुनमें ही मग्न थीं। नीलकण्ठ उतरा ? तब अवश्य मेरे राम लक्ष्मण आ रहे हैं। अवश्य आ रही है वधू सीता। आज यह काक भी कबसे मुझे हाँ, हाँ कहकर यही सन्देश दे रहा है। कहाँ तक आये होंगे वे?

अम्ब मैं बताऊँगी ? अचानक उर्मिलाने आकर दोनों सासोंकी चरण-वन्दना करके तनिक स्मितके साथ कहा।

सौभाग्यवती हो। सत्पुत्रवती हो। माता कौशल्याने आशीर्वाद दिया तो लज्जासे लाल हो गया मुख उर्मिलाका। बतला, तू क्या बतला रही थी ? माता कौशल्याने खींच कर छोटी बालिकाके समान उर्मिलाको हृदयसे लगाया।

अम्ब। सतीत्व तो नारी आपके इन श्रीचरणोंको स्मरण करके प्राप्त कर लेती हैं। झुककर चरणोंको हाथ लगाकर उर्मिलाने सिरसे लगाया- मुझे तो इनकी पावनरजका प्रसाद प्राप्त है। मैंने आज प्रात: स्वप्न देखा है कि आपके दोनों पुत्र जीजीके साथ बड़े भारी हंसपर बैठे गगनसे उतर रहे हैं। बहुत लोग उनके साथ उतर रहे हैं उस हंससे। मुझे लगता है, वे कहीं आकाश मार्गसे ही आ रहे हैं।

आकाश मार्गसे ? सुमित्राजी गम्भीर हो गयीं- वत्से। तेरी बात सत्य होनी चाहिये। अभी वह वानर लगभग सात दिन पूर्व बतला गया कि वत्स रामभद्र लंकामें संघर्षरत हैं। अपने कुलगुरुने उनके विजयी होनेकी भविष्यवाणी की। लंका निकट तो नहीं है। कल रामको लौटना चाहिये। आज उनके बनवासकी अवधि पूर्ण हो जायेगी। वह वानर पूरा पर्वत उठाकर आकाश मार्गसे लमा गया था। अवश्य वह मेरे पुत्रों तथा पुत्रवधूको भी अपने कन्धोंपर बैठाकर आकाश मार्गसे आ सकता है।

वत्से। तू अपनी छोटी सासको सम्भाल ले। माता कौशल्याने आग्रहपूर्वक कहा- तू ही कैकेयीको सम्हाल सकती है। वह बहुत पीड़ा सह चुकी। सबसे अधिक जो मानिनी थी, सबसे सम्मानित थी, उसीको अत्यन्त अपमान-भाजना दैवने बना दिया। वह अब पता नहीं क्या सोच बैठे।

अम्ब। मैं प्रथम उन पूज्याकी चरण-वन्दनाकर आयी। उर्मिलाने प्रसन्न मुख कहा- आज उनके उत्साहका पार नहीं है।

कल मेरा राम आवेगा। माता कैकेयीका उल्लास जागा है आज चौदह वर्ष पश्चात्- कैकेयी भले कुमाता सिद्ध हुई, राम जैसा सत्पुत्र सृष्टिमें दुर्लभ है। मैं भटक गयी थी। भूलसे मैंने भरतको अपना मान लिया; किंतु भरतने मुझे बुद्धि दे दी। राम मेरा रहा है और रहेगा। कल मेरा राम बनवाससे लौट रहा है। लौट रही है मेरी पुत्रवधू सीता। अब कोई आधा शब्द भी कैकेयीको कहनेका साहस नहीं कर सकता। मैं अपने पुत्र और पुत्रवधूका स्वागत करूँगी।

मन्थरे। मैंने अपने इन्हीं जले हाथों रामको वल्कल दिया था। माता कैकेयी उन्मादिनी हो उठती हैं बीच-बीचमें। यह उन्माद चित्रकूटसे लौटनेसे बना ही रहा है; किंतु आज उसमें आनन्दोद्रेक आ गया है- कल मैं अपने सारे आभरणोंसे अपनी पुत्रवधूको इन्हीं

हाथों सजाऊँगी। इसी भवनसे राम बन गये हैं। कल यहीं स्वागत करना है उनका मुझे।

कैकेयीको राजमाता बनना है। उन्मादमें अट्टहास कर उठती थीं प्राय: वे चित्रकूटसे लौटकर; किंतु आज हँसती हैं।राजमाता तो थी और है। कल सब देख लेंगे जब इसका राम आवेगा और माँ कहकर इसके पदोंमें प्रणाम करेगा।

आज मैं किसीका प्रमाद नहीं सह सकती। पूरे श्रमसे सदन सज्जित करो। उर्मिलाने बतलाया- आज वे अम्बा पुन: शासिका बन गयी हैं। क्षण-क्षणपर कहती हैं कि उनके पुत्र और पुत्रवधू कल आवेंगे।

वह ठीक कहती है। राम सदासे उसके रहे हैं। माता कौशल्याने प्रसन्न होकर कहा- सौभाग्यकी बात है कि वह इस सत्यको समझ गयीं। अब उसे आनन्द मिलेगा। राम तो उसका सम्मान सदा करते रहते हैं।

माण्डवीने मुझे अपने सदनमें आनेसे रोक दिया था। ठीक किया था उसने। उर्मिलाने बतलाया- वे कह रही थीं, मेरी पुत्रवधू कल आ रही है। मुझे क्या आवश्यकता है कि मैं किसीके सदनमें जाऊँ। अब सब स्वत: भागी आवेंगी यहाँ। मेरी पुत्रवधूको आ जाने दो।

मैं अभीसे भागी आयी हूँ अम्ब। उर्मिलाने कहा था।

वत्से। तू ही तो मेरा अवलम्ब रही है। माता कैकेयीने हृदयसे लगाया- तू सदा ऐसे ही आती रही है। यह सदन तेरा ही है।

अम्ब। समस्या माण्डवी जीजी की है। उर्मिलाने सुमित्रा और कौशल्या दोनोंको चौंका दिया- वे कलसे निर्जल हैं।

उसे क्या हुआ है ? आतुरतापूर्वक कौशल्याजीने पूछा- वह वैसे ही अत्यन्त कृशाङ्गी हो गयी हैं आये दिन व्रत करके। अब असमय उसे निर्जल रहनेकी क्यों सूझी है ? मैं अभी उसके समीप चलना चाहती हूँ।

आपके दूसरे पुत्र भरत नन्दिग्राममें निश्चय किये बैठे हैं कि यदि कल उनके अग्रज नहीं पधारते तो अवश्य वे देहत्याग कर देंगे। उर्मिलाने सामान्य स्वरमें बिना किसी चिन्ताके कह दिया- उन्होंने भी कलसे निर्जल व्रत रखा है। माण्डवी जीजीका निर्णय तो उनके अनुरूप है। वे कहती हैं- आर्यपुत्रकी चरणानुगामिनी रहना है इस किंकरीको। अत: समझना ही हो तो आपको नन्दिग्राम जाना पड़ेगा।

मुझे इसमें चिन्ता करनेकी बात नहीं दीखती। उर्मिलाने कह दिया- मुझे किञ्चित् भी सन्देह नहीं है कि कल जीजीके साथ आपके दोनों पुत्र आ जायेंगे। मेरा वाम नेत्र, वाम भुजा प्रात:से स्फुरित हो रही हैं।

ये अङ्ग तो मेरे भी स्फुरित हो रहे हैं। कौशल्याजीने कहा तो सुमित्राजीने सूचित किया कि उनकी भी यहीं स्थिति है। तब उर्मिलाने कहा- सबके शकुन मिथ्या नहीं हो सकते। छोटी अम्बाने भी यही कहा और माण्डवी जीजी भी यह स्वीकार करती हैं। आज मेरा उद्यान पुष्पोंसे लदा है।

इन चौदह वर्षोंमें मैं आज उत्तम पुष्प अर्चाके लिए पा सकी। कौशल्याजीने कहा- उद्यानसे कुसुम लाने वाली सेविका कह दिया करती थीं कि पूरा उद्यान शुष्क हो रहा है। कठिनाईसे कुछ श्रीहीन सुमन मिलते थे। आज उसने भी कहा कि उद्यान हरित-पुष्पित हो उठा है। आज प्रात:से पिक, पपीहेका स्वर सुनायी पड़ रहा है। यह उत्फुल्लता अयोध्यामें अकारण नहीं आयी है।

महर्षि वशिष्ठने महामन्त्रीसे पूछा- तुमने नगर-सज्जा प्रारम्भ कर दी सुमन्त्र ? कल अतिलौकिक यश अर्जित करके आ रहे वत्स रामभद्र का स्वागत करना है। उनके अभिषेकका मुहूर्त भी शीघ्र आ रहा है।

मैं श्रीचरणोंमें यही निवेदन करने आया था कि अभी तक कहींसे भी हमारे सम्राटके आगमनका कोई सम्वाद नहीं मिला है। सुमन्त्रने शिथिल स्वरमें कहा- प्रजाका जन-जन आतुर है अपने सम्राटका स्वागत करनेके लिए; किंतु हमने जो सम्वाद पानेके साधन नियुक्त किये उनमें किसीको अब तक सफलता नहीं मिली। दक्षिण कोसलसे आगे तक हमारे चर नियुक्त हैं।

सुमन्त्र। केवल भौतिक सूत्र सदा सत्य नहीं हुआ करते। महर्षि अत्यन्त गम्भीर हो गये- भरत जैसे महातापसका निश्चय टूटेगा ? और भरतको शरीर त्याग करना पड़े तो सृष्टि सुरक्षित रहेगी ? राम सत्यसंकल्प हैं। उन्हें कल आना है। कोई शक्ति कहीं नहीं जो उन्हें कल अयोध्या पहुँचनेसे रोक ले। अत: तुम स्वागतकी सज्जा करो।

महर्षि वशिष्ठके इस आदेशका अयोध्यापर बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ा। सुमन्त्रने प्रजा-प्रधानोंको बुलाकर महर्षिका आदेश सुना दिया। मन्त्रियों तथा सेवकोंको कार्यमें लगाया दिया। ब्राह्मणोंने एक स्वरमें महर्षिके मतका समर्थन किया- अवश्य रामभद्र कल आ रहे हैं। हमारी आवहनीय अग्नियाँ बिना आहुति प्रज्वलित हो उठी हैं। अब धूम्रका लेश नहीं है उनमें।

अयोध्यामें कोई शिशु नहीं था। श्रीरामके वन जानेके पश्चात् सभी वर्णके लोगोंने भोग-विरत संयमका जीवन व्यतीत किया था। अत: चौदह वर्षसे कम आयुके बालक थे ही नहीं। इन चौदह वर्षोंमें महाराज दशरथके अतिरिक्त किसीने शरीर-त्याग भी नहीं किया था। सबके प्राण श्रीरामके दर्शनार्थ अटके थे।

सेवकोंको कार्य मिल गया था। उन्हें नगर, पथ, चतुरष्क सज्जित करने थे। नारियाँ और पुरुष-अयोध्यामें तो सभीका श्रीजानकी तथा श्रीरामसे कोई-न-कोई सम्बन्ध था। सब उत्साहमें आ गये थे। सबके हृदयसे निराशान्धकार अदृश्य हो गया था। सब गृह, द्वार, सम्मुखका पथ सजानेमें, स्वागत समारम्भमें लग गये थे। सबके मुखपर एक ही चर्चा- हमारे सम्राट कल आ रहे हैं। त्रिलोक-कण्टक रावणको समाप्त करके आ रहे हैं।

वे कहाँ तक आ गये हैं ? इस प्रश्नका उत्तर किसीके समीप नहीं था। लेकिन एक सुदृढ़ उत्तर था सबके समीप- महामन्त्री सुमन्त्र बिना विश्वसनीय सूत्रके तो स्वागत-सज्जामें नहीं लगे हैं।

सुमन्त्रने कुछ कहना अस्वीकार कर दिया था। अत: लोगोंने इसमें महामन्त्रीकी राजनैतिक निपुणताका अनुमान कर लिया- हमारे सम्राट सुरजयी रावणको समाप्त करके आ रहे हैं। मायावी राक्षस मार्गमें कहीं कोई उत्पात कर सकते हैं। अत: अयोध्या पहुँचनेसे पूर्व उनकी यात्रा गुप्त रखना उचित है। सुरक्षाकी दृष्टिसे बहुत आवश्यक है।

सम्राट कल आ रहे हैं। प्रजामें-से किसीके मनमें सन्देह नहीं था। अब अपने ढङ्गसे स्वागतकी सज्जामें लगे थे।

वे सदासे ही तो हमारे रहे हैं। सबसे अधिक स्नेह रहा है उनका हमपर। सबको अयोध्यामें तो सदा यही लगा है- वे आते ही सीधे हमारे सदन आ सकते हैं।

वे स्नेहमयी अब सम्राज्ञी होंगी। श्रीजनकनन्दिनीके सम्बन्धमें भी सबके ऐसे ही भाव हैं- उन्होंने तो अयोध्या आनेके पश्चात् सबसे पहिले हमें अपना बना लिया था। अब भी आते ही उनकी दृष्टि हमें ढूंढेंगी।

श्रीरामके सखा है, सम्बन्धमें बड़े अथवा छोटे हैं, नारियोंमें भी सब अपना सम्बन्ध मानती हैं। सबको श्रीसीताराम अपने अत्यन्त प्रिय लगते हैं। सबको लगता है, दोनों सबसे अधिक हमारा ध्यान रखते हैं। अत: सबको अपने सम्बन्धके अनुकूल उनका स्वागत करना है। सब गृह आशा लिये हैं- वे यहाँ पधारेंगे।

अयोध्यामें घर-घर, जन-जन आकुल प्रतीक्षा लिये पूरे उत्साहसे स्वागत-सज्जामें व्यस्त है।

श्रीराम के लौटने की अवधि का एक ही दिन बाकी रह गया अतएव नगर के सभी लोग आतुर और अधीर हो रहे थे। राम के वियोग में सभी स्त्री-पुरुष दुबले हो गये और जहां तहां एक ही सोच विचार चल रहा था कि राम अभी तक क्यों नहीं आये ? एका-एक सब तरफ से सब सुन्दर शकुन होने लगे और सबके मन प्रसन्नचित्त हो उठे। पूरा अवध चारों ओर से रमणीक हो उठा। ये सब चिन्ह प्रभु श्रीराम के आगमन की सूचना देने लगे।

प्राणों की आधार रूप अवधि का एक ही दिन शेष रह गया यह सोच सोच कर भरत के मन में अपार दु:ख हुआ। क्या कारण कि मेरे स्वामी मेरे नाथ प्रभु श्रीराम अभी तक नहीं आये ? मुझे कुटिल समझकर मुझे कही भुला तो नहीं दिया। लक्ष्मण ही बड़े धन्य एवं बड़भागी है जो प्रभु श्रीराम के चरणों में सेवा करते है, उनके प्रेमी है। मुझे तो प्रभु ने कपटी और कुटिल जानकर मुझे अपने साथ नहीं लिया। यदि प्रभु मेरी करनी के बारे में सोचे तो सौ करोड कल्पों तक भी मेरा निस्तार नहीं। मुझे आशा है और पूर्ण विश्वास है मेरे प्रभु श्रीराम सेवक का अवगुण कभी नहीं देखते वे तो दीनबन्धु और अत्यन्त ही कोमल स्वभाव के है। भरत की जटाये बिखर रही है शरीर बेहाल है। खुशी के दिन का इन्तजार कर रहे है। अब अधिक वियोग नहीं सहा जा रहा है। भरत के हृदय में पूर्ण रूप से भरोसा है कि राम अवश्य समय पर पहुंच जायेंगे पर लगता है अवधि बीत रही है फिर भी यदि भरत के प्राण रह जायेंगे तो जगत में भरत के समान कौन नीच होगा ? श्रीराम के विरह समुद्र में भरत का मन डूब रहा है। श्रीराम के बिना पांव उठते नहीं, हाथ बार-बार मल रहे हैं। कब उन चरणों की सेवा का सौभाग्य प्राप्त करूं। बार-बार सोचते है जिसकी मां हठपूर्वक छोटे को राज्य दिलाती है और दासी की बातों में आकर बडे को वन भिजवाया। विष बूटी को अमृत समझकर जिसने पी लिया है ऐसी मां की सन्तति रो-रो कर जी रही है। जिस घर में फूट का राज्य हो वही घर उजड जाता है। रत्नों का भरा भंडार भी वहां पर कंकड या पत्थर हो जाता है। माता सुमित्रा ही अवध है स्वर्ग समान है। माता

हो तो सुमित्रा जैसी जो सच्ची माता है। यही माता सिंहनी समान है। रघुकुल की महिलाओं में आदर्श बखानी जाती है। ऐसी आदर्श माता जो सौतेले पुत्र की सेवा में अपने पुत्र को भेजती है। जिस घर में ऐसी माता हो वो तो देव स्थान मन्दिर समान है। उसी मां के लक्ष्मण जैसी सन्तान उत्पन्न होती है। भरत सोचते हैं हे लक्ष्मण तू ही सच्चा भाई है जिसने भ्रार्तपन निभाया। जिसने जीवन १४ वर्षों तक तपस्वी बनकर बिताया। तू तो वह है जिसने वन के कांटों को अपनी फूंक से उडाया है। बडे भाई की सेवा पथ में दिन रात अपनी आंखे बिछाई है। रण में तुझ पर जो बीती वह भरत ने सब सुनली जानली। हे अनुज लक्ष्मण तू धन्य है तूने वीरोचित कर्म किये। तेरे सदधर्म पालन से संसार सदा शिक्षा लेगा। मैंने तो हाय जन्म लेकर भी इस जग में कौनसा सुकृत किया। एकान्त तपस्या कर कर भी मैंने श्रीराम की कौनसी सेवा करी। हे मेरे मन अब भी सचेत हो जा। हर दिन यह कर्म क्षेत्र है। अब योगियों की भांति इस शरीर का त्याग कर उस प्रभु के साथ आत्मा के तार जोडुंगा। मेरे उन आराध्य देव के चरणों में अब अपने प्राणों के फूल चढ़ाऊँगा। आत्मोसर्ग कर अब यह देह त्याग करूँगा। अतएव इन सब जल अग्नि पृथ्वी सूर्य चन्द्रमा को साक्षी कर प्रभु श्रीराम के चरणों की शपथ अन्तिम प्रणाम कर यही प्रण निभा रहा हूँ कि १४ वर्षों कि अवधि पूरी हो रही है और प्रभु राम अभी तक अवध में नहीं पधारे है तो अब इस शरीर को प्राण छोड़ प्रभु के चरणों में जायेंगे।

अचिन्य पराक्रम श्रीरामको अयोध्या पहुँचनेसे कोई अटका सकता है, यह असम्भव है। भरतकी आस्था अविचल थी- वे यदि कल यहाँ नहीं आते हैं तो इसका केवल एक ही अर्थ है कि उन्होंने भरतको अपने श्रीचरणोंकी सन्निधिमें रखनेका अधिकारी नहीं समझा है। मेरे मनमें ही कहीं कपट है, अग्रजके प्रति कुटिलता है, राज्यकी छिपी कामना है।

श्रीराम भारत-भूमिसे भी दूर लमामें युद्ध व्यस्त हैं, यह बात भरतको विचलित नहीं करती। उनका हृदय एक ही रट लगाये है- उन सर्वसमर्थको संग्राम रोकेगा ? वे परमोदार बहाना बना सकते हैं न आनेका; क्योंकि किसीको अयोग्य, अनधिकारी घोषित कर देना उनके स्वभावमें नहीं है। वे अपनी विवशता ही बतलावेंगे; किंतु है वह तेरी अयोग्यता। तुझे अपनाने योग्य उन्होंने नहीं समझा।

वे हनुमान आये थे। उन्होंने कहा था। लेकिन कुछ भी कहा हो हनुमानने, भरतका हृदय यह माननेको प्रस्तुत नहीं है कि श्रीराम आना चाहेंगे तो उनको कोई भी परिस्थिति रोक सकेगी। एक आशा अवश्य उठती है- हनुमान आकाश मार्गसे पर्वत लेकर आये थे। वे पर्वत लेकर उसी प्रकार लंका चले गये थे। वे इसी प्रकार आकाश मार्गसे श्रीरामलक्ष्मणको ले भी तो आ सकते हैं।

माना लो, लंकाका युद्ध नहीं ही समाप्त हुआ है। क्या बाधा है ? हृदयके तर्क बड़े अटपटे हैं- वे श्रीरघुनाथ अयोध्या आकर अपना राज्य सम्हाल लें तो भाइयोंको, अयोध्याकी विजयवाहिनीको भेज दे सकते हैं; किंतु कुलगुरुने कहा है, किसीके जानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। तब लंकाका युद्ध अवश्य समाप्त हो गया होगा। आज तो अवधिका अन्तिम दिन है। कल आना ही चाहिये उन अवधेशको।

चित्रकूट तक प्रभुके आनेका कोई समाचार नहीं है। निषादराजका सन्देश आया है- वन्य लोग और आगे तक पता लगानेके प्रयत्नमें है। सायंकाल तकका समाचार अवश्य रात्रिके प्रथम प्रहरमें अयोध्या पहुँच जायगा।

श्रीराम कहाँ हैं, हमारे चर कुछ पता नहीं लगा सके हैं। हम प्रयत्नमें है। दक्षिण कौशलसे मातामहका सन्देश आया है- यह बहुत पहिले पता लग गया था कि विराध जैसे विकट दानवको मारकर श्रीरामने दण्डकारण्यमें प्रवेश किया था। जो वानर रात्रिमें अयोध्या पहुँचा था, उसके द्वारा प्राप्त सन्देश सत्य होना चाहिये।

भरतको कोई अनर्थकारी पद नहीं उठाना चाहिये। सम्भव है, वत्स रामभद्रको कुछ थोड़े दिन अधिक लग जायँ; किन्तु जिन्होंने किष्किन्धाके अजेय-प्राय बालिको मार दिया, खर-दूषणका ससैन्य संहार किया, दशग्रीव अवश्य उनके करोंसे समरशैया प्राप्त करेगा। मातामहका आश्वासन देना उचित है- हमारे चर सुदूर दक्षिणकी ओर गये हैं; किन्तु अत्यन्त दुर्गम अरण्य होनेके कारण उनके लौटनेमें विलम्ब होगा। भरतको कमसे कम उनके लौटनेकी प्रतीक्षा करनी चाहिये। चरोंके लौटते ही हम अयोध्या आ रहे हैं।

श्रीरामभद्रके लौटते ही हमें सन्देश दिया जाय। हम उनके अभिषेकमें सम्मिलित होनेको उत्सुक हैं। महाराज सुमित्रका सन्देश उचित है। बहुत दूर है विदर्भ। वे मातामह उतनी दूरसे कैसे अनुमान लगा सकते हैं कि अयोध्याकी स्थिति क्या है और अयोध्याके वनवासी सम्राट कहाँ हैं। प्रत्येक महीने उनके दूत आते रहे हैं। हनुमानके अयोध्या आनेके पहिले उनका दूत लौट गया था। अब अवधि समाप्त होनेको आयी तो उनका दूत आना ही था। वह लौटनेकी त्वरामें है; किंतु क्या कहा जाय उसे ? अयोध्यामें तो स्वयं किसीको पता नहीं है।

प्रतिमास आते हैं जनकपुरके दूत। महाराज विदेह राज्यकी भी अवस्थाका पता रखते रहे हैं। वे अत्यन्त सन्तुष्ट हैं अयोध्याके

सुप्रबन्धसे। उन्होंने बार-बार कहलाया है- कुमार भरत मिथिलाको कोई सेवासूचित करते संकोच नहीं करें। यहाँकी पूरी सेना और कोष अयोध्याका ही है।

अब वे श्रीरामके लौटनेका समाचार जानना चाहते हैं, यह स्वाभाविक है। उनका चर हनुमान द्वारा प्राप्त समाचार लेकर चला जाय, यह तो उचित नहीं हो सकता। उसे कल तकके लिए आग्रहपूर्वक रोका ही जा सकता था। कल सायंकाल तक उसे समाचार मिलेगा। भरतने सोचकर दीर्घ श्वास ली- पता नहीं दैव उसे क्या समाचार देने वाला है।

कैकयसे भी चर आये। शत्रुघ्नसे यह समाचार पाकर भरत प्रसन्न नहीं हुए थे। शत्रुघ्नने कहा था- वे सामान्य यात्रियरेंके वेशमें आये हैं। राज्यकी पान्थशालामें रुके हैं। अपने गुप्तचरोंकी उनपर बराबर दृष्टि है।

उनको उपरिचित ही रहने दो और उनके लौटनेमें अवरोध मत उत्पन्न करो। भरतने आदेश दे दिया; क्योंकि अयोध्याके गुप्तचरोंकी सूचना थी- कैकयके चर कोई अभिसन्धि लेकर आये नहीं लगते हैं। उनकी परस्परकी चर्चासे पता लगा है कि उनके युवराज युधाजित अयोध्या हमारे सम्राटके आगमनके पूर्व आनेमें अपमानकी आशमा करते हैं। वहाँके महाराज अश्वपतिका कहना है- कन्याने हमें सम्राटके स्वागतसे भी वञ्चित कर दिया। वे सम्राटके अभिषेकोत्सवमें आना चाहते हैं। उसकी तिथि गुप्त रुपसे जाननेको आये हैं; क्योंकि उन्हें आशा नहीं है कि कैकय नरेशको इस अवसरपर भी आमन्त्रण प्राप्त होगा।

आर्य। नाना प्रदेशोंसे विख्यात कलाजीवी आ रहे हैं। उनमें-से अधिकांश अयोध्यामें बस जानेको उत्सुक हैं। शत्रुघ्नके समीप बहुत अधिक सूचनाएँ आज थीं- सुर वन्दित सुप्रसिद्ध तपस्वी, मुनिगण आ रहे हैं। अनेक आ गये हैं और बहुत अधिकके अन्तेवासी कुलगुरुसे अनुमति लेने आये हैं। कुलगुरुने सबको आ जानेकी अनुमति दे दी है।

कलाजीवियोंका, विद्वानोंका समुचित सत्कार होना चाहिये। उनके आवास एवं निर्वाहकी उपयुक्त व्यवस्था राज्यका कर्तव्य है। भरतने कहा- तापस, मुनिगण जहाँ उटज बनाना चाहें, उनको असुविधा एवं समोच न हो, इस प्रकार उनकी व्यवस्था करो। उन वीतराग वन्दनीयोंको प्रतीत नहीं होना चाहिये कि प्रशासन उन्हें परिग्रहके लिए प्रलब्ध कर रहा है।

आर्य। सरिताओं तथा सरोवरोंका जल सहसा सुनिर्मल हो गया है। शत्रुघ्नने अब दूसरे प्रकारकी सूचनाएँ देनी प्रारम्भ कीं- शुष्कप्राय उद्यान ही नहीं, वनके वृक्ष- लता भी फलों-पुष्पोंसे लद उठे हैं। गायें प्रसन्न हैं और अब उनके लिए वृषभोंमें संघर्ष होने लगा है।

वर्षोंके पश्चात् पक्षियोंने घोंसले बनाने प्रारम्भ किये हैं। इसका अर्थ ही है कि अब वे अण्डे देने वाले हैं। शत्रुघ्नने उत्साहपूर्ण स्वरमें सुनाया- अपने अश्वोंने, गजोंने कलसे पूर्ण आहार लेना प्रारम्भ किया है। अब उनका प्रसन्न स्वर अश्वशाला तथा गजशालाको गुञ्जित कर रहा है। उनके सेवकोंमें उत्साह आया है। अश्वशाला तथा गजशालाके निरीक्षकोंने कहा है- श्यामकर्णोंका हींसना, सुलक्षण गजोंका हर्षित होकर झूमना अत्यन्त शुभ सूचक है। अवश्य अपने सम्राट विजयी होकर पधार रहे हैं।

पालित पक्षी तक पूछते हैं- राम आ गये ? शत्रुघ्नने अपनी समस्या सूचित की- कृषक प्रजाके प्रतिनिधि उपालम्भ देने आने लगे हैं। उनके क्षेत्रोंमें उत्पादन बहुत अधिक हुआ है। वे कहते हैं कि जलाशयों के समीप रखा उत्पादनका षष्ठमांश उठाने राजकर्मचारी नहीं पहुँच रहे हैं। अब उन्हें अधिक समय तक इस राजकीय देयकी सुरक्षाका दायित्व वहन करना पड़ता है। साथ ही उत्पादन अधिक होनेके कारण उन्हें अधिकार मिलना चाहिये कि अपनी आवश्यकतासे अधिकको वे अपने आनेवाले सम्राटकी सेवामें अर्पित कर सकें।

अधिक स्वीकार नहीं किया जाना चाहिये। भरतने आदेश दिया- ऐसा करना होगा के स्वयं सम्राट ही करेंगे। अवश्य ही राजकीय भाग जलाशयोंके किनारोंसे उठाया जाना चाहिये। इसमें इतना अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिये कि जिनके भागसे अनुमान हो कि उनके पास वर्षभरको पर्याप्त नहीं रहा है, उन्हें कर्मचारी वहीं राजकीय भागसे पर्याप्त उपहार अर्पित कर दिया करें।

सबसे कठिन समस्या आकरों (खदानों) की है। शत्रुघ्न। उनके अधिपतियोंने आवेदन किया है- भूगर्भसे श्रमपूर्वक प्राप्त धातुओं तथा मणिरत्नोंपर ही हमारा अधिकार है। अकस्मात् भूमिमें ऊपर जो धातुएँ प्रकट हो गयीं है, गिरिपर जो मणियाँ, रत्न चमकने लगे हैं, वे तो भूदेवीने- अपने प्रिय सम्राटको उपहार दिये हैं। प्रशासनको उन्हें शीघ्र उठा लेना चाहिये, जिससे हम अपना कार्य सुगमतापूर्वक कर सकें।

उदधिके तटीय भागके लोगोंने मुक्ता, दुर्लभतम, शफ, प्रवालादि भेजने प्रारम्भ कर दिये हैं। शत्रुघ्नकुमार कह रहे थे- वे सुननेको ही प्रस्तुत नहीं है कि सागरकी तरंगे जो वेलापर निक्षिप्त कर दें, वह भी उनका स्वत्व है। वे इस धनको वरुणके राज्यकी-सम्राट्को भेंट मानते

हैं। सागरमें से श्रम करके जो प्राप्त हो, वही उनका स्वत्व है, उनके इस तर्कको कैसे अस्वीकार किया जा सकता है ? प्रशासन इस प्रकार प्रजाका उपहार स्वीकार भी कैसे कर सकता है।

औषधियाँ असीम बढ़ गयी हैं। मधु-छत्रकोंको सामान्य गृहोद्यानमें भी देखा जा सकता है। उन्हें मधुपूर्ण करके मक्षिकाएँ त्याग देती हैं और दूसरा छत्रक बनाने लगती हैं। शत्रुघ्नने अब अपनी बात कही- बाँसोंमें- से प्रत्येकमें वंशलोचनकी प्राप्ति, दुर्लभतम दिव्यौषधियोंकी प्रचुरता सूचित करती है कि अयोध्याके सम्राट कहीं समीप आ गये हैं। यह सब उनका ही अलौकिक प्रभाव हैं।

वे आवेंगे- अवश्य आवेंगे कुमार। जिनके प्राण उनके दर्शनोंके लिए आतुर हैं, उन सबको वे भूल कैसे सकते हैं। अवधकी प्रजा, यहाँका जन-जन उन्हींकी प्रतीक्षा कर रहा है। आतुर अभीप्साकी उपेक्षा वे करुणासिन्धु कर नहीं सकते। भरतके दृगोंसे धाराएँ चलने लगीं। उन्होंने भरित कण्ठ किसी प्रकार कहा- अयोध्या उनकी है। उन्हें यहाँ आना ही है; किंतु उनके दर्शनोंका अधिकारी यह भाग्यहीन भरत ही नहीं जान पड़ता। कुमार। तुम मेरी कुछ सहायता करोगे ?

शत्रुघ्नने व्याकुल होकर अग्रजके चरण पकड़ लिये। आर्य। आप इस प्रकार क्यों पूछते हैं ?

तुमको अत्यन्त सुकुमार जानते हुए भी बहुत निष्ठुर दायित्व दे रहा हूँ कुमार। भरतने भाईको उठाकर बैठाया। उसी प्रकार विह्वल कण्ठ बोले- मैंने प्रतिज्ञा की है कि यदि अवधि समाप्त होनेपर भी वे मेरे स्वामी अयोध्या नहीं पधारते तो भरत शरीरका भार नहीं ढो सकेगा। आजकी रात्रि व्यतीत होते ही अवधि समाप्त हो जायेगी। अबतक रघुवंशमें उत्पन्न किसीकी प्रतिज्ञा मिथ्या होते तुमने सुनी है ?

शत्रुघ्नने दोनों करोंमें मुख छिपा लिया और बालकके समान फूटकर रो पड़े। वे क्या कहें ? कैसे कहें ? भरतने उनके कन्धेपर कर रखा- तुमने चौदह वर्ष अत्यन्त कठिन दायित्व वहन किया है। मैं भी असमर्थ था अपनेको प्रसन्न दिखलाते हुए प्रबन्धरत रहनेमें। तुमने अश्रुतपूर्व कर्मयोगीका आदर्श उपस्थित किया है। अब यह बहुत दारुण दायित्व भी तुम्हीं वहन कर सकते हो।

मैं किसीको कष्ट नहीं दूँगा। अपने लिए श्रम नहीं उठाने दूंगा। केवल तुम्हें भरतके लिए हृदयको वज्र बनाकर कुछ करना है। भरतने कुछ क्षण मौन रहकर अत्यन्त गम्भीर स्वरमें कहा- यदि कल मेरे स्वामी अयोध्या नहीं आते, भरत इस अधम शरीरको नहीं रखेगा। कलका सूर्य इसे स्वत:रचित चितामें भस्म होता देखकर ही अस्त होगा। केवल तुम इतना करना कि वह भस्म सरयूमें विसर्जित की जाय।

शत्रुघ्न जैसे निष्प्राण हो गये। उनके नेत्र फटे-फटे हो रहे। वे सुन भी रहे हैं कि नहीं, यह देखे बिना भरत कहते गये- श्रीरघुनाथसे मेरी ओरसे प्रार्थना करना। मेरे प्राण परितुष्ट हो जायँगे। मैं कृतकृत्य हो जाऊँगा। मेरी जन्म-जन्मकी अभिलाषा पूर्ण हो जायगी। जीवितमें उनके श्रीचरणोंका स्पर्श न पा सकूं तो वे भक्तवत्सल अपने चारु चरणोंसे मेरी शरीर-भस्मको स्पर्श कर दें।

नहीं। नहीं। नहीं। शत्रुघ्नने चीत्कार की- फटे कण्ठकी चीत्कार ऐसा कुछ नहीं होगा। कल सूर्यास्तसे पूर्व ही हमारे वे सौभाग्य सूर्य आवेंगे। अवश्य आवेंगे।

ऐसी अभिलाषा भरत के मन में उठ रही है ऐसी ही मन में हठ ठान रखी है। मेरे हृदय तू दृढ़ रहना प्राणों की बाजी लग रही है। रघुकुल के छोटे राजा का शरीर सब और से जर्जर हो गया, जैसे सूर्य के छिप जाने से कमल कुम्हला जाता है। ये काली-काली मटियाली अलकें जो दाये बायें लटक रही है वह भाई की विरह वेदना में धूल धूसरित होकर सचमुच काली घटायें सी लग रही है। भरत ऐसे व्याकुल है जैसे चातक के लिये स्वाति नक्षत्र के जल बिन्दु ही आधार है। हे सीता नाथ इस अनाथ अयोध्या को सनाथ करो। यह भरत अब कैसे जी सकेगा जैसे पानी बिना मछली नहीं जी सकती। तार हीन वीणा नहीं बज सकती। अवध राज यदि अवधि के रहते नहीं आये तो यह आत्मा प्रभु में ही लीन हो जायेगी। इस हठीले दास की हठ पर ध्यान दे मेरे स्वामी।

हनुमानने अयोध्यासे एक कोसकी दूरीपर आश्रमवासी भरतको देखा, जो चीर-वस्त्र और काला मृगचर्म धारण किये दुखी एवं दुर्बल दिखायी देते थे। उनके सिरपर जटा बढ़ी हुई थी, शरीरपर मैल जम गयी थी, भाईके वनवासके दु:खने उन्हें बहुत ही कृश कर दिया था, फल-मूल ही उनका भोजन था, वे इन्द्रियोंका दमन करके तपस्यामें लगे हुए थे और धर्मका आचरण करते थे। सिरपर जटाका भार बहुत ही ऊँचा दिखायी देता था, वल्कल और मृगचर्मसे उनका शरीर ढका था। वे बड़े नियमसे रहते थे। उनका अन्त:करण शुद्ध था और वे ब्रह्मर्षिके समान तेजस्वी जान पड़ते थे। रघुनाथजीकी दोनों चरणपादुकाओंको आगे रखकर वे पृथ्वीका शासन करते थे।

भरत चारों वर्णोंकी प्रजाओंको सब प्रकारके भयसे सुरक्षित रखते थे। उनके पास मन्त्री, पुरोहित और सेनापति भी योगयुक्त होकर रहते

और गेरुए वस्त्र पहनते थे।

उसी समय वहां पर एक बूढ़ा ब्राह्मण आ गया वह भरत को तपस्वी वेशभूषा में देखकर अपने आप को भूल गया और पुलकित होकर बोला हे राजर्षि सुनो- जिनका तुम दिन रात ध्यान करते हो, जिनके दर्शन को हे भरत ! माला के दाने गिनते हो, इन्तजार की घडिया गिनते हो वही प्रभु श्रीराम पुष्पक विमान पर आरूढ़ हो वानर भालू मंडलसहित लक्ष्मण सीता सहित वह अवधेश अवध में आ रहे हैं। उसके ये वचन भरत को डूबने से बचाने के लिये मानो नाव आ गई हो। विप्र के यह मधुर वचन सुनकर मरते विरही में नवजीवन का संचार हुआ। यह वचन मधु रस की धार थी। जिस तरह से हर्ष बढ़ा, उल्लास बढ़ा यह वाणी से भी बखान नहीं किया जा सकता। लेखनी भी उठ नहीं पाती तो फिर लेखनी लिखे तो भी कैसे ? इस मदमाते भरत की दशा भावुक भक्त गण ही समझ सकते। भाई-भाई ही जान सकता है उस भाई-भाई के नाते और प्रेम को।

तब भरत उस द्विजवर को प्रणाम कर प्रेम विभोर हो बोले आप कौन है कहां से इस ओर आये है ? यह सुनकर वह द्विज अपने वास्तविक वानर रूप में प्रकट होकर बोला मैं हनुमान रामदास हूँ। तत्क्षण राम भक्त भरत हनुमान को पहचान गये। हनुमान बोले मेरा नमन स्वीकार करे। बस आपको राम आगमन की सूचना करूं। हनुमान से भरत साल्हाद मिलकर अत्यन्त प्रभुदित हुये, प्रेम और उन्माद उपजा। नेत्रों से प्रेमाश्रु बहने लगे।

मनुष्य-देह धारण करके आये हुए दूसरे धर्मकी भाँति उन धर्मज्ञ भरतके पास पहुँचकर पवनकुमार हनुमान्‌जी हाथ जोड़कर बोले- देव। आप दण्डकारण्यमें चीर-वस्त्र और जटा धारण करके रहनेवाले जिन श्रीरघुनाथजीके लिये निरन्तर चिन्तित रहते हैं, उन्होंने आपको अपना कुशल-समाचार कहलाया है और आपका भी पूछा है। अब आप इस अत्यन्त दारुण शोकको त्याग दीजिये। मैं आपको बड़ा प्रिय समाचार सुना रहा हूँ। आप शीघ्र ही अपने भाई श्रीरामसे मिलेंगे।

भगवान् श्रीराम रावणको मारकर मिथिलेशकुमारीको वापस ले सफलमनोरथ हो अपने महाबली मित्रोंके साथ आ रहे हैं। उनके साथ लक्ष्मण और सीता भी हैं। जैसे देवराज इन्द्रके साथ शची शोभा पाती हैं, उसी प्रकार श्रीरामके साथ पूर्णकामा सीताजी सुशोभित हो रही हैं।

हनुमान बोले जिनके विरह में आप दिन रात सोच करते रहते है, जिनके गुण समूहों का आप निरन्तर बखान करते रहते है वे ही रघुवंश शिरोमणि सबको सुख देनेवाले और देवताओं तथा मुनियों के रक्षक श्रीराम सकुशल अयोध्या में लौट रहे है। शत्रु को जीतकर सीताजी और लक्ष्मणसहित प्रभु श्रीराम आ रहे है। देवता सुन्दर यश गा रहे है। यह सुनकर भरतजी सारे दु:ख भूल गये। जैसे प्यासा आदमी अमृत पाकर प्यास के दु:ख को भूल जाये। कौशल्या आदि सब माताओं के मन में आनन्द छाने लगा।

हनुमान्‌जीके ऐसा कहते ही कैकयी-कुमार भरत सहसा आनन्दविभोर हो पृथ्वीपर गिर पडे और हर्षसे मूर्च्छित हो गये।

भैया। तुम कोई देवता हो या मनुष्य, जो मुझपर कृपा करके यहां पधारे हो ? सौम्य।

भरत बोले- हे हनुमान, तुम्हारे दर्शन मात्र से ही मेरे समस्त दु:ख सन्ताप सब समाप्त हो गये। भरत ने हनुमान से बार-बार कुशल पूछी और कहा मैं इस शुभ समाचार के लिये तुम्हें क्या उपहार दूँ ? इसके बदले में देने के लिये इस जगत में कुछ भी तो पदार्थ नहीं है। हे तात मैं तुमसे किसी प्रकार भी उऋण नहीं हो सकता ? तब हनुमान ने भरत के चरणों में मस्तक नवाकर श्रीराम की सारी गुण गाथा भरत को सुनायी। भरत ने पूछा हे हनुमानजी प्रभु श्रीराम कभी अपने इस दास की याद करते है ? हनुमान भरत के वचन सुनकर पुलकित हो गये और बोले आप श्रीराम को प्राणों के समान प्रिय है।

उन प्रमुख वानर-वीर हनुमान्‌जीके मुखसे श्रीरामचन्द्रजीके आगमनका अद्‌भुत समाचार सुनकर राजकुमार भरतको श्रीरामके दर्शनकी इच्छासे अत्यन्त हर्ष हुआ और उस हर्षातिरेकसे ही वे फिर इस प्रकार बोले-

आज यह कल्याणमयी लौकिक गाथा मुझे यथार्थ जान पड़ती है- मनुष्य यदि जीता रहे तो उसे कभी-न-कभी हर्ष और आनन्दकी प्राप्ति होती ही है, भले ही वह सौ वर्षों बाद हो।

सौम्य। श्रीरघुनाथजीका और वानरोंका यह मेल-जोल कैसे हुआ ? किस देशमें और किस कारणको लेकर हुआ ? यह मैं जानना चाहता हूँ। तुम मुझे ठीक-ठीक बताओ।

राजकुमार भरतके इस प्रकार पूछनेपर कुशासनपर बैठाये हुए हनुमान्‌जीने श्रीरामका वनवासविषयक सारा चरित्र उनसे कह सुनाया-

उपवास कृश, जटा मकुटी, वल्कल वसन भरतने श्वेत छत्र स्वयं स्वच्छ करके सज्जित किया। फिर हनुमानके साथ राजसदन चलनेको प्रस्तुत होकर बोले- पवनकुमार। आपने अपनी जातिके स्वाभाविक चापल्यवश मुझे भ्रमित करके अपने निश्चयको सक्रिय करनेसे विलम्बित करनेके उद्देश्यसे तो यह समाचार नहीं दिया है ?

देव। मैं ऐसा दुस्साहस नहीं कर सकता। हनुमानने हाथ जोड़कर कहा- आप स्वयं सरयूका निर्मल प्रवाह, अयोध्याके सरोवरों, वापियोंका स्वच्छ जल देख सकते हैं। लताओं तथा वृक्षोंको पुष्प-फल भारसे झुका देख रहे हैं आप। वन-उपवन जल-स्थलमें यह शोभा, सम्पन्नता, स्वच्छता पिछले चौदह वर्षोंमें कभी आयी है ? यह सर्वत्र जो आनन्द एवं वैभव उमड़ पड़ा है, वह क्या मेरे सन्देशके सत्य होनका पार्यप्त साक्षी नहीं है ? आपको कल तृतीय प्रहर तक भी प्रतीक्षा नहीं करनी है।

वर पाकर प्रसन्नतासे भरे हुए श्रीरामजी वानरोंके साथ पुष्पकविमानद्वारा किष्किन्धा आये। वहाँसे फिर गङ्गातटपर आकर प्रयागमें भरद्वाजमुनिके समीप वे ठहरे हुए हैं। कल पुष्य नक्षत्रके योगमें आप बिना किसी विघ्न-बाधाके श्रीरामका दर्शन करेंगे।

प्रभुके आदेशसे मैं निषादराज गुहाके समाचार देता आया हूँ। वे महाभाग उसी समय प्रयाग पैदल चल पड़े थे। अब पवनपुत्रने उपसंहार किया- प्रभु यहाँ शुभ मुहूर्तमें आना चाहते हैं। अत: पुष्पक नन्दिग्राम अभिजित मुहूर्तमें कल उतरेगा, यह सूचना मुझे देनेका उन्होंने आदेश दिया है।

फिर हनुमानजी भरत को भली भांति समझा कर श्रीराम के पास लौट आये और जाकर सब हाल श्रीराम को बताया। तब प्रभु श्रीराम हर्षित होकर विमान पर सवार होकर चले।

इधर भरत भी हर्षित होकर अयोध्या में आये और गुरुवर वशिष्ठ को सब समाचार सुनाया और राजमहल में जाकर खबर दी कि श्रीराम कुशल पूर्वक अवध में आ रहे है। खबर सुनते ही सब माताये उठ दौड़ी। भरत ने प्रभु की कुशल कहकर सबको समझाया। नगरवासियों ने समाचार पाया तो सभी हर्षित होकर दौड पडे।

यह सूचना मिलते ही अवधपुरी अब एक अलौकिक धाम बनने लगी। श्रीराम बिना जो पुरी श्रीहीन दिखाई दे रही थी वही पुरी हर्षित होकर रंग-बिरंगी दिखाई देने लगी। जो कली कभी मुरझाई सी पड़ी थी अब खुलकर खिल पडी। जिस जगह अन्धेरा था उस जगह सूर्यवंश के सूर्य से धूप निकल आई। पतझड के पीले वृक्षों पर जैसे निराला मधुमास छाया था। माली को आया जान पत्ता पत्ता मतवाला हो रहा था। सरयू के जल में लहरे उठ-उठ कर स्वागत गीत गा रही थी। वृक्षों की लतायें लहलहा रही थी और फूलों का फर्श बिछ रहा था। कुओं में स्वच्छ मधुर शीतल अमृत सदृश पेय जल भरने लगा। तालाबों में चन्द्रलोक का दुग्ध समान धवल जल भर गया। राम दर्शनों की प्रजा में उमंग और लालसा उठी कि सब अपने अपने घरों के कामकाज छोड़-छाड़ प्रभु श्रीराम के दर्शन करने चले। जो जिस दशा में है वैसे ही उसी दशा में उठ दौड़े जाते है। अवधपुरी में तीनों प्रकार के वायु बहने लगी। बहुत सी स्त्रियां अटारियों पर चढ़ आकाश में विमान को देख रही है और उसे देख कर हर्षित होकर मधुर स्वरों से सुन्दर मंगल गीत गा रही है।

यह श्रृङ्गवेरपुर है, जहाँ मेरा मित्र गुह रहा है। सीते। यह यूपमालाओंसे अलंकृत सरयू दिखायी देती है, जिसके तटपर मेरे पिताजीकी राजधानी है। विदेहनन्दिनि। तुम वनवासके बाद फिर लौटकर अयोध्याको आयी हो। इसलिये इस पुरीको प्रणाम करो।

तब विभीषणसहित वे सब राक्षस और वानर अत्यन्त हर्षसे उल्लसित हो उछल-उछलकर उस पुरीका दर्शन करने लगे।

तत्पश्चात् वे वानर और राक्षस श्वेत अट्टालिकाओंसे अलंकृत और विशाल भवनोंसे विभूषित अयोध्यापुरीको, जो हाथी-घोड़ोंसे भरी थी और देवराज इन्द्रकी अमरावतीपुरीके समान शोभित होती थी, देखने लगे।

श्रीरामने, लक्ष्मणने, श्रीवैदेहीने आसनसे उठकर अञ्जलि बाँधकर जन्मभूमिको प्रणाम किया। वानर प्रसन्नतासे उछलने लगे। श्रीरामने कहा- मुझे यह पावनपुरी वैकुण्ठसे भी प्रिय है।

अयोध्यासे श्रीराम चैत्र शुक्ल पञ्चमीको वनके लिये चले थे। आज चैत्र शुक्ल पञ्चमी थी। वनके चौदह वर्ष पूर्ण हो गये आज। कल प्रात: अयोध्या पहुँचना था।

यहां विमानपर से श्रीराम वानरों को अपना मनोहर नगर दिखला रहे है और कह रहे है कि हे सुग्रीव, हे अंगद, महाराज विभीषण यह मेरी पुरी अत्यन्त पवित्र और सुन्दर है। यद्यपि सभी पुराणों और वेदों में प्रसिद्ध है सबने बैकुंठ की बड़ाई की है फिर भी अवधपुरी के समान

मुझे वह भी प्रिय नहीं है। यह सुहावनी पुरी मेरी जन्म भूमि है यह मुझे स्वर्ग से भी बढ़कर है। इसके उत्तर दिशा में जीवों को पवित्र करनेवाली सरयू नदी बह रही है जिसमें स्नान करने से मनुष्य बिना ही परिश्रम मेरे समीप सामीप्य मुक्ति प्राप्त करता है। यहां के निवासी मुझे बहुत प्रिय है। यह पुरी सुख की राशि और मेरे परमधाम को प्राप्त करानेवाली है। तभी प्रभु ने विमान को नगर के समीप उतरने की प्रेरणा की तब विमान अवध भूमि भादर्शा पर उतरा।

इधर शत्रुघ्न ने आकाश मार्ग में विमान को देखा। सहसा उनके मुखसे शब्द निकल पडे अवधेश अवध में आ गये। जिस स्थानपर अवध में सबसे पहले विमान का दर्शन हुआ उस स्थान का नाम भादर्शा है अर्थात् दर्शन भये। पुष्पक विमान और कुछ समीप उतर आया। सब टकटकी बांध कर देख रहे हैं।

सम्पूर्ण साथियोंसहित पुष्पक विमान पृथ्वीपर उतर आया और जय जननी जन्मभूमि कह कर राघव ने शीश झुकाया। शत शत कंठों से उसी समय रघुपति की जय जय कार हुई।

आकाशमें सूर्यके मध्याह्न तेजे समान ज्योति: पुञ्ज चन्द्रोज्वल विमान पुष्पक दिखायी पड़ा। नन्दिग्रामके आस-पास सम्पूर्ण भूमि लोगोंसे भरी थी। वाद्योंकी तुमुल ध्वनि गूँजने लगी और जयघोष उठने लगा। विमान उतरनेका स्थान राजसेवकोंने रिक्त कराया। पुष्पकने एक मण्डल लिया और पक्षीके समान पफसमेटकर पृथ्वीपर उतर गया।

अञ्जलि बाँधे, कृशकाय, जटाधारी भाई भरतको श्रीरामने विमानके द्वारपर देखा तो हाथ पकड़कर ऊपर चढ़ा लिया। दोनों भुजा फैलाकर मिले। दोनों इन्दीवर सुन्दर, दोनोंके शरीर पुलकपूरित, दोनों की जटाएँ और स्कन्ध भीगते रहे दोनोंके अश्रुओंसे।

अब शत्रुघ्न कुमार विमानपर आ गये। श्रीरामने प्रणाम करते उन्हें उठाकर हृदयसे लगाया। लक्ष्मणने अममाल ली। श्रीजानकीने उनकी अलकोंपर हाथ रखा, जब वे पदोंमें प्रणत हुए। सुग्रीव तथा विभीषणादिसे मिलनेके अनन्तर शत्रुघ्नने निवेदन किया- देव। कुलगुरु, माताएँ तथा पुरजन आये हैं आपके दर्शन करने। सहस्त्र-सहस्त्र लोग हैं।

श्रीराम उठे। सब उनके पीछे चले। विमानसे उतरते श्रीसीताराम को देखकर तुमल जयघोष गूँजने लगा। वाद्योंकी ध्वनि द्विगुणित हो गयी। लगभग दौड़कर श्रीरघुनाथ महर्षि वशिष्ठके पदोंके सम्मुख गिरे। महर्षिने उन्हें उठाया।

फिर धीरे-धीरे मीठे शब्दों में यह पुकार मेरे प्रभु और भरत प्रभु श्रीराम से मिले। उस तपस्वी का मिलाप मानो गंगा की धारा सागर में मिलने जाती है। अयोध्या में भरतलाल श्रीराम के चरणों में प्रणिपात हुये तब प्रभु श्रीराम ने भरत को उठा कर हृदय से लगा लिया। दोनों भाईयों के रूप सांवले और मनोहर थे। इन चौदह वर्ष के यतियों की ऐडी तक जटा बढ़ी हुई थी। जब दोनों आपस में मिले तो दोनों में ऐसी समानता देखकर दर्शक भी भूल गये कि इसमें कौन राम है और कौन भरत। यहां तक स्वयं ब्रह्मा भी यह भूलकर बैठे। इस भातृ मिलाप ने अयोध्या का रंग ही बदल दिया। शारदा बोल उठी- देखो यह भरत मिलाप अयोध्या का। रघुवीर के वियोग में सब अयोध्यावासियों के शरीर कृश हो गये। प्रभु ने वामदेव, वशिष्ठ आदि मुनियों को देखा तो अपना धनुष बाण पृथ्वी पर रख अनुज लक्ष्मण सहित गुरु के चरण कमलों में सिर नवाया। गुरु वशिष्ठ ने श्रीराम को उठाकर गले लगाया और कुशल पूछी- तब श्रीराम बोले- गुरुवर आपकी दया से सब कुशल क्षेम है। धर्म की धुरी धारण करने वाले रघुनाथ जी सब ब्राह्मणों द्विजवरों से मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुये। भरत के नेत्रों में प्रेमाश्रु बहने लगे। शिव कहते है पार्वती सुनो वह सुख जो उस भरत को मिल रहा था वह वचन और मन से परे है। फिर प्रभु हर्षित होकर शत्रुघ्न से मिले। लक्ष्मण और भरत दोनों भाई परस्पर मिले। फिर भरत ने भाई शत्रुघ्न सहित भाभी सीता के चरणों में सिर नवाया और परम सुख पाया। प्रभु को देखकर अयोध्यावासी सभी हर्षित हुये और मिलने के लिये अत्यन्त आतुर होकर प्रभु श्रीराम से मिले। श्रीराम असंख्य रूपों में प्रकट हो गये और सबसे एक साथ यथा योग्य मिले। श्रीराम की कृपा दृष्टि से सब नर नारी शोक रहित हो गये। इस प्रकार शील और गुणों के धाम प्रभु श्रीराम सबको सुखी करके आगे चले।

फिर श्रीराम लक्ष्मण से बोले, मैं सीता सहित सबसे पहले मझली माता कैकयी से मिलने जाऊँगा तब तक हे सौमित्र तुम सुमित्रा माता की सेवा में जाओ वे तुम्हें मिलने के लिये अत्यन्त आतुर होगी। इतना सुनकर लक्ष्मण तुरन्त अपने प्रासाद की ओर चले।

प्रभु श्रीराम भरत से बोले, हे भरत मेरे संगी साथी यह वनवासी वीर वानरों को यथायोग्य प्रबन्ध कर ठहराओ। इनका पूरा स्वागत सत्कार का प्रबन्ध करना। यह सब मेरे सच्चे संगी साथी है इनका श्रम परिहार कर इनको विश्राम करवाओ। इनकी सेवा इनका आदर

सबसे पहले करना।

ये सब शूर संग्राममें मेरे लिए सर्वस्व त्यागकर आये। सच्ची भावना थी स्वरमें- युद्ध उदधिमें जलपोत बनकर इन्होंने रामको उबार लिया। भरत ने आनंदित हो जो आज्ञा कह चल दिये।

महर्षिको प्रणाम करनेके अनन्तर सब मुनिगणोंको दोनों भाइयोंने प्रणाम किया और तब श्रीरामने कैकेयीके चरणोंमें मस्तक रखा- अम्ब। आपके आशीर्वादसे, आपके अनुग्रहसे सुरोंको, साधुओंका शल्य दशग्रीव समाप्त हुआ। रामको आपने यह सुयश प्रदान किया है।

अब आनन्दकन्द प्रभु श्रीराम माता कैकयी के कक्ष में पहुँचे। प्रभु श्रीराम और वैदेही सीता ने माता के चरणों में प्रणाम किया। कैकयी अपनी छाती से दोनों को लगा कर बोली बेटा राम। मेरी आज्ञा से तुमने वनों से सम्बन्ध जोडा और वनगमन किया। मेरी ही आज्ञा से तुमने यह राज्य भरत के लिये छोडा। जब इतना सब स्वीकारा है तो अब भी मेरे लिये कुछ स्वीकार करो। यह मेरी अन्तिम आज्ञा है जिसे हे श्रीराम स्वीकार करो। मेरे मन में सम्पूर्ण ग्लानि भरी हुई है जिसे तुम धोकर स्वच्छ करो। यह रघुकुल का सिंहासन अब रघु कुलपति बनकर स्वीकार करो। जिस माता ने तुम्हारा राज्य छीनकर तुम्हें वन में भिजवाया है, वही माता वही जननी तुम्हें आज अब राज मुकुट पहनाती है। यह कहते-कहते माता कैकयी उसी क्षण ले आई राज ताज तब प्रभु श्रीराम माता से बोले, सेवक ने तो आपकी आज्ञा का पालन करना ही सीखा है। वन और राज्य की तो चर्चा बात ही क्या है, आपकी आज्ञा पर तो राम मरना भी जानता है। वो आज्ञा भी आपकी मैंने शिरोधारण की थी और अब यह आज्ञा भी सिरपर धारण कर लूंगा। मुझे कोई राज्य की राजमुकुट की कोई अभिलाषा नहीं है। पहनाओगी तो इसे भी पहन लूंगा। पर इस समय यह अवसर यहां पर राजमुकुट पहनने का नहीं है। यह दिन और समय तो आपके चरणों की रज को मस्तक पर धरने का है। तब माता कैकयी बोली राम मुझे इसका ध्यान नहीं रहा। एक लहर सी चल रही थी उसमें मैं अपना विवेक खो बैठी। अब यह राज्य सिंहासन का काम समयोचित ही होगा। तब माता राम को रोक कर हाथ में आरती थाल लेकर आई और उस सूर्यवंशी सूर्य की आरती उतारती है। जब यह सब रीति कर चुकी तो मैया के वात्सल्य भाव छलक आया। १४ वर्षों का पाप आज धुला और मुख पर पुण्य झलक आया और चेहरा कान्तिमान हुआ।

कैकयी की दशा का ऐसा प्रभाव पडा कि कुबडी मन्थरा भी ग्लानि भरी सद्भाव से श्रीराम के चरणों में गिरी और बोली मन्थरा आज मन्थरा नहीं है वह तो बाबली और दीवानी हो गई है। मन ही मन सिर से पांव तक लज्जित होकर पानी पानी हो गई। अत्याचारी एक न एक दिन अपने अत्याचारों पर पछताता है तब कोई सज्जन व्यक्ति क्षमा शस्त्र से उसका गर्व मिटाता है। इस तरह का परिवर्तन देखकर प्रभु रघुनाथ मुस्कुराये और बोले- मन्थरा क्या हुआ ? किसलिए अकुला रही हो? क्यों रो रही हो ? तूने जो किया ठीक ही किया फिर अब इतना क्यों पछता रही हो ? जो राजा बननेवाला था उसकी तो यह शिक्षा दीक्षा थी। यह राघव को कोई बनवास नहीं था यह तो उसके संयम की परीक्षा की घडी थी। पिछली बातों को भूल जाओ, जो बीत गया सो बीत गया। उन पिछली वियोग वाली रातें सूर्य के संयोग से मिट गई अब फिर नई सुबह हो गई। ऐसा सब विविध भांति समझा कर प्रभु ने मन्थरा को विदा किया अब प्रभु श्रीराम कौशल्या के महल की ओर चले। सबके चरित्र में परिवर्तन देख कर प्रभु मुस्कुराते थे और सोचने लगे इस माया ने मेरे प्यारों को क्या क्या नाच नचाया है। इस माया ने १४ वर्षों में क्या क्या उलट-पलट कर रख दिया है ? कैसे जमीं पलटती है, कैसे कैसे जहां पलटता है ? हजारों गुलिस्तां प्रतिदिन उजडते और बसते है। महल खंडहर हो जाते है और फिर वही खंडहर महल में परिणित होते है। ऐसे ऐसे मकान बनते है और बिगडते है। जहां रात होती है वहां दिन भी आता है। कैसे-कैसे यह जमीं और आसमां खेल करते रहते है।

इधर लक्ष्मण अपनी माता सुमित्रा के कक्ष में जाकर माता से मिले और चरणों में शीश नवाया। मां ने तुरंत सिरपर हाथ रख पुत्र को आशीर्वाद देकर बोली तुझ जैसे बेटे पर माता फूली न समाती है। जिस मां के तुम जैसा बेटा हो वह निश्चय ही धन्य हो जाती है। हे कर्मवीर तुझ पर तेरी यह जननी बलिहारी जाती है। आज जी भर कर तुझे हृदय से लगाने मेरी छाती उमड रही है। इस तरह कहकर माता ने आगे बढ़कर अपने प्यारे लाल को कलेजे से लगाया। माता सुमित्रा लक्ष्मण से पूछती है हे मेरे लाल तुम्हें कभी मेरी याद आई ? कभी अयोध्या की याद आई ? यह भी बतला तेरे बडे भैय्या श्रीराम तुझसे खुश रहे ना ? इन नन्हें-नन्हे हाथों से तूने कैसे असुरों का संहार किया ? इन्द्रजीत-मेघनाद जैसे योद्धा का क्या सचमुच तूने ही संहार किया ? लक्ष्मण माता के इस प्रकार के वचन सुनकर आंसुओं से प्रेम में भरकर बोले हे माता असुरों का दल मैंने कब संहारा है ? न ही मैंने मेघनाद को मारा है। यह तो सब कृपा आपही की थी जो मुझे

मार्ग दिखाती थी, आपकी प्रतिमा मेरे मन में बैठी थी जो मेरा उत्साह बढ़ा रही थी। खल दल को नाश करने का यह आदेश तुम्हारे ही तो थे इसलिये सच्ची बात तो यह है यह सब आपही का कृपा प्रसाद है। कर्तव्य कर्म को कभी मत त्यागना यह सब उपदेश आप ही के थे। जितनी भी सफलता मिली है उसमें मां आशीर्वाद तुम्हारा ही है। जो बालक अपनी माता का आज्ञापालक बन जाता है, धर्म की आवाज यही कहती है की इस जग में वह सब कुछ कर पाता है। बेटे के इस प्रकार वचन सुनकर फिर से पुलकित हो गई। रोम-रोम हर्षित हो गये, नयन सजल हुये और बोली पुत्र अब मां का प्रसाद यही है तुम्हारा सिर सदैव ऊँचा रहे। भाई के सदैव भक्त बने रहो। सदा यही मर्यादा पालते रहना। अपने भक्तों में राम तुम्हें सर्वोच्च पद देंगे। सभी तुम्हारे अपराधों को क्षमा कर देंगे जब तुम उनकी शरण में जावोगे। तूने अपने धर्म पर अडिग रह कर निज धर्म सुधारा है तू अवश्य जगत पूज्य होगा। जो कोई अपने माता-पिता को प्रसन्न रखता है वह ईश्वर तक को प्यारा है। माता के इस प्रकार वचन सुनकर बेटा निहाल हो गया और तुरन्त माता के श्री चरणों में गिरा। माता के वचन सुनकर अपने जीवन को सफल समझ वे अपने निजी कक्ष में आ गये जहां पर उस तपस्विनी बाला उर्मिला की याद आई। मन ने चुपचाप कहा देखे तो अच्छी तो है ना मेरी उर्मिला प्रिया। यह विचार कर आगे बढ़े पर झिझक गये और आगे नहीं बढ़ सके।

उस पुजारिन को देखकर लक्ष्मण आश्चर्य चकित हो गये। अपने प्राण प्रिय का चित्र चौकी पर रख कर निराहार रहकर सतत अपने प्राण प्रिय का पूजन करती है। यह देखकर प्रेमी प्रियतम साहस कर सामने जा पहुंचा। अब यह गुडियोंवाला खेल समाप्त हुआ जब सच्चा पति घर आ पहुंचा। पति को देखकर उर्मिला चौक उठी और पति चरणों में वह पतिव्रता प्रणत हुई और चित्र से बोल उठी है चित्रदेव आज यह अर्चन पूरा हो गया। जब तक ईश्वर निराकार था तब तक ही तेरा पूजन था अब तो निराकार साकार हो गया अब तो उसका ही पूजन होगा। चौकी पर आगत पति को सादर बिठाया। तब मुस्कुराते हुये लक्ष्मण बोले सभी देवता प्रसन्न और अनुकूल है हे उर्मिला अब लक्ष्मण इस गृह लक्ष्मी को क्या दे ? तन भी तेरा है, मन भी तेरा है, धन भी तेरा है और लक्ष्मण भी तेरा है फिर बता ऐसी कौनसी वस्तु है जो यह देवता तुम्हे दे सके। हम दोनोंने अपने अपने कर्तव्य का पालन निर्वाह किया। आज दोनों के ही जीवन कृतार्थ हो गये। जिस घर में सुमित्रा जैसी माता है और तुम्हारे जैसी गृहलक्ष्मी उस जगह लक्ष्मी श्रेय पाती है इसमें कोई आश्चर्य नहीं। अब हे प्रियतमा अब अत्यधिक नही ठहरूँगा क्योंकि मुझे अभी मां कौशल्या की भी पदवन्दना करनी है जिससे अपना जीवन धन्य करूं। तब उर्मिला बोली स्वामी अब बडी माता के पास से शीघ्र आना अब इस प्रबला का बल क्षीण हो गया है। १४ वर्षों का विरह सहन किया है अब क्षण भर भी आपका विरह असह्य है। पता नही आज आपका दर्शन कर नयन भरते नहीं मन नहीं भरता। चलो मैं भी आपके साथ चलकर माता सुमित्रा के साथ-साथ कौशल्या मां के दर्शन करने आती हूँ। सेवक को सदा सेवाव्रत से ही प्यार होता है। इस असार संसार में सेवा ही सार है। नर से लेकर नारायण तक इसके आधार है। सेवा करना सहज नहीं है दुस्तर है। सेवा धर्म निभाना अत्यन्त कठिन है। शास्त्र भी पुकार-पुकार यही कहते है कि इसका पालन अत्यन्त महाकठिन है। नारायण उसके सेवा भाव को समझकर क्षण भर में ही भवसागर से उद्धार कर देते है।

इस प्रकार अपने महल से निकल कर लक्ष्मण तत्काल माता कौशल्या के महल में पहुंचे। वहां पर सियासहित प्रभु श्रीराम को प्रणाम किया। कौशल्या आदि सभी मातायें इस प्रकार दौडी मानो नवजात गाय अपने बछडों को दौडकर मिलती है। जैसे गाय अपने छोटे बछडों को छोडकर परवश वन में चली गयी हो और दिन बीतने पर साँज को गोष्ट में अपने बछडे से मिलती है। प्रभु श्रीराम अत्यन्त प्रेम से सब माताओं से मिलकर उनसे बहुत प्रकार के कोमल वचन कहे। वियोग से उत्पन्न भयानक विपत्ति दूर हो गयी और सबने अगणित सुख और हर्ष प्राप्त किया। जानकी जी अपनी सब सासुओं से मिली। सासुओं ने जानकी की कुशल पूछ कर आशीर्वाद दिया कि तुम्हारा सुहाग अखंड अचल रहे। सब मातायें श्रीराम का कमल का सा मुख देखकर मंगल समय जानकर आंसुओं के जल को नेत्रों में ही रोक रखती है। सोने के थाल में आरती उतारती है। कौशल्या बार बार श्रीराम की ओर निहारती है और हृदय में विचार करती है कि इसने लंकापति रावण को किस प्रकार मारा होगा। मेरे ये दोनों बच्चे तो बडे ही सुकुमार है और राक्षस तो बडे भारी योद्धा और बलवान है। कौशल्या ने कहा राम बता मैंने जो सम्पदा वन जाते समय तुम्हें सौंपी थी उसका क्या ? तब प्रभु श्रीराम बोले वह मणि मैंने बडी तहबीज से सम्भाल कर रखी है, झाडियों झाकडों से उलझी हुई को सब तरह से सुरक्षित रखी है। तभी प्रभु श्रीराने लक्ष्मण का हाथ पकडकर मां कौशल्या को सौंपते हुये बोले यह तुम्हारी सम्पदा सब प्रकार से सुरक्षित है। तब माता बोली लक्ष्मण को पाकर मै धन्य हो गई। मैं अब सुमित्रा से कह दुंगी इस लक्ष्मण को मुझे सौंप दे बदले मे चाहे तो इस रघुवर को तू ले ले। सामने ही सुमित्रा दिख पडी तो

सुमित्रा बोली- जीजी तुम तो दोनों की ही माता हो फिर यह बात क्यों ? साथ में कौशल्या ने उस लजीली कुलवधू उर्मिला को देखा। सुमित्रा बोली- यह आपको किसने बहकाया है कि लक्ष्मण सुमित्रा का बेटा है। यह मन में भेदभाव कैसे आया है ? यह कहकर तो तुम अन्याय कर रही हो।

प्रभु श्रीराम ने जाना भरत ने माता कैकयी का त्याग कर दिया है और वे उसके कक्ष में भी नहीं जाते है। उसी समय प्रभु श्रीराम ने भरत को बुलाया और समझाया भरत मां चाहे कैसी भी हो सदा वन्दनीय और पूजनीय होती है। फिर माता कैकयी का तो इसमें कोई अपराध ही नहीं है इसलिये भरत मेरे साथ कैकयी माता के कक्ष में चलो और माता को वन्दन करो। प्रभु की आज्ञा मानकर संकोच सहित भरत माता के कक्ष में गये और पदवन्दना की। माता भी हर्षित हुई और आशीर्वाद दिया। उस दिन से भरत के मन से माता के प्रति हुई ग्लानि मिट गई। फिर भरत सहित माता कैकयी भी कौशल्या सदन में सब जहां थे वहां आयी। कैकयी बोली मैं तो नियमोल्लंघन कर सब कुछ खो बैठी। वह अपने आपको लांछित, अपमानित, व्यथित, घृणित महसूस कर निर्जीव सी बैठी रही। यह सच है मेरी आकांक्षा थी कि मेरा पुत्र राजा बने बस इसीसे मेरा पतन हुआ, मैं कलंकिनी बनी। इतिहास और लेखक सब यही कहेंगे। तब कौशल्या बोली बहन अब कोई सन्ताप मत करो। यह पश्चाताप छोडो, बीती बातों को बिसार दो। वह जो नीच विचार ने अपना रंग जमाना था वही सब कुछ इसकी सूत्रधार है उसकी वजह से ही सब यह प्रकरण हुआ। इसलिये लेखक व इतिहासकार बिना जाने बिना समझे तुम्हे कैसे अपयश देंगे ? यह तो सब उस कुटिल मन्थरा का किया कराया हुआ है। उस दासी की दूषित लीला का तुम्हे कोई क्यों दोष देगा ? इन वीर बालकों की तुम तो सच्ची वीर माता हो। तुम तो रण में भी वह अनहोनी कर दिखाने वाली हो। मेरे विचार से तो विधाता के मन में ऐसा ही आया था जिस कारण घर में यह फूट पडी और हमारा दुर्दिन आया था। जो कुछ भी हुआ उसमें सभी तो निर्दोष है। जो होनेवाली थी वही होनी हुई। तू तो मेरी सगी बहन से भी बढ़कर है। मैं तो तुझे अपने से भी अधिक चाहती हूँ इसलिये मन में यह पश्चाताप और यह ग्लानि किसलिये ?

तब उसी समय माता सुमित्रा ने कहा उठो और रहने दो अब पिछली बातों का रोना। श्रीराम के राज्याभिषेक का समय निकट पल-पल आते जाता है, इसलिये मंगलाचार करो। रनिवासों में अपना इस तरह बैठे रहना अच्छा नही लगता है। तब कौशल्या ने सबकी स्वर्ण थाल में आरती सजाकर आरती की।

माता बलिहारी जाती थी। श्रीराम मुस्कुरा रहे थे। कैकयी, लक्ष्मण, सुमित्रा सब राम की इस छवि को देख-देखकर हर्षित हो रहे थे। सुरगण भी ऐसी झांकी देख कर अपने आप को भुला बैठे। राज्याभिषेक का समय निकट जाकर गगन से दुन्दुभि बजने लगी।

लंकापति विभीषण, कपि राज सुग्रीव, नल-नील, ऋक्षराज जाम्बवन्त और अंगद तथा पवनपुत्र आदि सभी भरत के प्रेम, सुन्दर मनोहर स्वभाव व्रत और नियमों की अत्यन्त प्रेम से आदरपूर्वक यशोगान करते है और नगरवासियों के प्रेम, शील और विनय की रीति देखकर वे सब प्रभु के चरणों में उनके प्रेम की सराहना करते है। फिर श्रीराम ने सब सखाओं को बुलाकर गुरु वशिष्ठ के चरणों में प्रणत होने को कहा और बताया ये गुरु वशिष्ठ हमारे कुल के पूज्य है इनका हम पर सदा आशीर्वाद बना रहता है। फिर श्रीराम गुरु वशिष्ठ से बोले हे मुनिनाथ ये सब मेरे सखा है। ये युद्ध में मेरे लिये बडेजहाज के समान हुये। इन्ही के सहयोग से में रावण को मार सका और सीता को लौटा सका। ये सब मुझे भरत से भी अधिक प्रिय है। प्रभु श्रीराम के वचन सुनकर सब प्रेम और आनन्द में मग्न हो गये। इस प्रकार पल-पल में उन्हें नये-नये सुख पाये। फिर उन सब सखाओं ने माता कौशल्या के चरणों की वन्दना की तब माता ने हर्षित होकर आशिष दी और कहा तुम सब मुझे राघव समान ही प्यारे हो।

श्रीभरतने इस अवसरपर अपनी पर्णकुटीमें जाकर सिंहासनस्था पादुकाओंको उठाकर अपने मस्तकपर रख लिया था। दोनों करोंसे उन्हें अपनी जटापर पकड़े वे श्रीरामके सम्मुख आये और घुटनोंके बल बैठकर पादुकाएं सम्मुख रखी उन्होंने- ये आपकी चरण पादुकाएं और यह इन पादुकाओंका प्रतिनिधि। पादुकाओंने ही इन वर्षोंमें शासनका संचालन किया है। अब इनको चरण-स्पर्श देकर सनाथ करें।

आर्य। आपने कैकेयीका यथेष्ट सत्कार सम्पन्न कर दिया। चौदह वर्ष वनमें रह आये आप। भरतने रोते हुए दोनों चरण पकड़ लिये- राज्य आपने अपने इस सेवकको सम्हालनेके लिए दिया था। मैं राज्य न तब स्वीकार कर सकता था, न अब स्वीकार कर सकता हूँ। आपका राज्य मैं आपको लौटाता हूँ। मेरे पास पिता का राज्य धरोहर के रूप में है। तुम्हारी आज्ञा से मैं राजकार्य चलाता रहा। अब आज्ञा दो, अपना राज्य स्वीकार करो और सिंहासन पर बैठ जाओ। मैं राम-सीता की सेवा करने हेतु रह जाऊँ। इस महान् राज्य को रखने की शक्ति मुझमें कहाँ

है। सिंह का पराक्रम सियार में कहाँ होगा। बलवान का बोझ दुर्बल कैसे ढो सकता है। महाराज्य की रक्षा केवल महावीर ही कर सकता है। आज से राज्यभार मुझपर न रहा। हे राम, तुम युग-युग तक इस राज्य का भोग करो। भरत अयोध्याके अधीश्वरको आज्ञा देनेवाला कौन होता है। यदि आप मुझे अपना भृत्य, भक्त मानते हैं, यदि आपका मुझपर स्नेह है तो आप मुझे आज्ञा दें।

मेरी इच्छा है कि आपका राज्याभिषेक संसार देखे। भरतने अञ्जलि बाँधकर दीनता पूर्वक याचना की- आप समस्त भूमण्डलके स्वामी हैं, आपका प्रभात जागरण वाद्यों तथा वन्दियोंके मङ्गल शब्दसे हो। भरतको आप यह वरदान दें।

वत्स। कैकेयी कुमाता सिद्ध हुई; किंतु तुम-सा पुत्र प्राप्त करके भी इसके दोषका परिमार्जन नहीं होगा ? माता कैकेयी उठ खड़ी हुई। वे साश्रुलोचन श्रीरामकी ओर देखती बोली- मैं क्षमा माँगती, यदि तुम मुझे अपनी माता न मानते होते। अब इस अपनी माताकी भूलको सुधार लो। अयोध्याका सिंहासन स्वीकार करो।

लज्जा से कैकेयी ने रघुनाथ से कहा, तुम्हारे सम्मुख मैं दोषी हूँ। देवताओं की कार्य-सिद्धि के लिए तुम वन गये और मुझको निमित्त का भागी बना गये। यह सारा संसार जानता है कि तुम गोलोक के पति हो, संसार का भार दूर करने के लिए अवतार लिये हुए हो। तुम संसार के सार हो। तुमको कौन पहचान सकता है। तुम्हारे अवतार लेने से सूर्यवंश पवित्र हो गया। शत्रु को मार कर देवताओं की अभिलाषा पूरी की और इसके निमित्त मेरे सिर पर सारा कलंक थोप गये संकोच न किया। बेटा राम, तुम जो मेरे को इतना दुःख पहुँचा रहे हो उसका कारण है कि मैं विमाता हूँ। सदा से तुमको भरत से अधिक स्नेह करती हूँ। तुमको जो कुवचन बोली सो तुम्हारी ही माया थी। तुम सर्व स्थानों में स्थित हो, सुख-दुख-दायक हो, जो मुझे इतनी विपत्ति प्राप्त हुयी केवल विमाता समझकर ही हुई।

राम ने लज्जित होकर सिर झुका लिया। हाथ जोड़कर राम कहने लगे। विनय वचन से राम कैकेयी को प्रसन्न करने लगे। तुम्हारा कोई भी दोष नहीं है माँ, सभी कुझ दैव की विडम्बना है। समय पर सभी कुछ होता है, विधि का लेखा है। तुम्हारी ही कृपासे दशानन का वध किया। तुम्हारे ही कारण मुझको सुग्रीव जैसा मित्र मिला। संकट में सुग्रीव ने मेरा बड़ा उपकार किया। तुम्हारी ही कृपा से मैंने सागर बाँधा। रावण को मारकर देवताओं को तुष्ट किया। लक्ष्मण का सारा भक्तिभाव जानने को मिला। यह भी जान सका कि सीता पतिव्रता और सती है। माँ तुम्ही से मैं धर्म-अधर्म सभी कुछ जान सका। व्याजस्तुति पूर्ण ये वाक्य सुनकर कैकेयी को दुगुनी व्यथा मिली। सभी को राम के दर्शन से आनन्द प्राप्त हुआ।

अम्ब। राम सदा आपका है। आपका आदेश मैंने कभी अस्वीकार किया है ? श्रीरामने भावभरे स्वरमें कहा- आज भी आपका आदेश स्वीकार करूँगा; किंतु आपने कोई भूल की थी, यह राम नहीं मानेगा। आपने अपने रामको अनन्त यशस्वी बनाया है।

सूत, मागध, बन्दीजन स्तवन कर रहे थे। जनसमूह जयघोष कर रहा था। गगनसे कुसुम वर्षा हो रही थी। श्रीरामने पुलकित होकर भरतको उठाकर हृदयसे लगाया।

आनन्दकन्द श्रीराम अब अपने महल में चले गये। आकाश फूलों की वृष्टि से आच्छादित हो गया। नगर के नर-नारी अटारियों पर चढ़ करके प्रभु श्रीराम का दर्शन कर रहे है। सब लोगों ने अपने-अपने घरों में मंगल के लिये सोने के कलश अपने-अपने दरवाजों पर रख लिये और तोरण वन्दनवार ध्वजा और पताकायें लगायी। सारी गलिया सुगन्धित द्रव्य से सींची गई। चौक पुराये गये। अनेकों प्रकार के सुन्दर मंगल साज सजाये गये और हर्षपूर्वक नगर में डंके बजने लगे। नगर की शोभा सम्पति और कल्याण का वेद, शेष और सरस्वती भी बखान करने में असमर्थ है। शिवजी कहते है- हे उमा तब भला मनुष्य उनके गुणों का कैसे बखान कर सकता है ? अनेक प्रकार के शुभ शकुन हो रहे है। आकाश में नगाडे बज रहे है।

सुमन्त्र राजकीय कोविदार ध्वज रथ जोड़कर सम्मुख हाथ जोड़े उपस्थित हुए। स्वर्णाभरण भूषित, रत्नमुकुट धारण किये श्रीराम उस रथपर सीताके साथ विराजमान हुए। भरतने सुमन्त्रके स्थानपर रथ-रश्मि अपने हाथमें ले ली। शत्रुघ्न श्वेत छत्र लेकर श्रीसीतारामके पीछे खड़े हुए। लक्ष्मणने व्यजन लिया। विभीषण और सुग्रीव दोनों पार्श्वोंमें चामरधारी बन गये।

चक्रवर्ती महाराज दशरथके सब मन्त्री, प्रजापरिषदके प्रधान आगे चले। विप्रवर्ग मन्त्र-पाठ करता आगे चला। गगनसे देवता अनवरत पुष्प वर्षा कर रहे थे। अप्सराओंका नृत्य, गन्धर्वोंकी वाद्यध्वनि, किन्नरोंका कल-कण्ठ गगनको गुञ्जित कर रहा था और धरापर मङ्गल-गान, मन्त्रपाठ, मागध-सूत-बन्दियोंका स्तवन, जन-समाजका जयघोष दिशाओंको ध्वनित कर रहा था। सहस्त्रश:

गजोंपर वानर-यूथप बैठे चल रहे थे।

पूरा नगर पताका, तोरण, ध्वजाओंसे सजा था। सम्पूर्ण पथ सुगन्धि सिञ्चित थे। द्वारोंपर मङ्गल-कलश प्रदीपयुक्त सजाये गये थे। प्रत्येक गृहोंके गवक्षोंसे सुरभित धूम्र उठ रहा था। प्रत्येक गृहें मन्त्र-पाठ चल रहा था, मङ्गल गान हो रहा था। अयोध्यामें आज चौदह वर्षोंके पश्चात् महोत्सव मनाया जा रहा था।

श्रीराम-लक्ष्मणने अन्त:पुरमें जाकर वन्दनीय महिलाओंको प्रणाम किया। श्रीजानकीने सबकी पद-वन्दना की। सभी सेवकों-सेविकाओंसे मिले, उनका कुशल पूछा। उन्हें पुरस्कृत किया।

अयोध्याका यह समारोह तो अब चलता ही रहना है। नगरकी विप्र-पत्नियोंको, वृद्धाओंको श्रीराम-लक्ष्मणसे भी मिलना है और श्रीजनक-नन्दिनीसे तो वधुओंको, कन्याओंको भी मिलना है।

श्रीरघुनाथको सभी नागरिकोंका सत्कार करना है। सखाओंको अममाल देकर उन्हें सुग्रीवादिसे परिचित कराना है। आजका आनन्द विभोर समय-आनन्दघन आज आये हैं दीर्घकालके पश्चात् अयोध्या। असीम आनन्द पारावार उमड़ा पड़ रहा है।

२) श्रीराम का राज्याभिषेक- गुरु वशिष्ठ ने सभी ब्राह्मणों को बुला लिया और बोले आज शुभ घडी सुन्दर दिन शुभ योग है। यदि आप सभी ब्राह्मणों सन्तो और ऋषियों की सम्मति हो तो श्रीराम अयोध्या राजसिंहासन पर विराजमान हो। वशिष्ठजी के वचन सुनकर सभी आनन्दित और हर्षित हुये। श्रीराम का राज्याभिषेक सम्पूर्ण जगत को आनन्द देनेवाला है। हे मुनिश्रेष्ठ अब विलम्ब का कोई कारण नहीं और शीघ्रता करें। तब मुनि ने मन्त्री सुमन्त्र को आज्ञा दी। वे तुरन्त ही जाकर अनेकों रथ, अश्व हाथी सजाकर ले आये और जहां-तहां सूचना देने वाले दूतों को भेजकर मांगलिक पदार्थ मंगा कर हर्ष के साथ आकर गुरु वशिष्ठ के चरणों में सिर नवाया।

महर्षिने मुहूर्त निश्चित कर दिया। भरतने सुग्रीवसे कहा- चारों समुद्रों तथा पुण्य सरित सरोवरोंका जल लानेके लिए आप अपने दूत भेजें तो वे हमारे अश्वारोहियोंकी अपेक्षा शीघ्र आवेंगे। औषधियाँ भी वे सुगमतापूर्वक ला सकेंगे।

सुग्रीवका आदेश पाकर स्वर्ण कलश लेकर बहुतसे वानरोंके साथ सुषेण पूर्व गये। ऋषभ दक्षिण, गवय पश्चिम तथा नल उत्तर सागरसे जल लेने गये। इनके साथके वानर सम्पूर्ण भारतकी पुण्य सरिताओं एवं सरोवरों, कूपों, निर्झरोंका तीर्थोदक ले आये। वानर अनेक प्रकारकी औषधियाँ ले आये।

यहां राजमहल में शत्रुघ्न ने आकर सबसे कहा गुरु वशिष्ठ की आज्ञा है कि भाई श्रीराम राजसी वेष में सुसज्जित हो। हम सबके सहित राज्याभिषेक के मंडप में उपस्थित हो। तब अयोध्या का भाग्य चमक रहा था कि प्रत्येक नर नारी हर्षित हो रहे थे। तब प्रभु श्रीराम ने सेवकों को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम पहले मेरे सखाओं को स्नानादि करवाओ।

अब जटाजूट के बदले रघुकुल का मुकुट शीश पर विराजे इसके लिये माताओं से सानन्द प्रणाम कर विदा ली और प्रभु श्रीराम-लक्ष्मणसहित स्नान के लिये चले। अब समय आ गया यह जटाजूट तपस्वी वेश हटाने का जैसे चन्द्रमा और सूर्य के आगे से काले बादल फटने को ही थे। श्रीराम भाई भरत की जटा सुलझा रहे है और भरत प्रभु श्रीराम की जटायें अपने हाथ से बना रहे है। तीनों भ्राताओं सहित प्रभु श्रीराम ने स्नान किया और भगवान आशुतोष का पूजन कर विविध भांति दान कर्म किया। स्नान करके श्रीराम ने आभूषण धारण किये और राजसी रूप में विधि भांति श्रृंगार किया। उनके इस रूप को देखकर असंख्य कामदेव भी लजा गये। इधर सासुओं ने जानकी सीता को भी स्नान करा उबटन लगा शरीर में दिव्य वस्त्र धारण करा श्रेष्ठ आभूषण भली भांति धारण करा दिये। तब साथियों सहित प्रभु श्रीराम राजसी रूप में राज दरबार की ओर चले। सीता प्रभा के साथ-साथ राम सूर्य उदित हुये। पुरजन मन्त्रीगण सहित मुनिवर वशिष्ठ अत्यन्त मुदित हुये। तब गुरु वशिष्ठ ने आज्ञा दी मणिजटित रत्नों से भरपूर सिंहासन बिछाओ तथा दामिनी की तरह दमकनेवाला दैदिप्य रत्न खचित राजमुकुट ले आओ। श्रीराम के बायी ओर गुणों की खान रमा जानकी सुशोभित हो रही है। यह झांकी देखकर सभी मातायें अपना जन्म जीवन सफल मानकर हर्षित हो रही है। काकभुशुण्डि कहते हैं हे पक्षिराज गरुड सुनिये। उस समय ब्रह्मा, शिव और मुनियों के समूह तथा विमानों पर चढ़कर सब देवता आनन्द कन्द भगवान के दर्शन करने के लिये आये। प्रभु श्रीराम उस दिव्य सिंहासन पर विराज गये। तब ब्राह्मणों ने वेद मन्त्रों का उच्चारण कर स्वस्तिवाचन किया। आकाश में देवता और मुनि जय हो जय हो जय का नाद

करने लगे। शुभ समय जानकर तब गुरु वशिष्ठ ने श्रीराम को राजमुकुट धारण कराया और कुम-कुम का तिलक किया। महलों में मंगलगान हुआ। द्वारपर बाजे बजने लगे। यह मन पसन्द अवसर देखकर सुर नर मुनि सभी हर्षाते हैं। जय सीता राम जय सिया राम जय राजा राम कहकर देवताओं ने सुमन वृष्टि की। भगवान शंकर ने भी उसी समय आकर अयोध्या में आनन्द घटा बरसा दी और सब के बीच श्री सीताराम की जय तीन बार बुलवा दी। सब लोग कह रहे है देखो तो क्या झांकी है कितनी छटादार छवि विराजी है दांये रघुनाथ विराज रहे है और बायें वैदेही विराजी है। सब ब्राह्मणों ने समुद्र जल से सभी पावन नदियों के जल से अभिषेक कर श्रीराम को तिलक किया। पुत्र को राजसिंहासन पर देखकर सभी मातायें हर्षित हुई और बार-बार प्रभु श्रीराम की आरती उतारी। ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के दायज दान दिये और सम्पूर्ण याचकों को अयाचक बना दिया। देवताओं ने नगाडे बजाकर जयघोष किया। गन्धर्व और किन्नर गा रहे हैं। अप्सरायें नृत्य कर रही हैं। देवता और मुनि परमानन्द को प्राप्त हो रहे हैं। भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न, विभीषण, अंगद, हनुमान और सुग्रीव आदि सहित क्रमश: छत्र, चंवर, पंखा, धनुष, तलवार, ढाल और शक्ति लिये हुये सुशोभित हैं। जो मनुष्य सीताराम इस छवि झांकी का दर्शन कर रहे हैं वे नर धन्य है। हे गरुडजी वह शोभा, वह समाज और वह सुख कहते नहीं बनता। सरस्वती शेष और वेद निरन्तर उसका वर्णन करते है उसका रस महादेवजी ही जानते है।

श्रीसीताराम रत्नजटित स्वर्णासनपर विराजमान हुए। औषधियुक्त पवित्र तीर्थोदकोंसे महर्षि वशिष्ठ तथा दूसरे ऋषि-मुनि-तापसोंने दोनोंको मन्त्र-पाठ करते हुए अभिषिक्त किया।

गगनसे सुमन-वर्षा हो रही थी। देवता जय-ध्वनि कर रहे थे। अप्सराएँ नृत्य कर रही थीं। गन्धर्व बजाने, गानमें लगे थे। सब ओर जयघोष उठ रहा था।

पुण्य स्नानके पश्चात् विप्रपत्नियों, देवाङ्गनाओं तथा नगरकी प्रतिष्ठित वृद्धाओंने श्रीवैदेहीको वस्त्राभरण, पुष्पमाल्य एवं दिव्यवस्त्र धारण कराया। उनकी केश सज्जा की। अङ्गराग लगाया।

श्रीरामने भी वस्त्राभरण धारण किया। अङ्गराग लगा। अब महर्षि वशिष्ठने इक्ष्वाकु वंशकी परम्परासे आता रन्तमुकुट विप्रोंके मन्त्र-पाठके मध्य श्रीरामके मस्तकपर रखकर उसपर वह किरीट धारण कराया जो सृष्टिकर्ताने स्वयं मनुको दिया था। श्रीजनक-नन्दिनीके मस्तकपर रत्नोज्वल चन्द्रिका भूषित हुई।

शत्रुघ्नने श्वेत छत्र धारण किया। यह चन्द्रोज्वल अमृतवर्षी छत्र विश्वकर्माने महाराज इक्ष्वाकुके लिए प्रस्तुत किया था। विभीषण तथा सुग्रीवने चामर धारण किया। भरतने व्यंजन उठाया करोंमें; किंतु श्रीरामने उन्हें रोक दिया। अग्रजके आदेशसे भरतको युवराजके आसनपर बैठना पड़ा। यौवराज्य पदपर उनका अभिषेक उसी समय श्रीरामके आग्रहसे हुआ।

सुदूर उत्तरके कैक देशसे कुमार युधाजित आ गये थे। दक्षिण कोशल तथा मगधके युवराज भी आये। जनकपुरसे महाराज विदेहने भी अपने पुत्रको भेजा था। कन्याके पतिगृहका ही नहीं, उस नगरका जल भी पहिले नियम- निष्ठ लोग नहीं लेते थे। अत: जनकपुर नरेश अथवा ननिहालोंके नरपति स्वयं नहीं आये थे।

इन स्वजन सम्बन्धियोंको तो उपहार लाने ही थे, दूसरे नरेश भी नाना प्रकारके उपहार सम्राट्को अर्पित करनेके लिए ले आये थे। अद्भुत रत्न, कम्बल, कौशेय वस्त्र, नाना प्रकारके पात्र, कलाकृतियाँ काष्ठगजदन्त अथवा धातु निर्मित लोग ले आये थे।

सरयू किनारे आगत नरेशोंके वस्त्र शिविरोंसे दूसरा महानगर निर्मित हो गया था। दूरस्थ प्रदेशोंसे कला जीवी पधारे थे अपनी सर्वोत्तम कृतियाँ लेकर। लगभग सभी सुप्रसिद्ध ऋषि-मुनि अपने शिष्य एवं सहायकोंके साथ आये थे।

शत्रुघ्नने सबको समुचित आवास दिया था। सबकी व्यवस्था भरत स्वयं घूमकर देख लेते थे। श्रीराम सबसे नम्रतापूर्वक मिलते थे। उनके राज्य, प्रदेश, आश्रमकी कुशल पूछते थे। सबको प्रतिदिन कुछ-न-कुछ उपहार भेजते रहते थे।

तुमल वाद्य ध्वनि, ऋषि-मुनि गण तथा विप्रवर्गके सस्वर वेद पाठके मध्य महर्षि वशिष्ठने श्रीरामको तिलक लगाकर सूर्यवंशकी परम्परासे आता मणि-रत्न-मण्डित राजदण्ड श्रीरामके दक्षिण हस्तमें दिया। ऋषियों तथा विप्रवर्गने स्वस्तिवाचनपूर्वक राजतिलक तथा दण्ड धारणका समर्थन किया। श्रीसीतारामको आशीर्वाद दिया।

सम्राटको सबसे पहिले उपहार अर्पण करनेका अधिकार वानरेन्द्र सुग्रीवको प्राप्त हुआ। सुग्रीवके पश्चात् विभीषणने जब उपहारर्पण

कर लिया, तब देवराजको, लोकपालोंको, देवताओंको अवसर मिला। सामान्य नरेशोंको तो बहुत पीछे वह अवसर प्राप्त हुआ। तब जब कि सब स्वजन सम्बन्धी उपहार दे चुके।

तब विभीषण ने उस राज सभा में गर्व सहित अवधेश को एक मणिमाल पहनाई। दीनदयाल प्रभु ने यह उपहार स्वीकार कर माला सीता के कंठ में डाल दी। वह मणि माला सीता के गले में अत्यन्त सुशोभित हो रही थी। जिसकी शोभा का वर्णन कर लेखनी भी लजाती है। वह मणिमाल दीपावली की समान प्रकाश ज्योति की भांति प्रकाशित हो रही है। सीताजी कुछ समय तक वह माला अपने गले में पहनी रही फिर सुत हनुमान को देखा तो उतारकर प्रेमसहित हनुमान के कंठ में डाल दी। अब तक हनुमन्त की दृष्टि माता के चरणों पर थी पर माला के गले में पडते ही माला पर दृष्टि गई। उन्होने इस माला के भीतर और कुछ देखा और वे चाहते कुछ और। क्षणभर उसे देखते रहे फिर उसे सूंघा और दातों से तोडा उस माला के एक-एक दाने को मुंह में लेकर दाँतों से फोडा। मन बेमन दानों को फोड रहे थे तब विभीषण के मन के भाव सूखते जा रहे थे। जब माला के दाने आधे से अधिक खंडित हो गये तब सुग्रीव से यह नहीं देखा गया और वे बोल उठे हे हनुमन्त, हे वीरवर हे बल बुद्धि के धाम तुम तो समझदार हो फिर दानी होकर ये कैसी नादानी कर रहे हो ? बल और बुद्धि ये दोनों पदार्थ जग में कोई-कोई बिरले लोग ही पाते है पर तुम में तो यह दोनों ही भरपूर दृष्टि में आते है। हे बुद्धिमान अब तुम्हारी बुद्धि कहाँ चली गई। तभी जाम्बवन्त बोले भाई बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद ? तब वीरवर हनुमान हाथ जोड बोले- अपनी आभा से जो तिनका-तिनका आभासित करते है उन इष्टदेव का पता मुझे इस मणिमाला में कहीं नहीं मिला, मेरे प्रभु श्रीराम का दर्शन इसमें मुझे कहीं नहीं हुआ। मुझे लगा इसमें भीतर में पाजाउँ इसी कारण से इसे तोड रहा हूँ इसके मणियों को फोड रहा हूँ। मुझे नादान कहो या दानी इसीलिये बस इसे मैं तोड रहा हूँ। अपना प्यारा भीतर भी नहीं मिला तो यह दाने किस मतलब के। इसलिये मेरे लिये इसका कोई मोल नहीं यह तो मात्र शोभा की निरर्थक वस्तु है। इसके मणि दानेभर मूल्य नहीं रखते। ये राम नाम रहित दाने है। दीनों के नाथ जो इसमें मिल जाये तो निश्चय ही य ह उपयोगी है वरना इस दास के लिये तो यह मणिमाला कंकर और पत्थर का टुकडा है। तब विभीषण बोले, हे तात सच है कि इसके भीतर तो राम नहीं है पर तुम में तो हे भक्तवर व्यापक है यह राम नाम। हनुमान बोले हां व्यापक है इस देह में यह दो अक्षर का नाम। रोम-रोम में इस दास के राम रमे हुये हैं यह कहकर हनुमान ने नख से निज वक्षस्थल चीर दिया। क्षणभर में सबको विस्मित कर दिया। सुग्रीव, विभीषण, जाम्बवन्त सबको बडा कौतुक हुआ दिल में ही क्या रोम-रोम में श्रीराम नाम अंकित था। वक्षस्थल में श्रीराम सीता की झांकी अंकित हुई पाई। श्रीराम नाम के रंग में बजरंगी ऐसे रंगे कि पूरी सभा में ही श्रीराम नाम का रस अमृत गा-गा कर बरसाने लगे। उसी समय माता सीता के अमृत समान नयन पुत्र पर पडे तब हनुमान जैसे तैसे हो गये और पूर्ण सुख चैन मिला।

सबसे अन्तमें अत्यन्त समोचपूर्वक उठे निषाद राज गुह; किंतु श्रीरामने उन्हें अपने सिंहासनके दक्षिण पार्श्वमें रत्नासनपर बलात् बैठा दिया- आप हमारे अपने हैं। इस सिंहासनको उपहारकी अपेक्षा आपसे नहीं है। आप इसके प्रमुख रक्षक रहेंगे और राजसभामें यह दक्षिणका आसन आपका रहेगा। रामको आप जैसा मित्र पानेपर गर्व है।

देवराज इन्द्रने स्वयं आकर उपहार अर्पित किया। यक्षराज कुबेर, जलाधीश वरुण प्रभृति सभी लोकपालोंने भेंट दी। गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, किम्पुरुष, नाग आदिने भेंट अर्पित की। अभिषेक के समय भेंट देनेका अर्थ ही अपना सम्राट स्वीकार करना था।

भगवान ब्रह्मा मूर्तिमान वेदोंके साथ पधारे। उन्होंने स्तवन किया। भगवान गङ्गाधर वृषभारुढ़ पधारे देवी पार्वतीके साथ। उन्होंने भी स्तवन किया।

सब देवता अलग-अलग स्तुति करके अपने-अपने लोक को चले गये तब चारों वेद वहां आये और प्रभु श्रीराम का गुणगान करने लगे और स्तुति करने लगे। वेदों ने भगवान के साकार रूप और निराकार रूप दोनों की स्तुति की और ब्रह्मलोक चले गये। तब भगवान शिवशंकर वहां पर आये और गद्गद् वाणी से स्तुति करने लगे। हे राम। हे रमा रमण लक्ष्मीकान्त। हे जन्म-मरण के सन्तापों का नाश करनेवाले आपकी जय हो। आवागमन के भय से व्याकुल इस सेवक की रक्षा करे। हे अवधपति हे देवताओं के स्वामी, हे रमापति हे विभो मैं शरणागत आपसे यही मांगता हूँ कि हे प्रभो मेरी रक्षा करें।

आप पृथ्वी मंडल के अत्यन्त सुन्दर आभूषण है, आप श्रेष्ठ बाण धनुष और तरकश धारण किये हुये है। महान मद मोह और ममतारूपी रात्रि के अन्धकार समूह के नाश करने के लिये आप सूर्य के तेजोमय किरण समूह हैं। हे नाथ हे पाप ताप का हरण करनेवाले

कामदेव को मार कर विषयरूपी वन में भूले पडे इस पामर अनाथ जीव की रक्षा करे। लोग बहुत से रोगों और वियोगों दु:खों से घिरे पडे है। ये सब आपके चरणों के निरादर का फल है। जो मनुष्य आपके चरण कमलों में प्रेम नहीं करता वे इस अथाह भवसागर में पडे है पार नहीं पा सकते। जिन्हें आपके चरण कमलों में प्रीति नहीं है वे नित्य ही अत्यन्त दीन, मलिन उदास और दु:खी रहते है और जिन्हें आपकी लीला कथा का आधार है उनको संत और भगवान सदा ही प्रिय लगते है। उनमें न राग है, न आसक्ति, न लोभ, न मान, न मद। उनको सम्पत्ति सुख, विपत्ति दु:ख समान है। इसीसे मुनि लोग योग साधन का भरोसा सदा के लिये त्याग देते है और प्रसन्नता के साथ आपके सेवक बन जाते है। हे रघुवीर मैं नित्य आपको भजता हूँ आपकी शरण ग्रहण करता हूँ। हे हरि आपका नाम जपता हूँ और आपको नमस्कार करता हूँ। आप जन्म-मरण रूपी रोग की महान औषधि और अभिमान के शत्रु हैं। आप गुण शील और कृपा के धाम है। आप लक्ष्मीपति है मैं आपको निरन्तर प्रणाम करता हूँ। हे रघुनाथ आप जन्म-मरण, सुख-दुख, राग-द्वेष आदि द्वन्द समूहों का निवारण कीजिये। हे पृथ्वी पालक इस दीन जन की ओर अपनी दृष्टि डालें। मैं आपसे बार-बार यही वरदान मांगता हूँ कि मुझे आपके चरण कमलों की अचल भक्ति और आपके भक्तों का सत्संग सदा प्राप्त होता रहे। हे लक्ष्मीपते हर्षित होकर मुझे यह दे। श्रीराम के गुणों का वर्णन कर उमापति महादेव हर्षित होकर कैलाश को चले गये।

तब प्रभु श्रीराम ने वानरों को सब प्रकार से सुख देनेवाले डेरे दिलवाये। हे गरुडजी यह कथा सबको पावन करनेवाली है। दैहिक, दैविक और भौतिक तीनों प्रकार के तापों का और जन्म-मृत्यु के भय का शमन करनेवाली है। महाराज श्रीराम के कल्याणमय राज्याभिषेक का चरित्र सुन कर मनुष्य वैराग्य और ज्ञान को प्राप्त हो जाता है। जो मनुष्य इसे सकाम भाव से सुनते है, भजते है और गाते है वे अनेकों प्रकार के सुख और सम्पत्ति पाते है। वे जगत में देव दुर्लभ सुखों को भोग कर अन्तकाल में श्रीरघुनाथजी के परम धाम को जाते है। इसे जो जीवनमुक्त, विरक्त और विषयी भी सुनते है तो वे क्रमश: भक्ति, मुक्ति और नये-नये सम्पति भोग पाते है। हे पक्षिराज गरुडजी यह कथा जन्म मरण के भय से मुक्त, और दु:खों को हरनेवाली है ये वैराग्य, विवेक और भक्ति को जड करनेवाली है। तथा मोह रूपी नदी को पार करने के लिये सुन्दर नाव है। अवधपुरी में नित-नये मंगल उत्सव मनाये जाते है। सभी वर्णों और वर्गों के लोग हर्षोल्लित हो रहे है।

अयोध्याकी राजसभामें आञ्जनेयने अपना स्थान उसी समय निश्चित कर लिया, जब श्रीरघुनाथ वैदेहीके साथ सिंहासनासीन हुए। अभिषेक तथा उपहारार्पण पूरा होते ही पवनकुमार श्रीराघवेन्द्रके पाद पीठके पास तनिक दक्षिण वीरासनसे बैठ गये। उनका यह स्थान और यह मुद्रा सुनिश्चित हो गयी श्रीरामके सिंहासनासीन रहते। वे सम्राटके सिंहासनपर बैठते ही बैठ जाते थे और उनके उठनेका उपक्रम करते ही उठ खड़े होते थे।

उपहारार्पणके अनन्तर सम्राट्की ओरसे पुरस्कार वितरण प्रारम्भ हुआ। भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न सब आगतोंको समुचित् पुरस्कार देनेमें लगे। सूत, मागध, बन्दीजन तथा दूसरे सब कलाजीवी सन्तुष्ट किये गये। सबको यथेष्ट पुरस्कार प्राप्त हुआ। सबको लगा कि स्वयं सम्राटने उनको सम्मानित किया है। उनकी कलाकी प्रशंसा की है और उन्हें विशेष रूपसे पुरस्कृत किया है।

ब्राह्मणोंको, मुनिगणोंको श्रीरघुनाथने विदा करते समय उनसे अनुरोध किया- आप सब इस सेवकपर अनुग्रह रखें। इससे कोई प्रमाद कभी होता दीखे तो इसे अनुशासित करें और यहाँ यज्ञका आयोजन हो तो आनेकी अनुकम्पा करें।

सबने हर्षोत्फुल्ल कहा- तुम्हारे यज्ञमें आमन्त्रित होकर आना हमारे लिए गौरवकी बात होगी।

आगत मण्डलीक नरेशों तथा प्रजा प्रतिनिधियोंको पुरस्कृत करके विदा करनेके अनन्तर स्वजनों, सेवकोंको श्रीरघुनाथने यथेष्ट पुरस्कार दिया। वस्त्र, अन्न-धन, गौ, गज, अश्व, भूमि, ग्रामादि यथोचित रूपमें देकर सबको सम्राटने सन्तुष्ट किया। कोई सेवक, कोई सम्बन्धी इस अवसरपर सत्कृत होनेसे छूटता नहीं था। सुमन्त्रादि सचिव ही नहीं, भरतादि भाई तथा भ्रातृ पत्नियाँ भी स्नेहोपहारसे सन्तुष्ट की गयीं।

सब स्वजनोंका सत्कार हो जानेके पश्चात् श्रीराघवेन्द्रने लमासे आये वानरोंको सम्मानित करना प्रारम्भ किया। अपने कण्ठकी रत्नमाला सुग्रीवके गलेमें डाल दी। अङ्गदकी भुजाओंमें अपने करोंसे अपने रत्नाङ्गद पहिनाये।

हनुमान। तुमको जो अभीष्ट हो मांग लो। सबके अन्तमें पवनकुमारकी ओर श्रीराघवेन्द्रने देखा। सब वानर यूथप, विभीषणादि पुरस्कृत हो चुके थे।

मेरे मुहसे आपका नाम बराबर निकलता रहे। आञ्जनेयको कहाँ किसी पदार्थकी कामना थी- जब तक सृष्टिमें भुवनपावनी कथा रहे, तबतक मैं सशरीर इस पृथ्वीपर रहूँ।

एवमस्तु। तुम स्वेच्छानुसार जीवन्मुक्त होकर मेरे भक्तोंके संरक्षक बनकर पृथ्वीपर रहो। श्रीरामने प्रसन्न स्वरमें स्वीकार किया।

सम्राज्ञी श्रीजनकनन्दिनीने वरदान दिया। तुम जनपदमें, निर्जनमें, वन-पर्वतमें जहाँ कहीं भी रहो, वहीं सब भोग तुम्हारी सेवामें उपस्थित रहा करें। जितने दिन तक यह पृथ्वी रहेगी- तुम रोग-शोक से रहित हो चिरंजीवी बने रहो। जब तक चन्द्र-सूर्य रहेगा, जब तक राम का नाम संसार में घोषित होता रहेगा उतने दिनों तक तुम अक्षय अमर बने रहोगे। हनुमान, तुमको मैं यह वर देती हूँ। जिस किसी स्थान पर राम के नाम का प्रसंग होगा- चाहे तुम कहीं भी रहो, वहीं पहुँच जाओगे।

श्रीराम चरण कमलों में जिन्हें शिवजी, मुनिगण और ब्रह्माजी भी नमस्कार करते है सबकी नित्य नवीन प्रीति है। भिक्षुकों को बहुत प्रकार के वस्त्राभूषण पहनाये गये और ब्राह्मणों को नाना प्रकार के दान दिये। वानर सब ब्रह्मानंद में मग्न है। प्रभु चरणों में सबका प्रेम है। दिन जाते समय नहीं लगता और इसी प्रकार रामराज्याभिषेक को छ: महिने बीत गये। इसी तरह नित्य उत्सव होते रहे। प्रतिदिन राजाराम का दरबार लगता था। उन लोगों को तो अपने घर ही भूल गये। उन्हे स्वप्न में भी घर की सुध याद नहीं आती जैसे सन्तों के मन में दूसरों से द्रोह करने की बात नहीं आती।

अतिथि, अभ्यागतोंका समाज सत्कृत होकर विदा हो गया आगत ऋषि-मुनियों तथा कलाजीवियोंमें-से अधिकांश अयोध्यामें तथा आस-पासके अरण्योंमें आश्रम बनाकर बस गये। केवल वे गये जिनके कहीं स्थायी आश्रम अथवा कला-शिक्षण-केन्द्र थे। जिनको किसी स्थान विशेषमें ही नहीं रहना था, वे परिव्राजक-पर्यटनशील अब अयोध्या छोड़कर अन्यत्र क्यों जायँ ? इस प्रकार जिन्होंने भी रहना चाहा, सबको उसकी इच्छा तथा सुविधाके अनुसार आवासकी व्यवस्था शासनने कर दी। उनके निर्वाहकी व्यवस्था भी शासनने कर दी, जिन्होंने इस व्यवस्थाको स्वीकार किया। अयोध्या उसी समय अपने नगर तथा उपनगरों, आश्रमों सहित भूमण्डलका वृहत्तम, सम्पन्नतम, श्रेष्ठतम नगर बन गया।

तुम मेरे साथ पृथ्वीका पालन करो। श्रीरामने बहुत आग्रह किया लक्ष्मणसे कि वे युवराज-पद स्वीकार कर लें; किंतु लक्ष्मणने इसे स्वीकार नहीं किया। उन्होंने सविनय निषेध कर दिया- मैं आपका सेवक हूँ। मेरा कोई अपराध नहीं है कि मैं सेवा-वञ्चित किया जाऊँ। मैं आज्ञा पानका अधिकारी हूँ। स्वयं निर्णय करना मुझे नहीं आता। हमारे वनमें रहते भाई भरतजीने राज्यका सञ्चालन किया है। ये उत्तम व्यवस्था-सञ्चालक सिद्ध हो चुके हैं। अत: नवीन परीक्षण अनावश्यक है।

स्वजन-सम्बन्धियोंने, सुग्रीवने भी यह व्यवस्था की कि उनको बार-बार आनेका अवसर प्राप्त होता रहे। राज्याभिषेकके अन्तमें वानरोंकी विदाई हुई; किंतु औपचारिक रह गयी। उन्हें तो यज्ञोंमें आना ही था। इतनेपर भी अपने अत्यन्त प्रिय श्रीरामसे भले अल्पकालिक हो, यह विदाई अत्यन्त विषम थी। बहुत व्यथित करनेवाली थी हृदयको। वानर यूथपोंमें कोई अयोध्यासे जाना नहीं चाहता था।

तब एक दिन प्रभु श्रीराम ने अपने सब सखाओं को बुलाया और कहा- तुम लोगों ने मेरी बडी सेवा की है। मैं किसप्रकार तुम्हारी बडाई करूँ। मेरे हित के लिये तुम सब लोगों ने अपने घरों तथा सब प्रकार के सुखों का त्याग कर दिया। इससे तुम सब मुझे अत्यन्त प्रिय हो। छोटे भाई, राज्यसम्पत्ति, जानकी, अपना शरीर, घर, कुटुम्ब और मित्र ये सब भी मुझे तुम्हारे समान प्रिय नहीं है। सेवक तो सभी को प्यारे लगते हैं पर नीति यह है कि मेरा तो दास पर स्वाभाविक ही विशेष प्रेम है। हे सखागण अब सब लोग अपने घर जाओ। वहां दृढ़ नियम से मुझे भजते रहना। मुझे सदा सर्वदा सर्वव्यापक और सबका हित करनेवाला जानकर अत्यन्त प्रेम करना।

आप सबने मेरे लिए बहुत समट सहा है। बहुत दिन हो गे आप सबको स्वजनोंसे वियुक्त हुए। शील-सिन्धु श्रीरामने समोचपूर्वक वानरोंको विदा करते समय कहा- आपने मेरे लिए अपने जीवन तकको उत्सर्ग करनेका उत्साह दिखलाया। मैं आपसे कभी उऋण नहीं हो सकता। मैं सदा आपका हूँ। अयोध्या आपकी है। आप अपने यहाँ निर्भय रहें। कोई आपको असुविधा करनेका साहस नहीं करेगा। रामका कोई यज्ञ-महोत्सव आपके आगमनके बिना अपूर्ण रहेगा और आप जब चाहें, यहाँ आ सकते हैं।

सब भाव विह्वल थे। सुरेन्द्र भी जिनके पादपीठका अपनी किरीटकोटिसे स्पर्श करके उलटे पदों पीछे हटते थे राजसभामें, वे

सर्वेश्वरेश्वर, भुवनैक सम्राट स्वयं वानरोंको पहुँचाने चले। सभी वानर यूथपोंको अयोध्यासे तो वानरेन्द्र सुग्रीवके साथ किष्किन्धा जाना ही था। अपने स्थानोंको वे वानरेन्द्रका सत्कार स्वीकार करके ही जानेवाले थे। अत: सबको एक साथ विदा होना था।

प्रभु के वचन सुनकर सब के सब प्रेम मग्न हो गये। हम कौन है और कहां है? देह की सुध बुध भूले हुये है। वे प्रभु के सामने हाथ जोडकर टकटकी लगाये देखते रह गये और प्रेमवश कुछ कह नहीं सकते। प्रभु ने उनका अत्यन्य प्रेम देखकर अनेक प्रकार से विशेष ज्ञान का उपदेश दिया। तब प्रभु ने विविध प्रकार के वस्त्राभूषण मंगवाये और उन सब वानरों को उपहार में दिये।

अपने अन्तरंग से प्रभु एक दिन सुग्रीव और विभीषण से बोले। आपने मुझपर असीम उपकार किया, निस्वार्थ प्रेम किया है, इसका कुछ भी अर्थ नहीं है आपने तो इतना ऊंचा परमार्थ किया। जिसके डर से अब तक शत्रु दल लंका में पानी भी नहीं पीता है उसी रावण को वानरसेना द्वारा तुम लोगों ने ही जीता है। रावण के वध हो जाने से अभी भी लंकापुरी में पूरी शान्ति का शासन नहीं हुआ है। फिर भी महाराज विभीषण को राज्य मिल गया पर अन्दर ही अन्दर कुछ अनबन चल रही है। यही स्थिति किष्किन्धा की है इससे जनता की प्रगति रुकी हुई है। अंगद और सुग्रीव भी यहां है इसलिये वहां की प्रजा बिना राजा के बिना युवराज के है। इसीलिये मेरे मन में बार-बार यही विचार आता है कि अब तुम्हारे साथ किस प्रकार व्यवहार करूं अपने प्यारों को इस समय रोक कर जनता पर अत्याचार होगा। इसलिये लाचारी से कह रहा हूं अपने-अपने राज्यों में प्रस्थान करो और विद्रोही दल का शमन करो। शान्ति के बाण से अशान्ति को नष्ट करो। जनता का नागरिकों का कष्ट शमन करो। इसप्रकार रघुवीर ने आदर सहित धैर्य बंधाकर दोनों को विदा किया। भरत ने अपने हाथों सुग्रीव को वस्त्राभरण करवाया और लक्ष्मण ने महाराज विभीषण को बहुमूल्य आभूषणों से अलंकृत किया।

अब आप हमें अनुमति दें। नगर द्वारपर पहुँचकर सुग्रीवने चरणवन्दना करके अनुरोध किया।

भाइयोंके साथ श्रीराम रुक गये- तुम ठीक कहते हो जिनसे शीघ्र मिलनेकी आशा हो, उन स्वजनोंको दूर तक नहीं पहुँचाया जाता।

पवनकुमार सुग्रीवके स्वेच्छा सहायक थे। सुग्रीवने उन्हें अपना मन्त्री बना रखा था; किंतु वे माताकी आज्ञासे किष्किन्धामें राजनीति तथा शासन-व्यवस्थाका व्यावहारिक प्रशिक्षण लेने आये थे। अब माताने श्रीरघुनाथकी सेवाका आदेश दे दिया था। किष्किन्धामें उन्हें क्या बन्धन था। उन्हें कोई रोक भी कैसे सकता था।

आप मुझे अनुमति दें। कुछ आगे जाकर हनुमान्ने वानरेन्द्र सुग्रीवसे विनम्र प्रार्थनाकी- आवश्यकता होनेपर जब आप स्मरण करेंगे, सेवामें उपस्थित हो जाऊँगा।

तुम सौभाग्यशाली हो हनुमान। अयोध्याके सम्राट्के श्रीचरणोंके सन्निकट रहनेका सुयोग सुरेन्द्रको भी सुलभ नहीं है। सुग्रीवने हृदयसे लगाकर विदा करते भरे कण्ठ कहा- किष्किन्धा तो तुम्हारी अपनी पुरी है; किंतु तुम अयोध्या रहोगे तो सम्पूर्ण वानर जाति गौरव प्राप्त कर लेगी कि उनका एक प्रतिनिध सम्राट्की नीजि सेवामें स्वीकृत है। तुम करुणावरुणालय श्रीरामकी सेवा करो। इतना ही तुमसे अनुरोध है कि सेवाका कोई भी सुयोग हो तो हम लोगोंको विस्मृत मत करना।

अत्यन्त कठिन- असम्भव प्राय है अपना आराध्य विग्रह किसीको दे देना। आस्थाहीन अथवा दुर्बल आस्था पुरुष भले यह कर ले, जिसमें दृढ़ आस्था है, वह यह त्याग किसीके निमित्त भी कैसे कर सकता है; किंतु श्रीरामके लिए यह भी अदेय नहीं रहा। अपना ही नहीं, इक्ष्वाकु कुलकी परम्परासे प्राप्त आराध्य मूर्त्ति भी इन उदार शिरोमणिने दे दी। आश्रितजनको जो स्वयं अपनेको ही दे डालते हैं, उन भक्त-वत्सलके लिए अदेय कुछ भी नहीं है।

सङ्गका रङ्ग कुछ-न-कुछ चढ़ता ही है। लमामें रावणके रहते विभीषणको उस स्वर्णपुरीका पूरा प्रबन्ध सम्हालना पड़ता था। उनका रात-दिन रक्षसोंका सङ्ग था। राक्षस सब इन्द्रिय भोगोंमें लिप्त। अर्थ और कामकी ही अहर्निशि चर्चा। फलत: अनजाने ही विभीषणने अन्त:करणमें दशग्रीवसे अपमानित होनेपर लमाका राज्य-प्रभुत्व पानेकी कामना एक बार जाग उठी थीं। श्रीरामके समीप पहुँचते ही वह कामना समाप्त हो गयी; किंतु श्रीरघुनाथने उसके उदयको ही पूरणीय मानकर संतृप्त कर दिया।

लमामें मन्दिर थे- भैरवके, भवानीके, भूतनाथके। परमभक्त विभीषणकी आन्तरिक इच्छा थी कि एक भगवान् नारायणका भी भव्य मन्दिर वहाँ होता। रावणके रहते यह असम्भव था। वह तो हरिका शत्रु ही था; किंतु अब तो वे दुर्दिन समाप्त हो गये। विभीषण ही लमाके अधिपति हो गये। अब वह आकांक्षा पूर्ण करनेमें कोई बाधा नहीं रही। अब आवश्यक है उपयुक्त भव्य मूर्ति।

अयोध्या आकर श्रीराम-राज्याभिषेकके अवसरपर विभीषणने भी अयोध्याके मन्दिरके दर्शन किये दूसरोंके साथ। राजसदनके मन्दिरमें दर्शन करने गये। इक्ष्वाकु कुलके आराध्य भगवान श्रीरङ्गकी शेषशायी भव्य श्रीमूर्तिके दर्शन करके हृदय पुकार उठा- यही। यही। यही। जैसे जन्म-जन्मसे इसी आराध्य श्रीविग्रकी शोधमें वे रहे हों।

कैसे माँगा जा श्रीराघवेन्द्रसे कि वे अपने कुलाराध्यका ही श्रीविग्रह प्रदान कर दें, किंतु हृदय मानता नहीं। बुद्धि बहाने बनाती है- जहाँ स्वयं रघुनाथ उपस्थित हैं, वहाँ किसी मूर्तिके रहने, न रहनेका क्या प्रभाव पड़ता है। वे सर्वसमर्थ हैं। वैसा दूसरा श्रीविग्रह वैकुण्ठसे भी उनकी इच्छा करनेपर आ सकता है। उन दानि-शिरोमणिके लिए कुछ अदेय नहीं है। लमाके राजस-तामस स्वभाव राक्षसोंके मनको प्रभावित करने-शुद्ध करनेकी सामर्थ्य इसी विग्रहमें है।

विभीषणने अनेक बार प्रयत्न किया; किंतु कहनेका साहस नहीं हुआ। जब आगत विदा होने लगे, वे श्रीरामके सम्मुख पड़नेसे बचते रहे। सुग्रीवादिको विदा करके श्रीरामने उन्हें समीप बुलाया। स्नेहपूर्वक़ बोले- सखे। मुझे लगता है कि तुम कई दिनोंसे कुछ कहना चाहते हो। मुझसे भी कुछ कहनेमें समोच ? बिना हिचक बतलाओ, तुम्हें क्या चाहिये ?

मैं अधम राक्षस हूँ। आपने मुझे अपनाकर धन्य-धन्य कर दिया है। विभीषण श्रीरघुनाथके दोनों चरण पकड़कर फूट पड़े- लेकिन राक्षसका लोभी स्वभाव गया नहीं। यहाँ इस दिव्यपुरीमें आकर इसका लोभ अधिक उद्दीप्त हो गया है।

अयोध्यामें ऐसा क्या है जो आप चाहते हैं और उसे सूचित करनेमें इतने समोच करते हैं ? श्रीरामके मुखपर सहज स्मित आया- सुनूं भी तो मैं अपने परम सहायक मित्रको क्या अर्पित करके सन्तुष्ट कर सकता हूँ।

लमामें श्रीहरिका कोई मन्दिर नहीं है। विभीषणने बहुत समोचपूर्वक प्रार्थना की- वहाँके राजस-तामस लोगोंको सात्विक, शुद्ध भक्तिकी प्रेरणा मिलती यदि श्रीरङ्गका श्रीविग्रह वहाँ विराजमान होता।

तुम यहीं कहनेमें इतना संकोचकर रहे थे ? श्रीरामने हँसकर कहा। तत्काल गम्भीर हो गये- विभीषण। श्रद्धा सेवित श्रीविग्रह धातु-पाषणकी मूर्ति नहीं होता। वह साक्षात् सच्चिदानन्द-घन हो जाता है। अर्चा विग्रह ईश्वरका प्रत्यक्ष अवतार है। इक्ष्वाकु-कुलको यह श्रीविग्रह स्वयं नारायणके अनुग्रहसे प्राप्त हुआ। उनको देने या लेनेका प्रश्न नहीं उठता। वे चिद्घन स्वयं अयोध्यासे अन्यत्र पधारना चाहते हैं, तभी उन अन्तर्यामीने तुम्हारे हृदयमें ऐसी आकांक्षा जागृतकी है। उनकी इच्छामें व्यवधान बननेका दुराग्रह यहाँ कोई भी कैसे करेगा। वे आराध्य जाना चाहते हैं तो तुम उन्हें स्वेच्छापूर्वक सादर ले जाओ।

विभीषणको तो वह अलभ्य लाभ हुआ, जिसकी उन्हें किसी प्रकार आशा नहीं थी। महर्षि वशिष्ठको बुलाया गया। विप्रवृन्दके साथ वे आये। सविधि महाराजोपचारसे श्रीरङ्गकी अर्चा हुई। राजकुलके सभी सदस्योंने, अयोध्याके प्रमुखोंने उनका पूजन किया। यह आराध्यको विदा देनेका पूजन-सबके हृदय भाव विह्वल हो रहे थे।

हम राक्षस आकाशचारी तो हैं ही। विभीषणने कोई वाहन स्वीकार नहीं किया- इस अधम असुरको एक बार तो श्रीनारायणका वाहन बननेका सौभाग्य प्राप्त हो।

श्रीरामने रथपर ले जानेका आग्रह नहीं किया। ऋषि-मुनियोंके सस्वर वेद-मन्त्रोंके स्वनके मध्य विभीषणने वह श्रीविग्रह सादर अपने दक्षिण स्कन्धपर उठाया और वहीं आकाशमें उठ गये।

श्रीरङ्गके अयोध्यासे प्रस्थान करनेके कारण वहाँ सबको खेद हुआ; किंतु दूसरा लगभग वैसा ही श्रीविग्रह उसी समय गरुड़ ले आये। उन्होंने बतलाया- स्वयं भगवान नारायणने उसे भेजा है। अत्यन्त आर्त पुकार तथा दीर्घकालीन तपोनुरोधके कारण ही अयोध्यामें स्थित अर्चाविग्रहको अन्यत्र जाना पड़ा।

अयोध्यामें इस आगत श्रीमूर्तिकी स्थापना हो गयी। यहाँसे श्रीरङ्गका अर्चा विग्रह लेकर विभीषण दिनके तृतीय प्रहरमें चले थे। मध्याह्नमें राजभोग अर्पित करके, विश्राम करानेके अनन्तर मध्याह्नोत्तर उत्थापन, पूजनपादिके पश्चात ही आराध्य-विग्रहको अयोध्यासे विदा प्राप्त हुई थी। विभीषणको सूर्यास्त होता दीखा जब वे दक्षिण भारतमें काबेरीके अन्त्यद्वीपके ऊपर पहुँचे। (कावेरी में तीन द्वीप है। तीनोंमें शेषशायी श्रीरङ्ग विग्रह स्थापित है। काबेरी उद्गमके थोड़ी ही दूरपर शिव समुद्रम् आदि रङ्गम। मध्यमें मैंसूरसे लगभग ६ मील दूर श्रीरङ्ग-पट्टन-मध्य रङ्गम् और काबेरी-सागर सङ्गमके समीप श्रीरङ्गम अन्तरङ्गम् यह त्रिचिरापल्ली में है।)

सूर्यास्त हो रहा था। विभीषण नियम निष्ठ थे। सायं स्नान-सन्ध्याका समय हो गया था और सायमालीन अर्चन भी श्रीरङ्ग विग्रहका आवश्यक था। अत: वे उस द्वीपमें उतर गये। अपोलिङ्गम श्रीजम्बुकेश्वरसे कुछ दूरीपर उन्होंने श्रीरङ्ग-विग्रहको सादर रखा और स्वयं काबेरीमें स्नान करके सन्ध्यादिमें लग गये।

अपना आह्निक सम्पन्न करके विभीषणने यथालब्धोपचारसे भगवान श्रीरङ्गकी सायमालीन अर्चाकी। अर्चाके अनन्तर जब वे उस दिव्य विग्रहको उठाने लगे, सम्पूर्ण शक्ति लगा देनेपर भी उसे हिलानेमें भी असमर्थ हो गये।

हृदयकी गति मानो अवरुद्ध हो जायगी। जैसे हृदय फट जायगा। उन्होंने वहीं श्रीरङ्ग विग्रहके समीप निर्जल, निराहार पड़े रहनेका निश्चय किया। जब तक अनुग्रह करके श्रीरङ्ग स्वयं चलना स्वीकार न कर लें।

वत्स विभीषण। आग्रह मत करो। विभीषण स्वयं नहीं समझ सके कि वे उस समय स्वप्न देख रहे थे या जागृत थे, अथवा तन्द्रामें थे। रात्रिमें तनिक पलकें झपकीं और जैसे गगन शत सहस्र पूर्ण चन्द्रोंकी ज्योत्स्नासे धवल हो उठा। साक्षात् पीताम्बर परिधान, इन्दीवर सुन्दर, रत्नाभरण भूषित, चतुर्भुज सायुज श्रीरङ्ग गगनमें सम्मुख सुप्रसन्न मेघ गम्भीर स्वरमें कह रहे थे- वहाँका नरेश महारजा दशरथके राजसूर्ययज्ञमें अयोध्या गया था। वहाँ मेरे इस श्रीविग्रहका दर्शन करके मुग्ध हो गया। अयोध्याके चक्रवर्ती सम्राटसे उनका आराध्य विग्रह माँगनेका साहस उसे नहीं हुआ। यहाँ लौटकर तभीसे केवल जल पीकर मेरे इस अर्चानिग्रहको पानेके लिए तप कर रहा है।

विभीषण। तुम भक्त हो। जानते हो कि मैं भक्तोंकी भावनाके वशमें हूँ। इसीसे अयोध्या त्यागकर मुझे यहाँ आना पड़ा है। वह अमृतको भी उज्जीवित करनेवाला स्वर अत्यन्त वात्सल्य मधुर हो गया- मैं तुम्हारी लमाकी ओर चरण करके, उधर ही देखता यहाँ शयन करूँगा। तुम यहाँ आकर प्रतिदिन मेरी अर्चा कर लिया करो। एक अत्यन्त आतुर, तपोनिरत, भक्तिपूत हृदयकी अभीप्सा पूर्ण हो जाने दो।

वह मूर्ति अदृश्य हो गयी। विभीषणने नेत्र खोले तो गगन अरुणोदयके कारण लाल हो रहा था। उन्होंने भूमिपर मस्तक रखकर वह आदेश स्वीकार किया। उठकर काबेरी स्नान करके सन्ध्याकी और प्रात:पूजन करके लमा चले गसे। तपोनिरत राजाको भी स्वप्नादेश हो गया था। विभीषणके जाते ही वहाँ आ गया। मन्दिर निर्माण उसने करवाया और विभीषण प्रतिदिन ब्रह्ममुहूर्त में श्रीरंगनाथ मंदिर त्रिचिरापल्ली में दर्शन करने जाते है।

अंगद प्रेम वश वहीं बैठे रहे। अभी तक प्रभु ने अंगद को नहीं बुलाया।

तभी जाम्बवान नील और अंगद प्रभु श्रीराम के पास आये तब श्रीराम बोले बस्ती ही नहीं भाई वन भी शान्त रहे ऐसा कोई प्रबन्ध करो। अब अवध में रहकर बहुत दिन बीत गये अब जाकर अपने घर की सुधि लो भाई। अपने घर को जाकर यह ध्यान रखना कि तुम राम मन्दिर में ही बैठे हो। सोते-जगते फिरते मन और हृदय से राम को स्मरण करते रहना। तब जाम्बवन्त बोले सुनिये कौशलनाथ आपके इन चरणों में बार-बार यह सिर झुका है। यदि मैं रणक्षेत्र में मर जाता तो सच्ची शान्ति प्राप्त हो जाती। अब इस बूढ़े जीवन में यह वियोग पीडा सही नहीं जायेगी। इस दास का जर्जर शरीर आपके चरणों को छोड़कर क्या कहीं चैन पायेगा ? मेरे तो सारे धन धाम सभी तुम्ही हो फिर कहां जायेगा ये दास प्रभो ? कमलों का प्रेमी भौरा कैसे पदम पराग छोडेगा, जिसपर जीवन रखा है उसी पर जीवन छोड देगा। इस तरह अपने भक्त के भाव भरे वचन सुनकर भगवान के नेत्रों में भी भक्ति के आंसू भर आये। उन अन्तर्यामी का इस बूढ़े जाम्बवन्त का सच्चा प्यार नजर आया नयनों से करूणा जल बहने लगा तब चुम्बक के समान उसको अपने से चिपटा कर प्रभु विकल हुये और रोने लगे। सुलझा कर जगत के सब सूत्र जो हरि चरणों में आजायेगा हरि भी उसके ही आगे धागे से बन्धा दिखेगा। प्रभु बोले मुनि बनकर मोह का संवरण करो। भक्तराज लौट जाओ। सहर्ष वियोग व्यथा को सहन करो और इस प्रकार राम का यह आदेश ग्रहण करो। सतयुग में वामन अवतार देखा उसने जाम्बवन्त जी आपका सान्निध्य था। त्रेता में रामावतार में मित्र की भांति साथ-साथ रहे। आगे द्वापर में भी यह हाथ-हाथ में रहे उस समय तुम्हारी पुत्री को अपनी पत्नी बनाकर राज महलों में लाऊँगा। उस तीसरी अवस्था में तुमको अपना तीसरा स्वरूप दिखलाऊंगा। इसलिये अब अगले युग तक जाकर वन में सानन्द निवास करो। मन में मेरा आराधन कर उस आनेवाले शुभ अवसर का इन्तजार करो। तब यह सुनकर भालूपति जाम्बवन्त इसे स्वीकार कर मौन हो गये। तब अंगद उठकर बोले सुने मेरी सरकार मेरे पिता के मरने के समय आपने मुझ पर अनन्त उपकार किया। अब तो यह चंचल चित्त आपके चरणों में लग गया। हे भक्तों के स्वामी क्या इसे इसी क्षण अभी छुडा दोगे ? अंगद के इस प्रकार वचन सुनकर प्रभु श्रीराम हंसने लगे और हृदय से लगाकर

प्यार से बोले। किष्किन्धा के युवराज तुम्हें इतना रहस्य समझाना है राजा बनने के पहिले ही तुम्हें राजा बन जाना है। जनपति ही अपनी जनता का प्रिय जनक बखाना जाता है। राजा का तो प्रजाजनों से समीप का नाता होता है। इतने पुत्रों का पिता तुम्हें बन जाना बहुत सहज है पर पिता का धर्म पालन करना वास्तव में कठिन समस्या है। सीता तक अत्याचार प्रजा चुप रहकर सह लेती है और प्रजा अत्यधिक सताई जाये तो वह सिंहासन भी छीन लेती है। इसलिये हे युवराज कुशल शासक बनकर प्रजा की सेवा अंगीकार करो और राज्य का कार्य करो प्रजा को अपनी बनाकर उससे प्यार करो।

अंगद बोले हे सर्वज्ञ, कृपा और सुख के सागर, दीनों पर दया करनेवाले हे नाथ, भक्तों के हितकारी अपना अशरण शरण का विरह याद करके मेरा त्याग मत करिये। मेरे तो स्वामी, गुरु, पिता और माता ये सब कुछ आप ही है। अब आपके चरण कमलों को छोडकर मैं कहां जाऊँ ? हे प्रभो अब आप ही बताये आपको छोडकर अब घर में मेरा क्या काम है ? हे नाथ इस ज्ञान बुद्धि और बल से हीन बालक तथा दीन सेवक को अपनी शरण में रखे। मैं आपकी सब तरह की सेवा करूंगा और आपके चरण कमलों को देख-देख कर भवसागर से तर जाऊँगा। मुझे कोई पद, कोई सुख-सुविधा नहीं चाहिये। मेरे पिता मुझे आपके पावन पदोंके प्रश्रयमें छोड़ गये हैं। अङ्गद अत्न्त विह्वल हो रहे थे- किष्किन्धामें मेरा कोई भी प्रयोजन नहीं है। मुझे अपने श्रीचरणोंमें पड़े रहने दें।

वत्स। तुम वानरेन्द्र बालिके वंशधर हो। तुम्हारी माताने केवल तुम्हारी सुरक्षाको महत्व देकर पतिके साथ शरीर त्यागका विचार छोड़ा था। वे पल-पल तुम्हारे प्रत्यावर्तनकी प्रतीक्षा करती होंगी। श्रीरामने अपने चरणोंमें लिपटे अङ्गदको बलपूर्वक उठाकर हृदयसे लगाया। छोटे बालकके समान उनके मस्तकपर हाथ फेरा। वात्सल्यपूर्ण स्वरमें समझाया- महामनस्वी पिताके तुम योग्य पुत्र हो। अपने दायित्वसे तुम्हें भागना नहीं चाहिये। तुम नहीं लौटोगे तो तुम्हारी माता भी उदासीना हो जायेंगी। एकाकी सुग्रीवकावे वानरोंके शासनमें बहुत कठिनाई होगी। तुमको उन्हें सहयोग देना चाहिये।

अयोध्या तुम्हारी अपनी है। तुमको तो यहाँ शीघ्र आना है, श्रीरामने आश्वासन दिया- वानरेन्द्र यहाँके किसी यज्ञके समय तुम्हें किष्किन्धामें रोकनेका आग्रह नहीं करेंगे। मैं तुम्हें विशेषरूपसे बुलाता रहूँगा।

ऐसा कहकर वे प्रभु श्रीराम के चरणों में प्रणत हो गये। अंगद के विनम्र भरे वचन सुनकर प्रभु ने उसे उठाकर हृदय से लगा लिया और नेत्रों में प्रेमाश्रु जल भर आया। तब भगवान ने अपने हृदय की माला वस्त्र और मणि रत्नों के आभूषण बालि सुत अंगद को पहना कर बहुत प्रकार से समझा कर उसको विदा किया। अङ्गदको आज्ञाके कारण विवश होकर जाना पड़ा। वे बार-बार मुड़कर देखते गये श्रीरामकी ओर- अब भी मुझे रह जानेका आदेश हो जाय।

उन तेजस्वी की बात को कौन काट सकता है। अब यह सुनकर अंगद भी जैसे तैसे मौन हो गया।

हनुमान ने सुग्रीव के चरण पकडकर अनेक प्रकार से विनती करी मैं कुछ दिन श्रीरामजी की सेवा कर फिर आपके चरणों के दर्शन करूँगा। तब सुग्रीव बोले हे पवनकुमार तुम धन्य हो, पुण्य की राशि हो जो प्रभुने तुमको अपनी सेवा में रख लिया। अब कृपानिधान श्रीराम की मन लगाकर सेवा करो। तब सब वानर चल पडे। अंगद हनुमान से बोले, मैं हाथ जोडकर कहता हूँ प्रभु से मेरी दंडवत कहना और उन्हें बार-बार मेरी याद कराते रहना।

पिताके न रहनेपर आप ही मेरे संरक्षक, सुहृद्, शुभ-चिन्तक रहे हैं। लौटते हनुमानसे पीछे आकर अङ्गद लिपटकर रुदन करने लगे- अपने पालित इस बालकको विस्मृत मत कीजिये। आप शरणागत वत्सल श्रीराघवेन्द्रको परम प्रिय हैं। उनकी सेवामें स्वीकृत हैं। उनके सदा समीप रहनेका सुयोग्य प्राप्त है। स्वामीको मेरा स्मरण दिलाते रहें। मेरी एकमात्र कामना है कि मैं उनके श्रीचरणोंके समीप ही रहूँ। अयोध्याके राजसदनकी तुच्छतम सेवा मिल सके तो मैं अपना सौभाग्य मानूंगा।

फिर कृपालु श्रीराम ने निषादराज को बुला लिया और उसे आभूषण, वस्त्र दिये और बोले तुम भी अब अपने घर जाओ वहां मेरा स्मरण करते रहना और मन, वचन, कर्म से धर्म के अनुसार चलना। तुम मेरे मित्र हो और भरत के समान भाई हो। अयोध्या में सदा जाते-आते रहना। तुम हमारे ऐसे ही आत्मीय बन्धु हो जैसे लक्ष्मण या भरत। श्रीरामने स्वयं निषादराज गुहको अपने करोंसे वस्त्रालमार पहिनाये और उन्हें विदा करने द्वार तक आकर अममाल देते भरे कण्ठ बोले- राम अब इस दायित्वसे दब गया है। अत: इसे अवसर न मिले तो तुम इसको विस्मृत मत करना। मेरी इच्छा है कि एक बार प्रतिदिन यहाँ दर्शन दे जाया करो। अयोध्याकी राजसभा अथवा रामके

अन्त:पुरमें आनेके लिए तुम्हें अनुमति की कभी आवश्यकता नहीं होगी।

निषादराजसे बोला नहीं जा रहा था। उनकी राजसभामें पदवृद्धि, उनके शासन क्षेत्रकी सीमा वृद्धि, उन्हें सम्राट्के पार्श्वमें प्रत्येक यात्रामें रहनेका अधिकार- इन सबके अतिरिक्त अयोध्याके चक्रवर्ती सम्राटकी एक निषादके प्रति यह आत्मीयता-गुह विभोर गये अयोध्यासे। श्रीरामके समीपसे शरीर ही गया, राम तो उनके अन्तरमें अविचल आसीन हो चुके थे।

यह सुनकर निषादराज गुह को भारी सुख उत्पन्न हुआ। वह आँसुओं से भीगकर प्रभु श्रीराम के चरणों में गिर पडा। तब प्रभुने उसे भाव भीनी विदाई दी। गुह भगवान को स्मरण कर अपने घर आगया और आकर उसने सभी कुटुम्बियों को प्रभु का स्वभाव वर्णन सुनाया। इस तरह प्रभुने अपने सभी वन के संगी साथियों को विदा किया। पवन तनय हनुमान से प्रभु विदाई की बात नहीं कह सके। क्योंकि उनका तो पूरा शरीर ही राम रंग में रंगा हुआ था। उनकी तो यह कठिन अनन्य भक्ति थी प्रभु के प्रति। आज उस अशोक वन वाली जानकी का आशीर्वाद पूरा हो गया। छाया के भांति वह माता सीता का दुलारा प्रभु श्रीराम के साथ रहता है।

पुष्पक। अब तुम धनाध्यक्षके समीप चले जाओ। श्रीराम विमानके समीप आ गये- उनकी सेवामें रहो।

श्रीचरणोंने मुझे सनाथ किया है। उस दिव्य विमानसे मधुर ध्वनि आयी- शस्त्र एवं वाहन समर बिजयीके होते हैं। लोकपाल कुबेर मुझे हार चुके हैं। उनको पराजित करके दशग्रीवने मुझे प्राप्त किया था। मैं अपवित्र ही रहता यदि आपके पादपद्म मुझे पवित्र न कर देते; किंतु दशमुख-दलन करके आपने अपने शौर्यसे मुझे प्राप्त किया है। इन चरणोंमें अपनाकर परित्यागकी परम्परा तो उचित नहीं है। मेरा अपराध देव ?

तुम सामान्य वाहन नहीं तो पुष्पक। सृष्टिकर्त्ताने विश्वकर्माके द्वारा तुम्हारा विशेषरूपसे निर्माण धनाध्यक्षके लिए कराया है। श्रीरामने कहा- दशग्रीवका दौरात्म्य था तुम्हारा अपहरण। अत: तुम अलकापुरी जाओ। मुझे जब आवश्यकता होगी, तुम्हें स्मरण कर लूँगा। तुम तो स्मरण करते ही आ सकते हो।

जब तक आप धरापर हैं, मैं वाहन आपका ही हूँ। पुष्पकसे पुन: ध्वनि उठी- आपके आदेशसे मैं धनाध्यक्षके समीप जा रहा हूँ। आपके स्मरण करनेपर मुझे कुबेरसे अनुमति लेनेकी आवश्यकता नहीं।

३) राम राज्य- अवध राजाराम को पाकर स्वर्ग सा बन गया। आज तक यह राज्य रामराज्य के नाम से विख्यात हुआ। श्रीराम ने प्रजा को अपनी सन्तान से भी अधिक समझा प्रजा भी प्रभु का पिता समान ही मान कर रही थी। चारों वर्ण और चारों आश्रम अपना अपना कर्तव्य पालन करते थे। राज आज्ञाओं और गुरु के वचनों को श्रद्धासहित पालन करते थे। ब्राह्मण द्विज वर्ग धर्म का उपदेश देकर सबको अपना-अपना कर्तव्य बताते थे। क्षत्रिय वर्ण शासन की नीति समझ उसी के अनुसार पालन कर राज्य का कष्ट मिटाते थे। वैश्य जाति पर व्यापार का भार था जिससे राज्य कोष भंडार भरा रहे। शूद्र वर्ण में सेवादि का भाव, उपकार का भाव कूट-कूट कर भरा था। सद्गुण सम्पन्न ब्रह्मचारी गुरुकुल से शिक्षा ग्रहण करते थे। गृहस्थ भी अपनी-अपनी जिम्मेदारियां समझकर गृह परिवार की उन्नति करते थे। वानप्रस्थ वर्ग सदा तप करने व तीर्थयात्रा में रत रहता था। सन्यासी ज्ञानी बन ब्रह्म आराधना में लगे रहते थे। पुरुषों का दल पुरुषार्थी था, सद्भावों से भरा सागर था। शरीर तो मनुष्य का था पर आचरण देवताओं के समान था। नारियां देवियां समान थी जो पति को ही ईश्वर मान गृहस्थ धर्म को जानती थी और माता का धर्म और कर्तव्य भलीभाँति जानती थी। प्रजा के सभी नर-नारी विद्वान व समझदार थे। कोई भी अनपढ़, अज्ञान, गंवार नहीं था। ऊँचे वर्ग में अभिमान अहंकार नहीं था और नीचे वर्ग में किसी का कोई अपमान नहीं था। चारों ओर शान्ति और खुशहाली का वातावरण था। श्रीराम के शासन का यही एक प्रधान मन्त्र था धर्म और सत्य पर प्रजा अटल रहे। नियमों में भी कोई ऐसी ढिलाई नहीं थी जिसे प्रजा दु:ख कष्ट सहन करे। राजा महलमें अपना मौज मजा भोग विलास में आनन्द उठाये और प्रजा रोती चिल्लाती रहे इस तरह की कोई विसंगति नहीं थी। यहां पर कोई नौकर मालिक नहीं है। राजा तो नाम मात्र प्रजा का राजा होता था। ऐसा कोई कठोर नियम भी नहीं था प्रजा मरती रहे, अकाल पडता रहे और फिर भी राजकर कठोरता से वसूल किया जाये। आज भी जहां कही सन्तोषजन शासन देख लेते है तो रामराज्य की ही उपमा देते है, अर्थात भारत में यह राज्य तन्त्र की प्रणाली रामराज्य से आई जिसकी सराहना लोग आज तक उदाहरण देकर कहते हैं। जीव जन्तुओं पशु

पक्षियों तक का न्याय होता था। न्याय के मामलों में श्रीराम गुरु सम्मति, गुरु मन्त्रणा कर ही न्याय करते थे।

श्रीराघवेन्द्रके अभिषिक्त होते ही भूमि रसवती हो गयी। कृषकोंके क्षेत्र बिना जोते-बोये फल देने लगे। कृषि तथा उद्यानके विनाशक तत्त्व मूषक, टिड्डियाँ, कीड़े एवं शुक जैसे हानिकर पक्षियोंका स्वयं अभाव हो गया।

लताएँ तथा पुष्पतरु पुष्पभारसे झुके रहने लगे। उनपर भ्रमरोंने, पिक, पपीहे, मयूरोंने अपना आवास बनाया। सुस्वर पक्षियोंकी बहुलता हो गयी। फलोद्यानों तथा उपवनों, वनोंमें सभी ऋतुओंमें वृक्ष फलित-पुष्पित होने लगे। उनपर स्थान-स्थानपर मधुछत्रक लटकने लगे। मेघ समय-समयपर आवश्यक वर्षा करने लगे। अनावृष्टि तथा अतिवृष्टि शब्द ही लोगोंको विस्मृत हो गये। धरापर परिपुष्ट गुणवान औषधियाँ प्रकट होने लगीं। तृणोंसे भूमि श्यामला हो उठी। सूर्यने मानो सुखद ताप बनाये रखनेका व्रत ले लिया। ओला, तुषारपात पुस्तक शब्द रह गये। हिमपातसे केवल गिरि-शिखर शुभ्र होते थे। सरिताएँ, निर्झर सदा निर्मल नीर प्रवाहित करने लगे।

अश्व, गज, गायें तथा अन्य पशुओंमें उत्तम लक्षणयुक्त शिशु ही उत्पन्न होने लगे। गायोंमें दूध बढ़ गया। भेड़ोंने सुकोमल ऊन देना प्रारम्भ किया। कौशेय क्षेत्रोंमें कोशक निर्माता कृमिगणोंने अनेक रङ्गोंके उत्तम कोशक निर्मित करने आरम्भ किये।

भगवान गणपतिने अपने गणोंको आदेश दे दिया- भूमिपर आधि-व्याधिके अधिदेवताओंका भूलसे भी भटककर निकलना- दण्डनीय अपराध माना जायगा। वीरभद्रने, महाभैरवने, कालिका तथा चामुण्डाने अपने सब अनुगतोंको सावधान कर दिया- अब त्रेताके अन्त तक पृथ्वीको वर्जित क्षेत्र न मानने वाले क्षमा नहीं किये जायेंगे।

सरोवरोंमें, वापियोंमें ही नहीं, छोटे उत्खातों (गड्ढों) तकमें रङ्गबिरंगे कमल, कुमुदिनियाँ खिल उठीं और वहाँ सारस, चक्रवाक तथा राजहंसोंका समूह स्वर्गीय उद्यानोंसे भी उतर आया। जैसे भगवती श्री स्वयं अपने करोंसे भूमिके एक-एक तृणको, एक-एक पादपको, प्राणीको, शिलातलको भी सज्जित करनेमें लग गयीं। पर्वतोंपर स्वर्ण, रजत, ताम्रादि धातुएं ऊपर ही प्रकट हो गयीं। हरिक, पुष्पराग, पन्ना, गोमेद, नीलम, पद्मराग जैसे रत्न-मणियोंकी राशि सामान्य पर्वतोंमें भी सुलभ हो गयी। समुद्रकी तरंगे राशि-राशि मुक्ता, विद्रुम, शफपुलिनपर प्रक्षिप्त करने लगीं। दुर्लभ पदार्थ, दुर्लभ वस्तु जैसा कुछ रह नहीं गया कहीं।

मनुष्योंके ही नहीं, पशु-पक्षी एवं कीटों तकके मानस निर्मल हो गये। सृष्टिमें तमोगुण केवल धातु-पदार्थोंको सघनता, दृढ़ता देनेवाला तथा प्राणियोंको सुखद निद्रा प्रदान करनेवाला शुभ गुण बन गया। रजोगुण शक्ति, स्फूर्ति, सेवाका प्रदाता हो गया। सबके अन्त:करण निर्मल हो गये। प्राणियोंमें परस्परका संघर्ष, हिंसा, अमर्ष विस्मृत बात बन गयी। सम्पूर्ण पृथ्वी तपोवनके समान शुद्ध सत्व, शान्त हो गयी।

वायुने बन्द हो जाना तथा झंझा, अन्धड़, वात्याचक्र बनना त्यागकर सुखद, शीतल, मन्दगति सुस्थिर रूपमें अपना लिया। अग्निदेव यज्ञशालामें हो अथवा पाकशालमें, निर्धूम प्रज्वलित होने लगे। उनके उपद्रव शमित हो गये।

मनुष्योंका शरीर सुपुष्ट, सुन्दर, स्वस्थ रहने लगा। स्त्री-पुरुष सबकी इन्द्रियाँ निर्विकार, चित्त शान्त। सब शम-दम सम्पन्न। परिग्रह केवल यज्ञके लिए आवश्यक रह गया। लोभ विदा हो गया। काम परिवर्तित हो गया श्रीराम प्रेममें। दाम्पत्य आवश्यक सन्तानोत्पादन तथा सेवाका साधन हो गया। सब अपने अनुकूल, विधि विहित आचारमें सुखी-सन्तुष्ट, ईर्ष्या, द्वेष, कपट, संघर्षसे सब असंस्पृष्ट। प्रचुर सामग्री सबके लिए सदा सुलभ हो गयी, तब लोभ और परिग्रह कोई क्यों करें ? सन्तोष, तितीक्षा, तप प्रिय हो गया सबको। इन्द्रिय-भोगोंमें रुचि नहीं; क्योंकि सत्वस्थ अन्त:करण अन्तरके अनन्त आनन्दका निधिपति हो गया।

भगवती वीणापाणि मानो प्रतीक्षा करने लगीं कि कोई अध्ययन करनेकी इच्छा करे, काव्यके लिए लेखनी उठाये, तूलिका अथवा तक्षणकी चेष्टा करे तो उसकी वाणीको, कण्ठको, करको अपना सम्पूर्ण आशीर्वाद देकर वे स्वयं कृतार्थ हो; क्योंकि मानवमें विलास-वर्जित उच्चतम अभिरूचि जाग उठी थीं। अध्ययन करना था योग्यता प्राप्तिके लिए। काव्य, सङ्गीत, चित्र अथवा मूर्त्तिकला साधन बन गयी- अपने सर्वेश्वरेश्वर सम्राटके रूप, गुण, पराक्रमको प्रकट करके उनके चारु चिन्तनमें मानसको निमग्न रखनेकी साधना।

साधक, संयमी, तपस्वी ये शब्द रह गये। ऋषि, मुनि, वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी वनोंमें रहते थे, उनके त्यागपूर्ण वेश थे, वे समाजके वन्दनीय थे; किंतु तितीक्षा, सन्तोष, अपरिग्रह, संयम एवं भगवत्प्रेम तो सामान्य जनोंमें भी उनके ही समान परिपूर्ण था।

लोगोंकी कुछ कठिनाइयाँ भी बढ़ गयीं श्रीरामके राज्यारूढ़ होते ही। सत्कार करनेवाले श्रद्धापूत मानस मनुष्य थे; किंतु उनकी वह श्रद्धा समन्वित सेवा स्वीकार करनेवाले अतिथि अभ्यागत प्राप्त होने दुर्लभ हो गये थे दाता तो सब होनेको उत्सुक थे; किंतु यह अवसर

अधिकांशके लिए अलभ्य बन गया था, क्योंकि प्रतिगृहीता भी कोई कभी बनता था तो आवश्यकतासे विवश होकर नहीं, केवल अनुग्रहके कारण। श्रीरामके राज्याभिषेकके साथ असन्तोष केवल अपनी आराधना तथा धर्ममें सीमित हो गया। दैन्य स्वभावका सद्गुण रह गया। सम्पूर्ण पृथ्वी, सब प्राणी सत्वनिष्ठ, सुखी, सम्पन्न सहज सद्गुण निरत हो गये।

एक दिन अवधेश अपने राजसदन में आनन्द सहित बैठे थे। उसी समय गुरु वशिष्ठ ने राजनीति का उपदेश दिया और बोले- हे राजन ये १८ व्यक्ति खास होते है जिनसे राजाओं का सम्बन्ध होता है जिससे राज्य प्रबन्ध का कार्य सुचारू रूप से चलता है। मन्त्री, खजांची, सेनापति, वेतनदाता, व्यापार, सचिव, युवराज, पुरोहित, द्वारपाल, वन विभाग रक्षक, कारागार सचिव, न्यायाधीश, रसोइयां, अभिभावक, राजाज्ञा कहनेवाला गुरु, दारोगा, राजवैद्य, महल की ड्योढ़ी पर रहनेवाला संरक्षक। ये १८ व्यक्ति राज चलाने के अंग होते है। इनका सदा विचार कर राजा को इन्हें अधिकार देना चाहिये पर इन पर पूर्ण अधिकार स्वयं राजा का रहे। राजा का यह भी कर्तव्य है इन सबसे नीति पूर्ण व्यवहार करे। चाहे अन्त:करण से आपस में उनसे विरोध हो परन्तु बाह्य से प्रीति प्रकट करना आवश्यक है। ऐसा भी कभी न हो कि आपस में अति लगाव और प्रीति बढ़ जाये जिससे पक्षपात करना पडे। सदा अपने विश्वसनीय गुप्तचरों द्वारा इनका गुप्त भाव समझता रहे। नीतिवान नरेश वहीं है जिसके ये सब नीरोगी और कुशल है। शासन में भी कुशलता तभी आती है जब कार्य कुशल सहयोगी हो।

राजन राजाओं में भी १४ दोष पाये जाते है जिससे सेना, राज्य और राजकोष नष्ट हो जाते है। ये दोष इस प्रकार है अभिमान, अहंकार, झूठ, आलस्य, क्रोध, अज्ञान, अनीति, नास्तिकपन, इन्द्रिय सुख भोग विलास (कामी), मूर्खों से मन्त्रणा, हठीला, मन्त्रणा, कथन, विद्वानों का अपमान और जनमत की अवहेलना करना, द्यूतक्रीडा और अति मद्यपान आदि का सेवन करना इन सब दोषों से राजा को सदा सर्वदा बचना चाहिये, तभी उसके राजत्व का लौहा पूरा देश मानता है। यदि प्रजा निरक्षक पापी हो, निर्दयी हो भ्रष्टाचारी उत्कोच लेनेवाले हो, गुप्तदूत अविचारी हो, मिथ्या सन्देश देनेवाले यदि वैद्य और गुरु चाटुकार हो, सेनापति षडयन्त्रकारी हो, राजा के सारे मन्त्री मीठे कपटी बकवादी हो तो निश्चय जानो कि वह राजा राज्य सहित पूरा चौपट होता है। अपनी छोटी-छोटी भूलों से ही बडा दारूण संकट उत्पन्न कर लेता है। इसलिये राजा के लिये उचित है कि वह अपना राजा पन समझे उसकी प्रजापाल की पदवी उसे समझकर प्रजा का मन समझने का प्रयत्न करे। दिन में सच्चा न्यायेश्वर बनकर रहे और रात्रि में स्वयं अज्ञात फिरकर अपनी राजधानी का निरीक्षण करता रहे और प्रजा के मन की स्थिति जाने। राज व्यय से सदा ही राज आय अधिक रहे। सभी सेवकों का शासन प्रणाली का वेतन भुगतान समय पर हो। ईश्वर और प्रकृति के नियमों को माननेवाला हो तथा शासन का मर्म समझनेवाला हो। किस तरह से प्रजा प्रसन्न रहती हो यह गुर परिपूर्ण तरीके से जानता हो तो उस राज्य में शासन देवी सदैव निसंकट और निर्भय रहती है और ऐसे राजा के राज्य के बच्चे-बच्चे की वाणी पर राजा की जय रहती है।

राजा अपने राज्य में अमानी हो तो वही मान पाता है। सृष्टि नियम में तो ईश्वर ही सर्वोपरि है। जनता की इच्छा को लेकर नर बनता है नर राज। जिसने सदा जनता को सर्वोपरि माना है, प्रजा का ध्यान रखता है वही राजा मान पाता है। उसे ही राजा का अधिकार दे जनता शीश पर बिठाती है। राजा के सिर पर भी पूर्ण प्रजा का भार रहता है। राजा का अपना निजी जीवन कुछ भी नहीं होता है। प्रजा को भी अपनी सन्तान समझकर जो पालन-पोषण करते वही राजा महान कहलाता है। कहने को तो राजा राजा है पर वास्तव में वो है प्रजा का दास। जिस राजा के हृदय में यह ज्ञान हो वही राजा महान है। जो राजा अहंकार बस प्रजावर्ग को नीच समझता है तब प्रजा और राजा के बीच कोई प्रेम और मोह नहीं रहता। जो इस सत्य को जान लेता है वही राजा महान है। गुरु वशिष्ठ के यह नीति वचन सुनकर प्रभु श्रीराम प्रभुदित हुये और स्वीकृति का अनुमोदन करने गुरु के चरणों में सिर नवाया। इस प्रकार मुनि वशिष्ठ नित्य प्रतिदिन राजनीति, ज्ञान-विज्ञान का उपदेश करते थे। ऐसे कुशल रामराज्य का डंका चारों और बजने लगा और लोग राम को दशरथ से भी बढ़कर बताने लगे।

श्रीराम के राज्य पर प्रतिष्ठित होनेपर तीनों लोक हर्षित हो गये, उनके सारे शोक ताप समाप्त हो गये। कोई किसी से बैर नहीं करता। श्रीराम के प्रताप से सबकी विषमता भेदभाव मिट गये। पूरी प्रजा वेद मार्ग पर चल रही। उन्हें न तो किसी बात का भय है और न ही कोई शोक। आधि-व्याधि रोग बीमारी से कोई पीडित नहीं है। राम राज्य में दैहिक, दैविक, भौतिक ताप किसी को भी नहीं व्यापते। सब मनुष्य परस्पर प्रेम करते है और अपने अपने धर्म का पालन करते है। सनातन और शाश्वत मार्ग पर चलते है। धर्म अपने चारों चरण से सत्य, शौच, दया और दान से जगत में परिपूर्ण हो रहा है। स्वप्न में भी कभी कोई पाप नहीं करता है। नर नारी सभी राम भक्ति के पारायण है और सभी के सभी

मोक्ष गति परमगति के अधिकारी है। छोटी अल्पआयु में मृत्यु नहीं होती, न ही किसी को कोई पीडा है। सभी के शरीर सुन्दर और निरोग है। न कोई दरिद्र है, न दु:खी है और न ही कोई दीन। न कोई मूर्ख है और न ही शुभ लक्षणों से हीन। सभी लोग दम्भरहित, धर्मपरायण और पुण्यात्मा है। पुरुष और स्त्री सभी चतुर और गुणवान है। सभी गुणों का आदर करनेवाले पंडित ज्ञानी ध्यानी है। सभी लोग कृतज्ञता को माननेवाले, कपट चतुराई रहित है। काकभुशुण्डि कहते है हे पक्षिराज गरुडजी। राम राज्य में जड चेतन सारे जगत में काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से उत्पन्न हुये दु:ख, किसी को भी नहीं होते अर्थात्त इनके बन्धन नहीं है। श्रीराम अवध में सात समुद्रों से घिरी पृथ्वी के एक मात्र एक छत्र सम्राट है। जिन एक-एक राम में अनेकों ब्रह्मांड बसे है उनके लिये ये सात द्वीप पृथ्वी की प्रभुता कुछ अधिक नही है। राम राज्य की सुख सम्पत्ति का वर्णन शेष शारदा भी करने की सामर्थ्य नहीं रखते। सभी नर नारी उदार है, सभी परोपकारी है और सभी ब्राह्मणों के चरणों के सेवक है। सभी पुरुष एक पत्नी व्रती है। इस प्रकार सभी स्त्रियां भी मन, वचन, कर्म से पति का हित करनेवाली है। श्रीराम के राज्य में दंड केवल सन्यासियों के हाथ में है। भेद नाचनेवालों के नृत्य समाज में है और जीतो शब्द केवल मन को जीतने के लिये है। राजनीति में शत्रुओं का जीतने तथा चोर डाकुओं आदि का शमन दमन करने के लिये साम, दाम, दंड और भेद ये चार उपाय किये जाते है पर राम राज्य में कोई शत्रु है ही नहीं। न ही कोई अपराधी है इसलिये किसी को दंड भी नहीं मिलता तथा सभी अनुकूल रहने के कारण भेद नीति की आवश्यकता ही नहीं पडती इसलिये भेद शब्द केवल सुरताल के लिये ही उपयुक्त होता है। वनों में वृक्ष सफा फूलते-फलते रहते है। हाथी और सिंह परस्पर वैर भाव भूल कर एक साथ रहते है। पशु और पक्षी सभी ने स्वाभाविक बैरभाव भुलाकर आपस में प्रेम बढ़ा लिया है। पक्षी मीठी-मीठी बोली से कूजते है। भाँति भाँति के पशु समूह वन में निर्भय विचरते है और आनन्द मनाते है। शील, मन्द, सुगंधित पवन बहते रहती है। भौंरे पुष्पों का पराग दान कर गुंजन करते रहते है। बेले और वृक्ष मांगने से ही मधु टपका देते है। गौये पर्याप्त मात्रा में दूध देती है। धरती सदा खेती से हरी-भरी लहलहाती रहती है। त्रेता युग में भी सतयुग की सी स्थिति हो गई।

समस्त जगत के आत्मा प्रभु श्रीराम को जगत का राजा मानकर पर्वतों ने अनेक प्रकार की मणियों के खनिज पदार्थ प्रकट कर दिये। सब नदियां श्रेष्ठ शीतल, निर्मल और सुख प्रद स्वादिष्ट जल बहाने लगी। समुद्र अपनी मर्यादा में ही हिलोरे लेता है। लहरों के द्वारा पर्याप्त मात्रा में किनारों पर रत्न डाला जाता है। सब तालाब कमलों से परिपूर्ण है। दशो दिशाओं के सभी देश अत्यन्त प्रसन्न व शान्तिपूर्वक है। चन्द्रमा अपनी अमृतमयी किरणों से पृथ्वी को शीतल मनोहारी करता है। वनस्पतियों को पालता है। सूर्य उतना ही तपता है जितने की आवश्यकता होती है और मेघ मांगने से जितना जहां जल चाहिये उतना देते है। कही कोई अनावृष्टि , अतिवृष्टि, अकाल नहीं है। न ही कोई तूफान, बाढ़ भूकम्प है।

प्रभु श्रीराम ने अपने राज्य काल में अनेकों अश्वमेघ यज्ञ किये और ब्राह्मणों को याचकों को पर्याप्त दान दक्षिणा दी। श्रीराम वेद मार्ग पर स्थित धर्म की धुरी को धारण करनेवाले, प्रकृति के तीन गुण सत्व, रजस और तमस से अतीत और भोगों से ऐश्वर्य में इन्द्र के समान है। यद्यपि राज घराने के घर में अपार अनेकों दास दासियां है, वे सब सभी प्रकार की सेवा में कुशल है तथापि पति सेवा को जाननेवाली सीता सदा घर की सेवा अपने हाथों से करती है और नित राम आज्ञा का अनुसरण करती है। घर में कौशल्यादि सभी सासुओं की सेवा तन-मन से करती है। उन्हें किसी बात का अभिमान और मद नहीं है।

सब भाई अनुकूल रहकर सभी भांति श्रीराम की सेवा करते है। श्रीराम चरणों में उनकी अत्यधिक प्रीति है। श्रीराम भी अपने भाईयों से प्रेम करते है और उन्हें नाना प्रकार की नीतियां सिखलाते है। सब लोग हर्षित रहते है और दुर्लभ भोग भोगते है।

अव्यवस्थित दिनचर्या अशान्त मानस एवं अपूर्ण व्यक्तित्वका प्रतीक है। मर्यादा पुरुषोत्तम पृथ्वीपर मानवकी धर्म मर्यादाके स्थापनार्थ पधारे थे, अत: उन्हें श्रुति-शास्त्र सम्मत दिनचर्याका भी आदेश स्थापित ही करना था। उनकी दिनचर्या सम्राट्की दिनचर्या; किंतु सामान्य व्यक्तिके लिए भी उसमें बहुत कुछ अपनाने योग्य आदर्श हैं। आज वह हमारे लिए भले असम्भव हो; किंतु हमारे पूर्व पुरुष कैसा जीवन व्यतीत करते थे, एक आदर्श आस्तिक व्यक्तिका भारतमें दैनिक जीवन कैसा था, यह इसका परिचायक है।

ब्रह्ममुहूर्तके प्रारम्भमें अर्थात् सूर्योदयसे तीन घण्टे पूर्ण ही निद्रा त्यागकर प्रथम मुख-कर प्रक्षालन करके शय्याके समीप रखे आसनपर आसीन होकर स्थिर चित्त ध्यान करते थे मर्यादा पुरुषोत्तम। अपने स्वरूपका ध्यान निर्मल, निष्कल, निर्विकार, अद्वितीय। एक रस परिपूर्ण परम तत्वका ध्यान।

नियमत: सम्राट्का उत्थापन मङ्गल वाद्यों तथा बन्दीजनोंके स्तवनसे होता था; किंतु वस्तुत: तो यह उत्थापन निद्रात्याग नहीं था। श्रीजनकनन्दिनी ही जानती थीं कि सम्राट स्वत: जागृत होते हैं। मङ्गल वाद्य एवं वन्दियोंका यशोगान तो उनका धनसे जागना बनता है। ध्यानसे उठकर वे पुण्य श्लोक पुरुषोंका-अपने कुलके महान पूर्वजोंका, ब्रह्मा-शिव प्रभृति अपनी विभूतियोंको स्मरण करके नित्य शौचसे निवृत्त होते हैं।

विशुद्ध नवनीत कोमल मृत्तिका एवं ऋतुके अनुकूल उष्ण, कवोष्ण अथवा शीतल जल प्रस्तुत रहता है हस्त-पाद मार्जन-प्रक्षालनके लिए। सुगन्धित औषधि सम्पुटित दन्तधावन सम्राट्के लिए भिषक् श्रेष्ठ स्वयं निर्मित करते हैं। उसका उपयोग करनेके पश्चात् अनुजोंके साथ सरयू स्नान करने पधारते हैं। स्नान, सन्ध्या, सूर्योपस्थान, नित्य-हवनके अनन्तर देव मन्दिरोंमें दर्शन करके लौटनेमें पर्याप्त विलम्ब होता है। राजसदन आकर भी पहले गो-पूजन, मंगलगज, अश्व, मधु, घृत, एवं आदर्श दर्पण का दर्शन करके तब वस्त्राभरण अङ्गराग, पुष्पमाल्य धारण होता है।

अलंकृत होकर श्रीराघवेन्द्र पितृ-तर्पण करते हैं। ब्राह्मणों का पूजन करके उनको गौ, अन्न, वस्त्र, स्वर्णादिका दान करते हैं। तब सदनसे बाहर राज-दर्शनको उपस्थित प्रजावर्गके लोगोंसे मिलनेके पूर्व भाइयोंको, स्वजनोंको, नगरके सुहृद-सखाओंको समय मिलता है। उनको उनका वृत्त पूछते हैं। उचित सम्मति एवं सहायता देते हैं। प्रजाजनोंसे मिलते समय उनके उपहार स्वयं सप्रेम स्वीकार करते हैं। उनके समाचार पूछते हैं। उनको तथा सेवकोंको भी सत्कृत करते हैं, पुरस्कृत करते हैं।

यह सब करते हुए मध्याह्न हो जाता है। भाइयोंके साथ पुन: सरयूस्नान करने पधारते हैं। मध्याह्न स्नान, सन्ध्या करके राजसदन लौटने पर पहिले आगत अतिथियोंको, ब्राह्मणोंको भोजन कराते हैं स्वयं। इससे पूर्व गौओंका, अग्निको, पक्षियोंको उनका भाग प्राप्त हो चुका होता है। वृद्धोंको, वृद्ध सेवक-सेविकाओं तकको भोजन कराके तब भाइयोंके साथ स्वयं भोजन करते हैं।

आचमनके अनन्तर ताम्बूल ग्रहण करके अत्यल्प समय मिलता है मध्याह्न विश्रामको। यह समय भी निद्राके लिए नहीं है। इस समयमें अन्त:पुरकी नारियोंको, सेविकाओंको अपनी बात सम्राटको सुनानेका समय मिलता है।

राजसभाके और सदनके, नगरके भी सेवक अत्यन्त विनम्र हैं। सब जानते हैं कि सम्राट् आगतसे कुशल-प्रश्नके समय अवश्य पूछेंगे- आपको यहाँ कोई असुविधा तो नहीं हुई ? नगरमें, राजसभामें आपको सुविधापूर्वक पहुँचाया गया ? उचित वाहन प्राप्त हुआ आपको? पान्थशालामें प्रबन्ध ठीक है ?

आगत अस्वीकार ही न कर दे उसे नगर द्वारसे रथमें लाया जाता है। सेवक आग्रह करते हैं कि वह पान्थशालामें आहार अथवा अल्पाहार स्वीकार करके तब सम्राटके समीप जायँ। अपरिचित ऋषि, मुनि विप्रवर्ग राजसभामें प्रवेश करते ही- सावधान। शब्दोच्चारण करते हैं, सम्राट स्वयं उठकर उन्हें प्रणाम करते हैं, आसन देकर अर्घ्य, पाद्यादि निवेदित करते हैं।

देवता ही नहीं, अनेक बार दैत्य, दानव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, नागोंके प्रमुख पधारते हैं। मानव नरेश, कला प्रवण लोग अथवा वन्य जातियोंके लोग भी आते हैं। कोई दिन नहीं जाता जब शतश: अभ्यागत राज-दर्शनार्थ न आते हों। आगतोंको कभी ही कोई समस्या होती है। अधिकांश लोग आते हैं सम्राट्का दर्शन करने और उनके श्रीचरणोंमें अपना कोई अतिशय प्रिय उपहार निवेदित करने।

श्रीराघवेन्द्र किसी भी वन्य पुरुषको, किसी अत्यन्त दरिद्र-कृशकाय तापसको, किसी सेवक वर्गसे आये व्यक्तिको देखकर सिंहासनसे उठकर दौड़ पड़ सकते हैं अस्त-व्यस्त उसे उठाकर हृदयसे लगाकर पुलक-पूरित हो सकते हैं। निषादराज गुह प्राय: प्रतिदिन आते हैं। प्रतिदिन उनके साथ यही होता है। श्रीराम उनसे ऐसे आतुर मिलते हैं जैसे युगोंके पश्चात् मिले हों।

भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, हनुमान, सुमन्त्रादि सब सतत सावधान रहते हैं। लेकिन भक्तवत्सल, अनन्त दयार्णव, उदार शिरोमणि सम्राट् सबके अपने हैं। ये भाववश्य-प्रतिदिन राजसभामें आनेवाले नगरके सखा, प्रजा प्रधान तकको कभी नहीं लगा कि श्रीरामका ध्यान आज उनकी ओर कम गया। प्रत्येक आगतका उसके भावके अनुसार सत्कार करनेमें ये ही समर्थ हैं। अनेकके सम्बन्धमें आदेश हो जाता है- आपने अपने रामको इतना पराया समझा कि पान्थशालामें ठहरे।

इतना पर्याप्त होता है। भाइयोंमें लक्ष्मण या शत्रुघ्न उस आगतका सब उपकरण पान्थशालासे राजसदन उठा ले जायेंगे। श्रीरघुनाथ स्वयं उसे लेकर राजसदन न भी जायँ तो भरत अवश्य उसके साथ जायेंगे। अब दिनमें अनेक बार सम्राट् उसके सम्बन्धमें पूछेंगे। विदा

होते समय आगतोंको सम्राट्के अत्यधिक उपहार प्राप्त होंगे ही, वाहन प्राप्त होंगे और अधिकांशको सम्राट् स्वयं पहुँचाने चल पड़ेंगे।

श्रीरामका स्वभाव ही है कि परिचित-अपरिचित कोई मिले, स्वयं स्मितपूर्वक उससे पहिले बोलेंगे। उसका समोच स्वयं दूर कर देंगे। ऐसे मिलेंगे जैसे वह बहुत-बहुत परिचित हो उनसे। सचमुच इन सर्वसुहृदसे कोई अपरिचित कैसे हो सकता है।

राजसभाका समय नियत तो है प्रजाको न्यायदान करनेके लिए; किंतु कभी कोई न्यायकी माँग करने आवे, ऐसा अवसर ही प्रजाको प्राप्त नहीं होता। एक ही निश्चित अभियोग है, बार-बार उपस्थित होता है। कभी भी कोई वणिक्, प्रजाप्रधान, वन्य जातिका सेवक उपस्थित होकर किसी राजकर्मचारीके विरुद्ध उपस्थित कर देता है। प्राय: कुमार शत्रुघ्नके विरुद्ध यह अभियोग उपस्थित होता है-

हमें सम्राटकी सेवासे वञ्चित किया गया है। हमारे उपहार अस्वीकृत हुए हैं। हमारा अनधिकार ? हमारा अपराध क्या है ? हम षष्ठांश से अधिक दे रहे हैं, यह सत्य है; किंतु सम्राट् क्यों हमें परिग्रहके लिए बाध्य करें। हम इतने उत्तम गज, अश्व, गौ या रत्न, मणि, औषधि क्या करेंगे ? यह राजसेवाके उपयुक्त-लेकिन इसे स्वीकृति क्यों नहीं मिलती ? कुमार तथा दूसरे राजसेवक हमारी अनुपस्थितिमें अथवा हमारी अस्वीकृतिकी उपेक्षा करके हमारे यहाँ इतने बहुमूल्य उपहार क्यों रखवा देते हैं ?

इन अभियोगोंका एक ही उत्तर सम्राट्के समीप है। ये सस्मित कह देंगे- राजसेवक तथा कुमार शत्रुघ्न जानते हैं कि आप अपने इस सेवक के, जिसे आपने सम्राट् बना दिया है, स्वजन हैं। अत: आपको अपने आपको असुविधामें, अल्पभोगमें रखनेका अधिकार नहीं है। आप क्यों मानते हैं कि आपका सदन सम्राट्का नहीं है और सम्राट्की वस्तु अयोध्या ही आनी चाहिए। वह आपके यहाँ सुरक्षित रहे, आप उसका उपयोग करके उसे कार्यक्षम बनाये रहें तो आवश्यकता होनेपर मैं मँगा सकूँगा।

दिवसके तृतीय प्रहरके अन्तमें राजसभा विसर्जित होती है। सम्राट्-कभी अपनेको विदार ध्वज स्यन्दनपर और कभी महागजपर जो चतुर्दन्त, श्वेत पर्वतके समान शुभ्र एवं विशाल है, बैठकर नगर-दर्शनके लिए निकलते हैं।

भवनोंसे लाजा, दूर्वामुर, पुष्प, केशर-चन्दनकी अनवरत वर्षा होती रहती है। वाद्य बजते चलते हैं, ब्राह्मण वेदपाठ करते, सूत-मागधबन्दी स्तवन करते साथ होते हैं। सब भाई, पवनकुमार, प्राय: सब मन्त्री एवं प्रजा प्रधान भी साथ होते हैं। केवल ऋषिगण राजसभासे अपने आश्रम चले जाते हैं।

सम्राट् पान्थशाला देख सकते हैं। वहाँ रुके किसी अभ्यागत विशेषसे मिल सकते हैं। नगरमें किसी सुहृद या श्रेष्ठिके सदनमें कुछ क्षणोंको पधार सकते हैं। किसी देवमन्दिरमें, ऋषि आश्रम में अथवा किसी शिल्पी, कवि, चित्रकारकी कला-शालाको कृतार्थ कर सकते हैं। नगरके किसी फलोद्यान, पुष्पोद्यान, वापी अथवा सरोवरको देखने जा सकते हैं। किन्हीं भी औद्योगिक संस्थानोंको देख सकते हैं। राजसभासे उठनेपर सम्राट् स्वयं अकस्मात् ही सूचित करते हैं कि वे आज किधर पधारेंगे।

पथोंके दोनों ओर आपण श्रेष्ठी करोंमें उपहार लिए खड़े रहते हैं। स्थान-स्थानपर नीराजन होता है। प्राय: सम्राट्की ओरसे श्रीभरतलाल उपहार स्वीकृत करते हैं और पारितोषिक देते, घोषित करते चलते हैं। सम्राट जहाँ पधारते हैं, वहाँके सदनपति, सेवकादि सबको विशेष रूपसे पुरस्कृत किया जाता है।

मार्गमें कहीं कोई भी आगे आ सकता है। अपना आवेदन प्रस्तुत कर सकता है; किंतु ऐसा अवसर नहीं आता। होता यह है कि सम्राट् स्वयं किसी तपस्वीको, वृद्धको, नगरश्रेष्ठिको या सेवकको समीप बुला लेते हैं। जो उन्हें क्षीणकाय, अल्पधन, अल्प सज्जित लगे, अवश्य बुला लेंगे- आप इतने अपरिग्रही, इतने वीतराग हैं।

अब वह कितना भी अस्वीकार करे, उसका सामान्य भवन भी विशेष बन जायगा। उसमें अपार सम्पत्ति एवं बहुमूल्य उपकरण आ जायँगे। बालकोंको तो विशेष रूपसे सम्राट् समीप बुलाकर स्नेह करते हैं। उनके उपहार स्वयं स्वीकार करते हैं और साग्रह उन्हें पुरस्कृत करते हैं। प्राय: साम्राज्ञी इस नगर-भ्रमणमें साथ नहीं होती; किंतु अवसर विशेष पर वे साथ होती हैं। उस समय नारियोंका सत्कार बढ़ जाता है। नगर भ्रमणके अनन्तर सायं स्नान, सन्ध्या-तर्पणका नित्यकर्म सम्पन्न होता है और तब श्रीराघवेन्द्र रात्रिके प्रथम प्रहरमें कथास्थलमें पधारते हैं। राजसदनकी स्त्रियाँ तथा नगरकी सम्मानित महिलाएँ भी पृथक प्रहरमें कथास्थलमें पधारते हैं। राजसदनकी स्त्रियाँ तथा नगरकी सम्मानित महिलाएँ भी पृथक स्थानमें बैठती हैं। श्रीशिवशर्माजी तो प्रधान कथा वाचक हैं ही, आगत ऋषि-महर्षि, विद्वान भी पुराण, इतिहास अथवा शास्त्रका प्रवचन करते हैं।

रात्रिके द्वितीय प्रहरके प्रारम्भमें अल्पाहार करके सम्राट् अपने निजी मन्त्रणा कक्षमें गुप्तचरोंसे विवरण सुनते हैं। मन्त्रियोंसे मन्त्रणा करते हैं। यह कार्य अल्प समय लेता है। भाइयोंको भी यह समय प्राप्त होता है। इससे अवशिष्ट समय मध्य रात्रि तक राज सदनके सामान्य कक्षमें नागरिक एवं राजसदनके सदस्योंके साथ कलाजीवी-कवि, विदूषक, नृत्य-सङ्गीतकारोंकी कलाको देखने और उन्हें पुरस्कृत करनेका है।

मध्यरात्रिमें सम्राट अपने अन्त:पुरके शयनागारमें पधारते हैं। यह सामान्य दिनचर्या है। विशेष पर्वोंपर, उत्सवोंके समय, किसी सम्मानित जनके आगमनपर, कोई विशेष नाट्याभिनय अथवा नगरमें कहीं किसीके यहाँ महोत्सव होनेपर इस दिनचर्यामें तदनुकूल परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन होता ही रहता है। सामान्य दिनचर्याको ही इतना कम समय मिलता है कि वह विशेष बन गयी है। सम्राट्को आखेट-यात्रा भी करनी होती है और राज्य-भ्रमण की यात्राएँ भी। उनकी विशेष व्यवस्था बनती है।

प्रात:काल सरयू में स्नान कर ब्राह्मणों और सज्जनों के साथ राज सभा में बैठते है। गुरु वशिष्ठ वेद और पुराणों की आगम निगम की कथाओं का वर्णन करते है। यद्यपि श्रीराम सब जानते है। वे भाईयों को साथ लेकर भोजन करते है। यह देखकर सभी माताये आनन्द मनाती है। हनुमान अपनी सुन्दर बुद्धि से श्रीराम के गुणों में गोता लगा कर उनका निर्मल यश गाते है और दोनों भाई भरत-शत्रुघ्न सुनकर अत्यन्त सुख पाते है।

सब घरों में पुराणों और अनेक प्रकार की पवित्र रामकथा होती रहती है। इस तरह आनन्द में रात दिन बीतते जाते है। जहां भगवान श्रीराम स्वयं राजा होकर विद्यमान है उस अवधपुरी के निवासियों के सुख सम्पत्ति का विवरण कैसे गाया जाये। नारद आदि और सनकादि ऋषि सब कौशलराज श्रीराम के दर्शनों के हेतु प्रतिदिन अयोध्या आते है और उस दिव्य नगर को देखकर वैराग्य भुला देते है। दिव्य स्वर्ण और रत्नों से जडित बनी अटालियां हैं। मणि रत्नों से सुन्दर बिछी हुई फर्श है। नगर के चारों ओर सुन्दर परकोटा है जिस पर सुन्दर-सुन्दर कंगूरे बने है। उज्वल गगनचुम्बी महल ऊपर आकाश को चूम रहे है। बहुत सी मणियों से ढके हुये झरोखे सुशोभित है और घर-घर में मणियों के दीपक शोभा पाते है। भूगों से बनी देहलियां चमक रही है। मणि रत्नों के खम्भे है। पन्ने से जडी हुई सोने की सुन्दर दीवारे है। बडे-बडे सुन्दर विशाल मनोहर महल है उसमें सुन्दर स्फटिक के आंगन बने है। खरादे हुये हीरे से जडे हुये सोने के द्वार है। घरों में सुन्दर चित्रशालायें है जिनमें प्रभु श्रीराम के चरित्र बड़ी सुन्दरता से दिखाये गये है जो मधुर बोली बोलते है और उडने में सुन्दर लगते है। मोर, हंस, सारस और कबूतर घरों के ऊपर बडी ही शोभा पाते है। वे पक्षी मणियों की दीवारों और छतों में अपनी परछाई देख कर बहुत प्रकार से मधुर बोली बोलते है और नाचते है। बालक तोता मैना को राम बोलना रटाते है। गलियां, चौराहे और बाजार सभी सुन्दर है। सुन्दर बाजार है जहां हर वस्तु मिलती है। स्त्री-पुरुष बच्चे वृद्ध जो भी है सभी सुखी सदाचारी और सुन्दर है। नगर के उतर में सरयू बहती है जिसका जल निर्मल और गहरा है। मनोहर घाट बंधे है। पशुओं जहां घोडों और हाथियों के समूह जहां जल पीते है उनके लिये अलग घाट है। जनाना घाट अलग से है जो बडा ही मनोहर है वहां पुरुष स्नान नहीं करते। राजघाट सब प्रकार से सुन्दर और श्रेष्ठ है जहां चारों वर्णों के पुरुष स्नान करते है। सरयू के किनारे देवताओं के मन्दिर है जिनके चारों ओर सुन्दर उपवन है। नदी किनारे कहीं-कहीं पर विरक्त और ज्ञानपरायण मुनि और सन्यासी निवास करते है। नगर की शोभा कुछ कहते नहीं बनती। अयोध्या के दर्शन करने मात्र से ही सम्पूर्ण पाप ताप नष्ट हो जाते है। अयोध्या में वन, उपवन बावलियां और तालाब सुशोभित है। अणिमा आदि आठों सिद्धियां और समस्त सुख सम्पतियां अयोध्या में छा रही है।

रामायणमें तो लिखा है कि श्रीराम श्रीसीताजीके साथ सुवर्ण-सिंहासनपर विराजे। उससे रामराज्यमें प्रजा बहुत ही सुखी हुई। रामराज्यमें प्रजाको जितना सुख मिला, वैसा सुख तो स्वर्गके देवताओंको भी दुर्लभ है। प्रजाको यहाँ तक सुख प्राप्त हुआ कि अगर किसीकी इच्छा न हो तो उसे काल भी नहीं पकड़ सकता था।

जिसकी मरनेकी इच्छा होती थी वही मरता था। रामराज्यमें काल भी हाथ जोड़कर खड़ा रहता था। रामराज्यमें सबकी इच्छाकी पूर्ति होती थी। अयोध्याकी प्रजा बहुत भाग्यशाली है, बहुत सुखी रहती है। रामराज्यमें कोई मूर्ख नहीं, सब ज्ञानी हैं। वहाँ कोई भिखारी नहीं। अधर्मसे कमानेकी किसीको इच्छा नहीं। सब मेहनत करते हैं। रामराज्यमें कोई विधवा नहीं, स्त्रीकी उपस्थितिमें पतिकी मृत्यु होती नहीं। माता-पिताकी उपस्थितिमें बालकका मरण होता नहीं। रामराज्यमें कोई आधि-व्याधिसे पीड़ित नहीं। शरीरके रोगको व्याधि

कहते हैं और मनके रोगको आधि कहते हैं। सभी सदाचार और संयमसे पवित्र जीवन व्यतीत करते थे।

श्रीरामचन्द्रजी प्रजाके सुखका अतिशय ध्यान रखते थे। आदर्श राजा कैसा होना चाहिए, वह रामजीने ही जगत्‌को बताया है। राजा स्वयंके सुख-दु:खका विचार करता नहीं, प्रजाके सुख-दु:खकी ही चिन्ता करता है। प्रजाके सुखके लिए स्वयंके सुखको भी बाँट देता है।

प्रजाकी आराधनाके लिए आवश्यकता पड़नेपर सीताजीका भी त्याग कर सकूं ऐसा हूँ और सरासर ऐसा प्रसंग आकर उपस्थित हो ही गया। उस समय श्रीरामजीने स्वयंका अथवा श्रीसीताजीके सुखका किञ्चित् मात्र भी विचार किया नहीं। रामचन्द्रजीने प्रजाके रंजनको ही स्वयंका मुख्य कर्तव्य गिना है। रामराज्यमें रामजीने प्रजाको बहुत सुख दिया, परन्तु प्रजाने कभी रामजीके सुख-दु:खका विचार किया नहीं। श्रीसीतारामजीने बहुत ही सहन किया है। जो अतिशय सरल होता है, उसको लोग बहुत दु:ख देते है। श्रीसीतारामजी अति सरल हैं, इससे उनको बहुत सहन करना पड़ा है।

उन्होने लोक प्रसिद्ध रामराज्य की स्थापना की, वैसा राज्य अब तक सुनने में नहीं आया। उनके राज्य मे कोई दु:खी नहीं था, कोई गरीब नहीं था, सब समान रूप से सुखी थे। किसी में विषमता नहीं थी। किसी से कोई शत्रुता नही करता था। सब लोग अपने धर्म का पालन करते थे। किसी को किसी प्रकार का संताप नहीं था। सब लोग परस्पर प्रेम से रहते थे। सभी स्वस्थ और सुंदर थे। सभी शिक्षित थे। कोई भी मूर्ख नहीं था। स्त्रियां पतिव्रता थी और पुरुष एक नारी-व्रती थे। यही नहीं, पशु-पक्षी और पेड़-पौधों मे भी विचित्रता आ गई थी।

प्रकृति भी उदार बन गई थी। जल-वृष्टि आवश्यकतानुसार होती थी। गर्मी-सर्दी भी आवश्यकता से अधिक नहीं पड़ती थी-

धार्मिक दृष्टिकोण से राम-राज्य पृथ्वी पर ईश्वरीय कहा जा सकता है। राजनीतिक दृष्टि से राम-राज्य एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र है, जहां अधिकार, वर्ण, स्त्री तथा पुरुष के विभेद पर आश्रित असमानतायें तिरोहित हो जाती हैं। इस प्रजातंत्र में भूमि तथा राजसत्ता की अधिकारिणी प्रजा है।

सब लोग अपने-अपने वर्णाश्रमके अनुकूल वेदमार्गपर चलते हैं और सुख पाते हैं। भय, शोक, रोग, तथा दैहिक, दैविक और भौतिक ताप कहीं नहीं हैं। राग-द्वेष, काम-क्रोध, लोभ-मोह, झूठ-कपट, प्रमाद-आलस्य आदि दुर्गुण देखनेको भी नहीं मिलते। सब लोग परस्पर प्रेम करते हैं और स्वधर्ममें दृढ़ हैं। धर्मके चारों चरणों सत्य, शौच, दया और दानसे जगत् परिपूर्ण है। स्वप्नमें भी कहीं पाप नहीं है। स्त्री-पुरुष सभी रामभक्त है और सभी परम गतिके अधिकारी हैं। प्रजामें न छोटी उम्रमें किसीकी मृत्यु होती है, न कोई पीड़ा है; सभी सुन्दर और निरोग है। दरिद्र, दु:खी, दीन और मूर्ख कोई भी नहीं है। सभी नर-नारी दम्भरहित, धर्मपरायण, अहिंसापरायण, पुण्यात्मा, चतुर, गुणवान्, गुणोंका आदर करनेवाले, पण्डित, ज्ञानी और कृतज्ञ हैं।

स्त्रियाँ सभी पतिव्रता हैं। ईश्वरकी भक्ति और धर्ममें सभी नर-नारी ऐसे संलग्न हैं मानो भक्ति और धर्म साक्षात् मूर्तिमान् होकर उनमें निवास कर रहे हों। पशु-पक्षी सभी सुखी और सुन्दर हैं। भूमि सदा हरी-भरी और वृक्षादि सदा फूले-फले रहते हैं। सूर्य-चन्द्रमादि देवता बिना ही माँगे समस्त सुखदायी वस्तुएँ प्रदान करते हैं। सारे देशमें सुख-सम्पत्तिका साम्राज्य छाया हुआ है। श्रीसीताजी और तीनों भाई तथा सारी प्रजा श्रीरामकी सेवामें ही अपना सौभाग्य मानते हैं और श्रीरामजी सदा उनके हितमें लगे रहते हैं। रामराज्यकी यह व्यवस्था महान आदर्श है। अयोध्याकी प्रजा अत्यन्त सुखी थी। राज्यमें कहीं कोई रोगी नहीं होता था। सर्प-भय, वृश्चिकादिका भय, अकाल-महामारीका भय अथवा चोर-डाकुओंका भय नहीं रह गया था। दैहिक, नैसर्गिक तथा देवताओंके प्रकोपका कोई भय नहीं रह गया था।

कोई नारी विधवा नहीं होती थी। बालक या युवाकी मृत्यु नहीं होती थी। वृद्ध मरते भी थे तो किसी दीर्घायु स्वजनके सम्मुख। उससे कम आयुके व्यक्तिको मृत्यु नहीं होती थी।

राज्यमें कोई व्यभिचारी, सुरापायी, द्यूतलिप्सु नहीं था। लोग कृपण नहीं थे। लोभी नहीं थे। सब प्रसन्न रहते थे। सेवा परायण थे। सबको दूसरोंको सुख देना प्रिय था। सब दूसरोंको प्रसन्न रखनेमें प्रसन्न रहते थे।

वणिक भी लोभहीन व्यापार करते थे। केवल अपना पारिश्रमिक प्राप्त करके सन्तुष्ट थे और धनका संग्रह दान अथवा यज्ञके लिए ही करते थे। राज्यमें स्थान-स्थञ्जनपर प्रशस्त मार्ग, सरिताओंपर सेतु बन गये थे। कूप, वापी, सरोवरोंकी बहुलता थी। सामान्य ग्रामोंके समीप भी फलोद्यान एवं पुष्पोद्यान थे।

गृहस्थ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्योंके गृहोंमें पृथक अग्निशाला थी, जो अतिथिके आगमनका मानों मार्ग ही देखती हो। ग्रामोंमें उपासना गृह

थे। राजकीय अतिथिशालाओंके अतिरिक्त लोगोंने धर्मशालाएँ, कूप, सार्वजनिक उद्यान बनवाये थे।

ब्राह्मण वेदाध्यन-अध्यापन, यजन-याजनमें लगे रहते थे। क्षत्रिय शस्त्र शिक्षण, शास्त्राध्यनमें लगे थे, किंतु उन्हें किसीकी रक्षाका अवसर ही नहीं आता था। वैश्य व्यापार करते थे केवल लोगों को पदार्थ सुलभ करनेके उद्देश्यसे। शूद्र-सेवक पुरस्कार निरपेक्ष सेवा करते थे। धन्वन्तरिके समान भिषक् थे। राज्यमें चिकित्सालयोंकी पर्याप्त व्यवस्थाथी; किंतु उनका कार्य नवीन औषधियोंके शोध तथा निर्माण तक सीमित हो गया था। कोई रोगी ही नहीं होता था तो वे उपचार कार्य कहाँसे पाते।

न्यास सुलभ था। स्थानीय ऋषि-मुनि न्याय-विधान दे सकते थे और स्थानीय शासन कर्मचारी उसके अनुसार दण्ड व्यवस्था कर दे सकता था। कोई झूठ नहीं बोलता था, अत: साक्षीकी आवश्यकता नहीं थी। कोई भी सीधे सम्राट्के सम्मुख उपस्थित हो सकता था।

न्यायालय निष्क्रिय नहीं थे। उनमें विवाद उपस्थित होते थे; किंतु विचित्र विवाद। ऐसे मधुर विवाद कि उनमें दण्ड विधानकी नहीं, सौजन्य पूर्ण समझसे सन्धि करा देना ही आवश्यक होता था। प्राय: वादी कहता था कि अमुक क्षेत्र, भवन अथवा धन उसका नहीं है, परन्तु कोई दूसरा उसे लेनेके लिए उसपर अनुचित दबाव डाल रहा है। प्रतिवादीका पक्ष होता था यह धन, भवन, क्षेत्र या उद्यान न्यायत: उस दूसरेका- वादीका ही है। वह उसे स्वीकार कर ले तो प्रतिवादी उसकी सुरक्षा चिन्तासे मुक्त हो।

लोगोंके मुखपर बार-बार श्रीरामकी प्रशंसा, श्रीरामका गुणगान आता था। जिसे देखो वह सगर्व कह रहा है- हमारे सम्राट् ऐसा करते हैं। राम, राम, राम, लोगोंकी वाणीका भूषण बन गया था यह शब्द। दिशाएँ इस पावन नामसे सर्वत्र पवित्र होती रहती थीं।

पृथ्वीके समान क्षमाशील और सबके धारक-पोषक, जलके समान सरस-सबको स्वच्छ पवित्र करनेवाले, अग्निके समान तेजस्वी तथा आपत्तिके त्राता, वायुके समान सबके प्राण, आकाशके समान समीप रहकर भी अस्पृश्य, समुद्रके समान अविचल, श्री-ह्री-कीर्ति-धर्मके नित्य निवास श्रीराघवेन्द्र जैसा सम्राट धराने दूसरा नहीं पाया। अत: राम-राज्य सदाके लिए शासकोंका आदर्श बन गया।

जब देशमें शान्ति रहती है, प्रजा पेट पालनकी चिन्तासे परित्राण पा जाती है, तब समृद्ध जनपदमें भगवती सरस्वतीकी सम्यक् आराधना होती है। कलाके लिए उर्वर क्षेत्र हैं वे, जो समृद्ध हैं और संघर्षोंसे सुरक्षित हैं। राम-राज्यमें भरपूर शान्ति थी और सम्यक् समृद्धि थी। अत: कलाके प्रत्येक क्षेत्रमें आश्चर्य जनक उन्नति हुई। लेकिन वह उन्नति उच्छृंखल नहीं हो सकती थी; क्योंकि सबमें श्रद्धा थी, संयम था। भोग-प्रवण, अर्थ प्रधान समाजकी कला उच्छृंफ्ल होती है। वह वासनाको उत्तेजित करनेवाली, मानवको पशु या दानव बनाकर पतनके गर्तमें गिरानेवाली होती है।

प्रतिभा तीक्ष्ण तलवार है। वह संयमी, सद्भावना सम्पन्न सत्पुरुषोंके करोंमें होगी जो समाजके लिए सुरक्षाका आश्वासन बनेगी और उन्मत्त व्यक्तिके करोंमें होगी तो उसका तथा औरोंका भी अङ्गच्छेद करेगी। उत्पातको उत्पन्न करेगी।

श्रीरामके शासनने सुरक्षा दे रखी थी, समृद्धि दे रखी थी तो साथ ही संयम तथा सात्विकतासे भी प्रजाको सम्पन्न बना रखा था। अत: कला, श्रद्धा-संवलित, धर्मभाविता, अध्यात्मोन्मुख थी। उसका उद्भव ही आराधनाके उद्देश्यसे होता था।

मूर्तिकार अपनी कलाको मन्दिर-निर्माणमें कृतार्थ करते थे। पाषाण, काष्ठादिके शिल्पियोंकी साधना थी आराधना-गृहोंको सज्जित करना। चित्रकार अपनी तूलिका, अपने सम्राटका शौर्य, शील प्रकट करनेमें अथवा भगवदवतार- विग्रहोंकी विविध भंगियोंको व्यक्त करनेमें पवित्र करते थे। सङ्गीत घर-घरमें गूँजता था- भगवद्-गुणगानसे वातावरणको पावन करता सङ्गीत और अधिकांश नर-नारी भावुक थे। उनको लेखनी, तूलिका अथवा तक्षण तल्लीन करनेके साधन थे श्रीरामपादारविन्दमें। वंशी, वीणादि वाद्य प्रत्येक गृहोंके श्रृङ्गार थे; किन्तु वे आराधना कक्षमें अथवा एकान्तमें बजते थे वे अन्तरको उन्मुख करनेके लिए।

कोई भी कुलनारी अथवा पुरुष नि:समोच किसी मन्दिरमें कभी कोई वाद्य उठा ले सकता था अथवा नृत्य करने लग सकता था। दर्शकोंके नेत्र अश्रुवर्षण करने लगते थे। लोग भावमग्न हो उठते थे। सहज स्वाभाविक हो उठी थी हरिभक्ति। किसीके कण्ठसे किसी क्षण काव्यधारा फूट पड़ती थी और श्रोताओंको आत्मविस्मृत करके अपने आराध्यके चिन्तनमें समाहित कर देती थी।

शासनकी समूची व्यवस्था प्राय: भरतपर निर्भर थी और उसका सञ्चालन लक्ष्मण और शत्रुघ्न करते थे। प्रजाका सीधा सम्पर्क शत्रुघ्नसे ही था; क्योंकि प्रजासे प्राप्त करके कोषमें सुरक्षित करना, पारितोषिकवितरण तथा प्रजाकी सुख-सुविधा-सुरक्षाका ध्यान रखना शत्रुघ्नने अपना दायित्व बना लिया था।

श्रीरामने तो लक्ष्मण को युवराज बनाना चाहा था; किन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया था। अत: राजपरिवार, राजसदनके सेवक एवं राजकुलके स्वजन-सम्बन्धियोंके सत्कारका भार उनपर था। वे इनकी सुख-सुविधापर दृष्टि रखते थे।

भरतको दोनों भाइयोंके कार्योंका विवरण सुन लेना था और आवश्यक निर्देश दे देने थे। क्योंकि सर्वत्र लोग सन्तुष्ट थे। सम्राट्से लेकर सामान्य कर्मचारियों तक किसीके समीप अधिक कार्य-भार नहीं था। समस्त राज्य-सेवकोंको आदेश था कि प्रजाके किसी वर्ग, किसी समय, किसी स्थानकी कोई सुख-सुविधा-सुरक्षाकी माँग आनेपर तत्काल उसकी पूर्ति करके तब अपने उच्चाधिकारीको सूचना दी जाय। लेकिन इसके अवसर आते ही नहीं थे।

ग्राम-ग्राम, नगर-नगरमें लोग यज्ञका, विशेष आराधनाका, कथाकीर्तनका, ज्ञानसत्रका आयोजन करते ही रहते थे और उनमें उत्साह पूर्वक वेदज्ञ ब्राह्मणोंको, विरक्त मुनिगणोंको आमन्त्रित करते रहते थे। यही गौरवका तथा स्पर्धाका विषय था सबके लिए।

सानुज सम्राट प्रजाके पुत्रोत्सव, विवाहोत्सव तथा ऐसे पुण्य आयोजनोंमें यथासम्भव सम्मिलित होते थे। सम्पूर्ण राज्यमें ऐसे आयोजन चलते ही रहते थे, अत: अनेक बार सम्राटकी ओरसे उनके प्रतिनिधिरूपमें उनके किसी अनुज अथवा मन्त्रीका आ जाना आश्चर्यका अथवा आवेदकके अपमान-अवज्ञाका प्रतीक नहीं था; किंतु सर्वसमर्थ सम्राट इसका अवसर नहीं आने देते थे। सबको लगता था कि सम्राटका वह सर्वाधिक स्नेहभाजन है और सम्राट उसके आयोजनोंमें, उत्सवोंमें सानुज सोत्साह सम्मिलित होते हैं। उन प्रजावत्सलके उपहार ऐसे अवसरोंपर प्रत्येकको पर्याप्त अधिक प्राप्त होते ही।

प्रत्येक सदन नित्य कथा-कीर्तनसे पवित्र रहता था। प्रत्येक स्त्री-पुरुष कलाकार था- किसी-न-किसी कलाका विशेष आराधक और उसकी कला अन्तर्मुख करनेवाली, सात्त्विक तथा अपने परमोदर, सद्गुणैकधाम सम्राट्को समर्पित थी। फिर भी समस्त राज्यमें मूर्तिकार, शिल्पी, सङ्गीतज्ञ, लीलाभिनय निपुण व्यक्तियों अथवा मण्डलियोंका सम्मान बहुत बढ़ गया था। बहुत बढ़ गया था भगवत्कथा-श्रवण करानेवालोंका समादर। फलस्वरूप इनकी संख्या भी बहुत बढ़ गयी थी। इस वर्गमें भी कोई अर्थलुब्ध नहीं था। उलटे यह वर्ग प्राय: इतना वीतराग कि श्रोताओंको इनकी सेवाका अवसर कठिनतासे सुलभ होता था।

अयोध्यामें श्रीरामचन्द्रजी सात समुद्रोंकी मेखला करधनी वाली पृथिवीके एकमात्र शासक थे। उनके प्रत्येक रोममें अनेकों ब्रह्माण्ड थे, उनके लिये सात द्वीपोंकी यह प्रभुता कुछ अधिक नहीं थी।

नगरके स्त्री-पुरुष श्रीरामचन्द्रजीका गुणगान करते थे और श्रीरामचन्द्रजी सदा सबपर अत्यन्त प्रसन्न रहते थें।

रामके राज्यमें राजनीति स्वार्थसे प्रेरित न होकर प्रजाकी भलाईके लिये थी। इसमें अधिनायकवादकी छायामात्र भी नहीं थी। रामका राज्य मानव-कल्याणके आदर्शोंसे युक्त एक ऐसा राज्य था, जिसमें नि:स्वार्थ प्रजाकी सेवा, निष्पक्ष आदर्श न्याय-व्यवस्था, सुखी तथा समृद्धिशाली समाज-व्यवस्था पायी जाती थी। श्रीरामचन्द्रजीने नगरवासियोंकी सभामें यह स्पष्ट घोषणा की कि भाइयो। यदि मैं कोई अनीतिकी बात कहूँ तो तुमलोग नि:संकोच मुझे रोक देना।

इस प्रकार मानसमें वर्णित रामराज्यमें चारों ओर समता, शान्ति और सम्पन्नता है। इस राज्यमें राजा प्रजाका सेवक है, उसका सम्पूर्ण जीवन प्रजाके कल्याणके लिये समर्पित है। प्रजा भी राजासे इतना प्यार करती है कि राजाके आदेशोंका उल्लंघन नहीं करती। वह राजाके लिये अपना सर्वस्व अर्पित कर देनेमें तनिक भी संकोच नहीं करती। सभी प्रजाजन एक-दूसरेसे नि:स्वार्थ प्रेम करते है। वे एक-दूसरेका उपकार करके अपने जीवनको सार्थक बनाते हैं। सभी लोग अपने अधिकारोंकी अपेक्षा अपने कर्तव्योंको अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। इस समाज-व्यवस्थामें कपटकी छायामात्र भी नहीं है। इसमें किसी प्रकारका अहंकार, क्रोध, लोभ, शोषण, अत्याचार, अनाचार आदि नहीं है। श्रीरामचन्द्रजीका सम्पूर्ण जीवन प्राणिमात्रके कल्याणके लिये समर्पित्त रहा, वे अनासक्त-भावसे शासन करते थे तथा सभीको दैहिक, दैविक और भौतिक तापोंसे मुक्त करते थे। आज भी वे सभीके कल्याणके लिये अपनी कृपादृष्टि बिखेर रहे हैं। भक्तों, साधकों तथा संत-महात्माओं आदिपर तो उनका विशेष अनुग्रह रहता ही आया है।

निखिलकलागुरु, समस्त विद्याओंके आद्याचार्य, योगियोंके आदर्श संरक्षक, वैराग्यके मूर्त्त विग्रह श्रीशिवशर्माजीसे आप अपरिचित नहीं है। उन गङ्गाधर, धूर्जटि, चन्द्रमौलि, त्रिलोचन, नीलकण्ठ, भस्माङ्गराग, अहिभूषण, कपालमाली, कृत्तिवास, कामारिसे कोई आर्य आस्तिक अपरिचित कैसे हो सकता है। उन वृषभध्वज, भूतनाथ, आशुतोषने अयोध्यामें शिवशर्मा नाम अङ्गीकृत कर लिया था।

भगवान उमाकान्त पधारे थे अयोध्या राज्याभिषेकके समय श्रीराघवेन्द्रका दर्शन करने। दूसरे सब नृपतियोंने, देवताओंने, दिक्पालोंने सम्राटको अपने उपहार अर्पित किये; किंतु नितय अपरिग्रही सृष्टिकी प्रलय करके उसकी विभूतिको अङ्गराग बनानेके व्यसनी स्थाणु शिवके समीप क्या था जो उपहार में अर्पित करते ? नवीन सम्राट्को डमरू, कपाल, त्रिशूल, सर्प अथवा अपना पहिना गजचर्म तो दिया नहीं जा सकता था। भोले बाबाको भूल ही गया कि कुबेर उनके अनुचर हैं और अन्नपूर्णा-जगद्धात्री वामाङ्गमें ही स्थित हैं। वे स्तवनके अनन्तर स्वयं बोले- श्रीराम। इस अवसरपर आप मुझसे कुछ माँग लो।

सर्वेश्वरेश्वर, निखिलभुवनैक सम्राटके कुछ माँग लेनेको कहनेका साहस त्रिपुरारिके अतिरिक्त दूसरा कोई कर भी तो नहीं सकता था। नवीन सम्राट् भी सुनकर प्रसन्न हुए। दोनों हाथ जोड़कर, मस्तक झुकाकर बोले- आप मुझपर प्रसन्न ही हैं तो मेरी सभाके कथावाचक बन जायँ। एवमस्तु। औढ़रदानी भी हँसे- इसका अर्थ है कि तुम मुझे अपनी समीप ही रखना चाहते हो। अच्छी बात, आजसे शिवशर्मा तुम्हारे धरापर इस युगलस्वरूपसे साक्षात् एकत्र रहने तक अयोध्याका कथावाचक हुआ।

जो प्रलयमर हैं, पूरी सृष्टिके साक्षी तो वही हैं। ब्रह्माण्डकी अनेकों प्रलयोंके वे प्रत्यक्ष साक्षी, उनसे अच्छा सृष्टिकी उत्पत्ति-प्रलयका वर्णन करनेवाला दूसरा कोई कहाँसे आवेगा। अब अवतार उनके सम्मुख हुए। सब सत्पुरुषोंको देखा उन्होंने। अत: पुराण कथाओंके वे प्रत्यक्ष द्रष्टा। ज्ञान, वैराग्य एवं भक्तिके, योगके विविध साधनोंके वे परमाचार्य। नरक-स्वर्ग, भूलोक, पाताल, मह: जन:, तप: तथा सत्यलोक एवं दिक्लोकोंमेंभी कोई इन हरिप्रियका अनदेखा है ? अब ये स्वयं कथावाचक बन गये तो ब्रह्मलोकमें भी ऐसी कथा क्या कभी सुलभ होगी ?

श्रीशिव शर्माकी कथा- श्रवणके आकर्षणने पृथ्वीके ही नहीं, ब्रह्मलोक तकके महर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि, काण्डर्षि, राजर्षि वर्गको, मुनिमण्डलको, सिद्धोंको, साधकोंको अयोध्याका नित्य अतिथि बना दिया था।

जिनके गुणोंसे प्रभावित राज्यमें प्रजा ऐसी हो, उनके गुण और चरित्र कैसे होंगे, इसका अनुमान करते ही हृदय भक्तिसे गदगद हो उठता है। भगवान्के अनन्त गुणों और चरित्रोंका जरासा भी स्मरण-मनन महान् कल्याणकारी और परम पावन है।

जब से राम प्रताप रूपी अत्यन्त प्रचण्ड सूर्य उदित हुआ तब से तीनो लोकों में पूर्ण प्रकाश फैल गया। सर्वत्र प्रकाश छा जाने से अविद्या रूपी रात्रि नष्ट हो गई। पाप, काम, क्रोध, इत्यादि सब नष्ट हो गये।

४) सम्बन्धियोंका अतिथियों का सत्कार- आश्रित-कार्य-निर्वाहकत्त्व, आश्रयण सौकर्या पादकत्व, सर्वशास्त्रज्ञ, उपासित-सर्वलोक श्रीराममें ही ये दिव्य सद्गुण निवास करते हैं। विलक्षण प्रतिभावान प्रत्युत्पन्न मति श्रीराघवेन्द्र ही सबकी भाव रक्षा करनेमें समर्थ हैं।

महराज जनकने यह नियम नहीं रखा कि कन्याके पति-गृह नहीं जाना चाहिए। वे अपनी पूरी व्यवस्थाके साथ विशेष अवसरोंपर अयोध्या आ जाते हैं। राज्याभिषेकके समय पधारे और प्रत्येक तीर्थ-यात्रासे लौटनेपर श्रीरघुनाथ उन्हें आमन्त्रित करते ही हैं। प्रत्येक यज्ञमें भी उन्हें आना है। अयोध्याके सम्मुख सरयूके दूसरे तटपर महाराजने अपने आवासका सुनिश्चित स्थान बना लिया है। मिथिलाके सेवक आकर स्थान स्वच्छ करते हैं और वहाँ वस्त्र, शिबिरोंका एक भव्य नगर बस जाता है। प्रत्येक सामग्री, सब सेवक मिथिलासे लाते हैं। इस प्रकार महाराज विदेह अयोध्या आकर भी अपने नगरमें निवास करते हैं। अपनी कन्याओंसे वहीं मिलते हैं। सरयूके पार अयोध्यामें आते हैं केवल राजसभामें अपने सम्राट जामाताको उपहार अर्पित करने ।

आप ही हमारी प्रतिष्ठा हैं, पालक हैं। आपकी कृपासे मैं दशग्रीवपर विजय पा सकता। अयोध्या आपकी है। श्रीराम हाथ जोड़कर प्रत्येक विदाके सम खड़े हो जाते हैं- दोनों वंशोंमें प्रीति बनी रहे, ऐसा आशीर्वाद रहें। भरत सेवामें साथ जायँगे और हमें कुछ तो अर्चाका अवसर प्राप्त हो।

मैं तुम्हारे दर्शनसे तृप्त हूँ। तुम साक्षात् परात्पर पुरुष मेरी दृष्टिके सम्मुख हो, यही मेरा परम सौभाग्य है। केवल भरत नहीं, तुम चारों भाई मिथिला पधारो तो हमारी पुत्रियोंको भी अपनी मातासे मिलनेका अवसर प्राप्त हो। महाराज जनक अयोध्याके उपहार तो स्वीकार नहीं कर सकते। वे सौजन्यसे, स्नेहसे कह देते हैं- वत्स। ये वस्तुएँ, यह रत्नराशि मैंने स्वीकार कर ली। अब इन्हें मैं अपनी पुत्रियोंको

प्रदान करता हूँ।

प्रत्येक बारका यह आमन्त्रण स्वीकार कर लिया जा सके, ऐसी परिस्थिति नहीं होती; किंतु इस प्रेमाग्रहको सदा अस्वीकार भी नहीं किया जा सकता। अनेक बार चारों भाई सपत्नीक सपरिवार मिथिला पधारते हैं। वहाँका स्वागत, स्नेह, सत्कार- यह भाव-प्राण हृदयोंके चिंतनका धन है। प्रत्येक वार ऐसा ही उत्साह, ऐसा ही स्वागत जैसे रघुवंशी कुमार विवाहके प्रथमावसरपर ही पधारे हैं। केवल इतना अन्तर कि समोच कम हो गया है अन्त:पुरमें। प्रत्येक बार विदा होते समय वही व्याकुलता, वही स्नेह, वही अपार सामग्री जैसे महाराज विदेह पुत्रियोंको अभी विवाह करके ही विदा कर रहे हों।

मिथिला आना होता है तो सचमुच अयोध्यासे बारात ही आती है। श्रीराघवेन्द्र ही तो अकेले जामाता नहीं है मिथिलाके। श्रीरामके विवाहके समय जो बराती आये थे, उनमें जितने बाराती आये थे, उनमें जितने युवक थे, वे सभी तो विदेहपुरीसे विवाहित होकर लौटे थे। जनकपुरके जन-जनक घरोंमें विवाह मण्डप बने थे। अयोध्यासे आये ब्राह्मणसे लेकर सेवकों तकको जनकपुरके लोगोंने दम्पती बनाकर विदा किया था। अब अयोध्याके घर-घरमें जनकपुरकी कन्याएँ हैं। सभी वर्णोंके गृहोंमें जनकपुरके उन वर्णोंकी वधुएँ विद्यमान हैं। साम्राज्ञीके साथ ही पितृगृहदर्शनका पुनीत नियम बना लिया है सबने। अत: सब अयोध्यासे उन सबको साथ लेकर जाना पड़ता है और वे साथ ही लौटती हैं।

यहाँ भारतीय परम्पराका एक नियम स्मरण रखने योग्य है। कन्या केवल समट कालमें पतिसे पृथक रहती थी। ऐसे अवसर पर जैसे अन्यत्र उचित स्थानमें शरण ले सकती थी पितृगृह भी रह सकती थी; किंतु सामान्य समयमें पतिके साथ ही पितृगृह रहती थी। पतिसे प्रथम पितृगृह जाने और रहनेकी प्रथा प्राचीन नहीं है।

श्रीराघवेन्द्र जब कभी जनकपुर पधारते थे, भाइयोंके साथ और उन सब वयस्कोंके साथ ही पधारते थे, जो जनकपुरमें विवाहित थे। जनकपुरके घर-घरमें कन्या-जामाताओंका सत्कार सम्पन्न होता था। महाराज विदेह बहुत कठिनाईसे विदा करना स्वीकार करते थे। एक-एक यात्रासे लौटनेमें कई-कई महिने लगना स्वाभाविक था। मिथिला महोत्सवमयी हो उठती थी। रघुवंशी कुमारोंके सत्कारके नित्य नवीन आयोजन, विदा माँगनेपर भी अनेक उत्सव, अनेक वृहदायोजन बाधक बनते थे। ऐसा मधुर संयोग भी क्या कोई समाप्त करना चाहता है। विदा तो विवशता ही थी दोनों पक्षोंकी।

बहिनने हमें कुछ कहने योग्य नहीं रखा है। बडा समोच था कैकेयके युवराज कुमार युधाजितको- सम्राट्का अनुग्रह कि हमें उपहार अर्पणका अवसर प्राप्त हुआ।

आप ऐसा कहकर हमें क्यों लज्जित करते हैं ? छोटी अम्बाके अनुग्रहसे ही तो राम लोकोत्तर सुयश अर्जित कर सका है। श्रीराम राज्याभिषेकके अनन्तर विदा करते समय युधाजितके सम्मुख हाथ जोडकर खडे हो गये थे- मातुल। यह राज्य आपका है। हम चारों भाई आपके आज्ञानुवर्ती है। आप ही हमारे संरक्षक, निर्देशक हैं। आप हमारी अल्प सेवा स्वीकार करें। लक्ष्मण आपको पहुँचाने जा रहे हैं।

यह सामग्री अयोध्या ही रहनी चाहिए। कुमार युधाजित अयोध्याका उपहार तो स्वीकार नहीं कर सकते थे। विनम्र स्वर बोले- सम्राट्के सौजन्य एवं सौहार्दने साहस दे दिया है कि मैं पिता श्रीकी प्रार्थना सेवामें उपस्थित करूँ। वे चाहते हैं कि आप चारों भाई कैकयको कृतार्थ करें। मातुल। उन आदरणीयका आदेश स्वीकार करके हम सब प्रसन्न होंगे। श्रीराम भी समझते थे कि कैकेय नरेशके साथ सुखद सम्बन्ध बनाये रखनेके लिए उनका आतिथ्य स्वीकार करना आवश्यक है। उनके मनमें जो ग्लानि, जो कुण्ठा आ गयी है, उसे समाप्त किया जाना चाहिए। अत: आमन्त्रण स्वीकार करके कहा- किंतु मातुल। अभी दीर्घकालके पश्चात् मैं अयोध्या आया हूँ। बहुत दूर है हमारा यह ननिहाल। अत: समय मिलते ही लक्ष्मणके साथ मैं आऊँगा। यहाँ शासनकी सुरक्षाकी दृष्टिसे भी दो भाइयोंका रहना आवश्यक है।

परम नीतिज्ञ युधाजितसे अविदित नहीं था कि भरत कैकेयीको माता नहीं कहते हैं। वे युधाजितको भी मातुल सम्बोधन नहीं करते। अत: वे कैकय जाना स्वीकार करेंगे, इसकी कोई सम्भावना नहीं है। इस तथ्यको ध्यानमें रखकर भरतके आनेका आग्रह उचित नहीं था। इससे कटुता उत्पन्न होनेकी आशमा थी। भरतके साथ ही शत्रुघ्न रहेंगे, यह सुनिश्चित तथ्य था। अत: कुमार युधाजित राज्याभिषेकके अनन्तर सम्राट्का लक्ष्मणके साथ कैकय आनेकी स्वीकृति लेकर सानन्द लौट गये थे।

श्रीराघवेन्द्र जब तीर्थयात्रा करके लौट आये, यात्रान्तमें अयोध्याके महायज्ञका आमन्त्रण कैकय भी पहुँचा। इस बार कुमार युधाजित

अपने पिता कैकय नरेश महाराज अश्वपतिका पत्र लेकर आये थे। यज्ञान्तमें सम्बन्धियोंके विदा हो जाने तब वे रुके रहे। श्रीरामने इस बार उनके आग्रहको स्वीकार कर लिया। लक्ष्मणके साथ वे कैकय पधारे।

महाराज अश्वपतिने इन भागनेयोंका अभूतपूर्व स्वागत किया। राज्यके दूसरे सब कार्य स्थगित कर दिये गये। कुमार युधाजित निरन्तर श्रीराम-लक्ष्मणके साथ रहते ही थे, स्वयं महाराज अश्वपति अधिकांश समय देते थे इनके समीप।

संसारका सुन्दरतम प्रदेश कैकय और वहाँ भूमण्डलके सम्राट सम्मान्य अतिथि होकर नहीं आये थे, दौहित्र बनकर पधारे थे। समस्त नागरिकोंका स्नेह भाजन-सारा कैकय स्वागतमें उमड़ पडा था। पूरे राज्यके नागरिकोंका आग्रह था- कमसे कम एक दिनका सत्कार सौभाग्य उनके नगरको प्राप्त होना चाहिए।

राजधानीमें, मातामहके समीप रहनेका तो अवसर ही अत्यल्प प्राप्त हुआ। राज्यके समारोहोंमें सम्मिलित होते, पर्वतीय मनोरम उपत्यकाओंमें भ्रमण करते, विभिन्न स्थानोंके नागरिकोंके आग्रहको सम्मान देते ही कई मास व्यतीत हो गये। अत्यन्त समोचके साथ मातामहसे विदा लेनी पड़ी।

सबसे अधिक सुविधा प्राप्त थी मगध नरेश महाराज सुमित्रको। उनको पृथक आग्रह करने अथवा आमन्त्रण देनेकी आवश्यकता ही नहीं थी। अयोध्याके राजकुमारोंको उनके राज्यमें होकर ही मिथिला जाना था और जाते समय वे तभी शीघ्र विदा पा सकते थे जब लौटते समय मातामहके यहाँ कुछ दिन रुकनेका आश्वासन देकर जायँ। महाराज सुमित्रको दौहित्रोंका सपत्नीक आतिथ्य करनेका अवसर सुलभ होता था। वे तो बहुत कठिनाई से अयोध्याके अन्य लोगोंको दो-चार दिन पश्चात् विदा करते थे।

महाराज मिथिलेशका आमन्त्रण ही मेरा आमन्त्रण मान लिया करो। महाराज सुमित्रने श्रीरामसे सहास्य कहा था- सम्राटका स्वागत करने योग्य मगध हो या न हो, अपने दौहित्रोंको स्नेह देने योग्य अवश्य है।

आप हमारे पूज्य हैं, परमादरणीय हैं। संकोचमें आकर श्रीराम अञ्जलि बाँध लेते थे- अयोध्या आपके अनुग्रहसे सुरक्षित है। हम सब तो आपके आशीर्वादसे पोषित हैं।

दक्षिण कोशलकी स्थिति सर्वथा भिन्न थी। दक्षिण कोशलके नरेश अयोध्याके सम्बन्धके पूर्व भी अयोध्याकी राजसभाके सामन्त थे। इस पदको वहाँ परम्परामें परम गौरवाह माना जाता था। अत: सम्बन्धके पश्चात् भी वहाँके युवराज अयोध्यामें ही अधिक रहते थे। राजसभाके महत्त्वपूर्ण अधिवेशनोंमे उनको उपस्थित रहना था। राजसभामें उनका स्थान महामन्त्रीके समान बन गया था।

सृष्टिमें कौन है जिसका श्रीरामसे सम्बन्ध न हो ? इन सर्वसुहृदसे जिसे अपने सम्बन्धका ज्ञान न हो, वह भाग्यहीन। अयोध्याके सम्बन्ध पूरे संसारमें थे। सब भाइयोंके साथ सम्राटको हमारे यहाँ पधारना है। किसी भी नरेश का आमन्त्रण कभी भी आ सकता था। ऐसे आमन्त्रण आते ही रहते थे। एक साथ अनेक आमन्त्रण-आग्रहपूर्ण आमन्त्रण आते थे- इस बार हमारे आग्रहको स्वीकृत करनेका अनुग्रह करें। क्षत्रियोंके ही नहीं, विप्रोंके, ऋषि-मुनियोंके, प्रसिद्ध व्यापारियोंके आमन्त्रण आते थे और अनेक स्थान थे जहाँ अनामन्त्रित स्वयं जाना आवश्यक था। कोई भावका धनी अपने अन्तरमें अभीप्सा लेकर एकान्तमें पुकारेगा तो अयोध्यानाथ उसके यहाँ पधारनेमें आमन्त्रणकी अपेक्षा करेंगे ? उसकी मूक पुकार अस्वीकृत होगी ?

श्रीसीताराम अयोध्याको त्यागकर कहीं नहीं जाते। अवधकी प्रजाको प्रतिदिन इनका दर्शन प्राप्त होता है। किसी सम्बन्धीका, किसी भाविक आग्रह अस्वीकृत नहीं होता। सम्राट भाइयोंके साथ, अनेक बार साम्राज्ञीके साथ भी जाते हैं और कहीं तो कई महीने निवास करते हैं। दोनों बातें सत्य हैं।

५) माताओंका परलोक प्रस्थान- अब अनुमति दो वत्स। एक दिन माता कौशल्याने नेत्रोंमें अश्रु भरकर एकान्तमें श्रीरामसे कहा- तुम्हारे पिताको हमारी प्रतीक्षा करते पर्याप्त समय हो गया। तुम्हारे दर्शनकी आशा और भरतकी आकुलताने हममें-से एकको भी उनका अनुगमन नहीं करने दिया। तुम मर्यादा पुरुषोत्तम हो। भली प्रकार जानते हो कि स्त्रीकी परमगति पति ही होता है। हम पुत्र-मोहसे बनी रहें, यह उत्तम आदर्श नहीं होगा।

माँ श्रीरामके नेत्र निर्झर बन गये। वे जननीके अममें मुख छिपाकर रुदन करने लगे। एक शब्द भी बोला नहीं गया उनसे।

वत्स। तुम्हारे पिताको उचित अवसरपर तुम्हारे करोंकी जलाञ्जलि नहीं प्राप्त हुई। माताके दृग भी वर्षा कर रहे थे- जननीको उससे

वञ्चित मत करो। सन्तानको लेकर यही सबसे बड़ी कामना माता-पिताकी होती है। तुममें शरीरके प्रति मोह सम्भव नहीं है। अत: अपनी माताको उसके धर्म पालनमें बल दो।

आप एकाकिनी जायँगी ? श्रीरामने किसी प्रकार पूछा। कोई आशा नहीं थी कि उसका उत्तर हाँ में मिलेगा।

सुमित्रा सदा मेरी अनुगामिनी रही हैं। वे इस अवसर पर मुझे त्याग दें, यह सम्भव नहीं है। सच तो यह है कि तुमसे पूछनेको उन्होंने ही मुझे बाध्य किया है। माता कौशल्याने कहा- बात तुम्हारी माँ कैकेयीने उठायी तुम्हारा अभिषेक सम्पन्न होते ही। उनका स्वर्गीय महाराजके प्रति कितना दृढ़ प्रेम है, तुम जानते हो। एक दिन ही केवल उनमें कुबुद्धि आयी थी। अब उसके कारण उनका आग्रह अत्याधिक बढ़ गया है। उनका कहना है, तुम उत्पन्न सिद्ध हुए अपने पितासे उन्हें क्षमा दिलाकर; किन्तु अब उन्हें पतिकी सेवा में शीघ्र उपस्थित होना चाहिए।

आप तीनों एक साथ अयोध्या त्याग देंगी ? श्रीराम स्नेह शिथिल कुछ कह नहीं पा रहे थे।

तीनों ही नहीं, तुम्हारी सब माताएँ ही महाराजका सामीप्य प्राप्त करनेको उत्सुक है। कौशल्याजीने स्नेह पूर्ण स्वरमें कहा- तुम धर्मज्ञ हो। तुमको अवरोध उपस्थित करनेके स्थानमें हमारा अनुमोदन करना चाहिए। भरत उस समय अत्यन्त आर्त न होते तो एक भी यहाँ रहना नहीं चाहती थी। उस समय अच्छा हुआ। तुम्हारे अभिषेक-दर्शनकी सबकी अभिलाषा पूर्ण हो गयी। उस समय कैकेयीको अवसर ही प्राप्त नहीं होता। अब तुम पधारो और अपने अनुजोंको प्रस्तुत करो। माताओंकी यह परमसेवा बहुत अप्रिय होनेपर भी पूर्ण कर दो वत्स।

कर्त्तव्य बहुत निष्ठुर होता है। श्रीरघुनाथको यह सम्वाद भरतको सुनाना पड़ा। लक्ष्मण-शत्रुघ्नने सुना। मन्त्रियोंने सुना। महर्षि वशिष्ठने शान्तचित्त अनुमोदन कर दिया। राजसदनमें और नगरमें रुदन व्याप्त हो गया।

माताओंने पुत्र- वधुओंको बहुत कठिनाईसे समझाया- वत्से। यह नारीका परम धर्म हैं हम तुम्हारे लिए पथ-प्रशस्त कर रही हैं। अपना कर्त्तव्य समझो। अब मनको म्लान मत करो। जिस उत्साहसे आर्य नारी भ्राता और पतिको शस्त्रसज्ज करके संग्राममें भेजती है, उसी उत्साहका अवसर है। हम धर्मके लिए परम प्रस्थान कर रही हैं।

वधुओंको अपने अत्यन्त प्रिय आभरण अपने ही करोंसे पहिनाकर, उन्हें अपने आराधना कक्षकी अर्चाका भार सौंप करके, अमसे लगाकर माताओंने उनसे विदा लीं उनका बहुत आग्रह होनेपर भी उनको राजसदनसे बाहर साथ ले जाना स्वीकार नहीं किया। वधुओंने चरण-रज ली। उन्हें आशीर्वाद मिला।

माताओंने सरयू तट पहुँचनेके लिए कोई वाहन नहीं स्वीकार किया। वे अत्यन्त शान्त चन्द्र शुक्त वस्त्रधारा, नग्न पद राजभवनसे चलीं तो उनके पादक्षेपके साथ पृथ्वी उन परम सतियोंके चरणोंसे च्युत कुंकुम से अमित होने लगी। सबसे प्रथम उनकी पुत्र-वधुओंको ही वह कुंकुम प्रसाद प्राप्त हुआ।

अयोध्याके राजपथके अतिरिक्त समस्त सदन सूने हो गये। समस्त नर-नारी राजपथके दोनों ओर अथवा राजपथपर पड़ते भवनोंमें एकत्र हो गये। ब्राह्मणोंने श्रुतिके मन्त्रोंसे स्तवन प्रारम्भ किया। भवनोंसे अनवरत पुष्प-वर्षा चलती रही। शेष सब श्रद्धासे अञ्जलि बाँधे मौन बने रहे।

सम्राट् श्रीराघवेन्द्र अपने तीनों अनुजोंके साथ नग्न सिर, नग्नपद, अनाभरण माताओंके पीछे चलते रहे। माताओंके आगे चले जानेपर लोग उनके पदारविन्दोंसे च्युत कुंकुमकण पानेका प्रयत्न करते थे; किंतु कोई कोलाहल अथवा धक्का-धुक्की नहीं थी। सम्पूर्ण जनसमूह शान्त था। श्रद्धावनत था। किसी पुरुषके शरीरपर कोई आभूषण नहीं था। कोई वाहन कहीं दृष्टि नहीं पड़ता था। मुनियोंके पदोंमें भी पादुका नहीं थी।

सरयूके तटपर चन्दन काष्ठकी चिता-पंक्ति सजी थी। मौन अवनतवदना माताएँ शान्त स्थिर पदोंसे चलती आयीं। भगवान भास्करने भी मानों मेघावरणमें तिरोहित होकर किञ्चित् अश्रुवर्षा की। माताओंने सरयू स्नान किया। वैसे ही आर्द वस्त्र उन्होंने अपने दिवङ्गत पतिको तिलाञ्जलि दी। महर्षि वशिष्ठके पदोंमें मस्तक झुकाया। ब्राह्मणोंको अञ्जलि बाँधकर प्रणाम किया। इसके पश्चात् चिताओंकी परिक्रमा करके वे उसके ऊपर आस्तृत कुशासनपर बैठ गयीं। प्रत्येकने पतिका कोई-न-कोई वस्त्र अपने अममें ले रखा था।

मूर्तिमान तपस्या इतनी तेजस्विनी नहीं हो सकती। श्रीरामको, सभी पुत्रोंको, प्रजावर्गको सबने हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया। अब

महामन्त्री सुमन्त्रने श्रीरामकी ओर देखा। संकेत समझकर देवी कौशल्या बोलीं- नहीं सुमन्त्र। सतीके आह्वानपर आनेमें अग्निदेव प्रमाद नहीं किया करते। अग्न्यापर्णका अप्रिय कर्म किसीको करनेकी आवश्यकता नहीं है।

अम्ब। सुमन्त्र फूटकर रो पड़े; किंतु अब अवसर नहीं था। माताओंने नेत्र बन्द कर लिए थे। उन्होंने अपने भुवन पावन पतिके पादारविन्दोंका ध्यान किया।

कहना कठिन है कि अग्निदेवको उनके सहज शुद्ध शरीरोंकी आहुति प्राप्त हुई। उन चिताओंसे एक साथ अद्भुत अत्युज्वल प्रकाश पुञ्ज प्रकट हुए और आकाशमें ऊपर दूर तक जाते स्पष्ट देखे गये। उन देवियोंका शरीर ज्योति: पुञ्जमें परिवर्तित होकर अन्तरिक्षमें अदृश्य हो जानेके पश्चात् अग्निदेव उन चिताओंमें प्रकट हुए। उन्हें केवल वे चन्दन काष्ठकी चिताएँ उनपर आस्तृत कुश प्राप्त हुए भस्म करनेको और प्राप्त हुई सुगन्धित औषधियोंसे समन्वित घृत कलशोंकी आहुतियाँ जो इस अन्तिम शरीरमेघ यज्ञके अङ्गरूपमें रघुकुल गुरुने निर्दिष्ट कीं।

बहुत शीघ्र वे चिताएँ शान्त हो गयीं। महर्षिके आदेशानुसार श्रीराम तथा उनके अनुजोंने सचैल स्नान करके तर्पण किया। भस्म-प्रवाह किया अञ्जलि जल उलीचकर। ब्राह्मणोंने, ऋषियोंने, स्वयं महर्षि वशिष्ठने सचैल स्नान करके जलाञ्जलि दी। इस परमतीर्थपर इस परमपर्वमें स्नान करके अञ्जलि देनेका सौभाग्य सुरोंने भी नहीं छोड़ा। वे मानव रूपमें मनुष्योंमें आ मिले।

उत्तर क्रिया सविधि सम्पन्न होनी ही थी। श्रीचक्रवर्ती महाराजकी उत्तर क्रियामें भरतने कुछ उठा नहीं रखा था; किंतु उस समयकी परिस्थिति भिन्न थी और आजकी स्थिति भिन्न। मूर्धाभिषिक्त नरेशको सूतक स्पर्श नहीं करता। श्रीरामको मरणाशौत्र प्राप्त नहीं होता था। शेष समस्त कृत्य सम्पूर्ण विधिसे चलते रहे। पूरे राज्यमें-सम्पूर्ण पृथ्वीमें राजकीय शोक मनाया गया। सभी स्वजन-सम्बन्धी पधारे। त्रयोदशाहके पश्चात् सम्बन्धियोंको सादर श्रीरघुनाथने विदा किया।

६) संत समागम, सत्संग- सुअवसर जानकर सनकादि मुनि आये तो तेज पुंज सुन्दर गुणों से युक्त शील तथा सदा ब्रह्मानन्द में लीन रहते है। बहुत समय से दिखने में बाल अवस्था के है मानो चारों वेद ही बाल रूप धारण कर आये हो। जहां भी राम कथा होती है वहां ये मुनिकुमार जाकर अवश्य सुनते है। शिवजी कहते है हे भवानी ये मुनि अगस्त्य मुनि के आश्रम में गये जहां प्रभु श्रीराम की अनेक कथाओं का वर्णन होता है, जो ज्ञान उत्पन्न करने में समर्थ है जैसे अरणि लकडी से अग्नि उत्पन्न होती है। तब उन्होंने प्रभु श्रीराम का दर्शन किया तदनन्तर प्रभु श्रीरामने अपने पास बिठाया और बोले हे मुनिश्वरों मैं आज धन्य हो गया। आपके दर्शनों से भव के सारे पाप नष्ट हो जाते है। बडे ही भाग्य से सत्संग की प्राप्ति होती है जिससे बिना परिश्रम ही जन्म-मृत्यु का चक्र नष्ट हो जाता है। संत का संग मोक्ष भवबन्धन से छुटाने का और कामी का संग जन्म-मृत्यु के बन्धन में पडने का मार्ग है। सन्त, कवि, पंडित तथा वेद पुराण सभी सद्ग्रन्थ ऐसा कहते है। प्रभु के ऐसे वचन सुनकर चारों मुनि हर्षित होकर पुलकित होकर प्रभु श्रीराम के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों की सुन्दर स्तुति करने लगे। प्रेम सहित बार-बार स्तुति करके और सिर नवाकर सनकादिक मुनि ब्रह्मलोक चले गये।

तब हनुमानजी हाथ जोडकर बोले प्रभु भरतजी कुछ पूछना चाहते है पर प्रश्न करते हुये मन में सकुचा रहे है। श्रीराम बोले हे हनुमान तुम तो मेरा स्वभाव जानते हो। भरत और मेरे बीच तो कोई अन्तर है ही नहीं। तब भरत प्रभु के चरणों में शीश नवाकर बोले हे नाथ न तो मुझे किसी प्रकार का सन्देह है और न ही स्वप्न में भी शोक और मोह है यह सब आप की ही कृपा का फल है। मैं धृष्टता करता हूँ। मैं सेवक हूँ और आप स्वामी है। वेद पुराणों ने सन्तों की महिमा बहुत प्रकार से बखानी है। आपने भी अपने श्रीमुख से उनकी बडाई की है उन पर आपका प्रेम भी बहुत है। हे प्रभो मैं जानना चाहता हूँ सन्त कौन होते है, उनके लक्षण गुण क्या है। आप यह सब बताने में ज्ञान और मोह में अत्यन्त निपुण है। सन्त असन्त के भेद अलग-अलग करके मुझको समझा कर बताये।

तब प्रभु श्रीराम बोले सुनो भाई भरत। सन्तों के लक्षण गुण असंख्य है जो वेद और पुराणों में प्रसिद्ध है। सन्त और असन्तों की करनी ऐसी है जैसे कुल्हाड़ी और चन्दन का आचरण होता है। कुल्हाड़ी चन्दन को काटती है क्योंकि कुल्हाडी का स्वभाव वृक्षों को काटना है। किन्तु चन्दन अपना गुण कुल्हाडी को देकर सुगन्ध से सुवासित कर देता है पर कुल्हाडी का गुण अपने में ग्रहण नहीं करता। अपने इसी गुण के कारण चन्दन देवताओं के सिरोंपर चढ़ता है और जगत का प्रिय है जब कि कुल्हाड़ी के मुख को दंड मिलता है उसको आग में जलाकर फिर हथौडे से पीटा जाता है। लोहा आग की भट्टी में पिघलाया जाता है, गरम किया जाता है। लोहा आग बन जाता है। उसमें

अग्नि का गुण आ जाता है लेकिन अग्नि लोहा नहीं बनती उसमें लोहे का गुण नहीं आता।

सन्त विषय भोगों में लिप्त नहीं होते। शील और सद्गुणों की खान होते है। उन्हें पराया दु:ख देकर दु:ख और सुख देखकर सुख होता है। वे सब सर्वत्र सब समय समता रखते है उनके मनमें न उनका कोई शत्रु है। वे मान मद से रहित और वैराग्यवान होते है तथा लोभ, क्रोध, हर्ष और भय का त्याग किये हुये रहते है। सन्तों का चित्त बड़ा कोमल होता है। वे दीनों पर दया करते है तथा मन वचन और कर्म से मेरी निष्कपट विशुद्ध भक्ति करते है। सबको मान सम्मान सादर देते है पर स्वयं मानरहित रहते है। हे भरत वे प्राणी सन्तजन मुझे प्राणों से भी बढ़कर प्रिय है। सन्तों की कोई कामना नहीं होती। वे मेरे नाम के परायण होते है। शान्ति, वैराग्य विनय और प्रसन्नता के भण्डार होते है। उनमें शीतलता, सरलता, सबके प्रति मित्र भाव और ब्राह्मणों के चरणों में प्रीति होती है जिससे धर्म की वृद्धि और उत्पति होती है। हे तात जिसके ये सब लक्षण जिसके हृदय में बसते हो उसे सदा ही सच्चा सन्त जानो। जो शम मन के निग्रह, दस इन्द्रियों के निग्रह, नियम और नीति से कभी विचलित नहीं होते और मुख से कभी कठोर वाणी नहीं बोलते। जिनके लिये निन्दा और स्तुति दोनों समान है और जिन्हें मेरे चरण कमलों में प्रीति और ममता है वे गुणों के धाम और सुख की राशि सन्त जन मुझे अत्यन्त प्रिय है।

हे भरत अब असन्तों के दुष्टों के लक्षण जानो। कभी भूलकर भी उनकी संगति मत करना। उनका संग बडा ही दु:ख और कष्ट देनेवाला होता है जैसे हडकाई गाय कपिला गाय को अपने संग से नष्ट कर डालती है। दुष्टों के हृदय में बहुत अधिक सन्ताप रहता है, वे परायी सम्पत्ति सुख देखकर सदा ईर्ष्या करते रहते है जलते रहते है। वे जहां कही भी दूसरों की निन्दा सुन पाते है वहां बड़े हर्षित होते है मानो कोई बहुत बडा खजाना मिल गया हो। वे काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह के परायण तथा निर्दयी कपटी, कुटिल और पापों के घर होते है। वे बिना किसी कारण के सबसे बैर कर लेते है। जो भलाई करते है वे उसके साथ भी बुराई करते है। उनका किसी से भी झूठ का लेना और झूठ का ही देना होता है। झूठ ही उनका भोजन होता है और झूठ ही उनका चबैना। वे लेनदेन के व्यवहार में झूठ का आश्रय लेकर दूसरों का हक मार लेते है अथवा झूठी डीग हांक कर करोडों का मिथ्या दान कर डालते है। चने की रोटी खाते है और कहते है रसगुल्ले माल पुआ का भोग लगाया है अर्थात सभी छोटी-छोटी बातों में भी झूठ का ही आश्रय लेकर जीते है। जैसे मोर बहुत मीठा बोलता है परन्तु उसका हृदय ऐसा कठोर है कि वह महान विषैले सर्पों को भी अपना आहार बना लेता है। वैसे ही ये दुष्ट लोग मीठे वचन बोलते है परन्तु हृदय के बडे निर्दयी होते है। वे दूसरे व्यक्तियों से द्रोह करते है तथा परायी स्त्री, पराये धन तथा परायी निन्दा में आसक्त रहते है। वे पामर और पापमय मनुष्य मानव शरीर धारण किये हुये भी राक्षस ही है। लोभ ही उनका ओढ़ना और बिछौना है, लोभ से ही सदा चारों ओर से घिरे है। वे पशुओं के समान आहार और मैथुन के ही परायण होते है उन्हें यमपुर का भय नहीं लगता। यदि किसी की बडाई या गुणों का बखान सुन लेते है तो वे ऐसी दु:खभरी सांस लेकर जीते है मानो भयंकर सन्ताप आ खडा हो और जब किसी को विपत्ति में पडा देखते है तब ऐसे सुखी होते है मानो जगतभर के राजा वे ही है। वे स्वार्थ परायण, परिवारवालों के विरोधी, काम और लोभ के परायण लम्पट और अत्यन्त क्रोधी होते है। वे माता, पिता, गुरु और ब्राह्मण किसी को भी अपना नहीं मानते। आप तो नष्ट होते ही है साथ में अपने संग से दूसरों को भी नष्ट करते है। मोहवश दूसरों से द्रोह करते है। उन्हे न सन्तों का संग अच्छा लगता है न भगवान के श्रवण प्रसंगों में कोई रुचि रहती है। वे अवगुण के समुद्र, मन्द बुद्धि, कामी राग युक्त, वेद निंदक और बलात पराये धन को लूटनेवाले अपहरण करनेवाले होते है। वे दूसरों से द्रोह तो करते ही है पर ब्राह्मणों से उनका विशेष द्रोह रहता है वे नास्तिक होते है। उनके हृदय में दम्भ और कपट भरा रहता है परन्तु वे ऊपर से सुन्दर वेश धारण किये रहते है। इस प्रकार के नीच और दुष्ट असन्त सतयुग और त्रेता में नहीं होते। द्वापर में थोडे होंगे पर कलियुग में तो ये झुंड के झडों से भरे होंगे।

हे भाई भरत दूसरों की भलाई के समान कोई दूसरा धर्म नहीं है और दूसरों को दु:ख पहुंचाने के समान कोई नीचता और पाप नहीं है। हे तात समस्त पुराणों और वेदों का यही कथन और निर्णय निश्चित सिद्धान्त है इस बात को विद्वान लोग भली भांति जानते है। मनुष्य का चोला धारण कर जो लोग दूसरों को दु:ख पहुंचाते है उनको जन्म-मृत्यु के महान संकट सहने पडते है। मनुष्य मोहवश स्वार्थ परायण होकर अनेकों पाप करता है इसी से उनका परलोक नष्ट हो जाता है। मैं उनके लिये काल रूप भयंकर हूँ और उनके अच्छे और बुरे कर्मों का यथायोग्य फल देनेवाला हूँ। ऐसा जो लोग जानते है वे परम चतुर है और वे संसार को दु:ख रूप जानकर मुझे ही भजते है। इसीसे वे शुभ और अशुभ फल देने वाले कर्मों को त्यागकर देवता, मनुष्य और मुनि लोग मुझे भजते है। इसप्रकार मैंने तुम्हें सन्तों और असन्तों के गुण कहे है।

जिन लोगों ने इन गुणों को जान लिया है वे मुझे जान गये है, वे जन्म-मरण के चक्कर में नहीं पडते। माया से रचे हुये ही अनेक गुण और दोष है इनकी कोई वास्तविक सत्ता नहीं होती। विवेक इसी में है कि दोनों ही न देखे जाये। इन्हे देखना ही अविवेक है।

सनकादि मुनि नारदजी की सराहना करते है यद्यपि सनकादिक मुनि ब्रह्मनिष्ठ है परन्तु श्रीराम का गुण गान कर वे अपनी ब्रह्मसमाधि को भी भूल जाते है। वे रामकथा सुनने के श्रेष्ठ अधिकारी है। जो यह जानकर भी श्रीहरि की कथा से प्रेम नहीं करता उनके हृदय सचमुच ही पत्थर के समान है।

एक बार अयोध्या में राजदरबार में गुरु वशिष्ठ, ब्राह्मण और अन्य सब नगरवासी उस सभा में उपस्थित थे तब प्रभु श्रीराम बोले- वही मेरा सच्चा सेवक है और वही मेरा प्रिय है जो मेरी आज्ञा मान कर आचरण करे। बडे भाग्य से यह मनुष्य शरीर मिला है। यह शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है। यह साधन का धाम और मोक्ष का दरवाजा है इसे पाकर भी जिसने अपना परलोक नहीं बना लिया वह तो अधम है दु:ख ही पाता है, सिर पटक-पटक कर पछताता है तथा अपना दोष न समझकर काल पर, कर्म पर और ईश्वर पर मिथ्या दोष लगाता है। इस शरीर के प्राप्त होने का फल विषयभोग नहीं है। इस जगत के भोगों की तो बात ही क्या ? स्वर्ग का भोग भी बहुत थोडा है और अन्त में दु:ख देनेवाला है अत: जो लोग मनुष्य शरीर पाकर विषयों में मन लगा देते है वे मूर्ख अमृत को बदल कर विष ले लेते है। जो पारसमणि को खोकर बदले में घुंघची ले लेता है उसको कभी कोई बुद्धिमान नहीं कहता। यह अविनाशी जीव अन्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज चार खानों औरा चौरासी लाख योनियों में चक्कर लगाता है। माया की प्रेरणा से काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से धिरा इनके वश हुआ यह जीव सदा भटकता रहता हैं बिना ही कारण स्नेह करनेवाले ईश्वर कभी विरले ही दया करके इसे मनुष्य शरीर देते है। यह मानव शरीर भवसागर से पार जाने के लिये बेडा समान है। मेरी कृपा ही अनुकूल वायु है। सद्गुरु ही इसके कर्णाधार है। जो मनुष्य ऐसे साधन पाकर भी भवसागर से न तरे, वह कृतघ्न और मन्द बुद्धि है और आत्महत्या करनेवाले की गति को प्राप्त होता है। यदि परलोक में और यहां दोनों जगह सुख चाहते हो तो मेरी भक्ति का मार्ग सुलभ और सुखदायक है।

पुराणों और वेद ने ऐसे गाया है। ज्ञान अगम दुर्गम है और उसकी प्राप्ति में अनेकों विघ्न है। उसका साधन कठिन है और उसमें मन के लिये कोई आधार नहीं है। बहुत कष्ट करने पर कोई उसे पा लेता है तो वह भी भक्ति रहित होने से मुझे प्रिय नहीं है। भक्ति स्वतन्त्र है और सब सुखों की खान है। परन्तु सत्संग के बिना प्राणी इसे नहीं पा सकते और पुण्य समूहों के बिना सन्त दर्शन नहीं होते। सत्संगति ही जन्म-मरण के चक्र का अन्त करती है। जगत में पुण्य एक ही है वह है मन कर्म और वचन से ब्राह्मणों के चरणों की पूजा करना। जो कपट का त्याग कर ब्राह्मणों की सेवा करता है उस पर मुनि और देवता प्रसन्न रहते है। शंकरजी की भक्ति के बिना मनुष्य मेरी भक्ति नहीं पा सकता। भक्ति मार्ग परिश्रम रहित है। इसमें न तो कोई योग की आवश्यकता है न यज्ञ, जप, तप और उपवास की। सरल स्वभाव हो, मन में कुटिलता न हो और जो कुछ मिले उसीमें सदा सन्तोष रखे। मनुष्य न तो किसी से बैर करे, न लडाई झगडा करे, न आशा रखे, न भय ही करे। उसके लिये सभी दिशायें सदा सुखमयी है। जो कोई भी फल की इच्छा से कर्म नहीं करता, जिसकी अपने घरमें ममता नहीं है, जो मान हीन, पापहीन और क्रोध हीन है, जो भक्ति करने में निपुण और विज्ञानवान है। सन्तजनों के संसर्स सत्संग से जिन्हें सदा प्रेम है, जिसके मन में सब विषयभोग यहां तक स्वर्ग और मुक्ति तक तृण के समान है, जो भक्ति के पक्ष में है, मूर्खता नहीं करता तथा जिसने सब कुतर्कों को दूर कर दिया है, जो मेरे गुण समूहों को और मेरे नाम के परायण एवं ममता, मद और मोह रहित है, उसका सुख वही जानता है जो परमात्मा रूप परमानन्द राशि को प्राप्त है। तब प्रभु श्रीराम के अमृत समान वचन सुनकर सबने प्रभु के चरणों में सिर नवाया और बोले हे कृपानिधान आप ही हमारे माता, पिता, गुरु, भाई सब कुछ है और प्राणों से भी अधिक प्रिय है। हे शरणागतों के दु:ख हरनेवाले राम आप ही हमारे शरीर, धन, घरबार और सभी प्रकार से हित चाहनेवाले है। हे प्रभो ऐसी शिक्षा आपके सिवा और कौन दे सकता है ? माता-पिता हितैषी भी शिक्षा देते है परन्तु वे स्वार्थ परायण है इसलिये हे प्रभो वे ऐसी परम हितकारी शिक्षा नहीं दे सकते। जगत में नि:स्वार्थ उपकार करनेवाले तो सिर्फ आप ही है और दूसरे आपके सेवक। जगत में शेष सभी स्वार्थ के मित्र है उनमें स्वप्न में भी परमार्थ का भाव नहीं है। शिव कहते है हे पार्वती अयोध्या में रहनेवाले नर नारी सभी कृतार्थ स्वरूप है जहां स्वयं सच्चिदानन्द ब्रह्म रघुनाथ जी राजा है।

एक बार गुरु वशिष्ठ श्रीराम के पास आये और बोले हे राम मेरी कुछ विनती सुनो। आपके आचरणों मनुष्योचित चरित्रों को देख-देखकर

मेरे हृदय में अपार मोह ब्रह्म हो रहा है। आपकी महिमा की सीमा नहीं है उसे वेद भी नहीं जानते फिर मैं भला किस भांति जान सकता हूँ। पुरोहितगिरी का कर्म पेशा बहुत ही नीचे स्तर का है। वेद पुराण और स्मृति सभी ग्रन्थ इस कर्म की निन्दा करते है, जब मैं सूर्यवंश के पुरोहित कर्म को स्वीकार नहीं कर रहा था तब उस समय ब्रह्माजी ने मुझे कहा था हे पुत्र तुम्हें आगे चल कर अत्यन्त लाभ होगा। स्वयं ब्रह्म परमात्मा मनुष्य रूप धारण कर रघुवंश में राजा होंगे। तब मैंने हृदय में विचार कर देखा कि जिसके लिये योग, यज्ञ, व्रत और दान किये जाते है उसे मैं मेरे इसी कर्म से पा जाऊँगा तब तो इसके समान दूसरा कोई धर्म भी नहीं होगा। जप, तप, नियम, योग सभी धर्म, श्रुतियों में उत्पन्न, वेद विहित शुभ कर्म, ज्ञान, दया दम इन्द्रिय निग्रह, तीर्थ स्थान आदि जहां तक वेद और सन्त जनों ने धर्म कहे है तथा हे प्रभो अनेक तन्त्र, वेद और पुराणों के पढ़ने और सुनने का सर्वोत्तम फल एक ही है और वह सब साधनों का भी यही एक सुन्दर फल है कि आपके चरण कमलों में सदा सर्वदा प्रेम बना रहे। जैसे मैल से धोने से मैल नहीं छूटता, जल के मथने से कभी घी नहीं निकलता वैसे ही हे श्रीराम प्रेम भक्ति रूपी निर्मल जल के बिना अन्त:करण स्वच्छ नहीं हो सकता। वही सर्वज्ञ, वही तत्वज्ञ और पंडित है। वही गुणों का खजाना है और अखंड विज्ञानवान है, वही चतुर और सब सुलक्षणों से युक्त है जिसका आपके चरण कमलों में प्रेम है। हे श्रीराम मैं आपसे एक वर मांगता हूँ कि मेरा प्रेम आपके चरण कमलों में जन्म-जन्मान्तर तक बना रहे। फिर गुरु वशिष्ठ प्रभु श्रीराम को प्रणाम कर चले गये।

शिवजी कहते है हे गिरिजा मैंने यह उज्वल राम कथा जैसी मेरी बुद्धि थी वैसे ही तुम्हें पूरी सुना दी। श्रीरामजी का चरित्र अपार है। श्रुति और शारदा भी जिसका गान नहीं कर सकते। भगवान श्रीराम अनन्त है, उनके गुण अनन्त है। जिनके जन्म, कर्म और नाम भी अनन्त है। जल की बूंदे और पृथ्वी के रज कण चाहे भले ही गिने जा सकते पर श्रीराम चरित्र वर्णन करना सम्भव नहीं है। यह पवित्र कथा भगवान के परम पद को प्राप्त करानेवाली है। इसके सुनने से अविचल भक्ति प्राप्त होती है। हे गिरजा यह सुन्दर कथा मैंने तुम्हे कही जो काकभुशुण्डि ने गरुड को सुनाई। मैंने प्रभु श्रीराम के थोडे से गुण बखान कर कहे है। हे भवानी अब बताओ तुम और क्या सुनना चाहती हो ? श्रीराम कथा सुनकर पार्वती हर्षित हुई और बोली हे त्रिपुरारी मैं धन्य धन्य हो गई जो मैंने जन्म-मृत्यु के भय को हरनेवाली श्रीराम के गुण चरित्र सुने। हे कृपा धाम अब आपकी कृपा से मैं कृतकृत्य हो गई। अब मुझे मोह नहीं रहा। अब मैं सच्चिदानन्द प्रभु श्रीराम के प्रताप को जान गई। कथा सुनकर मेरा मन तृप्त नहीं होता। श्रीराम के चरित्र सुनकर जो तृप्त हो जाते है तो उन्होंने तो उसका विशेष रस जाना ही नही। जो जीवन मुक्त महामुनि है वे भी भगावन के गुण निरन्तर सुनते रहते है। जो संसार रूपी सागर को पार करना चाहता है उसके लिये तो राम कथा दृढ़ नौका के समान है। हरि के गुण तो विषयी लोगों के लिये भी कानों को सुख देनेवाले और मन को आनन्द देनेवाले है। जगत में जिस किसी को श्रीराम चरित्र नहीं सुहाता हो वे मूर्ख जीव तो अपनी आत्मा का हनन करते है। पार्वती बोली हे नाथ आपने रामचरित्र गुणगान किया उसे सुन कर मैंने अपार सुख पाया। आपने कहा यह सुन्दर कथा काकभुशुण्डिने गरुड को सुनायी। कौए का शरीर पाकर भी काकभुशुण्डि वैराग्य, ज्ञान और विज्ञान में दृढ़ है और भगवान श्रीराम के चरणों में जिनका अत्यन्त प्रेम है उन्हे प्रभु श्रीराम की भक्ति किस प्रकार प्राप्त है ? हे त्रिपुरारि हजारों मनुष्य में कोई एक धर्म के व्रत का धारण करनेवाला होता है और उन करोडों धर्मात्माओं में कोई एक विषयोंसे विमुख और वैराग्यपरायण होता है। श्रुति कहती है कि करोडों विरक्तों में से कोई एक ही यथार्थ ज्ञान प्राप्त करता है और करोडों ज्ञानियों में से कोई एक ही जीवनमुक्त होता है ऐसा जीव जगत में कोई विरला ही होगा। हजारों जीवनमुक्तों अवस्था में भी सब सुखों की खान, ब्रह्म में लीन विज्ञानवान पुरुष और भी दुर्लभ है जो मद और माया से रहित श्रीराम की भक्ति परायण है। हे विश्वनाथ ऐसी दुर्लभ भक्ति को यह कौये का शरीर धारण करनेवाला कैसे पा गया मुझे समझा कर कहे। हे नाथ यह कौआ श्रीराम परायण, ज्ञान निरत, गुणों का धाम और धीर बुद्धि काकभुशुण्डि ने कौए का शरीर किस भांति पाया। हे नाथ यह बताइये प्रभु का यह पावन और सुन्दर चरित्र कौए को किस भांति प्राप्त हुआ। इस चरित्र को आपने भी किस भांति जाना। मुझे बडा भारी कौतूहल हो रहा है। गरुडजी तो महान ज्ञानी गुण रहित हरि सेवक और उनके निकट रहनेवाले प्रभु के वाहक है उन्होंने मुनियों के समूह को छोड़कर कौए से हरिकथा जाकर कैसे सुनी ? काकभुशुण्डि और गरुड इन दोनों हरिभक्तों की भेट किस प्रकार हुई ? तब पार्वती की सरल और सुन्दर सुख देनेवाली वाणी सुनकर शिवजी ने प्रसंग शुरु किया।

७) काक भुशुण्डि प्रसंग- शिव बोले हे सती तुम धन्य हो तुम्हारी बुद्धि शुद्ध है। श्रीराम चरणों में तुम्हारी प्रीति है अब तुमने जो पूछा वह सब सुनो जिसे सुनने से सारे लोक के भ्रम का नाश हो जाता है तथा श्रीराम चरणों में विश्वास उत्पन्न होता है और

मनुष्य बिना परिश्रम ही संसार भवसागर से तर जाता है। पक्षिराज गरुडने भी काकभुशुण्डि के पास जाकर ऐसे ही प्रश्न किये थे। अब यह कथा तुम्हे सुनाता हूँ। तुम्हारा इसके पहले का जन्म प्रजापति दक्ष के यहाँ हुआ तब तुम्हारा नाम उमा था और सती नाम से भी जाना जाता था। दक्ष ने एक बार यज्ञ किया था, मेरे से द्रोह होने के कारण तुम्हे नहीं बुलाया था पर तुम हठपूर्वक दक्ष के उस यज्ञ में गई वहां तुम्हारा अपमान हुआ। तब तुमने क्रोध करके प्राण त्याग दिया तब मेरे गणों, चरों और सेवकों ने उस यज्ञ को विध्वंस कर दिया था। तब मैं तुम्हारे वियोग से दु:खी होकर मारे-मारे फिरने लगा। मैं विरक्त भाव से सुन्दर वन, पर्वत, नदी और तालाब कौतुकवश देखते रहता था। सुमेरू पर्वत से उत्तर दिशा की ओर एक बहुत ही सुन्दर नील पर्वत है। उस सुन्दर पर्वत पर एक पक्षी काकभुशुण्डि रहते है उनका नाश कल्प के अन्त में भी नहीं होता। मायाजनित अनेक गुण दोष मोह काम, अविवेक आदि जो सारे जगत में व्याप्त है वे सब कभी भी उस पर्वत के पास नहीं फटकते। वहां वह काक रहकर हरिभक्ति करता है उसे सुनो। वह वहांपर ध्यान धरता है, जप यज्ञ करता है और मानसिक पूजा करता है। हरिभजन छोडकर उसे दूसरा कुछ सुहाता नहीं। बरगद के वृक्ष के नीचे वह दिन प्रतिदिन हरि कथाओ के प्रसंग सुनाता है। वहां अनेकों पक्षी आते और कथा सुनते है। वह रामकथा का आदरपूर्वक अनेकों प्रकार से गान करता है। जो राज हंस वहां बसते है वे सब उस सभा में कथा सुनते है यह दृश्य मैंने वहां जाकर देखा तब मेरे हृदय में भी विशेष आनन्द हुआ। तब मैंने भी हंस का शरीर धारण कर कुछ समय वहां पर निवास किया और श्रीराम चरित्र के गुणों को आदर सहित सुना और फिर कैलाश लौट आया। इस तरह मुझे राम चरित्र का ज्ञान हुआ। अब वह सुनो जिस कारण से गरुड उस काक के पास गये। रामचरित्र में युद्ध भूमि में लंका में मेघनाद ने श्रीराम-लक्ष्मण को अपने नागपाश बाणों से बांध लिया था तब वह बन्धन छुडाने को गरुड को नारद मुनिने भेजा। गरुडजी लंका में युद्धस्थल पर जाकर नागपाश के बंधन तो काट कर आ गये पर उनके हृदय में बडा भारी विषाद व शंका उत्पन्न हुई। गरुडजी बहुत भांति विचार करने लगे कि जो व्यापक, विकार रहित, वाणीपति, मायामोह से अतीत पर ब्रह्म परमेश्वर है कि जगत में ये श्रीराम उन्हीं का अवतार है पर मैंने तो उस अवतार का प्रभाव ऐसा कुछ भी नहीं देखा। वे तो साधारण मानव है, वे मेरे स्वामी कैसे हो सकते है ? जिनके बन्धन को मैंने काटा और उनको विपत्ति से त्राण दिलवाया ? जिनका नाम जपकर मनुष्य संसार सागर से मुक्त हो जाता है वे ही श्रीराम एक तुच्छ राक्षस के नागपाश में किस भांति बन्ध गये ? गरुड ने अनेकों प्रकार से अपने मन को समझाया पर उन्हे ज्ञान नहीं हुआ। हृदय में भ्रम और बढ़ते गया। इस दु:ख से दु:खी होकर मन में उहापोह और कुतर्क बढ़ाकर हे भवानी तुम्हारी ही तरह मोहवश हो गये। इस तरह गरुड व्याकुल होकर देवर्षि नारद के पास गये और अपने मन में जो सन्देह था वह कह सुनाया तब उसे सुनकर नारद ने दया कर गरुड से कहा हे गरुडजी श्रीराम की माया बडी बलवती है जो ज्ञानियों के भी चित्त को हर लेती है और उनके मन में भी बडा भारी मोह उत्पन्न कर देती है। उनकी इसी माया ने मुझे भी बहुत बार नचाया है और चक्कर कटवाये है। हे पक्षिराज अब वही माया आपको भी व्याप गयी है। इससे गरुडजी को सन्तोष नहीं हुआ। तब नारद बोले- हे गरुड, आपके हृदय में बडा भारी मोह उत्पन्न हो गया है। यह मेरे समझाने से भी दूर नहीं होगा अत: हे पक्षिराज आप ब्रह्माजी के पास जाकर अपना दु:ख निवारण करे। आपको ब्रह्मा से जैसा आदेश मिले आप वही करे।

वह पक्षिराज गरुड ब्रह्मा के पास गये और अपना सन्देह उन्हे कह सुनाया। तब ब्रह्माजी सोचने लगे कि कवि, कोविद और ज्ञानी सभी माया के परवश है। प्रभु की माया का प्रभाव असीम है जिसने मुझ तक को नहीं छोडा अनेक बार मुझे नचाया है। इस सारे जगत की मैं ही सृष्टि करता हूँ। जब मैं ही मायावश नाचने लगता हूँ, भ्रमित हो जाता हूँ तब बिचारे पक्षिराज गरुड को मोह व्याप्त होना कोई आश्चर्य नहीं है। तब ब्रह्मा बोले- गरुड श्रीराम की महिमा को भगवान शिव भली भाँति जानते है तुम महादेवजी के पास जाओ और अपने शंका सन्देह का निवारण उनसे करो। ब्रह्माजी की बात मानकर गरुड बडी उत्सुकता से आतुरता उतावली से मेरे पास आये। तब हे भवानी उस समय मैं कुबेर के घर अलकापुरी में जा रहा था और तुम कैलाशपर थी। उसी समय आकर गरुड ने मेरे चरणों में शीश नवाया और अपना सन्देह निवारण हेतु मुझे सारा वृत्तान्त सुनाया। हे भवानी उसकी विनती और कोमल वाणी सुनकर मैने गरुड से कहा हे गरुड तुम मुझे रास्ते में मिले हो अब राह चलते मैं तुम्हें किस प्रकार समझाऊँ ? तुम्हारा सन्देह तो तभी दूर हो जब दीर्घकाल तक सत्संग हो। फिर मन में यह विचार कर कि यह पक्षी है मेरे समझाने से भी इसके सन्देह का निवारण नही होगा इसके लिये उसे पक्षी की भाषा में समझानेवाले के पास भेजना चाहिये क्योंकि खग ही जाने खग की भाषा। यह सोच कर मैंने गरुड से कहा हे गरुड जहां हरिकथा

प्रतिदिन होती है वही मैं तुमको भेजता हूँ। तुम जाकर हरिकथा सुनो और सत्संग करो। तुम्हारे सब संशयों का नाश हो जायेगा मिट जायेंगे और तुम्हें प्रभु श्रीराम के चरणों में अत्यन्त अनुराग होगा।

सत्संग के बिना हरि कथा सुनने को नहीं मिलती, बिना कथा के मोह नहीं जाता और मोह का नाश हुये बिना श्रीराम चरणों में दृढ़ अनुराग नहीं होता। उत्तर दिशा मे एक सुन्दर नील पर्वत है वहां परम सुशील सुजान काकभुशुण्डि रहते है। वे राम भक्ति में परम प्रविण है, ज्ञानी है गुणों के धाम है और बहुत काल से वहां निवास करते है। वे निरन्तर रामकथा का गान करते है और भांति-भांति के श्रेष्ठ पक्षी उसे आदर सहित सुनते है। हे गरुडजी वहां जाकर हरि के गुणों का गान करो और सुनो। उसके सुनने से तुम्हारा मोह से उत्पन्न संशय और दु:ख दूर हो जायेगा। मैंने उसे इस भांति समझाया तब वह मुझे अपना सिर नवा कर हर्षित होकर चला गया। हे उमा उसने कभी अभिमान किया होगा जिसे श्रीराम नष्ट करना चाहते थे इसलिये उसे यह मोह व्याप हुआ। प्रभु की माया बडी बलवती है ऐसा कौन सा प्राणी है जिसे प्रभु की माया न लगती हो ? जो ज्ञानियों में और भक्तों में शिरोमणि है एवं त्रिभुवनपति के वाहक है उन गरुड को भी माया ने मोह लिया। नीच मनुष्य मूर्खतावश अभिमान करते है। हरि की माया ब्रह्मा और शिव तक को भी मोह लेती है तब दूसरा बेचारा क्या है ?

गरुडजी वहां गये जहां निर्बाध बुद्धि और पूर्ण भक्तिवाले काकभुशुण्डि रहते है उस रमणीय पर्वत को देखकर उनका मन प्रसन्न हो गया और सब माया, मोह सोच शंका जाती रही। तालाब में स्नान कर जलपान कर गरुडजी प्रसन्नचित्त से उस वट वृक्ष के नीचे गये जहां काकभुशुण्डि बैठे थे और बडे बूढ़े पक्षी श्रीराम चरित्र सुनने के लिये वहां आये हुए थे पक्षिराज गरुडजीको आते देखकर काकभुशुण्डि सहित सारा पक्षि समुदाय हर्षित हुआ। कामभुशुण्डि ने गरुड जी का बहुत ही आदर सत्कार किया और कुशल पूछकर बैठने के लिये सुन्दर आसन दिया। तब काकभुशुण्डिजी बोले हे पक्षिराज आपके दर्शनों से मैं कृतार्थ हो गया। आप आज्ञा करे सो मैं करूँ। आपका यहां आना किस कारण हुआ ? तब गरुड बोले आप तो सदा ही कृतार्थ रूप है जिसका गान श्रीमहादेवजी ने अपने मुख से कहा है। आपके दर्शन मात्र से ही मेरे सब संशय और कष्ट नष्ट हो गये। आपका यह परम पवित्र आश्रम देख कर ही मेरा मोह, सन्देह और अनेक प्रकार के भ्रम मिट गये। अब आप मुझे प्रभु श्रीराम की अत्यत पावन करनेवाली सदा सुख देनेवाली और दु:खों का नाश करनेवाली कथा सुनाये। मेरी आपसे बार-बार यही विनती है। गरुडजी की परम विनम्र, सरल, सुन्दर, प्रेमयुक्त, सुखप्रद और अत्यन्त पवित्र वाणी सुनते ही काकभुशुण्डि के मन में उत्साह हुआ और वे प्रभु श्रीराम के गुणों की कथा कहने लगे। काकभुशुण्डि ने वह सब कथा कही भवानी जो मैंने तुम्हें सुनायी। सारी राम कथा सुनकर गरुड अपने मन में बडे ही आनन्दित हुये और बोले मैंने प्रभु श्रीराम के सब चरित्र सुने जिससे मेरे सन्देह मिट गये। हे काकशिरोमणि आपकी कृपा से मेरा श्रीराम चरणों में प्रेम हो गया। जो धूप से अत्यन्त व्याकुल होता है वही वृक्ष की छाया का सुख जानता है। हे तात मुझे यदि अत्यन्त मोह न होता तो मैं आपको किस प्रकार आकर मिलता ? कैसे यह अत्यन्त विचित्र हरि कथा आपसे सुनता ? वेद, शास्त्र और पुराणों का भी यही मत है और सिद्ध, मुनि सभी कहते है कि शुद्ध सच्चे सन्त उसी को मिलते है जिसपर श्रीरामजी की कृपा हो।

प्रभु श्रीराम की कृपा से मुझे आपके दर्शन हुये और आपकी कृपा से मेरे सन्देह का निवारण हो गया। हे भवानी सुन्दर बुद्धिवाले, सुशील, पवित्र कथा प्रेमी और हरि के सेवक सज्जन श्रोता पाकर अपने गोपनीय रहस्य को भी प्रकट कर देते है। काकभुशुण्डि बोले हे पक्षिराज आप सब प्रकार से मेरे पूज्य है और श्रीराम के कृपापात्र है। आपको न तो कोई सन्देह और न मोह अथवा माया ही है। हे नाथ आपने तो मुझपर अनुग्रह ही किया है। मोह के बहाने प्रभु श्रीरामने आपको यहां भेजकर मुझे बडाई और सम्मान दिया है। नारदजी, शिवजी, ब्रह्माजी और सनकादि जो आत्मतत्व के मर्मज्ञ व ज्ञाता है उसका उपदेश करनेवाले श्रेष्ठ मुनि जन उन सबको भी मोह ने विवेक शून्य किया है। जगत में ऐसा कोई भी प्राणी नही है जिसे जगत में काम ने नहीं नचाया हो। तृष्णा ने किसको मतवाला नहीं बनाया ? क्रोध ने किसका हृदय नहीं जलाया। इस संसार में ऐसा कौन ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कौन विद्वान और गुणों की खान है जिसकी लोभ ने मिट्टी पलीद न की हो। लक्ष्मी के मद ने किसको टेढ़ा नहीं किया, प्रभुता ने किसको बहरा नहीं किया। ऐसा कौन बचा है जिसे मृगनयनी युवती स्त्री के नेत्र बाण न लगे हो ? सत्य रज तम आदि गुणों का किया हुआ सन्निपात किसे नहीं हुआ ? ऐसा कोई नहीं है जिसे मान और मद ने अछूता छोडा हो। यौवन के ज्वर ने किसे आपे से बाहर नहीं किया ? ममता ने किसके यश का नाश नहीं किया ? मत्सर डाह ने किसको कलंक नही लगाया ? शोक रूपी पवन ने किसे नहीं हिला दिया ? चिन्ता रूपी सांप ने किसे नहीं खा लिया ?

माया का स्वरूप- जगत में ऐसा कौनसा प्राणी है जिसे माया न व्यापी हो ? ऐसा धैर्यवान कौन है जिसके मनोरथ रूपी क्रीडा नहीं लगा हो ? पुत्र धन दारा और लोक प्रतिष्ठा की इन तीन प्रबल इच्छाओं ने किसकी बुद्धि को मलिन नहीं किया ?

हे गरुडजी यह सब माया का बडा बलवान परिवार है, अपार है। शिव और ब्रह्मा भी जिससे डरते है फिर दूसरे जीव तो बेचारे किस गिनती में है ? माया की प्रचंड सेना संसार भर में व्याप्त है। काम क्रोध और लोभ इस सेना के सेनापति है और दम्भ, कपट और पाखंड लडनेवाले वीर योद्धा है। माया प्रभु श्रीराम की दासी है। यह मिथ्या है पर प्रभु श्रीराम की कृपा के बिना छूटती भी नहीं है। जो माया सारे जगत को नचाती है और जिसका चरित्र किसी ने नहीं जाना। हे खगराज वही माया प्रभु श्रीराम की एक भृकुटि विलास के इशारे पर अपने परिवार समाज सहित नट की तरह नाचती है। भगवान श्रीराम षडऐश्वर्य युक्त है, प्रकृति से परे इच्छारहित विकाररहित अविनाशी ब्रह्म है। क्या अन्धकार का समूह सूर्य के सामने टिक सकता है ? प्रभु श्रीराम ने भक्तों के लिये राजा का शरीर धारण किया है और अनेकों परम पावन चरित्र किये है। हे गरुडजी रघुनाथ जी की यह लीला जो राक्षसों को मोहित करनेवाली और भक्तों को सुख देनेवाली है। जो मनुष्य मलिन बुद्धि, विषयों के वश और कामी है वे ही प्रभु पर इस प्रकार मोह का आरोप करते है। जिसको नेत्र दोष कंवल दोष होता है तब चन्द्रमा उसको पीले रंग का दिखता है। जिसे दिशा भ्रम हो जाता है वही कहता है कि सूर्य पश्चिम दिशा में उदय हुआ। नौका पर चढ़ा हुआ मनुष्य जगत को चलता हुआ देखता है और मोह वश अपने को अचल समझता है। बालक चक्राकार घूमते है और कहते है घर आदि घूम रहे है और वे परस्पर एक-दूसरे को झूठा कहते है। हे गरुडजी भगवान मैं तो स्वप्न में भी अज्ञान नहीं है किन्तु जो माया के वश मन्दबुद्धि और भाग्यहीन है और जिनके हृदय पर अज्ञान के परदे पडे है वे ही मूर्ख हठात सन्देह करते हैं और अपना दोष प्रभु पर आरोपित करते है। जो काम, क्रोध, मद और लोभ में रत है और दु:ख रूप घर में आसक्त है, वे प्रभु श्रीराम को कैसे जान सकते है ? वे तो अन्धकार रूपी कुये में पडे है। हे गरुडजी जिस प्रकार मुझे मोह प्राप्त हुआ वह सब आपको सुनाता हूँ। श्रीराम अपने भक्त में अभिमान कभी नहीं रहने देते क्योंकि अभिमान जन्म-मरण रूप संसार का मूल है और अनेक प्रकार के क्लेशों तथा समस्त शोक को देनेवाला है। कृपानिधान प्रभु उसे दूर कर देते है जैसे बच्चे के शरीर में फोडा हो जाता है तो माता उसे कठोर हृदय कर उसे चिरा (कटवा) डालती है। यद्यपि बच्चा पहले फोडा चिरते समय दु:ख पाता है और अधीर होकर रोता है तो भी रोग के नाश के लिये माता बच्चे की उस पीडा को कुछ भी नहीं गिनती। उसी प्रकार प्रभु श्रीराम अपने दास का अभिमान उसके हित के लिये हर लेते है।

श्रीरामजी की कृपा और अपनी जडता मूर्खता की बात सुनो। जब-जब प्रभु श्रीराम मनुष्य शरीर धारण करते है तब भक्तों के सुख के लिये बहुत सी लीलायें करते है। तब-तब मैं अयोध्यापुरी में जाता हूँ और उनकी बाललीला देखकर हर्षित होता हूँ। वहां जाकर मैं उनका जन्म महोत्सव देखता हूँ और लुभा कर ५ वर्षों तक वही रहता हूँ। बाल रूप श्रीराम मेरे इष्ट देव है। हे गरुडजी मैं अपने प्रभु का मुख देख-देखकर अपने नेत्रों को सफल करता हूं। छोटे से कौए का शरीर धरकर प्रभु के साथ-साथ फिर कर मैं उनकी भांति भांति की बाल लीलाये देखा करता हूं। लडकपन में वे जहां-जहां फिरते है वहां-वहां मैं साथ-साथ उडता हूँ और आंगन में जो उनकी जूठन पडती है वही उठा कर खाता हूं। प्रभु श्रीराम का चरित्र भक्तों को सुख देनेवाला है। एक बार की लीला का वर्णन करता हूं। अयोध्या का राजमहल सब प्रकार से सुन्दर है। उसका आंगन बडा ही मनोहर और सुन्दर है। जहां पर चारों भाई नित्य खेल खेला करते है। माता को सुख देनेवाले बाल विनोद करते श्रीराम उस आंगन में विचर रहे है। अपनी परछाई देख-देखकर उस आंगन में बाल रूप में श्रीराम नाच रहे है और मुझसे बहुत प्रकार के खेल करते है। किलकारी मारते हुये जब वे मुझे पकडने दौडते है तब मैं भाग चला जाता हूँ तब वे मुझे मालपुआ दिखलाते है। मैं उनके निकट जाता हूँ फिर प्रभु हंसते है और मेरे भाग जानेपर रोते है और जब मैं उनके चरण स्पर्श करने के लिये जाता हूँ तब वे मेरे पीछे फिर-फिर कर मेरी ओर देख कर भाग जाते है। साधारण बच्चों की सी यह लीला करते देखकर मुझे भी शंका हो गई कि क्या सच्चिदानन्द प्रभु है जो ऐसी लीला करते हैं। हे पक्षिराज मन में इतनी शंका आते ही श्रीरामजी के द्वारा प्रेरित माया मुझ पर छायी परन्तु वह माया न तो मुझे दु:ख देनेवाली हुई और न दूसरे जीवों की भांति इस संसार में डालनेवाली हुई। श्रीराम अखण्ड ज्ञान स्वरूप है और जड चेतन सभी जीव माया के वश है। अभिमानी जीव माया के वश है और तीनों गुणों की खान सत्व रज तमस। माया ईश्वर के वश में है। जीव परतन्त्र है भगवान स्वतन्त्र है। जीव अनेक है, भगवान एक है। यद्यपि माया का किया हुआ यह भेद असत है तथापि भगवान भजन बिना करोडों उपाय करने पर भी यह नहीं जा सकता। श्रीराम भजन बिना जो मोक्षपद चाहता है वह तो ज्ञानवान

होनेपर भी बिना पूंछ और सींग का पशु है। सभी तारांगणों के साथ सोलह कथाओं से पूर्ण चन्द्रमा उदित हो जाये और जितने पर्वत है उन सब में भी दावाग्नि लग जाये तो भी उनके प्रकाश की समता सूर्य के प्रकाश के समान नहीं हो सकती। सूर्य के उदय हुये बिना रात्रि नहीं जा सकती। हे पक्षिराज इस प्रकार हरि भजन बिना जीवों का क्लेश नहीं मिटता। प्रभु को कभी अविद्या अज्ञान नहीं व्यापता। प्रभु की प्रेरणा से ही विद्या व्यापती है। इससे कभी भी प्रभु के भक्त का नाश नहीं होता और भेद भक्ति बढ़ती है।

प्रभु श्रीराम ने मुझे भ्रम से चकित देखा और हंसे। वे प्रभु श्रीराम बालरूप से घुटने और हाथों के बल मुझे पकडने दौडे तब भाग गया। श्रीरामने मुझे पकडने के लिये अपनी भुजाये फैलायी। मैं जैसे-जैसे आकाश में दूर उडता गया वैसे-वैसे श्री हरि की भुजा को अपने पास देखता था। मैं उडते-उडते ब्रह्म लोक तक गया तब मैंने उडते हुये अपने पीछे की ओर मुडकर देखा तो हे तात मेरे और श्रीरामजी की भुजा में केवल दो ही अंगुल का अन्तर शेष था। सातों आवरणों को भेद कर जहां तक मेरी गति थी वहां तक मैं गया पर वहां भी प्रभु की भुजा मेरे पीछे देखकर व्याकुल हो गया। तब मैं भयभीत हो गया और डर से अपनी आंखे मूद ली। फिर आंख खोल कर देखा तो अपने आपको अयोध्या में पाया। मुझे देखकर श्रीराम मुस्कुराने लगे। उनके इस तरह हंसने से मैं तुरन्त उनके मुख में चला गया। हे पक्षिराज मैंने उनके उदर में बहुत से ब्रह्माण्ड देखे। वहां उन ब्रह्मांडों में अनेकों विचित्र विचित्र लोक थे जिनकी रचना एक से एक बढ़कर थी। असंख्य ब्रह्मा और शिव, अनगिनत तारागण, सूर्य और चन्द्रमा, अनन्त लोक पाल यम और काल, अगणित विशाल पर्वत और भूमि, बहुत सारे सागर, नदी तालाब और वन तथा नाना प्रकार की सृष्टि का विस्तार देखा। देवता मुनि सिद्ध नाग, मनुष्य किन्नर तथा चारों प्रकार के जड चेतन जीव देखे। जो कभी न देखा न सुना, जो मन में भी नहीं समा सकता था वही सब अद्भुत सृष्टि मैंने देखी। मैं वहां प्रत्येक ब्रह्माण्ड में पूरे एक-एक सौ वर्ष तक रहा। प्रत्येक लोक में भिन्न-भिन्न ब्रह्मा, विष्णु, शिव, मनु, दिक्पाल, मनुष्य, गन्धर्व, भूत-पिशाच, बेताल, किन्नर, राक्षस, पशु-पक्षी सर्प, नाग तथा नाना जाति के देवता व दैत्यगण थे। सभी जीव वहां दूसरे ही प्रकार थे। एक लोक से दूसरे के भिन्न थे। अनेक पृथ्वी नदी, तालाब, समुद्र पर्वत तथा सब सृष्टि वहां दूसरी-दूसरी ही प्रकार की थी प्रत्येक बह्माण्ड मे मैंने अपना रूप देखा तथा अनेक अनुपम वस्तुये देखी। प्रत्येक भुवन में न्यारी ही अवधपुरी, भिन्न सरयू और अलग-अलग प्रकार के नर नारी थे। महाराज दशरथ, कौशल्याजी और भरत आदि भाई सभी भिन्न-भिन्न रूपों के थे। मैं प्रत्येक ब्रह्माण्ड में रामावतार और उनकी अपार बाललीलायें देखता फिरता। हे हरि के वाहक मैंने सभी कुछ भिन्न-भिन्न और अत्यन्त विचित्र देखा। मैं अनगिनत ब्रह्माण्डों में फिरा पर प्रभु श्रीराम को कभी भी वहां जहां किसी दूसरी तरह का नहीं देखा। सर्वत्र वही शिशुपन, वही भोलापन, वही शोभा, वही कृपालु श्री रघुवीर। इस प्रकार मोह रूपी पवन की प्रेरणा से मैं भुवन-भुवन घूमता फिरा। अनेक ब्रह्माण्डों मेंभटकते हुये मुझे मानो एक सौ कल्प बीत गये। फिरता-फिरता मैं अपने आश्रम में आया और कुछ काल वहां रहकर बिताया। फिर जब मैंने अपने प्रभु का अवधपुरी में जन्म सुना तब प्रेम परिपूर्ण होकर मैं हर्षपूर्वक वहां दौड चला और जाकर मैंने प्रभु श्रीराम का जन्म महोत्सव देखा प्रभु श्रीराम के उदर में मैंने बहुत से जगत देखे जो देखते नहीं बनते उनका वर्णन भी नहीं किया जा सकता वहां मैंने सुजान मायापति कृपालु भगवान श्रीराम को देखा। मेरी बुद्धि मोह रूपी कीचड से व्याप्त थी। यह सब मैंने जो कुछ देखा वो दो घडी में देखा। मन में विशेष मोह होने से मैं श्रान्त हो गया। मुझे अत्यन्त व्याकुल देखकर परम कृपालु प्रभु श्रीराम हंस दिये। उनके हंस देने से मैं उनके मुंह से बाहर आ गया। प्रभु श्रीराम मेरे साथ फिर वही लडकपन करने लगे। मैं अपने मन को भांति-भांति समझाता रहा पर मेरा मन शान्ति नहीं पा रहा था। प्रभु श्रीराम का यह बाल चरित्र देखकर और उदर के अन्दर की लीला को देखकर उस प्रभुता का जब स्मरण करता हूँ तो अपने शरीर की सुध भूल गया और त्राहिमाम त्राहिमाम मेरी रक्षा करो मेरी रक्षा करो। यह कहता हुआ मैं पृथ्वी पर गिर पडा मुख से बात नहीं निकलती। तदनन्तर प्रभु ने मुझे प्रेम विह्वल देख कर अपनी माया की प्रभुता को रोक लिया और अपना कर कमल मेरे सिर पर रखा तथा मेरा सम्पूर्ण दु:ख हर लिया। सेवकों को सुख देनेवाले प्रभु श्रीराम ने मुझे सर्वथा मोह रहित कर दिया तब मेरे मन में बड़ा भारी हर्ष हुआ। प्रभु की भक्तवत्सलता देख कर मेरे हृदय में बहुत ही प्रेम उत्पन्न हुआ फिर मैंने पुलकित होकर प्रभु श्रीराम से विनती की तब प्रभु बोले काकभुशुण्डि मैं तुझसे अत्यन्त प्रसन्न हूँ वर माँगो। अणिमा आदि अष्ट सिद्धियाँ तथा सम्पूर्ण मोक्ष, ज्ञान, विवेक, वैराग्य और अनेकों गुण जो मुनियों के लिये भी जगत में दुर्लभ है ये सब मैं तुझे आज दूंगा इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। जो तेरे मन में भावे सो मांग ले। प्रभु के ये वचन सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हो गया पर मन में विचार कर देखा प्रभु ने सब सुखों के देने की बात तो कही पर अपनी भक्ति देने की बात तो कही ही नहीं।

भक्ति से रहित सब गुण और सब सुख वैसे ही जैसे नमक के बिना बहुत प्रकार के भोजन के व्यंजन। भजन से रहित सुख किस काम का ? हे पक्षिराज तब मैं प्रभु से बोला यदि आप मुझ पर प्रसन्न होकर वर देते है और मुझ पर कृपा और स्नेह करते है तो हे स्वामी मैं अपना मन आया वर मांगता हूँ, आप तो उदार है और सबके हृदय के भीतर की जाननेवाले हो। आपकी जिस अविरल प्रगाढ, एवं विशुद्ध अनन्य निष्काम भक्ति को श्रुति और पुराण गाते है जिसे योगीश्वर मुनि खोजते है और प्रभु की कृपा से कोई विरला ही जिसे पाता है। हे कल्पवृक्ष, शरणागत हितकारी, हे कृपा सागर सुख के धाम श्रीरामजी कृपा करके मुझे अपनी वही भक्ति दीजिये।

तब प्रभु बोले एवमस्तु, हे काक सुन तू स्वभाव से ही बुद्धिमान है। तूने सुखों की खान भक्ति मांग ली, जगत में तेरे समान अन्य कोई बडभागी नहीं है। वे मुनि जो जप और योग की अग्नि से शरीर जलाते रहते है, करोडो यत्न प्रयत्न करके भी वो मेरी भक्ति नहीं पाते वही भक्ति तूने मांगी। तेरी चतुरता देखकर मैं रीझ गया। यह चतुरता मुझे बहुत अच्छी लगी। हे काक मेरी कृपा से अब समस्त शुभ गुण तेरे हृदय में बसेंगे। भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य, योग, मेरी लीलायें और उनके रहस्य तथा विभाग इन सबके भेद को तू मेरी कृपा से जान जायेगा। तुझे साधन का कोई कष्ट नहीं होगा। माया से उत्पन्न सब भ्रम अब तुझे नहीं व्यापेंगे। मुझे अनादि, अजन्मा, अगुण और गुणातीत दिव्य गुणों की खान ब्रह्म जानना। हे काक सुन मुझे भक्त निरन्तर प्रिय है ऐसा विचार कर शरीर, वचन और मन से मेरे चरणों में अटल प्रेम करना। यह सारा संसार मेरी माया से उत्पन्न जान। इसमें अनेकों प्रकार के चराचर जीव है वे सभी मुझे प्रिय है क्योंकि सब मेरे द्वारा ही उत्पन्न किये हुये है उन सबमें मनुष्य मुझे सबसे अधिक अच्छे लगते है। उन मनुष्यों में भी ब्राह्मण तथा ब्राह्मणों में भी वेदपाठी और वेद के मार्ग पर चलनेवाले तथा उनमें से भी विरक्त वैराग्यवान मुझे प्रिय है। इन वैराग्य वानों फिर ज्ञानी और ज्ञानियों से अत्यन्त प्रिय मुझे विज्ञानी लगते है। इन विज्ञानियों से भी अत्यन्त प्रिय मेरा दास है जिसे मेरी ही गति और आश्रय है। मैं तुझे सत्य कहता हूँ कि मुझे अपने दास सेवक के समान अन्य कोई भी प्रिय नहीं है। भक्ति हीन चाहे ब्रह्मा ही क्यों न हो वह मुझे सब जीवों के समान ही लगता है परन्तु भक्तिवान अत्यन्त नीच प्राणी भी मुझे प्राणों के समान प्रिय है। पवित्र सुशील और सुन्दर बुद्धिवाला सेवक सबको प्यारा लगता है।

हे काक, एक पिता के बहुत से पुत्र पृथक-पृथक गुण, स्वभाव और आचरण वाले होते है। कोई पंडित होता है, कोई तपस्वी, कोई ज्ञानी, कोई धनी तो कोई शूरवीर, कोई दानी, कोई सर्वज्ञ, कोई धर्मपरायण होता है। पिता का प्रेम इन सभी पर समान होता है। परन्तु इनमें से यदि कोई मन, वचन और कर्म से पिता का भक्त होकर सेवा करता है और स्वप्न में भी कोई दूसरा धर्म नहीं जानता है वह पुत्र पिता को प्राणों के समान प्रिय होता है यद्यपि चाहे वह सब प्रकार से मूर्ख ही क्यों न हो। इसी प्रकार हे काक तिर्यक योनि पशु पक्षी देव, मनुष्य और असुरों सहित जितने भी जड चेतन जीव है उनसे यह संसार भरा हुआ है और यह सब मुझसे ही उत्पन्न है अत: सब पर मेरी समान कृपा है परन्तु इनमें से जो मद और माया से रहित मन, वचन और शरीर से मुझे जो भजता है वह चाहे कोई भी जीव हो कपट छोडकर सर्व भावसे मेरा भजन करता है वही मुझे परम प्रिय है। तब हे काक पक्षी मैं तुझे सत्य कहता हूँ पवित्र अनन्य एवं निष्काम सेवक मुझे प्राणों सम प्यारा है। ऐसा विचार कर सब आशा भरोसा त्यागकर मुझे भज। इससे तुझे काल कभी भी नहीं व्यापेगा। निरन्तर मेरा स्मरण भजन करते रहना। प्रभु के वचन सुनकर मैं तृप्त नहीं होता था। मेरा शरीर पुलकित हो रहा था और मैं हर्षित हो रहा था। वह सुख तो मन और कान ही जानते है। वाणी द्वारा उसका बखान नहीं किया जा सकता। प्रभु के स्वरूप की शोभा का सुख नेत्र ही जानते है पर नेत्र बखान नहीं कर सकते क्योंकि नेत्रों के वाणी नहीं होती। इस तरह मुझे सब कुछ समझाकर भक्ति का ज्ञान दान कर अवध राजमहल में बालकों से खेल करने लगे और माता की ओर देखकर बोले मुझे बहुत भूख लगी है। माता प्रभु श्रीराम की बाल लीला से उन्हें गोद में लेकर दूध पिलाने लगी और उन्हीं की ललित लीलाओं का गान करने लगी।

हे खगेश मैं और कुछ समय तक अवधपुरी में रहा और मैंने वहां पर प्रभु श्रीराम की रसीली मधुर बाललीलायें देखी। श्रीराम कृपा से भक्ति का वरदान पाकर प्रभु के चरणों की वन्दना कर मैं अपने आश्रम पर लौट आया। इस प्रकार प्रभु श्रीराम ने मुझे अपनाया तब से मुझे कभी उनकी माया नहीं व्यापी। हे पक्षीराज गरुड भगवान के भजन बिना क्लेश दूर नहीं होते। श्रीराम कृपा बिना श्रीरामजी की प्रभुता नहीं जानी जाती। प्रभुता जाने बिना श्रद्धा और विश्वास नहीं होता। विश्वास के बिना प्रीति नहीं होती। प्रीति बिना भक्ति दृढ़ नहीं होती जैसे चिकनाई पर जल नहीं ठहरता। गुरु के बिना और बैराग्य बिना कही ज्ञान नहीं हो सकता। वेद और पुराण सभी कहते हैं कि हरि भक्ति बिना सुख नहीं मिलता। स्वभाविक सन्तोष के बिना कोई शान्ति नहीं पा सकता चाहे करोडों उपाय करके देख ले। बिना पानी के कभी

नाव नहीं चल सकती। सन्तोष के बिना कामना का नाश नहीं होता। कामनाओं के रहते स्वप्न में भी सुख नहीं हो सकता। श्रीराम भजन बिना कामनाये नहीं मिटती। बिना जमीन के कही पेड उग सकता है ? विज्ञान तत्त्वज्ञान के बिना समभाव नहीं आ सकता। आकाश के बिना कोई अवकाश नहीं पा सकता। श्रद्धा के बिना धर्म का आचरण नहीं हो सकता। पृथ्वी तत्व के बिना कोई गन्ध नहीं पा सकता। तप के बिना तेज नहीं फैल सकता। जल तत्व के बिना संसार में रस नहीं मिल सकता। पंडित जनों की सेवा बिना शील सदाचार प्राप्त नहीं होता। बिना तेज अग्नितत्व के रूप प्राप्त नहीं हो सकता। आत्मानन्द के बिना मन स्थिर नहीं हो सकता। वायु तत्व के बिना स्पर्श सुखका अनुभव नहीं हो सकता। विश्वास के बिना कोई भी सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती। इसी प्रकार हरि भजन बिना जन्म मृत्यु के भय का नाश नहीं होता। बिना श्रद्धा के भक्ति नहीं होती और बिना भक्ति के प्रभु नहीं मिलते और बिना प्रभु कृपा जीव स्वप्न में भी शान्ति नहीं पा सकता। हे धीर, ऐसा विचार कर सम्पूर्ण कुतर्कों और सन्देहो को छोडकर करुणा की खान सुन्दर और सुख देनेवाले श्रीराम का भजन करो। हे पक्षिराज मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार प्रभु के प्रताप और महिमा का बखान किया है। यह सब प्रत्यक्ष देखी कही है। श्रीराम की महिमा, नाम रूप, और गुणों की कथा सभी अपार एवं अनन्त है। रघुनाथ जी स्वयं अनन्त है। मुनिगण सभी अपनी-अपनी बुद्धिनुसार हरि के गुण गाते है जिसका वेद, शेष शारदा शिव भी उनका पार नहीं पाते।

प्रभु श्रीराम का अनन्त कामदेवों के समान सुन्दर शरीर है वे अनन्त कोटि दुर्गाओं के समान शत्रुनाशक है। अनन्त इन्द्रों के समान उनका विलास ऐश्वर्य है। अनन्त आकाशों के समान उनमें अनन्त अवकाश स्थान है। पवन के समान अनन्त बल है और अरबों सूर्य के समान प्रकाश है। अनन्त चद्रमाओं के समान शीतल और संसार के समस्त भयों का नाश करनेवाले है। अरबों काल के समान वे अत्यन्त दुस्तर, दुर्गम और दुरन्त है। वे भगवान अरबों धूमकेतुओं पूच्छल तारों के समान अत्यन्त प्रबल है। अरबों पातालों के समान प्रभु अथाह है। अनन्त यमराजों के समान भयानक है। अनन्त कोटि तीर्थों के समान पवित्र करनेवाले है। उनका नाम सम्पूर्ण पाप समूह का नाश करनेवाला है। श्रीराम प्रभु करोडों हिमालयों के समान अचल स्थिर है और अरबों सागर के समान गहरे और गम्भीर है। प्रभु अरबों कामधेनुओं के समान सभी कामनाओं (इच्छित पदार्थ) के देनेवाले है। उनमें अनन्तकोटि शारदा सरस्वती के समान चतुरता है। अरबों ब्रह्मांडों की सृष्टि रचना करने की निपुणता है। वे अनन्त विष्णुओं के समान पालन करनेवाले और अरबों रुद्रों के समान संहार करनेवाले है। अरबों कुबेरों के समान धनवान और करोडों मायाओं के समान सृष्टि के खजाने है। बोझ उठाने में अरबों शेष शायी के समान है। प्रभु श्रीराम सभी बातों में सीमा रहित और उपमा रहित है। श्रीरामजी के समान श्रीराम ही है ऐसा वेद श्रुति कहते है। अरबों सूर्यों के समान कहने से भी सूर्य लघुता को ही प्राप्त होता है। इसी प्रकार अपनी-अपनी बुद्धि अनुसार मुनि लोग हरि का वर्णन करते हे लेकिन प्रभु तो भक्तों के भावमात्र को ग्रहण करनेवाले और अत्यन्त कृपालु है। प्रभु श्रीराम अपार गुणों के सागर है। सन्तों से जैसे मैंने सुना वो सब आपको सुनाया।

यह सुनकर गरुडजी का मन अत्यन्त प्रसन्न हो गया और श्रीरामजी का प्रताप हृदय में धारण किया। गुरु के बिना कोई भवसागर पार नहीं कर सकता चाहे वह ब्रह्मा और शंकर ही क्यों न हो। गरुडजी बोले हे तात मैं सन्देह से घिर गया था पर आपकी कृपा से मेरा मोह शोक और शंका सभी का नाश हो गया और मैंने प्रभु श्रीराम का अनुपम रहस्य जाना। अब हे भुशुण्डिजी मैं अपने अविवेक से आपसे पूछता हूँ अपना दास समझकर मुझे बताये आप तो सब कुछ जाननेवाले है तत्व के ज्ञाता है अन्धकार माया से परे है उत्तम बुद्धि से युक्त, सुशील, शुद्ध सरल आचरणवाले, ज्ञान, वैराग्य और विज्ञान के धाम और प्रभु श्रीराम के प्रिय दास है, आपने यह काक शरीर किस कारण पाया ? हे तात यह सुन्दर रामचरित्र आपने कहां पाया ? मैंने भगवान शिव से सुना था कि आप अजर अमर है, महाप्रलय में भी आपका नाश नहीं होता। हे काकजी नाग, मनुष्य, देवता आदि चर-अचर जीव तथा यह सारा जगत काल के अधीन है। असंख्य ब्रह्माण्डों का नाश करनेवाला यह काल सदा बडा ही अनिवार्य है फिर यह अत्यन्त भयंकर काल आपको किस भांति नहीं व्यापता ? इसका क्या कारण है ? यह ज्ञान का प्रभाव है या किसी योग का बल ? हे भुशुण्डिजी आपके आश्रम में आते ही मेरा मोह और भ्रम भाग गया इसका क्या कारण है ? हे मेरे नाथ यह सब मुझे सब समझाकर कहिये ?

भगवान शिव बोले हे भवानी गरुडजी की वाणी सुनकर काक भुशुण्डि हर्षित हुये और परम प्रेम से बोले- गुरुजी आपकी बुद्धि धन्य है। आपके प्रेम युक्त सुन्दर प्रश्न सुनकर मुझे अपने बहुत से जन्मों की याद आ गयी। मैं आपको वह सब सुनाऊँगा जो आपने पूछा है। हे तात अनेक जप-तप यज्ञ शम मन को रोकना, दम, व्रत, दान, वैराग्य, विवेक, योग, विज्ञान आदि सबका फल श्रीराम चरणों में प्रेम होना है इसके

बिना कोई कल्याण नहीं पा सकता। मैंने इसी काक शरीर से प्रभु श्रीराम की भक्ति प्राप्त की है इसीसे इस देह पर मेरी ममता अधिक है। जिससे अपना कुछ स्वार्थ होता है उसपर सभी कोई प्रेम करते है। वेदों में भी कहा है और सज्जन पुरुष भी कहते है कि अपना परम हित जानकर अत्यन्त नीच से भी प्रीति करनी चाहिये। रेशम कीडे से उत्पन्न होता है और उससे सुन्दर रेशमी वस्त्र बनते है। इससे उस अपवित्र कीडे को अत्यन्त प्रेम से पालते है। जीव के लिये अच्छा स्वार्थ यही है कि मन, वचन और कर्म से श्रीराम चरणों में प्रेम हो। वही शरीर पावन और सुन्दर है जिस किसी शरीर से प्रभु श्रीराम का निर्मल यश गाया जाय या भजन किया जाय। श्रीराम से विमुख हो और यदि वह ब्रह्मा के समान शरीर पा जाये तो भी कवि और ज्ञानी जन उसकी प्रशंसा नहीं करते। मेरे काक शरीर से ही मेरे हृदय में राम भक्ति उत्पन्न हुई इसीलिये यह मुझे परम प्रिय है। मेरा मरण मेरी अपनी इच्छा पर है परन्तु फिर भी मैं इस शरीर का त्याग नहीं करता क्योंकि वेद कहते है शरीर के बिना भजन नहीं होता। पहले मोह ने मेरी बडी दुर्दशा की है। श्रीरामजी से विमुख होकर मैं कभी सुख से नहीं सोया। अनेकों जन्मों में मैंने अनेको प्रकार के योग, जप, तप, यज्ञ और दान आदि कर्म किये है। हे गरुडजी जगत में ऐसी कौनसी योनि है जिसमें मैंने बार-बार घूम-फिर कर जन्म नहीं लिया हो ? मैंने सब भांति सब प्रकार के कर्म करके देख लिये पर अब इस जन्म की भांति मैं कभी सुखी नहीं हुआ। हे नाथ मुझे अपने बहुत से जन्मों की स्मृति बनी हुई है। शिव कृपा से मुझे मेरी बुद्धि को मोह ने नहीं घेरा है।

अब मैं अपने प्रथम जन्म के चरित्र के बारे में सुनाता हूँ जिसे सुनकर प्रभु चरणों में प्रीति उत्पन्न होती है और सब क्लेश मिट जाते है। पूर्व के एक कल्प में पापों का मूल कलियुग चल रहा था जिसमें सभी नर नारी अधर्म परायण और वेद विरोधी थे। उस कलियुग में अयोध्या में एक शूद्र के घर जाकर मैं जन्मा। मैं उस समय मन वचन और कर्म से शिवजी का सेवक था पर दूसरे देवताओं से द्रोह रखने वाला, निन्दा करनेवाला अभिमानी था। मैं धन के मद से मतवाला बहुत ही बकवादी और उग्रबुद्धिवाला था। मेरे हृदय में बडा भारी दम्भ था। यद्यपि मैं अवधपुरी में रहता था तो भी मुझे उस पुरी की महिमा का कोई ज्ञान नहीं था। अब जाकर मैंने उस पुरी का प्रभाव वेद शास्त्र और पुराणों ने सभी ने गाया है कि किसी भी जन्म में जो कोई भी अयोध्या में बस जाता है वह अवश्य ही प्रभु श्रीराम के परायण हो जायेगा। अवध का प्रभाव जीव तभी जानता है जब प्रभु श्रीराम उसके हृदय में निवास करते है।

कलियुग धर्म- हे गरुडजी वह कलिकाल बडा ही कठिन था जिसमें सभी नर नारी पाप परायण थे। कलियुग के पापों ने सब धर्मों को ग्रस लिया, सद्ग्रन्थ लुप्त हो गये, दम्भियों ने अपनी बुद्धि अनुसार कल्पना करके बहुत से पंथ प्रकट कर दिये। सभी लोग मोह वश हो गये। शुभ कर्मों को लोभ ने हडप लिया। मैं आपको कलिकाल के कुछ धर्मों का वर्णन कर उसका प्रभाव बताता हूँ।

कलियुग में कभी न वर्ण धर्म रहता है और न ही चारों आश्रम रहते है। सब स्त्री-पुरुष वेद विरोधी होते है। ब्राह्मण वेदों का विक्रय करते है और राजा प्रजा को निगलने वाला होता है। वेद की आज्ञा का कोई पालन नहीं करता। जिसको जो अच्छा लग जाय वही उसके लिये मार्ग है। डींग मारना ही विद्वता है, मिथ्या आडम्बर करता है और व्यक्ति दम्भ में रत रहता है उसी को लोग सन्त कहते है। किसी भी प्रकार से दूसरे का धन हरण कर ले वही बुद्धिमान है। जो दम्भ करता है वही बडा आचारी है। जो झूठ बोलता है और हंसी दिल्लगी करना जानता है वही कलियुग में बडा गुणवान कहा जाता है। जो आचार हीन है और वेद मार्ग छोड दिया है वही कलियुग में ज्ञानी और वही वैराग्यवान है। जिसके बडे-बडे नख और लम्बी-लम्बी जटाये है वही कलिकाल में प्रसिद्ध तपस्वी है। जो अमंगल और अशुभ वेष, भूषण धारण करते है और भक्ष्य अभक्ष्य सब कुछ आहार कर लेते है वे ही योगी पुरुष है, वे ही सिद्ध है और ऐसे ही वे लोग कलियुग में पूज्य है। जिनके आचरण दूसरोंका अपकार, अहित करनेवाले है उन्ही का बडा गौरव है और वे ही सम्मान पाने योग्य है। जो मन वचन कर्म से झूठ बोलने वाले है वे ही कलियुग में श्रेष्ठ वक्ता माने जाते है सभी मनुष्य स्त्रियों के वश में रहते है और बाजीगर के बन्दर की तरह स्त्री के नचाये नाचते है। ब्राह्मणों को शूद्र ज्ञानोपदेश करते है और गले में यज्ञोपवीत पहन कर कुत्सित कर्म करते है और दान लेते है। सभी पुरुष काम और लोभ में तत्पर और क्रोधी होते है, देवता, ब्राह्मण वेद और सन्त विरोधी होते है। कोई आचार नहीं होता। स्त्रियां गुण धाम अपने पति को छोडकर परपुरुष, जार पुरुष का सेवन करती है। सुहागिन स्त्रियां आभूषणों व सौभाग्य मंगल चिन्हों रहित रहती है। विधवायें नित नये श्रृंगार करती है। शिष्य और गुरु में बहरे और अन्धे का सा हिसाब रहता है। शिष्य गुरु के उपदेश को सुनता नहीं और गुरु के पास ज्ञान दृष्टि नहीं इसलिये वह शिष्य को देखता नहीं। गुरु शिष्य का धन हरण करने में लगा है पर शोक हरण नहीं करता ऐसा गुरु घोर नरक में भी जाने के लिये तैयार हो। माता-पिता भी अपने बालकों को वही धर्म सिखलाते है जिससे पेट भरे। स्त्री पुरुष

ब्रह्मज्ञान के सिवा दूसरी बात नहीं कहते पर वे लोभवश कौडियों थोडे लाभ के लिये ब्राह्मण और गुरु तक की हत्या कर देते है। शूद्र ब्राह्मणों से विवाद करते है और प्राडविक (वकील) होते है और कहते है हम क्या तुमसे कम है ? जो ब्रह्म को जानता है वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है ऐसा कह कर वे ब्राह्मणों को डांट देते है और आंखे दिखलाते है। जो परायी स्त्री में आसक्त, कपटी और मोह द्रोह और ममता में पारंगत है वे ही मनुष्य ब्रह्म और जीव को एक बतानेवाले अभेदी है। यह सब उस कलिकाल के चरित्र है जो मैंने देखा। वे स्वयं तो नष्ट होते ही है पर जो कोई सन्मार्ग पर चल रहा है उसे भी नष्ट कर देते है। जो तर्क करके बेद की निन्दा करते है वे लोग कल्प-कल्प भर नरक में वास करते है। तेली, कुम्हार, चांडाल, भील, कोल और कलवार आदि जो नीच वर्ण में है वो स्त्री के मर जाने पर, घर की सम्पत्ति नष्ट हो जानेपर सिर मुंडा कर सन्यासी हो जाते है और अपने आपको ब्राह्मणों से पुजवाते है इससे अपने ही हाथों से अपने दोनों लोक नष्ट कर देते है। ब्राह्मण, लोभी, कामी, आचारहीन, मूर्ख और नीची जाति की व्यभिचारिणी स्त्रियों के स्वामी होते है। शूद्र नाना प्रकार के जप, तप और व्रत में रत रहते है तथा ऊँचे आसन पर बैठकर पुराण कहते है। सब मनुष्य मनमाना आचरण करते है। अपार अनीति का वर्णन नहीं किया जा सकता। कलियुग में सब लोग वर्ण संकर और मर्यादा से च्युत हो गये। वे पाप करते है और उनके फलस्वरूप दु:ख, भय, रोग, शोक और प्रिय वस्तु का वियोग पाते है। वेद सम्मत तथा वैराग्य और ज्ञान से युक्त जो हरिभक्ति का मार्ग है, मोहवश मनुष्य उस पर नहीं चलता है और अनेकों नये-नये पन्थों की कल्पना करता है। सन्यासी बहुत धन लगाकर घर बनाते हे। उनमें वैराग्य तो रहता नहीं, उसे विषयों ने घेर लिया है। तपस्वी धनवान हो गये और गृहस्थ दरिद्र। हे तात कलियुग की लीला कुछ कहने में नहीं आती। कुलवती और पतिव्रता सती स्त्री को पुरुष घर से निकाल देते है और अच्छी चाल को छोडकर घर की दासी को घर में रख लेते है।

पुत्र अपने माता-पिता को तभी तक मानते है जब तक स्त्री का मुंह नही देख लेते। ससुराल प्यारी लगने लगती है। घर कुटुम्ब शत्रुरूप हो जाते है। साली घरवाली से भी प्रिय लगने लगती है। राजा लोग पाप परायण हो गये उनमें धर्म का लेश मात्र भी नहीं रहा। वे प्रजा को नित्य ही बिना अपराध दंड देकर उसकी विडम्बना करते है। धनी लोग मलिन नीच जाति के होने पर भी कुलीन माने जाते है। ब्राह्मणों का चिन्ह जनेऊ मात्र रह गया और तपस्वी का चिन्ह नंगे बदन रहने का। जो वेदों और पुराणों को नही मानते वे ही कलियुग में हरिभक्त और सच्चे सन्त कहलाते है। कवि लोग तो झुंड के झुंड हो गये पर दुनिया में कोई उदार उनका आश्रयदाता नहीं रहा। गुणों में दोष निकालने वाले बहुत है पर गुणी कोई नहीं है कलियुग में बार-बार दुर्भिक्ष और अकाल पडते है। अन्न के बिना सब लोग दु:खी होकर मरते है। हे पक्षिराज कलियुग में कपट, हठ, दुराग्रह, दम्भ, द्वेष, पाखंड, मान, मोह और काम क्रोध लोभ आदि और मद प्रबल हो ब्रह्माण्ड वर में व्याप्त होंगे। मनुष्य जप तप यज्ञ व्रत और दान आदि धर्म तामसी भाव से कररुगे, आचार हीन होंगे। देवता इन्द्र पृथ्वी पर वर्षा नहीं करेंगे मेघ जल नही बरसायेंगे और बोया हुआ अन्न पर्याप्त मात्रा में नही उगेगा। कृषि टिड्डी दल द्वारा, कृत्रिम इत्यादि से नष्ट प्राय हो जायेगी। स्त्रियों के बाल की साज सज्जा ही आभूषण होंगे और उनकी भूख भी बहुत बढ़ जायेगी अर्थात वे सदा अतृप्त ही रहेगी। वे धनहीन और बहुत प्रकार की ममताओं में आसक्त रहने के कारण सदा दु:खी ही रहेगी। वे मूर्ख सुख चाहती है पर धर्म में उनका प्रेम नहीं होगा। वे बुद्धि में थोडी है पर कठोर होगी हृदय में कोमलता का वास नहीं होगा।

मनुष्य असंख्य रोगों से पीडित होंगे जिससे भोग और सुख नहीं प्राप्त होगा। बिना कारण ही अभिमान और विरोध करते रहेंगे। अपने इस थोडे से अल्पआयु के जीवन को न जानकर ऐसा अहंकार करेंगे कि मानो कल्पान्त तक उनके इस जीवन का नाश नहीं होगा। कलिकाल ने मनुष्य को बेहाल कर डाला है। कोई बहिन बेटी का भी विचार नहीं करेगा। पिता ही पुत्री के धन का रखवाला बन उसी का धन हडप जायेगा। लोगों में न सन्तोष है, न विवेक ही और न शीतलता। सभी जीव उद्वीग्न होंगे। सुख शान्ति नहीं पायेंगे। शालीनता दिखाने भर मात्र की होगी पर कपट भरी होगी। जाति कुजाति सभी लोग भीख मांगनेवाले हो गये। चन्दा दान परोपकार के लिये इकट्ठा कर स्वयं अपने भोगों में व्यय करेंगे। ईर्ष्या डाह, कडवे वचन और लालच भरपूर होंगे। समता नहीं टिकेगी और चली गयी। सब लोग वियोग और विशेष शोक से पूरित होंगे। वर्णाश्रम धर्म के सब आचार-आचरण नष्ट होंगे। इन्द्रिय, दमन, दान, दया और समझदारी सब चली जायेगी। मूर्खता और दूसरों को बेवकूफ बनाना, ठगना यही सब प्रधान होंगे वही बुद्धिमान और चतुर कहलायेगा। स्त्री-पुरुष सभी शरीर के पालन पोषण में लगे होंगे। परायी निन्दा में ही सुख मानेंगे। ऐसे-ऐसे व्यक्ति इस जगत में फैले है। हे तात यह कलिकाल घोर पाप और अवगुणों का घर है किन्तु कलियुग में एक बडा गुण है कि उसमें बिना किसी यत्न और परिश्रम के ही भवबन्धन से छुटकारा

मिल जाता है। सतयुग, त्रेता और द्वापर में तो यह गति पूजा, जप, यज्ञ और योग से प्राप्त होती है वही गति कलियुग के जीवों को केवल भगवान भक्ति, भजन करने से प्राप्त हो जायेगी।

सतयुग में सब योगी और विज्ञानी होते है। हरि का स्मरण कर ध्यान कर सब प्राणी भवसागर से पार होते है। त्रेता में मनुष्य अनेक प्रकार के यज्ञ करते है और अपने किये हुये सब कर्मों को प्रभु अर्पण कर भवसागर से तर जाते है। द्वापर में श्रीहरि की पूजा, उपासना, आराधना कर मनुष्य संसार से तर जाता है इसके अलावा दूसरा कोई उपाय नहीं है पर कलियुग में तो केवल हरिनाम की गुणगाथाओं का गान करने सुनने से ही मनुष्य भव सागर को पार कर लेगा। कलियुग में न तो योग और यज्ञ है और न ही कोई ज्ञान है। न कोई तन्त्र विद्या और मन्त्र विद्या ही सिद्ध है। श्रीराम का गुण गान ही एक मात्र आधार है। अतएवं ऐसे सारे भरोसे को त्यागकर श्रीराम को प्रेमसहित उसके गुणों को गाकर भजे तो ऐसे ही लोग भवसागर से पार जायेंगे यह नि:सन्देह है। नाम का प्रताप कलियुग में प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। कलियुग का एक और पवित्र प्रताप महिमा है कि उसमें मानसिक पुण्य तो होते है पर उसमें मानसिक पाप नहीं होते। पाप तो सिर्फ पाप कर्म करने से ही होते है। यदि मनुष्य विश्वास करे तो कलियुग के समान दूसरा कोई युग नहीं क्योंकि इस युग में श्रीराम के निर्मल गुणों को गा-गाकर मनुष्य बिना श्रम संसार से पार लग जाता है। धर्म के चार चरण सत्य, दया, तप और दान प्रसिद्ध है जिनमें से कलि में दान रूपी चरण ही प्रधान है। जिस किसी भी प्रकार से जीव दान कर सके तो दान ही उसका कल्याण करता है।

प्रभु श्रीराम की माया से प्रेरित होकर सबके हृदयों में सभी युगों के धर्म नित्य होते रहते है। शुद्ध सत्वगुण, समता, विज्ञान और मन का प्रसन्न होना इसे सतयुग का प्रभाव जानना चाहिये। सत्व गुण अधिक हो, कुछ रजोगुण हो कर्मों में प्रीति हो, सब प्रकार से सुख प्राप्त हो वह त्रेता युग का धर्म है। रजो गुण बहुत हो, सत्वगुण थोडा हो तथा थोडा तमोगुण हो मन में हर्ष और भय व्यापता हो यह सब द्वापर युग का धर्म है। तमोगुण बहुत अधिक और प्रबल हो, रजोगुण थोडा हो, चारों ओर वैर विरोध, ईर्ष्या, डाह हो तो यह कलियुग का धर्म जानना चाहिये। पंडित लोग युगों के धर्म को जान अधर्म को छोड धर्म में प्रीति करते है। जिनको प्रभु श्रीराम के चरणों में प्रीति है उनको काल धर्म युग धर्म नहीं व्यापते। नट बाजीगर का किया हुआ कपट चरित्र देखनेवालों के लिये बडा ही विकट दुर्गम होता है पर अभिनय करनेवाले उस जम्भूरे को उसकी माया नहीं व्यापती। हरि की माया के द्वारा रचे हुये दोष और गुण हरि भजन बिना नहीं जाने जाते। इसलिये मन से सब कामनाओं को छोडकर प्रभु श्रीराम का भजन करे।

हे पक्षीराज उस कलिकाल में मैं बहुत वर्षोंतक अयोध्या में रहा। एक बार वहां पर संजोग वश अकाल पड गया तब विपत्ति का मारा रोजी रोटी की तलाश में मैं अयोध्या छोड़कर दूसरे देश में आ गया। मैं दीन, मलिन, उदास, दरिद्र, दु:खी होकर उज्जैन महाकालेश्वर की पुरी में आ गया। कुछ काल बीतने पर कुछ सम्पत्ति पाकर फिर मैं वहां भगवान आशुतोष महादेव की आराधना करने लगा। वहां पर एक ब्राह्मण वेद विधि से सदा शिव का पूजन करते उन्हे दूसरा कोई काम नहीं था। वे परम साधु और परमार्थ के ज्ञाता थे, वे शिव के उपासक थे और हरि के चरणों में भी उनकी प्रीति थी। वे हरि के निन्दक नहीं थे। मैं कपटपूर्वक़ उनकी सेवा करता रहा। वे ब्राह्मण बडे ही दयालु और नीति के घर थे। हे स्वामी बाहर से नम्र देखकर वे मुझे पुत्र की भांति मानकर पढाते थे। उन ब्राह्मण ने मुझे शिव मन्त्र दिया और अनेकों प्रकार से उपदेश किये। मैं शिव के मन्दिर में जाकर मन्त्र जपता। मेरे हृदय में दम्भ और अहंकार बढ़ गया। मैं दुष्ट नीच जाति और पापमयी मलिन बुद्धिवाला मोहवश श्री हरि भक्तों और द्विजों को देखते ही जल उठता और भगवान विष्णु से द्रोह करता था। गुरुजी मेरा आचरण देखकर दु:खित थे। वे मुझे नित्य ही भली भांति समझाते थे। मुझे अत्यन्त क्रोध उत्पन्न होता। दम्भी को कभी नीति अच्छी नहीं लगती। एक बार गुरुजी ने मुझे बुला लिया और बहुत प्रकार से परमार्थ की नीति की शिक्षा दी कि हे पुत्र शिवजी की सेवा का फल यही है कि श्रीराम के चरणों में प्रगाढ़ भक्ति हो। हे तात शिवजी और ब्रह्माजी भी श्रीराम को भजते है। नीच मनुष्य की बात ही क्या है ब्रह्माजी और शिवजी भी प्रभु श्रीराम के चरणों के प्रेमी है। अरे अभागे तू उनसे द्रोह करके अपना सुख चाहताहै ?

गुरुजी ने शिवजी को हरि का सेवक कहा यह सुनकर हे पक्षिराज मेरा हृदय जल उठा। नीच जाति का मैं विद्या पाकर ऐसा हो गया जैसे दूध पिलाने से सांप अभिमानी, कुटिल, दुर्भाग्य और कुजाति में दिन रात गुरुजी से द्रोह करता। गुरुजी अत्यन्त दयालु थे उनको थोडा सा भी क्रोध नहीं आता। मेरे द्रोह करने पर भी वे बार-बार मुझे उत्तम ज्ञान की शिक्षा देते थे। नीच मनुष्य जिससे बडाई पाता है वह सबसे पहले उसी को मार कर उसी का नाश करता है। आग से उत्पन्न हुआ उसी अग्नि को बुझा देता है। धूल निरादर से रास्ते में

पडी रहती है और सदा राह चलनेवालों के लातों की मार सहती है। पर जब पवन उसे उडाता है तो सबसे पहले पवन में ही भर जाती है और फिर सबके नेत्रों और सिर पर पडती है। हे पक्षिराज ऐसी बात समझकर बुद्धिमान लोग अधम का संग नहीं करते। कवि और विद्वान कहते है कि दुष्ट से न तो प्रेम करना ही अच्छा है और न ही कलह। उससे तो सदा उदासीन ही रहना चाहिये। दुष्ट को कुत्ते की तरह दूर से ही त्याग देना चाहिये। मैं दुष्ट था, हृदय में कपट और कुटिलता भरी थी इसलिये गुरुजी की हित की बात भी मुझे नहीं सुहाती थी। एक दिन मैं शिवालय में शिवनाम का जप कर रहा था उसी समय गुरुजी वहां पर आये पर अभिमान वश मैंने उठकर उनको प्रणाम नहीं किया। गुरुजी दयालु थे, मेरा दोष देखकर भी उन्होंने कुछ नहीं कहा। उनके हृदय में लेश मात्र भी क्रोध नहीं हुआ। पर गुरु का अपमान बहुत बडा पाप है अत: भगवान शंकर उसे सहन नहीं कर सके। उसी समय मन्दिर में आकाशवाणी हुई अरे अधम मूर्ख अभिमानी। यद्यपि तेरे गुरु को क्रोध नहीं है वे अत्यन्त कृपालु चित्त के है और उन्हे पूर्ण तथा यथार्थ ज्ञान है तो भी हे मूर्ख मैं तुझे शाप देता हूँ क्योंकि नीति का विरोध मुझे अच्छा नहीं लगता। अरे दुष्ट यदि मैं तुझे दंड न दूँ तो मेरा वेद मार्ग ही भ्रष्ट हो जायेगा। जो मूर्ख गुरु से ईर्ष्या करते है वे करोडों युगों तक नरकों में पडे रहते है। फिर वहां से वे निकल कर तिर्यक योनि पशुपक्षियों आदि योनियों में शरीर धारण करते है और अनके जन्मों तक दु:ख भोगते है। अरे पापी तू गुरु के सामने अजगर की भांति बैठा रहा रे दुष्ट तेरी बुद्धि पाप से ढक गई है अत: जा तू सर्प हो जा और अरे अधम से भी अधम इस अधोगति सर्प की नीच योनि को पाकर किसी बडे भारी पेड के खोखले में जाकर रह। शिवजी का भयानक शाप सुनकर गुरुजी ने चीत्कार किया। मुझे कांपता हुआ देखकर उनके हृदय में बडा सन्ताप हुआ। प्रेम सहित दंडवत करके वे ब्राह्मण भगवान शंकर के सामने हाथ जोड कर मेरी भयंकर गति दण्ड का विचार कर गदगद वाणी से विनती करने लगे। हे शिवजी में आपको नमस्कार करता हूँ। सर्वज्ञ शिव ने ब्राह्मण की स्तुति और विनती सुनी तथा ब्राह्मण का प्रेम देखा तब मन्दिर में आकाशवाणी हुई कि हे द्विज श्रेष्ठ प्रसन्न होकर वर मांगो। तब ब्राह्मण मेरे गुरु ने कहा हे प्रभो यदि आप मुझपर प्रसन्न है तो हे नाथ यदि इस दीनपर आपका स्नेह है तो पहले मुझे अपने चरणों की भक्ति दे। हे प्रभो यह अज्ञानी जीव आपकी माया के वश होकर निरन्तर भूला फिरता है। हे कृपा सागर उसपर क्रोध न करे। हे दीनदयाल इस पर कृपालु होईये और थोडे समय पश्चात आपके श्राप से यह मुक्त हो जाये। हे कृपानिधान अब वही कीजिये जिससे इसका परम कल्याण हो जाये। उस ब्राह्मण की वाणी जो दूसरे के हित के लिये कही गई थी सुनकर फिर आकाशवाणी हुई एवमस्तु ऐसा ही होगा। यद्यपि इसने भयानक पाप कर्म किया है और मैंने भी इसे क्रोध करके शाप दिया है तो भी तुम्हारी साधुता देखकर मैं इसपर विशेष कृपा करूँगा। हे द्विज जो क्षमाशील और परोपकारी होते है वे मुझे वैसे ही प्रिय है जैसे खरारि श्रीराम। हे द्विज मेरा शाप तो व्यर्थ नहीं जायेगा। यह हजार जन्म अवश्य पावेगा। परन्तु जन्म और मरने में जो दु:सह दु:ख होता है इसको वह दु:ख जरा भी नहीं व्यापेगा और किसी भी जन्म में इसका ज्ञान नहीं मिटेगा। हे शूद्र मेरा प्रामाणिक सत्य वचन सुन। प्रथम तो तेरा जन्म अयोध्या में हुआ है। फिर तूने मेरी सेवा में मन लगाया। इसके प्रभाव से और मेरी कृपा से तेरे हृदय में राम भक्ति उत्पन्न होगी। द्विजों की सेवा ही भगवान को प्रसन्न करनेवाला व्रत है। अब कभी भी ब्राह्मण का अपमान मत करना। सन्तों को सदा भगवान के ही समान जानना। इन्द्र के वज्र, मेरे त्रिशूल, यम के दंड और श्रीहरि के विकराल चक्र से भी जो नहीं मरता वह विप्र द्रोह रूपी अग्नि में भस्म हो जाता है। ऐसा विवेक मन में रखना। फिर तुम्हारे लिये जगत में कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा। मेरा एक और भी आशीर्वाद है कि तुम्हारी सर्वत्र अबाध गति होगी। आकाशवाणी सुनकर शिवजी के वचन धारण कर गुरु हर्षित होकर ऐसा ही होकर मुझे सब भांति समझा कर और शिव के चरणों को हृदय में रखकर अपने घर गये।

काल की प्रेरणा से मैं विन्ध्याचल में जाकर सर्प हुआ। फिर कुछ काल बीत जानेपर बिना परिश्रम ही कष्ट के बिना मैंने वह शरीर त्याग दिया। मैं जो-जो भी शरीर धारण करता उसे बिना परिश्रम ही वैसे ही सुखपूर्वक त्याग देता था, जैसे मनुष्य पुराना वस्त्र त्याग देता है और नया वस्त्र धारण कर लेता है। शिवजी ने वेद की मर्यादा की रक्षा की और मैंने क्लेश भी नहीं पाया। इस प्रकार हे पक्षिराज मैंने बहुत से शरीर धारण किये पर मेरा ज्ञान नहीं गया।

तिर्यक योनि पशु-पक्षी, देवता या मनुष्य का जो भी शरीर धारण करता, वहां-वहां उस उस शरीर में मैं श्रीराम का भजन जारी रखता। इस प्रकार मैं सुखी हो गया परन्तु एक शूल सदा मुझे बना रहा। गुरुजी का कोमल, सुशील स्वभाव कभी नहीं भूलता। मैंने अन्तिम शरीर ब्राह्मण का पाया जिसे पुराण और वेद देवताओं को भी दुर्लभ बताते है। मैं वहां ब्राह्मण शरीर से भी बालकों से मिलकर खेलता तो प्रभु

श्रीराम की ही सब लीलाये किया करता। समझदार सयाना होने पर मेरे पिताजी मुझे पढ़ाने लगे। मैं सब कुछ समझता था, सुनता था और विचारता था पर मुझे पाढ़ना अच्छा नहीं लगता था। मेरे मन से सारी वासनायें भाग गई केवल श्रीराम के चरणों में लौ लग गई। ऐसा कौन अभागा होगा जो कामधेनु को छोडकर गर्दभी की सेवा करेगा। प्रेम में मग्न रहने के कारण मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। पिताजी मुझे पढ़ा-पढ़ा कर हार गये। जब माता-पिता कालवश परलोक सिधार गये तब मैं भक्तों की रक्षा करनेवाले प्रभु श्रीराम का भजन करने के लिये वन में चला गया। वन में जहां-जहां मुनीश्वरों के आश्रय पाता वहां-वहां जाकर उन्हें सिर नवाता। उन मुनियों से मैं श्रीराम जी के गुणों की कथाओं के बारे में पूछता और वे सुनाते, मैं हष्ति होकर सुनता। इस भांति मैं सदा हरि के गुणानुवाद सुनता फिरता। शिवजी की कृपा से मेरी अबाध गति थी। मेरी सभी प्रकार की गहरी प्रबल वासनाये सुतदारा धन धान्य और मान की छूट गयी। हृदय में एक यही लालसा गहरी हो गई कि कब प्रभु श्रीराम के चरण कमल का दर्शन करूं और कब अपना जीवन सफल करूं। जिस किसी से भी मैं पूछता वे मुनि लोग ऐसा ही कहते कि ईश्वर तो सर्व भूतमय है। यह निर्गुण मत मुझे अच्छा नहीं लगता था। हृदय में सगुण ब्रह्म पर प्रीति बढ़ रही थी। गुरु के वचनों का स्मरण कर मेरा मन श्रीराम चरणों में लग गया। मैं क्षण-क्षण नया प्रेम प्राप्त करता हुआ प्रभु श्रीराम का यश गाता फिरता था।

एक समय की बात है सुमेरु पर्वत के शिखर पर एक वट वृक्ष की छाया में परम महर्षि लोमश बैठे थे। मैं उनके पास गया और जाकर उनके चरणों में सिर नवाया और अत्यन्त दीन वचन कहे। मेरे वचन सुनकर कृपालु मुनि ने मुझे पूछा हे ब्राह्मण आप कौन है और किस कार्य से यहां आये है। तब मैंने कहा हे कृपानिधि आप सर्वज्ञ है और सुजान है। हे भगवान मुझे सगुण ब्रह्म की आराधना के बारे में बताये और मैंने अपना परिचय दिया। तब हे पक्षिराज उन मुनीश्वर ने मुझे श्रीराम जी के गुणों की कुछ कथायें आदर सहित सुनायी फिर वे ब्रह्मज्ञानी विज्ञानी मुनि मुझे परम अधिकारी जानकर मुझे ब्रह्म उपदेश करने लगे कि वह अजन्मा, अद्वैत है, निर्गुण है और हृदय का स्वामी अन्तर्यामी है। उसे कोई बुद्धि के द्वारा नहीं जान सकता। वह इच्छा रहित, नाम रहित, रूप रहित, अनुभव से जानने योग्य, अखंड और उपमा रहित है। वह मन और इन्द्रियों से परे, निर्मल, विनाश रहित (अविनाशी) निर्विकार, सीमातीत और सुख की राशि है। वेद और श्रुति ऐसा कहते है कि वही तू (त्वमसि) है। जल और जल की लहर की भांति उसमें और तुझ में कोई अन्तर नहीं है। मुनि ने मुझे अनेक प्रकार से समझाया पर निर्गुण मन मेरे हृदय में नहीं बैठा। मैंने फिर मुनि के चरणों में सिर नवाकर कहा हे मुनि मुझे निर्गुण की नहीं सगुण ब्रह्म की उपासना कहे। मेरा मन रामभक्ति में बिना पानी के जैसे मछली तडफती है वैसा हो रहा है। हे चतुर शिरोमणि मुनीश्वर ऐसी दशा में आप मुझपर दया करके वही उपदेश कहिये जिससे मैं प्रभु श्रीराम को अपनी आंखों से देख सकूं। पहले मैं कौशलपति अवधेश श्रीराम को देखूंगा फिर निर्गुण का उपदेश सुनूंगा। फिर भी मुनि ने अनुपम हरि कथा कहकर सगुण मत का खंडन कर निर्गुण का निरूपण किया। तब मैं निर्गुण मत का खंडहर कर सगुण का निरूपण करने लगा। मेरे उत्तर-प्रत्युत्तर करने से मुनि के शरीर में क्रोध के चिन्ह उत्पन्न हो गये। बहुत अपमान करने पर तो ज्ञानी के हृदय में भी क्रोध उत्पन्न हो जाता है। यदि कोई चन्दन की लकडी को बहुत अधिक रगडे तो उससे भी अग्नि प्रकट हो जाती है।

मुनि क्रोधित होकर बार-बार ज्ञान का निरूपण करने लगे तब मैं बैठा-बैठा मन में अनेक प्रकार के अनुमान करने लगा। बिना द्वैत बुद्धि के क्रोध कैसा और बिना अज्ञान के क्या द्वैत बुद्धि ? माया के वश रहनेवाला जडजीव क्या कभी ईश्वर के समान हो सकता है ? सबका हित चाहने से क्या कभी दु:ख हो सकता है ? जिसके पास पारसमणि हो वह क्या दरिद्र रह सकता है ? दूसरे से द्रोह करनेवाला क्या निर्भय रह सकता है? और कामी क्या कभी कलंक रहित बेदाग रह सकता है ? ब्राह्मण का बुरा करने से क्या वंश सुरक्षित रह सकता है ? अपना स्वरूप आत्मज्ञान हो जानेपर क्या कर्म हो सकते है ? दुष्टों के संग से क्या किसी को सुबुद्धि उत्पन्न हुई है ? पर स्त्री गामी क्या उत्तम गति पा सकता है ? परमात्मा को जाननेवाले क्या जन्म-मरण के चक्कर में पड सकते है ? भगवान की निन्दा करनेवाले कभी सुखी हो सकते है ? नीति बिना जाने क्या राज्य रह सकता है ? हरि के चरित्र वर्णन करने पर क्या पाप रह सकता है ? बिना पुण्य के क्या पवित्र यश प्राप्त हो सकता है ? बिना पाप किये कोई अपयश पा सकता है ? जिसकी महिमा, वेद सन्त और पुराण गाते है उस हरि भक्ति के समान क्या कोई दूसरा लाभ है ? जगत में इसके समान दूसरी कोई हानि है क्या कि मनुष्य शरीर पाकर भी प्रभु श्रीराम का भजन नहीं करे ? चुगलखोरी के समान क्या कोई दूसरा पाप है ? दया के समान क्या कोई दूसरा धर्म है ? इस प्रकार मैं अनेक युक्तियां

विचारता और आदर के साथ मुनि का उपदेश नहीं सुनता था। जब मैंने बार-बार मुनि से अपना सगुण का पक्ष स्थापित किया तब मुनि क्रोधित होकर बोले अरे मूढ़ मैं तो तुझे सर्वोत्तम शिक्षा दे रहा हूँ तो भी तू उसे ग्रहण नहीं कर रहा है और बहुत से उत्तर-प्रत्युत्तर तर्क, दलीले दे रहा है। मेरे सत्य वचन पर विश्वास नहीं करता है कौवे की भांति डरपोक कांव कांव करता है। तेरे हृदय में अपने पक्ष का बडा भारी हठ है अत: तू मेरी बात नहीं समझेगा जा चांडाल पक्षी कौआ हो जा। मैंने आनन्द से आदरपूर्वक मुनि के शाप को सिरपर ग्रहण किया उससे मुझे न तो कुछ भय हुआ और न ही कोई दीनता आई। तब मैं तुरन्त कौआ काक शरीर हो गया और मुनि के चरणों में शीश नवाकर प्रभु श्रीराम का स्मरण कर हर्षित होकर उड चला।

शिव कहते हैं हे भवानी श्रीराम चरणों के जो प्रेमी है और काम अभिमान से क्रोध से रहित है वे जगत को प्रभु से भरा हुआ ही देखते है फिर वे किससे बैर करेंगे ? हे पक्षिराज गरुडजी इसमें मुनिश्वर लोमश का कुछ भी दोष नहीं था। रघुवंश शिरोमणि प्रभु श्रीराम ही सबके हृदय में प्रेरणा देते है उन्होंने ही मेरे प्रेम की परीक्षा ली। मन वचन और कर्म से प्रभु ने मुझे अपना दास जान लिया तब उन्ही मुनि ने मेरा महान पुरुषों का सा स्वभाव, धैर्य, अक्रोध विनय आदि और श्रीराम के चरणों में विशेष विश्वास देखा तब मुनि ने बहुत दु:ख के साथ बार-बार पछता कर मुझे आदरपूर्वक बुलाया और अनेक प्रकार से मेरा सन्तोष किया और हर्षित होकर मुझे राम मन्त्र दिया। मुझे उन मुनिने श्रीरामजी के बाल स्वरूप के ध्यान करने की विधि बतायी। यह सुन्दर और सुख देनेवाला यह ध्यान मुझे बहुत ही अच्छा लगा। मुनि ने कुछ समय तक मुझे अपने पास अपने आश्रम रखा तब उन्होंने राम चरित्र मानस मुझे सुनाया। आदरपूर्वक मुझे यह राम कथा सुना कर मुनि मुझे सुन्दर वाणी में बोले- हे काक यह सुन्दर और गुप्त रामचरित मानस मैंने शिव कृपा से उनसे पाया। तुम्हें श्रीराम का निज भक्त जानकर मैंने तुमसे यह सब चरित्र विस्तार से सुनाया है। जिसके हृदय में प्रभु श्रीराम के प्रति हृदय में भक्ति नहीं हो उनके सामने इसे कभी भी मत कहना। मुनि ने मुझे बहुत प्रकार से समझाया तब मैंने प्रेम और आदर सहित मुनि के चरणों में शीश नवाया। मुनिश्वर ने अपने कर कमलों से मेरा स्पर्श कर हर्षित होकर आशीर्वाद दिया कि अब मेरी कृपा से तेरे हृदय में सदा प्रगाढ़ राम भक्ति बनी रहेगी। तुम सदा श्रीरामजी के प्रिय हो जाओगे और कल्याण स्वरूप गुणों के धाम, मान रहित इच्छानुसार रूप धारण करने में समर्थ, इच्छा मृत्यु एवं ज्ञान वैराग्य के भंडार हो जाओगे। इतना ही नहीं भगवान का स्मरण करते हुये तुम जिस आश्रम में निवास करोगे वहां एक योजन तक चारों ओर अविद्या माया मोह नहीं व्याप्त होगा। काल, कर्म, गुण, दोष और स्वभाव से उत्पन्न कुछ भी दु:ख तुमको कभी नहीं व्यापेगा। अनेकों प्रकार के सुन्दर प्रभु श्रीराम के रहस्य गुण चरित्र जो इतिहास और पुराणों में भी प्रकट नहीं है गुप्त है वर्णित और लक्षित है तुम उन सबको बिना परिश्रम ही जान जाओगे। श्रीराम चरणों में तुम्हारा नित्य नया प्रेम होगा अपने मन में तुम जो कुछ इच्छा करोगे श्रीहरि कृपा से उसकी पूर्ति कुछ भी अलभ्य नही होगी। हे गरुडजी मुनि का आशीर्वाद पाकर आकाश में गम्भीर आकाशवाणी हुई कि हे ज्ञानी मुनि तुम्हारा वचन ऐसा ही सत्य होगा। यह काक कर्म, मन और वचन से मेरा भक्त है। आकाशवाणी सुनकर मुझे बडा हर्ष हुआ। मैं प्रेम में मग्न हो गया मेरा सन्देह दूर हो गया। तब मुनि की विनती कर आज्ञा पाकर उनके चरण कमलों में सिर नवा हर्षित हो इस आश्रम में आया। प्रभु श्रीराम की कृपा से मैंने यह दुर्लभ वर प्राप्त कर लिया। मुझे यहां निवास करते २७ कल्प बीत गये। मैं यहां सदा प्रभु श्रीराम के गुणों का गान करता हूँ और सभी चतुर पक्षी उसे सुनते है। अवध में जब जब प्रभु श्रीराम भक्तों के लिये मनुष्य शरीर धारण करते है तब-तब मैं वहां जाकर रहता हूँ और प्रभु की बाल लीला देखकर सुख प्राप्त करता हूँ। फिर प्रभु श्रीराम के बाल स्वरूप को हृदय में रखकर अपने इस आश्रम में लौट आता हूँ। जिस कारण से मैंने यह कौए का शरीर पाया वह सारा वृत्तान्त आपको कह सुनाया।

राम भक्ति की बडी भारी महिमा है। मुझे अपना यह काक शरीर अत्यन्त प्रिय है कि इसमें मुझे प्रभु श्रीराम के चरणों का प्रेम प्राप्त हुआ और इसी शरीर से मैंने प्रभु दर्शन किये और इसी शरीर से प्रभु के साथ बाललीला करता हूँ, इसलिये यह शरीर मैं छोडना भी नहीं चाहता। हे गरुडजी मैं हठ करके भक्ति पक्ष पर अडा रहा जिससे महर्षि लोमश ने मुझे शाप दिया उसी का यह फल मुझे प्राप्त हुआ कि जो गति मुनियों को भी दुर्लभ है वह मुनि कृपा से वह वरदान मैंने पाया।

भक्ति का प्रताप तो देखो। जो भक्ति की ऐसी महिमा जानकर भी भक्ति नहीं करता और केवल ज्ञान के लिये श्रम साधन करता है ऐसे वे मूर्ख घर पर बंधी हुई कामधेनु छोडकर दूध के लिये मदार के पेड को ढूंढते है। जो लोग हरि भक्ति छोडकर किसी दूसरे उपायों से सुख चाहते है वे मूर्ख और जड करनी वाले अभागे बिना ही जहाज के महासागर को पार करना चाहते है शिवजी कहते है हे भवानी काक

भुशुण्डि के वचन सुनकर गरुडजी हर्षित होकर बोले हे प्रभो आपके प्रसाद से मेरे हृदय का शोक, सन्देह मोह और भ्रम कुछ भी नहीं रह गया। मैंने प्रभु राम कृपा से पवित्र गुण समूहों को जाना और शान्ति प्राप्त की। तब गरुड बोले, हे प्रभो सन्त मुनि वेद और पुराण सभी कहते है कि ज्ञान के समान दुर्लभ कुछ भी नहीं है। वही ज्ञान मुनि ने आपसे कहा परन्तु आपने तो भक्ति के समान उसका आदर नहीं किया। मुझे यह बताएं ज्ञान और भक्ति में कितना अन्तर है।

तब काकभुशुण्डि ने गरुडजी के वचन सुनकर सुख माना और हर्षित होकर बोले हे पक्षिराज भक्ति और ज्ञान में कुछ भी भेद नहीं है। दोनों भी संसार के उत्पन्न क्लेशों को मिटानेवाले है। ज्ञान, वैराग्य, योग, विज्ञान ये सब पुरुष है। पुरुष का प्रताप सब प्रकार से प्रबल होता है। अबला माया स्वभाविक ही निर्बल और जाति जन्म से ही स्त्री जड होती है। परन्तु जो वैराग्यवान और धीर पुरुष है बुद्धिमान है वही स्त्री का त्याग कर सकते है न कि कामी पुरुष जो स्त्री के वश में है, विषयों के वश में है और प्रभु श्रीराम चरणों से विमुख है। वे ज्ञानी मुनि भी जो मृगनयनी के चन्द्रमुख को देखकर विवश हो उसके अधीन हो जाते है तो साक्षात भगवान विष्णु की माया ही स्त्री रूप से प्रकट है। यह मैं आपको वेद पुराण और सन्तों का मत ही कहता हूँ। यह एक विलक्षण रीति ही है कि एक स्त्री के रूप पर दूसरी स्त्री कभी मोहित नहीं होती। माया और भक्ति ये दोनों ही स्त्री वर्ग की है यह सब कोई जानते है। प्रभु श्रीराम को तो भक्ति प्यारी है। माया तो प्रभु के इशारे पर नाचने वाली नटी, सेविका है। प्रभु श्रीराम भक्ति के वश रहते है इसी से माया भक्ति से डरती है। जिस हृदय में उपमा रहित और उपाधि रहित विशुद्ध राम भक्ति सदा बिना किसी बाधा के बसती है उसे देखकर माया सकुचा जाती है। उस पर वह अपनी प्रभुता कुछ भी नहीं चला सकती। ऐसा विचार कर ही जो ज्ञानी मुनि है वे भी सब सुखों की खान भक्ति की ही याचना करते है। प्रभु श्रीराम का यह रहस्य गुप्त मर्म जल्दी से कोई नहीं जान पाता। प्रभु कृपा से ही उसे कोई जान सकता है, जिसने इसे जान लिया उसे स्वप्न में भी कभी मोह नहीं होता। अब मैं तुम्हें ज्ञान और भक्ति का भी निरूपण करके बताता हूँ।

जीव ईश्वर का अंश है वह अविनाशी चेतन, निर्मल और स्वभाव से ही सुख राशि है। यह माया के वशीभूत होकर तोते और वानर की भांति अपने आप ही से बन्ध गया है। इस प्रकार जड और चेतन में गांठ पड गई। यद्यपि यह ग्रन्थि मिथ्या है तथापि इसके छूटने में कठिनाई है। तभी से यह जीव संसारी जन्मनेवाला मरनेवाला हो गया। अब न तो वह गांठ छूटती है और न वह सुखी होता है। वेदों और पुराणों ने बहुत से उपाय बतलाये है पर फिर भी ग्रन्थि छूटती नहीं पर अधिकाधिक उलझती जाती है। जीव के हृदय में अज्ञान रूपी अन्धकार विशेष रूप से छा गया है इससे गांठ दीख नही पडती फिर छूटे तो कैसे ? जब कभी ईश्वर ही ऐसा संयोग उपस्थित कर देते है तब कदाचित ही यह ग्रन्थि छूट पाती है। हरि की माया अत्यन्त दुस्तर है वह सहज में ही तरी नहीं जा सकती। ज्ञान से यह ग्रन्थि खुल सकती है पर ज्ञान कहने समझाने में तथा समझने में और साधन में भी कठिन है। यदि संयोगवश ज्ञान हो भी जाये तो फिर उसे बचाये रखने में भी अनेकों विघ्न है। ज्ञान मार्ग कृपाण दुधारू तलवार के समान है। हे पक्षिराज इस मार्ग से गिरते देर नहीं लगती। जो इस मार्ग को निर्विघ्न निबाह कर ले जाता है वही कैवल्य मोक्ष का अधिकारी होता है।

सन्त, वेद, पुराण और सभी शास्त्र यही कहते है कैवल्य रूप मोक्ष परमपद भी अत्यन्त दुर्लभ है यह भी श्रीरामजी की भक्ति करने से बिना इच्छा किये भी आ जाती है। जैसे स्थल के बिना जल नहीं ठहर सकता चाहे कोई करोड़ों उपाय ही कर ले वैसे ही मोक्ष सुख भी हरि भक्ति को छोडकर नहीं रह सकता। ऐसा विचार करके बुद्धिमान हरि भक्त भक्ति पर लुभाये रहकर मुक्ति का तिरस्कार कर देते है। भक्ति करने से जन्म-मृत्यु संसार की जड अविद्या बिना किसी प्रयास और परिश्रम के अपने आप नष्ट हो जाती है। जैसे भोजन तृप्ति के लिये किये जाता है और उस भोजन को शरीर में जठराग्नि अनायास ही उसे पचा देती है वैसे ही ऐसी सुगम और परम सुख देनेवाली हरिभक्ति जिसे न सुहावे ऐसा जगत में मूढ़ कौन होगा ? जो चेतन को जड कर देता है और जड को चेतन कर देता है ऐसे समर्थ प्रभु श्रीराम को जीव भजते है वे धन्य है। मैंने ज्ञान का सिद्धान्त कहा अब भक्ति की महिमा सुने।

प्रभु श्रीराम की भक्ति सुन्दर चिन्तामणि है यह जिसके हृदय में बसती है वह दिन रात अपने आप ही प्रकाश स्वरूप ही रहता है। उसमें मोह रूपी दरिद्रता भी नहीं आती। उस मणि के प्रकाश से अविद्या का प्रबल अन्धकार मिट जाता है। जिसके हृदय में भक्ति बसती है उसके पास मद, मोह, काम, क्रोध, लोभ आदि नहीं आती। उसके लिये विष अमृत के समान और शत्रु मित्र हो जाता है। उस मणि के बिना कोई सुख नहीं पाता। बडे-बडे मानस रोग, जिनके वश होकर सब जीव दु:खी होते है। वे उसको नहीं व्यापते। श्रीराम भक्ति रूपी

मणि जिसके हृदय में बसती है उसे स्वप्न में भी लेशमात्र दु:ख नहीं होता। जगत में वे ही मनुष्य चतुर शिरोमणि है जो उस भक्ति रूपी मणि के लिये भली भांति यत्न करते है। यद्यपि यह मणि जगत में प्रत्यक्ष प्रकट है पर बिना श्रीराम कृपा इसे कोई नहीं पा सकता। अभागे मनुष्य इसे नहीं पा सकते। जो प्राणी इस मणि को खोजता है वह सब गुणों की खान उस भक्ति रूपी मणि को पा जाता है। श्रीरामजी के दास श्रीरामजी से भी बढ़कर है। सब साधनों का फल सुन्दर हरिभक्ति ही है उसे सन्त के बिना किसी ने नहीं पाया। ऐसा विचार कर जो भी संतों का संग करता है गरुडजी उसके लिये श्रीराम भक्ति सुलभ हो जाती है।

गरुडजी के काकभुशुण्डि से सप्त प्रश्न- गरुडजी बोले हे कृपालु काक यदि मुझपर आपका स्नेह है तो हे नाथ मुझे अपना सेवक जानकर मेरे इन सात प्रश्नों का समाधान करे हे नाथ बताइये १) इस जगत में सबसे दुर्लभ शरीर कौनसा है ? २) सबसे बड़ा दु:ख कौनसा है। ३) सबसे बडा सुख कौनसा है ? ४) सन्त कौन है और असन्त कौन है ? ५) पुण्य क्या है और सबसे महान भयंकर पाप क्या है ? ६) सबसे बडा रोग क्या है ? ७) सबसे श्रेष्ठ धर्म कौनसा है ? आप तो सर्वज्ञ है और मुझपर आपकी कृपा है तब काकभुशुण्डि बोले हे तात मैं तुम्हे नीति की बात कहता हूँ। मनुष्य शरीर के समान दूसरा कोई शरीर नहीं है। चर-अचर सभी जीव उसकी याचना करते है। यह मनुष्य शरीर ही नरक स्वर्ग और मोक्ष की सीढ़ी है। यही शरीर से कर्म करके नर को देवत्व प्राप्त करा सकता है। इस शरीर से ही ज्ञान, वैराग्य और भक्ति मिल सकती है। ऐसा मानव शरीर पाकर भी जो लोग हरि भजन नहीं करते और नीच से नीच विषयों में अनुरक्त रहते है वे पारसमणि को हाथ से फेंक देते है और बदले में कांच के टुकडे ले लेते है। जगत में दरिद्रता के समान दूसरा कोई दु:ख नहीं है। सन्तों के मिलने के समान जगत में दूसरा कोई सुख नहीं है। हे पक्षिराज मन वचन और शरीर से परोपकार करना यह सन्तो का सहज स्वभाव है। सन्त दूसरों की भलाई के लिये दु:ख सहते हैं और अभागे असन्त दूसरों को दु:ख पहुंचाने के लिये। कृपालु सन्त भोज के वृक्ष के समान दूसरों के हित के लिये भारी विपत्ति भी सह लेते है अपना चमडा तक दे देते हे। लेकिन दुष्ट लोग रस्सी की भांति दूसरे को बांधते है और उन्हें बांधने के लिये अपनी खाल खिंचवा कर विपत्ति सह कर मरने तक तैयार रहते है। दुष्ट बिना किसी स्वार्थ के सांप और चूहे के समान होता है जो अकारण ही दूसरों का अपकार करते है। वे परायी सम्पत्ति का नाश करके स्वयं नष्ट हो जाते है जैसे खेती का नाश करके ओले नष्ट हो जाते है। दुष्ट का अभ्युदय उन्नति प्रसिद्ध अधम केतु ग्रह के उदय की भांति जगत के दु:ख हेतु ही होता है। सन्तों का अभ्युदय सदा ही सुखकर होता है जैसे चन्द्रमा और सूर्य का उदय विश्वभर के लिये सुखदायक है। वेदों में अहिंसा को ही परम धर्म माना है और परनिन्दा के समान भारी पाप नहीं है। भगवान शंकर और गुरु की निन्दा करने वाला मनुष्य अगले जन्म में मेंढ़क होता है और वह हजारों जन्मतक वहीं मेंढ़क शरीर पाता है। ब्राह्मणों की निन्दा करनेवाला व्यक्ति बहुत से नरक भोगकर फिर जगत में कौये का शरीर धारण करता है। जो अभिमानी जीव देवताओं और वेदों की निन्दा करते है वे नरकों में निवास करते है। सन्तों की निन्दा में लगे हुये लोग उल्लू होते है, जिन्हे मोहरूपी रात्रि प्रिय होती है और ज्ञान रूपी सूर्य जिनके लिये अस्त हो गया रहता है। जो मूर्ख मनुष्य सबकी निन्दा करते है वे चमगादड होकर जन्म लेते है। मानस रोग सबसे बडा रोग है जिससे सब लोग दु:खी रहते है। सब रोगों की जड अज्ञान है। उन व्याधियों से फिर और बहुत से शूल उत्पन्न होते है। जब रोग कफ, वात और पित्त मिल जाते है तो दु:खदायी सनिपात रोग उत्पन्न होता है उसी प्रकार ये काम लोभ और क्रोध है जो सदा विषयों के मनोरथ के कारण है वे ही सब शूल बनकर कष्टदायक रोग है, वे अपार है। ममता, ईर्ष्या, हर्ष-विषाद, पराये सुख को देख कर जलना, दुष्टता और मन की कुटिलता, अहंकार, दम्भ, कपट, मद, तृष्णा, तीन प्रकार की प्रबल वासनाये धन, मान, सुतदारा, मत्सर और अविवेक ये सब बुरे मानसिक रोग है जो मनुष्य को गर्त पतन में ढकेलते है। एक ही रोग के वश होकर मनुष्य मर जाता है फिर ये तो कितने असाध्य रोग है। ये जीव को निरन्तर कष्ट देते रहते है ऐसी दशा में जीव शान्ति कैसे प्राप्त कर सकता है ? नियम, धर्म, आचार, तप, ज्ञान, यज्ञ, जप दान तथा और भी असंख्य औषधियां है। इस प्रकार जगत में समस्त जीव रोगी है जो शोक, हर्ष, भय, प्रीति और वियोग के दु:ख से दु:खी हो रहे है। इन सबको कोई विरले ही जान पाते है। प्राणियों को जलानेवाले ये पापी रोग जान लिये जाये तो कुछ क्षीण अवश्य हो जाते है परन्तु नाश को नहीं प्राप्त होते। विषय रूप कुपथ्य को पाकर ये मुनियों के हृदयों में भी अंकुरित हो उठते है तब बेचारे साधारण मनुष्य की बात ही क्या है ?

प्रभु श्रीराम की कृपा से यदि इस प्रकार का संयोग बन जाये तो ये सब रोग नष्ट हो जाते है। सद्गुरु में विश्वास हो, विषयों की आशा नहीं करे यही इसका संयम और परहेज है। प्रभु श्रीराम की भक्ति संजीवनी बूटी है। प्रभु कृपा का संयोग हो तो रोग भले ही नष्ट हो जाये

अन्यथा तो करोडों प्रयत्न करने पर ये रोग नहीं मिटते। मन को नीरोग हुआ तब जानना चाहिये जब हृदय में वैराग्य का बल बढ़ जाये, उत्तम बुद्धि आजाये और विषयों की आशा रूपी दुर्बलता मिट जाये। इस प्रकार इन सब मानसिक रोगों से छूटकर मनुष्य में निर्मल ज्ञान उदय हो तभी उसके हृदय में सच्ची राम भक्ति आती है। शिव, ब्रह्मा, शुक, सनकादि और नारद आदि सभी ब्रह्म विचार में परम निपुण जो मुनि है। उन सबका यही मत है कि प्रभु श्रीराम के चरण कमलों में प्रेम करना चाहिये।

श्रुति, पुराण और वेद सभी ग्रन्थ यही कहते है कि प्रभु श्रीराम की भक्ति के बिना कही भी सुख नहीं है। कछुये की पीठपर भले ही बाल उग जाये, बांझ स्त्री को भले ही पुत्र हो जाये, आकाश में भले ही अनेकों प्रकार के फूल खिल जाये परन्तु हरि विमुख होकर जीव सुख प्राप्त नहीं कर सकता। मृगतृष्णा के जल से भले ही प्यास बुझा ले, खरगोश के सिरपर भले ही सींग उग जाये, अन्धकार भले ही सूर्य का नाश कर दे, बर्फ से भले ही अग्नि प्रकट हो जाये ये सब अनहोनी बाते हो जाये, जल को मथने से भले ही घी उत्पन्न हो जाये और बालू को पेरने पर भले ही तेल निकल आये परन्तु प्रभु श्रीराम से विमुख होकर कोई भी सुख नहीं पा सकता। हरिभजन के बिना संसार रुपी समुद्र से नहीं तरा जा सकता यह सिद्धान्त सत्य और अटल है। प्रभु मच्छर को ब्रह्मा बना सकते है और ब्रह्मा को मच्छर से भी तुच्छ बना सकते है। ऐसा विचार कर चतुर पुरुष सब सन्देह त्याग कर श्रीराम को ही भजते है। हे खगराज मैंने श्री हरि का अनुपम चरित्र अपनी मतिनुसार कहा। श्रुतियों का यही सिद्धान्त है कि सब काल भुलाकर प्रभु श्रीराम का भजन करो। आपने मुझसे शुक, सनकादि और शिव के मन को प्रिय लगने वाली अति पावन राम कथा कहने को कहा वह सब बतायी। संसार में घडी भर का अथवा पलभर का एक बार भी सत्संग दुर्लभ है। आप ही हृदय में विचार कर देखे क्या मैं प्रभु श्रीराम भक्ति का अधिकारी हूँ ? पक्षियों में सबसे नीच और सब प्रकार से अपवित्र हूं परन्तु ऐसा होने पर भी प्रभु श्रीराम ने मुझको सारे जगत को पवित्र करने वाला प्रसिद्ध कर दिया। यद्यपि मैं सब प्रकार से हीन नीच हूँ तो भी आज मैं धन्य हूं। अत्यन्त धन्य हूँ जो श्रीराम ने अपना निज जन जानकर सन्त समागम दिया। मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार आपको सब कुछ सुनाया जो मैं जानता हूँ।

प्रभु श्रीराम का चरित्र सागर के समान अथाह है। श्रीराम चरित्र बार बार गा कर काकभुशुण्डि बडे ही हर्षित हो रहे है। जिनकी महिमा वेदों ने नेति-नेति कहकर गायी है जिनका बल प्रताप और प्रभुत्व सामर्थ्य अतुलनीय है। जिन श्रीराम के चरण शिव और ब्रह्मा के द्वारा पूज्य है उनकी मुझपर कृपा है ऐसा किसी का स्वभाव न मैंने सुना है और न देखा ही है। रघुनाथजी के समान कोई है ही नहीं।

साधक, सिद्ध, जीवन्मुक्त, उदासीन, विरक्त, कवि, विद्वान कर्म रहस्य के ज्ञाता सन्यासी, योगी, शूरवीर, बडे-बडे तपस्वी, ज्ञानी, धर्म परायण, पंडित और विज्ञानी ये कोई भी मेरे स्वामी का भजन किये बिना नहीं तर सकते। मैं श्रीरामजी को बार-बार नमस्कार करता हूँ। जिनकी शरण जाने पर मुझ जैसा पाप राशि भी पापरहित शुद्ध हो जाता है। जिनका नाम जन्म-मरण रूपी रोग की अव्यर्थ औषध और तीनों भयंकर पीडाओं आधि दैवि, आदि भौतिक और अध्यात्मिक तापों को हरनेवाला है। तब पक्षिराज गरुड बोले हे काक भुशुण्डिजी श्रीराम के रस में सनी हुई आपकी वाणी सुनकर मैं कृतकृत्य हो गया। श्रीराम चरणों में मेरी नवीन प्रीति हो गई और माया से उत्पन्न सारी विपत्ति चली गयी। मोह रूपी समुद्र में डूबते हुये मेरे लिये आप जहाज हुये। आपने मुझे बहुत प्रकार से सुख दिया। मुझसे इसका आपका प्रत्युपकार नहीं हो सकता। मैं तो आपके चरणों में बार-बार नमस्कार करता हूं। आप पूर्ण काम है और श्रीराम के प्रेमी है। आपके समान कोई बडभागी नहीं है। सन्त, वृक्ष, नदी, पर्वत और पृथ्वी इन सबकी क्रिया पराये हित के लिये ही होती है। सन्तों का हृदय तो मक्खन के समान होता है। मक्खन तो ताप मिलने से पिघलता है पर परम पवित्र सन्त तो दूसरों के दु:ख से ही पिघल जाते है। हे तात मेरा तो जीवन और जन्म सफल ही हो गया। आपकी कृपा से सब सन्देह दूर हो गया। मुझे सदा अपना दास जानियेगा। शिव कहते है हे भवानी पक्षि श्रेष्ठ गरुडजी बार बार ऐसा कह करके काकभुशुण्डि के चरणों में शीश नवाकर हृदय में प्रभु श्रीराम की भक्ति धारण कर धीर बुद्धि गरुडजी अपने स्थान बैकुण्ठ को लौट गये।

शिव कहते है हे गिरजा सन्त समागम के समान दूसरा अन्य कोई लाभ नहीं है पर यह सन्त मिलन हरि कृपा बिना नहीं हो सकता ऐसा वेद और पुराण गाते है। मैंने तुम्हें परम पवित्र कथा कही जिसे सुनने से भवपाश छूट जाते है और शरणागतों को कल्पवृक्ष तथा दया के समूह श्रीराम चरणों में प्रेम उत्पन्न होता है। जो मन से इस कथा का श्रवण करते है उनके मन, वचन और कर्म से उत्पन्न सब पाप ताप नष्ट हो जाते है। तीर्थयात्रा, आदि बहुत से साधन, योग, वैराग्य और ज्ञान से निपुणता, अनेकों प्रकार के कर्म, धर्म, व्रत और दान, अनेकों संयम,

दम, जप, तप और यज्ञ प्राणियों पर दया, ब्राह्मण और गुरु की सेवा, विद्या, विनय और विवेक की बडाई इत्यादि जहां तक वेदों ने साधन बतलाये है। हे भवानी उन सबका फल हरि भक्ति ही है। श्रुतियों में वर्णित प्रभु श्रीराम की भक्ति श्रीराम कृपा से किसी विरले ने ही पायी है। जो मनुष्य विश्वास मान कर यह कथा सुनते है व बिना परिश्रम ही उस दुर्लभ हरि भक्ति से प्राप्त कर लेते है। जिसका मन श्रीराम चरणों में अनुरक्त है वही सर्वज्ञ सब कुछ जाननेवाला है, वही गुणी है, वही ज्ञानी है। वही पृथ्वी का भूषण, पंडित और दानी है। वही धर्म परायण है और वही कुल का रक्षक है। जो छल छोडकर प्रभु श्रीराम की भक्ति करता है वह नीति में निपुण है वही परम बुद्धिमान है। उसी ने वेदों के सिद्धान्त को भली भांति जाना है। वही कवि, वही विद्वान तथा वही रणधीर है। वह देश धन्य है जहां गंगाजी है, वह स्त्री धन्य है जो पतिव्रत धर्म का पालन करती है। वह राजा धन्य है जो न्याय करता है और वह ब्राह्मण धन्य है जो अपने धर्म से नहीं डिगता।

वह धन धन्य है जिसकी पहली गति होती है, सुगति होती है उसकी जो धन दान देने में व्यय होता है। वही बुद्धि धन्य और परिपक्व है जो पुण्यों में लगी हुई है। वही घडी धन्य है जब सत्संग हो और वहीं जन्म धन्य है जिसमें ब्राह्मण की अखंड भक्ति हो। धन को तीन गतिया होती है, दान, भोग और नाश। दान उत्तम है, भोग मध्यम है और नाश नीच गति है। जो पुरुष न देता है, न भोगता है उसके धन का तो नाश ही होता है। वह कुल धन्य है जो संसार भर के लिये पूज्य है और परम पवित्र है जिसमें अनन्य रामभक्त विनम्र पुरुष उत्पन्न हो। जब मैंने तुम्हारे मन में प्रभु श्रीराम के प्रेम की अधिकता देखी तब मैंने यह राम कथा आपको सुनायी।

यह कथा उन लोगों से कभी नहीं कहनी चाहिये जो शठ हो, धूर्त हो, हठी स्वभाव के हो और मन लगाकर नहीं सुनते हो। लोभी, क्रोधी और कामी को, जो चराचर के स्वामी श्रीराम को नहीं भजते हो उन्हे यह कथा नहीं कहनी चाहिये। ब्राह्मणों के द्रोही, भले ही वह देवराज इन्द्र के समान ऐश्वर्यशाली वैभवशाली ही क्यों न हो उसे भी यह कभी नहीं सुनाना चाहिये। श्रीराम कथा के वे ही अधिकारी है जिनको सत्संगति अत्यन्त प्रिय है। जिनकी गुरु चरणों में प्रीति है वे ही इस कथा के अधिकारी है। जो नीति परायण है और ब्राह्मणों के सेवक है उनको तो यह कथा अत्यन्त सुख देनेवाली है। उनको तो श्रीराम प्राणों समान प्यारे है। जो श्रीराम चरणों में प्रेम चाहता हो या मोक्ष पद चाहता हो वह इस कथा रूपी अमृत को पियेगा। हे गिरिजा मैंने तुम्हे कलियुग के पापों का नाश करनेवाली और मन के मल को दूर करनेवाली रामकथा का वर्णन किया है। यह राम कथा संसृति जन्म मरण रूपी रोगों के लिये संजीवनी बूटी है ऐसा वेद और विद्वान पुरुष कहते है। जो कपट छोडकर यह रामकथा गाते है वे मनुष्य अपनी मन कामना की सिद्धि पा लेते है। जो इसे कहते सुनते है और अनुमोदन प्रशंसा करते है वे संसार रूपी समुद्र को गौ के खुर से बने हुये गड्ढे की भांति पार कर जाते है।

याज्ञवल्क्य मुनि कहते है यह सब कथा सुनकर पार्वतीजी के हृदय को बहुत ही प्रिय लगी और वे बोली स्वामी की कृपा से मेरा पूरा सन्देह मिट गया और श्रीराम चरणों में मेरी प्रीति उत्पन्न हो गई। हे विश्वनाथ आपकी कृपा से मैं कृतार्थ हो गई और श्रीराम चरणों मे मेरी दृढ़ भक्ति हो गई और मेरे सम्पूर्ण क्लेश बीत गये। शिव पार्वती का यह कल्याणकारी संवाद सुख उत्पन्न करनेवाला और शोक का नाश करनेवाला है। जन्म-मरण का अन्त करनेवाला, सन्देहों का नाश करनेवाला, भ्रमों को मिटानेवाला, भक्तों को आनन्द प्रदान करनेवाला और सन्त पुरुषों को प्रिय है। जगत में जितने भी राम के उपासक है उनको तो इस राम कथा के समान अन्य कुछ भी प्रिय नहीं है। श्रीराम कृपा से यह सुन्दर पवित्र करनेवाला चरित्र निर्मल यश बढ़ानेवाला है। इस कलियुग में योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत और पूजन आदि कोई दूसरा साधन नहीं है। प्रभु श्रीराम का ही स्मरण, उनका ही गुणगान करना और निरन्तर उनके गुणों को सुनना ही सर्वश्रेष्ठ साधन है। श्रीराम को भजने से हर किसी ने परम गति प्राप्त की है। पतितों को पवित्र करना ही जिसका महान व्रत है ऐसा कवि, कोविद, वेद, सन्त और पुराण गाते है। इसलिये हे मन कुटिलता छोडकर श्रीराम की भक्ति कर। अरे मूर्ख मन। गणिका, अजामिल, व्याध, गीध, गज आदि बहुत से दुष्टों को जिसने तार दिया। आमीर, यवन, किरात, खस, श्वपच चांडाल आदि जो अत्यन्त पाप रूप ही है वे भी केवल एक बार जिनका नाम लेकर पवित्र हो जाते है। यह श्रीराम चरित राम कथा पुण्य रूप, पापों का हरण करनेवाला, सदा कल्याणकारी, विज्ञान और भक्ति को देनेवाला, माया, मोह और मल का नाश करनेवाला, परम निर्मल, प्रेमरूपी जल से परिपूर्ण तथा मंगलमय है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस मानस सरोवर में गोता लगाते है वे संसाररूपी सूर्य की अति प्रचंड किरणों से नहीं जलते।

इति उत्तरकाण्ड समाप्त

रामकथा खण्ड-२

सियराम कथा कितनों ने लिखी, पर तुलसी जैसी मर्यादा कहाँ।
नरसिंह बसे प्रति खम्भन में, पर काढ़न को प्रहलाद कहाँ।

लवकुश काण्ड

* विषय-सूची *

१) सीता बनवास और लव-कुश का जन्म ५९८

२) राम का अश्वमेघ यज्ञ ६०४

३) लव-कुश की वीरता ६१२

४) सीता सतवन्ती/ भूगर्भ प्रवेश ६१९

५) श्रीराम का स्वधाम लौटना ६२५

जिसे हम बन्दर कहकर निकृष्ट समझते हैं, उस वानर में जितना सद्गुण, संयम और नियम है, उतना मनुष्य में कहाँ हैं? चाहे कितना भी भूखा रहे पर बानर रामफल अथवा सीताफल नहीं खायेगा। कारण, इन फलों के साथ इसके आराध्यदेव का नाम जुडा हुआ है।
इसी तरह जिसके जीवन में संयम नहीं,
जिसके जीवन में प्रभु-भक्ति का कोई नियम नहीं, उसका जीवन निरर्थक है।

१) सीता बनवास और लव-कुश का जन्म- रामराज्य की कथा सुनाते हैं। रामराज्य का उन्नत अवसर चल रहा था। रघुकुल नन्दन श्रीमान के शासन का सूर्य मध्यान्ह काल पर था। प्रजा के कारण अपने सुख का राजा राम ने बलिदान दिया अपनी प्यारी रानी सीता को राजा ने बनवास दिया था वह प्रसंग बताते हैं। राज माताओं और वधुओं सहित अन्त:पुर में नीति निधान गुरुवर श्रृंगी ऋषि अतिथि आये हुये थे। राजा राम का नित्य दरबार लगता था उससे स्वयं रघुपति राम विचार करके न्याय निर्णय करते थे। उस राजसभा में दुर्मुख विजय नाम का एक दूत था। वह नित्य अयोध्या नगर की प्रजा के समाचार लाकर राजाराम को दरबार में सुनाता था। एक दिन वह ऐसा सन्देश लेकर आया कहने में मन ही मन क्लेश हो रहा था और साथ में सकुचाहट। वह स्वयं सोच रहा था किस प्रकार यह सन्देश राजा को सुनाऊं ? या नहीं सुनाऊं। उसकी भी कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि यह सम्वाद कह वज्र सा आघात करेगा। इसे बताऊँ या नहीं। जब भी अपना मुंह खोलता था तो हृदय मना कर देता था। अगर मुंह बन्द रखता हूँ तो कर्तव्य से गिर जाता हूं। आज से यह दासत्व का काम नहीं करना है इस दासत्व को प्रणाम। अभी तक तो मैं आज्ञा के बन्धन में हूँ तो आज्ञा का पालन करना पडेगा। बार-बार यह सोचता है कि हे छाती तू पत्थर बन जा जब भी मैं उन बातों को बताऊँ। हे वाणी तू घोर घटा बन जाय जब मैं उन वाणी के ओलों को बरसाऊं। हे माता मुझे क्षमा करना, मैं कोई यह स्वयं का मत नहीं सुनाता हूँ। जिस प्रकार आप क्षत पर दृढ़ है उसी प्रकार मैं भी अपना कर्तव्य पूरा करता हूँ। इस भांति विचार कर हृदय कठोर और बलवान बनाकर वह अनुचर राज परिषद में बोला। हे राजेश्वर बस इतना ही कह पाया फिर कांपने लगा, उसका मन डोलने लगा। मुझे क्षमा करना मैं आज कुछ समाचार लाया हूँ। मैं आपसे यह सब एकान्त में निवेदन करना चाहता हूँ इसके लिये स्वीकृति प्रदान करें। बस उस दुर्मुख से इतने ही वचन निकले फिर वाणी अवरुद्ध हो गई और नैनों में जल भर आया और वह रोने लगा। दूत की यह दशा देखकर प्रभु श्रीराम बोले कहो क्यों रुक गये हो? कह डालो क्या बात है? तुम तो इस सभा के खास गुप्तचर हो और नित्य खबरे लाते हो। यह एकान्त में बताने का फिकरा सब को शंकित चकित और भ्रमित करनेवाला है इसलिये जो कुछ सच्चा है वह सब सबके बीच कहो। लगता है कोई भीषण ज्वाला ही भडकी है कारण अचानक मेरी छाती भी फडक रही है। मेरे शरीर के सारे बायें अंग फडक रहे है मेरी बेचैनी बढ़ते जा रही है ऐसा लग रहा है जैसे शरीर से आत्मा खिंची जा रही हो। हे दुर्मुख मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ जो कुछ है वह प्रकट करो। बताओ। यह भेद भाव जो एकान्त में राम को बताना चाहते हो मन से यह भेद भाव निकाल दो।

तब रोते-रोते दूत सब हाल बताने लगा जैसे क्षीरसागर में शेष ने विष डाल दिया हो। अयोध्या के प्रजा जनों में यह अपवाद उठ रहा है जिसका सम्बन्ध आप श्रीराम से है। रावण के कारण माता सीता लंका में कई महीनों रही बस इसी बात को दोष मानकर कुछ लोग शंका कर रहे हैं। लोग कहते है यह रघुवंश की गद्दी है इसके धर्म और नीति रक्षक है फिर दूसरे के घर में रह आनेवाली को किस लिये अपने घर में रख रखी है ? प्रजा पर राज करने से पहले अच्छा यह है कि राजा अपने घर पर राज करे और जिससे शासन निर्दोष रहे वैसा ही काम करे। शंकालु लोगों का यह आन्दोलन दल दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहा है। प्रभु श्रीराम का इसमें चुप रहना इस शंकालु लोगों का बल और बढ़ाता है।

यह सुनकर राम ने अपने आप को सम्भालने का बहुत प्रयत्न किया पर अपने को संयमित नहीं कर पाये। इस वाणी बाण के लगते ही हृदय विदीर्ण हो गया। मुंह से सहसा हाय निकली और पत्ते समान भूमिपर गिर पडे। तब दौडकर भरत और शत्रुघ्न ने तुरन्त सम्भाल लिया और क्षणभर मिल जुलकर चेतन कर दिया। उसी समय लक्ष्मण ने संकेत से राज सभा विसर्जित कर दी। तब करुणा सागर राघव भरत से बोले हे भैया भरत यह सत्य है कि मैं कभी भी राज्य चलाने के लिये योग्य नहीं था। वन में रहनेवाला शासन चलाना क्या जाने। यह राघव राजा बनने योग्य नहीं था। अब बीत गई सो बीत गई अब भी बिगडी बात तुम सम्हालो। जो भार इस समय राम के सिर पर है हे भाई उसे तुम उठा लो। अब मेरे लिये वानप्रस्थ आश्रम है मैं वही स्वीकार कर नियमों सहित निभाऊंगा सीता के साथ रहकर शेष जीवन बनों में ही बिताऊँगा। जब राज चलाने के बारे में सुनता था तो एक खिलौने चलाने की भांति लगता था लेकिन अब अनुभव करता हूँ राज चलाना एक मकडी के जाले जैसा है। इसी कारण हे भाई भरत अब मुझसे यह राज लेकर सब राज्य भार अब तुम सम्हालो। जो काम मेरे लिये उचित है वही मुझसे कराओ। तब रोते-रोते भरत बोले, भाई आपकी यह राय सब भांति अनुचित है। कल संसार यही कहेगा एक नारी के लिये रघुवीर ने सिंहासन त्याग दिया। एक ही प्रहार में गम्भीरता, धीरता त्याग दी। ऐसा करने से आपकी और रघुकुल

की भी निन्दा होगी। राजा भीरु बन जाये यह बात तनिक ओछी और तुच्छ लगती है। मुझे राज्य भार देना तो बालू में दीवार खड़ी करना जैसा है। जिस पर बडे कन्धे डालते हो और बोझ उठाते है तो फिर छोटे की क्या बिसात ? तब प्रभु श्रीराम बोले यदि यही ठीक है तो फिर यही उपाय है कि प्रजा हित में सदा सर्वदा के लिये सीता का त्याग किया जाये। उसी समय लक्ष्मण बोले, ये सब विचार, उपाय राय सब व्यर्थ है। माता सीता की अग्नि परीक्षा हो चुकी है फिर भी उसे त्यागने की कैसी बात करते हो ? हे दीनदयालु कृपा करें यह सुनकर ही छाती फट रही है। यह वाक बाण नहीं ये तो शूल चुभ रहे है। एक निर्दोष नारी दंड पाये क्या यह अधर्म का काम नहीं है ? इस तरह के काम करके क्या रघुवंश बदनाम नहीं होगा ? एक अबला, अर्द्धांगिनी, महासती निर्दोष होते हुये घर से निर्वासित की जाती है। ये पृथ्वी, आकाश, नक्षत्र सभी देखते है कि यह अवधपुरी कितनी घातक है। ऐसे प्रजा पालन पर भी धिक्कार है जो प्रजा सिरपर बैठकर इस तरह बोलने लगे। इतना सन्तोष पूर्ण सुखद शासन होने पर भी प्रजा का पूरा सन्तोष नहीं होता है। लक्ष्मण इस भांति क्रोध से गरज कर बोल रहे थे तभी धैर्य धारण कर भरत बड़ी नम्रता से बोले हे राघव भाई लक्ष्मण की सम्मति का मैं भी अनुमोदन करता हूँ। माता सीता को त्याग देने का आपका जो मत है उसे मैं भी खंडन करता हूँ; इसके बारे में मैं भी सहमत नहीं हूँ। हम तरह-तरह की साक्षी देकर पूरी प्रजा का सबका सन्तोष कर देंगे। माता में कोई दोष नहीं है यह सब भली भांति प्रमाणित कर देंगे। ऐसे अवसर पर दब जाना कायरता है, वीरता नहीं है। ऐसे समय में यदि सत्य चुप हो जाये तो झूठ, असत्य ही सच्चा हो जाता है। जो अवसर एक बार हाथ से खो जायेगा वह लौटकर फिर हाथ नहीं आयेगा। गृहलक्ष्मी को त्याग देनेसे पूरा गृह उजड जायेगा।

फिर सुमित्रानन्दन बोल उठे मुझे तो क्रोध आ रहा है चलो प्रजा के सामने चलकर इसका डटकर विरोध करो। तब राम ने धैर्य धर लक्ष्मण से कहा शासन का काम चलाना कोई खेल खिलौना नहीं है। जब तक शासन अपनी इच्छाओं और मन पर नहीं होगा तब तक पुरजन, परिजन और अपने प्रियजनों पर क्या प्रभाव पडेगा ? शासन करते गृहलक्ष्मी ही क्या गृह जीवन भी प्रजा पर भेंट चढा दूंगा पर प्रजा की इच्छा के विरुद्ध मैं कभी शासन नहीं कर सकता। जिस जगह सीता पर अग्नि परीक्षा हुई वहां पर किसी तरह का आन्दोलन नहीं उठा था। वहां तो कपि, निशाचरों का दल था जो श्रद्धा सहित सीतापर विश्वास रखता था। पर इसीसे अवध शंकित है। सीता का मन से त्याग करना सदा सर्वदा मेरे लिये असम्भव है। यह साधन तो सिर्फ तन से करता हूँ। मैं शरीर सम्बन्ध से सीता का त्याग कर रहा हूँ। हे लक्ष्मण अब सुनो यह बडे भाई की आज्ञा है तुम्हे, यह राज आज्ञा भी है कल प्रात: ही सूर्योदय से पहिले यह सेवा करनी है कि सीता को रथ में बिठलाकर वन बीच छोड आना है। सायंकाल होने पर सूर्यास्त के बाद ही वह खाली रथ वापस लौटा कर लाना है। लक्ष्मण का तो यह सुनकर हृदय भी डोल उठा और लक्ष्मण रोते रह गये। बडा टालने का प्रयत्न कर रहे थे पर वहां उनकी टालमटोल नहीं चली।

रघुवर ने यह आज्ञा दे दी और किसी तरह का सोच विचार भी नहीं किया उस दिन भरत और लक्ष्मण ने कोई आहार नहीं लिये। भूखे ही रहे और अपने महल के निकट बैठकर मन ही मन अनेक सोच विचार चिन्ता करने लगे। किस भांति यह आज्ञाकारी लक्ष्मण उनकी आज्ञा का पालन करे ? मन्दिर का यह पुजारी किस प्रकार मन्दिर की देवी का त्याग विजर्सन करे ? एक ओर तो आज्ञा पालन का कर्तव्य है और दूसरी ओर अति घोर संकट है लक्ष्मण की तो सांप छछूंदर की सी गति हो रही है न उगलते बनता है और न निगलते बन रहा है। हे विधना तूने यह क्या वज्राघात उस सती साध्वी सीता पर किया है, उस पर तूने ऐसा क्यों उत्पात ढाया है ? तू स्वयं अग्निरूप में साक्षी था फिर यह दूर्दिन अब सबको क्यों दिखलाया है। जिसकी तूने स्वयं रक्षा की थी उसको जीते जी आज क्यों मिटा रहा है ? जिस नारी ने गृहिणी का पद पाया है वह आज किसलिये अतिशय त्याज्य है ? अगर न्यायाधीश का यही न्याय है तो वह न्यायालय नही अन्यायालय है। जिसके ऊपर ये आफत आती है, गुजरती है कोई उसके दिल से तो पूछ कर देखे। पति सेवा करते हुये भी सती पति के द्वारा किसलिये त्यागी जा रही है ? इन्ही सब सोच विचार करते लक्ष्मण नीर बहाने लगे। बुद्धि गति कुंठित हो गई, शरीर निश्चल जड हो गया। प्रभु श्रीराम भी छुपे हुये लक्ष्मण की यहा दशा देख रहे थे। सामने आकर लक्ष्मण के शीश पर प्यार भरा हाथ रखकर बोले भैया लक्ष्मण ये रोना तुम्हे शोभा नहीं देता यह तो अधीरों का कर्म है। संकट सदा साहस से सहा जाता है। यही गम्भीर पुरुषों का कर्तव्य है। मैं स्वयं जानता हूँ सीता निर्दोष है निष्कलंक है, गुणखानी है, क्षत्राणी है विदुषी है। जो कुछ कहना है वह सब कुछ उसको कह लो, उसका कोई अपराध नहीं है फिर भी राम आज उसका त्याग कर रहा है। ऊपरवाला सबकी साख रखता है। जो नुकसान हानि होगा वह सब सही जायेगी। राजा का घरबार उजड रहा है पर राजापन उसका नहीं जायेगा। जिसके हरण से राम वन-वन पागल जैसा फिरता था,

जिसको छुडवाने को पृथ्वी पर लाशों का ढेर लगा खून से पृथ्वी को लथपथ करता था बस उसी अपनी प्राण प्रिया आर्या सीता को राम आज त्रास दे रहा है। सीता का मांगलिक समय होनेपर भी राम उसे आज वनवास दे रहा है। राम सीता को त्याग रहा है यह तुम, सुर मुनि नाग सभी देखते है जो कभी त्याग के योग्य नहीं उसका सब त्याग देख रहे है। यह त्याग मैं कोई छुपकर नहीं कर रहा हूँ। जो कुछ सीता पर कर रहा हूँ वह मैं अपने ऊपर कर रहा हूँ। हे लक्ष्मण अब देर का काम नहीं अब विचलित मत होओ। अब अपने राजा, स्वामी और अपने बडे भाई की आज्ञा मानकर अब हां बोलो। इसे उन्माद कहो, जादू कहो या यह होनी है तब लक्ष्मण ने हां भरी। इस प्रकार प्रभु ने लक्ष्मण को हाँ करवा कर तैयार कर लिया।

तब प्रभु अपने महल में सीता के कक्ष में पहुँचे और बोले सुनो अब अपनी छाया को बुला लो। इस जग खातिर हमें अभी थोडी लीला और करनी है। जिन भक्तों के कारण मैंने गरुडासन त्यागा था, कुश का आसन वन में स्वीकार किया था। जो देवता दल वानर वन कर लंका से तुमको लेकर आये थे। अपने बल पर इतना इतराने लगा है, इतना अधिक गर्वित हो गया है कि हे कमला तुम जानती हो गर्वहारी मेरा नाम है। मेरा यह बोझ तभी हठता है जब मैं भक्तों का गर्व खर्व कर दूं। इसलिये प्रजा के स्वार्थ हेतु अब हमें फिर कुछ कर दिखलाना है। तुम्हारे बच्चों द्वारा उन सबका अभिमान मिटाना है। हे स्वामी जो आज्ञा कह सीता का वास्तविक रूप अन्तर्ध्यान हुआ और उस शरीर में सीता की छाया का प्रवेश हुआ। अब छाया रूपी सीता से प्रभु श्रीराम बोले आपको कल प्रात: ही लक्ष्मण के साथ वन यात्रा को जाना है। उस दिन आप वनों के चित्रों को देख देख कर बडी उमंग में थी। वन आपको बहुत प्रिय है। गंगा पर और उन ऋषि मुनियों की कुटियों पर आपका अत्यन्त अनुराग था। वन विहार की बार-बार इच्छा प्रकट करती हो तुम्हे राजमहल में ये हीरे जवाहरात, मोती अच्छे नहीं लगते। तुम्हे कुश शैय्या कन्द मूल का भोजा, और मुनिमंडल का सत्संग, जी बहलाने में आसपास मृग शावकों का दल हो यही सब अभिलाषाये मेरे मन में भी मचल रही है। इस समय यह सब आज्ञा रूप मेरे मुख से निकली है अतएव हे प्राणप्रिये वन को सिधारो और अपनी इच्छायें पूरी करो। वन के उन पावन धामों में वन देवी बनकर विचरो। प्रात: लक्ष्मण तुम्हारी सेवा में रथ लेकर आयेंगे। यह कार्य उन्ही को सौपा है सो वो तुम्हारे साथ जायेंगे। हे प्रिये अब विदा दो इस जग में निर्मल चांदनी जैसी रहो। यह राम सदा तुम्हारा है और तुम सदा राम की बनी रहो। इस प्रकार व्याकुल होकर दयानिधान चल दिये। सीता का ध्यान रहने से रातभर रघुवर को नींद नहीं आई, इधर लक्ष्मण की भी रात रोते-रोते कटी। प्रात:काल अरुण चूड का शब्द सुन लक्ष्मण जगे और शीघ्रता से माता के पास रथ के साथ व्याकुल और उदास मन गये। जाकर माता को शीश नवाया तभी माता सीता ने आशीर्वाद दिया। सीता बोली लक्ष्मण रथ आगया तो अब देर करना अच्छा नही। अनुभवी जनों का मत है शुभस्य शीघ्रम। शुभ काम में देर नहीं करना चाहिये। जा कौशल पति राघव ने आज्ञा दी है वह मेरी इच्छा है। कई दिनों से मुझे वन भ्रमण वन दर्शन की उत्कट उत्कंठा जगी हुई है। प्राय: मैं प्रभु से कहती रहती थी कि मुनि दर्शन करना है स्वामी फिर वन प्रकृति का प्राकृतिक दृश्य मुझे दिखलाओ। इस समय कौशलपति मेरे उन सभी अनुरोधों को पूरा करते है। धन्य भाग इस दासी के जो करुणानिधि मुझ पर कृपा करते है। तब पति का स्मरण कर सीता सानन्द रथ में बैठी और लक्ष्मण ने जय रघुवर कहकर रथ वन की ओर हांक दिया।

जब यह रथ कौशलपुर के राजमार्ग से निर्जन वन को जा रहा था सूर्य का प्रकाश बढ़ रहा था, अन्धकार पीछे हटते जाता था। सचमुच में उस दिन का प्रात:काल सुख दु:ख से मिला सवेरा था। जंगल के लिये तो उजियाला हो गया पर महलों में अन्धेरा छा गया। जब रथ गहन वन की ओर चला तब लक्ष्मण के नयनों से बादल समान आंसू बहने लगे। आकाश के तारे आभा हीन हो रहे थे, चन्द्रमा भी उदास लग रहा था। ओस के कण नहीं गिरते थे पृथ्वी पर जैसे आकाश रो रहा है। दूसरी तरफ सूरज भी अपनी ललिमा लिये रूक रूक कर उदय हो रहा था। उन मोती जैसी आँसुओं की बूंदों को अति शीघ्र हंस के समान चुग रहा था। जब गगन मंडल सूर्य प्रकाश से उज्ज्वल हुआ तब डाली हिल मिल कर नाचने लगी। प्रकृति का यह रहस्य देख सब कलियां भी खिल खिल कर हंस पडी। पुष्प दल, वृक्ष तल, उस रथ के मार्ग पर स्वयं बिखरे हुये थे। पक्षी सभी अपने मीठे स्वर से कूंज रहे थे गा रहे थे और माता का आदर करते थे। तब लक्ष्मण अपने को धीरज देकर हाथ जोड माता के साथ रहे फिर रथ तुरन्त सघन वन की ओर चला दिया। कहने को तो बीहड वन था पर पावन सुनसरि का पथ था। वही रास्ता सीधा मुनि वाल्मीकि के आश्रम के पास जाता था। वह पथ नहीं कटीली किंकर बेरी का जंगल था। प्रकृति जानती है कि उसके तो सब मंगल ही मंगल था। जगह-जगह थे ऊंचे नीचे गड्डे जग की उन्नति अवनति दिखलाते थे। रथ के पहिये गिरते

पडते चल रहे थे मानो जीवन की चाल बताते हो। वन की धरती उबड खाबड तो थी पर रथ को पूरा रास्ता दे रही थी मां जिस भांति बच्चे को गोद में लेती है उसी तरह वह रथ मां की गोद से गुजर रहा था। शीतल सुखकारी अत्यधिक पवन बह रहा था। वन की शेरनियाँ गर्जन करती, कोयल मधुर आवाज से कूक रही थी। लगता था वन पुरुषों से अपना शासन लेकर नारी को देना चाहता है या सीता को पटरानी से वन देवी बनाना चाहता है। उसी समय लक्ष्मण ने रथ की बागडोर थाम ली और रथ से नीचे उतर कर मां को प्रणाम किया और शिशुवत रोने लगे, आंसुओं की धारा बहने लगी।

तब सीता भी अपना धैर्य छोड बोली हे रघुवंशी मेरे देवर क्यों आकुल व्याकुल हो रहे हो? क्यों रो रहे हो ? अपनी इस क्षत्राणी भाभी में क्यों करुणा व्याप्त करा रहे हो। क्षत्रिय के नेत्र तो रूधिर से या जलते अंगारों के क्रोध से ही शोभा पाते है। हे मेघनाद को जीतनेवाले तुम्हारी आंखों में यह आंसू शोभा नहीं देते। इसलिये धैर्य धारण करो और बतलाओ बात क्या है लक्ष्मण ? तुम्हे किस बात की चिन्ता है, क्या सोच रहे हो, क्या देख रहे हो ? सब बातें खुलकर बताओ। माता के यह वचन सुनकर लक्ष्मण के अश्रु रूके और धैर्य धारण कर बोले, मेरे लिये तो यही अच्छा होता कि शक्ति बाण लगने से लंका में ही सदा के लिये सो जाता, रावण के उस रण सागर में मारा जाता फिर आज यह दिन तो देख नहीं पाता जिसमें मैं तो जीता हुआ ही मर रहा हूँ। अपने हृदय मन्दिर की माता पर कुसमय जो आघात कर रहा हूँ। बात बताने में मेरी जीभ भी कांप रही है और चुप रहने में भीतर ही भीतर मेरा दम घुट रहा है। मैं वह उदासीन ऋणिया हूँ जो भीतर ही भीतर लूट रहा है। मुझ हतभागी पर बडे भाई ने आज्ञा का बरछा चला दिया, यह धर्म पर अत्याचार है जो मैंने सिर पर धारण कर रखा है। बस वह छोटा रघुवंशी इतना ही कह सका फिर पलभर में अधीर हो गया। जैसे अपने शिशु का रुदन सुनकर सिंहनी गुफा में से निकलती है उसी तरह सीता भी लक्ष्मण का कथन सुनकर रथ से उतरी और बोली, लक्ष्मण भाई की आज्ञा तुमने बरछा जानकर भूल की है। उनकी तो वज्र जैसी आज्ञा भी हो तो वह कोमल फूल जैसी है। वे मेरे और तुम्हारे क्या वे तो सारे जग के हितकारी है। रघुवर तो रघुकुल के गौरव है और सूर्यवंश के राजेश्वर है। जब उनकी दृष्टि विश्व हित की है तो वे बरछा किस भांति छोडेंगे। तुम धीरज धर कर मुझे पूरा वृतान्त बताओ प्रभु ने अपनी इस दासी के लिये क्या आज्ञा दी है ?

माता सीता के यह वचन सुनकर सकुचाहट की फांस हलकी हुई तब लक्ष्मण गहरी सांस खींच कर कहने लगे। हे मां आप तो साक्षात रमा हो, मन मन्दिर की प्रतिमा हो, महिमा हो, सुखदायी हो, आप तो अणिमा, गरिमा सब हो। भारत की ऊंची नारी का आपने जो आदर्श चरित्र दिखलाया है पर अवध वासियों ने तुम्हारे अशोक वाटिका निवास को अत्यन्त बुरा बताया है। लंका में तो विजय का डंका बजा दिया पर यह अवध ही वध किये जा रहा है। अवधवासियों का कहना है यदि परवशता में प्राण गंवा देती माता तो सच्ची पतिव्रता की पदवी पा लेती। मूर्ख प्रजा यह नहीं समझती कि आपने अग्नि परीक्षा दी है। पति के हित अपने प्राणों को रख पति की भी पत रखी है यही भेद है। जिसके कारण प्रभु श्रीराम ने आपका त्याग कर यहां वन में भिजवाया है। इतना कह कर लक्ष्मण बेचैन हो गये।

तब अवधेश्वरी बोली। हे लक्ष्मण खुद भी क्षत्रिय होकर रो रहे हो और मुझ क्षत्राणी को भी रूला रहे हो। बात बात को बढ़ा रहे हो और इतने व्याकुल हो रहे हो। मैं स्वयं को आज्ञाकारिणी कहला कर प्रभु की आज्ञा की भूखी थी। मैं तो इस आज्ञा से बडभागी हूं, वह कली खिल गई जो सूखी थी। पति के प्रत्येक दु:ख सुख में पत्नी हिस्सा लेती है, सीता वनों के संकट सह कर उनको यश का शासन देती है। हे विधाता यदि तू सच्चा तो सत्य नहीं जाने पाये वे अपना शासन कुशलता से करे उनको किसी प्रकार की पास में आंच भी नहीं आने पाये। अब हे देवर सानन्द लौट जाओ और जाकर प्रभुसे मेरा प्रणाम कहना मेरा यह सन्देश उनके चरणों में निवेदन कर देना कि अवधेश का इसमें कुछ भी दोष नहीं है वे इस लीला में बेबस है, सीता सब जगह उन्ही की है और वे ही सीता के सर्वस्व है। यह सुनकर लक्ष्मण रोने लगे और बोले अब यह किसका अवध और कौन अब अवध को जाये ? १४ वर्षों तक मैं जिसप्रकार वन में भाई की सेवा में रहा उसी प्रकार मैं फिर भी माता की रक्षा करने में तत्पर हूँ। प्रभु श्रीराम अवध का राज्य करे लेकिन मैं अब वहां नहीं जाऊंगा और इन चरणों की सेवा में ही अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करूँगा। जनता अपना कार्य करे जिससे यह राजा का यश बढ़े और राजा अपना कर्तव्य करे जिससे प्रजा को प्रिय लगनेवाला शासन हो। मैं तो इन चरणों की सेवा कर सेवा व्रत निभाऊँगा और उन्हीं चरणों पर अपना जीवन दूंगा। तब माता सीता बोली हे तात ! यह अनुचित बात है। सब भांति उचित यही है कि तुम कौशलपुर जाओ। इस भूमंडल का बच्चा बच्चा तुम्हारा गुण गायेगा। प्रभु श्रीराम के समान ही प्रजा तुम्हारा सम्मान करेगी। हे देवर तुम आदर्श गुणों के अथाह

भंडार हो। भाई का तुम पर प्यार रहे तुम सच्चे भाई भक्त हो। इस प्रकार लक्ष्मण को आश्वस्त कर और सभी भांति आशीष देकर माता वहां से तुरन्त उठी और अत्यन्त समझा बुझाकर लक्ष्मण को विदा किया। अब लक्ष्मण ने अपना रथ हांका पर रथ हांका न गया, घोडे शक्तिहीन हुये वे आगे की ओर पांव ही नहीं उठाते। उस ज्योतिर्मयी को वन में त्यागकर अन्धों की भांति चलते है। लक्ष्मण उन्हें आगे की ओर बढ़ाते है पर वे फिर पीछे ही आने लगते है। जब उनको राम की शपथ दी तब वे राम के भक्त घोडे चले और लक्ष्मण भी उस सम्य थोडे सशक्त हुये। जैसे तैसे अवध कुमार अवध पहुंचे। रथ छोड तत्काल भाई के पास गये। देखा रघुराई शैय्या पर लेटे हुये आंखो से बेतरह प्रेम नीर बहा रहे है। ज्यों ही प्रभु श्रीराम ने लक्ष्मण को देखा तो बोले मेरी सीता कहां है ? जिसके वियोग में मेरे यह प्राण और तन दु:खी है वह मेरे प्राणों की प्रिया कहां है ? फिर प्रभु सम्भले और बोले लक्ष्मण कहां छोड आये वत्स ? जो हुआ वह उचित ही हुआ। राजा होने में क्या सुख है यह राजा होकर ही विदित हुआ। हे लक्ष्मण तुम मेरे प्रिया सखा हो, भाई हो, मेरे हृदयेश हो आज तुमसे यह अवधेश अपने हृदय की बात कह रहा है। दो फूल एक डाली पर खिले हुये थे, आपस में मिले हुये थे आज वे किन्ही निष्ठुर हाथों से टूट गये। हवा के एक झोंके ने ही दोनों को तितर बितर कर डाला। इधर उधर होकर दोनों ही अपना-अपना पथ ढूंढ रहे है। यही दशा राम और सिया की है। कोई कहां रह रहा है और कुछ भी कर रहा है जीवन का नया अध्याय शुरू कर रहा है। राम की आंखों में हरदम जानकी रम रही है। जानकी का राम है और राम की है जानकी। कौन कहता है राम ने सीता को तज दिया है। जानकी तो राम की जान में, जिगर में, रोम-रोम में बसी है। यह चमडे के शरीर भले आपस की प्रीति क्या तुडवायेंगे राम जानता है जानकी सती है। जगत अब भी देखले जानकी शक्ति बनकर प्राणों में और ज्योति बनकर आंखों में राम के अब भी बसी है। राम जब तक बना है तब तक जानकी मन में बनी है। फिर लक्ष्मण ने प्रभु को जैसे तैसे धैर्य बन्धाया।

उधर सीता के हृदय में भी वियोग की पीडा होने लगी। जब तक रथ सहित लक्ष्मण थे तब तक तो हृदय में वियोग की ज्वाला दबी रही। जैसे ही रथ आंखों की ओर से ओझल हुआ तब भभक कर ज्वाला सी भड़क उठी। हृदय में यदि अमृत समान प्रभु की छवि विराजी नहीं होती तो सीता के जीवन की शाखा उस वन में कभी हरी भरी नहीं होती। अब विधना का जो विधान था वही अब वन में होकर रहा। वैदेही वनदेवी समान योगिनी बनकर वन में विचर रही थी। उस शान्त प्रकृति के वातावरण में अपने प्रिय पति पूजन वह प्रेमिनी करने लगी, पति भक्ति गान करने लगी। पत्ते-पत्ते में अपने प्रियतम का दर्शन करने लगी। लगता है ब्रह्मा ने मथ-मथ कर इस जगत को निस्सार कर दिया है उससे जो प्रेम सार निकला उस से ही सीता का रूप बना दिया है। जब घोर घुमड घुमड कर विरह घटा छा रही थी तब उस विरहन का मन मोर बोल रहा था हे सुख धाम तुम्हे तुम्हारी प्रजा का कुछ भी दोष नहीं है ये तो दो सौतों का परस्पर का भीषण संग्राम है। गृहलक्ष्मी ने १४ वर्ष तक स्वामी के संग बनवास बिताया है इस भांति राज्य लक्ष्मी का अपमान कराया हास्य कराया। अब अपने सौतिया डाह से उसने मुझे वन भिजवाया है और उस राज्य लक्ष्मी ने अब पूरी तरह रानी बन मेरे जीवन धन को भरमाया है। इस पृथ्वी पर मुझ जैसी दु:खी नारी और कोई नहीं होगी जिसे सारी उम्र भर कही भी सुख की जगह नहीं मिली। हे स्वामी आप कौशल में राजाधिराज रहकर विराजो। यह आपकी दासी स्वामी का कार्य समझकर वन में रहेगी। आपने मेरा त्याग कर दिया है पर मैंने तो तुम्हें नहीं त्यागा है। अवध में अगर मेरे लिये जगह नहीं है तो यह वन एक विस्तृत समाज बनकर मुझे जगह दे रहा है। फिर भी मेरी यही प्रार्थना है कि मैं रघुकुल की लाज होकर और आप रघुकुल के ताज होकर दोनों ही इस जगत में चमके। सोना जितना तपेगा उतना ही चमकेगा। मेरे वरण करने हेतु पहले ही मेरे पिता को अत्यन्त कठिनाई हुई फिर पाणिग्रहण होने पर जैसे ससुराल आई पति प्रियतम को बनवास हुआ। रानी बनते-बनते मैं तपस्विनी बनी, महलों के बदले कुटिया में रही जिस पर भी विधाता ने अपने काले-काले बादलों की रंगत नहीं बदली। मैंने अपनी दुर्बुद्धि से लक्ष्मण का अपमान मर्म भेदी वचन बोलकर कर दिया। दुष्ट रावण मुझे लंका में हर ले गया। रावण की लंका में रहकर वहां भी अपने स्वामी रघुनाथजी का विरह सहा। मेरे ही कारण मेरे प्राणनाथ कितने दिनों तक बेचैन रहे। कितने ही दिन तक मेरे कारण शोणित के सागर बहे। इतने पर भी इन ग्रहों के चक्कर ने मुझे सुख से नहीं बैठने दिया। संकट की सीमा ऐसी करदी कि अब वन भिजवाया है। जिसने अपने जीवन में भला कभी सुख चैन नहीं देखा हो, इस मांगलिक समय में (अन्तर्वती होने के समय) स्वामी ने प्रजा के कहने से महलों से निकाला हो ऐसी दुखिया नारी को हे वन के वृक्षों कभी कहीं देखा है ? हे वन जीवों इतने दु:खों और कष्टों से पीडित नारी कभी कहीं तुमने देखी है ? सीता इस प्रकार वियोग अधीन नहीं रह सकती। जल बिना मछली कहीं जी सकती है?

सारे सुख संसार दे दे फिर भी सजनी साजन बिना सुखी नहीं रह सकती। बादल गरज गरज कर खेती पर छा जाये पर खेती बिना वर्षा के हरी नहीं रह सकती। पक्षी पिंजडे में अकुलाता है, आकाश में उडे बिना उसे सच्ची मौज, आनन्द नहीं मिलता है। यह जीवन तो जीवनधन से है जीवन धन बिना नहीं है। यही सब विचारों से अत्यन्त अधीर हो वह सीता गंगा तीर पर आत्मघात करने चली, जीवन लीला समाप्त करने चली। जभी जल में कूदने को तैयार हुई तभी किसी ने पीछे से पुकारा सावधान इस भांति तुम अपना अवसान मत करो। आत्महत्या समान दूसरा कोई जघन्य पाप नहीं है।

सीता ने पीछे मुडकर देखा कि कोई मुनि पास आ रहे है जैसे डूबती नाव को कोई मांझी ही पार लगाता है। वे आनेवाले मुनि कोई नये नहीं थे पहिले के ही परिचित योगी, भारत के आदि कवि प्रचेतस पुत्र, वरुण पुत्र महर्षि वाल्मीकि ही थे। जब मुनि वाल्मीकि सीता के पास आये तो उन योगी ने अपने योग से सारा भेद वृत्तान्त जान लिया और बोले बेटी धीरज धारण करो इस तरह प्राण गंवाना ठीक नहीं संकट में या संघर्षों में इस तरह पागल बन जाना ठीक नहीं। तुम तो विदेह राजा जनक की पुत्री हो इस तरह चिन्ता करना लज्जा की बात है। झूठे अपयश का भागी बनकर इस तरह मरना लज्जादायक है। तुम्हारे लिये यही आज धर्म है कि मिथ्या अपवादों का नाश करो, यह कलंक रात्रि भी मिट जायेगी। सूर्यवंश का प्रकाश उदय करो। मेरे लिये कहना अनुचित है फिर भी तुम्हें कह रहा हूँ पुत्री गर्भवती होकर जल में अपघात कर रही हो। तब महर्षि की ऐसी वाणी सुनकर सीता सावधान हुई जैसे जाग गई फिर नीचे नयन कर मुनि से बोली। मुझे पता नहीं मुनि वर मैं किस ध्यान में सोच में विचार मग्न थी, क्या था, मुझे क्या हो गया और क्या मैं सचमुच जल में डूबने जा रही थी। मुझे सचमुच में कुछ भी पता नहीं। पता नहीं मैं किन विचारों में खो रही थी, किन विचारों में बह रही थी। वैदेही रघु कुल की लाज बचाने को इस जगत में कही न कही ठोर चाहती है। इस जीवन में ही दूसरी बात पतिव्रत दिखलाने को अपनी सच्चाई प्रमाणित करने को यह करने के लिये मैं वैदेही विवश हुई। इतना कहकर वैदेही के आंखों से आंसू बहने लगे। दयालु मुनि भी उस तप्त हृदय की पीडा देखकर विचलित हुये और सोचने लगे इस जहां की भी क्या अलबेली चाल है कही कोई बहाल है तो कही कोई बेहाल है। जिसका पति अवध का नरेश्वर है वह अवधेश्वरी कहाती है। वहीं अवधेश्वरी आज वन में मारी-मारी फिरती है और रहने को कही ठौर नहीं पाती है विधना की इस उल्टी माया पर मुझे बडी हंसी आती है। सब भांति सती यह जो नारी है उस पर ही दोष लगाया है। उन्हीं सब विचारों में मुनि कुछ क्षणों तक लवलीन रहे फिर सीता से बोले पुत्री किसलिये इतनी दीन और अधीर हो रही हो ? तुम्हे रहने को ठौर इस वन का पत्ता-पत्ता दे सकता है, तुम्हारे सतपन पतिव्रत की साक्षी यहाँ का तिनका-तिनका तक दे सकता हैं। अब चिन्ता छोड़ मेरे आश्रम को चलो वहां तुम्हारे रहने को कुटी बना दूंगा। महलों में रहनेवाली को मान सहित समय आने पर महलों में पहुँचा दूँगा। इस तरह सीता को लेकर मुनि अपने आश्रम में आये और सीता के लिये नवीन कुटिया का निर्माण किया इस प्रकार सात्विक वनवासी जीवन बिताने वन में वाल्मीकि आश्रम में सीता पहुंची।

कुछ ऋषि पत्नियों सहित उस कुटिया में सीता ने निवास किया। मुनिवर ने चतुराई से सीता का नाम छुपा दिया कौन है कहां से आई है क्यों आई है। इस बात को परदे में रखते हुये सीता का नाम वनदेवी रख दिया। उस आश्रम में रह कर सीता ऋषि कन्याओं का काम करने लगी। हरिणियों के बच्चों को गोद में खिला-खिला कर सीता उनसे प्रेम करने लगी। अपना मन उनमें लगाने लगी, गायों के बछडों को प्राय: नहलाती, नीर पिलाती थी। आश्रम के उपवन, बगीचों को खुद सम्भालने लगी। बगीचे के उन छोटे-छोटे पौधों को स्वयं पानी से सींचती थी। वहां तुलसी के पौधे आंवले के बिरवे, जूही, गुलाब, चमेली, केतकी केवडे के बिरवे सभी सीता की देख-रेख में खूब लहक उठे। उस वन देवी का हाथ लगते ही वन के सब फूल महक उठे। हर रोज हवा में वीणा की झंकार होने लगी इसप्रकार अपने आपका मन लगाकर जीवन चर्या में व्यस्त रहकर वैदेही अपना वनवासी जीवन व्यतीत करने लगी।

इस प्रकार कुटिया में रहते कुछ महीने बीत गये तब मुद मंगल का समय पास आ गया। गौ, हरिणों के बच्चों में भी अपार आनन्द छा गया। केलों, बिल्वों के वृक्षों में कुछ अजब निखार पैदा हुआ। भूतल की सभी वस्तुएं नवीन लगने लगी। सुमंडल भी नभ से सुमन वृष्टि करने लगा। वृक्षों की डालियां झूम-झूम कर पृथ्वी को चूम रही थी तभी उस कुटिया में पुत्रजन्म की धूम मच उठी। दो-चार दिनों में आसपास के सभी नर नारी को मालूम हो गया कि उस मुनि आश्रमवाली वन देवी ने दो वीर जुड़वे पुत्रों को जन्म दिया है। मुनि वर्ग ऋषि मंडल सब जगह आनन्द छा गया, खूब सारी सत्संग सभाये हुये, संकीर्तन पाठ, यज्ञ आदि धार्मिक विषयक चर्चायें इत्यादि बहुत हुये। गुरु बाल्मीकि ने उन बच्चों का नाम करण संस्कार किया। पहले बडे का नाम लव रखा और फिर ऋषियों की सम्मति से दूसरे पुत्र का

नाम कुश रखा। महर्षि वाल्मीकि का सीता को दिया हुआ वचन याद रहा और उन्होंने सिलसिलेवार रघुकुल की गीता को लिखना आरम्भ किया। वह रघुकुल की क्या गीता थी वह तो मुनिराई का आदि काव्य था। आज भी उस रघुराई की कविता का कवियों में आधिपत्य है। सचमुच चान्द्रायण की भांति वह आदि काव्य वाल्मीकि रामायण निर्मल है मानो भूमंडल का तारागण है। इसी रामायण के कारण आज भी भारत की छवि उज्ज्वल है, भारत धर्म परायण देश माना जाता है। कलम में भी कहां शक्ति है जो उस रामायण की परिपूर्ण महिमा लिख सके। मुनिवर सुबह-शाम राम चरित्र लिखने लगे और समय के साथ-साथ दोनों भाई लव-कुश बढ़ने लगे।

ये चित चोर जब अंगुली के बल कुटी में चलने लगे, अपने तोतली वाणी से सब को प्रेम विभोर कर दिया, मोह लिया। इस तरह थे दोनों राजकुमार लव कुश मुनि कुमारों और ऋषि कन्याओं के बीच पलने लगे। ये दोनों राजकुमार राजसी चाल से चलते थे। चुपके-चुपके मुनि के वेद उठा लाते और मां के समीप आकर पढ़ने लगते। जब कोई आकर उनसे ये छीन लेने आता तो वे आगे बढ़कर उससे लडने लगते। पुचकारने पर मान जाते थे और चिल्लाने पर चिल्लाने लगते थे। माता और गुरु जब मनाते थे तो मान भी जाते थे। पति भक्ता सीता को अब भी पति प्रेम का विरह रूलाता था पर दोनों शिशुओं के कारण सीता का समय सुख सहित कट जाता था। इसी भांति उस आश्रम में लव-कुश का बचपन बीता, लडकपन शुरू हुआ।

आठ वर्ष के लवकुश हुये तब मुनि वाल्मीकि ने उन्हें धर्म, कर्म की शिक्षा दी। यज्ञोपवीत संस्कार किया। दोनों भाई विधि विधान से जैसे बतलाया नित्य कर्म करते थे। अपना मुख्य धर्म समझकर विद्या अर्जन के साथ-साथ बल अर्जन करते थे। शक्ति संचय करते थे। प्राय: सिंह शावकों के साथ क्रीडा करते थे। उनसे भिड जाते थे अपने स्वाभाविक बल द्वारा उनको जीत लेते थे। नित्य गंगा स्नान करते थे। गौचारण के प्रेमी थे। नित्य प्रतिदिन गुरु की सेवा करते थे। माता का मान सम्मान आदर करते थे। मां भी अपनी समताओं में क्षमताओं में कभी कोई कमी उनमें नहीं रहने देती थी। इस तरह उन कुमारों का लालन-पालन करती थी। वे बालक मां को वनदेवी कहकर पुकारते थे। इसके सिवा उन्हें और कुछ विदित नहीं था। मुनि वाल्मीकि उन्हे वेदाध्ययन के साथ-साथ क्षत्रिय विद्या का भी पाठ पढ़ाते थे। संगीत शास्त्र का ज्ञान कराते थे। नित्य प्रतिदिन वीणा पर रामायण का पाठ भी गाते थे। आश्रम में जब कभी मुनियों का ऋषि वृन्दों का सत्संग होता था तो ये दोनों बालक रामायण का वीणा पर गान करते थे। रामायण का गान करने में कहते थे सीता चरित्र जहां प्रधान है जिसने राजसी सुख त्याग अपने स्वामी के साथ वनों में रही और अपने पति रघुनाथ का ही सदैव नाम रटती रही। ऐसी महान नारी का भारत की एक सन्नारी की हम कथा सुनाते है। जग में कहां मिलती है ऐसी सती महान जिसने प्राण रखे पति हित जान। लंका मे रह कर जिसने अपना धर्म बचाया रावण को फटकार। हनुमान मन्दोदरी सभी जानते है जहां सीता चरित्र प्रधान ऐसे ही भारत की सन्नारी की हम कथा सुनाते है। पति से मिलने के लिये जिस समय मूंद लिये थे नैन तब कूदी आग में अति बेचैन और साक्षी दी अग्नि में ऐसी सती का चरित्र महान। जिसके सुनने मात्र से होते है कर्ण पावन, रत्न रूप है जगत में सिया चरित्र ऐसा है यह चरित्र महान। भारत की उस सन्नारी की हम कथा सुनाते है।

२) राम का अश्वमेघ यज्ञ- सीता के बनवास को कुछ वर्ष बीत गये पर प्रभु श्रीराम के हृदय में निरन्तर संघर्ष चलता रहा। मन का सन्ताप नहीं मिटा तब एक दिन गुरु वशिष्ठ के आश्रम में गये और सूखपुर्वक सानन्द वहां बैठकर सत्संग करने लगे तब मुनि कहने लगे, अग्नि, वायु, जल, नभ और पृथ्वी इन सबसे ही यह जगत निर्मित है। विश्वनियन्ता ने इन पंच महाभूतों से ही पूरे जगत का निर्माण का खेल किया है। पूरी सृष्टि को जड और चेतन दो भागों में बांटा है और अपने नियमित विधान के अन्तर्गत ही सम्पूर्ण सृष्टि को रखा है। उस विश्व नियन्ता ने पंचभूतों को निर्माण किया, दश इन्द्रियों को बनाया, जड में चैतन्य मिलाकर नाना योनियां बनाई उसी से व उत्पति जीव कहलाया। अपने ही अंशों से उन योनियों में वह नियन्ता आता है जाता है। वह लीलामय अपनी इच्छा से ही इस प्रकार भांति-भांति की लीला दिखलाता है। वही लीलामय का अंश प्रकृति के मिलने से जीव कहलाता है। जब उसे यह ज्ञान हो गया तो वह ही करुणासीव हो गया। वास्तव में जीव ब्रह्म है उस पर माया का आवरण पडा है। जिस तरह मिट्टी से बना मिट्टी का घडा, स्वर्ण से बने स्वर्ण आभूषण, जब तक बिन्दु को अपना ज्ञान न हो तब तक पानी की बूंद कहलाता है। जिस क्षण भी उस बूंद को अपना आभास हो गया उसी समय वह जल बूंद महासागर बन जाती है। पर ऐसा ज्ञान मिलना या होना अत्यन्त दुष्कर है क्योंकि सामने प्रकृति, माया का चक्कर है। यह भूल भुलैया वाला अत्यन्त कठिन और दुस्तर पथ है। तब तक जीव को माया में क्षणभर भी चैन नहीं पा सकता जब

तक वह साधनों द्वारा चंचल चित शान्ति न पाता है। सर्वश्रेष्ठ योग वही कहलाता है जिससे चित्त वश में हो जाये। तीर्थयात्रा, पूजन, भजन ये सब इसी निमित्त किये जाते है कि किसी भांति चित वश में होकर एकाग्र हो और प्रभु स्मरण हो जिससे सुख शान्ति प्राप्त हो। चित के उलझे फन्दों की जो कडियों को सुलझाता है वही योगेश्वर कहलाकर अपने स्वरूप को पाता है। इस चित्त में ही घर व घरवालों का मोह समाया है, वसुधा का मोह समाया है इसी से इस जगत जाल में बार-बार प्राणी भरमाया है। सब कर्म जगत के करते है, चित्त पर भी पूरा शासन है वही सच्चे सम्राट है। जिनके पास ऐसा सिंहासन है। यह चित्त स्वप्न में भी किसी का मीत नहीं हुआ है। यह मन प्रमथन स्वभाव वाला और चंचल है। इसकी प्रीति ऐसी है जैसे बालू की दीवार जो कभी ठहरती नहीं। तुम अद्वैत हो, अखंड, अमर, अज, अविछिन्न हो, अविनाशी हो, जिस जगह चित्त की पहुंच नही उसी पद के महान वासी हो। जहां जीव और माया का सम्बन्ध है वहां धोखा है, वहाँ नाम रूप का ही गुनना है। बोधमय शान्ति धाम वही है जहां न कुछ कहना है और न ही कुछ सुनना है। हमारी यह आत्मा अमर है अविचल है। सदैव दृष्टि दृष्टि के भेद से अलग है। वहां पर तनिक भी वाणी का नाम नहीं है लेखनी भी उसके बारे में क्या लिख सके वहां तो लेखनी में भी दम नहीं है। जब वहां जन्म ही नहीं है तो मृत्यु की बात ही क्या है न तो वहा कोई उत्पत्ति ही है और न ही कोई उत्पात ही। न कोई बैरी है न कोई प्यारा न ही कही पुत्र है न ही कोई स्वामी, न कोई दास। सदा सचिदानन्द का ही सहारा है। जहां रात दिन का कोई झमेला नहीं है। जहां सदा ज्ञान रूपी रवि अकेला है, स्वयं प्रकाशित है। नानात्व का लेश भर भी नाम नहीं। न तो वहां पर कोई रूप है और न ही कोई नाम। जहां न तो मैं हूँ न तू हैं यह भेद नहीं दिखता है वहां तो केवल एक अनहद का स्वर ही गूंजता है ओम। न वह शान्त है और न ही क्रोध में, वह तो महाबोध है।

गुरु ग्रह में जब इस प्रकार सत्संग होता था तब प्रकृति ने उसी समय थोडा सा उस रस में रंग भंग किया। उसी समय लक्ष्मण घबडा कर वहां आये और बोले हे अवधेश, पाप रूपी कीचड में यह अयोध्या फंस गई है। कुछ दिनों से देख रहा हूं कौशल ने अपना रंग बदल डाला। जिस तरह से अब तक अवध का राज्य चलता था उसका ढंग बदल गया है। हम भी है और अवध भी है पर उसकी शोभा की छटा वैसी नहीं है। अब अपने-अपने कर्तव्यों का प्रजा को ध्यान नहीं रहा, न ही अपने कर्तव्यों का दायित्व निभाते है। जिसके प्रताप से सृष्टि नियम नियमित रूप से चलता था, जिसके शासन से शासित हो सूरज चढ़ता था, ढलता था। राजा तो आज भी वो ही है पर आज राज्यश्री रोती है। सावन में लूए चलती है और फागुन में वर्षा होती है। वर्णाश्रम धर्म कर्म बदलने लगे। नीति नियमों का बन्धन नहीं रहा। न ही वो दिन रात रहे न ही वह श्रमिक श्रम रहा और न ही वह प्रजा रही। विस्मय हो रहा है कुछ ही समय में यह सब कर्म धर्म बदल गये।अब तो जीव मात्र का पेट पालना ही कर्म रह गया। जो ब्राह्मण वेद पाठी था वह बकवादी होता जाता है। जो वर्ण देश का रक्षक है वही व्यसनी होता जा रहा है। जो वैश्य जाति है अति दिव्य व्यवसायी है वही आज व्यभिचारी हो रही है। जो ब्रह्मचारी, व्रतधारी थे लौकिक सुख ही अब उनका कर्म हो गया। पत्नीव्रत पालने के बदले पत्नी त्यागना ही धर्म हो गया है। बालक वृद्धों से झगडते है उनका आदर सम्मान नहीं करते। मूर्खों का आदर होने लगा और विद्वान धिक्कारे जाने लगे। पाखंडी, पापी दुष्ट लोग स्वामी की पदवी पाते है। जो हाथ स्वयं कलाकार थे वे अब किसी औरों के आश्रित हो गये। अपना उद्यम तो नष्ट कर चुके है अब लोभी हो गये है जूठे निवालों के। यह सब बाते मैं सिर्फ मौखिक ही नहीं कह रहा हूं। इन समाचारों के साथ सब कुछ प्रमाण देता हूं। अयोध्या में इस भांति कभी दुर्भिक्ष अकाल नहीं पडते। पिता के जीते जी पुत्र कभी अयोध्या में नही मरते थे। पर आज राजद्वार पर एक वृद्ध ब्राह्मण रोता हुआ धरना दिये बैठा है। मृत पुत्र का शव साथ में लिये बैठा है। वह कहता है जब कभी सृष्टि के नियम में ऐसा परिवर्तन होता है तो इन सब उत्पातों का उत्तरदायी एक मात्र शासन या राजा होता है। अब वह हठपूर्वक कर रहा है मैं अपना न्याय कराऊँगा या तो जीवित बेटा ले जाऊँगा या अपने प्राण यहां पर त्याग दूंगा।

लक्ष्मण की यह बात सुनकर श्रीराम गुरु के पास से उठे और गुरुवर सहित अपने राजमहल के राजद्वार पर आये। उस ब्राह्मण ने प्रभु श्रीराम को अपनी ओर आता देखकर ऐसे कठोर वचन कहे। आप ही के वंश में सगर, रघु, दिलीप हुये पर ऐसा क्रम कभी नहीं देखा कि पिता जीता रह जाये और अपने बेटे को मरता देखे। हे राम अब तुम्हारे इस शासन में क्यों यह सब नियम बदल रहा है। यह देखकर जी जलता है कि सूर्यकुल का सूरज अब ढल रहा है। यह ब्राह्मण के वाक्य सुनकर राम के हृदय में यह शूल से चुभे और अपने गुरुवर से पूछा किस लिये यह प्रकृति का निमय प्रतिकूल हो गये। तब गुरुवर वशिष्ठ ने कुछ काल ध्यान मग्न होकर फिर सब हाल सुनाने लगे। वास्तव में एक शूद्र बैठा अत्यन्त अधर्म कर रहा है। वह विन्ध्या चल के गहन वन में ब्राह्मण का कर्म कर रहा है। इस अनाधिकार ही के कारण

सब नियमित क्रमों का संवरण हुआ अयोध्या में दुर्भिक्ष पडा और ब्राह्मण के बेटे का मरण हुआ। गुरु के यह वचन सुन प्रभु श्रीराम अधीर हो गये। फिर क्रुद्ध हो धनुष पर तीर चढ़ाया और एक ही बाण से शुद्र का शीश काट चढ़ाया उसी समय ब्राह्मण का पुत्र जीवित होकर उठ बैठा। तब ब्राह्मण अपने पुत्र सहित सानन्त अपने घर चला गया। तब करुणानन्द श्रीराम गुरु वशिष्ठ से बोले हे भगवान किस कारण से इस दास के शासन में अन्धेरा हुआ। किस कारण से शूद्रों के हृदय में ये अनाधिकार का बीज उगा ? वह क्या काली करतूतें हैं जिनसे ये सब कुरीतियां फैली है। अवध के इस निर्मल अम्बर पर ये श्याम घटाये क्यों छाई है ? अब तक तो वेदादिक सद्ग्रन्थ ही पूजनीय रहे है पर अब नये-नये कल्पित पंथ पैदा हो रहे हैं। हरि मन्दिर मौज मन्दिर बन गये, तीर्थों में पाप प्रविष्ट हुआ। पर हित करना समाज भूल गया और परधन हरना ही उसे अभिष्ट हुआ। जिसको देखो उसके अन्दर स्वार्थ ही स्वार्थ भरा हुआ है। बच्चा-बच्चा समाज का केवल अपना हित सीख रहा है। स्नेह सिर्फ अपने जनों तक ही सीमित रह गया है। देश का हित अपने हित के बन्दीघर में ही बन्दी हो गया है। मेरा नाम क्यों नहीं ऊँचा यह विष नेताओं में फैल गया है। प्रजा स्वतन्त्र होकर कहती है मन्त्रियों और नेताओं का कोई काम नहीं। ये सब चक्कर ऐसा है जिसने हर जगह अनीति भर डाली। रात्रि को दिन कर दिया और दिन को रात।

यह सुनकर गुरुवर बोले इसका ठीक-ठीक कारण जान लो। ब्राह्मण का वध करने से धर्म की लीक बिगड गई। कितना भी कर्म हीन नास्तिक पापों से मंडित था रावण फिर भी वह पौलस्त्य वंश में विद्वान पंडित ब्राह्मण था। उसको तुमने युद्धस्थल में क्षत्रिय होकर संहारा है इसलिये उस ब्राह्मण वध का ब्रह्म दोष अवध को लग गया है। तब प्रभु श्रीराम बोले हे गुरुवर उस पाप का किस विधि से उद्धार और उपचार हो सकता है। तब गुरु ने विचार करके बताया कि इसके लिये उपयुक्त उपाय यज्ञ करना ही है। यदि अश्वमेघ यज्ञ किया जाये तो ये सारी बाधायें मिट जायेगी। फिर ये ही जो श्याम घटाये छायी हुई है वे आनन्द अमृत की धारायें बरसायेगी। पृथ्वी पर यह भारत आर्यदेश धार्मिक तत्वों का शिरोमणि है। अपने सब दुष्कर्मों को यह यज्ञ द्वारा धो देता है। जब-जब भी देश पर विपत्ति आई है तब हम यज्ञ कर के उसे मिटा देते है। अपनी प्रत्येक कठिनाई को हम इसी भांति निवारण करते है। वर्षा होने के हेतु हम यज्ञ करते है, पुत्र प्राप्ति के हेतु पुत्रेष्टि यज्ञ करते है। हां पर नाना प्रकार के यज्ञों का विज्ञान व विधान है इस तरह की विधान जगत में और कहीं नहीं है। अतएव इस पाप के आये हुये संकट को आज अपने पुण्यों से हटाना है। अब अश्वमेध यज्ञ कर कौशल का जग में डंका बजवाना है। गुरु की आज्ञा शिरोधार्य कर हर्ष सहित प्रभु श्रीराम चले तब मार्ग में लक्ष्मण बोले हे नरेश मैं भी कुछ कहूं। गुरुवर का कथन सत्य है, मति गति भी यही कहती है पर मुझे इस अवनति का कारण और ही एक बात दिखती है। क्या आप भी जानते है निर्दोषिनी सीताका आपने त्याग किया है। राजाधिराज को कुछ इस ओर ध्यान रहे कि सतवन्ती को त्यागने पर उसकी गीली दुखती आंखों को हे करुणेश आप भूल ही गये इसलिये सौ अश्वमेध यज्ञ करने पर भी आप अवध में कुशल नहीं पायेंगे। दीनों का दिल दुःखाकर सुख से कौन सोया है ? अबलाओं को सताकर किसका बल बढ़ा है ? हर प्राणी अपने किये का फल भोगता है। वह आम कैसे खायेगा जब नीम का पेड बोयेगा ? अब यदि प्रजा रोती है तो उसे रोने दो। प्रजा से कहदो सीता का श्राप अपना बदला अब प्रजा को रुला रुला कर लेगा। भूचाल हो या दुर्भिक्ष कब तक दुनिया में पाप दब कर रहेगा। हृदय के भीतर जिसकी मूर्ति छिपी हुई है कह दो उसे क्षमा कर दे अपनी दया दिखाकर। लक्ष्मण के इन वचनों को सुनकर रघुवीर व्याकुल हुये। नयनों में अश्रु प्रवाहित हो गये और उतर दे दिया। जैसे ही राजा राम राज द्वार पर आये तो उन्होंने अश्वमेध यज्ञ करने के लिये आज्ञा दी।

नागरिकों ने अयोध्यानगरी को विविध भांति नया बना डाला। नये-नये भवनों के निर्माण से स्वर्ग की भांति सजा डाला। मणि, मोती माणिक्यों से अवधपुरी जगमगा रही थी, शोभा पा रही थी। उस पुरी की शोभा देख-देखकर दिन में दिवाकर और रात्रि में निशाकर लजाता था। सभी लोग उस पुरी को सभी भांति सजा रहे थे। भाई भरत भी अश्वमेघ यज्ञ के आयोजन का सम्वाद देश में चारो ओर भेज रहे थे। गणपति, सुरपति इन्द्र सभी देवता आदि उस समय अवध में पधारे। यम, काल, वरुण, मारुत, कुबेर, सभी दिक्पाल आये। सभी शक्तियां वाणी, रुद्राणी, इन्द्राणी, सभी ऋद्धि-सिद्धियाँ आई सभी ऋषि-मुनि गौतम, कणाद, जाबलि, कपिल, अंगिर, अगस्त्य, कश्यप, पराशर, याज्ञवल्क्य, भृगु, अत्रि, पुलस्त्य वहां पर पधारे। सभी प्रधान प्रधान वानर यूथपति नल, नील, द्विविद, अंगद और सुग्रीव तथा त्रिजटा, सरमा के साथ लंकापति विभिषण सम्मिलित हुये अर्थात उस महोत्सव में सभी देवता, ऋषि मंडली, नर वानर दल, निशाचर दल, राजा लोग, विप्र वर्ग सभी आये। इन सब अतिथियों का समान मान-सम्मान और आदर हो रहा था। दूसरी ओर यज्ञाचार्यों द्वारा पूरे विधि विधान से यज्ञ कराया जा रहा था। सरयू के तीर पर यज्ञ वेदी बनाई गई तब कुछ ऋषि मुनि प्रभु श्रीराम से बोले, हे अवधेश

इस यज्ञ के होने में कुछ आपसी धर्म की उलझन है, कुछ मतमतान्तर है कि शास्त्रों में ऐसा वर्णन है कि पत्नी के बिना यज्ञ अधूरा ही रहता है। यज्ञ फलदायक तभी होता है जब अर्द्धांगिनी साथ में हो, तभी यज्ञ बलदायक हो सकता है। यदि सीता कहीं जीवित हो तो ढूंढकर उन्हे बुला लिया जाये अन्यथा यज्ञपूर्ण करने हेतु दूसरा विवाह कर लिया जाये। दूसरे विवाह के शब्द रघुपति ने बडे क्लेश से सुने और फिर दीन भाव से बोले हे महात्माओं राघव पर बडी ही कृपा होगी जो आप इस प्रकार की आज्ञा न दें। मेरे आपके इस वचन का उल्लंघन का अपराध क्षमा करे। चाहे मेरा पूरा राजपाट चला जाये, मैं रंक हो जाने से भी नहीं डरता। मुझे आप के चरणों की शपथ है मैं सब सत्य कह रहा हूँ, चाहे यह यज्ञ भी बिना पूर्ण हुये रह जाये, चाहे सभी राजा लोग मुझे त्यागकर अपने-अपने घर चले जाये, चाहे सूर्यवंश का सूरज अपमान की इस रात्रि में अस्त हो जाये, सरयू का जल ज्वाला बन खौलने लग जाये, चन्द्रमा सागर बन जाये या चन्द्रमा सागर में डूब जाये, पृथ्वी रसातल में चली जाये, तल वितल तलातल सभी फूट जाये इतना सब विप्लव होने पर भी राघव का दूसरा विवाह नहीं होगा यह मेरा निश्चित मत है। सब पंचों के सामने जिसे अर्द्धांगिनी का भाग दिया है उसका स्थान विश्व में कैसे कोई और ले सकती है। अर्द्धभाग की जो स्वामिनी है वही अर्द्धांगिनी होगी मेरी, जिसे वाम भाग में बिठाया है वही वामांगिनी है मेरी। जब वेदशास्त्रों ने नारी के एक पतिव्रत का विधान गाया है तो गुरुजनों ने पुरुषों को भी एक पत्नीव्रत सिखलाया है। आर्यजनों में नारी को दूसरी बार तेल विधान नहीं चढ़ता है तो फिर आर्यों में नर भी वर्जित है यह दूसरा भार ढोने से। इसी कारण से यह व्रत समान है और इस गठजोडे की आन है। ये ही दो दिल हिलमिल कर इस गठजोडे की शान रखते है। हृदय और मन एक ही है, लगन एक ही है फिर यह फेंर कैसा ? दो जीवन एक ही ग्रन्थि बन्धन में बन्धते है। दोनों का प्राण और तन एक ही है। फिर सीता का पति राम है तो इस राम पत्नी दूसरी क्यों वह तो सीता ही है। राम के इस प्रकार उद्‌गार सुनकर ऋषि मुनि वृन्द में विचार होने लगा। तभी सबकी सम्मति से यह विधान निश्चित हुआ सोने की सीताकी प्रतिमा बनाई जाये और उसे वामांग में प्रतिष्ठित की जाये। तभी उस शुभ समय में सरयू के तीर पर यज्ञ शुरु हुआ। यज्ञ मंडप में मुदित मन हो राजाराम ने यज्ञ दीक्षा ग्रहण की। गुरु वशिष्ठ बोले हे भरतलाल अब विश्वविदित अश्व लाओ जो श्वेत वर्ण हो, श्याम कर्ण, श्रुति और शास्त्र वर्णित लक्षणों वाला हो। वह अश्व विश्व विजयी करने जाये और पृथ्वी के सभी भूत जिससे पराजित हो इससे श्रीरघुवीर जय जयी बने और विश्वम्भर के पद से विभूषित हो। तब कैकयी सुत भरत जो आज्ञा कहकर चले और वर्णित अश्व यज्ञ में लेकर आये।

तब रघुपति ने विधान सहित उस अश्व का पूजन किया और उसके सिर पर एक ताम्रपत्र लिख कर बांधा गया कि इस सम्पूर्ण भूमंडल की प्रजा आज से यह स्वीकार कर ले अवधेश श्रीराम अब चक्रवर्ती सम्राट हो गये है। जो कोई भी इस अश्व को रोकेगा वह श्रीराम की सेना के साथ रण में लडना स्वीकारेगा। इस तरह यज्ञ का श्यामकर्ण जब सब भांति सज धजकर तैयार हो गया तो मुनिगणों ने विचार किया कि पहली बार किस ओर जाये तभी कुछ ऋषियों ने प्रभु श्रीराम को अपने मन की व्यथा सुनाई और बोले हे प्रभो लवणासुर के अन्याय और अत्याचार दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे है और कहा कि पहले अश्व मथुरापुरी कि तरफ जाये जहां लवणासुर का राज्य है उसका वध कर इस पृथ्वी का रहा सहा भार हरा जाये। ऋषियों के वचन सुनकर उनके कष्ट जानकर राजीव लोचन श्रीराम का हृदय पिघला और शत्रुघ्न को बुलाकर बोले हे रिपुदमन जो दुष्ट दल मुनियों की संकट विपत्ति में डालता है वह इस भूमंडल में मेरा सबसे पहला शत्रु कहलाता है। इसलिये इस अश्वमेघ यज्ञद्वारा उसका मद हरना अत्यन्त आवश्यक है, अपने जीतेजी यह पृथ्वी पाप रहित करना आवश्यक हे। इस हेतु लवणपुर (मथुरा मंडल) में जाकर दुष्ट दैत्य लवणासुर से संग्राम करना आवश्यक है और यदि वह दुष्ट अपनी दुष्टता नहीं छोडता है तो उसका संहार कर दो। वह दुष्ट इतनी आसानी से नहीं मारा जायेगा। इसलिये यह अमोघ बाण ले जाओ जिससे वह संहारा जायेगा। यह कहकर प्रभु ने अभिमन्त्रित कर वह शर शत्रुघ्न के हाथ में दिया। यह शर सुरराज इन्द्र के वज्र तुल्य ही था। प्रभु श्रीराम बोले साथ में अपने पुत्र सुबाहु और यूपकेतु को भी लेते जाना। अपने इन दोनों पुत्रों को उस दैत्य के पुत्रों से लडवाना। उस दुष्ट का वधकर उसे ऋषि मुनियों के वध का बदला लेना। फिर उसे जीत कर उस नगरी को दो भागों में बांटकर दोनों पुत्रों को दे देना।

शत्रुघ्न जो आज्ञा कह प्रभु श्रीराम को शीश नवा गणपति मना कर शत्रु हनन को चले। जब शत्रुघ्न राम की जय करके चले तब दुनिया भर के छल और पाप भयभीत होकर कांप उठे। आगे-आगे यज्ञ अश्व चल रहा था और पीछे-पीछे घुड़सवार सैनिक। शत्रुघ्न मध्य में रथपर बैठे थे और चारों ओर हाथी पर सवार सैनिक दल था। ऐसा लग रहा था मानो काल भुजदंड से संसार जीतने जाते है। सुरगण यह शोभा देख देख आनन्द भरे उमड रहे है। रघुवीर की जय से वीरों में अपूर्व उत्साह बढ़ाते थे। इस भांति अश्वसहित पूरी सेना लवणासुर

नगरी में पहुँची मानो यम अपने गणोंसहित लवणासुर नगरी में आया हो। लवणासुर ने यह सुनने पर क्रोध से आंखे लाल करके तत्काल अश्व पकडने की आज्ञा अपने अनुचरों को दी।

फिर लवणासुर अपनी सेना से ललकार कर बोला वीरों अब लडने के लिये तैयार हो जाओ। कैसा अच्छा अवसर आया है कि घर बैठे ही भोजन पाया है। दशरथ सुत शत्रुघ्न ने ज्वालामुख की नगरी पर हाथ डाला है इसलिये मुझे तुम लोगों से यही कहना है अपनी माता का मान बढ़ाना, मां का दूध पिया हो तो उसकी लाज रखने हेतु खून की नदी बहा देना। यह सुनकर उन दुष्ट निशाचरों का दल भीषण जय जय कार कर युद्ध करने के लिये तैयार होकर आगे बढ़ा। लवणासुर के पिता मधु दैत्य को कुम्भनीसी (कुम्भकरण की पुत्री) दी थी। उसी मधु सुत लवणासुर ने तप में तपकर शंकर से एक बडी महान शक्ति प्राप्त की थी। शत्रुघ्न ने जब उस लवणासुर से भिड जाने का साहस किया तब सुरगण बडे प्रसन्न हुये और शत्रुघ्न का जय-जयकार करने लगे। तब रण बांकुरे शत्रुघ्न अपनी सेना से इस प्रकार बोले बहादुरों आगे बढ़े चलो। इस देश का लहू है तन में वह आग वतन पर बलिदान करो। अब देर करना अच्छा नहीं है इन दुष्टों के दल का दलन करना है। खून की मेहन्दी से इन हाथों को रचाना है। युद्ध के इस महासागर में हमें इस बैरी को डुबाना है। दैत्य का रुतबा दबदबा मिट्टी में मिलाना है इसलिये वतन की शान पर जियो और वतन के मान के लिये मर मिटो।

इतने में ही उदंड निशाचर दल आ गया तभी कौशल सेना उससे बडी वीरता से जूझ पडी। सुजनों की मुठभेड दुर्जनों से हुई। तीखे बाणों की वर्षा से फिर आज पृथ्वी लो लुहान होकर लाल हुई। पृथ्वी डोलने लगी, आकाश हिला इतने पर भी वह शत्रु टोली डटी रही। उन युद्ध वीरों के बीच रण की होली खेली गई। कुछ पलों में ही उस शत्रु निशाचर का गर्व चूक हुआ। खंड खंड होकर राक्षस सेना टूट गई। शत्रुघ्न पुत्र यूपकेतु के द्वारा रिपुकेतु का वध हुआ और कुमार सुबाहु द्वारा मातंग वीरगति को प्राप्त हुआ।

इन दोनों के मारे जाने से शत्रुदल के हौसले टूट गये। सारे शत्रु पक्ष के निशाचर युद्ध स्थल छोडकर भागने लगे। तब लवणासुर ने क्रोधसहित शत्रुघ्न पर वार किया। फिर रघुवंशी ने भी उसी समय वीरोचित विकट प्रहार लवणासुर पर किया। जब बाण लगा तो कुछ शब्द हुआ, आँखों की त्योरी चढ़ी, आंखे फिरने लगी कुछ ही क्षणों में लवणासुर योद्धा का प्राण गया। उसी समय निशाचर के दुर्ग पर रघुवंश की विजय पताका फहराई। पृथ्वी आकाश जय कौशलेश, जय अवधेश, जय रघुराई की पुकारने लगे। मथुरा के सम्पूर्ण राज्य को दो भागों में बांटकर विश्वनगर यूपकेतू को दिया और मथुरा का राज्य पुत्र सुबाहु को दिया। इस तरह विजय पाकर शत्रुघ्न दूसरे देशोंको चले। अश्व मेघ का विश्वभर को सन्देश देना था। सब तरफ अवध की धाक जम रही थी। जगह-जगह विजय पताका लहराने लग गई और इस तरह शत्रुघ्न अवध के राज्य का प्रसार कर रहे थे।

एक दिन प्रभु श्रीराम ने महान सभा बुलाई उससे सभी सामन्तगण अपने-अपने योग्य स्थान पर बैठे थे। प्रजा सहित सुग्रीव विभीषण सारा मन्त्रिदल बाँयी ओर बैठा था। पीछे की ओर से भाई भरत चंवर डुला रहे थे। बजरंगबली हनुमान प्रभु चरणों में बैठकर पाद संवाहन कर रहे थे। गुरु जन मंडल, विप्र वर्ग, मुनि मंडल रघुवर के दाँये ओर शोभायमान था। तभी भाई लक्ष्मण आये और आकर प्रणाम किया और बोले प्रभु एक निवेदन है कि सुन्दर शोभा की खान दो साधु बालक द्वार पर खड़े हुये है जिनका लव कुश नाम है। दोनों भी वीणा पर अपनी अनुपम वाणी से साहित्य और संगीत सहित माता सीता का चरित्र सुनाते है। ऐसे अवसर पर इस राजसभा में उनका आना भी स्वीकार किया जाये। आपकी आज्ञा हो तो उन दोनों को भी बुला लिया जाये लक्ष्ण उन बालकों का गुण गान करने लगे और प्रभु श्रीराम कुछ उनके बारे में सोचने लगे। लक्ष्मण बोले दोनों ही बालक सुन्दर है उनके मुखपर तेज है उनका स्वरूप देख कर तो चांद सूरज भी लजा रहे है। निर्भय है, अभिमानी है, निर्लोभी है, निश्छल है। कोमल होते हुये भी सिंह समान बलवान है। उनके धूल धूसरित चेहरे रत्नों के समान दमकते है। वेशभूषा बनवासी की सी है पर चेहरे पर राजाओं का सा क्षत्रियों का सा तेज है। उनके चितवन और तौर तरीकों से वे क्षत्रिय समान लगते है। कमर में तर्कश लटक रहा है। अवधपुरी में सीता का गान सुनाते है जिससे लोगों में माता सीता पर श्रद्धा बढ़ती जाती है। लोगों की जो दृष्टि सीता के लिये पृथ्वीपर थी अब उसकी महिमा सुन सुनकर अम्बर पर उठती जा रही है। प्रजा अपनी पिछली बातों का याद कर अत्यन्त पश्चाताप कर रही है। स्मरण कर माता सीता का जाप कर रही है। इसलिये उनके गीतों के बोल में जादू लगता है। लगता है इन तपस्वियों के शरीर में कोई फरिश्ते ही अवतीर्ण हुये हो। सृष्टि कर्ता ने सभी रत्नों को मणि, माणिक मुक्ता, सूर्य, चन्द्रमा को निचोड कर उन सबके रस तत्व से इन दोनों बालकों को सृष्टि में रचा हो। शरीर में भस्म रमाये हुये ये भावुक मन

को अच्छे लगते है मानो माया के पर्दे में ये दो ईश्वर के अंश सुहाने लगते हैं। इनकी उपमा किसी से नहीं हो सकती। इनकी उपमा एक दूसरे से ही है। आप जैसा भी उनको जानने की कोशिश करेगा तो भी उनको उनसा ही पायेगा। छोटी-छोटी वीणाओं पर उनकी छोटी-छोटी कर अंगुलियां इस तरह चलती है जिस तरह मुनियों के हृदय से अनहद की ध्वनि निकलती है। जब वीणा के तार पर तान झंकारते है तब राग प्रकट होने लग जाता है। उनके इस वीणा से सात स्वरों का मधुर मिलन चौदह लोकों में व्याप्त होकर प्रकाशित करता है। इसलिये हे प्रभो फिर से विनती है कि उनको बुलाकर उनके इस स्वर्गीय गान द्वारा यह राजसभा जागृत हो।

तब राजाज्ञा से संकेत हुआ बुलवाओ उसी समय दोनों बालक अपनी वीणा वाद्य समेत आये। उन्हें देखकर पूरी सभा की आंखे झपक उठीं इतना मनोहर रूप मानो जैसे प्रात:काल की धूप निकली हो। राजा को अपना पूज्य जान शिष्टाचार सहित उन दोनों बालकों ने अपना शीश नवाया तब मन्त्रियों ने उन्हे उचित आसन देकर प्रभु श्रीराम के सम्मुख बिठलाया। आसन पर तो वे पीछे बैठे पर सबके दिलों में पहले बैठे। आते ही सब की आँखों में घर कर गये। प्रभु ने पूछा कौन हो तुम, परिचय तुम्हारा, तो बालक बोले संगीतज्ञ और आगे तो हमारा मर्मज्ञ परिचय हमारी कला ही बतायेगी। हे राजेश्वर ये दो बालक तपस्वी वेश में है फिर कौन सा यह प्रश्न है यह प्रश्न तो बडा ही अद्‌भुत है। तब प्रभु श्रीराम विहंस कर बोले, मेरे पूछने का केवल इतना ही तात्पर्य है कि तुम किसके सुन्दर बालक हो ? तुम्हारे पिताश्री कौन है ? बालकों ने उत्तर दिया सभी जनों का पालन पोषण करता है हम भी उसी के जग के है जो जगत का सृजन करता है। प्रभु ने फिर पूछा तुम किसकी गोदी के लाल हो तब वे बालक स्वाभिमान से बोले हम वनदेवी के पुत्र है। किसके शिष्य हो ? यह सुनकर उन बालकों में उत्साह बढ़ा और बोले मुनिवर वाल्मीकि जी हमारे गुरु है। फिर वे बालक बोले राज सभा जैसा हम वाक्य विवेक, शिष्ट नहीं जानते, हम तो रमते दो साधु बालक है और अपनी एक धुन जानते है। आपका यह राजसदन देख कर उमंग सी उठ रही है कुछ सुनना चाहो तो सुनादे। हम सीता चरित्र सुनाते है उसे ध्यान देकर सुनियेगा। आज्ञा पाकर उन बालकों ने तुरन्त अपनी वीणा के तार छेडे तब पूरा दरबार उनके एक ही लय और मुखडा सुनकर मुग्ध हो गया। बोल थे कि हम भारत की एक सन्नारी की कथा सुनाते है। ऐसा लगता था मानो साक्षात कला कलाप प्रकट हुआ। तान से अलाप स्वर का अवरोह इत्यादि बडी कुशलता से गा रहे थे। गणेश जी को मनाकर गुरु का ध्यान धर बालकों ने अपना प्रधान गीत सुनाना आरम्भ किया। इस आर्य देश में मिथिला नाम का एक देश है जो सबको विदित है। उसके स्वामी जग विख्यात नरेश जनक है। राजनीति के पारंगत होने के साथ-साथ ब्रह्मज्ञानी भी है। ऐसे महान राजा जगत में बडी मुश्किल से ही मिलते है। देह में रहते हुये ही वे विदेह है। एक बार उनकी राजधानी में बडा भारी अकाल पड गया तो वे विदेह स्वयं हल लेकर भूमि जोतने कृषि कार्य करने लगे उसी समय भूमि में एक घट के कारण राजा का हल हाथ से छूट गया। उसी घट के फूटने पर जगजननी अवतीर्ण हुयी जिससे भृकुटि विलास मात्र से ही पूरी सृष्टि लय को प्राप्त हो जाती है उसी शक्ति बालिका ने अपार चरित्र किया। उसने त्रिभुवन में लाखों लीला का खेल दिखाया है। अब वह मिथलेश्वर की पुत्री वन मिथिला में पाली जाने लगी। इस पृथ्वी पर अवतीर्ण होने के बाद उसकी सब अद्‌भुत लीलायें हुई उसके सिया, जानकी वैदेही, सीता आदि अनेक नाम हुये। नित्यप्रति अब वह सिया भगवान पूजन करती, पति धर्म और गृह शिक्षा प्रतिदिन माता से पाती थी। उस महाशक्तिने अपना एक प्रचंड परिचय दिया कि अपने बल से प्रलयंकारी शिव धनुष को उठा लिया। यह देखकर बुद्धिमान् मिथलेश्वर ने इस भांति प्रतिज्ञा कर डाली जो कोई इस धनुष को उठा कर उसे भंग करेगा वह सीता के साथ-साथ मिथिला से भी नाता जोडेगा। उस दिन से कितने ही जग के योद्धा उस धनुष भंग करने आते थे पर तोडना तो दूर की बात पृथ्वीपर से तिलभर भी हटा नहीं पाते थे। हिला नहीं पाते थे। उस स्वयंवर में आकर जब देश-देश के सभी बलधारी आकर थक गये तब विश्वामित्र महामुनि के एक शिष्य रघुनन्दन राम ने उस शिव धनुष का भंजन किया। इस तरह विश्व विजय की भांति उस मिथिला की सीता से नाता जोडा। उस गृह लक्ष्मी को अवध में अत्यन्त हर्ष मिला। सास-श्वसुर पति भक्ति सेवा में कुछ काल बीता पर कालचक्र के आगे सम्पूर्ण सुखों का ऱ्हास हुआ। माता कैकेयी द्वारा रघुवर को चौदह वर्षों का बनवास हुआ। यह समाचार जान सीता की छाती पर वज्र प्रहार हुआ। उस अवसर पर उस विदुषी महिला ने मन में विचार किया जब तन, मन, धन जन जीवन योगी बन वन में जायेगा तो फिर इस अर्द्धांगिनी का यह शरीर राज महलों में क्या रह पायेगा ? पानी से लहर कभी भी पृथक नहीं हो सकती। तब रघुवर के निकट शीश नवा लज्जा वश हठ और विवश से बोली हे जीवन धन कैकेयी मां का आज्ञा पालन कैसे हो पायेगा। जब आधा तन बन जायेगा और आधा यही पर रह जायेगा इसलिये जिसे जीवन भर का साथ किया उसे

हे नाथ अपने साथ ले चलियेगा। पंचों के सामने जिसका हाथ पकडा उसे अब न छोडियेगा। रघुवर बोले यह कथन तुम्हारा सब भांति ठीक है पर साथ तुम्हे ले चलने में बाधा आती है कि सीता तुम गृह लक्ष्मी हो तुम्हारा तपस्विनी बनना ठीक नहीं है, कोमल, कमलिनी अबला को वन वन में भटकना ठीक नहीं है। वन में सिंह बाघ, भालू फिरते है, राक्षस, वनचर सर्प निवास करते है। कंकड पत्थर से पूरित पूरा पथ है। पग-पग पर संकट है। तब सीता नयनों में नीर भर क्षणभर मौन रह बोली इस दासी को अबला कौन कहता है जो पति पद की सेविका है वह तो सभी सुखिया से बढ़कर है, जो अपने स्वामी के साथ रहे तो वह अबला सबला से भी बढ़कर है। जैसी मति गति पति की होगी वैसी ही पत्नी की होगी। पति यदि वन देव बने तो पत्नी वन देवी होगी। स्वामी यदि क्षत्रि सुत है तो यह दासी क्षत्राणी बाला है। रघुवीर यदि दुष्टों को अग्नि तेजरूप है तो सीता उस अग्नि की ज्वाला है। कैकेयी माता ने उचित ही किया भरत लाल को राज मिलना चाहिये था। जो वन चर आदि के भय से अपनी पत्नी तक को साथ नहीं रखते थे वे इस अवध की रक्षा का भार किस प्रकार वहन कर सकते है? यह दासी आपकी आज्ञा पालन कर कौसल में रह सकती है। पर इसका कोई भरोसा नहीं कि उसकी यह आत्मा इस शरीर में रह सकेगी ? हे भर्तार मेरी तो आराधना पूजा तुम्ही हो मेरी इस नैया के पतवार भी तुम्ही हो, इस पार भी तुम हो और उस पार भी तुम हो और यह कहकर सीता के नेत्रों से आँसुओं की झडी बहने लगी तब सीताकान्त ने कहा अच्छा तुम भी साथ चलो। यह संवाद सुन कर उसी समय लक्ष्मण वहां आये और कुछ विवाद के बाद वो भी वन जाने के संगी बन गये। इस तरह तपस्वी बन कर लक्ष्मण, जानकी राम वन को चले और पहली रात्रि सबने तमसा तट पर विश्राम किया। आगे चल कर तीनों ने केवट द्वारा गंगा पार किया। तब केवट की उतराई देने में रघुवर कुछ लाचार हुये उस समय सीता ने रघुवर की अवस्था देखकर अपने हाथों में से सुन्दर मणि मुद्रिका उतारकर स्वामी के मन को प्रसन्न होकर दी। इस जग में उदार बुद्धिवाले है ही नहीं जो अपने मन से पति के मन के सार को जान ले और बिना कहे ही स्वामी के काज कर डाले। जिससे पति सन्तुष्ट हो और लाज भी नहीं जाती हो। वही अंगूठी अब प्रभु अपने हाथ से उस केवट को देने लगे तब चरणों को गह कर केवट कहने लगा हे अवधेश मैंने कितने ही सन्त साधुओं को इस सेवक ने पार लगाया है सभी ने उतराई में ज्ञान विवेक दिया पर किसी ने भी माया नहीं दी। अब प्रभु मेरी भी आपसे यही विनती है मैने आपको गंगा पार किया उतराई में प्रभु मुझे तुम भवसागर पार करा देना। तप परान्त वन में रमते रहे सियाराम और कुछ दिनों में चित्रकूट पहुंच कर वहां जाकर निवास किया। वहीं पर पिता मरण ज्ञात हुआ और मेरे भाई भरत लाल। उसी जगह दुष्ट जयन्त इन्द्र पुत्र का अभिमान नष्ट किया। फिर आगे अत्रि मुनि से मिलकर अगस्त्य मुनि के मार्गदर्शन से आये प्रभु पंचवटी पास। वही पर रावण बहन शूर्पणखा अचानक आई थी, किसको मालूम था कि वह राघव पर मोहित हो रही थी। इस काम भाव को नष्ट करने लक्ष्मण ने उसके नासिका कर्ण काटे वास्तव में भाव यह था कि दुष्ट को उसके दुष्कर्मों का दंड दिलाना था। पापों से वंचित करने परिपूर्ण कुरुप करना था। उसके कहने से खर दूषण आदि आकर लडे तब राम ने सबका संहार १४ हजार राक्षसों के साथ किया। वह राक्षसनी शूर्पणखा भागकर लंका गई अपने भाई के पास और जाकर सारी कथा कही दोषारोपण कर लक्ष्मण और श्रीराम। अपना शूरत्व विवेक विचार कर रावण ने तापस वेश बना चोरी से सिया हरण किया। उस समय जब दशकन्धर ने अपना नाम सुनाया तो उस आदि शक्ति सीता ने भी उसको अपना ज्योतिर्मय रूप दिखलाया। जब उसने सीता माता को पहचाना तो सिर पर उठा कर लंका में ले आया। प्रसादो महलों में ठहराना अनुचित जान कर अशोक वाटिका में उसको ठहराया। लंका में रहकर भी सीता थी पतिव्रत धर्म से सदा भरपूर जैसे कमल जल में रह कर भी जल की बूंद से अलिप्त सदा दूर। सिया हरण से राम को हुआ अधिक सन्ताप और विरही पुरुषों के समान वन में करने लगा विलाप। आगे चल हनुमान मिले और सुग्रीव से बढ़ाया मैत्री का हाथ वही बाली को मारकर सुग्रीव को बनाया किष्किन्धा का राव। राजा बनते ही सुग्रीव राज्योन्माद में आसक्त हुआ और भूला मायापति को और माया का दास हुआ। तब कौशलपति ने प्रेम सहित उसके कर्तव्य का स्मरण कराया तब कपिपति ने भी सीता खोज हेतु चारों ओर कपि दल पठाया। जिस समय पवन सुत अशोक वाटिका में पहुंचे तब वहाँ उन्होंने सती साध्वी सीता के सब पतिव्रत आचरण देखे। छुप छुप कर वह सब सम्वाद सुने जब रावण अपनी भार्या बनाने हेतु लालच देता था बदले में उस राज सिंहनी सीता से बार-बार धिक्कार और डांट लेता था। दशमुख जब सीता से यह कह रहा था कि इस जग में मुझसा दूसरा नहीं कोई बलवान। मैं तो ऐसा राजा हूं कि जिसकी सोने की लंका है और मैं ही वह बलवान योद्धा हूं जिसका पूरी पृथ्वी पर बजा है डंका। मायापति भी जिसके डर से माया के परदे में छुपा बैठा है, वैदेही वही दशकन्धर आज तेरी प्रिय दृष्टि अपने ऊपर

चाहता है। तब सीता बोली मौन हो अरे दुष्ट, मिथ्या भाषण से भला कौन बना है वीर ? दशकन्धर बोला मैं वह हूँ जिसने एक समय शंकर का धनुष उठाया था और हे दुष्ट तू वह है जिसने उस धनुष को छूने में भी भय खाया था। मैं तो उसकी हूँ जिसने शिव धनुष को टूट कर दो खंड कर डाला और तू वह है जिसने चोरी कर पर नारी को हर डाला। जब दशवदन ने यह वचन सुने तो म्यान से तलवार खींच ली और आंखे लाल कर बोला फिर से यदि यह असभ्यता की तो इस तेज तलवार की धारा में तिनके सी बह जायेगी। यदि मेरी बन जायेगी तो इस संसार में जगमग सी हो जायेगी अन्यथा इस जीभ के साथ-साथ तेरी यह गर्दन भी अभी अलग हो जायेगी। तब सिया ने गरज कर कहा चुप हो जा नीच पापी, सागर तो सर्वदा सागर ही है और कीच-कीच ही दोनों में कोई तुलना समानता नहीं हो सकती। अगर तू बीसों हाथों से भी तलवार उठाकर आयेगा तो भी तू सीता के सतपन को नहीं डिगा पायेगा। पुलस्त्य मुनि का वंशज होकर क्यों कुल का नाम डुबो रहा है ? अपनी यह लाल-लाल आंखे कर किसलिये उस अबला को दिखा रहा है ? धिक्कार है जो ब्राह्मण जाति में ऐसा कलंक पैदा हुआ जो निशंक होकर चांडालों के से आचरण करता है। वेद ध्वनि उच्चारण करनेवाली वाणी से कभी अपशब्द नहीं निकलते। जिन हाथों में यज्ञ स्रुवा हो उन हाथों में तलवार चमकती शोभा नहीं देती। शुभ कर्म का अधिष्ठाता होकर दुष्कर्मों के चक्कर में पडा है धिक्कार है ब्राह्मण कुल का तेज क्षीण होकर किस अन्धेरे में मिट गया है। अब भी तेरा कुछ नहीं बिगडा है बुद्धि का पाप छोड दे और प्रभु सम्मुख हृदय से पश्चाताप कर ले। सीता को प्रभु को लौटाकर अपने को पुण्यशाली बना। अपनी अबतक की जो करनी कर ली उसका अपने पुण्यों के जल से तर्पण कर अन्यथा तुझे सावधान कर देती हूँ कि यह खडग तुझे नहीं तारेगी बल्कि मक्खियाँ तक तेरे शव को भिन्न-भिन्न स्वर से धिकारेगी।

इस प्रकरण के ज्ञाता है पवन कुमार और फिर स्वयं पवन देव भी साक्षी है अवनी और नभ के मध्य यह घटना प्रकट हुई। इस लीला के कुछ काल पश्चात कौशलाधीश के हाथों लंकाधीश्वर का वध हुआ और लीला का संवरण हुआ। सती सदा सत पर अटल रही और सत्य पद प्राप्त किया। जिसने उसको दु:ख दिया वही अब समाप्त हुआ। शक्ति ने उस दुष्ट को शाप दिया था वही अन्त में उसे उसी का पाप ले बैठा। इतने पर भी श्रीराम को इसका ज्ञान नहीं हुआ जब वे प्रभु राम के सामने आई तो उस सती का अपमान कर डाला। रण से वानर मंडल पूरा भरा हुआ था जय-जयकार करता हुआ विजय श्री का दरबार लगा। लाखों जीवों के सम्मुख सत परिचय का दरबार हुआ। अपनी श्री को रघुपति ने बायीं ओर का आसन नहीं दिया तब अपनी सन्मति से उस सतवन्ती सीता ने लक्ष्मण को आज्ञा दी हे देवर मुझे अपने स्वामी को कुछ परीक्षा देनी है, तुम उपकारी के भ्राता हो अपनी इस भाभी पर भी कुछ उपकार करो इसलिये अग्नि तैयार करो। आज्ञा होते ही वहां पर अग्नि तैयार हुई गगन चुम्बी लपटों से वह सत की अग्नि प्रबल हुई तब सती अपने पति से बोली यदि मेरे मन में पति को छोड इन आँखों से पति के सिवा तन तो बात ही क्या कभी आंखों से भी राक्षस पर दृष्टि उठाई हो प्रत्यक्ष में तो क्या कभी सपने में भी ऐसा हुआ हो कि प्रभु पद में मेरा अनुराग नहीं रहा हो तो मां ज्वाले मेरा यह शरीर अभी राख की ढेरी बन जा और यदि सच्ची पतिव्रता हूँ तो आकर साक्षी दो माता यह कह कर वह अग्नि में प्रवेश कर गयी। यह देखकर पृथ्वी भी दहल उठी। उस सत का परिचय देने ज्वाला भी मचल उठी। जलती लपटों में ही लावण्य रूप उत्पन्न हुआ और धीरे-धीरे वही रूप सीता समेत उत्पन्न हुआ और वह अग्नि प्रभु को अर्पण कर कहा त्यागो वह घृणित विचार, सीता निष्कलंकिनी है इसे करो स्वीकार । माया का भ्रम भेद जब विनाश हुआ तब ज्वाला विलीन हुई और सीता पति के वाम अंग में सीता स्वरूप आसीन हुई। पृथ्वी तल, सारा नभ मंडल सतवन्ती की जय बोल उठा। नीचे सागर ऊपर पवन सीता की जय बोल उठा। विजय सहित राघव जब अवध पहुंचे तब गुरु वशिष्ठ द्वारा सानन्द राजतिलक हुआ। तात्पर्य यही है कि जिसके सत आचरण पर बजरंगी की साक्षी थी, जिसके निर्मल आचरण पर ज्वाला अग्नि ने साक्षी दी थी राजा होकर उसी दशरथ पुत्र ने फिर भी उस सती को पुरवासियों की शंका हेतु वन भिजवाया था। उसकी मांगलिक अवस्था में यह न्यायीपन दिखलाया। जिन्होंने यह योग्यता पूर्ण काम किया वे ही इस अवध में प्रकटे हैं रघुवंशी राम। हम दोनों ने भी आपका भी नाम राम ही सुना है और यदि आप वही राम है तो हमारा भी लीजिये प्रणाम। यह कह कर अपनी वीणाएं बन्द कर दोनों गायक उठे।

यह इतिहास सुनाकर दोनों गायक चलने को तैयार हुये तभी सब उन्हे भीगे गीले नेत्रों से देख रहे थे तब प्रभु श्रीराम गदगद स्वर से बोले इन्हे अभी ठहराओ, रोको, जाने मत दो। तभी उन तपस्वी बालकों ने राजेश्वर से कहा बादलों को आते आते कौन रोक सका है? हम तो घूमते घामते रमनेवाले तपस्वी है जब तक जी चाहा रहे यहां अब जी उचट गया तो जाते है। ठहराने और रोकने के आदेश उन्हीं

पर लागू होते है जो व्यवसायी गायक जन हैं, जो धन लेकर अपनी कला बेचते हैं। रोकने से कभी गंगा की धार नहीं रुकती और यह कहकर तत्क्षण दोनों तपस्वी बालक चल दिये। चित्र लिखा सा वह सारा दरबार रह गया। फिर सभी ने द्वार पर ऐसी झनकार सुनी हे सीते तुम्ही तो रघुकुल की शक्ति हो तुम्हे प्रणाम हमारा हो। अनुरक्त विरक्ति भी तुम हो। इस पृथ्वी तल की हरियाली हो और उस नभ मंडल की उजियाला हो। सबकी अभिव्यक्ति भी तुम्ही हो हे सीते शक्ति प्रणाम तुम्हे। जो निष्क्रिय और निरन्जन है, निर्मल, निर्गुण नारायण है उनकी शक्ति भी तुम्ही हो। सत का जिसमें भंडार सदा, जय का आगार है सदा। हे सीता शक्ति प्रणाम तुम्हे। सब भांति तुम ही सुख करनी हो, जग जननी हो। मति, गति, रति, भक्ति तुम्ही तो हो हे सीता शक्ति प्रणाम तुम्हे।

३) लव-कुश की वीरता- रण विजयी शत्रुघ्न ने सब शत्रु विजय कर लिये और संसार में राम विजय का नाद गूंज उठा। इस प्रकार भू-भारण हर चारों ओर से पाप हटा और अब बाल वीरता का उपसंहार होना था। उन लीलामय की इच्छा से ही इस तपोवन में यह लीला हुई। यज्ञवाला अश्व उस शान्ति निकेतन तपोवन में आ पहुंचा। वन देवी के उन बलवीरों ने जब वह सजा हुआ अश्व देखा और साथ ही अश्व शीश पर रघुकुल के बल पौरुष का लिखा हुआ ताम्र पत्र देखा। इसका यूं ही आकर चले जाना वीरत्व लजाने वाला है यही सोच कर उन बालकों ने कि अपने गुरु का और बनदेवी का मान भी नहीं रहेगा इसलिये यही उचित है कि अपने बल की भी परीक्षा भी हो जायेगी और खेल ही खेल में रघुकुल को रण का आमन्त्रण दे दे। यही सोच कर तत्काल उस अश्व को पकड लिया, जिन हाथों ने वीणा सम्भाल रखी थी उन हाथों ने धनुष सम्भाल लिया। उन बलवान संयमी हृदयों में अब विश्व विजय का साहस जाग उठा। उन उत्साही वीर बालकों पर वीर रस स्वयं न्यौछावर था। वट वृक्ष के दूध से सीचें हुये बाल बिखर कर विकराल हुये। उन बालकों के लज्जाशील नेत्र सूर्यमंडल के समान लाल हो गये। धनुष की टंकार होते ही तर्कश की तीर कडक उठे। रामा दल का वह अश्व भडक गया। रामादल वालों के दिल धडक उठे। रघुवर की जय के उत्तर में उसी क्षण गुरुवर की जय गूंजी। उस कौशल रिपु सुदन के शस्त्रों के पहले उन बच्चों के तीर चले रण में। इस भांति बन में यह विकराल रण देखकर शत्रुघ्न स्वयं आगे बढ़ आये और देखा दो मुनि बालक वृक्ष के नीचे तीर कमान ताने खडे है। निकट ही यज्ञ का घोडा उस पेड की जड से बन्धा हुआ है। उस यज्ञ के घोडे के रक्षा हितवह बालकों का जोडा भी बडी अकड से खडा था। तब शत्रुघ्न हंसकर उन बालकों से बोले यह क्या बचकाना करते हो ? अभि अधखिले फूल हो क्यों इस भीषण रण की ज्वाला में जलते हो? कोमल अंगोवाले वत्स क्यों वीरों से आंख मिलाते हो, तिनके समान यह छोटे-छोटे तीर रघुकुल के सामने क्या दिखाते हो जाकर अपनी मां की गोदी में छुप जाओ रण में तुम्हारा काम नहीं। संग्राम कोई दूध की धार नहीं ये तो तीखे तीरों की धारा है जिसने खरदूषण, त्रिशिरा सहित १४ हजार खल राक्षस मारे है, जिसने दशकन्धर, बालि, विराध समान अनगिनत वीर संहारे है। जिनको सारे जग के लोग अपना सिरमौर मानते है उन राम की सेना से यह बच्चे युद्ध करते है। यह सुनकर लव बोल उठा महाशय अब अधिक अपने वंश की विरूदावली और नहीं गाये। राम और रघुवंश का प्रताप जग विदित है। हे कुश भैया यह वही राम है जिसके शासन में न्याय नहीं है। जिसकी साध्वी पत्नी सीता वन में मारी-मारी फिरती है। जिनके शत्रुघ्न भाई ने कुबरी मन्थरा के कूबर पर लात मार कर अपना पौरुष दिखलाकर रघुकुल का मान बढ़ाया है। इस व्यंग वाक्य ने सौ बाणों का सा काम कर दिया और यह सुनकर शत्रुघ्न व्यथित हो गये और उन बालकों के साथ संग्राम छेड दिया। क्षण भर में दोनों ओर से बाणों की बौछार होने लगी। पृथ्वी आकाश कांपने लगे, मारा मारी व्यापने लगी। अगणित वीरों ने उन दोनों बालकों को घेर लिया तब लव ने पलभर में ऐसा लाघव कर दिखलाया कि राम राम कहता हुआ रामादल भाग उठा। इस बात से शत्रुघ्न और भी आग की तरह क्रोधित हो उठे और सोचा इस जग विजयी सेना का इस तरह भागना लज्जास्पदक है। इन बच्चों से रघुकुल की सेना का हार जाना सचमुच कलंक का टीका है। ये बच्चे भी क्या बच्चे है सिंह समान है लगता विधाता ने भी इन्हें पहली बार ही इन रण बांकुरे बच्चों का सृजन किया है। तब अपनी सेना से बोले क्यों खेल खिला रहे हो समय व्यर्थ जा रहा है अच्छा नहीं है यह झमेल। यद्यपि गौर, द्विज, बच्चों पर वीर शस्त्र नही उठाते है क्योकि ये तीनों ही निर्बल है पर यहा उनके लिये यह शंका नही है वे स्वयं शीश पर चढ़ते है। जब वे सिर पर चढ़ने लगते है तब चींटे भी हटा दिये जाते है। इस कारण अपने हृदय का संशय दूर कर उन मतवाले बालकों का मदचूर कर डालो। अपने मन में किसी प्रकार की शंका मत लाओ। राम काज को मत भूलो। बालकों के भय से भाग रहे हो यह उचित नहीं है। पीछे मत हठो और बांध लो इन्हे और

देखना विजय की आन जाने न पाये। राम और रघुवंश का मान अभिमान न जाने पाये। कल तक तो तुमने हर बस्ती में विजय प्राप्त की थी अब आज इस वन में वह सम्मान न जाने पाये। पकडो जकडो इन बालकों को देर न करो राम के काज को।

तब कुश बोला कायर कभी बलवान नहीं होते। ये भगौडे रण में क्या सम्मान दिखलायेंगे। हे वक्ता जो सिर्फ वाकचतुरता से युद्ध नहीं जीता जाता है। अपनी मुंहमांगी वस्तु नहीं पाओगे, बच्चों से मुंह की खाओगे। विजयी सेना का वह बल विक्रम रणचंडी चट कर जायेगी उन मट्ठों में कितना घी है वह मथनी की रई प्रकट कर देगी। बाणों की वर्षा के आगे ये कच्चे घर बह जायेंगे, वट वृक्षों जैसे डीलडौल यह सब पृथ्वी पर पडे दिखाई देंगे। हमारे धनुष की टंकार सुनकर सारी बकवाद धरी रह जायेगी। यह योद्धापन की सूखी मिट्टी पानी होकर बह जायेगी। जिस राजा के राज में रहे अधर्म और अनीति तो सौ कल्पों तक उसकी जीत नहीं हो सकती। अत: हे अश्व रक्षकों हम तुमसे हमारे मन की कहते है जितनी कहते है वे सब सच्ची कहते है तो अब सुनो। जो अपने आपको रघुवंशी कहलाता है वह निज बल से घोडा ले जाये अन्यथा यह रास्ता सीधा अवध को जाता है। तब शत्रुघ्न ने कहा अरे ओ वाचालो मौन हो जाओ। रघुवंशियों के सामने रण में आजतक कौन ठहरा है ? पर्वत शिखायें चूर चूर हो जायेगी। पृथ्वी थर थर काँपने लगेगी। जिस समय रघुवंशियों की कमान खिंच जायेगी बाणों की भयंकर वर्षा होगी और सारा जग जलमय हो जायेगा। तुम दोनों झरनों का बल उस जल में लय हो जायेगा। इस कारण तुम्हारा यह उत्पात शोभा नहीं देता है। छोटे होकर बहुत बडी बातें कह रहे हो तब लव बोले छोटे तो सदा उत्पात करते है लेकिन तुम तो बडे बनकर छोटी तुच्छ बात करते हो। यह प्रतिवाद सुनकर शत्रुघ्न गरज उठे और बोले तुम्हारे अभिमान का अभी प्रसाद पाओगे। अब तक तुम्हारे इस श्याम सलोने मन मोहन मुखपर मन बढ़ बढ़कर रह जाता है। कुछ अजीब ही दशा हो रही थी कि मेरा शर चढ़ चढ़कर ही रह जाता है। लेकिन तुम्हारी अभी यह असभ्यता शत्रुघ्न सहन नहीं कर सकता।

चिरौटों के चहकने सुनकर कब तक बाज बाज रह सकता है। इतना कहकर शत्रुघ्न ने धनुष टंकार दिया और फिर अपने क्रोध से तेवर बदलकर एक शर उस और छोडा। जिस समय उस भयंकर तीर को आता देख कुश ने उसे बीच ही में काट दिया। तब शत्रुघ्न अधीर होकर बाण पर बाण छोड रहे थे और कुश पहले की भांति वीरता से उन बाणों को निष्फल करते जाते थे। उस और शत्रुघ्न की बली लाव लश्कर (सेना) अपने शस्त्र चलाता था तब प्रबल प्रभंजन के समान लव उन शस्त्रों को अपने बल से उडाता था। लव के बल को देखकर समस्त सेना विस्मित हो रही थी और इधर शत्रुघ्न कुश से संग्राम कर श्रान्त हो गये। लव कुश फिर इस प्रकार कहने लगे अब आप बहुत वार कर चुके अब इन बालकों का भी तनिक प्रहार सहन करिये। इसी वीर गरज के साथ मानो बादल सा छाया रण आंगन में। बिजली की चकाचौंध के समान एक बाण शत्रुघ्न पर आ चमका। उस एक बाण से ही क्षण भर में शत्रुघ्न बेहाल हुये विकल हुये। वह बाण हृदय में लगकर चरणों में जा पडा और शत्रुघ्न बाण की चोट खाकर मूर्च्छित हुये। सेना में द्वन्द मच गया और चारों ओर कुहराम होने लगा तब कही जाकर वीर बालकों ने संग्राम बन्द किया। तब शत्रुघ्न की सेना के कुछ मुख्य सैनिकों ने शत्रुघ्न को रथ पर सुलाया और रघुपति के पास पहुंचाया। कौशल की उस भरी सभा में जब शत्रुघ्न मूर्छाहीन हुये तब लवणासुर के वध करने का गर्व मिट गया और अति दीन हो गये। तब प्रभु श्रीराम बोले सब सन्ताप छोडकर शत्रुघ्न कहो कौन आज अपने आप काल का ग्रास बना है ? तब शत्रुघ्न ने कहा प्रभो काल का ग्रास बने ऐसे दो विकराल बांके बाल है। कहने को तो वे वनवासी है लेकिन रणधीर बला ही है। उनके पास छोटे-छोटे तीर ही वज्र के समान है। मुख मंडल दीप्त हो रहा है उस पर वह आभा है रण में प्रकाश हो जाता है। उनके लडने से पहले ही चितवन ऐसी लड जाती है कि जीतना हार दिखलाता है और हारना जीत दिखलाती है। शत्रुघ्न हरेक को हरा देता है यह बात सकल जहां जानता है लेकिन क्या जाने क्या है वे जी जिससे हार मानता है। लवणासुर का वध किया जिसने वो ही वन बच्चों से हारा है। लीलामय की इस लीला से शत्रुघ्न बडा ही चकित है, विस्मित हो रहा है। मन्द-मन्द मुस्कुराते हुये रघुवीर ने सब समाचार जाने और बोले छोडो सोच विचार। छोटा सुमित्रा नन्दन शत्रुघ्न युद्ध से मूर्छित होकर आया है तो फिर बडा सुमित्रानन्दन लक्ष्मण अब वहां जाकर छोटे का मान बढ़ायेगा।

लक्ष्मण ने लंका में अनगिनती योद्धाओं का संहार किया है अब तुम्हारे बल के आगे यह बच्चे बेचारे क्या है ? पर हे लक्ष्मण एक बात ध्यान रखना कही इन बालकों का वध मत कर आना। ऐसे बलशाली बच्चों को तो बांध कर ले आना। वानरराज सुग्रीव को, अंगद को अपनी रक्षा हित साथ में ले जाओ। हे लक्ष्मण सभी के काम सध जाये जाओ और यह भी कर आओ। तब रघुवर इस प्रकार कह कर मौन हुये तब वीर रणधीर शीश नवा कर सादर चले। बस आज्ञा की प्रतीक्षा थी। पूरी सेना सज कर तैयार हुई। रघुकुल व रघुकुल के

राजा की जयजयकार हुई। तेजस्वी सेना से लक्ष्मण इस प्रकार शोभा पा रहे थे जैसे पूनम का चन्द्रमा ताराओं, जुगनू के बीच शोभायमान हो। तब सब एक से एक वीर चल पडे रास्ते में तरह-तरह के शुभ अशुभ शकुन हुये। रास्ते में विलाप आ-आकर लडते थे तो गौ समूह भी सामने आजाता था। दो खाली घडे भी दिख जाते थे, दो भरे हुये घडे भी मिल जाते थे। सर्प भी सामने आ जाते थे तो हिरणों का समूह भी पास आ जाता था। कभी छींक सम्मुख हो जाती थी तो काली गाय भी दर्शन दे देती थी। इस तरह राह में शकुन अशकुन मिल रहे थे और लक्ष्मण भी सीतापति का ध्यान धर आगे बढ़ रहे थे। अंगद सुग्रीव इत्यादि सभी कपि वर्ग इस प्रकार गाते चले जा रहे थे। राज भक्तों चलो आज रघुकुल का कर्तव्य चुकाना है। आज वह समय है संसार हिलाना है। युद्ध वेदी में प्राणों का बलिदान देकर अमर हो परमधाम जाना है। हर समझदार का जो धर्म है उस धर्म को अब इस वक्त दिखाना है। देह मोह त्याग राम को पाना है।

जब सेना सहित राम भ्राता आ रहे थे उस समय वीर लव ने कुश से कहा सावधान रहो पृथ्वी कण आकाश से छा रहा है। सच में ही यह शान्त वन स्थल अब समर स्थल बनते जा रहा है। उस और देखो शत्रु दल फिर आ रहा है अश्व पकडने को। मां बनदेवी को प्रणाम कर फिर से रण लडने को प्रस्तुत हो जाओ। तब अपनी मां की स्तुति कर बोले हे भय हरनी मां, जय करनी मां, जय शक्ति रूप वनदेवी मां, मुक्ति रूप कल्याणी मां, जय भुक्ति रूप वनदेवी मां। बच्चों का मंडन करती हो, आधी व्याधि तुम हरती हो। वीरों के हृदय की तन्त्री मां जयशक्ति रूप वनदेवी मां। जननी के आशीर्वादों से दुर्जन जन भी अच्छे हो जाते है इसीसे पदवी बड़ी है मां की जय शक्ति रूप वनदेवी मां। इस तरह विधिवत भली प्रकार से उस शक्तिमयी मां का ध्यान धर दोनों वीर अतुल शक्ति के भंडार हो गये। तब उसी समय सबसे पहले कपिपति सुग्रीव वहां आ पहुंचे और बोले हे मुनि बालकों रण में आज सम्भल जाना। अच्छा तो यह है इस धनुष बाण को रसोईघर में रखो कि तुम्हारा यह कोमल शरीर देख कर सुग्रीव को डर लगता है कही तुम्हारी कलाई में मोच नहीं आजाये। यह लंका विजयी दल है इसके आगे ये प्रत्यंचाये मत चढ़ाओ और ऋषियों की कुटियों में जाकर तुलसी की मालाये फेरो। रण में लडना तुम्हारा काम नहीं। तब कुश बोले क्या वानरपति सुग्रीव तुम्ही हो ? हमारे तो भाग्य ही खुल गये तुम्हारे जैसे बलशाली को देख कर। कपिराज बालि से डर कर तुमने ऋषिमूक पर्वत पर अपना डेरा जमाया था उस हृदय को धन्य है जिसने अपने योद्धा भाई को छल से मरवाया था। वानरपति सचमुच तुमने वीरों में सुयश कमाया है। भाई का जिसने हनन किया उसी को तुमने अपना स्वामी बनाया है। हे धर्मवीर, हे धर्म रत्न तुमने स्व धर्म भी पाला है। बरसों तक जिसे भाभी कहां उसको ही घर में लाकर पत्नी बना डाला है। यह वाक्य विष से बुझे हुये तीर थे। इन वचनों से मानो क्षणभर में ही सुग्रीव का शरीर बिंध दिया। सुग्रीव बोले बस बन्द करो क्यों मुख से अपने विष टपकाये जाते हो ? मिट्टी के टीले होकर, पर्वत शिखरों से होड लगा रहे हो ? यह कहकर कुश का बल मिटाने कपिपति झपट पडे।

जैसे राहु सूर्य को ग्रसने जाता है। तब कुश ने रास्ते में उसकी सब वीरता हर ली। अपने बाणों की झडी से आंखों के आगे चकाचौंध सी कर डाली। लडते-लडते सुग्रीव थका, वह रण बांकुरा पीछे न हटा वह इस प्रकार मुस्कुरा रहा था जैसे कुछ हुआ ही नहीं। तब कु श बोले क्या तुम्हारा अभिमान पूरा हो गया। अब इन बच्चों का भी बाण स्वीकार करे महाराज। जैसे ही कुश के छोटे से धनुष से छोटा सा शर सुग्रीव पर पहुंचा तत्क्षण सुग्रीव कांपने लगे सिर चकराने लगा और मूर्च्छित हुये। कपिराज को गिरते देख अंगद दौड कर आया और उसने अपने आगे लव को मन्द मन्द मुस्कुराते देखा। तब उछलकर गरज-तरज कर अंगद बोले बच्चे क्यों हंस रहा है ? इसमें क्या है? ऐसा ही होता आया है जब दो लडते है तो एक तो हारता ही है। अब वानर राजा के गिरने का बदला यह अंगद युवराज चुकायेगा और ऐ हंसनेवाले अब यह सिंह तुझे खा जायेगा। लव बोले क्यो व्यर्थ ही बकवास कर रहे हो ? हमें सब मालूम है वानर कभी सिंह नहीं होता है। जब से तुमने अपने पितृ हन्ता के चरणों में अपना यह शीश झुकाया है तब से ही क्या तू इस पृथ्वी पर अपने आपको सिंह समझने लग गया है। हे श्रीमान सिंहजी अब अपने घर जाओ, व्यर्थ में क्यों प्राण गंवाने यहां आये हो ? यह कोई रावण की सभा नहीं है जो यहां पांव जमाने आये हो। तब बालि तनय अंगद यह कडवे वचन कैसे सहन कर सकता था तभी अंगद की आंखे बाल सूर्य की भांति तेजोप्त हो उठी। फिर उसी गरज और रोष सहित अपनी गदा उन बालकों पर चला दी। क्षणभर में सबने देखा वह गदा कुश के बाणों की नोक पर थी। इतने में लव ने भी एक शर छोडा जिसके लगने से अंगद का भी सिर चकराया और पृथ्वी पर गिरने लगे। अपने साथियों की चारों दिशा में हार होती देख कर तत्क्षण लक्ष्मण भी युद्ध करने के लिये तैयार हो गये।

लक्ष्मण बोले धन्य तुम्हे है। हे सुकुमार बालकों सचमुच तुमने अद्‌भुत बल पाया है। किष्किन्धा के इन गर्वीले वानरों को तुमने रण

में नीचा दिखलाया है। लेकिन रघुवर को, रघुकुल को स्वयं ब्रह्मा भी नहीं हरा सकता। सागर कितना भी बढ़ जाये, गहरा हो जाये पर सूरज को अपने में नहीं डुबो सकता इसलिये तुम्हें यह लक्ष्मण कहता है तुम अश्व लौटा दो, तुमसे मेरा रण करना ठीक नहीं है। ईश्वर भक्तों को यह माया का आवरण उपकरण ठीक नहीं है। तब कुश बोले आप ठीक कहते है श्रीमान लेकिन हमारी बात भी सुन ले। धर ध्यान कि ईश्वर भक्तों के तो टेक आन धर्म ही है। इसलिये ईश्वर भक्तों की रक्षा हेतु राजा का धर्मी होना आवश्यक है। रागी को राग जमाने हेतु उत्तम बाजा आवश्यक है। हमें सब विदित है कि राम जनता के पालन हारे है। त्रिभुवन विजयी होकर भी नारी से हारे है। सीता साध्वी के कष्टों ने उनकी शक्ति को नष्ट कर दी क्षीण कर दी अब कोई यश नहीं गाता लंका, किष्किन्धा और अवध का। इसलिये अब जगत का धर्म हुआ उनसे सिंहासन ले लेना और जो व्यक्ति शासन के योग्य हो उसको ही शासन अधिपति बना देना। उस दिन सभा में हमने जब सीता चरित सुनाया था उसे सुनकर भी रघुकुल तनिक भी नहीं लजाया था। अतएव देशहित के नाते अब हमको यह धर्म निभाना है और उस मद भरे पृथ्वीपति को जग विजयी नहीं बनाना है।

तब लक्ष्मण बोले अच्छा तो तुम्ही हो वे गायक गुणवान, मेरे ध्यान से निकल गया इसलिये मैं तुम्हें नहीं पहचान सका। लव बोले कोई बात नहीं युद्ध में अब पहचान जाओगे। कोरी बातों से क्या उस जगह अपना धन्वा रख दो। लडने से पहले यह तो बता दो लक्ष्मण कब लडने आयेगा ? सीता का त्याग कर वन में पहुंचाने का बदला कब पायेगा ? रघुकुल के धर्म प्राण बनकर जिसने एक अबला के नो कान काटकर उसे विरूप कर दिया वही उसका कर्म लव कुश का बाण बनकर प्रतिकार करेगा। तब लक्ष्मण अपना परिचय गुप्त रख इस तरह वचन बोले वीर बालकों, तुम्हारे यह वचन बेचैन करते है। लक्ष्मण अब भी बडा व्यथित है उसके चित्त को सन्तोष और शान्ति नहीं है। उस बेचारे का क्या दोष वह तो आज्ञाकारी है अपने स्वामी का। वो तो अपने बडे भाई की इच्छा पर अपना सर्वस्व लुटाता है। वह तो राज आज्ञा होने के कारण सब दोष से रहित है। तब कुश बोले इस बात से आप भूल रहे है श्रीमान। अब धर्म कहां ? यह कर्म तो हुआ एक भयंकर पाप। जो किसी भांति भी परवश होकर भी सत्य मार्ग को छोड कुमार्ग पर जाता है। वह परवश होकर भी अपनी बुद्धि पर अज्ञान की कुठार चलाता है।

अन्धा श्रद्धालु वही तो है, वही ज्ञानी अज्ञानी है जैसे हंस तो है पर दूध और पानी का विवेक नहीं है। जाने दो यह नीति अनीति की बातें अब तो कटने मरने की बात करो या तो अपने घर लौट जाओ। या हमसे तो रण करने की बात करो। लक्ष्मण बोले- बालकों क्षत्रिय के प्रति ऐसा कटु वाक्य शोभा नहीं देता है। क्षत्रिय में लौटने के बदले समर में जूझना अच्छा समझता है। बच्चों अब तक जो मैंने पर्दा रखा था वह हटा देता हूँ और मैं ही लक्ष्मण हूँ कैसा हूँ यह अभी तुम्हे बता देता हूँ। जिसने मेघनाद को संहारा उसे तुम कायर समझते हो, इन बाणों से विध कर सम्भलो तुम भी निज धाम पहुंच जाओगे। तत्काल दोनों ओर धनुष बाण खिंच गये। क्षणभर में विकराल विकट युद्ध होने लगा। लक्ष्मण जिस समय अग्नि बाण से सर्वत्र अग्नि फैलाते थे कुश तभी बाणों से जल बरसा कर अग्नि लपटों को बुझाते थे। फिर लक्ष्मण अपने बाणों से जल को घी कर देते थे। कुश तभी अपने बाणों से उस घी को मिट्टी कर देते थे। धीरे-धीरे दोनों में वैज्ञानिक संग्राम छिड गया। बाणों ही बाणों के द्वारा नाना विविध ज्वर आये और नष्ट हुये सब बिलगाये। माया की प्रतिमायें बनती थी, लगती थी, मरती जाती थी धोखे की सेनाये बनती थी लडती थी मिटती जाती थी। अब वैज्ञानिक युद्ध अन्त होने को आया तब तन्त्र शक्तियाँ रण में तुरन्त प्रकट हो गई। अभिचार मन्त्र, उच्चाटन, मारण, वशीकरण, सम्मोहन आदि सब तामसी उपकरण शस्त्र आये, उन मन्त्रों ने उन तन्त्रों ने कितने ही कौतुक दिखाये कभी प्रकट होकर लडते थे तो कभी गुप्त हो जाते थे। नाना प्रकार की लीला से वीर अपना वीरत्व प्रकट करते थे। इस तरह लक्ष्मण द्वारा दोनों बालकों को व्यथित होते देखा तो गुरु ने गुप्त रूप से अपना माया जाल फेरा। सेना का आधा दल तो अपने को ही कुश समझने लगा। आधा बचा दल लक्ष्मण को ही लव मान गया। कुछ घबरा कर अपने ही हाथों से अपनेवालों की गर्दन उतार दी। कुछ अपने ही शस्त्रोंद्वारा लक्ष्मण पर वार कर उठे। लक्ष्मण भी ऐसी बात देखकर घबरा उठे। विह्वल हुये शरीर से रघुनाथ का स्मरण करने लगे। लक्ष्मण ने सीता पति से अपनी रक्षा चाही। तब जाकर गुरू ने अपना माया बाण लौटा लिया। माया के हटते ही सारी सेना को ज्ञान हुआ, लक्ष्मण को भी अपनी बीती बातों पर ध्यान आया। सेना इस तरह घबराई वह युद्ध स्थल में टिक नहीं सकी और तुरन्त कौशल में लौट आयी।

लक्ष्मण ने जब अपनी सेना का यह हाल देखा तो तेवर तिर्छे हो गये और नेत्र लाल हो गये। सीता और सीता के जीवन का लक्ष्मण

ने ध्यान धरा तब शारंग शक्ति भर कर धनुष का बाण लक्ष्मण ने छोड दिया। वह तीर कुश को जाकर वज्र सा लगा उसी समय कुश मूर्छा खाकर गिरे उसी समय वीर लव लक्ष्मण के सामने युद्ध करने डट गया। आते ही लव ने शर से शत्रु पर प्रबल प्रहार किया तब सारी सेना में भीषण हाहाकार मच गया। लक्ष्मण ने जब यह उदंड प्रहार देखा तब उसने लव के शर के दो टुकडे कर दिये। कुश ने देखा उसके सायक के दो टुकडे हो गये तो फिर पूर्ण क्रोध में भरकर प्रलय समान प्रचंड बाण छोडा वह बलशाली शर हृदय में जा कर लगा तो लक्ष्मण को भी मीठी नींद सी आई और तुरन्त मूर्च्छित हो गये। तब सेना में प्रबल कुहराम मच गया। बालकों ने भी उस समय यह महा संग्राम बन्द किया। कुछ सैनिक तो लक्ष्मण इत्यादि को सम्भालने लगे तथा कुछ सैनिकों ने अवध जाकर सब हाल कह सुनाया। जब कौशल का दरबार भरा हुआ था उसी समय कुछ सैनिक जाकर पुकार करने लगे हे अवधनाथ सीतानाथ त्राहिमाम। महान संकट आया है। रघुवंश हिला जाता है। जुगनू की चमक के आगे बडा अन्धेर है। प्रकाश रहते हुये सूर्य अस्त हो रहा है। वहां पर सब अचेत पडे है हे दया धाम उन सबको चेत करे। सैनिक से जब रण का दुखद वृतान्त सुना तो मन से खेद प्रकट कर भरत से सीताकान्त राघव बोले। भाई भरत देखो तो कैसा अन्धेरा हो रहा है। दो बच्चों ने मिलकर रण में क्या हाथ फेर कर दिया है ? मेरे इस राजसी ठाठ पर धिक्कार है, जो बालक इस भांति रण मचा रहे है। मुझको तो वह कष्टों वाला वनवासी जीवन ही भाता है। यह निश्चित है राजा होकर ही दशकन्धर रण में हारा था। तपसी जीवन के बल पर ही हमने उसको संहारा था। जिसने मेघनाद सरीखे योद्धा को मारा था वही लक्ष्मण आज वनवासी बच्चों से संज्ञाहीन होकर पडे है। अब हे भरत अब तुम्ही बताओ कैसे इस समस्या का निदान हो ? जो जग की रक्षा करता है अब कौन उसकी रक्षा करे ? अवधेश्वर बोले जब लक्ष्मण वहां पर मूर्च्छित है तब तो मेरे वहां जाने की तैयारी है। कर्तव्य कहता है हे अवधपति अब तेरी बारी है।

यह सुनकर भरत बोले ठहरो हे दीनानाथ, जब तक यह दास जीवित है आप ऐसा विचार नहीं करे। मेरी उत्कट उत्कंठा है अपने जीवन को धन्य बनाऊँ। अपने स्वामी की प्रतिमा पर अपना सर्वस्व चढ़ाऊं। जिस प्रकार लक्ष्मण शत्रुघ्न को आपने रण की आज्ञा दी वैसी आज्ञा भरत को क्यों नहीं देते हो आज ? तब प्रभु श्रीराम बोले मेरे लिये तो सब भाई समान है लेकिन तुमसे तो कुछ महान सम्बन्ध है। हे भाई लक्ष्मण जैसा भाई ही रण में जब मूर्च्छित हो गया फिर तुम तो तपस्वी माला जपनेवाले भाई हो बस इन्ही सब विचारों से अब तक तुमको रोक रखा था। अपनी भीतर की ज्वाला में अपने आपको झौंक रखा था। तभी भरत उग्र हो उसी क्षण कह उठे आज देख लीजिये भरत के भी यह हाथ। कुछ वर्षों के ही बालक जब ऐसा अन्धेर मचायेंगे तो फिर क्या ये चौदह वर्षों वाले तपसी क्या कुछ भी करतब नहीं दिखलायेंगे। वर्षों तक जो तार तपा है वह कमान बन जायेगा। माला का एक-एक दाना महान शायक बन जायेगा। प्रभु बोले फिर यही बात है तो तैयार हो जाओ और जाम्बवन्त, हनुमान को फिर अपने साथ लेते जाओ। शीश नवाकर जब भरत तैयार होने गये तब हनुमान से राघव बोले हे हनुमन्त मेरे हित जिसने राज्य त्याग बनवास ग्रहण किया। मेरा अनन्य आराधना कर अपना सर्वस्व अर्पण कर डाला वही भरत आज मेरे ऊपर अपने प्राणों को न्यौछावर करता है। उसकी रक्षा का भार आज तुम्हारे उपर है बजरंगी। जब पवन तनय से प्रभु श्रीराम ने अपने मन के वचन कह दिये फिर जाम्बवन्त से करुणा निधि बोले। जब नाग पाश के फन्दे में पूरा वानर दल आया था उस समय हे जाम्बवन्त जी मेघनाद को परास्त कर आपने अपनी शक्ति दिखाई थी। आज फिर से आपको उस बल कौशल का जग को परिचय देना है और आते-आते उन वन के तपस्वी बच्चों को बन्दी बना कर ले आना है। दासों ने राम आज्ञा स्वीकार की और भरत भी युद्ध के लिये तैयार होकर आ गये। आकर हर्षित हो सिर नवाकर बोले निश्चय ही विश्वभर में अवध का जयनाद होगा। जिसको जगतपति रखवाले हो उस को भला किससे भय है ? त्रिभुवन में, चौदह लोकों में, नव खंडों और द्वीपों में उसकी जय ही जय है। इस क्षत्रिय का हृदय उमंगों से उमड रहा है। रण में कुछ कर दिखलाने को इसलिये हे नाथ अब मुझे शीघ्र ही आज्ञा दे जिससे रघुकुल की जय हो। आपके आशीर्वाद से भरत उनको रण का पूरा स्वाद चखायेगा। तब प्रभु ने भरत को आशीर्वाद दिया तब आनंदित होकर साथियों सहित भरत लाल चले।

भरत का रण प्रयाण जग को भरमा देता है। वह शान्त ढंग, श्याम अंग रघुवर के समान होने का लोगों को धोखा देता है। वल्कल धारण करनेवाले योगीने आज कवच पहना है वह शान्त रसप्रेमी शान्ति सहित वीर रस पर तुल कर चला। वे सब बलवान शीघ्रता से वहां पहुंचे जहां पर दोनों बालक कमान खींच कर खडे थे। वहां जाकर देखा कितने ही रामादल के योद्धा भूमि पर शयन कर रहे है भीतर तो सबके प्राण चल रहे है। पर बाहर से सब मरे हुये दिख रहे है। सभी आहत तथा मूर्च्छित थे। कितने ही तो मृत थे और कितने ही आहत थे यह गिनती मालूम नहीं पड रही थी। वह शान्त तपोवन की भूमि सब ओर से लाल होकर दमक रही थी। उस लाली में हीरों जैसी शस्त्रों की

ढेरी चमक रही थी। वहां देखा दो बच्चे धनुष चढ़ाये हुये है ओर उस अश्व मेघ अश्व पर अपना अधिकार जमाये खडे है। सिर पर जटाओं का जूड़ा है कटि मे कौपीन सुहाती है। बल से वीर घटाये छा रही है उनकी इस छवि पर पूरा जग मोहित हो रहा है। भरत उनको देख शत्रु भाव ही भूल गये और उनके प्रेम में मग्न होकर कहा धन्य हो युगल सुकुमार। कौशलपति ने दंडकारिणी में ईश्वर शक्ति दिखाई थी। चौदह हजार निशाचरों का वध कर अवतारों की महिमा बताई थी। तुम भी कहने को तो वीरों का वंश बढ़ा रहे हो पर ज्ञान दृष्टि से दोनों भी उस ईश्वर के अंश हो। भरत के हृदय में बार-बार यही मन में आता है कि प्रकृति स्वयं देह धारण कर तुम्हारी मां बनी है। तब लव बोले कुश अब घर लौट चलो अब रण में कोई जान नहीं रही है शत्रु तो विरुदावली बखान करने में लग गया है। हम तो समझे थे कैकेयी पुत्र योगी भी है और वीर भी है पर यह तो अपना भ्रम ही था भाई वास्तव में तो भरत भगत ही है। अपने भाई और अपने राजा की उसने क्या सुन्दर वीरता बखानी है। बलिहारी है उसकी चतुराई पर अपनी सभी निर्बलता छुपाई है। हमें भी यह विदित है कि खर आदि निशाचर मारे थे पर तीन पैर पीछे हट कर १४ हजार राक्षस संहारे थे। हे भरत आप ही न्यायी बन कह दे कि क्या यह न्याय कहाता है जो रण में तीन पैर पीछे हट कर रण करे वो क्या योद्धा कहलाता है ? हम तो वास्तव में कुछ भी नहीं है दो दिन के बालक है पर गुरु बल से यह कहते है तुम हमे जीत नहीं सकते लडकर। हम ब्रह्माण्ड हिला सकते है, हम में बल मिला है वनदेवी से। विन्ध्याचल और हिमालय तक को हम रेणुका बना सकते है तुम हमें जीत नहीं सकते लडकर। यदि तुम में बल और उत्साह हो तो आगे आओ और यदि यह नहीं हो सके तो अभी सीधे अपने घर जाओ।

जिस समय भरत ने इस प्रकार लव के तीखे वचन सुने तो हृदय में चोट लगी और नेत्र लाल हो गये और बोले बच्चों व्यर्थ में क्यों करते हो प्रलाप रघुकुल का संसार में चारों ओर प्रताप विख्यात है। तुमने इन्हीं छुई मुई समान बाणों को क्या समझ रखा है ? हमारे इन बाणों में भी प्रबल शक्ति छुपी हुई है। इतना कहकर भरतलाल बाणों पर बाण चला उठे। भरत भी यह नहीं जान सके कि किसका शर किस ओर जा रहा है अपना ही शायक टकरा कर अपनी ही ओर आ रहा है। एक ही बाण के भीतर से जब लाखों बाण निकलते है तब मालूम भी नहीं पडता था कि अपने दल में कितनों के प्राण निकलते है। आश्चर्य तो यह था कि लव के शर जब भरत के गात पर घाव करते थे तब पता नहीं क्या माया थी कि भरत के घाव तुरन्त भर जाते थे।

जब लव के किसी भी उपाय से भरत के प्राण नहीं निकले तब वल ने कुछ मन्त्र पढ़कर बाण अभिसिक्त कर छोडा तब हनुमन्त ने ऐसे बाण को आते देखा तब तुरन्त भरत को मार्ग से हटाकर भरत के प्राण बचाये। इसी तरह लव ने तीन बार बाणों का वार किया और बजरंगी ने तीन बार भरत के प्राण बचाये। हर बार लव के वार को निष्फल कर दिया। तब कुश ने देखा कोई वानर रण में लडने से बाधा देता है तब भैया लव के महाशायकों से भरत को बचा लेता है तब बोले बलिहारी है वानर रण में बांका योद्धा है वीरों की परीक्षा में उत्तीर्ण महान योद्धा है तू। यदि शस्त्र शास्त्र की हो तो रण में चतुर छात्र के जैसा आगे आ जा और आचार्य परीक्षा की शिक्षा हम तपस्वियों से लेते जा। इतना कहकर कुश ने धनुष पर तीर चढ़ाया पर उसी समय कुछ हृदय में सोच कर कुश वीर ठहर गये और बोले शस्त्रों से रण करना वीरता नहीं समझा जाता है। रण में बैरी को जीतना शारीरिक बल नहीं कहाता है। फिर धनुषबाण लेकर हमने नि:शस्त्रों से संग्राम किया तो वीर रण नहीं किया बल्कि कायर पुरुषों का सा काम किया है। इसलिये हे वानर मल्ल युद्ध करने को अब हमारा हृदय पुकार रहा है हे कपि कुश अब तुझे इस दंगल में कुश्ती करने को ललकार रहा है।

अब तो बजरंगी के लिये लडना अनिवार्य हो गया। आगे बढ़कर दोनों भिड गये वे रण आचार्य। क्षणभर में दोनों में घमासान मल्लयुद्ध छिड गया। ऐसे ऐसे दांव पेच होने लगे जो बखान नहीं हो सकते और वही परिणाम हुआ जो विधि को स्वीकार था। रावण से जो कभी नहीं हारा वो कपि आज यहां हार गया। कुश ने तत्काल बजरंग को पशु समान बांध लिया और जग ने बोला विजयी हुआ आज वनदेवी का लाल। लव ने देखा वीर कपि कुश के हाथों में आया है चारों ओर से पूंछ सहित अपने को बन्धवाया है। तब मुस्कुराकर कहने लगे देखो कितना सुन्दर खिलौना पाया है। मृग पालने के बदले अब तुमको वानर पालन भाया है। अब जाकर तुम थोडा आराम करो, मैं अभी शत्रु दल को पीछे हटाता हूँ। तुम इस कपि को लेकर आश्रम चलो मैं वह अश्व लेकर अभी आता हूँ।

लव ने सेनापर अपने धनुष की डोर खींची और इधर कुश हनुमान को अपनी कुटी की ओर ले चले। कपि केवल बन्धे ही थे और तो कुछ हानि नही थी। पता नहीं क्या बात था दु:ख था ना ग्लानि। अपनी पर्णकुटी के सामने ही पूजा घर था। कुश ने वहां उस कपि को

प्रेम सहित बांध दिया और जाकर गुरुदेव को माता को सादर शीश नवाया और जाकर गुरु चरणों में निवेदन किया कि आपके बल से अब तक हमने जय पाई है। जब जब भी कोई सेना चढ़कर आई है तब तब हमने उसे मार भगाई है। पर एक बडा ही अचरज है जो समझ में नहीं आता है। मारण प्रयोग परिवर्तित हो सम्मोहन होता जाता है। जिसको भी वहां रण भूमि में देखते है वह मृतक सा होकर मूर्च्छित हो पडा है। चेतना किसी की भी नहीं है किन्तु प्रत्येक वहां पर जीवित है। उनकी यह मूर्छा भी विचित्र सी है जो अभी तक कभी देखी या सुनी नहीं है। कितने ही दिन हो गये है किन्तु अब तक किसी की आंख भी नहीं खुली है। इस समय लव भैया ने सबको नीचा दिखलाया है और मेरे द्वारा आप श्री चरणों में यह एक कपि पकड कर भिजवाया है।

तब गुरु बोले अब अधिक देर मत करो और आदर शिष्टाचार से उस कपि को यहां मेरे पास ले आओ। जो आज्ञा कह कुश द्वार की ओर चले तब सीता ने प्रेम विभोर हो गुरुसे कहा- हे गुरुवर, मैं नित्य सुनती हूँ समर भूमि में नित्य युद्ध छिड रहा है। यह भी समाचार आते है कि योद्धा इन बालकों द्वारा हताहत हो रहे है पर अब तक यह विदित नहीं है कि यह कठोरता किसने ठानी है। जो इन बच्चों से जूझ रहा है वह कौन राजा बलशाली है ? मैं जब भी इस बारे में विनय करती हूँ आप सुन कर मौन हो जाते हो बस इतना ही बतलाते हो कि बालकों की परीक्षा ले रहा हूँ। अतएव आज अपनी इस पुत्री पर सब भेद अवश्य प्रकट करे यह रण क्यों है ? किससे है ? यह सभी भेद प्रकट कर कहे। तब गुरु बोले धीरज धरो पुत्री अब यह गुत्थी जाल सुलझ रहा है। आज सब कुछ छुपा हुआ हाल प्रकट हो जायेगा। ऋषिवर इतना ही कह पाये थे कि इतने में ही कुश हनुमान सहित वहां पर आगये। बस भक्त राज हनुमान ने आते ही वनदेवी को पहचान लिया। मां सीता बेटे हनुमान का वह प्रेम मिलन देखती है। मां मां कह कर वह लाल चरणों में गिरा तो सीता चौंक उठी और कहा मेरे हनुमान तुम।

तब कुश समेत सभी ऋषि अचरज में रहे तब गुरु ने सभी रहस्य सानन्द प्रकट किया। बनदेवी नाम देकर जिसे छुपा रखा था वही राम की प्रिया है यह सीता गुण धाम। तब कुश बोला यह है हमारी माता सीता तो क्या हम दोनों भाई अवधेश के पुत्र है ? तब गुरु बोले ऐसा ही है तुम दोनों भी अवधेश के पुत्र हो और यही सीता है। जिसके यश को पृथ्वी भर के कवि गा-गा कर सुनायेंगे। मेरे उस महाकाव्य में भी यही तो देदीप्यमान है। तुम जो विमल चरित्र गाते हो उसमें प्रधान यही तो है। इनके कारण ही मैंने इस वन में यह रण रचवाया है, मैंने ही योगशक्ति द्वारा सबको इस जगह बुलाया है। अब विस्तार सहित तुम फिर सुन लेना अब तो युद्ध के सम्मुख चलो। अब शेष भाग सीता चरित्र का रघुवर के सम्मुख गायन कर दो। अब इस धन्वा को कुटिया में रख दो अब वीणा बाण चलाना है और इसके एक ही वार में कौशल पर अधिकार जमाना है। यह कहकर गुरु कपि सहित कुश को लेकर मुदित मन रणस्थल पर आये। उधर युद्धस्थल में भरत लव को जीत नहीं सके। भरत ने अनन्त उपाय कर लिये। जाम्बवन्त ने भरत का जब यह हाल देखा तब लव से भिडने को तत्काल वेग से दौड पडे। तब एक ही बाण से लव ने उनको उडा दिया और वे जाकर अयोध्या सभा में मूर्छित हो जा गिरे। होश आने पर जाम्बवन्त ने अपने सामने प्रभु सीता कान्त को देखा और अत्यन्त लज्जित होकर रण का सब वृत्तान्त सुनाया। तब अयोध्यानाथ ने स्वयं विवश होकर रण के लिये प्रस्थान किया।

संसार ने फिर देखा रण में उन शान्ति निधान को। प्रभु से पहले विभीषण लव के निकट गये और बोले व्यर्थ तुम किसलिये रक्त पात कर रहे हो ? लंका का स्वामी विभीषण तुम्हे यह नेक सलाह देता है तुम्हे कि जाकर पढ़ो, अध्ययन करो। रण का उत्साह तुम जैसे बालकों को क्यों है। इस यज्ञ स्रवावाले हाथों में यह धनुष शोभा नहीं देता है। ऋषियों और तपसियों को क्षत्रिय कर्म अच्छा नहीं लगता है। तब लव ने कहा बलिहारी है आप पर हे धर्म वीर महाराज। यह सम्मति देते समय आपको लाज नहीं आई। तुम जिसके अधीन हो आज उसी ने तो यह रास्ता दिखलाया है। तपस्वी वेश में रावण जैसे ब्राह्मण पर शस्त्र उठाया है। हे भाई के घातक सागर की हर लहर अब तक रो रही है और कहती है विभीषण जैसा भाई हो तो लंका ढाई जाती है। घर का भेदी लंका ढावे। विभीषण के कारण ही तो लंका अब तक परतन्त्र हो रही है। ओ धर्म धुरी सोच तो तूने क्या किया है अपने जीवन में? मन्दोदरी को अपनी रानी बना यह सिखलाया है अपने शासन में। तब वचन बाण से यूं बिंध गये। विभीषण तो समझ कर सब अभिप्राय वे गदा लेकर लव की ओर दौडे। किन्तु लव ने उन्हे बीच में ही रोक दिया और अपने एक ही पैने बाण से उन्हे मूर्च्छित किया। तब उसी समय रघुराई आगे बढ़े तब लव ने सिर नीचा कर के कहा हे अवधेश्वर, हे राजेश्वर कष्टों के लिये क्षमा चाहता हूँ। रघुकुल के स्वामी होकर तुमने धोखे से बालि को क्यों संहारा ? सारे भेद उस विभीषण से लेकर रावण जैसा विद्वान ब्राह्मण को मारा क्यों ? शूर्पणखा तो नारी जाति है फिर उसके नाक कान कटाये क्यों ?

न्यायी राजा हो करके क्यों ऐसा अन्याय किया तुमने कि सीता की अग्नि परीक्षा लेकर भी फिर भी उसे वनवास दिया तुमने ? तब सचमुच रघुवर रोने लगे और बोले बच्चे तेरी बुद्धि पर यह सारा संसार न्यौछावर है। अब तुझे उत्तर दूं तो क्या उत्तर दूं मै ? बस मेरा कहना तो यही है जिसमें गुण और दोष होते है वही तो मानवचरित है। मैंने तो मानव लीला की है सबको मानव रूप दिखाया है अन्यथा तो मेरा जो धाम है उसमे तो न प्रपंच है और न ही माया है।

लव बोले वेदान्त से तुम कर रहे हो बचाव तो माया कह रही है अब धनुष बाण ले आओ। यह कहकर बालक ने तभी तीर कमान तान लिया। तभी रघुवर ने भी अपने धनुष पर बाण सन्धान लिया। तब कुछ दूर पर ही यह आवाज सुनी सावधान नहीं करना यह अनीति और अन्धेर कुश को हनुमान के साथ साआल्हाद वाल्मीकि आ रहे थे। आते ही गुरु बोले हे लव अब यह संग्राम बन्द करो। तुम अपना धनुष बाण रख दो। अब तो कुश की वीणा बजेगी। यह कहकर मुनि ने कमडंल से निकाल कर हर हर कह कर कुछ जल छिडका इससे सारा रामादल जी उठा और जय रघुनायक जय रघुवर की करने लगा। तब कुश की ओर देखकर मुनि बोले अब सन्देह हरो बेटा। अब अपनी वीणा पर रहा सहा चरित भी कह डालो बेटा। बस आज्ञा की ही देर थी तार से तार मिल गया बैर भूमि पर ही प्रीति की गुंजार की कुश ने। लंकेश्वर को श्रीरघुवीर ने संहारा। इस प्रकार भूमि का भारी भार उतारा तब सचमुच आकाश में धर्म का सितारा चमका। रघुपति का राज्याभिषेक हुआ। उनके शासन ने जग को स्वर्ग बनाया। जिस समय प्रजा में बुरी भावना जागी, मांगलिक समय में ही पति ने पत्नी त्यागी उस समय हृदय में भयंकर अग्नि धधक रही थी पर अपने कर्तव्य धर्म से वह नारी विमुख नहीं हुई न ही डीगी। तभी बाल्मीकि ऋषि ने धीरज बन्धाया तो सार वहां सीता चरित का ही पाया। पति वियोग से महादु:खी थी सीता। दिन प्रति दिन राम राम नाम की गीता ही रटती रहती थी। गुरु कृपा से ही वह जीती जागती रह गई अन्यथा तो इस देह का रीता ढांचा ही मिलता। गुरु ने सीता का सीता नाम छुपाया तो सार वहां सीता चरित का ही पाया। उस वनदेवी ने शुभ समय में दो पुत्रों को जन्म दिया। गुरुवर उनके लव-कुश नाम सुनाये। फिर अश्वमेघ समय वे अवध में आये। राजसभा में वीणा लयपर गुण गाये तब उस समय सभा में महामोद छाया तो सार वहां सीता चरित्र का ही पाया कुछ दिनों बाद जब अश्व यज्ञ का आया तब गुरु माया से उसे आश्रम की ओर बुलाया। बालकों द्वारा जब सब का मान घटाया तो फिर उस तरह गुप्तभेद पर्दा हट गया तो सार वहां सीता चरित का ही पाया। भारत की एक सन्नारी की हम कथा सुनाते है।

४) सीता सतवन्ती/भूगर्म प्रवेश - वैसे ही जब कुश से वैदेही वृतान्त सुना तो उस वीर भूमि पर अमृत समान शान्त रस बरस उठा। दोनों वीर क्षमा मांगने आगे बढे तब रघुवीरने भी उनको बडे प्रेम से हृदय से लगा लिया। पिता पुत्रों का यह मिलन देखकर स्वर्ग लोक से सुमन वृष्टि हुई और जय जय कार होने लगी। जब लक्ष्मण ने वे अनूप रूप देखे तब वे बोले मांगलिक रूप से आज अमंगल रण हुआ। उन बालकों को आशीर्वाद देने के लिये प्रत्येक का हृदय उमडने लगा। इनका अभिवादन करने को रघुकुलदल उमंगने लगा। अपयश के भीतर यश पाकर हार नही जीत हुई। कौशल की पूर्ण पराजय होकर भी जय पाई। अब यह निर्णय कौन करे किसकी जीत हुई और किसकी हार। कौशल ने इन दोनों को जीता या बदले में कौशल जीता। यह जीत हार के बदले में मनचाहा परिणाम हुआ। सीता ने राघव को पाया और राघव ने पाई सीता। हे राम रमापति मायापति अब जल्दी ही इस लीला का संवरण करो। साध्वी सतवन्ती सीता को सबके सम्मुख स्वीकार करो। तब सिया से रघुवीर बोले राम कभी पृथक नहीं लेकिन वह कभी प्रजा विरोधी काम नहीं करेगा। चाहे संसार सहस्त्र रूप धर ले पर राम को डिगाना सम्भव नहीं है। राम को प्रजा विरोधी राजा तो ब्रह्मा भी नहीं बना सकता है। इसमें मेरी सम्मति कुछ भी नहीं है सारी सम्मति प्रजा की है। प्रजा ही वनवास दे सकती है तो रनिवास भी प्रजा ही दे सकती है। तब बाल्मीकि कह उठे धन्य तुम्हे रघुराज। प्रबल पराकाष्ठा हुई प्रजा प्रेम की आज। मेरी तो सम्मति है यही कि प्रजा विरोधी कोई काम न करो जिससे विश्व में रघुकुल बदनाम हो। जनता के मत से विरुद्ध होकर राजा का चलना ठीक नहीं। यदि प्रजा का विरोध है तो सीता को पास रखना ठीक नही। इसलिये सबसे पहले इस अज्ञ प्रजा का ही अज्ञान मिटाये जाये। जिस दर्पण में धुंधला पन है उसे ही चमकाया जाये। इतने में ही पवनकुमार सिंह समान गरजे और बोले निश्चय ही मुनिराज का अति उच्च विचार है। मैं भी दृढ़ता से कहता हूँ यह झूठा दोष कलंक मिटाऊंगा और अपने बल से अपनी माता को अवध के राजमहल में पहुंचाऊंगा।

कानों से सुनी हुई नहीं आँखों देखी बताऊंगा। उस बहकी हुई अवधपुरी को सती साध्वी का ज्ञान कराऊँगा। यदि फिर भी राया को विश्वास नहीं होगा तो जनता से रण ठन जायेगा यह सहनशील हनुमान फिर साक्षात रुद्र बन जायेगा। उस समय इस सेवक का धर्म पृथ्वी और आकाश देखेंगे। उस समय इस सेवक का कर्म ब्रह्मा और शंकर देखेंगे। फिर इस तापसी प्रकृति का इस संसार से अस्तित्व ही मिटाया जायेगा और सद्गुणों की सामग्री से फिर से यह संसार बसाया जायेगा। यह जीवन भी जभी सफल होगा और आंखे भी तभी सफल होगी जब सीतापति की वामांगी कौशल की महारानी होगी। बजरंगी के उन वचनों से पूरा संसार दहल उठा। उस बाल ब्रह्मचारी का प्रण सुन सभी कपियों के हृदय फडक उठे। इसके अनुमोदन के लिये उन बालकों के भी तरकश में से तीर खडक उठे।

इतनेपर भी प्रभु श्रीराम मन्द-मन्द मुस्कुरा रहे थे जैसे बादलों से पानी बरसता हो पूरे पानी की बूंद सूरज पर नहीं पडती थी। अब महामुनि के लिये जो कुछ स्वीकार था उसका बहुमत द्वारा वही निर्णय और विचार हो गया। वैदेही लक्ष्मण के साथ कौशल आये और पुत्रों सहित मुनिनाथ अवध चले। यह आज्ञा पालन को लक्ष्मण रथ लेकर तुरन्त कुटी के पास आये। मुनि, पुत्रों, भाई व सैनिक गण सभी साथ-साथ कौशल के नर नाथ कौशल पुरी चले। सब भेद भाव छोड़ वन के सिंह और मृग लव कुश को यहां से जाते देख वे भी संग हो गये। वन के इन बन्धु बान्धवों ने साथी का साथ नहीं छोडा। इन प्यारे मित्रों ने अपनों का हाथ नहीं छोडा। लव कुश का दल जब साथ चला तो ऐसा दृश्य सुहाया मानो देवताओं का दल प्रेम सहित शिव विवाह में जाता हो। वृक्षों से पक्षी कहते थे कि ये दोनों भाई हमारी जान लिये जा रहे है। इस वन को बिना राजा की राजधानी बनाये जा रहे है। अब हमें मालूम पड गया आज से यह कौशल के हो गये है। अब इस निर्जन से नाता कैसा ये तो अब कौशल के युवराज हो गये है। हे भाई अब तो यह उस कौशलपति से ही पूछो जो न्यायशील है, औरों के धन को क्या इसी तरह हथियाते है ? तब प्रेम और आदर सहित सब भांति विविध उपाय कर अपने दल समुदाय को समझा कर वापिस लौटा दिया।

शुभ मुहूर्त में सभी का कौशल में प्रवेश हुआ। सबसे पहले वह अश्व पहुंचा जिसने घर-घर यह सन्देश दिया कि सत्य सुगन्ध सब जगह छायी, ये वीणाधारी बालक सीता के लाल है। आज जैसे बिना पानी वाली बिरवा वर्षा से लहलहा उठता है वैसे ही अवध की डाली का हर पत्ता पत्ता स्वागत का बाजा बजा उठा। यज्ञ भूमि पर जानेवाला पथ दर्शन के प्यासे लोगों ने घेरा। सुकुमारों को देखने हित उनका रथ भी प्रजाजनों ने घेरा। पूरे प्रधान-प्रधान रास्तों से स्वागत के लिये उन्हे ले गये। सभी नर, नारी वृद्ध और बालक हर्षित थे। बरसों की हार्दिक अभिलाषा सफल हुई। पग पग पर प्रीति प्रकटी। पूरे पथ पर आदर सत्कार हुआ। राज माताओं ने दोनों पौत्रों पर बलिहारी होकर आरती उतारी। उन सीता सलौनोंपर सर्वस्व न्यौछावर कर डाला। इस तरह सब में सुख का संचार करते हुये दोनों राजकुमार अवध में अश्वमेघ की भूमिपर आये। दर्शकों को भी इन्हें देखकर अतुलित प्रेमानन्द मिला।

तब रघुपति ने हाथ जोडकर गुरुदेव से कहा हे मुनिनाथ अब इस सेवक की प्रार्थना सुनिये। यज्ञ का काम सानन्द पूर्ण हुआ। अब ज्येष्ठ पुत्र को शासन का भार शुभ दिन विचार कर सौंपने की आज्ञा करे मैं अपने व्यक्तिगत जीवन में अब यह परिवर्तन कर डालूं। सब राग प्रेम अनुराग से अपने आपको विरक्त कर योगाश्रम का सहारा लूं। तब गुरु वशिष्ठ बोले राघव योगाश्रम का गमन यह विचार तो तुम्हारे लिये ठीक है क्योंकि यही सत्पुरुषों का मार्ग है। अब इस काज का आज ही श्रीगणेश कर डालो, सीता भी आज लक्ष्मण सहित आ रही होगी। ज्येष्ठ पुत्र को सिंहासन देना उचित ही कहाता है पर मेरे मन में एक भाव उठ-उठ कर आता है कि घर के जिन झगडों के कारण राजा दशरथ का सुरपुर गमन हुआ, अवध श्रीहीन हुआ। इन सब कारणों का झगडों के बारे में विचार कर भाइयों के पुत्रों को भी शासन में भाग दिया जाये। उन सबके भी दो-दो पुत्र है वे भी सभी योग्य है, यद्यपि वे अधिकारी तो नहीं है किन्तु वे भी अपने ही माने जाते है इसलिये हे राम लव कुश के साथ-साथ उनका भी मान कर साम्राज्य का आठ भाग कर आठों को राज्य दिया जाये। तब राघव ने हर्ष सहित गुरुदेव का यह प्रस्ताव स्वीकार किया और अगले दिन ही राजाज्ञा से राजसभा जुड गई।

प्रभु श्रीराम प्रजावासियों से बोले आज का दिन बडा ही शुभ है। आप सब के बल से राम ने विश्व विजयी पद पाया है। अब यदि आप सब की सम्मति हो तो पूर्व अवध का हिस्सा कुश को दे हूं और उत्तर दिशा का पति लव हो जाय। गुणविदित भाई भरत के पुत्र पुष्कल और तक्ष को दक्षिण कौशल का हिस्सा दे दूं। लक्ष्मण सुत चित्रकेतु और अंगद को पश्चिम कौसल का भाग दे दूं। शत्रुघ्न पुत्र मथुरा मंडल के शासक हो। तब प्रजा ने एक ध्वनि से यह स्वीकार किया और बोले शीघ्रता से यह उचित व उत्तम विचार कार्य में परिणित

कीजिये। सबकी सम्मति मिल जाने पर राजसभा विसर्जित हुई। प्रभु श्रीराम ने सचिव और सहचर की नियुक्ति की और कौशल पुरी सजवाने की आज्ञा दी कि अवधपुरी को भली भांति इस प्रकार सजाओ जिसे देखकर भूमंडल और सुरपुर भी सकुचा जाये। प्रभु श्रीराम बोले अवध मुझे प्राणों समान प्रिय है। यह महान कौशलपुर मेरी जननी जन्म भूमि है। इसी धरती का अन्न खाकर बलवान बना राम। और सरयू का जल पीकर ही राम ने पाया सम्मान। इसी भूमि की धूल में लोट पोट कर तीर कमान चलाना सीखा। इसी मां की गोद में खेल खेलकर राम हुआ श्रीराम। इसका नेह मुझसे कभी नही छुटेगा राम को है इसकी आन। अवधपुरी है यह कौशल पुर महान।

इधर राज्याभिषेक का विधान होने लगा। अब जो कथा शेष रह गई वो अब पूरी होनी है। रघुपति तो हर्षोल्लास से पुत्रोंसहित अवध आ गये और उधर लक्ष्मण माता सीता के पास पहुंचे। देखा कुटिया के बाहर वृक्ष तले वह वनवासिनी बैठी है जो गिया वस्त्र तन पर धारण किये हुये वह विरहन वहां पर बैठी है। रविमंडल बादल में था पर सूर्य तेज कभी छिप नहीं सकता वैसे ही तप से तपित हो वह काला तन सत का प्रकाश फैला रहा था। कुटिया से थोडी दूर पर ही गंगा की धारा बहती थी और दूसरी धार जल की उस वनवासिनी की आंखों से बहती थी। लक्ष्मण सामने खडे थे फिर भी वे आंखे लक्ष्मण को नहीं देख सकती थी। उस वनदेवी का अचल ध्यान अपने आराध्य देव का मन मन्दिर में था जब लक्ष्मण ने जाकर माता का यह हाल देखा तो चीत्कार कर चरणों में गिर पडे। जैसे ही उसका ध्यान टूटा वह पुजारिन चौंक उठी देखा गुणों की खान लक्ष्मण चरणों में पडे है। तब वैदेही बोली लक्ष्मण तुम कैसे आये हो ? क्या इच्छा है ? या दासी के लिये फिर कोई अवध से आज्ञा आई है ? हनुमन्त और गुरुवर उन दोनों बालकों को लेकर उसी अवधपुर में गये थे कही उन दोनों ने अवधेश्वर को कुछ अनुचित तो नहीं सुना डाला ? वन हो या राजमहलों में सीता सदा सर्वत्र उन्ही की है। वैदेही ने तो यही भावना और यही पूजा सीखी है। वे मेरे स्वामी मेरा त्याग कर सकते है पर मैं उन्हे नहीं तज सकती। परलोक-लोक दोनों में ही यह जानकी उनकी है और उनकी ही रहेगी। लक्ष्मण ने जानकी के व्यथित हृदय की बात सुनी तब बोले हे माता रघुवर ने कहां तजा है आपको? यह परम पावनी दिव्य मूर्ति भले ही भूल से भी त्यागी जाती तो भी यज्ञ समय इसकी प्रतिमा वाम भाग में नहीं विराजती। भगवान शिव ने भी सती का त्याग किया था फिर उसे कब वाम भाग बिठाया था ? अपने सरमुख आसन दे माता का भाव दिखाया था। जिस जनता ने आपको त्यागा वही जनता आज अति दु:खी होती है। अपनी भूल और अपनी करनी पर अब खुलकर रोती है। इतना होने पर भी प्रभु ने उन सोतों को सब भांति जगाया है। भवनोंमें नहीं माता अयोध्या में आपको बुलाया है। तब सीता बोली अवध को कुछ दोष मत दो। यह जो कुछ लीला हुई वह तो होनी की बात है। पर इस होनी द्वारा सचमुच मेरा अनन्त उपकार हुआ। सारा सार तत्व जगत का निकल आया जिससे यह संसार असार हुआ। जब प्रभु ने सीता को पाया तब कुटिया की दिनचर्या ने वन की एकान्त साधना ने मन से रानी भाव समाप्त हुआ। लक्ष्मण ने जब अनन्य अनुरक्ति धारण देखी तब चरणों में गिर लक्ष्मण बोले माता धन्य हो। कुछ समय प्रेम में पगे रहकर बोले मां अब अपने पावन चरणों से अवध को पवित्र करे। प्रजा आपकी बाट देख रही है अब आप विलम्ब न करे। प्रभु की आज्ञा यही है शीघ्र सीता आजाये। प्रभु की आज्ञा है ? या प्रभु का आदेश। अवधेश कहते हैं सीता फिर अवध आ जाये? थोडी रूक कर बोली। एवमस्तु। यह दासी तो अब बेबस है। सदा से आज्ञाकारिणी हूँ और आज्ञा ही मेरा सर्वस्व है। मेरे मन मन्दिर को आराध्य देव आप फिर अपना सगुण रूप दिखलाओगे तुम यहां वहां कहां नही हो फिर मुझे कहां ले जाओगे ? न तुम कहीं आते जाते हो और न मैं ही कहीं जाती हूँ और आती हूँ। केवल जग को दिखलाने के लिये फिर से सीता बन जाती हूँ। यह कह कर अपने खुले केश बांधकर सीता उठी। उस लव कुश की जननी ने जग जननी का वेश बनाया और बोलने लगी। गुरु की कुटिया मैं तुझे छोड़कर लज्जित हूँ। तुझसे प्रीति जोड कर मैं जीती हूँ और अब मैं हारी हूँ तुझ से प्रीति तोडकर। हे वन देव तुम्हारा हृदय से यह वनदेवी त्याग नहीं करती है। यह तो नगरपति की आज्ञा का पालन करती है। हे मृग शावक, हे गौवत्स मैं तुमको कभी न भुलूंगी। हे विल्वपत्र, हे तुलसीदल मैंने अपने हाथों से तुमको सींचा है। इस सीता का यही आशीर्वाद है कि संसार तुम्हें पूजता रहेगा। इस प्रकार हाथ जोड सीता ने सभी से विदा ली। आश्रम के शिष्यों पर आश्रम का भार छोड सीता अवध की ओर चली।

जो अश्व कभी मृग समान जाते दिखलाई देते थे। हिनहिना कर नहीं चलते थे वे ही अश्व आज कौशल पथ पर बिना हांके ही तीव्र गति से बढ़ रहे थे। फिर से अपनी महाशक्ति को पाकर फूले नहीं समाते थे। जब कभी भूमि से रथ को ठेस लगती है तो यही समझ में आती है सीता पुत्री से मिलने पृथ्वी माता अकुला रही है। घोडों की डोर लक्ष्मण के पास है और लक्ष्मण की डोर श्रीराम के पास। रघुवर

की डोर उनके प्रिय प्रजाजनों पर है। उस प्रकृति रथ में जगदम्बा शक्ति शोभायमान है जो लीलामय की इच्छा से भांति-भांति की लीला इस जग को दिखलाती है। रास्ते में मां गंगा का आशीर्वाद लेकर सीता सानन्द लक्ष्मण के साथ अवध पहुंची। अवधपुर में लगा कि त्रेता युग है जैसे यहां सतयुग आ पहुंचा। कुहरे और काई की व्यर्थ बाधायें कौशल से हट गइ। सीता के दर्शनों के लिये अवध प्रजा मंडल उमड पडा जैसे खोई शक्ति चिरकाल रोगी पा गया। जैसे ही लवकुश ने सुना माता अवध में आगई है तभी गुरुदेव की आज्ञा से वे दोनों भाई अपनी माता के पास आये। माता ने भी विह्वल होकर उन दोनों को गोदी में लेकर प्यार किया अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा उनमें परिपूर्ण शक्ति भंडार किया। जब अवधवासियों ने यह भक्ति भाव, धर्म भाव देखा तब उन्होंने कुछ नया तेज, नया पुण्य पाया। जहां सादर गुरु और दोनों भाई थे वहीं पर माता को ठहराया। जब कपि दल ने यह साआल्हाद यह शुभ समाचार सुना तो अपनी टोली सहित माता के दर्शनों के लिये वहां आये। सबने देखा सन्यासिनी सीता मृगछाला बिछाये बैठी है और अपने दोनों सुकुमारों को समयोचित शिक्षा देती है। बच्चों माता की शिक्षा को कभी भी अपने हृदयपट पर लिखते जाना इससे अपने विशाल जीवन पथ को निष्कंटक बनाते जाना। यह दृश्य देखकर शारदा भी उससमय वहां खो जाती है, ऐसी महान विदुषी मां पर बलिहारी जाती है और हर्षित हो रही है। भक्तों की टोली ने प्रणाम किया और बोले जय ज्ञानेश्वरी प्रणाम तुम्हे। दासों की टोली बोली जय मातेश्वरी प्रणाम तुम्हे।

सीता ने देखा जभी कपि समाज आया है तो उसे आदरसहित पूर्ववत ही आज बिठलाया है। तब माता सीता उन सबसे बोली लव कुश समान ही तुम सब मुझे प्यारे हो। इस कर्तव्य रूपी गगन के तुम सुन्दर चमकते तारे हो। तुम सबको फिर से सामने देखकर यह वृद्ध हृदय हर्षाया है। विधना ने अपने बिछुडे बेटों से मां को फिर से आज मिलाया है। जो सार मैंने जीवन में लव कुश को दिया वही उपहार आज तुम्हे मैं देती हूँ। सुनो परम धर्म का सार सुनाती हूँ। जन्म लेते ही प्राणियों का प्रकृति का दिया हुआ वह धर्म जिससे प्राणी कर्म करता है वह स्वधर्म कहलाता है। आगे चलकर जब गुरुद्वारा धर्म सिखलाया जाता है वह वर्णाश्रम धर्म कहलाता है। जब शिक्षा का क्रम समाप्त होता है तो जीव गृहस्थी में पडता है उस धर्म का पालन करता है वह गृहस्थ धर्म कहलाता है। फिर कुल धर्म ओर जाति धर्म सब सामने आते है फिर क्रमश: समाज के संचालक सामाजिक धर्म सिखलाते है। फिर देश धर्म या विश्व धर्म सभी प्राणी के सम्मुख आते है वही धर्म आगे चलकर धीरे-धीरे प्राणी के सुख बनते जाते है। पर प्राणी यह नहीं समझता है कि सच्चा धर्म कौनसा है ? अपने थोडे से जीवन में सब ओर भटकने लगता है प्राणी। मैं कहती हूँ, ऋषि मुनि, श्रुति वाणी सभी कहते है अपने स्वरूप को जानना यही परम धर्म है प्राणी का। हम क्या है ? कौन है ? और यह जगत क्या है ? हम यहां क्यों आये है और हमें क्या करना है ? क्या हमें यही जीना है? जन्म क्या है ? कौनसी वस्तु मृत्यु है ? सच्चिदानन्द किसे कहते है ? उसमें और हममें क्या अन्तर है ? इसकी सतत खोज कर जानते रहना सारे धर्मों से बढ़कर है। जो अवसर आत्मा से अपनी प्राणी साक्षात्कार करता है उस अवसरपर ही सब धर्मों पर पूर्णाधिकार करता है प्राणी। इस कारण नित्य सत संगति कर सत का सर्वदा मनन करना कुछ समय आत्म चिन्तन करना बस यही सब धर्मों का सार है। वही सच्चा सन्यासी है जिसने लालच लोभ हटाया मन से मोह माया मिटाया जिसने। जग से उदास होकर शुद्ध आत्मपद पाया हो। सुख-दु:ख को एक मानता हो और जन्म-मरण को जानता हो। सो अहं की रट हो वही तो अविनाशी है। सब धर्मों से युक्त वही जो जीवन मुक्ति है, भक्त भी वो ही है, मुक्त भी वो ही है जो निजपद का वासी है।

सीता सतवन्ती ने पूर्ण सम्मान पा लिया इधर राज्याभिषेक का महान दिन आ गया। सब रास्ते सडके जगमग जगमग कर रहे थे, पूरा महल मणि मुक्ताओं से मढा हुआ था। ऊंच नीच का भेद नहीं। चारों ओर प्रेम भाव बढ़ा हुआ था। विप्रवर्ग वेद ध्वनि उच्चारण कर रहे थे। क्षत्रियों के खेल शस्त्र थे। वैश्य सभी आतिथ्य कार्य कर रहे थे और सेवा का प्रबन्ध शूद्रों के पास था। मंगलाचार के सभी गीत नारी समुदाय सुनाता था। प्रजा मंडल मुदित हो चिरंजीवी हो राजा अपना ऐसा मनाता था। धौंसे ऐसे बज रहे थे जैसे जग को थर्रा देते है। शंखों के नाद स्वर्ग तक को हिला देते थे। राजधानी के सभी उद्यान फल फूलों से लदे थे उन्मत पवन के झोंकों से रसिकों के हृदय झूलते थे। सरयू भी उछाह से आपे में नही समाती थी और स्वतन्त्रता का जीवन अच्छा है यही पाठ पढ़ा बहती जाती थी। जगपति जगदम्बा सहित जिस जगह अपना प्रकाश दिखलाता है फिर उस कौशल नगरी का वर्णन कौन सा कवि कर पाता है ? सब कहते है पूरे जग की सुन्दरता आज कौशल को मिल गई। शारदा की प्रतिभा सहित लक्ष्मी की आभा कौशल को मिली। इतनी स्वच्छता थी कि सुरदल तक भी ध्यान नहीं रहा पृथ्वी तो क्या नभमंडल पर तक काला दाग न था। इधर अवध में सब भांति सुन्दरता का धाम बना और

उधर महल में पधारे अवधेश श्रीराम। अति उत्तम अवसर जानकर श्रीराम ने सीता का ध्यान किया तभी शक्ति स्वरूपा जानकी प्रभु आज्ञा मान प्रकटी। तब प्रभु बोले देवी अब धरा का भार हरण हुआ। असुरगणों का भी पूर्णतया संहार हो गया। जिस हेतु हम दोनों इस जगत में आये थे वह कार्य भी अब पूर्ण हुआ। भक्तों पर जितने संकट थे वे सब हमने हर डाले। अब साकेत धाम चलो। कर्म भूमि पर अपने सब कर्म कर लिये भक्तों के हित नाना चरित्र अब तक इस भूतलपर दिखलाये है। नारी का त्याग कर फिर भी राज पद को नहीं गिराया है। अन्तिम प्रजा का आदर्श राजाओं को सिखलाया है। वामांग तुम्हारी प्रतिमा रख पत्नीव्रत भी सबको सिखलाया है। किस तरह सब धर्म निभते है यह सब जग को बतलाया है। अब इस भूतल को प्राणी दल को हे देवी अब अपना सत दिखलाओ और पतिव्रत गौरव इस भूमंडल पर बतलाओ। अपने चमत्कार की लीला से अपने में पृथ्वी लय कर लो। सम्पूर्ण हो गई अपनी यात्रा अब यह अन्तिम पथ भी तय कर अपनी लीला का संवरण करो। जो आज्ञा कह छवि अन्तर्ध्यान हो गई।

तभी वहां राजमहल में लक्ष्मण आये और प्रभु श्रीराम से बोले अभिषेक भवन जन गणों से भर रहा है। इस आपका यहां अकेले रहना शोभा नहीं दे रहा है। गुरुजन, विप्रवर्ग पहुंच गया है मन्त्री मण्डल भी उपस्थित हो गया है सिर्फ अब हमारे लोगों का ही विलम्ब हो रहा है। प्रभु श्रीराम बोले यदि ऐसी बात है तो मैं अभी तैयार होकर चलता हूँ। इधर राम लक्ष्मण दोनों तैयार होने लगे और उधर दरबार में आठों राजकुमार जाने लगे। नगर वासियों के नेत्र उनकी रूप माधुरी को देखकर सुख पा रहे थे। कितने पावन, कितने निर्मल और कितने मन भावन मुखडे है मानो इस पृथ्वी पर आठ सूर्यवंशी चन्द्रमा उतरे है। वस्त्रों का ही इतना प्रकाश हो रहा था कि उसके प्रकाश से ही नेत्र नीचे झुक जाते है। उस पर भी बहु विविध आभूषण और नव रत्नों से विभूषित है। उनके कोमल कोमल चरणों पर सब बलिहारी जाते है। इस तरह उन्होंने सबका हृदय जीत लिया। जब आठों राजकुमार राजसभा में आ गये तो उसी समय राजसभा में जयनाद गुंज उठा और आगे बढ़ कर मन्त्रियों ने उन्हें साल्हाद बिठाया। उस तपसिन के बच्चों ने देखा आठ सिंहासन शोभायमान हो रहे है जिसके समीप में गुरुवर बैठे शोभा पा रहे है। गुरु आसन से ही सटे हुये अन्य चार आसन भी थे उनके पीछे मन्त्रीगण, निशाचर, वानर, पुरजन थे। दूसरी ओर बाल्मीकि विराज रहे थे उनके समीप मुनिमंडल था। सामने विप्रवर्ग शोभा था और उनके पीछे चारण दल था। उन मंचों के दायें बायें नगर वधुओं ललनाओं के बैठने की व्यवस्था की थी। पूरे मंडल को चित्रकारों ने सजाया था इन सबके पीछे दर्शक मंडली विराज रही थी। जब वे चतुर कुमार इस सभा मंडप की छटा निहार रहे थे उसी समय राजा की जय से दरबार गुंज उठा। तब देखा भक्त आदि के सहित रघुवीर धीरे-धीरे उन मंचों के पास आ गये और चारों भाई उन चार सिंहासनों पर आसीन हुये मानो चारों ओर ऐसा लगने लगा दुनिया में चार सूर्य उदय हुये। सुर मंडल ने जय नाद किया। विप्रवर्ग वेद ध्वनि उच्चारण की। उसी समय राज्याभिषेक का कार्य साल्हाद प्रारम्भ हुआ।

प्रभु का आदेश पाकर बन्दी जन सभी उपस्थित जनों से प्रभु का सन्देश कहने लगे। सर्व मतों से पहले जैसे निश्चित प्रथम विचार हुआ कि कुश को प्रभु कौशल का राज्य देंगे पर इसके पूर्व अयोध्यापति फिर से निर्णय करना चाहते है। प्राणों से भी प्यारी जनता की सम्मति भी लेना चाहते है। पिछले निर्णय से यदि कोई अपने मन से सन्तुष्ट न हो तो वह नि:संकोच अपनी इच्छा गुरुजनों से कह दे। तभी प्रजा सम्मिलत कंठ से अनुमोदन करती हुई बोली हमें पिछला निर्णय सब भांति स्वीकार है। तब कुश ने उठकर भरी सभा से कहा हमें यह कौशलपुर का राज्य स्वीकार नहीं है। जो जनता जन प्रिय राजा से अपनी रानी का त्याग कराती है। सतवन्ती के पावन सत पर मिथ्या सन्देह करती है। जिसके विचार भ्रम और भूल भरे कि त्यागने की हद तक जाते है वैसी जनता को हम गुरुकुल से ही हम दोनों शीश नवाते है। ऐसी रैयत के शासन को कोई बडभागा ही लेगा। हम दोनों तो उस मां के बालक है जिसको उसके स्वामी ने त्यागा है। यदि मां बनवासिनी है इस जग में तो बेटे भी वनवासी है। सन्यासिनी के जन्मे बच्चे जन्म जात सन्यासी है। जब तक माता के बारे में उचित विचार नहीं किया जाता तब तक हमें राजा बनना अस्वीकार है। वह कुमार प्रजाजनों में सिंह के समान गरज कर बोला तब सभा बीच चारों ओर सन्नाटा सा छा गया। तब पवन सुत हनुमान चुप नहीं रह सके और बोले कौन है वह जो सीता माता को दोष लगाता है? जिन आंखों ने देखी है सीता सतवन्ती की आभा लंका में जिन कानों ने गर्जना सुनी है उस क्षत्राणी की लंका में, जो अग्नि परीक्षा की घटना अपनी आँखों से देख चुके है वे ही माता के चरित्र का निर्णय प्रमाणों से कर सकते है। उन सबका दावा है कि माता निर्दोषिनी, निष्कलंक है। श्रीराम के चन्द्रमुख की अति पावन चारू चन्द्रिका है। इसके पतिव्रता का उदाहरण तो कहीं त्रिलोकी में भी नहीं है। महलों में रहनेवाली ने पतिव्रत धर्म रखा अशोकवन में। साक्षी प्रस्तुत कर दूंगा उस वन के वीर सिपाही से। चांद सूरज भी उतर आयेंगे गवाही देने के लिये।

शारदा भी माता के विरुद्ध कुछ कुत्सित नहीं कह सकती। ब्रह्मा दोषी हो सकता है पर माता में कोई दोष नहीं है।

तभी राक्षसी त्रिजटा के हृदय में भी एक उबाल उठा तब वह भी ऊंचे स्वर में तत्काल बोली। उसीसे पूछो माता क्या है जो रही साथ माता के, जिसने अपनी आंखों से देखे थे दिन अशोक वाटिका के। यदि एक दिन मैं वहां नहीं होती तो यह चिता में जल राख हो जाती थी। यह जो राजदरबार आज यहां लगा है वह सुनसान हो जाती थी। अपनी हड्डिया सुखा कर भी माता ने अपना पतिव्रत धर्म रखा है। छूना स्पर्श तो बहुत दूर की बात है उस निशाचर को कभी दृष्टि उठा कर भी नहीं देखा है। सत का प्रकाश तो कभी मिट ही नहीं सकता चाहे जितनी शंका की मलिन रज छा जाये। चन्द्रमा कभी भी मैला नहीं होता चाहे बादल उसे ढक ले। ऐसी सती का त्यागना सचमुच में बडा पाप हो गया है। दुर्देव विधना ने अवध के खेतों में अपयश का बीज बो दिया। इसका प्रतिशोध लेने जग जननी जब अपना शीश उठायेगी तब सूरज काला पड जायेगा और पृथ्वी चौपट हो जायेगी। पत्ता पत्ता साक्षी है और कण-कण, जर्रा-जर्रा सफाई दे रहा है कि जनता माता का न्याय करे त्रिजटा की बस यही दुहाई है।

तभी मुनि वाल्मीकि भुजा उठाकर बोले मैं भी यही पुकार कर रहा हूं हे कौशलाधीश आज न्याय हो जाये। वनदेवी जिसका नाम धरा और पुत्री समान जिसे पाला वह जग में उजियाली हो तो आश्रम में भी उजियाला होगा। अन्यथा शपथ से कहता हूँ मेरी पुत्री में कोई दोष नहीं यह मैं तप बल से सिद्ध करूंगा और सभी की शंका का सम्पूर्ण समाधान करूंगा। पास ही मिथिला के नर राज विराज रहे थे और बोले अब अविलम्ब ही निर्णय हो जाये। वशिष्ठ मुनि को यही अभिष्ट है कि अभी समाधि लगाये और जो कुछ सच्ची बात हो वह प्रजा को बतलाये। तब यह सुनकर ब्रह्मर्षि ने समाधि लगाकर जांच कि तो झूठ आंच में मिल गया और रह गया सांच का सांच। तब आसन से खडे हो गुरुवर बोले सचमुच में सीता पर अवध ने अन्याय किया है। अवधपुरी के माथेपर बुराई का टीका लग गया। अब आज यह ब्राह्मण उसे सच्चाई का पानी लेकर धोता है। सब लोग सुने सूर्य के उदय होने पर अन्धेरा रहता है। इसी भांति सीता सतवन्ती की भरी सभा में विजय हुई। हार्दिक क्लेश से व्यथित होकर सारी प्रजा रो उठी। पूरा अवध प्रदेश पानी-पानी जैसा लज्जित हो गया। तब सब लोग महान पश्चाताप करते हुये बोले माताजी यहां आये और हमें क्षमा प्रदान करे। वे अगर हमें ठुकरा भी देंगी तो भी हम शीश नहीं उठायेंगे और इन्ही लज्जित आंखों के जल से उन श्रीचरणों को धोयेंगे। हम सब आज बडभागी हुये। हम में आज उजियाला छाया। महलों वाली महिमामयी माता फिर आज महलोंवाली हुई। तभी पवन तनय हनुमान उठकर हर्षित हो नाद करने लगे और बोले मेरा प्रण आज पूरा हो गया। वाल्मीकि भी कहने लगे हृदय का रोग मिट गया। बनवासी का भी उद्योग भी पूर्ण हुआ और गुरु राजकुमारों से बोले अब देर मत करो जो कुछ अवधपति देते है उसे तुरन्त स्वीकार करो। गुरु समेत तत्क्षण सारा विप्र समाज उठा और अभिषेक की रीति विधि पूर्ण की। इस प्रकार सभी कुमारों का राज्य अभिषेक निर्विघ्न हुआ।

तभी उसी समय जोगिया वेश में एक जोगन आई और बोली, प्रभु के चरण रूपी कमल की भ्रमरी बन वन भटकी थी। अपनी आंखों में यह दिन देखूं बस यही लालसा मन में अटकी थी। फिर सूर्यवंश के गौरव की भी श्री सम्भाल कर रखनी थी। रघुकुल के राजमुकुट की मणि जग में उजागर कर रखनी थी। इन बातों के साथ ही एक ओर थी बात जिसके कारण विश्व में होती दिन की रात। सीता से नहीं साध्वी से उसके सत से प्रजा दल लडता था इसलिये सारा सती मंडल अपना प्रतिशोध लेने के लिये उबलता था। यदि उसी अवस्था में सीता अपने प्राण इस जग में गंवा देती तो अवधपुरी की तो बात ही क्या जग में कल्पभर प्रलय हो जाती। पृथ्वी सागर में लय हो जाती। सूरज भी ठंडा पड जाता। उस आत्मघात के बदले में सारा संसार उजड जाता। उस शंकरवादी दल का विनाश बस एक शाप पर ही था पर मेरी सहनशक्ति ने वह शाप रोके रखा था। अब प्रजा के क्षमा मांगने के कारण हृदय की सब व्यथा मिट गई। आज अब मैं यहां की साम्राज्ञी हुई और यह प्रजा वही फिर से प्रजा हुई। अब तक तो मौखिक बाते थी भ्रम को निकाल देने का। लेकिन अब तो आंखों से देख कर संशय निकाल दो। मां पृथ्वी यदि सीता ने कभी भी अपने पति को छोड पर पुरुष न देखा हो तो तुम सीता को अपने गर्भ में ठौर (स्थान) दो। यह सुनते ही उसी क्षण भू का वह भाग फट गया। जग ने देखा उस सती का वह अतुल प्रभाव। पृथ्वी फटते ही उसमें से एक सुन्दर सिंहासन प्रकट हुआ। देवी स्वरूप में एक दिव्य तेज साध्वी सीता के निकट आया। धीरे-धीरे रूप एकाकार हुआ और भेद मिट गया दो दो तन का। इस प्रकार उस शक्ति सिंहासन का पृथ्वी प्रवेश आरम्भ हुआ। तब प्रभु ने अपने दम्पती प्रेम की फिर शान दिखाई और सभा छोड़ तुरन्त उस छवि की ओर दौडे और बोले राघव को छोड कहां जा रही हो यह कहकर राघव ने उस मूर्ति का दायां

हाथ पकडा। इस झांकी ने विश्व पर तभी प्रकाश डाला और उसी समय सीताराम की जय से आकाश गूंज उठा। सुरगणों ने पुष्पांजलि अर्पित की। वेद भाट बनकर गाने लगे। इस तरह उस सती जगदम्बा ने पृथ्वी पयान किया। यह स्थान नैमिषारण्य में है जहाँ पर सती सीताने भू-गर्भ प्रवेश किया और वह स्थान सीता कुंड के नाम से जाना जाता है। सभी अतिथि अपने अपने घर को प्रस्थान कर गये। नये शासकों ने शासन का भार सम्भाल लिया। विश्वभर में अटल सत्य धर्म का राज हो गया। रघुकुल के भ्राताओं ने सरयू तट पर वास स्थान बना लिया जैसे एक प्रकार से सन्यास ले लिया हो।

५) श्रीराम का स्वधाम लौटना- जो माया से बाहर निकल कर अध्यात्म आत्म ज्ञान का पथ धारण करता है, पर दु:ख जिसको देता है, दु:ख पर सुख जिसको सुख देता है, जो कोई ज्ञान रश्मियों से भूले को मार्ग बताता है, अपने को सुधार कर जो अन्य जनों का सुधार करता है वही सच्चा सन्यासी जानने योग्य है। उसका जीवन ही जीवन है। इतिहास और काव्य में सदा ही उसका अमर वर्णन रहता है। जगतपति ने राम अवतार ले कर यह सब रहस्य जगत को बतलाया है और अब अन्त समय सरयू तट चौथा आश्रम बनाया है। नित प्रतिदिन आत्म अध्ययन होता है दिन प्रतिदिन सत्संग होता है। अब सन्यासी रघुनाथ का अब प्रतिदिन का यही क्रम था। जो भी वहां रघुनाथजी के दर्शन करने आता था उसको आत्मपद के बारे में श्रीराम समझाते थे। इस भांति बहुत दिनों तक प्रभु ने भक्तों को कृतार्थ किया। परमार्थ का मार्ग दिखा कर जगत की मानवी लीला को चरितार्थ किया। तब एक दिन इच्छा कर ली साकेत धाम जाने की। प्रभु की इच्छा से वहां पर तभी एक अनुपम तपस्वी उपस्थित हुआ। मेरी एक विनय है मैं सादर निवेदन करना चाहता हूं। पर वह निवेदन पूर्ण रूप से गुप्त है इसलिये एकान्त में निवेदन करूंगा तब यहां पर अन्तरंग परिस्थिति की जाये। यह सुनकर भरत और शत्रुघ्न वहां से हट गये किन्तु लक्ष्मण को रोककर श्रीराम बोले हे लक्ष्मण मैं जब तक इस मुनि से बात करूं तब तक तुम द्वार पर ही रहना और यदि मुझे कोई मिलने भी आये तो उसको वहीं रोके रहना। भीतर किसी का भी प्रवेश न हो। यद्यपि आश्रम में रोक थाम अनुचित है पर क्या किया जाये इन मुनिवर की हठ भी तो रखनी पडेगी। जो आज्ञा कह लक्ष्मणने प्रस्थान किया तब तपस्वी कहने लगा हे दीनानाथ दयानिधान यह मुनि वेश में आपका सेवक धर्मराज आया है। ब्रह्माजी का सन्देश लेकर आया है। आपके मन में साकेत गमन की जो इच्छा प्रकटी है उस इच्छा बल ने ब्रह्माजी के पास सन्देश भेजा है। उसी सन्देश को लेकर यह सेवक आपका आया है। आप आज्ञा करे क्या कहूँ विधाता से जाकर ? आज्ञा सुनने का इच्छुक है। सुरमंडल आपके दर्शनों के लिये घडियां गिनता है, उत्सुक है, बेचैन है। हे कमलेश कमला भी आपके आने की राह देख रही है। तब प्रभु मुस्कुरा बोले मैंने यह मानव शरीर धारण कर अपने सब यहां के कार्य पूर्ण कर लिये। साकेत वासियों से कह देना अति शीघ्र ही वहां पहुंच रहा हूँ। सारा क्रम अपनी यात्रा का इसी समय से रचना आरम्भ करता हूँ। मुझसे भी पहले लक्ष्मण का मन उचटा है इसलिये शेषावतार की यात्रा प्रथम रखी है। फिर शत्रुघ्न भरत समेत यह राम भी आता है। विधि का विधान भी यही है कि जो आता है वह जाता भी है। यह जन्म भी नहीं, वह मरण भी नहीं बस एक कृत्य था जो पूर्ण हो गया। अब भूमि का भार हरण राक्षस दल का मद चूर्ण हुआ। प्रभु की बात पूरी भी नहीं होने पाई थी कि इतने में ही द्वार से तत्काल लक्ष्मण लौट कर आये तब प्रभु बोले क्या बात है लक्ष्मण, द्वार छोडकर क्यों आये हो ? किसलिये मेरी आज्ञा भंग कर दी ? तब अनुज लक्ष्मण बोले मुझसे यह अनुचित कार्य हो गया। लक्ष्मण इस विधि के अनिवार्य कृत को रोक नहीं सका। बाहर द्वार पर दुर्वासा आये और उन्होंने कहा ऋषि आज्ञा पालन करें।

मुझे प्रभु श्रीराम से इसी क्षण मिलना है मेरा सन्देश उन तक पहुंचाओ। मैंने उन मुनिश्वर को बहुत भांति समझाया और विनती की पर वे किसी तरह भी नहीं माने। उन क्रोधी महामुनि ने मुझे देहावसान का श्राप दे डाला। मैं लाचार होकर उन्हे बाहर ठहरा कर अपना कर्तव्य पूरा करने के लिये यहां आया। अब आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा के लिये वे द्वार पर खडे है। यदि आपकी आज्ञा हो तो उन ऋषिवर को आपके पास बुला लूं अथवा वह धनुष यज्ञवाला सारे जगत को दिखला दूं। धर्मराज जो प्रभु के पास खडे थे प्रभु के इस क्रम को देखकर ठहाका मार कर हंस पडे फिर अन्त में प्रणाम कर उसी क्षण अन्तर्ध्यान हो गये। तब लक्ष्मण से कृपा सिन्धु बोले भाई विधना का लेख मिटाने भी नहीं मिटता है। होनी होकर ही रहती है। हटाने से भी नहीं हटती है। अब तो वही घटेगा जो घटना होनेवाली है। अब सन्ध्या को सरयू तट पर जाकर प्रायश्चित करो। अब यह पंच भौतिक शरीर को त्याग कर स्वर्ग सिधारो। मुझे भी अब यहां नहीं रहना है शत्रुघ्न भरत के साथ-साथ पीछे से मैं भी साकेत धाम जाने के लिये आ रहा हूँ। अच्छा अब जाकर दुर्वासा ऋषि को सादर

बुला लाओ। वे निर्दोषी है यह सब करूं तो होनहार ऊपर से बनकर आया था। जो आज्ञा कर लक्ष्मण शीश नवाकर चले और दुर्वासा मुनि को अपने साथ लिवा लाये। तब प्रभु ने मुनि दुर्वासा को आसन ग्रहण करने के लिये अनुरोध किया। उस क्रोधी मुनि के हृदय से क्रोध धुये की भांति उड गया और बोले भगवान ऋषि अपराध क्षमा करे। इस क्रोध रूपी वैताल ने मेरा ज्ञान ही नष्ट कर दिया। आप श्री के मुख का दर्शन कर मुझे होश आ गया। मेरे मन को बडा ही खेद है मैंने क्या कहा ? क्या किया पता नहीं। मन में बहुत ही खेद है। तब प्रभु बोले वह सब जाने दो, यह तो होनी का एक इशारा था उसमें कुछ भी तुम्हारा दोष नहीं था इसलिये तुम्हे सब विस्मरण कर गये। अच्छा कहिये अब क्या आज्ञा है। भगवन किस लिये आपने इस समय कृपा की है। भगवन बहुत दिनों के बाद सुधि आपने अपने सेवक की ली है।

तब मुनि बोले जिस कार्य हेतु मैं आया हूँ वह आपको विदित कराता हूँ कि हम मुनि ऋषिवरों के लिये भी कुछ जगह प्रदान करो। जप तप करने के लिये हमें उत्तराखंड मिल जाये। वह भूमि युग युग तक हम तपस्वियों के लिये तपोवन कहलाये। वह भूमि तपस्वियों के हेतु ही हो। जो कोई भी जगत से उपराम हो जाये वह वही जाकर अपना निवास करे। स्वच्छन्द होकर निभर्य होकर सन्यासी बन अपना सन्यास पालन करे। प्रभु श्रीराम बोले मुनिवृन्द का तो सब जगह प्रवेश है आप महानुभावों के लिये तो उत्तर देश ही क्या सारा देश है। अब तक आप सर्वत्र रहे है और अब भी वे सर्वत्र रहेंगे। पृथ्वी के हर कोने-कोने स्वच्छन्द होकर विचरेंगे। पर फिर भी यदि आप आज्ञा देते है तो यह काम भी करा दूंगा कि ऋषियों की प्रधान तप भूमि उत्तराखंड को बना दूंगा।

जब मुनि ने आदेश कहकर पूरा किया और वहां से विदा होकर चले गये तब प्रभु श्रीराम ने मुनि का यह सन्देश पुत्रों को भिजवा दिया। फिर तब से वह उत्तराखंड भूमि ऋषियों की तपस्थली बन गई। उसी दिन जब दोपहर में प्रभु श्रीराम बैठे हुये थे उसी समय वहां पर गुरु वशिष्ठ भरत सहित आये। सबने गुरुवर को सादर प्रणाम किया। गुरु बोले, हे राम सुनो। अपने मन में छुपी बात कहता हूँ बरसों से तुम्हारे कुल पुरोहित रूप में बन्ध किसलिये अवध में रहता हूँ। सभी सुजान लोगों का मत है कि पुरोहित कर्म निन्दनीय है यह कर्म कभी भी अच्छा नहीं है फिर भी चतुरानन की आज्ञा से यह धर्म निभाया है। उनके कहने से मैंने यह भार उठाया है। कारण यही था कि रामावतार हमें आपके दर्शन का लाभ मुझे उन्होंने बतलाया था। आपकी सानिध्य, सामीप्य का लोभ मुझे भरमाया था। बस इसी कारण से मैंने यह निंदित पुरोहित कर्म स्वीकारा था। अब मैंने मेरी योग शक्ति से जाना कि तुम अब साकेत धाम जा रहे हो तो अपने इस वृद्ध पुरोहित को क्या दान दे रहे हो ? अब तो मैं बस यही चाहता हूँ कि यह हृदय आपका धाम हो, आप इसमें सदा-सदा निवास करे और मेरा रोम रोम राममय हो बस इस रोम रोम में राम रहे। प्रभु ने तत्काल एवमस्तु कह गुरुवर के चरणों में शीश नवा दिया।

इधर जब सब लोगों को खबर पडी कि दुर्वासा मुनि के शाप कारण लक्ष्मण शरीर छोड रहे है तो सब अधीर हो उठे। उस अवसर पर कौशल का बच्चा बच्चा सरयू तीर पर आ पहुंचा और शेषावतार लक्ष्मण का महाप्रयाण देखा कि शेषावतार ने अपनी छाया लय करने सरयू जल में समाधि ली। उन्होंने श्रीराम जी के साथ-साथ माता सीता का ध्यान किया और ब्रह्म रन्ध भेद उस तेजस्वी ने इस दुनिया से प्रस्थान किया। दूसरे दिन सरयू तीर पर महापर्व था। आकाश में देव खडे थे। लक्ष्मण की भांति सीता पति राम से भी पहले भरत शत्रुघ्न ने पयान किया। फिर जगत के जर्रे जर्रे को भी अपना अन्तिम दर्शन देकर, द्वापर में फिर से आने का विमल वचन देकर सबको हर्षित कर इस भूमंडल के स्वामी ने भूमंडल से प्रस्थान किया। अमरत्व का वरदान हनुमान को देकर प्रभु ने अपने को अन्तर्ध्यान किया। प्रभु श्रीराम ने इस पृथ्वी पर १० हजार वर्ष तक राज्य किया। इस तरह कौशलपति ने अपना इतिहास पूरा किया।

उसी समय भगवान शिव पार्वती से बोले हे गिरिजा बहुत विस्तार से तुम्हे राम चरित्र सुनाया अब तो मैंने कुछ भी अपने पास नहीं रखा। राम अनन्त है राम कथा अनन्त, राम अकथ है राम की गाथा अकथ और अपार। मैंने तुम्हे सब क्रम से सम्पूर्ण चरित्र सुना दिया जिसको सुनकर तुम आज अत्यन्त पावन हो गई। अब साकेत पहुंच कर राम ने अपना दरबार लगाया। प्रभु दायें बैठे और सीता वामांग विराज गई। सौमित्र शत्रुघ्न सहित श्रीराम चरण पद चाप कर रहे थे और भरत प्रभु के उपर चंवर डुलाते थे। देव वृन्द सभी आरती कर रहे थे। साकेत की यह मनोहर छवि झांकी देखने योग्य बनती थी। भगवान श्रीराम का नाम ही तारने के लिये नाव है। जब जब भी पृथ्वी पर अधर्म की प्रबल बढ़ती है तब-तब प्रभु इस धरा पर प्रभु अवतार लेते है। दुष्टों का हनन कर पृथ्वी का भार हरते है। अपने भक्तों का आर्तनाद सुनकर नंगे पावों दौडते है और भक्तों का कल्याण करते है। जय सीता कान्त, जय सीता पति राघव राम।

इति लवकुश काण्ड समाप्त

ग्रन्थ समापन (उपसंहार)

जिसकी गांठ में राम हैं, उसके पास सब सिद्धियाँ हैं। उसके आगे अष्ट सिद्धि और नौ निधि हाथ जोडे खडी रहती हैं।

राम-राम के दो अक्षर में क्या जाने क्या बल है। नामोच्चारण से ही मन का धुल जाता सब मल है।
गद्‌गद् होता कण्ठ, नयन से स्त्रवित होता जल है। पुलकित होता हृदय, ध्यान आता प्रभु का पल पल है।
यही चाह है नाथ ! नाम जप का यह तार न टूटे। सब छूटे तो छूटे प्रभु ! तेरा ध्यान कभी न छूटे।।

पढे छ:वों शास्त्र ओ अठारहों पुराण देखे, वेदों को आदि से अन्त तक छाना है।
तीरथ तप ज्ञान ध्यान, योग यज्ञ ब्रत दान, संध्या-तर्पण शिल्प-विद्या ज्योतिष को जाना है।
नाडी पहचानना औ चाकरी के जोन दाँव पेच, जाना सहनाई और खेती बाग का लगाना है।
इतना जिन जाना, तिन खाक नहीं जाना सन्तों, जाना है वही जिन श्री राम नाम जाना है।

हरि अनंत हरि कथा अनंता। कहहिं सुनहिं बहुविधि सब संता।। रामचन्द्र के चरित सुहाए। कलप कोटि लगि जाहिं न गाए।।

श्री हरि अनन्त हैं (उनका कोई पार नहीं पा सकता) उनकी कथा भी अनन्त है, सब संत लोग उसे बहुत प्रकार से कहते सुनते हैं। श्री रामचन्द्र का सुन्दर चरित्र करोड कल्पों में भी गाया नहीं जा सकता।

धार्मिक विभूतियों को ऐतिहासिकता की कसौटी पर नहीं कसा जा सकता, वे तो हमारा जीवन हैं। हमारे राष्ट्र की झोली में मानो पहले ही विवादों की कोई कमी थी, जो भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने एक और मुद्दा जोड़ दिया। हमारे चारों ओर मौजूद भ्रम एवं तनाव इससे और भी बढ़ गया है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण इस बारे में अपनी राय कायम कर सकता था कि राम सेतु या आदम पुल बालू तथा मूंगे से बनी एक कुदरती संरचना है, जिसे ऐतिहासिक, पुरातात्विक या कलात्मक महत्व का नहीं कहा जा सकता। यह एक तार्किक नजरिया है, जिसे केवल इतने ही मजबूत पेशेवर जवाबी तर्क से निरस्त किया जा सकता है। लेकिन पुरातत्व विभाग ने तो इससे परे जाकर राष्ट्र को स्तब्ध कर दिया। उसने ऐतिहासिक विभूति के रूप में श्रीराम के अस्तित्व पर ही संदेह प्रकट कर दिया। इस दुर्भाग्यपूर्ण प्रसंग के बाद सत्य की प्रतिष्ठा के लिए कई तर्क दिए जाने की आवश्यकता है।

इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण का वह हलफनामा न केवल पूरी दुनिया के हिन्दुओं, बल्कि हमारी विलक्षण बहुलतावादी सांस्कृतिक विरासत के लिए भी दुर्भाग्यपूर्ण, अनुचित और अपमानजनक था।

किसी भी घटना की ऐतिहासिकता उस घटना से जुड़े स्थलों, ग्रन्थों, मार्गों, ऐतिहासिक साक्ष्यों, वंशावलियों और अनुश्रुतियों की सामग्री से की जाती है। ये सभी आधार सामग्रियां प्राचीन भारतीय साहित्य और लोक कथाओं, गीतों व किंवदंतियों में बिखरी पड़ी है। बल्कि राम-कृष्ण कथाओं पर जितना लिपिबद्ध भारतीय साहित्य उपलब्ध और लोकश्रुति वर्णन है उतने विश्व के किसी अन्य देव पुरुष के सिलसिले में नहीं है। यह एक आश्चर्य की बात है कि विन्ध्याचल में अब भी कुछ आदिवासी जातियां हैं जो राम-सीता की अनेक कथायें सुनाती हैं।

राम और कृष्ण तथा वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, श्रीमद्‌भागवत गीता और महाभारत को सर्वथा कल्पित कहकर नकार दिया जाए, तब भू-खण्ड भारत का भी कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। इतिहास और भूगोल का सह-अस्तित्व है। इतिहास की अविस्मरणीय जिन तिथियों को महत्वाकांक्षी महानायकों ने अपना और अपनी निष्ठावान सेना का जीवन जिन भू-खण्डों पर दांव पर लगाकर घटनायें रक्ताक्षरों से लिखी वे सजीव घटनायें प्राचीनकाल में दैनंदिन लोक व्यवहार व प्रचलन में आकर गाथायें व महागाथायें बनीं और साहित्य में अवतरित हुईं। इस दृष्टि से राम और उनके समकालीन चरित्रों की व्यापकता अद्वितीय है और यही व्यापकता उनकी ऐतिहासिकता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

यह दूसरी बात है कि कालांतर में रामकथा को देवत्य प्रदान कर राम को अवतार मानकर असंभव से लगने वाले चमत्कारों से जोड़ दिया गया और इस आधार पर इस संपूर्ण वृहद कथा अथवा इतिहास प्रसंग को तथाकथित इतिहासज्ञ और बुद्धिजीवियों द्वारा कल्पित

अथवा गढ़ा हुआ माना जाने लगा। लेकिन भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण जो भारतीय पुरातत्व धरोहरों की सबसे बड़ी संरक्षक संस्था है। उनके द्वारा राम के अस्तित्व को ही नकार देना इस बात का द्योतक है कि इस संस्था की शोध और ज्ञान की परंपरा ही नष्ट हो गई है अथवा यह प्रच्छन्न दबाव में है ? आखिर यह संस्था जिन प्राचीन स्मारक, पाण्डुलिपियों, चित्रों, शास्त्र और अस्त्रों का संरक्षण कर रही है वे किन कालखण्डों से जुड़े हैं ओर उनकी ऐतिहासिक व पुरातात्विक क्या महत्ताए है, वे नहीं जानते ? ऐसे में एएसआई के शपथ पत्र में दर्ज किए गये इस कथन को कि रामायण एक मिथकीय कथा है और इसके ऐतिहासिक कथा होने के कोई प्रमाण नहीं है को सरकार यह कहकर नहीं टाल सकती कि राम जनभावना से जुड़े हैं और हम उन्हें तर्क व प्रमाण की कसौटी पर नहीं कस सकते ? यह सही है कि राम एवं कृष्ण जन-आस्था के प्रबल प्रतीक हैं, ऐसे में तर्क व साक्ष्य की कसौटी पर उनकी ऐतिहासिकता सिद्ध करना अथवा इतिहास के स्त्रोत खोजना बेमानी है। दरअसल, ऐसे ही बहाने प्राचीन भारतीय इतिहास से जुड़े पात्रों और प्रसंगों को नकारने व उपहास उड़ाने का बड़ा आधार बनते हैं। ये जातियां हिन्दू नहीं हैं और हिन्दू धर्म के बारे में कुछ भी नहीं जानती। इन जातियों के लोग शक्ल-सूरत में भी बिल्कुल हिन्दुओं से मेल नहीं खाते। वे काले हैं, उनके बाल घुंघराले हैं, होंठ मोटे हैं और उनका अफ्रीका के जातियों से अधिक साम्य है। वाल्मीकि रामायण रामकथा से जुड़ा सबसे ज्यादा प्रामाणिक ग्रन्थ है, जो महाभारत से पहले रचा गया। महाभारत में बार-बार राम से जुड़े प्रसंगों का उल्लेख तो है ही, त्रेता युग में जन्मे राम के जन्म का भी उल्लेख हैं- अर्थात दशरथ पुत्रराम का जन्म त्रेता-द्वापर युग के मध्यकाल में हुआ। ३६०० वर्ष कालखण्ड वाले त्रेता युग का प्रारंभ १६वें परिवर्तन युग से ९२०० वि.पू. पुरूकुत्सत्रसद्दस्यु के शासन काल में हुआ और अंत में ५६०० वी.पू. दशरथिराम के राज्यकाल में हुआ। यहां हम रामायणकालीन पात्रों की ऐतिहासिकता सिद्ध करने के लिए देव और दैत्य माने जाने वाले दोनों ही वंशों की वंशावलियां राम-रावण के कार्यकालों तक दे रहे हैं। इन वंशावलियों का उल्लेख रामायण में तो है ही, रांगेय राघव द्वारा लिखित पुस्तक महायात्रा गाथा अंधेरा रास्ता में क्रमानुसार है। पुराणों में भी यह वंशावलियां मिलती है लेकिन वहां क्रमबद्धता नहीं है। दशरथ पुत्र राम इक्ष्वाकु वंश के थे। दशरथ राजा अज के पुत्र थे। अज का वरण एक स्वयंबर समारोह में राजाभोज की पुत्री इन्दुमती ने किया था। इन्दुमति की कोख से ही दशरथ जन्मे थे। रामायण में इक्ष्वाकु वंश की परंपरा इस तरह है, ब्रह्मा, मारिच, कश्यप, सूर्य, वैवस्वत मनु, इक्ष्वाकु, कुक्षि, विकुक्षि, बाण, अनरण्य, पृथु, त्रिशंकु, धुंधुमार, युवनाश्व, मांधाता, सुसन्धि, ध्रुवसंधि, भरत, असित, सगर, असमन्जस, अंशुमान, दिलीप, भगीरथ, ककुस्थ, रघु, सौदास, शंखण, सुदर्शन, अग्निवर्ण, शीघ्रग, मरू, पशुश्रव, अम्बरीष, नहुष, नाभाग, अज, दशरथ और राम।

महाभारत के पर्वों में वाल्मीकि और उनकी रामायण का उल्लेख है। वाल्मीकि ने रामायण में अपना परिचय प्रचेता के दसवें पुत्र के रूप में दिया है। इनके पिता का नाम वरूण था। वाल्मीकि को भागवत पुराण में भृगु का भाई बताया गया है।

विदेशों विद्वानों ने रामायण के रचनाकाल पर गंभीरतापूर्वक शोध किए हैं। जब रामायण की लोकप्रियता पश्चिमी देशों में बढ़ने लगी तो वहां के विद्वानों का मानना था कि इसकी रचना अत्यंत प्राचीन है। डॉ. फादर कामिल बुल्के की पुस्तक रामकथा निष्कर्ष के अनुसार ए. श्रूगेल ने इसे ११ वीं शती ई.पू. तथा गोरेसिया ने करीब १२ वीं शतीं ई.पू. माना। इस मत के विरोध में जीटी व्हीलर तथा डा. बेवर ने इसका रचनाकाल अर्वाचीन माना है। पौराणिक-धार्मिक ग्रंथों में प्राप्त वंशावलियों से यह निश्चित होता है कि त्रेता युग में जन्मे राम-रावण समकालीन थे। परंपरा में त्रेता और कलियुग के मध्य में द्वापर युग की स्थिति भी मानी जाती है। रामायण का रचनाकाल विद्वानों ने १२ वीं शती ई.पू. से पहली शती ई.पू. तक माना है। आदिरामायण और उससे भी पूर्व प्रचलित राम-रावण संबंधी लोकाख्यान इससे भी पुराने हैं। अत: राम-रावण युद्ध का समय ई.पू. लगभग १५ वीं शताब्दी माना जाता है। विद्वानों ने तो यहां तक सुनिश्चित किया हुआ है कि भीषणतम यह युद्ध चैत्र अथवा वैशाख माह में शुरू हुआ, जो ८४ दिन चला, जिसमें ७७ दिन राक्षस सेना नायक लड़े। ७ दिन रात लगातार राम और रावण लड़े और अंतत: राम ने वैशाख कृष्ण चतुर्दशी अथवा क्षेत्र कृष्ण अमावस्या को रावण का वध किया। राम ने रामसेतु का निर्माण ना भी किया हो तो यह इस नाते महत्वपूर्ण है कि राम व उनके खोजी दल ने रामेश्वरम से मन्नार तक जाने के लिये वह मार्ग खोजा जो अपेक्षाकृत सुगम होने के साथ रामेश्वरम के निकट था, जहां से राम व उनकी वानर सेना ने सभी रामायणों के अनुसार लंका के लिए कूच किया था। माना जाता है कि ५०० साल पहले तक यहां पानी इतना कम था कि मन्नार और रामेश्वरम के बीच लोग टापुओं से होते हुए पैदल ही आवागमन करते थे। वैसे इस क्षेत्र में ऐसे कम दबाव व भार वाले पत्थर भी पाये जाते हैं जो पानी में नहीं डूबते। नल और नील ने जिन पत्थरों का उपयोग सेतु निर्माण में किया, शायद ये उन्हीं पत्थरों के अवशेष हों जो आज भी

धार्मिक स्थलों पर देखने को मिल जाते हैं। दरअसल ऐसे भ्रमों को दूर करने के लिए अब जरूरी हो गया है कि प्राचीन भारतीय इतिहास का वैज्ञानिक दृष्टि से पुनर्लेखन कराया जाकर उसे इतिहास सम्मत मान्यता दी जाए ?

भारत की प्राचीन ऐतिहासिकता जिसे हम कुछ चमत्कारिक चरित्रों और घटनाओं की वजह से काल्पनिक मान लेने का भ्रम पाल बैठते हैं, दरअसल ऐसे भ्रमों को दूर करने के लिए अब जरूरी हो गया है कि प्राचीन भारतीय इतिहास का वैज्ञानिक दृष्टि से पुनर्लेखन कराया जाकर उसे इतिहास सम्मत मान्यता दी जाए ?

किन्तु प्रचुर संख्या में उपलब्ध साहित्यिक प्रमाणों के परिप्रेक्ष्य में भविष्य में होनेवाले पुरातत्विक अनुसंधानों से सिद्ध होने वाली ऐतिहासिकता को नकारा नहीं जा सकता है। वैसे तो हमारे राम जन-जन की आस्था के प्रतीक हैं तथा उन्हें इतिहास एवं पुरातत्व की प्रमाणिकता की आवश्यकता भी नहीं है। किन्तु पुरातत्विक साक्ष्यों का अभाव होता है। वाल्मीकि रामायण अन्य भारतीय भाषाओं में वर्णित रामकथा भारत के लगभग प्रत्येक प्रांत में प्राप्त होती है और सभी में सेतु निर्माण द्वारा लंकागमन का वर्णन है और यही तत्व कालांतर में मूर्ति कला एवं भित्ति चित्रों का अंग बने।

धार्मिक एवं आस्था प्राप्त महापुरूषों के संदर्भ में ऐतिहासिक प्रमाणों की अपेक्षा भी नहीं होनी चाहिए और उसे बार-बार इतिहास की कसौटी पर कसने का प्रयास भी नहीं करना चाहिए। वैसे भी हमें रामकथा को दो स्तरों पर समझना होगा वह है साहित्य तथा इतिहास एवं पुरातत्व क्योंकि राम के इतिहास पुरुष होने के साथ ही उनके साथ एक निश्चित काल खण्ड जुड़ जाता है और अनेक बार प्राचीन इतिहास को प्रमाणित करने हेतु साहित्यिक साक्ष्य तो प्रचुरता से होते हैं।

रावण के दुर्गुण और कुछ नहीं, मनुष्य की मूलभूत प्राकृत प्रवृत्तियां हैं। ये राक्षसी और आसुरी प्रवृत्तियां-तमोन्मुखी रजोगुणी प्रवृत्तियां हैं उनके बीज मनुष्य के स्वभाव में सदा से दबे पड़े हैं जो अनुकूल अवसर पाते ही अंकुरित होने लगते हैं। अवसर मिले तो वे पल्लवित और पुष्पित भी होते हैं।

श्रीराम ने रावण का वध कर दिया। संभव है कि ऐतिहासिक रावण का एक ही सिर हो और उसकी नाभि में अमृत का घट भी न हो किंतु हमारे मनीषियों ने देखा कि मनुष्य के मन में दबी यह प्रवृत्ति कितनी भी बार मारने पर बार-बार किसी न किसी रूप में पुन: जन्म लेती है और पुन: मानवता को एक रावण का सामना करना पड़ता है। इसलिए यह रावण मरता नहीं, बस उसके रूप बदलते हैं।

मानवता को त्रस्त करने वाला यह पात्र किसी न किसी रूप में संसार में जन्म लेता ही रहता है। जिसके पास अधिक धन हो जाए, वह भी रावण हो जाता है। जिसके पास अधिक बल हो जाए, वह भी रावण हो जाता है। मानवता उसका सामना कर कुछ समय के लिए उसका दमन कर देती है किंतु यदि उसका रूप इतना विकराल हो जाए कि उसके दस सिर हो जाएं और उसकी नाभि में अमृत घट भी आ जाए तो फिर स्वयं श्रीराम को ही जन्म लेना पड़ेगा।

रामकथा में स्थान-स्थान पर राक्षसों का आतंक है। सिद्धाश्रम में सबसे पहले विश्वामित्र इस आतंक का सामना करते हैं। वे ऋषि हैं किंतु अपनी इच्छा से एक यज्ञ भी नहीं कर सकते। यह आरंभ होते ही उनके आश्रम में रक्त और मांस का खेल आरंभ हो जाता है।

विश्वामित्र श्रीराम को लेकर आते हैं। राम ताड़का का वध कर देते हैं; किंतु आतंकवाद की जड़ ताड़का तो नहीं है। उसका पालन पोषण करनेवाला तो रावण है जो दूर लंका में सुरक्षित बैठा है। विश्वामित्र और राम दोनों ही जानते हैं कि किसी राजा की सेना जाकर रावण का नाश नहीं कर सकती।

श्रीराम के जन्म से पूर्व की स्थितियों में भी यह स्पष्ट किया गया है कि राक्षस और असुर कितने बलशाली और अत्याचारी हो गए हैं। देवता लोग उनसे छिपने के लिए पर्वतों की कंदराओं में चले गए हैं। सारे सद्ग्रंथ लुप्त हो गए हैं। धर्म अथवा सद्विचारों का कहीं नाम नहीं है। जिनके पास बल है, वह पराया धन, पराई स्त्री और पराई भूमि पर अधिकार जमा लेता है। इन सारे आतंकवादियों की शिराओं में रावण ही रक्त बन कर दौड़ रहा है। विराट और कबंध भी गंधर्व और यक्ष होते हुए भी राक्षस हो गए हैं, क्योंकि राक्षस बनने से रावण की सहायता प्राप्त होती है और वे किसी का भी रक्तपान कर सकते हैं।

राम निर्भीक हैं। उन्हें अपने बल का भी भरोसा है और अपने लक्ष्य का भी। वे जानते हैं कि उन्हें कहीं से सहायता नहीं मिल सकती, न राजाओं से, न देवराज से। भयभीत मानवता में साहस संचार करना ही अधिक उपयोगी है। इंद्र सहायता करेगा तो अपना स्वार्थ देखकर। कोई और सहायता करेगा तो अपना मूल्य लेकर।

राम तेरह वर्षों तक दंडक वन में घूम-घूम कर अपने ही बल पर ही राक्षसों का नाश करते हैं और फिर अगस्त्य के आदेश पर पंचवटी में अपनी कुटिया का निर्माण करते हैं- राक्षसों के स्कंधावार के ठीक सामने। वहां दस सहस्र राक्षस खर, दूषण और त्रिशिरा के नेतृत्व में निवास करते हैं। उनकी अधिनायिका शूर्पणखा हैं।

जटायु पहले दिन ही राम के साथ आ जाते हैं। जटायु स्थानीय लोगों के प्रतिनिधि हैं जो राक्षसों के अत्याचारों से पीड़ित हैं और कहीं आश्रय चाहते हैं। राम ने उन्हें सहारा ही नहीं, शस्त्र और शस्त्र परिचालन का प्रशिक्षण भी दिया ताकि वे राक्षसों के आतंक से अपनी रक्षा कर सकें।

राम का स्वरूप- वाल्मीकि ने राम को एक मर्यादा-पुरुषोत्तम के रूप में चित्रित किया। कंबन ने अपने युग की बदली मान्यताओं के अनुकूल राम को भगवान विष्णु के अवतार के रूप में अंकित करके चरित्र में देवत्व का सन्निवेश किया परंतु तुलसीदास जी ने तो श्रीराम को पूर्ण परब्रह्म के रूप में चित्रित करके उसके चरित्र की अलौकिकता को पराकाष्ठा पर पहुंचा दिया। इसी प्रकार, विभीषण की शरणागति वाल्मीकि रामायण में मुख्यतया एक राजनीतिक घटना के रूप में है और श्रीराम अपनी दृष्टि से ही विभीषण को अपने यहां शरण में लेते हैं। इसको बदल कर कंबन ने विभीषण को भक्ति-भाववश राम की शरण में जाते दिखाया है। तुलसी ने विभीषण को वैष्णव व प्रवृति-मार्ग का सर्वोच्च उदाहरण बना कर प्रस्तुत किया है और राम को शरणागत वत्सल भगवान के रूप में।

विविध चरित्र चित्रण - कथा-विन्यास तथा पात्र चरित्र-चित्रण में साम्य-वैषम्य के समान दोनों के काव्य शिल्प तथा देश-काल-चित्रण में भी समानता-असमानता के दर्शन होते हैं। कंबन-रामायण में अनेक स्थलों पर प्रकृति-चित्रण के अनेक सुंदर उदाहरण मिलते हैं। कौशल का वर्णन करते समय एक स्थल पर कवि ने प्रकृति के प्रांगण में आयोजित नृत्य सभा का एक रमणीय चित्र अंकित किया है। तुलसीदासजी ने भी प्रकृति के वर्णन में अनेक चित्र खींचे है।

अयोध्या के राजा राम निर्बल के बल राम ही नही हैं बल्कि वाल्मीकि के ऐसे महानायक हैं, जो जीव-जन्तु, सभी प्राणियों में कोई दोष-गुण नहीं देखते। शबरी, शिला, लंगूर, वानर, भालू, जटायु, काग, निषाद, खर, सुर-असुरों, ऋषियों-मुनियों और मनुष्यों में बिना भेदभाव के राम ने सभी के दु:ख हरे और उन्हें मर्यादित जीवन जीने का संदेश दिया। आज की मानवता देखें उस राम-युग को जब राम ने किष्किंधा का राज्य जीतकर सुग्रीव को सौंपा और स्वर्ण-लंका का राज्य शरणागत विभीषण को बिना किसी स्वार्थ तथा अहंभाव के दे दिया। धैर्यवान, ओजस्वी और तेजस्वी स्वरूप मर्यादा-पुरुषोत्तम राम का, पिता के प्रति कर्तव्य, भाई के प्रति कर्तव्य, पत्नी के प्रति कर्तव्य, ऋषियों-मुनियों के प्रति कर्तव्य और प्रजा के प्रति कर्तव्य अनेक घटनाक्रमों द्वारा उनके मर्यादित चरित्र को दर्शाता है। तुलसीकृत रामचरित मानस महाकाव्य एक आत्मकथा है। यह एक देशांतर तथा देशोत्तर काव्य एवं साहित्य ग्रंथ है, जिसने न केवल समाज को एकीकृत कर ज्ञान, अध्यात्म और मानवीय दृष्टि प्रदान की है। वस्तुत: यह भारतीय जीवन-दर्शन और अध्यात्म की आचार संहिता है। इस ग्रंथ में विज्ञान, दर्शन, राजनीति, भूगोल, इतिहास और समाजशास्त्र सभी का समावेश हैं। पशु-पक्षी, नदी, पर्वत, पर्यावरण, प्रकृति, जीव-जन्तु मनुष्य और सुर-असुरों का कोई ऐसा अनदेखा पक्ष नहीं है, जो छूट गया हो।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के प्रति लोकमानस में आज भी ऐसा विश्वास है कि राम हर युग में नये रूपों में जन्म लेंगे और आसुरी प्रवृत्ति का हनन करेंगे। हम राम जन्मोत्सव और रामलीलाओं का गांवों और शहरों में आयोजन करते हैं, जो हमें प्रेरित करता है कि राम के नाम को जानने की सार्थकता को जीवन में हम उतार लें। बुराइयों को समाज से जड़ से मिटाने, मर्यादाओं का पालन करते हुए राम की तरह आदर्श बनेंगे, पुरुषों में उत्तम बनेंगे, तभी रामराज्य की कल्पना साकार हो सकेगी। वस्तुत: यह तभी संभव होगा जब हम रामनवमी के उत्सव की औपचारिकताओं से ऊपर उठें, हमारे जीवन में प्रतिक्षण श्वासोच्छवास् के समान राम अर्थात आत्माराम का जन्म हो अर्थात हम आत्मस्थ हों।

त्रेता युग में राम-रावण युद्ध आज से ८८०१४९ वर्ष पूर्व हुआ था। धार्मिक ग्रंथों में दिए गए विवरणों के आधार पर इसकी जानकारी मिलती है। संसार के सबसे प्राचीन ग्रंथ माने जाने वाले वेदों का एक अंग है भारतीय ज्योतिष। ज्योतिष शास्त्र में सृष्टि की उत्पत्ति का विश्लेषण किया गया है। अनेक ज्योतिष-ग्रंथों में राम की कुण्डली दी गई है।

ज्योतिषाचार्यों के अनुसार, सृष्टि की उत्पत्ति अरबों वर्ष पूर्व हुई थी। उसके बाद से सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग आदि चार युगों वाला एक महायुग बीत चुका है, जिसमें ४३ लाख २० हजार वर्ष बीत चुके हैं। एक महायुग के एक बार बीत जाने को एक कल्प कहते

हैं। प्रत्येक कल्प में १४ मन्वंतर होते हैं। वर्तमान सृष्टि की उत्पत्ति हुए १९५५८८५१०८ वर्ष बीत चुके हैं। इसी तरह कलियुग की प्रामाणिक आयु ५१०८ वर्ष बीत चुकी है। महर्षि पाराशर ज्योतिष अनुसंधान केन्द्र के संचालक पण्डित विपिन कुमार पाराशर बताते हैं कि भारतीय धर्मशास्त्रों के विवरणों के अनुसार त्रेता युग में जो राम-रावण युद्ध हुआ था, उसका समय आज से ८८०१४९ वर्ष पूर्व ठहरता है। वैसे रावण का जन्म १२५६९०३१ वर्ष पूर्व माना गया है। त्रेता युग में भगवान के ३ अवतार हुए, वामन, परशुराम व राम। राम का जन्म त्रेता के ३ चरण बीतने के बाद हुआ। इस प्रकार राम का जन्म १२५५८०३३ वर्ष पूर्व माना गया है।

रस, अलंकार, ध्वनि, बिंब-विधान आदि काव्योत्कर्षक तत्वों की दृष्टि से रामचरित-मानस तथा कंबन-रामायण दोनों ही अतिशय हृदयाकर्षक बन पड़े हैं। यों दोनों कवियों की रचनाओं में सभी रसों को स्थान मिला है परंतु दोनों में एक उल्लेखनीय अंतर यह है कि कंबन की रचना में श्रृंगार का हर स्थल पर उद्दाम वर्णन भी मिल जाता है जबकि मानस में यह अत्यंत मर्यादित है। मानस में शांत रस को ही अंगी-रस का स्थान मिला है। कुल मिलाकर गोस्वामी तुलसीदासजी ने और कंबन दोनों ही अपनी-अपनी भाषा शैली के महान कवि माने जाते हैं। एक ही कथा, राम-चरित्र को आधार बनाकर चलने के कारण उनकी रचनाओं की ऊपरी रूपरेखा प्राय: समान है। जो अंतर है, उनका एक कारण तो उन पर पड़े अन्य ग्रंथों जैसे अध्यात्म-रामायण प्रसन्न-राधव जानकीहरण और रघुवंश आदि का प्रभाव है। इसके अलावा तुलसीदासजी भक्त पहले हैं फिर कवि, जबकि कंबन कवि पहले हैं, फिर भक्त। दोनों के इस व्यक्तित्व भेद के कारण भी उनकी रचनाओं में अंतर आया है किन्तु ये सभी अंतर उनकी महानता को बढ़ाने वाले हैं, घटाने वाले नहीं, यही रामनवमी का पर्व है।

कल्पभेद से गिरिधर रामायण और भावार्थ रामायण (सन्त एकनाथ द्वारा प्रस्तुत), तत्त्वार्थ रामायण (डोंगरे महाराज) में शत्रुघ्न को कैकयी का पुत्र बताया गया है। जबकि तुलसीदास और वाल्मीकि रामायण में शत्रुघ्न को सुमित्रा का पुत्र बताया गया है।

राम नाम के जप से मनुष्य में आत्मशक्ति की अतिशय वृद्धि होती है। इसमें जीव राममय बन जाता है। राम नाम ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप है। वह वेदों का प्राण है। निर्गुण उपमा रहित और गुणों का भंडार है। राम नाम महामन्त्र है जिसे महेश्वर जपते है और इस तारक मन्त्र द्वारा काशी में मुक्ति का कारण है। आदि कवि वाल्मीकि रामनाम के प्रताप को जानते है जो उल्टा नाम (मरा, मरा) जप कर पवित्र हो गये। राम नाम सहस्त्र नाम के समान है। राम नाम के दो सुन्दर अक्षर सावन भादो के महीने है। दोनों अक्षर मधुर और मनोहर है, भक्तों के जीवन है तथा स्मरण करने में सबके लिये सुलभ और सुख देनेवाले है। ये कहने सुनने और स्मरण करने में बहुत अच्छे सुन्दर और मधुर है। राम नाम का उच्चारण जगत का पालन और भक्तों की रक्षा करनेवाले है। जगत के हित के लिये निर्मल सूर्य है। नाम के बिना रूप का ज्ञान नहीं हो सकता। आर्त भक्त जन नाम जप करते है तो उनके बडे भारी बुरे बुरे संकट मिट जाते है और वे सुखी हो जाते है।

श्रीराम ने एक तपस्वी स्त्री अहिल्या को तारा परन्तु नाम ने करोडों जीवों की बिगडी बुद्धि सुधार दी। श्रीराम ने विश्वामित्र के यज्ञ रक्षा हेतु ताडका को मारा परन्तु नाम अपने भक्तों के दोष दु:ख और दुराशाओं का नाश कर देता है जैसे सूर्य रात्रि का। राम ने तो स्वयं शिव धनुषको तोडा परन्तु नाम का प्रताप ही संसार के सब भयों का नाश करनेवाला है। प्रभु श्रीराम ने वो भयानक दंडक वन को ही सुहावना बनाया पर नाम ने तो असंख्य जीवों के मन को पवित्र कर दिया। श्रीराम ने तो राक्षसों के समूह को मारा परन्तु नाम तो कलियुग के सारे पापों की जड को ही मिटा देता है। श्रीराम ने तो शबरी, जटायु आदि उत्तम सेवकों को ही मुक्ति दी परन्तु नाम ने तो अनगिनत दुष्टों का संहार किया। नाम के गुणों की कथा वेदों में प्रसिद्ध है। श्रीराम ने तो सुग्रीव और विभीषण दोनों को ही अपनी शरण में रखा पर नाम ने तो अनेक गरीबों पर कृपा की। नाम का यह सुन्दर विरद लोक और वेद में विशेष रूप से जाना गया है। श्रीराम से तो श्रीराम का नाम बडा है। नाम के कृपा प्रसाद से भक्तों को तो सपने में भी कोई चिन्ता नहीं सताती। नाम के ही प्रसाद से शिवजी अविनाशी है और अमंगल वेष वाले होकर भी मंगल की राशि है। शुकदेव और सनकादिक सिद्ध मुनि, योगीगण नाम के ही प्रसाद से ब्रह्मानन्द को भोगते है। नाम जपने से ही प्रभु कृपा करते है जिससे प्रह्लाद भक्त शिरोमणि हो गये। ध्रुव ने ग्लानि से हरिनाम को जपा और उसके प्रताप से अचल अनुपम स्थान ध्रुव लोक प्राप्त किया। हनुमान ने पवित्र नाम का स्मरण कर श्रीराम को अपने वश में कर रखा है। नीच अजामिल, गज और गणिका भी श्री हरि के नाम के प्रभाव से मुक्त हो गये। नरसी मेहता और मीरा बाई भी नाम जपते जपते प्रभु में ही विलीन हो गये।

कलियुग में राम का नाम कल्पतरु और कल्याण का निवास है। चारों युगों में तीनों कालों में और तीनो लोकों में नाम को जप कर जीव शोकरहित हो जाता है। वेद पुराणों और सन्तों का मत यही है कि समस्त पुण्यों का फल श्रीराम में प्रेम होना है। कलियुग में नाम ही कल्पवृक्ष है। जो स्मरण करते ही संसार के सब जंजालों को नाश कर देनेवाला है। कलियुग में यह राम नाम मनोवांछित फल देनेवाला

है। परलोक का परम हितैषी और इस लोक का माता-पिता है अर्थात इस लोक में माता-पिता के समान सब प्रकार से पालन और रक्षण करता है। कलियुग में न कर्म है, न भक्ति है और न ज्ञान ही है। राम नाम ही एक आधार है। अच्छे भाव से, प्रेम से, बुरे भाव से, बैर से, क्रोध से या आलस्य से किसी भी तरह से नाम जपने से दसों दिशाओं में कल्याण होता है।

क्षीरसागर की शरण में रहनेवाले को भूख पीडा नहीं पहुंचाती। सूर्य की संगति में रहने पर अन्धेरा किसी से भी नहीं झगडता। कल्प वृक्ष के आश्रय में रहने वाले को किसी पदार्थ का अभाव बाधा नहीं पहुंचाता। अग्नि के पास रहने से शीत नहीं लगता। अमृत का पान करने से विष नहीं व्यापता। सिंह की शरण में रहने वाले को सियार नहीं खाता। चिन्तामणि पास रहने पर धन के अभाव की व्यथा नहीं होती। इसी प्रकार जो मनुष्य रामकथा के आश्रित है, अत्यधिक श्रद्धालु है और जिसका ध्यान उसी के प्रति लगा हुआ है उसे विघ्न संकट बाधा नहीं आते। विषय वासना के पाश से मुक्त होकर वह भव सागर को आसानी से पार कर जाता है। सभी सन्त जानते है कि हरिकथा की महिमा बडी है।

राम के गुण अपार है। भूमि के धूलि कण, आकाश के तारे, बादल से गिरने वाले जल बूंदे भले ही गिने जा सकते पर राम के गुणों को गिनने के लिये ऐसी कोई संख्या नहीं है। राम के गुण अनन्त है। अमृत समुद्र में भरा हो तो कैसे पिया जा सकता है। एक चोंच भर जल से ही प्यास बुझती है और पक्षी सुखी हो जाता है।

श्रीराम चरित्र सुधा रस का अपार सुख देनेवाला पावन सागर है। यह आधि दैविक, आधि भौतिक और आध्यात्मिक तीनों तापों का शमन करनेवाले शीतल रस से परिपूर्ण है। यह अर्थ रूपी रत्न है। राम कथा भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाला कल्पवृक्ष है। इस कल्प वृक्ष के आश्रित जन अविचल पद को प्राप्त हो जाते है। उन्हे अपरोक्ष (आत्म साक्षात्कार) का अनुभव हो जाता है। उन्हे इहलोक और परलोक में यश, धर्म, अर्थ, काम मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। जो नर नारी राम कथा को विशुद्ध भाव से सुनते है, पढ़ते है वे इस लोक में सुखों का, भोगों का उपभोग करते है और अन्त में सुन्दर हरि पद को प्राप्त करते है। ब्राह्मण ब्रह्म तत्व को जान पाते है, क्षत्रिय विजय और बल को प्राप्त करते है। वैश्य बहुत प्रकार की समृद्धि और सन्तति प्राप्त करते है। शूद्र सुखी हो जाते है और उनके क्लेश कष्ट मिट जाते है। पुत्रहीन व्यक्ति पुत्र प्राप्ति करता है और धन हीन धन पाता है। रोगी मनुष्य रोग मुक्त हो जाता है। बन्धन में बन्धा हुआ व्यक्ति बन्धन से मुक्त हो जाता है। जिसे भक्ति भाव और विश्वास हो उसे भैरव, भूत-पिशाच, योगिनी आदि से कोई भय, दोष पीडा नहीं होती और न ही उसे ग्रह और पितर पीडा पहुंचाते है। वह शत्रु को पराजय कर सकता है। वह समस्त भय से मुक्त हो जाता है। उसके मन में जो-जो इच्छायें होती है वह पूर्ण हो जाती है। इस रामकथा के सुनने से महापापी नीच प्राणी मनुष्य बाल हत्या, गो हत्या, ब्राह्मण हत्या, स्त्री हत्या, गुरु द्रोह इत्यादि के महापातक से तत्काल छुटकारा पाता है। जो कोई भी श्रद्धा और विश्वास सहित इस कथा को पढ़ता, सुनता है वह समस्त तीर्थों के फल को प्राप्त कर लेता है। इस कथा के मन से श्रवण करने पर लक्ष्मी का आगमन होता है। दरिद्रता और रोग का नाश होता है।

रामायण, पढ़कर आलमारी में रख देने का ग्रन्थ नहीं है। वह जीवन में उतारने का, जीने का शास्त्र है। रामायण को केवल पढ़ो मत: उसे जीओ। जो रामायण को जीयेगा, रामायण में जीयेगा वह स्वयं श्रीराम स्वरूप हो जायेगा।

यह ग्रन्थ हमारे व्यक्तिगत जीवन को ऊँचा उठाने में बहुत सहायक हुआ है। इसमें राम की रावण पर विजय नहीं, अपितु पुण्य की पाप पर, न्याय की अन्याय पर और सत्य की असत्य पर विजय का वर्णन है। इसके हर एक पात्र से हमें शिक्षा मिलती है। प्रत्येक पात्र ने एक एक आदर्श उपस्थित किया है। इस ग्रन्थ में पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-भाई, गुरु-शिष्य, स्वामी-सेवक आदि नाना सम्बन्धों का निर्वाह आदर्श रूप से किया गया है, जिन्हें हम अपने आचरण में ढाल कर हम अपने पारिवारिक और सामाजिक जीवन को सुखी, सम्पन्न और शान्तिपूर्ण बना सकते है। रामायण हमारे आध्यात्मिक जीवन को उठानेवाला ग्रन्थ है। यह हिन्दू जाति, हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति का सजग प्रहरी है।

विश्व का महानतम ग्रन्थ है रामायण जिसका मानवीय जीवन में अमूल्य योगदान है। मानवीय मूल्यों और नैतिकता की शिक्षा देने वाले इस अनूठे ग्रन्थ से अनुशासित जीवन की अनोखी शिक्षा मिलती है। इससे मिला आध्यात्मिक बल कठिनाइयों से जूझने की, संघर्ष की प्रेरणा देता है। सांसारिक जीवन के प्रत्येक पहलुओं की प्रेरणा मिलती है।

राम और रामकथा, दोनों ऐतिहासिक सत्य हैं। कुछ विद्वान रामायण की घटनाओं को वैदिक काल से भी पूर्व की मानते हैं। उनकी इस मान्यता का आधार यह है कि (१) श्रीराम के पूर्वज इक्ष्वाकु का उल्लेख वेदों में है (ऋग्वेद १०/६०/४ तथा अथर्ववेद १९/३९/

९) (२) ऋग्वेद के दान स्तुति प्रसंग (१/१२६/४) में उनका वर्णन है तथा (३) ऐतरेय ब्राह्मण और शतपथ ब्राह्मण में श्रीराम का भी उल्लेख है। श्रीराम पर एक अलग उपनिषद भी है, जिसका नाम है रामोपनिषद्।

श्रीराम के ऐतिहासिक अस्तित्व को स्वीकार करते हुए उन्हें वैदिक काल या उसके पूर्व से जोड़ना कठिन है। संभव है वैदिक काल में इक्ष्वाकु या दशरथ नाम के अन्य कोई व्यक्ति हुए हों। यह भी संभव है कि इन नामों को बाद में किसी महर्षि ने वेदों में जोड़ा हो। उपनिषदों में तो इस तरह के परिवर्तन और भी अधिक संभव हैं। रामोपनिषद् तो निश्चय ही बाद की कृति है। वैदिक युग से काफी बाद का होते हुए भी श्रीराम और रामायण का घटनाक्रम अत्यन्त प्राचीन अवश्य है।

राम कथा संसार रूपी नदी को पार करनेवाली नाव है। पंडितों को विश्राम देनेवाली, कलियुग में पापों का नाश करनेवाली, ज्ञान प्राप्त करने वाली, सभी मनोरथों को पूर्ण करनेवाली, कामधेनु गौ, सुन्दर संजीवनी जड़ी, पृथ्वी पर अमृत की नदी, नरकों का नाश करनेवाली, जीवों को मुक्ति देनेवाली, सब सिद्धियों तथा सुख सम्पत्ति की राशि, भगवत् भक्ति और प्रेम की परम सीमा है।

राम कथारूपी सुन्दर सरोवर के चार उत्तम संवाद, चार मनोहरघाट, सातकांड सुन्दर सात सीढ़ियां, रामजी की निर्गुण और निरवधि महिमा का वर्णन इस सुन्दर जल की अथाह गहराई, सीताराम का यश अमृत के समान जल है। इस चरित्र को गानेवाले ही इस सरोवर के रखवाले हैं।

मैं तुलसीदास जी की रामायण को भक्तिमार्ग का सर्वोत्तम ग्रन्थ समझता हूं। रामचरित मानस विचार रत्नों का भंडार है।

रामचरित मानस विमल, संतन जीवन प्रान। हिन्दुआन को वेद सम, जवनहिं प्रगट कुरान।।

रामायण की सरसता क्या संसार के किसी काव्य से उपलब्ध हो सकती है ? अप्सराओं के अधरों और द्राक्षलताओं ने रामायण का रस न जाने कितनी बार चुरा-चुरा कर चखा है। रामायण हमारा क्षीर सागर है।

रामायण के द्वारा भारतवर्ष से स्वार्थपरता का दोष जितना दूर हुआ है उतना किसी भी नीतिवान, धर्मविद्, समाज-सुधारक राजपुरुष के द्वारा नहीं हो सका। रामायण में ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की निर्मल त्रिवेणी का प्रवाह बहता है। रामायण सुरतरु की छाया। दु:ख भय दूर निकट जो आया। राम भारतीय संस्कृति की आत्मा है। युगों से ही उनका नाम जीवात्मा को परमात्मा से जोड़ता है। राम नाम की तो इतनी महिमा है कि इसको उल्टा जपने से भी वाल्मीकि सिद्ध पुरुष हो गए।

स्कंद पुराण में महर्षि वेदव्यासजी कहते हैं- जो लोग राम नाम का सदा उच्चारण करते हैं, यानी खाते-पीते, सोते-जागते, चलते-बैठते, सुख-दुख दोनों अवस्था में सदा राम-मंत्र का जाप करते रहते हैं, उन्हें कष्ट, विपत्ति, दुर्भाग्य व मानसिक-शारीरिक रोग का भय नहीं रहता। उनकी आयु एवं संपत्ति में दिन-ब-दिन वृद्धि होती है।

स्कंद पुराण में भगवान शंकर ने माता पार्वती को राम नाम की महिमा इस प्रकार बताई है- राम नामक दो अक्षरों का मंत्र समस्त पापों का नाश करता है। जो प्राणी राम नाम का कीर्तन करता है, अंत में श्री हरि का पार्षद बन जाता है। राम नाम से बढ़कर जगत में जप करने योग्य कुछ भी नहीं है। राम-नाम का उच्चारण करने से दो अक्षरों का अविनाशी मंत्र पृथ्वी पर समस्त कार्यों में सफलता प्रदान करता है। अत: तुम भी सदा राम नाम रटा करो। अध्यात्म रामायण में राम नाम के मर्मज्ञ भगवान विश्वनाथ कहते हैं- आपके रामोच्चरण से कृतार्थ होकर मैं पार्वती सहित अहर्निशि काशी में निवास करता हूं और वहां मरणासन्न प्राणियों को मुक्ति दिलाने के लिए उनके कान में आपके राम नाम रूपी तारक मंत्र का उपदेश करता हूं। गोस्वामी तुलसीदास श्रीरामचरितमानस में लिखते हैं-

कासी मरत जंतु अवलोकी। जासुनाम बल करउं बिसोकी।। सोई प्रभु मोर चराचर स्वामी।। रघुबर सब उर अंतरजामी।।

भगवान शंकर माता पार्वती को काशी में मुक्ति का कारक राम नाम को बताते हैं। तभी तो शवयात्रा के समय श्री राम नाम सत्य है तारक महामंत्र है।

रामनामके प्रतापसे पत्थर तैरने लगे, रामनामके बलसे वानर-सेनाने रावणके छक्के छुड़ा दिये, रामनामके सहारे हनुमान्ने पर्वत उठा लिया और राक्षस (रावण) के घर अनेक मास रहनेपर भी सीता अपने सतीत्वको बचा सकी। भरतने चौदह सालतक प्राण धारण कर रखा; क्योंकि उनेक कण्ठसे रामनामके सिवा कोई दूसरा शब्द नहीं निकलता था। इसीलिये तुलसीदासजीने कहा है कि कलिकालका मल धो डालनेके लिये रामनाम जपो।

भारतीय जीवनमें राम नाम उसी प्रकार अनुस्यूत है। जिस प्रकार दुग्धमें धवलता। सत हृदय सदासे धर्म, आदर्श और चरित्रकी त्रिपथगाका मूलोत्सव भगवान् श्रीरामको स्वीकार करता चला आया है। श्रीरामके आदर्श चरित्रद्वारा ही उक्त तीनों विशेषताओंकी

उपलब्धि सम्भव होती है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तने यशोधरा के मंगलाचरणमें लिखा है-

राम। तुम्हारे इसी धाममें, नाम-रूप-गुण लीला- लाभ। इसी देशमें हमें जन्म दो, लो प्रणाम हे नीरज-नाभ।।

नाम-जपके साथ-साथ परमात्माके अमृत-मय स्वरूपका ध्यान होते रहनेसे क्षण-क्षणमें उनके दिव्य गुण और प्रभावोंकी स्मृति होती है और वह स्मृति अपूर्व प्रेम और आनन्दको उत्पन्न करती है। यदि यह कहा जाय कि रामचरितमानसमें नाम-महिमामें यह कहा गया है- भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।।

फिर श्रद्धासहित नाम जपनेसे ही फल हो, ऐसे ही जपनेसे फल न हो, यह बात कैसे हो सकती है ? तो इसका उत्तर यह है कि भाव-कुभाव किसी प्रकार भी नाम-जपसे दसों दिशाओंमें कल्याण होता है, इस बातपर तो श्रद्धा होनी ही चाहिये। इसपर भी श्रद्धा न हो तब वैसा फल क्योंकर हो सकता है? इसपर यदि कोई कहे कि विचारद्वारा तो हम श्रद्धा करना चाहते हैं, परन्तु मन इसे स्वीकार नहीं करता बुद्धिके विचारसे विश्वास करके ही नाम-जप करते रहना चाहिये। भगवानपर विश्वास होनेके कारण तथा नाम-जपके प्रभावसे आगे चलकर पूर्ण श्रद्धा और प्रेम आप ही प्राप्त हो सकते हैं। परन्तु यदि अर्थसहित जप किया जाय तो और भी शीघ्र परमानन्दकी प्राप्ति हो सकती है।

यदि परमात्माके नामके साथ अतिशय प्रीति हो तो ही अनेक जन्मकी पापकी आदत छूटती है। जगत परमात्माके अधीन है परन्तु परमात्मा नामके अधीन है। नाम ही ब्रह्म है। नाम ही परमात्मा है। परमात्माका नाम तो परमात्मासे भी अधिक श्रेष्ठ है।

रामायणमें एक प्रसंग आता है- वानर पत्थरके ऊपर राम-नाम लिखकर पत्थर समुद्रमें डालते हैं। राम-नामसे पत्थर तैरते हैं। पानीमें डूबते नहीं। राम-नामकी ऐसी महिमा है। रामजी महाराज वहाँ समुद्रके किनारे विराजे हुए थे। वहाँ प्रभुने विचार किया कि मेरे नामसे पत्थर तैरता है तो फिर मेरे हाथसे छोड़ा हुआ पत्थर क्यों नहीं तैरेगा ? मैं एक बार प्रयोग करूँ। मेरे हाथसे छोड़ा हुआ पत्थर यदि तैर जाय तो इन लोगोंसे कहूँ कि लिखनेकी मेहनत न करें। मैं जिस पत्थरका स्पर्श करूँ उस पत्थरको समुद्रमें डाल दिया जाया करेगा।

परन्तु रामजीको थोड़ी शंका हुई। कदाचित मेरे हाथसे डाला हुआ पत्थर न तैरा और डूब गया तो मेरी हँसी होगी। इसलिए समुद्रके किनारे मैं अकेला ही जाऊँ और आगे-पीछे कोई न हो, इस प्रकार पहले परीक्षा कर लूँ। पत्थर तैरेगा तो पीछे इन लोगों से कहूँगा। तब रामचन्द्रजी दूर समुद्र-किनारे गये और अकेले ही गये। परीक्षा करते समय वहाँ कोई देखनेवाला नहीं था। रामजीने पत्थर उठाया। श्रीहनुमानजी महाराजका नियम था कि कोई भी काम करें तो रामजीके चरणोंमें नजर रखकर ही करें। इससे हनुमानजीकी हार किसी दिन भी नहीं हुई। हनुमानजी जहाँ जाते वहीं उनकी जीत होती थी। वे रामजीका बल लेकर काम करते थे। श्रीराम-चरणमें नजर रखकर काम करते थे। हनुमानजीने विचार किया कि हम सब तो यहीं बैठे हुए थे, इन्होंने किसीसे कहा नहीं, ये अकेले कहाँ चले गये हैं? क्यों गये हुए हैं।

रामजीने हाथमें पत्थर लिया। आसपास कोई नहीं है, ऐसे विश्वाससे पत्थर समुद्र में फेंकनेको तैयार हुए। इनतेमें ही हनुमानजीने जोरसे जो छलाँग लगायी तो रामजीके पीछे आकर खड़े हो गये। हनुमानजी विचार करते हैं कि ये अकेले यहाँ क्या कर रहे हैं। रामजीने जैसे ही पत्थर समुद्रमें फेंका कि तुरन्त डूब गया। रामजीको यह ठीक लगा नहीं। उनको अनुभव हुआ कि मेरे हाथका डाला हुआ पत्थर तैरता ही नहीं, डूब जाता है परन्तु फिरसे प्रयोग करके देखूँ। दूसरा पत्थर हाथमें लिया और जोरसे समुद्रमें फेंका। वह भी डूब गया।

रामजीको विश्वास हुआ कि मेरे नामसे पत्थर तैरता है परंतु मेरे हाथसे छोड़ा हुआ पत्थर तैरता नहीं। यह तो ठीक है कि मैंने किसीको बात प्रकट नहीं की, मैं अकेला ही यहाँ आया। यहाँ कोई देखनेवाला नहीं था, यह ठीक हुआ। अब एक बार अन्तिम प्रयत्न फिर कर लूँ। फिर तीसरा पत्थर रामजीने फेंका और वह भी डूब गया। रामजी थोड़े उदास हुए, नाराज हुए।

रामजीने जब पीछे देखा तो हनुमानजी महाराज हाथ जोड़कर खड़े हुए थे। रामजीने हनुमानजीसे पूछा- हनुमान। तू यहाँ कहाँसे किसलिए आया है ?

हनुमानजीने कहा- आपने पहला पत्थर छोड़ा तबसे मैं यहीं तो हूँ।

रामजीने कहा- परन्तु इस समय तुमको यहाँ आनेकी क्या जरूरत थी ?

हनुमानजीने कहा- मेरे मालिक जहाँ जायें वहाँ मुझे जाना ही चाहिये ? जहाँ आप वहाँ मैं।

रामजीको कुछ ठीक नहीं लगा। उनको लगा कि इस हनुमानने देख लिया है, यह सब बन्दरोंसे अब कह देगा कि अकेले प्रयोग कर रहे थे परन्तु इनका प्रयोग सफल नहीं हुआ। इनके हाथका फेंका हुआ पत्थर तैरा नहीं। रामजी नाराज हो गये।

हनुमानजी रामजीका मुखारविन्द निहारते हैं और विचार करते हैं- आज मेरे मालिक नाराज हो गये हैं। इनके हाथका छोड़ा हुआ पत्थर

तैरता नहीं है। मेरा अवतार तो रामजीकी सेवा करनेके लिए है, रामजीको प्रसन्न रखनेके लिये है।

इसलिए हाथ जोड़कर हनुमानजीने कहा- महाराज। आप नाराज न हों। जो हुआ वह ठीक ही हुआ है। मैंने सन्तोंके मुखसे सुना है, कथामें सुना है कि श्रीराम जिसको अपनाते हैं, जिसको हाथमें रखते हैं, वही तरता है। रामजी जिसको फेंक देते हैं, वह तो डूबता ही है। आपने जिसका त्याग किया, वह फिर किस प्रकार तर सकता है ?

आप जिसको हाथमें रखते हैं, आप जिसको मानते हैं, वह संसार-सागरसे तर जाता है। आप जिसको फेंक दो, सम्बन्ध तोड़ दो तो वह कभी तर नहीं सकता। वह तो डूबता ही है। महाराज। तुम्हारे नामसे पत्थर तैरता है। तुम्हारे हाथसे नहीं तैरता।

रामजीकी अपेक्षा रामजीका नाम श्रेष्ठ है। कितने ही महापुरुषोंने वर्णन किया है।

रामजीके सत्सङ्गकी अपेक्षा रामायणका सत्संग बहुत प्रभावकारक है। परमात्मा प्रत्यक्ष विराजें, फिर भी जो काम परमात्मा स्वयं नहीं कर सकते, वह काम परमात्माका नाम करता है। राम-नामसे पत्थर तैरा है और रामजीके हाथसे छोड़ा हुआ पत्थर डूबा है।

मेरा विश्वास है कि रामनामके उच्चारणका विशेष महत्व है। अगर कोई जानता है कि ईश्वर सचमुच उसके हृदयमें बसता है तो मैं मानता हूँ कि उसके लिये मुँहसे रामनाम जपना जरूरी नहीं है। लेकिन मैं किसी ऐसे आदमीको नहीं जानता। उलटे, मेरा अपना अनुभव कहता है कि मुँहसे रामनाम जपनेमें कुछ अनोखापन है। क्यों या कैसे- यह जानना आवश्यक नहीं है।

राम शब्द के अन्दर सूर्य, चन्द्र और अग्नि की शक्ति निहित है। राम नाम के जापक को तीनों शक्तियों का महान तत्व प्राप्त होता है। सूर्य ज्ञान को उत्पन्न करता है, अग्नि पाप का नाश करती है एवं चन्द्रमा अमरत्व प्रदान करता है। इस तरह केवल एक राम के नाम द्वारा अनन्त तत्व की प्राप्ति हो जाती है।

भारत के प्राचीन महाकाव्य, रामायण और महाभारत तथा ऐसी ही अन्य अनेक पुस्तकों के प्रसिद्ध अनुवाद एवं अंश, जनसामान्य द्वारा भलीभांति हृदयंगम किये हुए थे और उसकी घटनाएं और कथानक तथा उसका आदर्श और आदमी की सोच को प्रभावित करता था तथा उसे गरिमा देता था। उसकी सैकडों पंक्तियों को अनपढ ग्रामवासी हृदय से याद किये रहते थे तथा आपसी बातचीत के दौरान वे उसको उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते थे अथवा प्राचीन शास्त्रों की किसी अन्य आदर्श कथा को प्रस्तुत करते थे। प्राय: ही यह देखकर आश्चर्य हो जाता था कि कैसे कुछ ग्रामीण लोग रोजमर्रा की बातें करते हुए भी अपनी बातचीत को साहित्यिक पुट दे दिया करते थे ?

महाकवि मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत के प्रारंभ में सही ही कहा है- राम तुम्हारा चरित्र, स्वयं की काव्य है। कोई कवि बन जाये सहज संभाव्य है। मानव मन सत और असत दोनों प्रकार की प्रवृतियों का आश्रयस्थल है। सत प्रवृतियां मनुष्य को मनुष्य से जोडती हैं और असत प्रवृतियां मनुष्य को आत्मकेंद्रित करती हैं तथा दूसरों से उसे तोडती है। यह सत और असत का संघर्ष हृदय में सदा चलता रहता है। मनुष्य को अपने विकास के लिये दूसरों से जुडना आवश्यक है।

हम जितना अधिक दूसरों से जुडेंगे, उनके काम आयेंगे, हम उतना ही अधिक अपने जीवन में सफल होंगे। पर यह दूसरों के काम आना सरल या सुविधाजनक नहीं है। इसके लिये हमें अपने स्वत्वों, अपने हितों का त्याग करना पडता है। इस त्याग के रास्ते में ही हर मनुष्य का अपना मोह अपनी पूरी ताकत के साथ खडा हो जाता है, इसी पर विजय प्राप्त करना ही रामत्व है। रामका समूचा जीवन इसी विजय पथ का पथिक रहा है। महाप्राण निराला ने जो लिखा - दु:ख ही जीवन की कथा रही, क्या कहूं व्यथा जो नहीं सहीं। राम के जीवन को सही रूप से प्रतिबिम्बित करता है। दूसरों के लिये दु:ख सहते या त्याग करते हुए रावत रथी-विरथ रघुवीरा के संग्राम में रथी महाराजाधिराज रावण की विरथी तापसी राम से पराजय ही असत पर सत की विजय का प्रतीक बन गई है। राम के जीवन की यही घटना हर युग, हर काल के मनुष्य को आश्चर्य में डाल देती है।

जिस प्रकार तुलसीदास की अनूठी कृति रामचरित-मानस हिन्दी साहित्य निधि की सर्वोत्कृष्ट रचना समझी जाती है, उसी प्रकार महाकवि कंबन का महाकाव्य रामावतारम तमिल काव्य भंडार का श्रेष्ठतम रत्न समझा भी जाता है। स्वयं कंबन और तुलसी भी अपने-अपने भाषा साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि स्वीकार किए जाते हैं। यों कहने को तो दोनों महाकवियों ने आदि कवि वाल्मीकि कृत रामायण के आधार पर ही अपने काव्यों का सृजन किया है, परंतु उनकी रचनाएं कई अंशों में वाल्मीकि रामायण से भिन्न हैं। इन दोनों महाकवियों में परस्पर अनेक अंतर हैं, यह अन्तर उनके द्वारा अंकित घटना-योजना, पात्र परिकल्पना, वातावरण, चित्रण, रचना शिल्प आदि अनेक बातों में परिलक्षित होता है।

वाल्मिकि कृत रामायण तथा तुलसीदास कृत रामचरित मानस में मर्यादा पुरुषोत्तम राम की महिमा का जिस तरह से वर्णन किया गया है, उसके आधार पर भगवान राम की आराधना एक देवता के रूप में नहीं बल्कि सर्वगुणसम्पन्न व्यक्ति के रूप में करना ज्यादा उचित जान पड़ता है। विष्णु के दशावतारों में से एक अवतार राम समाज में व्याप्त अनाचार, पाप का शमन करने के लिए अवतरित हुये थे। श्री राम को अवतार रुप में देखने पर यह बात साबित होती है कि उनका पूरा जीवन मर्यादा में ही व्यतीत हुआ। एक राजा के रुप में श्रीराम को प्रजावत्सल शासक के रुप में स्वीकार्य किया गया है। माता-पिता की सेवा तथा उनके आदेशों का अनुपालन करने में भी श्रीराम का चरित्र एवं उच्च आदर्श के रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत किया गया है।

वस्तुत: भगवान राम की आराधना राम का पूजन भारतीय संस्कृति की उच्च मर्यादा को ध्यान में रखकर तिया जाना चाहिये। भगवान राम की आराधना समाजोत्कर्ष, पापियों को सबक सिखाने, प्रजा के प्रति राजा के दायित्व तथा उचित न्याय देने वाले एक राजा के रूप में, एक आदर्श व्यक्तित्व के रुप में स्वीकार किया जाये न कि देवता के रुप में। राम ने एक पुत्र, एक पति और एक पिता के रुप में मनुष्य रुप में जिस तरह से जीवन जिया, उससे यही बात उभरकर सामने आती है कि श्रीराम ने अपने जीवन में मर्यादा से बाहर जाकर कोई कार्य नहीं किया, हालांकि उन पर लांछन भी खूब लगे हैं। गर्भावस्था में अपनी पत्नी का परित्याग करने वाले राजा राम को मर्यादा पुरुषोत्तम क्यों कहा जाए, ऐसा प्रश्न सहज ही उठाया जा सकता है ? लेकिन राजा के रूप में प्रजा के प्रति न्याय देने की दृष्टि से यदि राम के लिए सीता का परित्याग करना जरूरी हो गया हो तो बतौर राजा राम का फैसला उचित है अथवा नहीं ? इस पर भी ध्यान दिया जाना जरूरी है।

राजगद्दी हासिल करने के बाद राजा को यह भी सोचना चाहिए कि अपनी प्रजा के प्रति भी उसका कुछ उत्तरदायित्व है। राजा होने का गर्व स्वयं में संयोजकर प्रजा को परेशान करना ठीक नहीं है, इसलिए वाल्मिकि कृत रामायण हो अथवा तुलसीदास कृत रामचरित मानस, इन दोनों ही ग्रंथों में श्रीराम को धिरोदत्त नायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। राजा होकर स्वयं के पक्ष में फैसला सुनाने की इच्छा रखना गलत है। इसे राम जैसा राजा ही सोच सकता है। मानस में रावण को निर्दयी राजा के रूप में प्रस्तुत करने का मकसद यही है कि समाज में व्याप्त बुराइयां रावण के रूप में जब-जब अत्याचार करने लगें तो उनका विनाश करने के लिए राम (अच्छाई) को अवतार लेना ही होगा। राम को सत्य के रूप में अभिकल्पित कर राष्ट्रोत्थान का प्रतीक मानना ही सच्चे अर्थों में राम की आराधना है। वहीं दूसरी ओर रावण को राष्ट्रविनाशक मानकर इस विचारधारा के लोगों को सबक सिखाना भी राम के चरित्र को जानने-समझने की पुष्टि करता है।

राम को लेकर देश में जो राजनीति चल रही है, वह सत्य को विदीर्ण करने जैसी ही है। कोई राममंदिर बनाने को लेकर राजनीति कर रहा है तो कोई राम मंदिर न बनने देने पर आमदा है। किसी की भी राम के आदर्श पर चलने की इच्छा नहीं दिखती। चैत्रीय नवराज्य तथा दशहरे के दिन राम की आराधना करके इतिश्री मान लेने मात्र से हालात नहीं सुधरेंगे। महिलाओं पर बढ़ते अत्याचार, अपार धनसंपत्ति बटोरने की चाहत, येन-केन-प्रकारेण सत्ता प्राप्ति करने की मानसिकता रखने वाली राजनीति पार्टियों ने राम को भी विवादों के घेरे में ला खड़ा कर दिया है।

राम भारतीय संस्कृति की आधारशिला हैं, पर जिस राम मंदिर के लिए खून खराबा हो, उसके निर्माण से लाभ ही क्या है ? किसी भी मंदिर में भक्त अपनी समस्या को लेकर जाता है और वह भगवान से यही कहता है कि भगवान मेरा जीवन सुखी हो। भक्त व भगवान के बीच भी एक तरह का स्वार्थ होता है। हर भक्त भगवान के मंदिर में जाकर अपने दीर्घायु जीवन, सुखी व सर्वसुविधा संपन्न जीवन की कामना तो करता है पर शायद ही कोई ऐसा भक्त होगा कि जो भगवान के मंदिर में जाकर यह कामना करे कि हमारे पडोसी की तरक्की हो जाए, उसे सुखी व दीर्घायु जीवन मिल जाए। आज हालात यहां तक पहुंच गए कि एक राम मंदिर के लिए विभिन्न राजनीतिक दलों में टकराहट पैदा हो गई है।

हिन्दु कहें मुझे राम पियारा, मुस्लिम कहें रहिमाना, दोनों आपस में लड़ी-लड़ी, मुये मर्म न काहूं जाना

आशय यह है कि हिन्दू कह रहे कि मुझे राम प्यारे हैं, तो मुसलमान रहीम को ही अपना सर्वस्व मान रहे हैं और इसी लड़ाई में दोनों कौम में टकराहट हो रही हैं। सवाल यह उठता है कि आखिर विवादों के बीच राम मंदिर या बाबरी मस्जिद बन भी जाएं तो क्या दोनों कौम के बीच की टकराहट समाप्त हो जाएगी। हिन्दू यदि अयोध्या में राम मंदिर बनाने की पैरवी कर रहे हैं, तो मुसलमान किसी अन्य स्थान पर मस्जिद बनाने की तैयारी क्यों नहीं दर्शाते ? हिन्दुस्तान में भारतीय संस्कृति को जानना समझना ज्यादा जरूरी है, न कि बाबरी मस्जिद के लिए हाय-तौबा मचाना। ईश्वर व अल्लाह जब एक ही हैं तो फिर भारतीय संस्कृति में बाबर को स्थान दिलाने के लिए इतनी

जद्दोजहत करने की क्या आवश्यकता है ? बेहतर तो यह है कि भगवान को पूजने वाले हिन्दू तथा अल्लाह को पूजने वाले मुसलमान दोनों यह माने कि भगवान हो या अल्लाह, वे इंसान के दिलों में बसते हैं, यदि हमारे दिल में भगवान के प्रति आस्था है तो हम किसी भी मंदिर में जाकर उसकी पूजा कर सकते हैं, इतना ही नहीं प्रत्येक हिन्दू अगर अपने घर में भी पूजा करें तो भी भगवान उसे आशीर्वाद देंगे। मानव-मानव के बीच कटुता का आधार यदि भगवान या अल्लाह बने तो इसे कतई ठीक नहीं माना जा सकता। भगवान राम को सांप्रदायिक दायरे में पूजने से बेहतर हैं कि भगवान राम को उनकी आदर्श मर्यादा के लिए पूजा जाए। विष्णु के प्रतिनिधि के रूप में इस धरा पर अवतरित हुए राम को राष्ट्रीय अस्थिता मानकर उनकी आराधना को राष्ट्रोत्थान के रूप में अंगीकार किया जाए। राम की आराधना सच्चे व आदर्श समाज निर्माण का केंद्र बने न कि धार्मिक टकराहट का जरिया।

जग में सुंदर हैं दो नाम चाहे कृष्ण कहो या राम नामक भजन पर सार्थक चिंतन किया जाये तो यह बात खुलकर सामने आती है महाभारत के महानायक भगवान श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिस्थापित की गई कर्म की प्रधानता तथा रामायण के नायक भगवान राम की मर्यादा इतनी उच्च थी कि उन्हें मर्यादापुरुषोत्तम राम की उपाधि से नवाजा गया। सवाल यह उठता है कि आज के आधुनिक युग में राम-कृष्ण की आराधना की जानी जरूरी है, तो इसका उत्तर यही होगा कि भले ही हम कितने भी आधुनिक हो जाएं, फिर भी राम-कृष्ण की आराधना करना जरूरी होगा, क्योंकि कृष्ण का कर्मवाद इस धरा से कभी समाप्त नहीं होगा। राम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप को जीवंत रखने के लिये सामाजिक आदर्श का जतन करना जरूरी है। राम को भगवान मानकर पूजने से बेहतर है, उनके द्वारा प्रतिस्थापित मर्यादा को पूजा जाये राम किसी धर्म की मर्यादा नहीं अपितु सामाजिक मर्यादा के प्रतीक हैं, राम को लेकर राजनीति करने वाले कभी राम के हितैषी नहीं हो सकते, राम को मानव मात्रा में संचित मर्यादा को दृष्टि में रखकर देखा जाना चाहिये।

राम ने एक राजा और गृहस्थ के जीवन की तरह ही जीवन जीया, उन्होंने संकट के समय भी मर्यादा का दामन नहीं छोड़ा, विपत्ति में धैर्य तथा हर हाल में मर्यादा के पालन ने राम को देवत्व प्रदान कर दिया, इसलिये सदियां बीत जाने के बाद भी अयोध्या के राजा एक आदर्श के रूप में आज भी पूज्य हैं। भगवान राम के जन्मोत्सव के रूप में आज समूचे देश में राम नवमी मनायी जायेगी। राम नवमी का यह त्यौहार सिर्फ एक औपचारिकता के रुप में न मनाया जाकर उसे सामाजिक मर्यादा किस तरह से जीवन में अमल में लायी जाये, इस पर जोर देने की बात को केन्द्र में रखकर मनायी जाये, तभी इस पर्व की सार्थकता पूरी होगी। सत्कर्म की प्रधानता के बीच जीवन जीने की सीख देने वाले महाभारत के महानायक का व्यक्तित्व आज के दौर में न जाने कहां खो गया है। धन प्राप्ति की कामना के बीच गलत कार्य करने की चाहत ने कर्मवाद की परिभाषा ही बदल दी है। राजनीति से जुड़े लोग देश का संचालन सही तरीके से नहीं कर रहे। येन-केन प्रकारेण सत्ता प्राप्ति के घिनौने खेल का साक्षी यह देश कई बार बना है और भविष्य में भी बनता रहेगा, ऐसे बिगड़े हालातों से देश को निकालने के लिये भगवान राम की मर्यादा तथा भगवान कृष्ण के कर्मवाद को जीवन शैली का हिस्सा जरूर बनाया जाना चाहिये। घर या मंदिर में सिर्फ भगवान को पूज लेने मात्र से काम नहीं चलेगा, बल्कि हालात तब सुधरेंगे, जब गलत कार्य का विरोध, तथा सत्य का दृढ़ता से पक्ष लिया जायेगा। अपने पक्ष में गलत कार्य करने वालों का सहयोग देकर पायी गई सत्ता ज्यादा दिनों तक नहीं चलती है, यही बात तो गोस्वामी तुलसीदासकृत रामचरितमानस में कही गई है। भगवान का पूरा चरित्र कई-कई बार पढ़ने के बाबजूद भी लोगों के मन की मलिनता नहीं जाती तो ऐसे में राम के चरित्र के पठन का कोई औचित्य नहीं रह जाता। आज के इस कलयुगी समाज में कई लोग ऐसे भी मिल जायेंगे, जो नवरात्र में नौ दिन उपवास करेंगे, और इन ९ दिनों में ९००० झूठ भी बोलेंगे, ऐसी आराधना कभी फलदायी नहीं हो सकती। अपना कार्य लापरवाही से करने, दूसरों की योग्यता से घबराने वाले, अपनी सत्ता को षडयंत्र के तहत बनाये रखने वाले समाज को ऐसे भयावह मोड़ पर लाकर छोड़ते हैं, जहां से समाज का पतन निश्चित है। राम ने जो कुछ किया वह समाज में आज भी कायम है, जब-जब राम की बात होगी, उनकी महानता का गुणगान होगा और जब भी रावण का उल्लेख होगा उसकी दुष्टता को ही उकेरा जायेगा।

यदि भगवान राम और कृष्ण दोनों के व्यक्तित्व की ओर ध्यान दिया जाये तो यह बात खुलकर सामने आयेगी कि यदि समाज में महाभारत के महानायक के विचारधारावाला कर्म तथा भगवान राम की मर्यादा की स्थापना की गई तो उसके बाद जिस समाज का निर्माण होगा, वह राष्ट्रोत्थान का मार्ग प्रशस्त करेगा। अत: राम व कृष्ण के नाम जग में सुंदर बनाये रखते हुये राम व कृष्ण की आराधना का संकल्प आज जो भी भक्त लेगा, वह उत्कृष्ट समाज के निर्माण का भागीदार माना जायेगा।

जिस यम का दमन रावणराज ने किया उस रावण का दमन करने वाले राम हैं। जो राम का नाम लेता है उसको यमलोक नहीं जाना

पड़ता। भाई। राम-नाम जपो, दूसरा काम बाद में। राम-नाम के बिना सारे धर्म-कर्म व्यर्थ हैं। मृत्यु के समय यदि मनुष्य राम का नाम ले लेता है तो विमान पर सवार होकर वह देवलोक चला जाता है। श्रीराम की महिमा की कौन सी तुलना दूँ। प्रमाण के रूप में गौतम-पत्नी अहल्या को देख लो। वाल्मीकि की कृपा अर्थात् रामकथा से पापियों को मुक्ति मिली। रामायण सुनने से अश्वमेघ-यज्ञ का फल प्राप्त होता है। भाई, राम-नाम लेने में आलस मत करना, भवसागर पार करने के लिए रामनाम नौका के समान है। अनाथ के नाथ राम ने अपनी लीला प्रदर्शित की- वन के वानर बन्दी बन गये और जल पर शिला तैरने लगी। राम-जन्म के स्मरण से यम के हाथों से निस्तार मिल जाता है। भवसिन्धु को पार करने के निमित्त राम के चरण, तरणि नौका के समान हैं। जिनकी करुणा चंडाल पर भी है और जिनके गुणों के चिन्ह पाषाण पर भी अंकित हैं। राम-नाम लेने में कतई काहिली मन करना, संसार तरने के लिए राम-नाम की माला का पूल बाँधो। श्रीराम का स्मरण कर लो जो घनघोर जंगल में भी जाता है तो राम उसके पीछे-पीछे धनुष-बाण लिये चलते हैं। राम-नाम बार-बार मुँह से बोलो, सोच कर देखो, बिना राम के कोई गति नहीं। श्रीराम ने तो यत्न करके अश्वमेध-यज्ञ किया और केवल रामायण के श्रवणमात्र ही से अश्वमेघ का फल मिल जाता है। राम के ऐसे ही गुण हैं, उनकी क्या तुलना दूँ। उनके चरणों के स्पर्श से पत्थर प्राणी में बदल जाता है और नाव सोने की बन जाती है।

पार लगाओ हे रामचन्द्र, मुझे पार लगाओ। मुझे दीन देखकर तुम नाव लेकर दूर हट गये। जिनके पास उतराई देने के लिए कौड़ी भी नहीं थी वे पार लग गये, बिन कौड़ी के भी पार लगाओ तो समझूँ कि नाविक हो। जिसको ध्यान-पूजा, तंत्र-मंत्र का ज्ञान न हो उसको पार लगाओ तो जानूँ कि राम हो। जो व्यक्ति योग-याग और तंत्र-मंत्र में कुशल है वह तो अपने ही गुण के बूते पार हो जायगा, तुम उसे क्या पार लगाओगे ? मेरे पास कौड़ी नहीं है, मैं पार कैसे जाऊँगा ? चाहे पार लगाओ या न लगाओ मैं तो तटपर बैठा ही रहूँगा। केवटों की आदत से मैं भली-भाँति परिचित हूँ- कौड़ी न मिलने पर भी वे शाम को पार कर देते हैं। किसी को बिगाड़ते हो तो किसी को बनाते हो- यही तुम्हारा काम है। किसी के सिर पर राजछत्र है तो किसी के सिर गाज गिराते हो। किसी को तो सौ पुत्रों से अक्षय बना देते हो और किसी को एक पुत्र देकर भी छीन लेते हो। हे प्रभु, तुम स्वयं तोड़ते हो, स्वयं गढ़ते हो। साँप बनकर डस लेते हो और ओझा बनकर विष उतार देते हो। सभी कुछ तुम्हारी लीला है, तुम ही सब कुछ करते हो। हाकिम बनकर हुक्म देते हो और कारिन्दा बनकर ताडित करते हो। अधम देख कर यदि दया नहीं करोगे तो अपना पतितपावन नाम किस बल पर रख सकोगे। साधुओं को तारने में तो सभी देवता समर्थ हैं, असाधु को जो तारे वही सबका स्वामी देवताओं का देवता हैं। दैव-दोष से अहल्या पाषाण बन गयी थी, तुम्हारे चरणों के स्पर्श से उसे मुक्ति मिल गयी। हे रघुकुलमणि रामचन्द्र। मुझको पार लगाओ, तुम्हारे दोनों चरणों को मैंने अपनी तरणी बना लिया है। यदि तुम मुझको त्याग भी दो प्रभु। तो मैं तुमको छोड़नेवाला नहीं। तुम्हारे पैरों की पजनिया बनकर बजा करूँगा। नयनों से देखो, राम-सरिता बह रही हैं, उसमें चल कर स्नान करो, किनारे क्यों बैठे हो। अरे पामर, यदि पार ही होना है तो राम-नाम का अमृत पी लो, नदी बहती चली जा रही है। मृत्यु के समय यदि एक बार भी राम का नाम लेकर कोई पुकार ले तो यम खड़ा देखता रह जाता है और वह प्राणी स्वर्ग चला जाता है। ऐसे राम के गुणों का बखान करना क्या मेरे सामर्थ्य में है, मुँह से हरि का नाम लो, सुगमता से नौका पार लग जायगी।

ज्ञान का निर्माण न ईश्वर करता है, न जीव करता है, वह न जड में से निकलता है और न ही शून्य में से निकलता है। वह तो अनुभव स्वरूप अखंड अविरल धारा है।

रामायण मे ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की निर्मल त्रिवेणी का प्रवाह बहता है।

राम कृष्ण नारायण नाम अखंड जीवन है यह कही से भी खंडित नही होता है।

दोस्तों के नाम

दोस्ती दिलों से निकला भावनाओं का दरिया है। मित्रता मुसीबत के वक्त मदद का जज्बा है जो मनुष्य मन का मेल कराती है। मित्रता सुप्त हृदय का स्पंदन है। मित्रता आकाश में अठखेलियाँ करते विहंगों की वह ऊँची उड़ान है जो आकाश की अनंतता तक उड़ने की प्रेरणा देती है। मित्रता मुरझाए होठों की मधुर मुस्कान है। मित्रता सुहानी शाम का सुहाना एहसास है तो प्रभात की प्रथम किरण के साथ उदित प्रेम का वह प्रकाश भी है जो रिश्तों को स्नेह के तेज से आभामय बनाता है। केवल सोच की समानता ही मित्रता का आधार नहीं होती। मित्रता विचारों की विविधता भी है और भावनाओं का संगम भी। समर्पण, सहयोग, समन्वय का सम्मिश्रण है मित्रता। मित्रता के इस पावन रिश्ते को किसी एक परिभाषा के दायरे में नहीं बाँधा जा सकता। मित्रता की कई परिभाषाएँ और व्याख्या हैं। किंतु सार एक है- प्रेम, समर्पण और निष्ठा।

मित्रता अपरिचितों को परिचय के पड़ाव पर लाकर मधुरता की मंजिल तक पहुँचाती है। विश्वास के बीच से मैत्री की फसल का अंकुरण होता है जो वफा के नीर से लहलहा उठती है। अविश्वास के अंधकार में दोस्ती के दीप का प्रज्वलन असंभव है। मैत्री के महल विश्वास की नींव पर खड़े होते हैं। मैत्री के माध्यम से मनुष्य सामाजिक जीवन में अपना पहला कदम रखता है। मित्र मंडली के मध्य मनुष्य अपनी वेदना, विचार तथा मन की समस्त बातों को नि:संकोच व्यक्त कर सकता है।

जीवन में हर इंसान को एक सच्चे दोस्त की तलाश रहती है। सच्चा दोस्त सुख का ही साथी नहीं होता वह दु:ख में भी मददगार साबित होता है। सच्चा दोस्त सबको खुशनसीबी से मिलता है। सच्चा मित्र पथभ्रष्ट मित्र के मन की मलिनता, चरित्र की विकृतियाँ और स्वभाव में व्याप्त दुर्गुणों को अपने सद्गुणों के संस्कारों से समाप्त कर उसे सही रास्ते पर लाने का प्रयास करता है। सच्चे मित्र की तलाश में कई मनुष्यों की स्थिति कस्तूरी मृग के समान होती है कई बार तो सच्चा मित्र हमारे आसपास ही होता है, पर हम उसे सर्वत्र खोजते रहते हैं। पारखी नजर ही सच्चे मित्र की पहचान कर पाती है। कोई मनुष्य मधुर वाणी बोलने मात्र से ही सच्चा मित्र नहीं हो जाता। सच्चा मित्र अपने मित्र के हित हेतु कटु वचनों के प्रयोग से भी परहेज नहीं करता।

मित्रता स्नेह के मजबूत धागों से बँधी होती है। इसे धर्म, समाज, जाति के दायरों में नहीं बाँधा जा सकता।

मित्रता में बंधुता का भाव निहित होता है। मित्रता में सूर्य की ऊष्णता और शशि की शीतलता है। सूर्य की ऊष्णता इसलिए क्योंकि सच्चा मित्र अपने मित्र को कुमार्ग पर गमन करने से रोकने के लिए उग्र रूप भी धर लेता है और शशि की शीतलता इसलिए क्योंकि मित्रता की मधुरता में ही शशि की शीतलता का एहसास है। मित्रता स्वार्थ नहीं समर्पण है। मित्रता का रिश्ता भावनाओं के तारों से संबद्ध होता है। एक सच्चे मित्र की भावनाएँ कभी मलिन नहीं होतीं। यही तो है असली मित्रता जो कभी खंडित नहीं होती।

मेरे परम आदरणीय श्री रामस्वरूपजी मुरारका, नवलगढ़ निवासी जिन्हें मैं बडे भाई का सन्मान देता हूँ। बड़े ही शालिन व आदर्श व्यक्तित्ववाले है। हर समय उनसे मुझे सहयोग मिला है। श्री. विनोद गुप्ता व शिखा गुप्ता एक सफल प्रबन्धक व्यक्तित्ववाले मित्र हैं। श्री ईश्वर किशोरीलाल गोयल और कांता भाभी हमारे आदरणीय मित्र हैं। हमारे मित्र डॉ. पंकज जिंदल व श्रीमती डॉ. शीतल जिंदल से सदैव अनपेक्षित सहयोग मिलता है। मेरे भतीजे श्री राजीव किशोरीलाल पाटोदिया व श्रीमती रेखा पाटोदिया एक हँसमुख व्यक्तित्ववाले व्यक्ति हैं। हमारे मित्र श्री सज्जनकुमार तुलस्यान व उर्मिला तुलस्यान सदैव सभी से अपनी रिश्तेदारी सम्बन्ध स्थापित करने में माहिर है। हमारे दोस्त श्री वेदप्रकाशजी गुप्ता व श्रीमती राजकुमारी गुप्ता अपने जीवन में सही मायनों में आनन्द उठानेवाले व्यक्ति हैं। श्री रेवतीरमण पित्ती व सुशीला पित्ती एक हसीन व शालीन व्यक्तित्ववाले व्यक्ति है। श्री सन्तोषजी अग्रवाल व श्रीमती शशी अग्रवाल एक अलग व्यक्तित्ववाले दम्पती है जो हँसमुख चेहरे से सभी की आवभगत करने में पीछे नहीं रहते। हमारे परम मित्र श्री बनवारीलालजी बजाज व श्रीमती प्रेमा भाभी सदा से ही हमारे सहयोगी रहे हैं। हमारे दोस्त अरूण डिडवानिया व श्रीमती ज्योती डिडवानिया ने हमारे साथ हर समय कदम से कदम मिलाया। हमारे मित्र श्री उमेशकुमार अग्रवाल व श्रीमती निरभा भाभी इनका भी साथ हमें मिलता रहा। इसके साथ ही हमारे श्री अमरेश अग्रवाल व भाभी श्रीमती मधु अग्रवाल अपने आप में एक अद्वितीय व्यक्तित्ववाले मित्र है। मेरे इन सभी मित्रों के सहयोग से मुझे मेरे दैनिक जीवन में सफलतायें और शुभकामनाएं मिली है। अन्त में मेरे घनिष्ठ मित्र श्री नारायणदासजी जाजोदिया श्रीमती मीनल जाजोदिया तथा श्री नेमीचंदजी अग्रवाल व भाभी श्रीमती शारदा अग्रवाल ये दोनों दम्पती मेरे लिये आदर्श व्यक्तित्ववाले हैं।

* निगाहें आपकी पहचान है हमारी, मुस्कुराहट आपकी शान है हमारी,
रखना हिफाजत से तुम अपने आपको, क्योंकि दोस्ती आपकी जान है हमारी।
* कहीं अन्धेरा तो कहीं शाम होगी, मेरी हर खुशी दोस्तों के नाम होगी,
कुछ मांग के तो देखो हमसे, होठों पर हंसी और हथेली पर जान होगी।
* करोगे याद तो हर बात आयेगी, पुराने वक्त की हर मौज ठहर जायेगी,
तलाश करोगे अगर हमसे बेहतर दोस्ती कोई, तो निगाहे दूर तक जाकर लौट आयेगी।
* ऐ दोस्त तेरे चेहरे से कभी मुस्कुराहट न जाये, तेरी आंखों में कभी आंसू ना आये,
तेरी राहों में पडे हो जो कांटे, मैं हाथ रखूं और तू गुजर जाये।
* नजर से नजर चुराओगे कब तक, दोस्ती हमारी भुलाओगे कब तक,
यूं ही मिलते रहेंगे पैगाम हमारे तुम्हारे, इन पैगामों को मिटाओगे कब तक।
* लफ्ज आप दो गीत हम बनायेंगे, मंजिल आप पाओ रास्ता हम बनायेंगे,
खुश आप रहो खुशियां हम दिलायेंगे, आप बस दोस्त बने रहो, दोस्ती हम निभायेंगे।
* जिनकी याद में हम दीवाने हो गये, वो हम ही से बेगाने हो गये,
शायद उन्हें तलाश है नये दोस्त की, क्योंकि नजर में उनकी हम पुराने हो गये।
* चाह कर भी जुदा न रह सकोगे, रुठ कर भी खफा न रह सकोगे,
हम दोस्ती ही कुछ ऐसी निभायेंगे, कि आप हमारे बिना रह न सकोगे।
* रिश्तों की दूरी बडी कमजोर होती है, आंखों की बातें दिल की ओर होती है।
किसीने जब भी पूछा हमसे दोस्ती का मतलब, हमारी आंखे आपकी ओर होती है।
* हर दुआ कबूल नहीं हुआ करती, हर आरजू पूरी नहीं होती,
जिस दिल में आप जैसे दोस्त रहते हो, उनके लिये धडकने जरूरी नहीं होती।
* हम हवा के झौंके हैं गुजर जायेंगे, खामोशी से तुम्हारे दिल में उतर जायेंगे,
पाकर तुम्हारी दोस्ती ये हुआ अहसास, तुमसे बिछुड कर हम मर जायेंगे।
* वक्त मिले तो याद कर लेना, पल-पल न सही दिन में एकाध बार कर लेना,
दोस्त होंगे आपके हजार पर हमारा सिर्फ एक है ये खयाल रखना।
* वादा तो नहीं करता दोस्ती निभायेंगे, कोशिश यही है सतायेंगे,
जरूरत पडे तो दिल से पुकारना, मरते भी होंगे तो मुहल्लत लेकर आयेंगे।
* कही अनकही बातों की अदा है दोस्ती, हर रंजो गम की दवा है दोस्ती,
जमीं पर कमी है पूजनेवालों की, वरना इस जमीं पर खुदा है दोस्ती।
* सपने थे सपनों के साहिल हुये, न जाने कैसे हम आपकी दोस्ती के काबिल हुये,
कर्जदार रहेंगे हम उस हसीन पल के, जब आप हमारी दुनिया में शामिल हुये।
* दोस्ती अहसान नहीं कोई खास चीज होती है, ये कोई भीख नहीं कुदरत की दी बख्शीश होती है।
* जब भी तुम पुकारोगे दौडे चले आयेंगे, कफन में लपेटे चिता से उठकर चले आयेंगे,
अगर जल भी गये तो गम नहीं दोस्त, राख भी बने तो भी तेरा साथ निभायेंगे।
* एक मुद्दत के बाद मिलना अच्छा लगा, सागर से गहरी लगी आपकी दोस्ती, तैरना तो आता है पर डूबना अच्छा लगा।
* ना खैरियत कोई ना पैगाम आया, जो चाहा नहीं वो अंजाम आया,
लगता है भूला दी एक दोस्त ने मेरी दोस्ती, इसलिये न कोई दुआ ना सलाम आया।